६१५७

१८९८-ब

पत्र १३१५

ॐ

श्रीगणेशाय नमः

इस ग्रंथके प्रारंभमें प्रथम नाभा दासजीकी भक्ती कथनकरतेहैं दोहा श्रवण सुखद मंगल करन हरन त्रिवध तपसूल॥ भक्ति महातम कथन अब करहुं सकल सुखमूल॥१॥ हृदय प्रकासन ज्ञान रवि दहन दुरत मद मार॥ श्रीपति चरन सरोज नित नवल देन रतिचार॥२॥ टीका॥ सोकैसी भक्तीहै कि कानोको सुख देने वाली और मंगलों के करने वाली संपूर्ण दुखोंके दूर करने वाली फिर कैसीहै कि हृदयमें ज्ञान रूपी सूरज के प्रकास करनेवाली और कामादि मद और पापों के दग्धकरनेवालीहै और श्रीपति जो भगवानहैं तिनके चरन कमलोंमें नित्त नई प्रीती केदेनेवालीहै २ चौपाई॥ प स्रम देस ललित मन भावा॥ तहां नरेस मान हरि गावा॥ युक्त सकल सम ऋद्धि उदारा॥ विजय शत्रु जग कीरतिवारा॥ विप्र धेनु प्रतिपालिकराई॥ भक्त संत सज्जन सुखदाई॥ धरम निरन संकुल गुण सागर॥ दाया दान मान मति नागर॥ तास रुचिर गुरु देव सुहाये॥ कृस्न दास सब लोगन गाये॥ भक्त प्रधान निपुण गुन ज्ञाना॥ विप्र जासु कर बदर समाना॥ सज्जन सरब भूत हितकारी॥

औेर अग्रदास नामकरके तिनके तिनके दो चेलेथे सो
अपने गुरुजीकी भक्तीमे परम प्रवीनथे एकदिन वे
दोनो गुरुजीकी आज्ञासे पूजाका समाज पुष्प पत्र कुश
इत्यादि लेनेके वास्ते वनको जाते भये तहां पुष्प इत्यादि
वनसेलेकर जब आश्रमको आवने लगे तब क्या देखतेहैं
कि एक अंधा बालक दुरभिक्ष काल करके माताका
त्यागाहुआ मारगमे पड़ाहैर॥ चौपाई॥ देखि तासु
मुनि कील सुजाना॥ अग्रदास सन वचन बखाना॥
अहो कवन एह बाल नवीना॥ परो अशक्त विपन
पथदीना॥ जो एहि चलहु लेत निज गेहा॥ पा
लहिं संत सकल करि नेहा॥ सिसुहिं देखि मुनि
अग्र अमानी॥ लोचिन तासु मारजन पानी॥
कीन्यो अमल नैन मे तासा॥ उठ्यो बाल दृग ज्योति
प्रकासा॥ अति प्रसन्न निज आश्रम ल्याये॥ कृस्न
स्वामि अनुसासन पाये॥ अग्रदास बालक सन
बानी॥ बोले मधुर वदन हित सानी॥ अरे वत्स
तुव आश्रम रूं॥ ईहां निवास करहु निजचारूं॥
कल कर सैन साधु सिवकाई॥ सुतरत होहु
रूचिर मन लाई॥ संत उच्छिष्ट कुंड वर बरना॥
तहां सनान पान तुव करना॥ भोज्य उच्छिष्ट
संत जन जन वारा॥ सोऊ करहु तुव तात अहा
रा॥ अस मुनि अग्रदास मनभावा॥ सिसुहिं कीन
उपदेस सुहावा॥ दोहा॥ पुनि सब संतन सन विनय

विरत विवेक निरत व्रतधारी॥ भूप देस निज रुचिर सुहाई॥ रंमय पुरी एक विरचाई॥ गुरुवर हेतु प्रेम मन लीना गलता नाम प्रकट जग कीना॥ तहां जतेंद्र कृस्न मुनिराज्यो॥ युक्त सकल निज संत समाज्यो॥ अग्र कील मुनिवर सिष दोई॥ गुरु पद जलज भक्ति रत सोई॥ पूज्युधि करण हेतु तजि गेहा॥ गवने विपन दिवस इक तेहा॥ चूदन कुश कुसम कल नीके॥ धरत द्रोण मन भावत जीके॥ चले युगल निज आश्रम काहीं॥ ज्ञान विचार करत मन माहीं॥ दोहा॥१ तव देखा मारग पर्यो ग्रंथ बाल बल हीन॥ जानि दुरमित प्रभाव समय निज जननी तजि दीन॥२॥ टीका॥ कहते हैं कि पश्चिम देस मे एक मान सिंह नाम करके राजा होता भया सो केसा था कि संपूर्ण पदार्थों करके परिपूरण बड़ा उदार शत्रूओं के जीतने वाला और जगत मे कीर्ती वाला गौ ब्रह्मणों के पालने वाला भक्तों और संतों के सुख देने वाला धरम मे परायण सरब गुणों का समुद्र दयावान और दान मान के देने वाला बुद्धि मे बड़ा चतुर था तिस राजा के गुरुदेव कृस्नदास नाम करके लोगों में प्रसिद्ध होते भये सो केसे थे कि भक्तों मे प्रधान गुणमान बड़े चतुर और ज्ञानी संपूर्ण जीवों के हितकारी सो तिनके वास्ते मानसिंह राजा ने अपने देश मे गलता नाम करके एक नगर रचया तिस स्थान विखें कृस्नदास जी निवास करते भये तहां कीलदास

इसको सेवक और दीन जानकर सदा कृपा दृष्टि से दे
खा करो और इसपर सनेह किया करो॥ छंद॥ या
विध करते द्वार तासु निज गुरुहिं निवासा॥ रटित
मंजुल रामनाम कछु काल बितासा॥ संतन से
वा करत रुचिर मति विमल विकास्यो॥ भूत॥ भ
विष्यत॥ वरतमान॥ गति ज्ञान प्रकास्यो॥ दोहा॥
देखि सदिन सुभ कृपा जुत गुरु वर दीन सनेहु॥
राख्यो नाम प्रसिद्ध जग जन नामा अस तेहु॥२॥
तब ते दीन न देस अस वत्स जठिर जिय जान॥
तजि सुधरम सब आन मोहि सेवन रति मान॥ टीका॥
इसप्रकार उस बालकको गुरु के द्वारमे निवास
करते और राम नाम जपतेको कुछ काल बतीत
होगया तब संतों की सेवा के प्रभावसे उसकी
बुद्धि निरमल होगई॥ और भूत भविष्यत वर्तमान
इन तीनो कालोंकी गति जाननेको सामर्थ हो
जाता भया तिसते उपरंत अग्रदास जीने शुभ दिन
विचार करके उसका नाम नाभादास रखदिया और
येह आज्ञा देदई कि हे पुत्र मे वृद्ध हूं तू अबते
और सब धरम त्याग करके केवल मेरीही सेवा
किया कर॥ चौपाई॥ स्वामि न देस सुनत सुख
दाई॥ नाभा दास चरन सिर नाई॥ गुरु समीप निज
कीन निवासा॥ रोम रोम उर हरष प्रकासा॥ मन
वच करम भक्ति अनुरागा॥ इष्टदेव निज सेवन लागा॥

वदन कीन मुनि पद्म॥ सिसु पै राखहु कृपा नुव जन निज जानि सनेहु॥ टीका॥ तिस को देख वालक को देखकरके कीलदास जी अग्रदास जी को कहने लगे कि हे अग्रदास जी यह देखो कौन वालक है जो बड़ा दीन और दुखी होकरके मारग मे पड़ा है जो तुम इसको अपने आश्रम को ले चलो तो सब संत प्रीतिसे कृपा करके इसको पालेंगे अग्रदास जीने ऐसे सुन करके उस अंध वालक के नेत्रों पर मंत्र पढ करके जल छिड़का तो ततकाल उस वालक के नेत्र निरमल प्रकाश वाले हो गये और उठ करके बैठ गया तब कील और अग्रदास जी उसको अपने आश्रम मे ले आये

और अपने गुरु जी की आज्ञा पाकर के अग्रदास जी उस वालक को कहने लगे हे वालक अब तू ईहां संतों के द्वारे पर निवास कर और इह चिटाई ले इस पर सोया कर और रात दिन संतों की सेवा किया कर और इस कुंड मे जो संतों का जूठा जल पड़ा है इसी तिसमे सनान कर और यही जल पिया कर संतों का जूठा भोजन जो वचता है सोई तू अहार किया कर इस प्रकार अग्रदास जीने उस वालक को उपदेश करके फेर संपूर्ण साधुओं के आगे विनती करी कि हे संतो इह वालक आप के चरनो का दास है

लग्यो सुमरण वनक मनमाहीं॥ दीननाथजन संपति सारी॥ लगी निमगत होन निधवारी॥ जो कृपाल निज सेवक मानी॥ जन कहं कठिन काल अब जानी॥ राखि लेहु करुणाय अगारू॥ चल्यो जात अवसर उपकारू॥ दीननाथ विनु कवन उवारा॥ अब भरोस मोहि देव तुमारा॥ जब अस विनय वनक वर कीन्यो॥ गुरु त्रिकाल दरसी तब चीन्यो॥ जन कर देखि प्रबल दुख काया॥ उपजी दीन दयाल कहं दाया॥ फेरत रहे ललित तहि काला॥ गुरु वर ध्यान लीन निज माला॥ जन कलेश वारन हित सोई॥ बूड्यो ध्यान माल थिर होई॥ दोहा॥ दशा देखि भगवान तहि वोहत दीन चलाय॥ तद्यपि हरि पूजन स्थित भयो नाहिं मुनि राय॥ टीका॥

ई हो मुनी अग्रदास जी भगवानके मानसी ध्यान मेलीन हूये बैठे थे ऊहां उनका सेवक एक वानियां था सो तिसका व्यापारके समाजसे भरा हूआ जहाज दैवयोग करके कहीं समुद्रमे रुक गया यद्यपि उसने वहुत हि यतन किया तद्यपि सो नहि निकलता भया तव वे वानियां अत्यंत दुखी और निरास होकर के अपने गुरु श्री अग्रदास जीका सुमरण करने लगा किहे गुरुदेवजी मेरा सर्वस्व समुद्रमे डूबा जाता है और अब इस कठिन कालमे आपके विना

समय एक निज रुचिर कुटीरा॥ मुनिवर अग्रदास मति
धीरा॥ भक्ति निरत कछु भाव न दूजा॥ ध्यान लीन हरि
मानसि पूजा॥ धूप दीप नईवेद सुहावा॥ सुमन सुगंधि
सकल विरचावा॥ दोहा॥ कनकासन पर आभरन स
जत भक्त ~~चित~~ चित चोर॥ स्थित सनमुख कर
गहित स्रज श्रीखंडन देखोर॥५॥ टीका॥ ऐसे गुरू
जीका वचन सुन करके नाभादास चरनो पर सीस
नावता भया और मन वचन करम से प्रेम सहित करके
भक्तिवाल्ला होकर गुरुके समीप निवास करता
भया और गुरुजीकी सेवा करनेमे तत्पर होजाता
भया तब एक समय अपनी कुटियामे मुनिऊं
दिखें सृष्ट अग्रदासजी भक्ती करके लीन भग
वानकी मानसी पूजामे लगे हूयेथे और भगवान
को धूप दीप पुष्प सुगंधि और नईवेद्य इत्यादि
लगा कर और सुवरनके संग्रासन पर भूषण
और सुन्दर वस्त्रोंसे शृंगार कराकर और अपने
हाथमै माला लेकर ध्यानमै लीन होकर भगवान
के सनमुष स्थित होजाते भये॥ चौपाई॥ इत
मुनि ध्यान लीन भगवाना॥ उत सेवक इक वनक
महाना॥ केहत तासु जहाज द्रव्य जुत भारी॥
भानिरोध आवृत निधवारी॥ यद्यपि करि
अजास श्रम पायो॥ तद्यपि सोन निकट तट
आयो॥ तब दुखोत निज गुरु वर का हीं॥

चंदनका तिलक लगाकर

४

अतिप्रसन्न मानस अनुरागे॥ वदन वचन मृदु भाषण लागे॥ अबतें तुम नाभा मनभावन॥ गुणगण संत सुजस जग पावन॥ पाय मोर असिख अनकूला॥ करहु कथन कलि मंगलमूला॥ नाभादास वंदि गुरू चरना॥ नम्रत विनय वदन अस वरना॥ दोहा॥ मैजन कृपा नकेत अह संत सुजस गुण ग्राम॥ करहुं अलप मति कथन कस म. थनसिंधु अभिराम॥ तव गुरु वर अस भन्यो मुख जिमि अंबुध जल जान॥ तुव जान्यो गति होहिं तस तोहि अनभव सुतमान॥७॥ इतनेमे टीका॥ इतनेमे नाभादास जो चामर हाथमे लिये गुरुजीकी सिव कांईमे पीछे खडाथा सोअति नम्र वानीसे गुरु जीको कहने लगा किहे स्वामीजी आप भगवानके ध्यान और मानसी पूजनमे क्यों नहिं स्थित होते जहाजतो दूर च लागया नारायण की अनुग्रहसें कार्ज सिद्ध होगयाहै ऐसे जब नाभादास ने कहा तो गुरू जीने फिरकरके उसपर कृपा दृष्टिसे देखा और फेर भगवानके मानसी ध्यानमे लीन होगये और षोडस उपचारसे नारायण कापूजन करके फिर वारवार प्रणाम करके और विनती करके उठखडे हूये तव नाभादासजीको ~~करके लगे~~ अत्यंत प्रसन्न होकरके कहने लगे किहे पुत्र अब ते तूं मेरी आज्ञा पाकरके संतभक्तोंके पवित्र गुणगण और सुन्दर सुजस जो सरब मंगलों काभूहैलहै सो कथनकर तव नाभादास गुरूजीके चरनोको प्रणाम करके अति नम्रविनतीसे कहने लगा किहे दयानिधि संतभक्तोंके गुणगण जोहैं सोसमुद्र वतहैं जिनका कुछ अंत नहीं है अरु मेरी बुद्धि मलीन और तुच्छमात्र है मै ऐसे अनन्त गुणों को

कैसे कथन करूंगा तव गुरू अग्रदास जी कहने लगे
किहे नाभा जैसे तूंने समुद्र मे जहाज की गति को
जाना तैसेहिं हे पुत्र तेरेको संतों के गुण गण जानने
मनको अनुभव भी हो जावेगा मेरी आज्ञा अरु मेरे
वचनके बलसे और संतों की सेवा के प्रसाद से तेरे
हृदय में ज्ञान = रूपी प्रकास हो जावेगा और कुमति
का नास होकरके सुमती की दिन दिन अधिकता होती
जावेगी॥७॥ चौपाई॥ मोर नदेस वचन बल पाई॥
अरु प्रसाद संतन सिवकाई॥ ज्ञान दिप्ति तुव हृदय
प्रकासहीं॥ सरसहिं सुमति कुमति सब नासहीं॥
भयो होत जोई होवन हारा॥ वदर पानि सदृश जन
सारा॥ संत सुजस गुण ग्राम सुहावन॥ तोरे जानि
परहिं सब पावन॥ अस नदेश आसिख गुरु पाई॥
नाभा नम्र चरन सिर नाई॥ सावधान ह्वै विरचन
लागा॥ भगतन चरित चारु अनुरागा॥ कछु दी
ना निज गुरु वर लीन्यो॥ अन्यत कथन श्रवण
कछू कीन्यो॥ वंदित आदि देव गण नायक॥ वि
घ्न हरन मंगल फल दायक॥ उर धरि चरन कृ
ष्ण भगवाना॥ सुमरत संत सिद्ध सुर नाना॥ आन दे
व दिस देश नरीसा॥ सकल नमाय धरणि धर सी
सा॥ दोहा॥ मंगल वर ग्रंथ रह करि करि विविध
विचार॥ नाभा लग्यो यथा मती कथन करन निरधार॥८
टीका॥ फिर गुरु जी कहते भये कि हे पुत्र मेरी आज्ञा
और मेरे वचन के बलसे और संतों की सेवा के प्रसाद
से तेरे हृदयमे ज्ञान रूपी प्रकाश हो जावेगा और
कुमती का नास होकरके सुमती की दिन दिन अधिकता
होती जावेगी और भूत भविष्यत वर्तमान

इन तीनों कालोंमे जो संतोके गुण गण होवेंगे सो तेरे को सब सहजहिं जान पड़ेंगे इसमे कुछ संशय न हीहै इसप्रकार आज्ञा पाकर और गुरूजीके चरनोंपर प्रणाम करके नाभादासजी सावधान होजाते भये प्रथम सरव विघ्ननोंके दूर करने वाले और मंगलोंके देनेवाले गणपतीजो हैं तिनको वंदना करके और कृष्ण प्रमात्माके चरन कमलोंको हृदयमे धारन करके फिर संपूर्ण देवताउं और संत भक्तोंको प्रणाम करके गुरु कृपालकी दीक्षा और संतों संत शास्त्रोंसेसुनी हूई गाथाउं को हृदय स्थाय करके अतसे निरमल संत भक्तोंके गुणगण जोहैं तिनके कथन करनेको सामर्थ होजाते भयेः॥१॥ इति श्री मन्महाराजाधिराज जम्बूकाश्मीरादय नेक देशाधिपति प्रभुवर श्रीरणवीर सिंहात्मज श्री मीहोंसिंह विरचितायो भाषा टीकायो नाभादास चरित्रं नाम सरगः

अथहनुमत चरित्रं

दोहा॥ सिर धरि पावन चरन रज विप्र संत समुदाय॥ भक्ती महातम चारु अब हनुमत वरनहुं भाय॥१॥ टीका॥ संत भक्तोंके चरनोंकी पवित्र रजे क्या धूड़ीजोहै सो सीसपर धारन करके हनूमानजीकी भक्तीका सुन्दर महातम जोहै सो कथन करताहूं॥१॥ तिस चौपाई॥ कथा सुभ अदभुत मन भावन॥ जासु सुमरति भक्ति हरि

महाराज

मेरेको और कोई भी आश्रय नहीहै कृपा दृष्टि करके सेवकको राख लीजिये और अभय कीजिये मै आपकी शरण पडूहूं जब इस प्रकार बानियेने विनती करी तोगुरु जो त्रिकाल दरसी और सामर्थथे सेवकके कलेश को जान गये और हृदयमे अति करके दया उपजती भई माला जो फेर रहे थे सो स्थिर होगई ध्यान छूट गया जन का कलेश निवारणेमे चित्तकी वृति लग जाती भई ऐसे सेवक पर सनेह और तिनकी दशा देखकर भगवान उस बानिये के जहाज को जलकी रुकावटसे बाहर निकाल देते भये और अनुकूल पवने रसतेको सीधा चल पडा परंतु अग्रदासजी का ध्यान उसीमे लगा हुआथा भगवान की मानसी पूजामे मनकी वृतिको अबी नही लाये थे॥१॥ चौपाई॥ तब नामा चामर कर धारो॥ गुरुहिं नम्र मुख वचन उचारो॥ कन नहोहु तुव भगवन स्वामी॥ ध्यान लीन निज जन अनुगामी॥ भयो घाल अब दूर जहाजू॥ ससो प्रसाद राम सब काजू॥ अग्र सुनि वचन सुहावा॥ नामा ~~दास~~ और दृष्टि निज पावा॥ बहुरि ध्यान कमलापति ~~लीला~~ चारू॥ भये लीन मुनिवर व्रत धारू॥ करि पूजन षोडस उपचारा॥ उठे नम्र कहि विनय जुहारा॥

दास

वत्सल भक्त जनन अनुगामी॥ लखन सहित सुग्रीव सुजाना॥ अंगद जाम नील हनुमाना॥ नल समेत परिवारत कीने॥ बैठे राम चरन मन लीने॥ अन्य ललित सिष सेवक जोई॥ निजनिज रहे लाग सब कोई॥ सोरठा॥ तब प्रभु सभा मझार आवा रूढ विमान ह्वै संयुत प्रेम अपार भक्त बसी षण लोक पती॥ ३॥ टीका॥ एक समय जगत के ईश्वर कृपा की निधि रामचंद्र महाराज सेतु बांधने केलिये समुद्र के किनारेपर लक्ष्मण सुग्रीव अंगद जामवंत नलनील हनुमान इत्यादि और सब सेवकों के सहित ऐसे ~~शोभा~~ ध्यान से विराजमान थे कि ईश्वर जो कमल है तिसकी न्याईं मुखकी शोभा जिनकी और स्याम मेघ वत शरीरका रंग हृदय विशाल क्या चौडा और नवीन कमलकी न्याईं नेत्र संसारमें भक्तजनोंका भय दूरकरने वालियां लंबियां दोनो भुजा और सुन्दर लालरंगके ओष्ठ शुकसमान मनोहर नासका और मस्तकमें चंदनका तिलक कुंडलोंवाले स्याम और चिकने केश ~~मानो भ्रमरोंके समाजकी शोभाहै~~ ~~नवे~~ कुमद अर्णीत नापेकी कली और मोतियों की छविको हरने वाली दांतोंकी सुन्दर पंक्ती और इंद्रके धनुषको लज्जा देने ~~वाली बांकी भृकुटी टेढी भूवें~~ वालियां टेढियां भवां और चंद्रमाकी किरणों वत मुखका हासा सुन्दर ठोडी और कोमल कपोल सेखवत गला और माधुरे मीठे वचन और भक्तजनोंको सुख देनेवाले सुन्दरकान और मुनियोंके मनको मोहित करनेवाली

भ्रमरोंके समाज की शोभाई

हृदय मे जयंति माला ~~हाथमे धनुष~~ हाथमे धनुष और कमर मे कसी हूई तीरोंकी ढुड़ी मुनियोंके मनको हरनेवाली दयाकी दृष्टि और पीत यज्ञोपवीत और सुन्दर पीतहिं वस्त्र ऐसे रामचंद्रजी महाराज शिव और ब्रह्मा इत्यादि देवताऊं करके वंदित किये हूये तहां विराजमान थे समुद्रके किनारे पर विराजमान थे तिससमय महाराजजी की सभामै विमानपें चढा हूआ रावनका भ्राता * वभीषण नामा अतसे प्रेम करके आता भया॥ १॥ चौपाई॥ ली थे पानि सुभ मंगल दाई॥ सरव रतन मय मा लसुहाई॥ धरणी सिंधु रतन गण जोई॥ तिन कर मूल भूत जनु सोई॥ प्रेम भक्ति जुत सनमुख आई॥ नम्रत सीस राम पद नाई॥ कीन्हउपायन सो तहि काला॥ अदभुत अति वचित्र जोई माला॥ देखिराम तहि मन अनुरागे॥ पुनिपुनि वदन स राहन लागे॥ इह स्रज अति वचित्र मय क्रांती॥ अमल अमोल शुद्ध सब मोती॥ अस वखानि रघु वीर सुजाना॥ सनमुख देखि दास हनुमाना॥ तुरत निकट निज लीन बुलाई॥ आय प्रणाम कीन कपिराई॥ सोरठा॥ तब प्रसन्न मन होय दीन दयाल करुणाय तन रतन माल वर जोय हनुहिं दीन पहिराय प्रमुख॥ टीका॥ तब वभीषण विमानसें उतर करके एक २ रतनो की माला किजिसकी शोभा और मोल को संपूर्ण पृथवी और समुद्र के रतन नहिं पहुंच सकतेथे प्रेम और भक्तीसें नम्र प्रणाम

करके रामचंद्रजीके आगे भेटा करदेता भया तब र
घुनाथजी महाराज उस मालाको देखकर प्रसन्नतासे
बार बार सराहने लगे कि देखो येह अति निरमल और
विचित्र बडी सुन्दर मालाहे ऐसे कहिकर रघुनाथ
जीने हनुमानको बुलाया और बुह रतनोकी माला
उसके कंठमै पहिरायदीनी॥ ~~तब हनुमान रघुनाथ
जीके चरनोमै प्रीतिवाला जो था उस मालाको पहिर
कर और फिर उतार कर उससे एक मनीनिकाल
कर और दांतोंसे तोड कर उसके भीतरसे भलीप्रका
र देखने लगा ऐसे हनुमान को देखकर सब लोग
अचरज को प्राप्त होजाते भये कि~~ चौपाई॥
पहिरि माल हनुमत बडभागी॥ राम चंद्र चरनन अ
नुरागी बहुरि उतारि पानि निज लीनी॥ बैठि इकों
त भलहिं विधि चीनी॥ तहिंते मनिनिकासि इकताहों॥
तोरि दसन कल बलि मुख नाहों॥ देखन लग्यो अंत्र
तहि नीके॥ भये लोग सब विसमित जीके॥ दिव्य
अमोल माल वर एही॥ बनचर हनन कीन कस
तेही॥ विसमय तिनहिं निरखि हनुमाना॥ भाषन
लग्यो मधुर मुख ज्ञाना॥ निज सुचि भक्ति जनावन
हेतू॥ भयो कहत बनचर कुलकेतू॥ सुनहु संत ज
हि वसु मझारा॥ राम नाम नहि जाहिं निहारा॥
सो मोहि तीन काल प्रीय नाहीं॥ होहिंन राम चि
न्ह जहि माहीं॥ अस कहि हनूमान खलगंज
न॥ दूसर मनी दसन करि भंजन॥ राम नाम
संजुत अनुरागा॥ तहिमै भलहिं निहारनलागा॥

पावन॥ संतत होहिं रुचिर दृढ भाई॥ लोकप्रलोक सकल सुखदाई॥२ टीका॥ तिस हनूमानकी भक्तीके महातमकी कैसी कथाहै कि वडी ऐश्वर्य शोभायमान और मनको भावती जिसके वढने सुणनेसें भगवानकी पवित्र भक्ती निरन्तर करके हृदयमे दृढ होतीहै और लोक प्रलोकमे सर्व सुखोंको देतीहै॥२॥ सोरठा॥ समय एक विश्वीस राम चंद्र करुणाय तन राजे तट जलधीस सेतु वंध उद्योग हित॥ चौपाई॥ चारु इंदिवर वदन सुहावा॥ शुभ्रत वरन स्याम घन भावा॥ हृदय विशाल कंज नव लोचन॥ भुज आजान मान भव मोचन॥ सुन्दर अधर अरुन छवि नीके॥ नासिक कलित कीर ग्रीय जीके॥ खोर लिलाट खेउ श्री राजा॥ कच कुंचित जनु मधुन समाजा॥ दसन पांति कर कांति नयारी॥ सुठि छवि मुक्त कुन्द कलि हारी॥ भृकुटि कुटिल धनु इंद्र लजाहीं॥ इंदु किरण इव हास सुहाहीं॥ चारु चिवक मृदु रुचिर कपोला॥ कंबु ग्रीव मधुर मुख बोला॥ श्रवण सुखद भुज दंड प्रचंडा॥ माल जयेति जनन मन मंडा॥ धनुष निषंग पानि कटि सोहा॥ चितवनि चारु मुनिन मनमोहा॥ यज्ञोपवीत पीत तन चैला॥ वंदित जहि वरिंचि पति शैला॥ अस प्रभु राम धाम गुण स्वामी॥

१

फेंकदई और कहनेलगे कि हे संतो इहजो देह है सो सरव चराचर जीवों को अतिकरके प्यारी है परंतु मेरेको राम नाम केविना इहकाया केवल चामहिं देखपड़ती है ऐसे कहि करके ~~आपने~~ हाथ से सबके देखते हीं अपने शरीर की तुचाँउ तार डाली तिसके भीतर राम नाम लिखा हुआ सब को भलीप्रकार दिखा देते भये ॥५॥ चौपाई॥ हनुमत चरित चारू अस देखी॥ भये चकित सब हृदय बसेखी॥ बहुविधि करन प्रसंसा लागे॥ बार बार मानस अनुरागे॥ तुम्ह समान तुव हीं हनुमाना॥ भूत भवित्त न काहु न आना॥ स दृश तोर भक्ति गुण सागर॥ होहिंन देव लोग सुर नागर॥ बपुरा मनुज कवन तुवभाई॥ तुव सातात भक्तगण राई॥ जहि सुग्रीव राम सन मेला॥ अरु पयोधि गति निदरि अकेला॥ सीये मातु अन्वेषण हेतू॥ कीन विवध स्रम हर कुल केतू॥ जगत जननि सन पुनि समासा॥ जाय कीन मन हरषि हुलासा॥ अति बचित्र दसकंध्र आरामा॥ भज्यो विदत सकल बल धामा॥ अच्छे कुमार तासप्रिय ऐसा॥ अति प्रचंड बलकीन बध्वंसा॥ हेम बचित्र लोक सब जारी॥ अद्‌भुत करि बचित्र निजभारी॥ ब हुरि आय रघुनंदन चरना॥ सादिर सिर्यव्रितांत सब बरना॥ सेतु बंध आरंभ रचाई॥

द्रोण सैल तण समर ल्याई॥ रक्षा कीन प्राण ग्रहिराई॥ राम चंद्र सब शोक विहाई॥ सोरठा॥
इनते लेकर आन जेजे कीन अनंत तुव उग्र
करम हनुमान सो किमि बरणन जाहिं मुख॥
इह हनुमंत चरित्र विदत पुराणन सुमुखर स
व विधि परम पवित्र मैवरन्यो संक्षेप कहु॥१॥
टीका॥ इस प्रकार हनुमान जीका चरित्र देख
करके सब लोग अचरज को प्रापत भये और बार
बार ~~प्रसंसा~~ श्लाघा और धन्य धन्य कहने
लगे कि हे भक्त प्रधान तुम्हारे समान संसार मे तुम
हिं हो और कोई देवताउं मेभी ऐसा प्रवीन भक्त
निश्चयवाला नहीं है तुम कैसे हो कि सुग्रीव को राम
चंद्र महाराज जीसे मैत्री करवाई और समुद्र को अकेले
निडर करके लांघ गये सीता जीके खोजन मे बहुत यतन
किया और फिर जानकी जी को मिल कर धीरज दिया रा
वन का अशोक बाग उखेड़ा और अक्षकुमार को
मारा सुवरन की लंका सब जराय दई बड़े वचित्र
कौतुक किये फिर रघुनाथ जी के चरनो मे प्रापत
होकर के सीता जीका वृत्तांत कथन किया हे हनु
मान इनतें लेकर तुमारे और अनन्त प्राक्रम हैं
सो कहां तक हम कहि सकते हैं तुम्हारे उग्र करम
कथन करने को कोई सामर्थ्य नहिं है इस प्रकार इ
ह हनुमान जीका चरित्र पुराणों मे विदत है ईहां
संक्षेप करके बरणन किया गया॥१॥ इति श्रीमन्म
हाराजधिराज जैन्बू काशमीरादि अनेक देशाधिपति

प्रभु बरा जाप्र श्री हरसिंह विरचिताया भाषाटीकायां
हनुमत चरित्रे नाम सरगः

१४

अथहनुमत अन्य चरितं

चौपाई॥ अब आगे सुनहो हनुमाना॥ अन्य महा
तम होहिं बखाना॥ करहु श्रवण चकृत मनली
ला॥ निकर संत सज्जन शुचि सीला॥ सकल लो
क हेकार विभंजन॥ सरब प्रकार भक्त मन रंजन॥
समय एक द्वारावति माहीं॥ कृस्न देव प्रभु
विभु सांई॥ सोरठा॥ पारिजात द्रुम नाम निज
प्यारी सतभाम कहे॥ विजय इंद्र सुरधाम
लाय दीन अभिराम प्रभु॥१॥ टीका॥ अब हनु
मान जीकी भक्तीका और महातम कथन क
रतेहैं कि जिसकी बडी अचरज लीलाहै हे संत
और सज्जन जनो इसको कान दे कर भलीप्रकार
सुनो इह कैसा महातम है कि हेकार के नास
करने वाला और सरब प्रकार करके भक्तों के
मन को आनंद देनेवाला है एक समय कृस्न
प्रमात्मा द्वारिका मे विराजमान थे तब कौतुक
से पारिजात नामा वृक्ष इंद्र को जीत करके
स्वर्ग से अपनी प्यारी सत्यभामा ~~को कि जो~~
~~पति वृता स्त्रियों मे मुख्य थी~~को ल्याय दे तेभये॥१॥

पावन जबहिं धरन पर डारी॥ मंजुल माल रतन मय सारी॥ पुनि भयो मनत वदन हनुमंता॥ निश्चय वचन सुनहु मम संता॥ मंजुल देह जवन उह धारी॥ भूत चराचर कहे अति प्यारी॥ मोहि परंतु राम विनु नामा॥ केवल ~~नहिं~~ जानि परहिं सब चामा॥ अस वखानि हनुमान सुधीरा॥ है निथरक निज तुचा सरीरा॥ दोहा॥ शीघ्र करन उतारि तब सब कहे दीन दिखाय॥ रामनाम रहयो अत्र वपु रोमहिं रोम समाय॥५॥ टीका॥ तब हनूमान रघुनाथ जीके चरनोंमे प्रीतीवाला जोथा उस माला को पहिरकर और फेर उतारकर उससे एक मनी निकालकर और दातोंसे तोडकर उसको भीतरसे भली प्रकार देखने लगा ऐसे हनुमानजीको देखकर सब लोग अचरजको प्रापत होमये जाते भये कि ऐसी अमोल और दिव्य माला वनचरने दातोंसे क्यों तोड डाली तब हनूमानजी तिनको अचरज हूये देखकर अपनी पवित्र भक्ती जिताने के वास्ते कहने लगे कि हे संतो जिस वसतूमे मेरे को राम नाम नहीं देख पडता तिसको मे तीनकाल प्यारी नहीं जानताहूं ऐसे कहिकर उस मालासे एक और मनी निकालकर उसी प्रकार दातोंसे तोडकर देखने लगे जब उसमे भी राम चिन्ह नही पाया तब माला हाथसे

कोइ नहीं है इसीप्रकार सुदरसन चक्रभी किजि
सकी संपूर्ण शास्त्रोंमे मुख्य मानता है बानासु
रकी भुजोंके छेदने करके हंकार रूपी समुद्र वि
खें डुब जाता भया किमेरे समान संसारमे और कोई
सामर्थ नहीं है ऐसे गरव भंजन भगवान
जोहैं सो तिन के मनकी गतीको जानगये कि इन
के हृदें मै अभिमान रूपी वृक्षका अंकुर
निकलाहै इसकोमै अबीउखाड डालूं नहींतो येहै
दिनदिन बढता जावेगा इसप्रकार जनोके हि
तकारी और सरव चराचर के स्वामी भगवान उनका
अभिमान दूर करने और हनुमान जीकी सुन्दर भक्ती
जणावनेके वासते एक अदभुत लीला करते भये
सरव सुखों कीनिधि और
कृपाके समुद्र कृष्ण प्रमात्मा उत्साहसे रहित
वडे उदास चित्त होकर सतभामा के पास आन करके
बैठ जाते भये॥२॥ सवैया॥ देखि दसा भगवान प्र
प्रीया सतभाम दुखी जुग जोरत पाना॥ मंजु मनो
हरसे वचना रचना मृदुकीन प्रवीन महाना॥
हे करुणा तन मैतुम कहे उतसह गत देखति
हूं कित आना॥ सोच कहो मनकी गति नागर
लोग उजागर श्री भगवाना॥ चौपाई॥ एहकस
वात सुनी सुरराया॥ मै दासी प्रभु मन वच
काया॥ जोन कहौ तजहूं निज प्राना॥ तुम क
हे कबहुं दास भगवाना॥ मै ऐसे देख्यो प्रभु

चौपाई॥ तब सुशील सुन्दर सतभामा॥ अग्रगण्य पति वृता ललामा॥ पाय कलप द्रुम मन अनुरागी॥ आपन भाग्य सराहन लागी॥ मो हू समान को धन्य न आना॥ अस निज हृदय हरष सरसाना॥ अरु विहंग पति गरुड सुशीला॥ निज बल वेग जानि मुठि लीला॥ मानत हृदय मोद भयो सोऊ॥ सदृश मोर आज नहि कोऊ॥ चारु चक्र आयुध कुल केतू॥ बानासुर भुज छेदन हेतू॥ भयो जलधि हे कृत जनु लीना॥ कुस्मयाल तिन कर गति चीना॥ उपज दरप तरंग अंकुर जोई॥ तिन कर हृदय तुरत प्रभु सोई॥ भये नथृ कर जन अनुगामी॥ भगवन अखिल चराचर स्वामी॥ हनुमत भक्ति जगावन हेतू॥ लगे करन लीला भव सेतू॥ सोरठा॥ करुणा सिंधु अपार वत्सल भक्त समूह सुख राजे गत उतसाह सतभामा सामीप तब॥२॥ टीका॥ तब सो जो बडी सुशील सतभामा और पति व्रता स्त्रियों मे प्रधान तिस कलप वृक्ष को पाकर के अपने मन मे बडा हरष मानती भई और अपने भागों की श्लाघा करने लगी कि मै धन्य हूं और मेरे समान भगवान को और कोई प्यारी नहीं है अरु विहंग पती जो गरुड जी हैं सो भी अपने वेग और बल को जानकर चित्त मे बडा हरष मानते भये कि मेरे समान तीव्र वेग और पराक्रम वाला और

सत्यभामाके सुन्दर वचन सुनकरके तीनलोकके नायक कृष्ण प्रमात्मा कहतेभये कि हे स्त्रीयोंके धरम मे प्रवीन सत्यभामा तूंने जो मेरेको उतसाहसे रहित हूये देखाहै सोहे प्राणप्यारी इसमे वास्तव करके तो कुछ कारण नहीहै परन्तु एक अपनेंकीवि रहेका मेरेको अतिकरके कलेशहै क्योंकि भक्त के समान संसार मे मेरेको और कोईभी प्यारा नहींहै पुत्र प्रद्युम्नभी ऐसा नहीहै जैंसें मुजको भक्त प्याराहै अरमे अपनी कायाकोभी ऐसी प्यारी न ही जानताहूं जैसा मेरेको संसारमे भक्त प्याराहै"३" चौपाई॥ अति दुखात्र मन पीरत देहा॥ सुमरि रजनि दिन तासु सनेहा॥ मन अकुलाउं पाउं कव प्यारी॥ दरसन तास भक्त हितकारी॥ अस सुनि श्रवण वचन भगवाना॥ बोली वदन ललित सतभामा॥ इहका वचन नाथ उच्चारा॥ ऐसो कवन दास तुव प्यारा॥ कहो निवास कवन तहि नामा॥ चलहो तहो वरन चैन स्यामा॥ सादिर तासु संग ले आवहु॥ नाथ क्षोभ निज हृदय मिटावहु॥ सोरठा॥ यद्यपि इह सब होय तद्यपि मिटहिं न कवहुं जे हृदय क्षोभ प्रभु जोय तो मै जा... नू न एह चरज॥४॥ टीका॥ भगवान कहते कि हे प्यारी मै ऐसे भक्तका सनेह रात्रिदिन सुमरण करके हृदयमे अति दुखी होकरके वडा कलेश मानता और विआकुल

नाहीं॥ गत उतसाह छोम मनमाहीं॥ अस तुव दशा देखि निज जीके॥ जीवन लगत नाहि मोहि नीके॥ निज प्रीया कर मृदु मंजुल गाथा॥ सुनत श्रवण अस त्रिभुवन नाथा॥ बोले भामनि धरम प्रवीना॥ जो मोहि तुव उतसाह वहीना॥ देख्यो प्राण प्रीया तहि माहीं॥ वासव चेत हेत कछु नाहीं॥ एकँ पर तु मोर जिय प्यारी॥ पीड़ा विरहे भक्त निज भारी॥ सरस भक्त मोहि मानस प्यारा॥ नाहिन काहु सकल संसारा॥ पुत्र प्रद्युमन सोहुं प्रिय ऐसो॥ नाहिन अधिक भक्त मोहि जैसो॥ सोरठा॥ अस मोरे निज काय ऐसे प्रिय जिय सो नहीं जैसे भक्त प्रियायँ मोहि लागत संसति अधिक॥ ३॥ टीका॥ ऐसे भगवान की दशा देख कर सतभामा बडे दुखको मानती हुई हाथ जोड कर अति कोमल वानी से कहिने लगी कि हे कृपाकी निधि मै आप को उतसाह से रहित बडे उदास चित्त हुये देखती हूं हे भगवन सो कृपाकरके मेरेको सत्य सत्य कहो जो क्या कारण है मै आपकी मन वचन करम करके दासी हूं हे भगवन येह बात क्योंकर बनी आपके चित्त को किस प्रकार छोभ होगया है अर जेकर ना कहोगे तो मै अपने प्राणों को त्याग देउंगी मै अब तक आप को ऐसे छोभ वाले और उतसाह से रहित कभी नहीं देखा था हे नाथ तुमारी ऐसी दशा देखकर मेरेको इह अपना जीवना अच्छा नही लगता इस प्रकार अपनी प्यारी

टीका॥ ऐसे सत्य भामा के मुखसे कोमल वचन सुन कर अ
खिललो सरव लोगों के आधार जो भगवान हैं सो कहने लगे
हे प्यारी तूने जो विचार कियाहै सो इस मै कुछ संशय नहीं है
मै प्रसन्नता पूर्वक तिस भक्त को ईहां अपने घर मे बुलाय
लेता हू परंतु हे प्यारी सो मेरा भक्त कैसा है कि परम व्रतधारी
और अतसे नस्रय वाला है सीता और राम रूप के वि
ना तिसके हृदय मे किसी और इष्ट की रुची कदापि का
ल न हीं है धनुष बान धारी राम चंद्र जो हैं सोई तिस
के इष्टदेव हैं ऐसे सरव भक्तों जीकों कौं सुखदायक हनू
मान मेरो दास भक्त माधन गंध परवत की गुफा मे
निवास करतौ हैं अरु मेरे ई ध्यान और मेरे हिं सुमरन
मे रात्रिदिन मनको लगाय रखतौ हैं और केवल मेरे ई भ
रोसे को अपना आधार मानतौ हैं हे प्यारी जानकी के हरन
कालमे मैने जो धनुष बानधारी राम शरीर धारन
कियाथा तव यही हनुमान मेरे साथ था मै रावन को जी
तकर सीते और लक्ष्मण के सहित इसको संग ले कर
बड़ी कुशल से अजुध्या अपने धाम को आयाथा॥ चौ
पाई॥ अरु जब शक्ति लखन तन भेदा॥ मेउर मानि
तासु अति खेदा॥ विधत अचेत धीर गत भयउ॥ ना
हिन सुधि सरीर कछु रहउ॥ तव यहि निपुण भ
क्त हनुमाना॥ रक्षा कीन लखन प्रीय प्राना॥ राघव
कुल कर भयो सहाई॥ अति उपकार कीन कपिराई॥
दोहा॥ तवतें निश्चय ताहि मन सीये राम विनु आन॥
जानत नाहिन होहि कौ यद्यपि मोर समान॥१॥ टीका॥
हे सत्य भामे तहां रणमै जव मेघनादने लक्ष्मण का
शरीर शक्ति से भेदन कियाथा तिस काल मे बड़े क
लेश को प्राप्त हुआ और अत्यंत व्याकुल होकरके
अचेत और धीरजसे रहित होगयाथा तव इसी

हनुमानने तहाँ लछमनके प्राणोंकी रक्षा करी और राजकुलकी सहाय कृपया तिसके उपकारको मै भलीप्रकार जानता हूँ हे प्यारी तब तैं तिसके मनका यहो निश्चय है कि सीता राम के विना यद्यपि कोई मेरे समान भी होवे तद्यपि नहीं मानता है ॥६॥

चौपाई ॥ सो अस पवन सुवन गुणसागर ॥ आवहि इहाँ कवन विधि नागर ॥ ह्वै प्रसन्न मन बहुरि पराई ॥ श्रीया कैसे निज आश्रम जाई ॥ इह चिन्ता मोरे मन माहीं ॥ सुन्दरि आन हेतु कछु नाहीं ॥ इहिमै सुनहु ललित व्रत धरनी ॥ आरतगत्य पति देवत तरनी ॥ राम सरूप रुचिर श्रीया जोरी ॥ मैं प्रवीन तहि धारन कोरी ॥ जानकि धरहिं कवन पुनि देहा ॥ इह अति हृदय मोर संदेहा ॥ दोहा ॥ रुकमनि वनहिं कि तुम वनो विनु तुम वनहिं न कोय ॥ जहिते हनुमत भक्त मम देखि कुशल व्रत होय ॥७॥ टीका ॥ हे रुक्मणी सो ऐसा पवनका पुत्र गुणोंका सागर इहाँ किस प्रकार आवे और दरसन देकर फिर प्रसन्नता पूर्वक कैसे अपने आश्रमको चला जावे

हे प्यारी इहचिन्ता मेरे चित्तमे है और कोई
हेतू नहीहै परंतु इसमै हे सुन्दर ब्रतके धारने
वाली तू सुनि और पतीव्रतास्त्रियोंमे प्रधान तू सुन
कि प्रतिकरके सुन्दर जोराम सरूप है तिसके धारने
को तोमे चतुर और सामर्थ हू परंतु जानकीके शरीर
को कौन धारन करेगा इसबातका मेरे हृदयमे प्र
ति करके संदेह है हे प्यारी जानकी सीतेकारूप तूं धारन
करेगी किरुकमणी जो जिसका दरसन करके
मेरा भक्त हनुमान क्रतार्थ होजावे ॥७॥ चौपाई ॥
सुनि मृदु वचन रचन भगवाना ॥ बोली वदन ललित
सतभामा ॥ दीनदयाल चिन्ता परिहरहै ॥ जानकि
रुचि रूप मे धरहौ ॥ त्रिभुवन धनी वेग तुव जाई ॥
आपन निपुण भक्त सुखदाई ॥ लेहु बोलि निज भवन
हुलासा ॥ होहिं न कबहु बोम उर तासा ॥ प्रीय मुख
सुनत कृष्ण मृदु गाथा ॥ हृदय सुमरी कीन खगनाथ ॥
आय गरुड अस भाषन लागे ॥ वंदि सरोज चरन
अनुरागे ॥ कहिये दीन दयाल अनुसासा ॥ बोल्यो
कवन काज निज दासा ॥ रमा नाथ सुनि गिरा सु
हाई ॥ करि अनेक खगनाथ बडाई ॥ बोले सु
नहु व्याल पति नागर ॥ पवन पुत्र मम भक्त
उजागर ॥ मादन गंध शैल सुचि वासा ॥ नहो
जाय तुव वेग हुलासा ॥ कहहु आय द्वारिका
मझारा ॥ जानकि सहित राम अवतारा ॥ तुव
दरसन इच्छा मन माही ॥ अस कहि तासु वेग खग
साई ॥ वेग लिवाय आय तव मोही ॥ करहु जनाव

होताहै कि मेरेको ऐसे प्यारे भक्तका कब दरसन होवे॥ इस प्रकार भगवानका भक्तपर सनेह देखकर सत्यभामा कहने लगी कि हे नाथ येह आपने क्या कहा है और ऐसा आपका कौन भक्त प्याराहै और कहां निवास करताहै क्या तिसका नामहै हे नाथ तहां चलिये और आदर पूर्वक उसको साथ ले आवये और अपने हृदय का छोभ मिटाइये परंतु हे महाराज यदि इहसब कुछभी हो जावे और आपके हृदय का फिर भी छोभ ना मिटे तो मै इस अचरज को ना जान सकुंगी॥४॥ चौपाई॥ सुनि मृदु गिरा वदन सत्यभामा॥ बोले अखिल लोक विश्रामा॥ प्रीय यहि मे संसय कछु नाहीं॥ जो तुव कीन सोच मन माहीं॥ मै निज तासु भक्त हरखाई॥ ईहो भवन कल ले हुं बुलाई॥ पे अस बचन मोर सुन प्यारी॥ सो हुठि परम भक्त व्रत धारी॥ बिनु सिय राम रूप रुचि आना॥ नाहिन तासु सुनहु प्रीय प्राना॥ परिकर चाप वाल धृत जोई॥ संतत इष्टदेव तहि सोई॥ ऐसे स रूप भूत सुख दाता॥ हनुमत जासु नाम विख्याता॥ माधनु गंधमादन गिरि सोहा॥ करहिं निवास दास गन मोहा॥ मोर सुमरी ध्यान नित लाग्यो॥ आन भरोस सकल परि त्याग्यो॥ जानकि हरन कालमे रामा॥ धनुष धारि वपु धृत अभिरामा॥ सोरठा॥ लिये संग हनुमान विजत केधदशा समर सुभ आव कुसल करि ध्यान लखन सहित सिय भवन निज॥५॥

अग्र गति होई॥ सुनि अनुसास वदन भगवाना॥ श्री
श्रीकीन तव गरुड पयाना॥ बहुरि चक्र सन गिरा
मृदूला॥ बोले कलत कृष्ण अनुकूला॥ आवन
चाहिं भक्त मम प्यारा॥ रहहु तिष्ठ तुव आश्रम द्वारा॥
सोरठा॥ हनूमान जव आव तव तत दोरा मोहि
चक्र तुव पूरव करहु जनाव पाछे लावहु तासु जन॥८॥
टीका इस प्रकार भगवान के वचनोंकी कोमल जो रचना है
तिसको सुनकरके सत्यभामा कहने लगी हे दीनदयाल
आप चिन्ता को त्याग कीजिये जानकीजीका रूप मे
धारन करूंगी हे तीन भवनके नायक आप तिस अपने
प्यारे भक्तको अपने गृहमे प्रसन्नता पूर्वक वुलाय
लीजिये हे नाथ तिसको सर्व प्रकार करके कल्यान हि
होवेगी॥ ऐसे सत्यभामा के मुखसे कोमल वानी सुनकर
कृष्ण प्रमात्मा गरुड जीका सुमरण करते भये तव तिसी
कालमे गरुड जी आयगये और भगवान के चरन कमलों
पर प्रणाम करके कहने लगे कि हे नाथ किस कारज
के वास्ते इस दास को वुलाया है अव कृपाकरके आज्ञा
कीजिये तव भगवान गरुडकी वानी सुनकर और
अनेक प्रकार उसकी वडाई करके कहने लगे कि हे
नागोंके शत्रू वडे चतुर मै तेरेको इस कारन वुलाया है
कि पवनका पुत्र हनूमान मेरा उजागर भक्त जो मादन
गंध नामा परवत मे निवास करता है तिसको तहां जा
यकरके तुम कहो कि द्वारिकामे जानकीके सहित
रामचंद्र जी आपे महाराज आये है और तेरे दरसन
की इच्छा रखते हैं ऐसे कहिकर और तिसको साथ
लेकर आदरपूर्वक साथलेकर ~~और~~ आप वेगसे पेहलेहिं
आयकर तिसके आनेकी मेरेको खवरकर

16

के मुखसे प्रेमरसकी भीगी हुई औ शुभ और सु
खदायक बानी सुनकरके अर्घ्य पाद आदिक
जो अतिथी पूजन का धरम था सो सब आदरपूर्वक
किया और गरुड़ जी भी तिसके पूजनको बड़े सनमान
से सईकार करके ~~और अपने तीव्र~~ वेगको धारकर
फिर प्रसन्नतासे मुड़कर भगवानके चरनोमें आय
प्राप्त हुये तिससमय तिनके पीछेहि हनूमान
जीभी भगवानका सुमरण करते हुये तहां चलेआये
तब द्वारेपर सुदरसन चक्र जो स्थितथा तिसको देख
कर कहनेलगे कि हे भाई चराचर जीवोके नाथ और
कृपा निधान मेरे स्वामी जो हैं सो कहां हैं ऐसे तिस
हनूमान भक्तका वचन सुनकरके भगवान जो हैं
तो ततकाल धनुषवान धारी अतसे अनूप जो राम
स्वरूप है तिसको धारन करलेते भये॥९॥ चौपाई॥
अटन करत इत उत सतभामा॥ मुदित मंजु गृ
भृत निज धामा॥ धस्यो रूप तिन जानकि नाहीं॥
उपत वृती सोच मन माहीं॥ तब कृपाल रुक
मणि कहे बानी॥ भाषीस वदन मधुर रससानी॥
सिय स्वरूप निजधारि नवीना॥ राजहु मोरे नि
कट प्रवीना॥ अस अनुसास पाव प्रभु जवहीं॥
रुकमणि सिय स्वरूप भई तवहीं॥ चक्र वचन
पुनि हनुहिं वखाना॥ ईहां तिष्ठ तुव रहहु सु
जाना॥ सोरठा करहुं नवेदन जाय मैं तोरे उद्देश
कपि प्रभु अनुसासन पाय लै चलहौं तोहि
संग निज॥१०॥ टीका॥ तव सत्य भामा जो

इसप्रकार भगवानकी आज्ञापाकर गरुडजी हनुमान
केलेनेके वास्ते चले जातेभये तब भगवान सुदरसन
चक्रको कहने लगे कि हेसुदरसन हनूमान जो मेरा
प्यारा भक्त है सोअबी आया चाहता है तुम द्वारेपर
सावधानतासे स्थित रहना सो भक्त मेरा जब ईहां आवे
तब तुम पहलेहिं मेरेको आयकरके जिणाय देना
और फिर पीछे तिस को मेरे पास लाना॥८॥ चौपाई
ऊहां गंधमाधन गिरिजाई॥ भेटे हनूमान खगराई॥ दु
र्लभ दरस नैन भरि देखी॥ मानत हृदय मोद अव
रोखी॥ कहा जवन भगवन दुख हरना॥ करि प्रणा
म सादिर सब बरना॥ सुनि हनुमान गरुड मुखबानी॥
शुभ्रत सुखद प्रेम रस सानी॥ अर्ज्जे पाद आदिक जो
ई धरमा॥ चले अतिथि करत सब करमा॥ अरुवि
हंग पति करि सूई कारा॥ पूजन तासु शुभ्र आचारा॥
आये वेग ध्यान करि ताहां॥ राजे रमा नाथ प्रभु जा
हां॥ ताही समय सोपि हनु शीला॥ आये गान क
रत हरि लीला॥ द्वार पाल तहे चक्र निहासो॥ हनु
मत तासु वचन उख्वासो॥ कहो कृपाय काय मम
स्वामी॥ अग जग नाथ जनन अनुगामी॥ सोरठा॥
वचन सुनत हनुमान वतसल भक्त कुदंड धृत
भये तुरत भगवान राम स्वरूप अनूप तब॥९॥
टीका॥ ऊहां गरुडजी गंधमादन परवत पर हनू
मानजीसे जाकर मिलते भये और उनका दुरलभ
दरसन ~~नैनोंसे~~ देखकर हृदयमे बडा आनंद मानते
भये फिर प्रणाम करके वडे सनमान से भगवानकी
जो आज्ञा थी सो कही तब हनूमान गरुडजी

टीका॥ इस प्रकार भ्रमने वाला और प्रकाशमान चक्रका प्रभाव देखकर हनूमान जीने तिसको कंकनकी न्याई तत्काल दहनी भुजा मे पहिर लिया और फिर अंतापुर अर्थात घरके भीतर प्रवेश करके वारंवार ऐसा कहने लगा कि तीन भवनके नाथ और भक्त जनों के रक्षक मेरे स्वामी जो हैं सो कहा हैं ऐसे कहिकरके जब आगेकी ओर देखा तो अपने इष्टदेव स्वामी का एक अद्भुत रूप देखने मे आया सो कैसा था कि नीले बादर की न्याई शरीरकी आभा जिनकी और दोनो लंबियो सुन्दर भुजां कमलवत नेत्रों की शोभा और मुनियोंके मन को हरने वाली नेत्रों की सुन्दर दृष्टी और पीत वस्त्र और अत्यंत छबी वाली दांतोंकी उज्जल कांती और भक्त जनोके चित्तको प्यारा मधुर हास मुसका वडे सुखदायक श्रवण और शुकवत मनोहर नासिका शंख की न्याई गलेकी शोभा और चौडा हृदय कमलों वत कोमल चरन और संसार का भय दूर करने वाला माथेका मनोहर मुकट और चंदनका सुन्दर तिलक भ्रमरयों के समूहवत श्याम और कुंडलोंवाले चिकने केस भुजों मे सुन्दर भवट्टे और हृदयमे तुलसीकी माला इस प्रकार दिव्य भूषणो करके शोभायमान रामचंद्र महाराज और सीताजीको वामभागमे आसन दिये हूये हनूमान दरसन करता भया॥११॥

१८ और धनुष की न्याई बांकियां भृकुटियां

चौपाई॥ अस वचित्र प्रभु रूप अनूपा॥ देखि दृगन भरि बलिमुख भूपा॥ पुनि पुनि पद सरोज सुचिरामा॥ दीन दंड वत करत प्रणामा॥ लोचन सजल युक्त जुग पानी॥ हृय हरष मुख गद गद बानी॥ कहत नाथ संसृति दुख भंजन॥ करुणा सिंधु जनन मन रंजन॥ कवन हेतु निज दास संभार्यो॥ आयस कवन दीन दुख हार्यो॥ सुनि अस वचन वदन हनुमाना॥ सादिर प्रीति युक्त भगवाना॥ पानि पान गहि निकट विठाई॥ वहु विधि कुसल्ल पूछि रघुराई॥ कर सपर्स तहि पृष्ट कृपाला॥ कीन्यो वारवार जन

थाल॥ सिय स्वरूप तव रुकमनि आई॥ मोदिक मंजु अ
मिय सम ल्याई॥ संजुत प्रेम प्रीति हनुमाना॥ दीन प्रवीन
कीन सनमाना॥ पाय पयूख सरस आहारा॥ भा प्रसन्न
मन पवन कुमारा॥ भोजन करत तासु रघुराई॥ बोले
वचन भक्त सुखदाई॥ सोरठा॥ तव सुमरणि हनुमान
भा उतकंठित मोर चित ताहीतें निज यान तोपें प
ठवा पवनसुत॥ १२॥ टीका॥ इसप्रकार रामचंद्र म
हाराजका वचित्र रूप देख करके हनूमान जोहै सो कर
वार दीनकी न्याई वार वार महाराजजीके पवित्र च
रनोंपर प्रसू देइ प्रणाम करके और प्रेम रूपी जल
नेत्रोंमै भरकर वडे हरषसे गद गद बानी होकर
कहने लगा किहे संसारका दुख निवारने वाले और कृ
पाके समुद्र भक्त जनोंके हितकारी इसदीनको आपने
किस कारजके वास्ते वुलायाहै सो अनुग्रह करके अव
मेरेको आज्ञा करिये ऐसे हनुमानका वचन सुनकर
के भगवान वडी प्रीतीसे तिसका हाथ अपने हाथमे ले
कर पास विठाय लेते भये और फिर भलीप्रकार कुसल
पूछकर तिसकी पीठपर वार वार अपने हाथका सपरस
करते भये तिसतें उपरंत सीताजीका स्वरूप धारन किये
हूये रुकमणी जोहै सो आयकरके अमृतके समान सुन्दर
लडू वडे प्रेम और प्रीतीसे तिस हनूमानको देती भई सो
अमृतके समान लडू पाकरके ~~हं~~ पवनका पुत्र हनूमान
अत्यंत प्रसन्न होता भया तब भोजन करते हूये
हनूमानको रघुनाथ जी जो भक्तों ~~को सुख देने वाले हैं~~
~~कहने लगे~~ के रक्षक और सुखदायक हैं कहने लगे
किहे हनूमान तेरा सुमरण करतेहि ततकाल मेरा चित्त
तेरे दरसनकी कांक्षा वाला होगया तिस कारन

मैने अपना गरुड वाहन तेरे बुलानेके वास्ते तहाँ
तेरे आश्रमपर भेजदियाथा॥१२॥ चौपाई॥ तुव दरसन
इच्छा मनमाहीं॥ रह्यो आन कारन कछु नाहीं॥ अब तो
हि देखि भक्त हनुमाना॥ पूरण भयो मोर मन कामा॥ प्रीये
भवन निज जाहु पराई॥ मुदित मोर अनुसासन पाई॥
तोरे सरव काल कल्याना॥ संतत वचन मोर हनुमाना॥
अस अनुसास पाय श्री रमना॥ नायसीस मारत सुत
गवना॥ इह प्रभाव हनुमान सुहावा॥ मे संतप्र संत
जन गावा॥ सोरठा॥ कल तल धरणि मझार धरम
धेनु सुर विप्र हित धरहि राम अवतार वार वार करुणा
यतन॥ राम कृस्न हनुमान अरु विहंग पति आदि इह
एकहि मूरति जान यद्यपि धरहि अनेक वपू॥
करि करि सेवक सेव्य सुभ भाव विश्व जदुराय॥ लो
गन कहं मोहित करैं निज माया वश ~~[illegible]~~
त्याय॥१३॥ टीका॥ भगवान कहते हैं हे हनूमान मे
रेको केवल तेरेहि दरसन की इच्छा थी और वास्तव
करके कोई कारन नहीं है हे मेरे प्यारे भक्त मै अब
तेरा दरसन करके संपूर्ण कामनासे रहित होगया हूं
अब तूं मेरी आज्ञा पायकरके आनंद पूर्वक अपने
आश्रमको चलाजा मेरे वचन करके तेरेको सरव
काल कल्यानहि होवेगी इसप्रकार लक्ष्मी नाथ
भगवानजो हैं तिनकी आज्ञा पाकर पवनका पुत्र ह
नूमान वार वार देइ प्रणाम करके रघुनाथजीका
सुमर्ण करता हुआ अपने आश्रमको चलागया
~~ऐसे इसप्रकार~~ इह हनूमानजीका चरित्र ~~[illegible]~~ [illegible] कछु संक्षेप
करके कथन कियाहै कृपाके शरीर रामचंद्रमहाराज जोहैं
सो सुन्दर पृथ्वीतलपर धरती और धेनू देवता और
ब्रह्मणों की रक्षाके वासते वारवार अवतार धारनकरतेहैं

अपने घरमे इधर उधर फिर रही थी तिसने जा
नकीका स्वरूप नहीं धारन किया तिसकू उदासीन
और सोचमे हि थी इतनेमे भगवान रुकमनीको
चिताय देते भये कि हे प्यारी जानकीका स्वरूप
धारन करके ~~तूही आई~~ है मेरे पास आकरके स्थित होजा
ऐसे भगवानकी आज्ञा पाकर रुकमनी ~~सीताजी~~
ततकालही सीते रूप ~~के धारन कर लेती भई~~॥ होकर
भगवानके सामीप स्थित होजाती भई तब सुदरसन च
क्र हे कहने लगा कि हे हनूमान तूं इहा द्वारेपर
खडा रहो मै तेरे वास्ते भगवानके पास जाकर प्रार्थना
करताहूं और फिर महाराजकी आज्ञा पाकर तेरेको ले
चलताहूं॥१०॥ चौपाई॥ भ्राम मान अरु ज्वलन प्र
भावा॥ देखि चक्र हनुमान सुहावा॥ किंकन गती
तुरंत प्रवीना॥ पहिरि सुभुजा दन निज लीना॥
अंतह पुरहि सपदि पुनि जाई॥ बारंबार ब
दन कपिराई॥ भाषन लग्यो मोर कहो स्वामी॥
त्रिभुवन नाथ भक्त अनुगामी॥ अस कहि अग्र दृष्टि जब
देख्यो॥ अदभुत रूप स्वामि निज लेख्यो॥ सुठि जेमूत नील
तन सोहा॥ भुज आजान युगल मन मोहा॥ मजुल पुंडरीक
दृ खंजन॥ चितवनि चारु मुनिन मन रंजन॥ बसन पीत
दसनन छवि नीके॥ स्मित मुख हास भाव प्रिय जीके॥ श्र
वण सुखद शुक घ्रान सुहावन॥ कंबू ग्रीव ललित मनभावन॥
आयत हृदय चरन जलजारन॥ कलत क्रीट भव त्रास नि
वारन॥ चंदन खोर चोर चित भावन॥ कच कुंचित जनु
अलि गण लावन॥ अंगदादि उर बनस्रज धारी॥ भृकुटी
कुटिल धनुष छवि हारी॥ दोहा॥ दिव्य अलंकारादि सब भू
षत त्रिभुवन नाथ॥ शोभित रमास्वरूप बर बाम भाग सिय साथ॥११॥

चंद्रमहाराज जोहैं तिनकी सुन्दर भक्ती के देनेवाली है
कहते हैं कि वभीषण नामकरके मुनि पुलस्त का पौत्र
रावन का छोटा भाई रघुनाथजी का दृढ सेवक प्र
क्रम मैं चतुर वीर और वली जो था सो अपने जाती
नाती संबन्धियों और संपूर्ण वंसके धरम को त्यागकर
उनके साथ शत्रु भाव करके लंकाके जरने और =
युद्धमे अपने भ्राता रावणके मरने को हित मान कर
सरव सुखों के देनेवाली रामचंद्र महाराजकी भक्ती जोहै
तिसको ग्रहण करलेता भया तिसने अपना संपूर्ण वं
स भी मरवाय दिया परंतु रघुनाथजीकी भक्ति को
नहीं त्यागा॥२॥ चौपाई॥ ऐसे तास भक्त निध
शीला॥ शुभृत चारु भक्ति वर लीला॥ रामायण
सुचि ग्रंथ मझारा॥ महो मुनिन मुख विविध प्र
कारा॥ वरनिस हृदय भक्त सुख करनी॥ किलष क
लेश शोक भय हरनी॥ राम चरन पंकज रति
दायन॥ हृदय भक्त भ्रम तिमर पलायन॥ दोहा॥
अरु जोई लोक प्रसिद्ध तहि भक्ति श्रवण कलकीन॥
करत नरूपण सो सकल अब कृपाल तुवदीन॥२॥
टीका॥ इसप्रकार तिस शीलता के निध भक्तकी सुन्दर
शोभायमान और सृष्ट भक्तीकी लीला जोहै सो महो
मुनियोंने रामायणमे भली प्रकार कथन करी है कैसी
है कि भक्तोंके हृदय को सुखदेने वाली ~~पापोंके हरने~~
~~वाली~~ पाप और भय और शोक दुक्खि त्यादि कलेशों
के हरने वाली और रघुनाथ जीके चरनोमे प्रीती के दे
नेवाली है अरु जोकि मैने लोगोंमे प्रसिद्ध तिसकी
भक्ती श्रवण करी है सोहे गुरदेव स्वामी अबमे

तिसको कथन करता हूं॥२॥ चौपाई॥ रहा धनरु
पोत वह भारी॥ समय एक मारग निधि वारी॥ लिये
जात व्यापार समाजू॥ द्रव्य युक्त परिपूर जहाजू॥
सो रुकि गयो काहु अस्थाना॥ मध्य अगाधि अगम
जल खाना॥ लागे करन यतन मिलि सारी॥ एक एक
कहं वदन प्रचारी॥ यद्यपि तिनहिं कीन श्रम ना
ना॥ तद्यपि चल्यो नाहिं जलजाना॥ तव सो वैस ना
व पति जोई॥ अति संदिग्ध विथत मन होई॥ ल
ग्यो करन चिन्तन जिय माहीं॥ अव मोरे कछु सूझत
नाहीं॥ दैव होहि गति कवन हमारी॥ वोहत भूरि
द्रव्य जुत सारी॥ सो कहि विधि आपन दृढ़ताई॥ प
रि हरि चलव हमहुं सुखदाई॥ एक पुरष तव वचन
उचारा॥ सुनहु वैस अस कथन हमारा॥ सोरठा॥
कवहुंकि ईहो सुजान देहु मनुज वलि यतन युत
तव इह वोहत प्यान करिहै कछु संशय नहीं॥३॥
टीका॥ एक वैस जाती पुरष जहाज मे व्यापार करने
वाला वड़ा धनीथा सो एक समय द्रव्य से भरा हूआ
व्यापार के समाज का जहाज लेकर समुद्र के रसते
चला जाताथा दैव योग करके सो तिसका जहाज स
मुद्र के अथाह जल मे कसी अस्थान रुक गया तव
वह वैस और उसके नौकर चाकर जहाज के निका
लने को वहुत यतन करने लगे यद्यपि तिन्हों ने
अनेक हि उपाय किये तद्यपि सो नहि निकलता भया
तव वह वैस जो नावपतीथा अति चिन्ता वाला
और व्याकुल होकर के कहने लगा कि हे दैव अव
मेरे को कुछ सूझ नहीं पड़ता देखिये मेरी क्या गती
होवेगी यह जहाज द्रव्य करके परिपूर्ण

समुद्रमे रुका हुआ अपनी स्थिरता को त्याग करके फिर कैसे इहां से किस प्रकार निकलेगा और मेरे चित्त को कैसे सुख प्राप्त होवेगा ऐसे तिस वैस की कलपना को सुनकर तिनमै से एक पुरष कहने लगा कि हे वैस स्वामी मेरा वचन सुन कि जो इस अस्थान पर तूं कदी यतन के सहित मानुष्य की वली देवें तो इह तेरा जहाज सहज ही निकल कर चल पड़ेगा इसमे कछु संशय नहीं है॥३॥ चौपाई॥ सुनत श्रवण अस वैस प्रवीना॥ बोल्यो वदन वचन अति दीना॥ आनहु मनुज कवन कित जाई॥ बनी वात अस मेजस भाई॥ मै वलि रूप आप निधि जधारी॥ पूवस हे जाय मध्य निधि वारी॥ तब मोरे सुत बांधव जो हीं॥ तिन कहे कुसल सकल विधि होहीं॥ वो हत पाय द्रव्य सुत भारी॥ होहिं सकल निज हृदय सुखारी॥ सुनि अस दीन वचन मुख तेका॥ बोल्यो पुरष ज ठिर तहे एका॥ तुव कस मरहु बूडि जल स्वामी॥ मै मृत तोर दास अनुगामी॥ ग्रस्त कुष्ट रुज परम दुखारी॥ वैस जाति अनुचर हितकारी॥ वली मृत ह्वै पै निधि माहीं॥ मरहुं बूडि तुव कहहु नसाई॥ सोरठा॥ आज काल मम प्राण पूरव ही रुजराज कर चाहत कीन पयान ताते चाहे न देस तुव॥४॥ टीका॥ ऐसे तिस पुरष का वचन सुनकर के वैस जो बडा चतुर था सो ~~कहने लगा~~ अति दीन होकर के कहने लगा कि हे भाई मै इस समय मानुष्य कहां से ल्याऊं इह अति कर के अनहोनी वार्ता बनी है ताते मैहिं अब वली रूप होकर के समुद्र मे प्रवेस कर जाता हूं तब मेरे पुत्र और बांधव

यह राम कृष्ण हनूमान और गरुड़जी यद्यपि अनेक शरीर भी धारन करें तद्यपि एकहि मूरती हैं भगवान अपनी मायाके वलसे कहिं सेवक और कहीं स्वामी भाव करके संसार में लोगोंको मोहित करते हैं इति श्री मन महाराजाधिराज जंबू काश्मीरा द्यने क दे शाधिपती प्रभुवरा नप्र मीहोस्सिंह विरचिताया भषा टीकायां हनुमत चरित कथने ना सरग॥

अथ बभीषणचरितं

चौपाई॥ अब अदभुत मंगल सुखदाई॥ मंजु नवल इक कथा सुहाई॥ नाभा दास गुरुहिं निज बरना॥ किलबिष कलेस भीत भव हरना॥ चारु भक्ति प्रद प्रणत कृपाला॥ राम चंद्र प्रभु दीनन दयाला॥ मुनि पुलस्त कर पौत्र प्रवीना॥ रावन अनुज ज राम पद दीना॥ प्राक्रम निपुण वीर बल धामा॥ जहि जग विदत बभीषण नामा॥ बंधू वर्ण जाति निज धरमा॥ याश्चिवत सकल वंस तजि करमा॥ सोरठा॥ चरन सरन गहि राम बंधुन जुत रिपु भाव गहि॥ कीन समर संग्राम लंक विध्वंसन भ्रात वध॥ इह हित उर निज मान पेप्रवीन नहिं परिहरयो भक्ति राम भगवान सुखद सुहावन सरवदा॥१॥ टीका॥ अब एक और मंगलों और सुखोंके देने वाली सुन्दर नई कथा कथन करते हैं जोकि नाभा दासने अपने गुरूजीके सुनाई है सो कैसी कथा है कि संसारमें पाप और कलेश और भय के दूरकरने वाली और शरण पड़ेकी रक्षा करनी करने वाले दीनोंके दयाल राम

समुद्रमे कूद पड़ा और कहता भया कि जिसने इस स मुद्रमे मेरे स्वामीके द्रव्यसे भरे हूये जहाजको रोका है ति सको इह मेरा शरीर बली रूप होयकरके प्रापत होवे ग्रर इह मेरे स्वामीका जहाज द्रव्य और संपूर्ण समाजके सहित जिस देस और दशाको जाना चहता है तहां जायकरके प्रापत होजावे इस प्रकार कहिकरके सो परस्वार्थमे प्रीती वाला वृद्धपुरष राम राम कहता हूआ समुद्रके प्रवाहमे चला जाता भया॥५॥ चौपाई॥ इत तहि वृद्ध सलिल नि धि परना॥ उत जलजान प्यान निज करना॥ विसमय तासु देखि भये लोका॥ पावहि कुसल्ल विगत सब शोका॥ वीचन वेग जठिर तब पाई॥ लंकनिकट प्रापत भयो जाई॥ तहां तासु दनुजात निहारी॥ लिये संग निज प्रमुदित सारी॥ सोरठा॥ कीन उपायन जाय भूप बभीषण अग्र तहां नं मृत पद सिर नाय लगे करन विनती सकल॥६॥ टीका॥ कहते हैं कि जब उस वृद्धने जहाजसे समुद्रमे प्रवेश किया उसी समय वहां रुका हूआ जहाज चलपड़ता भया तब ति सको देखकरके लोग बड़े अचरजको प्रापत होगये और चिन्ताको त्यागकरके हृदयमे सुखमानते भये उहां सो वृद्ध समुद्रकी लैहरोंके वेगसे वहा जाता हूआ लंकाके निकट जायकरके प्रापत होजात भया तब तिसको तहां राक्षस दे खकरके जलसे बाहर निकाललेते भये और फिर प्रसन्नता पूर्वक साथ लेकर अपने राजा बभीषणके आगे वारवार प्रणाम करके भेटा करदेते भये॥६॥ चौपाई॥ आयस कवन दनुजकुलकेतू॥ भलकरन मनुज इहि हेतू॥ श्रवण दरस करि असुरन राया॥ करुणा दृष्टि तिनहू पर पाया॥ पारितोष पुनि लीन मंगाई॥ एक एक मृत निकट बुलाई॥ सब कहे सहित प्रीति सनमाना॥ मंजुल पारितोष विधि नाना॥ दीन प्रवीन मुदित मन होई॥ निज निज चले हरष जुत सोई॥ तासु वृद्ध कहे भक्त बभीषण॥

संजुत प्रेम रुचिर मति तीक्षण॥ निज संघासन लीन बिठाई॥ करि पूजन मुख विनय ग्रलाई॥ ग्रहो सुधन्य भाग्य वड मोरे॥ दरसन देखि वृद्ध ग्रस तोरे॥ सोरठा॥ रामचंद्र भग वान मंजु सरूप ग्रनूप सुभ ग्रविर भाव भयो जान मो रे मानस मुद भरन॥ ग्रव तुव जठिर सुजान प्रमुदित करहु निवास निज मोर सदन हितमान तोरे सव वि धि होहिं सुख॥७॥ टीका॥ तव सो राक्षस फिरविनती करकेराजा कोकहनेलगे ~~देवोंके~~ कि हे दैतोंकीकुलके धजा रूप ग्रव इस मानुखके भक्षण करनके वास्ते क्या ग्राज्ञाहै ग्रैसे तिनका वचन सुनकर ग्रौर तिस वृद्धपुरषका दरसन करके ग्रसुरोंका राजा जो वभीक्षण सो तिनपर कृपा दृष्टिसें देख ता भया ग्रौरफिरतिसी समय पारीतोष ग्रर्थात सुन्दर बस्त्र ग्रौर भूषण मंगवाकर एक एक चाकरको ~~बडी~~ वडे सनमान ग्रौर ग्रानन्द पूर्वकदेकर प्रसन्न करताभया सो संपूर्ण चाकर भूषण ग्रौर वस्त्रोंको पाकर जैमनाते हुये ग्रपने ग्रपने स्थानको चलेगये तव तिस वृद्ध को ~~रामचंद्रजीका भक्त वभी~~ सुन्दर तीक्षण वुद्धी वाला रामचंद्रजीका भक्त वभीक्षण वडे प्रेम ग्रौर सतकारसे ग्रपने संघासन पर विठायलेता भया ग्रौर भलीप्रकार पूजन करके नम्र वचनसे कहने लगा किहे वृद्ध ग्राज मेरे धन्य भाग्यहैं जो तेरा दरसन करके मेरेको साक्षात रा मचंद्रमहाराजजीका दरसन होगयाहै ग्रौर मै वडे ग्रानन्द को प्रापत हूग्राहूं हे वृद्ध ग्रवतूं सुख मान करई हो मेरेहिं घरमे निवास कर तेरेको सरवदा ग्रानन्दहिं रहेगा॥७॥ चौपाई॥ नतर प्रवीन लेक पुरि राजू॥ करहु सहित तुम सकल समाजू॥ हम समुदाय तोर ग्रनुसरिहैं॥ रघु देव सम सेवन करिहैं॥ सुनिग्रस वचन वदन खलनाहो॥ वोल्यो वृद्ध भीत वस ताहो॥ हैमे धरनि धाम धन जोई॥ राज काज सुख हृदय नमोही॥

२२

एक परंतु काम मन मोरे॥ पुरवहिं सो प्रसाद नृपतोरे॥ जहि जहाज ते मै गिरि आवा॥ इहां आय तुव दरसन पावा॥ ताहि मझार बहुरि निज गवना॥ चाहूं सुनहु सील गुन भवना॥ बोल्यो वृद्ध बचन अस जबहीं॥ चारु दतेंद्र मुदित मन तबहीं॥ पाट चैल कल सैलन कसीयो॥ दिव्य अमोल रतन दुति मसीयो॥ दीन सयतन वांधि भुज तासु॥ रघुवर भक्त निपुन गुन रासु॥ सोरठ॥ अरु तहि भाल रसाल राम नाम करि चिन्ह अस। तट जलधीस विशाल लै आये दनुजात नृप॥८॥ बभीखन की टीका॥ फिर बभीषण कहने लगा कि हे वृद्ध नहीं तो तूं मेरे संपूर्ण समाज के सहित इस लंका पुरी का राज कर हम सब लोग तेरी आज्ञा के अनुसार होकर इष्टदेव समान तेरे को सेवन करेंगे इस प्रकार दैतों के राजा का वचन सुनकर के सो वृद्ध डरे हुये पुरुष की न्याई बोलता भया कि हे राजा हाथी घोड़े पृथ्वी धन धाम और राज काज इत्यादि सबकी मेरे को कुछ कांक्षा नहीं है परंतु एक कामना है जो तूं अनुग्रह करें तो जिस जहाज से मै गिर कर के इहां आया और तेरा दरसन पाया उसी मै फिर जाने की इच्छा रखता हूं जब इस प्रकार वृद्ध पुरुष ने कहा तब दैतों का राजा बभीषण तिसका वचन सुनकर ततकाल एक पाट का वस्त्र मंगवाकर उसमें बड़े सुन्दर अमोल रतन लेकर तिस वृद्ध की भुजा में भली प्रकार बांध देता भया और फिर तिसके सुन्दर मस्तक पर राम नाम का चिन्ह करके बड़ी प्रीती से समुद्र कें किनारे पर लै आता भया॥८॥ तुरत बुलाय सलिल निधि ताहा॥ बोले बदन असुर गन नाहा॥ सुनहु निपुन पति सरित समुद्र॥ मै निज स्वामि नाम वर मुद्र॥ चिन्हत कीन तासु सन एही॥ रहा वृद्ध मम परम सनेही॥

जो हैं तिनको पीछे सरवदा कल्यान होवेगी इस द्रव्य
के भरे हूये जहाज को पाकर सुख को प्रापत होवेंगे इस
प्रकार तिस वैस के मुख से दीन बचन सुनकर तहां एक
रोग का ग्रसा हूत्र्प्रा वृद्ध पुरष था सो कहने लगा कि हे
स्वामी तुम जल मे क्यों डूब मरते हो मे आपका दास और
चाकर हितकारी कुष्ट रोग करके ग्रस्या हूत्र्प्रा बडा दुखी
और वैस जाती हूं तुम आज्ञा करो तो बली रूप होकर के
समुद्र मे डूब मरता हूं क्योंकि मेरे तो प्राण पहिले ही इस
महान रोग करके चलने को चाहते हैं अहो भाग्य जो स्वामी
के काज मे इह प्राण लग जावें तो इससे और कौन भला
ई है ॥५॥ चौपाई ॥ धरहु रजाय सीस हित मानी ॥ सेवक
नाथ करम मन वानी ॥ भलो कृपाल मरण अब मोरा ॥
दुरलभ सफल जियन जग तोरा ॥ ताते तुव जीवहु
सुख दाया ॥ इन बांधव कर होहु सहाया ॥ रहे जवन
फा कुल तुव पासा ॥ पालन करहु जानि निज दासा ॥
अस कहि वृद्ध पुरष मति धीरा ॥ परयो मझार जाय
निधि नीरा ॥ भाषत वदन जास इत थाना ॥ रोको
भूरि द्रव्य जल जाना ॥ अब इह बली रूप मम देही ॥
सादिर होहि उपायन तेही ॥ कै अविघन मम स्वामि
जहाजू ॥ सहित द्रव्य निज सकल समाजू ॥ अभिमत
दसा देस कहे सोई ॥ जाय सहज इह प्रापत होई ॥
सोरठा ॥ अस संकल्प तहि कीन राम राम रव रटत
मुख भयो महो दधि लीन पर स्वारथ रत जठिर सो ॥५॥
टीका ॥ फिर वह वृद्ध रोगी परष कहता भया कि हे नाथ मे मन ब
चन करम करके आपका सेवक हूं और आपकी आज्ञा को
सीस पर धारन करता हूं हे नाथ मेरा मरणहिं भला है
और आपका जीना शुभ और सफल है ताते तुम जीवो
और इह बांधव जो पीछे रहे हैं इनकी सहायता और
पालना करते रहो ऐसे कहि करके सो वृद्ध पुरष

भाई॥ कस गति इहाँ जान जल पाई॥ वृद्ध वचन तिन
कर सुनि राणा॥ अति प्रसन्न मुख वरणन लागा॥ अहो
विपुल आश्चर्य पयारे॥ कहि प्रकार भ्रम उपज तुमारे॥
मै सोई वृद्ध दीन वल हीना॥ वल्ली रूप भयो जलनिधि
लीना॥ प्रवल तरंग वेग तहे पाई॥ पहुंच्यो लेक
निकट तव जाई॥ मोरे ऊहाँ दनुज वल तीक्षण॥ गये
लेन सामीप वभीषण॥ सोरठा॥ सो मोहि दृगनन देखि
लाग्यो सुमरण राम मन मनहु समारक लेखि पूज्यो
सुर सम भक्ति जुत॥१०॥ टीका॥ सो राज रोगका ग्रसा हुआ
वडा दुखी वृद्धपुरुष तिस वभीषण भक्तके दरस परस तें
उस महान रोगके कलेशसे ~~मेरेको प्रापत होता भया~~ छूटकर
और वडे सुन्दर नये दिव्य शरीर को धारन करके समुद्र
के प्रवाहमे वहा चला जाता भया तव समुद्रकी लेहरोंका
प्रेरतकिया हुआ ~~सो तिसके पतीका जहाज गोया तिसके~~
पास जायकर के प्रापत होजाता भया तिसको देखकरके
वे लोग आश्चर्य मान कर परस्पर कहने लगे कि इहतो
हमाराहि संगी देखपडताहै जोकि वल्लीरूप होकरके स
मुद्रमे गिर गयाथा और फिर केई भ्रम करके ऐसा कहने
लगे कि वहतो वडा दीन और दुखियथा और इह कोई
वडा सुन्दर दिव्य शरीर धारे हूयेहै इतनेमे इसप्रकार
परस्पर अनुमान करतेथे कि इतनेमे वह वृद्ध थंभ
को पकडकर जहाजके ऊपर चढिआया तव उन
लोगोके हृदयमे अतिकरके भ्रम छायत होगया कि इह
वाही वल्लीरूप वृद्धहै कि कोई और पुरुषहै तव उस
को पूछने लगे कि हे भाई तू कौन है इहां किस प्रकार
आयकरके प्रापत भयाहै तव सो वृद्ध तिनका वचन
सुनकर अति प्रसन्न होकरके कहने लगा कि हे प्यारयो
वडी अचरजकी वातहै ~~इसकुस~~ जो तुमारे हृदय मे कैसे
भ्रम होगयाहै मैतो वेही वृद्धहै कि जो वल्ली रूप

फिर उसी पवनने तिसे जहाजको

होकरके समुद्रमे प्रवेश कर गयाथा मेरा यह वृतांत
हे कि तहांमे जलके तरंगोंका वेग पाकरके लंका
के पास जाय करके प्रापत होगया और उहांसे मेरेको
दास पकड़करके अतसे वुद्धिमान जो वभीषण भक्त है
तिसके सनमुष लेजाते भये तव सो भक्त मेरेको देखकर
अपने मनमै राम राम सुमरने लगा मानो मेरेको रामचं
द्रजीका सुमर्ण कराने वाला जान करके अतसे प्रेम और
भक्तीसे देवता समान पूजन करता भया॥२०॥ चौपाई॥
अति सन्मान प्रीति जुत कीना॥ दिव्य अमोल रतन
गल दीना॥ वहुरि सचार चिन्ह रघुनाथा॥ मुद्रत कीन
मोर कल माथा॥ डार दीन पुनि सिंधु मझारा॥ अस प्र
कार मुख वचन उचारा॥ इह नदीस जहे जावन चा
हीं॥ देहु पठाय ललित थल ताहीं॥ अस कहि कीन
दनुज पति ध्याना॥ कर स्परस संजोग सुजाना॥ अरु
आलाप कल दरस प्रभावा॥ मै रुज राज कठिन गति
पावा॥ वीचि अथाह अगम जल राई॥ अनायास
श्रम तास विहाई॥ ईहो आय अव दरस तुम्हारा॥ पावा
विगत शोक भय सारा॥ दोहा॥ धन्य वभीषण धन्य
सो रामनाम सुचि जोय॥ जहिप्रसाद रुजराजमम
मिट्यो पाप वपु सोय॥२१॥ टीका॥ वृद्ध कहता हे कि
फिर तिस वभीषण भक्तने वहुत सन्मान और प्रीतीसे
वडे दिव्य अमोल रतन जो हैं सो एकके वस्त्रमै मेरी पाट
भुजामे वांध दिये और फिर राम नामके चिन्हसें मेरा मा
था मुद्रत करके समुद्रमै डार देता भया और कहता
भया कि हे समुद्र इह वृद्ध जहां जाना चहता है तहां
हीं इसको पहुंचादे इसप्रकार कहिकरके आप अपने
आश्रमको चला गया और मै तिस भक्तके दरसन और
वारता आलाप और सपरस से अपने शरीरके महान

रोग से छूट कर बड़े अथाह और अगम समुद्र की लहरों का प्रेरया हुआ यतन के बिना सहजे हीं इहां आय करके प्राप्त होगया हूं और तुमारा दरसन पाकरके संपूर्ण शोक और भय से रहित होकर आनंद में मगन हुआ हूं हे प्यारयो देखो मेरा कैसा कुष्ट रोग करके गला हुआ शरीर था धन्य है बभीषण भक्त और धन्य है सो राम नाम किजिसके प्रसाद से मैने तिस राजरोग से मोक्ष पाकर इह नवीन सुन्दर शरीर धारन कर लिया है॥११॥ चौपाई॥ सुनि अस वचन वृद्ध मुख सारे॥ भये चकृत चित हृदय सुखारे॥ राम भक्ति जोई सुखद सुहाई॥ विविध प्रसंसि वदन समुदाई॥ निज निज हृदय हरष अति छाये॥ चले सकल रुचि भवन सधाये॥ इह विचित्र वर भक्ति अनूपा॥ कथनि लोक दनुज कुल भूपा॥ सोरठा॥ विदत सकल जग सोय अरु सदैव अस हीं रह्यो भक्ति महातम जोय सुखद सुहावन सरबदा॥१२॥ टीका॥ इस प्रकार तिस वृद्ध पुरष के मुख से सुन्दर वचन सुनकरके सब लोग आश्चर्य को प्राप्त होकर परम सुख मानते भये अरु सरब सुखों के देनेवाली शोभायमान रामचंद्र महाराज जी की भक्ती जो है तिसकी अनेक प्रकार शलाघा करके बड़े आनन्द पूर्वक अपने अपने स्थानों को चले जाते भये ऐसे दैतों की कुलके राजा बभीषण नामा की अतसे अनूप बड़ी बचित्र और लोगों को पवित्र करनेवाली सुन्दर भक्ति कथन करी है सो कैसी है कि संपूर्ण जगत मे सर्वदा प्रसिद्ध और सरब पदार्थों के देनेवाली है और जिसका महातम सदैव ऐसाहि चला आया है इति श्री मन महाराजाधिराज जम्बू काशमीराघनेक देशाधिपति प्रभूवरा ज्ञप्त मीहोसिंह विरचतायां भाषा टीकायां बभीषण चरित कथने नाम॥ सरगः

राम नाम तहि मुद्र प्रभावा॥ चाहत जहां जठिर इह जा
वा॥ तहां देहु तुव सहज पुचाई॥ परिहरि विलम वेग
जलराई॥ अस कहि राम राम उच्चारी॥ दीन प्रवाह वृद्ध
निधिवारी॥ सोरठा॥ भासंसर्ग जोइ तास अरु सपरस
संभाषना विस्नु भक्त गुण रास तहि प्रभाव कर जठिरसो॥ ५॥
टीका॥ तब असुरों का राजा और रामचंद्रजी का भक्त वभीषण
~~समुद्र नदियों कापती~~ जो समुद्र है तिसको ततकाल वुलाय कर
जलकीनिधी
कहने लगा कि हे नदियों के पती समुद्र इह जो वृद्ध पुरष है सो
मेरा अति करके परम सनेही है अरु मैने इसके माथे को
~~रघुनाथजीके राम नाम~~ अपने स्वामी के नाम की मुद्रा से
चिन्हित किया है सो इह तिस राम नाम के प्रभाव से जहां
जाना चहता है तूं इसको तहां पहुचा दे ऐसे कहिकर और
राम राम उचार करके तिस वृद्ध को जल के प्रवाह मे वहा
दिया तब वभीषण जो विस्नू महाराज का भक्त था
तिसके साथ सपर्स और वारता अलाप होने करके और तिस
की भक्ती के प्रभाव से तिस वृद्ध के शरीर को जो कल्यान
प्रापत हुई सो आगे कहिते हैं॥ चौपाई॥ असत राजरु
जे आरत जोई॥ होत तुरंत मुक्त दुख खोई॥ दिव्य न
वीन काय कल धारी॥ वह्यो प्रवाह जात निध वारी॥
वीचि वेग कर प्रेरत सोई॥ रहा जहाज तास पति जोई॥
ताहि संधि प्रापत भयो जाई॥ देखन लगे सकल वि
समाई॥ कहत पथिक संगि हमारा॥ जो वलि रूप अ
रासवर
राम निधि वारा॥ पर्यो जठिर सोई आन न ऐहीं॥
भ्रम वश वहुरि एक अस कैहीं॥ दुखिया दीन कठिन
रुज सोऊ॥ इह सुठि दिव्य रूप धृत कोऊ॥ करत
परस्पर अस अनुमाना॥ तव स्थम पथ वृद्ध
सुजाना॥ तुरत यान जल पर चढि आवा॥ उनकर
हृदय अतसे भ्रम छावा॥ आनंकि सोऊ जठिर एहा॥ जन
वारध दीन जास वलि देहा॥ पूछन लगे कवन तुव

हे भगवन इसकी कैसी कथाहै कि बडी अदभुत और
शोभायमान मनको भावनेवाली और पाप कलेशादि
सब शोकोके दूर करनेवाली रघुनाथजीकी भक्तिके देने
वाली अधिक करने वाली और सब मंगलोंके देनेवाली
है। कहतेहैं कि दंडक वन विखें मातंग मुनीके पवित्र
आश्रम के पास शबर नामा करके एक भील बसताथा॥ ति
सको एक पुत्री शीलताकी निधी और बडी शोभा वाली
शबरी नाम करके जगतमे प्रसिद्ध होती भई॥ सो कैसी थी
कि पती पुत्र करके बरजित बडी चतुर और सुन्दर ब्रत
के धारने वालीथी तब एक समय जो मुनि मातंग जी प्रात
कालमे सनान करके अपने आश्रमको चले आते थे सो
मारगमे देव योग करके शबरी तिनका दरसन करती भई
तब ऐसे मुनीका रूप देखकर कि जिसने अपनी सब इंद्रियों
को जीता हुआ हृदमे बडा प्रेम और हरख मानती भई॥
और फिर आपहि अपने मनमे संकोच मानकर पीछेको
हट चली और विचार करने लगी कि मै नीच जाती और
पापोंकी भरी हुईहूं इस मुनी महाराजके दरसन करनेके
योग्य नहीहूं परंतु मेरे हृदयमे इनकी भक्ती और सेवा
करनेकी अतसे लालसा उपज परीहै तातें मै इनका
पूजन और सेवन करनेको कौन उपाय करूं ऐसा विचार
करके फिर कहने लगी कि एक बारता इस कारजकी सिद्धी
के वास्ते मेरे मनमे आतीहै जो जिस मारगमे सो मुनी
महाराज सनान करनेको आते जाते हैं सो मारग जो कंटकों
और कंकरों करके भरा हुआहै जेकर तिसकोमे सवेरे
भाज सदैव रात्री विखें झाडू देकर शुद्ध करती रहूं
तो इसमे मेरी सेवा निश्चय होतीहै॥१॥ चौपाई॥ अरु
इंधन चुनि कानन ल्याई॥ निकट मंजु मुनि आश्रम जाई॥
आवहु जाहु नित्त रुचि सोई॥ तो प्रतीत सेवा कछु होई॥
याविध करत काल कछु सेवा॥ होहिं प्रसन्न कबहुं मुनि
देवा॥ अस विचार निज मानस धारी॥ सावधान ह्वै सुभ्र

अचारी॥ नित्यम प्रती सेष निसी पाई॥ मुनि पथ करत मारजन जाई॥ अरु कानन चुनि इंधन गाई॥ आश्रम निकट आव मुनि काई॥ ऐसे कछुक काल जब बीता॥ तब सप्रीति मुनि परम पुनीता॥ पूछन लगे सिषहिं निज बाता॥ कवन सनान मोर पथ ताता॥ नित्यमप्रती मार्जन करता॥ अरु आश्रम नित इन्धन धरता॥ देखहु कवन तात तुम जाई॥ तब सुशील सिष आयस पाई॥ द्वै अलोप गति बैठ निहारन॥ तहां शबरी इन्धन कृत धारन॥ आई समय जानि निज सोई॥ इन्धन डारि पथ मुनि जोई॥ सादिर करन मार्जन लागी॥ हरष विवश मानस अनुरागी॥ बहुरि भवन जब चली पराई॥ तब मुनीस सिष बदन बुलाई॥ पूछ्यो सुनहु सुशील प्रवीना॥ तुव जोई काय करम मन लीना॥ अस श्रम करहु नित्त निसि आई॥ हेतु कवन मोहि देहु जनाई॥ सोरठा॥ कवन तोर विश्राम॥ कानन बसहु कि आन कित॥ कवन जाति अरु नाम॥ को तुमार जननी जनक॥२॥

टीका॥ फिर शबरी कहती है कि एकतो मारग का शुद्ध करना और दूसरा बनसे सूकी लकड़ी ल्याकर और भार बनाकर रात्रीकोहिं मुनीके आश्रम के निकट छोड़कर चली जाया करूं तो इन दोनो प्रकारों से मेरी सेवा प्रतीत होतीहै इसप्रकार जबमै कुछ काल सेवा करूंगी तो कबी ना कबी मुनी महाराजजी मेरे पर प्रसन्न होवेंगे ऐसेविचारकर सोसुन्दर व्रत वाली शबरी जोहै मुनी की सेवा करनेमे सावधान होजाती भई॥ तब नित्त शेष रात्री लेकर अंधेरेमेंहीं तिस मुनी मातंगजीके आने जाने वाले रसते को झाड़ूसे प्रीती पूर्वक शुद्ध करके और फिर बनसे लकड़ियोंका भार लेकर मुनी के आश्रम के निकट छोड़ जाती और फिर अपने घरको चली जाती इसप्रकार जब कुछ काल बीतगया तब

एक दिन विचार करके मुनी अपने शिष्य को पूछने लगे कि हे शिष्य मेरे स्नान के रसते को नित्य शेष रात्री लेकर कौन शुद्ध करता और आश्रम के पास लकड़ियों के भार छोड़ कर कौन चला जाता है तुम तिस को भली प्रकार देखकर मेरे को कहो तब सो शिष्य गुरु का वचन मान कर रात्री के अलोप होकर के तहां बैठ रहा इतने में सो शबरी लकड़ियों का भार लिये हुये आई और आश्रम के पास छोड़कर मुनी के ~~मारग को जाडू करने लगी~~ आने जाने के मारग में जाडू करने लगी तब रसते को भली प्रकार शुद्ध करके जब आश्रम को चली तो तिस को सो मुनी का शिष्य बुलाय करके पूछने लगा॥ कि हे सुशीले तूं जो ईहां नित्य आय कर के बड़े निश्चय से ऐसा श्रम करती हैं इसका कौन कारन है मेरे को कहो और तेरा आश्रम कहां है वन में रहती हैं कि हां और अस्थान[illegible] और तेरी क्या जाती और क्या नाम है और किसकी तूं पुत्री हैं कौन तेरा माता पिता है॥ २॥

चौपाई॥ देखि अनन्य भाव तुव सेवा॥ भये प्रसन्न मोर गुरदेवा॥ चाहत तुमहि सुदेखन नैना॥ दीना चाल्ल ज्ञान गुन ऐना॥ परिहरि विलम चलहु अव ताहों॥ राजे मुनिन नाथ प्रभु जाहों॥ अस सुनि शबरि भीत मन मानी॥ कंपत प्रेम [illegible]वस अकुलानी॥ अति सुशील भक्ती रत सोई॥ मुनि पें आई सकुच वस होई॥ तव मुनीस तहि दृग निहा स्यो॥ करुणा युक्त वचन उच्चा स्यो॥ कवन हेतु तुव पंथ सवारहु॥ अरु इन्धन मम आश्रम डारहु॥ सुनत शबरि अस मन अनुरागी॥ करि प्रणाम मुख भाषण लागी॥ भील न नीच जाति अग रासी॥ मन वच करम चरन प्रभु दासी॥ विपुन निवास भाग गत दीना॥ शबरी नाम मेद मति हीना॥ एक दिवस प्रभु दरसन देखी॥

(margin:) गृहआश्रम और रस्ते

अथ शबरी चरित्रं

चौपाई॥ नंम्रत नाय सीस गुरु चरणन॥ नामादास लाग मुख वरणन॥ मै कृपाल जस श्रवणन कीना॥ चरित चारु वर शबरि प्रवीना॥ भक्ति महातम तासु रसाला॥ कहूं मोर मति यथा कृपाला॥ कथा शुभ्र अद्भुत मन भावन॥ किलष कलेस शोकविन सावन॥ राम धाम सुख भक्ति प्रवरधन॥ मंगल ललित करन भ्रम मरदन॥ शुभ्र देउ कारन्य मझारा॥ मुनि मातंग मंजु आचारा॥ आश्रम निकट तास सुचि धामा॥ वसिहें भील शबर इक नामा॥ तास पुत्रि निधि सील सुहाई॥ शबरी नाम विदत जग गाई॥ पती पुत्र वरजित ब्रम्ह चारी॥ सवविधि निपुण सुभ्रव्रत धारी॥ समय सु एक दैव गति पाई॥ मुनि मातंग दरस सुखदाई॥ करि सनान जब प्रातहिं काला॥ आवत रहे ललित निज आला॥ देखि जतेंद्र रूप अनुरागी॥ पुनि संकोच वश पाछिल भागी॥ मै मुनि दरस योग्य नहि दीना॥ अस तिन हृदय सोच निज कीना॥ नीच मलीन मंद अग रासा॥ अरचन भक्ति कवन विधि तासा॥ करहुं मोर लालस मन माहीं॥ पुनि उपाय कछु सूझत नाहीं॥ एक परंतु मोर मन आवहीं॥ जहि पथ मुनि सना न हित जावहीं॥ सोरठा॥ मंजुल मारग सोय॥ युक्त कंटकन झारकरा॥ मोपे कबहुंकि होय॥ तासु मारजन निसि समय॥१॥ टीका॥ नामा दासजी जोहैं सो बड़े नंम्र होकरके गुरुजीके चरणोंपर प्रणाम करके कहने लगे केहे कृपाल शबरी भीलनीकी भक्ती जो मैंने जिसप्रकार श्रवण करीहै सो तिसकी भक्तिका सुन्दर महातम जैसीक मेरी बुद्धी है तिसके अनुसार कथन करताहूं

अब

चारि इन्धन पथ सेवा॥ लागी करन तोर मुनि देवा॥
इहिमे जवन मोर मुनिराया॥ भा अपराध छमहु करि
दाया॥ मुनि मातंग सुनत तहि बानी॥ मधुर वनीत
प्रेम रस सानी॥ दया युक्त मानस अनुरागे॥ मुदित सि
षहि निज भाषन लागे॥ अब तुम मानि मोर अनुसा
सा॥ इहिकहे इहो सदन सिष वासा॥ देहु अतीत जानि
अति दीना॥ सरल सील छल कपट वहीना॥ पटभो
जन लषि किंकरि एहो॥ देत रहहु सुत परम सनेहीं
करुणा प्रीति प्रेम मय वचना॥ सुनि मुनीस मुख मंजु
ल रचना॥ नेम्रत शावरि युक्त कर दोई॥ करत प्र
णाम देड वत होई॥ वहुरि हरष जुत मन अनुरागी॥
वचन वनीत भनन मुख लागी॥ इह अनुसास कवन
प्रभु कीना॥ भोजन अरु निवास हित दीना॥ मोरे छमहु
नाथ स्रम एहा॥ प्रणत पाल प्रभु दीन सनेहा॥ सोरठा॥
अब कृपाल अविलोकि॥ दरस दिव्य करुणा मये॥ विगत का
म सब शोक॥ भई क्रतार्थ नाथमै॥ ४॥ टीका॥ फिर
शावरी कहतीहै कि हे मुनी महाराज ऐसा विचारकरके
मैने अपके आश्रम मे लकड़ियो लाने और ~~रस्तेस्था~~
~~कदम~~ रसतेको शुद्ध करनेकी सेवा उठाय लई है इस
मै हे भगवन जो कुछ मेरा अपराध होवे तो आप कृपा
करके छमा करिये मै कुछ जानती वूझती नहीं हू इस
प्रकार तिस शावरीकी वड़ी मधुर और प्रेम रसकी भीगी
हूई वानी सुनकर मुनी मातंग जी अतसे दयाकरके
अपने शिष्य को कहने लगे कि हे शिष्य अवतें तू मे
री आज्ञा मानकर इस शावरी को दीन और संतो के
द्वारेकी सेवा करनेवाली और अनाथ सूधे सुभाव वाली
छल और कपटसे रहित जानकर ईहो अपने आश्रम
मेहिं निवासदेना और भोजन वस्त्र इत्यादिभी इस
की खवर लेते रहना इसप्रकार प्रीति और दया करके

यह मुनीका वचन सुनकर शवरी बड़ी नम्र होकर
और दोनो हाथ जोड़कर प्रणाम करके विनती करने लगी
कि हे शरण पड़े की रक्षा करने वाले मुनी महाराज इस
किंकरी के भोजन और निवास के निमित्य आपने क्या
आज्ञा करी है हे दीनदयाल इह भ्रम मेरे को क्षमा करिये
मै तो अब आप का दरसन करके हि संपूर्ण मनोर्थों कामनाओ से
रहित होकर कृतार्थ रूप होगई हू ॥४॥ चौपाई ॥ मोरे
प्रीये नाहिं संसारा ॥ संपति कोष द्रव्य भंडारा ॥ एक
असीरवाद प्रभु चाहूं ॥ जहि तें परम शुभ्र गति पाहूं ॥
अस कहि क्षणक मूंदि दृग मुनियां ॥ बोले रुचिर मधुर
मुख धुनियां ॥ तोरे सरब काल कल्याना ॥ सत्य वचन
इह मोर सुजाना ॥ संसय शोक भीत अब त्यागी ॥ वि
चरहु विपुन निपुन बड़भागी ॥ आसिष देत मंजु मुनि
राया ॥ गवने भवन मोद मन छाया ॥ इहो शवरि
हिय हरष वढाई ॥ करि प्रणाम निज आश्रम आई ॥
तब तें सकुच सोच भय त्यागी ॥ ह्वै निधड़क तहे आ
वन लागी ॥ सेवा दरस दिव्य रिषिराई ॥ करि सुजाहिं
निज भवन पराई ॥ अस प्रकार कछु काल वतीसा ॥
तव सु देह कारण्य मुनीसा ॥ जहे तहे रहे आन वन
जवना ॥ देखि आगमन तास रिषि भवना ॥ अति अ
पमान सहित मुख निन्दा ॥ निज निज लोगे क
रन मुनि वृन्दा ॥ सोरठा ॥ पंकति सभा मझार
कीन निरादिर तासु प्रती मुनिगण सकल विचार
नाना चरचा करहिं मुख ॥५॥ टीका ॥ फिर शवरी कह
ती है कि हे नाथ अब मेरे को धन संपती आदि संसार
के पदार्थ कुछ प्यारे नहिं लगते मै तो केवल आप
का एक आशीरवाद चाहती हूं कि जिसकर के मै शुभ

गतीको प्रापत होजाऊं ऐसे शवरी का वचन सुन करके मुनी मातंग जो हैं सो एक छन भर नेत्रोंको मूंद कर चुप होगये और फिर वड़ी मधुर बानी सें कहने लगे कि हे शवरी अव तूं इस वन मे संशय और भय को त्याग कर शोक से रहित निरभय होकर विचरती रहो तेरेको मेरे वचन के प्रसाद सर्वदा कल्यान हिं होवेगी इस प्रकार आशीरवाद देकर के मुनी अपने आश्रम को चले गये और ईहां शवरी भी वड़ा आनन्द मान कर वार वार प्रनाम करके अपने आश्रम को चली आई तव ते निरभय होकर तहां आती और संतों का दरसन और आश्रम की सेवा झाडु इत्यादि करके अपनी कुटिया को चली जाती ऐसे सेवा करती को कुछ काल वतीत होगया तव तिस दंडक वन के और सव ऋषी उस शवरी का मुनी मातंग के आश्रम मे आना जाना देखकर वडे अपमान से अपने अपने सव निंदा करने लगे और इस वात की वड़ी चरचा उठाकर पंकति और सभा से तिस को वाहिर करदेते भये ॥५॥ चौपाई ॥ मुनि मातंग शांति निधि ज्ञाना ॥ यद्यपि मरम सकल अस जाना ॥ तदपि छोभ क्रोध मन माहीं ॥ रंचक मात्र कीन मुनि कछु नाहीं ॥ जानि शुद्ध निज हृदय प्रवीना ॥ तिन पर दाया सकल विधि कीना ॥ ऐसे जव कछु काल सराना ॥ तव मुनीस सुचि ज्ञान निधाना ॥ संतत जोग दृष्टि मय देखी ॥ समय सरीर पात निज लेखी ॥ कुशा मंगाय मंजु करि आसन ॥ उपस्थित भये जोग सन्यासन ॥ तव शिष निकर देखि मुनि ध्याना ॥ करि विलाप रोदन मुख नाना ॥ लगे करन पूजन

धन्य भाग जीवन निज लेखी॥ लालस उपजि अत से जिय मोरे॥ सेवहु चरन नलिन प्रभु तोरे॥ सोरठा॥ पुनि विचार उर कीन॥ नाहिन सेवा योग्य मे॥ नीच मंद कुल हीन॥ सब विधि दीन मलीन मति॥ ३॥ टीका॥ फिर मुनी का शिष्य कहने लगा कि हे सुशीले तेरी ऐसी दृढ़ सेवा को देखकरके मेरे गुरू महाराज अति कर के प्रसन्न होगये हैं अब सो ज्ञान और गुणों के धाम और दीन जनों पर कृपा करने वाले तेरे को देखना चहते हैं ताते हे शुभ्रे अब तूं विलंब को त्याग कर तहां तिन के सन्मुख चल ऐसे सुन करके तिस शबरी के मन मे हरष और प्रेम तो उपजा परन्तु कुछ कांपती और डरती हूई चित्त मे संकोच मानकर तिसके साथ तहां मुनि महाराज जी के पास आयकर के प्रापत होजाती भई तब मुनी तिसको देख करके बड़ी कृपासे कहने लगे कि हे सुशीले तूं कौन कारन मेरे मार्ग को सवारती हैं और मेरे आश्रम मैं॥ लकड़ियों के भार नित्य डारती हैं अपने मन का मनोर्थ कहो तब शबरी मुनी का वचन सुनकर प्रेमकर के प्रफुल्लित होगई और प्रणाम करके कहने लगी कि हे महाराज मे नीच जाती भीलनी और पापो की राशी हूं बुद्धी और भागों करके हीन हूं शबरी मेरा नाम है मन वचन करम करके आपके चरनो की दासी और वन मे निवास करती हूं एकदिन आपका दरसन करके मे अपने धन्य भाग मानकर अपने जीवने और जनम को सफल जानती भई॥ हे महाराज तिसी दिनतें हि मेरे चित्त मे आपके चरनो की सेवा करने की अति करके प्रीती और लालसा होरही है परंतु मैने हृदय मै विचार किया कि मै नीच कुल की उपजी हुई मंद दीन और मलीन मती हूं उह मुनी महाराज जो परम पवित्र है इनके सनमुख होकर सेवा के योग्य नही हूं॥ ३॥ चौपाई॥ अस वि

करने

२२
२१

आई और हाथ जोड़कर मुनिके सनमुख स्थित होकर रोदन करती भई तब तिसको देखकरके मुनी मातंगजी बड़ी प्रीतीसे कहने लगे कि हे शबरी तूं रोदन और शोक को त्याग कर मेरा उपदेस सत्य करके हृदयमे धारनकर कि रामचंद्र महाराज जो दुष्ट जनो का नासकरने वाले और चराचर जीवोंके स्वामी भक्तोंके हितकारी लक्ष्मीके नाथ और वैकुंठमे निवास करने वाले सतचित आनन्दरूप और सरव भवनोके प्रकाश करने वाले जो हैं सो तिन्होंने अजुध्या नगरीमे राजा दसरथके घर अवतार लिया है सो दीनोके पालक और सरव सुखों के धाम देव योग करके ईहां वनमे तेरे आश्रम पर आवेंगे और तूं उनका प्रीती पूर्वक अतिथि सतकार करेंगी तब तेरेको सरवदा कल्यान प्रापत होवेगी। हे शबरी इह मेरा सत्य वचन है ॥६॥ चौपाई॥ जोलो दीन पालक आगे जन॥ राम अकाम मुनिन मन रंजन॥ कानन ईहां भवन तुव माहीं॥ आवहिं रमा रमन प्रभु नाहीं॥ तोलो आन और वृति त्यागी॥ रहहु सुमरती तिनहिं नित लागी॥ राम नाम पावन जग जोई॥ भाषण करहु रजनि दिन सोई॥ मोर ललित सेवा फल एह॥ तोरे होहिं सुनहु सुभ मेह॥ अस उपदेस तासु मुनि वरनी॥ शिष्या जवन शिषन निज करनी॥ सो समुदाय करत मुनि ज्ञाना॥ दिव्य लोक कहे वहुरि पयाना॥ आपन कीन रुचिर मुनि नागर॥ राम भक्ति निधि ज्ञान उजागर॥ तवतें शबरी परम प्रवीना॥ राम नाम सुमरण भई लीना॥ स्वास स्वास नित राम चितारहिं॥ पथ आगमन मुद भवन निहारहिं॥ कंद मूल फल करहिं अहारा॥ सुचिं संतोष शील व्रत धारा॥ राम चंद्र प्रभु दसरथ नंदन करुणा कृपाल दनुजात निकंदन॥ आवहिं ईहा दृगन

भरि देखहूं॥ धन्य भाग जीवन निज लेखहु॥ अस प्र
कार चिन्तवत करि शबरी॥ श्रीरघुवीर नलिन पद
भ्रमरी॥ पुनि पुनि उठहिं प्रेम रस पागी॥ एकटकं दृ
ष्टि पंथ प्रभु लागी॥ मंजुल तिंदु बदरि फल मूला॥ जानि
मधुर पावन अनकूला॥ सोरठा॥ प्रभु अतिथी सतकार॥
करवे हेतु प्रसन्न मन॥ संजुत प्रेम अपार॥ सो संभार
राखत भई॥७॥ टीका॥ फिर मुनी कहते हैं कि हे शबरी
जव तक सो दीनदयाल और पापोंके दूर करनेवाले सरव
कामनोसे रहित मुनियोंके मनको आनन्दकारी राम
चंद्र महाराज इहां तेरे आश्रममे ना आवें तव तक तू
और सव पातेसे वृतीको त्यागकरके केवल उनहीं
का सुमरण करती रहो तिनका राम नाम जो सरव ज
गतको पवित्र करनेवाला है तिसकाहिं रात्रीदिन रटन
कर हे शबरी मेरी सेवाका तेरेको एही फल प्रापत है
इसप्रकार तिसको उपदेश करके और अपने शिष्य
सेवकोंको जोजो शिख्या करनी योग्यथी सो सव
भलीप्रकार करके मुनीमातंग ज्ञानकीनिधि और
रामचंद्रजीके दृढभक्त सवके देखते शरीरको त्या
गकरके दिव्यलोककों चले जाते भये तवतें सो शबरी
मुनीकी आज्ञा पाकर सरव सुखोंका मूल रामनाम जो है
~~तिसके सुमरण करनेमें लीन होजाती भई~~ स्वास स्वास
तसके रटन करनेमे ततपर होजाती भई और
बडे संतोष से अन्नको तयागकर कंदमूल फल फूल
इत्यादि आहार करनेका सुन्दर वृत धारन करके
रघुनाथजीके आनेवाले रसतेको देखनेलगी कि
दसरथके पुत्र कृपाकी निधी राक्षसोंके दै करने
वाले रामचंद्र महाराज कव आवें तो मै नेत्र भरकर
तिनका दरसन करूं और धन्य धन्य होकर अपने

३०
३१

जीवने ग्रोर जनम को सफल ~~होवेनू~~ जानू इसप्रकार विचारकरके श्री रघुनाथजीके चरन कमलों की जो भ्रमरी शबरीहै सो ~~बार बार~~ प्रेम करके बार बार उठती ग्रोर ग्रागे जा जाकर देखती मानो उसके नेत्रोंकी दृष्टी एक टक होकर रघुनाथजीके रसते पर लाग रहीथी ग्रोर फिर सुन्दर तिन्दू फल ग्रोर बदरी फल कि जिनको बेर कहते है इत्यादि ग्रोर भी कंदमूल बनसे ल्याकरके रघुनाथजीके ग्रतिथी सतकार करने के वासते बड़े प्रेम से सूंग सूंग कर ग्रोर ~~सेमर~~ भलीप्रकार संभालकर राख छोड़ती भई ॥७॥ चौपाई ॥ ग्ररु कुटीर निज रुचिर सवारी ॥ पावन कीन सिंचि सुचिवारी ॥ रचना विविध भांति विरचाई ॥ जहै तहै कीन मनोहर ताई ॥ कसलय तरू कुसम छबि नीके ॥ गुंजत भृंग भाव प्रीय जीके ॥ ग्रेसे करि वचित्र सब रचना ॥ ~~मगन~~ प्रेम मगन मुख गद गद वचना ॥ उठि सधाव मग ग्राव बहोरी ॥ राम दरस उर प्रीति नथोरी ॥ स्याम जलधि तन जलज विलोचन ॥ सुख समूह वै ताप विमोचन ॥ विसरत सो कृपाल छन नाहीं ॥ पावन प्रेम ग्रतसे मन माही ॥ मुनिन पुत्र इकसमय सुनाहो ॥ सुनि ग्रागमन कानन सुरनाहो ॥ निकट शबरि ग्राश्रम तब ग्राई ॥ करत ग्रागमन कथन रघुराई ॥ ते सुशील सुनकर तिन बानी ॥ प्रेम विवस मानस ग्रकुलानी ॥ इतउत ग्रटन करन द्रुत लागी ॥ लै फल मूल कंद ग्रनुरागी ॥ राखि बहोरि सलिल हित धाई ॥ रोम रोम रह्यो हरख समाई ॥ सोरठा ॥ तब मारग निधि ज्ञान मुनी एक तहिकर मिल्यो ग्रावासुम सुख दान करि सनान सरवर विमल ॥८॥ टीका ॥ फिर तिस शबरी ने महाराजजीका ग्रागमन विचार कर ग्रपनी कुटिया जोहै सो सुन्दर जल सिंचन करके ग्रोर लेपन देकर बड़ी पवित्र

इहांतक रामकली कवेलिखा

समुदाई॥ गुण गण तासु विविध मुख गाई॥ शवरी तवहिं रुदन सुनि श्रवना॥ आई तहां तुरत करि गवना॥ रुदन करत सनमुख मुनि ज्ञाना॥ स्थित भई जोरि जुगल निज पाना॥ मुनि मातंग देखि गति तासा॥ रे शवरी अस वचन प्रकासा॥ रुदन कलेस शोक परि हरहो॥ मम उपदेस सत्य जिय धरहो॥ राम चंद्र खल खंडिन स्वामी॥ अग जग नाथ जनन अनुगामी॥ रमा मीस वैकुंठ निवासी॥ चिदानन्द सद भवन प्रकासी॥ अवध ग्राम दसरथ नृप सदना॥ भे अवतरन ललित विधु वदना॥ पाय दैव गति सो जन घाला॥ आव हि इहां विपन सुख पाला॥ सोरठा॥ तुमहुं अतथि सतकार॥ करिहैं तिनकर वचन मम॥ तव तोहि सरव प्रकार॥ होहिं कुसल संशय नहीं॥६॥ टीका॥ जव ऐसे पंक्ति और समासे मुनीका निरादर भया तव सो मुनी मातंग वडे शांति सुभाव वाले और ज्ञानकी निधी जोथे यद्यपि तिन देषता का मरम सवहिं जान गये तद्यपि अपने हृदय को शुद्ध जान कर तिन पर क्षमाहिं करते भये अपने हृदय मे क्रोध और क्षोभ रिंचकमात्र भी नहीं करते भये इसप्रकार जब कुछक काल वीत गया तव सो मुनी परम पवित्र और ज्ञानकी निधी नरत्तर जोग ध्यान करके अपने शरीर पात होने का समय विचारकर और कुशा इत्यादि मंगाय कर औरसुन्दर आसन सजायकरके तहां जो समाधी मे स्थित हो जाते भये तव मुनी के संपूरण शिष्य जोथे सो तिनकी इसप्रकार प्रलोक को जानेकी दशा देखकर वडे विलाप से ~~रुदन करते हुये~~ अनेक गुण कथन करके रोदन करते हुये विधी पूर्वक तिनका पूजन करने लगे तव सो शवरी तिनका रोदन सुनकरके ततकाल दौड़ती हुई तहांचली

32

3)

तद्यपि करि सनान जल तासा॥ आय भवन निज मुनिगु
रु दासा॥ समय ताहि प्रभु रविकुल भाना॥ सहित अ
नुज निज लखन सुजाना॥ आश्रम रुचिर तास चलि
आये॥ शबरि शबरि मुख वचन सुहाये॥ तव घन बरन
अरुन दृग कंजा॥ जटा कीर सिर किलष विभंजा॥ ध
नुष वान धृत वाहु अजाना॥ निदरत मदन कोटि छवि
नाना॥ ऐसे राम रूप दृग देखी॥ परम आनन्द शबरि
जिय लेखी॥ हरष मगन करताल बजाई॥ निरत करत
सन्मुष प्रभु आई॥ दोहा॥ गयो खुलि परिधान तन
निरतति अउन माहिं तद्यपि मगन आनन्द सर भई न
वृत्त सोई नाहिं॥ ८॥ टीका॥ तव सो शबरी जो है सो तिस
मुनी को दहने पासे राखकर आप जल के वास्ते सरोवर को
चली जाती भई तो भी तिसके शरीर की छाया मुनी
के चरनों पर जा पड़ी तिस तें मुनी के अत्यंत मन में अ
त्यंत क्षोभ होजाता भया और तिस शबरी को अनेक प्र
कार ~~निरादर~~ के वचन कहिकर और तिरस्कार कर के
फिर क्रोध करके कांपता हूआ सनान के वास्ते ~~मुनि~~ फिर
सरोवर को चला गया तव तहां जायकर के सरोवर का
जल जो देखा तो ~~रुधिर और~~ लहू और की(ड़)यों
करके सब भरा हूआ है ऐसी दशा देखकर सो मुनि
बड़े अचर्ज को प्रापत होगया कि हे दैव इस सरोवर
की इह कौन गती भई है इसका क्या कारण है इस प्रकार
सोचकर और बड़ा अचर्ज मानकर फिर सनान
तहांहिं सनान करके अपने आश्रम को चला आया
ऊहां तिसी समयहिं सूरज कुल के सूरज रामचंद्र
महाराज अपने छोटे भ्राता लषमण के सहित
शबरी शबरी कहते हूये तिस के सुन्दर आश्रम मे
चले आये तव स्याम मेघ की न्याई जिनका
रंग और कमलवत नेत्र और पापों के दूर करने
वाला बड़ा मनोहर सिरपर जटों का मकट धनुष वान
धारी और लंबिया भुजों वाले जो अपनी छवी करके

क्रोड़ काम देवकी शोभाको लज्जा देते हैं ऐसे राम चंद्रजी को रूप देखकर शबरी गद गद बानी होकर होजाती भई और आनन्द करके प्रफुल्लित होकर हाथका ताल बजाती हुई और निरत करती हुई रघुनाथ जीके सनमुख चली आई और जो एक हि वस्त्र सिर पैरों तक धारन करके शरीर को आछादन किये हुये थी तो भी प्रेमसे उनमत्त हुई और निरत करतीका खेलकर गिर जाता भया परन्तु तोभी आनन्द रूपी सरोवरमें मगन हुई शबरी नृत्त करने से न नृत्त नहिं होती भई॥ ८॥ चौपाई॥ प्रेम विवस तहि मगन निहारी॥ बोले बचन बदन छितधारी॥ सुनहु प्रवीन शबरि बड़भागन॥ श्री रघुवीर चरन अनुरागन॥ देखहु सावधान है शीला॥ परिहैहि मंजु निरत निज लीला॥ अखिल लोक बिश्राम कृपाला॥ रामचंद्र खेलिन खेल माला॥ सन्मुख ठाड़ तोर सोई आजू॥ किंनर नाग मनुज सुर राजू॥ भई तुमार पूरन मन कामा॥ दरसे दीनदयाल प्रभु रामा॥ इनकर अब अतिथी सतकारा॥ करहु सप्रीति विविध परकारा॥ अस सुनि शबरि निरत मन धरना॥ परी दंडवत रघु पति चरना॥ उठी कुटीर पुनि अन्तर धाई॥ पावन कलित कुसासन ल्याई॥ दीनबिछाय राम कहे सोई॥ बैठे दयाल मुदित मन होई॥ संजुत भक्ति चरन जलजारन॥ लगी प्रेम जुत करन पखारन॥ तिन्दु बदरि फल, अमिय समाना॥ सादिर राखि अग्र भगवाना॥ पानि जोरे सनमुख प्रभु ठाढ़ी॥ बरनि न जाय प्रीति उर बाढ़ी॥ नाथ नगर पुर ग्राम न जानहु॥ सदा निवास विपुन निज मानहु॥ दीन मलीन मंद लघु जाती॥ कृपण पोच निंदित सब भाती॥ मोवें यथा

श भक्त रघुराई॥ इह सेवा ठाकर वनि आई॥ पै नहिं उचित नाथ प्रभु सेवा॥ इह अपराध क्षमहु मम देवा॥ सुनि वनीत मृदु मंजुल बानी॥ तासु प्रेम पूरण रससानी॥ हरषे दीन दयाल अग गंजन॥ राम अकाम भक्त मन रंजन॥ प्रीति पूर्वक ते फल मूला॥ खाय भवन मुद मन अनकूला॥ मधुर जानि अति करहिं प्रसंसा॥ हंस वंस तेजसि अवतंसा॥ बहुरि लाय मंजुल फल आना॥ अग्रहान करि शबरि सुजाना॥ प्रभुहिं देत मुख मधुर बखानी॥ तव अनन्त जुत सारंग पानी॥ परम प्रेम मय सो फल खाये॥ रोम रोम जनु हरष समाये॥ दोहा॥ यद्यपि नीच नषिद्ध ते तद्यपि अति सनमान कीनो तासु कृपानिधी भक्ति विवस भगवान॥ २०॥ टीका॥ तव तिस शबरीको निरत करती और प्रेम ~~केवस हुई~~ करके मगन हुई देखकर पृथ्वीके धारने वाले शेषरूप जो लक्षमनजी हैं सो कहने लगे कि हे रघुनाथजीके चरनोमे अनुराग वाली प्रवीन शबरी अब तू अपने नृत्तकी लीलाको त्याग करके और सावधान होकरके देख जो संपूर्ण लोकोंके विश्राम और कृपाके धाम दुष्ट जनोका नाश करने वाले रामचंद्र महाराज ~~सब ह्रिदेके स्वामी~~ सब दैत देवताओंके स्वामी सो आज प्रतक्ष तेरे सनमुख ठाढे हैं अब हे शबरी तेरे मनकी सरव कामना सिद्ध भई और तू धन्य धन्य हुई है जो ऐसे दीनोके दयाल महाराजजीका तैंने दरसन पाया है अब तू आदर प्रेम पूर्वक भक्ती प्रीतीसे इनका अतिथि सतकार कर और ~~कीजिये~~ करतार्थ हो ऐसे लक्षमणजीका वचन सुनकर शबरी नृत्तसे रहित होकर दंडवत रघुनाथजीके चरनो पर गिर पडती भई और फिर उठकर अपने कुटियाके भीतर चली गई तहांसे

कर राखी और सुन्दर कोमल वृक्ष पत्रों वाले छोटे छोटे नये वृक्षों और पुष्पों से संपूर्ण अपने आश्रमको बड़ा मनोहर और रमणीक कर राखा ऐसे एक अदभुत रचना करके बड़े प्रेमसे गदगद वानी होकर उठकरके देखने को जाती और फिर चली आती स्याम बादर की न्याईं सुन्दर शरीर वाले सुखों के समूह और सब कलेशों के दूर करने वाले रामचंद्र महाराज तिसको तनिक भी नहीं बिसरते तो शबरी तिनके दरसन करनेकी अत्यंत अभिलाषा वाली हो रही थी इतनेमे मुनियों के पुत्र महाराजजी का तिस बनमे आना सुनकरके शबरी के आश्रमके निकट आयकर परस्पर कहने लगे कि इस बनमे रामचंद्र महाराज आये हैं तब शबरी तिनका बचन सुनकर और प्रेमसे व्याकुल होकर ततकाल ~~कंद~~ फल फूल लेकर के इधर उधर दौड़ने लगी फिर तिनको तहां राखकर हरषसे भरी हुई पात्र लेकरके जलके वास्ते दौड़ जाती भई तब मारग मे ~~तिसको एक मुनी जो सनान करके चले आते थे मिलकरके~~ एक बड़े ज्ञानी मुनी जो सरोवरसे सनान करके चले आते थे तिनके साथ तिस की भेटा हो जाती भई ॥८॥ चौपाई॥ दसा दसा तहि राषि प्रवीना॥ जासत शबरि गवन तहे कीना॥ तद्यपि प्रती बिंब जोई तासा॥ परयो चरन मुनिवर सुचिरासा॥ तहितें छोभ कीन मुनि भारी॥ बहु विधि तासु वदन तिरस्कारी॥ पुनि सनान हित सरोवर धाया॥ क्रोध बिवस कंपत सब काया॥ तहे सरोवर जल जाय निहारा॥ क्रिमी रुधर मय पूरण सारा॥ दसा देखि अस मुनिवर ज्ञाना॥ अति अचरज मानस निज मानस माना॥ इहि गति कवन हेतु अस भयेऊ॥ सोचि सोचि बिसमय बस रहेऊ

सूंघ सूंघ कर महाराजजी के आगे रखदेती और कहिती कि भगवन इह बहुत मीठे हैं तब महाराज उसके प्रेम के वश हूये लछमण जी के सहित उन फलों को बड़ा हरष मानकर और बारबार श्लाघा कर के खायलेते भये हे संत जनों अब विचार करके देखो कि भगवान भक्तों के वश कैसे हैं सो शवरी मंद और नीच जाती थी तिसकी भक्ती के वश होकर भगवान एक बदरी फलों के सत्कार में तिसको संसार मे सन्मान देते भये जो कृतार्थ रूप होकर सरब लोगों मे उजागर होगई॥ २०॥ चौपाई॥ बहुरि दंड कारण्य मझारा॥ रहे जवन मुनि विविध प्रकारा॥ दरसन राम हेतु समुदाये॥ आश्रम शवरि सकल चलि आये॥ दिव्य दरस प्रभु दृगनन देखी॥ निज निज जनम सफल तिन लेखी॥ निकट मुनिन कहे तब रघुनंदन॥ संजुत लछन चरन करि वंदन॥ पूछिस कुसल वदन भगवाना॥ सादिर करि प्रतोष विधि नाना॥ करुणा दृष्टि देखि रघुराई॥ बोले वदन विप्र समुदाई॥ कुसल सदैव नाथ हम सारे॥ पै कृपाल अब दरस निहारे॥ भये भीत गत शोक निवरना॥ हृदय आनन्द जात नहि वरना॥ तव मुनीस इक आन प्रवीना॥ बोल्यो वचन प्रेम रस भीना॥ नाथ धन्य इह शवरि रसाला॥ जहि सानिध्य ताई कर, याला॥ मुनि मातंग शांति निधि ज्ञाना॥ त्यागा हम हे कीन अपमाना॥ तहि शवरी कर अजर खरारी॥ हम उपासना करहि तिहारी॥ बोल्यो अवर एक मुनि ताहो॥ सुनहु कृपाल मनुज सुर नाहो॥ मोरे उर दारुन भ्रम छाया॥ करहु नवृत्त नाथ करि दाया॥ सोरठा॥ एक समान जल जोय॥ ताहि जलासय विमल कर॥ कृमी रुधर

जुत होय॥कहि कारन दूषत भयो॥११॥ टीका॥ ~~तिस~~

फिर तिसतें उपरंत उस दंडक बनके रिषी मुनी जोथे सो जहां तहां अपने अपने आश्रमसे रघुनाथजीके दरसन के वासते तिस शबरीके आश्रम पर चले आवते भये और श्री रघुनाथजीका दिव्य दरसन पाकर अपना अपना जनम ~~सुफल्य~~ सुफल्ल मानते भये तब रघुनाथजी महाराज भी लछमनजीके सहित संपूर्ण ऋषियोंको बंदन करके बडी प्रीती और सनमानसे सबकी कुसल पूछते भये इसप्रकार भगवानकी कृपा दृष्टि देखकर संपूर्ण ऋषी और मुनी जोथे सो कहने लगे किहे नाथ हमारे को ~~सदैव कुसलहि~~ है ~~आपके~~ है आपकी कृपा करके सदै कुसलहि प्रापत है परन्तु आज आप का दरसन करके हम संपूर्ण ऋषी त्रास और शोकसे रहित होकर परमआनन्दको प्रापत होगयेहैं इतनेमे एक और मुनी जो बडा चतुर था सो कहने लगा किहे नाथ इह शबरी धन्य है देखिये जिसकें समीप वरती होनेसे हमने मुनी ~~म~~ मातंग जो शांति और ज्ञानकी निधीथे अपनी पंकती से त्यागदिये और अतसे अपमान किया सोहे दीनदयाल आज तसी शबरीके अंङन मेंहि हम संपूर्ण ऋषी आपकी उपासना और दरसन मेला कर रहैहैं फिर एक और मुनी जोथा सो कहने लगा किहे मानुषोंऔर देवताउंके स्वामी दीनोंकेदयाल मेरे मनमें एक भ्रम अति करके व्यापत होरहाहै सो आप कृपाकरके मेरे तिस भ्रमको निवारण करिये यह जो सरोवरहै तिसका जो निरमल जल अकस्मातहि कृमी और रुधर करके ~~किस कारण~~ दूषत होगया है ~~सो~~ ~~हे नाथ~~ तिसका क्या कारणहै॥११॥ चौपाई॥ समझक नाथ कवन विधि होई॥ विमल सलल इह स्रोवर जोई॥ सुनत तास मुख गिरा सुहाई॥ बोले लछन वदन मुसकाई॥ अहो तुम्हार धन्य मुनि

करनी॥ महिमा मंजु जाय किमि वरनी॥ सदानि
रत व्रत तप तुम जोई॥ विषय सुखादि सकल वपु
खोई॥ कानन वसहु विगत सव कामा॥ संतत
लीन भजन प्रभु रामा॥ तुव प्रभाव तप मुनि
सिष ज्ञाता॥ धास्यो धरनि लोक विख्याता॥ तुम
गण माहिं एक गुण धामा॥ मुनि मातंग जासु
अस नामा॥ अनुगृह करि तहिं निधि ज्ञाना॥
रह सुसील जोई शवरि सुजाना॥ भई भक्ति मारग
रत सोई॥ अभय अमल चित दुरमति खोई॥ त
हि पर दरसन आज तुम्हारा॥ भयो तासु भ्रम भी
त निवारा॥ धन्य भाग मंजुल दृहि आजू॥ जासु
अजर तुव मुनिन समाजू॥ संजुत राम लोक वै
राया॥ राजहिं हृदय हरष अति छाया॥ अरु दू
षत तहि सोवर नीरा॥ कहा जवन तुव मुनि वर
धीरा॥ सो मुनीस चरनन पर जोरी॥ परी छाय श
वरी तनकोरी॥ उपज्यो रिस मानस मुनि ज्ञाना॥
निदरि कीन तहि अति अपमाना॥ वहुरि सनान हेतु
तहं गयऊ॥ सलिल मलीन रुधिर तुव भयऊ॥
कारन एक सुनहु मुनि एहा॥ अरु इक वहुरि आ
न संदेहा॥ राम भक्त मुनि परम प्रवीना॥ तुम विक्षेप
ताहि सन कीना॥ ऐसे भयो तास अपमाना॥ तहि
पर मुनि तुमार अभिमाना॥ इन अकाज कर विसद
सुवारी॥ कृमी युक्त भा स्रोणत सारी॥ सोरठा॥
अरु अनहित करवात॥ मुनि मातंग कर सिषन सन॥
तुव मुनीस विख्यात॥ रहे करत विद्वेष मय॥ १२॥ टीका॥
फिर वह मुनी कहता है कि हे महाराज तिस सरो
वर का मलीन हुआ जल अव किस प्रकार निरमल
और शुद्ध होवे ऐसे तिस की वानी सुन कर

वडा पवित्र और सुन्दर कुशाका आसन ल्यायकर
रघुनाथजीके बैठनेके वास्ते विछाय देती भई तव
तिसपर रामचंद्रमहाराज बडे आनन्दसे बैठ जाते भये
फिर सो शवरी जोहै सो अतसे प्रेम और भक्तीसे जल
ल्याकरके महाराजजीके चरन कमलोंको वडी प्रीती
से प्रक्षालन करने लगी अर्थात धोवने लगी तिसतें
उपरंत सुन्दर तिन्दू फल और वदरी फल कि जो अमृत
के समान और भगवानको प्यारेथे ल्यायकरके सन्मुष
राख देती भई और आप हाथ जोड करके महाराजजी
के आगे दीन होकर स्थित होजाती भई तिसकी तिस समय
की प्रीती जोहै सो ~~कथन करने मै नहीं आ सकती~~ कुछ वरनकी जाती फिर
सो शवरी नम्र वचनसे विनती करने लगी किहे नाथ मै
तो नगर पुर और ग्राम कुछ नहीं जानती हूं सदैव
इस वनमै हि निवास करने वाली हूं और हे महाराज
मै दीन और मलीन नीच जाती हूं और सरव प्रकार
करके निन्दत हूं हे नाथ मेरेसे यथाशक्ति इह आ
पकी कुछ सेवा वन आई है परंतु मै जानती हूं कि
इह मेरी सेवा हे कृपा~~निधि~~निधान आपके योग्य नहीं है
तातें इसमे ~~मेरा~~ केवल मेरा अपराध हि निश्चय
है सो मेरेको अबूझ जानकर हे दीनोके नाथ आप
क्षमा करने योग्य हो इसप्रकार शवरीकी अतसें व
नीत और कोमल वानी सुनकर सरव कलेशोंके दूर
करने वाले दीनजनो और भक्तोंके हितकारी रघुनाथजी
महाराज अतसे प्रसन्न होकर वडी प्रीती पुर्वक शा
वरीके दिये हूये तिन फलोंको खाय लेते भये और
मधुर जानकर तिनका अत्यंत प्रसंसा करने लगे
कि हमने आजतक ऐसे मधुर फल कहीं नहीं खाये तव
शवरी जोहै सो और और सुन्दर फल ल्यायकर और

३४
३०

रघुनाथ जी के ग्रतसे निश्चयवाले बडे प्रवीन भक्त हैं तुमने तिनके साथ द्वेष उठाया ग्रौर बडा ग्रपमान किया ग्रौर पीछे उनके शिष्यों के साथ भी ग्रनहित की वातें करकर ~~द्वेषभाव हिंक~~ बडे ग्रभिमान से द्वेषभाव हि करते रहेहैं इन ग्रकाजोंसे तिस सरोवर का जल दूषत होगयाहै॥ २२॥ चौपाई॥ उचित तुमहि ग्रव सुनहु सुजाना॥ करहु जाय तिनकर सनमाना॥ ग्ररु निज पंकति माहिं मिलावहु॥ द्वेष भाव जिय सकल मिटावहु॥ ईहां शवरि तहि सरोवर नीरा॥ करहि सपरस जाय मति धीरा॥ पूरव तुल्य विमल जल होई॥ करहिं राम संसय नहिं कोई॥ सुनत लषन मुषगिरा सुहाई॥ चले तुरत मुनिवर समुदाई॥ मुनि मातंग शिषन कर नाना॥ कहि मृदु वचन कीन सनमाना कहा छमहु हमरे ग्रपराधू॥ तुम सुशील कोमल चित साधू॥ उत शवरी हिय पूरि हुलासा॥ पायराम लषमन ग्रनुशासा॥ श्रीरघुवीर हेतु जल ल्यावन चली करन जनु सरोवर पावन॥ जाय स्परस तासु जव कीना॥ सम्यक विमल सलिल तव चीना॥ सोरठा॥ तव शवरी दृगदेखि मंजुल भक्ति प्रभाव निज नीर पात्र सुम मेलि भरि गवनी हरषत भवन॥ ९॥ टीका॥ फिर लषमणजी कहतेहैं कि हे मुनियो ग्रव तुम को योग्य है कि मुनी मातंग जी के शिष्यों का जायकर के भलीप्रकार ग्रादर सतकार करो ग्रौर द्वेषभाव को त्याग करके उनको ग्रपनी पंकती ग्रौर सभामै मिलायलेवो ग्रौर ईहां शवरी जोहै सो जायकरके तिस सरोवर के जलसे स्परस करेगी तव रघुनाथजी की कृपासे सो सरोवरका जल निरमल ग्रौर शुद्ध होजावेगा इस मे कुछ संसय नहीं है इसप्रकार लषमन जी के मुख से वचन सुन करके संपूर्ण मुनी ~~प्रणाम करके~~ जो हैं सो जै रघुनाथजी की कहिकर चले ग्रावते भये

शीघ्र वच

और तहां मुनि मातंगजीके शिष्यों के पास जाकर और उनका बड़ा सनमान करके अतसे दीन वचन उच्चार कर अपना अपराध छमा करवावते भये और इहां शबरी जोहै सो रामचंद्रजी और लछमन जीकी आज्ञा पाकर जल के ल्यावने के वासते मानो तिस सरोवरके पवित्र करने को जाती भई और तिसने तहां जायकर जब तिस सरोवरके जलसे सपरस किया सो रघुनाथ जीकी कृपाकरके ततकालहि निरमल और शुद्ध होजा ता भया तब शबरी अपनी भक्तीका प्रभाव देखकर बड़े आनन्दमें मगन होकर और जलका पात्र भरकरके रघुनाथजीकी शरन को चली आवती भई ॥ १२ ॥ चौपाई ॥ सोजल लेत राम पें आई ॥ प्रेम मगन तन दसा भु लाई ॥ देखि दयाल नहि प्रेम अलोका ॥ बोले वचन हरन भव शोका ॥ हे सुशील तुव भक्ति निहारी ॥ मैं प्रसन्न निज मानस भारी ॥ परि हरि सुकुच मांग वर मोही ॥ नहि अदेव, मोरे कछु तोही ॥ ऐसे सुनत राम मुख बानी ॥ सुभ्र सुखद करुणा रस सानी ॥ नम्रत शबरि पानि जुग जोरी ॥ बोली बदन प्रीति नहि थोरी ॥ इहितें परे नाथ वर आना ॥ दीनदया ल मोहि परहिं नजाना ॥ नीच जाति सब विधि अ ति दीना ॥ सुपच मलीन मंद मति हीना ॥ पू रन ब्रह्म रूप प्रभु जोई ॥ सो प्रतक्ष मम सनमुख होई ॥ दुरलभ दरस दीन भगवाना ॥ धन्य मोर सम आज नआना ॥ तद्यपि करहुं जाचना दयालू ॥ इ ह वर देहु दीन प्रति पालू ॥ नाथ तुमार भक्ति वर जोई ॥ सतत हृदय मोर दृढ होई ॥ अब जीवन, इच्छा जोई करहीं ॥ अन्त नाथ एहि संसृति म रहीं ॥ तातें अस अवसर मोहि स्वामी ॥ मिलहि न कबहुं भक्त अनुगामी ॥ अस विचारि मोरे

मन माहीं॥ इच्छा नाथ जियन जग नाहीं॥ करुणा करहु दयाल अब सोई॥ कुटहिं काय पातिक मम जोई॥ सुनि अस वचन तास भगवाना॥ एव मस्तु निज वदन बखाना॥ अस वर लेत शबरि मुद मानी॥ परम प्रेम मय गदगद बानी॥ सोरठा॥ करि असतुति सुख मान तजि काया सुर लोक कहे सनमुख रवि कुल भान ध्यान करत भई तुरत निज॥१४॥ टीका॥ तव शबरी सो जलका पात्र लेकरके प्रेमसे मगन शरीर की दशा भुलाये हुये रघुनाथ जीके सनमुख आय प्रापत भई तो महाराज तिसका अलौकक प्रेम देखकर सरव शोकों के दूर करने वाला वचन जो है सो कहते भये कि हे शबरी मै तेरी भक्ती और प्रीती देखकर अत्यंत प्रसन्न भया हूं हे सुशीले अब तूं सकुच को त्याग कर और मेरेको अनकूल जानकर वर मांग मेरे कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो तेरे को नहीं देसकूं इसप्रकार बडी सुखदायक और दयारसकी भीगी हुई रघुनाथजी की बानी सुनकर शबरी जो है सो दोनो हाथ जोड कर और नम्र होकर बडी प्रीती से कहने लगी कि हे दीन दयाल इससे परे और कौन उत्तम वर है कि जिसकी मै जाचना करूं देखियेकि मै अति दीन और मलीन मंद बुद्धी वाली और नीच जाती हूं और आप पूरण ब्रह्म भगवान प्रतक्ष मेरे सनमुख हो हे भगवन मै आपका ऐसा दुरलभ दरसन नेत्र भर कर देखरही हूं मेरे से अधिक धन्य इस संसार मै कौन है अब हे नाथ और तो कोई कामना नहीं है परन्तु एक इह वर मांगती हूं कि आपकी पवित्र भक्ति जो है सोई निरन्तर करके मेरे हृदय मै दृढ होवे और जो मै अब जीवने की इच्छा करूं तो हे भगवन अन्तको एक दिन मरनाहीहै फिर ऐसा आपके साक्षात्कार होने

लछमनजी मुसकायकर कहने लगे किहे मुनी
धन्यहै तुमारी करनी और महिमा किजिसके कथन
करने को कोई सामर्थ नहींहै तुम कैसेहो कि वेद व्रत
धारी और तपमे प्रवीनहो शरीर के विषय सुख इत्या
दि सब त्याग करके और निसकाम होकर वनमे नि
वास करतेहो और भगवानके भजनमे रात्रीदिन
लीन रहतेहो हे मुनी तुमारे तपके प्रभावसे इस पृ
थवीने संपूर्ण सृष्टी को धारन किया हुआहै तुमारे मु
नियों के समूह मेसे एक मातंग नामा मुनी किजिनन
की कृपा करके इह सुशील शवरी जोहै सो दुरमतीको
त्यागकर अभय और निरमल चित होकर भगवान
की पवित्र भक्तीमे प्रीती वाली होगईहै तिसपर तिस
को सरब भय और भ्रम के दूर करने वाला तुमारा दर
सन प्रापत होगयाहै इस शवरीके धन्य भागहै
कि जिसके अंडुन मे ~~तीनो भवनो के नायक रामचंद्र~~
~~महाराजजोहै तिनके सहित तुमारा संपूर्ण मुनी रि~~
~~षयों का समाज विराजमानहै बडे आनन्द पूर्वक वि~~
राजे तुमारे ऋषियों के समाज के सहित तीनभवनके
नायक रामचंद्र महाराज बडे आनन्द पूर्वक विराज
मानहैं और वह जो सरोवर के जल दूषत होने का
प्रसंग है सो तिसका इह कारण है कि मुनी जो सरोवर
मे से सनान करके चले आतेथे शवरीके शरीरकी
छाया तिनके चरनो पर पड़गई तिससे मुनी के हृदय
मे बडा क्रोध उपजता भया और बहुतसे दुरवचन
कहिकर तिसका अपमान करके मुनीजोहैं सो फिर
सनान करने को चलेगये तब तिस सरोवरका जल
कृमी और रुधरकरके भरा हुआ देखते भये एकतो
इह कारनहै और दूसरा इहहैकि मुनीमातंग जो

२७
३७

सादिर जाय राम सब देखहिं॥ ते निज जनम सफ
ल जग लेखहिं॥ ऐसे भक्ति महातम सोहा॥ भीलन
शबरि मुनिन मन मोहा॥ कथन कीन निज मति अ
नुसारा॥ राम भक्ति प्रद विविध प्रकारा॥ इह पुनीत वर
कथा सुहाई॥ जे नर करहिं श्रवण मन लाई॥ पावहिं
परम सुभ्र गति सोई॥ लोक प्रलोक सुजस सुख होई॥
नासहिं कुमति रोग भ्रम भारू॥ उपजहिं राम चरन रति
चारू॥ दोहा॥ सरव सुखद इह चरित वर भीलन शबरि
प्रवीन॥ मै निज अलप पथा मती ललित कथन क
छु कीन॥२४॥ टीका॥ इस प्रकार जब शबरी सबके देखते
बड़े सुन्दर विमान पर चढ़ कर दिव्य लोक को चली गई
तब संपूर्ण मुनी और ऋषी इस अदभुत चरित्र को देख
कर अपने अपने हृदयमे बड़ा अचरज मानते भये तिस
ते उपरान्त देवताउं के राजे रामचंद्र महाराज वनसे
लकड़ियां जोड़ कर और ~~[illegible]~~ चिता बनायकर
तिस शबरी के शरीका दाह करते भये फिर विधी
पूर्वक तिलांजली देकर तिसका मृतक करम भी भ
गवान बड़े सनमान से आपहिं करते भये ऐसे भक्त
पाल रघुनाथ जीकी दशा देख कर सब मुनी लोग
बड़े अचरज को प्रापत होकर कहने लगे कि दे
खो तो कहां मंद मलीन और ~~कु~~ अधम करम
वाली नीच जाती भीलनी और सदा वनमेंहि नि
वास करने वाली और दूषणों करके भरी हुई और
कहां इह तीनों लोकों के भूषण रामचंद्र महाराज
कि जो देवताउं और मुनियों को भी दुरलभ है सो इस भील
नीको आज सहजे ही सुलभ होकर सनमुख दरसन
~~देखके~~ ताते है से तो रामचंद्र महाराजजी की परम
विचित्र और अगाध गति है तिसके जानने को
कोई भी सामर्थ नही है इह भगवान सदा भक्तों
केहिं वश हैं और तिस भगवानकी कृपासे भक्तजनों को
संसार मे कोई बारता भी असाध नही है

ऐसे कहिकर संपूर्ण मुनीजोहैं सो रघुनाथजीके और लछमणजीकी सुन्दर अस्तुती अनेकप्रकार गायन करके जैजै कहते हूये अपने अपने आश्रमको चलेगये और ईहां रघुनाथजीभी शिवजीका सुमर्ण करके लछमणजीके सहित शबरीके आश्रमका त्याग कर वनको चले जाते भये तांहां वनमें जहांजहां मुनियोंके पवित्र आश्रमथे सो संपूर्ण देखते हूये तिन सबको दरसन देकर सफल करते भये इसप्रकार शबरी भीलनीकी भक्तीका सुन्दर महातम जोहै सो कथकियाहै इह कैसा महातमहै कि सरब प्रकार करके रघुनाथजीकी भक्तीके देने वाला है और इसको जो कोई प्रीतीपूर्वक पढे और सुनेगा सो संपूर्ण विकारोंसे रहित होकर लोक प्रलोकमे सुन्दर यश के प्रापत करने वाला होगा॥२४॥ इति श्री मन्महाराजाधिराज जम्बू काशमीराधनेक देशाधिपति प्रभु वरा जप्र ~~~~ विरचते यो भाषा टीकायो शबरी चरित कथने नाम सरग:

अथ अजामलचरित्रे

सोरठा॥ नंम्रत नामा दास॥ नाय सीस ~~मुरन्वर वर~~ पंकज चरन॥ गुरुवर ज्ञान प्रकास॥ कथा अजामल ललित तर॥ कहों सुफुट जहि माहिं॥ श्री भगवान जनारदन॥ नाम महातम काहिं॥ मत्त मुनि नादिर वदन॥ चौपाई॥ सो नामाजन कथा सुनाई॥ संजुत प्रीति भक्तिसुख गाई अति अछ्रुजे चरित वर चारू॥ संकुल शोक सोच भ्रम हारू॥

३८
38

अन्तर वेदि देस जोई गावा॥ तहां एक जन विप्र सुहावा॥ पूरन कोष द्रव्य मय जासा॥ संज्ञा कान कुवज जग तासा॥ सरव धरम गत अधम अचारी॥ अस प्रसिद्ध दुज जह तहे सारी॥ वेस्या निरत मांस मद पाना॥ करहिं कुकरम विप्र प्रति माना॥ ऐसे विवस दुसंगति होई॥ जाती धरम सकल निज खोई॥ पावन विप्र नाम भगवाना॥ सोहु विसारि दीन अभिमाना॥ भयो मलेछ मंद वृती जवहीं॥ वंधु वरग संकुल मिलि तवहीं॥ निज पंकतितें कीन [illegible]न यारा॥ करि अपमान तास वहुवारा॥ पुर सामीप वहिर तव जाई॥ नूतन ललित भवन विरचाई॥ निज त्रिय सहित कीन तहे वासा॥ अति अनन्द जुत हृदय हुलासा॥ यद्यपि भयो नीच वृति सोई॥ तद्यपि भवन नवल निज जोई॥ विप्र [illegible] नकेत सरस सुभ राखा॥ जायन सुविचित्र कछु भाखा॥ वेस्या जाति तास त्रिय जोई॥ सो प्रसन्न मानस निज होई॥ रहिहें सुभ्र भवन मन भावन॥ पति समेत राखहिं नित पावन॥ सोरठा॥ ऐसे जवहिं सरान कछुक काल निवसत तहां करत मांस मद पान विषय निरत वेस्या रमत॥२॥ टीका॥ अव नाभा दासजी जोहैं सो अपने गुरु महाराज जीके चरन कमलों पर प्रनाम करके अजामलकी वड़ी सुन्दर गाथा किजिसमें श्री जनार्दन भगवान के नाम का महातम भलीप्रकार कथ कियाहै वरनन करतेहैं तिसकी कैसी कथाहै कि वड़ी सुन्दर और अदभुत और संपूरन पापोंको और भ्रमोंके नास करनेवालीहै कहते हैं कि अन्तर वेदी नामा देसमें एक ब्रह्मन वड़ाधनी होता भया / कि जिसकी कान कुवज संज्ञा थी और वह सरव धरमसे रहत वड़ा अधम और दुराचारीथा वेस्या भोगने और मांस मद खानपान करनेमें रातीदिन ततपर रहताथा और सदैव जिसकी कुकरम करनेमेंहिं प्रीती थी॥ २

का समय प्राप्त होना ~~दुरल्लभ है मेरेको~~ दुरल्लभ है ताते मेरेको अब जीवने की भी इच्छा नहीं है हे दीनों के पाल अब सोई अनुग्रह करिये कि जिससे इह मेरा पापों करके भरा हुआ शरीर छूट जावे ऐसे शवरी का वचन सुनकर के भगवान तथास्तु शबद कहते भये कि ऐसे हि होगा तब इस प्रकार वर ~~कर~~ लेकर के शवरी बड़े आनन्द से गद गद वानी हो ~~जातीभई~~ कर भगवान की अस्तुती करने लगी तब अस्तुती करती करती तहाँ हि रघुनाथ जी के सनमुख शरीर को त्याग कर देवलोक को चली जाती भई ॥२८॥ चौपाई ॥ देखत सबन शवरि सुख खाना ॥ है अरूढ़ वर रुचिर विमाना ॥ दिव्य लोक करि जबहिं सिधायो ॥ विसमय परम मुनिन मन छायो ॥ अद्भुत चरित देखि सब तासा ॥ निज निज करहिं चकित सभासा ॥ तहि अवसर तेत राम सुर नाहो ॥ करि संचित ईंधन प्रभु ताहो ॥ चिता बनाय दग्ध तहि काया ॥ कीन्हि भक्ति विवस रघुराया ॥ सादिर बहुरि तिलोजलि दीना ॥ मृतक करम प्रभु ते सब कीना ॥ ऐसे दसा देखि भगवाना ॥ अति अचरज मुनिजन मन माना ॥ दराचार इह कहो मलीना ॥ सदा निवास विपुन जहि कीना ॥ दीन नषिद्ध पोच रत दूषन ॥ कहो राम त्रै लोक विभूषन ॥ दुरलभ मुनिन सुरन कहे जोई ॥ इहि कहे भये सुलभ प्रभु सोई ॥ इह मुनीस आचरज वसेषी ॥ जायन राम परम गति लेषी ॥ सदा भक्तो वश्य राम गुसाईं ॥ कछु असाध जग भक्तन नाहीं ॥ अस कहि वदन विप्र समुदाई ॥ लषन सहित अस्तुति रघुराई ॥ बहु विधि गाय गाय मुनि धाये ॥ निज निज भवन प्रेम उर छाये ॥ ईहो सुमरि हर विपन पयाना ॥ कीन अनुजं जुत रविकुल भाना ॥ आश्रम मुनिन सरत सर पावन ॥ जहो तहो रह्यो शुभ्र मन भावन ॥

नाम अजामल जहि जग ताता॥ अतिथि संत निरध
न द्विज जाता॥ पुरवहिं सो तुमार मन कामा॥ करहि
हु जाय दरसन अभिरामा॥ असन वसन धन जथा
निहारी॥ देहिं सो विप्र भक्त ब्रत धारी॥ सवकर सदा क
रत सनमुखा॥ रैहि न काहु द्वार नहि भूखा॥ अस
कहि कौन तास सठ ध्याना॥ उत मुनीस वर ज्ञान
निधाना॥ आश्रम तास बूझि चलि आये॥ देखि सदन
मानस हरषाये॥ सनमुष द्वार ठाढ़ि मुनि नाहो॥ भा
खीस वदन अजामल काहो॥ तव तीय तास सुनत मु
नि बोला॥ आई वहिर द्वार निज खोला॥ मुनिहि दे
खि पूछत मुख वाता॥ कहितें आय संत सुख दाता॥
इहि सन कवन काज प्रभु तोरे॥ करहु कृपाल कथ
न अब मोरे॥ मुनि तहि वचन सुनत अनुरागा॥
निज वृतांत अस वरनन लागा॥ सोरठा॥ साधु अ
तिथि गत मान भामनि निसि विश्राम हित पथक
श्राव करि ध्यान सुने सिद्ध तोरे नगर॥२॥ टीका
जव तिस अजामल को ऐसे कुछ काल वतीत होगया
तव एक दिन तिस नगर मै एक विस्नु भक्त संत
महात्मा बड़ा सुशील और शांति रूप, फिरता फिरता
अतिथी की न्याई आय कर प्रापत हो जाता भया॥
और दिन का अन्त विचार कर एक कोई
दुरजन पुरष जो था तिस को पूछने लगा कि हे भाई
ईहां कोई देव भवन अथवा धरम शा
ला इत्यादि जो पवित्र अस्थान होवे तो रात्री के नि
वास करने के वास्ते मेरे को वताओ तव सो दुर
जन दुष्ट सुभाव वाला कपट से तिस को कहने ल
गा कि इस नगर के बाहिर एक ब्रह्मण अजामल नाम
करके निवास करता है और वुह साध संतों का सेवक
और निरधन दीन जनो के पालने वाला बड़ा धरमा
तमा सव लोगों मै प्रसिद्ध है तिसके द्वारे मै कोई भी
भूखा नहीं रहता है अन्न वस्त्र इत्यादि देकर भली॥

कार सबका संतोष करता है हे साधू तुम तहां जाओ सो तुमारी भी कामना सिद्ध करेगा ~~ओर एक~~ ऐसे कहिकर सो कपटी चला जाता भया और संत जो बडे विचारमान ज्ञानकी निधि थे तिस अजामिल का आश्रम पूछते पूछते तहां चले आये तब तिसका अत्यंत सुन्दर और पवित्र गृह देखकर बडे हरषको प्रापत भये और तिसके द्वारे कैं सनमुख स्थित होकर अजामिल को पुकारने लगे तब तिसकी इस्त्री मुनी का वचन सुनकर बाहिर चली आई और द्वार को खोलकर मुनीका दरस करके कहने लगी किं महाराज आप कहां ते आये हो और तिसें कु साथ क्या काम है कृपा करके मेरे को कहिये ऐसे तिसका वचन सुनकर मुनीजो हैं सो बडे आनंद से कहने लगे अपना वृतांत कहने लगे कि हे सुशीले हम एक अतिथी साधू हैं और तीर्थ यात्रा भ्रमते फिरते हैं ईहां रात्री के विश्राम करने के वासते सुते सिद्ध तुमारे नगर मैं आयकरके प्रापत होगये हैं ॥२॥ चौपाई ॥ बहिर ग्राम पहुंच्यो जब आई ॥ एक सजन मोहि कहा बुझाई ॥ विप्र अजामलिकर तुव धामा ॥ करहु जाय जामनि विश्रामा ॥ सुनत ८ तासमुख विप्र बडाई ॥ करि विस्तार विविध जोई गाई ॥ तब मैं ईहां गवन करि आया ॥ सो दुज कहां संत सुख दाया ॥ सुनि मुनि वचन निपुण त्रिय जोई ॥ सादिर अति प्रसन्न मन होई ॥ मुनिहिं भवन निज देत निवासा ॥ वदन बनीत वचन अस भासा ॥ दुज एहि समय संत गृह नाहीं ॥ आवसि जवहिं भवन निज माहीं ॥ सादिर वेदि चरन तुव सेवा ॥ सब विधि करहिं सुनहु महि देवा ॥ ऐसे देत मुनिहिं तहे बासा ॥ करत सदन दीपादि प्रकासा ॥ चारु अमान्न ल्याय पुनि दीना ॥ दैकर जुक्त बिनति अस कीना ॥ इह सामीप कूप मुनि राया ॥ पावक अमल सलिल सुभ छाया ॥ पात्र आदि प्रभु मे सब देवहुं ॥ आपु निकारि वारि तुव लेवहु ॥ मे तुव अरचन योग्य न साधू ॥ हमहु

कृपाल मोर अपराधू॥ अतीज जाति अधम अति रेका॥
जदितें कीन नाथ मै संका॥ सुनि अस वचन तास मु
नि राया॥ भये प्रसन्न हरष उर छाया॥ वहुरि सदन
सुख सेजुत होई॥ लेपन ललित कृत्य निज जोई॥
स्वच्छताई जुत सो सव कीना॥ तव वनाय भोजन
मुनि लीना॥ प्रथम हरिहिं नैवेद सुहावा॥ सादिर
प्रीति भक्ति जुत लावा॥ सोरठा॥ वहुरि कीन तहि
आपु भोजन परम प्रसन्न मन परि हरि स्त्रम संतापु
भयो सयनरत मगन सुख॥ ३॥ टीका॥ फिर मुनी कहते
है कि हे सुभगे जव मै इस तुमारे नगर मे पहुंचा तव
एक वृद्ध पुरुष ने मेरे को कहा कि अजामिल नामा ब्राह्मण जो
इस नगर मे वडा धरमात्मा है तुम तिसके आश्रम पर जावो
और रात्री को तहांहि निवास करो इसप्रकार मै तिसके
मुख से अजामिल की वडाई सुनकर ईहां तुमारे आश्रम
पर आया हूं हे सुशीले अव तूं मेरे को कहो कि सो संत
जनो का सुखदायक और हितकारी ब्राह्मण कहां है ऐसे
मुनी का वचन सुनकर सो चतुर स्त्री अतसे प्रसन्न
होकर ~~कहने लगी~~ तिस मुनी को अपने घर मे न्यारे
एक पवित्र स्थान मे निवास देकर वडी कोमल वानीसे
कहने लगी कि हे महाराज ब्राह्मण तो इस समय
घर मे नहीं है परन्तु जव आवेगा तो हे नाथ पहि
ले आप के चरनो पर प्रणाम करके पीछे भक्ती और
सनमानसे सरव प्रकार आपकी सेवा और पूजन करेगा
ऐसे कहिकर मुनी के निवास स्थान मे दीपकादि प्रका
श करके सूका भोजन जोहै सो ल्याय करके देदेती
भई और हाथ जोड कर कहती भई कि हे नाथ इह पास
हिं कूप वडे पवित्र और निरमल जल से भरा हूआ है
जल के निकासने का पात्र इत्यादि मै देती हूं आप आ
नन्द से जल निकासिये और भोजन वनाईये मै आप
के सपरस और सेवा करने के योग्य नहीं हूं क्योंकि
अधम और मलेछ जाती हूं इसीते लोकोंके व[illegible]

ऐसे दुर्मती के वस होकर सो ब्रह्मण अपनी जाती के संपूर्ण धरमों को त्याग देता भया और सरव जगत को पवित्र करने वाला भगवान का नाम जो है सो सपने मात्र भी सुमरण नहीं करता भया इस प्रकार सो ब्राह्मण जब निंदत और मलेछ वृती होगया तब बांधव और जाती नाती के लोगों ने तिस का अनेक प्रकार निरादर करके पंकती से न्यारा करदिया ऐसे बांधवों की पंक्ती से निकाला हुआ सो ब्रह्मण तिस अस्थान के रहने से उदासीन होकर नगर के बाहर एक न्यारा बड़ा सुन्दर घर बना कर तिस अपनी वेस्या के सहित बड़े हरख और आनन्द से निवास करने लगा परन्तु सो ब्रह्मण यद्यपि नीच वृती वाला भी होगया था तद्यपि अपने घर को ब्रह्मणों के समान नहीं उज्जल और पवित्र रखता भया सो तिस की स्त्री वेस्या जाती बड़े आनन्द पूर्वक तहां निवास करती और पती के सहित अपने आश्रम को भली प्रकार शुद्ध और पवित्र रखती थी ऐसे तिस ब्रह्मण को तहां बसते वेस्या रमते और मांस मद खान पान करते को कुछ काल बतीत होजाता भया॥

चौपाई॥ एक दिवस तहि ग्राम रसाला॥ विस्नु भक्त इक संत कृपाला॥ परम सुशील शांति वृति वारा॥ सालिग्राम सिला कर धारा॥ करत प्रजटन अतिथि वत आवा॥ जानि लुपत कल भानु सुहावा॥ रहा एक तहं दुरजन कोई॥ तहि कहे अतिथि संत वर सोई॥ निसि विस्राम हेतु कहि बदना॥ देव भवन कल पावन सदना॥ पूछी जबहिं दूर जुत तासा॥ मूढ़ मंद मति वचन प्रकासा॥ बहिर ग्राम धरमातम भारी॥ बसहि विप्र वर सुभ्र आचारी॥

82

41

सयन कराय देती भई इतन मे जव रैन वतीत होगई और प्राता काल होगया तव सो मुनी वडे सुघर और ज्ञानी जो थे जागते भये और राम राम कहते हुये विदाय होने के वास्ते अजामिल के द्वारे पर आय कर हे अजामिल ऐसा शब्द ~~करते~~ तिस पुकार ते भये ऐसे मुनी का पुकारना सुन कर सो अधम दुज अपनी स्त्री को पूछने लगा कि हे भामनी इह मेरे द्वारे पर कौन है तव तिसकी स्त्री ने मुनी का संपूर्ण वृतांत कहि सुनाया और कहा कि हे पती अव तू जाय कर इस मुनी के चरनो पर अतसे विनती से नम्र होकर प्रणाम कर और सेवा सतकार भी कर तव जो प्रसन्न होकर मुनी तेरको वर ~~देने~~ देने की रुची करें तो हे पती मेरे अर पुत्र उपजने के विना तुमने और कोई वरदान नहीं मांगना ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ प्रमुदा वचन सुनत ~~मुजा~~ दुज कीना ॥ मुनि पें आय दंडवत कीना ॥ सनमुख ठाड जोरि जुग पानी ॥ वोल्यो तव मुनीस वर ज्ञानी ॥ परम प्रसन्न जानि जिय मोही ॥ मांगहु विप्र देहु वर तोही ॥ ~~ख~~ देखि अजामिल मुनिहिं कृपाला ॥ नाय सीस पद वचन रसाला ॥ कहिस सुनहु भगवन हितकारी ॥ सव विधि करुणा नाथ तुमारी ॥ पुनि संतान रहित तुव कीना ॥ जो कृपाल करुणा निज कीना ॥ तो प्रभु देहु रुचिर वर एहा ॥ देखहुं पुत्र नैन भरि नेहा ॥ सुनि अस वचन तास मुनि राया ॥ वोले एव मस्तु करि दाया ॥ होई हैं सुवन सुभ्र गृह तोरे ॥ जानहु सत्य वचन दुज मोरे ॥ रखहु देखि पुनि दिवस पवित्रा ॥ नारायण तहि नाम विचित्रा ॥ अस वर देत गेउ मुनि गवना ॥ ईहा अजामिल आपन भवना ॥ आवा परम हर्ष उर छायो ॥ त्रीय कहे सकल वृतांत सुनायो ॥ सोरठा ॥ सुनि अस वचन सुहाव ॥ उपजा हरष प्रसन्न मन ॥ तव कछु काल

विहाव॥ भई गरभ वति सो त्रीये॥५॥ टीका॥ जब इसप्रकार स्त्रीके मुखसे पुत्रके वर मांगनेका वचन सुना तब अ जामिल ततकाल वाहिर चला आया और मुनीका दर सन पाकर दंडवत चरनोपर प्रणाम करके फिर दोनो हाथ जो ड़ कर सनमुख स्थित होजाता भया तब सो सृष्ट और ज्ञा नी मुनी अतिसे प्रसन्न होकर कहने लगे कि हे अजामि ल मेरेको अनकूल जानकर कुछ वर मांगले मे देनेको सा मर्थ्य हूं तब अजामिल मुनीकी कृपाको देखकर और चरनो पर सीस धरकर कहने लगा कि हे संत उपकारी और दी न जनोके हितकारी और तो सरव प्रकार करके आपकी अनुग्रह है परन्तु एक सन्तानकू घरमे हानी है अब जो आप अनकूल हो तो एही कृपा करो जो मे अपने घरमे वडे सुन्दर सनेह वाले पुत्रको नेत्र भरकर देखूं ऐसे अजामि लका वचन सुनकर मुनी वडे आनन्दसे कहने लगे कि भग वानकी कृपासे ऐसे हि होगा जो तुमारे घरमे पुत्र उपजेगा मे रा सत्य वचन है परन्तु हे भक्त तुमने कोई सुभ दिन विचार कर तिस बालकका नारायण नाम रखना इस प्रकार वर देकर मुनी अपने मारगको चले गये और ईहो अजामिल अ पने घरमे आयकर अपनी स्त्रीको संतके वर देनेका संपूर्ण वृतांत सुनाय देता भया ऐसे मंगलको सुनकर सो स्त्री वडे आनन्दको प्रापत भई जब कुछक काल वतीत होगया तब सो वेस्या गरभ वती हो जाती भई॥५॥ चौपाई॥ वीत्यो द सम मास जब आई॥ सरव अंग सुन्दर अधिकाई॥ ज नम्यो पुत्र परम सुखदाता॥ प्रमुदित भई देखि दृग माता॥ जानि चारु वर दिवस सुहावा॥ नारायण तहि नाम रखावा॥ समय पाय सुभ्रत सोई वाला॥ भयो तरुण वर रूप रसाला॥ तब तहि जनक अजामिल जोई॥ निर वल सिथल अंग सब होई॥ भयो स्वेत कच वृद्ध सयाना॥ तदपि तास मोम मद पाना॥ त्याग्यो नाहिं कृश्य वल हीना॥ भयो रोग वस आरत दीना॥ पर्यो रहत निज भवन मझारा॥ ते सुसील त्रीय विविध प्रकारा॥ सेवा करहिं रुदन मुखठानी॥ रत त्रीय धरम करम मन वानी॥

४२ ऐसे जब कछु काल विहावा॥ मृत्यू समय जठिर नियरावा॥ धरम राज तब कहा बुझाई॥ विकट दूत निज निकट बुलाई॥ अंतर बेदि नगर मध जोई॥ कान कुवज हेज्ञ दिज सोई॥ निदरत सुपच अजामिल नामा॥ सव विधि मंद अधम अग धामा॥ कठिन पास सन तासु बंधाई॥ देउ भीत विधि विविध दिखाई॥ सोरठा॥ ततत्तरा डारहु जाय॥ कठिन घोर अति नरकमध॥ सनमुख होन नपाय॥ मोरे सो पापी प्रवल॥ २॥ टीका॥

जब तिस तिस अजामिलकी वेस्या स्त्रीको गरभ धारन किये हुये दस महीने वतीत होगये तब सरव अंगोकरके सुन्दर और सुखोंके देनेवाला पुत्र जोहै सो जनमती भई और तिसका रूप देखकर वडे हरष को प्रापत होती भई॥ तिसतें उपरंत एक सुभ दिन विचार कर माता पिताने तिस वालकका नाम नारायण रख दिया और वोह दिन दिन वढता ~~जाता भया~~ ~~ऐसे~~ वढता समय पायकर जुवा अवस्था को प्रापत होजाता भया तब तिसका पिता अजामिल अंगोकरके सिथल और शरीरकरके दुवला वडा वृद्ध और निरवल होगया रोगके वश होकर अपने घरमे रात्री दिन खाट पर पडा रहता सोयद्यपि शरीरकरके वडा छीणभी होगया तद्यपि मांस मदके खान पान करनेको नहीं त्यागता भया और सो तिसकी वेस्या स्त्री भलीप्रकार तिसकी सेवा करनेमे रात्रीदिन लीन रहती और तिसको रोगके वश हुये देखकर वडा रोदन और विलाप करती इस प्रकार जब कुछ काल वतीत होगया तब तिस अजामलके मृत्यू होनेका समय आय प्रापत ~~हुआ~~ भया धरम राजाने वडे भयानक दूतोंको वुलाय करके कहा कि अन्तर वेदी देशके अमुक नगरमे जो कान कुवज संज्ञाकरके अजामिल नामा व्रह्मण निवास करताहै सो कैसा है कि अधमसेभी अधम महा पापी और मलेछरूप है

होकर हाथोंकरके कुछ आपकी सेवा नहीं करसकती
हूं तातेहेनाथ इहमेरा अपराध क्षमा करिये इसप्र
कार तिसकेनम्र वचन सुनकर मुनी बडे आनन्दको प्राप
त हूये तिसतेउपरंत ~~तिस स्थान लेपन~~ तहां लेपन
इत्यादि देकर अस्थानको भलीकार शुद्ध करके मुनी बडी
प्रीतीसे भोजन बनावते भये और भक्ती पूर्वक भगवान
कोनैवेद लगाकर औरफिर आप भोजन पाकर राम राम
रटते हूये रात्रीको विश्राम करते भये॥३॥ चौपाई॥ वि
नसी तहां अर्ध निसि जबहीं॥ वारुणि मत्त विथित
मन तबहीं आव अजामिल निज गृहमाहीं॥ तो
म सोच मानस कछु नाहीं॥ वेस्या तासु मत्त मद ची
नाथ तुरत प्रवीन पानि गहि लीना॥ जाय भवन नि
ज सयन कराया॥ भयो प्रात जब रैन विहावा॥ जागा
तब मुनीस वर ज्ञानी॥ राम राम पावन मुख वानी॥
वरधन समय द्वार दुज आई॥ कह्यो अजामिल व
दन अलाई॥ सुनि रव श्रवण अधम द्विज जोई॥ पू
छन लाग्यो त्रियहि निज सोई॥ इह अस कवन ठा
र मम द्वारा॥ तब वृतांत त्रिय वरनिस सारा॥ क
हिस बहुरि तब चरन मुनीसा॥ नम्रत विनय धरनि
धरि सीसा॥ जाय प्रणाम करहु कछु सेवा॥ तब प्र
सन्न मानस मुनि देवा॥ सोरठा॥ देव तुमहिं बरदा
न॥ कबहुंकि सुनहु प्रवीन पती॥ तब मांगहु ज
नि आन॥ विनु मोरे उपजन सुवन॥४॥ टीका॥
जब तो मुनी अपने आसन पर सोयगये तब आधी
रात बतीत होनेके समय मदपान करके उनमत्त और
व्याकुल हुआ अजामिल ~~देमा और~~ चिन्ता और शो
कको त्यागे हूये निरभय होकर अपने घरमे आ
वता भया तब तिसको मदसे मत्त हुआ देख कर
सो वेस्या पकड कर भीतरको लेगई॥ तहां जायकरके
तिसको

नाम उचारन करने से विस्नु के दूत तहां जाने कों तत
काल उठ खड़े होते भये ॥७॥ चौपाई ॥ संख चक्र भूषित
वनमाला ॥ चले पवन धरि वेग विसाला ॥ आये तहां
देखि जम दूता ॥ अति विकराल रूप भय भूता ॥ तब हरि
दूत तिनहिं तिरसकारा ॥ बारबार अस वदन उचारा ॥
करहु तुमहु जम लोक पयाना ॥ इहि कहं हम बै
कुंठ पठाना ॥ सुनि तिरसकार दूत जम बैना ॥ कोपे परम
अरुन करि नैना ॥ भई परस्पर कठिन लराई ॥ बैस्नव
दूत अनन्त बरयाई ॥ निदरत तिन्हहिं अरूढ़ विमाना ॥
तासु कराय कीन निज पयाना ॥ आय लेत बैकुंठ म
झारा ॥ करि वचित्र कौतुक अस मारा ॥ तब जम
दूत निरादर पाई ॥ अंग हीन निज चले पराई ॥
रोदन करत धरम नृप पासा ॥ आय वृतान्त स
कल मुख भासा ॥ सोरठा ॥ पठहो बिनहु विचार ॥
चित्र गुप्त तुम हमहु मही ॥ तब अपमान हमार ॥
होई है विविध प्रकार तहे ॥८॥ टीका ॥ सो विस्नु के दूत
कैसे थे कि संख चक्र ~~वनमाला~~ तुलसी की माला इत्यादि
धारन किये हूये वड़े तीव्र वेग से अजामिल के घर मे आ
यकर तिन भयानक रूप जम दूतों को देखते ही बड़ा ति
रसकार करते भये और कहने लगे कि तुम जम लोक को
चले जावो हम इस को वैकुंठ को ले जावेंगे ऐसे तिर
सकार के वचन सुनकर जमदूत जो हैं सो विस्नु दूतों के
साथ अत्यंत कोप करके लड़ाई करते भये परन्तु हार गये
और विस्नु के दूत प्रबल होकर और तिन को निदर कर
तिस अजामिल को विमान पर ~~आरूढ़ कर~~ बिठा कर बैकुंठ
को ले आवते भये तब सो जम दूत बड़ा निरादर पाकर
~~के और लड़ाई मे~~ अंगों से हीन भये हूये रोदन करते क
रते धरमराजा के पास आयकर चित्र गुपत से ~~[illegible]~~
न कहने लगे कि तुम हमको सोचने और विचारने
के विना ही तहां पृथवीपर भेज देते हो ताते इसी
ते हमारा अपमान और दुरदशा होती है ॥९॥ चौपाई ॥

॰ अनेक प्रकार

आयसु पाय नाथ हम जबहीं॥ पहुंचे भवन अजामल तबहीं॥
कठिन पासमन तासु बंधावा॥ आय दूत हरि तुरत छुड़ावा॥
जदपि जुद्ध परस्पर भयऊ॥ तदपि प्रबल दूत हरि रहेऊ॥
छिन्द भिन्द करि अंग हमारे॥ लेत ता... सु बैकुंठ सिधारे॥
सुनि तिन वचन धरम नृप जोई॥ चिंतत हृदय रोख बस होई॥ चित्र गुप्त कहे लीनन्हि टेरयो॥ करम कृतव्य अजामिल के स्यो॥ पुन्य पाप जम पूछित भयऊ॥
देखत चित्र गुपत अस कहेऊ॥ भवतें आदि मरण लग ताहू॥ कीनना पुण्य करम सुभ काहू॥ भीम दंड जब जमन निहारयो॥ मानत भये त्रास उर भारयो॥ कै व्याकुल निज सुतहिं बुलावा॥ नारायण जेहि नाम सुहावा॥ नाहिन कछु जगधीस चितारयो॥ दूज केवल निज सुतहि उचारयो॥ ते भ्रम मानि दूत उठि धाये॥ गये तासु बैकुंठ लिवाये॥ चित्र गुपत मुखे गिरा सुहाई॥
दिस बस श्रवण सुनत जमराई॥ लिये दूत निज संग सिधारा॥ हरि समीप बैकुंठ अगारा॥ नारायण कहे दंड प्रणामा॥ जाय कीन जोरित जुग पाना॥ कहो दूत जम तुम सुरराया॥ कीउ लेच्चन मोर रजाया॥ दोहा॥
विप्र अजामिल रह्यो जग महादुरत रत घाल॥ तासु लायबे हेतु मैं पठे दूत विक्राल॥ ९॥ टीका॥ जमदूत कहते हैं कि हे नाथ आपकी आज्ञा पाकर हमने तहां जाय कर तिस अजामिल के ल्यावने के वासते जब कोपसे बड़ी कठन फांसी तिसके गलेमें डारी और भलीप्रकार बांध लिया तब सो भय करके व्याकुल भयहुआ आपने पुत्र नारायण नामको बारबार पुकारने लगा इतनेमें ततकाल ही विस्नु दूत आय गये और हमारे साथ युद्ध करने लगे अनोको सो प्रबल होकर और हमारे को मार पीट कर तिसको छुड़ाय करके बैकुंठ को ले जाते भये ऐसे तिनका वचन सुनकर धरमराज जोहै सो बड़े को अत्यंत कोप के वस होकर बड़ा सोच करता हूआ चित्र गुपत को बुलाय कर तिस अजामिल का करम कृतव्य

४४

44

पुन्य पाप इत्यादिक सब पूछने लगा तब चित्रगुप्त कहने लगे कि जनम तें लेकर मरणे प्रजन्त इस ने कोई भी शुभ पुन्य करम नहीं किया है जब दूतों ने इसको भलीप्रकार दंड और भयदिखाया तिस तें त्रास मानकर और व्याकुल होकर अपने नारायण नामा पुत्र को वार वार पुकारने लगा कि हे नारायण इस समय मेरी सहायता कर तिसने वास्तव करके कुछ भगवान का सुमरण नहीं किया था केवल भयके वश होकर अपने पुत्र को पुकारता था तिस नाराय नामके भ्रम करके विस्नुदूत ततकाल तहां चले आये और तिसको आपके दूतों से छुडायकर और सुन्दर विमान पर बिठायकर वैकुंठको लेगये हैं इसप्रकार चित्रगुप्त के मुखसे वचन सुनकर धरमराजा बडे कोप ~~में भर होकर~~ अपने दूतों को साथ लिये हुये भगवानके पास वैकुंठ मे आय जातामया और दंडप्रणाम करके दोनो हाथ जोडकर कहने लगा कि हे दीनदयाल आपके दूतों ने आज्ञा उलंघन मेरी और मरजादा भंगन करी है क्योंकि अजामिल नामा जो ब्रह्मणों विखें अधम और जनम तें ही बडे पापों करके भरा हूआ था मैं तिसके ल्यावने के वास्ते अपने दूतों को तहां भेजता भया ॥ ६ ॥ चौपाई ॥ तहिंकाल दूतन प्रभु आई ॥ कीन तिन्हु सन विविध लराई ॥ अन्त लेत वैकुंठ सिधारे ॥ सो सन मुख अब नाथ तुमारे ॥ राजमान वैकुंठ मझारा ॥ मोहि न देस अब कवन उदारा ॥ सुनि अस धरम राज मुख गाथा ॥ सुख समूह प्रभु त्रिभुवन नाथा ॥ स्मित हास जुत वचन मृदूला ॥ मंजुल मधुर शांति जनु मूला ॥ बोले ललित वदन भगवाना ॥ धरम राज तुव सत्य वखाना ॥ इह अति निरत किलष अपराधू ॥ पै पावन मम नाम अराधू ॥ तहि तें मोर दूत दुज तासू ॥ लाय दीन वैकुंठ निवासू ॥ अब नृप धरम सुनहु मम वैना ॥ जहि तें मनुज परम शुभ ऐना ॥ सकहि न कठिन दंड तुव पाई ॥ सो प्रभाव मम नाम सुहाई ॥ सोरठा ॥

अजामिल

तुम तिसको अपनी कठिन फांसी से बांधकर और अनेकप्रकार देउ और भय दिखायकर ततकाल ल्यायकरके अतसे कठिन और महा घोर जो नरकहै तिसमे डालदेको सो पापी मेरे सनमुख नाहि ना पावे॥८॥ चौपाई॥ धरम राज अनुसासन पाई॥ कोपरूप जम चले सिधाई॥ देउ पास आयुध कर धार्‍यो॥ भीम भेष किमि जाय निहार्‍यो॥ दीरघ दसन अरुन दृग भारी॥ आये तीव्र वेग जनु धारी॥ देखा पसो अजामिल भवना॥ तव जम दूत पास निज जवना॥ कोपि तास जव ग्रीव प्रहारी॥ मानत भयो त्रास उर भारी॥ कंपत गात विथत मन दीना॥ हृदय समर्‍यो पुत्र निज कीना॥ रच्छा करहु तात रछा एहि काला॥ अस टेरत करि मुख विसाला॥ नारायण तिहि नाम सुहावा॥ विविध वार निज वदन अलावा॥ सोरठा॥ सो भगवन अस नाम॥ रट्यो तास वहुवार जव॥ तव सुन्दर वलधाम॥ विस्नु दूत ततकाल उठे॥७॥ टीका॥ इसप्रकार धरम राजकी आज्ञा पाकर जो दूत जोहैं सो मानो एक क्रोधका रूप धारन करके चलपडते भये और अत्यंत भयके देने वाली फांसी जोहै सोई जिनके हाथ मे शस्त्रहे बडे लंबे दांत और कोपकरके लाल हैं जिनके नेत्र ऐसे भयानक भेष धारे हूये तीव्र वेगसे तिसके घरमे आय प्रापत भये तव अजामिलको देखकर वडी कठिन फासी जोहै सो कोपकरके तिसके गलेमे डारकर अत्यंत भय दिखावते भये तव अजामिल तिनके भयानक ऐसे रूपको देखकर थर थर कांपता हूआ व्याकुल होकर अपने तिस नाराय पुत्रको वडी ऊंची स्वरसे पुकारने लगा कि हे पुत्र इसकाल मेरी रछा करो ऐसे जब तिस अजामिलने नारायण नारायण करके वहुत वार उचारन किया तव इसप्रकार भगवानका वहुतवार

८५
45

दोहा॥ इह चरित्र कल अजामिल भक्ति महातम जोय॥ ललित नाम सामर्थ जुत सरब सुखद भव सोय॥ सादिर इहि कहे प्रेम जुत जेनर स्रवण करंत॥ ह्वै कृतंतग पावहीं मंजु भक्ति भगवंत॥ ११॥ टीका॥ फेर भगवान कहते हैं कि हे जमराज सो पुरष तेरे दंड देनेके योग्य नहींहै सो मेरा भक्त है और मेरे हृदय मे निवास करता है और मेरे हि सुमरण मे नित्य लगा रहताहै जब शरीर को त्यागताहै तब रात्री दिन मन को लगाय रखता है और शरीर को त्यागने के समय निसकाम और वासना से रहित होता है और पुरष जो सदेव, गंगा जी के किनारे पर निवास कर के करता शरीर को त्याग ताहै सो निश्चय कर के मेरे मे हि लीन होताहै इस प्रकार जो कोई भक्ती पूर्वक मेरे को सेवन करताहै सो देताउं मे भी पूजने के योग्य होताहै तब जमराज भगवान के ऐसे सुन्दर उपदेश मय पवित्र वचनों को सुन कर बड़े हृदय मे सुखमान कर सूईकार कर लेता भया और बड़ा फिर दोनो हाथ जोड़कर और दंड प्रणाम कर वारवार दंड प्रणाम करके अपने दूतों के सहित तहां से जमपुरी को चला आया तहां भगवान का उपदेश और आज्ञा जोथी सो भली प्रकार सब जमदूतों को सिखाय कर अपने नित्य काजे मे ततपर होता भया इस प्रकार इह अजामिल का बड़ा सुन्दर चिरित्र और भक्ती का महातम जोहै सो नाम की सामर्थ के सहित सरब सुखों के देने वाला है इसको जो पुरष बड़े सन्मान और प्रीती से पढे और सुनेगा सो जम के त्रास से रहित होकर भगवान की कृपा से सुन्दर मोक्ष को प्राप्त होवेगा॥ इति श्री मन्महाराजाधिराज जम्बू काश्मीरादि अनेक देशाधिपति प्रभुवर जयप्रताप सिंह विरचतायां भाषा टीकायां भगवद्भक्ति महातमे अजामिल चरित वरणने नाम सरगः

अथ जटाऊ चरित्र

चौपाई॥ नाय सीस गुरु पद अनुरागे॥ नाभा दास कथन
सुख लागे॥ नाथ अजामिल चरित सुहावा॥ जहि प्रकार
मोरे मन भावा॥ सो सादिर निज मति अनुसारा॥ की
न कथन मै दीन उबारा॥ अब जटाऊ वर कथा पुनी
ती॥ वरणन करहुं दयाल जुत प्रीती॥ सुनहु स्रवण
सुख अद्भुत मन भाई॥ मंगल करन भक्त सुख दाई॥
अवध नाथ दसरथ नृप नामा॥ रघुकुल प्रवर तेज ब
ल धामा॥ गो द्विज त्रात ख्यात जग साखी॥ महा प्र
ताप उदित उपकारी॥ जेष्ट पुत्र जहि राम सुहाये॥ हरि
अवतार वेद जग गाये॥ राजऽवषेक हेतु तहि दयाला॥ की
न आरंभ जवहिं महिपाला॥ मिंथ्रा नाम तवहिं अग रासी॥
रही एक कयकै कर दासी॥ कुवरी कुटिल मंद मति हीना॥
अनहित मंत्र जास नहि दीना॥ सो सुनि स्रवण भवन
अग रानी॥ संतत हृदय रुचिर हित मानी॥ दोहा॥ रा
म राज अवषेकते दसरथ नृप कहे सोय॥ भई निवा
रन करत जढ हृदय वज्र गति होय॥१॥ टीका॥ अब
नाभादास जी अपने गुरु महाराज के चरनोपर सीस
नायकर लगे किहे नाथ अजामिल की
सुन्दर गाथा जैसीक मेरी बुद्धी के अनुसार होसकी सो
मैने आदिर पूर्वक कथन कर दीनी है अव हे दीन दयाल
जटाऊ भक्त की जो पवित्र गाथा है सो
मै प्रीती और सनमान से वरनन करता हूं तिसकी कैसी गा
था है कि भक्त जनोके हृदयको सुख देने वाली और सरव
मंगलोंके करने वाली है कहते हैं कि अजुध्याके स्वामी
दसरथ नाम राजा राघवों की कुलमे वडे स्रेष्ट तेज
और वलके धाम गो ब्रह्मणकी रक्षा करने वाले महा प्र
तापी और वडे उपकारी धरमात्मा जोथे जि
स समय पायकरके अपने जेष्ट पुत्र रामचंद्र महाराज
जीको किजिनको वेदने साक्षात विष्णुका अवतार कथन
किया

कियाहै जब राज तिलक देने का प्रारंभ किया तब मिंथरा नाम पाकें की रानी वड़े अधम ~~एक कयकैकी~~ दासी और शरीर करके कूवरी और कुटिल खोटी एक कयकैकी दासी जोथी तिसने रानी को हितके नाश करने वाला महामेद मंत्र जोथा सो सिखाय दिया तिस मंत्र को पायकरके सो रानी कयके ~~अपने हृदय मे बड़ा सुख और~~ ~~आनंद मानकर~~ अत्यंत सुख और हित मानकर अपने हृदय को वज्रकेसमान कठोर करके राजा दसरथके राम चंद्रजी के राज तिलक देनेसे निवारण करती भई॥१॥ चौपाई॥ थाती राख जबन वरदाना॥ सो मांगहु अब नृपति सुजाना॥ संजुत पतनि राम ब्रत धारी॥ विचरहिं विपुन वर्ष दसचारी॥ राजअभषेक भरत कहं होई॥ इह कृपाल मागहु वर दोई॥ वक्र उक्ति भव धनू समाना॥ वचन कठोर विसक जनु वाना॥ होतहिं मुर्छित नृपति उर लागे॥ मुरछित पर्‍यो धरनि सुधि त्यागे॥ तब प्रभु राम धाम गुण ज्ञाना॥ संजुत प्रेम प्रीति सनमाना॥ सावधान करि पितुहिं विठारा॥ कहि मृदु वचन विविध परकारा॥ नाथ धरहु धीरज जिय माहीं॥ अनहित जननि कहिस कछु नाहीं॥ कानन विहरि वरष दस चारहु॥ वहुरि आय प्रभु दरस निहारहु॥ असकहि राम अरन कुल तरना॥ लोचनजलज स्याम घन वरना॥ जनक धरम सेतत प्रतिपालक॥ सुर नर संत सुखद मनै घालू॥ सीये लखन जुत मुदित महाना॥ कीन देउ कारण्य पयाना॥ सोरठा॥ तहां जाय रघुबीर॥ प्रबल विकट दनुजात गण॥ कीन समर वध धीर॥ निज भुज देउ प्रचंड वल॥२॥ टीका॥ ~~सलोक~~ तब कयके राजा दसरथ को नम्र होकर कहने लगी किहे नाथ सुमधुर कहिये आपने जो प्रसन्न होकर मेरे को दो वरदान कियेथे और मैने कहाथाकि महाराज इनको अपने पासहि राखिये जब मेरेको इच्छा होगी तब मांग लूंगी सोहे प्राणपती अब अनुग्रहकरके

अस संतत मम नाम॥ अरु देवी महादेव कर॥ यद्यपि जन
अग धाम॥ सुमरहिं तहिं कर तजहु तुम॥१०॥ फिर धरमराज
कहता है कि हे भगवन जब मेरे दूत तहां गये तब तिसी समय
आपके दूतों ने आयकर तिन के साथ अनेक प्रकार लडाई
करके और फिर प्रबल होकर तिसको छुडाय कर इहां आप
के पास बैकुंठ मे ले आये हैं हे दीनानाथ अब मेरे को क्या
आज्ञा है ऐसे धरमराज के मुख से वचन सुनकर तीनों
लोक के स्वामी और सरब सुखों की निधि भगवान जो हैं सो
मधुर हास्य करके बडी कोमल बानी से कहने लगे कि हे
जमराज तैने सत्य कहा है इह अजामल तो बडा अधम
और अपराधी एक पापों की राशी था परन्तु तिसने मेरे
पवित्र नाम को जो बार बार आराधन किया तिस ते मेरे
दूतों ने तिस को ल्यायकर बैकुंठ मे निवास देदिया है हे धरम
राज अब तू मेरा वचन सुन किजिस करके बडा अधम
और पापी पुरष तेरा कठिन दंड नहीं पासकता सो तो
मेरे हिं नाम का प्रभाव है ताते मेरा और देवी महादेव
का नाम जो महा पापी पुरष भी सुमरण करेगा तिस के तु
मँ निकट नहीं आवना ~~सो तु मेरे दंड योग्य नहीं है~~॥१०॥
चौपाई॥ ते जन दंड योग्य तुव नाहीं॥ बसहिं भक्त मोरे
मन माहीं॥ मोर सुमरण करत नित जोई॥ तजहिं
काय काम गत होई॥ अरु जोई सदा देव सरि तीरा॥
करहिं निवास रुचिर मति धीरा॥ त्यागहिं तहां मंजु
निज काया॥ सो अर धंग मोर जम राया॥ अस जे हो
हिं निरत मम सेवा॥ पूजन जोग देवि अरु देवा॥
तब जम राज सुनत हरि बानी॥ सुचि उपदेस सुखद
हित सानी॥ अंगीकार कीन मुद मानी॥ करत प्रणाम
जोरि जुग पानी॥ जमन सहित निज लोक सिधाये॥
आये भवन हरष उर छाये॥ दीन घाल उपदेस सुहावा॥
निज दूतन कहि बदन सिखावा॥ सिर धरि हरि न
देस जम राजा॥ भयो निरत नरत निज काजा॥

४२
५७

रही जवन खरदून भगनी॥ नाम प्रसिद्ध सुरप नखा जासु॥
विकट रूप निज तासु प्रकासु॥ परिहरि भीम भेष सठ भा
री॥ लीनसि रुचिर रूप निज धारी॥ आय राम तहि दृगन
निहारो॥ जहिपर कोटि मदन छवि वारो॥ नेम्रत व
दन मनन असलागी॥ संजुत प्रीति रीति अनुरागी॥ ग्र
स्यो नाथ मोहि मंसज पीड़ा॥ तुम सन चाहे रमन
रति क्रीड़ा॥ करुणा करि कृपाल मोहि वरहो॥ किंकरि
चरन चारु निज करहो॥ तुव सरूप सुभ्रत दृग देखी॥
निज अहिवात सफल जग लेखी॥ सुनि रघुनाथ तासु
मुख बानी॥ बोले वचन कूट रस सानी॥ मै सपतनि मै
जुल मम बीरा॥ सो निस्त्रीक सुनहु मति धीरा॥ तहि
पैं जाहु वेग तुम भामा॥ पुरवहिं सो तुमार मन कामा॥
दनुजनि सुनत वचन रघुराई॥ हरषत हृदय लखन
पैं आई॥ सोरठा॥ कहिसि मनोरथ जोय॥ तिन आपैन
प्रमुदित हृदय॥ लखन श्रवण सुनि सोय बिहसि बोले
मुख वचन अस॥ १॥ टीका॥ जब सरब चराचर स्वामी के
रघुनाथ जी महाराज तिन राक्षसों का क्षय कर चुके त
व एक समय दण्डकवन गोदावरी के निकट पंच
वटी मे आपने भ्राता लक्ष्मन और जानकी जी के स
हित आयकर निवास करते भये तहां बड़ी अधम
दैतों की कुलके दग्ध करने वाली खरदूषन की भैन
अतसे भयानक भेष ~~वाली~~ और सुरप नखा नाम है जिस
का सो अपने तिस भयानक भेष को त्याग कर बड़ा
सुन्दर सरूप धार करके जिस रघुनाथ जी की मूरती पर
कोटि काम देव की छवी वारने होती है तिस मूरती
का दरसन करके अत से प्रेम और प्रीती से बड़ी दीन
होकर कहने लगी कि हे नाथ मै कामदेव की पीड़ा
करके अत्यंत दुखी हूं और आपके साथ रति बिलास
करना चाहती हूं कृपा करके मेरे को वर लीजिये और
अपने चरनों की दासी कर लीजिये हे दईयालु मे आपका

सुन्दर सरूप मैं तेरे देखकरके अपने सुहागको आज सफल जानाहै इसप्रकार तिसकी वानी सुनकर रघुनाथ जी [illegible] हसकरके कहने लगे कि हे भामनी मै तो स्त्री के सहित हूं परन्तु मेरा भ्राता जोहै सो निस्त्रीकहै तिसके पास स्त्री नहीं है ताते तूं तिसीके पास जा सो तेरे मनकी कामना पूर्ण करेगा ऐसे रघुनाथजीका वचन सुन कर सो दैतनी वड़ी प्रसन्न होकर लषमण जीके पास आ जाती भई और तहां हरषसे मगन भई हूई तिनको अपना मनोर्थ जोहै सो कह देती भई तव लषमण जी तिसके मनोर्थको सुनकर मनमे मुसक्याय कर जिस प्रकार उत्तर देते हैं सो आगे कथन किया जाहै ॥ चौपाई ॥ सुन्दरि जाहु वेग तुम ताहीं ॥ राजे राम धाम प्रभु जाहीं ॥ मै सरोज पद पावन तासा ॥ करम वचन मन सेवक दासा ॥ उचित नाहिं दिति नेदनि मोरे ॥ यद्यपि पठ्यो राम प्रभु तोरे ॥ ते समर्थ आपु बल धामा ॥ करिहैं सफल तोर मन कामा ॥ सुनत नदेस लषन अस सोई ॥ प्रभुपैं आई मदन वस होई ॥ तव रघुवीर वदन मुसकाई ॥ दीन लषन पैं वहुरि पठाई ॥ ऐसे तासु गता गत माहीं ॥ उपजा क्रोध शांति कछु नाहीं ॥ जायन भीम भेष तहि वरना ॥ दीरघ दसन करन दृग अरना ॥ घोर घ्रान भ्यावन अति जीहा ॥ चिवक कराल विकर निस्त्रीहा ॥ भुजा पसारि वदन निज वाई ॥ भक्षण करन हेतु सीय धाई ॥ भ्यावन घोर रूप तहि देखी ॥ सीय मानि उर त्रास वसेखी ॥ पाहि पाहि रघुनाथ पुकारी ॥ कंपत गात विपत मन भारी ॥ सोरठा ॥ लषन कोप तव कीन ॥ खड्ग निकासत [illegible] घ्रान श्रुत ॥ स्रवण छेद तहि लीन ॥ करि प्रवीन कौतुक रुचिर ॥ ४ ॥ टीका ॥ लषमणजी कहते हैं कि हे सुन्दरी तूं

४२

४०

॥ तहांहि जा कि जहां सरव सुखोंके धाम राम चंद्र महाराजजी विराजमान हैं मैं तो उनके पवित्र चरन कमलोंका सरव प्रकार करके सेवक और दास हूं हे दैत पुत्री यद्यपि महाराजजीने तेरेको इहां भेजा है तद्यपि मेरेको इह बात तो योग्य नहीं है सो दीनदयाल और बलके धाम आप हीं सामर्थ है तेरे मनकी कामना सिद्ध करेंगे तू तिनके पास हीं जा ऐसे लछमण जीकी शिक्षा लेकर सो फिर रघुनाथ जीके पास आवती भई। तब महाराजजी तिसको समुझायकर फिर लछमण जीके पास पठायदिया इस प्रकार इधर उधर आने जानेमें तिस राक्षसी के चित्तमें बड़ा क्षोभ उतपन्न होजाता भया तब अत्यंत कोपसे बड़े लंबे दांत और लंबे हीं कान और नासका और बड़ी भयानक जीभ और ठोड़ी क्रोधके भरे हूये लाल नेत्र मुख खोले हूये दोनों भुजा पसार कर सीताजीके भक्षण करनेको धावती भई तब सीते तिसके ऐसे महा भयके देने वाले रूप को देखकर कांपती हुई व्याकुल होकर त्राहि त्राहि पुकार करके रघुनाथ जीकी शरण प्राप्त होजाती गई इस प्रकार जानकी माताकी दशा देख कर लछमण जी ना... क्रोधसे ततकाल खड्ग निकाल कर एकहीं तुक्क से हीं तिसके कान और नासका काट कर तहांसे निकाल देते भये ४८॥ चौपाई॥ अंग हीन भई भयावन भारी॥ विकट रूप नहीं जाय निहारी॥ खर दूषण पे तवहिं कराला॥ जाय कीन जइ रुदन विसाला॥ सकल वृतांत कहिस विलाता॥ आये विपुन तपस दो भ्राता॥ नारि एक तिन संग सुहाई॥ इमत रूप छवि वरनिं नजाई॥ सुमन मृदुल अंग दुति दामनि॥ निदरत रमा रूप जनु भामनि॥ सोमें देखि भ्रात तुव लायक॥ सुन्दर वदनि नयन मृगसायक प्रेरत भई जबहिं तीय तासा॥ तब लछु भ्रात तपस बल दासा॥ नासिक श्रवण मलहिं करि हीना॥

वे दोनो वर मेरेको इसप्रकार दीजिये कि एकतो व्रतधारी
रामचंद्र स्त्रीके सहित चौदो वरष वनमे विचरते रहें और
दूसरा इहंकि राजतिलक मेरे पुत्र भरत को होवे ~~ऐसे दोनो~~
~~वर~~ इसप्रकार रानी ~~धनुष रूपी~~ के धनुरूपी मुखसे वाण
रूपी कठोर वचन जो छूटे सो ततकाल राजाके हृदयको
वेधकर मुर्छा करके पृथवी पर गिराय देते भये ऐसे
राजाकी दशा देखकर ~~रामचंद्र महाराज तहां~~ सरव गु
णों धाम राम चंद्र महाराज श्री तहां आय गये और वडी प्रीति
और सनमानसे राजाको मूर्छासे जगायकर भलीप्र
कार सावधान करके विठाय देते भये और फिर वडी कोम
ल वानीसे अनेकप्रकार प्रवोध करने लगे कि हे नाथ आ
प हृदयमे धीरजको धारिये माताने कुछ अनहित वातो
नहीं कहीहै सरवप्रकारकरके हमारी भलाई ही का हीं
कारन है ~~जो चौदो वरष वनमे विचर करके फिर आनंद~~
~~से आय कर आपके चरनोंका दरसन करूंगा~~
चौदो वरष कोई वडी अवधी नहीहै मै वनमे मुनी
ऋषियोंका दरसन मेला करता हुआ वतीत करके
ततकाल आयकर आपके चरनोंका दरसन करता हूं
इसप्रकार पिताको वारंवार प्रवोध करके स्याम मेघे
वत शरीरकी आभा वाले और कमलोंकी न्याई नेत्रोंकी
शोभा वाले सूर्जे सूरज पिताके धरमकी रक्षा करने
वाले देवता और संतोंके सुखदायक रामचंद्रजी म
हाराज जोहैं सो सीते और लछमणजीके सहित वडे
आनंदसे दंडिक वनको चले जाते भये और तहां
जायकर रघुनाथजीने वडे विकट और प्रवल जो
राक्षसोंके समूह थे सो रणमे धीरज धारकर अपने
भुज दंडोंके प्रचंड वलसे संपूरण नासको प्रापत करदिये॥
२॥ चौपाई॥ समय एक दंडक वन आई॥ गोदावरि स
मीप रघुराई॥ पंच वटीमे आग जग जाता॥ राजे सी
ये सहित निज भ्राता॥ तहां सुपच दनुजन कुल दयनी॥

प्रकारा॥ चले सु करत मार धर मारा॥ कवचु कुदंड वान धृ
त पानी॥ मुदगर सूल शक्ति रिपु हानी॥ खड्ग पास
अरि त्रास वढावन॥ लिये अनेक आयुध मन भावन॥
आय समर तिन राम प्रचारो॥ कोपि कठिन मुख
वचन उचारो॥ सूर वीर भटि असुर प्रचंडे॥ प्रवल
प्रतापि धीर रण मंडे॥ सोरठा॥ इत सुधीर रघुराय पे
खि असुर गण अनुज कहे॥ भाखिस वदन वुझाय॥ सिय
पें रहहु सजग्ग तुम॥६॥ टीका॥ तव क्रोध से भये हुये
दैतों की कुलमे भूषण महा प्रवल और प्रचंड प्रतापी खर
दूखन जो हैं सो अनेक प्रकार की सेना साथ लेकर कव
च जो ढाल और धनुष वान और मुदगर शत्रु के नास
करने वाली वरछी और फासी और तलवार से लेकर
और ~~अनेक प्रकार के~~ जो भांत भांत के अनेक शस्त्र हैं सो संपूर्ण धारन करके
मार मार करते हुये आय करके रण मे रघुनाथ जी को
प्रचारते भये कि हो तपस्वी आयु पुज स्थल मैं हु मोरे स
न मुख स्थित हों हम सूर वीर और महा प्रवल प्रतापी रण
मे धीरज धारने वाले खर दूखन हैं तव इस प्रकार रघुना
थ जी महाराज तिनके वचन सुन करें और राक्षसों के समूह
को देख कर लक्षमण जी को कहने लगे कि हे भ्राता तुम तू
अव इहां जानकी जी के पास भली प्रकार स्थित और
सावधान रहो और मेरे प्राक्रमको देखो॥६॥ चौपाई॥
रोडा छंद॥ मै इन खल दल केरि समर वल जाय नि
हार हूं॥ करि वानन परहार विविध परकार प्रचारहूं॥
अस कहि श्री रघुवीर वृषभि ध्वज सुमरन कीना॥ ज
टा मोर दृढ वांधि विकट धनु पानन लीना॥ कीनसि
जव टंकार पृथम सुख सार मुरारा॥ सुनि रव श्रवण
प्रचंड वधर भयो अरि दल सारा॥ जव संधानत वान
विकट भगवान विशाला॥ कीनसि सुचित प्रचंड खंड
असुरन सुर पाला॥ लागे खल दल जाय धरणि मु
रछाय पराने॥ रही सरीर न धीर वीर व्याकुल
अकुलाने॥ तव खर दूखन देखि विपत निज सेन

सवाहीं॥ गरजे महिरण सुभट क्रोध दारुन मन माहीं॥ प्रभुसें विविध प्रकार वान संधान प्रहास्यो॥ सो आव त रघुवीर तुरत निज सरन निवास्यो॥ वहु विधि समर विलाय प्रवल असुरन रघुराजा॥ अन्त विदारन कीन अजित जुत सकल समाजा॥ अस तिन कर हते देखि देव नभ मन अनकूला॥ जय जय शब्द उचारि हरषि ४र वरषि सफूला॥ सोरठा॥ सुरव न लो तव देखि॥ खरदूखन कर मरन तेहि॥ अति विसमय जिय लेखि॥ है निरास व्याकुल चली॥७॥ टीका॥ रघुनाथ जी कहते हैं कि हे लछमण मै इन खलों के दल का रण मै वल जायकरके देखता हूं और अनेप्रकार वाण मार कर इनको ताडना करता हूं ऐसे कहि करके श्री रघु वीर जीने महादेवजी का सुमरण किया और जटाउ का जूडा जोथा सो दृढ वाध कर और महाविकट धनुष को हाथमै लेकर चल्ले को चढाकर जव तिसका टंकार क रते भये तव तिस शब्दको सुन कर शत्रु का दलजोहै सो ~~मानो होगा सेहूस कानों से बोला~~ कानोसे सेव वोला होजाता भया और जव रघुनाथ जीने धनुषमै अनेक प्रकारके वान संधानकरके अर्थात जोड कर जो छोडने किये तव शत्रु के दलको भेदन करके मुर्छाय कर पृ थवीपर गिराय देते भये ऐसे वाणों करके छिदभिद और व्याकुल भये हुये राक्षस धीरजसे रहत और अचेत जो होगये तो खरदूखन तिनकी दशा देखकर अत्यंत कोप से मेघकी न्याई गरज करके भगवानके सनमुख अनेक प्रकारके वाण धनुषमे (रामके) जोर जोड कर छोडने लगे तव रघुनाथजी कौतुकसेही तिनके आते हुये तीव्र वाणोंको अपने वाणों से निवारण करके खण्ड खण्ड कर देते हैं भये ऐसे ~~तिस खरदूखनको~~ ~~आने~~ रघुनाथ जी महाराज अनेक प्रकार रणमे विलाय कर अंतको संपूर्ण सेना के सहित तिनका नास कर देते भये जव रसप्रकार खरदूखनको भगवाने वध कर दिया तव आकाशमे

देवताउं के समूह जो विमानो पर चढ कर रघुनाथ जी का रणमे कौतुक देख रहे थे सो भांत भांत फूलोंकी वरषा करके जय जय उचारते हूये देवलोक को चले गये और ईहां सुरप नखा खर दूखन का मरना देख कर वडा आचरज मानती हूई व्याकुल और निरास होकर लंका को चली जाती भई॥७॥

चौपाई॥ रुदन करत रावन पें आई॥ विलपत सकल वृतांत सुनाई॥ नाथ दंड कारण्य मझारा॥ धनुर वान धृत राज कुमारा॥ आये तपस भेष धरि दोऊ॥ प्रवल प्रचंड सूर रण कोऊ॥ तीये एक तिन संग सुहाई॥ रमा रूप छवि वरनि नजाई॥ खर दूषण मम भ्रात पयारे॥ तासु लायवे हेतु सिधारे॥ तोरे अर्थ सुन हे प्रीय भ्राता॥ सो तिन तपस समर विख्याता॥ से जुत अनी कीन हत प्राना॥ अरु लघु भ्रात तपस वल खाना॥ नासिक श्रवण मोर तेण छेदी॥ कानन वहिर दीन पुनि खेदी॥ तोरे जियत मोर अपमाना॥ भयो भ्रात नहिं जात वखाना॥ अव जग जियन मोर धृग भयऊ॥ काहेन दैव प्राण हरि लयऊ॥ दोहा॥ रोष वढावन वचन तेही सुनत दनुज पति कान॥ उठि धावा मारीच पें निपट कपट की खान॥८॥ टीका॥

तव सुरप नखा जो है सो रावन के पास आय कर वडा रोदन और विलाप करके संपूर्ण वृतांत कहि सुनावती भई॥ कि हे दैत पती दंडक वनमे कोई राजा के दो पुत्र धनुष वान धारी तपस्वीयों का भेष वनाये हूये वडे प्रवल और प्रचण्ड सूर वीर और धीरज के धाम हैं और लक्ष्मी की न्याईं सुन्दर रूप वाली एक स्त्री तिन के संग है सो खर दूखन मेरे प्यारे भाई तेरे वासते तिस स्त्री को ल्यावने के लिये जो कनत है वन मे गये तो तिन महावीर दोनो तपस्वीयों ने संपूर्ण सेना के सहित मेरे खर दूखन भाईयों को रण मे वध कर दिया है और मेरे को भी

अति दुरदशा मोर तहि कीना॥ आश्रम बहिर दीन पु
नि खेदी॥ अंग निसंग भंग मम छेदी॥ अस अपमान मोर
भयो जाहो॥ चलहो बंधु बेग तुम ताहो॥ तिनहिं बिदारि
नारि बर जोई॥ ललित बचित्र रूप रति सोई॥ आन
हु तबहिं मोर मन कामा॥ पूरन होहिं भ्रात अभिरामा॥
दोहा॥ निज भगनी कर बचन अस स्रवण
सुनत दनुजात॥ भये अरुन दृग क्रोध रत थर
थर कंपत गात॥५॥ टीका॥ तब सो सुरपनखा रा
क्षसी अंगों से हीन हुई महो भयानक रूप बनी
हुई जो देखी नहीं जाती थी तहां से दुरदशा को प्रापत हो
कर अपने खर दूखन नामा भैरों के पास जाय
कर बड़ा रोदन और विलाप करती हुई सारा वृतांत सुना
य देती भई कहने लगी कि भ्राता बनमें कोई दो भाई तपसी
आये हुये हैं और तिनके साथ एक स्त्री है सो कैसी है कि अ
त्यंत रूप और कोमल अंग है जिसके विजली
वत प्रकाश और अपने रूप गुण और शोभा करके लक्ष
मी को भी लज्जा देती है सो ऐसी मृगनैनी और सुन्दर
मुख वाली बाला को तुमारे लायक विचार कर मे जब
प्रेरती भई तब तिस तपसी के छोटे भ्राता ने महा को
प करके मेरा नाक और कान काट कर अतसे दुरदशा
करके बनसे बाहर निकाल दिया है हे भ्राता इसी ते मे
अत्यंत कलेश मानकर तुमारे पास आई हे कि जहां
मेरा इस प्रकार अपमान भया है तुम तहां चलो और
तिनको विदारन करके तिस मनोहर और रति समान
रूप वाली स्त्री को ले आवो तब हो मेरे मन की कामना
पूरी होती है इस प्रकार अपनी भगनी के मुख से बचन सु
नकर और तिसकी दुरदशा देखकर खर दूखन जो हैं सो
क्रोध करके लाल नेत्र भये हुये थर थर कांपने लगे॥५॥
चौपाई॥ संजुत भगनी तबहिं खर दूखन॥ प्रबल
प्रचंड दनुज कुल भूखन॥ लिये संग अति विविध

कहो अनुग्रह करके इसको बाणसे वध करिये तो हे
प्राणपती इसकी बुटीसुन्दर कोमल तुचा जोहै
सो मेरेको अत्यंत प्यारी और भावती है इसप्रकार
सीताजीकी रुची देख कर सूर्ज कुलमे सूर्ज जो रघु
नाथजी हैं सो ततकाल धनुषको हाथमे लेकर
तिसमे बाण जोड देते भये और लछमण जी को कहने
लगे कि हे भाई तुम सीता जीके पास कुटियापर सा
वधान रहना मत अकेली छोड कर बनमे कहीं इधर
उधर चले जाओ क्योंकि इहां बनमे राक्षस बहुत फि
रते हैं ऐसे लछमण जी को अनेक प्रकार समुझाय
करके आप रघुनाथजी तिस कपट रूपी मृग के पीछे च
ले जाते भये ॥९ चौपाई ॥ प्रगटत दुरत विपन मृग
जाई ॥ दूरहिं दूर घाल रघुराई ॥ जब सामीप भये
भगवाना ॥ तुरत प्रहार कीन तब बाना ॥ परो धरनि
प्रभु सायक लागे ॥ कपट भेष निज दीनसि त्यागे
तब तहि समय अनेत बहु बारा ॥ लखन लखन मुख
शबद उचारा ॥ सो रव सुनत सीये अकुलाई ॥ कहा
लखन सन बदन बुझाई ॥ शोकर परो भ्रात तुव मारे ॥
लखन लखन रव बदन उचारे ॥ सपदी जाहु तात तु
म ताहो ॥ कीन समर्थ तोर प्रभु जाहो ॥ सीय मुख
सुनत बचन अहिराई ॥ बोले सुनहु जननि सुखदाई ॥
एकल छाडि विपन इत तोरे ॥ आयस दीन नाहि प्र
भु मोरे ॥ ताते तजहु नाहि तोहि माता ॥ तब सिय
कहिस मरम कछु बाता ॥ सोन ख्याल पति सके सहारी ॥
चले विपुन प्रभु सरण सिधारी ॥ तब दस बदन सू
न ग्रह देखी ॥ आवा हृदय हरष अब सेखी ॥ दोहा ॥
करि निज कपट तुरंत सठ पंथ गगन धरि जान ॥
हरि ले गयोसि अतिथि बनी सियहिं असुर अभिमान ॥
१०॥ टीका ॥ तब सो कपट रूपी मृग बनमे कहीं प्रकट
और कहीं लुपत होता चला जाता है और रघुनाथ
जी भी तिस पीछे कुछेक दूरीसे घात लगाये हूये चले
आते हैं जब कुछे सामीपता भई अर्थात नेडे हूये तो

भगवान्ने तिस को भलीप्रकार खैंचकर बाण मारा तिस
बाण के लगते हीं मूर्छा होकर ~~पृथ्वी पर गिर पड़ा~~ लक्षमण
लक्षमण कहता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा और ततका
ल हीं अपने तिस कपट रूपी भेष को त्याग देता भया
तब तिस ने बाण लगने के समय लक्षमण शब्द जो ब
डी ऊंची स्वर से उचारण किया था तिस शब्द को सुन
कर ईहां जानकीजी बहुत व्याकुल हो गई और लक्षमण
जी को कहने लगी कि हे तात मै जानती हूं तेरा भ्राता कि
सी बड़े संकट मे पड़ा है जो तेरा नाम उचारन किया है
तूं बिलंब को त्याग कर तहां जा और तिनकी खबर ले
इस प्रकार सीताजी के मुख से वचन सुनकर लक्षमणजी
कहने लगे कि हे माता तेरे को ईहां बन मे अकेली
छोड कर जाना ~~रघुनाथजी~~ मेरे को रघुनाथजी की
आज्ञा नहीं है मै कैसे जाऊं तब सीते चिन्ताकुल भई
हुई अनन्त जी को कोई अपमान वाला दुरवचन
जो कह देती भई तो तिस को लक्षमणजी न सहार सके
ततकाल रघुनाथजी के पीछे बन को चले जाते भये
तब रावण सूनी कुटिया देखकर बड़े हरष से तहां च
ला आया और अतिथी संत का भेष धार कर महा मंद
अपने कपट और चतुराई से ~~[illegible]~~ ततकाल रथ पर
बैठाय करके आकाश के मारग सीताजी को हर ले जाता भया॥२०॥
चौपाई॥ तब सीय बिपत ब्योम पथ जाती॥
रोदन करत परम बिलपाती॥ हा पति प्राण लखन
हा प्यारे॥ अस सीय कहत बिकल मन मारे॥ ग
गन पंथ तब सुनत बिलापा॥ दारुण खेद सूल
संतापा॥ रहा जटाऊ भक्त हरि जोई॥ सीय कहे
देखि बिपत नभ सोई॥ हृदय बिचार करत अनुमा
ना॥ इह बर पतनि राम भगवाना॥ लिये जात पति
लंक सुरारी॥ अति प्रचंड रावण भट भारी॥ दसर
थ मित्र भक्त रघुराई॥ सो जटाऊ नभ मारग आई॥
रोकत भयो दनुज पथ बीरा॥ आब जबहिं सनमुख
खल धीरा॥ करि निन्दा मुख बिबिध प्रकारा॥

लग जटाऊ अस वचन उचारा॥ अहो बात विसय
अति भारी॥ उपज ब्रह्म कुल तुमहुं सुरारी॥ मुनि पु
लसत कर पौत्र उजागर॥ वेद पुरान पठित अति नागर॥
नीति मरम सब जानन हारा॥ इह कुकरम कस कीन हि
भारा॥ लखन राम विनु देखि सुरारी॥ सून सदन सीय
जात महतारी॥ हरि ले चल्यो उचित नहिं कीना॥ रा
म प्रताप प्रबल नहिं चीना॥ मखे गृह मांझ स्वान
हवि जैसे॥ लिये चुराय जात तुम तैसे॥ नृप वदेह
कन्या सीय माता॥ चोर चुराय धाय विख्याता॥ लिये
जाहु तुम मूढ हंकारी॥ सूझत नाहिं राम दनुजारी॥
अस कहि तासु वृद्ध पर कासो॥ रे सठ कपट भेद म
ति कासो॥ सोरठा॥ आज अखन जुत प्रान॥ मै तोरे
हत हौं समर॥ अरु भंजन करि जान सीय कहे दे कु
न जानि अब॥११॥ टीका॥ जब इसप्रकार रावण सी
ताजी को हर ले गया तब सो सीते व्याकुल भई हुई
आकाश के रसते ॥ बड़ा रोदन करती जाती है कहती
है कि हा प्राणपती हा प्यारे लखमण मेरी अब कौन
दशा होवेगी इसप्रकार विलाप करती है तब आकाश
के मारग ऐसे विलाप और महा कलेश को सुन
कर रघुनाथजी का भक्त जटाऊ जो था सो अपने हृ
दय मे विचार करने लगा कि इह तो भगवान राम
चंद्र महाराजजी की पतनी अथात स्त्री है महा प्रचंड
सूर बीर रावण जो है सो लिये जाता है ऐसे सोच
करके राजा दसरथ का मित्र रघुनाथजी का दृढ भक्त
जटाऊ जो है सो आकाश के रसते आयकर तिस देतों
के राजा महा बली रावण [illegible] को रोककरके सनमुख
होते हैं वरी ताड़ना से कहने लगा कि अहो बडी आ
चर्ज की बात है कि तुम रावण राजा ब्रह्म कुल मे उत
पन्न भया हुआ और मुनी पुलस्त का पोता बड़ा उजा
गर और वेद पुराणो के पढने मे अत्यंत चतुर और
नीती रीती को भलीप्रकार जानने वाला इतने गुणो
के होते हे रावण तैने इह कुकरम कैसे किया है इहते
री क्या बुद्धी है जो राम चंद्र और लखमणजी के विना॥

नाक और कानोसे हीन करके अत्यंत दरदशाते
पकडकर वनसे बाहर निकालदियाहै हेदैत पती देखो
तुमारे जीते मेरा कैसा अपमान भयाहै जो अब मेरा ज
गतमे जीना भी धृगहै विधाता मेरे ऐसे निरलज्ज प्राणों
के क्यों नहीं हरलेता॥ इसप्रकार सुरपनखाके अत से
कोपके अधिक करने वाले वचन सुनकरके रावनजोहै
सो ततकाल उठकर मारीच नामा दैत
के पास चला जाता भया॥२॥ चौपाई॥ निज कुल तासु
सकल समुझावा॥ लिये संग दंडक वन आवा॥ कपट
कुरंग तासु कल कीना॥ भेष अति त्यि आपु धरि लीना॥
सो मारीच नीच मृग कनका॥ देखत दृगन पुत्रि नृप
जनका॥ इत उत करहिं अटन वन माहीं॥ मगन
प्रमोद त्रास कछु नाहीं॥ कहा राम सन वदन बुझाई॥
देखहु दीन दयाल रघुराई॥ सुभ्रत हेम बरन मृग चारू॥
लिये ओट द्रुम विपन विहारू॥ हतहु कृपाल खाल रुचि
नीके॥ मंजुल मृदुल मोर प्रीय जीके॥ सि[illegible]य
रुचिमान भानु कुल भाना॥ गहिकर चाप बान संधाना॥
अनुजहि विवध भाँति समुझाई॥ कानन फिरहि अमर
गण भाई॥ एकल सियहि छाडि वन भवना॥ जनिनि
ज करहु आन तुव गवना॥ सोरठा॥ असप्रकार रघु
राय॥ लषनहिं बहुविधि वदन कही॥ चले आपु पुनि
धाय पाछिल कपट कुरंग प्रभु॥२॥ सो रावन मारीच
के पास आय करके अपना कुल जोहै सो तिसको संपूर्ण
समुझाय देता भया और तिसी काल तिसको साथ ले
कर दंडक वनको चला आया तहाँ आय कर तिस
को कपटरूपी सुन्दरहरन बनाया और आप अति
थी का भेष धारन कर लिया तव सो मारीच नीच सुन्दर
सुवरन का हरन बना हुआ इधर उधर निरभय
होकर आनन्दमे मगन हुआ जो फिरता था सीतेजी दे
ख कर रघुनाथ जीको कहने लगी कि हे दीनदयाल
देखिये कैसी सुन्दर शोभा वाला सुनेहरी रंगका मृग
वृक्षों की ओट लिये हुये वनमे विचरताहै जो

सरब प्रकार करके छीन एक खग जाती है तद्यपि
~~तेरे साथ मैं छाती धरकर लडूंगा~~ हे देवताउ के शत्रु
रघुनाथ जी के प्रबल प्रताप को हृदय धारन करके
तेरे साथ छाती जोड कर लडूंगा और सीताजी को
ना जाने देऊंगा ऐसे ताडना करके हृदे मैं रघुनाथ
जी का सुमरण करता हुआ आकाश को बडे वेग से उ
ड जाता भया और तहां से टूट कर अत्यंत कोप से
रावण के सीस को चरन का प्रहार जो दिया तब उ
स के दसो हीं मुकट पृथवी पर गिर जाते भये इस प्रकार
जब मुकट गिरे तब रावण महा क्रोध करता हुआ गृध
के साथ युद्ध करने मैं सावधान हो गया और अनेंक प्रकार के
बाण धनुष मैं जोड जोड कर छोड ~~[illegible]~~ ने लगा सो तिन
बानो ने यद्यपि गृधराज के अंगों को भेदन करके
महा खेद और श्रम भी दिया तद्यपि सो वीर एक नहीं
मानता भया और क्रोध करके पवन के तीव्र वेग समा
न उड कर चुंच और चरन और नखों से तिस के साथ
रण मैं युद्ध करने लगा तब अति हे प्रचंड बल करके बडा
वीर जटाऊ जो है सो तिस के रथ को भंजन करके पृथवी
पर गिराय देता भया ऐसे जटाऊ का प्राक्रम देख कर
असुरों का राजा महावीर रावन अपने हृदय मैं बडा आच
ज मानता ~~हुआ~~ हुआ भया ॥२२॥ ~~[illegible]~~ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥
कठिन क्रोध कर सर प्रहारत प्रचंड ॥ उरग जात फुंक
रत सु जनु वज्र खंड ॥ अमित बान यद्यपि असुर
नृप प्रहारे ॥ सो करि क्रोध खग बल सकल सर नि
वारे ॥ बहुरि तुंड निज वज्र गति कोप मारी ॥ भुजा
हीन कीन्यो दनुज प्रबल भारी ॥ जटिर गृध कर
परम प्राक्रम सुहावा ॥ विलोकत सकल लोक कर
चकित छावा ॥ रिस्यो दनुज जब निज भुजा खंड
देखी ॥ करी प्रकर नूतन तुरत बल बसेखी ॥ अ
नल बान संधान धनु तब प्रहार्‍यो ॥ दगध पंख
खग बृध करि धरन डार्‍यो ॥ सोरठा ॥ चल्यो आ

और [illegible]

पु पुनि धाय॥ सीय कहे सिंधन राखि निज॥ इन वि
हंग मुरछाय॥ प्राण कंठ गत विपत मन॥२२॥
टीका॥ जब इसप्रकार जटाऊने तिसको प्राक्रम दिखा
या तब रावण अत्यंत कोपके वश होकर गृद्धराज
पर ऐसे वाण छोड़ने लगा किमानो फुंकारे मार
ते हुये सरपों के समूह चले जाते हैं यद्यपि
वज्रके समान तिसने अनेक ही वाण मारे त
द्यपि कौतुकसे गृद्धराज ने सब ही निवारण कर
दिये ~~फिर कोपसे तीव्र ... के वेग समान उड़कर~~
फिर कोप करके वज्रके समान चुंच जो मारी तो दै
तराज को भुजासे हीन करदिया ऐसे गृद्धरा
जका महा प्राक्रम देखकर सब लोग आचरज को प्रा
पत होगये तब रावणने अपनी भुजा हीन भई
जो देखी तत्काल ही अपनी मायासे नई उत
पन्न करके कोपसे अगन वान जो मारा तो
तत्काल खगराज के पंख जो हैं सो संपूर्ण जलगये
और पृथ्वी पर गिरपड़ता भया जब इसप्रकार ज
टाऊ गिर गया तब रावन सीतेजीको रथ पर बि
ठाय कर आकाश के मारग लंकाको चला जाता
भया॥ और इहां जटाऊ प्राण कंठमें आये हुये
मूर्छा गत भया हुआ ~~... बिलाप करके पड़ो~~ वियाकुल पड़ा रघुनाथजी
का सुमरण करताहै॥२२॥ चौपाई॥ आवहिं कब
कृपाल रघुराई॥ तिन कहे सकल वृतांत सु
नाई॥ तजहुं प्राण अस हृदय विचार हीं॥ प्र
भु आगमन प्रति स्वास चितारहीं॥ तब रघु
वीर सहित निज भ्राता॥ आये विपुल ~~...~~
~~...भ्राता~~ धेनु सुर त्राता॥ सो जत सीय हि
विपुन दउ वीरा॥ सिथल सरीर विकल गत

धीरा॥ सोरठा॥ देखा लखन प्रवीन॥ वंध्याचल गिरि शृंग पर॥ गृद्ध पंख बल हीन॥ मारग पर्यो अशक्त गती॥२४॥ टीका॥ तब जटाऊ वाल्मीकी अगनसे जला हुआ कहता है कि कृपाके धाम रघुनाथजी महाराज इहां कब आवें तो तिनको मैं सारा वृतांत सुनाय कर इन अपने प्राणोंको त्यागूं इस प्रकार जटाऊ जो है सो रघुनाथजीके आगमन को स्वास स्वास मै चिंतन कर रहा था इतनेमैं सीताजीको खोजते हुये खोजते चित्तसे उदासीन सिथल और व्याकुल भये हुये रघुनाथजी महाराज अपने भ्राता लछमणजीके सहित तहां आय प्रापत भये तब लछमणजी क्या देखते हैं कि वंध्याचल परवतके शृंग पर सो जटाऊ जलेहुये पंख और शक्तसे रहित महा दीन और दुखी होकर मारगमें पड़ा है॥२४॥ चौपाई॥ सोच विचार करत करत मन माहीं॥ कहत सुनहु प्रभु राम गुसाईं॥ कै कबंध गति वपुख कराला॥ पर्यो रोकि मारग जन घाला॥ निकर तासु जब लखन सिधार्यो॥ राम राम मुख रटत निहार्यो॥ जाना राम भक्त इह कोऊ॥ तहिपै आय भ्रात चलि दोऊ॥ ज्ञान अज्ञान निपुण रघुवीरा॥ पूछन लगे कवन तुव धीरा॥ इहि थल पर्यो हेतु कहि भाई॥ देहु वृतांत सकल समुझाई॥ घायल पच्छ हीन अति दीना॥ अस दुरदशा तोर कहि कीना॥ राम वचन सुनि श्रवणन नीका॥ बोला गृद्ध विणत अति जीका॥ सोरठा॥ तुम हो कवन प्रवीन॥ एकल कानन फिरहु जुग॥ तब अननत मुख कीन॥ बरणन सकल वृतांत निज॥२५॥ टीका॥ तब लछमणजी अपने मनमै बड़ा सोच और विचार करके रघुनाथजीको कहने लगे कि हे दीन दयाल इसे देखिये इहां कोई बड़ी भारी देह वाला विकाल रूप कबंध

सूनी कुटिया देखकर संपूर्ण जगत की माता सीता जो है
तिस को हर करके ले चला है हे रावण रघुनाथ जी का
महा प्रबल प्रताप तेरे को देख नहीं पड़ता जैसे यज्ञ वाले
घर से दीर को चुरायकर कुत्ता लिये जाता है तैसे तूं ज
नक वदेह की कन्या सीता माता को चोर की न्याईं चुरा
य करके लिये जाता है तेरे को दैतों की कुल के नष्ट
करने वाले राम चंद्र महाराज नहीं सूझते हैं ऐसे क
हि करके जटाऊ तिस को ललकारता भया कि हे कपटी
और दुर्बुद्धी वाले महा मंद रावण तूं अब सावधान हो
कर मेरे सनमुख स्थित हो मैं आज इहां धोड़ों के सहित
ते तेरे को प्राणों से रहित करूंगा और तेरे रथ को
भी चूर करके सीत जी को कदाचित नहीं जाने देऊंगा॥
२२॥ चौपाई॥ करहु मोहि सन समर लराई॥ जैतुब
सूर सुभट खलराई॥ यद्यपि जरा ग्रस्त गत याना॥
त्रिशूल शूल आयुध नहिं पाना॥ सब विधि दीन हीन
खग जाती॥ तद्यपि लरहुं समर धरि छाती॥ सीय
हिं जानि नहिं देहुं सुरारी॥ राम प्रताप प्रबल उर
धारी॥ अस कहि उड्यो गगन खग धीरा॥ हृदय कृ
पाल सुमरि रघुवीरा॥ तहां चरन खल सीस प्रहा
र्यो॥ कलित क्रीट धरनी पर डार्यो॥ गिरे मुकट त
व रावण क्रुद्धा॥ लाग्यो करन गृद्ध सन युद्धा॥
पवि बान संधान करालो॥ छादित भयो दनुज वल
पालो॥ लागे गृद्ध राज तन जाई॥ भेदन अंग की
न समुदाई॥ यद्यपि भयो खेद स्रम वाना॥ तद्यपि हृ
दय धीर नहिं माना॥ दारुण क्रोध करत नभ जाई॥
तीव्र समीर वेग अधिकाई॥ चरन चुंच नख आयुध
संगा॥ लग्यो करन मारथ महि रंगा॥ सोरठा॥ दा
रुण प्रचंड बल वीर॥ धरनि गिरायो भंजि रथ॥ रा
वण सुभट सुधीर॥ देखि असुर विसमय भयो॥ २२॥
टीका॥ फिर जटाऊ कहता है कि हे रावण आ मेरे
साथ रण में युद्ध कर मैं यद्यपी वृद्ध और रथ से हीन
भी हूं और त्रिशूल इत्यादि शस्त्र भी नहीं रखता हूं

हित दी को है हति कि विन रहि ति

अस वानी॥ प्रभुपें गृद्ध वृद्ध तुम कहिऔ हे रघुवीर मोर सुधि लहिऔ॥ इह वृतांत कहस्रत निधि मोरा॥ धन्य भाग दरसन प्रभु तोरा॥ दुर्लभ में संत सुरन मुनि जोई॥ मो कहें आज सुलभ भयो सोई॥ अव कृपाल निज किंकर जानी॥ सनमुख रहहु मोर धनु पानी॥ सोरठा देखत दरस तुमार॥ नाथ तजहुँ प्रानमें॥ तव मोहि सकल प्रकार होहिं निज कुशल संशय नहीं॥२६॥ टीका॥ तव लछमणजी के मुखसे वृतांत सुनकर जटाऊ जो हे सो परम आनन्द को प्रापत हो जाता भया और नेत्र खोलकर, वडी नम्रवानी से ~~कहने लगा~~ धीरज धारकर कहने लगा कि हे नाथ मे ~~मृत्युको प्राप्त हो जाता हुं और~~ अगन वाण करके जला हुआ दीन और वलसे हीन हो रहाहे वोलनेकी शक्त नहीं रखता हे तथापि ~~कुछ~~ संतोष करके कुछ कहता हे किमे गृद्ध खग जाती जटाऊ नाम करके प्रसिद्ध हूं इहो आकाशके मारग देवतोंका शत्रू वडा अभिमानी और महा मद रावन सीतेमाता जीको लिये जाता जो देखा तो मेने कोप से उड करके तिसको वज्रके समान ~~कठिन~~ एक चोंच मारी और रथको तोड़कर भुजासे हीन करके मुर्छीय करके पृथवीपर गिराय दिया तव तिसने अपनी मायासे तुरत नई भुजा रच कर एक ऐसा अगन वान मारा कि जिससे मेरे संपूरण पंख जलगये और मे इहो पृथवी पर गिर पडा हे ~~[illegible]~~ और सो अधम रावन सीते जीको रथपर वेठायकर आकाशके मारग लंकाको लै गयाहै हे नाथ मेरे को वाण के श्रम और पीडा करके अव तक कुछ सुधि नहीं हे परन्तु इह जानताहूं कि जाती वेर सीते माताजीने वडे रोदन और विलाप से ऐसे कहाथा कि हे जटाऊ रघुनाथजी से कहना कि दीनद्याल मेरी वेग सुधि लीजिओ इस प्रकार इह मेरा वृतांत हे और मेरे धन्य भाग्य हैं कि जो आपका

[Margin, right:] दिया जीव लिये ताते ऐसी [illegible]

[Margin, left:] जव सीताजीने रोदन और विलाप करती हुईको

दरसन संत और मुनी ऋषियों कोभी दुर्लभ है सोमै ने आज नेत्र भर के सहजे ही पाया है अहे कृपा निधान मेरे को दीन और किंकर जान कर इन नेत्रों के सनमुख ही रहो जो मै आपका दरसन करता हुआ प्रानों को त्याग कर सुन्दर कल्यान को प्रापत होजाऊं॥ १६॥ चौपाई॥ परम प्रेम मय वचन सुहाये॥ सुनत गृद्ध राम मन भाये॥ अनन्य भाव तहि प्रीति निहारी॥ कोमल भये भक्त दुख हारी॥ करुना रोम रोम तन छाई॥ सजलनेन पावन रघुराई॥ कीन सपरस तासु निज पाना॥ भयो तुरंत खेद श्रम हाना॥ राम राम तव हृदय चितारी॥ गयो गृद्ध वैकुंठ सिधारी॥ जब जटाऊ निज प्रान तयागे॥ तब रघुवीर रुदन करि लागे॥ विरहे भक्तकर पीडत भारी॥ लोकिक करनि कीन प्रभु सारी॥ इंधन विपुल लखन चुनि ल्याये॥ राम करत निज चिता बनाये॥ सलिल सनान देत रघुराया॥ कीनहि दग्ध भक्त निज काया॥ सादिर वहुरि तिलोजलि दीना॥ विधि वत मृतक करम प्रभु कीना॥ देउ ऋषि विपुन जवन मुनि रहे ऊ॥ देखि चरित विसमय सब भये ऊ॥ नीच गृद्ध खग मांस अहारी॥ होत भक्ति वस जास खरारी॥ अति कृपाल प्रभु सद गति दीना॥ राम प्रभाव जाय नहि चीना॥ जप तप जोग जतन वहु साधन॥ गति अनन्य भगवान अराधन॥ करहि जोगि मुनि सिद्ध गयानी॥ संत साध द्विज तपस अमानी॥ ते भगवान पाव नही ध्याना॥ यद्यपि करहिं यतन हठ नाना॥ सोरठा॥ सो प्रतक्ष भगवान॥ स्थित सनमुख निज देखि दृग॥ तजत गृद्ध वर प्रान सद गति कहे प्रापत भयो॥ टीका॥ इस प्रकार भक्ती

और प्रेम के भरे हुये बडे नेम्र वचन जटाऊ के सुनकर रघुनाथ जी महाराज तुरत कोमलचित होगये और मन मे अती करके दया उतपन्न हो जाती भई नेत्रों मे प्रेम रूपी जल भरे हुये तिसके शरीर के हाथका स्परस जो किया तो ततकाल बाणका खेद और स्रम जोथा सो सब मिट गया और राम राम उचारण करता हुआ रघुनाथजी के सनमुख शरीर को त्याग कर वैकुंठ को चला जाती भया जब इसप्रकार जटाऊ ने प्राण त्याग दिये तब भगवान भक्त की विरहे के वश भये हुये मानुष्यों की न्याई रोदन करने लगे तिस ते उपरंत लछमण जी जायकर वन से लकडियां लेआये और रघुनाथ जी अपने हाथों से तिस जटाऊ भक्त की चिता वनाय कर और तिस के शरीर को भलीप्रकार सनान देकर दाह करदेते भये और फिर बडे सनमान से तिलो जली देकर तिसका मृतक करम भी विधी पूर्वक भगवान आपही करते भये इसप्रकार रामचंद्र महाराज जी की भक्त पर प्रीती और सनेह देखकर जहां लग दंडक वनके मुनी रिषी रहे सो सब आचर्ज को प्रापत होकर कहने लगे कि देखो इह गृद्ध खग जाती और नीच सदेव मांस का अहार करने वाला सो खर दूखन के वध करने वाले भगवान तिसकी भक्ती के वश होकर कैसी सुन्दर गती को प्रापत कर देते भये हैं सो तो रघुनाथ जी महाराज की अगाध महिमा है तिस के जानने को कोई भी सामर्थ नहीं है जोगी मुनी सिद्ध और संत साध तपस्वी जो हैं सो जप तप आदि अनेक साधना करके इकाग्र बृती से भगवान का आराधन करते हैं परन्तु तिनके ध्यान मे नहीं आवते सो ऐसी वडभागी जटाऊ तिस प्रमातमा को प्रतक्ष सनमुख देखता हुआ प्राणों को त्याग कर सुन्दर गती को प्रापत हो जाता भया॥ ७॥ चौपाई॥ इहि सम नाहिं आन वडभागी॥ दर सत राम प्राण जिन त्यागी॥ धरम अवधि दसरथ नृप रहे जो॥ उदय भाग अस तासु न भये जो॥ ताते

को नयाई मारगमे पड़ाहै ऐसे कहिकर जबलय मणजी तिसके पास गये तबतिसके मुखसे राम राम शब्द निकलता हूआ देखकर जाना कि इह कोई रघुनाथजीका भक्तहै इतनेमे दोनो भाई तिसके पास चले आये तब अजीन वारता के जानने वाले बड़े चतुर रघुवीर जीमहाराज तिसको पूछने लगे कि है वीर तूं कवनहैं और इस स्थानमे क्योंकर पड़ाहैं और तेरी इह कैसी दशाहै किसने तेरेको पक्षहीन करके ऐसे कलेश को प्रापत कियाहै मेरेको अपना वृतांत सुनाओ ऐसे रघुनाथ जीका वचन सुनकर सो चिंतकरके व्याकुल भया हूआ जटाऊ कहने लगा कि पहिले तुम अपनी कहो कि तुम कौनहो ॥ जो इहां वनमे दोनो अकेले फिरतेहो तब लषमणजी तिसको अपना सारा वृतांत कहि सुनावते भये ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ सुनत लखन मुख वचन सुहावा ॥ परम आनन्द गृद्ध उर छावा ॥ खोले नैन धारि उर धीरा ॥ सनमुख देखि शाल रघुवीरा ॥ कहा गृद्ध प्रभु मे बलहीना ॥ पावक बाण ग्रसत अति दीना ॥ शब्द प्रमाण शक्ति नहिं राखहु ॥ तदपि कछु संक्षेप कहि भाखहु ॥ नाम जटाऊ गृद्ध खग जाती ॥ गगन पेष सठ देव अराती ॥ रावण सीयहिं जात लियदेखो ॥ हेकु रत अभिमान कपट धरि भेखो ॥ ~~उड़त व्योम मुख मलहिं प्रचारी~~ ॥ विलपत विपत विदत दुख भारी ॥ मे कृपाल सीय मातु निहारी ॥ उड़त व्योम मुख मलहिं प्रचारो ॥ कठन चुंच निज तास प्रहारो ॥ सिंधन भंजि कीन भुजहीना ॥ परो धरणि मुरछित खल दीना ॥ तूतन तुरत बाहु रचि मूढा ॥ मारो अनल बान मोहि गूढा ॥ जरे पक्ष तब धरणि गिराना ॥ सीयहिं लेत सठ गगन उड़ाना ॥ गयो लेक कहै धाय सुरारी ॥ मे प्रभु मानि बान श्रम भारी ॥ परो विकल मुरछित महि माहीं ॥ मोरे अजहु नाथ सुधि नाहीं ॥ चलतीं बेर विपत सीय माता ॥ विलपत कहिस वैदेन

५७

57

॥ संसृति सुजस भरन सुख कारी॥ पूरब एक अजुध्या माहीं॥ सरब सुखद सब जीव काहीं॥ रह्यो महान राज ऋष नागर॥ अंबरीष जहि नाम उजागर॥ सुकृति सुजस रूप जग त्राता॥ निरधन धरनि धेनु दुज त्राता॥ दयानिधान नीति मति नागर॥ विभो प्रचंड सकल गुण सागर॥ प्रजा समूह जास महि पाला॥ संकुलं वृद्ध तरुन अरु बाला॥ नित्य नेम इत्यादि सुकरमा॥ सरब परायण निज निज धरमा॥ एकादशि व्रत पावन जोई॥ राखहि सकल भक्ति रत होई॥ हिंसा कूर कपट छल त्यागी॥ रहहिं समरथ राम नित लागी॥ समय एक छिति पति उपकारी॥ एकादशि मंजुल वृत धारी॥ बैठि अपोषत भगवन मंद्र॥ निज कुटंब जुत धरम धुरिन्द्र॥ भयो करत जागरन निसि सारी॥ वैस्नव भक्त भूप व्रत धारी॥ द्वादसि दिवस प्रात जब भयेऊ॥ उठि स्नान हित सरोवर गयेऊ॥ नित्य नेम मज्जन करि ताहीं॥ बहुरि मंद्र आयो नर नाहीं॥ सोरठा॥ सहित प्रीति सनमान॥ हरि पुनीत पद मदम रत॥ बैठि महीप सुजान॥ लाग्यो सुचि पूजन करन॥ २॥ टीका॥ अग्यान के प्रकाश करने वाले गुरु महाराज जी के चरन कमलों पर प्रणाम करके अंबरीष की पवित्र गाथा बड़ी प्रीती और सनमान से गायन करने लगे कि हे गुरदेव स्वामी यह कैसी गाथा है जो बड़ी शोभाय मान और शोक भय आदि सरब कलेशों के दूर करने वाली और सुन्दर सुजस और मंगलों के देने वाली है कहते हैं कि पूर्व काल मे अजुध्या विखे एक अंबरीष नाम करके बड़ा चतुर राज ऋषी होता भया सो कैसा था कि सरब लोकों मे उजागर बड़ा सुकरमी सुजस और धरम की मूर्ती गौ ब्राह्मण और दीन जनों की पालना करने वाला दया की नधी और नीती के जानने वाली

महो प्रतापी और गुणोंका समुद्र था और तिसकी सं पूर्ण प्रजाभी स्त्री पुरुष बालक वृद्ध नित्य नेम धरम सु करम मे भली प्रकार परायण थी और एकादशी का पवित्र जो व्रत है सो सबकोई प्रीती और भक्ती पूर्वक रखता और हिंसा आदि कपट छल को त्याग करके भगवान के सुमर्ण मे नित्य लगे रहते थे तब एक समय सब उपकार की मूरती सो राजा अपने कुटंब के सहित एकादशी का व्रत धार करके भगवानके मंदिर मे बैठ करके रात्रीको जागरन करता भया इस प्रकार जब तिस वैष्णभक्त राजा को भजन और कीर्तन करते हुये रात्री बीत गई तब प्रात काल द्वादशी के दिन उठकर स्नान के वास्ते स रोवर को चले गई तहां नित्य नेम आदि सब करम करके फिर समाज के सहित नारायण के मंदिर मे आ य कर बडी प्रीती और भक्तीसे भगवान के पवित्र चरन कमल हृदयमे धार कर पूजन करने को बैठ जाते भये ॥१॥ चौपाई॥ पावन प्रेम प्रीति मन माहीं॥ परिहरि ध्यान आन गति नाहीं॥ सायंकाल समय तब ताहां॥ मुनि गण निपुण प्रवर मुनि नाहां॥ दुरवासा मुनि ज्ञान निधाना॥ शिष गण लिये संग निज नाना॥ आय भवन वर प्रापत भयेऊ॥ पूजन करत नृपति जहां रहेऊ॥ निकट शिषन जुत मुनि कहं देखी॥ उठे भूप उर हरष वसेखी॥ पूजन कीन पंच उपचारा॥ प्रेम भक्ति जुत विधि वत सारा॥ नेमत बहुरि जुगल कर जोरी॥ कहत वचन उर प्रीति नथोरी॥ महाराज कछु आयस करहो॥ मन वच करम दास अनुसरहो॥ धन्य भाग मोरे जग आजू॥ जास भवन तुव मुनिन समाजू॥ आय दीन मोहि सुजस वडाई॥ इह तुमार करुणा मुनि राई॥ दोहा॥ वचन वनीत सप्रीति रत सुनत वदन महिपाल॥ बोले परम प्रसन्न मन मुनि सत्यम जनपाल॥२॥ टीका॥ तब राजा अतेसे प्रेम

करके भगवानके पूजनमे जो लीन था इतनेमे सायंकाल
के समय शिष्योंका समूह साथ लिये हुये मुनियोंमे सूर्य
और ज्ञान ध्यान की निधी दुरवासा मुनी जो थे सो
~~भये जिस भवनमे राजा~~ तहां आय प्रापत भये तव शिष्योंके
सहित मुनी को देखकर राजा वड़ा हरष मान कर उठ खड़ा
हुआ और दंड प्रणाम करके विधिवत पंच उपचार से पूजन
करता भया फिर नम्र वानीसे दोनो हाथ जोर कर वड़ी प्रीती
पूर्वक विनती करने लगा कि हे दीन नाथ कुछ आज्ञा क
रिये मै मन वचन काया करके आपके चरनो का सेवक
हूं और आज मेरे धन्य भाग्य हैं जो आपने वड़ी अनुग्रह
करके इनसब मुनियोंके समाज के सहित मेरेको ईहां
घरमे आयकर दरसन दिया है और संसारमे कीर्ती
मान और कृतार्थ रूप कर दिया है इसप्रकार राजा की
कोमल वानी सुनकर मुनी महाराज वड़े आनन्द को
प्रापत होकर जिस प्रकार कहने लगे सो आगे क
थन किया जाता है॥२॥ चौपाई॥ पूरव दिवस सुन
हु ऋषि राजा॥ सहित निकर निज शिषन स
माजा॥ एकादशि वृत पारन वन जोई॥ निराहार
धासो हम सोई॥ तहितें आज
विमूखत सारे॥ अन्न जाचना हेतु तुमारे॥ आय
भवन करि गवन नरिन्दा॥ करहु प्रतोष चारु
मुनि वृन्दा॥ सुनि मुनि वचन भूप अनुरागे॥ नम्रत
वचन भनन अस लागे॥ अहो भाग वड़ मोर कृपाला
प्रभु करुणा निज कीन विशाला॥ आये भवन
मोर अव जावहु॥ करि सनान संध्यादिक आव
हु॥ भोजन सपदि नाथ वनि जाई॥ जेवहु शि
षन सहित प्रभु आई॥ नृप मुख सुन्यो वचन अ
स जवहीं॥ गवने मुनि सनान हित तवहीं॥ ईहां
नृपति निज पाचक जोई॥ अति विदगध रचना
निज सोई॥ वोलि महीप वदन समुझाये॥ व्यंजन
रचहु विविध मन भाये॥ तिन्हें नृपति अनुसासन

सरव जीव सुख दाई॥ राम भक्ति वर रुचिर सुहाई॥
नीच निषिद्ध गृद्ध खग जाती॥ क्रिया तासु रघु वर
सब भाती॥ आपु कीन संजुत सनमाना॥ भक्ति विवस
ठाकर भगवाना॥ ऊच नीच को राम न भाखा॥ केवल
भक्ति प्रेम मुख राखा॥ सोरठा॥ अस कहि मुनि समुदाय॥
गृद्धहिं विबध प्रसंसि मुख॥ निज निज चले सिधाय॥
सुमरि राम सिय लखन मन॥ [illegible]॥ टीका॥ फिर ऋषी
कहते हैं कि इस जटाऊ के समान और कोई संसार मे ध
न्य नहीं है कि जिसने रघुनाथ जी के सनमुख शरीर को
त्यागा देखिये कि राजा दसरथ संसार मे एक धरम की अ
वधी थे परन्तु ऐसे उदय भाग उनके भी नहीं भये
तो ते सरव सुखों के देनेवाली रघुनाथजी भक्ती
हीं श्रेष्ठ है कि जिसके प्रभाव से तिस नीच जाती गृद्ध
की संपूर्ण किरया बडे सनमान से भगवाने आप हीं
करी है इससे जाना जाता है कि रघुनाथजी केवल भक्ती
के हीं वश है ऊच नीच भगवान के आगे कोई नहीं है
नारायण को भक्ती और प्रेम हीं प्यारा है इस प्रकार
कथन करके संपूर्ण मुनी सीते राम और लछमणजी
का सुमरण करते हुये अपने अपने आश्रम को चले
गये॥ [illegible]२८॥ इति श्री मन महाराजाधिराज जंमू
काश्मीराद्यनेक देशाधिपति प्रभु वरा ज्ञप्त विरचिते
भाषा टीकायां जटाऊ चरित्त्र वरणनें नाम सरगः

अथ अंबरीष चरितं

सोरठा॥ गुरुव ज्ञान प्रकास नाय सीस पंकज चरन
नंमृत नाभादास अंबरीष पावन कथा॥ चौपाई॥
सादिर कहत वदन निज गाई॥ महाराज इह कथा
सुहाई॥ भीत कलेश शोक भ्रम हरनी॥ सद्या भक्ति
विवरधन करनी॥ मंगल मूल सूल सब हारी॥

राजा का अपरोहित आय करके कहने लगा कि हे पृथवी
नाथ आज द्वादशी जो है सो थोरी है तांते मेरी इह
विनती है कि आप व्रत को पारन करिये नहीं तो आप
को व्रत वृथा हीं जावेगा हे राजन धरम शास्त्र की भी एही
आज्ञा है कि द्वादशी को वृत पारन करने से संपूर्ण ज
प तप भजन और साधन निसफल हीं जाता है इस
प्रकार अपरोहित का वचन सुनकर अंबरीष भू
पाल जो है सो अतिसको उत्तर देता भया॥२॥ चौपाई॥
कहि प्रकार वृत पारन करहीं॥ आपन धरम नाहिं
परिहरहीं॥ दुरवासा ऋषि ज्ञान निधाना॥ मुनि
सत्यम तप पुंज अमाना॥ लिये संग शिष्य मक्त जन
समुदाई॥ भये अतथि वत आपत आई॥ सो मेकी
न निमंत्रण तासा॥ गये सनान हेतु तप रासा॥
तांते अब विनु तिनहिं जिमाये॥ मोपे भोजन
कियो न जाये॥ इहि मे जवन बात कल्याना॥ सु
खद रुचिर हित मोर सुजाना॥ सो कृपाल उर
मलहिं विचारी॥ मोरे करहु कथन वृत धारी॥
अपरोहित सुनि छित पति वचना॥ धरम युक्त
मंजुल मृदु रचना॥ कहा सुनहु महिपति एहि
माहीं॥ सत्य कथन तुव संशय नाहीं॥ विनु जि
माय मुनि भोजन करना॥ नाहिंन उचित तुमहिं पति
धरना॥ पे नरेस रत्ता व्रत कारी॥ पादोदिक हरि दूख निवारी॥
पावन पान करहु तुव सोई॥ तो प्रतीत पारन व्रत हो
ई॥ इहि ते जाहिंन धरम तुमारा॥ होहि रुचिर हित
सरव प्रकारा॥ अपरोहित सुनि वचन प्रतीती॥
सादिर तुरत राऊ रत नीती॥ पावन पादोदिक
हरि जोई॥ किंचित कीन पान नृप सोई॥ ताहि
काल मुनि सत्यम आये॥ देखि भूप गति हृदय
रिसाये॥ जाना नृपति क्रोध मुनि कीना॥ नम्र त
जोरि जुगल कर दीना॥ कहत कृपाल छमहु अ
पराधू॥ सदा सुशील तुमहु जग साधू॥ सोरठा॥

मे व्रत रक्षा हेतु॥ इह हरि चरणामृत रुचिर॥ सुनहु मुनिन कुल केतु॥ कीन पान किन्चत प्रभू॥४॥ टीका॥४॥
राजा कहता है कि हे गुरुजी मै व्रत को किस तरै से पारन करूं अपना धरम जो है सो नहीं त्याग सकता हूं॥
दुरवासा मुनी ज्ञान की निधी मुनियों मे स्रेष्ट तप के पुंज मान से रहित शिष्यों का समूह साथ लिये हूये अतिथी की न्याई मेरे घर मे आय प्राप्त भये सो मैने तिन को निमंत्रण किया अर्थात भोजन करने को कहा अब वे तप की निधी स्नान करने के वास्ते गये हूये हैं तांते तिन को जिमाय विना मेरे से कैसे भोजन किया जाता है हे अपरोहित इस मे जौनसी वारता मेरे हित और कल्यान की सुखदायक होवे सो भली प्रकार विचार कर मेरे को जणाय देवो ऐसे धरम करके युक्त और सुंदर कोमल वचन राजा का सुन कर अपरोहित कहने लगा कि हे राजन तैने सत्य कहा है इसमे कुछ संशय नहीं है मुनी के जिमाय विना तुम को भोजन करना योग्य नहीं है परन्तु मै इतना कहता हूं कि व्रत की रक्षा के वास्ते भगवान का चरणामृत जो सरब कलेशों के दूर करने वाला है सो कुछ पान कर लीजिये इस मे तुमारा व्रत पारन प्रतीत हो जावेगा और धरम भी नहीं जावेगा॥ सरब प्रकार करके तुमारा हित ही होवेगा ऐसे अपरहित का वचन सुनकर राजा बडे सनमान से भगवान का पवित्र चरणामृत जो है सो किंचत पान करलेता भया तिसी समय मुनियों मे स्रेष्ट दुरवासा मुनी जो हैं सो स्नान करके तहां आय गये और राजा का कृतव्य देख कर के परम क्रोध को प्राप्त हो जाते भये तब राजा ने जान लिया कि मुनी के चित्त मे कोप हो गया है तत काल हाथ जोड़ कर और सनमुख स्थित होकर नम्र वानी से विनती करने लगा कि हे कृपा निधान आप संत महात्मा सदैव प्रीति रूप हो मेरा इह अपराध क्षमा करिये जो मैने व्रत की रक्षा के वासते कुछ किंचत मात्र

११९

भगवानका चरणामृत पान करलिया है कोई जान
बूझकर आप की अवज्ञा नहीं करी है॥४ चौपाई॥
सुनि मुनि नृपति वदन अस वानी॥ कोपित कठिन
दंड गहि पानी॥ भुजा उठाय भूपपें धाया॥ क्रोध
विवस कंपत सब काया॥ समय ताहि नृप भवन
मझारा॥ भयो अतसे कोलाहल भारा॥ अंबरीष
तब जुग कर जोरी॥ नम्रत विनय कीन नहिं थोरी॥
बहुरि स्थिर निज आसन होई॥ बैठ्यो हृदय दोभ
रिस खोई॥ तब नरनाथ करन रखवारी॥ चक्र चार
हरि भीत निवारी॥ आय भयो प्रापत तहि काला॥
देखि रूप मुनि त्रासु कराला॥ उरपत विथत करत
अनुमाना॥ निश्चय हतहिं मोर इह प्राना॥ अस वि
चारि मुनि चल्यो पराई॥ बहिर भेद्र तब भूपति
आई॥ देखा जाहिं अग्र मुनि भागा॥ पाछिल चक्र
जात हरि लागा॥ सो प्रचंड जनु काल समाना॥ ग्रा
सत सकल चराचर नाना॥ देखत तासु त्रास मुनि
पाई॥ भयो शरण विधि प्रापत जाई॥ पाछिल तासु
चक्र हरि जोई॥ आवा तेज पुंज जनु सोई॥ विधि पाव
क सम तासु निहारी॥ मुनिहिं अग्र निज लीन वि
ठारी॥ होत न वृत्य नाहिं जब देखा॥ चक्र रूप
धृत भीम बसेखा॥ तब चतुरानन करत विचारा॥
मुनिहिं लेत वैकुंठ सिधारा॥ सोरठा॥ रमानाथ
तब जान॥ चक्र त्रास बस मुनि विथत॥ तहि र
ता जीय मान॥ लैआये इत कमल भव॥५॥
टीका॥ तब इसप्रकार राजाकी बानी सुनकर
मुनी जो हैं सो महा कोपसे बड़ा कठिन दंड हाथ
मै पकड़ कर और भुजा उठाय कर कोपता हु
आ राजा पर धावता भया तिस समय मुनीका
कोप देखकर राजाके भवनमे अत्यंत शोर और
हाहाकार पड़गया तब अंबरीष महीपाल

लीने॥ भोजन रुचिर अमिय सम कीने॥ तब नरेस
अपरोहित आयो॥ तास वदन अस वचन सुनायो॥
छितपति आज द्वादशी थोरी॥ ताते सुनहु विनति
अस मोरी॥ आपु सपदि व्रत पारन करहू॥ मोर वचन निश्चय जिय धरहू॥ नतर जाय व्रत व्यर्थ
तुमारा॥ साधन भजन जतन जप सारा॥ धरम शास्त्र
कर आयस एहू॥ एकादशी व्रत धारत जेहू॥ द्वाद
शी कहे पारन जब होई॥ निसफल जाय तास व्रत सोई॥
सोरठा॥ अंवरीष महीपाल॥ अस अपरोहित वचन सुनि॥
बोल्यो वदन रसाल॥ सुनहु विप्रवर वचन मम॥३॥ टीका॥
मुनी दुरवासा जी कहते हैं कि हे अंवरीष ऋषीराज
पूर्वले दिनसे हमने संपूर्ण शिष्यों के सहित बड़ा
पवित्र एकादशी का जो व्रत है सो निराहार धारन कि
या था तिसतें आज सब संत क्षुध्यत भये हुये अन्नकी
कांक्षा करके तुमारे घरमै चले आये हैं हे राजन अब तुम
इनको सुन्दर भोजन जिमाय कर भली प्रकार संतुष्ट
करो ऐसे मुनी का वचन सुनकर राजा प्रेम करके
मगन भया हुआ नम्रवानी से कहने लगा कि हे दीन
याल मुनी महाराज मेरे अहो भाग्य हैं जो आपने मेरे
पर ऐसी अनुग्रह करी है और घरमै आयकरके दरसन
दिया है ताते अब कृपानिधान सनान करनेके वास्ते
जाइये और सनान संध्यादिक करके ततकाल आय
कर संपूर्ण संतोके सहित भोजन पाइये आपकी कृपा
से शीघ्रहीं सब कुछ वनजावेगा इस प्रकार राजाके
मुखसे वचन सुनकर मुनी जो हैं सो सनान करनेको च
लेगये और इहां राजा अपने चतुर पाचक अर्थात रसोई
वनाने वालोंको वुलाय कर कहने लगा कि भाई अब तुम
अनेक प्रकार के सुन्दर व्यंजन जो हैं सो अपनी चतु
राई सें शीघ्रहीं वनाओ क्योंकि दुरवासा मुनी शिष्योंके स
हित भोजन करनेके वासते आये चहते हैं ऐसे राजा
की आज्ञा पाकर अंब्रत के समान नाना भोजन और
व्यंजन जो हैं सो ततकाहीं वनाय लिये इतने मै

मोर आयस वस होई॥ रहा भक्त मम भूपति जोई॥ र
क्षा हेतु तास निधि शीला॥ कोपित चक्र कीन असँ लीला॥ तद्यपि कहहुं जतन अस तोरे॥ लिये संग मु
नि संजुत मोरे॥ राजहिं अंवरीष नृप जाहीं॥ चल
हौ विरंचि सकल मिलि ताहीं॥ क्षमिहैं ते मुनीस
अपराधू॥ नृप संतोष शील रत साधू॥ चक्र महान
वेग दिस दारुण॥ सोई नृपति वर करहिं निवारण॥
सुनि धाता कमला पति वानी॥ सुभ्र सुखद करुणा
हित सानी॥ हरि समेत वैकुंठ तयागी॥ आय धर
नि तल मुनि हित लागी॥ भये नरेस द्वार थिर आई॥
धाता चक्र विष्णु मुनि राई॥ तहां नृपति मंजुल वृति
संता॥ ताहि ध्यान तद काल प्रजेता॥ परि हरि दृवित अ
न्न अरु वारी॥ रह्यो रुचिर मुनि पेष निहारी॥ जव
लग सो मोरे गृह ~~नाहीं~~ आई॥ मन प्रसन्न भोजन
नहीं पाई॥ सोरठा॥ तव लग जेवहुं नाहि॥
मै भोजन प्रण सत्य मम॥ अस विचारि मन माहिं॥
अग्र विलोक्यो राऊ जव॥ मुनि संजुत तव ठाढ॥
कमला पति अरु कमल भव॥ परम हरष उर वा
ढ॥ देखि दृगन ऋषिराज कहे॥ ६॥ टीका॥ तवँ भ
गवान पहिले हीं ब्रह्मा को कहने लगे कि हे विधाता
इह जो महा प्रचंड वेग वाला प्रकाश का पुंज मेरा च
क्र जो है सो इह मेरे से भी निवारण नहीं हो सकता
क्योंकि इसको पहिले से हीं मेरी आज्ञा है कि जो मन
वचन काया करके मेरा दृढ भक्त है और सव को
त्याग कर के एक मेरा हीं भरोसा रखता है और मे
रे ही भजन और सुमरण मे रात्री दिन लीन रहता है
तिस की तुम सदैव सहायता करते रहना सो इस प्र
कार मेरी आज्ञा के वश होकर इह चक्र तिस
मेरे भक्त अंवरीष राजा का सहायक भया है तद्यपि
हे चतुरानन इसमे तेरेको एक उपाय कहता हूं कि
~~हम तुम और इह मुनी [illegible] [illegible]~~ तुम मेरे को सा
थ लेकर इस मुनी के सहित तसी राजा के पास

यद्यपि मैं ऐसा ही यतन करूं

चलो सोहीं इसके अपराध को क्षमा करने योग्य है क्यों कि वह बड़ा संतोषी और सुशील साधू वृती है और चक्र के तीव्र वेग और प्रचंड कोप को भी सोहीं निवारण और शांति करेगा इस प्रकार भगवान के मुख से वचन सुनकर विधाता जो है सो विष्णु के सहित मुनी को साथ लिये हुये वैकुंठ को त्याग कर पृथवी तल पर राजा अंबरीष के द्वारे पर आय प्रापत होते भये और इहां राजा बड़ा तपस्वी साधू वृती अन्न और जल को त्याग कर तिस काल से तिसी ध्यान में लगा हुआ था और मुनी का रस्ता देख रहा था कि जब तक दुरवासा मुनीजी मेरे घर में प्रसन्नता पूर्वक भोजन नहीं पा वेंगे तब तक मैने अन्न जल खान पान नहीं करना ऐसा विचार करता हुआ राजा ने जु उठाय कर जो देखने लगा तो मुनी के सहित भगवान और विधाता का सनमुख दरसन पाय कर अंबरीष महा हरष को प्रापत हो जाता भया॥२॥ चौपाई॥ ॥ करि प्रणाम नृप कीनसी पूजा॥ संजुत भक्ति भाव तजि दूजा॥ सुनहु भूप तब भगवन कहा॥ इह मुनीस तुध्यो नर राहा॥ तास हेतु तोहि मारन धाया॥ रहा चक्र तुव जवन सहाया॥ सो मुनीस पाछिल रिसि लागा॥ आव वरिंचि शरण मुनि भागा॥ तब चतुरानन मो पै आवा॥ कहि वृतांत निज सकल सुनावा॥ अब मैं लिये तिन हु निज साथा॥ तो पै आव त्रिपुरा नृप नाथा॥ क्षमहो इहि मुनीस अपराधू॥ तुव सदैव करुणा रत साधू॥ चक्र वेग रिस शांति करावहु॥ मुनि मानस दुख त्रास मिटावहु॥ भोजन करहु आप महिराई॥ अरु मुनीस कहे लेहु जिमाई॥ पुनि तुव करहु अकंटिक राजू॥ सहित मंजु निज सकल समाजू॥ इह सुर वर वरिंचि महिपाला॥ आव तुमहि वर

देन रसाला॥ मागहु जवन भाव मन तोरे॥ संतत
मानि वचन नृप मोरे॥ सुनि हरि वचन भूप अनु
रागा॥ करि प्रणाम मुख भाखन लागा॥ धन्य भा
ग वर दीन सुहाये॥ प्रभु पद पदम सदन मम पाये॥
दोहा॥ भयो कृतारथ आजमे दिव्य दरस प्रभु
देखि॥ इहि ते उत्तम कवन वर संसृति आन व
सेखि॥ १॥ टीका॥ तव राजा जोहै सो हाथ जोड़ कर
दंड प्रणाम करके अतसे प्रीती और भक्तीसे भग
वान का पूजन करता भया ऐसे तिसकी भक्ती
देख कर भगवान कहने लगे कि हे रा
जन मेरा वचन सुन जो इह
दुरवासा मुनी तिस दिन व्रतसे क्षुध्या करके
व्याकुल भया हुआथा तिसी कारनतें तेरे मारन
को धायाथा और इह मेरा चक्र जो तेरा सहायक
था वडे कोपसे मुनीके पीछे लाग चला तव ति
सके भयसें मुनी भागता हुआ ब्रह्माकी शरणको
प्राप्त हुआ और ब्रह्माने भी जव चक्र निवरण
होता नहीं देखा तव मुनीको साथ लिये हुये मेरे
पास आया और संपूर्ण वृतांत सुनाया अव मै तिन
को साथ लेकर हे राजन तुमारे पास आयाहै तुम
इस मुनीका अपराध जोहै सो क्षमा करो क्योंकि
तुम दयाकी मूरती साधू और कोमल चित्त वडे संतो
षी हो और चक्रका प्रचंड कोप भी अव शांति करावो
और मुनीको अभय करो फिर आनन्द पूर्वक आ
प भोजन करो और शिष्यों के समाज सहित मुनी
को भी करावो इह देवगौउंमे सूक्ष्म जो ब्रह्मा है सो
हे राजऋषी तुमारे को वर देने के वासते आयाहै
अव मेरा वचन मानकर जो मनकी इच्छा है सो वर
मांग इस प्रकार भगवानके मुखसे वचन सुनकर
राजा प्रेमसे प्रफुल्लित भया हुआ प्रणाम करके क
हने लगा कि हे भगवन मेरे धन्य भाग्य हैं जो आप

दोनो हाथ जोड़ कर नम्र वानीसे अनेकप्रकार करकर हार गया जब मुनीका कोप शांति नही भया तब अंत को राजा क्षोभसे रहित होकर अपने आसनपर स्थिर होकर बैठ गया इतनेमे राजाकी रक्षा करनेके वास्ते सब भयके दूर करने वाला भगवानका सुदर्शन चक्र जोहै सो तहां आयकर प्राप्त होजाता भया तब तिसका महा ज्वलत और भयानक रूप देखकर मुनी व्याकुलहोकर हृदयमे विचार करने लगा कि इह निश्चय करके मेरे प्राणोंका नाश करेगा इसप्रकार सोचकर मुनी जोहै सो भयके वश होकर तहांसे भाग चला तबराजाने देखा कि मुनी भागा जाताहै और महा कालरूप सब चराचरको ग्रसनेवाला चक्र भी तिसके पीछे वेगसे चला जाताहै तब सो मुनी भागता हुआ ब्रह्माकी शरण को प्राप्त होजाता भया और पीछेही चक्रभी तहांआ यगया तब विधाताने अगनीके पुंज समान चक्रका रूप देखकर मुनीको अपने आगे बैठार लिया परन्तु जब महा भयान रूप चक्रको नवृत्य हुये नहीं देखा तब ब्रह्माके विचार करके मुनी को बैकुंठ मे लैजाता भया तहां लक्ष्मीके नाथ भगवान जोहैं तिन्होंने जाना कि चक्रके भयसे मुनी जो व्याकुलहै तिसकी रक्षा विचार कर ब्रह्मा तिसको इहां लेआयेहैं ॥५॥ चौपाई ॥ तब इंद्रापति अग जग नाथा ॥ प्रथमहिं कहिस ललित मुख गाथा ॥ सुनहु. बरंचि चक्र बलरासा ॥ अति प्रचंड गति पुंज प्रकासा ॥ इह मोपें नहीं जाय निवारा ॥ यद्यपि करहुं यतन किनभारा ॥ इहि कहे पूरब मोर रजाया ॥ जेमम भक्त वचन मन काया ॥ मोहि कहें भजहिं आन वृति त्यागी ॥ रहहिं सकल मोर नित लागी ॥ वयो भरोस नाहिं जिय ताके ॥ सदा सहाय रहहु तुम ताके ॥ चक्र

मुनी को जिमाय कर भक्ती प्रीती से बारबार प्रणाम और पूजन सतकार कर के बिदाय कर देता भया ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ बहुरि आनुजुत सकल समाजा ॥ भोजन कीन मुदित ऋषि राजा ॥ तजि विकार सब भूप सुजानो ॥ हरि मय विश्व चराचर मानो ॥ देखत लो ... त्यो भक्ति रत होई ॥ अमल अमल चित संशय खोई ॥ सब भूमी मंडल परतासों ॥ भई प्रचलत जहं तहं अनुसासा ॥ सोरठा ॥ अस धर्मज्ञ महिराय ॥ अंबरीष वर सुकृती ॥ जांस एक अध्याय कह्यो जथा मति नाथमै ॥ ९ ॥ टीका ॥ जंब मुनी को विदा कर दिया तब पीछे राजा अपने संपूर्ण समाज के सहित बड़े आनन्द से भोजन करता भया और विषय विकारों को त्याग कर सब जगत को विष्णु मय देखता भया तब भक्ती के प्रभाव से संपूर्ण पृथ्वी मंडल पर जहां तहां तिसी राजा की आज्ञा जो है सो प्रचलत होगई इस प्रकार बड़े धर्मज्ञ और सुकृति रूप राजा अंबरीष की इह गाथा जैसी कछु हे गुरुदेव स्वामीजी मेरे बुद्धी विचार मे आई तैसी कथन की गई है ॥ ९ ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवत भक्ती महात्मे भाषा टीकायां अंबरीष चरित्र कथनम् नाम सरगः

अथ अंबरीष अन्य चरितम्

सोरठा ॥ गुरुवर दीननिवाज ॥ इह ... कौन मै अंबरीष ऋषि राजा ॥ कीन जथा व्रत मान कर्यो ॥

चौपाई॥ अब सुनि चरित चारु वर आना॥ करहुं सो रसिक जथा वखाना॥ अदभुत सुखद सुभ्र मन भावन॥ कृष्ण भक्ति रति प्रेम वढावन॥ परम पुनीत भीत भ्रम हारी॥ जथा प्रसिद्ध लोक जग सारी॥ रहा एक मंडिल पति काहू॥ अलप नृपति संज्ञा जग जाहू॥ पुत्री एक रुचिर गृह तासा॥ अति सुशील सुभग गुण रासा॥ सुत तें अधिक प्रानतें प्यारी॥ जननि जनक जनु जीयत निहारी॥ समय पाय पुत्री नृप सोई॥ जुवा वेस कहं प्रापत होई॥ मंडलीस सब तासु सुहावा॥ सुदिन सोधि उदवाह रचावा॥ लागे विविध वाजने वाजे॥ मंगल मंजु मनोहर साजे॥ करहिं गान कल कोकल वैनी॥ सुन्दर वदनि ललित मृग नैनी॥ उतसम भयो भूप गृह भारा॥ साजे समाज विविध परकारा॥ निज विवाह रचना वर जोई॥ देखि दृगन तनया नृप सोई॥ त्यगत लाज संकोच विहाई॥ भाषन लगी जनक पें आई॥ विनय मोर पितु सुनहु सुजाना॥ अंवरीष छित पति विनु आना॥ सोरठा॥ मैं न वरहुं जग कोय॥ सत्य मोर प्रण जनक इह॥ संशय नाहिन होय॥ इहि मैं कछु किंचत प्रभू॥ २॥ टीका॥ श्री नाभा दास जी कहते हैं कि हे धनो के पाल गुरु महाराज ३ह एक गाथा जो अंवरीष राजाकी मैने जैसे सुनी थी सो कथन कर चुका हूं अब तिस की और दूसरी गाथा जैसी कि मेरी बुद्धी के अनुसार हो सकती है भाषन करता हूं सो कैसी है कि वडी सुंदर अदभुत और सुख दायक मनको भावती भक्ती और प्रेम के अधिक करने वाली वडी पवित्र है भय और भ्रम के नाश करने वाली है कहते हैं कि एक कोई मंडिल पती छोटासा राजा था तिस के घर मैं एक कन्या ४

66

प जेती भई सो कैसी कि वडी सुन्दर ग्रौर सुशील सरव गुणोंकी खानी ग्रौर मातापिताको प्राणोसे प्यारीथी तब समय पायकर सोराजाकी कन्या जुवा ग्रवस्थाको प्रापत होगई राजाने जो देखा कि कन्या वर लायक भई है तुरत काल सुभ दिन ग्रौर महूरत विचार कर तिसके विवाहका प्रारंभ कर दिया तब ग्रनेक प्रकारके वाजे जो है सो वाजने लगे ग्रौर घर घर मे मंगल ग्रौर उतसव होने लगे राजाके भवनो मे वंदनिवार धुजा पताकादि इत्यादि सब सजाय गये कोकल वैनी ग्रौर मृग नैनी वाला मिलकर वडे हरषसे गायन करने लगीं इस प्रकार ग्रपने विवाह की रचना देखकर सोराजाकी कन्या लाज ग्रौर शंकोच त्यागे हुये ग्रभय होकर पिताके पास ग्राय करके कहने लगी कि हे तात मै जानती हूं जो तुमने मेरे विवाह की रचना रचाई है परन्तु इस मे मेरा प्रण है सो ग्राप सुनो कि मै ग्रंवरीष राजाके विना संसार मे ग्रौर किसी को नहीं वरूंगी हे पिता इह मेरा प्रण सत्य करके है इसमे कुछ संशय नहीं है॥२॥ चौपाई॥ कवहुं कि नि दरि मोर प्रण एहा॥ वलात कार ग्रान तकि गेहा॥ करहु विवाह मोर तहि सेगा॥ तव विलोकि ग्रापन प्रण भंगा॥ इह काया निज देहुं तयागी॥ महि पति ग्रंवरीष हित लागी॥ सुनि ग्रस वचन पुत्रि निज राई॥ भयो सोच वस हरष विहाई॥ चिन्तन करत विथित जिय माहीं॥ कछु विचार वनि ग्रावत नाहीं॥ तव निज पत नि निकट नृप जाई॥ लायो कहन ग्रस वदन वुझाई॥ सुता तोर मति भई वौरानी॥

ने चरन कमल मेरे मन घर मै पाये और दिव्य दरसन देकर मेरेको कृतार्थ करदिया है ~~अब हे कृपानिधान मै कौन~~ वर ~~मांगु~~ किया अब हे कृपानिधान कहिये कि इससे उत्तम संसार मे ~~म~~ दूसरा कौन वर है कि जिस को मै जाचना करके आप से मांगु ॥ ७ ॥ चौपाई ॥ मोहि कछु नाथ जानि नहिं परहीं ॥ जाचन जास दास सुख करहीं ॥ इन नैनन भरि निज गृह माहीं ॥ गोचर तुमहिं बिलोकि गुसाईं ॥ जीवन सफल जगत निज जाना ॥ मांगहु कवन नाथ वर आना ॥ पुनि उदार प्रभु त्रिभुवन राया ॥ जो मोपैं निज कीनसि दाया ॥ तो कृपाल मांगहु वर एही ॥ चारन मति तुव दीन सनेही ॥ अविरल हृदय मोर दृढ होई ॥ व्याधि उपाधि प्रीति भ्रम खोई ॥ भूप बचन सुनि अज भगवाना ॥ एवमस्तु कहि कीन पयाना ॥ निज निज भवन हरष उर छाये ॥ तब क्षितनाथ मुदित मुनि ये ॥ भोजन रुचिर अमिय सम नाना ॥ सो जिमाय सेजुत सनमाना ॥ करि पूजन सतकार सुहावा ॥ सेजुत भक्ति रुचिर मन भावा ॥ सोरठा ॥ बहुविधि विनय बखानि करिप्रणाम जुग जोरि कर सहित प्रियजन मुनि जानि कियविसरजन नृपति तब ॥ ८ ॥ टीका ॥ फिर राजा कहने लगा कि हे दीनदयाल अब मेरेको कुछ ~~इच्छा नहीं~~ मांगने की इच्छा नहीं रही है आपका ~~प्रत्य~~ प्रत्यक्ष दरसन करके मैने जगत मे अपने जीवन को सफल जाना है परन्तु कृपानिधान जो आप मेरे पर प्रसन्न भये हो तो अनुग्रह करके यह वर दीजिये कि सरव व्याधी और उपाधी का नास करके आप की ~~म~~ अविरल भक्ती जो है सोई मेरे हृदय मे दृढ होवे ऐसे राजा की प्रार्थना सुनकर ब्रह्मा और विस्नु भगवान तथास्तु शब्द उचारण करके ~~अपने अपने धाम को चले गये~~ कि हे राजन ऐसे ही होगा अपने अपने लोक को चले जाते भये तिसते उपरांत राजा बड़े आनन्द से अमरित के समान जो नाना प्रकार के भोजन बने हुये थे संपूर्ण शिष्यों के सहित

हि
ठि

अंबरीष चक्रवर्ती और सुकृतरूप परमउपकारी और
मै छोटेसे एक मंडलका पती दीन और धनसे हीन
मेरेसे तिसकी बरोबरी कैसे होसकती है कि जिसके
समान जगतमे आज दूसरा कोई नहीं है और वह मेरे
ऐसे दीनकी कन्याको किसप्रकार वरेगा हेप्यारी
इह सोच और संकोच मेरे चित्तमे अनतसे करके है
यद्यपि कदाचित मेरे मनमे इसबातीका उतसाह भी हो
जावे तद्यपि तिस महान राजाको कौन जायकर कहे
कितुम अमुक राजाकी कन्या जोहै सो वरो इसप्रकार
पतीके मुखसे वचन सुनकर रानी बडीव्याकुल औ
र सोचके वश होकर अतसे प्रेम और प्रीतीसे पु
त्री को पास बिठायकरके अनेक भांतीसे समुझाने
लगी कि हे सुशील और प्रवीन पुत्री तूं विचार करके
देख कि हम सामर्थसे रहित दीन और धनहीन
औ तुच्छ राजके अधिकारी और वह महाभूप परम
उपकारी गुणोंका समुद्र तीन लोकमे उजागर है
प्यारी उनसे कैसे बन आवेगी हेपुत्री कहां मेरु
और कहां राई ऐसे माताके मुखसे वचन सुन
कर सो राजाकी कन्या सुगंद करकें जैसा प्रण
करती भई सो आगे कथन किया जाताहै॥२॥ चौ
पाई॥ अंबरीष निश्चय पति मोरा॥ जेतुव करहु मातु
बरजोरा॥ मरहुं तवहिं उदबंधन लाई॥ नतरु मर
हु हालाहल खाई॥ अंबरीष बिनु आन न वरहूं॥
मातु सपथ तुव चरनन करहूं॥ सुनि अस राजकु
वरि मुख बानी॥ दुखित जननि मनमे अकुलानी॥
पति पै आई बिथत मन मारे॥ करि रोदन मुख व
चन उचारे॥ नाथ पुत्रि दारुण हठ धारा॥ किये यतन
नहीं होत निवारा॥ ताते तजहु लाज उदवाहा॥
मानहु प्राण पती मम काहा॥ रचना तुम हु जवन
बिरचाई॥ लाज समाज आज सम्मुदाई॥ परिहरि

श्रोर हु जतन विचारहु॥ मोर कथन निश्चय जिय धारहु॥ पतनि वचन सुनि भूप सुजाना॥ परम शोक मानस निज माना॥ कीन जतन प्रारंभ विवाहा॥ सो मन मानि पतनि निज काहा॥ तदिते मा नबूत्य पति धरना॥ चिन्ता सोच जाय नहीं वरना॥ ग्रति श्रीयस ता जवन सुखदाई॥ ग्रंबरीय लाग दुखद ग्रधिकाई॥ निसदिन सोच विवस गत धीरा॥ भयो दुखित ग्रति कृश सरीरा॥ रहस्योसि लुपत मरम रह जोई॥ प्रकट्यो सहज सहज कछु सोई॥ इक दूसर कर श्रवनन परहीं॥ लोक परस्पर चरचा करहीं॥ वढी वात ग्रामोतर छाई॥ ग्रंबरीष लग पहुँचिस ~~सकाई~~ जाई॥ रह वृत्तांत मेजुल सुनि राई॥ भयो प्रेम वस हृदय ग्रघाई॥ सोरठा॥ सादिर लीन बुलाय॥ तासु जनक कहे नृपति तव॥ सानुकूल समुझाय॥ भन्यो वदन मृदु वचन ग्रस॥ ३॥ टीका॥ सो राज कुमारी कहती है कि हे माता अंबरीष राजा जो है सो निश्चय करके मेरा पती है ग्रोर जो कदी तुम जोरावरीसे मेरे को तिससे निवारण करोगे तो मे गलेमे बंधन लगाय कर के मरजाऊंगी नहीं तो विष खाय कर के मरूंगी हे जननी मेरे को तेरे चरनो की लाख सुगंद है जो मैने ग्रंबरीष के विना ग्रोर किसी को नहीं वरना इस प्रकार कन्याका प्रण सुनकर माता जो है सो व्याकुल भई हुई. बडे कलेश को प्रापत हो करके पती के पास ग्राय कर ~~...~~ नेत्रोंमे रुदन रूपी जल भर कर कहने लगी कि हे नाथ पुत्रीने बडा कठिन हठ धारन किया है सो जतन किये भी निवारण नहीं होसकता क्यों के हे प्राणपती ग्रव एही कारण भली है कि तिस के विवाह का त्याग कर देवो

ओर तिसकी सब रचना को छोड़कर कोई और यतन
विचारो कि जिससे कन्याका मनोर्थ सिद्ध होवै ऐ
से रानीकी वानी सुनकर राजा बड़ा चिन्ताकुल
होकर चित ओर शोकके वश होकर विवाहकी
रचनासे न वृत्य होजाता भया ओर जो प्राणोंसे
प्यारी सुखदायक कन्याथी सो महा दुखदायक ओर
परम अप्रीया भासने लगी रात्री दिन चिन्ता करके
दुखी भये हृयेका शरीर जोहै सो बड़ा कृष्य होजा
ता भया तब इह वार्ता जो लुपत रही हुईथी हो
ती होती लोकोमे प्रकट हो जाती भई ओर सब
कोई चरचा करने लग पड़ा बाहिर ग्रामो
तक भी इहवारता फैल गई तब जाती जाती
अंबरीष के पास भी पहुंच गई सोराजा अंबरी
ष महा प्रवीन ओर शरणागत की रक्षा करने वा
ला तिस वारता को सुनकर ततकाल तिस क
न्याके पिता को अपने पास बुलाय कर बड़े प्रेम
ओर सनमान पूर्वक अतसे कोमल बानीसे शिक्षा
देने लगा॥२५ चौपाई॥ सुनहु भूप यद्यपि मम रानी॥
अधिक एकतें एक सयानी॥ ललित रूप पति व्र
ता सुहाई॥ सब विधि निपुण शील सुखदाई॥
तद्यपि तोर पुत्रि बड़ भागन॥ संतत मोर चरन
अनुरागन॥ बिनु मोरे पति आन न चाहीं॥
साचि सनेह निश्चय मन माहीं॥ इहितें तासु म
नोरथ जोई॥ पुरवहुं मै प्रसन्न मन होई॥ क
रहु रुचिर रक्षा प्रण तासा॥ संतत वचन
मोर सुण राशा॥ सोरठा॥ सुनहु वचन नृवराय॥
जे मोहि ते कोई जाचना॥ करहिं मनुज नृप आय॥
मे पुरवहुं तिह काम सब॥४॥ टीका॥ अंबरीष
कहने लगा कि हे राजा यद्यपि मेरी रानीजो

अन हित विकट करत मुख बानी॥ महो नरी सदीत जग सारी॥ सुकृति अंबरीष उपकारी॥ चक्रवर्ती भूप वर सोई॥ आज जास सदृश नहीं कोई॥ मैं लघु मंडलीस धन हीना॥ समता जाय तास किमि कीना॥ कहि विधि करहिं गृहण मम सोई॥ पुत्रि प्रवीन राज कुल जोई॥ इह संकोच सोच मोहि भारी॥ ■ यद्यपि वनहिं बात सब प्यारी॥ तद्यपि करहिं कवन तहि जाई॥ कन्या वरहु अन्य नृप आई॥ पति मुख सुनत वचन अस रानी॥ विथत सोच वस उर बिलमानी॥ प्रीति पूर्वक सुता बुलाई॥ ~~■■~~ विविध भांति सादिर समुझाई॥ सनहु पुत्रि गुन सील प्रवीना॥ हम हुं अस के दीन धन हीना॥ ते उदार त्रै लोक उजागर॥ महो भूप संपति गुण सागर॥ हमरी उन सन कस बनि आई॥ कहाँ मेरु गौरव कहं राई॥ सोरठा॥ सु■ सुनतहिं राज कुमारि॥ निज जननि मुख वचन अस॥ तंजत सपथ उचारि॥ कहत सुनहु प्रण मातु मम॥२॥ टीका॥ फिर राज कुमारी कहने लगी कि हे पिता जो कदी तुम मेरे प्रण को निदर करके जोरावरी किसी और के साथ मेरा विवाह करके देवोगे तो मैं अपना प्रण भंग जानकर राजा अंबरीष के हित से प्राणों का नास कर देऊंगी एक क्षण भी ना जीऊंगी ऐसे पुत्री ■ का वचन सुनकर राजा हरष से रहित होकर बड़े शोक को प्राप्त हो जाता भया और ■ व्याकुल होकर हृदय में अनेक विचार करने लगा पर जो जब कुछ बन नहीं पड़ा तब अपनी स्त्री को पास बुलाय कर कहने लगा कि हे वाले तेरी कन्या की बुद्धि बावरी होगई है जो लज्जा को त्याग कर बड़े कठिन और अन हित वचन जो हैं सो निरशंक होकर कहती है देखो वह भूप शिरोमणी राजा अं

मान (पमान जुगल संसार॥ सोरठा॥ लोक करम
मध देय॥ प्रेम सुभक्ति प्रसंग मे॥ इह कवहु नहिं हो
य॥ निश्चय जानहु सत्य नृप॥ ॥ टीका॥ फिर अंबरी
ष कहते हैं कि हे राजन अब तुम को योग्य है कि
अपने घर को चले जाओ और तहां जायकर विवा
ह के संपूर्ण मंगल जो हैं सो रचाउ देवो तिसतें उ
परांत ~~[illegible]~~ शुभ दिन और महूरत देख कर आप
ने दूत के पत्रका देकर मेरे पास भेज देवो तो मैं विवाह
के लिये तुमारे घर आजाऊंगा इस प्रकार अंबरीष
का वचन सुन कर सो राजा सन्मुष स्थित होकर
और दोनो हाथ जोड़ कर बड़ी प्रीती भक्ती से विनती
करने लगा कि महाराज मेरे धन्य भाग्य हैं जो
सरव दुःखो और दारिद्रों के दूर करने वाले आप
के ~~[illegible]~~ पवित्र चरन जो हैं सो मेरे घर मे पड़े
गे और मै सरव प्रकार करके जगत मे सुजस का भा
जन हो जाऊंगा परन्तु हे कृपानिधान मै जो हूं
सो एक तुमारा दासानुदास दीन और गुणों से
हीन सरवप्रकार करके दारिद्री हूं ~~[illegible]~~ खद्योत के
समान हूं अर्थात एक जुगनू वत हूं और आप म
हा नरेस प्रताप के पुंज सूरज के समान जगत मै
प्रसिद्ध हो तातें हे नाथ मेरी और आपकी समता
कैसे वन आवेगी कहां अब समुद्र और कहां मैं
क्षुद्र नदी इहवार तो कैसे हो सकेगी मेरी ढिठाई
को देखकर लोग हासी करेंगे हे कृपानिधान इस
मे ~~आपको यही करनो उचित है कि मेरे घरमें~~
~~[illegible]~~ यही उचित है कि आप मेरे घर मे ना
आईये मैं ही आदर पूर्वक अपनी कन्या को
ले के आपके पास ले आता हूं आप इहां
अपने डेरे मे ही विवाह कर लीजिये तव हे दी
न दयाल इस मे मेरे को सरव प्रकार करके सुख और

सुजसजोहै सो प्रापत होवे गा ऐसे जिस राजाके मुखसे बड़ी वनीत और कोमल प्रीती और हितकी भरी हुई बा नी सुनकर अवरीष कहने लगे कि हे प्रवीन राजन तैने निरन्तर करके सब सत्यही कहाहै परन्तु मेरी बात सुन कि इह मान अपमान जोहै सो संसार के बीच लोक करममे सिद्ध होताहै भक्ती और प्रेम के प्रसंगमे हे राजन निश्चय करके जान इसका ~~कोई भी संबंध नहीं है~~ इह कदाचित हुआ ही नहीं है॥ य॥
चौपाई॥ जे भगवान लोक पति स्वामी॥ सदा दीन भक्तन अनुगामी॥ किन्नर नाग मनुज सुर राया॥ चिदानन्द अनभव पति माया॥ कुब जो गोपिन आदिक जोई॥ गनका शबरि भक्ति बश होई॥ तजि ईश्वर मान अपमाना॥ इनपें आय आपु भगवाना॥ अवरिल भक्ति प्रेम जहे देखा॥ ऊंच नीच तहे काहुन लेखा॥ तस तुव सुता माहि नर राई॥ प्रेम प्रीति मोरी अधिकाई॥ इहां भगवन तासु सुजाना॥ होत प्रतीत नृपति अपमाना॥ चलहु आपुमे से दन तुमारे॥ सब विधि होहिं रुचिर हित प्यारे॥ पूर्वौहुं तास मनोरथ जोई॥ करहुं विवाह मुदित मन होई॥ अब तुम जाहु भवन निज राजा॥ विरचहु जाय विवाह समाजा॥ सब विधि यथा शक्त अनुसारी॥ करहु काज उर सोच विचारी॥ कहा ~~तुमकुं जोई~~ भूप प्रवीना॥ तुम धन द्रु
जवन तुव
मे द्रव्य वहीना॥ इहि विवाह मे सदृश सोई॥ कहि विधि मोर तोर बनि आई॥ सो नृप सुन द्रव्य इह जोई॥ जलद छाय इव थिर नहि होई॥ अहह संपति ईश्वर्य बड़ाई॥ सदा अ नित्य नृपति चलि आई॥ तणमे तुरत रेक

१२

६४

है राया॥ लखि न जाय माया पति माया॥ सोरठा॥
अस विचारि ~~मन माहि~~॥ इहिमे चिन्ता करहु नृप॥
कहु नी
जाय मुदित गृह माहिं॥ रचहु विवाह समाज तुव॥
२॥ टीका॥ फिर अवरोध करते हैं कि हे राजा जो
भगवान नाग किन्नर मानुष्य और देवताओं के
स्वामी तीन लोक के नायक सतचित आनन्द रू
प स्वतेप्रकासक और माया के पती हैं सो देखि
ये कैसे भक्तजनों के आधीन हैं कि गोपी और
कुबजा गनका और शबरी इत्यादकों की भ
क्ती और प्रेम के वश हो कर अपने ईश्वर्य
और मान अपमान को त्याग कर तिन के पास
आप ही चले आवते भये भगवान ने जहां अवरिल
भक्ती और ■ दृढ प्रेम ■ देखा तहां ऊच नीच
कोई नहीं लखया तैसे राजन तेरी पुत्री में ~~मेरा~~
का नश्चय देखकर मै तिसकी भक्ती और प्रेम
के वश होगया हूं अब इहां भगावने मे मेरे को तिस
का अपमान प्रतीत होता है मै आप ही तुमारे
घरमे चलूंगा और विवाह करके तिस के मनोर्थ
तह
को सिद्ध करूंगा तो सरब प्रकार करके सुन्दर सुख
दायक और ~~किसी और~~ बरी हित की वार्ता होवेगी
अब तुम जो है सो अपने घर मे जायकर यथाशक्त
समय के अनुसार विवाह की रचना रचो और हे
राजन इहजो तुमने कहा कि तुम धनड्य और
मै दरिद्री धन हीन और दीन हूं तो इस मे रहवा
तो सन कि इह द्रव्य जो है सो बादर की छाया
वत थिर नहीं रहता है और ■ इह संपती चढाई
भी अनित्य है ~~जाके~~ क्योंकि जगत मे राजा
जो है सो रंक हो जाता है और रंक राजा होजाता है

" चलीआई है

है सो एकते एक बड़ी चतुर और सयानी हैं सुन्दर रूपवाली पती व्रता और सुशील सुखदायक भी है तद्यपि बड़े भागों वाली तेरी कन्या निरन्तर करके मेरे चरनो की प्रेमवाली जो भई है और मेरे विना और दूसरा पती जो नहीं चहती केवल मेरे मे ही जिसकी प्रीती और निश्चय है इस करके तिसका मनोरथ जो है सो मैं अवश्य पूरण करके तिसके प्रणकृता करूंगा हे राजन मेरा भी धरम है कि जो कोई पुरुष मेरे से किसी प्रकार की जाचना करता है मै तिसके मनोरथ को अवश्य करके सिद्ध करता हूं ॥४॥ चौपाई ॥ उचित तुमहिं अब सुनहु सुजाना ॥ करहु चारु निज भवन पयाना ॥ तहो जाय तुम रचहु विवाहा ॥ विविध भांति मंगल उतसाहा ॥ सुदिन महूरत सुभ सुधाई ॥ देहु दूत मोहि ओर पठाई ॥ अलप नृपति सुनि भूपति वचना ॥ सुन्दर सुखद परम हित रचना ॥ होत स्थित पानन जुग जोरी ॥ विनय करत उर प्रीति नथोरी ॥ अहो भाग बड़ मोर सुहावन ॥ जो मम सदन चरन प्रभु पावन ॥ परहिं सकल दारद दुख हरना ॥ धन्य सुजस मम जाहि न वरना ॥ पै कृपाल मै दास तुम्हारा ॥ दीन हीन गुण सरव प्रकारा ॥ प्रभु प्रताप जग सदृश भाना ॥ मै नविषृ खद्योत समाना ॥ सरता क्षुद्र नाथ मै दीना ॥ तुव नदीस अवगाह प्रवीना ॥ समता ख्याल कवन विधि रही है ॥ मोर ढिठाई देखि सब हसि है ॥ ताते विनय जोरि जुग पाना ॥ उचित न तुमहिं मोर गृह जाना ॥ मै सादिर निज भवन कुमारी ॥ दैहा लाऊं प्रभु सरण तुमारी ॥ तव कृपाल सब विधि हित जानी ॥ करहु विवाह रुचिर [illegible] मानी ॥ इहि मै [illegible] मोर कल्याना ॥ सुजस मोद किमि जाय वरनाना ॥ अलप नृपति मुख सुनि अस वानी ॥ परम विनीत प्रीति हित सानी ॥ कहा राऊ तुव नृपति प्रवीना ॥ सेतत सत्य कथन सब कीना ॥ पै नरेस तुव सुनहु विचारा ॥

फिर पुरोहित को भी बुलावता भया और तिस को
पास बिठाय कर अंबरीष का प्रयोजन जो है सो सब
सुनाय दिया तब पुरोहित ने सुन्दर लगन और
सुभ महूरत देखकर पत्रिका जो है सो लिखी और
मंगल समय विचारकर तिस पत्रिका को लेकर रा
जा अंबरीष के पास जाय प्रापत होता भया और त
हां पहिले आशीरवाद देकर फिर आदर पूर्वक पत्रि
का आगे रख देता भया तब राजा तिस पत्रिका को विधी
अनुसार लेकर बाचने लगा तिसमे जो अपने मनका
मनोरथ पाया तो हरषसे गद गद बानी होगया ततका
ल बांधव और सज्जन संबंधियों को बुलायकर सुन्दर
बरात जो है सो सजावता भया और हास बिलास तें लेकर
अनेकप्रकार के पनव झांझ संखरव भेरी नफीरी बाजे
जो हैं सो बाजने लगे और अनेक गान तान सें नृत्य ना
टक भी होने लगे ॥१॥ चौपाई ॥ राजकुवर बर तुरग
निचावहीं ॥ बांधे बिरद सूर छवि पावहीं ॥ चिकर
हिं नाग बाजि हिनाहीं ॥ बाहन बिबिध बरनि किमि
जाहीं ॥ धूम धाम मय चली बराता ॥ कौतुक कर
त जाहिं मग जाता ॥ महा बिप्र बर संग सुहावहिं ॥
सिबकन आरूढ छबि पावहिं ॥ आई बरात निकट
✓ पर
पुर जबहीं ॥ खरभर भयो नगर सब तबहीं ॥ बा
हिन साजि मुदित मन नाना ॥ आय लेन सादिर अ
गवाना ॥ कुंवर कलस धार भरि नीके ॥ भोजन अ
मिय सरस प्रीय जीके ॥ फल बर बस्तु अनेक सु
हाई ॥ अति बचित्र कछु बरनि न जाई ॥ महा
बसन भूषण मणि चारू ॥ यथा उचित नृप वि
बिध प्रकारू ॥ सादिर सेजुत प्रीति पठाये ॥ दे
खत अंबरीष सुख पाये ॥ सोरठा ॥ तब बर रुचि
र बरात ॥ अगवायन बहु बरन लखी ॥ कहत
परस्पर बात ॥ रहे उपमा देखीन दृग ॥१॥ टीका ॥
तब राजों के पुत्र जो हैं सो घोडों पर सवार भये
सूरवीर

हुये तिनको अनेकप्रकार निचावतेहैं और हस्तियों का
चिक्कार शब्द होता जाताहै· ऐसे धूमधाम के सहित बरात
चलीजाती और रस्तेमें अनेक कौतुक होते जाते हैं
और बडे बडे मानी ब्राह्मण पालकियों पर चढे हुये
शोभा पावतेहैं इसप्रकार अब बरात जब पुर के
निकट आय गई तब नगर में बडा शोर
परगया और अनेकप्रकार के वाहन सजायकर
बडे सनमानसे बरातके लेने के वास्ते अगवायन
आवतेभये और कावरी अर्थात बहंगियों में अमृत
के समान अनेक भोजन और सुन्दर फल और दि
व्य वस्त्र और भूषण जैसेकि योग्यथे सो राजा ने
सब भेजदिये तब अगवाय जोसब लेनेके वास्ते गयेथे
ऐसी दिव्य बरात को देखकर परस्पर कहने लगे
किहमने ऐसी उपमा आज तक नेत्रोंमें कहीं देखी
नहीं है॥७॥ चौपाई॥ देखि बरात आव अगवा
ना॥ हनेसि विविध प्रकार निसाना॥ भये परस
पर मेल सुहावा॥ इत उत नृपति जुगल सुख
पावा॥ जोकुछ अलप नृपति तहं दीना॥ सा
दिर अवरोष सब लीना॥ भई परस्पर विनय बडा
ई॥ सील सनेह बरनि किमि जाई॥ रहे जव
न जाचिक गण सारे॥ पाय द्रव्य मन भये सुखा
रे॥ तब जनवासहिं संग लिवाई॥ सादिर चले
परम हरषाई॥ दीन वास वर सुभ सुचि थाना॥
भई पहुनाई रुचिर विधि नाना॥ जे से कलप जा
हि मन कीना॥ सहजहिं सुलभ पाय तहि ली
ना॥ जेवनार बहुभांति सुहाई॥ अमिय"स
रस कछु बरनि न जाई॥ जेवन समय केठ
कल नारी॥ करहिं गान मुख गारि उचारी॥
समय जानि तब विप्रन आई॥ मेंडलीस कहे
लगन जनाई॥ सादिर बोलि बधु जन नाती॥
करि प्रतोष सब कर सब भाती॥ यथा उचित

आसन बैठारी॥ विधी वेद जुत वेद सवारी॥ गाव
वहि गीत प्रीत मृदु बैनी॥ कोकिल कंठि कलि
त मृग नैनी॥ अति विचित्र सेज्यासन सोहा॥ ला
टिक मणिन खचत मन मोहा॥ तहि पर अंबरी
ष वर राई॥ रे बैठे दुजन चरन सिर नाई॥ सोरठा॥
पुनि विप्रन हरषाई॥ बोलि लीन बर कुवरि नृप॥
करि श्रृंगार सुहाई॥ ल्याई निपुण सखि संग निज॥
८॥ टीका॥ तव वरातियोंने देखा कि आगवायन
आते हैं वडे हरषसे अनेक प्रकारके बाजे बजाने लगे
तिस ते उपरांत परस्पर मिलनी जो है सो भई और दो
नो राजे बडे आनन्द को प्रापत हूये तिस समय उस
राजाने जो कुछ दिया सो अंबरीष वडे सनमान पूर्व
क सब लेलेता भया और परस्पर शील सनेह और
विनय वडाई जो भई सो कही नहीं जाती जाचिकअ
र्थात मंगने वाले भी मन वांछित द्रव्यको पायकर वडे
सुखको प्रापत हूये तव वरातको अतहे मनोहर
अस्थान मे निवास देकर प्रत्येकका यथा रुची
भली प्रकार संतोष किया फिर नाना प्रकारके भोज
न जो हैं सो बडे प्रेम और प्रीती से जिमाये तिस स
मय कोकिल कंठनी नारी गायनमे गारी दे दे
कर रिझावने लगी तिस ते उपरांत समय
जानकर उपरोहित आया और राजाको लगन
जणाया तव तिसने अपने बांधव जाती ना
तियों को बुलायकर यथा योग आसनो पर
वैठार कर और वेदकी रीती से वेदी की रचना
करके अंबरी को बुलावते भये तव मणियों
करके खचित सोवरन का सुन्दर सेज्यासन जो
था तिसपर ब्रह्मणो के चरनोको वंदना करके
अंबरीष आय कर बैठ जाते भये और राजा
की कन्या मंगल रूपी सब श्रृंगार कराय कर
वडी चतुर सखी जो हैं सो साथ लेकर आय जा
ती

माया के भगवान जो हैं तिनकी इहमाया लखी नहीं जा
ती है इसप्रकार विचार कर अपने घरमे जायकरके
हेराजन विवाहका आरंभ करो॥५॥ चौपाई॥ अंबरी
ष मुख वचन सुहावा॥ सुनि अस अलप नृपति
सुख पावा॥ आयस मानि भवन निज आना॥ कीन
तुरंत परम मुदमाना॥ उहां जाय मंजुल निजरानी॥
निकट बुलाय निपुण अति स्यानी॥ सकल वृतां
त तासु समुझावा॥ महिषी सुनत परम सुख पावा॥
बहुरि बंधु निज सखे सुजाती॥ सादिर बोलि ली
न जन नाती॥ अपरोहित पुनि बोलि प्रवीना॥
तिहिसन मरम प्रकट सब कीना॥ ते अनुसास भू
पवर पाई॥ लगन सुदिन सम ठेइ सुधाई॥ देखि
महूरत पत्रिक लेखी॥ मंगल समय सुगुनत ब
सेखी॥ चल्यो गौरि गणनाथ मनाई॥ अंबरीष
पे पहुंचिस जाई॥ प्रथम असीर बाद मुख की
नी॥ सादिर बहुरि पत्रिका दीनी॥ विधी पूर्वक
लेत सुराया॥ बाचित परम हरष उर छाया॥ तब
बांधव संजुत महिराई॥ सब विधि रुचिर बरात
सजाई॥ हास विलास करत अति गाना॥ बा
जित विविध प्रकार निसाना॥ पन्नव फौज संग
धुनि घोरा॥ भेर नफीर करत रव सोरा॥ सोरठा
अरु बाजत सेनाई॥ नृत्य करत कल केउनी॥
मंजुल भाव जनाई॥ गान तान नाना करें॥२॥
इसप्रकार अंबरीषके मुखसे वचन सुनकर और
आज्ञा लेकर सो राजा बडे आनन्द पूर्वक अपने घर
को चला आया और तहां अपनी रानी को पास बुलाय
कर संपूर्ण वृतांत सुनाय देता भया तब सो चतुर
रानी ऐसे वृतांत को सुनकर हृदयमे परम हरष
को मानती भई तिसते उपरांत राजा अपने संपू
र्ण बांधव और नाती जाती के लोकों को बुलायकर

७१

कमलों के देव का दरसन करके भ्रमरी वत हृदय
मे हरष मानती भई॥ तिसते उपरांत ब्राह्मणों ने
गणपति आदि पूजन करवाकर वेद की रीती से की
विधी से कुलकी रीती अनुसार सब करम करके वि
विवाह जो है सो परिपूरण किया जब पिताने कन्या का हाथ
अंबरीष के हाथ मे देदिया तब पानी अंब
रीष बडे हरषको प्रापत होजाता भया और मंगल
क गायनभी अनेंप्रकारके होने लगे फिर भलीयों करके
रचित अनेक भूषण और चांदी सुवरन के सुन्दर भा
जन दासी दास गज रथ और श्रृंगारसे
सजाये हुये घोडे यथा सामर्थ दायज देकर सो राजा
हाथ जोर कर विनती करने लगा कि नाथ मे दीन
संपतीसे हीन हूं आपके चरनो का एक दास हूं क्यादेऊं
कनक कुछ देने के लाय नहीं हूं आप महाउदार कृपाकेधाम
त और दीन जनोके हितकारी हो जो मेरे को अनाथ जान
कर इहां चरनधारे और मेरे घर को पवित्र
किया और सब जगत मे एक सुजस का भाजन ब
नाय कर अपनेदरसनसे संपूर्ण परिवार के सहित
मेरे जीवने और जनम को सफल कर दिया है
फिर रानी और राजा दोनो प्रार्थना करते है कि हे
कृपानिधान इह कन्या हमारी प्राणोंसे प्यारी अत
से दीन आप के चरनोकी दासी है जो कदाचित इस
से कोई अपराधभी होजावे तो आप अनुग्रह करके
क्षमा ही करते रहना ऐसे कहकर रोदनरूपी ज
ल नेत्रोंमे भरकर पुत्रीको हृदयमे लगाय लेते
भये और कोमल बानीसे जोजो शिक्षा देनी
योग्य थी सो सब देकर भलीप्रकार प्रबोध करते
भये तब राजा अंबरीष ने जाचिक जनों को
यथा रुची धन देकर सब का भली प्रकार परि
जगतमे तोष किया और सुंदर सुजस लिया॥ ९॥ चौपाई॥
मुदित भवन पुनि कीन पयाना॥ बाजित बि

विध प्रकार निसाना॥ आये नगर निज सदिन विचा
री॥ रहे जवन पुर परिजन सारी॥ कीन विदाय सक
ल सनमाना॥ करि प्रतोष सवकर विधिनाना॥ तहि
रानी कहे वहुरि भुपाला॥ रचि नुतन रक भवन
रसाला॥ दीन निवास सदन सुभ ताहो॥ करि सन
मान विविध नरनाहो॥ चारु चेरि सेवक सुखदाई॥
दीन उचित संपती सुहाई॥ तव नृप पतनि नवल
अति स्यानी॥ पति अनुसास काय मुद मानी॥ पूज
न भवन वेग चलि आई॥ प्रेम भक्ति मानस सरसाई॥
तहो देखि हरि मूरति जोई॥ करत प्रणाम दंड वत हो
ई॥ पुनि पुनि हरष विवस अनुरागी॥ आपन भाग
सराहन लागी॥ मोहि सम धन्य आन नहीं काहू॥
पति धरम धीर निध जाहू॥ अस विचारि पति
वृता ललामा॥ तहिदिन देखि भवन घनस्यामा॥
मगन प्रमोद सदन चलि आई॥ तहि उपरांत शेष
निशि पाई॥ हरि मंदिर आवत वर भागी॥ करहिं
माजेन मन अनुरागी॥ पूजौंपकरौं आनि सव
जोई॥ पावन भक्ति प्रेम जुत होई॥ करि शो
धन सादिर निज पानी॥ पुनि सव यथा योग जिय
जानी॥ प्रेम प्रीति जुत करत स्थापन॥ आवहिं
वहुरि भवन चलि आपन॥ निशि दिन चरन चा
ह पति देवा॥ मन वच करम निरत सुचि से
वा॥ सोरठा॥ तव प्रवीन ऋषि राज॥ जुगल
दिवस लग भवन प्रभु॥ देखतरहे समाज॥ हरि पू
जन कर विमल सव॥ १०॥ टीका॥ तिसतें उपरांत
राजा अंवरीष जोहैं सो वडे आनन्द से अनेकप्रकार
के उत्सम करते हुये तहोसे विदाय होकर सुभ
दिन विचार कर सर्वेसमाजके सहित अपने घर
मे आय प्रापत हुये तवपुरजन और परिजन
जो सव मेल आये हुयेथे तिन सवको राजा भली
प्रकार परितोष कर के विदाय कर देताभया फिर

हरि हि

हरि

९२

वासते

तिस नवीन रानीकेः एक अत्यंत सुन्दर न्यारा घर बनवाय देतामया करः दासी दास धन संपती आदि सब सनमान मलीप्रकार करतामया तब सोरानी आनन्द पूर्वक तहां निवास करने लगी एकदिन पतीकी आज्ञा पाँकर राजाका पूजन मवन जोथा तिसमे चली आवतीमई तहां मगवानकी मूरती देखकर बडे हरष और प्रेमसे दंडवंत प्रणाम करके मनमे विचार करने लगी किमेरे समान संसारमे धन्य कोई नहीं है जिसको ऐसा मगवान भक्त और धरमात्मा पती प्रापत मयाहै ऐसे विचारकर आनन्दमे मगन मई हुई अपने घरको चली आई तिसदिनते निज शेष रात्री लेकर उठती और मगवानके मंद्रमे आती तहां प्रथम मार्जन अर्थात् झारू इत्यादि सेवा करती फिर ठाकरोंके संजमेज जो हैं सो मक्तीपूर्वक मलीप्रकार शोधन करके और यथा योग्य अस्थानमे स्थापन कर अपने घरको चली आवती और रात्री दिन पतीकी सेवामे मी लीन रहती तब सो प्रवीन राजा अंबरीष जोथे सो दो दिन प्रयंत मगवानके मंद्रमे आयकर देखते रहे कि ठाकरोंके सब संजमेज शोधे और सवारे हूये रहते हैं ॥२०॥ चौपाई॥ बहुरि स्थापत निज निज जाहीं॥ सो त समाज मवन हरि माहीं॥ तीसर दिवस भूप तहं जाई॥ पूछन लगे मरम समुदाई॥ इह हरि नारायण कर मवना॥ सुचि समाज पूजन प्रभु कवना॥ संपादन करि जाहिं सिधारी॥ करहु बदन मोहि प्रकट पुजारी॥ तब तिन मरम सकल कहि दीना॥ जे कनिष्ट तुव त्रीये नवीना॥ सो निसि सेष पाय नर राई॥ पूज्युप करण नित्य समुदाई॥ संपादन करि निज निज थाना॥

तीमई॥८॥ चौपाई॥ रूपरासनिधि शील कुमारी॥
सूतम अंग मान रति हारी॥ मंडप मध्य आय जब रा
जी॥ सकुच मान मानसनिज लाजी॥ पुनि पति च
रन नलिन दृग देखी॥ हरषि अलिनि इव हृदय वसेखी॥
बहुरि द्विजन वर अवसर पाई॥ प्रथम देव गण नाथ
पुजाई॥ वेद वहीत रीत कुल दोई॥ संजुत प्रीति सक
ल करि सोई॥ सादिर दीन विवाह पढाई॥ अलप नृ
पति तव उर हरषाई॥ गहित रुचिर कन्या निजपानी॥
दीन समर्पि नृपहिं मुदमानी॥ पानिगृहण जव भयो
रसाला॥ हरष्यो अंवरीष महिपाला॥ मंगलगान क
रहिं कल नारी॥ सुन्दर वदनि नैन मृगवारी॥ वाजन
लगे विविध वरवाजा॥ भयो हरष वस सकल समाजा॥
मणि गण खचित्र विभूषण चारू॥ रज कांचन धन वि
विध प्रकारू॥ दासी दास तुरग गज जाना॥ यथाशक्ति
दायज नृप नाना॥ दीना विनय बहुरि मुख कीना॥ मैं कृ
पाल जन संपति हीना॥ का प्रभु देहुं नाहिं कछु ला
यक॥ आपु नाथ तुव दीन सहायक॥ मैं किंकर तुव च
रनन राया॥ कीन कृपाल दीन पर दाया॥ आज सफल
जग जीवन मोरा॥ देखि दिव्य वर दरसन तोरा॥ मोर
सदन संजुत परिवारा॥ भा प्रसाद तुव पावन सारा॥
दंपति ठाढ जुगल कर जोरी॥ हृदय पुनीत प्रीत न
हिं थोरी॥ इह दासी प्रभु चरन तुमारी॥ सुत सम
हमहुं प्राण तें प्यारी॥ इहि अपराध जानि परिहरहै॥
किंकरि चरन चारु निज करहै॥ अस कहि लीन
पुत्रि उर लाई॥ प्रेम विवस लोचन जल छाई॥ क
हि कहि ~~लीने पुत्रि उर लाई॥~~ वदन रुचिर मृदु वा
नी॥ शिक्षा दीन परम हित सानी॥ सोरठा॥ तव जा
चिक गण जोय॥ अंवरीष नृप सकल कर॥ मन प्र
सन्न अति होय॥ कीन रुचिर परितोष तहां॥ ९॥ टीका॥
सो कैसी कन्या कि रूप की रास और शील की निधी अ जो
पने सूतम अंगों करके कामदेव की स्त्री का मान हरने
वाली सो तहां वेदी मंडप में बड़े संकोच और लज्जा के
वश होकर आय बैठती भई परन्तु पती के चरन

के ऐसे अपने घरमैंहीं परमदेव भगवान जो हैं ति
नका पूजन किया कर मैं तेरे पूजनके वास्ते एक
घरमैंहीं न्यारा मंद्र वनवाय कर तहां पूजनका
सरव समाज स्थापत करदेता हूं ~~तूं आनंद पूर्वक~~
~~ऐसे घरमैंहीं पूजन~~ और तेरे पास आप मैं नित्य
आया करूंगा॥१२॥ चौपाई॥ सुनि अस वानि भूप
मुख वानी॥ सुन्दर सुचि सनेह हित सानी॥ जुग
कर जोरि हरष वश ठाढ़ी॥ करत प्रणाम प्रीति उ
र गाढ़ी॥ तव नरेस विधि जुत सनमाना॥ विर
च्यो तुरत भवन भगवाना॥ तहां अनन्त मोद म
न मानी॥ भक्ति प्रीति संजुत निज रानी॥ करहिं
नित्य पूजादिक करमा॥ वहुरि सदन सुभ भूप सु
धरमा॥ रमन आदि सव करहिं विलासा॥ वढ़
त जात नित हरष हुलासा॥ ते सुशील सेवन
पति लीना॥ मन वच करम भक्ति रत दीना॥
तव नरेस कर दूसर रानी॥ निपुण एकतें एक
सयानी॥ तास प्रेम वस पतिहिं निहारी॥ करत
विचार परसपर सारी॥ हम जान्यो नहिं कारन
काहू॥ इहि वस भयो कवन विधि नाहू॥ वोली
एक वदन मृदु वानी॥ इह जोई नवल रूप नि
धि रानी॥ सदा निरत नारायण पूजा॥ संतत रहत
भाव तजि दूजा॥ भक्ति विलोकि तास वस राऊ॥ भ
यो आन कारन नहिं काहू॥ तास कथन सुनि
रानि सुहाई॥ निज निज करि विचार समुदाई॥ भई
निरत पूजन भगवाना॥ रीझहिं देखि कवहुं प
ति प्राना॥ अस प्रकार तिन मानस गाढ़ो॥ दिन दि
भक्ति प्रीति सुचि वाढ़ी॥ तव नवीन त्रीय संग न
नरीसा॥ रमन करत कछु काल वतीसा॥ सुता
सुशील अलप नृप सोई॥ अवसर पाय गरभ वति
होई॥ सोरठा॥ जव चतुरण षट मास॥ वीते क
न्यो रुचि तव॥ रूप सील गुणरास तेमहिषी जन

मत भई ॥२२॥ टीका॥ ऐसे राजा के मुखसे वचन सुन
कर सो रानी हरषसे दोनो हाथ जोड कर चरनोपर प्र
णाम करती भई तब राजा तिसके पूजनके वासते ~~स्व~~
विधीपूर्वक एक सुन्दर न्यारा भवन ततकाल रचाय दे
ता भया ~~बर~~ और तिस रानी के सहित आप भी ~~ज~~ होहीं
नित्य नेम और भगवान का पूजन जो है सो करने ल
गा और रमन आदि विलासमें भी नित्य तिसके साथही
रहता भया सो ~~स~~ सुशील रानी भी मन वचन काया
करके पती भक्ती और सेवामे रात्रीदिन लीन रहती थी
तब राजाकी और जितनी रानी एकते एक बडी स्यानी
और चतुर जो थीं पतीको तिस रानी ~~के भक्ती और प्रे~~
~~म~~ के वश हुये देख कर परस्पर कहने लगी कि हम
नहीं जानती ~~पती जो तिसके प्रेमके वश हो गया है~~ क्या
कारन है पती क्योंकर इसके ~~प्रेम~~ के वश होगया है
तब उनमे से एक बडी कोमल वानी से कहने लगी कि
मै जानती हू यह जो सुशील नवीन रानी है सो सदा
नारायणकी पूजामे निरन्तर करके लीन रहती है इसी
ते तिसकी भक्ती और प्रीती देख कर राजा तिसके वश
होगया है और कारन कोई नही है इस प्रकार तिसका व
चन सुनकर सो सपूर्ण रानी भी भगवानके पूजन सेवन
मे ततपर होजाती भई कि हमको भी भक्तीमान जान क
र पती तिसीके समान हीं ~~जानेगा~~ जानेगा और रीझ कर प्रसन्न
होवेगा तब तिस नवीन रानीके साथ राजाको रम
न करते हुये कुछ काल बतीत होगया सो समय पाय
कर गरभ वती होजाती भई और जब दस महीने बतीत
होगये तब सो रानी रूप ~~और सु~~ शील गुणोंकी रा
सी ~~जो है स~~ कन्या जो है सो जनमती भई ॥२३॥ चौपाई॥
तब नरेंद्र मन हरषि हुलासा॥ चारु नाम करमा
दिक तासा॥ संसकार सब पुत्र समाना॥ सब विधि
भयो करत गुण खाना॥ किये द्रव्य बय विविध नरे
सा॥ दिये दान महि सुरन बसेसा॥ देखि सुदिन सं
जुत अभिलाखा॥ श्री मति नाम रुचिर तहि राखा॥

सुकँवल ससि सदृस कन्यां॥ भई सुवढत रूप गुरानाथ न्या॥ थोरहिं काल मध्य तव सोई॥ जुवा वेस को है प्रापत होई॥ सोरठा॥ मृदुल अंग गुण खानि॥ भाव भक्ति गंभीरता॥ नखसिख रमासमान॥ अरु मोचिन मद मानरती॥२३॥ टीका॥ तव राजा अंवरीष बडे हरष को प्रापत भया हुआ तिसका जनम से लेकर सब संसकार पुत्र के समान ही करके ब्रह्मणों और दीन जाचिक जनो को अनेक प्रकार के दान देता भया तिसतें उपरांत सुन्दर सुभ दिन विचार कर तिसका श्रीमती नाम जो है सो रख दिया तब रूप और गुणों की निधी सो कन्या शुकल पक्ष के चंद्रमा की न्याईं दिनदिन वढती जाती भई थोरे ही काल मे सो जुवा अवस्था को प्रापत हो गई कोमल अंगोवाली गुणों की खानी सो कन्या रूप भाव और भक्ती गंभीरता करके नखसिख लक्ष्मी के समान भासने लगी और कामदेव की स्त्री रती जो है तिसके मान और मद को भी हरने लगी॥२३॥ चौपाई॥ ऐसे तेहि निधि सील सुजाना॥ किमि अनन्त छवि जाय वखाना॥ नारद अरु परवत मुनि दोई॥ तासु विलोकि प्रेम वस होई॥ अंवरीष पें जाचिन आये॥ मनत वदन अस वचन सुहाये॥ इह तुमार जोई सुता रसाला॥ हम कहे दान करहु महिपाला॥ सुनि अस मुनिन वचन नरराई॥ कहत चरन ने मृत सिर नाई॥ दीन कथन कछु अनुचित होई॥ मुनिवर महाराज तव दोई॥ कन्या एक मोर विधि कामी॥ इह कस वनहिं वात प्रभु स्वामी॥ तांते विनवहु वारंवारा॥ करहु कृपाल आप सुई कारा॥ सोरठा॥ सँवर विधि जुत थाल॥ इहि कर रचहु विवाह मे॥ धरहिं जास उर माल॥ तहि देवहु संशय नहीं॥२४॥ टीका॥ इस प्रकार रूप और शील की निधी वडी चतुर और अनन्त शोभा छवी वाली सो कन्या जो थी तिसको नारद

जाहि सुशील निपुण गुण लोना॥ सुनि अस वचन विप्र मुख राई॥ नवल पतनि कहे मन हरषाई॥ प्रेम भक्ति रत आपु समाना॥ मानत भयो भूप निधि ज्ञाना॥ करि पूजन भगवन सुखदाई॥ प्रमुदित नर राई॥ गयो निकट निज नारि नवीना॥ तासु वदन अस आयस दीना॥ अब तुम आव गमन श्रम खोई॥ निजहि निकेत मुदित मन होई॥ परम देव भगवानँ सुहावा॥ करहु रुचिर पूजन मन भावा॥ मै मंजुल एक भवन नवीना॥ तोरे पूजन हेतु प्रवीना॥ सोरठा॥ देहुं विलग विरचाय॥ शुचि समाज पूजन सकल॥ सादर तहां रखाय॥ मै आवहुं नित्यम् प्रती॥ ११॥ टीका॥ फिर राजा क्या देखते हैं कि ठाकरों का सब समाज सेज मेज इत्यादि अपने अपनें स्थानमें यथा योग रक्खा हुआ है तब तीसरे दिन राजा तहां जाय कर पुजारी से पूछने लगा कि ईहां भगवान के भवनमे मार्जन इत्यादि कौन करता और ठाकरों के नित्य सेजमेज सब शोधन करके और फिर यथा योग्य अस्थानमे स्थापित करके कौन चला जाता है हे पुजारी तुम सत्य कहो इसप्रकार राजा का वचन सुनकर पुजारी कहने लगा कि हे राजन आपकी छोटी नवीन रानी जो है सो कुछ शेष रात्री लेकर इहां नित्य आवती है सो मंदिर की मार्जन आदि सेवा करके ठाकरों के सेज मेज वडी प्रीती भक्तीसे शोधन करती और फिर सब समाज अपने अपने अस्थानमे स्थापत करके घरको चली जाती है ऐसे तिसका वचन सुन कर राजा वडे हरष को प्रापत होजाता भया और तिस रानी को भगवान की भक्ती और प्रेममे लीन जान कर अपने समान मानता भया तिसतें उपरांत भगवान का पूजन करके राजा तिस रानी के पास जाय कर वडी प्रीती और सनमान से प्रसन्न होकर कहने लगा कि हे प्यारी अबतें तू आने जाने का श्रम त्याग कर

तिसि धरि धरनि सीस गति दीना॥ विनय बहुत विधि मुख कीना॥ मुनिन वचन सुनि श्रवण सुहाये॥ कौतुकि रमा नाथ मुसकाये॥ निज स दृश तव मंजुल काया॥ दीनदयाल दीन करि दाया॥ तिसिमे मरम एक पुनि राखे॥ आनन भये मुनिन मृग

सोरठा॥ अस अदभुत जब कीन॥ तब मुनि हरि सदृश रुचिर॥ सुचि सरूप निज चीन॥ नाय सीस गवने मुदित॥ २४॥ टीका॥ तव मुनी जो हैं सो राजा का कथन सुनकर न्यारे न्यारे होकर के बड़ा सोच करते हुये वैकुंठमे भगवानके पास चले जाते भये तब पहिले नारद जी जायकर नारायण को देख प्रणाम कर के नम्रवानी से अपना मनोर्थ कथन करने लगे कि हे दीनानाथ मै जो फिरता फिरता पृथ्वी मंडल पर चलागया तो तहां अतसे रूपकी निधी राजा अंबरीषकी कन्या को देखकर तिस के रूपके वश व्याकुल होगया और राजा के कहतामया कि राजन इह कन्या मेरे को देवो और आसीरवाद लेवो तव राजा कहने लगा कि हे मुनी स्वयंवर की विधी से इस का विवाह रचता हूं जिसके गले मै इह प्रसन्न होकर के स्वयंर माला डाल देवेगी तिसी के साथ इस का विवाह कर देऊंगा सो मै इसप्रकार राजा का प्रण सुनकरके हे दीनदयाल आप की शरण को प्राप्त भया हूं क्योंकि सो राजा की कन्या निरन्तर कर के आपकी भक्तीमे हो लीन है और तिसने इह प्रण धारा हुआ है कि भगवान के समान जिसका रूप होवेगा तिस को मै वरूंगी ताते कृपा निध मेरी एही प्रार्थना और विनती है कि दीन को अपने समान रूप दीजिये और मनोर्थ सिद्ध कीजिये इतनेमे परवत मुनी भी आयगये जैसे नारद जी ने विनती करी थी तैसे ही सो भी करते भये तब मुनियों को मोहके वश हूये देखकर परम कौतुकी भगवान जो हैं सो अपने मन मै मुसकावते भये

(Margin: साखा। / सोरठा॥ / सोरठा / विश्व रूप करके ... / ... करके / भगवान ने ...)

३२

और फिर अपने समान तिनके शरीर बनाकर बी
चमे अपनी माया करके ऐसा भेद रखदेते भये कि
तिनके शरीर तो सब भगवानके समान परन्तु मुख
वानरोंके थे जब कौतुकी रमाके नाथ भगवानने
ऐसा अद्भुत चरित्र किया तब माया करके मोहित
भये हुये मुनी भगवानके समान अपना सुन्दर
स्वरूप जान कर बार बार प्रणाम करके आनन्द पूर्वक
चले आवते भये॥ १५॥ चौपाई॥ जहां भूप स्वयंवर
बिरचाना॥ जुरो समाज ललित विधिनाना॥ पा
छिल रमानाथ सुख शाला॥ ताह भक्ति वश दीन
कृपाला॥ मनुज रूप निज धारि अनूपा॥ आये अ
खिल भवन कर भूपा॥ हरन कोटि छवि मनमथ
काया॥ पुंडरीक लोचन निधि दाया॥ नील जलद
दुति निदरन वरना॥ चितवनि हृदय भक्त तम हरना॥
भुज आजान मान खल गंजन॥ ध्यान वचित्र
मुनिन मन रंजन॥ चंदन तिलक भालकल
राजा कच कुंचित जनु मधुप समाजा॥ कलि
त क्रीट भव भीत निवारन॥ पावन अरन च
रन जल जारन॥ सोरठा अस सरवा सुहाय॥
बैसकि शोर कृपानिधी॥ किमि छवि बरनन
जाय॥ नख सिख रूप अनूप प्रभु॥ १६॥
टीका॥ जहां अंबरीष ने स्वयंवर रचा हुआ था त
हां अनेक राजे और ऋषिमुनि अपने अपने समा
जके सहित सब आवते भये और वह
मुनी भी तहां चले आये तिनके पीछे रमाके ना
थ और दीनोंके पाल भगवान भी तिस कन्या
की भक्तीके वश भये हुये अतसे मनोहर मानुषका भेष
धार कर तहां आयजाते भये सो अपने रूप करके
कैसेथे कि कामदेवकी अनेक छवीको हरने वाले थे
और कमलोंकी न्याईं नेत्रोंकी शोभा वाले नीले बा
दरको निदरने वाला जिनके शरीरका रंग और भक्तो

सरव भव नेतेके अव ग्रधर

९२

76

के हृदयका तम अर्थात अंधेरा दूर करनेवाली कृपाकी
दृष्टी और लंबियो सुन्दर दोनो भुजा मुनीजनो के
मनको आनन्द देने वाला वड़ा विचित्र ध्यान मस्त
कमे चंदनका मनोहर तिल और सुन्दर कुंडलों वाले
भ्रमरयों के समाज वत स्याम केश लालीमय
कोमल चरन कमल और संसारके सरव भयको
दूर करने वाला माथे का मनोहर मुकट ऐसे सरव अं
गो करके शोभायमान कशोर अवस्था भगवान जो हैं
तिनकी नखसिखतें लेकर अनूप शोभाके कथन क
रनेको कोइ भी सामर्थ नहीं है॥१२६॥ चौपाई॥ भूमिभू
प जंह तंह समुदाये॥ बैठे निज निज रूप सजाये॥
तव सुन्दर अवसर अनुसारी॥ तेहि नृप श्रीम
ति नाम कुमारी॥ संतत निरत चरन भगवाना॥
लिये माल स्वयंवर निज पाना॥ सभा मध्य संको
च विहाई॥ त्यगत लाज हरषत चलि आई॥ प्र
थमहिं देखि रूप भगवाना॥ मनुज भेष अदभुत
मन माना॥ करत प्रणाम मनहिं मन कन्या॥
रूप अनूप शील निधि धन्या॥ स्वयंवर माल ल
लित कर जोई॥ डारि दीन भगवन उर सोई॥ जै
जै शबद देव समुदाई॥ करहिं प्रसून व्योम व
रषाई॥ तव तहि लिये संग भगवाना॥ मुदित की
न निज भवन पयाना॥ ते नारद परवत मुनि दो
ई॥ हृदय विचार करत निज सोई॥ रमानाथ वै
कुंठ निवासी॥ चिदानन्द सद भवन प्रकासी॥ ध
रि निज मनुज भेष अनुसारी॥ करि वचित्र कौ
तुक निज न्यारी॥ कन्या भूप रूपनिध जोई॥ लि
ये आपु गवने प्रभु सोई॥ अस विचारि जव आ
नन देखा॥ वलिमुख रूप दृगन निज लेखा॥ उ
पजा हृदय रोष तव धाये॥ हरि के भवन गवन क
रि आये॥ अप्रीय वचन कठिन रिस भीने॥ वद
न देव ऋषि हरि सन कीने॥ सोरठा॥ सुन हु

२४

ओर परवत मुनी देखकर रूप के वश भये हूये तिसके मांगने के वासते राजा के पास आवते भये और कहने लगे कि हे राजन् देखो इह जो रूप और शील की निधी तुमारी कन्या है सो हमको दान कर देवो इस प्रकार मुनियों का वचन सुनकर राजा हाथ जोड़कर नम्र बानीसे कहने लगा कि हे मुनि महाराज आप तो दो हो और कन्या मेरी एक है कृपानिधान इह बात कैसे बनेगी तो ते इसमे मेरी प्रार्थना है कि मै स्वयंवर की विधीसे इस कन्याका विवाह रचता हूं जिस के गले मै इह कन्या जैमाला डाल देवेगी मै तिसी के साथ इस का विवाह कर देऊंगा इसमे कुछ संशय नहीं है ॥२४॥

चौपाई॥ सुनि अस वचन भूप मुख सोऊ॥ पृथक पृथक करि मुनिवर दोऊ॥ गये तुरत वैकुंठ सिधारी॥ हरि सामीप सोच उर भारी॥ प्रथम जाय नारद परवीना॥ हरिहि प्रणाम दंडवत कीना॥ बहुरि मनोरथ आपन जोई॥ सादिर कहिस मुदित मन होई॥ महि मंडिल पर दीनदयाला॥ गवन करत मै देखि रसाला॥ कन्या अंबरीष ऋषिराई॥ रूपरास निधि सील सुहाई॥ सो मानो मन मोर सुनैना॥ तव मै कहिस भूप सन वैना॥ इह सुन्दरि मोहि कहु नृप देहो॥ आसिख मोर मुदित मन लेहो॥ कहा भूप तव वदन बुझाई॥ स्वयंवर विधि संजुत मुनिराई॥ रचहु विवाह पुत्रि निज जोई॥ सो प्रसन्न मानस जहि होई॥ स्वयंवर माल देहि उर डारी॥ देहु हरष जुत तासु कुमारी॥ अस विचारि जिय जन अनुगामी॥ आवा शरण तोर प्रभु स्वामी॥ ते नरेस वर सुता प्रवीना॥ सेवत भक्ति तोर प्रभु लीना॥ जहि अस दीन दयाल भगवाना॥ मन वच करम हृदिर प्रण ठाना॥ हरि सरूप पावन जग जोई॥ मोरे होहि ललित वर सोई॥ तो ते विनय मोर जन द्याला॥ अति विचित्र निज रूप रसाला॥ देहु देव मोहि आपु समाना॥ मागहु नाथ जोरि जुग पाना॥ बहुरि आय मुनि परवत ज्ञानी॥ जिमि नारद मुख विनय बखानी॥

करके राजाकी कन्याको हरकरके ले आयाहैं तेसेतूं
भी मेरा वचन जान कि तेरी प्रान प्यारी पतनी
को भी महा शूरवीर असुर शत्रू कीन्याई हरकर ले
जावेगा ॥२७॥ चौपाई ॥ संशय नाहि सुनहु भग
वाना ॥ तहि उपरंत वचन मम आना ॥ कीनह
मनहु मरकट मुख जोई ॥ तहि परिणाम प्रकट
अस होई ॥ बानर करहिं सहाय तुम्हारी ॥ सब
विधि बनहिं मीत हितकारी ॥ तुमउनकर रक्षा र
ण लेहो ॥ मोर वचन सन्तत अब एहो ॥ सुनत
श्रवण नारद मुख शापा ॥ बोले हरि जन जात
संतापा ॥ विनय युक्त अति कोमल बानी ॥ मंजुल
मधुर सुखद हित सानी ॥ मुनि नायक तुव सत्य बखा
ना ॥ कछु संशय नाहिन विधि जाना ॥ भावी कारज
कर गरवाई ॥ व्यापहिं हमहु अवश मुनि राई ॥ ये
सुनहो तुव मुनिवर धन्या ॥ इह जोई अवरीष
नृप कन्या ॥ सु नि शिक्षा निज मातु सनेहो ॥ धा
रिस हृदय रुचिर प्रण एहो ॥ बिनु हरि आन ना
हिं वर मोरा ॥ प्रेम नेम कछु हृदय न थोरा ॥ इहि
मै मोर धरम प्रण जोई ॥ सब विधि तुमहिं विदत
मुनि सोई ॥ सोरठा ॥ जे संतत नर भाम ॥ मोहि कहं
भजहिं सप्रेम जुत ॥ मै पुरवहुं तहि काम ॥ सत्य वचन
संशय नहीं ॥२८॥ टीका ॥ फिर नारद मुनी कहते हैं कि
हे भगवन मेरे इस वचनमै कुछ संशय नहीं है अरु
तिसपर और भी मेरा वचन है कि जो तुमने हमारे
वानरों के मुख किये हैं तिस का तुमको प्रकट इह
फल होवेगा कि वानर हीं तुमारे रक्षक होकर
रणमै रक्षक होवेंगे और तुम उनकी सहायता
लेवोगे इसप्रकार मुनीके मुखसे शाप सुनकर
भगवान जो हैं सो बड़ी कोमल और मीठी बानी
से नम्र होकर कहने लगे कि हे मुनियों बिखे सु
ष्ठु नारदजी आपने सत्य कहा है इसमै कछु सं
शय नहीं है इह भावीकी प्रबलता हमारे पर अ

वशु ध्यावेगे परन्तु हे मुनी सत्यम् इह राजा
अंबरीषकी कन्या जोथी इसने अपनी माताकी पि
ता लेकर हृदयमे निरन्तर करके इहप्रण धारन कि
याथा किमै विस्नु भगवानके विना और किसीको कदा
चित नहीं वरूंगी सो इसमे हे मुनीस मेराधरम और
प्रण जो है सो तुमको भलीप्रकार विदित है जोकोई
स्त्री अथवा पुरुष भक्ती प्रीती पूर्वक मेरेको निरन्तरकरके
भजता है मै तिसकी कामना अवश्य पूर्ण करताहूं
इसमे कुछ संशय नही है ॥ २८ ॥ चौपाई ॥ इहिंसो कन्या
पतिधरनी ॥ रहान उचित तुमहिं मुनि वरनी ॥ इह
अपराध तोर मुनि राया ॥ मै जोई कीन तमहु करि
दाया ॥ रहे तुमार जवन वपु सोई ॥ पूरव तुल्य वचन
मम होई ॥ सुनि अस वचन वदन भगवाना ॥ हृदय
आनन्द युगल मुनि माना ॥ विविध भांति अस नुति
मुख गाये ॥ नाय सीस निज भवन सिधाये ॥ विश्व
नाथ तहि पतनि समेता ॥ राजे निज वैकुंठ निके
ता ॥ इह पुनीत वर चरित सुहावा ॥ मै नृप अंबरी
षमन भावा ॥ कीन यथा मति कथन रसाला ॥
श्री गुरदेव दीनजन पाला ॥ हरनकलेस शोकवि
नसावन ॥ मंजुल भक्ति प्रेम प्रद पावन ॥ अति
उत कृष्ट सुखद सबकाहू ॥ परहिं प्रीति जुत श्रव
ण न जाहू ॥ सोरठा ॥ पावहिं सो मन काम ॥ कष्ट
दोष दारद मुकत ॥ भक्ति रमापति राम ॥ तहि उर
संतत होहिं दृढ ॥ २९ ॥ टीका ॥ भगवान कहते
हैं कि हे मुनी इह निमित्त करके सो राजाकी कन्या
तुमारे वरने के योग्य नहींथी मेरे ही वरनेकु यो
ग्य थी ताते मेरे से इह तुमारा अपराध भया है अ
व आनुग्रह करके मेरे [illegible] को क्षमा ही करिये औ
र जौनसे तुमारे शरीर हैं सो मेरे वचन करके पू
र्व वत जैसे थे तैसे ही हो जावेंगे तव ऐसे भग
वानके वचन सुन कर मुनी जो हैं सो परम हरष
को प्रापत हो जाते भये और फिर अनेक प्रकार

भगवान की अस्तुती गायन कर के जय जय करते हुये अपने अपने चले गये और सरव चराचर के स्वामी भगवान तिस राज कुमारी के सहित तहां अपने वैकुंठ धाम मे हीं विराजमान रहते भये ~~इस प्रकार इह अंबरीष का चरित्र~~ नाभादास जी कहते हैं कि हे गुरदेव स्वामी जी इस प्रकार अंबरीष का सुन्दर चरित्र जो है सो जैसा कि मेरी बुद्धी के अनुसार होस का गायन कर दिया है इह कैसा भी चरित्र है कि कलेशों के हरने वाला और भगवान की भक्ती और प्रेम के देने वाला सरव सुखों का साधन है जो कोई इसको प्रीती पूर्वक पढ़े सुनेगा तिसकी मनवांछित कामना सब सिद्ध होवेगी और सरव दोष दारिद्र और कष्टों से मुकत होकर भगवान की सुन्दर भक्ती को प्रापत करेगा ॥ १८ ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती महातमे भाषा टीकायां अंबरीष चरित वरणने नाम सरगः

अथ विदुर ~~चरित्र~~ त्रिये चरित्रे

सोरठा ॥ श्री गुरदेव कृपाल ॥ चारु भक्ति वर विदुर त्रीये ॥ जहि विधि कीन सि ख्याल ॥ सो वरणन प्रभु पै कहू ॥ चौपाई ॥ अवसर एक विदुर गृह त्यागी ॥ गये वहिर कारज हित लागी ॥ रही सदन एकल त्रिय तासा ॥ परम प्रवीन शील गुण रासा ॥ एक दिवस उठि प्रात हिं काला ॥ सो मंजुल निज अजर रसाला ॥ प्रमुदित करन मारजन लागी करि कृत सकल सदन अनुरागी ॥ वहुरि निपुण निज अंग न सोई ॥ मज्जन लगी नगन तन होई ॥ ताही समय कृस्न हत दूखन हरि प्रसिद्ध त्रै लोक विभूषण ॥ आये तुरत ठा

श्रवण श्री ईस॥ जाहि प्रकार छल कपट कारि॥ हम सन सुता महीस॥ हरि लै ग्रायो निठुर तुव॥ तसहि वचन ग्रवमोर॥ जे तुमार पतनी प्रीया॥ ग्रसुर ग्रौर वल चोर॥ हरि लै जाहिं प्रचंड रिपु॥२७॥ टीका॥
तव पृथवी के संपूर्ण राजे ग्रपनी ग्रपनी सज धज वनाय कर जथा जोग ग्रासनो पर ~~पर~~ वैठ गये इतने मे समय के ग्रनुसार तिस राजा की श्रीमती नामा कन्या जो निरन्तर करके ~~श्री~~ भगवान के हीं चरन कमलों की प्रीती वाली थी हाथ मे स्वयंवर माला लिये हूये लाज ग्रौर संकोच को त्याग कर वडे हरष से सभा के वीच चली ग्रावती भई। ग्रौर पहिले भगवान को हीं मनोहर रूप ग्रौर ग्रदभुत मानुष्य भेष देखकर वडे ग्रानन्द को प्रापत होइ ~~हुई~~ फिर नारायण को मन मे हीं प्रणाम करके सो स्वयंवर माला तिनके गले मे पहिराय देती भई जव इस प्रकार भगवान को माला पहिराय दई तव देवताओ के समूह जो ग्राकाश मे कौतुक देख रहे थे जै जै शब्द उचारन करके भगवान पर ग्रनेक प्रकार पुष्पों की वरषा करने लगे तिस ते उपरांत कौतुकी भगवान जो हैं सो तिस राजा की कन्या को साथ लिये हूये ग्रपने धाम को चले जावते भये तव ना रद ग्रौर परवत मुनी जो थे सो परस्पर विचार करने लगे कि रमा के नाथ वैकुंठ निवासी सतचित ग्रानन्द रूप जो हैं सो कौतुक से मानुष्य भेष धार कर रूप की रासी राजा की कन्या जो थी तिस को छल करके ग्राप ले गये हैं ऐसे विचार कर कहीं ग्रकस्मात जल मे जो देखने लगे तौ ग्रपने मुख वानरों के देखे तव तो महा कोप से कांपते हूये भगवान के पास वैकुंठ को धावते भये ग्रौर तहां जाय कर देव ऋषी जो नारद जी हैं सो भगवान को वरि ग्रप्रीयें ग्रौर कठोर वचन कहने लगे कि हे लक्ष्मी के पती हे ~~हे~~ ~~हे~~ जैसे तू हमारे साथ कपट

“भगवान्”

हे हरि॥

आनन्दमे मगन होगई और दोनो हाथजोड़कर ग
द गद वानी होकर प्रेमसे कहने लगी कि कृपानिधान
चलिये और चरन कमलोंसे मेरे घरको पवित्र
करिये आपकी अनुग्रवाला मेरा पतीभी इतने
मे आय जाताहै ऐसे कहिकर वडे सनमान से
भगवानका हाथ अपने हाथमे लेकर घरके भी
तर ले आवती भई॥२॥ चौपाई॥ हरि आगमन
देखि गृहमाहीं॥ भई उनमत्त प्रेम सुधी नाही॥
पुनि पुनि छवि विलोकि चैन वरना॥ परत देउ
वत चरनन धरना॥ प्रेम मगन तहि कृस्न निहा
री॥ पीतांवर निज रुचिर उतारी॥ तासु तुरत
प्रभु दीन उढाई॥ वोले वहुरि वचन जदुराई॥
सुनहु सुसील भक्ति रत नेहा॥ जे कछु वसतु मो
जनुव गेहा॥ औहीं तो प्रवीन वड़ भागी॥ लाय दे
हु छुध्या मोहि लागी॥ सुनि अस वचन वदन भ
गवाना॥ हरषी विदुर पतनि सुख माना॥ उठि तु
रन्त निज भवन सिधाई॥ अमिय सरस कदली फ
ल ल्याई॥ सनमुख वैठि कृस्न भगवाना॥ भक्ति प्री
ति संजुत निज पाना॥ मूल पदारथ देत तयागी॥ छि
लकहि लेत मानस अनुरागी॥ सादिर प्रभुहिं जिमा
वत सोई॥ प्रेम मगन सुधि सार न कोई॥ प्रीति
अलौकिक तासु विलोकी॥ ते भगवान नाथ त्रै
लोकी॥ खावत तिनहिं अमिय सम जानी॥ विवि
ध प्रसंसि वदन मृदु वानी॥ ताही समय रहत
जदुराई॥ विदुर आगमन भवन किय आई॥ निज
औंगन तव देखि विराजे॥ कृस्न कोटि छवि
मन मथ लाजे॥ पुनि देखी सनमुख निज भा
मा॥ ओढे पीत वसन चैन स्यामा॥ छाल
रसाल कदलि फल जोई॥ हरिहि अहार क
रावत सोई॥ ऐसे देखि विदुर गति तासु॥

हृदय अतसे उदवेग प्रकासा॥ सोरठा॥ लाग्यो वद न बखान॥ करि बहु विधि तिरस्कार तहा॥ का जीय मूढ महान॥ मति तोरी भोरी भई॥२॥ टीका॥ इस प्रकार जब भगवान को अपने घरमे विराजमान हूये देखा तब प्रेम करके अैसी उनमत्त होगई कि शरीर की ~~सुधि~~ भी कछु सुधी नहीं रही और भगवान की सुन्दर छवी को वार वार देखकर चरनो पर दंडवत प्रणाम करती भई तब तिसको प्रेम मे मगन और उनमत्त भई जानकर कृपानिधान भगवान जो हैं सो ततकाल अपना पीतांबर उतारकर तिस के ऊपर उढाय देते भये और फिर ~~[illegible]~~ कहने लगे कि हे सखी ले बड़भागन इस समय तुमारे घरमे जो कुछ खानपान करने वसतू है सो मेरे को शी घ्र ल्याय करके देवो मै क्षुध्या करके पीड़त होरहा हूं इसप्रकार भगवान का वचन सुनकर सो विदुर की वाला वड़े हरष से सुख पूर्वक उठकर अपने घरके भीतर चली गई और तहां से अमृत के समान सुन्दर और मधुर कदली फल जो थे सो ले करके ततकाल चली आवती भई और फिर भगवान के सनमुख बैठ कर वड़ी प्रीती और भक्ती से तिन के मूल पदार्थ को फेंकती और छील उतार कर भगवान को देती जाती सो कृपानिधान ~~तीन लोक के स्वामी~~ तिस की अलौकिक प्रीती और भक्ती देखकर वड़े आनन्द से खावते जाते और अनेक प्रकार सुख ~~से~~ तिनकी स्लाघा करते तिसी समय विदुर भी तहां आय जाता भया क्या देखता है कि कृष्ण प्रमात्मा अैसे उन मै विराजमान हैं और सनमुख तिसकी स्त्री ~~[illegible]~~ तिनका पीतांवर ओढे हूये वैठी है और फलकी छील उतार उतार भगवान को भक्ती प्रीती से अहार कराय रही है अैसे ~~विदुर~~ तिसकी दशा देखकर वदुर जो है सो अपने हृदय मे अतसे गिलानी मान कर क्रोध से ~~कहने लगा~~ तिसका तिरस्कार करके कहने लगा कि हे मंद सुभाव वाली मूढ जाती स्त्री क्या तेरी बुद्धी

अन्तर्पट

सुन्दर

वस्त्रोंकी

सखी

कृष्ण छिलका

ही

८०
८३

ही कदली मलेछ होगई और क्या तू बाउली होगई है इह तेरा क्या करम है॥२॥ चौपाई॥ कदली साक अहार कराव हु॥ मंद मूढ नहिं हृदय लजाव हु॥ अरु पट पीत रुचिर भगवाना॥ लीन ओढि तुव कुमति महाना॥ का मूरख आपन लघुताई॥ कै उनमत्त दीन विसराई॥ जोगी अरु ऋषिराज ~~मुनि~~॥ गयानी॥ संत देव दुज तपस अमानी॥ जा कर चरन रेणु सुचि जोई॥ जाचित रहहिं दीन गति हो ई॥ तुव तिन कर जड लीनसि धारा॥ पीतांबर नहिं कीन विचारा॥ पतिमुख सुन्यो वचन अस जबहीं॥ भ ई चेत जुत भामनि तबहीं॥ आपन दशा देखि अकु लाई॥ उठि लाजत निज भवन सिधाई॥ कीन विविध आपन तिसकारा॥ भीतर जाय बसन निज धारा॥ पी तांबर भगवान उतारी॥ राख्यो करि प्रणाम संभारी॥ ~~तहि अवसर न~~ तव इत विदुर मोद जुत होई॥ लेत रुचिर रंभा फल सोई॥ त्वक उतारि से जुत सत कारा॥ प्रभुहिं करावत अमिय अहारा॥ मन प्रसन्न पावत भगवाना॥ देखि रुचिर रुचि प्रीति महाना॥ पूछत विदुर नाथ फल एहू॥ ऐहिं मधुर कछु दीन सनेहू॥ विहसे कृपाल कृष्ण सुनि बानी॥ बोले वचन मधुर हित सानी॥ सुन हु विदुर तुम यद्यपि दीना॥ अमिय सरस फल रुचिर नवीना॥ सोरठा॥ तद्यपि तहि सम नाहिं॥ तुव त्रिय दीनसि साक जे॥ पूरि प्रेम मन माहिं॥ सो मोरे विसरत कहो॥३॥ टीका॥ विदुर कहते हैं कि हे मूढ भगवान को कदली अर्थात के ले के फलों के छिलके अहार कराय रही है अ रे महा मंद तेरे को लज्जा नहीं आवती औ र दूसरा तूने हे कुमती इह भगवान का म हां पवित्र पीतांबर जो ओढ लिया है तो क्या मूरख तैने उनमत्त होकर के अपनी लघु

रि तहि द्वारा॥ विदुर विदुर रव वदन उचारा॥ आव
हु बहिर भवन तुव भाई॥ बारबार बोलत जदुराई॥
तव तिय पतनि सुनत हरि बानी॥ प्रेम प्रीति करुणा
रस सानी॥ ततत्छण बहिर भवन चलि आई॥ न
गन शरीर चीर बिसराई॥ भगवन रूप देखि अनुरा
गी॥ वचन वनीत भनन सुख लागी॥ गदगदगिरा
प्रीति नहिं थोरी॥ सनमुख ठाढि जुगल कर जोरी॥ क
रहु कृपाल सदन मम पावन॥ धारि चारु निज चरन
सुहावन॥ आवहिं नाथ सोहु पति मेरो॥ जहिपर कृ
पा दृष्टि प्रभु तेरो॥ सोरठा॥ करि विनन्ति मृदु बानि॥
भक्ति प्रीति सनमान जुत॥ गहि प्रभु कर निज पानि॥ लै
आई भीतर भवन॥२॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि
हे दीनदयाल गुरदेव स्वामी जी अब मै विदुर की स्त्री की
भक्ती जैसी कि तिसने करी है आप के आगे प्रीती पूर्व
क कथन करता हूं एक दिन विदुर जी घर से निकल
कर किसी कारज के वासते कहीं बाहर ग्रामोत्र को च
ले जाते भये तव पीछे तिनकी परम प्रवीन शील और
गुणों की राशी पतनी जो थी घर मे अकेली रह जा
ती भई सो एक दिन प्राताकाल ही उठकर अपने
सुन्दर ग्रेहन मे बडे आनन्द पूर्वक झाडू मार्जन आ
दि घर का सब कारज करके फिर वस्त्र उतारकर
और नगन होकर सनान जो करने लगी तो इतने
मै सरव दूषणों के हरने वाले तीन लोक के भूषण
हरि अवतार कृष्ण भगवान आयकरके तिसके
द्वारे के बाहर स्थित हो जाते भये और हरष से बार
बार पुकारने लगे कि हे विदुर घर से बाहर आवो
ऐसे भगवान को बारबार बुलावते सुनकर और पती
पर अत्यसे प्रीती और सनेह देखकर ~~तत~~काल
~~घरसे बाहर चली आई~~ प्रेम से उनमत्त भई हुई व
स्त्रों की सुधी विसार कर नगन ही धावती हुई घर
से बाहर चली आई तव भगवान का रूप देख

२१

(८)

न चीन्हा॥ असप्रकार तहिप्रीति सुहाई॥ मै संक्षेपत बदन कछु गाई॥ अब आगे दूसर इतिहासा॥ करहुं यथा मति बदन प्रकासा॥ अवसर एक कृष्ण सुर नाहीं॥ मेजुल इंद्रप्रस्थ पुर माहीं॥ दरजोधन कर भवन सुहाये॥ कौरव दूत विदत बनि आये॥ तहां कृपाल विविध विधि नीती॥ कीन कथन मुख संजुत प्रीती॥ कृष्ण उक्त जोई विविध प्रकारा॥ कीनेंन एक तिनहुं सईकारा॥ तव मध्यान काल तहं आवा॥ करत रुचिर संवाद सुहावा॥ ताही समय पाक गृह लाई॥ भोजन वन्यो विविध विधि आई॥ तव आये कौरव मिलि सारी॥ कहिस बदन तिन विनय उचारी॥ हमरे चरन चारु निज धरहीं॥ चलहु नाथ कछु भोजन करहीं॥ दरजोधन पुनि विनय बखानी॥ ~~कहि~~ बहुविधि बदन रुचिर मृदु बानी॥ धृतराष्ट्र नृप विविध प्रकारा॥ यद्यपि दीन वचन उच्चारा॥ तद्यपि कृष्ण देव नहिं माने॥ तव कौरव निं हृदय लजाने॥ सोरठा॥ जव भोजन नहीं कीन॥ भगवान दुख दारद हरन॥ तव नेमृत मुख दीन॥ विनय कीन धृतराष्ट्र नृप॥ ४॥ टीका॥ इसप्रकार भगवान विदुरके साथ वचन करके मुखमें मुसकावते हैं और विदुरकी स्त्रीको वार वार बुलावते हैं और सो बड़भागन भगवानकी अनुग्रह देखकर लज्जाकरके वडे संकोचको प्रापत होती और दूरसेही हाथ जोड़ कर विनती और प्रणाम करती है भगवानके प्रेम मै मगन होरहीथी इसप्रकार तिसकी प्रीती और भक्ती जोहै सो इहां कुछ संक्षेप करके कथन कीगईहै अब आगे और दूसरी जैसीक बुद्धीके अनुसार होसकती है गायन करताहूं एक समय इन्द्रप्रस्थ नामा नगरमे किजिसको दिल्ली कहते हैं कृष्ण प्रमातमा पांडवों के दूत बनकर समाचार लेनेको दरजोधनके घरमे आवते भये ~~और~~ तहां

बड़ी प्रीती और सनमान से कृपासिंधु भगवान ने नीती युक्त अनेकप्रकारके वचनजो हैं सोकथनकिये परन्तु भगवान के अप्रेम नीती संबंधी वचनोको तिन्हों ने सूईकार नही किया तवचरचा वार्ता होती को मध्यान समय होगया तिसी कालविषे राजाके घरमे भोजनके प्रकार भी सब बन चुके थे तव कौरव जो हैं सोमिलकरके आये और दीन होकर नम्रवानी से भगवान के आगे विनती करने लगे कि कृपानिधान हमारे घरमे चरन धारिये और चलकरके भोजन पाईये दुरजोधन ने भी अनेकप्रकार करके विनती करी और धृतराष्ट्र ने भी नम्रवानीसे बहुत बार कहा परन्तु भगवान नही मानते भये तब कौरव हृदयमे बड़ी लज्जाको प्रापत हुये जब इस प्रकार विनती करने से कृष्ण प्रमातमाने भोजन नही किया॥ तब जिसप्रकार बड़ी नम्रवानीसे दीन होकर राजा धृतराष्ट्र प्राथना करने लगा सो आगे कथन किया जाता है॥४॥ चौपाई॥ हे हरि महा बाहु जन पाला॥ दलन दोष दारद सुख शाला॥ कृपासिंधु पूरन सब कामा॥ विनवहु नाथ जोरि जुग पाना॥ यद्यपि प्रभु सदृश हम नाहीं॥ तद्यपि अस लालस मन माहीं॥ विनु भोजन कीने सुख सिंधू॥ जाहु नाहि तुव जादव इन्दू॥ इह हम कहे प्रभु देहु बड़ाई॥ सब विधि जानि नाथ अपनाई॥ जब अस भूप कथन मुख कीना॥ तब हरि उत्र वदन तहि दीना॥ सुनहु नृपति तुव सत्य वखाना॥ कथ तुम कथ तुम नाहि समाना॥ पै तोरे मुख वचन वनीती॥ होत जानि संबंधप्रतीती॥ प्रीति धरम चरचा कछु नाहीं॥ करत प्रकट कछु अनहित काहीं॥ होत सरस भोजन नृप ताही॥

प्रीतिभाव पूरण मन जाही॥ प्रेम प्रीति विनु अ-
रथ न एक॥ यद्यपि व्यंजन होहिं अनेक॥
इहि ते मै भोजन नहिं करहौं॥ तुम यद्यपि मान
सरिस भरहौं॥ कछु अपदा व्याप्यो नहिं मोरे॥
जो मैं करहुं पाक गृह जोरे॥ सदा सतेज अमल
गात आसा॥ अस कृपाल मुख वचन प्रकासा॥ सो-
रठा॥ तब कौरव समुदाय॥ धृतराष्ट्र नृप सहित
नहीं॥ मौन न हृदय लजाय॥ करि चिन्तन निज
निज करम॥ ५॥ टीका॥ राजा धृतराष्ट्र कहते हैं
कि हे महाबाहु भारी भुजों वाले दीनो के दयाल भ-
गवान तुम कैसे हो कि जगत मे सरव कामना के
सिद्ध करने वाले और दोष दारिद्र्य को हरने वाले
सखों के धाम हो मे हाथ जोड़ कर विन-
ती करता हूं कि हम यद्यपि आपके समान नहीं
हैं तद्यपि हृदय में अतसे करके
इह लालसा रखते हैं कि आप भोजन किये विना
हमारे घरसे ना जाइये आनन्द पूर्वक इहां
भोजन कीजिये और हमको वडाई दीजिये
इसमे हे नाथ सरव प्रकार करके अब नाई
प्रतीत होवेगी जब राजाने ऐसे कहा तब कृ-
ष्ण प्रमातमा उत्तर देते भये कि हे राजन तैं ने सत्य
कहा है क्या जाने कि हम तुमारे समान नहीं कि
तुम हमारे समान नहीं हो परन्तु राजन तुमारे मु-
ख के वचन जो हैं सो निश्चय करके उपहास अ-
र्थात मसकरी संबंधी प्रतीत होते हैं और इनमे
प्रीती और धरम की कुछ चरचा नहीं है इसके
सहित आनन्द दायक भोजन तहां होता है कि
जहां मनमे प्रीती भाव निश्चय होता है प्रीती
और प्रेम के विना यद्यपि अनेक भी व्यंजन होवें
तद्यपि किसे ही अर्थ नहीं हैं हे राजन इस

ताईं को विसार दिया है रे गंवार देख कि जिस प्रमा
तमा के चरनो की रज अर्थात धूरी को [illegible] जोगी
श्वर और राज ऋषी संत महात्मा महा तपस्वी
और ज्ञानी देवता और ब्रह्मना इत्यादि सब जाच
ना करते रहते हैं तूं तिसके पीतांबर को निरसंक
होकरके अपने ऊपर धारन कर लिया है तेरी ऐ
सी बुद्धी को धिग है इस प्रकार पती के मुख से तिर
स्कार के वचन सुन करके सोने वाला जो है तत्का
ल चैतन्न होकर सुरत मे आय जाती भई और अ
पनी दशा देखकर बड़े संकुच और लज्जा को प्रापत
भई हुई उठकर अपने घर के भीतर चली गई तहां
जायकर अनेंप्रकार अपना तिरसकार करके सोंपा
वन पीतांबर ~~[illegible]~~ जो था तिसको उतार कर, और सं
नमान से राखकर ~~फिर~~ अपने वस्त्रों ~~पहर लेती भई~~ को
धारन कर लेती भई और इहां विदुर जो है सो सुन्दर
कदली फलों की छाल उतार कर बीच का अमृत के स
मान जो पदार्थ है भगवान को अहार करावता भया
तब कृपानिधान तिसकी भक्ती और प्रीती देखकर ब
ड़े आनन्द पूर्वक खावने लगे ऐसे भगवान को प्रस
न्न देखकर विदुर कहने लगा कि हे दीनानाथ इह फ
ल कुछ मीठे हैं कि नहीं इह वचन सुनकर भगवान
मुसक्यावते हुये बड़ी मधुर और हित की भीगी हुई
बानी से कहने लगे कि हे विदुर तुमने यद्यपि अत्यं
त मधुर और अमृत के समान सुन्दर नवीन फल
खवाये हैं तद्यपि तिनके समान नहीं है कि जो ते
री पतनी ने प्रेम पूर्वक मेरे को छिलके अहार
कराये हैं हे भक्त सो मेरे हृदे से क्योंकर बिसरते हैं
॥३॥ चौपाई॥ अस कहि कृपा सिंधु मुसकावहीं॥
~~बार बार~~ तेहि हरषित तासु बहुबार बुलावहीं॥ ते उर
संकुच लाज बस होई॥ दूर हि दूर जुक्त कर दोई॥ वि
नय प्रणाम करत गति दीना॥ प्रेम अलौकिक जाय

१३
८३

प्रसन्न मन होई॥ प्रीती भक्ति जुत शाक तुम्हारा॥ अ प्रिय सरस मोहि मानस प्यारा॥ विरचे जबहिं विदुर बृजधरना॥ अन्नकूट व्यंजन बहु बरना॥ तब मैं त हो शाक मुख राखा॥ प्रीये प्रधान बदन निज भा खा॥ जब भने वचन भगवाना॥ उठे विदुर संजुत सनमाना॥ लेत सलिल कर चरन पखो सो॥ प्रभु हि रुचिर आसन बैठा सो॥ सोरठा॥ तब सुपतनि दुत तास॥ राखि शाक पावँन परस॥ सनमुख कृपा प्रकास॥ भई नवेदन करत सो॥२॥ टीका॥ और ई हो भगवान तिनकी सभा त्याग करके बडे भागों वा ला विदुर जो है तिस के घर मे चले आवते भये त हो अतसे प्रीती पूर्वक तिसको कहने लगे कि हे विदुर मेरेको अत्यंत छुध्या लगी है इस समय जो कुछ तुमारे घर मे खान पान करने की वस्तू है सो मेरे को शीघ्र देवो मै पायकर छुध्याको निवार ण करूं ऐसे भगवान का वचन सुन कर वि दुर परम हरष को प्रापत होता भया और ति स समय तिसके घर मे कुछ शाक कि जिस को साग कहते हैं बनाय कर रक्खा हुआ था तत काल सुन्दर लेपन देकर और चौकी इसाय कर बडी प्रीती भक्ती से नम्र होकर और हाथ जोड कर कहने लगा कि हे कृपानिधान आज मेरे घर मे कुछ शाक मात्र हीं भोजन बना हुआ है सो आप को देने मे लज्जा आवती है जो ~~कदी~~ कदाचित अनुग्रह करके एक छिन भर विलंब करो तो भगवन ततकाल हीं कुछ सुन्दर नवीन भोजन बन जाता है सो आप आनन्द पूर्वक पाईये इस प्रकार विदुर का वच न सुन कर कृपा के समुद्र भगवान जो हैं

अस

भ० एवम्भाषि

सो इसकरके कहने लगे कि हेविदुर तुमने नहीं जाना इह साग जोहै सो मेरेको अत्यंत पयाराहै तो ते तूं इह सागहीं मेरेको दे मै इसको वडे आनन्द पूर्वक पाऊंगा इह प्रेम और भक्ती सूंसे दिया हूआ तुम्हारा साग जोहै सो मेरेको अमृतं समान अतसे प्याराहै हे विदुर जानतेहो कि जव वृज मै अन्न कूटं भयाथा तहां अनेक प्रकारके व्यंजन जोहैं सो रचे गयेथे हे भक्त मैने तिन व्यंजनो विषे तहां इह सागहीं मुख राखाथा और अत्यंत सवसे प्रधान कहाथा जव इसप्रकार कृष्ण प्रमातमाने कथन किया तव विदुर उठ खडे हूये और जलका गंगासागर लेकर वडे सनमानसे भगवानके चरन हाथ और चरन प्रक्षालन करवाये फिर भक्ती प्रीतीसे सुन्दर आसन पर वैठाये तव तिसकी स्त्रीने अतहे कोमल और पवित्र पत्रों पर तिस सागको परोसन करके भक्ती पूर्वक भगवान के आगे नवेदन करदिया॥६॥ चौपाई॥ सजल नयन कल पुलक सरीरा॥ प्रेम मगन ठाढी गत धीरा॥ वतसल भक्त दीन जन पालू॥ करत शाक भोजन सुख शालू॥ ~~कहे मने~~ कहो कृपाल प्रेम जुत वोई॥ आज विदुर विपती हम पाई॥ सो प्रणाम करि पानन जोरी॥ कहत वदन उर प्रीति न थोरी॥ भयोसि आज कृतारथ दीना॥ जास भवन प्रभु भोजनं कीना॥ शाक मात्र मै पाक वनावा॥ अमिय जानि कहणा निधि पावा॥ केवल दीन दीन कहे स्वामी॥ वडो वडाई भक्ती अनु गामी॥ दर जोध कर विविध प्रकारा॥ भोजन रुचिर अमिय आहारा॥ परिहरि

५४

८६

सो कृपाल मम गेहू॥ पाव शाक कछु दीन सनेहू॥ धन्य न आज मोर सम आना॥ जेहिं अस दीन सुजस भगवाना॥ भाखि विदुर अस संजुत प्रीती॥ लेत सलिल सुन्दर शुभ रीती॥ प्रभु कर चरन भक्ति सनमाना॥ करन पखोरि पुनि फल पाना॥ वदन शुद्धि कारन अचवाये॥ देखि भक्ति भाव हरषाये॥ पुनि प्रमुदित प्रभु कीन पयाना॥ त्रीय समेत तव विदुर सुजाना॥ चले अग्र पहुँचावन हेतू॥ हरषि विदाय कीन भव सेतू॥ करि प्रनाम तव भवन पराये॥ उत कृपाल निज धाम सिधाये॥ रहा उच्छिष्ट शाक प्रभु जोई॥ तासु मुदित मन दंपति दोई॥ पावन लगे परम हित मानी॥ पावन सुधा सरस जीय जानी॥ इह देखहु जग भक्ति प्रभावा॥ अति अदभुत मन हरन सुहावा॥ कहो रमीस लोक त्रै नाहो॥ शाक अहार विदुर गृह काहो॥ इहितें भक्ति सरव सुख साधन॥ करहिं निरन्तर जवन अराधन॥ सव जीवन कहें अति सुखदाई॥ उदय भाग जेहि संसृति पाई॥ दोहा॥ सुजस वढावन भय हरन दीन शरण श्री कन्त॥ भक्ति महातम इमत जग कहिन सकहिं श्रुति सन्त॥ १॥ टीका॥ तव सो विदुर की स्त्री नेत्रों मे प्रेम रूपी जल भर कर आनन्द मे मगन भई हुई सनमुख स्थित होकर दरसन कर रही है और वतसल्ल भक्तों जो है सो प्रेम पूर्वक तिस साग को खाते जाते हैं और कहते हैं कि हे विदुर मैने आज हि तृपती पाई है तव विदुर प्रनाम करके दोनो हाथ जोड कर कहने

विदुरहित

कारनतें मै तुमारे भोजन नही पावता हूं इसमे चाहे तुमारे चित्तमे क्रोध भी होजावे मेरे को कोई अपदा नही व्यापी है जो मै ऐसा अनहित देख कर तुमारे घरमै भोजन करूं क्योंकि मै तो सदा सर्वत्र और निरमल अभय रूप हूं इसप्रकार भगवानके मुखसे वचन सुनकर धृतराष्ट्र के सहित संपूर्ण कौरव जो है सो अपना अपना करम चिन्तन अर्थात समझ करके हृदयमे लज्जाको प्रापत होकर मौन हो जाते भये॥५॥ चौपाई॥ अस भगवान सभा तिन त्यागी॥ आये भवन विदुर बड़भागी॥ बोले वदन मधुर मृदु बानी॥ परम प्रेम प्रीती रस सानी॥ सुनहु विदुर क्षुधा मोहि लागी॥ देहु वेग कछु विलम तयागी॥ जो तुव भवन जोग आहारा॥ सो अब करहु मोर सतकारा॥ सुनि अस वचन वदन भगवाना॥ परम आनन्द विदुर मन माना॥ रहा तिनहुं निज हेतु बनावा॥ शाकमात्र कछु पाक सुहावा॥ संजुत भक्ति प्रीति सुख मानी॥ देत ललित उपलेपन पानी॥ सादिर आसन दीन विछाई॥ राखिस काष्ट पीठ हरषाई॥ प्रभु सन मुख जुग जोरत पाना॥ विदुर दीन गति विनय बखाना॥ कृपानिधान आज मम गेहा॥ शाक मात्र कछु भोजन रेहा॥ सो मोहि देत लाज जीय परहीं॥ जो विलंब कहसा निधि करहीं॥ तो नवीन भोजन कछु आना॥ बनहिं वेग पावहु भगवाना॥ सुनि सुभ वचन विदुर मुख एहू॥ विहसि बोले अस दीन सनेहू॥ सुनहु विदुर तुव नाहिंन जाना॥ मोहि न प्रीये कछु शाक समाना॥ तांते देहु भक्त तुम सोई॥ पावहुं मै

चरमे त्याग का अहार इसी तें हे संतजनों भक्तीजो है सो संसारमे एक वडा कारण है और सर्व सुखों का साधन है इसके आराधनसें सरव जीव वडे अनन्द को प्रापत होते हैं इन प्रेम के सहित भगवान की भक्ती कैसी है कि सरव कलेश और भय के हरने वाली और सुजस के सहित भगवान् की शरण को प्रापत करने वाली है और इसके महातम का कुछ परिमाण नहीं है अनन्त है श्रुति और संत तिस के कथन करने को सामर्थ नहीं हैं ॥७॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती महातमे भाषाटीकायां विदुर चरित वरणने नाम सरगः

अथ सुदामा चरित्र

दोहा॥ विप्र सुदामा की कथा मे पूरव संछेप॥ कीन यथा मति कथन कछु सलय भक्त उरलेप॥ परम मोद प्रद रस भरी संसृति वारद वेरि॥ अब तां कें विस्तरन हित उमगि रुचिर रुचि मेरि॥ श्री रघुवर जदुवर कलित कंज चरन उर धार॥ वरनहु सो सुख करन मन हरन तरन संसार॥ १॥ टीका॥ अब सुदामा ब्रह्मण की गाथा जो है सो कैसी है कि भक्त जनो के हृदय को शीतल करने वाली है सो पहिले कुछ संछेप कर के हीं कथन की गई थी अब तिस को कुछ विस्तार पूर्वक कथन करने के लिये चित्तमें रुची और उतसाह जो है सो उपज आया इस तें श्री रघुवीर और जदुवीर महाराज जी के चरन कमलों को हृदय मे धारन करके सरव सुखों के देने वाली और संसार के भय दूर करने वाली इस गाथा को जैसी क बुद्धी के अनुसार हो सकती है गायन करता हूं॥ चौपाई॥

पुरी उजैन समीप सुहावा॥ रम्मय रुचिर ग्राम
इक भावा॥ बसिहैं तहां मोद मन छाये॥ सकल लो
क सुख संपति पाये॥ निरध विप्र एक तहि ग्रामा॥
कृस्न भक्त ग्रस नाम सुदामा॥ दम्पति बसहिं सद
न निज दीना॥ गिरधर चरन चारु रति लीना॥ ज
ब निसि नाथ कृसद जदुवंसा॥ निज प्रचंड बल
कंस विध्वंसा॥ पठन हेतु विद्या उतसाहा॥ गुरु
पें गवन भवन मुद चाहा॥ आगम निगम ने
ति जहि बरना॥ सो ग्रस हृदय गुनत दुख हरना॥
पुरि ग्रावंति हरष उर छाये॥ सांदीपन गुरु सदन
सुहाये॥ जीव चराचर कर सुखदाता॥ ग्राये
राम कृस्न दो भ्राता॥ पूरव गुरु पें सोऊ सुदामा॥
रहे पठत विद्या ग्रभिरामा॥ दोहा॥ तहां कृस्न
कर विप्र वर बने मीत हितकारि॥ ससि कल
सदृश होत गई ग्रधिक प्रीति नित भारि॥२॥
टीका॥ कहते हैं कि उजैन नाम नगर के पास ब
डा सुन्दर और रमणीक एक ग्राम होता भया तहां ग्रा
नन्द पूर्वक सुख और संपती के सहित सब लोक नि
वास करते थे तिस ग्राम मे निरधन केवल एक ही ब्र
ह्मण होता भया कि जो सुदामा नाम कर के ~~विख्यात~~ कृस्न
भगवान का भक्त प्रसिद्ध था सो ग्रपनी स्त्री के सहित
दीन और दारिद्र करके ग्रसया हुआ घर मे निवास
करता था और कृस्न भगवान के चरन कमलों की
~~भक्ती~~ प्रीती और भक्ती मै निरन्तर करके लीन था
जब कृसद रूपी जादवों के प्रफुल्लित करने वाले
चन्द्रमा रूपी कृस्न प्रमातमा ने ग्रपनी प्रचन्ड भु
जों के बल से कंस को ~~हनन~~ विध्वंसन कर दिया ग्रर्थात मा
र दिया तब तिस के उपरान्त बडे उतसाह से विद्या
पढने के वासते गुरु के घर मे जाने की इच्छा करते
भये देखिये कि जिस प्रमा को वेद और पुराण नेत

नेत कर के गायन करते हैं कि कुछ अन्त नहीं आव
ता है सो प्रभात मा भगवान विद्या पढ़ने की इच्छा
कर के आवंती नगरी मे सांदीपन नामा गुरू के घर
विखे हरख पूर्वक आवते भये तहां सुदामा जो
है सो पूरव हीं अर्थात पहिले हीं ~~[illegible]~~ गुरु
जी के पास विद्या पढ़ रहा था तहां रात्रीदिन
एक साथ पढ़ने और मेल मिलाप रहने से ति
स विप्र सुदामा की परस्पर भगवान के साथ बड़ी गूढ़
मित्राई हो गई और ~~[illegible]~~ अत से हितकारी बन
गया चंद्रमा की कला वत ~~[illegible]~~ दिन दिन प्रीती जो है
सो बढ़ती जाती भई ॥२॥ चौपाई ॥ जब गुरु वर
अनुसासन पाये ॥ श्री माधो निज भवन पराये ॥
तब सुशील सुंदर गुण धामा ॥ आय सदन
निज विप्र सुदामा ॥ बीत्यो कछुक काल जब
तेहा ॥ करत निवास रुचिर निज गेहा ॥ भयो
तरुण अति दारद घेरा ॥ परहि न सदन अ
न्न कछु हेरा ॥ भिक्षाटन द्विज धरम सदा हीं ॥
सो विचारि निज मानस माहीं ॥ अस बनिहैं
तस करहिं निबाहू ॥ कृष्ण भजन संतोष उ
छाहू ॥ तन परि धनत चीर प्राचीना ॥ यद्य
पि अति दारिद्र दुजलीना ॥ तद्यपि करम धर
म निज सारी ॥ विधिवत करहिं विप्र व्रतधारी ॥
कृष्ण रजाय सीस धरि नीके ॥ लखहिं न
दुज कलेश कछु जी के ॥ विषय विरक्त मुचित
अभिमाना ॥ संतत निरत भजन भगवाना ॥
एक दिवस भिक्षाटन लागी ॥ गवन न केत
विप्र निज त्यागी ॥ कृष्ण कृष्ण रव वदन उचा
रत ॥ विहरत सदन सदन सुध्यारत ॥ अस दुज
भ्रमत विपुल गृह दिन्हा ॥ पावन तन क सदन
कित भिन्ना ॥ तब निरास निज वास परा ॥

लगा कि हे दीनानाथ इहदीन आज कृतार्थ और धन्य धन्य होगयाहै कि जिसके घरमें आप अनुकूल होकरके भोजन पाया मैनें बड़ी ढीठाई करीथी जो इह साग मात्र कुछ पाक बनायाथा परन्तु आपकी अनुग्रहके बलिहारे जाताहूं जो इस मेरे दिये हूये साग को आपने प्रसन्नता पूर्वक अम्रत जान कर पायलिया है इसते मैं जानताहूं कि भक्तपाल आपने मेरेको केवल इंबराई और सुजसही दियाहै देखिये कि दरजोधन के घरमें अनेक प्रकारके बने हूये व्यंजन त्याग कर मेरे घरमें एक साग मात्र अनुकूल होकरके पाय लियाहै ताते संसारमें आज मैंही धन्यहूं और मैंही सुजसका भाजनहूं ऐसे कहि करके विदुरने बड़ी प्रीती और सनमानसे जल लेकर अपने हाथोंसे भगवानके हाथ और चरन प्रक्षालन करवाये और पुंगीफल अर्थात सुपारी और पान आदि मुखकी शुद्धीके वासते बड़ी भक्ती प्रीतीसे अचवाये इसप्रकार विदुरकी भक्ती और प्रेम देखकर कृपासिंधु भगवान जोहैं सो बड़े हरषको प्रापतभये तिसतें उपरांत कृस्नभगवानने तिनकी प्रसन्नता लेकर जब अपने भवनको चलने लागे तब स्त्रीके सहित विदुर जोहैं सो आगे पहुंचावन के वासते साथही चलपड़े, मारगमें भगवान ने अनेक प्रकार समुझायकर तिनको विदाय करदिया तब सो दोनो बारंबार प्रनाम करके कृस्नकृस्न रटते हूये अपने घरको चलेआवतभये उहां भगवान अपने धामको चलेगये तब ईहां भगवानका उछिष्ट अर्थात जूठा भोजन जो बचाहूआथा तिसको दोनो स्त्रीभरता अम्रत जानकर बड़े हरषसे खाय लेतेभये हे हेसतजनो इह देखिये भक्तीका कैसा अदभुत प्रभाव है कि कहां लछमीके नाथ तीनलोकके स्वामी भगवान और कहां विदुर के

अप्रस्थान

तब निराश होकर के अपने वास को चले आया और दूसरे दिन फिर प्रात काल उठ कर मिक्षा के वास्ते ग्राम मे चला गया तिस दिन भी भिक्षा प्राप्त नहीं भई कृष्ण कृष्ण रटता हुआ खोली फिर करके घर मे चला आया इस प्रकार जो है सो तिसको तीन व्रत वीत जाते भये संतोष मे लीन भया हुआ दुज कुछ भी कलेश नहीं मानता भया तब चौथे दिन की अर्ध रात्री को तिस की स्त्री व्याकुल होकर बड़े दुख वाले वचन कहने लगी कि हे नाथ क्षुध्या सहारी नहीं जाती है दारिद्र रूपी जो ज्वर है सो हृदय को जरावता है हमने कौन सा पाप किया है कि जिस के संसार मे इतना संताप हमने लिया है ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ प्रीय दुख सुनत श्रवण दुज नाथा ॥ बोले मंजु मधुर मुख गाथा ॥ भामनि सुनहु सत्य जिय धारी ॥ जे जदु वंस तिलक हितकारी ॥ सो तो संमृति दारद लीना ॥ सदा रहत आरत धन हीना ॥ याते करि सुमर्ण भगवाना ॥ लेत विमल पद कृपा निधाना ॥ सो अस हरन त्रास दुख दासा ॥ भक्त वन ज उर भानु विकासा ॥ मोरे परम मीत हितकारी ॥ दारद दुरत दोष जन हारी ॥ लोकपाल दिग पालन पाला ॥ सकल सुखेद प्रभु दीन दयाला ॥ पे मोरे प्रीय गरव न भयऊ ॥ यद्यपि मीत भवन पति रहेऊ ॥ दोहा ॥ जन रालख करलाय तन कृष्ण देव भगवान तस हमरे संतोष प्रीया धरन उचित गत मान ॥ विप्र सुजान सुज्ञान मय यद्यपि वचन अलाय ॥ तद्यपि तासु न भयो गुण भामनि अगुन सुभाय ॥ ४ ॥ टीका ॥ ऐसे जब स्त्री ने रोदन कर के अपना दुख सुनाया तब सुदामा सुनकर बड़ी मनोहर और मधुर वानी से

कहने लगे कि हे पयारी तूं मेरा वचन हृदयमे
सत्य धारकर सुण कि जादो वंसके टीके भगवान
जो हैं तिनका जो कोई हितकारी और प्यारा भक्तजो
है सो तो संसारमे सदा दारिद्री और दुखी धनसे ही
नहीं रहताहै इसीतें प्रीती भक्तीसे तिस प्रमात्मा
का सुमरण और भजन करके तिसके महा पवित्र नि
रमल पदको प्रापत करताहै सो ऐसे दीनजनो
के दुख और भयके हरने वाले और भक्त जनो
के कमल रूपी हृदयके आनन्द कारी भगवानजो
हैं मेरे परम मित्र और हितकारी हैं और सरब दो
ष दारिद्रों कोभी दूर करने वाले हैं लोकपाल औ
र दिगपाल भी होई हैं सरब प्रकार करके दीनो
के पाले सुख दायक होते हैं परन्तु हे प्यारी यद्यपि
ऐसे संपूरण भवनोके पती मेरे अतसे मित्र हितका
री भी रहे तद्यपि मेरे हृदयमे किंचक मात्र भी गरब
उतपन्न नहीं होता भया यही जानताहूं कि कृपा
निधान कृष्ण भगवान जिसै सनमानसे राखें ति
सीमे हम को निरमान होकर संतोष धारना उचित
है इस प्रकार भगवान के भक्त बड़े चतुर सुदामा
जो हैं तिन्होंने अपनी स्त्रीको ज्ञानके सहित मीठी
वानीसे यद्यपि अनेक वचन भी सुनाये तद्यपि
स्त्री का जो सदैव अवगुण वाला सुभाव है तिन
वचनोका तिसको कुछभी गुण ना होता भया॥
४॥ चौपाई॥ बोली सुनहु प्राण पति मोरे॥ जो
के अस कृष्ण परम प्रीय तोरे॥ हरन दुन्द दुख
दारद हारी॥ तो न जाहु कस वेग सिधारी॥ म
न वांछित निज काम सुहाई॥ कस न लेहु
अब स्वामिन जाई॥ मित्र तुमार विभव सुख
भोगू॥ तुम हूं निरत दारद दुख सोगू॥ मोरे
हृदय भूरि संदेहू॥ कस विप्रीत प्राण पति
एहू॥ अवसर परे मित्र हितकारी॥ तनमन

और अपने जनका [illegible] नहीं सकते

88

धन सुदेत सब कारी॥ तोते जाहु वेग तुम ताहो॥ राजे कृष्ण दमन दुख जाहो॥ दुज वर कहि सव चन सुनि नारी॥ प्रभु पें जाहु प्रात मै प्यारी॥ ये ग्रस हृदय होत संदेहा॥ जोगन कृपा नाथ क कु नेहा॥ जो मै धरहु उपाइन जाई॥ सनमु ख दीन घाल जदुराई॥ कछु मिलन मीत सन रीती॥ सो अनीत प्रीय होत प्रतीती॥ ग्रस विचा रि कछु तुमहिं सनेहो॥ ल्याय देहु मोहि ग्रवस र एही॥ दोहा॥ सुनि निज पति मुख वचन ग्र स भामनि वदन उचारि॥ भवन विभूती विदत निज प्राण नाथ तोहि तारि॥ ४॥ टीका॥ सुदामा की स्त्री कहती है कि हे प्राण पती जो ऐसे सरव दे ष दारिद्रों के दूर करने वाले कृष्ण भगवान तुम्हा रे मित्र प्यारे हैं तो तुम तिनके पास शीघ्र क्यों नहीं जाते हो और ग्रपनी मन वांछत काम नाको क्यों नहीं प्राप्त करते हो देखिये कि मित्र तुमारा तो वड़ा प्रताप मान महा ईश्वर्य भोगता है और तुम ईहो अत्यंत दारिद्र और दुखी करके ग्रसे हुये हो हे प्राण नाथ इह मेरे हृदय मै ग्रतसे करके सन्देह होता है और इह विप्रीती क्यों कर भई है ग्रपदा काल के समय मित्र हितकारी जो होता है सो ग्रपने सज्जन का कलेश नहीं देख सक ता तन मन धन इत्यादि निछावर कर देता देता है ग्रर्पान करने कर देता है इस ते जानती हूं कि भ गवान को तुमारे दारिद्र और दीनता की कुछ खबर नहीं है तो ते हे पती जहां दारद दुख हान कृपा निधान भगवान विराजमान हैं तहां तुम वि लंब को त्याग कर ग्रव वेग चले जावो सो दीना ण तुमारे पर ग्रवश्य ग्रनकूल होवेंगे ऐसे ग्र पनी पतनी का वचन सुन कर के सुदामा कहने लगे कि हे प्यारी मै प्रात होते हीं भगवान की शर्ण

दूसर दिवस प्रात उठि धाका॥ तब ह्वै आव कछु कै नि
ज गेहा॥ कृस्न कृस्न मुख रटत सनेहा॥ असप्रका
र ब्रत तीन सराने॥ दुज संतोष निरत नहिं माने॥
दोहा॥ अर्ध निसा चतुरथ दिवस विप्र पतनि अकु
लाय॥ कहत वदन आरत वचन छुधा सहिन प्र
भु जाय॥ दारद ज्वर सेन्न सुजरावउर कवन की
न हम पाप॥ जाहि तें संतति लीन अस प्रबल्ल ना
थ संताप॥ ३॥ टीका॥ जब गुरु महाराज से विद्या पढ
कर और तिनकी आज्ञा लेकर श्री माधवजी भ्राता
के सहित अपने घर को चले आये तब बडे सु
शील और सुहृद गुणों के धाम सुदामा जो थे सोभी
गुरु महाराज की आज्ञा से घर को चले आवते भये
इसी प्रकार जब घर मे निवास करते सुदामा को कु
छ काल वतीत होगया तब जुवा अवस्था को प्रा
पत होजाता भया परन्तु दैव ~~इच्छा से~~ दारिद्र ने ऐ
भोगीकरके
सा ग्रसया जो घर मे अन्न का एक दाना भी नहीं दे
ख पडता भिक्षाटन करना जो ब्राह्मणों का धरम है सोई
हृदय मे विचार कर जैसे बन पडता तैसे संतोष पूर्व
क निरवाह कर लेता और भगवान के भजन मै ली
न रहता ~~यद्यपि~~ शरीर के वस्त्र ~~[illegible]~~ प्राचीन मलीन
यद्यपि दीन और दारिद्री भी था तद्यपि सो ब्रतधा
री ब्राह्मण ~~करन धरम अपना~~ सब विधी पूर्वक ता
अपना धरम करम
और भगवान की भावी को स्वीकार करके हृद
य मै किंचत भी कलेश नहीं मानता था संसार
के विषयों से विरक्त और अभिमान से रहित
होकर भगवान के भजन और सुमरनी मे ही निरन्तर
कर के मगन रहता था एक दिन जो है सो भिक्षाटन करने
के वासते घर से निकल कर ग्राम मात्र मै चला गया
तहां कृस्न कृस्न शबद उचारण करता हुआ घर
घर मै विचरने लगा इस प्रकार ब्राह्मण ग्राम
के बीच सब घर घर मै फिर चुका परन्तु दैव
इच्छा से भिक्षा कुछ भी प्रापत नहीं भई

अवधूत
अवधूत
[illegible]

८९

चावलों के बडी प्रीती से सुन्दर चिउवे बनाके
र भक्ती तनमानसे पती को देकर कहने लगी
कि हे नाथ बलरामजी के भैय्या सों कहियो कि र
हे पृथुक अर्थात चिउवे तुमारी भौजाई ने पठे हैं
ऐसे पतनी का वचन सुनकर सुदामा बडे हरख को
प्रापत होगये और तिन चिउवों को एक फटे हुये
प्राचीन चीथडे मे सात तैह बनायकर भलीप्र
कार दृढकर के बांध लिया और शरीर पर एक
वृध टूटी हुई मलीन कंबली और फटा हुआ अ
तसे प्राचीन सिरका वस्त्र पाउं से नंगा और
नहीं कोई जल का पात्र केवल हाथ मे एक दंड लीया
इस प्रकार अमंगलरूप बनाये हुये सुदामा जो
है सो शीघ्रता पूर्वक द्वारिका को चल पडता
भया तब मारग मे जाता हुआ हृदय मे विचार क
रने लगा कि छपंजा करोड जादवों का स्वामी के
सके हनन करने वा कृष्ण प्रमातमा मेरा मित्र
हित कारी है ऐसे तनके मिलाप होने सुदा मे
मा जिसप्रकार संकप वकलप करता है सो
आगे कथन किया जाता है ॥५॥ चौपाई ॥ तास
दमन दारद संतापा ॥ जाजि परत मोहि अगम मि
लापा ॥ कस ढंग करहे सफल अब देवो ॥ भा
गा अल्प अभिलाख बसेवो ॥ निरधन दीन
मलीन तन चीरा ॥ दशा विवरन देखि जदु
बीरा ॥ चीनत किन चीनत मोहि ताईं ॥ अस
संदिगध विप्र मन माहीं ॥ तट जलधीस शी
घ्र तर आऊं ॥ राधा रौन मिलन उर चाऊं ॥
नाथ का सुन हु मधुर अस बानी ॥ विप्र दीन ब
त बदन बखानी ॥ मे धन हीन रेक दुज जा
ती ॥ जदुपति मोर मित्र प्रीय नाती ॥

उनकर मिलन मोद मन छैय्या॥ मै तजि आव सदन निज मैय्या॥ अव कस होहु पार नदराई॥ नहिन छोर मोरे उतराई॥ करन धार दाया तुव धारी॥ जो मोहि करहु पार निधवारी॥ तो तुमार कल्यान सुहाई॥ मोर असीस नाव कन भाई॥ नम्र वचन सुनि दुजवर काना॥ परम प्रसन्न नाव कन माना॥ तुरत पार निधवार उतारा॥ चल्यो सुमरि दुज कृस्न उदारा॥ पुर विस्तार दृगन जव आये॥ देखो विप्र चकत उरछाये॥ दोहा॥ कोटकोट द्वै वीस घट द्वैद कनक चहु ओर॥ चारि द्वार चाहू रचे जनहु मेरगिरि कोर॥ १॥ टीका॥ सुदामा विचार करते हैं कि तिस संताप और दारिद्रों के दमन करने वाले भगवान का मिलँन होना मेरे को अगम हैं जा पड़ता है मै तिन का दरसन करके नेत्रों को कैसे सफल करूंगा क्या कहूं कि भाग्य बड़े जोर है और चित्त की अभिलाखा बहुत बड़ी है तिसपर निरधन दीन और वस्त्रों करके मलीन अतसे दारिद्री हूं मेरी ऐसी विवरण दशा को देखकर क्या जानिये कृपासिंधू चीनते हैं कि नहीं चीनते इस प्रकार सुदामा जो है सो संदिगध चित भया हुआ भगवान के मिलने की कांक्षा वाला समुद्र के किनारे पर चलाआवता भया तब तहां नाव को अर्थात मलाहों को देखकर वड़ा नम्र और मधुर वानी से कहने लगा कि हे भाई नाव को मै निरधन और अतसे दीन एक रंकवत ब्रह्मण जाती हूं और जदुपती कृस्न भगवान जो हैं सो मेरे मित्र हितकारी हैं मै आनन्द पूर्वक तिनको मिलँने के वासते अपने घर को त्याग करके आया हूं और अव इहां समुद्र से पार होना वड़ा कठिन जान पड़ता है मेरे पास उतराई भी नहीं है जो मै तुमको देकर इस महां नदीस से पार हो जाऊं अव हे भाई नाव के जो कुछ तुम्हारे हीं चित्त मे दाया उतपन्न होती है तो मेरे को दीन जान कर इस समुद्र से पार उतार देवो मेरे पास आशीरवाद के विना और कुछ नहीं है सो मै

तुमको देता हूं भगवान तुमारी कल्यान करे इसप्रका
र सुदामाके नम्र वचनकर सो नावक हृदय में वडा
आनन्द मानते भये और तिसीकाल नाउका पर चढाय
कर के [struck] समुद्रसे पार उतार देते भये तबसो
ब्राह्मण तहां से कृष्ण कृष्ण रटता हुआ आगे को चल पड़ा
जब सामीप जाय पहुंचा तब नेत्रों में पुरका विस्तार जो
देखा तिससे वडे आचरज को प्राप्त होगया सो कैसा
विस्तार था कि चारो ओर अठतालीस कोस सुन्दर
सुवरण का कोट और मनोहर चार जिसके दरवाजे सो
कैसे थे किमानो सुमेर परवत को कोरकरके रचे हुये
थे ॥२॥ चौपाई॥ जहं तहं ठाड सजग रखवारे॥ सायु
द वीर धीर मति भारे॥ चहुं कित नगर नवल जा
नु सोभा॥ अति बचित्र उपवन मन लोभा॥ बीच
बीच वर सुभग अरामा॥ द्रुमन वेलि छबि छये व
ताना॥ सुमन ललित अवलि अमराई॥ खेमन क
दलि कलित तत छाई॥ विरचत कुंज बीच व
र नीके॥ सुखद बचित्र परम प्रीय जीके॥ चारु
प्रसून वाटिका न्यारी॥ गुंजत मधुप मधुर स्वर
प्यारी॥ वापि तड़ाग कूप चहुं ओरा॥ कोकल कै
कि मुखर चित चोरा॥ सीतल सलिल विविध
वर व्यारी॥ रचना देखि विप्र मन हारी॥ दोहा॥ च
हु कित चितवत चकत चित नगर द्वार दुज आय॥
नाय सीस भीतर चल्यो कृष्ण चरन मन लाय॥
७॥ टीका॥ फिर सुदामा क्या देखते हैं कि जहां तहां
प्रत्येक स्थान पर रखवारे वडी सावधानता से खड़े
हैं [struck] और
नगर के चारो पासे मानो नित्त नवीन ही शोभा और
रमणीकता भासती है अत से मनोहर वन और
उपवन और बीच बीच वडे सुन्दर बगीचे जो वृक्षों
और [struck] नवीन वृक्ष जो हैं सो सुन्दर वेलियों करके
छायत भये हुये शोभा पावते हैं और आंबो की पंक्ति
यों की कुंड विचित्र रचना है कदली खंभ जो हैं

के चला जाऊंगा परन्तु ऐस शोले हृदयमें संदेह होता है कि कृपानिधान भगवान जो हैं सो तिनके योग्य घर मे कोई वस्तु नही है जो मे लेजायकरके दीनानाथ के सनमुख भेटा धरूं और बोली हाथ जाय कर मित्र प्यारे के जो मिलना है सो है प्यारी तिसमे भनीती प्रतीत है तो है तो ते ऐसे विचार करके हे हितकारनी इस समय ~~तुम हीं मेरे को ल्याय करके देवो~~ मेरे को कुछ तुम हीं ल्याय करके देवो इस प्रकार पती के मुख से वचन सुनकर सो बाला नम्र बानी से कहने लगी कि हे प्राण नाथ घर की विभूती जो है सो आपको भली प्रकार सब विदत है मेरे से क्या पूछते और मांगते हो॥५॥ चोपाई॥ अस कहि सो पति देवत नारी॥ भिक्षाटन हित ग्राम सिधारी॥ कृस्म कृस्म अस बदन उचारी॥ आरत अटन करत गृह चारी॥ चारि मूठि चावर तनकाला॥ ल्याई निज नकेत दुज बाला॥ अतसे प्रीति पुनि पृथक बनाई॥ सादिर दीन पति हिं निज जाई॥ कहि है। बदन राम बल भैया॥ पठे पृथुक रहत तोर भु जैया॥ सपत परत तव चिर कुट चीरा॥ करि दृढ बांध लीन दुज धीरा॥ कौमरि वृद्ध मलन तन खेदु॥ पट प्राचीन सीस कर देह॥ नहिं पद त्राण पात्र कछु वारी॥ चल्यो द्वारिका छिप्र सिधारी॥ दोहा॥ हृदय जात अस गुनत दुजो कंपन कोटि जदु वेस॥ ताकर पति प्रीय मीत मन कृस्न करन हत केसवर॥ टीका॥ इस प्रकार कहि करके सो पती व्रता सुदामा की स्त्री भिक्षाटन करने के वास्ते ग्राम मे चली जाती भई और क्षुध्या करके दुखी भई हुई चार पांच घरों मे फिर कर चार मूठी चावल जो हैं सो भिक्षा द्वारा मांग कर घर मे ले आवती भई और फिर तिन

१८
श्रीकृष्ण कृपा

९१

मेद मेद वरवस चल्यो मिलन मीत हित लोय॥ ९॥ टीका॥ जब सुदामा ने भीतर प्रवेश किया तब से ~~संसार समुद्र के तारने वाले कृष्णभगवान को सुमरण जो करता जाता था तिसको किसी ने भी निवारण नहीं किया [illegible] जाय करके नगर की रमणीकता जो देखी तो अपारो मनोहर और रमणीक मन को मने वाली [illegible]~~ तब तिसको किसी ने भी निवारण नहीं किया संसार समुद्र के तारने वाले कृष्ण परमातमा जो हैं तिनका सुमरण करता हुआ ~~देखो [illegible]~~ नगर की शोभा को देखता चला जाता है तो कैसा नगर है कि अति रमणीक और मनोहर बड़ा शोभायमान अत्यंत ऊंचे धवल धाम और बड़े विचित्र मठ और माड़ी नाना प्रकार के चित्रों से चित्रत किये हुये और तिनके ऊपर वरन वरन की धजा जो हैं सो फहराती हैं और जहां तहां को चिनें कलस लगे हुये बड़ी शोभा और छवी के प्रकाश करते हैं और बजार के बड़े सुन्दर चतुरंग चौक और सुन्दर ही बचार और हाट तिन्हों पर बनक जो वाणियें अतसे धनाढ्य मानो कुबेर के समान बैठे हुये हैं देवता और देवतों की स्त्रियों के समान पुर के नर और नारी शोभीत होते हैं पुर के चित्र नवीन ही मंगल और उत्तम [illegible] देखे पड़ते हैं इस प्रकार आचरज होकर के सुदामा देखता है तहां हां तिसके नेत्र जो हैं सो चित्रवत होकर के एकटक लगे रहते हैं भगवान की नगरी को कैसे देखता भया कि मानो अमरावती जो देवताओं की पुरी है सो साक्षात पृथ्वी तल पर शोभायमान है तब चलता चलता जदुवंसियों के कोट का जो दरवाजा है ~~तिसके [illegible]~~ आय गया ~~[illegible]~~ तिसको देखकर के मन में ही अनेक शोलाचा करने लगा ~~सो तिनके भवन कैसे हैं कि गोपुर के समान~~

फिर क्या देखता है कि गोपुर के समान

अतसे वचित्र और ऊंचे [illegible] दरग जो किले हैं सो म
ना दुरगम। और नाना प्रकार के रचे हूये बडी शोभा पाव
ते हैं ऐसे तिनकी अलोकिक रचना देख करके व्या
कुल भया हुआ बडे आचरज को प्राप्त हो कर चारो
पासे देखता है और डरता हूआ आगे को चरन नहीं
धरता धीरज जो है सो शरीर मे नहीं रहा परन्तु संकोच
के वश हो कर कि कोई निवारण ना करदे वे जोरावरीसे
सहजे सहजे आगे को हीं चल पडता भया ॥ ८ ॥ चौपाई ॥
जब कढि गये द्वार दुज राई ॥ देखे भीत्र भवन समुदाई ॥
जदु वंसिन कर परहि नपारा ॥ अति अनुपम नव ला
ख आगारा ॥ चारु वचित्र वनत वर न्यारी ॥ मुनि
मन विरत जोग रत हारी ॥ विरचित जनु गगन सो
पाना ॥ कविन अगम किमि जाय वखाना ॥ ललि
त मातंग तुरंगन आला ॥ उघूर वृषभ विसद वर
शाला ॥ चोहनि चौक वीच विरचाने ॥ इन्द्र वरुण
जम भवन लजाने ॥ गयो विप्र जव दुतिय अवरना ॥
कुवरन भवन मोद मन भरना ॥ देखे दृगन नाक
दुति निन्दा ॥ कंचन मणिन खचित छवि वृन्दा ॥
ललित प्रद्युमन आदि महि राजे ॥ कुवर आमरन व
सन तन छाजे ॥ तरुण नवल निज रूप रसी ले ॥
मनहु सकल छवि मदन करी ले ॥ गयो निकसि
जव तेऊ अवरना ॥ संकित चरन धरत दुज धरना ॥
इत उत चकित थोर गत होई ॥ बोलिन सकत व
दन कछु सोई ॥ दोहा ॥ भवन भूरि लावन्नता र
चिर राम वल जाई ॥ देखित जहिं वर विधि सुमति
अति विराम विसमाई ॥ ९ ॥ टीका ॥ जव सुदामा तिस
दरवाजे से आगे को निकल गया तो भीतर मे अनन्त भ
वनो को देखता भया सो जदुवंसियों के धाम जिनका
कुछ पार नहीं पाया जाता अतसे अनूप नौ लाख
ख घर कि जिनकी रचना बडी वचित्र [illegible] नवीन
से नवीन एक न्यारी ही थी देखने तें मुनी और जोगी

पूर्वोक्त दिव्य कालि मे भवन देखि कि जिनकी जोकी शो ... भी चित्र से छूट गई

एक विकराली ... से बने कुल की हैं

९२

जनो की वृती को भी हरने वाली थी और असे ऊंचे धवल धाम थे कि मानो आकाश के ~~छूने को रची हुई है~~ चढने को पैड़ियों की रचना की हुई है कवीजनो को भी तिन का कथन करना अगम प्रतीत होता था और जो है हस्ती उष्ट्र जो ऊठ वृषभ जो बेल तिनकी अत्यंत ऊंची और मनोहर शाला ~~किंच~~ और भवनो मे बीच बीच अतहि रमणीक चांदनी चौंकों की रचना जो है तो मानो इंद्र वरुण और जमराज के भवनों को भी लज्जा देती है इस प्रकार सुदामा ने जब और दूसरे दरवाजे के भीतर प्रवेश किया तहां कुमारों के सुन्दर भवन जो है सो देखने मे आये कै से भी ये कि बडे आनन्द दायक और स्वर्ग की मनोहरता को निदरने वाले कांचिन ~~और मणि~~ और अमोलिक मणियों करके खचित भये हुये अपनी अत्यंत छवी ~~से~~ के प्रकाशमान थे और प्रद्युम्न आदि कृष्ण कुमार अपनी नवीन जुवा अवस्था और रूप गुण करके रसीले बडे सुन्दर वस्त्र और दिव्य भूषण पहरे हुये मानो कामदेव की छवी का निरादिर करते है जब सुदामा इस प्रकार देखता हुआ तहां से भी आगे निकल गया तब चकित भया हुआ धीरे धीरे पृथवी पर चरन धरता है ~~[illegible]~~ और आचरज मान कर धीरज को त्यागे हुये इधर उधर देखता और मुख से कुछ बोल नहीं सकता है फिर तिसते उपरांत आगे ~~[illegible]~~ बलराम जी के भवनों की लावन्नता अर्थात अत्यंत शोभा जो देखी तो कैसी थी कि जिस पर विधाता की बुद्धी भी थकत हो आचरज को प्रापत ~~भई थी~~ हो रही थी ॥ ५ ॥ ~~[illegible]~~ चौपाई ॥ देखे पुनि वसुदेव उतंगा ॥ भवन भान जनु लसत सुरंगा ॥ सुभृत उग्रसेयन कर ऐना ॥ इकटक लाग देखि दुज नेना ॥ मदन सदन सम पूरित शोभा ॥ काम वचित्र चित्र मन लोभा ॥ हृदय ~~[illegible]~~ गुनत अस

ओरवधुन

भवन

वपथकोशे

के नाना प्रकार के भूमी पर छाय त भये हुये अत्यंत छ
बी के दरसावते है और तिन के बीच अतसे मनोहर
और आनन्द के देने वाली कुंजन की रचना जो है सो
मनको हैं भावती है कही नहीं जाती बडी सुन्दर
न्यारी न्यारी पुष्प वाटिका कि जिनमे सुन्दर भ्रमरे
~~सोहै~~ सो नाना प्रकार की मधुर गुंजार करते है बा
वी जो बावली और तडाग जो तलाउ और कूये इत्या
दी सब निरमल जलसे परिपूर्ण हैं कोकला और मोर
इनते लेकर शुक सारकादि जो पंछी हैं सो भी नाना
शब्दों का उचारन करते हैं सीतल मंद सुगंध इह
तीन प्रकार की पवन जो है सो सदैव चलती रहती है ऐसे
अद्भुत रचना देख करके सुदामा आचरज होकर चारो
ओर देखता हुआ नगर के द्वार पर आयकर और सी
स नाय कर कृष्ण भगवान कौं सुमरता हुआ भीतर प्र
वेश करता भया॥७॥ चौपाई॥ कौतुक कीन विप्र वर
वारन॥ सुमरत जात सिंधु भव तारन॥ देखिस नगर
रम्यता नीके॥ छवि लावन्य बनत प्रीय जीके॥
धाम उतंग धवल मट माही॥ चारु विचित्र चित्र कृत
साही॥ बरन बरन बर धुजा सजीली॥ कनक कल
स दुति ललित छबीली॥ हाट बजार चौक चतु र
गा॥ बनक बनक जनु धनद उमंगा॥ अमर अ
मर त्रीय तिमि नर भामा॥ नित नव नगर मोद अ
भिरामा॥ चितवत चकत चित्र बत जाही॥ लागे र
हत विप्र दृग ताही॥ अस प्रकार दुज देखत न
गरी॥ जनु है धरणि अमरावति सगरी॥ खाया को
ट द्वार जदु वंसन लख्यो मनहिं मन विविध प्र
संसन॥ गोपुर सरस विचित्र उतंगा॥ दुरगम
दुरग चित्र बहु रंगा॥ रचना ऐसे अलौकिक दे
खी॥ चहुं कित चितवत चकत बसेखी॥ उरपत
धरत चरन नहि आगे॥ धीर सरीर विप्र निज त्यागे॥
दोहा॥ कारन शंका मानि जीये विप्र सकुच बस होय॥

"एक

93- पाउं नहीं धरता मुख मांग मीत का मिलना कैसे प्रा
प्त हो सकता है इह मेरा हठ जो है सो वृथा हीं जाता है
परन्तु मीत प्यारे के बिना मिले भी सो दुख वरतमान
होते हैं जो सहारा नहीं जाता है जब मेरे को तिस दीनो की हि
तकारी मीत का मिलाप नहीं भया तो घर मैं जाते को
स्त्री जब पूछैगी तहां तिस को क्या उत्तर देऊंगा इस
प्रकार मन मैं चिन्तन कर के दुचित भया हूआ सु
दामा मीत को अवश्य मिलना निश्चित कर के
वडा शंकित चित होकर इधर उधर देखता हूआ
फिर आगे को चलपड़ता भया ॥ २० ॥ चौपाई ॥ मंदमंद
उर त्रास बढावा ॥ मीत भवन द्वार जब आवा ॥ तब द्वा
रप सहिसा उठि धाये ॥ वारन हेतु निकट दिसआ
ये ॥ को तुम कहो जात कित भागा ॥ द्विज सभीत
तन कंपन लागा ॥ पै निरधन तिन देखि दुखारे ॥
त ज्यो जानि जिय रंक भिखारी ॥ खोइस सहस मे
द्र तकि ताहो ॥ इक टक लाग नयन द्विज नाहो ॥ क
हिन जाय शोभा सुठि नीकी ॥ प्रभा मयंक कोट
मनु फीकी ॥ होत न भवन छोट वड़ भाना ॥ ए
क तरह गिर मेर सैमाना ॥ शंकित द्वार देहिर क
ढिगयऊ ॥ चितवत चकित शकत गत भयऊ ॥
भनत भवन कित भवनन राऊ ॥ जादव केज
किरन विकसाऊ ॥ भोरेहु अनत भवन जनि
जाऊं ॥ तहां न मिलन मीत निज पाऊं ॥ तो कु
मेख कोऊ देखि वसेखो ॥ वारन करत नलाहि
न मेखो ॥ दीन उवारन चीनन हारा ॥ दीन नाथ
बिनु कवन हमारा ॥ दोहा ॥ सोऊ मीत सज्जन
सुहृद सखा सुखद हित वंधु ॥ जन मेटिन दा
रद दहन निर धन धन जदु नंदु ॥ २१ ॥ टीका ॥
तब सुदामा हृदय कर के त्रासत भया हूआ अपना त
डरता हूआ सहजे सहजे कृष्ण भवान के द्वा
रे के भीतर जब आया तब द्वारपाल जो है सो

शीघ्रता पूर्वक दौड़ कर तिस के निवारण करने के वा
सते धावते भये कहने लगे अरे मंद तू कौन है कहां
भागा जाता है और ऐसे तिन को रोष मय आवते देख कर
सुदामा भय के वश होकर थर थर कांपने लगा परन्तु
तिन्हों ने तिसको निरधन दुखी और भिखारी जान कर
त्याग दिया कुछ नहीं कहा तब सतहीं सोला ह
जार ~~मिव~~ मंदिर में देख करके सुदामा के नेत्र इकटक
लग जाते भये तिनकी उपमा और शोभा जो है सो कही
नहीं जाती ~~क~~ करोड़ चन्द्रमा की आभा भी तिनके आगे की
की भासती थी छोटे बड़े भवन प्रतीत नहीं होते
एक जैसे मानो सुमेर के समान दरसावते हैं ऐसे
देखता देखता शंकित भया हुआ जब द्वार की ड
ली जसे निकल आगे चला गया तब चकित करके
आचरज और शंकित से रहित होकर मन में वि
चार करने लगा कि जादव रूपी कमलों को सूरज
की किरणों वत विकास मान करने वाले भवनों के
राजा का कौन सा भवन है मत मैं भूल करके किसी और
दूसरे के भवन में चला जाऊं और तहां अपने मी
त प्यारे का दरसन मैं ला ना पाऊं तो मेरे को इस
कुभेख में दीन दारिद्री देख कर ~~कोई~~ कोई अप नि
काल देवेगा मेरे जैसे दीन के तहां से उधारनेवाला और प
हिचानने वाला तिस दीनानाथ के बिना और कोई न
हीं है सोई प्रीत सज्जन और सोई सखा सुहृद सु
खदायक सोई हितकारी बंधु सोई दास मंडन दा
रिद्र खंडन और निरधनों के धन सोई जदुनन्दन
हैं ~~दू~~ दूसरा कोई नहीं है ॥१२॥ चौपाई ॥ अब न
भवन आगल पग धरहौं ॥ बैठि द्वार प्रभु सुमरण
करहौं ॥ काहू तौ कहहिं मीत सन जाई ॥ निरधन
विप्र द्वार तुव आई ॥ चाहत हृदय हरन संतापा ॥
अखिल भवन पति तोर मिलापा ॥ अस सुधि पाय
सजन सुखदाई ॥ आय चलब मोहि संग लिवाई ॥
अस प्रकार अन्का पर द्वारा ॥ रह्यो ठाड़ दुज करत

विचार॥ तब सनमुख एक भवन सुहावा॥ जनु
बिरंचि निज कर न रचावा॥ सोभित अरुण को
टि छवि छाजे॥ तहां प्रयेक मणिन प्रभु राजे॥ क्री
डत ● करि विलास बहुरंगा॥ रुकमणि सहस स
हचरी संगा॥ दोहा॥ पीय प्यारी तन प्रीय पीये
मोद प्रमोद समेत॥ इत उत चित वत परस्प
र हसि चकोर छवि देत॥ २२॥ टीका॥ फिर सु
दामा कहता है कि अब ~~[illegible]~~ मे आगे भवन
मे जाने को पाउं नहीं थुं ~~[illegible]~~ रहा द्वारे मे ही बै
ठकर भगवान का समरण करता हूं. कोइ तो जाय
करके मेरे मीत प्यारे से कहेगा कि हे अखिल भवनो के
नायक एक कोई निरधन दीन ब्राह्मण द्वारे पर स्थि
त भया हुआ सरब दोष दारिद्रों के दूर करने वाला
तुमारा मिलाप जो है सो चाहता है तब ऐसी सु
नी पाय करके सो सज्जन पाल और दीन दयाला
प करके मेरे को साथ ले चलेंगे इस प्रकार अन्ता
पुर के द्वारे मे स्थित भया हुआ विचार करता है त
ब सनमुख एक बडा शोभायमान भवन ~~[illegible]~~ कि
मानो ब्रह्मा ने अपने हाथ से रचा हुआ है और
कोटि सूरज की आभा वत प्रकाशमान अत्यंत
छवी को दरसावता है तहां सुन्दर मणियों क
रके खचित भये हुये दिव्य ~~[illegible]~~ प
लंग पर अनेक विलासों करके युक्त भगवान
जो हैं सो विराजमान हैं और रुकमणी जो है सो
सहस्र सखी के सहित भगवान को परिवारत कि
ये हुये पास बैठी है भगवान आनन्द मे मगन
भये हुये हृदय मे अत से सनेह पूरित करके तिस
की ओर देखते हैं और सो भगवान की प्रसन्न छवी
को नेत्र भर कर देखती है औ परस्पर दरसन तें

विप्र सभीता॥ सुन्दर सदन मोर कित मीता॥ सो- कित सजन सुखद कित जाऊं॥ आनन्द कन्द दर स कित पाऊं॥ इहां राज भवनन अवसेखो॥ भे आगमन निज दुरलभ देखो॥ अब लों आव कठिन हठ धारी॥ काहु रेक तकि देहि निकारी॥ बिनु जदु बंस तिलक मोहि आनै॥ रेक भेष अस कवन पहचानै॥ अबन धरहुं आगल पग जैहैं॥ सांगा मीत मिलन किमि पैहैं॥ पै बिनु मिले दुसह दुख दाहा॥ धन पुत्र व कहिहैं तव काहा॥ दोहा॥ अस चिन्तत दिज दुचित चित मित सुमिलन मति रधार॥ इत उत चकित चहुं ओर कित चितवत चल्यो सिधार॥२०॥ टीका॥ फिर सुदामा जो है सो वसुदेव जी के सुन्दर भवन सूरज समान आभा वाले नाना वरन करके युक्त देखता भया और इसीप्रकार उग्रसेन के धवलधाम भी अत से मनो हर कामदेव के भवनो बत विचित्र और शो भा करके युक्त देखकर नेत्रों की दृष्टी को इकटक तहां ही जोड देता भया और हृदय में विचार करने लगा कि इह अनन्त महिमा तो मैंने देखी है परन्तु मेरे मित्र हितकारी जो कृष्ण भगवान हैं तिनका भवन कहां है और तो सज्जन और दीन जनों के सुखदा यक आप कहां हैं क्या करूं अब कहां जाऊं आनन्द के कन्द जो भगवान हैं तिनका दरसन कैसे पाऊं इहां राज भवनों में मैंने अपना अबिना दुरल भ जाना है अब तक तो बडा कठिन हठ धार कर के चला आया हूं न जानिये कि कोई रेक जान कर निकाल देवे क्योंकि मेरे ऐसे दारिद्री और रेक भेख को तिस दीनानाथ के बिना और कोन जान ने पहिचानने वाला है अब तो मैं आगे जाने के लिये

Margin notes: सतसोंके; प्रधानेव गवदायगसेच; इहां; पद

२५

९६

बोलें तोलत अतोल प्रेम नैन नीके नीर याम॥ लोम हरषाने जुग होत न जुदाने जुग जोवे नजि तो ने प्रीत पोरष सरीर ~~सामम~~ साम॥ जाये मेरे मौते मेरे मीत बोले राधा रोन मोसो अग्र ग न्य धन्य धन्य कौन धीर धाम॥ ~~स्स कैस~~ सवैया॥ वा दिन के बिछुरे बरसान सों आज मिले मोहि मी त पधारे॥ लोचन चारु बिलोकन की कस लालस होत बिराम हमारे॥ साजन मेरसों काज सरे सब आज उदय जग भाग बिचारे॥ मोसन धन्य न आन महान मिले जहि मीत सुजान बधारे॥ सेस महेस गनेस सुरासुर देव धनेस सुरेस लोकारी॥ गंधर्व किन्नर नाग मुनिन्द्र सिद्ध जोगिन्द्र सोन रतारी॥ जास प्रसाद तें धन्य ब्रह्मण्य सो होत कठन्न महो ब्रत धारी॥ ते निज धन्य लहैं वट मेर सुगम्य ए प्रेम की रीति नियारी॥ दोहा॥ विप्र अलोकिक देखि अस प्रीति रीति जदुराय॥ चितवत चकृत मूकवत दृगन प्रेम जल जाय॥ २३॥ टीका॥ तब भगवान की प्यारी रुकमनी जो है सो ~~[illegible]~~ ~~से [illegible]~~ सनमान ~~कै~~ अतसे आनन्द मान कर प्रान नाथ जो भगवान हैं तिनको देने के वासते अपने कमल रूपी हाथ मे पान का बीडा सुधारती भई और लेजन जो ममोला मीन जो मछली तिनके समान चंचल नेत्रो का कटाक्ष भाव करके और मधुर आनन्द दायक वचन उचार कर सो पान का बीडा महाराज को देती भई और भगवान सनमुख दृष्टी जोड कर तिसको प्रीती पूर्वक सैनी जो लेने लगे तो एक बार ही जुडी हुई भगवान की नेत्रो से छूट कर अचानक ही

दृष्टी

तहां जाय पहौंचे कि जहां द्वारे पर सुदामा स्थित भये हुये थे तब तो भूल गये धन धाम और खान पान और प्यारी भाम अर्थात रुकमनी और भूल गये दिन रात समय प्रहर और छूट गयो हृदय से धीरज भूले गये भवनो का आनन्द और क्रीड़ा विलास भूले सब सज्जन और भू[illegible] केवलराम वीर और भूल गये माता पिता भूले सुत भ्राता सब भूल गई बात चीत और भूल गये पीत वसन भूले सब भूषण तन और भूल गये कानन सुरान ऐसे भूले कि तनकी सुधी भी भूल गई सीत घाम [illegible] के रूप की कछु भी ज्ञान नहि रहा तब प्रेम से अचेत भये हुये सज्जन हित कारी भगवान क्षिन के पलंग से तत काल उठ खडे हुये और मनमे ऐसा आनन्द और सुख मानते भये कि जैसे कोई निरधन अनन्त धनको प्रापत करके सुखी होता है और आनन्द [illegible] ते हुये शरीर से वस्त्र भी फट जाने लगे हरष से [illegible] प्रफुलित भया हुआ शरीर वस्त्रोंमे नहीं समावता है और प्रेमकी गरमाई करके अंगों से स्वेद छूट चला जाता है शरीर से लटपटाये हुये धीरजको हारे हुये अटपटे पाउं धरते धरते जायकर कहते हैं कि आये मेरे मीत आये मेरे मीत ऐसे कहि कर भगवान दोनो भुजा भरकर सुदामा को हृदयमे जुड़ाय लेते भये इधर सो [illegible] भी भगवान के प्रेममें तल्लीन था दोनो जुवा शरीर ऐसे [illegible] वलन करके मिले कि प्रेम के स्वेद बिंदु जो हैं सो दोनोके मुखों पर उभर आवते भये और सीस से सीस कंठसे कंठ मुखसे मुख हृदयसे हृदय नेत्रों से नेत्र भुज से भुज केशों से केश करसे कर पीतांबरसे केवल लिपट जाता भया और क्रीट जो भगवान का मुकट है सो भी लटपटाय गया [illegible]

छूट कर

१ पृष्ठ

[illegible]

मेत्रो ग्रोर मणी मालाकी लड़ी टूटगई बंतरी [illegible]
पृथवी पर गिर [illegible] पड़ी गदगद बानी भये
हूये भगवान मुख खोल करके वचन नहीं कहिसकते
ग्रोर नेत्रोंसे जलकी धारा रोककर ग्रतुलित प्रेम जो है
मानो तिसको तोलते हैं ग्रोर हरख मे मगन प्रस्पर जुड़े हू
ये छूटते नहीं है मानो ग्रपने प्रेमका पोरख जिताव
ते हैं तब भगवान जो हैं सो कुछ चेतमे ग्राय भये
ग्रोर सुदामा के हृदयके साथ जुड़ा हूग्रा देखकर ऊंची
स्वरसे कहने लगे कि ग्रहो भाग्य जो मीत प्यारे मे
रे घरमे ग्राये हैं ग्राज मेरे समान सबसे प्रधान ग्रोर
धन्य धन्य धीरजका धाम कौन है देखिये [illegible] कि
तबके बिछड़े हूये बहुत बरसोंके पीछे ग्राज मित्र
प्यारे मेरे को मिलते हैं तो इस मेरे नेत्र सज्जन के द
रसनकी लालसा ग्रोर कोना वाले जो हैं सो ग्रब
शांति को कैसे प्रापत होते हैं ग्राज मीत प्यारेकी
भेट से मेरे सरब कारज सिद्ध होगये हैं ग्रोर मे ग्र
पने भाग्य भी उदय भये जानता हूं ग्रोर मेरे
समान ग्राज धन्य भी दूसरा कोई नही है कि
जिसको मीत हितकारी मुजों [मेरे] करके मिल
या है ग्रब विचारकरना चाहिये कि शिव महेश
ग्रोर गणेश ग्रोर सुरेस जो इन्द्र है इनते लेकर सब
सुर ग्रसुर ग्रोर गंधरब किन्नर नाग ग्रोर यक्ष मुनी
ग्रोर सिद्ध जोगीस्वर ग्रोर ज्ञान ध्यान के धारने वा
ले बड़े बड़े तपीस्वर जिस भगवान के प्रसाद से बड़े
ब्रत ग्रोर कठिन हठ धार करके संसार मे धन्य प
द को प्रापत करते हैं सो भगवान ग्राज एक निरधन
ब्राह्मण की भेट से ग्रपने ग्राप को धन्य मानकर
तिसकी ग्रनेक शलाघा ग्रोर बड़ाई करते हैं तो ते
हे [illegible] भक्तो देखो यह प्रेमका मारग जो है

चन्द्रमा और चकोर की शोभा को उदय करते हैं॥ २५॥
कवित्त॥ प्यारी सनमान सों महान मोद मान प्रान नाथ हेत पान कंजपानन सुधार कर॥ लोचन विलोल सों कलोल मीन खंजन से रंजन से बैन दैन रंजन उचार कर॥ भाव भरि भुज सों पसार दीन पान प्यारी कंजन बिहारी लीन लोचन दुचार कर॥ एकै बार टूटी जूटी टेक लाल लोयन की चकसी गड़ ठाड़ जोवै दृज द्वार पर॥ भूल गयो धन धाम से न पान प्यारी भाम भूल गयो मान रैन जाम काल काम धीर॥ भूल गयो भुवन प्रमोद मोद भूरी भोग भल्यो आयो सज्जोग संजोग लोग राम बीर॥ भूल गयो भात भूल गयो तात भ्रात भूल भूल गयो बात पीत गात अंमिराम चीर॥ भूलि गयो आभरन भवन सुनन तन भूली सुधि मन न भनन सीत घाम पीर॥ सहित उठि त्यागत प्रजंक धाय कंचिन को साजन सनेह साने स्यामल सरीर वार॥ मानस मगन मानो रंक पायो भूरी धन तन भो प्रफुल्लित प्रमोद बस चीर फार॥ आये मीत आये मेरे वदन अलाये नाथ छूटी खेद काये लटकाये जात धीर हार॥ भुज सों भराये उर लाये उर लाये लीन दीनन दयाल जू दृगन प्रेम नीर ढार॥ जूटी गये जुगम जोवन तन स्रम खेद कन कल विमल वदन उभराई वर॥ सीस सोली कंठ ग्रीव आनन वदन वक्र छती ढके प्रेम दृग लोचन ललिताई पर॥ भुज सों उरज भुज केस कच करि कट पटपीत कामर कलित लपटाई वर॥ रावर न जानै मै तो तन मन धन प्रान वार डारूं ऐसे मीत मीत की मिताई पर॥ और लटकायो मनि मुकता न टूटी लरी बेसरि परी धरन सुध ना सरीर स्याम॥ गद गद बानि बैन बोल नवढ़न

२०

९)

मनमे कहताहै किइनको श्रुति पुराण जोहैं सो सत्य करके भक्तवत्सल कथन करतेहैं और पवित्र प्रेम की अवधी ~~भी एहीहैं~~ और दीन जनोके सुखदायक और हितकारी भी एहीहैं भक्तोंके कल्पवृक्ष और गऊ ब्राह्मण पृथवी की रक्षा करनेवाले भी एहीहैं और "चराचर जीवोंके पालक भक्तजनो के हितकार और अनुसारी भी एहीहैं देवताउं के त्रास हरनेवाले और सत्य धरममे परायण भी एही ~~हैं~~ मुरारी भगवानहैं संसारमे मीतकी रीत कोजाननेवाले हारे और अधनियोंके धन भी एहीहैं अतिथी और संतजनोके प्यारे सुखदायक और महेश्वर संसारं भयं नाश करनेवाले भी एहीहैं अनन्त शक्ती वाले देवताउं के स्वामी और लक्ष्मीके पती अतसे प्रसन्न मुखवाले भी एहीहैं ग्राहके बंधनसे गजको मोक्ष देनेवाले और अनेक पापी जनोका उद्धार करनेवाले भी एहीहैं प्रहलाद भक्तके उबारनेवाले और द्रोपदी की लाज रखनेवाले गनिका गऊआदि निस्तारन हारे भी एहीहैं प्रमातमाहैं असरणके शरण अनाथनके नाथ अधीरोंके धीरज और शरणागत पालिक भी एहीहैं सरब घटोंके अन्तरजामी और सरब सृष्टीके आधार भी एही भगवानहैं इनकोही मेरी देर प्रणाम होवे इस प्रकार हृदयमे अस्तुती करके मुखसे बोलना चाहताहै परन्तु प्रेम करके अशक्त भयेहूयेसे कछु वचन नहीं निकलसकता इकटक जुड़े हूये नेत्र भगवानके चन्द्रमारूपी मुखको चकोर बने हूये सनमुख देखतेहैं तब जादवोंके बंसमे सृष्ट कृष्ण प्रमात्मा जोहैं सो ततकाल हृदयसे छूटकर सुदामाके चरनोमे लिपट गये

(margin: "सरब" ; ॥)

और तिस के चरनो की धूरी जो है सो बडे आदिरसे एक रज जान कर अपने सीस पर चढाय लेते भये॥ २४॥ चौपाई॥ दृगन नीर भरि त्रिभुवन नायक॥ कोले वदन वचन सुखदायक॥ उदय भाग आये मम गेहू॥ अनायास प्रीय मीत सनेहू॥ अस कहि गाढ एके जदुनाथा॥ रुकमणि गहिस एक दुज हाथा॥ दम्पति हृदय हरष निज छाये॥ सादिर लेत भवन निज आये॥ सहचरि देखि सकल मुसक्यानी॥ प्रीत पनीत परस्पर जानी॥ मणिन जटित परयंक सुरारी॥ गोरस फेन सेज छवि हारी॥ तापर अतसे प्रीति सनमाना॥ वैठारे दुज कृपानिधाना॥ वृझिस विविध वदन कुसलाता॥ परम प्रेम नहिं हृदय समाता॥ ~~कवित्त एक और जटा जूट वृद्ध पट सीस रू~~ दोहा॥ ˇ~~तव दुज जुत चने स्याम तहां देत लखि छवि जोय॥ सो मति जुते मन हरन कहो कवुक अब होय॥~~

ˇदुजसंजुत तहँ मुदित मन राजे कृपानिकेत॥
ˇसौ समता अचरज कछू नवल ललित छवि देत॥

~~टीका॥~~ ˇकवित्त॥ एक ओर जटाजूट वृद्ध पट सीस रूर एक ओर कनक कलित कीर भावतो॥ एक ओर कंमर समल चीथ चीर चाले एक ओर अंबर सुपीत छवि छावतो॥ एक ओर पानन विपादिका कठोर एक ओर कंजकर कल कोमल सुहावतो॥ एक ओर मुरली युमेरु एक ओर दण्ड समता अमरा ऐसो प्रेम नहिं मैं भावतो॥ दोहा॥ तव रुकमणि ल्याई विमल उदिक कनक भृंगार॥ लागी प्रक्षालन करन चरन विप्र व्रत धार॥ २५॥ टीका॥ फिर तीन लोक के नायक भगवान जो हैं सो नेत्रों मे प्रेम जल भरे हूये मधुर वानी से कहने लगे कि अहो मेरे वडे उदय भाग्य हैं जो यतन के विना हीं मीत हितकारी मेरे घर मे आय गये हैं ऐसे कहि कर के सुदा

मा का एक हाथ भगवान ने और एक रुक
मणी ने पकड़ लिया दोनो हरष से पूरित भये
हुये बड़े सनमान पूर्वक तिसको उरमै ले आ
वते भये तव सहचरी जो सखी हैं सो परस्पर
भगवानकी और रुक्मणी की पवित्र प्रीती देख
कर मुखमै मुसकावती भई तिसतें उपरांत म
णियों करके जटित कंचन का पलंग और दू
ध की फेन को लज्जा देने वाली जिसपर उज्वल
सिज्या कसी हुई थी तिसपर कृपानिधान भग
वान वड़ी प्रीती और सनमान से अपने मीत प्या
रे सुदामा को विठाय देते भये और फिर सनमुख
वैठकर वार वार वड़े हरष से कुसल पूछने लगे तव
भगवान सुदामा के सहित तहां विराजमान भये हुये
कैसी शोभा और समता को उदय करते हैं कि एक
और तो जटाजूट और प्राचीन फटे ~~[illegible]~~ टा हु
या ~~[illegible]~~ सिर का और एक और मणियों करके
खचित कंचन का सीस पर मुकट है ~~[illegible]~~ ए
क और अतसे मलीन ~~[illegible]~~ केवल का चीथड़ा
~~[illegible]~~ एक और वड़ा वचित्र ~~[illegible]~~ दिव्य पीतांवर है
~~अतसे के चीकट से शोभान है~~ ~~[illegible]~~ एक और ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ व्याइयों करके ~~[illegible]~~ फूटे हुये वड़े कठोर हा
थ ~~[illegible]~~ और एक और कमलों की शोभा वाले
अतसे कोमल हाथ और एक और वड़ा अस्थूल और
विकट दण्ड धारन किया हुआ है और एक और
हाथमै अतसे सुरीली और सुजान मुरली की शो
भा है अव देखिये प्रेम का कैसा वचित्र मारग है
कि जिसमै ऐसी अमंगल समता मैं सनमान
पावती भई और भगवान को भावती भई तिसतें
उपरांत रुकमणी अतसे सुन्दर कंचन के ग
ड़ा सागर मे जल भर करके ले आई और अपने

सो कैसा सुगम है इसमें कुछ भी साधन नहीं है
तब सुदामा जो है सो इस प्रकार भक्त पाल भगवा
न की अलौकिक प्रीती की रीती देखकर मूकवत
अर्थात गूंगे की न्याई आचरज होकर चितवता है
और नेत्रों में प्रेम जल का प्रवाह चला जाता है"
१३" चौपाई" इनकर कहत मन हीं सुरधरना"
वतसल भक्त सत्य स्रुति वरना" पावन प्रेम अ
वधि जग एहू" एउ सुखद जन दीन सनेहू"
भक्त अमर तर एउ गुसैंया" मेदिन एउ धरन दु
ज गैया" सरव भूत सुखदायक स्वामी" एउ कृ
पाल भक्त अनुगामी" एउ त्रास वृन्दारिक हारी"
सत्य धरम रत एउ मुरारी" मीत रीत जग जानन
हारे" एउ अधन धन दीन उवारे" अतिथी प्रीये एउ जनरंजन"
एउ विकर भव त्रास विभंजन" एउ अनन्त प्र
कि सुरराया" एउ प्रसन्न वदन पतिमाया" एउ
ग्रसत गज फन्द छुरैया" एउ कोटि वतत न उ
धरैया" एउ भक्त प्रहलाद उवारन" गनिका
गज द्रुपत जा तारन" असरन सरन एउ भ
गवाना" एउ अनाथ नाथ जिय जाना" एउ
देव प्रनतारत हरना" एउ अधीर धीर उरधर
ना" एउ निकर चर अन्तर जामी" एउ आधार
सकल जग स्वामी" इनहीं मोर अब दएउ प्रनामा"
अस, ~~विचारि~~ जिय विप्र सुदामा" दोहा" बोलन
चाहत बदन कछु सकत बोल नहिं वेन"
इक टक लखि आनन छिते जनु चकोर जुग
नैन" तब हिय तें जदुवंस वर छूटि चरन
लपटाय" दृग जल दरज निज सीस सज सादर
लीन चढाय"१४" टीका" फिर सुदामा अपने

प्रसंग १८

टीका॥ जब इस प्रकार रुकमणी सुदामाजीके चरन प्रक्षालन करने लगी तब दीन बंधु भगवान जो हैं सो तिसको निवारण करके आप अपने हाथों से विप्रमीत के चरन प्रक्षालन करने लगे और तिसका चरनोदिक अर्थात चरनोंका जल जो था सो कृपा के समुद्र अपने सीस पर चढ़ाय लेते भये फिर रुकमणी भी अतिसे प्रेम करके भगवानके मीत प्यारे के चरनोंको मरदन करने लगी और भगवान वनहीं चरनोंका जल सीस पर धारन करके फिर सोई जल जहां तहां सिंचन करके अपने घरकोभी पवित्र करती भई तिसते उपरांत सुन्दर चमर जो है सो प्रीती पूर्वक हाथमें लेकर झुलावने लगी सतभामा आयकर बड़े हरषसे प्रफुल्लित भई हुई विजन जो पंखा है इत्यादि सेवा करनेमें ततपर हो जाती भई भगवान प्रेमके भये हुये अपना पीतांबर लेकर विप्र मीतके चरनोंको बड़ी प्रीतीसे परोछण करने लगे अर्थात पोंछने लगे तिस समय भगवानके शरीरकी ऐसी दशा थी कि हरष करके रोमांच सब उठे हुये और अंग सब पुलकमान भये हुये थे मानो एक प्रेमका समुद्र उमग्या जाता है था कुमद रूपी जादवों के प्रफुल्लित करनेवाले चन्द्रमा वत कृष्ण प्रभातमा जो हैं सो अपने रुकमीतको अंकमें अर्थात गोदमें लिये हुये मुखकी ओर देख रहे हैं तिसका दरसन करते करते भगवान के नेत्र त्रिपती को प्रापत नहीं होते मीत मीत कहिकर के बारबार हृदय में लगाय लेते हैं हसन रसन बोलन मिलन की रीती जो है सो कुछ कही नहीं जाती तब फिर रुकमणी सत्यभामा और सब सखी भगवान के सहित सुदामा को बड़ी प्रीती सनमानसे सुन्दर सनान कराय कर उबटन और मलके सहित जो शरीर था तिसको भली प्रकार कोमल मरदनसे शुद्ध

करके शरीर जो चन्दन उसीर जो खीरू मृगमद जो कसतूरी कुंकुम जो केसर सोंधा जो अतर इत्यादि और अनेक फूल सुगंधियों से शोभित करके वड़े सुन्दर दिव्य वस्त्र जो हैं सो पहिराय दिये और सतभामा ने ततकाल हीं घर में वड़ी प्रीती पूर्वक सुन्दर अमृत के समान नाना रस के भोजन वनाय कर और कंचिन के भाजनो मे रखकर ल्याय दिये तव भगवान वड़े प्रेम और सतकार से साजिन साजिन कहिकर तिसको जिमावते भये और अमर तरंगनी जो गंगा है तिसका निरमल जल अपने हाथ से पान कराय कर फिर जिस पीतांवर की महिमा को वड़े चतुर कवि जन और वेद पुराण वरणन करते है सो पीतांवर भगवान अपने विप्र मीत को सुख पोंछने के वासते देदेते भये देखिये कृपानिधान कैसे मीत पाल हैं इनकी मिताई पर वलिहारे जाना चाहिये ॥२६॥ चौपाई ॥ सादिर वहुरि पान अचवाये ॥ प्रेम प्रीति कछु वरनि न जाये ॥ धूप दीप जुत आरती कीना ॥ विधिवत चारि प्रदछण लीना ॥ कीन प्रणाम दंडवत धरनी ॥ भई प्रेम वश दशा विवरनी ॥ सतभामा रुकमणि मन हारू ॥ फूलत विजन चमर कर चारू ॥ एक प्रयंक शुभ्र अभिरामा ॥ विय विराज घनस्याम सुदामा ॥ रहे परस्पर वदन निहारी ॥ भरि भरि प्रेम दृगन निज वारी ॥ दोहा ॥ कृष्ण रूप द्विजवर चितैं द्विज मूरति घनस्याम ॥ इत उत चितवत दृष्टि दृग होत न तनक विराम ॥ धन्य धन्य जदुवंसवर धन्य सुप्रेम मिताई ॥ धन्य अलौकिक प्रीति अस धन्य धन्य प्रभुताई ॥२७॥ टीका फिर भगवान ने वड़े सनमान से पान जो हैं सो अचवाये अर्थात खवाये और धूप दीप के सहित आरती उतारकर विधी पूर्वक चार प्रकरमा करके फिर दण्डवत प्रणाम किया तव प्रेम से अशक्त हुये कृपान की दशा विवर्ण सी कुछ और की और हीं होगयी ॥ सतभामा

तव अन्नापुर पति गयो श्रौर श्रौर वहुं भ्रात ॥
पैठे एक प्रयंक पर अदित रंक भगवान ॥

औार रुकमणी जो हैं सो हाथमे पंखा और चमर ले
कर बडी प्रीती से झुलावने लगी एक हीं मनोहर
[illegible] पलंग पर घनस्याम और सुदामा [illegible] विरा
जमान हैं दोनो के नेत्र प्रेम जल से भरे हूये पर
स्पर देख रहे हैं सुदामा भगवान के रूप का दरसन
कर रहा है और भगवान सुदामा की मूरती को देख
रहे हैं इसप्रकार परस्पर देखती देखती नेत्रों की
दृष्टी छकत नहीं होती धन्य हैं इन कृपानिधा
न भगवान और धन्य है इनका प्रेम और पवित्र
मिताई धन्य है ऐसी अलौकिक प्रीती और धन्य
है इनकी प्रभुताई इनके समान [illegible] प्रभु और भी
तपाल ऐ हो है और [illegible] दूसरा कोई नहीं [illegible] तबतो
अन्तापुर में अर्थात भीत रणवास मैभी चारो ओर
शोर पर गया कि एक कोई भगवान का मीत रंक
ब्रह्मण है तिसको प्रीती पूर्वक लेकर महाराज पले
ग पर बैठे हूये हैं ॥ १७ ॥ चौपाई ॥ षोडस सहस कृष्ण
कर रानी ॥ देखन आई सकल विसमानी ॥ इहद्दुज
आज धन्य धरमाहीं ॥ करन के जनिज त्रिभुवनसाईं ॥
जास चरन प्रक्षालन कीने ॥ पादन उदिक सीस
धरि लीने ॥ अतसे समल तन चिरकुट चीरा ॥ म
रि भरि भुजा भेट जदुवीरा ॥ कीन्यो अतसे रंक स
न माना ॥ मिलन मोद किमि जाय बखाना ॥ कृपा
सिंधु कर हे सखि सारी ॥ जानि न जाय रीति कछु
न्यारी ॥ कहो अखिल भवनन प्रभुराई ॥ कहो रं
कसन करन मिताई ॥ दीना नाथ सत्य जिय
जान्या ॥ जो अस रंक मीत प्रीय मान्या ॥ दोहा ॥
माधो मीत सप्रीत अस देखि चकित सब नारि ॥
कृपा नाथ बिनु कवन अस करत जनन हितकारि ॥
१८ ॥ तब सोलो हजार कृष्ण भगवान की रानी जो थी
सो सब आचरज को प्रापत होकर तिसके देखने के
वासते चली आवती भई और आय करके क
हती हैं कि इह ब्रह्मण आज पृथ्वी पर धन्य है

टीका

नाथों ने प्रीतीपूर्वक बडे सतकार से सुदामा के चर
नो को प्रक्षालन करने लगी अर्थात धोवने लगी थी॥
चौपाई॥ दीन बंधु करि दीन निवारन॥ लगे आप
निज करन पखारन॥ चरणोदिक दुज नाथ सुहा
वा॥ कृपासिंधु निज सीस चढावा॥ अतहे प्रेम रु
कमनि पुनि करना॥ मरदन लगी विप्र वर चरना॥
दुज पद बार सीस निज धारी॥ सीचिस बहुरि भवन
अंगुरु सारी॥ चामर चारु झुलावन लागी॥ पावन
प्रीति प्रेम रसपागी॥ सतभामा उत केठि लग आये॥
करत सु बिजन मोदमन छाये॥ हरिनिज पीत बस
न कर लीने॥ दुर वर चरन परोछन कीने॥ प्रेम
सिंधु जनु जात उमेगा॥ पुलक अंग उठ लोम त
रेगा॥ दोहा॥ रेक मीत कहे अंक लै जदुकुल
कुमुद मयंक॥ चितवत बदन न होत दृग त्रिप
त त्रिविध तप भंग॥ पुनि पुनि हृदय जुराव
प्रभु अतसे प्रेम जुत प्रीति॥ हसन रसन बो
लन मिलन कहिन जाय कछु रीति॥ रुकम
नि जुत सतभाम पुनि भाम सहचरी आन
फ्री भगवान सप्रीति निज मीत हि देत सनान॥
सवैया॥ सामल रूप बढ़ तन लेपत चारु
परीर उसीर मिलाये॥ फूल सु गंधिन लो मद
कुंकुम दिव्य दकूल ऽ नकूल सजाये॥ धामन
मो सत भाम अमी मन भावन पावन पाक र
चाये॥ कंचिन भाजन भाव सनेह सों साजिन
साजिन खोलि जिमाये॥ दोहा॥ निजकर पान
कराय प्रभु अमर तरंगनि वार॥ दीने सादि
र प्रेम जुत दुज कर चरन पखार॥ कवि को
विद आगम निगम बरणत जहि पद की तम॥ वद
न परोछन हेतु प्रभु सो दीन्यो निजमीत॥२२॥

कौन

तुम कित ध्यान भयो का भयो विवाह साजनसु
नाइये॥ सुवन सुताके होन भौन लो विभूतीजो
न सोच लोन आदि अन्न मोसो मीत गाइये॥
जोसो आन भाव हू अभाव जीय जान मान प्या
रे प्रान तासों भेद भूलि ना दुराइये॥ त्योंहि मेरो
तेरो काहू अनारो न वीच वयो साजन वियोंन
बोलवे को वेर लाइये॥ दोहा॥ कह्यो तुमरा से
ग मोहि जब तें मीत पधारे॥ तब तें भोगत विप
ति दुख बीते दिवस हमारे॥ असप्रकार भो
चकित चित देखि दृगन दुजराऊ॥ नवल अलोकि
क प्रीतिप्रभु ललित सुशील सुभाऊ॥ १९॥ टीका॥
तिसतें उपरांत गिरिवर जो गोवरधन है तिसके
धारने वाले भगवान अपने हाथसे सुदामा का हाथ
पकड़ कर ~~और बड़े कोमल और मधुर वचनोंसे बोल~~

प्रेमके

~~बोल~~ प्रीतीके अथाह समुद्र का नीर नेत्रोंसे बहा
य बहाय बड़े कोमल और मधुर वचनों से ~~बोल~~
~~बोल~~ मीतकहते हैं कि हे प्यारे सज्जन मैने आज

के

बहुत दिनके पीछे इह तुमारा सुन्दर भेष ~~नेत्रसे~~
~~लेखोल देखाहे~~ जो है सो नेत्र भर भरके देखोहे ~~और~~
~~हे मीत जब जब तुमारी सुधी मेरेको आवतीरही~~
~~हे तब तब ही~~ [illegible] ~~मैं तुमारी सुमरण करता र~~
~~हा हे~~ और हे मीत जब जब मेरेको हृदयमे तु
मारी सुधी आवती रहीहै तब तबहीं मै मुखसे
बोल बोलकर तुमको संभालता रहाहू आज तु
मारा दरसन करके मेरे नेत्र सफल भये है औ
र मनकी अभिलाखाभी पूरण भई है मानो अन
न्त सुख को प्रापत भयाहू परन्तु वतीत काल
को ~~विचारके~~ पछतावताहू कि अब तक जो ज
रमे तुम्हारे विना मेरा समय वतीत भया है सो
वृथाही गया है तिससे मेरा कोई भी कारसिद्ध नहीं

ज

मया अब कहो प्यारे कि कभी मेरी सुरत भी तुम
को आवती रही की नहीं और प्रीती का सुमरण
रहा है आप ~~[illegible]~~ कि विसर गया है आप
और गृह में वास और नहीं के होम विलास की है प्यारे
मीत कुछ तुमको सुधी सुमरण रहा है आपके की नहीं
तिन दिनों में मैं तो मथुरा को चला गया था और तुम
अपनी कहो कि कहां गये थे और इहां भी कहो कि विवा
ह भया कि नहीं भया और पुत्र पुत्री का होना आर की
विभूती के सहित हे मीत सब वृतांत सत्य सत्य मेरे
को सुनावो क्योंकि जिसके साथ द्वैत भाव नहीं होता
है सरव प्रकार करके आपना ई हो होती है तिसके सा
थ ~~हे प्राण प्यारे~~ कोई भेद मूल करके भी छिपावना
नहीं चाहिये तैसे हीं हे सज्जन प्यारे मेरे में और
तुमारे में कुछ अन्तर नहीं है हम तुम निरन्तर हैं अ
पनी विथा और वृतान्त कहने को वेर न लगावो स
व सुनाय देवो ~~हे प्राणप्यारे जबते~~ और ई होतो
प्राण प्यारे जबते तुमारा संग छूटा है तबते मेरे
को विपती और दुख भोगते को ही दिन बीते हैं इस
प्रकार भगवान की अलोकिक प्रीती और सुशील सु
भाव देखकरके सुदामा जो है सो बड़े आचरज को प्राप
त होजाता भया॥ १८॥ चौपाई॥ प्रेम विवस कछु
कहा न जाये॥ इकटक चितहिं नैन जल छाये॥ भ
यो मूकवत विप्र अधीरा॥ बोले तब कृपाल जदु
बीरा॥ करते रह्यो मीत तोहि संगा॥ श्रम धेन म
न मोद उमंगा॥ तास रीति सबहि तुमारे॥ मीत उप
जउर ज्ञान हमारे॥ जगत विरक्त विगत भ्रम मैं म
यऊँ॥ तुव प्रसाद सब विधि सुख लयऊँ॥ जा
स क्रिपा तें संसृति होहीं॥ ज्ञान ध्यान रत मु
नि वर जोहीं॥ गुरु प्रसाद जहि देव न देवा॥
नरन सकल सुख ~~संपती~~ सम्पती लेवा॥

सो प्रेम दु जहिं कहत भगवाना॥ तुव प्रसाद ली न्यो सुख ज्ञाना॥ इह तो दीन नाथ प्रभुताई॥ सदा जनेहिं निज देत बडाई॥ सुनहु मीत हम तुमहुं सनेहा॥ पठते रहे जवहिं गुरु गेहा॥ श्रावण मास कीन तब आवन॥ लगे मेघवर गगन सुहावन॥ शिष गण बोलि गुरन हरषाये॥ इन्धन लेन विपुन सु पठाये॥ हम तुम मीत तिन हु ते जि न्यारे॥ कानन कलित गवन जुग बारे॥ तहीं जलधि गरजित नभ छूट्यो॥ मूसल धार वार जनु छूट्यो॥ चपला चपल चमक चहुं ओरा॥ भयो गगन भयावन रव घोरा॥ वीरन हृदय धीर जनु हा[illegible]री॥ चल्यो प्रचण्ड प्रबल बन व्यारी॥ दोहा॥ कर नपरहिं दृग देखि निज अ्रत ते रैन अंध्यारि॥ हम भूले तिन शिषन संग विपुन विच रत जीय मारि॥ २०॥ टीका॥ तव प्रेमके वश भये हुये सुदामा से कुछ वचन न ही निकलता नेत्रो से जल बहा जाता है इकटक होकर भगवान के रूप को देख ता है मानो गुंगे पुरुष वत मौन धारा हुआ है तब कृपा निधान भगवान कहने लगे कि हे मीत तहां गुरु जी के घरमें जो [illegible] आनन्द पूर्वक तुमारे साथ पाठ स्वाधैन करता रहा है सो तिस करके तुमारे संसर्ग अर्थात संगत से मेरे हृदयमे [illegible] ज्ञान का प्रकाश हो गया है अब नाना प्रकार का भ्रम और भटकना जो है तिससे निवृत होकर जगत से विरक्त भया हूं तुमारी ही कृपा के प्रसादसे [illegible] ~~सरब सुखो [illegible] को प्राप्त किया है मेरे [illegible]~~

मेरे को सरब ~~सुख~~ सुख प्रापत हुये हैं अब देखिये कि जिस प्रमातमा की अनुग्रह करके संसार मे मुनी जन और संत महातमा ज्ञान ध्यान [illegible] को प्रापत करते हैं और जिस प्रमातमा के प्रसाद से सब लोग सुख संपती को पावते है सो ऐसे

. संसारमे

कि जिसके चरन तीन लोकके नायक भगवानने बडे सत्कारसे अपने हाथों करके प्रक्षालन किये और चरनोके जलको सीस पर धारन कर लिया है मैले शरीर और मैले फटे हूये वृद्ध वस्त्रों की गिलानी भी कुछ नहीं मानी अतसे आनन्द पूर्वक भुजा भर भर के मिले है कृपासिंधु भगवानने इस रंकका ऐसा अमित सनमान किया है कि जिसकी मिती नहीं है इसके मिलनेका भगवानको जो सुख भया है सो कुछ कहा नही जाता हे सखी दीन बंधू भगवानकी प्रीती कुछ जानी नहीं जाती इनकी रीती कुछ न्यारी है देखो आप कहा अखिल भवनोके पती और कहा ऐसे रंककी मिताई ताते हे सखी इसीते इनको दीनानाथ सत्य करके कहते हैं जो एक ऐसे महा रंकको जिन्होने मीत हितकारी मान लिया है इस प्रकार माधवकी मीत पर प्रीती देखकर सब रनवासकी बाला आचरजको प्राप्त होकर कहने लगी कि कृपानिधान भगवान के विना कौन ऐसा दीन जनो का हितकारी है "१८" कवित्त " तबकर करन पकर गिरवरधर माधुरे म्रदुल कल बैन बोल बोलके " मीत सों कहत प्रेम सिंधको अथाह नीर नैनन अधीर जदुवीर ढेल ढेल के " रावर सजन आज नेक दिन पाछे पेख सुन्दर सुभेष मे दृगन खोल खोलके " ज्यों हि जीये जागत रही सुहृद सुधि तोर त्योंहि लेत रह्यों मे वदन बोल बोलके " आज नैन सफल सजन तुव तन तकि पूरन भिलाख लाख मोद सरसावरो " अवलों धाम तुम बिनु अभिराम मीत मेरे दिन जाम काहू कामहि न आवरो " किधों मेरी रावर सुरत हिये ले रह्यों कीना किधों प्रीत हूकी रीत विसरावरो " मुरूगेह वास कल कानेत विलास हास ऐसि तात किधों मीत मन कि भावरो " मे तो मथुरा पधार

कुछ

सुधि

कीना॥ ईंधन भार सीस धरि लीना॥ आय भवन
गुरु चरन जुहारे॥ ते कृपालु अस वदन उचारे॥
आज कलेश जवन वन भयऊ॥ मोरे हेतु तात
तुम लयऊ॥ मै प्रसन्न तोपै सुत नेहू॥ आसिष
देऊ रुचिर वर एहू॥ जो तुमार विद्या मन माई॥
सो न तुमहि विसरब सुखदाई॥ तब हम गह्यो चर
न गुरु पाना॥ सो न जाय सुख मीत बखाना॥ गुरु
नेह बसन हरष उतसाहा॥ धो इह मीत तुमहि
सुधि राहा॥ दोहा॥ मोहि समान प्रीय तोहि ना
तोहि समान प्रीय मोहि॥ प्रीति निरन्तर परस्पर मी
त लखहि किमि कोई॥ २१॥ टीका॥ भगवान क
हते है कि हे मीत फिर हम एक वृक्षों के समूह
की घनी छाया देखकर तहां डरते डरते सब रा
त बतीत करी जब प्रातकाल भया तब लकडि
यों के भार सीस पर उठाय कर गुरु जी के आश्रम
को चले आये और तहां आय कर गुरु महाराज
के चरनो पर दंड प्रणाम करके सनमुख स्थित होजा
ते भये तब सो कृपालु हमारी दशा देखकर ब
डे अनुग्रह से कहने लगे कि हे पुत्रो आज तुम
ने बन मे जो कलेश पाया है सो केवल मेरे हीं नमि
त्त पाया है ताते मैं प्रसन्न होकर तुम को इह
है आशीरवाद और वर देता हूं कि जो तुमारी
पढी हुई सुन्दर विद्या है सो तुम को आयू पर्यंत
ना विसरेगी जब इस प्रकार गुरु महाराज ने वर
दिया तब हम चरनो पर गिर पडे हे मित्र प्यारे
तिस समय का सुख कुछ कहा नहीं जाता गुरु
के चरन मे बास करने और तहां के हरष उतसा
ह की कहो मीत तुम को कुछ सुधि रही हुई है
और जानते हो कि हमारी और तुमारी हृदय की
कैसी बन आई तुमारे समान प्यारा मेरे को

अौर मेरे समान प्यारा तुम को और कोई नहीं है मेरे और तुमारी प्रीती निरन्तर है इस को कौन जा नताहै मै जानू वा तुम जानो और कौन जानताहै" २१" चौपाई" सुनि प्रभु वचन प्रेम रस भीना" ब्र ह्मा नन्द विप्र जनु लीना" हरष मगन कछु उत्त न करयो" जात प्रेम जल नयनन ढरयो" गुनत मनहि मन मोद उमंगा" कवन न धन्य मोहि सरस उतंगा" आ द्रयो अखिल भवन पति जाहू" आज भाग भये भागन नाहू" तव करुणाय सिंधु मृ दु वानी" सुनहु मीत अस वदन वखानी" सो तु म तुव सुशील अभिरामा" कहो निवास करत कल धामा" तुव समान सुन्दर व्रत धरनी" अग्गा...पति देवत तरनी" विरत विवेक ज्ञान विज्ञाना" जो कर हृदय मीत सव भाना" जेहि लग ग्रहस्थ धरम निज रेहा" कर त अशान्त होत नहिं गेहा" सुख दुख राग द्वेष संसारा" सदा एक रस जासु विचारा" अति सु प्रील सुचि निरत सुकरमा" सेतत निपुण धर म वर मरमा" अस प्रकार मृदु वचन सुहाये" कृपासिंधु निज वदन अलाये" तवहि नदीन उत्तर दुजराई" चितवत जनहु चित्र टकलाई" दीन नाथ प्रभु दीन उवारे" कहत सुनहु प्रीय मीत हमारे" अतसे सुखद गुरु ज्ञान सुनावा" सो न हमहि विसरत मन भावा" गुरु वर श रण जिनहिं जग लीना" प्रीय तिन जनम सफल जग कीना" सेहि ते अगम वार निधि मा रा" होत सो विनु प्रयास तुरत पारा" जप तप जोग नेम जम करमा" तीरथ रटन जतन व्रत धरमा" दोहा" साधन दान दयादि सव

ग्रहस्थ धरम जग जेत॥ गुरु सेवन सम मीत मोहि
एक न अनभव देत॥२२॥ टीका॥ इसप्रकार भगवा
न के मुख से प्रेम रस के भीगे हूये वचन सुनकर सो विप्र
जोहै सो मानो ब्रह्मानन्द विषे मगन होजाता भया
और हरष करके पूरित भये हूयेसे कुछ उत्तर न हो
व न आवता नेत्रोंसे प्रेम जल वहा जाता है और अ
पने मन मेंही विचार करता है कि आज मेरे समान कौ
न वड़ा धन्य है जो जिसको अखिल अर्थात सरव
भवनोंके पती ने ऐसा सनमान दिया है और मेरे भा
ग जोहैं सो आज सरव भागों वखे प्रधान होगये है तव
भगवानुं फिर कोमल वानीसे कहने लगे कि हे मीत तु
मारी प्यारी स्त्री जो तुमारे समान सुन्दर व्रतके धा
रने वाली और पती व्रता स्त्रीयोंमे मुक्त
वैराग विवेक और ग्यान विग्यान मै चतुर और
जहां लग अपने ग्रहस्थके धरम है सो घरमे क
रती अशक्त नहीं होती संसार के सुख दुख राग
द्वेष मे ~~जिसके~~ सदाही एक रस रहती अत हे सुशी
ले ~~[illegible]~~ और सुकरममे परायण जो है
सो कहो और किस सुन्दर घरमे निवास करती है इ
सप्रकार जव दीन दयाल भगवानने मधुर वानीसे व
डे हित संवंधी वचन उचारण किये तवभी सुदामा
ने कुछ उत्तर नहीं दिया एकटक होकर चित्रवत स
न मुख देखता रहा तव दीने वंधू और कृपासिंधू
फिर कहते भये कि हे मीत प्यारे सरव कलेशोंके
हरनेवाला परम सुखदायक गुरु जीका ग्यान उ
देश जोहै सो हमको नहीं विसरता है जिन पुरषोंने
संसार मै गुर की शरण गत प्राप्त होके ~~भये हैं सो अपने ज~~
~~नम को सफल करके~~ तिन्होंने अपना जनम सफल
कर लिया है और इस संसार के अगम समुद्र से स
हजे ही पार होगये है जप तप जोग नेम संजम
करम तीरथ रटन जतन व्रत धरम साधन

प्रमातमा भगवान आज ब्रह्मरा को कहते हैं कि मै
ने तुमारे प्रसाद करके सरव सुख और ज्ञान को प्रा
पत किया है अब कहो कि कृपानिधान कैसे दीन
पाल है और कैसी इनकी प्रभुताई है जो जगत मे
सदैव अपने जन को हो सुजस और ब
डाई देते चले आये हैं फिर भगवान कहते हैं कि
हे मीत सनेही तुम सुमर्णि तो करो कि जव हम और तुम गु
रु जी के घर मे पढते रहे तव तहां सावन का महीना
आया और मेघ जो हैं सो आकाश मे वडी शोभा दे
ने लगे तव गुरु महाराज ने वडे हरष से वालकों को बु
लायकर लकडियां लेने के वासते वन मै भेज दिया
तव हे मीत हम और तुम दोनो वालक तिन वाल
कों का संग त्याग कर वन मे न्यारे होकर के ल
कडियां लेने के लिये विचरने लगे
तहां अकस्मात हीं मेघ जो हैं सो वडे गरज के
[illegible] करके आकाश से वरसते भये और मूसल
धार अर्थात मुहले की धार वत जल पृथवी पर प
डने लगा चपला जो विजली सो वडी चंचल होकर
चारो और चमकने लगी आकाश मे अत से
भयानक शब्द होने लगे मानो शूर वीरों के
हृदय की धीरज को हरते थे और वडे वेग क
र के महा प्रवल और प्रचंड पवन भी चल रही
थी हे मीत रात्री का
समय जो आय गया तव ऐसी अंध्यारी छाय गई
कि अपना हाथ भी देख नहीं पडता था और ह
म तहां वन मै तिन वालकों से भूले हूये वडे
व्याकुल होरहे थे ॥२०॥ चौपाई ॥ तव
इक देखि सघन द्रुम छाया ॥ तहां जा
स वस रैन विहाया ॥ भोर हिं होत गवन निज

१०५

10T

मुनी जनो के मन को ■ मोहित करने वाली भगवा
न के रूप की जो छवी है तिसको देख देख मानो पर
मानन्द पद को प्राप्त भया हूआ आप ने आपको
कृतकृत्य ~~[illegible]~~ मानता भया तिसतें उप
रान्त वडी देर के पीछे धीरज को धार और शरीर की
सुधी संभार ~~[illegible]~~ नेत्रों से प्रेम जलधार को रोक कर
सहज सहज कोमल वानी से कहने लगा कि हे कृ
पासिंधु मुरारी ~~[illegible]~~ दीन हितकारी सो तो गुरू जी
के घर मे वास और तुमारे संग हास विलास की मेरे
को सारी सुधी है और मैं भी जानता हूं कि तीन लो
क के नायक जो तुम हो ■ तुमारे साथ मिताई हो
नी ■ मेरे भागों उदय होने का कारण है परन्तु हे
दीनानाथ एक हृदय मै इह संदेह अतंस करके हो
ता है इसका समाधान ~~[illegible]~~ नहीं हो सकता ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ कि चारो ही वेद जिस परमातमा की वाणी हैं
और जगत का उतपन्न करना पालना और सं
घार करना जिस के हाथ मै है सो परमातमा भगवान
आप घर को ~~[illegible]~~ त्याग कर गुरू के घर मे विद्या
पठने और कल्यान प्राप्त करने कु वासते जाते
भये इस प्रकार मीत के मुख से चतुराई वचन सुन
कर कृपानिधान तिसको ततकाल हृदय मे जो
मुस्क्या लेते भये तब फिर सुदामा कहने लगा कि हे
मीत मै जानता था जो तुमारे घर मे स्त्री नहीं है
अब तो सोलां हजार एक तें एक अधिक जो है
तिन्हों कर के सब भवन परिपूर्ण देखता हूं ता
ते हे सज्जन हितकारी अब अपनी सुन्दर कुल की
कुशल कहो कि सब राजी तो हैं और पुत्र पत्नी से
लेकर परिवार जो है सो कहो कहां किस किस भवन
मे ■ वास करता है ॥२३॥ चौपाई ॥ तब माधो अस

८ मूर्ति

८ है

के

८ कुछ

८ मे

परि

८ संपूर्ण

८ आनन्दपूर्वक

८ कि मैने जो कृष्ण का ताप मेकर लिया

विनय उचारी॥ मीत कुसल सब कृपा तुमारी॥ जो के
अस साजन मन भाये॥ तुमसे पीये सख सुखदाये॥
सो संसृति पूरन सब कामा॥ अस प्रभु भाखि वचन अभि
रामा॥ वदन प्रसन्न मोद मन छैयो॥ साजिन गरे डा
रि मृदु बैयो॥ अति अश्चर्य कहत जीय मोहि ही॥ पू
छहुं मीत सकुच तजि तोही॥ मोरे हेतु हरषि मन माहीं॥
भोजी भवन पठव कछु नाहीं॥ परम कृपावति सोउ
प्रवीना॥ ते कछु होहिं मीन मोहि दीना॥ सो नकर हु
तुव सजन दुरैया॥ अस कहि वदन वेग वल भैया॥
कामर मीत प्रीत अनुरागे॥ करन केज निज चापन
लागे॥ कृपा सिंधु जिमि खोजत नीके॥ सकुचित जा
त विप्र तिमि जीके॥ दोहा॥ सोचाउर जीय कर दि
ये गोवत कोन दवाय॥ प्रभु तन चितवत गुप्तत अस
शोकित हृदय लजाय॥ सकल भवन नायक विदत
अतुलत विभु मुरारि॥ इनकर इहलायक नहीं चाउर
मूठी चारि॥ २४॥ टीका॥ ऐसे जब सुदामाने कहा
तब माधव भगवान जो हैं सो कहने लगे कि हे मीत प
यारे कुशल तो एक तुमारी कृपा हीं जानता हूं क्यों
कि तुम समान जिनके ऐसे हितकारी प्यारे और सख
सुखदायक सज्जन होवें ~~सो तो~~ तिनको संसार मे सब कामना
पूरण हैं और तिनको सदैव हीं कुशल प्राप्त है ऐसे
कहिकरके भगवान बड़ी प्रीती और प्रेमसे आनन्द
पूर्वक अपने मीतके गलेमे भुजा मेलकर सुन्दर वा
नीसे कहने लगे कि हे प्यारे मेरे हृदयमे एक बड़ा आ
श्चर्ज आवता है सोमे संकोचको त्यागकर अब तुमसे
पूछता हूं कि हे हितकारनी मेरी भौजाई जो है तिसने
प्रसन्न होकर मेरे निमित्त कुछ नहीं भेजा है हे सज्जन
सो तो परम कृपावती है मेरे लिये अवश्य कुछ भे
जा ही होवेगा तुम क्यों छिपावते हो इस प्रकार क
हिकर बलराम जीके भ्राता दीन सुखदाता भगवान
मीतके तिस केवलको हाथों से टोलने लगे

[illegible]

प्राचीन

२०६

तब ज्यों ज्यों कृपासिंधु खोजते हैं त्यों त्यों सुदामा
ता जाता है और सो चावल
स्त्री के दिये हुये भुजा के नीचे दबाय करके वही गिला
नी और लज्जासे भगवान्की ओर देखता हुआ
चित्तमे कहता है कि इह लोकोंमे प्र
सिद्ध अतुलित प्रताप वाले सब भवनोंके नायक
भगवान इनकी लायक इह मेरे चार मूठी चावल न
हीं है मै कैसे देऊं॥२४॥ चौपाई॥ इहकछु उचित
भेट नहि मोरी॥ आवत देत विपुल जिय खोरी॥ अ
स विचारि जब ग्रंथि दुरायो॥ कृपानकेत मरम
तब पायो॥ बरबस सबल कोन कर दीन्यो॥ दी
ना नाथ ग्रंथि गहि लीन्यो॥ पठ्यो रुचिर कछु भेट
भुजैया॥ तुम हे राखे कस मीत दुरैया॥ अस कहि
दीनदयाल अनुरागे॥ ता सु दृगन जब देखन लागे॥
चारु पृथुक भगवन तब पाये॥ बार बार निज ब
दन सिहाये॥ तब बोले दुज ह्यं सुदामा॥ इनतें स
रहि कवन प्रभु कामा॥ मानहिं दीप दिखावन जै
से॥ जीये ढिठाई कीन प्रभु तैसे॥ दोहा॥ वि
प्र तोष इनतें सकल होत कृष्ण कह मीत॥ भूरि
भाग भोजी पठ्यो भेट भाव जुत प्रीत॥२५॥ टीका॥
फिर सुदामा कहते हैं कि इह मेरी भेटा जो है सो दी
ना नाथ के योग्य नहीं है इसके देनेमे अतसे लज्जा
आवती है ऐसे विचार करके जब तिन चावलोंकी
गांठ को छिपाया तब भगवान जान गये कि कुछ है फिर
बलसे हाथ पसारकर दीनानाथने तिसको छीन लिया और
और मुसकाय कर कहने लगे कि मे हमारी भौजाईने
कछु भेटा पठीथी हे मीत तुमने क्यों छिपाय राखी
ऐसे कहिकर जब प्रेमसे तिसको देखने लगे तब कृपा
निधानको सुन्दर चिउरे जो हैं सो देख परे तब तो भग
वान बार बार तिनको सराहने लगे जब ऐसे इस प्रका
र भगवानके अनुकूल देखा तब सुदामा कहते हैं

८२ख

दान दया यज्ञ आदि और अनेक गृहस्थ के धर्म जो हैं सो हे प्यारे गुरु सेवन के समान इनमें से कोई भी नहीं है॥२२॥ चौपाई॥ इस प्रकार भगवान सुहाये॥ अनेक प्रसंग मीत सन गाये॥ मोद मगन कछु मन न बाचा॥ इकटक चितहिं प्रेम रस राचा॥ कृष्ण वदन सुन्दर छवि सोहन॥ देखि देखि मुनि मानस मोहन॥ परमानन्द जनु हे पद पाई॥ कृत्य कृत्य ह्वै रह्यो अघाई॥ विपुल वेर पाछिले द्विज राया॥ सुधि सँभार धरि धीरज काया॥ करत निरोध प्रेम दृग धारा॥ मन्द मन्द मृदु वचन उचारा॥ दीनानाथ मीत हितकारी॥ सो तो हृदय मोर सुधि सारी॥ गुरुवर सदन संग तुव सोहा॥ वास विलास हास मन मोहा॥ तीन लोक नायक संसे न करनी॥ मंजु मिताई मोद मन भरनी॥ इह तो जानि न दीन दुख हारन॥ मोरे उदय भाग कर कारन॥ पै अस हृदय भूरि संदेहा॥ समाधान कछु होत न एहा॥ जो कर वानि वेदवर चारा॥ भव पालन जग करन सँहारा॥ सो तजि भवन गवन भगवाना॥ गुरु गेह पठन लेन कल्याना॥ मीत वचन सुन्दर सुखदाई॥ सुनत लीन प्रभु हृदय जुड़ाई॥ दोहा॥ कहिस विप्र तव मीत तुव जीय न रहिस मनमाई॥ अब सुन्दर घोइस सरस धाम न भाम दिखाई॥ कहहु मीत कुल कुसलता सुत पुत्र परिवार॥ कहो वसत कित कित भवन आनन्द सरब प्रकार॥२३॥ टीका॥ ऐसे भगवान कृपानिधान जो हैं सो अनेक कारके प्रसंग मीत को सुनावते भये परन्तु सो आनन्द मे मगन भया हुआ मुख से कोई वचन नहीं बोलता प्रेम रस मे रचा हुआ इकटक हो मन मुख देखता है और

दीनी॥ का पावन हम जोग न [illegible] है॥ जाहितें दी
न न दीन हमे हो॥ सुनहु प्राण पति नीति अला व
[illegible] हैं॥ जे प्रीय वस्तु भवन निज आवहीं॥ बुध
जन मुदित रुचिर परिवारा॥ पावत करि विभक्त
सुत दारा॥ दोहा॥ सुनि अस रुकमणि वचन [illegible]
प्रभु मंद मंद मुसकाय॥ बोले चितवत मीत तन
मगन मोद हरषाय॥२७॥ टीका॥ [illegible] तब
इस प्रकार मन मै विचार कर रुकमणी कहने लगी
कि हे भक्तपाल दीन दयाल इह चावल [illegible] को क्यों न
हो देते हो प्राणनाथ इह तो मेरी जिठानी ने भेटा भेजी
है क्या आप प्यारी जान कर हमे नही दीनी कि हम
इसके पावने के योग्य नही है जिसते हमको प्रापत
नहीं भई हे कृपानिधान नीती का वाक्य है [illegible]
[illegible] हैं कि जो प्यारी वस्तु घर मे आवे तो बुध
जन अपने पुत्र [illegible] स्त्री और परिवार मै विभक्त
गत कर के पावें अर्थात बांट कर खावें इस प्रकार
रुकमणी का वचन सुन कर भगवान मंद मंद
मुकायकर बडे आनन्द मै मगन भये हुये अपने
मीत की ओर कृपादृष्टी से देखते हैं॥२७॥ कवित्त॥
चारु नवनीत प्रीत मोदिक मोहन मैया बृजमै ख
वैया [illegible] कैया माखे मावरो॥ मथुरा अनेक नी
के व्यंजन विरचे रुची प्रेम सुची भोन ओन ज
ननी जिमावरो॥ जादवन सदन सुधासे नीके पाये
पाक पावन सुहात जात बदन नगावरो॥ पै न
तीन लोक मै विलोकि माधुराई ऐसी जैसी लोकी
मीत चारु चावरन रावरो॥ पाय सानुराग कोरी
जागन सुभाग आछे नीके रमा बाग साग फूल
फल भावनो॥ आनन्द करन कल कन्द नन्द
कानन के मंजुल मृदूल मूल मानस सुहावनो॥
पाये मै अनेक देव साधुन समाज सेव मंदनि न
वेद नीके मोद सरसावनो॥ पै न काहू आज लों

सरस ग्रस पायो मीत जस चारु चावर ए रावर
मिठाव नो॥ भये ग्रस कोमल उदारता निकेत तकी भार
जा समेत भीम भीत्यो मन ग्रान कै॥ किधों मेरो भूधर
भूदेवहिं को देत देव त्योंहि देवराज देव लोक भीत
मान कै॥ कैधयो कमल भव किधों मेरो लोक देत
तेकयो गोलोक लोकपाल त्यों हीं जान कै॥ मुकती
जगमं जुगत विलोकै ठाढि कोने विप्र करत निहाल
मोदमान कै॥ उत धौल धामन की धूम गो गगन भू
म झूमझूम वाम मानो काम देव ह्वै गयो॥ गरिा
गण खचित कनक कल कोर क्रांति भांत भांति भा
वन पवित्र चित्र दे गयो॥ विधना क्रतूती करतूती
विसकरमा की भौन न विभूती भूरि भरी भरी पै गयो॥
इत्र जेती विमल वचित्रता वैकुंठ गृह विप्र चारु
चावर व बात छिप्र ह्वै गयो॥ दिउ सिध नव
निउ कोटि कृतु फल द्रुम काम धेनु काम ग्रभिराम
तो प्रभाव वर॥ इन्द्र जम वरन कुबेर लो विभौं व
डाई जात नहि हाई झाई सुन्दर सुहाव वर॥ भान को
प्रकास कोटि चंच ला विलास चामी कर चारु भास
विप्र वास भौन भाव वर॥ कौतुकी कृपा निधान कौ
तुक ग्रनुप्रमा वरा विप्र भौन भान भाव भाव भूरि
छाव वर॥ दोहा॥ जस माधो निज मीत सो ग्रति ग्र
नन्द सरसाय॥ मिले न जात सुप्रेम सुख वदन
एक कहु गाय॥ कीनी दुजसन प्रीति जस कृपा
सिंधु भगवान॥ सो दुरलभ संसार मे करहि कवन ग्र
स ग्रान॥ २८॥ टीका॥ भगवान कहते हैं कि हे मीत
वृजमै माताने मेरेको नवनीत जो मख्खन मो
दिक जो लडु और मोहन भोग इत्यादि पदारथ व
डी प्रीती से क ग्रहार कराये हैं और मथुरा मे भी माताने
ग्रनेक रसों के व्यंजन रच करकें ग्रत से प्रेम और रुची पूर्वक
~~से के मेरे को~~ जिमाये हैं ग्रौर मे जादवों के घर मे मेरेको मैने
ग्रमृत के समान चेउ उत्तम और पवित्र भो जो पाये
है सो कुछ कहे नहीं जाते हैं परन्तु हे मीत जेन सोरस ग्रौर

सो मधुरताई तीन लोक मे भी नहीं दे
खी कि जो तुमारे इन चावलों मे देखी है और फिर मै
ने अत से प्रीती और प्रेम से कोटी यज्ञोके भाग और
रमा जो लछमी है तिसके बाग के सुन्दर फल फूल और
साग बड़े प्यारे जान कर पाये हैं और परम आनन्द के
देनेवाले नन्द के बाग के कन्दमूल और अनेक देवता और पृथवीपर साध संतो के समाज के सुन्दर
नैवेद्य भलीप्रकार पाये हैं परन्त ऐसा रस और ऐसी मधु
रताई आज तक कहीं नहीं पाई कि जैसी मीत
तुमारे चावलों मे पाई है इसप्रकार परम उदार भगवानको
अत से प्रसन्न और कोमल भये जानकर पारबती के
सहित महादेव भी चित्त मे शोकित होकर डरते भये कि
ऐसा ना हो मेरा कैलाश इस ब्राह्मण को दे देवें और
तैसे ही अपने देव लोक का भय मानता भया कमल
भव जो ब्रह्मा है सोभी कंपाय मान होने लगा
कि मेरा ही ब्रह्म लोक ना दे देवें ऐसे जान
कर गोलोक भी शोकित चित हो जातभया और मुकती
जो है सोभी दोनो हाथ जोड़ कर सनमुख स्थित भई
देखती है कि अब इस ब्राह्मण किसको निहाल क
रता है और जहां सुदामाके घर मे धवलधाम
जो बनगये सो अनेक प्रकार मानो कामदेव केर
चे हूये आकाश मे शोभा देने लगे फि
र कैसे कि कंचिन और मणियों करके खचित और
नानाप्रकार के चित्रों से चित्रत किये हूये भांतभांत
की आभा को उदय करते हैं विधाता और बिसक
रमा की करतूती और भवनो की विभूती जो है
सो तहां इससे भिन्न
बैकुंठ सहकी है सो
संपूर्ण भी भई इससे भिन्न
बैकुंठ की जितनी मनोहरता और शोभा है सो भ
गवान के चावल चावते चावते ब्राह्मण के घर

कि हे भक्त वत्सल इनतें आपका कौन कारज सरता है
जैसे सूरज को दीप दिखाना तैसे हीं हे नाथ इहस्त्री
की एक ढीठाई और मूरखताई है ऐसे सुदामा का वचन
सुनकर भगवान कहने लगे कि हे मेरे मीत इससे
सब सृष्टि के विश्व का तोष होता है अर्थात सब जगत का
पेट भर जाता है मेरे बड़े भाग्य हैं जो भौजाई ने ऐसी भेटा
अत्त प्रीति भाव और सनमान पूर्वक भेजी है ॥२७
चौपाई ॥ तब भगवान मूठि भरि पानी ॥ लीन सिउरि
बदन सुख मानी ॥ मंद मंद चाबत जदुराये ॥ प्रेम
नीर नयनन ढुरि जाये ॥ विविध प्रसंसि बदन भगवा
ना ॥ भरो मूठि मे जल जब आना ॥ तब रुकमणि
कर लीन निवारो ॥ चतुर चारु निज हृदय विचारो ॥
दोहा ॥ दीना नाथ दया नधी मूठी चाउंर पाय ॥ ती
न लोक दीन्यो विभू अति उदार जदुराय ॥ असे
सूति प्रभु सम नहीं करन छोह जन काहु ॥ थोरे हे
पैं कोमल कलित होत देत बहु लाहु ॥२८॥ टीका ॥
तब भगवान ने तिनकी श्लाघा करके और एक मूठी
भर कर बड़े आनन्द से मुख मे पाय लेते भये प्रे
म जल से नेत्र भरे हुये सहज सहज चाबते जावते
जाते हैं और अनेक बडाई कर के जब दूसरी मूठी
भरते भये तब रुकमणी ने हाथ पकड़ लिया और म
हा प्रवीन हृदय मे विचार कर कहती है कि देखो इह द
या की नधी दीना नाथ जो एक मूठी भर चावल पा
य करके निरधन ब्रह्मण को तीन लोक की विभूती औ
र प्रताप दे दिया है तिस्से संसार मे दीन जनो पर अ
नुग्रह करने वाला और कोई नही है सो दीन बंधू
सामर्थी हैं जो थोरे पर ही प्रसन्न होकर बहुत लाभ
दे देते हैं ॥२९॥ चौपाई ॥ अब हम कहे कस देहुन
स्वामी ॥ चाउर चारु भक्त अनुगामी ॥ करसों कर पकरत
हरखाई ॥ कहत सुनहु साजन सुखदाई ॥ मोरजिठा
नि भेट पठई नी ॥ प्रभु प्रेम जानि हम हु नहिं दी

१-२

१०९

कि मीत आपप्यारे की विरहे तें अधिक संसार मे और कोई भारी दुख नहीं है ताते मे अब तुमारा वि जोग नहीं सहार सकता हूं हे मीत मै अपने हृ दय को वज्र समान कठोर करके कैसे कहूं कि तुम मेरे से विछुड़ कर के जाओ॥ २९॥ चौपाई॥ तुव वियोग मोहि मीत सुजाना॥ सेतन अति कलेश अवसाना॥ जस सुख दीन मीत तुव आवन॥ अब न देहु दुख साजन जावन॥ सुन्दर सुखदमीत वड़भागी॥ सदावसहु मम नयनन आगे॥ अ त से प्रीति युत वचन सुहाये॥ प्रभु कर सुन त विप्र मनभाये॥ प्रेम मगन भरि नयनन नीरा॥ कहिस कृपाल सुनहु जदुवीरा॥ तुम मम हृदय वसहु सुख धामा॥ मै तुव चरन कंज अभिरामा॥ करहु निवास मधुप इव लोभा॥ विरहे विजोग कवन प्रभु दोभा॥ इह तुमार मूरति सुखदाई॥ माधुरि दृगन मोर प्रभु छाई॥ दोहा॥ अस कहि उठे प्रवीन दुज परि हरि कनक प्रजंक॥ येक॥ लाय लीन उर प्रेम सो जदुकुल कुमुद मयंक॥ ३०॥ टीका॥ फिर भगवान कहते हैं कि हे मीत तुमारा वियोग जो है सो मेरे को निरन्तर कर के क लेश का हीं कारण है ताते हे प्यारे जैसा सुख तुम ने आवने को दिया है अब वैसा ही जावने का दुख क्यों देते हो हे सुन्दर सुखदायक और वड़भा गी मीत तुम तो सदैव मेरे नेत्रों के आगे ही वसो इस प्रकार प्रीती करके पूरित वडे मनोहर और मनको भा वते भगवान के वचन सुनकर सुदामा प्रेमसे मग न भया हुआ नेत्रों मे जल भर कर कहने लगा कि हे सरव सुखों के धाम ज्ञान स्याम तुम तो अनु ग्रह करके सदैव मेरे हृदय मे ही वसो और मै तुमारे चरन कमलों मे भ्रमर से निवास करता रहूं

तब हे नाथ इसमे विरहे वियोग का कोई भी कलेश नहीं होवे
गा इह तुमारी माधुरी मूरती जो है सो मेरे नेत्रो मे सदा
ही छायत रहेगी ऐसा कहिकर के सुदामा ~~नेत्र~~ के
चिनके पलंग से उठ खड़े हूये और भगवान प्रेम से व्या
कुल भये हूये तिसको ततकाल हृदय मे जुड़ाय लेते
भये ॥२०॥ सवैया ॥ बारहिं बार विदाय समय विरहे
वस बार विलोचन छाये ॥ माधव मीत सो प्रीत भरे
मिलते तन की सुधियो विसराये ॥ आगू पहुंचावन
भावन को मन पावन द्वार दया निध आये ॥ नेम्र त
क्रीट नयो पद मीत नई कछु प्रीत की रीत जनाये ॥
साजिन धाम सुभामनि सों निज ओर प्रणाम विनय करि
कहियो ॥ इह चार बार हमार सबे सुत दार विचार
त आपन रहियो ॥ औ सुरती रखियो इक साजिन द्वा
रिका जादव जाति बसैयो ॥ जे अपचार भयो कछु सेव
न ते अपना मोहि जानि छमैयो ॥ प्रेम भरी बतियान
सों माधव मीत लिये छतियान जुड़ाये ॥ नेह भरी
मतियो अखियों रतियो जल जात प्रवाह बहाये ॥
साजन साजन भाषत भेटत होत विराम सिलाम
नचाये ॥ सो दुसह दुख जात कह्यो न किये जब
माधव मीत विदाये ॥ दोहा ॥ विप्र वज्र धरि हृदय
निज गवन प्रेम दृग ~~[illegible]~~ नीर ॥ बिछुरि चल्यो
जदुवीर तें बरवस विकल अधीर ॥ २१ ॥ टीका ॥ तब
विदाय होने के समय फिर भगवान विरहे के वश भये हूये
नेत्रो मे जल छाय कर बड़ी प्रीती से मीत को बारबार मिल
ने लगे जिस तें उपरान्त प्रेम कर के अंग सिथल और
अचेत भये हूये बड़े सनमान से अपने मनभावन प्यारे
को आगे पहुंचावने के वासते द्वार लग चले आव
ते भये और तहां आयकर अत से नम्र होकर मुकट
के सहित सीस जो है सो मीत के चरनो पर धर कर क
हने लगे कि हे साजिन घर मे जाय कर अपनी पतनी
को मेरी ~~[illegible]~~ बहुत विनती से प्रणाम कहियो
और इह ~~[illegible]~~ घर बार हमारा जो है सो सब आपना ही

जान ते रहियो फिर उ हमी सुरती रखियो कि दो
रिका मे एक जादव जाती हमारा मीत वास करता है
और तुमारे सेवने मे मेरे से जो कुछ अपचार अवज्ञा
होगई हो सो मेरे को अपना ही जान कर छमा की
यो. ऐसे प्रेमरसके भीगे हूये वचन ~~कर कर~~ माधव
भगवान ने मीत को भुजा भर कर हृदय मे लगाय लिया
~~और~~ स्नेह से भरे हूये राते नेत्र जो हैं तिन्हों से प्रेम जल
का प्रवाह चला जाता और साजिन साजिन कह
ते हूये मिलने की अभिलाखा से नवृत्य नहि होते सो
दुख और सो कलेश कहा नहीं जाता है कि जिसको
मानकर दीनानाथ भगवान ने अपने मीत को विदा
य किया है और इधर सुदामा भी अपने हृदय को
वज्र समान करके नेत्रों से जल ~~बहा~~ बहा ता हूआ प्रेम
करके व्याकुल और अधीर जदुवीर से विछुड कर
चल पडता भया ॥ ३२॥ चौपाई॥ करत जात निज
हृदय विचारा॥ धन्य धन्य वसु देवकुमारा॥ निरधन
पाल ख्याल विख्याता॥ जहि अस कीन रंक सन
नाता॥ नाहिं निकट कौ जासु विडाई॥ ~~तेहि सन~~
तेहि सन सादिर कीन मिताई॥ मलन चीर अति स
मल सरीरा॥ भरि भरि भुजा भेट जदु वीरा॥ कन
क प्रयंक रुचिर निज गेहू॥ बैठा यो मोहि दीन
सनेहू॥ सुचि पूजन ऋषि देव समाना॥ सादि
र सकल कीन भगवाना॥ अचल अवध गत
नेह नवीना॥ मोहि सन कृपासिंधु जस कीना॥
को अस करन हार संसारा॥ करत जात अस
विप्र विचारा॥ दोहा॥ पुनि पठवन धन हेतु धन
प्रभु निरधन धन पाहिं॥ मन गुनि गुननिधी म
नत सो दीन दया निधी नाहिं॥ ३२॥ टीका॥ जब
सुदामा भगवान से विछुडा तब मारग मे जाता हूआ
हृदय मे विचार करने लगा कि वसुदेव के कुमार
भगवान जो हैं सो धन्य हैं देखो कैसे निरधन

मे सब क्षायत होजाती भई नाभादासजी कहते
हैं कि हे गुरुदेव स्वामीजी महाराज जिस प्रकार कृ
पासिंधु भगवान अपने मीत से मिले हैं सो प्रेम
असुख एक मुख से गायन नहीं किया जाता है और
के जैसे दीनबंधु भगवान ने ब्राह्मण के साथ प्रीतीभा
व प्रकट किया है सो संसार मे दुर्लभ है ऐसा और
कौन कर सकता है ॥२८॥ चौपाई॥ तब प्रसन्न मा
नस दुजराई॥ बोले बदन बचन सुखदाई॥ तुमस
मान तुमहीं जदुबीरा॥ जनमन धरन धीर गुण खी
रा॥ सबकर सुखद सबन हितकारे॥ विप्र धरणि सु
र त्रास निवारे॥ अब अनुसासन नाथ जोई पावहुं॥
तो कृपाल निज सदन सिधावहुं॥ बैठि अचल नि
ज सदन सुहावन॥ करहुं ललित तुव गुणगण
गायन॥ बोले बदन भक्त चित चोरा॥ सहिन सकहुं
तुव मीत निहोरा॥ दोहा॥ बिरहे मीत ते अधिक
दुख कवन मीत संसार॥ साजिन कस गावन कहे
हृदय बज्र निज धार॥ २९॥ टीका॥ तब सुदामा जो है
सो अतसे प्रसन्न होकर नम्रबानी से बड़ा सुखदाय
क वचन कहता भया कि हे जदुनाथ तुम कैसे हो कि
दीनों के हृदय को धीरज देने वाले और सब गुणों के
समुद्र सबके सुखदायक और सबके हितकारी
गऊ ब्राह्मणों के पालक पृथ्वी और देवताओं की र
क्षा करने वाले हे प्रभू तुमारे समान तुमही हो और
दूसरा कोई नहीं है इस प्रकार सुजस कहता हुआ
हाथ जोड़कर बिनती करने लगा कि हे दीनानाथ
जो अब आज्ञा पाऊं तो आपके चरन कमल हृदय
मे धार कर घर को जाऊं और तहां बैठकर तुमारे
पवित्र गुण गण जो हैं सो गायन करता रहूं ऐसे
मीत का बचन सुनकर कृपानिधान कहते हैं कि
हे साजन तुमने सत्य कहा है परन्तु मेरी बात सुनो

दोहा॥ तव आगे मदनादि सुत कृस्न वीर वलराम॥
मिलैं सु लै लै नाम निज करि करि नम्र प्रनाम॥ २२॥
टीका॥ फिर सुदामा कहता है कि कृपा के समुद्र भग
वान जो हैं सो तिन्हों ने मेरा हित और भला हीं विचा
रा है कि जिस करके संपती जो धन है सो नहीं दिया है
क्यों कि इह धन संसार मै अत से वलमान है काम क्रो
ध लोभ मद इत्यादि अनेक अनर्थों को उतपन्न
करता है और सरव सुखों के देने वाला भगवान
का सुन्दर सुमरिन जो है सो विषयों मे अंध हूये पु
रष को सव भूल जाता है ~~और सुन्दर~~ सुभ करम और
सुधरम जो हैं ~~सो भी धन का मद विसराय देता है~~ -
सो इह धन का मद तिन को भी विसराय देता है औ
र जो द्रव्य वहीन पुरष है सो सदा सुशील और
भगवान की भक्ती वाला होता है परमार्थ के मारग
को भली प्रकार जानता और नारायण के चर
न कमलों की प्रीती मे निरन्तर करके लीन होता है ऐ
से विचार कर दीन वंधु भगवान ने मेरको अनुग्रह
करके राख लिया है [illegible] नहीं तो विषयों मे अंध हो
जाता मेरी कौन गती होती भक्तपाल ने भला
उवार लिया अर्थात वचाय लिया है मीत हितका
री जो होते हैं तिन की ऐसी हीं रीती होती है जो स
ज्जन के दुख आवता देख कर सहायता करते हैं
मेरे अहो भाग्य हैं जो मै ने नंदलाल भगवान का
दरसन नेत्र भर कर पाया है और भुजा भर भर
कर मिला भी हूं आज मै ने संसार मे अपना जनम
सफल कर लिया है मेरे समान दूसरा कौन ध
न्य है कि जिस के सरव चराचर के पालिक कृस्न
प्रमात्मा भी हितकारी वने हैं अव जो तीनों भ
वनों का धनी ~~मेरा मीत~~ मै ने मीत माना तो कहो
कि मेरे समान जगत मे वड़ा कौन धनमान है
इस प्रकार विचार करता करता सुदामा जो
है सो राजभवनों के द्वार से वाहर निकस आया

तब इधर उधर चारो ओर शोर पड़जाताभया सब कोई कहताहै कि इह ब्रह्मन भगवानका मीत हितकारी जाताहै ~~तब आगेन~~ इतने मे आगे मदन आदिक कृष्न के पुत्र और भ्राता बलराम अपना अपना नाम ले ले सब प्रनाम करकर मिलते भयेः॥ २२॥ चौपाई॥ पुनि उद्धव सत्यकि सुख भारी॥ जदुबंसी बंसी मधु सारी॥ क्रूरादिक मानस हर लोभाई॥ सादिर निज निज नाम सुनाई॥ कृष्न कृपाल मीत प्रीय जानी॥ करत प्रनाम चरन गहि पानी॥ जे जे मिलत जात मग ताही॥ बन्दित नम्र चरन द्विज नाही॥ अस प्रकार तजि दुरग सुधीरा॥ द्विजबर आय सरत पति तीरा॥ करि प्रनाम मुख बिनय उचारे॥ तुरत नाव करि पार उतारे॥ चले भवन तब करत बिचारा॥ का देब हु मोगव जब दारा॥ ग्राम लोग पूछब मोहि सारी॥ का तोहि दीन मीत हितकारी॥ तब अनुपम अस हरष सुहावा॥ सबमन करहु कवन मन भावा॥ कृष्न कृपाल मिलन ते भाई॥ कवन लाभ सेहत्ति अधिकाई॥ दोहा॥ असचिन्तत द्विज चलत मग लटपटात पग देत॥ निकट ग्राम निज आव जब बिसमय हरष समेत॥ २४॥ टीका॥ तिसते उपरान्त फिरसात्यकी और उद्धव बड़े सुख करके पूरित जदुबंसी और मधुबंसी इहसब अक्रूर आदिक जो हैं सो अपना अपनानाम ~~लेलेकर~~ सुनाय ~~कर~~ सुनाय कृष्न भगवानका मीत जानकर बड़े हनमानसे चरनो पर सिस धरधर प्रनाम करते भये ~~श्री~~ इसप्रकार जो जो रसते मे मिलता जाताहै सोसो भगवान के मीतौंको बड़ी प्रीती से बंदना करताहै तब सुदामा जोहै सो ~~भगवान~~ कृष्न भगवानकी नगरी त्याग कर ~~बु~~ चलता चलता समुद्र के किनारे आय प्रापत

Margin notes: ०अपना; ०जौमधुरावासी; [illegible]

१३७

हो जाता भया तब नावक जो है सो तिसको देखकर
और बडे प्रसन्न होकर तुरत ही पार उतार देते भ
ये ~~जब सुदामा समुद्र से पार उतर भये~~ जब ब्राह्म
ण पार उतर गयो तब मारग मे जाते हृदय मे सो
च करने लगे कि घरमे जब स्त्री धन मांगेगी तो
तिसको मै क्या देउंगा और ग्राम के संपूर्ण लोग जो
मेरे को पूछैंगे कि तेरे को कृष्ण हितकारी ने क्या दिया
है तब तो मै अवधगत हरष कि जिस हरष की को
ई अवधी नही है और अनुपम कि जिसकी कोई उप
मा भी नहीं है सो सब से कथन करूंगा और कहूं
गा कि कृष्ण परमातमा के मिलने और मिताई सें
संसार मे और ~~कौन अधिक लाभ है~~ कौन अधिक लाभ
है इस प्रकार सोचता जाता ब्राह्मण रस
तेने अटपटे पैर धरता कछु आचरज और
कुछ हरष के वश भया हुआ अपने ग्राम के
निकट आय प्रापत होता भया ॥ ३८ ॥ कवित्त ॥
पूरब दिसा की ओर नैनन को जोर जब देख्यो
जोती ज्वलत सुमेरके विलास वर ॥ गगन
सोपान किधो इन्द्रको धनुष तान बादर ज्यो
न किधों कोटि भान भासवर ॥ जामनी विगत
किधों निखत समाज संग मेदन मयंक बंक
पावत प्रकास वर ॥ किधों कोटि विद्युत प्रचंड
को प्रभाव छाव आव किधों ज्वाल चय चंड
चहुं पास वर ॥ दोहा ॥ अस प्रकार द्विज देखि
दृग रचना भवन अपार ॥ मति गत थकित सु
चकित चित शंकित ~~[illegible]~~ करत
विचार ॥ ३९ ॥ टीका ॥ तब सुदामा ने पूरब दिसा
की ओर नेत्र जोड़कर जो देखा तो घरों की महि
मा और रचना एक सुमेर कैसी बड़ी प्रका
श्यमान भासती भई फिर कैसी कि मानो आकाश
को पौडी लगी हुई है कि कोई इंदर का धनुष

पाल और दीन दयाल हैं जो मेरे से रंक के साथ जिन्हों
ने ऐसा नाता किया अत से मलीन वस्त्र और मली
नहीं शरीर कोई मेरे को पास भी नहीं बैठने देता था तिस
दीनानाथ ने कुछ भी गिलानी नहीं मानी बड़े सनमा
न से मिताई करी और भुजा भर भर कर मिले फिर रुकमि
नी के पलंग पर प्रीती पूर्वक बिठाय कर श्री और दे
वताउं के समान पवित्र पूजन जो है सो किया कृपासि
धू ने मेरे साथ जैसा अनन्त और अचल
सनेह किया है ऐसा संसार में कौन करने वाला है इस प्र
कार विचार करता हुआ फिर (दूसरा) मन मे कहता है कि मेरे को
घर वाली ने धन ल्यावने के वासते भगवान के पास
मे जाया सो तो कृपानिधान ने कुछ दिया ही नहीं है ति
स को क्या जाय कर उत्तर देऊंगा ॥ ३२ ॥ चौपाई ॥ कृपा
सिंधु हित मोर विचारा ॥ याते दीन न संपति भारा ॥ ३१
धन संसृति अति बलवाना ॥ मनसिज क्रोध लोभ अभि
माना ॥ अन्य अनर्थ कोटि दुखदाई ॥ ३१ उतपन्न कर
त जग आई ॥ हरि सुमरण अति सुखद सुहावा ॥ विषय
निरत सब देत भुलावा ॥ चारु सुधरम करम वरयाई ॥
धन मद देत सकल विसराई ॥ होत विप्र सैनेर द्रव्य व
हीना ॥ सदा सुशील भक्ति हरि लीना ॥ जानत परमारथ
पथ नीके ॥ भगवन के जु चरन रति जीके ॥ अस विचा
रि मोहि दीन सहाया ॥ राखे लीन कीनी अति दाया ॥ वि
षय अंध अस होत निहारी ॥ भक्तपाल मल लीन
उबारी ॥ मीत रीत मंजुल जग एहू ॥ जो दुख होत
हरहिं करि नेहू ॥ दुरलभ नन्द लाल मन भावा ॥ मे
मरि दृगन दरस जो ई पावा ॥ भुजन भराय भेट पुनि
कीना ॥ संसृति जनम सफल करि लीना ॥ मोहि स
म कवन धन्य बड़ भागी ॥ जो कर बने कृष्ण अ
नुरागी ॥ त्रिभुवन धनी मीत जब माना ॥ तो मोहि
सरस कवन धनवाना ॥ अस प्रकार अन्ना पुर द्वारा ॥
र ह्यो ठाड़ द्विज करत विचारा ॥ इत उत चख्यो सोर
बहु ओरा ॥ ३१ द्विज जात कृष्ण चित चोरा ॥

२२३

113

सुधी है कि मेरी बुद्धी मैं भ्रम हो गया है अथवा मैं
फिर करके द्वारावती में चला आया हूं ऐसे जब तिस
ने भली प्रकार सो चकरके देखा कि सोई अपना स ९८
नातन ग्राम जो है सो निश्चय होता भया ॥ ९८ ॥ सवैया ॥
आरत करत कहो कित गो मेरो मई ग्राम के सुन्दर
लोग बसैया ॥ कौन निकार दिये घर बार लिये सब
लोस परोस सहैया ॥ हाय अनीत करी कसको नृप
जाहि तजी दई जोर मढैया ॥ सो कित श्री लसने
हे मेरी अब पारव आनन प्यारी लुगैया ॥ माधव
दूर भये कहूं कहि पै अपने जियकी बतियो सब
जाई ॥ दीन दयाल बिना अब दीन की कौन करै दु
ख चीन हाई ॥ याविध चिन्तत मानस शंकित दे
खत चकृत चहुं कित आई ॥ आरत मौनन के
ढिग ठार मनो सब सम्पति रंक गवाई ॥ मंदुन
की उपमा दृग देख रहे टक एक लगे दुज नैना ॥
केलि के शाल औ पाक के शाल रसाल औ
पान की शाल सु हैना ॥ नाग तुरंगन शाल
उतंग सुरंग गो शाल बिसाल रचैना ॥ जात वि
बेक किये नजरे जो भरी मुकता हल कंचिन
ऐना ॥ अन्न अगार औ तोस अगार अगार
रचे रतना अति चारू ॥ सार अपार दुती छिप
तैं दुति सेस मणी फरा पाव नपारू ॥ इंद्र कुबेर
महेश्वर दानव देवन सेवन सम्पति मारू ॥
माया बिभूती कृती विधी मनु ठौरहि ठौर
ठटी मन हारू ॥ चित्र भरी चित्र सार सुहावन
काम तरू फलवार सुरंगन ॥ धूम शिला औ
शिला फटिकादिक नील शिला ललिता छ
वि अंबुन ॥ चौकन चांदनी चांद को चांदन
मानो तनी तन मोद उमेगन ॥ विप्र सुजान को
भाम, तहां सेज स हस सखी रति मान बिमंगन ॥

आवन प्राणपती दृग देखि दूरते देखि उतायल दो
रयें आई॥ सेधती सोहनि रतनाल सी सरच
रिसों परिवारन माई॥ पान लिये पीकदान लिये को
लिये विजनादिक चौर सुहाई॥ मानो प्रकास को
रास लिये संग भामनि पास पती निज आई॥ दोहा॥
तव दुजवर दृग देखि अस भ्रम वस करत विचार॥
देव सुता जुत धरन धो रमा लीन अवतार॥ धो
इह माया मूरती लिये सगर परिवार॥ सहित आ
ई नाकतें लखित रूप निज धार॥ ३७॥ टीका॥
जव सुदामाने अपना ग्राम लख करके जान लिया
तव अत्यंत व्याकुल और दुखी होकर कहने कर
ने लगा कि इह क्या अचरज माया है मेरे ग्राम
वासी सव लोग जो हैं सो कहां गये किसने नि
काल दिये और मेरे सहायक पड़ोसियों के घर
वार छीन लिये हैं हाय इह कैसी अनीति किस रा
जाने करी है जो मेरे निरधन की झोंपरी निरदय हो
कर जलाई और तपी है अव मै शील और सने
ह की भरी हई अपनी प्राणप्यारी स्त्री कहां खोज के
हा मैं पाऊं माधव भगवान जो हैं सो तो दूर रहे
अपने हृदयँ दुख और कलेश किस को आय कर
कहूं दीन दयालके विना इस मेरे दीन का कौन
दुख पहिचाने और कौन सहायता करे इस प्रकार
सोचता हुआ मन मे शोकित होकर पुनः आंखें
से चारो ओर देखता है जव बुद्धी विचार मे
कछू नहीं आया तव व्याकुल होकर मानो
के सामीं आय कर ऐसे स्थित हो गया मानो जैसे कोई
रंकपुरुष प्रापत भये धन को गवाय कर व्याकुल होता है
और तहां स्थित भया हुआ भवनो की शोभा को दृ
ष्टी जोड़ कर देखने लगा वहां सुन्दर केली
कि जहां विलास होते हैं और तैसे ही पीकदान
अनेक कीड़ा और

सवकि
सते

का

री

पुंडर

हुई

री

११५

कि जहां नाना प्रकार के व्यंजन बनते हैं और बड़ी
विचित्र पानशाला और हस्तीशाला तुरंगशा
ला और गोशाला इत्यन्त से ऊँची और बड़ी दिव्य
नाना रंग और चित्रों करके युक्त कंचन और मुक्ता
मणियों से खचित अत्यन्त शोभा पावती हैं
अन्न और के शके आगार
अर्थात् जा और वास भव
न जो हैं सो कंचन के रचे हुये रतनों करके ऐसे जटत
शोभायमान हैं कि जिनकी शोभा और प्रकाश का
शेष मणी भी पार नहीं पाय सकती है
मानो तहां इन्द्र कुबेर महेश दैत्य देवता
इन सबकी सम्पती विधाकी करतूती
और माया की जितनी विभूती है सो सब परिपूर्ण
होकर शोभा दे रही है चित्रशाला जो हैं सो चि
त्र मणियों करके ही बनी हुई बड़ी अनुपम और
वाटिका जो फूलों की फुलवारी हैं सो कल्प वृक्षों
करके भवनों के मनो

युक्त नाना रंगों की छबि को दरसावती हैं

हर उन जो हैं सो धूमशिला और नील शिला
और फटक शिला इत्यादि करके बड़ी उपमा को उ
दय कर रहे हैं चौकों विखे
चांदनी तनी हुई मणियों करके
जटत ऐसी शोभा देती हैं कि मानो जहां तहां चं
द्रमा की चांदनी खिली हुई है
तहां रती के रूप को लज्जा देने वाली हजार सखीजों
तिनके बीच परिवारत भई हुई सुदा की
ही दूर तें ही अपने पती को देख कर मानो एक
प्रकाश के समूह को साथ लिये हुये बड़ी उताय
ल से ततकाल ही दौरे

त भा हुआ है कि बादल की घटा का समूह — कि कोटि सूरज उदय होरहा है अथवा रात्री के बिना कहीं ता रो का समाज शोभा देता है कि पृथवी पर चन्द्रमा प्रका शमान होरहा है कि यह कोई कोटि प्रचंड बिजली का प्रभाव है कि चारो ओर से अगनी का पुंज आयकर प्रज्वलत होरहा है ऐसे भवनो की महिमा जो है सो सुदामा देखकर मती से व्याकुल भया हुआ बड़ा आ चरज और चकित चित होकर मनमै अनेक विचार करता है॥२५॥ कवित्त॥ किधों देवराज देव लोक लै समाज आज अवनी विराज छबि छाजके तु भावनो॥ किधों ब्रह्म लोक लै बिरंचि आयो मेदन पै किधों शंभु ल्यायो सैल मोद सरसावनो॥ धनद किधोंकि अलकावली को ल्यायो भूम भोगी भोगवती किधों ल्यायो ललित बलो॥ मदन सदन भास माया को विलास किधों कलित प्रकास को विकास भूरी भावनो॥ दोहा॥ धो प्रतत्त सपने किधों भयो कि भ्रम मति मेरि॥ धों आयौं द्वारावती मगन मोद फिरि फेरि॥ ~~[illegible]~~॥ अस जब हृदय बिचार निज मन हि विप्र वर कीन॥ सोउ सनातिन धाम निज करि प्रवीन दृढ लीन॥ २६॥ टीका॥ फिर सुदा मा कहता है कि यह मानो देवराज जो इन्द्र है सो देवलोक के समाज को लेकर आज बड़ी छबी से पृ थवी पर आया हुआ शोभा देता है कि अथवा ब्रह्म लोक को लेकर ब्रह्मा आया हुआ है कि महादेव अपने कैलाश को लेकर भूमी पर आये हुये हैं कि यह अलकावली को लिये हुये कुबेर है कि सुन्दर भोगवती को ~~लेकर~~ भूमी पृथवी तल पर ल्याये हुये हैं फिर कहता है कि काम देव के घर हैं कि यह ~~[illegible]~~ प्रकाश की हो ~~[illegible]~~ एक पुंज है कि अथवा कोई आचरज माया का विलास है मैं कुछ नहीं जानता हे कि यह मेरे को प्रतत भासता है कि सपने की

दीनोंपर प्रीती पालने वाले तुमारे मीत कृष्ण प्रभात मां कैसे हैं कि दानी सिरोमणी अर्थात दानी पुरुषों विषे प्रधान हैं और जिनका सदैव एही विरद चला आया है कि अपने जनपर स्नेह और कृपा दृष्टि रखनी तिनके समान संसार में ऐसा दीन पाल और कोई नहीं है और मेरा प्राण नाथ तुमारी स्त्री है और इह सव मेरे साथ की सब सखी जो हैं सो आप की दासी हैं और इह भवन भी सव तुमारे हैं अब विस्वास को त्याग दीजिये सव विभूती भगवान की अनुगृह से अपनी ही जानिये जव ऐसे पतनी ने उचारन किया तव सुदामा को निश्चय हो जाता भया कि इह सव मेरे दीना नाथ भगवान को उपकार है ऐसे जानकर तिस दीना वंधू और कृपा सिंधू को मन मे वारवार प्रणाम करने लगा और कहने लगा कि अहो मीत ने कैसी मिताई और हित किया है जो मेरे को अमित कि जिस की कुछ मती नही है ऐसी वडाई देकर जगत मे सुजस का पात्र वनाय दिया है विश्वनाथ के समान कौन ऐसा उदार है और कौन जनपाल और जन हितकारी है देखो मै कौन दीन रंकों का रंक कि जिस को तीन लोक मे डंका देकर तार दिया और उजागर किया है इस प्रकार कहिकर सुदामा जो है सो मंद मंद क्या सहजे सहजे द्वार से चल पड़ा और कृष्ण भगवान कों हृदय मे सुमर स्मर कर स्त्री और स्त्री की दासियों के सहित सुन्दर भवन मे प्रवेश करता भया॥ ३८॥ चौपाई॥ तव ते हरष शोक गत तेहू॥ लाये निवास करन निज गेहू॥ यद्यपि विप्र इमत प्रभुताई॥ कोटि यग्य फल सदृश पाई॥ तद्यपि दरप विवस नहिं भये ऊ॥ विषय विरक्त विप्र वर रहे ऊ॥ जव लग रह्यो जिव जीयत जगमाहीं॥ भयो अपना तो कवहु दुज नाहीं॥ कृष्ण कमल पद प्रेम सुहावन॥

नित नव सरस होत गयो पावन॥ कीर्तन कथा कृ
ष्ण भगवाना॥ कृष्ण सुमरनि कृष्ण पद गाना॥ कृ
ष्ण विनोद भजन सुखदाई॥ रटत निरंतर कृष्ण दु
जराई॥ मूरति कृष्ण ललित छवि कारी॥ अन्तका
ल निज मानस धारी॥ कृष्ण प्रसाद सहज तजि
काया॥ कृष्ण लोक कहं विप्र सिधाया॥ अस प्र
कार इह चरित सुहावन॥ सं स्मृति कृष्ण भक्ति प्र
द पावन॥ मैं निज अल्प यथा मति गावा॥ मान
स मोद प्रेम सरसावा॥ सरव सुखद इह मंगल मू
ल॥ जे नर सुनहिं श्रवण अनुकूल॥ सोरठा॥
कृष्ण कमल पद नेहु॥ उपजहिं अविरल भक्ति
जुत॥ होहि सुचित संदेहु॥ ताकर कृष्ण प्रसाद सव॥
दोहा॥ दुख दारिद ज्वर सकल सव दुन्द दोष वपु
तास॥ कृष्ण कृपा तें मिटहिं सव सम्पति सुजस
प्रकास॥ ३९॥ टीका॥ तवतें सुदामा शोक और
दुख से रहित होकर वडे आनन्द पूर्वक अपने घर
में निवास करने लगा यद्यपि तिसनें अमित
कि जिसकी मिती नहीं है ऐसी प्रभुता भी पाई त
द्यपि हृदय में रंचक मात्र अभिमान भी नहीं कर
ता भया विषय विकारों से सदैव विरक्त ही रहा जव ल
ग संसार में जीवता रहा कवी अशान्ती नहीं भया
कृष्ण भगवान के चरन कमलों मे नित्य नवीन ही
प्रेम वढता चला गया कृष्ण का ही कीर्तन कृ
ष्ण की ही कथा और कृष्ण का ही सुमरण कृ
ष्ण पदों का ही गायन कृष्ण के ही चरित्र और
कृष्ण का ही निरन्तर करके रटन करता रहा अन्त
काल को कृष्ण भगवान की अति से मनोहर मे
चवत स्याम मूरती जो है सोई हृदय मे धारन
करके कृष्णप्रसाद है के प्रसाद से सहजे

सु॰ (margin) सुदामा चरित्र सटीक पत्र ११५

११२

118

हो शरीर को त्याग कर कृष्ण लोक को हीं प्रापत हो जाता भया इस प्रकार इह बड़ा अद्भुत चरित्र कृष्ण भगवान की सुन्दर भक्ती के देने वाला है सो मैंने बुधि मती अनुरूप हे गुरुदेव स्वामीजी कथन कर दिया है इह कैसा चरित्र है कि हृदय मे प्रेम और आनन्द के देने अधिक करने वाला है सुखों का कारण है और मंगलों का मूल है जो कोई इस चरित्र को प्रीती पूर्वक श्रवण करेगा तिस की कृष्ण भगवान चरने कमलों मे प्रीती और भक्ती अवश्य प्राप्त होवेगी और भगवान की कृपा के प्रसाद से तिस के हृदय के सब संदेह मिट जावेंगे और दुख दारिद्र ज्वर शूल पाप इत्यादि कलेश जो हैं सो सब नास को प्रापत होवेंगे सो संसार मे सुन्दर सुजस का पात्र बना रहेगा ॥ इती श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषा टीकायां सुदामा चरित वरणने नाम सरगः

अभी

के

विशेष,

घरपतीके पास आय जावती भई॥ तव सुदामा तिसको
देखकर भ्रमके वश भया है अरु हृदयमे विचार करता है कि
इह कोई देव पुत्री है कि रमा जो लछमी है तिसने पृथवीपर
अवतार लिया है कि अथवा इह कोई माया मूरती है जो आप
ने सव परिवारको साथ लेकर देव लोकसे आमनी है रूप
धार कर आई है॥ ३७॥ चौपाई॥ अस जव कृस्न मीत
विसमाये॥ तव द्विज पतनि वदन मुसकाये॥ कर गहि
त कर वचन अलाई॥ धन्य धन्य तुव मीत मिताई॥
जास सकल इह सम्पति दीन्यो॥ कृपानाथ निरधन
धनि कीन्यो॥ इह रचना वर भवन सुहावा॥ विसकर
मा निज करन रचावा॥ दानि सिरोमणि कृस्न दयाला॥
मीत तुमार प्रीत जन पाला॥ जनपै कृपानाथ चयन
कारे॥ कृपा दृष्टि निज वरषन हारे॥ सेमृति सदा वि
रद निज जेहू॥ जनपै करन प्रीति अति नेहू॥ मै कृ
पाय तन त्रीये तुमारी॥ इह दासी तुव चरनन सारी॥ प्रा
ण नाथ सव आपन गेहू॥ करि विस्वास तजहु संदे
हू॥ तव द्विज हृदय मरम सव जाना॥ इह सव कृपा
कृस्न भगवाना॥ नाय मनहि मन सीस सुहावन॥
चरन कंज प्रभु मुनि मन भावन॥ अहो मीत भल
कीन मिताई॥ दीन इमत मोहि सुजस वडाई॥ विस्व
नाथ सम कवन उदारा॥ जनन पाल जग जनन
उवारा॥ कवन दीन मै रंकन रंका॥ तास्यो तीन
लोक दै डंका॥ दोहा॥ अस कहि विप्र प्रवीन तव
मंद मंद पग देत॥ सुमरि कृस्न पूवस्यो भवन
त्रीय त्रीय दासि समेत॥ ३८॥ टीका॥ इस प्रकार ज
व भगवानका मीत सुदामा हृदय मै आचरज
को प्रापत भया देखो तव तिसकी मुखसे मुसकाय
कर हाथसे हाथ पकड़ कर वडी प्रीती पूर्वक कहने लगी
कि हे पती धन्य है धन्य है तेरे मीतकी मिताई कि जिसने अपनी
इह महान सम्पती देकर हमारे से निरधनियोंको
धनी किया है देखो इह भवनोंकी रचना जो है सो विस
करमाने सव अपने हाथोंसे करी है हे प्राण पती

११७

मनोहर गाथा जो है सो कथन करता है इह कैसी भी गाथा है कि मद आदि सरव विकारों को हरनी और रसिक जनो के मन मे आनंद भरनी भगवान के चरन कमलों मे नित्य नवीन हीं प्रीती के अधिक करने वाली है कहते हैं कि जब केशी को भगवान ने मार दिया तब कंस जो है चित्त मे बड़ा भय मानता भया ततकाल हीं अक्रूर को पास बुलाय कर और अपना मनोर्थ भली प्रकार समुझाय कर कहने लगा कि हे दानपती तुम मेरे बड़े हितकारी हो ताते अब गोकल मे जावो और तहां धनुष यज्ञ की गाथा चलाय कर जैसे जानो तैसे कृस्न और बलराम इन दोनो को साथ करके ले आवो ऐसे दानपती कंस का कथन सुनकर हृदय मै हरष और शोक के वश हो कर कुछ व्याकुल सा हो जाता भया और मन मै विचारता है कि भगवान के ईहां आवने मे इह अधम तिन को वध करना चहता है सो मै कैसे जायकर तिन को ऐसे अनर्थ के निमित्त ले आऊं परन्तु तहां जाने मे मेरे को एक अत्यंत लाभ होता है और मेर भाग्य भी उदय जाने जाते हैं सो क्या है कि तहां जायकर सुन्दर स्याम और राम दोनो भ्राता जो हैं तिन का दिव्य दरसन नेत्र भर करके पाऊं गा और इह भी मेरे को निश्चय है कि भगवान के शत्रुओं को वध कर मे इह अधम कदापि काल सामर्थ नहीं है दुष्टों के दलन हारे सो ई बल के धाम इस के वध करने सामर्थ हैं इस प्रकार हृदय मे विचार कर सुफलक का पुत्र जो अक्रूर है सो बड़े उतसाह से रथ पर चढकर के बृजपती जो भगवान हैं तिन के घर को चल पड़ता भया कृस्न परमातमा के चरन कमल जो हैं तिन के दरशन की प्रीती और लालसा वाला भया हुआ मारग मै विचार के

रता है कि संसार मे सो मेरे कौन पुन्य हैं कि जिन के प्रभाव करके सुन्दर स्याम मूरती वाले नन्द किशोर को मैं नेत्र भरकर देखूंगा ॥२॥ चौपाई ॥ मुनि जोगिन कहं दुरलभ जोई ॥ परसहुं चरन करन मे सोई ॥ पतित मोलि मणि वषय विकारू ॥ निरत अधम विश्रुत संसारू ॥ अस मोसे दरस भगवाना ॥ अहो बात अचर्ज महाना ॥ आवा गमन जगत जे जाला ॥ मिटहिं मोर दरसत नन्द लाला ॥ हितु मम कहुं कंस सम नाहीं ॥ पठ्यो जासु ल्यावन प्रभु काहीं ॥ इन नयनन मुनिमन मुद भरना ॥ देखि लेहुं प्रभु पंकज चरना ॥ नख दुति देखि जास भगवाना ॥ अंबरीष आदिक सुख माना ॥ विदत चोर भव भीत विहाई ॥ लीन्यो विमल कृस्न पदपाई ॥ दोहा ॥ मैं हुं दृगन अविलोकिहै नख दुति कृपा अगार ॥ विअ जास गोपद सरस तरहुं अगम संसार ॥२॥ टीका ॥ फिर अक्रूर कहता है कि जिन चरनो को मुनी और जोगी जन दुरलभ जान कर जाचते रहते हैं सो चरनो मे आज ~~सहजेहीं~~ जायकर के सहजेहीं दरसूंगा परन्तु मै जो हूं सो एक पतित पुरषो का सिरोमणी अर्थात मुख्य हूं तो ऐसे मेरे जैसे पापी को भगवान का दरसन होना इह बड़ा ही आचर्ज प्रतीत होता है आज नन्दलाल महाराज का दरसन करते ही मेरा आवागमन जगत जेजाल जो है सो सब छूट जावेगा अब मैने जाना है कि कंस के समान मेरा हित कारी कोई नहीं है कि जिसने भगवान ल्यावने के वासते मेरे को भेजा है मै इन नेत्रो करके मुनियो के मनको आनन्द देनेवाले चरन कमलो का भलीप्रकार दरसन कर लेऊंगा जिस भगवान ~~[illegible]~~ के चरन नख की आभा को देख कर के अंबरीष आदिको ने अनन्त सुख माना है और महा चोर संसार के

२२८
118

मय से छूट कर ~~मुक्त~~ तिस प्रमातमा के निरमल पद को प्रापत किया है तैसे अब मै भी तिनँ नखों की आभा को नेत्रो मे देख कर जतन के विना ही गोपद समान संसार समुद्र से पार हो जाऊंगा॥ ३॥ चौपाई॥ जे चतुरानन सिव सेवा॥ अरु कमॅ मुनि प्रीति अमेवा॥ भक्त मोद प्रद जे पद पावन॥ सुमरत जगत जाल विनसावन॥ जे पद गोधन पाछल आई॥ विचरत वृज मे दन सुखदाई॥ चिन्हत कुच कुंकुम वृज वेता॥ परसहुं सो पद आज अनन्ता॥ अमँ कपोल जुगल दुति वरना॥ कुटिल ललित लक्षित सुख सदना॥ आत सुभग सुशुक निदरत नासा॥ हसनि मंद मृदु मोद प्रकासा॥ अंवुज अरुण चंत छवि वरनी॥ चितवनि चारु भक्त मन हरनी॥ कुटिल अलक जहि वदन विराजी॥ मानहुं स्याम भुजग छवि लाजी॥ आज सो वमिल वदन गिरधारी॥ ग्वाल जूथ जुत लेहुं निहारी॥ मेदनि भार हरन हित स्वामी॥ वृज अवत सो जनन अनुगामी॥ तीन भवन कर लावनताई॥ देखपरत तन गोकल राई॥ अत अनूप छवि दृगन निहारी॥ लेहुं धन्य निज जनम विचारी॥ दोहा॥ निकसत मेरे यान कहं देदे दक्षण ऐन॥ सकुन होत निश्चय सफुट सुभग सुमंमल दैन॥ ४॥ फिर अक्रूर कहता है कि जिन चरनो को महादेव ~~और~~ वृहमा लक्षमी और मुनी जनो ने भव हेप्रीती पूर्वक सेवन किया है और जिन चरनो के समरण करने ते भक्त जन परमानन्द को प्रापत होकर जगत जेजाल से छूटते हैं जो चरन सुन्दर गौअन के पीछे वृज भूमी मे विचरते हुये शोभा देते हैं और जो चरन वृजवनता अर्थात वृज की स्त्रीयों के कुचों के ~~कमल~~ कुंकुम से चिन्हत हैं सो ऐसे सर्व सुखों

'ल

'ल

अथ अक्रूर चरित्र

दोहा॥ दानपतीकर अब करहू कथन श्रवण सुखदान॥ कथमहातम ललित तर हृदय हरन मदमान॥ जासु सुनत श्रुति रसिकजन मनप्रमोद सरसाहिं॥ उपजहि अविरल नवलनित प्रीतिचरण हरिमाहिं॥ चौपाई॥ भयो नास केसीकर जबहीं॥ भीत्यो कंस सुनत अस तबहीं॥ लीन तुरन्त बोलि पति दाना॥ तासु मनो रथ सकल बखाना॥ गोकल जाहु दान पति प्यारे॥ तुम हो मोर सज्जन हितकारे॥ माखि धनुष मख गाथ सुधीरा॥ ल्यावहु उभय कृस्न बलवीरा॥ सुनत दान पति कंस उचरना॥ हरष शोक बश भयो विबर ना॥ प्रभु आवन इत मै जिय जाना॥ चाहत हनन अधम अभिमाना॥ मै कस अभिमुख जाय अभागी॥ लावहु तिनहिं जाय वध लागी॥ पै इक मोर भाग्य अधिकाई॥ देखहु राम स्याम तन जाई॥ इह अशक्त तिन कर वध माहीं॥ खल दल दलन दलहिं इहि का हीं॥ हृदय गुनत सुफलक सुत एहू॥ चल्यो जान चढि वृज पति गेहू॥ कृस्न कमल पद प्रीति बढाई॥ कब देखहु नैनन भरि जाई॥ भक्त प्रधान ज्ञा न गुण नीके॥ करत विचार जात पथ जी के॥ सोरठा॥ को सुकृत जग मोर कवन दान मनमान अस जहि प्रभाव चित चोर देखहु नन्द कशोर दृग॥१॥ टीका॥ नाभा दास जी कहते हैं कि हे भगव न अब दानपती जो अक्रूर हे तिसकी भक्ती के महातम की ~~सरव मान मद के हरनेवाली और सुनने~~ से कानोको सुख देने वाली मनोहर गाथा जो है सो कथन करता हूं कैसी गाथा है कि भगवन सम्बन्धी रसिक जनो के हृदय को आनन्द करनी और भगवान के चरन कमलों मै नित्य नवीन प्रीती को अधिक करने

रनन जाई॥ लेहुं दृगन पद रेनु लगाई॥ विधि हर हृदय जवन पद धारी॥ लेहिं ललित मन वांछित सारी॥ सोऊ चरन पंकज गहि पाना॥ होउं धन्य संसार म हाना॥ दोहा॥ दीन दयाल कर दरस दृग सपने हु देखत जोय॥ लागत तीकर नयन नित ग्रति फीको त्रैलोय॥ य॥ टीका॥ फिर अक्रूर कहता है कि भगवान कैसे हैं मरयादा प्रषोतुम संसार मै अपनी मरजादा को पालने वाले जिन्हों ने गौब्रह्मनों की रक्षा करने और पृथवी का भार उतारने के नमित्त जादोवंस मै अवतार लिया है सो भगवान अनेक जिनकी कुछ मिती नहीं है ऐसे अद्भुत और मनोहर चरित्र कर कर संसार मै सुन्दर सुजस जो है सो विसतारन करते हैं फिर तिस सुजस को देवता और मुनी लोग गायन कर कर अतसे आनन्द और सुख को प्रापत करते हैं ऐसे सज्जन तारक और सरव दोष निवारक कृपा निधान भगवान कि जिनकी की सौंदर्यता की छबी पर रमा जो लक्षमी है सो सदैव हीं मोहित रहती है और जिनका तीन लोक मै कोई भी उपमान नहीं है कि भगवान ऐसे हैं सो मै आज तिस प्रमातमा की सुन्दर छबी को इन नेत्रों से लखकर धन्य धन्य होता हूं और आज मेरे को दिन भी बड़े लाभ और सुख के देने वाला भया है जो मै जायकर भगवान के चरन कमलों का दरसन करूंगा फिर कहता है कि जब मै दूर से हीं स्याम और बलराम जी को देखूंगा तब ततकाल रथ के त्याग कर पैरों से धाय कर के दंड समान चरनो पर गिर पड़ूंगा और तिन के चरनो की धूडी जो है सो लेकर सिर पर धारूंगा और नेत्रों मै लगाऊं गा जिन चरनो को धोकर और विधाता हृदय मै धार कर मन वांछित फल को पावते हैं मै भी आज सोई चरन हाथों से परस कर संसार मै धन्य धन्य होता हूं दीनानाथ भगवान का जिस पुरष ने सपने मै भी दरसन पाया है तिस के नेत्रों मै तीन लोक की श्री

शोभा और सुंदरताई जो है सो सब फीकी हो भास
ती है॥५॥ चौपाई॥ वंदि कृष्ण वल चरन सुहाये॥ प्र
णाव है वहुरि स घन समुदाये॥ धन्य धाम वृज त
रुवर धन्या॥ धन्य धन्य मेदनि वृज मन्या॥ त्रास
क्रीतन्त हरन हरि जोई॥ सरणागत विदलन दुख
सोई॥ तीन भवन ईश्वर्य वडाई॥ इन्द्र पूजि जहि
कर वर पाई॥ वलि दै तीन लोक कर जासा॥ वस
कीने प्रभु रमा निवासा॥ वृज तीय रास विलास म
झारा॥ जहि कर परसि लीन सुखभारा॥ जहि क
र की जल जारन सोभा॥ हरत सकल वृज लोग
न लोभा॥ सो कर सीस मोर जन लेखी॥ धरहिं
ध्याल निज कृपा वसेखी॥ यदपि जाहु नृप केस
पठावा॥ वार वार मन कर पछतावा॥ तदपि कवहुं
जन कृपा उमंगा॥ करहिं न वैर वुद्धि मोहि संगा॥
घेट घेट अन्त जामि भगवाना॥ जगत प्रकासिक कृ
पा निधाना॥ दरसित कोटि जनम अघ भारी॥ मोर
प्रसाद मिटहिं गिरधारी॥ दोहा॥ देवकि नन्दन प
दम पद मै गहि हैं जव जाय॥ राखहिं मोरे सीस तव
कर निज कृपा वढाय॥१॥ टीका॥ फिर अक्रूर कहता
है कि कृष्ण भगवान और वलराम जी के पहिले चरन
वन्दना करके फिर ~~सेवक भगवान~~ के संपूर्ण सखेओं को
प्रणाम करूंगा धन्य हैं वृज के सब धाम और धन्य हैं
वृज के सब वृक्ष धन्य धन्य है वृज की सुन्दर भूमी
कि जहां भगवान निवास करते हैं क्रीतन्त जो काल है
तिसका भय दूर करने वाले और शरणागत पुरषों के
सब दोष दारिद्र हरने वाले तिस भगवान के कम
लों वत कोमल हाथ जो हैं तिन की कैसी महिमा है
कि इन्द्र आदिकों जिनकों पूजकर तीन लोक के
ईश्वर्य और वडाई को प्रापत किया है और वली
राजा ने जिन हाथों मे तीन लोक देकर [illegible]रमा

रमन भगवान जो हैं तिनको वश कर लिया है जि
न हाथों को परस करके बृज की स्त्रीओं ने रास
विलास मै अनेक सुख पाये हैं और जिन हाथों की
कमलों कैसी शोभा है और बृज वासी लोगों को सुख
दा आनन्द दायक हैं सो अै से कल्यान के देने वाले
हाथ आज भगवान कृपा करके मेरे सीस पर धरें
गे यद्यपि मै कंस का भेजा हुआ जाता हूं और बार
बार मन मै पछताता भी हूं कि शत्रू का दूत बन कर च
ला हूं तद्यपि मै जानता हूं और मेरे निश्चय है कि भ
गवान ~~अन्तरजामी हैं~~ मेरे साथ वैर बुद्धी कदापि का
ल नहीं करेंगे क्योंकि दीनानाथ अन्तरजामी घट
घट की जानन हारे हैं और सर्व जगत के प्रकाशि
क हैं तिनका दरसन करते हीं मेरे कोटि जनम
के पाप सब मिट जावेंगे और जब मै देवकी नंदन
भगवान के चरन कमलों को जाय करके पकडूंगा
तो दीनबंधू अनुग्रह करके मेरे सिर पर अभय हा
थ धरेंगे ॥ ५६ ॥ चौपाई ॥ तो मोहि मोद अवध नत
नाना ॥ निज सम संसृति गिनहुं न आना ॥ हमरे
सखे जाति कुल देवा ॥ भुजपसारि निज कृपा अ
भेवा ॥ मोहि कहे मिलहिं उतायल धाये ॥ करहिं
मोर इह पावन काये ॥ छूटहिं करम बंध सब मो
रा ॥ कृत्य कृत्य जग होइहु न थोरा ॥ मिलि जुहा
रि पुनि जोरित पाना ॥ छ्वै हैं ठाढ़ पाय सनमा
ना ॥ तब वसुदेव कुंवर अस कैहीं ॥ मोर अक्रू
र कका सुखि अैहीं ॥ तब लेहुं जनम फल पाई ॥
होहिं काम पूरन समुदाई ॥ हरि प्रीय भयो भक्त
नहिं जेहू ॥ दीन्यो वृथा जनम विधि तेहू ॥ जिमि
कै काम विटप छिन जाई ॥ लेत ललित मन वां
छित पाई ॥ तिमि ठाढ़ि हुं जुग जोरित पाना ॥
देखि राम मोहि दीन महाना ॥ भेटहिं मे जु मधुर
मुसक्याते ॥ गहि कर युगल मोर रति राते ॥ अति
सनमान जुक्त जुग वीरा ॥ लै जहिहैं मोहि सदन

केदेनेवाले चरनकमलोंको आज जायकरमै बडे आनन्दपूर्वक परसूंगा फिर जिस नंदलाल महाराजके बडे कोमल सुन्दर शोभावाले दोनो कपोल और सुन्दरहीं सुखकेदेनेवाले कानोमै कुंडल बडी शोभायमान शुकवत मनोहर नासिका और तैसाहीं मुखमैं मंद मंद मधुर मुसक्यान लाली करके युक्त कमल जो है तिसके समान नेत्रोंकी शोभा और तैसीहीं भक्तजनोके मनको हरनेवाली नेत्रोंकी कृपा दृष्टी और स्याम नागकी को लज्जादेनेवाली मुखपर छूटी हुई मनोहर अलकें ऐसे वचित्र ध्यान करके युक्त भगवान जो हैं सो आज तिनको जायकर सख ग्वालवालों के सहित नेत्र भरकर देखूंगा दीनानाथ कैसे हैं किजिन्होने पृथवीकाभार दूरकरनेके वासते वृजमै अवतार लिया है और अपने रूपकी छवी करके कैसे हैं किमानो तीन लोककी शोभा जिनके शरीरमै सब देख पडती है ऐसे छवीके धाम मैं देखकर अपने जनम को धन्य धन्यमानूंगा देखो आज इह कैसे शुभ सगुन होते हैं जो मेरे रथ के दहने से हरन निकस निकस चलेजाते है॥४॥ चौपाई॥ देव मृजाद जगत निजपाला॥ रमा रमन प्रभु दीन दयाला॥ भे अवतरणा वंस जदु माहीं॥ हरन भार हरि मेदनि काहीं॥ करि करि रुचित चरित मन हारू॥ विस्तृत करहिं सुजस संसारू॥ सो शुभ जस प्रभु चरित सुहायन॥ सुर मुनि करहिं मोद जुत गायन॥ अस कृपाय निधि सज्जन तारन॥ तीन लोक कर दूख निवारन॥ रमा मोहत छवि जासु विलोकी॥ प्रभु सम ललित कवन त्रै लोकी॥ सो वचित्र छवि रन दृग ल्याई॥ होहूं धन्य जनम फल पाई॥ आज दिवस मै सुखद विचारहु॥ कृस्न चरन जलजात निहारहु॥ राम स्याम दरसन जव पावहूं॥ तजहु तुरतसिंधन तव धावहु॥ परहु लुकट रथ च

121 मित्र हितू प्यारा अनप्यारा कोई नहीं है जैसी जि
सकी भावना होती है तैसा हीं भाव तिसको दिखा
वते हैं ॥७॥ चौपाई॥ कंसकरन अपकार जदुनसन॥ पूछे
हिं सो मोहि कृष्ण कृपातन॥ देहुं वताय सकल
मै सोई॥ नहिं राखहुं कछु पाछिल गोई॥ अस
प्रकार उर सोचित जाता॥ सुफलक तने
चल्यो मग जाता॥ असुन वाग जव दीन सि छो
डे॥ चल्यो वेगसिंधन अति गाढे॥ धन्यो प्रात म
थुरा तें सोई॥ वृजपहुच्यो जामनि जव होई॥
गोकल निकट गयो जव धीरा॥ लखि छित चर
न चिन्ह जदुवीरा॥ वलसमेत थल थल वृज
धरना॥ दरसत चरन चिन्ह मन हरना॥ सुर अ
ज इंद्र चरन रज जासा॥ धारत निज निज सी
र हुलासा॥ सो पद भूषण भूतल केरे॥ सेवत
जन कहं सुखद घनेरे॥ पुणरीक अंकुस
मन हरना॥ सुचिरेखाजिन पावन चरना॥ वृ
जरजमाहिं सुहावनि चारू॥ प्रभु पद अव
लि भक्त मन हारू॥ देखि दान पति नयनन
सोई॥ हरष विवस प्रेमाकुल होई॥ दोहा॥ जीय
अभिलाखेत हरि दरस सुफलकसुवन प्रवी
न॥ तुरगन कर पथ अपण कछु दृगनन
परत नवीन॥ तनमे रही नतनक सुधी पुल
की वलि सव काय॥ नैननसों छिनछिन विपु
ल प्रेम वार द्रुत जाय॥८॥ टीका॥ फिर अक्रूर
कहता है कि जदुवंसियों के साथ कंसका अपकार
अर्थात अनहित जोहै सो मेरेको कृपा
निधान भगवान पूछेंगे तो मै सव वताय देऊंगा
कुछभी भेद नहीं राखूंगा ऐसे मारग मै सोचता
हुआ सुफलकका पुत्र जोहै सो चला जाता है ज
व घोड़ियों की वाग भलीप्रकार छोडी तव पवनके
वेग समान रथ चलपड़ता भया प्रातकालहीं

मथुराते चलायथा सूरज के अन्त होते वृजमे आय पहुंचा जब गोकल के निकट गिया तहां पृथ्वी मे बलरामकेसहित भगवान के चरनो के सुन्दर चिन्ह देख करतामया के कैसेभी चरन हैं कि जिनकी सप शुतें धूरीको सुर इन्द्र ब्रह्मादि बडे सनमान से सिरपर धारन करते हैं फिर कैसे हैं कि पृथ्वी तल के एक भूषण हैं सेवने से भक्त जनों के हृदय को बडे सुख दायक हैं धुजा अंकुस कमल इतमनोहर रेखा जो हैं इति न्हों करके शोभित हैं ~~और भगवान के चरन चिन्हों की बनी हुई पंक्ती जो हैं सो वृजभूमी पर अपनी सन्मुख हर प्रकारतीहे शोभादेतीहै~~ तैसे ही वृज भूमी पर भगवान के चरन चिन्हों की बनी हूई पंक्ती भक्तज नों के मन को मोहित करती है इस प्रकार देखकर के अक्रूर जो हैं सो हरषमे मगन भगवान के दरसन की अभिलाखा वाला अैसे वेगसे रथ चलावतामया कि पथ अपथ कुछ नहीं देखपडता प्रेम करके व्याकुल हरषसे शरीर प्रफुल्लित और नेत्रोसे जल वहा चला जाता है ॥८॥ चौपाई॥ तजि तुरन्त निज सिंधन काहीं॥ लाग्यो लोटन वृजरज माहीं॥ करत सुवचन प्रेम रस राता॥ इहरज चरन मोर जन त्राता॥ आज धन्य संसार महाना॥ मोहि सम भाग्य वन्त नहिं आना॥ लोटत रजतें उठ्यो नजाई॥ तब सिंधन भृत लीन उठाई॥ सदन नंद तकि सनमुख कोरी॥ देख्यो गोप वास चहुं ओरी॥ अति प्रमोद वश वृजकर शोभा॥ चल्यो जात देखत मन लोभा॥ आगल चौक बीच तब जाई॥ राम स्याम देखे जुग भाई॥ भये रूप तकि अनमिख नैना॥ बोलि न सकत प्रेम वश बैना॥ दोहा॥ अतसे माधुरी मन हरन मूरति जुगल सुहाई॥

122 को नहोत संमृति लुभत देखि दृगन सुखदाई॥
सवैया॥ नी●ल दकूल दुती मकरा कृत कुंडल
कान सजे छबनी की॥ लोयन लाललसैं मनुखंज
न ओकल कंजनकी धजफीकी॥ बीच सखानके
राजितहैं जदुराज छरी कर कंचिनहीं की॥ दूधदु
हावतहैं जगनाथ सो हाथ धरे दुहनी प्रीयजीकी॥
लुभत सारद वारद सावनसे तनस्याम सुजान
अजाना॥ आनन इन्दु लसैं परिपूरण पांति सुदं
तकी कांती महांना॥ वछ विसाल बनी बन
माल कटीकल किंकनि जाल सजाना॥ दछि
न ओत ठढे बलराम औ वाम खडे खलखय
भगवाना॥ जहिं धुज अंकुस लौं पदचिन्ह सों
अंकितहै बृजकी धरनी॥ निजदायासों ग्वाल
सुची करिकै करिहैं कल कीरति नहिं भरनी॥
जगनाथसों कौन उदार इतो अस दीन उधार
नकी कर●नी॥ भव मेटित वेर न लावत जे
जन आवत ते चरनी सरनी॥ मुखमै मुसक्यान
मनोहर मंजुल दीह दया दृग पूरन जासा॥
चाल मतंगजकी कल कोमल मूरति मान
मनोज विनासा॥ हीरन औ मुकताहल जाल
हृदय बनमाल रसाल विकासा॥ मानो भूमी
कै भार उतारन कहै अवतार भये विथ विस्व
प्रकासा॥ दोहा॥ असप्रकार अक्रूर दृग हरि
छबि देखि अपार॥ भयो विथत गत धीर ह्वै मगन
मोद निधवार॥ ~~●●~~ ९॥ टीका॥ तबअक्रूर प्रेमा
कुल भया हुआ तुरतहीं रथसे उतर कर बृजभू
मी की धूरी ~~जो है तिस~~ मे लोटने लगा पड़ा और प्रेम
रस के भीना हुआ ~~बोला~~ वचन कर कहता है कि इह रज
कर जो धूरी है सो मेरे दीनपाल के चरनों की है जो है सो मेआ
ज संसार मे धन्य हूं और धन्य मेरे भाग्य हैं ऐसे

सुधीर॥ दोहा॥ होहुं चरन लगि जोरि कर जब समीप बैठाउं॥ तब किहें तब मोहि तन तुरत प्रभु करुणा निज गाउं॥ मित्र सत्रु प्रीय अप्रीय प्रभु कहे नाहिंन कोय॥ पै जस जहिकर भावना तस तहि दरसन होय॥१॥ टीका॥ अक्रूर कहता है कि जब इस प्रकार भगवान मेरे सिर पर हाथ धरेंगे तो मेरे को ऐसा आनन्द प्रापत होवेगा कि जिसकी कोई अवधी नहीं है और मै संसार मे अपने समान ~~और किसी~~ दूसरे को नहीं गिनूंगा मेरे सखे सुजाती और कुलदेव जब भुजा भर कर मेरे को मिलेंगे तब इह मेरा शरीर जो है सो ततकाल पवित्र हो जावेगा और मेरा करम बंध भी सब दूर जावेगा मैं कृती रूप हो जाऊंगा फिर मिलकरके और प्रणाम करके बड़ा सनमान पायकर सनमुख स्थित हो जाऊंगा तब वसुदेव के कुमार भगवान जो हैं सो मेरे को ऐसा कहेंगे कि हे हमारे अक्रूर चचा राजी तो हो इतने भगवान के कहिने से मै अपने जनम को सफल मानूंगा और जानूंगा कि मेरे मन के मनोरथ सब पूरण भये हैं फिर कहता है कि जिस पुरष को भगवान के चरनो की प्रीती नहीं और भगवान का प्यारा भक्त नहीं भया है तिसको संसार मै विधाता ने वृथाहीं जनम दिया है जैसे तो तैसे जैसे कोई कलप वृक्ष के समीप जाय कर अपने मन वाञ्छित फल को प्रापत करता है तैसे दोनो हाथ जोड़ कर भगवान के सनमुख स्थित रहेगा तब मेरे को दीन जान कर कृपानिधान अवश्य मलेंगे और राम स्याम दोनो भ्राता मुख से मंद मंद मुसकावते हुये प्रीती पूर्वक मेरा हाथ पकड़ कर सनमान से घर को ले जावेंगे तहां जब मै चरनो को वन्दन करके हाथ जोड़ कर सनमुख स्थित होऊंगा तब दीन बंधू अपनी कृपा दृष्टी से मेरी और देखेंगे भगवान के सत्र

मे

ने वाले भगवान विराजमान है और जिन चरनोंकी
अंकुस धुजा कमल आदि रेखों करके महिमा है सो
तिन चरनोंसे भगवान बृजकी भूमीको चिन्हत और
पवित्र करके अपनी मायासे सुन्दर कीरती जो है सो
पृथवीपर जहां तहां विस्तारन करते है इह जगत
नाथ धन्य हैं और बडे दीनपाल हैं इनके समान दी
नोंके उधारनेमे और कौन असा उदार है जो कोई
इनके चरनोकी शरन लेता है तिसको संसारके
भयसे ततकालहीं वचाय लेते हैं फिर कैसे भगवा
न हैं कि जिनके मुखमे वडा सुन्दर मधुर मुस्कान सं
है और अतसेदी ची है जिनकी दयादृष्टी और
मातंग जो हसती है तिसके समान जिनकी सूलम
गती अर्थात चलना कामदेवके मानको हरनेवा
ली जिनकी मनोहर मूरती है वडे अमोलक हीरे
और मुक्ता ~~[illegible]~~ ओंकी जिनके ~~की जिनके~~ हृदयमे सुन्दर
माला असे सरव अलंकारों करके भूषित हैं श्याम
और घन स्याम ~~[illegible]~~ मानो भूमीका भार उ
तारनेके अवतार धारते ~~[illegible]~~ भये हैं इस प्रकार अक्रूर
जो है सो अपार छवीको देखकर धीरजसे
भगवानकी
रहित और एकंत होकर आनन्द रूपी सरोवरमे
मगन हो जाता भया॥ ९॥ चौपाई॥ पसो कूदि
रथतें ततकाला॥ धावा सनमुख दीनदयाला॥
चरन सरोज कृष्ण बलवीरा॥ गिरो दंडवत वि
कल अधीरा॥ आनंद वार धार दृगछाये॥ प्रेम
मगन तन दसा भुलाये॥ सनमुख देखि जुगल
निधि दाया॥ पुलकावली प्रकट भई काया॥ गदगद
गिरा भई अटपाटी॥ दसा प्रेम कछु जाय न राटी॥
असत अक्रूरहिं जदुपति देखी॥ ठाढय लीन निज
कृपा वसेखी॥ भरि भरि भुजा मिले घन स्यामा॥
जाय न प्रेम प्रमोद वखाना॥ वहुरि हरषवश प्रेम

सरवचित्तके चकमाहक

अवायें॥ दौरि मिले वलराम सुहाये॥ पुनि कोल
कर कमलन सों गहीं॥ लेगमने प्रभु सदन सुतहीं॥
बहुरि जुगल बीरन सतकारो॥ कनक प्रयंक दी
न बैठारो॥ लागे विजन करन वलरामा॥ हे
रहिं कृपा दृष्टि घन स्यामा॥ पुनि प्रभु जानि पेम
प्रेम मूरा॥ चापन लगे चरन अक्रूरा॥ दोहा॥
बहुरि चरन तहि प्रेम जुत शिरदेव सुरि नीर॥
लागे प्रक्षालन करन कर न कमल जदुवीर॥
१०॥ टीका॥ तब अक्रूर जो है सो भगवान की छवी मे
मोहित भया हुआ ततकाल रथ को त्याग कर तिन को
धावता भया जाय करके राम और घन स्याम के च
रन कमलों पर दंडवत गिर पड़ा और आनन्द रूपी
जल जो है सो नेत्रों मे भरा हुआ प्रेम करके व्याकुल
तन शरीर से अचेत दया की निधी दोनो भ्राता जो हैं ति
नको सनमुख देख कर शरीर के रोमांच सब खड़े
हो जाते भये और वानी भी गदगद अटपटी हो गई
कुछ निकलती है कुछ नहीं निकलती इस प्रकार
अक्रूर की दशा देख कर भगवान अनुग्रह से
तुरत हीं उठाय लेते भये और भुजा भरभर के
के मिलने लगे तिस समय का प्रेम और सुख क
हा नहीं जाता है तिसते उपरंत वलराम जो हैं
सो वड़ी प्रीती पूर्वक मिलते भये फिर दोनो भ्राता
वरे सनमान से तिसको घर मे लेगये और तहां
कंचिन के पलंग पर विठाय कर वलराम जी पंखा
करने लगे और भगवान कृपा दृष्टी से तिसके मुख
की ओर देख देख प्रसन्न होते हैं फिर भगवान
मारग के आवने का श्रम विचार करके अक्रूर
के चरनो को चापने लगे तिसतें उपरांत वड़ी
प्रीती से भगवान गंगा जल डारकर मिल के चर
नों को अपने हाथों से धोवने लगे॥ १०॥ चौपाई॥

कें सनमुख

पुनि प्रभु कहिस वचन सनमाना॥ पूछेउ कुसल तुव
कका सुजाना॥ ते इकटक चितवत प्रभु काहीं॥
प्रेम विकल कछु उचरत नाहीं॥ वहुरि कह्यो प्र
भु कका प्रवीना॥ तुमरे तोम क्षुधा अति कीना॥ तोते
अपनो भवन सुहावा॥ जानि करहु भोजिन मन भा
वा॥ अस कहि प्रभु निज करन लयाये॥ विंजन वि
विध रुचिर मनभाये॥ कहि कहि वदन नाम हेपूरा॥
दीन जिमाय मुदित अक्रूरा॥ पुनि अचवाय आ
चमन तासा॥ रतन प्रयंक दीन कल वासा॥ तव दीन्यो
वलराम सुधीरा॥ तात तात कहि पानन वीरा॥ पुनि
पहिराई सुमन सुचि माला॥ ~~कहो~~ कह्यो हरष जु
त वचन रसाला॥ कंस महीप दयागत ऐसे॥ जीव
हु तास निकर तुम कैसे॥ जिमि अज निकर अमले
विकेई॥ नहिन भरोस जीयन कछु तेई॥ हते सु
वन भगनी निज जासा॥ देवकि यद्यपि कीन अजासा॥
पै नहिं मिट्यो अधम अभिमानी॥ वारवार देवकि
विलपानी॥ दोहा॥ लागी दया ननतनक तहि दु
सृ सुभाव महान॥ तुम ताके पुर वसत हो कका
कवन कल्यान॥ अस भाष्यो वलराम जव तव
अक्रूर प्रवीन॥ भये पंथ श्रम विगत तव हरष मो
द मन लीन॥ २२॥ टीका॥ फिर भगवान् कहते हैं कि
हे ~~चचा~~ तुम प्रवीन चचा तुम प्रसन्न हो तो हे जव
दीनानाथने इस प्रकार कुसल पूछी तव अक्रूर ने
कुछ उत्तर नहीं दिया नेत्रोंको इकटक जोड़कर भ
गवानके रूपको देखरहा है तो फिर भगवान कह
ते हैं कि हे चचा तुमको क्षुधा ने कलेश दिया
होगा तो ते अपना घर जान कर अव भोजन पा
इये जो ऐसे कहिकरके भगवान नानाप्रका
र के विंजन जो हैं सो आप ने हाथों से ल्याय क
र के और सव का भिन्न भिन्न नाम सुनाय कर

वंउसनमानसे

कहि कर तिस धूरी से और ताहू ग्रा तिस धूरी से उठ
नहीं सकता तब भूत जो भार थी है तिस
ने उठाय कर रथ मे विठाय लिया तहां जाते जाते
नन्द का घर और गोपों के गृह और मन के मो
हित करने वाली बृज की शोभा जो है सो सब देखता भया
फिर आगे अत से मनोहर एक चौक जो देखे
पडा तिस के बीच राम स्याम दोनो भ्राता स्थित भये हुये
देखकर दीन सुख दाता को देखकर अक्रूर के नेत्र विरा
जमान थे तिन के रूप की छवी को देख कर अक्रूर के
नेत्र जो हैं सो टकटके लग जाते भये और प्रेम कर
के ऐसा अचेत हो गया कि मुख मे बोलने की सामर्थ
नहीं रही राम और घन स्याम की ऐसी माधुरी और
मनोहर मूरती थी कि जिस को देख कर कौन मोहित
नहीं हो जाता था फिर कैसी उपमा थी कि नील औ
र पीत वरण के वस्त्र जिन के और कानो मे वडी आ
भा वाले मकराकृत कुंडल खंजन जो ममोला
कंज जो कमल तिन के समान सुन्दर नेत्रों की सुन्दर
शोभा लाली भये चंचल नेत्र खंजन जो ममोला
कंज जो कमल तिन को मल आदेने वाले लाली भये
चंचल नेत्र और सखा समूह के बीच विराजमान
हाथ मे लीये हुये कंचिन छिटी दूध दुहावने
की इच्छा से हाथ मे पकडी हुई है जिन के दूहनी
और सावन के सरद बादर समान है जिन के शरीर
का रंग और ले विये सुंदर भुजा चन्द्रमा वत
मुख की मनोहर शोभा और बडी उज्वल आ
भा वाली दांतो की पंकती वडा विशाल हृदय
और कि जिस शोभा देती है सुन्दर तुलसी की माला औ
र कटी जो कमर है तिस मे सजी हुई है मनोहर किं
कनी अर्थात सुन्दर तगडी दहनी ओर बलराम
जी ठाडे हुये हैं और वाम ओर खेलों का खय कर

कवन तुच्छ मति या सो॥ रसिक जनन आधार र
साल॥ गोपी बिरहे कठिन जग जाल॥ गोपिन
सदृश को संसार॥ नाहिन जदु नन्दन कहे प्या
रा॥ तिन कहे पति पितु सुत तन जोई॥ अैहिन
जदुपति सम प्रीय कोई॥ दोहा॥ सेस जीह सारद
सुमती लेखक गजमुख मेख॥ मसि समुद्र गो
पी बिरहे तौ न सकहि कछु लेख॥ १२॥ टीका॥ त
ब अक्रूर जो है सो राम और घन स्याम को कंस का
कथन सब सुनाय देता भया तिस को सुनकर प्रा
त काल होते ही सुन्दर रथ जो है सो मंगवाय लेते
भये और तिस पर राम स्याम अक्रूर तीनो बैठ
कर मथुरा को चल पड़ते भये जब भगवान ने [illegible]
[illegible] प्रस्थान किया तब बृज मे बिरहे का
समुद्र जो है सो उमड़ता भया और बृज की बाला
मानो सब डूबने लगी सो पूरी बृज मे हाहाकार
पड़ गया शरीर मे किसी को भी धीरज नहीं रहा प्रे
म के आंसू जो हैं सो नेत्रों से झड़ झड़ कर पड़ने ल
गे बिरहे बिखाद कहा नहीं जाता सब कोई अैसे
कहता है कि हे अक्रूर तुम कैसे निरदय हो और तु
मने यह क्या किया है कि जो कृष्ण प्रमात्मा का [illegible]
[illegible] वियोग हम को दिया है इस प्रकार गोपियों का
बिरहे जो है सो [illegible] समुद्र
वत अपार है तिस के कथन करने को कोई सामर्थ नहीं
है अपनी अपनी बुद्धी के अनुसार सूरदास आ
दि [illegible] कवी और पंडित जनो ने गायन कि
या है तिस को अन्त तिन को भी नहीं आया और
कौन कहि सकता है यह गोपियों का बिरहे जो है सो
रसिक जनो का एक आधार है [illegible] जदुनाथ को गो
पियों के समान संसार मे और कोई प्यारा न
हीं है और गोपियों को जदुनाथ के समान

पती पिता पुत्र और अपना शरीर भी प्यारा नही
है सेसरूपी ~~जिन्हके सारदा बुधी~~ जीभ और
सारदा बुद्धी समुद्र की मसी अर्थात सियाही
और लिखने हैं गणपती तोभी इन गोपियों
का विरहे विजोग लिखा नहीं जा सकता है ॥ २२ ॥ चौपाई ॥
सुफलक सुत जुग भ्रातन काहैं ॥ लेत चल्यो मथुरा
रथमाहीं ॥ राम स्याम छवि दृगन निहारी ॥ मगन मो
द तन दसा विसारी ॥ नन्द नगर तें चले सिधाई ॥ अर्थ
अरुन पहुंचे तब आई ॥ जमुना तट अवेर जीय जा
नी ॥ लग्यो करन मज्जन सुखमानी ॥ तब अस जीय
विचार प्रभु कीना ॥ इन लोटन बृज में दनि कीना ॥
मन बच करम दास इहमोरा ॥ प्रेम नेम कछु हृद
य न थोरा ॥ तोते बृजरज प्रकट प्रभाऊ ॥ देहुं आ जे
निज जनहिं दिखाऊ ॥ जब अक्रूर जमुना जल
जाई ॥ मज्जन लग्यो प्रेम सरसाई ॥ तब तहि
निज कौतुक भगवाना ॥ दीन तुरत वैकुंठ वखाना ॥
तहें निज सकल विभूति सुहाई ॥ दीन दिखाय भा
गवत गाई ॥ तब ह्वै पुलक गात ~~[illegible]~~ पति
दाना ॥ कीन कृष्ण कल अस्तुति नाना ॥ जल तें
बहिर बहुरि निकसायो ॥ रमा रमन पद सीस निवा
यो ॥ प्रभु कौतुक अद्भुत जीय जानी ॥ बहुरि
बहुरि वंदित पग पानी ॥ दोहा ॥ बार बार लाग्यो
करन विनय जुगल कर जोर ॥ नाथ धन्य
धरनी कियो मोहि अधम सिर मोर ॥ २३ ॥ टीका ॥
तब सुफलक का पुत्र अक्रूर जो है सो राम स्याम
दोनो भ्राता को रथ में विठाय कर मथुरा को ले जा
ता भया और तिनकी छवी को देख देख वलिहारे
होता है नन्द के नगर से जो चले तो सूरज के अ
स्त होते को तहां आय पहुंचे कुछ अवेर जान
कर जमुना के किनारे स्नान करने लगे तब भग

ᵛ बडे सुखपूर्वक

वान ने हृदय में विचार किया कि इस ने वृजभूमी में लोटन किया है और मन बचन काया कर के मेरा दृढ भक्त है इस के हृदय में प्रेम नेम कुछ थोड़ा नहीं है ताते वृजकी रज अर्थात वृजकी धूड़ जो है तिस का प्रभाव आज इस अप में को दिखाता हूं इतने में जब अक्रूर बड़े आनन्द से जमुना में सनान करने लगा तब तिसको भगवान ने अपने कौतुक से तुरत बैकुंठ में पहुंचाय दिया तहां तिस को अपनी संपूर्ण विभूती कि जो श्री भागवत में गाई गायँकी हई है सो भली प्रकार दिखाय देते भये ॥ ऐसे भगवानकी महिमा देख कर अक्रूर जो है सो हरष कर के प्रफुल्लित भया हूआ नाना प्रकार भगवानकी अस्तुती करने लगा फिर जब जमुना के जल से बाहिर निकला तो रमारमन जो लक्ष्मी के पती नारायण हैं तिनके चरनो पर सीस नावता भया भगवान के अद्भुत कौतुक को विचार कर बार बार बंदना करता है फिर हाथ जोड़ कर बड़ी नम्र वानी से बिनती करने लगा कि हे दीनानाथ मैं तो अधमो विखै ~~सिरमोरथा~~ प्रथम गिना हूआ था परन्तु आपने ऐसी अनुग्रह करी कि पृथवी पर धन्य धन्य कर दिया ॥ १२ ॥ चौपाई ॥ अस कहि जुगभ्रातन सुख रूढे ॥ लावा पुर पुनि यान अरूढे ॥ अति पुनीत मुख गिरा उचारी ॥ प्रभु निज चरन सदन जनधारी ॥ चरन बार सों कुल परिवारा ॥ आज करहु पावन प्रभु सारा ॥ कहि कृस्न जु तस प्रीति सनेहू ॥ मैं ऐहों सज्जन तुव गेहू ॥ ककामोर तुव प्रान न प्यारे ॥ सब विधि सुखद रुचिर हितकारे ॥ सत्य जानि प्रभु बरनन काहीं ॥ चल्यो दान पति निज ग्रह माहीं ॥ नव मधु

आनंदपूर्वक

अक्रूरको जिमाय देते भये फिर आचमन कराय
कर बड़े सतकारसे रतनोसें जड़े हूये पलंग पर बिठा
य देते भये तब बलरामजीने मुख शुद्धी के वास्ते तात
तात कहिकर पान का बीड़ा जो है सो लाय दिया और पु
ष्पोंकी सुन्दर माल हृदय मे पहिराय दई फिर ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ बड़े हरषसें कहने लगे कि हे तात कंस राजा जो
है सो तो अतसे निरदय और बड़ा कठोर है तुम तिस
के पास कैसे जीवते हो जैसे कसाई के पास बकरा
होवे तिसके जीने का क्या भरोसा है ~~कंस कैसा मी~~
~~है कि जिसने अपनी भगनी अर्थात भैनके पुत्र मा~~
~~र दिये यद्यपि देवकी माताने अनेक यतन भी किये~~
~~तो भी कंस~~ देखो देवकीने यद्यपि अनेकहीं यतन
किये हैं तद्यपि तिस दुष्ट ने भगनी अर्थात भैन के ना
ते को भी नहीं माना तिसके पुत्रों को मार हीं दिया
मै जानता हूं सो तो अतसे दुष्ट सुभाव वाला और म
हां मंद है तुम तिस अधम के पुर मे बसते हो तुमारे
को कैसे कल्यान होती होगी जब इस प्रकार बल
रामजीने कहा तब अक्रूर सुनकर मारग के श्रमसे
नवृत्य होकर परम आनन्द मे मगन हो जाता भया॥
२२॥ चौपाई॥ राम स्याम सो पुनि पति दाना॥ कह्यो
कंस कर सकल बखाना॥ उदय प्रभात बोलि र
थ लीन्यो॥ बैठि चले तहिं पर तब तीन्यो॥ उमगे
प्रेमसिंधु तहि काला॥ बूड़िन लगी सकल बृजबा
ला॥ हाहाकार पस्यो बृज माहीं॥ रही सरीर धीर क
छु नाहीं॥ झर झर परत प्रेम असुआना॥ बिरहे
बिखाद न जाय बखाना॥ हे अक्रूर कहत का कीना॥
निरदय बिरहे कृष्न कत दीना॥ गोपि बिजोग सिं
धु गत पारा॥ को सामर्थ कथन से सारा॥ निज नि
ज मति अनुसार सुहावा॥ सूरदास कवि का बि
द गावा॥ नेति नेति करि अन्त पुकारो॥ तोसे

अब अनुग्रह करके मेरे घरमे चरन धारिये और चर
न कमलोंके जलसे मेरे घर और परिवारको पवित्र क
रिये तब भगवान कहने लगे कि हे सज्जन सुनेहो मै अ
वस्य तेरे घरमे चलूंगा क्योंकि तुम मेरे अतसे प्रारा
प्यारे और सुखदायक हितकारी हो ऐसे भगवा
नके कथनको सत्य जानकर अक्रूर जोहै सो चरनो
पर वारवार प्रनाम करके अपने घरको चला जाता
भया तब मधुपुरी जो मथुरा है तिसके निकट बडे
सुखदायक और मनोहर अमराई अर्थात आंवोका
वाग देखकर भगवान तहां वैठ जाते भये तब नंद
लाल महाराजका आगमन सुनकर नन्द आदिक
सब गोप दरसन करनेको चले आये
जब सूरजके असत होनेका समय भया तब भ
गवान बलराम और ग्वाल वालों के समूह सहित पु
रके देखनेके वासते चले आवते
भये जब मुनिजनोके मनको मोहित करनेवाले
राम स्याम दोनो भ्राताने पुरमै प्रवेश किया तब ति
नके आगमनका संपूर्ण नगरमै शोर पड जाता
भया नगर के नर और नारी जोहैं सो सब खान
पान और शरीर की दशा विसारे हूये दरसन
करनेको धाय आवते भये सिरका वस्त्र गलेमै और
गलेका सिरमै पहिरकर राम स्याम की कोमल माधु
री मूरती देखनेको सब कोई चले आवता भया जहां ज
हां जहां दोनो भ्राता जातेहैं तहां तहां स्त्रीयोंके ने
त्र लोभी भये हूये दरसनको ललचावतेहैं और
परस्पर कहतीहैं कि हे सखी इह स्या
मल और गौर शरीर अतसे सलोने मनको ह
रनेवाले मानो कोटि कामदेवकी छबीको
लज्जा देतेहैं फिर कैसेहैं कि नेत्रों की दृष्टी
से चित्तके चुरावतेहैं और अमृतके समान मधुर

हमारे + चेरकलनायकर

वैन बोल बोले करें हृदयको प्रेम के वश करते जाते हैं

आज वृजकी स्त्रीयों के धन्य भाग्य हैं कि जिनके नेत्रों

के सनमुख इन चौदहों भवनेको आनन्द देने वाले प्रतक्ष

हैं देखो मोहन भगवानने कैसा मोहन मंत्र किया है कि वृ

जकी संपूर्ण बाला मोहित होकर अचेत होगई है एक

~~के ऊपर एक व्याकुल होकर पड़ती जाती है~~ प्रीती ऐसी

गाढी सरस भई है कि देखे विना ~~हृदय~~ चित्तको चैन नहीं

आवता एकके ऊपर एक व्याकुल होकर पड़ती जा

ती है मानो कामदेव धकेलता है आ टिकने नहीं दे

ता है इस प्रकार वृजकी सब नारी जो है सो राम

स्याम दोनो भ्राताकी मनोहर मूरती को देख देख मन

मे रीजकर मोहित हो जाती भई तब तहां मारगमे

केसका एक रजक जो धोबी है सो वस्त्रोंका भार

लिये जाता था तिसको देखकर भगवान इस प्रकार

पूछते हैं सो आगे कथन होता है ॥ २४ ॥ चौपाई ॥

को तुम रजक कवन कर अहैं ॥ हम कहे एक वसन क

छु दैहौ ॥ कहिस रजिक अस वचन अधीरा ॥ रंगवा

र मति अधम अहीरा ॥ मांगत पट निज वदन न

देखी ॥ भयो मोहि अरु आज बसेखी ॥ इहकस कुदु गो

प कर लायक ॥ वसन अमोल केस नरनायक ॥ सु

नि अस अधम वचन नरनाथा ॥ अस प्रहारि काटो

तहि माथा ॥ दीना ग्वाल वसन सब लीने ॥ कछुक भ

क्त सखन कहे कीने ॥ तबहि इक धरम मति नामा ॥ वा

इक भक्त कृस्न घनस्यामा ॥ जुगकीरन कहे आवत

देखे ॥ उद्यो जानि निज जाति बसेखे ॥ नमत पग्यो

चरन हरषाता ॥ प्रेम वार नयनन ढुरि जाता ॥ मोहि

किंकर निज जानि अमेवा ॥ कहिये दीन ग्वाल कछु

सेवा ॥ सो देऊं तब वसन हमारे ॥ कृपासिंधु अस

वचन उचारे ॥ वाइक सांजि दिये पट ताहीं ॥ अमय

कीन तहि सुर नर नाहीं ॥ निज करुणा ते विस्व प्रकासी ॥

Margin notes: श्रीकृष्ण सर्वेश्वर ... ; और ; श्री

सब विधि कीन कृतार्थ तासु ॥ दोहा ॥ सम्पति बल
विद्या विमल सुमति सुजस सुख चारु ॥ तासु देत
कृपालय तन कीन मुक्त संसारु ॥ २५ ॥ टीका ॥ भग
वान पूछते है कि तू कौन और किसका धोबी है हम
वस्त्र हमको भी कुछ देवो तब सो मूरख धोबी
निरसंक होकर कहने लगा रे गवार अहीर तू अ
पने की ओर देखकर वस्त्र तर नहीं मांगता है ~~इस~~
~~मेरे को बड़ा आवजे लगाता है~~ ~~इस~~ र तुम अमोल व
स्त्र राजा के सके हैं क्या मूढ क्षुद्र गोपों की ला
यक है इस प्रकार तिस अधम धोबी के मुख से व
चन सुन कर भगवान बड़े कोप मे हो जाते भये और
ततकाल खड्ग का प्रहार देकर तिसका सीस
जो है सो काट डाला और व स्त्र सब लेकर
सखा जनो को बांट देते भये तब एक धरम मती
नाम करके ~~एक~~ बारक अर्थात दरजी भगवान का
भक्त था सो राम स्याम दोनो भ्राता को आवते
देख कर बड़ी प्रीती भक्ती उठकर नेत्रों मे प्रेम जल
भरे हुये नम्र गतीसे चरनो पर ~~सिर~~ सीस धर देता
भया और कहने लगा कि हे दीनदयाल मैं आप
के चरनो का दास हूं मेरे दीन के लायक जो सेवा हो
सो कहि दीजिये तब भगवान कहने लगे कि हे
भक्त और सेवा तो कुछ नहीं है परन्तु हमा
रे वस्त्र ~~सीज कर~~ देवो ॥ तिसने भगवान की आ
ज्ञा पायकर ततकाल ही वस्त्रों को ~~साध सिय~~
~~सीज कर~~ दिया तब भगवान कृपानिधान अ
तसे प्रसन्न होकर तिसको संसार मे ~~अभय और~~
~~कृतार्थ कर देते भये~~ धन सम्पती बल वि
द्या सुख और सुजस इत्यादि सब देक
र अभय और कृतार्थ रूप कर देते भये ॥ २५ ॥

अब
ते
सजाय

पुरी निकट सुखदाई॥ बैठे प्रभु विलोकि अमराई॥ तहि आगमन नंदादिक पाये॥ दरसन करन हे रथजुत आये॥ तब प्रभु ग्वाल बाल जुत रामा॥ आये अहन पुर देखन कामा॥ कीन प्रवेस रुचिर पुर आई॥ जहि मुनि जन मन लेखि लुभाई॥ नगर सोर चहुं ओर बढैया॥ आये राम कृस्न जुग भैया॥ खान पान तन दसा बिसारी॥ देखन आई नगर नर नारी॥ दोहा॥ धारि बसन बप्रीत बपु चली दौरि गत धीर॥ मृदु मूरति देखन दृगन राम कृस्न जुग बीर॥ कवित्त॥ जित जित जात जग जीवन जुगुम भ्रात तित तित तीये दरसात अनुरात नैन॥ आली ए तो स्यामल सिलोने ओ गवर गात मानस हरात निदरात छवि कोटि मैन॥ चितवनि चारु सों चुरावत है चित चोप लावत ललन ओप अमि ललितात बैन॥ भूरी भाग आज बृज कर नर नारिन के जांके दृग गोचर प्रमोद सात सात देन॥ मोहनने कीनो निज रूप के मोहन मानो मोही ~~कृस्न~~ सबं बनता सु तन मो रहीं न चेत॥ एक टक चित्र सी विलोकत सकल ठाढी बाढी गाढी प्रीत पल कल नबुं षलेत॥ एक के ऊपर एक व्याकुल परत जात मारत अचात मार टिके नहि कन देत॥ रीझ रीझ वारी साबृज "मेदनी की नारी राम गिरधारी दोऊ देख के कृपा निकेत॥ दोहा॥ तहां रजक इक कंस कर लिये बसन मग जात॥ तहि प्रछ्यो जदुबीर अस वचन बदन मुसक्यात॥ १४॥ टीका॥ इस प्रकार अक्रूर ~~मनमान~~ बिनती करके वडे सुख पूर्वक रथपर बिठाये हूये दोनों भ्राता को अपने पुरमे ले आवता भया फिर कोमल बानीसे प्रार्थना करने लगा ~~अहल~~ किहे नाथ

और सनमान से पवित्र आसन पर विठाय कर अ
पने भागों को मान ता भया कि धन्य हैं मेरे भा
ग जो जिस के घर मै सर्व चरा चर के पालक राम
और घन स्याम दोनो भ्राता आये हैं ऐसे कहि कर
अर्घ पाद आदि से पूजन किया और धूप दीप नैवे
द लगाय कर ~~भगवान के शरीर को चंदन लेपन क~~
~~रता भया~~ दीनानाथ के अंगों को चंदन का लेपन देता
भया जैसे तिस ने भगवान का पूजन किया ते
से ही सब सखो जन का भी सनमान करता भया फिर
हाथ जोड कर विनती करने लगा कि हे दीना
नाथ आज आपने मेरा संपूर्ण परिवार पवित्र क
र दिया है ~~और~~ अब मैने अपना जीवना और जन
मं सफल जाना है और मेरा धन धाम भी सफल भ
या है हे जगत पती आज तुमारे प्रसाद करके मेरे पि
तर देव ऋषी जो हैं सो तिन का भी उद्धार हो गया है
तिस पुरष के वडे उदय भाग्य हैं और जगत मे धन्य
है तिस का जनम कि जिस के घर मै संसार का भय
दूर करने वाले देव तुम चरन कमल अपने धरन
करो॥ २४॥ चौपाई॥ माली कर सुनि वचन सुहाये॥
रहे मोन संसृति सुख दाये॥ तव माली प्रभु जिम क
र पाई॥ लखत विपुल निज भाग वडाई॥ कोम
ल सुमन सुगंधित नीकी॥ विरचत माल ललित
प्रीतिमय जीकी॥ राम स्याम कल कंठ सजाई॥
औरहु सखन दीन पहिराई॥ कृष्ण विलोकि प्रीति
निज जनकी॥ माग हु कहि स भक्त रुचि मन की॥
नव पद के प्रहत पद चारु॥ कै विधि पद सरित धर
पद मारु॥ सेह भक्त नहीं दुरलभ तोरे॥ अवहिं
देहु कछु वेर न मोरे॥ माली जोरि जुगल कर भा
खो॥ रनकर सुनि ननाथ अभिलाखो॥ निज पद
भक्ति संत सिव कारी॥ रह मोहि देहु जनन सुख

दाई॥ प्रभुपद भक्ति सरस जग आना॥ सेव
सेष पद नाहिन जाना॥ दीननाथ तहि देखि अका
मा॥ निज पद भक्ति दीन अभिरामा॥ मानहु सम्पति
अचल सुहाई॥ दीनी तासु घाल जदुराई॥ लोकप्र
लोक सुजस सुख हूरा॥ दीन्यो तासु दया निधि पूरा॥
हरि सम को दाता जग माहीं॥ एक देत शत गुण प्र
कटै हीं॥ दोहा॥ तब बल संजुत सखन हरि मंदमंद
मुसक्याय॥ चले कलित कूवरि दृगन परी दृष्टि प्र
भु आय॥१८॥ टीका॥ ऐसे वडे प्रेमपूरित मालीके व
ँदी चन सुनकर जगत के सुखैता भगवान मौंहीं रहे कुछ ँन
उत्तर नहीं दिया तब माली ने भगवान के हृदय की जानकर
और अपने भागों की वडाई लखकर अतसे मनोहर
सुगंधी वाले पुष्पों की माला रचकर प्रीती पूर्वक रा
म स्याम दोनो भ्राता के कंठों मे सजाय दई और तैसे
हीं भक्ती पूर्वक सब सखा जन को भी पहिराय दई
तब भगवान तिस अपने भक्त की प्रीती देख कर प्रसन्न
हो जाते भये और कहने लगे कि हे भक्त अब तेरे मन की
जो रुची है सो मांग नृपपद की इंद्रपद की ब्रह्म
पद की शिवपद इत्यादि जो इच्छा है सो लें ते
रे को कुछ दुर्लभ नहीं है मेरे देने मे अब बेर नहीं ऐ
से भगवान के प्रसन्न देखकर माली हाथ जोड कर कह
ने लगा कि हे कृपासिंधु इह पद जो हैं सो
इन की मेरे को कुछ है अभिलाखा न
हीं है मै तो केवल आप के चरन कमलों की भक्ती और
सिवकाई चाहता हूं सोई अनुग्रह करके मेरे को दी
जिये हे दीना नाथ तुमारे चरनो की
भक्ती के समान संसार मे और कोई भी विशेष पद न
हीं है इस प्रकार भगवान तिस को निसर लोभ और
निसकाम जान कर अपना सुन्दर भक्ती पद जो है सो कृ
पा करके देते भये मानो दया सिंधू ने तिस को एक
अचल सम्पती दे कर अभय कर दिया और लोक

ँजगतकेविषयोंसे

प्रलोकमे सुन्दर सुख और सुजस का पात्र बनाय दिया देखो प्रभू के समान ऐसा कौन दाता है जो एक केदिये पर सो गुणा देते हैं अर्थात थोरे पर हीं रीझकर बहुत लाभ दे देते हैं तिसतें उपरन्त भगवान बलराम और सब सखा जन के सहित तहां से मंद मंद गती फिर आगे को चले तब दीनानाथ को मारग मे आवती हुई सुन्दर कुवरी जो है सो देख परी॥२८॥ चौपाई॥ वैकशोर कर लिये सुहावन॥ कलित कटोरि कनक मन भावन॥ श्री खंदिन कुंकुम सन पूरी॥ तकत जात चहुंकित दृग तूरी॥ सुन्दरि जब समीप कछु आई॥ तब नंदलाल कह्यो मुसकाई॥ हमकहं अंग रूह देहौ॥ भामनि मन वांछित निज लेहौ॥ कुवरी कह्यो कंस नृपकेरी॥ दीनानाथ अहुं मै चेरी॥ इह चन्दिन प्रभु तें प्रीय नाहीं॥ अस कहि त्रीये हरषि मनमाहीं॥ हरिमुख मन हरन सुहाई॥ अंखि दृगन पथ मान सल्याई॥ धन्य भाग निज संमति जानी॥ सादिर अंगराग निज पानी॥ प्रभु कर अंग लगावन लागी॥ प्रेम अंग पूरण अनुरागी॥ तब निज हृदय गुन्यो जदुराई॥ इहि फल उचिति दरस सिव काई॥ अस कहि जुगम अंगुरि निज पाना॥ धर्यो चिबक तरि कृपानिधाना॥ पग अंगूठ सन पग दबिलीना॥ मुख उठाय ऊपर जब कीना॥ दोहा॥ तब कूबर गत रूप अत दृग मृग वतस वनीय॥ लखि लाजित त्रीय मदन मनु मनुज कवन रमनीय॥२९॥ टीका॥ सो कूवरी कैसी थी कि किशोर अर्थात ~~[illegible]~~ नवीन जुवा अवस्था और हाथ मे लिये हुये कंचिन कटोरी चन्दन केसर इत्यादि सुगंधी दर्वों करके परिपूरण ~~[illegible]~~ नेत्रों को चंचल किये हुये चारो ओर देखती चली आवती है इसप्रकार जब ~~[illegible]~~ निकट आंगई तब भगवान मुसकाय कर कहते हैं कि हे भामनी इह अंगराग जो बुटना है सो कुछ हम को भी देवो और अपना म

चौपाई॥ आगल चले बहुरि जुग भ्राता॥ सखन सहित पूरन [illegible] मुद गाता॥ रह्यो एक मधुपुरी मझारा॥ मालाकार भक्त प्रभु प्यारा॥ नाम सुदामा विदित सुहावा॥ भवन तास केचिन कृत भावा॥ ताकर सदन गवन प्रभु कीना॥ सो देखत मन हरष प्रलीना॥ चरन परत अस वचन प्रकासा॥ मै माली प्रभु तुव पद दासा॥ पावन करहु मोर प्रभु गेहू॥ चल्यो लेत अस भाखि सनेहू॥ सादर सुचि आसन बैठारे॥ धन्य भाग निज तास विचारे॥ जांके सदन चराचर ज्ञाता॥ आये राम स्याम जुग भ्राता॥ अरघादिक आचमन कराये॥ धूपदीप नैवेद लगाये॥ कीन्यो दीन थाल कर अग्रेगा॥ चन्दन लेपन हृदय उमेगा॥ जस पूजन प्रभु कर तहि कीना॥ तस सनमान सखन सब दीना॥ विनय कीन कर जोरि बहोरी॥ आज कीन प्रभु सुचि कुल मोरी॥ जीवन जनम धन धाम हमारा॥ जौन्यो आज सफल संसारा॥ उधरे पितर देव ऋषि मोरे॥ आज प्रसाद जगत पति तोरे॥ दोहा॥ उदय भाग तहि पुरष कर धन्य जनम जग तास॥ धरहु सदन जहि चरन तुव देव हरन भव त्रास॥ १६॥ टीका॥

तब फिर सखों के सहित राम स्याम दोनो भ्राता बडे आनन्द पूर्वक आगे चलते भये तहां मधुपुरी मै एक मालाकार कि जिसको माली कहते हैं सो भगवान का अत्यंत पयारा भक्त था नाम तिसका सुदामा ॑ घर जिसका केचिन करके युक्त बडा सुन्दर बना हूआ था तिसके घर को भगवान चले आये सो दीननाथ को आवते देखकर परम हरष से चरनो पर दंड प्रणाम करके विनती करने लगा कि हे दीन बंधू मै माली आप ~~[illegible]~~ हे के चरनो का सेवक हूं चलिये मेरा घर पवित्र करिये ऐसे कहि कर ~~[illegible]~~ भगवान को ॑ घर मै ले आया था

॑ और

॑ बडी प्रीती से

जो कर लखत इंद्र मन लोभा॥ कुवरी देखि हरष दृग नीरा॥ गई लेन आगल धरि धीरा॥ दोहा॥ ल्याइ कर गहि सदन निज सुचि प्रयेक बैठाइ॥ भूरि भाग निज जाय गुनत किये विविध सतकार॥ २७॥ टीका॥ तब कुवरी जो है सो मुनियों के मन मोहित करने वाला भगवान का सुन्दर रूप देखकर कामदेव के वश हो जाती भई पीतांबर का लड़ पकड़ कर मुसकावती हुई अतसे कटाक्ष जनाय कर बचन कहिने लगी कि हे प्रीतम अनुग्रह करके मेरे घर मे चलो मै तुमको अब त्याग नहीं सकती हूं इस तुमारी मनोहर स्यामल मूरती जो है सो मेरे हृदयमे बस गई है अब इस के विजोग से ~~प्राणों की हानी प्रवीन है तीनै~~ को मै ~~[illegible]~~ रे प्राण कैसे सहार सकैं गे इस प्रकार कुवरी की विनती सुन कर भगवान जो हैं सो बलराम की ओर देखकर कुछ सकुचमान होय गये और कहने लगे कि हे भामनी तेरे घर मै मेरा आवना अब श्री होवेगा परन्तु विलंब इह है कि मैने कुछ देव काज करना है सो कर के फिर तेरे घर मे आऊंगा ऐसे भगवान का वचन सुन कर सो कुवरी परम हरष को प्रापत होती भई और पीतांबर लड़ जो पकड़ा हुआ था सो छोड़ कर वारंवार प्रणाम करती हुई आप ने मारग को चली गई तब ~~नंदलाल महाराज~~ ने रंग भूमी मे अर्थात अखाड़े मै धनुष ~~को तोड़~~ भंगन करके ~~[illegible]~~ गज जो हस्ती और ~~[illegible]~~ चांडूर आदिक मल्लों तिन को मार कर उद्धव जी को बृज की ओर पठायदिया और आप भगवान आनन्द पूर्वक कुवरी के घर जाते भये तिस के घर की कैसी शोभा थी कि सुन्दर मणियों करके जड़त और चित्रों से चित्रत किया हुआ मानो इंद्र के भवन को भी लजा देता था

कृष्ण भगवान (interlinear)
जो हैं (interlinear)

Margin: ^के; ^को; ^को; ^भगवानके चित्तकी जिक्र (vertical); [illegible] (vertical)

क्यों कि जहां तीन लोक के नायक भगवान ने चरन
धारे तिस घरकी ऐसी उपमा होनी कुछ बड़ी बात न
हीं है तब कुबरी भगवान को आवते देखकर हर
नीर से नेत्र भरे हुये प्रेम करके अधीर भई हुई उताव
ल से आगे आयकर प्रीती पूर्वक भगवान का हाथ कर
घर मे ले गई तहां बड़े अतसे सुन्दर और पवित्र पलंग पर
बिठाय कर और अपने भागों की बड़ी प्रशंसा करके अनेक
प्रकार के आदर सतकार जो हैं सो करती भई ॥१७॥ चौपाई॥
रमा सरस प्रभु ताहु बड़ाई॥ कीनी विविध बदन निज
गाई॥ को कृपाल जदुपति सम नाहीं॥ हरन दीन दुख
दुसह सदाहीं॥ कहां अनन्त अजर जग पालन॥ क
हां केसकर कूबरि मालिन॥ जानि कपट गत चन्दन
सेवा॥ मिले जाय तहि आपु अभेवा॥ भगवन् कैव
ल संसारा॥ सरल कपट गत प्रेम पयारा॥ ऊंच नी
च कुल जाति बड़ाई॥ इन कर नहिं रीझत जदुराई॥
सदा दीन बंधु कर रीती॥ रीझहिं लखि अवदिलं ज
न प्रीती॥ अस प्रकार कुबरी कर तोहां॥ करत कृता
रथ सुर नर नाहां॥ पुनि बलराम सहित भगवाना॥
कीन भवन अक्रूर पयाना॥ सुनि आगमन भवन
जदुराये॥ अति प्रमोद मानस निज छाये॥ चल्यो
द्वार आगल अकुलाई॥ प्रेम मगन तन दसा भुला
ई॥ चरन परत अस गिरा अलाई॥ नाथ सनाथ
कीन मोहि आई॥ दोहा॥ चरन कमल रज सीस
धरि बंदि राम पद पानि॥ सबन जुहारत सदन
निज चल्यो लेत सुख मानि॥ ॥१८॥ टीका॥ जब
कुबरी ने इस प्रकार भगवान को सनमान किया तब
तब दीनानाथ प्रसन्न हो कर तिस को लक्ष्मी के
समान बड़ाई दे के भये कर अपने मुख से अनेक
प्रशंसा करते भये देखो जदुनाथ के समान

कृपा और दीन जनो का आधार और कोई नहीं है के
हो अनन्त और अमर अखंड सरव जगतके पाल
क भगवान और कहो कंसकी कूबरी मालीन तिस
की कपटसे रहित एक चंदनकी सेवा जान कर दीना
नाथ आप तिसको घर मे जायकर मिलते भये ताते
भगवानको संसार मे सरल और कपटसे रहित केवल
प्रेम हीं प्यारा है ऊंच नीच कुल जाती और व
डाई जो है सो इन करके भगवान नहीं रीझते हैं दीन
बंधू की सदा एही रीती है कि अपने जन की अ
वगिलंक जिसमे कोई विरल नहीं है ऐसी प्रीती देख
कर ततकाल रीझ जाते हैं इस प्रकार तहां कु
बरीको कृतार्थ करके फिर बलरामजीके सहित
बड़े आनन्द पूर्वक अक्रूरके घरको चले आवते भये
तब अक्रूर जो है सो कृपानिधान भगवान का आ
गमन सुन कर प्रेम गदगद हो जाता भया हरिषसे
और प्रेम करके ऐसा व्याकुल हो गया कि शरीरकी
भी दशा भूलगई तब उतायल से द्वार पर आगे ही
धायकर चरनोपर गिर जाता भया और फिर हाथ
जोड़कर कहने लगा कि हे दयानिधी आज आपने कृ
पा करके इस अनाथको सनाथ कियाहे ऐसे कहि
करके भगवानके चरन कमलों की धूडी को सीस पर
धारन करके फिर बलराम के सहित भगवान के सब
सखो को प्रणाम करता भया तिसते उपरांत बडे आ
नन्द पूर्वक सबको अपने घर मे ले गया ॥ २९॥ चौपाई॥
मन्दिर भवन रतन संज्यासन॥ बैठारे जग प्रीत हुलास
सन॥ गहित करन केचिन भृंगासो॥ राम स्याम
पद पदम पखासो॥ चरन बार सिं च्यो गृह सारो॥
कहत धन्य कुल आज हमारो॥ भूल्यो विधी करन
कल लागा॥ पूजन कृस्न देव अनुरागा॥

कु
भी

न वांछित फल लेवो तव कूवरी कहने लगी कि दीनानाथ मै कंस राजा की चेरी हूं इनकि सके वासते लिये जाती हूं अव आपने मांगा है तो इह मेरे को कुछ आप से प्यारा नहीं है ऐसे कहि करके हृदय मै वडा हर्ष मानती भई नंदलाल की मनोहर मुद्रा जो है तिसको नेत्रों के मार्ग द्वारा खैंच कर हृदय मे ल्याय कर अपने भागों को धन्य मानती भई फिर ~~अति से प्रीती पूर्वक~~ सो अंगराग जो है सो अपने हाथों से भगवान के अंगों को लगावने लगी तव जदुनाथजी महाराज ने हृदय मै विचार किया कि इस कुवरी को दरसन और सेवा का कुछ फल होना चाहिये ऐसे विचार कर दीनवंधू ने ~~के अंगूठा आपने हाथ की तिसकी ठोडी पर राखो~~ आपने हाथकी दो अंगुलियों से तिस ठोडी पकड कर और पाउं के अंगूठे से पाउं दवाय कर मुखको उठायकर ऊपर जो किया तव ततकाल हीं कूवर से रहित सीधी होकर मृग के वालक समान नेत्रों वाली अत्यंत हीं रूपवती होजाती भई मानो तिसको देखकर कामदेव की स्त्री भी लज्जा को प्राप्त होती है और मानुखी स्त्री की कौन गिनती रही॥ २१॥ चौपई॥

हरि सरूप मुनि मानस लोभा॥ देखत कीन मदन तहि सोभा॥ अंचल छोर गहित निज पानी॥ वोली हसि करि जुत वानी॥ प्रीतम चलहु सदन सुभ मोरे॥ निकसत प्राण तजत अव तोरे॥ नाहिन छिनक सकौं तजि तोही॥ मै मूरति मृदु स्याम लखि मोही॥ कवरी कर सुनि विनय वसेखी॥ सकुचि गये प्रभु वल तन देखी॥ भाख्यो मोर सदन नृव भामन॥ ऐहैं देव काज करी आवन॥ अस मृदु वचन सुनत भगवाना॥ महा प्रमोद कुवरि उर माना॥ अंचल तजत गवन निज कीना॥ जदुनन्दन सुचि प्रीति प्रलीना॥ प्रभु धनु मंग रंग महि कीने॥ गज मल्लादि प्रचण्ड हतीने॥ पठे वहुरि उद्धव वृज काहीं॥ आपु गये कुवरी गृह माहीं॥ मणिगण जटित भवन तहि सोभा॥

ऐसे

ऐसे

की

अंगराग की नीकी और प्रेम करके [illegible] भई है

अर्थात धूरि करदेते हो और रज को मेरु करदेते
हो हे अधम उधारन भगवान जो तुम ऐसे ना होते
तो मेरे से अधमो का कैसे उद्धार होता इस प्रकार अ
क्रूर के ~~वचन~~ प्रेमरस के मे भीगे हुये वचन सुन कर
भगवान मंदमंद मुसकाते हुये कहने लगे कि हे च
चा तुम हमारी कुलमे बड़े ~~ससुर~~ सुजान और सयाने
हो और हम जो हैं सो बालक हैं कुछ शुभाशुभ के
ज्ञान को नहीं जानते तुम दाऊ अर्थात बड़े हो हमारे
पर ~~[illegible]~~ दया करके क्षमा ही करते रहना ॥ १९ ॥
चौपाई ॥ इह तुव वात्सल भाव हमारा ॥ लागहु सदा
हृदय निज प्यारा ॥ वात्सल रस सदृश नहि आना ॥
हर ~~फिर~~ विरंचि कमला मन माना ॥ अस प्रभु वचन
सुखा पन देखी ॥ मानि भक्ति सौ हृदय विसेखी ॥ कवन
५ अ धन्य क्रूर समाना ॥ जेहि वृज रज प्रीय मानस माना ॥
परसेत जाहि प्रभाव सुहायो ॥ हरि वैकुंठ दृगन दरसा
यो ॥ आय बहोरि सदन जदुराई ॥ वृजरज को प्रभा
व मुख गाई ॥ करहि जतन हठ मुनि जन नाना ॥ जे
पदपदम न आवत ध्याना ॥ अब अक्रूर ऐकपद
तेहू ॥ रह्यो तरन तहि कवन संदेहू ॥ द्रवहि दीन
पर दीन सनेही ॥ जो विस्वास सदा दृढ तेही ॥ जन
विस्वास नाथ कर कोहू ॥ मेटत इमत विकट जग
मोहू ॥ अब विचार कछु आन न कीजे ॥ प्रभु क
हे प्रीये प्रेम लखि लीजे ॥ विना प्रेम साधन सब नाना ॥
मृग तृसना कर नीर समाना ॥ दोहा ॥ रीझत केव
ल प्रेम पैं संसृति नन्द कुमार ॥ तांते तजि सब ज
तन हठ करिये प्रेम आधार ॥ १ ॥ विना प्रेम जदुवं
स मणि बरनहु बारंबार ॥ नहिं रीझत जप तप ज
तन करहिं न कोटि प्रकार ॥ ~~[illegible]~~ २० ॥ टीका ॥
भगवान कहते हैं कि हे अक्रूर इह हमारा बालक
भाव जो है सो तुम ~~[illegible]~~ प्यारा जान कर हृदय

मे सदैव ही बसाय राखो इस वात्सल रस के समान और कोई भी अधिक रस नहीं है शिव ब्रह्मा आदिकों ने भी एही प्यारा माना हुआ है इस प्रकार भगवान के कृपा मय वचन सुनकर और सखोपन देखकर अक्रूर जो है सो तैसी ही भक्ती को हृदय मे धारन कर लेता भया अक्रूर के समान कौन धन्य है कि जिसने बृज की रज धूरी के हृदय मे प्यारी जाना और जिसके परसने के प्रभाव तें भगवान ने तिसको वैकुंठ नेत्रों मे दिखाय दिया फिर तिसके प्रभाव तें ही भगवान तिसके घर मे चले आये ताते बृज रज की महिमा और प्रभाव को कौन कथन कर सकता है फिर देखो कि जिन चरन कमलों को हृदय मे धारने के लिये मुनी जोगी जो हैं सो अनेक हठ और यतन करते हैं परन्तु तिनके ध्यान मे नहीं आवते हैं अब सोई चरन अक्रूर के अंक अर्थात गोद मैं हैं कहो तिसके तरने का कौन संदेह है दीन बंधू भगवान कैसे हैं कि जहां अपने जन का दृढ विस्वास देखते हैं तहां तुरत हीं कोमल हो जाते हैं जन का विस्वास और नाथ की कृपा तिसके आगे कोटि कठिन और संसार के अनेक भ्रम जो हैं सो सब मिट जाते हैं अब और विचार सब छोड देवो भगवान को केवल एक प्रेम हीं प्यारा जान लेवो प्रेम के बिना सब साधन जो हैं सो मृग तृसना के जल वास्तव अर्थ को सिद्ध नहीं करते हैं नंदलाल महाराज को प्रेम हीं भावता है ताते और सब छोडकर प्रेम हीं आधार करना चाहिये प्रेम के बिना यद्यपि अनेक जप तप आदि यतन भी होवें तद्यपि भगवान कवी नहीं रीझैंगे जहां सरल और निसकपट प्रेम देखैंगे तत काल हीं कोमल हो जावेंगे ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथ भगवद्भक्तों की महातमे भाषा टीकायां अक्रूर चरित वरननं नाम सर्गः

अथ जुधिष्ठर चरितं

दोहा॥ सुनहु संत अस्चर्य प्रद कथा महातम एहु॥ जासु सुनत लखि परत प्रभु जदुपति दीन सनेहु॥ चौपाई॥ अवसर एक धरम सुत राई॥ बैठि रह्यो निज सभा सुहाई॥ हृदय विचार तास अस ठाना॥ होहि सुजस कहि भांति महाना॥ राजसूय मखे करहुं अनन्दू॥ मोर सहाय कृस्न सुख कंदू॥ जोन करहुं अव इह निज भावो॥ तोरहि जाहि जिये अभिलाखो॥ रह्यो करत अस भूप विचारा॥ आय गये नारद तहि द्वारा॥ सभा सकल उठि मुनिहि निहारे॥ हरखे हृदय पांडु अति भारे॥ चलि सादिर आगवाय न ल्याये॥ सुचि कंचिन आसन बैठाये॥ नृप विधि जुत पूजन मुनि कीन्यो॥ पद जल सिंचि भवन सुभ दीन्यो॥ लेत कुसल नृप सब वारहि वारा॥ विनय वचन निज वदन उचारा॥ जो हरि करहिं कृपा निज नेका॥ उय ज्यो मोहि मनोरथ एका॥ मुनि तुव जाहु द्वारिका माहीं॥ जहांव सत प्रभु त्रिभुं सांई॥ कहि ... हियो विनय वचन अस मोरा॥ बोलत तुमहि नाथ जन तोरा॥ दोहा॥ करन चहत मख राजसू प्रभु तुव दास नरेस॥ करहु सफल इत आय हरि करि निज कृपा वसेस॥ टीका॥ नाभा दासजी कहते हैं कि हे संत प्रधान गुरु महाराज अब और वडी आश्चर्ज गाथा मै आपके आगे कथन करता हे इसको कान देकर सुनिये यह कैसी गाथा है कि जिसके सुनने से जदुपति दीनों के सनेही भगवान जो हैं सो लखे जाते हैं कहते हैं कि एक समय धरम पुत्र राजा जुधिष्ठर अपनी सभा मे जाय करके बैठा हुआ था तब तिसने हृदय मे विचार किया कि जगत मे सुंदर सुजस

करि जस तस पूजन भगवाना॥ धारत अंक चरन सुख माना॥ चापन लग्यो हरष सरसाई॥ जानि भाग निज विपुल बड़ाई॥ निकसत गिरा प्रेम वस नाहीं॥ अनमिष लखत रूप प्रभु काहीं॥ सुधि सँभारि पुनि वचन वखाना॥ धन्य धन्य तुव कृपा निधाना॥ मोहि सम पतित नाथ सम पावन॥ होहिं न को करुना सर सावन॥ तुव रज मेरु मेरु रज करहौं॥ कृपा न केते अधम उद्धरहौ॥ जो न होत अस दीन सनेहू॥ तो मोसे उधरत कस एहू॥ मुसकि मेद प्रभु वचन वखाने॥ तुव हमार कुल केका सयाने॥ दोहा॥ हम बालक जग जनत नहिं वचन सुभासुभ ज्ञान॥ छिमहु सदा तुव कीहु निज दाऊ दयानिधान॥ १२॥ टीका॥ तब अक्रूर बड़े हुलास और सनमान से दोनो भ्राता को सुन्दर पलंग पर विठाय कर और गंगासागर मे जल भरकर राम स्याम के चरन कमलों को प्रक्षालन करता भया अर्थात धोवता भया तब चरनो का जल जो है सो बड़ी प्रीती से संपूर्ण घरमे सिंचन करके कहता है कि आज हमारी कुल पवित्र भई है फिर प्रेम करके विधी से भूला हुआ और और प्रकार से ही पूजन करता भया तिस तें उपरान्त भगवान के चरनों अपने अंक मे धार कर बड़ी प्रीती और भक्ती से चापने लगा और अपने भागों की बड़ाई मानने लगा परन्तु प्रेम करके ऐसा उनमत्त होगया जो मुख से कुछ वचन भी नहीं निकसता एक टक नेत्र जोड़ कर भगवान के रूप को देखता है कुछ एक वेर के पीछे शरीर की सुधी सँभाल कर कहने लगा कि हे कृपानिधान धन्य हो तुम धन्य हो क्योंकि मेरे समान कोइ पतित अर्थात पापी नहीं है और तुमारे समान न कोई पतितपावन अर्थात पापियों को पवित्र करने वाला नहीं होगा तुम कैसे हो कि मेरू जो सुमेर है तिस को रज

को

सुजस मतिमाना॥ उरवसि आदि गंधर्व सारी॥ करहिं
नृत्य गायन मन हारी॥ पहुंचे जाय तहां ऋषिराई॥
देखि उठी सद सभा सुहाई॥ दोहा॥ उठि आगल घन
स्याम बल बंदि देव ऋषि काहिं॥ बैठासो पूछत
कुसल कनक सिंघासन माहिं॥ २॥ टीका॥ इस प्रकार
राजा का वचन सुनकर मुनी जो हैं सो हृदय मै बहुत ह
रष मानते भये और कर कहने लगी कि हे राजन तैने
बहुत शुभ मनोरथ किया है घनस्याम भगवान ई हां अ
व श्य आवेंगे ऐसे कहिकर मुनी चल पड़ते भये जहां
सुधरम जनो की सभा लगी हुई थी राजा उग्रसेन और
तिस की दहनी ओर करोर कामदेव की छवी को लज्जा
देने वाले कृस्न प्रमात्मा और तिन की दहनी ओर बड़े
बीर सिरमोर कृतवरमा अक्रूर उद्धव ऊधव और
सात्यकी थे और उग्रसेन की बाईं ओर बल के धाम ब
लराम और तिन के आगे प्रद्युमन थे कृस्न भगवान
के पुत्र सांबादिक जितने हैं सो सब अस्त्र शस्त्र धा
रे हुये इनतें लेकर और वृद्ध बीर धीर जा
दव जो हैं सो सब विराजे हुये थे उरवसी आदि गंधर्व
बड़े नृत्य गायन कर रहे थे तहां नारद जी आय
के प्रापत भये तिन को देखकर सभा उठ
खड़ी होती भई तब घनस्याम और बलराम आगे
जाय करके मुनी के चरनो को बंदन करके
बारबार कुसल पूछते हुये ल्याय कर कंचन सिंघा
सन पर बिठाय देते भये॥ २॥ चौपाई॥ कहिये मुनि कोउ
व कुसलाता॥ नारद कहिस वचन सुखदाता॥ राज
सूय मख दीन दयाला॥ चाहत करन धरम महिपाला॥ देव तास पूरण हित तोही॥ बोलन पठयो आ
ज नृप मोही॥ जदुवर सुनत परम सुख पावा॥ सजन
सैन सासन गुहरावा॥ हरि निदेस बस सजि सजि नाना॥
चल्यो कटक चतुरंग महाना॥ पाछे उग्रसेन बलबीरा॥
पुर रखवार रहे मति धीरा॥ इत हरि इंद्रप्रस्थ चल

आये॥ पांडव लेन अग्र उठि धाये॥ चले बसन वप्रीत सरीरा॥ अति उतसाह विवस मत धीरा॥ जेप हुंचे आगे गलजहि हाला॥ मिले ताहि नस कृस्न कृपाला॥ प्रेम प्रवाह वार दृग जाता॥ मिले आय पुनि पा चउ भ्राता॥ धरम भूप भीषम पग लागे॥ बहुरि नम्र अरजन अनु रागे॥ सकल अनुज जुत कीन प्रनामा॥ वंदे पुनि पांडव जन स्यामा॥ दोहा॥ प्रभु दलकहे सानुज सुवन पुनि नृप धरम सुजान॥ इंद्रप्रस्थ पुर ल्याय कै कियो कोटि सनमान॥२॥ टीका॥ फिर भगवान कहने लगे कि हे मुनी पांडवों की कुसल कहो सब राजी तो हैं तब नारद जी बड़ा सुखदायक वचन कहने लगे कि दीनानाथ धरम भूप जुधिष्ठर जो है सो राजसू यग्य करना चाहता है हे देव तिसके पूरन होने के वासते राजा ने मेरे को तुमारे बुलावने के वासते भेजा है इस वचन को भगवान ने सुनते हीं ततकाल सेना के सजावने के वासते आग्या दे दई तब भगवान की आग्या पायकर नाना सूरवीरों करके सोभित चतुरंगनी सेना का कटक जो है सो बड़े हुलास से चल पड़ता और पीछे पुर की रक्षा के वासते उग्रसेन और बलराम जी रहते भये जब भगवान इंद्रप्रस्थपुर अर्थात दिल्ली मे आय पहुंचे तब पांडव हरष करके पूरित बड़े उतसाह से धायकर आगेहीं लेने के वासते आय गये और प्रेम से ~~व्याकुल भये~~ हुये किसिर का वस्त्र गले मे और गले का सिर मे पहिरे ~~करके~~ ~~भगवान के मिलने~~ हुये उतावलेसे भगवान के दरसन को चले आवते हैं तब जो जो जिस हाल मे बैठे पहुंचा तिसतिसको तैसे ही भगवान मिलते भये फिर ~~जुधिष्ठर के सहित पांचो भ्राता जो हैं~~ सो प्रेम जल के नेत्रोंमे छाये हुये भगवान के चरन कमलों को दंडप्रणाम करते भये ~~और~~ तिसते उपरांत भगवान ने पांडवों को वंदन किया फिर राजा जुधिष्ठर ने भगवान के दल को हरष व समाज के सहित हस्तनापुर मे ल्याय कर अनेक प्रकार के सनमान

(margin) ले जो है
(margin) भया
(margin) सब लोग
(margin) भीषम और पांचो भ्राता के सहित जुधिष्ठर
(margin) ।बैठे ।हवे
(margin) २७।

जो है सो किये॥ ३॥ चौपाई॥ सिवका रूढ मान रति हरनी॥ खोडस सहस कृस्न कल तरनी॥ तिनहिं नृप ग्रागल चलि ल्याये॥ निज ग्रन्ता पुर वास दिवाये॥ खोडस सहस भवन सुखदाई॥ वसीतहें महिखी जदुराई॥ भिन्नभिन्न कुवरन कहें वासा॥ दीन नृपति निज हृदय हुलासा॥ ग्रौरहु रहे जव न जदु वंसी॥ सव कहें दीन निवास प्रसंसी॥ नित नव कीन रुचिर सनमाना॥ वरनि न जाय प्रताप म हाना॥ वासर एक सभा सुखदाई॥ पांडव जुतराजे जदुराई॥ कह्यो धरम नृप जोरित पानी॥ मेमख राजसूय रुचि ठानी॥ करहु काम पूरण प्रभु ए हा॥ मुहि भरोस तुव दीन सनेहा॥ इह सुभ काज धरम नृप राहा॥ करहु ग्रव प्रा कृस्न ग्रस काहा॥ तव लिये भीम ग्ररजुन संगा॥ गये मगध देसहिं ग्रगभंगा॥ भीम हाथ मागध हत कीने॥ राज तासु तहि सुत कहें दीने॥ दोहा॥ ग्राये पुनि करुणायतन इंद्रप्रस्थ सुखदाऊ॥ वरण न कीन वृतांत सव वैठि निकट महिराऊँ॥४॥टीका॥ फिर पालकियोंँ पर चढी हुई कामदेवकी स्त्रीको लज्जा देने वाली कृस्न भगवानकी सोला हजार रानी तिनके राजा जुधिष्ठिर ग्रागे जाय कर ल्याये ग्रौर ग्रपने रनवास भीतर भवनोमे भिन्नभिन्न वासदिवा ये ग्रौर कुवर जो कृस्न भगवानके कुमार थे तिनकोभी न्यारे न्यारे वास दिये तिसतें उपरांत ग्रौर जादव जो थे सोभी सनमानके संग जथा योग्य ग्र स्थानोमे उतार दिये तिन सवका नित्य नवीन हीं ग्रादर सतकार होता था राजा जुधिष्ठिर ऐसा म हान प्रताप था कि जो कोई जैसी इच्छा करता सो तिसको सव सहजे हीं प्रापत होता था

॥ सोरठा ॥ इहंविधि पावत वखान आनंद दरब विकथा सुनी ॥ पुरकलाल सुनमों करहुं कथन मखराज सु ॥ ४ ॥

॥ को

जो है सो कैसे प्रापत होवे इसमें और तो नहीं है परन्तु
राजसू यज्ञ करना चाहिये क्योंकि मेरे सहायक श्री
कृष्ण भगवान है जो मैं इह नहीं करूंगा तो चित्त में
अभिलाखा ही रहि जावेगी इस प्रकार राजा विचार कर
रहाथा इतने में तहां नारद जी आयगे तब मुनि को दे
खकर सब सभा उठ खड़ी हुई पांडव हृदय में बड़े ह
रखमान होते भये मुनी सनमानसे ~~लेकर सुंदर~~
ल्यायकर सुंदर कंचिन के पलंघ पर बिठाय दिया ति
सतें उपरान्त राजा ने विधी पूर्वक मुनी का पूजन कि
या और तिसके चरनों का जल संपूर्ण घर में सिंच
न करवा के और फिर बड़ी प्रीती सतकार से कुसल
पूछकर फिर हाथ जोड़ कर विनती करने लगा कि हे
मुनी नाथ जो भगवान प्रसन्न होकर कृपा करें तो मेरे
हृदय में एक मनोर्थ उपजा है सो क्या है कि आप अ
नुग्रह करके ~~भगवान~~ कृष्ण महाराज के पास द्वारिका में
जावो और मेरी ओर से प्रार्थना करो कि भगवन आप
का दास जो है सो आपको बुलावता है और इह भी कहि
देना कि आपका दास राजसू यज्ञ किया चा
हता है सो आप चल करके तिसके यज्ञ को सफल
करिये ॥१॥ चौपाई ॥ सुनि मुनि बचन भूप अनुरा
गा ॥ हरखि वदन अस भाषन लागा ॥ नृप तुव नी
के कीन मन कामा ॥ अहै इत अब घन स्यामा ॥
चल्यो वेग अस भाखि मुनीसा ॥ जहां विराजमान
जगधीसा ॥ सभा सुधरम जनन कर लागी ॥ बैठो
उग्रसैन बड़भागी ॥ उग्रसैन नृप दाहन राजे ॥ कृष्ण
कोटि छवि मैसज लाजे ॥ कृतवरमा अक्रूर विचछ
न ॥ उद्धव सात्यकि हरिकर दछन ॥ अस औरउ
जादव जन सोहीं ॥ बीर धीर कछु कथन न होहीं ॥ उ
ग्रसैन बायें बलबीरा ॥ तहि आगल प्रद्युम्न धुव धीरा ॥
कृष्ण सुवन सांबादिक जेते ॥ बैठे अस्त्र सस्त्र धृत
तेते ॥ जादव जिठिर बीर वर आना ॥ राजे सकल

के

पृ० २७

कौनउ योगू॥ सुर ऋषि रुचिर ब्रह्म ऋषि जे
तू॥ देखि परत सब नृपति नकेतू॥ भीरभार कछु
जाय न बरनी॥ राजा रंक वृद्ध सिसु तरनी॥ सिद्ध
साध तापस दुजनाना॥ आय सकल सेवन भगवाना॥
दोहा॥ विद्याधर चारन पितर गंध्रव गुह्यक आय॥
हरि बरिंचि दिगपाल जुत लोक पाल समुदाय॥५॥
टीका॥ राजा जुधिष्ठर जो है सो भ्राता और मंत्रियों के स
हित सुखपूर्वक सभा सजाय करके बैठ हुआ था औ
र पांडवों का कारज करने वाले कृष्ण प्रभात मां सुवरन
के सिंघासन पर बिराजमान हैं वाल्मीक विश्वामित्र
अगस्त गौतम भार्गव आसुरी गालभ लोमस
गरग च्यवन और सनकादिकों से लेकर नारद
जी ~~जैसे~~ इह सब मुनी तहां ~~बैठे हुये~~ भगवा
न के दरसन को आये हुये थे और सब यथा योग्य आ
सनो पर बैठे हुये थे तब राजा जुधिष्ठर सरव मुनियों
को कहने लगा कि हे मुनि महाराज मेरे को राजसूयज्ञ
करने की अभिलाखा है तुम ~~कृपा~~ कृपा करके मेरी इस
अभिलाखा को पूरण करो मै जानता हूं कि तुमारे प्र
साद से मेरे को कुछ दुर्लभ नहीं होगा इसप्रकार रा
जा का वचन सुनकर मुनी जो हैं सो एव मस्तु शब्द कहते
भये कि हे राजन ऐसे ही होगा तिस तें उपरांत मुनियों
ने सुभ दिन बिचार कर यज्ञ का प्रारंभ कर दिया तब
तहां राजा के यज्ञ मै सुर ऋषी और ब्रह्म ऋषी जि
तने थे सो सब आये हुये थे भीरभार कुछ कही नहीं
जाती राउ रंक बृद्ध जुवा सिद्ध साध तपसी ब्र
ह्मण इत्यादि सब भगवान के सेवन के वासते चले
आवते भये और भी विद्याधर चारन पितर गंधर्व
गुह्यक शिव ब्रह्मा दिगपाल लोकपाल आये हु
ये थे॥५॥ चौपाई॥ देखन राजसूय मख काहीं॥ कोत्रि
भुवन जाकर रचि नाहीं॥ इंद्रप्रस्थपुर आवत ताहूं॥

(margin) भोरहीके

(margin) भी

(margin) सुन

(margin) पाल

देखन आय सकेल जदुनाहू॥ करि सम्मति नृपधर्म प्रवीना॥ भवे कारज विभगत सव कीना॥ वने भीम नायक पकवाना॥ वन वावहिं विंजन रुचि नाना॥ जोधन कौसाधीस वनाये॥ करहि काज हरि त्रास न पाये॥ लै आवन धन जानि प्रवीना॥ इह अधिकार नकुल कहे दीना॥ विप्र नृपति पूजन सतकारा॥ सहदेवहिं दीन्यो अधिकारा॥ ऋषि मुनि साधु संत सिवकाई॥ इह लीन्यो अरजन सुखदाई॥ भवे दुज साधु परोषण काजा॥ लीन्यो कुवरि द्रुपत महाराजा॥ संत चरन प्रक्षालन सेवा॥ आपु कृपाल कृस्न इह लेवा॥ भीषम विदुर भेत्र प्रदचाहू॥ कीन्यो करन दान अधिकारू॥ असप्रकार होवन भवे लागा॥ हरख्यो धरम भूप वडभागा॥ दोहा॥ ताहि काल अति शोरभा जहं तहं मुनि गण माहिं॥ कवन अग्र पूजन लहै कहि पर रुचि सव काहिं॥१॥ टीका॥ ऐसे राजसू यज्ञ देखने की तीन भवन मै किसको रुची न होई थी तिस समय इंद्रप्रस्थ पुर मै भगवान के दरसन को मानो सव पृथवी के लोग चले आवते भये तव राजा जुधिष्टरने सम्मती करके यज्ञका काज जो है सो सव वांट दिया भीमसेन पकवान के अधिकारी वनाये सो नानाप्रकारके व्यंजन वनवावने लगे और दुर्जोधन को कोशाधीस वनाया सो भगवान की आज्ञा पाय कर सव काज करने लगे और धनका ले आवना इह अधिकार जो है सो नकुलको देते भये ब्रह्मण और राजों का सतकार सहदेव को दिया ऋषी मुनी साध संतो की सिवकाई का अधिकार अरजुन को मिला यज्ञ मै साधु अन्न परोसन का काज जो है सो द्रोपदी के आधीन ~~हुआ~~ भया और संतो के चरन प्रक्षालन करने की सेवा आप कृस्न प्रमातमा लेते भये भीषम और विदुर जो हैं सो भेत्र शिक्षा देने को रहे और दान का अधिकार करन ने लिया इस प्रकार यज्ञ जो है सो होने लगा राजा जुधिष्टर देखकर

हरष से प्रफुल्लित हो जाँ भया तब तिस समय जहाँ तहाँ
मुनियोंके समूह मै शोर पड़ गया कि प्रथम पूजन कि
सका है कहो सबकी रुची किस पर है॥६॥ चौपाई॥ तहं म
हा ऋषी देव ऋषि जेते॥ लगे विचार करन सब तेते॥
जुरे भूप गौरव अति नाना॥ इह संदेह न काहु मिटाना॥
तब असे वदन कह्यो सहदेवा॥ मुनि ज्ञानी सब सुन
हु अभेवा॥ जग व्यापक जगते पुनि न्यारे॥ कृष्ण दे
व सब कर हितकारे॥ सोऊ अग्र पूजन कर लायक॥ दी
न बंधु प्रभु दीन सहायक॥ इन पूजन ते हे मुनि राजू॥
होहिं सकल जग पूजन आजू॥ इह विचार हमरे मन
माना॥ आगल जँ रुचि तोर सुजाना॥ सुनि सहदेव
वचन उच्चारा॥ मुनि जन हृदय कीन सुईकारा॥ इहि
तै नहिन प्रमार्थ दूजा॥ लेहिं अग्र जदु नेदन पूजा॥
धरम भूप सुनि मुनि जन काहा॥ भयो प्रलीन परम
उतसाहा॥ अनेक आभरन बसन मंगायो॥ हरि कहं
सं आसिन बैठायो॥ चरन पखारि करन निज राई॥
लीन चरन जल सीस चढाई॥ दोहा॥ जब की
न्यो विधि जुत हरषि हरि को पूजन राऊ॥ सहि न
सक्यो सिसुपाल जठ दुरमति दुष्ट सुभाऊ॥७॥ टीका॥
जब असे शोर पड़ गया तब तहां महा ऋषी और
देव ऋषी जितने थे सो आपने आपने सब विचार
करने लगे और तहं बड़े बड़े भारी अनेक राजा भी
बैठे हुये थे परन्तु इह संदेह किसीने नही मिटाया तब
सहदेव जो है सो ऊंची स्वर से सबको कहता भया कि
हे मुनी ज्ञानी साध संतो अब मेरा वचन सुनो कि ज
गत मै व्यापक और जगत से न्यारे कृष्ण प्रमात्मा सब
के हितकारी हैं सोई अग्र पूजन के लायक हैं क्यौंकि
इस दीनबंधु और कृपा सिंधु के पूजन करने से सरब
जगत का पूजन हो जाता है इह विचार तो मेरे मन मै है
आगे आप लोगों की जैसी रुची हो सो कहिये असे स
हदेव का वचन सुन कर सब मुनिजनों ने साधु सा
धु कहि करके सुईकार कर लिया और कहने लगे

एक दिन पांडवों के सहित भगवान कृपानिधान सभा मे विराजमान थे तब राजा जुधिष्ठिर ने हाथ जोड़ कर प्रार्थना करी कि हे दीनानाथ मेरे को राजसू यज्ञ की अभिलाषा है और मे आप के चरनो के विना और किसी का भरोसा नहीं रखता हूं इस मेरे काज के सिद्ध करने को तुम हीं सामर्थ हो तब भगवान कहने लगे कि हे राजन तुम धन्य हो जो तुमारे चित्त मे ऐसे धर्म की अभिलाषा उतपन्न भई है तो तो इस को अब अवसि ही करना चाहिये मै तुमारी सहायता करुंगा ऐसे कहि कर भगवान भीम और अरजुन को साथ लेकर मगध देश को चले जाते भये तहां भीम के हाथ से मागध का हनन करवाया अर्थात मरवाया और तिस का राज तिसी के हीं पुत्र को देकर आप फिर आनंद पूर्वक इंद्रप्रस्थपुर को चले आते भये और तहां आयकर संपूर्ण वृतान्त जो है सो बैठ कर राजा जुधिष्ठिर को सुनाय देते भये इस प्रकार इह आनंद की अवधी इतनी क गाथा जो है सो कथन की गई है अब आगे सनमान पूर्वक राजसू यग्य की गाथा है गुरदेव स्वामी जो जैसी कि बुद्धी के अनुसार हो सकती है गायन करता हूं ॥४॥ चौपाई ॥ सचव नजुत वंधुन महिराई ॥ बैठो सुखी निज सभा सजाई ॥ कनकासन कल कृष्ण कृपाला ॥ करन पांडवन काज रसाला ॥ वालमीक कौसक मुनि नाहीं ॥ अरु अगस्त गौतम जुत ताहीं ॥ भार्गव आसुरि गालम नामा ॥ लोमस गरग चिवन अभिरामा ॥ सनकादिक नारद जुत सारे ॥ आये जहं बैठे गिरधारे ॥ तिन कहे धरम सूव भगवाना ॥ बैठा रो करि करि सनमाना ॥ तब अस नृपति मुनिन सन काहा ॥ मोरे राजसू यग्य चित राहा ॥ पूरन करहु नाथ मख का हीं ॥ तुव प्रसाद कछु दुरलभ नाहीं ॥ एव मस्तु कहि कहि मुनि लोगू ॥ सुदिन देखि मख

ग्रौर तीन भवन के नाथ त्रिपुरासुर के मारनेवाले
महादेव ग्रैसे इस ग्रौर नदीसों को छोड कर इन स
भा के लोगों की बुद्धि काल भाग गई है
जो कोन एक बालक मती से हीन कि जिसके कहने
को सत्य मान लिया ग्रौर गाई चराने वाले गोप
को ग्रग्र पूजन दे दिया क्या कोई ग्रौर लायक नहीं
रहा था इह तो नंद गोप का पुत्र बुद्धी से हीन भागों
के वश होकर कुछ वडाई को पाय गया है
नहीं तो सरव धरम से रहित वडा नकारा ग्रौर शरीर क
रके काला मातुल जो ग्रपना मामा है तिसके घात क
रने वाला है इह वडी ग्राचर्ज की वात है जो इस को ग्र
ग्र पूजन दे दिया इस प्रकार तिस दुष्ट के मुख से भग

४ जन

वान की निंदा सुन कर हरि जो तहां वैठे हूये थे सो सव
चारो ग्रोर से हाय हाय पुकारने लगे मुनी ऋषी सा
धू ब्रह्मन भगवान के भक्त जो थे सो सव ग्रंगुली देकर
ग्रपने ग्रपने कान मूंद लेते भये है
कि जहां कोई दुष्ट ग्रभागी हरी ग्रथवा हरी के
भक्तों की निंदा ग्रपकीर्ती करे तिस ग्रधम को
ततकाल मार देना चाहिये नहीं तो ग्रपने कान
मूंद कर तहां से भाग जाना योग्य है ॥१८॥ चौ
पाई॥ साधु विप्र ग्रस मानस वरना॥ चले दुखित उ
ठि मूंदित करना॥ सुनि दुर वचन दुष्ट कर भारे॥
सा जुध उठे पांडु मन मारे॥ द्रोण विदुर भीषम
व ले वीना॥ कोपित धस्यो धनुष कर वाना॥
देखि सव जुत ग्रावत सारे॥ उठि चंदीप ग्रसगि
रा उचारे॥ करि ग्रनीति ग्रव जान न पैहो॥
खहुं सहाय गोप तव ग्रैहो॥ ग्रस कहि गहि करवा
ल कराला॥ उछोदित कि सिसुपाल भुग्राला॥ धाव
हत न पांडव सुत काहीं॥ मच्यो ग्रत से कोलाहल
ताहीं॥ जव लग हरि कहं वोलत राहा॥ तव लग

प्रभु भाखेस नहिं काजा॥ जब धाये दमसन कहै मारन॥
तब अस दिस कि कह्यो खल हारन॥ तुम बैठहु भटि
सकल समाजू॥ मै देहौं इहिकर फल आजू॥ अस क
हि गिरधर चक्र प्रहार्यो॥ कारि सीस तहि मेदनि डार्यो॥
जैजै मुनि साधु समाजा॥ बोले परिचार दुंदुभि बाजा॥
दोहा॥ जे हरि हरि जन द्रोहि नृप चले सु अधम पलाय॥
कीनी अस तुति धर्म नृप मुनिन सहित सुख पाय॥८॥
टीका॥ इसप्रकार सब साध मुनी और ब्राह्मण दुखित हो
कर कान मूंदे हुये तहांसे उठ खडे हुये और तिस दुष्ट
के ऐसे दुर्बचन सुनकर पांडव जो हैं सो सस्त्र लेकर
बडे क्रोधसे उठते भये द्रोण विदुर भीषम इह
जो बल और प्राक्रम की खान थे इन्होंने भी
हाथोंमे धनुषबान धारन करलिये जब इसप्रकार स
ब शस्त्रोंके सहित सब आवते देखे तब क्रोधसे भ
रा हुआ चंदीप जो सिसुपाल है सो कहने लगा कि
अहो मंद अब अनीत करके कहां जाने पाते हो मै
जानता हूं जो तुम्हारा सहायक गोप है ऐसे कहिकर औ
र हाथ बडी प्रचंड तलवार लेकर कोपसे कांपता
हुआ सिसुपाल उठता भया और पांडवों के मारने के
वासते धाया तब तहां बडा हाहाकार शब्द जो है सो
होने लगा जब तक सो अधम भगवान को दुर्बचन
बोलता रहा तब तक गरुड गेजानने कुछ नहीं क
हाथा परन्तु जब भगवानके दासोंको मारने धाया
तब दीनबंधू नहीं सहार सके कोपसे कहने लगे कि हे
सूरवीर तुम सब बैठे रहो मैंही इस दुष्ट को आज
करनीका फल देता हूं ऐसे कहिकर गिरधर भगवा
नने चक्रको भ्रमन करके जो मारा तो तुरत हीं दु
ष्ट का सीस कारकर पृथ्वी पर गिराय दिया जब इस
प्रकार सिसुपाल मारा गया तब साध मंडली मैं ज
हां तहां जै जै कार शब्द होने लगा और दुंदुभी

और जब श्रीभगवानने इसप्रकार

नाना प्रकार से वाजने लगी जो जो हरी के ग्रोर हरी जनो के द्रोही राजे थे सो सब लज्जा ग्रो भय के मारे लोप होय गये राजाधरम ग्रौर संपूर्ण ऋषी मुनी वडे हरष मै मगन भये हूये ग्रनेप्रकार करके भगवान की ग्रसतुती करने लगे ॥८॥ चौपाई॥ पुनि राजसु मख होवन लागा॥ छायो वेद धुनी चहु भागा॥ सुर नर सिद्ध देव ऋषि ज्ञानी॥ महं ऋषी तपस मुनीस ग्रमानी॥ साधु विप्र ग्राये मख जेहू॥ लीन मनोरथ निज निज तेहू॥ ग्रस प्रमाण तहि मख कर रहेउ॥ जानि परहि पूरण तब भयेउ॥ वाजहि पंच जन्य जब ग्रापू॥ भरन प्रमोद हरन सेतापू॥ सो मख कर सुरनर मुनि जेते॥ पाय पाय वांछित मन तेते॥ पै नहीं वज्यो संख पच जन्या॥ तहितें नृप कलेश जीय मन्या॥ सभा मध्य तब जात ग्रधीरा॥ पूछ्यो कर जोरत जदुवीरा॥ ऋषि मुनि सिद्ध साध समुदाई॥ ब्रह्म रुद्र तुम विभु वनराई॥ भई तृपति सब कर मख माहीं॥ वाज्यो संख हेतु कहि नाहीं॥ रह्यो कवन मख भाग वहीना॥ जहि निज मन वांछित नहि लीना॥ दीन दयाल कहिहे ग्रब कारन॥ वजै संख जिमी शोक निवारन॥ दोहा॥ सुनि ग्रस वचन नरेस कर कृष्ण देव लखि हेतु॥ कहिस मंद मृदु वचन मुख विहसि प्रभु कृपानकेतु॥ सवैया॥ वरिंचि सुरेसु महेस कुवेर लौं देवन ग्राय सवै मख तेरो॥ ग्रौर मुनी ऋषि देव महा ऋषिराज ऋषी दुज प्रेम ते नेरो॥ नेकक स्यो सतकार तिन्है तुव पूरणता नभई जग केरो॥ संख वज्यो नहीं हेतु सोई इक ग्राव ग्रनन्य सुदास नमेरो॥ जारत भौन सदा तुमरे तुव चाकर ग्रो पुर तोर निवासी॥ हान ग्रो लाभ सुमान ऽपमान मे रहत सदा रस एक उदासी॥ खोवत खोवत सेतन जूठ सुची मति तास ग्रनूठ प्रकासी॥ जाति ग्र

कि इसते परे और कोई प्रमाण नहीहै जदुनंदनको
हीं अग्रपूजन लेना योग्यहै जब इसप्रकार मुनियों
ने कहा तब राजा जुधिष्टर परम सुख मानताभया तत
कालहीं अतसे दिव्य वस्त्र और भूषण मंगवाय कर भग
वानको मनोहर सिंघासन पर विठाय दिया और चरनोंको
प्रक्षालन करके सो चरनोंका जल सीस पर चढाय ले
ताभया जब इसप्रकार भक्ती और विधी संजुक्त राजा
ने कृष्ण भगवानका पूजन किया तब तहां सिसुपाल
बड़ा जड़ बुद्धी और दुष्ट सुभाव वाला^ सो नहीं स
हार सकताभया ॥७॥ चौपाई ॥ सभा मद्ध कटु वचन
उचारा ॥ सुनहु सकल मुनि जन परिवारा ॥ कालवश कर
मति भई ~~कैसी~~ तुम्हारी ॥ जानि परत कछु और की औ
री ॥ ऋषी ब्रह्म ऋषि सुर ऋषी ज्ञानी ॥ धर्मधरिं द्रभू
प बहुमानी ॥ इंद्र वरुण लोकप सुरझारी ॥ त्रिभुवन
नाथ देव त्रिपुरारी ॥ अस नरीस सुर ईसन त्यागी ॥ कित
मति सभ्य जनन कर भागी ॥ कवन एक सिसु मती व
हीना ॥ सगरन कथन सत्य जहि कीना ॥ दीन अग्र पूज
न गुप काहीं ॥ रहो आन कै लायक नाहीं ॥ नंद गो
प कर सुत मति हीना ॥ भागवित विमुख कछु लीना ॥
सरव धरमगत जाति निकारा ॥ कारि काय मातुल नि
ज हारा ॥ अति आचर्ज वात संदेहु ॥ कीन्यो अग्र पूज्य
कस एहु ॥ हरि जन सुनि निन्दा हरि केरी ॥ हाय हाय
को ले चहुं ओरी ॥ मुनि ऋषि साधु दुजन बुध नाना ॥
लीने मूंदि अंगुरि धरि काना ॥ दोहा ॥ जो हरि हरि के
जनम कर अपजस करहिं अभागि ॥ हतन उचित
तहि जाहिं नत मूंदि श्रवण जुग त्यागि ॥८॥ टीका ॥
तव सिशुपाल ~~से~~ सभा के बीच ऐसा वचन क[illegible]
[illegible] हिता भया कि हे सरव मुनी जनो क्या तुम्हारी स
बकी कुछ बड़ी बौरी होगई है जो मेरेको कुछ और
का और हीं देख पड़ता है क्योंकि ऋषी ब्रह्म ऋषी
देव ऋषी [illegible] मुनी ज्ञानी और धरमके धार नेवाले
बड़े प्रवीन राजे इंद्र वरुण लोकपाल देवता

^ मानी और

कर कहने लगे कि हे राजन ब्रह्मा महेस इंद्र कुबेर
~~और सब~~ मुनी ऋषी देवऋषी महाऋषी राजऋषी
सुरदेव ब्रह्मन सिद्ध साध इनसब प्रेमप्रीतीसे तेरे यज्ञ
के देखनेके वासते आये हैं और तैने इन सबके अनेक
प्रकार आदरसतकार किये परन्तु यज्ञकी पूर्नताई
नहीभई पंचजन्य संख जोहै सो नहीं वजा तो इसमे
कारन कौनहै कि एमेरा अनन्य भक्त कि जिसको दूसरा न
हीं भासता एमैहीं भासताहूं ~~वसो~~ इस यज्ञमे नहीं आ
याहै वेकौन हे जो तुमारे भवनोमे नित्य झाडु देता तुमा
रा चाकर और तुमारेही पुरमे वसनेवालाहै फिर कैसा
है कि हान लाभ मान अपमान सुख दुखमे सदेव एक
रस रहताहै और विषयोंसे विरक्तहै संतजनोकी जूठ
खाते खातेहीं तिसकी वुद्धि निरमल होय गई है जाती
करके नीच और नाम से वालमीक हे राजन सो मेरा
भक्त तेरे भागों के उदय करने वाला है और भूप यद्यपि
तुम ~~सब~~ मुनी ऋषी साध ब्रह्मन देवताकों पूजन ~~और~~
~~दानमान भोजनसे लेकर अनेक सिवकाई भी करोगे~~
~~और सरव प्रकारसे तिनको रिझाओगे~~ भी करोगे और
दानमान भोजनसे लेकर कोटि सिवकाई भी करोगे
~~और सरव प्रकार से राव रंकको भी रिझावोगे तथा~~
रिझावोगे ~~स~~ राव रंकको मनमान देकर और ~~भी~~ कि
तने उपाय करोगे तद्यपि जव लग सो मेरा भक्त वा
लमीक ~~इस~~ यज्ञमे नही आवेगा तव ~~तव~~ लग इन
सवतें तुमारा कारज कदापीकाल सिद्ध नही होगा औ
र संखभी नहीं वजेगा तो ते हे राजन तुमको योग्यहै
कि अरजुन और भीमसेनको तिसके पास भेजो ~~कि~~
सो तुमारे प्रेमका नेम जनाय कर तिसको प्रीती पू
र्वक साथ लिवाय ल्यावें और ईहां आवते के चरन
पखार कर द्रोपदी अपने हाथसे भोजन वनायकर
तिसको वडे प्रेमसे पास वैठकर जिमावे फिर भक्तीका
प्रभाव देखो कि तिसके चरन पखारनका जल जोहै

सो लेकर जब यज्ञ को भूमी पर सिंचन करोगे अर्थात् छिड़कोगे तो ततकाल ही ~~यज्ञ पूर्ण होजावेगा~~
और बड़े नाद से संख बजैगा और यज्ञ भी पूर्ण होजा वेगा इस प्रकार भगवान के वचन सुनकर राजा हृदय मै बड़ा आचर्ज मानता भया फिर भक्तों की महिमा विचा रकर अरजुन और भीम सैन को बुलायकर के भगवा न की आज्ञा जो है सो सुनाय देता भया॥१०॥ चौपाई॥ अ रजुन भीमसेन तुव जाई॥ लावहु बेग भक्त जदुराई॥ पारथ भीम चले ततकाला॥ खोजत खोजत नगर विसाला॥ एक ओर पुर देखि कुटीरा॥ बैठो द्वार छिये मति धीरा॥ पारथ कह्यो कवन तुव बाला॥ को इत बालमीकर श्वाला॥ भामनि कह्यो नाम जहि लेहू॥ मै त्रीय तासु सदन इह तेहू॥ भूरि भाग मोरे जग देहा॥ आये कवन काज प्रभु गेहा॥ तव अरजुन अस बचन उचारा॥ भामनि पतिवर कहां तुमारा॥ तीये कहिस प्र भु भीतर भवना॥ लावहु बोलि बेग करि गवना॥ हम हु चलव पारथ अस बरना॥ वेदन जोग तोर पति च रना॥ अरजुन भीम भाषि सुखे एहा॥ चले हरख जुत भीतर गेहा॥ बालमीक आवत दौ भाई॥ देखि परयो च रनन अकुलाई॥ बहुरि भीम अरजुन हरखाते॥ परे चरन तहि प्रेम अघाते॥ दोहा॥ साधु भेष तन वसन धृत उर बनमाल सुहाई॥ हरि पूजन वृत दिवस निसि निरत संत सिव काई॥११॥ टीका॥ राजा जुधिष्ठर कहने लगे कि हे अरजुन भीमसेन ~~तुम~~ दोनो जायकर सो भगवान का भक्त जो है तिस को प्रीती पूर्वक लेआवो तव राजा की आज्ञा पायकर अरजुन और भीमसेन ततकाल चले गये और नगर मे जायकर तिस को खोजने लगे ऐसे फिरते फिरते पुर के एक कोने मे कुटिया सी देख पड़ी और तिस के द्वारे पर एक

२७ ~~[margin]~~

स्त्री बेठी हई है तब तिसको अरजुन पूछने लगे कि
हे भामनी तूं किसकी स्त्री हैं और इह बालमीक
का घर कवन है तब तिसने कहा कि हे नाथ जिस
का तुम नाम लेते हो इहउसीका घर है और मै ति
सकी स्त्री हूं महाराज कहो कौन काज है हमारे धन्य
भाग जोआप घरमे आये तब अरजुन बोले हे भ
क्ति सुशीले पतिव्रते सोउत्तम पती तुमारा कहा है
तिसने कहा कि महाराज घरके भीतर है मै अबी बु
लाय ल्यावती हूं अरजुन कहने लगे कि हम हु च
लते है तेरा पती वंदन योग्य है ऐसे कहि कर पा
रथ और भीमसेन दोनो भीतर चले गये तब वाल
मीक दोनो भ्राता को आवते देख कर धाय कर चर
नो पर गिर परत भया फिर अरजुन और भीमसेन
तिसके चरनो लागते भये सो वालमीक केसा था
कि साधु उज्वल भेष और वस्त्र हृदयमे तुलसीकी माला
रात्री दिन हरी पूजन मे लीन और संत सेवा मे तत
पर ऐसे जिसका ब्रत था ॥११॥ चौपाई ॥ बोल्यो नम्र
जुगल कर जोरी ॥ नाथ कवन सुकृति जग मोरी ॥
जे नृप द्वार बुहारन हारा ॥ तो के सदन चरन धारा ॥
सुपच जाति अति मंद मलीना ॥ काहु विचार ना
थ नहीं कीना ॥ इह अचरज कछु लख्यो न जाई ॥
अब नदेस प्रभु देहु सुनाई ॥ तब अरजुन अस भाखन
लागे ॥ धरम भूप तुव दरसन रागे ॥ चलहु जज्ञ
पूरन अब कीजै ॥ नृप कहे रुचिर सुजस सुख
दीजै ॥ साधु सिरोमनि भक्त अमान्यो ॥ कृस्न देव
जिहि निज प्रीय जान्यो ॥ अस कहि पद रज सीस
धराये ॥ चले लेत जहां पांडव राये ॥ आवत दे
खि द्वार अगवाना ॥ चले भूप जुत कृपा निधाना ॥
तब नृप धरम धीर तजि धाये ॥ परे सुपच पद प्रे
म अघाये ॥ पुनि पुनि मिलत सनेह अपारा ॥

(margin: हरि मुकुंद आदिक सेवै सुपच; प्रभु)

नीक भनै वलमीक सुनो नृपतोर सो भाग्य विकासी॥ साध ऋषी दुज देवनलो नृप पूजन नेक करो शिवकाई॥ भूप खवाय रिझायकै दानसों मान देहो किना रेकन राई॥ रावर काज सरै इनतें नहीं आन है कोटि करैं जो उपाई॥ जो लो नआव हैं सोवलमीक सो तोलो नसंख वजे सुख दाई॥ ताहिको लायबो जोग तुम्है पैपठो अव पारथ भीमको राई॥ ते नृप प्रेम को नेम जनायकै आव हीं तेमसों संग लिवाई॥ पाद पखारके पाकरचे द्रुपदी निज हाथसो देहीं जिमाई॥ तहि पदवारके सिंचन सों इत संखवजे मख पूरण ताई॥ दोहा॥ दीननाथकर वचन अस सुनि नरेसविसमाय॥ जानि भक्त महिमा ~~अमित~~ अमित आयस दीन सुनाय॥ १०॥ टीका॥ फिर राजसू यज्ञ जो है सो होने लगा, सुन्दर देवधुनी चारो ओर से छायत होती भई सुर नर सिद्ध देव ऋषी ज्ञानी महा ऋषी तपसी मुनी ~~साध~~ साध ब्रह्मण इत्यादि सब यज्ञमे जो आये हुये थे सो सबने अपना अपना मनोर्थ पाया और यज्ञ के पूरण होनेका इह लक्षण राखा था कि जब पंचजन्य संख अपने आप बाज उठेगा तब जानना कि यज्ञ पूर्ण भया है सो तहां यज्ञके मुनी ऋषी साध ब्रह्मण भलीप्रकार सब खाय, और अपने मन वांछित पायकर प्रसन्न हो गये परन्तु पंच जन्य संख जो है सो नहीं वजा तब राजा जुधिष्टर बड़ा व्याकुल होकर दोनो हाथ जोड़े हुये जदुनाथ के पास जाय कर विनती करने लगा कि हे दीनबंधू ऋषी मुनी सिद्ध साध ब्रह्मा शिव और तुमारे सहित सबकी यज्ञमे तृपती भई है परन्तु संख नहीं बजा है देव इसका क्या कारण है सो कौन ऐसा पीछे रहि गया है कि जिसको यज्ञ भाग नहीं मिला और अपना मन वांछित नहीं पाया हे कृपानिधान इह कारण कहिये और उपाय भी कहिये कि जिसते इह संख अपनी मोनता को त्याग कर सुंदर नादसे बाज उठे ऐसे राजा के मुखसे वचन सुनकर भगवान कोमलवाणीसे मुसकाय

143

१ केकहने

होगये और अपने अपने मनमे विचार करने लगे कि अहो इह प्रेमकी रीती न्यारी है तिससे उपरान्त एक हाथ जदुनाथ और एक हाथ नरनाथ पकडकर तिसको यज्ञ स्थलमे ल्याय कर ~~सुन्दर~~ बडे सुंदर और पवित्र आसनपर विठाय॥२२॥ चौपाई॥ राजो मुनि मेडलि जहि ठामा॥ बैठ्यो तहं सुपच अभिरामा॥ द्रुपद सुता आई पुनि ताहीं॥ जल जुत कनक पात्र कर माहीं॥ हेमथार भूपति कर लीने॥ सुपच चरन प्रक्षालन कीने॥ करत स शोषण पुनि नरनाहू॥ पहिराये पावन पट ताहू॥ पुनि लीन्यो चंदन सुखदाई॥ सुमन माल उरकीने सजाई॥ मादिर धूप दीप नृप कीना॥ द्रुपद सुता कहं आयस दीना॥ भक्त प्रवर कहं विंजन ल्याई॥ देहु सप्रीति परोसि जिमाई॥ तव भगवान कह्यो मुसकाई॥ द्रौपदि जहि लग तुव चतुराई॥ तहं लग सुचि व्यंजन विरचावहु॥ मोर भक्त कहं करन जिमावहु॥ पाकभवन तव द्रुपद कुमारी॥ जाय रच्यो विंजन सुखकारी॥ धरि धरि हाटक भाजन नाना॥ रोखे अग्र भक्त भगवाना॥ निज मुख द्रुपद सुता अभिरामा॥ पृथक पृथक भाखे सव नामा॥ दोहा॥ धरे सकल विंजन सुजव वालमीक सनमान नैन मूंदि लाग्यो करन तव अरपन भगवान॥ ~~चौपाई~~ २३॥ टीका॥ जव ~~॰॰॰~~ इसप्रकार वालमीकको यज्ञमे बैठारा तंजहांसव मुनी मेडली बैठी हुई थी सोतिन के वीच शोभायमान होता भया तव राजा द्रुपदकी कन्या द्रौपदी सुवर्ने के पात्र में जल लेकर आई और राजा जुधिष्टर सुवर्ने का थाल नीचे रखकर तिस वालमीकके चरनोको धोवने लगे तव भली प्रकार धोय कर अंगोछसे पोंछकर बडे सुंदर दिव्य वस्त्र जो हैं सो पहिराय देते भये फिर चंदन लगाय कर पुष्पोंकी मनोहर माला कंठमे सजाय दई

^देते भये

^व

सुगन्धिपुष्पैः

सुपचवाल्मीक

और धूप दीप इत्यादि पूजन करके द्रौपदी को आज्ञा दई
कि भक्त प्रधान को सुंदर भोजन बनाय कर शीघ्र ही
जिमाय देवो फिर भगवान मुसकाय कर कहने लगे कि
द्रौपदी तेरे मे जहो लग चतुराई है तहाँ तू पवित्र भो
जन बनाय कर मेरे प्यारे भक्त को अपने हाथों से बैठकर
जिमा इतना सुनकर द्रौपदी जो है सो पाकभवन कि ज
हाँ भोजन बनाने का चरणा तहाँ जायकर बड़े रस युक्त
पवित्र भोजन रचती भई और सुवर्न के पात्रों मे रखकर
वालमीक के आगे धर देती भई फिर मुख से भिन्न भिन्न स
बका नाम सुनाय कर कहने लगी कि भक्त प्रधान कृपा
करके जेमिये ~~इस प्रकार जब द्रौपदी ने सब पदार्थ आ~~
~~गे रखकर जेमने की प्रार्थना करी तब भक्तों मे श्रेष्ठ~~
जो वाल्मी~~क है सो कैसे है सो~~ जब इस प्रकार द्रौपदी
ने कहा तब वाल्मीक प्रीती सनमान से नेत्र मूंद कर
सुन्दर भोजन जो है सो प्रथम भगवान को अरपण कर
ता भया ॥१२॥ चौपाई ॥ अस प्रकार प्रभु कहे तहि दीने ॥
पुनि इकत्र विंजन सब कीने ॥ जब इक ग्रास तास मुख
पावा ॥ एक बार तब संख धुनावा ॥ वालमीक सब
कीन अहारा ॥ पै नव ज्यो भख संख दुबारा ॥ रिह कि संख
कहे जदुपति ताहो ॥ तब हूं न तास धुनी कछु का
ढो ॥ तब द्रौपदि सन भगवन काहा ॥ संख मोन क
हि कारन राहा ॥ हरि मुख सुनत वचन अस सोई ॥
बोली परम सकुच बस होई ॥ मै आने विंजन जोई
नाना ॥ वालमीक सब एक मिलाना ॥ खायो रस अ
न रस नहीं लेखो ॥ इह ते ग्लानि मोहि उपजि बसेखो ॥
जान्यो जिये वृथा श्रम कीना ॥ इहि विंजन कछु सा
र न चीना ॥ मोरे जानि परयो कछु नाहीं ॥ भक्त भक्त
भाखत इहि काहीं ॥ तब भगवन अस वचन बखाना ॥
अब लग तुमहि भयो नहीं ज्ञाना ॥ महिमा परम भक्त
मम जोई ॥ मै जानहु जानत किमि कोई ॥ दोहा ॥ विरचे वि
जन जेवन तुम सो अरपे मोहि तास ॥ मोरे कस पु

हि

अपवर्ग के

सब

दोहा

२८८

144

क्यों न तुम सकल स्वाद मोहि भाख्यउ॥२४॥ टीका॥ इस प्रकार वालमीकने सब भोजन भगवान को अरपण करके फिर सब इकत्र करदिये और तिसमेसे एक ग्रास मुखमे पाया तब एक बार संख धुनी करता भया ऐसे वालमीकने सब भोजन पाय लिया परन्तु फिर दुबारा संख नहीं बजा यद्यपि भगवानने कोप करके तिसको ताडन भी किया तद्यपि सो नहीं बाजता भया तब भगवान द्रोपदी से पूछने लगे कि संख किस कारन से मौन रहा है ऐसे हरी के मुखसे वचन सुन कर द्रोपदी कुछ सकुचसे कहने लगी कि हे भगवन मै नाना भांत के व्यंजन ल्याई थी और इस वालमीकने मिलाय कर सब इकत्र कर दिये लोयकर कुछ रस अनरस नही विचारा ताण इह मेरे हृदय मे अतसे गिलानी है जो मैने वृथाही श्रम किया इसने व्यंजनो की कुछ भी सार नहीं पाई भक्त भक्त कहते हैं मेरे को तो कुछ जान नहीं पडा तब कृष्ण भगवान कहने लगे कि द्रोपदी तेरे को अबी तक ज्ञान नहीं भया है मेरे भक्त की महिमा और भेद जो है सो मैही जानता हूं और कोई नहीं जानता है तैने जो नाना प्रकार के व्यंजन ल्याय कर दिये सो तो तिसने सब मेरे को अरपण किये तिनके रस और स्वाद को मै जानता हूं तूने मेरे से ~~पूछना था~~ क्यों नहीं पूछा॥२५॥ चौपाई॥ रस अनरस सम हेस ति एही भक्त मोर अति परम सनेही॥ जब भगवन अस गिरा उचारी॥ मिट्यो सकल भ्रम द्रुपद कुमारी॥ अति आचर्ज मानस निज मानी॥ वंद्यो वालमीक पद पानी॥ जब द्रोपदि पद सुपच जुहारे॥ तब हे संख धुनि घोर पुकारे॥ सुर नर मुनि देखत विसमाने॥ भक्ति प्रभाव महान वखाने॥ मुनि सुर विप्र धरन पति जेते॥ नावहिं सीस सुपच पद तेते॥ प्रभु कहे वार वार सिहाहीं॥ ■ तोर भक्त

बह्यो जात नयनन जलधारा॥ कृस्न देव उरली न जुड़ाई॥ वालमीक पग परसो लजाई॥ निकसत प्रेम विवस नहिं वैना॥ साधु दुजन मन अचरज हैना॥ नि जनिज वदन कहत असलारी॥ अहो प्रेम कर रीति न यारी॥ दोहा॥ तब इक कर गहि कृस्न तहि इक कर नृपति गहेत॥ ल्याये मख थल दीन कल आसन सुभग पुनीत॥२२॥ टीका॥ तब वालमीक कहने लगा कि हे नाथ मैं नहीं जानता हूं जो इह मेरे कवन पुन्य हैं क्योंकि जो आप का वार बुहारन हारा अर्थात झाडू बरदार है तिस के घर मे आपने चरन धारन किये हैं और नीच जाती मे द और महा मलीन था आप ने कुछ भी हेकौं विचार नहीं किया इह आचर्ज मेरे को लखा नहीं जाता है अब दीनानाथ जो आज्ञा है सो कहिये तब अरजुन कहने लगे कि हे भक्त प्रधान धरम भूप तुमारे दरसन की अभिलाखा करते हैं अब चलो यज्ञ जो है सो सफल करो और राजा को सुजस और ~~कीरती वादे~~ बडाई देवो॥ तुम कैसे हो कि संत भक्तों सृष्ट और कृस्न भगवान के परम प्यारे ऐसे कहि कर तिस के चरनो की धूड़ी को सीस पर धारन कर के और फिर साथ लेकर जहां राजा पाडू और भगवान विराजमान थे तहां आय गये तब वालमीक को आवते देख कर कृस्न भगवान और राजा जुधिष्टर आगे हीं द्वार पर चले आये इ धरम भूप जो है सो ~~[illegible]~~ प्रेम करके व्याकल भया हुआ धाय कर वालमीक के चरनो पर गिर पड़ा और भुजा भर कर वार वार मिलने लगा नेत्रों से प्रेम जल बहा चला जाता है फिर भगवान कृपानिधान अत्यंत प्रीती से तिस को हृदय मे जुड़ाय ले ते भये वालमीक लजित भया हुआ हृदय से छूट कर भगवान के चरनो पर गिर गया प्रेम कर के व्याकुल भये हुये से कुछ बचन नहीं निकलता तब साध ब्रह्मता ऋषी मुनी इह अदभुत देख कर वडे आचरज को प्रापत

और बड़ा आचरज मान कर भक्ती के प्रभाव की अनेक प्रशंसा करने लगे ः ऋषी मुनी साध ब्रह्मणादि जो ~~इन सब तिन~~ के चरनों को बारंबार प्रणाम करते भये भगवान कृपानिधान का नाना प्रकार से सुजस और प्रसंसा करने लगे कि हे दीन बंधू तुम धन्य हो और धन्य तुमारे भक्त हैं कि जिनकी महिमा और प्रभाव का कुछ ~~अंत~~ अंत नहीं पाया जाता है ~~ऐसे कहि कर ऐसे सब मुनियों का समाज~~ और आज इह पांडु पुत्र भी धन्य और इनकी करनी भी धन्य है ऐसे कहिकर मुनियों का समाज ~~जो है सो~~ जै जै शब्द को उचारन करते भये इस प्रकार राजसू यज्ञ जो है सो पूरण होता भया और बालमीकी सुंदर भक्ती और सुजस दसों दिसा में व्यापत हो गया तिस समय एक पुरुष नकुल जो नेउला है तिस को साथ लिये हुये तहां आय करके प्रापत होता भया सो ऊंची स्वर से प्रकट करके सब को कहने लगा कि हो भाई मैं तो तीन लोक में फिरि आया हूं एक समय मरुत राजा के राजसू यज्ञ में कि जहां अनेक मुनी ऋषी संत महातमा आये हुये थे मैं इस नकुल के सहित जायकर तहां प्रापत भया तिस यज्ञ की अनन्त महिमा और प्रभाव जो है सो सुनो जो मैने तहां संतों के चरन प्रक्षालन किये हुये जल मैं इस नकुल को न्हाया तब तुरत हीं इसका आधा शरीर सुवर्न का हो गया मैं इह प्रभाव देखकर बड़े आचर्ज को प्रापत भया तब तें मैं जहां जहां राजसू यज्ञ होता सुणा है तहां तहां जायकर इसको बहुत बार लोटाया है परन्तु इह आधा शरी इसका सोवर्न का नहीं भया इस प्रकार तिसका वचन सुनकर भगवान हसकर कहने लगे कि इसको अब हीं बालमीक के चरनों के जल मैं

जब

लोटा को तत काल ही सुवर्न का हो जावेगा तव तिसने भगवान के कहिने पर नकुले वालमीक के चरनो के जल मे लोटा तो तत काल ही तिसका आधा शरीर सुवर्न का वन गया इस अद्भुत को देख कर सब लोग आचर्ज हो गये और भक्ती के प्रभाव को अनन्त जान कर जैजै शब्द उचारन करते हुये वार वार भगवान के चरनो मे प्रनाम करते है तव अनेक प्रकार भगवान का सुजस गायन कर कर और प्रसन्नता पूर्वक आज्ञा लेकर सब मुनी ऋषी संत महातमा अपने अपने आश्रमो को चले जाते भये इस प्रकार इह वालमीक की पवित्र भक्ती का महातम और राजा जुधिष्टर का सुंदर चरित्र गायन किया गया है इसके प्रीती पूर्वक पढने और श्रवण करने मे कृस्न भगवान की सुंदर भक्ती जो है सो निरन्तर करके ह्रदय मे दृढ होती है॥११॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती महातमे भाषाटीकायांम जुधिष्टर तथा वालमीक चरित वरनने नाम सरगः॥

अथ जनार्दन चरित्रे

अथ ब्रह्मदत्त तथा सहमित्र चरित्रे

दोहा॥ कृस्न चरन रति दायनी हरन सकल भ्रम भीत॥ करन मोद मंगल महा वरनहु कथा पुनीत॥ विप्र जनार्दन नाम इक निपुण भक्त भगवान॥ तहि हरि वंस पुराण मध कथा श्रवण सुखदान॥ चौपाई॥ ब्रह्म दत्त इक भूप मधीरा॥ वसिहे सालव नगर गुण धीरा॥ धरम निरत इंद्रय जित ज्ञानी॥

अनक जज्ञ कारक जग मानी॥ महिखी रही तास
कल दोई॥ सुमति सुशील विपुल गुण सोई॥ भूप
मित्र इक विप्र रहावा॥ जहि सहमित्र नाम जग गा
वा॥ नृप अरु विप्र मित्र सह काहीं॥ दीन नदेव सुव
न गृह माहीं॥ नृपति कीन चिर राज अभंगा॥ विप्रमि
त्र जुत हृदय उमंगा॥ अवसर एक पुत्र दुख मानी॥
नृपति यज्ञ वैष्नव रुचि ठानी॥ हेतु प्रसन्न श्री भग
गवाना॥ मख वैष्नव नृप कीन महाना॥ विप्रमित्र
सह तिमि जिय जानी॥ कृष्न प्रसन्न हेतु सुख मानी॥
वेद वहीत पुनीत अचारा॥ करि कीन्यो वैष्नव
मख भारा॥ नृप दुज भक्ति प्रेम दृढ जाना॥ भे प्र
सन्न हरि हर भगवाना॥ गये नरेस यज्ञ ससिमा
ला॥ आये कृष्न विप्र मख शाला॥ दोहा॥ नर
नायक हर पगन पर वर माग्यो कर जोर॥ देहु
पचेर प्रताप पर प्रभु मोहि जुगल कशोर॥॥
टीका॥ नाभा दासजी कहते हैं कि हे गुरू महाराज
अब कृष्न भगवान के चरन कमलों मे प्रीती के देने
वाली आनंद और मंगलों के अधिक करने वाली और
मोह भ्रम आदि सब विकारों ~~के~~ नास के नास करने वा
ली सुंदर गाथा जो है सो कथन करता हूं एक जनार्द
न नामा ब्राह्मण भगवान का प्यारा भक्त होता भया
तिस की सुंदर गाथा हरि वंस पुराण मे भली प्र
कार गायन की हुई है कहते हैं कि एक ब्रह्मदत्त
नाम करके राजा बड़ा धीर्ज का धाम और धरम मे प
परायण साल्व नगर मे निवास करता था कैसा
था कि सरब गुणों का समुद्र इंद्री जीत बड़ा ज्ञानी
और अनेक यज्ञों के करने वाला अत्यंत मानी था
तिस राजा की दो स्त्री होती भई सो कैसी कि वड़ी सुशी
ल और सुमती सरब गुणों मे चतुर थी तब राजा
का एक ब्राह्मण सहमित्र नाम करके अतीत सुहृद

(margin: कवित्त; ३०; २९ ?)

महिमा अव नाहीं॥ जैति शब्द सब करहिं समाजू॥
कहत धन्य पांडव सुत आजू॥ राजसूय पूरण
तब भयेऊ॥ वालमीक जस दसदिस छयेऊ॥ आ
वा तहां एक जन काहू॥ लीने संग नकुल इकता
हू॥ प्रकट तास अस वचन अलावा॥ मैतो तीनलो
क फिरि आवा॥ मरुत राज कर राजसु माहीं॥ गयो
नकुल जुत मुनिगण जाहीं॥ तहि मखकर कल
इमत प्रभाऊ॥ सुनिनहु संत मुनि ऋषि वर राऊ॥
दोहा॥ तिन पद प्रक्षालत सलिल नकुलहिं लोट
ने कीन॥ भयो कनक आधो वपुख सै प्रभाव इह
चीन॥ जहें जहें भामख राजसू मैं तहें तहें नि
ज जाय॥ नकल लुटायो वार बहु भयो नकेंचिनका
य॥ मुनि भाख्यो भगवन विहसि अवहिं सुपचपद
तोय॥ लौटावहु निज नकल कहें कस नकनक
वपु होय॥ तव लौटायो नकुल कहें वालमीक पद
वार॥ भयो प्रकट आधो कनक लीन्यो सवन निहार॥
भये सकल अचरज विवस जयति जयति धुनिगाय॥
भक्ति प्रभाव अनन्त लखि कृष्ण चरन सिरनाय॥
विविध सुकीरति वदन निज करि हरि भक्त सनेहु॥
हरि अनुसासन लेत सब गवने निज निज गेहु॥
अस ■ इहपावन चरित मैं वालमीक कहुगाव॥
जासु सुनत स्रुति प्रीति दृढ कृष्ण कमल पदभा
व॥ ९४॥ टीका॥ भगवान कहते हैं कि द्रौपदी इसमे
रे भक्तको रस अनरस एकसमान है और मेरा इह
परम पयारा भक्त है जब इस प्रकार भगवानने कहा
तव द्रौपदी के हृदय का भ्रम जो है सो सब मिट गया और
बहु आचर्ज मान कर वालमीक के चरनोको वार वार
वंदन करने लगी तो जव द्रौपदी ने वालमीक के चर
नोको वंदन किया तव संख जो है सो वडे जोर नाद से
बाजता भया तिसको सुर नर मुनी सब देख कर

संतमाल ४६

कानन पंच वरष लग तीन्यो॥ विधिपूर्वक हरिह
र तप कीन्यो॥ नृप सुत रहे करत तप जाहां॥ आ
ये हर प्रसन्न मन ताहां॥ दोहा॥ मागहु मागहु भक्त
वर मुहि प्रसन्न जिय जान॥ तब कीन्यो तप क
ठिन मम तजि भरोस जग आन॥२॥ टीका॥ और
सहमित्र नामा ब्राह्मणने भी तैसेहीं विष्णुमहाराज
से अपने मनको भावता वर मांगा कि हे दीनानाथ अ
पना अनन्य सेवक कि जिसको तुमारे विना और नहि
भासता होवे और बडा जशमान और भक्तीमान ऐ
सा जो पुत्र है सो मेरे को देवो इस प्रकार तहां महा
देवने प्रसन्न होकर राजाको दो पुत्र ऐसे दिये कि
जो अमर अखेड और रणमे बडी धीरजके धारने
वाले ~~होतेभये~~ और तैसेही तिस ब्राह्मणको भी
विष्णुमहाराजने विषयों से विरक्त और अभिमानसे
रहित केवल अपना भक्तहीं पुत्र दिया तब राजा
के पुत्र जो थे सो जगतमे बडे प्रबल और प्रतापी म
हा सूर वीर ~~भये~~ ~~और~~ हंस और डिंभक ~~तिनकरके~~ जिनकर के
प्रसिद्ध होते भये और ब्राह्मणके घरमे जो पुत्र
जनमा ~~भया~~ तिसका नाम जनार्दन राखा तब ब्राह्मणके पु
त्र और राजाके पुत्रोंका ~~भी~~ परस्पर ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ अत्यंत अभंग सनेह होजाता भया
शस्त्र और शास्त्र विद्या पढकर भलीप्रकार प्रवी
न होगये तब रुचीसे घरको त्याग कर तप कर
नेके वासते बनको चले जाते भये तहां राजाके
पुत्रों ने तो अजै होने होनेके निमित्त महादेवके च
रन हृदयमे धारकर तिनकाही अखेड तपकिया और
ब्राह्मणके पुत्रने भक्तीकी ~~कामना~~ प्रापती के वासते
विष्णु महाराजका उग्र तप धारन किया तब बनमे
पांच वरष तक तीनोने सुंदर विधी पूर्वक हरिहर
का तप जो है सो किया तो जहां राजाके पुत्र तप
कर रहेथे तहां विश्वनाथ महादेव प्रसन्न होय कर

आय प्राप्त होते भये और कहने लगे कि हे भक्त तुमने और कामना सर्व त्याग कर केवल मेरा ही अखंड तप किया है तो ते मै तुमारी भक्ती देखकर प्रसन्न भया हूं अब तुमारे मन की जो इच्छा है सो मांगो मै तुमको वर देता हूं ॥२॥ चौपाई ॥ भूप सुवन सुनि संकर बानी ॥ मानहु तप निद्रा ते जागी ॥ उठि हरष पूरित जुग भाई ॥ हर पद परे दंड वत जाई ॥ अस तुति लगे करन बहु भाती ॥ जैति जैति हर त्रिपुर अराती ॥ जै प्रभु भाल चंद्र सुख सारा ॥ जै हर हरन त्रास संसारा ॥ जैति जैति शंकर भगवाना ॥ जैति वृषभ पती कृपा निधाना ॥ जै उमा ईस गौरीस गरीसा ॥ जैति जैति भुजंग भरन अहीसा ॥ जै गंगाधर जैति पिनाकी ॥ जैति भीम भगवान इकाकी ॥ जै जै नंदि नाथ वर दाता ॥ जैति भसम सित मंडित गाता ॥ जैति जैति चरमंबर धारी ॥ जै जै मदन दहन दुख हारी ॥ जै जै करन विश्व संघारा ॥ जैति जैति प्रभु भक्त उधारा ॥ जै जै भूत चराचर सेवा ॥ जैति जैति मंडित दुज देवा ॥ दोहा ॥ अस प्रकार अस तुति करत तिन मांग्यो वर एहु ॥ हम कहे सो तृति असुर सुर जीति सकै नहिं केहु ॥ ३ ॥ टीका ॥ तब राजा के पुत्र संकर देव की ऐसी बानी सुनकर मानो तप की जो निद्रा है तिस से जागते भये और हरष करके पूरित भये हुये महादेव के सनमुख देखकर दंडवत चरनो पर गिर पडे फिर उठकर और दोनो हाथ जोडकर सुन्दर अस तुती जो है सो करने लगे कहते हैं कि जै हो जै हो तुमारी हे त्रिपुरासुर को वध करने वाले शंभू जै हो तुमारी हे हर मसतक मे चंद्रमा धारने वाले जै हो तुमारी हे संसार का भय दूर करने वाले जै हो तुमारी हे शंकर भगवान जै हो तुमारी हे वृषभ पती कृपा निधान जै हो तुमारी हे उमा नाथ हे गौरी नाथ हे गिरी नाथ जै हो तुमारी हे गंगाधर हे पिनाकी हे ~~भुजंग~~ भुयंग भूषणधारी जै हो तुमारी

८८
अयोध्याकांड

हे श्री भगवान हे नंदी नाथ हे भसम के रमने वाले
हे भक्ता वरदायक जै हो तुमारी हे वाघंबर धारी
हे कामदेव के दाध करने वाले जै हो तुमारी
हे सरव चराचर के स्वामी हे विश्व का संघार करने वा
ले जै हो तुमारी हे देव ब्राह्मण गौ पृथवी की रक्षा कर
ने वाले इस प्रकार शंकर भगवान की अस्तुति क
रके तिन राजा के पुत्रों ने इह वर मांगा कि हे भगवन
संसार में मानख्य सुर असुर कोई भी हमको जीत
नहीं सकैं॥३॥ चौपाई॥ दीजे दिव्य अस्त्र हमका हीं॥
आवहिं मीच निकट रण नाहीं॥ एवमस्तु कहि श्री
भु कृपाला॥ दीने अस्त्र समर अरि ज्वाला॥ बहुरि कृपा
जुत वचन उचारे॥ सदा संग तुमरे रखवारे॥ रहैं
सुभट जुगल गण मोरे॥ अरि कौ जीति सकैं नहिं
तोरे॥ इह तुमरे जन सदा सहैया॥ रिपु कहँ का
ल रूप दरसैया॥ केउदर विरूपाक्ष वखानौ॥ वि
श्वदत नाम निज रक्षक जानौ॥ अस कहि अंत्र ध्या
न शिव भयेऊ॥ हृदय हेस रिंभक सुख छयेऊ॥ हे
मु प्रसाद कवच कहि धारन॥ पानि परसु गहि श्रो
क निवारन॥ दोहा॥ जुगल वीर गवने भवन भीम
संग गण दोऊ॥ सदन आय वंदो चरन जनक ने
म वत होऊ॥४॥ टीका॥ फिर राजा के पुत्र कहने लगे
कि भगवन हमको दिव्य अस्त्र जो हैं सो कृपा करके दे
वो मीच जो मौत है सो रण मे हमारे निकट नहीं
आवे तब शंकर भगवान ने एवमस्तु कहिकर कि
ऐसे ही होगा शत्रू के नाश करने वाले दिव्य अस्त्र जो हैं
सो ~~[illegible]~~ दिये फिर कृपा करके कहने लगे कि हे
भक्त जन मैने तुमारी सदैव की सहायतां के वास्ते
अपने शूरवीर दो गण तुमारे संग कर दिये हैं अब
तुमको कोई शत्रू रण मे जीत नहीं सकेगा इह
तुमारे सहायक तुमारे शत्रू को काल रूप देखपड़ेंगे

औरहितकारी मित्र होतामया देव इच्छा करके राजा
और ब्रह्मण इन दोनोके घरमे कोई पुत्र नहीं था तव
राजाने तिस ब्रह्मणके सहित वहुत काल प्रयत्न राज
किया कोई किसी प्रकारका विचन नहीं भया एक
समय हृदयमे पुत्रका दुख मान कर राजाने वैस्नव य
ज्ञ करनेका मनोर्थ किया तव महादेवके प्रसन्न करने
के वासते राजाजोहै सो तिस वैस्नव यज्ञको वडी प्रीती
पूर्वक करतामया और तिस सहमित्र नामा ब्रह्मणने
भी पुत्रकी अभिलाखासे कृस्न प्रमात्मा की प्रसन्नता
के वासते वेदकी विधी अनुसार वडा सुख मानकर वि
स्नु यज्ञजोहै सो किया तव राजा और ब्रह्मण की भक्ति
और प्रेम दृढ जानकर हरि हर जो विस्नु और शंकर
हैं सो प्रसन्न होजाते भये ततकालहीं राजाके यज्ञमे
महादेव चलेगये और ब्रह्मणके यज्ञमे कृस्न भग
वान [illegible] जाते भये तव राजाने महादेव के चरन पकड
कर और हाथ जोडकर इह वर मांगा कि भगवन मेरे घर
मे दो पुत्र उतपन्न होवें परन्तु कैसे होवें कि वडे प्रवल
और प्रचंड महा प्रतापी जिनको कोईभी जीत नासके
॥२॥ चौपाई॥ विप्रमित्र सह तिमि हरिपाहीं॥ माग्यो
वर भावत जिय काहीं॥ निज अनन्य सेवक जस मा
ना॥ देहु सुवन मुहि कृपा निधाना॥ अस हर नृप
हि दीन सुत दोई॥ अमर समर धीरज धृत होई॥
तिमि सुत दुजहिं दीन भगवाना॥ विषय विरक्त
भक्त गत माना॥ भे नृप सुत जग प्रवल अपारा॥
नाम हेस हिंमक तिन धारा॥ राख्यो नाम जनार्द
न तासा॥ विप्र सदन जोई सुवन प्रकासा॥ दुज
सुत कर नृप पुत्रन संगा॥ वन्यो परस्पर नेह
अभंगा॥ शास्त्र शास्त्र पढि भये प्रवीना॥ तव त
प हेतु गवन वन कीना॥ कीन उग्र तप नृप कुमा
रन॥ करि निज हृदय शंभु पद धारन॥ जाचिन
भक्ति भक्त हित कारी॥ कीन उग्र तप विप्र मुरारी॥

तारन बधुवार॥ द्रुपद सुताकी लाज तहो तुम राखी
जे दुराय॥ तुम हु भये प्रहलाद कर धर नरसिंह रूप राय॥
॥५॥टीका॥ फिर हंस और डिंभक कैसे शोभायमान थे
कि त्रिपुंड तिलक जो है सो मस्तक मे सजा हुआ है और स्वेत
भस्म शरीर मे रमाई हुई मानो चांदनी को लज्जा देती है रुद्रा
क्षों की सुंदर माला धारी हुई सिर पर मनोहर जटा और
तिनके बीच गंगा उलझी हुई बाघंबर वस्त्र और ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ आठो पहर शिव शिव शिव धुनी जिनके हृदय मे
बाजती है ऐसे राजा के पुत्र महा प्रबल और प्रतापी आ
नंदपूर्वक अपने घर मे निवास करने लगे और उ
हां ~~[illegible]~~ ब्राह्मण के पुत्र जनार्दन नामा ने विष्णु भगवा
न के प्रसन्न होने के निमित्त तपस्या जो करी तो कैसी क
री कि हरे राम रघुवर रघुराई केशव कृष्ण इस
प्रकार भगवान के नामों को तिसकी रसना जो है सो रा
त्रीदिन रटती भई और नेत्रों से प्रेम जल का प्रवाह
चला जाता है वार नहीं लेता है शरीर से अचेत भया
हुआ भगवान के भजन मे लीन हो रहा है ऐसे तिस
को रात्रीदिन हरी हरी रटते को पांच वरष बतीत हो
जाते भये तब तिसकी अवदिल कि जिसमे कोई विरल
नहीं थी ऐसी भक्ती देखकर भगवान प्रसन्न होकर
ततकाल प्रकट हो जाते भये तब ब्राह्मण ~~[illegible]~~
भगवान कृपानिधान को सनमुख देखकर प्रेम करके
व्याकुल भया हुआ तुरत ही चरनो पर गिर पड़ा फिर कुछ
कवेर के पीछे उठकर और दोनो हाथ जोड़ कर अस्तुती
जो है सो करने लगा कहता है कि जै हो तुमारी हे जा
दवों मे सृष्ट हे कृपा के धाम जै हो तुमारी हे भगवन तुम
कैसे हो कि दीन जनों का उद्धार करने वाले और तुम ही
शरण पड़े ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ दुख निवारने वाले हो तुम ही ब्राह्म
ण देवता पृथवी गौओं की रक्षा करने वाले हो अप्र
ती पुरषों की तुम ही शरण हो और गरीब निवाज

भी तुमहीं [illegible] कहावते हो तुमहीं सरब जगत के आधार
हो और भक्त जनो के उधारने वाले भी तुमही हो गोतु
म की स्त्री के तारने को [illegible] तुमहीं सामर्थ होकर जगत मे
प्रसिद्ध भये हो और बारन जो हस्ती है तिसको तेंदवे के फंध
से छुड़ाने वाले भी तुमही हो अजामेल जो महा पापी था
तिसको उधारने वाले और गनका के चनी को तारने
वाले भी तुमहीं हो ~~जैसे तुमारी हे भगवान~~ द्रोपदी की
तहां कौरवों की सभा मे लज्जा राखने को तुमहीं सामर्थ भ
ये हो और प्रहलाद की भी नरसिंह रूप होकर तुमने हीं सहा
यता करी जैसे हो तुमारी हे भगवान तुम सरब कला साम
र्थ और सब चराचर के स्वामी हो ॥४॥ चौपाई ॥ अस प्रकार
अस्तुति मुख गाई ॥ भगता प्रेम दृग बारि बहाई ॥ तब
प्रसन्न भगवान अस काहा ॥ मागहु भक्त जवन रुचि
रा हा ॥ तुब निस कपट कीन सिवाई ॥ मै प्रसन्न तुमपें दु
जराई ॥ तब दुज जोरि जुगल कर भाषा ॥ अब मोहि ना
थ कवन अभिलाषा ॥ जोगि सिद्ध तापस मुनि ज्ञानी ॥
करहि जतन हठ अनक अमानी ॥ तुव दरसन हित भक्त
उधारी ॥ नाना लेहिं बपुख दुख भारी ॥ तिनके हूं ध्यान
मात्र भगवाना ॥ आवत कबहूं न कृपा निधाना ॥ मोर
भाग्य कर कवन बड़ाई ॥ जो प्रतक्ष प्रभु सनमुख आई ॥
मांग मांग बर देव उचारा ॥ मोहि सम कवन धन्य संसारा ॥
जेहि गोचर दृग त्रिभुवन राई ॥ का मागहुं अब भक्त सहा
ई ॥ पै मोपें प्रभु जो अनुकूला ॥ तो मोहि देहु सकल
सुख मूला ॥ चरन कमल निज भक्ति सुहाई ॥ अब दिल
प्रेम सेत सिव काई ॥ दोहा ॥ इह दाया निध देहु मोहि
नहिं न आन कछु काम ॥ बोले मुनि दुज बचन अस
रमारमन अभिराम ॥८॥ टीका ॥ इस प्रकार भगवान
की अस्तुती गायन करता भया और नेत्रों प्रेम
नीर जो है सो बहा चला जाता है तब प्रसन्न हो

कर भगवान कहने लगे कि हे भक्त अब जो तेरे मनकी रुचीहै सोवर मांग क्योंकि तूने निस कपट होकर मेरी भक्ती सिवकाई करीहै तिसतें मै तेरे पर अत्यंत प्रसन्न भयाहूं तब जनार्दन ब्राह्मण हाथजोड़ कर विनती करने लगा कि हे भक्तपाल अब मेरे को कौन अभिलाखा रही है जोगी तपी ऋखी मुनी साध सिद्ध ज्ञानी अभिमानी इत्यादि सब तुम्हारे दरसके वासते जप तप हठ इत्यादि अनेक कठिन साधना को धारन करते है परन्तु हे भगवन तुम तिनके ध्यानमे नहीं आवते हो देखिये मेरे भागों की बड़ाई ~~कि तुम ऐसे दुराराध जो कठिन से अराधे जाते हो ऐसे प्रभु तुम मेरे नेत्रों के सनमुख होकर कहते हैं कि वर मांग तो तेरे समान आज लोक में धन्य कौन है~~ कि तुम ऐसे दुराराध जो बड़े कठिनसे अराधे जातेहो आज मेरे नेत्रों के सनमुख प्रगट होकर कहतेहो कि वर मांग हे दीनानाथ अब क्या मांगूं तुमारे दरसनतें परे कौन वर है कि जिसके प्रसादसे मैं संसारमे धन्य धन्य होचुका हूं अब भगवन जो आप मेरे पर अनकूल हो हो तो एही वर देवो जो सरब सुखों के देनेवाली तुमारे चरन कमलो की अबिरल भक्ती और संत सिवकाई जो है सोई मेरे हृदयमे दृढ़ होवे और कोई अभिलाखा नहीं है ऐसे ब्राह्मण का वचन सुनकर भगवान कृपानिधान जिसप्रकार उत्तर देते हैं सो आगे कथन किया जाता है॥१॥ चौपाई॥ मैनिज भक्ति संत सिवकाई॥ तोरे दीन विप्र सुखदाई॥ अस कहि सजल नैन भगवाना॥ पुजहिं

१के

~~और~~ केरोदर और विरूपाक्ष इनदोनो तुमारे स
हायकौंनाम है ऐसे कहिकर महादेव अन्तर्ध्यान
होय गये ~~और~~ हेस और डिभक दोनो बड़ा सुखमान
कर शिवशंकर के प्रसादसे कवच जो सजोहै सो धा
रन करके और शत्रुके वध करने वाला परसू जो
कुहाड़ा सो हाथमे लेकर बड़े आनन्द पूर्वक घरको
चले आवते भये तहा आयकर पिताके चरनो पर नम्र
होकर ~~सीस नावते भये~~ बारबार प्रणाम करते भये॥४॥
चोपाई॥ ललित लिलार त्रिपुण्ड्र विराजत॥ भस्मसे
त तन चांदनि लाजत॥ रुद्राक्षन स्रज अंगन धारू॥
पिंगुल सीस देवसरि चारू॥ अघ जाप शिव शिव
धुनि बाजे॥ बाघंबर अंबर तन साजे॥ असनकेत
निज भिक्षन लागे॥ नृपसुत प्रबल जुगल बड़भागे॥
उत जनार्दन विपुन निवस्यो॥ हरि प्रसन्न हित कीन
~~कीन~~ तपस्यो॥ हरे राम रघुवर रघुराई॥ केशव कृ
ष्ण जनन सुखदाई॥ रटत रुचिर रसना दुज एहू॥ प्रे
म वारि दृग बार न लेहू॥ सुधि सरीर सगरी बिसराना॥
भजत नरेत्र कृष्ण भगवाना॥ पंच बरष इहि भांति
बिताया॥ हरि हरि रटत दिवस निसि तासा॥ अब दि
ल भक्ति प्रेम दुज जाना॥ प्रकटि प्रसन्न भये भगवाना॥
विप्र देखि प्रभु कहे अकुलाई॥ परयो लुकट इव
चरनन जाई॥ अस्तुति कस्यो अनेक प्रकारा॥ जै
जै जदुवर कृपा अगारा॥ तुमहि दीन उद्धारन हारे॥
तुमहि शरनागत दुख निवारे॥ तुमहि विप्र सुर मे
दनि गैया॥ दीन दयाल दुख त्रास हरैया॥ असरन
सरन तुमहु जग जाने॥ तुमहु गरीब निवाज कहा
हाने॥ तुम आधार सकल जग केरे॥ तुमहु भक्तजन
सुखद घनेरे॥ दोहा॥ मुनितीय तारन तुम विदित
वारन शोक निकार॥ तुमहु उबारन अजामल तुम

व्याघ्र मृग वाना॥ हते कौन मृग जानत नाना॥ जु
गल जाम विहरत वन माहीं॥ बीति गये दुज नृप सु
त काहीं॥ चमू समेत थिकत भये भारी॥ तव आये
पुष्कर तट सारी॥ करि जल पान कियो विस्रामा॥ त
हां वसहिं तापस मुनि नाना॥ सुनत वेद धुनि से न
तयागे॥ नृप सुत दुजन दरस अनुरागे॥ विप्रमीत नि
ज संग लिवाई॥ गवने जहे मुनि मंडलि छाई॥ मुनि
दरसन करि नृपसुत तेहीं॥ वंदि चरन सुभ आसिष
लेहीं॥ वहुरि नम्र वत कहत उचारी॥ मुनि कृपाल
अस विनय ~~अस उचारी~~ हमारी॥ पितु करि राजसूय
मख काहीं॥ विजय करन सब मेदनि चाहीं॥ हम ज
ब करिहैं निमंत्रण तोरे॥ तब ऐहो तुम मुनि पुर मो
रे॥ दोहा॥ अस प्रकार सव मुनिन सन विनय करत कर
जोरि॥ आश्रम आश्रम मुनिन के फिरत नरेस कशोर॥
॥५८॥ टीका॥ तव एक समय राजा के पुत्र हेमरि
भक नाम दोनो अपनी सेना सजाय करके तिस
ब्रह्मण मित्र के सहित वण को शिकार खेलने के वा
सते जाते भये तहां जायकर अनेक वराह और व्याघ्र
मृग जो हैं सो वाणों से हनन किये इसप्रकार मृगजान
त जो शिकार है सो करते करते तिन राजा के पुत्रों को
तिस ब्रह्मण के सहित ~~के~~ वण में दोपहर वतीत
हो जाते भये तहां वन में फिरने के श्रम से सेना समेत
सब लोग व्याकुल होय गये तब पुष्कर तीरथ
पर आयकर के विश्राम करते भये सबने जलपान
इत्यादि करके श्रम जो है सो निवारण किया तहां ती
रथ पर ~~मुनी ऋषी~~ अनेक मुनी ऋषी जो निवा
स करते थे सो चारो ओर से तिन की वेद धुनी
सुनकर तिस मीत ब्रह्मण के सहित राजा के
पुत्र सेना को निकास कर मु संग

दरसन करनेको मुनी मंडलीमे चले जाते भये तब जहां तहां मुनियों के दरसन करते हुवे और नम्र होकर चरनोंपर सीस नावते हुये सबकी सुंदर असीसा जो है सो लेते भये फिर मुनी मंडलीको हाथ जोड कर कहते हैं कि हे मुंख्यर लोगो हमारा पिता राजसू यज्ञ करके सरव पृथवी को जीतने चाहता है आपलोगों ने हमारे पर इह कृपा करनी कि जब हम तुमारे बुलावने केंहुता भेजें तो तुम कृपा करके हमारे घर मे चले आना इस प्रकार राजाके पुत्र हाथ जोड कर सब मुनियों के आगे बिनती करते हुये तिनके आश्रम आश्रम मे फिरते भये॥ ८॥ चौपाई॥ करि दरसन परसन सुख पायो॥ मुनि गण तिन सो वचन अलायो॥ करहि जग्य जब जनक तुमारा॥ तब आवन उत होहि हमारा॥ इहि विधि सुनत कथन मति न काहीं॥ गवने दुरवासा मुनि जाही॥ रुचिर सहस दस सिखन मझारा॥ राजत अनल रूप जनु धारा॥ जासको प दव भवन उदेरा॥ जरत सुरासुर ताप प्रचेरा॥ अवर अरुन देह कर धारी॥ जारन जगत अब ज्ञाकारी॥ लोचन लाल भसम वपु छाजे॥ सेत सीस जट जूट विराजे॥ मनहु काल मूरति मुनि राई॥ देखत कौ नवि कल है जाई॥ हिमक हंस निकट तहि आये॥ जोरि पानि चरनन सिर नाये॥ पूछि कुसल मानस हरषाई॥ मुनि समीप बैठे जुग भाई॥ विप्र जनार्दन मुनि पग लागे॥ कृस्न भक्त लखि मुनि अनुरागे॥ मुनि नाथहि विरतो जोय जानी॥ भूप सुतन अनुचित चित मानी॥ दोहा॥ कह्यो कठिन कटु वचन अस काल रूप मुनि काहि॥ चौर ग्रहस्त तजि कत वन्यो सन्यासी जग माहि॥ ९॥ टीका॥ इस प्रकार राजा के पुत्र मुनी लोगों का दरसन परसन करते हुये बडे सुखको प्रापत भये तब मुनी लोको ने आनंद होकर तिन कों कहा कि हे राज कुमारो जब तुमारा पिता राजसू यज्ञ करने लगे गा

तब हम अवश्य तुमारे घर मे आवेंगे ऐसे मु
नियों का वचन सुन कर सो राजा के पुत्र प्रसन्न हो
कर आगे को जहां दुरवासा मुनी थे चले जाते भये
सो दुरवासा मुनी तहां दस हजार शिष्य के बीच मा
नो अगनी का रूप धार कर बैठे हुये थे फिर कैसे थे
कि जिन के कोप से शाप की ज्वाला करके तीन
भवन और सुरासुर सब जलते वेर नहीं लगती
लाल वस्त्र और लाल हीं नेत्र जिन के शरीर मे भसम
रमी हुई और सिर पर स्वेत बालों की जटें सरब
जगत की अवज्ञा के नास करने वाला हाथ मे धार
न किया हुआ दंड सो मुनियों के नायक मानो सा
क्षात काल रूप धार कर बैठे हुये हैं तिन को देख कर
कौन नहीं व्याकुल हो जाता तब ऐमक और हंस जो
हैं सो तिन के पास आय कर चरनो पर दंडप्रणाम
करके और भली प्रकार कुसल पूछ कर दोनो भ्राता
मुनी के पास बैठ जाते भये फिर जनार्दन ब्राह्मण
भी मुनी के चरनो पर दंडप्रणाम करता भया त
ब मुनी तिस को भगवान का भक्त जान कर बड़ा स
नमान देता भया तिस ते उपरान्त राजा के पुत्र
मुनी को जगत से विरक्त जान कर हृदय मे
बड़ा अयोग्य देख जो है सो ल्यावते भये और कोप से
अति कठिन और कटू वचन तिस काल
रूप मुनी को प्रकट कहने लगे कि हे चोर तू ग्रह
स्त को त्याग कर क्यों सन्यासी बना है॥२॥ चौपाई॥
प्रथम धरहि सन्यास न कोई॥ ग्रहस्त आश्रम
विधि जुत दृढ होई॥ पहिरे रंगे वसन पाखंडी॥
मूरख बन्यो मृखा तब दंडी॥ कहिते तीन वेद
प्रतिकूला॥ लीनी अधम ग्रहस्त पथ भूला॥

अति मान से गलित भये हैं ॥२

लीन निज हृदय जुराखौ ॥ तब हरि वदन निज त्रिभुवन राया ॥ कह्यो दुज हि अस मुदित दाया ॥ कछु दि न मेरी प्रवर करि सेवा ॥ मेरे धाम तुव ऐहै अमेवा ॥ अस कहि कृष्ण अंतर हित भये ऊ ॥ विप्र मुदित आश्रम निज गये ऊ ॥ तबते एहु रुचिर व्रत धारा ॥ राख्यो कृष्ण चरन आधारा ॥ उरध पुंड्र समतिक कलसे हित ॥ द्वादस तिलक अंग मन मोहित ॥ सुचि वनमाल के ठ कर लीला ॥ सरल सुभाव सनेह सुशीला ॥ दो० ॥ अस डिंभक अरु हंस जुत विप्र जनार्दन जोय ॥ सात्व नगर निवसत भये मुदित सुजस रत होय ॥ ७ ॥

टीका ॥ भगवान कहते हैं कि हे भक्त मैने तेरेको अपनी भक्ती और संत सिवकाई जो सरब सुखों के देनेवाली है सो तेरेको दान करी है अैसे कहि करके नेत्रों मे जल भरे हुये भगवान तिसको हृदय से लगाय लेते भये फिर दया करके भरे हुये दीनानाथ तिसको कहने लगे कि हे भक्त तुम रहो कुछ दिन मेरी सिवकाई करके फिर सहजेही शरीर को त्याग कर मेरे धाम को चले आवोगे अैसे कहि करके भगवान अंतर्ध्यान होगये और ब्राह्मन हृदय मे आनन्द मानकर अपने आश्रम को चला आवता भया तबतें तिसने एही सुंदर ब्रत धारन किया जो केवल एक कृष्ण भगवानके चरन कमलों को आधार राखलिया उरध पुंड्र जो रामानंदी तिलक और अंगों में सुंदर द्वादिश तिलक जो हैं सो धारन करता भया और तैसेही मनोहर तुलसी की माला कंठमै वडे सरल और साधु सुभावसे हंस और डिंभक जो राजाके पुत्र हैं तिनके सहित सात्व नगर मे निवास करता भया ॥ ७ ॥ चौपाई ॥ एक समय न्रप सुत जुग वीरा ॥ सैन सजाय करि मुदित रन धीरा ॥ लिये जनार्दन दुज कर संगा ॥ कानन गये करन मृग भंगा ॥ तहां वराह

मो हित किया हुआ है सरवप्रकारसे तूं आचार
और ज्ञानसेरहित है तेरेको भसम रमावनेमै ल
ज्जा नहीं आई तूं तो केवल अमंगल रूप बनाय क
रके जगतमै दुरवासा नाम रखाय लियाहै परं ऐसे से
पाखंडियों को पकड कर हम जोरावरी से भी दंड देते
है तेरें ऐसे सुनायकर कहने लगे कि पकडो इसको
रवी बांध लेवो तहां घरमे ले जायकर इसका विवा
ह करावेंगे तब वेदकी विधीसे ग्रहस्ती बनायकर
और सब संसकार करवाय कर फिर इसको सन्यासी ब
नावेंगे ॥१०॥ चौपाई ॥ असमनि जाय ऋषि मुनि पा
स॥ बैठे जुगल जनु बल रासा॥ तहां बहुरि क
टु वचन प्रकासा॥ रे सठ देख निरत दुरवासा॥ न
हिन मूढ कछु ज्ञान तुमारे॥ वृथा सहस दसवि
प्र बिगारे॥ मूरख आपु बिनासन औरे॥ अबलग
भयो न सासन तोरे॥ को पापी देखी नहीं तोसे॥
॥ तोहितें चलत धरम सत कैसे॥ दुजहमार तुव
॥ लेहु सिखावन॥ पैहो अब शुभ लोक सुखभावन॥
॥ करि पूरब ग्रहआश्रम केरी॥ वान पस्थ पद
॥ लेहु बहोरी॥ ब्रह्म चर्ज धरि पुनि सन्यासू॥
॥ लेहु विप्र बर धरम प्रकासू॥ जो हमार अस
॥ कथन न करहो॥ तो दुख पाय बिपुल बपु म
॥ रहो॥ मुनि तहि समय मौन जपलीना॥ सुम
॥ रत ध्यान कृस्न बद्द दीना॥ श्राप वचन न
हिं सके उचारी॥ उपज्यो कोप मुनि मानस भारी॥ जो
र अनर्थ जनार्दन जाना॥ भूप सुतन सन बचन
बखाना॥ दोहा॥ नहिंहि सेवा वृद्धन कियो ना सतसंग
उपास॥ मुनिहि वृथा दुरवचन कहि करि लीन्यो
कुल नास॥११॥ टीका॥ तब ऐसे कहिकरं राजा

बडे बीरधीर

के पुत्र ~~ऊसीके~~ अत्री मुनीके पास जाय बैठे और तहां
से फिर कहने लगे अरे देभी दुरवासा तेरेको कुछ
ज्ञान नहीहै तैने तो वृथाही दस हजार ब्रह्मनोंको
गालाई और बिगाड़ाहै आपतो मूरष तेरा नास भया औ
रों कोभी सत्यानासी है जठ अब लग ~~तेरेको~~ किसी ने ते
रेको ताड़ना नहीं करी हम जानते हैं कि तेरे समान कोई
देभी और पापी नहीं होगा ~~इससे~~ धरम जोहै सो तो तेरे
निकट ~~कभी~~ आयाही नहीं है हे ब्रह्मन तू हमारी सिक्षाले
तेरेको अब भी स्वर्ग प्राप्त होवेगा तू पहिले ग्रहत
आश्रमको धारन कर तिसते उपरांत वान प्रस्थी ~~आश्र~~
~~म को चर्जी धार~~ हो और फिर ब्रह्म ~~चारी~~ चारी बनकर
तब फिर सन्यास पदवी ग्रहण कर तो तेरेको धरमके
सहित कल्यान प्रापत होवेगी जो तू ऐसे हमारे
कहनेको नहीं मानेगा तो शरीर मे बहुत दुख
पाय करके मरेगा तब मुनी दुरवासा जोहैं सो ति
स समय जपमें लीन भये हुये मौन थे ~~और~~ भग
वानके समरन और ध्यानमें जुड़े हुये थे तिससे
शापके वचन जो है सो नहीं कहि सके यद्यपि मु
नीके हृदयमें अत्यंत ~~नहीं~~ कोप छाय रहाथा तब
सो जनार्दन नामा ब्रह्मण तिनका मीत बड़ा जो
र अनर्थ जानकर राजाके पुत्रोंको कहने लगा
कि हे अभिमानी अबीतक तुमने नातो वृद्धजनोंकी
सेवा करी और ना कहीं संत समाजमें बैठे ना सतसंग
किया एक मुनीको वृथाही दुरवचन कहि कर अपनी
कुलका नास कर लियाहै ॥ ११ ॥ चौपाई ॥ अब तुव लेव
महा दुख सोई ॥ किये कुवाद काल वस होई ॥ शिव अ
वतार पूंज तप छाये ॥ दुरवासा मुनि हं सृति ~~छाये~~ ॥
उरपत लोक कोप जहि जोरा ॥ मुनि सन्यास वि

दत सिर मोरा॥ तुम तिन कहे दुरवचन उचारे॥ अब नहोहिं कल्यान तुमारे॥ वेग गहहु उनके कर पद जाई॥ जो अपराध छमहिं मुनिराई॥ मिनु पनतें तुम संग सुहाई॥ रही परस्पर प्रीति मिताई॥ वाहित देखि विनास तुमारा॥ उपज्यो मोहि सोक दुख भारा॥ मरहु खाय विष की नसिजाऊं॥ गिरितें गिर हु कि वारि बुडाऊं॥ सुनत विप्र सुम गिरा उचारी॥ बोले नृप सुवन हंकारी॥ रे द्विज करु कथन कत त्रासन॥ को कर शक्ति हमार विनासन॥ तुम हु पत उनकर जड़ ठाना॥ लग्यो हमहु उपदेस सिखाना॥ अस तिन कथन सुनत दुरवासा॥ कोप अनल मनु कीन प्रकासा॥ दोहा॥ निकसी रिस ज्वाला ज्वलत रोम रोम मुनि आय॥ वक भृकुटि तिन तन चित्यो मदन भीम जिमि माय॥ २२॥ टीका॥ जनार्दन कहता है कि हे राज कुमारो अब तुम दोनो परम दुख पावोगे ऐह कुवाद तुमने केवल काल के वश होकर किया है क्योंकि दुर्वासा मुनी शिव का अवतार और तप के एक पुंज हैं जो संसार मे प्रसिद्ध हैं और जिनके थोर कोप से त्रैलोकी कांपती है सो मुनी सरव सन्यास मे प्रधान गिने हुये हैं तुमने अभिमान के वश होकर तिनका अपमान किया है अब तुमारो कैसे कल्यान हो वेगी अब एही उपाय है जो तुव शीघ्र जाय करे तिनके चरन पकड़ लेवो इससे तुमारा अपराध छिमा कर देवे तो कुछ आचर्ज नहीं है क्योंकि महापुरष कोमल भी तुरत हो जाते हैं मै तुमको वारंवार इसतें कहता हूं कि जो तुम्हारे मेरी जनम तें ही परस्पर स्नेह मिताई है अब तुमारी दुर्दशा होती जो देख पड़ी तो मेरे को बड़ा कलेश उतपन्न भया है मै क्या करूं

जामै अतिथि संत दुज देवा॥ सव विधि होत र
चिर सुचि सेवा॥ ग्रहस्त आश्रम शंकर मन माना॥
दायक नरन विप्र कल्याना॥ सुव कपटी कर दं
ड धराये॥ दीनसि धरम करम विसराये॥ पुसकर
तट वक ध्यान लगाई॥ वैठ्यो जन वंचन हित आ
ई॥ रे विरूप उनमत मति हीने॥ तैं जड वृथा
दास हरि लीने॥ गताचार अज्ञान रताना॥ भसम
रमत सठ लाज नमाना॥ निपट अमंगल रूप वना
ये॥ दुरवासा जस नाम कहाये॥ अस पाखंड निरत स
ठ कोरी॥ पकरत देत दंड हम जोरी॥ वांधहु अव
हि वेर नहीं काहू॥ गवनि भवन इहि करव विवा
हू॥ दोहा॥ गृह आश्रमी वनाय इहि करि विधी वे
द अजास॥ संसकार करवाय पुनि करहु निरत स
न्यास॥१०॥ टीका॥ फिर हिंसक और हंस कहने लगे
अरे अधम पहिले ही सन्यास कोई नहीं
धारता है प्रथमं ग्रहस्त आश्रम दृढ होना चाहिये
तूं तो मूरख लाल वस्त्र पहिर कर झूठा ही दंडी वन
वैठा है रे पाखंडी ग्रहस्त मारग से भूल कर इह
वेद के विरुद्ध रीती तैंने किससे सीखी है ग्रहस्त
मारग कैसा है कि जिसमें साध संत अतथी जनोंकी
सव प्रकार से सेवा होती है और इह ग्रहस्त आश्रम
शंकर देव कोभी पयारा है संसार मे मानुष्योंके
कल्यानके देने वाला है तैंने कपटी कैसे दंड धार
न कर लिया है और सव धरम करम को विसा
र दिया है इहां पुसकर तीर्थ के किनारे वक जो वगुला
है तिसके समान ध्यान लगाय कर लोगों के छल
ने के वासते आय वैठा है अरे मंद भेषवाले उनम
त और मती से हीन तूंने तो इन दासौं के वृथा ही

नमूछ कालनिय रायो॥ दोहा॥ तव प्रसन्न मन
विप्र पै दुरवासा मुनि होय॥ कह्यो रहहिं जानत
सदा कृस्न देव प्रीय तोहि॥ थोरहिं दिन मध तुम
हिं द्विज मिलहि मुकंद कृपाल॥ इन अधम
न कर संग तव तजहु जानि वस काल॥१३॥ टीका॥
तव मुनी ने कोपकी ग्रैसी प्रवल अगनी दिखाई
कि मानो प्रले निकर आय गई है ग्रौर तिन राजाके
पुत्रो पास आयकर क्रोध से भरा हूआ मुनी थर थर
कोपने लगा ग्रौर इह श्राप देता भया कि अरे
अभागी तुम दोनो भसम हो यद्यपि मुनीने तिन
कोअत्यंत कोपसे श्राप भी दिया तद्यपि सो दग्ध नहीं हो
ते भये तव दुरवासा आपने मनमै वडा आचर्ज मा
न कर ग्रौर लज्जित होकर तनको कहने लगे कि
अरे दुष्ट उठो मेरी आंखों से दूर हो जाउ तुम अ
भागी देखनेके योग्य नहीं हो तुमारा पाप ग्रौ
र हंकार जान कर भगवान तुमारा नास क
रैंगे जब इस प्रकार मुनी ने कहा तव भगवान
का नाम सुन कर तिनो ने हृदयमै अत्यंत कोप
किया ततकाल हीं उठ कर ग्रौर कोपीन ले
कर मुनी के हाथ मे देते हो जोरावरीसे तिस
को पहराय देते भये तव ग्रैसे मुनीकी दशा देख
कर संपूर्ण शिष्य जो थे सो हाहाकार करके
ते भाग चले ग्रौर दुरवासा भी जव अपमान
कर गाय करके चलने लगे तव हंस डिंभकने
हस कर के विठाय लिये तव भी जनार्दन ने व
हुत समुझाये परन्तु सो कालके प्रेरे हुये क
व मानते थे दुरवासा मुनी जनार्दन की वुद्धी
देखकर वडे प्रसन्न होकर तिसको कहने लगे

कि हे पुत्र मेरे वचनसे कृष्ण भगवान तेरेको स
देव हीं प्यारा जानते रहैं गे और थोरे हीं दिनोंके
भीतर तेरे को ~~भगवान मिलेंगे~~ सो दीन बंधू
सहज हीं मिलंइ हैं गे अब तुम इन दुष्टों का कु
संग जो है सो त्याग देवो इहतो अब ग्र काल वश
हो चुके हैं ॥१३॥ चौपाई॥ दुज कर अरु मुनि वर
कर देखी॥ हेस मित्रता हृदय विसेखी॥ भाख्यो
अरे दुष्ट दुज जाती॥ मुनि कर बन्यो मूढ़ अब नाती॥
आयो मीच निकट तुव जानो॥ जो अब निज नीकी
कुछ मानो॥ तजि हमकहे कटु कहहु नवागी॥
न तर कढ़िहु अब जीह अभागी॥ सुनत जनार्द
न हृदय दुखारी॥ गयो मौन निज सदन सिधारी॥
इत कोपे नृप सुत जुग वीरा॥ जारि दीन सब मु
निन कुटीरा॥ दंड कमंडल भाजन भूरी॥ तोरि
फोरि सब कीन सि दूरी॥ पकरि पकरि पुनि मु
निसिष सारे॥ करि दुर दसा विविध विधि मारे॥ दुरवा
सा तकि चले पलाई॥ मानत हृदय त्रास सुत राई॥
कीन जठन अपमान महाना॥ विधि मति फेरि काल
नियराना॥ जारि जटा पट जोगिन केरे॥ कानन वहि
र दीन सब प्रेरे॥ इहि विधि जठन अनर्थ प्रकासा॥ मु
निन निवास कीन सब नासा॥ दोहा॥ कबहुं न
रत कानन हुतो मानहु मुनिन निवास॥ अस कहि
उतरे ताहि थल हरषि जुगल अगरास॥१४॥ टीका॥
तब जनार्दन ब्रह्मण की और मुनी दुरवासा की परस्पर
मैत्री भाव देख कर ~~ब~~ हेस कहने लगा कि अरे दुष्ट ब्र
ह्मण जाती अब तूं इस मुनी का नाती बन बैठा है
मैंने जाना कि तेरी मौत निकट आई है जो अधम अ
पनी भलाई चाहता है तो ऐसे कटु वचन मत कहो

और हमारे पास से चला जा नहीं तो अबी
तेरी जीभ बाहिर निकाल डालूंगा ऐसे सुनकर
जनार्दन बड़ा दुखी भया और तहां से उठकर
अपने घर को चला गया और इहां हेमहिमक जो
हैं सो दोनो वीर अत्यंत कोप से मुनियों की कुटि
या और झोंपड़ी सब जड़ा पकर
देइ कमंडल इत्यादि सब तोड़ फोड़ देते भये फि
र दुरवासा के चेलयों को पकड़ पकड़ बहुत दु
रदशा करके मारा और आप मुनी दुरवासा राजा
के पुत्रों का महा कोप देख करके त्रास मानकर
भाग चला तिन्हों ने मुनियों का बड़ाही अपमा
न किया विधाता ने तिनकी बुद्धी कर दई का
ल नेड़े आय गया सब जोगी मुनी
जटाधारी जो थे तिन सब की जटा जराय दई
और बन से बाहिर निकाल दिये ऐसे तिनो
ने बड़ा घोर अन्न किया मुनियों के जहां ज
हां वास अस्थान थे सो सब नष्ट कर दिये
ऐसे प्रतीत होता कि मानो इहां बन में को
ई बसता हीं नहीं था इस प्रकार
सब उजाड़ करके हेम और हिमक अपने दल
के सहित तहां हीं विश्राम करते भये॥१५॥ चौ
पाई॥ तहां करत अमखोदि अहारू॥ चले
सुखित पुनि भवन सिधारू॥ भागत गये दू
रि दुरवासा॥ बपुखे विपुल स्रम शोक प्र
काशा॥ बचे जवन शिष विकल विहाला॥
मिले जाय करि रुदन विसाला॥ मुनि प्रबोध
करि विविध सिखाये॥ धीरज धरहु विप्र समुदाये॥

विष खाय कर मर जाऊं कि तुमको त्याग कर कहीं च
ला जाऊं अथवा परवतते गिर मरू कि जल मे डूब
कर प्राणों का नास कर देऊं इस प्रकार ब्रह्मणी के मुख
से वचन सुन कर डिंभक और हंस महा हंकारी जो हैं सो
बोलते भये हे ब्रह्मणी तू भय के वश होकर इह क्या व
चन कहती है हमारा नास करने को कौन सामर्थ है और
किस की शक्ती है हे मूरख तेने भी उनका पत पकर लिया
है और हमको शिक्षा देने लगी है इस प्रकार तिनका
कथन सुनकर दुरवासा मुनी जो हैं सो कोप रूपी अग्नी
को प्रचंड करते भये तब सो कोप की ज्वाल बड़ी ज्वल
त होकर मुनी के रोमरोम से निकलती भई और व
ड़ी वंक अर्थात टेढी भृकुटी करके जैसे कामदेव को
जराया था तैसी हीं दृष्टी से मुनी तिन राजा के पुत्रों की
ओर देखते भये॥ १२॥ चौपाई॥ प्रबल कोप दव
दृगन दिखाई॥ मानहु प्रलै अबहिं नियराई॥ आ
य हंस डिंभक ढिग ताहीं॥ कंपत कोपविवस मु
नि नाहीं॥ दीन्यो जोर प्राय अस वानी॥ हे हु
म सम तुव जुगल अभागी॥ मुनी कुपत य
द्यपि अस काहा॥ पै नहिं श्राप सक्यो करि दा
हा॥ दुरवासा तब अचरज माने॥ बिलखि वि
पुल अस वचन बखाने॥ जाहु जाहु मोहि सन
मुख त्यागी॥ राखन जोग न तुम हु अभागी॥ तु
म से जानि पाप हंकारी॥ करहिं नास भगवान तु
मारी॥ भगवन नाम सुनत सुतदाई॥ हृदय को
प कीन्यो अधिकाई॥ कर को पीन दीन मुनि ना
था॥ पहिरायो वरवस गहि हाथा॥ अस मुनि व
र कर दसा निहारी॥ हाहा करत भगे सिषझारी॥
दुरवासा अपमान कराये॥ लगे चलन हसि हेस
बिठाये॥ तबहु जनार्दन वड़ समुझाये॥ मन्यो

के हैं क्योंकि धारण करे की पालना करते हैं हमारे सिर पर क्यों ना हाथ धरेंगे इस प्रकार शिष्यों को धीरज देते हुये रस्ते मे श्रम करके दुःखी भये हुये चले जाते हैं तिस समय मुनी के साथ पांच हजार शिष्य था और पांच हजार हंस डिमक ने मार दिया था तब जैसे तैसे करके सब संत जो हैं सो द्वारिका के निकट आय पहुंचे तहां स्नान करके फूटे फटे वस्त्र जो थे सो ई पहिर कर पंथ के श्रम निवारणे को कुछ कवि श्राम करते भये॥ २४॥ चौपाई॥ कीन प्रवेस नगर अभिरामा॥ कृष्ण देव दरसन मन कामा॥ ठाढे द्वार दहिर प्रभु जाई॥ द्वारपाल सन कह्यो बुझाई॥ देहु जनाय वेग प्रभु पासा॥ आये मुनि दरसन तुव आसा॥ द्वारप दुरवासै मुनि जानी॥ हरि सन जाय कह्यो सुभवानी॥ ठाढे द्वार मुनी दुरवासा॥ लावहु जो पावहु अनुसासा॥ कह्यो कृष्ण लावहु द्रुत जाई॥ तब द्वारप मुनि वरपै आई॥ सादिर गयो लेत गहि हाथा॥ देखे मुनिन नाथ जदुनाथा॥ महावीर जदु वंसिन संगा॥ राजमान मन मोद उमंगा॥ उग्रसेन महाराज सुहाये॥ कनकासन राजत छवि छाये॥ मणिगण रचित सेंघासन चारू॥ सोभित जदुवर कृपा अगारू॥ तिन समीप बलराम विराजे॥ मनहु कोटि छवि सुरपति लाजे॥ दक्खिन बाम विराजत धीरा॥ हरि के उद्धव सात्यकि वीरा॥ दोहा॥ कृतवरमा अक्रूर जुत आन सुभट बलधाम॥ हरि भ्राता गद लों सकल वैठे सभा ललाम॥ २५॥ टीका॥ फिर दुरवासा मुनी सब मुनियों के सहित सुंदर नगर मे प्रवेश करते भये सब के हृदय मे कृष्ण भगवान के दरसन की अत्यंत कामना है तब जायकरके जदु

नायके द्वारे पर स्थित होय गये और द्वारपालों से कह
ने लगे कि भैया तुम भीतर जायकरके खबर जनाओ
कि भगवान तुमारे दरसन के वासते मुनी लोग आये ह
ये हैं तब द्वारथ ततकाल हीं जायकर भगवान से क
हते भये कि महाराज आपके दरसन की आशा से मुनी दु
रवासा जी द्वारे पर स्थित भये हूये हैं जो प्रभु की आज्ञा
हो तो लेआवें भगवान सुनते हीं कहने लगे कि जा
व वो मुनी को सनमान से लेआवो तब द्वारपाल ततका
ल हीं मुनी के पास आयकर बडे सतकार से हाथ पकड
कर भीतर को ले गये तहां मुनी ने बडे बीरधीर जदु
बंसियों के सहित बिराज मान भये हूये भगवान कैसे दे
खे कि अतसे मनोहर सुवर्न के सिंघासन पर राजा उग्र
सेन बैठे हूये बडी छबी को उदय करते हैं और सुंदर म
णियों करके जटित सिंघासन पर आप भगवान कृपा
निधान बिराजे हूये हैं तिनके पास कामदेव की छबी को
लज्जा देनेवाले बलराम जी बैठे हैं और जदुबीर के द
हने बायें उद्धव और सात्यकी शोभा देते हैं कृतवरमा
अक्रूर इनते लेकर भगवान के भ्राता गद आदि बडे बल
के धाम जो हैं सो सब अपनी अपनी सजधज से सभा में
बैठे हूये छबी देते हैं॥२२॥ चौपाई॥ खेलत नरद सात्य
की संगा॥ दोन ग्वाल उर हरष उमंगा॥ बालक जुवा
जठिर समुदाये॥ बसुदेवादि सकल सुख छाये॥ बा
रबार मुनि मानस मोहन॥ चितवत कमल नयन छ
बि सोहन॥ असप्रकार प्रभु त्रिभुवन राये॥ बैठे सुचि नि
ज सभा सजाये॥ जिमि सुग्रीव संग रघुराई॥ खेले बि
बुध खेल सुखदाई॥ तिमि सात्यकि संग कुसुम बिलासे॥
देखि देखि सब लोग हुलासे॥ आये सभा सुभ्र दुरवासा॥
उठे बिलोकि सुभट ~~बल~~ ~~धाम~~ जासा॥ दोना ग्वाल
लखित मुनि काहीं॥ छाडि तुरत निज केलि तहाहीं॥
लिये करन कल गोलप खेला॥ सहित बीर बलराम

सुहेला॥ चलि आगल मुनि वर पग लागे॥ अति प्र
सन्न मानस अनुरागे॥ पुनि आहुक नृप कीन प्रणा
मा॥ परे चरन सव जादव नामा॥ पंच सहस सिष मु
नि वर संगा॥ ते आसिष सव देत अभंगा॥ दोहा॥ राम कृ
ष्ण वसुदेव कहं आहुक भूप समेत॥ आसिष दीन प्रस
न्न मन मुनिवर कृपा नकेत॥१२॥ टीका॥ तहां सभा मे
भगवान् सात्यकी के संग नरद खेल रहेथे और वसु
देव जीसे लेकर वालक जुवा वृद्ध जितनेथे सोसव
सुख पूर्वक भगवान के चरन कमलों की छवी को देख
देख मोहित होरहेथे इस प्रकार तीन भवनों के नायक
भगवान सभा सजाय कर बैठे हुयेथे। जैसे सुग्रीव के साथ
ले राम चंद्र महाराजने ~~...~~ अनेक खेल
विलास किये हैं तैसे हीं सात्यकी के संग कृष्ण भगवान
नाना विलास करके आनंद लेते भये तव मुनी दुरवासा
जो हैं सो सभा के वीच चले आये तिन को सव लोग दे
खकर डुरते हुये उठ खडे भये कृष्ण प्रभात मा मुनी को
देखते हीं तुरत अपनी खेल को त्याग कर वलराम के
सहित आगेही जाय कर मुनी के चरनों पर प्रणाम करते
भये फिर आहुक राजा ने भी नम्र होकर प्रणाम किया
तिसते उपरांत सव जादव मुनी के चरनोपर सीस
नावते भये तव पांच हजार शिष्य जो मुनी के साथ
थे ~~सव~~ तिनोने प्रसन्न होकर सवको आसीरवा
द दिया फिर राम कृष्ण और वसुदेवको आहुक
राजाके समेत दुरवासा मुनीने आनंद होकर वहुत
वहुत आसीस दिया॥१२॥ चौपाई॥ शिषन सहित मु
नि वर कर देखी॥ दीन खाल दुरदशा वसेखी॥ केते
तन घायल विथताने॥ केतन कर जट जूट जराने॥
टूटे फूटे देह कमंडल॥ विथुरे केस विथत मुनि
मंडल॥ कोपीना दि वसन तन फाटे॥ हायहाय

दुष्टविदलन दीनहितकारी॥ बसत द्वारिका कृष्ण मुरारी॥ सो हमार रक्षकार सुहावा॥ अशरन सरन विदित जहि गावा॥ हने नास अस खल जग झारी॥ भने विदित तव नाम खलारी॥ असकहि ला वधान शिष सारे॥ लिये संग दुरि कान्हि धारे॥ सरणागत पालिक जदुनाथा॥ करुन हमार सिर धरहिं नराथा॥ अस धीरज मुनि सिखवन उचारी॥ चले जात पथ श्रमत दुखारी॥ सहस पंचशिष से ग रहाने॥ पंच सहस नृप सुतन हताने॥ दोहा॥ पहुंचे जस तस के निकट द्वारावति मुनि झारि॥ कहै कहै पहिरान पट करि सनान सुभवारि॥२४॥

टीका॥ ~~फिर~~ तब हंस और डिंभक जो हैं सो तहां आनंद पूर्वक मृगों का मांस खायकर फिर ~~सब~~ हरष से सब समाज के सहित अपने घर को चले जाते भये और उहां मुनी दुरवासा जी भागते भागते दूर चले गये श्रम और शोक इतना व्यापता भया जो कहा नहीं जाता है और तिनके शिष्य जितने क बचरहे थे सो भी बड़ी दुरदशा से व्याकुल ~~भये~~ हुये आय मिले तब मुनी ने तिनको भली प्रकार प्रबोध करके ~~धीरजदिया~~ सावधान किया और कहा कि तुम धीरज धरो दुष्टों का नास करने वाले दीनजनों के हितकारी कृष्ण परमातमा जो हैं सो द्वारिका मे बसते हैं और हमारे रक्षक हैं आ शरणों की सोई शरण हैं तिन्हों ने ऐसे खल जो दुष्ट सो अनेक मारे हुये हैं तसी तें तिनका नाम जगत ~~मे~~ मे खलारी है अर्थात दुष्टों के शत्रू हैं ऐसे प्रबोध से सबको सावधान करके मुनी जो हैं सो द्वारिका ~~मे ले आवते भये~~ को चले आवते भये मारग मे फिर कहते हैं कि भाई भगवान शरणागत पाल

को घोर हीं दिन भये हैं जो इहां से गये हो अब कैसे आना हु आ है कृपा करके कहो ॥१८॥ चौपाई ॥ तुव आगमन मोहि सु जस बडाई ॥ पै कारण कछु लख्यो न जाई ॥ अस कहि अ र्घ पाद्य सनमाना ॥ कीन्यो मुनि कर कृपानिधाना ॥ प्रभु के सत कारत मुनि काहीं ॥ उपज्यो कोप दुगन मन माहीं ॥ अरुन नयन कंपत थरथरहीं ॥ चितवत भस्म मनहु मुनि करहीं ॥ फेरत दृग चहु कित रिस छाये ॥ लोक विलोकि स कल अकुलाये ॥ निकसत वचन क्रोध वस नाहीं ॥ अनमि ख नयन तकत प्रभु काहीं ॥ जस तस कै पुनि कोप संभारी ॥ बिलखि वदन मुनि गिरा उचारी ॥ तुव भरोस हम दीन उ बारे ॥ विचरत धरनि त्रास गत सारे ॥ जो हम कहें अब तु महिं विसार्यो ॥ तो जग आन कवन आधार्यो ॥ पूछत ज नहु अजान समाना ॥ हम कारन कछु नाहिन जाना ॥ विश्व वृतांत विदत प्रभु काहीं ॥ इह कारन जानत कस नाहीं ॥ दृगन देखि दु[illegible]र दशा हमारी ॥ पूछहु आगम हे तु मुरारी ॥ करहु हांसि मोहि दुखित विचारी ॥ भे तुव विभू विवस हे कारी ॥ विप्र पाल निज विरद सुहावा ॥ उपजत मदहु दीन विसरावा ॥ दोहा ॥ पूछत मोहि अजान से चर अचर जानन हार ॥ कहि न सकहु कछु लाज वस निज दुरदशा विचार ॥१९॥ टीका ॥ भगवान कहते हैं कि मुनी नाथ तुमारे आने से मेरे को बडा सुजस और बडाई है परंतु तुमारे तौ म[illegible]का कुछ कारन नहीं लखा जाता है ऐसे कहिकर भगवान ने अर्घ पाद्य आदि सनमान से मु नी का पूजन किया तब भगवान के सतकार करते करते मुनी के चित्त मे कोप जो है सो दुगना हो जाता भया और नेत्र भी लाल भये हुये क्रोध से थरथर कांपने लगा मानो देखने मे हीं भस्म करता है क्रोध के भरे हुये नेत्र चारो ओर फेरता है लोग सब देखकर के व्याकुल हो गये कोप ऐसा छाय रहा ~~कि मुनी के~~ या कि मुख से वचन भी नहीं निकलता एकटक नेत्र करके भगवान की ओर देखता है अंत को जैसे कैसे करके कोप को सं भाला और कहने लगा कि हे भगवन दीन हितकारी तुमारे भरोसे पर हम मुनी लोग अभय हो[illegible]कर

पृथवी पर विचरते हैं जो हे दीनानाथ अब तुमने हीं
विसार दिया तो हमको जगत में किसका आधार रहा आ
प मेरे को अजान होकर पूछते हो कि हमने कारन नहीं
जाना है हे कृपानिधान ~~स्स~~ तुम सर ~~[illegible]~~ व जगत
के अन्तरजामी और घट घट के बूझनहारे हो इह कारन
कैसे नहीं जानते हो अब ~~[illegible]~~ प्रतक्ष अपने नेत्रों से हमारी
:का दशा देखकर मेरे आवनें कारन पूछते हो और हमको
दुखी जानकर हांसी करते हो तुमको अपनी बड़ाई और प्र
ताप का अभिमान होगया है ब्रह्मण्यपाल जो आपना वि
रद है सो मद के वश होकर विसार बैठे हो क्योंकि घट
घट की जानन हारे तुम मेरे को अजान बनकर पूछते
हो मैं तो अपना अपमान विचार कर लज्जित भया हूं या
कुछ नहीं कहि सकता हूं ॥२९॥ चौपाई ॥ यद्यपि तुम जा
नत सब अहैं ॥ तदपि पूछे पर प्रभु कहैं ॥ डिंभक हंस भू
प सुत पापी ॥ साल्व नगर जुग बसहिं प्रतापी ॥ पुहकर
बसत हमार महाना ॥ तिन जड़ जाति कीन अपमाना ॥ मु
नि आश्रम सब जारि उजारे ॥ भये हनन शिष विपुल ह
मारे ॥ तोस्यो दंड कमंडल झारी ॥ पट कोपीन छीन
सब फारी ॥ इह अचरज तुव इछत अपारे ॥ कै हें अस
दर दशा हमारे ॥ अब तुम एहु जुगल ~~कुछ~~ धामा ॥ जो
नहिं किये हनन संग्रामा ॥ तो तुमार पुर संजुत बंसा ॥
देत शाप सब करहुं विध्वंसा ॥ अरजुन भीषम तुव भ
ट जोई ॥ इन कहं जीति सकैं नहिं कोई ॥ तुम बिनु
कवन तिनहुं जग हेता ॥ जिनहुं कीन शंभु अनेता ॥ तप
दुष्ट प्रबल जुग सुभट अराती ॥ मारहु वेग इनहुं धरि
छाती ॥ तो तुमार वर वेस बचैहीं ॥ होहिं अब भस्म स
कल नतछैहीं ॥ दोहा ॥ दुरवासा कर कथन सुनि क
ह्यो कृष्ण मुसकाय ॥ लघु कारज वश नाथ अस क
स मानहु रिस छाय ॥२०॥ टीका ॥ दुरवासा मुनी क
हते हैं कि हे भगवन यद्यपि तुम सब कुछ जान
ते हो तदपि पूछे पर कहता हूं ~~[illegible]~~ कि डिंभक
और हंस राजा के पुत्र बड़े पापी और महा प्रतापी

160

सालव नगर मे दोनो बसते है पुसकर तीरथ पर हम मुनी लोग जो बास करते थे तहां तिन दुष्ट जातियों ने हमारा अपमान किया है मुनियों के आश्रम सब जराय कर उजार दिये और पंच हजार शिष्य मार दिया है दंड कुमंडल तोड़ ताड़ कर बस्त्र कोपीन आदि सब फाड़ फूड़ दिये है हे भगवन तुमारे होते हु ह आचर्ज और हमारी इह दुरदसा भई है अब जे कर तुम तिन पाप की खेनियों के जुद्ध मे नास को प्रापत नहीं करोगे तो मे तुमारे पुत्र और सब परिवार का स्राप दे कर नास कर देऊंगा और इह अरजुन और भीषम जो तुमारे सूर बीर हैं सो तिन दुष्टों को रण मे नहीं जीत सकेंगे तुम्हारे बिना जगत मे इन को कौन मारने वाला है कि जिन्हों ने महादेव का आन नात किया है इह दुष्ट महा प्रबल सूर बीर शत्रु हैं इन को तुमहीं रण मै छाती धर कर मारोगे दूसरे के मारने लायक नहीं है तब तो तुमारा बंस भी बचा रहेगा नहीं तो सब छै हो जावेगा इस प्रकार दुरबासा मुनी का कथन सुन कर भगवान मुसकाय कर कहते हैं कि हे मुनी महाराज इस छोटे से कारज के वासते आपने क्यों इतना बड़ा क्रोध किया है ॥२०॥ चौपाई ॥ कवन बात दिमक अरु हेसे ॥ आपु मरहिं दुज द्रोहिं असे से ॥ यद्यपि हर बर दि चिकिना आई ॥ करहिं समर तिन कोटि सहाई ॥ बरुण कुबेर सेर जम काला ॥ इनकर बनहिं सकल रखवाला ॥ यद्यपि सुरासुर होहिं सहैया ॥ तदपि हतहु तव चरन दुहैया ॥ तजहु मुनीस कोक सब भांती ॥ अब न बचहिं तुव दुष्ट अराती ॥ सपत स्वर्ग अरु सपत पताला ॥ सपत सिंधु महि मेरु कपाला ॥ पैठसहिं कुलस भवन कि ना जाई ॥ कौन सकहिं मुनि नाथ बचाई ॥ सुनि प्रभु वचन उग्र इहि भांती ॥ भयो मुनीस

(margin notes: प्रत्येत; दोनो; लायक; पप)

अस मुनि सबरोटे॥ फरकत अधर अरुन दृग ताहो॥
कालहू काल मनहूं मुनि नाहो॥ जादव देखि सकल
अस माखे॥ कवन हेतु मुनि नायक माखे॥ उरपत ठाढ़
सकल कर जोरी॥ चिंताकुल चितवत मुनि ओरी॥ कन
क संघासन वेग मंगाये॥ तापर मुनि महाराज विठाये॥
पद पखारि पूजन मुनि कीना॥ चरन वारि प्रभु सिर धरि लीना॥
यथाउचित सब मुनिन हुलासन॥ दीनाद्याल दीन सुभआ
सन॥ पुनि कर जोरि कृस्न अस काहा॥ को अपराधि नाथ
तुव राहा॥ आये कवन हेतु मुनि तज्ञा॥ का मोहि तें कछु
भई अवज्ञा॥ दोहा॥ हम अनन्य सेवक सकल मन वच
करम तुम्हार॥ कस आये मुनि नाथ फिरि थोरहिं काल म
झार॥ १८॥ टीका॥ तब शिष्यों के सहित मुनी की दुरदशा
~~विचार कर~~ भई कैसे देखते भये कि कितनों के तन घाय
ल और व्याकुल और कितनों के जटाजूट जले हुये दंड
कमंडल सब टूटे फूटे हुये सिर के केश विखरे हुये और कौ
पीन आदि वस्त्र जो हैं सो भी सब फटे हुये हाय हाय श
ब्द को उचारन करते हैं और दुरवासा के भी लोम कर के
अधर जो ओठ हैं सो फरकने लगे तब ऐसे कालके भी काल
दुरवासा जो हैं तिनको देखकर सब जादव डरते हुये हा
थ जोड़कर प्रार्थना करने लगे कि महाराज आपने कौ
न कारन इतना क्रोध किया है ऐसे कहिकर चिन्तांवस भ
ये हुये सब मुनी की ओर देखते हैं तब भगवान ने तुरत ही
सुवर्नका संघासन मंगायकर तिसपर बड़े सनमानसे मु
नीको विठाया और चरन पखार कर प्रीतीसे पूजन किया
फिर सो चरनों का जल लेकर दीनबंधू ने अपने सीसपर
धारन कर लिया तिसतें उपरान्त सब मुनियों को यथा
योग्य आसनो पर विठाइकर सतकार किया फिर भग
वान हाथ जोड़कर विनती करने लगे कि हे मुनी नायक
आप कहिये कि कैसे आना हुआ है मैं आपको कुछ को
प मैं भये हुये देखता हूं कहो कृपाल तुमारा कौन अप
राधी है कि कोई मेरे से ही अवज्ञा हो गई है परन्तु हे
मुनी नाथ हम तो सब तुमारे चरनो के ~~सेव~~ सरव प्रकार
करके सेवक हैं कोई अवज्ञा करने वाले नहीं हैं आप

नायक आप तुमाही करिये इन तमा करनी तुम सन्यासियों
को हीं योग्य है ऐसे कहिकर भगवान बडे पवित्र आंगन
वन वायकर मुनी के सब शिष्यों के सहित आनंद पूर्वक जि
माय देते भये तब दुर्वासा मुनी सब मुनियों के सहित बारबा
र आसीसा देकर फिर बडी प्रसन्नता से विदाय होयकर आप
ने आश्रम को चले गये॥२१॥ चौपाई॥ उतै हंस डिंभक जुग भा
ई॥ पितु पें जाय चरन सिर नाई॥ बारंबार हरष जुत होई॥ बोले
वदन वचन अस दोई॥ करि अब राजसूय मख काहीं॥ लीजै
जनक सुजस जग माहीं॥ हम जीतब महि मंडल सारा॥ होहि
जनक मख सफल तुमारा॥ समर सुरासुर सुभट सवाहीं॥ ह
म जीतब संशय कछु नाहीं॥ विदत हमार हेतु रखवारी॥ नि
जगण जुगल दीन त्रिपुरारी॥ महि महीप कर जीतन जेहू॥
हम कहे सहज सुगम पितु एहू॥ ब्रह्मदत्त सुनि सुतन व
खाना॥ परम हरष निज मानस माना॥ कह्यो तुम दुहे ला
यक सुत दोई॥ मख हमार सुजन अब होई॥ अस सुति
न कथन श्रवण निज धारी॥ विप्र जनार्दन भक्त मुरारी॥
करख वचन भूपति सन कीना॥ काहि यहो तुव भयो
मलीना॥ पापी उभै अधम सुत तोरे॥ भाषत वचन ग
रल जनु बोरे॥ मरिहै आपु तोहि पुनि मारहीं॥ मूरो
मंद मुख वचन उचारहीं॥ जनि नृप करहु भनन इन
केरा॥ ह्वैहै नतर नरक तुव डेरा॥ अगम हेन राज सुम
ख एहू॥ माखेहु सत्य भूप गुण गेहू॥ सुनि अस वि
प्र कथन सुत राई॥ बोले वचन रोष सरसाई॥ दोहा॥
मख निवर्ण कर कवन द्विज देहु नवेग जणाय॥ अव
हि सीस कटि तासु हम धरहु अग्र पितु ल्याय॥२२॥टि॰॥
उहां हंस और डिंभक दोनो जायकर पिता के चरनों पर
सीस नावते भये फिर दोनो भ्राता हरष से भरे हुये कर
पिता को वार वार कहने लगे कि हे महाराज अब आ
नंद पूर्वक राजसू यज्ञ करके जगत में सुंदर कीरती
और जस जो है सु प्रापत करो हम संपूर्ण पृथवी के जी
तने को सामर्थ हैं आपका यज्ञ सहजे हीं सफल हो
गा तुमारी कृपा से हमारे आगे ~~पृथवी~~ सुर असुर के
ई नहीं ठहरेगा सब को जी लेंवे रणमें ......ने महादेव ने

इसीके वास्ते आपने दो गण हमारे साथ दिये हुये हैं इसते
पृथ्वी के राउ राजे हमको जीतने सुगम और सहज नहीं
हैं तब ब्रह्मदत्त राजा जो है सो पुत्रों का कथन सुन कर
बडे हरष को प्रापत भया और कहने लगा कि हे पुत्र तुम सर
व सामर्थ्य और लायक हो अब यज्ञ का समाज सर्व तयार क
रो इस प्रकार राजा का कथन सुन कर भगवान का भक्त जना
र्दन ब्राह्मण जो है सो कहने लगा कि हे राजन क्या तेरा हृ
दय कुछ मलीन हो गया है अथवा तूं बौर हो गया है इह दोनो
तेरे पुत्र जो हैं सो मानो विष के भीगे हूये वचन कहते हैं आप
तो मरेंगे तेरे को भी मारना चहते हैं इह पापी और महा मंद
केवल अनर्थ ही भाखते हैं हे राजन इनके कहने पमत चल
ना नहीं तो तुमारा नरक मै निवास होवेगा और इह राजसू
य यज्ञ जो कहते हैं सो तो होना बडा कठिन और दुर्लभ है मैं स
त्य सत्य कहता हूं ऐसे जनार्दन के वचन सुन कर राजा
के पुत्र जो हैं सो बडे क्रोध मै होय करके कहने लगे कि अरे
अधम ब्राह्मण तूं इह क्या कायरों कैसे वचन सुनावता है
सो इस समय पृथ्वी पर कौन पुरष है जो हमारे यज्ञ को
निवारण करेगा मूढ अबी उसका सिर काट कर पिता के
चरनो मै ल्याय धरेंगे ॥२२॥ चौपाई ॥ विप्र जनार्दन तब हे
उचारे ॥ वृथा काम मद हृदय तुमारे ॥ भीषम देव जीयत
जग माही ॥ जीतन समर सुरासुर काहीं ॥ जीवत जरासिं
ध ध्रुव धीरा ॥ तहि सन कवन समर थिर वीरा ॥ जादव
सकल प्रवल भटि भारे ॥ जिनहु इमत अरि समर वडारे ॥
तिन मध कृष्ण खेलन तै कारी ॥ तासन कवन करन रण
रारी ॥ राजन हार ब्रह्मंड निकाया ॥ अज अनन्त अन
भव पति माया ॥ जहि बलराम नाम गुरु भ्राता ॥ हलधर
सुभट सूर विख्याता ॥ सरसव सरस धरनि सिरधारा ॥
भनत वेद फनपति अवतारा ॥ सुमरत जास नाम अ
ग जाला ॥ सकल लोक आधार कृपाला ॥ महा वीर
सात्यकि अभिरामा ॥ जीतव तासु कवन संग्रामा ॥ प्र
वल सुभट इन जीतन काहीं ॥ तुव अभिमान वृथा म
न माहीं ॥ दोहा ॥ मुनिन नाथ अपमान तें तुम हु भाग
गत होय ॥ ब्रह्म ज्योत सम पातकी भये विदित जग सोय ॥
दुर्वासा से जुत छिपन मुनिन निरादर किय ॥ करिहि कथन तुव कर

ने जब राजा के पुत्रों कोप से वचन कहे तब भी जनार्दन क
हता भया कि हे राजकुमारो तुमारे हृदय मे यश की अ
भिलाषा जो है सो वृथा है क्यों कि सर्व भीषम जी जो सब
सुरासुर को जीतने हारे है सो जगत मे जीवते हैं और
तैसे ही जरासिंध भी जीवता है तिस के आगे रण मे कौ
न स्थित होने वाला है और बडे प्रबल और महा सूर वीर
सब जादव कि जिनो ने अनन्त शत्रु रण रूपी नदी मे
मारकर बहाये हुये हैं फिर तिन के बीच महा वीर धीर
बल जो दुष्ट हैं तिन का छेद करने वाले कृष्ण भगवान
हैं तिन के सनमुख रण मे युद्ध करने को कौन सामर्थ
है और कैसे हैं कि अनेक ब्रह्मांडों के उतपन्न करने वा
ग ले अनन्त भगवान कि जिन का अन्त नहीं आवता है औ
र माया के पती अखेद अबनासी हैं और सूर वीरों मे
प्रधान बलराम नाम जिनके भ्राता हैं सो कैसे हैं कि सर
सों के दानेवत जिन्हों ने पृथ्वी को धारन किया हुआ है
जगत मे शेष नाग का अवतार हैं और सर्व सृष्टी
के आधार प्रसिद्ध हैं तैसे ही बल के धाम और बडे प्र
चंड वीर सात्यकी कि जिन के जीतने की रण मे किसी को
सामर्थ नहीं है ऐसे महा प्रतापी सूर वीरों के जीतने की
तुम अभिलाषा रखते हो यह तुमारा अभिमान वृथा
हो है तुम तो मुनी नायक दुर्वासा जी के अपमान क
रने तें भाग्यों से हीन हो गये और ब्रह्म घात के समा
न पाप जो है सो तुमारे दोनों के माथे लग गया है दुर्वा
सा मुनी सब शिष्यों के सहित बडा दुखी होयकर और नि
रादर पायकर तुमारी करनी कथन करने के वास्ते
कृष्ण भगवान की शरण को द्वारिका मे चला गया है॥ का
२३॥ चौपाई॥ सुनत हंस बोल्यो रिस मानी॥ दुज
कस करत भीति बस बानी॥ भीषम निरबल जठिर
अनीती॥ धनुष धरन कछु लखहिं न रीती॥ समर ठा
ल ढ रम सनमुख सोई॥ तीन का दुज कबहु न होई॥
मने तुम हु जादव वर जेते॥ निबल दीन कायर सब

कोप कछु शांती॥ लग्यो वदन अस्तुती उचारन॥ दीना

दयाल दुख हारन॥ जैजै चक्र पानि भगवंता॥ जै मुकुंद जै

जै श्री कंता॥ जैति कृष्ण जै भक्त उधारन॥ जै महि हरण

भार जग कारन॥ जैति विप्र सुर संत सहैया॥ जैजै मान

भक्त भव दैया॥ जै अनन्त जै अजर मुरारी॥ जैति जैति दी

नन दुखहारी॥ जैजै जैति चराचर त्राता॥ जैजै दलन दु

ष्ट संत्राता॥ अस प्रकार अस्तुति प्रभु गाई॥ मुनिवर ली

न शांति सुख पाई॥ तब प्रभु कह्यो सुनिये मुनि नायक॥ छ

मा धरम सन्यासन लायक॥ दोहा॥ अस कहि कृष्ण कृपाय

तन व्यंजन बनवाय॥ द्वारिकेश मुनि मुनिन जुत प्र

मुदित दीन जिमाय॥ २१॥ टीका॥ भगवान कहते हैं कि हे मुनी सो

हे सन्यासी और ऐ भिक्षुक क्या कितनीक बात हैं ब्रह्म लोक के द्रोही आप

ही मर जावेंगे यद्यपि शिव ब्रह्मा भी आय कर इनकी

रक्षा मे सहायता करें और बरुण कुबेर इंद्र जम इत्यादि

और सब सुरासुर भी इनके रखवारे बने तद्यपि तुमारे च

रनो की दुहाई कि मै इन को मारूंगा हे मुनी नाथ तुम शो

क को त्याग देवो अब इन दुष्ट तुमारे शत्रु कदापि काल ना

बचेंगे साते स्वर्ग और साते पाताल साते ही समुद्र और

सब पृथवी मे तुल इन अस्थानो के बीच जाहे जावे और य

द्यपि वज्र का घर बनाकर तिसमे प्रवेश करेंगे तो भी इन

को कौन राखने वाला है इस प्रकार भगवान के बड़े उग्र व

चन सुन कर मुनी के हृदय मै कोप की कुछ शांती होती भई

तब दीनबंधू भगवान की अस्तुती जो है सो करने लगा कह

ता है कि जै हो तुमारी हे चक्र के धारने वाले भगवंत जै हो

तुमारी हे मुकुंद हे लक्ष्मी के नाथ हे कृष्ण प्रमातमा जै हो तु

मारी हे भक्त जनो के उधारने वाले हे पृथवी का भार उतारने

वाले हे जगत के कारन भगवान जै हो तुमारी हे साध ब

ह्मण की रक्षा करने वाले हे अनन्त हे अमर हे दीनो के

दुख दारिद्र हरने वाले जै हो तुमारी हे सरब चराचर

के पालक हे दुष्ट घालक हे संत जनो के आधार इस प्रकार

भगवान की अस्तुती करके मुनी जो है सो शांती और सुख

को प्रापत होता भया तब भगवान कहने लगे कि हे मुनी

(margin: दीन; य; ॰ कैसेहु इनके प्रान नहि बचिहै ॰ मुनि नायक सब मुनिन जुत; ॰ कृष्ण …)

163

जो राजा जुधिष्ठिर मेरा मित्र है सो तिसकी नकल करता है और जो पृथवीपर धरमके धारने वाला बड़ा ज्ञानमान और विचारमान जरासिंध है सो तो सरबप्रकार करके मेरा सहाय कहीं होवेगा और मेरे साथ कभी बैर विरोध नहीं करेगा॥२४॥ चौपाई॥ तबहि जनार्दन प्रकट बखाना॥ मूढ दरप बश परहिं न जाना॥ भीष्म देव पांडव कुरु बंसी॥ जीयत सकल जादव रिपु धंसी॥ केहि विधि राजसूय तुव होना॥ ऊखर धरनि बीज जिमि बोना॥ हंस अनथ कछु गिरा न मेरी॥ तुव मति दीन प्रकट विधि फेरी॥ बोल्यो हंस कुपत अधिकाई॥ जाय न विप्र तोर जढताई॥ पुनि पुनि मनहु प्रबल रिपु काहीं॥ जानहु निबल हमहि मन माहीं॥ इह अपराध छिमा हम कीना॥ जानि दीन जाचिक मति हीना॥ पै अब सासन मानि हमारी॥ विप्र जाहु दुआरका सिधारी॥ नंद गोप सुत सन गत त्रासा॥ मोर कथन अस करहु प्रकासा॥ रच्यो राजसू जनक हमारे॥ हमहू सकल महि जीतन हारे॥ तुमरे देस लवण अधिकाई॥ चलहु लेत बहु बृषभ भराई॥ आन देउ तुमतें नहि लेसू॥ देहु नकछु धन हेत कलेसू॥ दोहा॥ जो अनुसासन हंस नृप तुव नसीस धरि एहु॥ तो कहियो कुल सकल तुव हरहिं बिगत संदेहु॥२५॥ टीका॥ जब इस प्रकार हंस अभिमानके बश होकर सबको निदरता भया तब जनार्दन ब्रह्मन तिनका मौन जो है सो प्रकट करके फिर कहने लगा हे मूढ तेरेको हंकार ने ग्रस लिया अब कछु सूझता नही है देखतो भीषम देव पांडव कुरुवंसी और महावीर शत्रूउं का नास करने वाले सब जादुवंसी जीवते जागते हैं तुमारा राजसू किसप्रकार होवेगा तुम तो कल्लर वाली भूमीमे बीज बीजना चाहते हो सो कैसे ~~उत्पन्न होवेगा~~

उगेगो

हे हंस मेरा वचन झूठा नहीं है तेरी बुद्धी वि
धाताने फेर दई है तब हंस फिर कोपसे कहने लगा
कि हे ब्रह्मण तेरी जढता नहीं जाती है जो तू हमको नि
बल जानता है और बारबार शत्रूकी प्रबलता जणावता है हमे
तेरेको दीन और जाचिक जानकर इह अपराध
क्षमा करदेता हूं परन्तु अबतूं इह कामकर कि मेरी आज्ञा
से द्वारिकामे जायकर और निरभय होकर नंद गोपके
पुत्र से कहो कि हंस और डिंभक के पिताने राजसू यज्ञ
रचा है और वे दोनो संपूर्ण प्रथवीको जीतन हारे हैं
तुमारे देशमे जो लवण बहुत करके होता है सो तिस के
तुम बैल भराय करके ले चलो तुमारे से और कुछ दंड
ना लेवेंगे और नाधन आदि कुछ कलेश देवेंगे और जे
कर कदी इह हंस राजाकी आज्ञा तुमने सीस पर नहीं
धारन करी तो निश्चय करके जान लेना जो वे तुमारे स
रब वंसका नास करदेवेगा ॥२५॥ चौपाई ॥ हंस कथन सुनि
दुज ~~मुनि~~ वरज्ञाना ॥ भये सहाय कृष्ण मुनि जाना ॥ मोहि मुनी
स वरदीन सिनेहू ॥ अब फुर भयो कवन संदेहू ॥ उप
ज्यो हृदय विप्र सुख भारी ॥ चल्यो प्रवाह जात दृगवारी ॥
निकसत वचन हरष बस नाहीं ॥ कृष्ण देव मनु मिले तहां
हीं ॥ बोल्यो बहुरि हंस अस गाथा ॥ मेरी सपथ तोहि दुज
नाथा ॥ मै जस कह्यो तहां तस कहना ॥ भीति विवस क
छु मोन नरहना ॥ सुनत जनार्दन वचन बखाना ॥ सु
नहु नरेस श्रवण गुन खाना ॥ तुव नदेस द्वारिका सिधा
री ॥ बरनन करहुं कथन तुव सारी ॥ अबमै करहु सदन
निज जाना ॥ होहि सुदिन सुभ पूछि पयाना ॥ अस कहि
विप्र हरष उर छाये ॥ चल्यो भवन मनु संपति पाये ॥
करत विचार जात जीय तेहू ॥ निश्चय भये काल व
श एहू ॥ पै मोहि सन नृप हंस भलाई ॥ कीनी वदन
कहि नकछु जाई ॥ दोहा ॥ रही जनमतें लालसा कर
न दरस सुख ऐन ॥ भई सफल अब भाग वस देखहु
भरि भरि नैन ॥२६॥ टीका ॥ ऐसे हंस का कथन

सुनकर जनार्दन ब्राह्मणने जाना कि अब मुनीके सहाय
के कृष्ण भगवान भये और जौनसा मुनीने मेरेको वरदि
याथा सोभी अब सफल भयाहै इसमै कुछ संशय नहींहै
१२. ऐसे विचारकर ब्राह्मण अपने हृदयँ ऐसा हरषमान भया
कि नेत्रोंसे प्रेम जलकी धारा चली जातीहै और मुखसे व
चन नहीं निकलता मानो कृष्ण भगवान अबी मिलपड़ेहैं
तब हंस कहनेलगा कि सुन ब्राह्मण तेरेको मेरी सुगंद
होवे मैने जो कुछ कहाहै सो तहां अभय होकर सब य
थावत कहिदेना मौन नहीं रहना जनार्दन कहनेल
गा कि राजाहंस मै तुमारा कथन सपथ करके सब क
हूंगा अब मै अपने घरको जाताहूं सुभदिन देखकर द्वा
रिकाको चला जाऊंगा ऐसे कहता हुआ ब्राह्मण मानो
बड़ी संपतीको पायकर अपने घरको चल पड़ता भया त
ब मारगमै विचार करताहैकि इहतो निश्चय करके का
लके वश होय गयेहैं परन्तु मेरे साथ जो राजा हं
सने भलाई करीहै सो कुछ कही नहीं जाती क्योंकि
जनमतें लेकर हीं मेरे मनमै भगवान कृपानिधान के
दरसनकी लालसा लगी हुई थी सो अब भागोंके उदय
होनेकरके सफल भई है जो मै स्यामल मूरतीवाले नंद
कुमारको भलीप्रकार नेत्र भरभरकर देखूंगा॥२६॥ चौपाई॥
अस गुनि जाय भवन निसि सोयो॥ तनक नैनन नींदवस
होयो॥ चल्यो प्रात उठि वाजि अरूढा॥ प्रभु दरसन अ
भिलाखत गूढा॥ जेठ मास जिमि पथक पयासू॥ धाव
त सर पीवन जल आसू॥ तिमि द्विज चल्यो द्वारिका धा
ई॥ लीनसि मनहु कलप द्रुम पाई॥ तुरगहि वेग यदपि
बहु दीना॥ तदपि मंद गति मानस चीना॥ क्षुधा त्रिषादि
न श्रम कछु बूझा॥ पथि विश्राम पसो नहि सूझा॥ क
ब पहुंचहु द्वारावति धामै॥ देखहु कमल नैन घन
स्यामै॥ मोहि सन हंस कीन उपकारा॥ दरसायो वसुदेव
कुमारा॥ आज कवन संसार महाना॥ धन्य धन्य मो
हि सदृश आना॥ जहि इन नैनन होहि सुहावा॥ नं
दलाल दरसन मनभावा॥ भयो विदित दाहंन मोहि

मे
ता २

ते ते॥ वीर धीर तिन कवन उचारा॥ हरे समर मागध बहुवा
रा॥ सात्यकि सोऊ सुभट किमि जोगू॥ भीरु विपुल जानत
सब लोगू॥ इह बालक चारहीं के बाढे॥ परे काहु संगर
नहिं गाढे॥ राम वीर तुम जवन बखोना॥ सो सुनि अच
रज होत महाना॥ वारुणी मत्त रहत नि[illegible] सोई॥ धनुष ध
ऽत
रन तहि ज्ञान न कोई॥ जाहि कृष्ण कहे ईश्वर लेखो॥
सो कब ते भ्रम तुमहि बसेखो॥ नंद गोप कर सुवन कहा
वा॥ हमरे कबहु न सनमुख आवा॥ पांडु क[illegible] मोरऽप
ऽमित्र
ति धरना॥ तो की करत गोप अनुकरना॥ दोहा॥ धरन
धरम धरनी विदत जरासिंध जेन बोध॥ मोर सहाय
क होहिं सो करहिं न वैर विरोध॥२४॥ टीका॥ तब ज
नार्दन का बचन सुनकर हंस बडे कोप से कहने लगा
कि अरे ब्राह्मण क्या डरके बश भया हुआ बचन करता
ऽरट
है भीषम भीषम जोऽकहता है [illegible] मूढ सोतो निरबल
और बूढा अनीती पुरष है धनुष धारने की रीती को क्या
जानता है हमारे सनमुख रण मे कदाचित नहीं हो सकेगा
ऽम
और जो तुऽ सब जादव कहते हो सो भी महा भीरू डरनेवा
ले दीन और कायर तिनको सूर वीर कौन कहता है मा
गध जो जरासिंध तिसने रण मे अनेक वार दुरदशा कर
के भगाये हुये है और सात्यकी जो है सो तो अत से का
यर और बलहीन भय से कांपनेवाला सब कोई जान
ता है वे किस प्रकार जुद्ध के लायक समुझा जावे इह
तो चारके ही बालक है कबी [illegible] रण की गाढि गर
माई और घाम नहीं देखी और बलराम को जो तुम
ने बीर कहा सो सुनकर [illegible] बडा आचर्ज आवता है वा
रुणी जो शराब है सो पीकरके नित्त सोया ही रहता है
ऽसको
धनुष धारने का तिऽ कछु ज्ञान ही नही है [illegible]
रहने दो जिस कृष्ण [struck through] और जिस कृष्ण को तुमने
ईश्वर समुझा हुआ है सो कहो कि इह भ्रम तुमको
कब का भया हुआ है वे तो नंद गोप का पुत्र कहावता
हमारे सनमुख तो रण मे कबी नहीं आया पांडु पुत्र

चारी॥ आज सुगंम मै नैनन जाय सु देखिहुं रूप प्रत
दो मुरारी॥ दोहा॥ भूरि भाग मोहि सरस जग आज न दू
जो कोय॥ विनु आयास जाके सुगम कृस्न मिलावा हो
य॥ अस प्रकार दुज गुनत मन चैन प्रमोद सुख पाय॥
आय भवन हरि द्वार थिर भयो नेम्र सिर नाय॥ २७॥ टीका॥
तब जनार्दन हरष के वस भया हूआ मन मै विचार करता क
रता घर मै जाय कर सोवता भया परन्तु भगवान के दरस
न का जो उतसाह था तिस तें नेत्र जो हैं सो नीद के वस नहीं
होते भये प्रात होते ही घोडे पर सवार होकर भगवान के
मिलने की अभिलाखा वाला भया हूआ जैसे जेठ के म
हीने मै रसते चलने वाला पुरष ~~व्याकुल होय~~ त्रिखा करके
व्याकुल जल पीवने के वासते सरोवर को धावता है
तैसे ~~ही~~ ब्राह्मण द्वारिका को धावता भया मानो कलप
वृक्ष को पाय हूये चला जाता है घोडयों को यद्यपि व
हुत ही चलावता है तद्यपि थोडे ही चलते प्रतीत हो
ते हैं भूख प्यास रसते का विस्राम इह कुछ नहीं सूझ
ता है कहता है कि द्वारिका मै कब पहूंचूं और कमल नैन
घनस्याम को कब नेत्र भर कर देखूं अहो हंसने मेरे सा
थ बडा उपकार किया है जो त्रैलोकी के नाथ का दरसन
करवाया है आज संसार मै मेरे समान धन्य कौन है कि
जिसको इन नेत्रों मै नंदलाल महाराज का दरसन होगा मेरे
को आज विधाता दहने भया है जो भगवान के चरन कमल
देखने का संजोग बना दीन बंधू के दरसन तें संसार मै और
कोई अधिक लाभ नहीं है ऐसे विचार कर कहता है कि अब
जायकर कृपासिंधू के आगे भेटा क्या धरूंगा और तो
कुछ नहीं है परन्तु तन मन प्राण इह जो हैं सो निछा
वर अर्थात वारने कर देऊंगा मै जानता हूं कि आज
जगत मै एक मेरा ही जीवना और जनम सफल है और मेरे
ही भाग जागे हूये जाने जाते हैं और मेरे ही पुन्य का प्रभाव सू
रज की न्याई उदय भया है तिस तें ~~सब~~ दोष दुख और
दारिद्र रूपी उलूक जो उलू हैं सो सब दीन होकर छिप गये
हैं और मेरे धन्य होने को ~~[illegible]~~ अब तक कोई भी समय नहीं व
नाया आपदा मै ही दिन वतीत करता रहा हूं आज विधाता

मेरे रहने भया है जो राधा वर स्याम सलोने भगवान को जाय
कर दरसन करूंगा सो कैसे भगवान हैं कि जिनके सीसपर मु
नियों के मन को हरने वाला मणियों कर के जटित बड़ा मनोहर
मुकट है और कानो मे मकराकृत कुंडल बड़े विशाल हृदय
पर तुलसी की माला और कौस्तुभ मणी मुख मे सुंदर मधुर मु
सकान और नवीन कमलो वत नेत्रों की उपमा कामदेव की
कोटि छवी को लज्जा देने वाला स्यामल सरीर गोधन के चराने
और बन के विचरने मे जिनकी प्रीती अहो मेरे भाग्य जो मै ऐसे
ध्यान के सहित भगवान कृपानिधान को जाय जायकर देखूं
गा दीन बंधू का ध्यान सुमरण करते करते हीं मेरे को ऐसे प्र
तीत होता है कि मानो भगवान चतुर्भुज रूप मेरे प्रतक्ष सनमु
ख हैं॥ परन्तु एक कलेश मेरे जीये मे अत से करके उपज
रहा है कि हेस के लवण मांगने की अनीती भगवान को कैसे
कहूंगा और जो नहीं कहता तो तहां जायकर के क्या उत्तर दे
ऊंगा इह मेरे को बड़ी कठिन बनी है जो उहां अति कठोर
हेस और इहां अतसे कोमल जदुनाथ मै किसकी कहूं औ
र किसकी ना कहूं पर इसके बीच एक मेरे हृदय मे भरोसा है
कि ~~यद्यपि कोई~~ दीन बंधू के सनमुख यद्यपि कोई अयोग्य
कथन भी होवे तद्यपि जन के हृदय की भगवान जानने हारे हैं
संसार मे दूत के धरम और मीत की प्रीती को श्री वसुदेव कु
मार जो हैं सो भली प्रकार जानते हैं दीनानाथ को कपट से र
हत होकर जो कोई सनमुख जाय मिलता है तब अतसे उदा
र भगवान जो हैं सो तिसका कुछ भी दोष नहीं गिनते हैं तो ते
मैं भी निरसंक होकर जाता हूं क्या भया जो का भेजा हुआ आया हूं
भगवान कृपानिधान मेरा कुछ भी दोष ना गिनेगे इस प्रकार
मन मे विचार करता हुआ ब्राह्मण सरतपती जो समुद्र है तिस
के किनारे पर पहुंच कर और तहां से तुरत हीं पार होय कर जदु
बीर को रत्ता रटता पुर मे प्रवेश करता भया तहां फिर
मन मै विचार करने लगा कि जिस परमातमा के नमित्त जोगी
जती ब्रतधारी और तपी इह सब अनेंक साधना और हठ कर
ते हैं और शंभु आदि भी अगाध समाध को धारन करते हैं
~~[illegible]~~ सो परमात्मा भगवान तिनके ध्यान मे नहीं आवते

१६६

168

मेरे भागोंकी वड़ाई देखो जो तिस प्रमातमा को आज जाय कर सहजे हीं नेत्र भर करके देखूंगा मैधन्य हूं मैधन्य हूं किजिस को ऐसे दुराराध भगवानको किजो वड़ो कष्टनसे अराधे जाते हैं विना यतन केही मिलावा होता है ऐसे विचारता हुआ जनार्दन ब्रह्मण वड़े सुख करके पूरित भया हूं आ भगवान के भवनो के द्वारे पर आयकर सीस नावता भयो॥ २७॥ चौपाई॥ द्वार पाल तहां देव समाना॥ पहिरे मुकत माल मणि नाना॥ तिन सों विप्र सुभृ हरषाई॥ नम्र वदन अस गिरा अलाई॥ मै दुज जाति जनार्दन नामा॥ साल्व नगर द्वारप मम धामा॥ हेस भूप सन मोर मिताई॥ आवा करन दरस जदुराई॥ अव तुव कृपासिंधु पें जाई॥ मोर खवर सव देहु जनाई॥ द्वारप सुनत विप्रवर भाषा॥ हरषत गयो दौरि प्रभु पासा॥ जोरि जुगल कर विनय प्रकासी॥ साल्व नगर वर विप्र निवासी॥ कहत जनार्दन नाम सुहावा॥ प्रभु तुमार दरसन हित आवा॥ जो नदेस करुणानिध होई॥ तो आवहिं प्रभु सन सुख सोई॥ कृपासिंधु सुनि वचन उचारा॥ लावहु दूत दुजहिं दरवारा॥ प्रभु नदेस वस द्वारप ताहीं॥ लावा दुजहिं सभासद माहीं॥ हरिछवि देखि विप्र मन हर नी॥ व्याकुल परयो दंडवत धरनी॥ दोहा॥ सुधि संभार पुनि उठो दुज लखि सनाथ निज काहिं॥ चितवत अनमिख कृष्ण तन करि चिंतन मनमाहिं॥ छंद॥ जाहि हे मीव धर रूप संखासुरै करत वध वेद अवुध निकासो॥ मच्छ औ कच्छ वपु धरत कीन्यो चरित सुजस विसतरत सुरनर उवासो॥ होत मृगराज नर हस्यो प्रहलाद दुख दीन गजराज रुज दीन टास्यो॥ कोल कल रूप भवकूप भय हरन हरि चरित निज धरत धरनी उवास्यो॥ दोहा॥ सोई भृगुवर रघुवर सोई सोई जदु वर जग गाय॥ कीने आगनित चरित प्रभु धरि नाना निज काय॥ अस मानस निज गुनत दुज भगवन सभा सुहाई॥ छवि अनू

धाता॥ देखव चरन केज जग त्राता॥ दीनदयाल दरसन
ते काहू॥ नहिन अधिक संपति उतसाहू॥ दोहा॥ घरहू उ
पायन कवन [deleted] प्रभु सनमुख अब जाय॥ करव निछा
वर प्राण मन तन चरनन सिर नाय॥ कवित्त॥ भयो एक
मेरोई जनम जीवन सफल मेरोई सुभाग जागे जाने ज
ग जात हैं॥ मेरोई प्रभाव पुन्य सूरसो उदित पूर दूषण उ
लक दूर दारद दरात हैं॥ मोको धन्य भये वे को भयो न
प्रसंग भव अबलों विताये अपदा मै दिनरात हैं॥ आज
विधिदा हन विचारकै निहारूं जाय राधावर स्यामल सलो
ने जौने गात हैं॥ मंडित मणिन मुनी मानस हरन क्रीट
कुंडिल ललस कृत कानन विराजैं जास॥ हीयरो विसाल पें
लसित वनमाल तापें कौसतभ जाल जो रसाल मुख मंद
हास॥ नीरज नवल [deleted] नैन कोटि छवि मैन दैन सांवरे
चरैया धैन कानन करन वास॥ अहो भाग करुणा नि
धान भगवान आज ऐसो ध्यान गोचर विलोकव दृगन
दास॥ दोहा॥ सुमरत रूप अनूप कल कृष्ण देव भगवान॥
मोहि आगल जनु चतुर भुज चलत होत अस मान॥ पै
इक वडो कलेस मोहि उपज पर्यो जीय माहि॥ हेसहु
मांगन लवन कर कस कहिहौं प्रभु पाहि॥ जो न कहे
अब उत्तर तव करहुं मुख जाय॥ उत कठोर अति हेस
"कवन रत प्रति को भल जदुराय॥ पै मम हृदय भरोस रह
दीन वंधु भगवान॥ जन हीय की जानत सकल यदपि
अजोग वखान॥ धरम दूत अरु मीत को प्रीत रीत संसार॥
वूझत भलहि कृपाय तन श्री वसुदेव कुमार॥ दीन
नाथ कहे कपट गत मिलहि जो सनमुख जाय॥ तो
कर दोष न गनहि कछु अति उदार जदुराय॥ तांते
जाहु असंक मै यद्यपि हेस पठेहु॥ मेरो दोष न गन
हिं कछु जदुपति दीन सनेहु॥ गुनत मनहि मन
विप्र अस गयो सरत पति तीर॥ उतरत पार प्रवेस
पुर कियो सुमरि जदुवीर॥ सवैया॥ वहुरि विचार
करै दुज मानस जाहि हित जोगि जती व्रतधारी॥ सेमु
समाध अगाध धरैं जो करैं हठ कोटि तपी स्वर झारी॥
आव [deleted] ध्यान न तें भगवान थके सब अंत हु नेति उ

167

कोई गिनती नहीहे सो चरित्र करते रहेहैं इस प्रकार विचारकरके ब्रह्माजी भगवान की सुंदर सभा जोहै ति सकी अनुपम छबीको देखने लगा॥ २८॥ चौपाई॥ नाचरही अपसर गण नाना॥ गुनि गंधर्व करहिं कलगाना॥ सूत बंदि मागध सुभ बानी॥ हरि जस करहिं कथन सुखखानी॥ उग्रसैन महाराज बिराजे॥ बिभु बिलोकि जहि सुरपति लाजे॥ कनक सेंघासन सुखद सुहाये॥ राम कृस्न मंजुल छबि छाये॥ सात्य अरु उद्धव अभिरामा॥ सोभित जुगल दिसन जन स्यामा॥ जादव आन सुभट सुखदाये॥ प्रबल उदार सिंह जनु भाये॥ पट अमोल कल आयुध धारे॥ प्रभु कहे सकल प्रानतें प्यारे॥ झूलत चमर बिजन छबि देहीं॥ सकल प्रमोद परस्पर लेहीं॥ राम कृस्न छबि कनक सेंघासन॥ मनहु मेरु रबि चंद्र प्रकासन॥ पीत स्याम पट अंग बिराजे॥ जिन्है निहि बिलोकि मदन छबि लाजे॥ लोल कपोल कुंडलन सोभा॥ गीरबान मुनि मान सलोभा॥ तकत भौंहि प्रभु बीर प्रचंडा॥ सासन होत कवन कहि डंडा॥ दोहा॥ तब नारद कहे निकट लखि हसि हसि कृपा अपार॥ दुरवासा कर विधा सब भाखित बदन उचार॥ २९॥ टीका॥ भगवान की सभा है कि जहां अप ~~सरोंके समूह नाचते~~ रा नृत्य करती हैं और गुनी गंधर्व जोहैं सो भी नाना प्रकार की मधुर स्वरों से गायन करते हैं सूत बंदी मागध जो भाट जन हैं सो भगवान के अनेक जस्सों को उचारन कर रहे हैं और राजा उग्रसैन कैसे बिराजमान हैं कि जो जिस के प्रताप को देख कर इंद्र भी लज्जाको प्रापत होताहै और सुवर्न के मनोहर सेंघासन पर राम कृस्न दोनो भ्राता बैठे हुये अत्यंत छबी को उदय करते हैं सात्यकी और उद्धव जी इह बने स्याम भगवान के दहनी बाईं ओर बैठे हुये शोभा देते हैं और सब बीर धीर अति से प्रबल और उदार जादव जो

है सो अमोल भूषण वस्त्र औ शस्त्र सजाय हुये कर मानो सभाके शृंगार हुये बैठे हैं और भगवानको सब प्राणों से प्यारे हैं चमर और पंखा जहांतहां फूलता छवी देता है सबकोई आनंदमें मगन होरहे हैं सुवर्न के सिंघासन पर श्रीकृष्ण और बलरामजी कैसे शोभायमान हैं जैसा सुमेर परवत पर चंद्रमा और सूरज दोनो उदय होरहे हैं और कामदेवकी छवीको हरने वाले पहिरे हुये जिन्होने मनोहर पीत और स्याम वस्त्र तैसे हैं मुनियोंके मनको मोहित करने वाले कोमल कपोल और कानोमें दिव्य कुंडल इसप्रकार दीनबंधु भगवान सभामें विराजे हुये हैं तब नारदको पास बैठे हुये देखकर भगवान हंसकर के दुरवासा मुनी का वृतान्त जो है सो सब सुनाय देते भये ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ सुनत जनार्दन प्रभु अस वानी ॥ मानस सकल लोक सुख मानी ॥ पस्यो लकुट इव दौरि सिधाई ॥ चरन कंज मंजुल जदुराई ॥ प्रेमाकुल तन चेत विसारी ॥ चल्यो प्रवाह जात दृग वारी ॥ कछुक वेर पाछिल जब चेत्यो ॥ छकोदेखि छवि कृपान केत्यो ॥ पुनि धरि धरनि सीस अनुरागा ॥ जैजै जैति उचारन लागा ॥ हे भगवान मान प्रद स्वामी ॥ अखिल लोक विश्राम निमामी ॥ कर आकर सामर्थ कृपाला ॥ दुज सुर धरनि धेनु प्रतिपाला ॥ सदा दीन रक्षक भगवंता ॥ अनभव अजर अनादि अनंता ॥ मै दुर्जं वसहु साल्व कुलगाऊं ॥ हेसभूव कर मित्र कहाऊं ॥ जनक जनार्दन नाम धरावा ॥ तुमरे दरस हेतु इत आवा ॥ अधम अपावन दुरमति भारू ॥ अनाचार रत विषय विकारू ॥ पै तुव पतित पुनीत कृपाला ॥ दैद रसन मोहि कियो निहाला ॥ अव मै चरन सरन प्रभु लीन्यो ॥ जनम सफल निज संसृति चीन्यो ॥ मोहि जानिये अव आपन बालाम राखिये कृपा दृष्टि नंद

१६९ 1.81

लाला॥ दोहा॥ तब उठि द्विज हि कृपायतन लीन सिहृद य जु राय॥ बारबार पूछत कुसल हरष बार दृग छाय॥ ॥३०॥ टीका॥ तब जनार्दन भगवान के मुख से दुरवासा जी का वृतांत सुनकर हृदय अत्यंत सुख मानता भया और दौड़ करके दंडवत भगवान के चरनों पर गिर पड़ा प्रेम करके व्याकुल नेत्रों से जल बहा चला जाता है कुछ के बेर के पीछे जब सुधी आई तब भगवान के रूप को देख कर उ नमत्त हो जाता भया फिर प्रणाम करके और सनमुख हाथ जोड़ कर अस्तुति करता भया कि जै हो तुमारी हे मान दान के देने वाले भगवान हे सरब लोक के आधार तुमा रे को नमसकार होवे देव तुम कैसे हो कि सरब सामर्थ और सरब के पालक हो गौ ब्रह्मण देवता पृथवी की रक्षा करने को तुम ही योग्य हो और जरा जो मरन ति स से रहित और अनादि हो तुमारी आदि भी नहीं है अ पने आप से ही प्रकाशमान हो और अनन्त हो तुमारा अन्त भी नहीं पाया जाता है हे नाथ मैं ब्रह्मण जाती साल्व नगर में वसने वाला और हंस राजा का मित्र क हावता हूं पिता ने मेरा जनार्दन नाम रखा हुआ है अब इहां आप के दरसन के वासते आया हूं और मैं कैसा हूं कि बड़ा अधम अपावन दुर्बुद्धि और अधम आचारी मेरा आचार विवहार भी मंद है और वि षय विकारों मे ततपर हूं परन्तु हे कृपासिंधू तुम पतितपावन जो पापियों को पवित्र करने वाले हो मेरे को दरसन देकर निहाल कर दिया है अब मैं दीनबंधू तुमारे चरनों की शरण लेकर ~~अ~~ अपने ज नम को सफल जाना है मेरे को अपना बालक जान कर अब कृपा दृष्टी ही राखते रहो जब जनार्दन ने ऐसे विनती करी तब भगवान ~~बड़े~~ ~~प्रसन्न~~ होकर आ नंद जल से नेत्र भरे हुये ततकाल ही उठकर जनार्दन को हृदय मे लगाय लेते भये ॥३०॥ चौपाई॥ पुनि सेज्यासन दीन बिठाई॥ लीन कनक भृंगार मंगाई॥ द्विजकर दीन शील अनुरागे॥ निज कर चरन पखार

(margin) मैं

(margin) अपने जनम को

(margin) ...

पलोकन लग्यो प्रेम हरष सरसाय॥२८॥ टीका॥ तब
भगवानके द्वारेपर द्वारपाल जोहैं सो देवतोंके समा सुंदर
मोतियोंकी माला पहरे हूये स्थित है तिनको ब्र
ह्मण कोमल बानीसे कहने लगा कि हे भाई मै विप्र जाती है
और जनार्दन मेरा नाम है साल्व नगरमे बसता है हे सरा
जाके साथ मेरी मिताई है और ईहां जदुनाथ महाराजका
दरसन करनेको आया है अब तुम कृपासिंधूके पास जाय
कर मेरी खबर जणाय देवो ऐसे ब्रह्मण का वचन सु
नकर द्वारपाल ततकाल भीतर भगवान के पास चला गया
और हाथ जोड़कर बिनती करने लगा कि महाराज एक सा
ल्व नगरके रहने वाला जनार्दन नाम करके ब्रह्मण तुमा
रे दरसनको आया है जो कृपानिधान की आज्ञा पाऊं तो
सनमुख लेआऊं तब भगवान सुनते ही कहने लगे कि
जावो ब्रह्मण को शीघ्र मेरे पास ले आवो दीनबंधू
की आज्ञा सुनकर द्वारपाल जो है सो ततकाल जना
र्दनको ले आवता भया सो तहां भगवानकी मनोहर छबी
देखकर प्रेमसे व्याकुल भया हुआ दंडवत पृथ्वीपर गिर
पड़ा फिर कुछेक बेरके पीछे शरीर की सुधी संभाल कर और
अपने आपको सनाथ लखकर नेत्रोंकी दृष्टी को एक
टक जोड़करके भगवानके रूपको देखता और हृदयमे
बिचार करता है कि जिस प्रमातमाने हैग्रीव रूप धार
न करके संखासुरको वध किया और समुद्रसे वेदों को
निकाला है और जिस प्रमातमाने मच्छ कच्छ इत्या
दि अवतार धार कर अपने अद्भुत कौतुकसे संसारमै
सुंदर सुजस बिस्तारण किया और गौ ब्रह्मण पृथ्वी
और देवताओंकी रक्षा करी जिस भगवानने नरसिंह
रूप धर कर प्रहलादका दुख निवारण किया और तहां
ग्राह करके ग्रसा हुआ गज जो था तिसकी भी सहाय
ता करी और जिं प्रमातमाने शूकर रूप धार कर पृ
थ्वीको समुद्रसे निकाला है इह सोई कृस्न प्रमा
तमा हैं जो परसराम और रामचंद्र
इत्यादि नाना शरीर धार कर अगनित कि जिनकी

जानकर कुछ कहि नहीं सकता है॥३१॥ चौपाई॥ कामा
खहु करुणानिधतोही॥ होत सकुच अति भाखत मोही॥
बिहसि बोले प्रभु दूतहिं बानी॥ नहिं अयोग्य जानत बुध
ज्ञानी॥ कहो हंस डिंभक जुग भाई॥ औ हिं कुसल कछु
खबर न पाई॥ अभय सकुच गत दुजबर होई॥ बरनहु
हंस कथन अब सोई॥ यहि मै तुम अदोष दुज भाई॥ ज
नि राखहु कछु मरम दुराई॥ मोर तोर कछु अन्तर ना
हीं॥ तुव अनन्य सेवक मोहि काहीं॥ दूत सत्य जे मनहिं न
बागी॥ सो अति होहिं पाप कर भागी॥ ताते हंस मनन सब
आजू॥ मोहि सन करहु कथन दुजराजू॥ सकुचि उत्र
तव दुजबर दीन्यो॥ अस जदुताई हंस प्रभु कीन्यो॥
जस अप मान कीन दुरबासा॥ तुमहिं विदित सब बिस्व प्र
कासा॥ बहुरि हंस जब सदन सिधावा॥ तब मोहि सन
अस बचन अलावा॥ जाहु बिप्र द्वारावति माहीं॥ कह
हु कथन मम जदुपति काहीं॥ दोहा॥ पितु हमार मख
राजसू करत हरष सरसाय॥ हम जीतव निज भुजन बल
सकल प्रबल महिराय॥ तुमरे देस बसेष कर उपज
त लवण अपार॥ सो तुम हमको देउ इह पठहु बृष
भ बहु भार॥ ३२॥ टीका॥ जनार्दन कहता है कि हे दीन
सुखदाता मै आप को क्या कहूं कहने मे चित्त को बडा
सकुच आवता है तब भगवान हंसकरके कहने लगे कि
हे भक्त दूत का कथन जो है तिसको बुधजन बिचारमान
अयोग्य और बुरा नहीं जानते हैं तिसका एही धरम है जो
सत्य सत्य कहि देना ताते तिनकी तुमको आज्ञा है सो कहो
और इहांकी सुनावो कि हंस अरु डिंभक राजी तो है बहु
त दिन भये तिन की कुछ खबर नहीं पाई तुम सकुच
मत करो अभय होकर सब बृतांत सुनाय देवो इसमै
तुमको कुछ दोष नहीं है मेरे तेरे मै कुछ अन्तरा न
हीं है तुम मेरे अनन्य भक्त हो जो मेरे बिना दूसरे का
भरोसा नहीं रखते हो हे प्यारे जो दूत होकर सत्य
ना कहे तो पाप का अधिकारी होता है इस प्रकार

भगवानके वचन सुनकर जनार्दन कुछ सकुचके वश
भया हुआ उत्तर देताभया किहे भगवन हंसने अतहे ज
ढताई और अधमकरम किया है पहले दुरवासा मुनी का
अपमान करना सो आपको भली प्रकार विदत है सव जा
नते हो तिसते उपरांत जो हंस जब घरमै आया त
व मेरे को वलाय करके कहने लगा कि ब्रह्मन तुम द्वारिका
मै जावो और तहा मेरी आज्ञा जदुपतीसे कहो कि पिता हमा
रा राजसू यज्ञ किया चाहता है और हम अपनी भुजों के प्रचं
ड वलसे सरव पृथवी मंडलको जीतेंगे तुमारे देशमै जो
अधिक करके लवण होता है सो तिसके तुम वेल भराय
कर हमारे पास ईहां भेज देवो तुमारेसे और कुछ दंड नहीं
लिया जावेगा ॥ ३२॥ चौपाई॥ जो तुम कवहु लवण नहि
लीनो॥ मख मे डिल आवन नहिं कीनो॥ तो
निश्चय यह वात हमारी॥ होहि हनन जादव कुल सारी॥
अस दुरवाद हंस जढताई॥ और हु कथन कियो नहि जा
ई॥ सुनि हरि हंस कथन मुसक्याने॥ तेजुग भ्रात का
लवस जाने॥ दुज सन कह्यो वचन जदुराई॥ हंस व
खान सत्य सब भाई॥ हम तो लवण दंड कर जोगू॥
भल हिं विदत जानत सब लोगू॥ दुज तुम जाय हंस स
न कहियो॥ अब हम देत दंड तुम लहियो॥ सुनत
वचन वलराम मुरारी॥ विहसे वदन दै दै करतारी॥ अ
स अविलोकि हास वलदाई॥ हसी सभा जादव समुदाई॥
विप्र जनार्दन लजत महाना॥ वारवार मानस पछताना॥
कहत दूत वनि मै कत आयो॥ प्रभु कहे कत कटु वचन सु
नायो॥ पावक जरहु कि वारि वुडाऊं॥ प्रभुहिं वदन कहि
भांति दिखाऊं॥ दोहा॥ पाहि पाहि मुख नंम्र वत कह्यो
विप्र कर जोर॥ दुष्ट भवन कस जाहु अव याल शरन
तजि तोर॥ ३३॥ टीका॥ फिर हंसका कथं है कि हे कृष्ण
जो कवी तुम लवण के भार लेकर यज्ञ मंडलमै नहीं
आये तो निश्चय करके जानना जो तुमारे सव जदुवंस
का मै नास कर देऊंगा जनार्दन कहता है कि हे भगवन

१९०

१२४

इस प्रकार हेसका दुर्वाद और जढताई जो है सो कही नहीं जाती तब भगवान हेसका कथन सुनकर बडे हसने लगे और जानते भये कि इन दोनो भ्राता कालके वश हो चुके हैं फिर जनार्दनको कहने लगे कि भाई हेसका कथन सत्य ही है लवणको देदेने योग्य हैं सब कोई जानता है अब तुम जाय कर तिसको कहना कि हम देदेते हैं तुम लेवो ऐसे भगवानके मुखसे वचन सुनकर बलरामजी बडी ताडी देदेकर हसने लगे तब बलरामजीका हसना देखकर जादवों से पूर्ण सभा हीं हसने लगी तिनको देखकर जनार्दन जो है सो बडी लज्जाको प्रापत होता भया और मनमे बार बार पछताने लगा कहता है कि मै क्यों दूत बनकर आया और भगवानको क्यों ऐसे कटु वचन सुनाये अब मै अगनीमे जल मरूं कि पानीमे डूब जाऊं कि विष खायकर प्राणोंको त्याग देऊं भगवानको कैसे मुख दिखाऊं ऐसे आदि चाहि उचारता हुआ बडी दीनतासे हाथ जोड कर कहने लगा कि हे दीनानाथ अब मै आपकी शरणको त्याग कर तिस दुष्ट के से जाऊं ॥ ३३ ॥ चौपाई ॥ तब सात्यकि तन जदुपति देख्यो ॥ उठ्यो तमकि रिस मानि बसेख्यो ॥ तब प्रभु कह्यो हेस ढिग जाई ॥ मोर वचन अस देहु सुनाई ॥ हम तें जवन देउ तुम जाचा ॥ चाहत हमहु देन सब साचा ॥ जहां नदेस होय तुव राई ॥ तहां लवण हम देब पठाई ॥ पितु तुमार मख जहां करै हैं ॥ की तहां पठौ लवण हम दै हैं ॥ दुजसन कह्यो बहुरि भगवाना ॥ तुम सात्यकि संग करहु पयाना ॥ तुमरो विप्र दोष कछु नाहीं ॥ मै जान्यो अपनो तुम काहीं ॥ तब नकहो दुज मोर बखाना ॥ सब कहि है सात्यकि मति धामा ॥ तब साखी वत सुनत रहाना ॥ मोर कथन सात्यकि मुख नाना ॥ लौटि आहु पुनि सात्यकि संगा ॥ रखि मरोस मम चरन अभंगा ॥ सिर धरि प्रभु नदेस मुख दाई ॥ जेहि कृस दुजगीरा

न लागे॥ ते चरणोदिक विप्र सुहावा॥ कृपासिंधु निज
सीस चढावा॥ करि पूजन विधि संजुत साही॥ दीनदयाल
पुनि गिरा उचारी॥ अहो भाग्य तुव दुज वर आई॥ जो मोहि
दीन दरस सुखदाई॥ जनहु आज मै सरवस पायो॥ धन्य
धन्य संसार कहायो॥ तुव दुज नाथ प्राण प्रीय है मेरो॥ मो
हि जिय मरम विदत सब तेरो॥ अब न होहिं तुमरे संसारा॥
सत्य वचन दुज सुषु हमारा॥ सुनत जनार्दन प्रभु मुख बानी॥
सकल लोक मानस सुख मानी॥ जोरि जुगल कर विनय अ
लायो॥ मै जदु नाथ दूतवत आयो॥ प्रभु सिंघासन लीन वि
ठाई॥ इह नउचित मोरे जदुराई॥ दुज आसन सोभित
महि माहीं॥ हृदय राखि प्रभु चरनन काहीं॥ दोहा॥ अब अ
नुचित कछु विनय मम कहि न सकहु जदुराय॥ जहिहि
त हेस रेस इत पठ्यो सि दूत बनाय॥ ३१॥ टीका॥ फिर भ
गवान तिस जनार्दनको वडे सनमानसे सिंघासन पर विठाय कर
और रुकमनी [सुवने] का गेगा सागर मंगवायकर अपने हाथों से तिस
के चरन धोवने लगे फिर वडी प्रीतीसे सोई चरनो का जल
भगवान अपने सीस पर धारन करले तभये तिसतें उप
रान्त विधी अनुसार पूजन करके दीनदयाल कहने लगे क
हे ब्रह्मण मेरे अहो भाग्य हैं जो तुम ने घरमे आय कर द
रसन दिया और मेरे को धन्य धन्य किया तुम तो मेरे
को प्राणों सेभी प्यारे हो तुमारे हृदयकी मै सव जानता हू
हे प्यारे अब तुमको जनम मरन इत्यादि संसार का कलेश
जो है सो कदाचित नहीं व्यापेगा इह मेरा सत्य वचन है
तव जनार्दन भगवान के वचन सुनकर अपने हृदयमै
मानो सरव लोकका सुख मानता भया और दोनो हाथ जो
डकर विनती करने लगा कि हे दीन बंधू मैतो दूत बनकर
आया था और आपने मेरे को सिंघासन पर बैठार लिया
सो हे कृपानिधान इह मेरे को योग्य नहीं था आपके चर
न कमलों को हृदयमै धार कर ब्रह्मणों का आसन पृथ
वी पर ही नीका लगता है अब हे दीनानाथ मेरी कु
छ विनती है कि जिस हेत करके हेसराजाने मेरे को
दूत बनाय कर आपके पास भेजा है परन्तु सो अनुचित

७८

[margin, vertical] [illegible]

सभा द्वार कीन्यो पुनि आवन॥ तब जनार्दन आगल
जाई॥ हंसहि आसिख वदन अलाई॥ पूछ्यो हंस कुस
ल सुख मानी॥ कह्यो विप्र सादिर तुम वानी॥ मन्यो
भूप जहि अर्थ पठीन्यो॥ सो कारज हमरो दुज की
न्यो॥ कहि स विप्र तहि कारज हेतू॥ सात्यकि पठे कृ
पाय नकेतू॥ सो निज मुख तुम सन सब गाथा॥ क
हि है जथा भन्यो जदुनाथा॥ कह्यो हंस सात्यकि
कहे ल्यावहु॥ तुम आवन कछु मोहि सुनावहु॥ कु
सल कृस्न जदुवंस सवाहीं॥ हम कहे कर दुज देहि
कि नाहीं॥ दोहा॥ तव दुज सात्यकि कहे तुरत ल्या
य हंस दरवार॥ प्रभु प्रताप लागे भनन करि करि
विविध प्रकार॥ २५॥ टीका॥ फिर भगवान कहते हैं
कि हे प्रवीन सात्यकी तुम नीतीं मारग को भली प्र
कार जानते हो मैं तुमको क्या सिखावन कहूंगा जो तु
मारे मनमैं नीकी लागेगी सो कहना और तहांका
संदेस जो पाउगे सो मेरे को देना॥ तव सात्यकी
फिर भगवान के चरनों पर सीस नावता भया ऐसे सू
रवीरों मै प्रधान जो सात्यकी सो शोकों निवारण कर
के और जनार्दन ब्रह्मण को साथ ले कर आपने
वडे चपल तुरंग अर्थात घोडे पर सवार होकर के चल
ता चलता हंस के नगर मै जाय प्राप्त भया जाय
कर सभा के द्वार मैं स्थित हो गया तव जनार्दन ब्रह्म
ण तहांसे भीतर को चला गया और जायकर हंस रा
जा को आसीरवाद देता भया तिसको देखकर हंस व
~~[illegible]~~ दे आनंद से कुसल पूछने लगा
ब्रह्मण ने कहा कि आपकी कृपा से सब कुसल है तब
फिर हंस कहने लगा कि जिस काज के वास्ते तुमको भे
जाथ सो हमारा ~~[illegible]~~ कारज किया कि
नहीं तव ब्रह्मण ने कहा हे महाराज तिस कारज के
वास्ते भगवान ने सात्यकी को आप के पास
भेजा है सो आपने मुख से जिस प्रकार जदुनाथ जी
ने कहा है सब कथन करेगा तव हंस कहने लगा

कि सात्यकीको हमारे पास ल्यावो और तुमभी कुछ अप
नी सुनावो कृष्ण जो है सो सव जदुवंस के सहित राजी हैं
हमारेको कर देताहै कि नहीं देता तव जनार्दन ब्राह्मण सा
त्यकी को ततकालही हंसके दरवार मै लेगये और कृष्ण
भगवानका प्रताप जो है सो नाना प्रकार करके कथन क
रने लगे॥३५॥ चौपाई॥ तुम सम हंस मोहि जग सारी॥
वयो नजानि परत उपकारी॥ जहि द्वारावति दूत प्रकारा॥
पठ्यो कृपाल कृष्ण दरवारा॥ तहां वीर जादव समुदा
ई॥ वैठे चतुर प्रोत जदु राई॥ मनहु वीर रस धारि स
रूपा॥ वैठ्यो सभा मद्ध जदु भूपा॥ दिपत मान कल क
नक संयासन॥ कृष्ण कुमद जदु चंद्र विकासन॥ ग
दा पदम दर चक्र विराजे॥ वसन पीत दुति दामनि ला
जे॥ सुंदर स्याम कमल कल काया॥ कैक क्रीट मुनि
मानस छाया॥ खोर चोर चित चंदन भाला॥ नैन न
लिन नव नैसुक लाला॥ उरविसाल वन माल विराजी॥
उपमा देखि सकल जहि लाजी॥ लोल कपोल भृकुटि
कल वांकी॥ देखत दृष्टि सुरासु थांकी॥ कुंडल कर न
सफरि कृत चारू॥ कच अलि अवलि भक्त मन हारू॥
माधुरि मंद वदन मुख हासी॥ नखसिख कृपासिंधु
छविरासी॥ दोहा॥ असदरसन मै देखि दृग जदुपति
सहित समाज॥ संसृति निज जीवन जनम लह्यो स
फल सव आज॥ देव महा ऋषि राज ऋषि ब्रह्म ऋ
षी समुदाय॥ सरव काल सेवन करत गति अनन्य ज
दुराय॥३६॥ टीका फिर ब्राह्मण कहने लगा कि हे राजा
हंस तेरे समान संसारमै और कोई भी उपकारी नहीं है कि
जो जिसने दूत वनायकर मेरेको जदुनाथकी शरणको
प्राप्तकिया और भगवान के सुंदर दरवार का दरसन कर
वाया तहां वीर धीर जदुवंसी जो हैं तिनके वीच मानो वी
र रसका रूप धार कर जदुनाथ विराजे हूये हैं और
संख चक्र गदा पदम इहधारन किये हूये हैं जिन्हों
ने और शरीर मै पहिरे हूये हैं विजली लज्जा देनेवाले पीत

सव रत्नके प्रकाशमानसेसी
सेवपरे

को

वस्त्र स्याम कमलवत है जिनके शरीर का रंग और सिर
पर मुनियों के मन को हरने वाला मोर मुकट चित्त को च
र तैसे ही मस्तक मैं चंदन का मनोहर तिलक और क
मलों वत लाली वाले सुंदर नेत्र बड़ा विशाला हृदय ति
सपर शोभा देती है तुलसी की माला अत से कोमल और
चंचल कपोल तैसी ही बांकी मनोहर भवैं कि जिन को दे
खकर सरब सुरासुर भी थकत हो रहे है कानो मै मकरा
कृत कुंडल और भ्रमरयों के समाज को लज्जा देने वाले
सुंदर स्याम केस और मुख मै मधुर मधुर मुसक्यान ऐ
से नख सिख तै लेकर भगवान मानो एक छबी के समुद्र है
और देवता ब्रह्मण महा ऋषी राज ऋषी ब्रह्म ऋषी
इन सब जो है सो सरब काल ही तिस प्रभात मा का सेवन
कर रहे है मै भी ऐसे भगवान का सब समाज के
सहित दरसन करके संसार मै कृतार्थ रूप हो गया
है ॥३६॥ चौपाई ॥ मागद सूत बंदि जन नाना ॥ सादि
र पठहि बिरद भगवाना ॥ उद्धव अति उदेर मति धी
रा ॥ बैठो दक्षि दाहिन ध्रुव धीरा ॥ कृत बरमादि दा
न पति चारू ॥ सोहि सुभट जदुपति दरबारू ॥ उग्र
सैन बसुदेव सुहाये ॥ और हु वृद्ध वीर समुदाये ॥ ह
रि भ्राता गत आदि हुलासन ॥ सकल विराजहि निज नि
ज आसन ॥ जिमि मयंक उडगन परिवारा ॥ तिमि जदु
पति जादव दरवारा ॥ सब पें कृपा दृष्ठि निज हेरैं ॥
हरन दीन दुख दुसह घनेरैं ॥ दुरवासा मुनि आरत
बानी ॥ विलपि दुखित निज बदन बखानी ॥ मो
हो अधम अजामिल काही ॥ प्रभु निज बिरद सुमरि
मन माही ॥ सब विधि कीन नाथ अपनाई ॥ दीनो च
रन सरन जदुराई ॥ सुनि मुनि कर अस आरत गा
था ॥ भये तुरत कोमल जदुनाथा ॥ अभय देत मुनि
कीन विदाये ॥ अस भगवान द्वारिका छाये ॥ दोहा ॥
कहे लग करहु बखान मै प्रभु प्रताप अति घोर ॥ नि
गम नेति जहि कथन किये कवन तुच्छ मति मोर ॥३७॥

तयारी॥ चौपाई॥ तब सात्यकि पद बंदि मुरारी॥ ल
गे करन निज गवन तयारी॥ दोहा॥ तब सात्यकि सन प्र
भु कह्यो तुम एकल मति धीर॥ जाय हेस सन भनन म
म मन हुं बिदित बृति बीर॥ २४॥ टीका॥ तब भगवान
सात्यकी की ओर देखते भये सो तुरत हीं बड़ी तमक
से उठ खड़ा होता भया तिस को भगवान कहने लगे
कि सात्यकी मेरा कथन हेस को जाय करके कहो कि तु
म ने जो हमारे से दंड मांगा है सो हम भी सत्य करके दे
ना चहते हैं जहां तुमारी आज्ञा हो तहां हीं लवण
पहुंचाय देवें कि जहां तुमारा पिता यज्ञ करेगा तहां
भेज देवें फिर भगवान जनार्दन से कहने लगे कि हे भ
क्त तुम सात्यकी के संग तहां जावो तुमारा कुछ भी दो
ष नहीं है मैं ने तुम को अपना करके जाना है और इस
मेरा कथन तुम ने कुछ नहीं कहना सब सात्यकी
ही सुनाय देवेगा तुम इस के कहने को केवल सा
खी होकर सुनते रहना फिर जब सात्यकी इधर को
आवेगा तब तुम मेरे चरनो का भरोसा रखकर इस
के साथ हीं लौट कर चले आना इस प्रकार बड़े सु
खदायक भगवान की आज्ञा सीस पर धारन करके
ब्रह्म जो है सो जैहो कृष्ण जैहो कृष्ण ऐसी बानी उचा
रण करता भया और सात्यकी भी भगवान के च
रनो पं प्रणाम करके चलने की तयारी करता भया
तब सात्यकी को फिर भगवान कहने लगे कि हे मती
के चतुर यद्यपि तुम अकेले भी हो तद्यपि मेरा कथन
जो है सो वीरों की बृती से कहना सकुचमान नहीं हो
ना॥ २४॥ चौपाई॥ नीति मरम तुमरे सब राहा॥ मै
अब करहु त्रिलोचन काहा॥ कहियो उचित जवन जि
य तोरे॥ तास संदेस देहु इत मोरे॥ तब सात्यकि
प्रभु चरन जुहारी॥ सु भट त्रिरो मणि तेक
निकारी॥ लीने विप्र जनार्दन संगा॥ होत हूठ वर
चपल तुरंगा॥ पहुंचि हेस नृप नगर सुहावन॥

पुनि

भृ
,,

भृ
,,

तुव तिनसन कटु वचन वखाने॥ गोप सुवन कछु मोह
न कीन्यो॥ तुव मति जन हु प्रकट हरि लीन्यो॥ हमरे आ
गल तासु वडाई॥ करत वार वहु लाज न आई॥ मै जाने
जादव समुदाया॥ दुज तुव मृषा वदन जस गाया॥ कौन
होहि तुव वित जुत सेवा॥ तव हु प्रसंसन लग्यो अभेवा॥
दोहा॥ सिसुपन तैं अव लग वस्यो मोहि समीप दुज कोहि॥
मन्यो मीत याते नमै करहुं हनन सठ तोहि॥ ३८॥ टीका॥
जानार्दन कहता है कि हे हंस मैने तुमको सव कुछ सुना
य दिया अव जैसे तुमारी मरजी हो तैसे करो तुमने
जो राजसू यज्ञका आराधन किया है सो तो अपने मरनेका
उपाय वनाया है और तिस यज्ञका सिद्ध होना वडा असाध्य
है जैसे विष खायकर सुखपूर्वक सोना तांते जो आप
ना भला मानते हो तो यज्ञकी अभिलाषासे न वृत्त हो
जावो इसीमे तुमारी कल्यान है कृष्ण भगवान के चरन क
मलों की प्रीती वाले होके ~~...~~ जगतमे अपना जनम स
फल करो (कर) ऐसे जव भगवान तुमारे पर प्रसन्न होवेंगे
तव हीं तुम अपना यज्ञ सफल भया जानो सो अव
मै अपनी मिताई का धर्म तुमको वारवार समुझायकर पूरा क
र चुका हूं आगे ~~जैसी तुमारी इच्छा हो सो करो तैसे करो~~
जैसी तुम को भावती है तैसी करो इसप्रकार ब्रह्मण
का वचन सुनकर हंस वडे कोपसे क्रूर दृष्टी करके
कहने लगा अरे वालक ब्रह्मण वुद्धी के हीन क्या
तेरेको कृष्णनें वाउला वनाय दिया है कि जो तीन
लोकको जीतनहारे हैं मूढ तूं तिनके सनमुख ऐंसे क
टू वचन कहे है मैं जानता हूं कि गोपके पुत्र ने तेरे पर
कुछ ~~...~~ मंत्र जंत्र किया है जिससे प्रतत
तेरी वुद्धी हरी गई है हमारे आगे तिसकी वारवार
वडाई करते हुये जड तेरेको लज्जा नहीं आई मैने
तो इह सव जादव जाने हुये हैं तैने तिनका झूठा
ही इतना जश मुखसे गाया है तिन्होने तेरी कुछेक
रके पालना करी होगी तव हीं तूं तिनकी इतनी

[margin: और तुमने किया तो; तो; कुछ; से; कि; धन]

बड़ाई करता हैं क्या कहूं कि तू बाल्यअवस्था से लेकर मेरे
पास निवास करता रहा हैं और कुछ मीत कहने का विचार
~~रहा है नहीं तो अधम तेरे को अबी प्राणों से रहित करदेते~~
~~२८॥ चौपाई॥~~ आवता है इस कारन ते अधम तेरे को मार
नहीं सकता हूं॥ ३८॥ चौपाई॥ नतर अबहिं आवत जीय
मोरे॥ दै असि करहुं खंड जुग तोरे॥ पै द्विज जानि होत मन
सेका॥ अब नँखोहु बदन सकलेका॥ जाहु वेगजित भा
वति तोरे॥ देखि देखि उपजत रिस मोरे॥ हंस वचन सुनि
द्विज हरखाता॥ उठ्यो भनत मुख आसिष वाता॥ चल्यो
वेग मनु सरवस पाई॥ सुमरत चरन कमल जदुराई॥
द्वारावती आय मति धीरा॥ लाग्यो बहुरि चरन जदु
वीरा॥ प्रभु सतकारि लीन उरलावा॥ निज पार्षद पद
दीन सुहावा॥ ब्रह्मा नेद मगन द्विज भयऊ॥ जीय
जग भीति सकल मिटि गयऊ॥ जिमि उद्धव गद भ्रात उ
दारे॥ तिमि प्रभु कहे द्विज प्राणन प्यारे॥ दिन दिन कृपा
दृष्टि अधिकाई॥ द्विजवर लीन जनम फल पाई॥ कु
छक काल करि हरि अनुरागा॥ पुनि गवन्यो हरि
पुर बड़भागा॥ प्रभु प्रसाद द्विज सुगम सुहावा॥ मुनि
न अगम पद लीन छिपावा॥ सोरठा॥ इह हरिवंस
पुराण अंत नो कथा जनार्दन॥ अब आगल व्या
ख्यान करहुं हंस डिमक कथा॥ ३९॥ टीका॥ हंस क
हता है कि हे मंद तू ब्राह्मण जाती भी है इसतें
थोका मानता हूं नहीं तो अबी खड्ग का प्रहार
देकर तेरे दो खंड कर देता पर जा को हे कलेकी अब
मुख ना दिखावो तेरे को देखदे[…]खे मेरा क्रोध प्रचंड हो
ता है मत मेरे हाथों से मारा ना जावें शीघ्र उठकर चला
जा ऐसे हंस का वचन सुनकर जनार्दन बड़े हरख से
आसीसा देकर उठ खड़ा भया मानो सर्वस्व को पायकर
चल पड़ा तब भगवान के चरन कमलों को ध्यावता
हुआ द्वारिका मैं आयकर फिर जदुनाथ महारा

नके चरनोपर सीस धरदेता भया तव भगवानने वडेस नमान से उठाय कर हृदय मे लगायलिया और अनुग्रह करके अपना पार्षद पद जोहै सो तिस को दे दिया इसप्रकार जदुनाथकी कृपा देख कर ब्रह्मण मानो ब्रह्मानंद मे मगन हो कर संसार के भय से न वृप्त होता भया जैसे उद्धव और गदश्रात प्राणप्यारे थे तैसे ही भगवान तिस को भी प्यारामानते भये दिनदिन कृपा दृष्टी अधिक ही होती गई ब्रह्मणने भी अपने जनम का फल प्रापत करलिया तव कुछेककाले भगवान के ~~सेवा करके~~ चरनो का अनुराग और सेवा करके फिर सहजे ही शरीर को त्याग कर भगवानके परमधाम को चला गया दीनवंधूकी कृपा ~~करके~~ के प्रसाद से ब्रह्मण मुनी और जोगी जनो को जो दुर्लभ पदहै सो सुलभ ही पाय लेता भया इसप्रकार इहरतनी जनार्दनकी माया जोहै सो हरि वंस पुराण मे विदत है ~~अव हंस और डिंभक की जिस प्रकार माया है सो आगे कथन की जाती है~~ अव जिस प्रकार हंस और डिंभक की माया है सो आगे कथन की जाती है॥३२॥

दोहा॥ उतै सात्यकी जाय जव हंस भूप दरवार॥ वैठ्यो निरभय शोकगत कृष्ण चरन उर धार॥ चौपाई॥ हंस वदन तव वचन अलाये॥ सात्य ईहां कवनहित आये॥ नंद गोप सुत सासन मोरा॥ मान्यो नहिन कवन कर जोरा॥ मित्र मोर पौंडक पति धरना॥ करत गोप तोकर अनुकरना॥ उपजी कवन कुमति जीय तासा॥ जो नामन्यो मेरी अनुसासा॥ अव न होहिं कछु तास भलाई॥ आयो कस न आप जदुराई॥ पठ्यो न लवण वृषभ मदिमारा॥ अहो गोप ■ उन मत्त विचारा॥ अव सात्यकि नुव देहु सुनाई॥ औरहीं कुसल गोप समुदाई॥ तरनी वृद्ध वाल सव कोहीं॥ निजनिज सदन सुखित सव होहीं॥ हंस कथन सुनि सात्य

टीका॥ फिर जनार्दन कहता है कि भगवान की सभा मे गुनीजन भाट लोग जो हैं सो नाना प्रकार के जशों को गायन कर रहे हैं और भगवान की दहनी ओर उद्धव जी वैठे हूये हैं कृतवरमा अक्रूर बडे वीर धीर महाराजा उग्रसेन और वसुदेव इन तें लेकर भगवान के भ्राता गद जो हैं ~~सब~~ सो सब वडी सज धज से अपने अपने आसनो पर विराजे हूये हैं जैसे चंद्रमा की चारो ओर तारागणों का परिवार होता है तैसे जदुवंसियों के वीच ~~म~~ जदुनाथ शोभा देते हैं दीनो के दुख हरने वाले भगवान सव पर कृपा दृष्टी से देखते है तहां दुरवासा मुनी आय कर वडी दुख की भरी हुई वानी से अपनी सब विथा सुनावते भये कि हे भगवन मेरे जैसे अधम अजामिल को अपने दीनपाल विरद को सुमरण करके चरनो की सरन दीनी ~~देदई~~ और सरव प्रकार करके अपना वनाय लिया अब मेरे को किन चरनो का भरोसा है इस प्रकार मुनी की दुखित वानी सुनकर भगवान तुरत ही कोमल होय गये और तिसको भली प्रकार धीर ~~देकर~~ और अभय दान देकर विदाय कर देते भये हे राजन ~~जे~~ इस प्रकार भगवान द्वारिका मै विराजमान हैं तिन के ~~~~ प्रताप की महिमा अपार है जो वेद भी जिसको नेत नेत कहा है कि अन्त नही आवता तो मै एक तुच्छ सी मती वाला तिनकी अनन्त महिमा को कैसे कथन कर सकू॥२७॥ चौपाई॥ अब जहि मै कल्यान तुमारे॥ हेस जनक जुत लेहु विचारी॥ राजसूय मख जवन असाधा॥ सो कीन्यो अपनो तुम वाधा॥ अहै असाध सिद्ध किमि होना॥ गरल पान करि जिमि सुखि सोना॥ ताते मख अमि लाष निवारहु॥ जो आपन कल्यान विचारहु॥ कृष्ण सरोज चरन चित देहो॥ संसृति जनम सफल करि लेहो॥ जो प्रसन्न प्रभु होहिं उदारा॥ तव हुं जग्य जन सफल तुमारा॥ मे और न हम तुमहुं वुझाई॥ करहु जवन अब भावति राई॥ सुनि दुजवचन हेस रिस पागा॥ क्रूर दृष्टि करि भाषन लागा॥ अरे विप्र वालक मति हीना॥ काविदापत कृष्ण तोहि कीना॥ तीन लोक जीत्यो जिन जाने॥

बडेवीर ओ

सुनके

जे

दुष्ट सठ मीत तुमारा॥ भावै भूरि भलाई भाई॥ नहिं
विरोध कीजै जदुराई॥ कहां हंस तुव निवल सृगालू॥
कहां प्रवल जदु पति जदु पालू॥ विंदु सिंधु जिमि सदृ
श ताई॥ समता मेरु करहिं किमि राई॥ पठ्यो मोहि प्रभु
तुव हित जानी॥ करहु न हंस (वंस) निज हानी॥ दोहा॥ य
द्यपि कर मागन लवण तुव अपराध महान॥ सरणाग
ति त तद्यपि तुरत छमहिं चूक भगवान॥ सुनि सात्यकि
कर वचन अस हंस परम रिस मानि॥ अरुन नैन कर
कंत अधर भन्यो वदन कटु वानि॥४१॥ टीका॥ फिर
सात्यकी कहता है कि हे अधम हंस तुम ऐसे त्रै लोकी के
नायक जदु नायक से लवण का दंड मांग धिग धिग धिग
है तेरी बुद्धी को इह पापनी सरव कुल के दगध करने वा
ली तेरी जिह्वा जो है सो ऐसा वचन कहती हूई क्यों
नही गिर गई अरे मंद जिसने इह सिक्षा तुम को सिखा
ई है सो तो बाहर से तुमारा मीत और भीतर से तुमारे
नास करने वाला शत्रू है वे दुष्ट आप तो मरा हूआ है और
तेरे को मारन लगा है अब जो तूं अपनी भलाई चहता हैं तो
जदुनाथ के साथ वैर मत कर देखो कहां तुम निरवल
गीदड़ और कहां जदुनाथ प्रवल सिंह ये जल का
विंदू समुद्र की क्या बरोबरी करेगा और राई का दा
ना सुमेर की समता को कैसे पहुंचेगा मेरे को भगवा
न ने तेरा हित विचार करके इहां तेरे पास भेजा है हे हं
स तूं अपने वंस की हानी मत कर यद्यपि इह ल
वण के कर मांगने का तेरा अति से महां अपराध भी
है तद्यपि शरणागत होने से दीन वंधू तुरत हीं छमा
कर देवेंगे तूं अपने हठ को छोड़ कर उन की शरण को
प्रापत हो जा इस प्रकार सात्यकी के वचन सुन कर
हंस जो है सो परम कोप से लाल नेत्र करके थर
थर कांपता हूआ जिस प्रकार बड़ी कटू वानी से बोल
ता भया सो आगे कथन किया जाता है॥४२॥ चौपाई॥
अरे अधम जादव मति हीना॥ रहकस कथन वदन तु
व कीना॥ कोवल कवन कृष्ण कित लेखे॥ गोप कवहुं

तेग रथिर देखे॥ जरा सिंध जान्यो होई॥ भाज्यो जमन जा वत होई॥ ते अहीर तुम वडो वखान्यो॥ कहत न सकुच लाज कछु मान्यो॥ आवा तुम हे वसीठि हमारे॥ तोते त जहु अधम दुर चारे॥ न तर काटि तुव सीस कृपाना॥ पठ हु सा मीप गोप अभिमाना॥ कर हु वदन मूदन मति मेदा॥ अब नमनहु कछु अनुचित छेदा॥ तव सात्यकि वोलेरि स मानी॥ अरे अधम कारक कुल हानी॥ मोहि सन मुख जदु नेदन लागी॥ कस दुर वचन भनत हत भागी॥ दीन्यो प्रभु आयस नहिं मोरे॥ करत्यो अवहिं अधम वध तोरे॥ लघु ते लघु अनुचर जदुराई॥ करव हनन तुव दुर मति आई॥ स मर सुरा सुर जीतन हारे॥ विदत महा रथि ऐसेहिं नियारे॥ दोहा॥ कृत वरमा अक्रूर जुत आन वीर वलधाम॥ उद्धव राम ग दादि सव परम सुभट संग्राम॥ ४२॥ टीका॥ कहे सक हता है कि अरे बुद्धी के हीन जादव इत तूने मुख से कैसा कुथन किया है तिस कृष्ण को किसका वल है और कौन है किस गिनती मे है मूढ कवी गोपमी रण मे थिर भये देखे हैं मैने जाना हुआ है कि जरा सिंध के साथ जो जमन जो आया था तिस के भय से भागे हूये को ठौर नहीं मिली थी सो अहीर तुम वडा वडा कहते हो अरे मूरख तुम को लज्जा भी नहीं आवती क्या करूं तू तो दूत वनकर आया है इस ते छोड देता हूं नहीं तो खड्ग से तेरा सीस काट कर तिसी गोप अभिमानी के पास भेज देऊं हे मंद अव तू अपने मुख को मूदन कर और कुछ अनुचित वचन मत कहो ऐसे हंस का कथन सुन कर सा त्यकी जो है सो वडे क्रोध से कांपता हूआ कहने लगा कि अरे कुल की हानी करने वाले अधम अभागी तूं मेरे स नमुख जदु नेदन भगवान को ऐसे दुर्वचन कहता हैं अहो महाराज ने मेरे को आज्ञा नहीं दई नहीं तो इस घृते रे को अभी वध कर देता मेरी वात रहने दो एक छोटे से छोटा जदु नाथ महाराज का सेवक आय कर के मार सकता है और तो रण मे सुर असुरों को जीतने वा ले वीर धीर न्यारे रहे जैसे कि कृत वरमा अक्रूर उद्धव

बलरामजी गद दूनतें लेकर ओर अनेक वीर प्रधान
कि जिनको कोई जीत नहीं सकता है॥४२॥ चौपाई॥ सिव
वरदान विवस मद बाढा॥ अबै न परयो समर तोहि गाढा॥
यदपि कोटि किन शंभु उबारैं॥ तदपि हनन जदुवीर न टा
रैं॥ सिव गण जुगल संग तुव जौने॥ भूत कबहु भट स
नमुख होने॥ असरिस भरत भूरि उर मोरे॥ करहु अब
हि हनन दुर मति तोरे॥ दूतधरम पै सोचि विचारी॥ तजहु
तोहि उर धीरज धारी॥ कह्यो मोर प्रभु सुन सठ बानी॥
जो मति समर करन हुलसानी॥ तो गोवरधन मधुपुरि
काहीं॥ कै प्रयाग पुसकर थल माहीं॥ आवहु सजत
सैन निज सारी॥ देखहु समर होहि कस रारी॥ तुम
कहे एहु देउ हम देना॥ बाकछु मुनिन बैर धरि लेना॥
बोल्यो सुनत हंस दिस मानी॥ तुव भावति मोहि बात
बखानी॥ परैं प्रात पुहकर तुम सारे॥ आवहु निज
निज विरद संभारे॥ मैं बल गोप गरब भट ताई॥ देखव
तहां समर मचि आई॥ दोहा॥ अब लो लख्यो न जीव
जग जे मोहि देउ न दीन॥ मीच परैरे कवन इह गो
प गनति कहि कीन॥४३॥ टीका॥ फिर सात्यकी कहे
ता है कि मूढ तेरे को शिव के वर देने से मद होगया है
अब तक कोई गाढा रण नहीं पडा है परन्तू जान किय
द्यपि कोटि शंभू भी तेरे सहायक बनेगे तो भी जदु
नाथ के हाथ से तेर वध को नहीं निवार सकेंगे
और जो तेरे को शिव के गणों का अभिमान है कि मेरे
रखवारे हैं सो मंद कबी भूत भी शूरवीरों सनमुख
हो सकते हैं तेरी जडता को देखकर मेरे चित्तमें ऐसी
आवती कि इसमत्ती तेरे को अबी मार देऊं परन्तु दूत धर्म
को हृदय मे विचार कर तेरे प्राणों का नाश नहीं करता
क्षमा करता हूं अब जढ मेरे स्वामी की आ
ज्ञा सुण कि जो कबी युद्ध करने का तेरे चित्तमें हुलास
है तो गोवरधन मथुरा अथवा प्रयाग राज वा
पुसकर तीर्थ पर अपनी सब सेना सजाय कर

कि धीरा॥ बोले बदन वचन गंभीरा॥ तुमसे जहो कुस
ल कर लेवा॥ तहो कुसल सब भांति अमेवा॥ बड़ो कुस
ल तुम कहे कर देना॥ सो अब लेहु जथा तुम लेना॥
नीके तुमहु लखे नरनायक॥ जदुपति औरहिं देउ करला
यक॥ दोहा॥ जाकर विधि सेकर सवै देव अदेव मुनीस॥
सेवत रहत अनन्य गति चरन रेनु धरि सीस॥ ॥ ८०॥
टीका॥ तब ऊहो सात्यकी जो है सो कृष्ण भगवानके
चरन हृदयमे धारकर निरभय और शोकासे रहत होकर
जायकरके हंस राजाके दरवारमे बैठ जाताभया तब हंस
कहने लगा हो सात्यकी ऊहो किस कारण के वासते आये हो
और कहो कि नंद गोप ~~कृष्ण~~ के पुत्रने हमारी आज्ञा कि
सके बल से नहीं मानी मेरा मित्र राजा जुधिष्ठिर जो
है सो गोप तिसकी रीस करता है ऊह कौन कुमती ति
सके हृदय मे उपजी है कि जिसते मेरी आज्ञा नहीं मानी॥
और आन नहीं आया मै जानता हूं कि अब तिसकी भलाई
ना होगी देखो तिसने लवणके वैल मराय कर नदी मे जे
अहो गोप बड़ा उनमत्त हो गया है अब सात्यकी तुम कहो
कि गोप सब राजी तो हैं स्त्री पुरुष बाल वृद्ध अपने अप
ने घरमे सब सुखी तो रहते हैं ऐसे हंसका कथन सुनकर
सात्यकी जो हैं सो बड़ा गंभीर वचन बोलते भये कि हे हंस
तुम्हारे जैसे जहो कुसल लेनेवाले हैं तहां सरब प्रकार करके
कुसल ही है पर बड़ी कुसल तो तुमारा कर मांगना है सो अ
ब लेवो जिस प्रकार लेना है तुम बहुत अच्छा समुझा है
ऊह जदुपति जो हैं सो यथार्थ करके देउ के लायक हो हैं क्यों
कि जिनको विधी शेकर सुर असुर मुनी ऋषी सब
निरन्तर करके सेवते रहते हैं और तिनके के चरण कम
लों की धूड़ी को बड़े सनमानसे सीस पर धारन करके धन्य
धन्य होते हैं ॥ ८०॥ चौपाई॥ तब तासो कर लवण अहो
री॥ मोहयो धिग धिग धिग मति तोरी॥ पापनि तोर स
कल कुल दहती॥ गिरी न जीह वचन अस कहती॥
ऊह सिख दीन कवन अस तोही॥ भलो मित्र तुव मा
नस द्रोही॥ मरयो आपु तोहि मारन हारा॥ कपटि

बाजि हैनात दसदिसन धायो॥ गजन चिक्कार फिका
र उटन पर वचरन केपन करन थरथरायो॥ लपत
दिनमान रज रथन उड़नतें उगर ग्रन मान मो भोर
भारी॥ जैति जदुबीर जै जात बोलत सकुट सुभट
धुव धीर रला करन हारी॥ शक्ति सर परशु धनुखर
ग बांधे बिरद सुवध निध विविध विध बीर भारी॥
नाद मृगराज नव गरज गौरव करत उरत धृतिय
रक रिपु वरग झारी॥ चढे जहिं जान सुख के दम
दु कुमद कुल चंद तहि बाजि कर चक्र चारू॥ मणि
न गण खचित रथ पचित हाटक हथन मन हु
मन मथन सजधज सवारू॥ सुभ्रसित तुरग चतु
चतुर चंचल चपल नवल निदरत मरुत वेग धा
रू॥ धुजा फहरात बिलसात कलँकनक कृत दि
पत मनु दमनि दसदिसन मारू॥ दोहा॥ समर सूर
गहलाद प्रद बजहिं ग्रनेक निसान॥ चल्यो जात
ग्रस कटक प्रभु सकुन होत सुमदान॥४४॥ टीका॥
तब हंस के मुख से दुर्वचन सुन कर कुपत होकर
सात्यकी कहने लगा कि जिस पुरुषने ग्रपने प्रभु
स्वामी निंदा ग्रपकी तो सुनी तिसने मानो ब्रह्महत्या
त का पाप किया है ग्ररे विप्र द्रोही तू तो काल के
वश भया है तेरे को बहुत बुझायकर क्या कहूं ग्रैसे
कहिकर महा बीर धीर ग्रौर चतुर सात्यकी जो है
सो तहां से बड़ी तमक ~~कर~~ ग्रौर चमकसे नि
संग उठ कर जदुनाथ को सुमरता हुग्रा द्वारिका
को चला ग्रावता भया तहां ग्राय कर भगवान के च
रन कमल पर सीस नायकर विनती करने लगा
कि हे दीनानाथ मैं ने निश्चय करके जान लिया जो
हंस मूढ काल के वश होगया है क्योंकि मैं ने ब
हुत ही कहा परंतु ग्राप ~~की~~ के चरनो की
प्रीती को नहीं ग्राया कुछ ग्रौर ही दुर्वी वकता है
ताते ग्रब विलंब ना करिये तर वीरों के ~~साथ~~

त

की

द्वारिका में

हंसकर

के सहित सेना सजाय कर प्रातःकालहीं पुसकर
तीर्थ पर चलिये सो दुष्ट अभिमानी भी तहां आय
जावेगा इस प्रकार सात्यकी का वचन सुनकर भगवा
न तुरतहीं अपने सेना धीसों को बुलायकर सेना के
सजावने के वास्ते आज्ञा देते भये तब भगवान की
आज्ञा सुनकर रण मे युद्ध करने के हुलास से सब
सूर वीरों के अंग हरष से प्रफुल्लित होजाते भये और
सब अस्त्र शस्त्र सजाय कर के त्यार होय गये पायक
जो पयादे हैं घोड़े गै हाथी सिंधल जो रथ इनका
कुछ पार नहीं पाया जाता इस प्रकार जदुकुल कमलों
के सूरज कृष्ण भगवान जो हैं तिनकी चतुरंगनी सेना स
ज सजाय करके मैदान मैं आयगई फिर सुभ मुहू
रत देखकर के चलने की आज्ञा होती भई
तिस आज्ञा को सुनकर सब सूर वीर हुलास मै होजाते भये
जो जब रण मैं धीरज के धारने वाली जदुवीर की सेना
चली तब ऐसे प्रतीत होता कि मानो समुद्र उमड़ आजाता है
आकाश मै धूड़ छायत होय गई और चारो ओर से वड़ा
शोर उठता भया वीरों की भुजें जो हैं सो बल करके भरी
हुई फरने लगजाती भई इस प्रकार दल चला जाता है क
मानो पवन के प्रेरे हुये बादरों के समूह जाते हैं और
घोड़े हिनकते हुये दसो दिसा को धावते हैं गज जो हा
थी तिन्हों की चिंकार और रथों की झंकार का अत्यंत
हीं शब्द होता है रथों के चलने से धूड़ उड़ कर आकाश भ
र गया और सूरज लुपत होय गया डगर जो रस्ता
सो दिखाई नहीं देता अत्यंत भीर होय गई और सुभट
जो सूर वीर हैं सो जै जदुवीर जै कृष्ण ऐसे उचारन करते
हुये चले जाते हैं शक्ती त्रिसूल धनुष तरवार
परसु इत्यादि सब शस्त्र धारे हुये वड़े धीरज के धाम हैं श
त्रु के भय देने वाला महा घोर सिंह नाद जो है सो वड़ी
गरज से करते जाते हैं कि जिसको सुनकर पृथवी भी कांप
ती है और जिस रथ पर सुख के कंद जदुनंद महाराज

चढे हुये हैं तिसके बडे सुंदर सुवर्न के चक्र और मणी
यों कर खचित सुवर्न का हीं सब रथ मानो कामदेव ने
अपने हाथ से सजाया हुआ है तैसे हीं मनोहर श्वेतवर्न के चं
चल और चपल चार घोडे कि मानो अपने वेग के प्रभाव से
पवन को भी निदरते हैं और बिजली वत चमकते हुये कंचि
न के कलस और फहराती हुई धुजें अत्यंत छवी को
उदय करती हैं रणमे सूरवीरों के हरष और उतसाह
के देने वाले सुंदर वाजे वाजते हैं और जदुवीर के दल को
मार्ग मे जाते हुये बडे सुभ सकुन होते हैं ॥ ४४ ॥
चौपाई ॥ रण बांकुरे सकल जदुवंसी ॥ बीर धीर रिपु व
र्ग विध्वंसी ॥ जिन निज उग्र भुजन बल पाई ॥ जीते
समर प्रबल छितराई ॥ द्वादस अक्षूहणी दल संगा ॥
उर उतसाह लरन मधि रंगा ॥ राजत उग्रसेन महा
राजा ॥ चारु चमर सिर छत्र विराजा ॥ गद उद्धव सा
त्यकि बलरामा ॥ अमनित आन सुभट बल धामा ॥
सब के उर रिपु जीतन केरी ॥ बढत जात अभिलाष
घनेरी ॥ रणभूमि रिपु सनमुख जाई ॥ हम कब होव
ठाढ समुदाई ॥ करि प्रहार आयुध बहु रंगा ॥ अरिदल
करि है सकल वल भंगा ॥ दोहा ॥ अस प्रकार जदुना
थ जुत सुभट बीर समुदाय ॥ करत कथन रिपु म
थन मद पुष्कर पहुचे जाय ॥ ४५ ॥ टीका ॥ इस प्रकार
शत्रू वर्ग का नास करने वाले महा बीर धीर रणमे बां
कुरे जदुवंसी कि जिन्हों ने अपनी भुजों के उग्र बल से
प्रथ्वी के बडे बडे प्रबल राजे जीते हैं ऐसे चारो अक्षूहणी हुये
है ती सेना कि जिसको रणभूमि मे युद्ध करने का अ
त्यंत उतसाह है और महाराजा उग्रसेन तिन के बी
च शोभा देता है गद उद्धव इत्यादि अगिनित सूर
वीर जो बल के धाम हैं सबके हृदय मे शत्रू के जीतने
की अभिलाखा बढती जाती है कहते हैं कि हम रण
भूमी मे कब शत्रू के सनमुख जाय कर होवेंगे

चले आवो देखो तो रण मै कैसा युद्ध होता है तुमको
हमने एही दंड देना है अँवा कुं[illegible]नियों का वैर ले
ना है ऐसे सात्यकी का कथन सुनकर हंस कोप से
भरा हुआ कहने लगा कि इह तो तुमने मेरे मन को भा
वती कही बहुत शुभ बात है जो परसों के दिन प्रात हो
ते हीं तुम अपनी अपनी सेना और सूरवीर लेकर
पुसकर तीर्थ पर चले आवो तहां मैं गोप का गरव और
बल चतुराई सब देखूंगा अब तक तो संसार मे मैने कोई
नहीं देखा कि जिसने मेरे को दंड नहीं दिया है इह मृत्यु के
प्रेरे हुए गोप क्या वसतू और किस गिनती मे हैं ॥ ८२ ॥
चौपाई ॥ सुनि अस हंस बदन दुरवानी ॥ भने बचन सात्यकि
रिस मानी ॥ जहि निज प्रभु निंदा सुनि लीना ॥ तहि मनो ब्र
ह्म बधन अग कीना ॥ भयो काल बस तुव दुज द्रोही ॥ वि
पुल बुझाय कहें को तोही ॥ अस कहि सात्यकि सुभट स
याना ॥ समर वीर धर धीर महाना ॥ उठ्यो अशोक तमकि त
र ताहीं ॥ चल्यो चपल द्वारावति काहीं ॥ आयो नंद नंदन
दरबारा ॥ करि प्रणाम असविनय उचारा ॥ दीनानाथ हं
स मैं जान्यो ॥ कालविवस कछु कथन न मान्यो ॥ अब
जनि करहु बिलम जदुराई ॥ वेग सुभट निज सैन सजाई ॥
पुहकर चलहु प्रात भगवाना ॥ आवहिं तहां हंस अभि
माना ॥ सुनि सात्यकि अस वचन मुरारी ॥ सेनापति स
ब लिये हंकारी ॥ दीन नदेस सजन हित सैना ॥ उमगे सु
भट सुनत रण वैना ॥ जाय वेग सब कीन तयारी ॥ लीने
अस्त्र शस्त्र निज धारी ॥ दोहा ॥ पायक पार न पावहिं क
छु हैं गैं सिंधन संग ॥ जदुकुल कमल दनेस कर सजी
सैन चतुरंग ॥ देखि सदिन शुभ इंद्र प्रभु आयस कीन प
यान ॥ हरखे सुनि साहन सकल समर सुभट बलवान ॥
॥ झूलना छंद ॥ चली रण धीर चमू जबै जदुवीर वरउ
मठ मनु नीर खय धूरि छायो ॥ उठ्यो रव घोर च
हुं ओर अनंत से अच्चर भटन भुज जोर जुग फरकरा
यो ॥ चल्यो दल जात जिमि मरुत प्रेरत जलध

थ बड़े भयानक भेख वाले दोष्टि ब गए हैं सो कैसे कि नख
सिख मानो काल का ही रूप हैं और बड़े क्रूर कुमेखी लंबी
भुजों वाले शरीर के बड़े कृष्ण अर्थात दुबले और नग
न दया से रहित मुख खोले हूये बड़ा कट कटात शब्द
करते और अगनीवत दग्ध करने वाले स्वास भरते
हैं सो हंस और डिंभकी दोनो ओर मै रक्षा करते चले
आवते हैं॥ ६६॥ चौपाई॥ एक विचक्र नाम दनुजाता॥
मित्र हंस डिंभक जुग भ्राता॥ वरुण कुबेर इंद जम
सारी॥ जीते तास समर करि रारी॥ भये देव सन मु
ख रण जबही॥ पायो विजय दनुज पति तबही॥ शाङ्क्र
धाम औरावति ~~[illegible]~~॥ चढि कै॥ हन्यो विचक्र सम
र मधि बढि कै॥ श्री पति सन रण किये महाना॥ प्रवल
जानि भय मानि पलाना॥ तब तें रिस कि दनुज दुर
चारा॥ द्वारावती जाय बहुबारा॥ करत अपद्रव रह्यो
अनन्ता॥ अब स्रुति सुन्यो समर श्री कन्ता॥ जैहित
लिये दनुज बहु रंगा॥ आवा हंस भूप कर संगा॥ एक ह
डिंभ नाम दनु भारा॥ सो विचक्र कर मीत पयारा॥ मा
या निपुण प्रवल भट धीरा॥ चाहत कुमति विजै जदु
वीरा॥ सहस अठासी तमिचर संगा॥ विकट भीम र
ण सुभटन भंगा॥ अस चमु साजि जुगल सुत राई॥
आये पुहकर गरब बढाई॥ दोहा॥ अरि आगमन
अस सुनत हरि सजन सैन समुदाय॥ वजन
बाज जूझन समर सास दीन सुनाय॥ ॥ ६७॥ टीका॥
तब एक विचक्र नाम करके दैत हंस और डिंभक दो
नो भ्राता का मित्र था तिसने रण मे युद्ध करके वरु
ण कुबेर इंद्र यमराज इत्यादि सब जीते हूये थे
और देवताभी जब जब तिसके सनमुख ~~[illegible]~~ तब
तबही तिन ~~[illegible]~~ को जीतता रहा ~~[illegible]~~ सो ऐरा(?)
इंद्रभी ऐरा
वत हसती पर चढ कर रण मै आया परन्तू तिस
के आगे नहीं ठहर सका अन्त को हार मान गया
श्रीपती जो लछमी के स्वामी भगवान हैं तिनके सा

थ वड़ा घोर युद्ध किया परन्तु तिनको प्रवल जानकर
डरता हुआ भाग गया तब ते सो लजित भया हुआ अ
नेक वर्ष द्वारिका मै जायकर कई एक उपद्रव क[illegible]
रता रहा अब फिर[illegible]ती का रण सुनकर सो दुष्ट जै
की अभिलाषा से हंस और डिंभक के साथ नाना प्रका
र की सेना लेकर आया है और एक हडिंभ नामक
र के वड़ा भारी दैत विचक्र का मित्र अति से प्रवल वी
र और अनेक माया के जानने वाला रण मै अचल
अठासी हजार राखस साथ लेकर जदुवीर के जीत
ने की इच्छा मे आया है इस प्रकार सब सहायको
के सहित सेना सजाय कर हंस और डिंभक दोनो राजा
के पुत्र जो हैं सो चित्तमे वड़ा गरव करके पुसकर तीरथ
पर आय प्रापत होते भये तब ई हों शत्रू का आगमन
अर्थात आना सुनकर सब सेना के सजने और युद्ध
मै जूझने वाले वाजों के वजने की आज्ञा अपने
सेना पतियों को सुनाय देते भये ॥४७॥ चौपाई ॥ हरिअ
नुसास पाय सब वीरा ॥ भये उद्युगद समर निधधी
रा ॥ वाजिन लगे अनेक निसाना ॥ छयो घोर रव
दसहू दिसाना ॥ गज मातुंग तुंग सतुरंगा स्पिंधन
सजे सुभट वहु रंगा ॥ वीर धीर भारथ अनुरागे ॥
सिंह नाद मुख गरजन लागे ॥ अस उद्दंड निज सै
न निहारी ॥ चढे आपु स्पिंधन गिरधारी ॥ पांचज
न्य कीन्यो तब घोरा ॥ छायो दसहु दिसन रव घोरा ॥
चढ्यो कटक जदुवंसिन भूरी ॥ भयो कि भानु लुपत
नभधूरी ॥ वीर धीर ध्रुव रण अभिलाखे ॥ चले
जात सनमुख रिपु माखे ॥ डिंभक हंस साजि उत से
ना ॥ आये समर सुभट भरि चैना ॥ दौ दल मनहु
उमग्यो निधि नीरा ॥ वरनि न जाय समर भटभीरा ॥
दुंदभि ढोलन ढुंढ वहु वाजी ॥ भेर नफीर घोर धुनि

निगाजी॥ पञ्च संख सुभ्र सेनाई॥ बजे निसान गगन धुनि छाई॥ मंद मंद उर पूरि उमंगा॥ दौ दलैं मिले आय महि रंगा॥ भिंडिपाल सर सूल कृपाना॥ मुदगर पास त्रास अरि दाना॥ पाहन परसु कवच करवाला॥ धनुष गदादि चक्र धृत माला॥ अस प्रकार सब वीर प्रचंडा॥ लागे लरन समर महि मंडा॥ दोहा॥ बदन प्रचारि प्रचारि नर करहिं परस्पर वार॥ जूझि सुभट सनमुख समर सुरपुर जाहिं सिधार॥ ४८॥ टीका॥ तब भगवान की आज्ञा पायकर सब वीर धीर जो हैं सो रण ~~करने~~ मे जाने को त्यार हो जाते भये अनेक प्रकार के जूझने बाजे बजने लगे दसो दिसामैं घोर शब्द ~~[illegible]~~ छायत हो गया और हसती घोडे रथोंपर सूरवीर चढे हुये अत्यंत शोभा पावते है रण के उतसाह से ~~मगन भये~~ उमगे हुये बडा सिंह नाद करके गरजते हैं ऐसी चढाई और सजावट अपनी सैना की आप जदुनाथभी रथपर आरूढ होते भये तब पांच जन्य संख जो है सो अत्यंत नाद से ऐसा घोर करता भया जो तिसका शब्द दसो दिसा मे छायत हो गया जदुवंसियों के दलकी धूम धूडसे आकाश पूर्ण होकर दिन मान लुपत हो गया और वीर धीर रण की अभिलाषा वा लें उनमत्त होकर शत्रू के सनमुखको धाये चले जाते है उहाभी डिंभक और हंस सेना सजायकरके दोनो वीर अपने वीर धीरों के सहित आनंदमे मगन रणभूमी को चले आवते है तब दोनो दलों का ऐसा प्रभाव देख पडता है कि मानो दो समुद्र उमडायकरके परस्पर मिलने आये हैं रण की भीर भार कुछ वरनी नहीं जाती है और दोनो दलो मे दुंदभी भेरी नफीरी संख इत्यादि अनेक बाजयों के बडे घोर शब्द होने लगे तब सहजे सहजें दोनो रणभूमीमे

टिका॰ देवको सब को

ओर कव शस्त्रों के प्रहार करके शत्रू के दल को भंगन करें गे इस प्रकार जदुनाथ के सहित सव सूरवीर शत्रू के मद को कथन से मथन करते हूये पुसकर पर आय प्रा पत होते भये ॥४५॥ चौपाई ॥ तहाँ करत मजन जल पाना ॥ वसे विचिंत रजनि सुखमाना ॥ समर हरष दृग नींद न लीने ॥ लखत दिसादिव रैन वतीने ॥ भोरहि सुभट सद ले मति धीरा ॥ उठि कीन्यो मजन सर नीरा ॥ उतै हंस डि भक जुग भाई ॥ आये पुसकर सैन सजाई ॥ सपत तीन अ छूहनि भारी ॥ चमु चतुरंग करन रण रारी ॥ धरे धनुष जुग वीर विसाला ॥ लसत त्रिपुंड तिलक वल माला ॥ रु जरुद्राछ सकल तन धारू ॥ भस्म वलेपत अंगन चारू ॥ धरे मौलि वल पिंगुल भारी ॥ सिव सिव सिव मुख जात उ चारी ॥ स्यंधन चढे जुगल भटि वीरा ॥ उरउतसाह समर निध धीरा ॥ उभय भीम गदा भावन भारे ॥ नख सिख का ल रूप मनु सारे ॥ क्रूर कुभेष लेव धृत काया ॥ कृष्ण नगन विन वसन अदाया ॥ कर करात रव करते महाना ॥ वमत वदन पावक भयमाना ॥ दोहा ॥ इतउत डिंभक हंस कर दहु दिसि सिव गण सोय ॥ करत जात रतण उगर सगर सुभट मुख दोय ॥४६॥ टीका ॥ तहाँ पुसकर तीर्थ पर सनान पान करके रात्रीं विचिंत होकर को निवास किया परन्तु रण के हुलास से रात्री भर नेत्र जो हैं सो निद्रा के वश नहीं भये सूरज को देखते हीं रात वतीत करी फिर प्रात काँ उठते हीं सरोवर मे सव सूरवीरों ने सनाँ करके अपना नित्य नेम करम भी किया तव ऊहाँ हं स और डिंभक दोनो भ्राता अपनी सेना को सजाय कर पुस कर पर चले आवते भये तिन के साथ भी दस अछूहणी चतुरंगनी और वडी प्रचंड सेना थी आप दूनो भाई म हाँ वीर और मस्तक मे दिये हूये त्रिपुंड तिलक हृदय मै रुद्राक्षों की माला और सरव अंगों मे रमाई हूई भस्म सिर पर जटाउं के पेच शिवशिव शिव उचारन करते रथ पर चढे हूये चले आवते हैं और दोनो के हृदय मे र ण करने का अत हे उतसाह हृदय हो रहा है तिन के सा

१८२

182

वडेतीक्षण वाणोंके लगनेसे वीरोंकेसीस तनसेकट कटउडे जातेहैं और कायर भीदी ~~भैसैं~~ भयमानक र भागेजाते ~~चले जातेहैं~~ हूये रणको त्याग चलेहैं भौरणत जो रुधिर तिसकी नदी वही जातीहै पंछी और गीदड सू र वीरोंके ~~मांस~~ को भक्षण करतेहैं और जोगनी भूत प्रे त पिसाच इत्यादि वडे हरषसे वीरोंके रुधिरको पानकर कर रणमे नाचतेहैं भटी जो सूर वीरहै सो वडी गरज से तमककर एकदूसरे को पकड कर पृथवी पर पछाड तेहैं उहां अतसे ~~कठिन अखेड और प्रवल देत~~ प्रचं ड वडे कठिन और प्रवल देत हैहो वीरप्रधान रण मे अचल औ अखेड जादव इसप्रकार दोनो दलोंके म हा पराक्रमवाले वीरधीर कोपसे लाल नेत्रकिये हूये पर स्पर लडतेहैं धरो मारो एही शवद जहांतहां हेरहाहै रणकी धूमधाम और ग्राम कुछ कही नही जाती वा णों के लगनेसे वीर गरजतेहैं ~~[illegible]~~ घूमकर और घायलहोहोकर भूमी परगिरते जातेहैं और अ नेक मूर्छासे उठकर फिर सावधानतासे नाना शास्त्रों को चलायकर रणमें सामर्थदिखावतेहैं गजोके समू हसे गज रथोंके समूहसे रथ ऐसे लडनेलगे किमानो रणरूपी आकाशमे दोनो औरसे वादरों के समूहभिडतेहैं तव कवंध जोहैं सो सीस कटे हू ये हाथोंमे नंगी तलवारें चमकती हूई पृथवीमे धसते और धावते चले जातेहैं ऐसा युद्धभया किमा प्रलैकाल हीं प्रतीत होताहै इसप्रकार घोर रण होने से सववीर थकत हो ~~गये~~ जातेभये तवफिर एकके सनमुख एक होकर कोपकरके द्वंदरण जोहै सो कर ने लगे॥८१॥ चौपाई॥ भटिवि चक्र दानव जदु वीरा॥ लागे करन युद्ध रण धीरा॥ हंस भूप वल राम अखेरा॥ लरन लाग गहि सस्त्र प्रचंड॥ डिंम क सन सात्यकि मतिधामा॥ लागे करन घोर संग्रा मा॥ उग्रसेन वसुदेव रिसाये॥ समर हडिंभ दनुजपे धाये॥

गद अक्रूर आदि कृत वरमा॥ लरहिं सु समर निरत म
टि धरमा॥ हरि अखेड वानन झरिलाई॥ किये विदलन
दनुज समुदाई॥ रहै नधीर विकल मन मारे॥ चले जात का
दर रण हारे॥ तव विचक्र दनुजात रिसान्यो॥ गहिकर
धनुष वान संधान्यो॥ तानि श्रवण लग दीन सिक्कारे॥
लागे सो मुकुंद उर गाढे॥ कछुक वेर मुरछाय मुरारी॥
उठे वहुरि निज चेत संभारी॥ मा सोरिस कि धनुष धरि वाना॥
धुज पताक दनुजात उडाना॥ पुनि सारथि जुत गरव प्रहा
री॥ कीने हनन तुरग रथचारी॥ दोहा॥ कोच जन्य कर
घोर तव कियो चोर जदुराय॥ प्रले मेघ सम जनहुं र
व दियो दहैन दल छाय॥ ५०॥ टीका॥ तव द्वंद रण जो हो
ने लगा तिसमें विचक्र दैत के साथ आप जदुनाथ महाराज
जुद्ध करने लगे और हंसराजा के साथ वडे अखेड शस्त्र
धारकर वलराम जी सामर्थ हो जाते भये डिंभके साथ
वृद्धी केवा और वलके धाम सात्यकी हडिंभ दैत के सा
थ महाराजा उग्रसैन और वसुदेवजी महा कोपसे र
ण करने को धाय चले और गद अक्रूर कृतवरमा
रहे तिनके और वीर धीरों से लडने को सनमुख जाते
भये इस प्रकार द्वंद युद्ध होने लगा तव भगवानने
वाणों की अखेड झडी लगाय कर अनेक दैतों को मार
कर वहाय दिया किसी को धीरज नहीं रहा व्याकुल भ
ये हुये कायरों वत रणभूमी को त्यागकर भागे चले जा
ते हैं ऐसे अपनी सेना की दुरदशा देखकर विचक्र जो है सो
वडा कुपत होकर धनुष को हाथमै लेकर और वाण जो
डकर कान तक खैंचकर जदुनाथ के सनमुख छोड दे
ता भया ऐसे तिसके अतसे तीक्ष्ण और प्रचंड छूटे हुये
वाण भगवान के हृदयमै जाय लगते भये तव तिनके
प्रहार से कुछेक वेर तक मुरारी ~~और~~ गरव गारी भग
वान मुर्छाय हुये मौन रहे फिर तुरतहिं सावधान
होकर कोपसे ऐसा वाण मारा कि रथ के धुजा पता
को ~~सव~~ उडाय ~~दिया~~ कर सारथी के सहित चारो घोडे

मी हनन करदिये अर्थात मारदिये तिसते उपरांत भगवान
ने पांचजन्य संख का ~~ऐसा नाद करते भये किया~~ नाद
जो किया तो दोनो दलो मे मानो प्रलै कालके मेघोंव
त और पावद जो है सो व्यायत होजाता भया ॥५०॥ चौपा
ई ॥ वेग विचक्र तमकि तजि जाना ॥ गौरव गदा गहि त
निज पाना ॥ गर ज्यो सिंह नाद जिमि घोरा ॥ हन्यो मुकु
द मुकट भुज जोरा ॥ तास वार प्रभु लीन वचाई ॥ तव
प्रचंड कोप्यो दनुराई ॥ साधि करन सठ सिला महाना ॥
मास्यो ताकि वक्ष भगवाना ॥ सो प्रभु प्रेर दीन तहि
ओरा ॥ लाग्यो हृदय दुष्ट सिल जोरा ॥ गिस्यो सि धुर
मि धरन मुरछाई ॥ उठ्यो वहोरि सुरति जव आई ॥ ले
त तुरत कर परघ विसाला ॥ वोल्यो वचन सुनहु नं
द लाला ॥ हरहि परघ इह दरप तुम्हारा ॥ तुमहि का
वल विदित हमारा ॥ भयो सुरासुर जव रण घोरा ॥ ह
म तुम लरे जुगल इक ठौरा ॥ सो भुज वल हमारह ह
म सोऊ ॥ का सुधि विसर गई अव तोऊ ॥ अहो वी
र तव परघ वचो हो ॥ नतर न वेर प्राण अव लै हो ॥
अस कहि हन्यो परघ भुज जोरा ॥ सो आवत जदुनं
दन तोरा ॥ दोहा ॥ भयो कुपत तव दनुज सठ सम
र भूमि अति क्रूर ॥ हन्यो उपारत साख सत विट
प वेग वल पूर ॥५१॥ टीका ॥ तव विचक्र दोनव तुर
तही तमक कर रथसे कूद पड़ा और महा भारी गदा
हाथमे लेकर सिंह नाद करता हुआ भुजो के जो
र से जदुनाथ के मुकट पर चलावता भया तव कौ
तुकसे भगवान ने तिसके वार को वचायलिया दैत
पती देखकर फिर वड़े कोपसे एक महांभारी सिला
उठायकर ताककरके भगवान के हृदय मे मारता भया
तव सो सिला अवती हुई कौतुकी भगवानने तिस दु
ष्ट की ओर ही प्रेर दई तुरत ही जायकर तिसके हृ
दय मे ऐसी लगी कि घूमता हुआ मुर्छायकर
पृथवी पर गिर पड़ा फिर कुछेक वेर के पीछे

दल जोहैं सो श्राय कर के मिल जाते भये श्रौर सूर
वीर श्रपने श्रपने भुजों के बल से बरछी त्रिसूल मुद
गर फांसी तलवार चक्र पाषाण भाला श्रौर
धनुषबाण इत्यादि श्रनेक शस्त्रों के प्रहार कर कर ब
डे कोप से परस्पर लड़ने लगे श्रौर मुख से एक दूसरे
को ललकार कर वार करते हैं फिर रण में सनमुख जूझ कर
स्वर्गलोक को चले जाते हैं ॥ ४८ ॥ भुजंगप्रयाद छंद ॥ उ
ड़ी छिति चहूं कित छयो गगन धूरी ॥ रह्यो मार धर
मुषर दसदिसन पूरी ॥ परी समर श्रायुधन झनकार भारी ॥
करैं रिस किलिकार भटि प्रबल झारी ॥ उड़ैं सीस तन
तीब्र तर सरन लागे ॥ चले चपल कादर समर भूम त्या
गे ॥ बह्यो जात श्रोणित सरित समर भारी ॥ भषै गीध
खग गण श्रमिख भटन झारी ॥ जुरी जोगनी भूत प्रेत पिसा
चैं ॥ करैं पान श्रोणित समर धरन नाचैं ॥ सुभट परस्पर
गरजत तरजत प्रचारै ॥ गहै एक कर एक धरि धरन मारैं ॥
उतै विकट दनुजात दल बल श्रखंडा ॥ इतै वीर ध्रुव धीर
जादव प्रचंडा ॥ महा विक्रमी सुभट जग दलन केरे ॥ ल
रै परस्पर दृगन करि श्ररुन नेरे ॥ रह्यो मार धर श
ब्द दहुं दिसन पूरी ॥ भिरै भट भयो व्योम संग्राम भूरी ॥
लगैं सर समर सूर गरजत प्रचंडा ॥ परैं घुरमि घायल
श्रनक खंडखंडा ॥ उठैं बहुरि संभार करि कोप धावैं ॥ परग
श्रस्त्र सर करन करि भट चलावैं ॥ गजन सों गजन
की रथन सो रथन की ॥ परी रार जनु रण गगन द्वंद
घनन की ॥ दोहा ॥ धाय जात धरनी विपुल गहि कबंध
करवाल ॥ भयो जोर मारत समर प्रलै काल के हाल ॥
श्रस प्रकार करि रार भट भये थकत समुदाय ॥ लगे
करन पुनि द्वंद रण वीर वीर रस छाय ॥ ४९ ॥ टीका ॥ इस प्रकार
घोर रण होता भया कि पृथवी की धूड़ी उड़कर
चारो पासे श्राकाश में छायत होजाती भई श्रौर दसो दि
सा में मारो धरो मारो धरो इह शब्द जो है सो पूर्ण हो रहा है
रण में श्रतसे करके शस्त्रों की झनकार पड़ जाती भई
श्रौर बड़े कोप से सूर वीर किलकार कर कर ललकारते हैं

छत्र सारथि तुरग चूरण रामा॥ दोहा॥ तब सिंधन बल
राम तजि गदा धारि कर धाय॥ उत हु आय गोरव गदा
गहित हंस गर जाय॥ ४२॥ टीका॥ तब दीनबंधु भगवा
न ने तिस वृत्त को आवते ही खंड खंड कर दिया फिर ति
स दैत का मारना हृदय मै विचार कर पतत्री जो आ
न वाण है सो धनुष मै जोड़ कर सनमुख छोड़ देते भये
जब वे वाण तिस दैतराज को जायकर लगा लगते
ही सो देवताओं का शत्रु तुरत भस्म हो गया और पतत्री वाण
फिर आय कर भगवान की तूणमे अपनी उड़ीमे समाय गया
तब और जितने राखस थे सो तिसका भस्म होना देखकर
भय के मारे सब समुद्र मे जायकर के छिप जाते भये औ
र उहां हंस और बलराम जी का जुद्ध जुटा हुआ था त
ब रोहनी के पुत्र बलराम जी ने हंस विषय के मरे हुये दस वा
ण मारे और उधर से हंस ने भी अति से तीखन और गाढ़े
पांच वाण छोड़े सो ~~बलजीने~~ बलराम जी तिनको रणमे
सनमुख सहारते भये फिर हलधर ने कोप से खैंच कर
एक वाण हंस के सीस को मारा तिसके लगते ही सो वी
र घूमता हुआ मुर्छाय कर पृथवी पर गिर पड़ा फिर
थोड़ी वेर के पीछे सुधी संभाल कर उठा और सिंघवत
घोर गरज करके एक वाण भुजों के जोर से खैंचकर ह
लधर को मारता भया सो वाण बलराम को यद्यपि
बड़ा कठिन ही लगा तद्यपि वीर प्रधान रणमे साव
धान ही रहा तब फिर हंस ने महा कोप करके सात ह
जार वाण ~~बलराम~~ पर छोड़ते भये तिन वाणों कर
के रथ सारथी और घोड़े सब चूर दूर होगये और
तिसका आप भी हंस मूर्छा होकर धीरज से रहित हो गया औ
र गिर पड़ा फिर जब चेत मे आया तो उठते ही त
मक से पांच वाण ऐसे गाढ़े मारे कि बलराम का
छत्र वाणों की उड़ी रथ सारथी और घोड़े सब उड़ा
य दिये तब बलराम जी रथ से हीन और भये हुये हाथ
मे गदा धार कर धावते भये और उधर से हंस भी

बलरामजी

रणहीन भया हंस्रा गदा ही उठाय कर कोपसैं चला
आवताहै॥ पद्धड़ी छंद॥ उभय वीर विक्राल परस्पर
गदा चलावैं॥ निज निज वार प्रचार परस्पर मार बचा
वैं॥ करैं मत्त गज मनहु समर मेदनि अति जुद्ध॥
भिरैं भी म जुग सुभट ठोकि भुज दंडन क्रुद्ध॥ अस्तति
न कर संग्राम गगन सुर चढे विमाना॥ देखहिं निज
निज ठांढ मानि अस्चर्ज महाना॥ धायधाय हलिज
वै जोर भुज गदा चलावैं॥ तवै वरषि सुर सुमन जै
ति जै जैति अलावैं॥ टूटे गदा प्रचंड भिरत भट जुग
लन केरे॥ तव धाये वलराम कुपत करि नैन तरेरे॥
हंस वत्त थल जाय ललकि निज लात प्रहारी॥ गिरयो
तुरत महि विकल सकल तन सुरति विसारी॥ त
व वोले वलराम उठहु सठ दुष्ट अमंडा॥ हमहु
प्रहारन देहु खड्ग भुज जोर प्रचंडा॥ जव लग उठ
हु न हनहुं सस्त्र तव लग भूय लोभा॥ मरे परे
पर वार करन कछु वीर न सोभा॥ दोहा॥ उठ्यो
न मुर्छित हंस नृप ठाढ रहे वलराम॥ डिमक
सात्यकि को लगे लखन उग्र संग्राम॥ पद्धड़ी॥ टीका॥
तव वलराम और हंस दोनो महावीर उमच्य उम
च्य कर भुजों के जोर से गदा चलावते हैं और पर
स्पर मार कर और ललकार कर वार भी वचाते हैं
दोनो का भिड़ना ऐसे प्रतीत होता है कि रणभूमी
मे उनमत्त भये हूये ~~दोनो हस्ती~~ मानो दो हस्ती
जुद्ध करते हैं और कोप से भरे हूये वार वार भु
जों को ठोकते हैं इस प्रकार तिनका रण जो है सो
देवता गण विमानो पर चढे हूये आकाश मे खडे
देखते हैं और सब आचर्ज को प्रापत होते हैं
~~तव~~ और हली जो वलराम है सो धाय धाय कर
जवजव भुजों के महान वलसे गदा चलावते तव
तव ही देवता गण पुष्पों की वरषा करके जै जै जै
शबद का उचारण करते हैं तव दोनो भटियों

के भिड़ते भिड़ते गदा जो हैं सो टूट गये फिरतो बलराम कोप से नेत्र घुमावते हुये धायकर ~~और लल~~ और तमकसे उछल कर हंस के वक्षस्थल मे लात का प्रहार देते भये तब सो व्याकुल होकर पृथवी पर गि~~रता भया और~~ र पड़ा बलराम कहने लगे कि अरे मूढ़ मंद वेग उठो और मेरे को भुजों के जोर से ख ड्ग का वार करने देवो ~~हे पृथवी से प्रीती करने वाले जे~~ ~~बलाम तुम काहे~~ हे पृथवी के लोभी अधम जब लग तूं नहीं उठेगा तब लग मै तेरे को शस्त्र नहीं मारूं गा क्योंकि गिरे ~~०~~ और पड़े पर वार करना वीरों को कुछ शोभा नहीं होती है इस प्रकार बलरामजीने बहुत हीं कहा परन्तु हंस मूर्छा से नही जागता भया तब हलधर जी तहां स्थित भये हुये डिंभक और सात्यकी का बड़ा घोर जुद्ध जो है सो देखने लगे ॥ यथा ॥ चौपाई ॥ करत प रस्पर बान प्रहारी ॥ उभय प्रबल भट बदन प्रचारी ॥ तब सात्यकि दस विसख प्रचंडा ॥ हने नैरच प्रबल भुज दंडा ॥ भेदि वच्छ तन डिंभक सोई ॥ पृथवी से ध रनि वेग गत होई ॥ जद्यपि लगे कठिन तर बाना ॥ तद्यपि रह्यो सूर सवधाना ॥ धनु संधानि लच्छ सर गाढ़ा ॥ वेग कुपत सात्यकि तन छाडा ॥ सो आवत रोहनि कुमारे ॥ गहि पिनाक निज बान प्रहारे ॥ टू क टूक सायक करि तासा ॥ कियो धनुष डिंभक कर नासा ॥ हंस अनुज दूसर धनु धारी ॥ लग्यो कर न तर बान प्रहारी ॥ छाडे अस निराच विस पूरे ॥ भये विपुल घायल रन सूरे ॥ स्रोणीत भरे सुभट तन कैसे ॥ फूले बन किंसुक छवि जैसे ॥ तब कोपे सात्य कि बलधामा ॥ लेत बदन डिंभक कर नामा ॥ अरे अधम कादर मति हीने ॥ इहविधि कत घायल तु व कीने ॥ परो समर मोहि सन तुव गाढ़ा ॥ वृथा रो स औरन पर काढ़ा ॥ दोहा ॥ अस कहि सात्यकि त मकि तर हन्यो धनुष धरि बान ॥ भंज्यो धनु ~~रि~~ रिपु

सिरहिरहिहै

जब सुरत संभाली तब बड़ा भारी परद्य जो कुसंडा है सो
उठायकर कोपसे कहने लगा कि हे नंदके पुत्र इस
परद्य जो है सो अब तुमारे गरब का नास करता है तुमको
मेरी भुजों का बल भली प्रकार विदत है जानो तो जब सुर
और असुरों का सु परस्पर युद्ध भया था तहां हम तुम दे
नो लड़े थे सोई हम हैं और सोई हमारी भुजों का बल है
क्या तुमको कुछ सुधी बिसर गई है अब जो वीर हो तो
हमारे परद्य से बचो नहीं तो अबी तुमारे प्राणों को लिया
चहता है ऐसे कहिकर दैतराजने सो परद्य भुजों के जो
र से मारा तब भगवान आवते को हीं तुरंत दो खंड कर
देते भये तिसको देखकर सो विचक्र दैत अत्यंत क्रोध
से सौ साखो वाला बड़ा भारी वृक्ष उखाड़ करके भगवान
पर घुमाय करके चला बता भया॥ पद॥ भयंकर प्रयादकंद॥
के स्यो खंड खंडा सुद्रुम जनन मंडा॥ भरे भूरि रिस
समर थल बल अखंडा॥ बधन दनुज पति सुमदि मा
नस मुरारी॥ हन्यो पत्रि सर तीव्र तर करन धारी॥
लग्यो जाय दनु तन अनल अस्त्र चेडा॥ भयो भस्म
तत ताल सुरन रिपु अखेंडा॥ पत त्री बहुरि पूवस
हरि छूटा आई॥ भये लुपत दानव सकल जलध जा
ई॥ उते हंस बल रण लगे करन घोरा॥ हने बाण
दस बिसष रोहनि कपोरा॥ हली कर हने पांच सर
हंस गाढे॥ लिये सुभट सनमुख समर धरन ठा
ढे॥ हन्यो रिसकि बल बान पुनि सीस हंसा॥ गिरयो
धरनि मुरछित विकल बलवि धंसा॥ उठ्यो बहुरि
करि शोर जनु सिंह घोरा॥ हन्यो बान रामै भवकि
भुजन जोरा॥ हली के लग्यो बान यद्यपि महाना॥
रहे सुभट तद्यपि समर सावधाना॥ सपत सहस
पुनि बान हलि हंस कोरी॥ प्रहारे कठिन कोप क
रि ~~भुजन~~ धनुष जोरी॥ उड्यो बाजि रथ सार थी सरन
लागे॥ गिरयो हंस मुर्छित धरनि धीर त्यागे॥
उठ्यो बहुरि सर पंच हनि हंस नामा॥ दल्यो

१८५

188

खड्ग उठाय कर शत्रू के सनमुख को चला और ईहां सात्य
की भी रथ को और धनुष को त्याग कर बिजली वत चमक
चमक से उछलते हूये अति प्रचंड तलवार खैंच कर तिस के
सनमुख को धावते भये तब रण मे दोनो वीर परस्पर ल
लकार कर ऐसे वार करने लगे कि एक के पराक्रम का दू
सरे को पार नहीं परता है अन्त को दोनो वीर मुर्छित
करके पृथवी पर गिर पड़े परन्तु रण भूमी मे खंडे के
प्रहार करने का दोनो के हृदयों से उतसाह नहीं घट
ता भया इस प्रकार तिन का जुद्ध जो है सो देवता गण
विमानो पर चढ़े हूये आकाश मे स्थित भये हूये देखते
है और बड़े आनंद को प्रापत होते हैं ॥ यथ ॥ चौपाई ॥
उग्रसैन वसुदेव प्रवीरा ॥ बलि विख्यात समर धुव
धीरा ॥ ज्ञान निरत विज्ञान सुजाना ॥ प्रजापाल गुण नीति
निधाना ॥ ते दोऊ समर करन अनुरागे ॥ रथ चढ़ि बान प्र
हारन लागे ॥ उत हि डिंभ दनु प्रबल प्रचंडा ॥ सनमुख आ
व समर धर खंडा ॥ ठाढ़े लोम वपुख कच पीता ॥ बाहु वि
लेव दसन प्रदभीता ॥ गिरी गोह मनु नासिक भ्यावन ॥ चि
वक विकट मुख जोहि अपावन ॥ वपुख कराल बंध गिरि भा
सा ॥ कढ़त वदन मनु पावक स्वासा ॥ अस हिडंब दनु
भीम कराला ॥ धावा मत्त मतन विसाला ॥ गज उचा
य गजन पर मारे ॥ धरि बाजिन पर बाजि प्रहारे ॥ रथ
पे रथ धरि धाय पछारत ॥ सिंह नाद चहु ओर पुका
रत ॥ मनहु कृतांत रूप धरि धावा ॥ गहि गहि समर
सुभट बहु खावा ॥ कीन सकल दल व्याकुल तासा ॥ प
रे दुमत मुर्छित रण नासा ॥ दोहा ॥ मनत मार धर मा
र सठ लेत न तनक विराम ॥ तब व्याकुल चमु जाद
वन चली तजत संग्राम ॥ ५८ ॥ टीका ॥ ~~तबै उग्रसैन
और वसुदेव~~ तब वीरों मे प्रधान ~~और~~ रण मे धीर ज
धारने वाले राजा उग्रसैन और वसुदेव ~~जी~~ जो हैं
सो दोनो रथों पर चढ़ कर रण मे बड़े उतसाह से बा
णों के प्रहार करने लगे और उधर हिडंब नामा
दैत महा प्रबल और प्रचंड हाथ मे खड्ग धारे हू
ये सनमुख चला आता है सो कैसा भ्यानक रूप है

श्री ... पूरन प्रत्यक्ष ...
प्र० ? भी तोमे प्रवीन

किशरीरके सब रोम उठे हुये और पीले केश लंबी मु
जें और बडे भयानक लंबे हीं दांत परबतकी कुंद्रा समा
न नासिका बडी कराल ठोडी और मुखमें बडी अपवित्र
जीभ बंध्याचल परबतके समान अत से ऊंची काया
और तैसे हीं मुखमें अग्नी वत दवंद करनें स्वास ऐसे रोमहो
कराल हिडंब दानव जो है सो सूर वीरों के भक्षण करने को धाव
ता भया तब हसतियों को उठाय कर हसतियों पर मारता
और घोडुयों को घोडुयों पर रथों को रथों पर धर कर के प
छाडता जाता है और सिंह नाद करके चारो ओर गरजता
है मानो प्रतक्ष काल हीं रूप धार करके धावता फिरता
है अनेक सूर वीरों को पकड पकड खावता जाता है तिस
दुष्ट ने जदुवंसियों का संपूर्ण दल घायल करदिया और अ
नेक ~~मूर्छत हूये व्याकुल और और अ~~ मूर्छा हो कर रण
भूमीमें पडे हैं ~~सो~~ तोभी सो दुष्ट मारो धरो मारो धरो
ऐसा भयानक शबद कहता हुआ विश्राम नहीं ले
ता तिसके भयके वश भई हूई जादवों की सेना र
णभूमी को त्याग कर भागी चली जाती है कुछ ठौ
र नहीं लेती॥ ४६॥ चौपाई॥ जिमि रण कुंभ करन
कुपतायो॥ मरकट कटक कोटि भट खायो॥ तिमि
हिडंब दनुजात प्रचारी॥ भक्षो जदु वंसिन चमु
सारी॥ काहु सुभट सनमुख नहिं लेवा॥ तब नृ
प उग्रसेन बसु देवा॥ वीर महान वृद्ध चलचेउ॥
रथारूढ गहि करन कुदेउ॥ गे हडिंभ सनमुख
बिनु बेरी॥ क्रुधत बाय आगे जिमि केरी॥ वृद्धन
लखि आवत दनु घोरा॥ धावा ग्रसन करन करि सोरा॥
अंध कूप सदृश मुख बायो॥ मृतक मनुज चाव
त चट आयो॥ उग्रसेन आहुक जुग बीरैं॥ भक्षो
कदन राक्षस तव तीरैं॥ चावि सकल सर दानव
घोरा॥ धावा गरजि ग्रसन तिन ओरा॥ मै वृद्ध
बीरन कर जाई॥ लीन तोरि धनु सारथि खाई॥

१८६ 189

भुजन पसारि धरन तिन हेतू॥ भयो बहुरि दनुजात सचेतू॥ बोल्यो वदन हास जुत बानी॥ रे हरि जनक सुनहु मति हानी॥ उग्रसेन सेजुत तुव काहीं॥ अब मै ग्रसहुं बेर कछु नाहीं॥ जद्यपि जठिर अमल वे तुव रूखो॥ तद्यपि मैहूं भ्रमत रण भूखो॥ अब उपाय तुव वचन न कोई॥ आपु परहु मोरे मुख दोई॥ जो नहिं मनिहु जठिर गाथ मेरी॥ तो मै वैहुं अवहिं विनु वेरी॥ दोहा॥ अस कहि भुजा पसारि निज वदन भयंकर बाय॥ दैत्यो भत्तण करन तिन धरि कृतंत जनु काय॥ ४१॥ टीका॥ जिस प्रकार रण मै कुंभकरनने कोप किया था और कोट हो मरकट सूरबीरों को ग्रासन कर लिया था तिसी प्रकार अब हरिद्विव नामा दैत कोप करके जदुबंसियों की सेना को भत्तण कर लेता भया कोई भी सूरवीर तिसके सनमुख नहीं भया तव मह वृद्ध वीर राजा उग्रसेन और वसुदेव रथ पर आरूढ़ होकर और हाथ मै धनुष लेकर हरिद्विव के सनमुख ऐसे जावते भये कि जैसे सूखे वृक्ष के आगे ... जातीहै तव वृद्ध बीरों को आवते देख कर सो घोर दानव ग्रासन करने के वास्ते वड़ा घोर करके धावता भया और बड़े गहिरे सू के खूले वत मुख खोलकर मरे हुये मानुष्यों को चावता हुआ सनमुख चला आया तव उग्रसेन और वसुदेवने तिसके आवते का वाणों से मुख भर दिया सो तिन बाणों को चावता हुआ तिनके ग्रसने को कोप से वड़ा सिंहनाद करके धाया और आवतेने हो वृद्ध वीरों के धनुष तोड़कर तिनके सारथियों को खाय लिया फिर भुजा पसार करके तिन वृद्धों के ... पकड़ने को भी त्यार होकर वड़े अट्टहास से कहने लगा कि हो हरी के पिता

त्रूण जुत मनिमनि वचन अमान॥ ५४॥ टीका तव डिंमक औ
र सात्यकी जो हैं सो दोनो वीर मुखसे ललकार ललकार
वाणों के वार करते हैं फिर सात्यकी ने विस के भरे हूये द
स बाण जोर से खैंचकर जो मारे तो डिंमके हृदय को भेदन करके
पृथ्वी मै जाय धसते भये यद्यपि ऐसे कठिन बाण भी ल
गे तद्यपि सो वीर सावधान हीं रहा तब तिसने भी कोप
करके ~~ल ● नो बाण~~ सात्यकी के शरीर पर लक्ष बाण
छोड़ा सो रोहणी के पुत्रने अपने बाण मार कर आव
ते हीं टूकटूक कर दिये और तिसका धनुष भी खंड खंड कर
दिया तब हंसके भ्राता डिंमकने दूसरा धनुष धारन करके
बड़ी शीघ्रता से ऐसें बाण मारे जो जादवों के अनें सूरवीर
रण मै घायल होय गये तब रुधर से भरे हूये वीर ऐसी
उपमा को उदय करते हैं किमानो वण मै नाना केसुओं के
वृक्ष फूले हूये शोभा पावते हैं जब इस प्रकार वीरों को घा
यल भये हूये देखा तब क्रोध से लाल होकर सात्यकी
कहने लगे कि अरे अधम कायर बुद्धी के हीन डिंमक
इहतै ने औरों को क्यों घायल किया है मूढ रण तो मे
रा और तुमारा था ● ऐसे कहिकर सात्यकी ने कोप से ध
नुष मै धरकर बाण जो मारे तो ततकाल हीं ~~हि~~ शत्रू का
धनुष और बाणों की डंडी चूरचूर कर डाली॥ ५५॥ रोडकंद॥
तब डिंमक अति कुपत तजत रथ खड्ग उठायो॥ सिंहना
द करि गरज तरज रिपु सनमुख आयो॥ उतहु यान
तजि धनुष गहित कर बाल कराला॥ धाये सात्यकि
तमकि तड़त जनु ● उकाला॥ लागे करन
प्रचार परस्पर खड्ग प्रहारा॥ एक एक कर पाव सुभट
विक्रम नहिं पारा॥ फेर अन्त मुरझाय धरनि जुग वीर
प्रचंडा॥ घट्यो न उर उतसाह करन रण भेदनि खंडा॥
दोहा॥ असतिन कर संग्राम सुर चढि चढि रुचिर
विमान॥ ठाढ़ विलोकहिं गगन पथ पावहिं मोद
महान॥ ५६॥ टीका॥ जब डिंमक धनुष से हीन हो गया
तब रथ को छोड़कर कोप से सिंहवत गरजता हूआ

तब उग्रसेन और वसुदेव जीने जाना कि इह दुष्ट अब न
हीं छोडता इसके ग्रासन करनेमे कोई संदेह नहीं है ऐ
से विचारकर चारो ओर देखते हैं कोइ रक्षक सूझ नहीं प
डता है तब धनुषवाला इत्यादि सब शस्त्र छोडकर भयके
वश होकर भाग चले और हंडिव दानव जो है सो तिनके
पीछे लागा जाता है इस प्रकार दैत को प्रबल देखकर सब
चारो ओर हाहाकार मचगया कि उग्रसेन और वसुदेव
को दैत भक्षण करता है रक्षक कोई नहीं है तब इस
शोर को रोहणीके पुत्र बलराम जीने सुनकर और
नेत्र फेरकर जो देखा तो जाना कि ऐसे महा प्रबल और
प्रचंड राक्षस जो है सो अब निश्चय करके पिता को और
राजा को खाय लेवेगा ऐसे सोच कर हंसका युद्ध कृ
ष्ण भगवानको सौंपकर आप बलके धाम बलराम ब
डे जोर गरजते हुये धायकर दैतको ललकारते भये
कि अरे हंडिव निरलज्ज मूढ तू इन बूढों के पीछे
क्यों धावता चला जा है इह तेरा क्या पुरुषार्थ है अधम बू
ढ्यों के पीछे जाना कुछ वीरों का धर्म नहीं है आ पहिले
मेरे को खा पीछे इनको खाना तब तो तेरा कुछ बल भी
प्रतीत होगा ऐसे कहिकर महा वीर धीर हलधर जी
राक्षस और पिताके बीच जायकर स्थित होय गये त
ब देखकर सो दानव हसकर कहने लगा कि आज
विधाताने बडा शुभ अहार दिया है जो मै तेरा नवीन
मांस खायकर इन बूढयों के अहार को छोड देता हूं
इस प्रकार कहिकर रण भूमीमे दोनो भुजा पसार कर औ
र धायकर बलवीर जीको [illegible]य पकडता भया ॥ ४८ ॥
चौपाई ॥ कुपत राम तब आयुध डारी ॥ तमकि दनुज
उर मुष्ट प्रहारी ॥ सो जनु बज्र सरस तहि लागी ॥ परो
धुरमि मुर्छित सुधि त्यागी ॥ द्वै कर चरन पकरि तत
का स्यो ॥ धाय धाय बलराम पकास्यो ॥ परो जाय सर
कोस हंडिवा ॥ मानहु गिर्यो गगन पर [illegible] खंबा ॥ भ
यो दनुज जनु मृतक समाना ॥ बिपुल काल तहां प
रे बिताना ॥ रह्यो भीम कर ता कर याता ॥ या तें अ
ब नम स्यो दनुजाता ॥ उठो बहुरि जब तन सुधि आ

ई॥ बल अनन्त सुमरत बलदाई॥ ... समर भू
मितजि ताहू॥ गयो समाय उदधि अवगाहू॥ बलको
बल विलोकि जदुवंसी॥ जै जै कार किये अरि धंसी॥
तो लों गवन करत दिनराई॥ भयो सु लुपत अस्त गि
रि जाई॥ प्रकट्यो अंध कार अति भारा॥ सूझि परहि
निज कर नपसारा॥ तब दहु दिस न मिट्यो संग्रामा॥
जब भये क पूरण उदनाना॥ दोहा॥ द्वै सजाय भट द्वै
दल निज निज सैन सजाय॥ लगे लरन पुनि धरन रण
आजुध करन सुहाय॥ ५९॥ टीका॥ तब बलवीरजीने
कोप से शस्त्र जो हैं सो डारदिये और तमक से उछल
कर ~~एक~~ तिस दैत के हृदय मे एक मुष्टिका अर्थात मुक्की
मारी कि मानो वज्र के समान तिस को लागती भई और
घूमता हुआ ~~...~~ मुर्छागत होकर पृथ्वी पर
गिर पडा तब फिर बलराम ने लातसे पकडकर और घुम
य घुमाय कर ऐसा पिछाडा कि ... कोस पर जाय पडा मा
नो आँधीसे वृक्ष टूटकर पडा है और ~~...~~ मरे हुये पुरुष
वत कुछ कोतक तहां हीं पडा रहा तिसका मरना भीमसे
न के हाथ से था इस कारणते मरा नहीं फिर बहुत देर के
पीछे जब सुरत सँभाली तब बलरामजी के बलको अनन्त
जानकर ~~...~~ भय के वश भये हुआ र
णभूमी को ~~...~~ त्यागकर समुद्र मे जाय प्रवेश कर
ता भया ऐसे हलधरजी का महा पराक्रम देखकर सब जदुवं
सी जो हैं सो जै जैकार शब्द करने लगे इतने मे सूरज भी
अस्ताचल मे जायकर लुपत होगया बडा अंधकार होगया
अपना हाथ नहीं सूझ पडता तब दोनो दिसोंसे जुद्ध
जो है सो मिट गया सबकोई विश्राम करता भया तो ज
ब पूर्ण चंद्रमा उदय भया तब दोनो दलों के सूरवीर
अपनी अपनी सेना और शस्त्रों के सहित सावधान हो
कर रणकरने मे ततपर होजाते भये॥ ५९॥ चौपाई॥
उतै हेम रुकमक जुगवीरा॥ भये सेन आगल रणधीरा॥
इतै कृस्न बलराम सुहाये॥ विजै करन रिपु सनमुख आ
ये॥ लागे लरन दुहुं दल भारी॥ सुभट सूर सम विक्रम

धारीम निज पर मान रह्यो कछु नाहीं॥ भिरत प्रचारि वीर रण माहीं॥ इत उत प्रबल्ल होत दहुँ ओरा॥ करत रजनि चमु भारत घोरा॥ अस प्रकार रण करत अनेता॥ भये अनन्त हनन वल वेता॥ गोवरधन तर जानि न पाये॥ लरत लरत लोचन दल आये॥ जमुना तीर भये भिन सारा॥ भिरत वीर वर लेहिं नवारा॥ मिल्यो न संध्या करन अवकास॥ होत बरोवर वीर विनासू॥ सारनादि सात्यकि हरि रामा॥ किये मनहिं मन गिरहिं प्रणामा॥ वहुरि हंस डिमक जुग वीरैं॥ छोरि महारथि जादव धीरैं॥ वसुदेवैं छाडे सर साता॥ नृपति तिहत्तर वान निपाता॥ दोहा॥ सात्यकि मारयो सात सर निसठ तिहत्तर मान॥ पंच वीस सारन हन्यो केक कान दस तान॥ चतुरवीस विप्रथु किये वान मुचत तहिं ओर॥ उद्धव दस इसू हन्यो तव तानि प्रवल भुज जोर॥ ६०॥ टीका॥ तव उहो हंस और डिमक दोनो भ्राता जो हैं सो अपनी सेना के आगे होकर रण में आय जाते भये और ईहां कृस्न भगवान और वलराम शत्रू के जीतने की अभिलाषावाले होकर सनमुष चले आवते भये तव दोनो दलों के वडे प्राक्रमी वीर धीर परस्पर अतसे घोर जुद्ध जो है सो करने लगे ऐसे लडते भये कि अपना विराना सुझ नहीं पडता रात्री के समय घोर जुद्ध करते कवी इधर प्रवल होते हैं और कवी उधर इस प्रकार अनन्त हीं जुद्ध होता भया कि जिसका अन्त नहीं और अनन्त हीं सूर वीर भी मारे गये किसी को जान नहीं पडा दोनो दल लरते लरते गोवरधन के निकर चले आये तव जमुना के पर पहुंचते हीं प्रातकाल होगया सूरवीरों के चित्त से लडने का उतसाह नहीं घटता किसी को संध्या करने का समय भी नहीं मिला वीर धीरों का वरोवर घात होता रहा तव भगवान वलराम सारन सात्यकी इत्यादिकों ने गोवरधन को मन मैं हीं प्रणाम कर लिया फिर हंस और डिमक दोनो भ्राता को महारथी जादवों ने घेर कर

जो है सो

अब मै उग्रसेन के सहित तेरे को ग्रसता हूं कुछ वेरन
हीं है जद्यपि तुमारा नाम वृद्ध सा कुछ तुलो देखपड
ता है तद्यपि मै रण के खेद से थकत और भूखो हो रहा
हूं अब तुमारे बचने का तो कोई उपाय नहीं है इस
तें तुम आपही मेरे मुख मै आय करके पड जावो हे
वृद्ध अब जो मेरा कहा ना मानोगे तो मै तुम को अबी
धरके खाय जाऊंगा ऐसा कहि करके मुख को खोले हु
ये दोनो भुजा पसार कर और वडा भय कर मुख
खोल कर तिनके भक्षण करने के वासते मानो काल के
समान धावता भया ॥५७॥ चौपाई ॥ जान्यो अब नत
जत सठ एहा ॥ गहन ग्रसन कर कवन संदेहा ॥ निज
रतक कौ नाहिन लेखा ॥ चहुं कित चितय त्रास अब
सेखा ॥ धनुष बान आयुध विसराई ॥ जठिर जान तजि
चले पलाई ॥ तब हरि भ पाछिल तिनके लागा ॥ हाहा मच्यो
चहुं कित वागा ॥ उग्रसेन वसुदेव हुं काहीं ॥ भच्छित दनु
रच्छित कौ नाहीं ॥ ऐसो शोर मच्यो चहुं कोरा ॥ सुन्यो
स्रवणा रोहनि किशोरा ॥ भिरत हेस सन मुख रण माहीं ॥
लोचन फेरि लख्यो दनु काहीं ॥ जान्यो महा प्रवल खल
ऐहीं ॥ निश्चय पितु महीप कर खैहीं ॥ अस उर गुनत हेस
हं धामा ॥ हरि कहं सौंपि राम वल धामा ॥ धाये कुपत सिंह
जनु गाजे ॥ रेरे हो हरि व गत लाजे ॥ कत धावा सठ वृ
ढन पाछू ॥ रह न अधम तव साहिस आछू ॥ छाडछो
र जठ वृढन काहीं ॥ रह नधरम वीरन रण माहीं ॥
मो हि खाय पुनि जठिरन खाना ॥ तो वल तोर होहि
अनुमाना ॥ अस कही हली समर रण गाढे ॥ जाय
मंडु राक्षस पितु ठाढे ॥ बोल्यो देखि दनुज हसि जी
के ॥ आज अहार दीन विधि नीके ॥ खाय न वल तन त
रुण तुमारा ॥ इन वूढन कर तजहुं अहारा ॥ दोहा ॥
दौर्यो द्रुत अस भनत खल भुज पसारि मुख वाय ॥
प्रवर वीर वलराम कहं धर्यो धरणि रण आय ॥५८॥

थवी पर घायल हुये परे हैं इन ते भिन्न और जो
सूर वीर थे सब रणभूमी को त्याग कर भागे चले
जाते हैं हंस और डिंभक ने मानो बालों की एक झड़ी
लगाई हुई है तब राम कृष्ण दोनो भ्राता दीन सुख
दाता अपनी सेना की ऐसी दशा देखकर तिन दु
ष्टों के वध करने को आगे निकल आये और कोप
से ~~शस्त्र चलाकर~~ मारमारकर धाये तब चारो वीर एक से एक
विरुद्ध अपने अपने वल और सामर्थ से लड़ने लगे
तहां शिव जी के दोनो गण जो थे सो समय जानकर
वड़े क्रोध से आवतेभये तिनोने हंस और डिंभक
को बीच मे राख लिया दोनो और रक्षक होकर
नाना प्रकार की घोर माया जो है सो करने लगे तब
वलरामजी मुख से ललकार कर डिंभक के साथ जु
मे जुट जाते भये और घनस्याम भगवान वड़े अप
मान के वचन सुनाय कर हंस के साथ जुद्ध करने
लगे॥२१॥ चौपाई॥ तेऊ कर गण जुगल सहाया॥
लागे करन विविध विधि माया॥ डिंभक हंस सखे धु
न करहीं॥ बारबार निज जैति उचरहीं॥ पूरहिं र
न हुं संख चहुं ओरा॥ बारबार देवकि कसोरा॥
हेल डिंभकैं सिथल निहारी॥ भरे अमर्ष शंभु ग
ण भारी॥ उभय भयंकर रूप कराला॥ धाये ग
हि त्रिशूल करवाला॥ दहुं न ओर तें आयुध
छूटे॥ अंग निसंग भंग भटि टूटे॥ तरकि वे
ग ततकाल मुरारी॥ गहित चरन गण जुगल
पुरारी॥ शंभु लोक कहे वेरविहाई॥ जाहु अधम
भाखत जदुराई॥ भूमि भुवाय धाय वहु बार्यो॥
दीन वहुरि कैलास पठा सो॥ परे तहां मुर्छि
त सुधि वीन्यो॥ हरहरि सावधान पुनि कीन्यो॥
वहुरि नसमर करन रुचि कीने॥ विलोकि भयभीने॥ हरि विक्रम
मानि त्रास निज हृदय वसेखौ॥ हंस त्रिविक्रम विक्रम देखौ॥
कहत हमारा

जसूमा हो॥ तब हरि करहु विघन भलनाही॥ जो नवन्यो तुहलखनतुमारे॥ तो और हु कर देहु ह मारे॥ करहु सरवदा जो तुम नाही॥ तो कैसे हमतें स हि जाही॥ जित कर भूपगरव लयु जेही॥ हमरीसा सन सिर धरि लेही॥ दोहा॥ जो तुमकवहुं कि दरप व स देहु न कर हमकाहि॥ तो देखहु निज दसा अव जो प कुवर इहि ठाहि॥ १२॥ टीका॥ सो॰ व जी के दोनो ग ण तो अने कमा करने लगे और आप हंस और डिम क सेलकी चोर धुनी करके जैसे वारवार जेजे शब्द को उच्चारण करते हैं और हे हो देवकी नंदन भगवा न भी चारो और सेलखे पूररहेहैं तव हंस और डि मक को कुछ सिथल जानकर वडे जोर शो भूगण जो हैं सो महा कोप करते भये और हाथ खरग धार कर मार मार करते धाय पडे दोनो ओर ते शस्त्र छूटते हैं और सूर वीरों के अंग टूटते हैं तव कौतुकी भगवान ने अत्यंत गहि के हे तम क कर तिनि गणों को चरनो से प कड कर और घुमाय घुमाय कर ऐसे पछाडे कि वे लाशा पर हीं जाय पडते भये तहां मूर्छागत और अचेत होकर कुछ काल पर्यंत पडे रहे तव महादेव ने देखते हीं हंस करके फिर साव धान करलिये तिस ते उपरांत तिन को फिर रण कर ने की रुची नहीं होती भई भगवान का प्राक्रम देखकर भय से कंपने लगे और हंस भी त्रिविक्रम भ गवान की प्रचंड पौरष और लख कर हृदय मे वडा त्रास मानता भया और ऊपर से कहने लगा कि हो हरी तूं हमारे राजसूमें विघन करता है इह तेरे को भला नहीं है जेकर तेरे से कर हलखण नहीं वन सकता था तो तूं हमारे को कुछ और हीं कर देता अव हम लेलेते अव जो सरवदा नांह करोगे तो हमारे से कैसे सहारी जा वेगी देखो पृथ्वी के छोटे वडे जितने राजे हैं हमारी आज्ञा सव सीस पर धारन करते हैं अव जो तुम अभि मान के वशि होकर हम को कर देउ नहीं देवोगे

तो हे गोप पुत्र अबी देख लेना कि तुमारी क्या दशा
होवेगी ॥४२॥ चौपाई ॥ एकहिं बाण प्राण हरि तोरे ॥
पठऊं भवन जम वेद नमोरे ॥ अस कहि धनु सायक
संधानी ॥ हन्यो सीस जदु नंदन तानी ॥ हरि लिलाट
सर सोहत कैसे ॥ पुष्प सरा कृत ससि उर जैसे ॥ त
व दारुक पाछे प्रभु कीन्यो ॥ सात्यकि कहं सारथि क
रि लीन्यो ॥ भन्यो हंस सो अब कर लेहै ॥ उहि अव
सर नहिं सोच करैहै ॥ दुज द्रोही तुव अगि जग मा
हीं ॥ करि पाखंड भन्यो शिव काहीं ॥ मोरे जियत वि
प्र अपमाना ॥ करन कवन समरथ जग जाना ॥ अस
कहि वेग कुपत भगवाना ॥ मार्यो अनल अस्त्र ध
नु ताना ॥ तहितें मनहुं जरन ब्र[illegible] सेउ ॥ जन्यो
ज्वाल चहुं ओर प्रचंड ॥ हन्यो अस्त्र वारुण तव हं
सा ॥ अनल ज्वलत सब कियो विधंसा ॥ मरुत अस्त्र
जदुनाथ प्रहार्यो ॥ हनि महेन्द्र सर हंस निवार्यो ॥
रुद्र अस्त्र पुनि हन्यो मुरारी ॥ रोक्यो सोऊ हंस व्र
त धारी ॥ दोहा ॥ तव मारे हरि कुपत धनु अस्त्र ती
न संधान ॥ ~~मंग्रव~~ दनुज पिसाच बहु भूत प्रेत प्र
कटान ॥ ४३ ॥ टीका ॥ हंस कहता है कि हे गोप एक
हीं बाण से तेरे प्राण जमधाम को पठाय देऊंगा फिर कु
छ देर नहीं है ऐसे कहिकर धनुष मे बाण जोड़ और
र खैंच कर ~~ब~~ जदुनाथ के सीस को मारा सो सर जाय
कर भगवान के मस्तक मै कैसे शोभादेता भया कि
जैसे ~~पुष्पकार~~ बाण कार अर्थात बाण के आका
र से पुष्प चंद्रमा के ~~[illegible]~~ हृदय मै छबी पावते हैं तब
जदुवीर नें भी अपने सारथी को पीछे कर दिया और सात्य
की को सारथी ~~[illegible]~~ कर के हंस को कहने लगे कि अब
हम तुमको कर देते हैं लेवो सोचने का समय नहीं है
हे पापी दुज द्रोही तेने पाखंड करके शिव को भजा
है परन्तु मेरे जीवते ब्रह्मनों का अपमान करने वा
ला जगत मै कौन है और किसको सामर्थ है ऐसे कहि
कर भगवान ने महाकोप से अग्नी अस्त्र जो है सो

तिनपर एकबार हो वाणों के प्रहार करने लगे तब वसुदेव ने दस" राजाउग्रसेन ने तिहत्तर" सात्यकी ने सात" निसठ ने तिहत्तर" सारन ने पच्चीस" कंक ने दस" विप्रथ ने चौबीस और उद्धव ने दस इसप्रकार सब भुजों के वलसे खैंच खैंच कर वाण जो हैं सो मारते भये॥१०॥ चौपाई॥ रुक्मि हंस सुभट रणधीरे॥ काटि तोरि इन सब कर तीरे॥ हन्यो सबन कहे भरिभरि वाना॥ मूर्छि दियो भुज सारथि जाना॥ वहत रुधिर तन वीर विहाला॥ जिमि कुसमत तरु किंसुक लाला॥ डोलि उठी जादव चमु सारी॥ हंस विसख खर सकिं न सहारी॥ उद्धव सात्यकि आदिक जेते॥ मुर्छित परे समर महिं केते॥ आन सुभट सब चले पराई॥ रुक्मि हंस सरन जदि लाई॥ राम कृष्ण वढि आगल आये॥ हनन हंस रुक्मि कहे धाये॥ करत जुद्ध भट चारियो क्रुद्धा॥ एक एकते वीर विरुद्धा॥ प्रभु जुगल लगए अवसर जानी॥ रदन हेतु आय सुखमानी॥ रुक्मि हंस भूप सुत दोई॥ रोके मद्ध प्रभु गण सोई॥ लगेसि आपु करन चहुं ओरा॥ माया वरन वरन वहु घोरा॥ उत प्रचारि रुक्मि सन जुद्धा॥ लागे करन राम वल क्रुद्धा॥ दोहा॥ हंस भूप सन समर महिं कोपि कठिन घन स्याम॥ वीर वचन भनि भनि वदन लगे करन संग्राम॥११॥ टीका॥ तब रणमेधी रजवालें हंस और रुक्मि ने तिन सबके वाणों को टूक टूक कर दिया और अपने अत्यंत गाढे वाण मार कर तिनके रथ सारथी धुजा पताका सब नास कर दिये वीरों के तन घायल और रुधिर वहा जाता ऐसी शोभा देता है कि मानो जहां तहां रणभूमी के सुओं के वृंद ~~लाललाल~~ फूले हुये हैं जादवों की सेना जो है सो सब डोल उठी हंस और रुक्मि के कठिन वाण कोई नहीं सहार सका उद्धव और सात्यकी से लेकर जितने थे सो सब मूर्छा होकर प

८ मरोरो

८ मे

जाते हैं भूत प्रेत पिसाच इत्यादि जो सेना मैं था तिनको कर रहे थे सब मिटाय दिये तब फिर कृष्ण भगवान ने सो ऐसा अव अस्त्र मारा कि जिसका कोई निवारण हो न हीं था तिस से घोर और महा प्रचंड अगनी जो है सो बड़ी भय के देने वाली चारो दिसा मैं प्रज्वलत हो जाती भई मानो सब लोक जलने लगे हैं जगत मैं हाहाकार मच गया समुद्र ने भी अपनी मरजादा को त्याग दिया शिव ब्रह्मा के हृदय मैं भी बड़ा विषाद उतपन्न हो जाता भया मानुष और देवता सब कोई कहने लगे कि देखो इस हंस महाक्रुद्ध जड के वासते भगवान संपूर्ण जगत की प्रले करने लगे हैं यह अतसे कठिन वार्ता वनी है तब तिस विस्म अस्त्र को महा भयानक देख कर हंस जो है सो रण मैं व्याकुल हो जाता भया और कोप से रहत शिथल और ~~विकल~~ वेहाल भये हुये का हाथ से धनुष भी छूट गया तब डरता हुआ जीव को बचाने के लिये ~~बचाकर~~ रथ से कूद कर भाग चला जाता जाता काली हृद मैं अर्थात काली नाग के निवास स्थान मैं ~~जाय लुका~~ जल के भीतर जाय लुका तिस के तहां गिरने से बड़ा शोर होता भया तिस को भागते हुये देख कर जदुनाथ भी तुरत रथ से कूद कर दुष्ट के नास करने को साथ हीं धावते भये॥ २८॥ चौपाई॥ जाय सबल देवकि कुमारा॥ उभरि कीन तहि चरन प्रहारा॥ बूडि गयो काली हृद माहीं॥ अब लो देखि परयो सठ नाहीं॥ भाषत का कुहंस वश काला॥ भयो कहत को भगत व्याला॥ देखि न परयो हंस जब नाहीं॥ तब हरि आय चढे रथ माहीं॥ देवन मुदित दुंदभी दीनी॥ बरषि प्रसून जैति धुनि कीनी॥ हन्यो हंस हरि दीनन ने हू॥ रह्यो पूरि रव हंस तिघ हू॥ भ्राता मरन विलोकि तहां हीं॥ भयो विकल डिंभक मन माहीं॥ हलि कहे प्रबल देखि धृति त्यागी॥ भाजि चल्यो तजि जान अभागी॥

दुसरोसि जाय हँस थल जाहीं॥ कूदि परयो डिंभक द्रुत
तांहीं॥ दौरे तहिं पाछिले बलरामा॥ काली दह द्रुत वि
क्रमधामा॥ तब डिंभक निज अग्रज काहीं॥ खोजन
लाग्यो जमुन जलमाहीं॥ कहुँ बूडत निकसत अकु
लावा॥ हँस वीर निज नाहिन पावा॥ राम निरा
युध तासु निहारी॥ हँस्यो न वीर न धरम विचारी॥
तब डिंभक हरि काहिं पुकारा॥ अरे नंदसुत भ्रात
हमारा॥ कहो दिखाय देहु कत नाहीं॥ नातो हनहुँ
वेग तुम काहीं॥ मै जानो सब सक्ति तुमारी॥ अबल
न गुरु वृंदावन चारी॥ दोहा॥ एकहु जमुना तें न
कत कह्यो कृस्न मुसकाय॥ परयो तोर अग्रज जहां
सो सब देहिं बताय॥ १४॥ टीका॥ तब तहां काली
दह मे जाय करके भगवान ने उछल कर के तिस
को चरन का प्रहार जो दिया तो हँस दुष्ट तहांहीं डू
ब कर मरगया अब तक कहीं देखे नहीं पडा को
ई कहता कि हँस काल के वश होगया और कोई
कहता कि सरप ने भछन करलिया जब तहां हँस
देखे नहीं पडा तब जदुनाथ आय कर अपने
रथ पर चढ बैठते भये तिस समय देवतागरा आ
नंद से दुंदभी बजाने लगे और भगवान पर गगन मे
का मे फूलों की वरषा कर कर जै जै शबद को उच्चा
रन कर ते भये तब नेकतहे से सार मे जहां तहां
रहै खबर तुरत ही फैल गई कि दीनबंधू भगवान ने
हँस को मार दिया है डिंभक ने जब भ्राता का मरना सु
ना तो अत्यंत व्याकुल होगया और हलधर जी
को प्रबल जान भय का मारा धीरज को त्याग कर भा
ग चला जहां जाय करके लुकाथा तहां ही तुरत डिं
भक भी कूद पडता भया तब तिसके पीछे ही महा प्रा
क्रमी बलराम काली दह मैं कूद पडते भये तहां डिं
कूद

मक जमुना के जल में अपने भ्राता को खोजने लगा
कहीं डूबता कहीं निकसता है परन्तु अपने भ्राता
को नहीं पावता है और बलराम जी तिसको शस्त्र र हि-
हित खाली हाथ देखकर हृदय में सूरवीरों का धरम
विचार करके नहीं मारते हैं तब रुक्मिक कृष्ण भग
वान को कहने लगा कि अरे नंद के बालक मेरा भ्रा
ता कहां है दिखाय क्यों नहीं देता नहीं तो मैं तेरे को
अबी मार देऊंगा मैं तेरी सब शक्ती भली प्रकार
जानता हूं तू ग्वालों का गुरू वृन्दावन में विचरने
वाला है तिसका वचन सुनकर भगवान मुसकाव
ते हुये कहने लगे कि मूढ जमुना से क्यों नहीं पू
छता है जहां तेरा भ्राता जिस दशा से पड़ा होगा सो
वे आप कहि देवेगी ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ तब जमुना
सों पूछन लागा ॥ रुक्मिक परम शोक रस पागा ॥
हलि हसि मन्यो वदन असवाता ॥ हन्यो तोर अग्र
ज मम भ्राता ॥ का पूछसि जल तें मति हीना ॥ चू
र्ण्यो सलिल परत नहिं चीना ॥ सुनत राम कृष्ण मु
ख वचन कठोरा ॥ भयो विकल मति रुक्मिक भो
रा ॥ बंधु विनाशन हृदय विचारी ॥ लाग्यो विला
प करन जड भारी ॥ हाय आज मोहि परिहरि
भ्राता ॥ कहां गवन कीन्यो सुखदाता ॥ अस रुक्मि
क मन विकल बसेली ॥ रोदन करत मरन निज
लेखी ॥ विरह भ्रात नहिं सक्यो सहारी ॥ जानि
प्रबल बलराम अरारी ॥ ऐसे चेत करन जो हृदि नि
ज काहीं ॥ बूडि मर्यो जमुना जल माहीं ॥ तब
देवन नभ हन्यो नगारा ॥ बरषि सुमन जै जै ति
उचारा ॥ राम हुलसि करि चढे रथ आई ॥ मिले
परस्पर आनंद पाई ॥ मृतक सेन सब लीने जि
याई ॥ चारि ओर जै जै धुनि छाई ॥ चढि सिंध

धनुषमे तान करके मारा तिसते चारो ओर ज्वाला जा
गउठती भई मानो सरव ब्रह्मांड जलने लगा तब
हंसने उधरसे वारुण अस्त्र मार करतिस प्रचंड अग्नी
को तुरत हीं शांत कर दिया फिर भगवान ने मरुत अ
स्त्र जो है सो प्रहार किया तिसने महेन्द्र बाण मारक
र सो भी निकारण कर दिया फिर मुरारी ने रुद्र अस्त्र
मारा हंसने सो भी रणमे धीरज धार कर रोक लिया
तब भगवान ने अत्यंत कोप करके और तीन अस्त्र जो
धनुषमे जोड कर मारे तो तिनसे अनेक जोगनी और
दानव पिशाच भूत प्रेत इत्यादि जो हैं सो बडे भयानक
भेषसे प्रकट होजाते भये ॥२३॥ चौपाई ॥ हंस हु तीन
अस्त्र पुनि जोरे ॥ सुमरत शंभु धनुष निज जोरे ॥ ति
न तीनन कहे तीनहु मार्‍यो ॥ हरि पै ब्रह्म अस्त्र पुनि
डार्‍यो ॥ राक्षस भूत प्रेत समुदाई ॥ ब्रह्म अस्त्र सब दी
न मिटाई ॥ वैष्णव अस्त्र कृष्ण पुनि मारा ॥ जेहि नवा
रन जासु प्रकारा ॥ तहि तें घोर चहुंन दिशि आई ॥ उप
जी अनल भीम भयदाई ॥ जरन लाग जनु लोक सबाहीं ॥
हाहाकार भयो जग माहीं ॥ तजि दीन्यो सागर मरजा
दा ॥ विधि शोकर किय विषम विषादा ॥ मनुज देव सब
कहत उचारी ॥ हंस क्रुद्ध जठ हेतु मुरारी ॥ लागे प्रलै क
रन जग केरी ॥ बनी बात इह कठिन घनेरी ॥ विष्णु अ
स्त्र भी मन निहारी ॥ भयो हंस व्याकुल भारी ॥ विगत को
पतन सलिल विहाला ॥ कृष्ण करतें धनुष विशाला ॥
तब डरपत निज जीव बचाई ॥ कूदि जानते चल्यो प
राई ॥ काली दह द्रुत जाय दुराना ॥ भयो गिरत तहि
सोर महाना ॥ दोहा ॥ तहि परात जदुनाथ तकि रथ
ते कूदि तुरंत ॥ दौरे साथहि रोष भरि करन कुमति
अरि अंत ॥२४॥ टीका ॥ तब हंस भी फिर शिवजी का
समरण करके तिनि जदु वीर के तीनो अस्त्रों पर बडे
घोर तीन हीं अस्त्र छोड कर एक ब्रह्म अस्त्र
भगवान पर डारता भया सो तिस ब्रह्म अस्त्र ने

१५३

|53.|

नाके सहित राजी को निवास किया रणका स्रम श्रोर रसो च जिलानी जोथी सो सब दूर हो गई सब कोई अपने अ पने सुख पावता भया श्रोर सूरवीर जो हैं सो संपूर्ण प रस्पर रणमे राम कृस्न दोनो भ्राताका प्रभाव श्रोर शत्रू के मदमथन करने की चरचा करते करते राजी भर नेत्रोंमे नीद नहीं लेते भये इसीप्रकार सब कोउ रष श्रोर उतसाह मै जागते जागते हीं प्रात काल होगया ॥२२॥ चौपाई ॥ हरिजे हिमक हेस विनासा ॥ फैलिगयो संसृति चहुंपासा ॥ गोप गोवरधन धेनु चरावन ॥ श्राये हुते जमुन जल प्यावन ॥ तिन वृंदावन जाय तुरंता ॥ जसुमति सन कह सकल वृतन्ता ॥ कौनृप श्रमी श्रधम दुजद्रोही ॥ पै श्रति समर सुभट जुग सोई ॥ कालीदह जमुना जलमाहीं ॥ राम कृस्न जुग हन्यो तहांहीं ॥ तिन कर विजय पाय जुगवीरा ॥ बसे श्राय गोवरधन तीरा ॥ गोपन वचन सुनत सुखदाई ॥ नंद जनक जुत जसुमति माई ॥ चांत्रिक स्वांति बूंद जिम्मि पाई ॥ तृपति प्रमोद लेत अधिकाई ॥ जननि जनक तिम्मि श्रानंद छाये ॥ राम कृस्न दरसन हितधाये ॥ कब देखब भरि नैनन जाई ॥ गवर स्याम मंजुल जुग भाई ॥ जीवनजीव प्राण श्राधारे ॥ सब कर सुखद सबन हितकारे ॥ छिन वि जोग जिनकर नहिं सह श्रौ ॥ तिन विछुरे दिन विपुल वितय श्रौ ॥ श्राज नैन पूषित जुग वारे ॥ सो श्राये सरवस्य हमारे ॥ त्रीयनर श्रान नगर समुदाई ॥ सुनि श्रागमन कृस्न बलराई ॥ नंद जसो मति सन अनुरागे ॥ गवने द्रुत धन धाम त्यागे ॥ भामनि भनत परस्पर एरी ॥ हम है श्राज रन नैनन हेरी ॥ दोहा ॥ गवर स्याम

मृदु माधुरी मूरति जुगल किशोर॥ दमन कोटि छवि
मन मथन बृज वंतन चितचोर॥ ९३॥ टीका॥ तब भग
वानकी जे ओर ह्रैस डिंभक का मरना संसार मे चारो
ओर फैल गया गोप जो है सो गोग्रन के चारने ओर [illegible]
जमना मे जल [illegible] पयाने के वास्ते गोवरधन मे आ
ये हूये थे तिन्हों ने तुरत हीं वृंदावन मे जाय कर जसोधा
माई से सब वृतान्त कहि सुनाया कि कोई राजे महा
पापी और अधम ब्रह्म रा द्रोही रण मे बडे वीर धीर
थे सो कालीकी दवर मे रामकृष्ण दोनो भ्राताने मार दि
ये हैं तिन को सब सेना के सहित जीत कर आज गोवरध
न गिरी पर बडे आनंद पूर्वक उतरे हूये हैं इस प्रकार
गो कों वचन सुनकर नंद पिता और जसोधा माई ऐसे
~~प्रसन्न होते भये कि~~ जैसे चात्रिक अर्थात पपीहा सो तो बूंद
को पाय कर अघाय जाता है और त्रिवती ~~[illegible]~~ को
प्राप्त होता है ~~तब हरष मे मगन भये हूये नंद और ज~~
~~सोधा माई राम कृष्ण बालकों के देखने~~ दरसन की अ
~~भिलाषा से सब धन धाम विसार कर के धाय च~~ ते से हीं सु
ख मे मगन होकर तिन अपने बालकों के दरसन की अ
भिलाषा से ततकाल हीं धा[illegible]च[illegible] ते भये और मन मे क
हते जाते हैं कि सरब लोकों के सुखदाता [illegible] हमारे जी
वन और प्राण अधार गवर स्याम दोनो भ्राता जो हैं
सो कब नेत्र भर कर देखेंगे हम जिन का छिन भर
भी विजोग नहीं सहार सकते थे तिन विछुडे बहु (अब)
त दिन वतीत होगये हैं आज सो हमारे सरवस्व और
नेत्रों की पुतली दोनो बाल आय ~~[illegible]~~ हैं (को आगये?) इसी प्रकार
नगर के सब और ~~न~~ नारी भी राम और घन स्याम
का आगमन सुनकर नंद [illegible] जसोधा के साथ हीं अ
पना धन धाम विसार ~~हूये चले आवते हैं~~ कर चल
पडते भये ~~स्त्री जो हैं के~~ परस्पर कहती हैं कि हे
सखी आज हम (नव ही गये?) बृज की स्त्रीओं का मोहन नारे

कें मन

१५४ 194

और कोटि कामदेव की छवी को लज्जा देने वाले बड़े मनोहर और माधुरी मूरती गौर स्याम दोनो भ्राता जो हैं सो नेत्र भरभर ~~दरसन~~ करदेखोंगी ॥६७॥ चौपाई ॥ गोपी ग्वाल बाल समुदाई ॥ सुनत आगमन स्रवण जदुराई ॥ चले जात गोवरधन काहीं ॥ हरि दरसन लालस मन माहीं ॥ वृजवासी जन सकल सुखारी ॥ तरुणं वृद्ध बालक नरनारी ॥ भेटदेन नंद नंदन काहीं ॥ हरष पूरि पथ दौरत जाहीं ॥ पथिकन सो पूछैं हरषाई ॥ तुम देखे कहु कुंवर कन्हाई ॥ हरि दरसन लालसा घनेरी ॥ जुग सम इकइक छिन बिंतेरी ॥ कौ नवनीत लिये करमाहें ॥ हमहु देव नंद नंदन काहीं ॥ कौ दधि लिये कहत हम जाई ॥ आज लाल कहं देव खवाई ॥ चीन वं कृस्न धों नाहीं ॥ बनी भेट बहु दिवसन माहीं ॥ सुनियत स्याम बिभो बहु पायो ॥ नवल नाम जदुनाथ धरायो ॥ हमहु वृथम देखब अब आई ॥ नंद लाल कहं अंक उठाई ॥ चूमब वदन लेव बलिहारी ॥ महाविरह दुख देब निवारी ॥ वृजवासी भाखत हरखाई ॥ नंदलाले कहं बरवस ल्याई ॥ वृजतें पुनि दारा वति माहीं ॥ अब तो जान देव हम नाहीं ॥ रहे संग कर सखा खिलारी ॥ वारबारतें कहत उचारी ॥ भये भूप तो नहिं कछु खोरी ॥ हम निज दाव लेव बरजोरी ॥ दोहा ॥ जद्यपि बीते घोस बहु बिछुरे कृस्न मुरारी ॥ तदपि मिले पर लेव हम अपनो दाव संभारि ॥६८॥ टीका ॥ फिर सब गोपी ग्वाल भी भगवान का आवना

"त

"हमहु

न बल कृष्ण ब होरी॥ सात्यकि आदि सुभट सब जोरी॥ गिरि गोबरधन आनंद छाये॥ कृपासिंधु अनि संजुत आये॥ निसि निवसे तहं सारंगपानी॥ भयो विगत श्रम बिधा गिलानी॥ बीर परस्पर हरष अघाये॥ सुमिरि प्रभाव कृष्ण बलदाये॥ दोहा॥ करत कथन रिपु मद मथन धृत चित चौगन चाय॥ भये नैन नहिं नींद बस गयो रैन निसराय॥ ११॥ टीका॥

जब इसकार भगवानने ~~[illegible]~~ कहा तब डिंभक व्याकुल भया हुआ डिंभक जमुनासे पूछने लगा और इतने हसकरके हलधरजी कहते है कि मूढ तेरे बडे भाई को मेरे भ्राताने मारदिया है रे अधम जलसे क्या पूछता है सनमुख हुवा हुआ नहीं देख पडता ऐसे बलराम के मुखसे बचन सुनकर डिंभक जो है सो व्याकुल और बावरा होगया भ्राताका मरना देखकर परम विलाप करने लगा कहता है कि हा हाय बीर आज मेरेको तजकर तूं कहां चलागया है इसप्रकार डिंभक अत्यंत कलेशसे रोदन करता आप नेमरनेको विचारता है भ्राताका विजोग सहता नहीं जाता ~~और~~ तब महा प्रबल शत्रू बलराम जी सिरपर देखकर हाथों अपनी जीभको खैंचकर जमुनाके जलमे डूबकरके मर जाता भया जब डिंभक मृत्यू को प्राप्त होगया तब आकाशमे देवताओंने फूलोंकी बरषा करकर और जैजै उचारकर दुंदभीका शोर करदे मचायदिया और बलरामजी भी जमुनासे निकलकर अपने रथपर आय चढे पर और बडे आनंदसे परस्पर मिलते भये जितनी सेना रणमे मारीगई थी सब जिवाय लई चारो पासे जैजै शब्द छायत होगया तिसते उपरान्त कृष्ण प्रभातमा और बलराम सात्यकी के सहित रथपर आरूढ होकर सब सूरवीरों को साथलिये हुये बडे आनंदपूर्वक गोबरधन परवत मे आय प्राप्त भये तहां दीन बंधूने से

(margin) जब डिंभककी बुधि गति

बिसारे॥ लेजिय देदुख गयो कन्हाई॥ कुबरीकेकर
रहयो बिकाई॥ लेव वैर सगरो गहि ताम्मे॥ जो दै
दगा गयो वृजवामे॥ सुनियत कियेविविध उतसा
ह॥ नंदलाल कल नवल बिवाह॥ और रहु रंग रंगे
जेदुराई॥ दीन हमार सुरति बिसराई॥ अस वृजवा
[illegible] सनि हृदय हुलासी॥ चली जात प्रभु दरसन प्या
सी॥ राखि बीच जसुमति नंद काहीं॥ वृजवासी च
हुंकित पथ जाहीं॥ आये जब गोवरधन नेरे॥ जदु से
ना नैनन तब हेरे॥ दोहा॥ दूतन हरि सो जाय द्रुत भ
ने मुदित मृदु बैन॥ वृजवासी तुमरे सकल प्रभु दरस
न तुव लैन॥ आये नर त्रीय सकल जुत नंदजसोधा
माई॥ हरषे दूतन कथन अस सुनत कृष्ण बलराई॥
१९॥ टीका॥ तब वृद्ध वृद्ध गोपिका जो थीं सो जाती जाती
परस्पर कहती हैं कि हे सखी जो नंदलाल लज्जा को त्या
ग कर दधि माखन की चोरी और बाल चरित्र करते रहे
हैं सो तिनका कहां समरण रहा होगा अब तो नंदकु
मार भूप होय गये हैं और जो भगवानकी प्यारी
गोपी थीं सो नेत्रों से जल ढार कर कहती हैं कि
जिस प्राण प्यारे ने वृजवासियों की सुरती बिसारी ह
ई थी तिसको हम आज जायकर देखेंगी और
संसार मे नेत्रों का लाभ लेउंगी ~~देखो कैसा है~~ पर
न्तु देखो रह कन्हैया कैसा निरदय है जो हमारा चि
त हरकर और महा दुख देकर आप कुबरी के हाथ
जाय बिका नो है रहजो तिसने हमारे साथ दगा किया
है तिसका हम पकड़ कर बैर ले लेवेंगी और सुना है
कि लालजीने बडे उतसाह से बहुत बिवाह किये हैं
अब तो और रही रंगों मे रंगे हुये हैं हमारी सुरती कहां
रहनी थी इस प्रकार वृजवासनी नंद जसोधा को
बीच मे राखे हुये बडे उतसाह से चली जाती है तो ज
ब गोवरधन के निकट आय गये तब जादवों की सेना
ने देखकर भगवान से जाय कर खबर जनाय दई कि
हे दीनानाथ तुमारे वृजवासी जो हैं नंद और जसोधा

माई के सहित सब स्त्री पुरष दरसन की लालसा से चले आवते हैं तब भगवान बलरामजी के सहित बृजवासियों का आगमन सुनकर बड़े हरष को प्रापत भये ॥ २९ ॥ चौपाई ॥ जैसे जहं बैठे दऊ भाई ॥ तैसे तहं धाये अतुराई ॥ दल मै मच्यो शोर चहुं ओरा ॥ गवने कहं वसुदेव किशोरा ॥ सात्यकि उद्धव आदि सबा हीं ॥ धावत नहिं पावत प्रभु काहीं ॥ छत्र चमर व्यंजन कर धारू ॥ जहं तहं चले जात परिचारू ॥ नंद लाल कर खोज न पैहीं ॥ चहुं कित फिरत चकत चितै हीं ॥ खरभर परयो सकल दल माहीं ॥ धाये कौतुक देखन काहीं ॥ गोप समाज जसोमति नंदू ॥ जब समीप आये जग बंधू ॥ तब दृग देखि विकल महतारी ॥ लाल लाल मुख मुखर उचारी ॥ धाय वत्स जनु धेनु लुभाई ॥ लीन्यो अंक उठाय कन्हाई ॥ चूमि वदन गहि हृदय जुड़ायो ॥ मानहु रंक देव द्रुम पायो ॥ कृष्ण परहिं पुनि पुनि पद माता ॥ ठाढ़े हरष लोम सब गाता ॥ आनंद वसनि कसत नहिं बाता ॥ चल्यो जात जल दृग जल जाता ॥ दोहा ॥ जसुमति को छूति वदन मृदु लालन वचन वखान ॥ आज मिले जुग भाग वस मोरे जीवनप्रान ॥ १० ॥ टीका ॥ तब सब बृजवासियों के सहित नंद जसोधा का आवना सुनकर रामकृष्ण दोनों भ्राता जैसे बैठे थे तैसे हीं उठकर आगे मिलने को धाय चले जाते भये तो दल मै शोर मच गया कि वसुदेव कुमार भगवान कहां गये सात्यकी उद्धव इनतें लेकर सब धाये चले जाते हैं परन्तु भगवान को नहीं पावते हैं और भृत सेवकभी छत्र चमर पंखा लये हुये पीछे भागे जाते हैं तिनको भी कहीं खोज नहीं मिलता सं पूरी दल मै खरभर शबद मच गया सब कोई कौतुक देखने को धाय चला जब गोप समाज और नंद जसोधा माई के निकट जाय पहुंचे तब माता नेत्रों मै देखकर व्याकुल भई हुई लाल लाल कहिकर जैसे बछड़े को गाई प्यार से हुंकार शबद करती धावती है तैसे धायकर गोद मै उठाय लेती भई फिर बार बार मुख चूम कर हृदय से जुड़ाय लेती भई मानो रंक निरधन ने कलप बृक्ष पाया है

२९६

1.96

कृस्न भगवान जो हैं सो हरष से प्रफुल्लित भये हूये वारवार माता के चरनो पर सीस धरते हैं और ऐसे आनंद के वस हो गये जो मुख से वचन भी नहीं निकसता नेत्रों से जल चला जाता है तव जसोधा माई वडे लालन अर्थात लाड और प्यार के वचन बोल बोल मुख पोंछती और कहती है कि आज भागों के वस से मेरे जीवन प्रान दोनो भ्राता जो हैं सो आय मिले हैं ॥ १०॥ चौपाई ॥ लाल दिवस वहु कहां विताये ॥ विपुल दिनन पाछिल वृज आये ॥ तौलौ परे चरन वलदाई ॥ हरषि मात लिये अंक उठाई ॥ चूमति वदन हरष रस वोरी ॥ देत असीस जियो जुगजोरी ॥ नंद चरन पुनि परे मुरारी ॥ मिल्यो उठाय ढारि दृग वारी ॥ सूंघत सिर चूमत मुख स्यामै ॥ मो सिसम कहत न धन्य धरामै ॥ राम हु नंद चरन पुनि वंदू ॥ मिले नंद उर पूरि अनंदू ॥ राम स्याम कहे पुनि हर दोई ॥ लीन नंद निज अंक उठाई ॥ तहि छिन कर सुख आनंद भारी ॥ एक वदन किमि सकहु उचारी ॥ वृद्ध वृद्ध सगरे वृजगोपा ॥ राम स्याम देखन चित चोपा ॥ आय आय रत प्रीति घनेरी ॥ करहीं निछावर हरि वल केरी ॥ प्रेमाकुल दृग वारि वहाये ॥ वार वार मिलहीं उर लाये ॥ राम कृस्न सव गोपिन संगा ॥ भेटहिं भरि भुजा उमंगा ॥ दोहा ॥ वृद्धन कहे पुनि वंदि प्रभु लीन्यो सुभग असीस ॥ अति अनंद रत रहु नित तुव द्वारिका अधीस ॥ ११ ॥ टीका ॥ जसोधा माता पूछती है कि हे लाल इतने दिन कहां विताये वहुत चिर के पीछे वृज मे आये हो तव वलराम जो हैं सो चरनो पर सीस नावते भये जसोधा माई ने उठाय कर हृदय से लगाय लिये और हरष के रस से भीजी हुई वारवार मुख चूम कर आसीसा देने लगी कि हे पुत्र तुमारी दोनो भाईयों की जोड़ी जुग जुग जियो तिस उपरान्त भगवान नंद के चरनो मे लागते भये सो नेत्रों मे हरष जल भर कर और उठाय कर हृदय से लगाय लेता भया फिर सिर को सूंघ कर

सुनकर दरसन की लालसा से सब गोवरधन को
दौडे चले जाते हैं और बृज बासी लोग सब सु
खी भये हुये नंद नंदन को भेटा देने के लिये एक तें
एक आगे धावता है और मारग पथिक जो रसते
ने चलनेवाले हैं तिन सों पूछते हैं कि भैया तुमने कहीं
कुंवर कन्हैया जी देखे हैं सब किसी को नंदलाल
महाराज के दरसन की अत्यंत लालसा है जिनको ए
क एक पल जुग समान वतीत होता है किसीं ने नवनी
त जो माखन है सो लिया हुआ है और किसी ने दधी
लिया हुआ है कहते हैं कि हम लालजी को अपने हा
थों से खवावेंगे फिर कहते हैं कि कन्हैया हमको प
हिचानेगे कि नहीं तिन सों बहुत हीं दिनो के पीछे
भेट भई है अब सुनते हैं कि स्याम ने बहुत वि
भो और बडाई पाई है अपना नवीन नाम जदुनाथ
धराया है परन्तु हम निरसंक हो कर नंदलाल सें
भुजा भरभर प्रथम ही भेटेंगे और मुखचू
म चूम कर बलिहार जावेंगे तब हमारा विरहे
विषाध सब मिट जावेगा ॥ बृज बासी कहते हैं कि अ
ब नंदलाल महाराज को त्याग कर बृज ते फिर द्वा
रावती को कबी नहीं जाने देवेंगे और जो जो ला
लजी महाराज के साथ के खेलने वाले सखा
थे सो सब बार बार कहते हैं भैया क्या भया जो
नंदलाल महाप्रतापी होगया है हम तो
मिले पर अपना दाउ जोरावरी से भी ले लेवेंगे ॥ ६८ ॥ चौपाई ॥
वृद्ध वृद्ध गोपिका स्यानी ॥ गवनत कहत परस्पर
बानी ॥ जे बृज करत रह्यो तजि लोरी ॥ सुधि
कैहें दधि माखन चोरी ॥ बाल चरित का सुमरण
रहैउ ॥ अब तो भूप नंद सुत भये ऊ ॥ रही गोपि
का जे हरि प्यारी ॥ ते अस कहत नैन जल ढारी ॥
आज लखब हम प्राण प्यारो ॥ जो बृज बासिन सुरति

रीति देखि विसमाने॥ परहिं चरन सव जसुमति नंदू॥ जदुसमाज उर वूडि अनंदू॥ दोहा॥ जस जानें पितु मातु कहे कृस्न देव वलराय॥ तस मानैं सनमान जुत जदुवंसी समुदाय॥ हरि वलसन जिमि करहिं कल नंद जसोमति प्रीति॥ तिमि जदुवंसिन सन रुचिर करहिं प्रेमरत रीति॥७२॥ टीका॥ फिर भगवान जिस प्रकार अपने सखों को मिले हैं सो प्रीती कुछ कथन नहीं की जाती वे जदुनाथ का हाथ पकड़कर कहते हैं कि हे कृपानिधान वृज की सुधी भली विसर गई तव दीन वेधू कहते हैं कि हो सखा प्यारे जवसे मैने वृज को त्यागा है तव से कवी छिन मात्र भी सुख न हीं पाया फिर वृद्ध वृद्ध गोपी जो हैं सो आयकर की वलैयां लीती और मुख चूमती हैं नेत्रों से प्रेम के आंसू ढोरती और रूप की छवी पर त्रिण तोरती हैं कन्हैया को वार वार गोद मे धारती और जसुमति लाल कहिकर सिर पर रतन नछावार ती हैं फिर कहती हैं कि हे नंद कुमार तुमारे विना हमको जगत मे जीवना जंजाल हीं हो रहा था तिसतें उपरांत ~~सो प्यारी सखी मिलती भई किजिनको~~ ~~हमहीं धनधाम है~~ भगवान की सो प्राण प्यारी सखी मिलती भई किजिनको महाराज के प्रेम मे धनधाम की सुधी नहीं है और आयकर अपनी अपनी पूरव की प्रीती को जनावती और अनेक कटाक्ष भाव कर कर मुसकावती हैं कोई परस्पर विचार करती हैं कि हमको प्राण प्यारा वहुत दिनों के पीछे मिला है अव छलिया जाने नहीं पावे इहरसिक सिरोमणी जो है सो वृज मे हीं वसकर रिझावे और कोई सखी नंदलाल जी का हाथ हाथ से झनक कर कहती है क्यों जी हमको चीनते नहीं हो इस प्रकार राम स्याम और वृजवासियों को

पर म आनंद के देनेवाला समागम होता भया तब जो दुवंसी जो हैं सो भगवान के हसने बोलने मिलने की रीती देखकर धन्य धन्य कहते हुये बडे आचर्ज को प्राप्त होगये फिर सब जदुवंसी आनंद से नंद जसोधा केचरनो पर देडप्रणाम करते भये तिनको जैसे कृस्न और बलराम माता पिता जानते थे तैसे ही सन मान से सब जदुवंसी भी मानते भये और नंद जसोधा भी जैसे राम और घनस्याम प्रीती प्यार करते थे तैसे ही सब जदुवंसियों से सनेह करते भये॥७२॥ चौपाई॥ तब घनस्याम राम कर जोरी॥ भाखि समिरा नंम्र रसबोरी॥ हमरे सिवर चलहु पितु माता॥ नंद जसोमति सुनि सुभ बाता॥ गोप गोपिका संग सुहाई॥ और हु जदुवंसी समुदाई॥ निज निज हरष प्रफुल्लित काये॥ सकल सखद सुभ सिवर सधाये॥ परम दिव्य कनकासन माहीं॥ हरिब ल नंद जसोमति काहीं॥ बैठाये सादिर गहि पाना॥ जदुवंसिन अचरज मन माना॥ जब जसुमति बलराम स्यामै॥ हरषि गोद लीन्यो अभिरामै॥ पौछति मुख चूमति बहुबारा॥ कहत अबै नहिं कियो अहारा॥ तब दधि दुध नवनीत खवैया॥ मे छिन छिन सुत रहति दवैया॥ कन्हवा मोर सुरति बिसराई॥ कहत रहे माई मुख माई॥ एक बडो अचरज जिय मोही॥ पूछहुं मै उरपत सुत तोही॥ बडे बडे नृप देतन काहीं॥ मासो तात सुन्यो स्रुति माहीं॥ दोहा॥ आयुध विद्या मदन गुण कब सी ख्यो सुत एहु॥ कंस जी त्यो अरि समर दृढ मोरे बिपुल सं देहु॥७३॥ टीका॥ तब नंद जसोधा को घनस्याम और राम ~~कहने लगे~~ हाथ जोडकर नंम्रबानी से कहने लगे कि हे मात पिता अब हमारे घर को चलो इसप्रकार नंद जसोधा सुनकर सब गोप गोपिका और जदुवंसियों के सहित आनंद से जदुनाथ के भवनों मे चले आये तब राम स्याम ने सुवर्ण के दिव्य सिंघासन पर नंद जसोधा को बडे संमान से बिठाय

दिया जदुवंसी जो हैं सो देखकर आचर्ज को प्रापत हो गये तब जसोधा माई ने बडे हरख से राम स्यामको गोदमे लेलिया और मुख पोंछ कर और बारबार चूंमकर कहती है कि अबी तुमने अहार नहीं किया है तुमतो दूध दधी और माखन के खवैया थे मैं छिन छिन देती रहती थी अब हे पुत्र तुमने मेरी सुरती बिसार दई है जानो तो मैया मैया कहते हुये माषन के लालच से पीछे लागे फिरते थे हे पुत्र एक मेरे हृदयमे बडा आचर्ज आवता है सो सकुचके शंका करके पूछ नहीं सकती हूं कि बडे बडे भारी राजा और दैतों को तुमने रनमें मार कर जमधामको पठायदिया है सो हे पुत्र ऐसे प्रबल शत्रू तुमने किस प्रकार जीते और रह शस्त्रविद्या और गुन कहां पाये और किससे कब सीखे रह अदभुत कामेरे हृदयमे बडा संशय है ॥७३॥ दानव भूप भयंकर भारे तुम हो अंग कोमल सुकुमारे॥ उनसन समर कियो कस रारी॥ इह मानति अचरज महतारी॥ राजकाज कस करहु कन्हाई॥ छूटि न अजहुं तात लरिकाई॥ जो तुम करत रहे तजि सोरी॥ बिसरि गई सुधि माषन चोरी॥ दूबरताई लाल मुख तेरैं॥ देखि परत इन नैनन मेरैं॥ कागोरस दधि माखन मावा॥ मैं जान्यों कहुं नाहिन षावा॥ तजि बिलंब अब लेहु कन्हाई॥ मैं व्यंजन बहु तुम हित ल्याई॥ भोजन करहु लाल इहि काला॥ बैठि संग सब बाल गुपाला॥ अस कहि जसुमति बिबिध प्रकारू॥ दधि माषन मिसरी रस चारू॥ कदली पदम पल्लव दोना॥ भरि भरि आन धरयो चहुंकोना॥ बैठे बीच राम अरु स्यामा॥ ग्वाल बाल बहु चोर ललामा॥ हरि बल कहे जसुमति सुखसानी॥ लागी पाक करावन पानी॥ दोहा॥ बिलगबिलग बहुभांति बदन सुचि ब्यंजन रस स्वादु॥ भनत मुदित बल राम हरि भरि भरि उर अहलादु॥७४॥टीका॥

फिर

पृष्ठ

पीछे

छि, छि, सु,

चौ०पई

और मुख को चूम कर कहता है कि आज मेरे समान संसा
र मे कोई धन्य नहीं है तब बलराम भी चरनोपर सीस
नावते भये तब नंद ने केन राम स्याम दोनो भ्राता को
बडे प्रसन्न होकर गोद मे लेलिया तिस समय का सुख
जो है सो कुछ कहा नहीं जाता फिर वृद्ध वृद्ध सब
गोप कि जिन के हृदय मै राम स्याम दो नो भ्राता के दरसन की
अत्यंत ~~उत्कंठा~~ अभिलाषा है सो आय आय कर के स्न
स्याम और बलराम के सिरपर निछावर अर्पण कर के
करते है और भुजा भर भर भेटते हैं तब राम स्याम दोनो
भ्राता भी तिन गोपों से बड़े आनंद पूर्वक मिलते हैं
तिनमे वृद्ध वृद्ध जो हैं सो प्रसन्न होकर भगवान को आ
सीसा देते हैं कि हे द्वारिकाधीस तुम सरब काल आनं
द और सुख मे हरे भरे रहो॥ ११॥ चौपाई॥ मिले सखन
सन स्याम बहोरी॥ कहि नजाय कछु प्रीति अथोरी॥
तेभाषत भुज गहित कन्हाई॥ बृज सुधि भूलिगई बृजरा
ई॥ हरि कह जब तें बृज बिलगाने॥ तब ते कबहु न
छिन सुख साने॥ वृद्ध वृद्ध गोपी जुरि आयो॥ राम स्या
म कर लेत बलैयो॥ चूमत बदन निहारत रूपा॥
तोरत तिन लखि रूप अनूपा॥ बरषहिं आंखिन आनंद
आंसू॥ लेहिं अंक कल रमा निवासू॥ हरिय हरखित
न गत बारत॥ जसुमति लाल बदन उच्चारत॥ तुम
बिन हमहु ललित नंद लाला॥ रहजग जीवन भयो जंजा
ला॥ मिलहिं सखी हरि प्राण पयारी॥ जे प्रमुदित थ
न धाम बिसारी॥ निजनिज पूरब प्रीति जनाई॥ करत
कटाछ बदन मुसकाई॥ काहु परस्पर करत बिचारा॥ मि
ल्यो बहुत दिवसन पिय प्यारा॥ अब कछु लिया छूटन न
हीं पावैं॥ हम कहे बृज बसि रसिक रजावैं॥ कोऊ स
खि कहि हरि कर काहीं॥ करत कान्ह कह चीनत नाहीं॥
राम स्याम बृजबासिन केरो॥ भयो समागम मोद
घनेरो॥ धन्य धन्य जदुबंसि बखाने॥ प्रभु कर

अ० ८४

बार बार सुत विनय हमारी॥ लखि निज जठिर तात महतारी॥ दोहा॥ अब नत जहु वृज काहिं तुम वृज प्यारे वृज राऊ॥ आये हमरे भाग वस वृज वासिन सुखदाऊ॥७५॥ भगवान कहते हैं कि हे माता जब तें हम ने वृज को त्याग है तब तें ऐसे भोजन कहीं नहीं पाये अब हे मैया मेरे को कहो जो हमारी वृज सब सुखी तो है ऐसे सुन कर जसोधा माई कहने लगी कि हे पुत्र तुम्हारे बिना सब वृज के लोग व्याकुल हैं तब कृष्ण कहने लगे कि मैया मैने तुमारी कृपा प्रसाद से यद्यपि रण मे बडे बडे प्रबल शत्रूओं को जीता है तद्यपि दुख देखते को ही दिन बतीत भये हैं कार जसे कबी छूटने नहीं पाया मै जानता हूं कि वृज के समान सुख तीन लोक मे भी नहीं है और यद्यपि सो इंद्र का विलास भी होवे तो भी वृज के आगे एक नहीं है तब ग्वाल बाल कहते हैं कि हे अनंत भगवान तेरे बल का कुछ अंत नहीं आवता है हम ने वृज मै बहुत बार देखा हुआ है भगवान तुम ने अनेक असुरों का संघार किया है फिर नंद जो है सो हस करके कहने लगा कि सुना है स्याम तुम ने बहुत विवाह किये हैं और सब सखा के सहित सुख पूर्वक द्वारिका मे बसते हो बडाई भी बडी प्रापत करी और लडकाई चपलताई सब छोड दई है अब हे पुत्र बार बार हमारी बिनती है कि हम को वृद्ध जान कर हे वृजराज हे वृज के प्यारे ~~वृज के~~ और वृज वासियों के सुखदाता वृज को त्याग कर कहीं नहीं जावो हमारे अहो भाग्य हैं जो तुम दोनो भ्राता ने फिर आय कर दरसन दिया है॥७५॥ चौपाई॥ नतर चलब हम संग खरारी॥ तुम बिन जीवन वृथा मुरारी॥ कह्यो कान्ह तुव जनक विछोरा॥ कारक दमन सकल सुख मोरा॥ पै मम हृदय परम संदेहू॥ जो तुव संग चलन पितु केहू॥ मै तो नित तुव हृदय वसैया॥ को कर संग चलति पितु मैया॥ सुनहु तात संदेह विहाई॥ लखहु सदा मोहि संग सहाई॥

गिरा गूढ अस कृस्न उचारी॥ सुनत नंद जसुमति म
हतारी॥ भये मगन सुख सिंधु अपारा॥ नैनन बहतिप्रे
म जलधारा॥ असप्रकार करि पाक कन्हाई॥ बैठे नंद
अंक कल जाई॥ हरि रचना अब चरित बिहारी॥ भनत प
रस्पर जादव सारी॥ धन्य नंद जस भाजन भाई॥ धन्य ध
न्य जग जसुमति माई॥ को दुरलभ संसार न ताके॥ तीन
भवन नायक सुत जो के॥ सत्य सनेह कृस्न पर कीन्यो॥
जीवन मुकत विदत इह चीन्यो॥ दोहा॥ तब नंद नंदन नं
द सो आनंद बचन उचारि॥ कहो अहै ब्रजमै कुसल
पितु सब धेनु हमारि॥ १८॥ टीका॥ फिर नंद कहते हैं कि
जो लाल तुम ब्रजमे नहीं रहोगे तो हम भी तुमारे संग
ही जावेंगे तब भगवान कहने लगे कि हे पिता तुमारा
विछोड़ा जो है सो मेरे सरब सुखों के नास करने वाला है
परन्तु मै बड़ा आचर्ज मानता हूं कि जो तुम संग चलने के
कहते हो ~~तो तो ऐसे है~~ तो मै तो सदैव तुम्हारे हृदय मै
निवास करता हूं तुम किसके साथ चलने को कहते हो हे
पिता इस भ्रमको दूर करके मेरे को सदा अपने अंग संग
ही जानते रहो इस प्रकार भगवान की गूढ बानी सुनकर
नंद जसोधा दोनो हरष रूपी समुद्रमे मगन होकर नेत्रों
से प्रेम जल का प्रवाह वहावते भये तब कृस्न भगवान
भोजन पायकर बडे आनंद से नंद की गोद मे जाय
बैठे ऐसे जदुनाथ की लीला देखकर सब जादव जो हैं
सो परस्पर कहने लगे कि भाई धन्य है सुजसका भाज
न नंद और धन्य है जगत मे जसोधा माई इनको
संसारमे क्या दुरलभ है कि जिनके तीन लोक के ना
यक ~~पुत्र है~~ कृस्न परमात्मा पुत्र हैं इन्होंने भगवान
पर सत्य सनेह पाला है ~~सो~~ जगत मे इनको ही जी
वन मुक्त जानो तिसते उपरांत नंदलालजी महा
राज बडे आनन्द से नंद को पूछने लगे कि हे पिता
अब इह सुनावो कि ब्रजमै हमारी गौअन का तो कु
सल है अथात सब राजी तो हैं ॥१९॥ चौपाई॥

२००

२८

ब तसि बत्स सब ग्रेहि सुकारी॥ जिनमहं छिन छिन सु
रति हमारी॥ कहहु कुसल बृज कुंजन ताता॥ बिसर
त जो न हमकुं सुखदाता॥ बरन तृन सकल फूलफ
ल वारी॥ कुसल वारि बर भानु कुमारी॥ कदलि कदं
ब ग्रेब कल छाया॥ जहां रहत मन मोर लुभाया॥
केलि स्थान ग्रान बृज जनकी॥ देहु कुसल मोहि ज
नक सबन की॥ सुनत नंद कान्हर ग्रसबानी॥ बोले
चूमि बदन सुख मानी॥ बृज कर कुसल कवन हम क
हि हैं॥ जहां स्याम इक तुमकुं नरहि हैं॥ ग्रौर कुस
ल नीकी सब ताता॥ पै बिजोग तुव सह्यो नजात॥
ग्रतने मे बलराम सुधीरा॥ ग्राये हरष पूरि दृग नी
रा॥ नंद मोद ग्रानंद बढाई॥ बैठे मंद मंद मुसकाई॥
कछु कारज बस प्रीये पिनाकी॥ गये दूसरे सिवर
इकाकी॥ ईहां नंद ग्रतसे ग्रनुरागे॥ जदुकुल कु
सल सु पूछन लागे॥ हलधर करहु कथन कस्हु
मोहि काहीं॥ रहहि कुसल बसुदेव सदाहीं॥ सुखि
त भोज नृप जादव सारी॥ कहहु रामबल सकल
उचारी॥ हलि हसि कहि कल कृपा तुमारी॥ ग्रेहि
कुसल जादव कुल सारी॥ इतै इकांत कोत कहे
पाई॥ गोपी सकल हरष सरसाई॥ गवनी पूरि
प्रेम दृग वारी॥ पदि वादित कीने गिरधारी॥ तिनकहे
देखि स्याम निजकीने॥ ग्रधो बदन कछु नैन
लजीने॥ तब बोली हसि कै हरि प्यारी॥ ग्रवकत
मानिये लाज बिहारी॥ भली करी जो करी कन्हा
ई॥ बीती बात कौन मुख गाई॥ दोहा॥ ग्रव तो स
नमुख कीजिये नैन नलिन नंदलाल॥ तुमै न
दीजै दोष कछु बिधि गति ग्रगम गोपाल॥ जो
लिलार बिधना लिख्यो हो तसकुर जदुराय॥ रा
ई घटै न तिल बढै कीजे कोटि उपाय॥ तब कर
सुधि कान्हर तुमै बिसर गई हमारीय॥ सबकर

फिर जसुमति कहती है कि हे पुत्र सो तो ~~कंस~~ राजे और दा
नव महा भयंकर बड़े कठोर थे और तुम अत से सुनम
कोमल अंगो वाले तिनके साथ कैसे रण मे जुद्ध किया इह
मै बड़ा आचर्ज मानती हूं और इहभी कहो कि पुत्र तुम राजकाज
कैसे करते हो अभी तो तुमारी लड़काई छूटी ही नहीं जानो
तो जो तुम ढीठ होकर दधी माखन की चोरी करते रहे सो
सुधी तुम को बिसर गई है और हे पुत्र मेरे नेत्रों मे तुम तो
दुबले से देख परते हो क्या कुछ मिसरी माखन खाया नहीं
खाते रहे हो अब लाल बिलंब को त्याग करके अपने सब
ग्वाल बालों के सहित भोजन पावो मै तुमारे वास्ते अने
क व्यंजन ले आई हूं ऐसे कहिकर जसोधा माई दूध दधी
माखन मिसरी इत्यादि सब पदार्थ के ले और कमलोप
त्रों के दूनूं मै भर भर कर आगे धर देती भई तब नंदला
ल जी सब ग्वाल बालो के ~~सहित~~ बीच भोजन करने को बैठ
जाते भये माता जसोधा जो है सो प्रीत पूर्वक रामस्याम को
अपने हाथों से जिमावती और व्यंजनो का ~~स्वाद~~ स्वाद
पूछती तब राम और घनस्याम दोनो भ्राता सब रसों
का भिन्न भिन्न स्वाद कहि सुनावते हैं ॥७४॥ चौपाई ॥
जब तें हम निज बृज तजि आये ॥ तब तें अस न भोज
न नहिं पाये ॥ मातु कहहु मोहि बदन उचारी ॥ अहैं
सकल बृज कुसल हमारी ॥ सुनि प्रीय जसोमति कहवो
तुम बिन कहति बिकल बृज जनवो ॥ हरि कह भेजन
नी तुव दाया ॥ जीत्यो महा प्रबल रिपुराया ॥ पै दुखहिं दु
ख मै दिन बीते ॥ कबहुं न कारज तें हम रीते ॥ बृज सम
सुख त्रिभुवन नहिं जाना ॥ जदपि शक्र सत बिभो समा
ना ॥ ग्वाल बाल तब बदन उचरहीं ॥ तुव अनेक
बल अंत न परहीं ॥ हम देखे बृज मै बहु बारा ॥ किये
अनेक असुर संघारा ॥ मख मस काय नंद पुनि का
हा ॥ किये स्याम बहु रुचिर बिबाहा ॥ बसहु सदन
द्वारावति माहीं ॥ सखा सुहृद तुव संग सकाहीं ॥ अब तो
सुनियत बड़ो बड़ाई ॥ छोड़ि दई लालन लरिकाई ॥

जावते हो आपने जो करी सो भली करी बीती वार्त्ता की
क्या चरचा चलावनी है परन्तु हे महाराज अब मेरेउ
ठाप कर तो सनमुख देखो तुमारा कुछ दोष नहीं है विधा
ता की गती अगाध है तिस ने जो मस्तक मे लिख दिया है
सो यद्यपि कोटि उपाय भी करिये तद्यपि नाराई प्रमा
ण घटता है ना तिल प्रमाण बढ सकता है हे रसिक बिहा
री तब की सुधी तुमको सब बिसर गई है देखो अनकू
ल होकर सब की कैसी रुचि राखते रहते थे अब तो कुछ
और ही नई रीतीं देखपडती है ॥१७॥ चौपाई ॥ जानिपरत
हो हृदय बिरागी ॥ मानहु लगन आन कहु लागी ॥ चेच
रीत चित रीत तुमारी ॥ रहहु नवल नित बेलि बिहारी ॥
तुम कहु दोष नहीं कछु प्यारे ॥ रहे ऐसही भाग हमारे ॥
सदा रीत तुमरी मन भावन ॥ सनमुख देखि प्रीति उप
जावन ॥ पीठ दिये पर औरन केरे ॥ बनहु स्याम नीके ह
म हेरे ॥ अब तो ब्याही राजकुमारी ॥ बिसरि गई सुधि
कान्ह हमारी ॥ जाति अहीर गवारनि जोई ॥ कब भा
वति अब कान्हर तोही ॥ छल करि सखी स्याम बहुरं
गी ॥ गये सकल ब्रजकर सुख भंगी ॥ जात समय माधो
गुहराई ॥ हम ऐहैं ब्रज बेग पराई ॥ सखी सोच जनि
मानस करहो ॥ हम तुमरे सब विधि अनुसरहो ॥ सो
अनुसार भये भल स्वामी ॥ बने जाय और ने अनुगामी ॥
हमरी सुधि कस करहु पियारे ॥ रहहु छल छंद सदाहि तु
मारे ॥ दोहा ॥ मिली एक कुबरी तुम्हे जाहि मुख जि
यहु निहारि ॥ तास कटाछ्छ निराच बस हमरी सुरति
बिसारि ॥ १८ ॥ टीका ॥ फिर गोपी कहती हैं कि हे नंद
लाल महाराज विरागी ~~[illegible]~~ देख पडते हो
~~[illegible]~~ मानो कहीं और ठौर लगन लगी हुई है तु
म्हारे चित्त की रीती जो है सो भ्रमरे वत है नित्य न
वीन हीं बेलियों के लोभी बने रहते हो परन्तु प्या
रे तुमको कुछ दोष नहीं है हमारे भाग्य ही ऐसे हैं
तुमारी तो सदा ऐसी ही रीत रही कि सनमुख देखकर

तुम हृदय से

प्रीती करनी और पीठ दिये पर औरों के वन जाना हम ने
भली प्रकार देखे हुये हो अब तो कान्ह तुम ने राज कन्या
विवाही हैं हमारी सुधी बिसार दिये हो क्योंकि हम जाती
की अहीर और गवार नी हैं ~~सोतुमको~~ सो तुम को
अब कैसे भावती हो हे सखी बहुरंगी स्याम जो हैं सो छ
ल करके सब बृज का सुख भंग कर गये हैं जो ते सम
य सब को धीरज दे गये थे कि हम बृज मै उतायल ही आय
जावेंगे तुम चिन्ता नहीं करनी हम तुमारे अनुसारी हैं
सो देखो सखी स्याम भले अनुसारी बने जो तहो जाय
कर औरों के हाथ ही बिकाय गये हमारी सुधी किस ने ले
नी थी २२ इन छल छंद इनके तो सदा तें ही चले आवते हैं
हम जानती हैं कि तुम को एक कुबरी मालन मिल गई है
~~और तुमरा को दिन~~ जिस का मुख देख देख जीवते हो तिस
के कटाक्ष रूपी बाणों के घायल घनस्याम तुम हमा
री सुरती कहां ले सकते थे ॥ ५ ॥ चौपाई ॥ पै कुबरी
संग हम है लिलामा ॥ जब तुब सुन्यो नेह घनस्यामा ॥
तब पछताय कह्यो हम जीके ॥ इहि परिणाम होहिं
कब नीके ॥ सदा एक रस स्याम न अहीं ॥ छल बल
नवल करत नित रहीं ॥ भयो सत्य सोऊ कथन हमा
रो ॥ तजि कुबरी द्वारिका सिधारो ॥ तहां सुन्यो रुक
मणी विवाही ॥ कछु दिन ताकी प्रीति निवाही ॥ तापर
वरी अष्ट पटरानी ॥ षोडस सहस बहुरि मन मानी ॥
पृथम है तें बिगरी जिन रीती ॥ तिन कर कबहुं न
परत प्रतीती ॥ बृज कहं वारध बिरहे बहाये ॥ अब
मुख कौन दिखावन फिर आये ॥ अति उपकार
हंस नृप कीना ॥ जिहि मिस तुमहुं चरन रज दीना ॥
अब लों गई न चंचल ताई ॥ भली निवाही प्रीति
कन्हाई ॥ पै जो भयो भयो कहि काला ॥ अब सो
चित दुख जाहि नंदलाला ॥ तुव दरसन दुरलभ जग

लीने॥ हम इह नैन सफल निज कीने॥ दोहा॥ आन ला
भ याते अधिक कछु जान्यो नहिं जाहिं॥ इहि लग रहे
सि प्राण इह प्राण नाथ तन माहिं॥ १९॥ टीका॥ गोपी
कहती हैं कि हे घनस्याम जब हमने तुमारा तिस कुब
री से नेह सुना तब हम सबने पछुतायकर कहा कि
इसका फल शुभ नहीं होवेगा क्योंकि स्याम सदा एक
रस नहीं रहते हैं नित नवीन ही कुल[illegible] कौतुक
दिखावते हैं सो हमारा कथन सत्य ही होगया जो
कुबरी को त्यागकर द्वारिका को चले आये तहां सु
ना कि रुकमनी बिवाही और कुछ दिन तिसकी प्रीती
निबाही फिर और आठ रानी को वरकर तिसतें उ
परान्त सोलो हजार को अंगीकार करते भये हे स
खी जिनकी प्रथमतें ही रीती बिरी होती है तिनकी
कबी प्रतीत नहीं होती फिर कहती हैं कि घनस्याम
बृजको बिरह रूपी समुद्र मै डुबोयकर अब कौन
मुख दिखावने के लिये आये हो हमारे पर हे सरा
जाने बड़ा उपकार किया है कि जिसके निमित्त करके
तुम स्याम तुमने इहां चरन धारे हैं अब तक चं
चिलताई जो है सो नहीं गई प्रीत की रीत भली
निबाही परंतु हे स्याम जो भया सो भया काल तो ब
तीत होगया अब सोचने से दुख नवृत्य नहीं होता
इह तुमारा दरसन जो है सो हमारे मै दुरलभ है हम
अपने नेत्र सफल कर लिये हैं इसते अधिक हम
को और कोई लाभ नहीं है हे प्राणनाथ इह हमा
रे प्राण जो हैं सो शरीर मै केवल इसी निमित्त ठ
हरे हूये थे नहीं तो चले जाते॥ १९॥ चौपाई॥ अ
ब निज कुसल कहो गिरधारी॥ रहे हम जुत तुमरे
सुखारी॥ जब तें तुम तजि बृज घनस्याम॥ जहं जहं
बिचरत रहे ललाम॥ तहं तहं रसिक सिरोमनि

रुचि रावत रहे अब कछु रीति नईय॥ ११॥ टी का॥ फिर घनस्याम कहते हैं कि हे पिता मेरे सो बछरी बछरे तो सब सुखी हैं कि जिनमे मेरी छिन छिन सुरती लगी रहती है और हे पिता बृजके कुंजन की भी कुसल कहो कि जो मेरे परम सुखदायक हैं और मेरे को विसरते नहीं हैं और भी बता त्रिरत फूल फँवारी कदली कदंब अंब इत्यादि सीतल छायावाले वृक्ष कि जिनके बीच मेरा चित्त लुभायमान रहता था और जमुना का सुन्दर निरमल जल इन सब की कुसल सुनावो कि अपने आप ने सब आने पूर्वक तो हैं इस प्रकार नंद जो है सो घनस्याम की बानी सुन कर बडी प्रीती से मुख चूम कर कहने लगा कि हे स्याम जहां एक तुम हो नारहे तहां हम बृजकी क्या कुसल कहेंगे हे प्राणप्यारे और तो सब कुसल भली हीं है परन्तु एक तुम्हारा विजोग नहीं सहा जाता है इतने मे बलराम जो हैं सो हसके बडे आनंद से मंद मंद मुसकावते हुये आयकर नंदकी गोदमे बैठ जाते भये और उमापती जो शिव हैं तिनके प्यारे रमापती भगवान कुछ काज विचारकर उठकरके दूसरे भवनको चले गये तब ईहा नंद बडे सनमान पूर्वक हलधरजी से जदुकुलकी कुसल पूछने लगे कि पुत्र कहो वसुदेवतो राजी रहते हैं और सब जादवों के सहित राजा उग्रसेन भी सुखी आनंद हैं तब हली जो बलराम सो हसकर के कहने लगे कि हे पिताजी कृपासे संपूर्ण जादवों मे कुसल हीं है तब उहां कोतक को इकांत पायकर सब गोपी नेत्रोंसे प्रेम जल बहाती हुई आयकर भगवान को परिवारत करलेती भई॥ अर्थात चारोंओर होय गई तिनको देख कर घनस्याम मुख निवायकर नेक के कुछ लजीनेसे कर लेते भये तब भगवान की प्यारी जो है सो कहने लगी कि हे विहारी लाल अब क्यों ल

ले

सदेव

के

पुत्र वसु

तुमा

ग्रौर मेरे तें जो सखी सो हे सखी सब कांची है तुम को कुछ दोष नहीं इन सब मेरे को हीं दोष है सुनो प्यारी दाउ के हारे हये कुछ बस नहीं चलता है तुम को मे किस प्रकार समुझाऊं ग्रपने किये पर ले जावता है इसमै जो कुछ किया सो मे किया ग्रौर किसी का दोष नही है मै ग्राप तुम को विरह के समुद्र मै डाल कर द्वारिका को चला गया तो इन मेरा हीं दोष है ॥८०॥ चौपाई ॥ ये तुव सखी भलो प्रण धारा ॥ सत्य निवाह्यो प्रेम हमारा ॥ ग्रव निज धरहु धीर जिय माहीं ॥ सोच विषाध करहु कछु नाहीं ॥ ये है तुम हु सरवदा प्यारी ॥ मोर मिलन ग्रह लाद सुखारी ॥ ग्रस कहि उठि सानंद कन्हाई ॥ मिले सखिन दृग वारि वहाई ॥ मरि मरि भुजा तिन हु हरि भेटे ॥ दुसह वियोग सोग दुख मेटे ॥ मिलत न तजहिं स्याम चैन काहीं ॥ परहिं सुधा जिमि मृत मुख माहीं ॥ विपुल वुझाय कह्यो गिरधारी ॥ ग्रव मोहि देहु रजाय सु प्यारी ॥ जाउं वेग द्वारावति माहीं ॥ देहु ग्रभय धीरज सव काहीं ॥ व्याकुल लोग नगर नर नारी ॥ देखत होंहि मोर वय सारी ॥ गिरा गमन जब स्याम सुनाई ॥ वृज वंता मानस ग्रकुलाई ॥ विरह सिंधु मनु वूड़न लागीं ॥ स्याम सरोज चरन ग्रनुरागी ॥ वोली वारे धार दृग ढारी ॥ पुनि मिलि हो कव कुंज विहारी ॥ दोहा ॥ ससि ग्रानन चैन स्याम तुव इह दृग जुगल ~~क~~ चकोर ॥ कव देखव हमरे वहुर सुन हु रसिक सिर मोर ॥८१॥ टीका ॥ भगवान कहते हैं कि हे सखी तुम ने ~~ा~~ भला प्रण धारा ● जो हमारा प्रेम सत्य करके नि~~भ~~ भाया परन्तु ग्रव हृदय मे धीरज धारो सोच विषाद ~~मत~~ कुछ ~~मत~~ करो हे प्यारी तुम को मेरे मिलने का सुख ग्रौर ग्रानंद जो है सो सरव काल प्राप्त

होता रहेगा ऐसे कहिकर भगवान उठे और सब सखियों को नेत्रों से आंसू ढार ढार हृदये मे लगावते भये और भली प्रकार मिलकर विजोग का परम दुख जो था सो निवारण कर ते भये और सो सखी भी मिलती हुई भगवान के हृदय से नही छूटती हैं मानो जैसे मरा हुआ पुरष मुख मे अम्रत पडने से सजीवन होजाता है तैसे ही वे सब जी उठती भई तब फिर वार वार कहते हैं कि प्यारी अब मेरे को आज्ञा देवो जो मे द्वारिका मे जाय कर सब को धीरज देऊं और अभय करूं क्योंकि तहां के सब लोग नारी नर और बाल वृद्ध सब मेरा ही मारग देखते होंगे इस प्रकार जब भगवान ने चलने की चरचा चलाई तब सुनते ही वृज की स्त्री जो हैं सो सब व्याकुल होय गई और ~~[illegible]~~ विरहे के समुद्र मे डूबने लगी नेत्रों मे जल भर भर कहती हैं कि हे घन स्याम फिर कब दरसन देवोगे ~~[illegible]~~ ~~[illegible]~~ और तुमारे मुख चंद्रमा को इह हमारे चकोर नेत्र फिर कब देखेंगे ॥८१॥ चौपाई ॥ सुनत सखिन मुख वचन निकामा ॥ बोले मुसकि मंद घन स्यामा ॥ सखि तुमरे मानस मम वासा ॥ मै तो रहहु सदा तुव पासा ॥ कुछ दूते जे कहे आउब जबही ॥ इह सुख हम तुव पाउब तब ही ॥ जब सखि करहु ध्यान सुधि मेरी ॥ तव मे होहु प्रकट विन वेरी ॥ अस सुनि वृज भामनि अनुरागी ॥ वार वार मिलि प्रभु पद लागी ॥ तब तिन तें हरि होत विदाये ॥ हरखि नंद जसुमति ढिग आये ॥ माग्यो तासन जुग कर जोरी ॥ अब पितु ऐहि चलन मति मोरी ॥ सुनि अस नंद जसोमति काहीं ॥ विरहे वान लाग्यो उर माहीं ॥ सिथल अंग तन उठे दुलारी ॥ लिये लगाय हिये गिरधारी ॥ विलपि कह्यो दंपति अस वानी ॥ तुव विजोग सुत प्राण न हानी ॥ चलन वात जनि कहहु मुरारी ॥ देहु न हमहु

दुसह दुखभारी॥ कह्यो कृस्न अब ते पितु मोरा॥ तुमरे कबहुं न होहिं बिछोरा॥ दोहा॥ मोपें राखे रहहु नित तुव निज कृपा महान॥ अस कहि समुझाये पिता करि हरि विविध बखान॥ नंद जसो मति हीये कर हरि दुख सकल मुरारि॥ सानकूल अस वदन प्रभू पुनि असगिरा उचारि॥ २२॥ टीका॥ तब सखियों के मुखसे वचन सुनकर भगवान मुसक्याय कर कहने लगे कि प्यारी मै तो सदैव तुमारे पास बसता हू क्योंकि तुमारे हृदय मै मेरा निवास है और मै जब कुरुक्षेत्र को आऊंगा तब हम तुम इहप्रतक्ष दरसन मे लेकासु पावेंगे और जब तुम मेरा ध्यान और सुधी करोगी तब मै ततकाल हीं तुमारे पास आय जाऊंगा इसप्रकार सुनकर के सब वृजवासनी बडे आनंद और प्रेममै मगन भई हुई बार बार मिलकर भगवान के चरनो पर सीस नावती भई तब घनस्याम तिनतें विदाय लेकर नंद जसोधा के पास आय जाते भये तिनके आगे हाथ जोड कर विनती करने लगे कि हे दयानधी अब अब आज्ञा करो तो मै चलने को चहता हू ऐसे सुनकर नंद जसोधा के हृदयमै मानो विरहे का वाण लग जाता भया सब अंगों से सिथल भये हूये उठते हीं घनस्याम को हृदयमै लगाय लिया और बडे विलाप के वचनों से कहने लगे कि हे पुत्र तुमारा विजोग हमारे प्राणों की हानी है लाल तुम चलने की वारता मत कहो इसतें हमको कलेश उपजता है तब भगवान कहने लगे कि हे पिता अबतें आगे तुमको मेरा विजोग कबी नहीं होगा तुम मेरे को बालक जानकर आपनी कृपासे सदैव हीं निहाल करते रहो ऐसे बार बार कहि कर और समुझायकर नंद जसोधा के हृदय का दुख सब दूर करके फिर भगवान बडी कोमल वानी

नीके॥ भयो वृज सदृश सुख जीके॥ कहहु सत्य जि
य की गिरधारी॥ धौं वृजकर सुख दियो बिसारी॥ सुनि
गोपिन अस वचन कन्हाई॥ बोले लज्जित मंद मुस
काई॥ सखी प्राण प्रीया तुम मोहि काही॥ बिसरी तुम
रि सुरति पल नाहीं॥ काह कहूं कछु कारज हेतू॥ ग
वन कियो पितु मात निकेतू॥ वृज वेतन सदृश सुख
मोहि॥ त्रिभुवन प्राण प्रिया नहिं कोहि॥ छिमहु छिम
हु अपराध हमारा॥ तुव दुख देखि न जाहि सहारा॥
तुम जो कही सखी सब सांची॥ मोहि तें सही करी सब
कांची॥ तुमहु दोष नहिं दोष हमारे॥ चलत न जुग
ति दाव सखि हारे॥ तुमहिं कौन विधि मैं समुझाऊं॥
अपन किये पर जीये लजाऊं॥ दोहा॥ जो कुछ कियो
सो मैं कियो दोष काहु कर नाहिं॥ तुव विरहें वारद तु
मै गयो द्वारिका माहिं॥ ९०॥ टीका॥ गोपी कहती हैं
कि हे गिरधारी स्याम अब अपनी कुसल सुनावो जो
बलराम के सहित सुखी तो रहे और रहमी कहो कि
जबतें तुम वृजको त्यागकर जहां जहां विचरते रहे
हो तहां तहां वृजके समान भलीप्रकार सुख पावते
रहे कि नहीं अब हे जदुनाथ अपने हृदयकी सत्य स
त्य कहो कि अथवा वृजका सुख बिसार दिया हुआ
था इसप्रकार गोपियों का वचन सुनकर भगवा
न मंद मंद मुसकाय कर कहने लगे कि हे सखी
तुम तो मेरे को प्राणों से भी प्यारी हो तुमारी सुरती
मेरे को पल भर भी भूली नहीं पर क्या करूं कुछ
काज के निमित्त मात पिता के घर मैं चला गया था
वृजकी स्त्रीयोंके समान मेरे को प्राण प्यारा कोई ती
न भवन मैं भी नहीं है हे सखी मेरा अपराध क्षमा
करो मैं तुमारा दुख देखकर सहार नहीं सकता हूं
तुमने जो कही सो सब सांची॥ [illegible] मैंने जो करी

ते रोवने लगे और जब स्याम रथपर आरूढ भये अ
थात चढे तौ सब लोग चक्रखायकर के गीर पडते भये
जैसे जलके विना मछली व्याकुल होकर तडफती है तै
से ही सब वृजवासी तडफने लगे ऐसे तिनकी दशा देख
कर भगवान कृपानिधान तुरत ही रथको त्याग कर
चले आये और तहां अनेक प्रकार का प्रवोध करके सबको
समुझाय और भलीप्रकार धीरज देकर सबको सा
वधान किया फिर वारवार नंद जसोधाको भी
धीरज और संतोष दिया सो प्रेमसे व्याकुल भये हुये भग
वान को भुजा भरभर हृदय मै जुरावते है॥ २२॥ चौपाई॥
जस तसके पुनि होत विदाये॥ चले स्याम चढि जो न
सुहाये॥ रत पथ नंद जसो मति लीन्यो॥ कृस्न विरहे व्या
कुल मति कीन्यो॥ पुनि पुनि चितय जात छन स्यामे॥ तक
त नैन नहि लेत विरामे॥ देखत वहुरि वहुरि सब ग्वाला॥
कहेला अवे गये नंद लाला॥ उत फिरि फिरि पथ तकहि
कन्हाई॥ कस जहि है गृह जसुमति माई॥ अस प्रकार
वलराम मुरारी॥ जीति हेस हिम कर रत तारी॥ गये द्वा
रिका सानंद भूरी॥ रह्यो सुजस सुभ त्रिभुवन पूरी॥
जसुमति नंद लोग समुझाये॥ रते सुमरि हरि गोक
ल आये॥ एक आधार कृस्न जीय जाने॥ वयोम
रोस सपन नहि माने॥ कोह कहे वृजवासिन रीती॥
जोकी इमर्ट कृस्न पद प्रीती॥ करि करि प्रेम अनंद सुरारी॥
लोक प्रलोक लियो जस भारी॥ धन्य धन्य भाजन
जग एहू॥ रहत सदा रत कृस्न सनेहू॥ अस वृजवा
सिन की मन भाई॥ मैं रह कथा अलप कछु गाई॥ नत
र अगाध जलध जग गाथा॥ अगनित चरित चारु
वृजनाथा॥ को सामर्थ कथन कर ऐहीं॥ वेद प
योधि पार किमि पैहीं॥ मति अनुरूप समय अनु
सारा॥ जान्यो एह भयो चित सतारा॥ दोहा॥ प्रेमने
म जस कीन कल वृजगोपिन भगवान॥

सुनहु संत श्रोता सकल और हिं नतास प्रमाण॥ बृज
वासनि बृज बल्लभी बृजपति प्राणपियारि॥ सदा
रहत ताकर हृदय निवसत कुंजविहारि॥९४॥टीका॥
तबफिर कृष्ण भगवान जैसे तैसे कर के तिन सब बृज
वासियोंसे विदाय होकर रथपर चढकर चल पडतेभये
और इहो कृष्णकीविरहेसे व्याकुलभये हुये नंद
जसोधा भी अपने रसते को लेतेभये परन्तु तिनके नेत्र
घनस्याम की ओर फिरफिरकर देखते जाते हैं धुनी तो को
प्रापत नहीं होती और सब ग्वाल भी बारबार तकते जा
ते हैं कि अब लो नंदलाल जी कहांतक गये हैं और
ऊहो कृष्ण भी फिरफिर रसते की ओर देखते है कि
नंद और जसोधा माई किसप्रकार घर जावेंगे ऐसे
राम स्याम दोनो भ्राता जो हैं सो रणमें हंस और डिम
क को जीतकर बडे आनंदसे सब समाज के सहित द्वा
रिकामे जाय प्रापत भये और इहो सब गोप समा
ज के सहित नंद जसोधा भी गोकलमे चले आये तिन
को केवल एक कृष्ण काहीं आधार है और दूसरा को
ई भरोसा नहीं है बृजवासियों की रीती और महिमा
कहांतक कही जावे किजिनकी कृष्णभगवानके चरनो
मे अमिट और अनन्त प्रीती है और जिन्हों ने भगवान
से पवित्रप्रेम और सत्य सनेह करके लोकप्रलोकमें
बडे महान जश को प्रापत कियाहै इहधन्य इहधन्यहैं
सुजस के भाजन किजो रात्रीदिन सदैव कृष्णके सनेह
मे हीं लीन रहतेहैं इसप्रकार इह बृजवासियों की
गाथा कुछथोडी सी गायन कीगई है नहींतो इह
बडी अगाध कथा है और अगाध हीं कृष्ण भगवा
नके चरित्र हैं तिन के कथन करनेको कौन सामर्थ्य है
~~[illegible]~~ पैरने अर्थात तरने करके स
मुद्रका पार कैसे पाया जाता है ताते हे गुरदेव म्हा

मी जी जथामतो और समय के अनुसार इह पवि
त्र गाथा जो है सो गायन की गई है इह भगवान का
पवित्र प्रेम नेम जो गोपियों ने किया है ~~जिसका कोई~~ त्र
सो अप्रमाण है तिसका कोई प्रमाण नहीं सो वृ
वाला वृज का सखी वृजपती की प्रा प्यारी जो हैं
तिनके हृदय मै भगवान सदैव ही निवास किये र
हते हैं इति श्री भक्तिविनोद ग्रंथे भागवद भगतीम
हातमे भाषा टीकायो व्रह्मदत्त ओ सहमित च
रिते नाम सरगः८

से जिसप्रकार कहते हैं सो आगे कथन किया जाता है॥
२२॥ चौपाई॥ जनक मोर कुरुदेत तर माहीं॥ होव मिला
प रुचिर तुम काहीं॥ मैसुत तात मात तुम मेरे॥ कोटि
कलप लग फिर हि न फेरे॥ अस कहि वसन आमरन
नाना॥ वेग मेगाय कृष्ण भगवाना॥ गोपी गोपिन क
हे समुदाई॥ हरषि विमगत कीन जदुराई॥ पुनि प्रभु वार
वार सव काहीं॥ मिले मोद पूरित मन माहीं॥ राम सहि
त मानस अनुरागे॥ वहुरि नंद जसुमति पग लागे॥ है
गये प्रेम विकल गिरधारी॥ ढारत लोचन वारज वारी॥
नंद जसोमति विकल अधीरा॥ भये निमगण विरहे निधिनी
रा॥ गोपी गोप सकल सुधि त्यागे॥ कृष्ण कृष्ण करि वेद
न लागे॥ स्याम जान जव भये सवारा॥ गिरे लोग सव
खोय पिछारा॥ जल वहीन जिमि मीन दुखारी॥ तरफत
तिमि व्याकुल नर नारी॥ तिन कर दसा देखि भगवाना॥ आ
ये तजि तुरंत [illegible]ना॥ करि करि वदन प्रवोध सुहावा॥
वारवार सव कर समुझावा॥ दै दै आस्वासन गिरधारी॥
सावधान कीनी वृजनारी॥ दोहा॥ जनक जननि कहं
दीन पुनि धीरज कृपा निकेत॥ वार अनेक लगाय हि
ये दम्पति प्रेम समेत॥२३॥ टीका॥ भगवान कहते हैं कि
हे पिता मेरा मिलाप तुमको कुरुक्षेत्र मे होवेगा मै तु
मारा पुत्र और तुम मेरे माता पिता कोटि जनम तक भी
[illegible] मि[illegible]टाये नहीं मिटते हो ऐसे कहिकर नाना
प्रकार के वस्त्र और भूषण मंगवांकर वडे आनंद से
सव गोपी गोपों को वांट दिये फिर वारवार सव
को मिल कर राम स्याम दोनो भ्राता नंद जसोधा के च
रनो पर जाय प्रणाम करते भये तव घन स्याम जो हैं
सो प्रेम करके व्याकुल और अधीर होय गये नेत्रों
से जल का प्रवाह चला जाता है ऊहो नंद जसोधा भी
व्याकुल भये हुये विरहे के समुद्र मे डूवे जाते हैं और
गोपी गोप भी सव सुधी को त्यागे हुये कृष्ण कृष्ण कर

कबहु न देखे स्याम जलधतन मंजुल सोभा॥ रंजन सुर दुज धरन करन मुनि मानस लोभा॥ वीत्यो जनम अमोल मोर जग वृथा सबाहीं॥ तांते आज दिखाय समर हरि दासन काहीं॥ दोहा॥ हेहु कृतार्थ आज मैं जुत समाज समुदाय॥ बिनु अजास हरिदास पद लेहु सुगम सुभकाय॥ ८॥ टीका॥ नाभादास कहते हैं कि हे गुरदेव स्वामी जो [illegible] बड़ी आचर्ज और मनोहर गाथा जो है सो कथन करता हूं आप ध्यान देकर स्रवण करिये कैसी भी गाथा है कि कृस्न भगवान के चरन कमलों मे नित्य नवीन प्रीती के सरस करनेवाली और रसजस के सहित सरब सुखों के देनेवाली और भ्रम कलेशों के हरने वाली है कहते हैं कि एक समय राजा जुधिष्ठर ने अस्वमेध यग्य किया तब घोड़ा जो है सो वेद की विधी अनुसार पूज कर के छोड़ा तिस के साथ बड़े सूरबीर अर्जुन प्रद्युमन इत्यादि और अनेक महारथी बीर धीर जो हैं सो सब चलते भये तब सब देस दिसाओं मे भ्रमन करता हुआ सो घोड़ा संपूर्ण दल और सूरबीरों के सहित चंपक पुरी मे आय प्राप्त भया तहां धरम मे प्रबीन और धीरज मे अचल सरब गुणों का धाम हंस धुज नाम कर के राजा था तिस के दूत ने ततकाल ही आय कर तिस को कहा कि हे राजन धरम भूप जो राजा जुधिष्ठर है तिस ने अस्वमेध यग्य किया है सो तिस का घोड़ा बड़े अखंड दल के सहित तेरे नगर मे आया है और प्रद्युमन अरजुन इत्यादि और अनन्त सूरबीर [illegible] बड़ी सज धज से साथ आये हुये हैं मैने तुमारे को खबर जणाय दई है आगे जैसी चित्त को भावती है सो करो इस प्रकार दूत के बचन सुन कर राजा हंस धुज जो है सो [illegible] परम हरष को प्राप्त होता भया और ततकाल अपने मंत्री और सेनापतियों को बुलाय कर कहने लगा कि भैया इनका हमारे नगर

मे आना विधाता ने हमको बड़ाही लाभ दिया है क्योंकि
मुकुंद भगवान के पूर्ण प्रेम का पात्र राजा जो युधिष्ठिर जगत में
गायन किया हुआ है तिसने अश्वमेध का प्रारंभ किया
और चतुरंगनी सेना साथ दे कर घोड़ा छोड़ा है तिस सेना के
सरदार कृष्णपुत्र प्रद्युमन और अरजुन इनतें लेकर और
भी महाराज के आनंदाश्र बड़े हुल्लास में आय हुये हैं तातें
अब योग्य है कि तिस घोड़े को बांध कर तिनके साथ यु
द्ध करो और रण में सनमुख जूझ कर भगवान
के दासों का सुंदर पद जो है सो सहजे ही प्रापत
कर लेवो और तुमने इह निश्चय कर के जान लेना कि जहां
अरजुन और प्रद्युमन इत्यादि वीरधीर शोभायमान हों तहां
दीनों के दुख हरने वाले और भक्तजनों पर कृपा करने वाले ज
दुनाथजी महाराज साक्षात आप हीं हैं इसमें कुछ संशय न
हीं है जानो कि इसी बहाने से हमको भगवान का दुर्लभ
दरसन ~~जानो~~ संपूर्ण दल के सहित नेत्र भरभरकर प्रा
पत भया है हे भाई मैंने अपना सब जनम वृथाहीं गवा
या है इह जो ब्रह्मणा पृथवी देवताउं के रखवारे और मुनी
जनों के मनको मोहित करनेहारे सुंदर स्याम मचवत
शरीर की शोभा वाले भगवान कबी दरसे ही नहीं हैं आ
ज भागों की बड़ी बड़ाई है जो भगवान के दासों को रणमें
रिझाय करके अपने सब समाज के सहित कृतार्थ हो
ता है और भगवान के दासों का सुंदर पद जो है सोई प्राप
त करता है॥२॥ चौपाई॥ सेनप सचिव पुत्र पुरवासी॥ रहे
सकल हरि दरसन आसी॥ सुनत हंसधज वचन सुहाये॥
निज निज हृदय सकल हरषाये॥ भनत नाथ हरिदास
न केरी॥ हमरे दरसन प्रीति घनेरी॥ इह अवसर सकल
सुखदाई॥ नाथ निसंक निसान बजाई॥ चमु समेत
भरबीरन काही॥ आयस देहु वदन नर साईं॥
राऊ सुनत मानस हरषाये॥ सजन सैनहित सुभट
बुलाये॥ करहु वेग जन समर तयारी॥ कृष्ण सरो

जे चरन उरधारी॥ राऊ रजाय सीस सब राखे॥ ते सब बी
र समर अभिलाखे॥ रथ मातुंग मत्त रण गाजे॥ वाह
न इमत आन भट साजे॥ अगनित प्रबल पदाति स
वारा॥ चतुरंगनि चमु चढी अपारा॥ मुदगर सक्ति
सूल असि पासा॥ कवच कृपान प्राण रिपु नासा॥
धारे धनुष तूण कटि सूरे॥ बीरप्रधान समर बलपू
रे॥ अस जब सेन सुभट सजि आये॥ तब नदेस अ
स भूप अलाये॥ एक नारि ब्रत जे हरि दासा॥ जाके कृ
ष्ण चरन विस्वासा॥ दोहा॥ ते आवहिं रण धरमिधु
व बांधि बिरद निज बीर॥ हरिदासन सन समर ल
रि लेहिं अमर पद धीर॥२॥ टीका॥ तब राजा हंसधुज
के सेनापती मंत्री पुत्र और पुरवासी इह सब
भगवान के दरसन की आसा वालेथे जब तिन्हों ने
हंसधुज के मुखसे बचन सुने सब अपने अपने हृद
यमें बडा हरष मानते भये कहने लगे कि हे नाथ भ
गवान के दासों के दरसन करनेकी हमारे हृदयमे
अत्यंत ही लालसा है इस समय सरब सुखोंके देनेवा
ला है अब निसंक होकर रणमे जूझने वाजयों की ओ
र सब सूरबीरों के जूझनेकी आज्ञा दीजिये तब राजा
सुन करके बडे हरष को प्रापत भया और सब सूरबीरों
को बुलाय कर कहने लगा कि भाई कृष्ण प्रमातमाके
चरन कमल हृदयमे धार कर रणकी शीघ्र त्यारीकरो
इसप्रकार राजाकी आज्ञा पायकर वैसे बीर जो है सो
रणकी अभिलाखा वाले होकर मातुंग जो उ
न मत्त हस्ती और नाना प्रकार के इमत वा
हन कि जिनकी मिती नहीं पदाती जो प्यादे और सवार
ऐसे महाप्रवल चतुरंगनी सेना को सजाय कर और
शक्ती जो बरछी शूल जो त्रिशूल असी जो
तलवार पास जो फासी कवच जो संजो
इत्यादी मुदगर कृपान जो है शत्रूके प्रा

और धनुषवाण

अथ सुरथ और सुधन्वा चरित

दोहा॥ अघ मन हरन प्रमोदप्रद कृष्ण चरन रति कारि॥
बरन हे कथा पुनीत सुभ सुजस भरन भ्रम हारि॥ सुरथ सु
धन्वा भूप जग जिमि निज भगति प्रभाव॥ मुनि जोगिन दुर
लभ अमल लीन मुकति पद पाव॥ चौपाई॥ अवसर एक जु
धिष्टर राई॥ कीन्यो बाजि मेध मख आई॥ आयो विधि जु
त पूजि तुरंगा॥ चले महान सुभट तहि संगा॥ इंद्र सुवन
सुवन प्रद्युमन सुहाये॥ आन महारथी वीर निकाये॥
अभिलाखत रण राजिन संगा॥ भ्रमत देस देसन सतुरंगा॥
आवा चंपक पुरी रसाला॥ पारथ जुत दल सुभट विसाला॥
तहां नरेस हंसधज नामा॥ धरम प्रवीन धीर ध्रुव रामा॥
तासु दूत द्रुत आय अलावा॥ सुनहु वृतांत नवल नृप
भावा॥ करत अहै विधि संजुत आला॥ असुमेध मख
धरम भुवाला॥ दल अपार जुत तास तुरंगा॥ आवा तुमरे
नगर निसंगा॥ भट प्रद्युमन पारथ संग राजे॥ और हु
सुमत सूर छवि छाजे॥ मे कीन्यो परिचित नृप तोही॥
अब कीजे मनभावति जोही॥ दूत वचन अस सुनत
सुहाये॥ भूप हंसधज हरख अघाये॥ दोहा॥ बोलि बेग
भट सचिवजन उर विचारि अस कीन॥ इन आगमन
हमरे नगर विपुल लाभ विधि दीन॥ सवैया॥ पूरण प्रे
म मुकुंद को भाजन भूप जुधिष्ठर संस्तुति गाये॥ तहि
अस्वमेध आरंभ कियो कल छांडि तुरंग चमू चतुं ला
ये॥ पुत्र प्रद्युमन अर्जुन और हु संग सुदास हु
लास सों आये॥ बांधि तुरंग करो रणदार सुदास सुरार
लेवो पद पाये॥ रोड़ा छंद॥ जहां अर्जुन वीर सुभट
प्रद्युमन सुहाये॥ अहै तहां जदुनाथ हरन दीनन
कायें॥ एहि व्याज जदुराज दरस दुरलभ जग जेहू॥
भरि भरि लोचन लेहु सदल जुत सुभट सनेहू॥

सुवल सुधन्वो और सुरथ प्रसिद्ध थे इन्ह पांचो अत्यंत
बली और सव सेना के सरदार रण मे जुद्ध करने की अ
भिलाखा वाले थे जव इन्ह रण को चले तव तिन की स्त्री
जो हैं सो देखकर वडे हरष को प्रापत होती भई और एक
दूसरी को परस्पर कहती हैं कि हे सखी तुमारे अधरों
पर अर्थात होठों पर स्यामता छाय गई है इस तें तुमारे
पती के हृदय की कदराई अर्थात् कायरताई सी जानी जाती
है और वे तिस को उत्तर देती है कि हे सखी मेरे पती की
कोई कायरताई नहीं है मैने पती का रण मे जदुनाथ के हाथ से
मरना विचार कर तिस घनस्याम भगवान का सुमरण जो
किया तो हे सखी सोई स्यामता मेरे अधरों पर प्रकट आ
य कर छाय गई है पती वीर धीर तो जदुवीर महाराज के
इष्ठ सेवक कवी कायर होने वाले नहीं हैं ॥३॥ चौपाई ॥
अस प्रकार वधु वीर सयानी ॥ हरषत मनत अनेक न वा
नी ॥ भूप हंस धुज सीस सुहावा ॥ चलै छत्र चांवर म
न भावा ॥ लागे वहु विधि वाजन वाजी ॥ छयो संख धुनि
गगन दराजा ॥ सैनप सुभट इमत दल साजे ॥ नगर
वहिर सव आय विराजे ॥ तव प्रण रोपि हंस धुज राई ॥
सुनहु सुभट अस मन्यो रिसाई ॥ मम सासन मानव न
हीं जोई ॥ तिन कहे सुनहु देउ अस होई ॥ संख लिखत
अव रोहित मेरे ॥ रहे जुगल पाछिल तुव हेरे ॥ तिन कर
पूर्व वृत्तांत विचारी ॥ करहु कथन कछु समय निहारी ॥
संख विरच्यो एक आरामा ॥ सुमन द्रुमन छवि छयो लि
लामा ॥ तामध लिखत गये इक काला ॥ वदरी फल द्रुग
देखि रसाला ॥ खाये तुरत तोरि लखि पाके ॥ पाछे उप
ज ज्ञान जीय ताके ॥ विनु पूछे फल किये अहारा ॥
अहो विपुल अपराध हमारा ॥ जो मैं याको दंड कदा
ई ॥ उहितन मे नहिं लीनस्सि पाई ॥ तो सुर पुर गवने
मोहि काही ॥ कैहै दुरगति संशय नाहीं ॥ संसारहु सु
ख सपन न मोही ॥ अस विचारि निज मानस सो ही

दोहा॥ गये तुरत निज वीर ढिग कह्यो वदन अनुरात॥
भयो पाप मोहि तें विपुल भ्रात मन्यो नहीं जात॥४॥टीका॥
इस प्रकार बड़ी चतुर वीरों की स्त्री जो हैं सो आनंद से प
रस्पर अनेक चतुराई की बातें करती हैं और तहां राजा हं
सधुज के सीस पर बड़ा शोभायमान छत्र और चमर झूल
ता और बाजे भी अनेक प्रकार के बाजते हैं शंखों की नाना
धुनी जो है तिस कर के आकाश परिपूर्ण हो रहा है सेनापती
मंत्री और सूरवीर नाना दल को सजाय कर के नगर के
बाहर आय कर के स्थित हो जाते भये तब राजा हंसधुज प्र
ण प्रतिज्ञा कर के बड़े कोप से कहने लगा कि मेरी वार्ता
को सब सूर वीर कान देकर सुनो : मेरी जो आज्ञा है तिस
कौं कोई उलंघन करेगा सो ऐसा दंड पावेगा कि संख और
लिखत दोनो भ्राता मेरे अपरोहित जो हैं तिन को मैं पीछे
छोड़ चला हूं॥ तिन की पूर्व ली गाथा कि संखने
एक बड़ा सुंदर बगीचा बनाया सो सुंदर हीं बृक्षों और पु
ष्पो कर के बड़ा शोभायमान था एक दिन तिस के बीच
संख की भ्राता लिखत जो था सो चला जाता भया त
हां तिस ने बदरी फल किं जिन को बेर कहते हैं पाके हु
ये देख कर तोड़े और खाय लिये तब पीछे तिस को
ज्ञान उपजता भया कि बड़े लो मैने विना पूछे ही इन
बेरों को खाय लिया है इह मेरा बड़ा अपराध है जो मैने
कदी इसी शरीर मे इह दंड नहीं पाय लिया तो आगे पर
लोक मे जाय कर क्या जाने मेरी कैसी दुरदशा होगी॥
और इहां लोक मे भी मेरे को सुख नहीं होगा ऐसे अ
पने हृदय मे विचार कर तुरत अपने संख नामा भ्राता
के पास बड़ी व्याकुलता से जाय कर कहने लगा कि
हे भ्राता मेरे से बड़ा पाप हो गया है कि जो मै कहि नहीं
सकता हूं॥ चौपाई॥ तो कर दंड अबहिं तुव देहैं
नातो टरन अगाम अगएह॥ किये विचार संख मनमाहि॥

(margin, left) ऐसे दंड को पावेगा कि जैसे संख ने लिखत को दंड दिया था

(margin, right) कुलिषि॥ मेरेपुरोहित॥

याकी गती दंडविनु नाहीं॥ पै इह दंड देन नरनाह॥ उचित मोर अधिकार नराहा॥ अस कहि छित पति सरण सिधारे॥ जुगल भ्रात निज विथा उचारे॥ भन्यो भूप पंडित तुम दोई॥ यामे जस न देस तुव होई॥ सो मोहि करन उचित सुइ कारा॥ तुव प्रवीन पण वेद विचारा॥ तव बोल्यो अस संख प्रवीना॥ होहिं वीर मम करन वहीना॥ दुज कर जुगल पानि महि पाला॥ दीन कटाय तुरत तहि काला॥ लखि श्रा लवध भोग जुग वीरा॥ करन कटन कछु मानि न पीरा॥ अस तिन कर दृढ धरम निहारी॥ भा प्रसन्न मन भूपति भारी॥ संख लिखत कहे निकट बुलाई॥ भूप वदन अस गिरा अलाई॥ पूरि मही इक तैल कराहू॥ बैठहु नगर वहिर तुव जाहू॥ दोहा॥ अनल चंड ता कर तरे तुव दुत देहु जराय॥ चुरत तैल जव अरुन अति होहिं अनल वत आय॥ तव जे वे मुख समर ते होहिं समर कटराय॥ तपत तैल दुत तासु तुम करहु सुसम जराय॥ टीका॥ लिखत अपने संख नाम भ्राताको कहताहै कि इस मेरे अपराध का दंड तुम अवहीं देवो नहीं तो इह पापछूटना वडा कठिन है तव संखने भी विचार किया कि इसकी दंडके विना कोई गती नहीं है परन्तु इह दंड देना राजा को योग्य है मेरा अधिकार नहीं है अैसे विचार करके दोनो भ्राता राजा के पास जाय कर सव विथा सुनाय देते भये तव राजा कहने लगा कि तुम आप दोनो वडे चतुर हो जैसे योग्य है तैसे कहिहो मैं सोई करोगा अैसे राजा का वचन सुनकर संख कहने लगा कि इसका दंड इहहै जो मेरे भ्राताके हाथ कटाये जावें तव राजा ने सुनते ही तिस व्रह्मण के दोनो हाथ कटाय डाले सो विचार मान व्रह्मण अपना

पंडित वेद के जानवेवारे

२६

रोगो का नास करने वाले हैं धारन किये हूये सज स
जाय करके चले आवते भये इस प्रकार जब सब सूर
वीर सेनाके सहित तयार होकरके चले आये तब देख
कर राजा आज्ञा देता भया कि सुनो भाई जो कोई एकनारी
के व्रत वाला भगवानका भक्त है और जिस को केवल कृस्न
भगवानके चरनोका हीं भरोसा है सो अपनी सक्ति और सा
मर्थ के अनुसार रण भूमिकामे चला आवे और तहां भ
गवानके दासों से सनमुख जूझकर सुंदर अभय और
अखंड पद जो है सो प्रापत कर लेवे ॥२॥ चौपाई ॥ हरिदास
न बिनु आन न कोई ॥ हरिदासन रण सनमुख होई ॥ नृ
पति सैन अस काहु न हेरा ॥ जो न होहिं हरिदास घनेरा ॥
विधिवत दान होम करि सारे ॥ उर्ध्व पुण्ड्र दै तिलक लिला
रे ॥ पहिरि पहिरि तुलसी कल माला ॥ सजे सुभट वर
वीर विसाला ॥ पोच पुत्र भूपति अभिरामा ॥ करहु कथ
न तिन कर अब नामा ॥ ससि केतु ससिसेन प्रवीरा ॥ सु
बल सुधन्वा सुरथ सधीरा ॥ इह बलि सुभट सैन सरदा
रा ॥ अभिलाषत रण राज कुमारा ॥ समर गमन तिन
कर तीय देखी ॥ मानि हरष निज हृदय बसेखी ॥ दोहा ॥
भये अधर तब स्याम सखी भनत परस्पर बात ॥ तुव
पति होय कदराई तुव अधरन प्रकट जणात ॥ तास
कह्यो सखि कादरी मोरे पतिकी नाहिं ॥ पति हत गुनि
हरि करन मे सुमस्यो जदुपति काहिं ॥ सोऊ स्याम ता
अधर मम रही प्रकट सखि छाय ॥ वीर धीर जदुवीर जन
पति न कबहु कदराय ॥३॥ टीका ॥ फिर राजा कहता है कि
भाई हरि दासों के विना हरी दासो के सनमुख और कोई
नहीं होवे तब राजाके दलमे ऐसा कोई नहीं जो भगवान
का दृढ सेवक नहीं था सब कोई विधीवत दान होम करके
और रामो ने दी तिलक मस्तक मे देकर सुंदर तुलसी की
माला हृदयमे पहिर पहिर कर वीर प्रधान जो हैं सो स
ज सजाय कर त्यार हो जाते भये तब राजाके महावीर
पोच पुत्र कि जिनके नाम ससीकेतू ससीसेने

तेले का भरा हूआ कड़ाह तपाय लेते भये उहां और सब
सूरवीर जो थे सो सब राजा के साथ रण को चले गये
और राजा का छोटा पुत्र सुधन्वा नाम करके जो था सो
कृस्न भगवान का दृढ सेवक और वीर प्रधान सब लोगों मे
विदत सुधन्वा नाम करके जो था सो तैजस जाय करके
माता के पास आज्ञा लेने को चला जाता भया तहां जाय कर
माता के चरनो पर सीस धरकर विनती करने लगा कि हे कृ
पावती जननी मै अब रण को चला हूं तूं प्रसन्न होकर
मेरे को आसीसा दे जो मै रण मै सनमुख जूझकर सुंदर
जस को प्रापत करूं क्योंकि तहां रण मै कृस्न भगवान
का प्यारा पुत्र प्रद्युमन और तैसे ही महां वीर भगवान का
प्यारा अर्जुन बडे बडे सूरवीर और चतुरंगनी से
ना को लेकर यज्ञ से वंधी घोरे के साथ आये हुये हैं
सो आज मै तिन भगवान के दासों के दरसन से नेत्रों को
सफल करके और तिन को भली प्रकार रण मै रिझाय क
रके अपने मन वांछित फल को सहजे ही पावता हूं औ
र अभय होता हूं हे माता भगवान के दासों के दरस
न तें अधिक संसार मै और कोई लाभ नहीं है जिस
पुरष के हृदय मै दृढ विस्वास होवे तिस को हरी के
दासों का दरसन होना साक्षात हरी का ही दरसन है
इस प्रकार पुत्र के वचन सुन कर माता बडे आनंद से
कहने लगी॥ कि हे पुत्र हरस से शीघ्र जावो और भग
वान के दासों को रण मे भली प्रकार प्रसन्न करके प्र
द्युमन अरजुन इत्यादि और सब वीरधीरों को घर
मे ले आवो और मेरे को दरसन करावो॥२॥
चौपाई॥ जो तुम जूझि समर सुत जैहौ॥ तौ सुचि मुक्ति
सुजस जग लैहौ॥ जियत रहहु तब हरि कहे
चेले पावहु॥ मोहि समेत सुत धन्य कहावहु॥
सब विधि तात तुमार भलाई॥ करहु समर ध्रुव सनमु

खे जाई॥ धन्य सो जननि जगति तलचारू॥ जासु पुत्र महि समर जुझारू॥ अरु रण विमुख जासु सुत होई॥ भली बांझ जननी जग सोई॥ सुनत सुधन्वैं गिरा उचारी॥ तुव आसिष प्रसाद महतारी॥ होंहूं नविमुख कवहुं महि रंगा॥ लरहूं समर हरिदासन संगा॥ अस कहि बंदि चरननिजमाता॥ तृय पें गयो भूरि मुद गाता॥ मांग्यो तहितें विदा उचारी॥ देहु रजायस रण कहं प्यारी॥ हरषि वदन त्रीय वचन बखाना॥ मोहि सम आज न संसृति आना॥ जहिपतिजदुपति शरण विचारी॥ चल्यो करन सनमुख रण रारी॥ जाहु प्राणपति विलम नकीजे॥ श्री जदुवीर दरस दृग लीजे॥ दोहा॥ पैरति दोन सुजान पति रहि अवसर देमोहित्ति बहुरि जाहु रण धरनि द्रुत तुव विशुद्ध वपुहोहि॥ १॥ टीका॥ फिर माता कहती है कि हे पुत्र जो तुम रणमें जूझ जावोगे तो सुंदर मुक्ती और सुंदरही जशको प्रापत करोगे॥ और जो जीते रहे तो भगवान कृपानिधान को पावोगे॥ आपभी धन्य होवोगे और मेरे कोभी धन्य धन्य करोगे हे पुत्र तुमारी सरवप्रकार करके भलाई हीं होवेगी जावो रणमे सनमुख सावधान होकर युद्ध करो सोजननी जगतमे धन्य है कि जिसका पुत्र रणभूमीमे सनमुख जूझेगा॥ और जिसका पुत्र रणसे विमुख होगा सो जननी अर्थात माता जगतमे बांझ हीं भली है ऐसे माताका सुखदायक वचन सुनकर सुधन्वा कहने लगा कि हे जननी तेरा आसीरवाद पायकर तेरी कृपासे मे रणमे कवी विमुख नही होऊंगा भगवानके दासोसे दासभाव करके सनमुख छाती जोडकर लडूंगा इसप्रकार कहिकर और माताके चरनोपर वारवार प्रणाम करके फिर आनंद पूर्वक अपनी स्त्रीके पास चला जाता भया और तिससे जाय करके विदाय मांगने लगा कि हे प्यारी अवतूं प्रसन्न होकर मेरे को रणमे जानेकी आज्ञा

दे तब तिसकी स्त्री बडे हरषसे कहने लगी कि मेरे समान
बडभागी संसारमे दूसरा कोई नहीं है कि जिसका पती
जदुनाथ महाराज की शरण विचारकर रणमे सनमुख जुद्ध
करने को चला है ऐसे कहिकर फिर कहने लगी कि हे प्राण
पती अब जावो देर ना लगावो तहां जायकर भगवा
न का और भगवानके दासों का दरसन पावो परन्तु प्राणना
थ मेरी प्रार्थना है कि अब समय है मेरे को रति दान दे
जावो फिर ततकाल ही शुद्ध होय जुद्ध करनेको रणमै च
ले जावो॥ १॥ चौपाई॥ तब भामनि कहे दे रति दाना॥ करि स
नान आयुध पहिराना॥ हरि हर सुमरि बहुरि सुतराई॥ गव
न्यो रथ चढि सेल बजाई॥ भई तासु जब बिलम महा
हीं॥ मेटत भवन न जननि जीय काहीं॥ उत तकिसै नहे
सधुज टेरा॥ कहो सुधन्वो नाहिन हेरा॥ आये सकल वी
र मोहि सेगा॥ रह्यो सु भवन उरत महि रंगा॥ अबहिं जा
हि द्रुत जमन सिधाते॥ लावहि तासु बांधि रिसराते॥ राज
सु वन गुनि जनि तजि आवहिं॥ नातो कठिन देउ मम
पावहिं॥ सुनि नदेस नृप द्रुत चोडला॥ चले करन ग
हि खरग कराला॥ आवत डगर सुधन्वो पायो॥ नृप सा
सन तिन तासु सुनायो॥ सुनत सुधन्वा वेग सिधायो॥
आय जनक चरनन सिर नावा॥ भन्यो नृप तब बचन
कठोरा॥ अरे मंद तुव सुत नहिं मोरा॥ जो रणतें कद
राय अभागी॥ रह्यो सि सदने वीरता त्यागी॥ दोहा॥
भन्यो सुधन्वो बचन तब जोरि जुगल निज हाथ॥
जाहि हित मे काढिल रह्यो सुनहु गाथ नरनाथ॥ वि
दा लेन निज जननि पें गयो भवन दुहदीन॥ याते भई
बिलंब कछु जानि न अनुचित कीन॥ ८॥ टीका॥ तब
सुधन्वा ने स्त्री के कहने को विचार करके कि जो ऐसे
नहीं करता तो दोष लगता है तिसको तुरत ही र
ती दान देकर फिर सनान करके शस्त्र वस्त्र सजा
य कर हरी हर भगवान का सुमरण करता हुआ

प्राणवध भोग जानकर हाथोंके कटे जानेकी कुछ पीड़ा नहीं मानते भये इसप्रकारतिंका दृढधरम देखकर रा जावड़ा प्रसन्न होगया इसीतेतिनको धरममे प्रवीन जानकर तहां रणके समय निकट बुलाय कर कहने लगा कि हे संख लिखत पुरोहित तुम एक तेलका कड़ाह पूर करके नगर के बाहिर बैठरहो जब सो तेल तप करके अगनी समान दाध करने वाला होजावे तब जो सुभट वीर रणसे बेमुख और कायर होजावे तुमतिसको त तकाल पकड़ कर तिस तपे हुये तेलमे डालकर जलाय देवो॥५॥ चौपाई॥ संख लिखते नृप आयस लीन्यो॥ तेल कराह तपत द्रुत कीन्यो॥ और वीर नृप संगसिधा दे॥ सुमरत श्री वसुदेव दुलारे॥ लघुसुत भूप सुधन्वा जोई॥ समर सुभट जानत सब कोई॥ कृस्न सरोज चरन दृढ दासा॥ उर उतसाद समर नित जासा॥ सज सजाय र ण हेतु प्रवीरा॥ मातु समीप गयो मति धीरा॥ वंदि चरन मृदु गिरा अलाई॥ मै अब चल्यो धरणि रण माई॥ तुव प्रसन्न मन आसिख देहो॥ अभिमुख लरहु समर जस लेहो॥ हरिसुत प्रीये प्रद्युमन सुजाना॥ तसहिं सुहृद पारथ प्रद माना॥ आये सख तुरंग कर संगा॥ लेजुत सु भट सैन चतुरंगा॥ हरिदासन कहे नैनन देखी॥ अहर काय रण धरन बसेखी॥ अभिमत फल सहजहिं सुख दाई॥ लेख मातु भव भीति बिहाई॥ हरिजन दरसन ते जग माही॥ बयो लाभ जननी कोउ नाहीं॥ जोकर हृदय मातु बिलासा॥ हरि सरूप दरसन हरिदासा॥ दोहा॥ मन्यो मातु द्रुत जाहु सुत मोद प्रमोद समेत॥ रणतो षत करि हरिहिं तुव ल्यावहु रुचिर निकेत॥ पारथ जुत प्रद्युमन सब और हु हरि जन काहिं॥ मोहि दर सावहु सुवन तुव आनि सदन निज माहिं॥६॥ टीका॥ तब संख और लिखत राजा की आज्ञा पाय कर

ओर लिखतकेनी वे आगजलायकर

न्यो इह सुत जोई॥ रह्यो सदन रण कादर होई॥ सब ते पाछिल मोहिपें आवा॥ याको ईस दंड कस गावा॥ जथा उचित तुव देहु विचारी॥ विप्र दंड याको अति भारी॥ संख लिखित तुव भूपति पासा॥ पठे दूत अस वचन प्रकासा॥ तुव न देस वस तैल कराहू॥ कीन्यो तपत अनल वत दाहू॥ कादर समर विमुख नर का हीं॥ जो अब पुत्र पक्ष अस होई॥ करहु भंग प्रण आपन सोई॥ तो हम तजब देस तुव राई॥ पाछे करहु जवन मन भाई॥ हंस केतु ढिग दूतन जाई॥ दयो परो हित कथन सुनाई॥ दोहा॥ तब नरेस निज सचिव सुचि बोलि निकट समुझाय॥ करहु हनन इहि सुत हिं तुव जन न मोर प्रण जाय॥ ८॥ टीका॥ तब हंस धुज राजा ने अपने दो दूत संख और लिखित के पास भेज दिये तिन दूतों ने ~~जाय कर~~ तिन के पास जाय कर और निर से क होकर राजा का कथन सब सुनाय दिया कि सेनापती मेंत्री और सब सूरवीर रण मै जुद्ध करने के निमित्त ह मारे साथ आये और इह भीरू अर्थात ″डरनेवाला″ डरने वाला सुध मेरा पुत्र सुधन्वो जो है सो रण से कायर होकर घ र मै बैठ रहा और ~~सब के~~ बहुत चिर वतीत कर के सब के पीछे मेरे पास आया है तातें इह बड़ा अपरा धी है ″″ शास्त्र की विधी अनुसार ~~इसको~~ जो दंड होता है सो देवो तब संख लिखित ने सुन कर अपना दूत रा जा के पास भेज कर कहा कि हे राजन तुमारी आज्ञा है ″ तेल का कड़ाह तपाय राखो जो कोई रण से विमुख होगा तिस को तुरत हीं तिस मे डाल कर भ सम कर देवो सो अब तुमारा ही पुत्र रण से विमुख भ या है जो कदी पुत्र पक्ष कर के तिस की रक्षा करनी चाहोगे और हमारे प्रण को भंगन करोगे तो हम तुमारे देस को त्याग जावेंगे पीछे तुमारी जो इच्छा हो सो करना तब दूत ने हंस धज राजा के पास जा य कर अपने हितों का कथन सब सुनाय दिया

″सुधन्वा व्याकुल तहि माहीं″

इसको

पक्षि

राजाने सुनते ही मंत्री जो वजीर था तिसको निकट बुलायकर आज्ञा देदई कि जाते हीं इस मेरे पुत्र को जाते लके कहते है मै जलायकरके मारदेवो जिसमे मेरे प्रजाकी हानी ना होवे ॥९॥ चौपाई ॥ मंत्री नृप सुत लियो हंकारी ॥ संखलिखत पहं चल्यो सिधारी ॥ मारग भनत सुनहु सुतराई ॥ अहो देव गति लख्यो न जाई ॥ इह तुम्हार दृग दसा विलोकी ॥ उपज मोहि दुख जनहु त्रिलोकी ॥ छूटत आज न काय अभागी ॥ जो इह चल्यो हनन तुव लागी ॥ मोरे प्रभु कर तुव सुत प्यारे ॥ कहि प्रकार अब हनहु तुमारे ॥ जो न करहुं कुर सासन स्वामी ॥ तो मै होहुं नरक पथ गामी ॥ लोक प्रलोक जुगल इह मोरे ॥ बिगरहि किये हनन बिनु तोरे ॥ सुनि ब्रत सुनि वच सचिव सुधन्वा ॥ मन्यो वदन उर पूरि प्रसन्वा ॥ सकुच सोच तजि सचिव उदारे ॥ पितु नदेस जस दीन तुम्हारे ॥ करहु सपुर निज धरम बिचारी ॥ सचिव होहिं कल्यान तुम्हारे ॥ इहि विधि भनत परस्पर दोऊ ॥ आये संखलिखत ढिग सोऊ ॥ तिनहुं देखि दृग राजकुमारो ॥ महो कोपि मुख वचन उचारो ॥ दोहा ॥ पावन छत्री वंस तुव जनम्यों भूपति गेह ॥ होत विमुख रनतें अधम अपकीरति जगलेहु ॥ अतप ग्राम संग्राम तुव सहो न सठ कदराय ॥ तपत तेल अब जरहु तोहि मरहु मंद दुख पाय ॥१०॥ टीका ॥ मंत्रीने राजाकी आज्ञा पायकर तुरतहीं सुधन्वा को वुलायलिया और संखलिखत के पास लै ~~[illegible]~~ चला रसतेमै कहताहै कि हे राजकुमार ~~विधाता की [illegible]~~ देव गती अपार है कुछ लखी नहीं जाती इह तुमारी दशा देखकरके मेरेको मानो त्रिलोकीका दुख आय प्रापत भयाहै इह मेरा अभागी शरीर क्यों नहीं छूट जाता जो तुमारे वध करने को चलाहै तुम मेरे प्रभू के प्यारे पुत्र हो वडा अनर्थ मै तुमको कैसे मारूं और जो कदी स्वामी की पूरी ना करूं तो नरकका अ

॰आगो

२२४

114

धिकारी होताहै ‍ इदोनो ओर से बडी कठिन वारता बनी है जो तुम को नहीं मारता तो मेरा लोप्रलोक विगर जाताहै ओर जो मारताहू तो स्वामी घात के पाप की शंका होतीहै इसप्रकार मंत्री का ~~सुवचन धरम~~ दृढ व्रत ओर सुधरम देख करके सुधन्वा बड़ा प्रसन्न होतामया ओर कहने लगा कि प्रवीन मंत्री अब तुम शंको के सकोच सब त्याग देवो ओर अपने धरम को पालो पिताने तुमको जैसी आज्ञा दई है ~~सई~~ तैसी ही पूरन करो इसमे तुमारी सुंदर कल्यान होवेगी ऐसे परस्पर दोनो वातालाप करते हूये संख लिखत अप रोहितों के पास आय प्रापत भये तब ~~वि~~ सो ब्रह्मण राजा के पुत्र को देख कर महा कोप से कांपते हूये कहने लगे कि हे अधम तूने बडे पवित्र क्षत्री वंस मै राजा के घर विखें जनम लिया ओर रण मे विमुख होकर संसार मे ~~कैसा~~ अपजस को प्रापत किया ~~ऐसा~~ अरे जड जुध के धूप घाम को तो तूने कायर होकर नही सहा परन्तु अब ~~इस महा तपन~~ देख कि मंद तेरे को इस महा तपे हुये तेल मे कैसे जलाते हैं ओर कैसे दुख पाय पाय कर म~~ार~~ रताहैं ॥१०५ चौपाई॥ हरखि सुधन्वा वचन उचारा॥ करहु विप्रवर जो तोहि भावा॥ मै तो अभय अचल मन माहीं॥ रण ते भयो विमुख कछु नाहीं॥ मम कदराई वीरता जोई॥ जानत हैं भेद भेदन सोई॥ घट घट की प्रभु जानन हारे॥ भक्तन के जग राखन वारे॥ सुनि अस उग्र वचन सुत राई॥ बोले संख लिखत रिस काई॥ मंद करम निज जे तुम कीना॥ तास लेहु फल अब हि नवीना॥ अस कहि कोपि परोहित पापी॥ राजकुवर कहे कादर थापी॥ भन्यो सचिव सन अब धरि एहा॥ डारहु द्रुत तुव तपत सनेहा॥ पकरत सचिव सुधन्वा काहीं॥ सकुच विचार कियो कछु नाहीं॥ सायुध संजुत वसन अभरना॥ डारन चले तेल तप तरना॥

ग्रौर संख बजावता हुग्रा रथपर सवार होकरके च
ल पड़ा इस प्रकार जब माता से ग्रौर स्त्री से भेटते भे
टते तिसको बहुत बेर होगई तब उन्हो सब सेना ग्रौर
सूरबीरों को देखकर राजा कहने लगा कि सुधन्वा क
हां है सो नहीं देख पड़ता सब वीर धीर मेरे साथ ग्राये हू
ये हैं वे रण से डरकर ग्रौर कायर होकर घर में लुक रहा
है ग्रबी यमन चांडाल जो हैं सो जायकर तिसको बांध
लावें मत राजकुमार जानकर शोका करें ग्रौर तिस
को छोड़ ग्रावें तब तो वे मेरे हाथ से बड़ा कठिन दंड पा
वेंगे ग्रैसे जब राजा की ग्राज्ञा भई तब चांडाल जो हैं
सो हाथों तलवारें धार कर मार मार करते चल पड़े तहां
तिन्हों ने सुधन्वा को रसते में ग्रावते पाया ग्रौर राजा
की ग्राज्ञा सब स्पष्ट करके सुनाय तब सुधन्वा सु
नतेही बड़ीउतावल से धाय कर ग्रौर ग्राय कर पिता
के चरनोपर शीस नावता भया तब राजा देखकर बड़ी
कठोर बानी से कहने लगा कि ग्ररे मंद तू मेरा पुत्र
नहीं है कि जो वीरता को त्याग कर ग्रौर कायर होकर
घर में छिप रहा है ग्रैसे पिता के मुख से निरादर के
बचन ~~सुन सुधन्वा~~ जानकर सुधन्वो नम्र बानी से हा
थ जोड़ कर बिनती करने लगा कि हे नाथ मैं जिसका
रण से पीछे रहा हूं सो ग्राप कृपा करके सुनिये
जब सब सेना के सहित सरबीर सज सजाय करके नि
कले थे मैं भी तिनके साथ ही निकला परन्तु र
सते से फिर कर विदाय लेने के वास्ते माता के भवन
में चलागिया तहां ही कृपानिधान मेरे को कुछ बेर
लग गई है कुछ जान बूझ कर ग्रपराध नहीं किया
है ॥८॥ चौपाई ॥ तब जुग दूत हंसधजराये ॥ सेवलिखित
पें वेग पठाये ॥ दूतन जाय नरेस बखाना ॥ मन्यो स
कल कछु सकुच नमाना ॥ सैनप सुवन मंत्रि
भट सारे ॥ ग्राय समर हित संग हमारे ॥ भीरु सुध

११८

निरलज्ज को पकड़कर तपे हूये तेल के बीच डार क्यों नहीं देते अब क्या विलेम है तंत्री और दूत के साथ के पुरषों ने ~~तिस~~ ततकाल हीं निरदय होकर सुधन्वा को बांधलिया और भूषण वस्त्रों के समेत ही तिस को तपे हूये तेल में डालने के वासते चले तब तिस समय सो राजापुत्र रण में बड़े प्राक्रम वाला और सूरवीरों में प्रधान धरम की निधी सुधन्वा जो है सो और सबके भरोसे को त्याग कर एक कृष्ण भगवान का सुमरण हीं करने लगा कहता है कि हे देव जबजब गौ ब्राह्मण पृथवी देवताओं को भीर बनती रही तबतब कृपानिधान तुमहीं धीरज देते रहे और जहां प्रल्हाद का दुख निवारण करके ~~तिस को~~ जगत में तुमहीं तिस को सुजस का भाजन भी बनाया गोतम की स्त्री अहल्या जो बहु काल से श्राप के वश शिला बनी हूई थी तुमारे हीं चरन के प्रभाव से तर कर वैकुंठ को चली जाती भई और हे दीनानाथ तुम्हीं ग्राह के हाथ ग्रसे हूये गजराज की पुकार भी तुमहीं सुनी और द्वारिका तें धाय कर ~~तुमहीं~~ तिस के फंदन भी तुमहीं काटे हे भक्तसनेही तुम कैसे हो कि सदैव हीं अपने जनों की सहायता करते रहे हो देखो तब कौरवों की सभा में दुखित होती द्रौपती पत तुमहीं राखी और अजामिल्ल आदि अनेक पापियों को भी तुम ने हीं ~~तारा~~ है तिसी प्रकार हे नाथ मैं अनाथ भी आप की शरण को आश्रय करता हूं क्योंकि मैं जैसा कैसा हूं दीनबंधु तुम भली प्रकार जानते हो जो कदी मैं रण से विमुख और कायर होकर घर में रहा हूं तो यह अगनी वत महा तपत तेल जो है सो मेरे को जलाय कर अभी भसम करदेवे और जो मैं रण से कायर और विमुख नहीं हूं तो यह तपा हुआ तेल मेरे को सीतल

जलके समान होजावै ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ ऐसे कहि तपत तेलमै जाई ॥ कूदि परयो सुभट जदुराई ॥ भरो तेल तहो मनुज प्रमाना ॥ भवकत अनल भीम भय दाना ॥ परयो तहो जब नृप सुत धीरा ॥ पूर्ब स्यो मन है देव हरि नीरा ॥ तपत तेल पावक प्रदजासा ॥ तासु सुखेद सीतल जब भासा ॥ लोक विलोकि भनत विसमाई ॥ इह नृप सुवन भक्त जदुराई ॥ संख लिखत तब कोपित वानी ॥ मनु सचिव अस वदन बखानी ॥ विपुल वेर कर चक्यो सनेहू ॥ रहयो तपत तजि सीतल एहू ॥ याते जरयो न राज कुमारा ॥ यों जानत कछु मंत्र विचारा ॥ सचिव कह्यो नहि तेल जुरानो ॥ तुम कहे दुज सूजयो कछु आना ॥ संख लिखत तब हृदय रिसाई ॥ नारियेर फल लीन मंगाई ॥ तपत तेल महं दीन सिरारा ॥ पर त तुरंत होत जुग फारा ॥ तीव्र वेगसों लेत उछाला ॥ संख लिखतके लग्यो कपाला ॥ फूटि गये जुगल न कर हीसा ॥ परे धरनि द्रुत प्राणन खीसा ॥ देखि सचव अचरज रह भारी ॥ गये हंसध्वज सरण सिधारी ॥ कह्यो वृतांत सकल जस भयऊ ॥ भूप वेग निज सुत पें गयऊ ॥ तुरत तेलतें लियो निकारी ॥ चूमत वदन लेत वलहारी ॥ दोहा ॥ सुभट सुधनें भूप तब कंचिन रथ वैठारि ॥ चल्यो सुद्ध चित जुद्ध हित करि अनेक मनुहारि ॥ २३ ॥ टीका ॥ तब ऐसे कहिकर सुधन्वा जो है सो जदुवीरको सुमरता हूआ तिस तपे हूये तेलमे कूद पडता भया तब सो तेल अत्यंत भय के देने वाला मानुष्य प्रमाण जो कडाहे मे भरा हूआथा तिसमे जब राजाके पुत्र प्रवेश किया तब ऐसे प्रतीत भया कि मानो गंगाके सीतल जलमे जाय पडाहै ऐसे सब लोक देख करके वडे आचर्ज को प्राप्त होगये और कहने लगे कि इह राजाका पुत्र तो भगवान का

116

बडा दृढ भक्ता है तब संख लिखत इह चरित्र देखकर
बडे कोप से मंत्री को कहने लगे कि इह तेल जो है सो
बहुत चिरका चढा हूआ सीतल होरहा है इसते इह
अधम जला नहीं है अथवा कुछ मंत्र जंत्र जानता है
तब मंत्री ने कहा इं तेल सीतल नहीं है तुम ही इसरा
जकुमार के प्रभाव को जानते नहीं हो तुमारे को कुछ
और सूजा है ऐसे इस प्रकार मंत्री के मुख से वचन सु
नकर संख लिखत बडे कोप से दो फल नारियर के मंगा
वते भये ~~सो तब~~ और प्रीक्षा के वास्ते तुरत हीं तिस तपे हू
ये तेल मैं डार देते भये तब सो नारियर तेल मैं पडते ही
दो फाड होकर और तीव्र वेग से उछल कर संख और
लिखत के कपाल मे जाय लगे तिन के लगते ही सिर
फूट कर दोनो मरगये तब मंत्री के सहित सब लोग इ
ह अदभुत देखकर आचर्ज को प्रापत हूये और तैसे हीं
राजा हंसधुज के पास जाय कर सब वृतांत सुनाय देते
भये राजा सुनकर आचर्ज भया हूआ तुरत धाय कर
कोतह पुत्र के पास चला गया तब जाते ही तिस को ते
ल से निकाल कर फिर बारबार मुख चूम चूम कर बलि
हारे होने लगा तिस ते उपरांत तिस की अनेक बडा
ई और लघुताई कर कर बडे सनमान से कंचिन के
रथ पर बिठाय करके शुद्ध चित्त होकर युद्ध के वा
स्ते रण भूमी को लै आवता भया ॥२२॥ चौपाई॥
तब निरदोष कहत सुत साधू॥ छिमहु मोर अनु
चित अपराधू॥ साधु सुधन्वा धरम प्रवीना॥ बोला
पितु हि जोरि कर दीना॥ तुमरो दोष पिता कछु
नाहीं॥ होनहार व्यापत सब काहीं॥ इहि महं ने
सुक सोच न कीजै॥ श्री जदुबीर चरन चित दीजै॥
प्रभु की गती बिदत प्रभु काहीं॥ बपुरो मनुज ज
नत कछु नाहीं॥ लखि अनन्य जन करि बिस्वासू॥
हरहिं बिपति दुख रमानिवासू॥ अस कहि सुमरि

तव किशोर नृप सुभट सुधरमा॥ अग्र गन्य दशा वि क्रम वरमा॥ यदि हरि आन गती मन माहीं॥ लाग्यो सुमरण जदुवर काहीं॥ छंद॥ परो जब जबै भव भी र सुर धेनु दुज धरा तब धीर तुव दीनदेवा॥ उते प्र~~ह्लाद आह्लाद~~ ल्हाद आल्हाद दे हरन दुख भये मु नि तरन त्रीय जनन सेवा॥ दीन गज राज ग्राह फंद चुत कीन द्रुत विरद निज चीन जग सुजस लेवा॥ पतिन दृग तकत पत होत द्रोपति द्रुपत राखि पत पतित उद्धरने देवा॥ दोहा॥ तस अनाथ मे नाथ तुव दीन बंधु भगवान॥ मम हीयकी गति विदत सब तुमरे कृपानिधान॥ जो वे मुख रणतें रह्यो जन कदराय अगार॥ तपत तेल तव करहिं मोहि जा रि तुरत द्रुत ~~छार~~ छार॥ जो कादरता हृदय मम क छु नरही जदुवीर॥ तो सनेह पावक तपत होहि सु सीतल नीर॥ २२॥ टीका॥ तव सुधन्वा जो है सो वडे आनंदमै मगन भया हुआ कहने लगा हे ब्रह्मणों मै तुछ ब्राह्मण अव जो तुमारे चित्त को भावती है सो ई करो मै तो अपने मनमे अभय और अचल हूं रण से कुछ कायर नहीं भया हूं भगवान की कृपासे सन मुख हूं विमुख नहीं हूं मेरी कायरता और वीरता को जदुनाथ महाराज भली प्रकार जानते हैं क्यों कि सोई दीन बंधु चराचर की बूझन हारे और भ क्तजनो की टेक राखने वारे हैं ऐसे राजा के पुत्र का कथन सुन कर सेख और लिखित दोनो बडे को प से कहने लगे कि अरे अभागी तैने जो मंद करम किया है तिस का तूं अबी ले इस प्रकार सो पापी अब दोहि तिस राजकुमार को रणसे कायर और विमुख जान कर मंत्री को कहने लगे कि क्या देखते हो इस अधम

117

तुरंग हरन सब कथा सुनाई॥ हंसकेतु नृप धस्यो तुरंगा॥ ठाढो सैन सहित सहि रंगा॥ तँप्रद्युमन पार्थ तत काला॥ बोलि सुभट सब कह्यो हवाला॥ गह्यो हंसधुज बाजि हमारा॥ ठाढ समर दल साजि अपारा॥ बहुरि धनंजय वचन उचारा॥ सुनहु बीर बर कृष्ण कुमारा॥ समर हेतु अनुमति मम जी की॥ लागहिं तुमहिं तात जोई नीकी॥ तो हम तुम सात्यकि अनिरुद्ध॥ समर सनमुख रिपु क्रुद्धा॥ लै संग सुभट प्रबीर महाना॥ लरैं समर करि कौतुक नाना॥ दल नायक तुम कृष्ण दुलारे॥ तुम सों सकल सुरासुर हारे॥ तुव मोरे प्रीय प्राण अति सुभट सूर सिर मोर॥ आगल हमरे इकत रण लरन उचित नहि तोर॥ हम आगे मेदनि समर लरब धीर हठ धारि॥ तुव पदात दल तात तकि लीजे जतन संभारि॥२४॥ टीका॥ फिर राजा ने सुधन्वा को कहा कि हे पुत्र जावो अरजुन के सुंदर और सुभ मेघ वाले घोडे को पकडो इस प्रकार पिता की आज्ञा पायकर सुधन्वा ने जाते ही तुरत तिस घोडे को पकड लिया ॥ तब हंसधुज राजा सुंदर पदम व्यूह रचकर सेना और सब सूरबीरों के सहित रण मे स्थित हो जाता भया और उहां दूतों ने जाय कर घोडे के पकड लेने की खबर सुनाई कि महाराज हंसधुज राजा ने आप का घोडा पकडा और सब सेना भली प्रकार सजाय करके रण मे स्थित भया हुआ है ऐसे दूतों के मुख से वचन सुन कर प्रद्युमन और अरजुन ने ततकाल अपने सब सूरबीरों को बुलायकर घोडे के पकडे जाने का वृतांत सुनाय दिया ~~और~~ कहा कि हंसधुज राजा ने हमारा घोडा पकडा है और दल अपार सजाय कर रण मे स्थित भया हुआ है फिर अरजुन कहने लगा कि हे बीर धीरों मे प्रधान प्रद्युमन जो तुम को ~~नीकी लगे~~ तो रण करने मे मेरी इह सम्मती है कि हम तुम सात्यकी और अनिरुद्ध सूर बीरों के सहित सब से

भूमी

अनिरुद्ध

सेवति

ना लेकर शत्रु के सनमुख रणमे जुद्ध करै और हे कृष्ण दुलारे तुम जो हो सो सब दल के नायक हो तुमारे तें सुर असुर सब हारे हुये हैं और मेरे को तुम प्राणों से भी अति प्यारे हो हमारे होते रणमे तुमारा लडना योग्य नहीं है हम धीरज को धार कर आगे सनमुख जायकर लडेंगे और तुम वीर पीछे अपने दलकी जो किसी प्रकार हानी देखना तो तिस को संभाल लेनाथ॥ चौपाई॥ बिहसि प्रद्युमन तब वचन अलाये॥ साची सुनहु सुभट समुदाये॥ इह सम समर सुरासुर नाहीं॥ ऐसें प्रसंग आन इहि माहीं॥ इह अनन्य हरि दास नरेसा॥ धरम धीर ध्रुव सुभट सुवेसा॥ छत्री विदत वीर बलधामा॥ सब कर करहिं तोष संग्रामा॥ जहि दल पूरि रह्यो चहु कोरा॥ जै हरि जै जै नंदकिशोरा॥ उर्ध पुंड्र मस्तक कल टीके॥ उर बनमाल ललित ग्रीय जीके॥ इह सब विधि अपनो नर नाहू॥ पै दुर्लभ जीतन रण ताहू॥ कहु पारथ तुम सत्य उचारा॥ इह हमरे नृप प्राण पयारा॥ छत्रि धर्म लखि दै रण डंका॥ आयो अजै विजै तजि संक॥ अस कारण प्रद्युमन बलधामा॥ करि सम्मति जुग सुभट ललामा॥ समर हेतु सुभ रत जदुराई॥ दीन्यो सनमुख सेन चलाई॥ तब वृषकेतु वीर बलवाना॥ अरजुन सों अस वचन बखाना॥ दोहा॥ लखहु जुद्ध मम छिनक रहि पुनि विक्रम निजवीर॥ कीजो जस रुचि रुचिर तुव समर धारि उर धीर॥ ११॥ टीका॥ तब प्रद्युमन जो हैं सो हस करके कहने लगे कि हे सब वीर धीरो मेरा वचन सत्य करके सुनो जो इह रण सुर असुरों के रण समान नहीं है इस मे कुछ और ही प्रसंग है क्योंकि इह राजा जदुवीर महाराज को दृढ भक्त है और धरम धीरज मे अचल

महाशूरवीर है बल प्राक्रम की निधी और तत्री है र
णमै भली प्रकार सब को संतुष्ट करेगा अर्थात प्रसं
न्न कर देवेगा देखो जिसका महा प्रबल दल चारो ओ
र परिपूर्ण हो रहा है जै हरी जै नंदकिशोर यह कैसा
व्यूह है जिनके मुखमै मस्तकों मै सुंदर ऊर्ध पुंड्र अ
र्थात रामानंदी तिलक और हृदों मै तुलसी की माला
~~जो चित को अत्यंत ही प्यारी लगती है~~ यद्यपि इह
राजा सरब प्रकार करके अपना ही है तद्यपि इसको
रणमै जीतना बड़ा ~~कठिन~~ दुर्लभ प्रतीत होता है
अर्थात कठिन ही है तब अरजुन कहने लगा कि हे कृ
ष्ण कुमार तुमने सत्य ही कहा है इह राजा भगवान
का भक्त हम को प्राणो से भी प्यारा है जो तत्री धर्म
विचार कर और जीत हार की शंका को निवारण कर
के डंका बजाय कर रणमै युद्ध करने को आया है इस
प्रकार प्रद्युमन और अरजुन परस्पर सम्मती क
र के आनंद पूर्वक जदुवीर का सुमरण करते हुये
सेना के सहित जुद्ध की अभिलाषा से रंग भूमी
को चल पड़ते भये तब महा वीर और बल की निधी
वृषकेतु जो था सो अरजुन को कहने लगा कि
हे महाबाहु और प्राक्रम के धाम अरजु अब कुछ
छिन भर रहि जावो प्रथम मेरा जुद्ध देख लेवो पीछे जै
सी तुमारी रुची होगी तैसे रणमै धीरज धारकर
अपना अपना बल प्राक्रम जो है सो सनमुख होकर
दिखावना ॥ २६ ॥ चौपाई ॥ इस कहि कियो सेख धनि
घोरा ॥ छायो हंसकेतु दल शोरा ॥ चल्यो जात स
नमुख मन माषा ॥ भटि वृषकेतु समर अभिलाषा ॥
देखि सुधन्वै कह्यो उचारी ॥ कोइक सुभट करन र
ण रारी ॥ आवत चल्यो एकलो सोई ॥ तब इत रहो
ठाढ सब कोई ॥ यासों मै अब जाय अकेला ॥ करउं
धर्म भारत रण मेला ॥ अस कहि सनमुख चल्यो सि

कृष्ण घन स्यामा॥ मिल्यो जाय निज सेनन्हि लामा॥ वीर सुभट सब दृगनन देखी॥ मानत भये प्रमोद वसेखी॥ दोहा॥ भूप हंस धुज दीन तव सासन स्रवन सुनाय॥ वन स्रज सकल प्रवीर उर लेहु ललित पहिराय॥ शस्त्र हनत हरि नाम कल करहु रटन सब कोय॥ जे हरि नाम न कढ हिं मुख चढहिं समर जनि सोय॥२४॥ टीका॥ फिर राजा कहता है कि हे पुत्र तू तो सरव प्रकार करके निरदोष हैं और साधू हैं मैं हीं अपराधी हूं और मेरा ही सब दोष है तुम क्षमा करने योग्य हो मेरे को अबूज जानकर क्षमा करो तव धरम मैं प्रवीन और साधू सुधन्वा जो है सो पिता को हाथ जोड कर कहने लगा॥ कि हे पिता तुमारा दोष कुछ नहीं है रह होन हार जो है सो सव को व्याप जाती है अब इसमें चिं ता मत करो श्री जदुवीर महाराज का सुमरण करो भ गवान की गती को भगवान हीं जानता हैं तहां मानुष्य की क्या सामर्थ है और क्या जानता है भगवान कृपानि धान अपने जन का दृढ विस्वास देखकर और कोमल हो कर तिस का दुख कलेष और विपती सब काट देते हैं ऐसे कहिकर जदनाथ का सुमरण करता हुआ अपनी सेना मे जाय मिला तब सब सूरवीर तिसको देखकर वडे आनंद को प्रापत भये तिसतें उपरां त राजा हंस धुज सब सेना और सेनापतियों को ऐ सी आज्ञा देता भया कि भैया सब कोई अपने अप ने गले मे तुलसी की माला पहिर लेवो और शस्त्रों के वार करने और लगने पर हरि हरी शब्द के विना और कुछ उचारण नहीं करो जिस पुरष ने हरी का नाम उचारण नहीं करना सो रण भूमिका मे कदा चित नाजावे॥२४॥ चौपाई॥ वहुरि सुधन्वै मन्यो न रेसा॥ एक २ रहु पारथ वाजि सुवेसा॥ मानि जन क निज सासन वीरा॥ त्यागो पकरि वाजि द्रुत धी रा॥ रचि व्यूह पदम हंस धज राजा॥ ठाढ भयो जु त महिन समाजा॥ तव दूतन पारथ ढिग जाई॥

सार्थी आन नवल रथ ल्याई॥ चल्यो डारि दुत तासु
लिवाई॥ निजदल जात जग्यो मुर्छाना॥ अधो वदन भ
र हृदय लजाना॥ तासु प्राजय दृगन निहारी॥ आन वीर
उर धीरज धारी॥ अजमेजस लखि सुभट निकाये॥ सिंह
नाद गरजत रण धाये॥ उतै हंसधुज सैन प्रवीरा॥
आई भनत जैति जदुवीरा॥ जुग दल मिलत भयो अति
सोरा॥ मानहु मिले जलधि दहु ओरा॥ भा अनन्त तहि
शस्त्र प्रहारा॥ छयो धूरि धरनी अंधियारा॥ भये सुभट
घायल समुदाई॥ श्रोणित सरित बह्यो रण जाई॥ सम
र सुरासुर सरस अपासो॥ भयो इमत वर वीर जुझा
सो॥ तहां सुधन्वै रथहि चलाई॥ अरजुन दल वाणन
झरि लाई॥ मारत सर जय जदुवर भाखै॥ कृष्ण मि
लन मानस अभिलाखै॥ रह्यो महा रथि अति रथि सो
ई॥ भयो वीर सनमुख नहि कोई॥ दोहा॥ चाहत छिन
महं हनन सब पारथ दल रण धीर॥ लखि सत्यकि
अक्रूर जुत कृतवरमादि प्रवीर॥ और हु जे जे समर
ध्रुव सूर वीर बलमान॥ सुभट सुधन्वै पगे विस ल
गे प्रहारन वान॥ उतै सुधन्वा वीर वर करत धनुष
टंकोर॥ हनन लाग सर टेरि मुख जै जै नंदकिशोर
॥१८॥ टीका॥ जब इस प्रकार वृषकेतू के वाण सुध
न्वा को आवर्न कर लेते भये अर्थात घेर लेते भये तब
सो वीर प्रधान जदुनाथ का सुमर्ण करता हुआ आप
ने धनुष मे जोड़ कर एक ऐसा वाण मारता भया कि
जिस ने छूटते हीं तिन वाणों खंड खंड कर दिया फि
र तैसे हीं कोपसे दूसरा और वाण मारा कि जिसने सा
रथी को मार कर रथ को भी भंजन कर दिया तिसतें
उपरांत एक वाण वृषकेतू को मारा कि जिसके लग
ते हीं सो वीर मूर्छासे व्याकुल हो कर पृथ्वी पर
गिर पड़ा तब नये सार्थीने नया हीं रथ ल्या कर औ
र तुरतहीं तिस पर डार कर ~~[illegible]~~ ऐसी शीघ्रता करी
कि मानो उडाय कर ले गया तब आप ने दल मै जायकर
कुछ्छक वेर के पीछे तिसकी मूर्छा खुली और जागा

वृके

तिसको

अपने प्राक्रम की हानी देखकर लज्जित भया हुआ मुख ऊपर नहीं उठाय सकता ऐसे तिसकी हार देखकर और सब सूरवीर हृदय में ग्लानी मानते भये और फिर धीरज को धारकर सिंहवत गरजते हूये रण को सनमुख चल पड़ते भये और ऊहां हंसध्वज की सेना जैजदुवीर की जैजदुवीर की ऐसे उचारण करती हुई चली आवती है दोनो दल इस प्रकार मलते भये किमानो परस्पर दोवा दलों में समूहों का संजोग भया है। शस्त्रों के अनन्त प्रहार होने लगे जुद्ध की येनी ज्रमसान से धूड़ी उड़कर आकाश छायत हो गया और अंधेरा बढ़ गया सूरवीर जो है सो अनन्त ही मारे गये और अनन्त ही घायल हो गये रण भूमी मे जहां तहां रुधिर बहा चला जाता है सुर असुरों के समान बड़ा घोर जुद्ध होता भया तब सुधन्वा ने रथ को आगे चलायकर अरजुन के दल पर ऐसे बाण मारे कि मानो झड़ी लगाय दई और जब जब बाण मारता तब तब जैजदुवीर की उचारता है श्रीजदुवीर के ही मिलने की अभिलाखा रखता है फिर कैसा महा रथी और अती रथी सुधन्वा है कि जिसका सनमुख कोई भी नहीं कर सका और जो छिन भर में अरजुन के सब दल को मार दैना चाहता है तब सात्यकी अक्रूर कृतवरमा इत्यादि और जो रण में अचल और प्राक्रम की निधी सूरवीर थे सो सब सुधन्वा को विसके भरे हूये बाण मारने लगे और ऊहां वीरों में प्रधान सुधन्वा भी धनुष मे जोड़ जोड़कर बड़े कोप से बाण मारता और जो बेद कुमार की पुकारता है॥ १८॥ चौपाई॥ सुनत नाम जो देव जदुनाहू॥ भये विगत भारत उतसाहू॥ तब सुधन्वे धरि धनु रण माहीं॥ छिन मह किये विरथ सब काहीं॥ भले भुजान बल बान प्रहारे॥ सुभट सकल

ले महि मुर्छित तुरे॥ हनन धाव पुनि पारथ काहीं॥
हाहा मच्यो सकल दल माहीं॥ आयो तव प्रद्युमन
धरि धीरा॥ सलभ सरस छाडत धनु तीरा॥ क्रुद्धप्र
वाह सरन जनु सरता॥ हृदय धीर वीरन मनु हरता॥
हते सुभट महि समर उदारा॥ कटे मतंग तुरंग अपा
रा॥ तदपि न डरत मरनतें वीरा॥ सहत समर सन
मुख सर धीरा॥ जै जै जै जदुवीर उचारी॥ देत प्राण र
ण धरनि जुझारी॥ भूप हंसधज दल कल माहीं॥ स
कँ सुभट कादर कौ नाहीं॥ अस निज सैन हनन अ
वसेखी॥ सुभट सुधन्वा नैनन देखी॥ रथारूढ मुख
कृस्न उचारी॥ चल्यो धाय सनमुख धनुधारी॥ दोहा॥
उततें आये कृस्न सुत विदत वीर सिरमौर॥ भये सु
भट सनमुख समर ठाढे जुगल इक ठौर॥ रह्यो
गुनत जन जनमतें वनत न पस्यो प्रयास॥ तुव पि
तु तुव दरसन चरन रही करन उर आस॥ आज का
म पूरण भयो तुव प्रसाद रण माहिं॥ लेहु सुजस
सुख पगन परि करि तोषित प्रभु काहि॥२८॥ टीका॥
तव जादव जो हैं सो इस प्रकार तिसके मुखसे जदुना
थ का नाम सुनकर के जुद्धके उतसाहसे नवृत्त होजा
ते भये तव सुधन्वा ने रणमै धनुष धारन करके ऐ
से प्रचंड वाण मारे कि सवको विरथ कर दया औ
र ऐसा भुजों का वल दिखाया कितिनके सव सूरवीर
मूर्छा करके पृथवी पर गिराय दिये फिर कोप से
अरजुन के मारने को धाया तव संपूर्ण दलमें हाहा
कार मच गया इतनेमै सलभ जो सलया तिसकी
न्याई अनन्त वाण छोडते हुये प्रद्युमन जो हैं सो
आय गये तिनके वाण जो नदी के प्रवाह समान छू
टे जाते थे तिनको देखकर किसी के हृदयमै धीर
ज नहीं रहा और सूरवीर हसती घोडे रथ पयदि
अनेक मारे गये और घायल होगये तद्यपि सो

धारी॥ गहि कुदंड कर कृस्न उचारी॥ पूछ्यो तासु स
मर महि जाई॥ कवन वीर तुव देहु बताई॥ मै वृषध
ज सुत करन कहावहुं॥ तुमहुं नाम निज जनक सुनाव
हुं॥ दोहा॥ मै सुत भूप मराल ध्वज जन जदु वर निसका
म॥ कहत सुधन्वा नाम मम विदत वीर संग्राम॥ सु
नत कथन वृषकेतु अस गहि कुदंड धृति धार॥ द्रुत
संधानत बान शत सनमुख किये प्रहार॥१२॥ टीका॥
ऐसे कहिकर वृषकेतू जो है सो संख की महा घोर धुनी
करता भया तिस का शोर हंसध्वज के संपूर्ण दल मै
छायत होगया फिर जुद्ध की अभिलाखा वाला परम
कोप से शत्रू के सनमुख कों चल पड़ा तब तिसको
आवते को देख कर सुधन्वा कहने लगा कि इह कोई
वीर रण मै जुद्ध करने को अकेला हीं चला आवता है
अब तुम सब सूरवीर ईहां स्थित रहो इसके साथ मै हीं
अकेला जाय करके रण मै धर्म जुद्ध करता हूं ऐसे क
हिकर और हाथ मै धनुष धारन करके कृस्न कृस्न उ
चारण करता हुआ सनमुख को चल पड़ा और रण मै
जायकर ऊंची स्वर से पूछता भया कि हे वीर तुम कवन
हो मेरे को अपना ~~नाम~~ नाम सुनाय देवो तब सो कहने ल
गा कि मेरा नाम वृषकेतू है और करण का पुत्र हूं अब
तुम अपनी कहो कि तुम कौन हो तब वे कहता भया कि
जदुवीर के दासों मै जो हंसध्वज नाम करके राजा है मै ति
सका पुत्र हूं और सुधन्वा मेरा नाम कहते हैं और कृ
स्न भगवान की कृपा तें रण मै अचल और धीर्ज के धा
रने वाला ~~हूं~~ हूं सब लोगों मै प्रसिद्ध हूं इस प्रकार
सुनते हीं वृषकेतू जो है सो ~~~~ तुरत धनुष लेकर तिस पर
एकवार हीं सौ बाण छोड़ देता भया॥१३॥ चौपाई॥
लखि आवरन सरन जीय माहीं॥ सुभट सुधन्वा जदु
वर काहीं॥ हृदय सुमरि निज बान प्रहा र्यो॥ काटि
तुरत तास सर डार्यो॥ बहुरि हनत सर कोप प्रली
ना॥ रथ समेत सारथि हत कीना॥ पुनि मार्यो
सर वृषध्वज काहीं॥ पर्यो विकल मुर्छित छित माहीं॥

होत परस्पर घायल बीरा॥ परे समर मूर्छित रनधीरा॥
कछुक बेर पाछिल सुधि पाई॥ उठ्यो सुधन्वा समर रिसा
ई॥ हेरो वीर न सनमुख कोई॥ हरष्यो हृदय विजित
रण होई॥ तब कोपित अति पारथ धायो॥ मारि सरन
रथ तासु दुरायो॥ सुवन हेमधुज समर उदारे॥ हनत सर
न सर तासु निवारे॥ बहुरि सुधन्वा मन अनुरागा॥ हरषि व
चन अस भाषन लागा॥ सुनहु सखे जदुनायक केरे॥ आज
मनोरथ पूरण मेरे॥ दोहा॥ भीषम द्रोणाचारजी चारज कृ
पा प्रवीर॥ तुव जीते सब करन को धारि धरणि रण धीर॥
२०॥ टीका॥ फिर सुधन्वा कहता है कि नाथ अब मै अपनी कु
ल के धरम अनुसार रण मे तुमारा पूजन करता हूं ऐ
से कहि कर वीर प्रधान सुधन्वाने वान संधान कर अर्था
त धनुष मे वाण जोड कर और ताक करके कृष्ण कुमार
के चरनो मे मारा तिसते इह सिद्ध भया कि वीरने वाण द्वा
रा प्रद्युमन को प्रणाम किया तब कृष्ण कुमारने हृदय
मे विचारा कि इह तो पिता का अति से दृढ सेवक औ
र चरनो का दास है इससे मेरा किस प्रकार रण होसके गा
ऐसे विचार कर तिस के प्रेम के वश भये हूये प्रद्युमन म
न तन से सिथल होकर रण करने लगे फिर अंत को वढ
ते वढते दोनो वीर गाढे वाण जो हैं सो छोडने लगे
ज्यों ज्यों रण मे क्रोध वढता जाता है त्यों त्यों
^वाण हो विस के भरे हूये ^ काढते जाते हैं अन्त को परस्पर
^नो दो^ घायल और मूर्छा होकर रण मै गिर जाते भये फिर
कुछक वेर के पीछे सुन्वा को सुधी आई और उठ कर
^थ क्रोंसे रण मै देखने लगा जब कोई वीर सनमुख
नहीं पाया तब अपनी जै मनाय कर बडे हरष को प्रा
पत होता भया इतने मे अरजुन जो हैं सो परम को
^भरे हूये पसे ^ धावते चले आये और आवते ^ ऐसे वाण मा ^हों
^तिस रे कि शत्रू का रथ लुपत ^करदिया तिस समय सु
धन्वा भी बडा कोपायमान होता भया ततकाल

अपने बाणोंके प्रहारसे अरजुनके सब बाण निवारण करदिये और फिर हरषसे बडु प्रसन्न होकर अरजुनको कहने लगा कि हे जदुनाथ के सषे आज भगवानकी कृपासे मेरे सब मनोरथ पूर्ण भयेहैं और मै जानता हूं कि तुमारी भजोंका ~~[illegible]~~ बल अनन्त हीं है कि जिसका अन्त नहीं क्योंकि तुमने भीषम द्रोणाचाज कृपाचार्ज करण इत्यादि महारथी और अतिरथी जो वीर प्रधान थे सो रणमें सब जीते हुयेहैं ॥२०॥ चौपाई॥ तब मेरो प्रभु भारत थोरा॥ रह्यो धनंजय साथी तोरा॥ अब कत तासु महा भट त्यागी॥ आये ईहां समर अनुरागी॥ कोटि जतन किना करि करि रैहो॥ विनु साथी निज विजय न पैहो॥ तोते साथी बोलि अपाना॥ धरहु मोर सन मुख धनु पाना॥ मै अनन्य सेवक जदु नाहू॥ सपने हु आन भरोस न काहू॥ हन्यो भनत अस सायक थोरे॥ सर प्रहारि पारथ सब तोरे॥ पचि बान अरजुन तब मासो॥ हनत सलिल सर तास निवासो॥ अस्त्र दिव्य पारथ पुनि प्रेरे॥ दिव्य अस्त्र हनि तास नबेरे॥ जब निज विजय होत नहि जाना॥ तब लाग्यो सुमरण भगवाना॥ ततक्षण भक्त भीर मै हारी॥ भये प्रकट सुमरत नगधारी॥ लषत सुधन्वा जदुबर काहीं॥ रथते उतरि मुदित मन माहीं॥ त्राहि त्राहि मुख वचन उचारी॥ नयो सीस पद पदम मुरारी॥ जैजैजैति जगत उपजावन॥ हरन त्रास जन सुजस बढावन॥ सदा पैज निज भक्त रखैया॥ मेदिन धरनि देव दुज गैया॥ अनघ अदत अनभव अवनासी॥ चिदानंद सद भवन प्रकासी॥ दीनानाथ दीन दुख हा[illegible]रे॥ दीन बंधु दीनन हित कारे॥ जै जै जैति कलप द्रुप रामा॥ पुरवहु कस नजनन मनकामा॥ जै पारथ सारथि जदु नायक॥ भगत संत सज्जन सुखदायक॥ आज जनम जन सफल सुहावा॥ धन्य धन्य संसार कहावा॥ पितर देव सब तोषित भयेऊ॥ जोरन दुगन

ऐस प्रभु लख्यो॥ दोहा॥ कृष्ण देव दृढ दास लखि भक्त सुधन्वै काहिं॥ गह्यो बाग पारथ प्रसुन करकंज निज माहिं॥ करि प्रनाम उतरथ चढ्यो सुवन हंसधुज राय॥ लग्यो करन भारत समर वीरधीर धरि काय॥२१॥ टीका॥ फिर सुधन्वा कहता है कि हे अरजुन जब तहां घोर भारत मैं तुमने सब वीरधीरों को जीता था तब तो मेरे प्रभू कृष्ण परमात्मा तिस रण मै तेरे साथी थे तूं तिनकी कृपा तें सब सूरवीरों को जीता और अब हमारी बार तिनके कहीं छोड कर अकेला जुद्ध करने को आया है परन्तु तूं जाण कि यद्यपि कोटि यतन भी कर कर हारेंगा तद्यपि अपने तिस साथी के बिना कभी जीत नहीं पावेंगा॥ तो ते योग्य है कि अपने साथी को बुलावो और फिर धनुष पकड कर रण मे मेरे सनमुख आवो॥ क्योंकि मैं जदुनाथ महाराज का दृढ सेवक हूं तिनके चरनों के बिना मेरे को और कोई भरोसा नहीं है ऐसे कहिकर वीरधीर सुधन्वा जो है सो धनुष मे जोड कर बडे कठिन चलावता भया तब उधर से अरजुन ने बाणों को आवते देखकर और अपने बाण मार कर तिन को तुरत ही खंड खंड कर दिया और बडे कोप से पक्षी अर्थात अग्नी अस्त्र जो है सो मारा तब सुधन्वा ने वारुण अस्त्र मार कर तिस को निवारण कर दिया॥ फिर अरजुन ने दिव्य अस्त्र मारा तिस ने भी दिव्य ही अस्त्र मारकर खंडिन कर दिया इस प्रकार अरजुन ने जब अपनी जीत होती नहीं देखी और सुधन्वा को प्रबल जाना तब भगवान का सुमरण करने लगा तिसके सुमरते ही भक्त जनो का भय दूर करने वाले दीन बंधू भगवान जो हैं सो तहां रण मै ही तुरत प्रकट हो जाते भये तब सुधन्वा जदुनाथ महाराज को देख कर आनंद मे मगन भया हुआ ततकाल रथ से उतर पडा और त्राहि त्राहि कहता हुआ धाय कर भगवान के चरन कमलों पर सीस धर कर "अस्तुती करने लगा॥

"और फिर हाथ जोड कर

वीर धीर डरते नहीं रणमै सनमुख हीं वाण सहारते हैं और जे जदुवीरकौ पुकारते हुये भलीप्रकार जूझकर प्राणों को त्यागते हैं हंसधुज राजाके दलमै सबहीं सूरवीर हैं कायर कोई भी नहीं है एतव इसप्रकार अपनी सेनाका मरना और घायल होना देखकर महावीर सुधन्वा जो है सो जै जदुवीर की उचारता हुआ रथपर सवार होकर और हाथमै धनुष लेकर रणको सनमुख चलपड़ता भया और उधरतें वीरोंमै प्रथमगिनतीवाले कृष्ण भगवानके कुमारप्रद्युमन जो हैं सो आवते भये जब दोनोवीर सनमुख रणभूमीमै आय कर स्थित होगये तब सुधन्वा कहनेलगा कि हे नाथ तुमारे और तुमारे पिताके चरनोके दरसन करनेकी मेरेको जनमतें हीं लालसा लगी हुई थी परन्तु अबतक कोई समागम और उपाय नहीं बनपड़ा किजिसतें मै सहित कुटंबके सफल होता आज भागोंकी वडाई और कामनाकी पूरणताई जानताहूं जो तुमारी कृपातें तुमारे चरनोंको वंदना करके नाथ तुमको रणमै भलीप्रकार रिझायकर ~~सुंदर सुख और सुजसको प्रापतकरूंगा~~ मुनी और जोगी जनोंको दुर्लभ सुख और सुजस जो है सो प्रापत करूंगा॥२८॥ चौपाई॥ नाथ रुचिर पूजन रण तोरा॥ करिहौं एह धरम कुल मोरा॥ अस कहि वीर वान संधाना॥ मासो चारन सुवन भगवाना॥ कियो प्रणाम सुभट सर द्वारा॥ तब प्रद्युमन अस हृदय विचारा॥ रह दृढदास चरन पितु केरो॥ पासन समर कहो कस मेरो॥ अस गुनि तास प्रेम वस होई॥ लागे करन सिथ रण सोई॥ अंत हु वढत वढत जुग वीरा॥ छाडन लगे तीव्र तर तीरा॥ जिमि जिमि भरत रोष रण सूरे॥ तिमि तिमि कढत वान विसपूरे॥

जो मे तीन बान हनि को फी॥ काटहुं सीस तोर अब नाहीं॥ बहुरि न धरहुं धनुष रण माहीं॥ पितर हनन अग लागहिं मोही॥ जो नहिं हतहुं आज रण तोही॥ तब अस उत्र सुधन्वै दीना॥ जो न कटहुं तुव सायक तीना॥ तोहरि विमुख पाप जग जोई॥ मोहि लागहिं बिनु संसय सोई॥ होहि अजस जग जुग जुग मेरो॥ जो न करहुं वारन सर तेरो॥ तब अरजुन सायक इक मारयो॥ हनत तास सर तुरत निकारयो॥ तज्यो धनंजय दूसर बाना॥ सो हुं कट्यो नृप सुवन सुजाना॥ विक्रम देखि बीर वर केरा॥ करत सुजस सुर गगन घनेरा॥ जब पारथ तीसर सर लीन्यो॥ तब जदुनाथ मनन अस कीन्यो॥ सखा दास दोऊ प्रीय मोरे॥ कछु न कहुं तुव अनुचित हेरे॥ दोहा॥ कट्यो छिप्र निराचतब इंद्र सुवन रण धीर॥ सुमर सुधन्वै सोऊ सर हृदय सुमरि जदुवीर॥ काटि दियो निज हनत सर पै आधो तहिं जाय॥ लग्यो सीस मेदनि गिरयो परयो अचेत मुरछाय॥ २२॥ टीका॥

तब लडते लडते ऐसे लडे कि देवता गण प्रसन्न होकर आकाश मे स्थित भये हूये धन्य धन्य वाणी को उच्चारण करते हैं और फूल बरषते हैं फिर अरजुन जो है सो प्रण प्रतिज्ञा करके कहने लगा कि जो मै अब तीन बाण मार करके तेरा इहां रण मे सीस ना काट डालूं तो फिर आगे कभी हाथ मे धनुष ही नहीं पकडूंगा और भी सुण कि जो मै आज तेरे को ना मारूं तो मेरे को पितर घात के पाप की पीडा जो है सो व्यापत हो तब सुधन्वा ने उत्तर दिया कि जो मै भी तेरे सो तीनों बाण आवते खंड खंड ना कर देऊं तो भगवान से विमुख होने का पाप जो जगत मे है मै ति

सका ही भागी होऊं अर्थात मेरे को सोई पाप लगे जो
तेरे बाणों को ना निवारण करूं तो जगत मे जुग जुग मेरा
अपजस ही होवे तब अरजुन ने धनुष मे जोड़ कर एक वा
ण मारा तिस ने आवते ही तुरत निवारण कर दिया फिर
अरजन ने दूसरा और बाण छोड़ा सुधन्वा ने अपना
बाण मार कर के सो भी काट डाला इस प्रकार तिन वीरों
का बड़ा प्रचंड प्राक्रम देख कर देवता गण आकाश मे फि
र बड़ाई करने लगे तो जब अरजुन ने तीसरा बाण
धनुष मे जोड़ा तब जदुनाथ महाराज कहते हैं कि सखा "तुम
और दास मेरे दोनो ही प्यारे हो मै तुमारा अनुचित दे
ख कर कुछ नहीं कहि सकता हूं कि योग्य कौन है और
अयोग्य कौन है तब इंद्र के पुत्र अरजुन ने सो तीसरा बा
ण कि जो धनुष मे जोड़ा हूआ था ततकाल छोड़ दिया
उही हेसधज के पुत्र सुधन्वा ने जदुनाथ को सुमर कर
अपने बाण का प्रहार करके तिस को काट दिया पर "भी
न्तु तिस मे से आधा जाय कर तिस के सीस को जो लगा तो
तिस ते वीर मुर्छाय कर और अचेत होकर पृथवी पर
गिर पड़ता भया ॥२२॥ चौपाई ॥ तास तेज देखत सब सु
दाई ॥ गयो तुरत प्रभु बदन समाई ॥ उठि कुबंध नाकर
रण माहीं ॥ पांडव भटन हनत भयो ताहीं ॥ सुत कर
मरण हेस धुज देखी ॥ बिलपत करत रुदन अब सेखी ॥ हा
हा सुवन प्राण प्रीय मेरो ॥ सहहुं विजोग दुसह कस तै
रो ॥ धरम धुरिंदर धीर उदारा ॥ आज तात तुव समर जुझा
रा ॥ बड़े महान वीर बलवंता ॥ कीने तुमहुं समर सुत
हंता ॥ मोरे जीय अचरज इह भारी ॥ पारथ सर नहिं स
क्यो सहारी ॥ तात देखि अस मरण तुम्हारा ॥ भयो सून
दल आज हमारा ॥ कहि मरोस धीरज अब काहा ॥ तुव अ
बलंब बड़ो सुत राहा ॥ सुनत विलाप जनक पछुताना ॥
सुरथ नाम भूपति सुत आना ॥ जुग कर जोरि भनन अस
लागा ॥ तात हमारे वीर बड़भागा ॥ जहिं हरि दास समर

224

सर लागे॥ हरि सनमुख निज प्राण तयागे॥ सो किमि जन
के जोग जग सोकू॥ विजय कीन जहि लोक प्रलोकू॥ इहि
हेत जग जननति सुत माता॥ होहिं सूर सुभ सुजस
प्रदाता॥ दोहा॥ कीजे जनि कछु सोच पितु अवै जियत
तुव दास॥ देखिये निज नैनन नवल मेरो समर विला
स॥२३॥ टीका॥ जब सुधन्वा रण मै जूझा तब सब के देखते
तिस का तेज जो है सो निकल कर भगवान के मुख मै जाय
समावता भया और तिस का कुवंध उठकर पांडवों की
सेना को रण मै जहां तहां मारने लगा अन्त को मारता मार
ता सो भी गिर पड़ा तब पुत्र का मरना देखकर हंसधज
राजा जो है सो बहु विलाप कर कर के रुदन करने लगा
कहता है कि हा पुत्र हा प्राण प्यारे मै अब तेरा विजो
ग जो नहीं जाता है कैसे सहूंगा ~~हे पुत्र तू कैसा किय~~
~~मै का धारी और धीर्ज का धाम परम उदार~~ हे पुत्र तू
महा धरम धारी और धीर्ज का धाम परम उदार और
सूर वीरों मै प्रथम गिनती वाला कि जिसने रण मै महा
प्राक्रमी वीरों को अपनी भुजों के बल से मारा हुआ था
सो पुत्र तू आज रण मै जूझा हुआ पड़ा है मेरे हृदय मै
बड़ा आचर्ज आवता है कि पार्थ जो अरजुन है तू तिसके
वाण नहीं सहार सका हे पुत्र आज तेरा मरना देखकर
हमारा संपूर्ण दल सूना हो गया है अब सेना को कि
स का धीर्ज और किस का भरोसा रहा पुत्र तुमारा हो
बड़ा आधार था ऐसे ~~राजा~~ का विलाप सुनकर सुरथ
नाम करके राजा का दूसरा पुत्र जो था सो हाथ जोड़कर
कहने लगा कि पिता हमारा भ्राता अतसे बड़भागी
जानो कि जो भगवान के दास को वारण से ~~हंस~~ जूझ करके भग
वान के सनमुख हीं प्राणों को त्याग देता भया हे पिता सो
भ्राता क्या कुछ सोच करने के योग्य है कि जिसने रण मै
सनमुख होकर लोक प्रलोक दोनो जीत लिये हैं माता
जो है सो ~~इसी~~ इसी नमित ~~जनती~~ पुत्र को जनमती है कि सूर
वीर सुंदर जस और बड़ाई के देने वाला होवै हे नाथ

सहा

हंसधज

पिता

प्रसंग

अग्रवस

तात भाचरज

कहता है कि जै हो तुमारी हे जगत के उतपन्न करने
वाले और दीन जनो के दुख हरने वाले भगवान और
जै हो तुमारी हे भक्त जनो की पैज राखने वाले हे गो
ब्राह्मणो के पालक और पृथवी देवताओं की रक्षा कर
ने वाले हे दीनबंधू तुम कैसे हो कि अनंग जो काम
से रहित हो अर्थात तुमारा देह भी नहीं है
अविनासी हो तुमारा नास भी नहीं है औ
र चैतन्न हो आनंदरूप हो और सरव भवनो के प्रका
श करने वाले हो फिर कैसे हो कि दीनानाथ हो दीन
बंधू हो दीनो के हितकारी हो जै हो तुमारी हे भक्त जनो
के कलपवृक्ष हे संत सुखदायक जै हो तुमारी हे
अरजुन के साथी भगवान हे दास जनो की आसा पूरी
करने वाले कृपानिधान आज मैं आप के चरनो का से
वक संसार मै धन्य धन्य हूं हूं और मेरे
देव पितरो का भी उधार हो गया है जो तुमारा दरसन
भगवान मैने नेत्र भर भर कर पाया है इस प्रकार
कृष्ण भगवान सुधन्वा को अत से प्रीती और भक्ती
वाला अपना दृढ सेवक जानकर ततकाल ही
अरजुन के रथ पर जाय चढे और आनंद पूर्वक ति
सके घोडयों की बागें हाथ मै पकडकर सार्थी
बनकर स्थिर हो जाते भये और इहां प्रनाम कर के
हंसधज का पुत्र सुधन्वा जो है सो भी परम उत्साह से धा
य कर अपने रथ पर जाय चढा और जदुवीर को
सुमरता हुआ रण मै धीरज धार कर अनेक प्रकार के
बाण मार कर बडा घोर जुध करने लगा॥ २८॥
चौपाई॥ भा से संग्राम भयावन भारी॥ सुरन धन्य
नभ गिरा उचारी॥ तब बोल्यो पारथ प्रण रोपी

क्योंकि इह सुरथ मेरा बड़ा दृढ़ सेवक है तेरे तें इहजी
तना बड़ा कठिन है अतसे प्राक्रम की निधी सूरवीं है
ऐसे सुनाय करके फिर भगवान प्रद्युमन को कहने ल
गे कि हे पुत्र तुम जावो और सुरथ के साथ रण मै धीर
ज धार कर जुद्ध करो ॥२४॥ चौपाई ॥ वध हु कि देहु परा
जय तासा ॥ तब प्रद्युमन अस वचन प्रकासा ॥ नाथ सु
रथ सेवक तेरो ॥ तासन विजय अगम भव मेरो ॥ पै कृपा
ल तुव सासन पाई ॥ छत्रि धरम वस करहु लराई ॥ अस
कहि सनमुख सुरथ ~~[illegible]~~ प्रवीरा ॥ चल्यो लेत भट नि
कर मधीरा ॥ तहि आवत प्रद्युमन कहं देखी ॥ नयो चरन
सिर नम्र वसेखी ॥ भन्यो बहुरि सुन नाथ किशोरा ॥ रण
को करो वीर सिर मोरा ॥ मोहि जीतन समरथ रण मा
हीं ॥ जीतत रह्यो सुरासुर काहीं ॥ दीन द्याल तुव सर
कर लागे ॥ जो मै प्राण समर महि त्यागे ॥ तो मै सत्य
भनहुं प्रभु तोही ॥ होहि न कछु अपजस जग मोही ॥ पै
इक कृपासिंधु पछताता ॥ रहि है हृदय मोर इह छावा ॥
पारथ सखा स्याम चन केरा ॥ सो न समर इन नैनन हेरा ॥
देहु बताय भटन कुलके तू ॥ जनक तोर जहो सखा सने
तू ॥ दोहा ॥ तब हरि सुत कह ललित छवि कपि धुजफ
हरत जाहि ॥ सखा सहित जदुवंस मणि सुरथ विराजत
ताहिं ॥ २५ ॥ टीका ॥ भगवान कहते हैं कि हे प्रद्युमन तु
म तिसको मारौ कि अथवा रण से कायर करके जीत लेवो
तब प्रद्युमन कहने लगा कि हे दीनानाथ सुरथ जो है सो
आपका दृढ़ सेवक है तिसको रण मे जीतना मेरे को ब
ड़ा कठिन प्रतीत होता है परन्तु नाथ तुमारी आज्ञा से
क्षत्री धर्म के वश होकर अब युद्ध लडूंगा ऐसे कहिकर
अपनें सूरवीर साथ लेकर रण को सनमुख चल पड़ा
तब सुरथ ने कृष्ण कुमार को आवते देख कर दूर से ही
~~नम्र मतीसेम~~ नम्र होकर चरनो को प्रणाम किया और

देवो
तब

फिर कहने लगा कि हे रण मै बांकुरे ओर सूर वीरों मै प्र
धान मेरे स्वामी के पुत्र प्रद्युमन तुम कैसे हो कि रण मै मे
रे जीतने को सामर्थ हो क्योंकि तुम महा प्रबल सुरं असु
रों को जीतते रहे हो हे दीन दयाल जो मै तुमारे वाण के
लगने से रण भूमी मै प्राणों को त्यागूंगा तो ~~[illegible]~~ मेरे
को कुछ अप जश नहीं होगा सरवदा जश ही प्रापतन होगा
परन्तु हे कृपा निधान एक रह पछतावा मेरे हृदय मै रहि
जावेगा कि घन स्याम भगवान का सखा अरजुन जो है सो मै
ने रण मै इन नेत्रों करके नहीं देखा है हे वीर कुल मै उजा
गर प्रद्युमन अब कृपा करके मेरे को बताये कि तुमारे पि
ता के सहित सो सखा कहां विराज मान हैं तब कृष्ण कु
मार प्रद्युमन कहने लगे कि वे देख जहां वहु सुंदर क
~~कै वाली धुजा फरकाती है कि जिस पर हनुमान को~~
~~चित्र शोभावे~~ वाली हनुमान के चित्र वाली धुजा फरक
रही है हे सुरथ तहां ही जदुवंस के भूषण भगवान तिस
अपने सखा के सहित विराज मान हैं ॥२४॥ चौपाई॥
जाय करहु दरसन जदु राई॥ लेहु ललित फल वांछि
त पाई॥ सुरथ सुनत अस जान उठायो॥ दीन दयाल
कर सनमुख आयो॥ कियो प्रणाम नम्र सिर नाई॥
बहुरि वदन अस गिरा अलाई॥ आज धन्य जन जन
म सुहावा॥ जो भरि दृगन दरस प्रभु पावा॥ मुनि जोगिन
दुर्लभ जग जोई॥ मोरे आज सुलभ भयो सोई॥
अब पुर भयो मनोरथ मेरो॥ करिहुं नाथ पूजन रण
तेरो॥ अस कहि विसखुं वान बहु छांडे॥ चले व्या
ल मनु फुंकरत गाढे॥ तब भाष्यो प्रभु पारथ काहीं॥
हो है सजग वीर रण माहीं॥ सनमुख सावधान
धुव होई॥ करहु जुद्ध जग करहिं न कोई॥ उहरण धीर
धरम धुर सूरा॥ जाहि सर हनत गगन पथ पूरा॥ तब
बोल्यो अरजुन कर जो[रे]॥ प्रभु प्रसाद कछु अगम न

मोरे॥ अस कहि जुगल बीर बलधामा॥ लागे करन क्रूर संग्रामा॥ हार जीत कछु परत न चीनो॥ महां जुद्ध जुगलन रण कीनो॥ दोहा॥ सुरथ गहित सर करन निज करि प्रण वचन वखान॥ मोर वान कर सुनहु अब तुव प्रभु तथे प्रमाण॥ जो कहो सर हनि तोहि जन हस्तिन पुर पहुंचाऊं॥ कै पताल देस न दिसन कहो कि गगन उडाऊं॥ २६॥ टीका॥ फिर ~~सुरथ~~ श्रोमन कहते हैं कि हे सुरथ तहां जाके और भगवान का दरसन पायकर अपने मन वांछित फल को प्रापत करो तब सुरथ ने सुनते ही रथ को उडाया ~~[illegible]~~ और भगवान के सनमुख चला आया तहां ~~[illegible]~~ के चरनो पर ~~[illegible]~~ प्रणाम करके वडी नम्र वानी से कहने लगा कि आज मै धन्य हूं और धन्य मेरा जनम है कि जो भगवान का दरसन मुनी और जोगी जनों को दुर्लभ होता है सो मैने आज सहजे ही नेत्र भर भर कर पाया है अब ~~[illegible]~~ मेरा मनोर्थ सिद्ध भया है जो रण मे आज देव तुमारा भली प्रकार पूजन करूंगा असे कहि कर विस के भरे बाण ~~[illegible]~~ छोडने लगा सो मानो साक्षात सरप ही फुंकारे मारते चले आवते हैं तब भगवान अरजुन को कहने लगे कि हे वीर अब तू रण मे सावधान हो ~~और~~ ~~सनमुख अचल [illegible] और धीरज को धारकर~~ और हृदय मे धीरज धार कर और सनमुख अचल होकर असा जुद्ध करैं कि दूसरा कोई ना करे हे सखे देखो इह कैसा धर्म धारी और धीरज का धाम सूरवीर है कि जिसने वाण ~~[illegible]~~ मार कर आकाश मार्ग पूर्ण कर दिया है तं अरजुन हाथ जोड कर कहने लगा कि हे भगवन आप की कृपा से मेरे को कुछ भी कठिन नही है असे कहि कर दोनो वीर जो हैं सो वडा घोर जुद्ध करते ~~[illegible]~~ भये और परस्पर असे लडे कि हार जीत का कुछ ज्ञान नहीं रहा फिर सुरथ जो है सो हाथ मे वाण पकड कर और प्रण करके कहने लगा कि हे जदुनाथ के सखे ~~[illegible]~~

(हाशिये पर: ...हि... / रणमे / अर्जुन... / व / ...)

आप हृदयमे कुछ चिंता और सोच मत करो क्योंकि इह तुमारा दास अभी जीवता है अब और ठौरसे वृती और ध्यान को उठाय कर रणमे मेरे नित नवीन प्राक्रम और सामर्थ को देखो कि भगवान के दासों को कैसे प्रसन्न करता है॥२३॥ चौपाई॥ पारथ जुत प्रद्युमन बल धामै॥ करिहौं समर तोष घन स्यामै॥ अस कहि शस्त्र धारि रण धीरा॥ दै दुंदभि रथ चढ्यो प्रवीरा॥ त्यो सुरथ रण अभय सिधारी॥ जै जै जै जदुवीर उचारी॥ आवत देखि तासु भगवाना॥ पारथ सन अस वचन वखाना॥ महा रथी अतिरथी जग गावा॥ सुरथ नाम रण मेदनि धावा॥ तुव जोरि हन्यो समर इहि वीरा॥ आवा मानि तास उर पीरा॥ अब न उचित इहि सनमुख तोरा॥ सुरथ अनन्य दास दृढ मोरा॥ या को विजय कठिन संसारा॥ महा वीर ध्रुव धीर उदारा॥ दोहा॥ जाहु सुरथ सन लरहु तुम धारि समर उर धीर॥ २४॥ टीका॥ फिर सुरथ पिता को कहता है कि हे नाथ अरजुन के सहित महा बली प्रद्युन और तिस के पिता घनस्याम भगवान को आज रण मे भली प्रकार तोष करूंगा अर्थात प्रसन्न करूंगा ऐसे कहिकर और शस्त्र धार कर ततकाल रथ पर आरूढ हो जाता भया फिर जै जदुवीर की उचार कर दुंदभी वजाता हूआ सनमुख रण को चल पडता भया तब जदुनाथ महाराज तिसको आवते को देखकर पारथ सों कहने लगे कि हे अरजुन इह सुरथ नामा राजा का पुत्र जो है सो महा रथी और अति रथी संसार मे विदत है तुम ने इसका भ्राता जो रण मै हत किया है सो कलेश हृदय मे मान कर अब परम कोप से अभय होकर रण भूमी को चला आता है ताते तुम को अब इसके सनमुख होना योग्य नहीं है

दोहा कहो जदुवीर

पुनि

पुनि

सरीर

ने रणभूमीमे तिसके केई रथ खंड खंड कर दिये
तो सुरथ भी कोप से लाल होकर ऐसा बाण मारा॥
कि अरजुन के गांडीव धनुष को टूक टूक कर डाला
और वीरे प्रधान बुद्धी और धीरज के धाम जब जब बा
ण मारता है तब तब जे जदुवीर की हुं उचारता है कि
र अरजुन ने दूसरा धनुष धार कर मुरारी भगवान के
चरन कमलों का ध्यान करके धनुषमे जोरते ही कान त
क खैंच कर बाण जो मारा तो तुरत ही सुरथ की भुजा
काट कर पृथवी पर गिराय दिई तो भी सो वीर भुजा से ही
न भया हुआ जदुवीर जदुवीर कहता रणमे सनमुख
चला आवता है तिस ते उपरांत अरजुन ने फिर तीन बा
न और मार कर तिस की दूसरी भुजा और दोनो चरन
भी काट डाले तो भी महा सूरवीर सुरथ रुंड वत भया
हुआ सनमुख ही आवता है तब अरजुन ने कोप से
एक बाण मार कर तिस का मुंड भी काट कर पृ
थवी पर गिराय दिया॥२७॥ चौपाई॥ लग्यो मुंड सो अ
रजुन छाती॥ गिरो भुवमि मुर्छित रिपु घाती॥ सुरथ
सीस हरि हृदय उमंगा॥ परस्यो निज पावन पद संगा॥
सुनि त्रीय तरन सो चरन प्रभाऊ॥ पार्षद रूप लयो सुभ
ताहू॥ पुनि जगाय पारथ प्रभु लीन्यो॥ बहुरि समलि
सकुन पति कीन्यो॥ जब आयो खगनाथ प्रवीना॥ सु
रथ सीस ताके प्रभु दीना॥ तास प्रयाग राज द्रुत जाई॥
डार्यो सीस भक्त जदुराई॥ सो धार्यो शंकर निज मा
ला॥ जानि प्रवीर भक्त जदु पाला॥ दोहा॥ सुरथ सुधन्वा
सरस सुभ सूरवीर द्वै लोय॥ जन अनन्य जदुवंस
मणि होहि न दूसर कोय॥ कहि सनमुख चैन स्याम तन
रण रुचि रुचिर हुलास॥ हरिदासन हरि कृपा ते ली
न्यो हरि पुर वास॥२८॥ टीका॥ तब सो सुरथ का मुंड जो
है सो पृथवी पर से तत काल उछल कर अरजुन की छाती

मे ऐसे वेग से जायकर लगा कि सो वीर घूमता हुआ मुर्छा
यकर पृथवी पर गिर पड़ा फिर दीनबंधू भगवान ने तिस सु
रथ के सीस को अपने चरन कमलों से परसन किया तब
गौतुम की स्त्री को तारना और पापी जनों को उधारना तिन चर
नों का प्रभाव जो था तिसतें सुंदर पार्षद रूप को धारन करले
ता भया तिसतें उपरांत भगवान कृपानिधान ने अरजुन को मू
र्छा से जगाय कर सावधान कर लिया और फिर खगराज
जो गरुड़ हैं तिन्हें को दीनबंधू याद करते भये
सो महा प्रवीन और सूक्षम गती वाले ज
ब आय गये तब कृपासिंधू ने समुझाय कर सुरथ का सीस जो
था सो गरुड़ को दे दिया तिसने जाते ही सो जदुनाथ के भक्त
का सीस प्रयाग राज मे डाल दिया तब शंकर भगवान ने
कृस्न भक्त का सीस जानकर बड़े सनमान पूर्वक अपनी रु
ंड माला मे धारन कर लिया तातें सुरथ और सुधन्वा के स
मान सूरवीरों मे प्रधान जदुनाथ भगवान
के चरन कमलों के भरोसे वाला सत्य सेवक और दूसरा को
ई नहीं होगा कि देखो जिन्होंने बड़े उत्साह और हुलास
से घनस्याम भगवान के सनमुख रण विलास करके
भगवान की कृपातें भगवान के
निरमल धाम को प्रापत कर लिया है ॥२८॥ चौपाई ॥
तब हत सुतन हंसधुज देखी ॥ भयो शोकरत दुखित बसेखी ॥
पै अब लेव जानि जिय एहू ॥ चल्यो सरन प्रभु दीन सनेहू ॥
उर अभिलाख लाख असठाना ॥ करहुं जाय दरसन भगवाना ॥
बजत निसान भूप जब आयो ॥ कृपानकेत मरम तब पायो ॥
जानि दास निज भक्त सहायो ॥ भुज पसारि आगल द्रुत धायो ॥
नृप लखि प्रभुहिं कृपा जुत आयो ॥ भयो हरखरत शोक वि
हायो ॥ किये प्रणाम दंडवत धरनी ॥ जै जै जै जदुपति मुख
बरनी ॥ प्रेम विवस तब दीन दयाला ॥ लिये लगाय किये मति

पाला॥ दोहा॥ बहुरि भन्यो प्रभु वदन अस सुनहु धरम धुज राय॥ धन्य धन्य तुव धन्य जग जुत समाज समुदाय॥ २८॥ टीका॥ तव हे सुधुज राजा जो है सो अपने पुत्रों का मरना देख कर शोक करके बड़ा दुखी हो जाता भया, परन्तु जब भगवान कृपानिधान के बिना और कोई आश्रय नहीं देख पड़ा तब ~~भगवान~~ दीनबंधु के दरसन की अभिलाखी वाला होकर तिनों चरनो की शरण लेने को चला आवता भया इस प्रकार जब राजा को आवते देखा तब दीन हितकारी भगवान तिसको अपना दृढ सेवक जानकर और बड़े प्रेम से दोनो भुजा पसार कर आगे ही मिलने को बड़ी उतायल से धाय चले तव राजा दीना नाथ को कृपा के सहित आवते देख कर हरष मे मगन भया हूआ सब शोक को त्याग कर जै जै जै जदुवीर कहता हूआ दंडवत चरनो पर गिर पड़ा तब दीन याल भगवान प्रेम के वश भये हूये तिसको उठायकर तुरत हृदय मे जुड़ाय लेते भये फिर कृपा दृष्टी से प्रसन्न होकर कहने लगे कि हे धरम मे उजागर नृप मै तेरी का बड़ाई करूं ~~मैं~~ आज जगत मे तेरा जीना और जनम सफल है और तू धन्य है तेरा संपूर्ण समाज और परिवार भी धन्य है॥ २८॥ चौपाई॥ तुव सुत सदृश त्रिभु वन माही॥ मोर अनन्य दास कउ नाहीं॥ करहु न पुत्र शोक गुण ग्रामा॥ निवसत सो विकुंठ मम धामा॥ तव कर जोरि भन्यों नरराई॥ सुत पितु मात भ्रात समुदाई॥ दीना नाथ तुमहु जग मेरे॥ सपने हु शोक न आवत नेरे॥ अब कीजिये पावन जन गेहू॥ धारि चरन निज दीन सनेहू॥ प्रेमाकुल अस विनय उचारी॥ गिरयो धरनि नृप सुरति बिसारी॥ तव कृपाल कल करन उठाई॥

तू अब मेरे बाण का प्रमाण सुण कि जो तूं कहें तो तेरे को बाण मार कर हस्तिनापुर अर्थात दिल्ली में पहुंचाय देऊं की पाताल में की किसी देस की दिसा ओं में कि अथवा कहो तो आकाश को उडाय देऊं ॥ २६ ॥ चौपाई ॥ तब अरजुन सन कह जदु राई ॥ सुरथ सत्य प्रण मृखा न भाई ॥ जो अब निज कल्यान चहे हो ॥ तो इहि पृथम विरथ करि देहो ॥ तब पारथ पद सुमरि मुरारी ॥ कियो विरथ द्रुत बान प्रहारी ॥ सुरथ तुरत दूसर रथ लीना ॥ सोऊ हनन पारथ रण कीनी ॥ तास बहुरि तीसर रथ धारा ॥ दलन कीन सोऊ पंडु कुमारा ॥ अस प्रकार सत सि धन नासा ॥ किये समर पारथ भट नासा ॥ तब कोपित भट सुरथ सुमज्जन ॥ कह्यो धनुष गांडीव अरजुन ॥ जब जब हनत बाण मति धीरा ॥ भनत जैति जै जै जदु बीरा ॥ तब पारथ दूसर धनु धारी ॥ सुमरि चरन जल जात मुरारी ॥ मारयो बान तान लग करना ॥ सुरथ बाहु दासो करि धरना ॥ तबहु चल्यो सन मुख रण धाई ॥ भुज बहीन सुमरत जदु राई ॥ तीन बान पुनि अरजुन मारे ॥ भुज जुग चरन तास कटि डारे ॥ दोहा ॥ यदपि सुरथ भयो रुंड वत तदपि नर क्यो प्रवीर ॥ कह्यो मुंड तहि हनत सर तब पारथ रणधीर ॥ २७ ॥ टीका ॥ जब सुरथ ने इस प्रकार प्रण करके कहा तब भगवान अरजुन से कहने लगे कि भाई सुरथ का प्रण सत्य है झूठा नहीं जो अब तू अपनी कल्यान चहता है तो इस को पहिले ही विरथ करदे तब अरजुन ने भगवान के चरनो की वंदना करके तुरत ही बाण मार कर तिस को विरथ करदिया तब सुरथ ने ततकाल दूसरा रथ धारले (हो) लिया और पारथ ने सो भी भंगन करदिया फि र तिस ने तीसरा रथ धारन किया अरजुन ने बाण के प्रहार से तिस को भी चूर चूर कर डाला इस प्रकार पारथ

राजा अत्यंत हरष और आनंद को प्रापत होता भया फिर सब को वारवार सीस नाय कर वड़े आदर सतकार से अपने नगर को ले चला तहां भवनों मै ल्याय कर अत से प्रीती और भक्ती से कृपासिंधू भगवान का और भगवान के पुत्र सखा और दासों का विधीअनुसार पवित्र पूजन करके सब को भली प्रकार प्रसन्न किया और फिर मणियों करके जटित भये हूये सुवर्ण के नाना भूषण और वड़े सुंदर दिव्य वस्त्र तिस यज्ञ वाले घोड़े के सहित मंगवाय कर राजा ने प्रीती पूर्व कृस्नभगवान को अरपण कर दिये तव तिस भक्त की ऐसी भक्ती और प्रीती देखकर दीन वंधू अतहे प्रसन्न हो जाते भये॥ ३०॥ चौपाई॥ परम मोद वस दीन सनेहू॥ नृप कहं दीन दान वर एहू॥ सुर दुरलभ जग भोग न भोगी॥ लेहुं अंत गति दुर्लभ जोगी॥ ममपुर वसत दास मम जाहीं॥ करहु निवास भूप निज ताहीं॥ तव कर जोरि चरन सिरनाई॥ विनय भूप अस वदन अलाई॥ मोहि तास्यो तुव दीन सनेहू॥ पै अभिलाष नाथ जीय एहू॥ जौ लो जीवहु जगत उमंगा॥ तौ लो रहहुं जनन तुव संगा॥ एवमस्तु भगवान उचारे॥ भक्त प्राण प्रीय तुमहुं हमारे॥ पांच दिवस दयानिधी ताहीं॥ किये निवास नगर नृप माहीं॥ पुरजन नृपति सहित परिवारा॥ किये कृतार्थ कृपा अगारा॥ सव कहं करि सनाथ भगवाना॥ वहुरि भवन निज कीन पयाना॥ अस इह चरित जथा मति भावा॥ मै निज वदन हेत जन गावा॥ दोहा॥ सुरथ सुधन्वा हंसधज भक्त प्रधान सुहाय॥ जहि सुत सखा समेत रण नंद किशोर रिझाय॥ क्षत्रि धरम पूरो कियो लियो सुजस संसार॥ दियो वास प्रभु भक्ति वस निज वैकुंठ अगार॥ ३१॥ टीका॥ तव दीन सनेही प्रसन्न होकर तिस को इह वर देते भये कि हेरा

(margin notes: के, न, भगवान)

जन अब तुम जगत मै देवताउं को दुर्लभ जो भोग हैं
सो भोगकर अंत को जोगी जनो की सुंदर गती कि जो वडे
कठिन हठ और साधन से पावते हैं प्रापत करो और मेरे
पुर मै जहां मेरे दास वास करते हैं तहां ही निवास करो
तव हाथ जोडकर [और वारंवार सिर नायकर] राजा प्रार्थना करने लगा कि हे दीन
हितकारी भगवान तुमने मेरे को तार दिया है परन्तु भक्तपा
ल अब एही विनती करता हूं कि जव लग इस संसार मै
जीऊं तव लग तुमारे ही दासों के साथ मिला रहूं तव
भगवान कृपानिधान कहने लगे कि हे भक्त ऐसे ही हो
गा तुम मेरे दृढ सेवक और प्राणों से भी प्यारे हो ऐसे
कहिकर दीनवंधू ने तहां राजा के नगर मै
वडे आनंद से पांच दिन निवास किया और अपनी कृ
पा से परिवार के सहित राजा और सब पुरवासियों को
जगतमै कृतार्थ करदिया अर्थात भगवान की कृपा से सब
मोक्ष को प्रापत हो गये इस प्रकार सव को सफल करके
फिर भगवान कृपानिधान अपने भवनो को चले आव
ते भये नाभा दास कहते हैं कि हे गुरु महाराज इह
गाथा जो है सो मैंने वुद्धी के अनुसार जैसी होस
की तैसी गायन कर दई है इह सुरथ सुधन्वा और
हंसधज भगवान के दृढ सेवक और भक्तों मै प्रधा
न कि जिन्हों ने सखा और पुत्रों के सहि
त नंद किशोर को रण मै रिझायकर और अपना
छत्री धरम पूरा करके वडे सुजस के सहित भ
गवान का सुंदर वैकुंठ धाम जो है सो प्रापत कर
लिया ॥ ३१॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथ भगवद
भक्ति महातम भाषा टीका यो सुरथ सुधन्वा च
रित वरणने नाम सरग ०

अथ भक्तिसार चरित्र

दोहा॥ अव मुकुंद पद प्रीति दृढ करन हरन दुखमू
ल॥ भक्ति महातम करहुं कल कथन सकल सुख
मूल॥ चार चक्र भगवंत को विदत विश्व अवतार॥
भक्ति सार मुनि प्रकट भे करन लोक उद्धार॥ चौ
पाई॥ सिंधु तीर महिसुर पुरि कहिहैं॥ भार्गव विप्र
एक तहे रहिहैं॥ तहि दुज विपुन जाय तप कीनो॥
श्री माधव चरनन मन लीनो॥ देखि देव देवन पति
जोई॥ परम उग्र तप दुज वर सोई॥ उरपत रूप
वंत मन हरनी॥ सुंदरि विप्र वियन तप करनी॥ रचि
मायक द्रुत दीन पठाई॥ मोहनि मनहुं तपस ढिग
आई॥ दुज विलोकि तांकर अकुलाये॥ छूट्यो ध्या
न मदन वसधाये॥ अस वे घृत महि देव अनेगैं॥ र
ति विलास कीन्यो तहि संगैं॥ गर्भवती तव भई सु
भामा॥ लागी वसन तास दुज धामा॥ असजव
वीति गये नव मासा॥ अमघपिंड जनन्यो त्रीय
तासा॥ दंपति विमन भये लखि ताहू॥ सुत उप
जन गृह मिट्यो उछाहू॥ रह्यो महान वेतवन
ताहीं॥ डास्यो जाय पिंड तहि माहीं॥ पुनि मुनि
सोऊ सहि त निज भामा॥ करत भयो सुर
पुर वश गामा॥ दोहा॥ रह्यो पिंड तहि विपन
मध फुट्यो पाय कछु काल॥ प्रकट्यो बालि
क ललित मृदु मूरति तेज विसाल॥ १॥ टीका॥
अवँ मुकुंद जो भगवान हैं तिनके चरन कमलों
मे प्रीती के दृढ करनेवाला और दुख दारिद्रों के
के हरनेवाला सरव सुखों का मूल॥ भक्ती का सुंदर
महातम जो है सो कथन करता हूं कि भक्ती सार

लिये भूप निज हिये जुडाई॥ अनपायनि निजभक्ति रसाला॥ नृपहिं दीन प्रभु दीन दयाला॥ पुनि पारथ प्रद्युमन सन ल्याई॥ कृपासिंधु नृप भेट कराई॥ औरहुं मिले सकल हरिदासा॥ हृदय हंसधुज मोद प्रकासा॥ सब कर बार बार सिर नाई॥ सादिर पुर कहें चल्यो लिवाई॥ भवन ल्याय जुत भक्ति अभेवा॥ कीन्यों विधि जुत पूजन देवा॥ पूजि सखा सुत दास तहोंहीं॥ तोषत कियो भूप सब काहीं॥ पुनि केचिन आभरन सुहाये॥ मणिगण दिव्य वसन मनभाये॥

दोहा॥ कीने अरपण कृस्न कहें नृप मख वाजि समेत॥ भक्ति प्रीति लखि भक्त अस हरखे कृपा निकेत॥ ३०॥

टीका॥ फिर भगवान कहते हैं कि हे राजन तेरे पुत्रों के समान तीन लोक मे मेरा दृढ सेवक और कोई नहीं है अब तिनका शोक मत करो सो तो मेरे वैकुंठ धाम मै निवास करते हैं तब राजा हाथ जोड कर विनती करने लगा कि हे दीनानाथ मेरे तो माता पिता पुत्र भ्राता एक तुमहीं हो तांते मै शोक को सपने मै भी नहीं देख सकता हूं अब हे दीनबंधू ~~और कृपासिंधू~~ कृपा करके चलिये और मेरे दीन के घर को पवित्र करिये इस प्रकार विनती करता करता प्रेम मे व्याकुल भया हुआ राजा अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पडा तब कृपासिंधू भगवान ने तुरत ही उठाय कर अपने हृदय से लगाय लिया फिर अतसे प्रसन्न होकर अपनी अनपायनी भक्ती ~~और जो किसी को~~ कि जो अनेक जतन और हठ किये से भी प्रापत नहीं होती सो कृपानिधान तिस राजा को देते भये फिर आनंद पूर्वक पारथ और प्रद्युमन से राजा हंसधुज की भीट कराई अनंत परस्पर मिलाप करवाया तिसतें उपरांत और ~~के~~ भगवान के दास भी सब आय कर मिले ~~और~~ तब

वणाथा तिसमे जायकर तिस पिंडको डालआये तिस
तें उपरान्त काल पायकरके सोमुनी तिस अवनीस्त्री
के सहित भगवान का सुमरणी करता हूआ शरीरकोत्या
गकर परलोक को चलागया और वह मांसकापिंड
जो तिसने वैंतोंके वणमे छोड़दियथा सो समय पा
यकरके फूटा और तिसते अत्यंत सुंदर दिव्यरूप
वपु ते जस्वी बालक प्रकट हो जाता भया॥१॥ चौ
पाई॥ विपुन जन्तु हरि कृपा प्रसादू॥ को नभयो तह
बालक बाधू॥ सीतल तरु तर रोवत बाला॥ होत
भयो कछु वपुष विशाला॥ महिसुर पुर मंदिर छ
विछाये॥ जो नारायण देव सुहाये॥ सो अनाथ ल
खि संजुत लालन॥ रहे करत कानन सिसु पालन॥ अ
वसर एक सुप कृतवारे॥ वेत लेन तहि विपुन सिधारे॥
आवत तिनहिं देखि भगवाना॥ भये अंत्रे हित कृपानिधा
ना॥ तव बालक अपने प्रभु काहीं॥ हेरन लाग्यो विक
ल मन माहीं॥ पायो जब न बाल भगवाना॥ तब ऊंचे
स्वर रोदन ठाना॥ सुनत बाल रोदन असतोई॥ आय
निकट अचरज बश होई॥ भनत परस्पर बाल नवे
ले॥ परो विकल कस विपुन अकेलो॥ वृद्धो मनुज
एकतिन माहीं॥ तीके सदन रह्यो सुत नाहीं सो बा
लक कहे प्रीति समेता॥ ल्यायो जीयपें मुदित नकेता॥
बोल्यो प्रीय वनते भगवाना॥ रह कीन्यो हमरे सुतदा
ना॥ भामनि चलहिं रुचिर संसारा॥ अवनिश्चय वर
वेस हमारा॥ दोहा॥ सुनि भामनि पतिमुख वचन सि
सुहिं लेत अनुरागि॥ निज सुत सम करि नवललित
लालिन पालिन लागि॥२॥ टीका॥ तव वणकेजी
व जंतू जो थे सो भगवान की कृपातें तिस बालकौं की र
ता हीं करतेभये इसप्रकार सो बालक एक सीतल
वृक्ष के नीचे कवी रोता कवी खेलता॥ दिन पायकर

ख

कुछ

कारीसे पुष्ट होजाता भया तव तिस ब्राह्मणों नगर मै जो मंदर था तिस देवभवन था तहां के भगवान तिस बालक को अनाथ जानकर बडी प्रीतीसे वणमै पाल न करते रहे एक दिन भोजन बनानेवाले लांगरी जो थे सो बेतं लेने के वास्ते तहां वणमै चले आये तव भगवान तिन को आवते देखकर तुरत लुपत होजाते भये और बालक अपने प्रभू को लुपत भये जानकर इधर उधर देखने लगा जब तिसने भगवान कृपा निधान नहीं पाये तव दुखी होकर बडी ऊची स्वर से रोवने लगा तव सो लांगरी बालक को रोवं देखकर बडे आचर्ज केवल भये हुये तिसके पास चले आये और परस्पर कहने लगे कि देखो इह अतसे सुंदर नवीन बालक इहां वणमे अकेला क्योंकर पडाहै तिनमै एक बहुत बूढा था और तिसके घरमै पुत्र भी नहीं था सो तिस बालक को प्रीती पूर्वक घरमै ल्याय कर अपनी स्त्री की गोदमै बिठाय कर कहने लगा कि हे प्यारी इह बालक भगवानकी कृपा तें हमको वणते प्रापत भयाहै अव इसतें संसारमै हमारा वंस निस्चय करके चलेगा तूं भामनी इसकी पालना जोहै सो प्रेम प्रीतीसे भली प्रकार कर ऐसे पती के मुखसे वचन सुनकर सो स्त्री बालक को गोदमै लेकर बडे हरख को प्रापत भई और वार वार मुख चूम कर दिनदिन सनेह पूर्वक तिसका पालन करने लगी॥२॥ चौपाई॥ भा जव पंच वरष कर बाला॥ भयो दिवस इक चरित रसाला॥ क्षुधित बाल मुख रोदन ठाना॥ तव इह मरम जठिर पितु जाना॥ सिसु हि कराय पान पै दीना॥ तहिं उच्छिष्ट आपु पुनि लीना॥ करत पान दम्पती अयाने॥ भये तुरंत तरुण विसमाने॥

"कैवलभये हुये" "पास चले आये" "और वणमै अकेला"

२३२

232

ल

रूणा था तिसमे जायकर तिस पिंड को दी आये तिसते उपरांत काल पाय करके सो मुनी तिस अपनी स्त्री के सहित भगवान का सुमर्ण करता हू शरीर को त्याग कर परलोक को चला गया और वह मांसका पिंड जो वे तीके वरणमे तिसने छोडि या था सो समय पाय करके फूटा और तिसतें अत्यंत सुन्दर दिव्यरूप वाला वरा तेजस्वी बालक प्र कट होजाता भया॥

तब भीमनि दूसर सुत जायो॥ तास नाम कनि कृष्ण धरायो॥ जेष्ठ पुत्र हरि भक्त सुहाये॥ भक्तिसार जग नाम कहाये॥ दहुन परस्पर प्रेम सुरीती॥ तिसु पनतें हरि चरनन प्रीती॥ गुरु समान कनि कृष्ण विचारी॥ करत भजन सेवन व्रत धारी॥ भक्तिसार कहे जदुपति दाया॥ शास्त्र पुराण ज्ञान उर छाया॥ कनी कृष्ण कहे सकल सिखावा॥ सविधि जोग विज्ञान सुहावा॥ नित संतोष भूत भवदाया॥ श्रीपति चरन नलिन मन लाया॥ वैठि इकांत जुगल कल भाई॥ करहिं सुमर्ण दुग्ध निध साई॥ दोहा॥ करि करि ग्रनके विचार उर मथि सब शास्त्र पुराण॥ हनत सकल मत मन्यो मत परम तत्व भगवान॥२॥ टीका॥ जब सो बालक पेचँव र्षका भया तब एकदिन ऐसा चरित्र हूआ कि वे बालक वुध्या करके व्याकुल भया हूआ रोदन करनेलगा पिताने तिसको भूखा जान कर तुरत ही एक पात्र मे दूध पाय कर बडी प्रीतीसे पुत्र पुत्र कहि करके पिलाय दिया और तिस पात्रमे बालकका जूठा कुछ दूध जो बचाया

मुनी प्रतत्त सुदरसन चक्र के अवतार और संसार
मै लोगों का उद्धार करने के वासते जिस प्रकार प्रकट
होते भये सो सुनो कहते हैं कि समुद्र के किनारे पर
एक ब्रह्मणों की नगरी थी और तिस मै एक भार्ग
व संज्ञा करके ब्रह्मण रहता था तब तिस ब्रह्म
ण ने वणमै निरजन अस्थानपर जायकर और तहां
द्रिढता पूर्वक बैठ कर श्री माधव भगवान के चरन
कमलों मै मन को लीन करके तिनका अैसा भारी तप
किया कि तिस को देख कर देवताउं के सहित इंद्र जो
है सो बड़ा भयभीत होकर कांपने लगा तब तुरन
ही एक अतसे रूपवंत और मन के हरने वाली मा
या की वचित्र स्त्री रचकर ब्रह्म की तप भंगन क
रने के वासते तहां तिसके पास वण मै भेज देता
भया सो मानो मोहनी रूप बनी हूई तपस्वी ब्र
ह्मण के पास वडे करतोंहूंसे चली आई
तब ब्रह्मण तिस के रूप को देखता ही काम कर
के पीड़त और व्याकुल होगया तप मै जो ध्या
न लगा हूआ था सो सब छूट गया कामकर
के ग्रसा हूआ धाय कर तिस मोहनी साथ
~~तिस विलास~~ भोग विलास का सुख लेता भया
तब सो स्त्री गर्भ वती होय गई और तिसी ब्र
ह्मण के घर मै निवास करने लगी इस प्र
कार ~~तिसके~~ जब नौ महीने वतीत होगये तब तिस
के गर्भ तें एक मांस का पिंड जनमता भया ~~तब~~
तिस की स्त्री मरता दोनो देखकर अतसे निरास होगये
घर मै पुत्र के जनमने का उतसाह जो था सो सब
मिट गया तहां सामीप ही वैतों का जो वड़ा वण

२३२ 233

कूला॥ लखि अनन्य निज भक्त अतूला॥ समय एक निसि अर्ध सुहाये॥ भक्त सुखद भगवन प्रकटाये॥ पुंडरीक लोचन अरुन्यारे॥ भुज आजान घलेन मद हारे॥ तुंड कीर कल नासिक सोहन॥ अधर अरुन छवि बिंब बिमोहन॥ उर बिसाल वनमाल सुहाई॥ भाल तिलक चंदन छवि छाई॥ चारु सफरि कृत कुंडल करना॥ भृकुटि मयंक वंक मनहरना॥ मधु समाज निदरत कछु कारे॥ भक्तिसार कबि कृष्ण निहारे॥ धन्य जनम जीवन निज जानी॥ परे चरन जुग जोरित पानी॥ लखि अनन्य जन मन वच काया॥ दीनदयाल कीनी निज दाया॥ अनपायनि सुचि भक्ति सुहाई॥ तिनहिं दीन प्रमुदित जदुराई॥ किये सनाथ नाथ संसारा॥ भये लुपत पुनि भक्त उवारा॥ तवतें जुगल भक्त वडभागे॥ भ्रमय धरनि तल विचरन लागे॥ पुनि विचार तिन मानस ठाना॥ अब कहुं विपन भजिय भगवाना॥ हृदय गुनत कनि कृष्ण समेता॥ भक्तिसार किय विपुन नकेता॥ निरजंन सथल पाय मतिधीरा॥ लागे भजन जुगल जदुवीरा॥ करहिं विमल वेदांत विचारा॥ समय एक तहे वृषभ सवारा॥ आये उमा सहित त्रिपुरारी॥ ध्यान वचित्र भक्तमय हारी॥ लसत भाल विधु वाल नवीनो॥ उज्जल भस्म रमन तन कीनो॥ गवर काय कल कांति नयारी॥ सजे भुजग भूषण मदनारी॥ कर त्रिसूल उर हेरुन माला॥ स्रवत सीस सुरसरित रसाला॥ भक्तिसार कहे कानन देख्यो॥ मानहु पुंज तेज तप लेख्यो॥ तव कर जोरि उमा अस काहा॥ इह हरि भक्त नाथ कोउ राहा॥ मोरे जानि परत भृषकेतू॥ वसत इकांत विपुन तपहेतू॥ करहु नाथ चलि निकट सुहावा॥ इहि श्री दास दरस न मन भावा॥ दोहा॥ सैल सुता कर वचन अस सुनि म

हेस जन नेहु॥ चलि आये द्रुत उमा जुत भक्तिसार सुभगेहु॥ लखि मूरति तप तेज मय जानि भक्त भगवान॥ ह्वै प्रसन्न मुख मांग वर सेकर वचन वखान॥ ४॥ टीका॥ तव तिन्हों ने नास्तिक वाद जो था सो सब नास कर दिया और ~~सब को कल्यान के देने वाला~~ आस्तिक वैस्नव मत जो है सोई ~~जहां तहां प्रचलित~~ शास्त्र के बल से जहां तहां स्थापत किया और रात्री दिन सुंदर ज्ञान और उपदेश सुनाय सुनाय कर विमुख पुर्ष जो थे सो भगवान के सनमुख कर दिये अर्थात तिन को भगवान के चरनो की प्री हो गई तब दीन बंधू तिन की ऐसी दृढ भक्ती देख कर अत्यंत हीं प्रसन्न होय गये एक दिन आधी रात के समय भक्तपाल भगवान जो हैं सो कैसे ध्यान से प्रकट हो जाते भये कि पुंडरीक जो कमल तिस के समान कुछ लाली मय जिन के नेत्र और दुष्ट जनो का मद दूर करने वाली लंबी भुजें शुक जो तोता है तिस के समान मनोहर नासका और बिंब जो कनूरी फल है तिस को लज्जा देने वाले अति सुंदर लाल ओष्ट बडा विशाल हृदय और तिस पर शोभा देती है तुलसी की माला मस्तक में सजा हुआ चंदन का मनोहर तिलक और कानो में मकरा कृत कुंडल तेसी हीं बांकी अर्थात टेढी ~~भृकुटी~~ और भ्रमरों के समाज वत सिर के स्याम केस ऐसे ध्यान के सहित भगवान कृपानिधान का दरसन करके कनिकृष्न और भक्तिसार दोनो भ्राता संसार मे अपना जीवना और जनम सफल मानते भये और त्राहि त्राहि कहते हूये भगवान के चरनो पर गिर पडे तव दीना नाथ ने मन वचन काया करके तिन को अपने दृढ भक्त और सेवक जान कर बडी कृपा से अपनी अन पायनी भक्ती जो है सो देते भये इस प्रकार तिन को संसार मे सनाथ करके फिर आप दीन नाथ तहां हीं लुपत

(margin: ^भवें)

234

होकर अपने परम धाम को चले गये तव तें सो दोनो भ्राता भगवान के प्रवीन भक्त अभय होय कर पृथवी तल पर विचरने लगे फिर तिन्होंने अपने मन मे विचार किया कि अव कहीं बैठ कर भगवान का भजन करिये ऐसे विचार कर कनिकृष्ण के सहित भक्तिसार जो हैं सो वण मे एकांत स्थान देखकर और तहां कुटिया वनाय कर जदुवीर महाराज के भजन मे लीन होजाते भये तव एक समय तहां वैल पर चढे हूये पारवती के सहित महादेव जी आये सो कैसे शोभायमान थे कि मस्तक मे वाल चंद्रमा विराज मान है जिनके और अंगो मे रमाई हुई उज्ज भस्म अत से मनोहर गवंर शरीर हाथ मे त्रिशूल और गले मे धारी हूई रुंड माला तैसे हीं सरपों के सव भूषण और सिर मे उलझी हूई गंगा इस प्रकार कामदेव के शत्रु शिव कर भगवान ने जव वण मे आय कर तिस भक्तिसार को देखा तो साक्षात मानो एक तप और तेज का पुंज हीं देख पड़ा इतने मे गौरी कहने लगी कि हे नाथ इह कोई वैस्नव भगत है जो इहा वण मे तप निमित्त अकेला हीं वास करता है कृपा करके जो इसके सामीप चलो तो भगवन इस भक्त का दरसन और प्रीती भी हो जावेगी ऐसे भवानी का वचन सुन कर महादेव तुरत हि तिसके पास चले आये तव भक्तिसार को तप और तेज वाला भगवान का भक्त जान कर शिव प्रसन्न होकर कहने लगे कि हे भक्त अव जो तुमारे मन की रुची है सो वर मांग मे तेरे को देता हूं ॥८॥ चौपाई ॥ हमरो दरसन विफल न होई ॥ पावे जन वांछित मन जोई ॥ भक्त प्रधान गुनत जिय काहा ॥ मोरे कछु न मनोरथ राहा ॥

भक्तिसार

कृष्ण और

सो तिसके माता पिता दोनो पीकर अग्र्याय गये
और तिनके शरीरोंकी जुवा अवस्था होयगई
इस अदभुत को देखकर सो वडे आचर्ज को प्राप्त
हो जातेभये तव समय पायकर तिस भामनीने
और दूसरा पुत्र जनमा तिसका नाम कनि कृस्न रा
खा जेठेपुत्र भगवानके दृढ भक्त भक्तिसार
नाम करके उजागर और छोटे कनि कृस्न तिन दो
नो भ्राताकी भगवान के चरनोमे प्रीती और परस्पर
वाल अवस्थासे सने ह और प्यार अधिक ही
होता गया कनि कृस्न जोहै सो अपने वडे भ्राता
भक्तिसार को गुरू समान जानकर तिनके पूजन औ
र सेवनमे रात्रीदिन लीन रहता और भक्तिसार
जीको कृस्न भगवानकी कृपासे शास्त्र पुराण विद्या
ज्ञान विराग सब प्राप्त था सो तिन्होंने प्रीतीपूर्वक
कनीकृस्न और विधि अनुसार अपने छोटे भ्राता कनी
कृस्नको सब सिखाय दिया और नित्य संतोष सरव जी
वोंपर दया भगवान के चरन कमलोंमे सदैव मन
को लगाय रखना इत्यादि सुंदर उपदेश करके तिस
सिखायकर
तें उपरान्त दोनों भ्राता नित्य एकान्त स्थानमे आस
न लगावते और क्षीरसमुद्रमे शयन करनेवाले
लक्षमीनाथ भगवान जोहैं तिनके सुमर्ण और ध्यान
मे लीन रहते इसप्रकार तिन्होंने अनेक विचारों
से शास्त्र और पुराणों को मथन करकर और सव मतों
को खंडन करके एक सुंदर और सरव सुखोंके देने
वाला वैस्नव मत जोहै सोई सिद्ध कर लिया॥३॥ चौ
पाई॥ नास्तिक वाद किये सव नासा॥ वैस्नव मत
सिद्धांत प्रकासा॥ करि करि सुचि उपदेस न ज्ञाना॥
किये विमुख सनमुख भगवाना॥ भये देव तिनपर अनु

भक्तिसार

२३५

235

औरभक्तप्रधान केपाउंकी अंगुलीकी इहदोनो अगनी जोहैतिस
कोतेज मिलकर प्रलेकालकेसमान सृष्टीको दग्ध क
रनेवाला आकाशमे व्यायत होजाता भया॥५॥ चौपाई॥
जानि परयो त्रैलोक जराना॥ तुरँ समन हित ज्वाल महा
ना॥ प्रले मेघ प्रकट्यो त्रिपुरारी॥ सिंधुर सुंड दंडवत
धारी॥ लग्यो वारि वरषन तत आई॥ अप्रमाण कछु व
रनि न जाई॥ पै नहिं शांति भयो कछु ज्वाला॥ व्यायो तेज
लग गगन विसाला॥ भक्तिसार हरि भक्त महाना॥
रह्यो ठाढ तहां अचल अमाना॥ देखि प्रभाव अनेत
अपारा॥ साधु साधु सिव वदन उचारा॥ विविध प्रसंस
त तासु पुरारी॥ कीन्यो मुदित प्रदक्षण चारी॥ लषि अ
नन्य जन कृत्स अमाना॥ कीन्यो प्रणति शंभु भ
गवाना॥ दोहा॥ भक्तिसार वहु वार रटि रुचिर सु
जस जुत तास॥ करि प्रणाम देपति वहुरि कियेग
वन कैलास॥१॥ टीका॥ तव तिस तेज करके ऐसे
प्रतीत होताकि अव तीनोलोक भस्म होतेहैं इस
प्रकार शिवजी महाराजदेखकर तिस प्रचंड अगनी
की शांतीके वास्ते तुरतहीं प्रलेमेघ जोहैं सो प्रकट
कर दिये तव हस्तीकी सुंड के दंड प्रमाण जलकी
धारा पृथवीपर पडने लगी ऐसा अप्रमाण जल
वरसा किजिसका कोई प्रमाण ही नहीं था परन्तु सो
अगनी कुछभी शांतीको प्रापत नहीं भई आका
शपर्यंत तेज वरावर व्यायत होरहाथा और भक्तो
मे प्रधान भक्तिसारजी तहां अभय और अचल होकर
स्थित हो रहेथे ऐसे तिनका अनन्त प्रभाव देख
करके शंकर भगवान मुखसे साधु साधु उचारन

करते हूये तिसकी अनेक शलाघा और बडाई करने
लगे तिसतें उपरान्त फिर चार प्रदक्षण देकर श्रीकृ ५८
ष्ण भगवान का दृढ सेवक जानकर प्रणामभीकिया और
फिर तिसभक्तसूर्षकौ वारवार सुजस गायन करकर और
धन्य भक्तिसार धन्य भक्तिसार ऐसे शलाघा करते हूये
उमाके सहित शंभु भगवान बडे आनंद पूर्वक वंदना करके
अपने कैलाशको चले जाते भये॥२॥ चौपाई॥ भक्तिसार
कले कानन ताहू॥ वसत रहे सुमरत जदुनाहू॥ वासर
एकभक्त व्रतधारू॥ सियत रहे निज गूदरि चारू॥ तेज
पुंज इक सिद्धन राई॥ चढ्यो सिंह नभ मारग जाई॥
जब आयो तहि थल वडभागे॥ रूक्यो सिंह तव चलत
न आगे॥ कीन्यो यद्यपि जतन वसेषा॥ तद्यपि च
लत सिंह नहिं लेषा॥ तव चहुं कित चितवन मग्हि ला
गा॥ देख्यो भक्तिसार वड भागा॥ बैठे सीयत गूदरी चा
रू॥ मनहु तेज तप मूरति धारू॥ तहिपे आय भीत मन
मानी॥ कियो प्रणाम जोरि जुग पानी॥ दोहा॥ लखि जीरण
गूदरि भन्यो सिद्ध जुक्त करदेई॥ तुव अनन्य सिय
पीय सुजन इह नउचित मुनि तोहि॥१॥ टीका॥ तव
भक्तीसार जोहै सो कृष्ण भगवान को सुमरते हूये तहो
तिस वनमे ही काल वतीत करते रहे एकदिन सो
भक्त व्रतधारी अपनी गोदडी के सीवनेमे लगे हूयेथे तव
तेजका पुंज एक सिद्धोंका राजा महा जोगीश्वर सिंह
जो शेर है तिसपर सवार भयाहूआ आकाश मारग मे
चला जाताहै ~~जब~~ सो जब भक्तीसारके वरावर आ
य पहुंचा तव तिसका सिंह तहांही रुक गया आगे चल
नेकी सामर्थ नहीं रही जद्यपि सिद्धने वहुत ही जतन
किये तद्यपि सो आगे नही चलसका तव सो सिद्ध वडे

भक्तमाल

भक्तिसारकी

आचर्ज को प्रापत होकर प्रथवी पर चारो पासे देख
ने लगा तो क्या देखा कि मानो तप और तेज
की मूर्ती धारकर भक्तजनोमें उत्तम और बड़ भागी
भक्तीसार जोहैं सो बैठे गोदड़ी सींवते हैं तब सि
द्ध तुरत आकाश से उतर कर और डरता हूआ ति
नके पास आय कर दोनो हाथ जोड़ कर दंडवत प्रणा
म करता भया और तिनकी जीरण अर्थात पुरानी
गोदड़ी देख कर कहने लगा कि हे महातमा तुमतो
सीताके पती रामचंद्र भगवान जोहैं तिनके परम
प्यारे और प्रवीन भक्त हो इह तुम को जोग्य नहीं है
"७" चौपाई" तजि गूदरि तुव लेहु प्रवीना" मोर व
सन कल दिव्य नवीना" फटे चीर मुनि तुमहिं न
भाये" तुव अनन्य सिय पिय जन गाये" भक्तीसा
र कह वदन उचारी" चितहु मोहि हुक नैन उ
घारी" तव तहिं चित्यो भलहि मुनि काया" कंचि
न मणिन जटित छवि पाया" बहुरि
सिद्ध मुकता हल माला" मुनिहिं दीन लखि ल
लित विसाला" भक्तीसार मुनि मुख मुम काई"
तुलसि माल पावन मन भाई" अमल अनुपम
इमन छवि धारी" तासु दीनं निज रुचिर उतारी"
सिद्ध देखि माला मन हरनी" रह्यो मौन कछु
सक्यो न बरनी" दोहा" चिंता मणिकी माल
ते दसगुण प्रभा सुहाई" भयो सिद्ध विसमय
विवस मुनि प्रभाव अस पाई"८" टीका" सिद्ध
कहता है कि हे भक्त प्रधान अब तुम इस गोदड़ी को

तब सिव संत कीन्यो परिहासा॥ जो मोपें प्रभु कृपा प्रकासा॥ तो वर सूचि छिद्र सम मोरे॥ देहु नाथ कछु अगम न तोरे॥ लखि परिहास संभु भगवाना॥ कीन्यो तापर कोप महाना॥ जारयो जथा मदन छिनमाहीं॥ तस अब करहुं भस्म छिकाहीं॥ अस गुनि तीसर नैन पुरारी॥ खोलि चितयो तन भक्त मुरारी॥ तब प्रभाव निज भक्त सुहावा॥ तहां शंभु सनमुख प्रकटावा॥
दोहा॥ जेष्ट अंगुरि पद वामतें कढी ज्वाल विकराल॥ उभै तेज मिलि नभ छयो प्रलै काल के हाल॥४॥ टीका॥
फिर शंभू कहते हैं कि हे भक्त हमारा दरसन निस्फल नहीं होता है जैसे कोई इच्छा करता है तैसे ही हम देते हैं तब भक्त प्रधान भक्तिसार ने अपने हृदय में विचार किया कि मेरे को तो कोई इच्छा नहीं है अब क्या मांगूं ऐसे विचार कर भक्त सूष शंकर देव से परिहास करते भये कहने लगे कि हे भगवन जो आप मेरे पर प्रसन्न हो तो कृपा करके एक सूई के छेक समान मेरे को वर दान ~~देके~~ दीजिये हे नाँ इह आपको कुछ कठिन नहीं है तब शंभू ने तिसका वचन सुनकर और परिहास जानकर अत्यंत कोप को प्रकट करके कहने लगे कि जैसे मैने कामदेव को जलाय कर राख कर दिया था तैसे ही अब इसको भी तुरत भस्म करता हूं इस प्रकार कहते ही ततकाल तीसरा नेत्र खोलकर तिस ~~भक्त~~ भगवान के भक्त की ओर देखते ~~भये~~ भये तब भक्तिसार ने भी अपनी भक्ती का प्रभाव तहां महादेव के सनमुख ही प्रकट किया कि अपने बायें पैर की जेष्ट अंगुली से महा विकराल अगनी जो है सो निकाली तब शंभू के नेत्र की

भक्तमाल

मुनि मोही॥ देहुं दिव्य इह पारस तोहू॥ होव परसि
जहि कंचिन लोहू॥ अस कहि तहि पारस जव दीना॥
विहसे देखि मुनि नाथ प्रवीना॥ सिद्ध अनुज मन क
ह्यो वुझाई॥ मेहुं देव पारस तोहि भाई॥ तेरो लोह
कनक प्रकटावै॥ मेरो करहिं पुरट पाषानै॥ सिद्ध
अनुज लखि अचरज भारी॥ करि प्रणाम निज च
ल्यो सिधारी॥ जुगल सिद्ध इक परवत जाई॥ मुनिकृ
त पारस दियो छुवाई॥ भयो सु सैल पुरट कर सासो॥
हरषि सिद्ध निज भवन सिधासो॥ इत मुनि भक्ति
सार जुग वीरा॥ उदासीन तजि रुचिर कुटीरा॥ अ
चल समाधि हेतु गत मोहा॥ पूर्व से जाय अगाम
गिरि गोहा॥ दोहा॥ तहां गवन कानन करत आय
तपस जुग स्वामि॥ औसर भूत सनाम रत हरिस
मर्ती निस कामि॥ ४॥ टीका॥ तव सिद्धने अनेक प्र
कार मुनीकी वडाई करके और ~~प्रदक्षणा देकरके~~ फिर
वडे सनमान पूर्वक प्रदक्षणा दिया इतने मे सिद्ध
का एक छोटा भाई था सो भी तहां आय प्रापत भया
तव सिद्धने अपने भ्राताको ~~सम्पूर्ण~~ भक्तिसार मुनीका
महा प्रभाव जो था सो सव आदर पूर्वक सव सुनाय दिया
ऐसे मुनीका प्रभाव सुन कर सिद्धका भ्राता अपने
हृदय मे वडा आचर्ज मानकर भक्तीसार जीको कहने
लगा कि हे मुनी मे तेरेको परम रंकवत अर्थात् अत
हे निरधन देखता हूं इसते मेरेको दया उपजी है इह
देख मे तेरेको ऐसा पारस देता हूं कि जिसके स्पर्श ते
लोहा तुरतहीं कंचिन हो जाता है इस प्रकार कहि
करके जव सो पारस मुनीको दिया तव मुनियों मे प्रवीन
भक्तिसार मुनी तिस पाषाणको देखकर मुसकावते भये

और सिद्धके भ्राता सों कहने लगे कि हे भाई अब मै भी तेरे को एक सुंदर पारस देताहूं तेरा पारस लोहे को कंचिन करताहे और मेरा पाषाणो को सुवर्ण बनाय देवेगा तब सिद्धका भ्राता सो पारस ले कर और बड़ा आचर्ज होकर सिद्धके सहित प्रणाम करके तहां विदाय होकर ~~चलपड़े~~ अपने मारगको चलपड़ा तब चलते चलते दोनो भ्राता एक परवतपर जायकर सो मुनीका दिया हूआ पारस तहां तिस परवत के साथ छुहाय दिया तत काल क्या देखते हैं कि वे संपूर्ण परवत सुवर्णका हीं बन गया इस अदभुत को देखकर दोनो भ्राता हरषमे मगन भयेहूये अपने निवास अस्थान को चले गये और इहां भक्तीसार मुनी भी अपने भ्राता के सहित उदासीन होकर और कुटिया को त्यागकर अचल समाधी धारन करनेके वासते एक परवत की अत्यंत घोर गुफा देखकर तिसमे जायकरके प्रवेश करतेभये और तिसी कालमे वणमे फिरते फिरते महा तपस्वी दो स्वामी औसर और भूत नाम करके प्रसिद्ध सोभी तहां आयगये ॥ ५ ॥ चौपाई ॥ गुफा मद्ध तप तेज निधाना ॥ जान्यो तिनहु संत भगवाना ॥ दहुंन प्रवेस कीन जब ताहां ॥ देख्यो भक्तिसार मुनि नाहां ॥ पूछ्यो कुसल नम्र सिर नाया ॥ मुनि कह कुसल कृष्ण की दाया ॥ तहं कछुक काल जुगल निवसानो ॥ अनत देस पुनि किये पयानो ॥ बहुरि करत थल अटन सुहावन ॥ महत स्वामि कीन्यो तहं आवन ॥ भक्तिसार कर दरसन पाये ॥ महत स्वामि मानस हरषाये ॥ मुनि नायक सत संगत भाती ॥ हरिगुन सुजस सुनत दिन राती ॥ कछुक काल जब गयो विताई ॥ तब कनि कृष्ण सहित मुनिराई ॥ दोहा ॥ सिंधु तीर कल नगर इक विदत मयूरा नाम ॥ आय मुदित

तहे महत जुत जुगल भ्रात अभिराम॥२०॥टीका॥ तव
तिनोने तिस गुफाके बीच तप और तेजकी निधी संत
महत्मा बैठे हूये जाने जब दोनोने भीतर प्रवेश
किया तव मुनियों प्रधान मनी भक्तीसार जो हैं तिन
का दरसन पाया फिर प्रणाम करके जब कुसल पूछी
तव मुनीने कहा कि कृस्नभगवान की कृपासे सब कु
सल हीं है इस प्रकार सो दोनो स्वामी कुछक काल
तहां निवास करके फिर आनंद पूर्वक विदाय होकर
किसी और को चले जाते भये तिसतें उपरान्त
देस दिसाओं मे भ्रमते भ्रमते महत स्वामी जो हैं
सो तहां आय प्रापत हूये तव भक्तीसार जी का द
रसन पायकर महत स्वामी अपने हृदय मे वडा आ
नंद मानते भये और तहां तिनके पास हीं निवास
करने लगे ऐसे मुनि नायक भक्तिसार जी की स
त संगती और भगवान के सुजस और निरमल
गुणो को रात्री दिन श्रवण करते करते जब कु
छ काल वतीत होगया तव महत स्वामी औ
र कनी कृस्न भ्राता के सहित भक्ती
सार जी तहां से उठकर समुद्र के किनारे पर
एक मयूरा नाम करके सुंदर नगर था तहां
आनंद पूर्वक चले आवते भये॥२०॥ चौपाई॥
तहे तरु वर कल केसरि नामा॥ तहि तर उ
भय भक्त निसकामा॥ बैठे सून समाधि लगा
ये॥ महत भक्त कहे अनत सिधाये॥ भक्तिसा
र तहे वसे सुखारी॥ राम चरन पंकज उर धारी॥
पै नर स्यो चैदिन तिन पासा॥ तास सोच कछु

त्याग देवो और इह मेरा सुंदर नवीन वस्त्र जो है सो धारन करलेवो क्योंकि तुम भगवान के परम प्यारे भक्त सब लोगों मे प्रसिद्ध हो ऐसे फटे हूये वस्त्र तुमारे शरीर पर शोभा नहीं देते हैं ऐसे तिस सिद्ध का वचन सुनकर भक्तीसार जी कहने लगे कि हे संत महात्मा अब तुम अपने खोलकर मेरे शरीर की ओर भलीप्रकार देखो तब सिद्ध ने जो मुनी ओर देखा तो शरीर की कैसी आभा देखपड़ी कि कंचिन और मणीयों करके जटित जो ती जो है सो जगमगाय रही है सि देख करके बड़े आचर्ज को प्राप्त भया और फिर तिसने एक अत से दिव्य मोतियों की माला बड़ी अदभुत जानकर भक्त प्रधान को दई और भक्तीसार जी ने मुख से मुसक्याय कर एक बड़ी पवित्र तुलसी की माला कि जिस के समान और दूसरी कोई भी वस्तु नहीं थी अपने गले से उतार कर तिस सिद्ध को देदई तब सिद्ध तिस माला की सुंदर छवी को देखकर मौन ही होगया मुख से कुछ बोल नहीं सका चिन्ता मणी की माला से तिस तुलसी की माला की दसगुणा अधिक आभा और प्रकाश देखकर सिद्ध जो है सो बड़े आचर्ज के वश होकर अपने मन मे बारबार मुनी के प्रभाव की प्रशंसा करने लगा ॥८॥ चौपाई ॥ विविध प्रसंसि मनहि मन माहीं ॥ दियो प्रदच्छण मुनि वर काहीं ॥ आयो सिद्ध अनुज पुनि ताहीं ॥ राजे भक्ति सार मुनि जाहीं ॥ नमत सीस पद सिद्ध सुहावा ॥ मुनि प्रभाव कहि सकल सुनावा ॥ अनुज सुनत मानस विसमायो ॥ मुनि प्रधान सन वचन अलायो ॥ देखहु परम रंकवत तोही ॥ ताते उपजि दया

(margin: ऐसे; मनोहर और)

ओर रात्रीभर नेत्र निद्राकेवस नहीं भये प्रातका
ल होतेहीं सनान करनेके वास्ते चलेगये तव रस
तेमे जाते जाते विचार करते हैं किआज शरीर मे
चंदन कैसे सजाया जावेगा जव भक्तसृष्टृने इस प्रका
र सोचकिया तव जनके हृदयकी जाननेवाले भगवा
न कृपानिधान जोहैं सो तुरतहीं तहां एक चंदनका
सुंदर कुंड प्रकट करदेते भये तिसको देखकर भक्तप्र
वीनने तहां निरमल जलमे सनान करके ओर ति
स कुंडसे चंदन लेकर वडीप्रीती पूर्वक सव अंगोंके
लगायकर फिर हरी हरी रटते हूये कांची पुरी
को चले ~~जातेभये~~ देखिये सो भगवानका प्रकट किया
हुआ चंदनका कुंड अव लग तिस देसमे प्रसिद्ध
है तव भक्तीसार जीभी कांचीमे आयकर ओर त
हां एक वडी भारी परवतकी गुफा देखकर अचलस
माधी लगायकर भगवानके ध्यानमे लीन होकर वै
ठ जाते भये ओर कनीकृष्ण तिनका छोटा भाई जो
है सो भिक्षाटन करके भोजन आदि निरवाह करलेता
तव तिनको तहां निवास करते करते कुछ कालव
तीत होगया किसी पुरवासीने भी नहीं जाना कि इ
हां परवतकी गुफामे कोई वास करताहै एकदिन
एक वृद्ध स्त्री भगवानके चरनकमलोंकी प्रीतीवाली
तहां वनमे लकडियों लेनेके वासते चलीआई ओर
तिसने देखा कि परवतकी गुफामे कोई संत म
हात्मा वास करतेहैं तवसो भगवानकी भक्ती विचा
र कर जिस प्रकार संत भक्तोंकी सेवा करनेमे रुची
ओर प्रीती करतीभई सो आगे कथन कीजाती है॥१११॥
चौपाई॥ मुनि गेह द्वार मार्जन कीने॥ वहुरि क

रन कल लेपन दीने॥ करि पूजन सादि[illegible] मन लाई॥
पुनि आई निज भवन पराई॥ अस प्रकार भामनि व्रत ठा
ना॥ मुनिनायक कछु मरम न जाना॥ करत करत तो
कर सिव कार्ई॥ गयो कछुक जब काल बिताई॥ तब मु
नीस एक दिवस विचारा॥ गुहा अजर रह कवन हमा
रा॥ करत नित्य कल लेपन आई॥ अस गुनि भक्ति सा
र मुनिराई॥ एकदिवस कलकाल प्रभाता॥ दिसं ग
गन उडगन कछु राता॥ दरी द्वार देख्यो जब आई॥
लेपन करत वृद्ध त्रीय पाई॥ तासु देखि मुनि मन हर
षाये॥ कृपा सहित मुख वचन अलाये॥ वृद्धे भक्ति
भाव मन लीना॥ तुव हमार सेवन वहु कीना॥ अ
व वर मांग जवन रुचि तोरे॥ नहिंन अदेव आज क
छु मोरे॥ वृद्ध त्रीये कर जोरि अलाया॥ जो वर देहु
नाथ करि दाया॥ तो प्रभु मोर जठिरपन छीजे॥ जुवा
वैस जोवन तन दीजे॥ सदा करहु सेवन मै तोरा॥
टरै न छीन नाथ प्रण मोरा॥ दोहा॥ तव मुनीस द्रु
म देव सम दृगन दृष्टि निज पाई॥ वृद्ध त्रीय तन चि
त्यो जब जुवा वैस प्रकटाई॥ २२॥ टीका॥ तिस वृद्ध
स्त्री को संतो की सेवा करने मे ऐसी प्रीती उतपन्न भई
कि नित्य प्रातकाल मे आवती और गुफा के द्वारे
और अंडन मे मार्जन अर्थात झाडू आदि सव ~~से भ~~
~~ली प्रकार करती~~ थ देती और फिर सन्मान पूर्वक
लेपन आदि सव सिव कार्ई भली प्रकार करके ति
सते उपरान्त अपने घर को चली जाती इस प्रकार
'स ती वृद्ध स्त्री ने नित्य एही व्रत धारन कर लिया पर
न्तु मुनिनायक ने कुछ मर्म नहीं जाना कि एह

२४० २४०

आश्रम की सेवा कौन कर जाताहै ऐसे तिस भा
मनीको सेवा करते करते जब कुछ काल बतीत हो
गया तब मुनीनाथ मक्तीसार जीने अपने हृदय मे
विचार किया कि इह हमारी गुफाके द्वारमे कौन जा
डू और लेपन आदि कौन सिव काई कर जाता है ऐ
से विचारकर सो मुनीस एकदिन बडे प्रातकाल हीं
जो अबी कुछ रात वाकी थी और आकाश मे ता
रे भी देख पडते थे गुफाके द्वार मे आयकर जो देख
ने लगे तो एक वृद्ध स्त्री लेपन करती हुई देख
पडी तब इसप्रकार तिसको देखकर मुनीना
थ अपने हृदयमे अत्यंत प्रसन्न बडी कृपासे तिसको
कहने लगे कि हे वृद्धे तूने मक्तीमावमे लीन होकर
हमारी बहुत हीं सेवा करी है ताते मे तेरेपर प्रसन्न
भयाहूं अब जो तेरे मन की इच्छा है सो वर मांग मैते
रेको देताहूं तब वृद्धे हाथ जोडकर विनती करने
लगी कि हे कृपानिधानजो मेरे पर प्रसन्न भये हो तो एही
वर अनुगृह करो कि मेरा जठिरपन अर्थात बुढेपा
दूर हो जावे और नवीन जुवा अवस्था प्रापत होवे
तो मे हे भगवन तुमारी मक्ती और सिव काई जो है सो
सदैव करती रहूं इह मेरा प्रण भंग ना हो जावे ऐ
से तिस वृद्ध भामनीका वचन सुनकर मुनी कृपा
लने कलप वृक्षके समाव वाली अपने ने
त्रोंकी दृष्टी जो पाई तब ततकाल हीं सो वृद्धे
जुवा अवस्थाके सहित अतसे मनोहर और दि
व्य रूप वाली प्रकट हो जाती भई॥२२॥ चौपाई॥ देव
दार सम रूप सुहावा उपज्यो तास ललित मन

हृदय प्रकासा॥ तव रघुपति पद पंकज काहीं॥ लगे सुमरनी भक्त मन माहीं॥ रैन ननैन नींद व स भयऊ॥ भोरहिं उठि मज्जन हित गयऊ॥ कर त सोच मानस मग जाता॥ आज सजन कस चंदन गाता॥ जन जीयकी भगवन गुनि लीनो॥ चंदनकुंड प्रकट तहं कीनो॥ तहं मज्जन करि भक्त प्रवीना॥ लै चंदन कल अंगन दीना॥ हरि हरि रटत बहुरि मन माहीं॥ किये गवन कोंची पुरि काहीं॥ सो चंदन कल कुंड सुहावा॥ अवलो विदित देस तहि भावा॥ कोंची आय भक्त व्रत धारी॥ तहं गोरव गिरि गोह निहारी॥ धरे समाधि अचल सुविधाना॥ वैठे ध्यान लीन भगवाना॥ कनी कुसुम मिताटन करिकै॥ करहिं तोष मुद मानस भरिकै॥ दोहा॥ लख्यो न पुरवासिन तिन्हैं वसत गोह गिरि कौन॥ हरिदासी वृद्धा त्रीये एक दिवस वन तोन॥ आई इंधन लेन हित दरि वसत लखि संत॥ प्रेम मती हिये हुलसि जिये गुनत भक्ति भगवंत॥२२॥ टीका॥ तव तहां एक केसरी नामा वृक्षके नीचे दोनो निसकाम भक्त सून समाधी लगाय कर ~~क~~ स्थित होय गये और म हत स्वामीजी कहीं और प्रस्थान को चले जाते भये भक्तीसारजी रामचंद्र महाराजजी के चरन कमलों को हृदय मैं धार कर तहां आनंद पूर्वक निवास करते भये परन्तु तिनके पास चंदन जो है सो नहीं रहा इसतें तिन्हों ने अपने हृदयमे वडा कलेश माना तव और कुछ तो वन नहीं पड़ा रघुनाथ जीके चरनो का सुमरन करने ~~लगे~~ लगे

४८१

स्त्री ती से पूछने लगा कि हे वाले इह ऐसा अनना रूप तेरेको कहो किसने दियाहै तब सो हाथजो इकर कहने लगी कि महाराज अमुक परवतकी गुफामे जो महा तप और तेज के पुंज संत भगवान वास करते हैं इहतिन्हों ने जोवन दान मेरेको दियाहै हे नाथ तुमभी चौथापन के ग्रसे हूये हो अर्थात वृद्धभयेहूये हो जो मेरा वचन मानो तो तिन वडे महत्मा कें छोटे भाई कनि कृष्ण जो हैं तिनको सन्मान पूर्वक अपने पास वुलावो और नम्रवाणीसे विनती प्रार्थना कर कर सुंदरनवीन जोवन जोहै सो प्रापत कर लेवो इसप्रकार तिस भामनी के मुखसे वचन सुनकर राजाने ततकाल दूत भेज दिये और कनी कृष्ण वुलाय लिये जब वे सनमुख आये तब राजा हाथ जोड़कर कहने लगा कि हे संत महात्मा तुमारी कीर्ती जो है सो संपूर्ण सृष्टीमे छायत होरही है देखिये कि तुमारे गुरुदेव स्वामी जीने इस वृद्ध स्त्री को जुवा अवस्था के सहित कर दियाहै अव भगवन मेरे पर तुम कृपाकरो जो मेरा इह जठिरपन छूटकर मैभी सुंदर जोवन अवस्था केसहित हो जाऊं ॥ २३॥

चौपाई॥ जो न तुमहे समरथ इहिमाहीं॥ तोनिज वेग वोलि गुरु काहीं॥ जोवन पन मोहि देहु दिवाई॥ जब वपु मोर तरुण ह्वै जाई॥ तवमुनीस तुव मोर सुहायन॥ करहु अनुपम सुजस मुख गायन॥ सुनि सासन नर जस मुख गाना॥ कनी कृष्ण वहु अनहित माना॥ मन्यो अरुन दृग कोपिहिं वागी॥ सुनहु गाथ नरनाथ अभागी॥

हमहे नआन देव जस गावा॥ भूप मनुज जग कवन कहावा॥ सुन्यो एक सीय पीय निरधारा॥ सुंदर सुजस जोग संसारा॥ श्रुति पुराण जस गावत जासा॥ अज र अमर अनमव अविनासा॥ तासु सुजस हम गावन हारे॥ मनुज भूप जग कवन नकारे॥ तोते सुनहु भूप मति हारा॥ मोर देव गुरु तोर अगारा॥ परि हरि निज आश्रम गिरि गोहा॥ आवहिं कवहु नविगत विमोहा॥ सुनत भूप कनि कुस्म वखाना॥ अरुन नैन करि कोप महाना॥ कटु कठोर मुखे वचन उचारा॥ सठ हमार सासन सूई कारा॥ कीन न तुमहे दरप वस होई॥ जान्यो अधम करिल मति दोई॥ दोहा॥ जो नकरहु तुव मंद मम सुजस वदन निज गान॥ तोमेरे अव देस ते करहु सुपच द्रुत प्यान॥ २४॥ टीका॥ फिर राजा कहने लगा कि हे संत जो तुम आप इस वार्ता के कर नेको सामर्थ नहीं हो तो अपने गुरु को बुलाय कर मेरे को जोवन दान दिलादेवो और जब इह मेरा शरीर जोवन अवस्था मे हो जावे तब तुम दोनो मुनी मेरा अतसे अनुपम सुजस और कीरती जो है सो अपने मुखसे भलीप्रकार गायन करो मेतु मारे पर वहुत प्रसन्न होऊंगा इसप्रकार राजा की आज्ञा और मानुष्यका सुजस गायन करना सुन कर कनी कुस्म अपने हृदयमे एक वडा अन हित मानतेभये और तिस राजाको कोपसे लाल नेत्र करके वचन कहने लगे कि अरे अभागी भूप तू सुण जो हमने आजतक संसार मे और किसी देवका जस गायन नहीं

गायन किया मानुष्य और कौन हैं और किस गिनती मे हैं हम तो केवल एक सीता के पती भगवान राम चंद्र महाराज जी को सुजस के जोग्य जानते हैं क्योंकि जिस अजर अमर और ~~अ~~ प्रमात्मा ~~को वेद~~ को श्रुती और पुराण सुंदर सुजस गायन करते हैं हम भी तिसी प्रमात्मा का सुंदर सुजस और कीर्तन जो है सोई रात्रो दिन गायन करने हारे हैं मानुष्य और राजा कौन नकारे हैं संसार मे हम तिन को क्या जानते हैं और मंदमती तूने जो कहा कि अपने गुरु को इहां हमारे पास ही जोवन दान देने के लिये बुलाय लेवो सो दुर्मती सुन कि वे परम ध्यान ध्यान निधी और परम ब्रतधारी तपसी महातमा अपने आश्रम को त्याग के अभिमानी तेरे ही हां किस प्रकार आय सकते हैं ऐसे कनी कृस्न का बचन सुनकर सो राजा परम कोप से लाल नेत्र करके कहने लगा कि सठ तुमने हमारी आज्ञा नहीं मानी अब मेने जाना है कि तुं दोनो बडे कुटिल खोटी बुद्धी वाले और महा अभिमानी हो मूरख अब तुम को विदत रहे ~~कि~~ कि जो तुमने मेरा जश गायन किया तो भला नहीं तो अभिमानी अभी मेरे देश से निकल कर के बाहिर हो जावो ॥२८॥ चौपाई ॥ अनहित कथन सुनत अस राई ॥ उठि गवने कनि कृस्न रिसाई ॥ भक्तिसार ढिग जाय तुरंता ॥ कियो कथन सब भूप ब्रतन्ता ॥ नाथ नृपति मूरख अगरासू ॥ अब न उचित इहि देस निवासू ॥ भाख्यो मतीसार सुनियाला ॥ धरहु तनक धीरज जीय ताता ॥

संसार मे
निज प्रभु को इस
कौ
वर
म
अभिमानी भक्ति को

भावा॥ तवते प्रीति पूर्वक रवक रागी सेवन प्रकट करन मुनि लागी॥ चंदन सुमन भवनतें ल्याई॥ करत अनन्य मुनिन सिवकाई॥ तव कांची कर भूप तहां हीं॥ रह्यो भ्रमत मृग्यानत काहीं॥ तासु देखि मग जात इकाकी॥ चितवत दृष्टि दृगन नृप थॉकी॥ वरवस पकरि मदनवस ताहो॥ गवन्यो लेत भवन नर नाहो॥ भन्यो तासु नृप संजुत नेहा॥ कवन दीन तोहि जोवन एहा॥ तव भामनि कर जोरि उचारा॥ नाथ वसत गिरि गोह म[illegible]जारा॥ निधि तप तेज संत भगवाना॥ तिन दीन्यो मोहि जोवन दाना॥ तुमहु भूप चौथापन छेरे॥ तो ते मानि वचन प्रभु मेरे॥ कनी कृस्म सेवक मुनिराई॥ तासु निकट नरनाथ वुलाई॥ नंम्रत विनय वदन वहु कीजै॥ मंजुल नवल वेस निज लीजे॥ सुनत भूप द्रुत दूत पठाने॥ कनी कृस्म निज निकट वुलाने॥ भाष्यो वदन शोकगत राई॥ तुमरी कीरति संसृति छाई॥ दोहा॥ जो तुमरे गुरु वृद्ध तीये जुवा वेस जुत कीन॥ करहु जुवा जुत मोहि कहे अव तुम संत प्रवीन॥ २३॥ टीका॥

तव सो वृद्धे देव स्त्री के समान सुंदररूप वाली और जुवा अवस्था होकर वडी प्रीती और भक्ती से नित्य आय करके तिस मुनी की सेवा करती और अभय होकर विचरती एक दिन तहां वनमें कांचीपुरी का राजा शिकार खेलने के लालच से भ्रमता फिरता था तिसको रसते में अकेली जाती हुई देख कर राजा के नेत्र रूपके वश होकर एकत होय गये तव तिस रूपवती को अतसे प्रेम और

और काम के वशमया हुआ तिसको भुजासे पकडकर घर को ले गया।

अंकित

तहां

देडवत प्रणाम करके और दोनो हाथ जोड़ कर विनती करने लगे कि हे दीना नाथ तुमारे नगर का जो राजा है तिसने हम को देस निकाला दे दिया है तातें भक्तपाल हम अब विदाय होने के वासते आप के पास आये हैं इस प्रकार इतना हीं कहिकरके भक्तीसार जो हैं सो वरद राज भगवान को माथा निवाय कर और जै जै शब्द उ चारकर पिछले पाउं से पीछे को हटते हटते वडी शी घ्रता पूर्वक भवन से निकल कर धाय चले॥२४॥ चौपा ई॥ भक्तिसार जब चले सिधारी॥ वरदराज तब भये दुखारी॥ सहि न सके निज भक्त विछोरा॥ कंपि उठ्यो मंदिर चहु ओरा॥ रेंगि चली मूरति भगवाना॥ च ले जात जित भक्त महाना॥ तित पाछिल मूरति प्रभु सोई॥ लागि जाहिं भक्ति वश होई॥ लोक अलो किक चरित निहारी॥ धाय धाम धन काम विसारी॥ पुर महं मच्यो कुलाहल भारी॥ चले अनत कहे वि प्र अधारी॥ अस भगवान गवन निज करना॥ नृप पें जाय पूजकन वरना॥ वरदराज महाराज हमारे॥ चले जात कहु अनत सिधारे॥ सुनत भूप रानी जुत धायो॥ धीर सरीर चीर विसरायो॥ जुवा वृद्ध वालक नर नारी॥ धाये हाहाकार पुकारी॥ मु नि पाछिल लखि भगवन जाते॥ दौरि लोग आगल अतुराते॥ भक्तिसार कर भक्ति निहारी॥ गिरे चरन मुख चाहि उचारी॥ दोहा॥ हाथ जोरि विनवैं सकल वारवार सिर नाय॥ अब न अनत कीजै गवन तुव कृपालु मुनि राय॥ नतर नाथ तुव गवन तें रमा रमन भगवान॥ किये गवन निज भ वन तजि हम हु कवन कल्यान॥२५॥ टीका॥ इस प्रकार जब भक्तीसार जी चले गये तव तिनके

जाने वरदराज भगवान अत्यंत दुखे और कलेश मा
नते भये अपने प्यारे भक्त का विछुड़ना सहार न
हीं सके ततकाल ही मंदिर जो है सो सब चारो ओर तें
कांप उठा और भगवान की मूरती रेंगती हुई अर्थात
ऊंची स्वर से बोलती हुई जिस ओर भक्तीसार जी चले जा
ते है तिसी ओर भक्ती के वश भई हुई तिनके पीछे पीछे
चली जाती है इस अलौकिक चरित्र को सब लोग देखकर और
अपने अपने धाम काम विसार कर हुये कर व्याकुल
भये हूये भगवान के पीछे ही धाय चले तेसही
नगर मे इह शोर मच गया कि वरदराज भगवान इ
स अस्थान को छोड कर कही और अस्थान को च
ले गये है इतने मे पुजारियो ने जाय कर राजा को पास
सुनाय दिया कि पृथीनाथ वरदराज हमारे भगवान जो है
सो किसी और ही दिसा को धाय चले जाते है तब तो रा
जा सुनते ही रानी के सहित धीरज को त्यागे हूये और
विप्रीत वस्त्र सिर का गले मे और गले का सिर मे पहि
रे हूये हाहाकार शबद करता हूआ पैर प्यादा ही धा
य चला और तिसके पीछे बाल जुवा वृद्ध स्त्री पुर्ष
वरदराज भगवान को रटते हू धाय चले जाते है तब
मुनी के पीछे भगवान को जाते देख कर वलमान
और ऊंचे चलगती वाले जो पुरष थे सो वेग से धा
य कर मुनी को आगे से जाय रोकते भये और तिस
भक्त प्रधान की अतलुत भक्ती देखकर कि जिसका
कोई प्रमाण ही नही है त्राहि त्राहि कहते हूये च
रनो पर सीस धर कर और हाथ जोड कर नम्रवानी
से वार वार विनती करते है कि हे कृपानिधान

२४८

244

और भगवान के परम प्यारे भक्त अब तुम और कि
सी अस्थान को मत जावो इन जीवों दया करके
रहो हमारे नगर मै ही ~~कि~~ आनंद पूर्वक निवा
स करो नहीं तो हे भक्तप्रधान तुमारे जाने तें रमा
रमन भगवान वरदराज जो हैं सो इस अपने भवन
और नगर को त्यागकर तुमारी भक्ती के वश भये
हूये तुमारे साथ ही चले जावेंगे तो हे मुनीम
हाराज तुम विचार कर देखो कि पीछे हम भगवा
न के विना कैसे जीवेंगे और हमारी क्या गती हो
गी ॥ २४॥ चौपाई॥ इह आधार हमरे मुनिराई॥
देखि चलन तुव चले सिधाई॥ नाथ सकल जीवन
हित लेखी॥ ईहां वसहु करि कृपा विसेखी॥ भक्ति
सार मुनि गिरा अलाई॥ हम ना हिन कछु जानत
भाई॥ जो हमरे कनि कृष्ण परावैं॥ तो पाछे हम हे
फिरि आवैं॥ सुनत मुनीस वदन अस वानी॥ विल
पत भूप सहित निज रानी॥ आय कृष्ण कनि चरन
न लागे॥ वारंवार विनय रसपागे॥ हम चूके प्रभु
संत उदारा॥ छिमहु नाथ अपराध हमारा॥ निवस
त सदा संत उर दाया॥ चूकनिवारी नाम प्रभु गाया॥
तव कनि कृष्ण दुखित जीय जानी॥ प्रजा सकल
लेजुत नृपरानी॥ लौटि चले को चीपुरि काहीं॥
तहि पाछिल नर नारि सवाहीं॥ चलि आवत दे
खे दृग ताही॥ लौटे भक्ति सार मुनि नाहीं॥ तिन पा
छे सुर नर सुखदाना॥ लौटे वरदराज भगवाना॥
दोहा॥ मुनिन नाथ तव हरि भवन आये हरष स
मेत॥ कर गहि बैठारे तहां गिरधर कृष्ण निकेत॥
२५॥ टीका॥ फिर लोग कहते हैं कि हे मुनियों के

मैहुं नगर तुव संग सिधावहुं॥ तुमकहे कौतुकन वल दिखावहुं॥ भनत वदन अस भक्त प्रधाना॥ चले हरषि सुमरत भगवाना॥ कांची नगरि अभय वर दाये॥ वरद राज भगवान सुहाये॥ जिनकर सुजस सुमंगल दाता॥ गावत सकल विश्व विख्याता॥ आये भक्तिसार तहि भवना॥ भनत जैति जैजै श्रीरमना॥ नम्रदेर वत किये जुहारा॥ जुगत पानि अस विनय उचारा॥ नाथ भूप पुर भवन तुम्हारा॥ हम कहे दीन्यो देस निकारा॥ तांते विदा होन हित स्वामी॥ तुमपें आय भक्त अनुगामी॥ दोहा॥ भक्तिसार अतनो भनत नाथहिं माथ निवाय॥ रहित जैति पाछिल पगन निकसि चले अनुराय॥ ९॥

टीका॥ तब राजाका वडा अनहित कथन सुनकर कनी कृष्ण जी बडे कोप चल परते भये और ततकाल भक्तीसार जीके पास आयकर राजाका सब वृतांत सुनाय दिया और कहाकि नाथ इहराजा महो मूरख पापों की राशी है इसके राजमे अब निवास करना योग्य नहीहै तब भक्तीसार जी कहने लगे कि भ्राता जरा धीर्ज करो मै अबी तुमारे साथ नगरमे चलता हुं और तुमको एक नवीन ही कौतुक दिखावता हुं ऐसे कहिकरके भक्त प्रधान कनी कृष्ण को साथ लेकर भगवान का सुमरण करते हुये नगर को चले आवते भये तहां कांची नगर मे अभय वर के देनेवाले वरद राज भगवान कि जिनका मंगल रूपी सुजस गायन करकर लोग मन वांछित फल पावते हैं तिनके भवनमे भक्त प्रधान आयकर जैहो लक्ष्मीके नाथ ऐसे उचार कर वडी नम्रताहे

१६॥ चौपाई॥ सकल लोक संजुत नृप रानी॥ साधु साधु साधु भाषत मुख बानी॥ धन्य धन्य तुह्म भक्त सिमामी॥ जास भक्ति वश त्रिभुवन स्वामी॥ वरद राज भगवान सुहाये॥ तजित भवन पाछिल लगि धाये॥ वात्सल भक्त सत्य जग भाई॥ सुमरत जनन सदा सुखदाई॥ अस प्रकार जन जुत प्रभु केरा॥ गाय गाय मुख सुजस घनेरा॥ महिपति नगर लोग समुदाई॥ भये सिष्य सेवक मुनि राई॥ तब मुनीस कछु काल तहांहीं॥ बसे नगर कांची कल माहीं॥ विमल द्रवड भाषा सुभ पावन॥ कियो प्रबंध ललित मन भावन॥ भनत सुजस गुन भगवत गाढे॥ तहां सपत सत संवत काढे॥ बहुरि कृष्ण सुमरत मन माहीं॥ गवने चोलि महेस्वर काहीं॥ पुनि कल कुंभ कोण कहं आये॥ रटतनि रंच भक्त सुखदाये॥ कुंभकोन कल नगर मझारा॥ रह्यो एक सुभ देव अगारा॥ दोहा॥ तहं मूर्ति मनहरन मृदु भगवन सारंग पानि॥ भक्तिसार तहि भवन मे करत गवन मुद मानि॥ १७॥ टीका॥ जब इस प्रकार भक्त प्रधानका भगवान कृपानिधानने सनमान किया तब देखकर राजा और रानी के सहित सब लोग मुखसे साधु साधु शब्द उचारने लगे और कहने लगे कि भक्त सिरोमणि तुमको हमारी नमस्कार हो और तुम धन्य हो धन्य तुमारी करनी कि जिनकी भक्ती के वश होकर तीन लोक के स्वामी बरदराज भगवान अपने भवन को त्याग कर पीछे लाग चले इस ते भगवान कृपानिधान वतसल भक्त सत्य करके हैं और सुमरण किये तें अपने जनो के संपूर्ण मनोरथ सिद्ध करते हैं ऐसे मुनी के सहित दीनबंधू भगवान का निरमल सुजस अनेक प्रकार गायन करके राजा के सहित सब नगर के लोग बडी प्रीती भक्ती से भक्तीसार जी के सिष्य सेवक हो जाते भये तब मुनीनायक कुछ काल प्रयन्त तहां कांची नगर मेही वास करते रहे और द्रवड भाषा मे कितनेक सुंदर ग्रंथ जो हैं

सो बड़ी रुची पूर्वक निरमाण किये ग्रर्थात रचे इस प्र
कार भगवानके गुणगण ग्रौर सुजस कथन करते क
रते तहां सात सै वर्ष वतीत किये तिसते उपरान्त कृ
ष्ण प्रमात्मा का सुमरण करते हूये महे प्वर चोली को च
ले जाते भये ग्रौर तहांसे फिर सुंदर कुंभकोण जो है त
हांको चले ग्राये तिस कुंभकोणके नगरमे एक सुंदर दे
व भवन था तिसमे ग्रतसे मनोहर ग्रौर बड़ी कोमल वि
ष्णु नारायण की मूरती देखकर भक्तीसार जी ग्रानंद पू
र्वक भीतर चले जाते भये॥ २७॥ चौपाई॥ जाय
चरन कल कमल मुरारी॥ नाय सीस मुनि विनय उचा
री॥ प्रभु उप ज्यो मम हृदय संदेहू॥ करहु निवर्ण कृ
पा करि एहू॥ भुजग सेज प्रभु सैन तुमारा॥ कवन हेतु
करुणाय ग्रगारा॥ धोधरि वपुष कोल जन नेहा॥ कि
योउद्धर्ण धरनि भ्रम एहा॥ केंद्रि कवन धाय महाना॥
होये थाकि विपुल सुखमाना॥ सिंधु मथन श्रम धों
कछु पाये॥ दीन नाथ सुखसेन दिजाये॥ सुनत भ
क्त निज गिरा सुहाई॥ हरिमूरति कह सीस उठाई॥ भ
क्तहेत हमरो ग्रवतारा॥ दौरत रहत सदा संसारा॥
करत सैन इत सो श्रम पाई॥ नहि कछु ग्रान हेत
मुनि राई॥ ग्रस प्रकार निज वदन वखानी॥ भयेमौ
न प्रभु सारंगपानी॥ ग्रवलो सीस मूर्ती भगवाना॥
उठ्यो ग्रहि कर एक प्रमाना॥ भक्तहेत प्रकरत न
ग धारी॥ करत कलित कौतुक मन हारी॥ दोहा॥
चौदहे शत संवत तहां निवसे भक्त प्रधान॥ रहेरट
त गुणगण विमल श्रीपति कृपानिधान॥ २८॥ टीका॥
तव ~~देव~~ भवन मे जायकर मुनीने ~~चरन~~ भग
वानके चरन कमलों पर सीस नायकर ग्रौर हाथ
जोड़कर विनती करी किहे दीनानाथ मेरे हृदयमे ग्र
तसे भ्रम उपजाहै सोग्राप कृपा करके इस मेरे भ्रम

कोनिवारण करिये सो इहजो शेष की सेज पर आप विराजते और सैन करते हो इसका क्या कारणहै कि अथवा जब शूकर रूप धारकर पृथवी काउद्धार किया तिसतें श्रम मान कर अर्थात थाक कर सोवते हो कि दंडकवनमें जो वहुत भ्रमन कियाहै तिसतें कि अथवा समुद्र के मथन करने से आपको श्रम होगयाहै तिसतें हारे हूये सुखमान कर शेषकी सिज्जापर सोवते हो इस प्रकार भक्तप्रधान के मुखसे वचन सुनकर भगवान की मूर्ती जोहै सो सीस उठाय कर कहने लगी कि हे मेरे प्यारे भक्त हम भक्तों के वासते जो संसारमे दौड़ते रहतेहैं और वारवार अवतारधारते ~~रहते~~हैं ~~सोई हमको श्रम है और तो कोई नहीं है सोई तिसतें~~ श्रम मान कर ईहां शेष की सिज्यापर सोये रहतेहैं और कोई कारण नहीं है ऐसे कहि कर भगवान कृपानिधान मौन होयगये और वे भगवानकी मूरतीका सीस अव लग एक हाथभर उठा हूआ है इह भगवान जोहैं सो केवल भक्तों के निमित्त हीं प्रकट होकर संसारमे नाना कौतुक करकर लोगों को मोहितकरतेहैं तव तहां चौदासै वरष भक्तीसारजीने निवास किया और राधेकृस्न भगवान के निरमल गुणगण जोहैं सोई भक्ती और प्रीतीसे गायन करते रहे ॥२८॥ चौपाई॥ तहंते वहुरि गवन मुनि कीनो॥ देख्यो मारग चरित नवीनो॥ वेदक दुजन वृंद अभिरामा॥ पठते रहे वेद इक ठामा॥ जानि सूद्र जन मुनिवर कोही॥ भये मौन दुज पठत सवाही॥ भक्तिसार हरि भक्त महाना॥ तिनकर दुजन कीन अपमाना॥ तहिंतें विप्र सकल बौराने॥ बोलि न सकहि परम दुख साने॥ निज अपराध जानि दुजधाये॥ भक्तिसार

(margin: कुंभकोण; ८दिन)

नायमुनीमहाराज इह वरदराज भगवान तो हमलो
गोंआधार और जीवन प्रालहैं तुमारा चलना दे
खकर इह चलपड़े हैं हे भगवन सरव जीवोंका हित
विचार कर अवआप इहां हैं वलो तब सुनकर भ
क्तीसार जी कहने लगे कि भैया हम कुछ नहीं जा
नते हैं जो हमारे कनिकृष्ण फिर आवें तो तिनके
पीछे हमभी फिरि आवें गे इसप्रकार भक्तीसारजी
के मुखसे वचन सुनकर वड़ादीन भयाहूआ राजा
रानीके सहित जायकर कनीकृष्ण जीके चरनो
पर सीस धरकर और वारवार मुखसेनम्र विनती
करकर फिर हाथ जोड़ कर कहने लगे कि हे संतउ
दार हमतें वड़ी चूक भई है अर्थात हम भूलगये हैं
आप कृपा करके हमारा अपराध क्षमा करो क्योंकि
संतों के हृदय मै दया जो है सो सदा हीं निवास कर
ती है और चूक निवारण नाम भी आपका सरव ज
गत मै प्रसिद्ध है तब कनीकृष्णजी संपूर्ण प्रजा
के सहित राजा और राजाकी रानी को परम दुखी
जानकर दयाकेवश भये हूये कांची पुरीको फिर
करके चले आवते भये तब तिनके पीछे पुरकी स
व नारी और नर जो चले आवते देखे तो भक्ती
सार जी भी भगवानका सुमरण करते हूये फिरि आ
ये और तिनके पीछे हीं ~~सुर नर आदि~~ सरव जीवों
के सुखदायक वरदराज भगवान् फिर कर आप
ने भवन को चले आये तब मुनि नायक भक्ती
सार जी वड़े आनंद पूर्वक भगवानके प्रेम जो
आये तो वरदराज महाराजने वड़े सनमानसे
मुनी का हाथ पकड़ कर तहांभवनमे विठाय लिये॥

२४७

२४७

"का लोॲगुंगपन और बाजर ताई सब दूर हेयगई तहां ~~एक~~ सिंहपुर नाम करके बड़ाभारी नगर था तिसमे ~~•~~ अत्यंत मनोहर और बड़ी शोभा कर के युक्त भगवान का भवन कि जिसके दरसन के निमित्त अनेक जो जू आये हूये और भवन के द्वारे मै स्त्रीपुरष बड़ी भीरंभार से स्थित भये हूये और पुजारी भीतर भगवान का पूजन कर रहे थे तव बहुत भीरभार के होने से भगवान का दरसन जो नहीं ~~करसके~~ तो भक्तीसार जी हृदय मै विचार कर दूसरे द्वार की और चले आये जव भक्त प्रधान तहां से नेत्र जोड़ कर देखने लगे तव भगवान की मूर्ती तत काल तिन कौं फिर जाती भई॥ १२॥ चौपाई॥ लखि "और पूजक जाति क समुदाये॥ भ्रामक वृति मान सवि समाये॥ विकल नारि नर धीरज त्यागे॥ वहिर निकसि जव देखन लागे॥ ठाढे भक्तिसार मुनि द्वारे॥ जन अनन्य भगव न निर धारे॥ परे चरन स गारे अकुलाई॥ ल्याय भवन करि विपुल बड़ाई॥ प्रभु प्रभाव जा न्यो हम नीके॥ अहु अनन्य भक्त सीय पीके॥ अव पूजन कछु नाथ हमारा॥ छीन ग्याल कीजे सूई करा॥ रह्यो होत तहे जग्य महाना॥ जुर्यो समाज दुजेन वहु नाना॥ तहे ऊचे आसन सुवराई॥ वैठारे मुनि नायक ल्याई॥ कियो प्रथम सुचि सेवकरीती॥ भक्तिसार पूजन जुत प्रीती॥ देखि अग्र पूजन मुनि ज्ञानी॥ जे अभक्त पंडित अभि मानी॥ भक्ति रीति कछु जानत नाहीं॥ निपट कुमति रत दरप महां हीं॥ सो तिनक हे सठ निंदरन लागे॥ जे मुनीस पूजन अनुरागे॥ दोहा॥ सुनि निंदन मुनिनाथ तिन सभा मद्ध मुसक्याय॥ मन्यो वचन निज वदन अस हृदय सुमरि जदुराय॥ जो सत हो वसि विप्र जन हृदय मोर

१६ ५

भक्तमाल

विलास॥ तो प्रकटैं दूत हरन दुख दीनन रमा निवास॥
२०॥टीका॥ इसप्रकार भगवान की मूरती का फिरना
देखकर पूजक ग्रोर जातू लोग जो थे सो सब ग्राश्च
के वृती होकर बडे ग्राचर्जे को प्राप्त होगये तब नारी
नर सब व्याकुल भये हूये बाहिर ग्रायकर जो देखने
लगे तो भक्तों मे प्रधान मुनी भक्ती सारजी द्वारे मे स्थित
भये हूये हैं तिनको देखते हीं सब लोग चरनो पर गिर
पडे ग्रोर ग्रनेकप्रकार ग्रसतुती ग्रोर वडाई करके वडे
सनमान पूर्वक भगवान के भवन मे ले ग्रावते भये ग्रो
र हाथ जोडकर कहते हैं कि हे मुनी महाराज हमने ग्रा
पकी महिमा ग्रोर प्रभाव जाना नहीं तुमतो साक्षात सी
ता के पती रामचंद्र महाराज के परम प्यारे ग्रोर प्रवीन भ
क्त हो ग्रब हे दीनानाथ चलिये ग्रोर ग्रानमूह करके कु
छ हमारा पूजसुईकार करिये तब तहां वडा भारी जमघ
होरहाथा ग्रोर ग्रनेक साध ब्राह्मण ग्रायकर के जुडे
हूये थे तहां यग्य मंडली मे तिनोने मुनी नायक को
वडे ऊचे सिंघासन पर ल्याय कर विठायदिया ग्रोर
भक्ती प्रीती ग्रनुसार सेवकों की रीतीसे प्रथम तिनका
हीं पूजन किया तब इसप्रकार मुनी नाथका प्रथम पू
जन देखकर जेजे ग्रभक्त ग्रोर ग्रपंडित ग्रभिमानी
थे ग्रोर भक्ती की रीती कुछ जानते नहीं थे केवल
~~मूढ मंदमती ग्रोर महा हंकारी थे~~ दुष्टसुभाव वाले म
हा मूढ हीं थे सो वे सब तिन सबको निंदने लगे
कि जिनोने प्रीतीपूर्वक मुनीका प्रथम पूजन किया
था तब मुनी नायक भक्ती सारजी तिनका निंदन
सुनकर ग्रोर सभा के बीच मुसक्याय कर हृदय
मे भगवान का सुमरन करके कहने लगे कि हे ब्रह्म
सभाके लोगो जो कदी मेरे हृदय का विस्वास सत्य
करके है तो ईहां तुमारे चराचर मे लक्ष्मी नाथ

श्रीभगवानकेग्रोर (margin)
निजसेवको (margin)
को (margin)
हीं (margin)
के

भगवान जो है सो साक्षात प्रकट हो जावें ॥ २० ॥ चौपाई ॥ अस जब भक्तिसार तपधारी ॥ सभामद्ध प्रण कह्यो उचारी ॥ तब तिन के ~~~ श्री पति रामा ॥ प्रकटे चतुर बाहु घन स्यामा ॥ निज निज हृदय विप्र सुदाई ॥ देखि रूप अस त्रिभुवन राई ॥ चरि हरि मान दौरि द्रुत हाथा ॥ पकस्यो जाय चरन मुनि नाथा ॥ हम अग्यान जान्यो नहिं काहू ॥ तुव प्रभाव महिमा अवगाहू ॥ मुनिन नाथ अपराध हमारा ॥ क्षमहु क्षमहु लखि कुमति गवारा ॥ सदा होत दायार त साधू ॥ पर अपराध पीर पर बाधू ॥ भक्तिसार भाष्यो मुसक्याई ॥ तुव अपराध नहिन कछु भाई ॥ दोहा ॥ अस प्रकार तप पुंज मुनी भक्तिसार जग माहिं ॥ करत अनेकन चरित कलु करत सफल सब काहिं ॥ रंग नगर निवसत भये सुमरि चरन जदुनाथ ॥ अस मुनिवर सुख सुजस प्रद मै बरन्यो कछु गाथा ॥ २१ ॥ टीका ॥ इस प्रकार जब तपधारी मुनीने सभाके बीच प्रण उचारन किया तब तिन से पूण ब्रह्मणों के हृदय मे ततकाल ही घनस्याम भगवान चतुर भुज रूप होकर प्रकट हो जाते भये सो ऐसे भगवान के अद्भुत रूप को सब ब्रह्मण अपने अपने हृदय मे देखकर तुरत ही धायकर भक्तीसार जी के चरनो पर गिर पड़े और नम्रवानी से हाथ जोड़ कर कहने लगे कि हे मुनि कृपाल हम महा मूढ़ और अज्ञान थे तुमारे अनन्त प्रभाव और महिमा को जान नहीं सके अब दीनानाथ हम को दुरबुद्धी और गवार जान कर हमारे अपराध को क्षमा करो क्योंकि तुम संत सदैव दया के रूप हो ~~~ पर अपराध और पर पीड़ा के निवारने को भी तुमहीं सामर्थ्य हो तब भक्तीसार जी कहने लगे कि भाई तुमारा कोई भी अपराध नहीं है ~~~ मै तुमारे पर प्रसन्न हूं इस प्रकार तप के पुंज भक्तीसार जी संसार मे अनेक चरित्र कर कर लोगों को सफल करते रहे और फिर रंग

नगर मे आयकर कृष्ण भगवान की टहल करते हूये तहां काल व तीत करने लगे नाभादासजी कहते हैं कि हे गुरु महाराज २२ मैने सनमानपूर्वक आपके आगे सुख और सुजस के देने वाली भक्तीसार जी की गाथा जो है सो जैसी कमेरे कानों के मार्ग मे आई थी तैसी ही गायन कर दई है ॥ इति श्री भक्तिविनोद ग्रंथे भगवद्‌ ॥

चरनन सिर नाये॥ तव मुनीस दयावस ताहीं॥ फ
स्यो धान लेत कर माहीं॥ हरि प्रसाद ततकाल मि
टाई॥ पुजन वृंद करवा उर ताई॥ तहाँ रह्यो एक
नगर महाना॥ विदत सिंह पुर नाम कहाना॥ नामध
भगवन भवन सुहावा॥ जासु करन दरसन वहु आवा॥
भवन द्वार ठाढे नर नारी॥ करत रहे पूजन सु पुजारी॥
दोहा॥ भीर भार वहु द्वारते देखि न परे मुरारि॥ भक्ति
सार सुविचारि उर आये दूसर द्वार॥ देखन लागे त
होते प्रभु कहे भक्त प्रधान॥ फिर गई तो नेहि ओर
तव मृदु मूरति भगवान॥२८॥ टीका॥ तव भक्तीसार
जी तहां वहुत काल वास करके फिर कनिकृस्न भ्राताके सहित
तहांसे उदासीन होकर आनंदपूर्वक किसी और अस्थान
को प्रस्थान करते भये तव चलते चलते तिन्होंने मा
रगमे एक नयाहीं चरित्र देखा जो एक अस्थानमे कई एक
वेदक व्रह्मणों ~~...~~ वडे सुंदर स्वरसे वेदका उच्चार
कर रहे हैं ~~...व्रह्मणोंने~~ तिनोने मुनी को देख
कर जाना कि इह कोई शूद्र जाती है इसते वे सव के सव
वेदपठनेसे मौन होय गये और इहां भक्तीसारजी
जो मुनियोंमे सृ सृ महा मुनी थे तिनका व्रह्मणोंने
जो अपमान किया तिसते वे संपूर्ण व्रह्मण वौरे
अर्थात वाउले होयगये मुखसे कुछ शवद प्रमाण
वोलने की भी ताकत नहीं रही तव तिनों विचार कि
या कि हमने और अवज्ञा तो नहीं करी परन्तु इस मु
नीका निरादर किया है इसते कोई पाप हमको लगा है
ऐसे विचार कर त्राहि त्राहि कहते हूये आयकर
मुनी के चरनो पर गिर पडे तव दया रूप मुनी नाय
क तुरत दया के वश होकर और दला हूया धानका
दाना हाथमे ले कर राम राम कहि कर के तिनपर डार दिया
तो ततकाल हीं भगवान की कृपासे तिन व्रह्म

२४५

न मुख हो जाते हैं ॥ रामानुज और तिनके शिष्य सेवक बड़े विद्वान और भी जो जो आचार्ज प्रसिद्ध भये हैं तिनकी गाथा एक अमृत के अपार समुद्र वत है तिसके कथन करने को ऐसा कौन सामर्थ है परंतु ~~कछुक लघुमती~~ ~~से कथन की जाती है~~ हे गुरुदेव स्वामी जी समय के अनुसार और लघु मती के अनुमान से ईहां कुछ गायन की जाती है कहते हैं कि एक भगवान कृपानिधान आपने वैकुंठ धाम मे शेषनाग की सिज्या पर कैसे ध्यान से विराजमान थे कि चार तो भुजे और ~~स्याम शरीर~~ नीले कमल को लज्या देने वाला सुंदर स्याम शरीर बड़ा विशाल हृदय और तिस पर शोभा देती है तुलसी की माला और नवीन कमल की छवी को हरने वाले मनोहर नेत्र सिर पर के चिनु ~~और~~ की दिव्य मणियों करके लचित भया हुआ मोर मुकट और कानो मे मकाकार कुंडिल संख चक्र गदा पद्म इनो करके शोभायमान और कुटिल भवें बड़ी शोभा वाले पीवस्त्र और ~~भगवान के सुदोम श्याम~~ कोटि कामदेव की छवी को लज्या देने वाले सुंदर अंग ऐसी शोभा वाले और संसार का भय दूर करने हारे भगवान जो हैं सो कली काल अर्थात कलयुग का जोर प्रवेश देखकर हृदय मे विचार करने लगे कि ऐसा कौन उपाय किया जावे जिस ते ~~सन्मु~~ विमुख भये हूये लोग मेरे सनमुख हो जावें देखो कि कलीकाल का प्रभाव पाय करके सब ~~नरक को हीं जाने वाले~~ हो गये हैं ॥ २ ॥ चौपाई ॥ प्रभु जीय सोच गुनत

(margin:) पीत, ले, मुराकृति कुंडल, अर्थात् भयानक, तथा, कलियुग रूपी दौसि मैं जितने जाने वाले

इन्द्र अधिकाई॥ बोले वचन चरन सिरन सिरना
ई॥ कवन सोच वारन भवतारन॥ कसन करहु अ
व प्रकट उचारन॥ तव बोले अस त्रिभुवन नाथ॥
सुनहु भुजगनायक मम गाथा॥ धरम सुकरम प
रत नहीं हेरी॥ कलि मति हस्यो लीन सब केरी॥
मख व्रत दान दयादि विसारी॥ दंभाचार निरत नरनारी॥
पूरहिं अवहि नरक सब जाई॥ मोरे सोउ सोच अधि
काई॥ ग्रसत काल कलि लोग सवाहीं॥ किमि आव
हिं मोरे पुरमाहीं॥ तुमहु सेष समरथ पियनाहीं॥ कर
हिं जे मम सनमुख इनकाहीं॥ ताते तुमहु परम उपका
री॥ इन जीवन उद्धार विचारी॥ अव तरहो पृथवी त
लमाहीं॥ करहु जाय सनमुख सबकाहीं॥ सेष सुन
त भगवन अनुसासा॥ नाय सीस मुख विनय प्रकासा॥
मै जावहूं भगवन महिमाहीं॥ देहु विभूति जुगल ज
नकाहीं॥ दोहा॥ होहिं काज सब सिद्ध तव प्रभु तुव कृ
पा प्रसाद॥ एवमस्तु भगवन भन्यो पाय परम अह
लाद॥ १२॥ टीका॥ इस प्रकार भगवान के हृदय का सोच
देखकर फणपती जो है सो चरनो पर सीस नाय कर
कहने लगे कि हे गज का त्रास हरने वाले और भवरूपी
समुद्र के तारने वाले अव मेरे को प्रकट करके कहिये
कि आपने हृदय मै सोच किस निमित्त किया है ऐसे शेष
का वचन सुनकर तीन लोक के नायक भगवान कह
ने लगे कि हे भुयंग नाथ मेरा वचन सुनलो जो संसार
मै इस कली काल ने सबकी बुद्धी हर लई है ध
र्म और सुकरम कहीं देख नहीं पड़ता है यज्ञ व्रत
दान दया इत्यादि सब विसार कर सब नारी
नर दंभाचार मै लीन हो रहे हैं इन अब पूरा करके
को
नरको परिपूरण करदेवेंगे ताते मेरे हृदय मै एही
बड़ा सोच है कि इह कली काल के ग्रसे हुये लोग मेरे पुर

मे किस प्रकार आवेंगे अब हे सेष तुमहिं सामर्थ हो औ
र तो कोई नहीं देख पड़ता जो इन जीवों को मेरे सन
मुख करेगा तातें हे फणनायक तुमहीं परम उपका
रकी नधी हो इन जीवों उद्धार विचारकर पृथ्वी तल
पर जायकर अवतार धारो और इन विमु
ख जीवोंको मेरे सनमुख करो तब शेष जी भगवा
नकी आज्ञा सुनकर और चरनोपर सीस नायकर
विनती करने लगे कि हे कृपानिधान मे पृथ्वी तलपर
जाता हूं परन्तु कृपाकरके अपनी दोनो विभूती ऋ
द्धी सिद्धी जो है सो मेरे को दान करिये तब आप की अ
नुग्रह से सब कार्ज सिद्ध हो जावेंगे ऐसे शेष के मु
खसे वचन सुनकर भगवान एवमस्तु कहते हुये कि
ऐसे ही होगा हृदय मे परम हरष और आनंद मानते
भये ॥२॥ चौपाई॥ तब अहीस उर आनंद छाये ॥
अवनि गवन हित होन विदाये॥ चतुर खघृश
त सीस सुहावन॥ धर्‍यो नाथ पद पंकज पावन॥
बार बार अस प्रभुहिं जुहारी॥ लीन्यो बहुरि प्रदत
ता चारी॥ तब भाष्यो अस त्रिभुवनराजू॥ तुम्ह रे
हाथ भक्त अब काजू॥ जस बनि परहिं करहु त
स जाई॥ तुम सामर्थ सरब सुखदाई॥ तुम नाहिन
उपदेसन जोगू॥ गुणनिधान जानत सब लोगू॥
सखे चक्र आदिक पुनि जोई॥ पठे दीन दाया नि
धि सोई॥ मनुज रूप निज धारि सुहाये हरि प्रेरत
अवनी तल आये॥ फणि नायक कहे बार बार्‍यो॥
दीन नाथ श्री वदन उचार्‍यो॥ रहहु कब हे ज
नि भूतल जाई॥ तात मौन धरि आपु दुराई॥
सकल लोक हित हृदय विचारी॥ करि उपदेस

अथरामानुजंचरितं

॥ दोहा॥ कथा सुधारस पावनी सुनहु श्रवण दै संत॥ हरन भूरि भ्रम भीत भव करन शरण श्रीकंत॥ जासु सुनत हरि विमुख जन होहिं सुसनमुख आय॥ सो अनुपम सुख सुजस प्रद करहुं प्रकट कछु गाय॥ चौपाई॥ अग्रवर्ति रामानुज केरे भये विदित विद्वान घनेरे॥ और हुं प्रकट आचारज जेते॥ करहुं वदन गायन सब तेते॥ सुधासिंधु तिन चरित अथाहा॥ कोसामर्थ कथन कर ताहा॥ ईहां कछु कलछु मति अनुसारा॥ करहुं कथन संक्षेप प्रकारा॥ सेष सेज भगवन इक काला॥ राजे निज वैकुंठ कृपाला॥ चारु चतुर्भुज स्यामल गाता॥ निदरत नलिन नील अवदाता॥ उर विसाल वनमाल विराज्यो॥ नयन नवल नीरज छवि लाज्यो॥ मौलि क्रीट कल मणिगण मंडित॥ रवि दुति जोति कोटि मनु खंडित॥ करन मत्स कृत कुंडल चारू॥ चरनु चक्रादि चिन्ह मन हारू॥ भृकुटि लोल कल वंक विहारी॥ वसन लाव[illegible]न्य वन्यारी॥ लाजित मदन कोटि छवि अंगा॥ दीन नाथ भव भीत विभंगा॥ लखि प्रवेश कलि जोर महाना॥ उर विचार कीन्यो भगवाना॥ दोहा॥ मम सनमुख जन होहिं कस कीजे कवन उपाय॥ भये नरक गामी सकल कलि प्रभाव जग पाय॥ १॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो इह गाथा जो अमृत रस कर के भीगी हूई है सो इसको अवकान देकर सुनिये इह कैसी भी गाथा है कि संसार की महा भय और भ्रम के नास करने वाली और श्रीपती जो भगवान हैं तिन के चरनो की शरण को प्रापत करने वाली है फिर कैसी है कि जिसके श्रवण करने ~~से तो भगवान के विमुख पुरुष जो हैं~~ भगवान से जो ~~[illegible]~~ पुरुष ~~[illegible]~~ विमुख भये हुये हैं सो ततकाल ही भक्ती प्रीती वाले होकर भगवान के स

२५१

२५१

करके

और

किये मानुष्य रूपधार जीवोंके धरम और सुकरम मे लगायके तिनका उद्धार करो इसप्रकार भगवानके प्रेरे हूये सोभी पृथ्वी तलपर चले आवते भये ॥३॥ चौपाई ॥ दछणदेस विदत सब गाई ॥ कावेरी पुरिरुचिर सुहाई ॥ तहि महे सुमति सुजस सुख गेहा ॥ द्विज वर एक निपुण गुण रेहा ॥ केसव जज्ञा नाम सुहावा ॥ भवन भूरि सुख संपति छावा ॥ प्रमुदा तास सील गुण धामा ॥ कांतिमती अस नाम ललामा ॥ मन हु हरन छवि मनमथ नारी ॥ पति व्रत धरम निरत सुभचारी ॥ जद्यपि द्विज सुख संपति जाने ॥ तद्यपि सुत बहीन दुख माने ॥ पुत्र जाचना हेतु सदाहीं ॥ सुमरत रहत रमापति काहीं ॥ देवपति तजि भरोस जग आना ॥ एक आधार कृस्न जीय जाना ॥ दोहा ॥ असतिन भक्ति अनन्य लखि भे प्रसन्न फलदाय ॥ कांतिमती के गर्भ प्रभु प्रवसे कौतुक आय ॥ ४ ॥ टीका ॥ तब दछण देश मे एक बडी रमणीक और मनोहर कावेरी नाम करके पुरी प्रसिद्ध थी तिसमे एक बुद्धिमान् सुजस और सुखका धाम ब्रह्मण निवास करता था सो धन संपती करके परिपूरण केशव जज्ञा नामकरके प्रसिद्ध था और कांति मती नामा तिसकी स्त्री परम सुशील और गुणों की निधी अत्यंत रूपवाली और पतीव्रत धरममे बडी प्रवीन थी यद्यपी तिस ब्रह्मण को सुशील स्त्री और धन संपती करके सरव प्रकार सुखही प्रापत था तद्यपी संतान से जो रहित था इस करके हृदयमे बडाही दुख मानता था सो रात्रीदिन पुत्र की प्राप्ती के निमित्त लक्ष्मी के नाथ भगवान जो हैं तिन

ल

ल

प

श्रीरामजी

काहीं सुमरती करता रहता था तैसेही तिसकी स्त्री भी और सब कामरोस त्याग करके एक नारा यण चरन कमलों को सुमरती रहती थी इसप्रकार तिनकी दृढ भक्ती और प्रीती देखकर फणपती जो हैं सो हृदय मैं अत्यंत प्रसन्न होकर कै तुकसे कांतिमती के गरभमें आयकर प्रवेश करते भये ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ तबतें होन लग्यो पुरि नाना ॥ नित नव मंगल मोद महाना ॥ द्वादस मास जब गयो विताई ॥ चैत शुकल पंचमि तिथि पाई ॥ सुमिनसार गुरु वार सुहायो ॥ कांति मती सुंदर सुत जायो ॥ सुनि केसव जज्वा सुत भयऊ ॥ हरख्यो परम मोद बपु छयऊ ॥ कहत आज निवरन दुखदीना ॥ हम रो सफल मनोरथ कीना ॥ भनत सत्य श्रुति सिम्रिति टेरे ॥ सुमरत सुलभ नाथ सब केरे ॥ अस कहि केसव जज्वा नाना ॥ दिये दान विप्रन मनमाना ॥ निज गुरु वहुरि लिये बुलवाये ॥ नाम शैलपूरन जग गाये ॥ संसकार सुत कर जस राहा ॥ करवायो संजुत उतसाहा ॥ दिन दिन बढत भयो तब वाला ॥ देखि सुदिन सुभ नाम रसाला ॥ रामानुज राख्यो मन भावा ॥ विप्र भवन मनु भाव सुहावा ॥ बढत बाल जब भयो सयाना ॥ तब विद्यादि पठन रुचि माना ॥ रूप तेज गुण शील उदारा ॥ जान्यो सबन शेष अवतारा ॥ चारि वेद षट शास्त्र पुराना ॥ कौतुक पठे शेष भगवाना ॥ दोहा ॥ बरष अष्ट दस कर भये तेज वदीन सनेहु ॥ प्रमुदित पिता कराय तब दियो दार परि गेहु ॥ ५ ॥ टीका ॥ जब ते शेष भगवान ने तहां प्रवेश किया तब तें तिस पुरी विषें नित्य नवीन

मंगल और उतसव जो हैं सो होने लगे जब नौ महीने वतीत होगये तब चैत्रके शुकलापक्ष की पंचमी तिथी को प्रातकालहीं गुरूवारके दिन कांतिमती सुंदर पुत्र जो है सो जनमती भई ऐसे पुत्रका जनम सुनकर केशव जज्वाभी अपने हृदय मै परम आनंदको प्रापतभया कहनेलगा कि आज सरव दुख और कलेशों के निवारने वाले भगवान कृपानिधानने हमारे मनोरथ सफल किये हैं सुनो भाई श्रुती और सिमृती सत्यकरके पुकारती है कि जो कोई भगवानका सुमरण करेगा तिसको दीनानाथ सहजेहीं फलके देने हारे हैं इसमै कुछ संशय नहीं है इसप्रकार कहिकरके केशव जज्वाने ब्रह्मणों को वुलायकरैं अनेक प्रकारके दान जो हैं सो दिये तिसतें उपरांत ~~शैलपूरन नामा~~ ~~अपने~~ अपने गुरू शैलपूरण नामा जी को वुलायकर जिस प्रकार पुत्रका संसकार होताहै सो विधी पूर्वक सब करवाया ऐसे दिन दिन पायकरैं वालक जो है सो वढतामया तब पिताने सुंदर और शुभ दिन विचारकर तिस वालकका नाम रामानुज रखदिया सो ब्रह्मणके घरमै वडी शोभा पावता भया और जब वे वढकर सयाना हूआ तब रूप तेज गुण शील और उदारता करके वडा चतुर होता भया फिर विद्या पठनमे रुची और प्रीती जो लगी तो थोरेहीं कालमे चारोवेद षट शास्त्र अठारो पुराण पढकर प्रवीन होयगया तब लोगोने जाना कि इह साक्षात शेषभगवान का अवतार है और जब फणी नायकजी अठारा वर्ष के होयगये तब पिताने वडे हरष और उतसाह से दार परिग्रह

(हाशिया:) चंद्रेसिनमानसे

ऐसे

एकके तुकसे है

जनन सुख कारी॥ अधरम कुमति कपट दुरचारा॥ हरहु सकल करि धरम प्रचारा॥ दोहा॥ एवमस्तु भनि भुजग पति प्रभु सासन धरि सीस॥ मातलोक कहं गवन किये जिय सुमरत जगधीस॥ २॥ टीका॥ तब शेषनागजी बड़े आनंद मैं मगन भये हुये पृथवीतल पर जाने को विदाय होने के वासते भगवान के पास आय कर हजार सीस हीं चरनो पर धर कर फिर बारंबार दंड प्रणाम करके चार प्रदक्षणा लेते भये तब कृपा सिंधू भगवान कहने लगे कि हे भक्त अब हमारा काज तुमारे हाथ हीं है जैसे हो सके तैसे हीं करो तुम सरव प्रकारों के सब के सुखदायक और सामर्थ हो मै तुम को क्या उपदेश करूं और क्या सिखाऊं तुम तो आगे हीं सरव गुणों की निधी और नीती विचार मै परम चतुर सब लोगों मै प्रसिद्ध हो तदपि बारंबार मै हे भुजग नाथ एही कहता हूं कि पृथवीतल पर जाय करके मत कहीं मौन धार कर बैठ रहो तहां जाते हीं सरव जीवों का हित विचार कर [illegible] बड़ा सुखदायक उपदेश करके अधर्म कबुद्धी कपट दुराचार इह सब दूर करके सुंदर धरम और सुकरम जो हैं सोई जहां तहां प्रचलित कर देवो इसतें विमुख पुरष जो हैं सो आप हीं मेरे सनमुख हो जावेंगे इस प्रकार भगवां की आज्ञा सीस पर धारन करके शेषजी कहने लगे कि महाराज ऐसे हीं होगा [illegible] इतना कहि कर और भगवान के चरन कमल हृदय मै धार कर जैहो दीनानाथ की ऐसा कहते हूये कलापती जो हैं सो तुरत हीं मातलोक को चले आवते भये तिनके पीछे हीं भगवान कृपानिधान के संख चक्रादि [illegible] भी पृथवीतल पर [illegible]

पीछे [illegible] आज्ञा देते भये कि तुम भी

जाय करके

२५३

253

१८

उपजती भई॥ तब एक बडे प्रसिद्ध गुसांई पर विद्वान और बडे भारी पंडित धरम सुकरम मे प्रवीन जादव गिरी नाम करके लोगों मे गाये हूये मानो बृहस्पती के समान विद्या की एक निधी थे तिनके चरनों की शरण विचार कर रामानुजजी अपने सब पुस्तक लेकर और घर को त्यागकर पढने के निमित्त तिनके पास कांची पुरी मे चले आवते भये तब तहां न्याय व्याकर्ण और सांगादि भली प्रकार विचार करके तिसते उपरान्त भक्तपाल भगवान को हृदय मे सुमर कर वेदांत शास्त्र जो है तिसका प्रारंभ कर दिया इस प्रकार जब पढते पढते कुछ काल व्यतीत हो गया तब तिस पुरी का जो राजा था तिसकी रूप गुण सील सुभाव वाली और छबी की खानी एक अतहे मनोहर कन्या थी तिसको करम की गती से एक ब्रह्म पिसाच लगा हूआ था सो राजा ने तिस के निवारने के वासते यद्यपी अनेक जतन भी किये और धन भी बहुत खरच किया तद्यपी सो दुष्ट तिस कन्या को नहीं छोडता भया तब राजा ने जादव जी को सुण पाया कि मंत्र शास्त्र मे अत्यंत प्रवीन हैं ततकाल ही पुत्री का कलेश निवारने के वासते तिन को शिष्यों के सहित सनमान पूर्वक घर मे बुलाय लिया और अनेक प्रकार विनती प्रणाम करके फिर पुत्री को ल्याय कर तिन के सनमुख बिठाय दिया और हाथ जोड कर प्रार्थना करने लगा कि हे दीनानाथ इस कन्या को ब्रह्म पिसाच लगा हूआ है मै अनेक उपाय कर कर के हार गया हूं अब इस की गती आप के बिना और किसी के हाथ नहीं है हे भगवन तुम संत सदैव पर हितकारी और पर पीडा के निवारन करने वाले हो

भक्तमालभाषा

संसारमे तुमारा शरीर केवल पर उपकारके वासते है तो ते अब कृपा करके अपने मंत्रके प्रभावसे इस कन्या का कलेश जो है सो निवारण करिये ॥ २ ॥ चौपाई ॥ सुनि अस दीन वचन नरराया ॥ जादव भये तुरत वस दाया ॥ पठि पठि मंत्र लगे बहु झारन ॥ भयो न ब्रह्म प्रेत कछु चारन ॥ प्रबल जानि मानस विसमाये ॥ अब कीजे इहि कवन उपाये ॥ तब सनमुख दुज चरन पसारी ॥ हस्यो प्रेत दै दै करतारी ॥ जाहु जाहु वामन निज गेहा ॥ देखे मंत्र जे तुव एहा ॥ इनतें मोहि न त्रास कछु भाई ॥ जंत्र मंत्र अस अनक निकाई ॥ हम उराय दुज वातन दीने ॥ मंत्री जंत्रि हनन बहु कीने ॥ पूर्व जनम तुमरो दुज जाती ॥ हमरे हृदय विदत सब भाती ॥ पूर्व जनम तुव कानन भीरा ॥ बसत रहे इक सरवर तीरा ॥ तहि थल संत सुषृ इक आये ॥ निरत भक्ति भगवंत सुहाये ॥ देखि विमल जल किये सनाना ॥ करि नित करम पाक विरचाना ॥ हरिहि लाय नैवेद सुहावा ॥ आपु संत पुनि भोजन पावा ॥ जे उछिषृ अव सिषृ रहाना ॥ ते पतरी सर दिये बहाना ॥ बहुरि संत मारग निज लीना ॥ पाछे तुम है गवन तहं कीना ॥ दोहा ॥ ते उछिषृ पतरी लिये जलतें तुरत निकारि ॥ विकल क्षुधा वस बैठि तट सो तुम किये अहार ॥ ७ ॥ टीका ॥ तब ऐसे राजाके दीन वचन सुनकर जादव जो सो तुरत दयाके वश होकर और मंत्र पढ पढ कर कन्याको झारने लगे यद्यपी मंत्रोंका बहुतही प्रभाव दिखाया तद्यपी सो ब्रह्म पिसाच कुछभी निवर्त नहीं भया तब जादव तिसको प्रवल जानकर हृदयमे आश्चर्ज होकर विचार करने लगे कि इसका क्या उपाय करिये इह तो बडा असाध्य है इतने मे सो पिसाच तिनके सनमुख चरन पसार कर और हाथोंकी तारी दे दे कर बडा हसने लगा और फिर कहता भया कि हे ब्राह्मण अब उठो और अपने घरको रसता लेवो मैने तुमारे जंत्र मंत्र सब देख लिये है इनतें मेरेको कुछ डर

नहीहै ऐसे कई जंत्र मंत्र हुआ करते हैं हमनेतो अने
के कानों मैही उडायदिये हैं और अनेक जंत्री मंत्री
सेंकन मारकर प्राणों से हैं मुकायदिये हैं हेब्र
स्न ण तुम किस गिनती मै हो तुमारे तो पूर्व ले जन
म कोभी हम भलीप्रकार जानते हैं सो श्रवण करो
कि पूर्व जनममै तुम वडे चोर वणमै एक सरोवर के
किनारेपर वास करते थे तिस अस्थान पर एक संतसू
षू वडे महातमा आय प्रापत भये तिन्होने सरोवर का
निरम जल देखकर तहा सनान किया फिर अपना सव
नित्यकरम करके वडी प्रीती से भोजन वनाया और भक्ती
पूर्वक प्रथम भगवान को नैवेद लगायकर पीछे आप
भोजन पाया तव तिनका जूठा जो कुछ भोजन वचा
था सो संत महात्मा ने पत्तल के समेत सरोवर मै
फेंकदिया तिसतें उपरान्त संत अपने मारग को
चलेगये और पीछे तहाँ तुम आय प्रापत भये
तव तुमको छुधा ने जो व्याकुल किया हुआथा सो
पत्तल सरोवर से निकालकर संतभक्त का जूठा भो
जन जो उसमै कुछ रहा हुआथा सो तुमने अहार क
र लिया ॥७॥ चौपाई ॥ संत उच्छिष्ट प्रसाद प्रभाऊ ॥
भये तुम हु जादव द्विज राऊ ॥ तहि तें भक्ति सुमति
सुखदाई ॥ तुम हुं विपुल विद्यादिक पाई ॥ अरु मै
ब्रह्म प्रेत जिमि भयऊ ॥ इहां प्रवेस भवन नृप
लयऊ ॥ सो कारन सुन है द्विजनाथा ॥ तुमरे क
रहुं कथन सव गाथा ॥ मै त्रीय जुत संपति परि
वारा ॥ वसत रह्यो निज मुदित अगारा ॥ समय
एक जुत वेद विधाना ॥ मै लाग्यो कृतु करन महाना ॥
भूलि गयो मोहि मंत्र प्रकारा ॥ भयो सि क्रिया हीन
दुरचारा ॥ तास पाप वस मै इत आई ॥ भयो ब्रह्म

अर्थात विवाह करवाय दिया ॥५॥ चौपाई ॥ अस प्रका
र कछु काल सिराना ॥ शेष जनक किय हरिपुर प्याना ॥
पितु कर प्रेतकरम जस बरना ॥ कियो सकल तस धारन ध
रना ॥ बहुरि राखि रुचि मानस माहीं ॥ करहुं ध्यैन सम शा
स्त्र सचाहीं ॥ रहे गुसाईं विदित पटु भारी ॥ जादवगिरि नाम
क सुभचारी ॥ सुरगुरु सम विद्वान महाना ॥ तिनकर चर
न सरन हित माना ॥ लै पुस्तक मानस अनुरागे ॥ रामानु
ज निज सदन त्यागे ॥ पठिन हेतु कांची पुरि माहीं ॥
चलि आये सुमरत प्रभु काहीं ॥ भलहिं न्याय व्याकरण
विचारा ॥ पुनि सांगादि किये निरधारा ॥ बहुरि कियो वेदां
त आरंभा ॥ सुमरत हृदय भक्त अवलंभा ॥ पठत पठत
कछु समय बितावा ॥ तहिं पुर रह्यो जवन नृप भावा ॥
सुछबि सील निधी तासु कुमारी ॥ रूप प्रधान मान
रति हारी ॥ ब्रह्म पिसाच लग्यो इक तासा ॥ तहि नि
वर्तो हित भूप अजासा ॥ किये अनेक जद्यपि धन खोई ॥
तद्यपि तजत भयो नहिं सोई ॥ तब जादव छित पति सु
नि पाये ॥ मंत्र शास्त्र संपन्न सुहाये ॥ सुता हेत सादिर
नरराई ॥ शिषन सहित गृह लिये बुलाई ॥ विनय प्रणाम
विविध मुख भाखी ॥ सुत ल्याय सनमुख नृप राखी ॥ जु
गकर जोरि बहुरि अस वाचा ॥ लग्यो नाश इहि ब्रह्म
पिसाचा ॥ मै हार्यो करि जतन सचाहीं ॥ अब उपाय
कछु प्रभु विनु नाहीं ॥ दोहा ॥ सदा संत परहित करन
कारन पीर पराउ ॥ इहि कलेस अब हरिय प्रभु करि
निज मंत्र प्रभाउ ॥६॥ टीका ॥ जब इस प्रकार कुछ का
ल बतीत हो गया तब शेष जी पिता शरीर को त्याग कर
परलोक को चले तिनका प्रेतकरम जिस प्रका
र जोग्य था सो फणि नायक जी ने विधी पूर्वक सब कि
या तिस तें उपरांत तिन को शास्त्र पढने की फिर रुची

के

आप तें भये

विचारने

किजिसतें मै राजाकी पुत्रीको त्यागसकताहूं औ
र वे सत्य करकेहै तिस मै कुछ संशय नहीं हेब्र
ह्म कुलमे सूर्य तूं श्रवण कर सो आगे कथनकिया
जाताहै ॥ ५८ ॥ चौपाई ॥ तुमरे शिष्यन माहिं गुणधा
मा ॥ विदत जास रामानुज नामा ॥ सोमेरे कब हूंकि दुज
राई ॥ निज चरणोदिक पान कराई ॥ वहुरि करहिंमो
हि आपन चेला ॥ तोमै तजहुं सुता नृप मेला ॥ सुनि
जादव मानसविसमाना ॥ तव दुहिता निज भूप सुजा
ना ॥ रामानुज पद सनमुख ल्याई ॥ विनै विविधक
रि दीन विठाई ॥ इहकिंकरि प्रभु चरन तुमारी ॥ ल
ग्यो पिसाच ब्रह्म इहि भारी ॥ दीन नाथ तुव पद सर
नाई ॥ जानिखित कछु करहु भलाई ॥ सुनिअस न
म्र वचन महिपाला ॥ अरु कन्या दुख देखि विसाला ॥
रामानुज निज चरन पखारी ॥ दीन्यो सुतावदन सो
ऊवारी ॥ धरि निज पद कन्या कर सीसा ॥ जाहु जाहु
अस भन्यो वगीसा ॥ अघृ वरन पुनि वदन उचारी ॥ दि
ये सुनाय भक्त व्रत धारी ॥ तस्केप्रेत ततकाल उड़ा
ना ॥ मुनि दुरलभ सुर पुर किय ~~थाना~~ थाना ॥ देखि
चरित जादव विसमान्यो ॥ अधो वदन मानस विकल
खोन्यो ॥ निज अपमान गुनत जीय भारी ॥ पियत जात म
नु क्रोध दिवारी ॥ सुता अरोग देखि निजराई ॥ रामानुज
चरनन सिरनाई ॥ जादव जुत सतकार महाना ॥ कियो
नरेस विविध सुख माना ॥ कीन वहुरि अस विनय म
हाहीं ॥ मोहितें सस्यो नाथ कछु नाहीं ॥ तुव उपकार
संत भगवाना ॥ मोपें कौन दीनपद जाना ॥ अस प्रकार
करि विनय वडाई ॥ किये विदाय संत नरराई ॥ आये
तव जादव निज धामा ॥ रामानुज मानस निसकामा ॥
दोहा ॥ भूपति दान महानवित जादवकहे सव दीन ॥
पै तिहि सोच न तज्यो कछु कियो कपट मन लीन ॥ ५९ ॥

टीका॥ प्रेत कहता है कि हे दुजराज तुमारे शिष्यों के बीच एक गुरोंकी निधी भगवान का भक्त रामानुज नाम करके जो प्रसिद्ध है सो मेरे को कदी अपने चरनो का जल पान कराय देवे और फिर पीछे ते मेरे को अपना शिष्य बनाय लेवे तब मै अवश्य करके राजा की पुत्री को त्याग देऊंगा इस प्रकार सुन करके जादव अपने हृदय मे परम आचर्ज को प्राप्त भया तब राजा ने ~~अपनी कन्या को लेकरके~~ मुख से अनेक विनती और बडाई करके कन्या को ~~साथ~~ त्याय करके रामानुज जी के चरनो के आगे विठाय दिया और कहा कि महाराज इह कुमारी आप के चरनो की चेरी है इस को महा दुखदायक ब्रह्म पिशाच लगा हूआ है अब हे दीनानाथ इह आपके चरनो की शरणागत भई है इस को दुखित जानकर उपकार ~~कीजिये~~ करो ~~और~~ कि जिसतें इसका भला होजावे ऐसे राजा के दीन वचन सुनकर और कन्या का परम कलेश देखकर रामानुज जी तुरत दया के वश होय गये तब ततकाल अपने चरन धोयकर सोई चरनो का जल लै करके तिस राज कन्या को पिलाय दिया और फिर अपना चरन कन्या के सीस पर धरकर तीन वार जाउ जाउ जाउ कहिकर अष्टाक्षर मंत्र जो है सो तिसके कानो मे सुनाय दिया तब तिस मंत्र के प्रभाव से सो प्रेत ततकाल उडकर मुनी जनों को दुर्लभ जो देवपुर है तिसको चला जाता भया इस अद्भुत चरित्र को देखकर जादव ने बडा आचर्ज मानकर लज्जा से मुख नीचे को कर लिया और अपना अपमान विचार कर मानो क्रोध की अगनी को पीता जाता है तब राजा अपनी कन्या को आरोग जान कर रामानुज जी के चरनो पर वार वार सीस नावता भया तिसतें उपरान्त

श्री

राजाने अनेक प्रकार का धन देकर जादव के सहित रा
मानुज जी का बड़ा सतकार किया और फिर हाथ जो
ड़ कर कहने लगा कि भगवन मेरे तें कुछ नहीं स
रा है तुमने हीं अपने चरनो का सेवक जान कर
मेरे पर अनंत उपकार किया है कि जिस का कुछ
अंत नहीं इस प्रकार बार बार विनती और बड़ाई
सन्मान करके संत महातमा विदा कर दिये तब जा
दव शिष्यों के सहित अपने घर को चले आये
और रामानुज जी परम त्यागी और निसकाम जो
थे तिनो ने राजा का दिया हुआ सब धन जादव जी
को हीं दे दिया परन्तु तिसने अपने मन से सोच नहीं
त्यागा और हृदय मे कपट धारन कर लिया ॥ ९ ॥
चौपाई ॥ रामानुज सो बैर बंधावा ॥ ऊपर हित
मानस रिस छावा ॥ एक दिवस रामानुज केरा ॥ मौ
सी कर सुत भ्रात जठेरा ॥ आयो भेट करन तेहि धामा ॥
गोविंदा चारज अस नामा ॥ परम सुशील संत हि
तकारी ॥ ज्ञान निरत पंडित व्रतधारी ॥ जादव सन
मिलि हरष उमंगा ॥ बहुरि मिल्यो रामानुज संगा ॥ पू
छि परस्पर कुसल सुहाई ॥ बैठि गये सुमरत जदुराई ॥
भ्रातहिं देखि पठित बेदांता ॥ लग्यो पठिन आपु वृति
शांता ॥ श्रुति को अरथ समय इक माहीं ॥ जादव कि
ये विरुद्ध तहाहीं ॥ तब रामानुज विनय उचारा ॥ इह न
शुद्ध प्रभु अर्थ तुमारा ॥ तब जादव करि कोप महाना ॥
रामानुज सन वचन बखाना ॥ अरे मंदमति अ
धम अपावन ॥ भये तुमहुं गुरु लगे पढावन ॥ अस क
हि अरुन नयन विसकारी ॥ रामानुज कहं दियो नि
कारी ॥ दोहा ॥ तब आये आपन सदन रामानुज मति
धीर ॥ बैठि साम्ब चिन्तत चतुर उर सुमरत जदुबीर ॥
१० ॥ टीका ॥ ऐसा जादव जो है सो रामानुज जी सों बै
र बांध लेता भया बाहर से तो हित करता और भीतर
से क्रोध राखता था तब एक दिन रामानुज की मासी

‘विनती’ ‘राजाने’ ‘द्वि’

रादासदु जराई॥ जरन लग्यो निसवासर काया॥
भ्रमत भ्रमत कहु ठौर नपाया॥ तव ग्रायो कोंची
पुरि माहीं॥ इत देखि नृप नंदनि काहीं॥ मैसचयो
निजकुल करमांती॥ तव तें कुछक भयो मोहि शांती॥
जंत्री मंत्रि कोटिकि ना होई॥ मोहि वारन करिसक
हि नकोई॥ दोहा॥ नृप तन्याकर तजन मम पैइक
ग्रहि उपाय॥ होहि सफुर समय नही दुज तोहिँ व
ताय॥८॥ टीका॥ तव संत भक्त के जूठे भोजन खाने
के प्रभाव से हे ब्रह्मण तुम जादवगिरि करके प्रसिद्ध
भये हो ग्रौर तिस तें हीं भक्ती ग्रौर सुमती सरव ग्रौर सुं
दर विद्या जो है सो पाई है ग्रौर मैभी जिस प्रकार प्रेत
भया हूं ग्रौर ईहा राजा के भवन मै प्रवेश पाया है सो
मै सव कारण कथन करता हूं हे दुज प्रधान तुम श्र
वण करो क्योंकि मै ग्रपनी स्त्री संपती ग्रौर
परिवार के सहित वडे सुख पूर्वक घर मै वास
करता था॥ एक समय मै वेद की विधी के ग्रनुसार व
डाभारी यज्ञ जो है सो करने लगा तव मेरे को तहां
मंत्र का प्रकार भूल गया ग्रौर मै क्रिया से हीन दुरा
चार होगया तिस पाप के वश होकर हे दुजराज मै
ईहां ग्रायकर के ब्रह्म पिशाच वन गया तव मेरा श
रीर जैसे ग्रगनी करके जलता है तैसे जलने लगा
भ्रमते भ्रमते को कहीं ठौर नहीं मिला तव मै व्या
कुल भया हुग्रा कोंची पुरी को चला ग्राया ई
हां इहराजा की पुत्री देखकर मे इस को सच गया
तव तें मेरे को कुछक शांती प्रापत भई है ग्रव जे
त्री मंत्री यद्यपी कोटि भी ग्रावें तद्यपी मेरे को को
ई निवारण नहीं कर सकेगा परन्तु इस मे एक
उपाय है

८ सावभूतोंके देवताकी

भी

इहां

द्वैत खेद गत मेरो चहत खंड किय कुमति घनेरो॥ तां ते सव मिलि कर हु अजासा॥ जहि विधि मरहि अधम अगरासा॥ मोरे जीय अस फुरयो उपाई॥ सो तुम कहं सुत देहु सुनाई॥ मकर प्रयाग अनावन हेतू॥ चलहु सकल मिलि अधम समेतू॥ तहां प्रवाह वेनि मध माई॥ सठहि देहु तुव सुगम वुराई॥ कहि सोच प्रभुशिष न उचारा॥ लखिली जै रामानुज मारा॥ अस कहि गयो एक शिष ताहीं॥ रह्यो भवन रामानुज जाहीं॥ गवन्यो करि मनुहार लिवाई॥ आवागुरु समीप हरषाई॥ लखि जादव रामानुज काहीं॥ लग्यो प्रसंसन वदन महाहीं॥ मकर प्रयाग अनावन हेतू॥ वोल्यो तुमहि सुजस नद सेतू॥ सत्य वचन रामानुज गाई॥ गयो मातु ये लेन विदाई॥ मातु मुदित मन आयस दीना॥ गुरु सन हरषि गवन तव कीना॥ दुगर विंध परवत ढिग जाई॥ दीन्यो गोविंद मरम जनाई॥ दोहा॥ रामानुज तोहि हतन हित जादव जतन विचारि॥ मज्जन मकर प्रयाग मिस ल्याये दिस वस मारि॥ ११॥ टीका तव रामानुज गुरु के घर मे पढने के वासते जो नहीं गये तिस तें सो हृदय मे वडा कोप मानकर अपने शिष्यों को कहने लगा कि देखो इह रामानुज मेरा परम दुखदायक शत्रू है मैंने पुत्र के समान जढको पाला था तिस का अधम ने मेरे को भला फल दिया है जो मेरे अद्वैत और अखंड मत को दुषृ दुरवुद्धी खंडि न करने को सामर्थ हो गया है तां ते हे शिष्यो तुम सव मिलकर सो जतन करो कि जिस तें सो अधम पापों की राशी मृत्यू को प्राप्त होवे तिस के मरने का मेरे हृदय मै एक उपाय फुरया है सो मै तुम को सुनाय देता हूं क्योंकि प्रयाग राज पर मकर के न्हावने के वासते तिस दुषृ के सहित सव मिल कर के

चलो और तहां वेनीके प्रवाहमे जब अधम तुमारे साथ स्नान करने लगे गा तब तुमने पकरते हीं ततकाल जलमे डुबायदेना ऐसे गुरूका वचन सुनकर शिष्य कहने लगे कि महाराज इस वारताका क्या सो च करते हो तुमने रामनुजको मरा हुआ देखलेना॥ इसप्रकार कहिकर एकशिष तहां रामानुजके घरमे चला गया तब तिसके साथ अनेंप्रकार हितके वचन करकर और मनाय कर तुरतहीं साथ लेकर के गुरू के पास चला आया ऐसे रामानुज जादव देखकर अन्तर मे कपट और वाहिर से अत्यंत प्रसन्न होकर वारवार पुलाआ और वडाई करके कहने लगा कि हे सुजस और गुणोके सागर रामानुज मैने तुमको प्रयागराजके मकर न्हावने के वासते बुलायाहे तव सरल सुभाववाले भ गवानके भक्त रामानुजजी गुरूका सत्य वचनमानकर और अपने पर हित जानकर तुरतहीं विदायलेनेके वा सते माताके पास चलेगये तहां जातेहीं गुरूकी आज्ञा जोथी सो सव सुनाय दई तव माता आशीस देकर क हने लगी कि पुत्र आनंद पूर्वक जावो और गुरू के साथ मकर न्हाय कर फिर तिनके साथहीं घरके च लेआवो इसप्रकार माताकी आज्ञा पायकर और चर नोपर सीस नायकर ततकाल लौटकर गुरूके पास चलेआये तव जादव गुरू जो हे सो वडे हरषसे सुभदिन विचारकर रामानुजको साथ लियेहुये सवशिष्योंके स हित प्रयाग राजको चल परते भये सो जव चलते चलते मारग काटते हुये विंध्याचल परवतके पास आय प हुचे तव गोविंदाचारी जो तिनकी मासीकापुत्र भ्राता जादव गुरूके साथ था तिसने कहिदिया कि रामानुज रह जादव तेरेको मारना चहताहे इसीकारन तें म कर न्हावनेके बहानेसे तेरेको परम कोप करके प्रया गराज ले चला है॥२२॥ चौपाई॥ रहियो सावधान

अब भाई॥ मै तोरे सब दीन जनाई॥ गोविंद वचन सुनत हितकारी॥ रामानुज निज हृदय विचारी॥ बैठि रह्यो तरूतर धृति त्यागे॥ जादव जात रह्यो कछु आगे॥ तब गोविंद मिल्यो तहि जाई॥ तासु लख्यो पूछन अतुराई॥ रामानुज छोड्यो कहि ठामा॥ तब बोल्यो गोविंद मतिधामा॥ मै जान्यो मानस निज स्वामी॥ भयो संग तुव आगल गामी॥ तब जादव निज शिष्यन हेकारी॥ दीन्यो सासन वदन उचारी॥ खोजहु रामानुज कहं जाई॥ तुरत सकल शिष्य सासन पाई॥ गिरि थल विपुन पथापथ सारी॥ मिल्यो न खोजि फिरे सब हारी॥ तब निश्चय जादव जीय आवा॥ अधम अब सिंपचानन खावा॥ तास मरन अस हृदय विचारी॥ गुणि समान फल सुरसरि वारी॥ शिष्यन जूथजुत मुदित प्रयागा॥ कीन गवन जादव अनुरागा॥ दोहा॥ इत निरजन वन विकल मन रामानुज बस त्रास॥ बैठ तरू तर सोच पर परत नवनत प्रयास॥२२॥ टीका॥ फिर गोविंदाचारी कहता है कि भाई तुम सावधान रहना मैने तेरे को सब भेद जनाय दिया है इस प्रकार गोविंद का बड़ा सुखदायक वचन सुन कर रामानुज धीरज से रहित और हृदय मे विचार करते हुये एक वृक्ष के नीचे बैठ गये और जादव कुछ दूरी पर आगे आगे चला जाता था इतने मै गोविंदाचारी धाय करके तिसको जाय मिला तब जादव पूछने लगा कि गोविंद तुम ने रामानुज कहां छोड़ा है सो बुद्धी और विचार मे बड़ा प्रवीन जो था कहने लगा कि महाराज मैने जाना जो रामानुज आपके साथ आगे चला आया है ऐसे सुनकर जादव ने तुरत अपने शिष्यों को बुलायकर कहा कि भाई शीघ्रता से धायकर जावो और रामानुज को खोजकर के मेरे पास ल्यावो वे कहां चला गया है तब गुरू की आज्ञा पायकर

का पुत्र वडाभाई गोविंदाचार्ज नामा वडासुशील
और संतों का हितकारी ज्ञानकी निधी महाप्रवीन
पंडित जो था सो अपना घर त्यागकरके तिनके मि
लनेके वास्ते तहां आवता भया और हरष पूर्वक
पहिले जादव को मिलकर फिर अपने भ्राता रामानु
ज जी को ~~मिला~~ मिला तव परस्पर भलीप्रकार कुस
ल पूछकर और गले लागकर फिर कृष्ण भगवानका
सुमरण करते हूये आनंदसे वैठ गये सो गोविंदाचार्ज
अपने भ्राता रामानुज को वेदान्त पढते देखकर आप
भी रुची पूर्वक सोई शास्त्र पढने लगा तव एकदि
न श्रुतिका अर्थ जो है सो जादव जीनें विरुद्ध ही किया रा
मानुज सुनकर कहने लगे कि महाराज इह अपका अ
र्थ यथार्थ नहीं है अशुद्ध है तव जादवने कोप कर
के रामानुज [को] कहा कि अरे मूरख मंदमती क्या तूं गुरू
वनकर मेरेको पढावने लगा हैं इसप्रकार तिसने क्रोधसे
लाल नेत्र किये हूये और वडे दुर्वचन वोलकर रामा
नुज जी को अपने पासे निकालदिया तव सो धीरजके
धाम और शांती सरूप रामानुज जी तहांसे उठकर अ
पने घरको चले आये और घरमे एकान्त वैठकर रात्री
दिन भगवान का सुमरण करते और शास्त्रके विचार क
रने मे लगे रहते थे ~~तव गुरूके घरमे पढनेके वास्ते~~
~~जो नहीं गये तिसतें जादव अपने हृदयमे वडाहीं को~~
~~प मानां और शिष्योंको कहने लगा कि देखो इह रा~~
~~मानुज मेरा परम दुखदायक शत्रू है मैने पुत्रकेसे~~
~~मान जठको पालना था तिसको अधम ने मेरेको मत्या~~
~~काल दिया है~~
॥२०॥ चौपाई॥ गये न पठन हेतु गुरु धामा॥ किये पर
म दिस जादव वामा॥ निज शिष्यन वोलि भन्यो अस वाता॥
रामानुज मम रिपु दुखदाता॥ मै सुत सम जठ पा
लि पठायो॥ भलो आज तांकर फल पायो॥ भत अ

२५६
259

मानहु मगान शोक निधि वारी॥ दोहा॥ वधक रूप
भगवँवचन सुनि रामानुज ज्ञानि॥ बोले वदन उठाय
निज कछुक धीर उर आनि॥ २३॥ टीका॥ फिर रामा
नुज आप ने मन मे विचार कर कहते हैं कि क्या करूं और
र कहो जाऊं ईहां तो मेरे आस पास कोई जीव ज
न्तु भी नहीं है ईह वन जो है सो महा घोर और भय
के देने वाला है अब मेरे को एक दीन हितकारी मुरा
री भगवान जो हैं तिनका ही आधार है और किसी का
भरोसा नहीं है ईस प्रकार विचार कर भक्त प्रधान रा
मानुज जी हृदय मे कृष्ण परमात्मा का ध्यान धार कर
विनती करने लगे कि हे भगवन तुमहीं निरधारों के
आधार हो और निरमानो के मान हो तुमहीं कृपानि
धान दीन जनों के दुख और कलेश हरने को स
मर्थ श्रुती पुराणों ने प्रकट गायन किये हुये हो
जब ईस प्रकार भक्त प्रधान ने प्रार्थना करी तब दीन
बंधू और कृपा के सिंधू भगवान आप ने का कलेश
सहार नहीं सके तुरत लक्ष्मी के सहित व्याध और
व्याधनी का रूप धार कर तहां वन मे प्रकट हो कर जि
स वृक्ष के नीचे भक्त सूर्य बैठे हुये भगवान का
सुमरण कर रहे थे तिसी रस्ते से धनुषवान धार
न किये हुये निकल चलते भये तब तिन को देख
कर रामानुज कहने लगे कि हे व्याध भाई तुम
स्त्री के सहित ईहां वन मे कैसे फिरते हो और कहां
को जाते हो ऐसे तिस का वचन सुनकर व्याध रू
प भगवान जो हैं सो बोलते भये कि भाई हम स
त्यव्रत तीर्थ को जाने वाले हैं अब तुम अपनी
कहो कि ईहां महा भय के देने वाले वन मे अ
केले क्यों कर बैठ रहे हो तुमारी दशा तो ऐसी
दिखपड़ती है कि मानो शोक रूपी समुद्र मे डूबे

हये हो॥ ऐसे बधक तू भगवानका वचन सुनकर रामानुज मुख उठाय कर और धीरजको धारकर जिस प्रकार उत्तर देते हैं सो आगे कथन किया जाता है॥ १३॥ चौपाई॥ मैवसतहों कांची पुरि माही॥ मकरप्रयाग अनावन काहीं॥ आवा मारग गयो भुलाना॥ तब बैठ्यो इत विकल महाना॥ देखत रह्यो चकत चहुं घाहीं॥ मिल्यो न संग विपन मोहि काहीं॥ तज्यो आस अब मकर सनाना॥ जो मोहि मिलहि सहायक आना॥ तो न केत निज जाहुं सिधारी॥ तास वचन सुनि बधक मुरारी॥ बोले वदन मंद मुसकाई॥ कांची निकट सत्य व्रत भाई॥ तीरथ विदत लख्यो केहि नाहीं॥ चलहु विप्र अब मैं तुव काहीं॥ कांची पुरि तुव धाम पुचाई॥ बहुरि सत्यव्रत तीरथ जाई॥ द्विज सुनि व्याध वचन हितकारी॥ चल्यो संग लगि मुदित सिधारी॥ कोस प्रजन्त गये जब दोई॥ अथि अरुन तब जामनि होई॥ तरु तर एक किये विश्रामा॥ वीती जब जामनि जुग जामा॥ उठी सतृषत व्याधकर नारी॥ लागी पतितें मांगन वारी॥ मोरे जो न मिलहि पति पानी॥ तो निश्चय अब प्राण नहानी॥ कुसमय जानि व्याध अस कहा॥ इहां न कूप निकट प्रीय राहा॥ तब रामानुज वचन उचारे॥ प्रात उदिक मैं देहुं तुमारे॥ अस प्रकार जब भयो विहाना॥ रामानुज कहं बधक वखाना॥ तुव जल देन कह्यो निसि भाई॥ मोर मई अब देहु लयाई॥ तब रामानुज जल हित धाई॥ किये प्रवेश कूप मध जाई॥ दंपति हे पाछिल तहिं आये॥ व्याध वचन अस वदन अलाये॥ द्विजवर देहु बेग तुव पानी॥ नतर हे

त जैय प्राणन हानी॥ दोहा॥ तब ल्यायो मारि ग्रेजु
ली रामानुज मतिधीर॥ हानकूल द्रुत दहुन कहे
पानकरायोनीर॥ २४॥ टीका॥ रामानुज कहने लगे
कि हे व्याध मै कांचीपुरी मे वास करता हूं॥ और प्रया
गराज के मकर न्हावने के वासते संत समाज के साथ
चला जाता था इहां दैवयोग करके मारग से भूल गया
तो परम व्याकुल होकर इस वृक्ष के नीचे बैठ गया हूं
तबते चारो ओर देखते देखते मेरे नेत्र थकन लग
ये हैं परन्तु परन्तु बन मै कोई संगी नहीं मिला अ
ब मैने मकर न्हावने की आशा जो थी सो त्याग दई
है चहता हूं जो मेरे को कोई सहायक मिल जावे
तो इस घोर बन से निकलकर अपने घर को चला
जाऊं इस प्रकार तिसका वचन सुनकर बधक
रूप भगवान मुख से मुसक्याय कर कहने लगे कि
हे भाई सत्यव्रत तीरथ जो बडा प्रसिद्ध है सो तो
कांचीपुरी के पास ही है तुम तिसको कैसे नहीं जा
नते हो चलो ब्राह्मण मै तुमको कांचीपुरी मे तु
मारे घर पहुंचायकर फिर सत्यव्रत तीरथ को चला
जाऊंगा तब बधकरूप भगवान के परम हित
कारी वचन सुनकर रामानुज जो हैं सो आने
द पूर्वक तिनके साथ चलपडते भये जब
चलते चलते एक कोस तक गये तब सूरज
भगवान अस्त होय गया और रात्री पड गई तहां
एक चन्दनसा वृक्ष देखकर तिसके नीचे व्या
धनी व्याध और रामानुज तीनो विश्राम कर
ते भये जब दो पहर रात बतीत हो गई तब व्या
ध की स्त्री त्रिषत भई हुई उठकर अपने पती
से जल मांगने लगी और कहने लगी कि हे
प्रान पती जो मेरे को अब जल नही मिलेगा

सपूर्ण शिष जहां तहां परवत कंदरा वन मारग कु
मारग इत्यादि देखते देखते हार गये तिन्होंने रामा
नुज कहीं नहीं पाये फिर तो निरास होकर सब चले
आये और गुरू को आयकर कहने लगे कि महाराज
हम बहुत खोज थके हैं क्या जाने रामानुज कहां
लोप होयगया है तब तो जादव को निश्चय होयगया
कि तिसको अब प्यकर के सिंह ने खाय लिया है ऐसे
रामानुज का मरना हृदय मे विचार कर जादवने जा
ना कि आज हमको गंगा के सनान का फल प्रापत
भया है तिसते उपरान्त सब शिष्यों के सहित बडे आ
नंद पूर्वक जादव जो हैं सो प्रयाग राज को चले आये
और इहां बडे गंहिवर निरजन वन मे डरके वश व्या
कुल भये हूये रामानुज एक वृक्ष के नीचे बैठे हू
ये हृदय मे विचार करते हैं परन्तू कोइ उपाय न
हीं बन परता है॥ २२॥ चौपाई॥ काह करब जाऊब
कहि ओरे॥ इहां न ग्राम पास कोऊ मोरे॥ भूरि घोर
म्यावन बन एहू॥ अब आधार हरि दीन सनेहू॥
अस विचारि उर भक्त प्रवीना॥ बैठि ध्यान जदु
नंदन कीना॥ प्रभु आधार निरधारन केरे शोक ट
हरन विदत श्रुति टेरे॥ निज जन कर कलेश दु
खभारी॥ सहि न सके प्रभु भक्त उबारी॥ रमा स
हित भगवान सुहाये॥ व्याधनि व्याध रूप धरि आ
ये॥ रामानुज जहि तरु तर जीके॥ रहे करत सुम
रन सीय पीके॥ तहि मग कढे हरन दुख दीने॥
तूण धनुष सर धारन कीने॥ तब रामानुज देखि
बखाना॥ तीय जुत व्याध किये कित पयाना॥ तब
कह व्याध रूप भगवाना॥ हम है सत्य ब्रत तीरथ
जाना॥ तुव इकोत इत कारन के ही॥ बैठि रहे
म्यावन बन एही॥ जानि परत अस दशा तुम्हारी॥

गवन पुर काहीं॥ देखि पथिक मग पूछत बाता॥ कौ
न नाम इहि पुर कर ताता॥ तब कांची तिन कियो बखा
ना॥ रामानुज निज मानस जाना॥ रमा नाथ वंच्यो मो
हि काहीं॥ धरि निज व्याध रूप बन माहीं॥ कपट भेष दं
पति कहे रामा॥ बार बार दुज वंदन लागा॥ दीन नाथ
दुख दीन निहारी॥ कीन मोर कानन रखवारी॥ प्रभु सम
आन कवन संसारा॥ जन उबरन हित करन उदारा॥
लखि दुखोत मोहि विपन अकेला॥ कीन्यो व्याध रूप
धृत मेला॥ दूरि देस ते कौतुक ल्याई॥ दीन नाथ दि
ये भवन पुचाई॥ दोहा॥ हरि उपकार विचार अस
बार बार उर ल्याय॥ चलि आये तब सदन निज मन
हि सीस प्रभु नाय॥ ९४॥ टीका॥ तब दूसरी बार फिर
अंजुली भर करके जल ले आया सो भी तिनो ने
पान कर लिया तब तीसरी बार ल्याया और व्याध
की स्त्री को त्रिषत जानकर पिलाया जब चौथी बा
र जल ल्यावने के वास्ते जायकर कूये मे प्रवेश कि
या तब इहां लक्ष्मी के सहित भगवान व्याध
व्याधनी का रूप जो धारे हूये थे सो अपना अद्भुत
कौतुक करके अन्तर्ध्यान होय गये जब रामानु
ज कूये से बाहर आय कर देखने लगा तब सो व्या
ध व्याधनी तहां देखने नहीं पड़े परन्तु अपना देश
जो है सो नेत्रों मे देखकर आचर्ज के वश भया हू
आ कुछ कहि नहीं सकता हृदय मे सो सोच कर
ता है कि मेरे को इहां अपने देश मे किसने पहुंचाय
दिया है इस प्रकार सोच करता हूआ रामानुज आप
ने पुर को चल पड़ा और भ्रम के वश भया हूआ मार्ग
चलने वाले लोगों से पूछता है कि भाई इस पुर का
क्या नाम है तब तिनो ने कहा कि इह कांची पुरी है
ऐसे तिन के मुख से कांची का नाम सुन कर रामानुज

अपने हृदयमे विचार कर कहताहै कि अहो मेरे कोंदी
नबंधु भगवानने व्याध व्याधनी का रूप धार कर छल
लियाहै ऐसे कपटभेषी दोनो स्त्री भरता को प्रेममेम
गन भयाहुआ भक्त सृष्ट रामानुज बार बार प्रणाम
करने लगा कि देखो दीनानाथ भगवानने मेरे को दीन
जानकर और मेरा दुख विचारकर इस महा घोर बन
से मेरी कैसी रक्षा करीहै तातें दीनबंधु के समान संसा
रमे जनके दुख और कलेश हरने को और कोई साम
र्थ नहीं है ~~क्योंकि मे~~ ऐसे उपकार करने को कोई कृपा
निधान सामर्थ है कि जिनोने मेरे को बनमे महा दुखी
त और अकेला जानकर एक कौतुक से ही दूर देसतें
ल्यायकर सहजे ही घरमे पहुचाय दियाहै इस प्र
कार भगवान का उपकार जो है सो बारबार हृदयमे
ल्यायकर और मनहीं मन सीस नाय कर फिर भग
वानका सुमर्ण करते हुये रामानुज अपने घरको च
ले आये ॥२५॥ चौपाई ॥ मिले मातु कहे चरनन लागी ॥
दीन जननि आसिष सुभ वागी ॥ मेरे पुर परिजन
नरवंता ॥ जादव कर सब भन्यो व्रितंता ॥ सुनत सकल
मानस विसमान्यो ॥ पुनर जनम रामानुज जान्यो ॥ सु
नहु तात जननी तव भासा ॥ गिरधर देव लीन तोहि
राखा ॥ अब न करहु सुत हृदय संदेहू ॥ भजहु कृष्ण
प्रभु दीन सनेहू ॥ जाहु सत्य ब्रत तीरथ धामा ॥ तहे
कांची पूरन अस नामा ॥ विदित अनन्य दास जदु
राई ॥ तासो निज वृतान्त समुदाई ॥ जस कीन्यो
जादव आकारा ॥ देहु सुनाय प्रकट सुत सारा ॥ पाय
न देस जननि सुखदाई ॥ रामानुज गवन्यो सिरनाई ॥
कांची पूरन के ढिग जाई ॥ बंदि चरन सब विथा सुना
ई ॥ तब कांचीपूरन अस भाखा ॥ तोहि भगवन कर
णा करि राखा ॥ व्याधनि व्याध रूप सुभ धारी ॥ तोरे

२६२

जन लषि लियोउवारी॥ दोहा॥ तांते अव तुम जा हु द्विज कृष्ण कृपा लषि भूरि॥ ल्याव हु तौनै कूपतें कनक कुंभ जल पूरि॥ २६॥ टीका तव घर मे आय कर रामानुज माता से वारवार चरन वंदना करके मिलते भये फिर माताने मुख चूम कर और प्रसन्न होकर वडी शुभ वानी से आसीसा दई कि पुत्र तुम चरंजीव रहो तिसतें उपरान्त जाती नाती के लोगों से और पुर वासियों से वडे आनंद पूर्वक मिलकर फिर जादव का वृतान्त जो था सो सव सुनाया तव सुनकरके सव लोग आचजी के वश होगये और रामानुज का दूसरा जनम जानते भये फिर माता कहने लगी कि हे पुत्र तेरेको गिरधर भगवान ने राख लियाहै ~~हे पुत्र~~ अव हृदय मे सोच संकोच मत करो दीन जनो के हितकारी कृष्ण भगवान जो हैं तिनका सुमरण करो और सत्य वृत तीर्थ पर चले जावो तहां कांची पूरन नाम करके संत महातमा भगवान के वडे दृढ भगत जो हैं तिनके पास जाय कर जादव ने जिस प्रकार तुम्हारे साथ अपकार कियाहै सो सव सुनाय देवो ऐसे माता की आज्ञा पाय कर और सही सनाय कर रामानुज तहां को चल पड़ते भये तव कांची पूरन के पास जाय कर और चरनो पर ~~सीस~~ सिर धर कर जादव का सव वृतान्त सुनाय दिया तव सुनकर के कांची पूरन कहने लगे कि रामानुज तेरेको दीनवंधू भगवान ने कृपा करके राख लियाहै देवो दीनानाथ कैसे दीन हितकारी हैं कि अपना जन जान कर और व्याध व्याधनी का रूप धार कर तेरे तांई घोर वन मे रखवारे होय गये हैं तांते हे ब्राह्मण अव तुम कृपा सिंधू भगवान की अत्यंत ही कृपा जान कर जावो और तिसी कूये का जल सुवर्ण के कुंभ मे भर कर ~~[illegible]~~ शीघ्र ही ले आवो॥ २८॥ चौपाई॥ वरदराज

तो मै प्राणों को त्याग देऊंगी इसमे कुछ संशय नहीं है
ऐसे स्त्री का वचन सुनकर और कुसमय जानकर व्याध
कहने लगा कि हे प्यारी इहां तो कोई कूप अथवा सरोव
र निकट नहीं है कि जिससें मैं जल ल्याय कर तेरे को पिला
ऊं इतने मे रामानुज बोल उठे कि हे वधक भाई अव तो
रात्री है कुछ वस नहीं चलता परन्तु प्रातःकाल होतेहीं मैं
तुम को जल ल्याय देऊंगा इस प्रकार जब प्रभात समय हो
य गयो तव व्याध बोला कि भाई तुम ने जो जल ल्याय
देने को कहा था सो अव प्रातःकाल हो गया है जाओ शीघ्र
जल ल्याय देवो तव रामानुज सुनते हीं तत्काल धाय
चले और वन मे कहीं एक कूआ देखकर तिसके भीत
र जल लेने के वासते उतर जाते भये और इहां तिन
के पीछेहीं व्याध और व्याधनी रूप लक्ष्मी नारायण
भी ~~धावते~~ धावते हूये चले आये तव व्याध जो है
सो तहां आयकर रामानुज के कहने लगा कि हे ब्राह्मण
अव तुम शीघ्रहीं जलदेवो नहीं तो इह भामनी अप
ने प्राणों को त्यागती है ऐसे सुनकर धीरज के धाम रा
मानुज तुरतहीं अंजुली भरकर के जल लै आये औ
र व्याध व्याधनी दोंको आनंद पूर्वक पान कराय दि
या ॥२८॥ चोपाई ॥ पुनि दूसरि अंजुलि भरि लावा ॥
दंपति को है सोऊ पान करावा ॥ त्रितिये बार बहुरि ज
ल दीना ॥ जानि विलत त्रीय व्याध प्रवीना ॥ भरन
नीर अंजुलि चतुकारी ॥ गये जब हि दुज सूषू सिधा
री ॥ अंतर्ध्यान तव दंपति भयऊ ॥ करि वचित्र
कौतुक निज नयऊ ॥ दुज जब कूप बहिर कढि आ
ये ॥ सो न जुगल दंपति दृग पाये ॥ पेनिज देस विलो
किस नयना ॥ कहि न सकत सम्भ्रम कछु वैना ॥ क
रत विचार मनहिं विसमाई ॥ दियो कवन मोहि देस पु
चाई ॥ अस प्रकार सोचत मन माहीं ॥ दुज वर किये

कोसनान देकर तिसतें उपरान्त सनमानसे पूजन किया इसप्रकार रामानुज कांची पुरीमें निवास करके नित्य रात्रीदिन भगवानके पूजन और सेवन करने मे ही लगे रहते थे और उन्हें जादव जब प्रयाग राज पर पहुंचा तब तहां रोग के वश परम दुखी और दीन होयगया गोविंदाचारी जो तिसका शिष्य था सो सदा रात्रीदिन भगवान कृपानिधान के भजन और सुमर्णों मे लीन रहताथा तब एकदिन सो गोविंद त्रिवेनी मे सनान जो करने लगा तहां तिसको एक परम पवित्र और अतसे मनोहर शिवलिंग जो है सो मिलगया तिस अपूरब शिला को देखकर सो आचारी बड़े हरष और आनंद को प्रापत भया तब सनान करके ततकाल ही गुरू के पास आयकर और चरनों पर सीस नायकर सो मनोहर शिव सिला जो वेनी से प्रापत भई थी गुरू जी को दिखावने लगा तब गुरू देखकर कहने लगा कि हे पुत्र तूं धन्य है कि जिसके ऐसे सुखदायक प्रभू प्रापत भये हैं इसप्रकार तहां मकर प्रजन्त भगवान का सुमर्ण करते हुये निवास करते रहे फिर शिष्यों के सहित प्रस्थान करके जादव जो है सो कांची पुरी को चले आये तब मारग मे गोविंदाचारी गुरू की आज्ञा लेकर अपने घर को चला आया तहां आय कर सो शिवलिंग जो कि वेनी से प्रापत भया था बड़े सनमानसे विधीपूर्वक अपने घर मे स्थापत करदिया ॥ २७ ॥ चौपाई ॥ दिनदिन हर पद पंकज चारू ॥ बाढ्यो प्रेम भक्तब्रत धारू ॥ उत कांचीबासिन सब आई ॥ जादव कहे अस दियो बजाई ॥ तुव पूरव कांची पुरि आवा ॥ रामानुज पूरन सुखछावा ॥ तब डरप्यो जादव अभिमाना ॥ जहिं रखकार

आप भगवाना॥ हमरे कियो होत तब काहा॥ अस गुनि लजित मौन धरि रहा॥ पठयो बहुरि सिष बद न बुझाई॥ रामानुज कहं लेहु बुलाई॥ आये सिष न देत गुरु पाई॥ रामानुज कहं चले लिवाई॥ संत सुभाव सरल सब भांती॥ राख्यो हृदय न बैर अराती॥ सहज सील चित कपट बहीनो॥ आय प्रणाम चरन गुरु कीना॥ निवसन लगे पूर्ववत ताहीं॥ निरत पठिन विद्यादिक माहीं॥ ताहि समय इक विदित महाना॥ प्रकट्यो रंग नगर विद्वाना॥ जामुन चारज नाम सुहावा विदत विदुख सिर मोर कहावा॥ दोहा॥ भये पंच सिष तासु पुनि प्रकट महा गुनधाम॥ पृथक पृथक तिन केर बदन मनहु बिसद सुभ नाम॥ ॥टीका॥ तब तें गोविंदाचारीका दिनदिन संकर भगवानके चरन कमलोंमे प्रेम अधिक ही होता गया और इहां कांचीवासियोंने जादवके साथ सब वृतांत सुनाय दिया कि रामानुज तो तुमारे से पहिले ही बड़े आनंद पूर्वक इहां कांचीपुरीमे आय गया है तब जादव सुनकर हृदयमे बड़ा भय मानता भया और कहने लगा कि जिसके जहां आप भगवान सहायक और रखवारे हैं तहां हमारा किया क्या होता है ऐसे विचार कर मनमे परम लज्जा को प्राप्त भया हुआ मौन होय रहा दो एक दिनके पीछे अपने शिष्यों को बुलाय कर और भली प्रकार समुझाय कर कहने लगा कि जावो रामानुजको ले आवो तब शिष्य जो हैं सो गुरु की आज्ञा पायकर रामानुज पास चले आये और तिसके अनेक प्रकार हित के वचन सुनाय कर तुरत ही साथ लिवाय कर आयगये लेआये संत जन सदैव सरल और सील सुभाव वाले होते हैं शत्रू का बैर जो है सो हृदयमे कुछभी नहीं राखे सहज सील और निसकपट रामानु

टीका

जी आयकर गुरू जी के चरनो पर प्रनाम करके और तिनकी आज्ञा सीसपर धारन करके पूरव समान तहां फिर निवास करने लगे और तैसे ही रुचीपूर्वक शास्त्र विद्या के पढने को तिसी समय एक परम चतुर और बड़ा भारी विद्वान रंगपुर मे प्रकट हुआ विद्या मे प्रवीन जो महान पंडित थे तिन सबका सिरोमनी और जामुनाचारज नाम करके प्रसिद्ध होता भया तिसके परम चतुर विद्या और गुनों के धाम पांच शिष्य होते भये तिनके भिन्न भिन्न नाम जो है सो कथन करता है प्रथम गोश्टीपूरन और कांचीपूरन महापूरन श्रीगिरपूरन मालाधर इह पांचो शीलकी निधी और बड़े सूक्ष्म बुद्धी विचार और ज्ञान ध्यान मे प्रवीन वेदके तत्त्व को भली प्रकार जानने वाले थे इस प्रकार शिष्यों के सहित नित्य रात्री दिन रंगनाथ भगवान का पवित्र पूजन और सेवन करते करते ~~मे लीन रहते थे तिसने~~ जामुनाचारज जो जगत मे सुख और सुजस के सहित होकर बड़े विभू और बड़ाई को प्रापत होते भये ॥ २८ ॥ चौपाई ॥

समय एक जामुन व्रत धारू ॥ बैठि सदन मन किये विचारू ॥ कौ बालक वर सुमति निधाना ॥ मिलहि मोहि सेवक भगवाना ॥ रंग नाथ प्रभु पूजन माहीं ॥ करहे नयुक्त भवन तरि काहीं ॥ तो कछु मिलहि मोहि अवकासा ॥ अस प्रकार गुनि मानस तासा ॥ बोलि निकर शिष दिसन पठाये ॥ ते बालक खोजन द्रुत धाये ॥ आये जब कांची पुरि माहीं ॥ तहे देख्यो रामानुज काहीं ॥ गुण प्रवीन विद्या मति नागर ॥ सर्व सीलचित लोग उजागर ॥ देखि तुरत शिष जामुन पासा ॥ आय वृतान्त कह्यो सब तासा ॥ रामानुज कर सुनत बड़ाई ॥ हरषि चले जामुन अतुराई ॥ देखत दृग न

कहे देत सनाना॥ सविधि करहु पूजन सनमाना॥ गति
अनन्य प्रभु पद मन लाई॥ श्रीजुत होहु विप्र सुखपाई॥
रामानुज अस सासन पाई॥ तुरत नकेत मातु ढिग आ
ई॥ कहि बृतान्त लिय सासन पाई॥ श्रीगोविंद चरन
मन लाई॥ कनक कुंभ ले चल्यो सिधारी॥ श्रम करि ल्या
य कूपतें वारी॥ प्रेम भक्ति जुत देत सनाना॥ पूजे वरदरा
ज भगवाना॥ अस दुज नित कांचि पुरि सेवा॥ भयो नि
रत नित त्रिभुवन देवा॥ उत जादव प्रयाग जब गयऊ॥
तहे रोग बस आरत भयऊ॥ गोविंदाचारज शिष तासू॥
ते सुमरो रत रमानिवासू॥ एक दिवस सुंदर सुखदेनी॥
लग्यो सनान करन कल बेनी॥ तहे तासु पावन मन भा
वा॥ मिल्यो एक शिवलिंग सुहावा॥ हरष्यो तासु वि
लोकि अचारी॥ करि सनान द्रुत चल्यो सिधारी॥ गुरु
पें जाय चरन सिर नाई॥ सिला लभद सिव दीन दिखाई॥
तब गुरु भन्यो धन्य तुव ताता॥ जहि पायो अस प्रभु सुख
दाता॥ असप्रकार तहे मकर प्रजन्ता॥ बसत रहे ध्या
वत श्रीकन्ता॥ बहुरि शिषन जुत हरष अघाये॥ कांची
कहे जादव चलि आये॥ दोहा॥ तब गुरु सासन पाय
मग गोविंद सदन सिधाय॥ सो सिव मूरति कहे भवन
कीन स्थापत ल्याय॥ १३॥ टीका॥ कांचीपूरन कहते हैं
कि हे रामानुज फिरति सीजल से वरदराज भगवान को
सनान देकर विधि अनुसार पूजन जो है सो करो और
एकचित होकर भगवान॑ चरन कमलों मै मन को ल
गायकर बडे आनंद के सहित सुंदर कल्यान को प्राप
त हो जावो तब रामानुज कांची पूरन की ऐसी आ
ज्ञा सीस पर धारन करके और भगवान के चरन कम
लों मै मन को लगाये हुये सुवर्ने का पात्र जो है सो
घडा
ले कर धाय चले और बडे श्रम से तिस कूये का जल
ल्यायकर अति से प्रेम और भक्ती से वरदराज भगवान

निकर लिलामा॥ गहेहाथ रामानुजकेरा॥ तव कांची
पूरन दुत हेरा॥ जामुन सों अस मरम जणावा॥ जा
स हाथ गहि जादव आवा॥ सो रामानुज भक्त प्रवीना॥
तास कथा प्रभु सुनहु नवीना॥ ले प्रयाग इहि जादव
गयऊ॥ विंधविपुन जव आवत भयऊ॥ तहां हननहित
जतन विचास्यो॥ व्याध रूप धरि कृस्न उवास्यो॥ निज
कौतुक प्रभु भक्त सहैया॥ कांची पुरि द्रुत दीन पठैया॥
तव जामुन रामानुज काहीं॥ हरषे देखि विपुल मनमा
हीं॥ चाहत किये कछु वचन विलासा॥ पे नमिल्यो अव
स अवकासा॥ तवला गे सुमरन भगवाना॥ दीना याल
भक्तवरदाना॥ वेदपुरान निपुण व्रत धारी॥ इहवालक
मोहि मिलहि मुरारी॥ करि नास्तिक मत भेदनि लेहु॥ वै
स्नव मत शुभ करहिं उदेहु॥ वाद विवाद जीति समुदाई॥
करहि विमुख सनमुख जदुराई॥ सव विधि देहि सुजस
सुख मोही॥ हरहिं कुमति वैस्नव मत द्रोही॥ दोहा॥
अस कहि जामुन शिषन जुत रंगनगर निज आय॥
रामानुज विसस्यो नये प्राण प्रीये सुखदाय॥ २०॥ टीका॥
इतनेमे तहां वरद राज भगवान के मंदरमै जादव भी शि
ष्यों का समूह साथ लिये हूये और रामानुज का हाथ
पकडे हूये आय गये तव कांची पूरन ने देखकर तुरत जा
मुना चारज जीसे जणाय दिया कि जादव ने जिसका हा
थ पकडा हूआहै सोएही भक्त प्रवीन रामानुज है अव
तिसका वृतान्त मै आपको सुनाता हूं कि इह जो [illegible] जो है
सो रामानुज को लेकर प्रयाग राज को चलागया जव
विंध परवत के पास आये तव हृदयमे जो कोई द्वेष था
तिस करके भक्तस्रेष्ठ के मारने का उपाय करने लगा तहां
कृस्न भगवान ने रामानुज को अपना जन जानकर और
व्याध रूप धारकर के राखलिया फिर भक्तपाल भगवान
ने अपने कौतुक से ततकाल कांचीपुरी मैं दिया इस प्र
कार जामुनाचारीजी सुनकर और रामानुज की ओर देख

श्री[illegible] ६६

कर हृदयमे बडे प्रसन्न भये तिसके साथ वचन बिलास
करनेकी कुछ रुची भी हुई परन्तु समय नहीं मिला त
व हृदयमे भगवान का सुमर्ण करके कहतेहैं कि हे भक्त
पाल हे दीन दयाल हे मुरारी भगवान इह जो वेदविद्यामे प्र
वीन और परम ब्रतधारी बालक है सो मेरेको प्रापत होवे
क्योंकि इह पृथवी तलपर नास्तिक मतको खंडन करके
सुंदर वैश्नव मत को प्रचलित करेगा और संपूर्णवाद
विवादको जीतकर विमुख पुरुषोंको भगवानके सनमुख
कर देवेगा॥ और वैश्नव मतके द्रोही कुमती और दुष्ट ज
नोका नासकरके मेरेको सरव प्रकार करके सुख और आ
नंदको प्रापत करेगा ऐसे वारंवार प्रार्थनाकरके जामुचारी
जी अपनेरंग नगरको चले आये परन्तु सो प्राण प्यारा
और सुखसुजस के देनेवाला रामानुज हृदयसे पल न
हीं विसरता भया॥२०॥ चौपाई॥ रंगनाथ मंदिर सुभजाई॥
विमल नवल नित असतुति गाई॥ विरंचि स्तोत्र आलमं
दारू॥ पठहि सुवदन वेद जनु चारू॥ कहिविधि इह बा
लक मन भावन॥ श्री वैश्नव मत जगत चलावन॥ मि
लहिं मोहि पूरन सुखदाता॥ दीननाथ दुखदीन निपाता॥
उत रामानुज जादव पासा॥ पढे शास्त्र वेदान्त अजासा॥
समय एक निज गुरु वर काहीं॥ संजुत भक्ति हरषिमन
माहीं॥ करत पीठ कल तैल लगावत॥ गुरु सप्रीति कछु
रहे पढावत॥ तव जादव श्रुति अर्थ विरुद्धा॥ किये सुनत
रामानुज क्रुद्धा॥ रिस वस निकसि दृगन द्रुत वारी॥ प
रो जेय जादव ततकारी॥ देखि तुरत भन्यो असवानी॥
रामानुज रोवत कहि लागी॥ ढरत तपत जल दृगन तु
मारे॥ कहहु सपदि सुत हेतु हमारे॥ तव रामानुजवद
न अलाना॥ प्रभु श्रुति अर्थ विरुद्ध वखाना॥ सो अजो
ग जन सकौ न सेही॥ हेतु ढरत जल नैनन एही॥ हरि
लोचन उपमान सुहाना॥ पुंडरीक कवि कोविद गाना॥ क
पि नितंव सम प्रभु उच्चारा॥ सो अजोग कस सकहुं स
हारा॥ तव जादव रिस कियमहाना॥ रामानुजकहेवचनवखाना॥

दोहा॥ अरे निसरम दुरातमन विविध पठायो तोहि॥ अ
व उनमत उलटो अधम लग्यो पठावन मोहि॥२१॥टीका॥
तव जामुनाचारीजी रंगनाथ भगवान के मंदिरमै आयकर
नित नवीन ही असतुति गायन करने लगे और वेदकासा
र आलमंदारू स्तोत्र जोहै सोरचकर वडीप्रीती और भ
क्तीसे पढपढकर प्रार्थना करतेहैं किहेदीनानाथ औ
रहे दीनोके दुख हरने वाले भगवान इनअतसे मनोह
र और जगत मै वैस्नव मतके प्रकाश करने वाला प
रम सुखदायक वालक जोहै सोमेरे को किसप्रकार प्राप
त होवेगा इहांकी तो इह कथाहै और उहां रामानुज
ने जादवके पास रहिकर वेदान्त शास्त्र के पढनेमें अ
त्यंत ही स्रम और यतन किया तव एकदिन रामानु
ज भक्ती प्रीतीसे गुरूजी की पीठ को तैलकी मरदन
कर रहेथे और गुरूजी तिन्हने को प्रीतीपूर्वक कु
छ पढाय रहेथे तव जादवने तहां स्रुती का अर्थ
कुछ विरुद्ध जो किया तो सुनकरके रामानुज जीको
हृदयमै वडा क्रोध उतपन्न भया तिसतें तिनके नेत्रों
से जल निकलकर जादकी जंघा पर जाय पड़ा तिस
को देखकर जादव कहने लगा कि हे रामानुज तूंकों
रोवताहैं देखो तुमारे नेत्रोंसे जल निकलकर
वहा जाताहै हे पुत्र इसका कारण मेरेको शीघ्रकहे
तव रामानुज कहने लगे किमहाराज आपने स्रुती
का अर्थ विरुद्ध कियाहै सोअजोग जानकर मैसहार
नहीं सका नेत्रोंसे जलके निकसने का केवल एही
कारनहै और कुछ नहीं है हेनाथ भगवान के नेत्रों
का उपमान पंडित और कवी जनोने सुंदर कमलजो
है सो वरणन कियाहै और आपने वानरके नितंव स्थ
ान चूतडोंके समान कथन कियाहै सो ऐसी अयो
ग्य उपमाको मै कैसे सहार सकताहै इसप्रकार रामा
नुजके मुखसे वचन सुनकर जादव जोहै सोमहाको
प करके कहने लगा कि अरे दुष्ट सुभाव वाले वुद्धीके

बाल कल शोभा॥ मुनि जामुन मानस मनु लोभा॥ आये जब कांची पुरि चारू॥ तब मंदर प्रभु भक्त उदारू॥ बरद राज कर देखि सुहावा॥ जामुन हृदय परम सुख पावा॥ दोहा॥ जोरि जुगल कर नम्र गति आय भवन भगवान॥ करि प्रणाम लागे वदन अस नुति बहुविधि गान॥ २९॥ टीका॥ तब एक समय बड़े व्रतधारी जामुनाचारज जी अपने घरमे बैठे हूये विचार करने लगे कि मेरेको कोई सुशील और सुमती का धाम बालक भगवान का सेवक जो मिल जावे तो मै तिसको रंगनाथ प्रमात्मा के पूजन करने मै स्थापन करदेऊं तिससे मेरे कोभी विश्राम प्रापत होगा और सहायता मिल जावेगी इस प्रकार हृदयमे विचार करके जामुनाचारजजीने अपने शिष्यों को बुलाय कर बालकके ल्यावने के वासते देसदिसाओं मै पठायदिया तब सो शिष्य बालकको खोजते खोजते कांचीपुरी मै आय प्रापत भये तहां तिनोने रामानुजको जो देखा तो गुण शील सुमती और विद्यामै परम प्रवीन सहज साधू और सरल सुभाव पाया तब रंगपुरमै जामुनाचारजके पास आयकर तिसका सब वृतान्त सुनायदिया इसप्रकार रामानुज की बड़ाई सुन कर जामुनाचारी बड़े हरष मै मगन भये हूये तहांको तुरत चल पड़ते भये तब कांची पुरी मै आयं और रामानुजकी शोभा देख कर सो आचारी मोहित होय गये फिर कांचीपुरीमे बरदराज भगवानका मंदर देख कर और बड़े प्रसन्न होकर भीतर चले आये तब प्रणाम करके दोनो हाथ जोड़ कर और दीन होकर नम्र बानीसे भगवानकी असतुती जो है सो अनेक प्रकार मुखसे गायन करने लगे॥ २९॥ चौपाई॥ आय भये जादव तहिं ठामा॥ परिकरत शिष

ना कि कपटी और कुमती जादवने रामानुज को अत्यंत ही अपमान किया है तिस तें सो प्रधान बुद्धी वाला भक्त प्रवीन अब कांची पूरन के पास निवास करता है और साल कूप से अर्थात तिस जंगल के कूये से कि जिसे व्याध व्याधनी रूप लक्ष्मी नारायण को जल पिलाया था दिन दिन सुवरन के घडे मै जल भर ल्यांता और वरदराज भगवान को सनान देकर भक्ती प्रीती से पूजन करता है इस प्रकार रामानुज का सब वृतांत सुनकर जामुनाचारी जो है सो मानो अपने मनोरथ को प्राप्त कर हृदय मै परम हरष को प्राप्त होते भये ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ पूरनाचारज वेग बुलाये ॥ तासु वदन जामुन समुझाये ॥ जाहु वेग कांची पुरी माही ॥ ल्यावहु द्रुत रामानुज काही ॥ तेशासन निज गुरु वर पाई ॥ कांची नगरि हरष जुत आई ॥ वरदराज मंदिर सुभ दारू ॥ करत प्रनाम आल मंदारू ॥ लग्यो स्तोत्र पढन मन भावा ॥ सुनत भवन वासिन सुख पावा ॥ तहि अवसर रामानुज आये ॥ कनक कुंभ जल सीस धराये ॥ सुन स्तोत्र आल मंदारू ॥ इह कृत कहत कवन मन हारू ॥ तुम कहितें आये उतसाह ॥ तब पूर्नाचारज अस काह ॥ मै तो रंग नगर तें आवा ॥ तुमहि लेन गुरुदेव पठावा ॥ जामुन चारि नाम गुरु मेरो ॥ पढ्यो स्तोत्र उकत तिन केरो ॥ सुनि पूरन कर वचन सुहाये ॥ रामानुज मानस हरषाये ॥ रंग नगर सुभ दरसन काही ॥ उपजी रुची रुचिर मन माही ॥ तब पूरन अतसे अतुराई ॥ कांची पूरन के ढिग जाई ॥ रामानुज बोलन गुरु देवा ॥ बरन्यो सकल प्रसंग अभेवा ॥ दोहा ॥ कांची पूरन सुनत अस गुरु सासन सुभदानि ॥ रामानुज कहे पठ्यो द्रुत रंग नगर सुख मानि ॥ २३ ॥ टीका ॥

तब जामुनाचारीजीने पूर्नाचारजको शीघ्र बुलाय कर भली प्रकार समुझाय दिया कि तुम कांचीपुरीमे जावो और जिस प्रकार जानो रामानुजको ले आवो सो इस प्रकार अपने गुरूकी आज्ञा पाय कर और तहांसे चल कर कांचीपुरीमे आय पहुंचा और बरदराज भगवान के मंदरके द्वारमे आयकर बारबार प्रणाम करके आलमंदारू स्तोत्र जोहै सो बडी मधुर स्वरसे प्रीती पूर्वक पढने लगा ऐसे तिस स्तोत्रको सुनकर भवनवासी लोग परम सुख और हरषको प्रापत भये तिसी समय रामानुजभी जलसे भरा हूआ सुबर्नका कुंभ घडा सीस पर धारे हूये तहां आय गये और सुंदर आलमंदार स्तोत्रको सुन कर कहने लगे कि इह ऐसी मनोहर और ललित कविता किसकी है फिर पूर्नाचारजको कहने लगे कि भाई तुम कहांते आये हो तब पूर्नाचारजने कहा कि हे भक्त मैतो रंगनगर से आया हूं और गुरदेव स्वामी जामुनाचारज नाम करके जो प्रसिद्ध है तिनोने तुमारे ही लेने के वासते भेजा है और इह स्तोत्र जो मैने बरदराज भगवानके मंदर मे सबको गायकर करके सुनाया है सो तिनोंका हीं बनाया हूआ है इस प्रकार पूर्नाचारजके मुखसे बचन सुनकर रामानुज परम हरष को प्रापत भये और रंगनगरके दरसन करनेकी हृदयमे रुची और लालस उतपन्न हो जाती भई॥ तब तो पूर्नाचारि ततकाल कांचीपूरनके पास जायकर रामानुजके ल्यावने के वासते जो गुरूकी आज्ञा थी सो सब सुनाय दई ऐसे सुनते हीं कांचीपूरन गुरूकी आज्ञा सीस पर धारन करके बडे हरषसे रामानुजको पूरनके साथ देकर ततकालही रंगनगरको गुरूजीके पास भेज देते भये ॥२२॥ चौपाई॥ तब पूरन उर आनंद छायो॥ रामानुज कहे चल्यो लिवायो॥ रंगनगर उत भक्त उदारा॥ रंगनाथ प्रभु कियो विचारा॥ निज्झाय जा

निपसो कोटि जीके॥ अब तरेंगे सगरो जग नीके॥ मिलि रामानुज जामुनचारी॥ नरकमूल सब देहिं उपारी॥ तो ते अब कछु जतन करीजै॥ इनकर भेट होन नहिं दीजै॥ अस विचार भगवन चित ठाना॥ भोर हि भये उदय जब भाना॥ रंगनाथ सुचि पूजन कांहीं॥ जामुन आय भवन प्रभु माहीं॥ तब भगवान भने अस बानी॥ मम सासन बस तुम बड़भागी॥ अष्ट दिवस महं तजि संसारा॥ जाहु मोर वैकुंठ अगारा॥ सुनि जामुन भगवन अस बानी॥ भये निमग्न मोद हित मानी॥ अष्टय दिवस उर सुमरि मुरारी॥ गये बिकुंठ जामुनाचारी॥ गुरु कर देखि सकल शिष ध्याना॥ हरष अरु बाक दुख माना॥ दोहा॥ संसकार हित बहुरि दुज कावेरी तट ल्याय॥ राख्यो वपु जामुन शिषन विकल शोक समुदाय॥ २८॥ टीका॥ तब पूरन जो है सो अत्यंत हरषके बश होकर रामानुज को ~~अपने साथ~~ अपने साथ लेकर रंग नगर को चल पड़ता भया तब इहां रंगनगर मे भक्तों की रक्षा करने वाले रंगनाथ भगवान अपने मन मे विचार कर कहते हैं कि मैने जान लिया है जो अब निश्चय करके जगत के सब जीवों का उद्धार होजावेगा क्यों कि इह रामानुज और जामुनाचारी दोनो मिलकर निरक जो है तिसको मूल से उखाड़ डालेंगे तो ते अब कुछ ऐसा उपाय करिये कि जिससे इह दोनो मिलने ना पावें इस प्रकार भगवान ने रात्री को विचार किया और जब प्रात काल भया तब रंग महाराज के पूजन करने के वासते जामुनाचारी भवन मे जो आये तो तिनको भगवान कहने लगे कि बड़भागी मेरे भक्त अब तुम मेरी आज्ञा पाय कर आठ दिन के भीतर संसार को त्याग कर मेरे वैकुंठ धाम को चले जावो ऐसे भगवान की आज्ञा सुनकर जामुनाचारी बड़ा हित मान कर मानो आनंद सरोवर मे मगन हो जाते भये और जब सात दिन बीत गये तब आठमे दिन को जामुना

हीन मैने तेरेको बहुत ही पढायाहै तिसतें तूं अधम उनमत्त होकर अब उलटा मेरेको ही पढावने लगाहै २१॥ चौपाई॥ जाहु जाहु सठ सनमुख त्यागी॥ अब न पढाउब तोहि अभागी॥ लेहु भवन मारग जड जाती॥ बन्यो न शिष सठ जन्यो अराती॥ सुनि अस कुपित बचन गुरु श्रवना॥ रामानुज गवने निज भवना॥ कांची पूरन पें द्रुत जाई॥ गुरु वृतान्त सबदीन सुनाई॥ तासम न्यो अबतें तजि आने॥ सेवहु बरदराज भगवाने॥ त हि सासन बस भगवन सेवा॥ लग्यो करन जुत भक्ति अ भेवा॥ उत श्री रंग नगर रह आई॥ बिघा सकल जामुन मुनि पाई॥ रामानुज कर कियो महाना॥ कुमति कुटिल जादव अपमाना॥ तहितें कांची पूरन पासा॥ निवसत अब सोऊ सुमति विकासा॥ साल कूपतें प्रति दिन जाई॥ मंजुल कनक कुंभ भरि ल्याई॥ बरदराज प्रभु देवन देवा॥ करत भक्ति जुत पूजन सेवा॥ दोहा॥ अस रामा नुज कर रुचिर सुनि वृतान्त समुदाय॥ हरषे जामुन हृदय निज मन है मनोरथ पाय॥ २२॥ टीका॥ फिर जा दव कहने लगा कि उठो अधम और मेरे सनमुखसे चले जावो अब अभागी तेरेको कबी नहीं पढाऊंगा जावो अपने घरका रसता लेवो तेरेको मैने शिष्य न हीं बनाया किंतु शत्रू उतपन्न करलियाहै ऐसे कोपके भरे हूये गुरूके बचन सुनकर रामानुज अपने घरको चले आये और कांची पूरनके पास आयकर गुरूका सब वृतान्त सुनायदिया तब कांची पूरनने कहा कि अबतें और सबका भरोसा त्यागकर केवल बरदराज भगवानका ही सेवन किया करो इसप्रकार तिंनकी आज्ञा पायकर रामानुज जो है सो रात्रीदि न बरदराज भगवानके पूजन सेवन करनेमें लीन हो जाता भया तब उहां रंग नगरमें जामुनाचारीजीने सु

भक्तिसागरमीत्रोकाहित

चरनो पर सीस नाय कर स्थित होयगये तव तहां एक वडा आश्चर्ज देखने मे आया कि जामुनाचारी जी की तीन अंगुली सकुच रही हुई थी इस बात का सब कोई सोचविचार करताथा परन्तु कुछ कारन जान नहीं पडताथा कि इह अंगुली क्यों सकुच रही है तव रामानुज ने दोनो भुजा उठाय कर ऊंची स्वर से कहा कि भाई सव लोग सुनो जो मै भगवान कृपानिधान के प्रसाद से श्रीवैश्नव मत जो है सो जगत मे भलीप्रकार चलाय कर पृथवी तल पर सव जीवों को अवश्य करके तारूंगा तव इस प्रकार रामानुज की परम परायण वानी सुनकर ततकाल ही सव के देखते जामुनाचारी जी की सकुची हुई अंगुलियों मे से एक अंगुली उठ खडी होती भई ॥२५॥ चौपाई ॥ बहुरि भन्यो रामानुज वैना ॥ रचिहौं भास सेत सुखदेना ॥ तुरत सुनत अस वचन सुहावा ॥ अनत अंगुलि जामुन उठि आवा ॥ तदपश्चात निपुण गुण धामा ॥ भन्यो वदन अस वचन ललामा ॥ विस्नु पुरान विदत संसारा ॥ रच्यो पुरासर सुमति उदारा ॥ सो पढि है सेब वैश्नव काहीं ॥ प्रीति प्रतीति राखि मन माहीं ॥ तहि प्रभाव साधन सुखदाई ॥ सेजुत भक्ति प्रीति सुखगाई ॥ उपरहिं लोक मोदपद पैहीं ॥ ब्रह्मानंद सुगम सुख लेहीं ॥ अस जब जगत जीवहितकारी ॥ श्री रामानुज गिरा उचारी ॥ दोहा ॥ फैलिगई जामुन तवै तुरत अंगुलि तिसरीय ॥ भये लोक लखि चकत मन तर्कित न "परस परीय ॥२६॥ टीका ॥ तव दूसरी वार रामानुजने फिर कहा कि पूरन प्रमातमा की आज्ञानुग्रह से अैसा भास रचूंगा

किस को विचार कर संपूर्ण संत महातमा परम आ
नंद को प्रापत होवेंगे ऐसा वचन सुनते ही जामु
नाचारी जी की दूसरी अंगुली भी उठ खड़ी भई
तिसतें उपरान्त परम चतुर और गुणों के धाम रामा
नुज जी फिर कोमल बानी से कहने लगे कि सुनो भाई
विस्नु पुराण जो संसार मे प्रसिद्ध परम विद्वान पुरासर
जी का रचा हुआ है सो मैं प्रीती और विस्वास पूर्वक सं
पूर्ण वैस्नव जनों को पढ़ाऊंगा तब तिस के प्रभाव औ
र साधन से और भक्ती प्रीती करके मुख से गायन करने से
संपूर्ण लोगों का उद्धार होगा और सो तपद को प्रापत
होवेंगे ब्रह्मानंद सुख जो है सो सहजे ही पाय लेवेंगे
इस प्रकार रामानुज ने जब जगत के जीवों के लिये परम
हितकारी और सुखदायक बाणी उचारन करी तब जामु
नाचारी की तीसरी अंगुली जो थी सो भी तत्काल सब के
देखते फैल जाती भई इस अद्भुत को देखकर सब लो
ग आचर्ज के वश भये हुये परस्पर एक दूसरे की ओर दे
खते हैं और मुख से कुछ कहि न हीं सकते कि इह क्या कौ
तुक बना है ॥ २३ ॥ चौपाई ॥ पुनि जामुन कहे शिष्य न उठा
यो ॥ विधि जुत कावेरी पधरायो ॥ तब वैस्नव सब मानस
रागे ॥ रामानुज कहे भाषन लागे ॥ रंग नगर की जे अब
ध्याना ॥ दरसिये रंगनाथ भगवाना ॥ तब रिस वस रामा
नुज काहा ॥ किया नाथ मोहि गत उत साहा ॥ मैं जामु
न दरसन हित आवा ॥ दीन दयाल कहे सो ऊ नसावा ॥
तातें रंग नगर करि ध्याना ॥ हम न करब दरसन भगवा
ना ॥ हम रत जहि दरसन हित आये ॥ सो विकुंठ दि
य नाथ पठाये ॥ ~~अब करि हैं को ची निज ध्याना ॥ ह~~
~~म न करब दरसन भगवाना ॥ हम रत जहि दरसन~~
~~हित आये ॥ सो विकुंठ दिय नाथ पठाये ॥~~ अब करि हैं

कांची निज थाना॥ भावत मोहि न दरस भगवाना॥ जो मोपै दाया नहिं कीन्यो आज हुं काल रहन नहिं दीन्यो॥ निरदय रंगनाथ हैं सांचे॥ भक्त मनोरथ पूरन कांचे॥ अस प्रकार प्रभु पै रिस ल्याई॥ वैस्नव जन कहे प्रकट सुनाई॥ चलिआये कांची पुरि काहीं॥ सरिता छीर नीर सुचि माहीं॥ दोहा॥ करि सनान दरसन किये वरदराज भगवान॥ जाय बहुरि निज भवन सुभ निवसे भक्त प्रधान॥ २७॥

टीका॥ तिसके उपरान्त जामुना चारी जी के शरीर को तिनके शिष्यों ने विधी अनुसार कावेरी नदी के जल मे पधराय दिया फिर तब वै स्नव मिल कर रामानुज को बडी प्रीती और प्रेम से कहने लगे कि हे भक्त प्रधान अब तुम रंगनगर को चलो और तहां रंगनाथ भगवान का दिव्य दरसन जो है सो करो ऐसे तिनका वचन सुनकर रामानुज क्रोध के वश भये हुये कहने लगे कि भाई रंगनाथ भगवान ने मेरे को उतसाह से रहित कर दिया है देखो मै जामुना चारी जी के दरसन के वासते ई हां आया सो दीना नाथ के मेरा तिनके साथ मिलाप होना नहीं भाया ताते अब मैं नहीं जाऊंगा और ना रंगनगर मे भगवान का दरसन पाऊंगा क्योंकि मै जिनके दरसन के वासते आया था सो मेरे से पहिले ही वैकुंठ धाम को पठाय दिये है अब मै फिर करके कांची पुरी को चला जाता हुं रंगनाथ भगवान का दरसन जो है सो मेरे को नहीं भावता देखो इतनी भी दया नहीं करी जो एक दिन मेरे आने तक तिनको रहने देते अब मैने जान लिये हैं जो रंगनाथ भगवान सत्य करके निरदय है और भक्त जनों के मनोरथ पूरण करने मै तिनकी रुची नहीं है इस प्रकार रंगनाथ भगवान पर क्रोध ल्याय कर और वै स्नव जनों को प्रकट सुनाय कर फिर भक्त पाल भगवान का सुमरण करते हुये कांची पुरी को चले आये और तहां नदी के सुंदर निरमल जल मै सनान करके फिर आनंद पूर्वक आय कर वरदराज भगवान का दरसन किया

संपूरी

चारीजी भगवान का सुमरण करते हूये वैकुंठ धाम को च
लेगये इस प्रकार गुरू का जाना देखकर ~~[illegible]~~ शिष्य जो
हैं सो भी तरसें परम ग्यानंद और बाहिर सें ~~दुखी होकर वि~~
~~लाप करते हैं~~ शोक कर के दुखी भये हूये जामुन के शरी
र को उठाय कर संसकार के वासते कावेरी नदी के किनारे
पर ल्याय राखते भये ॥२४॥ चौपाई ॥ रामानुज पूरन संग
माहीं ॥ आय गये तहि दिवस तहांहीं ॥ देखि महान जनन क
र भीरा ॥ पूछन लगे जुगल मतिधीरा ॥ कावेरी तट सुनहु
सनेहू ॥ जुरयो समाज कवन हित एहू ॥ भन्यो शिषन तुव
सुन्यो नप्यारे ॥ गुरु जामुन वैकुंठ सिधारे ॥ पूरन सुनत ग
वन गुरु काना ॥ विकल सीस धुनि धरनि गिराना ॥ रामानु
ज से जुत दुखमानी ॥ लगे करन शोकारत बानी ॥ आये व
हुरि निकट गुरु काया ॥ रुदन करत चरनन सिरनाया ॥ तब
देख्यो अचरज इक भारी ॥ अंगुरी तीन जामुना चारी ॥ सकु
चि रही कछु जानि नपरहीं ॥ लोक परस्पर चिंतन करहीं
तब रामानुज मुजा उठाई ॥ भाषा सुनहु लोग समुदाई ॥
मै प्रसाद भगवंत कृपाला ॥ श्री वैष्णव मत जगत रसाला ॥
करि प्रचलित सब जीवन काहीं ॥ तारिहुं अवसि धरनि तल
माहीं ॥ दोहा ॥ धरम परायण ललित शुभ सुनि रामानुज बा
नि ॥ उठि जामुन देखत सबन अंगुलि एक सकुचानि ॥२५॥
टीका ॥ तब रामानुज भी पूर्नाचारी के साथ तहां आय गये
और लोगों की महा भीर भार देखकर पूछने लगे कि भाई
इहां कावेरी के किनारे पर इह इतना लोग समाज किस का
रन जुड़ा हूआ है तब शिष्य कहने लगे कि तुम नहीं सुना
गुरु महाराज जामुना चारीजी वैकुंठ धाम को चले गये हैं
जैसे गुरु जी का परम धाम को जाना सुनकर पूरनाचारी सि
र फेरता हूआ व्याकुल होकर पृथवी पर गिर पड़ा और रा
मानुज भी हृदय में परम शोक और कलेश मानते भये
तिस ते उपरान्त पूरनाचारी और रामानुज बड़े दुखि
त भये हूये गुरु जी की काया के पास आय कर और

किरामानुज बहुत शुभ करता है मै अब ही तेरे घर मै च
लूंगा और भोजन पाऊंगा इस प्रकार जब गुरूजी ने सूईका
र कर लिया तब रामानुज अपने घर को चले आये और ब
डी प्रीती भक्ती से अनेक प्रकार के सुंदर व्यंजन जो है सो बन
वाये तिसते उपरान्त तिन के ल्यावने वासते जो गया तो
गुरूजी वे तिसके आने से पहिले हीं किसी और रसते द्वारा
होकर रामानुज के घर मै आय प्रापत भये तब छुधा करके
व्याकुल भये हूये रामानुज की स्त्री को जिस प्रकार वचन क
हते हैं सो आगे कथन किया जाहै ॥ २८ ॥ चौपाई ॥ मोहि भो
जन अब देहु सुभागी ॥ सहि न जाय छुध्या अति लागी ॥ रा
मानुज तीय भोजन दीन्यो ॥ कांची पाय परम सुख मान्यो ॥
सानुकूल पुनि हरष अघाये ॥ बरदराज प्रभु भवन सिधाये ॥
उत रामानुज कांची गेह ॥ गवने भेट भयो नहीं तेह ॥ आय नि
रास सदन दुखमाना ॥ तीय खिर च्यो भोजन तब आना ॥
गुरू आगमन पूछ्यो निज नारी ॥ तास भन्यो सुख सकल
उचारी ॥ तब रामानुज भोजन पाई ॥ चले वेग हरि भवन
सिधाई ॥ कांची पूरन के ढिग जाई ॥ जोरि जुगल कर विन
य अलाई ॥ कीजै मोहि समास्त्रय याला ॥ होहु मुचित
भव दुरगम जाला ॥ तब कांची कह वचन सनेह ॥ होहिं
न प्रभु सासन विनु एह ॥ विनु पूछे हरि भक्त सहैया ॥ तो रे मै
न करहु शिष भैया ॥ अस कहि गवन भवन हरि कीना ॥ चरन
सरोज सरन चित दीना ॥ दोहा ॥ गहित चाकर चामर वि
जन होत जजन रत सेव ॥ विनय नम्र लाग्यो करन सन
मुख देवन देव ॥ २९ ॥ टीका ॥ कांची पूरन जी कहते हैं
कि हे बड भागन मै छुधा करके व्याकुल होरहा हूं तू मे
रे को अब शीघ्र भोजन जिमा तब रामानुज की स्त्री ने
ᵛत तुरंत हीं भोजन दे दिया और कांची पूरन जी
पायकर बडे आनंद को प्रापत भये तिसते उपरांत उठ
करके बरदराज भगवान के दरसन करने के
वासते मंदर को चले गये और उहां रामानुज
कांची पूरन जी के घर मै जो गये तो तिन से भेट नहीं

फिर निरास होय करके घर को चले आये तब स्त्रीने तिन
के वासते और भोजन बनाया रामानुज पूछने लगे कि
गुरू जी घर मे आये थे स्त्रीने कहा कि भोजन पायकर वर
दराज भगवान के भवन को चले गये है तब तो रामानु
ज ततकाल भोजन पाय कर तिनके पीछे ही भगवान के
भवन को चले आये और कांचीपूरन जी के पास आयकर
दोनो हाथ जोड़ कर विनती करने लगे कि हे दीन दयाल अ
ब कृपा करके मेरे को अपना शिष्य कीजिये तो मै आ
प के प्रसाद से इस संसार के घोर कलेश और बंधन से
छूट कर मोक्ष पद को प्रापत हो जाऊंगा तब कांचीपूरन
कहने लगे कि रामानुज इह भगवान की आज्ञा के विना
नहीं हो सकता तिस भक्तपाल के पूछे विना मै तेरे को
उपदेश नहीं कर सकता हूं ऐसे कहिकर वरदराज भग
वान के भवन मे चले गये और तहां भगवान के चरन क
मलों मे चित्त लगायकर चामर और पंखा जो है सो
~~कांचीपूरनजी~~ हाथ मे लेकर बड़ी प्रीती भक्ती से झुलाव
ने लगे ऐसे भगवान कृपानिधान की सेवा मे लीन हो
कर रामानुज के निमित्त जिस प्रकार विनती और प्रा
र्थना करने लगे सो आगे कथन ~~किया कीजाती है~~ किया
जाता है ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ दीन नाथ रामानुज एहू ॥ चहत
होन ~~[illegible]~~ शिष मोर सनेहू ॥ यामे जस निदेश प्रभु होई ॥
मै अब करहुं सीस धरि सोई ॥ सुनि कांची कर विनय सु
हाई ॥ बोले वरदराज मुसकाई ॥ तुव कांची रामानु
ज संगा ॥ करहु कथन इह मोर प्रसंगा ॥ जो अस उ
पजि सुमति जीय तोरे ॥ लगी सुभक्त परम प्रीय मोरे ॥
गुरुवर शरण मोर शरनाई ॥ ऐसे हि अग्र जन मोक्ष उ
पाई ॥ जे अनन्य मम दास सुहावा ॥ तो के देहु परम पद
भावा ॥ तो ते जो तुमरे मन कामा ॥ बनहु जाय पूरन
शिष रामा ॥ तब कांची प्रभु चरन जुहारी ॥ रामानुज पे

१ कांचीपूरनजी

चल्यो सिधारी॥ वरदराज उपदेस सुहावा॥ तासु दीन स
व पृथक सुनावा॥ रामानुज हरि सासन पाई॥ रंग नगर
द्रुत चल्यो सिधाई॥ दोहा॥ ताहि ~~[illegible]~~ नगर तहिका
ले सब वैस्नव विपुल दुखारि॥ विरहे विकल जामुन
सकल शोकित सुरति विसारि॥ ३०॥ ~~चौपाई~~॥ टीका॥
कोंची पूरन जी विनती करते हैं कि हे भक्तजनो की रक्षा
करने वाले भगवान इह ब्रतधारी आप का दास रामा
नुज जो है सो मेरा शिष्य बना चहता है इसमे आपकी
जैसी आज्ञा होवे मै भगवन तैसी हीं सीस पर धारन
करलेऊंगा इस प्रकार कोंची पूरन की विनती सुनक
र वरदराज भगवान मुसक्याय कर कहने लगे कि
हे कोंची पूरन तुम मेरी ओर से रामानुज को कहो कि
इह जो तुमारे हृदय मे सुमती और रुची उपजी है सो
भक्त प्रवीन बहुत हीं शुभ है और मेरे को भी परम प्या
री लगी है जिस पुरुष ~~[illegible]~~ संसार मै गुरु की शरण ~~[illegible]~~
जो
गत भया है सो निश्चय करके मेरी हीं शरण को प्राप
त भया जानो और वशेष करके जगत मै एही मोक्ष
का उपाय है जो कोई मेरा निश्चय वाला भक्त है इह
पद मै तिसको देता हूं ताते जो तुमारे मन मै कामना
है तो जायकर के पूरनाचारी के शिष्य बनो ऐसे भ
गवान की आज्ञा सुनकर कोंचीपरन चरनो पर प्रणा
म करके तुरत रामानुज के पास चले आये और वर
दराज भगवान का सुंदर उपदेश जोथा सो सनमान से
सब सुनाय दिया तब रामानुज भगवान की आज्ञा पा
यकर तुरत रंग नगर को चले आये तिस समय ति
स रंग नगर के सब वैस्नव जन जो थे सो जामुनाचारी
जी की विरहे के वश भये हूये अपने अपने हृदय मै
परम दुखी हो रहे थे तिनको कोई आधार देख नहीं प
रता था॥ ३०॥ चौपाई॥ भक्तहि परस्पर मानि कलेसू॥
को अब करहि ज्ञान उपदेसू॥ महे पूरन लो सेवक ने र॥

रंग नगर मै

तिसतें उपरान्त भगवान के चरन कमल हृदयमें धारकर वार वार प्रणाम करके अपने घरको चले आये ॥ २७ ॥
चौपाई ॥ सुखसों सोय सदन निसिसारी ॥ जागे प्रात भक्त व्रत धारी ॥ कांची पूरनके गृह जाई ॥ किये प्रणाम चरन सिर नाई ॥ जामुन गवन परम पद भाषा ॥ दियो बहुरि सब पृथक सुनावा ॥ गुरु आज्ञा सुनि हरिपुर काहीं ॥ कांची भये दुखित मन माहीं ॥ तव रामानुज मानस रागे ॥ निसिवासर गुरु सेवन लागे ॥ एक दिवस उर आनंद छाये ॥ गुरु सन मुख अस वचन अलाये ॥ विनय मोर करु णाय निधाना ॥ कीजे भवन दास निज पावना ॥ करि भोजन पावन मोहि करहो ॥ दीन नाथ सेवक अनुसरहो ॥ तव कांची असभन्यो सनेहा ॥ मैं भोजन करिहौं तुव गेहा ॥ जव कीन्यो गुरु वर सुईकारा ॥ तव रामानुज भवन सिधारा ॥ विविध भांति व्यंजन वनवाये ॥ खटरस चारु अमिय सम भाये ॥ पुनि गुरु कहें ल्यावन हित गयऊ ॥ सो हु अनत पथ आवत भयऊ ॥
दोहा ॥ तव रामानुज के सदन गुरु कृपालु द्रुत आय ॥ क्षुधारत तहीं प्रीया सन भन्यो वचन अकुलाय ॥ २८ ॥
टीका ॥ तव भक्तप्रधान रामानुज जीने तहां घरमें वडे सुख पूर्वक रात्री को विश्राम किया और प्रातकाल होतेहीं उठकर भगवान कृपानिधानका सुमरण करते हुये कांचीपूरन जीके पास आयकर और चरनोपर सीस नायकर जामुनाचारी जीके परमधाम को जानेका सव प्रसंग सुनायदिया इस प्रकार गुरु जी का परमपद को जाना सुनकर कांचीपूरन हृदयमें परम शोक मानते भये तव रामानुज जीअनेक प्रकार समुझायकर फिर भक्ती प्रीतीसे तहां तिनके पासहीं निवास करने लगे एक दिन वडे आनंद पूर्वक तिनको कहने लगे कि गुरु महाराज मेरी इह प्रार्थना और विनती है कि आप मेरे घरमें चलिये और भोजन पाईये क्योंकि मैं सरव प्रकार करके आपका सेवक हूं इसमें आपके चरनोके प्रसादसे मेरा घर पवित्र होजावेगा और मैंभी सनाथ होजाऊंगा तव कांची पूरन जीने कहा

शुभ बानी सुनकरके पूरनाचारी जी रामानुज के ल्यावने वासते तुरत कांची पुरको चले जाते भये तब ग्रयग्रहार नाम करके एक ग्राम था तिस मैं तिनका परस्पर मिलाप होय गया तब रामानुज ने पूरनाचारी जी को देखकर और दोनो हाथ जोड़कर चरनो पर सीस धरके प्रणाम किया और पूरनाचारी भी ग्रसीसा देकर और ग्रपने मनोर्थ कूं सिद्ध जानकर हृदय मै परम हरष को प्रापत होते भये॥ ३१॥ चौपाई॥ रामानुज तब विनय बखाना॥ प्रभु कहि और किये निज प्याना॥ तब ग्रागम प्रसंग जस राहा॥ पूरन प्रकट बदन सब कहा॥ रामानुज तब विनय उचारी॥ मोहि शिष करहु दीन हितकारी॥ तब पूरन ग्रस कह्यो बुझाई॥ चलहु सत्य ब्रत तीरथ भाई॥ विधि जुत करं समाश्रय ताहीं॥ देहुं उचित दीक्षा तुव काहीं॥ तब रामानुज गिरा अलाई॥ नाथ कालिकर कवन बसाई॥ हम तुम जामुन दरसन हेतू॥ ग्राये रंग नगर मति सेतू॥ ते तहि दिन हरि लोक सिधारे॥ दरस ग्रास उररह्यो हमारे॥ ताते ग्रब कीजे जनि बेरी॥ नाथ प्रतीति न ग्रवसर केरी॥ जहं गुरु मिलहिं तहां शिष होना॥ देखिय देस काल कल कोना॥ मैं इह दीन नाथ जोई गावा॥ सकल शास्त्र सिद्धांत सुनावा॥ प्रेम अलौकिक तासु निहारी॥ संत सिरो मणि हृदय विचारी॥ दोहा॥ देव भवन इक ललित लखि तामध ग्रयो लिवाई॥ गुरु दीक्षा सादिर विमं विधि वत दीन कराई॥ ३२॥ टीका॥ तब रामानुज कहने लगे कि महाराज ग्राप कहां को चले हो रामानुज का वचन सुनकर पूरनाचारी जी ने ग्रपने ग्रावने का सब प्रसंग सुनाय दिया तब रामानुज हाथ जोड़कर बिनती करने लगे कि हे दीन दयाल ग्रब मेरे को ग्रपना शिष्य कर ली

जिये पूरना चारी कहने लगे कि भाई सत्य व्रत तीर्थ जो
है तिस पर चलो तहां विधी के अनुसार तुमको निरमल
दीक्षा कराय कर अपना शिष्य बिनाय लेताहूं तब रामा
नुज कहने लगे कि नाथ सत्य व्रत तीर्थ पर क्या है आ
पने जो कुछ करना है सोई हांहीं करिये समय का कु
छ वसाय नहीं है छिन मे और का और हो जाता है देखि
ये हम तुम गुरू जामुना चारी जी के दरसन के वासते
रंग नगर मे आये थे सो तिसी दिन परम धाम चले ग
ये दरसन की आशा हृदय मे ही रेह गई तो ते अब बेर
करने का समय नहीं है गुरूजी जहां मिलें तहां ही शि
ष होना ~~चाहिये इसमे देस काल का विचार कुछ नहीं क~~
~~रना चाहिये~~ योग्य है इस मे देस काल का विचार कु
छ नहीं करना चाहिये हे नाथ मैने जो इहां कथन कि
या है सो संपूर्ण शास्त्रों का सिद्धांत है इस प्रकार रामानु
ज का अलौकिक प्रेम कि जो लोकों मे नहीं है देखकर
संत सिरोमणी पूरना चारी जी हृदय मे विचार करके एक
देव मंदिर देखकरके तिसमें ले गये तहां निरमल गुरू दी
क्षा जो है सो विधि अनुसार बड़ी प्रीती सतकार से कराय दई
॥ ३२ ॥ चौपाई ॥ रामानुज कर बहुरि प्रवीना ॥ संख चक्र
चिन्हत भुज कीना ॥ ऊर्ध्व पुंड दै तिलक लिलारा ॥ अ
षृ वरन पुनि श्रवण उचारा ॥ विधीवत बहुरि हो
म कल कीन्यो ॥ लछमनाजे तहि नाम रखीन्यो ॥ व
स्तराज पूजन मन भावा ॥ तासु दीन अधिकार सुहावा ॥
पूरित परम हरष मन माहीं ॥ पुनि आये कांची पुरि
काहीं ॥ तब पूरन अस भीरा अलाई ॥ तुव पाछे जामुन
गुरु भाई ॥ सुचि वे सब मत पावन करहीं ॥ संत जनन
उर आनंद भरहीं ॥ तुम वे सब सिर मोर कहावा ॥ चक्र
वरति तुव नाम सुहावा ॥ रामानुज गुरु आसिख पाई ॥
बार बार चरनन सिर नाई ॥ धन्य जनम निज जगत वि
चारी ॥ मानत भयो मोद सुख भारी ॥ पुनि गुरु ते वि

२७४

२७६

धा अभिरामा॥ रति जुत पठत रहे मतिधामा॥ मन मति पा छिदिन मत कीने॥ सुचि वै सब मत [illegible] दिन की ने॥ कांचीपुरि कल जवन निवासी॥ विप्र संत वै सब गुण रासी॥ रामानुज सब कर हित भीने॥ करत रहे स नमान नवीने॥ अस प्रकार षट मास विहाये॥ गुरु पैंक रत वास सुख छाये॥ एक दिवस अपने गृह माते॥ अंग न तेल लगावन राते॥ तहां एक अतथी दुज आवा॥ तहि लखि उर करुणा रस छावा॥ नृय सन मन्यो वेग सुख रामा॥ ल्याय अमान्न देहु रहि धामा॥ तव भाम नि अस कह्यो रिसाई॥ इहि हित अन्न लेन कित जाई॥ निज नकेत कछु नाहिं न पाऊं॥ अनत अन्न कहि ले जन जाऊं॥ सुनि तीय वचन परम दुखदाई॥ रिसव स उठे आप अतुराई॥ दोहा॥ निज नकेत तें अन्न क छि तीय सन मुख द्रुत ल्याय॥ कहिस मिल्यो इहि हम कहँ कस दुरमति दुष्ट सुभाय॥ ३३॥ टीका॥ तिस ते उपरांत रामानुज की भुजों को संख चक्रादि चि न्हों करके चिन्हत करदिया फिर मस्तक में उ र्ध पुंड्र अर्थात रामानंदी तिलक सजाय कर अष्टा क्षर मंत्र जो है सो कान में सुनाय दिया और फिर विधी पूर्वक होम करके लक्ष्मनाचार्ज तिसका नाम रख दिया और वरदराज भगवान के पूजन सेवन करने का अधिकार देदिया तिसतें उपरांत हरष करके पूरित भये हूये रामानुज गुरु जी के सहित कांची पुरी को चले आये तव गुरू पूरना चारीजी मधुर वानी से कहने लगे कि हे रामा नुज तुम गुरू जामुना चारी जी के पीछे परम प वित्र वैष्णव मत जो है सो स्थापन करो और संत जनों के हृदय को परम सुख और आनंद देवो अव प्रवीन तुम सरव वैष्णवों के सिरोमणी अर्थात

जामुनविरहं शोकमति प्रेरे॥ तव सव संतन संमति
कीना॥ होय अचारज कौन प्रवीना॥ वैस्नव मत मेदिन
करि चारू॥ करहिं खंड पाखंड प्रचारू॥ सुचि सुधरम
संसृति विसतरहीं॥ हरिविमुखन कहं सनमुख कर
ई॥ मिलि विचार ठान्यों सव केही॥ हैं रामानुज लाइक ए
ही॥ आवहिं रंगनगर ते जवहीं॥ उदय होहिं वैस्नव म
ते तवहीं॥ तव संतन कह पूरन काहीं॥ तुमहुं जाय कां
ची पुरि माहीं॥ आनहु रामानुजें लिवाई॥ सादिर संसका
र कराई॥ लेहु वनाय रुचिर शिष आपन॥ तव वैस्नव म
त होहिं स्थापन॥ गिरा सुनत अस संतन सोची॥ पूर्णं किये ^न
गवन द्रुत कांची॥ अप्रहार इक ग्राम सुहावा॥ तहां परस्पर
भयो मिलावा॥ दोहा॥ तव रामानुज देखि द्रुग परे चरन अ
तुराई॥ पूरन हं लखि सुख पगे मन हुं मनोरथ पाय॥ ३१॥
टीका॥ तव सो वैस्नव परस्पर विचार करते हैं और कहते
हैं कि अब हमको कौन ज्ञान उपदेश किया करेगा इस
प्रकार महापूरन से लेकर संपूर्ण वैस्नव गुरु जामुनाचा
री जी के विजोग से शोक करके व्याकुल और दुखी हो रहे थे त
व सव वैस्नवों ने मिलकर संमती करी कि अव आचार्ज
कौन स्थापत होवे कि जो वैस्नव मत को उदय करके पाखं
ड मतियों को खंडिन करे और सुधरम का संसार में विसता
र करके विमुख पुरषों को भगवान के सनमुख कर देवे ऐ
से सव ने मिलकरके अंत को इहि विचार निस्चय किया
कि जो इस अधिकार के लायक रामानुज है तिसके विना
और दूसरा कोई नहीं है सो प्रवीन जव रंग नगर में आवे
तव वैस्नव मत भलीप्रकार उदय होता है और शोभा भी पा
वता है इस प्रकार संमती सव वैस्नवोंने पूरनाचारी जी को
कहा कि तुम कांची पुरी में जावो और रामानुज को ले आ
वो फिर इहां सनमान से विधी अनुसार सव संसकार कर
वायकर तुम तिसको अपना चेला वनायलेवो तव सुं
दर वैस्नव मत जो है सो भलीप्रकार जगत में स्थापत
होवेगा ऐसे सरव जीवों के हित के देने वाली संतों की

[Left margin: सुंबुद्धमय ... ; ^करके]

मानुज नारी॥ गुरु तीय जुत दोउन गहि कान॥ ३॥ सोग गरि कूप मध्यान॥ रामानुज तीय घट पें केरी॥ पलोग गरि पूरन तीय केरी॥ तमकि उठी रिस मानि महान॥ तजत अधम मन गुरु तीय कान॥ तुव घट पर सि मोर घट संग॥ भयो अपावन जोग विभंग॥ दोहा॥ रे नीच नि कुल कुमति अति नहिं जानति तुव बात॥ हम रो कुल उत्तम विसद सकल जगत विख्यात॥ २४॥ टीका॥ फिर रामानुज कहने लगे कि अरे अभागन अतथी ब्रह्मण क्षुधा करके दुखी भया हूआ मेरे द्वारे पर चला आया अधम तैं ने तिसका ऐसा निरादर किया अब मैने जान लिया कि दुष्ट तूं बड़ी पापनी है और कुबुद्धी जड जाती सेत जनों की चेरन है उठ दुरमती मेरे सनमुख से चली जा अब कुछ और अयोग्य बचन मत कहना ऐसे पती को कोप के वश हूये देखकर लज्जा की मारी उठकर अपने घर मे मौन होय कर जाय बैठी और इन्हें तिस अतथी को अमान्न अर्थात सूखा अन्न देकर रामानुज जी ने विदाय करदिया तब एक समय तिसी नगर मे कि जहां सब स्त्री मिलकर जल भरने को आती थीं तहां पूरना चारी जी की स्त्री भी जल लेने को आय गई इतमे सो कलह कारनी अर्थात लड़ाई का मूल रामानुज की स्त्री भी तिसी कूये पर जल लेने को चली आई तब गुरु की स्त्री और रामानुज की स्त्री ने कूये मे एक साथ ही घड़े बहाय दिये सो दैवयोग से गुरु की स्त्री का घड़ा तिसके घडे के साथ टकर पड़ा तब तो सो दुष्टबुद्धी रामानुज की स्त्री घडें स्पर्श देखकर ततकाल तमक उठी और क्रोध के वश भई हुई गुरु लज्जा को त्याग कर बड़ी तीक्षण बानी से कहने लगी कि अरे मंद तेरे घड़े ~~से मेरा घड़ा अधम~~ के स्पर्श से मेरा घड़ा भ्रष्ट होगया है अब मै इसको क्या करूंगी हो नीच कुल की जनी हुई तूं नहीं जानती थी कि हमारी कुल कैसी उत्तम है ~~और संपूर्ण जगत मे प्रसिद्ध है~~ और जिसको सब जगत जानती है॥ २४॥

चौपाई॥ हम न पीव तुव घर सत वारी॥ अस गुरु पतनि विविध तृसकारी॥ तव पूरन तीय कोपि वखान्यो॥ हम बड़वारि तोर सब जान्यो॥ अस दऊ हन कर भयो विवादा॥ छूटिगई गुरु सिष मरजादा॥ तव पूरन ची य धाम सिधारी॥ पतिसन सकल वृतान्त उचारी॥ पूरन मानि परम अपहानी॥ गवन्यो रंग नगर दिसमानी॥ उत सेवन हित सांझ सनेहू॥ रामानुज गवने गुरु गेहू॥ सो पाये आश्रम निज नाहीं॥ पूछन लगे परोसिन काही॥ तव तिन तीयन परस्पर केरा॥ वरन्यो वदन विवाद घनेरा॥ कहि नगये हम कहं कछु सोहीं॥ रंगनगर गवने गुरु तोहीं॥ रामानुज सुनि फिरतु राई॥ [illegible] अजर भवन निज आई॥ भामनि सों पूछन अस लागे॥ रे दुरमति जड़ जाति अभागे॥ गुरु तीय कस कीन सी अपमाना॥ कलह करनि तव वचन वखाना॥ दोहा॥ कुवन किये कत असुचि मम कढ़त कूप घटवारि॥ मेंआई हित तास तहि करि दिसवस बहु गारि॥ ३४॥ टीका॥ फिर रामानुज की स्त्री कहती है कि हम तुमारे घर से हुये जल को कवी नहीं पियेंगे इस प्रकार गुरु की स्त्री बहुत ही निरादर किया तव क्रोध से भरी हुई गुरु की स्त्री भी कहती है कि दुष्ट बुद्धी हम तुमारी कुल बड़ाई सब जानी हुई है ऐसे दोनों विवाद करने में गुरु शिष्य की मर्जादा जो है सो छूट गई तव पूरनाचारी जी की स्त्री तहां से जल लेकर अपने घर को चली गई और जाती ने ही पती के साथ सव वृतांत सुनाय दिया इस निरादर को पूरनाचार्ज सुनते ही हृदय मे अत्यंत हानी मानकर तत्काल स्त्री के सहित रंगनगर को चले जाते भये और इहां सांझ के समय रामानुज गुरु जी के सेवन के वास्ते तिनके घर मे जो आये तो गुरु कृपाल घर मे नहीं पाये पड़ोसियों से

"वस
के
अपने
"काति सजउजा तीने

पूछने लगे तब तिनों परस्पर स्त्रीयें का विवाद जो हू
आ था सो सब सुनाय दिया और कहा कि गुरू जी हम
को कुछ कहि तो नहीं गये हैं परन्तु जान पड़ता है
कि अवश्य करके रंगनगर को गये होंगे तब रामानु
ज सुनतेहीं क्रोध के वश भये हूये बड़ी उतायल से
अपने घर मे चले आये और स्त्री से पूछने लगे कि
अरे जड़ दुष्टबुद्धी और अभागनी तैने गुरू जी की
स्त्री का क्यों अपमान किया है तब सुन करके सोम
दमती कहने लगी कि तिसने कूये पर मेरा जल से
भरा हुआ घड़ा परस करके अपवित्र कर दिया था
मै इसी कारन से तिसको गारी दे कर ~~क्षमा~~ से और
सोई अपवित्र घड़ा लेकर के घर मे चली आई
हूं ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ रामानुज कहि कोपित बानी ॥ रे
जड़ कीन धरम कर हानी ॥ जहि उच्छिष्ट हम खाय अ
भागी ॥ पावन होत अपावन त्यागी ॥ तास त्रीय प
रसन जल कीने ॥ मूरख असुचि कवन मति दीने ॥
गुरू तीय की ये पान पद वारा ॥ होहि सकल सुचि वे
स हमारा ॥ मा तोहि तें अनरथ जड़ भारी ॥ जो अ
पमान गुरू नारी ॥ अब न सदन तुव राखन जोगू ॥
करहिं मोर अपजस किन ~~[illegible]~~ लोगू ॥ तब दुर
पत रामानुज नारी ॥ बैठी जाय भवन निज न्यारी ॥
उत रामानुज पूजन हेतू ॥ वरदराज किय गवन न
केतू ॥ लगे विचार करन मन माहीं ॥ किमि इहि तज
हु अधम तीय काहीं ॥ विप्र एक तहि अवसर आयो ॥ प
रम क्षुधित मुख वचन अलायो ॥ दाता देहु अन्न मोहि दा
ना ॥ तब रामानुज वचन बखाना ॥ मोर सदन द्विज जा
हु सिधारी ॥ करहि प्रतोष तोर मम नारी ॥ रामानुज
त्रीय पें द्विज जाई ॥ कहिस देहु भोजन मोहि माई ॥ आ
वा अतिथि विप्र तुव द्वारा ॥ करहु दान भोजन उपका
रा ॥ दोहा ॥ सो बोली अनखाय तब का मूरख ~~कह~~ तुव

सरदार बने हो और चक्रवर्ती तुमारा नाम प्रसिद्ध हूआ
इस प्रकार रामानुज गुरू जी की आसीस पायकर वारंवार
चरनों पर सीस नावते भये और जगत मे आपका धन्य जन
म जानकर परम सुख को प्रापत हूये फिर गुरू जी ने बहु सुं
दर सुखदायक विद्या जो है सो बुद्धी के धाम रामानुज प्रीती
और भक्ती से पढते रहे और मनमती जो पाखंडी थे तिनके मत
को खंडन करके ~~दिन दिन~~ वैस्नव मत का प्रभाव बढाते ग
दिन दिन
ये कांची पुरी मे वास करने वाले वैस्नव ब्राह्मण संत म
हातमा जितने थे सो रामानुज सब का परम हित प्यार से
नित नवीन हीं आदर सतकार करते रहे इस प्रकार जब सु
ख पूर्वक गुरू जी के पास वास करते करते छे महीने व्यती
त होय गये तब एक दिन आपने घर मै शरीर के सब अंगों
को तेल की मरदन कर रहे थे तिसी समय तहां एक कोई
अतथि ब्राह्मण आय प्रापत भया तिसको दीनवत देखकर
हृदय मे दया जो उतपन्न भई तो स्त्री से कहने लगे कि हे भा
मनी इस अतथी ब्राह्मण को कुछ सूखा अन्न घर से शीघ्र
ल्याय दे तब सुनकर स्त्री क्रोध से कहने लगी कि इस के
वासते मै अन्न लेने को कहां जाऊं आपने घर मै तो कुछ न
हीं है अब औरों के कहां लेजती फिरूं ऐसे स्त्री का परम
दुखदायक वचन सुनकर क्रोध के वश भये हूये उतायल
से आप हीं उठे और घर से अन्न निकाल कर स्त्री के सन
मुख ल्यायकर कहने लगे कि अरे मंदमती और दुष्ट सु
भाव वाली इहं देख तो हमको घर से कैसे अन्न मिल गया
है ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ तुष्यत अतथि आव मन द्वारा ॥ तुव त
हि कीन अधम अपकारा ॥ रे पापनि जड जानि अबुद्धी ॥
निपट गवारनि संत विरुद्धी ॥ जाहु जाहु मम सनमुख त्या
गी ॥ अब न कढहु कछु दुरमति वागी ॥ पति हि देखि अ
मरख बस भामा ॥ बैठी जाय लजित निजधामा ॥ उते अ
मान अतथि कहं दीने ॥ रामानुजैं विसरजन कीने ॥ एक
समय पुनि तहि पुर माहीं ॥ जहं जल भरन सकल तिय
जाहीं ॥ तहि कूप मे जुल घट लीने ॥ पूरन पतनि गवनि
सुख भीने ॥ आई तहां सोपि तिन वारी ॥ कलह करनि रा

विचारा॥ मेरो जतन लागि अब गयऊ॥ वधु अ
पराध बार त्रै भयऊ॥ मैं न पती न पतनीं इह मेरे॥
या मै औगुन सब जग केरे॥ अस गुनि द्विजहि कह्यौ
समुझाई॥ अब तुम बहुरि सदन मम जाई॥ तीयस
न मनहु वचन सुखदाये॥ हम तेरे मैके ते आये॥
तोर बीर कर रुचिर विवाहू॥ सदन सुभग मंगल उ
तसाहू॥ जनक जननि तुव पत्रिक दीना॥ चलहु
बांचि द्रुत सुमति प्रवीना॥ अलि गण भगनि अनत
पुरनारी॥ तुम अगमन अभिलाषित सारी॥ अस
कहि पत्रिका दीन बनाई॥ छिरकत कुंकुम मलय सुहाई॥
विप्र लेत गवन्यो अतुराता॥ हृदय विचार करत मग जा
ता॥ मेरत कवन काज वह आवा॥ आवागमन करत
श्रम पावा॥ अस सो चित द्विज पंथ निवारी॥ आयनिक
ट रामानुज नारी॥ दोहा॥ सो पत्रिक कर दीन तहि ती
न सि अति सुख मानि॥ पितु पठवन धन गुनत मन जन
प्रमोद सरसानि॥ ३७॥ टीका॥ फिर कलहँकारनी ति
स ब्राह्मण को कहने लगी कि मेरे ईहां से निकलकर
चला जा नहीं तो अबी दूर दृष्ण से ● गारी देकर
निकाल देऊंगी तब ब्राह्मण तिस दुरमती के बच
न सुन कर ततकाल रामानुज जी के पास फिर आया
और तिन को तिस दुरवचनी का अपकार और कथ न
जो था सो सब सुनाय दिया रामानुज सुन कर कहते
है कि मै इस जड जाती का अपराध तीन वार सहार
कर सांचा हो चुका हूं अब इह नामेरी पतनी और
ना मै इसका पती इस अधमनी मै तो सब जगत के
औगन भरे हूये हैं ऐसे विचार कर तिस ब्राह्मण को
भली प्रकार समुझाय कर कहने लगे कि भाई अब तु
म फिर ऊहां हीं हमारे घर मै जावो और तिस दुरम
ती को जाय कर कहो कि मै तेरे मायके अर्थात मापयों
के घर से आया हूं तेरे भ्राता का विवाह है ऊहा वडे मै

गल और उत्सव होरहे हैं और तुमारी ~~सखी~~ मैनस
खी सहेली और पुरकी नारी सब तुमारे आगमनको
देखरही हैं कि हमारी हितकारनी कब आती है और इ
स पत्रिका जो है सो तुमारे मात पिता ने दई है अब इस
को बाचकर तुम तहां को शीघ्रही चलो इस प्रकार रा
मानुज जी ने तिस ब्रह्मणको समुझाय कर और पत्रिका
बनायकर केसर चंदन इत्यादि से भली प्रकार
छिड़के करके तिस ब्रह्मण के हाथ मे देदई तब सो
विप्र तिस पत्रिका को लेकर के तहां को फिर चलपड़ता भ
या और रस्ते मे जाता जाता कहता है कि मै इहां आ
ने जाने के श्रम मे कहां आय फसा हूं ऐसे विचार कर
ताहुआ ब्रह्मण ~~मारग को~~ कर वेग से चलकर रा
मानुज जी के घर मे आय पहुंचा तहां सो पत्रिका ति
नकी स्त्री को देदेता भया सो पिता की भेजी हुई पत्रिका
लेकर हृदय मे परम हरष को प्रापत होती भई ॥३२॥
चौपाई॥ कीन विप्र सतकार सुहाया॥ देधन पुनि
दीन विदाया॥ आये जब रामानुज गेहा॥ कहि सब
बचन त्रीय परम सनेहा॥ मैके नाथ वीर मम के
रा॥ सुठि विवाह उत्साह घनेरा॥ जो पावहुं सा
सन तुव स्वामी॥ तो मैं करहुं गवन सुख मानी॥
जननि जनक मोहि पठै बुलाई॥ इह पत्रिका
प्राण पति आई॥ तब रामानुज आनंद मानी॥ जा
हु अवसि भाखिस मुख बानी॥ पट आभरन लेत समु
दाई॥ सह समाज देऊं तुव जाई॥ हम दिन पांच गये उ
त ऐहैं॥ तुम कहं पुनि लिवाय इत लैहैं॥ तब तीय भू
षण बसन सजाई॥ पियरे गवनि हरष सरसाई॥ रा
मानुज लहि आनंद रासी॥ जान्यो कटी ग्रीव ते पासी॥
भाषत मन सो मति अनुसरई॥ अब विदेह कल धारन
करई॥ पटि हरि प्रहस्था श्रम जंजाला॥ भजिय बैठि अब
कृष्ण कृपाला॥ अस विचारि निज मानस माही॥

२७८

पठित माइ के निज सति काही ॥ त्रिणावत तोरि ज
गत जिय श्रासा ॥ देत विदाय ग्रवास निरासा ॥ दोहा
नारायण पद प्रेम किये वलकल पट पहिराइ ॥ धरे
कमंडल दंड कल चले चपल गति धाइ ॥ ३८ ॥ टीका ॥
फिर रामानुजकी स्त्रीने तिस ब्रह्मणका वड़ा सतका
र करके और श्रन्न श्रहार देकरके विदाय कर
दिया जब रामानुज घरमै श्राये तव स्त्री जो है सो व
हुत नेह जणाय करके कहने लगी कि हे नाथ मेके मैं
मेरे भ्राता का विवाह ~~और उत्सव~~ है तहां वड़े मंगल
और उतसव होवेंगे जो स्वामी श्रापकी श्राज्ञा होवे
तो मैं श्रानंद पूर्वक तहां जाऊं क्योंकि माताने मेरे
को वुलाय भेजा है इह पत्रिका तहांसे श्राई है ऐसे
तिसका कथन सुनकर रामानुज जी कहने लगे कि
भामनी वड़ी शुभ वार्ता है तहां तुमको श्रव श्रवस जा
ना चाहिये और भूषण वस्त्र जो कुछ तहां देना
योग्य है सो साथ ले जावो और तहां समाज के
वीच जाय करके देवो हम भी चार पांच दिनके
पीछे श्राय जाते हैं और जव तहांसे घरको श्रा
वेंगे तो तुमको साथ ही ले श्रावेंगे इस प्रकार
पतीके मुखसे वचन सुनकर सो भामनी ततका
ल भूषण व वस्त्र सजाय कर जो कुछ लेनाथा सो
साथ लेकर श्रपने मैके को श्रर्थात माता पिता
के घरको चली जाती भई तव पीछे रामानुजजी
परम सुख और श्रानंद को पायकर कहते हैं कि श्रा
ज गलेसे फांसी कटी है तातें श्रव सुदिन और सु
मती विचार करके विदेह जो है सो धारन करूं इस
ग्रहस्त श्राश्रमके जंजाल को त्याग कर स्वतंत्र हो
करके कृष्ण प्रमातमा के भजन और सुमरण में ली
न हो जाऊं ऐसे मनमें विचार और स्त्री को मे
केमें भेजकर जगत की श्राशा जो है सो त्रिणावत

होत॥ मैं राख्यो भोजन विरचि जोतुव सासन लेत॥ ३१॥ टीका॥
तब रामानुज ने परम क्रोध करके कहा कि अरे पापनी
जड़ बुद्धी तैने तो धरम का नाश कर दिया मूरखनी जिस
का उछिष्ट अर्थात जूठा खाय कर हम जगत में पवित्र
होते हैं तिसकी स्त्री के सपरश होने से जल अपवित्र
हो गया हे दुर भागी इस किस मंदमती ने तेरे को नरक
मे जाने का मारग बताया है गुरु की स्त्री के चरनो का ज
ल पान करने से हमारा संपूर्ण वंस पवित्र हो जाता है और
जड़ इस तो तेरे से महा अनर्थ भया है जो तैने गुरु पतनी
का ऐसा अपमान किया अब यद्यपी लोग मेरा अपजस
भी करैं तद्यपी मै तेरे को घर मे नहीं राखुंगा ऐसे पती
के मुख से तिरसकार के वचन सुनकर भय के वश भई हुई
सो भामनी मौन होय करके घर मे जाय बैठी और इहो
रामानुज वरदराज भगवान के पूजन सेवन के वासते भवन
मे चले आये और हृदय मे विचार करने लगे कि अब इस अ
धम स्त्री का किस प्रकार त्याग करूं तिसी समय एक ब्राह्मण
क्षुधा करके व्याकुल भया हुआ आय करके रामानुज जी
से कहने लगा कि दाता मै क्षुधा करके पीड़ित हूं मेरे साथ
अन्न दान का उपकार करो तब रामानुज कहने लगे कि
ब्राह्मण मेरे घर मे जावो तहां मेरी स्त्री जो है सो तुमा
रा परितोष कर देवेगी ऐसे सुनकर के सो ब्राह्मण
तुरत रामानुज के घर मै जाय कर तिन की स्त्री को कह
ने लगा कि माई मै अतिथी ब्राह्मण तेरे द्वारे पर आया
हूं और क्षुधा करके व्याकुल हूं अब तूं उपकार कर और
मेरे को भोजन दान दे तब सो क्रोध की भरी हुई कहने ल
गी कि चल लिबाड़ क्या तेरे वासते किसी ने भोजन व
नाय के रखा हुआ है॥ ३२॥ चौपाई॥ जाहु जाहु तजि स
दन भिखारी॥ काढि है नतर देत द्रुत गारी॥ विप्र सु
नत ततकाल पराई॥ रामानुज पै द्रुत गती आई॥
किय कथन जीय गुन अपकारा॥ तब रामानुज हृदय

२२९

२२९

देवताओं की रक्षा करने वाले हे मुकुंद हे तीन लोकों के नायक हे भक्त हितकारी भगवंत जो आप की आज्ञा पाऊं और जो कृपा करके आप निबाहो तो इहत्रि दंड मैं धारन करूं इस प्रकार बड़ी मन को भावने वाली जन की बानी सुनकर दीनबंधू भगवान प्रसन्न मुसक्याय कर कहने लगे कि हे भक्त प्रधान तुम हरष पूर्वक अनंत सरोवर को चले जावो तहां मेरे अनन्य भक्त कि जिनको मेरे बिना और दूसरे का भरोसा नहीं है तिनसे जायकर हित और प्रीती से विधी अनुसार सुंदर त्रिदंड जो है सो ग्रहन करो ऐसे भगवान की आज्ञा सुनकर रामानुज मन मैं कहने लगे कि आज मैं निश्चय करके दीनबंधू के दासों मैं गिना गया हूं तिस समय का सुख हृदय मैं समावता नहीं भया तुरत प्रनाम करके अनंत सरोवर को चले गये तहां जायकर भगवान के दास भक्तों को देख कर पृथ्वी पर माथा धर करके प्रनाम करते भये फिर तहां जामुनाचारी जी का दरसन पायकर तिनके चरनों पर प्रनाम किया तिसतें उपरान्त संपूर्न संतों की कृपा से त्रिदंड जो है सो विधी अनुसार ग्रहन कर लिया तब तें रामानुज जी का नाम जतीवर करके प्रसिद्ध होता भया तिस समय देवताउं ने बड़े आनंद से आकाश मैं नाना प्रकार दुंदभी का शब्द करके जतीवर के सहित सब संत समाज पर सुंदर पुष्पों की बरषा जो है सो कर दई ॥ २९ ॥ चौपाई ॥

संत समाज सकल हरषाई ॥ जय जय जय मुख मुखर अलाई ॥ महि मंडिल सुभ मंगल छायो ॥ कलि उरपत जनु बिपुन दुरायो ॥ इत निसि को चौपूरन काहीं ॥ दीन सपन अस त्रिभुवन साईं ॥ मोर चरन जल पादुक चारू ॥ छत्र जटित कंचिन मनि भारू ॥ चमर सुभग सिव का मन हरनी ॥ रतन अलंकृत निदरत तरनी ॥ ता मध मम पादुका सुहाई ॥ रावि ललित मुनि मानस भाई ॥ अग्र जाय रामानुज काहीं ॥ ल्यावहु ई हो भवन मम माहीं ॥ मुनि सासन सपने

८३

जगत्राता॥ कांची पूरन उठे प्रभाता॥ प्रभु पादुका भक्त
सुखदाई॥ सिवका रूठ कीन द्रुत ल्याई॥ छत्र चा
रु चामर छवि छाई॥ कहि नजाय कछु लोचन ताई॥
रामुज कहे आगल जाई॥ चले लेन सादर हरषाई॥
प्रभु पादुका भक्त प्रदकामा॥ धारत मौलि भक्त अभिरा
मा॥ दोहा॥ ल्याये कांची नगर कूं अति प्रमोद सु
खमान॥ सुमरत दीन दयानिधी वरदराजभगवान॥
७०॥ तब तहां सब संत भक्त जोथे सोभी बडे आनंद
से जै जै शब्द को उच्चारण करते भये और पृथ्वी
मंडल पर शुभ मंगल छायत हो गया कली जो
कलजुग है सो मानो डरता हूआ कहीं बन मे जाय
छिपा तब ईहां रात्री मै कांची पूरन जी को वरदराज
भगवान सपने मे कहने लगे कि हे भक्त मेरी चरन
पादुका अर्पीत खडाऊं और कंचिन मणियों
करके जडा हूआ छत्र चमर जो है सो मेरी सूरजकी
आभा के निंदर ने वाली अतसे प्रकाशमान सिवका जो
पालकी है तिसमे [illegible] राखकर और आगे जा
यकर मेरे परम प्यारे भक्त रामानुजको बडे सनमान
से ईहां मेरे भवनमै लेआवो इसप्रकार सपने मे भ
गवानकी आज्ञा पायकर कांचीपूरन जी प्रात काल
होते हीं उठे और भक्तजनो के मन को सुखदेने वाली
भगवान की चरन पादुका लेकर बडे प्रेम सतकार से
पवित्र पालकी मे स्थापत करके और छत्र चमर आ
दिस [illegible] म सजाय करके अत्यंत छवी से रामानुजजीके
ल्यावनैंका सते चलेगये तब तहां जायकर के [illegible]
भक्तजनो के मनोर्थ सफल करने वाली भगवान
की चरन पादुका रामानुजजीं सीस पर धारन कर
के वरदराज भगवान का सुमर्ण करते हूये बडे सुख औ
र आनंद से कांची पुरी मैं ले आवते भये॥ ७०॥ चौ
पाई॥ रही विदेउ गृहन कृत जोई॥ करवाई सादि
र पुनि सोई॥ हरि मंदिर तब जति वर जाई॥
बार बार नंमृत सिर नाई॥ करन लाग कल अस

२८०

तुति गाना॥ जयजय जैति भक्त वरदाना॥ जैति अनन्त शक्ति सुरराया॥ जैमुकंद जैजै पति माया॥ जैसुर धरनि धेनु रखवारे॥ जेजे भक्त संत हितकारे॥ जैमोदिन वृंदारक जाती॥ जैजैजे मधु कैटव घाती॥ जैवारन हारन भव पीरा॥ जैति प्रवरधन द्रोपदिची रा॥ जै प्रल्हाद करन रखवारी॥ जैजै जैति तरन मुनिना री॥ जैजै सीत करानन शोभा॥ जैजै सुर मुनि मानस लोभा॥ जैजे कमल विलोचन चारू॥ जेजे जै उरवनम जधारू॥ जैति त्रिभंग अंग मृदु लोने॥ जैजे हृदय भक्तोजन टोने॥ जैतिस फटि कृत कुंडलकरनाथ जैजे केकि क्रीट कल धरना॥ दोहा॥ जैजै पीत पुनीत वरजग्युपवीत मुरारि॥ जैति संख चक्रादि प्रभु गदापद्म धृतचारि॥ अस प्रभु अस तुति कीन कल रामानुज मतिधाम॥ द्वैपसन्न करुणायतन दीन्यो जति वरनाम॥ प्रभुप्रसाद जन पायकै अभय अमल चित होय॥ हरिस मीपनिवसन लग्यो दुरत दोष दुख खोय॥ सुचि संतन सतकार नित होत निरत गुन गेहु॥ लाग्योनिसिदिन भजनपद वरद राज जन नेहु॥ रामानुजकर चरित अस कछुक किंचत मति वार॥ मे गायो संदापूरह हरन दोष संसार॥ ६२॥ टीका॥ फिर विदंड गृहण करनेकी कृत जो रहीथी सो सनमान से विधीपूर्वक सब करवायदई तिसतें उपरांत जतीवरजी भगवानके भवनमे जायकर वारवार प्रणाम करके वडीनम्र वानीसे सुंदर अस्तुती जो है सो गायन करने लगे कहते हैं कि जैहो तुमारी हे भक्तजनोको वर देनेवाले हे अनन्त शक्ती वाले मायाके पती भगवान जैहो तुमारी हे मुकुंद हे देवताउंके स्वामी हे गौ ब्रह्मण पृथवी की रक्षा करनेवाले हे भक्त संतोंके हितकारी जैहो तुमारी हे देवताउंको आनंद देनेवाले हे मधु कैटव आदिदैतोंके वध करनेवाले जैहो तुमारी हेभगवान तुम कैसेहो

तोड़ कर और घर को त्यागकर नारायण के चरन
कमलों मै चित्त जोड़ कर वलकल जो मुरज पत्र और
दंड कमंडिल इत्यादि धारन करके चल पड़ते भये॥ ३८॥
वरदराज मंदिर मै जाई॥ आगे धरो साज समुदाई॥
सानुराग जुग पानन जोरी॥ लाग करन मुखविनय
वहोरी॥ हे उदार हे कमल विलोचन॥ कमलाकांत
भक्त दुख मोचन॥ हे अनन्त हे ~~कमल~~ संतन हैया॥
धरनि धेनु सुर त्रास हरैया॥ हे मुकुंद हे त्रिभुवन रा
ऊ॥ जो तुमार अनुसासन पाऊं॥ धारहुं तो त्रिदंड कल
एहीं॥ जो निवाहु तुव दीन सनेही॥ जनकर गिरा
सुनत मन भाई॥ वोले प्रभु प्रतक्ष मुसकाई॥ भक्त
प्रधान हरषि मन माहीं॥ जाहु अनन्त सरोवर काहीं॥
मोर अनन्य दास समुदाये॥ निवसत ~~तहां~~ तहां भक्ति
सुख पाये॥ तिन सों संजुत प्रीति मिताई॥ करहु त्रिदंड
ग्रहण द्रुत जाई॥ रामानुज सुनि भगवन वानी॥
भयो आज प्रभु जन जीय जानी॥ सो समात उर आ
नंद नाहीं॥ गयो अनन्त सरोवर काहीं॥ तहं विलो
कि हरिदास सुहाये॥ कियो प्रणाम धरनि सिर नाये॥
वहुरि नेम मन हरष प्रवीने॥ जामुना जे पद वंदन
कीने॥ सविधि सुसंतन कृपा उदंडा॥ हरषि कीन
कल ग्रहण त्रिदंडा॥ तवतें रामानुज मति धामा॥
भये विदित जग जतिवर नामा॥ दोहा॥ सानुकूल अ
मराय तव गगन दुंदभी पूरि॥ कीनसि नाना अम
ल कल सुमन वृष्टि ~~और~~ अति भूरि॥ ॥ ३९॥ टीका॥
तव रामानुज जी ने वरदराज भगवान के भवन मै
जायकर दंड कमंडिलादि समाज जो था सो सव
दीनानाथ के आगे रख दिया और आप दोनो हाथ जो
ड़कर के विनती करने लगे कि हे उदार हे कमल नैन
हे लक्ष्मी कांत हे ~~सम्व~~ सरव कलेशों के हरने वाले
कृपानिधान हे अनन्त हे संत सहायक हे गोव्राह्मण

दोहा॥ अब आगल इतिहास कल रामानुज कर आन
करहुं कथन सादिर वदन हरन भीत भ्रम मान॥ चौपा
ई॥ कांची नगर निकट मन भावा॥ पूर्व दिसा इक ग्रा
म सुहावा॥ तहं अनन्त दीक्षित अभिरामा॥ रह्यो एक
दुजवर मतिधामा॥ जतिवर भगनि पुत्र गुण गेहू॥ सु
चि सुधरम रत सील सनेहू॥ तासु पुत्र विद्या गुण सा
गर॥ दास रथी अस नाम उजागर॥ मन बच करम
भक्त भगवाना॥ विगत विकार मार अभिमाना॥ सो सु
नि मातुल भक्त उदंई॥ अमल आचारज गृहित वि
दंई॥ आवा भक्ति प्रीति सरसाये॥ लखि भैने मातुल
हरषा॥ कियो समास्रय सुत सम जाने॥ विपुल ग्रंथ
सत पंथ पठाने॥ रह्योसि तहां एक दुज आना॥ गुण
गार धीमान सुजाना॥ ताके एक आतम जभावा॥ जहि
कूरेस नाम जग गावा॥ श्रीपति भक्ति निरत व्रत धारी॥
सेवक संत सरव हित कारी॥ सो आयो कांची पुरि माहीं॥
हरष्यो लखि रामानुज काहीं॥ दोहा॥ करि प्रणाम सि
ष सो भयो विधि जुत पूरित प्रीति॥ पढे सास्त्र
विद्या विमल विविध ग्रंथ गुण नीति॥ १॥ टीका॥ ना
भादास जी कहते हैं कि हे संत जनो एक गाथा रामा
नुजकी मै कथन कर चुका हूं अब तिसकी दूसरी गा
थाँ जो है सो सनमान पूर्वक आपके आगे कथन कर
ता हूं "कहते हैं कि कांची पुरी के पास पूर्व दिसा की ओर
एक बड़ा रमणीक ग्राम था तहां अतसे विचारमा
न और बुद्धी का धाम एक ब्रह्मण होता भया सो ज
तिवर की भगनी अर्थात भैन के पुत्र का पुत्र विद्या
और गुणों मै प्रवीन दासरथी नाम करके उजागर
था और मन वचन काया कर के भगवान का भक्त
से पूर्ण विषय विकारों से रहित था सो अपने पिता
के मामे का विदंड ग्रहण करना और विद्या भक्ती का
प्रभाव सुनकर बड़ी प्रीती भक्ती वाला होकर तहां
जतीवर जी के पास आवता भया तब तिसको देख

रामानुजी बडे प्रसन्न भये और पुत्र समान जानकर
वडी प्रीती अपना शिष्य विनाय लिया फिर वडी प्रीती
सनमानसे बडे बडे उत्तम ग्रन्थ जो थे सो सब पढाय दिये
तब तहां एक ब्रह्मण बडा गुणमान और वुद्धी का धाम
अतेसे चतुर था तिसका पुत्र परम ब्रतधारी और
भगवान भक्ती मै निरन्तर करके लीन संतजनोकासे व
क सरव जीवों का हित कारी और कूरेस नाम करके
प्रसिद्ध जो था सो भी कांची नगरी मै चला आ
वता भया तहां रामानुजजी को देखकर बडे हरषसे
चरनोंपर सीस नाय कर फिर भक्ती प्रीतीसे तिनका शि
ष्य वन गया और थोडे हि कालमे गुरुजी की कृपासे
बडे महान ग्रंथों को पढकर विद्या गुणनीतीमे भली
प्रकार प्रवीन हो गया ॥२॥ चौपाई॥ दासरथी कूरेस
सुजाना॥ वै सव निरत ज्ञान विज्ञाना॥ अति सुशी
ल सिष जुगल उदारे॥ जति पति कहं प्राणन ते प्यारे॥
गुरु समीप निवसत दिन राती॥ सेवन जजन जुक्ती
सव भाती॥ समय एक जादव कर माता॥ जति वरक
हं देखो मग जाता॥ उर्ध पुंड्र जहि लसत सिला
रू॥ संख चक्र चिन्हत भुज चारू॥ भानु समान भा
स चहुं घाहीं॥ पट कलाय सोहत तन माहीं॥ गहित
मेरु पद पानि त्रिदंडू॥ रतिसिय पिय पद पदम अखंडू॥
अस प्रकार लखि जादव माई॥ मनहि प्रणाम कियो
हरषाई॥ आई लौटि भवन निज माहीं॥ कह्यो मरम
सव जादव काहीं॥ रामानुज संग वैर वढायो॥ निज अ
पवाद विश्व विथुरायो॥ अव तासों तजिये रिपुताई॥
सव विधि तात वात सुखदाई॥ इहि विकुंठतें हरि पठ
वायो। जी उधरन हेतु जग आयो॥ दोहा॥ सत्य शेष
अवतार इह सुत संशय कछु नाहिं॥ कहिहैं अवसि
प्रचलित जग सुचि वै स्रव मत काहि॥२॥ टीका॥ तव
दासरथी और कूरेस दोनो परम ज्ञान वज्ञान मे
प्रवीन और जति पति जी के प्राणों से भी प्यारे थे सो

सो जौ दिन गुरु जी के पास हीं निवास करते और ति
नके पूजन सेवन मै भली प्रकार लीन रहते तब ए
क समय जादव की माता रामानुज जी को कहीं र
स्ते मै आवते हुये किस प्रकार देखती भई कि जिन के
मस्तक मै उर्ध्व पुंड्र कि जो रामानंदी तिलक कहे सो सोभ
जा हुआ और भुजों मै संख चक्र आदि बडे सुंदर चि
न्ह जो हैं सो लगे हुये और कषाय अर्थात गेरु के
रंगे हुये निरमल वस्त्र और परम आनंद दायक हाथ
मै गृहन किये हुये त्रिदंड मानो सूरज के समान नख
सिख एक प्रकाश के पुंज हैं और भगवान के चरन क
मलों मै अखंड जिन की प्रीती थी इस प्रकार भक्त प्रधा
न रामानुज जी को जादव की जननी देखकर बडे ह
रष के वश भई हुई मन मै हीं प्रणाम करके अपने
घर को चली आई॥ और घर मै आय कर जादो के सा
थ सब वृतांत सुनाय दिया फिर कहने लगी कि हे पुत्र
तेरी इह क्या चतुराई है जो रामानुज जी के साथ वैर
बांध कर सब जगत मै अपना अपजस करवाय लि
या है अब योग्य है कि तिन से वैर भाव त्याग करके
अपनाई करो तो हे पुत्र इस मै तुमारी सरव प्रकार कर
के भलाई और कल्यान [illegible] होवेगी तु मन हीं जा
नते हो कि इन को भगवान ने [illegible] बैकुंठ से इहां पृथ
वी तल पर जीवों के उद्धार करने के वासते भेजा है
इह तो सत्य करके (धरनधारी) शेषजी का अवतार हैं ज
गत मै अधर्म का नास करके [illegible] सुधरम के सहित वै
ष्णव मत को भली प्रकार उदय करेंगे॥२॥ चौपाई॥
वैष्णव मत सुंदर संसारा॥ श्रीपति कहे अति मान
स प्यारा॥ कौन न विष्णु भक्ति जग जेही॥ दीन्यो वृ
था जनम विधि तेही॥ पठिन श्रवण गुण विद्या चर
ना॥ बिनु हरि भक्ति वृथा श्रम करना॥ शोभित ज
था न मृतक शरीरा॥ सुमन सुगंधि अभरन चीरा॥
कोंची पूरन लों विदाना॥ निरत ज्ञान विज्ञान [illegible]॥

कि चंद्रमा के समान मुखकी शोभा वाले और
तेंदवे का ग्रसा हुआ गजराज जो था तिसकी पुकार सु
नने वाले और सभामें द्रोपदी की पैज राखने वाले प्र
ल्हाद आदी संत भक्तों ~~के सहाय करता तुमहीं बने हो~~
की सहायता करने वाले भी तुमहीं हो जै हो तुमारी
हे गोतुम की स्त्री को तारने हारे हे देवता और मुनियों
के मन को मोहित करने वाले हे कमलों वत नेत्रों की
शोभा वाले जै हो तुमारी हे तुलसी की माला के धारने
वाले हे त्रिभंगी हे सुंदर अंगो वाले हे मोर मुकट
धारी जै हो तुमारी हे कानो मे मकराकृत कुंडलों
के धारने वाले हे पीत जग्युपवीत वाले हे मुरारी हे
संख चक्र गदा पदम धारी इस प्रकार जब रामानु
ज जी ने भगवान भक्त सुखदान की अस्तुती करी तब दी
नबंधू ने प्रसन्न होय जतीवर नाम जो है सोई दान क
र दिया ऐसे भगवान कृपानिधान का प्रसाद पायकर
जतीवर जी अभय और निरमल चित होय कर
के तहां भगवान के चरनो के पास ही बास करने ल
गे और नित्य रात्रीदिन संत जनों के आदर सतकार
मे और भगवान के पूजन सेवन मे ही लीन हो
कर काल वतीत करते भये नाभादास जी कहते है कि
हे गुरू महाराज इस प्रकार इह रामानुज का चरित्र
जो है सो मैने जैसा कि तुच्छ मती के अनुसार हो सका
आपके आगे गायन कर दिया है जो इसको श्रद्धापूर्वक
पढैं सुनेंगे सो भगवान की कृपा से दुख दारिद्रों छूटकर
संसार मे भगवान की भक्ती को प्रापत करेंगे इति श्री
भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्तो की महातमे भाषाटीकायां रा
मानुज चरित बरनने नाम सरग ९

अथ रामानुज अन्य चरिते

वेदन योग्य हीं हैं परन्तु हे जननी मेरे हृदयमे एक इ
हे लालसा है कि प्रथम जायकरके संपूर्ण पृथ्वीकी
प्रदक्षणा करूं और फिर आयकरके रामानुज जीका
दरस पाऊं ॥३॥ चौपाई ॥ तव नदेस जति वर सुखदाई ॥
राख हु जननि सीस हरषाई ॥ सुनि जननी अस वचन
अलाई ॥ अवलो सुत नजात जढताई ॥ भूप्रदक्षणा ते
जग माहीं ॥ जति पति न्यून प्रदक्षणा नाहीं ॥ परि हरि ता
त मनोरथ दूजे ॥ रामानुज सरणागत हूजे ॥ जादव ज
ननि वचन वस प्याना ॥ कीन्यो हृदय राखि अभिमाना ॥
रामानुज कहें जाय निहारा ॥ जथा इंदु उडुगन परिवा
रा ॥ सिष समाज सोभित चहुं पासा ॥ अरु सुरगण सु
र गुरु जिमि भासा ॥ तव जादव अस प्रकटउ चारा ॥ सु
न रामानुज वचन हमारा ॥ उर्ध पुंड जोई मस्तिक दीना ॥
सेख चक्र कस धारन कीना ॥ निराकार निरगुण भग
वाना ॥ भयो सगुन कस करहु वखाना ॥ जादव कथन
सुनत अस काना ॥ रामानुज प्रमोद सुख माना ॥ तव
कूरेस कहें सासन दीना ॥ देहु उत्र तुव प्रस्न प्रवीना ॥
गुरु आज्ञापत कूरेस सुजाना ॥ लै संमति स्रुति शास्त्र
पुराना ॥ दै दै वेद प्रमाण अनेका ॥ हरयो सकल जा
दव कैर टीका ॥ दोहा ॥ सुनत कथन कूरेस अस अ
ति अचरज वस होय ॥ जादव गवने भवन निज क
रत सोच निसि खोय ॥४॥ टीका ॥ जादव कहता है कि हे
जननी जव मै इस प्रकार पृथ्वीकी प्रदक्षणा करके ति
नके पास आऊंगा तो फिर जिस प्रकार रामानुज जीकी
आज्ञा होगी सोमै सीस पर धारन करूंगा ऐसे जादव
का कथन सुनकर मांता कहने लगी कि हे पुत्र अवी
तक तुमारी जढता जो है सो नहीं जाती देखो तिस पृथ
वीकी प्रदक्षणा तें ■ इह जति वर जी की प्रदक्षणा कु
छ ँ यह नहीं है मै तुमको वारवार कहती हूं कि और स
व कीआशाको छोड कर एक रामानुज जीकी शरणा
गत को प्राप्त हो जावो हे पुत्र इसीमे तुमारी ■■ भलाई है

ऽजिय

८ यतिराज चरित्र

इसप्रकार माताके वचन सुनकर जादव जो है सो हृ
य मे अभिमान राखकर घरसे चलपडता भया और
इहां आयकर के रामानुज जी को कैसे देखता भया कि
जैसे चंद्रमाकी चारो ओर तारों का ~~परिवार~~ घेरा पडा
हुआ होता है तैसे ही शिष्यों करके परिवारत भये हुये
भक्तप्रधान रामानुजजी वडीभे दर शोभाको उदय कररहे
है फिर कैसे हैं कि मानो जैसे देवतों के समाज के बीच
गुरू ब्रहस्पतीजी विराजे हूये छबी पावते हैं। तब जाद
व अभिमानी जो तहां सेवत सभाके बीच जाताहीं कहने
लगा कि हे रामानुज इह जो तैनें उर्धपुंड्र मस्तक मे
तिलक दिया और संख चक्रादि चन्हों करके भुजों को
चिन्हत किया सो क्यों किया भला इह तो कहो कि निरा
कार और निरगुण भगवान जो था सो सगुन क्यों कर
भया है असे जादव का कथन सुनकर के रामानुजजी
हृदय वडा आनंद और सुख मानकर कूरेसजीको आ
ज्ञा देते भये कि तुम इनके प्रश्न का उत्तर देवो तब गुरू
जी की आज्ञा पायकर के कूरेसजी जो हैं सो शास्त्र और
स्म्रुति पुराणों के अनुसार वेदके प्रमाण दे दे करके जा
दव के हृदय के संदेह को भलीप्रकार निवारण करदे
ते भये इसप्रकार कूरेसके कथनको सुनकर जाद
व अभिमानी वडे आचर्ज को प्रापत ~~होकर~~ भया हुआ
उठकरके अपने घरको चला ~~जाता~~ गया तहां सारी
रात सोच मे ही वतीत होती भई ॥४॥ प्रातकाल निद्रा
कछु लागी॥ वदराज सपने कहि वानी॥ हे जादव
अबलों तुव का हीं॥ सुजि पसो मानस कछु नाहीं॥ ति
सो नु लीने रामानुज सरना॥ तोहि नआन सिंधु भवत
रना॥ देखि सपन जादव अंसा॥ चौकि उठा सम
भ्रम अकुलाता॥ मोरे हेतु हरन दुख कीना॥ जो इह सपन
प्रबोधन कीना॥ अब उद्धार कवन विधि होई॥ करत वि
चार मनहिं मन सोई॥ उत प्रातहिं जादव महतारी॥

ह

प्रकार के नाम प्रकार

भै

चौपाई

दी

२८४

284

गवनी कूप भरन हित कारी ॥ तहि मग संजुत शिषन सु
होये ॥ जतिपति हरि पूजन हित जाये ॥ देखि जननि
जादव अनुरागी ॥ हृदय विचर करन निज लागी ॥ रा
मानुज द्युति भानु समाना ॥ आगम निगम निपुण धा
मा ॥ मन वच करम भक्त जदुराई ॥ मम सुत कुमति क
रत जडताई ॥ राखत द्वेष भाव तहि संगा ॥ तहि क
ल्यान कर कवन प्रसंगा ॥ दोहा ॥ जो सुत परिह
रि द्वेष हठ रामानुज शिष होय ॥ तो कल्यान तरहु क
लप सम करहिं सुजस सव कोय ॥ ५ ॥ तव जादव को
प्रातःकाल होते कुछ निद्रा जो आय गई तो वरदराज भग
वान सपने मे कहने लगे कि हे जादव अव तक तेरे को कु
छ सूझ नहीं पड़ा जो रामानुज की शरन लिये विना इस
संसार रूपी समुद्र का तरना वड़ा कठिन है इस प्रकार जा
दव प्रातःकाल ... मे सपन देख कर वड़ी भ्रामिक वृती
वाला होकर आचर्ज के वश भया हुआ इधर उधर देख
ने लगा और मन मे कहता है कि मेरे वास्ते जो दीनो के
दुख हरने वाले भगवान कृपानिधान ने इह सपन प्रवो
धन किया है सो अव उद्धार किस प्रकार होवे और कौन
उपाय किया जावे ऐसे हे जादव इह विचार करते हैं और
उहां प्रातःकाल ही जादव की माता जल भरने के
वास्ते कूये को जो चली जाती थी तो तिसी रस्ते से
शिष्यों का समूह साथ लिये हूये जतीवर भी भग
वान के पूजन करने के वास्ते चले आये तव ति
नको जादव की जननी देख कर के हृदय मे वड़े ह
रष और आनंद को प्रापत भई और विचार क
रने लगी कि देखो इह रामानुज जी सूरज के समा
न वड़े तेजधारी वेद पुराणों के ज्ञाता और गुणों के
धाम मन वचन करम करके भगवान के दृढ भक्त हैं
और मेरा पुत्र खोटी वुद्धी वाला कैसी जडता के वश
भया है जो इन के साथ द्वेषभाव राखता है और इ
नकी प्रभुताई के प्रभाव को नहीं जानता है तिसकी

ते रामानुजकर समुदाई॥ नाना धन्य वाद मुख गाई॥ ल
खि आचार सार सुखदाना॥ पूजहि भक्ति प्रीति सनमाना॥
तौते तुमहूं द्वेष सुत त्यागी॥ लेहु शरण जतिपति बड
भागी॥ जादव मातु वचन सुनि नीके॥ बोल्यो अमयमो
द भरि जीके॥ कहिस सत्य जननी तुव बानी॥ मोरे हू
उर भई गिलानी॥ अग्र अन्य आचार ज भाये॥ शेषरूप
रामानुज गाये॥ ताहि तुल्य संसार न दूजा॥ जेहि जोग
जगवंदन पूजा॥ दोहा॥ यमोरे मानस रह्यो मातु लाल
साएहु॥ भूषदतरण पृणमदे पुनि गवनहु ढिग तेहु॥३॥
टीका॥ फिर माता कहने लगी कि हे पुत्र इह जगत मे सुं
दर वैस्नव मत जो है सो भगवान को अति करके प्यार है जो
ब्राह्मण होकरके विस्नु भक्ती मे लीन नहीं भया तिसको
विधाताने जगत मे बिरथाही जनम दिया है पढना सुनना
विद्या गुण चतुराई इत्यादि जो हैं सो हरी भक्ती के बिना
किसे अर्थ भी नहीं है केवल श्रम ही है जैसे मरे हुये पु
रुष के भूषण वस्त्र पुष्प सुगंधी सजाने से कुछ शोभा
नहीं होती है तैसे ही भगवान की भक्ती के बिना विद्या गु
ण चतुराई शोभा नहीं पावती है देखो कांची पुरन
से लेकर बडे बडे विद्वान जो ज्ञान विज्ञान के जानने वा
ले हैं सो सब रामानुज जी का नाना प्रकार करके मुख से
धन्य वाद गायन करते हैं तिनके आचार को सार जान
कर परम प्रीती और भक्ती से सब सेवन करते हैं तौते
हे पुत्र तुम भी द्वेष को त्याग करके महाउदार भगवान
के प्यारे भक्त जतीवर रामानुज जी जो हैं तिनकी शरण
को प्राप्त हो जावो इस प्रकार माता के मुख से वचन सु
नकर जादव अमय होकर बडे आनंद से कहने लगे कि
हे माता तैने सब सत्य ही कहा है इसमे कुछ संशय न
हीं है मेरे चित्त मे भी इस बातों की अत्यंत गिलानी उ
पजी है क्योंकि संपूर्ण आचार्जों मे प्रधान रामानुज
जी साक्षात शेषनाग जी का अवतार प्रसिद्ध हैं तिनके
समान और दूसरा कोई नहीं है सो सत्य करके जगत मे

जगगाये॥ चूकनिवरणजनन सुखदाये॥ अब उद्धारप्र
भु तुम बिनु नाहीं॥ मै जान्यो निश्चय मन माहीं॥ तुम हु ना
थ जन संसृति हेरे॥ करनधार भव सागर केरे॥ ग्रसत अ
वर म्यावन दुख मोऊ॥ तुव अबलंब आन नहिं कोऊ॥
कीजै नाथ पार बिन बेरी॥ दशा देखि आरत असमेरी॥ अ
स कहि परयो चरन अकुलाई॥ जतिपति जीय दाया सरसाई॥
मन्यो वचन सुन जादवधीरा॥ तुव दुख हरहिं अवसि जदु
बीरा॥ उठहु सकल संदेह बिहाई॥ भजहु कृष्ण दीनन सु
खदाई॥ उठि जादव जुग पानन जोरी॥ बोल्यो नाथ बिन
य अस मोरी॥ मोहि कीजै भगवन अपनाई॥ पाच हु संसका
र करवाई॥ बूडत बिकट उदधि संसारा॥ अैंचि लेहु तुव
दीन उबारा॥ दोहा॥ तब रामानुज सुदिन गुनि संत स
माज जुराय॥ जादव को बिधि जुत सकल संसकार करवाय॥
८॥ टीका॥ जादव कहता है कि हे नाथ तुम जो हो
सो संसारी जीवों का उद्धार करने वाले हे मेरे से जो अप
राध भया है सो क्षमा करिये क्योंकि संत जन सदैव उदार
चित ~~हैं~~ होते हैं और जनो की भूल चूक निवारने को सा
मर्थ सरब सुखदाय कहोते हैं हे दीनानाथ अब मेरा उ
द्धार आप के हाथ है मैं ने निश्चय करके जान लिया
है कि तुम ही इस संसार समुद्र के करनधार अर्थात
मलाह हो तो मै इस महान समुद्र के चुम्मन ये
रे मै फसा हूआ परम दुखी होरहा हू और आप के बि
ना इसके तरने को और कोई आश्रय देखन नहीं पड
ता है सो आप कृपा करके अब विलंब नहीं करिये
मेरे को परम दुखी जानकर इस संसार समुद्र से वे
ग पार उतारिये ऐसे कहिकर के फिर चरनो मे लिप
ट गया ऐसे तिसकी दशा देखकर जतिवर जी के
हृदय मे दया जो व्यापत होगई तो कहने लगे कि
हे धीरज के धाम जादव तुमारा दुख जो है सो कृष्ण
प्रमात्मा ~~दूर करेंगे~~ अवश्य करके हरेंगे अब उठो

अ

जो कि मन्ना है

कल्यान मैं कैसे बचाऊंगी अब जो इह द्वेष भावको त्याग कर रामानुज जीका शिष्य होजावे तो इह सुंदर कल्प वृक्षको पायकर और कल्यानके सहित होयकर जगतमैं सुख और सुजसका पात्र होजावै ॥५॥ चौपाई ॥ गुनत जननि अस भवन सिधारी ॥ रामानुज कहं लिये हकारी ॥ हित जुत भनत वचन अस माता ॥ होहु जाय सिष्य जति पति ताता ॥ मोक्ष उपाय सुगम सुनत एहू ॥ लेहु सरन रामानुज नेहू ॥ होहिं सहज जदु नेदन मेरा ॥ आवागौन मिटहिं तुव बेरा ॥ जादव सुनत मातु कृत वाना ॥ हरि प्रबोध कृत सपन बखाना ॥ पै नहिं मिट्यो तास संदेहू ॥ कियो न रामानुज पद नेहू ॥ संसय समन न समय इकतेहा ॥ गवन्यो कांची पूरन गेहा ॥ करि प्रनाम अस बदन उचारा ॥ दीननाथ संशय मोहि भारा ॥ सो पितु मातु भ्रम भ्यावन छाई ॥ हरिय मंत्र उपदेस सुनाई ॥ तुमहु जो गज गजनन सहाया ॥ हरहु नाथ संशय करि दाया ॥ धौं प्रभु वरदराज ढिग जाई ॥ विनय मोर अस देहु सुनाई ॥ जन कल्यान कवन विधि होई ॥ देहिं देव सासन करहिं जिमि सोई ॥ दोहा ॥ सो मैं हित जुत जानि जिये लेहु सीस निजधारि ॥ कांची पूरन सुनत अस चले तुरंत सिधारि ॥ ६ ॥ टीका ॥ इस प्रकार जादव की माता विचार करती हुई अपने घर को चली आई तहां आय कर अम्मा और जादवको पास बुलाय करके बडे हित प्यार से कहने लगी कि हे पुत्र मेरी आज्ञा मानकर और जायकर प्रीती भक्ती से रामानुज जीके शिष्य बनो तिनकी शरनि जो है सो सहजेही मोक्षका उपाय है हे तात इससे तुमारी सरव प्रकार करके भलाई होगी और जगत आवागौन अर्थात जनम मरन छूटकर कृष्ण प्रमातमाके साथ मिलाप होजावेगा इस प्रकार माता के मुखसे परम सुखदायं ज्ञानभी सुना और वरदराज भगवानका सपने मैं प्रबोध करनाभी जननी को सुनाय दिया तद्यपि

तिस के हृदय का द्वेष नहीं छूटा और ना संदेह मिटै ~~तम~~
~~स~~ ना रामानुज जी के चरनों मे भक्ती प्रीती भई तब एक
समय हृदय का संशय निवारणे के वासते सो जादव कांची
पूरन जी के घर मे चला गया तहां प्रणाम करके कांची
पूरन जी के आगे बिनती करने लगा कि हे दीनदयाल मेरे
हृदय मे ~~[illegible]~~ बड़ा भारी संशय उतपन्न भया है सो आप
अनुग्रह करके ~~मेरे इस पिसाचरूपी संशय को उपदेश~~
~~रूप मंत्र सुनाय सुनाय करके निवारण कीजिये~~ इस भ्रमरू
पी पिसाच की छाया को ~~उपदे~~ मंत्ररूपी उपदेश सुनाय कर
मेरे हृदय से निवारण करिये हे भगवन ऐसे भ्रमभूत के
दूर करने को तुमही सामर्थ हो अथवा वरदराज भग
वान के आगे जाय कर इस भ्रम के निमित्त मेरी प्रार्थना
करो कि हे दीनानाथ अब मेरी कल्यान किस प्रकार होवेगी इसमे
जिस प्रकार कृपासिंधु की आज्ञा हो मैं सोई हित मानकर
सीस पर धारन करूंगा तब कांचीपूरन जी तिसका क
थन सुनकर के तुरत वरदराज भगवान के भवन को चले
गये ॥६॥ चौपाई ॥ वरदराज भगवन पैं आई ॥ जादव
की सब विनय सुनाई ॥ तब प्रसन्न बोले भगवाना ॥ कां
ची पूरन सुनहु सुजाना ॥ तुमहू वेग जादव ढिग जा
ई ॥ मोर कथन अस देहु सुनाई ॥ बिनु लीने रामानु
ज सरना ॥ तोहि अगम भव वारद तरना ॥ दीन सपन
मे कारन एही ॥ तुमहू भयो विस्वास न तेही ॥ अबहू भ
लो बिगरयो कछु नाहीं ॥ गिरै जाय जति पति पद माहीं ॥
जो दुरलभ मानुष ~~व~~ वपु धरई ॥ संसृति मोक्ष उपाय
न करई ॥ ते कूकर सूकर सम मूढा ॥ दुरमति दुष्ट दुरत
रत गूढा ॥ कांचीपूरन हरि अनुसासा ॥ लिये आय दूत
जादव पासा ॥ मन्यो नाम निज चाहुन जोई ॥ तो जतिप
ति सरणागत होई ॥ वरदराज प्रभु सासन एहू ॥ हित
जुत कीन कथन तोहि नेहू ॥ जादव सुनि सासन भ
गवाना ॥ भयो विगत संशय अभिमाना ॥ दोहा ॥

त्रतिपति सरन सिधारकै परयो चरन गति दीन॥ त्राहि त्राहि नम्रतविनय वहत दृगन जलकीन॥७॥ टीका॥ तब कांचीपूरन जी वरदराज भगवान के भवन मैं आय कर जादव की विनती सब सुनाय देते भये इस प्रकार सुनकरके भगवान कृपानिधान प्रसन्न कहने लगे कि हे कांचीपूरन अब तुम जादव के पास जायकर मेरा इह कथन प्रकार करके सुनाय देवो क रामानुज के चरनोकी सरन लेने के विना तुमको इह संसार समुद्र जो है सो तरना वड़ा कठिन है इसी निमित्त मैं ने पहिले हीं स्वपनमै समझाय दिया था सोतिसको विस्वास न हो आया ~~...~~ वना हुआ है कुछ अब भी सब भला ही है कुछ विगड़ा नहीं है जायकरके रामानुज जी के चरनोपर गिर पड़े क्योंकि जो पुरष वड़े दुरलभ मानुष्य शरीर को धारकर जगत मे मो दीका उपाय ना करे सो कूकर जो कुत्ता और सूकर जो सूर है तिसके समान पशू हीं जानो और भी महा मूढ दुष्ट दुरवुद्धी पापी और अभागी होता है ऐसे कांचीपूरन जी भगवान की आज्ञा पाय कर ततका लहीं जादव के पास चले आवते भये और कहने लगे कि हे जादव जो अपना नास नहीं चहता तो शीघ्र हीं रामानुज की शरनागत हो जा मैने वड़े हित के सहित इह वरदराज भगवान की आज्ञा जो है सो तेरे को कथन करके सुनाय दई है तव इस प्रकार जादव भगवान की आज्ञा सुनकर सरव संशय और अभिमान से निवृत्त हो ~~...~~ कर रामा नुज जी ~~...~~ के पास आय करके और दीन होय कर के त्राहि त्राहि कहता हुआ चरनोपर गिर पड़ा ~~...~~॥ ~~...~~॥ और नेत्रों से प्रेम रूपी जल वहाय करके वड़ी कोमल वानी से विनती करने लगा॥७॥ चौपाई॥ तुव उद्धार करन संसारा॥ क्षमहु नाथ अपराध हमारा॥ सदा उदार संत

मानुजजी आज्ञा देते भये कि हे गोविंददास तुमने जा
त मे अपने मुख करके वे सब जनों की निंदा अपकीरती
की हुई है तो ते तिस अपराध के मिटावने के वास्ते अब
तुम सुंदर वे सब ग्रंथ जो है सो रचो ऐसे सुन कर
जादव गुरू जी के चरनो को प्रणाम करके और हृदय मे कृ
स्न प्रमात्मा का सुमरण करके विशुद्ध निरमल विचार से
स्मृती पुराण और वेद के
प्रमान लैलै कर सब ग्रंथों का सिरोमणी ग्रंथ जो है
सो रच देते भये और जती धरम तिसका नाम प्रसिद्ध
करके फिर ल्याय कर और गुरू जी के सनमुख बैठ कर
बडी प्रीती भक्ती से गायन करके सब सुनाय दिया
तिस ग्रंथ मे विदे
ह सन्यास के धारने की विधी जो है सो वशीकरकरके कही
हुई थी रामानुजजी
सुन करके हृदय मे अत्यंत ही प्रसन्न भये और
वारंवार सलाजा करके जो कहीं कुछ भूल चूक दे
ख पडी सो कृपा करके सुधार दई तब
जादव कि जो अब गोविंददास जी प्रसिद्ध हैं गुरू जती
वर जी के चरनो मे निवास करके तिन की भक्ती सेवन मे रा
त्री दिन लीन रहते भये इस प्रकार जब कुछ समय व
तीत होय गया तब जादव जो हैं सो श्री राधा रमन भ
गवान को सुमरते हुए गुरू जी की कृपा के प्रसाद
से मुनी जोगी जनो को दुरलभ जो विस्नुधाम है ति
स को आनंद पूर्वक चले जाते भये ॥ ८ ॥ चौपाई ॥
देखहु संत महंत गया नी ॥ हरि महिमा काहु जा
य न जानी ॥ किये विचार पार नहिं पाई ॥ इहि विधि

गुरु महाराज की सिवकाई का सुख लेते होते

जनन निज लेत बचाई ॥ सो जादव है दूसर नाहीं ॥ पढत रहे रामानुज जाहीं ॥ हतन चहेउ करि जतन बसेखे ॥ अहिं सोऊ जादव तुम देखे ॥ वे स्रब मत निंदरत जगमाहीं ॥ जहिं रामानुज देखि डराहीं ॥ सोऊ विदित जादव गहि सरना ॥ धारि सीस जति पति रज चरना ॥ गुरु प्रसाद जग कीरति पाई ॥ गयो बैकुंठ निसान बजाई ॥ तब रामानुज धरम प्रवीना ॥ कृस्न मंदिर निसवासर लीना ॥ कांचीपुरि बसि सानंद रागे ॥ सिषगन रुचिर पढावन लागे ॥ रंग नगर उत संत सवाहीं ॥ जामुन विरहे दुखित मन माहीं ॥ विद्या वेद पढावहिं जोई ॥ देखि न परहिं अचारज कोई ॥ रंग नगर तब संत महंता ॥ रामानुज दरसन रति वंता ॥ आये रंग नाथ प्रभु द्वारा ॥ बारंबार अस विनय उचारा ॥ जो हम कहें नुव दीन सनेहू ॥ करन कृतारथ संप्रति येह ॥ दोहा ॥ बोलि लेहु तव कृपा जुत रंग नगर कल माहिं ॥ भक्त प्रधान सुज्ञान घन जन रामानुज काहिं ॥ १० ॥ टीका ॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे ज्ञान की निधी सब संत महंतो देखिये इस भगवान की अगाध महिमा कुछ जानी नहीं जाती है विचार किये से कुछ पार नहीं पाया जाता है इस दीन बंधु स्रपने जन को कैसे बचाय लेते हैं देखो सोई जादव है कोई दूसरा नहीं कि जिसके पास रामानुज जी पढते रहे हैं और सोई जादव है कि जो रामानुज जी के मारने के वास्ते अनेक जतन करता रहा और वे सबों परम द्रोही अर्थात निंदक कि जिससे रामानुज जी डरते हुये भागते थे अब सोई जादव गुरु रामानुज जी के चरनो की धूरि को सीस पर धारन करके तिनकी कृपा के प्रसाद से जगत मे सुभ कीरति और सुखे सुजस का पात्र होकर के निसान अर्थात बाजे बजाता हुआ बैकुंठ धाम को चला गया तांते है संतो इस पर मेस्वर की बड़ी बचित्र है तिसके जानने को कोई भी सामर्थ नहीं है तब भक्त प्रधान और सर्व गुन निधान रामानुज जी कृस्न भगवान की मे रात्री दिन लीन कांचीपुरी मे निवास करके शिष्य समूह जो हैं तिनको रुची और प्रीपूर्वक पढावने लगे और तिस समय उहां रंग नगर मे संपूर्ण वै स्नव जामुनाचारी

(margin notes: और; को; माया; परमश्रवीन; रुचि; जन; मये हुये)

जी की विरहे करके व्याकुल भये हुये कहते हैं कि हमा
रा कैसे निरवाह होगा जो ई हां वेद विद्या पढावने के वा
स्ते कोई आचारज नहीं देख पड़ता है रंग नगर के
सब संत महंत जो हैं सो रामानुज जी के दरसन की अ
भिलाखा वाले होरहे थे तब संपूर्ण मिल करके रंगना
थ भगवान के भवन मै आयकर प्रार्थना करने लगे
कि हे दीन हित कारी मुरारी भगवान जो तुम हम को अप
नी कृपा से संसार मै कृतार्थ [illegible] करना चहते हो तो हे
भगवन तिस अपने भक्त परम व्रत धारी और ज्ञान गुन
प्रधान रामानुज जी ई हां रंग नगर मै वेग बुलाय लेवो
[illegible] तिन के आने से ई हां सर जीवों की भलाई और कल्यान
हो जावेगी ॥२०॥ चौपाई ॥ विनय करत अस संत समाजू ॥
बैठि द्वार मंदिर सुरराजू ॥ रंगनाथ सुमरण निसि लीनो ॥
तब जगधीस स्वपन अस दीनो ॥ मम सेज्यासन निकट सु
हाती ॥ लिखो मोर कलकरन सु पाती ॥ कांची वरदराज पे
सोई ॥ पठ हो वेग प्रात दुज होई ॥ अस प्रकार निसि
स्वपन निहारी ॥ भोर हि उठि संत दुज झारी ॥ देख्यो सेज्यासन
ढिग जाई ॥ परी हरीकर पत्रिक पाई ॥ सासन स्वपन जानि
निसि सांची ॥ पठई ते दुज कर द्रुत कांची ॥ वरदराज ढिग
सो दुज आयो ॥ करि परणाम निज नाम सुनायो ॥ रंगना
थ पत्रिक पुनि दीनी ॥ हरषत वरदराज जब लीनी ॥
रामानुज जाचना सुहाई ॥ वरदराज वाचित अकुला
ई ॥ जामनि लिख्यो उच प्रभु एही ॥ रामानुज मम परम
सनेही ॥ वन हि देत जाचन सब आना ॥ दिये
न जाहिं नाथ वै प्राना ॥ कहि प्रकार रामानुज प्यारे ॥
दीननाथ मे दे हु तुमारे ॥ लिखि वृतान्त भगवन अ
स राती ॥ धर्यो निकट सेज्यासन पाती ॥ दोहा ॥ आ
ये पूजक प्रात जब वरदराज मध भौन ॥ परी धरी
पाती करी दृगन विलोकन तौन ॥ २१ ॥ टीका ॥ इस
प्रकार सब संतों का समाज रंगनाथ भगवान के

“को (margin insertion)

रामानुजको कांचीसे (vertical margin note)

“व (margin)

औ्रर विना संदेह को त्याग कर सरव सुखों के देने वाले
कृस्न भगवान जो है तिनका सुमरन करो तव जादव
उठ कर के औ्रर दोनो हाथ जोड़ कर के कहने लगा कि भ
गवन मेरी इह विनती है जो ग्रव ग्रपनी कृपा से मेरे
को पांचो संसकार करवाय करके ग्रपना जन वनाय
लेवो औ्रर मेरे को इस संसार के ग्रवगाह समुद्र में डूव
ते हुये को हाथ से पकड़ करके उवार लेवो इस प्रकार सु
जादव की विनती सुन करके रामानुज जी ने वड़ा सुंदर
औ्रर शुभ दिन विचार कर औ्रर सव संत समाज जोड़ कर
विधी के ग्रनुसार संसकार जो है सो सव करवाय दिया॥
८॥ चौपाई॥ धरो नाम तहि गोविंद दासा॥ वेद मरम स
व कियो प्रकासा॥ नाना वैस्नव ग्रंथ पढाई॥ दीन्यो वै
स्नव धरम जनाई॥ पुनि रामानुज ग्राज्ञा दीनी॥ तुव वै
स्नव ग्रपकीरति कीनी॥ ते ग्रपराध मिटावन हेतू॥ रचहु
ग्रंथ वैस्नव मति सेतू॥ तव जादव वंदित गुरु चरना॥
हृदय सुमरि स्यामल तन वरना॥ करि करि विमल वि
चार सुजाना॥ लै प्रमाण स्रुति वेद पुराना॥ रच्यो ग्रंथ
सव ग्रंथन भूपा॥ नाम जास जतिधरम निरूपा॥ त्याय
वहुरि गुरु सनमुख गावा॥ सानुकूल कछु मूल सुधा
वा॥ विधि त्रिदंड धारन सन्यासा॥ नाम धकिये वहोय
प्रकासा॥ रामानुज मुनि मान सरागे॥ तहि कहे विवि
ध सराहन लागे॥ तव जादव जतिपति सरनाई॥ कीन्यो
ग्रत से भक्ति सिवकाई॥ ग्रस प्रकार कछु समय वती
ने॥ गोविंद जन हु भक्ति भक्ति सुख लीने॥ दोहा॥ सुम
रत श्री राधा रमन गुरुवर कृपा प्रसाद॥ गवन किये ह
रि वास कहे पाय परम ग्रहलाद॥ ९॥ तव जा टीका॥
तव जादव का नाम जो है सो गोविंद दास करके रख
दिया तिसते उपरान्त नाना प्रकार के वैस्नव ग्रंथ व
ड़ी प्रीती पूर्वक पढाय दिये औ्रर वेद के तत्व के सहि
त वैस्नव धरम जो है सो सव जनाय दिया फिर रा

तैप्रसन्न जव होहिं उदारा॥ मणि केचिन वित देहि अपारा॥
करि हैं सो न तुम हूं कारंगी॥ लेहु एक रामानुज मांगी॥
देखि स्वपन अस मान सभावा॥ हृदय प्रमोद रंगवर छावा॥ प्रातकाल उठि सुमरि मुरारी॥ कांचीपुर कहे चल्यो सिधारी॥ वरदराज प्रभु मंदिर आई॥ कियो प्रणाम नेम्रसिर नाई॥ दोहा॥ सज सजाय पट आभरन मधुर नाद मुख गाय॥ निरतत नेकन भाव किये प्रभु मन सुख सुख छाय॥२२॥

टीका॥ तव पूजक सो पत्रिका लेकरके भवन के वाहर चले आये और रंगनाथ भगवान के दूत को वुलाय कर तिस के हाथ देकर वडे सनमानसे विदाय करदिया सो दूत तत काल तिस पत्रका को लेकर और रंगपुर मै आय कर रंगनाथ भगवान ~~के~~ के आगे प्रणाम करके धर देता भया भगवान तिस पत्रका को वाचकर सव तातपर्ज जान गये तव जामुनाचारी जीका एक पुत्र रंगवर नाम करके प्रसिद्ध गायनविद्यामै परम चतुर और प्रधान था रंगनाथ भगवान तिसको स्वपने मै प्रवोध करते भये कि हे रंगवर तुम गायनविद्या ~~और मुनि~~ के संगीत शास्त्रमै परम प्रवीन और सरव गुणनिधान हो तो ते कांचीपुरीमै जावो और तहा अपने गुण प्रभाव से वरदराज भगवान को भली प्रकार रिझावो ऐसे जव सो प्रभातमा तुमारे पर प्रसन्न होवैंगे तो तुम केचिन मणी द्रव्य इत्यादि कुछ नहीं लेना केवल एक रामानुज को हि मागलेना इस प्रकार स्वपन देखकरके रंगवर जो हैं सो हृदय मैं अत्यंत प्रसन्न होते भये और प्रातकाल होते हि उठकरके भगवान को सुमरते हुये कांची नगरी को चँपडे तव मारग को ~~काटकर~~ नवृत्य करके वरदराज भगवान के भवनमै आय कर दंडवत प्रणाम किया तिसते उपरान्त वडे सुंदर भूषण और वस्त्र सजाय करके ~~और अनेक~~ गत से रसीली और मधुर स्वर से गायन कर कर और नृत्य नाना प्रकार के भाव जणाय कर भगवान कृपानिधान को रिझावने लगे॥२२॥ चौपाई॥ अस संगीत रीत लखि तासा॥ वरदराज उर मोद

प्रकासा॥ बोले बचन जनन सुखदाता॥ मांग रंगवर जि
य बर भाता॥ हरषि देखि अनुकूल प्रवीना॥ करि प्रणा
म कर जोरत दीना॥ कहिस नाथ मोपैं जोई आपू॥ भये
प्रसन्न हरन भवतापू॥ जो जन बर जाचन अनुरागै॥
जोग अजोग कछु प्रभुहिं न लागै॥ भाख्यो कृपासिंधु मु
सक्याई॥ भक्त एक तुम रमा बिहाई॥ आन सकुच तजि
मांगि न लेहो॥ मै प्रसन्न मानस तोहि देहो॥ कह्यो रंग
बर जुग कर जोरे॥ रामानुज दीजै प्रभु मोरे॥ अब करि
ये निज बचन प्रमाना॥ नटियँन कृपासिंधु भगवाना॥
कह्यो नाथ बंच्यो दुज मोही॥ जो मै दीन बचन मुख तोही॥
हुतो बात इह दुरलभ भाई॥ ये पूरब मोहि लिये हराई॥ अ
ब न मृखा निज बचन करैना॥ पर्यो अब हि रामानुज दे
ना॥ दोहा॥ अस कहि प्रण पूरन प्रभू रामानुजैं बुलाय॥
हरषि रंगवर हाथ द्रुत दीन्यो नाथ धराय॥ २३॥ टीका॥ तब
बरदराज भगवान ऐसे रंगवर के मुख से संगीत रीत सु
न कर के हृदय मै परं हरष को प्रापत होते भये और कहने
लगे कि हे रंगवर मै तेरे पर बहुत प्रसन्न भया हूं अब जो
तेरे मन की रुची है सो मेरे से वर मांग ले मै तेरे को देता हूं
इस प्रकार भगवान को प्रसन्न भये जानकर रंगवर जी
दोनो हाथ जोड़ कर बड़े दीन हो कर के बिनती करने लगे
कि हे भक्तभयहारी भगवन जो आप मेरे पर प्रसन्न
भये हो तो ~~इसे आपका दास~~ मैं वर मांगता हूं परन्तु हृदय
मैं ~~संकोच होता है~~ डरता हूं कि आपको अयोग्य ना प्रतीत हो ऐ
से रंगवर का कथन सुन कर भगवान मुसक्याय कर के
कहने लगे कि हे भक्त एक लक्ष्मी को छोड़ कर के और
जो तुमारे ~~मन~~ चित्त को भावता है सो वर मांग लेवो मै आनं
द पूर्वक तेरे ~~को~~ मनोरथ को सफल करूंगा तब रंगवर
हाथ जोड़ कर कहने लगे कि हे भगवन मेरी प्रार्थना रामा
नुज की है सो कृपा कर के मेरे को दे देवो और अपने वचन
को प्रमाण करो हे दीनदयाल अब ~~फिर~~ टाल ना नहीं चाहिये

इसप्रकार सुनकरके वरदराज भगवान कहने लगे कि हे ब्र
ह्मण तैंने मेरे को वंच लिया अर्थात छल लिया है क्योंकि
मैं तेरे को ~~[illegible]~~ वचन दे चुका हूं इहवार्ता तो कदाचित् भी ॰त
होने वाली नहीं थी परन्तु अब क्या करूं कि तूं ने पहिले
ही मेरे को हर लिया है अब अपना वचन नहीं टाला जा
ता रामानुज अब ही देना पड़ा ऐसे कहि करके प्र
णपालक भगवान जो हैं सो रामानुज जी को तुरत बुला
य करके आनंद से रंगवर जी को सौंप देते भये॥ १३॥ चौपा
ई॥ स्नान कूल पुनि गिरा उचारी॥ रंग नगर जन जाहु सि
धारी॥ करहु जाय दरसन मन भावा॥ रंगनाथ भगवान
सुहावा॥ रामानुज सासन प्रभु पाई॥ वारवार चरनन सि
र नाई॥ करि द्रुत गवन भवन निज आये॥ सुचि सेवक
जन लीन बुलाये॥ शिष्य समूह संजुत दुख साना॥ भये
रंगपुर करत पयाना॥ पितु गृह तें पति गृह जिमि जाती॥
कन्या परम दुखित बिलपाती॥ तिमि मानस दुख मानि म
हाना॥ सुमरत वरदराज भगवाना॥ कावेरी तट मा
रग आई॥ करि सनान स्रम सकल विहाई॥ द्वादस
तिलक अंग कल दीन्यो॥ सुमरत कृस्न गवन पुनि
कीन्यो॥ तब प्रमोद मानस सरसाई॥ आये अस रंगवर
धाई॥ रंगनाथ प्रभु मंदिर आई॥ करि प्रनाम अस
विनय अलाई॥ आये कलि प्रभाव जग हेता॥ दीन
द्याल रामानुज सेता॥ दोहा॥ सुनि संदेस वसेस
अस वदन रंगवर एहु॥ जन आगमन कलगुन त
मन हरषे दीन सनेहु॥ १४॥ टीका॥ फिर वरदराज
भगवान प्रसन्न होयकर कहने लगे कि हे रामानु
ज अब तुम रंगनगर को चले जावो तहां जायकर
के रंगनाथ भगवान का परम सुखदायक और मनो
हर दरसन जो है सो आनंदपूर्वक पावो इस प्रकार
रामानुज भगवान की आज्ञा पायकर और चरनोपर
वार वार सीस नाय कर अपने घर को चले आये

भवन के द्वारे मे स्थित होयकर व प्रेमभक्ती प्रीती से भगवान
का सुमर्ण करने लगे तव दीनवंधू कृपासिंधू ने रात्री के
समय स्वपने मे तिन को जणाय दिया कि मेरे संघ्या
सन के पास मेरे ही हाथ की लिखी हुई पाती जो है सो तुम
लेकर के प्रातकाल होते ही कांचीपुरी मे वरदराज भगवान
के पास भेजदेवो इस प्रकार सव संतजन रात्री को स्वपन दे
खकर प्रातकाल होते ही आयकर भगवान के संघ्यासन के पा
स जो देखने लगे तो वे पत्रका भगवान के हाथ की लिखी मिल
जाती भई तिस को सनमान पूर्वक लेकर और रात्री का स्वन
सत्य जानकर एक ~~संत महात्मा~~ (उत्तम ब्रह्मण) के हाथ देकर के कांची नगरी
मे भेजदेते भये तव सो ब्रह्मण वरदराज भगवान के पास आ
यकर और प्रणाम करके अपना नाम सुनायकर रंगना
थ भगवान की पत्रका जो थी सो आगे रख देई वरदराज
भगवान तिस को वाचकर रामानुज जी की जाचना करनी अ
र्थात मांगना जानकर हृदय मे व्याकुल हो जाते भये तव रा
त्री के समय ही रंगनाथ महाराज जी को उत्तर लिखते भये कि
हे भगवन यह रामानुज जो है सो मेरा परम सनेही है और स
व प्रकार का मांगना दिया जाता है परन्तु प्राण किसी से नहीं
दिये जाते हैं तो ते हे दीनानाथ मै आपको इस परम प्यारे
रामानुज को किस प्रकार देऊं ऐसे सव वृतान्त लिखकर
पत्रका जो है सो संघ्यासन के नीचे रख छोडी तव प्रात
काल होते ही जव पूजिकजन भवन के भीतर आये तो
तिनो ने सो भगवान के हाथ की लिखी हुई पत्रका सिंघ्यास
न के नीचे धरी हुई पाई ॥ ११ ॥ चौपाई ॥ लेत सो वहिर भव
न दूत आई ॥ रंगनाथ कर दूत वुलाई ॥ दीन तासु पुनि की
न विदाया ॥ लेत सो विप्र रंगपुर आया ॥ वरदराज कर
पत्रिक पावन ॥ रंगनाथ कहं दीन सुहावन ॥ भगवन वा
चि मरम जिय जाना ॥ तव जामुन सुत एक प्रधाना ॥ ना
म जासु वर रंग सुहावा ॥ रंगनाथ तहि स्वपन वुझावा ॥
गान शास्त्र तुव परम प्रवीना ॥ श्रुति संगीत रीत सव चीना ॥
कांची वरद राज पें जाई ॥ निज प्रभाव गुण निपुणाइ जाई ॥

हुई

तासा

वरदराजभगवानतेरात्रीको

धनी अनन्त प्रभाऊ॥ मैं सेवक लघु रंक कहाऊ॥ तुव
तासों अति दीन बड़ाई॥ कौन मेरु सदृश धरि राई॥ सुन
त भक्त वर विनय सुहाई॥ रंगनाथ मानस सुख पाई॥ बोले
सुनहु शिरोमणि दासा॥ हुतो मोहि तुव दरसन आसा॥ या ते
बोलि पठ्यो तुव काहीं॥ भक्त बात कछु अचरज नाहीं॥ जो
मैं संसृति निज जन केरा॥ करहुं न अस सतकार घनेरा॥
दीन बंधु तव नाम हमारा॥ कौन करहिं गायन संसारा॥ दोहा॥
तुम लायक सब गुणनपर रामानुज मतिधाम॥ मैं तोरे नाय
क कियो मुक्ति भुक्ति अभिराम॥ १४॥ टीका॥ फिर भगवान रंग
बर को कहने लगे कि सब संत अब वेद के पढ़ने को छो
ड़ कर रामानुज के लेने के वासते आगे ही चले जावो
ऐसे भगवान की आज्ञा पाय करके पूरनाचारी से ले
कर सब संत भक्त रामानुज जी के ल्यावने के वासते आगे हीं
चले आये तब रामानुज तिन संतों को आवते हुये देख कर और
धीरज से धाय कर पूरनाचारी जी के चरनों पर गिर प
ड़े तब तिनों ने प्रीती पूर्वक उठाय कर अपने हृदय से लगाय
लिये तिसते उपरान्त और सब वैष्णव जो थे सो भी परस्पर वंद
ना करके गले लाग लाग कर कुशल पूछते भये इस प्रकार
जब चलते चलते भगवान के भवन के सामीप आय गये तब
दीनानाथ की मूरती जो है सो अपने भक्त रामानुज को लेने के
वासते आगे हीं चल कर भवन के द्वारे पर आय गई इस अद
भुत को देख कर सब लोग मोहित हो गये तब वैष्णव जन ब
ड़े सनमान से रामानुज जी को भगवान के भवन मैं ले आये
तहां भक्त प्रधान रामानुज जी रंगनाथ महाराज का दिव्य दर
सन पाय कर दंडवत प्रणाम करके विनती करने लगे
कि हे सरब चराचर के पालक हे सरब सृष्टी के
आधार देव आप जो मेरे लेने के वासते आगे चल कर भ
वन के द्वारे पर आये हो इह कृपानिधान आप को उचित
नहीं था क्योंकि मैं किस गिनती में एक महा रंक बुद्धी का
हीन दीन जड़ जाती था कि जिस के वासते हे कृपासिंधु
आपने इतना श्रम उठाया तुम भगवान
अनंत प्रभाव वाले तीन लोक के नायक और तुच्छ मैं
सा रंकों का रंक आप के चरनों का सेवक ता ते मैंने जाना है
जो कृपानिधान ने मेरे को अपना जन जान कर ता और रज
रदिया

"अतसे

गतमै सुजसअौर वडाई पावकरके राईको सुमेरपरवत वनायदियाहै ऐसे भक्तसृषृ रामानुजजी के मुखसे वचन सुनकर रंगनाथभगवान अत्यंत प्रसन्न होते भये और कहने लगे कि हे दास सिरामणी रामानुज मेरे कोतेरे दरसनकी वहुतहीं आसाथी इसीतें मैने तेरे को अपने पास वुलाय लियाहै हे भक्तप्रधान इहवारताकी ई आचर्जै नहीं है जो मै संसारमै अपने जनका इस प्रकार सतकार ना करूं तो मेरा जगतमै दीनवंधूनाम जोहै सो कौन गायन करेगा और तुमतो हे वुद्धि केधाम रामानुज सरवलायक और सरवगुणसाम र्थहो मैने तुमको अपनी कृपासे जगतमै मुक्ती और भुक्तीका नायक स्थापत करदियाहै ॥२४॥ चौपाई॥ सुनि असदीन दयालकर वानी॥ रामानुज प्रमोद सुखमानी॥ देत प्रदछना मनअनुरागा॥ वारवार पदवंदन लागा॥ वहुरि भवन भक्तन सुखदाई॥ महेमूरति करदरसन पाई॥ लै प्रसाद सादिर सुखछाये॥ वैठे गरुड भवन द्रुत आये॥ तहे आव हि वैस्नव गणसेगा॥ कथा अलाप करत अनु भेगा॥ पुनि रामानुजगिरा अलाई॥ सुनहु संत वैस्नव समुदाई॥ जहि कहे जस सामर्थ रहाना॥ इहमत रंगनाथ भगवाना॥ वैस्नव प्रवर सरव सुखदाई॥ निजनिज करहु स्थापन भाई॥ इहि मै करहि न सारस जोई॥ पावहिं दंड वेद विधि सोई॥ गिरा सत्य सठ कोप वखानी॥ सोम तव पूना चारज जियजानी॥ हमरे वंस कोऊ इक होई॥ जतिवर भनहि नाम सव कोई॥ सो वैस्नव मत करत उदंडा॥ करहि धूरि कलिधरम प्रचंडा॥ निज जाता अवसर सुभवानी॥ पुनि जामुन असविदत वखानी॥ कछुक दिवस वीते इत आई॥ एक अनन्य भक्त जदुराई॥ दोहा॥ कहि कहि हित जुत वचन मृदु मधुर प्रवोध सुनाय॥ करहिं सुखी सव जगत कहे वैस्नव मत प्रकटाय॥ २६॥ टीका॥ तव ऐसे दीनवंधू भगवान की वानी सुनकर रामानुजजी

परम हरष और सुख को प्रापत होते भये और भक्ती प्रीती से प्रदछना देकर वारंवार दंड प्रणाम करते भये तिसतें उपरांत भवन मै भगवान की महा मूरती का दरसन पायकर और तहां से सनमान पूर्वक प्रसाद लेकर फिर आनंद से गरुड भवन मै आय बैठे तहां सब वैस्नव जनों के बीच विराजे हुये सुंदकथा अलाप जो है सो करते रहे फिर रामानुज कहने लगे कि हे वैस्नव संत जनो मेरा वचन सुनो कि जिसको जितनी सामर्थ हो इह सरव सुखदायक रंगनाथ भगवान का सूक्षु वैस्नव मत जो है सो अपने अपने सब कोई स्थापत करो इस मै जो कोई किसी प्रकार का विघन करेगा सो वेद की आज्ञा अनुसार महां दंड पावेगा ऐसे सुन करके सठकोप जोथे सो इस धरम के स्थापित को सामर्थ रामानुज जी को हीं जणावते भये तब पूरनाचारी जी हृदय मै जान गये और कहने लगे कि हमारे वंस मै कोई एक ऐसा होगा कि जिसका जती वर करके नाम प्रसिद्ध होगा सोई वैस्नव धरम को प्रकास करके कली काल के अधरम का जगत मै नास कर देवेगा और गुरू जामुनाचारी जी भी परमधाम को जाने के समय प्रकट करके कहि गये हैं कि कु[?]क दिनो के वतीत होने के पीछे एक कृस्न भगवान का दृढ भक्त ई हां आवेगा सो वडे हित कें सुखदायक वचनो से प्रवोध कर करके जगत के जीवों को आनंद देवेगा और वैस्नव धरम को भली प्रकार उदय करेगा ॥२१॥ चौपाई ॥ सो रामानुज तुम हुं उदारे ॥ उदय करन वैस्नव मत वारे ॥ जति पति सुनत गूढ अस वानी ॥ परे चरन पूरन सुख मानी ॥ भने नाथ महिमा वरतोरी ॥ किमि कहि सकहिं अलप मति मोरी ॥ अस कहि उठे जनन सुखदाऊ ॥ देखन लगे त्रिकाल प्रभाऊ ॥ तिन कहे विविध प्रसंत रागो ॥ रंगनगर कल निवसन लागे ॥

१२

१ कुलकी

कराये

कोमल और

और तहां आयकर सव शि[illegible]य सेवक जो थे सो बुला
यलिये तव तिन सव के सहित दुखीभये हूये रंग पुर को चल
पड़ते भये जैसे पिता के घर से पती के घर को जाती हूई कन्या
परम दुखसे विलाप करती है तैसे हीं हृदय मे दुखित भये
हूये रामानुजजी वरदराज भगवान को सुमरते हूये कावे
री नदी के किनारे पर मारग को नवृत्य करके आय पहूंचे
तहां सनान करके मारग का स्रम जो था सो नि वारण किया
फिर द्वादिस तिलक अंगों मे सजाय करके कृस्न प्रभात
मा का सुमरण करते हूये आगे को चलपड़ते भये तव
रंगवर जामुना चारी जी के पुत्र जो थे सो आगे ही वड़ा आ
नंद मानकर और आगे ही आय कर रंगनाथ भगवान के च
रनों पर प्रणाम करके विनती करने लगे कि हे दीन दयाल
आपकी कृपासे अव सो कली काल का प्रभाव दूर करने वा
ले भक्तप्रधान रामानुजजी आय गये हैं इस प्रकार रंगवर
के मुखसे अपने जन का आवना सुनकर के दीन हित
कारी रंगनाथ भगवान जो हैं सो हृदयमे परम हरष और
सुख मानते भये ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ माध्यो वदन रंगवर काहीं
पठित वेद तजि संत सवा हीं ॥ रामानुज आगवायन हे
तू ॥ मिलिहव चलहु संत मति सेतू ॥ रंगनाथ अस
सासन पाई ॥ पूनां चार्ज आदि समुदाई ॥ चले जात द्रुत
ल्यावन आगे ॥ लषि रामानुज मानस रागे ॥ धाय परे पू
रन पद आई ॥ तास उठाय लिये उर लाई ॥ वै स्नेव आन
देखि हरखाने ॥ वंदि परस्पर हृदय जुड़ाने ॥ आये जव स
मीप हरि भवना ॥ तव आगल मूरति श्रीरमना ॥ आई
लेन लग मंदिर द्वारा ॥ मुहत सकल लषि चरत अपारा ॥
तव वैस्नव रामानुज काहीं ॥ ल्याये भवन भवन पति मा
हीं ॥ तहां वचित्र विमल सुखदाई ॥ महो रंग प्रभु दर
सन पाई ॥ करि प्रणाम अस विनय उचारा ॥ मोरे हि
त तुव दीन उवारा ॥ आयलेन अगवायन देया ॥ का
रकीन रह भक्त सहैया ॥ कवन दीन जड़ मे मति
हीना ॥ अस स्रम जास हेत प्रभु कीना ॥ त्रिभुवन

५७७

सोजगतमे कृतार्थरूप होयकर भगवानकेपरमधाम
मे जाय प्रापत होते भये ऐसे रामानुजजीका परमप्र
भाव जोहै सो कथन नहीकिया जाता है और जवसो
रामानुजजी कांचीसे रंगनगरको चलने लगेथे तव
चार वैस्नवजनोंको वुलायकरके एकांत समुझायदि
या कि तुम सैलपूरनजीके पास जावो और तहां मेरी
मासीका पुत्र भ्राता गोविंदाचारी नामक वैस्नवमत
का द्रोही और निंदक जो है सो तिसको वुद्धीके धाम
सैलपूरनजी अव वैस्नव वनायकर कालहस्ती
पुरको चले आये हैं तुम इस वारताका भलीप्रकार
सव भेद लेकरके फिर शीघ्र हीं रंगपुरमे मेरेपास
चले आवो इसप्रकार तिनको आज्ञा देकर फिर आ
प रंगनाथ भगवानकी शरणको चले आये तव कुछ
क काल वतीत होनेके पीछे सो चारो वैस्नव जो सै
लपूरनजीके पास गयेथे आय गये तव तिनोने
रामानुजजीके चरनोपर सीस नायकरके तहां
का वृतांत जो था सो प्रकट करके सव सुनाय दि
या ॥२१॥ चौपाई ॥ हम जव कालहस्तिपुर त्यागी ॥
आये सैल पूर्न संग लागी ॥ डगर तड़ाग देखि म
नभावन ॥ लगे वैठि तहं शिषन पठावन ॥ आवा
तहां भरन जलहेतू ॥ गटा गहित गोविंद मति सेतू ॥
भरि घट चल्यो भवन जव वारी ॥ सैल पूर्न तव ति
नउचारी ॥ लै घट गवन पूरि जल जोई ॥ तो कर
कहहु कवन फल होई ॥ गोविंद सुनत उतर नहिं
दीना ॥ सोचित गवन भवन निज कीना ॥ आवौव
हुरि भरन जलताहीं ॥ सैलपूर्न तव मारगमाहीं ॥
सुचि सलोक कल कागद लेखी ॥ धर्यो डगर दृग
गोविंद देखी ॥ लीन उठाय चकित चहुं चाहीं ॥ चि
तवत जानिपरत कछु नाहीं ॥ देखे सैलपूर्न तहि
ठामा ॥ तिन कर निकट जाय मति धामा ॥ हरषत
वदन वचन अस भाषा ॥. को इह पत्र डारि मगराखा ॥

रंगपुरमे

याको अर्थ प्रकट मोहि संगा॥ करहु कथन मानस
भ्रमभंगा॥ दोहा॥ भन्यो सैलपूरन वदन अर्थ अनेक
प्रकार॥ औरहु शास्त्र पुराण वहु दिये प्रमाण अपार॥
१८॥ टीका॥ फिर वे चारो वैस्नव कहनेलगे कि जव हम
कालहस्तीपुर त्याग करके सैलपूरनजी के साथोसा
थ चलेआये तव रसते मै एक निरमल तलाउ देखकर
तहां सैलपूरन जी वैठ गये और शिष्यों को पढावने ल
गपडे इतने मै तहां गोविंदाचारी भी घडालियेहूये ज
ल भरने के वासते आयगये सोजव तलाउ से जलका
घडा भरकर घरको चले तव सैलपूरनजी ने कहा कि
हे गोविंद तुम इह जलका घडा जो भर करके लेचले
हो कहो इसका क्या फल होगा गोविंद ने सुनक
र उत्तर नहीं दिया परन्तु इसी वारता का सोच
करता हूआ घरको चला गया थोडीं देरी के पीछे फि
र जल भरने को तहां चला आया तव सैल पूरनजी
ने एक श्लोक कागद पर लिखकर के तिसके आव
नेवाले रसते मै रखदिया हूआथ सो गोविंद आव
ताहीं तिस श्लोक को देखकर उठाय लेताभया औ
र आचर्ज के वश होकर इधर उधर चारो पासे देखने ल
गा कुछभी समुझ मै नही आया तव कुछ दूरीपर सै
लपूरन जी को देखकर और तिनके पास जायकर वडे
हरष से कहने लगा कि नाथ इह पत्र अर्थात कागद रस
ते मै किसने राखा हूआ था अव आप कृपाकरके
हृदय के भ्रम को दूर करनेवाला इसका अर्थ जोहै सो
मेरे को प्रकट करके कहिये ऐसे गोविंदका वचन
सुनकर सैलपूरन जी ने तिस श्लोक का अर्थ शा
स्त्र के वहुत प्रमाण देदेकर अनेक प्रकार से कथ
किया॥१८॥ चौपाई॥ करत जात गोविंद सव खंडा॥
भयो पर स्पर वाद प्रचंडा॥ भयो अन्त कुंठित मति
सोई॥ गोविंद कथित चकित चित होई॥ सुनि अस
कथन वैस्नव काना॥ सैलपूर्न कहे धन्य वखाना॥

रामानुज तहं संतन संगा॥ भने प्रमाण अनेक प्रसं
गा॥ तिन वैस्नव जनसों अनुरागे॥ बहुरि वदन अस
पूछन लागे॥ अब गोविंद की कहहु सुनाई॥ रह्यो स्थि
र की गयो पलाई॥ गुरु मुख सुनत वैस्नव बानी॥ बो
ले परम मोद सुख मानी॥ तहितें जबन उत्र प्रभु सरयो॥
तब निज ध्यान आन कहुं करयो॥ सैल पूर्न विकट
गिरि आये॥ दिवस तीसरे बहुरि सिधाये॥ जोरि जूथ
शिष्य कानन चारू॥ सहस गीत कल अर्थ उदारू॥
लागे संजुत प्रीति पठावन॥ संसृति सकल अनर्थ
मिटावन॥ तहां प्रसून लेन हित बन महं॥ गोविंद आ
य मोद भरि मन महं॥ चढ़ि पाटलि तरवर अनुरा
गे॥ चूंदन सुमन सु गोविंद लागे॥ तब चतुरथक
ल गीत सुहावा॥ निकस्यो इह प्रसंग मन भावा॥ दोहा॥
क्षीर सुता पति नाभि निज कढ्यो कमल कलएक॥
तहितें विधि उपजत विविध विरच्यो विस्व ववेक॥ २९॥
टीका॥ तब गोविंदजी है सो तिन के कथनको खंडन क
रता जाता है इस प्रकार तिनका प्रसपर बहुत ही सं
वाद विवाद भया अंत को गोविंद की बुद्धी थकत होय
गई और ~~बोलने~~ आचर्ज होय करके बोलने से रहित हो
गया ऐसे शुभार्थ को सुनकर संपूर्ण वैस्नव
सैलपूरन जी को धन्य धन्य कहने लगे तब रामानु
जजी संत समाज के बीच बैठे हूये जो अनेक ज्ञा
न चरचा कर रहे थे तिन वैस्नवों को फिर पूछने
लगे कि भाई गोविंद की इह तो सुनावो तहां ही
स्थिर रहा था कि भाग गया था ऐसे गुरु के मु
ख से वचन सुनकर सो वैस्नव बड़ा हरष और
सुख मान कर कहने लगे कि हे भगवन जब ति
स से कुछ उत्तर नहीं सरा तब तहां से लजत
भया हूआ उठकर कहीं को चला गया था और
सैलपूरन जी विकट गिरी मे आय कर फिर तीस

मानी स विरहे वरद दुख जेता॥ दरसत रंग मिट्यो सव तेता॥ जापै सानुकूल करि दाया॥ दृगन दृष्टि रामानुज पाया॥ होत कृतार्थ से सवति तेहू॥ निवहे जाय कृस्न कल गेहू॥ रामानुज प्रभाव गत पारा॥ को सामर्थ कथन संसारा॥ कोंचीते जव भक्त प्रधाना॥ लागे करन रंग पुर प्याना॥ वेगवुलाय वैस्नव चारी॥ ले इकांत ग्रस गिरा उचारी॥ तुम हु सैल पूरन ढिग जाई॥ तहां मोरकृपिया सुत भाई॥ गोविंद नाम भनत सव कोई॥ वैस्नव मत निंदक जग सोई॥ तासु करत वैस्नव इहि काला॥ सैलपूर्न पर वुद्धि विसाला॥ ग्राये काल हस्ति पुरकाहीं॥ तायें तुमहु जाय द्रुत ताहीं॥ पाय वृतांत मरम सव तासु॥ ग्रावहु रंगनगर मम पासू॥ तिनहिं वदन ग्रस सासन वरनी॥ ग्राये ग्राय रंग प्रभु सरनी॥ कछुक काल महि ते व्रतधारी॥ ग्राय रंगपुर वैस्नव चारी॥ दोहा॥ रामानुज पद वंदिकै जोरि करन गति दीन॥ पृथक पृथक सादर वदन मरम कथन स वकीन॥ ९२॥ टीका॥ पूर्नाचारीजी कहते हैं कि सो रामानुज तुमहीं उदार वुद्धी हो ग्रोर जगतमें वैस्नव मत के प्रकाश करने वाले हो इसप्रकार रामानुज ने पूर्नाचारीजी की वडी गूढ वानी सुनकर परम सुखमान करके पूरन जी के चरनो पर सीस नावते भये ग्रोर कहने लगे कि हे दीनद्याल ग्रापकी महिमा जो है सो वडी ग्रगाध है तिस के जानवे को मेरी तुच्छ वुद्धी कहां सामर्थ है ऐसे कहि करके रामानुज जी उठे ग्रोर त्रिकाल भक्त जी का प्रभाव [illegible] जाय करके देखने लगे तहां तिनकी ग्रनेक प्रकार स्लाघा वडाई करके फिर रंग भगवान को सुमरते हुये रंगपुर में वास करने लगे तिनके हृदयमें वरदराज भगवान की विरहे का जितना दुख कलेस था सो रंगनाथ महाराजजी का दरसन करते करते सव मिट गया ग्रोर परम उदार रामानुजजी जिन्हुं पर प्रसन्न होकर ग्रपने नेत्रों की कृपा दृष्टी पावते थे

^ सकतीजै

कथनकरते हैं कि एही भगवान सब के ईश्वर स्वामी औ
र एही सब जगत के आधार हैं जो पुरष भक्ती प्रीती से नि
संकपट होकर के भगवान कृपानिधान की पुष्पों कर के
सेवा करे सेवकाई करेगा अर्थात सेनित दिन भगवान
के पुष्प चढावता रहेगा सो संसार अनन्त फल को प्रा
प्त होवेगा करेगा कि जिसमें कोई अन्त नहीं है जब गोविं
द ने इस प्रकार का प्रसंग कानो मे सुना तो ततकाल सा
वधान होय कर अज्ञान निद्रा से जाग उठता भया और
हृदय मे विचार करने लगा कि जिस विस्व के नाथ भगवान
के चरन कमलों की धूडी को शिव ब्रह्मा देवतादि
दि देवता जो है सो सेवन करते हैं मै भी तिस दीनो के दुख
दूर करने वाले भगवान भक्तसुखदान के चरनो की धू
डी को भक्ती प्रीती से सीस पर धारन करके शुद्ध चित हो
कर तिनका भजन और समरन करूं तो मेरे को इस
संसार रूपी के महा समुद्र से पार होने को कोई विलंब
नहीं है अर्थात सहजे ही तर जाऊंगा ऐसा विचार क
र के तिस वृक्ष से कि जिस पर चढा हुआ था तुरत नीचे उत
र आया और त्राहि त्राहि कहता हुआ धाय कर के सै
ल पूरन जी के चरनो पर गिर पडता भया और फि
र उठ कर और हाथ जोड कर बिनती करने लगा
कि हे दीना नाथ मै तुमारे चरनो की सरन को
प्रापत भया हूं अब मेरे को दीन जान कर राख लीने
जिये क्योंकि मै अपनी जडता और कुमती के
वश भया हुआ अब लग वृथा ही भ्रम के महा जा
ल मे फसा रहा हूं हे दीन दयाल मै उत्तम भ्रमर की
रीती से चूका हुआ भगवान के चरन कमलों की प
राग को अर्थात धूडी को त्याग कर नीच कुल के
कीट अर्थात भूडे वत अत से अधम करम जो है तिस
मै लाग रहा हूं ॥२०॥ चौपाई ॥ प्रभु पद पदम प्रेम न
हिं कीना ॥ याते अब लौं ठौर न लीना ॥ रह्यो भ्रमत

भटकत जगमाहीं॥ विनुहरि सरन स्वपन सुष नाहीं॥
बारबार अस भनत गोविंदू॥ तजत न सैलपूर्न पदद्वंदू॥
हरिपद प्रेम पेषि अस तासा॥ सैलपूर्न मन मोद प्रकासा॥ गहित करन द्रुत गोविंद काहीं॥ लिये उठाय लाय उर माहीं॥ झारि प्रीति पूर्वक रज अंगा॥ बोले वचन भीत भ्रम भंगा॥ बीतिगयो अवसर जोई हाथा॥ अब न कहिय तो कर कछु गाथा॥ आग लसावधान चित होई॥ कपट द्वेष दुरमति ~~मति~~ सब खोई॥ करि हरि पद पंकज विस्वासा॥ तरहु उदधि भव विगत अजासा॥ गोविंद गिरा सुनत हितकारी॥ भयो निर्मल मोदनिधकारी॥ सैलपूर्न कहें गुरु सम जानी॥ बारबार वंदित पगपानी॥ भयो भक्त वैस्नव व्रतधारी॥ लियो सुजस सुखे स्मृति भारी॥ सुनत खबर पुरकर नर वंता॥ गोविंद वैस्नव बन्यो महंता॥ सखे सुजाति नाति समुदाई॥ तहिं पै आय सकल अतुराई॥ दोहा॥ सैलपूर्न कहे वृथम अस करत कुमति सब आयु॥ तुम जानत ● नीलको जादू जे त्रव नाय॥॥२२॥ टीका॥
फिर गोविंद कहता है कि मैने जो ~~भगवानके~~ नारायण के चरनो मे प्रेम नहीं किया इसी तें अब तक कहीं ठोर नहीं पाया संसारमे वृथाहीं भ्रमता और भटकता रहा हूं भगवानकी शरण लेने के विना सुख जो है सो सपने मे भी नहीं देख पडता इस प्रकार बार बार उचारण करके गोविंद सैलपूरनजी के चरनो को नहीं त्यागता भया तव सैलपूरनजी तिसका भगवान के चरनोमे प्रेमनेम देखकरके हृदयमें बडा आनंद और सुख मानते भये तुरत हीं हाथोंसे पकडकर चरनोपर से उठाय करके हृदयमै लगाय लेते भये और प्रीती पूर्वक अंगोंकी सब धूरी झाडकर भ्रम और भयके दूर करने वाला वचन जो है सो कहने लगे कि हे भक्त अब जो समय हाथ से निकल गया तिसकी क्या चरचा चलावनी है आगेको कपट छल और दुरमती त्याग करके सावधान हो जावो और भगवान कृपानिधान के चरन कमलोंमे दृढ विश्वास करो फिर तुमको इह संसार समुद्र कतरना

ग

के

को

जो है सो विना जतन के ही सहज हो जावेगा ऐसे सैलपूरनजी
के मुख से वाणी सुनकर गोविंद आनंदरूपी सरोवर मै
मगन हो जाता भया तब सैलपूरनजी को गुरु समान जा
नकर वारवार वंदना करने लगा और तिनकी कृपा से प
रम ब्रतधारी वैस्नव वनकर संसार मै सुख और सुजस
का पात्र हो जाता भया तब इह खबर नगर के सब लो
गों मै फैल गई कि गोविंद ने वैस्नव धरम ग्रहण कर
लिया है तिसके सखे संबंधी जाती नाती जो थे सो स
बु मिलकरके सैलपूरनजी के पास चले आये और कठो
र वानी से कहने लगे कि हम ने भली प्रकार जान लिया है
जो तुम कुछ जादू जंतर वनाय जानते हो ॥२२॥ चौपाई॥
गोविंद सीस काह तुम डारा॥ भयो वौर निज तौर विसारा॥
कौन मंत्र तुम तासु पठायो॥ जहितें कुमति तुरत वौरायो॥
सैलपूर्न हसि वचन अलावा॥ हम नाहिन कछु तासु
पठावा॥ पूछि लेहु तुव सनमुख राहा॥ हम इहि दीन
सिखोवन काहा॥ कुमति सुनत अस वचन रिसाते॥
गोविंद पकरि लीन द्रुत जाते॥ अधम कठोर कहत मु
खवानी॥ अरे तोर मति भई वौरानी॥ या सन कवन तो
र है जोगू॥ चलहु भवन निदरत सव लोगू॥ अपनो
धरम भलो जगभाई॥ कीजे सोऊ रुचिर सुखदाई॥
यह भाषत छल छंद वनाये॥ भूलिय ना काहू के मु
लाये॥ तब गोविंद अनख दृग ल्याई॥ वोलि वदन अ
सगिरा अलाई॥ जौलो तुमरे संग अगारा॥ रहत रह्यो
संसर्ग हमारा॥ तवलो तुव सासन जस होई॥ धारत रहे
सीस निज सोई॥ दोहा॥ जबतें हम तुमकहं तज्यो स
ज्जन हित चित खोय॥ तवतें तुम तुम हम हि हम अ
व संवंध नकोय॥२२॥ टीका॥ फिर सो दुष्ट कहने लगे
कि सत्य कहो तुमने गोविंद के सीस क्या डार दिया है
इह तो अपने तौर को विसार कर वौरा सा हो गया है
इसको तुमने कौन ऐसा मंत्र पढ़ाया है जो इह पढ
ते ही वावला हो ~~गया~~ है ऐसे तिनका कथन सुनकर
करतुमारहीबुनगया
सैलपूरनजी हस करके कहने लगे कि भाई हमने

म

यदि

हिदिवकुत...सं

रेदिनके पीछे शिष्य समाज जोड़ करके वनकेवी
च चले गये और तहां जगतके सव अनर्थोंको मि
टावनेवाला सहस्रगीत का ग्रंथ जोहै सोतिनकों प
ढावनेलगे तव एकदिन तहांवनमैं गोविंद फूलले
नेकेवासते जो चलेंआयौ तो पाटली नामा वृक्ष केऊ
पर चढकर सुंदर पुष्प जोहैं सो चुननेलगा तव सैल
पूरनजी जो अपने शिष्योंको सहस्रगीत पढाय रहेथे
तहां चौथे गीत मे वडासुंदर मनको भावने वाला रहस्य
सेंग निकला कि क्षीरसुता जो लक्षमी तिसकेपती जो
भगवान सो अपनीं नाभी सें एक मनोहर कमल उत
पन्नकरतेभये तिसतें ब्रह्मा उपजकर नानाप्रकारकी
सृष्टी को रचदेता भया ॥१९॥ चौपाई ॥ तातें सरवबि
स्वकरकारन ॥ नारायण दुखदीन निवारन ॥ श्रुतिपुरा
ण सव विदत अलाये ॥ सरवेश्वर भगवान सुहाये ॥
जेनर करहिं भक्तिसरसाई ॥ नारायण प्रसून शिवकाई ॥
हरिहिं दिवसनित पुष्प चढावै ॥ सोअनन्त फलसंप
तिपावै ॥ असप्रसंग जव श्रवणन लयऊ ॥ सावधा
न तव गोविंद भयऊ ॥ विस्वनाथ नारायण देवा ॥ शि
व विधि चरन रेनु जहि सेवा ॥ तातें सोऊ चरनरज
तासा ॥ मैं हुं धारि निज सीस हुलासा ॥ सुमरि दीन दु
ख मोचनकाहीं ॥ होहुं पार भवसिंधु अथाहीं ॥ अस
विचार निज मानस ल्याई ॥ तरुतें उतरि तुरत अतु
राई ॥ जाहि जाहि मुख ररत तहां हीं ॥ परयो सैलपूर
न पदमाहीं ॥ वहुरि वदन असगिराउचारी ॥ दीनना
थ मोहि शरण तिहारी ॥ निज जडताई कुमति वश
फूली ॥ अवलग रह्यो वृथा भ्रम मूली ॥ दोहा ॥ चे
चरीक चतरीतमै हरिपद पदम [deleted] पराग ॥ त
जत नीच कुलकीरवत रह्यो अधम कृत लाग ॥
२० ॥ टीका ॥ तातें भगवान जोहै सोई सरव सृष्टीके
कारन अर्थात मूलहै श्रुति पुराण भी प्रकट करके

२२५ 297

बैठगये मन मारे हूये न्यारे जाय बैठे तब गोविंद त
हां से उठकर भगवान का सुमरण करता हूआ सैलपूर
नजी के पास चला आया और भक्ती श्रीवाला होयकरके
कृस्न भगवान के चरन कमलों को हृदय मे बसाय लेता
भया तब तहां के वे सब द्रोही हैं जो है तिन सब को रा
त्री के समय श्रीकर भगवान ऐसा स्वपन देते भये कि
हे मंद जड जाती बुद्धी के हीन नास्तिक और वे सब
धरम के विरोधी दुष्ट जनो तुम कृस्न प्रमातमा के प्यारे
भक्त गोविंद को ताडना करके वे सब धरम जो है तिससे
निवारने लगे और अधम अपनी जडता और अज्ञान
सुनावने लगे अरे दुष्ट जनो तुमको धिग है अब मंद जो
अपना भला चहते हो तो इसतें आगे गोविंद को कुछ बु
रा भला मत कहना क्योंकि इह भगवान का दृढ भक्त ज्ञा
न विज्ञान के जानने वाला वे सब धरम मे प्रवीन है इस प्र
कार वे सब सो ही द्रोही अर्थात भगवान से विमुख रात्री के
समय स्वपन देखकरके आश्चर्ज होय गये और सैलपूरन
जी की धन्य धन्य श्लाघा करके गोविंद से निरास भये
हूये अपने अपने घरों को चले जाते भये तब सैलपूरन
जी भी गोविंद को साथ लिये हूये व्यंकटगिरी को चले आ
ये तहां सब संत समाज जोडकर पांचो संसकार जो
है सो करवाय दिये तिसतें उपरांत बडे उत्तम वे सब शा
स्त्र जो है सो प्रीती पूर्वक गोविंद को सब पढाय दिये सो
अब गुरू जी के चरनो को सेवता हूआ और सुख मे मग
न भया हूआ भक्ती प्रेम को अधिक किये हूये व्यंकटगि
री मे निवास करता है ॥ २३ ॥ चौपाई ॥ इह वृतान्त जति
नाथ उदारा ॥ हम तिन कर सब कियो उचारा ॥ गोविंद
कर अस सुनत प्रसंगा ॥ भे जतिपति पुलकावलि
अंगा ॥ अति सनमान वे सब न कीना ॥ भलो अनुप
म हरष मोहि दीना ॥ पुनि रामानुज प्रीति समेता ॥

गोविंद — सैलपूरन — ८८

सब संतन कहँ गवन नकेता॥ सानुकूल करि दीन वि
दाये॥ उठे आपु सुमरत जदुराये॥ गवने रंगभवन हरखा
ई॥ प्रभुपद बार बार सिर नाई॥ जोरि जुगल कर विनय उ
चारी॥ दीन नाथ प्रणतारत हारी॥ तुव मर्याद संतन
रखवारे॥ जगत विखाद विनासन हारे॥ जो न होत प्रभु
सम संसारा॥ तो संतन कहँ कौन आधारा॥ केवल तुमहुं
देवकी छैया॥ संतन की सुधि सदा रखैया॥ हरिहि नम्र
अस विनय सुनायो॥ निज नकेत रामानुज आयो॥ समय
एक मानस सुख छायो॥ गुरु पूर्णाचारज गृह आये॥ करि
दरसन पूरित अनुरागा॥ किये बंदि पद विनय सुभागा॥
गुरु जामुन दरसन सुख देना॥ भयो न दीन दयाल इन नै
ना॥ तातें मै शोकारत भारी॥ शोक जनत भगवन दुख
सारी॥ सिरि गो तुव दरसन तें मोरा॥ मै अनन्य सेवक प
द तोरा॥ जानि कृपाल मोहि दृढ दासा॥ करिय सुचिर उ
पदेस प्रकासा॥ सुनि रामानुज गिरा सुहाई॥ बोले महा
पूर्न हरखाई॥ जुगल बरन मंतर चित चोरा॥ जानहु
सकल मंत्र सिरमोरा॥ इह जाके उर होहिं प्रकासा॥ कार
क कोटि जनम अघ नासा॥ दोहा॥ भुक्ति मुक्ति प्रद सुखद
जस चारि बरन महँ कोय॥ सेवत संसारार नव पार सु
गम लहि होय॥ २४॥ टीका॥ वैस्नव कहने लगे कि गुरु ‸हे
‸जी महाराज ‸ इह वृतांत तिनका हमने आपके ‸ सब कथन ‸आगे
कर दिया है तब ऐसे गोविंद का वृतान्त सुनकर रामा
नुज जी सुख मानकर अंग अंग प्रफुलित हो जाते भये ति
‸का न वैस्नवों ‸ बड़ा सतकार करके कहने लगे कि भाई तुम
ने तो मेरे को अनुपम हरख उपजाया है कि जिस ‸ कोई ‸की
उपमा ही नहीं तिसतें उपरान्त रामानुज जी बड़ी प्रीती
सनमान से सब संत जनों को अपने अपने आश्रम को
जाने की विदाय देकर आप जदुनाथ जी का सुमरण
करते हुये आनंद से रंगनाथ भगवान के भवन
‸के मैं चले आये तहाँ भगवान ‸ चरनो पर बार बार सीस
नाय कर और दोनो हाथ जोड़कर विनती करने लगे

२९८

298

कि हे भक्तजनो का भय दूर करने वाले दीनानाथ तुम
कैसे हो कि संत भक्तों मर्जादा जो है तिस की रक्षा कर
ने वाले और जगत के दुख विखादों का नास करने हारे हो
हे भगवन जो कबी कोई आपके समान संसार मे ना
होता तो संतजनो को कौन आधार था इन संतों की सु
धी राखने को हे देवकी नंदन केवल तुम हीं सामर्थ हो
इस प्रकार भगवान के आगे नम्र अर्थात दीनवत विन
ती करके रामानुज जी अपने घर को चले आये तब ए
क समय हरख करके पूरित भये हुये गुरू पूर्णाचारी जी
के घर मै चले आये तहां तिनका दरसन करके और चर
नो पर सीस धर के विनती करने लगे कि हे भगवन गु
रू जामुनाचारी जी का दरसन जो मेरे इन नेत्रों
मै नहीं भया तिसते मै सोक करके परम दुखी हो रहा था सो
तिस सोक से उतपन्न भया हुआ मेरा दुख जो था आ
पके दरसन करने सें सब मिट गया है और मै दीनाना
थ मन वचन काया करके आप का सेवक हूं हे
कृपा निधान मेरे को अपना दृढ दास जान कर अ
ब सुंदर सुख के देने वाला उपदेस करिये ऐसे
रामानुज की कोमल बानी सुन कर महा
पूरन जी आनंद मै मगन भये हुये कहने लगे
कि जुगल बरण अर्थात दो अक्षरा मंत्र जो है सो संपू
रण मंत्रों मै प्रधान है रह जिस के हृदय प्रकाश कर
ता है तिसके कोटि जनम के पाप जो हैं सो सब नष्ट हो
जाते हैं फिर कैसा है कि चारो बरनो मै जो कोई सेवन
करै तिन सब को भुक्ती मुक्ती के देने वाला है और
संसार समुद्र से सहजे ही पार उतारने वाला है ॥२४
चौपाई॥ वेद मूल मे जुगल मंत्र तारक॥ जनन दो
ख दुख दुरत निवारक॥ तुम्है देत हम जतिवर
लीजे॥ सावधान अमृत रस पीजे॥ असकहि अमर
मंत्र सुखदाई॥ दीन्यो जति पति श्रवण सुनाई॥

ॱया

तो इसको कुछ नहीं पढाँवाहै ऐसी इहतुमारे सनमुखहै इसको पूछ लेवो कि हमने क्या सिखायाहै इसप्रकार सुनके इके तिन दुष्टबुद्धीवालोंने कोपसे जायकर गोविंदको पक इलिया और कहनेलगें अरे तेरे को क्या भया तूं क्यों बावला बनगया इसके साथ तेरा क्या संजोगहै मूरख अपने चरको चेले लोग निंदा करतेहैं हेभाई जगतमे अपना हीं धरम भलोहै इहसाधू जोहै सो बलछंददिखायकरके भरमा यलेताहै किसूके भुलाये कवी नाम लिये ऐसे तिन से वधियों के वचन सुनकर गोविंद ने जो मे क्रोध भरकर कहने लगा कि सुनो भाई जवलग जो मे तुमारे साथ हमारा संबं ध बना हुआथा तवलगतुमारी जो आज्ञा होती रही हमसी सपर धारते रहे और जबतें चित्तसे तुमारा त्याग करदिया है तबतें तुम तुम हो और हम हमहैं अब संबंधका कुछ प योजन हीं नहीं रहा॥२२॥ चौपाई॥ उग्रवचन सुनि बाध व सारे॥ बैठे लजित मौन मन मारे॥ तब गोविंद सुमर त भगवाना॥ सैलपूर्नकि गमकिये पयाना॥ भयो अनन्य दास हरि केरा॥ कृस्न चरन उर किये वसेरा॥ तब वै सब द्रोहिन कहं राती॥ संकर सपन दीन इहि भाती॥ सुनहु मंद जड जाति अबोधी॥ नास्तिक वै सब धरम विरोधी॥ कृस्न दास गोविंद प्रवीना॥ अधम तासु तुव ताडनकीना॥ वैसब मत तें प्रेरन लागे॥ कहिकहि निज अग्यान अभागे॥ जो चाहो अब भूरि भलाई॥ तो नकरहु तहिसन वरयाई॥ वेसब निरत ज्ञान विज्ञाना॥ इह अनन्य सेवक भगवाना॥ हरिद्रोही अस सपन निहारी॥ सैलपूर्न कहे विपुल उचारी॥ गोविंदतें सब होत निरासा॥ कीन्यो निज निज गवन अवा सा॥ सैलपूर्न व्यंकटगिरि आये॥ गोविंद कहं निज संग लिवाये॥ तहिथल संत समाज सजाई॥ पाचहु संस कार करवाई॥ वैसब शास्त्रविमल मन भाये॥ गोविं द कहं सब दीन पठाये॥ दोहा॥ सो अब सेवत चरन गु रु सैलपूर्न सुखदाई॥ निवसत गिरि व्यंकट रुचिर भ क्ति प्रेम सरसाई॥२३॥ टीका॥ इसप्रकार गोविंद के बडे उग्र वचन सुनकर सबलजा वाले और मौन होकर के

ॱवोधवजन

भये और जहाँ अपने अस्थान पर गोष्ठीपूरनजी विरा
जे हुयेथे तहाँ आयकर और अपना नाम सुनायकर
वार वार दंड प्रणाम करते भये फिर दोनो हाथ जोड़कर
बड़े दीन होयकरके विनती करने लगे कि हे दीनानाथ मे
आपके चरणका सेवक अब आपके चरनो की शरनी आ
य पड़ा हूं मेरेको कृपा करके मंत्रार्थ जो है सो दीजिये
और शास्त्रार्थका बोध भी कीजिये ॥२५॥ चौपाई॥ सुनिके
श्रीपूरन असवानी॥ लग्यो विचार करन विज्ञानी॥ याको
अब अधिकार नकेऊ॥ अस गुनि रह्यो मौनवत हे
ऊ॥ तब रामानुज करत विचारा॥ फिर आये निज रुचि
र आगारा॥ बीते कछुक दिवस इहि वरतंते॥ भाउत सब
अति रंग नगर महे॥ तब गोष्ठी पूरन सुख छाये॥ उतस
व लखन रंग पुर आये॥ दरसन हित मानहु अनुरा
गे॥ आये रंग भवन बड़भागे॥ तब प्रसन्न पूरवक
असवानी॥ भने वदन पूजक हित सानी॥ रंगनाथ प्र
भु शासन एहू॥ रामानुज कहें सुखद सनेहू॥ उपदे
शिये मंत्रार्थ प्रकारू॥ जानि भक्त सज्जन हितकारू॥
तब गोष्ठी पूरन अस भाख्यो॥ पृथ्वमहिं रंगनाथ क
हि राख्यो॥ अधिकारी याको हैं जोई॥ विनु श्री कौंसले, ना
दू हैं लखि सोई॥ तो ते जानि असेमं अव हूं॥ कीजे इहि व
मंत्रार्थ न कबहूं॥ प्रभु शासन कैसे करि कीजे॥ विनु
कीजे कस प्रभुहि पतीजे॥ तब पूजक हरि शासन पा
ये॥ गोष्ठि नाथ सों वचन अलाये॥ रामानुज सब गु
णन प्रवीना॥ या सम सेसति आन न चीना॥ तुम जि
यको तजि सकल संदेहू॥ देउ रुचिर मंत्रारथ एहू॥
दोहा॥ सुनत पूजकन कथन अस गोष्ठि पूर्न हु विमा
नि॥ प्रभु शासन धरि सीस निज भन्यो वदन मृदु बानि॥
२६॥ टीका॥ इस प्रकार रामानुजकी कोमल वानी सुनके
र गोष्ठी पूरनजी जो ज्ञान विज्ञान मै प्रवीन थे हृदय मे
विचार करने लगे कि इसको अधिकार नहीं है ~~मे के~~

मै कैसे मंत्र उपदेश करूं ऐसे सोच कर मौन ही होय
रहे कुछ उत्तर नहीं दिया॥ तब रामानुज विचार कर
के हृदय मे निरास भये हुये फिर करके अपने घर को च
ले आये जब कुछ क दिन वतीत भये तब रंगन
गर मे एक बडा भारी उतसव होता भया तहां गोष्टीपूर
न जी भी तिस उतसव के देखने को रंग नगर मे सब सं
त समाज के सहित चले आये तब दरसन करने के वासते
सो बडभागी गोष्टीनाथ रंगनाथ भगवान के भवन मे
आवते भये तिन को देखकर पूजक जन जो हैं सो बडे प्र
सन्न होकर के कहने लगे कि हे गोष्टीपूरन जी तुम को
भगवान कृपानिधान की इह आज्ञा है कि रामानुज को
अति से पवित्र और सरव सुखदायक मंत्रार्थ जो है सो
प्रीती पूर्वक उपदेसन करो क्योंकि इह भगवान का पर
म व्रत धारी भक्त है तब गोष्टीपूरन जी कहने लगे कि
इस मे मेरे को भगवान भक्त सुखदान की प्रथम ही आज्ञा है कि
जो पुरष इस उपदेश का अधिकारी हो तिस को प्रीता के
विना ही लखकर उपदेश किया जावे तो ते इह इस का अ
धिकारी नहीं है मै इस को कबी उपदेश नहीं कहूंगा परन्तु
अब जो भगवान की आज्ञा भई है सो कैसे की जै और विना
भगवान को कैसे पतीजै तब पूजक जन गोष्टीना
थ जी को फिर कहने लगे कि इह रामानुज जो है सो सर
व गुण प्रवीन भगवान का दृढ भक्त है इस के समान और दू
सरा कोई नहीं है तुम अपने हृदय का संदेह त्याग कर के
इस को मंत्र उपदेसन करो इस प्रकार पूजकों का कथन
सुन कर गोष्टीपूरन जी बडी प्रीती रुचीसे प्रसन्न होकर
और भगवान की आज्ञा सीस पर धार कर जिस प्रकार
कहते हैं सो आगे कथन किया जाता है॥ २२॥ चौपाई॥
आवहु रामानुज मम गेहू॥ मै मंत्रार्थ देहुं तोहि नेहू॥
अस कहि गोष्टी पूरन गवने॥ रामानुज आये तहि भव
ने॥ पै मंत्रार्थ दियो नहि तासा॥ फिर भवन जति नाथ
निरासा॥ अस दस अष्ट बार तहि धामा॥ किये गवनु अ

तिपति अभिरामा॥ उपदेसन कीनो कछु नाहीं॥ मंत्रा
रथ रामानुज का हीं वारनवमदस पुनि अभिलाषे॥
गये भरोस विपुल जिय राखे॥ तब गोष्टीपूरन अनखो
ई॥ जाहु जाहु कहु गिरा अलाई॥ सो सुनि जतिपति
षोय गिलानी॥ फिरे निरास ~~रुदन सुख मानी~~ रुदन
मुख ठानी॥ भवन जात इक संत निहारी॥ रामानुज
कर दसा दुषारी॥ आवा रंग नगर कहि सोई॥ समत्र
म हृदय सोच बस होई॥ गोष्टीपूरन सो द्रुत जाई॥
सो रामानुज दसा सुनाई॥ सुनि गोष्टीपूरन दुख तासा॥
भये ~~[illegible]~~ ति थल तन दया प्रकासा॥ बोलि एक
सेवक समुझावा॥ रामानुज पहं वेग पठावा॥ तहं द्रुत
जाय मोद प्रदवानी॥ रामानुज कहे वदन वषानी॥ दोहा॥
गुरु गोष्टीपूरन तमै बोल्यो सुमति निधान॥ करहु ध्या
न गुनि रुचिर हित अब न धरहु चित आन॥ २७॥ टीका॥
गोष्टीपूरन जी रामानुज को कहने लगे कि हे रामानु
ज अब तुम मेरे घर मै आवो मै हित पूर्वक तेरे को
मंत्र उपदेश करूंगा ऐसे कहते हुये गोष्टीपूरन जी
अपने घर को चले गये और इहां रामानुज भी अ
पने घर को चले आये मंत्रार्थ जो नहीं पावत है
आष्टा इसतें बडे निरास चित होरहे थे तब इसी मंत्र
की लालसा से अठारे बार गोष्टीपूरन जी के घर मे
जाते भये परन्तु तिनोने मंत्र उपदेस नहीं किया अन्त
को उन्नीसमी बार बडी अभिलाषा से और मन मै बडा
भरोसा राखकर फिर जो गये तो आगे से गोष्टीपूरन
जी क्रोध से भरे हुये कहने लगे कि जा चला जा ईहां
क्यौं बार बार आता हैं तब रामानुज सुन करके हृदय
मै अतसे गिलानी मान कर निरास होकर रुदन करते
हुये ~~[illegible]~~ फिर करके घर को चले आये तहां मारग मे
एक संत तिनको रुदन करते हुये परम दुखी देखकर
सोच करता ~~[illegible]~~ करता रंग नगर को

८ बडी कठ्ठधान्नीसे

हैं

न्याय तत्व गीतादि सुहावन॥ अर्थ युक्त मानस सुखछावन॥ व्यास सूत्र वेदांतै चारू॥ पंचरात्र आदि कगुनि सारू॥ संजुत प्रीति रीति मन भावा॥ कियो विमल उपदेस सुहावा॥ बहुरि तनय निज कर सिष कीन्यो॥ पुंडरिकान्त नाम जहि दीन्यो॥ पुनि भाष्यो पूरन हरषाई॥ अब जति पति गोष्ठी पुर जाई॥ तहँ अनन्य भक्त जदुराये॥ गोष्ठी पूरन स्वामि सुहाये॥ महँ विदु ख तिन तें भ्रम खेदु॥ शास्त्रार्थ सुनि लेहु उदेदु॥ रामानुज गुरु सासन पाई॥ किये गवन गोष्ठी पुर आई॥ बैठे जहँ सुखासन स्वामी॥ बारबार करि नम्र निमामी॥ दोहा॥ जुग कर जोरत दीनवत विनय वदन अस कीन॥ दीजे मोहि मंत्रार्थ प्रभु निज सेवक दृढ चीन॥ २४॥ टीका॥ फिर इनके सामंत्र है कि वेद का मूल है और सरव दुखदारिद्र और पापों के दूर करनेवाला तारक मंत्र ~~है सिद्ध है~~ प्रसिद्ध है हे जतीवर इन तुमको हम देते हैं तुम ~~ग्रहन~~ ~~करलेवो~~ सावधान होयकरके इस अमृत रस को पान करलेवो अर्थात इस मंत्र को ग्रहन कर लेवो ऐसे कहिकार के बडी प्रीती और हित से सो अमर जतीवर जी के कान में सुनाय दिया ~~तिसते उपरांत~~ गीता न्याय व्यास सूत्र वेदांत पंचरात्र इत्यादि सब अर्थ के सहित भलीप्रकार पढाय दिये और जो उपदेश करना योग्य था सो सब कर दिया ~~फिर~~ तिसतें उपरांत ~~ब~~ पूरनाचारी जीने अपने पुत्र पुंडरीकान्त नामा को ल्याय करके रामानुज जीका शिष्य बनाया और फिर कहने लगे कि हे रामानुज अब तुम मेरा वचन मानकर गोष्ठीपुर को चले जावो तहां कृष्ण भगवान के दृढभक्त और सरव गुणनिधान परम विद्वान गोष्ठीपूरन स्वामी जो हैं तिनका दरसन मेला करो और तिनसे हृदय के संपूर्ण भ्रम दूर करने वाला शास्त्रार्थ सुनकर के संसार में अभय हो जावो इस प्रकार गुरू जी की आज्ञा पाय करके रामानुज जी भगवान का सुमरण करते हूये गोष्ठपुर में चले गये तब ते

मंत्र

फिर

पूर्णाचार्य

आवन तुव हेतू॥ तो तुम कत सिष संग लिवाया॥ कि
ये उलंघन मोर रजाया॥ दोहा॥ तब रामानुज नम्र मु
ख विनय कीन कर जोरि॥ नाथ उलंघन दीन ते भई न
शासन तोरि॥ २८॥ शिष्य कहता है कि हे रामानुजजी
गुरू कृपाल और दीनो के हितकारी जो हैं अब तुमारे
को अवश्य मे आर्थ देवेंगे परन्तू तुम आप अकेले
ही चलो अपना शिष्य कोई साथ मत लेवो॥ तुमार
मनोर्थ सब सिद्ध हो जावेगा इस प्रकार सुन करके
रामानुज बडे हरष गुरू गोष्ठीपूरन जी के घरको
चल परते भये तब कूरेस और दासरथी यह दोनो ति
नके चेले भी साथ ही चले तिनको देखकर गोष्ठी
श्रीपूरन जी का शिष्य कहने लगा कि ~~रामानुजजी~~
मेरे को गुरु महाराजजी ने कहा हुआ है कि जो रामानु
जको अकेले ही ल्यावना केवल उपवीत और
त्रिदंड ही साथ होना चाहिये और कुछ नाहो तो ते तुम इन
शिष्यों को साथ मत लेवो गुरूजी तुमारे पर दूषण
धरेंगे और निश्चय करके कोप करेंगे इसमे तुमा
री भलाई ना होगी तब रामानुजजी कहने लगे कि
भाई इस मे तुम कुछ चिन्ता नहीं करो हम इन सब
बनाय लेवेंगे गुरू महाराज केभी कोप ना करेंगे
इस प्रकार रसतै मे वार्ता अलाप करते हूये गोष्ठीनगर मे
आय प्राप्त भये॥ तब गुरू गोष्ठीपूरन जी के सनमुख
जाय कर बडी दीनता से वारवार दंडप्रनाम करके
हाथ जोडकर ठाडे हो गये तब गोष्ठीपूरनजी तिनको
शिष्यों के सहित देखकर ~~कोपकर के कहने लगे~~
और अजोग जान कर हृदय मे कोप ल्याय करके उ
ग्रवचनो से कहने लगे कि हमने त्रिदंड और सूत्र के
के सहित तुमारे आवनेकी आज्ञा दई थी और तु
म शिष्यों को भी साथ ले आये हो मेरी आज्ञा को उ
लंघन कर दिया है ऐसे तिनके मुख से वचन सुनकर

रामानुज हाथ जोड़कर विनती करने लगे कि हे कृपानि
धान मैने तो आपकी आज्ञा उलंघन नहीं करी
है इसमे जो प्रार्थना है सो आगे कथन करता हूं ॥ २८
चौपाई ॥ त्यागन संग देउ उपवीता ॥ प्रभु सासन अस
रह्यो पुनीता ॥ इहमारे शिष दीन दयाला ॥ दोउ देउ
उपवीत रसाला ॥ तव गुरु मने वदन गत माला ॥ को
उपवीत देउ कहि भाषा ॥ गुरु कृपाल अनकूल नि
हारी ॥ रामानुज अस गिरा उचारी ॥ दासरथी प्रभु
देउ हमारा ॥ अरु उपवीत कूरेस उदारा ॥ इह जुग धर
म सहायक होई ॥ निवसत अंग संग मम दोई ॥ गोष्ठि
पूर्न तव गिरा उचारे ॥ जदपि देउ उपवीत तुमारे ॥
तद्यपि आवहु इतै अकेले ॥ मंत्र राज सुख लेहु सुहेले ॥
इन कहं जथा जानि अधिकारी ॥ तुम करिहो उपदेस
विचारी ॥ तव रामानुज जाय इकाकी ॥ बैठे गुरु पै सु
मरि पिनाकी ॥ लखि सुपात्र गुरु कृपानिधाना ॥ दीन
सुनाय मंत्र कल काना ॥ बारबार पुनि दीन सिखावन
मंत्र राज रह पावन पावन ॥ दोहा ॥ याको प्रकट न क
रहु जन राखहु जतन दुराय ॥ भक्ति मुक्ति जग करन
कल नरन सरब सुखदाय ॥ २९ ॥ टीका ॥ रामानुज क
हते हैं कि भगवन इस दास को आपकी आज्ञा देउ और
जग्योपवीत के त्यागने की थी तातें हे दीनदयाल इ
हमेरे दोनो शिष जो साथ हैं एक त्रिदंड और दूस
रा जग्योपवीत है ऐसे रामानुज के वचन सुनकर गोष्ठीपू
रनजी कोप से रहित होकर कहने लगे कि इन तुमारे
शिष्यों में कौन उपवीत और कौन सा त्रिदंड है तव गु
रुजी को प्रसन्न मुख देख कर रामानुज कहते भये कि
महाराज दासरथी जो है सो मेरा त्रिदंड है और कूरेस जो
है सो उपवीत प्रसिद्ध है इह दोनो धरम के सहायक हो
कर मेरे अंग संग ही रहते हैं तव गुरु गोष्ठीपूरनजी
कहने लगे कि रामानुज इहां यद्यपी तुमारे त्रिदंड और
दोनो

उपवीत ~~सैक्ते~~ हो हैं तथापी इहां तुम अकेले ही आवो और
जगत के जीवों को तारने वाला परम पवित्र राज मंत्र जो
है सो सुनकर के ब्रह्मानंद मे लीन होजावो फिर इनको
जो से अधिकारी देखोगे तैसे ही उपदेश सुनाय कर कृ
तार्थ करियो ॥ ऐसे गुरू जी के मुखसे वचन सुनकर रा
मानुज जी अकेले होयकर हरिहर का सुमर्न करते हुये
(पास) गुरू जीके आय बैठते भये तब कृपानिधान गुरू जी ने
कृपा दृष्टि से तिन को सुपात्र जानकर सर्व मंगलों का मू
ल सो तारक मंत्र तुरत ही कानों मे सुनाय दिया और
फिर बारबार सिखाय कर भली प्रकार समुझाय दिया कि
(त्र) इह पवित्रों से पवित्र राजमंत्र जो है इसे छिपाय करही (को)
राखना कही प्रकार नहीं कहना ॥ इह कैसा मंत्र है कि ज
गत मै भुक्ती मुक्ती के सहित सर्व जीवों आनंद और (को)
सुख के देने वाला है ॥ २८ ॥ चौपाई ॥ एवमस्तु कहि
जति पति ज्ञानी ॥ करि प्रणाम पद परसत पानी ॥
लैत विदाय रंगपुर आयो ॥ जानि धन्य निज जनम
सुहायो ॥ तहं नरसारदूल भगवाना ॥ रह्यो ल
सित इक भवन महाना ॥ माधव मास तहां जब आ
यो ॥ नरहरि जनम महूरत सब छायो ॥ देस देस तें संत
निकाये ॥ ते लीला दरसन हित आये ॥ अति सेवग भी
भयो पुर माहीं ॥ जहं तहं साधु समाज दिखाहीं ॥ च
हुं कित करत संत परिवारा ॥ जै हरि जै हरि घोष अपा
रा ॥ तब जति नाथ गुन्यो मन मेता ॥ जुरे आय इत सं
त अनन्ता ॥ ~~अघ बरनते पर कछु नाहीं~~ ॥ अघ बरन
तें पर कछु नाहीं ॥ प्रबल परत अग कोटि नसाहीं ॥
तातै अवसि काज इह करहैं ॥ चढि उतंग मंदिर
स्वर भरहैं ॥ अघ बरन अग हरन सुनाई ॥ करहुं
अधम उधरन समुदाई ॥ करि विचार अस जति प
ति जी के ॥ सुमरत चरन कंज सिय पी के ॥ दोहा ॥ ते
हि दिन भई अधरात जब उठि अकेले सुख छाय ॥

चला आया तहां पहुंचताहीं ततकाल गोष्टीपूरन
जीके पास जायकर सो रामानुजकी दशा जो देखीथी
सब सुनाय दई तब गोष्टीपूरन जी रामानुजका प्रेमादु
ल और कलेश सुनकर तुरतहीं कोमल और रसिपल
तन होयगये दया जो है सो रोम रोममें छाय गई त
तकालहीं अपने एक सेवक को बुलायकर और
भलीप्रकार समुझाय कर रामानुजके ल्यावनेंवासते
भेजदिया सो शिष्य तहां रामानुज जी के पास जायकर
परम चतुराई और मीठी बानी से कहने लगा कि हे बुद्धि
के धाम रामानुजजी तुम को गुरु गोष्टीपूरन जी प्रीती
पूर्वक तहां अपने पास बुलाया है सो अब तुम चित्तमे
हित मानकर और भ्रमग्लानी इत्यादि सब विसार
कर चलो तिनके चरनो की शरण प्राप्त करो ॥ २७ ॥
चौपाई ॥ गुरु कृपाल दीनन हित कारे ॥ अब मे साथ
देहिं तुमारे ॥ चलहु आपु एकल गुरु धामा ॥ होहिंअ
बसि पूरन सब कामा ॥ सुनि रामानुज आनंद छाये ॥
गोष्टीपूरन भवन सिधाये ॥ तब कूरेस दासरथि दोई ॥
चले संग रामानुज सोई ॥ देखि गोष्टिपूरन जनभाषा ॥
मेरे गुरु कृपाल कहि राखा ॥ चलहु अकेल पूरि मन
मंत्रा ॥ लिये संग उपवीत त्रिदंडा ॥ शिषन संग जनि
लेहुसुजाना ॥ धरहिं अवसि दूषन गुरु ज्ञाना ॥ नि
श्चै करहिं कोप अधिकाई ॥ तापर होहिं न तुमहिं भ
लाई ॥ रामानुज भाष्यो तिन काहीं ॥ तुव न करहु चिं
ता मन माहीं ॥ हम सह जहिं सब लेब बनाई ॥ जहिंते
गुरु न करहिं रिस भाई ॥ याविध भनत पंथ मुखबा
नी ॥ आये गोष्टि नगर सुख मानी ॥ गुरु गोष्टीसन मु
ख कर जोरी ॥ किये दंडवत प्रीति न थोरी ॥ शिषन
सहित रामानुज काहीं ॥ तब गोष्टीपूरन ताहीं ॥
लखि अजोग नयननरिस ल्याये ॥ उग्र वचन जतिप
तिहिं सुनाये ॥ हम त्रिदंड उपवीत समेतू ॥ कहिपठयो

टीका॥ तव जहां अनेक सिष सेवकों सहित संतों का समा
ज जुड़ रह्याथा तहां रामानुजजीने वारंवार ऊंची स्वर से
सो अष्टाक्षर मंत्र जो था उचारण करदिया तव सो जगत को
पवित्र करने वाला मंत्र तहां चुहत्तर जनो के कानो मे सु प्राप
ड़ा सो सव सुनते हीं परम जोगी श्वर होय कर सुजस के सहि
त मुकती कैं सुखको प्रापत हो जाते भये और पीठ कहाय कर
अव लौं दक्षण देस मै प्रसिद्ध हैं जव इस प्रकार रामानुजजीने
मंत्र प्रकाश किया तव गोष्टीपूरन जी का एक सेवक रामानुज
जी कैं इस उपकार और उदारता को देखकर उतायल से भागा
और जाय करके गुरु गोष्टीनाथ को सव वृतांत सुनाय देता भया
कि भगवन तुमने जो रामानुज को अधिकारी जान कर गुपत मंत्र
दियाथा और वारवार समुजाय कर वरज दियाथा कि इस मंत्र को
कवी प्रकट नहीं करना सोई मंत्र तिस रामानुज ने आप कीं मे
गन करके रंगनाथ के भवन पर चढकर वड़ी ऊंची स्वर से सव
कौं सुनाय दिया है मै तिस का इह अजोग करम देख कर आय
करके आपको ~~सुनाय~~ जणाय दिया है तव गोष्टी पूरन जी
तिसके मुख से ऐसा कथन सुन करके महा कोप के वस होय गये
ततकाल हीं रामानुज के ल्यावने के वासते वड़े क्रूर सुभाव वा
ले साधू जो थे सो भेज दिये॥ ३१॥ चौपाई॥ आय संत रामानुज
पासा॥ गुरु सासन जस वदन प्रकासा॥ रामानुज कछु विलम न
कीना॥ गुरु पैं आय हरष मन लीना॥ तव गोष्टीपूरन तहि हे
रे॥ भरे ~~नैन~~ कोप करि नैन तरेरे॥ भाख्यो रे मूरख मति ही
ना॥ मै जोई मंत्र राज तोहि दीना॥ सव सास्त्रन महं गोप महा
ना॥ कवहुं न अधर ~~विते~~ वहिर निकसाना॥ मै तोहि जानि पा
त्र अधिकारी॥ तव दीन्यो तुव स्रवण उचारी॥ वार अनेक तु
मै समुझावा॥ तापर दुरमति सपथ धरावा॥ जनि काहू सों भू
लि भुलाई॥ गोप मंत्र इह देहु सुनाई॥ जो कवहुं कि तुम कि
यहु प्रकासा॥ तो सति लखिहु नरक निजवासा॥ सो तुम मं
त्र राज मनु सारू॥ चढि उतंग प्रभु रंग दवारू॥ ऊंचे स्वर
वहु वार उचारा॥ सुनत भयो तहं मनुज अपारा॥ गुरु सास
न भंगन तुव कीना॥ दीषत हो कोऊ मनुज मतीना॥ दोहा॥
तुमहिं सास्त्र विधि देउ अव देन उचित गुरु द्रोहि॥ जो भ
ख्या करि वचन तुव वे च्यो दुरमति मोहि॥ ३२॥ टीका॥
तव सो साधू रामानुजजी कैं आय कर गुरु गोष्टीपूरन
जी की आज्ञा सुनाय देते भये कि चलो गुरुजी तुमको वीलावरवु

बुलावते हैं ऐसे तिनके मुखसे गुरूजी की आज्ञा सुनकर रामा
नुजजी विलंबको त्याग कर ततकाल ही चल पड़ते भये और
गुरूजी के पास आय करके वते हो प्रणाम करके सनमुख स्थित हो
य गये तब गोष्टी पूरन जी तिनको देख कर कोप से लाल ने
त्र करके कहने लगे अरे मूरख बुद्धि के हीन मैंने जो तेरे
को राज मंत्र दिया था सो सेपूर्ण शास्त्रों में गुप्त ही राखा हूआ
है प्रकट नहीं है ~~और मैंने तेरे को अधिकारी और सुपात्र~~ ~~जो~~
~~जानकर कानों में सुनाय दिया था~~ मैंने तुम को अधिका
री और सुपात्र समुझा था तब मूढ तेरे कानों में सुना
य दिया था और वारवार सिखाय समुझाकर सुगंद भी क
रवाई थी कि कहीं प्रकट मत करना जो कभी प्रकट करोगे
तो सत्य करके अपना वास नरक में ही जान लेना॥ सो तुम
ने इस राजमंत्र को कि जो सरब मंत्रों में सार है रंगनाथ
भगवान के भवन के ऊंचे द्वार पर चढ कर वडी ऊंची ही
स्वर से वहुत वार उचार करके सब लोगों को सुनाय दि
या है और गुरू की आज्ञा भंगन होने का कुछ भी विचार
नहीं किया है इस ते जाना गया कि मूढ तूं कोई मन मतिया
अपनी इच्छा ही करने वाला है हे गुरू द्रोही तेरे को अब
शास्त्र की उक्त अनुसार दंड देना जोग है क्योंकि तैंने झूठ
बोल करके मेरे को वंचन किया अर्थात छल लिया है॥ १२॥
चौपाई॥ तब जतिपति जुग जोर तहाथा॥ कहि सुन हु वि
नती मम नाथा॥ प्रभु प्रथमहिं उपदेस न कीनो॥ इह अ
थाह तत्र रूप हरि चीनो॥ तुमरे श्रवण सुधार हम भरऊ॥
का हूं सों जनि भाषण करऊ॥ पावन राज मंत्र इह जोई॥
जास करन कल पृवसन होई॥ कोटि जनम अघ तास वि
धंसे॥ करहि गवन हरिभवन असंसे॥ कसहिं न वहुरि
जगत जंजाला॥ हरि सेवन सुख लेहिं विसाला॥ विनु
आसा प्रीता विनु कोऊ॥ करहिं मंत्र उपदेस न जोऊ॥
होहिं सो अवसि नरक कर भागी॥ वेदपुरान भनत अस
वागी॥ सो मैं सुन हु दीन दुख हारू॥ निज मानस किय
वि मल विचारू॥ चढि ऊंचे कहू भवन दवारा॥ राजमंत्र

इह कर हुंउ चारा॥ जो नर हरि उतसव अभिलाखें॥ लाघ न आय संत रुचि राखें॥ जिनजिन श्रवण मंत्र इहपर हीं॥ ते हरि भवन गवन द्रुत कर हीं॥ दोहा॥ मै जाऊं तो जाऊं इक नरक बात कछु नाहिं॥ पहुंचाऊं इन जनन विनु जतन पर म पद काहिं॥ ३३॥ टीका॥ तब रामानुज दोनो हाथ जोड़कर क हने लगे कि भगवन मेरी विनती सुनिये जो आपने पहिले हीं उपदेश किया था कि इह अष्टाक्षरमंत्र जो है सो साक्षात भगवान का हीं रूप है मैने तुमारे कानोमे सुनाय दिया है मत किसी के साथ प्रकट करना इह परम पवित्र राज मंत्र जो है जिस के का नोमे प्रवेश करेगा तिसके कोटि जनम के पाप भीन नासको प्रा पत होवेंगे और निर संदेह होकरके भगवान के भवन को च ला जावेगा सो फिर कवी इस जगत के जालमे नहीं फसेगा भगवान के सेवन करने का परम सुख जो है तिस को प्रापत होवेगा और जो कोई विना आज्ञा और विना प्रीक्षा के इस राज मंत्र का उपदेश करेगा सो अवश्य करके नरक का भागी होवेगा सरव वेद शास्त्र का भी एही मत है कि परीक्षा और अधिकार के विना उपदेश नहीं करना सो हे दीनो के दुख दूर करने वाले गुरु महाराज मेहृदयमे विचार करके एही सोचा कि किसी ऊचे भवन के द्वार पर चढ़कर इस राज मंत्र को ऊ ची स्वर से उचारन करूं तो जो जो संत महातमा नर सिंह ली लो के देखन को अनेक आये हुये हैं इस परम पवित्र और तारक मंत्र को सुनकर सब हीं भगवान कृ पानिधान के परम धामं जाय प्रापत होवें एक मै नर क को जाऊं तो जाऊं कुछ बात नहीं है परन्तु ~~इतने पूरी लोग और सो तो विना जतन के भगव~~ इनसे पूरी लोगों का तो उद्धार हो जावे॥ ३३॥ चौपाई॥ जो मम अनुचि त मंत्र ~~उच्चरे~~ पुकारे॥ अस मोरे अस नरक सिधारे॥ ह रिपुर लाखन जीव सिधाहीं॥ तो कछु हानि नाथ मोहि ना हीं॥ नरक गवन अस दीन दयाला॥ मोरे सुजस सुखद सब काला॥ एहि गुन तमै दीन उचारा॥ अश्वरन चढ़ि भवन उ चारा॥ गिरा गूढ़ रामानुज नी की॥ पावन श्रवण सुखद प्रीय जी की॥ सुनि गोष्ठी पूरन अनुरागे॥ मान सविविध प्रहसन लागे॥ याके जिये अवधगत दया॥ इह अवतार

(margin: परीक्षा; किसी ऊचे भवन के; उच्चस्वर ते ऊचे)

ऋति उतंग प्रभु रंग के चढ्यो द्वार द्रुत जाय॥ ३०॥ टीका॥ तव ज
तिवर जो रामानुजजी हैं तिस राज मंत्र को पायकर एवमस्तु कह
ते भये कि भगवन ऐसे ही होगा तिसके उपरांत गुरुजी के चरणों पर
प्रणाम करके और आनंद पूर्वक विदाय लेकर रंगपुर को चले आ
वते भये तहां और अपने भागों को उदय जानकर तहां निवास करने
लगे तव रंग नगर में नरसिंह भगवान का एक बड़ा सुंदर भवन था
जब माधव मास अर्थात वैसाख महीना आया तो तहां नरसिंह भग
वान के जन्म का बड़ा भारी उत्सव होता भया देस दिसाओं के संत
महात्मा लीला देखने के वास्ते तहां चले आये नगर में अत्यंत ही
भीरभार होयगई जहां तहां साधुओं के समाज ही देख पड़ते हैं चारो
पासे में जै हरी जै हरी एही शब्द पूरित होरहा है तव रामानुजजी ने
अपने हृदय में विचार किया कि इहां संत भक्त समूहों के समूह जुड़े
हुये हैं जिनका कुछ अन्त नहीं आवता और अष्टाक्षर मंत्र ते परे और
कुछ नहीं है कि जिसके कानों में पड़ने से कोटि पापों का नाश हो जा
ता है तो तिस मैं अवश्य इह कारज करूं जो ऊंचे चढकर और ऊंची ही
स्वर से [struck] तारक मंत्र जो है सव को सुनाय देऊं इस में [struck] एके
वार ही सव का उद्धार हो जावेगा इस प्रकार विचार करके सीता
के पती रामचंद्र भगवान जो हैं तिनका सुमरण करते हुये तिसी
दिन की आधी रात को आनंद पूर्वक अकेले ही उठकर रंगना
थ भगवान के भवन का बड़ा ऊंचा द्वार जो था तिस पर जाय च
ढते भये॥ ३०॥ चौपाई॥ जहां अनक सिष सेवक संगा॥ जुरे स
माज संत बहुरंगा॥ रामानुज मुख वारंवारा॥ अष्टाक्षर तारक मं
त्र उचारा॥ चौहत्तर जन श्रवण सुहावन॥ संत है पायो मंत्र ज
ग पावन॥ ते जोगीश्वर भये उदंडा॥ पाय मुक्ति सुख सुजस अ
खंडा॥ चौंठ कहाय संत सुभवेसा॥ अव लौं विदित सो दक्षण दे
सा॥ जव जतिपति अस मंत्र प्रकासा॥ तहां गोष्टि पूरन दासा॥
जाय मरम निज गुरुहि जनायो॥ प्रभु हम देखि दृगन सव आ
यो॥ गुपत मंत्र भगवन तुव जेहू॥ जतिवर कहं दीन्यो लखि
नेहू॥ वरजि दियो प्रभु वारहि वारा॥ करिहैं कवहु न प्रकट उ
चारा॥ तौन मंत्र जतिपति द्रुत जाई॥ चढि उतंग प्रभु मंदिर
जाई॥ ऊंचे स्वर मुख भलहि अलापा॥ दीन्यो सवकहं प्रकट सुना
पा॥ इह अनुचित हम तौ करपाई॥ दियो आय प्रभु तुमहि सुना
ई॥ दोहा॥ गोष्टी पूरन सुनत अस भरे परम रिस नैन॥ रामा
नुज कहं तक कछु सठे पठे संत द्रुत लैन॥ ३१॥ [struck]॥

^नरसिंहजन्मकी
^से
^२
^द्रुत

३०५

305

हे भ्रमररूपी श्रोताजनो रस के सहित जानकर स्रवणों के मार्ग से सनमान पूर्वक पान करिये कहते हैं कि धरम का पुत्र और जगत में धरम के बीच प्रधान राजा जुधिष्टिर जो प्रसिद्ध होता भया तिसका प्रताप और सुंदर धन्यवाद अर्थात सुजस दुरजोधन जो है सो सहार नहीं सका तिस के हृदय मे बहु भारी द्वेष उतपन्न होजाता भया और मूढ छल बल करके तिसको हरने का ही जतन विचारता रहता था अंत को घर मे जूये की खेल रच कर और लज्जा गिलानी को त्याग कर करन दुसासन और सकुनी के साथ सरब कुल के नास करने वाला मंत्र विचार कर के आप अधम आय कर के राजा जुधिष्टिर के पास बैठ गया और बीर धीर पांचो भ्राता पांडव जो हैं तिनको निमंत्रण करके बुलाय भेजा कि आप हमारे घर मे आइये और भोजन पाइये सो पांडु पुत्र कपट छल से रहित सूधे सुभाव वाले संदेस सुनते ही कृस्न भगवान का सुमरण करते हुये बड़े हरष से तहां चले आये और अंध भूप राजा धृतराष्ट्र अपना सब समाज जोड़कर सभा के बीच बैठा हुआ था तहां प्रणाम करके आनंद पूर्वक बैठ जाते भये तब दुरजोधन कहने लगा कि हे गुण प्रवीन राजा धरम तुम हमारे साथ लज्जा को त्याग करके द्यूत क्रीड़ा जो है सो करो अर्थात जूआ खेलो हे राजन जहां इस प्रकार जूआ अथवा जुद्ध आय पड़ता है तहां सूरबीर जो होते हैं सो सनमुख छाती धर देते हैं ऐसा समय चूकने और पीछे हटने वाला नहीं होता है क्योंकि लोग अपजस और निंदा करते हैं तातें समय पड़े पर सूरबीर को हट करके पीछे पाउं धरना जो है सो तिस की मान बड़ाई और बल सामर्थ को हानी देने वाला और जगत मे कुल को कलंक लगावने वाला है ॥१॥ चौपाई ॥ अस जोधन दिय तरक बरेसा ॥ सावधान किय धरम नरेसा ॥ भीषम द्रोणाचारज जाहां ॥ ताहि समाज बैठि नर नाहां ॥ भूप सजोधन के अनुरागे ॥ द्यूत केलि कल खेलन लागे ॥ सकुन सजोधन

(margin notes:) ^त्यागकर ^महा ^त्र ^धृतराष्ट्र पटसें ^जहां ^निरसंक होयकरके ^इसमैसब

गुनत अज्ञासा॥ दीन चलाय करन छल पासा॥ क्रम क्रम तहां धरम सुत सारी॥ छल वस दीन विभू निज हारी॥ लखि असक्त धृत्राष्ट्र राई॥ हारित वस्तु सब दीन दिवाई॥ तब दुरजोधन पितुहिं बखाना॥ हम जीत्यो नृप विभू महाना॥ प्रभु दया करि सकल दिवाये॥ दीननाथ इह हमहिं न भाये॥ अब न करिय अस दया घनेरी॥ कौन देत जीत्यो पण केरी॥ अस कहि बहुरि सुजोधन राई॥ धरम सुवन द्रुत लियेउ बुलाई॥ सरुचि नृपति जुग खेलन लागे॥ अस प्रण बंधत द्यूत रस पागे॥ अब कर बार हार जहि लीनो॥ तहि रवि बरष कानन चीनो॥ दोहा॥ एक बरष अज्ञात महं विचरहिं सं सृति सोय॥ जो प्रकटहिं तव बास वन आन बरष दस दोय॥ २॥ टीका॥ इस प्रकार दुरजोधन ने अनेक तरकें दे दे कर राजा जुधिष्ठर को सावधान कर दिया तब जहां भीषम और द्रोणाचार्ज जी बैठे हुये थे तिसी समाज मैं बैठ कर दुरजोधन के साथ बड़ी रुची से द्यूत सजो जूआ है सो खेलने लगे सकुनी और दुरजोधन जो हैं सो परस्पर जतन विचार कर छल का पासा हीं डारते जाते हैं तिसतें क्रम क्रम करके राजा जुधिष्ठर छल के वस भये हुये अपनी सब विभूती जो है सो हार देते भये तब तिन को असक्त भये हुये देख कर अंधभूप राजा धृत्राष्ट्र ने सब हारी हुई वस्तु फिर कर तिन को हीं दिलवाय दई इस अयोग्यता को देख कर दुरजोधन अंधभूप अपने पिता को कहने लगा कि महाराज हमने धरम पुत्र का महा प्रताप और विभूतीं जीत लई थी आपने दया कर के फिर तिन को हीं दिलवाय दिया है हे दीनानाथ इह आपकी उदारता हमको नीकी नहीं लगी है अब कृपा कर के इसतें आगे फिर ऐसी घनेरी दया को हृदय मैं मत ल्याविये कृपानिधान जीता हुआ दाउ कौन फेर देता है ऐसे कहि करके दुरजोधन जो है सो धरम पुत्र राजा जुधिष्ठर को फिर बुलाय लेता भया तब तो रुची पूर्वक दोनो राजे ऐसा प्रण बांध करके पासा ढालने लगे कि अबकी बार जो हार जावेगा सो बारां बरस तक वन मैं हीं विचरता रहेगा और तिस बारां बरष की अवधी मैं एक बरष तक लुपत होय कर के विचरना प्रकट नहीं होना जो कभी प्रकट हो जावे तो फिर बारां बरष तक और वनवास भोगना चाहिये॥ २॥ चौपाई॥

[margin notes: द्यूत; हम हीं हैं; सब कुछ; और; और]

२०६ ३८६

असमंजस ईकार परस्पर भयऊ॥ पासा सकुनि डारि तब दयऊ॥ भूप जुधिष्ठिर सरल सुभाऊ॥ ते अग कुमति कुटिल रत दाऊ॥ लख्यो न तिनकर कपट अजासा॥ छलवस हारि गये नृप पासा॥ दुष्ट सभा जउ ठ्यो सब देखी॥ सुजन सोच उर उपज बसेखी॥ तब जोधन मुसक्याय बखाना॥ राखिये जो न रह्यो कछु आना॥ बिलखत धरम सुवन तब कहयौ॥ भवन एक द्रुपदी अव रहयौ॥ पणपें सोऊ राखि हम दीनी॥ जो कुरुनाथ जीति तुम लीनी॥ तो हमार निश्चय बनवासा॥ अस कहि डारि दीन द्रुत पासा॥ हारि गये नर नायक सोऊ॥ महा अनर्थ भने सब कोऊ॥ नीति निधान धरम सुत धीरा॥ रत विज्ञान सुमति गुण खीरा॥ महा विदुष विद्वान उजागर॥ वेत्ता वेद सुजस सुख सागर॥ भक्ति प्रधान जान जल खीरा॥ भा अस कस कहा सूत सकीरा॥ दोहा॥ अहो दैव भावी प्रवल जो के व्यापति आय॥ ज्ञान ध्यान धीरज सुमति जात सकल विलगाय॥ टीका॥ ऐसे जब परस्पर समईकार होगया तब सकुनी ने तुरत ही पासा डाल दिया ईहां राजा जुधिष्ठिर निसकपट और सूधे सुभाववाले ~~किंतु~~ सत्य की मूरती और वे अधम पापी और खोटी बुद्धीवाले महा कपटी अपना दाउ संभालने मैं सावधान ~~किंतु~~ जो थे सो तिन दुष्टों के ~~कपट~~ कपट को धरम के पुत्र राजा जुधिष्ठिर लख नहीं सके छल के वश होकर धोखे से दाउ जो है सो हार गये जब इस प्रकार धरम भूप ने दाउ हार दिया तब देखकरके दुष्ट समाज जो था सो सब उठ खड़ा भया और भले लोग जो सज्जन जन थे सो अपने अपने कलेश मानकर सब सोचने लगे कि इह क्या अनर्थ होय गया है तब दुरजन राजा जुधिष्ठिर की ओर देखकर मुसक्यायकरके कहने लगा कि जो कुछ और ~~भी है तो~~ भी बाकी रहा है तो ल्याईये दाव पर राखिये ऐसे तिस का कथन सुन कर लजित भये हुये राजा जुधिष्ठिर कहने लगे कि अब तो घर मै बाकी एक द्रौपदी ही रही है सो भी मैने दाउ पर राख दई है ~~से~~ हे कुरुनाथ दुरजोधन जो इह भी तुमने जीत लई तो अब निश्चय करके हम बन वास जो है सो ग्रहण कर लेवेंगे ऐसे कहि करके ~~फिर~~ तुरत पासा डाल दिया दैव इच्छा से ~~फिर~~ भी हार गये तब तो सब लोग देख करके महा अनर्थ पुकार उठे कि इह क्या अचर्ज भया है देखो

अथ द्रौपदी चरितं

दोहा॥ अव प्रसन्न प्रद हरन मन करन सरन श्रीकंत॥
पंचाली पावन कथा वरनहुं संत महंत॥ संत सुजस म
ध जासु जस जथा पदम मकरंद॥ करिय पान सादर स
रस स्रोता सुजन मलिंद॥ चौपाई॥ धरम पुत्र जगधरम प्र
धाना॥ भूप जुधिष्टर विदत महाना॥ तासु प्रताप सुजस
जग भारी॥ दुरजोधन नहीं सक्यो सहारी॥ उर ज्यो देष
विपुल जिय माहीं॥ हरन तासु छल वल करि चाहीं॥ वि
र च्यो श्वेत भवन गत ब्रीड़ा॥ दुरजोधन नृप द्यूतस क्रीड़ा॥
करन दुसासन सकुन हे चारी॥ गुन्यो मंत्र नासि ककुल
सारी॥ बैठे आपु अंध नृप पासा॥ बोलि पठ्यो नृप धरम
हुलासा॥ वर ज्यो हृदय कपट सरसाई॥ वीरधीर ध्रुव पैं
ड़क भाई॥ साधु सरलचित कपट वहीने॥ पंडु पुत्र मनन
रथ प्रलीने॥ सुमरत कृष्ण चरन वडभागे॥ चलि आ
ये मानस अनुरागे॥ जहं धृतराष्ट्र जोरि समाजा॥
रह्यो रुचिर निज सभा विराजा॥ करि प्रणाम तहं पां
डु कुमारा॥ बैठे अंध भूप दरवारा॥ बोल्यो वचन सुजो
धन ताहीं॥ सुनहु प्रवीन धरम नरनाहीं॥ हमसन करि
य आज गत ब्रीड़ा॥ तुमहु भूप वर द्यूतस क्रीड़ा॥ परेज
उ द्यूतस इहि भाती॥ धरत वीर नृप सनमुख छाती॥ इह
अवसर नहि चूकन जोगू॥ करहि भूप अपजस सव लो
गू॥ दोहा॥ समय परे पर सूर कहं हटि पाछिल पग दैन॥
अरन गरव गहतादि वल कुल कलंक जग लैन॥ १॥ टीका॥
नाभादास जी कहते है कि हे ~~गुरदेव स्वामीजी~~ अव आनंद के दे
ने वाली और वडी मनोहर श्रीपती जो भगवान हैं तिन के च
*की रन कमलों" शरण को प्राप्त करने वाली पंचाली जो द्रोपदी
है तिस की गाथा मे कथन करता हूं ~~ऐ~~ कैसी "द्रोपदी है कि *श्री
जिस का सुंदर जस संत जनो के सुजस के बीच ~~ऐसे~~
नानो ~~ऐसा देता है कि जैसे~~" ~~पुष्प के बीच~~ मकरंद अर्थात पु
ष्प रस ~~ऐसे मानो पद्म मकरंद~~ ऐसे है कि जैसे पद्मों के
वीच मकरंद अर्थात पुष्प रस सोभा देता है सो तिस का अव

*संत महंतजनों

*सैन्यमानो

श्री ग्र जायकर भीतर भवनो से द्रोपदी को पकड़कर सभाके बीच ले आवो क्योंकि पांडवोंने हार दई है सो जीतेपर अब हमारी होय गई है तुम अबी तिसको पकड़कर और ल्यायकर सभाके सब लोगोंको दिखाय देवो इसप्रकार दुसासन राजा दुरजोधन की आज्ञा सुनकर तुरत हीं अन्तःपुर को अर्थात भवनोंके भीतर को चलागया और तहां दुष्ट बुद्धी कुलकी सब लज्जा को त्याग कर द्रोपदी के भवन मे आय प्राप्त भया तिस समय सो द्रोपदी कि जो स्त्रियों के धरम मैं परम प्रवीनथी सिर से पाउं तक एकै वस्त्र हीं ओढे हुये पुष्पवती और मुक्त केशी होरही हुई थी अर्थात रितु समय होनेकारके केश खुले हुयेथे और अपने भवन मे इकान्त हीं बैठी हुई थी तब आयकर और लज्जाको त्यागकर दुष्ट दुसासन जो है सो कहने लगा कि सुनो द्रोपदी तेरे को तेरे पती राजा जुधिष्ठर ने अब धनधाम पृथवी इत्यादि सब विभूतीके सहित जूयेकी खेलमैं हार दिया है ॥४॥ चौपाई॥ तोहि जीत्यो दुरजोधन राई॥ मोहि सासन अस कठिन सुनाई॥ आपन दासि जानि जीय दारा॥ ल्यावहु मुजागहेत दरवारा॥ भामनि अब विलंब जनि कीजे॥ उठहु पंथपग आगत्ले दीजे॥ चलहु सभा दुरयोधन राई॥ बैठो जहे समाज समुदाई॥ जबअस कथन दुसासन कीना॥ भई द्रुपदि मन विकल मलीना॥ उड़िगई वदन जोति सब लाली॥ पियरि भई लखि समय कुचाली॥ हाय हाय दई बन्यो अजोगू॥ कहां जाऊं कस देखत लोगू॥ विलपत गिरा वदन मृदु कहयो॥ मोरी मुकत केसि गति रहयो॥ तोते मलहिं विदत तुव काहीं॥ जैव जोग पुष्पवति नाहीं॥ जो उपकार करहु करि दाया॥ दसा विलोकि मोर इहकाया॥ समुझावहु कुरु नायक काहीं॥ तो अपराध तुमरे कछु नाहीं॥ अब न होत पतरारवन हारे॥ वीरधीर परपीर निवारे॥ परदुख देखि लहत दुख भारी॥ तुमसे विदत विसल उपकारी॥ दोहा॥ सुनि स्मृति वचन वनीत अस द्रुपद सुता मृदु पूत॥ आजहु कलि भव मनुज मन होत दया द्रवि भूत॥ ५॥ टीका॥ फिर दुसासन कहता है कि द्रोपदी तेरे को राजा दुरजोधन ने जीत लियाहै और मेरे को [illegible] कठिन आज्ञा देकर के भेजा है कि अब द्रोपदी को अपनी दासी जानकर भुजाहे प

कर कर के दरबार मे ले आवो तो ते हे भामनी अब विलंब मत करो उठो मेरे साथ राजा दुरजोधन की सभा मे चलो ~~कि~~ कि जहां अनेक महाजनों के सहित कौरवों का समाज बैठा हुआ है जब इस प्रकार दुसासन ने कथन किया तब द्रोपदी सुनतीही व्याकुल और मलीन चित होय गई मुख की लाली और जोतीजो थी सो ततकाल ही सब उड गई समय की कुचाली विचार कर हलदी के समान पीली होय गई और मन मे कहती है कि हाय दई इह कौन अजोग आय बना मै क्या करूं कहां कैसे जाऊं सब लोग देखते है तब विलाप करती हुई दीन होय कर बडी कोमल बानी से दुसासन को कहने लगी कि हे सुमती निधान तूं विचार कर जो मै इस समय पुष्पवती हो रही हूं ~~सो~~ और इस मे तो तुम को भी भली प्रकार विदत है कि पुष्पवती जैसे जोग अर्थात कहीं जाने के लायक नहीं होती है तो ते हे गुण प्रवीन "तुम ~~तुम~~ मेरे शरीर की इह दशा देख कर जो उपकार कर के दया करो और कुरूनायक राजा दुरजोधन को समझावो तो तुम को इह बारता कुछ कठिन नहीं है सहज ही है क्योंकि दुखित होते की पत राखन हारे पर पीडा के निवारने को सामर्थ और पर दुख अर्थात दूसरे का दुख देख कर आप को परम मानने महां वीर धीर भी तुमारे जैसे हीं उपकार की निधी होते हैं इस प्रकार बडे कोमल और विनती वाले अत से दीन वचन ~~[illegible]~~ द्रुपद ~~[illegible]~~ राजा की कन्या के सुन कर आज भी कली काल के उतपन्न भये हूये ~~[illegible]~~ मान छों का मन ~~[illegible]~~ दया कर के द्रवीभूत मानो ~~पानी वत चल परता है~~ जल समान हो चलता है ॥५॥ चौपाई॥ तब तो रह्यो सि द्वापर छाया कंस न भई तो के उर दाया॥ इह भावी कर गौरव ताई उपज्यो द्वेष दुष्ट मति छाई॥ भृकुटि वंक करि सदृग न दिखाई॥ बोल्या बदन सजोधन भाई॥ नहिं अब काम उक्त अब मोही॥ मैनी के जानत हों तोही॥ कहि कहि बदन नम्र मृदु बानी॥ त्रीय चरित्र करि वंचिन लागी॥ जो न चलहु उठि आपु निदानी॥ तो मै अबहिं गहित कच पानी॥ लै जैहौं आगल धरि तोही॥ देखिये कौन निवारत मोही॥ क्रूर वचन अस सुनत महाना॥ धरम पतनि पतिव्रता

प्रधाना॥ सहिमि सकुचि मृगि जथा मृगेसू॥ भई मौन लषि विपुल कलेसू॥ गुनत मनहिं मन आज हमारे॥ पूर्व पुन्य सब भये नकारे॥ दैव कवन इह बन्यो कुचाली॥ विलपत विपुल सोच पंचाली॥ तोलों धाय धरन हित दारा॥ हाथ भ्रात कुरुनाथ पसारा॥ भन्यो द्रुपदि करि नयन तरेरे॥ रह रु दूरि जनि आवहु नेरे॥ धनुर्गांडीव धरन धृतिधारी॥ पारथ विदित सुरासुर जारी॥ भीम नकुल सहदेव अषंडा॥ बल उदंड भुज दंड प्रचंडा॥ धरम भूप सब संसृति जाना॥ मानत इंद्र वरुण जहि आना॥ दोहा॥ तिन वीरन कर इक्षत जग आगम करत तुव मोहि॥ महा विकट विक्रमि प्रतक्ष लषि नपर त चषतोहि॥ ६॥ टीका॥ तव तो द्वापर जुग का प्रभाव था तिस दुष्ट के हृदय मे दया क्यों नहीं आई तो ते इह भावी की प्रवलता है जो द्वेष उपज करके दुष्ट वुद्धी होय गई इतने मे भृकुटी जो भवां तिनको चढायकर और नेत्रौं मै कोप भरकर दुरजोधन का भ्राता दुसासन कुल नासन बोलता भया कि मेरे को कुछ इतनी अवधी नहीं मिली हुई है जो तेरे साथ इहां वार्ता अलाप करने मे वतीत करूं और मै तेरे को भली प्रकार जानता हूं जो तू मुख से वडी नम्र और कोमल उचार कर स्त्री चरित्र कर कर मेरे को छलती है अरे मंद जो अव भला चहती है तो उठ कर के मेरे आगे हो चल नहीं तो अवी निरादर कर के केशों से पकड़ कर खेंचता ले जाऊंगा देखूंगा कि तेरे को कौन निवारण करता है ऐसे तिस के महा क्रूर वचन सुन कर सो राजा धर्म की पतनी और पतीव्रता स्त्रीउं के धरम मे प्रवीन जैसे सिंह को देख कर मृगी सहिम और सकुच जाती है तैसे ही परम कलेश मान कर मौन [illegible] और मन मै विचार करती है कि आज हमारे पूर्व ले पुन्न जो थे सो सब क्षीण होय गये हैं हे दैव इह कौन कुचाली आय बनी है इस प्रकार पंचाली जो द्रोपदी है सो हृदय मे परम सोच और विलाप करती है इतने मै कुरुनाथ दुरजोधन का भ्राता जो दुष्ट दुसासन था तिस ने नमक के रके द्रोपदी पकड़ने के वासते जो हाथ पसारा तो तिस

वानी

कृष्ण

के

धरमकेहपुत्र नीतीमेप्रवीन ज्ञानविज्ञान की निधी सुम
ती और धीरजकेधाम गुणोंकेसमुद्र व ... उजागर विद्वान और
पंडित वेदकेजानने वाले भक्तों मे प्रधान लज्जा कोज
हाज सुख और सुजस केसागर महा चतुर थे इन से
से द्यूतस अर्थात जूये की खेलमे क्यों कर आसक्त होय
गये अहो दैवभावी बड़ी प्रबल है जिसपर ~~...~~
आय करके व्यापती है तिसकौन ध्यान धीरज सुमती
इत्यादि सब दूर हो जाती है॥३॥ चौपाई॥ नतर धरम सुत
द्यूतस जोगू॥ धरन मर्याद विदित सब लोगू॥ दुरगम
होन हार संसारा॥ सो नटरहि किय कोटि विचारा॥ अवता
रन ते चूकि नए हू॥ वृथा दोष जनि भूपति देहू॥ अस विचा
रि सज्जन सब कोई॥ भये मौन भावी वस होई॥ तव बोल्यो जो
धन तजि खोरी॥ सुनहु दुसासन सासन मोरी॥ जाय भवन गहि
द्रोपदि काहीं॥ ल्यावहु वेग सभा सद माहीं॥ हारि दई पांडु क
निज नारी॥ अब जीते परभई हमारी॥ असे पकरि कानन द्रुत
ल्याई॥ सभा सकल कहे देहु दिखाई॥ सुनत दुसासन सासन
राई॥ अंतह पुर कहे चल्यो सिधाई॥ दुरमति तजत सकल कु
लकानी॥ आवा द्रुपदि भवन अभिमानी॥ तहि अवसर धर्म
सुजाना॥ एकहि चीर किये परिधाना॥ मुकता केसि पुष्प
वति होई॥ बैठि इकांत भवन निज सोई॥ दोहा॥ त्यागत दु
सासन लाज तब मन्यो वचन सुनभाम॥ हा सो तुव पति
द्यूत तोहि सजुत धरनि धनधाम॥४॥ टीका॥ नहीं तो
इह धर्म का पुत्र श्री भगवान का दृढ भक्त इस जूये की खे
ल के जोग्य था ~~...~~ इह तो जगत मे परम मर्यादा के धा
रने वाला प्रसिद्ध है परन्तु होन हार जो है सो संसार मे
बडी कठिन है तिसके टार ने के वासते यद्यपि कोटि उपा
य भी करिये तो भी ~~...~~ नहीं सकती है इह ~~...~~ ऐसी प्र
बल है ~~...~~ अवतारों से भी नहीं ~~...~~ चूकी राजा को
क्या दोष देना है ~~...~~ इस प्रकार सोच करकर हितकारी
और सज्जन जन जो थे सो भावी के वश होकर सब मौ
न होय रहे तब मंदमती दुरजोधन लज्जा को त्याग क
रके दुसासको कहने लगा कि भाई तुम मेरी आज्ञा से अब

दोहा॥ अव तें तुम हमरी भई तीय तज तिन करने हु॥
तोहि बनाउब दासि अब बसहु सखिन ममगेहु॥१॥ टीका॥
जब इस प्रकार द्रोपदी के मुख से बड़े उग्र बचन सुने तब
कुलघालक दुशासन जो है सो कहने लगा कि अरे अज्ञा
न बीये तेरे बड़े प्राक्रम वाले वीर धीर जो हैं सो हमने
देखे हूये हैं अब तिनका भरोसा मत कर कबी मृग तृसना
के जल से भी किसी की त्रिषा नवृत्य भई है रे नदान तैने
अबी तक भी नहीं जाना मैने जो तेरे को प्रथम ही कहि दि
या है कि पती तेरे को सब संपती और समाज के सहित हार
कर आप बनवास के अधिकारी होय गये हैं अब सुन मूरष
तिनकी कौन बड़ाई है कि जिनको स्त्री को हारते हूये लज्जा
नहीं आई ऐसे कहिकर और कोप से लाल नेत्र किये
हूये तिस दुष्ट ने अपनी कल्यान बिभूती और कुल की
आयुषा इत्यादि सब द्रोपदी के अपमान की अगनी मे
जलाय कर ततकाल केशों से पकर लेता भया सो ति
स अधम पाप की खानीने द्रुपद नंदनी को केशों से के
पकड़ा मानो जठ सरव बंस के सहित कालरूपी
फासी के वश होय गया है तब हाय दई हाय दई इस प्रका
र पुकारती हुई द्रोपदी को
अभिमानी जोरावरी खैंचता हूआ ले गया इस
जो अनर्थ को देख कर सब लोग चारों ओ
र से दुखी होकर हाहाकार पुकार उठे जहां संपूर्ण
समाज जुड़ा हूआ था और महाजनों की सभा लगी
हुई थी तहां द्रोपदी को पकड़े हूये दुष्ट ले आवता
भया तब द्रुपद कुमारी मुख और नेत्रों को नीचे किये
हूये बड़ी दुखी और दीन व्याकुल भई हुई लज्जा से
कोच से मौन होय कर स्थित होय गई ऐसे तिसको
देख कर मंदमती दुरजोध बड़े हरष से मुसकाय कर कहने लगा
कि हे भामनी राजा जुधिष्ठर जो हैं सो हमारे पास ते
रे को जूये मे हार गये हैं तिस तें तूं अब हमारी भई तिन
का हित अपने चित से त्याग दे तेरे को दासियों मे प्रधा

नहीं जाने

७२

हृदयमेंदेवभावीकोप्रवलजानकर

न वनावैंगे अव सुखपूर्वक हमारे उर मै वासकर ॥७॥
चौपाई॥ अस कहि वदन सजोधन राजा॥ ठोक्यो उरु
निज मध्य समाजा॥ सुकुच लाज जीय सकल विहाई॥
वैठहिं द्रुपद सुता इत आई॥ लखि अस अधम अनीति
कुचाली॥ वोली वदन वचन पंचाली॥ भूप सचिव से
वक जुत भ्राजा॥ वैठ्यो इत सव दाऊ समाजा॥ कुलगु
रु विप्र देव रिषि राई॥ नाति जाति सज्जन समुदाई॥ अस
गुरु जन सद सभा मझारा॥ मोर कथन इह अनुचित भा
रा॥ पति हरि सकुच सोच कुल कानी॥ लागी अभय
मनन मुखवानी॥ इह मेरो अपराध वहेलौ॥ तमहु ना
थ कुसमय जीय लेखौ॥ पर वस दुखित दीन जगमा
हीं॥ कान करत कछु सुजन नाहीं॥ अस कहि वदन
वहुरि मृदु वानी॥ वोली द्रुपदि नीति दरसानी॥ मै
तो पांच हु पौंडुक भ्राता॥ रही पतनि संमृति विख्याता॥
हासो एक धरम सुतराई॥ इह कैसे मोहि देहु जणाई॥
जथा जोग निज हृदय विचारी॥ दीजे उत्र धरम अनुसा
री॥ नतविनु समति पाचौ भ्राता॥ हारहिं एक असंभव वा
ता॥ दोहा॥ सुनत सभ्य सत जन सकल द्रुपदि नीति रत
वानि॥ रहे मौन दुष पूर अति काल क्रूर गति जानि॥८॥
टीका॥ इस प्रकार ~~[illegible]~~ राजा दुरजोधन ने कहि कर
अपने उरु जो पट्ट है तिनको ~~सभा के वीच ठोका ठोक~~
~~य कर सव लोग लज्जा को त्याग कर कहने लगा कि~~
निरलज्ज होय करके सभा के वीच ठोकता भया कि अ
व पाण्डवों की स्त्री इह द्रोपदी जो है सो इहां आय कर वैठे
ऐसे तिस अनीती और कुचाली देख सुनकर पंचाली
वडे कोमल और चतुराई के वचनो से कहने लगी कि देखि
ये इहां ~~सव~~ राजा मंत्री भृत सेवक और दाऊ अर्थात
वडयों का समाज सव जुड रहा है और कुलगुरु ब्रह्मन
देव ऋषी राजऋषी नाती जाती सज्जन हितकारी सव
विराजे हुये हैं ऐसे गुरु जनो की सत्य सभा के वीच मे
रा कथन जो है सो एक वडा भारी अनुचित है अर्थात ~~[illegible]~~

महा अजोग्य है क्योंकि मैं लज्जा और संकोच को त्या
ग हुये अभय होय कर बोलने लगी हूं तांते इह मेरा
परम अपराध है ~~परन्तु~~ आप दया के रूप हो कुसम
य जानकर मेरे को छमा कीजिये हे नाथ परवस और
दीन दुखिया जो होता है सो जगत मे क्या नहीं करता ति
स को कुछ भी सूझता नहीं है इस प्रकार विनती करके
परम प्रवीन द्रौपदी जो है सो फिर कोमल लजानी सी नी
ती संबंधी वचन कहने लगी कि हे सरव महाजनो
~~तो पांचों हीं पंडुवों की स्त्री हूं जब लों पांचों हीं म~~
अब मेरी और प्रार्थना सुनिये कि पांडव जो पांचों हीं
भ्राता है मैं तिन पांचों की पतनी हूं अर्थात स्त्री हूं ~~ओ~~
~~र~~ सब जगत मे प्रसिद्ध है और कहते हैं कि एक धरमपु
त्र राजा जुधिष्ठर ने मेरे को हार दिया है ~~अब मेरा न्याउं~~
~~तुमारे हीं आगे रहा~~ अब कहिये कि इह कबी हो सकता
है जो पांचों की सम्मती के विना एक के हारे मै हारी जाऊं
इह मेरा न्याउं आप लोगों के आगे है रहो आंहीं सत्य
सत्य और जथाजोग विचार कर धरम के अनुसार उ
त्तर दीजिये मै मान लेउंगी ऐसे नीती करके युक्त
द्रौपदी के वचन सुनकर सत जन जो सभा के बीच बै
ठे हुये थे हृदय मे परम दुख मान कर और समय की
क्रूर गती को जानकर मौन ही होय रहे कुछ उत्तर न
हीं देत भये॥२॥ चौपाई॥ तब अनहित कटु वचन क
राला॥ बोल्यो दुरजोधन महिपाला॥ रे द्रुपदी सुल
निपट नदानी॥ काह करत कस कलपत बानी॥ बा
क्य जाल सब वृथा तुमारा॥ कौन रछत हम तोहि उ
बारा॥ तोलो मन्यो करन अभिमानी॥ महा वक्र कटु
अनहित बानी॥ सुनहु दुसासन सुमति प्रधाना॥ मो
र कथन सेतत सुखदाना॥ बुध जन विदत नीति मत
गाया॥ रिपु सन करिय कबहु नहिं दाया॥ तांते इह म
म सत्रून नारी॥ प्रीति वती अति प्रानन प्यारी॥ सास

को देखकर राजा द्रुपद की कन्या बडे कोपसे त्रेरेने
तर करके कहने लगी अरे मंद दूर रहो मत नेडे आ
वना तुम तिन वीरों को नहीं जानते हो किजो गांडी
वनामा धनुष के धारने वाले अरजुन सब सुरासुर
मे प्रसिद्ध हैं तैसे हीं भीमसेन और नकुल सहदे
व किजिनकी भुजों का अंत और अतसे प्रचंड व
ल सब लोगों मे विदत है फिर तिन सबतें बडे राजा
धरम किजिन को सब जगत जानता है इंद्र और व
रुण भी जिन की आन मानते हैं हे अधम तिन वी
र धीरों के होते तूं अभय होकर मेरे को पकडता हैं क्या
मंद तेरे को तिन का महान प्राक्रम और प्रचंड वल सू
झ नहीं पडता है ॥२॥ सुनि अस उग्र वचन पंचाली ॥
भन्यो वदन सासन कुल घाली ॥ जीय अजान जाने हम
सोई ॥ वीरधीर तुव विक्रमि जोई ॥ उनकर अव भरोस
जनि कीजे ॥ मृगत्रिसना जल त्रिखा न छीजे ॥ रे नदान
जान्यो कछु नाहीं ॥ मै भाख्यो पूरव तुव काहीं ॥ तोहि स
माज सेपति जुत हारी ॥ भये गवन कानन अधिकारी ॥
रे जढ तिनकर कौन वडाई ॥ जीय हारत जहिं लाज न
आई ॥ अस कहि कुपत अरन दृग कीने ॥ श्री विभूति
आयुष कुल लीने ॥ पावक दहन द्रुपदि अपमाना ॥
जारत सकल अधम अगलाना ॥ जाय द्रुपद नंदनि
कच गहयौ ॥ मानहु कालपास वस भयौ ॥ हाय हा
य दई रटत वानी ॥ लैगवन्यो वरवस अभिमानी ॥
भयो अनर्थ विपुल इह ठोरा ॥ आरत सोर मच्यो
चहुं ओरा ॥ जसो समाज सभासद जाहीं ॥ लावा प
करि दुष्ट मति ताहीं ॥ अधो वदन तव नैन निवाई ॥
दुखित दीन द्रोपदि अकुलाई ॥ ठाढी लजित मौन सु
कुचानी ॥ भावी दैव प्रवल जिय जानी ॥ तव कटु वच
न सजोधन राई ॥ वोल्यो हरषि मंद मुसक्याई ॥ नृपति
जुधिष्ठर द्यूतस माहीं ॥ भामनि हारि गये तुव काहीं ॥

जो शत्रू वरग के साथ कवी दया नहीं करनी तांते इह ह
मारे शत्रूउं की स्त्री तिनको अत से प्राण प्यारी है इह
अधम राजा की आज्ञा नहीं मानती है अब तुम इसको व
स्त्र उतार कर नगन शरीर करदेवो तब इस की ऐसी अ
नी दुरदशा देख कर हमारे वैरी जो है सो हृदय में जल
मरेंगे इसप्रकार करन का कथन सुन कर महा पापी
और दुष्ट दुरमती कुलके नास करने वाला दुसासन नीती
से विरुद्ध लज्जा को त्याग कर द्रुपद सुताके शरीर से
वस्त्र उतारने और तिसको पत से द्रुपत करने तिसी
सभाके वीच सामर्थ हो जाता भया कि जहां कुमद
रूपी सूर वीरों की कुलके सव चंद्रमा वैठे हूये थे सो कौ
न कि धरम के धुरे और धरम के पुत्र राजा जुधिष्टर कि
जिनके समान धीरज के धारने को धरनी जो पृथवी है
तिसके वीच और दूसरा कोई नहीं है और तैसे ही
गदा के धारनेवाले भीमसेन सरव भवनों मे प्रसिद्ध
और रण भूमी मे वैरियों के गरूर को दूर करनेवाले
और फिर सव वीर धीरों मे प्रधान गांडीव धनुष के धा
रनेवाले अरजुन कि जिन की भुजों के दंडों का अप्रचंड प्रौ
र प्रचंड वल सरव ब्रह्मंड मै उदंड अर्थात उदय है
तैसे हीं प्राक्रमके धाम धनुषधारी और रण मे अचल
नकुल और सहदेव कि जिनके आगे सरव भूमीके
सूर वीर राजे नपुंसिक प्रतीत होते हैं फिर तिन
सव के वडे जगत मे धनुष और धीरज के धारने मे सा
मर्थ परपीडा के निवारक ज्ञान विज्ञान की निधी भीषम
जी कि जो धरम के पालिक और वीर धीरों मे मुख्य गाये
हूये हैं तैसे हीं वेद धरम और धनुष के आचारज
सरव जगत मे प्रसिद्ध कल्प वृतके समान द्रो
णाचारज जी और संपूर्ण लोगों मे सराहे हूये
गुणों के समुद्र धनुष और धरम मे चिरंजीव
कृपाचार्ज जी और भी विदुर से लेकर वडे वडे सूरवीर
राजे भक्त और सज्जन जन और महारथी अतिरथी

इत्यादि जोधे सो सँ(व)सिथल भये हूये मानो अपना सर
वस्व हराय कर मौन हूये बैठे हैं सर्व सरवीरों लज्जाके
मारे नीचे मुख किये हूये एक दूसरे की ओर वंक दृष्टीं अ
र्थात तिरछे नेत्र कर कर देखते हैं पंचाली जो द्रौपदी है ति
सकी पीड़ा निवार नेको कोई सामर्थ नहीं होता भया कोई
तो परस्पर सनेह लख कर और कोई वृथा विरोध हो वि
चार कर कोई धरम और को सोच कर मौन होयर हता
भया और जो व्रतधारी मौनमान सज्जन और साधु जन
थे सो भगावंत की भावी को प्रबल विचार कर दया के वश
दुखी भये हूये रुदन कर कर नेत्रों से जल बहाते हैं ॥२०॥
सवैया॥ देखि सभासद सून तहाँ दव लागत ज्यों वनव्या
कुल ऐनी॥ आरत आस निरास भई द्रौपदि लेत उसास
दुघारत बैनी॥ भीम भुजानके विक्रम ज्यों भव कौं न परे
अब देखत नैनी॥ पारथके धनुधारनको किधौं आज
समाज भुजा सकुचैनी॥ औ न जग्यो जम प्रण प्रा
क्रम देखि महा अपदा दुख मेरो॥ मालके भाग हरे हम
रे अब कोऊ उबारन हार न हेरो॥ रंतक कोऊ न त
तकु से सब पतक पत प्रनत न बेरो॥ पै इक दीन
दयाल कृपाल हैं देवकि लाल सहायक मेरो॥ कवित्त॥
और ना सहैया दुख दीन को मिटैया सबै सज्जन स
गैया मौन आंखन निवाये हैं॥ मानके दवैया ज्ञान
ध्यानके धनैया आज मोको साय दै[illegible]या देखे होत
न सहाय हैं॥ वीर ना रखैया नागहैया साथ दीन हूं
को पीर ना हरैया कोऊ नैकन मनाये हैं॥ काहू कहे
मैया है न कालके करैया कोऊ कौंकी सरनैया मोको
देत न बताये हैं॥ बादी मे सहैया कोपे दीजिये दुहैया
दुख दीन लाजनैया को नाटेर को सुनैया हैं॥ विपति कटै
या औ तरैया ना गुसैया कोऊ धीर ना बधैया कोर हू के
ना तकैया हैं॥ बडे आव दैया वीर विक्रमी कहैया धीर
धरम धरैया पीर को ना उबरैया हैं॥ तात मात भैया मेरे एक
नाम हैया एक द्वारिका बसैया आज पैज के रखैया हैं॥ दोहा॥

द्रुपद सुता पत जात लखि यों विलपत दुखिदीन ॥
घटत नीर लखि ज्यों न कल लेत पलक पाठीन ॥
११॥ टीका ॥ तब सब सभा को सून भई देखकर द्रौ
पदी जो है सो ऐसे हो जाती भई जैसे वन मे
आग लगी हुई देखकर मृगी व्याकुल होजा
ती है और चित्त से सब आस त्याग कर निरास म
ई हुई बड़े भारी दुख के उस्वास भरभर कर कहती है
कि हे दैव आज समय की क्या कुचाली आय
बनी है जो भीमसैन की भुजों का जैसा कि महा प्रा
क्रम जगत मै प्रसिद्ध होते सा अब मेरे नेत्रों मे कौन
हीं देख पड़ता और तैसे ही पारथ जो अरजुन है तिस
के धनुष धारने को भी क्या तिस वीर धीर की भुजा आ
ज सकुच गई हैं और मेरी ऐसी आपदा और दुख देख
कर राजा धरम का पण और प्राक्रम नहीं जाता इस
ते निश्चय हो गया कि हमारे मस्तक के भाग्य जो
हैं सो हर गये हैं अब मेरे को कोई उवारने वाला
नहीं देख पड़ता रक्षक कोई नहीं सब तरह क अ
नाथ सरण देने वाले होय गये और पत का जो पत
करने वाले थे सो भी पत को छोड़ कर न्यारे होय बैठे हैं
अब किसी का भरोसा नहीं रहा केवल एक दीन हि
तकारी कृपा के समुद्र देवकी नंदन भगवान जो हैं
सोई मेरे सहायक हैं और कोई भी सहायक मेरे दु
ख के निवारने को सामर्थ नहीं है सखा सज्जन नाती
संबंधी सब ओर से निराय करके मौन होय रहे हैं
जो न से मानी मान के देने वाले और ज्ञान ध्यान के
धनी कहावते थे सो भी मेरे आज कोई सहाय
क नहीं होते हैं मै भली प्रकार सब को [illegible] यचु मना
की हूं इस समय मेरे दीन का हाथ [illegible] ड़ने और
मेरे वस्त्रों की रक्षा करने को कोई सामर्थ नहीं होता भया

^तहाँ ^न ^कि ^को ^है ^भी ^वत ^हमारे ^इससमय

न भूप नमानति धीरा॥ करहु चीरगत नगन सरीरा॥
अस इहिकर दुरदसा अनैरी॥ जरहि देखि दृग सनमुख
वैरी॥ करन कथन अस सुनत दुसासन॥ पतित दुष्ट
दुरमति कुलनासन॥ नीति विरुद्ध लाजगत जीके॥ लग्यो
दुकूल हरन द्रुपदी के॥ दोहा॥ अपत करन पत द्रौपदी भयो
उदित मतिमंत॥ जहि समाज बैठे सवे सुभट कुमद कुल
चंद॥ कवित्त॥ धरम धुरिंदर महिंदर धरमसुत धीरके
धरनको धरनि मैं न दूसरो॥ त्यों हि गदाधारि भीम भुवन
प्रसिद्ध भूरि भारथ गरूरी भैरी वैरीन को भूसरो॥ पारथ
को देहि दंड भुजन उदंड जास विक्रम अखंड चंड खंडित रिपु
सरो॥ तैसे हि नकुल औ सहदेव धनुधारी ध्रुव जोको भा
री भट भूमी भूप मान भूसरो॥ छंद॥ धरन धनु धीरज
ग हरन परवीर तग भीष्म भट वीर निधि धरम गाये॥ वेद
धनु धरम चारज विदत विस्व सव द्रोण द्रुम कलप मन
अवनि छाये॥ कृपाचारज चिरंजीव धनु धरम जग विदुर
लग भक्त भट सुजन राये॥ महारथी अतिरथी सिथल
और हु सुभट रहे मनु मौन संपति हराये॥ दोहा॥ अधो
वदन देखत लजित वंक दृष्टि सव कौर॥ भयो न कारन
करन कै पंचाली को पीर॥ लखि सनेह कौ परस्पर
वृथा विरोध विचार॥ कालु धरम धीरज गुनत रह्यो मो
न निरधार॥ लखि भावी भगवन प्रवल साधु सुजन
व्रतधारि॥ दया विवस आरत सकल दृगन विमोचित
टीका॥ वारि॥ १०॥ तव वह अनहित और कठोर वचन जो है
सो राजा दुरजोधन बोलता भया कि अरे नदान द्रोप
तूं दी क्या करती है और कैसी कलपना कर रही है इहते
रा वाका जाल सव वृथा ही है हमारे आगे तेरे को
कौन उबारने वाला और तेरी कौन रक्षा कर सकता
है इतने मैं करन अभिमानी भी वडी विकट और अ
नहित वानी से बोल उठा कि हे सुमती निधान दुसास
न तू मेरा वचन सुण नीती का भी एही मत है और
वुधजन जो वड़ी मान हैं तिनका भी एही सिद्धांत है

राम बाँधि पार पायो हैं॥ रावण को मार परिवार को प्रचार
जार लंक सीते शोक टार लोक जश छायो हैं॥ ग्राह को ग्र
सत भार आरत पुकार सुनि वारन उबारवे को वार न लगा
यो है॥ रुकमणि वार लाज राखि दरबार सार भूपन गरब गार
द्वारिका ते धायो है॥ दीन हितकारी ऐसे दीन दुख हारी सदा
दीनन उबारी गिरधारी दीन द्याल देव॥ सेवक को सोक के
निवारी सोक गारी सारी आरत विदारी प्रभु देवकी के लाल
देव॥ कबहूं सहारी ना निहारी ■ भृत भीर भारी बान है ति
हारी सो विसारी क्यों कृपाल देव॥ कौन अपराध वारी आ
ज मैं विचारी जो ते नाथ ना उबारी धारी करुणा विसाल
देव॥ दीननाथ दीनबंधू सहज सनेह सिंधू करुणा
मयंदू करुणा करन भारिये॥ करुणा सुजान करुणा
अनुप्रमाण आज करुणा निधान करुणा को ना विसारि
ये विरद की लाज महाराज सुरराज राखी राज बृज आज
प्रण आपनो ना हारिये॥ जानकै अनाथ नाथ कीजिये
सनाथ मोको बूडत दै हाथ जदुनाथ जू उबारिये॥ जा
नती हूं नीके कुरुवंस को विधंस होव धरम नरेस को प्र
सेसा जग छाय गो॥ माधव जरूर चक्र क्रूर चंड चूर गहि
गंजन गरूर रिप द्वारिका तें धाय गो॥ पांडु सुत सासन
प्रकासन करे गो भूमी पूरन प्रमोद ■ भूरी भौनन भरा
य गो॥ याते काज होहि आज एकहि अकाज दीननाथ
गई हाथ मोको लाज हू ना आय गो॥ दोहा॥ जिमि प्राणन
तें चित न प्रीये तिमि पत तें नहीं प्राण॥ देन परे अब प्राण
प्रभू जाति जगत पत जान॥ हरी गीत छंद॥ नतर प्रण
त उबार गिरधर गरब गंजन द्याल जू॥ मोहि क्रूर काल तें रा
ख लीजिये नंदलाल कृपाल जू॥ अपने विरान वने ■
अहो सब हान पत मेरी चहैं परमगन होत विनगन तकि
अब वदन वच कछु ना कहैं॥ द्रवहो दयानिध वेग नत पु
नि काल हाथ न आय गो॥ पाछे अवसि पछतान पत जुत
प्रान प्यान सुहाय गो॥ भई देर टेरत वेर वहु अवसेर ज्यु नि
अबलौं करी॥ आय न टारि अंट टारन छोर गज रण गिर

कहे गरव गाढेन भरिन सन घनस्याम भव भारथ पगे॥ पना
प्रनत हरन सुमरन तजि उद्धरन जन स्वारथ रगे॥ जहिवि
रदवान वखान वेदपुरान प्रनतारत हरन॥ तहिराज वृजनि
ज कस विसारो आजमम असरन सरन॥ दोहा॥ दुखितदीन
द्रुपदी विलपि जव अस कीन पुकार॥ जात हुते तव सालव स
सन कृस्न करन रनरार॥ सरत पती तट हरन पट नट ना
गर के कान॥ परीटेर द्रुपदी चकित चौंकि उठे भगवान॥
२२॥ टीका॥ फिर द्रौपदी कहती है कि हे देव तेरी ~~कैसी~~ कैसी इ
च्छा भई है जो देव्रत द्रोणाचार्ज कृपाचार्ज इह सव सु
न और मौन धारकर मेरी होनहार को देख रहे हैं और व
डे वडे उदार वि दुर करुण और भीषम पितामा से लेकर
आज मेरे निराधार का कोई अधार नहीं होता है दे खो कि
जोधन के त्रास से सव संकित भय हुये ऊचे सास नहीं भ
रते अव देव मेरे को विचार कीजे मैं कौन जतन करे
पत के अपत होते देखकर पती जो हैं सो भी इस समय अ
पनी पतनी को ~~नहीं~~ उवार सकते हैं हे भगवन हे नंद कि
शोर मैं तो ~~[illegible]~~ देव अदेव मानुख्य नाग ऋषी ब्रह्मण ~~[illegible]~~
सव को ~~भली प्रकार न~~ ~~कहने करके~~ मनाय चुकी हूँ मेरा को
ई भी सहाय नहीं ~~[illegible]~~ भया तो तें अव किसकी शरण को जा
ऊं छिन भर मैं वस्त्र उतरने चहते हैं हे दीन वंधु और कृपा
सिंधु अव तुमारे हीं चरनों की ओट है और तुमारी हीं दासी हूं
तुम ~~[illegible]~~ हीं मेरी लज्या राखने को सामर्थ हो अव लग को
ई दूसरा द्वार नहीं देखो है तुमारे हीं चरनो की सेवका
ई सार मानी हूई है हे मोर मुकट धारी घन स्याम अव
अपना दीन पाल विरद संभाल कर और मेरे को अना
थ जान कर इस दुरजोधन के भ्राता के हाथ से वेग मे
री पत की रछा करिये फिर कहती है कि हे कृपानिधान मैं शं
कट की ग्रसी हूई लोगों की हासी हो रही हो है तुम द्वा
रिका विलासी मेरी सुधी क्यों नहीं लेते हो क्या भया कि
कहीं हाथ से गदा गिर गई कि अथवा कहीं जुद्ध मे धनुष

(margin, left:) कार कार
(margin, left:) वेग
(margin, right:) सि॰ इस कठिन काल मे

३२४

३१८

खोया गया कि खेउग जाती रहीं कि ~~चक्र~~ कहीं चत्रा
चूक गया है कि अथवा गरुड़ जीने कहीं गरुड़ासन
को गिराय दिया है किंदया के कलप वृक्ष ~~जो तुम हो~~ क्या
तुमारे हृदयमै कुछ दया नहीं ~~आती है~~ उदय होती है कि अ
थवा कृपानिधान आज तुमारा विरद बान जो है सो मैन
हीं जानती कहीं हानी को प्रापत होयकर हासी रूप होहो
गया है फिर कहती है कि हे दीनानाथ जानकी का शोकर
विचारकर कृपा के धाम रामचंद्र जी ~~ने~~ अपार समुद्र को बां
धकर पार उतर गये और परिवार के सहित रावण को
मारले का के आर सीते जी का सब शोक टार कर लोगों
मै ~~सुकीरती और~~ सुंदर सुजस जो है सो छायत करदेते भये
और तहां ग्राह जो तंदूआ तिसके ग्रसे हूये और दुखी भ
ये हूये गज की पुकार सुनकर तिसका बंधन काटने को हे
कृपा के समुद्र तुमने रंचक भी वेर नहीं लगाई और ते
से ही द्वारिका से धायकर सभा के बीच सब सूरवीर रा
जयों का गरव दूर करके रुकणी की लज्जा राखी और
तिसके मनोर्थ को सफल किया ऐसे तुम हे दया की नधी
हे गिरधारी सदैव दीनों के हितकारी हो ~~और दीनों सब दु~~
~~ख दुख दूर करते चले हो~~ ~~अपने सेवक का शोकट देखकर~~
और दीनो के दुख दारिद्र और शोक कलेश दूर करने
को भी सदैव तुम ही सामर्थ हो सूत जो सेवक है तिसकी पी
ड़ा और शोकट देखकर दीन बंधू ने कबी सहारा ही नहीं सो
ऐसा प्रण और विरद अपना हे कृपासिंधू आज कों
विसार दिया है कि अथवा कोई ऐसा भारी अपराध मेरा दी
नानाथ ने हृदय मै विचारा है कि जिसते मेरे उबारने अर्थात
मेरी रक्षा करने को इतनी विलंब लगाय दई है हे दया के
निधी हे अनुप्रमाण दया वाले कि जिसका कुछ प्रमाण ही
नहीं हे दया मै चतुर आज अपनी सनातन दया को मत
विसारिये हे महाराज हे बृजराज हे ~~सुर~~ देवराज आज
विरद की लाज को राखकर अपना पावन प्रण जो है सो

हे मैया अब क्या करूं इस काल मैं बचाने वाला कोई न
हीं है किस की शरणी को जाऊं सहायक जो थे सो तो बादी
होय गये किस के आगे पुकार करूं मेरे दीनों का दुख जानने
मेरी वाला और टेर के सुनने वाला कोई नहीं रहा और मेरी वि
पती के नाश करने को ना कोई घर का ना बाहिर का पा
स आय कर बैठता ना कोई मेरी दशा को देखता है देखो ब
डे बडे वीर प्राक्रमी धीरज और धरम के धारने वाले बैस
व बैठे देखते हैं मेरी पीड के निवारने को कोई सामर्थ न
हीं होता है आज मेरे माता पिता भ्राता भी कोई सहाय
क नहीं बना अब एक द्वारिका के वासी कृष्ण प्रमातमा हैं जो
सोई मेरी पैज ~~..~~ के राखने हारे हैं इस प्रकार पत जाती
को देख कर राजा द्रुपद की कन्या द्रोपदी कैसे विलाप कर
ती है कि मानो जैसे छूटे हुये नीर को देख कर परम दुख
कर के तड़फती हुई मछली शांती नहीं लेती है ॥ २२ ॥
कवित्त ॥ एरी दई कैसी भई देवब्रत द्रोण कृप दैयें ~~..~~ मौन सून
सार मेरी होन हार को ॥ विदुर विकरण ~~.~~ लो भीषम उदार आ
ज कोऊ ना आधार होत मोऊ निराधार को ॥ जोधन को त्रास
सब संकित ना लेत सास कैसे कै अजास दैव दीजिये विचार
को ॥ पत के अपत होत पती हुं तकते न सकत भये आज सो
उबार निज दार को ॥ देवता दनुज दुज नागन मनाय नेक एक
न सहाय मेरे बन्यो कुसमाज नाथ ॥ कौन की सरन आसी बस
न बिनासी मैं तो रावरे की दासी आज रावरे हीं लाज नाथ ॥ अ
बलो निहार द्वार दूसरो न हे मुरार मान्यो सार एक हीं तुमार
महाराज साथ ॥ जानकै अनाथ भ्रात नाथ गुरु नाथ हूं तें
राखो पत मेरी दीन नाथ क्रीट भ्राज माथ ॥ शंकट गरासी होय
लोगन की हासी कैसे द्वारिका बिलासी मेरी सुधी क्यों न लये
है ॥ गिरि गई गदा किधौं भारथ धनुष खोयो खरग खरानी कि
धौं चक्र चूकि गयो है ॥ किधौं गरुडासन को गरुड सिरायो कि
धौं दाया द्रुम देव हूं को दाया ना उदैयो है ॥ किधौं आज करु
णानिधान को विरद बान जान ना परत हान हासी हेत भयो है
जानकी को संकट विचार करुणा ~~.....~~ अगार बारद अपार

देनेका प्रण जोहै सो क्यों विसारदियाहै इसप्रकारजव दुखित औरदीन होयकरके द्रौपदीने पुकारकरी तव तिससमय कृष्णप्रभातमा साल्व राजाके साथ रणकरनेको चले जातेथे सरतपति जोसमुद्रहै तिसके किनारेपर नटनागर भगवानके कानमैं द्रौपदीकीटेर सुनपडी तवतो नंदलाल महाराज तुरतही चौंकउठे अर्थातआश्चर्ज होयकरके इधरउधर देखने लगपडे ॥२२॥ कवित्त ॥ देखिकै दुसहदुख द्रौपदीको दीननाथ दीनको गहनहाथ विरदचितासोहै ॥ ऐसोहीसदाहै वान सेवकको अपमान कवहूं नकरुणानिधान जू सहासोहै ॥ द्रौपदीको चीर तेसो पाहको नधीर जैसो तैसोजदुवीर पणप्रकट उचासोहै ॥ प्रभुके प्रभाव वाक सासन निवारयाक औवर विवाकपै नहोत ताक हासोहै ॥ रावणसमाजरघुराजको प्रसाद ज्योंही वालीपूत पाद नटरोहै सूरवीरतें ॥ त्योंहिं जदुवीर आज जोधन समाजचीन होत नवहीन आन चीरद्रौपदी सरीरतें ॥ वारवारटार नविचारत कलंक भागी लागी गये औवर पहारभार भीरतें ॥ सज्जन सयान विसमान भगवान कृतकौतुक महान देखि द्रौपदीके चीरतें ॥ तवदुरजोधनदुसासन करन सठ सकुनि समेत चारि वंसकोविनासकार ॥ मनके विचारकोस औवरऔवार रावे देवकिकुमार कोप पावक प्रकासमार ॥ कीन्योछारकोसदीन्यो जारकै वरोस सवकाहुं लोककोस दैकुनीजनको दोससार ॥ आयगये तोलो जदुकमल दनेसमनमानसमहेस हंसदीनने कलेसहार ॥ नैनननिहारि दुखदीनको दुसहभारी माधव मुरारी व्रतधारी दीनपालजू ॥ माखे मानो दहन दिवारी दनुजारीदेव दूषणनिवारी सारी देवकीके वालजू ॥ देखे नृप द्रुपदकुमारी आय वनवारी आरत विदारीगारी गरव कृपालजू ॥ पाहिपाहि मुखर उचारी भरिवारी

दुग आज मोहि सरन तिहारी नंद लालजू॥ दोहा॥ ल
हि सनेह सुख दीन द्रुत दीप जगाहिं जिमि आय॥ अह
चात्रिक जिमि जरत जिये लेहि स्वांति सुख पाय॥ १३॥
टीका॥ तब द्रोपदीका ऐसा दुसह दुख कि सहारा नहीं
जाता है देखकर के दीनानाथ कृस्न प्रमातमा जो दी
नो के हाथ पकड़ने वाला और दीनो को आस्रय देने वाला
अपना विरद जो है सो चितारते भये क्योंकि तिन की सदैव
ऐसी ही बाणा है जो अपने सेवक का अपमान देखकर क
भी सहारते नहीं हैं ततकाल ऐसे प्रगसे वचन उचार
न करते भये कि द्रोपदी के वस्त्र जो है सो तरह कोरवों की स
भा समुद्रवत अपार होजावें तिनका अन्त ना पाया जा
वे इस प्रकार हैं हे भगवान का वचन और उहां दुष्ट दु
सासन द्रोपदी के वस्त्र उतारता उतारता हार गया तिनका
तिसको कुछ पार ही नहीं पाया जाता जैसे रावण की समाज
के बीच रघुनाथजी की कृपासे बाली के पुत्र
का पैर किसी सूरवीर से भी नहीं टराया अर्थात नहीं उ
ठाया था तैसे ही आज दुरजोधन की सभा समाज के बीच
जदुनाथ महाराजजी की कृपासे द्रोपदी के वस्त्रों को हार
लेने को सामर्थ नहीं होता भया सो कलेक के भागी
विचार नहीं करते बार बार उतारते हैं वस्त्रों के
अंबार लग गये तब इस प्रकार कृस्न प्रमातमा के कौतु
कसे द्रोपदी के वस्त्रों का अनन्त प्रभाव देखकर सज्जन
और सयाने लोग जो थे सो सब आचर्ज को प्रापत
होजाते भये फिर दुरजोधन दुसासन करन सकुनी
इह चारो दुष्ट वंस का नास करने वाले जो थे सो परस्पर
मंत्र विचार करके तिन वस्त्रों के समूह को ले जाय कर
अपने कोष अर्थात तोसे खाने मे जो राखते भये तो तुर
तहीं देवकी कुमार भगवान की कोप रूपी अगनी प्र
ज्वलत और प्रचंड होकर तिन पापियों के संपूर्ण

केसव

को ग्राकी और ग्राप पाहैं यादों को सहित तब जलाय देती भई तब पड़ोसी लोग दुखी भये हुये तिन दुष्टों को व है क्रोधसे अनेक गारी देते हैं कि देखो इन कुनीतियों ने क्या अनर्थ किया है इतने में जदुकुल कमलों के सूरज और महादेव के मनरूपी सरोवर के हंस दीनों के कलेश दूर करने वाले कृष्ण प्रमात्मा जो हैं सो आयगये तब द्रोपदी को दुसह दुख देखकर कि जो सहारा नहीं जाता है परम ब्रत धारी और दुष्ट क्षयकारी माधव मुरारी जो हैं सो कोपसे मानो दग्ध करने वाली अग्नी के समान होय गये और द्रुपदसुता ने देखे कि अब सब कलेशों के दूर करने वाले गिरधारी और गरब प्रहारी स्याम आयगये हैं तब पाहि पाहि कि राख लीजिये राख लीजिये ऐसा शब्द उचारकर और नेत्रों में जल भरकर कहती है कि हे दीनदयाल मेरे को तुमारी शरण है और जैसे क्षीण भया हुआ दीपक सेन्ह जो तेल है तिस को पाय करके जाग उठता है और जैसे चात्रिक अर्थात पपीहा स्वाती बूंदको पान कर तुल और शांती को प्राप्त होता है तैसे ही तिस समय द्रोपदी ~~कृष्ण भगवान को ग्राधार जानकर शांती को प्राप्त होजाती~~ भई श्री कृष्ण भगवान को देखकर जैसे मृतक शरीर में जीव पड़ जाता है तैसे ही सजीव होकर सब पीड़ा और कलेश को विसार देती भई ॥२३॥ चौपाई ॥ मनत प्रणत मोचिन सुरनायक ॥ कृपानिकेत भक्त सुखदायक ॥ दीनदयाल दुख दीन हरैया ॥ भले आय प्रभु दीन सहैया ॥ हरन त्रास जन दीन उवारा ॥ रह्यो कहां सो ऊ बिरद तुमारा ॥ अब जो आय प्रभु अमर सरना ॥ पूरब कहां रही तुव करुना ॥ गज गुहार सुनि एकहि बारा ॥ गरुड़ छोड़ि कस लियो उवारा ॥ मैं तो बार बार खग गामी ॥ रही सुमरती करत तुव स्वामी ॥ जान्यो निज नैनन भगवाना ॥ देखन हुतो मोर जस अपमाना ॥ अस कहि बिपत परम दुख पागी ॥ आरत सुरहिं रुदन करि लागी ॥ त्रास हृदन अ

(margin notes:) ˇद्रौपदी दुख बिसारी — ˇदेवकीके लाल — ˇमोरवक्री — ˇजा — ˇले — ˇसुखमें

ना हारिये मेरेको इस समय अनाथ जान के हे दीनानाथ सनाथ करिये और महा विपती के समुद्र मे डूबती को हाथ देकर उबार लीजिये मै भली प्रकार जानती हूं कि कौरवों के वंस का विधंस अर्थात नास हो जावेगा और धरम के पुत्र राजा जुधिष्टर का धन्यवाद और सुजस सब संसार में जहां तहां क्षायत होवेगा माधव जो कृष्ण प्रमातमा है सो भी अवस्य बड़ा क्रूर और प्रचंड चक्र धार कर दारिका तें धावेंगे पांडव पुत्रों की सासना जो आज्ञा है सो भी पर प्रचलत होवेगी और सरब भवनों में बड़ा आनंद परिपूर्ण हो जावेगा इह काज तो सब होवेंहींगे परन्तु एक ही अकाज है कि दीनानाथ मेरी लाज गई हुई फिर हाथ नहीं आवेगी हे भगवन जैसे प्राणों से धन प्यारा नहीं होता तैसे पत तें प्राण प्यारे नहीं है तो ते अब जगत मे पत जाती देखकर हे दीन बंधु प्राण ही देने पड़े नहीं तो हे शरण पड़े की रक्षा करने वाले हे गिरधारी हे गरब गंजन हे कृपाल नंदलाल मेरे को इस कठिन काल तें राख लीजिये अब अपने बिगाने जो है सो मैने भली प्रकार देख लिये सब मेरी पत की हानी हीं चहते हैं मेरे को वस्त्रों से नगन होती देखकर मुख से वचन बोलने को कोई सामर्थ नहीं है हे कृपानिधान अब दया करके बेग सुधी लेवो नहीं तो फिर समय हाथ नहीं आवेगा पीछे केवल पछताना ही रहि जावेगा प्राण जो हैं सो तो पत के हीं चले जावेंगे हे दीनानाथ मेरे को टेरती टेरती अर्थात पुकार करती को बनी बेर होय गई है परन्तु अब लग हे टटीहरी कि अंडों पर भारथ मे रक्षा विचार कर गज घंटा डारने वाले आये नहीं हो क्या जानूं कि कहीं बड़े गाढे सूरवीरों से रणभूमी मे जुद्ध विलास मे जुड़े हुये हैं वेद और पुराणों ने जिस का बिरद वाला प्रणतारतहरन कथन किया है कि शरणागत को पालते हैं तिं बृजराज महाराज ने आज अपना असरणों को सरण

३१७

३१७

और कृपा दृष्टी से देखकर तत काल हीं अपने पावन पी तांबर जो है सो प्रीती पूर्वक तिसको उढाय देते भये ॥ १४ ॥ चौपाई ॥ भने वचन पुनि दीन सनेहू ॥ इह हमार पीतांबर जेहू ॥ अब हमरे देखत सठ जोई ॥ कारन कारहिं विवस हठ होई ॥ आजहिं हतहु तासु जुत वंसा ॥ सत्य मोर प्रण नाहिन संसा ॥ तव इह प्रकर कौरव न जाना ॥ कोपे कृष्ण देव भगवाना ॥ भीषमादि तव सुधर सयाने ॥ बोले वचन नीति दरसाने ॥ हठ परिणाम भलो नहिं भाई ॥ द्रुपदि टेर राखी जदुराई ॥ अव सासन कव हु कि तुम एहा ॥ रह्यो पीत पट दीन सनेहा ॥ तो निज तज हु जियन जग आसा ॥ जानहु सकल वंस निज नासा ॥ मिल्यो विपुल पर लाभ मनाये ॥ कोश भूतन पे तुम हु पठाये ॥ कृष्ण कोप वस जस्यो सवाहीं ॥ अब जहु नचे न पर्यो तुव काहीं ॥ वीर वृद्ध अस नीति वखानी ॥ ~~...~~ रहे मौन अवसर अनुमानी ॥ कृष्ण कोप तव हृदय विचारी ॥ सो हुं नवृत्त भयो हेकारी ॥ दोहा ॥ द्रुप नंदनि कहे लेत तव पौढुक धरम प्रधान ॥ कृष्ण कमल पद वंदि द्रुत काननकिये पयान ॥ १५ ॥ टीका ॥ फिर दीनो के सनेही कृष्णप्रभु तमा कहने लगे कि इह हमारा पीतांबर जो है अब हमारे देखते जो कोई जड हठके वश होकर निवारण करेगा तो मै तिस अधम को आजहीं संपूर्ण वंसके सहित नासको प्रापत करदेऊंगा इह मेरा सत्य प्रण है इसमे कुछ संशय नहीं जव भगवानने इसप्रकार कथन किया तव कौरवोंने प्रकर जानलिया जो कृष्ण भगवान कोपायमान होय गये हैं भीषमतें लेकर चडे वडे सुघर सयाने जोथे सो नीतीके वचनोंसे तिनको चितायदेते भये कि भाई हठकरनेका परिणाम अर्थात फल कुछ भला नहीं होता देखो तुमारी सभाके वीच द्रौपदीकी टेक भगवान कृपानिधानने आपराखी है ~~अब~~ हे दुसासन जो कबी ~~अब~~ हठसे तूं ~~...~~ अव द्रौपदीके ऊपरसें इह भगवानका पीतांबर उतारेंगा तो जगतमे अपने जीवने की आशा त्यागदे और अपने सव वंशका

"तुमकोग्रौर

भी नास भया जान" तुमारी बुद्धी के क्या कहिये किजिनोने बहुत वस्त्रोंकी प्रापती का लाभ जानकर कोश में रख वायदिये तहाँ कृस्न प्रमातमा के कोप से भिन वस्त्रों के सहित सब कोश भी जलगया तोभी तुमको सूझ नहीं पड़ा इस प्रकार वृद्ध बीरजो ये सो नीती संबंधी वचन उचार कर समयके ग्रनुसार मौन होयरहे तब कृस्न भगवान का कोप विचार कर सो ग्रभिमानी दुसासन भी द्रुपद सुताके वस्त्र उतारने से न वृत्त होय गया" तिसतें उपरान्त धरम ग्रौर धीरजमे प्रधान पांडु पुत्रजो हैं सो द्रोपदी को साथलेकर कृस्न प्रमात्मा के चरन कमलों को बारबार बंदना करते हुये कृस्न कृस्न रटते बन को चले जाते भये॥२५॥ चौपाई॥ ग्रस प्रकार प्रभु त्रिभुवन धन्या॥ गति ग्रविलोकि द्रुपद नृप कन्या॥ नानाबिकर कौरव न बंसा॥ कीन सकल भगवान विधुंसा॥ दीननाथ इह चरित सुहावा॥ मै संछेपत् बदन कछु गावा॥ बतसल भक्त जासु स्रुति बरना॥ हरन कलेस धेनु द्विज धरना॥ सरव गुनन मय गुननबहीने॥ कठिन कालप्रभु सुमरण कीने॥ करत सहाय ग्रापु निज जनकी॥ बिदत जासु गति ग्रारत मनकी॥ देखहु दुखित दीन ग्रति भारी॥ पराधीन नृप द्रुपद कुमारी॥ सेवत सुलभ तासु मे स्वामी॥ प्रणत पाल प्रभु जन ग्रनुगामी॥ ग्रस करुणा मृत सिंधु ग्रगाधे॥ भक्ति प्रेम जुत हृदय ग्रराधे॥ रत्नाकर हि भक्त निज ग्राई॥ दीन बंधु प्रभु दीन सहाई॥ भक्तन हेतु प्रगट संसारा॥ हरि निज धरहिं रुचिर ग्रवतारा॥ दोहा॥ भक्त सुखद जहि बिरद जग भक्त सकल प्रद काम॥ केवल भक्तन प्रेम बस धरहिं वपुष ग्रभिराम॥ २६॥ टीका॥ इस प्रकार सरब भवनों के पती भगवान द्रुपदराजा की कन्याकी गती देखकर नाना प्रकार कौरवों का जो बंस है तिस सबका नास करदेते भये" ग्रैसे इह दीना नाथका चरित्र जोहै सो मैने कुछ संछेप करके गायन किया है जिस भगवान को स्रुती ग्रौर पुराणों ने भक्त वत्सल ग्रौर गौ ब्राह्मण पृथवी

का कलेश दूर करने वाले कथन किया है सो भगवान
कठिन काल मे सुमरण किये तें अपने जन की आप सहा
यता करते हैं क्योंकि वे प्रमात्मा भगवान दुखित जन की पी
डा को अपने मन मे जानते हैं देखो कि परम दुख कर के
ग्रसी हूई दीन पराधीन द्रोपदी तिसको शरणा
गत पालक भगवान सेवन और सुमरण करने से कैसे
सहज होयगये इस प्रकार दयारूपी अम्रत के समु
द्र जदुनाथ महाराज जो हैं सो भक्ती और प्रेम के सहित हृ
दय मे अराधने सें ततकाल आय कर अपने भक्त की र
त्ता करते हैं दीनानाथ कैसे हैं कि भक्तों की कामना पू
र्ण करनी और भक्त जनो को सुख देना एही जिनका विरद
है और केवल भक्तों के नमित्त ही संसार मै नाना अवता
रों कों धार कर अपने संदँसुज सें जीवों का उद्धार करते हैं ॥२२॥
इति श्री भक्त विनोद ग्रंथ भगवद्भक्ती महातमे भाषा टीकायां
द्रोपदी चरत वरणनं नाम ● सरगः

सदेखिदुखारी॥ सुजन सोचि दृग ढारत वारी॥ दीननाथ नैनन निज देखी॥ जन कलेस दुष दुसह बसेषी॥ कंपि उठे नहीं सके सहारी॥ भये कोप बस गरव प्रहारी॥ कौरव कुल संघार न हेतू॥ भे उद्यगद सिंधु भव सेतू॥
दोहा॥ निज पुनीत पर प्रीत गुन पीत हरन भव भीत॥ पंचाली पें दीन द्रुत पालि बिरद निज रीत॥ १४॥ टीका॥
द्रौपदी कहती है कि हे शरणागत के दुख दूर करने वाले देवताउं के नायक हे कृपा के धाम हे भक्त जनो को सुख देने वाले और दीनो के दुख हरने वाले हे दीन सहायक दीनदयाल तुम भले आये सो दीन जनो के त्रास हरने वाला और दीनों रक्षा करने वाला तुमारा विरद जो है हे दीनपाल कहां विसारा था असरनो को सरन देने वाले दीनानाथ तुम अब जो आये हो सो तुमारी इह कृपा इतना चिर कहां रही — क्योंकि तहां तुमने गज जो हाथी है तिसकी पुकार सुनकर और गरुड़ को भी त्याग कर आयकर कैं राख लिया मैं तो वार वार बहुत वेर लग हे गरुड़गामी हे स्वामी कैसे तुमारा सुमरण करती रही मेरे पर श्री थे क्यों कृपा नहीं करी इसते जानती हे कि दीनानाथ मेरे अपमान को देखना चहते थे ऐसे कहिकर बडी व्याकुल और दुखी भई हूई द्रौपदी परम विलाप की स्वरते रोदन करने लगी तव तिस का ऐसा रुदन और दुख देखकर सज्जन जन जो थे सो बडा कलेश मानकर नेत्रों से जल वहायजाते हैं और दीनानाथ भी अपने नेत्रों से द्रौपदी का परम दुष देखकर कांप उठे सो पंचाली का कलेश गरव प्रहारी भगवान सहार नहीं सके कोप के वश भये हूये कौरवों की कुल के नाश करने को सामर्थ हो जाते भये तव द्रौपदी की

३१९

319

मन मथन स्रीय॥ आय बेठि चित तिषत मुनी स्रिषत नि
कर निज पीय॥१॥टीका॥ जै हो तुमारी हे श्री पती हे ज
गत पती हे जदुपती हे घन स्याम प्रभू तुम केसे हो किजि
न के चरनो की बारता बेद पुराणों ने भक्त जनो को अभय दान
देने वाली कथन की है जै हो तुमारी हे संसार मे भक्त
जनो के कलप बृक्ष हे पापियों के उद्धार करने वाले हे दे
वताउं के नाथ हे मुकुंद हे मुरारि जै हो तुमारी हे जगत मे
असर्न जनो को ~~सर्न~~ सर्न देने वाले हे माधव भगवान हे
कृपानिधान हे कमल रूपी संतों के हुलास देने वाले सूर
ज ~~...~~ हे दीन हित कारी देवकी नंदन जै हो तुमारी हे
गणपती हे गज मुख हे विघनो के नास करने वाले औ
र कामना के सिद्ध करने वाले जै हो तुमारी हे सुखों के
धाम हे एक दंत वाले हे गौरी के पुत्र जै हो तुमारी ~~हे~~
~~...~~ हे सरस्वती हे सुधृ बाणी के देने वाली हे क
वि कुल की आधार अब प्रसन्न होय कर संत भक्तों के सु
जस गायन करने को सुमती और विचार जो है सो दा
न करिये नाभादास जी कहते हैं कि हे सर्वे अब मैं
तुमारी कृपा प्रसाद को पाय कर श्री शुकदेव जी की जगत
मे परम पवित्र ~~...~~ और हृदय को आनंद देने वाली
~~...~~ अनन्त गाथा जो है सो ~~बुद्धि मती के अनुसार गायन कर~~
~~...~~ सो हूं हो बुद्धी के अनुसार कुछ गायन करता हूं
कैसे शुकदेव जी हैं कि जिन्होंने अपने हृदय मे परम
उपकार विचार कर संसार समुद्र का सेतू अर्थात
पुल रूप श्री भागवत जो है सो निरमाण किया अर्थात
रचा है और इस संसार रूपी समुद्र मे डूबते हुये अनेक
जनो को ~~...~~ जतन के बिना सहज ही पार उतार
दिया है कहते हैं कि एक समय शंकर कैलास पती जो हैं
सो उमा के तहां आपने कैलास मै बिराजे हुये और कां
धे मै बीना को ~~लिये हुये~~ धारन किये हुये कृष्ण प्रभात मा
के सुमरण और भजन मे लीन थे तिस समय तहां ॰ क

(margin additions: ने; ॰और हे तुमारी; सर्व; ॰श्री; ॰और संत जनों के चरनों की ॰ रज; मति)

षियों मै प्रधान नारदजी जो है सो आयगये और शिव श
ती के चरनो पर सीस नाय कर बैठ गये तब मुनियों के ना
थ नारद जी सहजे से कहने लगे कि हे जननी मेरा कुछ
कथन है जो कदी वृष व नायक महादेवजी ना सुनने पावें
तो मै कथन करूं हे मातू सो मेरा मर्म तुमारे ही सुनने के ला
यक है और तुमको ~~व~~ शुभ फल के देने वाला है इस प्रकार ना
रद के मुख से वचन सुन कर सरव सुखों की निधी भवानी जो है
सो हस कर के कहने लगी कि हे मुनी ज्ञानी सो तुमारा कौन
मर्म है मेरेको न्यारे होय कर शीघर जनाय देवो ऐसे कहिकर
मुनी को साथ लिये हूये कुछक दूरी पर जाय बैठी तब नारद
कहने लगे कि हे भवानी मेरे से कुछ कहा नहीं जाता है पर
न्तु मैने अपने हृदय मै भली प्रकार जाना हूआ है कि महादे
व तेरे साथ अंतर गत कपट ~~करते~~ रखते हैं अपने चित्त का
गूढ मर्म अर्थात गुपत भेद जो है सो तो तेरे साथ कदी
प्रकट नहीं करते चंद्रमाल शंकर कैसे हैं कि तेरे ही रुंडों
की माला राती दिन अपने हृदय मै धारन करते है ~~और~~ तेरे
तू तिनसे ही जाय करके पूछ लेना॥ इस प्रकार नारद के मु
ख से कथन कर कामदेव के दहन करने वाले शंभू ~~शिव~~ की पतनी
उमा जो है सो ~~आय कर~~ मुनी की सिखाई हूई चित्त मै क्षोभ
भरे हूये आय कर पती के पास बैठ जाती भई॥१॥ चौपाई॥
बंदि चरन सुख विनय उचारी॥ नाथ मोहि संशय इक भारी॥
करि दाया तुव दीन सनेहू॥ हरहु मोर मानस संदेहू॥ धार
हु रुंड माल उर कोंकी॥ करं कथन मोहि प्रकट पिनाकी॥
लखि नारद कृत हर मुसक्याने॥ सुनहु उमा अस वचन
बखाने॥ तोरे तुम प्रीय प्राण विसाला॥ तब धारहुं तुव
रुंडन माला॥ जब जब तुमहुं तज्यो तन रामा॥ मै तब
तब तुव सीस लिलामा॥ धारत रह्यो व च्छ निज नेहा॥
राख्यो निज सुंदरि पण एही॥ संभु कथन सुनि प्रबला
भवानी॥ पुनि किय विनय जुगल जुग पानी॥ दीन नाथ दा
या निज करिये॥ आवा गवन मोर अस हरिये॥ गौरि गिरा सु
नि शंकर स्वामी॥ भने वदन अस सुनहु भवानी॥ राम तत्व
उपदेस सुहावा॥ मै तोरे करि मानस भावा॥ आवागवन दुसह

दुख तोरा॥ हरहु अवसि गिरजे भ्रम मोरा॥ अस कहि सिवा से
ग निज लीने॥ महा अरन्य गवन हर कीने॥ तहां जाय
मानस अनुरागे॥ संकर डमरु बजावन लागे॥ दोहा॥ डुम
रु घोष भयावन सुनत खग मृग कानन चारि॥ भागि गये
सब भीत वस जनु तन दसा बिसारि॥२॥ टीका॥ तब महा
देव जी के चरनों को वंदना करके विनती करने लगी कि हे दीनाना
मेरे हृदय मे एक बड़ा भारी संशय उतपन्न भया है सो हे दीनों के
सनेही तुम दया करके मेरे तिस महा संशय को नवृत्य क
रो कि आपके हृदय मे जो रुंडमाला धारन की हुई है सो कि
सकी है रहसे मेरे को प्रकट करके कथन करिये ऐसे सुनकर हर
भगवान जो है सो नारद की करनी और चतुराई जानकर मुखसे
मुसक्यावते भये और कहने लगे कि हे उमा अब श्रवण कर
[illegible] जब जब तुमने अपना शरीर त्यागा है तब तब मै तुमारे
सुंदर सीसको माला की रीती से परोय कर हृदय मे धा[illegible]
रता रहा हूं हे प्राणप्यारी मेरा तो प्रण रहा है इस प्रकार
प्रभु भगवान का कथन सुनकर भवानी जो है सो फिर हाथ
जोड़ कर विनती करने लगी कि हे दीनदयाल अब दया कर
के मेरा आवागमन अर्थात जगत मे जनम मरन जो है सो
नवृत्य करिये ऐसे गौरी का गूढ़ वचन सुनकर शंकर
भगवान कहने लगे कि हे भवानी अब मै तेरे को सरब उ
पाधियों और व्याधियों के दूर करने वाला राम तत्व जो
है सो उपदेश करके तेरे जनम मरन के भ्रम और कले
श को दूर करदेता हूं इस प्रकार उचारन करके अपनी
अर्धंगी गौरी को साथ लेकर महा घोर बन को चले जा
ते भये और तहां जाय करके बड़े आनंद और प्रेम मे म
गन [illegible] भये हैं शंकर देव डमरू जो है सो बजा
वने लगे तहां तिस डमरू का भयावन घोष अर्थात
महा भय के देने वाला शब्द सुनकर जहां लग बन के
खग मृग और जीव जंतू थे सब भय के वस व्याकुल हो
कर भागते हुये दूर दूर चले गये॥२॥ चौपाई॥ जदि तरु
तर शंकर मन भाये॥ हरन किलेश जग डमरु बजाये॥

अथ शुकदेव चरित्र

दोहा॥ जै श्रीपती जै जगत पती जैजदुपती घनस्याम॥ अभय दान प्रद नाम जहि वरनत वेदपुरान॥ जैति भक्त भव कलप द्रुम जैति पतित उद्धार॥ जैति सुधामर नाथ जै जैति मुकुंद मुरार॥ जै जै असरन सरनजग जैमाधव भगवान॥ जैजै कृपा निधान जे संत सरोजन भान॥ जैजै गण पति गज बदन विघन कदन प्रद काम॥ जैति सदन सुख रदन इक सुवन मदन रिपु भाम॥ जैति गिरा वरदाय नी जै कवि कुल आधार॥ संत सुज स गुण कथन कहे दीजिय सुमति विचार॥ श्री शुक देव पुनीत जग चरित चारु मन देज॥ वरनहु वदन अनंत कछु सुमरि संत पद कंज॥ विरचि जास श्रीभागवत भव सागर कहे सेतु॥ पार उतारे जीव जनु वूडत कृपा नकेतु॥ चौपाई॥ एक समय शंकर गिरिराजे॥ उमा सहित कैलास विराजे॥ तहँ कृष्ण सुमरण म न लीना॥ धारे सुभग कंध्र कल वीना॥ आय गये नारद ऋषिराई॥ वैठे दम्पति पद सिरनाई॥ तव सहुज हिं मुनि नाथ उचारा॥ मातु रह्यौ कछु मरम हमारा॥ जो न सुनहिं कवहुं वृषभ नायक॥ तो कछु करहुं क थन तुव लायक॥ भन्यो विहसि अस वदन मृबानी॥ सो तुव कवन मरम मुनि ज्ञानी॥ अस कहि मुनि कहे संग लिवाई॥ वैठे कछुक दूर उतजाई॥ तव मुनी स सुख गिरा वलोनी॥ मोसों कह्यौ नजाय भवानी॥ मै नीके नि ज गुन्यो प्रसंगा॥ राखत कपट शंभु तोहि संगा॥ आप न मर्म तत गिरिराई॥ तोसो करत नप्रकट कदाई॥ प्रति दिन उर धारत ससि माला॥ उमा तोर कल हेतु नमाला॥ या मै जो कछु होहिं संदेहू॥ तो तुम जाय पूछि किन लेहू॥ दोहा॥ सुनि नारद मुख कथन अस रिपु मन

वैरनी निद्रा जो है सो सदैव प्रवल होती है कुछक काल पर्यंत हुंकारी देती रही फिर गिरजे नीद के वश होय गई तव महादेव के मुखसे जो राम तत्व का उच्चारण हो रहा था सो तिस शुक वालक के कानो मे पड गया कि जो वृक्ष के कोटर मे कोटरा मे बैठा हुआ था ~~तिसके राम तत्व के प्रव~~ तिसके प्रभाव से यद्यपि तिसको अखंड ज्ञान भी हो गया तद्यपि आनंद मे मगन भया हुआ सो शुक पुत्र त्रिपती को प्राप्त नहीं होता वृतीको तहां ही जोडकर हुंकारी दे~~ता~~ता जाता है तव कुछक काल के पीछे महादेव ने देखा कि गिरजे तो नीद के वश होय गई तुरत जगाय कर के कहने लगे कि हे प्यारी तू तो ईहां सोय रही थी मेरे को हुंकारी कौन देता ~~था~~ रहा इस प्रकार त्रिपुरारी का कथन सुनकर गिरजे कहने लगी कि भगवन इह मर्म मै नही जानती हूं ~~किसके कौन~~ जो कौन हुंकारी देता रहा ॥२॥ चौपाई॥ शंकर सुनत कोप वस होई॥ वाजन लगे डमरु निज सोई॥ तासु सुनत सापथ सुष पाई॥ सुक साव कछुक चल्यो उडाई॥ महादेव पाछिल तहि लागे॥ मनत जात अस अमरष पागे॥ राम तत्व सुनि शुक जड जाती॥ अवजे हैं कहां अधम अराती॥ जहे जहे चल्यो जात शुक धावा॥ विनु शंकर थल काहु न पावा॥ तव देष्यो इक सरवर भारू॥ विकसे पदम प्रांत चहु चारू॥ तहिंकर विमल व्यास वर भामा॥ रही करत मज्जन अभिरामा॥ आई तासु तहां जमुहाई॥ पैठ्यो उदर तास शुक जाई॥ पाछे आय गरीस उचारा॥ दुस्यो उदर तुव चोर हमारा॥ भय वस व्यास पतनि अकुलानी॥ पतीसुमन सो कछु मन्यो नवानी॥ आय व्यास वहु विनय वखानी॥ तजि गे सभु भावी अनुमानी॥ तहां व्यास जीय गरव निवासा॥ द्वादस वरष किये शुक तासा॥ हरि मायातें संकित होई॥ निकसत उदर वहिर नहीं सोई॥

ॅ शंकरदेवकेमुखसेरामतत्वप्रकट~~[illegible]~~
सुनता सुनता

हुंकारी

देता

व्यास वीये अस कष्ट निहारी॥ भये कृपा वस भक्त उवारी॥
सदाचान जदुनेदन केरी॥ भक्त दुसह दुष सकहिं नहेरी॥
दीन नाथ शुक कहं दुत जाई॥ मन्यो वृझाय वचन सुख
दाई॥ दोहा॥ तजि विलंव अव गरव सुत तजिय दुखित
तुव मात॥ तव रोदन करि गरभते भने वदन सुक वात॥
४॥ टीका॥ तव महादेवजी सुन ~~कर~~के तहीं कोपके वश हो
कर फिर अपने तिस डमरू को वजावते भये तिसको सु
नकर सो शुक का वालक पंखों के सहित होकर तहां से
ततकाल हीं उड़ जाता भया इस प्रकार ~~तिस~~ तिस कों देखकर म
हादेव भी पीछे लाग चले और कहते जाते हैं कि अरे अ
धम शत्रु और ~~जड़~~ जड़ शुक जाती अव भाग कर कहां जा
वेंगा तव सो शुक जहां जहां जाता है तहां तहां शंकर
~~केविन~~ देव आगे ही देख पड़ते हैं अंत को हारा हुआ ए
क वड़े भारी सरोवर को देखता भया कि जिस की चारों ओर
वड़े सुंदर कमल फूले हुये हैं और ~~वहां~~ तिस सरोवर के
निरमल जल मे व्यासदेव जी की स्त्री जो है सो सनान क
र रही थी तहां तिसको जमुहाई अर्थात उवासी जो आ
ई तो वे शुक तुरत हीं तिसके उदर मे प्रवेश कर गया
तव पीछे महादेव आय कर तिसको कहने लगे कि हे भाम
नी तेरे उदर मे हमारा चोर छिप गया है सो हम लेवेंगे ऐ
से शंकर के मुख से वचन सुनकर व्यास पतनी भय के
वश व्याकुल भई हुई अपने पती का सुमरण करती भई त
व तिसके सुमरण करने तें व्यास जी ततकाल हीं आय गये
और शंकर भगवान के आगे नम्र होय कर अनेक प्रकार सें
विनती करने लगे ऐसे तिनकी दीनता और भक्ती देखकर
महादेव जी भावी को विचार कर त्याग करके चले जाते
भये तव तहां व्यास की स्त्री के गर्भ मै तिस शुक को वास
करते हुये वारे वर्ष वतीत होय गये सो भगवान की मा
या के त्रास सें संकित भया हुआ उदर के वाहिर नहीं नि
कल सकता तव व्यास की स्त्री का कलेश देखकर भक्तों

की रक्षा करने वाले भगवान कि जिन का विरद बाणा स
देव ऐसा ही है जो अपने भक्त का दुःख देख कर नहीं स
हारते हैं कृपा के वश होय कर तिस शुक को आय कर क
हने लगे कि हे पुत्र अब विलंब ~~करना~~ मत कर गै
गरभ को त्याग देवो क्योंकि तुमारी माता अत्यंत ही दुखी
है जब इस प्रकार भगवान के मुख से वचन सुना तब गर्भ
तें रोदन करके जिस प्रकार शुक कहता है सो आगे कथ
न किया जाता है॥३॥ चौपाई॥ अति ~~अंधे~~ सु तुव संस्रति मा
या॥ मोपें जो न करहिं निज छाया॥ तो मैं वेग गरभ तजि
माता॥ ऐहीं जगत भक्त सुखदाता॥ नारायण सुनि शुक
कर बानी॥ परम भक्ति परमारथ सानी॥ कह्यो अनन्य दा
स तुव मोरे॥ माया करहि स्पर्श न तोरे॥ तब शुक लेत अ
भय वरदाना॥ तज्यो गरभ जननी सुख माना॥ पै पितु मा
तु हिं नैनन देखी॥ भागि चल्यो भय मानि वसेखी॥ पाछे
सुत सनेह सरसाते॥ व्यास देव गुरु राखत जाते॥ कहो
जात हम कहे सुत त्यागी॥ जनमत हीं कस भये विरागी॥
फिरहु फिरहु सुत प्राण पयारे॥ कवन हेत द्रुत जात सि
धारे॥ तजत न व्यास देव सुक जाने॥ पृथक शि गयो गए
द्रुमन महाने॥ भयो द्रुमन तें तब अस वाणी॥ जो सु स
दन मम आस त्यागी॥ दोहा॥ गिरा द्रुमन तें श्रवण सु
नि व्यास देव मुनि जानि॥ फिरे भवन सोचित सुमति
अति अचरज जिय जानि॥४॥ टीका॥ शुक कहते हैं
कि हे भगवन तुमारी जो है सो संसार मे ■ अतसे कठिन
है जो कदी मेरे पर व्यापित ना होवे तो मैं अबी गर्भ को
त्याग कर बाहिर जगत मे आय जाता हूं ऐसे भगवान
तिस शुक की ■ परमार्थ और भक्ती रस की भीगी हुई बानी
सुन कर कृपा से कहने लगे कि हे शुक तू मेरा अनन्य
भक्त है कि जिस को मेरे बिना दूसरे किसी का भरोसा न
हीं है इह मेरी माया जो है सो तेरे को कदी स्पर्श नहीं
करेगी अर्थात तेरे पर कदी नहीं व्यापेगी इस प्रकार

तासनिकट कै जीव न आवा॥ दूरहिं दूर सुनत धुनि धावा॥
पै इक रह्यो तास तरु माहीं॥ कोटर जठिर वास खग काहीं॥
तामध सुकसावक इक चारू॥ रह्यो अपत सुजस अधिकारू॥
तहि तरु तर हर दीन दयाला॥ बैठि ललित आसन मृग
छाला॥ सैल सुता कहं मन अनुरागे॥ राम तत्व उपदेसन
लागे॥ तत्वविचार सुनत सुखकारी॥ लागी सिवा देन हुंकारी॥
हरिगुन कथन होत सुभ जाहीं॥ सदा श्रवण इह वैरनि ताहीं॥
दियो काल किंचित हुंकारी॥ भई नीद वस पुनि हरनारी॥ रा
म तत्व शंकर उच्चरना॥ परिगो सुक सावक कल करना॥
भयो जदपि नहीं ज्ञान अछेदु॥ तदपि न तृपति लेत मन
मेदु॥ इकचित लग्यो देन हुंकारी॥ सुनि श्रुति ज्ञान कथन
त्रिपुरारी॥ कछुक काल महं हर वरदानी॥ सैलसुताहि
नीद वस जानी॥ वेग जगाय भन्यो विधुधारी॥ तुमतो सो
य रही इतप्यारी॥ दोहा॥ को हुंकारी देत मोहि रह्यो प्र
कट सुन भाम॥ तब गिरजे भाख्यो वचन मोहि न मर्म कछु
वाम॥ १॥ टीका॥ तब जिस वृक्ष के नीचे महादेव ने बड़ा म
नोहर और जगत के पापों का नास करने वाला डमरू बजा
या तिस वृक्ष के निकट कोई जीव नहीं आवता भया डम
की रू धुनी सुनकर सब दूर सेहीं भाग जाते भये परन्तु तिस
वृक्ष के बीच एक जठिर कोटर अर्थात पुराना खोड पंछी
के वास करने का था तिसमें एक सुंदर तोते का अपत बच्चा
के कि जिस पंख अबी नहीं बने थे बैठा हूआ था तिसी वृक्ष के
नीचे दीनों के हितकारी महादेव बड़ी पवित्र मृगछाला बिछा
यकर और तिस के ऊपर बैठ कर सैलसुता जो पारवती है
तिसको प्रीती पूर्वक सरव कलेशों के हरने वाला और
मंगलों के करने वाला राम तत्व जो है ~~तिसका~~ सो उप
देश करने लगे तब सरव सुखों के देने वाला तत्व वि
चार सुनकर महादेव की भारजा भवानी जो है सो हुंका
री देने लगी अर्थात हुंगारा भरने लगी तो जहां भगवा
न के गुणानुवाद और कीर्तन कथा होती हैं तहां इ

कोसमदरसि विरक्त अस भक्त निपुण भगवान॥ निजप
द सेवक राखि मोहि भाखिय कृपानिधान॥४॥ टीका॥ ऊ
हो व्यासदेवजी जब जरको फिर आये तब ईहो शुकजी
तिन वृक्षों से निकल कर आगे को धाय चलतामया तब
रसतेमें देवताउं के गुरू ब्रहस्पती जी मिलगये सो देख
ते ही कृपाकरके कहने लगे किहे सुमती प्रधान व्यासके
पुत्र तूं मेरा हित और सुखके देने वाला वचन जोहै सो
श्रवणकर क्योंकि यद्यपि तूं संसार के वंधनोंसे मोक्षको
प्रापतहै अर्थात छूटा हुआहैं और सरव प्रकार करके ज्ञा
न और भक्तीमें भी प्रवीन हैं तद्यपि हे पुत्र गुरू दीक्षा के
विना ज्ञान भक्ती और विवेक विचार सब वृथाही होताहै तांते
अब जिसप्रकार जानो प्रथम गुरू जी की शरणको प्रापतहो
कैसे भी गुरू देव हैं कि जिनकी कृपा प्रसादतें संसार की
माया सेछूटकर और अपने सरूपको पायकर जुग्यासी
उद्धारको प्रापत हो जाताहै इसप्रकार ब्रहसपती जीके
केमुखसे बड़े हित और सुखके देने वाले वचन सुनकर
शुक जोहै सो चरनों पर सीस नायकर नम्र बानीसे कह
तामया कि हे दीना नाथ आपने जो गुरदेव स्वामी
कथनकियेहैं सो ऐसे जगतमें त्यागी और श्रीप
ती भगवान के चरनकमलोंकी दृढ़ भक्ती औरप्री
तीवाले कौन हैं और माया ने किसको स
पर्श नहीं किया और कौन जगत में विषय विका
रोंसे रहितहै किसके हृदय में दुख सुख नहीं व्यापताहै और हान लाभ में एक रस कौन है
और अपजस सुजस मान अपमान जीवन मरन
इनको एकसमान कौन जानताहै हे कृपा निधान
ऐसा कौन समदरसी संसार में विरक्त और भगवा
नका दृढ़ भक्तहै दयाकरके मेरे को अपने सेवक
जानकर कथन करिये॥ चौपाई॥ सुनि कलकीर

व वन मन भाये॥ गीरवाण गुरु गिरा अलाये॥ सुकप्रवी
न तुव सदृश वानी॥ है जग जनक भूप विज्ञानी॥ धारहु
जाय अवसि गुरु सोई॥ पुर तुमार मन वांछित होई॥ करि
अषेद उपदेस प्रकारा॥ जनम मरन दुख हरहिं तुमारा॥ है
सब विधि उपदेसन जोगू॥ हरन कलेस भीत भ्रम सोगू॥
सुरगुरु वचन सुनत हितकारे॥ नायसीस शुकदेव सिधारे॥
विगत मुनिवर अतुराई॥ पहुंचे जनक नगर जब आई॥ करि
निव सौ श्रम दुगर वसेसा॥ प्रथम द्वार तब किये प्रवेसा॥ त
हो वचित्र चरित इक न्यारा॥ मुनि नायक निज दृगन निहारा
सुछम अंग मान रति हरनी॥ पर आमने मूछित इक तरनी॥
तासु पुरष द्वै ताडत ठाडे॥ निरदय मदि अमरष उर गाढे॥ ति
न कर देखि कह्यो मुनि राया॥ तिय कहै कत ताडत ~~कवि~~ दाया॥
दोहा॥ तब पुरषन कह सुनहु मुनि इह वृतांत समुदाय॥ पू
छेहु जनक नरेस ~~कह~~ तें सानुकूल सचि जाय॥१॥ इस प्रकार
शुकके मुखसे वडे मन भावते सुंदर वचन सुनकर गीरवाण
जो देवता हैं तिनके गुरु ब्रहस्पती जी कहने लगे के हे शुक
प्रवीन तेरे कहने के अनुसार ज्ञान विज्ञान की निधी जगतमें
एक राजा जनक हैं और तो कोई नहीं ~~सो~~ अवश्य ~~तुम~~ जाय
करके गुरु धारन करो सो तुमको मन वांछित फलके देने
वाले हैं ~~तुमारे~~ अषेद उपदेश करके तुमारे जनम मरन
के कलेश को दूर कर देवेंगे हे पुत्र सोई सरब प्रकार करके
उपदेस करने के जोग हैं और सरब कलेश दुख और भय
भ्रम के हरने को सामर्थ हैं ऐसे देव गुरु के वडे हितकारी
वचन सुन कर शुक जो हैं सो आनंद पूर्वक चरनो पर सी
स नायकर तहां को चल पडते भये ~~और मा~~ तब मारग
को न्रवृत्य करके सुंदर जनक नगरी जो है तिसमें आ
य ~~पहुंचे~~ प्रापत हुये तहां स्थित होयकर और मारग के
श्रम को उतार कर कृष्ण परमात्मा का सुमरण करते हुये न
गर के प्रथम द्वार में प्रवेश करते भये तब तहां शुकदेव
जी ने अपने नेत्रों में ~~एक~~ कैसा अद्भुत चरित्र देखा कि
एक सूक्ष्म अंगों रती जो काम देव की स्त्री है तिसके मान को
हरने वाली मूर्छत और वस्त्रों से सजी हुई वडी मनोहर स्त्री
जो है तिसको दो पुरष कोप से निरदय होकर ताडना

३२४

326

कर रहे हैं तिन को देखकर के शुकदेव कहने लगे कि भा
ई तुम इस स्त्री को निरदय होयकर क्यों ताड़ते अर्थात मा
रते हो तब तिन पुरषों ने कि हे मुनी इह प्रसंग तुम
आनंद पूर्वक जायकर के राजा जनक से पूछो सोई
तुम को भली प्रकार कहेंगे ॥६॥ चौपाई ॥ तब आगल
शुकदेव सिधारे ॥ पैसत तहीं द्वितदूसर द्वारे ॥ देखे तहां
पुरस तस दोई ॥ निरदय परम दोष बस होई ॥ करत
विलाप तीये इक कोरी ॥ ताड़त देत दंड नहीं थोरी ॥
पूछ्यो जब मुनीस कछु कारन ॥ तिन है कीन अप्रसन्न
कटउ चारन ॥ पूछहु जनक भूप तें जाई ॥ निज सं
शय उर लेहु मिटाई ॥ तिन कर कथन सुनत मुनि
नाथा ॥ धुनत शीस मीजत निज हाथा ॥ मानि गि
लानि विपुल पछतायो ॥ पूरित पाप नगरि कत आ
यो ॥ अस प्रकार जब तीसर द्वारा ॥ किये गवन सुकदे
व उदारा ॥ देख्यो इगन चरित अस ताहीं ॥ दुइ भट
भूप पुरष इक काहीं ॥ रिस बस करसाघात तन दे
हीं ॥ उर न दया नेकु निज लेहीं ॥ ठाढि विलोक
त लोक सबाहीं ॥ पूछ्यो व्यास सुवन तिन पाहीं ॥
तुव जन दोष विवस गत दाया ॥ कत ताड़त सुंदर
नर काया ॥ दोहा ॥ तिन भाख्यो मुनि नाथ कहं इ
हि कर कथा निदान ॥ पूछहु जाय नरेस तें सो
सब करहिं बखान ॥ ७ ॥ टीका ॥ तब फिर शुकदेव जी
आगे को चलते भये तहां दूसरे द्वारे मैं प्रवेस करते
हीं क्या देखते हैं कि तिसी प्रकार कोप से एक
स्त्री को दो पुरष निरदय होय कर ताड़ना कर
कर बड़ा भारी दंड देर हे हैं तो जब शुकदेव जी
ने तिन को कारन पूछा कि इस को क्यों मारते हो
तब तिनोने भी प्रकट एही कहा कि जाय कर
राजा जनक से पूछो और अपने हृदय का संदे
ह मिटाय लेवो ऐसे तिन का कथन सुनकर

भगवान कृपानिधान से शुक अभयदान लेकर तत
काल गर्भ को त्याग देता भया तब जननी जो है सो परम
सुख को प्रापत होती भई परन्तु माता पिता को देखकर शुक
भय के वश भया हुआ तुरत ही भाग चला तब तिसके पी
छे पुत्र के स्नेह के वश होकर व्यास देव जी पुकारते चले
जाते हैं कि हे पुत्र हमको त्यागकर कहां जाता है तूं जन
मते ही कैसा वैरागी होय गया है हे प्राणप्यारे क्यों नहीं
फिर आवता कहां धाया चला जाता है तब शुकने देखा कि
पिता त्यागता नहीं पीछे ही चला आव
ता है ततकाल वृक्षों के ऊंचे घने वण मे प्रवेश कर गया
तब व्यास जी को कुछ देख नहीं पड़ा इतने मे तिन वृक्षों से वाणी
होती भई कि हे पिता अब मेरी आशा को त्याग अपने घर
को फिरकर के चले जावो ऐसे तिस वाणी को सुनकर व्यास
देव जी आश्चर्य के वश होकर सोचते हुये फिरकर के घर
को चले आये ॥४॥ चौपाई ॥ शुक हु निकसि उत आगल
धाये ॥ हरि माया मानस भय छाये ॥ मले जात पथ सुर
गुरु ताता ॥ दया युक्त मुख वचन प्रकासा ॥ सुनहु व्या
स सुत सुमति प्रधाना ॥ मोर कथन संतन सुखदाना ॥
यद्यपि तुमहु सुचित संसारू ॥ अनुपम ज्ञान भक्ति
रत चारू ॥ तद्यपि गुरु दीक्षा विनु ताता ॥ वृथा वि
चार वेद विख्याता ॥ तातें वेग विलंब विहाई ॥ करहु
आराधन गुरुवर जाई ॥ सो हित करन सरन मुनि दा
या ॥ करहि उद्धरन हरन भय माया ॥ सुरगुरु वचन
सुनत सुखदाई ॥ बोल्यो शुक चरनन सिरनाई ॥ दीन
नाथ अस को जग त्यागी ॥ को अनन्य श्रीपति पद रा
गी ॥ कहि सपर्शी माया नहिं कीने ॥ को जग विषय वि
कार विहीनो ॥ को के उर दुख सुख नहिं जाग्यो ॥ हान
लाभ को के सम लाग्यो ॥ अपजस सुजस मान अ
पमाना ॥ जीवन मरन जाहि एक समाना ॥ दोहा ॥

त हृदै भक्तमुरारी॥ पुनि मिथलेस नम्र सिरनाई॥ पा
नि जुते जुग विनय अलाई॥ नाथ निकट वाटिका
सुहावन॥ तहां निवास करिय निज पावन॥ जनक वि
नेति सुनत हितकारी॥ चले मुदित मुनिनाथसिधारी॥
दोहा॥ ललित नवल द्रुम भवन सुभ सुमन सलिल
सुखदाई॥ मनहु अमर फल लखि विमल वसे व्यास
सुत आई॥८॥ टीका॥ तब ऐसे तिनके मुखसे सुनकर
हृदयमे सोचकरते हुये राजाके पास चले आये तिन
को आवते देखकर जनक उतायलसे आगेही धायक
र वारवार चरनो पर सीस नावता भया और भक्तीप्री
तीसे ल्यायकर वडे सनमान सतकारसे सुवर्नके आ
सनपर वैठाय देता भया फिर विधि अनुसार पूजनकर
के हाथ जोड़कर नम्रवानीसे कुसल पूछने लगा औ
र कहने लगा कि हे मुनीस आजमे संसारमे धन्य हूं और
धन्य मेरे भाग्य है कि जिसके नेत्रोंको आज आपके चर
नोकी रज अर्थात धूड़ीका सपर्श भया है अब हे कृपा
निधान आपने इह चरनकमल जिस नमित्त मैं धार
न किये हैं सो कारन जोग जानकर कृपाकरके कहिये
मै सरव प्रकार करके आपका सेवक हूं ऐसे राजाकी
विनती सुनकर शुकदेव जी कहने लगे कि हे राजन
तुमारे द्वारमे तो हमने वड़ा आचर्ज देखा है सो अन
र्थ जानकर मेरे हृदयमे अतसे गिलानी होय रही है
ऐसे कहिकर जो जो देखा था सो सव सुनाय दिया तव
राजा जनक तिनका कथन सुनकर हाथ जोड़कर नम्र
वानीसे उत्तर देने लगे कि हे मुनिनायक सो पृथम
जो तुमने स्त्री देखी है वे सरव जगतको वे चने वाली
अर्थात ~~[illegible]~~ करने वाली त्रिसना है तिसके वस हो
यकरके जीव भ्रमते फिरते हैं सोई हे मेरे नगरमै
तोड़ना पावती है अर्थात मारी पीटी जाती है और हे
मुनप्रधान जौनसी तुमने दूसरी स्त्री देखी है सो माया

है और जगत के सब जीवों के मोहनहारी है सो पाउं मे बंधन पडे हुये मेरे द्वारे मे स्थित रहती है तिस का ईहां कुछ संचार नहीं है अर्थात कुछ भी बल नहीं चल सकता है और तीसरा जो हे मुनी बहुत देर और दुख पावता तुमने पुरुष देखा है सो से पूरी जगत के जीवों को ~~दुख और~~ कलेश ~~के~~ देनेवाला कामदेव है तिसका भी ईहां कुछ प्रभाव नहीं चलता है रोके दिन को धा हूआ मार खावता और दुख पावता है इस प्रकार शुकदेव जी ~~सत्य~~ जनक भूप के वचन सुनकर हृदय मे जान गये कि राजा जनक सत्य करके परम व्रतधारी श्री मुरारी भगवान के कृपापात्र और बडे दृढ भक्त हैं तिसते उपरांत मिथलेस ने सीस नायकर और हाथ जोड कर विनती करी कि हे मुनीनाथ अब कृपा करके ईहं निकट वाटिका अर्थात सुंदर बगीची जो है तहां चलकर आनंद पूर्वक निवास करिये इस प्रकार राजा जनक की प्रार्थना सुनकर शुकदेव जी आनंद मान कर तुरत ही चल पडते भये तहां तिस बगीची मे सुंदर नवीन वृक्ष ~~और~~ और बडा शुभ भवन सीतल और निरमल जल नाना प्रकार के सुगंधी वाले खिले हुये पुष्प मानो देवअस्थान जान कर व्याससुत तहां आयकर के आनंद से निवास करते भये ॥८॥ चौपाई॥ तहाँ रजनी नरनायक तरनी॥ मुनि पे पठी मन हु मन हरनी॥ बहुरि अमोल रतन गण के चिन॥ मुनि पे पठे भूप हित वे चिन॥ भष संभार अनेक प्रकारा॥ जोग विधान नरिंद्र उदारा॥ साधन इमत विराग सुहाये॥ मुनि ढिग जनक नरेस पठाये॥ जानन हित अनुराग प्रवीना॥ इह कौतुक नर नायक कीनी॥ प्रथम जाम जुवतीन पठायो॥ दुतिये रतन अमोल सुहायो॥ त्रितिये जग्य जोग सुविधाना॥ चतुरे विरत पठ्यो सन माना॥ अर्थ धरम कामादि सुहाये॥ चारि पदारथ संपति गाये॥ इन कहे कीन न शुक सुई कारा॥

"मरकतजी के सुख भी राज कैसे बनते "शुभ्र
बडि दृढ भक्ति

तिस प्रेह अचल व्यास कुमारा॥ आये प्रात जनक
वडभागे॥ मुनिवर दसा देखि अनुरागे॥ हरि सरूप ल
खि नृपति प्रवीना॥ वारवार पद वंदन कीना॥ विनय
युक्त पुनि वचँउचारे॥ मै न सिखावन जोग तुमारे॥
सोरठा॥ तव शुकदेव वखान॥ मोहि दीजै उपदेश अ
व॥ इहि कारन मम ध्यान॥ तुमरे देस नरेस मँ॥ ८॥
टीका॥ तव तिस रात्री को राजा ने परीक्षा लेने के नमि
त्त मुनी शुकदेव जी के पास वडी रूपवंत मन के हरने
वाली स्त्री जो हैं सो भेजीं और फिर वडे अमोल रत
न और कंचिन इत्यादि धन जो है सो भेजा कि देखूं मु
नी इसमे मोहित होता है कि नहीं तिसते उपरांत म
ख जो यग्य है ~~जिसके~~ तिसकी अनेक सामग्री और
जोग के विधान वैराग के अनेक साधन मुनी की
भावना और प्रीती देखने कारनं कौतुक से सव पठा
य देते भये पहिले पहर मे तो मनोहर स्त्रीओं को भे
जा और दूसरे पहर मे अमोल रतन तीसरे मे
यग्य और जोग के विधान चौथे पहर मे वैराग के सा
धन इत्यादि सनमान पूर्वक सव पठाय दिये तव
अर्थ धर्म काम मोक्ष इह चार पदार्थ जो जगत
मे गायन किये हूये हैं इनको महाविरक्त और
अचल जो कदी चलायमान नहीं होनेवाले मु
नियों मे प्रधान शुकदेव जी जो हैं सो स्वीकार नहीं
करते भये अर्थात कुछ भी ग्रहण नहीं करते भये इत
ने मै प्रात काल होते ही राजा जनक जी तहां आय
गये और मुनी को अचल और विरक्त देखकर हृद
य मै परम आनंद मानते भये मुनी नायक को सा
क्षात भगवान का रूप जानकर वारवार दंडप्रना
म करने लगे फिर हाथ जोड कर विनती करते
हैं कि हे कृपानिधान मै तुमारे सिखावने के योग्य
नहीं हूं॥ तव शुकदेव जी कहने लगे कि भूप सिरोमनी

शुकदेव मुनी सिरको फेरते और हाथोंको मलतेहैं हृ
दयमें परम गिलानी और दुःख मानकर पछताते और
कहतेहैं कि अहो दैव मैं इस पापोंसें भरी हुई नगरीमें
क्यों आया इसीप्रकार जब जाते जाते शुकदेव जी तीस
रे द्वारे मे प्रवेश करतेभये तहां ऐसा चरित्र देखाकि बड़े
दो सूरवीर एकपुरषको बांधेहुये कोरड़ोंकी मार देरहे हैं
तिनके हृदयमें कुछभी दया नहीं आवती और तिसकी ऐसी
दुरदशाको सब लोग ठाढेहुये देखरहे हैं तब व्यासपुत्र
तिनकोभी पूछने लगे किभाई तुम ऐसे कोपसे निरदयहोकर
इस पुरषको क्यों मारतेहो तब तिनोनेभी एही उत्तर दिया
किइसका वृतांत तुम जायकर राजा जनकसे पूछो सो तु
मको आपही प्रकटकरकेसब कहेगा ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ चले
सुनत शुकदेव प्रवीना ॥ नृपपै आय सोचमन लीना ॥ देखि
जनक तहिंसा उठिधाये ॥ बारबार चरननसिर नाये ॥ सादि
र भक्तिभाव जुत ल्याई ॥ कनकासन आसीन कराई ॥ वि
धि जुत पूजन करत बहोरी ॥ पूछी कुसल जुगलकर जोरी ॥
धन धन आज मोर जग भागा ॥ प्रभु पदरज जहि नैनन
लागा ॥ जेहि कारन मुनि नाथ कृपाला ॥ धारे चरन मेल
न मम आला ॥ जोग जानि कहिये सोई हेतू ॥ आपन जन
मुनि कृपानकेतू ॥ तब मुनीस अस वचन उचारयो ॥ व
हु अचरज तुव द्वार निहारयो ॥ सो अनर्थ नरनायक जा
नी ॥ मोरे उर अति भई गिलानी ॥ अस कहि दीन्यो सक
ल सुनाई ॥ जस देख्यो द्विगनन मुनिराई ॥ जनक भूप सु
नि जोरत पानी ॥ लागे उत्तर भनन मृदु बानी ॥ देख्यो जवन
प्रथम तुव नारी ॥ सो त्रिसना जग बंचिन हारी ॥ भ्रमत जीव
तोके बस होई ॥ पावै मम पुर ताड़न सोई ॥ जो देख्यो मुनि
नायक आना ॥ जीय सरूप माया सब जाना ॥ बंधन पाय
परी मम द्वारा ॥ तोको इतै न कुछ संचारा ॥ तृतिये पुरष
विलोक्यो जोई ॥ लेत दंड पीड़त बपु होई ॥ जानहु प्र
बल मदन मुनिराई ॥ सकल जगत जीवन दुखदाई ॥
सुनत मुनीस भूप अस बैना ॥ संतत सरव लोग सु
ख दैना ॥ जान्यो सत्य जनक ब्रत धारी ॥ कृपापा

अर्थात प्रधान है मेरेको देवताउं के गुरू ब्रहसपतीजी
ने जैसे कहाथा हे राजन तेरेको तैसे हीं देखो है ऐसे क
हिकर और बड़े आनंदसे विदाय होकर मुनीनायक शुक
देव तहां से किसी और अस्थान को चलपड़ते भये और रात्री
दिन मैं सदैव गऊ के दूहने मै जितनी वे
र लगती है उतनी वेर तक मिलाप न करते और जगत
मै विरक्त होयकर विचरते इसप्रकार ज्ञानध्यान औ
फिर कैसे कि हुए और सब इंद्रवृतीको ले
र वैरागमे लीन भगवानके चरन कमलों प्रेममे मगन
मुनी शुकदेवजी जगतमे ऐसे रहते कि जैसे जलमे क
मल निरलेप रहता है अर्थात तिस के जलका कुछ भी स्प
र्श नहीं होता है और हृदयमे जैसे हरषके सुखको न
हीं मानते तैसेहीं चित्तमे विषाद के दुखको भी नहीं मानते
हैं इहसंतजन शरीरसे विषयों की मैल धोय हूये सदैव
निरमल होयकर संसार मे विचरते हैं ॥२॥ चौपाई॥ सोप्र
तक सुनहो शुकरंभा॥ वरनमान संवाद प्रसंगा॥ जथा सं
तजन विषयन रूखे॥ हरिपद पदम रसमूखे॥ तथा वदनसे
तपत प्रेमेका॥ करहु भाव कथन शुकदेवा॥ प्रीतालै
न भुवन निजकेरी॥ पठीव्यास रंभा द्रुत प्रेरी॥ सो कै
सी मन मोहनि नारी॥ नखसिख मनहु रूप रति सारी॥
मृदु अंगी मृगसावक नैनी॥ गजगामनि कामनिपि
कबेनी॥ किये सीस सुमसिंधुर रोली॥ धरे उतंग उर
ज जुगचोली॥ सुंदर पटबिंदु वदन दुराई॥ किये भाव
नेकन चतुराई॥ मुष मुसक्यान नचलक कछु ल्या
ये॥ जोगि जनन मन लेत चुराये॥ वेनि मुक्त गूंदिन
पे छाई॥ परीवरन जाव कग्ररनाई॥ माणीक पुंज
गुंज मनु सोभा॥ लागे देन रसिक मन लोभा॥ दै क
पोल कल काजर बिंदू॥ लिये संग अनि मदन महिंदू॥
मानहु विजय करत जग काहीं॥ आई रमनि व्यास
सुत पाहीं॥ बोली वदन मंद मुसकाई॥ किये भाव
भामनि चतुराई॥ कंचिन कुंभ रोजन सोभा॥ मल
यलिपत अंगन मन लोभा॥ चंद्र मुखी दृग

रंजनि ~~[illegible]~~ वामा॥ निज छवि हरन मान रति रामा॥ दोहा॥ अधर सुधा रस मधुर जहि मुष मुसक्यान मिठाई॥ वृथा जनम मुनि जास अस ललिना उर न लपटाई॥ १०॥ टीका॥ ~~[illegible]~~ अब ~~[illegible]~~ जैसे संत जन भगवानके चरन कमलोंके प्रेम रसके भूखे और जगतमें विषयोंसे रूखे होते हैं रंभा और शुकदेव जीकेसे वाद से जाने जावें सो सो सुंदर संवाद और शुकदेव जीका प्रभाव इहां कुछ संक्षेप करके गायन किया जाता है कहते हैं कि व्यासदेव जीने अपने पुत्र की प्रशंसा लेने के वासते रंभा जो अपसरा है तिसको अनेक प्रकार सिखाय समुझायकर शुकदेव जीके छलनेके वासते तिनके पास पठाय दई सो कैसी रंभे कि मनके मोहन हारी और सिरसे पाउं तक कामदेवकी स्त्रीके रूप वाली को मल अंगों करके शोभायमान ~~[illegible]~~ और मृग वालकके नेत्रों समान सुंदर नेत्रों वाली हंसती वतजि सकी सुत चलना और कोकला समान मधुर वचनों वाली सीसमें दी हुई सिंधूरकी मनोहर रोली और चोलीमें धारन किये हुये हैं जिसने ऊंचे और कठोर ~~[illegible]~~ दो कुच घुंगट के परदे में चंद्रमारूपी मुखको छिपाये हुये चतुराई से अनेक भावों को प्रकाश करती है और मुखके ~~[illegible]~~ में कुछ नया हो मुसक्यान ल्याय करके जोगी जनों के चित्त को चुराय लेती है वेनी अर्थात गुत्तमें जो मोतियोंकी रचना की हुई है तिन पर जो चरनोंकी जावककी अरुनाई अर्थात मैंहदी की लाली जो पड़ती है सो वे वेनीमें सजे हुये सब मोती मानों गुंजों जो रत्तकी हैं तिनकी शोभा और छवीको उदेय करते हैं ~~अर्थात सब गुं~~ ~~जोंहीं व~~ वेनी की स्यामता और जावककी लालीको लेकर सब गुंजों हीं वन जाते हैं और फिर कपोलों को जलल का बिंदु दिये हुये कामदेव जो एक

५क

अंबुजे

५ये

रसिक जनके चित्त की पवनवेरी

५मैं

रजा है तिस की सब सेना को साथ लिये हुये मानो
संपूर्ण जगत को जीतती हुई रंभे जो है सो
व्यास पुत्र शुकदेव जी के पास आय प्रापत होती भई त
व तहां आवती हीं अनेक भाव और के चतुराई से मंद मंद
मुसक्याय कर कहने लगी कि कंचन के कुंभों वत है जि
स के कुचों की शोभा और मलय जो चंदन
मन के लोभी करने हारा चंदन सो है जि
स के सकल अंगों में लेपन किया हुआ चंद्रमा वत है मु
ख जिसका और खंजन जो ममोला है तिस के समान हैं
वे चल जिस के नेत्र और अपनी सुंदर छबी कर के र
ती जो कामदेव की स्त्री है तिस के मान को दूर करती है
और अधर जो ओष्ठ हैं सो अमृत रस वाले बड़े मीठे
और तैसा हीं सुख का मुसक्यान भी मीठा है मुनी ऐसी
ललिना जो स्त्री है जिस पुरष ने हृदय में नहीं लगाई
तिस को विधाता ने जगत में जनम वृथा हीं दिया है॥
१०॥ चौपाई॥ रंभा उक्त रसक सुख दाई॥ अटपटि प्रेम
युक्त मन भाई॥ श्री शुकदेव सुनत मुसक्याने॥ भने
वचन परमारथ साने॥ जास कृपा तें दुरमति दंभा॥
करत स्पर्श कदापि न रंभा॥ जग पोषन सिरजन
जहि हाथा॥ सदा एक रस त्रिभुवन नाथा॥ रूप अ
नूप अचिन्त प्रभाऊ॥ जीव चराचर के सुख दाऊ॥
जहि प्रसाद लीन्यो जग पावा॥ सुंदरीन सों दे
ये सुहावा॥ दोहा॥ भज्यो मूढ चित जो न अस सर
व सुखद भगवान॥ वृथा गवायो जनम तिहि सु
न रंभा दे कान॥ ११॥ टीका॥ तब श्रीशुक देवजी रंभे
की चतुराई देखकर और तिस की मनमानी अटपटी बानी को जो
रसिक जनों को सुख देने वाली है सुन कर के मुख से
मुसक्याते भये और परमार्थ रस के भीगे हु
ये वचन जो हैं सो कहने लगे कि हे रंभे जिस परमा
त मा की कृपा से दुष्टबुद्धी और दंभ पाखंड इत्या

और ज्ञान ध्यान की निधी तुम हो प्रथम हीं क्या कहते हो मै तो इसी निमित्त तुमारे पास आया हूं जो मेरे कृपा करके उपदेश करिये ॥८॥ हरषत मने भूप तव वानी तुव तो श्रीपति पद अनुरागी॥ सदा राम रस सुखद सुहावन॥ तुव मति किये पान जग पावन॥ मोरे करिय आप उपदेसू॥ हरिय नाथ भ्रम भीति कलेसू॥ तुम समरथ जदुनाथ पयारे॥ तुमरी सासन सीस हमारे॥ पुलकि कह्यो तव व्यास किशोरा॥ तुव हरि भक्त वंस सिरमोरा॥ मन्यो अमरगुरु जथा वसेषा॥ संकुल सिद्धि निपुण तोहि देखो॥ अस कहि सानकूल मुनिराई॥ चले अनत द्रुत होत विदाई॥ धेनु दुहन सम समय विचारी॥ निसि वासर महं मुनि व्रतधारी॥ भिर्लटिन स्रम करत सदा हीं॥ है विरक्त विंरत जगमाहीं॥ निरत निरन्तर विरत विरागा॥ हरि पद पदम प्रेम मन लागा॥ दोहा॥ इकथित वृती अस एव जुत जगत सुमति सुत व्यास॥ रहत नलिन जिमि उदकनित कबु सपर्श नहीं तास॥ जिमि मानत नहिं हरष चित तिमि विषाध गत होय॥ विचरहिं से सति संत जन विषय मलन तन धोय॥९॥ टीका॥ इसप्रकार शुकदेव जी का कथन सुनकर राजा जनक बडे आनंद से कहने लगा॥ कि हे मुनी नायक तुम तो श्रीपती भगवान जो हैं तिनके चरन कमलों की प्रीती और भक्ती वाले हो तुमारी बुद्धी ने सदैव जगत मे सरव सुखों के देने वाला परम पवित्र राम रस जो है सो पान किया हुआ है कृपा करके अब आप मेरे को उपदेश करिये और मेरे हृदय के भ्रम भय इत्यादि कलेशों को हरिये हे जदुनाथ जी के प्यारे तुम सरव सामर्थ हो मै तुमारी आज्ञा को सीस पर धारने वाला चरनो का एक सेवक हूं तव राजा का ऐसा वनीत अर्थात विनती वाला वचन सुनकर व्यास कुमार बडे आनंद मै प्रफुल्लित होयकर कहने लगे कि हे भूप तू भगवान के भक्तों का वंस जो है तिस मै सिरोम

और नाकंठ मैं लगाई है तिस का जगत मैं आवना
वृथा है ॥२२॥ चौपाई ॥ जब रंभा अस किये उचार
न ॥ वचन वदन मनु मदन उवारन ॥ जदुपति पद
सरोज उर आनी ॥ श्री शुकदेव भने मृदुवानी ॥ नी
ल जलध दुति स्यामल गाता ॥ नैन बिसाल नव
ल जलजाता ॥ भृकुटि बंक शुक निंदरत नासा ॥ म
लय तिलक कल भाल प्रकासा ॥ कुंडल कर न मत
स कृत सोभा ॥ कच कल अवलि अलिन मन लोभा
वरह कीट मणि मंडित चारू ॥ गुंथित बीच सुमन नंम
नहारू ॥ दाडम दसन कुंदकलि लाजा अधर अरुन
छवि बिंब बिराजा ॥ चितवनि चारु मुनिन चित चोरी ॥
वसन पीत दुति दामनि थोरी ॥ उर विसाल विलसत बन
माला ॥ खचित कनक कौस्तुभ मणिजाला ॥ अंगदा
दि आभरन सुहावन ॥ यज्ञोपवीत पीत मनभावन ॥ द
र चक्रादि चिन्ह चतु चारू ॥ चारि भुजन भवभीत निवा
रू ॥ स्यामल चरन पीठ पद अरना ॥ उज्जल विसद नख
न दुति वरना ॥ दोहा ॥ मनहु त्रिवध अस मिलि चली भ
क्त संतन सुख देनि ॥ सुरसरि सारद रविसुता श्रीपति
चरन त्रिवेनि ॥ अस विचित्र मुनि मन हरन वरन स्या
म ध्यान ॥ ऐसे जास न धरो उर वृथा कसो
जग ध्यान ॥ २३ ॥ टीका ॥ जब रंभा ने कामदेव के जगावने वाले ऐसे (ने)
से वचन उचारन किये तब श्री शुकदेव जी जदुनाथ महाराज जी
(को) के चरन कमलों हृदय मैं ल्याय कर बड़ी मधर और कोमल वानी
को प्रकाश करते भये कि नीले बादर के समान स्यामल सरीर
(बड़े) और नवीन कमल जैसे विशाल हैं नेत्र भृकुटी जो भवों है
सो कुटिल अर्थात खम लाय हुये टेढ़ी और शुक जो तोता
है तिस की चुंच को लज्जा देने वाली मनोहर नासिका मस्तक
मैं प्रकाशमान है सुंदर चंदन का तिलक और कानों मैं है
मकराकार कुंडलों की शोभा भक्त जनों के मन को मोहित
करने वाले भ्रमरयों के समाज वत बड़े स्याम हैं सिर के केस
औ मनोहर मोर मुकट कि जिसके बीच बीच गूंदे हुये छबीदे तो

हैं वरन वरनके सुंदर पुष्प कुंदकली जो न्याये की ~~फूल~~ मुंदा हूआ फूल और दाडम जो अनार तिनको लज्यादेनेवाले उज्वल हैं जिनके दांत और बिंब फल जो कनूरी है तिसके समानं लाल हैं सुंदर ओष्ट मुनी जनोके मनको चुरायलेनेवाली है जिनके नेत्रोंकी दया दृष्टी और दामनी जो बिजली है तिसको लज्यादेनेवाले बडे दिव्य पीत वस्त्र बडा विशाल जो हृदय तिसपर शोभादेती है तुलसी की माला और सुंदर कौस्तव मणियों की माला अंगद जो भुजबंद इत्यादि सजे हूये हैं विचित्र भूषण जिनको और पहिरा हूआ है पीतवरणका ~~सु~~ यग्योपवीत चार जो भुजाहैं तिनमैं धारे हूये हैं संख चक्र गदा पदम इहचारो आयुध और स्याम है जमुनावत जिन चरनोकी पीठ लाल हैं सुरस्वतिवत चरनतल और उज्वल हैं गंगावत जिनके नख इसंप्रकार जिस भगवानके चरनोकी इह त्रिवध त्रिवेनी होयकर ~~जे~~ जगत मे भक्त और संत जनों को सुख और आनंद देरही है तिस मुनियोंके मनको हरने वाले घनस्याम प्रभातमा को हे रंभे जिस ~~पुरष~~ ने हृदय मे धारन नहीं किया सो जीव संसार मे वृथा ही आया है और तिसका जनम भी अकारथ ही गया है ॥ १३ ॥ चौपाई ॥ श्री शुकदेव सुनत असवानी ॥ संतत भक्ति प्रेम रस सानी ॥ रंभे नवल उक्त मन ल्याई ॥ लागी भनन कपट सरसाई ॥ भागरेख जहि भाल ~~[illegible]~~ सुहाई ॥ आनंद भेष वसेष सदाई ॥ भरीन वल जोवन मृदु अंगी ॥ सुरन कला कल निपुण त्रिभंगी ॥ आँन हास सु वास सुधा रसि ॥ सोभित कलत कपोलन आरसि ॥ दिपतिमान मनु मूरति नेहू ॥ रूप सु ~~[illegible]~~ भाव हाव गुन गेहू ॥ दोहा ॥ चंद्रमुखी अस वालसो जास सुनहु सुत व्यास ॥ आलेवन चुंवन नकिये वृथा जनम जग तास ॥ चौपाई ॥ ~~सुनि शुकदेव तासु चतुराई ॥ गिरा गूढ मृदु वदन अलाई ॥ नय किशोर नित जास बिहारी ॥ न~~ १४ ॥ टीका ॥ इसप्रकार शुकदेवजीकी भक्ती और प्रेम रस की भीगी हूई वाणी सुनकर रंभा जो है सो नवीन नहीं उक्त ल्याय कर और कपट को अधिक करके कहने लगी कि हे मुनी जिसके मस्तक मे शोभादेती है भागकी रेखा और सदेव ही आनंदके देने वाला है जिसका भेष ~~जे~~ नवीन अर्थात नया जो जोवन है तिस करके परिपूरण हैं

मनोहर

चरनोंके

धनव

न

हृदयमें

सुंदर

© Dharmarth Trust. Digitized By eGangotri

३३० ३३४

जिसके कोमल अंग और सुरत कला मे प्रवीन अर्थात मोगविलास मे परम चतुर और तीन रेखा है जिसके उदर मे मुख मे मुसक्यान जो है सो अमृत रस करके युक्त सुंदर सुगंधी वाला और तैसे ही अलसाने बडे कोमल कपोल अत्त से प्रकाशमान मानो सनेह की मूरती रूप सुभाव हाव भाव गुन चतुराई इन सब की एक नधी है ऐसी चद्रमुखी वाला अर्थात स्त्री को हे व्यास नंदन जिस पुरुष ने आलेंवन और चुंवन नहीं किया तिसका जगत मे जीवना और जनम वृथा ही है ॥२३॥ चौपाई ॥ सुनि शुकदेव तास चतुराई ॥ गिरा गूढ मृदु वदन अलाई ॥ वै किशोर नित जासु विहारी ॥ छवि करोर मनु मनमथवारी ॥ दृगन पीठ प्रेरत जित ओरी ॥ अभय होत जग जीव करोरी ॥ रहत सदा जहि जाचित दाया ॥ शिवविरिंचि सुर संत निकाया ॥ चुवत चारु चरन रज जासा ॥ सहजहि समन होत भव त्रासा ॥ जे सरवंग स्याम मृदु लोने ॥ भक्त जनन मन मानस टोने ॥ दोहा ॥ सो अस मोहन मदन सो जा सनकीयो नेह ॥ वाले हारयो तास निज वृथा जनम जग एह ॥२४॥ टीका ॥ तव शुकदेव जी तिस रंभे की परम चतुराई की वानी सुनकर वडे गूढ वचनो से उत्तर देते भये कि सुन रंभे जिस विहारी लाल महाराज की सदैव ही किशोर अवस्था है और जिनकी सौंदर्जता पर करोड कामदेव की छवी वलिहारे होती है जहां जहां नेत्रों की सुंदर दया दृष्टी को प्रेरते हैं तहां तहां कोटी जीव अभय हो जाते है जिनके कृपा प्रसाद को शिव व्रह्मा सुर सनकादिक सब रात्री दिन सदैव जाचते रहते हैं अर्थात मांगते रहते हैं और जिन के चरन कमलों की पवित्र धूरी चुंवन करने से संसार के सब कलेश सहजे ही दूर हो जाते है और जो सरव अंगों करके कोमल स्याम सलोने और भक्त जनों को टोने क्योकि जादू के समान हरलेने वाले हैं ऐसे मदन मोहन गोपाल और दीनदयाल सों जिस पुरुष ने सनेह नहीं किया तो हे वाले रंभे तिसने इस जगत मे अपना जनम वृथा ही हारा है ॥२४॥

दि कदीभी सपर्श नहीं करते हैं और जगत का र
चना और पालना पोषना जिसके हाथ मैं है और सदा ए
करस अचिन्त प्रभाव वाला कि जिसका अनन्त प्रभाव
चिंतने मे अर्थात विचार मे नहीं आवता है और चरा
चर सब जीवों ~~सुख~~ को सुख देनेवाला सरब ब्रह्मंडों का
मालक है और जिसकी कृपाप्रसाद से जगत मे सुंदरी
जो स्त्री हैं तिनोने सुंदर सौंदर्यता पाई है ~~औरक~~ अर्थात
रूपवती कहावती हैं सो ऐसे सर्व सुखों के देने वाले परम
उदार भगवान कृपानिधान का जिस मूढ चितने संसार मे
आयकर भजन नहीं किया तिसने सुण रंभे ~~औ~~ जग
त मे जनम अपना वृथा ही गवाया है ॥२२॥ चौपाई ॥
सिरा गूढ मुनि सुनत सुहाई ॥ भनी वदन रंभा मुसक्या
ई ॥ मोद मूरती मदन मवासिनी ॥ अंग अंग कले भाव प्र
कासिनी ॥ सोन जुही कोलता सी सुहाई ॥ केतकि मन हु
सुवास भराई ॥ मधुर हासि अमृत रसवारी ॥ रसिक सृतक
जग जीवन कारी ॥ दोहा ॥ अस ललिना सुखमूरती मन
रंजनि सुत व्यास उर न लगायो जास निज वृथा जनम ज
गत तास ॥ ~~चौपाई ॥ जब रंभा अस किये उचारन ॥ वचन व~~
~~देन मनु मदन उचारन ॥~~ जनु धनि पद ~~तरेज उरश्री~~
२२ ॥ टीका ॥ इस प्रकार मुनी शुकदेवजी की बडी गूढ वानी
सुनकर रंभा जो है सो मुसक्याय कर कहने लगी कि मोद
जो आनंद है तिसकी मूरती और मदन जो कामदेव है ति
सकी सहेली अंग अंग प्रती सुंदर भावों के प्रकाश करने
वाली फिर कैसी है कि सोन जो ही जो एक पुष्प विशेष
है तिसकी वेली कि मानो सुंदर सुगंधी करके भरी हुई
केतकी है ~~और अमृत रसवाली जिसके मुखकी म~~
~~धुरहासी~~ ~~हसि~~ और जगत मे ~~मरे~~ (मरे) हुये रसिक जोनो
को सजीवन करनेवाली अमृत रसकी भीगी हुई जि
सके मुख की मधुर हासी है ऐसी ~~ललिना अस~~ सु
ख की मूरती और मनको सरवदा आनंद देने वाली
ललिना जो स्त्री है हे व्यासपुत्र जिसने रमन नहीं करी

३३१
331

न किये वृथा जनम दिये खोय॥१७॥ शुकदेवजी कहते
हैं कि हे रंभे जो भगवान कृपानिधान अभयवर के देने
वाले श्रुति और पुराणों ने गायन किये हूये हैं ति
स भगवान् का ध्यान जो है सो जो भी सुर जन बडे सा
धन और जतन हठ कर करके हृदय मे धारन करते हैं
और शिव ब्रह्मादि भी दरशन की अभिलाषा से तिस घन
स्याम की सुंदर स्याम मूरती को सदैव हृदय मे ही छिपा
ई रखते हैं ऐसे जो सरव कला संपन्न तीन लोक के
नायक कृष्ण प्रमातमा जो हैं हे रंभे तिन के चरन क
मलों को जिस पुरष ने प्रेम नहीं किया तिस ने संसार
मे अपना वृथा जनम खोय दिया है॥१८॥ चौपाई॥
कान फूल कानन कल सोभा॥ सजे सुगंधि सु
मन मन लोभा॥ मुख मयंक पर दुहुं न दिसारी॥ छुटी
अलक जुग नाग निकारी॥ अमल आभर्न अलंकृ
त चारू॥ अंगराग अंग न मन हारू॥ मदन प्रमो
दनि मूरति रामा॥ रस सिंगार वेली मनु बामा॥ दोहा॥
तापे लुभत न जो भयो रसिक भ्रमर की रीति॥ तासे
जनम सुत व्यास सुन गयो वृथा जग बीति॥१९॥
टीका॥ रंभा कहती है कि हे व्यास नंदन करनफूल
जो है सो शोभा देते हैं जिसके कानों मे और मन के
लोभी करने वाले सुगंधी युक्त पुष्प सजाये हूये हैं हृदय मे
फूलों के हार चंद्रमा रूपी मुख पर दोनो दिसा मे छू
टी हूई हैं जिसके स्याम नागनी वत मनोहर दोनो
अलकें और आभरन जो भूषण हैं तिनों करके अ
लंकृत अर्थात सिंगारा हूआ है संपूरन सरीर जिस ने
तैसे ही अंग अंग मे दिया हूआ है अंगराग अर्थात सु
गंधी वाला वुटना ऐसी कामदेव की
त्रिपत करने वाली आनंद की मूरती और रस सिं
गार की वेली सुंदरी जो है तिस पर जो रसिक
जन भ्रमर के समान होय कर लोभी नहीं भया

हे व्यासपुत्र तिसका जनम जगतमै वृथाहीं बीत
गयाहै॥ २७॥ चौपाई॥ जासु सफरि कृत कुंडिलका
ना॥ मलयलिपत अंगन सुविधाना॥ बंसी बट
तट बंसि बजैया॥ मनमोहन बन धेनु चरैया॥ अ
लक स्याम ससि आनन छूटी॥ चली अमिय मनु
नागिनि लूटी॥ नटप्रवीन कल कुंजविहारी॥ नय
सिष माधुरि मूरति हारी॥ दोहा॥ अस मुद्रा मन
हरन हरि धरी न उर निज जास॥ सुन रंमे निसफ
लगयो बीति जनम जग तास॥ २८॥ टीका॥ शुकदेव
जी कहते हैं कि हे अपसरे कि जिस सुंदर नंदलाल के का
नो मे मुनीजनो के मन को हरने वाले मकरा कृत कुंडल
हैं और मलय जो चंदन सो अंग अंग लेपत किया है और
शोभा देता है
बंसी वट जो है तिसके नीचे स्थित होयकर बंसी बजा
ने मे है रुची और प्रीती जिनकी और तैसे ही मन को मोह
भगवान
नहारे वन मे गौओं के चराने मे प्रवीन स्याम जो अलकें
जैसे
छूटी हुई हैं जिनके चंद्रमा रूपी मुख पर से मानो अमृत
जैसे
के लूटने को नागनी आय लिपटी हुई हैं ~~नट जो नृत्य है तिसमें परम प्रवीन और सुंदर कुंजो मे विचरने वाले~~ और मन
जनो के मन को आनंद देने वाली माधुरी है मूरतीजि
नकी कुंजविहारी अर्थात कुंज गलियों मे विचरनेवाले
और नर जो नृत्य है तिस मे परम प्रवीन ऐसे सरव गुण
निधान भगवान की मनोहर मुद्रा हे रंभे जिस पुरष ने
हृदय मे धारन नहीं करी तिसका जनम जगमे निस
फलही बीत गयाहै॥ २९॥ चौपाई॥ सील सुभाव भाव
भरि प्यारी॥ तपत मैन ननु सीतलकारी॥ अंजन रं
जित खंजन नैनी॥ मृदुल नवल नागरि पिकबैनी॥
दोहा॥ जहि अस रति वति रमनि चित रित
हिमंत सुन व्यास॥ उरनलगाई प्रेम सो वृथा ज
नम जग तास॥ ३०॥ टीका॥ फिर रंभे कहती है कि
सील सुभाव वाली और हाव भावों की भरीहुई जो

२३२ 332

प्यारी है और कामदेव की तपत को सीतल करने हारी है अंजन जो सुरमा तिसकर के वन रहा है जि सके चंचल नैनों की शोभा और पिक जो कोकिला ति सके समान है जिसकी ~~कोमल~~ वानी नवीं अवस्था औ र परमचतुर ऐसी विलास और सुख की मूरती है व्यो कुमार जिसने हिमंत ऋतू अर्थात सीतकाल में प्रेम और प्रीती से हृदय में नहीं लगाई तिसका जगत में वृथा ही जनम गया है ॥२९॥ चौपाई ॥ सदा सील हठ जास उदंडा ॥ समन त्रिविध तप तपत प्रचंडा ॥ दिव्य अ नेक गुणन प्रकासिक ॥ भक्त भीति भगवन भव ना सिक ॥ देवन देव देव नग धारी ॥ भक्त हेत मेदनि अवता री ॥ आदि अनंत अनादि अखंडा ॥ अलख अदा अव्यक्त अमंडा ॥ अमल अरूप अजाति अनामा ॥ अनभव अगुन अमर अभिरामा ॥ असय अभंग असंग सदा ही ॥ अनघ असाध अगाँध अथाही ॥ निर गुण सगुन रूप धरि जासा ॥ किये कोटि ब्रह्मंड प्र कासा ॥ सुर मुनि धरनि धेनु दुज काही ॥ जब जब परी भीर भव माहीं ॥ तब धरि सरूप निज नाना ॥ तिनकर हरी त्रास भगवाना ॥ सदा देव दीनन हि तकारी ॥ असरन सरन भक्त भय हारी ॥ दोहा ॥ अ स करुणामृत सिंधु कहं भज्यो न संसृति जास ॥ सुनरे मे धिग धिग जनम कुमति अधम अगतास ॥२०॥ टीका ॥ व्यास कुमार कहते हैं कि जिस भ गवान का सदैव सीलही हठ है और की कृपा प्रसा दसे जगत के जीवों के तपावनेवाले बड़े प्रचंड तीन ताप जो हैं सो सहजे ही दूर हो जाते हैं अनेक दिव्य गु णों करके प्रकाशिक और जगत में भक्त संतों की ~~[illegible]~~ सदैव रक्षा करनेवाले हैं केसे भी ~~[illegible]~~ देवों देव गिरधारी हैं कि जिनका पृथ्वी तलपर के वल भक्तों के निमित्त ही अवतार होता है ~~और आदि~~

चौपाई॥ श्री शुकदेव कथन सुनि चारू॥ मनीवचन रमे रस सारू॥ मधुर वैन कल बोलन हारी॥ नवल कमल मुख जोति उज्यारी॥ नीलांबर सुवरन तन कैसे॥ लिये ओट घन दामनि जैसे॥ उभय बीच कुच कंचिन वामी॥ लसत स्याम पूतरी अभिरामा॥ मुनि देखिय कस सोधन कीना॥ दै कसोटि कल काम प्रवीना॥ फवन हरन मन के चुकि न्यारी॥ भूषित सुमन सुगंधिन प्यारी॥ कोककला पर रमनि अस रम्यो न जहि संसार॥ वृथा जनम दिय तास विधि सुन हो व्यास कुमार॥ २१॥ टीका॥ तब श्री शुकदेव जी का सुंदर कथन सुन करके रमे जो है सो रसिक जनो के सुख के देने वाला वचन कहती भई कि मुनी नायक मधर और मनोहर जो वचन हैं तिन के बोलने हारी और नवल जो न्यारे हैं कमल है तिस के समान है नेत्रों की छबी और प्रकाशमान है जोती जिस की और जिस की सुवर्न देह नीलांबर अर्थात नीले वस्त्र ~~कैसे है कि जैसे बादर~~ मे कैसी शोभा देती है कि जैसे घन जो बादर है तिस की ओट मैं बिजली छब देती है और तैसे ही दोनो कंचिन के कुचों के बीच बडी मनोहर स्याम पुतली जो है सो हे मुनी देखिये तिस सुवर्ने को ~~सोधने के वासते~~ काम देव ने कसौटी लगाई है पकर के खरा किया है मन के हरने वाली जिस की कंचुकी अर्थात चोली और पुष्प सुगंधियों करके शोभित है जिस के सब पूर्ण अंग ऐसी कोक कला मे प्रवीन रमनी जो है हे व्यास कुमार जिस ने संसार मे रमन नहीं करी जानो कि तिस को विधाता ने वृथा ही जनम दिया है॥ २२॥ चौपाई॥ जे प्रभु अभय वरद श्रुति गाये॥ दया देव द्रुम संत तिहाये॥ करि साधन हठ कठिन प्रयासा॥ धरत ध्यान जोगी सुर जासा॥ हारन हृदय जनन दुरताई॥ ललित स्याम मूरति सुखदाई॥ सदा दरस अभिलाषित होई॥ रावत शिव विरिंचि उर गोई॥ दोहा॥ सरव कला साम थें अस त्रिभुवन नायक जोय॥ तापद प्रेम न जा

कोभी पाय गया ~~और~~ यद्यपि महें और सेष के पद को प्रा
पत करके सरव चराचर जीवों को अपने वशीभी कर
लिया तद्यपि जो दारा अर्थात स्त्री है तिससे प्रेम और
प्रीती ~~करने वाली~~ वाला नहीं भया तो तिसका संसार मे हे
व्यास पुत्र भोग सम्पती और प्रताप सब वृथाहीं जानो॥
२१॥ चौपाई॥ भूप सकल सुख भूपन नाहू॥ देवन देवराज
उतसाहू॥ सेस दनेस वर्दिछि वड़ाई॥ सकल लोक संप
ति प्रभुताई॥ दोहा॥ जहि जदुनंदन पदम पद किये मधु
प इव नेहु॥ तासु तुछ्छ इमे सकल विभु सम्पति सुख
एहु॥ २२॥ टीका श्री शुकदेवजी कहते हैं कि राजयों और
महाराजयों का जो संपूर्ण सुख है देवताओं और देव
ताओं के राजा इंद्र का जो उतसाह है सेस जो शेषनाग
दनेस जो सूर्ज वर्दिची जो वृह्मा इन सब की वड़ाई और
सरव लोकों की सम्पती और प्रभुताई जो है सो हे रेमे
जिसने जदुनंदन भगवान के चरन कमलों मे भ्रमर
वत होय करके सनेह किया है तिस के आगे इह सं
पूर्ण सुख सम्पती और प्रभुताई वड़ाई एक ■ तुछ्छ
प्रमाण भी नहीं भासती है॥ २२ चौपाई॥ कोमल कुसु
म सेज मन भाई॥ रम्यो न कव हु ललित सुखदाई॥
अंवर अमल आभरन अंगा॥ सजे न उर उतसाद उमं
गा॥ चंदन मृग मद सुमन सुवासा॥ भये न रति मन
सुत व्यासा॥ किये सैन मेदनि मृगछाला॥ जुक्त जोग
जानत सब काला॥ दोहा॥ जस तोहि प्रीति विराग अ
ति तस हम मेहे रति होय॥ तो जीवन सुख पेहु न
त वृथा जनम जग सोय॥ २३॥ टीका॥ रंभा कहती है
कि हे मुनी बड़ी मन को भावने वाली कोमल पुष्पों की
सेजा जो है सो तो कवी रमी हीं नहीं और निरमल वडे
कोमल वस्त्र और तैसे हीं दिव्य भूषण जो हैं सो भी उत
साह और आनंद पूर्वक अंगों मे कवी सजाये नहीं हैं
मलयजो चंदन मृगमद जो कसतूरी सुमन जो पुष्प इन की सुं
दर सुगंधी जो है तिस ~~को भी कर~~ के लगावने मे भी कवी रुची

सुगंध्युक और

५भई और प्रीती नहीं करते हैं सदै मृगछाला विछायकर पृथ्वी पर ही सैन करते रहे हो और जोग की जुक्ती जो है तिसको हो भलीप्रकार जानते हो परन्तु हे व्यासकुमार इह जैसी प्रीती तुम को जोग वैराग में है कवी ऐसी प्रीती हमारे मैं भी करो तो तुमको जगत मे जीवने का सुख है न ५तो हीं जोनम वृथा हीं गया जानो॥ २३॥ चोपाई॥ काहे त्रिय अत करत वडाई॥ अधम मंद कवि कोविद गाई॥ करकि कौन कहे आरसि काहा॥ याकर कौन वात उतसाहा॥ अम ष अस्थि चरमादिक काया॥ रुधर पीप मल उदर भराया॥ मंगल कौन अमंगल सारी॥ मनहुं विस विष बेलरि नारी॥ या संसर्गविसष फल खाई॥ लेत असाध मनुज रुज पाई॥ प्रमुदा प्रीति अहिनि जिमि पाली॥ डंसित देविस्वास कुचाली॥ दोहा॥ अस दुखदायक दार सो कियो नेह नर जास॥ तनि रंचिक सुख लोभ लगि लीन्यो नरक निवास॥ २४॥ टीका॥ शुकदेवजी कहते हैं कि हे रंभे क्या स्त्री की वडाई करतीहैं कि जिसको पंडित जनो ने महा अधम और महा मंद कथन किया है हाथके कंगन को आरसी क्या है कहो इस मे कौन उतसाह की वात है अमष जो मांस अस्थी जो हड्डी चरम जो चाम इनकी तो काया वनी हुई है और रुधर जो लहू पीप जो पाक इत्यादि सब पेट मे भरा हुआ है अब कहो कि इस मे मंगल कौन है सब अमंगल ही देख पड़ते हैं हे रंभे स्त्री तो संसार मे मानो विष की एक वेली है जगत मे इसके संसर्ग संजोग का विषसे भरा हुआ फल खाय करके मनुष्य असाध रोग मे ग्रसे जाते हैं हे रंभे स्त्री की प्रीती ऐसे है जैसे सरपनी का पालना पुरष को विस्वास देकर डंसती है और महा अधम और कुचाली है तांते हे रंभे ऐसी दुखदायक स्त्री सो जिस पुरष ने सनेह किया है तिसने एक रंचिक सुख के लोभ और लालच मे फस कर अपना नरक मे निवास लेलिया है॥ २४॥ चोपाई॥ जग्य दान तप तीरथ चाहू॥ परम सुकरम

Margin notes: और भी (left margin), ५कि (left margin)

अनेक प्रकारहू॥ अहै स्वर्ग तिनकर फल ताई॥ लोकहु वि
दित वेद सुख गाई॥ पूरन ताई न बिनु त्रिय ताही॥ को अ
स जोगि जगत मुनि नाही॥ नारी नेह न जौन बिकाये॥
तिय सुखसार मनहु महि आये॥ दोहा॥ सदा जनम जग जा
सतें अस निंदन सुखतास॥ देत न कछु सोभा तुमै सुनहो
नंदन व्यास॥ २५॥ टीका॥ रंभे कहती है कि हे मुनी जग्य दान
तप तीरथ और अनेक प्रकारके धरम सुकरम जो हैं ति
नँका फल वेदने गायन किया हुआ और लोगों मै प्रसिद्ध स्व
र्गकी प्राप्ति है परन्तु स्त्रीके बिनाँ पूरणताई नहीं है है सो हे व्यासकुमार
जगत मे कौन असा जोगी जती तपी मुनी है जो स्त्रीके सनेह
मे नहीं बिकाया इह स्त्री जो है सो पृथवीपर मानो एक
सुखका सार आई है और जगत मे सदैव जिससे जनम हो
ता है ताते ऐसी सुखदायक और हितकारनी की नि
दा करनी हे व्यासनंदन तुमारे मुखसे कुछ शोभा नहीं देती है॥
२५॥ चौपाई॥ जो फलरूप स्वर्ग तुम जाना॥ सोहु स्वर्ग
अस नरक समाना॥ निद्रा क्षुधा त्रिषादि समेता॥ जरा
शोक चिंता दुख जेता॥ मोरेहु निकट न आवत जाही॥
सो अस हरिपद पंकज माहीं॥ सदा लुभत चित मधुप
हमारा॥ जहां न कछु माया संचारा॥ दोहा॥ रंभे इह
हठ वृथा तुव नारि नेह सरसान॥ ताते परिहरि दं
भ सब भजहु कृष्ण भगवान॥ २६॥ टीका॥ शुकदेव
जी कहते हैं कि हे रंभे जो स्वर्ग तुमने फलरूप जाना
है तो वे स्वर्ग भी नरकके समान ही है और जहां निद्रा
क्षुधा त्रिषा जरा जो बुढेपा और चिंता दुख
भूलकरके भी निकट नहीं आवते हैं सो ऐ
से भगवानके चरन कमलों मे हमारा मन तो सदैव भमरे
वत लोभी बना हुआ रहता है रंभे तू जो बारबार दुखदु
खदायक स्त्री सनेहकी अधिकता जणावती है इह हठ
तुमारा वृथा ही है ताते इसको त्यागकर और दंभक
पट से रहित होकर सरब सुख निधान भगवान जो हैं
तिनका भक्ती प्रीती से भजन और सुमरण कर॥ २६॥ चौपाई॥

फिर भगवान कैसे हैं कि आदि हैं और अनंत हैं कि जिनका अंत नहीं आवता अनादी हैं कि जिनकी आदि भी नहीं अखंड हैं अलख हैं अछेद हैं कि जिनका छेद भी नहीं हो सकता स्वरूप है अर्थात प्रकट नहीं हो सकते अभेद हैं अर्थात शोभा से भी परे हैं अमल हैं क्या निरमल हैं अरूप हैं तिनका कुछ रूप भी नहीं है अजाती हैं तिनकी कोई जाति भी नहीं है और अनुभव रूप हैं अगुन हैं अमर हैं अभय हैं अभंग हैं और सदै असंग हैं तिनके किसी का संग भी नहीं है अनघ हैं जो पापों से रहित हैं असाध हैं और अगाध हैं अथाह हैं और निरगुण ने सगुण रूप धार करके अनेक ब्रह्मांडो को प्रकाश किया है और गौ ब्राह्मण पृथवी मुनी देवताओं को भीर बनती रही है तब तब नाना स्वरूपों को धारकर दीनानाथ तिनका कलेश और त्रास दूर करते रहे हैं ऐसे कृपा रूपी अमृत के समुद्र दीन हितकारी असरनो की सरन और भक्त भय हारी भगवान जो हैं हे रमे जिस पुरुष वा स्त्री ने संसार में आयकर भजे नहीं हैं तिस कुमती और अधम पापी को जगत में धिगा जनम है २०॥

चौपाई॥ काह भयो जो धनी कहायो॥ भूपति भयो सुजस जग छायो॥ भयो देव जुत विभू बडाई॥ देवराज गौरव पद पाई॥ काह भयो जो विधि पद पावा॥ माननीय संसार कहावा॥ भयो महेस सेस पद लीना॥ सकल चराचर निज बस कीना॥ दोहा॥ जो न भयो रत दास सों तो सुन व्यास कुमार॥ ताहि भोग संपति विभू वृथा सकल संसार॥२१॥ टीका॥ फिर रमे कहती है कि क्या भया जो धनी कहाया और यद्यपि पृथवी का पती राजा होकर जगत में सुजस का पात्र भी बन गया यही महा प्रताप और बडाई के सहित देवताओं का राजा इंद्र भी होय गया और क्या भया जो संसार में बडा मानी और पूजने के जोग्य होकर ब्रह्मा के पद

जो सुने हैं प्रकाशित किये

क्लेश, जगत में ...

३३५ 335

कोनहीं जानताथा इह अदभुत चरित्र जो तुमने दिखाया है अब लग मैने कहीं देखा और ना सुना है वे द पुरानों ने जगत मे स्त्री वर्ग को वृथाहीं निंदरन किया है हे रंभे अब बड़ा निरमल सुंदर सुगंधी वाला और परम प वि तुमारा उदर देखकर के मेरे हृदय मे आय कर के इहलालसा उपज पड़ी है कि ऐसे उदर मे निवास करके फिर जनम को धारन करूं॥२७॥ चौपाई॥ सुनि शुकदेव उक्ति अस न्यारी॥ भई मूक सुरसुंदरि हारी॥ उरप तात विपुल विसमानी॥ वारवार जुग जोरित पानी॥ करत विविध सुभ सुजस बड़ाई॥ सुरपुर गवनि चरन सिरनाई॥ श्री शुकदेव प्रभाव अपारा॥ को सामर्थ कथन संसारा॥ षोड्स वरष वैस वपु स्यामा॥ हरिप्रीय भक्त विपुल गुण धामा॥ विमल हेम सर नासिक जाई॥ वै योग्य नसन व्रत सरसाई॥ मे शापित जब प्रीक्षत राई॥ सुर दिषि ब्रह्म ऋषी समुदाई॥ और हु भक्त संत दुजराये॥ अवसर जानि भूपपै आये॥ नृप समक्षि वंदन प द कीने॥ सादिर सवन वरासन दीने॥ मुनि समाज सो भ्य जगहारू॥ लाग्यो सरित देव तट चारू॥ व्यास प रासर आदिक जोगी॥ वैठे वहु विराग के भोगी॥ तहां समाज मुनि तकर जोरी॥ किये प्रसन नृप विनय अघोरी॥ दोहा॥ सपत दिवस महं मरन जिह को कर्तव्य मुनि तात॥ वनि परिहैं मोहि कृपाजुत कीजिये वदन प्रकास॥२८॥ टीका॥ इस प्रकार शुकदेव जी कों वड़े गूढ वचन सुनकरके सुरसुंदरी जो रंभा है सो मूक अर्थात गुंगे वत मौन होय गई और आश्चर्ज के वश होयकर हृदयमे पश्चातावती हुई वारवार हाथ जोड़कर प्रणाम करती भई फिर मुखसे अनेक प्रकार असतुती गायके करके और सीस नाय करभगवान का सुमरण करती हुई अपने स्वर्ग लोक को चली गई ऐसे श्री शुकदेव जी का सुंदर प्रभाव जो है सो तिसके कथन करने को संसार मे कौन सामर्थ है सो षोडश वरष की अवस्था सुंदर स्याम सरीर सरव गुणों के

धाम भक्तों मे प्रधान भगवान के परम पयारे सो जायकर
के हंससर नामक एक बडा निरमल सरोवर जो है तहां
निराहार व्रत धार करके बैठ जाते भये और जब राजा प्री
क्षत को श्राप हुआ तब देव ऋषी ब्रह्म ऋषी भक्त संत
और ब्रह्म [illegible] इह संपूरण समाचार जानकर राजा के पास
चले आये राजा ने महापुरुषों को आवते देखकर भक्तों से
चरन वंदना कर कर बडे सनमान सतकार से सब को ज
था जोग आसन दिये इस प्रकार सरब से सयों के दूर करने वा
ला मुनी ऋषियों का समाज गंगा जी के किनारे पर शोभा
देता भया तिस मे व्यास परासर आदि
जोगी और बैराग के भोगी और भी बहुत बैठे हुये थे तब
तहां मुनियों के समाज मे राजा प्रीक्षत हाथ जोड कर बडी
बिनती वाली कोमल वाणी से प्रश्न करते भये कि हे मु
नी श्रेष्ठ जो पुरष आज से सात मे दिन को मरने वाला
है तिस को कौन करम करना चाहिये कि जिस मे तिस की
कल्यान निश्चय हो इह कृपा करके मेरे को आवी कथन
करिये ॥ २८ ॥ चौपाई ॥ मुनि समाज सुनि भूपति बानी ॥ बो
ले निज निज मति अनुमानी ॥ कोऊ विधान जोग मुष बरना ॥
को बिराग अनुराग उचरना ॥ कोऊ दान व्रत मष मुख
राखो ॥ कोऊ धरम तीरथ सुभ भाखो ॥ यद्यपि मुनि न अ
नेकन कहऊ ॥ पै संसय नृप समन न भयऊ ॥ तहि अ
वसर ततकाल सुहाये ॥ श्री शुकदेव तहां प्रकटाये ॥ न
र नायक कहें कृस्न समाना ॥ देखि परे मुनि कृपानिधाना ॥
चलि आये जब मद्र समाजू ॥ उठे मुनिंद्र सकल जुत
राजू ॥ कहि कहि वदन वचन सतकारा ॥ वंदे सब न मु
नीस उदारा ॥ कहि निज नाम भूप कर जोरी ॥ लाग्यो चर
न बहोरी बहोरी ॥ कनक आसन द्रुत लीन मंगाये ॥ तहि
पर मुनि आसीन कराइये ॥ करि पूजन जुत भक्ति विधाना ॥
नृपति नम्र मुख विनय बखाना ॥ जन कर दशा विदित
प्रभु तोही ॥ कहिये जथा उचित अब मोही ॥ दोहा ॥
तब शुकदेव प्रसन्न मन भन्यो वदन मुसकाय ॥ सपत
दिवस लग अवहिं तुव अवधि सेष महि राय ॥ २९ ॥

श्री

पनिज

[illegible]

३३६

३३६

टीका॥ तब मुनियों का समाज राजा की कोमल और विनती वाली वानी सुनकर अपनी बुद्धी के अनुसार भिन्न भिन्न सब कथन करने लगे कोई जोग के विधान को बखान करने लगा कोई विराग कहने लगा किसी ने यग्य दान और ब्रत कथन किया किसी ने तीरथ और धरम उचारन किया कि एही करना चाहिये इस प्रकार मुनियों ने यद्यपि अनेक ही कथन किया तद्यपि राजा के हृदय का संशय कुछ भी न वृत्य नहीं भया परंतु तब तिसी समय तहां शुकदेव जी भी आय प्रकट भये हां राजा को साक्षात ब्रह्म आतमा का रूप ही देख पड़े और वे जब समाज के बीच चले आये तब राजा के सहित सब मुनी ऋषी संत भक्त उठ खड़े हुये और बड़े सतकार के वचन कहि कहिकर सबों ने मुनी नायक शुकदेव जी को वंदना करी फिर राजा अपना नाम सुनाय कर बार बार चरनो पर सीस नावता भया तिसके उपरांत सुंदर सोवरन का सिंघासन मंगाय कर तिसपर बड़े सनमान से मुनी महाराज बिठाय दिये और विधि विधान के सहित भक्ती पूर्वक सब पूजन करके राजा जो है सो बड़ी नम्र वानी से विनती करने लगा कि हे दीनानाथ मेरी दशा आपको सब भली प्रकार विदित है अब दास के समय के अनुसार जैसा योग्य हो सो कहिये इस प्रकार राजा के वनीत वचन सुनकर श्री शुकदेव जी आनंद से मुसक्याय कर कहने लगे कि हे राजन अभी तो तुमारी सात दिन की है चिंता कौन बात की है॥२८॥ चौपाई॥ नजरु सोच नरनाथ उदारा॥ सफल मनोरथ होहि तुमारा॥ रहो एक ऋषिराज सुहावा॥ जेहि षटूवांग नाम जग गावा॥ सुरहित लागि महीप सुजाना॥ असुरनवि जय हेतु किय प्याना॥ समर प्रचारि असुर संघारी॥ हरषि सुरन तव वदन उचारी॥ जुव हित कीन हमार सुहावा॥ अव नृप मांग जवन मन भा

सुनिशुकदेव गिरामन भाई॥ मनीवदन रंभे हरषाई॥ जोत्रियकर तुव सुमति प्रधाना॥ भस्यो उदरदुरगंधि वषा ना॥ सोमुनीस मन मृषा विचारी॥ लेहु विदत निज नैन निहारी॥ मोर चरितउर अचरजदाई॥ अस कहि सुर सुंदरि अतुराई॥ किये प्रकट कौतुक मनहारी॥ दियेउदर निजे नखनविदारी॥ सपत तीन जोजन चहुंपासा॥ फैलि गई सुभ सुखद सुवासा॥ मनहुं वसंत विमल मन भाई॥ वसुमतिपें सोभा सरसाई॥ लखि कौतुक अस तासु नवीना॥ विहसि मुदित मुनिनाथ प्रवीना॥ विविध प्रसंसि वदन अस काहा॥ सुभ्रे मोहि नमर्म कछु राहा॥ अवलो श्रवण दरस नहिं आवा॥ इह अदभुत तुव जवन दिखावा॥ वृथा किये निंदरन जगमाहीं॥ वेदपुरान वरण त्रियकाहीं॥ अव सौरभ अस अमल सुहावन देखिउदर रंभे तुव पावन॥ दोहा॥ मोरे जिय जनु लालसा उपजपरी अस आय॥ करिनिवास सुभ उदर पुनि लेहु जनम निजपाय॥२१॥ टीका॥ इसप्रकार शुकदेव जीकी मनको भावती और गूढ वानी सुन कर रंभे हरषसे कहने लगी कि हे सुमती प्रधान मुनी इह जो तुमने स्त्री का उदर दुर्गंधी से भराहूआ कथन किया है सो इसको मृषा अर्थात असत्य जानकर और इस भ्रमको त्यागकर वडे आचर्ज के देनेवाला मेरा चरित्र अपने नेत्रों से अव प्रतक्ष देखलेवो ऐसे कहिकरके देवस्त्री रंभे जो है सो ~~[illegible]~~ सब लोगों के मन को मोहित करने वाला कौतुक करके ततकालही नखों से अपना उदर विदारन करदेती भई अर्थात फाड़देतीभई तिसतें दस दस जोजन चारो पासे सुभ और सुख के देनेवाली सुंदर वासना जो है सो फैल ~~[illegible]~~ गई मानो वसुमती जो पृथवी है तिसपर वडी निरमल और मनके भावने वाली वसंत की सोभा सरस होतीभई इसप्रकार तिसका अदभुत कौतुक देख करके मुनियों मे प्रवीन शुकदेवजी वडे हरख और आनंद को प्रापत होते भये और अनेक प्रकार तिसकी श्लाघा और वडाई करके कहने लगे कि हे सुश्री ले मै तेरी महिमा

ऐसी

सात दिन मे श्री सपताह सुनाय करके ततकाल भग
वानके वैकुंठ धामको पठाय दया ॥२०॥ चौपाई॥ देखहु
संत संग सुखदाना॥ सपत दिवस महंभूप सुजाना॥ त
हो विमल संगति फल पाई॥ गयो विकुंठ निसान व
जाई॥ अस नित संत संग सुखदाया॥ जनन उधरन वे
द वुध गाया॥ समय एक चढि जान सुहाये॥ कृष्ण देव
उर आनंद छाये॥ लिये समाज संग निज नाना॥ जनक
नगर कहं किये पयाना॥ तव मारग शुकदेव निहारे॥ ज्ञा
न ध्यान मनु मूरति धारे॥ जानि अनन्य भक्त मुनि राई॥
लिये कृष्ण निज जान चढाई॥ मुनि नायक कछु हरष
न माना॥ यद्यपि कृष्ण किये सनमाना॥ जहि अपमा
न मान समु दोई॥ हरष विषाद गुनहि किमि होई॥ सद
एक रस सुष दुख माहीं॥ हानि लाभ सपने हुं कछु ना
हीं॥ को शुकदेव सरस जग आना॥ भक्त प्रधान प्रीये
भगवाना॥ जहि अवुध भव जीवन हेतू॥ वांध्यो सु
भ भागवत सेतू॥ दोहा॥ तहि भग जीव अनंत भव भ
ये जतन विनु पार॥ धन धन संसृति अव तरे श्री शुक
देव उदार॥ पतित उधा हो कोटि जग सकल लोक हि
तकीन॥ कौन भयो शुकदेव सम पर उपकार प्रवीन॥
टीका॥ देखो संतों की संगत कैसी सुखके देने वाली है
कि जिस संगती का फल पाय करके राजा परीक्षत वैकुंठ
को वाजे वाजते चला गया इसपर वेद और वुध जनो ने
संसार मे नित्य जीवों के उद्धार करने वाली परम सुखदा
यक संत जनोकी संगती वरणन करी है एक समय
आपने नाना समाज को साथ ~~लिये हुये~~ लेकर सुंदर रथपर
आरूढ भये हुये अर्थात रथपर चढे हुये कृष्ण प्रभात
मा जनक नगरी को चले जाते थे तब रसते मे मानो एक
ज्ञान ध्यान की मूरती धारे हुये मुनी शुकदेव जी मिल
जाते भये तिनको आपने अनन्य भक्त जान कर कि जिन
के समान दूसरा कोई नहीं भगवान कृपान ने तुर
त सनमान से अपने रथपर चढाय लिये यद्यपी
भगवान ने मुनी नायक का वहुत ही सतकार सनमान

किया परन्तु तिनोने हृदयमे कुछभी हरष नहीं माना क्यों कि जिनको मान अपमान दोनो समान हैं तिनको हरष विषाध कैसे सूझता है सुखदुख हान लाभ मे सदैव एकरसही रहते हैं ऐसे शुकदेव जी मुनियोंमे प्रधान और भगवान के परम प्यारे भक्त कि जिनके समान संसार मे दूसरा कोई नहीं और जिनोने संसार रूपी समुद्रमे जीवों का भला विचारकर इरव हुत हीं सुगम और सूधा श्रीमत भागवत का सेतू अर्थात पुल बांध दिया है तिस मारग से संसार के अनन्त जीव कि जिनका कुछ नहीं जानके विना सहजे हीं पार होयगये हैं और होते जाते हैं इन श्री शुकदेव जी का अवतार जो है सो संसार मे धन्य है कि जिनोने अनेक कोटि पापी जनों तारा और जगत मे सरव प्रकार करके लोगों का हित किया है इनके समान और दूसरा कोई भी उपकार मे प्रवीन नहीं भया है ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषाटीकायां शुकदेव चरित वरणने नाम सरगः

वा॥ बोल्यो सुरन वचन सुनिराया॥ जो मो पै तुमरी सुरदाया॥
मरन मोर तब देहु बताई॥ सुनत सुरन असुगिरा अलाई॥ घ
टि का जुगल सेष तुव मरना॥ तब कर जोरि कह्यो पतिधर
ना॥ देव देहु मोहि भवन पुचाई॥ रह तुमार कहु लग अधिका
ई॥ तब देवन तहि सदन पठायो॥ रुप अनन्य हरि ध्यान जु
ड़ायो॥ द्वै घटि का धरि सून समाधी॥ लोक प्रलोक लियेनि
ज साधी॥ भयो मुक्त षट्वांग नरेसा॥ अहै अब धितुव सप
त दिनेसा॥ दोहा॥ अस कहि मुनि शुकदेव तहं भूप परीछत
काहिं॥ श्री सुकदेव सब ताह सुनाय द्रुत पठयो हरि पुर मा
हिं॥ टीका॥ हे परम उदार नर नायक तुम अपने हृदय का सोच
सब त्याग देवो कुछ कृष्ण प्रमातमा की कृपा से तुमारा मनोर्थ
सफल हो जावेगा इस पर एक आख्यान तुम को कहते हैं क
एक षट्वांग नाम करके राजा था सो एक समय दे
वताओं के हित से असुरों के जीतने को चढ़ाई करता भया औ
र तहां जाय कर तिस महा प्रतापी राजा ने रण मे अपनी भु
जों के बल से सब असुरों को मार दिया तब देवता गण
परम आनंद को प्राप्त भये हुये कहने लगे कि हे राजन तु
मने हमारे साथ बड़ा हित और उपकार किया है हम तुमा
रे पर बड़े प्रसन्न भये हैं अब जो तुमारे मन की रुची और इ
च्छा है सो वर मांगो इस प्रकार देवताओं का कथन सुनकर
के राजा कहने लगा कि हे देव जो आप मेरे पर प्रसन्न भ
ये हो तो कृपा करके इह बताय देवो कि मेरा मरन
कब होगा ऐसे राजा की बानी सुनते ही देवता विचार कर
कहने लगे के हे राजन तेरे मरने मे तो दो ही घड़ी बाकी है
तब राजा हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे देव अब ए
ही कृपा करो जो मेरे को घर मे पहुंचाय देवो इस प्रका
र राजा का वचन सुनते ही देवताओं ने तिस को तत्काल
घर मे पहुंचाय दिया तहां घर मे आवता ही राजा भग
वान के अखंड ध्यान मे चित्त को जोड़ देता भया और दो
घड़ी तक सून समाधी धार कर लोक प्रलोक को सिद्ध
करके राजा षट्वांग जो है सो मुकती को प्राप्त हो जाता भया
हे राजन तुमारी अवधी तो अबी सात दिन है इस प्र
कार कहि कर मुनी शुकदेव जी ने राजा परीछत को

३३९

336

इह संतों का सुज और गुणानुवाद के सामी है कि सुमती के अधिक करने वाला कुमती और पापों के नास करने वाला संपूर्ण भय और भ्रम के अंधेरे को हरने वाला मानो प्रकासमान सूरज है ऐसे संतमतों के चरनो को सीस नायकर भीषमदेवजी का मनो हर और कानों को सुख देने वाली गाथा जो है सो सनमानसे प्रीती पूर्व ईहां गायन करता हूं कहते हैं कि जिस प्रकार भीष जी का जनम हुआ है सो तो महाभार्थ पुस्तक मे व्यासदेवजी ने भली प्रकार सब कथन किया है ईहां हृदय को आनंद देने वाला प्रसंग कुछ संछेप करके कथन करता हूं क्योंकि बालअवस्था से हीं तिनकी संतजनों के पूजन सेवन करने मे रुची रही और तैसे हीं धरम मे प्रवीन होकर सज्जनो के सुख देने और प्रजा के पालने मे भी प्रीती रही सो भीषमजी एक समय ~~मुनी पुलस्त जो हैं तिनके पास आवते~~ भये धरम स्त्रास्त्र की विधी जानने के निमित्त मुनी पुलस्त जी के पास आवते भये तहां अनेक प्रस्न कर कर नीती के सहित धरम विधान जो हैं सो भली प्रकार सब सीख लिये तब भीषमजी के बडे भ्राता बचित्रवीर्ज नामा जो सील सनेह और गुणों मे परम प्रवीन थे गृहस्थ से रहित थे अर्थात विवाह नहीं किया हुआ था तिसी समय कासी के राजाने वेद के विधानसे अपनी पुत्रियों का एक महा स्वयंवर रचा तहां देस देस के राजे और महा राजे अपना अपना समाज सजाय कर सब चले आवते भये तब इस स्वयंवर की सुधी पाय कर सूरवीरों मे प्रधान जो भीषमजी थे सो भी बडे तीव्रवेग वाले रथ पर चढ के संख बजावते हूये तहां को चल पडे और तिस स्वयंवर मे राजकुमारियों ने तिनके जाने से पहिले हीं अपने अपने मन को भावते वर जो थे सो जाच लिये इतने मे भीषमजी भी तहां आय पहुंचे

(margin: सुमिरन; गिरीकेताग; ...; ...कर; ...; ...सुंदर)

ग्रोर सँवर भये हुये को देखकर परम कोप से लाल नेत्र करलेते भये ग्रोर वहुत उग्रवाणी करके सूरवीरों की रीति से ललकार कहने लगे कि ग्रेसा कौन वीर जगत मे साम र्थ है जो हमारे को निदर करके ई हां से इन राजकुमारियें मे तिस की रण मै वडाई ग्रोर वल देखूंगा इस प्रकार भीषम देवजी वीर रउतसाह से भरे हुये धनुष को टंकार जो है सो करते भये ग्रोर उधर से वडे वडे भारी राजा रण मै सूरवीर भीषम जी के को सहार ना सके ततकाल लडने को उठ खडे हूये ॥ २ ॥ चौपाई ॥ लागे होन परस्पर जुद्ध ॥ वीर धीर रण मेदनि कुद्धा ॥ दहेन ग्रोर तें सायक ग्राते ॥ फुंकरत व्याल विसष मनुजाते ॥ छुटे विषम सर भीषम ताहां ॥ मूर्छित गिरे विपुल नरनाहा ॥ वहु घायल रण परे प्रवीरा ॥ भये हननव हु वि कल ग्रधीरा ॥ दोहा ॥ ग्रस प्रकार नृप सकल तहे जीति भीषम भट ताज ॥ नृप कुवरिन कहे जान धरि फिरे सुम रि जदुराज ॥ २ ॥ टीका ॥ तव परस्पर सूरवीरों का जुद्ध जो है सो होने लगा दोनो ग्रोर तें ~~सायक जो ग्रावने~~ वाण ग्रावते हुये ग्रैसे प्रतीत होते हैं के मानो विष के भरे हुये सरप फुंकारे मा र ते चले ग्रावते है तहां भीषम जी के महा कठिन वाण जो छू टे तो तिनके वहुत सूरवीर मूर्छागत हो गये ग्रोर ग्रनेक घा यल होयकर पृथवी पर गिर पडे वहु त मारे गये ग्रोर धी र ज छूट कर सब व्याकुल होय गये इस प्रकार वीरों मे प्रधान भीषम जी तहां सें पूरण राजाउं को जीत कर ग्रोर तिन राजकुमारियों को रथ पं वेठाय कर जदुनाथ जी का सुमरण करते हूये ग्रपनी राजधानी को फिर ग्राये ॥ २ ॥ चौ पाई ॥ विजय सुजस जग पाय महाना ॥ ग्राय भवन नि ज सुमति प्रधाना ॥ ग्रेवालिका सुता नृप जोई ॥ दीन्यो जेयृ भ्रात कहे सोई ॥ ग्रेव ग्रेका दीन सुधीरै ॥ हरषि देव व्रत दूसर वीरै ॥ तहां ग्रेव के वचन ग्रलाई ॥ मै लीन्यो संयंवर पाई ॥ ग्रव दूसर इहे काह ग्रनीती ॥ ग्रस तहि गिरा सुनत व प्रीती ॥ भीषम देव न हीं सके सहारे ॥ जान्यो ग्रहे ग्र धम विभचारी ॥ तजि दीन्यो करि करि तिसकारा ॥ जाहु जाहु जित वरय तुमारा ॥ यद्यपि निज ग्रनुचित कहे तासा ॥ तम हु नाण वहु वदन प्रकासा ॥ तद्यपि भीष्म देन हीं माने ॥ विपुल कहे पर विपुल रिसाने ॥ तव निरा

Margin notes: ५कर; ५पको; ५२; ग्रोर सँ; ५त; कोप से कोप; केसकते; वर केसकपसे

२४०
३५०

स मा मनि अकुलाई॥ निज पितु मातु भवन चलि आई॥
राखी तिन है न आपन गेहू॥ आई बहुरि भीषम पे तेहू॥
नम्रत जोरि जुगल कर दीना॥ आरत विनय वदन निज
कीना॥ दोहा॥ राख्यो मोहि न मातु पितु नाथ छिन कनि
ज गेह॥ आई निरास्रत बहुरि मै तुम पै दीन सनेह॥
२५ टीका॥ तव सुंदर जै और सुजस जगत मे पाय कर सुम
ती प्रधान भीषम जी जो है सो आपने घर मे आय प्रापत
भये और अंवालिका नामा राजकुमारी जो थी सो अपने
वडे भ्राता वचित्रवीर्य नामा के दे दई और जो अं
व अंवका दो राजकुमारी थीं सो भीषम जी आपने दूसरे
भ्राता को देदेते भये तव अंवका निरभय हो करके
कहने लगी कि हे राजन मैने तो आपना वर तहां सयंवर मे
हीं पाय लिया हूं अहे अव दूसरा वर देते हो इह क्या अनीती
करते हो ऐसे तिसकी विप्रीत वानी सुनकर भीषम
जी सहार नहीं सके हृदय मै जानते भये कि इह तो
विभचारनी है ततकाल तिसकार करके निकाल दिया और
कहा कि जहां तुमारा वर है तहां हीं जावो तव सो कु
मारी भीषम जी को कोपायमान देखकरके आपना
अनुचित छमा करावने के वासते वहुत हीं विनतीक
रती भई परन्तु भीषम जी नहीं माने तिसके वहुत
कहनेपर वहुत हीं कोप करते भये तव सो राजकुमा
री तहां से निरास होयकर अपने माता पिता के घर मै
चली आई तहां तिसको तिनो ने भी नहीं राखा अन्त
को फिर भीषम जी के आय गई और दीन वत हाथ जो
ड़ कर वडी दुखकी भरी हुई वानी से विनती करने लगी
कि हे कृपानिधान मेरे को माता पिता ने भी घर मे नहीं राखा
है तांते मै निरास और निरास्रत होय करके फिर तुमारी ही सरन को आई है॥२॥ चौपाई॥
तुमरे हेतु जनक गृह माहीं॥ रहन दियो मोरे प्रभु नाहीं॥
दियो निकारि कहां अव जाऊं॥ कां के निज दुख दुसह सुनाऊं॥
तुव सेतनु सुत परम उदारा॥ अव मोहि करिय नाथ सू
ई कारा॥ नतर जो कियो मोर अपमाना॥ तो देउंगी तो
हि स्रप जस नाना॥ भीषम सुनत कथन अस तासा॥

तिसके

पास

अथ भीषम देव चरितं

दोहा॥ श्रीजदुनंदन पदमपद प्रद प्रमोद कल्यान॥ उरधरि गु
णगण संत जन मनहुं वदन शुभदान॥ सुमति प्रवर धन
हरन अघ करन कुमति सव नास॥ संत सुजस दिनमान
दुति दमन तिमर भ्रम त्रास॥ भीषम देव कर चरित सुभसु
नत श्रवण सुखदाई॥ वरनहुं सादिर श्रीतिजुत संत चरन
सिरनाई॥ चौपाई॥ जथा जनम भीषम जग लीन्यो भारथ
कथन व्यास सब कीन्यो॥ ईहां कछुक संतपन प्रसंगा॥ रट
हुं रुचिर मनमोद उमंगा॥ सिसुपन तें संतन सिवकाई॥ किये
अचरन तास सुखदाई॥ संतत धरम निरत दिनराती॥ सज्जन
प्रजा सुखद सब भांती॥ एक समय नरनाथ प्रवीना॥ मुनि
पुलस्त पें आवन कीना॥ धरम शास्त्र विधि जानन हेतू॥ क
रि करि प्रस्न भूप मतिसेतू॥ सद्गुरु तें सीख्यो निरधारा॥
अर्थ शास्त्र सुभ जथा प्रकारा॥ रह्यो वचित्र वीर्य अ
स नामा॥ अग्रज भ्रात भूप मतिधामा॥ गुण प्रवीन
रत सील सनेहू॥ किये न तास दार परिग्रेहू॥ कासिराज
निज सुता महाना॥ रच्यो सुँवर वेद विधाना॥ देस देस कर न

५ये

व नृपराजू॥ आये निज निज साजि समाजू॥ अस सुधि पा
य भीष्म भटि माना॥ संख वजाय चल्यो चढि जाना॥ नृप
तें पूरव तहां सुहावा॥ निज निज वर कुवरिन मनभावा॥
जाच्यो ललित सुयंवर माहीं॥ आय गये भीषम भट ता
हीं॥ तहां सुयंवर देखि नरेसा॥ अरुन नैन रिस किये वसे
सा॥ वदन प्रचारि भन्यो भटि वाना॥ निदरि हमहिं अस को
न महाना॥ जो नृप कुवरिन कहं ले जाई॥ मै देखहुं तहि
समर वडाई॥ अस कहि भीषम देव मन मंडा॥ किये धनुष
टंकार प्रचंडा॥ दोहा॥ उत तें वीर विसाल वहु समर
सुभट महिपाल॥ सके सहारि न भीषम रिस उठे लरन
तत काल॥१॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि
अव श्रीजदुनंदन भगवान जो हैं तिनके आनंद और
कल्यान के देने वाले चरन कमल ~~जो हैं सो~~ हृदयमें
धारन करके संत भक्तों के पवित्र गुण गण जो हैं सो
~~के~~ सुभवानी से मती अनुसार कुछ गायन करता

३४१ 341

तिनको देख ~~और दीनता~~ करके सो राजकुमारी बड़ी दीन होयकर चरणपर प्रणाम करती भई और फिर दोनो हाथ जोड़कर परम दुखकी बानीसे रोदन करके आपनी दशा और वृतान्त जो था सो सब सुनाय देती भई इस प्रकार तिसका दुख और संताप सुन करके मुनिनाथ परशुराम जो हैं सो रोम रोम दया के वश हो जाते भये अर्थात तिनके रोम रोममे दया प्रवेश कर गई ॥४॥ चौपाई ॥ हरिसरूप मुनिनाथ उदारा ॥ परसराम विख्यात संसारा ॥ जहं लग अस्त्र शास्त्र जगमाहीं ॥ मुनि सप्रीति सब भीषम काहीं ॥ पूर्व सिखाय सकल सुविधाना ॥ तातें असमुनीस जिय जाना ॥ रह्यो मोर भीषम शिष शुद्धा ॥ सो न होहि मम वचन विरुद्धा ॥ असमुनीस निज हृदय विचारी ॥ तासु कह्यो सुन राजकुमारी ॥ तुमरे गृहण करन हित जाई ॥ हम भीषम सों कहब बुझाई ॥ सो हमार ~~शा~~सासन वस ह्वैहीं ॥ तुम कहं अवसि गृहण करिलैहीं ॥ कबहुं कि मन्यो न वचन हमारे ॥ तो मैं देखत अब हीं तुमारे ॥ यदपि रह्यो सिषमोर वीरारी ॥ तदपि तासु प्रतिकूल विचारी ॥ हतहु प्रचारि समर सर प्रेरी ॥ को समरथ सासन जग मेरी ॥ जो नसीस धरि लेहि अखेरा ॥ परसराम मम नाम उदेरा ॥ जास कुठार धार निधवारी ॥ विसिकवार तत्र तत सारी ॥ बूडे वहे वार कछु नाहीं ॥ तास वचन निसफल किमि जाहीं ॥ असकहि कुपत अरुन दृग कीने ॥ चले परसु कोधर धरि लीने ॥ दोहा ॥ आय गये कुरुक्षेत्र महं भृगुनंदन नृप क्रूर ॥ चले सुनत भीषम धरन सीस चरन मुनिधूर ॥५॥ टीका ॥ कैसे भी परसराम हैं कि साक्षात भगवान का रूप से पूर्ण जगत मे प्रसिद्ध और जहां लग अस्त्र शास्त्र ~~हैं~~ हैं सो भी सबही को परसराम जी ने ही सिखाये हुये थे इससे मुनीनाथ का आपने हृदय मे जानते थे कि भीषम मेरा शिष्य है सो मेरे वचनके विरुद्ध कभी नहीं होगा अर्थात मेरी आज्ञाको

कबी नहीं टारैगा इसप्रकार हृदय मै विचारकर परसराम
जी तिस राजकुमारी को कहने लगे कि हे पुत्री तेरे ग्रहण
करने के वासते हम भीषम को जायकर के कहेंगे सो ह
मारा शिष हमारी आज्ञा के आधीन है तुमारे को
अवश्य ग्रहण करलेवेगा और जो कदाचित हमा
रा वचन नहीं मानेगा तो मै अबी तुमारे देखते हीं य
द्यपि मेरा शिष्य भी है विमुख जानकर
रण मै ललकार कर ऐसे बाण मारूंगा कि तिस को
ततकाल प्राणों से रहित करदेऊंगा जगत मै ऐसा कौ
न सामर्थ है जो मेरी आज्ञा को सीसपर धारन नहीं क
रता मेरा परसराम नाम संपूरण जगत मे सूरज के स
मान उदय है और जिसके कुठार की समुद्ररूपी धारा
मै इक्कीसवार संपूरण पृथवी के क्षत्री डूब चुके हैं तिस
का कुछ पार नहीं पाया जाता है हे राजकुमारी सो ऐसे
परसराम का वचन कैसे निस्फल होजावेगा इसप्र
कार वचन कहिकर कोप से लाल नेत्र
किये हूये परसू जो कुहाडा है सो कांधेपर धारन करके
चल पडते भये तब चलते चलते भृगु नंदन जो
पृथवी के संपूर्ण राजाऊं को महा
क्रूर हैं कुरुक्षेत्र पर आय प्रापत हूये तहां भीषम
जी गुरूजी का आवना सुनकर तिनके चरनों की धूरी को
सीसपर धारने की अभिलाषा से आगे हीं लेने को च
ले पडते भये ॥४॥ चौपाई॥ आयलेन अगकायन राई॥
सनमुख होत लुकट इवजाई॥ कहिकहि धन्य भाग्य प्र
भु मेरे॥ गहे चरन भृगु नंदन केरे॥ पूछि कुसल सुभ
आसन दीना॥ विनय बडाई विविध विधि कीना॥ मन्यो ब
हुरि जुग जोरत पानी॥ धार्यो चरन कवन हित स्वामी॥
कहिये दीननाथ अनुसासा॥ मैमन वचन करम प्रभु दा
सा॥ तब मुनिनाथ कह्यो अस बानी॥ इह नृप सुता
अंबका स्यानी॥ हित जुत मोर वचन अनुसारी॥ करहु

करहु ग्रहण कल्यान तुमारी॥ तव भीषम कर जोरि व
खाना॥ याहित मै भगवन प्रण ठाना॥ कवहुं न करहुं ग्र
हण तुव काहीं॥ जो लौ अहैं प्राण तुव माहीं॥ सुनत राम
अस भीषम वानी॥ भने वचन मान सरिस मानी॥ जो इहउ
त्तर दीन तुव मोही॥ परे समर सूझव नृप तोही॥ सो अस उ
वचन जगत ररना॥ अहो अवहि भीषम तुव मरना॥ मै दु
रराम जानत संसारा॥ जासु नित्र वीस इक वारा॥ कियेभू
मि निज भुजवल भारी॥ कोपित परसु प्रचंड प्रहारी॥ तव
भीषम कह जुग कर जोरी॥ सुनहु विनय भृगु नंदन मोरी॥
क्षत्री जाति समर नहिं डरई॥ डरै तो अवसि नरक महं परई॥
वरमा धरम जुद्ध रण मरना॥ रिपु जुझाय कै आपु जुझर
ना॥ किये नित्र राम महि जव हीं॥ रह्यो ना जग भीष
म भट तव हीं॥ दोहा॥ अहै एक डर श्राप तुव सो नहि हे
हु मुनिराय॥ करहु जुद्ध भावत जथा समर सुभट इव
आय॥१॥ टीका॥ इस प्रकार जव भीषम जी मुनी को आ
गे लेने के वासते गये तव सनमुष होते हीं दंड समान
~~चरनो पर~~ चरनो पर गिर पड़े फिर दोनो हाथों से चरन
पकड़ कर विनती करने लगे कि हे भगवन मेरे धन्य
भाग्य है जो आप का दरसन पाया ऐसे कहि कर और कु
सल पूछ कर फिर प्रीती भक्ती से ल्याय कर सुभ आसन
पर विठाय दिये और अनेक प्रकार की विनती और वडाई
कर कर कहने लगे कि हे दीना नाथ मै मन वचन काया
करके आपके चरनो का सेवक हूं अव जिस कारन इहां
चरन धारे हैं सो आज्ञा मेरे को कहिये ऐसे भीषम जी
की वानी सुनकर मुनियो मे प्रधान परसराम जी कहने
लगे कि हे भीषम मै तुमारे पास इस निमित्त आया
हूं [illegible] इह अंवका नाम करके राजा की कन्या जो है इस
को तुम मेरे वचन से हित मान कर ग्रहण कर लेवो तु
मारी सरव काल कल्यान होवेगी तव मुनी नायक
का कथन सुन कर भीषम जी कहने लगे कि हे
भगवन मै इस के निमित्त व्रत कर दिया हुआ है

कछुक रोष वस वचन प्रकासा॥ पानि ग्रहण तिय मोहि न माना॥ तुव कत वृथा रार मुष ठाना॥ जग निस्त्रीक रहन प्रण मोरा॥ इह निसफल भामनि हठ तोरा॥ तव हु अंवका विपुल वखान्यो॥ भीष्मदेव कछु एक न मान्यो॥ ह्वै निरास तव विकल अचेतू॥ कानन गवनि त्रिये तप हेतू॥ परसराम सन तहां सु हेला॥ भयो तासु कलं कानन मेला॥ करि प्रणाम जुग पान न जोरी॥ भृगू नंदनि सन भूपकिशोरी॥ दोहा॥ वरन्यो विनय वृतांत निज करि रोदन समुदाय रोम रोम दाया विवस भये सुनत मुनिराय॥ ४॥ टीका॥

राजकिशोरी अंवका जो है सो फिर कहती है कि हे नाथ तुमारे कारन पिता ने मेरे को घर मै नही रहने दिया ततकाल ही निकाल दिया है अब कहो कि मै कहां जाऊं और ~~किसको~~ अपने जीये का दुसह ~~दुखको~~ दुख कि जो नहीं सहा जाता है किसको सुनाऊं हे संतनू के नंदन भीषमदेव तुम उदारता की नधी हो अब कृपा करके मेरे औगुन नाहि चारिये नाथ ~~मेरेको~~ अपनी किंकरी जानकर मेरे को गृहण कर लीजिये नहीं तो जेकर मेरा अपमान ही करोगे तो हे कृपानिधान मै आपको वडा भारी अपजस देऊंगी तव भीषमजी तिसका ऐसा कथन सुनकर "कुछक रोस करके कहने लगे कि हे भामनी स्त्री का पानी गृहण अर्थात विवाह जो है ~~सोतो~~ सो तो मेरे को कदाचित कर नाही नहीं है तूं इह अपना ~~हठ~~ वृथा" क्यों करती है मेरा तो जगत मै निस्त्रीक ~~रह~~ ही रहने का प्रण है तेरा विवाद झगड़ा सब निसफल ही है ऐसे भीषमजी के कहने पर अंवका "ने फिर वहुत ही हठ" "किया और वहुत ही कहा परन्तू संतनू कुमार एक नहीं मान ते भये तव सो" निरास और व्याकुल होकरके तप करने की अभिलाषा से वण को चले गई तहां वण मे व्याकुल फिरती फिरती को दैव योग से कहीं परसराम जी मिल गये

सुदुःख,

"हठ

"ह्वैनिरास

धनुषसर सुभग प्रणामा॥ दियो ग्रशीश वाद भृगुनाथैं॥ हनि निराच भट भीषम माथैं॥ तापर संतनु सुत कर जोरी॥ कीन्यो विनय वहोरि वहोरी॥ मै सेवक तुव स्वामि सनेहू॥ तजिय नाथ हठ ग्रापन एहू॥ किये न परसराम सुई कारा॥ तव भीषम ग्रस विनयउ चारा॥ दोहा॥ मै ग्रदोष भृगुनाथ ग्रव करिय धरनि रणरार॥ तव ग्रमरष भर परस धर सरधनु किये प्रहार॥ ७॥ टीका॥ भीषमजी कहते हैं कि हे भगवन ब्रह्मणो के वच

ने को वल तो मेरेको विदत है परन्तु ब्रह्मण कौ भुजों का वल प्रताप जो है सो ग्रव देखूंगा कि कैसा होता है हे भृगुनंदन ग्राज कृपा करके ग्रपने दास के सनमुख शरीर का जितना क गरव है सो निकाल लीजिये ग्रव पीछे छिपायकर ना रालिये रणमै जहां तक हो सकता है ग्रपने तीक्षण ग्रौर प्रचंड वाणों के प्रहार कर लीजिये इस प्रकार भीषमजी का कथन सुनकर के परसराम जी ने क्रोध भर कर ततका उठ खडे हूये ग्रौर जिसको देखकर पृथ्वी के वडे वडे राजा सव कंपायमान हो जाते ति समके कूर धनुष ग्रौर वाण हाथ मै धारन कर लेते भये ग्रौर उहां संतनू के पुत्र वीरधीरों मै प्रधान भीषमजी भी जदुनाथ भगवान का सुमरण कर के जो उहाँ तिस के सहित धनुष वाण कौ धारन कर लेते भये इस प्रकार दोनो वीर क्रोध से भरे हूये रणमै जुद्ध की ग्रभिलाषा वाले होते भये तव गांगेयजी गंगा के पुत्र भीषम वीर हैं ब्रह्मणों को ग्रनेक प्रकार के दान देकर ग्रानंद पूर्वक ग्रपने रथपर चढ बैठे उधर से चार घोडयों वाले रथपर ग्रकृतव्रत सारथी को लेकर परसराम जी भी चढते भये तव रणभूमी मै ग्राय कर भीषम जी ने धनुषमै वान जोड कर पहिले परसराम जी के चरनो को प्रणाम की रीती से मारा ग्रर्थात प्रणाम किया ग्रौर उधर से परसराम जी ने भीषम

जी के माथे को बाण मारकर सुंदर शरीर बाद जो है सो दि
या तिस पर संतनू के पुत्र भीषमजी ने फिर हाथ जोड़कर
बारबार विनती करी कि हे नाथ मै है सेवक और आप स्वा
मी हो कृपाकरके इस हठ अपना त्याग दीजिये इस प्रकार
यद्यपी भीषमजी ने बहुत ही कहा तद्यपी भृगुनंदन नहीं
माने तब भीषमजी ने नम्रवानी से फिर कहा कि हे मुनीना
यक मै बहुत कहि करके अदोष हो चुका हूं मेरे को कु
छ दोष नहीं है अब आनंद पूर्वक आइये रण भूमी मे सन
मुष होकर जुद्ध करिये ऐसे संतनू कुमार के वचन सुन ते
ही भृगुनंदन परम कोप से तुरत बाणों के प्रहार करने ल
ग पड़े ॥७॥ चौपाई ॥ उत संतनु सुत मन अनषाये ॥ लागे
हनन बान अतुराये ॥ गुरु सिष जुगल परसपर ठाढे ॥
करहिं समर आयुध दिढ गाढे ॥ वीर प्रधान सबल भुज
जोरे ॥ छाड़त विसष बान दहु ओरे ॥ सरस निरस स
म सुभट उदारा ॥ हरि उतार उत बसु अवतारा ॥ खेल
त फवन फाग जिमि होरी ॥ लाल गुलाल उड़त दहु
ओरी ॥ वीरन वीर रंग तिमि राते ॥ सर अरु वीर रणधीर
उड़ाते ॥ सुरगण समर सूर लषि लोभा ॥ चढि विमा
न नभ देखत सोभा ॥ भीम सुभट भीषम रणरारी ॥ ते
से हि परसराम धनु धारी ॥ तिनहु कीन जस जुद्ध अपा
रा ॥ तास विपुल भारत विसतारा ॥ तातें कछु संछे
पत कणोरा ॥ तेईस दिवस भयो रणघोरा ॥ राम सुभ
ट वर भीषम काहीं ॥ जीति सक्यो रण मे दनि नाहीं ॥
तब कह परसु धरन उर हारी ॥ सुनहु गंग के भूप कुमा
री ॥ दोहा ॥ जो त्यो जाय नमो तै भी छ सुभट सिरताज ॥
जस भावत तस करहु तुव तजिय रोस मम आज ॥८॥
टीका ॥ और उधर से भीषमजी परम कोप से भरे हुये व
डे तीक्षण बाण जो हैं सो छोड़ने लगे इस प्रकार गुरू और
सिष दोनो रण भूमी मे स्थित होकर परस्पर गाढे बाणों के
~~जो हैं सो छोड़ने~~ प्रहार करके अपनी अपनी भुजों का
प्रचंड बल जो है सो दिखावने लगे सरसता और निरसता मे
दोनो बराबर इस हो हरी अवतार मुनी और उहो वसु अ

त
भी
कुंभकेतामे
पांचमेकोग

३४४

344

वतारभीषम जैसे फागुनकी होरी खेलनेमे दोनो ओरसे लाल गुलाल उडते है शोभादेते है तैसे ही वीररंगमे राते हुये वीर दोनो ओरते अबीर रूपी बाणोंको रणमे धीरज धार करके उडावते है ऐसे तिन सूरवीरोंके रणकी शोभाको देवताउंके समूह आकाशमे विमानोपर चढे हुये देखते है और बडे प्रसन्न होते है भीषमवीर कैसे है कि रणमे अतसे कठिन और तैसे ही धनुके धारने वाले परसरामभी महा दुर्गम तिनोने जैसा अपार जुद्ध किया है तिसका ~~विसतार वर्णन करके भारतमे~~ है भारतमे वहुत विसतार है इहां संक्षेपकरके कथन कियां गया है तेईस दिन तक तिनका वडा घोर युद्ध होता भया परसरामजी भीषम वीरको जीत नहीं सके तब परसू जो कुहाडा है तिसके धारनेवाले मुनी हारकरके तिस अंबके नामा राजकन्याको कहने लगे कि हे पुत्री इह सूरवीरो मे प्रधान भीषम जोहै सो मेरे से जीते नहीं जाते है इनकी भुजो के अपार वलका कुछ पार नहीं पाया जाता है तूं अब मेरे भरोसे को त्यागकर जैसी चितको भावती है तैसी कर ॥८॥ चौपाई॥ असकहि राम समर तजि गवना॥ भीषम आय लौटि निज भवना॥ विजय वाज बहु वाजन हेतू॥ दीन्यो शासन सुमति निकेतू॥ लोग्यो होन पुर मंगल नाना॥ मोद प्रमोद न जाय वखाना॥ पुनि जब कौरव पांडव केरे॥ भयो विरोध अनर्थ घनेरे॥ धरम सुवन कहं द्यूत खिलाई॥ जीत्यो सकुनि कपट सरसाई॥ जुग दस वरष दियो तिन काहीं॥ राजनिरास वास मन माहीं॥ वीत्यो वरष चार दस जवहीं॥ सजत कटक कुरु नायक तवहीं॥ चल्यो लरन अमरष सरसाये॥ अनि अनेत कछु वरनिं न जाये॥ तव भीषम वहु नीति वखानी॥ समुजाये कुरु पति अभिमानी॥ पै न मन्यो मानस हंकारी॥ भये मौन तव भीषम हारी॥ भटि कृप द्रोण देव

(margin notes: परसू कुहाडे; हारकरके; तो)

कि तेरेको कवी ग्रहण नहीं करूंगा इसप्रकार भीषम
जीकीवानीसुनकर परसरामजी हृदयमे क्रोधकरकेक
हनेलगे किहेराजन इह जोतैने उत्तरदियाहै इसका
फल तेरेको रणकेपडनेपर मजूमपडेगा मेरा जगतमे
ग्रवेह वचन टलना ग्रहो भीषम केवलतेरा मरनाहीहै
मे संपूर्णलोगोंमे प्रसिद्ध वहादुरराम ग्रर्थात ग्रतसेकठि
न हूं किजिसने ग्रपनी भुजोंके महाप्रतापसे पृथवीको
इक्कीसवार नित्तच करदियाहै ग्रैसे परसरामजीकी उग्र
वाणी सुनकर भीषमजी हाथजोडकर कहनेलगे कि हे
भृगुनंदन मेरीविनती सुनियें जो छत्री जानी तो रण
से कदापी काल नहीं डरताहै जोडरै तो ग्रवश्य
नरकका ग्रधिकारी होताहै छत्रियोंका धरमहै रणमै
जुद्धहीं करना शत्रूको जुझावना ग्रथवा ग्रापच
झजाना जव मुनीनायकने पृथवीको नत्तच किया
तव देखिये जगतमे इह वीर शिरोमणी भीषम न
हीं था हे भृगुनंद एक तुमारे शापसे डरताहूं सो
कृपाकरके ना दीजिये ग्रौर जुद्ध जैसे चित्तकोभावता
है तैसे सूरवीरोंकी रीती हे रणमे निधडक ग्रायकर
के करिये॥१॥ चौपाई॥ विप्रवचन वल विदत महाना॥ दे
खेहुविप्र भुजन कसवाना॥ जन सनमुख भृगुनंदन
ग्राजू॥ करिय समर निज गरव दराजू॥ राखिय ग्र
व न नाथ कछु पाछे॥ हनिय समर सर तीक्षण ग्रा
छे॥ परसराम सुनि भीषम वैना॥ उठे तुरन्त पूर्दि
स नैना॥ धरो धनुष सर विषम कराला॥ जासुदेखि
कंपत महिपाला॥ उत संतनु सुत सुभट प्रधाना॥
धरे तूण कटि कर धनु वाना॥ उभय वीर सम सम
र करुद्धा॥ उठे पचारि करन कल जुद्धा॥ देत दुज
न धन विविध प्रकारा॥ चढो जान गंगेय उदारा॥
राम चढ्यो रथ वेद तुरंगा॥ ग्रकृत व्रत सारथि
ग्रभंगा॥ हन्यो प्रथम भीषम पदरीमा॥ ताकि

अंबलागशरीरसेप्राणहैं

अथकुचनकरे

किं..................

२८५
345

है तो सभाके वीच मे दृढ हठ ग्रौर प्रण करता हूं कि कौरवों ग्रौर पांडवों के दोनो दलों के वीच बडे हरष ग्रौर ग्रानंद से वीदों की बधी ग्रौर रीती ग्रनुसार जदुनाथ महाराजजी का पवित्र पूजन जोहै सो करूंगा॥ ९॥ चौपाई॥ श्रोणित कनकल देत सनाना॥ रणरज वसन सजहुं सनमाना॥ पांडव सुभट सैन संघारी॥ ग्रगर कोप देऊं तिलक लिलारी॥ विविध वरन को सुमन तरंगा॥ पहिराऊं उरमाल उमंगा॥ सनमुख ग्ररि दल दुमत उडाऊं॥ हरि कहे कीरति सुरभि सुंघाऊं॥ वहुरि त्रिविक्रम कहे निरधारू॥ विक्रम दीपदिखावहु चारू॥ पारथ सखे समीप सिधाऊं॥ रुचिर प्राण नैवेद लगाऊं॥ ग्रैंचि प्रीति सं सृति समुदाई॥ देहु नाथ कहे वीरि खवाई॥ विजय प्रदान वान श्रीपीके॥ मे चलवाय समर महि नीके॥ जे प्रद दाना जो न दिवाऊं॥ तो हरिजन जग जन न कहाऊं॥ हरि रथ सो रथ वहुरि मिलाई॥ धुज चौवर कल करन चलाई॥ नखसिख निरखि स्याम छवि सोहन॥ सुरनर सकल चराचर मोहन॥ ग्राज ललित लोचिन फल पाऊं॥ दीन नाथ कहे समर रिझाऊं॥ दोहा॥ करि करि वारंवार धुनि धनुष प्रत्यंचन घोर॥ वजिहुं वाज रण सुभट प्रद हरष करष वहु ग्रोर॥ १०॥ टीका॥ फिर भीषम जी कहते हैं कि श्रोणित जो रुधर है तिसकी कणीयों से ~~भगवान~~ जदुवीर जी को सनान दे कर रण की धूडी के वस्त्र जो हैं सो दे सजाऊंगा सव ग्रंगों मे ग्रौर पांडवों की संपूर्ण सेना को संघ्यरषण करके ग्रर्थात घिसकरके सोचंदन का तिलकभगवान के मस्तकमे देऊंगा ग्रौर ग्रनेक रंगों के जो वीर तरंगहैं तिन पुष्पों की हृदयमे सुंदर माला पहिराऊंगा फिर रणमे सनमुख दुमित शत्रूओं को उडायकर कि जिनकी कुमिती नहीं होगी भगवान को सो कीरती ग्रौर सुजस रूपी सुगंधी सुंघाऊंगा फिर त्रिविक्रमभगवान को विक्रम जो प्राक्रम है तिसका सुंदर दीवं दिखायकर पारथ जो ग्ररजुन है तिसकेनिकट जायकर प्राणों का नैवेद लगाऊंगा ग्रौर संपूर्ण जगत की प्रीती को खैचकर सोई कृपानिधान को वीडी खवाऊंगा फिर जेके देनेवाले श्रीपती

महाराज के बाण जो हैं सो मैं रणभूमी मे चलायकर जैकी
प्रतग्या जो ना दिखाऊं तो जगत मे हरी के दासों मे दा
स ना कहाऊंगा और फिर दीनानाथ के रथसों
रथ मिलायकर ध्वजा और चांवर को हाथोंसे चलायक
र सरवचराचर के मन को हरनेवाली अतसे छवीली
स्याम मूरती जो है सो भलीप्रकार देख करके आज नेत्रो
के फल को पाऊंगा और दीनानाथ को रण मे रि
झाऊंगा धनुष जो है तिसके चढाने की धुनी करके वार वार धुनी करके वीरों को हरष और करष
के बढानेवाले रण मे अनेक बाजे वजाऊंगा ॥१०॥ चौपाई ॥
रथ मंडल करि देत प्रदछण ॥ उर उपजाऊं प्रमोद विच
छण ॥ आज नाथ जदुहाथन तें हूं ॥ चक्र प्रसाद अवसि
मे पैहूं ॥ अरजुन सर पिंजर सहि कोहा ॥ कै जंजर रण
पर हुं असोहा ॥ इहि विधि करि पूजन जदुनाथा ॥ त्रिभुवन
सुजस लेहुं निज हाथा ॥ कृपा प्रसाद कृस्न कल पाई ॥ वर
वस वसहुं कृस्न पुर जाई ॥ मे इह सुन्यो करन कुरु नायक ॥
श्री जदुनंदन दीन सहायक ॥ तुम सों अस संतत हठ ठाना ॥
हम न धरव भारत धनु वाना ॥ तो ते सुनहु सभा समुदाई ॥ नि
ज पण भनहुं पुकर गुहराई ॥ समर मचाय घोर जमहा मा ॥
काटि प्रचंड दलन दल वाना ॥ रोम रोम दिस विस हुं चढा
ई ॥ हरिहिं देहुं धनु वान धराई ॥ यद्यपि प्रण पालि कभग
वाना ॥ तद्यपि निज दासन को माना ॥ दीन नाथ दीनन सु
खदाये ॥ दीन दया निधि राखत आये ॥ दोहा ॥ मेरी वार रवि
सारि कस विरद वान निज नाथ ॥ लै हैं अपजस जगत मे
गिरे गहन जन हाथ ॥ ११ ॥ टीका ॥ फिर भीषम जी कहते हैं कि
रथ मंडल करके प्रदछणा देकर हृदय मे परम आनंद उपजा
ऊंगा और आज मैं श्री जदुनाथ के हाथसे चक्र प्रसाद पायकर
अवस्य सफल होऊंगा महाबाहू अरजुन जो है तिसके
वाणों के पिंजर से जिंजर अर्थात घायल होकर रण मे
पडूंगा इस प्रकार रंगभूमी मे जदुनाथ
भगवान का पूजन करके तीन लोक का सुजस अपने
हाथमे लेलऊंगा और कृस्न भगत माके कृपा प्रसाद

को पाय कर जोरावरी से कृष्णधाम मे जाय निवास करूंगा
हे कुरुनायक दुरजोधन मैने सुना है कि दीनो की स
हायता करने वाले श्रीजदुनंदन महाराज ने तुमारे सा
थ ऐसा हठ और प्रण किया है जो हम भारत मे धनु
ष और वाण कवी धारन नहीं करेंगे तांते अव तुम
सभा के सब लोग सुनते हो मै भी अपना प्रण प्रकट
कर के कहता हूं कि मै रण मे घोर घमसाण मचाय
कर और दल के दलने वाले महा प्रचंड वाण चलाय कर
रोम रोम मे रिस जो क्रोध है तिसका विस चढाय कर के
जदुनंदन को ततकाल धनुष वान पकराय देऊंगा
यद्यपि भगवान वडे हीं प्रण पाल और व्रतधारी हैं त
द्यपि अपने दासों का मान जो है सो दीन हितका
री और दया के समुद्र सदैव राखते हीं चले आये हैं
अव मेरी वार असरणों की सरण और निराधारों के
आधार भगवान सो अपना विरद वान कैसे वि
सार देवेंगे इह कवी नहीं होंगा॥ २१॥ चौपाई॥ च
लहु वेग अव वेर न कीजै॥ सनमुख समर सुजस अवलीजै॥ दृग अभिलाख दिवस वहु केरी॥ पूजि है अव सिआ
ज सव मेरी॥ पीत वसन वनमाल विराजत॥ मुकट म
यूर माथ छवि छाजत॥ एक पानि ताजन इक वागा॥
गहि वाजिन पारथ वड भागा॥ चहुं दिस चपल चला
वत जाना॥ अस लखि भक्त हेत भगवाना॥ धुनि धुनि
वान रंग महि भूरी॥ धनधन होहु सुजस जग पूरी॥ अ
स कहि कुरुपति संजुत वीरा॥ आयो कुरूखेत रणधी
रा॥ उर अभिलाष लाय सरसातो॥ सनमुख समर वीर म
द मातो॥ ठाढो अभय पांडवन आई॥ धुनत संख चट
चाप चढाई॥ देखि सखा जुत श्री जदुनाथैं॥ नावत
मोद मगन महि माथैं॥ गुनत आज जग सुक्रत मेरे॥
एक एक कर लाखन हेरे॥ जो अस भूरि भवन कर ना
यक॥ होत समर निज सेष सहायक॥ दोहा॥ सेव
क वाजिन वाग गहि वनि सारथि चढि जान॥ आहे
मान भगवान मोहि सनमुख कृपा निधान॥ २२॥ टीका॥

व्रत जेते॥ बैठे सभा सजोधन तेते॥ निज उर तिन सोच न थोरो॥ होहि अब कि अब भारत घोरो॥ तब भीषम निज सुजस विचारी॥ बोल्यो वदन वचन व्रत धारी॥ पूरित महा मोद मन धीरा॥ कह्यो कंठ कल गिरा गंभीरा॥ सुनहु सभासद जोधन राई॥ मोर वचन श्रवण हृदय लगाई॥ जो मैं सुवन भगीरथी केरो॥ तो इह सभा मध्य हठ मेरो॥ दोहा॥ कौरव पांडव दहूंन दल बीच हरष सरसाय॥ करहु सविधि वीरन विदत जदुपति पूजन जाय॥ २॥ टीका॥ ऐसे कहिकर परसराम जी रण को त्याग कर चले गये और इहां भीषम जी भी लौट कर अपने घर को चले आये तब जे के बाजे जो हैं सो बजावने की आज्ञा होती भई पुर मे नाना प्रकार के मंगल जो हैं सो होने लगे आनंद की चरचा कुछ कही नही जाती फिर जब कौरवों और पांडवों का परस्पर विरोध हो गया और धरम पुत्र राजा जुधिष्ठर को सकुनी ने कपट करके जूये मे जीत लिया और बारा बरष तक राज से निरास करके बण मे बास दे दिया तो जब चौदां बरष वतीत हो गये तब कुरु नायक दुरजोधन जो है सो सेना को अनेत करके सजाय कर के कि जिसका अंत नहीं आवता परम कोप से पांडुवों के साथ जुध करने को सामथ होजाता भया तब तिस अभिमानी को भीषम जी ने अनेप्रकार नीती के वचन सुनाय सुनाय कँवहुतहीं समुझाया परन्तु सो हंकारी और मूढ एक नहीं मानता भया तब भीषम जी अंत को हार कर मौन होय रहे तिस समय वीरथी रो मे प्रधान कृपाचार्ज और द्रोणाचार्ज देवव्रत इत्यादि दुरजोधन की सभा मे बैठे हूये थे सो सब अपने अपने हृदय मे अतसे चिन्ता और सोच कर रहे हैं कि अब अत्यंत ही घोर जुध होवेगा तब भीषम जो हैं सो अपना सुजस विचार कर बडे आनंद और हुलास से भरे हूये अतसे गंभीर बानी से कहने लगे कि हे सभा के संपूर्ण लोगो और हे राजा दुरजोधन तुम मेरा वचन और प्रण चित्त लगाय करके सुनो कि जे कर मै सत्य करके भगीरथी जो गंगा है तिसका पुत्र

धनधन जगत जास जन पावा॥ स्याम मनोहर मूरति चारू॥
माधुरि हरन कोटि छवि मारू॥ दरसत जनम सफल करि
लै हो॥ जोगिन अगम परम पद पै हो॥ सारथि आवत पांडु
कुमारा॥ जहि आगै प्रभु भक्त उधारा॥ गहि बाजिन करवा
ग सुहाई॥ बैठे रथ सोभा सरसाई॥ दोहा॥ चपल तुरग च
मकाय कै धरनि धवावत जान॥ धूरपूर गहरो गगन भग
ग अरिन अभिमान॥ २३॥ टीका॥ तब भीषम जी अपने सा
रथी सों ऐसी सुख की भीगी हुई बानी कहने लगे कि हे हि
तकारी ऐसा समय अनेक यतन किये पर भी प्रापत नहीं
होगा मैने जो आज तक तेरे साथ दान सनमान और उप
कार जहां लग सब किये हैं हे भाई जो तेरे से बन पड़ता है तो
आज तिन सब का बदला मुकाय दे सो कैसे कि मेरे रथ के घो
ड़ों को "कर चपल चलाय" झटपट भगवान कृपानिधान के
पास पहुंचाय दे "तब एक ओर दीन बंधू जदुनाथ विराजमान
हों और एक ओर तुमारा रथ स्थित भया हुआ शोभा दे
वे इह पुरुषार्थ करके अपना और हमारा जगत मे सुं
दर सुजस जो है सो विस्तारण करो हे सारथी इस सु
ख से परे संसार मे और कोई नहीं है तिस का धन्य जन
म है जिस को इह प्रापत होवे ताते आज चलकर कोटि
कामदेव की छवी को हरने वाली अतसे माधुरी और मनो
हर स्याम मूरती को दरसन करके अपने जनम का फल
पाय लेवो और सो परम पद कि जो मुनी और जोगी जनों
को प्रापत नहीं होता है तुम सहजे ही प्रापत कर लेवो हे सा
रथी तूं देख पांडु कुमार चले आवते हैं जिनके आगे भक्त
जनों को तारने वाले घनस्याम घोड़ों की बागें हाथ मे पक
ड़े हुये रथ पर बैठे शोभा पावते हैं ~~और~~ "और महा चपल घो
ड़ों को चमकाय कर पृथवी पर रथ को कैसे घुमावते
और चलावते हैं कि जिनसे धूरी उड़ कर के आकाश ~~भी~~
~~भक्के~~ पूरण होकर गहिरा होगया ~~है और शत्रूओं का अ~~
~~भिमान भी दूर~~ "परि और देख करके शत्रूओं का अभिमान भी
दूर होजाता है॥ २३॥ चौपाई॥ पारथ हनत हजारन सा
यक॥ कटत वीर बलि विक्रमि लायक॥ कोमट विनु से
तनु सुत आजू॥ सन मुख हो हिं समर जदुराजू॥ कौन

नाथ कहं आतुर जाई॥ हनि हनि विसष बान अतुराई॥
सारथि वाजिन चपल चलाये॥ जिमि चपला चल जान
धवाये॥ लै चलहौ मोहि सनमुष ताहौ॥ जिय आधार
स्याम घन जाहौ॥ उत दल दुंद देषि भगवाना॥ मने मोदम
न मंजु महाना॥ श्री मुष मंद मंद मुसक्याई॥ लागे मनन म
ता सुखदाई॥ मै पारथ नीके जीय जाना॥ इह भीषम जग
सुभट महाना॥ मोपर भयो अनष रण ठाढा॥ परहि आ
ज संग्रर बड गाढा॥ जानि परत मोहि कठिन महाना॥ पै
पारथ तुव सुभट प्रधाना॥ निज विक्रम भुज बल अधिकाई॥
जनि राषहु कछु समर दुराई॥ अब लौं भयो न संसृति केहु॥
भीषम भुज बल जलनिधि जेहु॥ पैरि अगाध लियो पहि पा
रा॥ ओ जग तुमहु समर निधवारा॥ मथि अनन्त बल
भुजन महाना॥ कीन्यो विजय सुधारस पाना॥ दोहा॥ मोरे
उर रुचि लषन तुव विक्रम समर सुजान॥ को समरथ बर
दहुंन महे धीर धाक धनुवान॥ १४॥ टीका॥ और पारथ जो
अरजुन सो भी हजारों बाण मार कर बडे वीर प्राक्रमी और
लायक जो है तिन को कारता चला आवता है आज कौन वी
र धीर संतनू के पुत्र विना रण मे जदुनाथ के सनमुख हो
ने वाला है और कौन आज विषके भरे हुये बाण मार मा
र कर दीनानाथ को रण मे रिझावेगा हे सार थी जैसे बिज
ली धावती है तैसे तूं घोडुयों को चपल करके रथ को च
ला और प्राणों के आधार घन स्याम विराजमान है
जहां
तहां तिन के सनमुख मेरे को ले चल इहां का तो इह प्रसंग है
और जहां जदुनाथ भगवान दोनो दलों को देख कर ब
डे आनंद से वचन कहने लगे कि हे अरजुन मैने हृदय मे
भली प्रकार जाना हुआ है जो इह भीषम जगत मे वीरों
का सिरोमणी महा वीर है आज मेरे पर क्रोध से भरा हू
आ रण मे आय ठाढा भया है मै जानता हूं कि अब बडा
गाढा जुद्ध परैगा और बडा कठन समय है परन्तु हे
पारथ तूं भी वीरों मै प्रधान महा वीर आज अपनी
भुजों का जहां लग बल प्राक्रम है सो रण मे
सब लगाय लेना कुछ पीछे नहीं रखना अब लग

॥संसार मै ग्रैसा कोई नहीं भया कि जिसने भीषम भुजा रूपी समुद्र को तर करके पार पाया हो ग्रौर तुमने भी जगत मै रण रूपी समुद्र को मथन कर कर जैरूपी ग्रमृत रस को पान किया हूआ है तांते ग्रब मेरे हृदय मै रणभूमी मे तुमारा बल प्राक्रम देखने की ग्रति से रुची ग्रौर लालसा है कि तुम दोनो बीरो मै से धनुष क रतब मै धीरज वा ला ग्रौर सामर्थ कौन है॥२४॥ चौपाई॥ लषहु सषे ~~सेन~~ दल जलनिधि भारी॥ पूरित बिमल बीर रस बारी॥ गाढ गरब गज ग्राह बिसाला॥ घोर कठोर कुमठ ठट ढाला॥ धनुष मीन ग्रसि मकर करोरा॥ भटि गण सिंह नाद बहु शोरा॥ सरंत रंग बहु बोरन तेहीं॥ उठहिं भांति बहु भनत नपेही॥ बीर रतन बहु रतन बिराजैं॥ चमर हिलोर चारु छबि छाजैं॥ रथन चक्र चय ग्रावृत नाना॥ सबल जुगल दल कूल महाना॥ धरम सुवन दुरजोधन राजू॥ उभय बनक सजि सकल समाजू॥ तुव भीषम भुजबल दृढ भारी॥ पाय जहाज सुभग सुखकारी॥ चढत चहत उतरन ~~उतरन~~ उत पारा॥ सो दुरगम मोहि फुरत विचारा॥ वै हैं पार गुनत चित मोरा॥ होहिं जासु नाविक बरजोरा॥ इत जदुपति ग्रस करहिं विचारा॥ उत रण मच्यो कुलाहल भारा॥ भ[illegible]ई देवब्रत बानन सैगा॥ बिरत नै न कोउ बिमहिं रंगा॥ तव जदुपति लै पारथ काहीं॥ ग्राय ग्रभय सनमुख रण माहीं॥ बीर प्रधान जुगल मन माखे॥ सुभट भिरन भारत ग्रभिलाषे॥ दोहा॥ इति समर ग्रंध्यार चहुं दिसन भरत भट भारि॥ धरत दरत दल भटिन रण पारथ प्रबल ग्ररारि॥२५॥ टीका॥ फिर भगवान कहते हैं कि हे सषे देखो इहं दल का समुद्र कैसा भारी है ग्रौर बीर रस के जल से परिपूरण है बडे भारी गाढे ~~जिसमे~~ ~~हसती~~ ~~ग्रहं~~ गर्ज जिसमे ग्राह ग्रर्थात तेंदवयों के समान है (हसती) ग्रौर महा कठोर ढालें जो हैं सोई हैं जिसमे घोर कुमठ ग्रर्थात ~~कछुवा~~ कछू धनुष ग्रौर तलवार ग्रादि शोभा देते हैं जिसमै बडे कराल मकर

५सेना

भीषमजी कहते हैं कि अब शीघ्र हीं चलो वेर मतकरो
५२ रणमे सनमुख होके सुजस को प्राप्त होवो नेत्रो मे दरस
न करनेकी वहुत दिनोकी अभिलाषाथी सो मेरी आजस
व पूरी होवेगी पीत है वस्त्र और तुलसी की माला है जिन
के हृदयमै माथेमै छवी देता है मोरमुकर [illegible] एकहा
थमै है जिनके कोरडा औरएक मै कारण जो अरजुन तिसके
घोड्योंकी वागें चारोदिसामै वडे चंचल और चपल रथ
जो है सो चलावते हैं ऐसे भक्तहितकारी भगवान का दरस
न पायकर और रणभूमीमे वाणोंकी प्रवलता दिखाय
कर ~~जगतमै सुजसको पायकर धन्यधन्य~~ धन्य होउंगा आज सुज
सके सहित जगतमै धन्य धन्य होजाऊंगा इसप्रकार
कथनकरके कुरुपति जो दुरजोधन है तिसके साथ कुरुक्षेत्र
७व को चले आवते भये तहां हृदयमै मानो लाख अभिलाषा
को अधिक किये हूये वीर प्रधान भीषमजी धनुषके चढा
य कर और संष वजायकर रणमै ~~पांडवोके सनमुख~~
अभय होयकरके पांडवोंके सनमुख आय स्थित हूये तहां
सखा जो अरजुन है तिसके सहित श्री जदुनाथ जीको
देखकर आनंदमै मगन भये हूये भीषम नम्र होयकरके
माथा पृथवी पर नाय देते भये और कहते हैं कि आजज
गतमै मेरे सुक्रत जो पुन्य हैं सो एकएकके लाष लाष दे
ख पडे हैं क्योंकि जो तीन लोकके नायक भगवान रण
मै अपने सषेके सहायक होकर और अपने दासको घोड्यों
की वागें पकडे हूये सारथी वनकर कृपानिधान मेरे सनमुख
भये है ॥२॥ चौपाई ॥ तवनिज सारथिसो अस वानी ॥ भने
वदन भीषम सुखसानी ॥ अस अवसर सुनहै हितकारे ॥
मिलिहै कवहु न जतन विचारे ॥ कृत उपकार दान
सम माना ॥ मै जहि लग तुम सन किय नाना ॥ जो तुम
तै वनि परहि कदाऊ ॥ सवतें उरिन आज है जाऊ ॥
मम रथ वाजिन चपल चलाई ॥ हरि समीप द्रुत देहु
पुचाई ॥ अपनो ओ हमरो संसारा ॥ करहु अनुपम सुज
स विसतारा ॥ एक ओर जदुवीर विराजहिं ॥ एक ओर तु
व रथ छवि छाजहिं ॥ या सुखते सुख अधिक न गाका ॥

३४९

349

तुला विचार धरत तुलि लीती॥ संतनु सुत कछु दीन दयालैं॥ चढ्यो सरस चित निज प्रण पालें॥ अरजुन तन तकि कृपा निकेतू॥ मुख मुसक्याय रहे लखि हेतू॥ गुनत मनहिं मन त्रिभुवन राजू॥ मम प्रण रहै कि भीषम आजू॥ बहुरि विरद निज हृदय चितारी॥ सिद्ध कीन अस दीन उवारी॥ भक्त हेत सति अवसि हमारा॥ झूठो अनति उचित संसारा॥ दोहा॥ मम प्रण व्रत कृत जो न रहै जो जग जाय तो जाय॥ पै न जाय प्रण जगत मम भक्त भरोस विहाय॥ २६॥ टीका॥ और उहां अग

"मानो

न और अपार महा भयानक" ग्रीषम ऋतु के प्रज्वलित सूरज के समान उदय भये हैं जो भीषम किजिन का य लके दगध करने वाला अति प्रचंड कोप है और बड़े विकट वीर धीरज को धारकर रण विलास कर रहे हैं तब दोनो ओर से ऐसे बाण टूटे कि मानो सरपों

"दलों के

के समूह" दसने को छूटे जाते हैं अनेक हो मुरछायल और घायल होय कर पृथवी पर गिर पड़े वीर धीरों की करनी जो है सो कुछ कही नहीं जाती दे नो वीर रण मे अत्यंत शोभा पावते हैं कभी प्र कट होते और कभी रण की गरद गुबार मे लुपत हो कर अपनी अपनी सामर्थ्य दिखावते हैं इहां पुरुषार्थ के धाम अरजुन तथा और उहां प्राक्रम के पुंज भीषम भक्त दीनानाथ भगवान ने दोनो की अत्यंत प्रीति कि जो नहीं घटने वाली जब विचार रूपी तुला अर्थात त राजू मे धर करके तोली तब प्रण पालक दीनानाथ को संतनू कुमार जो भीषम हैं सो चित्त मे कुछ सरस ही देख पड़े फिर कृपानिधान अरजुन की ओर देख कर और हेतू को पायकर मुख मे मुसक्याय करके मौन होय रहे और अपने मन मे विचार करने लगे कि देखिये आज मेरा प्रण रहता है कि भीषम का फिर दीनपाल

"मे

अपने विरद को हृदय" चितार कर इसी अर्थ को सिद्ध करते भये कि हमारा सत्य जो है सो भक्त के निमित्त अवश्य

और

कर के असत्य होना उचित है मेरा प्रण और व्रत जगत मे जाये तो जाये परन्तु मेरे भक्त का प्रण ना जाये

ग्रौर तिसके हृदय से मेरा भरोसा नाछूटे ॥२६॥ चौपाई॥
जिमि चपला चमकत चहुं वोरा॥ तिमि भीषम सर समर करोरा॥ फरफरात चहुं वोर लखाते॥ वीरन हृदय धीर विलगाते॥ झरे झुंड सूरन सरलागे॥ परे हेड रण प्राण त्यागे॥ विकल सिथल दल चेत विहाई॥ मनहुं प्रलै ग्रंतक प्रकटाये॥ उक्त युक्त कछु सूझत नाहीं॥ चितवत जथा पंगु गिरि काहीं॥ हनत न शास्त्र सूर सिथलाने॥ कढत न कोप कंपि कदराने॥ निज निज मीच गुनत सव कोई॥ विछतसे न ग्रस पांडु विहोई॥ पदचर तुरग जान गज गाढे॥ परे समर घायल दुख वाढे॥ छिंद भिंद किय वान न ग्रंगा॥ भरे कुंड श्रोणित महि रंगा॥ लखि खेजर जे जर तन भयये॥ यम नृप दल पिंजर सर पयये॥ सूझत पथ नहिं दिसा दिसाई॥ भादव निसा मनहुं महि छाई॥ ब्रह्म लोक लो वीर सुकरनी॥ छ्यो प्रकास विदत जिमि तरनी॥ दोहा॥ वीर धीर तजि धीरल हीं होत जीर तन टूक॥ भागि गये मनु कीर तकि तीर भीर ग्रन हूक॥ २७॥ टीका॥
तव जैसे चारो ग्रोर विजली चमकती है तैसे हीं रण मे भीषम के करोडों वाण फरफराय कर के चारो ग्रोर चमकी रहे हैं ग्रौर सूरवीरों के हृदय की धीरज को हरते हैं तिन ग्रैसे वाणों के लगने से सूरवीरों के झुंड जो समूह हैं सो झड पडे ग्रौर ग्रनेक हेड मुंड होय कर प्राणों से रहित होय गये पांडवों का सेना दल व्याकुल ग्रौर ग्रचेत होय गया मानो प्रलैकाल व्यापित हो जाता भया किसी को कुछ उक्त युक्त सूझ नहीं पडती सव ग्राचर्य को प्रापत भये हुये ग्रैसे देखते हैं कि जैसे पंगू ग्रर्थात पिंगुला परवत को देखता है सिथल भये हुये सूरवीर शास्त्र नहीं मार सकते ग्रौर कायर तासे कांपते हुये कोप प्रकट नहीं कर सकते सव कोई ग्रपना ग्रपना मरना विचारते हैं पदचर जो पयादे तुरग जो घोडे यान जो रथ गज जो हस्ती सव घायल होकर रण मे दुखी हुये पडे हैं श्रोणित जो लहू तिसके रणभूमी मे कुंड भरे गये खेजर जो तलवारें तिनके फटने से जेजर ग्रर्थात जरीजरी होकर धरम भूप का दल मानो वाणों के पिंजर मे

२५०

पड़गया दिसविदिस मारग कुमारग किसीको कुछ सूझ नहीं पडता मानो भादों महीने की रात्री पृथ्वीपर छायरहीहै" सूरवीरों के करनी ओर सुजसका प्रकाश जोहै सोसूर्जके समान ब्रह्मलोक तक फैल जाता भया॥ चौपाई॥ भीम नकुल सहदेव प्रवीरा॥ द्रुपदभूप सुत द्रुपत सुधीरा॥ नृप बराट लो महि बरज्ञाना॥ कोऊ न गहि सनमुष धनुबाना॥ रोषबिहीन दीन सब ठाढे॥ लगे सिरोम रोम सर गाढे॥ बिकलअधीर धरमसुत हारी॥ चहत गवन कानन तजि रारी॥ जदपि भटि न कहे धरम प्रचारो॥ बीरबिरद बहु बदन उचारो॥ तदपि नरहके सुभट कदराने॥ डरि समर धनु बिकल पराने॥ झिले सकल कौरव बल पाई॥ हनत कुपत आयुध अधिकाई॥ चटकि चपल चपला चटपर हीं॥ झटकत पटकि मदिन कर करहीं॥ खरभर मच्यो समर चहु ओरा॥ नादित सुभट सिंह रव घोरा॥ कहो प्रबल पारथ रहि काला॥ कहो सुभट सातकि जदुपाला॥ अस अमर षब सबीर प्रधाना॥ तरजत गरजि समर महि नाना॥ तव सातकि फिरि सनमुष ठाढ॥ गहित विजय सिंधन रन आढ॥ दोहा॥ सुमरत निजकुल बिरद मन बार बार गुहरा य॥ कहत समर मरबो भलो फिरहु फिरहु समुदाय॥ २८॥ टीका॥ तब महा धीरजके धाम भीमसेन नकुल सहदेव राजा द्रुपद ओर तिसका पुत्र ओर राजाविराट इनतेलेकर जो और अनेक बीर प्रधान थे कोईभी सनमुष धनुष बाण नहीं पकड़ता भया क्रोधसे हीन भये हुये रोम रोममें बाण खोये हुये दीन होकर स्थित होरहे हैं ओर धरमके पुत्र राजा जुधिष्ठर भी धीरजको हार कर व्याकुल भय हुये रणको छोडकर वनको जाना विचार रहेहैं ओर यद्यपि राजा धरमने सूरवीरोंको सावधान करने के लिये बहुत ही समुजाय ओर ललकारा तद्यपि सो कायर भये हुये रुकते नहीं भये रणभूमीमे धनुष डार डार कर भाग गये तब कौरव जो है सो बल पाय कर चमकउठे ओर महाकोपमे बाण भरभर कर मारनेलगे वडी चटकसे चपल होय कर चपला जो बिजली है तिसके समान पड़जाते हैं ओर रज

ग अर्जुनको कहा। जेकेवतमें। सो देवकर और जो कायर हैं तिनके समान भाग चले अजैसे कौरविसेनभी भीमसकी

जो मच्छ और तिस समुद्र मै शोर जो होता है सोई है सूरवीरों का बडा सिंहनाद अर्थात शोर के समान गरजेना नाना प्रकार के बाणों का छूटना जो है सोई उठते हैं भांत भांत के तरंग और वीर रतन हैं जिस मै अनेक प्रकार के रतन चमर जो झूलते हैं सोई है फिपडते हैं जिस जल मै हिलोरे और रथों के समूहें के चक्र जो है सोई है जिस मै आवृत अर्थात चुम्मण घेरे दोनों दल हैं जिसके दो किनारे और धरमपुत्र राजा जुधिष्ठिर और दुरजोधन ने दोनो वनक अर्थात वानियें अपना सब समाज सजाय कर तुमारी और भीषम की भुजों का अत्यंत भारी बल पायकर के और तिस पर चढकर के तिस रणरूपी अपार समुद्र से पार हुये चहते हैं सो मेरे को अत से दुरगम और महा कठिन देख पडता है परन्तु एक इह विचार आवता है कि सो तिस के पार को पावेगा जिस का नावक अर्थात मलाह जोरावर होवेगा ईहो जदुनायक भगवान इह विचार करते हैं और ऊहां रण मै अत्यंत कुलाहल जो शोर है सो मच गया देवव्रत जो भीषम है तिस के बाणों की मार से रणभूमी मै पांडवी सेना सब व्याकुल होगई और धीरज छूट गया तब जदुनंदन महाराज अरजुन को लिकरये अभय होकर रण मै सनमुख चले आये तहां दोनो वीर प्रधान कोप से भरे हुये बडी रुची और अभिलाषा से जुद्ध मै जुड जाते भये तब ईहो शत्रूओं का नाश करने वाले महाप्रबल अरजुन लडते लडते सूरवीरों को दलते हुये रण की चारो दिसा मै मानो अंधेरा छायत कर देते भये॥ २४॥ चौपाई॥ उतै भीम भीषम भट माना॥ ज्वलत जनहु ग्रीषम उदताना॥ कोप प्रचंड दहन दल जासा॥ महा विकट भट समर प्रकासा॥ दहुंन ओरतें सायक टूटे॥ मानहु उरग गण छूटे॥ मुरछित गिरे विपुल भट धरनी॥ कहि न जाय कछु वीरन करनी॥ उभय सूर संग्राम सुहाते॥ प्रगटत दुरत वेग दरसाते॥ इतै सखा अरजुन अभिरामा॥ उतै भक्त भीषम बलधामा॥ नाथ दहुंन की अद्भुत प्रीती॥

केसमूह

सुंदर

भारी

को

फिर सात्यकी कहते हैं कि हे भाई वीरधीरों रण मे पीठ देना
प्रकट लोकों मे अपजस हीं लेना है जगत मे विरद बांध
कर सूरवीर कहाना सहज नहीं है बड़ा कठिन है तप
स्वी जोगी सिद्ध मुनी और ज्ञानी अमानी जगत मे अने
क यतन हठ और साधन करते हैं तो जिस पद को वे
अत्यंत श्रम करके प्रापत करते हैं तिस पद को वीर रण
मै यतन और श्रम के विना सहजे हीं पाय लेते हैं उन
को अनेक प्रकार का सोच और साधन करना पड़ता है
और इन को केवल रण मै सनमुष छाती धर कर जूझना
होता है तो ते हे वीरधीरो अब रण मे वीरधरम और रवी
र करनी करके सोई परम पद सनमुष करके पा
य लेवो हे भाई वीर जो होते हैं सो प्राणों मर के लोभी न
हीं होते हैं वीरों को रण मे प्राण त्यागने की वड़ी भारी
शोभा होती है और जो रण से विमुख घर मै जायकर प्राण
त्यागते हैं सो अभागी घोर नरक के ~~अधिकारी होते हैं~~
मे जायकर नाना प्रकार दुख और कलेश पावते हैं ऐसे जा
नकर हे वीरधीरों जदुनाथ को सुमर कर और धीरज को धा
रकर रण मै सनमुख जूझ जावो इस प्रकार यद्यपि सा
त्यकी ने तिन को वहुत हीं कहा तद्यपी भीषम के महा क
ठिन और भयानक वाण जो हैं सो तिन को कहां धीरज
लेने देते हैं सव भय के वश भये हूये थरथर कांपते हैं सो
गंगा का पुत्र और वीरों मे प्रधान भीषम जो है रणभूमी मे
अंग अंग उतसाह से भरा हूआ पांडवी सेना को दलन क
रके मानो प्रलै मचाय देता भया फिर घनस्याम औ
र तिन के सषा को और घोड़ियों के सहित रथ को रण
मे वाणों से ~~[illegible]~~ करके और धनुष को घुमावता हूआ
चारो दसा मै धा~~य क~~वता फिरता है और कोप से
सिंहनाद करके धीरज को धारे हूये मानो रण को जीत
कर और अभय होय कर सूरवीर ~~[illegible]~~ भगवान के सनमुष
आय करके स्थित हो जाता भया और नेत्रों की त्रिकी
दृष्टी से ~~[illegible]~~ कृष्ण प्रमातमा के चरनकमलों कौ रदेख

पूर

औ

चौपाई॥

देख हृदयमे परमानंद सुख मानताहै॥१९॥ विसष वाण भीष
म धनुधारी॥ लगे सुभट पारथ तनकारी॥ लषिउर पीर
निराचन गाढी॥ है गो विकल सिथल धृति त्यागी॥ धनुषध
रन कर सुरति नकाहू॥ गयो समर विगत उतसाहू॥ श्रम
त उड़ानि वीर अरुन्याई॥ सूषे अधर वदन पियराई॥ परभी
षम सरपिंजर माहीं॥ विसरि दियो निज विक्रम काहीं॥ रणपें
अचल हार हियमानी॥ वैठिरह्यो मनु मूरति हानी॥ निक
सि नवचन कंप तन वाढ़ा॥ खोलि नसकत नैन दुख ~~वाढा~~॥
कियोसि निज प्रण पूरन जोई॥ भूल्यो मनत नचेतन कोई॥
विजयलाभ दुरलभ जिय लेखी॥ मान्यो हानि गिलानि वसेखी॥
अव आधार लषहु इकमनके॥ गिरधर देव अरजुन के॥ भीषम
सर छिनछिन अधिकाते॥ विसष व्याल मनु फंकरत जाते॥
मूर्छो पारथ सारथ काहीं॥ रथ जुत तुरग नदरसत ताहीं॥
दोहा॥ ~~दोहा~~॥ दावत वल जुत समर हरि वारवार रथ काहिं॥
तव हे उठ्यो जनु जात कछु होत स्थिर तित नाहिं॥२०॥टीका॥
तव महा धनुषधारी भीषम ~~सोहे तिस~~ के अतसे विषके भरेह
ये ~~वाण~~ गाढे वाण जाय करके अरजुन के शरीर को जो लगे
सो तिन कठिन वाणों की अतसे पीड़ा और कलेश मान कर
धीरज को त्याग कर व्याकुल और सिथल होय गया धनुषके
धारने की कुछ सुधि नहीं रही ~~व~~ ~~याद~~ थकत होयकर रण
के उतसाह से रहित हो गया श्रम करके वीर लाली जो है सो
सव उड़ गई अधर जो ओष्ठ हैं सो भी सूष गये मुख पीला
होय गया भीषम के वाण रूपी पिंजरे मे पड़ कर के अ
पने सव पराक्रम को विसार दिया हृदय से हार कर और
अचल होय कर मानो हानी की मूरती वन कर रणपर
वैठ रहा है शरीर से थरथर कांपता मुखसे वचन नहीं
निकलता नेत्र खोल नहीं सकता हृदय मे दुष ही दुष
फैल गया पहिले जो अपना प्रण किया था सो सव
भूल गया कुछ खवर नहीं रही जै का लाभ जो है सो
~~हृदय दुरलभ~~ वि~~चार~~ कर हानी और गिलानी को हृ
~~हृद~~ होना कठिन चा
दय मे वहुत मानता भया अव इस समय अरजुन
के आधार एक कृष्ण भगवान माहैं और कोई नहीं है

भीषम के बाण जो हैं सो जैसे विषके भरे हूये सरप फुंकारे मारते जाते हैं तैसे छिन छिन मै अधिक हीं होते जाते हैं ऐसे बाण मारे कि पारथके सारथी को भी मूंद दिया अर्थात बाणों मे लोप करदिया और रथके सहित घोड़े भी दे ~~खनेमे नहीं आवते~~ ख नहीं पड़ते हैं यद्यपि अरजुन के सारथी भगवान ~~■~~ बल करके रथको बार बार दबावते हैं तथापि सो उड़ता हीं जाता है पृथवीपर स्थित नहीं होता ॥२०॥ चौपाई॥ बाजि विविध तन ताजन खोते॥ पै न वेगनै सुकदरसाते॥ गहन बाग बाजिन हरिकाहीं॥ रही संभार करन कछु नाहीं॥ भये अचेत सकल जग चेतू॥ नहिं फहरात कलित कपिकेतू॥ उभय चक्र रतक सर लागे॥ मुरछित ~~■~~ रे धरन सुधि त्यागे॥ दीननाथ दीनन हित कारी॥ जन प्रण पालन हृदय विचारी॥ करि न सकत कछु बनत न ताहीं॥ तब कौरव जुत कौरव नाहीं॥ प्रभु गति देखि बदन मुसक्याने॥ मन हु मूढ निज विजय जिताने॥ जदुपति फिरि फिरि पानि पसारैं॥ बारबार अरजुनै हलारैं॥ मरिगे धों जीवत तुम अहैं॥ बोलि चलन दुकवचन भनै हो॥ कहत रहे तुव सभा गरूरा॥ मै गांडीव धरन धनुशूरा॥ द्वैक उड़ मह कुरूदल सारी॥ उरिहु अवसि महि समर संघारी॥ सो प्रण अब कत दीन विसारयो॥ कौरण दीन सरासन डारयो॥ दोहा॥ उठहु उठहु अब वेग जन करहु चेत तन माहिं॥ तुमरी बहु बड़वारि जग जन त विदित सब काहिं॥ २१॥ टीका॥ तब घोड़े जो हैं सो शरीर पर अनेक कोटड़े ~~■~~ खाते हैं परन्तू अपना वेग कुछ भी प्रकट नहीं करते हैं भगवान को घोड़ों की बागें पकड़ने की कुछ संभाल नहीं रही संपूर्ण जगतको चैतन्य करने वाले भगवान तहां चेतना से रहित अचेत होय गये और रथके ऊपर कपी धुजा जो फरकती थी सो भी सून होयगई अर्थात फरकती नाभई रथके चक्रों के दोनो रखवारे बाणोंके लगने से मूरछा होयकर पृथवी पर गिर पड़े तब दीनानाथ और दीन हितकारी भगवान अपने दासका प्रण जो है तिसको

टक करके पटक करके भटी जो वीर हैं तिन को फर
करते हैं अर्थात घायल करते हैं संपूर्ण में एक खरभर मच
गया वीर धीर चोर और बड़ा जोर सिंहनाद करते हैं और
कहते हैं कि अब कहां है वे अनते प्रवल पारथ और कहां
है सात्यकी वीर कहां हैं जदुनायक कृष्ण ऐसे कोप से भरे
हुये वीर धीर रणभूमि में बड़े जोर गरज कर ललकारते फि
रते हैं तब सात्यकी जो है सो जदुवीर को सुमर कर और जै सूफी
रथ जो है तिसकी ओट लेकर अर्थात जैको हृदय में राख कर फिर
अपनी कुल के विरद को संभाल कर बड़ी ऊंची स्वर से
पुकार कर कहने लगा कि हे भाई रण से विमुख होना सूरवीरों
का धरम नहीं है फिर आके फिर आवो इस समय रण में
मरना ही सुभ के देने वाला और सरब अर्थ के सिद्ध करने वा
ला है ॥१८॥ चौपाई ॥ वीरन पीठ समर महि देना ॥ विदत लो
क अपकीरती लेना ॥ कोधि विरद जग सूर कहाना ॥ अहे न सु
गम अगम इह वाना ॥ तापस जोगि सिद्ध मुनि ज्ञानी ॥ करत ज
तन हठ अनक अमानी ॥ जो पद पैहि विपुल श्रम कीने ॥
लेहि वीर रण जतन वहीने ॥ उनहुं सोच साधन वहु भाती ॥
इनहु समर जूझन धरि छाती ॥ तो ते वीर वीर कृत करिके ॥
लेहु परम पद सनमुख मरिके ॥ होहि न वीर प्राण के लो
भा ॥ तजन प्राण रण वीर न सोभा ॥ विमुख समर नरपति
त अभागी ॥ लेहि नरक गह प्राण त्यागी ॥ अस जिय जा
नि सुभट धरि धीरा ॥ जूझहु समर सुमरि जदुवीरा ॥ प्रभु के दे
खत प्राण विहाई ॥ प्रभु पुर जाहु निसान वजाई ॥ यद्यपि
सात्यकि विविध वखाना ॥ तद्यपि भीम भीषम भट वाना ॥ ति
नहिं न लेन देत आ स्वासू ॥ वीर विकल कंपत वह चा
सू ॥ अंग अंग महि रंग उमंगा ॥ विक्रमि विकट सुभट सु
त गंगा ॥ दोहा ॥ करि विदलन दल पांडवी प्रले पारि म
नु दीन ॥ सखे स्याम जुत असुन रण छाय सरन रण
लीन ॥ अरु कुंदेरु मंडिल करत दिसन सं चरत चारि ॥
सिंह घोष सारोष सुख भरत धरत धृति दारि ॥ मनहु वि
जत रण अभय भट ठाढ्यो सनमुख आय ॥ हरि पद सु
मरत तकत तिर छौहे मंद मुसकाय ॥ १९ ॥ टीका ॥

पीत वरनकी॥ रुचिर समर रज रंजित नीकी॥ विथुरनि
अलक वदन श्रीय जीकी॥ श्रम कन कलित विराज
त चारू॥ रिसवस नयन नलिन अरन्यारू॥ कियेउ
धे गत भुजन विसाला॥ भ्रमन चक्र लषि उरपत का
ला॥ मसो मसो भीषम अभिमानी दौ दल कढ़ तकु
लाहल वानी॥ दोहा॥ तानि रहे निज निज धनुष रू
कथित ठाढ़ि प्रवीर॥ तजत न सर थरथर सडर कंप
त सकल अधीर॥ ~~[illegible]~~ २२॥ टीका॥
फिर भगवान कहते हैं कि हे अरजुन आज पांडू कुल
की मर्यादा जो है सो मेरी वुद्धी कहती है कि तुमारे ही
आधीन है और तेरे हीं वल से रण मे दुंदभी वजाय
करके राजा धरम भी चढ़ आये हैं अव तमारे रण
मे तिपल होने से कहो तिन को कौन धीर जहै और
तेरे को ऐसा कायर और अशक्त देखकर रण मे लज्जा
करके मैभी मुख छिपावताहूं हे सषे तुम कहो कि ऐ
से पाक्रम से तुमारी जगत मै कैसे कीरती और र
महिमा चलेगी अव सत्य सत्य कहो कि तुमारे म
नकी क्या रुची है जैकी अभिलाषा है कि ~~[illegible]~~ न
हीं कि अथवा हार गये हो हे सषे मेरे को तो जिस
मै तुमारी सुंदर जीत होवै सोई शुभ भावती है क्यों कि
तेरे समान मेरे को संसार मे और कोई सुहृद सज्जन
और पयारा नहीं है इसप्रकार ईहां भगवान अपने स
षा अरजुन को सावधान करते हैं और ऊहां देव व्रत
जो भीषम है तिसके वांणों ने पांडवों की संपूर्ण सेना
को चूर करदिया सव कोई व्याकुल होयकर त्राहि ज
दुवीर त्राहि जदुवीर पड़े पुकारते हैं तव भगवान ति
नकी ऐसी दुखकी वानी सुनकर और रण मै वड़ा क
ठिन काल जान कर रोम रोम मै कोप भरलेते भ
ये और तुरतहीं रथको त्यागकर रथका ही च
क्र सुदरसन के समान हाथमै धारन करलेते भयेति
स समय महाराजकी भुजा ऐसी छवी और शोभाको
उदय करती है कि मानो ~~[illegible]~~ नलनी

जोकमलहै तिसकी नालपर सूरज विराजमान होरहा
है ऐसे रथ चक्रको धारकर भगवान सनमुख धाय चले
जाते हैं तव चरनो की मंजीर का मंदमंद वाजना और रम
नेके हरने वाले पीत वस्त्रों की अत्यंत ही शोभा देख पडती
है और रण की रज जो धूरी है सोभी शरीर पर छाय तमई
हुई सुंदर भावती है तैसे हीं मुखकी दोनो ओर छूटकर विथु
री हुई दोनो अलकें मनको प्यारी लगती हैं स्रम के विंदु
अर्थात पसीनेकी कणीजो हैं सोभी मुखपर उभरी हुई छवि
पावती हैं और कोपसे नेत्रोकी लाली कुछ न्यारीही
है बडी सुंदर विसाल भुजा जो हैं तिंको उ
ठाये हुये चक्रको ऐसे वेगसे घुमावते हैं कि जिसे देखक
र कालभी थरथर कांपने लगा तव दोनो दलों मे जहां
तहां वडाभारी शोर मच जाता भया सव कोई पुकार उ
ठा कि देखो अव मरा अव मरा भीषम सव वीर धीर अ
पने अपने धनुषमे वाण ताने हुये स्थित हैं भयके
वश थर थर कांपते धीरज से रहित औ
र व्याकुल भये हुये तिन वाणों को छोड नहीं सकते हैं॥
२२॥ चौपाई॥ रंग भूमि दिस भरे मुरारी॥ चले चक्र आ
युध करधारी॥ मनहुं राजगज पर मृगराजू॥ चल्यो
जात करि गरव दराजू॥ देखहु दुतिय कौन संसारू॥ दी
न वंधु दीनन हितकारू॥ जो जन हित तजि निज प्रण
पालू॥ जन प्रण पालत परम कृपालू॥ सदा वाण भग
वान सुहाई॥ निज लघुता निज जनन वडाई॥ कूरम को
ल मतस इत्यादी॥ धरे रूप भगवान अनादी॥ भक्तन हि
त करुणाय अगारा॥ कान कीन विस्तुत संसारा॥ निज
व्रत असत भक्त सत हेतू॥ कीन कृपा न केत भव सेतू॥
आय धाय सनमुख सहि रंगा॥ दीननाथ भव भीत विभं
गा॥ लखि सचक्र भीषम प्रभु आये॥ रोम रोम तन ह
रष अघाये॥ डारि धनुष भेदनि अनुरागा॥ जै जै जै
ति भनन मुख लागा॥ दीन नाथ तव विरद वखानी॥ ह
म न गह्यो आयुध निज पानी॥ दोहा॥ नाथ कथन सां
चो अहै कह भीषम सिरनाय॥ पै हौं धन हौं धन भयो आ

जस अन सुख पाय प्रभु सुमरिय निज नाम कहे सकल लो
क विख्यात॥ चक्रपानि रथ चक्र अब धस्यो नाथ निज हा
थ॥२३॥ टीका॥ इस प्रकार रण भूमी मे कोप से भरे हूये मुरा
री भगवान रथ का चक्र जो है सो ई हाथ मै शस्त्र धारे हू
ये सनमुख चले जाते है मानो गजराज पर मृगराज जो
है सो अत से गरव करके चला जाता है देखो दूसरा ऐसा
संसार मै कौन दीनबंधू और दीनों हितकारी है
जो दासके निमित्त अपना प्रण त्यागकर ने दास
का हीं प्रण पालते हैं भगवान कृपा निधान की सदैव ऐसे
ही हीं बाण चली आई है जो अपनी लघुता और दास
की बडाई हीं करनी देखिये कि कूरम जो कच्छ और मत्स जो
मच्छ कौल जो वाराह इत्यादी कृपा के धाम भगवा
न ने रूप जो धारन किये है सो केवल भक्तों के वास्ते
हीं धारन किये हैं इन भक्तों के निमित्त दीनानाथ संसार
मै क्या नहीं करते है दया के समुद्र दीनबंधू ने भक्त के
सत्य व्रत के वास्ते अपना व्रत जगत मै असत्य कर दि
या तब ऐसे प्रण पालक भगवान को हाथ मै रथ च
क्र धारे हूये सनमुख आवते देखकर भीषम जो है सो
हरष करके रोम रोम अघाय जात भयो और तत काल
हाथ से धनुष को पृथवी पर डारकर जै जै जै ऐसा श
ब्द मुख से उचारन करता भया तब भगवान तुरत
हीं बोल उठे कि हमने तो अपने हाथ शस्त्र नहीं
पकडा है जिसके उत्तर मे भीषम विनती करने लगा
कि हे दीनानाथ आपका कथन सब सांचा हीं है परन्तु
मै आज अथाह सुख को पायकर लोकों मे धन्य धन्य
हो गया हू अब हे कृपानिधान अपने नाम सुमरण
करिये जो संपूर्ण लोकों मे तुमको चक्रपानी
कहते और इसी नाम से सब जगत मै प्रसिद्ध हो तो
ते सोई चक्र यद्यपी रथ का हीं है हे दीनबंधू तुमा
रे हाथमै धारन किया हुआ है॥२३॥ चौपाई॥ कृ
पासिंधु हित कीन न थोरा॥ निज प्रण हारि रख्यो
प्रण मोरा॥ आवहु आवहु देवकि छैया॥ अब न रु

पालनाविचारकर कुछनहीं करसकते और ना कुछवन पड़ताहै इतनेमें ~~कैरवों~~का सव कौरव और कौरवोंका राजा दुरजोधन भगवानकीदशा देखकर मुखमें मुसक्याव नेलगे ना के मूढ अपनी जैविचारतेमये और ई हो भगवान वारवार हाथ पसारकरके अरजुनको हलाव तेहैं और कहतेहैं कि हे पारथ तुम मरगये हो किजीवते हो ने त्रोंको खोलकर कुछ वोलो तो सही तुम तो सभामें वड़े गरूर से कहतेथे जो मैं गांडीव नामा धनुषके धारने में प्रधानहूं दो एक घड़ी के वीचमें कौरवों के संपूर्ण दल का नास करदेऊं गा सो अपना प्रण अव कहां विसार दिया और रणभू मीमें धनुष वाण को डार दियाहै हे पारथ सावधान हो और उठो चैतन्य होजावो तुमारी जगतमें वहुत वड़ाई है और तुमको सवलोग जानते हैं अपने वलप्रताप को संभालो॥ १२॥ चौपाई॥ आज मुजाद पांडु कुल केरी॥ तुव आधीन गुनत मति मेरी॥ तुव वल धरम सुवन चढि आये र ण प्रचारि दुंदुभि वजाये॥ तुमरे होत सिथल रण माहीं॥ कहो कौन धीरज तिन काहीं॥ कादर सहिं न सकत गत तो ही॥ रण लखि लाज लजावत मोही॥ कस तुमरी अस विक्रम संगा॥ चलहिं सुजग की रति अभंगा॥ सखा सोच मनकी रुचि जोऊ॥ कहहु विचारि प्रकट अव सोऊ॥ हे अभिलाष विजय धों नाहीं॥ धों कछु हारि गये मन माहीं॥ जामें तुमरी जीत सुहाती॥ सो मति ह महिं लखे सुभ भाती॥ तुव समान मेरे जग माहीं॥ मी त सुहृद सज्जन प्रीय नाहीं॥ इत प्रभु सखेहिं करत सविधाना॥ उत अति विषम देव व्रत वाना॥ किय विदलन पांडवि दल सारा॥ त्राहि त्राहि देवकि कुमा रा॥ रटत सकल अस जदुपति देखी॥ कठिन कुस मय समर प्रभु लेखी॥ मेरे मूदि अमरष भगवाना॥ तजि रथ गहित चक्र रथपाना॥ मनहुं सुदरसन सद्रस धारी॥ असहु वी उदय होत मन हारी॥ नल नि नाल मनु विराजा॥ चले धाय सनमुख जदुराजा॥ वाजनि मृदु मंजीर चरन की॥ छवि अनुपम पट

भगवान मेरे मारने के वास्ते हाथमे चक्र पकडे हुये सनमुष धाय चले आवते हैं तातें मै आज भगवान का इह चक्रप्रसाद पायकर मुखसे पूरित भया हुआ सब के देखते बाजेव जावता भगवान के वैकुंठ धामको चला जाऊंगा कृपासिंधूने मेरे मनकी आसा पूरण करदई है हे ~~भक्तवत्~~ वीरसिरोमणी घनस्याम अब एही आनुग्रह करो किइह जो तुमारी कोटि काम देव की छवी को हरने वाली मूरती है सो सदैव ही मेरे हृदय मे निवास करती रहै जै हो तुमारी हे पारथके सारथी हे जन के प्रण को पालने वाले भगवान तुम कैसे हो किजिनोने मेरे जैसे अधम और महादीन जनको किजिस को कोई उद्धारन हारा नहीं था उद्धार किया और रणमे पारथ के सारथी होकर बडे कठिन बाणों घात जो हैं सो सहारे और अपने प्रण को त्याग कर संसार मे मेरा प्रण पूरा किया है ~~[illegible]~~ हे देव कीलाल दीनदयाल ऐसा जन के प्रण को पालने वाला सुंदर सुभाव इहतीन लोक मे तुम को ही शोभा देता है ॥२४॥ चौपाई ॥ कृस्न सुनत संतनु सुत वानी ॥ प्रीति प्रतीति भक्ति रस सानी ॥ करि दृग तकत तनक तिरछाने ॥ श्रीमुख मंदमंद मुसकाने ॥ बोले बदन दीन दुषहारी ॥ सुनहु वचन भीषम हितकारी ॥ इहि रण कर कारन नहि आना ॥ जानि परै मोहि तुमहि सुजाना ॥ जो प्रथमहि कुरु नायक काहीं ॥ लेते हु बरजि गुनत मन माहीं ॥ तो न होत इह कुल कर घाता ॥ सुनत वचन भीषम जग त्राता ॥ जुग कर जोरि गिरा मृदु भाषी ॥ मम अनुचित कछु चूक न राषी ॥ कंस राज कहे कुल कर केहू ॥ राख्यो बरजि नं दीन सनेहू ॥ कृस्न कह्यो तब जदु कुल माहीं ॥ असबर वीर रह्यो को नाहीं ॥ जैसे तुम त्रिभुवन धनुधारी ॥ धरम निरत परहित उपकारी ॥ तब भीषम कह दीन कृपाला ॥ जो न होत यह समर विसाला ॥ तो कस मोहि अधमहिं वसु कैया औ तेहु करन धरनि धन देया ॥ दोहा ॥ अस भाषत मुष परसपर जस जस हरि नियरात तस तस भीषम भक्त मन अति प्रमोद सरसात ॥ २५ ॥ टीका ॥

इस प्रकार भगवान से तनूके पुत्र की ~~वानी सुनकर~~ पर
म प्रीती और प्रतीती वाली वाणी सुनकर कुछक
तिरछे से नेत्रों से देखते हूये मुख से मंदमंद मुसक्याय
कर कहने लगे कि हे भक्त प्रधान और परहितकारी भी
षम इस रण का कारण कोई दूसरा नहीं है मेरे को
तुमही जान पड़े हो जो कदी पहिले ही कुरनायक दु
रजोधन को बरज लेते तो इह कुल का घात क्यों होना
था ऐसे जगतपाल भगवान का बचन सुनकर भीष
म हाथ जोड़कर कोमल वाणी से कहने लगा कि हे दीना
नाथ मेरा कथन यद्यपि अनुचित ही है तद्यपि कहता हूं
कि कंसराजा को कुल के किसी ने क्यों नहीं बरज लिया
~~[illegible]~~ भगवान कहने लगे कि तब जदुकुल में कोई ऐसा स
मृ और विचारमान बीर नहीं था कि जैसे तीन लोक में प्र
धान धनुषधारी और धरम की विधी पराये हित के पाल
ने वाले परम उपकारी तुम हो तब भीष कहने लगा
कि हे दीनदयाल जो इह रण ना होता तो मेरे जैसे अध
म को पृथवी पर धन्य धन्य करने और सुजस का पात्र ब
नावने ~~[illegible]~~ तुम कृपानिधान कैसे आवते इस प्रकार
परस्पर कथन करते ज्यों ज्यों भगवान नेड़े आवते
जाते हैं त्यों त्यों भीषम भक्त के हृदय में सुख आनंद
अधिक होता जाता है॥ २४॥ चौपाई॥ भक्तप्रेम वश श्री
भगवाना॥ चले दौरि सनमुख तजि जाना॥ पारथ
हू तजि रथ संगि लानी॥ दौरयो द्रुत लखि निज जन
हानी॥ प्रभु भुज भुजन गहित बरजोरी॥ कहत
तो हठ छवि सकुचति मति मोरी॥ मिले मनहुं मारुत
बस होई॥ गगन मंजु नव नीरद दोई॥ पुनि गहि चर
न कंज भगवाना॥ किये सरस रस बीर महाना॥ प्रभु
हिं रोकि अरु विनय उचारी॥ कृपानिकेत भक्त हितका
री॥ भीषम प्रण पूरयो जन नेही॥ टारयो निज प्रण
आयुध गेही॥ दीनानाथ भक्त रत हेतू॥ किये असत नि
ज कृपानिकेतू॥ लौटि चलिय अब स्योधन स्वामी॥

राखिय मोर म्रजाद निमामी॥ तुव प्रसाद कछु दुर्ले
भ नाहीं॥ कौतुक नाथ समर महिमाहीं॥ करि प्रहा
र बानन आतुराई॥ अरिदल दलहु समर समुदाई॥
वृथा रोष जनि भगवन कीजै॥ विक्रम मोर समर ले
खि लीजै॥ दोहा॥ सषा वचन सुनि कृपातन वदन
मंद मुसक्याय॥ निस्यंधन जदुनंद गति मंद मंद जु
त आय॥ एक सो करन सरोज कल चपल तुरंगन
लागि॥ कियो सुजस भाजन समर प्रभु पारथ वड
भागि॥ २६॥ टीका॥ तव भक्त के प्रेम के वश होकर
भगवान रथ को त्याग करके दौड़ते हुये सनमुष धाय
चले ऐसे भगवान को जाते देखकर पारथ भी तुरत र
थ को त्यागकर हृदय मे परम मिलानी और अप
ने जस की हानी मानकर शीघ्र धायकर
के दोन वंधू के जोरावरी भुजसे जाय पकड़ता भया
तिस समय की छवी कुछ कही नहीं जाती पव
न के वश होकर आकाश मे नवीन दो बादल मिल जैसे
ते हैं तैसी शोभा को उदय करते भये फिर अरजु
न कृपा सिंधू के दोनो चरन पकड़ कर सुंदर वीर र
स का जो है सो प्रकट करता भया कहता है कि हे भक्त
सनेही भगवान तुम कैसे हो कि जिनो ने भीषम प्रण को पूर्ण करके
पूर्ण करके अपने प्रण को हाथ मे शस्त्र पकड़ कर टार
दिया भक्त के सत्य हेत अपना व्रत असत्य
कर दिया है अब हे कृपासिंधू कृपा करिये और लौट च
लिये जगत मे मेरी मर्यादा को राखिये तुमारे प्रसा
द करके हे दीनानाथ कुछ दुरलभ नहीं है कौतुक
से रण भूमी मे बाणों के प्रचंड प्रहार करके शत्रू के
संपूर्ण दल को उड़ाय देऊंगा हे कृपानिधान वृथा
ही कोप मत करिये अब रण मे मेरे पराक्रम को देख
लीजिये इस प्रकार सषा जो अरजुन है तिसके वचन
सुनकर भगवान मंद मंद मुसक्यावते हुये मंद मंद
गती से ही अपने रथ पर आय कर अतसे चपल घोड़ों

किय जनदीनसहैया॥ मारहु चक्रचारु चटमोही॥ तजहु प्राण निरखत रटतोही॥ बरख सपत सतजगत बितेवा॥ अस औसर नहिं मिल्यो कदेवा॥ मलगुन चलनचक्र प्रभुहाथा॥ समरमरन पुनि सनमुषनाथा॥ अहोभाग मम सरस नदूजो॥ जाहिं असमन वांछित प्रभु पूजो॥ सुरमुनि तपसि जोगि जति जेते॥ करि करि हठे कठिन हठकेते॥ पाये सोन तिनहुं अनपायन॥ जो मम हनन हेतु अनुरायन॥ चक्रचारु गहि धावत धरनी॥ धनधन उदय भाग मम तरनी॥ अप्रसाद परम प्रभु पाई॥ देखत सबन निसान बजाई॥ जैहुं बैकुंठ मसो सुख भूरी॥ रमानिवास आस मम पूरी॥ वीर सिरो मणि दूलह बामा॥ मूरति हरन कोटि कविकामा॥ बसहिं सदा मो रे उर गेहा॥ दीन बंधु प्रभु दीन सनेहा॥ जै पारथ सारथि जदुराजू॥ जन प्रण पूरक वाण विराजू॥ मोसम अधम दीन जन काहीं॥ कोउ उधरन आन अस नाहीं॥ कै सारथि करुणा निधि नीरा॥ सहे घात सर दुसह सरीरा॥ दोहा॥ निज प्रण तजि पूरयो विदित मोर दीन प्रणपाल॥ अस सुभाव सोभित तुमै त्रिभुवन देवकि लाल॥ २८॥ टीका॥ फिर भीषम कहता है कि हे कृपासिंधू आपने कुछ मेरा हित नहीं किया बहुत किया है क्योंकि अपना प्रण हार दिया और मेरे प्रणको राखा है अब हे देवकीके लाल आविये मत रुकिये यह चक्र जो है सो मेरे को शीघ्र मारिये मै तुमारे को रटता रटता प्राणोंको त्याग देऊं अब लग जगतमै सात से बरष बतीत होगये है ऐसा समय कबी नहीं मिला था दीनानाथ के हाथ है चक्रका चलना और रणमै दीनानाथके सनमुखे हो मेरा मरना इससे परे और क्या है अहो आज मेरे समान किसके पूरण भाग हैं कि जिस को मन वांछित फल प्राप्त भया है देखिये देवता मुनी तपसी और जती इत्यादि जेते हैं सो से पूर्ण अनेक साधन और यतन कर कर हार जाते हैं यह भगवान कृपा निधान तिनके ध्यान मै नहीं आवते हैं मेरे भाग कैसे सूरजके समान कैसे उदय हैं कि सोई

३५१

३५१

विचारकर राजा अकेला हीं तहां चला गया कि जहां भगवान सैन कर रहे थे तब द्वारेपर सात्यकी जो स्थित था सो राजा को देखकर चरनो पर माथा रखके ~~~~~~~कर प्रनाम करता भया तिसको राजा जुधिष्ठर पूछने लगे कि ~~~~ जदुनाथ महाराज कहां है तब सात्यकी हाथ जोड़कर कहने लगा कि नाथ मेरे को तो द्वारेपर स्थित रहने की आज्ञा है इह नहीं जानता हूं कि भगवान कहां हैं और क्या करते हैं ऐसे सात्यकी का वचन सुनकर राजा जुधिष्ठर सहजे सहजे जहां भगवान विराजमान थे तहां को चल पड़े तब तिस समय जदुनाथ जी अपनी सेजा से उठकर और पदमासन लगायकर ध्यान मै लीन हुये बैठे थे ॥ २७॥ चौपाई॥ देखि दसा अस भगवान केरी॥ रह्यो चकत संकित नृप हेरी॥ ठाढो उभय घरी नृपताहो॥ रह्यो तकत कौतुक सुरनाहो॥ तोलो भक्त संत सुखदेना॥ खोल्यो अमल कमल दल नैना॥ नृप हि देखि जदुपति अनुरागे॥ उठि भराय भुज भेटन लागे॥ पुनि स प्रीति भगवान महीपै॥ बैठा सो निज सेज समीपै॥ तब विसमित संदिग्ध नथोरी॥ भनत भूप अस जुग कर जोरी॥ प्रभु उपज्यो संशय जिय मोरे॥ निवरन चाहु कृपा करि तोरे॥ जगत चराचर जीव सबै हीं धरत ध्यान तुमरो प्रभु ऐहीं॥ तुव निज धरहु ध्यान कहि केरो हृदय नाथ संशय इह मेरो॥ सुनि अस भूप कथन जदुराई॥ बोले मधुर मंद मुसकाई॥ सुनहु धरम नृप सुमति निधाना॥ मोर वचन इह सत्य प्रमाना॥ जीव चराचर संसृत जेते॥ निसि वासर ध्यावत मोहि तेते॥ दोहा॥ मै सेतत निज जनन कर धरहु ध्यान मन माहि॥ मोहि जग जन तजि आन कौ प्राण प्रीये अस नाहिं॥ २८॥ टीका॥ तब ऐसी भगवान की दसा देखकर राजा आचर्ज के वस होकर संकित भया हुआ स्थित हो रहा इस प्रकार दो घड़ी तक दीनबंधु भगवान का कौतुक देखता रहा इतने मे भक्त संतो को सुख देनेवाले कृस्न प्रभातमाने कमल के दल वत सुंदर नेत्र जो हैं सो खोले तब राजा जुधिष्ठर को सन मुख देखकर

भगवान उठकर के हृदय से लगाय लेते भये फिर श्री
ती सनमानसे हाथ पकड़कर अपनी सेज के समीप
बैठाय लेते भये तब राजा के हृदय में जो संदेह उपजा
है आपणा हाथ जोड़कर बिनती करने लगा कि हे कृपा
सिंधू मेरे हृदय में जो संशय हो रहा है सो आपकी कृपा तें
अब मिटाया चाहता हूं सो क्या है कि जगत के संपूर्ण
चराचर जीव तो निरंतर करके आपका ध्यान धार
ते हैं हे भगवन तुम किसका ध्यान धारते हो मैने आप
को ध्यान में लीन हुये देखा है मेरा इह संशय निवारण
कदिये ऐसे राजा की कथन सुनकर भगवान मंद मं
द मुसक्यायकर कहने लगे कि हे सुमती प्रधान राजन
अब तू मेरा वचन सत्य करके श्रवण कर कि इह जगत
के चराचर जीव जो हैं सो रात्रीदिन मेरे को ध्यावते है
और मैं हृदय में निरंतर करके अपने जन जो दास हैं तिन
का ध्यान धारन करता हूं मेरे को जगत में अपना दास मम
ता छोड़ करके और कोई भी प्यारा नहीं है ॥२८॥ चौपाई॥
पसो सेज सर अवसर रहो॥ मोर भक्त भव परम स ने
हो॥ भीषम सुभट कमल कुल भाना॥ अग्रगन्य धनु
धरन प्रधाना॥ तासु ध्यान इहि अवसर कर हों॥ लखि
अनन्य जन छिन न बसर हों॥ होत उत्तरायन रवि धी
रा॥ मम पद सुमरत तजहिं सरीरा॥ है सेका उपजत म
न माहीं॥ चहत कलेऊ लगयो मोहि काहीं॥ निज निज
कहिं लोग समुदाई॥ नृपवे कृपा कीन जदुराई॥ पे न
सिखायो धरम भुवालें॥ कहु सुभ धरम करम जगपालें॥
धरम करम जपजोग विरागा॥ ज्ञान ध्यान विज्ञान विभा
गा॥ चारु अचार विचार सुरीती॥ अर्थ काम नरनायक
नीती॥ विमल विवेक महातम नामा॥ साधन जोग अका
म सकामा॥ विधि निषेध जहिलग जग माहीं॥ रह्यो विद
त सब भीषम काहीं॥ तास तजत तन इह समुदाई॥
होहि अस्त संशय नहीं राई॥ नृपति धरम जस विद
त प्रकारा॥ को पुनि तुमहिं सिखावन हारा॥ अब मोहि ते
तुम जो न नरेसा॥ चारु सुनन सुदर उपदेसा॥

शीतवे

१७५

तो मे करहु सत्य पति धरमा॥ तुमसों नहिं न मोरक कु
मरमा॥ जितो जनत भीषम जग माहीं॥ तितो अवर
को नाहिं न करहीं॥ दोहा॥ ताते तुम भाईन सहित
चलहु सकल मिलि ताहि॥ मैहु चलव तुव संग द्रुतत
जिविलंब नरनाह॥२२८॥ टीका॥ हे राजन इस समय मे
रा परम सनेही भक्त भीषम जो है सो बाणों की सेजा पर प
डा हुआ है और वे कैसा है कि वीरों की कर्म रूपी कुल मे एक
सूरज और संपूर्ण धनुषधारियों मे प्रथम गिना हुआ है मे
रे इस समय तिसी का ध्यान धार रहा हूं अपना इष्ट भक्त जान
कर एक छिन नहीं विसार सकता हूं जब सूरज उत्तरायण
हो वेगा तब सो मेरे चरनो का सुमरण करता हुआ शरीर को
त्यागेगा इसते मै अतसे सोच के वश हो रहा हूं क्योंकि
मेरे को कलंक लगना चहता है सब लोग जो है सो अ
पने अपने कहेंगे कि देखो राजा पर जदुनाथ ने कृपा करी
परन्तु धरम सुकरम जो है सो तो कुछ नहीं सिखाया
औ धरम सुभ करम जप जोग वैराग ज्ञान विज्ञान
ध्यान और सुभ आचार विचार सुभ रीती अर्थ
काम राजनीती और निरमल विवेक सुंदर नाम
का महातम जोग के साधन अकाम सकाम विध
नेषध अर्थात गृहण त्याग इत्यादी जहां लग धरम
संसार मैं हैं सो तो सब भीषम को ही विदत हैं सोई भ
लीप्रकार जानता है तिसके शरीर त्यागने से इहसं
पूर्ण असत्य और लुपत हो जावेगे फिर कौन कहेगा औ
र हे राजन ऐसे धरम के प्रकार फिर तुम को कौन सिखा
वेगा और हे राजन जो तू मेरे से इह उपदेस सुना
चहता हैं तो मेरा तुमारा कुछ भेद नहीं है मै तुमको
अपने हृदय की सत्य सत्य करता हूं कि जितना जग
त मै भीषम जानता है इतना और कोई नहीं कहि
सकेगा ताते मेरी इही सम्मती है कि अब तुम स
म भ्राता और सब सज्जन हितकारी मिलकर
विलंब को त्यागकर तहां भीषम के पास चलो

७५६

कीवागें हाथमैं पकड़कर वड़भागी जोअरजुन तिसके
रणमैं सुजस का पात्र वनाय देते भये ॥ २६ ॥ भयो अंत
भारत जब ताहो ॥ तब प्रसन्न पूर्वक जदुनाहो ॥ भाइन
सुत समाज सब जोरी ॥ मंगल मोद प्रमोद न थोरी ॥
विधिवत हरषि धरम सुत काहीं ॥ वैठायो नृप आसन
माहीं ॥ जैजै सवद भयो चहुं पासा ॥ सव कर हृदय
प्रमोद प्रकासा ॥ तव तहि रजनि भूप सुख पाये ॥ कियो
सैन निज भवन सुहाये ॥ सेष निसा लखि भूपति जाग्यो ॥
श्री जदुपति पद सुमरन लाग्यो ॥ पुनि विचार किय मान
स माहीं ॥ इहि छिन हरिदरसन हित जाहीं ॥ अस सोचि
त नृप चल्यो उकाकी ॥ किये सैन जहं श्रीयपिनाकी ॥ द्
ह्यो द्वार साहत्यकि थिर चीने ॥ उठि भूपति पद वंदन
कीने ॥ पूछ्यो राउ कहो भगवाना ॥ तव सात्यकि
कर जोरि वखाना ॥ वैठायो द्वारे प्रभु मोही ॥ काहू
कौं कछु मरम न सोई ॥ मंद मंद तव चले महीसा ॥
रहे जहो जदुकमल दनीसा ॥ दोहा ॥ तहिं अवसर
भगवान तहं उठि सुचि से जमुना हिं ॥ वैठ पदमासन
किये ध्यान लीन मनमाहिं ॥ ~~देखि दसा आस~~
~~भवनके री~~ ॥ २७ ॥ टीका ॥ इस प्रकार जव तहो भार
त जो युद्ध है तिसका अंत हो गया तव प्रसन्नता पूर्व
क जदुनाथ भगवान नै संपूर्ण समाज के सहित पोड
वों को जोड़ कर महा मंगल और भारी आनंद से वि
धी के अनुसार राजा जुधिष्टर को राज सिंघासन पर
विठाय दिया तव जैजै शब्द जो है सो चारों पास होने
लगा सव कोई अपने अपने हृदय मे परम सुख औ
र आनंद मानता भया तव तिस रात्री मे राजा जुधिष्टर
महा हरष मे मगन भया हुआ अपने घर मे जाय क
र सोय रहा जव कुछ शेष रात्री रही तव राजा जा
ग उठा और श्री जदुपती महाराज का सुमरण करने ल
गा भगवान के सुमरते सुमरते राजा के चित्त मे विचार उ
पजा कि इस समय भगवान के दरसन को चलिये ऐसे

मूरति जो हैं सो जहां तहां से चले आवते भये तब भीषमजी
ने बड़ी प्रीती सतकार से सब की कुसल जो है सो पूछी
आगे से सब ने कहा कि आप की कृपा तें सरव प्रकार क
र के कुसल और आनंद है है ॥ ३० ॥ चौपाई ॥ श्री जदुवर त
व चरनन वोरा ॥ ठाढ़ भये उर हरष नथोरा ॥ भीषम नि र
खि स्याम घन काहीं ॥ मानि महान मोद मन माहीं ॥ कियो
प्रणाम जोरि जुग पानी ॥ जैजै जैति वदन वर वानी ॥ दीन
नाथ मो से अग काहीं ॥ धन धन धन को कीन जग माहीं ॥
जो इहि अवसर दरसन दीना ॥ कृपा निकेत कृतारथ कीना ॥
तव मृदु वचन कह्यो भगवाना ॥ सुनहु पितामह नीति
निधाना ॥ आये धरम भूप तुव पासा ॥ मानस प्रस्नन क
रन कछु आसा ॥ सो बालक गुनि तुव गुन गेहू ॥ हित
जुत सुभग सिषावन देहू ॥ नृपति नीति तुव चेतुर स
याने ॥ अपर धरम तुमरे सब जाने ॥ इनहिं सिषाय
सकल सुविधाना ॥ लेहु विदत ॥ जन प्रमोद प्रद सु
नि प्रभु वानी ॥ भने वदन भीषम सुख मानी ॥ दीना
नाथ विरद तुव एहू ॥ राखहु सदा दीन पर नेहू ॥ ये
संसय मोहि कृपा अगारा ॥ हृदिय हरन हरि भेद निमा
रा ॥ तुमरे इछत भीत भव भंगा ॥ मोहि पूछन कर कव
न प्रसंगा ॥ जा के सब विधि तुव जन जाता ॥ औ है भरो
स चरन जल जाता ॥ भीषम वचन सुनत मुसक्याई ॥
सवन सुनाय कह्यो जदुराई ॥ तुम सम तुमहुं प्र
वीन पितामह ॥ वयोन काहु ज्ञात गुन धामा ॥ ज
था अलाप सकति वरतोरी ॥ तथा तात सामर्थ न
मोरी ॥ तुव मुख सुनन सरुचि संसारू ॥ विमल ध
रम सुभ मरम प्रकारू ॥ हम इत जुत समाज किय
आवन ॥ अभिलाषित तुव सुमति सिखावन ॥ दोहा ॥
~~दोहा~~ ॥ सुनि अस कथन कृपाय तन मन प्रमोद सरसा
य ॥ भने वदन भीषम वचन रचन रुचिर चित ल्याय ॥
नाथ रीत तुमरी सदा अहै विदत संसार ॥ देहु सुजस
निज जनन कहें जस तस मिस हुं मुरार ॥ ३१ ॥ टीका ॥

जगसुजसमहित ॥

तव श्री जदुपतीजो हैं सो आनंद पूर्वक भीषमजीके चर
नोकी ओर वैठगये तिनको तहां वैठे हूये देखकर भीष
म अपने हृदय मे परम सुख मानता भया और दोनो हाथ
जोड़कर प्रणामकिया फिर मुखसे जैजै शब्द उचारकर
कहने लगा कि हे दीन वंधू तुम सत्य करके कृपाकेहीं स
मुद्र हो जोमेरे से पापीको इस समय अंतमे आयकर द
र्सनदिया और कृतार्थ करके जगतमे धन्य धन्य ~~कर~~
~~दिया~~ किया और ~~सुजस~~ सुजस का पात्र ~~बनाय दिया~~ बनाय दिया है
तव भगवान कोमल वाणी से कहने लगे कि हे नीतीके
निधान पितामह हे तुम मेरा वचन सुनो जो इस राजाध
मे तुमारे पास आये हैं और कुछ प्रश्न किये चहते हैं सो
इनको तुम वालक विचारकर हितके सहित वडे सुख
के देवेगा ली शिक्षा जो है सोदेवो हे भीषमजी तुम राज
नीतमे परम प्रवीन हो और जहांलग धरम सुकरम औ
र सुविधान चारविचार इत्यादीं सव तुमको विदत हैं
और भली प्रकार जानते हो सो संपूर्ण इनको सिखाय
कर जगतमै तुम जस को प्रापत कर लेवो ऐसी भक्त
जनोके हृदयको आनंद देने वाली ~~अ~~ भगवानकी सुंदर
वानी सुनकर भीषम कहने लगे कि हे दीनानाथ तुमा
रा सदैव एहि विरद है जो अपने दासपर दयाहीं पाल
नी परंतु दीनानाथ मेरेको वड़ा भारी संशै हो गया है
सो अव कृपाकरके मेरे इस संदेहको दूर करिये सो क्या
है कि ~~आप~~ राजा जुधिष्ठर जो सर्वकाल आपके चर
नोकाहीं मरोसा रखता है तिसको आपके होते मेरे पूछ
ने का कौन प्रसंग है ऐसे भीषम का वचन सुनकर
भगवान मुसक्याय कर कहने लगे कि हे पितामह
हे तुमारे समान जगतमै तुमहीं हो दूसरा ऐसा को
इ गुनोकाधाम नहीं है जैसी अलाप शक्ती तुमारी
है और जैसा तुम कहते हो ऐसे कहने की मेरी भी
सामर्थ नहीं है हे गुणप्रधान भीषम हम तो के
वल तुमारे ही मुख से सुधरम और सुभमरमो

और सव को सुनाय कर

के प्रकार सुनाने की अभिलाषा वाले होकर सब स
माज के लेकर ई हो तुमारे पास आये है इसप्रका
र भगवान कृपानिधान का कथन सुनकर भीषम अपने हृदय
मै परम सुख मानकर कोमल वाणी से कहने लगा कि हे दी
नो नाथ तुमारी सदैव ए ही रीती है जो जगत मे जैसे के सेव
रके अपने दास को बडाई और सुजस हीं देते रहते हो ॥३०॥
चौपाई॥ अब मुकुंद करि दया घनेरी॥ देखि दसा श्रम संजुत
मेरी॥ परसत पदम पानि मम सीसा॥ कथन शक्ति सतध
र्म रमीसा॥ देहु दयानिधि जन निज काहीं॥ होहि सहज सा
हस मन माहीं॥ सर संघात घात तन पीरा॥ प्रभु ढिग क
हत होत अति ब्रीरा॥ सुनत देवव्रत वचन रसाला॥ धर्‍यो
माथ तहि हाथ कृपाला॥ बहुरि भन्यो अस वदन मुरारी॥ सुन
हु भक्त भीषम व्रतधारी॥ सकुच न करत भास रवि कोरी॥
धर्म कथित कछु तुमहि न खोरी॥ पाय स्परश पानि
भगवाना॥ मिट्यो घाउ श्रम सरन महाना॥ विगत खेद
उप ज्यो सुखदेहा॥ उमग्यो हरि पदपदम सनेहा॥ भन्यो
परसि पुनि चरन मुरारी॥ नृप पूछिये रुचि जथा तुमारी॥
धरम सुवन तव प्रसन उचारा॥ राज धरम कर कहहु प्र
कारा॥ आन विधान वेदमत गायन॥ करिय कथन संदे
ह पलायन॥ दोहा॥ तव भीषम उर सुमरि पद जदुप
ति कृपा अगार॥ सानकूल वर रान किये राजधरम वि
सतार॥ ३२॥ टीका॥ फिर भीषम कहता है कि भगवान अ
व दया करके मेरी दशा और मेरा कलेश श्रम देखक
रके सरव व्याधियों के दूर करने वाले हाथ से मेरे
सीस को स्परशी करिये और सत्य धरम के कथन करने की शक्ति
जो है सो हे दीन हितकारी मेरे को दीजिये और चित्त मे उतसा
ह की अधिकता कीजिये [illegible] घाउ और घात जो
हैं तिन की पीड़ा कथन करते को आप के सनमुख लज्जा
आवती है ऐसे भीषम की वाणी सुनकर कृपासिंधू तु
रत हीं कृपा के वश होय गये और तिसके माथे पर हाथ
धरकर कहने लगे कि हे भीषम जैसे सूरज को प्रकाश
करते कुछ सकुच नहीं होता तैसे हीं धरम के कथ
न करते तुम को कुछ लज्जा नहीं है इस प्रकार जब

अनुशासन

मैं भी तुमारे साथ चलता हूं॥ ॥२८॥ चौपाई॥ तुम जस जस पूछब नरराई॥ तस तस भीषम देहिं बताई॥ तुमरे संग मैं हूं सुनि लेहों॥ पुनि कबहुं न अस अवसर पैहों॥ प्रभु मुख सुनि प्रभाव अभिरामा॥ धन धन गुन्यो नरि द्रुपिता महा॥ चलहु भूप भाष्यो कर जोरी॥ अस अभिलाख अहै प्रभु मोरी॥ अस कहि भाईन भूप बुलाई॥ रथ मातंग तुरंग सजाई॥ इक रथ अरजन स्याम विराजे॥ इक रथ भूप धरम छवि छाजे॥ चले जात संजुत सहदेवा॥ सात्यकि नकुल करत प्रभु सेवा॥ भनत कथा मग अनेक सुहाई॥ पहुंचे कुरुखेतर महं जाई॥ सरन सेज जहं पर्यो महीरा॥ भीषम सुभट सिरोमणि बीरा॥ बंदि चरन छित पति अभिरामा॥ बैठ्यो सीस समीप पितामा॥ सनमुख कृष्ण प्रीत चित भाई॥ बैठे उर प्रमोद सरसाई॥ सुनन हेत भीषम उपदेस॥ आये मुनिवर वृंद वसेसु॥ दोहा॥ तब भीषम पूछ्यो कुसल सादिर प्रीति समेत॥ कह्यो सवन तुमरी कृपा सब विधि कुसल निकेत॥ ३०

टीका॥ हे राजन तहां [struck] से जो जो तुम पूछोगे सो भीषम जी सब बताय देवेंगे तुमारे संग मैं भी सुन लेऊंगा ऐसा समय फिर कहां प्रापत होवेगा इस प्रकार भगवान के मुख से भीषम जी का प्रभाव सुनकर राजा जुधिष्ठिर तिन पितामहं जी को धन्य धन्य मानते भये फिर हाथ जोड़ कर कहने लगे कि हे नाथ मैं चलता हूं मेरी भी एही अभिलाषा है ऐसे कहि कर राजा ने ततकाल अपने भाईयों को बुलाय कर और रथ गज घोड़े इत्यादी सुंदर वाहन सजाय कर एक रथ पर अरजुन और श्री स्याम विराजमान हूये और एक रथ पर राजा धरम और सहदेव चले जाते हैं सात्यकी और नकुल जो हैं सो मारग में अनेक कथा वारता करते हूये भगवान की सेवा करते चले जाते हैं तब जाते जाते कुरुखेत्र में जाय प्रापत भये जहां बाणों की सेजा पर बीरधीरों में सिरोमणी भीषम जी विराजे हूये थे तहां राजा जुधिष्ठिर [struck] चरनों को वंदना करके तिनके सीस के पास बैठ गये और सनमुख में कृष्ण भगवान आस पास में और सब भ्राता बड़े आनंद पूर्वक बैठ गये तिस समय तहां भीषम का उपदेश सुनने के वास्ते मुनियों के स

सब सुनाय दिये और आपदधर्म अर्थात आपदा के ध
रम जो अनेक प्रकार के हैं और जगत मे जनम सत्य
और असत्य का विचार जोग वैराग ज्ञान विज्ञान और
धरम मोक्ष इत्यादि सब भिन्न भिन्न कथन किये फिर भगवंत
की निरमल भक्ती जो है तिसका मारग गायन किया
सरब सुखों के देने वाला परम धरम और दान धरम निगु
ण सगुण उपासना और संत महातमा के लछण और महा
तम ... परम पवित्र तीर्थ महातम के सहित सब भ
ली प्रकार सुखसे वरणन किये जैसे जैसे राजा जुधिष्ठिर
ने पूछा तैसे तैसे ही भीषम ने सब कहा तिस समय ऐ
सा कोई प्रश्न बाकी नहीं रहा जो राजा धर्म ने नहीं पूछा
फिर भविष्यत वार्ता जो है सोभी पूछी भीषम जी ने वे भी प्रक
ट करके सब सुनाय दई इस प्रकार भीषम का बड़ा सुंदर
और सुभ कथन सुनकर के व्यास आदि जो सब ऐते बै
ठे हुये हैं कोई भी तृपती को प्राप्त न होता प्रीती पूर्वक
सब सुनते ही जाते हैं ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ पुनि सब कहे जुग
भुजा उठाई ॥ कह्यो पितामह अस गुहराई ॥ हे सिद्धांत
शास्त्र सब एहू ॥ राखे सदा संत पद नेहू ॥ पर उपका
र निरत धरि काया ॥ होय अनन्य दास जदुराया ॥ सी
ल सुभाव सदा निज राखे ॥ माखे मन न विलै रस चाखे ॥
राखे सब जीवन पर दाया ॥ रंगे न रंग मोह मद माया ॥
सत्य धरम रत रहै सदा हीं ॥ कपट द्वेष राखे कछु नाहीं ॥
धारे ब्रत परहित पर प्रीती ॥ राखे अटल वचन मन
जीती ॥ तजे मृजाद वेद निज नाहीं ॥ हेरै हरि मय स
ब जग का हीं ॥ है इह सार धरम समुदाई ॥ सुवन धर
म उर धरहु सदाई ॥ सुख हरि नाम दया मन जा के ॥
माया करहिं स्पर्श न ता के ॥ अस प्रबोध कहि विविध
प्रकारैं ॥ वदन देव ब्रत पांडु कुमारैं ॥ लीन्यो बहुरि
मौन ब्रत धारी ॥ तब मुकुंद जुत मुनि गण सारी ॥ दोहा ॥
लगे सराहन वदन बहु बारबार हरखाय ॥ जैहैं नभ
ये न होहिं जग धन धन भीषम भाय ॥ २३ ॥ टीका ॥ तब फिर
भीषम दोनो भुजा उठाय करके सब को ऊंची सुर से कह
ने लगे कि हे भाई संपूर्ण शास्त्रों का सिद्धांत तो एही है

जो संतजनो के चरनो मे सदेव प्रीती और प्रेम राखे और इस शरीर को धार करसदेव परउपकार मे ही लगेरहे जदुनाथ भगवानका अनन्य दास होवें और सबको त्यागकर एक उनकाही भरोसा राखे और अपने शील सुभाव मे रहे कबीक्रोध ना करे और विषयों का रसन चाखे सबजीवों पर दयाही राखे और मोह मदमाया जो है इनके रंग मे ना रंगाजावे सदेव सत्य धरम मे ही लीन रहे हृदय मे कपट द्वेष कुछ नहीं राखे ऐसा ब्रत धारन करे किजिस मे परहित और पर प्रीती ही प्रतीत होवे और मन को जीतकर वचन अपना अटल राखे अपने वंस की मर्यादा जोहै सोनहीं त्यागे हरीजो भगवानहैं तिनके सहित सब जगत को देखे हेधरमभूपसर्व धरम का सार तो इहहै तुमहृदयमे सदेव ही धारन करो क्योंकि मुखमे भगवान का नाम और मन मे दया इहदोनो जिसके होवें तिसको माया कबी स्पर्श नहीं करतीहै अर्थात तिस के निकट नहीं आवतीहै इसप्रकार भीषम जीने राजा जुधिष्टर को नानाप्रकार प्रबोध करके फिर मोन जोहै सो धारन करलिया अर्थात बोलनेसे नवृत्य होयगये तब भगवानके सहित मुनियों का सब समाज परम प्रसन्न होकर अपने अपने मुखसे वारवार श्लाघा करने लगे कि अहो जगत मे भीषम धन्यहैं इनके समान तीन काल मे ना कोई है ना भया ना होगा ॥ ३२ ॥ चौपाई ॥ भई गगन तब गिरा सुहाई ॥ रहौ उ नरायण अठाई ॥ सुनि भीषम जुगजोरित पानी ॥ जदुपति सो अस विनय बखानी ॥ दीननाथ दीनन सुखदाई ॥ चल्यौ जात अब समय विहाई ॥ होउ नाथ मम नैनन आगे ॥ करन पयान प्राण इहलागे ॥ प्रभु सनमुख देखत दृग तोही ॥ माया मोह न व्यापहिं मोही ॥ तब मुकुंद उठि सानंद रागे ॥ भये ठाढ़ द्रुत भीषम आगे ॥ चरन वोर मुख सनमुखहेरें ॥ मनहुं भीति भव भक्तन वेरें ॥ सुर ऋषी ब्रह्म ऋषी ऋषीराई ॥ जे ध्रुव यक्ष सिद्ध समुदाई ॥ चारन चारु चतुर नर नाहा ॥ ठाढ़ विलोकहिं कौतुक तोहा ॥ वारवार अस कहत सवाहीं ॥ बड़ भाग भीषम जग माहीं ॥ स्याम जलधर तन नयन विसाला ॥ विलसत हृदय विमल वन माला ॥ वसन पीत

दुति दामनि लाजे॥ हरन कोटि छवि मदन विराजे॥ चारि भुजा न खलन मद गंजन॥ सुरदुज धरनि धेनु मन रंजन॥ मुकट मयूर पूर छवि नीकी॥ चितवनि चारु मुनिन प्रीय जीकी॥ कुंडिल करन वदन विधु निंदा॥ कच कल कुटिल मधुप मनु वृंदा॥ दोहा॥ अस मूरति मृदु माधुरी लखि मन मुख भरि नैन॥ चितवत अनमिष देव व्रत सरन मे जन कृत सेन॥ २७॥ जब इस प्रकार भीषम की बडाई करी तब आकाश से इह सुभवानी प्रकट होती भई जो अव उतरायण ■ आयन होगया है ऐसी आकाश वानी को भीष्म सुणकर जदुनाथजी से विनती करने लगा कि हे दीन बंधू हे दीनानाथ अव समय जो है सो वीता जाता है कृपा करके मेरे नेत्रों के सनमुख स्थित हो जाइये क्यों कि मेरे प्राण जो हैं सो अव चलने लागे हैं हे भगवन तुमारे को सनमुख नेत्रों मे देखते हूये मेरे को मोह माया आदि कुछ नही व्यापेगा ऐसा सुनते ही भक्त हितकारी भगवान तुरत उठकर भीषम के सनमुख स्थित हो जाते भये और चरनो की ओर खडे होकर तिसके मुख की ओर देखते हैं सो मानो जगत मे भगत का भय दूर करते है तिस समय तहां सुर देव ऋषी ब्रह्म ऋषी राज ऋषी गंधर्व यक्ष सिद्ध चारन इत्यादि और सब राजा महाराजा स्थित भये हूये कौतुक देख रहे हैं वार वार ऐसा कहते हैं कि आज जगत मै भीषम के धन्य भाग्य हैं क जो कोटि कामदेव की छवी को हरने वाले पीत वस्त्रधारी और दुष्ट जनो का मद दूर करने वाली हैं चार भुजा जिनकी गऊ ब्रह्मण पृथवी और देवताओं के रक्षक मोर मुकट करके शोभायमान और मुनियों के मन को प्यारी लगती है जिनके नेत्रों की दृष्टी कानो मै ■ मनोहर कुंडिल और चंद्रमा को लजा देने वाला मनोहर है मुख भ्रमरों के समाज को निंदने वाले सुंदर स्याम केश ऐसे भगवान की दिव्य और माधुरी मूरती को वालों की सेजा पर विराजे हूए भी

(margin notes: टीका॥ / अथ टीका)

दीनानाथ के वचन सुने और दीनवंधू के हाथका स्पर्श पा
या ततकाल वाणों के घाउ और पीड़ा कलेश सब मिट
गया शरीर मै परम सुख और आनंद उप
जता भया तव भगवान के चरन कमलों पर प्रणाम करके सो
ई चरन हृदय मै धारकर कहने लगा कि हे राजन अव जोत
मारे मन को भावती है सो पूछिये ऐसे भीषम पितामहै को अ
नकूल जानकर राजा जुधिष्टिर प्रस्न करते भये कि हे तात
राजधरम के प्रकार और भिन्न भिन्न नाना विधान कि जो
वेद मै गायन किये हूये हैं सो भ्रम और संशयों के दूर करने
वाले कृपाकरके सब कथन करिये इस प्रकार धरम भूप
के प्रस्न सुनकर भीषम जो हैं सो जदुनंदन भगवान के च
रन कमलों को सुमरकर वडी प्रीती रुची से राज धरम के
अनेक प्रकारों का विसतार पूर्वक कथन करने लगे॥ २१॥ चौ
पाई॥ वहुरि अनेक आनमन भाखे॥ सहित अंग इति हा
स अलाये॥ विधि नखेध पुनि वहु विधि भाख्यो॥
अर्थ शास्त्र कछु मरम न राख्यो॥ कहे सकल साधन अनु
रागा॥ स्वर्ग नरकद करम विभागा॥ आपद धरम अने
क प्रकारा॥ जनम जगत सत असत विचारा॥ जोग विरा
ग ज्ञान विज्ञाना॥ मोक्षधरम पुनि किये वखाना॥ विलग
विलग मन हरष प्रलीनो॥ विमल भक्ति पथ गायन कीनो॥ वरन्यो परम धरम सुखदाना॥ दान धरम पुनि विवि
ध वखाना॥ निरगुण सगुन उपासन चारू॥ लछण साधु
अनेक प्रकारू॥ तीरथ संत महातम जोई॥ कौन विसद
गायन सुख होई॥ जस जस पूछ्यो भूपन भूपा॥ तस तस
भीषम कियो नरूपा॥ रहो न कोउ शेष नहि काला॥ पू
छ्यो जो न धरम महि पाला॥ पूछ्यो वहुरि भवितात गा
था॥ वरन्यो सो हु सकल करुनाथा॥ सोरठा॥ किमि पाव
हिं विस्राम॥ भीषम भनत स पवृ सुभ॥ व्यासादिक
अभिराम॥ जहं वैठे स्रोता सकल॥ २२॥ फिर भीषम जीने

टीका॥

राज अंगों के सहित मन को भावते अनेक इतिहास क
थन करे तिसतें उपरांत विध नखेध अर्थात ग्रहण त्याग
इत्यादि धरम जो हैं सो सव कहे फिर अर्थ शास्त्र के प्रकार
और संपूर्ण साधन स्वर्ग और नरक के देने वाले क
रम अनुराग जो प्रेम इत्यादि सव

३६२

363

भक्त हितकारी भगवान भीष्मके चरनोमे स्थित भये हुये तिसकोअभय कररहेहैं ओ जअपने दास भीषम कोअभय करनेके वासते तिसके चरनो मे स्थित भये हुये हैं धन्यहै भीषम सोर धन्यहै जगतमे सुजसका पात्रभीषम किजिसको अब भक्ती दान देनेके वासते तीन लोकके नाथ क भगवान सनमुखस्थित भये हुये हैं॥ २१॥ चौपाई॥ देखि देखि प्रभु दीनसनेही॥ सुंदर स्याम नाम रस देही॥ श्रीलालित पद पंकज माही॥ कियेनिवास मधुप मनकाही॥ करि इकाग्र इंद्रै इक ध्याना॥ पुलककाय जल दृगन दुराना॥ पानिजु कजुग विनय अलाई॥ सुनहु भक्तवतसल जदुराई॥ विते सपत सत संवत मोरे॥ जगकारज नहिं कबहु विछोरे॥ सकल जनम अपकरमन माहीं॥ खोयो दीननाथ जगमाहीं॥ सपनेहु भलो करम नहिं कीना॥ दुराचार रत रह्यो मलीना॥ इह कृपाल कछु नाहिं नजाना॥ कहि सुकृत रीझ्यो भगवाना॥ जान्यो प्रभु करविरद नयारो॥ जन अवगुन सब गुनहिं विचारो॥ अब सब मुनिन चरनपर मोरी॥ देइ प्रनाम जुगलकर जोरी॥ इहिअवसर इनमैनन मोहीं॥ दीषत एक स्याम घनसोही॥ भनत वदन अस भीषम बानी॥ आनंद मगान जोरि जुगपानी॥ दोहा॥ जोमूरति मुनि मन वस्यो हृदय राखि निज सोय॥ लाग्योअस तुति करन प्रभु सावधानमन होय॥ २२॥ टीका॥ तब भीषम स्यामकमलवत भगवानकी ~~सुर~~ शोभा को देख देखकर श्रीजी लक्ष्मी तिसके हाथों से करदनकिये हुये जोचरन तिन चरन कमलोंमे अपने मन रूपी भ्रमरेको निवास देकर इकाग्र इंद्रय और एक ध्यान होय कर शरीरसे प्रफुल्लित भया हुआ नेत्रोमे प्रेम जल भरकर और दोनो हाथजोड़ कर विनती करने लगा किंभक्तवतसल भगवान कि मेरेको ~~जनम~~मे सात से वरष वतीत होगया इन जगतं कारजो से कबी नहीं छूटने पाया सब जनम जोहै सो अपकरमो मे ही खोय दिया भला करम सपनेमे भी नही किया सदैव दुराचार मैं ही लगा रहा हूं हे दीनबंधू मेरेको इह नहीं जानपड़ा किआप

देखिये

के

है

कौन सुकृत और पुन्न के प्रभाव से मेरे महामंद पर री
झे हो इसते मैने विचारा है जो कृपानिधान तुमारा वि
रद न्यारा ही है कै अपने दास के अवगुन जो हैं सो गुन
ही विचारते हो फिर भीषम कहते हैं कि अब सब मुनियों
के चरनों पर मेरी हाथ जोड़कर दंडप्रणाम होवे इस स
मय मेरे इन नेत्रों के बीच सरव सुखों के धाम एक घ
न स्याम ही देख पड़ते हैं इस प्रकार कथन करके आनंद मे
मगन भया हुआ भीषम दोनो हाथ जोड़कर जो मूरती भग
वान की मुनियों के मन मे बस रही है सोई अपने हृदय मे रा
ख कर और चित्त से सावधान होय कर भगवान की अ
स्तुती करने लगा ॥ २१ ॥ चौपाई ॥ जै जै प्रजा पाल जदुना
यक ॥ जै जै भक्त हेत सुखदायक ॥ जै जै वृंदारक मन मंडा ॥
जै जै खंडन दनुज प्रचंडा ॥ जै जै आनंद कंद मुरारी ॥ जै जै जे
ति केतु उर गारी ॥ जै जै कुंजन करन विहारा ॥ जै जै धरन अ
नेक अवतारा ॥ जै जै कृपा सिंधु जन रंजन ॥ जै जै भक्त भीत भ
व भंजन ॥ जै जगधीस रमीस अनामा ॥ जै जै जन मन पूरन
कामा ॥ जै जै नव तमाल तन सोभा ॥ जै मुख अलक जा
ल मन लोभा ॥ जै विसाल भुज वनत अनूठी ॥ मूर ति
मदन कोटि मनु ~~[illegible]~~ मूठी ॥ जै जै उर वन माल विराजे ॥
पीत वसन दुति दामनि लाजे ॥ जै वारज लोचन चैन स्यामा ॥
जै कल कं कि कीट छवि रामा ॥ जै उर पाल वदन दुति देवा ॥
जै अज चंद्र भाल सुर सेवा ॥ जै पारथ सारथि जदुनाथा ॥
जै रथ चक्र धरन रण हाथा ॥ जै जै मोर सरन श्रम पाई ॥
कन कल स्वेद वदन उमराई ॥ जै जै रण रज रंजित अंगा ॥
बिच बिच स्रोणत बिंदु सुरंगा ॥ जै करि टेर सुनत दुत धा
वन ॥ सकुनि झंट गज जेंट दुरावन ॥ जै जै नख नग ध
रन कृपाला ॥ वृज उवरन प्रभु दीन दयाला ॥ जै जै सत्य
सिंधु भगवाना ॥ जै जै पतित उधारन वाना ॥ जै जै दीन नाथ
रण देखी ॥ धरम भूप चमु विकल वसेखी ॥ कृपासिंधु
दास हित लागी ॥ बिसराइव निज प्रण दीने तयागी ॥
पूर्वै हेतु मोर प्रण स्वामी ॥ धस्यो चक्र कर कमल निमा
मी ॥ दोहा ॥ अहो नाथ सम कौन अस करन दीन पर हेत ॥
जो जन सति हित असति भये भगवन कृपा निकेत ॥ २२ ॥ टीका ॥

३६४

364

भीषमकहताहैकि जैहो तुमारी हे प्रजापाल हे भक्त संत सुखदायक हे देवताउके आनंदकारी हे दुष्टदेतों के खेदिनहारी जैहो तुमारी हे कुंजगलियों मै विचरने वाले हे पृथवी मंडलपर अवतारों केधारने हारे हे कृपाके समुद्र हेदास पाल हेजगतमै भक्त जनोकाभय हरनेवाले जैहोतुमारी हे लछमीकेपती हे जगतपती हेदास जनोकी कांमा पूरण करनेवाले जैहो तुमारी हे नवीन तमाल वृक्षवत शरीरकी शोभावाले हे स्याम अलकों वाले हे लंबी भुजों केधारने हारे हे कोटिकामदेवकी छबीको लज्जा देने वाले जैहो तुमारी हे तुलसीमाला धारने वाले हे पीतवस्त्रधारी हे कमलनेत्र हे घन स्याम हे मोरमुकट वाले हे चंद्रमा वत मुख की शोभावाले जैहो तुमारी हे शिव ब्रह्मादि और सनकादियों करके सेवत किये हूये हे पारथके सारथी हे जदुनायक हे रण मै रथ चक्र के धारने वाले जैहो तुमारी हे मेरे बाणो करके श्रमत क्या थके हूये और मुख पर प्रस्वेद के कण उभरे हूये हे अंग अंग रणकी धूडी से सजे हूये और श्रोणित जो लहू है तिसके बिंदुओं से बीच बीच शोभित भये हूये जैहो तुमारी हे गजेंद्र की पुकार सुनते ही वेग धायकर रक्षा करने वाले हे टटीहरीके टांडे भारतमे गजके टाडे कर बचाने वाले हे नखपर गोवरधन धारकर बृजकी रक्षाकरने हारे हे सत्य के समुद्र हे पापी जनों का उद्धार करने वाले जैहो तुमारी हे भगवान तुम कैसे हो कि रणमै धरम भूप की सेना को व्याकुल देखकर और दासों का हित विचारकर अपना प्रण जो था सो त्रिण के समान ततकाल तोड दिया और मेरा प्रण पूरण करने के वासते रणभूमी के बीच अपने हाथमै रथका चक्र धारन कर लिया ताते देखिये हे दीनबंधू तुमारे समान दीनोपर कृपा और स्नेह करने वाला ऐसा कौन है कि जिनो ने अपना प्रण असत्य करके अपने दास का प्रण सत्य किया है ॥ ३१ ॥ चौपाई ॥ निज हठ तजत दीन सुखदाई ॥

षम सनमुष [illegible] भर कर [illegible] और इकटक होकर देखता है॥ २६॥ चौपाई॥ सो मूरती नैनन पथ ल्याई॥ भीषम उर निज लीन बसाई॥ रह्यो तहो सब मुनिन समाजा॥ कौसिक व्यास देव भरद्वाजा॥ नारद परसरामज गसेवा॥ औ परवत कस्यप सुकदेवा॥ देखि प्रेम बस जदुपति काहीं॥ ते सब कहत परसपर ताहीं॥ आज कौन भीषम सम आना॥ जहि रिझाय अस कृपानिधाना॥ अंत काल सनमुख गत ठाढे॥ अतुलित कृपा दृष्टि निज काढे॥ आज भाग एहि भागन नाहू॥ एक वदन किमि जाहिं सराहू॥ है सेवकर इह सिवकाई॥ धौं कृपाल कर कृपा सुहाई॥ जासु प्रभाव नाम सिव कासी॥ जीवन मुक्ति देत अवनासी॥ जासु नाम रटि जन जग माहीं॥ आवत कबहु जनम फिर नाहीं॥ मरन काल हरि सुमरत जेहू॥ नासत कोटि जनम अगतेहू॥ सो कृपाल भीषम पद माहीं॥ ठाढे अभय करन जन काहीं॥ दोहा॥ धन धन भाजन सुजस जग भक्त देवब्रत आज॥ मुक्ति दान जहि देन हित ठाढे त्रिभुवन राज॥ २४॥ टीका॥ तब सो भगवान की मूरती को भीषम नेत्रों के मारग मै ल्याय कर अपने हृदय मै विसाय लेता भया तहां जो मुनियों का समाज विस्वामित्र वयासदेव भरद्वाज नारद परसराम [illegible] परवत मुनी कस्यप शुकदेव इत्यादि सब भगवान को भक्त के प्रेम के वश हुये देख कर परस्पर कहते हैं कि आज दूसरा भीषम के समान कौन है जिसने ऐसे कृपानिधान भगवान को रिझाय लिया है देखो अब अंतकाल तिसके [illegible] सनमुख स्थित होकर कैसी अनंत कृपादृष्टी से देख रहे हैं आज इसके भाग संपूर्ण भागों के राजा हैं तिनकी एक मुख से कैसे सराहना हो सकती है क्या जानिये कि इह सेवक की सिवकाई का प्रभाव है कि अथवा कृपानिधान की कृपा है सो कृपासिंधु कैसे हैं कि जिनके नाम के प्रभाव से अवनासी महादेव कासी मै जीवों को मुक्ती दान दे कर अभय कर देते हैं और जिस परमातमा के नाम को रटन करके मानुष्य जगत मै फिर जनम नहीं पावता है मरन काल मै ऐसे दीनानाथ भगवान के सुमरण करने से कोटि जनम के पाप जो हैं सो सब नास को प्रापत होते हैं सो

कर कृस्न भगवान मे ही लीन होगया ॥३८॥ चौपाई ॥ तव भीषम कर श्री जदुनाथा ॥ परस्यो कलित कंज कर माथा ॥ लेत सपर्स तुरत जदुवीरा ॥ जरो वसन सम भयो सरीरा ॥ मृतक करम कोरव सव कीन्यो ॥ जदुपति ताहि तिलोजलि दीन्यो ॥ तव भीषम कहे सुमरत साही ॥ आय भवन संजुत गिरधारी ॥ कृपासिंधु तव सभा सजाई ॥ वोलि धरम नृप ~~सभा सजाई~~ कह्यो वुझाई ॥ जो जो तुम कहे भीषम भाषा ॥ मति महान उपदेस सुभाषा ॥ सो न सुन्यो देख्यो कहुं नाहीं ॥ भाषहु सत्य भूप तुव काहीं ॥ अत कोमोहि न मरम नरराई ॥ जदपि विदत जग मोर वडाई ॥ जो वस करन मोहि तुव कामा ॥ तो भीषम उपदेस ललामा ॥ स्रुति पुराण सिद्धांत विचारी ॥ करहु आचरण सदा सुखकारी ॥ भीषम भनित सरस जग माहीं ॥ मोहि अस आन प्रीये कौ नाहीं ॥ अरु समान भीषम संसारा ॥ अहै न मोहि भक्त भव प्यारा ॥ दोहा ॥ अस प्रकार नृप धरम कहे वहु विधि नीति वखान ॥ आपु सुमदि हरदा रिको कियो गवन भगवान ॥ इह अदभुत मन हरन भव भीषम चरित पुनीत ॥ मै कीन्यो संतपत कहु कथन हरन भ्रम भीत ॥ कुमति विनासन सुख करन जरन त्रिवध तप सूल ॥ ज्ञान ध्यान दायन विमल सकल सुमंगल मूल ॥ कृस्न कमल पद प्रीति नित दैन सुजस संसार ॥ दुरित दोष दारद समन दमन मोह मद मार ॥३९॥ टीका ॥ तव भगवान ने अपने हाथ कमल से भीषम के माथे को स्परश किया तिस स्परस के होते ही भीषम का शरीर मानो जले हूये वस्त्र के समान होगया तव तिसका मृतक करम जो है सो सव कोरवों ने किया और आपदीन वंधू ने तिलो जुली दिया तिसते उपरांत भीषम को सुमरते और तिसके गुणगण कथन करते हूये भगवान के सहित अपने घरको चले आये तव कृपासिंधु ने सभा सजाय करके और राजा जुधिष्टर को वुलाय कर कहने लगे कि हे राजन भीषम जी ने तुमारे को जो जो उपदेश सि

ना

याहै सो तो कहीं सुना और ना देखा है मैं सत्य कहता हूं यद्यपी जगत मे मेरी बहुत हीं बड़ाई है तद्यपी इत मै ना नहीं जानता हूं कि जितना भीषम पितामा ने कहा है अब हे राजन जो तुमारे चित्त मे मेरे को वश करने की काम ना है तो इह भीषम ने जो उपदेश तुमको दिया है सो संपूर्ण श्रुति पुराणों का सिद्धांत अर्थात सार जानकर और सरब सुखों का साधन जान कर सदै आचरण करते रहो क्योंकि सदा तिस पर ही चलते रहो इह भीषम का कथन जो है तिसके समान मेरे को जगत मे और कुछ कोई भी प्यारा नहीं है और ना संसार मे भीषम के समान मेरे को भक्त प्यारा है इस प्रकार धरम के पुत्र राजा जुधिष्ठर को अनेक प्रकार की नीती सुनायकर और सिखायकर महादेव का समरण करते हूये कृष्ण प्रभात मा द्वारिका को चले जाते भये नाभादास जी कहते हैं हे संतो ऐसी इह अदभुत और मन के हरने वाली परम पवित्र भीषम की चरित्र गाथा जो है सो मैंने यथा मती कुछ संछेप कर के कथन करी है इह कैसी भी गाथा है कि भय भ्रम कुमती शूल रोग और मोह मद दोष दारिद्रादि सब पापों के नाश करने वाली और निरमल ज्ञान ध्यान के सहित कृष्ण भगवान के चरन कमलों मे नित्य नवीन प्रीती और भक्ती के देने वाली है शुभं ॥ ॥ ३२ ॥ इति भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातम भाषा टीकायां भीषम चरित बरणने नाम सरगः ॥

राख्यो मम हठ भक्त सहाई॥ कियो आज धन रंकन
रंका॥ तासो तीन लोक दै डंका॥ अस कहि अनमिं नयन
न होई॥ सोई रूप सनमुख प्रभु जोई॥ देखत भयो अच
ल चित ताहो॥ गह्यो मौन मानस कुरू नाहो॥ जोग कला
करि भक्त प्रधाना॥ सुमरत कृष्ण भक्त वरदाना॥ विनु अ
जास सनमुख सुखकंदू॥ तजत प्राण कौतुक कुरु चंदू॥
भयो लीं जदु नंदन जोती॥ देखि भक्त भगवान मिलोती॥
बाजी गगन दुंदमी नाना॥ हरषि प्रसून सुरन वरषाना॥
दसो दिसन जै जै धुनि छाई॥ धन्य धरा धन भीषम भाई॥
मुनि समाज सब उठ्यो पुकारी॥ अहो भाग भीषम व्रतधा
री॥ जास रिझाय समर हरि काहीं॥ लियो वजाय मुक्ति ज
ग माहीं॥ करत भक्ति बल सनमुख ठाढे॥ देखत दीनद्या
ल सुख बाढे॥ दोहा॥ कृष्ण कृष्ण सुमरत सहज भक्त प्रा
ण तजि दीन॥ कृष्ण कृपा तें कृष्ण जन भयो कृष्ण महं ली
न॥ ३८॥ टीका॥ हे भक्त सहायक तुम धन्य हो जो अपने
हठ को त्याग कर मेरे हठ को अटल राखो है आज रंकों मे
रंक जो मै था सो आपने तीन लोक मे डंका देकर तार दि
या है ऐसे कहि कर और सनमुख ध्यान जोड कर भगवा
न का सोई सरूप देखता देखता अचल चित्त होकर मौन को
धारन कर लेता भया और फिर जोग कला करके कृष्ण प्रमा
तमा को सुमरता सुमरता जतन के बिना हीं भगवान के स
नमुख प्राणों को त्याग कर प्रमातमा की जोती मे लीन हो
जाता भया भक्त की भगवान मे मिलावा देख कर देव
ताउं ने आकाश मे अनेक प्रकार की दुंदमी बजाय दई और
हरष से भांत भांत पुष्पों की वरषा कर दई दसो दिसा मे जै
जै धुनी छायत हो जाती भई सब कोई कहता है कि भाई
आज पृथवी पर इह भीषम धन्य है और धन्य इस व्रत धारी के
भाग हैं कि जिसने भक्त हितकारी भगवान को रण मे रिझाय कर
जोरावरी से मुनी जोगी जनो को दुरलभ मुक्ती जो है सो
प्रापत करी है और भक्ती के बल से सनमुख स्थित करके औ
र तिन के देखते देखते कृष्ण कृष्ण सुमरते हुये प्राणों को त्याग

३६७

वाला सो कानो मे शबद सुणने की शकती वाला होजाता है और अंध जो है सो नेत्रों मे सुंदर जोती और प्रकाश को पाँवता है और जिसकी अनुगृह से मूक जो गुंगा है सो वाचाल होजाता है अर्थात वारता अलाप करने लग जाता है और पंगू जो लंगडा है सो परवत पर चढजाने की सामर्थ वाला हो जाता है ऐसे कृपासिंधु भगवान के चरन कमलों का सुमरन करके संत भक्तों के गुण गण और निरमल सुजस जो हैं सो गायन करता है विस्नुचित्त नाम करके मुनी थे तिनकी कन्या रूपकी निधी और गुणों की खानी गोदा देवा नामा जिस प्रकार प्रकट होती भई तिसकी अदभुत और आनंद के देने वाली गाथा जो है सो इहां प्रीती पूर्वक कथन की जाती है कहते हैं कि विस्नुचित्त मुनीने अपने अस्थान पर एक नवीन बडी सुंदर तुलसी की वाडी रचना करी थी एक दिन तिस वाडी को जल देते देते तिनको तहांसे एक कन्या प्रापत होयगई तिस सील और रूप की निधी कन्या को देखकर दयाके वश भये हूये मुनी पुत्री जानकर प्रीती सनमान से अपने घर मे लेआये और दिनदिन तिसकी पालना करने लगे तब एक रात्री को भगवान सुपने मे तिस मुनीको कहने लगे कि हे मुनी जब मैने वाराह रूप धार करके पृथवी का उद्धार किया था तब पृथवी ने मेरेसे पूछा था कि हे भगवन तुमको कौनसी पूजा प्यारी लगती है और अपने दासकी किस सिवकाई पर तुम रीजते हो तब मैने तिसको कहा कि मेरेको पुष्पों की पूजा अती से कर के प्यारी लगती है और संसार मैं मेरे नाम और कीर्तन जो करने वाला है तिस पर मेरा प्रेम थोडा नहीं है बहुत ही है सो ऐसा मेरा भक्त निरसंदेह होय करके मेरे परम धाम को प्रापत होजाता है

(margin notes: एक; क; की; ने; भक्ति प्रीती पूर्वक; ...)

इस प्रकार मेरा उपदेस जो था सो पृथवीने हृदयमे धार
कर और कन्या होयकर इहां तेरे भवन मै आय निवास
कियाहै अवहे मुनी जो तुम इसको भलीप्रकार सेवते रहो
गे तो तुम्हारे को कुछभी दुरलभ नहीं होगा सरवप्रकार
करके सुखहीं प्रापत होवेंगा॥ ऐसे रात्री को स्वपन देखकर
धीरज के धाम विस्नुचित्त प्रातःकाल होतेहीं अपने भा
गों की बडाई जानकर कृस्न कृस्न रटते हुये उठ खडे भये॥
१॥ चौपाई॥ जात करम कन्याकर कीन्यो॥ महामोद दं
पति मन लीन्यो॥ समय पाय कन्या जब सोई॥ जुवावैस
कहं प्रापत होई॥ कृस्न कमल पद प्रेम जुडानी॥ कृस्न
कृस्न निस वासर वानी॥ सुमन माल हरि हेत रचावैं॥
हरि गुण विमल सुजस मुख गावै॥ सुमन माल वनमा
ल सुहावन॥ तास सप्रेम रचित मनभावन॥ विस्नुचि
त्त नित दा सनरीती॥ रंगनाथ कल भवन सप्रीती॥ जा
य अनुपम हरख सरसाई॥ देत रुचिर निज करन चढा
ई॥ एक समय गोदा मन भाई॥ ललित करन निजमाल
रचाई॥ सो लीन्यो आपन उरधारी॥ पुनिकर गहितमु
कर सुकमारी॥ निजसज धज कल देखन लागी॥ आय
गये तव पितु वडभागी॥ लखिऊ छिपृ वनमाल कुमा
री॥ नूतन विरचि ललित मन हारी॥ रंगभवन द्रुत
जाय प्रवीना॥ प्रभुहिं करन पहिरावन कीना॥ दोहा॥
रंगनाथ भगवान तव देखि नवल सजनैन॥ विस्नुचि
त्त कहं विहसि मुख भने ललित मृदु वैन॥ २॥ टीका॥।
तव कन्याका जात करम जोहै सो विधी पूर्वक सव कि
या दोनो स्त्री भरता वडे आनंद को प्रापत भये फिर स
मय पायकरके सो कन्या जुवा अवस्था को प्रापत हो
जाती भई और कृस्न भगवान के चरन कमलों मै प्री
ती वाली होकर रात्रीदिन कृस्न के भजन सुमर्ण
मै हीं लीन रहती सुंदर पुष्पों की माला भगवा
न के वासते अपने हाथसे वनावती और
भगवान के हीं पवित्र गुणानुवाद गावती रहती

३६८

३६७

तिस के हाथ की पुष्प माला और तुलसी की माला विष्णुचित्त जो है सो दासों की दी तिस से बड़े हरष और आनंद पूर्वक जायकर रंगनाथ भगवान को नित्त हीं चढाय देता तब एक दिन गोदा ने अत से सुंदर और मनोहर माला बड़ी प्रीती से बनाय कर फिर अपने हृदय मे पहिर लई और हाथ मे दर्पन लेकर अपनी सज धज जो है सो देखने लगी इतने मे तिस कन्या के पिता विष्णुचित्त तहां आय गये और कन्या की उच्छिष्ट अर्थात पहिरी हुई तुलसी की माला देखकर तुरत ही और नवीन रच कर रंगनाथ भगवान को जायकर के अपने हाथो से पहिराय देई तब रंगनाथ भगवान ने नवीन माला देख कर बड़ी कोमल वानी से मुसक्याय कर विष्णुचित्त को कहने लगे॥ २॥ चौपाई॥ गोदा कर जूठी सज जोई॥ पहिरावहु मोहे तुम सोई॥ जदपि ललित यह माल तुमारी॥ पै मोहि गोदा कर अति प्यारी॥ तब नवीन सुचित्त अधिकाई॥ सो जूठी मोरे मन भाई॥ विष्णु चित्त सुनि भगवन वाचा॥ अपने उर अति आनंद राचा॥ सुता सहित वन माल हि लीन्यो॥ रंगनाथ कहं अरपन कीन्यो॥ तब भगवन गोदा कहं देखी॥ मनेवचन जुत कृपा वसेखी॥ तासु सुताहिं भवन निज जानी॥ हम व्याहब इहि स्वयंवर ठानी॥ विष्णुचित्त सासन प्रभु लीन्यो॥ सुता समेत गवन गृह कीन्यो॥ एक समय गोदा सुकमारी॥ हरषि पितु हि अस वचन उचारी॥ तात विदत ब्रह्मांड मझारा॥ केते दिव्य धाम निरधारा॥ सुनि पुनीत गोदा मुख वानी॥ विष्णुचित्त मानस सुख मानी॥ जेते दिव्य धाम हरि पावन॥ लग्यो हरषि निज सुता हि सुनावन॥ दोहा॥ सुन गोदे मे दोक थन सावधान निरधार॥ श्री वैकुंठ निवसै सदा श्री वसुदेव कुमार॥ ३॥ टीका॥ भगवान कहते हैं कि हे विष्णु चित यह गोदा की पहिरी हुई जूठी माला जो है सोई मेरे को पहिराय देवो यद्यपि तुमारी माला अत से सुंदर हीं है परन्तु यह गोदा की

अथ गोदा अंबा चरित्र

दोहा॥ जास कृपातें वधर श्रुति सुनहिं ग्यान सुखदान॥ अंध अमल कल जोति दृग लेहिं विदित जग जान॥ अरु जेहि कृपा कटाक्ष तें होहिं मूक वाचाल॥ पंगु चढ़हिं गिरिवर गहन पाय प्रसाद कृपाल॥ अस करुणामृत सिंधु के सुमरि चरन जलजात॥ संत सुजस गुण विमल कछु करहुं कथन अवदात॥ चौपाई॥ विस्नुचित्त कन्या इक गाई॥ गोदा अंबा नाम सुहाई॥ तासु कथा अदभुत सुखदानी॥ ईहां मनन कछु करहुं सुबानी॥ विस्नुचित्त इक नवल ललामा॥ विरचत रह्यो तुलसि आरामा॥ सींचत तासु दिवस इक ताहीं॥ मिली एक कन्या मुनि काहीं॥ देखि सील निधि रूप कुमारी॥ लागि दया नहिं सके सहारी॥ सुता जानि अति प्रीति समेता॥ ल्याय हरषि निज रुचिर निकेता॥ लगे तासु पालन मुनिराई॥ तब निसि सपन दीन जदुराई॥ जब हम कोलव पुष धरि लीना॥ धराउधार विदित जग कीना॥ तब पूछ्यो मेदनि अस मोही॥ कौन पीये पूजा ते प्रभु तोही॥ रीझहु कौन जतन जिवकाई॥ तब मैं कह्यो तासु समुझाई॥ पूजा सुमन मोहि प्रीय लागै॥ अस सेवन सज्जन अनुरागै॥ कीर्तन नाम मोर संसारा॥ करहिं अनन्य मोर निरधारा॥ तापर मम अनुराग नथोरा॥ होहिं वजाय मुक्ति वरजोरा॥ ताते मम उपदेस सुहावा॥ हृदय राखि मेदनि मन भावा॥ भई कन्यका रूप निधानी॥ तुमरे भवन वास रुचि मानी॥ जो रहिहै सेवत तेहि काहीं॥ तो तुमरे कछु दुरलभ नाहीं॥ दोहा॥ अस हरजनी देख्यो सुपन विस्नुचित्त मतिधीर॥ उठि प्रात गुनि भागवत वदन ररत जदुवीर॥ २॥ टीका॥ जिस प्रमातमा की कृपा तें वधर जो

नाम श्रवन करते हैं कि

थ विदत जिन नाम॥ किये प्रवेति ग्रमल निज धाम॥ द्वारवती जदुकुमद मयंकू॥ सरनागत सब हरन कलंकू॥ जे नंद नंदन नाम कहाने॥ निवसत नंद ग्राम बरसाने॥ वृंदावन कल कुंज विहारू॥ केलिपुं ज नित नवल सवारू॥ काली हृद गोविंद सुहाये॥ गोवरधन गिरधर छवि छाये॥ सिरि रंग मंत सेष मन गावाना॥ हरी द्वार जदुपति मनमाना॥ दोहा॥ निवस हिं सेत समाज जुत गया गदाधर देव॥ वेनी माधव रमरहे प्रयागराज जगसेव॥४॥ टीका॥ फिर ग्रामोद लोक जिसका नाम है ताहां संकर वन मै बलराम जी नि वास करते हैं ग्रौर प्रमोद लोक जो है तहा प्रद्युम जी विराजते हैं सामोद लोक मे ग्रनिरुद्ध वास करते हैं ग्रौर सेतदीप जो है तहां संत भक्तों को ग्रानंद देने वाले दौसाई भगवान ~~विराज~~ विराजमान हैं वदरीधाम ना म करके जो प्रसिद्ध है तिसमे नर नाराय ण सोभा पावते हैं ग्रौर सरव कामना के सिद्ध करनेवाले जोगपती भगवान जो है सो नेमषारण्य तीरथ पर निवास करते है तैसे हीं मुक्तीनाथ मे ग्रनेत छवी को उदय किये हुये ग्रा नंद पूर्वक सालिग्राम भगवान विराजमान है ग्रौर ग्रजुध्या मे जानकी जी के सहित रामचंद्र महाराज सोभा पावते हैं मथुरा मै जदुनंदन भगवान वास करते हैं काशीपुरी जो है तिसमै विस्वनाथ का धाम है ग्रौर वे ग्रवनाशी तारक मंत्र सुनाय कर जगत के जीवों को ग्रभय करते हैं ग्रौर सिव के समान ग्रौर को ई ~~और~~ उदार नही है ग्रौर जिनको ग्रवनी नाथ जी कहते हैं सो ग्रवंती नगरी मे निवास करते हैं द्वा रिका मे जदुकल कुदों के चंद्रमा कृस्न प्रमातमा वि राजे हुये है ग्रौर जो नंद नंदन नाम करके प्रसिद्ध हैं सो नंदगाम वरसाने मे वास करते हैं वृंदावन मे कुंज विहारी भगवान ग्रनेक खेल विलास कर के युत सोभा पावते हैं ग्रौर काली हृद मै गोविंद निवास

ग्रौर सिरंगम मे सिरंग करते हैं

करते हैं गिरधर भगवान गोवरधन मे विराजते हैं और हरीद्वार मे जदुपती महाराज आनंद लेते हैं गरी गो मेत जो है तहां सोरी भगवान वास करते हैं और इसे दूसरे संत समाज के स॰हित गदाधर स्वामी गया जी मे विराजते हैं तैसे ही वेनी माधव भगवान प्रयाग राज मे रम रहे हैं और अपने दरसन से जगत के जीवों को सफल कर रहे हैं॥४॥ ॥ चौपाई॥ गंग सागर कपल कृपाला॥ नंदी ग्राम भरत सुख शाला॥ जानकि लषन सहित रघुनायक॥ निवसत चित्रकूट सुखदायक॥ विरूह रूप प्रभु दोत्र प्रभासा॥ कूर्म तेत्र कूरम हरि वासा॥ जगनाथ नीलाचल वसहीं॥ जुत बलभद्र सुभद्र विलसहीं॥ सिंहसेल नरसिंघ वसैया॥ गदानाथ तुलसीवन छैया॥ सेताचल महं नरहरि स्वामी॥ करहिं वास निज जन अनुगामी॥ तेत्र पुरातम दोष विनासा॥ तहं साली नारायण वासा॥ गोदावरि के तीर सुहाई॥ परम पुरी सब संसृति गाई॥ तहं हरजन सब संतन वीरा॥ जोगानंद वसे जदुवीरा॥ कृस्नावेनी तीर सुहंता॥ वहै अंध्र नायक भगवंता॥ धाम अहोवल सुपर नगर ही॥ श्री नरसिंह वास तहं करहीं॥ वरद राज कांची सुखमाना॥ पुंडर पुर विठुल भगवाना॥ दोहा॥ सेसाचल महं धाम किये व्यंकटनाथ सदाहिं॥ नारायण निवसे मुदित श्री जादवगिरि माहिं॥५॥ टी का॥ गंगसागर जो है तहां कृपा धाम कपलजी विराजमान हैं और नंदी ग्राम मे भरत जी वास करते हैं जानकी और लषमण जी के सहित रघुनाथ जी महाराज सोभा पावते हैं प्रभास दोत्र मे विरह रूप और कूरम क्षेत्र मे कूरम भगवान विराजे हुये हैं जगनाथ प्रभूं बलभद्र जी के सहित नीलाचल मे वास करते हैं और सिंहसैल मे नरसिंह भगवान रम रहे हैं तुलसी वन मे गदानाथ जी विराजे हुये हैं और सेताचल मे दासमतों के

हितकारी नरहरी स्वामी शोभादेते हैं सरवपापों के
नासकरनेवाला पुरातन तीर्थ जो है तहां साक्षीनारा
यण निवास करते हैं और गोदावरी के सामीप धरम
पुरी जो प्रसिद्ध है तिसमें सब संत भक्तों की पीडा दूर
करने वाले जोगानंद भगवान बसते हैं और कृष्णा
वेनी के किनारे अंध्रनायँ भगवान शोभा पावते हैं अ
होवल धाम में सुपर नगर के बीच श्री नरसिंह वास क
रते हैं वरदराज भगवान कांची नगरी में और
और विठ्ठलदेव पुंडरपुर में विराजे हुये हैं सेसाचल
जो है तहां देव व्यंकट नाथ भगवान का धाम
है और श्री जादवगिरी में आनंद पूर्वकँ नारायण
निवास करते हैं ॥ चौपाई ॥ नारसिंह यहि का गिरि
राजे ॥ कांची बहुरि रुचिर छवि छावे ॥ पार थसार
थि पूरन कामा ॥ पुनि जपो तंकारी अस नामा ॥ त
हां रमा पति धाम सुहावन ॥ तहि नगरी दक्षण दिस
पावन ॥ निवसहिं भक्त संत सुखदाता ॥ नरहरि नाम
जास विख्याता ॥ पद्मदिसा त्रिविक्रम छाला ॥ करहिं
वास सरणागत पाला ॥ गरुड सरोवर तीर सुहाये ॥ व
सहिं विजै राघव रघुराये ॥ वीना रम्य तीर्थ मन
भावन ॥ वसै वीर राघव जग पावन ॥ जोताद्री
हरँ दुख दीना ॥ रंगसेन प्रभु आश्रम कीना ॥
गज नगरी गजसोक निवारन ॥ श्री हरि बसहिं
जनन भव तारन ॥ करहिं वास बिलपुर अभिरामा ॥
श्री बलराम नाम छवि धामा ॥ दीरघ तीकर तीर सु
होवन ॥ पुनि गोपाल ललित मन भावन ॥ श्री गो
पाल विराजत ताहीं ॥ अभय करत जग जीवँ काहीं ॥ जे श्री मुष्णा तेउ तीर्थ भ्राज्यो ॥ कोल
रूप हरि तहां विराज्यो ॥ तूरा नगर सुदक्षण माहीं ॥
बसैं कमल लोचन प्रभु ताहीं ॥ कावेरी मध्य त
हां सुहावा ॥ दीप एक भास त मन भावा ॥ रंग

माला जो है सो मेरी को बहुतहिं प्यारी है तुमारी नवी
न और पवित्र माला से ॥ हे गोदे की जूठी माला मेरे चि
त्त को अतसे भावती है इस प्रकार विस्नुचित्त भगवान नम
तसुखदन के वचन सुनकर हृदय मै अत्यंत सुख मान
कर वनमाला के सहित पुत्री को ल्याय कर भगवान के
अरपण कर देता भया तब भगवान गोदे को देखकर व
डी कृपा के सहित वचन कहने लगे कि हे भक्त तुम अ
पनी इस पुत्री को सनमान पूर्वक अपने घर मे राखो हम
स्वयंवर की विधी अनुसार इसको विवाह लेवेंगे ऐसे
विस्नुचित्त भगवान की आज्ञा लेकर पुत्री के सहित अ
पने घर को चला जात भया तब घर मै एक समय गोदा
अपने पिता से बड़े आनंद से पूछने लगी कि हे तात
इस संपूर्ण ब्रह्मांड मै दिव्य धाम जो हैं सो कितने प्रति
ष्ठ हैं ऐसे गोदा के मुखसे परम पवित्र बानी सुनकर विस्नु
चित्त हृदय मै प्रसन्न होकर भगवान के जितने पवि
त्र दिव्य धाम हैं सो हरष से पूरित भये हुये गोदे को सब
सुनावने लगे कि पुत्री अब तूं मेरे कथन को निश्चय
से सावधान होकर श्रवण कर जो श्री वैकुंठ मे तो
श्री वसुदेव कुमार निवास करते हैं ॥ चौपाई ॥ पुनि
आमोद लोक जहि नामा ॥ निवसत वल प्रीकर व
लरामा ॥ लोक प्रमोद प्रद्युमन सुहाये ॥ करहिं निवा
स हरष सरसाये ॥ अरु संमोद लोक छवि छाजे ॥ सा
नकूल अनिरुद्ध विराजे ॥ सेत दीप महे मेदिन संता ॥
वसैं छीर साईं भगवंता ॥ वदरी धाम नाम जहि गावा ॥
नरनारायण के मन भावा ॥ वसैं जोगपती हरिप्रद
कामा ॥ नेमषार तीरथ अभिरामा ॥ मुक्तिनाथ महे
मुदित विराजे ॥ सालिग्राम रमत छवि छाजे ॥
वसैं अवध सिय सानुज रामा ॥ जदुनंदन मथुर
किय धामा ॥ निवसत विस्वनाथ कल कासी ॥ ता
रक मंत्र देत अवनासी ॥ अभय करत जग जीवन
काहीं ॥ तिन सम को उदार तिय नाहीं ॥ अवनी ना

शोभा पावते हैं और सुंदर सुवर्णनगर में सुवर्णमुख प्रभू निवास करते हैं व्याघ्र नामक पुरी जो है तिसमें महावाराह भगवान का धाम है तैसे हीं व्योम नगर में चित्रहरो और उत्पलवर्ततीर्थ में श्री जदुपाल विराजमान हैं॥६॥ चौपाई॥ मनि कोटी महं दीन दयालु॥ बसहिं महो प्रभु आनंद शाला॥ सागर तीर कृष्ण पुरि माहीं॥ निवसैं महो कृष्ण प्रभु ताहीं॥ विष्णु क्षेत्र एक संस्तुति गायन॥ बसहिं अनंत मुक्ति कर दायन॥ कृष्ण क्षेत्र जुत संत विकासा॥ तहां लक्ष्मि नारायण वासा॥ स्वेत सैल एक निगम बखाना॥ बसैं शांत मूरति भगवाना॥ अग्नि होत्र पुर विदित अनूपा॥ तहां बसहिं बामन सुर भूपा॥ भार्गव क्षेत्र जगत महि छावा॥ तहां निवास परसु धर गावा॥ अहै बिकुंठ नगर एक रामा॥ बसहिं तहां माधव सुविधामा॥ विदित मुक्ति परिषू क्षेत्र जग पावन॥ सुधा भक्त तहं बसहिं सुहावन॥ करै सुदरसन प्रभु दुख नासा॥ चक्र तीर्थ महं रुचिर निवासा॥ कुंभ कोण पुरि भूत मझारा॥ सारंग पानि दहेन पगधारा॥ तीरथ कलुष हरन एक नामी॥ बसहिं गजेंद्र मोक्ष प्रद स्वामी॥ दोहा॥ दक्षण देस प्रसिद्ध एक चित्रकूट अस नाम॥ तहां बसहिं गोविंद प्रभु जन न कल्प द्रुम काम॥७॥ टीका॥ मणी कोटी जो है तहां दीनों के हितकारी महो प्रभू वास करते हैं और समुद्र के किनारे कृष्ण पुर में महो कृष्ण प्रभु विराजते हैं विष्णु क्षेत्र जो जगत में प्रसिद्ध है तहां मुक्ती के दाते अनंत भगवान विराजमान हैं और कृष्ण क्षेत्र में संत समाज के सहित लक्ष्मी नारायण शोभा पावते हैं॥ स्वेत सैल जो एक बड़ा उजागर है तहां शांत मूरती भगवान का धाम है और अग्नि होत्र पुर जो है तिसमें बामन भगवान विराजते हैं भार्गव क्षेत्र जो पृथ्वी पर प्रसिद्ध है तहां परसुधर जी निवास करते हैं

ऋौर परम रमणीक वैकुंठ नगरमै माधव भगवान वि
राजे हूये है जगतमै परम पवित्र गृद्धिषू नाम करके
जोहै तहा लक्ष्मीभक्त शोभा पावते है और चक्रतीरथमै
सुदर्शन चक्र निवास करते है कुंभकोण मैं भूत पुरी [illegible]
मै सारंग पानी भगवान विराजते है और कलुषह
रन तीरथ जोहै तहा गजेंद्र मोक्ष स्वामी वास करते है
दक्षण देसमै चित्रकूट नाम करके प्रकट अस्थान जोहै ति
समै दासभक्तोके मनोर्थ सिद्ध करनेवाले गोविंद देव निवा
स करते है ॥७॥ चौपाई ॥ पुरी उत्तमा जेजग लसहीं ॥
तामधि ईस अनुत्तम बसहीं ॥ स्वेत सैल महि किये निवासू ॥
पदम विलोचन विस्व प्रकासू ॥ पारब्रह्म पारथ पुरमा
हीं ॥ करहिं सफल जगजीवन काहीं ॥ वृद्ध पुरी वृष
आस्रय स्वामी ॥ सानंद बसहिं जनन अनुगामी ॥ सरत
पुरी सरण्य सुखकारी ॥ संगम नगरि अहंग मुरारी ॥ ध
नषतैत्र जगधौ सरगाये ॥ कालमेघ सुंदर पुर आये ॥ ७ग
दक्षणमै मथुरा सुभ धामा ॥ तहं सुंदर प्रभु बस
हिं ललामा ॥ परवराज नामिक प्रभु जोई ॥ निवस
हिं वृषपरवत महं सोई ॥ वर गुण तेज पुन्य फल
भ्राजा ॥ नाथनाम प्रभु तहां विराजा ॥ रमा पुरी कुरका
पुरि लसहीं ॥ गोष्ठि नाथ गोष्ठी पुर बसहीं ॥ दर्भसे
न मै सिंधु किनारे ॥ भूमि सेन रघुनंद पधारे ॥ धन्वी
मंगल नगर उजागर ॥ निवसहिं कान कुवर तहं ना
गर ॥ दोहा ॥ सुवर तेज महं विदत अस निगम निरू
पण कीन ॥ वल साली भगवान तहं बसहिं हरन
दुखदीन ॥८॥ टीका ॥ फिर जगतमै उत्तमा पुरी जो
प्रसिद्ध है तहां अनुत्तम ईस निवास करते है और
स्वेत सैलमै जगतके प्रकास करनेवाले पदम विलो
चन भगवान शोभा पावते है तैसे ही पारथ पुरमै

पार ब्रह्म विराजते हैं और जगत के जीवों को सफल क
रते हैं वृद्धपुरी मैं वृषआस्रय स्वामी निवास
करते हैं सरन पुरी मै सरण सुखकारी और सं
गम नगरी मे अहंग मुरारी विराजे हूये हैं धनुष क्षे
त्र जो है तहां जगदीस्वर और मुदगर पुर मै कालमेघ
आश्रम किये हूये हैं दक्षिण मै एक मथुरा नाम करके
धाम है तहां सुंदर प्रभू निवास करते हैं और वृषपर
वत जो है तिस मै परवराज भगवान विराजमान होरहे
हैं वरगुन क्षेत्र जो परम पुन्न का अस्थान है तहां
नाथ नाम करके भगवान शोभा पावते हैं कुरकापु
री मै रमापती और गोष्टीपुर मै गोष्टीनाथ वास क
रते हैं समुद्र के किनारे दर्भसेन अस्थान मे भूमीसेन
रघुनंद जो हैं सो विराजे हूये हैं और धन्वीमंगल नगर
मै कान्हकुवर वास करते हैं सुंदर क्षेत्र जो प्रसिद्ध
है तहां दीनो का दुख दूर करने वाले बलशाली भगवा
न शोभा पावते हैं ॥८॥ चौपाई ॥ नगर कुरंगए
क कवि रासी ॥ तहं पूरण प्रभु ह्वै हिं निवासी ॥ तटीथ
ल नगर रुचिर मनभावन ॥ बसहिं विष्णु वपु तहं सु
हावन ॥ क्षुद्र सरन तर परम रसाला ॥ अच्युत नाम
विदित जगपाला ॥ भद्रपुरी महं संस्तुति गाये ॥ नाम
अनंत सैन प्रभु छाये ॥ इहि विधि विपुल पुन्न थल
माहीं ॥ विग्रह दिव्य बसेष सुहाहीं ॥ जे तिन कर से
वन मन राचे ॥ चारि पदारथ लेहिं सु सांचे ॥ दिव्यरू
प जे सकल बखाना ॥ तिन कर चरण मन किय पाना ॥
होत मुचित दूषण समुदाई ॥ लेहि सहज जग सदगति
पाई ॥ हरि मूरति सन जहि अनुरागा ॥ किये नते उ
पतित हत भागा ॥ पितु मुख सुनि प्रबोध असनी के ॥
मोद भई मगन सुख जी के ॥ हरि मूरति सब सत्य विचारी ॥

नाथ भगवान सुहाये॥ निवसहिं तहां जनन सुखदा
ये॥ दक्षण राम क्षेत्र ऊकजाहां॥ बसहिं राम जुत जा
नकि तहां॥ श्री निवास कल क्षेत्र विसाला॥ तहं पूरन
भगवान कृपाला॥ सुवरन नगर एक अति रासा॥ सु
वरन मुख प्रभु तहां निवासा॥ पुरी व्याघ्र नामिक अस
जेहू॥ तामध महां बाहु प्रभु सेहू॥ दोहा॥ व्योम नगर
महं चित्र हरि करहिं वास सब काल॥ क्षेत्र उतपलाव
रत मै निवसत श्री जदु पाल॥ ६॥ टीका॥ फिर नारसिंह
भगवान जो हैं सो घटिका गिरी मै विराजते हैं और कांची
मे पारथ के सारथी कृष्ण प्रभातमा निवास करते हैं जग
ता कारी नाम करके जो नगरी है तहां रमापती का
धाम है और तिस नगरी की दक्षण दिसा मे भक्त संतो के सु
खदायक नरहरी भगवान वास करते हैं और तिसकी
पश्चिम दिसा मे शरण गत को पालने वाले त्रिविक्रम दे
व विराजते हैं गरुड सरोवर के किनारे पर
निवास करते हैं और वीता रम्य क्षेत्र मे वीर राघव शो
भा पावते हैं औत्तादरी मे दीनो के दुख हरने वाले रंगसेन
प्रभू विराजे हुये हैं और गज नगरी मे गज का शोक नि
वारने वाले और जीवों को जगत मे तारने वाले श्री हरी भग
वान वास करते हैं अतसेरमलोक बलीपुर जो है तहां
धामवलराम जी का आश्रम है और वीरवती के किनारे
पर अति सुंदर गोपालपुरी जो है तिसमे श्री गोपाल जी
विराजे हुये जीवों को अभय करते हैं श्री मुष्ण क्षेत्र
जो प्रसिद्ध है तहां वाराह रूप भगवान शो
भा देते हैं और दक्षण मे नूतन नगर के बीच कमल
लोचन प्रभू विराजे हुये हैं कावेरे के बीच एक बड़ा
सुंदर दीप जो है तहां भक्तों के सुखदायक रंगनाथ भग
वान रमरहे हैं और दक्षण मे राम क्षेत्र जो प्रसिद्ध है
तहां जानकी के सहित रामचंद्र महाराज निवास करते हैं
श्री निवास जो बड़ा भारी क्षेत्र है तिसमे पूर्ण भगवान

३१२ ३७३

सुन गोदे सादर मन लाई॥ रंगनाथ कर कथा सुहाई॥ एक समय तप किये विधाता॥ प्रकटे देखि भक्त सुखदाता॥ सुंदर स्याम तामरस काया॥ चारु चतुरभुज रूप सुहाया॥ निदरत वदन कोटि विधु सोभा॥ भाल तिलक चंदन मन लोभा॥ अंगदादि भूषन वनमाला॥ वसन पीत उपवीत रसाला॥ मकराकृत कुंडल कल काना॥ पुंडरीक लोचन छवि विताना॥ दोहा॥ मोर मुकट माथे वने मने वचन भगवान॥ मागहु भावत चतु वदन मोहि प्रसन्न जिय जान॥ १०॥ टीका॥ इस प्रकार भारत खंड मै प्रसिद्ध भगवान के एक से आठ दिव्य धाम जो है तिनका अतसे पवित्र प्रभाव सुण कर गोदे जो है सो रंगनाथ भगवान के चरन कमलों मे अत्यंत प्रीती और निश्चय वाली हो जाती भई तव पिता तिसका रंगनाथ भगवान के चरन कमलों मे असा दृढ प्रेम देखकर के रंगनाथ भगवान पवित्र गाथा जो है सोई तिसको प्रीती पूर्वक सुनावने लगे कहते हैं कि हे गोदे अव तूं कान धरकर और सावधान होयकर रंगनाथ जी की मनोहर गाथा श्रवण कर एक समय व्रह्मा ने तप जो किया तो तिसका पूर्ण तप देखकरके भक्त सुखदायक विष्णु भगवान असे ध्यान से प्रकट होय गये कि तामरस जो नीलवर्ण का कमल है तिस समान सुंदर काया और चार है भुजा जिनकी कोटि चंद्रमा की शोभा को संदेने वाला अतसे सुंदर मुख जिनका और मस्तक मे चंदन का मनोहर तिलक अंगद जो भवटे और हृदय मे तुलसी की माला इन धारे हुये हैं भूषण जिन्हो ने पीत वस्त्र और पीत ही यग्योपवीत अर्थात जनेऊ और कानो मे शोभा देते हैं मकराकृत कुंडल कमलों के समान वडे सुंदर हैं नेत्र जिनके और माथे मे सजा हुआ मोर मुकट असी उपमा वाले भगवान हृदय मै परम प्रसन्न होयकर व्रह्मा को कहने लगे कि हे चतुरानन अव तूं मेरे को अनक्र

(margin: की; केस; हि ६ / ७२)

ले अर्थात प्रसन्न जानकर जो मनको भावता वर है सो मां
ग॥१०॥ चौपाई॥ तब बिरंचि अस विनय बखाना॥ हमरे
ईस लालस भगवाना॥ तोहि पूजब करिके मषभारी॥ सोपू
रन कीजै गिरधारी॥ करहु यज्ञ विधि कँह सुरनाहो पुन्य
देत्र कुसुमित वन जो हो॥ अस कहि भये लुपत सुर ना
ता॥ विधि जुत रच्यो जग्य तब धाता॥ तहां मुनीस असु
र सुर चारन॥ आये विधि मष देखन कारन॥ इच्छा कुसुम
राज सुहाये॥ निज समाज से जुत तहां आये॥ पूजित र
हे विरंचि तहां हीं॥ रंगनाथ मूरति मष माहीं॥ सो अनंत
छवि कौन बखाने॥ नृप इछ्वाकु विलोकि लुभाने॥ करि
परसन नरनायक पावन॥ भूरिभाग निज गुनत सुहावन॥
विधि सो कहत जोरि जुग पानी॥ मोर विनेति दीन वरदानी॥
रंगदेव मूरति छवि पागी॥ इहि पूजन मम मति अनुरागी॥
जो मोपें कहणा प्रभु तोरी॥ तो कृपा करहु आस इह मोरी॥
मूरति रंगनाथ भगवाना॥ मोहि कीजै पूजन हित दाना॥
सुनत बिरंचि भन्यो अस वानी॥ करहु भूप तप मूरति
लागी॥ तो तुव इहि पूजन अधिकारी॥ कैहै अवसि भू
प उपकारी॥ फिर धरि हितक वचन विधि राई॥ कीन्यो
तप सरजू तट जाई॥ तब नृप देखि उग्र तप भारी॥ सा
नकूल विधि अवध सिधारी॥ दीन्यो रंगनाथ भगवाना॥
महा प्रमोद भूप मन माना॥ तब तें रघुकुल के नरपालें॥
रंगनाथ प्रभु दीनदयालैं॥ मान्यो निजकुल देव सुहावन॥
जब रघुनाथ पतित जग पावन॥ दोहा॥ करि रण रार प्र
कार बहु मारि असुर दसकंध॥ सिये लषन जुत अवध
पग धारो कृपा प्रबंध॥ ११॥ टीका॥ तब ब्रह्मा विनती
करने लगा कि हे भगवन मेरे को इह लालसा है जो मै य
ग्य करके तुमारा पूजन करूं॥ आप कृपा करके मेरे यग्य
को पूरण करिये तब भगवान कहने लगे कि हे ब्रह्मा तुम
यग्य करो परन्तु पुन्नदेत्र मे जहां कुसमत वन है तहां
करो ऐसे कहिकरके दीनानाथ लुपत होय गये और ब्र

ह्मा विधीके सहित यग्य जो है सो रचदेता भया तहां मुनीस
असुर सुर और चारन विधाता के यग्य देखने के लिये च
ले आये और इक्ष्वाकू महाराज भी अपने सब समाज के
सहित तहां आय जाते भये तब यग्य में विधाता जो ब्रह्मा है
सो रंगनाथ भगवान की मूरत का पूजन कर रह्या तिस मू
रती की अनंत छवी को देखकर राजा इक्ष्वाकू लोभांन हो
य गये ऐसे भगवान की मूरती का परम पवित्र दरसन
करके और अपने बड़े भाग्य जानकर राजा दोनो हाथ जोरे हुये
विधाता के आगे दीन होय कर विनती करने लगा कि हे भ
गवन इस रंगदेव अतसे छवीली मूरती जो है सो इसके
पूजन सेवन करने की मेरे चित्त में रुची और प्रीती होय
गई है अब जो मेरे पर तुमारी कृपा है तो हे कृपानिधान म
नोरथ पूरण करिये इस रंगदेव की सुंदर मूरती जो है
सो मेरे को अनुग्रह करके दान करिये ऐसे राजा की जा
चना सुनकर ब्रह्मा कहने लगा कि हे तुम इस मूरती की प्रा
पती के वासते तप करो तब तुम इसके पूजन करने के
अधिकारी होवोगे इस प्रकार ब्रह्मा की आग्या सीस पर
धारन करके राजा सरजू के किनारे पर जाय करके तप
करने लगा तब राजा का उग्र अर्थात बड़ा भारी तप देख
करके विधाता जो ब्रह्मा सो अजुध्या में जायकर बड़ी प्र
सन्नता पूर्वक रंगनाथ भगवान की मूरती जो है सो देदेता
भया राजा ऐसी दिव्य और मनोहर मूरती को पाय कर
परम आनंद में मगन हो ~~जाता भया~~ गया तब ते रघू के रा
जाओं ने रंगनाथ भगवान अपने कुलदेव माने हु
ये हैं और जब पापियों का उद्धार करने वाले रामचं
द्र महाराज रण में अनेक प्रकार का जुद्ध करके और रा
वणादि सब असुरों को मार करके सीते और लछमन
जी के सहित आनंद पूर्वक अजुध्या में चले आये त
ब सो रंगदेव की मूरती जिस प्रकार बभीषण को देते हैं आ
गे कथन किया जाता है ॥१२॥ चौपाई ॥ तब रघुपति स
न रावण घाता ॥ आयो अवध पूरि मुद गाता ॥

वारवार उर वेदि कुमारी॥ दीन्यो तजि भरोस सब केहू॥ कीन्यो
रंगनाथ पद नेहू॥ दोहा॥ विरचि ललित वनमाल नित न
वल पठहिं प्रभु काहिं॥ रंगनाथ सोवत जगत दीसत नैन
न माहिं॥ २॥ टीका॥ एक सुंदर [illegible] वी का धाम कुरंग नगर
जो है तहां पूरण प्रभू का निवास है और तदीयत्न नगर
मै विस्नु भगवान का वास है वडी मनोहर मदुपुरी जो है
तिसमै अनन्त सैन प्रभू विराजे हुये हैं और कृष्ण सरता के
किनारे जगत के पालक अच्युत नाम भगवान आसनकि
ये हुये हैं इसप्रकार बहुत पुन्न अस्थानेमै दिव्य धामजो
हैं सो व[illegible]ष करकु शोभा पावते है जो पुरष तिनके सेव
नेमै रचे हुये हैं सो जगतमै सत्य करके चारो पदार्थ
धर्म अर्थ काम मोक्ष जो है सो प्रापत करते हैं इह [illegible] दिव्य
रूप जो संपूर्ण कथन किये है इनके चरणामृत पान कर
नेसे सरव पाप और दूषणोंसे रहित हो [illegible] कर सहजे
ही सदगती को प्रापत होजाता है ऐसे भगवान की मूरतीसे
जिसने प्रेम नहीं किया सो जगतमै महा मंद पापी और रखमा
गी पुरष है इसप्रकार पिता के मुखसे प्रबोध सुनकर गोदे
जो है सो परम सुखमै मगन होजाती भई भगवान की से
व मूरती को सत्य जानकर [illegible] हृदयमै वार वार
वंदना करके और सबके भरोसे को त्याग कर एक रंगना
थ भगवान के चरनकमलो की प्रीती वाली हो जाती भई
नित्य नवीन फूलों की मनोहर माला प्रेमपूर्वक अपने हा
थों से रचाय कर भगवा के पहिरने के लिये भेजदेती औ
र प्रभू के प्रेममै ऐसी लीन होयगई कि सोवती जागती और
बैठती उठती को एक रंगनाथ भगवान हीं दृष्टी मै आवते हैं॥
२॥ चौपाई॥ इकसत अष्ट दिव्य हरिधामा॥ भारत खंड
विदित अभिरामा॥ सुनि प्रभाव तिन कर मन भावन॥ रं
गनाथ पद पंकज पावन॥ भई निरत गोदे दिन राती
प्रीति प्रतीति न हृदय समाती॥ देखि जनक अस
प्रेम नवीना॥ रंगदेव चरनन मन लीना॥ रंगना
थकी कथा अनूपन॥ लगे करन सानंद नरूपन॥

लगा सो जब कर चुका तब फिर अपने देस को जो चलने लगा तो रंगनाथ जी को उठावता है पर वे नहीं उठते हैं यद्यपि बहुत ही यतन और बल भी किया तद्यपी सो नहीं उठते भये तब धीरज से रहित व्याकुल और दुखी भया हुआ अतसे निरास चित होय करके रोदन करने लगा इतने मे आकाश वाणी होती भई कि हे निसाचरों के पती तुम हृदय मे मत सोच करो अब हम तुमारे साथ नहीं जावेंगे इसी अस्थान मे आनंद पूर्वक निवास करेंगे इह भूमी हमको बहुत प्यारी लगी है हेभक्त तेरे को अपने हृदय की सत्य सत्य कह्यो है जो तेरे चित्त मे मेरा प्रेम ही है तो नित्त दिन दिन लंका से आयकर हे भक्त बड़भागी इहां ही मेरा पूजन किया करो और मै इह भी कहता हूं कि जब जब तुम मुझ मे मेरा समरण करोगे तब तब मै प्रकट होय करके तुमारी आसा पूरण करूंगा ॥२२॥ चौपाई ॥ रंगनाथ सासन सुखदाई ॥ सिर धरि बंदि चरन अनुराई ॥ गयो लंक कह वेग सिधारी ॥ सुमरत हृदय भक्त भय हारी ॥ तब ते नित्य प्रीति जुत आई ॥ करि पूजन प्रभु जाहि पराई ॥ बसि का वेदि रंग भगवंता ॥ तस्यो पतत जग जीव अनंता ॥ जहि मंदिर भगवान निवासा ॥ बिसकरमा निज करन प्रकासा ॥ ललित दिव्य दिप सत प्रकारा ॥ तहो बसे हरि भक्त उदारा ॥ सुनि कल कथा रंग भगवाना ॥ परम मोद मोदे मन माना ॥ इक सत अमृत रूप हरि जाने ॥ सब तें अधिक रंग प्रभु माने ॥ कह्यो जनक सन वचन बहोरी ॥ मोहि कब मिलि हैं भक्त चित चोरी ॥ रंगनाथ भगवन जग पावन ॥ मुनि रिषि संत सुरन मन भावन ॥ विस्मय चित्त मोद सुनि बानी ॥ भने वचन तहि श्री

ति पिछानी॥ पुत्री मार्ग सीर्ष व्रत कीजै॥ तब पद
सरन रंग प्रभु लीजै॥ वृंदावन गोपिन जुत प्रीती॥
धास्यो इह व्रत विमल सुरीती॥ तब तें भई सकल सु
ष षानी॥ पाये नंद नंदन वरदानी॥ जनक कथन
अस सुनत न कीन्यो॥ गोदै मार्ग सीर्ष व्रत कीन्यो॥
पदन प्रबंध विरचि मन भायन॥ व्रत करि मधुर क
रहिं कल गायन॥ मगन प्रेम तन कर सुधि त्यागी॥ रं
गनाथ दरसन अनुरागी॥ एक दिवस निसि सैन लि
लामा॥ मिलिगे तासु रंग जन स्यामा॥ सोरठा॥ चौं
कि उठी तत काल॥ लागी चितवन चहुंन दिस॥ सो मूरति
नंद लाल॥ लषि न परत व्याकुल भई॥ १३॥ टीका॥ इस प्र
कार रंग नाथ भगवान की आज्ञा सीस पर धारन करके
~~और~~ वारवार प्रणाम करता हुआ रंगनाथ भगवान को
हीं सुमरता सुमरता बभीषण जो है सो लंका को चला ग
या तब तें नित्य प्रीती पूर्वक आय कर रंग देव का पूज
न करता और अपने घर को चला जाता ~~[illegible]~~ कावे
री मै रंगनाथ भगवान निवास कर के ^प्रेमसे^ अनन्त हीं पापि
यों का उद्धार कर देते भये ^और^ ~~[illegible]~~ जिस मंदिर मे रंग ~~[illegible]~~ ^देवजी^ ने आपना
~~[illegible]~~ वास किया सो विसकरमा ने अपने हाथ से अनेक च
तुराई करके रचा ~~और वे दिव्य [illegible] मंदर~~
~~के सात द्वार~~ और ~~[illegible]~~ भगवान के परम उदार दास भक्त जो
है सो ई तहां ~~[illegible]~~ वास करते हैं इस प्रकार पिता के मुख से रं
गनाथ भगवान की पवित्र गाथा सुनकर गोदै महां आनं
द मे मगन होय गई एक सै आठ ~~[illegible]~~ भगवान
के दिव्य रूप जानकर सब तें अधिक रंगनाथ भग
वान को मानती भई और फिर पिता सो कहने लगी
कि हे तात मेरे को इह मनो चित्त को हर लेने रंग देव प्रभू
कब प्रापत होवेंगे तब विस्नु चित्त गोदै की वानी सुन
कर और तिस की प्रीती देखकर कहने लगे कि हे पुत्री
जो तू भगवान की शरण को प्रापत होई चहती है तो मार्ग

सीर्ष व्रत को धारन कर देखो वृंदा वन मै गोपियों ने प्री
ती और सुभरीती पूर्वक इह निरमल व्रत जो है सो धारन
किया तबतें वे सब सुख की खानी होय कर नंदनंदन
भगवान कौ प्रापत होय गई हैं ऐसे पिता का कथन सु
नकर गोदे ने प्रीती पूर्वक मार्ग सीर्ष व्रत को धारन
कर लिया तबतें व्रत के सहित होयकर व्रत से मन को भा
वते और मधुर पद जो हैं सो ~~नि~~ नित्त नवीन रचकर
बडी मीठी सुर से गायन करती और प्रेम मै मगन सरीर की
सुधी ~~त्याग~~ बिसरे हुये रंगदेव जी के दरसन की अभिला
खा वाली होय रही थीं तब तिस का अलौकिक प्रेम देख
करके एकदिन सपने मै तिस को रंग जुन स्यान मिल
जाते भये तिनको दिव्य दरसन को देखकर ~~[illegible]~~ अ
चेभासी होयकर ततकाल जाग उठी और आचर्ज
के बस भई हुई इधर उधर चारो पासे देखने लग पडी
सो मूरती भगवान की तिस को दृष्टी मै नहीं आवती है
॥२३॥ चौपाई॥ तबतें बैठत विचरत जाहीं॥ सोव
त जागत बैठत माहीं॥ रंगनाथ मृदु मूरति जी की॥
देखत रहत सदा प्रीय जी की॥ दिन दिन रंग प्रेम मम
दमाती॥ लेत न बिरहे तपत तन छाती॥ चं
दन बारा गई इक काला॥ जग्यो बिजोग दुगन ने
द लाला॥ विप्र सुता इक तासु सहेली॥ सुंदर
नागरि रूप नवेली॥ देखि तासु दुख पूछन ला
गी॥ कौन सोच बस तुव धृति त्यागी॥ भई म
लीन वदन सखि प्यारी॥ करहु प्रकट मोहि मरम उ
चारी॥ तब गोदे कहि मिस लिलामा॥ मोहि सपने
छलि गये युन स्यामा॥ दे दरसन भे लुपत मुरारी॥
तबतें कल न परत कछु प्यारी॥ कह द्विजसुता ब
दन मुसकाये॥ विविध रूप भगवान सुहाये॥ कव
न रूप सखि रावरि प्रीती॥ लिख हुं चित्र मोहि सो हि प्रतीती॥
तब गोदे मानत अनुरागी॥ हरि के चित्र उतारन लागी॥

सो विदाय जब होवन लागा॥ जोरि जुगल कर मन अनुरागा॥ रघुपति सों अस विनय उचारी॥ प्रभु वियोग नहि सकहुं सहारी॥ तास प्रीति दृढ देखि रसाला॥ रंगनाथ तहि दीन कृपाला॥ ~~रंगनाथ तहि दीन कृपाला॥~~ दनुजनाथ अस भगवन पाई॥ गुनत भाग निज विपुल वडाई॥ बार बार पद वंदि खरारी॥ चल्यो लंक कहे वेग सिधारी॥ जब कावेरि तीर किय आवना॥ तहां सु नेम तास कछु ठाना॥ सो जब भयो समापत ताहीं॥ लाग्यो चलन देस निज काहीं॥ रंगनाथ कहे बहुरि उठावन॥ भाउ युगवद दनुजकुल भावन॥ जदपि जतन वल कियो महाना॥ तदपि न उठे रंग भगवाना॥ तब अधीर व्याकुल दुख पागा॥ है निरास चित रोवन लागा॥ भई गगन तब गिरा सुहाई॥ कर हु न सोच निसाचर राई॥ तुमरे संग अब न हम जाई॥ इहि थल बसब रुचिर सुखपाई॥ इह भूमी भावति प्रीय मोही॥ कहहु सत्य मानस रुचि तोही॥ जो तुमरे मन मम अनुरागा॥ तो नित दिवस भक्त वड भागा॥ लंका तें प्रति दिवस सिधाई॥ करहु मोर पूजन इत आई॥ दोहा॥ जब सुमरो तुव मोर जिये करहु भक्त व्रत धारि॥ होव प्रकट मै तुरत तब पुरवहुं आस तुमारि॥ टीका॥ तब रघुनाथ जीके साथ रावण का भ्राता वभीषण आनंद कर के पूरित भया हूआ अजुध्या मे चला आया सो जब विदा होने लगा तब हाथ जोर कर रघुनाथ जीके आगे विनती करने लगा कि हे दीन बंधू मै आप का वियोग कैसे सहूंगा ऐसे तिस की दृढ प्रीती देखकर रघुनाथ जीं कृपा कर के तिसको रंगनाथ भगवान की मूरती देदेते भये तब दैतपती जैसे भगवान को पाय कर अपने भागों की अत्यंत वडाई मानता भया फिर वारवार दुष्टं ते कारी रघुवीं जीके चरनें को वंदना कर के वेग से तुरत लंका को चल पडा जब कावेरी के किनारे पर आय पहुंचा तहां अपना कुछ नित्त नेम करने

भक्तमाल

कि कौन रूप से तेरी प्रीती है ऐसे सषी का वचन सुनकर
गोदे प्रेम मै मगन भई हुई भगवानके चित्रजो है सोउतार
ने लगी॥ जब मनको भावता रंगनाथ भगवान का चित्र तिसके
हृदय मे आया तब तिसको लिषती लिषती मनमै सकु
चाय गई और नेत्र निवाय करके लज्जामान होयगई
फिर मुषसे मंदमंद मुसकाय कर कहने लगी कि इन्हने छ
लिया सपने मै मेरे को छल गया है मिलकर के तुरत ही
लुपत होय गया है हे सखी तब तें हीं मै विरहे रूपी आग
नीमे जल रही हूं तब ब्राह्मण की कन्या सो सषी परम
हितकारनी जो थी गोदे को कहने लगी कि हे प्राण पया
री जो तेरे साथ मेरा सत्य सनेह है तो मै प्रण करती हूं
कि रंगनाथ को तेरे साथ मिलाय देऊंगी और तेरे मनका
मनोर्थ पूरण कर देऊंगी ऐसे सुनते हीं गोदे हाथ जोड़
कर कहने लगी कि हे हितकारनी अब मेरा जीवना सत्य
करके तेरे हीं हाथ मै है तू पयारी अब रंगभवन मै फी
चर जा और प्राणपती सों इह मेरी दसा सपष्ट करके
सुनाय दे तब गोदेका कथन कर सखी जो है सो रंगभवन
को तुरत हीं चली जाती भई ~~प्रथम मनो~~ और जहां
वसंत की शोभा वाला अतसे रमणीक मनोहर बागथा
आनंद से प्रफुलत भई हुई परम चतुर सषी प्रथम
तहांहीं जाय प्रापत भई॥१८॥ चौपाई॥ तहं देख्यो इक
कौतुक तासा॥ मृदुल सेज कल कुसम विकासा॥
तहां विरहं कुल श्री पति होई॥ लौटत कल न लेत प
ल सोई॥ विप्र सुता तब निकट सिधारी॥ हरि पूछे
मृदु गिरा उचारी॥ अहो कौन तुम को हित लागी॥
लौटत अवनि विकल सुधि त्यागी॥ तब भगवान क
ह्यो असटेरी॥ गोदा विरहं विकल मति मेरी॥ कहहु
कौन तुम कारन केही॥ मोहि पूछ्यो अस वचन सने
ही॥ मै तो रंगनाथ अलि ऐहीं॥ तुव कारन आगमन
निज कैहै॥ तब नागरि सखि मुख मुसक्याई॥ सफल
काज निज गुन तअलाई॥ मोहि गोदे प्रभु दीन पठा
ई॥ तासु दसा वरणन हित आई॥ प्रीया को नाम सुनत

भगवान॥ बोलेवचन जोरि जुगपाना॥ जासविरहं व्याकुलमति मेरी॥ तुव तहिंनाम कह्यो मुखटेरी॥ अव तहिं कहहु कुसल कलमोहो॥ पठयो कौन हेत इत तोहो॥ दोहा॥ कह्यो सखी जोई माल कल बालहिं उरपहिरानि॥ सोई तुव प्रीतम हित पठ्यो प्रीय गोद रतिमानि॥ १६॥ टीका॥ तहां तिस सखीने कैसा कौतुक देखाकि फूलोंकी वडीकोमल सेजाविछीहुईहै तिसपर श्रीपती जोभगवान सो व्याकुल भयेहुये लोटरहेहैं ग्रौर शरीरमे कुछ शांती नही लेते हैं तव व्रष्भानकी कन्या सोसखी निकटजाय करके कोमलवानी से भगवानको पूछने लगी कि कहोजी तुम कोन हो ग्रौर किस कारण ग्रचेत ग्रौर व्याकुल होकर पृथवी पर लोट रहेहो तव भगवान कहने लगे कि मै गोदकी विरहं करके व्याकुल होरहाहूं तूं ग्रपनी कहो कि कोनहै ग्रौर मेरेको क्यौं पूछतीहैं मैतो रंगनाथहूं तूं ग्रपने ग्रावनेका प्रसंग कथन कर जोईहो किसकारन ग्राईहैं तव प्रवीन सखी जोहै सोमुखमे मुसक्याय कर ग्रौर ग्रपने कारजका सफल होना विचार कर कहनेलगी किहे भगवन मेरेको ईहां तुमारेपास गोदैंहीं भेजाहै ग्रौर तिहीकी दशा कहने <s>कोग्राईहूं</s> ग्रापको सुनानेके वासते ग्राईहूं इसप्रकार तिसके मुखसे ग्रपनी प्यारीका नाम सुनकर भगवान हाथ जोर कर कहने लगे किहे हितकारनी जिसकी विरहं से मेरी मती व्याकुल होरहीहै तूंने ग्रपने मुषसे तिसीका नामउचारण कियाहै ग्रव तिसकी कुसल कहो कि वे मेरी परमप्यारी गोदे प्रसन्न तोहै ग्रौर इहभी कहो कि तेरेको ईहां किसकारन भेजाहै ग्रैसे रंगप्रभूकी वानी सुनकर सखी कहनेलगी किहे नाथ गोदैने परमसनेह ग्रौरप्रीती से ग्रपने हृदयकी कफूलमाला तुमारे वासते भेजीहै मै सोई लेकर केग्राईहूं॥ १६॥ चौपाई॥ लीजिये ललित मालचित चोरी॥ भने तासु कुसुवचन निहोरी॥ मोहिसपने मिलि नंदकिशोरी॥ दैदरसन लेगे चित चोरी॥ मेलि ग्रपांग हेद दृग टोने॥

दुरे तुरत मृदु स्याम सलोने॥ तबतें बिरहे अनल मो
हि दहती॥ झुलकत जिय न परत कल शांती॥ ऐसो
कौन करत कोऊ काहीं॥ चाहे पकरि त्यागत प्रभु नाहीं॥
मनी वदन गोदे जस वानी॥ दीन नाथ सों सकल व
खानी॥ काह कहे तदि दसाउ चारी॥ नाथ विरहे दार
न दुख भारी॥ प्रभु वियोग तें दिन दिन काया॥ होत जा
त दूबरि सुर राया॥ खान पान सब दियो बिसारी॥ प्रभु द
रसन अभिलाषत प्यारी॥ चारु चौक मुकतान सवार
त॥ नाथ मिलन सुभ सगुन विचारत॥ विकल वही
न मीन जिमि वारी॥ तिमि तरफत तुव विरहे मुरारी॥
वार वार का करहु बषाना॥ मिलहु वेग नत त्यागत प्राना॥
जानकि हेतु सरत पति बोधा॥ हन्यो प्रचादि समर दस
कोधा॥ सिसुपालादि गरब नृपगारी॥ ल्याये रुकम
नि जीति मुरारी॥ दोहा॥ मेरी वार उदार तुव काह गही
निठुराई॥ दीन दया द्रुम कलप कस दीन दया विसराई॥
१७॥ टीका॥ अब भगवन इह सुंदर माला जो है सो आप
नी प्यारी की पठी हुई जानकर लीजिये और तिसने
निहोरे से कुछ वचन भी कहे हुये है सो भी सुन लीजिये
कहती है कि मेरे को नंदलाल सपने मे मिलकर मोहि
त कर गये हैं और अपना दरसन देकर मेरे चित्त को चु
राय करके ले गये हैं नेत्रों से नेत्र मिलाते ही मा
नो जादू करके फिर तत काल माधुरी मूरती
वाले तहां ही स्याम सलोने लुपत होय गये हैं तब तें मेरे को विर
हे की अगनी जो है सो दगध कर रही है हृदय शांती को
प्रापत नहीं होता है ऐसी किसी के साथ कौन करता है
जो बाहे पकर कर त्याग देता है हे दीना नाथ गोदे
ने जिस प्रकार कहा है सो मैने आपको सुनाय दिया है
तिसकी दसा मे क्या कथन करूं हे दीन बंधू तुमारी विरहे करके
अत से दुखी हो रही है और तुमारे विजोग से काया दिन

तिसकी

जब तहि रंग नाथ मन भावा॥ चित्र चारु उर बस्यो सु
हावा॥ लिषत तासु मानस सकुचानी॥ नमत नैन कर
केपि लजानी॥ बोली मंद मंद मुसक्याती॥ इह छलिया
सपने मोहि राती॥ मिल्यो अली दुरि गो ततकाला॥ तब
तें जर हुं विरहे बल बाला॥ बोली विप्र सुता हितकारी॥
सुन गोदे मम प्राण पयारी॥ जो तोसों मे दोसति नेहू॥
तो मै रंगनाथ प्रभु एहू॥ देहुं मिलाय सखी प्रण मोरा॥
होहिं मनोरथ पूरण तोरा॥ तब गोदे बोली कर जोरी॥
अब जीवन गति तुव कर मोरी॥ रंग भवन द्रुत जाय सनेही॥
पिय सन कहहु दसा मम एही॥ गोदे वचन सुनत सखि
प्यारी॥ रंगभवन द्रुत चली सिधारी॥ दोहा॥ प्रथम मनो
हर बाग महे जहे बसंत छवि छाई॥ गई नवल नागरि
सखी उर प्रमोद सरसाई॥ ॥१४॥ टीका॥ तब तें गोदे जो है
सो बैठती विचरती सोवती जागती रंगनाथ भगवान की
मनोहर मूरती को हीं नित्त देखती रहती और रंगदेव के
प्रेम के मद से मत्त ~~भई हुई ... की विरहे की तपत से~~
और विरहे के ताप से तपत भई हुई शरीर मै कुछ शांती
नहीं लेती भई तब एक दिन चंदन बाग मै जो चली गई तहां
तिसको नंदलालजी का विजोग दुगना जाग उठता भया
और व्याकुल होय गई तहां तिसकी एक सहेली ब्रह्मण
की कन्या अपने रूप सुभाव और गुणों करके बडी चतुर
थी गोदे का ऐसा कलेश देख करके पूछने लगी कि
हे गोदे तूं किस सोच के वश होकर धीरज को त्यागा है और
मुख से मलीन हो रही है हे प्यारी मेरे को अपने हृदय की
सत्य सत्य कहो तब गोदे कहने लगी कि हे हितकारनी
मेरे को घनस्याम भगवान सपने मै छल गये एक
छिन भर दरसन देकर फिर तुरत हीं लुपत होय गये हैं
तब ते मेरे को चैन नँ पडता है उनहीं के दरसँन की अभि
लाषा वाली हो रही है तब सो सखी कहने लगी कि
हे गोदे भगवान के बहुत हीं रूप हैं तुमारी किस रूप से
लगन लगी है मेरे को चित्र लिख कर के दिखाँ जो मै जानुं

३१९

३७९

तुम्हें मुख सुनि संदेस सषि एरी॥ आज मरोस कछुक जिय आवा॥ तुव ने हनि कछु धीर बंधावा॥ दोहा॥ रंगनाथ अस भनत मुष पठित माल निज प्यारी॥ सषि तें सादिर लेत कुच कल लीन कंठ द्रुत धारि॥ ५९॥ टीका॥ राजा द्रुपद की कन्या द्रोपदी जो है सो भी जगत मे हे नाथ तुमने उवारी और गरुड़ को त्याग कर गज कीं भी रक्षा करी फिर वृज की गोपी और गौतम मुनी की नारी अहिल्या इह भी तुमारे सुमरण तें निहाल होय गई ताते मे भी हे दीनाथ तुमारे चरन कमलों की भ्रमरी थी मेरे पर कैसे दया नहीं करी है कि मेरे से कोई अपराध होय गया है यदि ऐसा भी होवे तो हे दयानिधान तुम तो क्षमा करने जोग हो अपने चरनो की दृढ दासीं जानकर मेरे को ग्रहन कर लीजिये इस प्रकार सषी के मुष से वचन सुनकर रंग भगवान गोदे का प्रेम नेम जो है सो दृढ और सत्य जानते भये फिर सनेह की भीगी हुई बानी से कहने लगे कि हे सषी अब तूं मेरे हृदय की सत्य सत्य सुण क्योंकि जब गोदे की सुधी आवती है तब मेरे को और कुछ भी भावता है जैसे रात्री मे चंद्रमा को चकोर देखता है और चात्रिक स्वांती बूंद को मांगता रहता है तैसे ही मै अपनी प्यारी गोदे का सुमरण करता रहता हूं हे सषी तिस हेमेरा ध्यान एक पलभर भी नहीं छूटता है गोदे की बिरहे करके मेरी मती व्याकुल होय रही है आज तेरे मुख से इह संदेस सुनकर के हृदय मे कुछ क धीरज और भरोसा आया है ऐसे कहिकर रंग भगवान सो गोदे की भेजी हुई माला सखी से लेकर बडे सनमान से तुरत अपने हृदय मे पहिर लेते भये॥ २८॥ चौपाई॥ सुनहु सखी तुव माल नदीना॥ मानहु प्राणदान मोहि कीना॥ जो हम आज माल नहीं पावत॥ तो तन तें जियरो कढि जावत॥

अस कहि कमल माल सिर धारी॥ कर मुंदरि जुत जुगल उतारी॥ सखि कर दीन हरषि भगवाना॥ बहुरि वदन मृदु वचन बखाना॥ जाय देहु सखी प्रीय कर पानी॥ पठि मोर इह जुगल निसानी॥ कहहु बहुरि अस वचन सुहावा॥ कुरका नगर रुचिर मन भावा॥ हम दो सुभग स्वयंवर आवहिं॥ तहे अवतार सकल मम आवहिं॥ सुर ऋषी देव महो ऋषी सारी॥ जुरिहे सुजन भक्त मम झारी॥ तहे तुव कर न माल सुखदाई॥ परिहें अवसि ग्रीव मम आई॥ तव तुमार मन वांछित कामा॥ होहिं रुचिर फुर संसृति रामा॥ हरि मुख सुनत गिरा सुखदेनी॥ लख्यो मुचित दुख भई वर हनी॥ करि प्रणाम पद पदम मुरारी॥ लै विदाय द्रुत चली सिधारी॥ दोहा॥ गोदे पे आलि आय तव हरष पूरि मन माहिं॥ कमल माल मुद्रा दई नई नागरी कहि॥२८॥ टीका॥ फिर भगवान कहने लगे कि हे सखी तूंने इह माला नहीं दई मानो ~~प्राण~~ दान कीये हैं जो कदी आज मैं माला नहीं पावता तो शरीर मैं जीव के रहने का कोई भरोसा न होया ऐसे कहिकर के रंगदेव हाथ की मुंदरी के सहित हृदय की कमल माला उतारि आनंद पूर्व सखी के हाथ देदेते भये और कोमल बानी से कहने लगे कि हे सखी इह मेरी दोनो निसानी जाय करके गोदे के हाथ मे दे देनी और कहना कि कुरका नगर जो है तहां हमारा सुभ स्वयंवर होवेगा और मेरे सब अवतार महो ऋषी सुर ऋषी और सेपूर्ण देवताउं के सहित तहां आवेंगे और भक्त से तो का समाज भी नाना प्रकार करके आय जुडेगा तहां हे प्यारी तेरे हाथो की माला जो है सो अवश्य मैं हृदय मे धारन करूंगा तब तेरी मन वांछित कामना सब पूरण हो जावेगी इस प्रकार भगवान के मुख से

ऐसे

कर

इह

और सेम्पूर्ण

सब लोग

अपने

३८०

३८०

पर सुख के देनेवाली सुंदर वानी सुनकर सखी ने जाना कि अब विरहनी जो है सो दुख से छूट गई अब ग्य छूटे गी तब भगवान के चरनो पर वारवार प्रनाम करके और विदाय लेकरके सो चतुर सखी अपने अस्थान को लौट कर चली आई और पहिले गोदे के पास ही आयकर सो रंग भगवान की मुंद्री और कमल माला चढे सनमानहि तिसके हाथ मे दे देती भई ॥२९॥ चौपाई ॥ पुनि प्रीतम संदेस वखाना॥ सुनत पाय गोदे मनु प्राना॥ वारवार मान स अनुरागी हरषिता स पद वंदन लागी॥ सखि तुव सम न आन हितकारी॥ जहि चूरत दुख लीन उवारी॥ वीर कौन उपकार न थोरा॥ उरहनि वरण किमि होहिनि होरा॥ सुनत सने हरंग भगवाना॥ पांच सात जब दिव स सराना॥ विस्नु चित्त तव समय विचारी॥ लिये संग दुहिता सुकमारी॥ कुरका पुरि कहं चल्यो सिधाई॥ वल्लभ देव नाम तहे राई॥ सोहु सजाय सेन चतु रंगा॥ गवन्यो विस्नु चित्त कर संगा॥ आये कुरका पुर सुख छाये॥ तहां स्वामि सठकोप हु आये॥ और हु मुनि ऋषी विप्र नरिंदा॥ आये विदुष अचार ज वृंदा॥ विस्नु चित्त तव उर हरखाई॥ लिये निकट सठकोप वुलाई॥ सकल मर्म ताके समुझावा॥ तव सठ कोप नरेस वुलावा॥ दोहा॥ वल्लभ देव नरेस कहं आसन देस सुख दीन॥ सुमति मधुर क विराज जुत तुव हित राज प्रवीन॥ सज हु स्वेचर कर रुचिर सकल समाज अनूप॥ सुनि लागो विर चन जथा उचित भूप कवि भूप॥ ३०॥ टीका॥ फिर प्रीतम का संदेस जो है सो कथन किया तिसको सुनकर के गोदे मानो गये हुये प्राणों को पाय लेती भई॥ हरष और प्रेम से पूरित भई हुई वारवार तिस सखी के च रनो को वंदन करने लगी और कहने लगी

दिन दिन दुवली होती जाती है षान पान सब विसा रेहुये तुमारे दरसनकी अभिलाषा वाली होरही है और प्रतीदिन मोतियोंके सुभ चौक रचकर हे दीनबंधू तुमारे आवनेके सगन विचारती रहती है और जैसे जलके विना मछली व्याकुल होती है तैसे नाथ तुमारे विरहसे तड़फती है और शांती नहीं लेती है अब मै वारवार क्या कथन करूं तिसको शीघर दरसन देवो नहीं तो प्राणोंको त्याग देवेगी और तिसकी इह भी प्रार्थना है कि भगवन तुमने जानकीके वासते समुद्र कौं धाअर रण मे वजाय कर रावणको मारा फिर सिसुपाल आदिक राजयों का गरब दूर करके रुकमणीको जीत करके ले आये तो ते अब मेरी वार हे उदार प्रभू इह क्या निठराई करी है अर्थात जो हृदयको कठोर कर लिया है और हे दयाके कलप वृक्ष अवदीनोंके उधारने वाली सो अपनी दया कैसे विसार दई है ॥ १७ ॥ चौपई ॥ द्रुपद सुता जग नाथ उवारी ॥ गरुड़ काढ गजकी रषवारी ॥ वृज गोपी गो तुम मुनि वाला ॥ प्रभु सुमरत जग कीन निहाला ॥ मै हूं नाथ पद पदम अलीनी ॥ मो पै कस न दया प्रभु कीनी ॥ कौन चूक मेरी भगवाना ॥ होय तो छिमये भक्त वरदाना ॥ जानि अनन्य चरन निजदासी ॥ करिय गृहसी ल सिंदु दरसन आसी ॥ सुनि सखि वचन रंग भगवाना ॥ प्रेम नेम गोदे दृढ जाना ॥ मन नेह पूरित मृदु वानी ॥ सुनहु सत्य सहचरि सयानी ॥ जव गोदे सुधि आवत जीके ॥ तव मोहि कछु न सुहावत नीके ॥ चितै चकोर चंद जिमि राती ॥ चात्रिक चहत रहत जिमि स्वांती ॥ तिमि गोदे सुमरण हम ठाना ॥ छूटत सकी पलक नहीं ध्याना ॥ गोदे विरह विकल मति मेरी ॥

कलसिंचतकारी॥ सरलवंक चतु कोण कयारी॥ सुभ्रत कदलि कलित बहु पांती॥ देखि देखि चित लेत न शांती॥ करत कदंब बीच मनु टोना॥ चारिखंभ सोभित चहुंकोना॥ तहां देव ऋषी महा ऋषीसा॥ आये सुरन सहित सुरईसा॥ भूप भूमि मंडिल समुदाई॥ जुरो जमात जगत जनु आई॥ बैठे जथाजोग सब काहू॥ मुनि सुर संत विप्र नर● नाहू॥ कीन परस्पर सादिर प्रीती॥ जथाउचित बंदन सुभ रीती॥ आचारज निज निज कृत रूरी॥ लगे प्रबंध गान सुखपूरी॥ दोहा॥ तहां अष्ट अरु एक शत दिव्य रूपमगवंत॥ सफलस्वयंवर करनहित आये कृपाअनंत॥ २१॥ टीका॥ तब तिनोंने बडे ऊंचे मंच और सुंदर बुरज कंचनकारी करके युक्त नाना प्रकार के रचाय दिये और बतान जो सायवान सोभी बडे बचित्र नाना भांतके जहां तहां तानदिये जरकसी ~~और~~ विछौने और ~~[illegible]~~ दूधकेफेन को निदरनेवाले अनेप्रकारकेउ जल फरस बडे दिव्य आसन और प्रकासवाले दिव्य हीं सेज्यासन सो मानो ईद्रके सुखासन पृथवी पर आये हुये हैं और अतसे मनोहर चौक तैसे ही चौहट और मटमारी मणियों करके शोभित और नाना चित्रकारियोंसे चित्रित भांत भांत के सुंदर बाजार फूलोंकी नाना प्रकारकी भिन्न भिन्न कयारी जलकरके सींची हुई सरल वंक और चतुर कोण जो अतिकरके शोभा पावती हैं और बडी छबीली कदलीखंभोंकी मनोहर पंकती किजिनको देख देखचित्त त्रिपतीको प्राप्त नहीं होता और बीच बीच कदंब वृक्षों अत्यंत की शोभा होरही है चारो कोन्योंपर बडे भारी चार खंभ सजे हुये हैं और तहां देव ऋषी महा ऋषी और देवताऊं के सहित देवराज जो ईद्र है सो अपनी सजधज से आयकर विराजा हुआ है और भी भूमी मंडिल के अनेंराजा आये हुये हैं मानो तहां एक जगतकी जमात

[right margin:] और सुंदर बुरज कंचनकारी करके युक्त
[right margin:] और मटमारी

जुड़रहे हैं मुनी देवता संत ब्रह्मण राजा सवकोई अपने अपने जथा जोग आसनोपर आनंद पूर्वक वैठे हूये हैं और सब ने रीती अनुसार जैसे जैसे योग्य था प्रसपर वंदन सतकार किया आचार्ज लोग जो है सो अंनी अपनी कृत अर्थात कविता प्रबंध वड़े सुख पूर्वक गायन करने लगे फिर एक से आठ भगवान के दिव्य रूप जो हैं स्वयंवर के सफल करने के वासते सो भी तहो चले आवते भये॥ २२॥ चौपाई॥ इक इक मंचन पर सब वैठे॥ गोदा विषयो धि महे पैठे॥ पाछे रंगनाथ प्रभु आई॥ ऊच मंच सो भा सरसाई॥ भे आसीन भक्त सुखदाता॥ नैन नलिन स्यामल मृदु गाता॥ उर विसाल वनमाल विराजी॥ मूरति कोटि मदन छवि लाजी॥ चंदन तिलक माथ मन हरना॥ मुकट मंजु छवि जाय न वरना॥ निंदरत वदन विमल विधु सोभा॥ अलक स्याम मुनि मानस लोभा॥ कच मेचक मनु मधुप समाजू॥ वसन पीत दुति दामनि लाजू॥ अस सरूप भगवान अनूपा॥ देखि देखि सुर नर मुनि भूपा॥ अहो भाग नि ज गुनत सवाहीं॥ हम सम धन्य जगत कियु नाहीं॥ किये अनेक हठ दुरलभ जोई॥ देखे सुलभ नैन भरि सोई॥ तहि अवसर सठकोप प्रवीना॥ विस्नु चित्त सन भाषण कीना॥ अव गोदे हिं वोलिय सनमाना॥ होय स्वयंवर वेद विधाना॥ दोहा॥ विस्नु चित्त अस सुनत द्रुत गोदे हिं लीन बुलाय॥ सखि ल्याई पर आभरन नषसिष सकल सजाय॥ २२॥ टीका॥ तव सनमान पूर्वक सब एक एक मंच पर वैठ जाते भये मानो गोदे की छवी के समुद्र मे मगन होय रहे हैं तिन सब के पीछे रंगनाथ भगवान आयकर शोभा को अधिक किये हूये ऊचे मंच पर वडी छवी से विराजमान होते भये तिनका कैसा सुंदर ध्यान था

३८२

382

कि कमलों को लज्जा देने वाले सुंदर नेत्र और स्याम मेघ वत मनोहर शरीर बड़े कोमल अंग हृदय जो विशाल है तिसपर शोभा देती है तुलसी की माला माथे मे चंदन की मनोहर तिलक और तैसे ही शीसपर शोभा देता है सुंदर मोर मुकट चंद्रमा की आभा को निदरने वाला निरमल मुखार्विंद और मुनियों के मन को हरने वाली मुख पर छूटी हुई स्याम अलकें तैसे ही भ्रमरयों के समाज वत स्यामलके स विजली को लज्जा देने वाले पीत वस्त्र और कोटि कामदेव की छवी को हरने माधुरी मूरती ऐसे भगवान के अनूप रूप को देखकर देवता मुनी ऋषी राजे महाराजे सब अपने अपने भागों की शलाघा करने लगे कि आज हमारे समान धन्न कौन है जिनोने सो भगवान कि जो अनेक जतन और हठ कियेसे देखने दुरलभ होते हैं आज सहजे ही नेत्र भरकर सनमुख देख लिये हैं तब तिस समय सठको पजी विस्नुचित्त सों कहने लगे कि अब सनमान पूर्वक गोदे को बुलाय लेवो जो स्वयंवर का समय आयगया है वेद की विधी अनुसार सव किया जावे तब विस्नुचित्त ऐसे सुनकर ततकाल गोदे को बुलाय लेते भये सखी जो परम चतुर और सयानीयों सो नखसिख भूखणों से शृंगार कराय कर और दिव्य वस्त्र सजाय कर बड़े सतकार से तहां लै आवती भई ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ गोदे रूप सील गुण खानी ॥ तीन लोक नायक मन मानी ॥ रति रंभे उरबसि बिधु नारी ॥ जास रूप छवि चितवन हारी ॥ वरनि न जाय तास कछु सोभा ॥ देखि सकल सुर नर मुनि लोभा ॥ तब पितु मन्यो प्रीति जुत बानी ॥ जापें तुमरी मति हुलसानी ॥ ताके उर बनमाल सुहाई ॥ देहु स्वयंवर सुता मिलाई ॥ सखीनाम जाको अनुग्रहा ॥ तहि सठ कोप वचन अस कहा ॥

कि हे सखी तेरे समान मेरा और कोई हितकारी नहीं है देखो जिसने विरहके के समुद्र मे डूबी हुई को हाथसे पकड़कर उवारलिया है हे वीर तैने उपकार थोड़ा नहीं किया है इहव दला मे देसे कव दिया जावेगा इस प्रकार हृदय मे रंगमगवा न का सनेह विचार ती को जव पांच सात दिन वतीत हो य गये तव विस्नुचित्त समय विचारकर और पुत्री को साथ लेकर कुरकापुर को चला आवता भया तहां का राजा जो वल्लभदेव नाम करके प्रसिद्ध था सो भी चतुरंगनी सेना सजाय करके विस्नुचित्त के साथ हो चलता भया तव चलते चलते कुरकापुर मे आय प्रापत हूये तहां आगे ही सठकोप स्वामीजी और मुनी ऋषी ब्रह्मना पंडित आचार्ज इत्यादि संपूर्ण आये हूये थे तव विस्नुचित्त ने सठकोप स्वामी को अपने पास बुलाय कर सिव संपूर्ण मर्म जो है सो सुनाय दिया इस प्रकार सठकोप जी सुनकर तत काल वल्लभदेव राजा को बुलायकर कहने लगे कि हे राजन अव विलंव को त्यागकर तुम और महाप्रवीन मधुर कवीराज ~~मैं~~ जी मिलकर स्वयंवर के समाज की नाना प्रकार रचना जो है सो सव रचाय देवो ऐसे सठकोप स्वामीजी की आज्ञा पायकर वल्लभदेव नरेस और कवीराज जी स्वयंवर के सव समाज सजाव ने मे सावधान हो जाता भये ॥ २०॥ चौपाई ॥ रचे उतंग मेच वहु केचिन ॥ खचित मणीन मनु मानस वेचिन ॥ तने वतान चारु चहु वोरा ॥ फवी सु फरस सरस चितचोरा ॥ विछे विछौन छेज छु विछाने ॥ जरकसि दुगध फेन निदराने ॥ आसन दिव्य दिपत संध्या सन ॥ आय अवनि मनु इंद्रसु वासन ॥ चारु चौक चोहटे मटमारी ॥ मणि वचित्र कृत चित्रित सारी ॥ वनी वनत वर विविध वजारू ॥ रचना रुचिर रम्य मन हारू ॥ विरचि कुसुम

३८३

383

और गुण प्रभाव कथन करती करती जहां रंगनाथ भगवान बड़े प्रेमासे विराजे हुये थे तहां आय पहुची॥ २३॥ चौपाई॥ सब रूपनतें सरस बसेषे॥ रंगनाथ मोद दृग लेषे॥ पुलक्यो तन मन मोद उमंगा॥ छ्की छवी मानस प्रभु रंगा॥ करत मनहिं मन दंड प्रणामा॥ सोवन माल करन मृदु रामा॥ रंगनाथ कल कंठ सुहाई॥ सानकूल द्रुत दीन मिलाई॥ जन जमात अस देखि सबाहीं॥ जै जै सुघर करहिं चहुं घाहीं॥ नभतें सुरन सुमन झरि लाई॥ हरषि दीरह दुंदभि बजाई॥ सुर नर मुनि मन मोद अपारा॥ पूरि रह्यौ मंगल संसारा॥ देखि दिव्य वपु भगवन नीके॥ भे विसमत सुर नर नृप जीके॥ तिहिंछिन आय कमल भव तांहां॥ लागी सुरन सभा सद जांहां॥ भये रंग प्रभु गरुड सवारा॥ रवि सुत चारु चमर कर धारा॥ मारुत करत विजन सिव काई॥ कर कुबेर कलछत्र झुलाई॥ संभु ईंद्र उर मोद प्रकासा॥ धारे करन कमल कल आसा॥ सुर किंन्नर गंधरवन नाना॥ साजे निज निज रुचिर विमाना॥ कुरका नगर तहां मन लोभा॥ श्री बैकुंठ देत मनु सोभा॥ दोहा॥ विष्णु चित्त कहें धन्य धन कहत धन्य सबकोय॥ जहि प्रसाद हम आज जग सकल कृतार्थ होय॥ २४॥ टीका॥

तब सब रूपों से अतसे करके अधिक रंग भगवान को देखकर शरीर पुलकमान होय गया और मनमें आनंद उमच्च आया रंगनाथजी की छवीमें गोदे जो है सो उनमत्त होयगई मनमैं हीं बारबार दंड प्रणाम करके सुयंबर माला जो थी सो भगवानके कंठमें डाल देती भई इस प्रकार देखकर जहां जन जमात जुडी लग हुई थी सब जै जै कार शबद को उचारण कर उठी और आकाशमार्ग ते देवताउं नें फूलों की बरषा कर दई और बडी दीरघ दुंदभी का शोर भी मचाय दिया सुर नर मुनियों के मनमै महां आनंद प्रापत भया और

भक्तमाल

अंजी पद

संसार मे जहाँ तहाँ मंगल ही परिपूरण होय गया इस प्रकार भगवान का दिव्य रूप देख कर देवता राजे मुनी सब आचर्ज को प्रापत हो जाते भये तिस समय तहाँ कमलभव जो ब्रह्मा हैं सो आय गये तब रंगभगवान आनंदपूर्वक अपने वाहन गरुड़ पर आरूढ़ अर्थात सवार हो जाते भये सूरज और चंद्रमा ने डुलावने के लिये हाथ मे चमर धारन कर लिये मारुत जो पवन सो पंखे की सेव कोई करने लगा और कुवेर ने हाथ मे छत्र धारन कर लिया प्रभू और ईंद्र हाथो मे सुंदर आसे धार कर आनंद मे मगन भये हुये भगवान के सनमुख स्थित हो जाते भये किन्नर गंधर्व और देवताओं ने नाना प्रकार करके अपने अपने विमान सजाय लिये तिस समय तहाँ कुरका नगर जो है सो श्री वैकुंठ की शोभा देता भया और विस्नुचित्त को सब कोई असे कहते हैं कि इह पृथवी तल पर धन्य और सुजस का पात्र है देखो कि जिस के प्रसाद से हम भी आज क्रतार्थ रूप होय गये हैं ॥२८॥
चौपाई ॥ पुनि कर जोरि रंग प्रभु आगे ॥ विनय करन ने मत गति लागे ॥ श्री सठ कोप भवन उतसाहू ॥ नाथ सुता सन करहु विवाहू ॥ एवमस्तु भगवान उचारे ॥ विस्नुचित्त तहं पूर्व सिधारे ॥ रच्यो विवाह सकल सुख दाता ॥ सो न जाय कछु वरनन वाता ॥ देव ऋषी महे ऋषी आचारज ॥ आये तहं प्रधान मत आरज ॥ सजे साज सब रुचिर विवाहू ॥ भवन भवन मंगल उतसाहू ॥ लागे होन अनेक प्रकारा ॥ साजि सुभग वर वंदनिवारा ॥ गृह गृह धुजा पताक सुहाये ॥ कलित कलस कंचिन छवि छाये ॥ विसकरमा कहे भयो रजाई ॥ रचन नगर रुचिता सुहाई ॥ तास न देस पाय भगवाना ॥ सज्यो नगर वैकुंठ समाना ॥ वापी तड़ाग कूप मन भाये ॥ चौक वजार चारु विरचाये ॥

३६४

३८४

में जु नवल वाटिका अरामा॥ मणिन खचित कल कंचिन धामा॥ दोहा॥ ताल तमाल कदंब कल कलप जंब विरचा य॥ अंब खंभ कदली किये मन हे प्रेम थिर ल्याय॥ २४॥ टीका॥ फिर हाथ जोड़ कर रंग भगवान के आगे नम्र होय कर विनती करने लगे कि हे कृपानिधान अब हमारी यह प्रार्थना है जो आप सठकोप स्वामीजी के घर में गोदे के साथ विधीपूर्व विवाह करिये तब भगवान मुसकराके एवमस्तु कहते भये कि ऐसे हीं करूंगा तब विस्नु चित्त जी सठकोपजी के घर मे चले गये और तहां विधी के अनुसार विवाह की ऐसी सुंदर सब रचना रचाय दई कि वरणन नहीं की जाती है देव ऋषी महा ऋषी और बड़े बड़े आचारज कि जो आरज धरम मे प्रधान थे तहां सब चले आये जहां लग विवाह का समाज था सब सजाया गया और घर घर मे सुंदर मंगल जो हैं सो होने लगे वेद निवार धुजा पताका कंचिन के कलस इत्यादि मनोहर रचना जहां तहां भलीप्रकार सब की गई तिसते उपरांत नगर की रमणीकताई और सजावट के लिये विसकरमा को आज्ञा होती भई तिसने भगवान की आज्ञा पाय कर ततकाल नगर को वैकुंठ के समान शोभावाला कर दिया वापी जो बाउली तड़ाग जो तलाउ कूप जो कूये सुंदर बाजार और भांत भांत के चौंक चढ़े मनों नाना बाग और बागीचे कंचिन और मणियों करके खचित अनेक प्रकार के धवल धाम और ताल तमाल कदंब जंब जो जामण कलप अंब इत्यादि सब बृक्षों की नाना रचना कर दई और चारों ओर बड़े सुंदर कदली थंभ जो हैं सो रचाय दिये २४॥ चौपाई॥ रची सुमन वाटिका नियारी॥ और हु बरन बरन फुलवारी॥ बेलि वितान मान चहुं पासा॥ जनु समाज ऋतुराज विकासा॥ कूजन खगन द्रुमन बहु रूपा॥ गुंजत अलि कल सुमन अनूपा॥ जहेत हे

ᵛ७

ᵛ७२

ᵛ७८ कर

(margin:) कुसमकी विकसित

इकसत अषृरूप सुखदाये॥ रंगनाथ भगवान सुहा
ये॥ तुव गोदाके संग सिधारी॥ कहहु तिन है गुनना
मउचारी॥ तव सखि गहित करन कर गोदा॥ लैग
नीउर पूरि प्रमोदा॥ हरिकेरूप दिखावन लागी॥ क
हि गुणनाम ठाम अनुरागी॥ जोके मंजु मे चढिग
जाती॥ तहि प्रभाव वरनत सुखमाती॥ दोहा॥ अ
स प्रकार दरसात गुन कथित सवन समझानि॥ रंग
नाथ केनि कट जव लै आई सखि स्यानि॥ २३॥ टीका॥
सो गोदे कैसी है कि रूप सील और गुणों की खानी॥
तीन लोकके नायक भगवान जो हैं तिनके मनमे
मानी हुई रती जो कामदेव की स्त्री और रं
भा उरवसी और चंद्रमाकी स्त्री रोहनी इह सव
जिसके रूपकी छवी को देखँ मोहित होती हैं ति
सकी शोभा कौन वरणन करसकै सुर नर मुनी स
व देख कर मोहित होरहे हैं तव ऐसी रूपकी निधी
गोदेको पिताजो हैं सो प्रीती पूर्वक कहने लगे कि
हे पुत्री अव स्वयंवरमे तेरेको जिसके वरने की रु
ची और प्रीती है तू आनंद पूर्वक तिसके गलेमे
इह वनमाला जो है सो डालदे इतनेमे अनुग्रह
नाम करके जो सखीथी तिसको सठकोप स्वामीजी
कहते भये कि हे चातुरी तू गोदेके साथ होकर इह
एकसे आठ भगवान दिव्यरूप जो हैं तिनके नाम और
गुण भिन्न भिन्न भली प्रकार कथन करती जा जिसपर
गोदेकी मती मानेगी तिसके कंठमे स्वयंवर माल मेल
देवेगी ऐसी आज्ञा पाय कर सो निपुण सखी गोदे
का हाथ अपनें मे लेकर भगवाके रूप दिखावने को आ
नंद पूर्वक ले जाती भई इसप्रकार जिस जिस रूपके पा
स जाती तिस तिसका नाम और गुण प्रभाव सव कथन
करके सुनायदेती ऐसे गोदेको भगवान के दिव्य रूपदिखावती

है सो चलतीहै तिस अस्थान की असी रमणीकता क्यों ना होवे कि जहां सरव भवनों के नायक भगवान चरन धार कर विवाहन आये हैं और मुनी ऋषी देवता और देवताउँ को साथ लयाये हैं इस प्रकार जव पुर की शोभा होयगई तव रंगनाथ भगवानकी वरात जो है सो चढती भई शिव ब्रह्मा इंद्र वरुण कुवेर धरमराज दिगपाल दत यछ किन्नर गंधर्व देवता और देवताउं के गुरू वृहस्पती इत्यादि सव अपने अपने सुंदर विमानो पर चढकर और वराती वनकर लछमी के नाथ भगवान जो हैं तिनके साथ शोभा को अधिक किये हुये सव चले जाते हैं अपसरा और गंधर्व रसते मे नाना प्रकार के तान तराना और गाना वजाना करते जाते हैं और वडी छवी से छत्र और चमर भगवान के सीस पर झूलते अत्यंत शोभा पावते हैं खगनी जेत्र जो आतसवाजी है सो जव आकाश को छूटती हैं तिसतें हस्ती वडा चिक्कार शवद करते और वाजी जो घोडे हैं नावते हैं वडी धूमधाम के सहित वरात चली जाती और मारग मे अनेक कौतुक होते जाते हैं मागध सूत वंदीजन जो भाट लोग हैं सो नाना प्रकार करके सुंदर विरदावली पढते जाते हैं और आगे आगे ब्रह्मा वेद पठते जाते हैं वेदों की घोर धुनी और नाना प्रकार के वाजे जो हैं सो वाजते जाते हैं वरात भी मंद मंद गती से चली जाती है पुर वासियों के हृदय मे सुख नहीं समाता सव नारी नर जो हैं सो देखने की लालसा से जहां तहां से धाय चले आवते हैं और भगवान की मनोहर मूरती को देखकर मोहित भये हुये कुछ ठौर नहीं लेते ॥ २६ ॥ चोपाई ॥ कहत परसपर पुर कर नारी ॥ अति अनूप छवि दूलह निहारी ॥ ललित श्याम मृदु मूरति नीकी ॥ सखि सो

हनि मनु मो हनि जीकी॥ अस प्रकार जब द्वार सिधारे॥
रंगनाथ छवि अतलुत वारे॥ मोर मुकट माथे अभिरा
मा॥ दिव्य पुनीत पीत पट जामा॥ उर विसाल सुरपाल
कृपाला॥ दिपत कलित कौस्तुभ मणि माला॥ अंगदा
दि भूषण भुज भाये॥ बने नाथ जस जाहि न गाये॥ कुंडल
लोल करन मृदु वैना॥ सुभग सीस चंद्रक सुख दैना॥
भाल तिलक श्रीखंड विराजा॥ अधर बिंब नासिक सुक
लाजा॥ वदन मयंक सरद छवि निंदा॥ कुटल चिकुर
मेचक अलि बृंदा॥ लोचन नलिन नवल भ्रू बांकी॥
निदरत कोटि चंद्र रवि झांकी॥ वृषभ कंध बल षल
दल षंडा॥ नाग सुंड भुज दंड उदंडा॥ अंकुस कुलस स
कंज धज धारी॥ उदर सुभ्रवर रेष मुरारी॥ दोहा॥ सार
दूल कटि कृपातन बरन स्याम घन स्याम॥ अरुन चर
न जलजात लषि रीझि निकर पुर भाम॥ २७॥ टीका॥
पुर की सब नारी नर कहते हैं कि अहो दुलह की छवी
अतसे हीं अनूप और न्यारी है देखो इह ललित स्याम
मन के हरनेवाली कोमल मूरती जो है सो अतसे शोभाय
॰न मा[illegible] और मन को प्यारी भावती है इस प्रकार जब अ
॰वा तुलत छवीले रंगनाथ भगवान सठकोप जी के द्वारे
पर आय प्रापत भये तिस समय भगवान की कैसी शोभा थी
[illegible] कि माथे पर बडा सुंदर मोर मुकट और तैसे हीं बडे दि
व्य पीत वस्त्र और मनोहर जामा बडे विशाल हृदय
पर शोभा देती है अतसे प्रकाशवाली कौस्तुभ मणिओं
की माला अंगद जो भुजबंद हैं इत्यादि भुजों मे सजे
हुये हैं भूषण जिनके और कानों मे फबे हुये हैं मक
॰रि राकार कुंडल तैसे हीं सीस मे शोभा देती है चंद्रक
मणि मस्तक मे चंदन का तिलक बिंब जो कंदूफल ॰री
है तिसके लज्जा देनेवाले लाल ओष्ठ शुक जो तोता
तिसके समान मनोहर नासिका और सरद चंद्रमा की
॰को छवी हरनेवाला सुंदर मुखारविंद भ्रमरयों के समा
ज को लज्जा देनेवाले स्याम और कुंडिलों वाले केस

कमलों वत सुंदर नेत्र और सुंदर हैं वो की अर्थात
त्रेढी भवें वृषभ समान कंधे और हसती के सूं
वत भुजों के दंड अंकुस कुलस कंज धुज
इह चार प्रकार की हैं उदर मे जिन के रेषा और
सिंह वत कटी जो कमर कोटि चंद्रमा की आभा को
हरने वाली जिस भगवान की सुंदर झांकी और क
मल वत लाली मय जिन के कोमल चरन ऐसे
नष सिष मनोहर घनस्यान भगवान की मुद्रा दे
ष कर पुर की सब नारी जो हैं सो रीझ कर मोहि
हो जाती भई ॥२७॥ तहं मुकतान चोक मन भाता॥
पूरयो ऋषिन पूरि मुद माता॥ महं ऋषी ब्रह्म ऋषी
हरषाई॥ लागे पठिन वेद समुदाई॥ तहां रंग भगवा
न कृपाला॥ सुर समाज जुत दीन दयाला॥ बैठे उर
प्रमोद सर साई॥ सो अनेत छवि वरनि न जाई॥ तब ब्र
ह्मा अत से अनुरागे॥ द्वार चार करवावन लागे॥ कर
हिं गान कल मंगल चारी॥ पुरकर सकल ललित छवि
विकारी॥ हंस गवनि मृग सावक नैनी॥ नागरि नव
ल मृदुल पिक वैनी॥ समय सरस सुभ वदन उचारी॥
देती रंग नाथ कहं गारी॥ मति गण देव समूह लुटावें॥
सुर तरु कुसमन की झरि लावें॥ रंग नाथ शोभा छवि
नी की॥ पुर नर नारि देषि प्रीय जी की॥ रही चित्र व
त चषन निहारी॥ प्रेम मगन तन दसा विसारी॥ द्वा
र चार ह्वै गो जब ताहां॥ गई बरात वास जन जाहां॥
अमिय पाक पावन सेभारू॥ व्यंजन दिव्य अनेक
प्रकारू॥ षट रस चारु वरनि किमि जाई॥ विस्नु
चित्त तहां दीन पठाई॥ जस रुचि रहीं जौन सुरका
हीं॥ सोदे जनक कीन फुरताहीं॥ रिद्धि सिद्धि नव निद्धि
सुहाई॥ विस्नु चित्त गृह सरवस छाई॥ दोहा॥ जन
जमाति सब जगत की सुरगण ते तीस कोटि॥ षान
पान पहरान की लख्यो न कोने टोटि॥ २८॥ टीका॥

विमलवारि वर पावन॥ कसन होय रम्य तपुर न्यारी॥
जहां भवन नायकपगधारी॥ आये सजन विनाहअनू
प॥ लिये संग सुर मुनि सुरभूप॥ असप्रकार जव पुर
छविराता॥ रंग नाथ तव चढी वराता॥ ~~हरि~~ हर वरिंचि
मातुल समुदाई॥ वरुन कुवेर मेर जमुराई॥ दिसनपाल
महिपाल प्रधाना॥ दत जदत किन्नर सुर नाना॥ गीर
वाण गुरु गंधर्व चारन॥ निजनिज चढिविमानम
नहारन॥ वनि वरात इंद्रा पति संगा॥ चलेजातउर
हरषउमंगा॥ अपसरादि गंध्रव कलगाना॥ करत
जात मग तान तराना॥ छविजुत छत्र सीस प्रभुसोंहीं॥
चलत चारु चामर मन मोहीं॥ अगनि जंत्र छूटत
नभ काहीं॥ चिकरत नाग वाजि हैनाहीं॥ धूम
धाम जुत चली वराता॥ करत कलित कौतुक म
ग जाता॥ मागद सूत वंदिजन नाना॥ करत जात
विरदावलिगाना॥ पठित वेद ब्रह्मा चलि आगे॥ से
ख निसान वचन वहु लागे॥ मंद मंद तहं चली
वराता॥ पुर वासिन उर सुख नसमाता॥ दोहा॥
धायेदेखन नारि नर नगर सगर चहुं वोर॥ प्रभुमूरति
झांके सकल तकितकि लेत नठोर॥ २६॥ टीका॥ फिर
~~फूलों~~ न्यारी न्यारी फूलों की वाटिका ~~जो न्यारी है जो~~
र अर्थात वाडी नाना रंगोके फूलों से शोभित
और चारो पासे सुंदर वेली उलझी हुई और वेलि
योंके हीं वतान ~~जैसे~~ सायवान तने हूयेहोतेहैं इस
प्रकार मानो रितुराज जो वसंत है सो जहां तहां छा
यत होरहाहै वृक्षों पर पंखी नाना प्रकारके शवद
करते और फूलों पर भ्रमर गुंजार ~~कर~~ते अतसेशो
भापावतेहैं वडासुंदर निरमल और पवित्र जल
तैसेहीं सीतल मंद सुगंध तीनप्रकारकी पवन जो

तब विधि विस्नु चित्त गृह आई॥ मने वदन वरगिरा सुहाई॥ लगन विवाह रंग भगवाना॥ इहि अवसर सब सुनहु सुजाना॥ तातें करहु हरषि सब काहू॥ मंगल नवल अमल उतसाहू॥ तब सठकोप आदि मुनिराई॥ गवने जन वासहिं अतुराई॥ रंगनाथ सन जाय बखानी॥ नम्रत विनय जुक्त जुगपानी॥ तब कृपाल जुत हरन समाजा॥ चलि आये लखि समय सुकाजा॥ विस्नु चित्त गृह जब पग धारयो॥ सनकादिक सब सुमती उचारयो॥ मंडप रचन रुचिर चतुराई॥ कहि न जाय कछु लावन ताई॥ खचित खंभ कदलीक लपावन॥ पदम राग कृत सुमन सुहावन॥ दिव्य सिलप कृत अंदुग सोभा॥ सुर समाज लखि अदभुत लोभा॥ दोहा॥ दिपत दीप मनि झालरैं झलकरतन चहुं वोर॥ पाच पुरट मनि जटित कलज्वलत जनहु चित चोर॥ २९॥ टीका॥ तब सब काज था जोग सनमान और परितोष होता भया सुर नर मुनी जन सब आ जाय गये प्रत्येक ने जथा रुचि अपना अपना मनोर्थ पाया पृथ्वी मे दिलपर महा सुजस जो है सो व्यापत होय गया तब विधी जो ब्रह्मा सो विस्नुचित्त के घरमै आयकर कहने लगे कि हो भाई अब रंग प्रभू के विवाह के को लगनं ~~एही~~ समय है ~~सो~~ सब कोई हरष पूर्वक नाना प्रकार के सुभ मंगल और उतसाह जो है सो करो ~~सब नर नारारर~~ ऐसे सुनकर पुरमै अनेक मंगल और गायन होने लग परे और सठकोप स्वामी तें लेकर और जो महा मुनी सथे सो ततकाल बरातीमे आय कर रंगनाथ भगवान के आगे हाथ जोर कर विनती करते भये तब भगवान कृपानिधान समय जानकर सब देवताउं के समाज के सहित आनंद पूर्वक

चलेआये जब दीनबंधूने विसुचित्त केजरमै चरनक मलधारे तब सब देव ताओंने ऊंची स्वरसे स्तुती शब्द को उचारन करते भये जिस मंडप मै भगवान आय करके विराजमान भये तिसकी मनोहर रचना की कुछ शोभा कही नहीं जाती॥ कंचिनके कदली खंभ और मणियों कर के खचित कियेहूये तैसेही पदमराग जोहीरे तिनकी सब फूल वेलियों की रचना और दिव्य शिलों से जटित मनो हर अंगन किजिसको देख कर देवतागण मोहित होय गये और रतनो की गूंदी हई झालरें जो चारो और झलरही हैं तैसे ही अत से प्रकाशमान मणियों के दीप और ~~सुवरन के~~ मणियों ~~के~~ से ही खचित सुंदर पात्र जहां तहां धरे हूये शोभा पावते हैं॥ २८॥ चौपाई॥ कंचिन रतन खचित अनऊठी॥ मंडित मंजु जुगल कल पीठी॥ विसु चित्त कर हरखि मुरारी॥ निज कर क मल गहित सुखभारी॥ सेजुत सुर समाज समुदाई॥ कि ये प्रवेस सुभ मंडप आई॥ तहं सुर ब्रह्म ऋषी अनुरा गे॥ विधि जुत वेद पढन सबलागे॥ लग्योअचार हो न सुभ रीती॥ विसु चित्त तब सादिर प्रीती॥ प्रभु कहं रतन पीठ वैठायो॥ महा मोद सब कर मन छायो॥ द तला दिसि गोद आसीना॥ आनंद उदधि मन हं मनली ना॥ तहां ब्रहस्पति अवसर जानी॥ धरयो कुसा गोदे पितु पानी॥ विसु चित्त अंजुलि जल धारी॥ पकरि कलितकर कमल कुमारी॥ रहहि रंगपति मंगल मूला॥ तोपै सदा पृथि अनकूला॥ मोहि निज चरन कमल कलदासा॥ गुनत रहहि नित विस्व प्रकासा॥ अस संकलप पठित हुलसाना॥ गहि कर कंज रंगभगवा ना॥ दोहा॥ गोदा कर कर नाथके करि विनेति धरि दीन॥ चल्यो जात जल चखन पथ प्रेमविकल मतिकीन॥ ३०॥ टीका॥ कंचिन और रतनो से खचित

३८८

388

भई हुई मनोहर दो चौकी इसप्रकार सब दिव्यसमा
ज जो है सो सजा हुआथा। तब भगवान विस्नु चित्तका
हाथ अपने हाथ कमल मै पकडे हूये सब देव मंडली
के सहित बडे आनंद पूर्वक सुभ मंडप मै प्रवेस करते भये
तहां ब्रह्म ऋषी और देव ऋषी जो थे सो हरष मै मगन
भये हूये विधी अनुसार सब वेद का उचार करने लगे
और आचार जो है सो सुभ रीती से सब होने लगा तब
विस्नु चित्त ने बडी प्रीती और सनमान से भगवान ल्या को
य करके रतनो की दिव्य चौकी पर बिठाय दिया ~~इस~~
~~प्रकार भगवान मंडप मै विराजमान भये~~ तब और दस्तरा
दिसा मै गोदे को आसीन कर दिया अर्थात बिठाय दिया त
ब इस प्रकार गोदे और भगवान को विराजे हूये देखकर सुर
नर मुनी सब परम हरष को प्रापत भये तिसते उपरांत
ब्रहसपती जी ने समय जान कर विस्नु चित्त के हाथ मै
कुसा धर दई और ~~[illegible]~~ अंजुली मै जल भरकर विस्नुचित
और हाथ मै कन्या का हाथ लेकर इन संकल्प पढने
लगा कि हे पुत्री इह मंगलो के मूल तेरे रंगनाथ
पती जो हैं सो तेरे पर सदैव अनकूल अर्थात प्रस
न्न ही रहैं और मेरे को अपने चरन कमलों नित्त से का
वक ही जानते रहैं ऐसे ~~कहकर~~ इन भगवान के विनतीकर
विस्नुचित्त जो है सो
हाथ मै गोदे का हाथ देदेते भये तिस समय तिन के ने
त्रों से प्रेम जल का प्रवाह चला जाता है और मती जो
है सो भी प्रेम कर के व्याकुल होय ~~[illegible]~~ ॥ ३०॥ चौपाई
पानि ग्रहन जब भयो मुरारी॥ महा प्रमोद छयो छितसारी॥
स्वस्ती स्वस्ती तहिं छिन सुखभीन्यो॥ बदन रंगनाय
क कहि दीन्यो॥ तहि छिन धरनि व्योम चहुं जाहीं॥
मच्यो शोर दुंदुभि महाहीं॥ चौदस भवन जैति धु
नि छाई॥ सुमन प्रसून सुमन झरि लाई॥ विस्नुचि
त्त जग धनधन मूला॥ सुरनर सकल भनत अनुकूला॥

तहां रीतीके अनुसार ऋषियों ने आनंद पूर्वक मो
तियों का चौक जो है सो पूर दिया और महा ऋषी
ब्रह्म ऋषी जो हैं सो बड़े हरष से वेदका उचार क
रने लगे तब रंग नाथ भगवान शोभा और आनंदको
अधिक किये हूये सब देवताउं के समाजके सहित तहां
विराजमान हो जाते भये फिर ब्रह्मा जो हैं सो हरषसे
विधीपूर्वक द्वार चार करावने लगे तब हंसगमनी
मृग नैनी और पिक बैनी परम चतुर पुरकी सुंदर ना
री सब मिलकर बड़े शुभ मंगल गायन करने लगीं
और समयके अनुसार रंग प्रभूको गारी भी देने लगीं दे
वता जो है सो कलप वृक्षोंके फूलोंकी वरषा करते मुकता फल
मणियोंको भगवान पर निछावर करते और लुटावते हैं फिर
पुरके सब नर और नारी प्रेम के वश शरीर की दसा भुला
ये हूये चित्रके समान इकटक नेत्र जोड़कर रंगना
थ भगवानकी अनंत छबी को देख देख मोहित होते
जाते हैं इस प्रकार जब द्वार चार होयगया तब बरा
त बाजे बजते हूये अपने बास अस्था में आय प्रापत
भई तिसतें उपरांत विस्नुचित्त जी ने बड़े प्रेम और स
नमानसे अमृतके समान षटरस करके युक्त नाना प्र
कारके भोजन और व्यंजन जो हैं सो सब तहां हीं पठाय
दिये जिस देवता को जैसी रुची भई गोदा के पिता ने
तैसे हीं तिसको परितोष किया तिस समय रिद्धिसि
द्धि और नव निद्धि इह सब विस्नुचित्त के घरमें आय कर
के छायत होय रही थी सब जगत की जन जमात
और तेतीस कोटि देवता जो थे किसीको कभी खान
पान और पहिरान की कुछ टोट नहीं रही ॥ २९॥
चौपाई॥ भये तोष सब कर मन भाव॥ सुर नर मु
नि जन सकल अघावा॥ निज निज सदन मने
रथ पायो॥ महा सुजस महि मंडिल छायो॥

३८९ 389

ऐसा तन नहीं पाया जाता है सो प्रमातमा भगवान आज प्रत
त अपना अदभुत रूप धारकर इस विस्नुचित्त के घर मे विवा
ह करने को चरन धार ते भये हैं और शिव ब्रह्मा से लेक
र इंद्र और सब देवता जो हैं सो रंग भगवान की छवी को
देख देख मोहित हो रहे हैं तब रंग देव गोदे का हाथ पक
ड़ हुये आनंद पूर्वक सात भांवरी अर्थात सात फेरे जो हैं
सो लेते भये फिर विधी अनुसार अगनी होम भी करते
भये तब विस्नुचित्त हाथ जोड़ कर विनती करने लगा कि
हे कृपानिधान अब दास की इह प्रार्थना है कि मेरा सरव
स जो है सो सब दायज मै ले लीजिये और मेरे को आप
ने चरन कमलों का भ्रमरा ~~करके~~ जानकर तिन चरन कमलों के
हीं सेवन करने की प्रीती वाला कीजिये और सेवक पद दी
जिये ऐसे विस्नुचित्त की प्रर्थना सुन कर और एवमस्तू
कहि कर कि ऐसे हीं होगा भगवान भीतर घर मै स्त्रीयों के
समूह के बीच चले गये तहां नारी जो हैं सो समय अनुसा
र भगवान को गारी देने लगी कोई पीतांबर को खेंचती हैं
और कूट अर्थात मसकरी करती हैं कोई हाथ की चुमक
दे कर फिर हाथ की ताड़ी बजावती और परिहास करती हैं
कोई कहती कि हे सखी इह दुलहा काला है कोई कहती
है कि काला तो है परंतू परम सुशील और गुणों मे भी
परम प्रवीन देखा है तब गोदे जो है सो भगवान के मुख
मे मिष्टान देती है और भगवान गोदे के मुख मे देते हैं सो
आनंद और सुख जो है ~~तिसके कथन करने को एक मुख~~
~~कोई सामर्थ नहीं है~~ जुवा बाल वृद्ध जितनी स्त्री जुड़ी हु
ई थीं सो बारबार सब रंग भगवान पर बलहारे होती हैं
इस प्रकार सरव भवनों को आनंद देने वाला रंगनाथ भग
वान का सुंदर विवाह जो है सो होता भया तिसते उपरांत
जहां बरात उतरी हुई थी रंगप्रभू सुख पूर्वक तहां आय
कर के विराजमान हो ~~य~~ जाते भये ॥ ३१ ॥ चौपाई ॥
उदय अरुण सठ कोप प्रवीना ॥ जथा उचित मन

(हाशिये पर: कोई मसखरा कर)

(हाशिये पर: कोइ कमुख से कहा नहीं जाता है)

हरष प्रलीना॥ विनय वडाई भनत रत शांती॥ किये
प्रतोष सुरन वहु भांती॥ पाय देव सतकार महाना॥
लागे भनन सुजस मुख नाना॥ सानंद वहुरि रंग प्र
भु काहीं॥ ल्याये ललित भवन निज माहीं॥ विरचि वि
विध व्यंजन मन भाये॥ पाक पुनीत आन अधिकाये॥
नाना कंद मूल फल मेवा॥ प्रभु हीं जिमाय कीन सुचि
सेवा॥ जेवनार विरच्यो पुनि आना॥ भोजन भूरि दि
व्य पकवाना॥ षटरस रुचिर सुखद सव भांती॥ तहं मु
निंद्र वृन्दारक पांती बैठि लग्यो जेवन जिवनारा॥ किये
जासु रुचि जोन अहारा॥ सुरन लीन जव भोजन पाई॥
लागि गई तव सभा सुहाई॥ दिये सवन कर पानन वीरा॥
उमग्यो मनहु मोद निधि नीरा॥ सुर मुनि विप्र वृंद छवि
त राजे॥ निज निज सजधज साजि विराजे॥ तव सठको
प विस्मु चित ताही॥ औरहु वृद्ध अचार जनाही॥ दिव्य
आभरन वसन मंगाये॥ सव कहं जथाउचित पहिरा
ये॥ दोहा॥ सनमाने सुर विप्र मुनी॥ करि प्रतोष सव
भांति॥ भयो सकल कर थर रुचिर अति प्रमोद सुख
शांति॥ ३२॥ टीका॥ तव सूरज के उदय होतेही सठ
कोप स्वामी ने ~~[crossed out]~~ नाना विनती और वडाई करके स
व देवताओंका यथा योग्य आदर सतकार और भ
ली प्रकार परितोष जो है सो किया देवतागणों ने ऐसे आ
दर सनमान को पायकर और अतसे प्रसन्न होयकर नाना
सुजस और वडाई को गायन करने लगे तिसते उप
रांत आनंद पूर्वक रंगभगवान को घर मै ले आये और
नाना प्रकार के अमृत के समान पवित्र व्यंजन और
अनेक सुंदर भोजन वनवायकर नाना कंद मूल और फल
मेवयों के सहित भगवान को जिमाय कर सब प्रकार की
सेवा जो है सो करते भये फिर और अनेक भांत के दि
व्य पकवान और भोजन व्यंजन रचायकर महाप्र

[margin:] ओर
[margin:] बड़ी प्रीती सतकार से
[margin:] १५ ~~[crossed out]~~ वडे सनमान और प्रेम से

नियो और देवताउं को जिमावते भये तहां जैसी जिसकी
रुची होती भई तिसका तैसाही परितोष भया इस
प्रकार जब देवताउं ने भोजन पायलिया तब सुंदर स
भा जो है सो सज गई सबको मुष शुद्धी के वास्ते पानो
के वीरे ल्याय दिये सर्व के हृदय मै हरष परिपूर्ण होरहा है
मानो आनंद का एक समुद्र उमड्यो हूआ है देवता मुनी
ऋषी और राजे सब अपनी अपनी सजधज से विराजे
हूये हैं तब सठकोप स्वामी और विष्णुचित्त और
भी वृद्ध आचारज सब मिलकर बडे दिव्य वस्त्र और भू
षण ल्याय कर सबको यथा योग्य प्रीती स
तेकार से पहिराय देते भये जब इस प्रकार मुनी ऋषी
देवताउं का भली प्रकार सनमान और परितोष होय
गया तब सब कोई ऐसे सतकार को पायकर अपने अ
पने हृदय मै परम सुष और शांती को प्रापत होजाते
भये ॥३२॥ चौपाई ॥ करहि सकल धन्य धन्य सुखदाई ॥
विष्णुचित्त कर विमल बडाई ॥ ऐहि न भयो होहि है
सारा ॥ अस कौ भोजन सुजस उदारा ॥ विबुध समापु
नि विविध सराहती ॥ हरषि गये जन बास बराती ॥ चौ
थे दिवस रंगपति पावन ॥ निज सुसराल कीन कल
आवन ॥ तब तहं उचित जथा विधि रहयो ॥ चौथी
चार चारु सब भययो ॥ तहि निसि रंगनाथ अभिरामा ॥ निवसे विष्णुचित्त कल धामा ॥ सो देख
हित हरष मन लीने ॥ हास विलास रास रस कीने ॥ ५॥
तब निसि शेष रहे चतुर्पाई ॥ सठकोपादि प्रवर मु
नि राई ॥ आचारज जन जुरि समुदाये ॥ आये भवन
द्वार सुख छाये ॥ जगतनाथ जागन हित नीके ॥
छंद प्रबंध ललित प्रीय जी के ॥ रचि रचि नवल
मधुर पद पावन ॥ गाय मधुर सुर लगे जगावन ॥
तब सोदे जुत प्रभु सुख पागे ॥ प्रातकाल गायन सु
नि जागे ॥ दोहा ॥ करि सनान पट आभरन सजत

नेति नेति जहि निगम नरूपा॥ धरि प्रतत्त निजग्रद
भुत रूपा॥ रंगनाथ भगवान सुहाये॥ तास सदन सुभ
व्याहन ग्राये॥ सिव ब्रह्मादि इंद्रसुर ताही॥ रंगदेव छवि
छके सवाही॥ तव गोदे कर रंग गहाई॥ दियो सपत भाँ
वरि हरषाई॥ ग्रनल होम कीन्यो भगवाना॥ विस्नु चित्त
तव विनय वखाना॥ दीन नाथ मम सरवस जेता॥ लीजे
दायज कृपा नकेता॥ मोकहे चरन कमल निज कीजै॥ ग्र
नुचर भमर रीति रति दीजै॥ एव मस्तु कहि दीन दयाला॥
कोहवर गये जुरी जहां वाला॥ भामनि तहां गारि ग्रनुरा
गी॥ देन निसंग रंग कहं लागी॥ ग्रैं चति कोउ पट पी
त मुरारी॥ हसि हसि करत कूट की प्यारी॥ कै कर चुम
क देत करतारी॥ त्रिय विलास परिहास उचारी॥ कोउ क
हत सखी दुलहं निकारे॥ पै सुसील गुरा निपुरा निहारे॥
गोदे रंगनाथ मुख भावन॥ मेलति है लहकौर सुहावन
रंगदेव गोदे मुख नीकी॥ मेलहिं कौर सुखद मनुजीकी॥
सो प्रभेद ग्रनमित सुख सोई॥ वरनहिं एक वदन कि
मि कोई॥ भामनि वाल वृद्ध तरनैयां॥ वारवार सव ले
त वलैयां॥ दोहा॥ रंगदेव कर भयो ग्रस भवन मोद म
द व्याहु॥ गये वहुरि जनवास कहें हरषि भवन सद
नाहु॥ ३१॥ टीका॥ इस प्रकार जब पानि ग्रहरा होय
गया तब संपूर्ण पृथवी पर ग्रानंद ही छायत होजा
ता भया तिस समय भगवान ग्राप भी स्वस्ती शब्द को
उचारण करते भये तब पृथवी से लेकर ग्रकाश तक
चारो ग्रोर दुंदभी के शब्द का ग्रत्यंत शोर मच जाता
भया ग्रौर चौदांहीं भवनों मै जैजैकार ~~शब्द हो~~
~~ने लगा पर~~ धुनी छायत होय गई देवता गरा ग्रका
श से पुष्पों की नाना प्रकार वरषा करने लगे तब सु
र नर मुनी सब हरष से प्रफुल्लित भये हुये विस्नु चि
त्त को धन्य धन्य कहते हैं कि देखो जिस प्रमात्मा को
वेद ग्रौर पुराण सब नेति नेति कथन करते हैं कि कुछ

२५१

791

दीन नाथ गोदे सुकुमारी॥ रही मोहि इह पालन प्यारी॥
पुरकर सादि नारि नर साषी॥ मै निज दृग पुतरी इव रा
षी॥ साधु सरल चित सील सदा ही॥ अति निदान जा
नति कछु नाहीं॥ मोहि पति जुत पद पंकज पावन॥
लषि अलि अलनि समन संतापन॥ इहि कहे गुनि
निज चरनन चेरी॥ दीन नाथ निज दया घनेरी॥ रा
षत रहहु सदा इहि हाला॥ बारबार इह विनय कृपाला॥
विस्नुचित्त पुनि जुग कर जोरी॥ विनय वदन कछु कीन
न थोरी॥ तब सिव का प्रभु सुरन उठाई॥ जनवासहि
द्रुत चले लिवाई॥ गोदे मातु देखि अकुलानी॥ कठ
त विरहे बस रोदन बानी॥ पुर कर नारि सषी सुमुदा
ई॥ रोति विपत उर धीर विहाई॥ गोदे विरहे मन हुं
निधि नीरा॥ बहो जात तजि लोचन तीरा॥ दोहा॥ स
ठ को पादिक विस्नु चित आन लोग पुरवासु॥ विलपत
सब करुना विवस रो रो भरत उसासु॥ ३४॥ टीका॥ त
व सठकोप स्वामी से लेकर विस्नुचित्त और सब मुनी
भगवान के जाने की ~~खबरी~~ वार्त्ता सुनकर ततकाल विदाय
करने की त्यारी करने लगे कंचिं की रतनो कर के ज ^न
डी हुई सुखपालैं और मो■तियों गूंदी हुई सुंदर ^की
^र झालरें तैसे ही जंकसी■ वडुमनो हर उपकार किजिन
के बीच मणियों की मालार ची हुई शोभा पावती हैं इस
प्रकार मानो इंद्र के विमानो को लज्जा देने वाले विमा
न जो हैं सो सजाय कर और त्याय कर ■ सुंदर और इन
के बीच राखदिये तब विस्नुचि ~~अपनी स्त्री~~ त और
तिन की स्त्री दोनो रंग भगवान के चरन कमलों की प्री
ती वाले जो थे सो ■ अपनी पुत्री गोदे को और रंग
भगवान को ■ बडे सनेह और सतकार से तिन विं नो के ^मा
^फिर बीच विठाय देते भये और निछावर करके अर्पौं ति■ ^त
नके सीस पर धन वार कर सुंदर आरती उतारते
भये तिस समय तिन के नेत्रों से प्रेम जल का प्रवाह
चला जाता है तब गोदे की माता ने भगवान के चरन क

ना

मल पकड़ लिये औ विनती करने लगी कि हे दीनानाथ इह पुत्री जो है सो मेरे को प्राणों से भी प्यारी रही पुर के सव नारी नर इस वार्ता के साखी हैं जो मैने इस को नेत्रों की पुतली के समान कैसे पाला और राखा है इह तो साधू सुधे सुभाव वाली सदा सील और व्रत से नहीन कुछ भी जानती नहीं है हे दीनवंधू मेरे को पती के सहित अपने चरन कमलों के भ्रमरी भ्रमरा जान कर और गोदे को अपने चरनो की चेरी समुझकर सदैव इस पर दया दृष्टी हीं रखते रहो मेरी वारवार एही विनती है फिर इसी प्रकार विस्नुचित्त भी हाथ जोड़ कर वारवार विनती करने लगा तव देवताओं ने रंगभगवान का विमान जो है सो उठाय लिया और जहां वरात उतरी हुई थी तहां आनंदपूर्वक लै आये गोदे की माता पुत्री को जाती देखकर व्याकुल होय गई और विरहे के वश होयकर वड़ी दुख की वानी से रोदन करने लगी तैसे हीं सव पुर की नारी और सखी गण गोदे के विजोग से व्याकुल भई हुई रुदन करती हैं मानो गोदा के विरहे का समुद्र उमड्या हुआ तिन के नेत्रों के किनारों उछल कर वहा चला जाता है सठकोप स्वामी लेकर विस्नुचित्त और जितने मुनी ऋषी औ गोदे की विरहे से अधीर भये हुये आंसू भर भर कर रोवते हैं ३४॥ चौपाई॥ उत गोदे जुत रंग उदारा॥ गरुड़ जान निज भये सवारा॥ गेह गेह गगन दुंदभी वाजी॥ चौदस भवन जैति धुनि छाजी॥ विधि मराल शिव नंदि सवारू॥ चढे शक्र ऐरावति चारू॥ ~~[illegible]~~ सिखी स्वामि कार्तिक सुख भीने॥ वरुण सुखासन आसन कीने॥ पहुप विमान धनद छवि छाये॥ चढे महिष जमराज सुहाये॥ और हु सकल देवगण नाना॥ कै असूढ निज रुचिर विमाना॥ रंगनाथ प्रभु संग सुहाये॥ प्रमुदित रंग नगर कहं आये॥ आन भक्त संत जन अनुरागी॥ लिये छत्र चामर वड़भागी॥ करत जात सेवन जग त्राता॥ असमोहत पथ नाथ विराता॥

भी

से

से

छवि सों

तव गोदे कहे दीन दयालू॥ वन उपवन गिरि ग्राम रसालू॥ पावन सुभ्र सरित सर जोई॥ चले जात दिषरावत सोई॥ देखि प्रकाल भक्त थल पावन॥ मनेवचन गोदे मन भावन॥ इहि थल वसहिं भक्त मम प्यारा॥ जासु प्रकाल नाम निज धारा॥ चौरज व्रत संतन हित जासा॥ आपु नहिन ~~सेवक~~ नेसुक धन आसा॥ एकवार आये गृह साधू॥ अति तुध्यत मम नाम अराधू॥ रह्यो न भक्त अन्न कछु गेहू॥ भयो दुषित मामनि जुत तेहू॥ मोर समरी करत वनमाहीं॥ गयो पथक जन लूटन काहीं॥ कढ्यो न पथक पंथ तहिं कोई॥ भूषे संत सदन लखि सोई॥ लाग्यो रुदन करन अकुलाई॥ तव मैं वन्यो पथक अतुराई॥ लूट्यो मोहि लेत वित गायना॥ मुदित जिमाय संत सुभ भवना॥ दोहा॥ अस प्रकार त्रिभुवनपती गोदे रतिमति काहिं॥ दिखरावत पथ ललित थल गये रंगपुर माहिं॥ ३४॥ टीका॥ उहां गोदे के सहित रंग भगवान बडे आनंद से अपने गरुड वाहन पर सवार होजाते भये तव आकाश में दुंदभी जो है सो वाजने लगी और चौदाहीं भवनों मैं जै जै कार धुनी छायत होजाती भई तिस समय ब्रह्मा जो हैं सो हंस पर औ महादेव नंदीप र इंद्र ऐरावती हस्ती पर स्वामी कार्तिक मोर पर और वरुण ~~[illegible]~~ पर कुवेर पुहप विमान पर जमराज महिष अर्थात संढे पर और जो देवतागण थे सो भी सब अपने अपने सुंदर विमानो पर चढे हूये रंगनाथ भगवान के साथ साथ ही रंगपुर को चले आवते भये इनतें भिन्न और भक्त संत हितकारी जो थे सो वडभागी हाथों में छत्र चामर धारन किये हूये मारग में भगवान का सेवन करते जाते हैं ऐसे रंग भगवान की अदभुत वरात जो है सो मारग में अत्यंत ही शोभा देती भई तव गोदे को भगवान वडे सुंदर वन और उपवन गरी जो परवत और

सकल उतसाहु॥ भवन गवन कहे उदत द्रुत भये भवन सदनाहु॥ ३३॥ टीका॥ तब सब कोई धन्य धन्य कहिकर विस्नुचित्तकी वड़ाई करने लगे कि इसके समान है ना भया ना होगा सख सुजसों का पात्र सत्य करके एही है ऐसे अनेक श्लाघा करके सभा जो है सो अपने अपने विखर जाती भई और वराती जन सब अपने वास अस्थान को चले आये तब चौथे दिन रंगभगवान आनंदसे अपने सुसराल के घर मै चले आये तहां विधी पूरवक सुंदर चौथी चार जो है सो सब होता भया तिस राती को रंगभगवान अपने सुसर ~~...~~र विस्नुचित्तके घर मै ही निवास करते भये गोदेके सहित साती रात हास विलास और आनंद मै ही मगन रहे जब चार घड़ी रैन बाकी रही तब सठकोप स्वामी से लेकर और मुनी आचार्ज जो थे सो सब मिलकर भवन के द्वार पर चले आये और जगतपती के जगाने के वासते वड़े सुंदर छंद प्रबंध ~~...~~ और नवीन पद रचकर वडी मधुर स्वर से गायन करने लगे तब प्रात काल ऐसे मधुर गायन को सुनकर गोदेके सहित भगवान कृपानिधान ततकाल जाग उठते भये और सौच सनान इत्यादि सब करके फिर दिव्य वस्त्र और भूषण पहिरकर अपने घर को जाने की अभिलाषा वाले होजाते भये॥ ३३॥ चौपाई॥ सठकोपादि विस्नुचित जेते॥ गवन भवन नायक लखि तेते॥ लगे विदाय करन सब त्यारी॥ केचिन रतन रुचिर कृत कारी॥ सजी सुभ्र सिवका सुख पालकि॥ ~~...~~ मानिक विमल दिपत कल झालर॥ छयो उछाउ छोर जरकारी॥ मंजु मालमणि की चमकारी॥ निदरत मनहुं प्रहूत विमाना॥ ल्याये अजर साजि सनमाना॥ विस्नुचित्त दंपति बड़भागी॥ रंगनाथ चरनन अनुरागी॥ गोदे संजुत दीनदयालैं॥ दी विठाय सुभग सुखपालैं॥ करि परिछन आरति उताहीम प्रेम वार दृग लेत नवारी॥ गोदे मातु चरन भगवाना॥ गहित करन मुख विनय वखाना॥

[margin: कोई जगत मै]
[margin: सुभ]

समय पाय अभिरामा॥ गोदेरूप सील छबि धामा॥ करत
रंगनायक सिवकाई॥ गई रंगपति अंग समाई॥ अस प्र
कार इह चरित नवीना॥ मैं संतपत कथन कछु कीना॥
गोदे सरस भक्त संसारा॥ भयो नँवयो रंगपति प्यारा॥ जे
हि हित दीननाथ कलि काला॥ धरि प्रतत्त निजरूप रसाला॥
सुर समाज जुत भक्त सनेहू॥ धायो चरन विस्नुचित गेहू॥
लोकरीति जुत कीन विवाहू॥ देखे विदित देव सब काहू॥
जनि अचरज कछु लखहु नभाई॥ भक्तन हेतु भक्त सु
खदाई॥ का न करहिं कौतुक संसारा॥ दीननाथ कहे भक्त
पयारा॥ भक्त हेत जानत जग सारी॥ सारदूल नर बने मु
रारी॥ धार्‌यो मच्छ कच्छ वाराहू॥ भक्त हेत वपु सुर
नर नाहू॥ वामन राम कृस्न संसारा॥ भक्तन हेत ली
न अवतारा॥ नरसि भक्त हित स्यामल साहू॥ बने ना
थ जानत सब काहू॥ तुलसिदास हित बाल कनीका॥
लीन्यो चित्रकूट कल टीका॥ होत कूप चुत सूर नि
वारे॥ नाना वपुष नाथ निज धारे॥ सदना हेत विस
वहु रंगा॥ रहे सि तुलत अमुख कर संगा॥ भक्त प्रकाल
हेतु भगवाना॥ बने पथक सरबस लुटाना॥ मीरा के
बनि गिरधर नागर॥ कीन तासु चै भवन उजागर॥ दो
हा॥ अस प्रकार करुणायतन भक्त हेत संसार॥ धर
हिं सुभेष वसेष कल करहिं अनेक विहार॥ ३६॥ तहां
दीनबंधु भगवानने सब देवता मुनी ऋषी विदाया लेकर
और बारबार जैजैकार बुलायकर स्याम कमलवत जो
भगवानके चरन हैं सोई हृदयमें धार कर अपने अपने
आश्रमको चले जाते भये और ईहां भक्तसुखदायक भ
गवानकि जो अपनी छबीसे कोटि कामदेवकी छबीको ल
ज्जादेते हैं गोदेके सहित षट ऋतूका आनंद भोगते औ
र रंगपुरमें वास करते संसारके अनंत हीं जीवोंको तार
देते भये तब कुछ काल पायकर रूप सील और छबी
की निधी गोदे जो थी सो रंगभगवानको सेवती सेवती
कौतुकसे रंगपती के अंगमें हीं समाय जाती भई॥

ˇजोहैसो

इसप्रकार इह चरित्र कुछ संक्षेप करके गायन किया गया है मोदे के समान संसार मे ~~और~~ रंग भगवान का प्यारा

ˇना भक्त कोई है ना होवेगा ~~देखो~~ क्योंकि जिसके वास्ते कलीकाल मे भगवान अपना अतत मनोहर रूप धार कर सब देवताओ के समाज के सहित विष्णुचित्त जी के घर मे चरन धारे हैं और लोक रीत के अनुसार सुंदर विवाह जो है सो किया सब देवता और मुनी ~~ऋषी~~ ऐसे भगवान के अदभुत रूप को प्रतक्ष नेत्र भरकर देखते भये इस वार्ता मे कछु आचर्ज नहीं जानना चाहिये क्योंकि भक्तो के हेत भगवान संसार मे क्या कौतुक नहीं करते हैं

ˇमै दीन बंधू को जगत मै भक्त ही प्यारा है देखो कि भक्त के वास्ते सब लोग जानते हैं भगवान ने नारसिंह रूप धारन किया है और भक्तों के वास्ते ही मछ कछ वाराह वामन और परसराम इत्यादी रूप धारन किये हैं तहां नरसी भक्त के निमित्त स्यामल साह होते भये और तुलसी दास जी के वास्ते वडे कोमल बालक बन कर चित्रकूट मे तिलक लेते भये ~~बल्कि~~ कूये मे गिरते हुये सूरदास जी को निवारण किया और सदना भक्त के हेत भक्त हित कारी भगवान मांस के साथ तुलते रहे हैं प्रकाल भक्त के वास्ते दीन बंधू पथिक बन कर ~~ति~~ तिसके हाथ अपना सरवस्व लुटाय देते भये और मीरां बाई के गिरधर नागर पती होकर तिसको तीन लोक मे उजागर कर ~~देते भये~~ कर दिया है इस प्रकार भगवान कृपानिधान भक्तों के वास्ते संसार मे नाना भेष धार कर अनेक कौतुक और विहार करते रहे हैं ॥ ३६ ॥

ˇश्री इति भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती मःहातमे भाषा टीकायो मोदे चरित वरणनं नाम सर्ग ॥००

३५४

354

सुंदर ग्राम बडी शोभावाले पवित्र नदी ग्रौर सरोवर
जोहैं सो सब दिखावते चले जाते हैं तब ग्रागे प्रकाल
भक्तका पवित्र ग्राश्रम देखकर भगवान कहने लगे कि
हे गोदे इस स्थल मे मेरा परम प्यारा भक्त प्रकाल नाम
करके प्रसिद्ध जो है सो निवास करता है ग्रौर तिसने इह व्र
त धारा हूग्रा है कि संतोके वासते चौरज करना ग्रर्थात र
साते चलैवाल्यों को लूटना ग्रौर तिनका धन संतो को हीं
खवाय देना ग्रपा कुछ भी ग्रहण नहीं करना एक बार
तिसके घरमे साधू जो ग्राय गये सो क्षुध्या करके ग्रत्यंत दुखी
हो रहे थे तिनको केवल मेरे हीं नामका ग्राधार था ग्रौर इहो
भक्त के घरमैं भी तिसदिन ग्रन्न मात्र कुछ नहीं था तिसतें
स्त्री के सहित सो मेरा भक्त परम कलेशको प्रापत होता भया
तब हृदयमे मेरेको सुमरता सुमरता पथक जनोको लूटने
के वासते बनको चला जाता भया दैव योग से तिस दि
न तिसको कोई भी पथिक ग्रर्थात रसते चलने वाला नहीं
मिला ग्रौर घरमे संतो को भूखे जान कर दुखी भया हूग्रा रु
दन करने लगा तब मै ग्रपने भक्तका कलेश विचार कर तु
रत हीं तहां पथिक जायबना मेरेको देखते ही तिसने त
तकाल लूट लिया ग्रौर सो इ धन लेकर ग्रौर घरमे जा
यकर ग्रानंद पूर्वक संतो को भली प्रकार भोजन जिमा
य दिया इस प्रकार भगवान कृपानिधान ग्रपनी प्यारी
गोदे को सुंदर थल मारग ग्रौर नदी वन सरोवर इत्या
दि दिखावते हूये ग्रपने वास ग्रस्थान रंगपुर मे ग्राय
प्रापत भये ॥ इथ ॥ चौपाई ॥ तहं सुरगण मुनीस समुदाई ॥
करि प्रणाम पद लेत विदाई ॥ बारबार जै जै ति उचारी ॥
स्याम सरोज चरन उरधारी ॥ निज निज गये हरष सर
साते ॥ इत भगवान भक्त सुख दाते ॥ रंगनाथ बहु रंग रं
गीले ॥ हरन कोटि छवि मदन छवीले ॥ गोदे सहित सब
द सुंमं पावन ॥ करि विहार षट ऋतु मन भावन ॥ निवसि रं
गपुर दीन उधारी ॥ तरे ग्रनंत जीव संसारी ॥ तब कछू

बानी सुनकर भगवान मुषसे मुस क्याय कर कहनेलगे कि हे प्यारी तेरे उदर मै निश्चय कर के मेरे समान ही पुत्र उतपन्न होवेगा किंतु बुद्धी और गुण चतुराई मे कुछ मेरे से भी अधिक ही होवेगा अब मै हे रुकमनी तेरे पुत्र के वासते जहां कैलास पर महादेव वास करते है तहां जाय के यकर विधी अनुसार स्थित होयकर तपकरता हूं और तप के प्रभाव से शंकर भगवान को रिझायकर तिनसे वरदान लेऊंगा और फिर आय करके तेरे को अपने समान शक्ती और सामर्थ वाला सरव सुखों की निधी पुत्र जो है सो देऊंगा इसप्रकार कहिकरके भगवान कृपानिधान तहां भवन मै कोमल सेजा पर विराजमान होयगये और जब पहर भर रात बाकी रही तब दीनानाथ जाग उठते भये ॥१॥ चौपाई ॥ हरहर रहरतम सुख बानी ॥ सौच सनान कीन सुख मानी ॥ करि विधि जुत पुनि पूजन भावा ॥ तेरां सहसर धेनू मंगावा ॥ कये दान सव दुजगण काहीं ॥ आये बहुरि सभा सद माहीं ॥ हृदय हरष प्रीत जदुराये ॥ उधव सात्यकि लीन बुलाये ॥ आये बहुरि सकल पुरवासी ॥ कृस्न कमल मुख दरसन आसी ॥ दंड प्रणाम धरनि धर सीसा ॥ करहिं ररत जैजैति रमीसा ॥ तहां कोटि ससि सदृस आये ॥ सभा मध्य बलराम सुहाये ॥ उठे सभ्य छवि निरषत रामा ॥ भरे प्रमोद मोद घन स्यामा ॥ कनकासन बलराम विठाये ॥ दक्षण दिसि जदुनाथ सुहाये ॥ कृतवरमा सात्यकि अभिरामा ॥ आये सभा मध्य ~~[illegible]~~ गुणधामा ॥ कृस्न कमल पद वंदि सुहाये ॥ बैठे उर प्रमोद सरसाये ॥ तहि अवसर मागद अनुरागे ॥ पठन वदन विरदावलि लागे ॥ कियो न कीव न सोर अपारा ॥ सभा द्वार चहुं वोर अपारा ॥ उग्रसेन महाराज उदारा ॥ आय इंद्रछवि हरन हजारा ॥ उठे महान सुभट जन सारे ॥ सादिर सवन नरेस जुहारे ॥ नृप वैठे वसुदेव कु

मारा॥ पुनितस लागिगयेदरबारा॥ दतणाराम बामज
दुबीरा॥ बीचबिराजतमूप मधीरा॥ आये पुनि उद्धव तहि
ठामै॥ बैठकरि प्रणाम घन स्यामै॥ सुमति प्रधान नी
तिमत नागर॥ उरत देव बल जासउजागर॥ असुर मनुज
सव मे दनि राई॥ मानत जहि सासन सिर नाई॥ दोहा॥ अस
उद्धव मति धीर कहि जदुकुल कुमद मयंकु॥ सव जादवन
सुनायमुष मन्यो वचन अनसंकु॥२॥ टीका॥ तव कुस
देव हरहरहर मुखसे उचारते हुये सौच सनान सव करके
पवित्र पूजन जो है सो करते भये फिर तेरा हजार गौ मेगवा
य कर ब्रह्मणों को दान कर के तिसतें उपरांत आनंद
पूर्वक सभा के बीच चले आये तहां उद्धव और सात्यकी
को भी बुलाय लिये पुरवासी भी हरष से पूरित भये हुये भ
गवान के दरसन की अभिलाषावाले होकर सव चले आवते
भये और पृथवी पर माथा धरकर कृपासिंधु को दंड प्रणाम
करते और जैजैकार ~~[illegible]~~ बुलावते हैं
फिर तहां कोटि चंद्रमा की आभा वाले सभा के बीच बलरा
मजी भी आय गये तिनके आवने से सभा के सव लोग उ
ठ खडे भये और घनस्याम भगवान ने भी अपने हृदय मे
परम हरष और सुख माना तव सुवर्ण के सिंघासन
पर बलरामजी विठाय लिये जो दहनी और भगवान वि
राजमान होय गये कृतवरमा और सात्यकी भी जदु
नाथ जी के चरन कमलों पर प्रणाम करके सभा के बीच
बैठ जाते भये तव मागद सूत जो भाट जन हैं सो मुखसे ना
ना प्रकार की विरदावली जो है सो पढने लगे नकीबजन
भी सभा के द्वार मे अनेक प्रकार का शोर करते हैं और
इंद्र की अनेक छवी को हरवाले तहां उग्रसेन महाराज
भी आय गये तिन को देख कर सव सूरवीर उठ खडे हुये
और सीस नायकर वंदना करने लगे और राजा उग्रसे
न नम्र होयकर भगवान कृपानिधान को वंदना करते
भये फिर सभा जो है सो यथावत लग जाती भई दहने
बलराम और वायें घन स्याम बीच मे राजा उग्रसेन

वड़ेसतकारसे

३२६ २९८

फिर तहां उद्धव जीभी आय गये और उनस्थान के चर
नोपर प्रणाम करके बैठ जाते भये सो उद्धव जी कैसे हैं कि
जिन के बल प्रताप के आगे सुर असुर और मानुष्य सब
कांपते रहते हैं तब ऐसे उद्धव जी को जदुकुल के कुमदों के
चंद्रमा कृस्न प्रसन्न भये सब जादवों को सुनाय कर वचन
जो है सो कहते भये ॥२॥ चौपाई ॥ मैं तप हित कैलास हि
धारहुं ॥ करि प्रसन्न हर दरस निहारहुं ॥ और हु कछु का
रज मोहि आसा ॥ तुम जदु वीर सकल बल रासा ॥ मैं जो
लों आव हुं फिरि नाहीं ॥ तो लो तुव धरि धीर सदा हीं ॥
राखहु सजग नगर सं माहीं ॥ जथा उचित मति जतन
विचारी ॥ केसी कंस मल्ल संसारा ॥ मैं वहाय सब नगर प्र
सि धारा ॥ उग्रसैन कहं तिलक सवाह्यो ॥ और हु विदत
असुर संघार्यो ॥ जिन जिन वैर कियो मोहि संगा ॥ ते प्र
चारि मारयो मन हि रंगा ॥ पौंड्रादिक अजहूं नृप क्रोधी ॥
ऐहि मोर सठ अधम विरोधी ॥ विनु मम सून नगर स्व
निहारी ॥ आवहिं अवसि मूढ हितवारी ॥ ताते सावधा
न तुम ह्वै कै ॥ रहहु दिवस निसि आयुध गहि कै ॥ राखि
हु सुला एकदर वाजा ॥ रहहिं चारि दिसि वीर समा
जा ॥ विना चक्र अंकित पुर माहीं ॥ आगागवन
करै कोनाहीं ॥ जनि की जो रुचि विपुन अहेरैं ॥ राखि
हु चमू नगर चौफेरैं ॥ बहुरि कह्यो सात्यकि स
न नाथा ॥ श्रीमुख सुभ्र सिलोचन गाथा ॥ दोहा ॥ वी
र धीर विक्रमि विदत तुव गुण नीति निधान ॥ ब
ऊग धनुष धरि पहरि कल कवच कुंर दसतान ॥
की जोरैन नसैन भटी रहहु सजग निज द्वार ॥ क
रहु जथा सासन भनै अग्रज सुमति विचार ॥ ३ ॥ टीका
हे उद्धव मैं अब तप के नमित्त कैलास को जाता हूं तहां
महादेव को प्रसन्न करके तिनका दरसन पाऊंगा अरु और
कारज की मेरे को कुछ आसा है हे जदुकुल के वीर तुम
सब भली प्रकार सामर्थ हो अब ऐसे करना कि जब तक मैं
लौट कर नहीं आऊं तब तक तुम सब धीरज को धारकर

अथ प्रद्युम्नकरन पिसाच चरितं

दोहा॥ प्रद्युम्नकर पिसाचकी कथा श्रवण मन रंज॥ वरनहुं यदपि चितमति सुमरि कृष्ण पदकंज॥ चौपाई॥ एकसमय द्वारावति चारू॥ जहां कृष्ण दीनन दुखटारू॥ रुकमणि संजुत सदा निवासा॥ करहिं विनोद प्रमोद विलासा॥ तव रुकमणि प्रभु पद सिर नाई॥ पानि युक्त जुग विनय अलाई॥ दीननाथ मोरे मन आसा॥ सो पुरकर सहित मन भव त्रासा॥ देहु पुत्र एक कृपानिधाना॥ होहि रुचिर जदुवंस प्रधाना॥ गुणप्रवीन सब लोग उजागर शास्त्र शस्त्र विद्या बलसागर॥ गिरा गूढ सुनि रुकमनि रामा॥ सुखकुस क्याय मने स्व न स्यामा॥ तोर समान सुवन नु व गेहा॥ उपजहिं अवसि नकछु संदेहा॥ मोहितें अधिक गुनन मति धामा॥ होहिं विदित सब लोक ललामा॥ जो है सुवन हित मै अव प्यारी॥ वसहिं जहां कैलास पुरारी॥ तहां करहुं तप सहित विधाना॥ उनहिं रिझाय लेहुं वरदाना॥ तोरे देहुं वहुरि सुत आई॥ निज सदृश सुंदर सुखदाई॥ दोहा॥ अस कहि कीन्यो सैन हरि भवन सेज मृदु सेत॥ रही एक जब जामनिसि जागे कृपानकेत॥१॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो अब प्रद्युम्न करन पिसाच की वडी मनोहर गाथा जो है सो जैसीक मेरी वुद्धीके अनुसार हो सकती है कृष्ण परमात्माके चरन कमलोंको हृदयमै धारकर वरणन करता हूं एकसमय द्वारिकामै कि जहां रुकमणीके सहित कृष्ण भगवान सदैव निवास करते थे और नाना प्रकारके आनंद और विलासों भोग रहे थे तहां रुकमणी हाथ जोड कर "के और चरनों पर सीस नाय कर विनती करने लगी कि हे कृपानिधान मेरे चित्त मै एक आसा हो रही है सो आप कृपा करके मेरी ऐसी आसा को पूरण करिये सो क्या है कि मेरेको पुत्र दान करिये परंतू कैसा पुत्र हो "कि विद्या गुण शास्त्र शस्त्र मे परम प्रवीन और संपूर्ण जदुवंस मै प्रधान और उजागर होवे ऐसे रुकमणी की गूढ

"लोगों मै

३८७

397

सो उचारी॥ सुनहु मोर अग्रज हितकारी॥ द्वारावति
महे सब सुख छावा॥ इह तुम्हार जदुवंस सुहावा॥
इनकर रक्षण जतन विचारी॥ करिहु जथामति फु
रहि तुमारी॥ अस सुनि भनेराम सुख गाथा॥ याक
र कवन सोच जदुनाथा॥ ऐसो कोन वीर जगमाहीं॥
मोर अछत आवहिं पुरमाहीं॥ दोहा॥ जो के प्रीय न
हीं प्राण निज नहि न काम धन राज॥ सो आवहिं पु
र लखन मम रिपु वत साजि समाज॥ ४॥ टीका॥ ऐ
से भगवान की परम हितकारी आज्ञा सुनकर सात्य
की हृदय मे सुखमान कर कहने लगे कि हे दीनानाथ
तुमारी कृपा प्रसाद से मेरे को संपूर्ण जगत के सूर
वीरो का कुछ भी भय नहीं है जो कदी इंद्र वरुण कु
वेर होकर इह भी दल साज कर और कोप से उनमत्त
होकर आवें ~~केमेरे जीवते नगर को कोई देख सकें~~
ते तो भी मेरे जीवते नगर का देखना दुर्लभ ही समुझें
अर्थात तिनको क्या सामर्थ है कि नगर को देख सकें मेरे ध
नुष के गढे बाण छूटने से सब रणभूमी मैं ती मक्खो डछोड
कर जावेंगे और पृथवी के राजे तो किस गिनती मे
हैं आपके प्रतापसे मेरे आगे सब सहज हैं हे दी
नबंधू मैं तोई कहूंगा कि जो बलराम जी आज्ञा करेंगे
इस प्रकार सात्यकी के वचन सुनकर भगवान ब
लराम जी सो कहने लगे कि हे हितकारी भ्राता द्वारि
का मै इह तुमारा जदुवंस जो है सो सब भली प्रकार परि
पूर्ण हो रहा है अब इस की रक्षा तुमारे आधीन है जैसा
बुद्धी विचार मै आवे तैसाही जतन विचार कर इस ज
दुवंस की रक्षा करने मै सावधान रहना ऐसे भगवान
की शिक्षा सुनकर बलरामजी कहने लगे कि हे कृपानि
धान इस वारता का कोन इतना सोच है और जगत
मे ऐसा कोन सूरवीर सामर्थ है जो मेरे होते पुर मे

आय सके और पुर को देख सके जिस को राज और धन की कुछ कामना नहीं और अपने प्राण भी प्यारे नहीं है सो शत्रु वत्त समाज सजाय कर मेरे नगर के देखने को आवेगा॥४॥ चौपाई॥ उग्रसेन कहे बहुरि रसाला॥ दीन देस बदन ने द लाला॥ पुर कर रहहु सदा रखवारे॥ तुव सामर्थ सुभट सरदारे॥ तजहु भवन जनि सासन मोरी॥ तुमरे विदित अधम रिपु घोरी॥ पुनि जदुवं सिन कहे न दुराई॥ श्री मुख सासन दीन सुनाई॥ रहहु सकल अग्रज अनुसारी॥ करहु सजग पुर कर रखवारी॥ अस प्रकार करि सबन सिखावन॥ आय भवन कमला मन भावन॥ वेनतीय द्रुत लीन बुलाई॥ परे चरन खग जेति अलाई॥ तासु मसे सब बदन उचारी॥ दीननाथ द्रुत कीन सवारी॥ चले धनद दिसि कहे जदुनंदू॥ सुमरत सुषद भाल कल चंदू॥ सुरसमाज प्रभु संग सबाही॥ अस तुति करत गगन पथ जाही॥ बदरी बन कहे कमल विलोचन॥ आये भक्त संत दुष मोचन॥ बहती जहा कलुष कलि भंगे॥ सीतल विमल वारि वर गंगे॥ दोहा॥ तहा वास वहु काल करि वृत्त बधन अगमारि॥ करि अषेर तप कीन सब दीन दयानिधि जारि॥ फिर उग्रसेन को भगवान आज्ञा देते भये कि हे राजन तुम वल सामर्थी सरब गुणनिधान हो पुर की भली प्रकार रक्षा करनी मेरी बार बार एही आज्ञा है कि घर और पुर को त्याग कर कही जाना नही क्योंकि तुमारे सिर पर बड़े बड़े भारी शत्रु हैं सो समय ही देखते रहते हैं तिनका दाउ नहीं खाना तिसते उपरांत जदुनाथ जी महाराज सब जदु वंसियो को कहने लगे कि हे भाई तुम सब बलराम जी की आज्ञा अनुसार रहना और भली प्रकार पुर की रखवारी मै जतन करना और सावधान रहना इस प्रकार सब को सिखा करके फिर भगवान कमलाकांत जो हैं सो अपने घर मै चले आये और तहा वैनतीय जो गरुड़ जी हैं सो बुलाय लिये तब खगपती आवते ही चरनो पर माथा नावते भये

तिनको भगवान अपना सव वृतांत सुनाय कर फिर तत
काल तिनपर अरूढ अर्थात सवार होजाते भये और हृ
दयमे महादेवजी को सुमरते हूये धनद दिसी को चल पडे
तव देवताउं का सव समाज भगवानके साथसाथ अका
श मारगमे अस्तुती करता चला जाताहै दीनवंधू और
भक्त संतो के सुखदायक भगवान जो हैं सो चलते चलते वद
री वन मे आय प्रापत भये और जहां कलीकाल के पापों
का नास करने वाली ~~गंगा वहती~~ सीतल और निरमल
जल करके युक्त गंगा वहती थी तहां वहुत काल तक
निवास करके वृतासुर आदि मरवाय देने का वराजोर
पाप जो था सो असंख्य तप करके सव जलाय देते भये
॥५॥ चौपाई॥ जहां मादि रावत रनमाहां॥ कीनउ अतप
रघुकुल नाहां॥ सुर ऋषि सिद्ध संत मुनि नाना॥ करहिं
महां तप हित कल्याना॥ सोवदरी वन अमल अनूपा॥
पहुंचे जव तहे जदुकुलभूपा॥ तहि वनके मुनि वृंद नि
वासी॥ कृस्न कमल पद दरसन आसी॥ आय लेन सा
दर अगवाना॥ भनत वदन जैजै भगवाना॥ दंडप्रनाम
करत अनुरागे॥ वारवार चरनन लागे॥ पहुंचे सोऊ
समय जदुराजा॥ कर आवली लिये मुनिन समाजा॥
सकल मुनिन कहे कृस्न जुहारो॥ आसिष वचन मुनि
न उच्चारो॥ गहित विजन चौमर रुचि हाथैं॥ सेवन
लगे मुदित जदुनाथैं॥ लखि अस प्रीति मुनिन समुदा
ई॥ उतरे भूमि तज्यो षगराई॥ चलत चरन पंकज भ
गवाना॥ लागे कुस कंटक दृत नाना॥ तहि वदरी का
नन कलपावन॥ जहं जहं आस्रम मुनिन सुहावन॥
देखि मुनिन जुत कृपा निधाना॥ हरषि करहिं वंदन स
नमाना॥ मुनि सप्रीति आस्रम लै जाई॥ अर्घ्य पाद्य आ
चमन कराई॥ कंदमूल फल भोजन चारू॥ प्रभुहिं क
रावत अमिय अहारू॥ अस करि गृहन मुनिन सत
कारा॥ चले जात वसुदेव कुमारा॥ अति आस्र

ओर सावधान रहिकर अपने नगर को जैसे जानो तैसे संभाल रखना तुम जानते हो कि मैने केसी केस ओर मष्ट चाणूर आदि सब तलवार की धार मे वहाय दिये हुये है ओर उग्रसेन को राज तिलक देकर बडे बडे भारी असुरो को मार दिया हूआहे जिस जिसने मेरे साथ वैर भाव दिखलाया मैने तिस तिस को ही रण मे प्रचार कर चूर दूर कर दिया है देखो पौंड्रादिक बडे क्रोधी राजा अभी तक मेरे महा विरोधी जीव ते जागते हैं सो मेरे विना सूना नगर देखकर अवश्य चढि आवेंगें ओर कुछ अनर्थ ही करेंगे ताते भाई तुम भलीप्रकार शस्त्र धारकर रात्रीदिन अपने पुर मे सावधान रहना केवल एक दरवाजा खुला रखना ओर चारोंई दिसामे वीरधीरोंको जमाये रखना चक्र के चिन्ह लगे विना पुर मे कोई आना नहीं पावे ओर देखना कहीं वन मे शिकार खेलने को मत चले जाना नगर के चारोपासे सेना स्थित करदेनी फिर भगवान सात्यकी को शिक्षा देने लगे कि हे सात्यकी तुम बडे पराक्रमी वीर धीर ओर नीती मे भी परम चतुर हो खड्ग धनुष कवच इत्यादि सब वीर शस्त्रों को धारकर रात्री भर जागते रहना ओर द्वारे की भलीप्रकार सावधानता से खबर रखनी बलराम जी की आज्ञा के अनुसार सब कारज करना ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ सुनि निदेस जदुपतिं सानी ॥ मनेवचन सात्यकि सुखमानी ॥ तुव प्रसाद भगवन मोहि काहीं ॥ त्रिभुवन मधिन भीत कछु नाहीं ॥ कबहु कि ईंद्र वरुण जमराजा ॥ विधि कुवेर संकर दल साजा ॥ आवहि कोप चषक रण पीवत ॥ दुरलभ लषन नगर मम जीवत ॥ छूटत मोर वाण धनु गाढे ॥ जाहि सीस रण मेदनि छाडे ॥ छितके भूप कौन कित लेखे ॥ तुव प्रसाद सब सुगम परेखे ॥ सोई करि हो मै दीनदयाला ॥ मनहिं वदन जस राम कृपाला ॥ तब बल कहे प्रभु क

भक्तहितकारी भगवान मुनियोंका सतकार ग्रहण करते हूये चले जाते हैं और अत्री अगस्त वसिष्ट भरद्वाज गौतम व्यासदेव नारद वालमीक इत्यादि सब मुनिंद्र और भगवान के दास भक्त जैजैकार ररते हूये चारो पास मिले हूये ऐसी शोभा से चले जाते हैं कि जैसे नवीन वादर को देखदेख के की जो मोर हैं सो वडी हरषकी वानी करते और प्रसन्न होते हैं तव कुछ दूर जायकर के भगवान वडा सुंदर स्थल देखकर हृदय मे महादेव को सुमरते हूये तुहीं वैठ जाते भये ॥१॥ चौपाई ॥ मुनिसमाज चहुं वोर विराजा ॥ फवे वीच जदुकुल महाराजा ॥ चितवहिं सव इकटक द्रग कीने ॥ मानहु मोद महोदधि लीने ॥ सादिर कलित कुसासन आनी ॥ प्रभु कहं दीन मुनिन सुष मानी ॥ नेमृत वहुरि जुगल कर जोरी ॥ लागे करन विनेति अथोरी ॥ नाथ सदा हम कानन वासी ॥ तुव पराग पदपंकज आसी ॥ का करि हैं सेवन उपचारे ॥ हमरे सरवस नाथ तिहारे ॥ तव मुसक्याय भने गिरधारी ॥ सुनहु मुनीस महा तपधारी ॥ मे करुना तुव जाचन हारा ॥ औरहु सदा मुनि दास तुमारा ॥ सिवतप करन हेत तुव देसा ॥ मे कीन्यो इव विपुन नवेसा ॥ जहि विधि होहिं प्रसन्न उमीसा ॥ कहिये अव सोई जतन मुनीसा ॥ सुनि मुनि द्रप्रस भगवन वानी ॥ वोले वचन जुक्त जुगपानी ॥ दीनवंधु दीनन हितकारी ॥ तुव महेस मानस संचारी ॥ दोहा ॥ चाहु जास भगवान तुम दियहु वडाई तास ॥ प्रभु तुमरे मानस प्रीये भक्तसेत जन दास ॥१॥ टीका ॥ तव मुनियों का समाज जो है सो चोरो और शोभा देता भया और वीच मे जदुनंदन भगवान विराजे हूये छवी पावते हैं सव मुनी ऋषी इकटक नेत्र जोरकर भगवान के रूप को देखते देखते महा आनंद के सरोवर मे मगन हो

भक्तशिरोमणि

भक्तशिरोमणि

रहे हैं और कुसा का दिव्य और बड़ा पवित्र आसन लाय करके भगवान के आसीन होने अर्थात बैठने को बिछाय देते भये फिर हाथ जोड़कर और नम्र होयकर बिनती करने लगे कि हे भक्त पाल हम जो हैं सो सदैव वनमें ही निवास करनेवाले हैं और भगवन नित्त तुम्हारे चरनकमलो के दरसन करने की अभिलाषा रखते हैं आज हमारे धन्य भाग्य हैं जो दीन बंधू ने घर में आय कर दरसन दिया है यद्यपि हमारा सरवस्व सब कृपानिधान तुम्हारा ही है तद्यपि हृदय मै सकुच होता है कि दीनानाथ का सेवन और उपचार करैं ऐसे मुनियो की वानी सुनकर भगवान सुख से मुसक्याय कर कहने लगे कि हे तपधारी मुनीसरो तुम मेरा वचन सुनो जो मै तो सदैव तुमारी ही कृपा को जाचता रहता हूं और तुमारे ही चरनो का दास हूं महादेव भगवान का तप करने के वास्ते तुमारे देस विषे इहों वन मै आय निवास किया है अब कृपा करके कोई जतन कहिये कि जिस ते त्रिपुरारी भगवान सहजे ही प्रसन्न हो जावें इस प्रकार भगवान का वचन सुनकर सब मुनी लोग हाथ जोड़कर विनती करने लगे कि हे दीनानाथ हे दीनबंधू तुम जो हो सो सदैव महेसजी के मन रूपी सरोवर के हंस हो अर्थात सदैव तिनके मन मैं ही निवास कर रहे हो हे दीनहितकारी तुम जिसको ~~चाहो बड़ाई देने को सम~~ चहते हो तिसको बड़ाई देते हो तुम को अपने भक्त संत और दास जो हैं सो सदैव ही प्यारे हैं॥ ३॥ चौपाई॥ तब भगवान मने मृदु बानी॥ मै अब होंमु ग्रि जावन लागी॥ इहि थल निवसि करहु तप चेडा॥ सुंदर साधि समाधि अखेडा॥ तुम निज निज अब जाहु सिधारी॥ मोहि मानस अनुकूल विचारी॥ तब मुनि वंदि चरन भगवाना॥ निज निज आश्रम किये पयाना॥ इत उत्तर सुर सरि तट माहीं॥ बैठे करि आसन दृढ़ताहीं॥ मनहु जान निज वो लि मुरारी॥

हों

हमसो हरि

ईन रजायस वदन उचारी॥ सुमरत फिरि कीजो इत
आवन॥ करहु गवन अब भवन सुहावन॥ करि प्रना
म तब खगपति धाये॥ इत भगवान भक्त सुखदाये॥ बैठे
साधि समाधि अखंडा॥ जैसो प्रान प्यान ब्रह्मंडा॥ मूदे
नैन बांधि गति मन की॥ ह्वै गई दसा चेतगत तन की॥ अ
स प्रकार जदुपति तप पागे॥ संकरदेव आराधन लागे॥
सुर मुनि देखि उग्र तप नाथा॥ विसमित मनत पर
स्पर गाथा॥ दोहा॥ सकल जगत के ईस इह जदुकुल
कमल दनेस॥ इन कहे धरन समाधि कहि जानि न परहिं
उदेस॥।८॥ टीका॥ तब भगवान वद्रीकोमलवासी
से कहने लगे कि हे संत भक्तो मैं अब शंभू भगवान के
रिझावने वासते इस अस्थान मैं वास करके अखंड
समाधी लगाय कर अति उग्र तप जो है सो करूंगा अ
व तुम सब मेरे को प्रसन्न जानकर आनंद से अपने
अपने आश्रम को चले जावो ऐसे भगवान की आज्ञा
सुनकर सब मुनी ततकाल चरनो पर सीस नाय कर जै
जै उचारते हुये अपने अपने आश्रम को चले गये और तब
इहां भगवान कृपानिधान महादेव को सुमरकर गंगाजी के
किनारे पर दृढ आसन करके बैठ जाते भये और गरुडजी को
पास बुलाय कर कहने लगे कि हे खगनायक अब तुम भी
अपने स्थान को चले जावो परंतु ध्यान रखना कि जब मै
सुमरण करूंगा अर्थात तुम को याद करूंगा तो ततकाल मे
रे पास आय जाना विलंब नहीं करना ऐसे दीनानाथ की
आज्ञा पाय कर गरुडजी चरनो पर प्रणाम करके अपने
आश्रम को चले जाते भये तब इहां भगवान दसमे द्वा
र मे प्राण चढाय कर और अखंड समाधी
लगाय कर मन की गती को रोक कर नेत्रों को मूंद ले
ते भये शरीर की दशा तुरत ही अचेत होय गई इस प्र
कार भगवान तप मे नयुक्त होय कर शंकरदेव की
आराधना करने लगे तब देवता और मुनी ऋषी
भगवान का ऐसे उग्र तप देखकर बडे आचर्ज को प्रा

वसिषृ सुहाये॥ भारद्वाज गौतम मुनिराये॥ व्यासदेव
नारद वलमीका॥ और हु सब हरिदास अलीका॥ जेजे र
टत चहुं न दिसि जाहीं॥ जथा निरषि नवनीरद काहीं॥ कर
त केकि कल मंजुल वानी॥ महाप्रमोद मोदमन मानी॥
दोहा॥ कछुक दूर जब जाय के निरषि सुथल घन स्याम
वैठि गये उर सुमरि हर भक्त कलप द्रुम काम॥२॥ टीका॥
और ~~जसे~~ रावण को रण मे मार कर जहां रघुनाथजी
ने वड़ भारी उग्र तप किया है और जहां सुर ऋषी सिद्ध
साध मुनी जन ~~~ कल्यान की प्रापती के वासते वड़ा
घोर तप करते हैं सो तिस ~~~ निरमल वदरी वण मे
जब जदुनाथ जी महाराज आय प्रापत भये तब तिस व
ण के निवास करने वाले मुनी भगवान के चरन कमलों
के दरसन की आसा वाले जै जै कार वुलाते हूये दीनाना
थ के लेने के वासते आगे हीं चले आवते भये और प्रेम
के वस भये हूये भगवान के चरनो पर वार वार दंडप्रणा
म करने लगे दीनवंधू को तहां आवने मै सोकसमय
होगया मुनियो का समाज चारो पासे सोभा दे रहा
है तब भगवान नाथ जो दे हूये सब मुनियों को वंदना क
रते हैं और वे आनंद पूर्वक सब आसीसा देते हैं फिर भ
ती प्रीती से हाथों मे चमर पंषा इत्यादि लेकर भगवा
न कृपानिधान की सेवकाई मे ततपर होय गये इस
प्रकार मुनियों की भक्ती सेवकाई देखकर भगवान
प्रसन्न होयकर गरुड़ से उतर कर पृथवी पर चल
ने लगपड़े ऐसे पाउं के चलने से दीनवंधू के को
मल चरनो मे वण के कुस ~~~ कांटे और कंकर जो हैं
सो चुभ जाते भये तहां तिस वदरी वण मे जहां जहां
मुनियों के पवित्र आश्रम थे सो मुनि समाज को सा
थ लिये हूये कृपानिधान सब देखे देख सब का वंदन
और सतकार करते ~~~ और मुनी जो हैं सो आगे हीं
आय कर भक्ती पूर्वक घर मै ले जाते और सनमान से अ
र्घ पाद आचमन करवाय कर वड़े मधुर कंदमूल फल और प्रे
तके समान भोजन जो हैं सो भगवान को अहार करावते हैं इस प्रकार

संपूर्ण

८०१

५०१ श्री

को ही जानता था और रात्रीदिन शिव को रटता रहता था कानों मे छोटा बांधे हूये शिव के बिना और किसी का नाम नहीं सुनता था जो कोई तिस को धोखा दे कर और किसी देवता का नाम सुनाय देता तो ततकाल खडग से तिस का सीस काट देता और शिव शिव उचार कर छोटे का महां शबद करने लग जाता था तहां सो शिवजी को कारन के बिना ही हसते हूये देख कर हाथ जोड कर बिनती करने लगा कि हे कृपानिधान मेरी कुछ अयोग्य सी बानी है परंतू दीनवंधू तुम मेरे को अपना सेवक जान कर और मेरी ढीठाई विचार कर छमा ही करियो सो क्या है कि नाथ तुमारे अकारन हसने का मेरे हृदय मे बडा भारी संशय उतपन भया है जो भगवन सेवक जान कर मेरे पर तुमारा सनेह और प्रीती है तो अनुग्रह करके मेरे हृदय के इस संदेह को दूर करिये इस प्रकार पिसाच के बचन सुनकर कृपा के धाम शंकर जो हैं सो अपने तिस हसने का कारन जिस प्रकार कहते हैं सो आगे कथन किया जाता है ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ दीन दयाल भक्त अनुगामी ॥ बदरी बन आये मम स्वामी ॥ मोर हेत सुर नर मुनि संगा ॥ बैठे साधि समाधि असंगा ॥ लखि न परत अचरज इह गाथा ॥ करत कौन कौतुक जदुनाथा ॥ प्रभु मन की गति अगम अगाधी ॥ जाय न कोटि जतन मति साधी ॥ हम उन कर पद पंकज केरे ॥ सदा अनन्य मधुप इव चेरे ॥ सो साहिब स्वामी जदु नंदू ॥ करत ध्यान हमरो सुख कंदू ॥ अस विचारि मे हस्यो तुराई ॥ रह्यो न हेत आन कछु भाई ॥ तब पिसाच जुग जोरित पानी ॥ नाय सीस बोल्यो मृदु बानी ॥ तुम तें अधिक कौन जगदीसा ॥ तुम हो ईस सामर्थ गरीसा ॥ संभु कह्यो नहिं जानसि मूढा ॥ मम प्रभु तत्व गूढ ते गूढा ॥ याके ओर ह न तुम अधिकारी ॥ ताते हम नहिं करत

उचारी॥ तब पिसाच अस विनय अलाई॥ मै बहु
दिवस नाथ सिवकाई॥ करि लीनी भरि मोद महा
ना॥ अब करुणा करि कृपानिधाना॥ जानि चरन
अनुचर अपनाई॥ देहु मुक्ति मोहि सहज सुहाई॥
भने वदन संकर तब बानी॥ जो मोहि भजहिं सुजन
अनुरागी॥ देहुं पदारथ सब तिहि काहीं॥ मुक्ति दान
मोहि समरथ नाहीं॥ दोहा॥ मुक्ति पदारथ देन कहे
समरथ दीन दयाल॥ इष्टदेव मम कृपातन श्री
वर श्री जदुपाल॥ २०॥ टीका॥ शंभू कहते है कि हे
खेटाकरन दीनदयाल और भक्तपाल श्री जदुनंदन
भगवान मेरे स्वामी जो हैं सो बदरीवन मै आये विरा
जे हैं और मेरे सुमरन और अराधन के वासते अ
षंड समाधी लगाय कर बैठ गये हैं अब मेरे को इह
अचरज कुछ लषा नहीं जाता कि भगवान कौन
कौतुक करते हैं तिनके मन की अगाध गती है
सो तो कोटि जतन किये भी ~~नहीं~~ जानी नहीं जाती
मै उनके चरन कमलों का भ्रमरे वत एक सेवक हूं
वे मेरे साहिब और स्वामी हैं देखो तिनकी आचर्ज
लीला कि सो प्रमातमा अब मेरे ध्यान मै स्थित हो
य रहे हैं हे पिसाच मै एही विचार कर हसयाथा
और कारन तो कोई नहीं है ऐसे महादेव का वचन ^व
सुनकर पिसाच जो है सो हाथ जोड़ ^कर कोमल बानी
से विनती करने लगा कि हे भगवन तुमारे से अधिक
और कौन जगत मै ईस्वर है तुम ही सरव सामरथ भग
वान हो तब शंभू कहने लगे अरे मूढ तेरे को सू
झता नहीं है मेरे प्रभू का तत्व गूढ से गूढ परम गूढ
है तिसका तूं अधिकारी नहीं है तिसी तें मै उचा
रण नहीं कर सकता हूं तब पिसाच फिर विनती कर
के कहने लगा कि हे देवा नाथ मै आनंद ^द भर कर तुमा
री सेवा जो है सो बहुत काल तक कर लई है अब ~~दास~~
^को ~~[illegible]~~ को अपने चरनों सेवक ~~[illegible]~~ जानकर एही कृपादान
करो जो मेरे को सहज ही मुक्ती प्रापत होवे ऐसे

८०१ ८०२ ४०२

तिसका वचन सुनकर श्रीकर भगवान कहने लगे कि हे पिसाच जो मेरे भक्त मेरे को प्रेमपूर्वक भजते हैं मै तिन को जगॅके सब पदार्थ देता हूं परंतु मुक्तीदान जो है तिसके देने की मेरे को सामर्थ नहीं है मुक्तीपदार्थ देने को केवल दीनो के हितकारी मेरे इष्टदेव श्री जदुनंदन भगवान हीं सामर्थ हैं ॥२०॥ चौपाई॥ सकल जगत के अंतरजामी॥ भक्त संत सज्जन अनुगामी॥ कह पिसाच कर जोरि निमामी॥ मोहि बताय दीजे निज स्वामी॥ कहि विधि होहि सरन उनकेरी॥ फुरहि आस प्रभु मन कर मेरी॥ देहु बताय जतन सुल ऐना॥ प्रभु तुमार देखहु भरि नैना॥ कहि थल बसहिं गरीब निवाजा॥ सुरसुर राज राज जदुराजा॥ सुनि पिसाच मृदु गिरा सुहाई॥ बोले बदन हरखि गिरिराई॥ तुव कीन्यो मम प्रभु पद रागा॥ याते मोहि मानस प्रीय लागा॥ तुम पें मोर भई अति प्रीती॥ लखि जदुपति पद पदम प्रतीती॥ मिलन सहज अब जतन [illegible] मुरारी॥ मोहि ते सुनहु भक्त व्रतधारी॥ हरन भार मेदनि अवतारा॥ लीन्यो जदु कुल प्रकट उदारा॥ देन सुजस मोहि श्री जदुराये॥ सुत जाचन बदरी बन आये॥ बैठे साधि समाधि अखंडा॥ जहि सुमरत छूटहिं भव दंडा॥ दोहा॥ जो तुमरे मन का भजन मुक्ति पदारथ लेत॥ तो बदरी बन जायकै भजहु कृष्ण दिन रैन॥ ११॥ टीका॥ फिर [illegible] भगवान कैसे हैं कि संपूर्ण जगत के अंतरजामी हैं और भक्त संत सज्जन जनो के परम हितकारी हैं तब पिसाच कहने लगा कि हे कृपानिधान अब कृपा करके सोई जतन कहिये कि जिससे मेरे को आपके ऐसे स्वामी की सरण प्राप्त होवे और मेरे मन का मनोर्थ भी सफल होवे मै तिस भगवान को नेत्र भर कर देखूं सो देवता और देवताउ के राजा के पालने वाले जदुराज भगवान कि स अस्थान मै वास करते हैं ऐसे पिसाच की कोमल

(margin left:) गिरिराज
(margin right:) पिसाच

पत होकर परस्पर कहते हैं कि संपूर्ण जगत के
ईश्वर जदुकुल कमलों के प्रफुल्लित करने वाले सूर्ज
इह कृष्ण प्रभातमा इनकों समाधी धारना और किसी
देवता का ध्यान करना इह कारण कुछ जाना नहीं जा
ता है ॥८॥ चौपाई ॥ इत मुनीस अस करहिं विचारा ॥ उ
त समाधि पथ कृष्ण उदारा ॥ दीप सिषा सम जब करि
लीना ॥ चारु अचल चित ध्यान प्रलीना ॥ तब कौ
तुक अस देखि सुहावा ॥ बिहँसे संभु मान सुष
पावा ॥ जब शंकर अस मुख मुसक्याने ॥ हरगण नि
रषि सकल विसमाने ॥ तिनमे रह्यो एक मति
नागर ॥ घेटाकरन पिसाच उजागर ॥ बिनु संकर गति
आन न जाके ॥ शिव शिव रटन दिवस निसि ताके ॥ घेटा
बांधे कानन माहीं ॥ सिव तजि आन सुनै श्रुति नाहीं ॥
जो तहि बंचि सुनावहिं आना ॥ काटि सीस तहि तुरत
कृपाना ॥ करहिं घोष घेटा हरषाई ॥ शिव शिव सुभ
सबद अलाई ॥ बिहसे संभु बिन कारन जानी ॥ सो
वोल्यो जोरि त जुगपानी ॥ कह हे नाथ कछु अनुचि
त बानी ॥ तुव कृपाल सेवक अनुरागी ॥ इह छिठा
ई लषि मोर महाना ॥ छिमिय अनाथ नाथ भगवाना ॥
नाथ बिहसन वदन बिनु हे[illegible]तू ॥ मोहि उप[illegible]
ज्यो संशय वृषकेतू ॥ जो मो पै भगवन तुव नेहू ॥
तो इह हरिय नाथ संदेहू ॥ दोहा ॥ सुनि पिसाच के व
चन अस संकर कृपा नकेत ॥ लागे भनन प्रसन्न मन
सो बिहसन निज हेतु ॥९॥ टीका ॥ ईहां मुनी लोग ऐसा
विचार करते हैं और ऊहां समाधी के रसते ध्यान मै लीन
होकर जदुनंदन जीने दीप सिषा के समान चित्त को अच
ल औ स्थिर कर लिया तब ऐसा कौतुक देखकर के अतिप्र
सन्न होयकर मुखसे हसपड़ते भये इसप्रकार महादेव को
हसते देखकर तिनके गण जो हैं सो परम आचर्ज को प्रा
पत होयगये तब तिन गणों मै एक घेटाकरन नामकर
के एक बड़ा चतुर गण था कि जिसको जगत मै शंकरदेव
के बिना और कोई सूझता नहीं था अर्थात एक शिवजी

नाना यतन हठ किये से भी प्राप्त नहीं होते हैं परंतु जहां सूधे सुभाव से कपट छल से रहित होकर कोई दीनबंधू का सुमर्ण करे तो तिसकी निसकपट भक्ती और पवित्र प्रेम देखकर भगवान तुरत प्रकट होय कर तिसके मनोर्थ को सफल कर देते हैं क्योंकि दीनानाथ सदैव भक्त हितकारी और भक्तों के अनुसारी हैं तातें हे भक्त तुम बदरी वन मे जायकर और हृदय से निसकपट होय कर भगवान के भजन मे ततपर होय जावो तब तुमारा दृढ प्रेम देख करके दीनबंधू तुरत ही रीझ जावेंगे दीनदयाल को संसार मे केवल प्रेम ही प्यारा है ऊंच नीच जाती बडाई को भगवान कुछ नहीं जानते हैं इस प्रकार संकरदेव के मुष से हितदायक वचन सुनकर चेटाकर ततकाल चरनो पर सीस नायकर जै हरी जै हरी रटता हुआ ~~बदरीवन को चलपडताभया~~ भांत भांत के पिसाचों की जमात और अनेक ~~[illegible]~~ श्रकारी स्वान साथ लिये हुये जहां बदरी वन मे कृष्ण भगवान मा समाधी लगाये हुये बैठे थे तहां को चलपडता भया तब चलता चलता बदरीवन के बीच आयकर तिन श्राकारी स्वानो अर्थात कुत्तयों को सब पिसाचों के सहित बाराह और रोर इत्यादि मृगों पर प्रेर कर ~~प्रेरकर~~ जै हरी जै हरी ऐसा सबद पुकारते और मारो धरो धरो मारो इस ज़ोर शोर चारो ओर करते हैं ॥२२॥ चौपाई॥ गहित जीव कानन समुदाई॥ हनत बदन जै जै हरिगाई॥ करत भीरु रव कानन चारी॥ खग मृग जीव निकर धृति हारी॥ भागे जात चहुन दिसि त्रासे॥ दुखित दीन निज प्राण निरासे॥ भच्यो सोर कानन अति घोरा॥ करी किहरि चिकरत चहुं ओरा॥ करि पिसाच घायल बहु जीवैं॥ खोवैं अमुष रुधर बहु पीवैं॥ बार बार जै जै ति बखानें॥ हम हुं अहार दीन भगवानें॥ तिन महं अस को पहो न जानी॥

जहि जै जै हरि रह्यो नबानी॥ राम कृष्ण गोविंद उचारैं॥ जै जै जै कहि जीवन मारैं॥ खग मृग डर पत जात पलाई॥ लागे जात पिसाच पिछाई॥ खरभर मच्यो विपुन चहु घाहीं॥ जहं तहं फिरत पिसाच दिखाहीं॥ चेटाकरन कहत अस बानी॥ हम आये इत जदु लागी॥ तांते देषहु कानन माई॥ करि छल ~~[illegible]~~ अहैं भक्त सुखदाई॥ मृषा न कथन संभु भगवाना॥ खोजहु कानन कृपानिधाना॥ करि दरसन दुरलभ जदुराई॥ लेहु जनम फल संपति पाई॥ दोहा॥ चेटाकरन ~~[illegible]~~ बखान अस सुनि पिसाच समुदाय जहं तहं खोजन लाग बन राम कृष्ण मुष गाय॥ २३॥

टीका॥ फिर जीवों को पकड़ पकड़ जदुनाथकी जै बुला ~~[illegible]~~ बुलायकर मारदेते हैं तब बनके खग मृग जीव जंतु जो हैं धीरज को त्यागे हूये सब भाग चले जाते हैं और प्राणों से निरास भये हूये भयके बश दीन और दुखी होरहे हैं इसप्रकार बनमें बड़ाजोर शोर मच जाता भया फिर जो शोर करी जो हसती सो भयभीत होकर चिक्कार शबद करते फिरते हैं और पिसाच जो हैं सो अनेक जीवों को घायल करके तिनका रुधर पीवते हैं और मांस खावते हैं और बारबार जैजैकार बुलाय कर कहते हैं कि भगवानने आज हमको उदर भर कर आहार दिया है तिनमें ऐसा कोई नहीं देख पड़ा कि जिसने जै हरी जै हरी बाणी उचारन नहीं करी सब राम कृष्ण गोविंद उचारते और जीवों को मारते हैं खग मृग डरते हूये आगे भागे जाते हैं और कोपसे तिनके पीछे पिसाच लगे जाते हैं बनमें चारो पासे खर भर मच गया जहां तहां पिसाचही देख पड़ते हैं तब चेटाकरन कहने लगा कि हो भाई हम इहां जदुनंदन भगवानके दरसन मेलेके वासते आये हैं तांतें तिनको

अब

हीं देखो श्रोर भालो कि सो कृपानिधान कहां श्रोर किंथल मै वास करते हैं श्री भू भगवान का कथन श्र न्यथा नहीं है तिस भक्त सुखदायक जदुनंदन के खो जने मे शीघ्र यतन करो श्रोर तिनकी चरन शरन को प्रापत होवो॥ फिर भगवान का दुरलभ दरसन पाय कर श्रपने मन वांछित फल प्रापत करो श्रोर जगत मै जनम सुधारलेवो इसप्रकार चेटा करन की बातो सुनकर सब पिसाच जो हैं सो मुखसे कृस्न कृस्न उचा रते हूये भगवान को जहां तहां वण मे खोजने लग जाते भये॥ २३॥ चौपाई॥ खेलन मिस श्रखेद वनमा हीं॥ तेहेरत सब जदुपति काहीं॥ जहेलग रहेजी व वन चारी॥ भागे जात दुखि दिसि चारी॥ तिनकर श्रारत शोर महाना॥ परि गो श्रवण रुधर भगवाना॥ लागे सोचन सो विनासा॥ कौन उपद्रव विपुन प्रका सा॥ जहि हित खग मृग कानन वासी॥ भगे जात नि ज श्राण निरासी॥ को श्राये इन कर दुखदाता॥ लेत न विकल जीव थिर गाता॥ स्वान सोर इकवोर महा ना॥ तिमि पिसाच धावत वन नाना॥ वीच वीच जै जै धुनि करहीं॥ मोर नाम श्रभिराम उचरहीं॥ तोलो विपुन जीव नियराये॥ करत सोर श्रारत श्र तुराये॥ लखि जीवन दारुन दुष व्याधी॥ सहित स... के प्रभु छुटी समाधी॥ नैन उघारि चि त्यो भगवाना॥ परे दृष्टी धावत गण स्वाना॥ तिन पाछे पिसाच समुदाई॥ धावत विपुन जीव दुख दाई॥ दोहा॥ धावत श्रस गहुरात सब करत सोर कछु भयन॥ देखहु कहि थल श्रैहिं कल कृस्न कमल दल नैन॥ २४॥ टीका॥ पिसाच जो हैं सो प्रकार खेलने के वहाने से वण मे जदुनंदन भगवान को खोजते फिरते हैं तिनके भय से वण के सब जंतू व्याकुल होकर चारो दिसा मै भागे चले

ल वानी सुनकर शंकर भगवान प्रसन्न होयकर कहने लगे कि हे पिसाच तैंने मेरे प्रभु के चरनों प्रीती और ॰मै
प्रेम किया है इसते मेरे को तू परम पयारा देखपड़ता है
तेरी जदुनाथ जीके चरनोमे प्रीती देखकर मैभी तेरे पर प्रीती वाला होयगया हूं अव तू जदुनंदन महाराजके मिलनेकाँ जतन जो है सो मेरेतें श्रवण कर जो तिस भगवानने पृथवी का भार उतारनेके वासते जदुकुल मे प्रकट अवतार लिया है सो अव मेरेको सुजस देनेके वासते दीनबंधू पुत्र की जाचना के लिये वदरी वण मे आये हैं और जिस प्रमातमा के सुमर्ण करनेतें जगत का सव भय छूट जाता है सो तिस वणमे समाधी लगाय कर बैठे हूये हैं अव जो तेरे चित्तमे मुक्ती पदार्थ लेने की कामना है तो वदरी वणमे जाय कर तिस प्रमातमा का रात्रीदिन सुमर्ण कर ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ दुराराध जद्यपि भगवाना ॥ मिलहिं न किये जतन हठ नाना ॥ पै जहां सरल कपट गत होई ॥ सुमरहिं दीनदयाल कहं कोई ॥ अवरिल भक्ति प्रेम लखि तासा ॥ होत प्रकट दुत रमा निवासा ॥ पूजहिं तास मनोरथ सारी ॥ सदा कृपाल भक्तहित कारी ॥ ताते तुव वदरी वन जाई ॥ जननि सकपट भजहु जदुराई ॥ देखि अनन्य प्रेम भगवाना ॥ रीझहिं तुरत दीन वरदाना ॥ प्रभु कहे केवल प्रेम पयारा ॥ गुनहिं न ऊंच नीच संसारा ॥ सुनि संकर मुख गिरा सुहाई ॥ वेटाकरन चरन सिर नाई ॥ गवन्यो वेग हरष सरसाता ॥ जै जदुपति जै जदुपति गाता ॥ लिये संग वहु रंग धनेरी ॥ विविध जमात पिसाचन केरी ॥ जहि थल कृस्न समाधि जुडाना ॥ तहि थल कहे की ब्योति न प्याना ॥ स्वान सहस्र संग निज लीने ॥ सूकर सारदूल वन चीने ॥ दोहा ॥ रटि जै जै हरि कृकरन देत मृगन पर प्रेरि ॥ नादवाद नाना करत धरहु धाय धुनि टेरि ॥ २२ ॥ टीका ॥ शंकर कहते हैं कि यद्यपि भगवान दुराराध हैं अर्थात वडी कठिनतासे अराधे जाते हैं और

४०४

४०५

वते और रुधिर पीवते हैं बहुशोर करते चले आ
वते हैं फिर जैसे कार बुलावते और वनमें धाय धाय
कर मृगों को मारते हैं इस प्रकार अटन करते करते
पिसाच जो हैं सो भगवान के सनमुख चले आवते भये
और तिनके पीछे वनमें चारों पासे अत्यंत प्रकाश
देखपड़ा मानो वनमें एक सूरज उदय होय गया है
और अनेक ही भयानक रूप वाली पिसाचनी कि
(के) जिनों बड़े लंबे केस और लंबे ही दांत और मुखमें महा
कटू वचन गोदीमें लिये हूये बालक किलकलात
शब्द करके मुख खोले हूये शरीर से नगन हसती
और रोवती पापों की भरी हूई देह से कृष अर्थात
दुबलीसी वनमें जहां तहां धावती फिरती हैं॥ २४॥
चौपाई॥ रुदन करत बोधत अस बालैं॥ भेटब आज
अवसि नंदलालैं॥ तास प्रेत तिय मंडिल माहीं॥ लख्यो
कृष्ण जुग प्रेतन काहीं॥ सोचत मनमहे कृपानके
तू॥ अधम पिसाच नाम ममलेतू॥ को इह पाप पुन्न
बड़ दोऊ॥ जिमि विष खाय अमिय पियकोऊ॥ मोर ना
म सुमरत दुख धंसू॥ मुक्ति जोग इह जोग प्रसंसू॥ या
विध मनत नाथ के वाचा॥ चलि आये द्रुत निकट पिसाचा॥
वदन कराल लंब वपु धारे॥ पीत लोम लोचन अरुन्यारे॥
दीह दसन नासिक अति भ्यावन॥ अत से अमंगल रूप
अपावन॥ तीन ताल लग दूवरि देहा॥ हाहा हीही वच
न अनेहा॥ भक्षत मनुज अमुष कर लीने॥ मनुज आं
तन आव्रत कीने॥ मानुष रुधर पियत बहु वारा॥ मृ
तक मनुज जुग केष्र नधारा॥ वदत अनेक भांति मुषबा
नी॥ आवत चल्यो सकुच चित त्यागी॥ दोहा॥ हसत
बकत बहु बदन अत जेष्ठ वेग बल पाय॥ तरु टूटत
कंपत धरन उभय तरुन दनुराय॥ २६॥ टीका॥ तब
सो पिसाचनी रोते हूये बालकों को प्रबोध करती हैं
कि मत रोवो आज हम नंदलाल महाराज को भेटेंगी
अर्थात मिलेंगी तब तिस पिसाच मंडिल में कृष्ण

प्रभातमा दे प्रेतों को देखते भये और हृदय मे सोचने लगे कि देखो इह अधम पिसाच जो हैं सो मेरा नाम लेते हैं जान नहीं पड़ता कि इनको ई पुन्न पाप है इनको ऐसा संजोग है कि जैसे किसीने विष खाय कर अमृत को पान कर लिया है सरब दोषों के दूर करने वाला मेरा नाम सुमरण किया है तौते इह मुक्ती के योग्य हैं और शालाग्राम के लायक हैं इस प्रकार दीन बंधू के कहते कहते सो पिसाच निकट चले आवते भये सो कैसे थे बड़ा कराल मुख और तैसे लंबा शरीर पीले रोम और लाल नेत्र लंबे दांत और बड़ी भयानक नासिका सिर से पाउं तक अंत से अमंगल रूप और तीन ताल प्रयंत दुबली सी काया हाहा हीही मुख मैं वचन मानुष्यों का मांस खावते और मानुष्यों की ही पहिरी हुई गले मे और दरो मरे हुये मानुष्य की केथी पँउठाय हुये नाना बानी बोलते और अनेक प्रकार हसते बकते अभय होकर चले आवते हैं ऐसे तिनके तीव्र जंघों के बल वेग से वृक्ष टूटते और पृथवी थरथर कांपती है ॥२६॥ चौपाई॥ येटाकरन भनत अस बानी॥ कब देखब हम सारंगपानी॥ निवसत कहो बदरि बननाथा॥ फिरे गरीब गहन मुनि हाथा॥ माधुरि स्याम मृदुल वर मूरति॥ संमुभनत नहीं हृदय बिसूरति॥ कहो होहि राजत अय मोचू॥ साधि समाधि हरन भव सोचू॥ कौन पाप पूरब हम कियऊ॥ जाहि ते जोनि प्रेत जग लियऊ॥ पै हम सदृश आज न कोई॥ परम पुन्न भाजन भव होई॥ जो के दरस दिव्य भगवाना॥ होहि सुरन दुरलभ सुखदाना॥ अस प्रकार सो चतमन माही॥ येटाकरन अनुज जुत ताही॥ हेरत विपुन विपुल

४०६ ४०४

श्रम पाई॥ श्राय गयो सनमुख जदुराई॥ प्रभु कहं प्रेत मनुज मनु लेखी॥ बोलिउ त्रो मुख वचन कुभेषी॥ अहो कौन इत कहि लागी॥ वैठे ध्यान लीन वडभागी॥ ईहां समूह पिसाच कराला॥ अटन करत कानन स वकाला॥ दोहा॥ स्वान सिकारी इमत इत फिरत वद न वहुवाय॥ तुम नइरत निरजन विपुन वैठे ध्यान लगाय॥१७॥ टीका॥ तव घंटाकरन पिसाच जो है सो ऐसे कहने लगा कि हम कौने करकर भगवान कृपा निधान को देखेंगे सो गरे हुये गरीबन का हाथ पकरने वाले इस वदरीवन मे कहां वास करते हैं कंभू का कथन विसरता नहीं ~~सब~~ है स्याम माधुरी और कोमल मूरती वाले भगवान सत्य करके हैं परंतू क्याजा ने कि समाधी लगाये हुये कहा विराजे हैं हमने पूरव जनम मे कौन पाप किया है कि जिसतें इह पिसा न जोनी पाई है परंतू आज हमारे समान भी कोई ~~नहीं~~ है पुन्य का पात्र जगत मे कोई नहीं है कि जिन को आज भगवान भक्त सुखदान का दिव्य दरसन कि जो देवताउ को भी दुरलभ होता है होने वाला है इस प्रकार कहता हुआ घंटाकरन अपने भ्राता के सहित वडे श्रम से खोजता खोजता भगवान के सनमुख आ य जाता भया तब जदुनाथजी को मानुख्यवत देख कर घंटाकरन जो है सो कहने लगा कि अहो तुम कौन हो और ईहां ध्यान लगाय कर किस कारन वैठ रहे हो देखो इस वन मै तो महा भ्यानक पिसाच रात्री दिन फिरते रहते हैं और अनेक ही सिकारी स्वान मुख खोले हुये मार मार करते धावते हैं तुम ध्यान लगाये हुये इस निरजन वन मैं वैठे हो क्या तुमारे को कुछ भय नहीं लगता है॥१७॥ चौपाई॥ अति सुकमार अंग मृदु लोने॥ चितवत चित चुरात मनु टोने॥ कलित कमल दल

जाते हैं ऐसे तिनके दुखकी पुकार सुनकर महा
पुकार भगवान दीन सुखदान के कानो मे जो पहुंची तो
सरव सोचों के दूर करने वाले भगवान सोच के वश
ॅवनमे होकर कहने लगे कि यह कौन उपद्रव उतपन्न भया है ॅव
कि जिसतें वनके विचरने वाले खग मृग प्राणों से नि
रास होकर भागे चले जाते हैं ईहां इनको दुखदेने
वाला कौन आया है जो जीव व्याकुल भये हुये धीर
ज नहीं लेते हैं कहीं स्वान जो कुत्ते हैं तिनका घोर
आतसे करके है और तैसे ही जहां तहां पिसाच समूह
धावते फिरते हैं और मेरे नाम से जैजै शब्द उचारते हैं
ॅके रतने मै वनजीव जंतू बड़ी दुखकी वाणी उचारते हुये
के भगवान निकट आय जाते भये तब तिन जीवों का अत्यंत
दुख देखकर दीनबंधू सहार नहीं सके समाधी जो है सो
छूट गई जब नेत्र उघार कर कृपासिंधू ने देखा अने
कहीं स्वान धावते हुये देख पड़े और तिनके पीछे तब जीवों
के दुखदायक अनेक कहीं पिसाच वनमे धाये चले आवते हैं
और निरभय होकर परस्पर ऐसा पुकारते आ
वते है कि देखो धीज्यर देखो कि कमलनैन कृस्न भग
वान किस अस्थान मे विराजमान हैं॥ २४॥ चौपाई॥ म
नत अमृष रुधर करिषाना॥ आवत करत कुलाहल ना
ना॥ जैजै जै भगवान उचारैं॥ धाय धाय कानन मृगमा
रैं॥ करत अटन अस प्रेत नकाया॥ आय गये सनमुख
जदुराय॥ तिन पाछे बहु कानन माहीं॥ देखि परयो प्र
कास चहुं आहीं॥ मानहु उदय विपुन तमहारी॥ म
हा प्रकास छयो दिस चारी॥ इमत पिसाचनि रूप करा
ला॥ लहत लेव कच दसन विसाला॥ करत अटन
कानन चहुं पासा॥ महा विकट कटु वचन प्रकासा॥
दोहा॥ धरे उ ढंग नंगाल निज किलकलात मुख
वाय॥ हसत रुदित पर रहत रत दुरत दूबरी
काय॥ २५॥ टीका॥ कैसे भी पिसाच हैं कि मांस खो

ॅजीवोंका

तुम कहीं इंद्र हो कि कुवेर कि वरुण हो अथवा किंनर
गंधर्व हो कि कोई देवता हो तुमारा प्रभाव कुछ जाना
नहीं जाता है हे मानुष्य तुम सत्य करके बताओ कि कौ
न होते हो क्योंकि इन प्रेतोंकी जमाती जो है सो महा क
ठिन और क्रूर मानुष्योंकी शत्रु है तुम इस ते डरते नहीं
हो ऐसे चेटाकरन पिसाच का कथन सुनकर मुख मे
मुसक्यायकर कहने लगे कि हे पिसाच हम जदुवंसी क्ष
त्री हैं और हमने पृथवीपर भक्तोंके वासते हीं अवतार
धारन किया है शंभू ~~की शरणको~~ कैलास को चला जाते ये
केदरसनहित
रात्री जानकर इस वन मे हीं वास कर लिया है अब तुम
~~कैन~~ अपनी कहो कि तुम कौन हो इस वदरीवन मे कि
स कारन फिरते हो कि तुम कोई शंकर के गण हो जो दे
नो अभय होयकर वनमे विचरते हो इस मुनियोंके वा
स वदरी वन मे तुमको किसने बताय दिये है इस वन
मे परद्रोही नास्तिक जड़ पापी कदाचित नहीं आय
सकते हैं देवता ऋषी मुनी सिद्ध ~~[illegible]~~ जप तप भजन
कर करके अभय होय कर कल्यान को प्रापत होते हैं
इस कैसाभी वन है कि जिस मे परद्रोही पापी अधम दुष्ट
निवास करके संपूर्ण दुखदेने से क्रूर जाते हैं तो ते हे
पिसाच तुम ~~[illegible]~~ दोनो भ्राता आगे वन मे धावन मत
करो क्योंकि तहां मुनी ऋषी सिद्ध साध आनंद से वैठे
हुये तप करते हैं तिनके बीच तुमको जायकर शिकार
खेलना जोग नहीं है इतर और जो जीव हैं सोभी
तुमारे खाने के भय से व्याकुल और दुखी होय रहे
हैं तो ते जो अब तुम हमारी इस आज्ञा को उलंघन
करके वन मे शिकारी खाने को प्रेरोगे और जीवोंको
दुखदेवोगे तो फिर हम जो हैं सो सरव प्रकार करके
मुनियों के सेवक और जीवो के सुखदायक हैं तुमा
रे को छाती धरकर वाणों से हनन कर देवेंगे अर्था
त मार देवेंगे हम इस वनके ~~रखवारे~~ सव जीव जंतू
और मुनियों के सहित रखवारे हैं हमारे होते इनको

दुखदेनेवाला अपने प्राणों का शत्रू कौन है ॥१८॥ चौपाई॥
तौ ते अस विचार उर करि कै॥ बैठि जाहु इत आसन धरि कै॥ प्रेत तुमार वृतांत नवीना॥ हम जानन सब चहत प्रवीना॥ प्रेत मनन भगवन सुनि नीके॥ बैठि गयो अचरज गुनि जीके॥ इह मानुष कस जानि न जाई॥ सनि सनेह जनु गिरा अलाई॥ मम प्रभु कर इह खोज बतै हैं॥ तहे पुनि उदय दिवस हम जै हैं॥ अस कहि प्रेत हरष जुत होई॥ लगे वृतांत मनन निज दोई॥ सुनहु मनुज अब मरम हमारा॥ जैजै जै जग हित जन हारा॥ हम पिसाच रत दुरित महीना॥ चंटाकरन नाम अभिमाना॥ सेवक संभु वचन मन काया॥ इह मम सैन स्वान समुदाया॥ सैवो ध्यो चेटा स्रुति माहीं॥ जहि ते सुन्यो नाम हरि नाहीं॥ करि सेवा सुचि संभु अघोरी॥ मांग्यो मुक्ति जुगल कर जोरी॥ तब जस भन्यो संभु भगवाना॥ सो वृतांत तुव सुनहु सुजाना॥ दोहा॥ अस कहि चंटाकरन उर सुमरि चरन भगवंत॥ जै जै जै जदुनाथ कहि लाग्यो मनन वृतांत ॥१८॥
टीका॥ तौ ते हे पिसाच ऐसा हृदय मै विचार कर इहां हीं आसन लगायकर बैठ जावो हम तुमारा वृतांत जो है सो सब सुनना चहते हैं तब प्रेत भगवान का ऐसा कथन सुनकर आचर्ज के वश होकर बैठ गया और मन मै कहता है कि इह मानुष्य कैसा है कुछ जान नहीं परता इसने कैसी सनेह की भीनी हुई वानी उचारन करी है इह अवश्य मेरे प्रभू का खोज बतावेगा तब तहां प्रात होते हम जावेंगे ऐसे विचार कर प्रेत जो है सो हरष से भरा हुआ आपना वृतांत सब कथन करने लगा ~~कहता है कि जे हो~~ ॥१८॥
~~उस प्रमातमा कि जिसने इस नाना प्रकार की सृष्टी को उतपन्न किया है मै जो हूं सो महा पापी सरब जीवों को दुखदायक पिसाच जाती हूं चेटा करने मेरा नाम और अती से अभिमानी हूं॥~~

भागवान के चरनेको हृदय मे धरकर और जैजै शबद बोलकरे

४०८

408

चौपाई॥ घेटाकरन नाम अस मोरा॥ दुरतदंभदूषनरत चोरा॥ आमष अहार सदा दिनराती॥ दुषदायक जीवन जगघाती॥ निरदय कुटिल क्रूर कटु वाचा॥ परद्रोही निंदक अगराचा॥ तिमिरह अनुजमोर रनदोषू॥ चमु पिसाच सब आमिषपोषू॥ मैसब विध रत दूषन भारी॥ वखेसन जोग कृपाल मुरारी॥ असउरसुमरि कृष्न भगवाना॥ प्रेत कृष्न सन वचन वखाना॥ मै सिव तें जब विनय अथोरी॥ जाच्यो मुक्ति जुगल कर जोरी॥ तब भाष्यो शंकर मोहि वाता॥ है इक कृष्न मुक्तिकरदाता॥ तबमै नम्र जु[illegible]त जुगपानी॥ वृषभ नाथपें विनय वखानी॥ सो हरि जलधस्याम सुचि गा[illegible]ता॥ कमि सुधि करहिं मोर जग ज्ञाता॥ मै वांध्यो घेटा स्रुति माहीं॥ हरिको नाम सुनहु जहिं नाहीं॥ विस्नु देव निंदक सबकाला॥ कहि सेवा प्रभु दीनदयाला॥ दोहा॥ मोपरी ज[illegible]हि कृपातन कृष्न [illegible] कमलदलनैन॥ गुनिसेवकपद दीन लषि देहि मुक्ति सुषदैन॥२०॥ कहता है कि घेटाकरन मेरा नाम है और मै पीपी देभी सरव दूषणों का भरा हूआ हूं सदैव राचीदिन मैस ही मेरा आहार है जीवों का दुखदायक और घाती [illegible] निरदय महा कुटिल और दुरवादी परद्रोही निंदक और [illegible] हैं कुकरमी हूं तैसे ही सरव दोषों का भरा हूआ इह मेरा भ्राता और पिसाचों की सब सेना भी मांस अहारी है इस प्रकार मै तो सरव दोषों की निधी हूं वखसन जोग भगवान कृपा निधान ही हैं ऐसे कहिकर घेटाकरन पिसाच जो है सो कहने लगा कि मैने जब दीनता से बहुत विनती करके महादेव से [illegible] मुक्ती मांगा तब मेरे को शंकर भगवान ने कहा कि मुक्ती पदार्थ देने को सामर्थ एक कृष्न प्रभात मा हीं है और तो कोई नहीं है तिसपर मैने हाथ जोड़कर फिर विनती

टीका॥ विसच

कृष्ण प्रमा नमकोक

नैन नवीने॥ रूप राशि मनसिज छवि छीने॥ लसित नील अंबुज जनु काया॥ अतहे व चित्र चित्त मनभाया॥ ईं धकुवेर वरुण किधों कोऊ॥ कै गंधर्व किंनर सुर हो ऊ॥ जानि न जाय तुमार प्रभाऊ॥ मनुज प्रकार कहि सत्य जनाऊ॥ महाविकट कटू मनुज अराती॥ तुम न डरत लषि प्रेत जमाती॥ येहाकरन कथन सुनि काना॥ मुख मुसक्याय भने भगवाना॥ हम तजी जदु वंस मंझा रा॥ भक्त हेत लीन्यो अवतारा॥ सेमु सरणा के लोभ सिधाये॥ लषि जामनि इत विपुन वसाये॥ तुम हो कौ न कहो हम काही॥ कहि हित फिरहु वदरि वनमाही॥ धो सेवक मत शंकर कोऊ॥ अभय फिरहु कानन कलदोऊ॥ मुनिवास वदरी वन माही॥ कौन वताय दियो तुम काहीं॥ परद्रोही नास्तिक सठ प्रानी॥ आवत इहां न अग अभिमानी॥ सेवत सुर ऋषि सिद्ध सदाहीं॥ अभय होत सी जुत भव माहीं॥ परद्रोही पापी सठ पो चू॥ इहां होत से कुल दुख मोचू॥ तो ते तुम पिसाच जु गमाई॥ अव न जाहु आगल वनधाई॥ वैठ मुनिन वृंद तप हेतू॥ करहु न इत म सान न प्रेतू॥ अपर जी व इहि कानन केरे॥ होत विकल तुव स्वानन हेरे॥ क वहु कि सासन निदरि हमारी॥ तुम प्रेरे वन स्वान सि कारी॥ तो हम मुनि सेवक सव भांती॥ तुमहि हनव वान न धरि छाती॥ दोहा॥ हम रक्षक वदरी विपुन मु निजीवन सुषदा~~यक~~न॥ कौन इच्छत हमरे इहै दुषदाय करि पुष्प्रान॥ २८॥ टीका॥ फिर पिसाच कहते है कि ~~तु~~ तुम अतसे कुमार अवस्था और कोमल अंगोंवाले वडे सुंदर हो तुमारा दरसन जो है सो चित्त को चुराय लेता है ~~~~ सुंदर कमलो के समान तुमारे नेत्र और रूपकी राशी मानो कामदेव की अनेक छबी को लज्जा देते हो और नीले कमल वत है शरीर की शोभा इह तु मारी मनोहर मुद्रा अतिकर के मन को भावती है

सहजही होजावेगा सो नखपरजो परवत धारनेवा
ले हरीहैं तुमारेपर अवश्य अपनी दयादृष्टी पावेंगे
और तुमको सफलकरेंगे तव मैने फिर हाथजोडक
रविनतीकरी कि हेमगवन सो दीनदयाल नंदलाल
महाराज कहां और किस स्थल मे वासकरते हैं तव शं
कर कहने लगे वे दीनोके दुख और त्रास हरने वाले भ
गवान वदरीवनमे वासकरते हैं मैनेफिर प्राथनाक
री कि हेगौरीनाथ मै तिस दीनानाथको किसयतन
से नेत्र भरकर देखूंगा तव शंभूने कहा कि मारगके
जानेका ही श्रम है और तो कोई विलंव नहीं है फिरमै
भगवानके ~~रूप चिन्ह~~ का रूप चेहन चक्रसव पूछा किवे
प्रमातमाकैसे हैं तव शंकरदेव ने उत्रदिया कि सो जगत
नाथ भगवान सुतप्रकाशिक अनादी हैं अर्थात
तिनकी आदभी नहीं और अधामे हैं कौं अरभीनहीं
पापोंसे रहित अवनाशी हैं तिनका नासभीनहीं अ
नेत और अनाम हैं अर्थात तिनका अंत नहीं और
कोई नामभी नहीं है गुण और गती से रहित
चराचर मे प्रकाशिक और सव ते न्यारे भीहैं पृथ्वी
काभार उतारने के वासते जदुकुल कृष्ण नाम
करके अवतार धारनकियाहै और समुद्रके किना
रे द्वारावती जो द्वारिकाहै तहां मेरे सो इष्टदेव वा
सकरते हैं इसप्रकार मै शंभू भगवान के मुखसे
उपदेस सुनकर और तिनके चरनोपर वारंवार
सीस नायकर ~~छल~~ छल और कपटको हृदयसे त्या
गकरके हो वदरी वनमे आय प्रापत भयाहूं॥ २॥ चौपाई॥
अव खोजत इतफिरहुं विहाला॥ सोन पैहुं प्रभुदी
नदयाला॥ वृथा न होहिं कथन त्रिपुरारी॥ मोरे
जिय भरोस यह भारी॥ जामनि जानि वसहुं इथ
ठौरें॥ खोज हुंउदय होत पुनि भोरें॥ जो न मिल
हिं इतकृपानिधाना॥ तो द्वारावति करहुं पयाना॥
सवैया॥ सूरसरन्न ब्रह्मसुन न सो श्रीपती पैनिध

(margin: ...सब रूप हिन्दु... ; ६६ ; ६मै ; कृष्ण ...)

वालकरन सुहाये॥ करता हरता भरता जगको धरनी
धरता सुभ सेज पौढाये॥ आनंद कंद अमंद सदे
द हिमाकर वेद निवाजकहाये॥ देखव आज सो उ
मरकै दृग हैं हरि मूरति मैन लजाये॥ सेवत सेवत
वीति गये वहु श्रीकर पाद सरोजन काहीं॥ भोगत
भोग लग्यो तन रोग लख्यो नहीं जोग अजोग तदाहीं॥
जात कढे नित आयुष रोजहीं सुकृत खोज मिल्यो
कहु नाहीं॥ आज दया करि दीन विचार दियो उपदे
स महेस महाहीं॥ जाय अभय द्रुत देखव दौरि कै गौ
रीके नाथको नाथ कृपालैं॥ कोमल कंज सो रंज पदैग
रि मंगरि भीत भवैं सव कालैं॥ दीनके ईठहैं दीनपैं
डीठ सिखीकल क्रीट विराजत भालैं॥ भाग उदय ल
षिहों अस लोचन सोचविमोचन देवकि लालैं॥ दोहा॥
मै अति पतित पिसाच षल कुमति दुष्ट दुरचारि॥ आ
ज जाय पद पर सिहैं श्रीपति अधम उधारि॥२२॥
अब ईहो खोजता खोजता विहाल होय गयाहूं सोदीन
नही दयाल कहीं मिलतेहैं और शंभू भगवानका कथनभी
वृथा नहीं है मेरे हृदयमै दृढविस्वासहै किरात्रीको ईहां
निवासकरके प्रात काल सूरजके उदय होते हीं वनमै
भलीप्रकार खोजूंगा जो कदापिकाल भगवान ईहां ना
मिलैंगे तो द्वारिकाको चला जाऊंगा और दीनबंधू कों अ
वश्य मिलूंगा कैसेभी दीनानाथहैं कि संसारमै सूरवीरों
जो को शरण देने वाले और पैनिधी छीर समुद्रहै तिसमै वास
करने वाले जगतके करता भरता हरता और शेषनाग
की सेजापर सैन करने वाले आनेरूप और आनंद सेहीं
अपनी इच्छासे विचरने वाले सदैव कल्याणरूप योमा न
कीखोनी दीनोका उद्धार करनेवाले ऐसे भगवान की
कोटिकामदेव की छवीको लज्जा देने वाली मनोहर मू
रती जोहै सो आज नेत्र भरकर देखूंगा अबतक श्रीकर
भगवानके सेवते सेवते वहुत कालवतीत होगयाहै और
भोगोंको भोगते भोगते कयाको रोगभी लग गया तोभी जो
ग अजोग जोहै सोकुछ जान नहीं पडा आयुषा
केदिन वृथ हीं वीते चले जातेहैं सुकृत जो पुन्नहै तिनका

मैं बारम्बार समझों

४१०

५२८

कोई खोज हीं नहीं मिला आज दयाकरके और दीनविचारकरके महेस प्रभू ने मेरेको अतहीहितकेदेनेवाला उपदेस जोहैसोदियोहै तातें अब अभय होय कर और श्रीघर जाय कर गौरी के नाथ के नाथ श्रीजदुनाथ जोहैं तिन कोदेखूंगा सो कृपानिधान कैसेहैं कि संसार भयदूरकरनेवाले जिनके कोमल चरन कमल हैं और सदैव दीनों केहितकारी सुंदर मोरमुकटधारी मुरारीभगवानहैं मेरेआज बड़े ही भाग्य हैं जो मैं ऐसे सरब सोचोंकेदूर करने वाले देव की लालकी सनमुख नेत्र भरकरदरसन पाऊंगा और मेरे अहो पुन्नहैं कि मैं महापापी पिसाच दुरमती और दुराचारी अतसेदुषहूं आज अधमो के उद्धार करने वाले श्रीपतीभगवानके चरन कमलों ~~~~ को जाय कर परहूंगा॥२२॥ चौपाई॥ कहहु मनुज कहे तुमहे निहारे॥ लोचन स्याम ललित छवि वारे॥ जो देख करिके उपकारू॥ देहु बताय हरन महिभारू॥ तो मैं दौरि चरन प्रभु लागी॥ दरसत होहु विसुख बड़भागी॥ ऐत कथन सुनि कृपा निधाना॥ प्रेम नेम लखि दास महाना॥ जानि अनन्य चरन निजदासा॥ रीझि गये प्रभु रमा निवासा॥ तबपिसाच कहि गिरा ललितामा॥ जाहु मनुज तुव दूसर ठामा॥ हम इत नित्य नेम निज करना॥ भये मोर पुनि अनत सिधरना॥ ऐसा करन कहत असबानी॥ भयो मगन करि श्रोतत पानी॥ अमुष षाय गहि आंतन माला॥ धारि व निज रूप कराला॥ करि सनान सुरसरि सुषे पावा॥ बैठि कुसासन ध्यान जुरावा॥ महि अभि मंत्रि गंगवरनीरा॥ तजिदीन्यो सब स्वानन भीरा॥ कृस्न सुमर्ण ध्यान मन लीना॥ जोरि समाधि अचलचित कीना॥ दोहा॥ नाथ मिलन अभिलाष उर लाष लाष सरसाय॥ प्रेम मगन भाषत वचन वारिवि

करनेलगा कि हे त्रिपुरारीदेव सो मुक्ती के दायकस्या मसेघवत शरीर की प्रभावाले भगवान मेरे दीनकी कैसे सुधी लेवेंगे क्योंकि मैने कानोपर घंटा बांधा हुआहै और ~~आपको त्याग~~ तुमारे नामके विना तिस प्रमातमाका नाम कबी सपनेमैभी नहीं सुना विस्नु भगवान का सदेव निंदक हीं रहाहूं अब सो कमललैनन और कृपाके धाम कृस्न प्रमातमा कौन सेवा से मेरे पर रीझेंगे और कौन गुणसे अपने चरनो सेवक जान कर मेरे को सरव सुखों के देने वाली मुक्ती जोहै सोदान करेंगे ॥२०॥ चौपाई ॥ तव शंकर अस मोहि वखाना ॥ कृपानिधान कृस्न भगवाना ॥ जो तजि कपट भजहु हरि काहीं ॥ तो अ साध तुमरे कछु नाहीं ॥ फेरहिं अवसि दीन दुखहारी ॥ दया दृष्टि निज नग नषधारी ॥ तव मै विनय कीन कर जोरी ॥ शंभु वसहिं कहो नंदकिशोरी ॥ कह शंकर वदरीवन माहीं ॥ वसहिं हरन जन त्रास सदाहीं ॥ मै कह कौन यतन नंदलालै ॥ देखहु दृग भरि दीन दयालै ॥ हर भगवान कह्यो तव मोही ॥ गवन पंथ भ्रम वेर न को[illegible]ही ॥ तवमै नाम रूप गृह लागी ॥ पूछ्यो सिव सो नेमृत वागी ॥ हर कह अज अनादि अन धामा ॥ अच्युत अनग अनंत अनामा ॥ गुणअ तीत अवगत अवनासी ॥ सरव रहित सव घटन प्रकासी ॥ हरन हेत भव भेदनि भारा ॥ जदुकुल कृस्न लीन अवतारा ॥ सिंधु तीर द्वारावति माहीं ॥ ऋषृदेव मम वसहिं तहांहीं ॥ दोहा ॥ सुनि सिव मुष उपदेस अस वार वार पग लागि ॥ आयो वदरी विपन कहे कुमति कपट छल त्यागि ॥२१॥ टीका ॥ पिसाच कहताहै कि जव मैने इस प्रकार कहा तव शंकर भगवान मेरे को कहने लगे कि कृस्न प्रमातमा कैसे कृपा निधान हैं जो कपट छल को त्याग कर तुम तिनको भजोगे तो तुमारेको कुछ असाध नहीं है सव

८२२

५१८

कोटि जनम अघ भारी॥ मोहि अनाथ लखि आपन दासा॥ करिय नाथ निज उरवासा॥ जरामरन दुसह दुखभारी॥ हरिय कृपा करि मोर मुरारी॥ कोटि कलप तरु सम दुखसामी॥ तुम हु अर्थ प्रद जन अनुगामी॥ वारवार विनवों नंदलाला॥ देहु जोनि मोहि जोन कृपाला॥ तहां न तुव सुमरन विसराई॥ रहै प्रीति तुव चरन कन्हाई॥ दोहा॥ मै जहं जहं निज करम वस भ्रमहुं नाथ संसार॥ रहहुं भ्रमर इव लुभत नित तुव पद पदम मुरार॥ २४॥ टीका॥ पिसाच कहता है कि जै हो तुमारी हे कृपानिधान हे वासुदेव भगवान जै हो तुमारी हे संख चक्र गदा पदम के धारने वाले जै हो तुमारी हे मुकुंद हे मुरारी हे पापीजनो को उद्धारने वाले हे जदुकुल कमलों के प्रफुल्लित करनेवाले सूरज हे शिव ब्रह्मादि देवताउं करके पूजित कियेहुये हे सरव जग के सुखदायक जै हो तुमारी हे अनंत हे संतों के सहायक हे गो ब्रह्मण पृथवी की रक्षा करनेवाले हे निरधारों के आधार हे दीन जनो के दुख दूर करने वाले हे भगवान तुम कैसे हो जो तुमारे सुमरन करने से कोटि जनम के पाप जो हैं सो सब छूट जाते हैं अब कृपा करके मेरे अनाथ और अपने चरनो का सेवक जानकर हे दीन वंधू दास के हृदय मे वास करिये जरा जो वुढेपा और मृत्यू जो मरन इह भारी दुख मेरे सब कृपादृष्टी करके हरिये हे दीनानाथ तुम कोटि कलप वृक्ष के समान अपने दासों के मनोरथ सिद्ध करनेको सामर्थ हो अब मेरी वारवार एही प्रार्थना है कि मेरेको संसार मे जो जोनी प्रापत होवे तिस जोनी मे भी नाथ तुमारा सुमरन मेरेको रहे और मै करम के वश जहां जहां भ्रमता फिरूं तहां तहांहीं तुमारे चरन कमलों का भ्रमरे के समान लोभी वना रहूं॥ २४॥ चौपाई॥ मरन काल मोहि देवकिलाला॥ विसरहु तुम न दीन प्रतिपाला॥ अधम पिसाच पतित ल

षिमोहू॥ दीनदयाल निज तजिय न छोहू॥ परपीडन सुभाव मम मानो॥ कृपासिंधु सरणागत जानो॥ जन अपराध छमा करवे को॥ तुम सामर्थ नाथ जग एको॥ परो सरन द्वारिका विलासी॥ तुमहि लाज अब होय न हासी॥ जस जानिये तस कृपा न केतू॥ राखि लेहु भव सागर सेतू॥ अस कहि मनुज प्रोत उरधारी॥ सुमरत जदुपति दीन उधारी॥ साधि समाधि ध्यान मन लीन्यो॥ नासा अग्र अचल दृग कीन्यो॥ नाम मंत्र पावन हरि जोई॥ लाग्यो जपन प्रेत पति सोई॥ इक थित अचल आन गति त्यागी॥ श्रीपति चरन कमल लव लागी॥ मान हु भयो प्रेत पाषाना॥ छल बल कपट कूट विसराना॥ प्रेत नाथ अस दसा निहारी॥ भरे नाथ दृग कमल मुरारी॥ दोहा॥ भे अचरज बसस्याम ... चैन मन आनंद सरसाय॥ दृढ़ कीन्यो दृढ भक्ति मम दुरमति देष विहाय॥ ३६॥ टीका॥ फिर पिसाच कहता है कि हे दीन दयाल देवकी के लाल तुम मेरे को मरने के समय मे हृदय से विसरो नहीं और हे कृपानिधान मेरे को तुम अधम पिसाच और पापी जानकर अपनी दया को ना त्यागो इह मेरा परपीडन सुभाव जानकर अर्थात पर पुरष को दुख देने वाला विचारकर प्रभू तुम अपनी सरन मे राखो क्योंकि दास जनों के अपराध छमा करने को तुम भगवान सामर्थ हो हे द्वारिका विलासी मै तुमारी सरण पड़ा हूं अब मेरी लज्जा तुम को ही है जैसे जानो तैसे दीन को राख लेवो ऐसे कहिकर मानुष्य की प्रीत अर्थात प्रीत मनमे धारकर जदुनाथ भगवान को सुमरने लग जाता भया और समाधी साधकर ध्यान मे जुड़कर नासिका के अग्र भाग मे दृष्टी को अचल कर लेता भया भगवान के नामका पवित्र मंत्र जो है सोई स्थित होयकर प्रेत पती जपने लगा

और सब के भरोसे को हृदय से त्यागकर श्रीपतीजो
भगवान हैं तिनके ही चरन कमलों मे मन को जो
उदेता भया सब छल बल कपट को त्याग कर प्रेत
जो है सो मानो पाषाणवत होय गया तब तिस की
ऐसी दशा देखकर भगवान कृपानिधान के नेत्रों मे
प्रेम रूपी जल भर आया और आनंद व श भये हुये
भगवान आचर्ज होयकर कहने लगे कि देखो इस
पिशाच ने दुरमती और द्वेष को त्याग कर मेरी कै
सी ~~उत्तम किया~~ दृढ भक्ती करी है ॥२६॥ चौपाई ॥
मोर नाम निस बासर माहीं ॥ करत सुमर्ण आन ग
ति नाहीं ॥ मेरोई मिलन ध्यान उर राखै ॥ मेरो ई अ
मिय नाम रस चाखै ॥ जो जन कोटि पाप इन कीन्यो ॥
सहजहिं जपत नाम सब छीन्यो ॥ अंतह करन वि
मल कै गयऊ ॥ मोर प्रेम अवचल उर छयऊ ॥ अ
ब निज रूप अनूप सुहावा ॥ इहि के उचित दिखावन
आवा ॥ काहू के कछु नहिन निहोरा ॥ अधम उधरन
नाम जग मोरा ॥ अस कहि दीन बंधु जदुराई ॥ कौतुक
प्रेत पतित उर जाई ॥ निज अनुरूप रूप मन हारू ॥
दीन दिखाय दीन दृग चारू ॥ सुंदर स्याम तामरस
तन की ॥ सोभा अपर स्याम मनु घन की ॥ संख
चक्र बनमाल बिराजी ॥ गदा पदम पद नूपर बाजी ॥
पीत बसन दुति दामनि निंदा ॥ कच कल कुटिल
मनहु अलि वृंदा ॥ कंबु कंठ लोचन जलजाता ॥
भृकुटि बंक छबि धनुष निपाता ॥ अधर बिंब सु
क निंदरत नासा ॥ भाल तिलक श्रीखंड प्रकासा ॥
बर रह कीट कंचिन मनि ~~[illegible]~~ मंडित ॥ भुज आ
जान मान खल खंडित ॥ उर बिसाल छबि जाय
न बरनी ॥ चितवनि चारु मुनिन मन हरनी ॥ बद
न प्रसन्न गरुड आरूढा ॥ किमि उपकरहुं कथन म
ति मूढा ॥ भृकुटि बिलास जास संसारा ॥ जीव चराचर
के आधारा ॥ अस अनूप हरि रूप निहारयो ॥ प्रेत स
फल निज जनम बिचारयो ॥ इकथित अचल समाधि जुडना ॥

लोचनछाय ॥ २३ ॥ टीका ॥ फिर पिसाच कहता है कि
हे मानछ्य जो अतसे छवीवाले सुंदर नैन स्याम तुमने
कहीं देखे हैं तो कहो जो कहीं देखे होवें तो मेरे पर उ
पकार करो सो पृथ्वी का भार दूर करने वाले भगवान बता
य देवो जो मैं दौड़ कर के तिन के चरन कमलों पर सीस धर
कर और दरसन कर के जगत मे बड़भागी और सफल होय
जाऊं ऐसे प्रेत का कथन सुन कर भगवान तिसका प्रेम
नेम जो है सो दृढ जान ते भये और अपने चरनो का अ
नन्य सेवक समुझ कर कृपानिधान तिसपर तुरत हीं
रीझ गये तब पिसाच कहने लगा कि हे मानछ्य अब
तुम कहीं दूसरे स्थान मे चले जावो ई हो हम अपना
नित्य नेम कुछ करेंगे और प्रातकाल होते कहीं और स्थल
को चले जावेंगे इस प्रकार चेष्टा करन कहिकर और श्रो
णित जो लहू है सो पान कर के मगन होय गया फिर मांस
खाय कर और श्रोत अर्थात ओदरों की माला हृदय मे प
हिर कर तिसते उपरांत गंगाजी के जल मे जाय कर स्नान
करता भया फिर कुसा के आसन पर बैठ कर और ध्यान
लगाय कर अंजुली मे गंगा का जल ले के हीं संकल्प
प पढ कर स्थान इत्यादी का त्याग कर देता भया तब
कृष्ण भगवान सुमर्ता और ध्यान मे लीन [illegible] समाधी मे स्थित होय कर चित्त को भी अचल कर बैठा और
भगवान के ही मिलने की [illegible] लाष अभिलाषा करके
प्रेम मे मगन भया हुआ जिस प्रकार अस्तुती करने ल
गा सो आगे कथन की जाती है ॥ २३ ॥ चौपाई ॥ जैति
जैति जै कृपानिधाना ॥ जै जै वासुदेव भगवाना ॥ जै जै सं
ख चक्र कर धारी ॥ जै मुकुंद जै जैति मुरारी ॥ जै जै
अधम उधारन देवा ॥ जै जै मुनि शंकर सुर सेवा ॥
जै जै जदुकुल कमल जाता ॥ जै जै जैति विस्व सुख
दाता ॥ जै अनंत जै संत सहैया ॥ जै रछक मेदनि दुज
गैया ॥ जै आधार निरधारन केरे ॥ जैति हरन दुख
दीन घनेरे ॥ करि सुमर्ता तुमरो गिर धारी ॥ छूटत

के

अर्थ

रवि

हे जोहमा कम आ इति

दृष्टी जो है सो मुनियों के मन को हरने वाली है तैसे ही
प्रसन्न मुख और गरुड़ के सवार नखसिख छवी के धाम
ऐसे भगवान जो हैं तिन की उपमा कहां तक कथन कीजा
वे तिसके कहने को कौन सामर्थ है इह संपूर्ण संसार जो
है सो तिस प्रमात्मा की भृकुटी का एक विलास है और सो
ई भगवान चराचर जीवों के आधार हैं इस प्रकार जगत
नाथ का रूप अनूप देखकर प्रेत अपने जीवने और
जनम को सफल जानता भया एकथित होकर स
माधी मे लीन भया हुआ भगवान के चरन कमल के ध्या
न को त्यागता नहीं है कहता है कि जब से मेरे को श्री
कर ~~[illegible]~~ उपदेस किया है तब तें मैं ने कृपानिधान के
~~[illegible]~~ दरसन के नमित्त अनेक ही यतन किये हैं
॥२७॥ चौपाई॥ अस सरूप नहिं प सो निहारे॥ जग
वि लोको आज मुरारी॥ अब न कबहुं दृग पटल उ
घार हुं॥ सदा रूप हरि हृदय निहारहुं॥ याते अधि
क आन सुख नाहीं॥ देखि अदेख परे हिय माहीं॥ प्रेम
पयोधि प्रेत मन लीना॥ मनु मोहन हरि मूरति कीना॥
हरख मगन रोमांचित गाता॥ वार वार दृग वारि
बहाता॥ निरखि निरखि छवि जदुकुल चंदू॥ उरन
समात पिसाच अनंदू॥ निरतनि रंत्र ध्यान भगवा
ना॥ अस प्रकार जब जाम सराना॥ मोद मगन
नहिं नैन उघारा॥ दीन नाथ तब हृदय विचारा॥
जब लग मम सरूप उर ताके॥ तब लग नैन उघा
रन को के॥ तो ते अब निज रूप दुरैये॥ याके अ
चल समाधि जु दैये अस विचारि उर दीन दयालें॥
निज वपु लोपि लियो ~~[illegible]~~ तत कालें॥ सो
सरूप प्रभु आनंद दाई॥ उर न लख्यो जब प्रेत न
राई॥ चौंकि उठ्यो जुग नैन उघारी॥ चहुंकित च
कृत लख्यो निहारी॥ मानहुं सपन भयो भ्रम भारू॥
कहि न सकत दुख बन्यो अपारू॥ वारवार अस क
रत विचारू॥ कहां गये मम हृदय विहारू॥ ला
ग्यो विकल विलोकन ताहां॥ लख्यो बैठ सनमुख

जदुनाहो॥ दोहा॥ जणालख्योहिय माहियन स्याम रूप सुखदान॥ तणप्रतष भो दृगन पथ प्रेतनाथके मान॥ २८॥ टीका॥ परंतु ऐसा सरूप मेरेको दृष्टी मे नहीं आया कि जैसा मैने आज देखा है अव मैने त्र कवी नहीं खोलूंगा इस भगवान के रूपको हृदय मे सदैव ही देखता रहूंगा इससे अधिक जगत मे और कोई सुख नहीं है क्योंकि जो अदेख भगवानथे सो हृदय मे देख पड़े हैं ऐसे प्रेम मे मगन भया हुआ पिशाच मानो भगवान की मनोहर मूरती ने मोहित कर दिया है हरष से शरीर पर रोमांच उठ खड़े हुये और नेत्रों से जल वहता हुआ वार नहीं लेता जदुकुल के चंद्रमा की छवी देख देख कर हृदय मे आनंद नहीं समावता ऐसे निरंतर करके भगवान के ध्यान मै लीन भये को जव पहर भर वीत गया और आनंद मे मगन भये हुये ने जव नेत्र नहीं खोले तव दीनानाथ ने हृदय मे विचारा कि जव लग मेरा सरूप इस के हृदय मै है तव लग इह कैसे नेत्र उघाडेगा तो ते अव मै अपने रूप को छिपाऊं और इस को तिसी अचल समाधी मे जुडाऊं ऐसा विचार करके दीन वंधू ने ततकाही अपना सरूप लोप कर लिया जव प्रेतराज ने सो सरूप भगवान का हृदय मे नहीं देखा तुरतही दोनो नेत्र उघाड करके चौंक पड़ता भया और आचर्ज के वश होय कर चारो पासे मे देखने लग पड़ा हृदय विचारता है कि इह मेरे को कोई सुपन भया है कि प्रतक्ष है ऐसा कहि शोक आय कर के व्यापत भया कि कुछ कथन नहीं कर सकता वार वार एही कहता है कि वे मेरे हृदय मे निवास करने वाले घनस्याम कहां चले गये हैं व्याकुल होयकर के जो देखने लगा तो वेही घनस्याम सनमुख वैठे हुये देख पड़े जैसी मूरती को हृदय मे देखता था तैसीहीं मनोहर मूरती वाले भगवान प्रेतनाथ अपने नेत्रों के आगे खिड़े हुये देखता भया॥ २८॥ चौपाई॥

४१४ 416

जो नित्त्य जदुनायक एह॥ दीवत्ताय वृषमिध्रुजजेहू॥ मोद मगन तन दसा मुल्लानी॥ कढत न प्रेम विकल मुखवानी॥ जुग ल देउ अस मोन रहाना॥ सुधि से मादि पुनि वदन अलाना॥ जै जै जैति त्रिविक्रम देवा॥ जै जै सुर समाज मुनि सेवा॥ जै जै अखिल लोक विसामा॥ जै जै जन मन पूरन कामा॥ जै मम मुक्तिदाता जेदु नायक॥ जै जै भक्त संत सुखदायक॥ अहे भाग मम दीन सुहाये॥ पाय पाय प्रभु मै निज पाये॥ अस कहि नाचि न लग्यो पिसाचा॥ हरि गुन गान ध्यान मन राचा॥ देत प्रदछना बारहिं बारा॥ अंचुक चलत अंबु की धारा॥ उर न समात अनंत अनंदू॥ देखि देखि छवि जदुकुलचंदू॥ मिटि गई जनम जनम की पीरा॥ विसवे दस न मुख जदुवीरा॥ बहुरि प्रमो लीन मन कीने॥ श्रीपति चरन चारु चित दीने॥ दोहा॥ लाग्यो असतुति करन कल कृस्न हरन दुख दीन॥ जै कूरम जै नरहरी जै वराह जै मीन॥ जै धरनीधर सेन कर वरदायक भगवान॥ जै मुकुंद जदुकुमद कुल चंद चारु सुखदान॥ जै षट देउ भुज देउ बलचेउ खलन दल दीन॥ जै ब्रह्मादि सुरिन निखल जे प्रमोद पद दीन॥ जैति चराचर नाथ जै जै जगहिरजन हार॥ जै हर मानस विमल वर विहरन विदत मराल॥ जै जै विस्न सहिस्नु हरि विभु सुघासुर रंज॥ जैति विमोचन भार भू जैति विलोचन कंज॥ जैति गुपाल कृपाल जै देवकि लाल ललाम॥ जैति चक्रधर खडग धर जैति धनुषधर राम॥ जैति सुरथ रथ रमन जै भवन भूरि के नाथ॥ जैति सुधारन करन सर जैति धरन कटि भाथ॥ जै करता भरता जगत जै हरता जन त्रात॥ जैति कामतरू भक्त जन जैति स्याम घन गात॥ जैति उधारन पतित जै वारन विपति गजिंद॥ जै तारन मुनि तिय विदत मै

८८

तज्यो न हरि पद पंकज ध्याना॥ दोहा॥ जबतें मोहि
उपदेस किय संकर कृपाआगार॥ तबते मै कीन्यो
विविध जतन अनेक प्रकार॥ २७॥ टीका॥ भगवान
कहते हैं कि इह पिता च और सब
के भरोसे को त्यागकर राती दिन मेरेहि सुम
रन करता है और मेरा ही ध्यान और मेरे ही मिलने
की प्रीती वाला है और मेरे ही नामका अमृत रस पीव
ता रहता है इसने आज तक जन्मोत्र मे जो पाप किये
हैं सो तो नाम जपते जपते सब सहजे ही छीन होयगये
हैं मेरे भजन के प्रभाव से इस का अंतःकरण अर्थात
हृदय भलीप्रकार निरमल होय कर रोम रोम मैं मे
रा अवचल प्रेम छायत होयगया है अब इस को मेरे
अनूप रूपका अवस्य दरसन होना चाहिये इस
मै कोई किसी का निहोरा नहीं है अधम उधारन ना
म मेरा सब जगत मै प्रसिद्ध है ऐसे कहिकर दीन
बंधू जदुनायक तिस महा पापी प्रेत के हृदय मै जाय
कर अपना अदभुत रूप जो है सो दिखाय देते भये सो
भगवान का कैसा रूप और ध्यान था कि तामरस जो
नील बरन का कमल तिस के समान शरीर की आभा
फिर कैसी शोभा थी कि जैसे नील बरन का बादर होता है
और संख चक्र गदा पदम करके युक्त पाउं मै नूपर जो
झाजरी सो शोभा देती हैं बिजली को लज्जा देने वाले
पीत बस्त्र और बडे मनोहर कुंडलों वाले स्याम केस कि
मानो भ्रमरयों का समाज इकत्र हुआ बैठा है संखवत
ग्रीवा जो गला और कमलों की छबीको हरने वाले बिसा
ल नेत्र बडी बंक भृकुटी कि मानो धनुष को भी लज्जा
देती हैं बिंब जो कनूरी फल तिस [illegible] के समान अधरों की
शोभा शुक जो तोता तिसको लज्जा देनेवाली सुंदर ना
सिका और मसतिक मै चंदन का तिलक तैसे ही शोभा
करके युक्त कंचिन और मणियों से खचित माथे पर मोर
मुकट और खल जो दुष्ट हैं तिनको मान दूर करनेवाली
लंबी भुजें हृदय बडा विशाल अर्थात चौडा नेत्रों की

दीन हितकारी प्रभु पाये हैं इसप्रकार कहिकर पिसाच
जो है सो भगवान के गुण गण गावता ध्यान मै
जुड़ा हुआ नाचने लग जाता भया नेत्रों से प्रेम जल का प्र
वाह चला जाता दीनानाथ की वारवा प्रदक्षणा लेता है जदु
नाथ महाराज की छवी को देख देख हृदय आनंद जो है सो समा मै
वता नहीं सनमुख सरव सृष्टी के वेद जदुवीर जो हैं तिनको
देख कर पिसाचराज की जनम जनम की पीड़ जो है सो सब मि
ट जाती भई फिर आनंद मै लीन भया हुआ कृष्ण परमातमा
के चरन कमलों मै चित्त को जोड़ कर अस्तुती करने लगा कह
ता है कि जै हो तुमारी हे कूरम हे नरसिंह हे बाराह हे मत
स अवतारी जै हो तुमारी हे शेषनाग की सिज्या पर सैन
करने वाले हे मुकुंद भगवान हे जदुकुल कुमदों को प्रफु
ल्लित करने वाले चंद्रमा हे दुष्टों के दल को भारी भुज
दंडों से खंडन करने वाले हे ब्रह्मंडों को आनंद देने वाले
हे हे दीन जनो के सुखदायक जैं तुमारी हे चराचर जीवों
के पालक हे जगत के सिरजनहारे हे शंभू के मनरू
पी सरोवर मै विचरने वाले हंस हे वैष्णव जनो के
ष्व सखे हे सरस नेही विष्णू भगवान जै हो तुमारी हे देव
ताउं के हितकारी हे पृथवी का भार हरने वाले हे क
मलों वत नेत्रों की शोभा वाले हे गोपाल कृपाल हे
देवकी लाल हे चक्रधारी हे खड़गधारी हे धनुषधारी
जै हो तुमारी हे सरव भवनो के नाथ हे रण मै रण के धा
रने वाले हे हाथ मै बाण की शोभा वाले
हे कमर मै निखंग जो तीरों की डब्बी है तिसके धारने
वाले जै हो तुमारी हे जगत के करता भरता और हर
ता हे भक्त जनो के कलप वृक्ष हे स्याम मेघवत शरी
र की शोभा वाले हे पापी जनो के उद्धारनहारे हे ग्राह
के ग्रसे हुये गज की पुकार सुनने वाले हे गो
तम की स्त्री अहल्या को तारने हारे हे देवताउं का भय
दूर करने वाले जै हो तुमारी हे पावनरूप हे बलीरा
जा को छलने वाले वामन हे दीनो के सरव दुख दूर क
रने वाले हे लक्षमी के प्रीतम हे दल के सहित रण मै

रावनकीवलहीन करनेवाले जैहो तुमारी हे परसू के
धारनेहारे परसराम हेगरुड़गामी अर्थात गरुड़परसवा
रहोनेवाले हे नख पर गोवरधन परवतके धारनेहारे
हे महादेव का धनुष भंजन करनेवाले हे जगत के पिता
तुमको मेरी नमसकार होवे जैहो तुमारी हे रघुकुलक
मलों के सूरज हे जगत मैं दसरथ के जीवन हे जानकी
के प्रान आधार हे जदुकुल कुमदो के चंद्रमा हे गोकल
अवतारी हे पापी जनो को पवित्र करनेहारे हे पूतना को
तारनेवाले जैहो तुमारी हे जदुवंस के भूषन हे दासजनो
के दूषन दूर करनेवाले हे बृज वासी हे रासविलासी हे
जोगीजनो के हृदय मै चरन कमलों के धारनेवाले हे बृज
स्त्रीउ के सुखदायक हे बृंदावन मै विचरनेवाले जैहो तु
मारी हे अघासुर बकासुर को वधकरनेहारे हे गौ
ऊं के चारने मै प्रवीन हे मल्लचांडूर और कंस आदिकों के
प्रानों का नासकरनेवाले हे पांडवों के सखे सुहृद
हे मुरारी भगवान जैहो तुमारी हे ~~[illegible]~~ कौरवों की
सभा मे द्रोपदी की लज्जा राखनेहारे ~~हे जगत मै अजा
मिल से पापियों को तारनेवाले~~ हे कृपानिधान हे संत
हितकारी भगवान इसप्रकार असतुती करके पिसाच
कहता है कि हे दीनबंधू मै बड़ा दुरमती पापों का भरा हू
आ महामंद और मूढ कि जिसको चार विचार हिता
हित सत्य असत्य का कुछ भी ज्ञान नहीं सदैव तैं
पर द्रोही पाखंडी दंभी और कपटी हो रहा हूं मे
मेरा ऐसा कौन पुन्य था कि जिससे हे दीनानाथ तुम
मेरे पर अनुकूल अर्थात प्रसन्न होय गये हो॥२२॥ चौपाई
प्रेत जाति कहे अधम उधारी॥ जो दरसन तुव दी मुरारी॥ कि
यो धन्य धन संपति मोही॥ अधमउधारन लायक तोही॥
मोहितें सरहिं कै न सिव काई॥ काह करूं अरपन जदुराई॥
दारिद्री अति दीन मलीना॥ प्रभु दाया अनुचर लषि कीना॥
भाजन सुजस कियो जग मोही॥ वेदहुं वार वार प्रभु तोही॥
अस कहि नाचिन लग्यो पिसाचा॥ कृस्न सरोज चरन मन
राचा॥ मनहुं निमगन मोद निधवारी॥ प्रेमवार दृग लेत

राजा

हे जगत मै अजामिल से पापियों को तारनेवाले

ना

नकारी॥ भनत आज मम सरस नपूजा॥ जहि प्रभु की
न दृगन पथ पूजा॥ काह धरहुं नैवेद कृपालें॥ कस दिखा
ऊं अब दीन दयालें॥ दियो नाथ मोहि जोनि पिसाची॥
मोरी तुष्टि अमुष महं सांची॥ प्रेतन आमिष रुधर विधा
ता॥ रच्यो अहार पूर्व विख्याता॥ होत अहार जौन कर
जेहू॥ निज स्वामिन कहं अरपत तेहू॥ दोहा॥ तातें मो
रे उचित अब निज प्रभु सनमुष ल्याय॥ अरपहुं आमि
ष भक्ति जुत चरन कंज सिर नाय॥ ३०॥ टीका॥ फिर कह
ता है कि हे अधम उधारी भगवान तुमने जो मेरे पिसा
च जाती को दरसन दिया है तो कृपा न मेरे को संसार धन्य
धन्य कर दिया है इह वार्ता कुं आचर्ज नहीं है क्योंकि तुम
दीनाथ अधमों के उद्धारने को योग्य हो अब मेरे तें [illegible]
प्रभू तुमारी कौन सिव काई बन आवे और मैं दीन बंधू को
क्या अरपण करूं अर्थात कौन भेटा देऊं मैं तो महा दारिद्री
अत है दीन और मलीन हूं दीनानाथ ने अपने चरनों का
सेवक और किंकर जानकर दया करी है और मेरे को ज
गत मै सुजस का पात्र बनाय दिया है हे भगवान मै तु
म को बार बार वंदना करता हूं ऐसे कहि कर प्रेत जो है
सो कृष्ण भगवान के चरन कमलों की प्रीती वाला भया हुआ
नाचने लग जाता भया नेत्रों से प्रेमजल का प्रवाह [illegible]
चला जाता है मानो आनंद रूपी सरोवर मै मगन हो र
हा है और मन मै कहता है कि आज संसार मै मेरे स
मान दूसरा कोई नहीं है कि जिसने दीन हितकारी भ
गवान को नेत्रों के मारग पूजन किया है अब कृपा
निधान के आगे क्या नैवेद धरूं और दीन बंधू को कैसे
दिखाऊं मेरे को भगवान ने पिसाच जोनी हीं दई है तो
ते मेरी प्रसन्नताई मांस मै हीं है विधाता ने प्रेतों का
आहार मांस और [illegible] रुधर ही बनाया है तो तेजि
स का जो अहार होता है वे [illegible] अपने स्वामी को सोई
अरपण करता है इसते मेरे को भी योग्य है कि भक्ती
प्रीती पूर्वक कल्याय कर और चरनों पर सीस नाय कर

हारन सुर वृंद॥ जै पावन वामन कुलन दलन दुंद दुख दीन॥ जै श्रीभावन समर जै रावन दलबलछीन॥ जै हरि नर जै परसुधर जै धर नग षगगामि॥ जै हर भंजन धनुषधर जै जग जनक निमामि॥ जै जै रघुकुल कमलकल उदय अवध मनुभान॥ जै दसरथ जीवन जगत जै जै जानकि प्रान॥ जै मयंक जदुकुल कुमुद जै गोकुल अवतारि॥ जै जै पतित पुनीत पय पीयत पूतना तारि॥ जै भूषन जदुवंस वर जन दूषन दमनीय॥ जै विलास वृज वास जै रचन रास रमनीय॥ जै जै जोगिन वृंद उर आरविंद पद ध्यान॥ जै विहरन वृंदा विपुन जै वृज वधु सुखदान॥ जै अघ वक दारन दनुज चारन धेनु प्रवीन॥ जै ति मल्ल षल कंस बल धरषि प्रान हत कीन॥ जै जै पांडु सुहृद सुखद मुर मद मथन महान॥ जै जै राखन द्रुपदि पत होत द्रुपत जग जान॥ जै ति अजामिल पतित से सव जग जानत ऐन॥ तुम तारे करुणायतन सुजन संत सुखदैन॥ मै दुरमति रत दुरित अति अगति मूढ मद मत्य॥ चारविचार न हित अहित चितय न सत्य असत्य॥ परद्रोही पाषंड पर कपट दंभ कर मूल॥ कौन पुन्न वस प्रकट तुव भये नाथ अनुकूल॥ २८॥ टीका॥ तव चेटाकर न पिसाच ने जान लिये कि ये जदुनाथ भगवान मेरे हृदय मे वासकरने वाले और जिनको शंकरदेव ने बताया था सोए हैं आनंद और प्रेम से व्याकुल भया हुआ मुख से कुछ बोल नहीं सकता ऐसे दो घडी पर्यंत मौन ही रहा तिसते उपरांत शरीर की सुधी संभाल कर बोलता भया कि जै हो जै हो तुमारी हे त्रिविक्रम देव हे मुनी देवताओं करके पूजत किये हुये हे संपूर्ण लोकों के विस्राम हे दास जनो की कामना पूरन करनेवाले जै हो तुमारी हे मेरे से अधम पिसाच को मुक्तीदान करने वाले हे भक्त संतोंके सुखदायक मेरे धन्य भाग्य हैं जो मैने आपने ऐसे

४१७

४१७

हाथों मे लिये हुये आनंदमे मगन होयकर भगवान के सनमुष स्थित होयरहाहै इसप्रकार तिसको सरल और कपट से रहित जानकर दीनबंधु अत्यंत प्रसन्न होयगये और तिसका अनन्य प्रेम लखकर कि जिसको दूसरेका भरोसा नहीं भगवान तुरंही प्रेम के वश होयकर नेत्रों मे प्रेम जल हीं भरे हुये आनंदसे जिसप्रकार कहने लगे सो आगे कथन किया जाता है ॥ २२ चौपाई ॥ मै निश्चय मानस लषि पाया ॥ तुम मम भक्त वचन मनकाया ॥ सत्य प्रेम कीन्यो मोहिमाहीं ॥ तुम समान प्रीय दूसर नाहीं ॥ विप्रआमिष नहिं भोगन जोगू ॥ पूजनीय जानत सब लोगू ॥ यामै कछु नहीं दोष तुमारा ॥ अमिष पिसाच भोग संसारा ॥ तुव तन पाप परै न हीं पेषा ॥ जप्योमोर मुष नाम बसेषा ॥ कियो कपट गत मम पद नेहू ॥ साधुन रीति निरंतर एहू ॥ लषि अनन्य तुव प्रेम नवीना ॥ मै निज जिय तुमरे वस कीना ॥ तुमरी प्रीति प्रतीति निहारी ॥ प्रीय सेवक निज लियो विचारी ॥ प्रीति विनय कृत प्रेतमु वालैं जानि मुक्ती हेत कनंदलालैं ॥ सहि न सके उठि व्याकुल धाई ॥ भेटि लिये द्रुत भुजा भराई ॥ लिपटि गये कछु भेद न जाना ॥ को कृपाल जदुनाथ समाना ॥ दीनबंधू दीनन हितकारी ॥ दीनदयानिधि दीन उकारी ॥ दोहा ॥ प्रभु तन परसत प्रेत को भेद अपावन रूप ॥ कोटि निसाकर दिपत मनु दिपत कोटि दिन भूप ॥ २३ ॥ टीका ॥ भगवान कहते हैं कि मैने निश्चय करके अपने मन मे जान लिया है जो तुम मन वचन काया करके मेरे दृढ भक्त हो और मेरे मै तुमने सत्य प्रेम किया है अब तुमारे समान मेरेको और कोई प्यारा नहीं है हे भक्त इह ब्रह्मण का मांस जो है सो भोगने के योग्य नहीं है ब्रह्मण जगत मै पूजने लायक होता है सब लोग जानते हैं परंतु इसमै तुमारा कुछ दोष नहीं पिसाच जाती का मांस ही भोग है तेरे शरीर मे तो पाप देखही नहीं पडता क्योंकि तैने निरंतर करके मेरे नाम को जपया है और मेरे चरनो मै निःकपट प्रेम किया है

साधू जनो की रीती जो है सो एही होती है हे भक्त मै तुमा
रा ऐसा दृढ और पवित्र प्रेम देखकर अपना हृदय तुमारे
वश कर दिया है तुमारी प्रतीती और प्रीती विचारकर तु
मको मै अपना पयारा और दृढ सेवक जान लिया है ऐ
से कृपानिधान भगवान प्रेतराज की भक्ती प्रीती ~~केवल~~
~~भये हूये मित~~ को तिस की मुक्ती का कारन जानकर स
हार नही सके ततकाल व्याकुल ~~ताते~~ भये हूये उठकर
और धाय कर भुजा भरते ही लपेट कर हृदय से जुडाय ले
ते भये प्रेम के वश भये हूये भगवान कुछभी शोका नहीं
करते भये देखो जदुनाथ के समान कौन दीन बंधू और
दीन हितकारी है इस प्रकार भेद और अपावन रूप प्रेत को
परसते हूये ~~[illegible]~~ भगवान का शरीर कोटि चंद्रमा औ
र कोटही सूरज के समान आभा देता भया ॥३२॥ चौपाई॥
ललित वदन अंबुकजलजाता॥ भुज आजान स्याम घन गाता॥
कच कुंचित मनु भृंग समाजू॥ उर विसाल वनमाल बिरा
जू॥ पगमंजीर पीत तन चीरा॥ माथ मुकट मंडित
मनि हीरा॥ सोभित चारि चिन्ह मन लोभा॥ कहि न जाय
कछु अतुलित सोभा॥ बार बार मिलि ताहि मुरारी॥
बैठ आसन बहुरि सुखारी॥ ग्यान मान विग्यान सुजा
ना॥ भक्तिमान रतिमान महाना॥ रूपमान सब शा
स्त्र प्रवीना॥ कृपा नकेत प्रेत कहं कीना॥ जोगि
सिद्ध तापिस मुनि ग्यानी॥ करहिं जतन हठ अन
क अमानी॥ ते अधिकार लेत नहिं ऐसो॥ दीन्यो
कृष्ण प्रेत कहं जैसो॥ को दूसर अस दीनदयाला॥
प्रीति करत करि देत निहाला॥ आन उदार कौन
अस आहीं॥ सरन भवत संसार कछु है हीं॥ विदत भ
नत मुख वेद पुराना॥ इनहीं कर तारन भगवाना॥
दोहा॥ इकधरनी सुरधेनु सुर धरनि हरन दुखभार॥
इक धारन गिरवर सुनख वारन विपति निवार॥३३॥
टीका॥ फिर भगवान की कैसी शोभा किं मलवत मु
ख और कमलोंवत ही मनोहर नेत्र बडी लेवी

४१८ 418

मुजें स्याम मेघवत शरीर की उपमा और स्याम ही सुंदर कुंडलों वाले सुंदर केस मानो भ्रमरयों के समाज को लज्जा देते हैं हृदय विशाल तिस पर शोभा देती है तुलसी की माला पाउं मे सजी हुई मंजीर ते से ही मन को हरने वाले पीत वस्त्र माथे पर मुक्ता मणियों करके जटित मोर मुकट संख चक्र गदा पदम इन धारे हुये हैं जिन्हों ने शास्त्र इस प्रकार भगवान कृपा निधान की कुछ शोभा कथन नहीं की जाती बार बार तिस भक्त पिसाच को मिलकर फिर आनंदपूर्वक अपने ही आसन पर आयकरके विराजमान होय जाते भये और तिस पिसाच को भक्त हितकारी भगवानने अपनी कृपा की दृष्टी से ज्ञान विज्ञान के सहित भक्तीमान प्रीतीमान रूपमान और ~~बहोत गुणमान~~ विद्यामान भलीप्रकार सब सास्त्र मे प्रवीन करदिया देखिये जोगी सिद्ध तपस्वी मुनी और ज्ञानी जो हैं सो अनेक जतन हठ और साधन करते हैं परंतु ऐसे अधिकार को नहीं पावते कि जो कृष्ण प्रभात माने आ~~पाँही कृष्ण~~ करके इस प्रेत राज को दिया है ऐसे प्रभु समान और दूसरा कौन दीन हितकारी है कि जो जनकी प्रीती देखकर निहाल करदेता है और ऐसा कौन उदार है कि जो दासको शरण भये जानकर संसारके भयसे छुटाय देता है इनके समान एही भगवान हैं इसीतें इनको वेदपुराणोंने पतित उधारन ~~अर्थात पापियों के उधार करने वाले~~ कथन किया है अर्थात पापियों के उद्धार करनेको एही सामर्थ हैं और एही गौ ब्रह्मण प्रथवी की रक्षा करने वाले एही गोवरधन परवत को नख पर धारने हारे और गज जो तंदुये का ग्रसा हूआ हसती है तिसका कलेश और विपती हरने वाले हैं ॥ ३३ ॥ चौपाई ॥ प्रेत पारषद रूप धराये ॥ ठाढ भयो सन मुष जदुराये ॥ तब मुसक्याय भन्यो भगवाना ॥ सुनहु वचन मम सुमति निधाना ॥ जो लो वसहिं नाक सुरराई ॥ तो लो तहि समान तुव जाई ॥ सुरपुर वसहु विलासन संगा ॥ होहिं न तुव समाज सुख भं

अपने स्वामी को मांस हीं अरपण करूं अर्थात मांसही आ गे ल्यावेंगे ॥ २० ॥ चौपाई ॥ अस बिचारि सो प्रेत प्रवीना ॥ हरि अरपण हित जतन प्रलीना ॥ वेदक द्विज आमिष द्रुत ल्याई ॥ धोय विमल जल सुरसरि जोई ॥ मूल मंत्र अभिमंत्रित करि कै ॥ पात्र पुनीत प्रीति जुत धरि कै ॥ लेग बन्यो प्रभु सनमुख सोई ॥ मानस चार विचार न कोई ॥ जुग कर जोरि विनय मन राचा ॥ इह तुव रच्यो अहार पिसाचा ॥ अति पुनीत इह कृपानिधाना ॥ वेदक विप्र आमुष मैं आना ॥ तुम सम प्रभु के लायक चीना ॥ तापर मैं अभिमंत्रित कीना ॥ अबहिं बध्यो प्राचीन न एहू ॥ करिय ग्रहण तुव दीन सनेहू ॥ सेवक अरपत बहत सु दाहीं ॥ करिवो ग्रहण उचित तुव काहीं ॥ अस कहि प्रेत न हरष अयाता ॥ दृग पथ प्रेम द्रुत जाता ॥ ठाढो प्रभु सनमुख सुख मानी ॥ लिये विप्र आमिष जुग पानी ॥ तासु सरल गत कपट निहारी ॥ में प्रसन्न अति दीन उवारी ॥ दोहा ॥ लखि अनन्य तहि प्रेम अस प्रेम विवस जदुराय ॥ सजल नैन मुद अैन मुख मनें वचन सुखदाय ॥ २१ ॥ टीका ॥ तब ऐसे विचार कर सो प्रवीन प्रेत भगवान को भेटा अरपन करने के वासते जतन विचार कर एक वेदक ब्रह्मण का मांस ल्याय कर और गंगा के निरमल जल मे धोय कर फिर मूल मंत्र से मंत्रित कर के बडे सुंदर पवित्र पात्र मे धर कर प्रीती और सनमान से चार विचार को त्यागे हुये भगवान के सनमुख ले जाता भया और हाथ जोड़ कर विनती करने लगा कि हे भगवन तुमने ए ही पिसाचों का अहार रचया है अहो और मै वेदक ब्रह्मण का मांस ल्याया हूं इह अति करके पवित्र है तुमारे जैसे प्रभू के लायक जानकर मंत्र से मंत्रित करके ल्याया हूं और भगवन इह प्राचीन कुछ वासा नहीं नवीन अर्थात नया ही है मै अबी बध कर के ल्याया हूं हे दीन सनेही इस को ग्रहण कर लीजिये ना आप को योग्य है ऐसा कहि कर प्रेत जो है सो हृदय मे नही समावता और नेत्रों से हरष की जल बहावता है सो ब्रह्मण का मांस

पधारे भक्त मेरे समान ही सुंदर रूपधारे हुये वास करते हैं तहा वैकुंठ धाममै तेरे साथ मेरी सदैव ही अभंग सते संग और मिलाप रहेगा अब जो कुछ मनकी और रुची है तो और मांगलेवो मै तुमको देनेकेलिये सामर्थ है इसप्रकार परम सनेह और कृपा रसकी भीजी हुई भगवान की बानी सुनकर चेटाकरन अतसे प्रसन्न होकर और दोनो हाथ जोड़कर बारबार चरनोपर सीस नाय कर विनती करने लगा कि हे दीनपाल और हे दीन हितकारी भगवान अब तो कुछ बाकी नही रहा जो मैं मांगू आपके दरसनते संपूर्ण मनके अर्थ सिद्ध होयगये हैं और कामना सब पूर्ण होयगई है परंतु एक प्रार्थना है कि जो मेरेपर दीनबंधू और कृपा सिंधू का सनेह और दयाकी दृष्टी है तो बार बार इहवर मांगता हूं कि हे भक्त सनेही इह तुमारी भक्ती जो है सो निरंतर करके मेरे हृदय मै छायत रहे और तुमारे चरन कमलोंकी प्रीती ना छूटै नित्त नवीन ही विलास बढता जावे और हे दीन हितकारी एक मेरी और भी प्रार्थना है कि जो इह ~~तुमरी~~ मेरी और तुम्हारी पवित्र गाथा है इसको जो कोई श्रद्धा से प्रीती पूर्वक पढे अथवा श्रवण करै तिसको तुम हे दीनानाथ अपने चरन ~~कमलों~~ की निरमल भक्ती जो है सो देवो· और तिसके सब दोष दुख दूर करके अपनेही चरन कमलों का भ्रमरा बनाय राखो कली कालकी मल जो है सो तिसके शरीर मे ना रहे और जनम मरन की पीडा भी सब छूट जावे इसप्रकार प्रेत राजकी प्रार्थना सुनकर भगवान कृपानिधान अतसे प्रसन्न होयकर एवमस्तू शबद जो है सो कहते भये कि हे भक्त ऐसे ही होगा॥ ३४॥ चौपाई॥ सो दुज बधत प्रेत करतां हो॥ द्रुत जियाय कौतुकज दुनाहो॥ देखआपनो प्रभु रूप सुहावा॥ परम धाम निज दीन पठावा॥

सुर मुनि सकल चरित अस देखी॥ मानत भये प्रमोद व सेखी॥ जै मुकुंद जै जै जदुराई॥ कहि नभ सुरन सुमन झरि लाई॥ सब कर देषत सोमति धामा॥ चंटाकर्ण पूरि उर कामा॥ चढि विमान सुमरत जदुराई॥ गयो मुदित सुरलोक सिधाई॥ तहाँ अनन्त भोग सुख भोगी॥ बहुरि पाय गति दुरलभ जोगी॥ हरि समीप वैकुंठ अगारा॥ बस्यो जाय दुरमति दुरचारा॥ दोहा॥ देख हु दीन दयाल जग कौन सरिस जदुराय॥ जहि अस पतित पिसाच कहँ दीन्यो मुक्ति बजाय॥ अस इह चंटाकरन की कथा श्रवण सुखदान॥ पठै सुनै जो प्रीत जुत पावै पद निरवान॥ ३४॥ टीका॥ और जिस ब्राह्मण का मांस पिसाच वध करके ल्याया था तिस ब्राह्मण को भगवान तुरत कौतुक से जिवाय कर और अपना अदभुत रूप देकर वैकुंठ धाम को पठाय देते भये तब इस चरित्र को देवता और मुनी सब देखकर बडे आनंद को प्राप्त होय गये ~~किन्दे~~ और देवताँने जैजै शबद उचारकर आकास से फूलों की बरषा करदई तब चंटाकरन पिसाच जो था सो सब के देखते सरब कामना करके पूरित भया हुआ सुंदर विमान पर चढ कर जदुनाथ भगवान को सुमरता हुआ देवलोक को चला जाता भया और तहां अनन्त ही भोग सुख भोग कर फिर जोगी जनो को दुरलभ गती जो है सो पायकर भगवान के सामीप वैकुंठ धाम मे जाय निवास करता भया ~~देखिये~~ नाभा दास जी कहते हैं कि हे सेतम क्रो देखिये जदुनाथ भगवान के समान संसार मे कौन दीनपाल और दीन हितकारी है कि जिन्हों ने ऐसे महा पापी और अधम पिसाच को ~~मुक्तीको~~ बजायकर मुक्ती पदार्थ देदिया और लोक प्रलोक मे धन्य धन्य करदिया है इस प्रकार इह चंटाकरन की सुंदर और सुखदायक गाथा जो है

इस को जो कोई श्रद्धापूर्वक प्रीतीभक्तीसे पढैगा अथवा श्रवण करैगा सो जदुनाथभगवान की कृपासे अपने मन वांछित फल को प्राप्त करैगा और भगवान के चरन कमलों की प्रीतीभक्ती वाला होकर भगवान के धाम को हीं चला जावेगा ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषाटीकायां चेटाकर चरित वरणने नाम सरगा८ शुभ

जब इहमरहिं अमर नृप ताहीं॥ होहु तुमहुं सब अमर न
नाहीं॥ भोगी अनन्य भोग सुख भारे॥ पुनि ऐहौ तुव लो
क हमारे॥ निवसहीं जहां मोर प्रीय दासा॥ मम अ
नरूप सरूप प्रकासा॥ तहं बैकुंठ धाम तुव संगा॥ सदा
मोर संसर्ग अभंगा॥ मागहु अवर जवन मन माहीं॥ तो
हि अदेव कछु सज्जन नाहीं॥ ऐसा करन सुनत प्रभु बा
नी॥ अति सनेह दाया रस सानी॥ ह्वै प्रसन्न मन पानन
जोरी॥ नाय सीस पद बिनय अथोरी॥ बोल्यो दीननाथ
भगवाना॥ अब बाकी कछु रह्यो न आना॥ मागब जो नप
दम पद दासा॥ प्रभु दरसन सब पूरन आसा॥ पै मोपैं जो
भगवन नेहू॥ तो पुनि पुनि मांगहुं बर एहू॥ दीननाथ तु
व भक्ति सुहाई॥ मम उर रहहिं निरंतर छाई॥ छुटहिं च ^न
रन कंज तुव प्रीती॥ बाढहिं नित नव बिमल प्रतीती॥
आन बिनय दीनन हितकारी॥ जो इह कथा हमार तुमारी॥
पठै सुनै श्रद्धा सरसाई॥ तहिं निज बिमल भक्ति जदुराई॥
दीजै दीननाथ दुख छीजै॥ निज पद पदम भ्रमर करि
लीजै॥ रहै न कलिमल तासु सरीरा॥ छूटहिं जन
म मरन सब पीरा॥ दोहा॥ सुनि ता कर अस कथ
न कल कृपासिंधु भगवान॥ एवमस्तु निज बद
न भनि भये प्रसन्न महान॥ ३४॥ टीका॥ तब प्रेत
जो है सो पारषद रूप धारकर भगवान के सनमुख स्थित
होय जाता भया तिसको देखकर दीनबंधू कहने लगे
कि हे सुमती प्रधान मेरा वचन सुन कि जैसे जब लग
कि स्वर्गलोक मे इंद्र राज समाज भोगता है तैसेहीं न
^कर ब लग तूं तहां जाय देवलोक का राज जो है सो आनंद
पूर्वक भोग तेरा सुख बिलास कबी भंग ना होगा
जब इह देवताओं का राजा इंद्र मृत्यू को प्रापत होवे
तब तूं तहां जाय कर देवताओं का राजा बन जा और
तिस देवलोक के अनन्त सुख भोगकर फिर आनंद
से मेरे लोक मे आय प्रापत हो कि जहां मेरे परम

^और वहां से

के देने वाला और मोह भ्रम आदि मूल कलेशों हरने ^के
वाला सुभ मंगलों का मूल भक्ती काम हातम जो है
सो कथन करता हूं इह कै सामी भक्ती काम हातम मै है
^हीं कि भगवान की पवित्र भक्ती कैं देने वाला आनंद और
प्रेम को अधिक करने वाला मनको भावता कि जिसके
श्रवण करने तें सरब दुख दोष और पाप सहजे ही
नास हो जाते हैं कहते हैं कि सुंदर गूर्जर देश मै अ
^क जा नाम करके ^ए गाउं होता भया तिस गाउं के वीच
^की नागर जाती मै ब्रह्मणों कुल विषे नरसी नामकर
के एक भगवान का भक्त होता भया सो पूर्व लेजन
^विषे मों राष्ट्र देशों मै विचरता रहा अब जो [illegible] दा
^एक रिका तें आठ जोजन ^रेवत ^नामा परवत [illegible] तिसके
निकट बड़ा रमणीक पूना नगर जो है सो भक्त तिस
मै वास करता भया माता पिता काल के वश होग
ये हूये थे केवल एक बडा भ्राता और भ्राता की स्त्री
साथ थी आप भक्त ही से होन और विरक्त था
एक दिन सो जदुनाथ का सेवक कहीं गाउं से फिर
ता फिरता घर मै आय कर अपनी भौजाई से कहने लगा
कि हे माई मेरे को शीघ्र जल पिला जो मै त्रिखा क
र के व्याकुल हो रहा हूं सो तिस समय किसी काज मै
जो लगी हुई थी क्रोध करके बड़ी कठोर बानी से बोल
ती भई कि अरे मूढ कहो तो कौन काज कर कर
आया है जिसते बारबार जल ही जल पुकारता है
कि अथवा गाडी हांकता हूआ बडा श्रम पाय करके
आया है अहो मंद तेरे को लज्जा भी नहीं आवती
बड़ा ही ढीठ है जो खाने पीने के सम
य घर मै आय जाता है फिर तो अधम मुख भी न
हीं दिखावता है हे जड देखतो विधाता ने ते
रे को हाथ पाउं दिये हूये हैं आप क्यों नहीं ज
ल लेलेता वृथा मेरे को हीं श्रम देता है जा को दारिद्री
चले जावो अब मेरे को अविकाश नहीं है अर्था
त मै कार ज मै लगी हूं इस प्रकार वज्र के

समान तिस के वचन सुनकर नरसी को मरणे की रुची होजाती भई क्योंकि दुष्ट कठोर वचन जो हैं सो हलाहल जो विष है तिससे भी दसगुणा अधिक होते हैं विष जो है सो मार ही देता है परंतू दुष्ट कठोर वचन जो हैं सो रात्रीदिन हृदय को जलावते रहते हैं - शक्ती जो बरछी शूल जो त्रिशूल सर जो बाण खड्ग जो तलवार इत्यादि शस्त्रों को पुरुष हठ कर के सहार हीं सकता है परंतू दुष्ट वचन का बाण जो महा दुखदायक है सो जगत मे सहा रान हीं जाता है ॥२॥

चौपाई॥ अस चिंतत जीय भक्त सुजाना॥ चल्यो धीर गत दुखित महाना॥ तीन क्रोस पुर बहिर सुहाये॥ गोपनाथ जगदीस्वर गाये॥ अभय वरद दीनन हितकारी॥ आयो तहां भक्त व्रतधारी॥ करि प्रणाम अस दृढ लीना॥ तजहुं प्राण मानस प्रण कीना॥ सपत दिवस अस तासु सराना॥ कस्यो न भक्त अन्न जल पाना॥ मस्यो न जवहिं जतन तव कीना॥ गौरव शिला करन गहि लीना॥ शिव पें राखि सीस दुज नीके॥ मोजी मनन सुमरि निज जीके॥ लग्यो सीस जव शिला प्रहारन॥ महादेव तव भक्त उवारन॥ विप्ररूप धृत रुचिर नवीना॥ तासु निवारि प्रबोधन कीना॥ आतमघात करहु कस मूढा॥ इह तो विदित पाप जग गूढा॥ मोहि प्रसन्न जिय जानि अभेवा॥ अब वर मांग मांग महिदेवा॥ नरसी सुनत अलौकिक रचना॥ विप्ररूप वृषधुज वचना॥ अति प्रसन्न मानस अनुरागा॥ नम्र वचन मुख भाषण लागा॥ जो प्रसन्न तुव जन अनुगामी॥ मोरे देन चाहु वर स्वामी॥ तो निज प्रीये वस्तु मनमाना॥ करहु दान मोहि कृपानिधाना॥ तव शंकर निज हृदय विचारा॥ अस प्रीय वस्तु कवन संसारा॥ जो इहि देत वचन निज काहीं॥ करहुं रुचिर फुर संसृति माहीं॥ सव तें अधिक विस्व मोहि प्यारे॥ कृष्ण देव सज्जन हितकारी॥

सोग्रस देहुं कवन विधि एहीं॥ हृदयगुनत हर दीन
सनेही॥ बोले बदन वचन दुख मोचन॥ मूदहु वेग
भक्त जुग लोचन॥ मै वर देहुं उचित जस तोसो॥
नरसी सुनत पलक दृग जोसो॥ तव कौतुक मथु
रा हर ल्याये॥ कदि विलास जनु स्वपन सुहाये॥
तहां शंभु प्रीय कृष्ण रसीला॥ निरत रास मंडिल क
ल लीला॥ देखि करत हर भक्त सनेही॥ त्रीय स
"पूव माज [illegible] सन कस एही॥ दोहा॥ अस विचारि तहि
वृषभ धुज प्रमुदा भेष वनाय॥ कौतुक कलित प्र
दीपका करदे चले लिवाय॥२॥ टीका॥ तव ऐसे वि
चारकर व्याकुल और दुखी भया हूआ नरसी तहांसे
चल पडता भया नगरसे वाहर तीन कोस पर भ
क्तजनों को अभय वर देनेवाले गोपनाथ भगवान
विराजे हुयेथे तिनकी शरणा को चला आया तहां
तिस महादेवजी को प्रणाम करके और दृढ आसन
लगाय करके ऐसा प्रण करलेता भया कि अव प्रा
णों को त्याग देता हूं इस प्रकार तिसको सातदिन
वतीत होय गये कुछ अन्न जल खानपान नहीं कि
या जव ऐसे भी नहीं मरा तव हाथमे एक वडी
भारी शिला लेकर और महादेव की पिंडी पर अ
पना शीस डालकर भजाई के कठोर वचन हृद
य मे सुमर करके सिर को जो फोडने लगा तो त
तकाल ही भक्तों का कलेश हरने वाले महादेव भ
गवान ब्रह्मण का रूप धारकर तिसको निवारण
करके प्रवोध करने लगे कि अरे मूढ क्यों आतम
घात करता है इह अपने आपका घात करना तो वडा
भारी पाप है अव तू मेरे को प्रसन्न जानकर जोम
न को भावता है सो वरमांग इस प्रकार विप्र सरूप
श्रीः होकर देव का वचन सुनकर नरसी जो है सो हृदय
मे परम हरख मान कर" दीन होयकरके विनती कर श्रीः
ने लगा कहता है कि हे दीन वंधू जो तुम मेरे पर प्र

अथ नरसीभक्त चरित्रं

दोहा॥ अब संकुल सुख करन कल हरन मोह भ्रम सूल॥ भक्ती महातम करहु कछु कथन मंगलन मूल॥ भक्ति प्रवरधन प्रेमप्रद मनभावन मुददात जासु सुनत भव नरन दुख दोष दुरत दुः जात॥ चौपाई॥ गूरजर देस विदत अभिरामा॥ तहिमे अजा नाम इक ग्रामा॥ नागर जाति दुजन कुलचारू॥ भयेम के नरसी व्रतधारू॥ ते पूरब जनमांच सुहाये॥ सुभ सुराष्ट्र देसन उपजाये॥ अति सुभ्रत द्वारावति तेही॥ षष्ट जुगल जोजन इक श्रेही॥ रेवत सैल प्रांत मन हारू॥ पूना नाम विदत पुर चारू॥ तहांनि रेच कीन निज वासा॥ वरजित जननि जनक गुण रासा॥ जेष्ट भ्रात जुत भामनि सोहा॥ आपु भक्त नित्रीक अमोहा॥ एक दिवस सेवक जदुराई॥ ग्राम प्रजटन करत गृह आई॥ कहिस भ्रजावति सन मोहि पानी॥ देवहु वेग त्रिषारत जानी॥ ते नयुक्त कारज रिस छाई॥ अतसे कटुक मुख वचन अलाई॥ मूढ कवन अस काज सवासो॥ मांगत वार वार मुख वासो॥ आवा जनहु ठाकर करि क्रीडा॥ अहो अधम नहिं आवत ब्रीडा॥ खान पान अवसर तकि आवत॥ व हुरि न मंद वदन दिखरावत॥ कीने देव चरन कर तोही॥ आपु न लेत देत श्रम मोही॥ तजहु जाहु अब दारिद दासू॥ मोरे नहिन अधम अवकासू॥ तास वचन सुनि वज्र समाना॥ नरसी हृदय मरम हुवि लाना॥ दोहा॥ हाला हलतें अधिक दुह दस गुण वचन कठोर॥ ते मारत दुह ज्वाल वत जारत जिय निसि भोर॥ शक्ति खड्ग सर सूल नर कर हठ लेत सहारि॥ पै दुह सह्यो नजात जग वचन कान दुख भारि॥ १॥ टीका॥ अब सरव सुखों

भक्त प्रीय मोरा॥ मोर भक्त जन निंदक तोरा॥ सो द्वे
षी मोहि शत्रू समाना॥ भोगत और नरक सठ नाना॥
विष्टा क्रिमी होत पुनि ताहू॥ होई हैं अंत ग्राम बारा
हू॥ क्षुधित तृषत दुखित जग सोई॥ भ्रमत रहत दा
रदरत सोई॥ यातें संसृति भक्त तुमारा॥ तुव समान मो
हि मानस प्यारा॥ तब श्री कृष्ण देव [illegible] हरषाये॥
दीन धरनि कल रूप बनाये॥ नरसि भक्त कहे संजुत
दाया॥ दीन नाथ [illegible] अस वचन अलाये॥ भक्त स
रूप मोर तुम भेषा॥ इह तुव जवन दृगन भरि देखा॥
लेहु निरंत्र अंत्र निजधारी॥ मोर नृत्य गुण गीत उ
चारी॥ विचरहु अभय भक्त संसारा॥ तुमहिं सुजस
सुख सरब प्रकारा॥ लोक प्रलोक सिद्ध सब तोरा॥ सं
तत वचन भक्त बर मोरा॥ अरु जब बनहिं काज कछु
तोरे॥ कहि तुमतो सुमरन तब मोरे॥ मैं मेधा च सि
द्ध सब तोरा॥ कारज करहुं भक्त प्रण मोरा॥ सुनि न
रसी अस वचन कल कृष्णदेव सुखदान॥ खुले नैन
भयो निकट थिर गोप नाथ भगवान॥ सुमरत राधा कृ
ष्ण मन शंभु चरन सिर नाय॥ चल्यो भक्त ग्रामंत्र
कहे भक्ति प्रीति सरसाय॥ तब तहो जाय करके शंभू
भगवान बडी प्रीतीसे तिसको कहने लगे कि हे भक्त
देख इह राधिके और इह कृष्ण प्रमातमा है कि जि
नोने भक्तों के नमित्त जगतमे अवतार धारन कि
या है इन को छोड कर संसारमे मेरेको और कोई
प्यारा नहीं है तो ते तुम राधा कृष्ण इह परम प
वित्र मंत्र जो है सोई निरंतर करके रटन करो अर्था
त जपो क्योंकि इहमंत्र सरब सुखों का मूल और
सरब कामना के देने वाला है इस के जपने से दोष
दुष और दारिद्र सब दूर हो जाते हैं ऐसे शंभू का क
थन सुनकर मुखसे मुसक्याय कर कहने लगे कि हे
शंकर मेरेको कहो जो इह तुमारे साथ दीपक प
कडे हुये कौन है तब महादेव कहने लगे कि हे दीना
नाथ इह तुमारा ही भक्त है मैं इस को आप के चर
नोंकी शरणमे ल्याया हूं हे शंभू [illegible] सदेव दीनो
तुम

के सने हो और परम हितकारी हो कृपा दृष्टी करके इस को संसार मे कृतार्थ और सफल करिये तव शंकर की वा णी सुन कर के भगवान कृपानिधान मधुर वचों से कहते भये कि हे शंभू तुमारा भक्त जो है सो मेरा ही भक्त है और मेरा भक्त जो तुमारा निंदक है सो मेरे को द्वेषी शत्रु के समान है और दुष्ट घोर नरक भोग कर और विष्टा का कीड़ा होकर अंत को ग्राम का सूकर अर्थात सूर वनेगा और क्षुधा त्रिखा कर के दुखी भया हुआ महां दारिद्री होकर जगत मे भ्रमता रहेगा तांते तुमारा भक्त मेरे को तुमारे समान ही मन मे प्यारा है ऐसे कहिकर कृष्ण भगवान तिस दीप धा रनी का रूप वनाये हुये नरसी भक्त को वड़ी प्रीती और कृपा दृष्टि से कहने लगे कि हे भक्त इह मेरा सुंदर सरूप जो तूं ने नेत्र भर कर देखा है अव इसी निरंतर करके हृदय मै धारन करले मेरा ई नृत्य गुण और मेरा ही कीर्तन गायन कर कर संसार मै अभय होय कर विचरता रहो तेरे को सरव काल सुजस और सुख ही रहेगा और तेरा लोक परलोक भी सव सिद्ध होवेगा हे भक्त इह मेरा वचन सत्य कर कै है और भी जव तेरे को कोई कारज वने तो मेरा सुमरण करना मै तैसा ही भेष धार करके तेरे काजे को पूरण इह मेरा सत्य प्रण है इस मे कुछ संशय नहीं इस प्रकार भगवान भक्त सुखदान का वचन सुनते ही नरसी के नेत्र तुरत खुल गये तव अपने आप को तैसे ही गोपनाथ भगवान के सनमुख स्थित भये हुये देखता भया हृदय मे आचर्ज मान कर राधा कृष्ण को सुमरता हुआ महादेव के चरनो पर सीस नाय कर और भक्ती प्रीती वाला होय कर फिर भक्त प्रधान जो है सो कहीं अमोच को चलाजो भया ॥ २ ॥ चौपाई ॥ मारग मिल्यो नाति जन काहू ॥ सो विलोकि सं जुत उत साहू ॥ प्रेरत कृष्ण देव भगवाना ॥ नरसी सृष्ट भक्त जीय जाना ॥ अस विचार करि मानस ताही ॥ तासुदीन निज सुता विवाही ॥ त वहरि भक्त दार रत सोई ॥ लखि नकेत वसन दुख खोई ॥ अस प्रकार ताकर मन हाहू ॥ उपजे सदन सुता सुत चाहू ॥ भक्त कुटंव निरत तव भयऊ ॥ दिन दिन

८२८ ४२४

अधिक अधिक सुख लयऊ॥ सेवन अतथि संत अनुरागा॥ कृष्ण सरोज चरन मन लागा॥ किंकरादि कल वाद्य बजाई॥ निरतत कृष्ण विमल गुण गाई॥ देषि जाति जन द्वेष प्रकासा॥ कीन वहिर निज पंकति तासा॥ यद्यपि कीन अधम अस दोसू॥ तदपि न कीन भक्त कछु रोसू॥ कृष्ण सुमरन भजन इहि भांती॥ तत पर रहत भक्त रत शांती॥ दुष्टलोक नहीं आवत नेरे॥ सोऊ न जात सदन तिन केरे॥ अस प्रकार कछु समय विहोचा॥ तब इक गृह स्थि हरष उरछावा॥ चलन लाग द्वारावति काहीं॥ आवा भ्रमत ग्राम तहि माहीं॥ लोगन सन अस तास बखाना॥ मै चाहुं द्वारावति जाना॥ मोपें रह्यो द्रव्य अधिकाई॥ सुन्यो परत लुठिकमग भाई॥ काहु तुमार नगर धनि साहु॥ इहवित देहुं सकल निज ताहु॥ तहिते पाय पत्र सुखदाई॥ द्वारावती लेहुं धन जाई॥ दोहा॥ ते धूरत सुनि काय न तहि कपटकूट सरसात॥ बोले नरही भक्त इक ईहो धनक अवदात॥३॥ टीका॥ तब नरसी भक्त को मारग मे जाते हुये कोई एक नाती जन मिल जाता भया सो कृष्ण भगवान का प्रेरत किया हुआ नरसी को परम भक्त जान कर बडे आनंद से तिस को अपनी पुत्री विवाह देता भया तब सो भक्त स्त्री के सहित होकर सुखे पूर्वक अपने घर मे वास करने लगा इस प्रकार तिस के घर मे एक पुत्री और एक पुत्र उतपन्न होता भया और भक्त जो है सो कुटंब मे लीन भया हुआ दिन दिन अधिक ते अधिक सुखे को प्रापत होने लगा और रात्री दिन अतिथी संतो की सेवा करकर कृष्ण भगवान के चरन कमलों की प्रीती मे हीं लीन रहता खंजरी खरताल आदि वाज जो है सो बजाय कर कृष्ण भगवान के नृत्य और कृष्ण के हीं निरमल गुण सदेव गावता रहता तब इस प्रकार तिस को नाती जाती के लोगों ने देख कर द्वेष भाव कर के अपनी पंक्ती से बाहिर कर दिया यद्यपी तिन दुष्टों ने भक्त सूं ऐसा भी निरादर किया तद्यपि साधू सुभाव और क्षमा रूप नरसी हृदय मे कुछ क्रोध न हीं करता भया शांती रूप होय कर रात्री दिन कृष्ण प्रमातमा के भजन

(margin: दुष्टलोक नहीं आवत नेरे॥ ... ; नाती जन ... ; का)

तुम्न भये हो और मेरे को वर देना चहते हो तो हे कृपानिधान अब कृपा करके जो वस्तू तुमको संसार मे परम प्यारी है मेरे को सोई दान कर दे वो अर्थात दे देवो तब शंकर सुन करके हृदय मे विचार करने लगे कि ऐसी प्यारी वस्तु संसार मे कौन है जो मै इस को दे कर के अपने वचन को सफल करूं सब ते अधिक तो संसार मे मेरे को दीनो के हितकारी कृष्ण देव ही पयारे हैं सो इस को कैसे देउं इस प्रकार विचार कर शंकर भगवान परंसुखदायक वचन जो है सो कहने लगे कि हे भक्त अब तुम शीघ्र अपने नेत्र मूंद लेवो मै तेरे को जो उचित वर है सो देता हूं ऐसे महादेव का वचन सुन कर नरसी ततकाल दोनो नेत्र मूंद लेता भया तब शंकर प्रभु मानो स्वपने का विलास करके तिस को तुरत मथुरा मे ले आये तिस समय तहां कृष्ण भगवान सुंदर रास लीला मे लीन हो रहे थे तिन को देख कर शंभू विचार करने लगे कि ईहां स्त्रीओं के समाज मे इस को किस प्रकार ले जाऊं ऐसे विचार कर महादेव तिस का स्त्रीभेष बनाय कर और हाथ मे दीपक पकड़ाय कर अपने साथ ले जाते भये ॥२॥ चौपाई ॥ तहां जाय हर सेजुतदाया ॥ सुनहु भक्त अस वचन अलाया ॥ इह राधा इह कृष्ण मुरारी ॥ भक्त हेत संसृति अवतारी ॥ इनहिं छाडि मोहि मानस प्यारा ॥ आन न सुनहु भक्त संसारा ॥ राधा कृष्ण मंत्र जगपावन ॥ करहु निरंत्र रटन मन भावन ॥ सरव काम प्रद मंगल मूला ॥ हारन दुरत दोष दुख सूला ॥ सुनि अस शंभु कथन जदुराई ॥ बोले वदन वचन मुसकाई ॥ शंकर दीप धरा तुव एहू ॥ कवन करहु मोहि कथन सनेहू ॥ तब गरीस अस वदन उचारा ॥ दीन नाथ इह भक्त तुमारा ॥ मै लाया प्रभु शरण तुमारी ॥ करिये कृपा दृष्टि गिरधारी ॥ संसृति करहु कृतार्थ एही ॥ सदा देव तुव भक्त सनेही ॥ शंकर कथन सुनत भगवाना ॥ बोले मधुर वचन हित साना ॥ शंभु तुमार

४२५

425

इत सुतम पथिक व्यवहारू॥ जोम मरहु अपजस संसारू॥ मोर तोर कछु होहिं न थोरा॥ अस प्रकार जन वदन ~~कव~~ निहोरा॥ पथिक दीन पथिक कर तासा॥ जात लेहु स्यामल धनि पासा॥ चल्यो सुलेत पत्र हरषाता॥ इत हरि भक्त भक्ति मद माता॥ सो विंत अतथि सेत दुज काहीं॥ कीन विभगत सदन निज माहीं॥ उहां वनक द्वारावति जाई॥ पूछत फिरत विपुल श्रम पाई॥ इहां कवन पुर स्यामल साहू॥ तब भाष्यो लोगन अस ताहू॥ स्यामल नाम ग्राम इहि माहीं॥ अवलो सुन्यो वनक हम नाहीं॥ तव निरास चिंता कुल भारी॥ वहिर नगर फिरि चल्यो सिधारी॥ मोहि सन ~~भक्त~~ कपट करि भारा॥ अहो दीन श्रम वृथा अपारा॥ अस प्रकार जव चिंतन कीना॥ तव इक यान मनोरम चीना॥ चपल चारु सित तुरग सुहावन॥ तहि पै स्याम वरन मनभावन॥ पीत वसन सुभृत मृदु अंगा॥ हरन कोटि छवि ललित अनेगा॥ पूछत तासु वदन हेकारे॥ तुव स्यामल धनि कित हुं निहारे॥ तासु वचन सुनि भगवन काहा॥ मैहुं पथिक स्यामल धनि राहा॥ तुव अभिलषत कवन मोहि संगा॥ करहु कथन निज वदन उमेगा॥ ~~सक्त~~ सुनत अस वचन उचारा॥ मै पूछ्यो लोगन पुर सारा॥ दोहा॥ सवन कथन असकी सुखे इहां न स्यामल कोय॥ तव चिंता कुल वहिर पुर चल्यो आस जीय खोय॥४॥ टीका॥ हे पथिक अर्थात हे द्वारिका को जाने वाले तुम तिसके घर मै चले जावो तहां तुमारा कार्ज सिद्ध हो जावेगा ऐसे तिनके कहने से सोयात्रू पूछता पूछता नरसी भक्त के घर मै आय गया और तिसको मिलकर के कहने लगा कि हे भक्त इहमेरे से मुद्राधन लेलेवो और मै द्वारिका को जाने वाला हूं तहां अपने गुमासते के नाम मेरेको हुंडी लिखदेवो जो मै तहां अपना धन सहजे ही जायकरके पायलेऊं इस प्रकार तिसका कथन सुनकरके ~~न~~ नरसी भक्त हृदय मे विचार करने लगा कि इह दुष्ट जनों ने मेरे साथ हांसी करी है परंतू अव इस वारताका कुछ फल होना चाहिये

(margin: तास)

(margin: ५७४८)

यद्यपि इसका फल प्रापत होना दुर्गम और वडा कठिन है अर्थात
कदाचित होने वाला ही नहीं तद्यपी हृदय मे सोचकर कुछ
यतन करता हूं ऐसे विचारकर तिस यात्रू को कहने लगा
कि भाई मेरेको दिखावोतो तुमारे पास कितनाक धन है
तिसके वदले मै तेरेको हुंडी लिख देऊं तव तिसने तुरत
सात सौ मुद्रा गिणकर के देदई और भक्त प्रधान ने लेकर
वडे हरष पूर्वक स्यामल साह की ओर हुंडी जो है सो इस
प्रकार लिखी कि मैने ईहां इसकी सात सौ मुद्रा लेलई है
हे तीन भवन के धनी स्यामल साह अव इहं लज्जा तुम
को ही है और मेरे हाथ के लिखे अनुसार इह धन तुमको ^मेरी
^को अवश्य देना ही पडेगा क्योंकि इह हुंडी विवहार वहुत सू
तम है जो इसको नाम रेगे तो मेरा और तुमारा जगत
मै अत्यंत अपजस होवेगा ऐसे वारवार चितायकर और
हुंडी लिखकर तिस वैस यात्रू के हाथ देदेता भया और
कहने लगा कि जाउ भाई द्वारिका मैं जायकर अपना धन
पाय लेवो तव सो यात्रू आनंद से हुंडी लेकर द्वारिको चल
पडा और ईहां भगवान का भक्त नरसी सो धन अतिथी
^त सें और ब्रह्मणों को वांट देता भया ऊहां सो यात्रू द्वा
रिका मै जायकर और जहां तहां वडा श्रम पायकर
पूछता फिरता है कि भाई इस नगरी मे स्यामल साह
कौन है दयाकरके मेरेको वतायदेवो जो मै खोज
ता खोजता व्याकुल होय गया हूं तव लोगों ने तिस
को कहा कि भाई स्यामल नाम करके साह आजत
क हमने इस नगरी मे कोई सुना ही नहीं ऐसे तिन
के मुखसे वचन सुनकर सो यात्रू अत्यंत निरास
होयकर नगरी के वाहर को चलपडा और कहता है
कि मेरे साथ तिस धनी भक्त ने वडा भारी कपट किया
~~और वृथा ही ...~~ वृथा ही मैं और मनोकलेश ^म
दिया है इसप्रकार नगरी से वाहर जाते जाते ने चिंतन
जे किया तो क्या देखता है कि एक वडा सुंदर रथ और
तैसे ही चंचल स्वेत वरन के मनोहर घोडे तिस
पर स्याम मूरती पीत वस्त्रधारी कोटि कामदेव की

४२६

426

को

छवी हरने वाला शोभा की निधी एक सवार चढा हु
आ चला आवता है तिस को ऊंची स्वर से पुकार कर पू
छने लगा कि तुम ने कहीं स्यामल साह देखे हैं तो व
ताओ तब भगवान तिस का वचन सुन कर कहने ल
गे कि हे भाई स्यामल साह तो मैं हीं हूं तूं अपने हृदय
की अभिलाषा और मनोर्थ जो है सो कहो कि मेरे
साथ तेरा कौन काम है ऐसे भगवान का वचन सुनक
र सो याचू जन कहने लगा कि मैंने सब नगर मे लो
गों से पूछा कि ईहां स्यामल साह कौन है तो सब
लोगों ने एही कहा कि ईहां स्यामल साह कोई नहीं है
तब मै चिंता कर के व्याकुल और निरास भया हुआ नग
र से बाहर निकल कर पीछे को फिर चला था ॥ अब भागो
के वश तुम मेरे को मिल पडे हो ॥४॥ चौपाई ॥ नरसि भक्त
मोहि हरषि वसेखी ॥ पत्रिक दीन नाम तुव लेखी ॥ मोरे दे
हु धन क हरषाई ॥ वेग सपत सत मुद्र सुहाई ॥ तब स्या
मल पत्रिक सुखदाई ॥ सादिर लेत दृगन निज लाई ॥
अति प्रसन्न मुख वचन उचारा ॥ पथिक धन्य जग जन
म तुमारा ॥ जो अस दीन आज मोहि ल्याई ॥ तुव रु
ह पथिक रुचिर सुखदाई ॥ मोरे प्रीय जीय पत्रिका ता
हू ॥ अस न दीन मोहि अब लग काहू ॥ अस कहि हि
रन भक्त उर त्रासा ॥ मुद्रा दीन सपत सत तासा ॥ निज
कर पत्र लेखि भगवाना ॥ देत तासु अस वदन बखाना ॥
हुंडी जो नरसी कहे जाई ॥ अस प्रकार मुख वचन अ
लाई ॥ मोहि कहे सदा पत्र अस प्यारी ॥ लिखते र
हहु भक्त व्रत धारी ॥ भरन जोग मे पत्र तुमारे ॥ कर
ते रहहु सफल मोहि प्यारे ॥ पथिक सुनत अस वच
न सुहाये ॥ चलो हरषि धन पत्रिक पाये ॥ अंत्र ध्यान
स्यामल धनि भयऊ ॥ पथिक प्रथम द्वारावति गयऊ ॥
करि अनेक जात्रा मन भावा ॥ गवन करत नरसी
पें आवा ॥ दुरजन देखि पथक अस आवन ॥ ल
गे परस्पर हास अलावन ॥ अब दुरदसा होहि
कस एहा ॥ देखहि आय सकल अग गेहा ॥ तब

श्रौर सुमर्णो मै हीं लीन रहता दुष्ट लोग जो हैं सो
कोई पास नहीं आवते श्रौर सो भी तिन के घर नहीं जा
ता इस प्रकार जब कुछ समय वतीत होय गया तब
एक कोई गृहस्थी पुरुष बड़े हरष श्रौर आनंद से द्वा
रिका परसने को जाने लगा दैव इच्छा से भ्रमता भ्रम
ता तिसी ग्राम मै आय गया श्रौर वे लोगों से पूछने ल
गा कि भाई मै श्री द्वारि को जाने वाला हूं श्रौर मेरे पास
इह धन है सुनता हूं कि रस्ते मे लुंठिक अर्थात लूट
ने वाले लूट लेते हैं तांते तुमारे नगर मै जो कोई साहू
कार धनी है तो बताउ जो मै उसके पास इह धन राख
कर द्वारिका की हुंडी लेलूं श्रौर तहां जाय कर अपना धन
पाय लऊं सो धूरत ~~कपटी~~ अधम तिस यात्रू का कथन सु
न कर कपट से कहने लगे कि हां भाई इहां एक नर
सी नाम करके बड़ा धनी श्रौर साहूकार प्रसिद्ध है सो तु
मारे मनोर्थ को सफल करेगा ॥ २॥ चौपाई॥ जाहु प
थिक ताकर तुम धामा॥ सो पुर कर हिं तोर सब कामा॥
ते पूछित अस चल्यो सिधाही॥ आवा सदन भक्त ब्रत
धारी॥ करत भेट अस वदन उचारा॥ इह धन लेहु भक्त
तुब सारा॥ द्वारावति पैं धन क सुहाई॥ मोरे देहु पत्र लि
खि भाई॥ तहां विलेब विगत मै जाई॥ लेहुं रुचिर धन
आवन पाई॥ नरसी सुनत कथन अस तासा॥ लख्यो
कीन दुरजन कछु हासा॥ अब इहि कर फल पावन जो
गू॥ जो इह कीन कपट दुरलोगू॥ यद्यपि अगम अग्रे
म वजाना॥ तद्यपि सुमरि कृष्ण भगवाना॥ करहुं यतन
कछु हृदय विचारी॥ कहिस तासु वदन उचारी॥ केत
कवित तुव देहु दिखाई॥ मै अब लिखहुं पत्र सुख
दाई॥ तब तहि गनत सपत शत दीन्यो॥ मुद्रा चा
रू भक्त वर लीन्यो॥ स्यामल साह श्रौर हरषाई॥
भक्त सुष्टु पत्रिक सुख दाई॥ निज कर यथा उचित
लिखि दीनी॥ मै स्यामल मुद्रा इत लीनी॥ त्रिभुवन
धनी पत्र जोई मोरी॥ इहि कर तुमहिं आज जग खोरी॥
मोरे करन लेख अनुसरहीं॥ तुमहिं अब पा देन अब परहीं॥

श्री

अस

इसप्रकार भगवान वारंवार कहिकर ततकाल ही तिस
को सातसौ मुद्रा गिनकर देदेते भये फिर आपने हाथसे
सुंदर पत्रिका लिखकर और प्रीतीपूर्वक तिसके हाथमे
देकर कहने लगे कि हे भाई इह मेरी पत्रिका तिस धनीभ
क्त को देना और कहना कि भक्त मेरे को ऐसी प्यारी प
त्रिकाँ तुम सदैव ही लिखते रहना मै तुमारी हुंडी भरने
जोग्य हूं मेरे को इससे सदाहीं सफल करते रहो तब सो
यात्रू दीनानाथ के ऐसे वचन सुनकर धन और पत्रि
का को पायकर आनंद से चल पडताभया तब भगवान
तुरत तहाही अंतर्ध्यान अर्थात लोप हो जाते भये और
सो यात्रू जो है सो प्रथम द्वारिका को चला गया तहां भ
गवानकी अनेक यात्रा और दरसन परसन करके फिर
चलता चलता नरसी के नगर मे हीं चला आया तब
सो हासी करने वाले दुरजन जो थे तिसको तहां आव
ते हूये देखकर फिर परस्पर हास करके कहने लगे
कि देखो अब इस भक्त की कैसी दुरदशा होवेगी इह
धन देने वाला आय गया है इसप्रकाँ सब दुष्टजन त
माशा देखने को साथही चले आये तब तिस यात्रू
ने आवते ही नरसी भक्त के चरनोपर सीस धरदिया
और हाथजोड़ कर विनती करने लगा कि भक्त प्रधान
तुम संसार मै धन्य हो कि जिनका ऐसा अनुसारी औ
र सुखदायक गुमासता द्वारिका मै वास करता है कैसी
भी शोभावाला है कि सुंदर स्याम सरीर सरव अंगोंकर
के कोमल पीत वस्त्रधारी कमलोंवत मनोहर नेत्र
और कानों सजे हूये सुंदर कुंडल मानो नखसि
ख कामदेव के मद को हरने वाली कृस्न भगवान
की ही मूरती है सो ऐसी मन को मोहित करने वा
ली मूरती मेरे हृदय मै वस रही है विसरती नहीं
है और तुमारी लिखत देखते ही मेरे को तुरत सात
सौ मुद्रा गिनकर देदेई तिसने जैसा मेरा सतकार कि
या है तैसा मै एक मुख से कथन नहीं कर सकता हूं मा
नो मै कृतार्थ होकर आया हूं ऐसे कहिकर फिर सामल

भगवान की पत्रिका तिस भक्त के हाथ मै दे देता भया
तव नरसी दीनवंधू की पत्रिका को वडे सनमान से लेकर
ओर सीस पर धर कर वारवार प्रणाम करने लगा हर
ष के आसूपात जो हैं सो नेत्रों से वहे चले जाते हैं प्रेम
करके आछाय गया मुख से कुछ वचन नही निकल
ता तव दुसू जन जो थे सो देख कर आचर्ज होय गये हृ
दय मै परम लज्जा मान कर अपने अपने घर को चले
जाते भये ओर नरसी भक्त ने वडे हरष ओर प्रेम से तिस
यात्रू जन को तीन दिन तक अपने घर मै ही राखा ओर
नित्त नया ही आदर सतकार करता रहा चौथे दिं आनंद
पूर्वक वडे सनमान से तिसको विदाय कर दिया तव
सो यात्रू वारवार भक्त प्रधान के चरनो पर सीस नाय
कर हरष से अनें धुलाया करता हू आ अपने घर को
चला गया ॥५॥ चौपाई ॥ गयो कछुक जव काल विहा
ई ॥ करत संत सज्जन सिव काई ॥ असतहि सुता सील
निधि जोई ॥ अवसर पाय गरभ वति होई ॥ वीते स
पत मास जव तासू ॥ भई दुखोत्र देखि तव सासू ॥ र
ही सुनखो गर्भ वति जोई ॥ कुलारीत कछु नाहिन होई ॥
पितु गृहतें कारज सव एहू ॥ होहिरीत असतिन कर
गेहू ॥ भोजन वसन द्रव्य आभरना ॥ रहै सव जनकतास
वय करना ॥ भाषत सास वदन अस ताहू ॥ मोरे नहिन
भाग्य उतसाहू ॥ पितु तुमार निरलज्ज महाना ॥ चारवि
चार तास नहिं जाना ॥ मांगत फिरं भीष सन साधू ॥ निर
तत निडर लेत कर वादू ॥ करत कूट नित वांधव सारे ॥
सेसकार गत देखि तुमारे ॥ सुनि अस सास वदन क
टु वानी ॥ पितु कहं लिखो पत्र दुख मानी ॥ ईहा मोर
वांधव जन जाती ॥ पावक वचन दहत नित छाती ॥
जो तुव इत सं जुत वित आई ॥ इनकर वंस रीत सम
दाई ॥ करत जाहु निज भवन सिधारी ॥ तो मै होऊं सु
चित दुख भारी ॥ वाचि पत्र निज दुखित कुमारी ॥ उ
ठो सि मानि खेद जिय भारी ॥ वृद्ध वृषभ रथ जीरण
गेहा ॥ गवन्यो लेत भक्त वर तेहा ॥ राधा कृस्न विम
ल गुण गाता ॥ आवा भक्त सदन जा माता ॥

४२८

420

साधु दरस जीरण रथ तासा॥ देखत लगे करन सब हासा॥ दोहा॥ सुता विलोकत कहत ग्रस पितु कि मेष कराल॥ तुव धारत निज लाजगत ग्राव मोर सुसराल॥ ॥१॥ टीका॥ तव बूहो नरसी भक्त को घरमे वास करते ग्रौर भगवान के गुणगण गावते को जब कुछ काल वतीत होयगया तव तिस कौं निधी जो कन्या ग्रपने पती के घरमे वास करती थी सो समय पाय करके गरभवती होय जाती भई ग्रौर जव तिस को सात महीने वतीत होयगये तव तिस की सास ~~देख~~ विचार करके परम दुखी होती भई क्योंकि सुनखा ग्रर्थात बूह जो गर्भवती थी तिस की कुला रीत ~~तै~~ कुछ नहीं भई ग्रौर कारज संपूर्ण बहू के पिता के घर से होना था ग्रर्थात भोजन वस्त्र धन भूषण इह सब तिस के पिता ने ही देना था ~~सो ये करनाथा~~ ग्रव सास ~~जो~~ नरसी की कन्या को कहती है कि देखो मेरे भागों मे उतसाह नहीं है पिता तुमारा महा निरलज्ज तिस को कुछ चार विचार ही नहीं है साधुओं के साथ मिल कर भीख मांगता फिरता है ग्रौर निडर होय कर निरत करता ग्रौर बाद्य जो खंजरी खरताल ग्रादिक हैं सो वजावता रहता है इहा तेरे को संसकार से हीन देखकर सब बांधव जाती नाती के लोग कूर ग्रर्थात मसकरियां करते हैं ग्रौर मेरे हृदय को जलावते हैं इस प्रकार सास के मुख से महाकटू ग्रर्थात बड़ा कौड़ा वचन सुन कर ~~ग्रौ~~ ग्रौर हृदय मे ग्रत्यंत दुख मान कर पिता को पत्रिका जो चिट्ठी है सो ~~इस~~ इस प्रकार लिखती भई कि हे पिता इस समय ~~मेरे~~ को इहां बांधव जो जाती नाती के लोग हैं सो बोली कबोली से ग्रनेक दुरवचन कहि कहि कर मेरे को महाक लेश देते हैं ग्रौर हृदय को जलावते हैं जो तुम इहां ~~धन को लेकर~~ उचित समाज ग्रौर धन ल्याय कर इनके वंस की संपूर्ण रीती कर जावो तो मै इस महा कलेश से छूटती हूं नहीं तो मेरा मरण ही है ग्रैसे जव कन्या की ~~पत्री~~ पत्रिका गई ग्रौर

(margin) कि उतसाह
(margin) भी
(margin) क

ताऽ॥ पथिक भक्त पद आई॥ करि प्रणाम असविनय आलाई॥ तुमहु धन्य संसृति व्रत धारी॥ जा कर अस सेवक अनुसारी॥ द्वारावती वसहिं सुखदाता॥ मंजुल स्याम वरण मृदुगाता॥ अति सरवांग ललित मन हारन॥ वसन पीत लोचन जलजारन॥ कुंडल करन आभरन साजा॥ मानहु कुसुम मदन मद लाजा॥ सो सरूप अब विसरत नाहीं॥ पृवसि रह्यो मोरे मन माहीं॥ देखत लेख तुरत चितदीना॥ जस सत कार मोर तहिं कीना॥ वरनहु एक वदन किमि सोई॥ आवाज नहु कृतार्थ होई॥ अस कहि दीन पत्र भगवाना॥ सादिर लेत नरसि हरषाना॥ वारवार धरि सीस प्रणामा॥ लागे करन भक्त अभिरामा॥ आश्रु पात हरष दृग छाये॥ कहि न सकत कछु प्रेम अछाये॥ दुरजन देखि परम विसमाने॥ चले सकल निज हृदय लजाने॥ नरसि तासु संजुत अभिलाषा॥ तीन दिवस आश्रम निज राखा॥ दोहा॥ चतुरथ दिवस प्रसन्न मन सादिर कीन विदाय॥ चल्यो पथिक तव सदन निज हरषि चरन सिर नाय॥ ४॥ टीका॥ फिर सो याचू भगवान को कहता है कि नरसी धनी ने हरष से तुमारे नाम की मेरे को हुंडी लिख दई है अब हे साहूकार से हुंडी ^इस मे लिखा हुआ धन मेरे को दे देवो क्यों कि मैं उहां ^के तिस धनी भक्त साते सौ मुद्रा दे आया हूं इस प्रकार तिस के मुख से वचन सुनकर स्यामल भगवान तत काल अपने भक्त की लिखी हुई हुंडी को लेकर बड़े सनमान से नेत्रों पर धर कर और हृदय मे परम सुख और आनंद मान कर तिस को कहने लगे कि हे भाई तूं जगत मे धन्य है और धन्य तेरा जनम है कि जिसने आज इह ऐसी परम सुखदायक तिस भक्त के हाथ की लिखी हुई हुंडी मेरे को दई है इह तिस की हुंडी मेरे हृदय को अतहि कर के प्यारी है और ऐसी अब लग मेरे को किसी ने ल्याय कर नहीं दी है

सकल वस्तु संपादन कीने॥ भये तुरंत श्रेउ गत देवा॥
भगवन भूत चराचर सेवा॥ भक्त देखि प्रभु चरित सुहा
वा॥ वारवार चरनन सिर नावा॥ सकल समाज लेत हे
रषाता॥ आवा वेग सदन जामाता॥ उनकर वोलि ना
ति जन जाती॥ सवकहे जथा उचित जहि भांती॥ भोज
न वसन आभरन चारू॥ देत सवन संजुत सतकारू॥ दोहा॥
केचिन प्रसतर दलागा जुग जुग दीन प्रवीन॥ विनय
करत मुख विविध विधी हरषि विसरजन कीन॥१॥
टीका॥ फिर नरसीकी कन्या कहती है कि हे पिता ते
री तो आगे हीं सव नाती जाती के लोग निंदा
करते थे परंतु अव प्रतदा नेत्रों में देखकर सव कोई
हासी कर रहा है हे पिता जो तुमारे पास कुछ धन स
माज नहीं है तो अवी फिर करके घर को चले जावो
मेरे को जगत की हासी मत करावो इस प्रकार पुत्रीका
कथन सुनकर वडा प्रसन्न होयकर कहने लगा कि
हे पुत्री इस वातीका कुछ सोच मत कर दीनो के हि
तकारी कृष्ण भगवान जो हैं सो तेरे हृदय की अभि
लाषा और मनोर्थ सव सिद्ध करेंगे अव तुम अपनी
सासके पास जायकरके जोजो वस्तु चाहिये सो सव
पूछकर और फी घर मेरे को आयकरके वतायदेवो
ऐसे पिताके मुखसे वचन सुनकर सो कन्या तुरत अ
पनी सास के पास जाय कर जिस प्रकार पिताने कहा
था सो सव सुनाय दिया तव तिसकी सास
सुनकर मुखसे मुसकावने लगी और कहने लगी
कि अव मेरे को कुछ समर्थ नहीं रहा तव सो क
न्या वारवार पिताके पास जाती और फिर सास से आ
य करके पूछती अंत को सास क्रोध से कहने लगी
कि हमको चाहिये दो पत्थर जावो जायकरके पितासे
ले आवो तव सो जायकरके सासका कहना पिताको
सुनाय देती भई ऐसे पुत्री के मुखसे वचन सुनकर
भक्त हृष्ट हृदयमे हरष मानकर जदुनाथ भगवान
को सुमरता हुआ हाथमे खंजरी खड़ताल वाजा ले
कर और एक प्राचीन अर्थात पुराना सा भगवा

नका मंदर देखकर तहां भक्ती प्रीती पूर्वक स्थित हो
यकर कृस्न भगवान के पवित्र गुण गण जो हैं सो आ
नंद से गायन करने लगा इसप्रकार भक्ती और प्रेम
से कीर्तन करते [illegible] जब दो पहर वतीत होयगये
तब भक्त जनों की पैज राखने वाले भगवान सुंदर
वैस्नव रूप धारकर जो जो वस्तु तहां नरसी को दे
नी योग्य थी सो सब हीं तिस मंदर मे राखकर फिर आप
चराचर के स्वामी भगवान तुरत हीं लोप हो जाते भये
तब भक्त प्रधान इसप्रकार कृपासिंधू का चरित्र देख
कर वारवार प्रणाम करता हूआ सो सब समाज लेकर
अपने जमात्रे के घर मे चला आया और तहां तिन के
नाती जाती और ब्रह्मणों को सुंदर भोजन और सुंदर
हीं वस्त्र भूषणों यथा योग्य सनमान करके फिर प्रीती
पूर्वक केचिन के दो दो पत्थर दक्षणा देकर और मुख से
अनेक प्रकार की विनती करकर आनंद से सब विदाय
कर दिये ॥७॥ चौपाई ॥ दुरजन सकल साह जुत देखी ॥
[illegible] भये लजित विसमय अवसेखी ॥ विबुध प्रसंसि लो
क समुदाये ॥ निज निज सदन हरष वस धाये ॥ ब्रह्मणी
जठिर ग्राम इक ताहू ॥ तासु सुमती कीन नहिं काहू ॥ दु
हिता निकट आय अस वरनी ॥ मोहि विह स्यो कस मंग
ल करनी ॥ तब निज भूषण वसन उतारी ॥ तासु दीन
हरि भक्त कुमारी ॥ पुत्रि दान अस देखि सुहावा ॥ नरसी
हृदय हरषि सुख पावा ॥ पुनि प्रभु कहे सुमरण तस ला
गा ॥ करि करि नृत्य गीत गुण रागा ॥ तब करणा जुत
भक्त सहैया ॥ विविध वसन भूषण वित दैया ॥ सुता हे
तु मन हरष प्रलीने ॥ तिनकर सदन स्थापित कीने ॥ होत
विदाय भवन निज आवा ॥ कृस्न सरोज चरन मन लावा ॥
संसृति विषय सुखादिक जोई ॥ त्रिणवत भक्त सत्य जीय
सोई ॥ ह्वै विरक्त महि विचरन लागा ॥ रटत कृस्न गुण
गण अनुरागा ॥ तासु सुता कर सुत बड़भागी ॥ दुग्ध पा
न जब दीनसि त्यागी ॥ साहहि देत आपु हरषाती ॥
पितु पें आय भक्ति मद माती ॥ अति विरक्त वत मानस रागे ॥
जनक सुता हरि मूरति आगे ॥ लोक लाज कुल लाज वि
हाई ॥ निरतत विमल कृस्न गुण गाई ॥ समय पाय वेस्या

इक ताहीं॥ आई बसहिं भक्त वर जाहीं॥ नृत्य गीत
कल कला प्रवीना॥ लोगन तासु कथन अस कीना॥
ई है नरसि नामिक गुणसागर॥ सुभ संगीत मर्म अति
नागर॥ वाद नाद परिपूरण लीला॥ तांकर भवन
जाउ तुव सीला॥ करहिं अभिष्ट तोर फुर सोई॥ वे
स्या सुनत हरषवस होई॥ आई वेग भक्त वर धामा॥
लागी नृत्य करन अभिरामा॥ मूरति देखि देव सुख
दाई॥ अरु संसर्ग भक्त वर पाई॥ निरतत तासु वि
मल मति होई॥ निंदत करम सकल निज खोई॥ दोहा॥
वारवधू निज भाग वस ज्ञान भक्ति सरसाय॥ गहीं ला
गि विचरन अभय कृष्ण विमल गुण गाय॥८॥ टीका॥
तब तिसकी सास और दुर जन जो थे सो सब देखकर
बड़े आचर्ज से लज्जा को प्राप्त होयगये और जिस
मुख से निंदा परिहास करते थे तिसी मुख से भक्तसखू
की अनेक श्लाघा और बड़ाई करके अपने अपने
घरों को चले गये तिस नगर मे एक वृद्ध ब्रह्मणी र
हती थी तिसको तिस जग्यउतसम मे किसी ने याद
नहीं किया तब सो नरसी की कन्या के पास आय क
र कहने लगी कि हे मंगल करनी मेरा सुमर्ण क्यों
नहीं किया और ना मेरे को कुछ दान दिया है ऐसे ति
सका वचन सुनते हीं भक्त कुमारी ने ततकाल आप
ने भूषण और वस्त्र उतार कर तिस वृद्ध ब्रह्मणी को
देदिये इस प्रकार पुत्री का दान सुन कर नरसी हृद
य मे अत्यंत प्रसन्न होता भया और तैसे ही नृत्य गी
त कर कर फिर भगवां भक्त सुखदान का सुमर्ण करने
लगा तब दीनबंधू ने भक्त प्रवीन को और भूषण और
सुंदर वस्त्र अनुग्रह करदिये सो नरसी भक्त लेकर और
अपनी पुत्री ~~को ल्याय देना~~ के निमित्त तिनके घर
मे देकर फिर आनंद से विदाय होकर अपने घर
को चलाआया इस प्रकार कृष्ण प्रभातमा के भ
जन और सुमर्ण मे लीन भया हुआ भक्त संसा
र कें विषय सुखादकों को तृण समान हृदय से तोड़

नरसीनेबाची तब हृदयमे दुखी होयकर ग्रौरग्लानी
मानकर तुरत हीं उठ खड़ा हूत्र्रा घरमे एक जीरण
ग्रर्थात पुराना रथ ग्रौर तैसेहीं बृद्ध बैल जोथे सो
जोतकर चलपड़ता भया मारग मै श्री राधा कृष्णको
सुमरता सुमरता ग्रपने जमाते के घरमे ग्राय पुहुं
चा तब तिसका साधू भेष ग्रौर बृद्ध बैलोंके सहित
जीरण रथ देखकरके सब लोग हासी करने लगे ग्रौ
र पुत्रीभी तिसका सो कराल भेख देखकर दुखी होय
करके कहने लगी कि हे पिता तूंने इह क्या किया है
ग्रौर कैसा भेख धारकर मेरे सुसरालके घरमै ग्राया
हैं ॥६॥ चौपाई ॥ पूरब जाति नाति जन बृंदा ॥ तुबपि
तु करत सकल मुख निंदा ॥ ग्रब ग्रतद नैनन निज दे
खी ॥ करहिं बदन परिहास बसेखी ॥ ग्रबवित जौन ज
नक तुव पाहीं ॥ तो फिरि जाहु सदन निज माहीं ॥ सुता
कथन सुनि भक्त सुजाना ॥ ग्रति प्रसन्न मुख बचन बखा
ना ॥ पुत्रि न करहु सोच कछु एहू ॥ कृष्ण देव प्रभु दी
न सनेहू ॥ पुरवहिं तोर मनोर्थ ग्रासू ॥ ग्रब तुम जा
य निकट निज सासू ॥ जो जो उचित बस्तु समुदाई ॥
पूछि देहु मोहि बेग जनाई ॥ पितु मुख सुनत रुचि
र ग्रस बानी ॥ जाय सास सन सकल बखानी ॥ ते
ग्रस सुनत बदन मुसकानी ॥ मोरे नहिन परत क
छु जानी ॥ ग्रब सुमरो मोहि रहा न काहू ॥ बारबार ग्र
स भक्त सुताहू ॥ पितु पें जाय सास ढिग ग्राई ॥ पूछत उ
चित बसतु समुदाई ॥ तब कटु बचन बदन सासू ॥ [मार्जिन: सुनि]
बोली क्रोध निरत ग्रस सासू ॥ हमहिं उचत प्रसतर
ग्रब दोई ॥ पितु तें लेहु जाय किन सोई ॥ उकत सास
निज पितु सन जाई ॥ तास बदन ग्रस दीन सुनाई ॥ भ
क्त सुनत मानस हरषाई ॥ उठ्यो सुमरो करत जदुराई ॥
लिये बादमें जुल निज पानी ॥ जीरण एक भवन हरिजा
नी ॥ तहां जाय संजुत ग्रनुरागा ॥ कृष्ण विमल गुण गा
यन लागा ॥ ग्रस प्रकार जुग जाम बिहाये ॥ तब भगवा
न भक्त सुखदाये ॥ ललित रूप बैष्णव धरि लीने ॥

हिं ग्राम निंदत जडभारी॥ सुनि नृप सचिव कथन
इहि भांती॥ पठे चतुर निज चारि पदाती॥ ते आये दा
रुण रिस छाये॥ कहत चलहु बोलत नर राये॥ तब
वेश्या कन्या जुत आवा॥ करत भक्त नृत गीत सुहा
वा॥ दरसन देखि कहिस नरराजू॥ जान्यो इह विरक्त
कुललाजू॥ मूढ करम कस धारन कीना॥ निज कुल
जाति धरम नहिं चीना॥ सुनत भक्त अस सुफट उचा
रा॥ जाति धरम कुलचार विचारा॥ करम अकरम ला
भ अरु हाना॥ राग द्वेष जग मान अमाना॥ सुख दुख
जस अपजस तुम काहीं॥ हमरे हृदय भूप कछु नाहीं॥
इन ते हम विरक्त संसारा॥ नहिं न जाति कुल धरम हमा
रा॥ मोरे इनहुं दीन जब त्यागी॥ मैं हुं भयो इन तें वै
रागी॥ तोसें बंध कवन अब पाऊं॥ देखहु करि विचार
नृप आऊं॥ इम दुरजन कर कपट कहानी॥ अहो धर
न पति मानस मानी॥ मोरे लग्यो निवारण ग्रामा॥ तु
व श्रा खिशे निपुण गुण धामा॥ जिहि संगति संसर्ग न
काहू॥ त्याग रूप जानत सब ताहू॥ दोहा॥ पौराणक
तन देखि तब कहिस भूप कस एहू॥ पंडित भाखिस
भक्त सब कथन विगत संदेहु॥ ९॥ टीका॥ तब नरसी
भक्त का एक मामा था सो राजा का बडा सुहृद मंत्री था
एक दिन तिसने राजा के साथ जायकर मिथ्या हीं कथन
किया कि महाराज इह अधम नरसी जो है सो हमारी कु
ल में एक कलंक उत्पन्न भया है और बडा भारी जड है
देखिये कि अपनी कन्या और वेश्या को साथ लेकर
निरलज्ज होयकर के नृत्य और गायन करता रहता है
इसी तें नाती जाती के लोगों ने अपनी पंक्ती से बाहिर
कर दिया है तिस बात की तिस मूढ को कुछ भी हानी गि
लानी नहीं है तातें कृपा करके महामंद को अपने न
गर से बाहिर निकाल देवो सो दुष्ट राखने के योग्य न
हीं है इस प्रकार मंत्री अर्थात वजीर का कथन सुनकर
राजाने तिस के ल्यावनें वास्ते तुरत ही बडे चतुर और
चपल चार पयादे भेजदिये सो परम क्रोध से नर
सी भक्त के पास आयकर कहने लगे कि हे भक्त श्री

और चलो तुमको राजा ने बुलाया है तिन का बचन सु
न ते ही नरसी अपनी कन्या और बस्याको साथ लिये
हुये नृत्य गायन करता करता राजाके सनमुष आय
प्रापत भया तब तिसको देखते ही राजा में जान लिया
कि यह कोई विरक्त साधू है तद्यपि तिसको कहने ल
गा कि अहो मूढ इन तूं ने कौन करम धारन किया है
अपनी जाती और धरम को नहीं जाना ऐसे राजा का
कथन सुनकर भक्त प्रधान कहने लगे कि हे राजन जा
ती कुल धरम चार विचार करम अकरम ला
म और हानी राग द्वेष मान अपमान सुख
दुख जस अपजस इह संसार मे तुमारे वासते हैं
हमारे को इनका कुछ सपर्श नहीं है हम इन तें सं
सार मे सदैव विरक्त हैं और हमारा जाती कुल धरम
कुछ भी नहीं है इन बांधव संबंधियों ने जब मेरेको
त्याग दिया तो मै भी इन से बेरागी होय गया वास्तव
करके कुछ भी नहीं एक झूठी मानी हुई है
हे राजन तुम भी विचार करके देखो कि जगत मे किसी
का कौन नाता है जिसको किसी की संगत मिलाप से कु
छ प्रयोजन नहीं सो सदैव ही त्याग रूप है तब राजा
भक्त सरूप के वचन सुनकर पौरान के पंडित जो कथा बा
च रहा था तिस की ओर देख कर कहने लगा कि इह
कैसा है और क्या कहता है तब पंडित कहने लगा इह भक्त
जो कहता है सो सब सत्य है इस मे कुछ संशय नहीं है॥
९॥ चौपाई॥ इह अदोष हरि भक्त सुजाना॥ बिगत बि
कार मान अपमाना॥ भूप सुनत मानस हरषावा॥ नरसी
चरन नम्र सिर नावा॥ अब तें अभय भक्त ब्रत धारी॥
विचर हु सकुच सोच सब हारी॥ अस प्रकार जब
भूप अलावा॥ भक्त प्रधान सदन निज आवा॥ इह
संसार असार विचारी॥ जानि सार जग भक्ति मुरारी॥
सावधान मानस अनुरागा॥ भयो हि निरत भक्ति व
डभागा॥ एक दिवस तेहि सदन सुहाये॥ संत सहस

भ्रमत चलि आये॥ क्षुधित त्रिषत वि यत जीयमारी॥
नरसि भक्त अस तिनहिं निहारी॥ कछू को सदन अन्न
विनु आजू॥ अहो देव कस बन्यो अकाजू॥ इन कहं दे
हुं अन्न अब काहा॥ अंस प्रकार चिंताकुल राहा॥ करि वि
चार तब नगर सिधारा॥ ठाढ़ो जाय बनिक इक द्वारा॥
आरत दीन बदन तहि बानी॥ भक्त सुघर अस विलखि ब
खानी॥ राग किदार परम प्रीय मोरे॥ सो मैं धर हुं सदन
सुम तोरे॥ सहं मुद्र मोहि देहु सुहाई॥ आये संत सदन
समुदाई॥ तिनहिं देन भोजन मोहि जोगू॥ न तरकर
हिं अपजस सब लोगू॥ जो लो मैं न देहुं धन तोरा॥ तो
लो रह्यो बनक प्रण मोरा॥ दोहा॥ मैं न करहुं गायन ब
दन इह किदार कल राग॥ भक्त वचन सुनि ~~[illegible]~~
बनक वर उठ्यो जनहुं जीय जाग॥ दीन सिमुद्रा सह
स कल लीन सिपत्र लिखाय॥ हरष्यो भक्त प्रवीन जी
य निज अभिष्ट फल पाय॥१०॥ टीका॥ पंडित कहता है
कि हे राजन इह भगवान का प्रवीन भक्त मान अपमा
न और विकारों से रहित सरब प्रकार कर के अदोष है
तब राजा पंडित का वचन सुन कर और नरसी को भ
गवान का दृढ़ भक्त जान कर नम्र होय कर के चरनों
पर सीस नावता भया और कहने लगा कि अब ते हे
भक्त प्रधान तुम अभय होय कर के जहां तुमारी रुची है त
हां विचरो इस प्रकार जब राजा ने कथन किया तब भक्त से
षृ अपने घर को चला आया और संसार को असार विचा
र कर एक भगवान की भक्ती ही सार जान कर चित्त से
सावधान होय कर बड़े प्रेम और प्रीती से भगवान की भ
क्ती मे निरंतर कर के लीन होय जाता भया एक दिन दे
व योग से [illegible] तिस के घर मै भ्रमती भ्रमती ~~[illegible]~~ एक
हजार संतों की जमात चली आई सो सब संत ति
स समय ~~अनाके त्रिषते और~~ भूष होरहे थे भूख और
प्यास कर के अतसे व्याकुल होरहे थे नरसी भक्त
तिन कों देखकर हृदय मै विचार करता है कि हे देव इह
कौन अकाज बना है आज तो घर मै अन्न मात्र कुछ

आय

कर और विरक्त होय करके पृथ्वी पर विचरने ल
गा ॥ ऊंहां जब तिस भक्त की कन्या के पुत्र ने मा
तां दूध पीना त्याग दिया तब तिसको तहां ही सास के पा
स छोड़कर आप भगवान की भक्ती मे लीन भई हुई पि
ता के पास चली आई तहां पिता पुत्री दोनो विरक्त औ
र प्रेम भक्ती मे लीन भये हूये लोकलाज और कुल
लाज सब त्याग कर भगवान की मूरती के आगे नृत्य
और गायन करते रहते तब समय पायकर के तहां
एक वेस्या आय जाती भई सो नृत्य गीत मैं अत्यंत तहीं
प्रवीन थी तिसको लोगोने कहा कि ईहां एक नर
सी नाम करके गुणों का समुद्र संगीत के जानने वाला
वाद जो बाजा नाद जो गीत तिस मे परम चतुर है हे
सुशीले तूं तिसके घर मे जा सो तेरे मनोर्थ को पूरण
करेगा तब वेस्या तिनके मुख से बचन सुन कर हर
ष के वश भई हुई ततकाल नरसी भक्त के घर मे च
ली आई तहां परम सुखदायक भगवान
की मूरती के आगे प्रेम मे मगन होयकर नृत्य कर
कर बड़ा मधुर गायन करने लगी तब भगवान की मू
रती का दर्शन पायकर और भक्त सृषृ के संसर्ग मिला
प है नृत्य करती करती की तिसकी बुद्धी जो है सो नि
र्मल होय गई और अपना नित कर्म जो था सो
सब त्याग दिया इस प्रकार सो वेस्या अपने भागों के
वश से ज्ञान और भक्ती मे लीन होय कर कृष्ण भ
गवान के गुण गावती हुई अभय होय करके तहां
हीं विचरने लगी ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ नरसि भक्त कर मातु
ल जोई ॥ रहा मेचि सेदन पति सोई ॥ अब सर एक भू
प सन ताला ॥ मिथ्या जाय कीन सो भाखा ॥ महारा
ज नरसी जढ़ण हू ॥ उपज्यो कुल कलंक हम गेहू ॥
बारवधू कन्या जुत ताहू ॥ करत नृत्य गायन उत
साहू ॥ अधम मूढ़ निरलज्ज गवारा ॥ बांधव जाति
नाति त्रिसकारा ॥ दीन नाथ तहि देउ निकारी ॥ तज

कौतुक सोई॥ अब न करहिं निजवदन मुहायन॥ भक्त
किदार राग कलगायन॥ होत प्रसन्न त्रिभुवनराई॥
परत नमाल ग्रीव तहिं आई॥ दूरजन आय मरम अ
स तासा॥ जायभूपसन देष प्रकासा॥ नरसी ग्रीव प्र
सूनन माला॥ परत जवन नृप दीन दयाला॥ काचेसू
त्र रचित जद्यारी॥ देत ग्रीव हरि मूरति डारी॥ तेअ
स भार प्रसूनन पाई॥ टूटत परहिं ग्रीव तहिंआ
ई॥ आज कपट सठ विदत प्रकासा॥ प्रीता लेहु भू
प अवतासा॥ जोपूरव सम टूटत आई॥ परहिं माल त
हि ग्रीव सुहाई॥ तोकर भक्ति सत्य सव जानो॥ नतरअ
नर्थ कपट प्रभु मानो॥ तव नरेस तहिंलीन बुलावा॥
अस प्रकार मुख दीन सुनावा॥ मोर देव मूरति कर आ
गे॥ करहु नृत्य गायन अनुरागे॥ जो सज परहिं ग्री
व तुव आई॥ तोतुम भक्त सृष्ट जदुराई॥ दोहा॥ नतर
नगर सव लोक इह विदत देमतुव मानि॥ मोहिसन
भाषत वदन निज आन आन कछु वानि॥ ११॥ टीका॥
तव तिस वाणियें की दो स्त्री थीं एकतो लोकविव
हार काजमे प्रवीन और भगवान की भक्ती मे लीन
थी सो आनंद पूर्वक नरसी भक्त को कहने लगी कि
हे भक्तप्रधान जो कबी तूं मेरेको कृस्न भगवान का
दरसन कराय देवें ~~मेरे तेरे से हर~~ तो इह हजार मु
द्रा जो तेरेको देई है मै फिर करके ना लेऊंगी तव
नरसीने सुन कर के सत्य वचन कहा और हरषसे
अपने घर को चला आया तहां सुंदर भोजन रचा
य कर और प्रथम भगवानको नैवेद लगाय कर फिर
भक्ती प्रीतीसे सव संतों को भोजन जिमायदिया औ
र अनेक विनती बड़ाई करकरके विदाय कर दिये तव
ते तिस वड़भागी भक्तने उस किदार रागका गायन
करना हीं त्यागदिया तिसका इह नियम था किजव जव
किदार रागको गावता तवतव हीं कृपासिंधू भगवान
प्रसन्न होयकर परम सुजसके देने वाली अपने हृदय
की पुष्प माला जो है सो तुरत तिस भक्त के गलेमे डार
देते थे परंतु इह कौतुक भगवान लुपत होयकर
के करते थे तिस की दृष्टी मे नहीं आवते थे॥

सो भक्त अव तिस राग को जानहीं गा~~वत~~यन करता तिसतें भगवान प्रसन्न नहीं होते और सो माला भी तिसके गले मे नहीं पड़ती है तब दुष्ट जो थे सो इस भेद "जान को पायकर द्वेष से राजा के पास जायकर कहने लगे कि हे नाथ नरसी के गले मे जो पुष्प माला पड़ जाती थी सो तो काचे सूत्र से रची हुई होती थी वैसी हीं कपटी भगवानकी मूरती के गलेमे डार देता और वे फूलों के भा "से रटूटकर तिस नरसी के गले मे हथ नाटिक कर के आय पड़ती थी आज तिस भेदका कपट जाना गया है अब म "की हाराज तिस क्रीड़ा कर लेके जो पूर्व तुल्य अर्थात आगे की तरह टूट कर पुष्प माला तिस के गले मे आय पड़े तो तिसकी भक्ती सब सत्य जानो नहीं तो सब अनर्थ और कपट हीं मान लेना ऐसे तिन दुष्टियों का कथन सुनकर राजा नरसी भक्त को तुरत हीं बुलाय करके कहने लगा कि आज तुम मेरे प्रभू की मूरती "के आगे प्रेम प्रीती से नृत्य गायन करो जो तो तुमारे गले मे भगवान के हृदय की माला टूट करके आय पड़े भी तो तुम जदुनाथ भगवान के पूर्ण भक्त हो नहीं तो इस नगर के सब लोग प्रतक्ष तुमारा देम और पाखंड मान कर मेरे साथ कुछ और और हीं कथन करते हैं॥ ११॥ चौपाई॥ नरसी सुनत भूप अस बानी॥ लेत ललित बीना निज पानी॥ बैठो कुसुम भवन कल जाई॥ भक्त सु भृगु आसन दृढ लाई॥ दुरजन प्रथम पुष्प चुनि ल्याये॥ पाट सूत्र दृढ माल बनाये॥ डारि गये हरि मूरति ग्रीवा॥ जड़ मति मंद अधम अगसीवा॥ तब नरसी सुमरत भगवाना॥ बीन बजादि मधुर मुख गाना॥ लाग्यो करन मनोरम नाना॥ जुगल देउ जब तासु सराना॥ परी न माल टूटि तहि ग्रीवा॥ हरषे देखि सकल अगसीवा॥ तब नरसी निज हृदय लजाना॥ सुमरत लग्यो कृष्ण भगवाना॥ सदा रहे प्रभु पेज रखैया॥ अब कस हानि देव मोहि देया॥ पूरव करनि मोर सब काजू॥ भई कृपाल विडुमन आजू॥

मलो सकल दुरजन मुख नाना॥ करिहैं आज मोर
अपमाना॥ जब नरसी अपमान उचारा॥ सहि नस
के तब भक्त उदारा॥ इह तो सदा रीत गिरधारी॥ ज
न लघुताई न सकहि सहारी॥ नरसी भेष तुरत ध
रि लीना॥ धनि कर भवन गवन प्रभु कीना॥ रही स
दन तांकर जीय सोई॥ हरि सरूप अभिलाषत जो
ई॥ नरसि रूप भगवान सुहाये॥ तासु वदन अम
वचन अलाये॥ सुभेर दइह मुद्रा निज लेहू॥ सो अब
मोर पत्र कल देहू॥ तास लेत मुद्रा हरषाई॥ दीना प
त्र करन जदुराई॥ दोहा॥ तेहि रूप प्रभु देखि दृग संभ्र
म करहत उचारि॥ इह कौं आन न जान मोहि परत
नरसि वपुधारि॥ २२॥ टीका॥ तब नरसी भक्त राजा
की ऐसी वानी सुनकर बड़ी सुंदर वीना हाथमें ले
कर ततकाल भगवान के भवन में जाता हो आसन दृ
ढ करके बैठ गया तहां दुष्ट जन पैहले ही पुष्प ल्या
यकर और फाटके तलैसे दृढ माला रचायकर भ
गवान की मूरती के गलेमे डार गये थे उहां नरसी भ
गवान भक्त सुदान को सुमरकर वीना बजायकर के मु
खसे मधुर गायन जो है सो करने लगा इस प्रकार
जब तिसको दो घड़ी वतीत होयगई और माला
टूटकर तिसके गलेमे नहीं पड़ी तब दुष्ट जन देखक
रके सब प्रसन्न होते भये नरसी हृदयमे लज्जा मान
होयकर कृष्ण भगवान का सुमरण करने लगा कह
ता है कि हे प्रभू तुम तो सदैव मेरी टेक हीं राखते रहे हो
अब कैसे हानी को प्रापत कर दिया मेरी पूर्व की
सब करनी और कारज जो है सो सब दंभ और हासी
रूप हो गया है अब दुरजन मेरा मुखसे नाना प्र
कार करके मला अपजस और अपमान करेंगे इ
स प्रकार जब नरसी ने मुखसे अपमान उचारन
किया तब भक्त सहायक भगवान सो सहार नहीं
सके दीनबंधू की इह तो सदा ही रीत है कि अपने
जन की लघुताई कभी देख ही नहीं सकते

और

भी नहीं है और संत जन भूषे हैं इनको अन्न कहां से देऊं इस प्रकार चिंता करके व्याकुल भया हूआ नरसी भक्त नगर में चला जाता भया और तहां एक वनक जो वाणीयां था तिसके द्वार पर जायकर के स्थित होयगया फिर तिसको बड़े दुख से दीन होयकर कहने लगा कि हे धनी भाई इस समय मेरे घर मे संत समूह आये हैं और वे भूषे हैं मैने तिनको अवश्य भोजन देना है नहीं तो लोगों मै मेरा अपजस होता है तो ते तुम कृपा करके मेरे को हजार रुपैया देवो मै तिन के बदले तुमारे पास इह किदार राग जो मेरे को परम प्यारा है गिरवी रखता हूं और मेरा प्रण रहा कि जब लग तुमारा धन नहीं देऊंगा तब लौं इस राग को मै मुख से कबी गायन नहीं करूंगा इस भक्त सृष्ट के वचन सुनकर तिस वाणीये के हृदय मे मानो ज्ञान प्रकाश होय गया और अज्ञान निद्रा से जाग उठता भया ततकाल ही हजार रुपैया गिन कर भक्त प्रधान को दिया और टोंबू लिखवाय लिया तब भक्त प्रवीन अपने मनोर्थ को सफल करके परम हरष और आनंद को प्रापत होजाता भया॥ २०॥ चौपाई॥ तब तहि वनक जुगल वरनारी॥ रही एक लोकिक विवहारी॥ दूसर भक्ति निरत भगवाना॥ तास वदन अस वचन वखाना॥ जो मोहि कृष्ण दरस सुखदाई॥ भक्त सृष्ट तुव देहु कराई॥ तो इह सहस मुद्र जोई दीना॥ मै न लेहु पुन भक्त प्रवीना॥ नरसी सुनत तास अस वानी॥ सत्य वचन निज वदन वखानी॥ आवास दन हरष उरछावा॥ विरचि पाक नैवेद लगावा॥ वहुरि संत सज्जन समुदाई॥ प्रीति भक्ति जुत दीन जिमाई॥ तव ते तज्यो भक्त वड भागा॥ गायन तहि किदार कलरागा॥ रह्यो नियम अस तास सुहावा॥ जब जब हरि चिर राग इह गावा॥ तब तब कृपा सिंधु भगवाना॥ जानि तासु निज भक्त प्रधाना॥ सुमन माल निज सुजस प्रदारी॥ ताकर देत ग्रीव प्रभु डारी॥ पै तहि दृष्टि अगोचर होई॥ करहिं देव अस

४३५

४३६

॥ ३२॥ टीका॥ और जब तिस का पती घर में आया ति
सको तिस स्त्री ने संपूर्ण वृत्तांत सुनाय दिया तब उनक
जो धनी था सो सुन कर के हृदय में बड़े आश्चर्य को प्राप्त
भया और उन्हों भक्तों का भय दूर करने वाले भगवान् ने सो
टों रू नरसी भक्त के आगे रख दे तभये तब नरसी ने दे
खकर के हृदय में विचार किया कि जिस प्रकार भगवान् आ
गे सहायता करते रहे तैसे ही कृपासिंधु ने अब भी कृपा
करी है ऐसे सोच कर और मन में बारंबार दंडप्रणा
म कर कर तिस परम प्यारे किदार राग को प्रेम पूर्वक ब
ड़ी मधुर स्वर से गायन करने लग जाता भया तब इस
प्रकार गायन किया कि मानो आय कर के श्रोतीरस
परिपूर्ण होय गया है सब लोग चित्रवत हू कर के हो कर
मौन हो जाते भये और राजा भी आश्चर्य को प्राप्त होय
गया सब मूर्छागत हो कर अचेत होय गये
मानो मोहन जो मंत्र है तिसके वश भये हुये मो
हित हो रहे हैं तब तत्काल भगवान की मूरती के हृदय
से पुष्पमाला टूटकर नरसी भक्त के कंठ में आय पड़ी
इस अद्भुत चरित्र को देखकर राजा साधू साधू उचारता
हुआ भक्त सुपृ की अनेक श्लाघा करने लगा और
दुरजन जो थे तिन को तिरस्कार कर के निकाल देता भ
या तिसतें उपरांत हाथ जोड़ कर और चरनों पर सी
स धर कर दीनता से विनती करने लगा कि हे भक्त प्रधा
न मेरे तें बड़ा भारी अपराध होय गया है परंतु तुम
संत उदार और दया की मूरती क्षमा ही करने योग्य हो
मैं असाधू और अजान था तुमारे प्रभाव को कु
छ जान नहीं सका हे भगवान के प्यारे भक्त मेरी अनु
चित और अपराध जो है सो तुम दया करके क्षमा करो
और मेरे को अपना दास जान कर इह वृत्तांत भी कहो
कि भगवान के हृदय की पुष्पमाला टूटकर तुमारे कंठ
मे किस प्रकार आय पड़ी है तब नरसी भक्त ने हेतो
के निमित्त किदार राग को धनी के घर में धन के बदले रा
खणा सो सब प्रसंग सुनाय दिया राजा सुन कर बड़े
आचर्ज को प्राप्त हुआ और भक्त सुपृ को बहुत धन सं
पती जो है सो देने लगा तब भक्त प्रधान ने राजा का दि
या हुआ धन कुछ भी अंगीकार नहीं किया तिस को

(margin notes: व श्र... ; कोई ; क ; सब श्रेष्ठ ... ; किस प्रकार)

आनंद से आशीर्वाद देकर अपने घरको चलाआ
या ~~और~~ तहां रात्रीदिन नित्य भगवानके आगे अ
नेकप्रकारके नृत्य और गाय करकर कालव्यतीत
करने लगा॥ २३॥ चौपाई॥ समय पाय इक धनी सुजा
ना॥ काहु नगरकर रह्यो महाना॥ तहि कन्या वर देख
न हेतू॥ अपरोहित निज बोलि निकेतू॥ तासु विवि
ध विधि वदन सिखावा॥ वर संपति जुत होहिं सुहावा॥
अरु कुलीन विद्या चतुराई॥ सकल सुशील मात पितु
भाई॥ अस प्रकार वर देखि सुहावन॥ तुव निज करहु स
वदि इत आवन॥ धनि नदेस अपरोहित पाई॥ आवा नग
र भक्तजदुराई॥ लोगन सन अस पूछन लागा॥ को
इत नगर धनके वड भागा॥ ~~कुब~~ तब दुरजन सेजुत
सनमाना॥ दीन्यो नरसि निकेत पठाना॥ ते धन युसु
दर सुत वारा॥ आवा विप्रसुनत तहि द्वारा॥ तासु विलो
कि भक्त हरषाना॥ यथा योग्य कीन्यो सनमाना॥ करि स
व भोजनादि सिवकाई॥ कहि सभक्त अस वदन अलाई॥
ईहां आगमन कवन हित कीना॥ तब बोल्यो अस विप्र
प्रवीना॥ कन्यो रुचिर अमुक धनि गेहा॥ तहि हित
व स्यो बाल तुव एहा॥ तब नरसी कर जोरि बखाना॥ इ
ह न उचित मोरे सनमाना॥ मे दारद्र रत दीन इकागर
ते धन युसव लोग उजागर॥ इह न उचित संबंध सु
जाना॥ देखहु जाय धनक जगआना॥ लागन मेर व
रन लघुराई॥ तीन काल अस बनहिं नमाई॥ विप्र सुन
त हठ जुत बरिजोरा॥ दीन्यो रुचिर माथ सिसुखोरा॥ स
कुन नारि केलादि सुहावन॥ दै वित वसन आभरन भावन॥
होत विदाय नगर निज आवा॥ ते वृतांत सब धनिहि सु
नावा॥ नरसी सुवन योग्य वर राहा॥ तां कर दीने तिलक
उतसाहा॥ अस प्रकार जब विप्र उचारा॥ धनी सुनत की
न्यो धिक्कारा॥ दोहा॥ अरे मूढ दुज कीन तुव इह अयो
ग्य कस आज॥ तेमित के सकलंक जग मे प्रसिद्ध धनि
राज॥ २४॥ टीका॥ तब समय पाय करके एक ~~काहू~~ किसी
नगरका कोई धनी रहा तिसने अपनी कन्याका वर दे
खनेके वासते अपरोहितको बुलायकरके सरवप्रकार
से समुझाय दिया कि तुम नगरें और ग्रामोंमें जायकर

सुंदर कुलीन माता पिता करके सुशील विद्या गुण प्रवीन धन संपत्ती करके युक्त ऐसा जो वर होवे सो देखकर और आयकर मेरे को कहो तब अपरोहित धनीकी आज्ञा पायकर सुभदिन विचार कर जो चला तो चलता चलता पहिले नरसीभक्त के नगर मै ही आयप्रापत भया तहां लोगों से पूछने लगा कि इहां कोई कुलीन धनी सुंदर बालकवाला होवे तो मेरे को बतावो ऐसे तिसकी बानी सुनकर तहां पुरजन जो थे सो कहने लगे कि हो भाई इहां नरसी नामकरके एक बडा उजागर धनी है और अमुक तिसका घर है तुम तहां चले जावो तिसका पुत्र भी अत्से करके सरवांग सुंदर और रूपवंत है इसप्रकार तिनके मुखसे वचन सुनकर ब्रह्मण ततकाल नरसीके घर मै चला आया तब तिसको देखकर भक्त सुषू बडा प्रसन्न भया और यथा योग्य सब सनमानक्रिया फिर भोजनादि सिव काई करके भक्तप्रधान पूछने लगा कि हे भाई इहां तुमारा आवना किस कारन भया है तब सो ब्रह्मण कहने लगा कि अमुक धनी के घर मै सुंदर सीलताकी निधी कन्या है तिसके निमित्त इह तुमारा सुंदर बालक जो है सो मैने वर निश्चित करलिया है ऐसे तिसका वचन सुनकर नरसी कहने लगा कि ना भाई इह सनमान उचित नहीं है क्योंकि मै अतसे दारिद्र का ग्रसा हूआ अकेला पुरष हूं और भूत सेवकों करके युक्त महां धनी इह सब लोगों मै उजागर है इह संबंध कदाचित भी योग्य नहीं है सुमेर परवत को राई के चरनों मै लागना कैसे हो सकता है तुम कृपा करके कोई और ही धनी जायकर देखो यद्यपि नरसी ने बहुत हीं कहा तद्यपि ब्रह्मणने एक नहीं माना जोरावरी से बालके माथे मै तिलक दिया नारियर ~~और कदली~~ जो नरेल और कदली फल जो केले की फली इत्यादि सब सगुन करकर और धन वस्त्र भूषण यथायोग्य देकर फिर विदाय होकर ब्रह्मण अपने घरको चला आवताभया तहां आयकर धनी को सब वृतांत सुनायदेताभया कि नरसी नाम करके अमुक नगर मै एक उत्तम पुरष देखा या ति से ~~अतसे करके सुंदर~~ वर लायक जान कर
के अतसे सुंदर बालक को मैने

ल

ततका नरसी का रूप धारन कर तिस धनी मैं कि जहां
किदार राग गिरवी छोड़ा हुआ था आय गये तिस समय
तिस धनी की कोई स्त्री घर मे थी कि जो भगवान के दर्शन
की अभिलाषा वाली थी तब नरसी रूप भगवान तिस
भामनी को कहने लगे कि हे सुशीले अब इह तुम अपना
धन ले लेवो और हमारा टोंबू देदेवो तिसने तरत अ
पना धन ले लिया और टोंबू जदुनाथ के हाथ मैदे दिया
तब धनी की सो स्त्री भगवान का अनूप रूप देखकर हृदय
मैं भ्रम करके कहने लगी कि मेरे को जान नही पड़ता
इह ~~कोई~~ नरसी का रूप धारे हुये कोई और ही है॥ २२॥ चौपई॥
जब पति तास सदन निज आवा॥ सकल मरम तिहि दीन
सुनावा॥ बनक सुनत मानस विसमाना॥ इत जन हरन
त्रास भगवाना॥ सनमुख भक्त पत्र धरि दीना॥ नरसि वि
चार देखि अस कीना॥ पूर्ब होत जिमि दैव सहाया॥ अ
ब हु कीन भगवन तिमि दाया॥ करत मनहि मन दंड प्रना
मा॥ लग्यो करन गायन अभिरामा॥ ते किदार कल रा
ग सुनावा॥ भक्त मधुर स्वर बदन अलावा॥ जन हुं क्रांति
रस पूरत भयऊ॥ इक टक लोक मोनवत रहऊ॥ सजुत
नृपति सकल विसमाने॥ मुरछित सुधि सरीर विसराने॥
मानहुं चित्र मुहन मन लूट्यो॥ तब हरि सुमन माल
कल छूट्यो॥ भक्त सुग्रीव कर कंठ सुहाई॥ देखत सवन नु
रत परि आई॥ साधु साधु तब भूप उचारा॥ कीन विविध
दुरजन धिक्कारा॥ जुग कर जोरि चरन सिर नाई॥ वि
नय नम्र अस बदन अलाई॥ मोहि तें भयो विपुल अप
राधू॥ सदा कृपाय रूप तुव साधू॥ मै अजान कछु
सक्यो न जानी॥ अनुचित तम ह भक्त भगवाना॥ अब हे
इह कारहु कथन मोहि काहीं॥ इह त माल कंठ तुव मा
हीं॥ कहि विधि परी भक्त व्रतधारी॥ तब नरसी अस
कथा उचारी॥ भूप सुनत मानस विसमाना॥ लग्यो
देन सेपति सनमाना॥ लीन्यो सो न भक्त बडभागा॥ च
ल्यो भवन मानस अनुरागा॥ दोहा॥ फिर तत नृ
त्य अनेक कल गीत तान मुख गाय॥ लग्यो व
सन निज सदन सुभ हृदय सुमरि जदुराय॥

४३७

४३७

लेवो मे जायकरके सगुन जो है सो केर लि[illegible] ताहै तब धनी सुनकरके मौन होय रहा और नाती जाती के लोगो ने भी बहुत समुझायकर तिसके हृदयका भ्रम मिटाय दिया तब [illegible] तिसने अँनी कन्याके भाग और दै ई ऐसो जानकर सुंदर सुभदिन देख करके लगन जो है सो सुधाया [illegible] फिर सुभ हीं महूरत से लगन पत्रिका लिखकर और तसी अपरोहित के हाथमे देकर अपने समधी अर्थात कुटम के घर मे पठाय दई तब ब्रह्मण आय करके सो पत्रिका नरसी के आगे धर देता भया और नरसी तिसको देखकरके हृदयमें चिंतन करता है आ सो पत्रिका लेकर और जायकर भगवानकी मूरती के आगे धर देता भया और दोनो हाथ जोड़ कर चरनोपर सीस धरकर नम्र होयकर विनती करने लगा कि हे सुरासुर के नाथ हे दीनानाथ हे कृपानिधान मै वलहीन और सरव प्रकार करके दीन कुछ सामर्थ नहीं राखता हूं इह समधी ने लगन पाती भेज दई है अब मेरे को कुछ सूझ बूझ नहीं पड़ता कि क्या करना है हे कृपानिधान अब तुमारे विना और कोई आधार नहीं है इस काज के करने को भगवान तुमहीं सामर्थ हो और समधी नाती भी सब तुमारे हीं है मेरा तो कोई नाती संबंधी नहीं है इस प्रकार कथन करके ततकाल हाथमे बीना लेकर भगवानके बड़े सुंदर और मधुर पद जो हैं सो प्रेम भक्ती मे लीन होयकर के गायन करने लगा इस प्रकार अपने दास भक्त की दशा देखकर दीनो के हितकारी कृष्ण प्रभात माजो हैं सो सेना आदिक सब समाज साथ लेकर भक्तकी टेक राखने के लिये द्वारिका से चल पड़ते भये॥ १४॥ चौपाई॥ पूछत लोग देखि मग सोभा॥ इह किंत कवन जात मन लोभा॥ तब भूतकहत वदन अस वरनी॥ सेवक नरसि अमुक पति धरनी॥ रच्यो भवन निज पुत्र विवाह॥ आये किये निमंत्रन ताहू॥ तब भगवान सदन तहि जाई॥ जाति नाति सब लीन बुलाई॥ तीन दिवस

पूरव भगवाना॥ निज कौतुक करुणाय निधाना॥ व्यंजन वि
विध भांति विरचाये॥ यथा योग्य सब दीन जिमाये॥ देवराज
दुरलभ संभारू॥ लाय संग निज विविध प्रकारू॥ भूषण चा
रु चैल वितनाना॥ सब कहे यथा उचित सनमाना॥ सज्ज
न नाति जाति जन जेते॥ कीने कृष्ण कृतार्थ तेते॥ ततप
श्चात बरात सजाई॥ सो अनंत छवि वरनि न जाई॥ तब
निज भक्त प्रीये सन काहा॥ तुम कहु है उचित गवन अबरा
हा॥ तब नरसी कर जोरि उचारा॥ दीननाथ इह पुत्र तु
मारा॥ संबंधी नाती सब तोरे॥ तुमहिं उचित अब भगवन
मोरे॥ सुनि अस कथन भक्तहित कारी॥ लीनसि नरसिरू
प प्रभु धारी॥ ढढ पन्नव बाजत सेनाई॥ भेरन फीर थो
र धुनि छाई॥ वाहन विविध बाजि गज मात्यो॥ बरन बर
न बर चली बरात्यो॥ चंचल चपल तुरंगन रूढे॥ वीर
धीर सायुध छब गूढे॥ चिकरत नाग बाज हैं नाहीं॥ उ
ठी धूलि नभ मारग काहीं॥ समधी नगर प्रांत जब आये॥
चकित लोक अवि लोकन धाये॥ उत तहिं धनक सम
धि अभिमाना॥ अपरोहित कहे बोलि बखाना॥ देखहु
जाय साधवत होई॥ आवा होहिं बहिर पुर सोई॥ जो सम
धी तुव मोहि मिलाना॥ चल्यो सुनत असविप्र सुजाना॥
पुर तें बहिर आय जब देखो॥ धूमधाम कछू जाय न
लेखो॥ खरभर पस्यो बरात महाना॥ सबे जोर धुनि
हन्यो निसाना॥ बाहनि मनहु साजि चतुरंगा॥ आ
वा इंद्र जनहु महिरंगा॥ दोहा॥ धरणिधूर परिपूर
भो व्योम लुपत दिनमान॥ निज पर सूझ न परहि
कछु मनहु दिनहिं निसिमान॥ १६॥ टीका॥ तब भग
वान की शोभा देखकर मारग मे लोग पूछते हैं कि इ
ह ऐसे प्रताप वाला कोन है और कहां को जाता है तिन
लोगोंका वचन सुन कर नौकर चाकर कहते है कि इह
अमुक राजा है और नरसी भक्तका सेवक है तिस भक्त
ने घर मे अपने पुत्रका विवाह रचा है तिसके निमंत्रण
करने से अर्थात नेवता देने से इह आये हैं तब जाते जा
ते भगवान नरसी के घर जाय प्रापत भये तहां तीन दि
न पहिले ही भगवान तिसके नाती जाती के लोगोंको
बुलाय कर और कौतुक से नाना प्रकार के भोजन

भोजन रचाय कर यथा योग्य सब को जिमाय देते भये कौतुकी भगवान जो वस्तु इंद्र को भी दुरलभ थीं सो सब साथ ले आये थे सुंदर भूषण और बड़े सुंदर हीं दिव्य वस्त्र सब भाती जाती के लोगों को बड़ी प्रीती से नमा से देकर भली प्रकार प्रसन्न किये और सज्जन साधुओं का भी यथा उचित परितोष किया सब कोई अपने अपने मन वांछित फल को पाय कर कृतार्थ होय गया तिस ते उपरांत जिस प्रकार बड़ी शोभा से बरात सजावते भये सो उपमा और अनंतहु की कुछ कही नहीं जाती फिर भगवान अपने प्यारे नरसी भक्त को कहने लगे कि हे भक्त प्रवीन अब बरात के साथ समधी के घर मै जाना तुम को ही योग्य है तब दीनानाथ का वचन सुन कर नरसी हाथ जोड़ कर के कहने लगा कि हे दीनबंधू इह पुत्र तुमारा ही है और समधी नाती भी सब तुमारे ही हैं सब कुछ करना तुम को ही योग्य है इस प्रकार भक्त का कथन सुन॰ भगवान ॰कर तुरत नरसी का रूप धार लेते भये और कृपासिंधू की आज्ञा से दफ ढोल सेनाई भेरी नफीरी इत्यादि अनेक बाजयों का बड़ा जोर शवद होने लगा और तैसे ही नाना प्रकार के वाहन बाजी जो घोड़े गज जो हस्ती इत्यादि सब सजाय गये बरात जो है सो बरन बरन की बन कर के चल पड़ती भई बड़े चंचल और चपल जो घुड़ेयों पर चढ़े हुये सब शस्त्रों कर के युक्त सूरवीर अत्यंत शोभा पावते हैं मारग मे हस्ती चिंघारते और घोड़े हैं नाचते जाते हैं बड़ी भीर भार की बरात के चलने से पृथवी से धूड़ी उड़ कर आकाश पर्यंत पूरी हो जाता भया इस प्रकार जब चलती चलती बरात समधी के नगर सामीप आय पहुंची तब लोग आचर्ज होकर के जहां तहां से देखने को चले आवते भये और इहां नरसी का समधी अर्थात कुउम जो बड़ा धनी और अभिमानी था अपने प्रोहित को बुलाय कर कहने लगा कि उठो जाय कर के देखो सो कहीं साधुओं बत दीन बन कर

॰जो समधी तुम मेरे को मिलाया है

तिलक देदिया है इसप्रकार जब ब्राह्मणने कथन
किया तब धनीने सुनकर तिसका अत्यंत तिरस्कार
किया और कहने लगा कि अरे मूढ मंदमती इहतैने
कैसा अयोग्य काज किया है क्योंकि वे कलंकी मितक
और मैं सब लोकोंमें प्रसिद्ध धनी राज हूं ॥१४॥ चौपाई॥
निह कलंक कहं कस्यो कलंकू॥ आज मूढ जिमि विदित
मयंकू॥ यद्यपि वार वार समुझान्यो॥ तद्यपि अधम
सकल विसरान्यो॥ अब तैं तजहु मूढ जड तोही॥ जो स
कलंक कीन जग मोही॥ सुनि अस कठिन धनक दुज
बानी॥ बोल्यो हृदय रोष निज ठानी॥ इह अंगुष्ट तिल
क जहि संगा॥ मैं दीन्यो वर माथ उमंगा॥ सो तुव छेदि ले
हु अब मेरो॥ लावहु जाय तिलक मैं फेरी॥ धनी सुनत
अस मोन रहाना॥ बांधव जाति जनन समुझाना॥ जानि
भाग्य निज सुता सहाना॥ देसदिन वर लगन सुधाना॥ अ
प रोहित पैं कीन पठाई॥ लगन पत्र सादिर हरखाई॥
नरसिंह देखि चिंतन जीय कीना॥ लगन पत्र कर लेत प्र
बीना॥ धस्यो जाय हरि मूरति आगे॥ विनय वदन मान
स अनुरागे॥ लाग्यो करन धरनि धर सीसा॥ देव अदेव देव
जगधीसा॥ मैं बल हीन दीन सब भांती॥ समधी पठ्यो ल
गन वर पाती॥ मोहि सामर्थ देव कछु नाहीं॥ तुमहिं कर
हु सब त्रिभुवन साईं॥ समधी नाति सकल अब तोरे॥ दू
न कर जीय अभाव प्रभु मोरे॥ अस कहि लाग्यो मिनादन वी
ना॥ कीन ललित गायन मन लीना॥ दोहा॥ तब द्वारावति
तें चले जदुपति भक्त उवार॥ मुनि समाज जुत
विविध विधी लिये सकल संभार॥१५॥ टीका॥ फिर धनी
कहता है कि अरे ब्राह्मण तैने नेह कलंको ऐसा कलं
की करदिया है कि जैसे प्रकार चंद्रमा कलंकके सहित है
यद्यपि मंद तेरेको वारवार समुझाय भी दिया था तद्यपि
तैने सब बिसार हीं दिया जावो अधम अब मैंने तेरेको
त्याग दिया है जो तूने मेरे को जगतमें कलंक लगाय दि
या है ऐसे धनीकी कठिन वानी सुनकर ब्राह्मण क्रो
धसे कहने लगा कि लेवो इस अंगुलीके साथ जो मैंने
वर के माथे मैं तिलक दिया है तुम इस अंगुली को काट

ल्यो हरष मन लीना॥ नरसिंह रूप भगवन पें आई॥ विप्र
वदन अस गीरा अलाई॥ दोहा॥ तुव समधी करुणायँत
ने कहत जुगल कर जोरि॥ जिमि संसृति तुव विपुलता
तिमि लघुता जगमोरि॥ विंदु वरो वरि सिंधु किमि करहिं
आगम संसार॥ अरु चीटी दुरगम भवत यथा प्रवल ग
जभार॥ २७॥ टीका॥ तव वरातको देखकरके ब्रह्मण जो
है सो आचर्ज को प्रापत होयगया तुरतहिं धनीके पास
आय करके कहने लगा कि तुमारा समधी वरात सजाय
करके आया है अब नगरके वाहिर क्यों नहीं चलकर के
देखते हो जिसको तुम दीन और साधू कहते थे और मे
रे को वार वार त्रिसकारते थे अब चल करके तिस साधू
की सिधंमी देख लेवो मानो चतुरंगनी सेना साज करके
आया है इसप्रकार अपरोहित के वचन सुनकर धनी
जो है सो नगरके वाहिर चला आया और क्या देखता है
कि अतसे भीरभार वाली वरात जिसका कुछ पार न
हीं पाया जाता हाथी घोड़े रथ और अनेक प्रकार के वा
हन मानो देवताउं का समाज साथ लेकर आज पृ
थवी पर इंद्र आयकर के स्थित भया हूआ है तव धनी
आचरज के वश भया हूआ अपरोहित को कहने लगा कि "त
सो धूरत तो एक महो दीं ब्रह्मण था और कोई राज्यों "रज
का राजा [illegible] महाराजा वड़ा सुभ समाज साजकर
के आया है इतने में [illegible] वाराती आवते आवते जवनि
कट हीं आयगये तव परम सुंदर और दिव्य रथ पर च
ढे हूये नरसी जो देख पड़े तो धनी का शरीर थरथरा
य कर कांप उठा और आचर्ज के वश भया हूआ मु
खसे कुछ बोल नहीं सकता मनमें हीं कहता है कि
मैने तिसको साध और निरधन जानकर अपने घर
में कुछ समाज नहीं जोड़ा ऐसे विचार कर बांधव
और जाती जनों से कहने लगा कि हे भाई मेरे को वता
वो अब मैं कौन उपाय करूं अपने धन संपती के स
हित जो संपूर्ण नगरका भी द्रव्य लेउं तो मेरे को प्र
ती होता है कि इनका एक भी भोजन भी नहीं वन स
केगा इसप्रकार सोचकर के अपरोहित को कह

ओर निरधन

ने लगा कि हे ब्रह्मण तुम तहां जावो और तिनके दीन हो
य करके मेरी इह प्रार्थना करो कि हे महाराज राई जो ऐसे
मेरू परवतको शीसपर नहीं धार सकती है तैसे ही मै अत्यंत हो
करके दीन और निरधन हूं तुमारा आदर सतकार करने
को सामर्थ नहीं हे इह कुछ बोली हाथ ही कन्या का दा
न भक्त प्रधान मेरे हैसे बन आवता है तुम मेरे को दीन और
अपना दास जानकर ग्रहण कर लेवो तब इस प्रकार धनीका
वचन सुन करके ब्रह्मण कहने लगा कि अब कहो सो तुमा
रा सुजस और धन कहां है कि जिसके अभिमान से मेरे को
त्रिसकारते थे ऐसे सुनकर लज्जाके बस भया हूआ धा
नी कुछ उत्तर नहीं देता भया तब ब्रह्मण जो है सो आनंद
पूर्वक चल पड़ा और नरसी रूप भगवान के पास आय
कर इसप्रकार प्रार्थना करने लगा कि हे कृपानिधान तु
मारा समधी वारवार हाथ जोड़कर इसप्रकार विनती कर
ता है कि जैसे संसार मे तुमारी वडाई है तैसे ही जगत
मे मेरी लघुताई है ~~[illegible]~~ हे नाथ विंदू जो है सो सिंधूस
मुद्रकी कैंव रोवरी कर सकती है और चींटी जो है सो ह
स्ती का भार उठाने ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ को कब सामर्थ हो सकती है॥
१७॥ चोपाई॥ तिमि मोहि अगम तोर सनमाना॥
अस विचारि करुणाय निधाना॥ जनकर यथा शक्ति
अनुसारा॥ करहु नाथ पूजन सतकारा॥ विनय
वचन जब विप्र बखाना॥ बोले नरसि रूप भगवा
ना॥ अब रिस भक्ति प्रेम जुत चारू॥ जो दुज होहि
अलप सतकारू॥ मेरु तुल्य संसय कछु नाहीं॥
~~अस विचारि करुणाय निधाना॥ जनकर यथा श~~
~~क्ति अनुसारा॥ करहु नाथ पूजन सतकारा॥ विनय~~
~~वचन जब विप्र बखाना॥~~ अस विचारि निज मान स
माहीं॥ यथा उचित अब सर अनुसारू॥ विप्र हमा
रे करहु सतकारू॥ भगवन वचन सुनत अनुरागा
हरषत चल्यो विप्र बडभागा॥ धनिक सन जाय मरम

[illegible]

सब काहा॥ तास प्रीति संजुत उतसाहा॥ पानिग्रहण निज सुता सुहावा॥ विधि विधान जुत दीन करावा॥ भई परस्पर विनय बडाई॥ कीन्यो यथा उचित सिवकाई॥ नरसिंरूप भगवान महाना॥ तहाँ विभक्त कीन धन नाना॥ बहुरि सुजस जुत होत विदाये॥ हरषत भक्त भवन प्रभु आये॥ दोहा॥ इतउत देखत चकित सब सेनादिक संभारु॥ लखि न सकहिं कछु मरम अस प्रभु माया मन हारु॥ तीन दिवस करुणायतन बसे भक्त निजधाम॥ करि सब कर संतोष प्रभु जथा उचित अभिराम॥ पुनि गवने निज भवन कहँ कृष्ण भक्त चित चोर॥ अस नरसी जन जगत जित भये भक्त सिरमोर॥ सुर दुरलभ सुख भोगि जग तजत अंत निज काय॥ कृष्ण कृपातें कृष्ण मे भक्त कृष्ण गुण गाय॥ १८॥ टीका॥ ब्राह्मण कहता है कि हे महाराज जैसे विंदू सिंधू की बरोबरी नहीं कर सकता और चीटी हसती का बोझ नहीं उठाय सकती तैसे हीं मे तुमारे सतकार के लायक नहीं हूं ऐसे विचार कर हे कृपानिधान इस अपने दास का समय के अनुसार यथा शक्ति पूजन जो है सो स्वीकार लीजिये इस प्रकार जब विनती के दीन ब्राह्मण ने उचारण किये [वचन] तब नरसी रूप भगवान प्रसन्न होय करके कहने लगे कि हे ब्राह्मण जहां अब दिलभक्ती और प्रेम के सहित थोडाभी आदर सतकार होवे सो मेरू परवत के तुल्य है इसमे कुछ संशय नहीं ऐसे विचार कर यथा शक्ति समय के अनुसार हे ब्राह्मण हमारा सतकार सनमान करो ऐसे भगवान का वचन सुनकर ब्राह्मण आनंद पूर्वक आय कर धनी को सब वृतांत सुनाय देता भया तब तिसने प्रीती भक्ती और उतसाह से विधीविधान के सहित कन्या का ~~[illegible]~~ पानीग्रहण अर्थात विवाह जो है सो कराय दिया परस्पर बहुत करके विनती बडाई होती भई और सिवकाई सनमान भी जैसा योग्य था सो भली प्रकार सब होता भया तब नरसी रूप भगवान ने तहां बहुत सो धन बांटा और सुंदर जस जो है सो प्रापत किया फिर आनंद पूर्वक विदाय होय कर सब समाज के सहित नरसी भक्त के घर मे चले आवते भये इहां ऊहां सब लोग भगवान की माया के वश आश्चर्ज भये हुये सेना आदिक सब अनंत समाज देख कर कुछ भेद जान नहीं सकते भये तब दीनानाथ अपने भक्त के घर मे तीन दिन निवास करके और सब का यथा योग्य स-

नगरकेबाहिर आयाहोगा तब धनीकाबचन सुनकर आप
रोहित ततकाँहीं नगरके बाहिर आय करके जो देखने लगा
तो धूमधामका कुछ पार नहीं पड़ताहै बरातका बड़ाभारी
खरभर शब्द होरहाहै संख भैनाई इत्यादि बाजयों कीभीघो
र धुनी होरहीहै मानो चतुरंगनी सेना साजकरके रणभू
मी मे इंद्र आय विराजा हुआहै पृथ्वीकी धूडी उड़कर आ
काश परिपूर्ण होरहाहै औरसूरज छिपगया अपना बिगाना
कोई सूझ नहीं पड़ता मानो दिन हो रात पड़गई है॥१६॥
चौपाई॥ देखिबरात विप्र विसमाना॥ धनि पैं आय बदन
असगाना॥ आवा समधि बरात सजाई॥ देखहु कस
न बहिरपरजाई॥ दीन साधु जहि बदन उचारत॥ बारबा
र मोरे सिसकारत॥ देखि लेहु अब साधुसि धंगी॥ सोबाज
न हु साजि चतुरंगी॥ धनी सुनत अपरोहित बैना॥ निक
स्यो बहिर तजत जवगैना॥ तब बरात देखीसगत पारा॥
गज रथ बाहन विविधप्रकारा॥ लीने सुरसमाज सुरराजू॥
आवा जनहु धरनि तल आजू॥ अपरोहित सन बदन
उचारा॥ सोधूरत दुज दीन विचारा॥ इह आवा सुमस
जत समाजू॥ महाराज राजन सिरताजू॥ तौलौ नग
र निकट जब आये॥ रथारूढ नरसी तब पाये॥ उठ्यो
कंपि तन धनक महाना॥ बोलि न सकत बदन विस
माना॥ मै लखि तासु साधु निरधारू॥ जो सो कछु
न सदन संभारू॥ बांध बजन सन कहा अलाई॥ क
रहु उपाय कवन अब भाई॥ निज संपति जुत पुरका
रसारू॥ जोमै लेहुं द्रव्य संभारू॥ तोपि एक भोजन
इन केरो॥ बनहिं न जानि परत जिय मेरो॥ अस
विचारि अपरोहित काहीं॥ दीन पठाय वेगति न
पाहीं॥ कहियो बदन विप्र असजाई॥ मेरुँ न सक
हिं सीस धरि राई॥ मै निरधन अतिदीन विचारा॥
करि ● न सकहुं सतकार तुमारा॥ इह कूछे कछु दा
न कुमारी॥ मोहि तें सरहिं भक्त व्रतधारी॥ विप्र सु
नत अस बदन उचारा॥ अबतुव कहो सुजस वित
सारा॥ लाज विवस कछु उत्तर न दीना॥ तब दुज च

मे प्रेम प्रीती अधिक करनेवाला सुंदर भक्ती का महातम जो
है सो कथन करता हूं इसको जरा कान देकर सुनिये कह
ते हैं कि सुंदर मारवाड देशमे जैमल नाम करके एक रा
जा होता भया तिसके घरमे रूप और गुणों की निधी एक
कन्या मीरांबाई नाम करके उतपन्न होती भई तव तिस रा
जा के घरमे ■ गिरधर भगवान की एक सनातन मूरती जो
थी तिस की भक्ती सनमान से राजाका सब परिवार पूजन
और सेवन करता था ऐसे पिता के सहित सब परिवार को
भगवान की भक्ती मे लीन देख कर मीरांभी प्रेम करके
उनमत्त भई हुई गिरधर भगवान की भक्ती प्रीती वाली
होयजाती भई नित्त लुपत हीं भगवान के भवन मे जाती
और सुंदर नृत्य गायन कर कर दीनानाथ को रिझावती
फिर लुपत हीं अपने घरमै चले आवती और जव जव
तिसके विवाह का प्रसंग चलता तव तव हीं उतसाह
से रहित होयकर परम दुखको प्रापत होयजाती कैव
ल गिरधर स्वामी को अपने प्राणों के पती जानकर ति
स आनंद मे ही रात्रिदिन मगन रहती तव अंत को
मातापिताने अनेक प्रकार प्रबोध कर कर और शिक्षा दे दे
कर तिसको विवाह का सुईकार कराया तिस तें उपरां
त कुछेक काल वतीत होने के पीछे सुंदर सुभदिन वि
चार कर तिहँ विवाह जो है सो कर दिया और अनेक प्र
कार का दायज भी ~~देकर~~ दान किया तव राजकुमार लेक
रकें अपने घर को चल पडता भया अब मीरांने देखा
कि प्रस्थान तो भया हृदयमै परम कलेश मानकर गि
धर भगवान की विरहे से व्याकुल भई हुई अचेत और
मूर्छागत होय कर पृथ्वी पर गिर पडी तव दासी
गण देखकर तुरत हीं सीत जल और सीतल सुगंधी
मुखपर छिडक छिडक कर मरदन पंखे आदि कौं सिव
काई करने लगी इसप्रकार मीरां को जव शरीर मे कुछ
सुधी आई तव मातापिता ■ वडी कोमल वानी से पू
छने लगे कि हे पुत्री तेरे हृदय मै कौन सोच उतपन्न भ
या जिसते तू व्याकुल होयगई है अपने जीये का

का

अंग्रंदेस

ले

कलेश हम को सुनावो जो अबी तुमारा मनोर्थ सब पूरण क
र देवें हे पुत्री इह तुमारा दुख देखकर हमभी परम दुखी हो
य गये हैं तो ते अपने हृदय की कहो जो कौन कारन है इस प्रका
र माता पिता का कथन सुनकर मीरां रोय करके कहने लगी
कि हे पिता अन्न वस्त्र भूषण धन इत्यादिकों की मेरे को कु
छ अभिलाषा नहीं है परंतु एक गिरधर भगवान सर्व
सुखदायक मेरे प्राणनाथ और प्राण आधार जो हैं ति
नकी मूरती मेरे को दे देवो ऐसे मीरां का वचन सुनकर
माता पिता [illegible] ततकाल गिरधर भगवान की सुंदर
और सुखदाय मूरती जो है सो तिसको देदेते भये तब मी
रां अपने प्राणनाथ की मनोहर मूरती को पाय कर आ
नंद मे मगन भई हुई सुंदर सिंघासन जो पालकी है तिस
मे प्रीती और सनमान से स्थापित कर लेती भई ॥२॥
चौपाई॥ अस प्रकार मीरां हरषाती॥ गिरधर भक्ति प्रेम
अनुराती॥ जनक जननि तें होत वदाई॥ हरषत ग
वनि भवन पति आई॥ सुत सुत भामनि सेजुत सासू॥
अति प्रसन्न मन मानि हुलासू॥ आन समाज कीयन
सब लेवा॥ पूजन चली ग्राम कुलदेवा॥ तहां जाय
विधिवत सब कीना॥ निज कुल रीति हरषमन लीना॥
तब मीरां सन सास उचारा॥ तुव पुत्री हैं जुत सत
कारा॥ पावन इष्ट देव निज कोरी॥ करहु प्रणाम जु
गल कर जोरी॥ मीरां सुनत सास अस वानी॥ बोली
अभय वचन हरषानी॥ मोरे बिनु गिरधर भगवाना॥
मातु न इष्ट देव जग आना॥ एकहि देव दया निधि
मोरे॥ गिरधर उनहिं जुगल कर जोरे॥ देउं प्रणाम
मोर उन काहीं॥ आन देव मोहि सूझत नाहीं॥ मीरां
कथन सास सुनि काहा॥ इहि मे तोहि न दोष कछु
राहा॥ इह कुल इष्ट देव भगवंती॥ चाह वृद्धि सौभा
ग करंती॥ इहि कहि नम्र सीस तुव नाई॥ सुनाले हु
कल्यान सुहाई॥ अस प्रकार जब तास बखाना॥ त
ब मीरां सुमरत भगवाना॥ बोली वदन सुनहु तुव मा
ई॥ मोहि सो भाग नित्य सुखदाई॥ अस जो के गिरधर

४४२ ५५२

पतिनागर॥ सदाअमर त्रैभवनउजागर॥ जो सोभा
ग्य दात असंसेवी॥ मातुतुमार इष्ट कुलदेवी॥ तोपुर
करविधवा कस नारी॥ जवमीरो अस वचनउचारी॥
कंपत अधर कोप वससासू॥ चली विकल जीय है न
निरासू॥ दोहा॥ पति पें जाय वृतांत अस कीन कथन
सव तास॥ इह दुरमति कतलाय तुव करन वंस निज
नास॥ २॥ टीका॥ इसप्रकार मीरां जो है सो हरषती हुई
और गिरधर भगवान की भक्ती और प्रेम मे लीन भई हुई
मातापिता से विदाय होयकर आनंदपूर्वक अपने पती
के घर मे चली आई तव ~~[illegible]~~ पुत्र और पुत्र की
इस्त्री के सहित सास जो है सव स्त्रीउं का समाज साथ
लेकर वडे हरष सें अपने ग्राम के कुलदेवता को पूजने
चली तहां जायकर ~~[illegible]~~ विधी अनुसार अपने कुल
की सव रीती करके फिर मीरां को कहने लगी कि हे
पुत्री अव तुम भक्ती सनमान से ~~[illegible]~~ इस अपनी कुल के
इष्ट देव को हाथ जोडकर और नम्र होयकर दंड प्रणाम
करो तव मीरां सास की ऐसी वानी सुनकर अभयँ होयकर
मुख से कहने लगी कि हे माता मेरा तो गिरधर भगवान के
विनाँ और कोई भी इष्ट देव नहीं है मै तो तिनकों रात्रीदिन
हाथ जोड कर दंड प्रणाम करती हूं इत्तर और देव मेरे को
कोई सूझता नहीं है ऐसे मीरां का कथन सुनकर सा
स जो है सो फिर कहने लगी कि हे पुत्री इसमे तेरे को कु
छ दोष नहीं है इह हमारी कुल की इष्टदेव भगवती
है ~~[illegible]~~ तुमारे को सुंदर सौभाग्य और वृद्धी के दे
ने वाली है इस को नम्रता से सीस नायकर हे पुत्री
तूं सुंदर कल्यान को प्रापत कर इसप्रकार जव सास
ने कहा तव मीरां गिरधर भगवान को समर कर कहने
लगी कि हे माई मेरे को तो नित्य सौभाग्य ही है क्यों
कि जिसके ऐसे अमर रूप और तीनों भवनों के
नायक गिरधर भगवान प्राण पती हैं और जो तु
मारी ऐसी सौभाग अर्थात सुहाग के देनें कुलदे
वी है तो इह तुमारे नगर स्त्री विधवा क्यों कर है
जव मीरां ने इसप्रकार उच्चारन किया तव सास
जो है सो क्रोध से थरथर कांपती हुई व्याकुल और

सो

कि सुति देनेवाली है

सो

भगवती

की

डि ति

दोहा॥ हरण दोष भ्रम करन कल गिरधर चरन सनेहु॥
करहुं कथन सादिर वदन भक्ति महातम एहु॥ चौपाई॥
मारवाड़ वरदेस सुहावा॥ जैमल्ल नाम भूप तहं गावा॥
उपजी तास सदन सुभ कन्या॥ मीरांबाई रूप गुण ध
न्या॥ गिरधरदेव जनन सुखदाई॥ मूरति रुचिर सद
न नर राई॥ तासु भक्ति संजुत सतकारा॥ पूजहिं सकल
भूप परिवारा॥ मीरां पितुहिं देखि हरषाती॥ गिरधर भ
क्ति प्रेम मद माती॥ जाहिं लुपत हरि भवन सुहाई॥ करहिं
नृत्य कल गीत अलाई॥ जब जब चलहिं प्रसंग विवाहू॥
तब तब होहिं विगत उतसाहू॥ गिरधर स्वामि प्राणपति
जानी॥ हृदय प्रसन्न रहत सुखमानी॥ कहि कहि जननि
जनक बहु वारा॥ तासु कराय अंतसूई कारा॥ देखि स
दिन संजुत उतसाहू॥ जनक रुचिर करि दीन विवाहू॥
दायज दीन अनेक प्रकारा॥ चल्यो लेत नवराजकुमा
रा॥ मीरां देखि भयो प्रस्थाना॥ अति कल्लेश मान स
नि ज माना॥ गिरधर विरहं सुमरि अकुलाई॥ परी अ
चेत धरन मुरझाई॥ तब दासिन तहि लीन संभारी॥ सिं
चि वदन वर सीतल वारी॥ मरदन विजन करत सुधि
आनी॥ पूछत जनक वदन मृदु वानी॥ पुत्री कवन
सोच जिय तोरे॥ करहु सुकथन शोक गत मोरे॥ मै
पुर करहुं मनोरथ तोरा॥ मोहि दुख भयो देखि दुख तोरा॥
तब मीरां रोदन मुख ठानी॥ भाषिस जननि जनक क
हे वानी॥ मूरति गिरधर दीन सनेहू॥ मोरे देहु जन
क तुव एहू॥ अन्न वसन भूषण वितकाहू॥ मोरे न
हिंन जनक उतसाहू॥ गिरधरदेव एक सुखदाये॥ मो
रे प्राणनाथ मन भाये॥ मीरां वचन सुनत पितुमाता॥
ते मूरति गिरधर सुखदाता॥ दोहा॥ तहि दीनी अतिप्रीति
युत लीनी मीरांबाई॥ कीनी सिवका रूढ रुचि प्रेम
नवीनी नाई॥ २॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि
हे संतो अब इन सब दोष दरिद्र और भ्रम से देह के ना
श करने वाली और गिरधर भगवान के चरन कमलों
ह

रतीहै पीछे इससे क्या करेगी कि जो सास ससुर और पती
को कुछ समुझती मानती ही नहीं है अब तौ हे पती मै तिस
दुरमती को कबी कुछ सुभासुभ नहीं कहूंगी तब मी
रां का ससुर राना जो है सो सुनकर के परम कोप करता भ
या और कहने लगा कि हे देव इन हम को कैसा कलंक
लग गया है जो अब शस्त्र का घात देकर तिसको मार दे
ऊं तो स्त्री के बध करने का मेरे को जगत मे पाप लगता है
अब इह किस प्रकार मरे मै कौन यतन करूं ऐसे विचा
र कर चिंता करके व्याकुल भया हुआ अपनी पतनी अ
र्थात स्त्री को कहने लगा कि हे प्यारी अब इस का एही
उपाय है जो इह अपने घर मे न्यारी ही बैठी रहै जैसे
निरादरी और विसकारी हुई दासी होती है तैसे ही इह दु
रमती दीन होय कर घर मे बैठी रहै इस प्रकार विचार
करके तिस भगवान की प्यारी मीरा को एक जीरण अ
र्थात पुराने घर मै कैदियों के समान डाल दिया और
घर मी वृध वृध सेवक जो थे सो तिस की रक्षा के वास्ते
द्वारपाल कर दिये तब मीरां पतीव्रत धरम मे प्रवीन
तहां निवास करके श्री गिरधर भगवान के पूजन सेवन
मे ही नित्य लीन रहती और हाथ मे वीना लेकर सन
मानपूर्वक मधुर स्वर से भगवान के सुंदर पद जो हैं सो
गावती और तैसे ही नये नये भाव ल्याय कर
भक्तीप्रीती नृत्य भी करती सास ससुर जो तिस को देख कर कुछ
झिड़की के बचन कहते तो वे पवन के वेग समान इधर
कहते और उधर निकल जाते तिस को कुछ सपर्स
नहीं करते हैं क्योंकि जिनोने संसार मे सुख दुख रा
ग द्वेष सदा ही एक रस जाना हुआ है तिन को मान
अपमान क्या है इस जगत के दुरवाद को एक स्वपने
वत जानते हैं तैसे ही प्रेम की मूरती मीरां
भगवान के चरन कमलों की प्रीती भक्ती वाली लज्जा
और कार विचार सब त्यागे हुये गिरधर
देव के प्रेम समुद्र मे मगन भई हुई संतों के समाज मै
प्रकट बैठ कर नृत्य और गायन जो है सो करती

तब इस प्रकार तिसका आचार देख कर सास और सुसर व
डा भारी दुख मानते भये कहते हैं कि बुरी बात भई हमारी निस
कलंक कुल को इह महा कलंक लाग गया है हे देव अब कौ
न उपाय करिये इह हमारे हृदय का दाह कैसे मिटैगा तब एक
दिन मीरा की ननद जो है सो आय कर के कहने लगी कि हे
भौजाई तै ने निसकलंक दोनो कुलों को कैसा कलंक लगा
या है जो कहा नहीं जाता ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ सुनहु प्रजापति पर
म सनेही ॥ त्रीय कुलीन कहे उचित न एही ॥ चारु मर्याद
वंस चुत होई ॥ साधु समाज लाज सब खोई ॥ प्रेमय नृत्य गा
यन अस करना ॥ होत सुशील देखि दृग भरना ॥ सास सुसर
अस देखि तुमारे ॥ दुखि और निज जियन बिसारे ॥ जैमल जनक
तोर जग माना ॥ करत होहि सुख कवन बखाना ॥ तो कर सुजस
और हेलासो ॥ भलो आज तुव करनउतासो ॥ ननदन म
नन वदन अस बानी ॥ मीरा सुनत श्रवण मुसकानी ॥ अ
हो प्रेम कर रीति नयारी ॥ जिमि कर हैं प्रबोधन हारी ॥ ति
मि तिमि दिपति लेत अधिकाई ॥ सुनहु ननदि अस वदन अ
लाई ॥ निश्चय सत्य कथन सब तोरा ॥ मानत सास सुसर
दुख मोरा ॥ पति हं जुत बांधव जन सारे ॥ निज निज दुखित
सकल मन मारे ॥ मोर कुकरम देखि अति हानी ॥ उत जीय
जन क जननि निज मानी ॥ पुर कर आन लोक जन जे हू ॥
देखहि त्यत लाज मोहि तेहू ॥ ये हित करनि कर हुं अब
काहा ॥ गिरधर प्रेम अलौकिक राहा ॥ मोहि चितावत की
न जगतासा ॥ निज पर करहिं लोक सब हासा ॥ सास सु
सर बांधव पितु माता ॥ इनकर ननदि कवन सुख बाता ॥
चौदस भवन चराचर जेहू ॥ मोरे नहि सूजन कछु तेहू ॥
केवल एक ललित पति प्राना ॥ गिरधर देव होत मोहि मा
ना ॥ इह जियरा उनहीं हर लीना ॥ को सामर्थ्य नहं
मृति चीना ॥ जो अस प्राण नाथ तें मोरी ॥ लगी लगन
अस दहि विछोरी ॥ दोहा ॥ प्रेम मती अति रत रती ग
त [illegible] मति सील सुभाऊ ॥ बिसरि गयो कुल लाज सब
गिरधर चरनन चाऊ ॥ ४ ॥ टीका ॥ सो ननदी कहती है कि
हे प्रजापती अर्थात हे भौजाई कुलीन त्रीये जो होती
हैं तिन को इह योग्य नहीं होता है जो अपनी कुल की म
र्यादा को छोड़ कर साधुओं के समाज मै प्रमय और
निरलज्ज होय कर ऐसा नृत्य गायन करना हे सु

श्री ले इस अयोग्यता को देखकर मरणा ही प्रतीत होता है तुमारे इस करम को सास और ससुर देखकर परम दुखी होय कर अपने जीवने से निरास होय रहे हैं और जैमल तुमारा जगत में वड़ा मानी पिता सो मुख से क्या कहता होगा तिस के सुजस का मुकर जो था सो तैने अपने हाथों से मला उतारा है इस प्रकार ननदी की वानी सुनकर मीरां मुख में मुसकावने लगी देखिये इह प्रेम की रीती कुछ न्यारी ही है ज्यों ज्यों कोई प्रबोध करता है त्यों त्यों अधिक ही जागता जाता है कहने लगी कि हे प्यारी ननदी तेरा कथन जो है सो निश्चय करके सब सत्य ही है सास और ससुर मेरा वहुत ही कलेश मान रहे हैं और पती के सहित सब बांधव जन भी अपने अपने सब दुखी हो रहे हैं ऊहां माता पिता को भी मेरे इस कुकरम की बहुत हानी उपज रही है पुरके लोग जो हैं सो भी मेरे को निरलज्ज भई देखकर सब हाथ मल मल पछतावते हैं परंतु हे हितकारनी मैं क्या करूं इह गिरधर भगवान का अलौकिक प्रेम जो है तिसने मेरे को विलपत अधीन वावरी कर राखा है यद्यपि अपने बिगाने लोग ~~मेरे के~~ सब हासी कर रहे हैं ~~पर~~ मेरे कुछ सुपने भी नहीं हे ननदी सास ससुर बांधव माता पिता इह किसगिनती में हैं मेरे को तो इस समय चौदां भवनों में से कुछ नहीं सूजता केवल एक गिरधर देव मेरे प्राणपती जो हैं सोई सूजते हैं इह मेरा हृदय उनके ही वश हो गया है अब ~~के~~ ऐसा कोई सामर्थ्य नहीं देख पड़ता जो तिस प्राणनाथ से मेरे हृदय की लगनं को छुड़ाय देवे हे सील सुभाव वाली ननदी मैं तो प्रेम में उनमत्त प्रीती में लीन मती जो बुद्धी है तिस से तीन लोक लाज और कुल लाज सब विसारे हूये केवल एक गिरधर भगवान के चरनों का आधार मानकर तिसी उतशाह में मगन होय रही हूं ॥४॥ मीरा कर सुनि ननदि वाचा॥ गिरधर चरन प्रेम दृढ साचा॥ पूर्णोकारत दारुणा दिस

निरास होकर अपने पती के पास आयकरके ~~[struck out]~~
सब वृतांत सुनाय देती भई और कहने लगी कि हे पती
इस दुरमती और वंसके नास करनेवाली को अपने सु
मंदर मे क्यों लेआये हो इसने तुमने भला काम नहीं किया॥
२॥ चौपाई॥ अबहिं वक्र मुख वचन उचारत॥ मानहुं
वज्र बान उर मारत॥ पाछे कवन कारहिं इहनीकी॥ बन त
न सास ससुर निज पीकी॥ अब तैं मैं न समासम काहू॥ करहु
कथन पति दुरमति ताहू॥ राणा सुनत रोष रिस पागा॥ भा
षत इह कलंक कस लागा॥ आयुध हनत वधहुं अब जो
ई॥ तो तीय वध दारुण अग होई॥ इह कस मरहिं जतन
अब काहा॥ अस विचारि चिंता कुलराहा॥ निज पतनी स
न कहिं उचारी॥ अब इह रहहिं भवन निज न्यारी॥ जिमि
दासी सतकार वहीना॥ दुरमति बसहिं तिमि दीना॥ अस
प्रकार इक जीरण गेहा॥ उरदीन वंदी वत तेहा॥ धरमी
वृंद विविध समुदाई॥ [illegible] द्वारपाल तवराई॥ मीरां धर
म पतिव्रत माती॥ श्रीगिरधर पूजन नित राती॥ सादिर
लेत ललित करवीना॥ मधुर मधुर सुर गायन लीना॥
निरतत नवल भाव कल ल्याई॥ पावन भक्ति प्रीति सर
साई॥ सास ससुर दुरवचन उचारे॥ महतवेग वत
जानि विसारे॥ सुख दुख राग द्वेष संसारा॥ सदा एक
रस जिनहिं विचारा॥ तिन कहं कवन मान अपमाना॥
जग दुरवाद सुपन वत जाना॥ अस प्रकार मीरां अनु
रागी॥ गिरधर चरन कंज लव लागी॥ प्रकट वेठि सुर संत
समाजू॥ गायन करत त्यागत जीय लाजू॥ चार विचार
विसारत सारी॥ मगन आनंद प्रेम निधवारी॥ अस आ
चार तास अनिहारी॥ सास ससुर दुख मानीस भारी॥ हम
री निस कलंक कुल काहीं॥ लाग्यो इह कलंक जग मा
हीं॥ तेहिं उपाय दैव अब काहा॥ मानत हृदय विपु
ल निज दाहा॥ दोहा॥ तव मीरां कर दिवस इक कह
त ननदि अस आय॥ निह कलंक जुग कुलन कहे तुव
कलंक कस लाय॥३॥ टीका॥ फिर सास कहती है कि इह
अबहीं से वज्र के समान [illegible] दुरवचनों के बाण हृदय को मा

होयकर नृत्य और गायन करती है ऐसे अपनी पुत्री के मुखसे
राणा वचन सुनकरके हृदयमे अतसे कलेशमनता भया औ
र क्रोध से व्याकुल भया हुआ ततकाल ही विषमंगवायकर
भृत जो सेवक है तिसको कहने लगा कि जिसप्रकार जाने इह
विष जो है सो मीरां को पिलाय देवो तव सेवक तुरत ही सुव
र्ण के पात्र मे जल के साथ मिलायकर और भलीप्रकारसे भा
लकर ले जाता भया तहां मीरां के घरमे सो अभागी जायकर
के तिसकों कहने लगा कि हे मीरे इह राणा जीने भगवान
का पूजन करके तेरे नमित्त चरणामृत जो है सो भेजा है अव
तूं इसको प्रीती पूर्वक ~~कर~~ पान कर और सुंदर कल्यान
को प्रापत हो तव अतसे चतुर और परमव्रतधारी मीरां
गिरधरभगवान के चरनोकी प्रीती वाली और भूत भविख
वर्तमान तीनोकालों की गती को जानने हारी तिसकेसा
थ दुष्टने जो कपट किया तो संतों का सुभाव सदैव ~~ही~~ ऐसा
हीं होता है कि वे अनहितको हित करके हीं मानते हैं तिसपर
और विचार भी विचार न किया कि यद्यपि इह सेवक महा
दुर्बुद्धी और कपटी है परंतू अव हाथमे भगवान का च
रणामृत लिये हुये मेरे को कल्यान उचारण करता है सो
भगवान के चरनो का प्रभाव गौतुम की स्त्री अहिल्या को
तारने वाला सव जगतमे प्रसिद्ध है और यद्यपि मैने इ
हकपट भी सव जान लिया कि चरणामृत के वहाने से महा
भारी विष है तद्यपि मै अव इसको विष नहीं जानती अप
ने स्वामी के चरनो का अमृत रूपी जल जो है सो ई मानती हूं
क्योंकि श्रुती और पुराणों ने प्रकट कथन किया है कि भग
वान का नाम सुनकरके पापादिक सव दोष जो हैं सो सव मिट
जाते हैं और सुंदर ज्ञान और सुबुद्धी जो है सो हृदय मे प्रकाश हो
य जाती है तातें इह भगवान के चरनो का पवित्र जल जो है
सो विष के विकार को कैसे नहीं खोय देवेगा इसप्रकार भग
वान का चरणामृत जानकर भक्ती और प्रेम मै मगन भई
हुई मीरां गिरधर भगवान को हृदयमे सुमरकर और वि
ष का सो पात्र हाथ मे लेकर ~~प्रेमपूर्वक~~ मानो अमृत जा
नकरके आनंदपूर्वक पान कर लेती भई ॥५॥ चौपाई ॥
देव कृपातें गरल प्रभाऊ॥ जानि पर्‌यो कछु नाहिं न ताहू॥
जिमि नर लेत विगत रुज कोती॥ मीरां दिपति लीन तहि
भांती॥ दसगुण वदन ज्योति सरसान्यो॥ राणा सुनि

वृतांत विसमान्यो॥ हालाहलतें मरी न एहू॥ अवक समरहिं विपुल संदेहू॥ समय एक द्वारपजन आई॥ राणा सन कह्यो वुझाई॥ महाराज मीरा सन करहीं॥ भाषण काहु जान नहिं परहीं॥ राऊ कह्यो मोहि अवसर पाई॥ आय वेग मृत देहु जणाई॥ तव आवा मृत समय निहारी॥ राना चल्यो खड्ग कर धारी॥ भवन भित्ति सन लागि दुरावा॥ भाषण श्रवण करन मन लावा॥ तव देख्यो मीरा उतसाहू॥ करत अलाप आन सन काहू॥ सो सपष्ट कछु जानि न पावा॥ रिसकि प्रकट तहि वचन अलावा॥ वेग करहु उद्घाटन द्वारा॥ को अस करत अलाप विचारा॥ तव कवार मीरा हरषाई॥ खोलि दीन कछु विलम न लाई॥ देखि ससुर कहं जिय सकुचानी॥ लाजित कहि न सकत कछु वानी॥ राऊ कहिस इत कवन उमंगा॥ तोहि सन करत अलाप प्रसंगा॥ यद्यपि उचित न भाषण राहा॥ तद्यपि करहिं यतन अव काहा॥ त्यागत लाज अस अत उचारी॥ नाथ भवन सव लेहु निहारी॥ देखन लग्यो भवन तव राना॥ पर्यो न दृगन दृष्टि जन आना॥ तव लाजित निज भवन सिधास्यो॥ निज प्रीय सन सव मरम उचास्यो॥ तेऊ सुनत मानस विसमानी॥ दंपति कहि न सकत कछु वानी॥ दोहा॥ तव आवा इक समय तहि सदन दुरातम काहू॥ वेसव भेष वहेष निज धरत कपटि उतसाहु॥ ६॥ टीका॥ तव भगवान की कृपा से सो विषका प्रभाव तिसको कुछ भी जान नहीं पड़ा जैसे कोई पुरुष रोग से नवृत्य होयकर पीछे से सुंदर कांती और आभा को प्रापत होता है तैसे ही मीरा के मुख की जोती और शरीर का प्रकाश जो है सो अधिक जाग उठता भया तव राणा जो है सो सुन करके वडे आचर्ज को प्रापत होय गया कहता है कहालाहल जो विष है तिससे तो इह मरी नहीं अव कैसे मरेगी इह मेरे हृदय में वडा संदेह है तिस तें उपरांत जव कुछ कदिन वतीत होय गये तव एक दिनं द्वारपाल आयकर के कहने लगा कि हे महाराज हम को कुछ जान नहीं पड़ता ~~कस्य~~ तहां मीरा कैसाथ कोई आयकर के वारता अलाप करता है तव राना कहने लगा कि भाई ध्यान रखना अव जो वे आय कर के तिसके साथ वाती ~~कीत करे~~ अलाप करे तो तुम

कुछ

आयकरके शीघ्र रहौ मेरे को जगाय देवो मैतिसका तुर
त उपाय कर लेऊँगा ऐसे राना की आज्ञा पायकर के द्वा
रपालों ने समय जानकर ततकाल राना को आयकर के
खबर करदई तब राना कोप से भरा हुआ हाथमे खड्ग
धारन कर तहां को तुरत ही चलपड़ा और घर की दिवा
ल से लागकर तिसं बार का प्रलाप जो है सो सुनने लगा
तब राना ने अपने कानों से भलीप्रकार सुनलिया जो को
ई पुरुष मीरां के साथ बात चीत कर रहा है परंतु सप ष्ट
करके कुछ जाना नहीं जाता तब कोप से भरा हुआ राना
बड़ी ऊंची स्वर से कहने लगा कि हे मीरा द्वार को शीघ
र खोल दे ईहां तेरे साथ कौन बारता कर रहा है राना का
वचन सुनते ही मीरां ने तुरत द्वार खोल दिया और सु
सर को देखकर हृदय मैं सकुचमान होय जाती भई परभल
ज्जा करके मुख से कुछ बोल नहीं सकती तब राना कहने
लगा कि सत्य कहो ईहां तेरे सों कौन बातें करता था तब मी
रां को यद्यपि सुसर के सनमुख बोलना योग्य नहीं था तदपि
अब कौन यतन करै अंत को कुसमय जानकर और लज्जा
को त्याग कर कहती भई कि हे नाथ अब आप सब भवन मे
रा भलीप्रकार देखलीजिये ईहां तो और कोई भी बात
चीत करनेवाला नहीं है तब राना भीतर घर के जायकर
भलीप्रकार सब देखता भया परंतू कोई दूसरा पुरुष दृ
ष्टी मे नहीं आया फिर लज्जा मान होय कर के अपने
भवन को चला आया और तहां अपनी स्त्री को सब वृ
तांत सुनाय देता भया सो सुनकर के बड़े आचर्ज
को प्रापत होय गई और दंपती अर्थात दोनो स्त्री भरता
मुख से कुछ बोल नहीं सकते तब तसी समय तहां
मीरां घर मे एक कोई वैस्नव संत का कपटभेष धारे हूये दुष्ट
आतमा जो है सो आय प्रापत भया ॥१॥ मीरां रूप देखि मु
रछाना ॥ भयउ विकल मदन जनु बाना ॥ कहत कर
हु भामिनि मोहि संगा ॥ रतिविलास सुख हृदय उ
मंगा ॥ सुनत अनुचित तास मुख बानी ॥ मीरां कह
त हरषजिय मानी ॥ लेहु संत अब भोजन पाई ॥ म
दन विलास करहु निसि आई ॥ असप्रकार भोजन

लीना॥ पितुपै आय कथन असकीना॥ गिरधरप्रेम विकल मति सा॥ करि करि मै अनेक संभासा॥ कीन प्रबोधनवि
विधप्रकारा॥ पै नहीं स कछु मान सधारा॥ साधु समाज लाज सब त्यागी॥ संतत नृत्य गीत अनुरागी॥ सु
नि निज सुता वचन असराना॥ अति कलेस मानस निज माना॥ क्रोध सिरत विष लीन मंगावा॥ मृतहिं वदन निज दीन सिलावा॥ भाजन सो नै मिलावत वारी॥ चल्यो लैत मृत करन संभारी॥ मीरां सदन जाय हतभागा॥ वदनअ
धम अस भाषण लागा॥ राना करि पूजन मग वाना॥ संजुत भक्ति प्रीति सनमाना॥ इह चरणोदिक देव सुहावा॥ मीरे
गुव हित दीन पठावा॥ संजुत प्रीति करहु अव पाना॥ तोरे करहिं देव कल्याना॥ अतहि चतुर मीरां व्रतधारी॥ गिर
धर देव परम हितकारी॥ तीन काल गति जानन हारी॥ तहि सन कीन कपट जड़ भारी॥ संत सुभाव सदा अहनी
के॥ अनहित कहे मानत हित जीके॥ तापर आन विचार विचारा॥ इह यद्यपि मृत दुरमति मारा॥ पै करलि
ये चरण हरि वारी॥ मोहि भाषिस कल्यान उचारी॥ सो हरि चरन प्रभाव सुहावा॥ मुनि जीय तरण विदत सव गा
वा॥ यद्यपि कपट सकल मै जाना॥ चरणोदिक मिस गरल महाना॥ तदपि मैं न गरल अव जाने॥ चरन वारि नि
ज स्वामिन माने॥ श्रुति पुराण अस विदत अलावा॥ सुनत नाम भगवान सुहावा॥ दुरित दोष सव मिटहिं विकारू॥ उ
पजहिं सुमति ज्ञान रुचि चारू॥ तो इह चरणोदिक प्रभु होई॥ विष विकार कस दहिं न सोई॥ अस प्रकार चरणामृत जा
नी॥ मीरां हृदय भक्ति सरसानी॥ दोहा॥ सुमरत गिरधर देव निज लेत चषिक विषपानि॥ अमय जानि जनु लीन अ
च अतसे हरष उर मानि॥ ४॥ टीका॥ इस प्रकार ननदी जो है सो मीरां का कथन सुनकर और गिरधर भगवान के चर
न कमलों मे दृढ़ प्रेम देख कर शोक से दुखी भई हुई क्रो
धसे व्याकुल जायकर अपने पिता के आगे ऐसा कथ
न करने लगी कि हे पिता तिसकी तो गिरधर भगवान के प्रे
म मे बुद्धी व्याकुल होय रही है मै अनेक प्रकार की वारता
करकर तिसको बहुत हीं प्रबोध किया परंतू तिसने हृदय मे
एक नही माना लज्जा को त्याग हुये साधुओं के समाज मे अमय

४४७

447

ज्ञान और सुमतीके सहित कृष्णभगवानकी सुंदरभक्ती
और प्रीतीवाला होय जाताभया॥ १॥ चौपाई॥ अवसर
एक दलीस सुहावा॥ मीरा सुनत सुजस सुभभावा॥ लि
ये समाज सकल संभाहू॥ सेना सचिव भूरि भृत चारू॥
करत प्रजटन विपुन पुर ग्रामा॥ आवाधरन पाल अभि
रामा॥ करि दरसन मीरां हरषावा॥ वारवार चरन नसिरना
वा॥ पुनिगिरधरलाल [illegible]त देखी॥ हरन कोटि छबि मदन
वसेखी॥ उपज्यो हृदय तास अनुरागा॥ ललितध्यान
प्रभु विरचन लागा॥ इहजव तें नंद नंदन देवा॥ सुरनर
सकल चराचर सेवा॥ मैं निज जुगल नैन भरि हेरे॥ तव
तें सकल मनोरथ मेरे॥ भये सफल संसार सुहाये॥
मैं प्रभु विदत कल्पद्रुम पाये॥ सीस मुकट चंद्रक जुत
देखे॥ उदय भाग निज संसृति लेखे॥ केसं खोर लिला
ट नवीना॥ तीन लोक छवि मोहन कीना॥ स्याम त्रिभं
ग अंग अति लोना॥ चितवनि चारु विदत जिमि टो
ना॥ नैन मीन खंजन मृगछौने॥ अधर विंव कच
भृंग सलोने॥ दाडम दसन दमक दुति दामन॥ वरन
नीलवर वारद सावन॥ मंजुल मधुर मंद मुखहासी॥
चरन विवेनि विदत जनु भासी॥ नूपर क्षुद्र घंटका
केरो॥ सुखर सुनत मन मोहित मेरो॥ दोहा॥ अस प्र
कार दिल्लीसवर करि कल भव पयान॥ गयो ध्यान
असधारि उर मीरा गिरधर प्रान॥ ८॥ टीका॥ तव एक
कि समय दिल्ली का वादसाह मीरां का सुजस औंव डाई
सुनकर सेनादिक सव समाज और मंत्री नौकर चा
कर साथ लिये हुये वस्तों में नगरों ग्रामों मैं फिर
ताफिरता तहां आय प्रापत भया तव मीरां का दरसन
करके साहजो है सो परम प्रसन्न होयकर वारवारं ड
प्रणाम करने लगा फिर गिरधर भगवान की शोभा दे
खकर रोमरोम प्रेम के वश होजाता भया तव भगवान का
दिव्य और मनोहर ध्यान जो है सो हृदय में चिंतन करके कह
नेलगा कि मैंने [illegible] जव तें इह सुरनर और सव
चराचर जीवों करके सेवत किये हुये नंद नंदन भगवान

८न्य

८२

८२

और

नेत्र भर कर देखे हैं तव तैं जगत मै मेरे सव मनोरथ स
फल होय गये हैं और मैने प्रभू प्रतक्ष कलप वृक्ष के स
मान पाये ~~[illegible]~~ हैं कैसे भी भगवान हैं कि जिनके सीस पर
चंद्रकमणी के सहित शोभा देता है सुंदर ■ मोर मुकट ते
से हैं मस्तिक मै केसर कर के मिला हुआ चंदन का तिलक
सुंदर स्याम सरीर और उदर मै शोभा देती हैं जिन के तीन रेखा
सरव अंगों कर के कोमल" चितवनी अर्थात नेत्रों की दृष्टी
से मन को मोहित करते हैं सो नेत्र कैसे हैं कि मीन जो मछी
और खंजन जो ममोला मृगछौना जो हरन का बालक तिन
~~[illegible]~~ की छवी को अपनी सौंदर्यता और चंचलता कर के हरते
हैं विंव जो कनूरी फल है तिस समान ओष्टों की शोभा औ
र भ्रमरयों के समाज वत स्याम केश दारुम जो अनार के दाने
तिन के समान दांतों की कांती तैसे हीं मुख मै मंद और मधुर हासी
नूपर जो झांजर क्षुद्र घंटका जो तड़ागी तिनका शवद सुनकर
मेरा मन मोहित होगया है लाली मय स्याम चरन और तिन
चरनो के वड़े उज्जल नख सो मानो जगत के पाप हरने
कों त्रिवेनी ~~[illegible]~~ है इस प्रकार दल्लीपत जो है सो मीरां ~~के~~
के स्वामी गिरधर भगवान का ऐसा सुंदर ध्यान हृदय मै
धार कर वारंवां प्रणाम करता हुआ अपने घर को चला जा
ता भया ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ तव मीरां मानस अनुरागी ॥ सुचि
वृंदावन दरसन लागी ॥ आई हृदय रुचिर हरषाती ॥ कृस्न
कृपाल प्रेम मद माती ॥ तहां वसहिं स्वामी व्रतधारी ॥ सुचि
गोजीव वाल ब्रह्मचारी ॥ जीय दरसन वरजित वडुभा
गा ॥ तत पर कृस्न भक्ति अनुरागा ॥ मीरा सुनत सु जस अ
सतासा ॥ आई संत दरसन जीय आसा ॥ तव स्वामी आ
वत तहि देख्यो ॥ खोड्स वरष वाल वरलेख्यो ॥ सहिसा
उठे प्रेम सरसाये ॥ जाय लीन निज हृदय जड़ाये ॥ सादर
गहित पानि निज पाना ॥ वैठा सो आसन सनमाना ॥ ज
व जान्यों मीरा जीय एहू ॥ लग्यो करन चिंतन जियते
हू ॥ अवलो जीये वदन नहीं हेरा ॥ आज सु भयो भं
ग व्रत मेरा ॥ सुनि मीरां मानस पछुताई ॥ गवनी
स्वामि चरन सिरनाई ॥ करि प्रणाम हरि भवन सुहा

मीनलोचनकीछवीकोहरनेवाला

है

भक्त

७२

वन॥ पाय कृस्न दरसन मन भावन॥ तहां निवास कर
न निज लागी॥ गिरधर चरन चारु अनुरागी॥ प्रेस्यो हृ
दय देव तव राना॥ उपज्यो अकस मात जीय जाना॥ मीरां भ
क्ति प्रभाव सुहावा॥ ताकर हृदय प्रीति जुत आवा॥ वृद्ध विप्र
त हि वोलन काहीं॥ पठे राउ द्वारावति माहीं॥ दुजन आ
य से जुत सनमाना॥ सुतर कथन सव वदन वखाना॥ मी
रां सो नकीन सूई कारा॥ वार वार तव दुजन उचारा॥ अंत दे
खि अन मनि असतासा॥ वैठे विप्र जीयन तजि आसा॥ अ
न वार सव दीन ति त्यागी॥ असवि लोकि मीरां वड भागी॥
अति दुख मानि भवन हरि आई॥ करि प्रणाम अस वदन
अलाई॥ जो अनुसास देहिं भगवाना॥ तो मै करहुं भवन
निज याना॥ अस कहि दुखित दीन वत होई॥ लागी विन
य करन मुख सोई॥ हे करुणाय सिंधु भगवाना॥ हे हरि हर
न भव भय नाना॥ हे सव भूत चराचर सेवा॥ हे सुर सुजन
संत सुख देवा॥ मै अव लेव लेन तुव चरना॥ वैठी ई हां दे
व दुख हरना॥ अवसर अंत निकट अव मोरे॥ प्रभु कत जा
हु चरन तजि तोरे॥ दोहा॥ श्रावरी गनका गीद लो तुव
प्रभु भवन प्रकास॥ शरण चरन निज दीन मोहि किंकरि
कि तो अजास॥ ४॥ टीका॥ तव मीरां जो है सो गिरधर भ
गवान के प्रेम मे उनमत्त भई हुई श्री वृंदावन के दरसन
करने को वडे आनंद चली आवती भई तहां परम व्रतधा
री और वाल ब्रह्मचारी गोजीव नाम करके स्वामी नि
वास करते थे ~~~~ और स्त्री के सनमुख कभी नहीं होते
थे राचो दिन कृस्न भगवान भक्ती मे लीन रहना एही ति
न का धरम था तव मीरा तिनका सुजस और वडाई सु
न कर दरसन की अभिलाषा वाली होय कर तहां चली
आई स्वामी ने तिसको आवती देखकर और सो लोव
रष का वालक समुज कर ततकाहीं प्रेम से उठकर और
जायकर हृदय से जुडाय लिया फिर वडे सतकार से हा
थ ~~~~ मे हाथ पकड कर और प्रीती से ल्याय कर पर वैठा
य दिया तिसते उपरांत जव स्वामी ने जाना कि इह तो
इस्त्री है तव हृदय मे अत्यंत चिंता मान कर सोच क
रने लगा कि अव लग मैने स्त्री का मुख नहीं देखा था

से
की
ले

विरचावा॥ प्रथम हरिहिं नैवेद लगावा॥ पाछे धूरत दीन
जिमाई॥ पुनि गिरधर कहँ सैन कराई॥ सनमुख सेज्या रुचि
र सजाये॥ बैठिस तहाँ भक्ति सरसाये॥ तब धूरत कहँ ली न
बुलावा॥ ते प्रसन्न मानस जब आवा॥ मीरां रूप जननि नि
ज देखी॥ भयो चकित चित अद्भुत देखी॥ तब कर जोरि जुग
ल बिलखावा॥ बारबार चरनन सिर नावा॥ कहत नम्र अ
नुचित अति मोरा॥ मातु करम मन सेवक तोरा॥ देखि च
रित वे सब असआना॥ लागे बदन प्रसंसन नाना॥ दोहा॥
भक्त प्रभाव बिलोकि अस धूरत दुरमति खोय॥ भयो कुसम क
लम कि रत रुचिर सुमति जुत होय॥ ७॥ टीका॥ तब मीरां का
रूप देखकरके मूर्छा गत को प्रापत होय गया मानो कामदेव
के बाणों ने घायल और व्याकुल करदिया है तब आतुर भया
हुआ मीरां को कहने लगा कि हे भामनी अब तुम आनंद से मे
रे साथ रति विलास अर्थात ~~ ~~ जो है सो करो ऐसे तिस
धूरत की अयोग्य बानी सुनकर मीरां प्रसन्न होयकर कहने
लगी कि हे संत भक्त अब भोजन ~~ ~~ बन गया है सो पायकरके
सुख से विराजो और रात्री को आयकरके आनंद पूर्वक रुची
से भोग विलास जो है सो करो इस प्रकार प्रथम भगवान
को सुंदर नैवेद लगायकर और पीछे तिस धूरत को बड़े स
नमान से जिमायकर तिसके उपरांत गिरधर भगवान को
शयन करायदिया और सनमुख सुंदर सेजा विछायकर
तहाँ भक्ती प्रीती से आप बैठ कर ~~ ~~ फिर तिस धूरत को
बुलाय लेती भई सो जब आनंद पूर्वक तहां आयकर दे
खने लगा तो मीरां तिस को साक्षात माता का रूप देख पड़ी
हृदय में आचर्ज और व्याकुल होय गया कि इह क्या अद्भु
त चरित्र भया है तब तो बड़ी लज्जा से हाथ जोड़कर और
बारबार चरनों पर सीस धरकर विनती करने लगा कि हे माता
मै तेरे प्रभाव को जा ~~ ~~ नानहीं मेरे से महां अपराध होयग
या है अब तूं अपने चरनों का सेवक और बालक जान कर
कृपा करके मेरे को क्षमा कर इस प्रकार इह अद्भुत चरित्र
देखकर ~~ ~~ और सब वैस्न जन जो थे सो मीरां की अ स्तुती
शाला या और बड़ाई करने लगे और धूरत भी भक्त की महिमा
देखकरके हृदय की दुरमती और कपट देभ सब खोय करके

५५९

त चोरे॥ श्रवन न त जडु करुणा निधि मोरे॥ करत विलाप तास अस चंडा॥ भयो स फुटत तुरत ब्रह्मंडा॥ निकसि ते ज हरि मूरति जाई॥ सब कर देखत गयो समाई॥ हाहा करन विप्र तब लागे॥ रुदन करत द्वारावति त्यागे॥ निज पुर आय परम विलमाई॥ रानासन सब कथा सुनाई॥ तेसु नि धुनत सीस पछताना॥ मीरां भक्ति प्रभाव महाना॥ सत्य जानि परिहरि दुरताई॥ भयो सि निरत भक्ति जदुराई॥ अस प्रकार इह चरित सुहावा॥ मै कछु वदन यथा मति गावा॥ दोहा॥ भक्ति महातम ललित इह संसृति मीरां बाई॥ सुजस भरन मं गल करन हृदय हरन दुरताई॥ जे सादिर नर सुनहिं सुम सुखद सुहावन एहु॥ उपजहिं श्रवहिं ल भक्ति जुत गिरधर चरन सनेहु॥२०॥ टीका॥ मीरां कहती है कि हे भक्तज नों ~~के मन हर~~ने वाले भगवान अब कृपा करके मेरे को ना त्या गिये इस प्रकार विनती करती करती का तिस ब्रह्मंड जो कपाल है सो फूट गया और तिस का तेज निकलकर के सब के देखते भगवान की मूरती मे जाय समावतभया इस प्रकार देखकर के सो ब्राह्मण जो राणा ने भेजे हुये थे हाहा कार करते और रोवते हुये द्वारावती को त्याग कर दुःखी म ये हुये अपने नगर मे चले आये और आवते ही राणा जी को जिस प्रकार मीरां का अंत भया सब वृतांत सुना यदिया सो सुणकर के और सीस धुनकर के हृदय मे ब हुत ही पछताया मीरां की भक्ती ~~का~~ प्रभाव सब सत्य जानकर और कपट दुरमती को त्यागकर जदुनाथ भ गवान की भ क्ती प्रीती वाला होय जाता भया ऐसे इह मीरां की भक्ती का सुंदर महातम गायन ~~किया~~ किया गया है और इह के साभी महातम है सुजस और मंगलों के करनेवाला हृदय की दुरमती के हरनेवाला सब सुखों का साधन है जो कोई प्रीतीपूर्वक इसको सुने ~~और~~ गा अ थवा पढेगा सो निश्चय करके कृष्ण भगवान की सुंदर भक्ती को ही प्राप्त ~~होय~~ करेगा और संसार मे सुजस का पात्र होय कर विचरेगा॥२०॥ चौपाई॥ उत मीरां कर जनक सुहावा॥ जैमल भूप विदित जग गावा॥ तहि जब भक्ति प्रभाव अपारा॥ सुन्यो श्रवण मीरां करसो

Margin notes: "प्रेम की उरता से" "को" "ण" "कुछ" "और भक्ति के लाभ" "भक्ति"

रा॥ भयोविरक्त ज्ञान उपजाना॥ एकदिवस मानस हरखा
ना॥ ऊधोभवन बैठ्यो नरराई॥ अधोदेव मूरति सुखदाई॥
अस विचारि इक भवन उतंगा॥ रच्यो नरेस ललित बहुरं
गा॥ तहां देव मूरति हरखाई॥ मंदिर कीन स्थापित राई॥
तासु निरंत्र करन सिवकाई॥ लाग्यो भक्ति प्रीति सरसाई॥
एक दिवस तिन्ह भगवाना॥ किरि विधान संजुत सनमाना॥
ता. रा. विस कल उपकरण प्रवीना॥ हरखगवन निज की ना॥ भवन
तब कछु कथन करन महरानी॥ नृप पैं चली हरख सरसानी॥
पृब सी भवन द्वार जब ते ॥ हू॥ तब देख्यो अदभुत दृग एहू॥
मूरति देव हरन जन पीरा॥ करत पान मुख पान न बीरा॥ महि
ला देखि चरित अस चारू॥ अति बचित्र अदभुत मन ठारू॥
कीन नृप सन कथन सब जाई॥ हरख्यो सुनत श्रवण अस राई॥
दोहा॥ कहिस धन्य तुव धन्य प्रीया आज सकल सुख मूल॥
जहि देखे दृग देव अस करत पान तंबूल॥ ११॥ टीका॥ ऊंहां
मीरां का पिता जैमल नाम करके प्रसिद्ध राजा जो था ति
सने जब मीरां की भक्ती का अपार प्रभाव श्रवण कि
या ततकाल ही हृदय मे ज्ञान उपज आया और वि
रक्त होय गया तब एक दिन सो राजा घर के ऊपर
बैठा हुआ था और नीचे भगवान की मूरती थी हृदय
तो मे विचार जो आय गया तत्काल एक बड़ा सुंदर और ल
ऊंचा नवीन भवन रचायकर तहां भक्तीसनमान से
सो भगवान की मूरती स्थापित कर देई और तिसी भव
न मे रात्रीदिन भक्ती प्रीती से भगवान का पूजन सेवन
जो है सो करता एक दिन भगवान को ■ शयन कराय
कर और सब सेज सेज यथा योग्य स्थान पर राखकर
आनंदपूर्वक अपने घर को चला आया तब महारा
नी जो थी सो कुछ कथन करने के वासते राजा के पा
स चली जब भगवान के भवन के द्वार पर आई तो
क्या अदभुत चरित्र देखती है कि दीनों का भय दूर क
रने वाले भगवान जो हैं तिनकी मूरती मुख मे पानों का
बीड़ा ~~खवखरहे है~~ पान कर रही है अर्थात पान खाय रही है
तब महारानी इस अदभुत चरित्र को देख राजा के कर
पास आयकर सब ■ कथन कर देती भई राजा

सुन करके परँहरष को प्रापत भया और कहने लगा कि हे प्यारी आज तूं जगत मे धन्य हैं और धन्य तेरा जनम है कि जिसने ऐसे तीन लोक के नायक भगवान कृपानिधान को श्रीमुख से पानों का बीड़ा पान करते देखो है इस प्रकार राजा जो है सो तब तें रानी के सहित भगवान की भक्ती सेवकाई में अधिक ही प्रीती और प्रेम वाला होय कर आनन्द भया ॥२२॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती महातमे भाषा टीका यो मीरा बाई चरित वरणने नाम

— — सरगः

सो मेरा व्रत आज भंग होय गया है तब मीरां सुनकर के
मन मे पछतावती हुई स्वामीजी के चरनो पर सीस नायकर
चली जाती भई कृष्ण भगवान का सुमरण करती हुई द्वारि
का मे आय गई तहां भगवान के भवन मे जायकर प्रणाम कि
या फिर दीन बंधू का सुंदर दरसन पायकर और कृतार्थ हो
यकर आनंद से तहां ही निवास करने लगी तब ईहां मीरां
का सुसर राणाजी है तिस के हृदय को भगवानने जो प्रेरा तो
ततकाल तिसको ज्ञान प्रकाश होय गया मीरां की भक्ती
और प्रभाव जो था सो तुरत तिस के हृदय मे आय गया
और मीरां के दरसन की अभिलाषा वाला होयकर ततका
ल वृद्ध वृद्ध चतुर ब्राह्मण तिस के ले आवने के वासते द्वा
रिका मे भेज देता भया तब सो ब्राह्मण राणा की आज्ञा से
द्वारिका मे आय कर मीरां को कहने लगे कि हे भक्ती प्रवीन
मीरे तेरे को तेरे सुसर राणाजीने बडी प्रीती सनमान
से बुलाया है अब तू विलंब को त्याग कर हमारे साथ
सुख पूर्वक अपने घर को चल तब मीरां ने सुन करके सुई
कार नहीं किया मौन होय रही [struck] ब्राह्मणोंने बार बार क
हा परंतू जब नहीं मानती देखी तब ब्राह्मण भी दृढ आस
न लगायकर के बैठ गये और जीवने की आसा छोडकर अ
न जल सब त्याग देतभये इसप्रकार [struck] तिनका हठ
देखकरके मीरां हृदयमे परम कलेश मानकर भगवान
केभवन मे चली आई और हाथ जोडे हूये प्रणाम करके क
हने लगी कि हे दीन बंधू जो आप की आज्ञा पाऊं तो इन
ब्राह्मणों के साथ मे घर को चली जाऊं ऐसे कहिकर फिर
दीन वत [struck] हाथ जोडकर विनती करने लगी कि हे कृपा
सिंधू हे भक्तजनो का भय दूर करने वाले हे सरब चराचर जी
वों करके सेवत किये हूये भगवान हे संत मुनी देवताउं के सु
खदायक हे दीनानाथ हे दीनहितकारी मे तुमारे चरनो का आ
सरा और आधार मानकर ईहां आय बैठी थी अब मेरा अंत
समय भी निकट आया हूआ है हे दीन बंधू तुमारे चरनों को के
से त्याग करके जाऊं हे कृपानिधान तुमने सबरी गनिका
गीध इत्यादकों को अपने चरनो की सरन जो दी है तो मे
री किंकरी की इतनी कौन वारता है मेभी इनहीं चरन कम
लों की भ्रमरी हूं ॥२८॥ चोपाई ॥ अस जीय गुनत भक्त चि

ईरछा भगवान के चरन कमलों की भ्रमरी मीरां

त्यागी॥ जाके पति मोहित तुव देहा॥ सो तो हाड़ चामकर
देहा॥ भूल्यो वृथा कवन गुण लेखा॥ सार असार वि
चार न देखा॥ अहो कीन जस वाम सनेहू॥ तस पति
करहु राम पद नेहू॥ दोहा॥ उपजहिं अविरल भक्ति मय
रुचिर प्रेम संसार॥ तो तुव धन्य प्रयास बिनु भवज
ल तरहु अपार॥१॥ टीका॥ नाभादास जी कहत
हैं कि हे संतो भक्तजनों के कुमुद रूपी मन को विका
सने वाला अर्थात खिलावने वाला भक्ती का सुंदर महा
तम जो कथन करता हूं इसको प्रीती पूर्वक कान देकर
श्रवण करिये इहके स्वामी महातम है कि श्री रघुवीर जी
के चरन कमलों की पवित्र भक्ती के देने वाला सब दुख दो
ष और दुरमती के नाश करने वाला और विषय विकारों
के टारने वाला है कहते हैं कि गंगा और जमना के बीच
मे एक अंतर वेधी मनोहर देश जो है तहां की वड़ी सुंदर
पुन्य भूमी कि जहां संत साध मुनी जन सदैव निवास क
रते हैं और तिसी भूमी मे तुलसी नाम करके कि जिस
को शुकलभी कहते थे वास करता भया जब तिसका
विवाह होय गया तब पिता जो है सो काल के वश हो
य जाता भया और माता भी जगत मे जीवने की आशा
त्याग करके पती के साथ सती होय कर जल मरी॥ त
ब तुलसी जो है सो मन मतिया स्वतंत्र अर्थात अपनी
इच्छा अनुसार जैसे निरंकुश हस्ती होता है तैसें अ
भय होय कर विचरने लगा और पिता का धन पाय कर
मद मत्त होय कर सब संकुच और लाज को
त्याग के अपने सुंदर घर मे वास करने लगा और स्त्री
के प्रेम के वश होय कर रात्रीदिन तिसके साथ ही रमन और
विलास मे लीन रहने लगा तब समय पाय कर के ति
स के घर मे पुत्र जो उत्पन्न भया तो मानो हृदय की
सब अभिलाषा पूरण होय गई एक दिन तिसकी इ
स्त्री अपने माता पिता का घर समीप विचार
कर तुलसी के पूछे बिना ही अपने घर से निकल कर त
हां को चली आई तब पीछे से तुलसी जो घर मे आया
और अपनी प्राण प्यारी को तहां घर मे नहीं पाया जा
न लिया कि माता भवन मे अर्थात अपने माता पिता

के घर मे चली गई है तिसकी विरहे से घर मे कुछ अ
न्न जल खान पान नहीं किया ततकाल पवनके समान
वेगधारकर धावता हूआ अपने सुसराल के घरमे च
ला आया तव स्त्री तिसको देखकर वडे क्रोधसे अने
क प्रकार तिरस्कार करके कहने लगी कि मैं तो ईहां कु
छ कार्जके निमित्त आई थी और घरको अवी चले जाने
वाली हूं तूने छिन भर भी विलेव नहीं किया हे वुद्धी
केहीन मेरे पीछे पीछे हीं धावता चला आया है अव
मेरे को वतावो कि तेरे को ऐसा कौन काम रहा तव तुल
सी कहने लगा कि हे प्यारी मेरे को तेरा वियोग सहारना
वडा कठिन है मैं जव घर मे आया और तेरा दरसन न
हीं पाया तो वे सूना घर मेरे को कानन जोवनहे ति
सके समान भासने लगा तव हे कोमलअंगी मृग
नैनी और पिककेवेनी तेरी वरहे के वश भया हूआ मै
ईहां धावता चला आया है इसप्रकार पती के मुखसे
वचन सुनकर सोभामनी क्रोधसे कहने लगी कि
हे मूढ तैने हिता हित तो कुछ नहीं जाना केवल
विषय करके अंध भया हूआ धावता चला आया है
अहो जड विचार तो कर कि शरीर के कौन से चक
सुख के वासते तैने धीरज और लेख सब त्याग दि
या है और हे पती जिस पर तू मोहित होरहा है सो
तो हाड और चाम की काया है वृथा ही भूला हूआ है
तेरे को सार असार का कुछ विचार नहीं है अहो प्रे
मपती जेसा तैने स्त्री मे सनेह किया है कवी ऐसा
प्रेम और सनेह अचरिल भक्ती के सहित रघुनाथजी
के चरनो मे भी होवे तो तू संसार मे धन्य धन्य होयकर
इस भवरूपी अथाह समुद्र से जतनके विना सहजे ही पा
र होजावे ॥१॥ चौपाई ॥ जव असि ज्ञान वान जीय मास्यो॥
विषयविकार मार मृग त्यास्यो॥ तुलसि इकांत वस्यचि
त होई॥ विषयउपाधि सकल जीय खोई॥ मनहिं करत
तहि दंड प्रणामा॥ कानन चल्यो सुमरि सियरामा॥ भयो
विरक्त जानि जीय जी के॥ वोली वदन वचन मृदुनीके॥

हो ... हो

जेनि जा हो तृषित पति प्यारे॥ चलहु संग मैं नाथ
तुमारे॥ मंद मंद तुलसी तब बरना॥ भामन श्रवन क
थन कछु करना॥ कथा अलाप परत पर जोई॥ ताकर
अवधि आज मनु होई॥ कोकर मात पिता सुत दारा॥ इ
ह मिथ्या बांधव परिवारा॥ तुव प्रसाद सुन हो हितका
री॥ मै अब भयो कृतार्थ ~~नारी~~ प्यारी॥ गुरु सम्मान की
न्यो उद्धारा॥ श्री या मोर हित भलो विचारा॥ जान्यो
आज जनम जग माहीं॥ ~~श्रीयामोर~~ भयो सफल संसय
कछु नाहीं॥ हो हो धन्य धन्य सुखबानी॥ बारबार अस ब
दन बखानी॥ चल्यो वेग कानन पथ लीना॥ देखि दुमन
अस तृय प्रवीना॥ अति संदेह व्यवस अकुलाई॥ रुदन
करत पाछिल तहि धाई॥ तब तुलसी सरजू वर तीरा॥
देखि समूरति सीयरघुवीरा॥ तहां कीन विस्राम नवीना॥
मानस भयो सोच तवलीना॥ को आधार भजहु अब
काहा॥ अस प्रकार चिंतत जियराहा॥ तब सपने त
हि जन कसरूपा॥ काहु वैस्नव भक्त अनूपा॥ लग्यो प्र
बोध करन अस ताहू॥ रामनाम सदृश सुत काहू॥
तारक मंत्र आन जग नाहीं॥ सुर किंनर गंधरव सबा
हीं॥ जास उचारणतें अग खोई॥ मुकत होत संस
य नहीं कोई॥ जप तप यग्य दान व्रत धरमा॥ तीरथ
अटन अनेक हठ करमा॥ सब कर सारभूत जग एहू॥
राम राम मुख रटन सनेहू॥ अस विचार निज मानस
ता~~[illegible]~~ता॥ सीयवर भजहु सकल सुखदाता॥ दोहा॥
जब लग जियन प्रयंत निज रटहु राम सियराम॥ अं
तहु ले हु निज वपुख तजि राम धाम अभिराम॥ २॥
टीका॥ जब इस प्रकार स्त्रीने ज्ञान रूपी बाणमारा
तब कामादिक विषय विकार ~~कमर~~ को मृग जो है सो तत
काल वध करदिया तब तुलसी इकांत और स्वस्थ
चित होय कर विषय उपाधियों को ~~[illegible]~~ चित्त से ला
य कर और तिसको मन में हीं दंडप्रणाम करके र
घुनाथजी को सुमरता हुआ वणको चल परता
भया तब तिसको विरक्त जान कर स्त्री जो है सो कोमल
बानीसे कहने लगी कि हे प्राणप्यारे अब मूझे मत जाओ

तुलसीदास
अथ चरित वरणनं

दोहा॥ भक्तजनन मन कुमद कल ससिसदृश विकसान॥
भक्तिमहातम कथन अव करहुं श्रवण सुखदान॥ श्रीर
घुवीर सरोज पद प्रेम भक्ति प्रदचारू॥ हारन दुरमति दोष
दुख टारन विषय विकारू॥ चौपाई॥ मद्रसुता रवि
सुरसरि सोहा॥ अंतर वेधि देस मन मोहा॥ पुन्य भूमि सब
संसृति गाई॥ सेवत मुनि गण संत सुहाई॥ तुलसी शु
कल जुगल अस नामा॥ तहां निवास करहिं अभिरामा॥
जब तहि भयो दारपदि ग्रेहा॥ तब मृत भयो जनक तजि
देहा॥ जननी जियन आस जग खोई॥ निज पति सन सह
गामनि होई॥ मन मत यथा निरंकुस नागू॥ तिमि सुतंत्र
तुलसी कर भागू॥ पितुधन पाय मत्त मद होई॥ त्रीय जु
त सकुच लाज सब खोई॥ लग्यो निवास करन कल धामा॥
निरत निरंत्र रमन निज भामा॥ अवसर पाय पुत्र उप
जावा॥ जनु निज हृदय मनोरथ पावा॥ एकदिवस स
तों कर प्रीय नारी॥ मातृभवन सामीप विचारी॥ विनु
पूछे तुलसी अभिरामा॥ आई तहां तजत निजधामा॥ पा
छे तुलसि सदन निज माहीं॥ देख्यो आय प्राण प्रीय ना
हीं॥ मातृ भवन गव निजिय जानी॥ कीन न सदन अ
न्न जलपाना॥ मरुत वेग जनु धारत धावा॥ निज ससुरा
ल हरषजुत आवा॥ तृय विलोकि दारुण रिसपागी॥
वदन विविध त्रिस कारन लागी॥ मै इतक कछुक काज व
स आई॥ अवहिं जाहु निज भवन पराई॥ तुव विलंब
कछु सदन न कीना॥ आवा मोहि पाछिल मति हीना॥
ताहा कवन काज अस तोरे॥ सो अव करहु प्रकट कछु मो
रे॥ तव तुलसी अस वदन उचारा॥ तुव वियोग नहिं स
कहुं सहारा॥ मै जव प्रीये सदन निज आवा॥ तुव दरस
न दृग नाहिं न पावा॥ सो अस सून सदन विनु तोरे॥ भास
न लग्यो विपुन सम मोरे॥ तव कोमल अंगी मृगनयनी॥
मै आवा व्याकुल पिकवैनी॥ पति मुख सुनत भाम अस
वानी॥ वोली वदन वचन रिससानी॥ मूढ हिताहित
तुमहुं न जाना॥ विषय अंध निज दशा भुलाना॥ क
वन मदन रुचिक सुख लागी॥ धृति संतोष दीन सब

र॥ चौपाई॥ उदय अरन तोरे मन भाई॥ तुलसी माल ललि
त सुखदाई॥ काहु देहिं संजुत सनमाना॥ लेत सु कर हु
भजन भगवाना॥ तुलसी देखि स्वपन अस जागा॥ प्रा
त हरषि संजुत अनुरागा॥ राम मंत्र तारक संसारा॥ ली
न्यो हृदय भक्ति जुत धारा॥ आवा सरजु तीर हरषावा॥ क
रि सनान पूजन मन भावा॥ कीन ललित दरसन ~~भगवा~~
~~ना~~॥ सीयरामा॥ तव आवा वै स्मव अभिरामा॥ तुलसि मा
ल कर लेत सुहाई॥ तुलसिदास कहे दीन सजाई॥ लेत माल
निसि स्वपन विचारा॥ लग्यो भजन सियराम उदारा॥ संजुत
भक्ति गवन पुनि कीना॥ शिव पुरि आय हरष मन लीना॥
असि सरता तट हनुमत पासा॥ विरचि कुटीर कीन निज
वासा॥ ततपर राम भजन गुण गायन॥ निसिदिन करहिं
श्रवण रामायण॥ यथा लब्ध संतोष विचारी॥ भोजन क
रहिं भक्त व्रत धारी॥ कृपा प्रसाद धनुषधर पानी॥ विरचि
त ललित संसकृत वानी॥ अति वचित्र कल काव्य सुहा
ये॥ तुलसिदास जग विदित वनाये॥ समय एक न सिस्व
पन मझारा॥ राम सरूप ध्यान उर धारा॥ तव भगवान
वदन अस काहा॥ तुलसी मोर भक्त तुव राहा॥ मै प्रसन्न लो
गन हित मानी॥ तुम कहे करहु कथन अस वानी॥ मोर न देस
भक्त वर पाई॥ भाषा करि प्रबंध सुखदाई॥ रामायण कल का
व्य रचावहु॥ उधरहु आपु लोक उधरावहु॥ लघुमति लो
क काल कलि माहीं॥ जानि न सकहिं संसकृत काहीं॥ इहि
मे होहिं लोक हित भारा॥ रामायण कृत रुचिर तुमारा॥ पठ
हिं सुनहिं सादिर नर जोई॥ पावन प्रीति भक्ति रत होई॥ सो मो
रे प्रीय प्राण समाना॥ तिनहि देऊं अभिमत जग नाना॥
तुलसी देखि स्वपन निसि माहीं॥ जान्यो कृत्य कृत्य नि
ज काहीं॥ उठ्यो प्रात जुत भक्ति अभेवा॥ वंदित गणपता
दि सव देवा॥ मंगल मूल मंगलाचरना॥ सादिर प्रथम
भक्ति जुत वरना॥ वहुरि अभ्यास करत दिनराती॥ पूरण
कीन ग्रंथ इहि भाँती॥ ससि इव उदित तास वुध देखी॥
विकसे जन हु कुमद अवसेखी॥ अव लो देस दिसो त्र न
नाना॥ पूजत लोक सकल सनमाना॥ गाय गाय भ
व जलध अगाधू॥ तरे जात जन तुलसि प्रसादू॥
दोहा॥ तदनंतर अदभुत चरित भयो जवन मन हारु॥ सो
सादिर अव करहु कछु कथन वदन निज चारु॥३॥

टीका॥ फिर वे स्वप्न रूप भगवान कहते हैं कि हे तुलसी सूरज के उदय हूये तें तेरे को कोई आय करके सुंदर तुलसी की माला जो है सो देदेवेगा सो परम सुखदायक माला तुम लेकर के भक्ती प्रीती से भगवान का भजन सुमरणी जो है सो करो तब तुलसी ऐसे स्वपन को देखकर जागउठा और प्रातकाल होते हीं बडे हरष और प्रेम से जगत मे तारक मंत्र जो राम नाम है सो भक्ती प्रीती से हृदय मे धारन कर लेता भया तिसतें उपरांत सुंदर सरजू के किनारे पर आय कर बडे आनंद से सनान किया फिर प्रीती पूर्वक नित्य नेम और पूजन करके सीये रघुनाथजी का दरसन जो है सो किया तब इतने मे तहां एक वैस्नव जन हाथ मे तुलसी माला धारन किये हूये आय प्राप्त भया और तुलसी को देखकर सो तुलसी की माला तिसके कंठ मे सजाय कर अपने मारग को चला गया तब तुलसीदास तिस माला को पायकर और रात्री का स्वपन सत्य जानकर श्रीरघुनाथजी के भजन और सुमरनी मे लीन भया हूआ भक्ती प्रीती वाला होयकर बडे हरष से शिवपुरी जो काशी है तिस मे चला आया और असी नामा नदी के किनारे पर हनूमान जी के अस्थान के पास कुटिआ रचाय कर निवास करने लगा रघुनाथ जी के भजन और गुणगण गायन करने मे ततपर रेहता और रात्री दिन सुंदर रामायण की कथा जो होती भक्ती प्रीती से श्रवण करता प्रालब्ध के अनुसार जैसा आय बनता तैसा हीं संतोष से पाय लेता तब समय पाय करके तिस तुलसीदास ने रामचंद्र महाराज की कृपा प्रसाद से बडी सुंदर संसकृत वाणी के काव्य रचाय कर जहां तहां जगत मे प्रसिद्ध कर दिये एक समय रात्री को श्रीरघुनाथ जी का ध्यान जो हृदय मे धारन किया तो दीन बंधू सपने मे प्रगट होयकर कहने लगे कि हे तुलसी तूं मेरा भक्त है मै प्रसन्न होयकर और लोगों का हित विचारकर तेरे को कहता हूं कि तूं मेरी आज्ञा पायकर अब भाषा प्रबंध से रामायण काव्य की रचनाकर तिसतें आप भी उधर और लोगों का उद्धार भी कर क्योंकि कलीकाल मे तुच्छ बुद्धी वाले लोक संसकृत वाणी के जानने को

^सव ^की ^श्रीराम ^न ^सो

^अवतरतानवृक्ष ^श्रीरामचंद्रजी

सामर्थ नहीं है तांते भाषा सुगम वाणी जो है सो रचा वो
इसमै लोगोंका बहुभला होगा और रामायण भाषा कृ
त तुमारी जो सनमान पूर्वक प्रीती भक्ती से पढें सुनेगे सो
मेरे को प्राणों के समान प्यारे होवैंगे और मै तिन का मनवां
छित फल सब पूरण करूंगा इस प्रकार रात्री को स्वपन
देख करके तुलसी अपने आपको धन्य धन्य मानता भया प्रा
त काल होते हीं उठकर सोच सनान आदि सब नित्य क
रम गणपती से लेकर सब देवताओं को वंदना करके सर
व मंगलों का मूल मंगलाचरन जो है सो भक्ती प्रीती पूर्वक व
रणन किया तिस तें उपरांत रात्री दिन यतन और श्रम क
रके रघुनाथ जी की कृपा से संपूर्ण ग्रंथ पूर्ण कर दि
या तब चंद्रमा के समान तिस को उदय भये हूये देख क
र सर्व बुधजन अर्थात बुद्धीमान जो हैं सो कुमदों
वत विकास मां होय जाते भये अर्थात खिड जाते भये अ
वलग देस दिसाओं मे सब लोग तिस अदभुत काव्य
रामायण का बडी प्रीती भक्ती से पूजन सनमान कर र
हे हैं और तिस को श्रद्धा पूर्वक गायन
कर कर तुलसीदास जी के प्रसाद से इस संसार के अ
थाह समुद्र को सहजे हीं तरे जाते हैं अब इस से आगे
एक और बडा अदभुत और मन के हरने वाला चरित्र
जो है सो कथन करता हूं हे संत भक्तो इस को प्रीती
से कान देकर श्रवण करिये॥ २॥ चौपाई॥ तुलसी
दास नियम अस कीना॥ काशी करहिं न सोच प्रवी
ना॥ अति सरिता तट जात सदाहीं॥ करि सौचादि
भवन निज माहीं॥ आयकरहिं निजकृत अनु
रागा॥ श्री रघुवीर चरन मन लागा॥ तहां सोच ज
ल सोच सदाहीं॥ डारत भक्त आम्र द्रुम माहीं॥ त
हि द्रुम वसहिं प्रेत इक भारी॥ करत सुपान सौच नित
वारी॥ तहिं तें अति प्रसन्न मन वानी॥ तुलसिदास क
हे तास वखानी॥ तुव प्रसाद मोहि भक्त महाना॥ अ
व लो रहो मिलत जलदाना॥ इहउ पकार तोर हित
कारे॥ विसरहिं सुहि न जनम सत धारे॥ तांते मै प्रस
न्न अब तोही॥ देहु रुचिर वर मांगहु मोही॥ अस प्रकार

भोजनपाय लेवो मैभी तुमारे संगहीं चलतीहूं ऐसे स्त्री
का वचन सुनकर तुलसी मंदमंद कहने लगा किहेभाम
नी अब कुछ आगे मत कथन करना जहां लग वार्ताआ
लाप अर्थात कहना सुनना है तिसकी मानो आज अवधी
होयगई है किसके बांधव और किसके मातापिता और
किसके स्त्री पुत्र भ्राता हैं इह परिवार तो सबमिथ्या रूपहीं
है हे हितकारनी अब तेरी कृपा प्रसादसे मेरेको सब
भली प्रकार जान पड़ा और मै कृतार्थरूप होय गयाहूं तै
ने मेरे साथ अत्यंत हित और उपकार करके गुरु समा
न उ[struck]द्धार करदियाहै [struck] आजमै धन्य हूं और धन्य
मेरा जनमभी जगत मे सफल भयाहै इसमै कुछ संशय
नहीं इसप्रकार वारवार श्लाघा औरधन्यधन्य कहि
करके तुलसी जोहै सोवनके मार्गको चलपड़ा तव ति
सको ऐसे विरक्त भये देखकर स्त्रीभी व्याकुल होयकर
रुदन करती करती पीछेहीं चलपड़तीभई तव तुलसी
सरजू के किनारेपर आय पहुंचा तहां सीय रघुवीरजी
की मनोहर मूरती का दरसन करके फिर तहांहीं विस्राम करता
भया परंतू हृदय मै सोच और विचारकरताहै किअब मेरेको
मै
कौन आधार होवे औरं किस[struck] ऐसे हृदय मै सोचकर
रहाथा जो तुरतहीं निद्रा आयगई सपने मै क्या देखताहै
कि एककोई वैस्नव भक्त तिसके पितारूप धारनकियेहूये
का
ऐसा प्रबोध करने लगा किहेपुत्र रामनामके समान सं
सार मै और कोई भी तारक मंत्र नहीं है किजिसके उचा
रणतें किंनर गंधर्व और देवता इहस [struck] व दुखदोखों
से छूट कर सुंदर मुक्ती को प्रापत होते हैं जप तप यज्ञ
दान व्रत तीरथों का भ्रमन इत्यादि अनेक धरम कर
म जोहैं सो तिन सबका सारभूत एक राम नाम का सुम
रण और रटन करनाहै तांतै ऐसा विचारकरके हेपुत्र स
रव सुखोंके देने वाला सीय रघुनाथजी का भजन जोहै सो
ई करतेरहो और जब लग जीवो तब लग रामचंद्र भ
को
गवानके चरन कमलों हृदय मे धारकर नित्य तिनकी
भक्ती सिव काई मैहीं लीनरहो अंत शरीर को त्याग
कर तिनके हीं परम धाम को जायकरके प्रापत होजावो॥

मानकर कहनेलगा कि हेभाई तूं कौन है और क्या तेरी
यूनी है ईहां किस कारन ऐसा कलेश सहार रहा हैं जो
मेरे सौच के जल को पायकर तेने हृदय मे बडी तृपती मा
नी है तब प्रेत कहनेलगा कि हे भक्त प्रधान जो मेरा वृता
त सुना चहते हो तो सुनो मै कथन करता हूं कि मेरा पू
र्वला जनम जो था सो ब्रह्मन के घर मे था और विंध देस
के राजा का मे बडा मानी अपरोहित था परंतू मै
सा था कि महा निंदक और ब्रह्मनों का द्वेषी परम लो
भी सत करमों से रहित हृदय मे धरम अधरम का कुछ
विवेक विचार नहीं रखता था और राजा जो दान करता
था सो कुछ ब्रह्मनों को देता और बाकी सब घर मे हीं
रखता था और अतिथी संत साध को आवते देखक
र जल मरता और सेन पात के असे हूये पुरष के समान
बकउठता था अपने हाथ से रुची मानकर कबी किसी
को मूठी भर भी अन्न नहीं देता था मन बचन का
स्न या करके भी किसी के साथ कबी कोई उपकार
नहीं किया एकदिन कोई एक अतिथि पुरष अति कर
के तृषत भया हूआ मेरे द्वारे पर जो आय गया तो तिसको
मैने बहुतहीं निरादर और तृसकार करके जल पिलाया
तिसके अपमान से मैने संसार मे ईहप्रें का शरीर धारन
किया और तिसी प्रभाव से अब लग ईह तुमारे सौच
का जल मेरे को प्रापत होता रहा है ॥४॥ चौपाई॥ तब पूछ्यो
तुलसी अस तासा॥ ईहां आय तुव कवन अजासा॥ प्रे
त बदन अस गिरा प्रकासी॥ अवसर एक मोर नृप कासी॥ आये सत्रिधर दरसन काहीं॥ मो हियधन लोभ विपु
लमन माहीं॥ नृपते लेहुं दान मन भावा॥ अस निज हृद
य गुनत जब आवा॥ मारग डस्यो भुजंग भू परयो॥ तर
फत तुरत प्रान परिहरयो॥ आये लेन धरम जम पायक॥
तब हर किंकर भीम विनायक॥ बोले ईह न नरक अधिकारी॥
तब यम दूतन गिरा उचारी॥ ईह सठ आव लोभ वित ला
गी॥ हर दरसन कछु हृदय न रागी॥ सठ कहे हम सन दे
हु पठा[illegible]ये॥ तब हर किंकर बदन अलाये॥ यद्यपि क
थन सत्य सब तोरा॥ काशि प्रभाव तदपि बरजोरा॥ कर
हिं निवास बहिर अब जाई॥ देउ काल भैरव बपु पाई॥

रामभक्त कर नित सनमाना॥ रहि है करत सौच जलपाना॥
तहि प्रभाव कासी कल आई॥ होई है योग्य मुकत सुखदाई॥
इह प्रसंग सज्जन सब मोरा॥ अब वर मांग जव न रुचि तोरा॥
मै तोहि मन वाछित फल चारू॥ देत ले हु सद गति संसारू॥
सुनि अस प्रेत वचन हरषाये॥ बोले तुलसि मन हि मुसकाये॥ जो वर हृदय देन रुचि तोरे॥ तो परिवार सहित अब मोरे॥ सीये राम दरसन सुखदाता॥ देहु कराय हरन अगाता॥ प्रेत सुनत अस वदन उचारा॥ इह सामथ आगम संसारा॥ भक्त सरूप पै सुनहु उपाये॥ जहि तें राम जनन सखदाये॥ अविर भूत प्रभु होहिं तुमारे॥ दीनानाथ भक्त हितकारे॥ हनुमत भवन निकट सुखदायन॥ पावन कथा होत रामायन॥ तास श्रवण हित जठर सरीरा॥ गलत राज रज जीरण चीरा॥ आवत प्रथम लकट गहि हाथा॥ निवलकाय कंपत सब गाथा॥ पाछिल जात दुखित अति दीना॥ राम सरोज चरन मन लीना॥ साधु भेष धृत लखहि न कोई॥ हनुमत भक्त सरूप अस सोई॥ दोहा॥ कथा श्रवण करि जाहि जव मंद मंद सुखमानि॥ तव पाछे लगि चरन तुव पकरि लेहु द्रुत पानि॥ या॥ टीका॥ तव तुलसीदास तिस को पूछने लगे कि भाई इहां तुम कौन जतन से आये हो प्रेत कहने लगा कि एक समय मेरा राजा जो था सो महादेव जी के दरसन करने के वासते कासीपुरी मे चला आवता भया और मै धन के लोभ से कि राजा से दान लेऊं साथ हीं चल पडा तव मारग मे सरप ने जो डंस किया तो मै तत काल तडफता तडफता मृत्यु को प्रापत भया अर्थात मर गया धरमराज के दूत जो है सो मेरे लेने को आय गये तव तिन को देखकर शिव जी गण कहने लगे कि इस को तुम मत हाथ लगावो इह नरक का अधिकारी नहीं है तव यमराज के दूत कहने लगे कि इह अधम जो है सो इहां केवल धन के लोभ से आया है हृदय मे कुछ शिव जी के दरसन की अभिलाषा वालाा नहीं है तो ते इस जड को हमारे साथ भेज देवो हम यमराज के पास ले जावेंगे ऐसे तिन की वाणी सुनकर शिव जी गण कहने लगे कि हे यम दूतो तुमारा क

थन यद्यपि सब सत्य ही है तद्यपी कासी का प्रभाव जोरा
वर है अब इह पुर के बाहिर जायकर के निवास करेगा और
शरीर मै कालभैरव का दंड पावेगा फिर राम चंद्र जी के भक्त
का सनमान पूर्वक नित्य सौच का जल जो है सो पान कर
तारहेगा तिसके प्रभाव से इह कासी मे मुक्ती योग्य होजावे
गा हे सज्जन इस प्रकार इह मेरा प्रसंग है अब जो तेरे
मन की रुची है सो वर मांग मैं इ मन वांछित फल को पूरी
करके फिर आप सद गती को प्रापत होय जाऊंगा औसे प्रे
त की वाणी सुन कर तुलसीदास जी मुख मे मुसक्याय कर
कहने लगे कि हे भाई जो तेरे हृदय मे मेरे को वर देने की रुची
है तो सरब सुखों के देने वाला परिवार के सहित सीये
रघुनाथ जी का दरसन जो है सो मेरे को कराय देवो तब प्रेत
सुन करके कहता भया कि हे भक्त स्रेष्ट इह वात तो होनी तो बडी
कठिन है परंतू एक उपाय कहता हूं कि जिससे दीन जनों का
उद्धार करने वाले श्री राम चंद्र महाराज तुमारे को प्रतक्ष दर
सन देदेवें सो क्या है कि हनूमान जी के आश्रम के पास सर
व सुखों के देने वाली बडी पवित्र रामायण की कथा होती है
तिस के श्रवण करने के वास्ते वडा वृद्ध शरीर और कुष्टरो
ग करके गला हूआ फटे हूये प्राचीन वस्त्र और हाथ मे
सोटी धारन किये हूये निवल काया और माथा कांपता हू
आ प्रथम ही आवता और सब के पीछे जाता है रघुना
थ जी की भक्ती मे लीन परम दुखी और दीन साधू मे छिपा
रे हूये कोई लख नहीं सकता सो राम चंद्र जी का भ
क्तों मे प्रधान भक्त हनूमान है वे जब कथा श्रवण
करके सहजे सहजे आनंद पूर्वक चल पडेगा तब तुम
पीछे से शीघ्र ही जायकर के तिसके चरन पकड लेना
॥५॥ चौपाई॥ यद्यपि करहिं भक्त हठ नाना॥ तद्यपि तुम न
तजहु पनपाना॥ तव प्रसन्न मन महत कुमारा॥ देखि भक्त
हित रुचिर तुमारा॥ जो कछु करहिं कथन मुखवानी॥ हित
जुत लेहु सत्य सब जानी॥ भक्तराज संकुल गुणधामा॥ हे
हिं तुमहिं अब दंड प्रणामा॥ प्रेत बदन अस गिरा प्रकासी॥
आवा अभय सकुच गत कासी॥ तारक मंत्र लेत हरषा
ना॥ कृपा प्रसाद शंभु भगवाना॥ कौतुक प्रेत वपु षनि
ज खोई॥ हर हर रटत भये हर सोई॥ तब तुलसी अनु
राग बढाये॥ करि सनान पूजन रघुराये॥ आये प्रणम
भवन हनूमाना॥ तहां समाज संत जन नाना॥ देखत

जव प्रेत अलाव॥ तुलसी सुनत हृदय विसमावा॥ कोतु
व कवन यूनि अस काहा॥ इहां कलेश कवन हित साहा॥
मोरे सौच वार अस पाई॥ जो तुव लीन नृपति अधिकाई॥
कहिस प्रेत तुव भक्त उदारा॥ मोर वृतांत सुनहु अव सारा॥
पूरव जनम मोर दुजधामा॥ विंधदेस छितपत अभिरामा॥
मै तां कर अप रोहित मानी॥ पै निंदक दुज द्वेष प्रदानी॥
परम लोभ रत गत सत करमा॥ हृदय ववेक न धरम अध
रमा॥ छितपत रुचिर दान कृत चीने॥ रावहुं सदन दुज
न कछु दीने॥ अतथी संत देखि दृग जोरा॥ संन पात इ
व व कहुं न थोरा॥ निजकर काहु मानि रुचि जूठी॥ दीन
न कवहुं अन्न भरि मूठी॥ करम वचन मन कीन न काहू॥
कछु उपकार प्रीति उत साहू॥ दोहा॥ एक दिवस अति
त्रिषत इक अतथि आव मम द्वार॥ तासु करावा पान मै
वार विविध तिसकार॥ तहि प्रभाव मे प्रेत वपु अस ली
न्यो संसार॥ अव लग रह्यो सु मिलत मोहि सौच सेष तु
व वार॥ ८॥ टीका॥ तुलसी दास जीने ऐसा नियम धा
रण कर्या था कि कासी मै दिसा सौच कवी नहीं करते थे वा
हर कहीं दूर जाय कर दिसा फिरते और सौच करते ~~फेर~~
~~थे फिर अपने आश्रमको चले आवते थे~~ तव सौच कर
नेसे जो ~~जल~~ पीछे (जल) वच रहता था सो तहां एक आम्र
अर्थात आंव के वृक्ष पर ~~...~~ सदैव डार ~~देते थे~~
कर अपने आश्रम को चले आवते और रघुनाथजी
के चरनो मे चित्त को लगाये हूये तहां आश्रम मे अपना
नित्य करम सव करते थे तव एक दिन ~~...~~ सौच कर
के तिस वृक्ष पर जल जो डारा तो तहां एक वडा भारी प्रेत
निवास करता था और तिन के सौच का वाकी वचा हूआ
जल जो तहां पडता था सोई ~~...~~ नित्य पान करता था
तिससे सो प्रसन्न होय कर तुलसी दासजी को कहने ल
गा कि हे भक्त श्रेष्ठ तेरी कृपा तें मै अव लग ~~...~~ वडे आने
से जल पान करता रहा हूं तो ते इह तुमारा उपकार मेरे को
सौ जनम प्रयंत भी विसरने वाला नहीं है इसतें मे तुमा
रे पर अत्यंत प्रसन्न भया हूं अव कृपा कर के मेरे से कुछ
वर मांग लेवो मै देने को सामर्थी हूं इस प्रकार जव
प्रेत ने कथन किया तव तुलसी हृदय मे वडा आचर्ज

काशी ८ अस्सी नाम नदी के किनारे पर

४५७

457

द्वारा शरीरको त्यागकर शिव शिव ररता हुआ शिव का रूप ही
होय गया तव तुलसीदास स्नान आदि नित्य करम और पू
जन करके रघुनाथ जी को सुमरता हुआ प्रथम हनूमान जी के
आ स्थानपर चला आया तहां संत भक्तों का सव समाज जु
डा हुआ था तिसको देखकर भक्ती प्रीतीसे प्रणाम किया फिर
की परम पवित्र रामायण कथा जो होय रही थी तिसको श्रद्धापू
र्वक श्रवण करने लगा तव तहां हनूमानजी का दीनवत व
डा वृद्ध शरीर तुलसीदास ने जौं मै देख पहिचा
लेता भया जव कुछक वेर के पीछे कथा कर को अंत होय गया
और सव लोग भक्ती प्रीतीसे प्रणाम करके अपने अपने आ
श्रमों को जाने लगे तो सव के पीछे सो निवल और वृद्धसे
त कि जैसा तुलसीदास ने श्रवण किया था तैसाही माथा
कांपते और हाथमे सोटी धारन किये हूये सहजे सहजे सु
खपूर्वक चल पड़ता भया तव तुलसी भी पीछे पीछे लाग
चला कुछक दूरीपर जायकर पीछेको त्यागकर ततका
ल सनमुख होते ही चरन पकड़ लिये तव सो वृद्ध देखकर हा
हाहा ऐसा शवद उचारकर कहने लगा कि हे साधू मै दू
षत हूं सव लोग जानते हैं मेरे साथ मत स्पर्श कर तू
तेरे को किसने शिक्षा दई है और किसके भ्रमसे तैने
मेरे को पकड़ लिया है तेरे को किस कपटी ने छल लि
क्या या है अरे साधू छोड़ कोई कुष्टी के साथ भी स्पर्श
करता है तव तुलसी कहने लगा कि हे वृद्ध मेरे
को और कौन छलने वाला है एक तुम हू छलना
चहते हो परंतू मै अव तुमारे चरनो को कवी नहीं
त्यागूंगा तुम तो साक्षात रघुनाथ जी के प्रवीन भक्त
हनुमत नाम करके सव जगतमे प्रसिद्ध हो हे कृपानि
धान हे रघुनाथ जी के प्यारे भक्त अव अपना भेद
क्यों छिपावते हो और दासको निरास करते हो ना
थ इह क्यों कर होय सकता है कि जो मन वचन काया कर
के अपना सेवक हो तिस को त्याग देना हे सीयेरामजी
के प्यारे अव मेरे को अपने चरनो का दास जान कर प्रस
न्न होवो और मेरे मनोर्थ को सफल करो इस प्रकार ज
व तुलसीदास ने विनती करी तव हनूमानजी प्रसन्न
होयकर कहने लगे कि हे तुलसीदास अव कहो

तुमारा कौन काज है जब इस प्रकार पवन के पुत्र अन
कूल देखे तब तुलसीदास चरनो पर सीस धरकर कहने
लगे कि हे दयानधी अब दया कर के इह कहिये जो भ
क्त हितकारी और भक्त उधारी रामचंद्र भगवान का परि
वार के सहित मेरे को कब दरसन होवेगा ऐसे सीय रघुबीर जी के
दरसन के ~~व्याकुल और तृषा~~ महा व्याकुल और प्यासे
तुलसी के नेत्र पाय कर हनूमान जी प्रसन्न होय कर मानो
सरद बादर के समान सुंदर बचनो की बरषा जो है सो करदेते
भये ॥१॥ चौपाई ॥ विजयदसमि कर दिवस सुहाये ॥ चित्रकू
ट दरसन रघुराये ॥ तेरे होहि सहित परिवारा ॥ अस हनुम
त जब बचन उचारा ॥ तुलसिदास कहि दंड प्रनामा ॥ भक्त
सुखद सुमरत सियरामा ॥ ब्रह्मानंद चारि जनु बूडे ॥ निरतन
लगयो प्रेम जुत चूडे ॥ इत हनुमान भक्त रघुराई ॥ भये अंत्र
गत कथा सुनाई ॥ विजय दसमि कर दिवस सुभागे ॥ तुलसि
दास अवसेरन लागे ॥ श्री रघुवीर विमल गुन गाते ॥ आये चि
त्रकूट ~~मदमाते~~ हरषाते ॥ एक दिवस अदभुत अस देखा ॥ नग
र लोग जुत हरष बसेषा ॥ लीला दसम करन कल लागे ॥ निज निज
ज हृदय प्रेम रस पागे ॥ तो जिमि बिवेत के ध्रदस गूढे ॥ पुष्प कवि
मल विमान अरूढे ॥ सीये राम लषमण हनुमाना ॥ अंगद
जुत सुग्रीव सुजाना ॥ रावण भ्रात जाम नल नीला ॥ आन स
कल भृत से बक सीला ॥ तजत गोह आश्रम सुखमानी ॥
चले जात मंजुल रजधानी ॥ अस अनूप रघुवर छवि देखी ॥
कोटि कविन मति लाजत लेखी ॥ कहि न सकत कछु अदभुत
सोभा ॥ तुलसिदास देखत मन लोभा ॥ मोह विवस जीय लख्यो
सुहीला ॥ विरचत नगर लोग इह लीला ॥ यद्यपि हृदय जानि
अनुकरण ॥ तद्यपि राम रूप मन हरण ॥ रह्यो निवसि तु
लसी मन माहीं ॥ छूटत जूटि दृष्टि दृग नाहीं ॥ गयो दूर ज
ब राम विमाना ॥ तुलसिदास मानस अकुलाना ॥ प्रेम विवस
तन दसा बिसारी ॥ सो सरूप रघुवर उर धारी ॥ दोहा ॥ चले
जात मारग विकल मिले भरत सुत आय ॥ धरयो वेस वैस्न
व विमल तुलसि बदन हरषाय ॥ कहि स अपूरब आज
मै चित्रकूट मतिधीर ॥ जो लीला देखी दृगन हृदय हरन
रघुबीर ॥ देखहु तुम हे न जाय कस भक्त वतस हनुमान ॥
तब बोले अस पवन सुत बदन मंद मुसक्यान ॥

४५८

५०१

तुलसी मोहि वसमय विपुल इह लीला भगवान॥ कवहुं
होत ॑सुन्यो जग आतुन मास सुजान॥ ७॥ टीका॥ पवन
पुत्र कहते हैं कि हे तुलसीदास विजय दसमी के दिन चित्रकू
ट मैं तेरे को परिवार के सहित श्री रघुनाथजी का दरसन
होवेगा इस प्रकार हनूमान जी ने जव मुख से उचारण कि
या तव तुलसी दास देइ प्रणाम करके हृदय मैं रघुनाथजी
को सुमर कर मानो ब्रह्मानंद मैं मगन भया हुआ॑ नृत्य करने
लग जाता भया और इहां रामचंद्रजी के भक्त हनूमान तुलसी
दास को सव कथा सुनाय कर ततकाल हीं लुपत होय गये तव वड़
भागी तुलसीदास जो हैं सो विजय दसमी के सुभ दिन की देखने
की अभिलाखा से श्री रघुनाथ जी के निरमल गुण
गण गायन करते हुयी आनंद से चित्रकूट को चले आ
यौ तहां एक दिन ऐसा अदभुत चरित्र देखा कि नगर
के सव लोग मिल कर॑ दसमी की सुंदर लीला जो है
सो करने लगे हैं सो जिस प्रकार रावण को जीत कर और
सुंदर पुष्पक विमान पर आरूढ होय कर अर्थात
चढ कर रघुनाथजी महाराज जानकी लछमण
हनूमान अंगद सुग्रीव वभीषण जामवंत
नल नील इत्यादि और सव सेवकों के सहित गौ
हके आश्रम को त्याग कर अपनी सुंदर राजधानी॑ च
ले जाते हैं तैसे हीं रघुनाथ जी की अनूप छवी
कि जिस की कुछ शोभा कही नहीं जाती और जिस की
उपमा कथन करने को कोटि कवी जनों की वुद्धी भी थ
कत होय करके लज्जा को प्रापत होती है तुलसीदास देख
करके मोहित होय गया और मोह के वश भया हुआ
इहि विचार करता है कि इह नगर के लोगों की रची हुई
लीला है यद्यपि हृदय मै जान लिया कि इह अनुकर्णी
अर्थात नकल है तद्यपि मन के हरने वाला राम सरूप
जो है सो तुलसी के हृदै मै निवास कर गया नेत्रों की
दृष्टी जो जुट रहीं थी सो छूटती नहीं भई इतने मै जव
रघुनाथ जी का विमान दूर चला गया तव तुलसीदा
स मन मै व्याकुल होय जाता भया और प्रेम करके श
रीर॑ सव दशा भी भूल गई रघुनाथजी का सोई सरूप

Margin: ॑तुव ॑आनंदसे ॑विजय ॑को ॑की

देखत करि प्रणाम अनुरागे॥ कथा पुनीत श्रवण करि लागे॥ हनुमत जठिर रूप अति दीना॥ तुलसिदास नैनन निज चीना॥ कथा अंत जब देखि सिधारे॥ निज निज भक्ति प्रेम जुत सारे॥ पाछे संत वृद्ध बल हीना॥ तुलसी यथा श्रवण निज कीना॥ कंपत तथा लुकट गहि पानी॥ गवन्यो मंद मंद सुख मानी॥ तब तुलसी पाछिल तजि दीना॥ सनमुख होत चरन गहि लीना॥ हाहाहा अस जठिर उचारा॥ मै देखत जानत संसारा॥ साधु सपर्श करहु जनि मोरे॥ हीनादीन कवन अस तोरे॥ को कर भ्रम पकर्यो जन मोही॥ वंच्यो कवन कपटि अस तोही॥ तब तुलसी अस विनय उचारा॥ आन कवन मोहि वंचिन हारा॥ तुम हु चहत अब वंचिन मोरे॥ पैन तजहु पद पावन तोरे॥ तुव तो निपुण भक्त सियरामा॥ विदत सकल जग हनुमत नामा॥ अब न दुराहु मरम निज स्वामी॥ कृपा नकेत जनन अनुगामी॥ करम वचन मन सेवक जोई॥ तासु तजन प्रभु उचित न होई॥ होहु प्रसन्न राम सिय प्यारे॥ अस तुलसी जब विनय उचारे॥ हनुमत हरषि वदन तब काहा॥ तुलसी कहो काज तुव काहा॥ जब प्रसन्न मारुति अस जाने॥ तुलसिदास चरणन लपटाने॥ दोहा॥ बोले कब करुणाय तन राम सहित परिवार॥ दृष्टी गोचर होहि मोहि भगवन भक्त उदार॥ सियरघुवर दरसन तृषत विथत तुलसिजन पाय॥ हनुमत बारद सरद जनु वदन वचन बरसाय॥ ६॥ टीका॥ प्रेत कहता है कि हे भक्त यद्यपी सो बहुत हठ भी करेगा तद्यपी तुम चरनो को नहीं छोडना ~~और~~ फिर जब पवनका पुत्र प्रसन्न होयकरके और तुमाराहि हित देखकरके जो कुछ मुखसे कथन करेगा सो निश्चय करके सब सत्य ही जान लेना हे सरवगुणो के धाम भक्तराज अब मेरी तुम को दंडप्रणाम होवे इस प्रकार प्रेत मुखसे उचारण करके फिर आनंदपूर्वक सरीर कुचको त्यागे हुये अभय होय कर कासी मै चला आवता भया तहां सरव दोषों के दूर करने वाले तारक मंत्र को पाय कर ~~और~~ महादेव कै कृपा प्रसाद से कौतुक [illegible]

४५६

459 श्रीः

ता भया कि हे भाई लीला विलास जो होरहाथा सो अब कहां गया तब लोग सुणकर के कहने लगे कि हे संत हमने तो इहां लीला विलास ने जो मे कुछ देखा नहीं है इस प्रकार तिनका कथन सुनकर तुलसीदास हृदय मे हनूमान जी का वचन सुमरण करके कहने लगा कि अहो राम चंद्र भगवान ने मेरे को कुटिल और मलीन दुराचार और दुरमती जान कर अपनी माया कर के मोहित कर दिया जिसते मै भूल गया और मेरे हृदय मे कोन भ्रम छायत होय गया जो मेरे को प्रतक्ष राम चंद्र महाराज लोगों की लीला विलास भासते भये ऐसे कहिकर के व्याकुल भया हुआ बडी दीर्घ स्वर से रोदन करने लगा तब लोगों ने सुनकर तिसको विक्षपत अर्थात वाउलासा जान कर नमस्कार करके तहां से निकाल दिया तब तुलसी अपने आश्रम मै आय कर अपने आपको बहुत निंदरने लगा फिर मोहित और व्याकुल भया हुआ अन्न और जल त्याग करके तिसी चिंता मै सोय गया तब सुपने मै तिसको हनूमान जी आय कर बडी प्रीती से वारवार जिस प्रकार प्रबोध करते हैं सो आगे कथन किया जाता है ॥८॥ चौपाई ॥ धन्य धन्य तुलसी बडभागे ॥ श्री रघुवीर चरन अनुरागे ॥ सुर दुर्लभ दरसन भगवाना ॥ देख्यो जाय दृगन भरि नाना ॥ अब न करहु चिंता जीय भाई ॥ मन वच करम भजहु रघुराई ॥ सिद्ध संत तापस मुनि नाना ॥ देखहिं ज्ञान दृष्टि भगवाना ॥ को समर्थ न देखन हारा ॥ आगम दैव दरसन संसारा ॥ तोरे धन्य भाग जग लेखे ॥ जो प्रतक्ष दृग नैनन देखे ॥ बान सरासन धारी ॥ सुभ्रत वदन बरन घन कारी ॥ वारज विमल नैन अरु न्यारे ॥ भृकुटी कुटिल चाप शुकवारे ॥ दारुम दसन कुंद कलि लाजा ॥ जटा क्रीट कल सीस विराजा ॥ वलकल वसन भेषमुनि सोहा ॥ भाल विसाल तिलक मन मोहा ॥ भुज आजान मान खल मोचन ॥ आयत हृदय हरन जन सोचन ॥ अंग अनंग कोटि छवि हारन ॥ पावन अरुन चरन जलजारन ॥ जान किले

खन सहित भगवाना॥ सुग्रीवादि वाम पद पाना॥ भरद्दित भक्ति प्रेम सरसाये॥ सो आनंद कछु वरनि न जाये॥ सनमुख चरन पादि का धारे॥ भरत सनेह अवधि हितकारे॥ हरष नीर नैनन चुत कीने॥ जुग कर जुत भक्ति मन लीने॥ हनुमत और दृष्टि दृग जोरे॥ पूरित हरष प्रेम न हीं थोरे॥ अग्र भाग लंकेश विभीषण॥ देखन वदन काम मन तीषण॥ अंगद जाम नील नल लोही॥ दीननाथ परिवारत सोही॥ गगन निकर सुर रूढ विमाना॥ वरषत सुमन जै तिरव नाना॥ अस उर धरहु ध्यान रघुराई॥ तुलसी होउ कृतार्थ भाई॥ अस हनु वचन पयूख समाना॥ कीने तुलसिदास जव पाना॥ दोहा॥ भयो अमरवत भक्तिजुत सो ऊ ध्यान रघुराय॥ तुलसी उर धरि मरुत सुत चरन नंम सिर नाय॥ ९॥ टीका॥ हनुमानजी कहते हैं कि हे श्रीरघुवीरजी के चरन कमलों की प्रीतीवाले तुलसीदास तू धन्य है कि जिसने देवताओं को भी दुरलभ भगवान कृपानिधान का दिव्य दरसन आज नेत्र भरकर देखा है अब हृदय मै कुछ चिंता सोच मत करो मन वचन काया करके रघुनाथजी का भजन और सुमरण करो देखो कि सिद्ध साध तपस्वी मुनी ज्ञानी जो हैं सो सब भगवान को ज्ञान दृष्टि से ही देखते हैं प्रतक्ष को देखना होता नहीं है इह संसार मै वहुत कठिन है तेरे जगत मै धन्य भाग्य हैं कि जिसने दीनानाथ प्रतक्ष नेत्र भरकर देखे हैं कैसे भी दीनवंधू हैं कि सुंदर धनुष वाण के धारने वाले वडी शोभा वाला मुख और स्याम मेघवत शरीर की आभा कमलों वत लाली मय विशाल नेत्र कुटिल भृकुटी अर्थात टेढी भवें शुक जो तोता है तिसके समान सुंदर नासिका दाडम और कुंदकली को लज्जा देने वाले दांत सीस पर शोभा देता है जटा का मुकट वलकल जो भुर्जपत्र तिनके धारन किये हूये वस्त्र और मुनियों का भेष मस्तक मै मनोहर तिलक लंबियां भुजा और विशाल हृदय कामदेव की कोटि छवी को लज्जा देने वाले सुंदर अंग कमलों के समान लाली वाले कोमल चरन जानकी और लक्षमणजी के सहित विराजमान सुग्रीव आदि सेवक वडी प्रीती भक्ती से चरनों को मरदन कर रहे हैं सो शोभा कुछ कथन नहीं की जाती और सनमुख चरन पादुका अर्थात खडावां धारन किये हुये

नेत्रों मे हरष नीर भरा हुआ दोनो हाथ जोड़ कर प्रेमकी अवधी भरत जो हैं सो भक्ती मै लीन स्थित हुये हैं और सनमुख भाग मे लेकपती वभीषण कि जिसको रघुनाथजीके मुखारविंद देखनेकी कुछ थोड़ी भी तीन नहीं है और भी सब अंगद जामवंत नलनील इत्यादि सेवकों करके रघुनाथजी परिवारत भये हूये शोभादे तेहैं आकाशमे देवतागण विमानोपर चढे हूये आनंदसे पुष्पोंकी वरषा करते और जै जै शबद उचारते हैं हे तुलसीदास तुम ऐसे रघुनाथजीके ध्यानको हृदयमे धारकर जगतमे धन्य धन्य और कृतार्थ रूप होयजावो इसप्रकार ~~हनूमानके जब अमृतके समान तुलसीदासने पान किये~~ जब तुलसीदासने अमृतके समान हनूमानजीके वचन पान किये तब भक्तीके सहित अमर रूप होयकर और हनूमानजीके चरनोपर वारवार सीस नायकर रघुनाथजीका सूई ध्यान हृदयमे धारन करलेतामया॥

हनूमानकी ओर नेत्रोंकी दृष्टी जोड़ेहुये

९॥ चौपाई॥ अभयलाग विचरन संसारा॥ रामनाम उर राखि अधारा॥ अवसर एक विप्रँ का हू॥ कीउ तव पुष राजरुजताहू॥ निवल कृष्य दारदरत दीना॥ अति दुध्यत मन विकल मलीना॥ मारग लेत विपुल विस्रामा॥ आवा तुलसिदास कलधामा॥ रवि मध्यान गगन तव छावा॥ रामराम असवदन अलावा॥ तुलसिदास कहे लग्यो पुकारन॥ ते सुनि राम शबद भवतारन॥ आये निकसि वैहिर निज गेहा॥ देख्यो गलत कुष्ट दुजदेहा॥ रामभक्त तुलसी रतदाया॥ तासु वदन असवचन अलाया॥ जाउ सनान करहु दुज गंगा॥ इहतुव वपुष राजरुज भंगा॥ ब्रह्म हत्यादि पाप अव छोरे॥ मिटे प्रसाद राम सव तोरे॥ विप्रदेव सरि वेग अनाई॥ भोजन करहु भवन मोहि आई॥ सो दुज सुनत तुलसि असवानी॥ मज्जन चल्यो गंग सुखमानी॥ प्रमुदित जायदेव सरि नीरा॥ ता समगए जव कीन सरीरा॥ ते सुरसरि जहँ किलबिष कारन॥ तापर भक्त वचन दुखहारन॥ उभय प्रसाद विप्रवर काया॥ मानहु आज नवल उपजाया॥ विप्रवि लोकि चकित विसमाता॥ आवा तुलसि भवन हरषाता॥ देखि तुलसि

हृदयमेधारकरकेचलपड़ताभया तव व्याकुलभये हू ये मारगमे जाते जाते पवनपुत्र हनूमानजोहैं सोमिलप ड़तेभये तिनको तुलसीदास पहिचानकर बड़ेहरषसे कह नेलगा किहे भक्तोंकी रक्षाकरनेवाले हनूमानजी आज मैने चित्रकूटमे जो मनके हरनेवाली बड़ीअपूरव रघु नाथजीकी लीला नेत्रभरकर देखीहै सोतो तुमारे भी देखने केयोग्यहै जायकरके क्यों नहीं देखतेहो ऐसेतिसकावचन सुनकर हनूमानजी मुसक्यायकर कहनेलगे कि हे तुलसी मेरेहृदयमे मुखसे बड़ाआचर्ज आवताहै कि इनलीला रघुनाथजी की कबी तुमने इस महीने मे भी होतीसु नीहै॥७॥ चौपाई॥ तुम कहभयो भक्तभ्रम काहू॥ तु लसिवचनसुनि हनुमत ताहू॥ चित्रकूटकहं बहुरि सिधारा॥ सोउतसव लीलादि प्रकारा॥ देख्योभक्तदृगन कछुनाहीं॥ चिंताकुल पूछत सबकाहीं॥ कहतसकलकछु हमहिंनभासा॥ इहांसंत लीलादि विलासा॥ तुलसिसु नत कथन तिनकाना॥ कीनसुमरणि वचन हनुमाना॥ अहोरामभोहि कुटिलमलीना॥ दुरमति दुराचारचित चीना॥ कीन्यो मुहत देवनिजमाया॥ भूल्योहृदय कवन भ्रमछाया॥ जो मोहिरघुवर भवनप्रकासू॥ भास्योलीला लोकविलासू॥ अस कहि धीरज हरअधिकाई॥ ल ग्योकरनरोदन अकुलाई॥ सुनिलोगन विलपतविचा रा॥ दीन्योकरि इसकार निकारा॥ तवतुलसीआश्र मनिजमाहीं॥ आयलग्यो निदरननिजकाहीं॥ मोहित विगत अन्न जल त्यागी॥ भयो निरत निद्रा वड़भागी॥ दोहा॥ तव सुपने तहां मरुतसुत अतसे प्रीतिसरसाय॥ ल गे प्रबोधन वदननिज वारवार हरषाय॥८॥ टीका॥ पवनपुत्र कहने लगे किहे भक्तप्रवीन तेरेको क्याभ्रम उतपन्न भयोहै और तू कैसी वातें करताहै तव तुलदास ऐसे हनुमान जी के मुखसे वचन सुनकर फिरचित्र कूटको चलाजाताभया तहां जायकर जो देखने ल गा तो सोउत सव और लीला तिसको कुछभी देखनहीं पड़ी तव चिंताकरके व्याकुलभया हुआ सबकोपूछे

४६२

461

अब तुलसीदास के मुख से वचन सुनकर ब्रह्मणा ने नेत्रों को मूंद कर और एकाग्रचित्त होयकर तीनवार सीये राम शब्द जो है सो उचारण करता भया ॥२०॥ चौपाई॥ बांह गहित तुलसी तब ल्याये॥ तासु सदन निज हरषबढाये॥ सबकर देखत पंकति माहीं॥ दीन जिमाय पाक तहि काहीं॥ तब सुनि विप्र लोग पुरसारे॥ सकल परस्पर तासु उचारे॥ ब्रह्म हत्यादि पाप जब कीन्यो॥ तासु अधम तुव पंक्ति दीन्यो॥ अब न स्पर्श करब हम तोरा॥ इह तुव पाप कीन नहि थोरा॥ तुलसी कहिस वदन मुसकाई॥ चलहु शाली विस्वेस्वर माई॥ तुव इहि कर श्रीता करिले हैं॥ तृणा न सकल दोष मो हिदे है॥ विप्र वृन्द अस सुनत अलाये॥ हम हु करव प्री ता अस जाये॥ होहि उचित सदेह हमारा॥ अस प्रकार जब जठिर उचारा॥ जो इहि दुज दूषँत कर पाना॥ सुरभी करहि ग्रास मनमाना॥ तो निरलेप पाप गत राहा॥ तुलसि सुनत हरषि अस काहा॥ इह तो वचन सत्य सब तोरा॥ पै अब कथन आन कछु मोरा॥ जब अस धेनु ग्रास करि लेहीं॥ शैलरूप नंदी गणजे हीं॥ मैं तहि कहे भोजन हरषाई॥ सब कर देखत देहु जिमाई॥ तो न तो हि कछु हृदय संदेहू॥ रामप्रसाद सिद्ध दुजएहू॥ लोग सुनत अस मानि हुलासा॥ आये विप्र नाथ प्रभु पासा॥ तुलसी तास विप्र कहं लीने॥ आये राम चरन चित दीने॥ प्रथम ग्रास दुजे नाथ कराबा॥ सुरभी लीन प्रेम जुत पाबा॥ बहुरि पात्र धरि भोजन नीके॥ देत विप्र कर प्रमुदित जी के॥ कहा वृषव हर सनमुख जाई॥ देहु भक्ति जुत तासु जिमाई॥ दोहा॥ आपु सुमरि रघुवर चरन तुलसि वदन सनमान॥ लागे अस तुति करन कहं वृषव राज भगवान॥ जो इह दीन दयानिधी राम सुखद सुख गाय॥ ब्रह्म हतन दुख दोख ते मन्यो मोद जग जाय॥ तो तुव इहि कर करन कहं धरनि शृंग धर भार॥ सब कर देखत करहु अब वृषभ प्रवर आहार॥२२॥ टीका॥ तब तिस ब्रह्मणा को बांह से पकड़ कर तुलसीदास जी ले आये और सब के देखते अपने घर मे पंक्ती के बीच बैठार

ँ आनंदसे

कर भोजन जिमायदिया इसप्रकार तिसको पुरकेलो
ग और ब्रह्मण सब देखकर तुलसीदासको कहने लगे कि
अरे अधम इसतो ब्रह्म हत्यादि पापकरके दूषत है
तुम इसको पंक्तीमे बैठार कर भोजन जिमायदिया अब
हे जठ हम तेरे साथ कबी स्पर्श नहीं करेंगे तेने तो इह बडा
खोर पाप किया है तब तुलसीदास तिनका कथन सुनकरके
कहनेलगे कि भाई अब तुम विप्र सब भगवान के भवन मे च
लकर इस ब्रह्मण भलीप्रकार प्रीता कर लेवो मेरे को सब
वृथा क्यों दोष देते हो तब वृद्ध वृद्ध ब्रह्मण जो थे सो सुने
करके सब कहने लगे कि हम इसकी अवश्य प्रीता करले
वेंगे जो इसके हाथसे गऊ ग्रास कर लेवेगी तो इ
ह दोष और पाप से रहित जाना जावेगा और
हमारे हृदय का संदेह भी सब मिट जावेगा नहीतो इह निश्च
य करके दूषत हीं है ऐसे तिनका वचन सुन करके तुलसी
दास कहनेलगे कि भाई इह तुमारा कथन तो सब सत्य
हीं है परंतू अब मेरा वचन भी सुनो कि जब इसके हा
थसे गो ग्रास कर लेवेगी तब पाषाण रूप नंदी गण जो
है मैं सबके देखते तिसको भोजन जिमाय देऊंगा फिर
तो कुछ संशय नहीं होगा रघुनाथ जी की कृपासे इह ब्रह्मण
शुद्ध और निरदोष समुझा जावेगा इसप्रकार सब लोग
सुनकरके बडे हरषको प्रापत भये हूये विश्वनाथ के भ
वन मे चले आवते भये तब तुलसीदास रघुनाथजी
के चरनोको सुमर कर प्रथम तिस ब्रह्मण के हाथसे
गऊको ग्रास करवाया सो तिसने प्रसन्न होयकर तु
रतहीं खाय लिया तिसतें उपरांत एक पात्र मे भोज
न धरकर और तिस ब्रह्मण के हाथ मे देकर कहा कि
अब सनमुख जायकर पाषाण रूप नंदी भगवान जो
हैं तिनको इह भोजन जिमाय देवो इसप्रकार तिसको
कहिकर और आप तुलसीदास रघुनाथ जी के चरन
कमल हृदय मे धारकर वृषभराज जो नंदी गण हैं
तिनकी अनेक प्रकार अस्तुती कर कर विनती कर
ने लगा कि हे कृपानिधान हे दीनदयाल जो इह ब्रह्मण
राम शब्द के उच्चारण करने से ब्रह्म हत्यादि पाप और

ँ जगतमे

दोषों से न वृत्य है तो है शृंग पर सव पृथ्वीका भार धा
रन करने हारे नंदी भगवान अब सब के देखते तुम इस
ब्रह्मणके दिये हूये भोजनको प्रीती पूर्वक पाय लेवो॥
११॥ चौपाई॥ जब तुलसी अस विनय उचारे॥ तब प्रस
न्न हरगण हुंकारे॥ अद्भुत दिव्य रूप पाषाना॥ भक्तहे
त भोजन रुचि माना॥ अधो वदन देखत समुदाये॥
लीन वृषब वर भोजन पाये॥ निज निज सकल लोग
विसमाने॥ वदन मुखर जै जै ति अलाने॥ विप्र वृंद
पंडित समुदाई॥ तुलसिदास कर अस नुति गाई॥ दुजहि
अदोख दुंदगत जाना॥ धन्य धन्य सब वदन बखाना॥ राम
नाम अस देखि प्रभा ~~[illegible]~~ हू॥ भयो प्रवर वैस्नव
दुजताहू॥ निज कहे कृत्य कृत्य जग जानी॥ राम सरो
ज चरन रतिमानी॥ दोहा॥ सादिर लेत विदाय तब तुल
सि चरन सिरनाय॥ विचरन लाग्यो अभय दुज निज
अभिषृ फल पाय॥ २२॥ टीका॥ जब इसप्रकार तुलसी
दासजीने विनती करी तब प्रसन्न होय करके नंदी
गण जो हैं सो हुंकार शब्द करते भये और बड़े दि
व्य अद्भुत पाषाण रूप जो थे सो भक्त के निमित्त
सीस झुकाय कर सब के देखते बड़ी रुची से भोजन
पायलेते भये इस चरित्र को देखकर संपूर्ण लोग
बड़े आचर्ज को प्रापत हो ~~[illegible]~~ य कर मुखसे
जै जै शब्द उचारन करने लगे ब्रह्मण और पंडित
विद्वान जो थे सो सब तुलसी ^दास^ की नाना प्रशंसा और
बड़ाई कर के धन्य धन्य कहते हूये तिस ब्रह्मणको
दोष और पापों से रहित शुद्धरूप जानते भये इसप्रका
र राम नामका प्रभाव देखकर सो ब्रह्मण एक महा
सृष्ट वैस्नव होय गया और अपने आप को जगत मै
सफल जानकर रघुनाथ जीके चरन कमलों की प्री
ती भक्ती वाला होयकर तुलसी दासजीके चरनो पर
वारवार सीस नावता भया फिर सनमानपूर्वक तिनसे वि
दाय लेकर आनंद मै मगन भया हुआ अभय होयकर
पृथ्वी पर विचरने लगा॥ २२॥ चौपाई॥

चिनवतकाया॥ अति से प्रीति मुख वचन अलाया॥ तीन बार अस विप्र सुजाना॥ रटहु निरंतर बदन सिय रामा॥
दोहा॥ तब तुलसी विप्र मूंदि जुग नैनन॥ तीन बार सिय राम रव रट्यो भक्त सुखदैन॥१०॥ फिर तुलसीदास अभय होयकर और हृदय में रामनाम का आधार [illegible] राखकर संसार में विचरने लगा तब एकसमय कोई ब्रह्मण [illegible] कुष्ट रोग का ग्रस्ता हुआ निबल और कृश्य दारिद्री और दीन भूख करके व्याकुल और मन मलीन मारग मे बहुत विस्राम लेता हुआ तुलसीदासजीके घरमे आय प्रापत होतामया और मध्यान समयमे राम राम उचारण करता हुआ तुलसीदास को पुकारने लगा तब इसप्रकार तिस [illegible] केमुखसे राम शबद सुनकरके तुलसीदास ततकाल बाहिर निकल आये और तिस कुष्ट रोगके ग्रसे हुये ब्रह्मण को देखकर राम भक्त तुलसी दासजी रोम रोम दया केवश होयकर तिसको कहने लगे कि हे ब्रह्मण अब जावो गंगाजीमे आनंद पूर्वक सनान करो इहतुमारा राजरोगजो है सोसब दूर होजावेगा और ब्रह्म हत्यादिं घोर पाप तुमारे श्रीरामचंद्र जीकी कृपा प्रसाद से सब छूटजावेंगे हेब्रह्मण श्री गंगाजीमे सनान करके फिर [illegible] शीघर ईहां हमारे घरमे आयकरके भोजन पावो तब सो ब्रह्मण ऐसे तुलसी दास जी की वाणी सुनकर बडे आनंद से गंगाजीमे सनान करने को चला गया जब तहांजा यकरके देवनदी [illegible] केजलमे प्रवेश किया तब जगत के सब पाप निवारने वाली गंगे और तिसपर सब दोषों के दूर करनेवाला श्रीरामचंद्रजीके भक्तका वचन इन दोनोके प्रसादसे ब्रह्मण की काया मानो आज नवीन हीं उपजआई है इस अदभुत को देखकर ब्रह्मण आचर्ज केवश भया हुआ हरष से तुलसीदास के घरमे चला आया तब राम भक्त तुलसीदास जी तिसकी कंचिनवत कायादेखकर परम प्रीती से कहने लगे कि हे ब्रह्मण अब तुम मुखसे तीन बार सीयराम शबद जो सब दोषों के हरने वाला है निरंतर करके उचारण करो इसप्रकार

जब भीतर की ओर देखा तब कोई धनुषबाणधारी वीर धीर
तुलसी भक्त के रखवारे ठाढे हुये हैं तिनको देखकर चोर स
नमुख नेत्र नहीं जोड़सका ~~भयके~~ हृदय मे त्रास मानकर भाग
चला और कांपता जाता है कि मत कोई पीछे लागा आवता है इ
स प्रकार सो चोर कबी आवता और फिर भागता ऐसे गतागत
करतेको तहां रात ही बतीत होयगई और सूरज निकल आ
या अंतको अपने घर मे चला आया इस प्रकार आव
ते जातेको तिसको तीन दिन बतीत होयगये जब अधम
चौथे दिन फिर आया तब भी तिसको धन के हरने का समय
नहीमिला क्योंकि भक्तों की रक्षा करनेवाले भगवान ~~[illegible]~~
जहां आप रखवारे थे तहां चोर की क्या सामर्थ्य थी जो धन
को हर ले जाता अंतको चोरने अपना बल कुछ चलता न
हीं देखा तो हार करके लज्जित भया हुआ तुलसीदास के
पास आयकर अपना सर्व वृतांत सुनाय देता भया और क
हने लगा कि हे भक्त प्रधान तेरे घर मे जो धनुषबाणधारी
कमलनेत्र और मेघवत शरीर की शोभावाले सिंहवत
पराक्रमी और पीत वस्त्रधारी कोटिकालभी जिनको दे
(के) खकर भय मानता है और भक्तजनो के सुंदर भूषण [illegible]
हैं मै तिनको प्रकट देखने चहता हूं तब तुलसीदास
तिसका कथन सुनकर हृदय मे अत्यंत प्रसन्न होते भये
और तिसको कहने लगे कि हे भाई तैने ऐसे कमलनेत्र
और सुंदरछबीवाले धनुषबाणधारी महावीर धीर मेरे
घर के रखवारे कब देखे हैं ॥२३॥ चौपाई॥ चोर बदन
निज वचन अलावा॥ मै निसि अमुक सदन तुव आ
वा॥ हारन हृदय द्रव्य हि चिमानी॥ सो भट बान सरास
न पानी॥ ठाढे देखि सजग रखवारे॥ त्रासत चल्यो धीर
(हा) उर [illegible]॥ तृतिये दिवस बहुरि जब आवा॥ सोऊ मदन
मोहन छबि छावा॥ जापर थकित भवन सब सोभा॥ देखत
भक्त मोर मन लोभा॥ अब दया करि देहु दिखाई॥ तुलसी
जान लीन रघुराई॥ बोले तासु वचन मृदुबानी॥ तुलसी
तुव धन्य अमानी॥ जास दरस हित कोटि उपाये॥ अहो चोर
तापस रिषि राये॥ करत न अविरभूत प्रभु होहीं॥ संत सिद्ध
न विदत नैन भरि सोहीं॥ देखे अखिल भवनपति रामा॥ तुव ज
अब तुम भयो विगत सब कामा॥ निज उर धारि ध्यान

प्रभु सोई॥ विचरहु अभय भक्त भ्रम खोई॥ चौर सुनत तुलसी सुख्र स वानी॥ निज कहे कृत्य कृत्य जगजानी॥ नाय सीस निज भवन सिधारा॥ राम सरूप लीन उरधारा॥ इत विचार तुलसी जीय कीना॥ अहो महान नीच वित चीना॥ जहि हित हरन चोर संसारे॥ मोरे सदन भये रखवारे॥ दीनानाथ विपुल श्रम लीना॥ मै इह दुष्कृत कस कीना॥ अस विचारि सकुल धनधाम॥ तुलसिदास मान सनिस कामा॥ कीन विभक्त संत जन दीना॥ निरभय आपु राम पद लीना॥ विचरन लग्यो धरनि तल माहीं॥ आन भरोस राम बिनु नाहीं॥ अवसर एक विप्र जन कोई॥ सुंदर जुवा वेस जुत होई॥ दोहा॥ काशी मृत वस भयो दुज सह गामनि चीय तासु॥ तेन चली पावक जरन त जत जियन जग आस॥ २४॥ टीका॥ तब चौर कहने लगा कि मै अमुक रात्री कों तुमारे घर मे आयाथा तहां सो धनुषबाणधारी महा सूरबीर तुमारे रखवारे देखकर तिन के भय से मै धीरज को त्यागे हुये भाग चला और तीसरे दिन जब फिर आया तब भी सोई मदन मोहन किं जिन पर सरव भवनो की शोभा एकत हो रही है नेत्रो मे देखे है से तिन की अनेत छवी और अनेत हीं रूप पर मोहित होय रहा हूं हे भक्त सुष्टु अब कृपा करके सो मनोहर मूरती वाले मेरे को दिखाय देवो इस प्रकार चौर के मुख से वचन सुनकर तुलसी दास हृदय मे जान गये कि सो धनुषबाणधारी जो रघुनाथजी महाराज हीं है ऐसे विचार कर तिस कों कहने लगे कि हे चोर तूं धन्य है और धन्य तेरा जनम है देखो कि जिस भगवान के दरसन के वासते संत सिद्ध तपसी मुनी अनेक यतन और हठ करते हैं ~~तोभी सो भगवान तिन को प्रसन्न नहीं होते हैं~~ सो भगवान तिन को प्रसन्न होय कर कबी दरसन नहीं देते हैं आज तेरे बड़े उदय भाग है कि वे दीनानाथ तैने सनमुख नेत्र भर कर देख लिये और तूं सरब मनोर्थों को पाय कर संसार मे सफल होय गया है तो ते अब हे भक्त अब दीनबंधू का सोई ध्यान हृदय मे धार कर और अभय होय कर जगत मे विचर तेरे को सरब काल मे कल्यान हीं होवेगी ऐसे तुलसीदास जी की वाणी सुन कर सो चौर अपने आप को सफल जान कर और तिन के चरनो पर सीस नाय कर रघुनाथजी का सोई सरूप हृदय मे धारन करके अपने घर को चला जाता भया और इहां तुलसीदास

(margin) "धनके बहुवारे औरनके बीचसे
(margin) औरसबवस्तुनसे
(margin) "न ए

जी हृदयमे विचार करते भये कि अहो इह धन जोहै सो
म होनी चहै दोखो जिसके नमित्त संसार का भयनि
वारण करने वाले तीन लोकके नायक भगवान मेरे
घरमे आय करके रखवारे बने और कृपानिधान
ने बहुत श्रम और कलेश पाया तोते मैने इस दुष्ट को कों
अपना मीत बनाया इस प्रकार विचार करके घरका
संपूर्ण धन जोथा सो संत जनो और अतिथी ब्रह्मणों
को बांट दिया आप निरभय और निसकाम होय कर रघु
नाथ जीके चरनो मे लीन भया हुआ हृदयमे रामनाम का
ही आधार राखे हूये पृथवी तल पर निरसंक विचरने
लगा तब एक समय जुवा अवस्था एक ब्रह्मण काशी
मे जो मृत होय गया तो तिसकी स्त्री जीवने की आशा त्या
गकर पतीके साथ सहगामनी अर्थात सती होवने लगी॥
१४॥ चौपाई॥ देखे मग तुलसी अभिरामा॥ त्रीये जोरि करकी
न प्रणामा॥ लख्यो नमर्म भक्त वर काहू॥ हरषि दीन आ
सिख मुख ताहू॥ पुत्री होहु पती मनभाई॥ सुभ सौभाग्य व
ती सुखदाई॥ अधो वदन त्रीय लगी विचारन॥ मै गवनी
पतिसन वपु जारन॥ अब तुव भाग न संत बनाई॥ तब
बोले बांधव समुदाई॥ विधवा भई नाथ इहकाला॥ तुव
आसिख अब दीन कृपाला॥ सत्य वाक्य कस होहिं तुमा
रा॥ अहो संत हित कर न उदारा॥ अब लोवि प्र वचन
संसारो॥ मिथ्या नाहिंन नाथ निहारो॥ इहकस फ
लदायक प्रभु होना॥ ऊखर धरनि बीज जिमि बोना॥
तुलसी आवत हुतो अनाथे॥ तिनकर कथन सुनत वि
समाये॥ आये बहुरि देवसरि तीरा॥ लेत बसत सित मृतक
सरीरा॥ सादिर करत अछादन तासा॥ बैठि निकट तुलसी
गुण रासा॥ पावन मंत्र वदन सियरामा॥ लागे रटन
भक्त प्रद कामा॥ ललित सरूप राम उर आनी॥ लागे विवि
ध प्रसंसन वानी॥ हे सुर धरनि धेनु दुखहारे॥ हे हर हृदय
भक्त सुखकारे॥ हे प्रभु जलध नील वत काया॥ सदा कर
न जन दीनन दाया॥ हे भुज दंड चंड खल हरने॥ हे अखंड
मंडिन सुर सरने॥ हे गंगादि करन पद पावन॥ सिव ब्रह्मा
दि देव मन भावन॥ हे हरि नेति निगम जग गाये॥ हे प्रभु भ
क्त देव द्रुम छाये॥ हे जग चरन तरन मुनि नारी॥

एकसमय तुलसी करधामा॥ आवा चोर हरन धनकामा॥
भेदन भित्ति करत अगगूढा॥ पूवस्यो भवन भक्त तव मू
ढा॥ देखत दृगन ठाढ रखवारे॥ कमलनैन धनु सायक
धारे॥ सुभ्रत नाग सुंड भुज दंडा॥ वीरधीर जनु प्रवल प्र
चंडा॥ तसकर त्रास व्यवस अकुलाना॥ निकसि वहिर स
ठ चल्यो पलाना॥ करत विचार वहुरि फिरि आवा॥ मोरे हृदय
कवन भ्रम छावा॥ जो अस करि प्रवेशवित भवना॥ कूकैअ
हो भागि कत गवना॥ असविचारि पूरव पथ द्वारा॥ चौर
जाय जव दृगन निहारा॥ सोऊ निखंग धनुष सरधारू॥ ठा
ढो सजग विप्र रखवारू॥ सक्यो न चोर जोर दृग भागा॥
हृदय त्रास जनि पाछिल लागा॥ अस तहि करत गतागत
ताहो॥ गई रयन निकस्यो दिन नाहो॥ कीन्यो गवन अंत
निज गेहा॥ वीते तीन दिवस अस तेहा॥ चतुरथ दिवस व
हुरि सठ आवा॥ तवहूं न समय हरन वित पावा॥ जासु रटत
सव भक्त उवारे॥ सोऊ नकेत तुलसि रखवारे॥ हास्यो चौर
अंत अस देखी॥ निजवल निवल चलत नहिं लेखी॥ विस
मत तुलसिदास पें आवा॥ निज वृतांत सव दीन सुनावा॥
तोरे भवन धनुष सरधारे॥ लोचन जलजवरन घनकारे॥
आकृति सिंह पीठ पट पीता॥ कोटि कृतांत देखि जहि भीता॥
महा भक्त जन भूषण चारू॥ देखन चाहुं ~~कौन~~ मन हारू॥
तुलसि सुनत मानस हरषाने॥ तासु वदन अस वचन अला
ने॥ दोहा॥ तुम देखे कव कमल दृग अस सुंदर छविवार॥ धृ
त कोदंड कर चंड सर सदन मोर रखवार॥ टीका॥ तव एक
समय तुलसीदासके घरमे एक अधम चोर धनके हरनेको
जो आया तो रात्रीके समय सन्ह मार कर घरके भीतर प्र
वेश कर गया तहां क्या देखता है कि कमलोंके समान ने
त्रोंकी शोभा वाले और धनुष वाणधारी हसतीके सुंडवत
जिनकी भुजोंके दंड महाप्रचंड वीरधीर तुलसीदासके र
खवारे ठाढे हुये हैं तव चौर तिनको देखतेहीं भयके वश
व्याकुल होयकर निकल करके वाहिरको भाग चला ~~कौ~~ और फिर
हृदयमे विचार करके ~~फिर~~ लौट आया ~~और~~ मनमे कहता है
कि मेरे को इह कौन भ्रम उतपन्न भया है जो ऐसे धनवाले
घरमे प्रवेश करके वडे अचरजकी वात है जो खाली हाथ
हीं भाग चला हूं ऐसे विचार कर तिसी रसतेसे जाय कर

चौक

८१३

मलों से पवित्र करने ~~[illegible]~~ हारे हो और शिव ब्रह्मादि दे
वताउं के मन को भावते हो वेद भी तुमारे अंत को नहीं पा
वता नेत नेत करके हीं गायन करता है हे भक्तजनों के क
ल्पवृक्ष हे गौतम मुनी की स्त्री अहल्या को तारनेवा
ले हे ग्राह के ग्रसे हुये गज को छुडावनेहारे हे नरसिं
ह रूपधारी हे प्रल्हाद की रक्षा करनेवाले हे द्रोपदी के
सहायक हे कृपारूपी अमृत करके मृतक शरीरों को
~~जीवदान करके जियावनेवाले~~ जीवदान देनेवाले हे दया
के समुद्र मैं तुमारे चरन कमलों का दास अब मुख से व
चन कर चुका हूं ~~हे कृपानिधान~~ इस ~~तुमको है~~ मेरी लज्जा तुमको ही
है अपना भक्तपाल विरद सुमर कर अब इस ब्रह्मण को
~~सजीवन करदेवो~~ उपकार से प्राणदान देकर सजीवन
करदेवो ॥ २४ ॥ चौपाई मोहि किंकर निज चरनन जानी ॥
द्रवहु देव धनुसायक पानी ॥ जन कर वचन सफल प्र
भु करहो ॥ विप्र पत नि जिय शोक निवरहु ॥ जिमि पूर
व मोरे रघुराई ॥ रहे होत तुव सदा सहाई ॥ तिमि अब
देहु सुजस जग मो ही ॥ वंदहु वारवार प्रभु तो ही ॥ अ
स प्रकार अस्तुति मन लीना ॥ इदु जाम जब गयो व
तीना ॥ तब प्रभु भक्त सखद हितकारी ॥ राम चंद्र जन
शोक निवारी ॥ तुरत जिवाय विप्रवर दीना ॥ अद्भुत
चारु चरित प्रभु कीना ॥ राम राम अस उठ्यो उचारी ॥
ते समाज सव दृग न निहारी ॥ वोल्यो इहां कवन
हित आये ॥ भ्रात मीय तव वदन अल्याये ॥ तुव
मृत भयो आज जग नेहू ॥ प्राण दान दायक पि
तु एहू ॥ जो उपकार विदित इन कीना ॥ सो किमि
जाहि जनम शत दीना ॥ विप्र सुनत अस श्रवण प्र
संगा ॥ रोम रोम जनु हरष उमंगा ॥ तुलसि चरन ने
मृत सिर नाये ॥ लाग्यो सुजस विविध मुख गाये ॥ वहु
रि सनान करत कलगंगे ॥ चले सकल मन मोद उमं
गे ॥ तुलसिदास उत आश्रम आये ॥ अस प्रकार क
छु दिवस विहाये ॥ इह प्रभाव तुलसी अभिरामा ॥ छा
यो समग्र नगर पुर ग्रामा ॥ रुचिर प्रसाद भक्ति रघुराई ॥

कीरति अतुल तुलसि जगछाई॥ इहप्रभाव जब सुन्यो दलेसू॥ उतकंठित निज हृदय बसेसू॥ दरसन करहु भक्त वडभागी॥ जोअस राम चरन अनुरागी॥ असविचारिसु चिसेवकताहू॥ पठित प्रीति संजुत उतसाहू॥ सादिरप्रेम भक्ति सरसाये॥ तुलसिदास तब लीन बुलाये॥ सथल सेसकृत भवन सुहावन॥ तहां निकास कीन मनभावन॥ दोहा॥ बैठो सनमुख साह तब करि प्रनाम हरषाय॥ करिस प्रसंसत विविध विधी वदन वचन सुखदाय॥ भक्तराज सामर्थ्य तुव सुन्यो अलौकिक कान॥ मृतक सजीवन विदत जग जानत सकल सुजान॥ अब कछु हम हेस हो मते कलित कटाछ दिखाय॥ निज सेवक करि लेहु जग भक्तप्रवर रघुराय॥ १२॥ टीका॥ फिर तुलसीदास प्रार्थना करते हैं कि हे दीनानाथ मेरे को अपना किंकर जानकर दयाकरो जो मेरा इह वचन जगत मै सफल होवे और आपकी कृपा प्रसाद से इह ब्रह्मण की स्त्री भी शोक से छूट जावे हे भक्तों की पैज राखने वाले भगवान जिसप्रकार मेरी पूरव सहायता करते रहे हो तैसे ही मेरे को अबभी जगत मै सुजस और वडाई देवो मै प्रभू तुमको वारवार वंदना करता हू इसप्रकार तुलसीदास को अस्तुती करते करते जब एक प्रहर वतीत होयगया तब भक्तजनो के हितकारी और भक्त शोकनिवारी भगवान राम चंद्रमहाराज ततकाल ही तिस ब्रह्मण को जीवतकरदेते भये सो राम राम उचारण करता हुआ उठ खडा भया और अपने आसपास सब समाज को देखकर कहने लगा कि ईहो तुम सब किसकारन आये हो तब तिसके बांधव जन सुनकर के कहने लगे - कि हे प्यारे सनेही तू तो मृत्यू के वश होगयाथा अर्थात मरगयाथा इह उपकार की मूरती संत जो सनमुख स्थित हैं इन्होने कृपा और परमहित करके तेरे को जीवदान दियाहै इस महातमा ने जो उपकार किया है सो तो हमारे से सो जनम प्रयंत भी दिया नहीं जावेगा ऐसे तिन का वचन सुनकर ब्रह्मण जो है सो रोमरोम हरष से उमग्या हुआ धायकरके तुलसी दासके चरनों पर गिर पडा फिर दोनो हाथ जोड कर मुख से तुलसी दासजी का धन्यवाद गायन करने लगा तिस ते उपरांत सब लोग श्री गंगा

जीमे सनानकरके तुलसीदासजीकीवडाई करते भये और
धन्यधन्य कहते हुये ~~आनंद~~ आनंदपूर्वक अपने अ
पने घरोंको चले गये और इहां भक्तप्रधान तुलसीदासभी
अपने आस्रम को चले आये इस प्रकार जव कुछ कदिन
वतीत होय गये तव तुलसीदासजीका इहप्रभाव जहांत
हां ग्रामो और नगरोंमे व्यापत हो जाता भया रघुनाथजी
की भक्तीके प्रसादसे तुलसीदासजीका प्रभाव और महांसु
जस जगतमे भलीप्रकार सव फैल गया होती होती इह
महिमा जव दिल्लीके वादसाहने सुनी तव ~~भक्त~~ रघुनाथ
जीके भक्त ~~की~~ के दरसन की अत्यंत अभिलाषावाला हो
यकर और वडी प्रीतीसे अपना दूत भेजकर तुलसीदासको
संनमानसे वुलाय लेता भया और वडे पवित्र अस्थान
मे निवास देकर यथा योग्य सव आदर सतकार किया तिस
ते उपरांत भक्ती प्रीतीसे आप आयकर प्रणाम करके स
नमुख वैठ गया ~~और~~ फिर अनेप्रकार श्लाघा और वडाई
करके हाथ जोडकर कहने लगा कि हे भक्तराज मरे हुये व्राह्मण
को सजीवन करनेकी तुमारी सामर्थ्य और महिमा जो लोगों
मे फैलरही है सो सुणकरके तुमारे दरसनकी लालसावाला
भया हूं अ मैभी कुछ कौतुक और चमतकार देखना चहता हूं
सो कृपा करके मेरेकोभी कुछ अपना प्रभाव दिखावो और
चरनोका सेवक वनाय लेवो ॥१६॥ चौपाई ॥ तव तुल
सी अस वदन उचारे ॥ ~~कि~~ चमतकार कछु नहिन हमारे ॥
केवल राम चरन रति मानी ॥ नटवत आन केलि सव जा
नी ॥ आपन कछु सामर्थ्य न देखी ॥ झटझट रामकला स
व लेखी ॥ साहसुनत दारन रिस पागा ॥ मृतन वदन
अस भाषण लागा ॥ देहु भवन वंधन इहि काहीं ॥ जो
लो निज प्रभाव कछु नाहीं ॥ हम हु दिखाव मुकत जनि
करना ॥ जव अस साह वदन निज वरना ॥ करन तुरंत
मृतन गहिलीना ॥ वंधन भवन भक्त हरि दीना ॥ तव तुलसी
सुमरण सियरामा ॥ लाग्यो करन रोध उत धामा ॥ अग्रगा
मि राघव वर काहीं ॥ वहुरि सुमरतो लग्यो मनमाहीं ॥ हे
हनुमत जगजित मतिमाना ॥ श्रीरघुपति अति रति रत
जीना ॥ हे मारुत सुत भक्त सनेहू ॥ अति अतुलित वल
वाल जते हू ॥ अंजनि पूत दूत रघुवीरा ॥ जनमन हरन

हे जग मांह प्रसत चुतकारी॥ हे वपुसार दूलनरधारी॥
हे प्रहलाद करन रखवारी॥ हे प्रभु द्रुपद सुता दिस हैया॥
हे करुणामृत मृतक जवैया॥ दोहा॥ मै करि चुक्यो कृ
पाय तन वदन वचन निज एहू॥ करहु सजीवन दुज
हिं अब प्रभु जन दीन सनेहु॥ विप्र धरनि सुर सदा सुख
करन जाँ संसार॥ ताते दुज कहे करहु प्रभु प्राणदान
उपकार॥ २४॥ टीका॥ तव इसते मै तुलसीदासजी को देख
कर सो स्त्री हाथ जोड़कर चरनोपर प्रणाम करती भई भक्त
सूर्य तुलसीदास ने कुछ मर्म अर्थात भेद नहीं जाना था ह
रष पूर्वक तिसको आसीस देकर कहने लगे कि हे पुत्री तू
सुंदर सुहागवती और अपने पती को परम प्यारी हो तव
सो स्त्री सुनकर नीचे मुख करके हृदय मे विचार करने लगी
तीभई और कहने लगी कि हे दया की निधी संत अब तुमने मे
रे को सोभागन अर्थात सुहागन वनाय दिया है इतने तिसके
वांधव जन वोल उठे कि हे नाथ इह तो विधवा स्त्री है और तुमने
इसको कृपा करके सौभाग की आसीसा देई है हे हितकारी संत
अब इह तुमारा वाक्य कैसे सत्य होवेगा अवलग संसार
मे व्रह्मण का वचन मिथ्या नहीं देखा था अव इह
कैसे फलदायक होवेगा जैसे कल्लर वाली भूमी मे वीज न
ही उगता इह तैसे ही प्रतीत होता है तिस समय तुलसी
दासजी स्नान करके चले आवते थे तिनका कथन सुन
कर वडे आचर्ज को प्रापत होय गये ततकाल तिनको
साथ लिये हूये श्री गंगाजी के किनारे पर आये और श्वेत
वस्त्र लेकर तिस मरे हूये पुरष के शरीर पर उढायकर
आप तुलसीदास तिसके पास आसन लगायकर वैठ जा
ते भये और परम पवित्र राम नाम मंत्र जो है सो नि
रंतर होय करके मुख से उचारन करने लगे और रामचं
द्रजी का ध्यान हृदय मे धारकर नाना प्रकार अस्तुती
भी करने लगे कहते हैं कि हे गौ व्रह्मण पृथवी और देव
ताओं के दुख कलेश हरने वाले हे दीनो के सहायक हे
भक्त जनो के सुखदायक हे नीले वादर के समान शरी
र की शोभा वाले हे प्रचंड भुजधारी हे असुर संघारी हे
भगवान तुम कैसे हो कि गंगादि नदियों को अपने चरनक

का सुमरण करने लगे कहते हैं कि हे जगत के जीतने वाले हे बुद्धी के धाम हे रघुनाथजी की दृढ भक्ती प्रीती वाले हे पवन के पुत्र हे भक्तजनो के हितकारी हे अतलुत बल वाले हे बालजती हे अंजनी के पूत हे रघुनाथ जी के सुहृद दूत हे दास जनो की पीड़ा हरने वाले हे दीर्घ लांगूर के धारने वाले हे प्रचंड असुरो के वध करने हारे हे श्री रामचंद्रजी के हृदय को आनंद देने वाले हे एकादश रुद्र अवतार धारी हे विपति काल मे सहायता करने वाले और द्रोणाचल परवत को ल्यायकर रण मे मूर्छा भये लछमणजी को प्राणदान देने वाले हे सुजस के सागर महावीरजी अब कृपा करके सोई अपना प्रभाव प्रकट करिये और इस दीन का कलेश दूर करिये और जिस महान बलसे अति प्रचंड बल की निधी रावण का नाश किया अब सोई बल दिखाय कर जन के हृदय को आनंद दीजिये और जिस बल के प्रभाव से लंका मे जाय कर प्रवेश किया और सीता माता का कलेश निवारण करके तिस के हृदय को धीरज दिया और जिस प्रकार बड़ा सूक्षम सुखदाय क रूप धार करके दसकंधर के घर मे आये और तहां अपना अनंत प्रभाव दिखाया अब तिसी चतुराई और सुमती सामर्थ से हे कपीराज मेरे सहायक होवो हे संसार मे भक्तों का भय हरने वाले हे भुजों मे प्रचंड बल के धारने हारे हे रघुनाथजी के संतों मे प्रधान और दृढ सेवक हे जगत मे भक्तजनो को अभय वर के देने वाले अब मेरे को शरणागत जानकर इस बंधनागार के कलेश से निवारण करिये इस प्रकार इह तुलसी दास की विनती जो है सो जगत मे मनवांछित फल के देने वाली और बंधन कष्ट इत्यादि सब कलेशों को दूर करके मानुष्यों को सरब सुखों के देने वाली है ऐसे तुलसीदासजीने जब रघुनाथजी के भक्तशिरोमणी हनुमान जी की करी तब बिजली के प्रभाव वत ततकाल सहायता करने वाले हनूमान जी सुणकर के प्रसन्न होजाते भये और राम भक्त तुलसी दास जी का दुख और कलेश देखकर ततकाल हीं अगनित वानरों की सेना को कि जिनकी कुछ गिनती नहीं थी पुकार लेते भये॥ १७॥ चौपाई॥ अस प्रकार वानर जब आये॥ चले मार

(margin: ^व ... ^का ... ^विंद्रुम ... ^प्रसन्न)

धरमार अलाये॥ जब दलीस पुर कीन पवेसू॥ तवमार
तसुत दीन नदेसू॥ सकुल लोक नगर जुतराई॥ करहु
विदलन पलन अवलाई॥ करि कदर्थ मरदन सवकाहीं॥
देहु प्रमोद तुलसिमन माहीं॥ वानर सुनत वचन हनु
माना॥ प्रविसे इंद्र प्रस्थ पुर नामा॥ करकटाय मुख भ्रकुटि
वढाये॥ प्रसतर धूलि करन गहिधाये॥ द्रुमन उपरि विपुल
दिसराते॥ चले मनहु वारुणि मद माते॥ रदलांगूल मुष्टि
नखसंगा॥ क्रीडन लगे मनहु महिरंगा॥ अति दुरदशा की
न सव काहू॥ हाहाकार शवद सुनि साहू॥ व्याकुल उठ्यो दे
खि विसमावा॥ इहकामयो कवन रिपुआवा॥ भृतन की
न पदिवारत साहू॥ हनन पकरहि वानर जनि काहू॥ तोलो
करकटात करि आये॥ वानर कटक कठिन रिसछाये॥ धाय
धाय धरिमारन लागे॥ विथत नसकहिकितहु भृत भागे॥ ब्रेरि
वहाय जमन जलकाहू॥ हने काहु सनमुख धरि साहू॥ कीन
सकल भृतवत भृत ताहीं॥ तृय जुत पकरि लीन नरनाहीं॥
गहि कच वदन प्रहारत पाना॥ विहसि हसि निरत करावत
नाना॥ मरण प्रयंत भयो तवसाहू॥ आनलोग कीउ तस
वकाहू॥ जो सीयराम शवद असकेही॥ जानि भक्त प्रभु ता
सु न गेहीं॥ सचिव प्रवीन मरम असपाई॥ गुपत साह स
नदीन जिताई॥ रामराम सवकरहु उचारना॥ तौकलेश
सव होहि निवरना॥ दोहा॥ तुव तुलसी अभिमुख रह्यो वेमु
ख भयो वहोरि॥ तो स्वामिन निज प्रजा जुत वपु दुखलीन
नथोरि॥ ते त्रिभुवन धनि रामकर भक्त वचन मन काय॥
तुवकीन्यो अपमान तहिँ वंधनगार पठाय॥ मैसुनि राख्यो
विप्रमुख सदाराम असवान॥ संसृति जिज प्रीय भक्तकर
सहि नसकहिँ अपमान॥ २८॥ टीका॥ इसप्रकार जव वा
नरों के समूह आय गये तव मारो धरो मारो धरो कहते
हुये चले पते भये और जव चलते चलते दिल्ली नगर
मे आय पहुंचे तव पवन के पुत्र हनूमान जीने आज्ञा
ददई कि अव विलंव को त्याग कर दिल्ली पत के सहित स
व नगर के लोगों को भली प्रकार निरादर करके मरदन
करडालो और तुलसीदास को प्रसन्न करके वंधनागार
से छुडायदेवो ऐसे हनूमान जी की आज्ञा पायकर
के वानर जो हैं सो इंद्रप्रस्थ अर्थात दिल्ली नगर मे प्र
वेश करतेभये और मुखसे करकटात शवद करकर

भृकुटी जो भवो है सो चढाय कर पाषाण धूरी और
वृक्ष हाथों मे धारे हुये मानो मद करके मत्त और कोपसे
भरे हुये दांत लांगूर मुष्ट और नखों से मानो रणभूमी
मे युद्ध करने लगजाते भये तब तो सब लोगों की ऐसी
दुरदशा होतीभई कि चारो पासे हाहाकार शबद मचगया
इस अनर्थको देखकर साह व्याकुल और अचरजके वश
भया हुआ कहने लगा कि अहो इहैं क्या भया और कौन
ऐसा प्रबल शत्रु आयगया है इतने मे सब नौकरों चाकरों ने
आयकर साहको घेरा पायकर बीचमे लेलिया मत ऐसा
ना हो कि वानर आयकर अपमान और दुरदशा करदेवैं
ऊहो वानरों का दल जो कोपायमान होय रहा था तत
काल हीं कटकटात शबद करते और कोपसे भरे हुये
साहके ऊपर आय पडे तहो तिसके रक्षक और भृतसे
वकों को पकड पकड कर मारने लगे सो व्याकुल भये
हुये कहीं भाग नहीं सकते हैं तिनमेसे केते तो जमना
के जलमे बहाय दिये और केते साहके सनमुख ही पकड कर
मार दिये जितने सेवक नौकर चाकर थे सो सब ऐसे कर दिये
कि मानो मरे हुये हैं तिसते उपरांत स्त्री के सहित साहको भी
पकड लिया और केसों से पकडकर मुखपर तमाचे मार
ते और हस हस कर नृत्य करावते हैं तब साह जो है सो
मरने प्रयंत होयगया और लोगों को भी परमदुख और क
लेश प्रापत भया तिनमेसे जो [illegible] सीयेराम शबदको
उचारण करता तिसको रघुनाथजी का भक्त जानकर
छोड देते तब साहका मंत्री अर्थात वजीर इस मर्म
को पायकर आयकरके गुपत ही साहको कहने लगा
कि हे नाथ अब एही उचित है कि रामराम शबदको उचा
रण करो ~~तो तुम इस कलेश से छूट जावोगे~~ तो तुमारा
इह दुख और कलेश सब छूट जावेगा और सुखको प्रा
पत होजावोगे देखो कि पहिले तुम तुलसीदासके सन
मुख थे अर्थात अनुसारी थे और अब बेमुख जो हो
यगये तो इसीते प्रजाके सहित शरीर मे परम दुख और
कलेश पाया है सो कैसा भी तुलसीदास है कि तीन लोकके
नायक जो राम चंद्र महाराज हैं तिनका मन वचन काया के दृढ
भक्त है और तुमने तिसका अपमान करके बंदीग्रह मे भेज दि
या है हे प्रजापाल मैंने ब्राह्मणों और विद्वानो के मुख से सुना

दोखदुखपीरा॥ हे विदोप करन लोंगूला॥ हरन प्रचंड दनज अगसूला॥ हे हर उर प्रमोद प्रदरामा॥ हे अवतरण सपत चतुवामा॥ विपति काल कलकरन सहाई॥ मूर्छित देखि समर अहिराई॥ कौतुक कलित द्रोणगिरि ल्याये॥ लीन सुजस जग लखन जयाये॥ सो प्रभाव अव प्रकट करीजै॥ दीनानाथ दीनदुख छीजै॥ कीन्यो लेक दगध वल जासा॥ प्रवल चंड दसवदन विनासा॥ हे सुर दुर नरीन जय करना॥ इहि दिखाहु वल भक्त उवरना॥ जहि प्रभाव करि लंक प्रवेसू॥ विदत मात सिय हस्यो कलेसू॥ धरि सरूप सूक्षम सुखदाये॥ जिमि दस वदन भवन हर आये॥ अव प्रभु तास सुमति चतुराई॥ करहु मोर कपिराज सहाई॥ हे भव मुक्त मुचन दुखभारी॥ हे भुजदंड चंड वलधारी॥ अग्रगन्य सेवक रघुराई॥ संसृति अभय भक्तवरदाई॥ दीन दयाल सरणागत लेखौ॥ हरहु दीनदुख हृदय वसेखौ॥ दोहा॥ इह विनंति भव तुलसि जन अभिमत फलदातार॥ हरन कष्ट वंधन मुकत नरन करन सुख चार॥ अस प्रकार सुमरण कियो अग्रगामि रघुराय॥ जे जग तरत प्रभाववत ततदा सो होत सहाय॥ हनुमत सुनत प्रसन्न जुत राम भक्त दुखहेर॥ ततक्षण अगनित वलिमुखन लीन प्रवल अनिटेर॥ १७॥ टीका॥ तव तुलसीदासजी कहने लगे कि हे प्रजापाल हम चमतकार तो कुछ जानते नहीं हैं केवल रघुनाथजी के चरन कमलों की प्रीती मानी हूई है जगत के और सव खेल विलास जो हैं सो एक नट क्रीड़ावत जानते हैं अपनी सामर्थ कुछ नहीं है घटघट मे सव राम कला हीं व्यापी हूई देख रहे हैं इस प्रकार तुलसीदास का वचन सुनकर दल्लीपत जो है सो परम कोप के वश होयकर अपने नोकर चाकरों को कहने लगा कि जावो इसको अवी वंधनागार अर्थात जहिलखाने मे लैजावो जवलग कुछ अपना प्रभाव और चमतकार ना दिखावे तव लग इसको नहीं छोड़ना इस प्रकार जव साहने आज्ञा देई तव नौकरों ने तुलसीदासजी को ततकाल हीं पकड़ कर वंधन घर मै ले जायकर वंदी कर दिया तहां तिस वंधनागार मै तुलसीदास वंदी होयकर श्रीरघुनाथ जी का सुमरण करने लगे और तिसतें उपरांत फिर " रामचंद्रजी के परम हितकारी भक्त हनूमान जी

"मनमै

वारवार सीयराम सीयराम हीं मुखसे उचारणकरो
औरनांगे पाऊं हाथजोडकर त्राहि त्राहि कहते हूये तुल
सीदासजी के चरनोपर चलकरके सीसधरो और अपना
अपराध क्षमाकरावो इसप्रकार मंत्रीका कथन सुनकर
साहजोहै सो हृदय से द्वेषको त्यागकर ततकाल रामरामसी
यराम ऐसे उचारने लगा तब वानरों ने तिसके मुखसे
रामराम शब्दसुनकर और रामचंद्रजी का भक्तजानक
र तुरतहीं छोडदिया फिर तहांसे छूटाहूआ साह अप
नी पतनी अर्थात स्त्री के सहित व्याकुलभया हूआ नांगे
पाऊं त्राहि त्राहि कहता हूआ तुलसीदासजी के पास आय
कर दंडवत चरनो पर गिर पडा और फिर हाथजोडकर वि
नती करने लगा कि हे रामचंद्रजी के प्रवीन भक्त तुलसीदा
सजी हम कुटिल दुर्मती और दुराचारी महांमंद हैं तुम
साधू सरलसील और सदाउपकारकी नधी हो अब कृपा
करके हमारा अपराध और अनुचित जो है सो क्षमा करि
ये क्योंकि हम अजान और बुद्धी के हीन तुमारे अनंत
प्रभावको कुछ जान नहीं सके हम अधमों ने जैसी अव
ज्ञा करी तैसा हीं फल पायलिया है इस प्रकार साहकी
विनती सुनकर तुलसीदासजी आनंदसे कहनेलगे कि हे
प्रजापाल मैने तो को प्रथमहीं सत्यसत्य कहिदिया
था कि हमारी जगत मे कुछ सामर्थ नहीं है जहां तहां सब
राम प्रभाव हीं व्यापत होयरहा है सो अब तुमने प्रतक्ष दे
खलिया तब साह सुनकरके फिर चरनोपर सीसना
वताभया तुलसीदासजी प्रसन्न होयगये तिसते उपरांत
रामभक्त तुलसीदास ने जायकर हनूमानजी का दरस
न पाया और अपने जनम को सफल जाना फिर भक्ती
प्रीतीं पूजन करके कपीराज जो हैं सो विदाय करदिये तब
रघुनाथजी को सुमरते हूये हनूमानजी सेवूकी वानरों
के सहित अपने आश्रम को चले गये और ईहां तुल
सीदास भी जब विदाय होयकर अपने घरको चलने ल
गे तब साह वारवार चरनोपर सीसनायकर धन
के सहित बहुत खिवकाई करता भया परंतू भक्त
प्रधान ने सुईकार नहीं किया तब साह हाथजो
डकर और अपना अपराध क्षमा करवायकर प्रस
न्न भया हूआ विनती करने लगा कि भक्त सृ अब

मेरेको कृपाकरके कुछ उपदेश करिये किजिसतें मै
संसारमें सफल होयजाऊं ऐसे राजाकावचन सुनकर
दयाकरके पूरित तुलसीदासजी कहनेलगे किहे प्रजा
पाल तुमकोतो ऐसे योग्यहे कि अपने चारमे एक
नवीन बड़ासुंदर श्रीरघुनाथजीका भवन बनवाओ
तहां जोजो अतिथी और संत महातमा आवें तिन सबका
भक्तीप्रीतीसे यथायोग्य ~~[illegible]~~ आदर सतकार करतेरहो इसी
से तुमारी जगतमे सुजसकेसहित कल्यान होवेगी इसप्र
कार तिसको उपसकरके ~~[illegible]~~ हृदयमें रघुनाथजीको
सुमरतेहूये तुलसीदासजी आनंदपूर्वक वृंदावनकोच
लेआवतेभये॥ २०॥ चौपाई॥ तहां आय मानस अनुरागे॥
नाभादास भक्त बड़भागे॥ देखत तुलसिदास हरषाये॥
कीनप्रनाम भक्ति सरसाये॥ तब नाभा निज हृदय बिचारा॥
संतविरक्त विगत ~~[illegible]~~ हंकारा॥ पावन भक्ति प्रीति मन
माहीं॥ कीनप्रनाम तुलसि जनकाहीं॥ अस प्रकार सा
दिर हरषाई॥ करत परस्पर विनय बड़ाई॥ तुलसी देखिल
लित थल काहू॥ करि निवास संजुत उतसाहू॥ हृदयसु
मनि लाग रघुराये॥ साधुसुनत दरसन कहं आये॥ बोले
ईहां भक्त सुखदाये॥ मुरलीधर भगवान सुहाये॥ उन
करअति बचित्र मन भावन॥ करहु संतवर दरसन पावन॥
उठेसुनत तुलसी हरषाये॥ कहां मोर भगवान सुखदाये॥
सादिर लेत संत सब गवने॥ आये जबहिं निकर ~~[illegible]~~ म ^हरि
बने॥ वोल्यो एक संत तिनमाहीं॥ मे प्रभाव तुलसीजन
काहीं॥ करि प्रीता अब लेहु निहारी॥ अस प्रकार नि
जवदन उचारी॥ तुलसिदास तनदे खिअलावा॥ जो
निज इष्टदेव मनभावा॥ पर हरि करहिं उपासन आ
ना॥ सोजगलेतं हाना॥ जिमि प्रमुदा विभचार निक्र
महीं॥ निजवर तजत आन वर रमहीं॥ दोहा॥ चारुच
तुर रघुवीर पद पदम समर तुलसीय॥ तासवचन
सुनि मरम जुत हृदय सुमरि सीय पीय॥ मूरति देखि
गुपाल कल कहा करन जुगजोरि भले विराजेनाथ
^न छव मन मथमथंकरोरि॥ ललित अलोकिक रूप
वर करमुरली धरआज॥ मोहत सुरनर भक्तजन
मन हन स्यामलराज॥ पैतो लोजन तुलसि^ना
^नुव

बृंदावन

थ नेनाथहि माथ॥ जोलोपरि हरि मुरलिधर धरहु नधनु सर हाथ॥२४॥टीका॥ तब तुलसीदास तहां वृंदावनमें आयकर परम भक्त नाभादासजी जोथे तिनको भक्ती प्रीतीसे दंडप्रणाम करते भये तब नाभादासजी भी हृदयमे विचारकर और तुलसीदासजीको अभिमानसे रहित भक्त और संत विरक्त जानकर तैसेही भक्ती प्रीतीसे दंडप्रणाम करते भये इसप्रकार हरष पूर्वक बड़े सनमानसे परस्पर विनय वड़ाई करके फिर तुलसीदासजी बड़ा सुंदर अस्थान देखकर श्रीरघुनाथजीका सुमरण करते हूये तहां निवास करने लगे तब साधसंत सुनकरके जहांतहांसे तुलसीदासजीके दरसनको चले आये ऐसे दरसन मेला करके संत कहने लगे किंभक्त प्रधान इहां जो अत्यंत दिव्य सरूप और भक्तजनोंके हृदयको आनंद देनेवाले मुरलीधर भगवान विराजमान हैं तिनका चलकरके दरसन पावो और अपने आगमनको सफल करो इसप्रकार तिनका कथन सुनकरके तुलसीदास ततकाल उठ खड़े हूये और कहने लगे किसो ऐसे सुखदायक मेरे भगवान कहां हैं मे दीनानाथका अवी चलकरके दरसन करूंगा तब संतजन ततकालही भक्तसृष्ठ को साथ लेकर चलपड़े जब भगवानके भवनके निकट आय गये तब तिनमेसे एक संत कहने लगा कि मे अब तुलसीदासके प्रभाव को प्रीक्षा करके देख लेऊंगा ऐसे कहिकर फिर तुलसीदासकी ओर देखकर कहने लगा किजो कोई अपने इष्टदेवको त्यागकर और किसीकी उपासना करता है सो संसार मे अपजस और हानीकोही प्रापत होता है जैसे विभचारनी स्त्री अपने पतीको त्यागकर और पुरष के साथ रमन करती है तैसेही अपने इष्टको त्यागकर दूसरेकी उपासना करनेवाला विभचारीवत होता है ऐसे तिस संतका वचन सुनकर श्रीरघुनाथजीके चरनकमलोंके भ्रमर परम चतुर तुलसीदास जानकी नाथको हृदयमें सुरकर श्री गोपालजी की मनोहर मूरतीको देखकर दोनो हाथ जोड़करके कहने लगे किहे कोटि कामदेवकी

हुआहै कि रघुनाथजी महाराजकी ऐसी बाण है कि जगत में अपने प्यारे भक्तका अपमान कवी सहार नहीं सकते हैं २९॥ चौपाई॥ यातें राम भक्त हनुमाना॥ आवालेत निकर अनिनाना॥ कीन विविध दुरदसा हमारी॥ अस स्वामिन निज हृदयविचारी॥ जुग कर जोरि वदन सीयरामा॥ वारवार अस रटहुलिलामा॥ पदचर नगन पाद पुनि जोई॥ त्राहि त्राहि अस वदन अलोई॥ तुलसिदास चरनन सिर नावहु॥ नि ज अनुचितसव क्षमा करावहु॥ सुनिअस सचिव कथनव हुवारा॥ राम राम मुख साहउचारा॥ वानी सुनत रामसु खतासा॥ तज्यो जानिजिय रघुवरदासा॥ संजुत पतनि साह अकुलाई॥ पदचर तुलसिदासपें आई॥ परयो दंडवत चरनन आई॥ त्राहि त्राहि अस वदनअलोई॥ दमहु दमहु मोहि जानिअजाना॥ तुलसी भक्त रामभगवाना॥ हमहैं कु टिलदुरमतिदुरचारा॥ साधुसरल तुव चूकनिवारा॥ कुमति कीन जसअनुचित तोरा॥ नाथ तास फल लीन नथोरा॥ तु लसी सुनत कथन अस ताहू॥ वोले पुलकि वचनउतसाहू॥ भाख्यो प्रथम सत्य सव तोही॥ कछु संसृति सामर्थ नमोही॥ सकलप्रभाव रामभगवाना॥ सोअव विदतलीन तुव जाना॥ सुनत साह चरनन सिरनाये॥ कियेप्रसन्न भक्त रघुराये॥ तव तुलसी दरसन हनुमाना॥ पायस फलजीवन निज जाना॥ करि पूजन संजुतअनुरागा॥ कीन विदाय भक्तवरभागा॥ सुमरि राम वानर समुदाई॥ निजनिजगये हरख सरसाई॥ तव तुलसी उर आनंद छाये॥ चलेभवन जव होतविदाये॥ साहनम्र चरनन सिर नाई॥ वित जुत कीन विपुल सिवकाई॥ भक्त सप्रसूई कार नकीना॥ तव दलीस उरहरखि प्रवीना॥ निजअनुचित सव क्षमा कराई॥ विनयवहुरि अस वदन अलो ई॥ मोहि उपदेस कवन प्रभुराहा॥ दयायुक्त तुलसी तव काहा॥ तुवनिजवदन रचत सनमाना॥ सुमरतभवन राम भगवाना॥ आवत अतिथि संत सतकारा॥ करत रहहु हित होहिं तुमारा॥ दोहा॥ असउपदेसत वदन तहि हृदयसुमरि भगवान॥ तुलसी वृंदा विपुन कहे कीन हरखि निज प्यान॥ ३०॥ टीका॥ इसीतें रामचंद्र जीका दूत हनूमान अने कप्रकार कीसेना ले कर के आया और हमारी वहुत दुरदसा कीहै इस वारताको हृदयमें विचार कर हे नाथ अव

त

श्रीभक्तमालसटीक

इह चरित मै तुलसिदास सनमान॥ कीन्यो अलप जथामती कथन श्रवण सुखदान॥ जे सादिर नर भक्तिगुन करहिं रटन रुचि एह॥ उपजहिं सिय रघुवीर पद पदम नवल नित नेह॥ २२ टीका॥ इसप्रकार तुलसी दास के सुंदर वचन सुनकर वतसल भक्त भगवान राधाकृष्ण जो हैं सो ततकालहीं सियेराम रूप होय" और वंसी वेत्र अर्थात मुरली छडी त्यागकर के धनुष बाणको धारन करलेते भये तव इस अदभुत चरित्रको देखकर लोग बडे आचर्ज को प्रापत भये और साधु साधु शवद पुकारने लगे फिर तुलसीदासजी की अनेकप्रकार कीरती और वडाई" वार वार चरनोपर सीसनावने लगे तव तहां एक संतकहने लगा कि कृष्ण प्रमातमा जो हैं सो तो पूर्ण अवतार हैं और राम चंद्र अंसा अवतारी हैं इसप्रकार तिसके मुखसे वचन सुनकर परम व्रतधारी भक्त तुलसीदास प्रेमके वश अतसे प्रसन्नभये हुये नृत्य और गांयन करने लगजाते भये और फिर कहने लगे कि हे संतो आज जगत मै मेरे अहो भाग्य हैं जो ऐसे गऊ ब्रह्मण के रतक और भूमीकॉर उतारनेवाले पूरण अवतार भगवान का मैने दरसन पाया ऐसे तुलसीदासजीकी दृढभक्तीदेखकर संपूर्ण वैस्नव नानाप्रकार सुजस और वडाई करकर धन्य धन्य कहते हुये अपने अपने आश्रमोंको चले गये" इसप्रकार इह तुलसीदासभक्त वडभागी केवल लोगों के उद्धारने के वासते पृथवीतलपर मानो दूसरे वालमीकी अवतार धारकर आये हुये हैं पूरव जनम मै रामचंद्रजी के चरित्र गायगाय कर त्रिपती को प्रापत नहीं भये थे ताते अव तुलसीदास का शरीर धारकर और सुंदर भाषा प्रवंध रचायकर फिर भक्तीप्रीतीसे गाय गायकर" जगत मै तृपतीको प्रापतभये हैं इसते तुलसीदासके समान और दूसरा कोई मनवचन काया करके भगवान का प्यारा भक्त नाहे ना भया न होवेगा इह तुलसीदासजी

संसार मे धन्य है मेरी इनको वारवार वंदना होवे और इन सुख सुजस और सुमती के देनेवाले साधा सहाय करकर मेरे पर प्रसन्न रहैं ~~नाभादासजी कहते~~ है कि संत भक्तो इन तुलसीदासजी की परम पवित्र और मनोहर गाथा जो है सो ईने तुच्छ मती के अनुसार मैने सनमानपूर्वक आपके आगे गायन कर दई है इन कैसी भी गाथा है कि जो कोई इस प्रीती को और श्रद्धापूर्वक सुनेगा अथवा गायन करेगा तिसको सियरघुवीर जी के चरनकमलों मे नित्य नवीन हीं सनेह उपजे ~~गा~~गा और भगवान की भक्ती प्रीती वाला होय कर जगत मै सुंदर सजस का पात्र हो जावेगा इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महात्मे भाषा टीकायां तुलसीदास चरित वरननं नाम सरगः ॥

४९२

472

को

छवी लज्जादेनेवाले सुर नर मुनी और भक्तजनो के मनको मोहित करनेहारे घनस्याम आज अलौकिक रूपके सहित हाथमे मुरली धारन किये हूये अत्यंत शोभासे विराजे हूये हो तद्यपि हे नाथ इह तुलसी तुमारा दास तवलग चरनोपर माथा नहीं नायेगा कि जवलग सुंदर मुरली को त्याग कर हाथमे सुंदर धनुष वाण धारन नहीं करोगे ॥२२॥ चौपाई॥ तुलसिदास अस वचन सुहाये॥ वतसल भक्त सुनत सुखदाये॥ राधा कृष्ण भये सिय रामा॥ परि हरि वंसि वेनु अभिरामा॥ धनुषवाण करधारि सुहाये॥ लोक विलोकि चरित विसमाये॥ निज निज हृदय सकल अनुरागे॥ साधु साधु मुख भाषण लागे॥ कीरति विमल तुलसि जन गावहीं॥ वार वार चरनन सिर नावहीं॥ एक संत तव उचारा॥ कृष्ण देव पूरण अवतारा॥ राम चंद्र अंसा अवतारी॥ सुनि अस तुलसि भक्त व्रतधारी॥ अति प्रसन्न मानस अनुरागे॥ गायन नृत्य करन कललागे॥ वहुरि वदन अस वचन अलाये॥ अहो भाग्य जग मोर सुहाये॥ जो अस प्रभु पूरण अवतारा॥ धरनि धेनु सुर ब्राम्हनि वारा॥ सोभित करन भक्त भव दाया॥ धन्य भाग जन दरसन पाया॥ अस दृढ भक्ति तुलसि व्रत धारी॥ वैस्नव गण निज हृदय विचारी॥ विविध प्रसंसि विमल गुण गाते॥ निज निज चले भक्ति मद माते॥ अस इह तुलसि भक्त वडभागी॥ केवल लोक उधारन लागी॥ वालमीकि जनु आन उदारा॥ महित ललीन रुचिर अवतारा॥ राम चरित पूरव सुख गाये॥ वालमीकि कछु तृपति न पाये॥ तहिं तें अव तुलसी वपुधारी॥ करि प्रवंध भाषा सुखकारी॥ गाय गाय त्रिपती जग लीना॥ सो निज सफल मनोरथ कीना॥ यातें तहि सदृश जग आना॥ मन वच करम भक्त भगवाना॥ ह्वैहिं न भयो न होवन हारा॥ धन्य धन्य तुलसी संसारा॥ वेद हुं तासु युक्त करदोई॥ मोपें करहिं कृपा निज सोई॥ सदा रहैं अनकूल सुहाये॥ संसृति सुजस सुमति सुखदाये॥ दोहा॥ अस प्रकार

बादसाह के घर मे पहुंचाय देताथा अर्थात रैयत से मामला
लेकर बादसाह के खजाने मे दाखल कर देताथा तिस से जो
कुछ पीछे बच रहता सो अतिथी और दीन जनो को बां
ट देताथा एक समय शकर जो खंड है इत्यादि मिष्टा
न लेकर के बड़ी भक्ती और श्रद्धा से अपने गुरूजी के
पास भेज देता भया और मन मे कहने लगा कि इस मिष्टा
न के पूए जो पूडे हैं सो बनाय कर और भगवान को
नैवेद लगाय कर पीछे आनंद पूर्वक सब संत जन पाय
लेवेंगे तब तिसका भेजा हुआ सो मिष्टान गुरुजी के पा
स रात्री के समय आया तिसको देखकर अपने शिष्य को
कहने लगे कि इसके प्रातकाल माल पूए रचाय कर
और प्रथम भगवान को नैवेद लगाय कर फिर सब संतो
को बांट देवो ऐसे कहिकर गुरुजी सुखपूर्वक सोय गये
तब मदन मोहन भगवान जो हैं तिनके शिष्य को स्वपने मे
कहने लगे कि इस मिष्टान के अबही पूडे रचाय कर और
मेरे को नैवेद लगाय कर फिर संत भक्तों को बांट देवो इस
प्रकार भगवान का कथन सुनकर शिष्य स्वपन
जानकर कुछ हृदय मे नहीं राखा तब भगवान फिर वारंवार
जो कहने लगे तो शिष्य ततकाल उठकर और प्रीती स
न्मान से पूडे रचायकर प्रथम भगवान को नैवेद लगाय
करके फिर सब संतो को जिमाय कर और आप भी पायकर
अपने अपने जायकर के सोय रहे तिसते उपरांत
एक दिन सूरदास ने ऐसा पद रचकर के गायन किया
कि संतो का चरन न त्यागे अर्थात जोउ सीस पर धार
कर इस संसार के अथाह समुद्र को तर जाऊंगा ॥१॥
चौपाई॥ इह पद सुनत संत इक आवा॥ प्रीती कर न
भक्त हरषावा॥ तहि अवसर निज गुरुवर द्वारा॥
सूरदास थिर निरत विचारा॥ साधु कहि स निज बच
न सुहावन॥ मैं तुव गुरु वर दरसन पावन॥ जो तुम्ह
इतहिं पद गाना॥ अभय जाउ अस सूरव खाना॥
चल्यो सो हृदय कपट सरसाता॥ लखन प्रभाव सूर गु
रा जाता॥ गुरु पे आय हरषि अनुरागा कहि प्रनाम अ
स भाषन लागा॥ सूरदास प्रभु कह्यो तुमारा॥

सुनत वचन गुरु देव उदारा॥ बोलि लीन सादिर हरषाई॥
साधु ज्ञाण पद सीस सुहाई॥ धारि आय ततछण गुरु
पासा॥ सूर भक्त निज हृदय हुलासा॥ गुरुहिं नम्र मु
ख वचन बखाना॥ आज प्रसाद तोर भगवाना॥ निज
मन अर्थ सिद्ध सब देख्यो॥ गायन ललित जवन पद
लेख्यो॥ थोरेहिं काल भयो फुर सोई॥ दीन नाथ करुणा
तुव होई॥ साधु देखि मानस हरषावा॥ बार बार चरनन
सिर नावा॥ निज अनुचित सब छिमा कराई॥ गयो भवन
तब होत बिदाई॥ ~~दोहा॥ समय एकतेव सूर कर सदन प्र~~
~~व्य संभार॥ राख्यो रहा दलीस कर साधु विरक्ता के काम~~॥२॥
टीका॥ तब तिस पदको सुण करके एक संत सूर भक्त
की परीक्षा करने के लिये हरषसेतहो चला आया तिस समय
सूरदास गुरु जी के द्वारे मे स्थित भये हुये कुछ विचारकर
रहे थे ~~तिन~~ सो संत तिनको कहने लगा कि मै तुमारे गु
रु जी के दरसन को भीतर जाता हूं इह मेरा पदत्राण जो
जोड़ा है सो तुम देखते रहना ईहां तुमारे पास छोड़ जाता हूं
तब सूरदास प्रसन्न होयकर कहने लगे कि हे संत जावो
कछु चिंता नहीं है ऐसे सुनकर सो संत हृदय मे कपट रा
खकर सूरदास का प्रभाव देखने के वास्ते आनंद पूर्वक
गुरु जी के पास चला आया और प्रणाम करके कहने लगा
कि हे महाराज तुमारे सूरदास कहां है तब सुन करके गुरु
जी ततकाल बुलाय लेते भये सूरदास सो साधु के चरनो
का जोड़ा सीस पर धारकर बड़े आनंद से तुरत गुरु जी के पा
स चले आये और हाथ जोड़ कर नम्र वाणी से प्रार्थना कर
ने लगे कि हे भगवन आज तुमारी कृपा के प्रसाद से मेरे म
न का मनोर्थ सिद्ध होय गया है क्योंकि जो पद मैने रचकर
के गायन किया था कि संतो की चरन धारनी के प्रसाद
से मै संसार रूपी समुद्र को तर जाऊंगा सो नाथ तुमारी
अनुग्रह से आज थोड़े हीं काल मे सफल होय गया है इस
~~स्सै~~ प्रकार सूरदास की वाणी सुनकर और भक्ती का
प्रभाव देखकर सो संत हृदय मे परम हरष मान कर सूर
भक्त के चरनों पर बार बार सीस नावता भया फिर अपना
अनुचित छिमा कराय कर और विदाय होकर अपने मा

सब

रग को चला गया॥ ~~तब एक समय दिल्लीपत के~~ ॥२॥
दोहा॥ समय एक तब सूर कर सदन द्रव्य संभार॥ राख्यो
रहा दिल्लीसकर साधु विरक्त विचार॥ चौपाई॥ सो दु
रमित्त समय चलपाई॥ संतन कहं सब दीन खवाई॥
इ तदिल्लीस सूत दीन पठोई॥ लावहु जाय वेग धन सोई॥
सूत आय अस वदन उचारा॥ सो वित वेग देहु अब सा
रा॥ सूर सुनत चिंतत गृह जाई॥ अवनि खटक बहु
लीन मंगाई॥ प्रस्तर पूरित मुद्रित कीन्यो॥ अस प्रकार
पत्रिक लिखि दीन्यो॥ रहा इमत धन साह तुमारा॥ मै दु
र्भित्त इत समय विचारा॥ संतन कहं सब दीन खवाये॥
अब प्रस्तर खट पूरि पठाये॥ आपु त्रास वस गत उत ता
हू॥ भागि चल्यो वन कानन काहू॥ अस प्रकार जब सू
त जन आये॥ खट प्रस्तर पूरित समुदाये॥ साह पत्र जु
त दृगन निहारी॥ कहिस वदन अस वचन उचारी॥ जो
वित संतन कहं सब दीना॥ तो कत भक्त गवन बन कीना॥
वृथा त्रास मान सहि जमाना॥ तब तोडरमल दुष्ट दिवा
ना॥ करि अनीति दिल्लीस सिखावा॥ सूरभक्त हरि लीन
मंगावा॥ दीन्यो कारागार पठाई॥ गवने सूरभक्त हरषाई॥
तहां भक्ति संजुत अनुरागे॥ गुणगण कथन करन प्रभु
लागे॥ पावन भजन विमल पद नीके॥ लगे विरचन भ
क्त प्रीय जी के॥ तब जन मन मोहन निसि माहीं॥ दीन
स्वपन दिल्लीपत काहीं॥ जो तुव मोर भक्त व्रतधारू॥ दी
न पठाय बंधनागारू॥ अब जो इ उदय अरुण तुव साहू॥
बंधन मुकत कीन नहिं ताहू॥ तो दुरदसा होहि तुव भारी॥
अस प्रकार निसि स्वपन निहारी॥ व्याकुल जाय प्रात सन
माना॥ करि करि विनय वदन निज नाना॥ पुनि अनुचि
त सब क्षमा कराये॥ करि प्रणाम तब कीन विदाये॥ सु
मरत कृष्ण जनन सुखदाये॥ भक्त सूर वृंदावन आये॥
कृष्ण पुनीत गीत पद चारू॥ विरचत अनक भक्त मन
हारू॥ करहिं गेन जब सरस बनाई॥ सुनहिं दिसो ज
लोग समुदाई॥ उह प्रभाव संसृति वित्ताता॥ ललित
उक्त सुर नर सुखदाता॥ दोहा॥ भक्त सिरोमणि सूर अ
स विदत सकल संसार॥ वृंदावन बसि भक्तिजुत सुमरत

अथ सूर चरित

दोहा॥ मदन मोहन कर पुत्र इक विदत सूर जहि नाम॥ कृस्न भजन पर भक्ति रत भक्त सूभ गुण धाम॥ चौपाई॥ सो दिल्ली पत कर अधिकारी॥ राज काज तत पर व्रतधारी॥ सन मुख साह तास सनमाना॥ विविध प्रकार लोग सब जाना॥ जहं लग प्रजा तास अनुसारी॥ अति आनंद जुत सकल सुखारी॥ तहितें लेत रुचिर कर जोई॥ देत को ष स्वामिन निज सोई॥ बचहिं शेष कछु संतन काहीं॥ करहिं विभगत भक्ति मन माहीं॥ समय एक निज हृदय हुलासा॥ सूर भक्त निज गुरु वर पासा॥ थार करा दि मिष्टान सुहावा॥ दीन्यो संजुत भक्ति पठावा॥ पूर्व विरचि नैवेद लगाई॥ संत समूह लेहिं सुख पाई॥ सो गुरु पै नि सि अवसर आवा॥ स्वामि वदन निज वचन अलावा॥ इ हि कर प्रात पूर्व विरचाई॥ हरि हिं प्रथम नैवेद लगाई॥ करहु विभगत संत जन काहीं॥ अस कहि भये सुपत नि सि माहीं॥ मोहन मदन देव भगवाना॥ तब तहि शिष कहे स्वपन बखाना॥ इहि कर अब हिं पूर्व विरचाई॥ मो हि देहो नैवेद लगाई॥ स्वपन जानि शिष हृदय नराखा॥ बहुरि बहुरि भगवन मुख भाखा॥ तब शिष उठ्यो पूर्व वि रचाने॥ प्रभु कहे सु चि नैवेद लगाने॥ सब कहे देत आ पु पुनि पाये॥ भये सैन रत निज निज जाये॥ तब बासर इक सूरजन अस पद विरचि अलाय॥ संत ज्ञान पद सीस धर भवजल तरहु अपाय॥ १॥ टीका॥ कहते हैं कि मदन मोहन का पुत्र एक सूरदास नाम करके प्रसिद्ध कृस्न भगवान का भक्त और गुणों का धाम होता भया सो रा त्री दिन भगवान की भक्ती और भजन मे हीं लीन रहता था॥ और दिल्ली के बादसाह के आगे तिसकी भारी पदवी और बड़ा अधिकार था राज काज मे प्रवीन और परम व्रत धारी था दिल्ली पत भी तिस का बहुत सनमान करते थे और जहां तहां प्रजा भी तिस के आधीन बहुत सुखी रहती थी सो तिस प्रजा ~~आधीन~~ से कर ले कर

४७५

५७८

समय दिल्लीपतको सपनेमे कहने लगे कि जो तू ने मेरा परम व्रतधारी भक्त वंदीग्रहमे वंदी किया हुआहै अब सूरजके उदय होते जो तिसको नहीं छोड़ देवोगे तो तुमारी अत्यंत हीं दुरदशा होवेगी इस प्रकार राजीको स्वपन देख कर भयसे कांपता हुआ साह प्रातकाल होते हीं सूरभक्त को छोड़ देता भया और बड़े आदर सतकार से नाना प्रकार विनती और बड़ाई करके अपना अपराध क्षमा करवाया फिर चरनोपर प्रणाम करके आनंदसे विदाय कर दिये तब सूर भक्त हृदयमे कृष्ण भगवानका सुमरण करते हूये श्री वृंदावनमे चले आये तहां निवास करके कृष्ण प्रमात्मा के पवित्र पद जो हैं सो रचाय कर और वड़ी मधुर स्वरसे गाय गाय कर लोगोंको सफल करते भये इस प्रकार महा प्रभाव और सुंदर सुखदायक कवाली वाले सरव जगतमे प्रसिद्ध भक्त सिरोमणी सूरदासजी वृंदावनमे निवास करके कृष्ण भगवानको सुमरते हूये कीटजीवोंको तार गये और आपभी तर गये और जिनके प्रसादसे संसार समुद्रको अवलंगनी तरे जाते हैं ३॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती महातमे भाषाटीकायां सूरभक्त चरित वरणनं नाम सरगः ॥

श्रीरस्तु

हि

अथ तत्वा जीव चरित वरणनं

दोहा॥ जहि प्रभाव जग सुषक द्रुम हर हरात साखा
त॥ होत सुभक्ति विलास कल करहुं कथन अवदात॥
हरन सकल भ्रम सुखकरन कृष्ण चरन रतिदान॥ न
रन तरन भव वरन निधी उपत अरन विज्ञान॥ चौपाई॥
दछण देस रुचिर विख्याता तत्वाजीव सुभग जुगभ्राता॥
तजी विमल वंस उपजाने॥ अतिथि साधु सेवन रतिमा
ने॥ आन करम जग सकल विहाई॥ संतत निरत संत
सिवकाई॥ दुरगम तरन उदधि संसारा॥ करत रहत नि
त हृदय विचारा॥ हरन तिमर मानस सुखदाई॥ हम
हुं मिलव कव गुरु वर आई॥ अस आवत तकि सं
तउ मंगा॥ करत कथन गुरु मिलन प्रसंगा॥ गयो
कछुक जव काल विहाई॥ करत अतिथि संतन सि
वकाई॥ आवा एक दिवस इक साधू॥ राम नामनिज
हृदय अराधू॥ करि सव तास अतथि सतकारा॥ तत्वा
जीव वचन उ[illegible] उचारा॥ हमरे मिलव कवनक
व आई॥ गुरु वर हृदय हरन दुरताई॥ साधु सुनत ति
न कर असवानी॥ वोल्यो वदन वचन हितसानी॥ पी
पर सुषक द्वार तुव एहू॥ पावन परसि चरन जल
जेहू॥ साखा पर रोहत जव होई॥ अस तुमां जनस
द गुरु होई॥ सुनत संत मुख वचन सुहावा॥ तत्वा
जीव चरन सिर नावा॥ तवते करि निश्चय दृढ एहा॥
आवत अतिथि संत निज गेहा॥ खान पान सनमा
न कराई॥ चरन प्रेम पुनि पीपर जाई॥ गुरु वर मि
लन सुमरि वडभागे॥ सिंचन करत भक्ति जुत रागे॥ दोहा॥
अस अजास तिन कर करत वीतिगयो कछु काल॥ सो
न भयो साषान जुत तरुवर सुषक विसाल॥ १॥ टीका॥
नाभा दासजी कहते हैं कि हे संतो जिसके सुंदर प्रभाव
से जगतमें सूकेहूए वृक्ष प्रतक्ष हरे हो जाते हैं
ऐसा भगवानकी भक्ती का सुंदर महातम जो है सो मे

यथामती ई हां कुछ कथन करता हूं कै स्वामी म
हातम है कि संपूर्ण भय और भ्रमों के हरनेवा सरब 'ला
सुखों का मूल श्री कृष्णभगवान के चरन कमलों की प्री
ती के देनेवाला और मानुष्यों के हृदय मे ज्ञान रूपी
सूरज उदय करके संसार समुद्र के तारनेवाला है कह
ते हैं कि दक्षण देस मे तत्री वंस विखें तत्वा जीव
नाम करके दो भ्राता होते भये सो कैसे कि अतिथी
और संत जनो की प्रीती भक्ती से सेवा करने वाले संसार
मे और सब करम त्याग कर केवल साधुओं की सि
वकाई मे ही लीन रहते इह मन का दरगम संसार स
मुद्र जो है तिस के तरने का ही रात्री दिन यतन विचा
रते ऐसे कहते कि हृदय का तिमर अर्थात अंधे
रा दूर करने वाले परम सुखदायक गुरुदेव स्वामी जो
है तिनकी हमको कब प्रापती होवे इसप्रकार जब
जब कोई संत महातमा आवते तब तब ही तिनके
साथ गुरुदेव के मिलने का प्रसंग चलावते और प्रा
र्थना करते ऐसे तिनको जब अतिथी संतों की सेवा
करते करते कुछ काल वतीत होय गया तब दैवयो
ग से हृदय मे राम नाम के आराधन करने वाले एक
संत महात्मा तहां आय गये तिन का भक्ती प्रीती
से तब अतिथी सतकार करके तत्वा जीव नम्र
बाणी से कहने लगे कि हे संत उपकारी हमको हृ
दय की कुटिलता और दुर्बुद्धी के हरने वाले गुरुदेव
स्वामी जो हैं सो कब प्रापत होवेंगे तब साधू तिन
की बाणी सुनकर हित से आनंद पूर्वक कहने ल
गे कि हे भक्त जनो इह पीपल का वृक्ष जो तुमारे द्वारे
मे सूका हूआ स्थित है जिस संत महातमा के च
रनो के धोये हूये जल से संपूर्ण साखा के सहित ह
रा हो जावेगा सोई तुमारा गुरुदेव स्वामी होगा इस
प्रकार संत के मुख से वचन सुनकर तत्वा जीव
हरख से पूरित भये हूये वारंवार चरनो पर सीस
नावते भये तब तें तिनोंने हृदय मे एही निश्चय क
रके जो संत साध तहां आवता तिसका प्रीती पूर्वक

कुसमुरार॥ कोटिनकहेतारत विदत आपुतरे मति
धीर॥ जहिप्रसाद अजहूँ तरे जात सजन जग वीर॥
३॥ टीका॥ एकसमय दिल्लीपतने सूरभक्तको विरक्त
विचारकर तिसके घरमै बहुतसा द्रव्य जतनसूँ दन
करके राख दिया था सो दुर्भिक्ष समय अर्थात कालके
वर्तमान होनेसे सब अतिथी संतो और दीन जनोको
खवायदिया और ईहां दिल्लीपतने अपने नौकर सूर
दासके घरमै भेजदिये कि तहां हमारा द्रव्यजो है सोले
आवो तब साहके नौकर सूरभक्तके पास आयकरके
कहने लगे कि हेभक्त प्रजापालका धन जो तुमारे पास
है सो अब शीघ्र देदेवो हमले जावेंगे ऐसे तिनकाक
थनसुनकरके सूरदास अपने घरमै चले आये और
ततकाल माटीके घडे मंगवायकर तिनमै प्रस्तर अर्थात
पत्थर भरकर फिर इसप्रकार पत्रकालिखी कि हे पृथवी
पाल तुमारा द्रव्य मेरे पास था सो मैने दुरभित्त
समय अर्थात काल जानकर अतिथी संत और
दीन जनोको खवायदिया है और अब प्रस्तर जोप
थ्थर है सो घडयोंमे भरकरके भेजदिये हैं इसप्रकार
घडयोंके सहित तहां पत्रका पठायकर और आप
भयके वश भयातुरहुआ भागकर कहीं वनको चलागया
ऐसे जब सो नौकर तिन घडयोंके सहित प
त्रिकाको लेकर साहके पास चले आये तब साह पत्र
काको वाचकर और घडयोंको देखकर मुखसे प्रसन्न हो
य करकहने लगा कि जो संतो और दीनजनोको धन
खवायदिया सो सूरभक्त वृथाही भयमानकर वनको
क्यों चलेगये तब तोडरमल्ल दुष्ट दिवानने भक्तसूं
केसाथद्वेष करके साहको अनीतीसे कुछ औरऔर ही
सिखायदिया तिसपर सूरभक्त मंगवायगये और बं
धनागार अर्थात बंदी घरमै नजरबंद करवाये गये
तहां सूरदास जातेही आनंद पूर्वक भक्ती और प्रेमसे
भगवानके पवित्र पद और निरमलगुण जो हैं सो न
वीन रचनासे कथन करने लगजाते भये तब भक्त
जनोके मनको मोहित करने वाले भगवान रात्रीके

॰जो

४७७

तास त्रास निज हृदयविचारी॥ लेहुं नाथ अव सरण तुमारी॥ रामनाम भवहरन कलेसू॥ कीजे हमहुं मे त्र उपदेसू॥ सुनिकवीर तिन कर अस वानी॥ वोले वदन वचन हित सानी॥ दोहा॥ तुम दाती हम अधम लघु जाति सकल जग जान॥ इह उपदेस न ज्ञानँ उचित न हम हु सुजान॥ २॥ टीका॥ जव इस प्रकार सो वृक्ष हरा नहीं भया तव तत्वा जीव दोनो भ्राता चिंता करके व्याकुल और मन मारे हुये परस्पर कहने लगे कि इह हमारे मन की अभिलाखा कव पूरण होवेगी हमने तो संसार मे वृथा ही जनम हार दिया है ऐसे कहि कर रात्री दिन संतों की सिवकाई मे ही लीन रेहने लगे तव एक दिन देसाओं मे भ्रमन करते करते भक्त प्रधान कवीर जी तिनके घर मे आय प्रापत भये तत्वा जीव ने तिनो का नाम ही सुना हुआ था कवी दरसन नहीं पाया था अवँ दरसन करके चरनो पर वारवा प्रणाम किया फिर भक्ती प्रीती से अतिथी सतकार करके वडे प्रेम से चरन प्रक्षालन करवाये और सोई चरनो का जल लेकर तिस सूके हूये पीपल के वृक्ष पर सिंचन किया तिस तें उपरांत भक्ती सनमान से पवित्र भोजन वनवायकर और भक्त प्रवीन को जिमाय कर घर मै ही शायन कराय दिया और आप भी अपने अपने जायकर के सोय रहे जवँ प्रात काल भया तव दोनो भ्राता जागते ही उठकर वडे हरष और अभिलाषा सेँ तिस वृक्ष कोँ जो देखने लगे तो नवीन साखा छूटी हुई संपूर्ण हरा भरा हो रहा हैँ ~~तवही~~ ऐसे तिसके देखते ही हरष से पूरित भयेँ ततकाल कवीर जी केँ चरनो पर सीसँ ~~धर~~ नाय कर हुये सव प्रसंग सुनायदेते भये तव कवीर जी सुनकर और हृदय मे परम सुख मानकर अपने चलने की चरचा चलावते भये तिसको सुनकरके तत्वाजीव हाथ जोड कर दीन वचनो से विनती करने लगे कि हे नाथ आज ~~[illegible]~~ दासों के घर मे निवास करके हमारी मन वांछित कामना को

तिनवसीतसेगईग्रौर

[illegible]

सफल करिये और प्रातकाल होते हे प्रभू जाहाँ कुं तुमा
री रुचीहोगी तहाँ को चले जाँ... तब कबीर जी कह
ने लगे कि हो भाई तुमारी मन वाँछित कामना कौन
है मेरे को अबी कहो तिसका जो कुछ उत्तर हो
सो तुमारे को अबी दे देऊं ऐसे सुनकर तत्वा जीव प्र
सन्न भये हूये हाथ जोड़ कर अपने मनोर्थ को कथन
करने लगे कि हे नाथ हे संत कृपाल इह महा कठिन
और अथाह संसार समुद्र जो है तिसके तारने को
मल्लाह रूपी गुरु महाराज के विना और कोई सामर्थी
नहीं देखपड़ता है और इस भयानक समुद्र में सं
पूरी जगत डूबा चला जाता है तांते इसके त्रास से कांप
ते हूये नाथ हम तुमारी शरण को प्राप्त भये हैं अब
हे उदार अपने चरनों के सेवक जानकर संसार के भय और
कलेश को हरने वाला परंपवित्र राम नाम मंत्र जो
है सो हमको उपदेश करिये इस प्रकार तिन की गूढ
वानी सुनकर कबीर जी बड़े सनेह के भीगे हूँ वचन
कहने लगे कि हो भाई तुम द्विजी और हम अधम नीच
जाती जिस जगत के सब लोग जानते हैं अब कहो
कि इह तुमारे को ज्ञान उपदेश करना हमारा कैसे
योग्य हो सकता है इह तो कदाचित भी उचित नहीं है॥
२॥ चौपाई॥ गुरु कटाछ सुनि श्रवण सुहावा॥ तत्वा
जीव चरन सिर नावा॥ नम्रत कहिस बचन करजोरी॥
हमहे नजाति बंस कछु खोरी॥ लोक लाज निज मान
स त्यागी॥ अब प्रभु चरन कंज लव लागी॥ तुमहु
उदार शील गुरु देवा॥ मैनि स्चय जीयकीन अमेवा॥
सुनि कबीर यद्यपि हठ कीना॥ ते न तजत मन भक्ति
प्रलीना॥ तव कबीर निस्चय दृढ़ पाई॥ तारक मंत्र
राम सुखदाई॥ कहि उपदेस बहुत समुझायो॥ तब
जैन जाति लोग समुदायो॥ करहिं द्वेष दुख देहिं
बसेखी॥ अस कलेस तब मानस लेखी॥ कासी न
गर रुचिर सुख पासा॥ तब आगमन निज कर हु अजासा॥

मै प्रयतन तहि हृदय विचारी॥ हरिप्रसाद सुत लेऊ निवारी॥ अस कहि चले भक्त वडभागे॥ तत्वाजीव भक्ति अनुरागे॥ सुमरत रामनाम सुखदाता॥ आये सदन भक्त जुग भ्राता॥ कछुक दिवस वीते जव गेहू॥ तव वांधव जन जाति सनेहू॥ जानि कवीर भक्त शिख होये॥ लागे द्वेष करन सव कोये॥ वने मलेछ अधम सिष वीने॥ निदरि वहिर निज पंक्ति कीने इकइकर सुत कन्या इककेरी॥ वांधव जाति तजन असहेरी॥ भाषत अति कलेस वसताहू॥ अव इनकर कस होहि विवाहू॥ अस प्रकार चिंताकुल होई॥ कीन समर्ती वचन गुरु सोई॥ दोहा॥ तव अति दुखत मलीन मन तजत सदन अकुलाय॥ गुरु पेंस सिधर रुचिर पुरि करत गवन जुग आय॥ १॥ टीका॥ तव गुरु कवीर जी के कटाक्ष मय वचन सुनकर के तत्वाजीव चरनो पर सीस नायकर और हाथ जोडकर विनती करने लगे कि हे नाथ अव हमारे को जाती और वंस की कुछ भी लज्जा नहीं है और ना कुछ लोक लाज को मानते हैं केवल आपके चरनों की प्रीती ही मुख्य जानते हैं और आपको ही गुरु स्वामी पहिचानते हैं ऐसे तिनका कथन सुनकर यद्यपि कवीर जी ने वहुत ही हठ से निवारण किये तद्यपि सो भक्त मेलीन मये हूये त्याग ते नहीं भये तव कवीर जी तिनकी ~~प्रेम देखकर~~ दृढ भक्ती और निश्चय देख कर सर्व सुखों के देनेवाला रामनाम तारक मंत्र जो है सो प्रीती पूर्वक तिनको उपदेश करदिया और कहने लगे कि अव तुमारी जाती के लोग जो तुमारे साथ द्वेष करेंगे और दुख देवेंगे तो तुम तत काल काशी मे मेरे पास चले आवना तहां मे भगवानकी कृपा से तिसका विचार करके उपाय करलेऊंगा इस प्रकार कवीर जी का उपदेश ले

खानपान से लेकर आदर सतकार करते और फिर-
भक्ती प्रेम से चरन धुलायकर गुरू जीका मिलाप
हृदयमे सुमरकर सोई चरन जल तिस पीपलपर
सिंचन करदेते अर्थात छिड़कदेते ऐसा यतन औ
र भजन करते करते तिनको बहुतकाल हीं वतीत हो
गगया परंतू सो सूका हुआ वृक्ष कुछभी हरान
हीं होता भया॥१॥ चौपाई॥ तव चिंता वे घृत मन
मारे॥ जुगल परसपर वचन उचारे॥ कुर अमिघ्
कव होहिं हमारा॥ हासो वृथा जनम संसारा॥ अस
प्रकार मुख वचन अलाई॥ करते रहे संत सिव काई॥
तव दिसोत्र कल भ्रमत सुहाये॥ भक्त कबीर सदन
तिन आये॥ सुन्यो नाम दरसन नहिं पाये॥ सोप्रत
त अव सनमुख आये॥ देखि दरस दृग कीन जुहारा॥
संजुत भक्ति अतथि सत कारा॥ करि सनमान हरषि
अनुरागे॥ वहुरि चरन प्रछालन लागे॥ पादोदिक
सिंचिन तरु कीना॥ तदपश्चात भक्ति मन लीना॥ प्री
ति पूर्वक पाक जिमाई॥ दीन सदन निज सेन कराई॥
भये आपु रत सुपत सुभागे॥ भोरहिं रटन राम जव जा
गे॥ तहुहिं जाय संजुत अभिलाखा॥ देख्यो जवहिं
नवल कल साखा॥ हरखत जन कवीर पें आये॥ कहि
प्रसंग चरनन सिर नाये॥ तव कबीर मानस सुख पाई॥
गिरा गवन जव वदन अलाई॥ तत्वा जीव नम्र मुख
वानी॥ वोले जुगल जुक्त निज पानी॥ प्रभु वसि आज
जनन कर धामा॥ करहु सफल मन वांछित कामा॥
प्रात होत प्रभु जाहु सिधारी॥ तव कबीर अस गिरा
उचारी॥ को तुमार मन वांछित भाई॥ कस न देहु
मोहि वेग जनाई॥ तो कर यथा उत्र कछु होई॥ अ
वहिं देहु जन चेर न मोही॥ तत्वा जीव सुनत अनुरा
गे॥ निज अभिघ् वरनन मुख लागे॥ नाथ अगम
भव वारिद जोई॥ गुरु वर करणधार विनु कोई॥ तास
तरण सामर्थ न देखा॥ वूड़ो जात सकल जगलेखा॥

परयो न जतन आन कछु चीना॥ तुम हु बहिर निज पंक्ति कीना॥ हम मलेछ सेवक जग बाजे॥ तब अस करम कीन गत लाजे॥ ज्ञाती लोक सुनत समुदाई॥ बोले हम हु सदन निज जाई॥ करि सम्मति ठाकर मिलि सारे॥ देहु उत्तर जिमि उचित तुमारे॥ अस प्रकार बांधव परिवारा॥ लगे करन निज हृदय विचारा॥ बने मलेछ अधम सिष एहू॥ अब पंकति नि मिलन संदेहू॥ अस सोचित सब करत विचारा॥ भये सैन रत रैन अगारा॥ तब सपने रघुनंदन दूता॥ हनुमत बीर प्रभंजन पूता॥ ज्ञाती जन कहे रुचिर प्रबोधू॥ लागे करन देष अब रोधू॥ रामचंद्र दृढ भक्त कबीरा॥ इह सिख बने तास जुग बीरा॥ तुम हु कोन निज पंकति त्यागे॥ रघुपति भक्त जुगल बड भागे॥ दोहा॥ अब तुव प्रात न केत इन महित मोर अनुसार॥ सादिर कीन न पाक सठ करहु बसजुत नास॥ ८॥ टीका॥ तब बांधवों ने जो जो कलेश दिया था सो सब गुरू जी के आगे सुनाय कर कहने लगे कि हे कृपा निधान एक कलेश हमारे हृदय मे अत्यंत भारी होरहा है कि इह जो हमारी कन्या और पुत्र हैं इन का विवाह कैसे होवेगा इस का हमको कोई यतन भी सूझ नहीं पडता है बांधव जाती जो हैं सो ~~तो~~ तो सब त्याग गये अब केवल आपके ही चरनों का भरोसा रहा है इस प्रकार तिन का कथन सुनकर कबीर जी परम हित की वाणी से कहने लगे कि हो भक्त अब इनका तुम संशय को त्याग कर परस्पर विवाह कराय देवो इस मे रघुनाथ जी की कृपा से संपूर्ण बांधव और नाती जन तुमारी कुछ ~~अपकी~~ अपकीरती और निंदा नहीं करेंगे सरब प्रकार से तुमा ही करेंगे और तुमारे को अपनी पंकती मे भी मिलाय लेवेंगे ऐसे गुरु जी की आज्ञा को सीस पर धार कर और चरनो पर माथा नाय कर तत्वाजीव हरष के वश

ॱआनंदसे

भयेहूये अपने घरको चलेआये और नहो सुभदिन विचार कर कन्या और पुत्र का विवाह जोहै सो रचाय दिया तव जाती के लोग सव देख करके कहनेलगे कि तुम जगत मे अे सानिंदत करम जो है सो क्यों करनेलगेहो तिन का कथन सुनकर तत्वाजीव उत्तर देतेभये कि भाई तुमने तो हमारे को मलेछ के सेवक जानकर अपनी पंकती से वाहिर करदिया अव कोई और उपाय जो नहीं देखपड़ा तो एही निरलज्या करम हमने अंगीकार करलियाहै इसप्रकार तिनके मुखसे वचनसुनकर जाती लोग सव कहनेलगे कि तुम धीरजकरो हम घरमे जाते हैं और सव ठाकुर लोगों को मिलायकार सम्मती करते हैं तिसमे जोनसीवात वनेगी तुमको आयकरके उत्तर देते हैं तव वांधव जन और नाती जाती के सव लोग मिल कर परस्पर विचार करने लगे अंतको इहसिद्ध भया कि इन अधमो ने मलेछ का उपदेश लियाहै अव इन का पंकती मे मिलना वड़ा कठिन है इसप्रकार सोच विचार करते करते रात होयगई सवकोई अपने अपने जायकर सोयगये तव अर्ध रात्रीकेसमय श्री रघुनाथ जीके दूत पवन पूत हनूमान तिनकेजाती जी नातीके लोगों को द्वेषके निवारने वाला प्रवोध करके कहने लगे कि अरे मूढो इह तत्वाजीव दोनो भ्राता राम चंद्रजीके दृढ भक्त कवीर जी जो हैं तिनके सेवक और रघुनाथजी की पवित्र भक्ती प्रीती वाले तुम तिनके साथ द्वेष करके पंकती से वाहिर करदिये हैं और तिनका अपमान कियाहै परंतू अव सत्य करके जानलेवो कि जो मेरी आज्ञा से प्रात काल होते ही इनके घरमे जायकर सनमान पूर्वक तुमने भोजन नहीं पाया और इनको अपनी पंकतीमे नहीं मिलाया तो मै प्रण करताहूं कि तुमारे वंस का तुमारे सहित क्षण भर मै सव नास कर देऊंगा ॥४॥ चौपाई॥ ते अस देखि सपन निसि काहीं॥ निज निज सकल गुनत मन माहीं॥

ग्रंथ ७४

कहत परस्पर आज महाना॥ हमपें कीन कोप हनुमाना॥ जो न चलहु अब तिनकर गेहा॥ तास वधन कर कवन संदेहा॥ अस विचारि बांधव समुदाई॥ तत्वाजीव सदन सुभ आई॥ द्वेषभाव मानस तजि दीने॥ बोले वचन नम्र रस भीने॥ निंदत करम निवारण एहू॥ तात विरचहु पाक निज गेहू॥ बैठि सकल बांधव परिवारू॥ मेल लेहिं निज पंकति चारू॥ तुव अदोष सब दोष हमारे॥ बिनु अपराध कीन जोई न्यारे॥ अनुचित तमहु तात अस जानी॥ राम भक्त तुव अमानी॥ तिनकर वचन सुनत हित सानी॥ तत्वाजीव परम सुख मानी॥ बोले तुमहु योग्य सब भांती॥ मेलन तजन रुचिर निज पांती॥ हम आज्ञा पालक अनुसारे॥ कृपा दृष्टि तुव देखन हारे॥ अस कहि ललित पाक विरचाई॥ दीन सकल जन ज्ञाति जिमाई॥ तब प्रसन्न जुत बांधव सारी॥ बोले वदन वचन हितकारी॥ दोहा॥ अब कन्या निज सुवन कर करहु सोच जनि काहु॥ यथा उचित हम करब कल इनकर मुदित विवाहु॥ ५॥ टीका॥ तब सो जातीनाती और बांधवजन रात्रीको स्वपन देखकर अपने अपने सब विचार करने लगे और परस्पर कहने लगे कि देखो भाई आज हमारे पर महावीर हनुमानजीने अत्यंत कोप कियाहै अब जो कदी तिनके घरमे नही चलते तो हनुमानजीके वधकरनेका कौन संदेह है अर्थात हमको अवश्य मारदेवेंगे ऐसे विचार कर संपूर्ण बांधवजन तत्वाजीवके घरमे चले आवते भये और चित्तसे द्वेषभाव त्यागकर बडी नम्रवाणीसे कहने लगे कि हे तात अब तुम निंदत करम के निवारणके वासते अपने घरमे भोजन रचावो तहां संपूर्ण बांधव बैठकर सनमानसे तुमको पंकतीमे मिलाय लेवेंगे हे भक्त तुमतो अदोष हो इह सब दोष हमारे ही है क्योंकि तुमको बिना अपराध ही न्यारे कर दिया हे रामचंद्र जीके प्यारे भक्त अ

कर तत्वाजीव दोनो भ्राता भक्ती प्रीतीवाले होयकर
रामनाम को सुमरते हुये अपने घरमै चले आये ऐसे
जब कुछ कदिन वतीत होयगये तब बांधव जन और
जाती नाती के लोग अपने अपने सब चरचा करकेपी
छे तिनकों द्वेष करने लगे और कहने लगे कि इन अ
धम तो कबीर मलेछ के शिष्य वनगये अब हमारी
सभा और पंक्ती के योग्य नहीं रहे हैं ऐसे विचारकर
न और तिरसकार करकर तिनको अपनी पंकतीसे बाहिर
करदिया तब तत्वाजीव बांधवों की करनी देख कर व
डे कलेशको प्रापत भये क्योंकि एकका पुत्र और एक
की कन्या रही तिन को देखकर कहते हैं कि अब इनका
विवाह कैसे होवेगा इस प्रकार चिन्ता करके व्याकुल
भये हुये गुरूजी का वचन सुमरण करते भये और हृदय
मे सोई भरोसा राखकर दुखसे मलीन मन भये हुये घर
को त्याग कर शिव पुरीमे गुरूजीके पास चले आये॥
३॥ चौपाई॥ दीनकष्ट बांधव जन जेहू॥ गुरुसन
कीन कथन सब तेहू॥ नाथ कलेस एकजियभारी॥
इह कन्या सुत जवन हमारी॥ इनकर पानिग्रहण
कस होई॥ परत नजानि यतन प्रभु कोई॥ बां
धव जाति सकल तजिगयऊ॥ अब भरोस भगवन तुव
रहऊ॥ तिनकर कथन सुनत असवानी॥ कहित कबी
र परम हितसानी॥ करहु परसपर इनकर जाई॥ पा
णि ग्रहण सुंदर सुखदाई॥ भीत लोक बांधव जन
नाती॥ रामप्रसाद सुगम इहिभाती॥ तुमपें नामा
करत समुदाई॥ लेहिं ललित निज पांतिमिलाई॥
गुरु नदेस सुनि श्रवण सुहाई॥ बार बार चरनन
सिर नाई॥ तत्वाजीव भवन निज आये॥ दीन वि
वाह रुचिर बिरचाये॥ जाति लोग देखत समुदाई॥
कहत वदन अस वचन अलाई॥ इह कुकरम नि
दत संसारा॥ तुव कस हृदय कीन सुईकारा॥ तिनकर
सुनत कथन अस काना॥ जुगम भ्रात मुखवचन बखाना॥

प्रवीन भक्त जबलग जगत मे जीवते रहे श्रीरघु
नाथजीके चरन कमलों की भक्तीप्रीती ग्रोर संतज
नोकी सिवकाई मे हीं लीन रहे ग्रौर फिर ग्रंतकाल
शरीर को त्याग कर रघुनाथ जीकाहीं सुमर्ण कर
ते हूये मुनी ग्रोर जोगी जनोको दुरलभ परमपद
जोहै तिसको प्रापत होयगये ॥६॥ इति श्रीभक्तविनो
द ग्रंथे भागवदभक्ती महातमे भाषाटीकायां तत्वाजीव
चरित वरणने नाम सरगः ——

४८२

482

व कृपाकरके हमारे अपराध को क्षमा करो ऐसे ति
न की नम्र और हितकी वानी सुनकरके तत्वाजीव हृ
दयमै परम सुख मानकर कहने लगे कि हे भाई हमारे
पंकतीमैमिलाने और न्यारे करने को तुमही योग्य और
सामर्थ हो हम तो सरवप्रकार करके तुमारे अनुसारी और
दास हैं ऐसे कहिकर नाना प्रकार के भोजन व्यंजन व
नवायकर वडे सनमान से सव जाती नाती के लोग जि
मायदिये तव प्रसन्न होयकरके बांधवजन कहने
लगे कि अव तुम अपनी कन्या और पुत्र का कुछ सोच
चिंता मत करो हम आपही इनका यथा योग्य विचारकर
विवाह करवाय देवेंगे ॥ ५ ॥ चौपाई ॥ जव बांधव अस व
चन अलाये ॥ तत्वाजीव सुनत सुख पाये ॥ वोले नम्र
जुगल कर जोरी ॥ इन कर तात तुम हो सव खोरी ॥ इह
न दान जुग वाल तुमारे ॥ अस प्रकार बांधव सुनि सारे ॥ स
मय पाय सं जुन उतसाहू ॥ वालि वालक कर रुचिर विवाहू ॥
यथा उचित कुल दीन कराई ॥ अस इह चारु चरित सु
खदाई ॥ मैं कछु कीन कथन साधारन ॥ मंजुल राम भ
क्ति विसतारन ॥ दोहा ॥ तत्वाजीव प्रसिद्ध जग निपुरा भ
क्त भगवान ॥ जो लौ रहे सिजियत जग रामचरन र
तिमान ॥ अतिथि संत सेवत मुदित अंत तजत निज
काय ॥ सुमरत राम कृपाय तन लीन परम पद पाय ॥ ६ ॥
टीका ॥ जव इस प्रकार बांधव जनों ने कथन किया तव
तत्वाजीव सुनकर वडे सुख को प्रापत होते भये और नम्र
वानी से हाथ जोड़ कर कहने लगे कि हे भाई अव इनकी
लज्जा तुम को ही है और इह नदान वालक तुमारे ही हैं
ऐसे तिन का वचन बांधवजन सुनकर के और समय पाय
करके तिस कन्या और वालक का अपने वंस की रीती
अनुसार यथा योग्य वर और ज्वर देखकर के विवाह क
~~करवा~~ रवाय देते भये इस प्रकार इह सुंदर सुख के
देनेवाली और राम चंद्र जी की भक्ती के विसतार कर
नेवाली गाथा जो है सोई हो गायन की गई है इह तत्वा
जीव दोनो भ्राता जगत मै प्रसिद्ध और भगवान के

करि कौतुक करुणायतन निज वैकुंठ कलधाम॥ ग
ये गवन करि भवन मुद रमा रमन अभिराम॥२॥
टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि संतो सब भक्तजा
नो के हृदयके अंधेरेको दूरकरके ज्ञानरूपी सूरज
को उदय करने वाला और मोक्षके देनेवाला सब
दुख दोष और काम क्रोध कुमती मद भय इत्यादि
सब विकारोंको नासकरके मनको निरमल करनेवा
ला सुंदर भक्तीका महातम जो है सो प्रीती पूर्वक आ
पके आगे कुछ कथनकरताहूं कहते हैं कि जब दी
नोका उद्धार करनेवाले कृष्ण प्रभोतमाने मथुरामें अवतार
धारने किया तब कृपासिंधूने मनके हरनेवाले जोजोवि
लास और चरित्रकिये सो तो संसार मे सब भली प्रकार प्र
सिद्ध हैं तिससमय एक गुणोंका धाम और भक्तीमे प्र
वीन कृष्णभगवानके चरन कमलोंकी प्रीतीवाला स
रसयन के वंसमे उतपन्न होता भया सो कैसा कि भग
वानका सखामीत और परमव्रतधारी मनवचनकाया
करके दीनबंधूका हितकारी था जब भगवान मथुरा
को त्यागकर द्वारिका मे चले आये तब सो जादव
दीनानाथ के चरन कमलों चंचरीक अर्थात भ्रमरा
तिन चरनकमलोंका विजोग सहार नहीं सका प्रेम
भक्तीमे मगन भयाहूआ कृपासिंधूके साथही चला
आया यद्यपि भगवान कृपासे तिसको तहां भग
वानके साथ नित्त आनंदही रहताथा तद्यपि वृं
दावनका सुंदर निवास और कृपानिधानके साथनि
त्त मनोहर कुंज गलियों मै विचरना और नये नये
हास विलास देखने इनका तिसको एक पल प्रमाण भी
नही विसर तेथे तनतो मथुरा मे और मन वृंदावन
मे लगा रहता कुंजन की शोभाको हृदयमे सुमर सुमर
जादव जो है सो व्याकुल होता जाता और भगवानके
आगे वारवार रात्रीदिन नम्रवाणीसे एही प्रार्थना क
रता कि हे कृपाके धाम हे दीन सुखदायक सो कौन
सुभदिन मेरेको होवेगा कि जिसदिन मे आप के

साथ जयकर बड़ापरम पवित्र ग्रोर मनके हरने वाला भांडीरवन ग्रोर निरमल जमुनाकीजल तैसेही कुंज गलियोंकी शोभा ग्रोर नखे परवी देनेवाला गोवरधन परवत इत्यादि ग्रोर भी सब शोभा जोहै सो नेत्रभर कर देखूंगा हे कृपाल जबलग संसारमे जीं तबलग सो ग्रानंद ग्रोर सुखे मेरेको कैसे विसर सकताहै इसप्रकार उतकंठित ग्ररथात ग्रभिलाषावाला होकर रात्रीदिन वृंदावन वृंदावनही कहता रहता तब काल पायकरके भक्तोंजनोंको उधारने वाले भगवान कृपानिधान कौतुकसे संपूर्ण जादवोंके परिवार को साथ लेकर ग्रानंद पूर्वक ग्रपने वैकुंठ धाम को चले जातेभये ॥१॥ चौपाई॥ ते जादव हरिभक्त सुजाना॥ तहांपि जोरि जुगलनिजपाना॥ वृंदावन दरसन ग्रनुरागा॥ नम्रत विनय करन ग्रस लागा॥ चलेन होहि तुव दीन सनेह॥ कबकृपाल वृंदावन तेहू॥ सो ग्ररण्य कल कुंज सुहाये॥ दीननाथ मोरे मन भाये॥ विसरत सो न भक्त सुखदाई॥ एकबार प्रभु देहु दिखाई॥ तासु कथन सुनि विभु वनराई॥ बोले वदन वचन मुसकाई॥ सुनहु मीत पूरव वत नाही॥ मोर गवन वृंदावन माहीं॥ ग्रब न होहि ते भक्तसुजाना॥ मे परिवार सहित निज नाना॥ कुंज कुंज राधा जुत चारू॥ तहां निवास कर हुम न हारू॥ ते मधुरा वृंदावन जोई॥ जन वैकुंठ ग्रधिक प्रीय मोही॥ जवतें तज्यो मनोहर नगरी॥ कलित कुंज लीला निज सगरी॥ तबतें जद्यपि मोर सुहावा॥ इहवैकुंठ ग्रखिल सुख छावा॥ तद्यपि तहि समान सुमदाई॥ उपज्यो नहिन तनक सुख भाई॥ जिमि चातक निमि शीकर काही॥ विदत विश्व प्रीय मानस माही॥ तजत न तासु देव त्रिपुरारी॥ तिमि मधुरा मोहि प्रानन प्यारी॥

अजहुं सुमरत होत मन भाई॥ ललित बाल लीला
सुखदाई॥ दोहा॥ सतका भंजन पूतना शकटवि
मंजन मित्र॥ अरजुन जयमल मद हरन अ[illegible]का
वधन चरित्र॥ काली मद क्षय करन पुनि मोहनल
न मव देन॥ वृंदावन बंसी वजन चरन चारु वरधेन॥
धयनक वधन प्रलंब पुनि त्रिणावर्त वस काल॥ वृं
दावन रक्षा करन नग नख धरन रसाल॥ रचन रा
स लीलादि पुनि वचन सखन सखि संग॥ केशि वधं
सन नंदकले त्रातन हृदय उमंग॥ दावानलकर स
मन पुनि ग्वालन सन मन चाऊ॥ वन वन विहरन
सजन सुन हनन कंस रिपु राऊ॥ जननि जनक
बंधन मुकत चरित चारु इत्यादि॥ जब जब होत सु
मरण इह उपजत हृदय दुखादि॥ २॥ टीका॥ तब सो
जादव तहां वैकुंठ धाम मैं भी प्रेम के वश भया हुआ
हाथ जोड़कर श्री वृंदावन के ही दरसन की प्रार्थना
करने लगा कि हे दीनानाथ हे दीन हितकारी अब
कृपा करके मेरे को कहिये कि तिस मनोहर वृंदावन
मैं आप का चलना कब तक होवेगा क्योंकि तहां
के सुंदर वन और बड़ी शोभा वाले कुंज मेरे को
बिसरते नहीं हैं अनुग्रह करके सो दीन को एकवार
फिर दिखाय देवो ऐसे तिसका कथन सुनकर तीन लो
क के नायक भगवान मुसक्याय करके कहने लगे कि
हे मीत ~~पूरब के समान अब तो वृंदावन मे मेरा जा~~
~~ना नहीं हो~~ अब तहां वृंदावन मे मेरा जाना पूर्व
के समान तो नहीं हो सकता परंतू आद्य स्वरूप
से तहां संपूर्ण परिवार और राधिका के सहि
त जहां तहां कुंज कुंज मे विलास करूंगा क्योंकि
मथुरा और वृंदावन जो हैं सो मेरे को इस वैकुंठ
धाम से भी अधिक प्यारे हैं मैने जब तें तिस म
नोहर नगरी और कुंजों की लीला विलास को त्या
गा है तब तें यद्यपि मेरे को इहां वैकुंठ मे अखिल

अथ सूरदासजी चरितं

दोहा॥ करन विमल मन हरन तम दमन विविध दु
ख दोष॥ भक्ति महातम करहु कल कथन ललित
प्रद मोष॥ नासन कुमति कृतंत भय भासन भानु
प्रबोध॥ सुमति विकासन भक्त जन दलन मदन
मद क्रोध॥ चौपाई॥ कृष्ण देव जब जनन उधारी॥
मथुरा लीन ललित अवतारा॥ किये कृपाल च
रित जस चारू॥ सो मन हरन विदित संसारू॥ तब जा
दव एक भक्त प्रवीना॥ कृष्ण सरोज चरन मन लीना॥
सूरसयन वर वंस उजागर॥ उपज्यो भक्त सुघ गुण
सागर॥ सखा पुनीत मीत व्रतधारी॥ मन वच करम
कृष्ण हितकारी॥ जब मथुरा तजि करत पयाना॥ द्वा
रावती आय भगवाना॥ ते किमि वे चरीक बडभागी॥
सकहि सरोज चरन प्रभु त्यागी॥ भक्ति प्रेम कल नवल
उमंगा॥ आयो दीनदयाल कर संगा॥ यद्यपि आनंद
भवन प्रसादू॥ ताके तहां सुलभ सब साधू॥ पैनि
वास वृंदावन चारू॥ विहरन कुंज गलिन मन
हारू॥ कृष्ण संग नित नवल विलासा॥ सो न प
लक कल बिसरत तासा॥ तन मथुरा वृंदावन म
नुआं॥ लग्यो रहत निसि दिवस अननुआं॥ करि
सुमरण कल कुंजन सोभा॥ होत प्रबल हिय जादव
लोभा॥ प्रभु सन बारबार अस बरनी॥ नम्रत विनय
ज दिवस निसि करनी॥ कृपा निकेत जनन सुखदाई॥
तुव सन कवन दिवस सुमजाई॥ सुचि भांडीर वि
पुन मन हरना॥ रविजा कुंज सघन खग धरना॥
आन ललित लावन्यत नीके॥ देखहु देव परम प्रीय
जीके॥ जवलग जियन नाथ संसारा॥ सो प्रमोद
किमि बिसरन हारा॥ अस प्रकार उतकंठित रहना॥
वृंदाविपुन अहिर निसि कहना॥ काल पाय तब म
नऊ वारा॥ लिये संग जादव परिवारा॥ दोहा॥

सो सात्तान विप्र सुभ चारी॥ मोर सरूप भक्त व्रतधा
री॥ मथुरा धारि जनम जीय जोई॥ मोर ललित
उतसव पर होई॥ सो मोहि जसु मति मातु समा
ना॥ सुनहु आन अब भक्त सुजाना॥ जे नर मोर
जनम दिन लेखी॥ धारि रुचिर व्रत भक्ति वसेखी॥
बाल रूप मम पूजन करहीं॥ आवागवन सहज
स्रम हरहीं॥ करि प्रवेस मथुरा पुरि माहीं॥ जो
जन करहिं रटन मोहि काहीं॥ भक्त मोर सोई प्रा
ण पयारू॥ ताकर तरन सुगम संसारू॥ अब तो
हि जोपि भक्त बडभागा॥ मथुरागवन प्रीति अनुरागा॥
तो अब सुनहु कथन कल मोरा॥ संतत भक्त सुहृ
हित तोरा॥ जहितें तहेस जान तुव जाई॥ सोऊ ले
हु सुख कीरति पाई॥ अस कहि कृष्ण देव भगवाना॥
लागे तासु प्रबोधन ज्ञाना॥ कलि [illegible] संध्या अव
साना॥ मथुरा प्रांत भक्त गुण खाना॥ सुभ्रत विप्र
वंस उपजाई॥ मथुरा मोर ललित पुरि आई॥
मोर जनम लीला गतपारू॥ करत करत गायन
व्रतधारू॥ सोऊ अखेउ सुजस सुख जोई॥ होहिं
भक्त जन पावत तोही॥ बहुरि मोर लीला मन
भायन॥ प्राकृत पदन सुफट जब गायन॥ करब
तुम्हहु संगीत प्रकारू॥ सुभ्रत ललित प्रेम र
स सारू॥ सुनत लोग कलि काल मझारा॥ हो
ई है भक्ति निरंतर संसारा॥ बढहिं मोर चरनन
अनुरागा॥ उधरहिं तुव प्रसाद बड भागा॥ वे तुव
जनम अंध दृग हीना॥ जननि जनक अस देखि
प्रवीना॥ दोहा॥ पालहिं जन सामान कछु
सुत सनेह बस तोहि॥ आन सकल बांधव
सुहृद सो न करहिं हित कोई॥ १४॥ टीका॥
भगवान कहते हैं कि हे मीत सदैव मेरे हृदय
मे उतकंठा अर्थात अभिलाषा हीं [illegible]

रहती है कि इस अपने सुंदर वैकुंठधाम को त्यागकर
और पूर्ववत शरीर धारकर वृंदावनमे जायकरके सो
अदभुत और मनके हरने वाले चरित्र मै कब करूंगा
सो मेरे कैसे भी सुखदायक चरित्र हैं कि जो बडभागीजन
मेरी पवित्र भक्तीमे लीन और मेरे ही प्रेम रसमे भी
गहे हृदय ~~[illegible]~~ से कुतरक और कुटिलता त्याग
करके इन मेरे सुंदर चरित्रों और मेरी कीहुई सब प
वित्र लीलाऊं को विधीविधानके अनुसार रास रच
ना करके गायन करेगा अथवा प्रीती भक्तीसे श्रवण
करेगा सो ऐसा शुभ आचारी ~~[illegible]~~ व्रतधारीभक्त
इस जगतमे साक्षात मेराही सरूप होगा और हे प्यारे
मथुरामे जनम धारकर जो स्त्री मेरे सुंदर उतसवों
मे प्रीती और प्रतीती वाली होवेगी सो मेरे को जसो
धा माताके समान परम हितकारनी होगी हे भक्तप्रवीन
और भी सुनो कि जो मेरा दास मेरे जनमके शुभदिन
को व्रतधारकर बडी भक्तीप्रीतीसे मेरे बाल रूपका पू
जन करेगा सो निश्चय करके मेरी कृपासे इस संसार
के आवागमन अर्थात जनम मरनसे जतनके विना
सहजे हीं छूट जावेगा और जो कोई मथुरामे प्रवेश
करके भक्ती श्रद्धा पूर्वक मेरा भजन और सुमरण करेगा
सो मेरे को अतिसै करके प्राणों से प्यारा होगा और ति
सको इस संसार समुद्रका तरना बहुत सहज होजावेगा
अब हे भक्त जो तेरे को मथुरामे जानेकी प्रीती और
रुची उपजी है तो इह परम हित और कल्यानके
देनेवाला मेरा कथन जो है सो श्रवणकर कि जिस
तें तू तहां जायकर सोई सुख और सोई सुजस
सहजे हीं प्रापत कर लेवेंगा इसप्रकार कहिकरके भग
वान कृपानिधान तिसको प्रबोध जो है सो करने लगे
कि हे भक्त कलीकालमे मथुराके निकट ब्राह्मण
कुलमे ~~[illegible]~~ तुमारा जनम होगा

ग्रौर फिर तुम मेरी मथुरा पुरी मै ग्राय कर मेरे ज
नम की ग्रपार लीला कि जिसका कुछ पाया जाता
सो तहो तुम गायन करते करते सोई ग्रखंड सुख ग्रौर
सोई कीती सुजस जो है सो प्रापत करोगे फिर सोई
मेरी मन भावन ग्रौर परम पवित्र लीला जो है सो
प्राकृत निवेध ग्रर्थात भाषा पदो मे जव प्रकट क
र के संगीत के प्रकार से गायन करोगे तव कलीका
ल मै सुन कर के सव लोग भक्ती प्रीती वाले होय जावें
गे ग्रौर मेरे चरनो मै प्रेम जो है सो दिन दिन ही वढ
ताजावेगा हे वडभागी तेरे प्रसाद कर के सव जीवों
का उद्धार हो जावे गा परंतू भक्त तू जनम से ही
ग्रंध नेत्रों से हीन होवेंगा ग्रौर माता पिता देखकर
के पुत्र सनेह के वश कुछ सा मा नहीं पालना क
रेंगे ग्रौर वांधव संवंधी भी तेरे साथ कोई हित प
यार नहीं करेगा ॥३॥ चौपाई केवल जननि करहि
तुव सेवा॥ ग्रस कहि वदन भक्त द्रुमदेवा॥ भ
ये विराम कृष्ण चैन वरना॥ तव प्रणाम करि जा
दव चरना॥ ~~कलि संख्या~~ कर ग्रंत प्रवीना॥ सो
चन लग्यो भक्ति मन लीना॥ सो जव समय ग्राव
नियराना॥ तजि विकुंठ जादव गुण खाना॥ मथु
रा ग्रंत विप्र वर गेहा॥ भाउत पन्न भक्त हरि ने
हा॥ जनम ग्रंध दृग जोति वहीना॥ जननि जन
क कछु हरष न कीना॥ रहे मौन वांधव समुदाई॥
करहिं प्रीति केवल इक माई॥ ग्रष्ट वरष कर जा
नि सुहावा॥ यज्ञोपवीत जनक तव पावा॥ भयो
प्रसिद्ध नगर ग्रभिरामा॥ सूरदास तांकर ग्रस ना
मा॥ ग्रवसर एक मातु पितु संगा॥ ग्रान लो
क पुर प्रेम उमंगा॥ कृष्ण जनम पुरि दरसन
लागी॥ ग्राये सकल सदन निज त्यागी॥ करि
यात्रा विधिवत ग्रनुरागे॥ जव निज सदन चलन
जव लागे॥

अर्थात संपूर्ण भवनो का सुख भी प्राप्त है तद्यपि तिस सुख के समान मेरे को कोई भी देखत नहीं पड़ता है हे प्यारे जैसे वाराणिसि अर्थात काशी महादेव जी के मन को अत्यंत प्यारी है त्रिपुरारी तिसको क्षिन भर भी त्याग नहीं सकते हैं तैसे ही मथुरा मेरे को प्राणों से प्यारी है तहां की सुंदर सुखदायक बाल लीला और पूतना का मलना अर्थात मारी का खाना शकट जो गड्डा है तिसका चूर करना और अरजुन जमल का मद हरना अघासुर और बकासुर को मारना फिर कालीनाग को नथना और तिसका मद दूर करना ऊपन के हरने के समय ब्रह्मा को मोह के वश कर देना श्री वृंदावन में मधुर बंसी का बजाना॥ और गऊओं का चराना धेनक दैत्य का वध करना फिर त्रिणावर्त को भी मारना वृंदावन की रक्षा करनी गोवर धन परवत को नखपर धारना रास की रचना और लीला सखा और सखियों के साथ नाना वचन विलास केसी दैत के प्राणों को हरना नंद जी के हृदय को आनंद देना दावानल जो बन की अगनी तिसको शांती करना और बड़े उतसाह पूर्वक ग्वालवालों के सहित ठौर ठौर बनमे विचरना फिर कंस राजा जो एक महा प्रबल शत्रु था तिसको मारना और माता पिता को बंधन से मोक्त करवाना अर्थात छुड़ाना इत्यादि नाना सुंदर चरित्र जो हैं सो तिनका जब जब मेरे हृदय में सुमरण होता है हे मीत तब तब ही मेरे चित्त को महा दुख और कलेश प्राप्त होता है॥ २॥ चौपाई॥ सदा रहत मानस उतकंठा॥ तजि निज रुचिर बैकुंठा॥ पुनि कब वपुष पूर्व वत धारी॥ अद्भुत करहुं चरित मन हारी॥ जे जन भक्ति निरत बड़भागी॥ मोर प्रेम पावन रस पागे॥ हृदय कुतरक कपट सब खोई॥ मोर रुचिर लीला क्रत जोई॥ यथा विधान राम सिर चाई॥ गायन श्रवण करहि मन लाई॥

के सहित घरको त्यागकर दरसन की अभिलाषासे
कृष्ण भगवानकी जनमपुरी मे चले आवते भये
तव तहां विधी अनुसार ~~तव यात्रा भलीप्रकार करके~~
~~और प्रीती भक्तीसे भगवानकी वंदना करके तब~~
भक्तीप्रीतीसे भलीप्रकार सब यात्रा करके फिर घर
को जब चलने लगे तब सूरदास कहने लगा कि मैतो
अब कुछ दिन इहांहीं कृष्ण भगवान की सुंदर और
सुखदायक नगरी मै निवास करताहूं तुम आनंद
से अपने घरों को चले जावो मेरी ~~कुछ~~ चिन्ता नहीं
करो मै कृष्ण देवकी कृपासे इहां सरव काल सुखी र
हूंगा कोई भय और कलेश कदाचित भी नहीं व्या
पेगा ऐसे माता और पिता तिसकी वाणी सुनकर
सुतसनेह अर्थात पुत्रका प्रेमजोहै तिसके वश भये
हुये रुदनकरकर कहने लगे कि हे पुत्र एकतो तुम
अंध नेत्रों से हीन और इहकि नदान हो और वदे
सी हो अपना देस नही है इहविगाना देस है कौन तु
मारी खवर लेवेगा और कौन तुम को वस्त्र भोजन
देवेगा हम अपने हृदयको कठोरकरके इहां तेरेको वदेसमे
के से छोड़ जावें क्योंकि इहां तेरी पालना करनेवाला
कोई देख नहीं पडताहै इसप्रकार माता पिताकी वा
नी सुनकर सूरदासजोहै सो कृष्ण भगवानका भरोसा
राखकर वडे आनंदसे अभय होयकर कहने लगा कि
हे तात मेरेको वदेस जानकर तुम अपने हृदय
मे मत चिंता और सोचकरो क्योंकि मेरी रक्षा
करनेहारे और पालनेवाले कृष्ण भगवान हैं ~~सर्व~~
अंधदीन और वलहीन दासों के परितोष करनेको सोई
दीनानाथ सामर्थ हैं कही जो ग्राहका ग्रसा हुआ
गजराज अर्थात हसती तिसका कलेश काटनेवाले
जदुनाथ कृपाल जोहैं तिनके चरनो ~~[illegible]~~ की श
रणागत ऐसे मेरे जेसे दीन कोटहां पडे हूयेहैं
गत

सो कैसेभी भगवान हैं कि दीनवंधू दीनपाल दीना
नाथ दीनदयाल दीन हितकारी दीनदुखनिवारी
और दीनभय हारी दीन सुखदायक हैं देखिये जब
ऐसे दीन सहायक भगवान वेद और पुराणों ने प्रकट
गायन किये हुये हैं तो हे ~~[illegible]~~ मैया मेरे को अंध
ने त्रों से हीन और दीन जानकर सो भगवान कैसे नहीं
सहायक होवेंगे तब ऐसे सूरदास का वचन सुनकर
एक वृद्ध साधू दया के वश होकर जाता भया और सूर भक्त
के माता पिता को कहने लगा कि तुम ~~[illegible]~~ अपने इस अंध
बालक की चिंता मत करो आनंद पूर्वक अपने घर को च
ले जावो इस तुमार अंध बालक अब तें मेरे घर मे निवास
करेगा ऐसे कहिकर सो साधू सूरदास का हाथ पकडकर आप
ने आश्रम को ले गया और ईहां तिसके माता पिता भी
पुत्र को साधू के आश्रय भय जानकर हरष से अपने घर को
चले आये तब सूरदास मन करके बडा प्रसन्न भया हूआ तहां
साधू के घर मे हीं निवास करने लगा ~~और कृष्ण परमात्मा के~~
~~नाना सुंदर चरित्र जो पूरब गायन और श्रवण किये हु~~
~~ये थे सो सब हृदय लगाय वार और अब~~ और कृष्ण प्र

४८ मातमा के नाना पूरले सुंदर चरित्र जो वेद पुराणों
ने गायन किये हूये है सो सनमान पूर्वक सब सुन
ता रहा और फिर आप वैष्णव संत भक्तों के समा
ज मे वेठकर परम प्रीती और भक्ती से नृत्य गायन
करकर भगवान के निरमल और मन के हरने वाले
चरित्र जो हैं और जिस प्रकार जो जो दीन वंधू ने अ
द्भुत लीला करी हैं सो ~~[illegible]~~ आद से अंत प्रयंत सब
श्रवण कर लेता भया तब तिसको कृष्ण भगवान
की कृपा प्रसाद से पूरब का हृदय मे संचित भया
हूआ ज्ञान जो था सो सब भान हो जाता भया अ
थीत भास आवता भया ~~और~~ भगवान के नाना च
रित्र और लीला विलास जो थे सो सब तिसके हृदय

८८८ ५११

मै आय गये तब तो सूरदासजी प्रेम रूपी मदिरेको पान
करके मानो उनमत्त पुरुषवत् [illegible] मत्त होय कर
कृष्ण प्रभात नाके मनोहर चरित्रों की और नये नये
रसिक पदोंकी सुंदर रचना जोहै सो करने लग जाते भ
ये॥३॥ चौपाई॥ एस प्रकार कृत नवल सुहाई॥ भ
क्त सूष कल कुंजन जाई॥ करि प्रति दिवस मधुर स्वर
गायन॥ भयो कृष्ण पद भक्ति परायण॥ मथुरा निव
सि सुजस सुख लय[illegible]यो॥ सूर विदत सब देसन भ
ययो॥ निरमत तास ललित पद पावन॥ संसृति गाय
लोक मन भावन॥ वैस्नव भये भक्ति रत नागर॥ भ
क्त प्रधान सुजस गुण सागर॥ सूरदास हरि गुणग
ण गाते॥ जहंजहं फिरहिं भक्ति मद माते॥ तहंतहं भ
क्ति विवस अनुरागे॥ पाछे फिरहिं तास प्रभु लागे॥ सू
र चरित पाछिल भगवाना॥ ग्वाल केलि वन धेनु च
राना॥ निज अनुभव इत्यादि सुहाये॥ देखत रहत
भक्ति सरसाये॥ ब्रह्मानंद मगन दिनराती॥ प्रेम भ
क्ति कछु कही नजाती॥ दोहा॥ एक दिवस मारग च
लत विपन कूप कल कोय॥ दृगवहीन चीन्यो नक
छु लग्यो भक्त च्युत होय॥४॥ टीका॥ इस प्रकार सू
र भक्त जो हैं सो नये पदों की सुंदर रचना कर कर और
मनोहर कुंजों मै जाय कर [illegible] भक्ती प्रीती [illegible] और
मधुर स्वर से गाय [illegible] और हृदय मै केवल ए
क कृष्ण भगवान के चरन कमलों का आधार राख कर
मथुरा मै वास करते हुये सूरदास बड़े सुख और सु
जस के सहित होय कर सरव देसों मै प्रसिद्ध हो जाते
भये तिन के रचे हुये बड़े रसिक पवित्र और सु
दर पद जो हैं सो संसार मै लोग गाय गाय कर के वैस्नव
भक्ती मै चतुर भक्तों प्रधान सुजस और गुणों के सा
गर सब लोकों मै उजागर होय गये हैं और सूरदा
स जी भक्ती के मद मै मत्त भये हुये भगवान कृपा
निधान के गुणानुवाद गाते गाते जहां जहां चले जा

सूरदास तब कहत उचारी॥ मै अब ईहां स
दन नगधारी॥ कछु दिन करहु ललित निज वा
ता॥ कृस्न प्रसाद विगत श्रम त्रासा॥ तुव निज ग
वहु सदन ~~[illegible]~~ सुमकाहीं॥ चिंता मोर क
रहु कछु नाहीं॥ सुनि अस जननि जनक तहि वा
नी॥ सुत सनेह निज मानस मानी॥ रुदन करत
अस वदन उचारे॥ वतस अंध दृग जुगल तुमारे॥
करहि कवन भोजन पटदाना॥ सिसु नदान तुव दे
स विराना॥ कस तजि जाहिं सुवन पितु माता॥ काहु
न देखि परत तुव त्राता॥ सुनि अस जननि जनक
सुखवानी॥ कृस्न भरोस सूर जिय मानी॥ दोहा॥ बो
ल्यो अभय प्रसन्न मन वदन वचन सुखदान॥ तुव
जिय करहु न सोच कछु मोहि वदेस अस जान॥ २॥
टीका॥ भगवान कहते हैं कि हे भक्त केवल मा
ता जो है सोई तेरी प्रीती पूर्वक सेवा करेगी अैसे
तिस जादव को उपदेश करके दीनवंधू भगवान
मौन होय गये तव जादव जो है सो चरन स्याम के च
रन कमलों पर प्रणाम करके ~~कलीकाल और~~ द्वापर
और कलीकाल की संधी के अंत को देखने लगा
अैसे जब सो समय आय प्रापत भया तव जादव वै
कुंठधाम को त्यागकर मथुरा के निकट ब्रह्मनों के घर
मे आय उतपन्न होता भया जनमतें ही अंध नेत्रों
से हीन माता पिता देखकर कुछ हरष नहीं मानते
भये और वांधव संवंधी भी मौन हो रहे किसी ने कुछ हृदय मे
उतसाह नहीं जाना केवल एक माता ही प्रीती प्यार
करती है और कोई देवता भी नहीं है इस प्रकार जव
सो अंध वालक आठ वरष का होय गया तव पिता ने
संसकार करवाय कर यज्ञोपवीत अर्थात जनेऊ
जो है सो पवाय दिया तिसतें उपरांत नगर में सो सू
रदास नाम करके प्रसिद्ध होजाता भया एक समय
आनंद पूर्वक माता पिता और नगर के यातू लोगों

तब भगवान कृपानिधान भक्तजनोकी रक्षाकरने
वाले अपना अदभुत और सुंदर गोप रूप धारकर के त
तकाल ही हाथ से हाथ पकड कर सूरभक्त को कूपमै
गिरते को निवारण करलिया तब करी जो हसती है ति
स का त्रास और कलेश दूरकरने वाले भगवान के हाथका
स्पर्श होतेही सूरदासजीने हृदयमै जानलियाकि
इह हाथ तो मानुष्य का नहीं है ऐसे विचारकर दया
कीनिधी दीनानाथ का हाथ जो सो सूरभक्तने अ
पने हाथसे पकड कर आनंदसे ऐसा वचन उचारन
किया कि अब जब लग सांच नहीं कहोगे तब लग
मै हाथ नहीं छोडूंगा ऐसे भक्तका वचन सुनकर
भगवान मुखसे मुसक्याकर और बलसे सूरभक्त
के हाथसे अपना हाथ छुडायकर दीनबंधू न्यारे जा
यकरके स्थित होय गये जब इसप्रकार भक्तजनों
के चित्तको चुराय लेनेवाले भगवानकी चतुराई
~~देखकर~~ देखी तब ब्रह्मानंदमै मगन भया हुआ
कहताहै कि मै आज जगतमे धन्य हूं और अहोमेरे भा
ग्य हैं कि जिसको ऐसे तीनलोकके नायक भगवा
न के हाथ का स्पर्श प्रापत भयाहै इसप्रकार आनं
दसे गदगद बाणी भया हुआ भक्तप्रधान हाथजोड कर
नंम्रबाणीसे प्रार्थनाकरने लगा कि हे कृपानिधान मै तुम
को बारबार वंदना करताहूं जोमेरे को ऐसे निबल
जानकर केसी और कंस असुरोंके मदको गंजन
अर्थात दूरकरनेवाला अपना हाथकमल जोहै सो ब
लकरके मेरे हाथसे छुडाय लियाहै ~~सो~~ हे कु
मद रूपी भक्तजनो के आनंददेनेवाले चंद्रमा हे सं
सार समुद्र के तारनेवाले भगवान क्या भया जो हा
थसे छूट गये हो मनसे छूटना बडा कथन है अबतो
बलसे हाथको तोडकर मेरेको निबल करचले
हो परंतू जब मनसे छूटोगे तो भगवान तुमको देख
लेऊंगा कि कैसे छूट जाते हो ॥ ५ ॥ चौपाई ॥

सुनि कटाक्ष मय वचन सुहाये॥ सूरदासकर प्रभुमन
भाये॥ हरषे दीनदयाल भगवाना॥ कीन स्पर्श दृगन
तहि पाना॥ ततक्षण अंध नयन जुगतासा॥ अमल
विमल कल जोति प्रकासा॥ पाय दिपति अस सूर सुजा
ना॥ सनमुख कृपा सिंधु भगवाना॥ कलित कंज लोचन
चैन वरना॥ आनन हृदय भक्त तमहरना॥ चारु लिला
ट खोर श्री खंडा॥ माल जयंति जनन मन मंडा॥ यज्ञोप
वीत पीत पट राजा॥ निज छवि कोटि मदन मद लाजा॥
चितवनि चारु मुनिन मन मोहन॥ धृत गोपाल वेस वन
सोहन॥ मूरति विमल बाल वलभैया॥ निरत प्रवर
पर चारन गैया॥ सूर विलोकि रूप मनहरना॥ पर्यो
दंडवत चरनन धरना॥ सुमरि कृष्ण जब सीस उठा
या॥ कीन तुरंत मुग्ध प्रभु माया॥ जानत भयो सूर
मन माही॥ गोपबाल नंदनंदन काहीं॥ लग्यो वहुरि
अस वदन उचारन॥ तुमहुं कूप च्युत कीन निवारन॥
भयो सहाय अंध तकि मोरा॥ अहो कीन उपकार नथोरा॥
वंदहुं बार बार अव तोही॥ कीन्यो कूप त्रास गत मोही॥
अव वृतांत निज देहु सुनावा॥ कहि तें आव कवन कि
त जावा॥ मोह विवस अस तासु निहारी॥ वोले गो
प वेस गिरधारी॥ मथुरा वसहुं गोप सुत भैया॥ आ
वा विपुन चरन हित गैया॥ तोरे देखि भक्त दृग हीना॥
उहां निकसि कूप च्युत कीना॥ अव तुम जाहु सदन
सुखमाना॥ मैं हूं त करहुं विपुन निज ध्याना॥ दोहा॥
अस कहि वतसल भक्त प्रभू कृष्ण दलन दुख कूर॥
द्रुमन ओट करु लाय तन गये कछुक जव दूर॥ ६॥
टीका॥ इस प्रकार वडे कटाक्ष वाले सूरदास जी के वच
न सुनकर भगवान दीन सुखदान परम हरष को प्रापत
भये और प्रसन्नता पूर्वक दीनानाथ ने अपने हाथ का
तिसके नेत्रों को स्पर्श जो किया तो ततकाल हीं दोनो
नेत्र खुलकर निरमल और जोती प्रकाश वाले होय गये
तव सूर भक्त नेत्रों के सहित होयकर भगवान

कृपानिधान को कैसे ध्यान से सनमुख देखतभये
कि नीले बादर के समान जिनके शरीर की श्यामा ओर
कमलों वत नेत्रों की शोभा भक्तजनों के मन के अंधे
रे को दूर करने वाला सुंदर मुखारविंद ओर मस्तक
मे शोभा देता है चंदन का तिलक हृदय मे पहिरी हुई
जयंती माला दामनी जो बिजली है तिसको लज्जा देने वा
ले पीत वस्त्र ओर तैसे ही बड़ी उपमा वाला यज्ञोपवीत
अर्थात जनेऊ मुनिजों के मन को हरने वाली नेत्रों दया की
दृष्टी गोपाल भेष धारे हुये बनो गऊओं के चराने विषे
र मे प्रवीन ओर सुंदर मनोहर बाल मूरती बलरामजी
के भैया भगवान अपने दिव्य रूप से कोटि कामदेव
को की छवी हरने वाले ऐसे दीनबंधू के बचित्र ध्यान
न को सूर भक्त नेत्रों मे देखकर दंडवत चरनो पर गि
र पड़ता भया ओर फिर कृष्ण प्रमातमा को सुमरकर
चरनो से सीस जो उठाया तो ततकाल ही भगवान
की माया ने मोहित कर लिया तब नंदलाल देव
तिसको एक गोप बाल ही प्रतीत होते भये तिन
को सनमुख देखकर कहने लगा कि हे भैया तुमने
मेरे पर अत्यंत उपकार किया है देखो मै कूये मे
गिरा जाता था तुमने अंध जानकर सहायता करी
ओर कूये मे गिरते को हाथ से पकड़कर निवारण
कर लिया तुम धन्य हो ओर तुमको मै बार बार बं
दना करता हूं जो कूये मे गिरते हुये मेरे अंध के प्रा
णों की रक्षा कर लई है अब कृपा करके मेरे को अ
पना वृतांत सुनावो कि तुम कौन हो कहां से आये
ओर कहां को जाने वाले हो ऐसे सूर भक्त का कथन
सुनकर ओर तिसको मोह के बस जानकर गोप
वेस गिरधारी भगवान जो है सो कहने लगे कि हे भाई
मै मथुरा वासी गोप पुत्र हूं इहां बन मे
गोअन के चराने के वासते आया हूं तुमको नेत्रों
से हीन कूये मे गिरते देखकर निवारण कर लिया है

ते हैं तहां तहां हीं तिनकी भक्तीके वश भये भगवान पीछे लागे फिरते हैं सूरदासजी जो हैं सो भगवानके नाना कौतुक ग्वालवालोंके सहित हासविलास और बनमैं गऊओंका चराना इत्यादि मनोहर सब चरित्र जो हैं सो अपने अनभवसे नित्य भक्ती प्रेम को अधिक किये हुये देखते ही रहते हैं रा त्रीदिन ब्रह्मानंदमें मगन भक्तीप्रीती प्रभाव कुछ कथन नहीं किया जाता है तब एकदिन वनमें मारग चलते चलते अकस्मात कहीं कूप्रा जो आयगया तो भक्तप्रधान नेत्रोंसे हीन जोथे तिसमे गिरने लगे ॥४॥ चौपाई॥ तब भगवान भक्त रखवा रे॥ अदभुत गोप वेस निज धारे॥ गहित करन कर तुरत मुरारी॥ भक्त कूप च्युत लीन निवारी॥ करिकर हरन त्रास करकेरा॥ सूर सपर्स लेत जियहेरा॥ इहकर जानि परत नर नाहीं॥ करि विचार करु णा निधकाहीं॥ करते लीन पकरि करसंगा॥ कहिस वचन मन मोद उमंगा॥ अब न तजहु विनु सोच बखाने॥ तब भगवान वदन मुसका ने॥ तूरकरन कर करि वरजोरा॥ चले छुड़ाय भक्त चित चोरा॥ असजिय जानि देव चतुराई॥ ब्रह्मानंद सूर सुखपाई॥ मानत भयो भूरि नि जभागा॥ करसो कर कृपाल जब लागा॥ गदगद गिरा प्रेम दृगवारी॥ बोल्यो वदन वचन मनहा री॥ वंदहु वारवार प्रभु तोही॥ जो अस निवल जानि जीय मोही॥ केसी कंस असुर मदगंजा॥ लीन छुड़ाय सवल कर कंजा॥ दोहा॥ काह भयो करतें छुटे करन धार भव सिंधू॥ मनतें छुटन कठिन जन भक्त कुमद उर ईंदु॥ अब तो बल्ल कर तोरि कर चले निवल कर मोहि॥ पेमन तें छूटो न जब तब देखों प्रभु तोहि॥ ५॥ टीका॥

४८१

491

सूते व्याकुल भये हूये सूरभक्त पीछे लाग चल
ते भये और मन मे कहते हैं कि वे सुंदर कोमल
अंगो वाला और कोटि कामदेव की छवी को लज्जा
देने वाला मनोहर बालक कहां चला गया है
ऐसे कहते हूये इधर उधर व्याकुल फिरते हूये फि
रते हैं सो बाल प्रभू दृष्टी मे नहीं आवते हैं हृदय
मे वडे कलेश को प्रापत भये जहां से कोई प
थिक अर्थात रसते चलने वाला आवता है तिस को
आगे जायकर पूछते हैं कि भैया तुमने कोई स्याम
वरन कोमल अंगो वाला हाथ मे वेत की छडी धारे
हूये गऊओं को चरवाली कांधे पर कारी कमलिया
और हृदय मे तुलसी की माला पहिरे हूये बडा सुंदर
मनोहर बालक तो नहीं देखा ऐसे तिस का कथ
न सुनकर पथिक जन कहने लगे इह क्या कहता
है और इस को क्या भ्रम होय गया है हे भाई ईहां
तो कोई भी गऊओं के चराने वाला हमने देखा न
हीं है तम किस भ्रम मे भूले हो जावो अपने घर
को चले जावो तव सूरभक्त तिनका कथन सुनकर
आचर्ज को प्रापत भये हूये वण मे आगे को
चले जाते भये और सोई मन के हरने वाली मच
वत स्याम सरी गोप बालक जो है तिसी को वण
मे खोजते फिरते हैं तव इस प्रकार भ्रमन करते
करते वहुत ही श्रम पाया अंत को थकत हो
यकर एक वृक्ष की छाया मे वैठ गये
इतने मे सूरज जो है सो लुपत होय गया औ
र रात पड गई तव सूरदास जी व्याकुल भ
ये हूये उठ करके धाय चले और वण मे जहां
तहां भ्रमन करने लग जाते भये तिसी गोप
बालक को खोजते फिरते हैं तिन की ऐसी अनन्य
गती होय गई कि दूसरा कोई नहीं सूझता मानो
कृष्ण भगवान का हूहीं होय गये हैं भक्ती प्रीती

कहीं

५५

केवश भये हूये वणको त्यागकर घरको नहीं जाय सकते हैं तव रात्री के समय निद्रा जो आय गई तो स्वपने मे सोई सुलभ अंगों वाले मनोहर गोप बालकको कि जो दिन के समय वणमे देखा था देखते भये तव गोपरूप भक्त सहायक भगवान मंद हास से वडा सुखदायक वचन जो है सो कहने लगे कि हे भक्त ईहां गोपसुत अर्थात गोप पुत्र तो कोई नहीं है इह सव कौतुक मैने हीं किया है वनमे गोधनका चराना और तुम को कूये मे गिरते निवारण करलेना मेरा हीं विलास है हे भक्त सूर मैने तुमारे को दरसन देने के वासते इह अदभुत चरित्र किया है इसी तें तुमने इन नेत्रों से मेरा दरसन पाय लिया है अव हे प्यारे तुम मथुरा मे चले जावो तहा मेरे सुंदर चरित्र और गुणों के समूह जो हैं सो गाय गाय कर संसार मे पूर्ववत अभय होयकरके विचरते रहो॥७॥ चौपाई॥ सुनि प्रभु वचन सुखद अभिरामा॥ सूरदेउ वत करत प्रणामा॥ वोल्यो आज धन्य जग कीना॥ जहि इन दृगन दरस प्रभु कीना॥ मुनि जोगिन सुर दुरलभ जोई॥ मोरे सुलभ आज जग सोई॥ अव न देव कछु संसृति कामा॥ एक समण तोर अभिरामा॥ मोरे हृदय लालसा छाई॥ विसरहिं सोन भक्त सुखदाई॥ अह तुमार माया वलवाना॥ करहिं नमोहि मुग्ध भगवाना॥ हे कृपाल कल कमल विलोचन॥ हृदय भक्त जन सोच विमोचन॥ जिन नयनन अस रूप तुमारा॥ मै प्रतत प्रभु लीन निहारा॥ तिन सन जगत विलोकन काहीं॥ दीन दयाल मोरे रुचि नाहीं॥ तातें करहु पूर्ववत मोरे॥ दृग वहीन वंदहु प्रभु तोरे॥ तुव सरूप नित दीन सनेहू॥ देखत रहहु दिवस निसि एहू॥ करि अस विनय वदन अनुरागा॥ भयो विराम सूर वड भागा॥ वोले हरि सम भक्त चित चोरा॥ सूर कथन सव संतत तोरा॥

४९२

492

होहिं सत्य संसय कछु नाहीं॥ भाषि वदन प्र
स त्रिभुवन साई॥ भये लुपत प्रभु भक्त उवासो॥ उठे
सूरजन सपन विचासो॥ जुगल ग्रंथ लोचन निज पा
यो॥ प्रभु पद सीस मनहिं मन नायो॥ निज कल पत
पद पावन चाहू॥ लग्यो करन गायन मन हाहू॥ उदय
भरन तजि विपुन सिधाये॥ जमुना तीर भक्तवर आये॥
करि सनान गुण गण प्रभु गाते॥ मथुरा आय भक्ति म
द माते॥ भजन प्रभाव देखि अधिकाई॥ सादिर करहिं
लोक सिवकाई॥ दोहा॥ सब कर हित जीय मानि निज
दुज विरक्त संसारू॥ रटन कृस्न गुण गण निरत सूर
भक्त व्रत धारू॥ ८॥ टीका॥ इस प्रकार भगवान कृपानिधा
न के वचन सुन कर सूरदास जी दंडवत प्रणाम करके
कहने लगे कि मै आज जगत मै धन्य हूं और धन्य मेरे
भाग्य हैं कि जिसने इन नेत्रों करके भगवान भक्त सु
खदान का दिव्य दरसन पाया है कैसे भी भगवान हैं कि
जिनके दरसन के वासते मुनी और जोगीजन नाना
जतन और हठ करते हैं परंतु सो भगवान तिन के
ध्यान मै भी नहीं आवते हैं आज मेरे पुन्य कैसे उदय
हुए भये हैं कि सो भगवान मै ने नेत्र भर कर प्रतक्ष
देख लिये हैं हे देव हे कृपानिधान अब मेरे को
और कुछ कामना नहीं है केवल एक तुमारे
भजन और सुमरण की हृदय मै लालसा है सो
तुमारी कृपा करके मेरे को कदाचित नहीं विस
रै और देव तुमारी बलवान माया जो
है सो मेरे को मोहित नहीं करै और हे क
मल लोचन हे भक्त जनो के हृदय के सोच क
लेश दूर करने वाले भगवान अब और मेरी इह प्रा
र्थना है कि जिन नेत्रों करके इह प्रतक्ष तुमारा
रूप मै ने देख लिया है तिन नेत्रों से जगत को
देखने की मेरे हृदय मै कुछ अभिलाषा और रुची
नहीं है ताते कृपा करके मेरे को पूर्ववत नेत्रों

हे भक्त अब तुम सुखसे अपने घरको चले जावो
और इहां मैभी वनको प्रस्थान करता हूं ऐसे क
हिकर सरव कलेशों के दूर करने वाले कृष्ण भगवान
वृक्षों की ओटमें होकर कुछक दूर चले गये ॥६॥ चौ
पाई ॥ तव दरसन हित सूर सुजाना ॥ पाछिले चल्यो
वेग अकुलाना ॥ गवन्यों कहां वाल मृदु अंगा ॥ हरन
ललित छवि कोटि अनंगा ॥ इत उत फिरहिं चितथ
मन माहीं ॥ आवत दृष्टि वाल प्रभु नाहीं ॥ अतसे कले
श सूर तव पावा ॥ पूछत पथिक देखि जित आवा ॥
कोअस वरन स्याम मृदु चारू ॥ वेनु पानि गैयन चरवा
रू ॥ कामर कंध्र माल वन सोहा ॥ देखा तुम हुं वाल
मन मोहा ॥ सुनि तहि कथन पथिक इहि भांती ॥ इहक
स कहत कवन तोहि भ्रांती ॥ इहां न काहु धेनु वन
चारी ॥ जाहु सजन निज सदन सिधारी ॥ सूर सुन त
अस पथिक वखाना ॥ आगले चल्यो विपुन विसमाना ॥
खोजत नील जलध वत वरना ॥ गोप वाल कानन
मन हरना ॥ भ्रमत भ्रमत दारुण श्रम पाया ॥ वैठ्यो
अेत विपत द्रुम छाया ॥ तोलों दुसो सूर निसि छायो ॥
भक्त सूर व्याकुल उठि धायो ॥ जहं तहं लग्यो भ्रमन
वन माहीं ॥ खोजत गोप वाल मृदु काहीं ॥ गति अनन्य
अस भक्त जु ज्ञाना ॥ भातद रूप कृष्ण भगवाना ॥ पाव
न भक्ति प्रीति मन माहीं ॥ तजि न जाहिं कानन पुर काहीं ॥
तव निसि स्वपन रूप मृदु होई ॥ देखे दिवस गोप सुत जो
ई ॥ मंद हास जुत भक्त सहैया ॥ वोले वदन वचन सु
ख दैया ॥ इहां न भक्त गोप सुत कोई ॥ मैं हुं कीन कौ
तुक कल सोई ॥ कीन्यो तुमहिं कूप च्युत वारन ॥ वन
त गोप वन गैयन चारन ॥ ज्योति विमल तुव दृग न
प्रकासा ॥ भक्त सृष्टि सव मोर विलासा ॥ तुव नयनन
इन लीन निहारी ॥ मोर सरूप भक्त व्रतधारी ॥ तुव
हित दैन दरस मन हारू ॥ इहमैं कीन चेष्टा निज चारू ॥
दोहा ॥ अव मथुरा तुव गवन करि मोर चरित गुण
गान ॥ करि गायन भव पूर्व वत विचरहु अभय सु
जान ॥ ७ ॥ टीका ॥ तव दीनवंधूके दरसनके वा

४९२

493

भक्ति पूरवक वचन उचारे॥ तुव जादव प्रभु लोगन गाये॥ भक्त कृपा भगवान सुहाये॥ मोर प्रश्न कर दीन सनेहू॥ देहु उत्तर उर हरहु संदेहू॥ सदन मो र प्रभु अगनित भामा॥ एकतें एक सरस अभिरामा॥ तिन हु मध्य जादव कुलवारी॥ ऐसिहिं कोउ किना भक्त मुरारी॥ सुनि दलील अस कथन सुहावा॥ सू र वदन अस वचन अलावा॥ सुनहु धरन नायक बड भागी॥ करहु कथन कछु तुव हित लागी॥ जे हि तें तोर मनोरथ एहा॥ अवसिहिं होहिं फुर विगत संदेहा॥ इह तुमार सं कुल वर नारी॥ तुमहिं देखि पु नि मोहि निहारी॥ क्रमतें एक एक अस आई॥ क रहिं गवन इत मारग राई॥ तिन हु मध्य तवकर जीय जोई॥ सो निज सकुच लाज सव खोई॥ मो हि सन करहिं रुचिर संभासा॥ होहिं तुरंत बहुरि सुत तासा॥ सुनत साह अस दीन रजाई॥ मह षी सुनत सकल चलि आई॥ एक एक करि नेम्र प्रणामा॥ चलीजात भामनि निजधामा॥ आ ई एक सव न ते पाछे॥ पति प्रीय रूप ललित गुण आछे॥ दोहा॥ निरषत सन मुष हरष वस कहिस वदन मुसक्याय॥ कहितें कीन आगम न तुव मोर मर्म कछु पाय॥ ९॥ टीका॥ तव एक समय दिल्ली का वादसाह जो सव देसों मे प्रसिद्ध थो सूरदासजी का सुजस सुनकर ~~था~~ तिनको अप ने पास वुलाय लेता भया और जव सूर भक्तजी आ ये तव वादसाहने उठकर प्रणाम किया और फिर वडे आदर सतकार से पवित्र आसन पर वैठार कर भक्ती पूर्वक कहने लगा कि हे संत उदार तुम भगवान के प्रवीन भक्त जादव करके सव लोगों मे गाये हुये हो अव कृपा करके मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिये और मेरे हृदय के संदेह को दूर करिये सो क्या है कि भगवन मेरे घर मे एकतें एक सुंदर और

और

परम चतुर स्त्री हैं तिनके बीचमें कोई जादव कुल
की भी है कि नहीं इस प्रकार दिल्लीपत का कथन सु
नकर सूरदासजी कहने लगे कि हे पृथवीपाल मैं तेरा
हित विचारकर कुछ कहता हूं तूं श्रवणकर कि जिस
तें तेरा मनोरथ अवी सिद्ध और सफल हो जावे तुमा
री सब भामनी अर्थात स्त्री जो हैं सो प्रथम तुमको
देख कर फिर मेरे को देखती हुई क्रमतें एक एक
होकर इस मारगसे निकलती जावें तब तिनमें जो
तिस समयकी स्त्री होवेगी सो लज्जा और संकोचको
त्यागकर मेरे साथ निरसंक वारता अलाप करेगी
और फिर वे तिसी समय हीं प्राणों को भी त्याग दे
वेगी इस प्रकार साहने सुणकर ततकाल आज्ञा
दे दई तब पती की आज्ञा पाय कर राणी
जो हैं सो सब चली आई एक एक क्रम पूर्वकन
म्र प्रणाम करती हुई अपने घरको चली जाती
हैं तिन सबके पीछे एक पतीको प्यारी
सुंदर रूपवाली और गुणोंकी खानी स्त्री जो आई
सो सूरदास जीको सनमुख देखकर हरषके वश भई
हुई कहने लगी कि हे संत तुम कहांसे आये और
कुछ मेरा भी मर्म अर्थात भेद जानते हो॥ ९॥ चौपाई॥
देखत कहिस सूर तहि ओरा॥ सुभ्रे मोहि मरम सब
तोरा॥ भामनि सुनत चरन गहि लीने॥ देखत सब न
प्राण तजि दीने॥ महिखी आन देखी अस तासा॥ लागी
रुदन करन संभासा॥ साह विपत मानस विसमायो॥
धरत धीर पुनि बदन अलायो॥ वंदहुं बारबार अबतोही॥
भगवन करहु कथन सब मोही॥ को इह रही भवन मम
भामा॥ जहि अस तज्यो वपुष निसकामा॥ तब पूरव
तहि कथा सुहायन॥ लागे सूरदास मुख गायन॥ इह
मथुरापुरि वसहि सुहाई॥ चार वधू सब लोगन गाई॥
हावभाव कल निरत पुरायन॥ कलाप्रवीन परम पटु
गायन॥ सभा महेंद्र धनक जन जाई॥ निज प्रभाव

गुण लेत रिझाई॥ काहु धन उ कालसुम पायो॥ पानि
गृहण निज सुवन रचायो॥ इहि कहं पठ्यो बोलि सन
माना॥ लाग्यो होन नृत्य कल गाना॥ करि निज क
ला ललित चतुराई॥ मुर्छित सभा कीन समुदाई॥ त
व कोऊ ग्रान देस कर राई॥ इहि नृत गीत देखि चतु
राई॥ निज पुर गयो लेत हरषाना॥ पावा तहां वि
विध सनमाना॥ एक दिवस रत नृत्य अगारा॥ देखि
स रुचिर धरन पति दारा॥ सजि श्रृंगार आभरन सो
हन॥ ठाडी मनहुं मान रति मोहन॥ चारि ओर प
रिचारत दासी॥ सेवहिं सुखद रूप गुण रासी॥ अस
प्रभाव दृग देखि सुहावा॥ तहि कर हृदय मनोरथ आ
वा॥ हमहुं होव इहि सम कस रानी॥ अस विचा
रि मानस सकुचानी॥ इन कर भूप पुन्य संसारा॥
हम हु अधम धिग जनम हमारा॥ पुनि देखिस छित
पत पटरानी॥ देत दान दीनन रति मानी॥ दोहा॥ धन
भूषण पट भक्ति जुत करत सकल सिव काई॥ अत
थि संत आवत सदन भोजन देहिं जिमाई॥ हम हु क
रब यहि पुन्य अस कहत गुणत जियमाहिं॥ तो पा
ऊव संसय नहीं भूप पतनि पद काहिं॥ २०॥ टीका॥
तव सूरदास जी तिस भामनी की ओर देख कर कहने लगे
कि हे सखी ले मै तेरे पूर्व ले जनम को जानता हूं और तेरा
भेद मेरे को सारा विदत है इस प्रकार तिस स्त्री ने सूर भक्त
के मुख से वचन सुन कर ततकाल हीं चरन पकड़ लि
ये और सवके देखते देखते तहां भक्त प्रधान के चर
नो पर हीं अपने प्राणों को त्याग देती भई॥ ऐसे ति
स को ओर ■ रानी सव देखकर रुदन करती हुई पर
स्पर सोचने लग जाती भई और साह भी व्याकुल
और अचरज के वश भया हूआ कुछ क धीरज धार कर
सूरदास जी के आगे विनती करने लगा कि हे भगवन
मै तुमको वारवार वंदना करता हूं कृपा करके इह वृतो
त मेरे को सव प्रकार करके कथन करिये जो इह स्त्री
मेरे घर मे कौन रही कि जिस ने ऐसे निसकाम
होय करके शरीर को त्याग दिया है इस प्रकार साह

से हीन ग्रंथ हीं वनाय देवो क्यौंकि जो सरूप दीना
नाथ तुमारा मैं नेत्रौं से देखा हूआ है सोई मेरे हृदय
मै स्थित रहै और तिसी को मैं रात्री दिन सदैव हीं
देखता रहूं इस प्रकार वारवार विनती करके सूर
भक्त भगवान की स्याम सुंदर मूरती को हृदय मे वसा
य कर मौन होय गये तव भक्तवतसल भगवान
कहने लगे कि हे सूरभक्त तुमारा कथन जो है सो
निरंतर करके सव सत्य हीं होगा इस मे कुछ संशय
नहीं है इस प्रकार कहि कर भगवान कृपानिधान
तुरत हीं लुपत होयगये तव ईहां सूरदास भी उठ
खडे हूये और स्वपने को विचारते भये फिर अपने दो
नो नेत्र अंध जानकर जगत नाथ के चरन
कमलों पर मन मै हीं दंडप्रणाम करने लगे
और अपने कलपत अर्थात रचे हूये सुंदर पद जो
हैं सो भक्ती प्रीती से गावते गावते सूरज के उदय
होते वण को त्याग कर जमुना के किनारे पर चले
आवते भये तहां आनंद पूर्वक सनान करके भग
वान के निरमल गुण गण जो हैं सो गायन करते करते
भक्ती के मद मे मत्त भये हूये सूरदास फिर मथुरा मे
चले आये तव तिन की भक्ती का महा प्रभाव देख
करके सव लोग वडे सनमान से पूजन और सेवन
करने लगे और सूरभक्त भी संसार मै विरक्त होय
कर और हृदय मे सव जीवों का हित मान कर रात्री
दिन भगवान के भजन सुमरण और कीर्तन गायन
मैंहीं लीन रहने लगे ॥८॥ चौपाई ॥ अवसर भले
को सुहावा ॥ विदत दलीस लोक सव गावा ॥ संजुत
भक्ति प्रीति हरखाये ॥ तास सूर जन लीन वुला
ये ॥ आवत देखि भक्त अभिरामा ॥ साह कीं उठि दं
ड प्रणामा ॥ सादिर सुचि आसन वैठारे ॥

८५४ ५४१

इस प्रकार तिस पटरानी की भक्ती देखकर इस वेस्याके हृदयमे भी उतकंठा अर्थात अभिलाषा उतपन्न होजाती भई कि यदी हमभी अैसे दान सनमानमे रुची और प्रीती करैं तो निस्चय है कि हमभी अैसी महारानी की पदवीको प्रापत होजावें इसमे कुछ संशय नहीं है ॥ २० ॥ चोपाई ॥ अस प्रकार पावन सुभतासा ॥ ललित दान रुचि हृदय प्रकासा ॥ तब तहि दैव योग्य कर आई ॥ ज्वर रुज उपज ~~उपज~~ प्रबल दुखदाई ॥ पुनि वेंचत्य भाव कहे सोई ॥ प्रापत भई व्याधि सब खोई ॥ धरम दूत रौरव तहि डारयो ॥ तहां भोगि निज कृत अगनारयो ॥ सुरपुर गवनि बहुरि हरषाती ॥ अपसर नृत्य गीत कलराती ॥ मथुरा भवन भवन भगवाना ॥ जो नृत गीत ललित गुणगाना ॥ कीनसि भक्ति प्रेम सरसाये ॥ तहि परिणाम अमर पुर पाये ॥ अस उपकार देखि नृपरानी ॥ जो तहि हृदय दान रुचि मानी ॥ ताहि प्रसाद भवन तुव आई ॥ भोगे विविध भोग सुखपाई ॥ आज विदत देखत तुव एहा ॥ नृतवस भई तुरत तजि देहा ॥ ये जादव वंसी चीय जेहू ॥ रही सो देव रूप सब तेहू ॥ कौतुक करन देवपुर त्यागी ॥ आई धरणि कृस्न अनुरागी ॥ गवनी बहुरि अमर पुर काहीं ॥ रही सो मनुज रूप कछु नाहीं ॥ अस कहि सूरदास हरषाते ॥ भोगि विदाय भक्ति मद माते ॥ तब दलीस सादिर धन दीना ॥ भक्त सूर सुईकार न कीना ॥ हमरे नहिंन द्रव्य कछु कामा ॥ तब दलीस चरनन अभिरामा ॥ धरयो सीस नमृत कर जोरी ॥ विनय वदन कछु कीन नथोरी ॥ चले सूर तब होत विदाये ॥ हरषत ललित कृस्न पुरि आये ॥ अगनित विमल भक्ति सरसावन ॥ विरचत कृस्न चरित पद पावन ॥

रहे करत गायन संसारा॥ सकल लोक हित हृ
दय विचारा॥ पदन प्रबंध सूर जन नागर॥
बाध्यो जनहुं सेतु भव सागर॥ बिनु प्रयास क
लि काल मझारा॥ तहि प्रसाद उतरत सं पारा॥
दोहा॥ सूर सूर सम विदत जग सकल कवि न
सिमोर॥ सूर स्याम जहि भक्ति वस भये भक्त चित
चोर॥ जो लो विचरे धरनि तल पल न विसारे
स्याम॥ भये अंत अल चरन कल कंज कृस्न
अभिराम॥ ११॥ टीका॥ इस प्रकार तिसके हृदय मे
सुंदर दान सनमान की रुची जो है सो हो जाती भई तब
दैव योग करके अकस्मात हीं तिसके शरीर को ज्वर रोग
आय करके व्यापत होय गया सो तिस प्रबल रोग के
महा कलेश से तिस का शरीर थोड़े हीं काल मे पंचत्य भाव
को प्रापत हो जाता भया अर्थात कालके वश होय गया तब
धरमराज के दूतों ने तिस कों रौरव नामा नरकके बीच
डाल दिया तहां अपने किये हूये करम और पाप जो
थे सो सब भोगकर तिसतें उपरांत आनंद से स्वर्गलो
क को चली जाती भई तहां अपसरा होय करके देव
ताओं की सभा मे सुंदर नृत्य और गायन करती रही सो
मथुरा मे जो तिस ने भगवान भवन भवन मे भक्ती प्री
ती से नृत्य और गायं की तंन किया हूआ था तिस
के प्रभाव से अमर पुर अर्थात स्वर्ग धाम जो है सो प्रा
पत किया और राजा की राणी का उपकार देखकर जो
तिस को दान सनमान की रुची हूई तिस के प्रसाद से
तुमारे घर मे आय कर बड़े सुखदायक भोग जो हैं सो
अनेक प्रकार करके भोगती भई और अब तुमारे दे
खते प्रतक्ष शरीर को त्याग कर कालके वश होय गई है
हे पृथवी पाल जादव वंस की स्त्री जो हैं सो तो सब देव
रूप हीं रही हैं एक कौतुक करने के वासते देव पुर
जो स्वर्ग है तिसको त्याग करके कृस्न प्रमात्मा के प्रे
म के वश भई हूई पृथवी तल पर चले आवती
भई और भई हो नाना क्रीड़ा विलास करके

४८६ ४४४

फिर कौतुकसे भगवानको सुमरती हूई तहांश्रमर पुरकोही चलीगई है इस प्रकार सव वृतांत सुनाय कर फिर सूरभक्तजी वादसाहसे विदाय ~~लेकर~~ मांगते भये तव साहने वडे सनमानसे धनकर केनानांत्रिवकाई करी सो देखकरके भगवानके निसकाम भक्त सूरदासजी कुछभी सूई कार करतेभये कहने लगे कि हे पृथीनाथ हमतो रामनामके धनकी इछा रखते हैं और धन द्रव्यकी हमारे हृदयमे कुछ कामना नहीं है ऐसे सुनकरके साहजोहै सो भक्तप्र धानके चरनों सीसधरकर और हाथ जोडकर नम्र वाणी से विनती करकर विदायकर देताभया तवसू रदासजी कृस्नप्रभातमाका सुमरन करते हूये तहां से विदाय होकर मथुरा वृंदावनमे चलेआये तहां हृदय मे संपूर्ण लोकोंका हित ~~हृदय~~ विचारकर वडेनि रमल और परम पवित्र भक्ती प्रीतीके अधिक क रनेवाले भगवानके अगनित चरित्र जोहैं किजि नकी कुछ गिनती नहीं है सो मनोहर पदोंमे र चरचकर प्रेम और भक्ती नित्य गायकरते रहे सो पदोंके प्रवंधका सूरदासजीने मानो संसार स मुद्रका एक सेतू अर्थात पुल वांधदियाहै तिसके प्रसादसे कलीकालके लोक ~~विन~~ यतनके विना स हजेहीं पार ~~हुये~~ जातेहैं इहसूरदासजी सूरज केसमान प्रसिद्ध सव लोगोंमे प्रधान हैं ~~है~~ ना भादास जी कहते हैं कि हे संत भक्तो देखिये तिनका प्रभाव किजिनकी भक्तीके वश होय कर भगवान कृपानिधान सूरस्याम नाम करके प्रसिद्ध होयगये हैं फिर कैसे भी सूरदासजी किज वलग पृथवीतलपर विचरते रहे हृदयसे एकपलमात्र भीभगवान नहीं विसारे और अंत जव प्रलोकको सिधारे तो भी भगवानकेही चरनकमलोंमे भ्रमरे वत ~~[illegible]~~ लोभी होयकरके वासकरनेलगे ॥ ३२ ॥ इतिश्री भक्तविनोद ग्रंथे

पर
से
उतरे
कवी

संपूर्ण भक्तमाल भाषामें श्रीनाभाजी कृतकावित्रसे सूरदास जी का भगवत भक्तिमे वर्णन नाम ...

सूरदास जीका वर्णन संपूर्ण

का कथन सुनकर सूरदासजी कहने लगे कि हे पृथवी
पाल इह स्त्री जो है सो वेस्या जाती करके प्रसिद्ध मथु
रामे वास करती थी हाव भाव की सब कला और
नृत्य गायन में परम चतुर थी राजे महाराजयों
की और धनी जनों की सभामे सदैव जाती और आप
ने गुण प्रभाव से भली प्रकार सबको रिझावती
थी तब समय पाय करके एक धनी पुरुष ने आप
ने पुत्र जोर चाया तो नाना प्रकार के मंगल जो हैं सो
होने लगे तहां तिस धनीने बडे सनमान पूर्वक इ
स वेस्याको भी बुलाय लिया तब इसने आपनी सुंदर
कला और चतुराई से अनेक हाव भावों के नृत्य और
मधुर स्वरसे मनोहर गायन करकर संपूर्ण सभाको
मूर्छित करदिया तहां किसी देसका एक राजा जो
था सो इसका नृत्य गीत और परम चतुराई देख
कर वडे आनंदसे आपने नगर को लै जाता भया तहां
इसने अनेक प्रकार का आदर सतकार पाया एकदिन ऊचे
भवन पर नृत्य जो कर रही थी तहां राजाकी
सुंदर राणी कि जो दिव्य वस्त्रों और भूषणों
करके शृंगारत दासियों के बीच स्थित भई हुई आप
ने रूप और गुण करके कामदेव की स्त्री को भी लज्जा
देती थी इस वेस्याकी दृष्टी मे पडगई औसे तिसका
प्रभाव देखकर इसके हृदयमे इह मनोर्थ उतपन्न
भया कि इसके समान मैभी राणी की पदवी को कैसे
प्रापत हो जाऊं औसे विचार कर फिर आपही ल
ज्जासे सकुचाय कर कहने लगी कि अहो इनके सं
सार मे वडे राज पुन्य हैं हम क्या अधम हैं
और इह धिग हमारा जनम है फिर तिसतें उपरांत
राजा की पटरानी जो है तिसको देखती भई सो कैसी
कि दीन जनों को वडी प्रीती से
दान देती और अती थी संतों को श्रद्धा पूर्वक वडे
सनमान से भोजन जिमाय कर फिर धन भूषण
वस्त्रों से लेकर भली प्रकार सब सिकाई करती

प्रसिद्ध मथुरामे वासकरती थी
गृहस्थ
ऊंचे राजभवन मे
भाको
८२
दिव्य

वपु विकल भयेरा॥ होहि न जोग्य करम कछु का
हीं॥ अस विचारि निज मानस माहीं॥ दोहा॥ कह
त तजहु मुल ग्रहसथ सुत सदन दार परिवार॥
भजहु विपुन वसि विमल मन कृसन नाम निर
धार॥ २॥ टीका॥

नाभादासजी कहते हैं कि हे संत भक्तो जिस प्रभा
तमाके सेवन करने से संसार मे सरव प्रकार के सु
ख प्रापत होते हैं और दुख दारिद्र जो हैं सो सव
नास हो जाते हैं सो ऐसा कलप वृक्ष के समान
तिस प्रमातमा की भक्ती का सुंदर महातम और म
नोहर गाथा मे प्रीतीपूर्वक आपके आगे गा
यन करता हूं क्याकि उतकलदेस मे ब्रह्मणों
की कुल विखे एक माधो नाम करके ब्रह्मण हो
ता भया सो कैसा कि स्त्री पुत्र भ्राता इन सर्व [illegible]
[illegible] और अपने धरम मारग से
भूला हूआ था ऐसे तिसको तहां वास करते
करते बहुत काल वतीत होय गया अैनको सो
अज्ञानी ब्रह्मण वृध अवस्था को प्रापत भया तब
एकदिन घर को त्यागकर किसी कारज के वासते न
गर के वाहिर चला गया तहां जाता जाता सूरज की
तपत के घाम से व्याकुल भया हूआ एक वृक्षों
की श्रेणी और सीतल छाया देखकर [illegible]
तिनके नीचे वैठ [illegible] गया तिसी काल
विखे तिसके उदर मे ऐसा कठिन शूल उपज
पड़ा कि जिसकी पीड़ा के मारे सो ब्रह्मण व्याकु
ल और मूर्छा होय कर पृथवी पर गिर पड़ा
इसप्रकार मूर्छागत और अचेत भये हूये तिस
को दोघड़ी वतीत होय गई तिसते उपरांत

[illegible]

कुछ सुधी जो आई तो हृदय मे अनेक प्रकार पछ
ताने लगा कहता है कि देखो माता पिता और पुत्र
भ्राता इत्यादि बांधव जो हैं सो इहां मेरे कोई भी सहा
यक नहीं हैं आज मेरे को इस संसार का संबंध भ
ली प्रकार सब सूझ पड़ा है मरने के कठिन समय मे
कोई भी संगी साथी नहीं है अहो आज लग मैने सब
दिन वृथा ही खो दीये हैं कोई भी धरम और सुकरम
नहीं किया पूर्वला जो कुछ करम था तिस के अनुसार
इह मानुष्य शरीर प्रापत किया अब आगे के वासते कुछ
बन नहीं पड़ा और इह शरीर भी जर्जर अर्थात वृद्ध
होय गया अब निरबल औ बूढा जानकर इह बांधव
संबंधी भी कुछ सेवा सतकार नहीं करेंगे हे मूढ अ
ज हे संभाल और सावधान हो नहीं तो इस ते आगे
इह निबल और सिथल शरीर किसी करम के योग्य
भी नहीं रहेगा अर्थात इससे कुछ करम भी नहीं हो
सकेगा ऐसे विचारकर तिस ब्रह्मण ने एही नि
श्चय किया कि अब स्त्री पुत्र धन धाम इत्यादि
सरब सुखों की अभिलाखों को हृदय से त्यागकर और
बन मे जायकर केवल कृष्ण प्रमातमा के ही
चरन कमलों का भजन और सुमरण करता रहूं॥२॥
चौपाई॥ अस कहि विप्र सदन निज आवा॥
करि सनान कछु भोजन पावा॥ पुत्र पतनि
बांधव परिवारा॥ बोलि प्रकट अस वदन उ
चारा॥ मै तुमार हित धरम अधरमा॥ कीन सु
भासुभ संसृति करमा॥ पाल्यो तुमहिं जथा ब
नि आयो॥ नाना वपुष खेद श्रम पायो॥ सो अ
स कहत विदत बुध लोगू॥ पुरष करम कृत
भोगन जोगू॥ ताते मोहि अवशि फल होई॥
तुव हित कीन सुभा सुभ जोई॥ अहो तुम है

४५२ 451

निज निज सुखरागी॥ होहु न अंत काल कर भागी॥ जीयत परस्पर सब उपकारा॥ मरण काल पश्चात निहारा॥ मै तुमार तुम नाहिन मोरे॥ ममता लिन जियत सब मोरे॥ अस विचारि बांधव समुदाया॥ अब रह जानि जठिर जठ काया॥ कृपा सहित मोहि तजहु प्रवीना॥ कानन गवहु भक्ति मन लीना॥ करि सरोज पद कृष्ण अराधन॥ करहु प्रलोक लोक पथ साधन॥ तुमहु बसहु निज सदन सुखारी॥ चल्यो विप्र अस भाखि सिधारी॥ तासु देखि अस बंधु विरागी॥ चले सकल पाछिल तहि लागी॥ रोदन करत जात मन मारे॥ करि प्रबोध तब जठिर निवारे॥ एकल चल्यो आपु बन काहीं॥ इत सब आय सदन निज माहीं॥ गिरि विसाल नीलाचल नामा॥ आवा तहां विप्र अभिरामा॥ मानस विगत मार मद मोहा॥ देखि एक सिरिवर कल सोहा॥ दोहा॥ भयो स्थित ब्रत धारि दुज खान पान तजि दीन॥ जगन नाथ सुमरण करत बीति गये दिन तीन॥ २॥ टीका॥ इस प्रकार विचार कर ब्रह्मण जो है सो अपने घर मे चला आया तहां सनान करके कुछ भोजन पाया फिर स्त्री पुत्र और बांधव जनो को निकट बुलाय कर कहने लगा कि भाई देखो मै तुमारे नमित्त धरम अधरम और सुभ असुभ करम कर कर ~~तुमको~~ जैसे होसका तुम को पालता रहा हूं ~~....~~ बुद्धिमान कहते हैं और शास्त्र का भी एही सिद्धांत है कि पुरष के कीये हूये करम भोगने के योग्य हैं अर्थात जैसे करता तैसे भोगता है ताते इन करमो

"बुद्धिमान से" [margin:] अर्थात ....

अथमाधव चरितवरणनं

दोहा॥ जहिसेवत सुखे उपजि भव होत दुरत दुखे नास॥ भक्ती महातम कलपतर करहु सुप्रकट प्रकास॥ चौपाई॥ अत से मनोरम कथा सुहाई॥ हारन हृदय सजन दुरताई॥ उतकल देस द्विजन कुलमाहीं॥ माधो विप्र नाम इक ताहीं॥ बसि हैं नित भ्रात सुत दारा॥ पै विरक्त कछु धरम अचारा॥ असप्रकार बहुकाल सराना॥ भयोसि विप्र जठिर गत ज्ञाना॥ समय एक तजि सदन सुहावा॥ नगर बहिर काजे बस धावा॥ मारग अतप ग्रीम स्रम पाया॥ देखि सघन तरुवर इक छाया॥ बैठ्यो विप्र विथत चित हारा॥ अकसमात तहि उदर मझारा॥ उपज्यो सूल कठिन दुखदाई॥ मुर्छित पर्‍यो धरणी अकुलाई॥ अस अचेत मुर्छित तत तासा॥ गये जुगल जब दंड विनासा॥ तदपस्चात तासु सुधि आई॥ लाग्यो विविध हृदय पछताई॥ तात मात बांधव सुत भैया॥ इहो कवन अब मोर सहैया॥ देख्यो सकल विस्व बहुरंगी॥ मरण काल को होहिं नसंगी॥ अबलों वृथा दिवस सब खोयो॥ काहु नधरम करम सुभ होयो॥ पूरब जथा करम कछु कीना॥ इहो विपाक वपुखे धरीना॥ अब आगल कछु सह्यो नकाजा॥ भयो वपुष जीरण गत लाजा॥ जानि जठिर बांधव परिवारा॥ तजहिं सकल सेवन सतकारा॥ अजहुं समय कछु चेतन केरा॥ निवल सिथल

४९९ ५००

पूजक देत सैन हरि काहीं॥ करि शिवकाई जथा विधि सारी॥ तब नैवेद रुचिर रुक धारी॥ संजुत भक्ति राखि प्रभु आगे॥ मूदित कलकवार अनुरागे॥ निज निज भवन सैन रत आई॥ भये निपुण पूजिक समुदाई॥ तब कमलासन भक्त उचारे॥ कृपा युक्त अस वचन उचारे॥ माधव नाम विप्रवर जोई॥ मन वच करम भक्त मम सोई॥ नीलाचल वछि व गिरि गोहा॥ करत निवास विगत मद मोहा॥ मोर सुमरन निरत गुणरासा॥ वीत्यो तीन दिवस उपवासा॥ इह प्रसाद मोदिक सुखदाई॥ मै तहि देहु भक्त निज जाई॥ कमला सुनत वचन अनुरागी॥ प्रभुहिं वदन अस भाषन लागी॥ मै प्रभु जाहूं भक्त तुव पासा॥ तुव न करहु श्रम दैव अजासा॥ अस कहि लेत ललित कर थारी॥ त्रीये समान रूप निज धारी॥ चली तुरत नीलाचल काहीं॥ भक्त सुष्ट माधव दुज जाहीं॥ देखे जाय भक्त गुण खाना॥ बैठे ध्यान लीन भगवाना॥ कमला कहिस विप्र पति मोही॥ पठ्यो देन भोजन हित तोही॥ अस कहि राखि अग्र दुज थारी॥ चली आपु निज भवन सिधारी॥ माधव लीन हृदय निज जाना॥ तरव विप्र पालक भगवाना॥ पठ्यो मोहि भोजन निज दाया॥ लीन मुदित मोदिक दुज पाया॥ सुमरत जगन नाथ भगवाना॥ भयो निरंत्र निरत निज ध्याना॥ दोहा॥ रत पूजिक जन जजन हित प्रात भवन नग धारि॥ आय विलोकी न दृगन निज सुचि प्रसाद प्रभु थारि॥ ३॥ टीका॥ तो जब तीन दिन बीत गये तब जगन नाथ भगवान तिसकी दृढ भक्ती देखकर प्रसन्न होय गये चौथे दिन पूजक जन जब रात्री के समय भगवान को सयन कराय कर और जथा जोग सब

५८२

सिवकाई करकर एक नैवेदकी थाली दीनानाथ के आगे राखकर और भवनके कवाड़ मूंदकर फिर जायकरके आप ने अपने स्थानं सोयरहे तव कृपा निधान लक्ष्मी नाथ भगवान जोहैं सो कहने लगे कि माधव नाम करके एकब्रह्मण मेरा परम दृढ भक्त जो है सो संपूर्ण विकारों से रहित नीलाचल की गुफा मे वास करता है रात्रीदिन मेरे ही भजन और सुमरण मे लीन रहता है आज तिसको तीनदिन वीत गये कि कुछ खान पान नहीं किया केवल मेरे ही नामका आधार है ताते इह मोदिक अर्थात लडू प्रसाद जो है सो मै जायकर के तिस अपने प्यारे भक्त को देआवता हूं ऐसे भगवानके मुखसे वचन सुनकर लक्ष्मी कहने लगी कि हे दीनानाथ इसमे आप क्यों श्रम उठाते हो तुमारे ऐसे प्यारे भक्त के पास मै जाती हूं और तिसको भोजन देआवती हूं ऐसे कहिकर सरव जगतकी माता लक्ष्मी जो है सो मानुष्य स्त्रीका रूप धार कर और हाथ मे ~~भोजन~~ भोजनकी भरी हुई थाली लेकर जहां नीलाचल की गुफा मे माधव भक्त वास करते थे तहांको चली जाती भई जव तहां जाय पहुंची तव क्या देखती है कि माधो भक्त भगवान के ध्यानमे लीन हुये वैठे हैं तिनको कहने लगी कि हे ब्रह्मण मेरेको पतीने तेरे पास भोजन देकरके भेजा है तूं इसको ले और पायकर के संतुष्ट हो ऐसे कहिकर भेजन की थाली तिसके आगे राखकर आप लौट करके अपने घरको चली गई तव माधवने हृदयमे जान लिया कि सरव सृष्टीके पालक भगवान हैं कृपाकरके इह भोजन मेरेको भेज दिया है इसप्रकार भगवान काउपकार सुमरकर माधव ने सो भोजन आनंद पूर्वक पायलिया और फिर तैसेही भगवान के भजन और ध्यानमे लीन हो जाता भया ~~[illegible]~~ जव प्रात काल होते ही पूजक जन भगवान के पूजन सेवन के वासते आयकर भवनके कवाड़ खोलते भये तो तिसमें वे नैवेदकी

जेको

ष्याली कहीं देख नहीं पड़ी ॥३॥ चौपाई ॥ बिसमय बि
बस परस्पर बोले ॥ निजकर कलकवारू हम खो
ले ॥ इहिकर बन्यो कवन अभिमानी ॥ अगम बात
कछु जाय नजानी ॥ अस प्रकार चिंतत समुदाई ॥
नृप सन कहिस मरम सब[illegible] आई ॥ सुनत भूपमा
नस बिसमाये ॥ चारि ओर भृत दीन पठाये ॥ खोज
न चतुर चोर जनकाहीं ॥ धावन धाय बेग जहं तहंहीं ॥
गिरि कंद्रा कानन पुर ग्रामा ॥ लगे भ्रमन भृत भूरि
अरामा ॥ अस प्रकार खोजत तहिं काहीं ॥ आय कछु
कनीला चल माहीं ॥ देख्यो तहां लुपत गिरि गोहा ॥
तिनहुं संत धृत भेष अमोहा ॥ राखि अग्र निज मोदि
क थारी ॥ एहु चौर भृत लीन बिचारी ॥ बांधि ली
न मोदिक जुत थारा ॥ मारग भृतन बिबिध बिधि
मारा ॥ बहुरि लाय सन मुख नृप कीना ॥ नृप न
देस ताड़न हित दीना ॥ भयो तासु जब बेत्र प्रहारा ॥
टूट्यो तुचा अमष बपु सारा ॥ देखि कलेस भक्त अ
स भारी ॥ कहत दैवगति हृदय बिचारी ॥ मोर करम
पूरब कर एहू ॥ लीन सो आज प्रकट फल ते
हू ॥ रह्यो मौन अस सोचि सुधीरा ॥ सह्यो कर
म दुख दाहन पीरा ॥ एक पुरष तब बदन अला
या ॥ उपजी हृदय तास कछु दाया ॥ अब न करहु
जे न ताड़िन पहा ॥ अस भृत सुनत बचन मुख
तेहा ॥ तजत तासु निज निज सब धाये ॥ उत भ
गवान भवन सुभ आये ॥ पूजिक सांझ काल क
ले पाई ॥ भये नयुक्त देव सिव काई ॥ तब पूरब
स्रृंगार उतारन ॥ लागे शैन बसन जब धा
रन ॥ देखी परम देव कल काये ॥ तुचा सोथ
बेत्रन क्षत छाये ॥ अस बिसमय दृग देखि
पुजारी ॥ परिहरि रजनि अन्न बर वारी ॥ बैठे
देव भवन मन मारे ॥ करत बिचार परस्पर सारे ॥

का मरेको फल अव क्यकरके होगा कि जो मैने तुमारे निमित्त कियेहैं सो तुम तो अपने अपने सुखों की इच्छा वाले हो मेरेको अंतकालमे सहायक होने वाले कोई नहीं हो इह उपकार परस्पर सव जीवते ही होताहै मरणोके पीछे ना तुम मेरे ना मै तुमारा इह ममता और मोह सव जीवते का ही है ऐसे विचार कर हे भाई वांधव जनो अव मेरे शरीर को वृद्ध जान कर इसको तुम त्याग कर देवो इह मेरेपर तुमारा अत्यंत उपकार होगा मै अव भगवानकी भक्तीको आधार करके भजनके निमित्त वणको चला जाताहूं तहां कुछ काल कृष्ण भगवानके चरन कमलोंको आराधन करके लोक प्रलोक के मारग को सिद्ध करताहूं तुम सुखपूर्वक अपने घरमे वास करो ऐसे कहिकर व्रह्मण कृष्ण कृष्ण रटता हूआ वणको चल पड़ता भया इसप्रकार तिसको वैरागी हूये देखकर सव वांधवजनभी पीछे पीछे ही लाग चले तव तिस व्रह्मणने अनेकप्रकार का प्रवोध कर कर तिनको निवारण किया और आप अकेलाही वणको चल पड़ा इहो वंधव जन भी अपने घरको चले आये तव सो व्रह्मण एक नीला चल नाम करके वडाभारी परवत जो था तिस विषे चला आवता भया ~~...~~ और काम क्रोध मोह मद इत्यादि विषयों से उदासीन भया हूआ तिस परवत की एक वडी सुंदर गुफा देखकर तहां स्थित होयगया और खान पान सव त्याग कर निराहार व्रत धारन कर लिया इसप्रकार जगननाथ स्वामी का भजन और सुमरण करते को तहां तीनदिन वतीत होयगये ॥ ८ ॥ चौपाई॥ भये प्रसन्न भक्त अनुगामी॥ तापर जगननाथ प्रभु स्वामी॥ चतुरथ दिवस जवहिं निसिमाही॥

(हाशिये पर:) ऐसवकह तिस और ममता मोह हृये

बैठा है तब तिनो ने निश्चय जान लिया कि एही हमारा चोर है तुरत ही पकड़कर बांध लिया और खेंचते लै चले मारग मैं बहुत निरादर करकर मारा फिर ल्याय करके राजा के सनमुष करदिया तब राजा ने भी आज्ञा दई कि इस को भली प्रकार ताड़ना करो अर्थात मारो ऐसे जब तिस के शरीर पर बेत मारे तब तुचा और मांस सब टूटगया इस प्रकार शरीर की दुरदशा देखकर कहने लगा कि इह मेरा पूर्बला करम प्रकट भया है जिसका मैने आज इह फल पाया ऐसे प्रालब्ध भोग विचार कर सो भक्त प्रवीन मौन होय रहा करम का महा कलेश और दुख जो था सो धीरज धारकर सब सहार लिया तब तिन मै से एक पुरष को दया उपजी और कहने लगा कि भाई अब इसको मत मारो ऐसे तिसका कथन सुनकर तिनो ने फिर नहीं मारा और त्यागकर अपने अपने चलेगये उहां भगवान के पुजारी साऊ समय पाय करके दीनबंधू की सिवकाई मै जो ततपर हूये तो पूर्बला श्रृंगार उतारकर शयन के बस्त्र जो धारन करने लगे तब क्या देखते हैं कि भगवान कृपानिधान के शरीर पर बेतो के छत और घाउ लगे हूये जहां तहां सो जपडी हूई है इस आचर्ज को देखकर संपूर्ण पुजारी अन्न और जल त्यागकर मनमारे हूये भगवान के भवन मै बैठे परसपर विचार करते हैं कि अहो कुछ जाना नहीं जाता दीनानाथ तो शरीर करके अत्यंत दुखी और पीड़त होरहे हैं ऐसे विचार करते करते तिनको निद्रा जो आयगई तो सपने मै भगवान कहते हैं कि भाई तुम चिंता मत करो इह माधव नाम करके मेरा परम ब्रत धारी और दृढ भक्त कि जिसके हृदय मै काम क्रोध लोभ मोह

इत्यादि विषयों का कुछभी सपर्श नहीं है इस नी
लाचल परवत की गुफा मे वास करता था और
रात्रीदिन सदैव मेरे ही भजन सुमरणमे लीन था
मैने तिसको तुध्यत और व्याकुल देखकर इहं प्रसा
द की थाली भेज देई थी सो तुम ने बड़ा अनर्थ किया
कि तिसको विना बूझे मारे हीं नाना प्रकार ताड़ना कर
कर देइ दिया तिसतें मैं अपने प्यारे भक्त का ऐसा
कठिन कलेश देखकर महा दुखी और पीड़ित होगया
हूं इसीतें त्वचा को भेद कर मेरे शरीर पर बेतों के चिन्ह
और घाउ प्रकट होय गये हैं ॥४॥ उठे देखि प्रसन्न
मन पुजारी॥ वार वार निज प्रभु हिं जुहारी॥ अहो
सत्य तुव दैव सुहाये॥ वतसल भक्त वेद श्रुति गा
ये॥ अस प्रकार मुख विनय अलाई॥ माधव भ
क्त बहुरि हरषाई॥ सादिर बोलि प्रीति जुत रागे॥
विनय प्रणाम करन सब लागे॥ हम अजान जा
न्यो नहिं काहू॥ भक्त सुधू अस तोर प्रभाहू॥ भयो
विपुल अनुचित अपराधू॥ कृपा निकेत छमहु तुव
साधू॥ अस कहि चारु विमल जल संगा॥ दै सनान
करि पावन अंगा॥ सादिर नवल वसन पहिराई॥
दीन रुचिर अस तीर्ण वछाई॥ वैठारे संजुत उत
साहा॥ जेउपचार वेद कहे ताहा॥ सो सब कीन
जथा विधसारी॥ भये सुसथ चित भक्त सुखारी॥
तब प्रसन्न मानस अनुरागे॥ जगन नाथ पुरि
विचरन लागे॥ अवसर एक भक्त निसि काही॥
आये भवन भवन पति माहीं॥ पूजन देखि दैव
मन भावा॥ भक्त प्रधान परम सुख पावा॥ ब हु
रि इकांत विप्र रत ज्ञाना॥ वैठ्यो ध्यान लीन भ
गवाना॥ करत देव शुभ जजन पुजारी॥ दै कवार
निज चले सिधारी॥ तास मरम कछु नाहिं न जाना॥

माधव रहे भवन रत ध्याना॥ दोहा॥ भयो तजत दुज ध्यान जब तब सैलगन कवार॥ दृगन विलोकत ग्राव फिरि करि निज हृदय विचार॥ भयो सयन रत धरन तल कलकर करन विछाय॥ विथत अर्ध निसि लीन वस थरथर के पीस काय॥ ५॥ टीका॥ तब ग्रैसा सुपना देखकर पुजारी जो है सो उठ खडे भये ग्रोर भगवान भक्त सुवेदान को बारबार वंदना करने लगे कहते हैं कि हे दीनानाथ तुम सत्य कर के वेद ग्रोर पुराणों ने भक्त वतसल गायन किये हो तुमारा भक्तजनो पर सत्य कर के सनेह ग्रोर प्रीती है इस प्रकार बिनती ग्रोर वडाई करके फिर वडे ग्रानंद ग्रोर सनमान से माधव भक्त को ल्याय कर बारबार प्रणाम ग्रोर विनती करने लगे कि हे भक्त प्रधान हम ग्रजान तुमारे गूढ प्रभाव को कुछ जान नहीं सके यह हमारा ग्रत्यंत ग्रपराध है ग्रोर ग्रनुचित है तुम दया की मूरती सदैव सरल चित ग्रोर साधू हो हमारे इस ग्रपराध को कृपा करके छमा करिये ग्रैसे प्रार्थना करकर बडा सुंदर निरमल जल मंगवाया ग्रोर भक्त सप्रेम को सनान देकर दिव्य वस्त्र पहिराये फिर सुंदर ग्रोर कोमल सेजा सजायकर तिसपर सनमान पूर्वक बैठार दिये ग्रोर वैद्य जो वैत है तिन ढूत ग्रोर ग्रौषधों का जो जो उपचार ग्रोर उपाय था सो जथाविधी सब करने लगे भगवान की कृपा से थोरे ही दिनो मे सब कलेश दूर होयगया ग्रोर तब भक्त प्रधान स्वस्थ चित होयकर ग्रानंद पूर्वक जगननाथ पुरी मे विचरने लगे एकदिन राती के समय सो भक्त सप्रेम भवनो के पती भगवान जो हैं तिन के भवन मे चले ग्राये तहां दीनानाथ का पूजन देखकर के हृदय मे परम सुख मानते भये फिर इकांत मे जायकर भगवान के ध्यान मे लीन होकर भवन के भीतर ही बैठ गये

~~सिवकाई वारके एक ने वेद की थाली मे जो सामनमान~~
~~ते भगवान के आगे राखकर और भवनके कवार मूंद~~
~~कर फिर ग~~

अहो नजानि जाय कछु एहा॥ दीन दयाल पीड़त
अति देहा॥ दोहा॥ अस चिंतत निद्रा निरत दे
खीस सपन पुजारी॥ तुव नकरहु कछु सोच
उर गिरधर गिरा उचारि॥ इह माधव मम भक्त
दृढ वसत नील गिरि सोहु॥ मोर भजन सु
मरण निरत विगत मार मद मोहु॥ भे लुध्यत अ
ति विथत तकि सुचि प्रसाद वढि दीन॥ सो अनु
चित भव भक्त अस तुव तारुन जन कीन॥ देखि
कठिन दुख भक्त प्रीये मोहि उव ज्यो दुख पीर॥
तव प्रकटे लच मेदि ब्रत वेत्रन विदत सरीर॥
४॥ टीका॥ जब पूजकों ने सो प्रसाद की थाली न
ही देखी तब मनमै आचर्ज होकरके परस्पर
कहने लगे कि भाई हम ने अपने ही हाथों से इह
भवनके मूंदे हूये कवाड़ खोले हैं वड़े आचर्ज की वा
त है कि नैवेद की थाली को कौन लेगया और क
हो चली गई इह अचरज कुछ जाना नहीं जाता
ऐसे विचार करते हूये पूजक राजा के पास जाय
कर इह वृतांत सब सुनाय देते भये तब राजा भी
सुनकर वड़े आचर्ज को प्रापत होगया और इ
स वारता के खोजने को चारो पासे अपने नोकर
चाकर भेज देता भया तब सो राजा के चाकर ज
हां तहां नगर ग्रामो और वण परवतों की कंद्रा
गफो मे भ्रमन करते करते तिनमे से कुछ खोजते
खोजते नीलाचल परवत मै चले आये तहां तिनोने तिस
परवत की गुफा मे छिपा हूआ सेत भेष धारे हूये सो
ब्रह्मण देखा और मोदिक जो लडू हैं तिनकी भरी
हूई थाली आगे राखे हूए ध्यान मे लीन हूआ

इति कहि आपु रुचिर पट दीना॥ लाग करन तव
विनय सवाही॥ अनुचित तमकु भक्तन्हमका
हीं॥ नहि अपराध तुमरे कछु भाई॥ देवप्रसाद
सुलभ सुखदाई॥ अस प्रसंसि संजुत सनमाना॥
लगे करन पूजन भगवाना॥ माधव बहिर भवन
प्रभु आये॥ भक्ति प्रमोद प्रेम सरसाये॥ दोहा॥ आ
ये विचरत एकदिन भक्तवार निधकूल॥ देवयो
ग कर उदर तहि पयो प्रबल तर ~~[illegible]~~ सूल॥६॥
टीका॥ तव कृपाके धाम भगवान तिसको ऐसे प्री
तके वश देखकर ततकाल अपना सुंदर वैस्नव
रूप धार कर अपने ऊपर का ओढा हूआ वस्त्र जो
था सो तिसको उढाय देतेभये तव भगवांके दि
व्य वस्त्र गरमाई जो आई तुरत ही भक्त प्रधान
गाढी निद्रामे लीन होयगये जव प्रात काल हो
तेही पूजक जनोने आयकर भवनके कवाड खो
ले तव क्या देखते है कि कोई पुरुष भगवानका
पीत वस्त्र ओढे हूये भवनके भीतर सोया है
तिसको जगाय कर कहने लगे कि भाई तुम कोन
ई हो भवनके भीतर सोय रहे हो और इह भग
वानका परम पवित्र वस्त्र कैसे धारन किया हूआ
है तव माधव भक्त विनती कर कर कहा कि भाई
मे रात्री के समय ई हो भगवान के भवनमें ध्यानमे
लीन हूआ वैठाथा ऊहो तुम सव भवनके क
वाड मूंदकर अपने अपने चले गये पीछे मेरे
को निद्रा जो आई तो मै सोय गया आधी रात के
जव सीतने व्याकुल किया तव किसी सुधर
मी पुरुष ने ~~दयाके वश होकर~~ सीतसे व्या
कुल और थरथर कांपता देख कर दया करके
इह मेरे शरीर पर वस्त्र उढाय दिया है

॰न ॰की ॰ने ॰विवे

तिसके प्रसादसे मेरेको निद्रा आयगई और परम
सुखको प्रापत हुआ अब आयकरके तुमने जगा
य लियाहे तब पूजकोंने जानलिया कि इह वाही
माधव भक्त हैं दीनबंधूने अपनाजन जान
कर कृपाकरके अपना वस्त्र उढायदियाहे ऐसे विचार
कर सब विनती और बडाई करकर कहने लगे
कि हे भक्त सृष्ट हमारा अपराध क्षमा करिये तुमसरव
सामर्थ भगवानके प्यारे भक्त हो संसारमै तुमको कुछ
भी दुरलभ नहीं है सब सुलभ और सुगम ही है इसप्रकार
शलाघा करकर फिर प्रीतीभक्तीसे भगवान का पूजन
करने लगे तब माधव भक्तीके मदमै मत्तभये हूये आ
नंदपूर्वक भवनके बाहिर चले आये और अभय होय
कर भगवानकी नगरी मै विचरने लगे एकदिन विचर
ते विचरते समुद्र के किनारे पर चले आये तहां देवयोग
करके तिनँ उदरमे शूल रोग उतपन्न हो जाता भया॥६॥
चौपाई॥ रेचक वमन विविध दुखपावा॥ तरफत वि
थत धरनि मुरछावा॥ भयो सिथल निरबल दुज
काया॥ बीत्यो दिवस तिमर निसि छाया॥ कछुक चेति
दृग पटिल उघारे॥ कृस्न कृस्न अस बदन उचारे॥
अबतो चलन चहत जढ प्राना॥ अस विचारि जिय
भक्त सुजाना॥ तुमरण लोग चराचर जाता॥ हरन
कलेस जनन सुखदाता॥ जानि भक्त दुख दीन उधारी॥
ललित सरूप विप्र निज धारी॥ लेत विमल वर
वारि सुहावा॥ मंदिर सोच सनान करावा॥ पुनि
कौतुक भोजन विरचाई॥ दीननाथ तहिं दीन जि
माई॥ भवन निकट पहुंचावन हेतू॥ हृदय जतन
सोचत भवसेतू॥ निज उर भक्त सृष्ट तब जाना॥
इहतो कृपासिंधु भगवाना॥ विनयकीन मन मोद उमंगा॥

भगवतभक्तमाला

७के

दैव मोर परि सोधन अेंगा॥ कीन जवन निज कृपा अथाहा॥ दीन दयाल कहेउ चित नराहा॥ सुनत देव अस बचन अलोया॥ आतम मोर भक्त निज काया॥ तातें मै निज विप्र प्रवीना॥ जानि कायकल शोधन कीना॥ माधो कहिस जोरि जुगपाना॥ जो अस दीन नाथ तुम जाना॥ तो अस अकृतव्य कस कीना॥ देहु कलेस कवन हित दीना॥ दोहा॥ मुनि बोले कहु गोय तन जन अव लो तुव देहु॥ उपज्यो जवन कलेस कछु पूर्व करम करएहु॥ अव आगल तुव मुचित दुख मोर बचन निरधारि॥ चलहु भवन मम संग लगि भक्त सुषृ सुभ चारि॥ दीन दयानिध कृपा तें भक्त स्वस्थ चित होई॥ प्रभु सन आवा भवन प्रभु वपु कलेस सब खोई॥ ७॥ टीका॥ तब रेच औेर वमन अर्थात दस्त औेर कै जो हैं तिनके श्रमसे बड़ा कलेश पाया शरीर सब निरबल औेर सिथल होगया औेसे व्याॅल औेर पृथवी पर मूर्छा भये को दिन वतीत भया औेर रात्री आयगई तब कुछ क सुधी जोआई तो नेत्रों पटल उघार कर कृस्न कृस्न उचारने लगे औेर कहते हैं कि अब तो देह प्राण चलने चहते हैं औेसे सोचकर दीनजनोंका कलेश हरने वाले सरव चराचरके पालक भगवान जो हैं तिनका सुमर्ण करने लगे तब दीनउध्दारन भगवान अपने जनका कलेश विचार कर तुरत ब्रह्मणका रूप धारकर औेर हाथमै निरमल जलका पात्र लेकर चले आवते भये भक्त सुषृ की बड़ी प्रीती ~~औेर एजमानसे~~ से सब सोच सनान करायकर फिर कौतुकसे पवित्र भोजन रचायकर औेर सनमान पूर्वक जिमायकर फिर तिसका घरके सामीप पहुंचावने केवास्ते दीनबंधू हृदयमै यतन

श्रीभक्तमाल श्री

तब पुजारी जोथे सो भगवान का पूजन और
जथाजोग सब कार्ई करके फिर भवन के कवाड
देकर अपने घरको चलेगये माधव भक्तका भेद
किसी ने नहीं जाना सो ध्यानमे लीन भये हूये
भीतरही बैठे रहे जब कुछक बेरके पीछे ध्यानछू
टा तब क्या देखते हैं कि भवनके कवाड मूंदे हूये हैं
इधर उधर फिर कर फिर आयकर और चिटाई बि
छायकर भगवानका सुमर्णकरते करते तहांहीं सो
यरहे जब आधीरात भई तब सीत करके व्याकु
ल होयगये और थर थर कांपने लगा ॥५॥ चौपाई ॥
कृपा नकेत तासु अस देखो ॥ धरत ललित निज वेस्म
ब भेखो ॥ आपन पट परिधान उतारी ॥ जन तन
कीन अछादिन सारी ॥ प्रभुकर बसन उसन ज
ब लयऊ ॥ भक्त गाढ निद्रारत भयऊ ॥ आय प्रात
पूजक अनुरागे ॥ खोलि कवार बिलोकन लागे ॥
प सो काहु भगवन पट धारी ॥ तासु सजग करि
कहत पुजारी ॥ को तुम ईहो भवनकल पोढो ॥
श्रीपति बिमल बसन कस ओढो ॥ माधव बिनय
बदन करि कहा ॥ मै रत भवन बैठि निसि रहा ॥
भगवन ललित ध्यान मन लीना ॥ तुम सब उत
कवार कलदीना ॥ निज निज सदन कीन जब गव
ना ॥ मै इत सकत हैन भयो भवना ॥ तब नि
सि अर्ध सीत मोहि लागा ॥ काहु सुधरम पुरष
बड भागा ॥ देखि बिपत केपत मम काया ॥ दया
युक्त पट दीन उढाया ॥ तहि प्रसाद निद्रा सुख पा
यो ॥ आय तुम हू अब लीन जगायो ॥ तब पू
जक जन लीनसि जाना ॥ माधव सोऊ भ
क्त भगवाना ॥ दीन नाथ करुणा निज कीना ॥

कलह क्रोध कर मूरति देवी अतथि संत दुज भक्ता असेवी॥ जद्यपि द्रव्य विपुल तहि गेहा॥ तद्यपि कृपन भोग गत तेहा॥ दान दयादि सपन कछु नाहीं॥ सो अस देखि द्वार दुज काहीं॥ क्रूर दृष्टि देखत रिसछाई॥ मुख मरोरि चख भ्रान चढाई॥ तब मांगिस भिक्षा दुजधीरा॥ रही मोन जड कृपन सरीरा॥ बारबार दुज कह्यो अलाई॥ कस न देहु भिक्षा तुव माई॥ तब रिसात उपलेपन चीरा॥ करत वदन दुरवाद अधीरा॥ कंपत हनन हेत दुज धाई॥ विप्र त्रास वस चल्यो पराई॥ पाछिल परम कोप वस होई॥ धरत चीर उपलेपन सोई॥ कीन प्रहार विप्रवर काहीं॥ आई बहुरि सदन निज माहीं॥ दुज वर सोऊ चीर गहि लीना॥ उर विचार दाया वस कीना॥ अहो सदन इहि से पति छाई॥ पै अति कृपन धरम गत माई॥ अतथि संत सेवन रति नाहीं॥ कैवल कलह क्रोध मन माहीं॥ इहि कल्यान देव कस होई॥ अस उपकार गुनत दुज सोई॥ तहि प्रहार कृत चिरकुट चीरा॥ आये लेत सरत पति तीरा॥ दोहा॥ करि प्रक्षालन करन तहि कलित स्वेत करि लीन॥ सुष्क करत कलवरतिका विप्र जतन जुत कीन॥ ८॥ टीका॥ तब माधव भक्त भगवान का भजन और सुमर्ण करते हूये आनंद से तहां हीं निवास करने लगे तब तिन को भगवान के भजन के आनंद से बहुत काल जो है सो पल समान बतीत हो जाता भया केई बरष भगवान का पवित्र नैवेद जो है सोई पावते रहे फिर सो भी त्याग दिया तब भिक्षाटन करने लगे एक दिन भिक्षाटन के नमित्त नगर मे जो आये तो तहां एक धनी पुरुष की स्त्री प्रीती पूर्वक अपने घर मै लेपन दे रही थी सो कैसी कि क्रोध और कलह जो लडाई ~~[illegible]~~ तिसकी मानो एक मूरती और अतथी संत ब्रह्म भक्त को देख नहीं सकती थी

यद्यपी बहुतही धनवाली थी तद्यपी अत्येत कृपना
और नीच थी दया और दान तिसको सपनेमेभी न
हीं था सो माधव भक्तको द्वारमे स्थित देखकर बडी
क्रूरदृष्टीसे क्रोधकी भरी हुई देखने लगी जौन
जब भक्तसू
षूने भिक्षा मांगी तब नेत्र और नासका चढायकर महाकृपन
जोथी सो मौन हीं होयरही फिर भक्तप्रधानने बार बार कहा कि
हेमाई भिक्षा क्यों नहीं देती तब कोपकरके सोई लेपन
करनेका चीथडा उठायकर शरीसे कांपती और दुर
वाद करती हुई दौडकर मारनेके वासते धाई तिसके भयसे
माधवभक्त भाग चले तब महामंदने क्रोधसे सोई ची
थडा घुमायकर तिनके पीछे मारा और फिरकरके
बकती हुई घरको चली आई तहां भक्तसूषूने
~~[illegible]~~ तिसका मारा हुआ चीथडा
जो था सो फिरकरके उठाय लिया और दयाके वश
होकर हृदयमे विचार करने लगे कि अहो इसमाई
के घरमे धन संपती तो बहुतहै परंतु महा कृपन और
निरदय धरमसे रहितहै अतथी संत ब्राह्मणों के सेवन
मे कुछ प्रीती नहीं है केवल क्रोध और कलहकाही
मूलहै अब देव इसकी कैसे कल्यान होवे ऐसा उप
कार हृदयमे विचारकर तिसके मारे हुये तिस चीथडे
को लेकरके समुद्रके किनारे पर चले आये और तहां
तिसको भलीप्रकार धोयकर और उज्जल बनायकर
फिर सुकाय करके यतनसे तिसकी सुंदर बरतिका
अर्थात बतीजो है सो बनाय लई ॥८॥ चौपाई॥
अन्न दीप रचि हृदय उमंगा॥ तेसब करत भक्षन
घृत संगा सजत दीप हरि भवन सुहावा॥ अस
संकलप धारि दुज आवा॥ दीनानाथ भक्त हितकारी॥ इहबर विप्र धनक जोई नारी॥ अधनिरेत्र
तिमर अज्ञाना॥ इहि प्रसाद कल दीपन दाना॥
परि हरि कलह क्रोध दुर ताई॥ उप जहिं ज्ञानदिपत्ति
सुखदाई॥ दान दयादि संत दुज देवा॥ संजुतभक्ति

होहिं रतसेवा॥ तव संध्या अवसर जललीने॥ दुज पद कर प्रक्षालन कीने॥ देव भवन चहुंओर सुहावन॥ कीन प्रज्वलित दीप मन भावन॥ इत सुदीप जव भवन प्रकास्यो॥ उत अज्ञान तिमिर तहि नास्यो॥ भाखत वृथा सकल श्रम मोरा॥ इहवित सदन कवन हित जोरा॥ अवलों कछु नाहिन बनआई॥ अतथी विप्र संत सिवकाई॥ मैं दुरमति वित लालच लागी॥ रही सुधर्म कर्म सुभ त्यागी॥ मरणकाल वित संग न जाई॥ होहिं धरम परलोक सहाई॥ अहो आज सुभ संत सुहावा॥ मोरे सदन अतथि वत आवा॥ कुमति तासु दुरवचन उचारी॥ बहिर सदन निज दीन निकारी॥ मो हि सम कवन भाग्य हत भारा॥ जहि अस कीन संत तिरसकारा॥ अस प्रकार चिंताकुल काहीं॥ भई रैन निद्रा कछु नाहीं॥ प्रात होत उठि सदन प्रवीना॥ लेपन ललित मारजन कीना॥ दोहा॥ जहं लग वित भूषण वसन धन निज सदन निकारि॥ लगी देन संतन दुजन निरधन दीन निहारि॥ ९॥ टीका॥ तव अन्न के सुंदर दीप जो दीवे हैं सो रच करके और घृत से वत्तियों को भली प्रकार मथन करके माधव भक्त हृदयं ऐसा संकलप कर ता भया कि हे दीन वंधू हे दीनानाथ हे भक्त हितकारी भगवान इह धनी की स्त्री जो निरंतर करके अज्ञान के अंधेरे मैं अंध होरही है इस को इन दीप दान के प्रसाद से क[illegible]ल ह और क्रोध छूट कर दयादान और साधु ब्रह्मों की सेवा मैं भक्ती और प्रीती हो जावे और सुख सुजस के देने वाला सुंदर ज्ञान जो है सो भी इस के हृदय मै प्रकाश हो जावे इस प्रकार

विचारते भये तब माधवभक्तने हृदय मै जाना कि
इह तो कृपा के समुद्र भगवान हैं बडे आनंदसे हाथ
जोड कर विनती करने लगा कि हे दीनानाथ इह जो
आपने मेरे अंगों को शोधन किया अर्थात सनान दि
या है कृपासिंधू को योग्य नहीं था क्यों कि मे दीन रंक
और आप तीन लोकके नायक ऐसे तिसका वचन
सुनकर कृपानिधान कहने लगे कि हे माधव मेरे भक्त
की काया जो है सो मेराही शरीर है तो ते मैने अपनी हीं
काया जान करके शोधन की है इसमै कुछ संशय नहीं
है तब माधव हाथ जोड कर कहने लगा कि हे दीन
बंधू जो आप ऐसा जानते हो तो इह अकाज क्यों
किया और मेरे शरीर को किस कारन कलेश दिया
ऐसे भक्तकी गूढ बानी सुनकर भगवान कहने ल
गे कि हे माधव इह जो तेरे शरीर को कलेश भया
है सो तेरे पूर्व ले करम का फल है अब इसतें
आगे निश्चय करके जान कि तेरे को कबी कोई क
लेश नहीं व्यापेगा ~~~~ अब तू मेरे साथ हो
कर मेरे भवन को चल ऐसे दीनानाथ की
कृपासे माधवभक्त संपूर्ण दुख और कलेशों
से छूट कर सस्थचित होयगया और कृपानिधा
नके साथहीं आनंदपूर्वक तिनके भवन को च
ला आया १॥ चौपाई॥ लग्यो निवास करन कल
ताहो सुमरत हृदय असुर सुरनाहो॥ विपुल
काल पल सदृश तासा॥ निरत भक्ति भगवान
विलासा॥ केऊ वरष नैवेद सुहावा॥ भक्तभवन
भगवन सुचि पावा॥ बहुरि तजत भिता टन काहीं॥
गवन्यो एक दिवस पुरमाहीं॥ देखी एक धनक
धनदामा॥ देत ललित उपलेपन धामा॥

अस रुचि भक्ति प्रीति तहि देखी॥ हृदय गुनत दुज हर
षि वसेखी॥ दीपदान कर विदित सुहावा॥ अहो प्रभाव
रुचिर इह पावा॥ तव भामनि अस विनय उचारा॥
इह वित सदन नाथ तुव सारा॥ करि दाया सूई कार क
रीजे॥ सेवक जानि सुजस मोहि दीजै॥ माधव कहि स
वचन सुखदाता॥ इह तुव सदन मोर सव भ्राता॥ तुम
हि होव कल्यान सुहाई॥ अव ते विप्र संत सिव काई॥
करहु प्रलोक लोक सुखदायन॥ होहु भक्ति कल
कृस्न परायन॥ विनु प्रयास भव वारद पारा॥ होत
करहु कुल सकल उद्धारा॥ अस कहि कीन भक्त वर
ग[illegible]वना॥ सो [illegible] प्रसन्न वदन निज भवना॥ भगवन
भक्ति निरत अनुरागी॥ अतथि संत दुज सेवन ला
गी॥ दोहा॥ माधो भक्त प्रसाद तें करत संत सिव काई॥
दुज त्रिये परिहरि अंत वपु लीन परम पद पाई॥
तव विचरत पुर विपुन कल माधव भक्त सुजान॥ आ
ये सिसिधर रुचिर पुरि करि प्रमुदित निज ध्यान॥ २०॥
टीका॥ फिर आपने हृदय मै विचार करती है कि हे देव
जिस संत महातमा को मैने क्रोध के वश कर वेलेप
न का चीथडा मारा था सो अतिथी संत मेरे को कव और
कैसे मिलेंगे जो मै इह संपूर्ण अपना धन तिन को अर
पण कर देऊं इस प्रकार हृदय मे पछताती हुई अपने
घर के द्वार के वाहिर स्थित होय गई और उहो दीप को
का प्रभाव देखने के वासते माधव भक्त भी तहां चले आ
वते भये मन मै कहते है कि मै देखूं तो सही तिस धनी
की स्त्री का हृदय कुछ कोमल भया है कि नहीं असे क
हि कर जव सनमुख आये तव धनी की स्त्रीने देखते ही
पहिचान लिये और धाय करके चरनो पर गिर पडी
फिर उठ कर हाथ जोड कर [illegible] दीन वाणी से विनती करने
लगी कि हे दीन नाथ मै कुमती और कुटिल तुमारे
प्रभाव को कुछ जान नहीं सकी जडता के वश हो कर
आप को महा कटू वानी से दुरवचन वोल उठी थी सो
तुम दया की मूरती संत वखसन हार मेरे तिस अपरा

धको मूढ जानकर क्षमा करिये और कृपा करके अब चलिये अपने चरनों से मेरे घर को पवित्र करिये ऐसे कहिकर हाथ से हाथ पकड़ लिया और सनमानपूर्वक घर मे ले आई इस प्रकार तिसकी भक्ती और प्रीती देख कर माधव भक्त जान गये कि सत्य करके इह दीपदान का प्रभाव प्रकट भया है तव भामनी कहने लगी कि हे नाथ इह मेरे घर मे जो धन संपती है सो सब आपकी है अब कृपा करके इस को ग्रहण करिये और मेरे को अपने चरनो की किंकरी अर्थात दासी जानकर जगत मे सुजस और वड़ाई दीजिये ऐसे तिस का कथन सुनकर माधव कहने लगे कि हे माई इह तेरा धन संपती और घर बार जो है सो तो सब मेरा ही है तेरे को कल्यान होवे अब तें तूं हे माई शुद्ध चित्त होकर साध ब्रह्मनों की सेवा मे लीन हो और अपने लोक प्रलोक को सिद्ध ~~और सफल~~ कर इस ते विना यतन के ही तूं संसार समुद्र से पार हो जावेगी और तेरे संपूर्ण वंस का भी उद्धार हो जावेगा इस प्रकार उपदेश करके भक्त प्रधान माधव जो हैं सो चले जाते भये और इहां सो धनी की स्त्री भी भगवान भक्ती की प्रीती वाली होकर रात्री दिन अतथीं ब्रह्मनों और संत भक्तों की सेवा मे ततपर हो जाती भई ऐसे कुछ क काल संत भक्तों सेवा करती करती अंत शरीर को त्याग कर परमपद को प्रापत होय गई इहां सो माधव भी विचरते विचरते आनंद पूर्वक शिवपुरी जो काशी है तिस मे चले आये ॥२०॥ चौपाई ॥ दुज विधान जुत हृदय हुलासी ॥ यात्रा कीन सकल कलकासी ॥ सुमरत हरन त्रास उर दीना ॥ तहां निवास भक्त निज कीना ॥ आवा एक दिवस पुरताहू ॥ दरव मत्त पंडित जन काहू ॥ मेदिग विजय धरन समुदाई ॥ करत कीन विद्या वल पाई ॥ आवा विजय करन कलकासी ॥ अस प्रकार मुख वचन प्रकाशी ॥ वुधजन सभा

(margin, right) श्री ... की ... और ...
(margin, right) ... सभा मे ...
(margin, left) अवरगामसभोरावरणों मे

मध्य चलि आवा॥ तहां गरव बस वचन अलावा॥
जीते सकल धरनि विद्वाना॥ अब तुमार जीतन
रुचि माना॥ जो मान सत तुव होहिं उमंगा॥ तो सेवाद
करहु मोहि संगा॥ निजकर देहु नतर लिखि सारे॥
तुम प्रधान जीते हम हारे॥ बुधजन सुनत दरप
अस तासा॥ बोले वदन वचन परिहासा॥ बिंदूमा
धव सनमुख कासी॥ बसहिं सिद्ध इक ज्ञान प्रकासी॥
वेद तत्व सब जानन हारा॥ माधव नाम विदित संसा
रा॥ तहि पै जाय निपुण मन भावा॥ करहु वदन
संवाद सुहावा॥ जो तुम तासु पराजय कीना॥ हम
हु जीति संसय बिनु लीना॥ तिन कर कथन सुनत
अस काना॥ माधव निकट आव अभिमा
ना॥ कहिस प्रकट अस वदन प्रचारी॥ मैं ततवि
जय कीन जनसारी॥ कौ विदग्ध सनमुख नहिं आ
यो॥ कासी तुमहु एक सुनि पायो॥ तो ते करहु आ
ज मो हि संगा॥ पूर्ण अर्थ मन मोद उमंगा॥ जो
समरथ कछु होहिं न तोही॥ तो लिखि देहु परा
जय मोही॥ सो तुव वदन प्रसंसिक काहीं॥ गवहु
दिखाय सदन निज माहीं॥ दोहा॥ भक्त सुभृ माधव
सुनत श्रवण कथन अस ताऊ॥ मोहि जीत्यो
इन दीन लिखि गुरमुख सरल सुभाऊ॥ ११॥ टीका॥
तब तहां भक्त सुभृ ने विधी विधान के सहित शिव
पुरी की जहां तहां सब यात्रा करी फिर भगवान
का भजन और सुमरण करते हुये तहां हीं निवा
स करते भये तब एक दिन तहां बड़ा विद्या मे प्रवी
न हंकार मे उनमत्त भया हुआ एक पंडित आय जाता
भया सो कहने लगा कि मै अपनी विद्या के बल से स
पूर्ण पृथवी के विद्वानो को जीत लिया है ऐसा कोई
देखनहीं परता जो मेरे सनमुख होने वाला हो एक
मैने कासी का प्रभाव सुनाथा सो अब ईहां के विद्वानो

प्रार्थना करकर संध्याके समय जललेकर हाथपाउं
सब धोयकर और पवित्रहोयकर भगवान केभवनकी
चारो ओर सुंदर दीप जोरे सो जगाय देताभया ॥ जब
ईहो दीनबंधू केभवनमे दीपोंका प्रकाश भया तबऊहो
तुरतहीं तिस धनीकी स्त्रीके हृदयका अज्ञान जोथा सो
सब नाश होगया कहनेलगी किअहो मैनेजो घरमेंरह
धन जोडा हुआहै सोतो मेरा वृथाहीं श्रमहै मैंधनकेलाल
चसे कोई सुधर्म और सुकरम भी नहीं किया और नाअ
जतक अतथी साध ब्रह्मणों की कोई सेवा बनपडी इह
धनजोहै सो मरती काल मै मेरा संगी नहीं होवेगा अतको
धरमहीं परलोकमे सहायक होगा देखो देवयोगसे अक
"एक स्मातहीं मेरे घरमें संत महातमा आगयेथे मे कुमती और
महामेदने तिनका बहुत निरादर करके घरसे बाहिर नि
कालदिये तोते हेरे समान जगतमे कौन भागहीन है किजि
सने घरआयेहूये अतथी महातमा को नाना दुरबचन कहे
और तिसकार कर निकालदिया इसप्रकार तिसकोचिंता
करके व्याकुल भई हूई को रात्रीभर निद्रा नहीं पडी जब
प्रात कालभया तबउठी औरप्रीती पूर्वक सब घरको ले
पनदिया फिर जहांलग घरमे धन भूषण और वस्त्रथे
सब निकालकर अतथी साध ब्रह्मण औरदीन जनोको
बांटदेती भई ॥ ९ ॥ चौपाई ॥ बहुरि करत चिंतन मनमाहीं ॥
सोकब मिलहिं संत मोहि काहीं ॥ कुमति चोर दिसबस ज
हिमारा ॥ इहधन देऊं आज तहि सारा ॥ असप्रकार मा
नस पछताई ॥ बाढिस द्वार बहिर निज आई ॥ उतआ
ये माधव बडभागी ॥ दीप प्रभाव बिलोकन लागी ॥ भयो
किनारि बिमल मति दारा ॥ असजब आय निकट तहि
द्वारा ॥ भामनि देखि तुरत दुज चीना ॥ धावत सपदि च
रन गहि लीना ॥ नेमत कहिस जोरि जुगपानी ॥ पू
रब दिवस कुमति कटु बानी ॥ दीन नाथ तुव सनमुख
कीनी ॥ सो मोहि छमहु अधम मति चीनी ॥ अबदाया
बस दीन सनेहू ॥ पावन करहु मोर चलि गेहू ॥ अस
कहि पकरि बिप्रवर पाना ॥ आई लेत सदन सनमाना ॥

एकादशी, द्वादशी

इहलिखिदीनपत्र निजपानी॥ बुधजन लेततासु ज
व वाचा॥ भयो तुरत रत दरप अवाचा॥ माधवजीत
करतकल हासी॥ पढ़न तासु जब वदन प्रकासी॥
सो विलोकि अस परम लजाना॥ मोहि वंच्यो कसक
पट महाना॥ अस कहि लेत पत्र पुनि आवा॥ कंपत
रोम रोम रिस छावा॥ करिचित कार कथन अस कीना
मोहि कस वंचि कपट लिखि दीना॥ जान्यो दंड योग्य
तुव साधू॥ अब पत्र राखि करहु संवादू॥ जहि निज
वचन पराजय होई॥ गरधव रूढ़ होहि जन सोई॥ माध
व सत्य वचन तहि मानी॥ बोल्यो नम्र वदन असबानी॥
करि सनान चरचादि सुहाई॥ तोहिसन करहु निपुन कछु आई॥ अस कहि जाय देव सरि तीरा॥ सुमरत दे
व हरन जन पीरा॥ जगन नाथ भगवान सुहाये॥ विप्र
नम्र मुखवचन अलाये॥ इहवटु विदत सकलजग मा
हीं॥ मैं अजान जानत कछु नाहीं॥ जहि देखत कं
पत सब अंगा॥ कस संवाद देव तहि संगा॥ इत माधव
जीय करत विचारा॥ उत कृपाल प्रभु भक्त उवारा॥ मा
धव शिष धरि रूप सुहाये॥ करन संवाद भक्त हित आ
ये॥ तब मध्यस्थ आन विद्वाना॥ जिनहिं मरम
सब वेद पुराना॥ बैठे प्रकट होन तब लागा॥ सि
सु सन प्रश्न उत्र कल वागा॥ गरधव रूढ़ बीच
पत्र सोई॥ अस प्रकार चरचा जब होई॥ प्रबल व
चन बालक तब पाये॥ लोक विलोकि सकल वि
समाये॥ जानि न सके देव चतुरैया॥ सिसु सरू
प निज मरम दुरैया॥ कहत सकल शिष एह
अजाना॥ अहो करत संवाद महाना॥ आगम उ
क्त कछु युक्त नयारी॥ रुकी न रुकत जठिर म
ति मारी॥ तब अशक्त पंडित मुखवानी॥ बोल्यो
विलखि पराजय मानी॥ तुव वचनन कुंठित म
ति मोरी॥ अहो बाल कछु कीन नयोरी॥ अब
न होत संवाद उचारी॥ मोर पराजय विजय तुमा
री॥ तब आरोहण गरदभ तासा॥ हरषि लाग
जब करन अजासा॥ दोहा॥ तो लो मज्जन कर
तकल विम ल देवसरि वारि॥ आये

माधव सकुच जुत भक्त सु बृ व्रतधारि ॥ २३ ॥ टीका ॥
तब हेकारी माधव की लिखी हुई पत्रिका लेकर
विद्वानो की सभा मे आय करके ऊंचे स्वर से कहने लगा
कि इह देखो भाई तुमारे महा मानी और प्रवीन पंडित
ने हार मान कर इह पत्रिका अपने हाथ से लिख
देई है इसको बाच लेवो तब बिद्वान जनो ने सो पत्रिका
लेकर के जो बाची तो तिस मे माधव जीत लिखी हुई पाई
जितने विद्वान बैठे थे अपने अपने मुखसे सब तिसको
हासी करने लगे तब सो अभिमानी देखकर के जल मरा
और लज्जा को प्रापत भया ततकाल सोई पत्रिका ले
करके क्रोध से कांपता हुआ माधव के पास आय कर बडे
त्रिसकार के वचनो से कहने लगा कि अरे मूढ तैने मे
रे साथ कैसा कपट किया है कि हार के बदले जीत लिख
दिया है जड तू तो बडे भारी दंड के योग्य है अब मेरे साथ
पण अर्थात दाउ राखकरके संवाद कर जो हार जावेगा
सो गधे पर चढाय करके नगर की चारो ओर फेरा जावेगा
ऐसे तिसका कथन सुनकर माधो ने भी सत्य वचन कहि
दिया और फिर कहा कि हे प्रवीन अब मै सनान करके
आवता हूं और तेरे साथ चरचा करता हूं ऐसे कहि
कर भक्त प्रधान श्री गंगा जी के किनारे पर चले आये
और तहां हाथ जोड कर बडी नम्र बाणी से जगननाथ
स्वामी के आगे प्रार्थना करने लगे कि हे भक्त जनो की
पीडा और कलेश को दूर करने वाले भगवान मै निपट
अजान और मूरख हूं संवाद की रीती मर्यादा को कुछ
भी जानता नहीं हूं और इह ऐसा भारी विद्वान है
कि जिसको देखते ही शरीर का सब अंग अंग कांप
उठता है तिसके साथ मेरा संवाद कैसे हो सकेगा
इहां माधव हृदय मै ऐसा विचार करते हैं और उहां
भक्त जनो की टेक राखने वाले भगवान कृपानिधा
ने माधव के शिष्य का रूप धारकर तिसके साथ सं
वाद करने को चले आवते भये तब मध्यस्थ अर्थात
बीच मै और बडे बडे भारी विद्वान कि जो वेद के तत्व
को भली प्रकार जानने वाले थे बैठ गये और

५१०

तिस बालकके साथ शास्त्र अर्थ जो है सो होने लगा और गरदभ पर चढाने का बीच मे दाउ डाला गया इस प्रकार जब चरचा होने लगी तब वालक की वचनो मे प्रबलता पाई गई सब लोक देख करके आचर्ज को प्राप्त होगये वालक रूप भगवान का भेद नहीं पाय सके और प्रभात्मा के कौतुक को जान नहीं सके सब ऐसे ही कहते हैं कि इह वालक तो नदान है परंतू कैसा गाढा संवाद करता है और इसकी कैसी आगमउ कते है कि जिसका उत्तर हीं नहीं निकल सकता और रोकी हुई रुकती भी नहीं तब तो अश्रीत होय करके सो पंडित कहने लगा कि हे वालक तेरे वचनो ने मेरी वुद्धी को सिथल और निरवल कर दिया है अब तुमारे साथ मेरा संवाद नहीं हो सकता मै हारा और तुम जीते जब इस प्रकार तिसने हार मान लई तब संपूर्ण लोगों ने तिसको गरधव पर चढाने का यतन विचारा इतने मे गंगा विखे स्नान करके कुछ सकुच चित भये हूये परमव्रतधारी माधव भक्त भी तहां आय गये ॥२२॥ चौपाई ॥ सो व्रतांत सब सुनत अजासा ॥ गरदभ करन अरोहण तासा ॥ किये भक्त दयाजुत वारण ॥ शिषहिं करत तिसकार उचारण ॥ कहिस विदग्ध जठिर विद्वाना ॥ इहि कस गुन्यो योग्य अपमाना ॥ अस प्रकार तिसकार त तेहा ॥ शिव सरूप भगवन जनने हा ॥ परिहरि सभा वहिर चलि आये ॥ सिसु सरूप निज लीन दुराये ॥ रहा भवन माधव शिख जोई ॥ चलि आयो तहि अवसर सोई ॥ आन विपुल को विद जन आये ॥ शिख संवाद सुनत हरखाये ॥ लगे करन सब तास वडाई ॥ तुव इहि विजय कवन विधि पाई ॥ वेत्ता वेद परम विद्वाना ॥ तुव जीत्यो अश्चर्य महाना ॥ शिषविन कथन सुनत इहि भाती ॥ उपज्यो तुमहु करत कस भ्रांती ॥

सोहं... देखो ... कुछ ... शिवलाल...

‸के

कोभी जीतनें वासते आयाहूं इसप्रकार जवतिसने सव विद्वानो के वीच ऐसे हंकारके वचन उचारण किये कि मै सवको जीतकर अव तुमारे जीतनेको आया हूं जो तुमको कुछ सामर्थ है तो सावधान होकर मेरेसाथ शास्त्र अर्थकरो जो कदाचित तुमको सामर्थ नहीं है तो अपने हाथ से मेरेको लिखदेवो कि प्रधान तुम जीते और हम हारे ऐसे संपूर्ण पंडित विद्वान तिसकी हंकारकी भरी हुई वाणी सुनकर हृदय मे आश्चर्ज होकर परिहासके वचनों से कहने लगे कि हे ‸ल काशीमे वेदमाधवभगवान के सनमुख वड़ाज्ञानमां ‸न एक सिद्धनिवासकरताहै और वेद के तत्वको भली प्रकार जानने वाला माधव नामकर के लोगोंमे प्रसिद्ध है तुम आनंद पूर्वक तिसके पासजायकर जैसी तुमारी रुचीहै तैसासंवाद करो जो कदाचित तुमने उसको जीतलिया तोजानोकि तुम हमकोभी जीत गये इसमे कुछ संशय नहीं है इस प्रकारतिनका कथन सुनकर सो अभिमानी ‸ माधव जीके पास चलाआया और कहने लगा कि मै अपनी विद्याके वलसे संपूर्ण पृथ्वीको जीतलियाहै कोई विद्वानमेरे सनमुख नहीं भया अव काशीमे एकतुमको सुनाहै तोते तुम सावधान होकर अवमेरेसाथ शास्त्र अर्थकरो और जो तुमको सामर्थ नहींहै तोमेरेको पराजय लिखदेवो किमैहार गया हूं सोलिखतमै तुमारी शलाघा औरवडाई करनेवालों को दिखायकर आनंदसे अपने घरको चलाजाताहूं तव भक्तसष्ठ माधवजी तिसका कथन सुनकर तुरत लिखदेतेभये किमैहारा औरतूजीता इसमे वाकाभीहै कि गुरमुख हार चले जगजीता ॥१२॥ चौपाई ॥ सो अस पत्र लेत हंकारी ॥ आवाबुधजन सभा प्रचारी ॥ तहि प्रवीन ‸ कोविद बुधमानी ॥

(margin: स, न, तदकिल)

की वार्ता है जो ऐसा भारी विद्वान और प्रवीन पं
डित इं अपमान के योग्य होवे इस प्रकार त्रिस
कार करने से सिष सरूप भगवान जो थे सो सभा
को त्याग कर और बाहिर आय कर लुपत हो जाते
भये तब माधव का यथार्थ रूप शिष्य जो था सो
तिस समय तहां आय गया गुरु और भी पंडित वि
द्वान बहुत से आय गये माधव के शिष का संवाद सु
नकर बडे प्रसन्न भये और तिसकी अनेक प्रकार
शलाघा और बडाई करने लगे कि देखो इह वेदां[illegible]ता
महा विद्वान पंडित था बडे आचर्ज की बात है कि तुम
ने इसको कैसे जीत लिया है तब शिष्य तिनका क
थन सुनकर कहने लगा कि मै नहीं जानता हूं इह तु
मारे हृदय मै कौन भ्रम उतपन्न होगया है तुम भली
प्रकार जानते हो कि मै जनम तें बुद्धी का हीन हूं एक
वरण अर्थात अक्षर मात्र भी अपने मुख से उचारण
नहीं किया और महा पंडित गुणों का समुद्र कहो
मैने इसको कैसे जीत लिया तब विद्वान जन तिसकी
ऐसी बानी को सुनकर कहने लगे कि भाई इह बा
लक सत्य कहता है सो तो बडा भारी विद्वान रहा
तिसके जीतने की इसको कहां सामर्थ थी हमने
जान लिया कि माधव जो है सो मन बचन काया क
रके भगवान का दृढ भक्त है सो दीनानाथ और भ
क्त हितकारी भगवान तिस शिष्य का सरूप धारकर
भक्त के निमित्त आप संवाद करने को आये हैं और
कृपानिधान ने कौतुक और चतुराई से मधोन
हो करके अपने जन को जगत मै नाना सुजस और बडाई दे दई है
इस प्रकार तिनका कथन सुनकर के वे प्रवीन पंडित
जो था सो परम हरष को प्रापत हो जाता भया फिर
दीनवत दोनो हाथ जोडकर माधव भक्त के चरनो
पर प्रणाम करके असतुती करने लगा कि हे भक्त
प्रधान तुम धन्य हो कि जिनके शिष्य का रूप

धारकर गरव प्रहारी भगवानने नाना संवाद करकर मेरेको जीत लियाहै अव मै तुमारे उपकार की कहां लग वडाई और शलाघा करूं कि जिसके प्रसाद से इस कृपाके समुद्र भगवान मैने भलीप्रकार नेत्र भर कर देख लिये हैं हे भक्तप्रवीन तुम आपतो तरे हो परंतू मेरेको भी तार दिया है तुम संसार मे धन्य हो और धन्य तुमारा जनम है ऐसे अनेक प्रकार वडाई करकर और वारवार चरनोपर सीस नायकर आनंद मे मगन भयाहूआ सो पंडित अपने घर को चला जाता भया और ईहो माधव भक्त भी भगवानकी भक्ती प्रीती मे लीन भये हूये सुखपूर्वक आयकर अपने आश्रम मे निवास करने लगे इसप्रकार नीले वादर और नील कमल के समान शरीर की शोभा वाले ~~[illegible]~~ और कमलवतही विशाल नेत्रों वाले पुरषोत्तम भगवान जो हैं सो सात वरष के वालक का ■रूप धारकर अपने माधवजन की भक्ती के वश भये हूये रात्री दिन सदेव तिसके साथही रहते हैं वडेभागों वाले दूसरे पुरष को दरसन देते हैं परंतू माधवजी को देख नहीं पडते ॥१४॥ चौपाई॥ समय एक माधव मतिधीरा॥ तजि कासी निज रुचिर कुटीरा॥ मथुरा कहे दुजकीन पयाना॥ मारग पाय अतप स्रम जाना॥ देखि सघन कदल तरुवर छाया॥ वैठे भक्त सुमृ सुख पाया॥ तहां एक ■ त्रीये जठिर सयानी॥ भक्तिमान दायारतिसानी॥ पथिकन पान करावत वारी॥ चरवरण चाहदेत हितकारी॥ देखि भक्त जुत तृष्यत वाला॥ स्याम वरण मृदु रूप रसाला॥ देत विमल जल चरवण चारू॥ लागि करन शोक व्रत धारू॥ कवन जननि दुर भागन देहा॥ कीन त्रिजगत वाल मृदु एहा॥ सो कस जीयत वज्र उरधरनी॥ जव अस गिरा शोक त्रीय वरनी॥ तव माधव अस वचन अलोवा॥ वृढे कवन शोक तोहि छावा॥ वोली जठिर

ऐस सुत एहा॥ तुव लोगा प्रेरत कल गेहा॥ तास
अभागनि कर मोहि काही॥ मोयो विलोकि शोक
जियमाही॥ माधव सुनत वचन तहि भाषा॥ वृथाक
हत कछु हृदय न राखो॥ निज सन मुख इक आसन
चारू॥ दीन विछाय भक्त व्रतधारू॥ तहिपर मान
सि देव सुहाये॥ माधव सेजुत भक्ति विठाये॥ कर पद प्र
छालन प्रभु कीन्यो॥ चरवण सोऊ जठिर त्रीय दीन्यो॥
भाजन राखि विमल जल धरयो॥ खान पान भावन
तव करयो॥ वहुरि भक्त कछु शेष रहावा॥ पाछे आ
पु भक्ति जुत पावा॥ भामनि जठिर देखि अस सेवा॥ वा
ल रूप प्रभु देवन देवा॥ सादिर अति प्रसन्न अनुरा
गी॥ वदन वचन मृदु भाषन लागी॥ मै जान्यो तुव
सेत उदारा॥ सिसु हि दीन जहि प्रथम अहारा॥ त
व हु भक्त अस हृदय न राखो॥ वृद्ध मरम वचन जो
ई भाखो॥ दोहा॥ दीन दयानिध कौतुकी करि कौतु
क निज चारु॥ कतहु प्रकट कतहू दुरत सुहत नरन
संसारु॥ १४॥ टीका॥ तव एक समय माधव जी
काशी मैसे अपनी कुटिया त्याग कर मथुरा को च
लपडते भये तहा मारग मै धूप की घाम अर्थात गर
मीसे व्याकुल भये हूये एक वृक्षों की छानी और सी
तल छाया देखकर ~~सके~~ सुखसे आसन लगाय देते
भये तिस अस्थान पर ~~एक~~ भक्तीमान और दया की
मूरती ■ एक वृद्ध स्त्री रहती थी सो धरमवती पथि
क जनो को अर्थात रसते चलने वालों को प्रेम से जल
पिलावती और चवीना भी देती थी तव तिसने माध
व भक्त के साथ कोमल अंगों वाला एक स्याम सलो
नी मूरती वालक देखकर वडी प्रीतीसे सीतल जल
और चवीना देकर के हृदय मै शोक करने लगी कह
ती है कि देखो इह कैसा कोमल वालक है वे कौन ज
ननी ■ अर्थात माता है कि जिसने इस कुमार ■ के वि
जोग को सहार लिया और वे अपने हृदय ■
को वज्र समान कठोर करके कैसे जीवती है जव
इस प्रकार तिस वृद्ध स्त्री ने कथन किया तव माधव
कहने लगे कि हे माई तूं ऐसे शोक के वचन को

मैतो सकल जनम मतिहीना॥ बरण मात्र उञ्चार न कीना॥ इह महान पंडित गुण सागर॥ किमि जीत्यो सव लोक उजागर॥ अहो नजाय वात कछु जानी॥ मृषा कहत सव अनुचित वानी॥ बुधजन सुनत कहत समुदाई॥ इहि कर कथन सत्य सव भाई॥ किमि सामर्थ अकोविद एही॥ विजय करन गौरव पटु तेही॥ हम जान्यो माधव गुण खाना॥ मन वच करम भक्त भगवाना॥ शिश स्वरूप धृत देव सुहाये॥ करन संवाद भक्त हित आये॥ दीन जनहि निज रुचिर वडाई॥ कृपा नकेत कीन चतुराई॥ तिन कर सुनत कथन कल एहू॥ भयो प्रसन्न वदन पटु तेहू॥ जोरि जुगल कर चरनन दीना॥ कहि प्रणाम मुख अस तुति कीना॥ कहत धन्य तुव भक्त प्रधाना॥ जहि हित कृपा सिंधु भगवाना॥ तुव शिश रुचिर रूप निजधारे॥ मोहि जीत्यो प्रभु गरव निकारे॥ तुव उपकार अवध गत ले ख्यो॥ कृपा सिंधु नयनन भरि देख्यो॥ तुम को तरे भक्त मो हितारा॥ अहो धन्य जग जनम तुमारा॥ अस प्रकार मुख अस तुति गाई॥ वारवार चरनन सिर नाई॥ हरषत अति प्रसन्न मन माही॥ कोविद कीन गवन गृह काही॥ दोहा॥ इत माधव हरि भक्ति दृढ निज आश्रम सुख पाय॥ लागे करन निवास कल भक्ति प्रेम सरसाय॥ अस पावन तहि भक्ति वस पुरषोत्तम भगवान॥ सपत वरष कर वाल कल धृत सरूप सुखदान॥ नील जलध वत नील तन नील कमल कल नयन॥ अस मद मोचिन मैन तहि रहत संग दिन रैन॥ भक्त न जानत मरम पै होत न सन मुख मान॥ वड भागी जन आन कहि देत दरस भगवान॥ २८॥ टीका॥ तव सो तिस पंडित का गरद भवर चढा ना सुनकर दया के वश होय गये और तिस को

तिस अपमान ~~नवा~~ रण कर देते भये और अपने शिष्य को तिसकार करकर कहने लगे कि इह कौन विचार

ऽसेनि

देखि नेम्र चरनन सिरनायो॥ आगल रह्यो संत इकधामा॥ तहिंपें लाय भक्तिजुत भामा॥ बहुरि ख दन अस वचन प्रकासा॥ इहिंकहें देहु निकट निजवासा॥ बोल्यो सो असंत विधि बामा॥ इहां न बयो बसन कर ठामा॥ माखित त्रीय रिसात वर जोरा॥ तुव इत बसहु सदन प्रभु मेरा॥ खोन पान रुचि जथा तुमारी॥ करहु कृपाल संत व्रतधारी॥ माधव सुनत वचन अस काहा॥ सुभे अब न अस न रुचि राहा॥ तव त्रीय वैस निपुण बडभागी॥ संत सेरो जे चरन अनुरागी॥ संजुत भक्ति दुगध कल दीवा॥ सो प्रसन्न मन माधव पीवा॥ आसिख दीन रुचिर हरखाई॥ तोरे सदन होहिं सुत भाई॥ चारु वंस वर बिमल बढावन॥ भगवन भक्त निपुण जगपावन॥ बहुरि नाम निज तासु सुनाई॥ भक्त सु भगव ले सिधाई॥ दोहा॥ तव आयो निज सदन सुभ भक्त वैस हुलसाय॥ पूछत संत आगमन कल त्रीय सन वदन अलाय॥ १६॥ टीका॥ तब भक्त प्रवीन माधव जो हैं सो हृदयमें भगवान को सुमरते हुये तहां से आगे को चलपडते भये जाते जाते मारगमें सुंदर जल और छाया देखकर तहां सुखपूर्वक बैठ गये और सौच सनान करके भगवान को नैवेद लगाया पीछे चवीने मात्र कुछ आप भी अहार करके फिर तहां से चल पडते भये तब मारगमें एक कोई वैस भक्त मिलपडा सो माधवजी को संत रूप जानकर कहने लगा कि हे नाथ ~~[illegible]~~ रस्ते में अमुक मेरा घर है आप कृपा करके तहां चलिये मेरे को कुछ थोडासा काम है सो मैं करके अभी आवता हूं और भक्ती प्रीतीसे आपका पूजन सेवन करता हूं ऐसे माधवजी तिसका कथन सुनकर के तुरत हीं तिसके घरमें चले आये, तब ~~[illegible]~~ संत महातमा को घरमें आये हुये देखकर तिस वैसकी स्त्रीने नमस्कार होय

कर घरनोपर लीसनाया तहां तिस के घरमें एक
संत आगे भी रहता था तिसके पास माधव भक्तकोभी
लेगई और कहने लगी कि हे संतभक्त इनकोभी आप
ने पास निवास देवो तव सो संत कहने लगा कि ईहां
दूसरे के वासते जागा नहीं है ऐसे सुनकर सो भामनी
क्रोधसे कहने लगी कि महाराज तुम आनंदसे ईहां
वास करो दूरजर आपका हीं है और खान पानभी जैसे
तुमारी रुची है तैसे करो तव सुनकरके माधव कहने ल
गे कि हे संत हितकारनी अव खानपानकी तो कुछ रु
ची नहीं है यद्यपि भक्त सुष्टूने अस्तूईकार हीकिया त
द्यपि तिस भामनी ने कुछ दुग्ध मात्र भोजन लयाय
दिया सो तिसके वारवार कहनेसे माधवजीने पान
करलिया और फिर प्रसन्न होयकरके आसीरवाद देतेभये
कि माई भगवान तेरे घरमें पुत्र देवे सोकैसाकि तेरे
वंसके वढानेवाला भगवान का दृढ भक्त और गु
णोंकी निधी सव लोगों मे उजागर होवे इसप्रकार वर
देकर और अपना नाम सुनायकर भक्तप्रधान तहां से
चलपडते भये तव तिनके पीछे तिस भामनीकापती
सो वैस भक्तभी घरमें आय गया और संतमहातमा
के घरमें आने का वृतांत पूछता भया॥ २६॥ चौपाई॥ की
न गवन जिमि भक्त प्रवीना॥ प्रमुदा कथन सकल तिमि
कीना॥ वैस सुनत पाछिल तव धायो॥ जावत भक्त
सुष्टु पथ पायो॥ करि प्रणाम यद्यपि हठ कीना॥
तद्यपि आय न भक्त प्रवीना॥ कहि सवैस तुव सदन
सुहावन॥ जव उपजव सुत सुजस वढावन॥ त
व आगमन सदन तुव माहीं॥ करहु भक्त संशय क
छु नाहीं॥ अस कहि कीन भक्त वर गवना॥ आयो
सोपि वैस निज भवना॥ गयो कछुक जव काल
विहाई॥ विप्र असीरवाद फल पाई॥ वंध्या जनम
वैस वर भामा॥ जनमत भई पुत्र अभिरामा॥ रा
म भक्त विद्या गुण नागर॥ करन कलित निज वंस
उजागर॥ उत माधव मथुरा पुरि आये॥ देमय

रुचिर देखि सुख पाये॥ जमुना तीर जात मतिधी
रा॥ कीन सनान विमल वर नीरा॥ हरन नास स
ज्जन मनभावा॥ श्री भगवान दरस फल पावा॥ का
लिंदी तट वहुरि प्रवीना॥ भक्त सु षृ आश्रम नि
ज कीना॥ तव कउ वैस भक्त भगवाना॥ ग्रतथी
संत देखि सनमाना॥ चरवण च णक देत सव का
हीं॥ आवा भक्ति प्रेम मन माहीं॥ माधव कहे दीने
कछु सोई॥ लीने भक्त प्रीति रत होई॥ भानु सुता
तट जात मधीरा॥ करि प्रक्षालन पद कर नीरा॥
सुचि हो पान वैठि सनमाना॥ करि अरपण पूर व
भगवाना॥ पाछे आप हरष उर छाये॥ भक्त सु
षृ कछु लीन सिपाये॥ ताहि समय हरि भवन
सुहाये॥ पूजक महा भोग विरचाये॥ दोहा॥ स
नमुख कृपा नकेत कर धरत रुचिर वर थार॥ चलि
आये तव वहिर सव करि संलगन कवार॥ २१॥
टीका॥ तव जिस प्रकार संत भक्त घर मे आये
और चले गये सो स्त्रीने सव कथन कर
दिया वैस भक्त सुनते ही पीछे धाय च
ला और मारग मे जाते हूये माधव जीको पाय
कर ले जाने के वासते यद्यपि वहुत ही हठ किया
तद्यपि भक्त प्रधान ने नहीं माना कहने लगे कि
हे वैस भक्त जव तेरे घर मे सुख और सुजस के
वढाने वाला पुत्र उतपन्न होवेगा तव मै तेरे
घर मे अवश्य आऊंगा ऐसे कहि कर माधव जी
चले जाते भये और ईहो वैस भी निरास भया हूआ
अपने घर को चला आया जव कुछ काल वतीत
हो गया तव व्राह्मणके आसीरवाद का फल पाय
कर तिस वैस की स्त्री कि जो जनमते ही वाऊयी
वड़ा सुंदर विद्या गुण प्रवीन भगवान का भक्त
और आप ने वैस को उजागर करने वाला पुत्र को है

करती हैं वृद्ध कहने लगी कि हे साधू जिस माई का इकपुत्र तू घरसे प्रेरकरके ले आया है मैं तिस अभागनी का शोक कर रही हूं तब माधव ने तिस का कथन सुनकर कुछ हृदय में नहीं राखा फिर अपने सनमुख एक सुंदर आसन बिछायदिया तिस पर मानसी भगवान जो मन करके कलपना किये हुये थे बिठाय दिये और सनमान पूर्वक तिनके हाथ और चरन प्रक्षालन करवाय कर अर्थात धुलायकर सो चबीना कि जो वृद्ध स्त्रीने दिया हुआथा आगे राखदिया और सुंदर जल का पात्र भी धरदिया तब दीनबंधु ने प्रीतीपूर्वक भोजन पान किया तिनें शेष जो पीछे बचाथा सो सनमानसे भक्त प्रधानने आप पायलिया तब सो वृद्ध भामनी बाल रूप भगवान की ऐसी सेवा देखकर बड़ी प्रसन्न होयकरके कहने लगी कि हे संत महातमा मैने तेरे को अतसे उत्तम और उदार चित देखा है क्योंकि जिसने इस कोमल बालक को प्रथम ही भोजन दिया और सतकार किया है ऐसे तिस भामनी ने प्रकट भी कहा तोभी माधव कुछ हृदय में नहीं ल्यावते भये इस प्रकार कौतुकी भगवान जो हैं सो अपने सुंदर कौतुकसे कहीं प्रकट और कहीं लुपत होकरके संसार में मानुष्यों को मोहित करते हैं ॥ १५ ॥ चौपाई ॥ तब माधव हरि भक्त सुजाना ॥ आगल चले समरि भगवाना ॥ मारग देखि बारि वर छाया ॥ बैठे तहां बिप्र सुखपाया ॥ करि सनान भोजन मनभावा ॥ हरिहिं रुचिर नैवेद लगावा ॥ आप करत कछु चरवण चारू ॥ चल्यो भक्तवर पंथसिधारू ॥ तब इक मिल्यो बैस मगमाहीं ॥ संत रूप तकि माधव काहीं ॥ बोल्यो नाथ अमुक मम गेहा ॥ तहां चलहु तुव दीन सनेहा ॥ मोहि कारज लागहिं कछु बेरो ॥ आय करहु सेवन प्रभु तेरो ॥ माधव सुनत कथन असतेहा ॥ देखिस आय बैस बरगेहा ॥ भामनि तास संतगृह आये ॥

भक्तिसुधा

कि

निजप्रीय भक्तसिमरपत होई॥ पावामे प्रसन्नमन होई॥ तुव चिंता जनि करहु सुजाना॥ माधव भक्त मोर प्रीय प्राना॥ उठे देखि अस सपन पुजारी॥ माधव भक्ति जानि जीय न्यारी॥ वदन प्रसंसि विविध सनमाना॥ पूजक आय भवन भग वाना॥ तवते अतहे प्रीति अनुरागे॥ नित नैवेद देन तहि लागे॥ पुरकर आन लोग समुदाई॥ लागे करन तास सिवकाई॥ अस प्रकार कछु समय विताहा॥ एक दिवस माधव गुण रासा॥ सुठि मोठीर नाम वनका हीं॥ गवन्यो भक्ति प्रीति मन माहीं॥ तहां एक दोमा अस नामा॥ रहा प्रसिद्ध सिद्ध अभिरामा॥ तहिं जाय भक्त मन भावा॥ कीन कथन कछु ज्ञान सुहावा॥ देहा॥ देख्यो माधव दृगन तव रच्यो पदारथ काहु॥ कसो अछादिन वसन सन धसो तनत तत ताहु॥ १८॥ टीका॥ तव कुछ कवेर के पीछे जब पुजारी भवन के भीतर जायकर के देखने लगे तव सोई चलायो का प्रसाद कि जो माधव भक्त ने अरपण कियाथा दीनानाथ ने पाया हुआ है कछुक चरो भगवान के थाल मे भी पड़े हुये हैं और महा भोग ज्यों का त्यों ही परिपूर्ण धरो हुआ है सो दीनवंधू ने कुछ भी नहीं पाया इसके तुक को देखकर पुजारी जो हैं सो वडे आचर्ज को प्राप्त होयगये और चिंता करके व्याकुल भये हुये कहते हैं कि भगवान की गती कछु जानी नहीं जाती है इस प्रकार सव पूजक मनमारे हुये अन्न और जल त्याग कर भगवान के भवन के बाहैं पडु रहे जव तिनको निद्रा आई तव भगवान सपने मे प्रवोध करते हैं कि हे पूजक तुम अपने हृदय मे किस कारण छोम पावते हो नीलाचल परवत की गुफा मे वास करने वाला माधव नाम करके मेरा प्यारा भक्त जो है तिसने

भक्तीपूर्वक मेरेको ~~चर~~ सुंदर चणोंका नैवेद लगा
या सो मैंने अपने भक्तका अरपण कियाहूआ नैवेद
परमप्रसन्न होयकरके पाय लिया है तुम चिंता मत
करो माधव मेरेको प्राणोंसेभी प्यारा भक्त है इसप्रका
र स्वप्न देखकरके पूजक जो हैं सो उठ खडे हूये और
माधवजीकी भक्ती अलोकिक कि जो लोकोंमें नहीं है
ऐसी जान कर और अनेक श्लाघा करकर भगवान
के भवनमें चले आवते भये तवते नित्य प्रीती और
सनमानसे माधवजीको भगवानका पवित्र नैवेद
जो है सो देनेलगे और पुरकें लोग भी भक्तप्रधान
को भलीप्रकार सेवन सतकार करनेलगे इस प्रकार
कुछ समय वतीत होयगया तव एक दिन माधवभ
क्त जो हैं सो आनंदपूर्वक भांडेर नामा वणको चले
जाते भये तहां एक तेमा नामकरके सिद्ध वडा प्रसिद्ध
था तिसके पास जायकरके माधवजी कुछ ज्ञान
ध्यानकी चरचा करते भये और फिर क्या देखते हैं
कि तिसने पृथवी को खोद कर एक गढेमें सुंदर भो
जन वनाय करके छिपाया हूआ है ॥ २८ ॥ चौपाई ॥
माधव देखि तासु अस काहा ॥ इहकस संत पदा
रथ राहा ॥ सोबोल्यो अस कपट प्रवीना ॥ दीन
नाथ इह संतन दीना ॥ दिन कहे रुची मोर कछु
नाहीं ॥ करहुं अहार नाथ निसि काहीं ॥ काहुलु
पत अस भाषि सुनायो ॥ महाराज सठ कपट अ
लायो ॥ उत्तम सरस आपु जढ पाई ॥ वियन रू
ख कछु देहिं जिमाई ॥ याते सठ निसि करहिं अ
हारा ॥ असप्रकार जव तासउचारा ॥ तव मधव
भाख्यो तहि काहीं ॥ उचित न करन पाक निसि
माहीं ॥ अवहिं दिवस मम सनमुख भाई ॥ ले
हु संत तुव भोजन पाई ॥ दोष विभागत करहु क
छु आना ॥ नतर तुरंत लुपत तकि माना ॥ कृ
मि जुत होहिं अन्न सव तोरा ॥ संत निरंत्र वचन

इहमोद॥ तेलो भास करन लुपताना॥ तासु करत उदयोटन पाना॥ सोनिज चारु पदारथ देखो॥ कृमी सकल परिपूरण लेखो॥ सोमा देखि चकित विसमाना॥ लाग्यो चरन जोरि जुगपाना॥ ते कुकरम निज निदरत सोई॥ संतत कृस्न भक्ति रत होई॥ बैठि समाज संत जन माहीं॥ लग्यो करन भोजन दिन काहीं॥ परिहरि सकल देष दुरताई॥ ततपर भयो संत सिवकाई॥ माधव भक्ति प्रसाद सुहावन॥ भयो असंत संत जगपावन॥ भक्ति प्रसाद सुलभ संसारहि॥ तरहोंआपु पुनि लोकन तारहिं॥ दोहा॥ तब माधव यात्रा अखिल करन कृस्न पुरिमाहिं॥ आवा विचरत विपुन पुर गिरि नीला चलकाहिं॥ २८॥ टीका॥ तब माधव जीने तिसको कहा कि हे संत इह कैसा पदार्थ रखा हुआ है सो कपट से कहने लगा कि महाराज इह पदार्थ संतो ने दिया हुआ है दिन मे मेरे को खावने की रुची नहीं होती है रात्री के समय आहार करता हूं तब किसी ने सहजे ही माधव जी को कहि दिया कि महाराज इह जड़ मूर्ख अर्थात झूठ बोलता है उत्तम रस वाला भोजन आप पाय लेता है और रूखा सूखा पीछे औरों को देता है इसी तें अधम रात्री को आहार करता है जब इस प्रकार माधव जीने श्रवण किया तब तिस साधू को कहने लगे कि भाई रात्री के समय आहार करना योग्य नहीं है अब ही दिन को मेरे सनमुख भोजन पाय लेवो और बाकी जो बचेगा सो औरों को बांट देवो नहीं तो सूरज के असत होने के पीछे इस तुमारे भोजन मे किरम पड़ जावेंगे इह मेरा वचन सत्य करके है इस मे कुछ संशय नहीं है इस प्रकार वारता अलाप करते करते सूरज जो है सो लुपत होय गया तब सो साधू उठ कर के

सोजनमतीभई और उहां माधवभक्त जो हैं सो गवन करते हूये मथुरापुरीमे चले आये सो वडी सुंदर और रमणीक भगवान की नगरी देखकर हृदय मे परम सुखको प्राप्त होते भये फिर जमुना के किनारे पर जाय करके स्नान किया तिसते उपरांत आय करके भक्तजनो के भय दूर करने वाला भगवान का पवित्र दरसन जो है सो पाया फिर जायकरके कालिंदी जो जमुनाजी है तिसके किनारे पर आसन लगाय देते भये तब कोई वैस भगवान का भक्त अतथी और संतमतो को चरवण अर्थात चवीना वांटता हूआ चला आवता था सो माधवभक्त को भी देखकरके प्रीती भक्ती से कुछ चवीना देता भया तब भक्त सूष सनमानपूर्वक लेकर और जमुना के किनारे मे हाथ पाऊं धोय कर फिर वैठकर प्रीती पूर्वक प्रथम भगवान को अरपण किया और पीछे आनंद से कुछ आप भी पाय लिया तिसी समय भगवान के भवन मे पूजक जो हैं सो महाभोग रचायकर और भगवान के आगे प्रसाद का थाल राख कर आप कवार मूंद करके वाहिर निकल आये॥१२॥ चोपाई॥ वहुरि सकल मानस अनुरागे॥ पृवसि भवन जव देखन लागे॥ सोऊ चणक माधव जोई दीने॥ पाये जगननाथ तिन चीने॥ परे कछुक भगवन वर थारा॥ महा भोग परिपूरण सारा॥ पायो सो नभक्तभयहारी॥ भये चकित चित देखि पुजारी॥ अति चिंताकुल करत वखाना॥ जाय नमर्म देव कछु जाना॥ अस प्रकार पूजिक मनमारे॥ तजि हरि भवन अन्न जल सारे॥ परे विगत निद्रा जब आई॥ तब भगवान भक्त सुखदाई॥ स्वपने कीन प्रबोध सुहावा॥ तुव कस हृदय छोभ निज पावा॥ नीलाचल गिरि गेह विहारू॥ माधव नाम भक्त मम चारू॥ तास भक्ति जुत मोहि सुहावा॥ चणक चारू नैवेद लगावा॥

417

517

ग्रौर सफलकरके कृष्ण प्रमातमा को सुमरते हूये विचरते विचरते जगननाथ पुरी मे चले ग्राये तहां सरव लोकके सुखदायक भगवान जो हैं तिन के चरनो पर प्रणाम करके ग्रौर भलीप्रकार दरसन पायकरके जगत मे ग्रपने भागों की बड़ाई मानते भये कि मेरे समान संसार मे कौन ग्रैसा धन्य है इसप्रकार माधव भक्त जो हैं सो जब लग जगत मे जीवते रहे तब लग जगननाथ भगवानके भजन ग्रौर सुमरण मे लीन रहे ग्रौर ग्रंत काल शरीर को त्यागकर भक्ती के प्रसाद से मुनी देवताउं को दुरलभ जो गती है सो पायलेते भये ॥ १४॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषाटीकायां माधव चरित वरणने नाम सरगः

तिस भोजन को जो देखने लगा तो क्या देखता है कि वे सब भोजन कृमी के सहित होगया अर्थात किरम पड़े हूये हैं तब ताको देख करके बड़े आचर्ज को प्रापत हूआ और हाथ जोड़ कर माधव जी के चरनो पर सीस नावता भया फिर अनेक प्रकार आपको धिक्कार कर कर तिस कुकरम को त्याग कर कृस्न भगवान की भक्ती मे लीन होता जाता भया तिस दिन ते संत समाज के बीच बैठ कर दिन बिखे ही भोजन पाय लेता और हृदय से द्वेष और कुटिलता को त्याग कर संत भक्तों की सेवा करने मै तत पर होगया ऐसे माधव भक्त के प्रसाद से सो असंत जगत मै संत रूप होय करके इस संसार समुद्र से ... हो तर गया और लोगों को भी तारता भया तब माधव भक्त जो हैं सो कृस्न पुरी की जहां तहां सब यात्रा कर कर फिर नगर ग्रामो और बनों मै विचरते हूये नीलाचल परवत को चले आवते भये ॥ २९ ॥ चौपाई ॥ मारग ता सु बैस कर गे... हू ॥ आसिष दीन सुवन हित जे हू ॥ आवा हृदय हरष निज मानी ॥ ते दंपति जुग जोरित पानी ॥ सुवन सहित पावन पग लागे ॥ संजुत प्रीति भक्ति अनुरागे ॥ तिन कहं कृत्य कृत्य जग कीने ॥ कृस्न सरोज चरन मन लीने ॥ विहरत जगननाथ पुरि आये ॥ ते प्रभु अखिल लोक सुख दाये ॥ करि प्रणाम नयनन भरि देखे ॥ उदय भाग निज संसृति लेखे ॥ दोहा ॥ जो लोर रहसि जियत जग माधव भक्त प्रवीन ॥ जगननाथ सुमरण भजन रहे दिवस निसि लीन ॥ अंत तजत कल वपुष निज सुरदुरलभ गति चारू ॥ लीन भक्ति प्रसाद तें भक्त सुघृ ब्रत धारू ॥ ३० ॥ टीका ॥ तब मारग मै तिस बैस भक्त के घर मे चले आये कि जिस को पुत्र के नमित्त असीरबाद दिया था सो दंपती अर्थात स्त्री भरता माधव जी को देख कर हाथ जोड़ कर पुत्र के सहित प्रीती भक्ति से चरनो पर सीस नावते भये तब तिन को कृतार्थ

आगे तिसका पुत्र भगवान प्रवीन भक्त और साध
ब्रह्मणोंकी सेवा करने वाला था पिताने प्रीती पू
र्वक तिसका नाम रघुनाथ राखा हुआ था सो जब
जुवा अवस्था को प्रापत भया तब पिता तिस
को परम चतुर और लायक जानकर जुवराजकी
पदवी जो है सो देने लगा सो राजकुमार हृदय मे
बड़ा भारी बंधन जानकर पिता को प्रबोध करने ल
गा कि हे तात इह संपूर्ण जगत जो है सो मिथ्यारू
प देख पड़ता है ताते इस राजकाजकी मेरे को कुछ
अभिलाषा नहीं है तुम कृपा करके इह जुवराज पद
जो है सो मेरे दूसरे भाई को दे देवो मेरे हृदय मे इस
की कुछ लालसा नहीं है ऐसे कहि करके धन
धाम और माता पिता स्त्री भ्राता को त्याग करके के
वल भगवान के चरन कमलोंका आधार राखकर भ
जनके निमित्त अकेला निकलकरके चलपड़ता भया
तब [illegible]गवन करता हुआ जगननाथ स्वामी के सामी
प सिंह द्वार नामकरके अस्थान जो प्रसिद्ध है त
हां आय करके निवास करता भया अजाचित ब्रत
धारन करलिया जो अनिच्छित कुछ आय प्रापत
होवे तो पाय लेता नहीं तो संतोष मे मगन रहता इस
प्रकार तिसको जब माघ महीना आय गया तो एक
दिन पृथवी पर सोये हुयेको आधी रात बतीत जो
भई तो सीत के मारे थरथर कांपने लगा तहां भक्त
जनो की रक्षा करने वाले भगवान तिसका कलेश देख
कर तुरत ही बैस्नवरूप धारकर चले आये और
सीत के निवारने वाला वस्त्र जो था सो तिसके ऊपर
उढायदेते भये तब रघुनाथ भक्त वस्त्र के आधार से
निद्रा के सुख मे म[illegible]गन होय गये जब प्रात काल
पूजक जनोने आय करके देखा तो कोई पुरष [illegible]
भगवान पवित्र वस्त्र ओढे हुये सोय रहा है तब
आचर्ज होयकर[illegible] तिसको [illegible]जगाय करके पूछ
नेलगे कि अरे भाई इह तेरे पर भगवान पवित्र

का

वस्त्र किसने उढायदिया है ऐसे तिनका कथन सुन करके रघुनाथ भक्त कहने लगे कि भाई मेरे को कुछ खबर नहीं है आधी रातके समय सीतसे व्याकुल भया हुआ कांप रहा था कोई सुधरमी पुरष दया करके इह वस्त्र मेरे पर उढाय गया है॥२॥ चौपाई॥ तब इह मरम पूजकन जाना॥ इहि पट दीन आपु भगवाना॥ दीनदास बिनु कवन उदारा॥ जन पैं करन हार उप कारा॥ तास भक्ति अस देखि सुहाई॥ लगे करन अस तुति समुदाई॥ जानि प्रधान भक्त भगवाना॥ वंदित लगे करन सनमाना॥ तब सुभक्त कछु अवसर पाई॥ करत गवन मथुरापुरि आई॥ राधा कुंड बैठि सनमाना॥ सुचि पूजन मानसि भगवाना॥ लाग्यो करन भक्ति सर सावा॥ घने दुग्ध नैवेद लगावा॥ पूरब वत सेतन नहि दीना॥ एकल आपु पान सब कीना॥ ताहि दिवस तहि उदर मझारा॥ उपज्यो सूल प्रबल दुख भारा॥ वैद्य बुलाय धमनि दिखरावा॥ तास प्रकट अस दीन जनावा॥ दुग्ध पान कीन्यो तुव गाढा॥ तहितें उदर अजीरण बाढा॥ सो बोल्यो निसि दिवस सुहावा॥ मै न उदर कछु भोजन पावा॥ इह कस भयो वैद प्रति कूला॥ मोरे उदर अजीरण सूला॥ अब हिं दिखोऊं प्रकट करि तोहि॥ भेखज देन बिलम कछु मोहि॥ अस कहि वैद निपुण दुख चीने॥ अति प्रचंड औषधि कछु दीने॥ भयो तासु तीक्षण तत काला॥ तहि प्रभाव बल वमन उझाला॥ दोहा॥ निकसि प सो अति सघन तब उदर दुग्ध सब तास॥ लोक बिलोकत चकित मे भवत सूल दुख नास॥२॥ टीका॥ तब इह भेद पूजकोंने जान लिया कि इसके ऊपर दया करके आप भगवान भक्त सुखदानने वस्त्र उढाय दिया है दीन बंधू के बिना और कौन ऐसा दीन जनो की रक्षा करने वाला है इस प्रकार तिस की भक्ती देख कर सब लोग मुखसे अनेक प्रकार श्लाघा करने लगे और भगवान का प्यारा भक्त जान कर बारंबार

515

वंदना करते भये तव सो भक्त कुछ समय पाय कर
के तहां से उठकर मथुरापुरी को चले आये और
प्रीती पूर्वक श्रीराधाकुंड पर बैठकर भगवान के मा
नसी पूजन मे चित्त की वृती को लगायदेते भये तव
तिनो ने भक्तीप्रीती से भगवान कृपानिधान को बडे
फिर जतन से दूध का नैवेद लगायकर और पूर्ववत है
तों को देखते थे नहीं दिया अकेले सव आपही पा
यलिया तिसतें तिनके उदर मे बडाभारी शूल
दुखउतपन्न होजाताभया तव वैद्य को वुलाय
कर नाडी जो दिखाई तो तिसने कहा कि तुम ने
था वडामां दुगधपान किया है इसी तें तुम को अजीर्ण
होयकर शूल उतपन्न भया है तव रघुनाथ
भक्त कहने लगे कि भैया मै तो दिनरात्रीमे कुछ
भोजनमात्र पाया ही नहीं है मेरे को अजीरण के
से हुआ ऐसे तिनका कथन सुनकरके वैद कहने ल
गा कि औषधी के देनेकी विलंब है मै अवी दि
खायदेता हूं ऐसे कहि करके वैद ने ततकाल
एक औषधी देदई तिसके खाते हीं तिनको व
मन जो उछाला है सो हुआ सवके देखते ज्योंका
त्यों ही गाढा दूध निकल पडा और शूलभीसव
तुरत मिटगया इस अदभुत को देखकर आ
चर्ज के वश होकर मुखसे साधू साधू शवद उचा
रण करने लगे॥२॥ चौपाई॥ वैद वचित्र कीन च
तुराई॥ पूछत तासु मरम समुदाई॥ तव वो
ल्यो रघुनाथ सुजाना॥ मै ने वेद दुगध भगवाना॥
लावा मानसि ध्यान जुडाई॥ एकल वहुरि लीन
सवखाई॥ औरन नहि विभगत कछु कीना॥
सो परिपाक प्रकट अव लीना॥ सुनत लोक
मानस विसमाये॥ साधुसाधु सव वदन अ
लाये॥ अस प्रकार रघुनाथ सुजाना॥ भा अ
तिसृष्ट भक्त भगवाना॥ तासु भक्ति कर

ॐ

अथ रघुनाथ चरित वरणने दोहा॥=

कृस्न भक्ति कल करन दृढ दमन दुरत दुख मारू॥ भक्ति महातम आन अब कर हु कथन मन हारू॥ चौपाई॥ उतकल देस धरम गुणधामा॥ बसि हैं एक भूप अभिरामा॥ तासु पुत्र हरि भक्त प्रवीना॥ विप्र संत सेवन मनलीना॥ पितु सप्रीति सं जुत अभिलाखो॥ सुचि रघुनाथ नाम तहि राखो॥ सोउ जव भयो तरुण वडभागा॥ नृप जुव राज देन पद लागा॥ ते विचारि वंधन मनमाहीं॥ लाग करन वोधन पितु काहीं॥ मिथ्या तात सकल जग देख्यो॥ मोहि न राज कछु काज अपेखो॥ तुव जुव राज आन सुत काहीं॥ देहु जनक मोहि लालस नाहीं॥ अस कहि धाम भाम सुख त्यागी॥ चल्यो भजन भगवन हित लागी॥ जगननाथ सामीप सुहावा॥ सुंदर सिंह द्वार मनभावा॥ तहां निवास करन निज लागा॥ देव सरोज चरन अनुरागा॥ चारू अजाचित व्रत मन लीना॥ माघ मास इक समय प्रवीना॥ सोयो अवनि अर्ध निसि छाई॥ कंपन लाग सीत दुख पाई॥ तव भगवान भक्त रखवारे॥ वैस्नव रुचिर रूप निज धारे॥ सीत त्राण पट दीन उढायो॥ भक्त निपुण निद्रा सुख पायो॥ पूजक आय प्रात जव देखा॥ ओढत तासु देव पट लेखा॥ पूछन लाग सकल विसमाई॥ कहि तोहि दीन देव पट भाई॥ दोहा॥ तव वोल्यो रघुनाथ अस मोहि न मरम जन केहु॥ सीत कंप लखि अरध निसि दीन दया वस एहु॥२॥

टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो अव कृस्न प्रमातमा की सुंदर भक्ती के दृढ करने वाला और सर्व पूर्ण दुख दारिद्र और पापों के नास करने वाला मैं और भक्ती का महातम जो है सो कथन करता हूं आप कान देकर श्रवण करिये कहते हैं कि उतकल देस विखे एक धरम और गुणों का धाम राजा निवास करता था

ड़ेकावजावतेहूये कृष्ण भ्रमातमाके परमधाम
कोचलेगये॥ ३॥ इतिश्री भक्तविनोद ग्रंथे भ
गवद्भक्तीमहातमे भाषाटीकायां रघुनाथ चरि
तवरणनं नाम सरगः ══

विदत सुहावन॥ अन्य महातम मानस भावन॥
इहां एक संतपत उचास्यो॥ मै कछुअ
लव यथा मति वास्यो॥ दोहा॥ जीयत
रह्यो इह भक्तवर निरत भक्ति निसकाम॥ पा
यो मृत पश्चात कल कृष्ण धाम अभिराम॥
३॥ टीका॥ तव वैद की चतुराई देखकरके
लोग पूछने लगे कि इस क्या करण ~~है~~ रहा और
तुम कैसे जाना तव माधव वोल उठे कि
भाई मैने मानसी ध्यान लगायकर भग
वान को दूधका नैवेद अरपण किया था
पीछे किसी को नहीं दिया मैने अकेले सव
आपही पान करलिया सोई फल मेरेको
अव प्रकट मिलगया है ऐसे रघुनाथभक्त
की वाणी सुकरि मन करके अचर्ज भये
हूये साधु साधु कहने लगे कि भक्तप्रधान
तुम धन्य हो इस प्रकार रघुनाथ जी जो हैं
सो भगवान के परम सृष्ट और वडे दृढ भक्त
होते भये तिनकी भक्ती के अनेक औरभी
महातम हैं इहां संक्षेप करके एक ही कथ
न किया गया है इह भक्त सृष्ट जव लग जी
वते रहे तवलग भगवान की भक्ती मे लीन रहे
और जव शरीर को त्यागते भये तव आनंदपूर्वक

भक्ती का महातम कि जिसके श्रवन करनेसे हृदय
मे ज्ञान और सुमं का प्रकाश होता है मै आप के आ
गे गायन करता हूं क्योकि गौड देश विखे
धरम मे प्रवीन और बड़ा आचार्ज वेद के तत्व को
जानने वाला नित्या नंद नाम करके प्रसिद्ध एक
क ब्रह्मण होता भया सो भगवान की भक्ती मे
लीन भया हूआ अपने घर मे निवास कर
ता बड़े ही प्यार और सतकार से लोगों
को वेद पढ़ावता था एक दिन तिसने सरव सुख
और सिद्धियों के देनेवाला श्री भागत जो है सो देखा
तब पूर्व पुन्य के प्रभाव से तिस विखे तिसकी नित्य
नवीन ही प्रीती और रुची उपजती भई और कृस्न
भगवान के चरन कमलों को हृदय मे बसाय कर रा
तो दिन श्री भागवत के रटन करने मे ततपर
हो जाता भया तब तिस के हृदय मे दिव्य ज्ञान जो है
सो प्रकाशित हो गया सरव जगत को भगवान का रू
प ही जानने लगा और ज्ञान विज्ञान के सहित
होकर ब्रह्म नंद मे मगन हो गया इष्ट अनिष्ट
शत्रू और मीत जनम मरन क्षुध्या पिपासा सीत
उस्न गुन अवगुन हरष विषाद मान अपमा
न इन सब मे एकरस होकर और सब कृस्न प्र
भात मा का रूप विचार कर बारूनी जो शराब
है मानो तिस के मद मे उनमत्त भया हूआ आनंद
तब एक दिन नगर के बाहिर कहीं शिलास
मूह अर्थात फूसों ढेर जो लगा हूआ था तो
भक्त प्रधान जाय करके तिस पर दृढ़ आसन
लगाय कर बैठ जाता भया तहां पवन के
प्रबल वेग से दैव इच्छा करके अ
कस्मात ही आय कर तिन फूसों के ढेर अ
गनी जो है सो सुलग जाती भई तब थोड़ी

Margin notes:

४ती

४त

४मत

४का

फलविहूश्शम्मुद्रिद,

आनन्दउत्सवउत्सवहै

४को

हो वेरमें ज्यों ज्यों पवनके झकोरे लगते हैं त्यों
त्यों हीं ज्वाला भी प्रचंड होती जाती है ॥१॥ चौपाई॥
नित्यानंद भक्त भगवाना॥ देखि अनल अस प्रब
ल महाना॥ रंचक हृदय धीर नहीं त्यागा॥ कृष्ण
सरोज चरन मन लागा॥ रह्यो प्रलीन ध्यान नि
जमाहीं॥ पावक प्रबल त्रास कछु नाहीं॥ यद्य
पि लोगन विविध बखाना॥ उठ्यो न तदपि भक्त भ
गवाना॥ तब पावक चहुं ओरन जारी॥ भई
आपु निरबापन हारी॥ देखहु भक्ति प्रभाव सुहा
वा॥ जिहि स्पर्श तिल अगिन पावा॥ जरे न
सो ऊ भक्त कस जरना॥ अहो प्रभाव भक्त मन
हरना॥ अस प्रकार इह चरित सुहावा ॥ नि
त्यानंद विप्र मैं गावा॥ दोहा॥ भा जोगी जन भ
क्त वर जग जड़ भरथ समान॥ जिहि हरिभ
क्ति प्रसादतें पावा पद निरबान॥२॥ टीका॥ तब
नित्यानंद जी ने देखा कि अगनी महा प्रचंड हो
य रही है ऐसे धीरजके धाम भक्त प्रधान रंच
क भर भी नहीं डोलते भये सावधान होयकरके
कृष्ण भगवान चरन कमलों मै हीं चित्तको जुड़ाय
राखा और प्रभातके ध्यानमै हीं लीन रहे ऐसी
दाहक और महा प्रबल ज्वालाका हृदय मै कुछ
भी त्रास नहीं माना यद्यपि लोगों ने बहुत हीं
कहा तद्यपि बदेह भये हुये भक्त प्रधान नहीं
उठते भये तब अगनी जो है सो चारो ओरसे
जलाय करके फिर हारकर आपहीं शांतीको
प्रापत होजाती भई अब देखिये कि भक्तीका
कैसा अधिक प्रभाव है जिन तिलों का भक्त
राजके शरीर के साथ स्पर्श होय रहाथा सोतो
तिस अगनी की दाहक शक्तीसे ~~नहीं जल सके थे~~
~~[illegible]~~ जले ही नहीं अब कहिये कि तिस भक्तप्र

522

धानको कौन जंलायसकताथा अहोभक्तीका अदभुतप्रभाव औरअगाध महिमा है तिसके बडेउदयभाग्य हैं किजिसको इह अनंत महिमा वाली भगवानकी भक्ती प्रापत होवे इसप्रकार इहनित्यानंद जीकी मनोहरगाथा जोहै सो मैनेगायनकीहै कैसेभीनित्यानंदहैं किमहाजोगीजन और भक्तों से सूषू जगतमै साक्षात जडभरथ के तुल्य हूयेहैं और जिनोने भक्ती केप्रसादसे भगवानके निरवाणपदको प्रापत करलियाहै ॥२॥ इति श्रीभक्तविनोदग्रंथे भागवदभक्तिमहातमे भाषाटीकायां नित्यानंद चरितवरननं नाम सरग

अथ नित्यानंदचरितं

दोहा॥ अब बिचित्र जगबिदित बर भक्ति महातम आन॥ करहुं कथन जहि सुनत स्रुति बढहि सुमति सुभ ज्ञान॥ चौपाई॥ गौडदेस इक विप्र सुहावा॥ नित्यानंद नाम जहि गावा॥ अतिप्रवीन दुजधरम अचारा॥ वेदतत्व सब जानन हारा॥ बसि निज सदन विप्रबर सोई॥ संतत कृस्न भक्ति रत होई॥ वेदाध्यापन लोगन काहीं॥ सदा करावत हित चितमाहीं॥ एकदिवस सुंदर सुख सारू॥ देख्यो तास भागवत चारू॥ पूरव पुन्य प्रभाव प्रभाऊ॥ तामध नवल प्रीति रुचिताऊ॥ दिनदिन उपजि अधिक सुखदाई॥ कृस्न सरोज चरन मन लाई॥ तासु इकंत रटन पर भयये॥ तब तहि दिव्य ज्ञान उरछयये॥ सरव बिस्व भगवन मयजानी॥ ब्रम्हानंद मगन भयो ज्ञानी॥ इष्ट अनिष्ट मीत रिपु तासा॥ जनम मरन छुधादि पपासा॥ सीत उस्न गुन अगुन समाना॥ हरष विषाद मान अपमाना॥ कृस्नरूप सब जानि जगत्ता॥ भयो छकित जिमि बारुणी मत्ता॥ दोहा॥ एकदिवस पुरबहिर दुज नित्यानंद प्रवीन॥ तकि समूह त्रिन सुष्क तहे दृढ आसन निज कीन॥ तबमारुत बल वेग गहि अनल चंड हरसाय॥ तहि समूह त्रिन सुष्क कहे अकस्मात लगि आय॥ जिमि जिमि निज बल बेग ते मारुत मरुत झकोर॥ तिमि तिमि होत प्रचंड अति ज्वलत ज्वाल चहुंवोर॥१॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे संत महंतो अब एक और परम पवित्र और मनको आनंद देनेवाला

गुणोंका समुद्र एक कृष्ण चैतन्य नाम करके ब्र
ह्मण होता भया जिसने निरंतर करके कृष्ण भग
वानकी जो है सो लोगों विषें भलीप्रकार प्रसिद्ध क
री है वेदशास्त्र के अभ्यास मे चतुर और ग्रहस्थ
धरम मे परायण बड़ा दाता प्रति घृत और मानी
था सब लोगोंमे उजागर और बालपने मे भी पर
म चतुर भगवान के पूजन सेवन मे रात्री दिन ली
न और विषय विकारों से रहित था सुंदर स्त्रीओं
का समाज जोड़कर और नदीके किनारे नाना
कुंज रचायकर आप कृष्ण रूप धार कर भक्ती
प्रीती से वंसी बजायकर और मनोहर गायन कर
कर रात्रीदिन कृष्ण लीला जो है सो करता
रहता था इसप्रकार तिसको भगवानकी भक्ती
और लीलाविलास करते को बहुतकाल व्यतीत हो
य गया तब कोई महा मलीन मती दुरजन पुरुष
तिसका ऐसा प्रभाव देखकर हृदयमे चिंतन अ
थात विचार करने लगा कि इसके पास तो कुछ भी
साधन पदार्थ नहीं है कि जिसके आधार से इतन
ना रासविलास और लीलासमाज रचाय रहा है
अब इसको अवश्य देखना चाहिये ~~कि इसके कौन~~
~~साधन है~~ जैसा होगा तैसा जान पड़ेगा जो तो
सुषृ और साधू होगा तब तो कुछ दोष नहीं
है और जो कवी दंभी पाखंडी होगा तो मेरा
सत्य पणा है कि मै अबी राजासे इस दुष्टको
बड़ा भारी दंड दिवाऊंगा ऐसे विचार कर
और राजाके पास जायकर हाथ जोड़ कर के
कहने लगा कि महाराज आपके नगर मे एक
महाधूरत और बड़ा चोर दंभी पुरुष जो है सो वा
स करता है मूरख मिथ्या उपदेश से

पुरकी स्त्रीओं के प्रेरकर और धनका लोभ
देदेकर नित्य रात्रीदिन नृत्य करावता है तिस
पाखंडी ने कपटसे कुछ चमतकार दिखायकर
के लोगोंको अपने वशकरलियाहै और
जडने कृष्ण चैतन्य अपना नामप्रसिद्धकिया
और ईसतात कृष्णही बन बैठाहै ॥२॥ चौपाई॥ तो
ते देम निरन जडकाहीं॥ पूरण दंडदेहु वपुमा
हीं॥ नतरमूप सब प्रजा तुमारी॥ होवसिमोह
विवस दुरचारी॥ असस्तुनिक्षित पति वचनउचारा॥
मैरहै सुन्यो भक्त सुमचारा॥ चेतन कृष्ण नामपुर
माहीं॥ जान्यो दुराचार रत नाहीं॥ तुवमुखेआज
श्रवण सुनिएहू॥ उपज्यो हृदय मोर संदेहू॥ तांते
आजरजनि तोहि संगा॥ निज परिछिन्न वपुलेकरि
अंगा॥ तासु चरित निजरूप दुराये॥ जनसातात
विलोकहु जाये॥ अनुग्रह निग्रह अधिकारी॥ ता
सु दृगन निज लेहु निहारी॥ असकहि तहिंधूरत
कर संगा॥ चल्यो भूपमन मोद उमंगा॥ दूरहिं लुपत
आय जब देखो॥ अदभुत चरित दृगन तब लेखो॥
भक्तिप्रसाद नवल कछु सोभा॥ देखिसभूप परम
मनलोभा॥ धूरत कहे प्रतिकूल दिखाये॥ अरुन
नयन कछु भृकुटि चढाये॥ दर चक्रादि चिन्ह
भुजचारी॥ ते बचित्र असरूप निहारी॥ मोहवि
वस भाखेत आगेहू॥ हैभुज भयो चतुर भुजएहू॥
प्रकट्यो कपटि महो प्रभु आजू॥ जोरि सरित तट
त्रीयन समाजू॥ जव दुरमति अस वदन वखानी॥
करन नम्र निज अनुचित वानी॥ तवसनमुखे
नरनायक हेरा॥ भयो सफुटत दुष्ट ब्रह्मेरा॥ भ
तवस भयो तुरत विथताना॥ तव संदिग्ध भूप
विसमाना॥ चेतन कृष्ण ललित छवि सोहन॥
देखनलाग्यो मुनिनमनमोहन॥ हैभुज पुंडरीकवर

लोचन॥ स्यामबरनमदमदनविमोचन॥ बदन
प्रसन्न[illegible]नादन बैसी॥ आवृत रमनि रुचिरगत
हंसी॥ दोभुजमनुज रूप छवि भाती॥ अस देखे नर
नाथ पदाती॥ प्रेम भक्ति मानस सरसाई॥ करत प्रना
म दंडवत राई॥ ते भृत धूरत कर ततकाला॥ चले लि
वाय नगर महिपाला॥ दोहा॥ आपुआय निज भवन
जब ततपति परम सुजान॥ कल नपसो अश्चर्य
वश लोचन रैन सरान॥ टीका॥ तौते हे प्रजापा
ल ऐसे दंभी और पाखंडी को तुम भलीप्रकार ताड
ना करो और दंडो नहि तो हे राजन तुमारी प्रजा जो
है सो मोहके वश होयकर सब बिगड जावेगी ऐसे
सुनकरके राजा कहने लगा मैने सुना है कि यह भ
गवान का भक्त और शुभआचारी है कुछ दुराचा
री नहीं और कृष्ण चैतन्न नाम करके नगर मे
प्रसिद्ध है पर तू आज तुमारे मुखसे ऐसा सुन
करके मेरे हृदय मे संदेह उतपन्न होय गया है तौते
आज रात्री को तुमारे साथ चलकर और अ
पने शरीर का भेष बटायकर लुपत होय करके
तिसके चरित्र को देखता हूं और तिसकी भला
ई बुराई की भलीप्रकार प्रीक्षा कर लेता हूं ऐसे
कहि करके राजा जो है सो तिस धूरत के साथ होकर
कृष्ण चैतन्न की लीला अस्थान को चले आये
तब लुपत होय करके दूरसे जो देखने लगे तब ति
नको एक अदभुत चरित्र ही नेत्रों मे देख पडा
भक्ती के प्रसाद से कुछ और नवीन ही शोभा देख
कर राजा मन करके मोहित होय गया और तिस
धूरत को कि जो राजा को लेकरके आया था कुछ
और विरुद्ध रूप ही देख पडे सो कैसे कि क्रोधसे बडे
लाल नेत्र भृकुटी जो भवां हैं सो चढाये हूये
और संख चक्र गदा पदम इन चारो चिन्ह धारन
किये हूये हैं तब धूरत तिनके ऐसे बचित्र रूप
को देखकर मोहके वश भया हूआ कहने लगा

अथ कृष्ण चैतन्य चरितं

दोहा॥ अब उतृत्तम अश्चय प्रद भक्ति महातम चा
रु॥ वरणन करहु यथामती अति पावन मन हारु॥ चौ
पाई॥ बंग देस इक दुज बर मन्या॥ पावन गौड बंस उत
पन्या॥ कृष्ण चैतन्य नाम अस ताहा॥ भक्त सृष्ट सेकु
ल गुण राहा॥ श्री श्रवत जासु भक्ति भगवाना॥ कीन
प्रकृष्ट विप्र सनमाना॥ वेदांत निरत अभ्यासू॥ ग्र
हस्थ निपुण वर धरम विकासू॥ दाता परम प्रति सृत
मानी॥ लोक उजागर नागर बानी॥ देवजजन संतन
अनुरागी॥ विषय विकार मार मद त्यागी॥ त्रीय न जू
थ जुत ललित रसीला॥ प्रतिदिन करत कृष्ण कल
लीला॥ सरता तीर कुंज विरचाई॥ करत गान कल वंसि
बजाई॥ कृष्ण रूप धृत चारु सुहावन॥ लीला करत
भक्त मन भावन॥ अस तहि भक्ति निरत भगवाना॥
गयो विपुल जब काल सराना॥ तब मलीन मति दु
रजन काहू॥ भूरि प्रभाव देखि अस ताहू॥ हृदय करत
अस चिंतन सोई॥ इहि वितादि अवलेव न कोई॥ पुनि
कस करत स्वस्थ चित कारा॥ हास विलास विमल वि
हारा॥ निश्चय करहु यतन जढ केरा॥ जस इह हो
हिं परहिं तस हेरा॥ साधु सृष्ट नव दोष न कोई॥
कबहुं कि दंभ निरत सठ होई॥ तो क्षित पति तें देउ
यनेरा॥ अवहिं दिखाऊं सत्य प्रमाण एरा॥ दोहा॥
अस कहि गवन्यो भूपढिग विनय कीन करजोर॥
क्षितपत पूरत नगर तुव बसत दंभ रत चोर॥
सोमि थ्या उपदेस करि प्रेरत पुर कर नारि॥ नृत्य
करावत नित्य वित देत लोभ दुर चारि॥ तहि कीने
सब लोक बस निज कछु कपट दिखाय॥ नाम कृ
ष्ण चैतन्य भनि बन्यो कृष्ण जनु आय॥ २॥ टीका॥
अब अतहि उत्तम और परम पवित्र बडे आचर्ज
के देनेवाला और मन के हरने वाला भक्त का सुंदर
महातम जो है सो गायन किया जाता है हे संत
कौ
भक्तो इस ध्यान देकर श्रवण करिये कहते हैं कि
बंगाल देस मै गौड बंस विखें बडा सृष्ट भक्त और

बिलासा॥ मनुज रूप भुज जुगल पदाती॥ इत्यादि कसब देखन हाती॥ तिन सन कथन सकल नृप कीना॥ भये सुनत सब अचरज लीना॥ जानि कृस्न कहँ कृस्न समाना॥ लागे बदन प्रसंसन नाना॥ तब बोल्यो नरनाथ बिचारी॥ जो सम्मति अस होहि तुमारी॥ तो सिष बनहिं सकल हम तासा॥ अस प्रकार जब भूप प्रकासा॥ कहि सुई कार सकल चलि आये॥ कृस्न स्वामि कल भवन सुहाये॥ भक्तिप्रमोद प्रेम सरसाई॥ प्रथम चरन नमृत सिर नाई॥ पाछे भूप जुक्तजुग करना॥ सादिर सो वृतांत सब बरना॥ बहुरि कीन अस बिनय सुहाई॥ हम अजान मूरखे समुदाई॥ तुव उदार जन उधरन हारे॥ तुम हु नाथ अपराध हमारे॥ आये सदन तोर अब स्वामी॥ हम हु जानि वर नन अनुगामी॥ श्री मुखे कछु उपदेस सुहाई॥ हृदय हमार हरन दुर ताई॥ भव पयोधि अति बिकटम हान्यो॥ हम तहि देखि देव कदरान्यो॥ गुरु कृपाल अब तुम हो आधारा॥ करहु जानि निज सेवक पारा॥ नारि सदन सुत संपति मोरे॥ दीननाथ सब अरपन तोरे॥ अस निज बिनय बदन सब कीने॥ चेतन कृस्न चरन गहि लीने॥ दोहा॥ मानिस भक्त प्रधान तब बासव भेद न कोय॥ गुरु सिष भ्रम संसार मध कथन मात्र सब होय॥ ३॥ टीका॥ तब राजा राली को सब कथा सुनाय करके फिर घरसे बाहिर दरबार को चला आवता भया तहां से दूत भेज करके पंडित मंत्री और वृद्धजन जोथे सो सब बुलाय लिये तब कृस्न चैतन्न के पास जाना और कृस्न रूप दरसन पाना फिर धूरत का कथन और तिसका मरना स्त्रिओं का समाज सब

ली ला विलास और नृत्य गायन दूसरे सब लो
गों को दो भुजा वाले मानष्य रूप देख पड़ना इ
त्यादि रात्री के समय सब कौतुक का देखना राजा
ने तिन को सब कथन करके सुनाय दिया तब इ
स अद्भुत को सब लोग सुन करके आचर्ज को
प्राप्त होगये कृष्ण चैतन्न को कृष्ण रूप जान कर
वारंवार शलाघा और बड़ाई करने लगे तब राजा
विचार करके तिन को कहिने लगा कि भाई जो
अब तुमारी मरजी और सम्मती होवे तो हम
सब कृष्ण चैतन्न स्वामी के शिष्य बन जावें इस
प्रकार जब राजा ने कथन किया तब
सब लोग सुई कार करके कृष्ण स्वामी के आ
श्रम में चले आये तहां भक्ती प्रीती से तिन के
चरनों पर शीश नाय कर मुख से नाना अस्तुती
जो है सो करने लगे फिर राजा दीनताई से हा
थ जोड़ कर प्रथम सो रात्री का वृतांत भिन्न भिन्न
करके सब सुनावता भया तिस ते उपरांत नम्र
वानी से प्रार्थना करने लगा कि हे भगवन हम
लोग महा मूरख और अज्ञान कुछ जानते नहीं है
तुम जनों का उद्धार करने वाले दया के समुद्र पर
म उदार और उपकार की निधी हो हमारे अ
पराध जो है सो क्षमा करिये आप के चरनों की
शरण को आये है अब हम को अपने सेवक
जान कर कृपा करके कुछ उपदेश करिये और
हमारे हृदय की जड़ता को हरिये हे दीनानाथ
इह संसार समुद्र जो है सो महा विकट और दु
स्तर है अर्थात किसी से नहीं तरया जाता हम
इस को देख कर के अत्यंत भयभीत और व्याकु
ल होय रहे हैं अब कृपासिंधू के बिना इस के पा
र होने को और कोई आधार नहीं देख पड़ता है

तो ते हमको अपने चरनो के सेवक जान कर हे दयानिधी इस संसार के अगाध समुद्र से पार करिये हमारा धनधाम और स्त्री पुत्र परिवार जो है हे कृपानिधान सो सब तुमारे ही अरपण है इस प्रकार विनती कर कर ~~[illegible]~~ कृस्न स्वामी के चरन जो है सो पकड़ लिये तब भक्त प्रधान तिनकी प्रार्थना सुन कर कहने लगे कि हे भाई कौन गुरू और कौन चेला

चेले

इह गुरू ~~शिष्य~~ का भ्रम संसार मे एक कथन मात्र ही है नहीं तो वास्तव करके ना कोई गुरू और ना कोई ~~[illegible]~~ चेला है अकेला कृस्न प्रमातमा ही घट घट मै व्यापक होय रहा है ॥१॥ चौपाई ॥ तद्यपि हित तुमार अविलकू ॥ तुम कहे करहु भक्त गत शोकू ॥ अस कहि कृस्न मंत्र जगपावन ॥ तिनहि कीन उपदेस सुहावन ॥ पाय भूप संजुत अस सोई ॥ रहे सि कृत्य कृत्य सब होई ॥ कृस्न स्वामि तब नीती उचारी ॥ सुनहु नरेस भक्तव्रत धारी ॥ धरम पतनि जुत राज सुजाना ॥ करहु देमव रजत अभिमाना ॥ प्रजा संत सज्जन अनुसर है ॥ दान दयादि करम सुभ कर है ॥ अर पणमोर जवन वित कीना ॥ इह सब देहु अतिथि जन दीना ॥ आन भरोस सकल परिहर है ॥ एक कृस्न कल सुमरण कर है ॥ गुरु न देस अस सुखद सुहाई ॥ भयो नरेस कृतारथ पाई ॥ बार बार चरनन सिर नायो ॥ चल्यो भवन सुभ आसिष पायो ॥ इत चैतन्य कृस्न अभिरामा ॥ सोवित दान भूप सनमाना ॥ कीं विभगत संत जन काही ॥ आपु विरक्त भक्त मन माही ॥

नदीके किनारे सीडीओं का समाज जो उकर

कि बडे आचर्जु की बात है इन कपटी दो भुजों वाला हो
य कर आज चतुर्भुज और महाप्रभू प्रकट होयगया है
जब इस प्रकार तिस दुरबुद्धी ने अपने नास कर
ने वाली बानी जो है सो कही तब ततकाल राजा
के सनमुख ही तिसका कपाल फूट ~~सो धूरत त~~
~~काल मर जोता~~ गया और तडफता तडफता
व्याकुल होयकर के मरगया इस अदभुत कौतुक
को देखकर राजा बडे अचरज को प्रापत हूआ औ
र कृष्ण चैतन्न की मुनीजनो के मनको मोहित
करने वाली सुंदर छबी जो है सो नेत्रभर कर देखने
लगा सो ~~कैसा~~ कैसा मनोहर ध्यान कि जिन की लंबी दो
भुजें और कमलों के समान बडे शोभावाले नेत्र
कामदेव के मदको दूर करने वाला सुंद स्याम सरीर
और प्रसन्न मुख बंसी को बजाते हूये हंसगम
नी जो स्त्री गण हैं तिनके समाज के बीच पदि
बारत हूये शोभा पावते हैं राजा के और नौकर चा
कर जो थे तिन को वे दो भुजों वाले मानुष्य रूप
ही देख पडे तब राजा जो है सो भक्ती प्रीती से
बारबार चरनो पर दंड प्रनाम करके और भ्रम संदेह
को हृदयसे त्याग करके तिस मरे हूये धूरत पुरषको
उठवायकर नगर को ले जाता भया इस प्रकार रा
जा अपने भवनो मे आयकरके जब विश्राम करता
भया तब तिस अदभुत कौतुक के सोच मे राती
भर प्रजापाल के नेत्र निद्रा के बश नहीं होते भये॥
२॥ चौपाई॥ महिषी कहे सब कथा सुनाई॥ भोरहिं
बहिर भवन नृप आई॥ पंडित सचिव बृद्ध समुदाई॥
भृत पठाय सबलीन बुलाई॥ चेतन कृष्ण निकर
जिमि जाना॥ कृष्ण रूप कल दरसन पाना॥ धूरत
बाको मरन जिमि तासा॥ नृत्य गीत त्रीय प्रीति

५२९

चरनोपर प्रणाम करके और तिनकी आसीरवा
द पायकरके आनंदसे अपने घरको चलाआ
या और ईहां कृष्ण स्वामी जी राजाका दानधन
जोदिया हूआथा सो सब साध ब्रह्मनोंको बांट
कर आप ब्रह्मानंद मे मगन भये हूये रात्रीदिन
कृष्ण भगवान के चरित्र और गुणोंकी लीला
विलासकरने मे ततपर होजाते भये इसप्रकार
भक्तप्रधान कृष्ण चैतन्न जी ने पतितपावनी अ
र्थात पापी जनो का उद्धार करनेवाली भगवान
की भक्ती जोहै सो भलीप्रकार प्रसिद्ध करके संपूर्ण
बंगदेश जो बंगालाहै तिसको पवित्रकरदिया अब
लगभी तिके शिष्य परशिष्य जोहैं सो भक्ती के प्रसा
दसे लोगो को कृतार्थ और सफल करते चलेआव
ते हैं ऐसे ईहा कृष्ण चैतन्न भगवानके दृढ भक्त
जबलग जीवे नमुक्त होयकरके पृथ्वीतलपर
विचरते रहे भलीप्रकार लोगो का हित करके
उद्धार करते रहे और अंत जब शरीरको छूटते
भये तब देहदिहांतरोंमे यशके होयकर
कृष्ण परमातमा की कृपासे कृष्ण रूपही
होयगये ॥ ४ ॥ इति श्रीभक्त विनोद ग्रंथे
भगवद भक्ती महातमे भाषटीकायां कृष्ण चैतन्न चरित
वरणने नाम सरगः

कृष्ण चरित गुणगान रसीला॥ भयो निरंत्र निरत कल लीला॥ ब्रह्मानंद मगन दिनराती॥ भक्त प्रधान भक्ति इहि भाँती॥ करि प्रसिद्ध कल मानस भावन॥ कीन्यो बंगदेस सब पावन॥ अजहु जास परसि सिरसि जोई॥ करत कृतार्थ लोगन सोई॥ दोहा॥ अस इह कृष्ण चैतन्न जग भक्त कृष्ण भगवान॥ जो लोर है सुधरलित ल सकल लोक हितमान॥ करत रहे उपकार सुभ अंत तजन निज काय॥ कृष्ण कृपाते कृष्ण मे देस दिसन जसु पाय॥ ४॥ टीका॥ फिर भक्त प्रधान कहते हैं कि यद्यपि इह सब भ्रममात्र हीं है तद्यपि तुमारा हित और प्रीती विचारकर इह तुमारे हृदय का शोक और संदेह जो है सो निवारण करता हूं ऐसे कहिकरके सरव जगतके पवित्र करने वाला कृष्ण मंत्र जो है सो तिनको उपदेश कर देते भये तब राजा के सहित सब अधिकारी पुरुष तिस परम पवित्र उपदेश को पायकर जगतमे कृतार्थ रूप होय ~~[illegible]~~ गये तिसते उपरांत कृष्णस्वामीजी वडी प्रीती और सनमानसे राजाको कुछ सुंदर नीती का उपदेश करकर कहने लगे कि हे प्रजापाल अब ~~[illegible]~~ धरम पतनी तुमारी राणी जो है तिसके सहित तुम दंभकपट और अभिमान को त्याग कर संतसज्जन और प्रजाकी पालना करो दान दया और धरम सुकरम मे लीन हो और जो तुमने धन पदार्थ मे रे अरपण किया है सो सब अरतथी संत और दीन जनो को वांट देवो और सब के भरोसे को त्यागकर केवल एक कृष्ण भगवान का हीं भरोसा राखलेवो और तिनकेही भजन और सुमरण मै रात्रीदिन लीन रहो इस प्रकार गुरूजी के मुखसे उपदेश सुनकर राजाँ आपने आपको धन्य धन्य मानता भया और फिर वारवार

सवविकारोंकेसहित,

तीर्थ और नगर ग्रामो मे भ्रमन करते हूये चिंतावलीनाम
कर के एक बड़ा रमनीक अस्थान जो थो तहां आप ने शिष्य
के समेत आय प्रापत हूये और तिसी स्थल मे एक बड़ा
मनोहर बगीचा देखकर किजिस मे अतसे कोमल और
नवीन वृक्षों की बड़ी सुंदर सीतल और घनी छाया थी तहां
भक्त प्रधान विश्राम करने को बैठ जाते भये तिस अस्थान
की कैसी शोभा थी कि बड़े सुंदर निरमल जल का भरा
हूआ तलाउ किजिस मे नाना प्रकार के कमल फूले हूये
और सीतल मंद सुगंध इह तीन प्रकार की पवन चलरही
है और पुष्पों की सुगंधी भी नाना भांत करके उमडी हूई
अली जो भ्रमरे कै की जो मोर कीर जो तोते इह भी नाना
प्रकार के शबद और गुंजार करते हैं तब भक्त सृष्ट ऐसे
अस्थान की शोभा देखकर किजिस के आनंद को देवता भी
लोभी चित होते हैं अपने शिष्य कों कहने लगे कि पु
त्र तुम रसोई भोजन बनावो [illegible] मे इस निरमल जल
बिखे सनान करके और फिर आय कर भगवान का
पूजन सेवन सब करता हूं ऐसे कहिकर जब कोई और
देखा तो एक बड़ा सुंदर भगवती का भवन शोभा देता
भया है तहां बहुत लोगों का समाज जुड़ा हूआ भगव
ती को बकरे और भैंसयों की बली देरहे हैं ऐसे
देखकर भक्त प्रधान दया केवश बड़े व्याकुल और
दुखी होयकर दीनता से कहने लगे कि अहो इहतो
की सरव चराचर इष्ट देव भगवती माता है इस को ह
व्य जो खीर और अनेक रसों के दिव्य व्यंजन और
पकवान त्याग कर इह दैतों का अहार मांस जो है सो
किस नमित्त देते हैं और मूढ जीव हिंसा कर कर अ
पने मनोर्थों की सिद्धी चहते हैं
और भगवती के नमित्त कुकरम कर कर ऐसा
अभागी अनहित तें हित की प्रापती करते हैं ऐसे
कहिकर फिर तिन को कहने लगे कि भाई पाय
स जो खीर आदिक बड़ी पवित्र और सुंदर वली
है सो तुम महामाई को क्यों नहीं देते हो वृ
था इन जीवों का क्यों घात करते हो इस प्रकार

जब हरिव्यासजीने कथनकिया तब सोअधम पापकीवानी सुनकरके मुखसे परिहास करनेलगे और भक्तप्रधान के सनमुख हीं ततकाल एकबकरे को पकड़कर और तलवार मारकर तिसकासीस काट डालते भये इस प्रकार तिनदुष्टों के हाथसे जीव का घात देखकर हरिव्यासजो हैं सो हाहाकार करने लगे और फिर दया के बश व्याकुल और दुखी होयकर हरी हरी शबदको उचारण करते भये॥ १॥ चौपाई॥ क्रोध विथत असतिष हिं बखाना॥ अब न उचित भोजन जलपाना॥ जग जननी कहं आज रिझाई॥ बदन विविध विधि असतुति गाई॥ निस अपराध जीव इन मेरन॥ तात विदत करि रुचिर निवेरन॥ पाछे पाक करन कछु होई॥ अस कहि बदन भक्तवर सोई॥ दीनजीव हित हृदय विचारी॥ असतुति लग्यो करनमन हारी॥ हे सुर असुर नाग नर सेवी॥ हे जगजननि जनन सुखदेवी॥ दोहा॥ महिखासुर मद हरनि भव चंड मुंड छय कारि॥ सुंभ विधुंसनि समरश्री शक्ति चक्र करधारि॥ गहिर्यछंद॥ ब्रह्म चारनि सैल पुत्री गौरि बज्र धारनी॥ लछमी पदमासनी कौमारि दुखनिकारनी॥ खडग धारनि वाहनी मृगं भैरवी अगभंजनी॥ कालका ब्रेह्मसुरी अष्टादसी खलगंजनी॥ सिंहवाहनी भगवती भवनेसुरी मातंगनी॥ विंधबासनि नारसिंही भारती भवभंजनी॥ श्रीधरी साकंभरी सूलेसुरी ललितं मरीताउमा॥ पापनासनी मुक्तकेशी जयचरी रकता रमा॥ दोहा॥ अब तें भक्त प्रमोदनी पायसादि बलि मात॥ लेहु कृपा करि रुचिर नित दीनजीव तजि घात॥ २॥ टीका॥ तब हरीव्यास जी जो हैं सो कोपसे भरे हुये अपने शिष्य को कहने लगे कि हे पुत्र अब भोजन और जल खान पान करना योग्य नहीं है प्रथम जगजननी जो भगवती है तिसको रिझाय कर और इन निसअ पराधी जीवों की घात छमा कराय कर फिर पीछे कुछ खान पान किया जावेगा ऐसे कहिकर और दीन जीवों का हृदय में हित विचार कर को अमलवानी

भोजन अस असतुतीसे

से अस्तुती करने लगे कि हे जगत की माता हे दैत
देवता और नाग मानुष्यों करके सेवत कीहुई हे म
हिषासुर के मद को हरने वाली और चंड मुंड के क्षय
करने वाली हे सुंभ विदारनी हे रक्षा मे कल्यान के
देने वाली हे शक्ती और चक्र के धारने वाली हे शैल
पुत्री हे गौरी हे वज्रधारनी हे लक्षमी हे पदमआ
सनी अर्थात कमल के ऊपर आसन दृढ करने वाली
और ब्रह्म चर्ज के धारने वाली हे कौमारी दूखनिवा
रनी हे मृग वाहनी हे भैरवी हे खड्ग धारनी हे
पापों का नाश करने वाली हे कालिका हे छत्र की
शोभा वाली हे अष्टादसी अर्थात अठारां भुजों वा
ली हे खल जो दुष्ट जन हैं तिन का नास करने वाली
हे सिंह वाहनी हे भगवती हे भवनेश्वर जो महादे
व हैं तिनकी प्यारी भवनेश्वरी हे मातंगनी हे
विंध्याचल परवत मे निवास करने वाली हे नार
सिंही हे भारती अर्थात सरस्वती हे संसार भय
दूर करने वाली हे श्रीधरी हे शाकंभरी किं शाक
जो साग है तिस करके जगत के जीवों को त्रिपत किया
हे त्रिशूल के धारने वाली हे ललिता हे उमा हे
मुक्तकेशी अर्थात खुले केशों वाली हे आश्रमे "का
विचरने वाली तपचरी हे रक्षा हे रमा हे भक्त
जनो की रक्षा करने वाली जगदंबे अब ते तू कृपा
करके इन दीन जीवों के घात को त्याग कर इह
पायसादि अर्थात [illegible] खीर [illegible] आदिक बडी
सुंदर और पवित्र बली जो है सोई ग्रहण कि
या कर ॥२॥ चौपाई ॥ जो तुम अस नकीन ज
न पाली ॥ तो मे काटि सीस निज काली ॥ देखु
मातु तुव सनमुख डारी ॥ अस प्रकार निज वदन
उचारी ॥ सिष समेत परिहरि गति आना ॥ रह्यो
करत सुमरण भगवाना ॥ तीन जाम जब रयन
विहायो ॥ चतुरथ जाम जबहिं नियरायो ॥

अथ हरिव्यास चरित्र

दोहा॥ भक्तिमहातम ललित तर करहुं कथन अब आन॥ जासु सुनत मिटि जात सब मोह मदन मदमान॥
चौपाई॥ विदत व्यास हरि नाम सुहाये॥ भक्तिप्रवीन भक्त हरि गाये॥ तीरथ चारु नगर पुरधामा॥ करत प्रजटन भक्त अभिरामा॥ चिंता वली नाम थल काहू॥ सिष समेत मानस उतसाहू॥ आये तहां भक्त गुणधामा॥ देखि एक कल सुभ्र अरामा॥ कसलय द्रुमन सरद घन छाया॥ तहां विश्राम चक्र वर पाया॥ विमल तडाग सलिल कल कंजा॥ चलत चारु वर त्रिविध प्रभंजा॥ सुमन सुगंधि उमचि चहुं वोरा॥ अलिगण कैकि कीर कल सोरा॥ भक्त प्रवीन देखि असशोभा॥ मन हुं ब्रवचित्र अमर मन लोभा॥ सिषसन कहत वदन मृदुवानी॥ तुव इत रचहु पाक सुखमानी॥ मैपुनीत वर वारि अनाई॥ करहुं देव पूजन सुखदाई॥ असकहि वाम ओर जब देखा॥ भगवति भवन ललित सुभलेखा॥ छाग मेख बलि देत लुकाई॥ अस अवि लोकि भक्त जदुराई॥ दयानिरत व्याकुल दुखमानी॥ बोले वदन नम्र ब्रतवानी॥ अहो मधुर हव्यादि सुहावन॥ व्यंजन दिव्य पाक कलपावन॥ परिहरि देत असुख कस देवी॥ जे सब भूत चराचर सेवी॥ करि हिंसा जीवन अग धामा॥ चाहत रुचिर विसफुर कामा॥ अन हिततें हित लेहिं अभागी॥ अस कुकरम करि भगवति लागी॥ पायसादि बलि ललित सुहाई॥ करत भक्त कस देहु नमाई॥ जब अस कथन कीन हरि व्यासा॥ लागे अधम करन परिहासा॥ सनमुख भक्त गहि त असि करना॥ उस्रो काटि सीस अज धरना॥ दोहा॥ अस देखत दृग व्यास हरि कीनक्षि हाहाकार॥ भये दुखित दाया विवस हरि हरि वदन उचार॥ १॥ टीका॥ नाभादासजी कहते हैं कि हे गुरू महाराज और संपूर्ण संत भक्तो अब और भक्ती का सुंदर महातम कि जिसके श्रवण करने से मोह मद आदि सब विकारों का नास होजाता है मै आपके आगे कथन करता हूं कि एक हरी व्यास नामकरके भगवान के परम प्रवीन भक्त होते भये सो सुंदर

श्रोर प्रभाव है कि मानो चांदनी केँ कोटि चंद्रमा उदय होयगयाहै श्रोर प्रसन्न होयकरके बड़ी कोमल बानीसे कहने लगी कि हे भक्तसिरोमणी अबतें आगे तुमारेहित करके ई हां मेरे भवन मैं कबी जीवहिंसा ना होनी पावे गी इह मेरा बचन सत्य करकेहै मैं सुपनेमै पुरके सब लोगोंको भलीप्रकार प्रबोध करदेतीहूं ऐसेकहिकर मनोहर स्त्रीके भेषसे बड़े सुंदर दिव्य बस्त्र धारकर रात्रीके समय सुपने विखें सबको बुझायँदेतभई कि मेरी आज्ञासे अबतें आगे सबकोई मेरेको पायस जो दूध की खीर ॰की है तिसबलीदेवे मैं सोई आनंदपूर्वक पाय करपरँम प्रसन्न होय्जाऊंगी श्रोर तुमारे हृदयके सब मनोरथौं को सफल करूंगी इहजीवहिंसा जो होती है सो इसते आगे कोई मतकरे श्रोर जो कदाचित इह मेरी आज्ञा तुमने नहीं मानी तो निश्चय जानो कि मैं तुमारे संपूर्ण बंसका नास करदेऊंगी इह भक्तकुलमैं स्रेष्ट हरिव्यास जोहै सो मेरा परम प्यारा भक्त है अब मैं इसको प्रसन्न होयकरके वर देचुकीहूं कि इसते आगे अब जीव

(margin, right: ॰हरिब्यास,)

(margin, left: ॰श्रोर सबका)

हिंसा कवी ना होगी ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ स्वपन
विलोकि लोक समुदाई ॥ उठे प्रात निज निज
वित्त माई ॥ बैठि इकत्र परस्पर वरना ॥ आये
वहुरि व्यास हरि सरना ॥ कहि प्रलोभ सव
विनय उचारे ॥ अव न होहिं प्रभु नगर हमारे ॥ दुराचार हिंसादिक करमा ॥ तोर मृजाद वध कृत धरमा ॥ रहिहैं सदा अटल महिमाहीं ॥ दीन दयाल हे शंय कछु नाहीं ॥ सुनि अस भक्त सुषु हरखाना ॥ भगवति कथन सत्य जीय जाना ॥ नमृत सीस मन हिं मन नाई ॥ कीन सनान विमल जल जाई ॥ भोजन करत वहुरि हरखाते ॥ शिष जुत चले भक्ति मदमाते ॥
तवतें तहां नगर सुभ ताहू ॥ भयो करम हिंसादि न काहू ॥ पावन हृदय भक्ति सरसाई ॥ भये लोक वैष्णव समुदाई ॥ दोहा ॥ अस
प्रकार इह चरितमें कीन कथन हरि व्या
स ॥ सुनत जासु हरि भक्ति जुत होहिं मु
चित भव त्रास ॥ ४ ॥ टीका ॥ इस प्रकार रात्री
के समय स्वपन देखकर प्रातकाल होते हीं स
व उठे और अपने अपने आचर्ज मान
ने लगे फिर सव इकत्र होयकर के और परस्पर
सुनाय करके हरी व्यास जी की शरणको च
ले आवते भये तव तिनके चरनों पर वारवार

हरिव्या,

देइ प्रणाम करके सो स्वपन का वृतांत और भगवती का प्रबोध जो था सो सब सुनाय दिया तिसतें उपरांत हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे दीन दयाल अब इसतें आगे तुमारी कृपा के प्रसादसे हमारे नगरमै कबी जीव हिंसा का पाप नही होगा इह तुमारी बांधी हुई मर्यादा और सुधरम जो है सो सदैव ही अटल रहेगा हे कृपा निधान इसमै कुछ संशय नहीं है ऐसे तिनकी बानी सुनकर भक्त प्रधान हृदय मै परम सुख आनंद मानकर जगदंबे का कथन सब सत्य जानते भये फिर जग जननीको मनमै बारबार देइ प्रणाम करके तिसतें उपरांत जायकर निरमल मै सनान किया और आनंदसे भोजन पायकर शिष्य के सहित भक्ती के मद मे मत्त भये हूये कृष्ण कृष्ण रटते अपने मारग को चले गये तब तेतिस नगर मै कोई हिंसादि करम जो है सो नहीं भया हरी व्यास जी के प्रसादसे सब लोग भक्ती प्रीती वाले होयकर वैस्नव बनगये इसप्रकार इह हरी व्यासकी सुंदर गाथा जो है सो गायन की गई है इसके श्रवण करने से मानुष्य भक्ती प्रीती वाले होयकर संसारके महाभय से छूट जाते हैं ॥३१॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे हरी व्यास चरित वरणने नाम सरगः

(हाशिये में: और; जल; जी; भ)

तवनिजभवन वहिर हरखाती॥ निकसी अभय भक्त वर दाती॥ मानहुं प्रभा कोटि उदताती॥ वोली वदन मधुर मृदुवानी॥ अवतें भक्त भवन वर मोरे॥ होहिं नजीव हनन हित तोरे॥ मेपुरकर सवलोगन काहीं॥ करहुं प्रवोध सपन निसिमा हीं॥ अस कहि रुचिर दिव्य पटधारी॥ अवलामे ष सुभ्रमन हारी॥ रजनी सपन सवन कहे दीना॥ वदन नदेस कथन अस कीना॥ अवतें न गर लोक समुदाई॥ पाय सादि वली रुचिर सुहाई॥ मोरे देहु मुदित हरखाई॥ ते अजादि पसु वधन विहाई॥ तहितें निश्चय होहिं तुमारा॥ संपति सिद्ध मनोरथ सारा॥ जो न देस फुरकीन न मोरी॥ तो तुव देहुं वेस सव वोरी॥ दोहा॥ रहे वेसव हरिव्यास प्रीये भक्त मोर गुनगेहु॥ अव नहोहिं हिंसादि इहि नगर दीन वर एहु॥ २॥ टीका॥ फिर हरीव्यास जी कहते हैं कि हे भक्तजनों को पालने वाली जो कवी तूने ऐसा नहीं किया तो मै कल को अपना सीस काट कर हे जगदंवे तेरे चरनों के वीच डार देऊंगा ऐसी प्रण करके भक्तप्रधान जो है सो शिष्य के सहित एकाग्रचित होयकरके भगवान का सुमर्ण करने लगा इसप्रकार जव तीनपहर रात वतीत होय गई और चौथा पहर आय गया तव भक्तजनों को अभयवर के देने वाली भवानी जो है सो अपने भवन के वाहिर निकल आई तिस जगदंवे का ऐसा चमतकार

धीरज को त्याग कर क्षीर समुद्र मे जाय शयन करते भये तैसेही महादेव भी डरते हूये कैलास को चले गये और हजार फण वाले सेष नाग जो हैं सोभी त्रास मान कर रसातल लोक मे जाय निवास करते भये और संपूर्ण देवता जो हैं सोभी मानो प्रलैकाल विचार कर अपना सुख संपती और घरवार सब त्याग करके जहां तहां बण पर्वत और कुंद्रा गुफों मे भागते हूये चले गये ॥१॥ चौपाई ॥ असजग विदित असुर अभिमानी ॥ सूर प्रचंड समर धृति खानी ॥ जीते जास लोक समुदाई ॥ वदिवि प्रसाद अजित वर पाई ॥ अस दनुजात राज मृगगो हू ॥ उपजा पुत्र भक्त हरि नेहू ॥ प्रभा भक्ति जुत यो तन कारी ॥ गरभ गगन घन पटिल विदारी ॥ मानहु ईंदु धरनि अवतरयो ॥ पितु प्रल्हादनाम सुभ धरयो ॥ विमल वदन दृग कमं विसाला ॥ सुखमा सींव मृदुल वर वाला ॥ अंग अनंग मान हतकारी ॥ दिव्य वचित्र रूप मन हारी ॥ सोअस अल्हाद प्रद वालहि ॥ मुनि गण देखि असु मकिपाल हिं ॥ भाषत सुनहु दनुज कुल भूषण ॥ अवरह धरनि धन्य गत दूषन ॥ अरु तुव आज संपदा [illegible] जोई ॥ सकल भूप कर तारण होई ॥ पुन्य वान तुव पितर सुहाये ॥ आज सहज सत लोक सधाये ॥ तुव नृप धन्य धन्य तुव वं[illegible] ॥ सा ॥ सफल जनम तुव जोग प्रसंसा ॥ दोम सरूप पुत्र मुद भरयो ॥ सो तुव आज भवन अवतरयो ॥ निकर भाग कर पै निधि राई ॥ कहि नजाय कछु वदन वडाई ॥ तव भुआल निज कुल अनुसारा ॥ संसकार करि विविध प्रकारा ॥ दियेदान विप्रन सनमाना ॥ उत सव भवन भूप भा माना ॥ सोरठा ॥ वहुरि देत असि राय ॥ देखि सुदिन प्रल्हाद कहं ॥ प्रमुदित दीन पठाय ॥ कवि शुक्रा चारज भवन ॥२॥ टीका ॥ इस प्रकार जगत

मे प्रसिद्ध असुर अभिमानी और बल प्रताप की खानी
महा प्रचंड सूरवीर रनमे धीरज के धारने वाला कि जिसने
अपनी भुजों के बल से संपूर्ण लोकों को जीत लिया ऐसे
दैतराज के घर मे एक पुत्र भगवान का परम प्यारा भक्त उत
पन्न होता भया सो कैसा कि भक्ती रूपी जो प्रभा अर्थात चांद
नी है तिस करके प्रकाशवाला और माता का आकाश रूपी
गरभ जो है तिस मैसे जाली आदिक बादल को छेदकर मा
नो साक्षात चंद्रमा पृथवी तल पर अवतार लेता भया तब
पिता ने आनंद पूर्वक तिसका बड़ा शुभ नाम प्रल्हाद जो है सो
धर दिया सो दिन दिन बढता हूआ कैसी शोभा को प्रा
पत भया कि बड़ा निरमल और प्रसन्न मुख कमलों के
समान विशाल नेत्र कामदेव के मान को हरने वाले बड़े
कोमल और सजीले अंग नँखु से सिखा तक शोभा कर
के युक्त बड़ा दिव्य सरूप ऐसे आनंद और उतसाह के
देने वाले बालक को मुनी और पंडित देखकर के दैतराज
से कहने लगे कि हे असुरों की कुल के भूषन आज इह पृ
थवी धन्य और दूषनों से रहित भई है और तुमारी संप
दा जो है सो भी सब कृतार्थ हूई है आज तुमारे पितर
भी पुन्यवान होयकर सहजे ही स्वर्ग लोक को चले गये
हैं तूं भी धन्य और राजन तेरा वंस भी धन्य और तेरा
इह जनम भी सफल जगत मे शलाघा के योग्य है कों
कि इह कल्यान रूप और आनंद की निधी पुत्र जो है
सो तेरे घर मे उतपन्न भया है इसकी महिमा और
बड़ाई कथन करने को कोई सामर्थ नहीं है तब रा
जा सुनकर के परम हरष को प्रापत भया हूआ अपने
वंस की रीती अनुसार तिसका सब संसकार करवाय
कर अनेक प्रकार के दान जो हैं सो ब्रह्मनों को देकर
संतुष्ट करता भया और राज भवनों मे नाना उतसव
और मंगल होने लगे तिसतें उपरांत दैतपती ने बड़ा
सुंदर और शुभ दिन विचार करके प्रल्हाद को विद्या
पढने के निमित्त कवि शुक्राचार्ज जी जो हैं तिन
के घर मे पठाय दिया ॥२॥ चौपाई ॥ पठन हेतु

विद्या मन भाई॥ दंड नीति समेत सुखदाई॥ अह्लाद प्रद बाल नवीना॥ मति कुशाग्र जन जवन प्रवीना॥ तिन कर अग्रनीय बड़भागा॥ आदि आरंभ करन ज ब लागा॥ करि प्रणाम भगवन पद कंजा॥ पारब्रह्म प्रभु असुर विभंजा॥ चिदानंद दायक कल्याना॥ भृकुटि विलास जास असनाना॥ उपजत विनसत विश्व कर कुपारा॥ परहिं ननेति निगम उच्चारा॥ पशुपति जासु चरन चुतवारी॥ धारयो मौलि लीन जस भारी॥ जहि अनंत गुणगण सुखमाता॥ भयो शेष कुंठित मति धाता॥ सकल भूत कर अंतरजामी॥ विद्याधार भक्त अनुगामी॥ वेदित जासु निकर वृंदारक॥ प्रणौ रूप अस दीन उधारक॥ वेद कहैं सोई धरनि धरि सीसा॥ करुणा अमिय भीति भव खीसा॥ गुरु अस श्रवण सुनत न हि वचना॥ गूढ़ विचित्र मर्म जुत रचना॥ सोरठा॥ रिसवस वदन बखान॥ रे इह कवन दुरातमन॥ तब जलवत्ति अज्ञान॥ कहाँ लीन कहिपैं सुन्यो॥२॥

टीका॥ तहाँ कवि शुक्राचार्ज जी को राजा की इह आज्ञा भई कि इस को दंडनीती के सहित नाना प्रकार की सुंदर विद्या जो है सो भली प्रकारसें सब पढाय देवो तब शुक्राचार्ज जी के घर मे अह्लाद जो हरष है तिस के देने वाला नवीन बालक प्रह्लाद और कुशा के अग्रभाग के मान तीक्षण बुद्धी वाले पुरष जो हैं तिन मे प्रवीन और प्रथम गिनती वाला अर्थात प्रधान और बड़भागी सो जब आद हीं विद्या का प्रारंभ करने लगा तो पारब्रह्म सतचित आनंदरूप और कल्यान के देने वाला परमेश्वर कि जिस की भृकुटी के विलास से अर्थात एक भ्रूमात्र के हलाने से अनेक ब्रह्मांड उपजते और विनस जाते हैं और वेद ने भी जिस प्रमातमा को नेत नेत करके गायन किया है कि इह भी नहीं इह भी नहीं ऐसे नषेध कर कर हीं कथन किया है

अथ प्रह्लाद चरितं

दोहा छंद॥ विदत पुरातन गाव चरित प्रह्लाद सुहा
वा॥ तद्यपि लोक प्रसिद्ध जथन वर मानस भावा॥ म
ति अनरूप सो करहुं कथन संतनप्रसंगा॥ चारु
सुजस प्रद सुखेद स्रवण वपुदुरत विभंगा॥ पूरव अ
धिपति दनुज हरन कस्यपु अस नामं॥ विभू प्रचंड अ
खंड असुर संसृति बलधामा॥ जास भीत उरमानि वि
~~स्नु भगवान~~ कृपाला॥ नाभी नाल मृनाल लीन भे
दीनन खाला॥ अरु जहि त्रास प्रकास विप्र मदसूदन
देवा॥ भये शयन कर तीर धीर गत सुर मुनि सेवा॥ म
हादेव कैलास त्रास ~~[illegible]~~ उर मानतधा
या॥ गये रसातल लोक सहस्र फण उरपत काया सो
रठा॥ अन्य देव समुदाय॥ जानि काल कलपोत जिये॥
जहं तहं चले पराय॥ तजि सुख संपति भवननि ज॥
टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो अब प्रह्ला
द की गाथा जो है सो पुराणों मे अनेक प्रकार करके गाय
न की हई है तद्यपि ~~[illegible]~~ व श्रेष्ठ और मन को
भावती लोगों मे प्रसिद्ध है तैसी बुद्धी के अनुसार सं
क्षेप करके कुछ आपके आगे गायन करता हूं इह कैसी
भी गाथा है कि स्रवण करने से दुख कलेश और पापों
के नास करने वाली और सुंदर सुख और सुजस के
देनेवाली है कहते हैं कि पूरव काल विखे दैतों
का अधिपती अर्थात राजा एक बड़ा ~~[illegible]~~ अखंड
और प्रचंड महा बल का धाम हिरन्यकस्यपू ना
म करके प्रसिद्ध होता भया सो कैसा कि जिस
का जोर त्रास मान कर ब्रह्मा जो है सो कांपता हुआ
विस्नु भगवान के नाभ कमल की नाल मे जाय छि
पता भया और विस्नू भगवान भी तिसके भय से

(Margin, right: छिपता भया, कृपाल; रह)

(Margin, left: पुरुषों; जैसी; प्रसिद्धी)

534

हे सुखसिंधु भक्तपद कामा॥ हे सुरधरनि धेनु रखवा
रे॥ अस हरि नाम सफुट उच्चारे॥ गुरु अस सुनत
श्रवण तहि बानी॥ नायक असुर त्रास जीयमानी॥ क
हत न लेत मोर सठ दीना॥ देत मंद अन मव निजश्रीना॥
अहो अचरण तोर सिसु एहू॥ संतत कुल कलंक संदे
हू॥ अधिपति दनुज जनक तुव जोई॥ अस आचरी
मंद तुव सोई॥ करहिं श्रवण सुत पलविहाई॥ अदिरव
हत हिं को पवस धाई॥ सोरठा॥ तव प्रल्हाद बखान॥ र
टत नाम ईश्वापते॥ इह मम प्राण पयान करिहैं क
छु संसय नहीं॥४॥ टीका॥ अरे मूढ राजकुमार जान
कर मै तेरे को दंड नहीं दे सकता हूं अब अधम तू अप
नी चतुराई और चपलता को त्याग दे और जौनसा मे
सुखके देने वाला तेरेको सुंदर उपदेश करता हूं सो तू हि
त चित लगायकर श्रवण कर अरु और काहेसे वृती
को त्यागदे हे मदभागी दैतराजके पुत्र इह संसार मे
प्रकट जो हरी का नाम है सो तू कवी अपने मुखसे उ
चारण मतकर और हरी के गुण गण जो हैं सोभी श्र
वण नाकर सरव काल इस देवताऊं के वैस्नव मतपर
दूषण हीं राखता रहो इसतें पीछे जो तू ने हरीके गुण
उचारण और श्रवण किये सोकिये अब आगे भूल करभी
कवी मत उचारण और श्रवणकर इस प्रकार गुरू
की महावक्र अर्थात बड़ी विखड़ी बानी सुनकर औ
र हालाहल जो विष है तिसके समान पानकरकर नेत्र
जो हैं सो क्रोधसे लाल करलिये और भगवान के चर
न कमलों मे चित देकर हे मुकुंद हे केशव हे मुरार
हे दीन बंधू हे अनंत हे माधव हे भगवान हे सुख
सिंधू हे भक्तजनों की कामना पूरण करने वाले हे गौ
ब्राह्मण पृथवी और देवताउं की रक्षा करने वाले हे ज
गदीश्वर हे शरणागत पालक हे असुर घालक
ऐसे भगवान के नाम जो हैं सो भक्त प्रल्हाद अभय और
~~हेसकर~~ निधड़क उचार उठता भया तब इसप्रकार
ˇहोयकर

गुरु तिसकी वाणी सुनकर हृदय मै दैतराज तिसके पि
ताका भय मानकर कहने लगा कि अरे मंद मेने तेरेको
जिस हरी के नाम लेने से निवारण कियाथा मूढ तैने मे
रे को सोई विस्तार करके सुनाय दियाहै अहो अभागी र
हे तेरी कौन जढता और मूरखता है कि जो मै शिक्षा औ
र दीक्षा देता हूं सो नहीं लेता अधम अपने ही अनमत की
शीक्षा और चतुराई दिखावता हैं अरे गवार बालक इह
तेरा आचरण और धरम जो है सो निरंतर करके कुल
को कलंक है इसमै तेरी कुछ भी भलाई नहीं है दैतों
का राजा तेरा पिता जो है सो जब तेरा इह आचरण सुने
गा ततकाल पुत्र पद की प्रीती से निर्दय होयकर तेरे
को कोपसे शत्रू के समान मार देवेगा ऐसे गुरु के उग्र
वचन सुनकर प्रल्हाद कहने लगा कि जो कभी लक्ष्मी
केनाथ भगवान का सुमरण करते करते इह मेरे प्राण जो
हैं सो चले जावें तो मै जगत मे कृतार्थ होय जाता हूं औ
र मेरे को कुछ भी हानी नहीं है ॥४॥ चौपाई ॥ पै मोरे
मान सु गुरु देवा ॥ प्रीति प्रतीति चरन सुरसेवा ॥ दीन
नाथ भवभीति विभंजन ॥ ब्रह्म अद्वैत दैत मद गंजन ॥
टूट नवरध नित्य नव सोई ॥ नहिन विराम लालसा होई ॥
मंजुल परम मोद प्रद बानी ॥ जे प्रल्हाद निज वदन
बखानी ॥ ता हो रहा रोध कृत एका ॥ सुर असतीरा श्र
वण करि तेका ॥ कहिस बाल तोरे सुखदाये ॥ अति प्री
य वचन मोर मन भाये ॥ ~~[illegible]~~ परम
निपुण अति सील रसीला ॥ अंकमनीय ललित
तुव लीला ॥ ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ ॥ सोरठा ॥ तब प्रल्हाद प्रवीन ॥
कहा सुनहु अमराय तुव ॥ कुल कर नहिन अधीन ॥ दी
न दयाल भगवन शरण ॥ ५ ॥ टीका ॥ फिर कहता है
कि इह मेरे प्राण जावें तो जावें परंतू ब्रह्म अद्वैत
जि किंसमे कोई दूसरा नहीं है और संसार का मय

(margin) कोकिकारण
(margin) रीं
(margin) ९८
(margin) कस अवनकी उजनकुलमगौ अरौ रौतमित नवप्रभु ता रौं ॥

५२४ 535

दूर करने वाला असुर जो दैत हैं तिन का मद चूर क
रने वाला दीनानाथ भगवान जो है तिस के चरन क
मलों की प्रीती मेरे हृदय से नहीं छूटे दिन दिन अधि
क ही होती जावे और मेरी लालसा भी विराम अर्थात थक
त ना होवे इस प्रकार जब ऐसी आनंद के देने वाली
वानी प्रल्हाद ने कथन करी तब तहां एक कोई देवता
वेदी [illegible] मध्य हू आ बैठा था सो ऐसी मनोहर वानी
को सुनकर कहने लगा कि अहो इह तेरे बड़े मीठे वचन
मेरे को अतसे करके प्यारे लगे हैं तूं तो कोई परम चतुर
और सुशीलता की निधी हैं तैसे हीं तेरी लीला भी बड़ी
विचित्र है कहो कि तूं इस दैत्य कुल मे कैसे उतप
न्न भया और किस प्रकार भगवान कीं प्रापत करी है इन
तो हरी का चिंतन [illegible] सुमरण सुपने मैं भी नहीं होता है
तब प्रल्हाद कहने लगा कि हे देव इह भगवान की भक्ती
और तिन के चरनो की सरणा जो है सो तो कुछ कुल के
आधीन नहीं है इस का मारग जिस प्रकार है सो आगे
कथन किया जाता है॥५॥ चौपाई॥ इह विचित्र कर
मन कर न्यासो॥ अहि प्रभाव निगम उ(च्चा)सो॥ के
वल प्रभु प्रसाद इह भाई॥ उपजहि हृदय भक्ति सुखदा
ई॥ महिमा जास विदत जग सारी॥ एक वदन
किमि सकहुं उचारी॥ मुनिवर अरज बोध निधि
नागर॥ जहि निज पानि पुटक धरि सागर॥ कौतुक
सहज पान करि सोई॥ अरु गरीस वंध्याचल जोई॥
तासु वरध गति कुंठित कीना॥ इह गुन काहु अर
ज मुनि चीना॥ कै कुलाल कर आतमताई॥ नाहिन
उभय पत दृढ भाई॥ इह प्रभाव केवल प्रभु सेवा॥
चरन सरोज वरन अन देवा॥ रमानाथ केशव भ
गवाना॥ नेति नेति जहि निगम वखाना॥ गुरु त
हि वचन सुनत ततकाला॥ बोल्यो अरे कुटिल मति
वाला॥ सोरठा॥ मोर सिखावन जोय॥ तुव निज धरहु

~~किंतु मैं और नहीं आवता~~ पशुपती जो महादेव हैं सो जिसके चरनकमलों का जल सीसपर धारनैकरके जगत मे सुंदर सुजस को प्राप्त होते हैं और जिस परम पुरष के अनंत गुणगण गायन करता करतां विधाता जो ब्रह्मा है सो कुंठितमती होय गया अर्थात तिनकी बुद्धी भी थकत होय गई और सरव जीवों के अंतरजामी जगत के आधार असुरघालक और भक्तजनो के पालक सदैव वंदन योग्य कि जिनको संपूर्ण देवता और मुनी रिषी रात्री दिन वंदन करते रहते हैं दयारूपी अमृत के सरोवर संसार का भय नास करने वाले ऐसे मेरे. कृपानिधान भगवान जो हैं सो तिनको मै वारवार वंदना करता हूं इस प्रकार परम वचित्र और गूढ मरम वाली वानी सुनकर गुरु सुक्राचार्ज हृदय मे अत्यंत कोप करके कहने लगा कि अरे दुरात्मन अर्थात दुष्ट सुभाववाले इह तैने कौन अज्ञान कलना किया है मूढ सत्य कहो कहां से लिया और किससे सुना है॥ ३॥ चौपाई॥ राजकुमार जानि जियतो हो॥ उचित न देन दंड अब मो हो॥ तजहु मूढ आपन चतुराई॥ मै उपदेस जवन सुखदाई॥ करहु सुपठहु आन वृति त्यागी॥ सुवन दैत अधिपति वडभागी॥ जे हरिनाम प्रकट संसारा॥ करहु न कबहु वदन उचारा॥ दूषण धरहु विदस मत कोरे॥ हरिगुण करहु करन न हिं मोरे॥ पूरव किये श्रवण तुम जोई॥ अब न करहु उचारण सोई॥ वक्र उतो गुरु सुनत सुजाना॥ हाला हल समान करि पाना॥ लोचन अरुन कोप वस कीने॥ हरिपद नलिन चारु चित दीने॥ हे मुकुंद केशव सुख कंदू॥ हे मुरार प्रभु दीनन वंधू॥ हे अनंत माधव भगवाना॥

सवैया॥ हे सुखके आनंद विभू भव छेद प्रबंध धन मंदन हेता॥ हे वृंदारक वृंदन मंडिन खंडिन चंड प्रचंडन दंता॥ हे भक्त जन खंजन मान मद देव नरंजन हे भगवंता॥ हे कमलापत लोचन कंजन भीतविभंजन रंजन संता॥ इस दिती सुत वृंदन कहे अब मंद महो मद गंजन कीजे॥ रंजन दीन दयाकर नागर लोग उजागर कीरति लीजे॥ बोध सुधाकर देव गुणाकर वेग कृपा कर ठाकर छीजे॥ विदुत अचित नीरद दिव्य तनों तिनके मन मोद भरी जै॥१॥ टीका॥ फिर गुरू शुक्राचार्ज कहते हैं कि जड तेरा इह आचरण और करम जो है सो दैत मत हुई के जलायदेनेवाली दाहक अगनी है अब तूं देख मैं जायकर के राजों विखें सिंह तेरा पिता जो है तिस के आगे तेरा इह कुकरम सब सुनाय देता हूं ऐसे कहिकर के गुरू जो है सो कोप से धायचला तब तिसके पीछे पीछे चुपचाप मगन चित भया हूआ सहजे सहजे प्रल्हाद भी चल पडता भया इस प्रकार जब कुछ दूर चले गये तब पवित्र मुख और मीठी वानी वाला प्रल्हाद भक्त जो है सो ऊची स्वर से आलाप करने लगा कि हे ज्ञान ध्यान और मान के देने वाले भगवान हे अलख सरूप हे भक्त जनों के हितकारी हे सुखनिधी हे आनंदमूरती हे पूरण प्रतापवाले इह छेदो के प्रबंधवत जो संसार है तिस विखे मंद जो दुष्ट पुरष हैं तिन का नास करने वाले हे देवताउं के समूह को आनंद देने वाले और महां प्रचंड दुष्ट दैत जो हैं तिनं खंडिन करने वाले हे भक्त जनो के मान सी नेत्रों के अर्थात मन के नेत्रों के प्रकाश देने वाले अंजन हे देव नरंजन हे भगवंत हे लक्षमी कांत हे कमल लोचन

(margin notes: की, चढी, की, ... , को)

हे भयके हरने वाले हे संत जनो को आनंद देनेवाले हे कृपानिधान अब अनुग्रह करके इह दिती के पुत्र जो देवता गणहैं तिनको दुखदायक महामद और दुष्ट जोहै तिसके मदको दूर करिये और हे दयानिधी हे दीन सुखदायक लोकोंविखे परम सुजस और कीरती जोहै सो प्रापत करिये हे प्रबोध रूपी अमृतकी खानी हे गुणों के समुद्र हे बिजली के समान पीत वस्त्रधारी हे स्याम ज्ववत शरीरकी दिव्य आभावाले अब कृपाकरके दुष्टको शीघ्र ही हनन करिये अर्थात मारिये और देवताउंके चित्तको आनंद से परिपूरण करिये॥७॥ चौपाई॥ जय जय चारु चरित्र विचित्रा॥ जयति सुधाकर न्याय पवित्रा॥ मायक असुर सुरन प्रतिकूला॥ रत अभिमा न दुरत सठ मूला॥ वेद सुरालय नाथ कृपाला॥ हत हु वेग रिपु सुपच कराला॥ मंगल मोद हरष विसतारहु॥ धरनि धेनु सुर त्रास निवारहु॥ सोरठा॥ अस रचना सुनि तेहु॥ पृष्ट दृष्टि गुरु पाय तव कहा नहिन सिसु एहु कौ करम न करमूरती॥८॥ टीका॥ फिर कहता है कि जे हे तुमारी हे जगत मे सुंदर चरित्रोंके विसतार करनेवाले और जेहो तुमारी हे देवताउंके स्वामी हे दीनबंधू इह मायक जो नाना मायाके जानने वाला असुर और देवताउं के विरुद्ध अभिमानी जोहै सो इसको कृपाकरकें नासको प्रापत करिये और ब्रह्मण पृथवी देवताउं के हृदय का शोकनिवारण करके जगत मे आनंद और मंगल जो हैं सो विस्तारण करिये ऐसे प्रह्लाद के मुखसे वाणी की रचना सुनकर शुक्राचार्ज पीछे फिरकर देखतेहैं और कहते हैं कि इह तो बालक नहीं है कोई करमो की मूरती है॥ चौपाई॥ अस कहि अग्र मौन गुरु गमना॥ पहु चे आय द्वार नृप भवना॥ तहां दनुज पति सहित समाजा॥ रह्यो मुदित निज सभा विराजा॥ सामंतन अब कीरण देखी॥ कुसमय हृदय शुक्र निज लेखी॥ राजपत

[margin:] ॥म ॥ ॥ओरपनुपाए॥

निपें गयो सिधारी॥ जाय वदन ग्रस गिरा उचारी॥ तो
र राजभामनि सुत प्यारा॥ करहिं न वचन मोर स्वीकारा॥
कहि कहि विविध वदन समुझावा॥ कछु प्रतिकूल पठहिं
मन भावा॥ सोरठा॥ कीन ग्रलंब न जोय॥ तुव सुत मत नृ
प भामनी॥ निकर ग्रसुर कुल होय निश्च दोष कलंक प्र
द॥९॥ टीका॥ ग्रैसे कहि कर गुरू जो है सो मौन होय
कर ग्रागे को चलवदा॥ तव गवन करता करता राजा
के भवन द्वारमे ग्राय प्रापत भया ताहो देतों का राजा हरन
कश्यपू जो था सो ग्रपनी सभा कें बिच विराजा हुग्रा था ति
स समय मंत्रियों के सहित सब समाज जुड़ा हुग्रा जो
देखा तो शुक्राचार्ज ग्रपने हृदयमे कुसमय विचार
कर तहां से राजपतनी जो राजा की रानी ग्रौर प्रल्हा
द की माता थी तिस कें चलागया ग्रौर जाते हीं कहने
लगा कि हे राजभामनी इह तेरा परम प्यारा पुत्र जो है
सो मेरी शिक्षा को ग्रहन नहीं करता मै इस को ग्रनेक
प्रकार कहि करके समुझाय रहा हूं परंतू कछ ग्रौर
का ग्रौर विरुद्ध हीं पढता है ग्रौर ग्रपने ही मन की इच्छा
करता है हे राजरानी इह तेरे पुत्र नें मत ग्राचरा ग्रण
त धारन किया है सो तो संपूर्ण दैत कुल को निश्चय करके
दोष ग्रौर कलंक के देनेवाला है॥९॥ चौपाई॥ गुरु मुख
सुनत वचन ग्रसरानी॥ भाषत सुतहिं चारु मृदुवानी॥
हे सुत भूरि चपलता खोई॥ तुव दनुवंस उचित वृति
जोई॥ सो ग्राचरण करहु सुत प्यारा॥ इतिहित मानि
सुवन गुरु द्वारा॥ उत्तम दनुज वंस जोई वेसा॥ करहिं
सकल मुख जासु प्रसंसा॥ तुम कहेत हो पुत्र मे जाया॥ सु
नि प्रल्हाद वदन मुसकाया॥ इह कै वचन जननि कस
केहो॥ मे निसि दिवस विलोकत रेहो॥ सकल वंस द
नुजात ग्रभागी॥ दगध प्रचंड ग्रनल ग्रति लागी॥ तहि
ग्रवसर दनुराज सुहावा॥ सभा त्याग निज भवन न ग्रावा॥
सुतहिं देखि मानस हरखाना॥ तव प्रल्हाद जुक्त जुग पा
ना॥ पितुहिं प्रनाम कीन उठि दीना॥ सादिर जनक ग्रा
लिंगन कीना॥ परम प्रेम जुत ग्रंकविठाई॥ पूछत वदन

न मूढ चित॥ भ्रमय स कुच गत होय॥ वृथा करहु दु
र्वाद मुखे॥ ६॥ टीका॥ प्रल्हाद कहते हैं कि वेद ने गायन
किया हुआ है जो कर्मों का कुछ न्यारा है ते और
इह सर्व सुखों के देने वाली भक्ती जो है सो केवल भग
वान की कृपा के प्रसाद से प्राप्त होती है इस भक्ती की
सुंदर महिमा संपूर्ण जगत मे प्रसिद्ध है एक मुख से कु
छ कथन नहीं की जाती देखिये कि मुनीजनों मे मु
ख्य और ज्ञान की निधी कुंभज अर्थात घड़े से उतपन्न
भये हूये अगस्त मुनी कि जिनों ने हाथ की अंजुली के
द्वारा समुद्र को पान कर लिया और कौतुक से हीं विंध्या
चल परवत के बढने की गती को रोक दिया क्या इह गु
ण कुछ कुंभज मुनी का पाया जाता है कि कुछ कुलाल
का प्रभाव है इस मे इह दोनो वारता नहीं हैं इह तो जिन
की स्याम मेघ वत शरीर की शोभा और कमलों के स
मान विशाल नेत्र लक्ष्मी के नाथ केशव भगवान
कि जिन का वेद भी अंत नहीं पाय सकै केवल तिन के
चरनों मे भक्ती और सेवा का प्रभाव है तव गुरू तिस
की ऐसी बानी सुनकर कहने लगा कि अरे कुटि
लमती अर्थात खोटी बुद्धी वाले बालक तूं मेरी
सुंदर बड़े हित के देने वाली शिक्षा जो है सो सुनकर
हृदय मे धारन नहीं करता और भय संकोच को
त्याग कर मूढ वृथा [illegible] अपने मुख से दुरवाद बकता
[illegible] जाता हैं॥ ६॥ चौपाई॥ इह आचरण तोर प्रति
कूला॥ पावै दहन दैतमत तूला॥ सनमुख शार
दूल पतिमेदन॥ करहुं जाय अब सकल नवेदन॥
अस कहि धाव कोप गुरु कीना॥ पृषृ पृषृ प्रल्हा
द प्रवीना॥ तूष्णी मगन सहज गति धारी॥ ग
ये कछुक जव पंथ निवारी॥ तव प्रल्हाद रुचिर
मुख सूचे॥ बोल्यो वचन मधुर सुर ऊचे॥ हे भग
वान मान प्रद स्वामी॥ हे अव्यक्त भक्त अनुगामी॥

हाथ जोड़कर चरनोपर देउप्रणाम किया पिताने बड़ी प्रीती सनमानसे हृदे मे जुडायकर फिर आनंद और प्रेमसे अपनी गोदी मे बिठायलिया और बारंबां मुखको चूमकर बड़ी प्रसन्नतासे पूछने लगा कि हे पुत्र अबलग तुमने गुरूजी के पास जोजो पढ़ा और गुण प्राप्त किया है सो अपने मुखसे सुनावो और मेरे हृदय को आनंद देवो ऐसे जब पिताने बड़ी प्रीती और प्यारसे पूछा तब प्रल्हाद हृदयमे भगवान को सुमरकर और अभय होयकर कहने लगा कि हे पिता गुरूजी ने मेरे को परमहित और सतकारसे इह उपदेश और मैं चदियाहे कि असुरों के बंस का धरम और आचार्ण जो है सो सब त्यागकरके चित्त को निरमल करना और तामरस जो नीलवरण का कमल है तिसके समान शोभा वाला जिनका शरीर और भक्तजनो के हृदय के अंधेरे को दूर करने वाले और जिनके चरन कमलों के सपर्श होने से गंगा आदिक नदी जे हैं सो पवित्र होयकर के जगत मे कलीकाल के पापों का नास करने को सामर्थ होयगई हैं फिर जिस अनंत देव के प्रसाद से मुनी जन और संत महातमा सुंदर ज्ञान ध्यान के सहित होयकर त्रिकालदरसी होय जाते हैं और जिस प्रमातमा की कृपासे असुर जो दैत सुर जो देवता और मानुष्य राजे बड़ी ईश्वर्यता और बड़ाई को प्रापत होते हैं और जिस देव की माया के बस अनेक ब्रह्मंड उपजते और बिनसते हैं कुछ पार नहीं पाया जाता अलख पुरष की बड़ी अदभुत माया है तिसमे राजा को रंक करता और रंक को राजा करदेता है ऐसे भक्त हितकारी और दीन बंधू की शरण को प्रापत होना और तिस भगवान का ही कीर्तन सुणना और तिसका ही सुमरण करना तिसके ही भजनमे लीन रहना ॥२०॥ चौपाई॥ जब प्रल्हाद बदन असताहीं॥ कीन कथन सन मुखदनु नाहीं॥ कोपारुन्य नैन तबकीने॥ बोलीयो

वचन मरम सुत चीने॥ अरे वतस कहितें चतुराई॥ इह तुवलीन परम दुखदाई॥ वंचित कवन दीन अव चारा॥ धौं जढ निज अपराध तुमारा॥ तवगुरु भीत विवस तन कंपत॥ वोल्यो वियत जनकु गत संपत॥ रिपु मातंग केहरि दनुनाथा॥ मोरी सुनहु अवरण निजगाथा॥ सिसुहिं यतन करि विविध निवारा॥ कीन न वचन मोर सुई कारा॥ जो मिथ्या मन हू कछु तोही॥ तो सत सपत मह गुरु मोही॥ करि अपमान दिसकि गुरु काहा॥ तुव त्रिसकार मोर सठ हा॥ मंद सप्त तोहि जनक सुभागी॥ सत्य सत्य अव कपट तयागी॥ सोरठा॥ मोर पठावन जोय॥ तुव निज वदन समक्ष पितू॥ करहु कथन अवसोय॥ यदि हरि वेग विलंव हित॥ ११॥ टीका॥ जव ~~सो प्रकार~~ प्रल्हादने दैतराज अपने पिता के सनमुख कथन किया तव सो अभिमानी कोपसे लाल नेत्र करके कहने लगा कि अरे वालक इह परम दुखके देनेवाली शिक्षा और चतुराई जो है सो तैने कहांसेली और किससे सुनी है जढ ~~कि~~ किसने तेरेको छल लिया और महा मंद अविचार जो है सो देदिया है किंवा ढ तेरा कुछ अपना ही अपराध है इतनेमें गुरु जो है सो भयके वश कांपता हुआ मानो सव संपती को गवाये हुये व्याकुल चित होयकर कहने लगा कि हे ~~हस्ती रूपी शत्रूओं के नाशकारी सिंह~~ और हे दैत कुलके भूषण अव मेरी प्रार्थना जो है सो सुनिये कि मैं इस वालकको अनेक प्रकार यतन कर करके निवारण कर चुका हूं परंतु इसने मेरे वचनोंको सईकार नहीं किया जो इस विखे मैं कुछ मिथ्या कहता हूं तो मेरेको महा गुरुकी सौगंद है ऐसे कहिकर प्रल्हादको वड़े त्रिसकारके वचनोंसे कहने लगा कि अरे मंद मैं जानता हूं कि तू मेरा अपमान चहता है परंतु ~~शठ~~ अवं तेरेको पिताकी सौगंद होवे कि कपट को त्यागकर मेरा पढावना और शिक्षा जो है सो पिताके सनमुख सत्य सत्य कथन कर॥ १२॥ चौपाई॥ तव प्रल्हाद लीन उर सोचा॥ इह जढ उभय मंद मति पोचा॥

पचा

त्रिसकार

जढ

हस्ती रूपी शत्रुओं के नाशकारी सिंह

सठ दुरात मन तुरत नमूला॥ द्वेष निरत भगवन प्रतिकूला॥ असविचारि कछु उत्र प्रवीना॥ तूष्णी रह्यो वदन नहीं दीना॥ गुरु तव कहिस वचन रिस गूढा॥ तुव वशवरति जास अस मूढा॥ भक्ति प्रसिद्ध कीन दृढ जीके॥ ते पहिवा कप्रथम सठ नीके॥ पाव हुदेउ दुष्ट हत भागी॥ जे पश्चात वनहिं मम लागी॥ सो तिसकार होहिं जढ मोरा॥ ए हु प्रह्लाद भक्ति सठ तोरा॥ नृप दनुजात सुनत गुरु भाषा॥ कहत न हृदय एक सठ राखा॥ दीन न उत्र मौन जढ रहयो॥ अधिपति दनुज वदन तव कहयो॥ अव इहि देहु सपत सुर ताहू॥ करहिं सुमरणि भक्ति उर जाहू॥ सोरठा॥ कहा सपत सठ तोन॥ जहिं भक्ती तुव हृदय दृढ॥ इहि विद्यामे कौन पक्षपात कर तोर गुरू॥ २२॥ टीका॥ तव प्रह्लादने हृदयमे जान लिया कि इह जढ दोनो दुष्ट बुद्धी वाले ● और दुष्ट आतमा पापों की खानी महा द्वेषी और भगवान के विरोधी है ऐसे विचारकर कुछभी उत्तर नहीं दिया मौन होंरहा तवँ गुरू कहने लगा कि रे जढ तैने जिसके वशवर्ती अर्थात अनुसारी होकर हृदयमे ऐसी भक्तीको दृढ कियाहै तिसका तो प्रथमँ फल पाय ले पीछे मेरेको जो वनेगी सो तेरी भक्तीका प्रसाद मे भी भोग लेऊंगा ऐसे गुरू का कथन सुनकर दैतराज कहने लगा कि देखो इह वडा भारी दुष्ट है जो तुमारे कहने का कुछ उत्तर नहीं दिया उनमत्त वनकर मौन हो होयरहा है तव दैतपती कहने लगा किँ शुक्राचार्ज अव इसको तिसी देवता की सोगंद देवो कि जिसकीँ हृदयमे भक्ती और सुमरणी करता है ऐसे कहिकर फिर प्रह्लाद को कहने लगे कि अरे दुरमती तेरे को तिसी इष्टदेव की सोगंद है कि जिसकी हृदयमे तूने भक्ती दृढ कीहुई है अव सत्य सत्य कहो कि इस विद्यामे तेरा कौन गुरूँ और पक्षपाती है॥२२॥ चौपाई॥ परिहरि मँद मौन गतिधरमा॥ करहो प्रकट वेग निजमरमा॥ तव हरि हृदय सुमरि प्रह्लादा॥ कह्यो जनकसन वचन अगाधा॥ देव सरव विद्यानिधि जोई॥ घट घट अंत्रजामि प्रभु सोई॥ जे सरवत्र साखि भगवाना॥ चिदानँद वर ब्रह्म अमाना॥ सरव वेत अनभव अवनासी॥

कौन

वचन हरषाई॥ अबलग तुमहु तात परवीना॥ गुरुपें
पढ्यो जवन [illegible] लीना॥ सो मम हृदय श्रवण सुखे
दाई॥ देहु पुत्र निज वदन सुनाई॥ तब प्रल्हाद सुमरि
भगवाना॥ प्रकट पितुहिं अस वचन वखाना॥ अबल
ग तात गुरन हित चीना॥ अस उपदेस मंत्र मोहि दीना॥
परि हरि असुर वंस आचरना॥ सुत चित चाह विमल
निज करना॥ सुंदर स्याम तामरस देहा॥ हारन हृदय
मक्ति तम नेहा॥ जहि स्पर्शी पद पावन हेगा॥ विदत गंग
कलि किलष विभंगा॥ अरु प्रसाद जहि देव अनंता॥
होहि त्रिकाल दरसि मुनि संता॥ पाव असुर सुर मेदन राई॥
जहि प्रसाद ईश्वर्य वडाई॥ जहि मायावस मेरु निकाया॥
उपजव विनस पार नहिं पाया॥ जग मै करहिं रंक जगरा
या॥ दीनदयाल कर अदभुत माया॥ सोरठा॥ सरन तास
भगवाना॥ उचित लेन अनुचित तजी॥ श्रवण कीरतन
गान करन ताहि हित जानि निज॥ १०॥ टीका॥ तब गु
रु शुक्राचार्ज के मुख से वचन सुनकर [illegible] वडी कोम
ल और मधुर वाणी से प्रल्हाद को कहने लगी कि हे पु
त्र तूं चपलता को त्यागकर दैत वंस का उचित जो धरम
है सो हित [illegible] कर ग्रहण कर और गुरु के वचनो
को वडी श्रद्धा प्रीती से मान देख पुत्र इह संपूर्ण वंसो
विखे वडा उत्तम और स्रेष्ट दैत वंस जो है मैने तिस
विखे तेरे को जाया है और इह कैसामी वंस है कि जिसकी
सव लोक श्लाघा और वडाई करते हैं इस प्रकार जन
नी के मुख से वचन सुनकर प्रल्हाद मुसकाय करके क
हने लगा कि हे माता इह तूं ऐसे महा मिथ्या और कटू
वचन क्यों कहती है मै तो रात्रीदिन सरवकाल देखता
रहता हूं [illegible] इह मंद भागों वाला संपूर्ण दैत वंस जो
है इसको तो अतसे प्रचंड और दगध करने वाली अगनी
लगी हूई है मै जानता हूं कि थोड़े ही काल मै नास को
प्रापत हो जावेगा ऐसे प्रल्हाद के कथन करते कर
ते राजा जो है सो सभा त्याग करके घर को चला
आवता भया तहां पुत्र को देखकर हरष से प्रफुल्लत
होय गया तब प्रल्हाद ने तुरत उठकर और दोनो

कायर सरस करहु अज्ञाना॥ मम वीरज कर वीरजताया॥ सुतादेत जननी उपजाया॥ सो गुणमयो एकनहिं तोहे॥ इह अश्वर्य विपुल जीय मोरे॥ धों संसर्ग काल कछुदाया॥ कछु तुव जननि मोद उर छाया॥ असगुण नहि प्रभाव कर लीना॥ करहु सुमूढ पदासुर दीना॥ सुनहु तात प्रल्हाद वखाना॥ इहसव कथन तोर अज्ञाना॥ वित ईश्वर्य राज सुखे सेवे॥ विनु हरि भक्ति काहु कित लेवे॥ जीवत काय जवन भगवाना॥ करहिं न नम्रत देह प्रणामा॥ श्वासमान सोई जीवत देहा॥ श्रुति पुराण संमति मत एहा॥ जहि श्री भाग रुचिर गुणग्रामा॥ कीन न रटन कीरतन नामा॥ सो रसना नहि पुरष अभागी॥ विवे वल्लरि सरस जगलागी॥ सुनहिं न मंद सुजस हरि जोई॥ श्रवण विघ्न वल सदृश सोई॥ हरि सरूप जिन चखु नदेखा॥ सो दृग कैंकि पंख सम लेखा॥ पूजादिक अच्युत वर करमा॥ कीन नकरन जास अस धरमा॥ सोगत भाग विघ्न ते ऊपाना॥ द्रुम पल्लव परि दगध समाना॥ चिन चरनन सन श्रम करि जावा॥ भगवन धाम दरस नहिं पावा॥ तीरथ चारु

अटिन नहिं कीन्यो॥ सो अंघ्रि सरस पद चीन्यो॥ विभो राज संपति जहि पावा॥ हरि निमित्त वरदान सुहावा॥ उर उदार ह्वै नाहिन दीना॥ सो अपत्ति संपति जग चीना॥ हरि जस जास गान नहिं करयो॥ दारुण वज्र तास उर भरयो॥ सोरठा॥ सुनहु तात करि छोह॥ असुर सिरोमणि धीर धृत॥ पदि हरि कपट विमोह॥ भजहु रमापति मोक्षप्रद॥ १८॥ टीका॥ फिर दैतपती कहता है कि मंद देख मेरे शरीर का पराक्रम जो है सो से पूर्ण भवनो मे विसतरण ~~अर्थात फैलरहा~~ हो रहा है अर्थात फैलरहा है और मेरा दान मान ईश्वर्य ~~[illegible]~~ वडाई ~~[illegible]~~ संपती ~~[illegible]~~ सुखे और सुजस ~~[illegible]~~ जो है तिस की महिमा कछु कही नहीं जाती परंतू हे अभागी आज तेनें सब लज्जा को प्राप्त कर देई है और देखो कि मेरे वीरज की शक्ती से दैतपत्नी के गरभ द्वारा उतपन्न भया हुआ तू वडे आचर्ज की वात है

अवगुणों के समान अशुभ गुणों के भ वाला असर करके

कि सो गुण तेरे को कुछ भी नहीं भया क्या जानू
कि तहां संजोग के समय मेरे और तेरी माता के हृदय
मे कुछ दया का प्रवेश होय गया था कि जिस के प्रभाव
से तेरे विखे इह गुण आय प्रकट हूआ है जो अपने
पत्न को छोड़कर मूर्ख देवताओं के पत्न की पालना क
रता है ऐसे पिता के मुख से वचन सुनकर प्रल्हाद
कहने लगा कि हे असुरों के राजा इह तेरा कथन जो है
सो केवल सब अज्ञान ही है क्यों कि संपती सुख
और ईस्वरय बड़ाई इह सब भगवान की भक्ती के बिना
किसी अर्थ नहीं है जो शरीर धारकर भगवान के चरनों
को दंडप्रणाम नहीं करता तिसका सो शरीर जीवता ही
शव अर्थात मुर्दे के समान है इह स्रुती और पुराणों
ने प्रकट करके गायन किया हूआ है इस मे कुछ संशय
नहीं है और जिस ने सुंदर रसना को पायकर श्री
पती जो लक्षमी के नाथ भगवान हैं तिन भजन
का सुमर्ण नहीं किया तिस पुरष की सो रसना भी
संसार मे विष की वेली के समान है तैसे ही जिन
कानो से हरी हर का सुजस नहीं सुना सो कान भी ज
गत विखे सरप कुंडा के तुल्य हैं और जिन नेत्रों
कर के भगवान कृपानिधान की मूरती का दरसन
नहीं पाया सो नेत्र भी मोर पंखों के समान आकार
मात्र ही हैं जिन हाथों से विस्वनाथ का पूजन
सेवन नहीं कर लिया सो हाथ मानो दगध भये हू
ये वृक्ष के पुत्रों के सदृश हैं और जिन चरनो से च
लकर भगवान के धामों का दरसन नहीं पाया और
तीर्थयात्रा भी नहीं करी सो चरन भी असी नामा
वृक्ष के पत्रों के समान दुखदायक कहीं है
और जिस पुरष ने राज संपती और विभूत जो
प्रताप इत्यादि प्रभुता बड़ाई पायकर भगवान
के नमित्त प्रीती सनमान से कुछ दान नहीं
किया तिस पुरष का राज विभू और संपती

मर्यादहीन
धूल
श्रीकुपुंकम
को

जो है सो जगतमै केवल एक विपती रूप ही जानो और जिसने हरी नारायण का सुजस और गुण नुवाद गायन नहीं किये तिस अभागी ने ~~अपने हृदयमै महो वज्र धारन किया हुआ है~~ के हृदय मैमानो वड़ा घोर वज्र भरया हुआ है तो ते हे धीरज के धाम पिता और हे असुरों विखें सिरोमणी अव अनुग्रह करके हृदय का कपट और छल जो है सो त्याग देवो सूध और सरल चित होय करके सरव सुख और कल्यान के देने वाले लछमी नाथ भगवान जो हैं रात्री दिन तिनका ही भजन और सुमरण करो ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ धारहु हृदय ध्यान भगवाना ॥ पूजन करम धरम सनमाना ॥ सेवहु शरण धरणीसुर देवा ॥ सादिर करि संभावना सेवा ॥ विरचत दुरग अरिन मद हरहो ॥ पालन प्रजा विविध विधि करहो ॥ आपन सुभ्र सुजस विसतारी ॥ करहु धवल त्रैलोक सुरारी ॥ सहित सयन गण सचिव समाजा ॥ प्रापत करहु रुचिर साम्राजा ॥ उदय प्रताप गगन लग धरना ॥ कीजिये नाथ विदित जिमि तरना ॥ सोरठा ॥ तव असुर सुनि दनुराज ॥ कहा मंद मोरे लग्यो ॥ तुव उपदेसन आज ॥ कवं ज्ञान अज्ञान जुत ॥ २५ ॥ टीका ॥ फिर कहता है कि हे पिता ध्यान भी तिसी प्रमातमा का धारन करो और तिसके हीं पूजन सेवन मै ततपर हो और सुंदर धरम और सुकरम जो हैं तिन मै प्रवृती राखो साध ब्रह्मण और देवताओं की शरण को प्रापत होकर नित्य तिनका ही सेवन सतकार करते रहो और दुरग जो गढ़ आदि हैं सो रचाय कर शत्रूओं के मद का नास करो और प्रीतीपूर्वं अपनी प्रजा को पालो इस प्रकार अपना सुजस विसतारण करके तीन लोक मे उजागर होजावो और निसपूर्ण सभागण और मंत्रियो के सहित महा प्रताप को प्रापत होकर अपने प्रभाव को पृथवी से आकाश तक सूर्ज के समान उदय कर देवो ऐसे प्रल्हाद ने जब पिता को वचनो की रचना कर कर प्रबोधन किया तब सुन करके दैत राज जो है सो कहने लगा कि

अभय अमर अज सहज प्रकासी॥ अच्युत अनग अमल निसकामा॥ सत्य नदीस ईस अभिरामा॥ अलखे अदो अव्यक्त नरंजन॥ रंजन देव दैत मदगंजन॥ विद्या गुरू मोर सोइ स्वामी॥ आरत हरन भक्त अनुगामी॥ सोरठा॥ तव भाखिस दनुजेस॥ निसरग दरातमन॥ तुव अतिवात कलेस॥ कीन आलेवन अन्यमत॥ तीन लोक समुदाय॥ विभू वंस मेरो विदत॥ तहिमे तुम सठ आय॥ जनम्यो कुल कंटिक सुपच॥ २१॥ टीका॥ हे मंद इस अव मौनधरम को त्यागकर जो तुम को पूछा है सो तिस का शीघ्र उत्तर दे इस कार तिनका कथन सुनकर के प्रल्हाद जो है सो भगवान कृपानिधान को हृदय मै सुमरकरके वडी गूढ और परम पवित्र वाणी से कहने लगा कि हे पिता जो सरब विद्या की निधी और चराचर के अंतरजामी सरबत्र साखी और सत चित आनंद रूप हैं ब्रह्म अवनासी और सुते प्रकासी हैं ~~और जो~~ जनम मरन से रहित अभय रूप हैं कि जिन को किसी का भय नहीं अमानी हैं ~~कि जिन ... नहीं~~ कि जो मान से भी रहित हैं सरब वेता हैं ~~...~~ सब को जानने वाले हैं अच्युत हैं जोक वी गिरते नहीं हैं अनग हैं कि जिन को पाप का कुछ लेप नहीं है अमल जो सदेव निरमल हैं अतोहैं कि जिन का तय हीन नहीं है अव्यक्त हैं कि जो प्रकट नहीं देखे जाते हैं निरंजन हैं कि जो मार्या से रहित हैं ऐसे दैतों का मद दूर करने वाले और देवताओं को आनंद देने वाले तीन लोक के नायक भगवान जो है सो ही मेरे विद्या गुरू हैं और तिनही की मेरे हृदय मै भक्ती दृढ है इस प्रकार प्रल्हाद की अखेद वानी सुन करके दनजपती परम कलेशमान कर कहने लगा कि अहो बडे अनर्थ की बात है तैने तो अधम और हीमत धारन कर लिया है देखो यह तीन लोक मै उजागर महा प्रतापी मेरा वंस जो है तिस विखे तू दुरमती एक कंटिक अर्थात कांटा उतपन्न भया है॥ २२॥ चौपाई॥ मोर काय पाक्रम गत पारा॥ रह्यो सकल भवनन विसतारा॥ दानमान ईश्वर्य वडाई॥ सेपति सुजस मोद सुखदाई॥ आज तुम कुसठ सकल लजाना॥

अरे, अ, और, कि जो, है कि, के, ... कि

और कासमाधि सेरिज़ नकलम दृढ है

स्वामी है और इह प्रजा सब मेरी है इस प्रकार पिता
के मुख से महा कटु अर्थात बडे कडे वचन सुनकर के
प्रल्हाद जो है सो परम कोप के वश होय कहने ल
गा कि अहो पिता बडे आचर्ज की बात है मै इसका
उत्तर तुम को आगे देता हूं॥२२॥ चौपाई॥ सुगुणनिधान
श्रीनाथ गुसैयां॥ अंतरजामि प्रभु चराचर कैयां॥ हरन
गर्भ विश्व नर रुद्रा॥ पूतातमा मोदन नुमुद्रा॥ मंगल धा
म काम विधि आदिक॥ वंदित जासु संत सनकादिक॥ होत
विश्व जहि कौतुक द्वारा॥ भव पालन संघार प्रकारा॥ अ
स कृपाल भगवान क्रतज्ञा॥ करहु तासु तुव जनक अवि
ज्ञा॥ सुनि अस कोप निरत दनुजाता॥ भृत जन बोलि क
हिस मुख बाता॥ वदिहहि दनुज वेग अवदाया॥ कहि प्र
हार आयुध सठ काया॥ करहु घात इहि प्रानन केरा॥
नाहिन सुवन मंद रिपु मेरा॥ इहि जीवन कर मे अवजाना॥
होव न कबहु सुजस कल्याना॥ तब अरि जसु दनुज तहि
कीने॥ दारुण शस्त्र वेग कर लीने॥ सोरठा॥ धाय धर उ
र बकीन॥ भये विध्वंसन उदित तहि॥ तब प्रल्हाद प्रवी
न॥ विनय लीन असु गुनत मन॥२३॥ टीका॥
देखिये कि जो सब गुणों की निधी लक्षमी के पती और
चर चर की जानने वाले जाग्रत स्वपन सखोपत इन
तीनो अवस्थाके अभिमानी है और हिरन गर्भ विश्वा
नर और रुद्र पवित्र आतमा हैं आनंद की मुद्रा और
मंगल के धाम हैं कि जिन को शिव ब्रह्मा और संत
सनकादिक वंदना करतें हैं और जिन के कौतुक द्वारा
सदैव
संसार की उतपत्ती पालना और संघार होता रहता है
और क्रतज्ञ रूप हैं अर्थात किये हुये को जानने वाले
है ऐसे मेरे कृपानिधान भगवान जो हैं सो हे पिता तू
तिनकी अविज्ञा करता है इस प्रकार प्रल्हाद के उग्र व
चन सुनकर दैतराज परम कोप के वश हो जाता भया
और अपने सेवकों कहने लगा कि हे दैतो अब दया को
शीघ्र त्याग करें और शस्त्र का प्रहार कर कर दुरमती को अ
वी प्राणों से रहित करदेवो इह दुष्ट मेरा पुत्र नहीं है

और

कोई गाढा शत्रू है। मैंने भलीप्रकार जानलिया है जो इस अधमके जीवनेसे मेरेको कदाचित कल्यान नहीं होवेगी ऐसे दैतपती की आज्ञा के आधीन भये हूये असुर जो हैं सो तत काल तीव्र शस्त्रों को हाथों मै धारन करके धावो पकड़ो ऐसा शबद करते हूये प्रल्हादके वध करने को तयार हो जाते भये तब भक्तों मै प्रधान और परम चतुर प्रल्हाद तिससमय जिसप्रकार विनती करता है सो आगे कथन कीं जाती है ॥१७॥ चौपाई॥ जे मम पद सरोज हरि नीके॥ प्रीत प्रतीत भक्ति दृढ जीके॥ औ हिंसत्य निगमावलि जोई॥ तो दनु शस्त्र घात गुण होई॥ निसफल वृथा विगत बलसारी॥ बहुरि वदन असगिरा उचारी॥ जे माधव भगवन पतिमाया॥ करहिं न दीन द्याल निज दाया॥ तो तृण करहिं घात तण देहा॥ अरु भगवान कबहुं करि नेहा॥ करुणा करहिं दास निज जानी॥ वृथा प्रहार वज्र कृत पानी॥ असचिंतन जीय करत प्रल्हाद्यो॥ तब दनुजात शस्त्र कर साध्यो॥ कहि अस धरहु धाय हरि जन पर॥ करत प्रहार शस्त्र कर तन पर॥ कोऊ खड्ग कोऊ बान प्रचंडा॥ मुदगर गदा सूल गिरि खंडा॥ काहु पास प्रद त्रास प्रहारैं॥ कोपित चक्र शक्ति सठ मारैं॥ अगनित शस्त्र सुखलन प्रहारे॥ पै जगदीस जास रखवारे॥ आयुध करहिं कवन गुण ताहों॥ होत सहाय आप प्रभु जाहों॥ सोरठा॥ कुंठित गति समुदाय॥ सुमन वृष्टि सदृश लगो॥ घ्यकत असुर तन जाय॥ भयो न क्षोणत मात्र कछू॥ १८॥ टीका॥ प्रल्हाद कहता है कि जो मेरी प्रीती और प्रतीती भगवान के चरन कमलों विखे सत्य करके दृढ है और जो वेद शास्त्रभी सत्य हैं तो इन दैतों के शस्त्रों का घात और तिनका बल जो है सो सब वृथा और निसफल हो जावे और फिर कहने लगा कि जो माया के पती केशव भगवान और दीनो के हितकारी अपनी अनुग्रह जो है सो ना करैं तो इन तिणभी शरीर का घात कर देता है और जो भक्तों के रक्षक भगवान अपनी कृपा दृष्टी से अर्थात अपनी दया पालें तो [illegible] हाथ से सफल करैं

कोई

श्रीरस्तु

शत्रु

और वज्र का प्रहार किया हुआ भी वृथा होजाता है इ
सप्रकार प्रल्हाद अपने हृदय मैं चिंतन कर रहा था
इतने मैं दैत जो हैं सो हाथों मैं शस्त्र साधे हुये और
धरो मारो धरो मारो पुकारते हुये प्रल्हादभक्त के शरीर
पर शस्त्रों की नाना वरषा करने लगजाते भये तब कोई
खड्ग जो तलवार और कोई वडे प्रचंड वाण कोई मुद
गर और गदा त्रिशूल कोई परवतों के खंड और कोई
महा भय के देने वाली पास अर्थात फासी कोई को
पसे चक्र और शक्ती ~~...~~ जो
मारते भये ऐसे अगनित शस्त्र कि जिन की कुछ
गिनती नहीं दुष्ट दैतों ने प्रल्हाद के शरीर पर
प्रहार किये अर्थात मारे परंतू जिस के आप जगदीश्वर
भगवान रखवारे और सहायक हों तहां शस्त्र क्या गुण
कर सकते हैं सब कुंठित अर्थात खंडे होय कर एक
दुधर के विंदू मात्र भी घात नहीं कर सके किंतू भक्तप्रधा
न के शरीर को ऐसे प्रतीत होने थे कि मानो पुष्पों की व
रषा होय रही है ॥२८॥ चौपाई ॥ तब दनुजात निकर अ
भिमानी ॥ मानहुं पाय समर बड हानी ॥ नृप पैं आय
सकल मन मारे ॥ विसमय विवस वचन उच्चारे ॥ म
हाराज सिसु तन पर भारी ॥ ~~अगनित कीन प्र..~~ ~~..~~ कीन्यो अगनित शस्त्र प्रहारी ॥ काहू न अंग
वधीरता भयऊ ॥ सकल विराथ थकत हम भयऊ ॥ म
भूप वचन तव सुतहि वखाना ॥ विद्या कपट तुमहिं क
छु जाना ॥ धों कै मंत्र सिद्धि सठ तोरे ॥ करहु सप्र
कट वेग गुण मोरे ॥ हरि जन गिरा सुनत दनुराई ॥
वोल्यो वदन वचन मुसकाई ॥ विद्या कपट मंत्र कछु
मोरे ॥ नाहिंन जनक सपत सत तोरे ॥ जहि चित चा
रु चरन हरि लागा ॥ पावन प्रीति रीति अनुरागा ॥ सो
अंतक भय स्वपन न देखे ॥ तुम से तात कवन कित लेखे ॥ इहि मैं करहिं जवन जन संसा ॥ सो गोयन गुरु
स्वामि विध्वंसा ॥ नरक निवास करहिं चिर काला ॥
सुनत वचन अस असुर भुआला ॥ सोरठा ॥

श्री अरे मंद तूं आज मेरे कौं न अज्ञान के समान ज्ञान उपदेश कर कर दिखावने लगा है ॥२५॥ चौपाई ॥ मूढ़ प्रसिद्ध तोर हरि जोई ॥ सदृश व्योम पुष्प जग सोई ॥ मम ईश्वर्य तात सब भवना ॥ कायर तोर देव गण जवना ॥ प्रेरत मोर सरन विक्राला ॥ परिहरि विबुध लोक निज आला ॥ त्रासत धाव धीर उर हारी ॥ लगे निराच विन्हु तन कारी ॥ जहं तहं गिरन कुंदरन जाई ॥ विचरत जीव निज रहे दुराई ॥ कछु कौपीन मात्र वपु वसना ॥ क्षुध्यत मरहिं विकल विनु असना ॥ तिन मे देव इंद्र मुख जोई ॥ वंदित चरन चारु मम सोई ॥ गय दिग जान मोर कठिनाई ॥ रद कराल तिन कर अधिकाई ॥ चूर दूर मूरी सम कीने ॥ विक्रम जीति लोक सब लीने ॥ मे सुर असुर सकल कर स्वामी ॥ इह सब प्रजा मोर अनुगामी ॥ सोरठा ॥ जनक वदन कटु वाद ॥ सुनि प्रवल न दिस विवस कैं ॥ वोला जन प्रल्हाद ॥ अहो तात विसमय विपुल ॥२६॥ फिर कहता है कि हे मूढ़ बालक वे तेरा हरी जो प्रसिद्ध है और जिसकी तूं श्लाघा करता हैं सो तो ~~सब~~ जगत मे आकाश के पुष्पों वत है जो किसी ने देखा हीं नहीं और मेरा ईश्वर्य जो है सो तो सब भवनो मे भली प्रकार उजा रहे ~~है~~ गा और वे कायर तेरे देवता गण जो हैं सो मेरे बाणों के प्रेरे हुये अपने स्वर्गलोक के घरों को त्याग कर धीरज से रहित भय से कांपते और घायल भये हुये जहां तहां परवतों की कुंद्रा और गुफों मे व्याकुल होय कर जीव को लुकाय हुये वैठे हैं कुछ कौपीन मात्र शरीर पर वस्त्र होगा नहीं तो ~~x~~ महा दुखी भये हुये भूखे और प्यासे मरते हैं और तिन मे से वडे वडे भारी इंद्र आदि मुख्य देवता जो हैं सो तो रात्री दिन मेरे चरनो को वंदना करते रहते हैं और गय दिग कि जो दिशोंके रक्षक हस्ती सो भी हैं मेरी कठिनताई और क्रूरता को जानते हैं तिनके वडे कठोर और दीर्घ दांत जो हैं सो मैने अपनी भुजों केवल से मूली के समान चूर और दूर कर दिये हुये हैं और अपने प्रचंड पराक्रम करके सब लोकों को जीत लिया है मैं इस काल विषे संपूर्ण सुर और असुरों का ~~स्वामी~~

एक कालवंत धाई॥ पुनिपुनि करहिं डंस समुदाई॥
हरिप्रसाद भये सदृश मीना॥ विषप्रभाव कछु जाय न
चीना॥ डंसत दसन सीस मणि नासा॥ सकल सफूट
तटूट तरण नासा॥ कंप मान तन विथत भुयंगा॥ रद
मणि आदि अंग सब भंगा॥ आय नृपहिं निज दशा सु
दिखाई॥ विसमय विवस देखि दनुराई॥ दिग संधूर
बोलि दिस काया॥ तिनहिं वक्र अस दीन रजाया॥ दुहजो
ई परपता अभिमानी॥ माया निपुण कपट सठ खानी॥
निज विक्राल रदन सन एहा॥ वदरहु वदन उदर जुत
देहा॥ ते अनुसास दनुजपति पाई॥ लागे हतन तासु
जव धाई॥ टूटे दसन अनल तन लागी॥ नृप
पैं आय वेग गज भागी॥ का अपराध तोर हम कीना॥
जहि पदिवाक नृपति अस लीना॥ सोरठा॥ अतिपी
डत तन होय॥ कुंभ दसन हत हम भये॥ कुंभी देती
दोय॥ रह्यो न हमरे एक गुण॥ २०॥ टीका॥ दैतपती कहता है
कि तुम अपने ~~आगी के समान विष जो है~~ विषकी आगनी
जो है सो प्रकाश करके और डंसकर के शीघ्र दुष्टका
नास करदेवो क्योंकि इस अधम ने मेरा बहुत निरादर कि
या है ऐसे दनुजनाथ की आज्ञा पायकर ततक आदि ब
डे क्रूर सरप जो है सो सब कोप से धायकर और कालरूप हो
यकर फुकारे मारते हुये अनेक प्रकार से वारवार प्रह्लाद
के शरीर को डंस अर्थात डंग मारते हैं तद्यपि भगवान की
कृपा के प्रसाद से तिनके डंसों का तहां कुछ भी गुण नहीं
होता मानो मछलियों के समान होय गये हैं विषका प्रभाव
कुछभी देखने हीं परता तब डंस मारते मारते तिनके
दांत सीस और मणीं जो है सो सब टूट फूट कर नास
को प्रापत होय गई फिर तो व्याकुल और कोप ते अंग
भंग भये हुये भुयंग अर्थात सरप जो हैं सो राजाके
पास आयकर अपने शरीरों की दुरदशा सब दि
खांवते भये इस प्रकार तिनकी मंद दशा

देखकर दैत राज बडे आचर्ज को प्रापत होय गया और तत काल ही महा मत्त गयंद अर्थात बडे मसत हाथी जो हैं सो बुलायकर तिनको आज्ञा देता भया कि इह जो देवताओं के पक्ष को पालने वाला महा अभिमानी बालक है और माया कपट मे बड़ा प्रवीन है तुम जाय करके इस अधम के शरीर को चीर देवो ऐसी आज्ञा को पाय कर हसती जो हैं सो तुरत धाय करके प्रल्हाद के शरीर को विदारन जो करने लगे अर्थात फाड़ने जो लगे तो देव इच्छा से सपर्श करते ही तिन के दांत सब टूट पडे और शरीरों को मानो अगनी लग जाती भई तब संपूर्ण हसती जलते मरते हूये राजा के पास भागे चले आये और कहने लगे कि हे राजन हमने तुमारा ऐसा कौन अपराध किया था कि जिसके बदले हमको इह भारी दंड मिला कि हम शरीरों करके परम पीड़त और महा दुखी कुंभ जो माथे और दसन जो दांत इह हमारे सब टूट गये हैं अब हमारे दोनो गुणों मैसे एक भी नहीं रहा ना तो हम कुंभी रहे और ना दंती ॥ २०॥ चौपाई ॥ हम देखे न मौकतक कीना ॥ इह तुव यतन भूप हम चीना ॥ तब दनुपति पावक सन काहा ॥ तुव सामर्थ सकल जग दाहा ॥ करहु भसम वेग सठ एही ॥ सुनि अनुसासन अनल नृप तेही ॥ भाजबउदित धार तहि करना ॥ तब प्रसाद भगवन भय हरना ॥ सील अमर तुरंगनि सोभा ॥ भये कलोल अनलगत लोभा ॥ जन प्रल्हाद सफुट बर बानी ॥ सुनहु तात असवदन बखानी ॥ अनल प्रचंड दग्ध अति जेहू ॥ हरि आधीन सेवति गति तेहू ॥ बिनु नदेस भगवान कृपाला ॥ कर हि न कबहु दग्ध कछु ज्वाला ॥ जो इह निज तत्विक नृप होई ॥ तो वपु अत्र जठिर कृत जोई ॥ करहिं नदग्ध भसम हरि काया ॥ भलहिं विचार देख दनुराया ॥ सोरठा ॥ अति पीड़त दुखदेत त्रिविध ताप संसार जे ॥ करन समन तिन हेत रामनाम भेखज रुचिर ॥ टीका ॥

४८५

फिर हसती कहते हैं कि हे राजन हमने जान लिया है कि तुमने हमारे गजमुकता लेने के वासते युह यतन किया है ऐसे तिन का कथन सुन कर फिर दैत राज जो है सो अगनी को बुलाय कर कहने लगा कि हे अगनि देव तूं कैसा है जो सरव जगत दगध करने को सामर्थ है अब इस दुष्ट और दुरमती को क्यों नहीं भस्म कर देता इस प्रकार तिसकी आज्ञा सुनकर के अगनि देव जो है सो भक्त सुष्टु के जलाको जब प्रचंड होय कर के आया तब प्रल्हाद के साथ सपर्श करते ही तिस अगनी के लोल अर्थात चंचल कलोल जो थे सो सब गंगा जी के सीतल जल के समान शांती रूप होय गये तिसको देखकर के प्रल्हाद ऊंची स्वर से अभय कर पिता को कहने लगा कि हे दैत कुल के भूषण अब विचार कर के देख कि इह महा प्रचंड और दगध करने वाला अगनी जो है सो इह स्वतंत्र अर्थात कुछ अपने अधीन नहीं है सो सरव जगत के पालक जो भगवान हैं तिन के आधीन है और तिन की आज्ञा के बिना इसको एक त्रिण के भस्म करने की भी सामर्थ नहीं है जो कदाचित इह अपने ही आधीन होती तो उदर विखे जो जठिर अगनी रहती है सो शरीर को क्यों ना भस्म कर देती ताते भगवान की आज्ञा के बिना कुछ भी न हो सकता है हे पिता ऐसे मेरे भगवान दीन हितकारी जो है तिन के हो नाम का रात्री दिन भजन और सुमरण करना चाहिये देखिये कि अध्यातम अदभूतक अधदेवक इह तीन प्रकार के संसार में बड़े कलेशों के देने वाले ताप जो हैं तिन के नास ~~करने~~ करने को राम नाम ~~की औषधी ही नाम~~ ~~है~~ बड़ी सुंदर और सुखदायक एक औषधी है ॥२२॥ चौपाई॥ संतत तासु जवन जन साधक॥ रामनाम

परम कोप वश ~~होय॥ ग्यान न है अनुशासन अस॥~~
~~मूढ़ मंद मति हीन॥ दुराचार रत जवन इह~~॥ १८॥ टीका॥
तब संपूर्ण दैत जो हैं सो मानो रन विषें हानी पाय
कर और हार कर आवते हैं जैसे ही व्याकुल और मन
मारे हुये आय कर राजा को कहने लगे कि हे असुरों
के नायक हम ने तुमारी आज्ञा से इस बालक के शरीर पर
अनंत शस्त्रों के प्रहार किये हैं कि जिन का कुछ अंत नहीं
परंतु इस का कोई अंग भी छीजा नहीं और हम श
स्त्र मारते मारते थकत होय गये हैं ऐसे तिन का बड़े अ
चरज के देने वाला कथन सुन कर के हिरन्यकश्यपू
प्रल्हाद की ओर देख कर कहने लगा कि अरे जड़
सत्य कहो कि तेरे को कुछ छलविद्या का ज्ञान है कि
अथवा कोई मंत्र सिद्धी राखता है अब मेरे सन मुख
अपना जैसा गुन है तैसा प्रकट कर तब भगवान का
दृढ़ भक्त प्रल्हाद जो है सो कहने लगा कि हे पिता मैं तेरे
ही चरनो की सौगंद कर कर कहता हूं कि मेरे को वि
द्या कपट मंत्र कुछ भी नहीं है परंतु एक जानता
हूं कि जिस पुरष का भगवान कृपानिधान के चरन
कमलों मे अखंड चित जुड़ गया है सो जमराज के भय
को सपने मे नहीं देख सकता तुम कौन और
किस गिनती मे हो इस मे जो कोई संशय करता है सो
गुरू स्वामी और गऊ हत्या के पाप का अधिकारी होता है
और अधम बहुत काल नरक मै निवास करता है इस प्र
कार प्रल्हाद का कथन सुन कर दैतराज जो है सो परम
कोप से महा विष के भरे हुये सरपों को बुलाय कर कह
ने लगा कि अब विलंब मत करो और मेरी आज्ञा को पा
लो॥ १९॥ चौपाई॥ ~~करि विज मरल अनल परकासा~~
कर उ अनल निज गरल प्रकासा॥ इसित कर हु शी
घ्र सठ नासा॥ सुपच निरादर की बसि भारी॥ तत
क आदि उरग तब सारी॥ दनुज नाथ अनुशासन
लीना॥ गावन इस तासिसु की नाम। फुंकरत फ

(Left margin notes:) ॰सो॥ ऐसी गिरा सुनि तब असुर॥ अब विलंब जनि करहु कहुं॥ ॰मुख संमुख आयकर ॰और
(Right margin notes:) ॰वड़ी ॰गये ॰तो

परंतु यह ही बात है कि जिसके जगदीसर रखवारे हैं तिसको कुछ भी भय नहीं है तहां विष जो था सो अमृत के समान गुणदायक हो गया तब हरिन्यकश्यपू जो है सो इस प्रभाव को देखकर बडे अचरज के बश होयकर के कहने लगा कि अरे बालक इह तेरा कोई सामार्थ कहो गया है कि अथवा तू कोई विद्या कपट जानता है मेरे को सत्य करके कथन कर क्योंकि तेरे को यतन भी गुण नहीं करता है तब प्रल्हाद कहने लगा कि हे पिता तू श्रवण कर सरब सृष्टी को करती हरती मेरी माता लक्ष्मी जो है तिसने विलास मात्र नाना प्रकार की लीला रची हुई है सो विष को अमृत करती है और अमृत को विष करदेती है तिसने जो कुछ करना है सो प्रथम ही कर राखा है मै तो कुछ भी कपट और विद्या नहीं जानता हूं ऐसे सुनकर के दैतराज कोप से थरथर कांप उठा और असुरों को बुलाय कर फिर जिस प्रकार आज्ञा देता भया सो आगे कथन कीजाती है ॥२२॥ चौपाई ॥ अब इहि बांधि कठिन सठ अंगा ॥ तुम सब वेग जाहु निज संगा ॥ जाय शीघ्र गिरिपर जिसकारहु ॥ धाय धाय धरि धरन विडारहु ॥ तुरत दैत अनुसासन पाई ॥ बांधि शीघ्र गिरि चले लिवाई ॥ तब प्रल्हाद धरन प्रति बानी ॥ कहि हस वदन अस नम्र तसानी ॥ होत निमगण जलधि बहुबारा ॥ तो पें दीन नाथ उपकारा ॥ सो जस कीन विदत जगसारी ॥ अजहु कृपाल पृष्ट निज धारी ॥ तो उपकार मानि भव हरना ॥ मौरे लेहु धारि तुव धरना ॥ तब दनुजात बांधि गिरि डारो ॥ आवत धरनि लीन कर धारो ॥ सावधान निज भवन न आवा ॥ हरि प्रसाद श्रम काहू न पावा ॥ सो ब्रासुर तबली न बुलाइया ॥

जानत रहा विपुल सठ माया॥ दनुज भूप सुत से तासु बखाना॥ सुनहु बचन मम कहे सुजाना॥ माया के पर तुम हु अति नागर॥ सकल बंस दनुजात उजागर॥ सजहु प्रपंच वेग अब तेहो॥ जाहि ते होय नष्ट सठ एहो॥ ते अनुसर राऊ निज पाई॥ अति प्रचंड माया बिरचाई॥ सोरठा॥ कानन लागी देखि॥ दारुन दव चहु ओर निज॥ अति विसमय जीय लेखि॥ कहत बचन प्रल्हाद अस॥ २३॥ टीका॥ राजा कहता है कि हे दैतो अब तुम इस दुष्ट के अंगों को यतन से भली प्रकार बांधकर और बड़े ऊंचे परवत पर जायकर फिर घुमाय घुमाय कर पृथवी पर पछाड़ देवो तब रह अधम प्रानो से रहित हो जावेगा और तिसकी आज्ञा पायकर दैतों ने प्रल्हाद को निरदय होयकर ततकाल बांध लिया और खैंचते हुये परवत पर लेगये तहां प्रल्हाद जो है सो दीन होय कर नम्र बानीसे पृथवी के आगे प्रार्थना करने लगा कि हे भूमी माता तू समरन कर कि तेरे को मेरे दीनबंधू भगवान ने समुद्र विखें डूबती को बहुत बार उपकार करके राखलिया हुआ है २८ कृपासिंधु का उपकार सब लोगों में भली प्रकार विदत है और अब लग भी कुमठ अर्थात कछू रूप होय कर भक्तहितकारी ने तेरे को पीठ पर धारन किया हुआ है ताते अब तू सोई उपकार हृदय में सुमरन कर के तिन के दास की रक्षा कर अर्थात मेरे को परवत से गिरते हुये को धारन कर ले इतने में दैतों ने तिसको बड़े वेग से घुमाय कर परवत के शिखर से पृथवी पर गेरदिया तब पृथवी ने दया करके आवते को तुरत हीं हाथों पर धारन कर लिया ~~फिर ताते से~~ और महा उपद्रव से राखलिया तब प्रल्हाद सस्थचित और सावधान होयकर भगवान को सुमरता हुआ घर को चला आया दीनानाथ की कृपा से कुछ भी कलेश न हीं पाया २९ अद्भुत जब दैतराज तिस के पिता ने सुनी तो आश्चर्ज के वश भयं हुआ हाथों को मलने लगा और कोप से

भयाहूआ फिर ततकाल हीं संब्रासुर नामा दैत को बुला
य लेता भया कि जो अनेक प्रकार की माया मै प्रवीन था और
तिस को बडे सनमान से कहने लगा कि हे मेरे सखे तूं कैसा
है कि माया और कपट मै परम चतुर और संपूर्ण दैत
वंस मै प्रधान हैं अब ऐसा प्रपंच और यतन करो कि जि
स से ए हमेरा शत्रू प्रल्हाद जो है सो मृत्यू को प्रापत होवे तब
तिस ने दैतपती की आज्ञा सुन कर तुरत हीं ऐसी प्रचंड
माया रच देई कि एक बडा भारी बण है तिस विखे प्रल्हाद
की चारो ओर महा प्रचंड अगनी लगा हूआ है मानो अबी
भस्म कर देता है तिस को देख कर भय से व्याकुल भये हूए
आ प्रल्हाद जिस प्रकार कहता है सो आगे कथन किया जा
ता है॥२३॥ चौपाई॥ उदधी गता निगम कहुं गयओ॥ धों
आसीस दुज कुंठित भयओ॥ धों कछु कृया सकल भई
होनी॥ धों भगवान सुपत गति मानी॥ मै निज भयो
स्वपन कछु लीना॥ धों चरित्र माया पति कीना॥ वि
समय विवस भांति बृति जीके॥ अस स्तुति करत धार
धृति नीके॥ जै जै जैति जगत उपजावन॥ सनमुख
चारु मुनिन मन भावन॥ सुरं ~~हर सिधु~~ कर हरन धरन सु
रपाला॥ करुणा दाम सेम धृति शाला॥ दुरत नि
वारण कुटिल मंडिन॥ हनन विवध तप दनुज प्रचं
डन॥ बंध विमोचन सज्जन रंजन॥ दिव्य विलोचन
दुरजन गंजन॥ देव गदाधर सुरगण नायक॥ बोध
सुधाकर जतन सहायक॥ वेद विसारद भारत पंडित॥
दलन दोष दुख त्रास प्रचंडित॥ नतजन लालस आल
स खंडित॥ मानव मानद कौस्तुभ मंडन॥ करम प
रायण भंजन शोकन॥ मोह विहूनन दीन विलोकन॥
निरमल मानस मलन विधंसन॥ पंडित मंडित ल
डि न संसन॥ सीत करानन भानु विलोचन॥ भक्त
परायण भीत विमोचन॥ सोरठा॥ दीन नाथ श्रीवं
धू॥ विरचत असुर प्रपंच जे॥ प्रभु करुणा घन सिंधू॥

ज

नि हृदय आराधक॥ तिनकहै तात भीति कछु ना
हीं॥ संसय कवहु तोर मनमाहीं॥ तोप तन मोरे
तन लागी॥ होत प्रतीति सलिल गति आगी॥ सूदज
नन सन तव नृपकाहा॥ इहरिपु मोर नधन जोई राहा॥
माहुर गोप पाक जनु पाई॥ करहु प्राणगत तासु खवाई॥
तव आज्ञापत सूदजन दीना॥ भोजन गोप गरल करि लीना॥
सदृश अमिय तासु गुण भयऊ॥ अतिचित चकित
देखि सठ रहऊ॥ स्वाभाविक गुणकै कछु तोरे॥ विद्या
करहु प्रकट जठ मोरे॥ फुरहिं न काहु यतन गुण
वाला॥ कहत वदन अस दनुज भुआला॥ सुनहु
तात प्रह्लाद वखाना॥ मोर जननि लीला निज नाना॥
विरचि विलास मात्र वहु वरना॥ विषकहै अमिय अ
मिय विष करना॥ प्रथमहि कीन सकल घटमाना॥
मै न कपट विद्या कछु जाना॥ सोरठा॥ सुनत दैत
अधिराय॥ कोपविवस दनुजात गण॥ लीन क्षितिक
ट वुलाय॥ दीन रजायसु वदन अस॥ फिर प्रह्लाद क
हता है कि हे पिता तिस राम नाम की जो कोई निरंतर ॥ उरस
करके आराधना और साधना करते हैं तिन को भग ॥ को
वानकी कृपा के प्रसाद से संसार मे कोई भय और क
लेश नहीं होता इसमे जो तुम को कुछ संशय हो तो
प्रतक्ष देख लो जो मेरे शरीर विखे अगनी लगाहू
आ जल के समान शीतल प्रतीत होता है ऐसे
प्रह्लाद के मुख से वचन सुनकर दैतराज पाच
क जनो को कि जो भोजन वनाने वाले हैं आज्ञा
देता भया कि इह जो अवध अर्थात किसी प्रकार
नहीं मरने वाला मेरा शत्रू जो है सो इस को अव
तुम भोजन मै विष मिलाय कर खवाय देवो
॥ से तिस विष के प्रभाव इह अधम अव मृत्यू
को प्रापत हो जावेगा इस प्रकार तिस की आज्ञा
पाय कर तिन पाचकों ने प्रह्लाद को कपट से
भोजन मै विष मिलाय कर खवाय दिया

प्रकाशी हे संशय विनाशी हे चंद्रमा के समान मुखकी शोभा वाले हे भक्तजनों पर स्नेह करने वाले हे दुष्टों के जलाने को सूरज के समान नेत्रों के धारनेवाले हे दीनानाथ हे लक्ष्मी कांत इस असुर की रची हुई माया जो है सो दयाकरके अब इस को शीघ्र निवारण करिये ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ नम्रतगिरा सुनत अस जनकी ॥ विदत जासु गति आरत मनकी ॥ कृपाविवस ह्वै विश्व प्रकाशा ॥ दीन सुदरसन कहं अनुशासा ॥ हरहु प्रपंच वेग तुव जाई ॥ तहिं न देस भगवन अस पाई ॥ कीन नवृत्य असुर दारुण माया ॥ देखि चरित्र वरुहि दनुराया ॥ वेग वुलाय मरुत तन काला ॥ इह जोई नधन मोर दिपु राहा ॥ आज वपुख सठ देहु सुखोई ॥ पाय मरुत दनुनाथ रजाई ॥ करन सशोषण हरिजन काया ॥ तुरत प्रवेश्या मरुत निज पाया ॥ तहांपि धेनु धरणि दुखहारे ॥ जनकरम ये आयुरखवारे ॥ करुणा सिंधु भक्तभय गंजन ॥ लीनपान करि तुरत प्रभंजन ॥ जव समीरगुण नाहिं न देखा ॥ तव स कोप दनुजात वसेखा ॥ नाग पास तनकृठिन वंधाई ॥ दीन नदेस वदन खलराई ॥ वीचन वेग उदधि अवगाहा ॥ सठहिं देहु तुव दनुज प्रवाहा ॥ सोरठा ॥ भूप रजायस पाय ॥ वांधि तासु दनुजातगण ॥ वेग जलधि तट आय ॥ लागे करन निमग्गण जव ॥ २५ ॥ टीका ॥ तव इस प्रकार अपने भक्त की नम्र वाणी सुनकर सो भगवान कि जिनको अपने जनके हृदयकी गती सव विदत है तुरत दया के वश होयकर सुदरसनचक्र को आज्ञा देते भये कि तुम जायकर शीघ्र इस असुरकी मायाको दूर करदेवो तव सो दीनानाथ की आज्ञा पायकर ततकाल तें असुरकी प्रचंड माया को निवारण करदेताभया

ऐसे चरित्र को देखकर पापकी खानी अभिमानी दैत राज जो है सो तिसी समय फिर महत जो पवन है तिसको बुलायकर के आज्ञा देता भया कि इह अवध जो नहीं वध होने वाला मेरा शत्रु है हे तुम अपनी सशोषण शक्ती से जायकरके आजहीं इसके शरीर को सुकाय देवो कि जिससे इह दुबला होयकर आपहीं मर जावे ऐसे दैत नाथकी आज्ञा को पायकर प्रभंजन जो पवन है सो जायकर के जब प्रल्हाद के शरीर विखे प्रवेश करता भया तब तहांभी पृथवी और गऊओं की रक्षा करने वाले भगवान अपने जन के आप रखवारे होय गये ततकाल हीं पवन को पान कर लेते भये इस प्रकार जब पवन काभी कुछ गुण नहीं देखा तब महां कोप से दैतराजाने नाग पास के साथ कठिन वंधवायकर आज्ञा दई कि जावो इस अधम को अवीस समुद्र की वडी ओर और महा भयानक लहरों के बीच जाय करके प्रवाह देवो ऐसे तिस की आज्ञा को पायकर दैतों ने प्रल्हाद को [illegible] लिया और खैचते हूये ल्यायकर जब समुद्र मे प्रवाह देने लगे तब प्रल्हाद जी वडी नम्र बानी से जिस प्रकार विनती करता है सो आगे कथन कीजाती है ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ तब प्रल्हाद वदन उच्चारी ॥ नम्रत गिरा सुनहु निधिवारी ॥ जब मुनि घटज सशोषण कीना ॥ तुम हिं पान कौतुक करि लीना ॥ बहुरि देव भगवन पति माया ॥ निज वर अत्रि नीर उपजाया ॥ सो उपकार मोर प्रभु देवा ॥ जो तुव मानि करहु कछु सेवा ॥ तो जलधीस आज तुव बारी ॥ मोरे लेहु करन निज धारी ॥ अस कहि मौन मंत्र हरि लागा ॥ हृदय सुमरण भक्त बडभागा ॥ तब दनुजात धाय धरि डारो ॥ बीचन वेग प्रवल जहं मारो ॥ बिनु प्रयास क्रम मुदित सरीरा ॥ वहा प्रवाह जाय निधिनीरा ॥ माउदवे प्रवल जलधीसा ॥ कीं मर्याद आद निज खीसा ॥ प्रलयन प्रतीत जनहुं तहां होई ॥ डूबे दनुज ठाउ तट जोई ॥ सोरठा ॥ कैन वृत्य मति धीर ॥ सकल अनर्थन ते तहां ॥ आय वहिर निधि नीर कृस्न कृपा चिंतन करत ॥ २६ ॥ टीका ॥ प्रल्हाद कहता है कि हे जलनिधी तूं सुमरण कर कि जब तेरे को अगस्त मुनी ने कौतुक से पान कर लिया था तो [illegible] मेरे दीनबंधू भगवान ने अनुग्रह करके फिर तेरे को अपने चरनो

मैंसे उतपन्न कर लिया जो आज कदाचित तूं सो उपकार हृदय मे विचार कर तिनकी कुछ सेवा कर लेवें तो तेरेको योग्य है क्योंकि मै तिस भगवान का दास आज दैतों का प्रेरया हूआ तेरे विखे डूबने लगा हूं तूं कृपा करके मेरेको हाथों मे धारन करले इतने मे असुरों ने तिसको वैसे ही बंधे हूये को जल विखे प्रवाह दिया तब तिनका प्रेरा हूआ प्रल्हाद समुद्र के अगाध जल की महा भयानक लहरों के बीच बहा चला जाता है तिस समय समुद्र जो है सो अपनी मर्यादा मैं अत्यंत ही बढ जाता भया मानो एकप्रलै प्रतीत होने लगी तब दैत जो किनारे पर स्थित भये हूये हरीभक्त की दशा को देख रहेथे सो सब के सब डूब गये और प्रल्हाद को समुद्र ने सनमान पूर्वक सहजे हीं बाहिर प्रेरदिया सो संपूर्ण अनर्थों से नवृत्य होय कर भगवान को चिंतन करता हूआ जिस प्रकार अस्तुती करता है सो आगे गायन की जाती है॥ २२॥ चौपाई॥ अति प्रसन्न मानस अनुरागा॥ अस्तुति करन हरन भव लागा॥ हे भगवान दीन हित कारी॥ सज्जन सुखद त्रास जन हारी॥ आरत हरन धरन सुर त्राता॥ मंगल करन विप्र सुख दाता॥ भक्त कल्प द्रुम दीन सनेही॥ जनपैं प्रीति विरद जग जेही॥ भक्त भीत मोचन भव स्वामी॥ वतसल भक्त भक्त अनुगामी॥ जुग जुग संत धेनु सुर धरना॥ आगजग नाथ त्रास भव हरना॥ नित्य जास असरीत सुहाई॥ सहि न सकहिं जन कर लघुताई॥ मोसे कुटिल मंद मति कारे॥ जो कर भये ग्वाल रखवारे॥ सोरठा॥ मै पूरव जन दीन॥ को सनेह अनुबंधि व्रत॥ कृपानाथ सन कीन॥ जहितें हे दारद दमन॥ २३॥ अपार उपकार॥ मोपें की उदार तुव जाहि न बदन हजार सो मुरार बरनन किये॥ २३॥ टीका॥ प्रल्हाद कहता है कि हे दीनो के हितकारी भगवान हे भक्तों के भय हरने वाले हे संत सुख दायक हे दुखी जनो की पीड़ा निवारने वाले हे गऊ पृथवी और देवताओं की रक्षा करने वाले हे भगवान तुम कैसे हो कि सरब मंगलों के देनेवाले और जगत के पालक हो भक्तजनो के कलप वृक्ष और

लं २३८
(margin) धं २५

कहिये वेग इहि कर हनना॥२४॥ टीका॥ प्रल्हाद कहता है कि इह का अवतार भया है समुद्र सुक गया कि वेद लुपत होय गये हैं कि अथवा ब्रह्मनों का आसीरवाद ~~कियर्थो है विप्णु और~~ असत्य होय गया कि जगत मे सेपू ली कृपा की हानी होय गई है अथवा विष्णु भगवान निद्रा मे लीन होय गये कि मेरे को ही कुछ स्वपन होय रहा है कि अथवा माया के पती भगवान जो हैं तिनो ने कुछ चरित्र किया है इस प्रकार अचरज के वश आस्तिक वृती भया हुआ प्रल्हाद भगवान कृपा निधान की असतुती ~~करने~~ करने लग जाता भया कहता है कि जै जै हो तुमारी हे जगत के उतपन्न करने वाले भगवान जै हो तुमारी हे कोटि कामदेव की शोभा को लज्जा देने वाले जै हो तुमारी हे मुनीजनो के मन को भावने वाले हे भक्तों के हृदय मे निवास करने वाले हे मुर दैत के वध करने वाले मुरारी भगवान हे गौ ब्राह्मण पृथवी और देवताउं के पालक जै हो तुमारी हे क्षमा की मूरती हे कल्यान के दाता हे दया ~~आ~~ निधी हे धीरज के धाम जै हो तुमारी हे पापों के नास करने वाले हे ~~सु~~ कानो मैं कुंडलों की शोभा वाले हे तीन ताप के हरने वाले हे दुषृदैतों का नै करने वाले जै हो तुमारी हे संसार के बंधन को काटने वाले हे संत भक्तों को आनंद देने वाले जै हो तुमारी ~~हे कमल नेत्र~~ हे दिव्य नेत्रों वाले हे गदाधर स्वामी हे देवताऊं के नायक हे ~~अमृ~~ बोध रूपी अमृत की नधी हे दीनो के सहायक हे वेद मै चतुर हे युद्ध विलास के धनी हे दुख दोष और भय के नास करने वाले हे दारिद्र खंडन हे नम्र जनो पर प्रीती पालने वाले हे मानुष्यों को मान के देने वाले हे कौस्तभ मनी की शोभा वाले हे करम सुधरम विखे परायण हे शोक निवारण जै हो तुमारी हे निरमल हृदय वाले हे मोह मद के नास करने वाले हे पंडित जनो के हृदय को आनंद

सकल तुमारु॥ विभू वडाई संपती॥ मोर वचन निरधा
रा॥ हृदय धरहु दानव पती॥२९॥ टीका॥ देखिये कि
तनो वडे अगाध समुद्र मे डुबना और महा प्रचंड
अगनी मे जलाना तैसे ही ऊंचे परवत के शि
खर से गिराना और दैतों नाना शस्त्रों के घात दिला
ना विषका खवाना और पवन से शरीर को सुका
ना से व्रातुर मायाका भय दिखाना इत्यादि
अनेक उपद्रव और अनर्थ जो भये तिन सब तें मेरे
को बचाना ऐसे उपकार करने को हे दीनानाथ तुम
ही सामर्थ हो और कौन हो सकता है और हे दीन
बंधु मैं भली जान लिया है तुमारा निरंतर करके
एही व्रत है कि अपने जन पर जो सदैव सनेह ही पालना
इसी तें हे कृपा निधान तुम को श्रुती और पुराणों
ने प्रकट करके जन रक्षक और जन पालक गायन
किया है इस प्रकार प्रल्हाद जो है सो प्रेम और भक्ती
मे लीन भया हूआ भगवान भक्त सुखदान की अस
तुती करता भया तब तिस की ऐसी उत कृष्ट
अर्थात उत्तम ताई और चतुराई देखकर के दैतों विषैं
वडा प्रतिष्ठित और मानी दैतराज जो है सो सहार नहीं
सकता भया हंकार से उनमत्त भया हूआ कहने लगा
कि अरे मूढ बालक रहतेरा हरी कि जिस की तूं इतनी श
लाघा और वडाई करता है सो तेरे हृदय मे मेरे भय से कांपता
रहता है और परवतों की कंदरों के आश्रय होकर
अपने जीव को छिपायें बैठा है शरीर पर वस्त्र भी नहीं
है और महा दुखी भया हूआ मेरे त्रास के वश
कुछ भोजन मात्र भी नहीं पाय सकता है सो ऐसा
निरबल और दीन कहो मेरे सनमुख कैसे होय सकता
है मै तिस के वध करने अर्थात मारने को सामर्थ हूं
वे मेरी प्रबलता और मेरे प्राक्रम की महिमा को भली
प्रकार जानता है और हृदय मे भय मानता है मेरी प्रचंड
भुजों का ऐसा बल और प्राक्रम प्रसिद्ध है कि जिससे

ओर

दैत देवता सब थरथर कांपते रहते हैं इस प्रकार पिता का अतसे कठोर और अभिमान का भरा हुआ वचन सुन कर प्रल्हाद कहने लगा कि हे तात जब लग प्रभू ईश्वर प्रकट नहीं भया तब लग ही तूं निश्चय जान कि इहतेरी प्रताप और सब संपती बडाई देखपडती है॥ चौपाई॥ होत प्रतत्त बिसरि सब जाई॥ तात तुमार भूरि सब चतुराई॥ तब लग गरज करहिं करि कानन॥ जब लग नहिं न प्रकट पंचानन॥ सुनहु तात भाखिस दनुराई॥ बंध्याजिये पुत्र बहुजाई॥ कलयू कबहु कि करहिं बिवाहा॥ व्योम प्रसून जो पि बृषाहा॥ होहिं प्रकास अंध कर नयना॥ सुनहिं उरग्य बरु गायन बयना॥ सरवालीक सिरोमणि तोरे॥ सो न होहिं सुत सनमुख मोरे॥ तब प्रल्हाद कोप बसवानी॥ बोला सुनहु असुर नृपमानी॥ अतहे प्रबल हालाहल जोई॥ तासबिरचत कलेवर सोई॥ तहां प्रलीन फणीक कर न्याई॥ महाराजमम त्रिभुवनसाई॥ करहु न कोप बिबस तिन कोरे॥ सबबिधि दीनदयाल प्रभु मोरे॥ कर आकर सामर्थ गुसैयों॥ और की और करहिं कछु नैयो॥ सो जब करहिं कोप भगवाना॥ प्रलै कालकर अनल समाना॥ सोरठा॥ तो बिसमय कछु नाहिं॥ होहिं निखल ब्रह्मांड जे॥ तुरत भस्म तण माहिं॥ को निवार कर सकहि तब॥ २२॥ टीका॥ और हे पिता तिस अनंत प्रतापी भगवान के प्रकट होते हीं [illegible] तुमारी चपलता और चतुराई जो है सो सब बिसर जावेगी करी जो हसती है सो बन मे तब लग ही गरज करता है कि जब लग तहां सिंह नहीं प्रकट होता तब दैतराज कहने लगा कि अरे नदान जो कबी बंध्या अर्थात बांझ स्त्री पुत्र भी जनमे और हीजड़ा बिवाह भी करे आकाश से पुष्प भी बरखें और अंध पुरुष के नेत्रों मे प्रकाश भी होजावे सरप जो है सो गायन भी सुने परंतु सब से निकारा और सबसे नखिद्ध तेरा सिरोमणी हरी जो है सो तो कदाचित् मे भी मेरे सनमुख होवेगा इस प्रकार सुनकर के प्रल्हाद कोप के बश हो जाता भया और कहने लगा कि हे अभागी पिता तू श्रवण कर कि अतसे क्रूर हालाहल जो बिष है तिस कर रचे हुये कलेवर मे महा भयंकर फणीक अर्थात सरप बत

॥ २२॥

श्री

श्रीमद्भागवत

लीन भयेहूये तीनलोकके नायक मेरे स्वामी जो हैं तूं जड़
तिनको कोपके वश मतकर क्योंकि वे अनंत प्राक्रमवाले
और अनंतही महिमावाले दीनानाथ करने नाकरने और
कुछ और का और ही चमतकार दिखायदेने को सामर्थ हैं
सो जब प्रलेकालकी अगनी के समान अपना प्रचंड कोप क
र बैठेंगे तब हे पिता कुछ आचर्ज नहीं है कि एक छिनमात्र
में हीं संपूर्ण ब्रह्मंड भसम होजावेंगे फिर तिस समय ति
नको कौन निवारण और शांती करनेवाला है ॥२८॥ चौपा
ई॥ तहो मसक इव जनक तुमारा॥ होव निरंतर वेग संघा
रा॥ मृतजन सखे मित्र समुदाई॥ दसादेखि तुव जाहिं पराई॥
केवल मरन होव तहं तोरा॥ संतत सत्य वचन पितु मो
रा॥ दनुजाधीस सुनत सुतवानी॥ मानस मानि अ
तिबड़ हानी॥ कहत मंद मति अधम अचारी॥ उह
प्रसिद्ध जड़ संसृति सारी॥ तुव विरुद्ध अस कवन
प्रकारा॥ रे दुरात मन वचन उचारा॥ मेना मृगा देव
नभ धरना॥ अत्र विहर निसवासर मरना॥ तुव प्रति
कूल करहु कस मूढ॥ करम प्रसिद्ध मोर जग गू
ढ॥ सुनि प्रल्हाद कहत दिसमानी॥ तुव जन सकल
सुनहु मम कानी॥ अहो कवन उह व्यापिस आई॥
हृदय जनक जड़ दुरजन ताई॥ जाहि वर विधी दीन
वरणही॥ करत निरादर जड़मति तेही॥ मानत
नाहिं मूढ अभिमानी॥ कहत वदन जोई अनहितवानी॥
मोरे भी प्रमान अब एहू॥ देवप्रधान कमलभव जेहू॥
तासवचन उहि पातक कोही सो अब फुर प्रमान
भव होहीं॥ निसफल जाहि नसोय॥ हतहिं वेग
भगवान उहो॥ ब्रह्मवाक वर जोय करत अधम
तिन कर हनन ॥३०॥ टीका॥ ~~फिर प्रल्हाद कहता है कि~~
और हे पिता तहो तुमारा मसक जो मच्छर है तिसके समान
संघार होजावेगा अर्थात तुम मारे जाओगे और उह

दीनोके सनेही हो और सदैव जिनका एही विरद
है कि अपने दासजनो प्रीती पालनी और भक्तों के हृदय
का भय और शोक दूर करना इसी तें हे दीनानाथ तुम जग
त मै भक्तवत्सल कहावते हो हे आगजग अर्था
त जड़ चैतन्य सृष्टी के स्वामी तुमारी नित्य एही
रीती है कि जगत मे अपने जनकी लघुता और
अपमान को कबी सहार नहीं सकते हो देखिये कि मेरे
जैसे मंदमती और महा कुटिल के दीन बंधु तुम रखवा
रे होयगये हो कहिये कि मैने ऐसा कौन स
नेह संबंधी ब्रत कियाथा कि जिसतें हे उदार हे मु
रार भगवान तुमने मेरेपर इह अनंत उपकार
किया है कि जिसको मै हजार मुखधार कर भी वर्णन
करूं तो नहीं किया जाता॥२७॥ चोपाई॥
होत निमग्न उदधि अवगाहा॥ अति प्रचंड पा
वक कर दाहा॥ तूणीभूत कर सिखर छिउतंगा॥
अरु प्रहार आयुध बहुरंगा॥ गरल समीर सशो
षण काया॥ अन्य अनेक दनुज शठ माया॥ सब
तें राखलीन भगवाना॥ मै कृपाल केवल जीय
जाना॥ प्रभुकर निर्विकल्प ब्रत एहू॥ जनपें सदा
करन निज नेहू॥ तहि तें श्रुति पुराण असगाये॥ ज
न रंजन प्रभु जनन सहाये॥ असप्रकार प्रल्हाद प्र
वीना॥ प्रेम भक्ति जुत असतुति लीना॥ पितु अवलो
कि तासु उत कृष्णा॥ सहि न सक्यो सठ दनुज प्रतिष्णा॥
कहत मूढ़ अरभक हरि तेरा॥ राखत हृदय त्रास अति
मोरा॥ गिरि कुंडा आश्रुत जड़ जाई॥ विपत जीव
निज रह्यो दुराई॥ संतत दुखित विगत वपु
वसना॥ पाव नमोर त्रास वस असना॥
सनमुख होहि मोर किमि दाना॥
मै प्राक्रमि तहि हनन प्रवीना॥ जानत मोर विपुल
तानीके॥ मानत त्रास भलहिं निज जीके॥ मोर प्रचंड
भुजन बलपाई॥ डरपत दनुज देव समुदाई॥ सोरठा॥
सुनि पितु वचन कठोर॥ तब बोल्यो प्रल्हाद जन
जबलग प्रभुवर मोर ईश सपक्ष न जांमक भा॥ तबलग

त्रास जीय मोरा॥ होत न प्रकट मूढ प्रभु तोरा॥ ग्रस सामर्थ्य जो पि कछु तेहु॥ तो स्यंव सनमुख तुव जेहु॥ इहि मे सरव व्यापि कस नाहीं॥ ग्रंतर जामि तुव त्रिभुवन माईं॥ तब प्रल्हाद सुचिर मृदु बानी॥ सुनहु तात ग्रस वदन बखानी॥ जे मम भक्ति चरन हरि नीके॥ पावन प्रेम प्रीति दृढ जीके॥ जो पि वेद बर वाक्य विचारा॥ ग्रहिं प्रमाण सत्य संसारा॥ सोरठा॥ तो मोरे भगवान॥ ग्रंतर व र्ति स्यंव जे॥ तिन कर दरसन मान॥ शीघ्र होहि तुम रे पितु॥ कीट मात्र इह जोय॥ चलत तात कल थंब पर इहि मे प्रभु मम सोय॥ होत प्रतीत न तुम हिं कस॥ ३१॥ टीका॥

फिर प्रल्हाद कहता है कि हे पिता इह जो तुम कहते हो कि तुमारा स्वामी मेरे सनमुख क्यों नहीं होता है सो ग्रब तू सावधान हो ग्रोर देख कि घट घट के ग्रंतर जामी माया के पती ग्रोर दुष्ट दैतों का नास करने वाले भक्तजनो के रखवारे ग्रोर पृथ्वी का भार दूर करने वाले ग्रब साक्षात प्रकट होय कर के तेरा संघार करेंगे ग्रर्थात तेरे को मार देवेंगे ग्रैसे प्रल्हाद का उप्रवचन सुन कर के दैत पती कोप से तमक कर कहने लगा कि जो ग्रैसी सामर्थ्य वाला तेरा प्रभू है तो वे किस का भय राखता है क्यों प्रकट नहीं होता ग्ररे बालक तूं नहीं जानता है वे तो केवल मेरे ही भय से छिपा हुग्रा प्रकट नहीं होय सकता है जो कदाचित वे कुछ ग्रैसी ही सामर्थ्य वाला ग्रोर सरव व्यापी है तो इह देख तेरे सनमुख जो स्यंव स्थित भया हुग्रा है इस मे तेरा सरव व्यापी ग्रोर ग्रंतर जामी प्रभु क्यों नहीं देख पड़ता है इस प्रकार तिस का कथन सुन कर प्रल्हाद कोमल वानी से कहने लगा कि हे जनक ग्रर्थात हे पिता जो कदाचित मेरी भक्ती भगवान के चरन कमलों मे भली प्रकार दृढ है ग्रोर मेरी प्रीती प्रतीती भी भगवान के चरनो मे सत्य कर के है ग्रोर जो संसार मे वेद के वाक्य प्रमाण ग्रोर सत्य हैं तो मेरे ग्रंतर जामी ग्रोर दीन बंधू भगवान जो हैं सो पतला इसी स्यंव के द्वारा ग्रभी तेरे को दरसन देते हैं

ऐसे कथन करके फिर कहने लगा कि हे पिता तूं देख
इह स्थंब पर कीट मात्र जीव जो चल रहा है इस विखे मेरे
सरबव्यापी प्रमातमा भगवान तेरें कों नहीं देखपड़ते हैं" ॥ "को
३१॥ चोपाई॥ सुनसुत वचन भूप उच्चारा॥ उभय कीट
कल खेम मझारा॥ कैं [illegible] तोर प्रभु रहये॥ अहो
भागवद देवन भयये॥ अस जिन केर पूजनय स्वामी॥
कहि प्रह्लाद सुनहु विधि कामी॥ तजहु दुरंत कुटिल
पन जीके॥ लेहु सुशरण चरन श्री पीके॥ दीनद्याल
केशव भगवाना॥ सेवत होहिं तुमहिं कल्याना॥
परिहरि वक्र उक्त हंकारा॥ भजहु कृपाल विप्र आधा
रा॥ नतर रूप धरि मृत्यु कराला॥ तोरे हनन हेतु
इहि काला॥ होन प्रगट चहत मम स्वामी॥ दीनद्या
ल भक्त अनुगामी॥ जब प्रल्हाद रुचिर अस बानी॥
प्रकट पितुहिं निज वदन बखानी॥ तब खदरा अंगा
रन ऐसे॥ क्रूर कलेवर पंनग जैसे॥ कोप प्रचंड
प्रबलतर तांके॥ ईदोलत अवैवसब जांके॥
तपता इस गोलप कर न्याई॥ अरुण नैन कृत
त्रिभुवन साई॥ सप्त तीन नख कठिन कराला॥
धारा जनहुं करन करवाला॥ अस वचित्र सुर शत्रु
अनूपा॥ वैकुंठी कंठी रय रूपा॥ सोरठा॥ रव
प्रति रव करि सोय॥ मणिमय खचत स्थंब ते
भेदि प्रकट प्रभु होय॥ अदभुत मूरति नरहरी॥ ३२॥
टीका॥ तब ऐसे पुत्र के वचन सुनकर दैत पती मुस
कायकरके कहने लगा कि हे बालक इस खेम और
कीट [illegible] के विखे [illegible] प्रभू है
अहो देवताओं के धन्य भाग हैं कि जिनका इह कीट मात्र
[illegible] इष्टदेव है कि जिसको रात्रीदिन पूजते और वंदना
करते [illegible] रहते हैं ऐसा अपमान और अभिमान का
वचन सुनकर प्रल्हाद कोप से कहने लगा कि हे अभागी

पिता अब मैने निश्चय जान लिया कि तेरे पर विधा
कोप से विरुद्ध होय गया है परंतु हे तात तूं अब भी हृदय से
जड़ता और कपट को त्याग दे और लक्षमी के पती शरणा
गत पालक भगवान जो हैं तिन के चरनो की शरण को प्रा
पत हो इस मै दीन हितकारी और विघ्न निवारी दीना
नाथ जो हैं सो तेरे पर अवश्य क्षमा कर देवेंगे और तूं
सुंदर कल्यान को प्राप्त हो जावेंगा हृदय का अभिमान
और कुटिल वचन सब छोड़ दे केवल दया की निधी और
जगत के आधार मेरे स्वामी जो हैं तिन का हि भजन और
सुमरण कर नहीं तो मृत्यू का भयंकर रूप धार कर तेरे
वध करने अर्थात मारने के वासते वे अनंत प्रभाव वाले
अभी प्रकट हूये चहते हैं जब इस प्रकार प्रल्हाद भक्त ने
पिता को प्रकट उचारन किया तब खंदरा जो थे रहे
तिस के अंगारयों वत और क्रूर कलेवर वाले सरप
के समान बडे प्रबल और प्रचंड कोप से इंदोलत की
डोलते हैं अंग जिनके और लोहे के तपे हूये गोलों
के समान ~~[illegible]~~ किये हूये हैं लाल ~~[illegible]~~ नेत्र हा
थों के ~~[illegible]~~ महा विक्राल दसों नख जो हैं सो
हैं मानो भयानक तलवारों की तीव्र धारा ऐसे
मुर दैत के शत्रू वैकुंठी कंठीरय अर्थात वैकुंठ नि
वासी ~~[illegible]~~ मृगपती रूप जो हैं सो शब्द पर शब्द
करते हूये मणियों करके खचित भया हूआ स्थंब
जो था तिस को भेदन कर के अर्थात चीर करके
महा भयंकर नर सिंह मूरती से प्रकट हो जाते भ
ये ॥ ३२ ॥ चौपाई ॥ व्याकुल लोक गगन गरजाना ॥
कै दिग कंपि भीत मन माना ॥ डोलत धरनि धीर उर
त्यागे सैल विदलन परस्पर लागे ॥ वेला तजि स
जलधि निज जोई ॥ अरु दृग वृंद भ्रमन गति होई ॥
मानस विकल भूत सव केरा ॥ दशा काल क कुजा
य न हेरा ॥ जनु ब्रह्मांड स्फुटन लाग ब्रह्मंडा ॥ करि क
राल अस शब्द प्रचंडा ॥ दीना याल भक्त अवलं

तुमारे भृत सेवक और मंत्रीजो हैं सो तुमारी दुर दशा देख करके सब भाग जावेंगे तहां केवल एक तुमारा ही मरना होगा इह मेरा वचन सत्य करके है इस मे कुछ संशय नहीं है ऐसे प्रल्हाद का कथन सुनकर दैतराज जो है सो हृदय मे बड़ा शोक और हानी मानके कहने लगा कि अरे अधम बालक मेरा प्रधान करम जो है सो संपूर्ण जगत विखे प्रसिद्ध है और इस वारता को भी सब लोक भली प्रकार जानते हैं कि मै तो ना मानुष्य ना पशू ना देवता के हाथ से ना पृथवी ना आकाश ना अंतर ना बाहिर ना रात्री ना दिन विखे मरना है मूढ तैने इह कैसे मेरे मरने का महां अनर्थ और विरुद्ध वचन उचारन कर दिया है तब प्रल्हाद सुनकरकें कहने लगा कि हो भाई लोगो तुम देखो जो इस मेरे पिता के हृदय मे इह कौन जड़ता और दुरमती आय व्यापी है क्योंकि जिस विधाता अर्थात ब्रह्मा ने इसको वरदान दिया है अब मे दैत तिसके ही वचनों का निरादर करता है और हंकार के वश भया हुआ नहीं मानता है तो तैं मैं इही कहता हूं कि संपूर्ण देवताओं विखे सृष्ट विधाता जो है तिसके वचन इसके शीघ्र फलदायक होवें और भगवान इसको तैसे ही हनन करें अर्थात तैसे ही मारे कि ना रात्री हो ना दिन हो ना अंदर ना बाहिर इत्यादि विधाता के वचन जो हैं सो सब सत्य ही होवें जो इह तिसके वचनों का निरादर करता है और तिनके तातपर्य को नहीं समुझता है ॥ २० ॥ चौपाई ॥ सुनहु तात प्रल्हाद उचारा ॥ कहहु जवन तुव स्वामि तुमारा ॥ सनमुख मोर न हिन कस होई ॥ देख प्रसिद्ध होत प्रभु सोई ॥ चाट चाट अत्र जामि पति माया ॥ दलन दुष्ट गण जनन सहाया ॥ अब साक्षात तोर संघारा ॥ करिहैं देव हरन महिभारा ॥ बोल्यो असुर कोपवस होई ॥ अस सामर्थ तोर प्रभु जोई ॥ सरव व्यापि तुम जवन व खाना ॥ कवन भीत वस होत न माना ॥ केवल मानि

"दैत

५२

दुखीभया हुआ विलाप करने लगजाता है तैसेही इह लोग सब व्याकुल भये हुये धनधाम और स्त्री पुत्र सब त्याग कर त्राहि त्राहि करते भाग चले॥३३॥ चौपाई॥ मातु पुत्र प्रीय कर त्रीय पी के॥ देखन दृग न लालसा जी के॥ भीत विवस कछु परत न सूझा॥ निज पर पतनि पुत्र पति बूझा॥ काहु उसास लेत मन मारे॥ चले जात निज प्राण संभारे॥ कादर काहु प्राण परिहरये॥ कोऊ विपत मुरछित धर परये॥ कोऊ सूर वीर धृति चीने॥ आस्त्रत भये दीनगति कीने॥ त्राहि त्राहि रव कोऊ उचारी॥ आय शरण प्रल्हाद सिधारी॥ हम भृत तोर भवन कर सारे॥ अब राखहु प्रभु प्राण हमारे॥ हम कर विलम रहि जोई॥ तुव केवल गति आन न कोई॥ परम दैव करम भगवाना॥ आज त्रास मानस निज माना॥ कंपत पृथ्वी धरनि तजि दीना॥ सकल लोक मन विकल मलीना॥ सोरठा॥ नाके प्रबल मृगराज॥ प्राटायात कर सोपिमा॥ विकलभूत सब आज॥ गिरन चहत जनु धरनितल॥३४॥ टीका॥ तब माता पुत्र को और पतनी पती को देखने की अभिलाखा करती हैं परंतू भय के वश कुछ सूझ नहीं पड़ता है कि अपना बिगाना और माता पिता स्त्री पुत्र भ्राता कौन हैं और कहां हैं केते व्याकुल और मन मारे हुये वडे लंबे उसास भरते हैं केते प्राणों को लिये हुये भागे चले जाते हैं केते कायर होय कर गिरते और मरते जाते हैं केते मूर्छा गत होय कर पृथ्वी पर पड़ रहे हैं केते सूरवीरों को देख कर दीन भये हुये तिन के आस्त्रय होय गये हैं और केते त्राहि त्राहि उचारते हुये प्रल्हाद की शरण को आय प्रापत भये हैं और हाथ जोड़ कर कहते हैं कि हे नाथ हम तुमारे घर के सेवक और चाकर हैं अब इस समय कृ

पुत्र मृत्रेषु ॐ ¹ॐ ²काल

पाकरके हमारे प्राणों को राखलीजिये हे प्रभू इस कठिन कालमें हम को तुमारे बिना और कोई आधार नहीं है आज परमदेव कूरम भगवान जो हैं तिनो ने भी भय मानकर अपनी पृष्ट अर्थात पीठसे पृथवी को त्याग दिया है और संपूर्ण लोकों का मन व्याकुल और महा मलीन होयगया है और स्वर्ग लोक जो है सो भी तिस महा प्रवल मृग राज की गरदन के उठे हुये रोमांचों के भयसे व्याकुल होय करके आज पृथवी पर गिरने चहता है॥ २४॥ चौपाई॥ अब अहि समय महा मति वारे॥ तुम प्रल्हाद प्राण रखवारे॥ अनल प्रचंड कोप पंचानन॥ चाहत कीन दग्ध जनु कानन॥ हेहु सहाय जानि जन अपने॥ हम कहें आज नतर जगत सपने॥ व्याकुल देखि दनुजगण ताहीं॥ बोल्यो वचन वदन खेल नाहीं॥ अहो दैत उर धीरज धर है॥ कायर इव विलाप जनि कर है॥ का आगल तुव नाहिं न देखे॥ विपुन व्याघ्र इहि सरस वशेखे॥ इहि मे अधिक कवन गुण ताके॥ कंपत तुम हु सकल वशुजा के॥ मृग आरन्य कवन कित लेखे॥ तुव सामर्थ सूरर ण देखे॥ आयुध निपुण प्रवल भटि मारे॥ सिंह भीत वश भये निकारे॥ धरहु धीर पौरष उर भाई॥ मैं अनेक कानन अस जाई॥ शारदूल मृगशोनत कीने॥ सर प्रहारि प्राणन हत कीने॥ तब दनुजात विकल मन मारे॥ सुनहु भूप अस वचन उचारे॥ सोरठा॥ जासु वदन अवलोकि॥ प्राण प्यान चाहत करन अह कंपत त्रै लोकि को सन मुख ताकर स्थिर॥ २५॥ टीका॥ फिर सब लोग कहते हैं कि हे महा मती वाले प्रल्हाद अब इस समय हमारे प्राणों के तुम ही रखवारे हो इह घोर तेजसी पंचानन जो सिंह है इसके कोपकी महा प्रचंड अगनी जो है सो हम को बनके समान अभी दग्ध करने चहती है तुम आज अपने जानकर हम को सहायक होवो नहीं तो इह जगत हम को आज सपने वत होजाता है इस प्रकार सब दैत लोगों को व्याकुल देख करके हरिन्य कश्यप जो है सो बड़े मदके वचनों से कहने लगा कि अहो बड़े आचर्ज

रमाको

की बात है तुमने धीरज क्यों त्याग दिया और क्यों सावधान नहीं हो जाते हो रंक कायरों के समान कैसा विलाप करते हो और शत्रू से कल्यान चहते हो धिग है तुमको अरे मूढ क्या तुमने रंक के समान आगे वन मे व्याघ्र अर्थात बाघ नहीं देखे हैं इस से तिनते अधिक कौन गना है कि जिस के भय से तुम थरथर कांप रहे हो इस वन के मृग हैं और किस गिनती मे हैं तुम सब प्रकार करके सामर्थ और शस्त्रों के धारने वाले महा सूरवीर हो इस वन के रहने वाले मृग का भय मान कर नकारे होय गये हो सो वीर हृदय मे धीरज को धारन करो और अपने बल प्राक्रम को देखो मैं ने तो वन मे जाय कर ऐसे अनेक हीं मृ गों का शिकार किये हूये हैं और बानों से छिंद भिंद करके जहां तहां उड़ाय दिये हूये हैं ऐसे दैतराज का कथन सुनकर सब असुर जो हैं सो अति से व्याकुल और मलीन ~~मन वाले~~ चितभये हूये कहने लगे कि हे राजन जिस का महा भयंकर मुख देख करके प्राण तुरत नहीं ~~निकल जाते~~ चलनेके चाहते हैं और त्रैलोकी भी थरथर कांपती है तिस के सनमुख स्थिर होने को ~~कौन~~ किसका सामर्थ है ॥ २५ ॥ चौपाई ॥ भटि हठ सूरबीरता सारी ॥ दशा भीम हरि लीन विसारी ॥ बोल्यो बहुरि दैत अधिराई ॥ सूर धरम इह ना हिन भाई ॥ सनमुख होत शत्रु कदरावहिं ॥ प्राण प्राण करि सुजस न पावहिं ॥ महा वीर वीरन बर जोई ॥ विक्रम विजय कीन तुम सोई ॥ समर प्रचारि प्रबल अरि मोरे ॥ अब कस प्राण प्राण उच्चारे ॥ हठ उरधरहु धीर दनुजाता ॥ मोर प्रताप सकल जग व्याता ॥ जे ब्रह्मादि देव बर गाढे ॥ बेत्र पानि द्वारे मम ठाढे ॥ जीव चराचर संसृति जाहू ॥ मम सासन बस बहिर न काहू ॥ सोरठा ॥ मोर बाहु बल जोय ॥ तीन लोक जानत सकल ॥ तुव व्याकुल कस होय ॥ का पाचर मृग विपन इह ॥ २५ ॥ टीका ॥

Margin: ५का; हि; भ जिसकी

वा॥ अविरभूत प्रभु भये स्वंयवा॥ कोलाहल अत
सय तव भारी॥ भयो परस्पर नर अरु नारी॥ क हत
काल कलपांत हमारे॥ प्रकट भयो अव विनुहिं वि
चारे॥ सुत भृत तात मात प्रीयनेहू॥ कहां मित्र परि
जन त्रीय गेहू॥ रह्यो प्राण कर कवन वसाई॥ कहि
कर शरण लेव अव जाई॥ जीवन मरन सूझ कछु
नाहीं॥ निज निज विपत सकल मन माहीं॥ जिमि बूडत
निधि सलल जहाजू॥ होहिं विकल सव देखि समाजू॥
सोरठा तथा लोक समुदाय॥ त्रासत व्याकुल धीर
गत॥ जहेत हे चले पराय॥ परिहरि पुत्र कलित्र निज॥३३॥टीका
तव भगवानके ऐसे नरसिंह रूपको देखकर लोकसव
व्याकुल होयगये और गरजने लगा [illegible] गयदिग जो
दिशों के रक्षक हस्ती हैं सो भी भय से थरथर को
प उठे और पृथवी भी धीरज त्यागकर डगमग के
डोलने लग पडी परवत जो हैं सो परस्पर भिडने लग
जाते भये और समुद्र भी अपनी मर्यादा को त्याग चला
दिशों मे भ्रमन होने लगा सर्व भूतों का मन जो है सो व
व्याकुल होय गया तिस समय की दशा कुछ देखी
नहीं जाती मानो ब्रह्मांड फूटने लगा है इस प्रकार
वडा प्रचंड और महा कराल शब्द करके दीनो के याल
और भक्तों के आधार ~~[illegible]~~ नरसिंह भगवान जो हैं सो
ततकाल स्थंव से साक्षात ~~[illegible]~~ प्रकट होजाते भये
तव तिस समय अत्यंत कोलाहल अर्थात महा घोर शोर
जो है सो मच गया नारी और नर सव व्याकुल भये हुये
ऐसे ही कहते हैं कि अहो आज ~~[illegible]~~ विना बूझे ही
अकस्मात प्रलै काल आय व्याप्त भया है अव कहां
पुत्र पिता माता और कहां सेवक सखे भ्राता ~~[illegible]~~ क
हां मित्र वांधव सुखदाता प्राणों का ~~[illegible]~~ कौन भरोसा
रहा है अव किस की शरण को प्राप्त होवें ~~[illegible]~~
और जीवन मरन ~~[illegible]~~ किसी को भी कुछ सूझ नहीं पड
ता है अपने अपने सव कोई व्याकुल होय रहे हैं जैसे
समुद्र विखे जहाज को डूवता देखकर सव समाज

दीनगति वदन वखानी ॥ सोरठा ॥ जो कर दृष्टी जोदि ॥
अति कराल करवाल सम ॥ असपंचानन कोदि ॥ करहु
निवारण शीघ्र तुम ॥ ३६ ॥ टीका ॥ जब इस प्रकार ति
स अधम दैत राजने महा अभिमानके वचन उचारे
तब देवता पृथवी और गौओं की रक्षा करनेवाले भ
गवान जो हैं सो कैसी अपूर्व शोभा को उदय करते
भये कि महा प्रकोप से लाल होय गया जिनके
नेत्रों का प्रभाव और दोनो वें के भृकटी अर्थात
त्रिशी भको जो हैं सो अतसे करके फरकने लग जा
ती भई वकत्र जो मुख है सो बड़ा विकट और महा
भयंकर तैसे ही क्रूराकार शरीर और रितू के
~~करह~~ मेघवत और गरज करते हूये वड़े प्रचंड को
प से विजली के समान तमक और चमक से उ
छलकर तिस अधम असुर को तुरत ही जानूओं
के तले दवाय लेते भये कि मानो जैसे सरप के वा
लक को गरुड़ दवाय लेता है और जैसे वटेरे को
सचान जो शिकरा है सो ऊपर लेता है फिर कैसे
कि जैसे कमल की नाल को हसती मरोड़ लेता है
तैसे ही महा पराक्रमी निरसिंह भगवान ने तिस अ
सुरं मद को ततकाल दूर और चूर करदिया तहां ति
सकी प्रभुता वड़ाई और चपलता चतुराई जो थी
सो तो एक भी होने न ही पाई तव वड़ी दीनता से
निवल और सिथल होयकर पुकारने लगा कि
हे पुत्र हे वतस अब शीघ्र धाय कर मेरी ~~सहा~~ सहायता
कर क्योंकि महा विकराल तलवार की धारा के
समान जिसके नेत्रों की अति भ्यानक दृष्टी है
ऐसा शिंहों विखे प्रधान शिंह जो है ~~तिसके हा~~
~~थसे मेरे को अब तूं ही [illegible]~~ तिके हा
थसे मेरे छुड़ाने को अब तूं ही सामर्थ हैं ॥
३६ ॥ चौपाई ॥ तात तात हा तात पुकारत ॥

(margin: ऐसे; हां; छुड़ा)

मोरे जानि वेग सुत आरत॥ विकट क्रांत त ग्रस्त इहि काला॥ अति पीड़ित तन विकल बेहाला॥ होहु सहाय प्राण कर मोरे॥ इह उपकार आज सुत तोरे॥ मोहि कहे जीव दान अब करहो॥ कठिन कलेस त्रास जिय हरहो॥ सुत सुनि करत वचन अस दीने॥ तब भगवान मरम कछु चीने॥ शारदूल नर रूप अगारी॥ प्रखर नखर कर वृंद प्रहारी॥ तुरत विदारि उदर खल दीना॥ विलम न में मात्र नहिं कीना॥ सन मुख देखि पतनि निज ताहो॥ बोल्यो वदन वचन खल नाहो॥ कब हुं कि हृदय तोर प्रीय भामा॥ मम अनुराग जियन कछु कामा॥ तो करि प्रणति विविध विधि नीके॥ ले हु कछु दाय आज प्रीय पीके॥ काकु कातर वचन मुख वरना॥ वेग निवार राज मृग करना॥ ते पति सुनत दीन अस बानी॥ बोली वदन ~~[struck]~~ युक्त युग पानी॥ हे कृपाल माधव सुख कंदू॥ दीन नाथ प्रभु दीनन बंधू॥ हे नर केहरि भक्त भय गंजन॥ आरत हरन धरन सुर रंजन॥ कहिस कुमती वचन मुख जोई॥ दीन दयाल कर सनमुख होई॥ इहि कर नहिन नाथ अपराधू॥ अत से मोह वृती मूढ असाधू॥ जानत नहिन भेद प्रभु माया॥ ता महु कृपाल दयाल करि दाया॥ त्रिलमरदन सनहोहि नस्वामी॥ यश तुमार कछु जन अनुगामी॥ सोरठा॥ तब बोले भगवान॥ सुन महि खो मम भक्त जे॥ अत से मित्र प्रीय प्राण॥ तां कर अधम दुरातमन॥ कीन जवन त्रिसकार॥ प्रतिदिन करि अति वेदना॥ सो कस सकहुं सहार॥ मै व्यापक तां कर हृदय॥ ३२॥ टीका॥ इस प्रकार पुत्र पुत्र हा पुत्र पुकारता हुआ बार बार एही कहता है कि हे तात अब मै इस महा भयंकर काल का ग्रसा हुआ परम पीड़ित और दुखी होयर हा हूं तूं आज पिता का हित विचार कर ~~[struck]~~ मेरे प्राणों की रक्षा कर और जीवदान दे कर मेरे दुखे ~~[struck]~~ शोकरुं को निवारण कर इह तेरा अत्यंत

घोरमय

उपकार होवेगा ऐसे पुत्र के आगे दीन और दुख के मरे हुये वचन जो कह रहाथा तब भगवान ने हृदयं से चाकि "मैं ऐसा नाहो मेरे भक्त के चित्त मे दया उतपन्न होजावे और इस अधम के क्षमा की प्रार्थना करदेवे ऐसे विचार कर दुष्ट दलन नरसिंह रूप भगवान जो हैं सो ~~[illegible]~~ बड़े क्रूर और "का खर भनकों" घात देकर तिस अधम असुर के उदर को तुरत ही विदारन करदेते भये अर्थात फाड़ देते भये तब सो मंदमती दैतराज तहां अपनी स्त्री को सनमुख स्थित भई देखकर कहने लगा कि हे प्यारी जो क "त दाचित तेरे हृदय मे मेरे जीवने की कुछ भी प्रीति और अभिला षा है तो मुख से नाना विनती ~~[illegible]~~ बड़ाई और प्रार्थना चतुराई करकर इस महा मृग राज के हाथ से मेरे को छुड़ायले इस प्रकार पती के मुख से बानी सुनकर सो भामनी दीन गती से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने लगी कि हे कृपा के धाम हे लक्ष्मी नाथ हे आनंद मूरती हे दीन हित कारी हे दीनबंधू हे भक्त भय हारी हे नरसिंह रूप धारी हे दुख दारिद्रों के दूर करनेवाले हे पृथवी और देवताओं को आनंद देनेवाले हे दया निधी इस दुरमती ने जो आप के सनमुख अनुचित "उचारन किये कि "जो प्रभू के सनमुख कहने योग्य नहीथे तो हे दीनानाथ इसमे इसका कुछ अपराध नहीं है क्यों कि इह असुर बुद्धी का हीन और मोह की फासी मे बंधा हूआ निपट मूढ और असाधू है कृपा निधान की माया के जानने को इह मंद कहां सामर्थ होयसकताथा कृपा करके इस जड के अपराध को क्षमा करिये हे दीन दयाल खलके मरदन करने से तुमारा कुछ यश नहीं होता है इस प्रकार तिस दैतराज "की स्त्री का वचन सुन करके

फिर कहते हैं कि हे नाथ सूरवीरों की संपूर्ण वीरता और हठ प्राक्रम जोहै सो इस सिंहकी भयानक दशा ने सब हरलिया है तब दैतराज कहने लगा कि अहो भाई इह तुम जो भयके वश होकर बड़ी कायरता और दीनता के वचन कहते हो तो इहै कुछ सूरवीरों का धरम नहीं है जो शत्रूको सनमुख देखकर कायर होजाते हैं और प्राण प्राण ~~कर पुकार के अपनी बड़ाई~~ पुकार ते हैं वे संसार मे सुजस और बड़ाई नहीं पावते हैं मेरे को बड़ा विसमय अर्थात आचर्ज लगता है कि वीरों मे प्रधान महा सूरवीर जो थे सो तो तुम ने अपने प्रचंड प्राक्रम से जीत लिये और बड़े बड़े प्रबल शत्रूओं को रणभूमीमे बलकार बलकार कर मार दिया है अब कैसे प्राण प्राण करके पुकारते हो हठ और धीरज को हृदय मे क्यों नहीं धारन करते हो देखो मेरे प्रताप को कि जो संपूर्ण जगत मे प्रसिद्ध है और ब्रह्मादि जो बड़े प्रधान देवता हैं सो हाथों मे आसे धारन किये हूये रात्रीदिन मेरे द्वारे पर स्थित रहते हैं और भी जगत के सब चराचर जीव मेरी ही आज्ञा के आधीन चलते हैं इह मेरी भुजो का बल और प्राक्रम जो है सो तो तीन लोक मे सब जानते हैं तुम व्याकुल कैसे होय गये इह वण का मृग कौन पाँवर और क्या तुच्छ वस्तू है ॥२४॥ चौपाई॥ जब अस मंद वचन उच्चारे॥ तब सुर धरनि धेनु रखवारे॥ अरुन प्रकोप दृगन श्रीजी के॥ अति पदि भ्रमत जुगल भ्रू वां के॥ बकतर विकट भेष कृत भ्यावन॥ गरजे घोर जलध जनु सावन॥ क्रोधत पड़े तड़ित इव धाई॥ लीन असुर तल जानु दबाई॥ जिमि भुयंग सिसु गरुड़ दबावा॥ अरु सचान जिमि उपट अलावा॥ नाम मृनाल नाल जिमि भंजा॥ तिमि नर केहरि असुर मद गंजा॥ चपल विपुल तादि को चतुराई॥ सो तो होन एक नहिं पाई॥ देरे बतस धाव अस वानी॥ मंद

५५९

दैत राज अपनी स्त्री को कहने लगा कि हे प्यारी हे मृग
नैनी अव तू अंतापुर मे अर्थात भवनो के भीतर क्यों
नहीं चली जाती किसलिये परम दुख और कलेश
को प्रापत होय रही है अब मेरे इन प्राणो को निकसते
देखकर तेरे को और भी कलेश होवेगा और
तू कैसे सहार सकेगी तांते अपने घर को चली जा हे
प्यारी तू देख कि जिस प्रचंड प्राक्रम वाले मृगराज का
महा भयंकर मुख है कि जिसमें अनंत लोक और अनंत
ही ब्रह्मंड मे नगीरण अर्थात निगले हूये देखता हूं और
अनंत ही माया भी लखता हूं प्रलय काल की अ
गनी जो है सो भी जिसके क्रोध के समान दगध करने
वाली नहीं है ऐसे महा काल के हाथों विखे पक
ड़ा हूआ मै कहो प्यारी अब कैसे छूट सकता हूं
इस प्रकार पती का वचन सुनकर रानी जो है सो
दुखी होय कर दीन वाणी से कहने लगी कि हे नाथ
अब तुमारे प्राण तो चलने चहते हैं मै किसकी शरण
को प्रापत होऊंगी और पीछे संसार मे मेरे जीवने
का कौन आधार है ऐसे कहि कर और बड़े रुदन से
हाथ जोड़ कर "परम विलाप से भगवान के सनमुख वि
नती करने लगी कि हे दीन जनो की पीड़ा हरने वाले
हे वीर धीरों विखे हे कृपानिधान अब तुमा
रे जैसे ही साक्षात विवेक और विचार के धनी
ऐसी चपलता करने लगे तो इह चंचल सुभा
व वाले मनुष्य क्या उप
द्रव नहीं करेंगे ऐसे माता का वचन सुन कर जिस
प्रकार कहने लगा सो आगे कथन किया जा
ता है ॥ ३८ ॥ चौपाई ॥ अब सो हस परिहरि महतारी ॥
अंतापुर कहे जाहु सिधारी ॥ हठ परि णाम मातु
भल नाहीं ॥ समय विचार देख मन माहीं ॥ अन

"परम
"और ऐसे ही
"जो है सो
"जो
"ही हिरण्य

हित तजहु जानिहित जीके॥ करहु न सोच जननि उर
धीके॥ सुनि सुत वचन कहत अस माता॥ तुम कहें राखि
उदर मै ताता॥ जनम्यो पुनि भूरि स्तन पाना॥ वरधित
कीन पाय श्रम नाना॥ करत क्रतघ्नताई अवलेवा॥
अव फल दीन एहु सुत अेवा॥ जनक मरन कर तुमहिं
उछाहा॥ सुनि प्रल्हाद वदन अस काहा॥ जनक उपाय
मातु हत मोरे॥ विरचे जवन विदत सव तोरे॥ पितु की
न्यो अनुचित अति भारी॥ सो कृपाल प्रणतारत हारी॥
सहि न सके जनकर अपमाना॥ अव कस छाडुहि कृ
पानिधाना॥ सोरठा॥ कहिस वदन तव मात॥ जनक
मरण तुमरे सुजस॥ कृत्य कृत्य भा तात॥ सुनि वो
ल्यो प्रल्हाद अस॥ ३९॥ टीका॥ प्रल्हाद कहता है कि हे
माता अव विलाप को त्याग कर भीतर घर को चली जा
इह हठ करने का फल शुभ नहीं होता है अव देख
और समय को हृदय मै विचार अनहित को छोड और
सुंदर हित को मान पती का सोच मत कर ये सोच
ने के योग्य नहीं है असे पुत्र का वचन सुन कर माता
कहने लगी कि हे तात मैने तेरे को नो महीने उदर मे
राख कर जनमा और फिर प्रीती पूर्वक अपना दूध
पिलाय पिलाय कर वडे श्रम और यतन से नाना क
लेश सहार कर पाला है अव क्रतघ्नताई करके मा
ता को एही फल देता हैं कि पिता के मरने का हृदय मे
अत्यंत उतसाह मानता हैं तव प्रल्हाद कहने लगा कि
हे जननी तूम ली प्रकार जानती हैं जो पिता ने मेरे
मारने के वासते ~~[illegible]~~ अनेक ही उपाय किये हैं
और वुद्धी का हीन भगवान के दीन पाल विरद को कुछ
भी जान नहीं सका कि कृपासिंधू को अपने जन कैसे
प्यारे होते हैं एही अनुचित और अपराध विचार कर
दीन वंधू सहार नहीं सके अव कोप के वश भये हू ये भगवान
तिं को कैसे छोड सकते हैं असे सुन करके माता

कहने लगी कि हे पुत्र अब मैने जान लिया है जो पिता के मरने का तेरे को सुजस प्रापत भया है और तू कृत्य कृत्य होगया हैं जो कुछ करना था सो कर चुका हैं तब जिस प्रकार प्रल्हाद उत्तर देता है सो आगे कथन किया जाता है॥ ३९॥ चौपाई॥ जप तप जोग जतन बहु साधन॥ करहिं जबन भगवान अराधन॥ संत सिद्ध तापस मुनि ग्यानी॥ जोगी प्रवर रति ब्रह्म अमानी॥ तिन कर अंत काल भगवाना॥ चिंतन किये मातु प्रभु ध्याना॥ आवत नाहिं जास भव हारी॥ सो प्रत्यक्ष अब दीन उबारी॥ धरि उछंग तोरे पति प्राना॥ बैठे दीननाथ भगवाना॥ सब काल कल्यान सुहाई॥ इह दूषण भूषण अब माई॥ पुनि प्रल्हाद जनक सन बानी॥ भाखी जन हु अमिय रस सानी॥ धन्य तात तुव धन्य प्रसंसा॥ उधृत कीन जास सब वंसा॥ कदि है कुठि कठर य निंदा॥ क्रियेबि दलन दुरत कर वृंदा॥ पावन पद सरोज जन पाला॥ प्रभु सुख कंद मुकंद कृपाला॥ प्रापत भयो तात बड भागी॥ देख कलि किलख वपु त्यागी॥ तुव पितु धन्य धन्य प्रभु सोई॥ तुम पे कृपा जास अस होई॥ सोरठा॥ मोरी देउ प्रनाम॥ तुम कहँ अरु भगवान कहें॥ दीन जास निज धाम॥ पितु तुम से रत द्वेष कहें॥ ४०॥ टीका॥ प्रल्हाद कहता है कि हे माता संत सिद्ध तपस्वी मुनी ग्यानी और बडे बडे जोगी प्रवर अमानी कि जिन के हृदय मै कुछ मान नहीं है सो अनेक जप तप जोग जतन और हठसाधन कर कर भगवान का आराधन करते हैं परंतु वे पूरण प्रमातमा और अनंत माया वाले भगवान तिनके ध्यान मात्र भी नहीं आवते हैं देख आज तेरे पती के उदय भाग्य कि सो दुराराध भगवान

भगवान कहने लगे कि हे दैतपतनी इहप्रल्हाद मेरा भक्त जो है सो मेरेको प्राणों से भी अति प्यारा है और इस दुष्ट आतमाने मेरे भक्त को दिन दिन तिरस्कार करके नाना प्रकार का देह दिया है सो इह ऐसे अपने प्यारे भक्त का कलेश मेरे से कैसे सहारा जाता है क्योंकि मै तिसके हृदय मे व्यापक हूं मेरे भक्त का शरीर जो है सो मेरी ही काया है॥ २७॥ चौपाई॥ पुत्र पत सठ एक न कीना॥ मानहु हृदय वज्र धरि लीना॥ कीन अनर्थ विपुल गत दाया॥ नाना दीन देह दुख काया॥ मोर भक्त प्रति कूल अभागी॥ केहि प्रकार अब देहुं त्यागी॥ जीयहिं वदन तव दैत बवैना॥ प्रीया करेग श्रवन वर नैना॥ कस न वेग अता पुर जावहु॥ कवन हेतु दारुन दुख पावहु॥ निकसत प्राण मोर अब देखी॥ होहिं कलेस तुमहिं अवसेखी॥ बकतर भीम जास मृगराया॥ अखिल लोक ब्रह्मंड निकाया॥ मै कब लायमान प्रीय देखहुं॥ अति अनंत माया कछु लेखहु॥ अरु कलपांत काल जोई आगनी॥ सो न क्रोध इहि सदृश दयनी॥ ताते प्रहित करन इहि केरी॥ मोतप्रतीत कवन विधि मेरी॥ पति मुख गिरा सुनत असुरानी॥ आरत कहत दीन वतबानी॥ चाहत चलन प्राण पति तोरे॥ कहि कर शरण आज प्रभु मोरे॥ अब पश्चात जियन संसारा॥ कहहु प्राण पति कवन आधारा॥ अस कहि रुदन सहित करजोरी॥ हरि सनमुख कहुण नहिं थोरी॥ करत प्रणत मोचन भगवाना॥ धीर वीर प्रभु कृपानिधाना॥ तोसे अस ~~सिरलेकर~~ विवेकी॥ लागे करन चपलता थोरी॥ सोरठा॥ जो करिहैं कस नाहिं॥ अति निसर्ग चंचल मनुज॥ चपलताई मनमाहिं॥ तब बोल्यो प्रल्हाद अस॥ २८॥ टीका॥ फिर भगवान कहते हैं कि देखो इस महा मंदने कुछ पुत्र पत का विचार भी नहीं किया मानो हृदय मे वज्र धार कर महा अनर्थ किया और नाना प्रकार का देह ~~दुख~~ दुख दिया है ऐसा अभागी जो मेरे भक्तों विरुद्ध है अर्थात मेरे भक्त का वैरी है मै तिस दुष्ट को किस प्रकार छोड देऊं ऐसे भगवान का कथन सुनकर

(margin: ॰सातात; ॰के)

त्रिज[illegible] धारी॥ उपमा कोटि मदन छबि हारी॥ अमर अंश प्रभु प्रक्षालन चरना॥ नीरज नील नीरधर बरना॥ श्री वर उल्लहास चैन लामी॥ नारायण नरसिंह नि मामी॥ गीरवाण गंधर्व निकाया॥ मुनि ऋषि विप्र संत महि राया॥ भूत अपसरा यक्ष सवाहीं॥ जीव चरा चर जे जग माहीं॥ मनुज पक्षाच उरग दनुजाता॥ देवराज पशुपति वरधाता॥ इन कर सुजस जास संसारा॥ गायमान मुख विविध प्रकारा॥ कामधेनु द्रुम देव समाना॥ देव अनंत शक्ति परधाना॥ अखिल लोक विश्राम अगारी॥ सारभूत वैकुंठ मुरारी॥ सदा हरन हरि मेदनि भारा॥ धरहिं ललित लीला अवतारा॥ अब कृपाल केवल हम लागी॥ दाहक दनुज वंस वण आगी॥ इह नर शारदूल अवतारा॥ आर त जानि हमहिं प्रभु धारा॥ करुणासिंधु भक्त भय हारे॥ भये दीन देवन रखवारे॥ अतसे प्रचंड प्रबल तर जाको॥ विषय प्रताप अंत गत जाको॥ बुद्धि अगोचर परहिं न पारा॥ सकल परस्पर करहिं विचारा॥ एक कहहिं ग्रीषम ऋतु तरनी॥ चपला चैय वदन कौ वरनी॥ त्रितिये नैन वाम दव काहू॥ काहु कहहिं [illegible] वानल ॰वड दाहू॥ विदत रूप धरि कोप कराला॥ बरनहिं काहु सकल छिति ज्वाला॥ अस सुर सकल सोच उर करहीं॥ हरि प्रताप कछु जानि न परहीं॥ को सामर्थ नाहिं तिन केरी॥ सनमुख होहिं रूप हरि हेरी॥ कोप प्रज्वलित अनल कर भांती॥ देखहिं ठाढ तास सुर पांती॥ सोरठा॥ बहुरि परस्पर भाखि॥ सनमुख नर हरि शरण कर रचना रहे विचारि गमन पूरवा परजता॥४१॥

टीका॥ इसप्रकार जब प्रह्लादने वचन उचारन किये
तब दैतराज नृसिंह प्रह्लाद को त्याग देता भया तिससमय
देवताओं की कुल को आनंद देने वाले और दैत कुल के
राजा को दग्ध करने वाले अग्नी के समान नरसिंह
भगवान जो थे सो बड़ा महाँ भयानक रूप कर लेते भये
तब देवतागण स्थित भये हूये दूरसे ही देखते हैं निकट
नहीं आय सकते कैसेभी नरसिंहदेव शोभाय
मान हैं कि अतसेक्रूर भयंकर कलेवर जिनका और
महाँ प्रकोप से अग्नी के पुंजवत लाल भये हूये तिस
समय तिनके सनमुख होने की किसको सामर्थ थी
तब देवतागण अपने अपने विमानो को प्रेरकर पृथवी
तलपर दैतराज के द्वारे मे स्थित होयकर बड़ी नम्र
बानी से असतुती जो है सो करने लगे कहते हैं कि जै
हो जै हो तुमारी हे कमलों वत चरनों की शोभा वाले
जै हो तुमारी हे गो ब्रह्मण पृथवी और देवताओं
के भय दूर करने वाले हे भगवान तुम कैसे हो
कि सुधासिंधू जो खीर समुद्र है तिसविखे बड़ा सुं
दर और रमनीक नाग फणियों और रतनमणियों
के दीपकों से प्रकाशमान है जिनका मनोहर धाम
अर्थात घर शेष नाग की कोमल सेजा जो है ति
सपर है जिनका शैन और लक्ष्मी के सुंदर कु
चों कर के मरदित हैं जिनके कोमल चरन हृदय
मे धारे हूये हैं जिनोने मंदार जो कलप वृ
क्ष है तिसके पुष्पों की सुंदर माला और कोटि
कामदेव की छबी को लज्जा देने वाली है जिनकी
बचित्र मूरती तैसे ही गंगा के पवित्र जल से
प्रक्षालन भये हूये हैं जिनके चरन नीले
बादर और नीले ही कमल वत है जिनके शरीर
को सुंदर वरण अर्थात रंग श्री जो लक्ष्मी

है तिसके हृदय मे परिपूर्णरहता जिनके दरसनका नित्य उतसाह और हुलास। गीरवाण जो देवता और गंधर्व मुनी रिषी संत ब्राह्मण और पृथ्वीपाल जो राजे भूत अपसरा यक्ष पिसाच दैत नाग और मानुष्य देवराज जो ईंद्र पशुपति जो शिव धाता जो ब्रह्मा इनकरके जगतमें जिनकी नाना कीर्ती और सुजस गा यमां किया हूआ है कामधेनू और कल्प वृक्षके समान अनंत शक्ती और अनंतही प्रभाव है जिनका संपूर्ण लोकोंके आधार और वैकुंठ की संपूर्ण शोभा औं श्रृंगार पृथ्वीका भार उतारनेके वासते होता है जिनका जुग जुग लीला अवतार ऐसे कृपाके समुद्र भगवान जो हैं सो हमको हीं दुखी जानकर केवल हमारे ही निमित्त दैतवंसके वणको दग्ध करने के लिये अगनीके समान इह महा भयंकर नरसिंह अवतार जो है सो धारन किया है और दयाकी निधी भक्तरक्षक भगवान हुमां दीन देवताऊं के रखवारे भये हैं देखिये कि कैसा महा प्रबल और प्रचंड पराक्रम प्रताप और प्रभाव दिखाया है कि जहा बुद्धी विचारका कुछभी संचार नहीं है अर्थात अनंत महिमा है कुछ पार नहीं पायाजाता इसप्रकार सब देवता परस्पर सोच और अनमान करते हैं एक कहते हैं कि इह कोई ग्रीखम ऋतूका सूरज उदय भया है एक कहते हैं कि इह बिजलीका समूह प्रतीत होता है और कोई कहते हैं कि इह महा देवके त्रितिय नेत्रकी ज्वाला है

कि जो बडी कठिनता से ग्रेराधे जाते हैं इस तेरे पती
कों अपने उछंग अर्थात गोदी मे लिये बैठे हैं हे भाई
आज सरबदा शुभ और कल्यान हीं है और इसके
इन दूषण भी सब भूषण हीं होयगये हैं फिर प्र
ल्हाद पिता को कहने लगा कि हे जनक तूं धन्य तूं धन्य
है तेरी मै कहांलग श्लाघा और बडाई करूं कि जिस
ने आज संपूर्ण अपने वंसका उद्धार करदिया है और
वैकुंठ निवासी निरसिंह भगवान की निंदा कर कर अ
पने पापों के समूह का नास दिया है और संपूर्ण कले
शों से रहित हो कर सरब सुखों के मूल भगवान कृपा
निधान के चरन कमल जो हैं सो प्रापत करलिये है हे
पिता तूं भी धन्य है और इन भगवान भी धन्य है कि जि
नोने तेरे पर ऐसी अपूर्व अनुग्रह करी है अब तुम
को और भक्त हितकारी भगवान को मेरी बारबार दंड
प्रणाम होवे सो कैसे भी दीन बंधू भगवान हैं कि जि
नोने अत्यंत उदारता से तेरे जैसे पाप
की खानी को अपना परं धाम जो है सो देदिया है ॥४०॥
चौपाई ॥ अस जब कहिस बचन प्रल्हादा ॥ असुर
तुरंत अंत पथ साधा ॥ तब प्रभु सुर प्रमोद कुलकारी ॥ दहन
दनुज कुल तिलक दिवारी ॥ कियरूप निज भीम बसेखी ॥
दूरहिं दूर देवगण देखी ॥ बैकुंठी कंठीरव कैसे ॥ भ
यावन क्रूर कलेवर जैसे ॥ अति प्रकोप पुंज जिमि ज्वा
ला ॥ सनमुख होहिं कवन तहि काला ॥ प्रेरि बिमाण
देव समुदाये ॥ अवनी द्वार दनुज पति आये ॥ स्थित है
लाग नम्र मुख करना ॥ अस तुति दीन द्याल भव हरना ॥
जै जै चारु चरन जल जारना ॥ सुर दुज धेनु धरनि भय
हारना ॥ सुधा सिंधु ~~[illegible]~~ सुहावा ॥ रम्यमय हरम
जास स्रुति गावा ॥ फण रतन कर द्योतन दीपे ॥ तलप
ललित वर मृदुल अहीपे ॥ जन उतंग पीन स्तन
श्रीके ॥ लालत आरबिंद पद नीके ॥ सुचि मंदार चारु

अब
पति
कर
म

जीको प्रेरा और कहा कि हे गणनायक इससमय हमारे तुमहीं सहायक बनो भगवानके सनमुख जावो और मुखसे नाना प्रकार असतुती कर कर तिनके को पकी शांती करावो ऐसे देवताओं का वचनसुन कर करीमुख अर्थात हसतीके मुखवाले गणेशजी जो हैं सो मंदमंद गतीसे भगवानके सनमुखको चलपरते भये तब आगे जायकर ~~कैर~~ कोपसे लाल भया हुआ मानो विकराल कालकी अगनी के समान ~~भया~~ नरसिंह भगवानका मुख देखकर हरहरहर शबद उचारते हुये ततकालहीं पीछेको फिर आये और देवराज जो इंद्र है तिसके पास आयकर कहने लगे कि हे सुरपती तुम संपूर्ण देवताओं विखे शिरोमणी और प्रधान हो तहां भगवानके सनमुख जाने की तुमारी ही सामर्थ है तब इंद्र सुनकरके वरुणदेवको कहने लगा कि
५ण हे वरुं तेरा तामस गुण प्रभाव है और तू परम चतुर है हरीके सनमुख जाने की तेरीही सामर्थ है तब वरुण आगे मारुतजो पवन है तिसको कहता भया कि हे पवन भगवानके सनमुख तुम जावो क्योंकि तुमारा अतसे करके तीव्र वेग है और भय त्रास भी तुमारे हृदय में कुछ नहीं है ऐसे वरुणका कथन सुनकरके पवन आगे सूरजको कहने लगा कि प्रभाकर हे
निधी अर्थात हे प्रकाशकी ~~खानी~~ तू सत्व गुण सामर्थी और
ज महां तेंसी सूरवीर है आज तूहीं देवताओं के मनोर्थको सफलकर तब सूरज कहने लगा कि
भी भाई तुमने मेरे को पहिले क्यों नहीं कहा अब सायंकाल होय गया है मेरा वलपौरष कहां रहा और मैं लुपत हुआ चहता हूं ॥४२॥ चौपाई ॥ इहि अवसर सामर्थ न कोई ॥ विनु मयंक हरि सनमुख होई ॥ ओहिं क्रोध नर केहरि निवरण ॥ सोमयंक दिननायक वरनाय ससि सुनि वदन सूर असमाण ॥

हमरे चतुर चतुर मुख धाता॥ गुणनिधान विद्या मति
नागर॥ अग्रगण्य सुर सकल उजागर॥ आज होहिं प्र
भु सनमुख सोई॥ आन देव सामर्थ न कोई॥ विधि अस
सुनत निसाकर बानी॥ बोल्यो हृदय अगम अति जानी॥
अब तुम मिलि वृंदारक सारी॥ चलहु शरण क्षीरोध
कुमारी॥ सो निवारण करिहैं भगवाना॥ प्रबल कोप जो
ई अनल समाना॥ अस कहि चरन शरण प्रभु माया॥
गवने दीन देव समुदाया॥ हे अंबे शारद मुद सदनी॥
मंगलकरनि निसाकर बदनी॥ नीरज नवल विलोल
विलोचनी॥ हृदय भक्त दुख त्रास विमोचनी॥ सक
ल लोक प्रतिपालन जासा॥ व्रत पुनीत श्रुति संत प्र
कासा॥ सोरठा॥ मातु कोप पति प्राण॥ करहु समन च
लि श्री अत्र तुम॥ जब अस सुरन बखान॥ तब बोली क
मला बचन॥ ६१॥ टीका॥ फिर सूरज कहता है कि भाई
इस समय भगवान के सनमुख होने को चंद्रमा के बिना
और कोई सामर्थ नहीं है सोई नरसिंह देव के कोप
को निवारण करने वाला है इस प्रकार सूरज की वाणी
सुनकर चंद्रमा जो है सो कहने लगा कि भाई इस कार्ज
के करने को हमारे बिखे सामर्थ एक विधाता अर्थात
ब्रह्मा है क्योंकि वे सरब गुणनिधान और विद्या वि
चार मे परम चतुर संपूर्ण देवताओं बिखे प्रथम गिनती
वाला और सुमती करके उजागर है आज सोई भगवा
न के सनमुख होवेगा और किसी भी देवता को साम
र्थ नही है तब ऐसे चंद्रमा की बानी सुनकर विधा
ता कहने लगा कि भाई इह कारता बड़ी अगम और अ
तसे कठिन है परंत मै तुमको एक विचार कहता हूं कि
तुम सब देव मिलकर क्षीरसमुद्र की पुत्री जो लक्ष्मी
है तिसके चरनो की शरण को चलो सोई भग
वान के प्रबल और प्रचंड कोप को कि जो अगनी के
समान महा प्रज्वलत है शांती करदेवेगी ऐसे वि
चार कर संपर्ण देवता जो हैं सो महामाया की शरण

को चले आवते भये और दूर हीं स्थित होयकर अनेक प्रकार की अस्तुती से जगदेवे को रिझावने लगे कहते हैं कि हे अंबे हे शारदे हे आनंद मूरती हे मंगल करनी हे चंद्रमाके समान मुख की शोभावाली हे नवीन कमलवत चंचल नेत्रों वाली हे भक्तजनोंके हृदय के भय और कलेश दूर करने वाली हे जगतजननी तू कैसी है कि संपूर्ण लोकों को पालना एही जिसका पवित्रवत स्रुति और संतजनोंने गायन कियाहै अब हे माता तू इस समय इनदीन देवताओं का हितविचारकर और चलकर इन प्रलैकाल की अगनीके समान प्राणपती का कोप जोहै तिसको शांती कर अर्थात शीघ्र निवारण कर ऐसे जब देवताओं ने प्रार्थनाकरी तब लक्ष्मी जैसे उत्तर देतीहै सो आगे कथन कियाजाताहै॥ ४२॥ चौपाई॥ इहि अवसर मोरे सुरजाना॥ सनमुख नहिन शक्त भगवाना॥ तबदेवन अस विनय उचारी॥ करिय कवन अब जतन विहारी॥ कीन पराय हमहु मिलि जोई॥ नाहिन भयो दैव फुर सोई॥ सकल कराकर शक्ति भवानी॥ सोपि आज मानस सकुचानी॥ प्राणनाथ कर सनमुख होई॥ मई न कोप समन कर सोई॥ तो निश्चय मानस हम जाना॥ सकल चराचर कर भगवाना॥ भयेसि उदित करन संहारा॥ हमरे कवन आज आधारा॥ अस विचारि वृंदारक सारी॥ गये शरण प्रल्हाद सिधारी॥ हे जग अ प्रल्हाद सुर मंडिन॥ अल्हाद उर दनुज विखंडन॥ प्राणरूप नारायण केरो॥ आज धन्य कीरति जग तेरो॥ हरि प्रीय संत सिरोमणि टीका॥ भक्त प्रधान

कोई कहते है कि इह समुद्र की वडवानल अगनी है कोई कथन करते हैं कि इह प्रतत कों का रूप धारकर संपूर्ण पृथवी की अगनी जो है प्रायजगी है ऐसे संपूर्ण देवता अपने अपने विचार के अनुसार कहते हैं परंतू भगवान की महिमा और पराक्रम प्रताप कुछ जान नहीं परता है तिन मै कोई भी सामर्थ नहीं है जो ऐसे नरसिंह भगवान के रूप को सनमुख स्थित होय कर देख सके महा प्रज्वलत अगनी के समान भगवान का क्रोध जो है तिस के शांती होने की गती को देखते हैं और भगवान की शरण को सनमुख जाने की परस्पर सम्मती विचार रहे हैं कि पहिले कौन और पीछे कौन जावे ॥ ४१ ॥ चौपाई ॥ प्रेरे तिनहि प्रथम गणनायक ॥ होहु तुमहु इहि समय सहायक ॥ सनमुख जाय देव निधिदाया ॥ अस्तुति करहु वदन गणराया ॥ करि मुख मंद मंद गति ठानी ॥ चले सुरन अनुसासन मानी ॥ कोपारुन्न वदन हरि देखी ॥ काल कराल अनल जनु लेखी ॥ फिरे तुरत पाछिल पगधारी ॥ हर हर हर रव वदन उचारी ॥ देवराज सन तब तिन कहा ॥ तुम सुर सकल सिरोमणि राहा ॥ अस सुनि ईंद्र वरुण प्रति बानी ॥ भाषी वदन निपुण जियजानी ॥ हरि पें गवन करन गति तोरी ॥ तामस गुण प्रभाव जो कोरी ॥ वरुण मारुत सन भाखा ॥ तुव निज वेग ती व्रतर राखो ॥ अरु भय त्रास सो विमन माहीं ॥ तुमरे मरुत देव कछु नाहीं ॥ वरुणम वरुण सुनत अस ब्यारी ॥ सुनहु प्रभाकर विनय हमारी ॥ तुम सामथ तेज त्रिन सूरा ॥ करहु अभिष्ट सुरन कर पूरा ॥ सोरठा ॥ तब अस भानु बखान ॥ प्रथम नमो रे तुम कहा ॥ अब जीवन मम जान ॥ आहा साये काल जद्द कहा ॥ ४२ ॥ टीका ॥ तब तिनोंने प्रथम गणपती

७७

ेहो

ेखो

कोप जो है इसकी वेग शांती करो नहीं तो सण
भरमै संपूर्ण लोक भस्म होने चहते हैं ऐसे दे
वताओं की दीनता और दुख देख कर बड़े कोमल
चितवाले भक्त प्रल्हाद जो हैं सो नारायण के चर
न कमलों को प्रणाम करके बड़ीदीनगती से अभय
होयकर तुरत हीं दीनबंधू के सनमुख को चलपड़
ते भये तब नरसिंहभगवाने अपने प्यारे भक्तको आ
वते देखकर अत्यंत कृपा और स्नेह के वचनों से
कहने लगे कि हे वत्स हे तात हे सुभक्त हे मेरे प्रा
ण प्यारे अब भय और संकोच को त्याग कर और
आनंदपूर्वक शीघ्र आय करके मेरे हृदय को सी
तलकर अर्थात मेरे को मिल हे प्यारे मे जानता हूं
के जो तूंने मेरी भक्तीं व[illegible]श होकर शरीर मे नानाप्रकारका
दुख और कलेश पाया है ॥६४॥ चौपाई ॥ जन
क देइ कर पीड़त भारी ॥ साधु सरल चित धीर
ज धारी ॥ अति प्रीय भक्त मोर मन भावा ॥ अस
कहि कृपासिंधु उर लावा ॥ पुलक गात रोमा
वलि ठाढ़ी ॥ वरनि न जाय प्रीति उर गाढ़ी ॥
नेति नेति जहि निगम न रूपा ॥ गुण अतीत
अव्यक्त सरूपा ॥ [illegible] नरीह अगोचर वानी ॥
अगम जासु गति जाय न जानी ॥ चिदानंद पर
मातम जोई ॥ आज सुभक्त प्रेम वश होई ॥ धृत
नर केहरि रूप जन अंगन ॥ जन सन करत प्रत
त आलिंगन ॥ प्रमुदित कहत कृपानिधिवा
नी ॥ भक्त प्रसन्न आज मोहि जानी ॥ जो मन भाव
मो गवर मोही ॥ नहिं न अदेव आज कछु तोही ॥
सुनि भगवान वदन अस वचना ॥ कृपा सनेह मो
द प्रद रचना ॥ द्वै कर [illegible] युक्त सीस धरि चरना ॥
तव प्रल्हाद वदन अस वरना ॥ हे कृपाल प्रणतारत

नारी॥ नाथ अनाथ दीन हितकारी॥ संत सिद्ध तापस
मुनि ज्ञानी॥ साधन यतन कठिन हठ नाना॥ करिहैं आ
विर्भूत तिनकेरे॥ होत न कृपासिंधु प्रभु मेरे॥ सोतो
आज विदत मम लागी॥ निज ईश्वर्य गरव ता त्यागी॥
शारदूल नररूप धरावा॥ कृपा निकेत विपुल प्रेमपा
वा॥ सोरठा॥ धन्य भाग बहु मोर॥ जहि उदेश त्रिभुवन
धनी॥ आविर्भूत भा तोर मोरे दरसन नरहरी॥ ४॥ टीका॥
फिर भगवान कहते हैं कि हे धीरज के धाम साधू और सूधे
सुभाव वाले मेरे भक्त तूं पिता के दंड देने से शरीर क
र के परम पीडित होय रहा है ऐसे कहि कर के कृपासिं
धू तिसको अपने हृदय में लगाय लेते भये शरीर प्र
फुल्लित होय गया और रोमांच सब उठ खडे हुये प्रीती
और स्नेह जो है सो कुछ कहा नहीं जाता देखिये कि
जिस परमातमा को वेद और शास्त्र सब नेति नेति करके
गायन करते हैं कि भगवान इतने ही इतने नहीं ऐसे नषेध
से ही कथन करते हैं कुछ अंत नहीं पाया जाता और
गुणों से रहित है प्रकट नहीं होय सकता और नरीह
कि जो चेष्टा और इच्छा से भी रहित है अगोचर है कि
जो इंद्रियों का विषय नहीं है अर्थात जाना नहीं जाता है
और वाणी से भी परे है अगम है कि जहां किसी की पहु
चन नहीं है और सत चित आनंद रूप है कि जो सदैव रहने
वाला चैतन्य और आनंद मूरती है ऐसी अंतम
हिमा अप्रमेय नंत ही प्रभाव वाले भगवान जो हैं सो
आज भक्त की प्रीती और प्रेम वश
होयकर नरसिंह रूप
धार करके अपने जन के साथ तिसके अंग अंग में
प्रतत आलिंगन करर हे हैं अर्थात हृदय से हृदय जु
डाय कर मिल रहे हैं और फिर आनंद में मगन भ
ये हुये भगवान कहते हैं कि हे मेरे प्यारे भक्त तूं
आज मेरे को प्रसन्न जान कर जो वर तेरे मन को

भावता है सो मांग तेरे को अदे कुछ नहीं है
मैं सब दे सकता हूं तूं सकुच को त्याग कर मांग हे भक्त
भक्त मांग इस प्रकार भगवान के मुख से बचन सु
नकर और दीनानाथ को परम प्रसन्न जानकर
प्रल्हाद जो है सो दोनो हाथ जोड़े हुये चरनो पर
सीस धरकर ~~बिनती~~ प्रार्थना करने लगा कि हे कृपा के धाम
हे दीनजनों के दुख दूर करने वाले हे अनाथों के नाथ
हे भक्त हितकारी देखिये कि संत सिद्ध तपस्वी मुनी
ज्ञानी और ध्यानी जो हैं सो हे प्रभू तुमारे दरसन के
निमित्त नाना साधन यतन और अनेक ~~[illegible]~~ कठिन हठ
करते रहते हैं परंतू कृपानिधान तुम तिन के ध्यान
मात्र भी नहीं आवते हो आज मेरे कैसे उदय
भाग हैं कि जिस के निमित्त संपूर्ण भवनों के पती
ने अपना ईश्वर्य और बड़ाई त्याग कर इस नरसिंह
रूप धारन करके ~~[illegible] और दीनन हितकारी~~ और दीनन हितकारी
ने बहुत ही श्रम पाया है आज मैं धन्य हूं और
धन्य मेरे भाग्य हैं कि जिस की भक्ती के वशीभूय
कर तीन लोक के नायक ने इस नरसिंह भेष धा
रन किया और परतक्ष मेरे को दरसन दिया है॥५॥
चौपाई॥ मांगहु कवन नाथ वर आना॥ सनमुख
देखि तुमहिं भगवाना॥ जो कृपाल मोपें करि दा
या॥ देन चहहु वर भक्त सहाया॥ तो करुणाय
सिंधु करि नेहू॥ मोरे देहु रुचिर वर एहू॥ जनम
जनम प्रभु भक्ति सहाई॥ संतत हृदय रहव मम
छाई॥ हे अनंत हे त्रिभुवन साईं॥ सदा वसहु
मोरे मन माहीं॥ अव दिल प्रेम नित्य नव मोरे॥
पावन पद सरोज हरि तोरे॥ वछहिं विराम सो
न प्रभु होई॥ एहु कृपाल देहु वर मोही॥ भक्त
याचना सुनत अगारी॥ एवमस्तु मुख गिरा उ

प्रथम तुव लीका॥ अब चलि करहु समन गुण खा
ना॥ तुम हु प्रचंड कोप भगवाना॥ तब प्रल्हाद स्याम
घनवरना॥ करि प्रणाम जलजारन चरना॥ सनमु
ख अभय गवनु गति दीना॥ हरि कृपाय तन आवत की
ना॥ सोरठा॥ ~~[illegible]~~॥ हे सुवतस हे तातमित
~~[illegible]~~॥ हे सुभक्त प्रीय प्राण॥ अब आलिंगन वेग तुव॥
करहु मुदित मन आय॥ मोहि सन वरि हरि सकुचे जन॥
मै जान्यो तुव पाय प्रीय नानानिज कायदुख॥ ६४॥ टीका॥
जगदेव कहते है कि हे देवताऊ इस समय भगवान
के सनमुख जाने की मेरी शक्त और सामर्थ नहीं है
तव देवता दीन होय करके विनती करने लगे कि हे भ
गवान अब हम किसकी शरण लेवें और क्या करें जो
उपाय हम करते हैं सो कोई ■ सिद्ध नहीं होता है दे
खिये कि सरव प्रकार के करने और ना करने को सामर्थ
भवानी लछमी जो है सोभी आज भयमान करि सकु
चायमान होय गई है प्राणनाथ के सनमुख जायकर
तिनके कोप को निवारण नहीं करसकी इसतें
आज हमने निश्चय जान लिया है कि भगवान स
रव चराचर सृष्टी का संघार किया चहते हैं अहो
हम दीन देवताऊं को किसका आधार है इस प्रकार
सब देवतागण विचार करके प्रल्हाद की शरण को
चले आये और तहां नम्र वाणी से दीन होय कर
कहने लगे कि सरव जगत के हितकारी ~~[illegible]~~ हे दे
वताऊं को आनंद देने वाले और दैतों के हृदय
का हुलास जो है तिसको नास करने वाले हे भक्त
तुम कैसे भी हो कि भगवान के प्राण प्यारे संतो
विखे प्रधान और भक्तों मे प्रथम गिनती वाले
हो आज जगत मे धन्य हो और धन्य तुमारे
~~[illegible]~~ सुजस की महिमा है अब हे
गुणनिधान तुम हीं हमारे दीन देवताऊं का हित
विचारो और चलो इह भगवान का महा प्रचंड

(margin notes: सुभवचनसुखदाय; ॐ; अब; हे; तुम)

किसी का संघार अर्थात मरना नहीं होगा
अब तूं आनंद पूर्वक निसकंटिक राज कर
तेरे को किसी का भय और त्रास नहीं होवेगा
ऐसे प्रल्हाद भक्त को वर देकर फिर भगवा
न देवताओं का परितोष और सतकार क
रते भये कहने लगे कि हे देवताओ अब
तुम दुख और कलेश को त्याग कर और
अभय होय कर आनंद से अपना पूर्व वत
राज जो है सो करो और स्वर्ग लोक मे जा
यकर विधी जो ब्रह्मा है तिस की आ
ज्ञा अनुसार अपने सब कारज विव
हार जो हैं सो करो और आनंद पूर्वक विच
रो तब देवता गण भगवान कृपानि
धान की बडी सुंदर हित के देने वाली
शिक्षा सुनकर और अनेक प्रकार अस
ती कर कर बार बार प्रणाम करते हुये और
जै जै उचारते हुये अपने स्वर्ग धाम को
चले गये तिस ते उपरांत राज्याभिषेक
जो राज तिलक है सो विधी अनुसार अ
पने हाथ से जन प्रल्हाद को देकर फि
५२ र आप नृसिंह भेषधारी भगवान आनंद
पूर्वक उत्तर दिशा को प्रस्थान कर जाते

भये अर्थात चले जाते भये ॥४८॥ चौपाई॥ तब प्रल्हाद बंस निज धरमा॥ लाग्यो करन दनिक पितु करमा॥ सुन कुत्सित सज्जन मति शाला॥ अस प्रकार भगवान कृपाला॥ सदा भक्त वश भक्त सहाई॥ रक्षक भक्त भक्त सुखदाई॥ जुग जुग प्रेम भक्ति वश होई॥ सुर दुज धरनि धेनु हित सोई॥ कूरम कोल मतस इत्यादी॥ धरहिं रूप भगवान अनादी॥ तोते प्रेम सुजस सुख करनी॥ सकल प्रधान भक्ति बुध बरनी॥ भक्ति पुरष कहे संस्मृति माहीं॥ सकल सुलभ दुर लभ कछु नाहीं॥ अस प्रल्हाद चारु वर सोहा॥ परम पुनीत चरित मन मोहा॥ रहोक्ति यथा अलप मति दीना॥ तहि अनुसार कथन कछु कीना॥ सरब सुखद इह कथा सुनाई॥ जो इहि सुनहिं श्रवण मन लाई॥ सोरठा॥ लहिं भक्ति भगवान॥ संतत ताकर हृदय दृढ॥ मिटहिं मोह मद मान॥ कष्ट दोष बंधन मुकत॥४९॥

टीका॥ तब प्रल्हाद जो है सो अपने बंस की रीती अनुसार पिता का मृतक करम सब विधी पूर्वक करके अपने राज काज और संत भक्तों की सेवकाई मे ततपर हो जाता भया नामादास जी कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार भगवान कृपानिधान सदैव भक्तों के वश और भक्त सहायक भक्त रक्षक और भक्त सुखदायक हैं जुग जुग विखे भक्त जनों की भक्ती और प्रेम के वश होकर गौ ब्राह्मण पृथवी और देवताओं की रक्षा करने वाले दीनानाथ कूरम वाराह

ओर मतस्य अर्थात मछ इत्यादि अनेक अवतार धारन करते रहे हैं तांते संपूर्ण सुख सुजस और कल्यान के देने वाली इह सरब प्रधान भगवान की भक्ती है शास्त्र और बुधजनों ने गायन कीहै भक्ती वाले पुरष को संसार में सब सुलभ है दुरलभ कुछ नहीं है इस प्रकार इह प्रल्हाद की परम पवित्र और मनोहर गाथा जोहै सो मैंने कुछ किंचत मती के अनुसार गायन कर देई है इह कैसी भी गाथा है कि सरब सुखों के देने वाली है जो कोई इसको श्रद्धापूर्वक

५ग पठेंगे अथवा श्रवण करेगा तो तिसके हृदय मे भगवान की पवित्र भक्ती जो है सो निरंतर करके दृढ होजावेगी और भगवान की कृपा के प्रशाद से तिस के कष्ट दुख दोष और बंधन इह सब छूट जावेंगे इसमे कुछ संशय नहीं है ॥४७॥ इति श्री भक्त बिनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषाटीकायां प्रल्हाद चरित वरणने नाम सरगः

चारी॥ बहुरि दीन वर कृपा निधाना॥ होहु अमर तुव सखे सुजाना॥ अब आगल तुव वंस मझारा॥ होहि न मोर करन संघारा॥ निस केदिक तुव राज सुहावा॥ प्रमुदित करहु रुचिर मन भावा॥ पुनि पदि तोष सुरन सनमाना॥ कीन कृपाय काय भगवाना॥ अब तुम देव विगत ज्वर होई॥ संकुच कलेस त्रास उर खोई॥ अति प्रसन्न मन सहित समाजू॥ करहु यथा पूरब निज राजू॥ जाय नाक निज लोक मझारा॥ विचरहु विधि आयस अनुसारा॥ तव प्रसंसि मुख विविध प्रकारा सो॥ करि प्रनाम सुर सकल सिधासो॥

सोरठा॥ बहुरि राज अभिषेक॥ जन प्रल्हादहि देत तहं॥ आपु कैहरि नर भेष॥ दशा उत्तम वनेहरी॥ ४६॥ टीका॥ फिर प्रल्हाद कहता है कि हे दीनानाथ तुम कल्पवृक्ष और चिंतामणी के समान सरब सिद्धियों के देने वाले मेरे सनमुख स्थित हो अब मैं कौन वर की जाचना करूं अर्थात कौन वर मांगू परंतू जो कृपानिधान मेरे पर अनकूल भये हो और प्रसन्न होयकर वर देना चहते हो तो हे दयानिधे हे भक्त सहायक अनुग्रह करके एही वर देवो कि जनम जनम विखे तुमारी सुंदर भक्ती जो है सो मेरे हृदय मे निरंतर करके दृढ़ ही रहे और हे अनंत हे त्रिभुवन स्वामी तुम भी मेरे हृदय मे निवास करते रहो इह तुमारे चरनो का पवित्र प्रेम जो है सो मेरे नित्य नवीन ही बढ़ता चला जावे इस प्रकार भक्त की जाचना और प्रार्थना सुनकर भगवान एवमस्तू शब्द कहि देते भये कि हे भक्त ऐसे ही होगा फिर कृपानिधान ने इह वर दिया कि हे मेरे प्राणप्यारे हे मेरे सखे अब तू सरब उपाधियों से रहित होकर अमर हो इससे आगे तेरे वंस मे मेरे हाथ से

'सीवीत

'हृदय 'अध्ययन

'हृदय मझ 'के

प्रवीन और यज्ञकारक अर्थात यज्ञों के करनेवाले बडे सुशील और सुधरमी ~~संपूर्ण करमको वेदकी विधीसे करनेवाले~~ करम कांड मैभी चतुर और वेद के जानने वाले तहां की स्त्रीभी पतिव्रत धरम मै प्रवीन सवनारी नर दान और दयामै श्रद्धावाले और परब्रत धारी मानो वेग्राम ब्रह्म लोक के तुल्य था और तहां के चर सव देवताओं के चरों के समान थे धरम अर्थ काम मोक्ष इँचारो पदार्थ तिस शृंगेरी ग्राममै निवास करते हैं ॥२॥ चौपाई॥ तहां एक दुज वंस मझरयो॥ हरसरूप लीला अवतरयो॥ वेद वेदांग निपुण कौरा॥ श्रुति हिं जानि सवन मति धीरा॥ वेदाध्यायन रुचिर करावहिं॥ धरम सम्पन्न लोक सुख पावहिं॥ ओंकर नाम तासु प्रसता ता॥ पुन्य सरूप धरम धृति दाता॥ जहि विधि आय अवनि अवतारी॥ सो अव कथा मनोहर सारी॥ सादिर करहु कथन दुखहरनी॥ ललित मोद मंगल मन भरनी॥ रहे लोक जोई धरनि वसैया॥ संत सिऊ तापस दुज गैया॥ सो कलिकाल घोर अति पाई॥ सकल चिंतन उरधीर विहाई॥ दान मान यज्ञादिक करमा॥ भये समग्र लुपत वर धरमा॥ मुगध प्रपंच जयन मत सारी॥ नास्तिक धरम निरत नर नारी॥ दया दान श्रद्धा व्रत माहीं॥ द्वेषभाव प्रीती रुचि नाहीं॥ वरण आश्रम निंदक भारी॥ हव्य कव्य वरजित सठ सारी॥ सोरठा॥ वेद शास्त्र प्रति कूल॥ परिहरि सत्य असत्य रत॥ धरम रूप जग तूल॥ तांकर दाहक अनल जनो॥ २॥ टीका॥ तहां ब्रह्मणों के वंस विखे एक शिवरूप लीला अवतार हो ता भया सो कैसा कि वेद और वेद के अंगों को जानने वाला और गुणों की निधी ~~को~~ वडे हित से संपूर्ण ब्रह्मणों को वेद पढावने मै प्रवीन तिसके प्रसाद से सव लोग धरम और सुकरम वाले होयकर परम सुख को प्राप्त

होतेभये और वे पुन्य की मूरती धरम
और धीरज के देनेवाला शंकर नाम करके लोगों
मे प्रसिद्ध था और तिस उपकार की निधी का जिस
प्रकार पृथवी तल पर अवतार होता भया सो परम
मनोहर और सुखदायक हृदय मै आनंद और मंग
लों के अधिक करनेवाली गाथा जो है अब प्रीती पूर्व
क गायन करता हूं क्योंकि गौ ब्राह्मण संत सिद्ध
तपस्वी मुनी रिषी जोगी जती इत्यादि पृथवीतल
पर वास करने वाले जो थे सो घोर कली काल
का प्रभाव पाय कर सब व्याकुल और धीरज से र
हित होयगये दान मान यज्ञादिक करम जो हैं सो
भी सब लुप्त होय गये और धरम की भी हानी होय
गई सरव प्रपंच अर्थात सृष्टी के सब लोग जो हैं
सो जैनमत वाले होय गये जहां लग नारी नर
जो हैं सो सब नास्तिक मत को आश्रय कर लेते
भये दया दान पूजा व्रत इन विखे किसी की रुची
और प्रीती नहीं रही सब लोग धरम के द्वे
षी और विरोधी होयगये अपने वरणाश्रम से
भूलकर देव और पित्री करम से रहित वेद
शास्त्र से विरुद्ध सत्य को त्याग कर असत्य विखे
प्रवित्त होयकर धरम रूपी जो जगत मै रुई है ति
सके दग्ध करने को मानो अगनी होय जाते भये॥
२॥ चौपाई॥ अस प्रकार कलि जब हि प्रचंडा॥ ला
ग्यो देन विविध विधि दंडा॥ तब इंद्रादि भाग सब
लीने॥ सुरपित्रादि संग निज लीने॥ हव्य कव्य गत
परम दुखारी॥ आय शारण विधि सकल सिधारी॥
करि प्रणाम मुख विनय बड़ाई॥ विविध प्रसंसि सुर
न अज गाई॥ देखि मलिन सब देव दुखारी॥ प्रमु
दित गिरा वदन उच्चारी॥ इह पूरब वृंदारक तोरे॥
उपज कलेश विदित जीय मोरे॥ करहु उपाय
धीर उर धरहू॥ गवहु भवन चिंता जनि करहू॥

५६९

धरि उर विधि भरोस अप्रमराये॥ करि प्रणाम मनि जेमवननआये॥ तव कैलास कीनविधिगवना॥ राजे जहां शंभु सुदभवना॥ हरिहर तहां जुगल निधि [illegible]॥ देखिविरंचि दृगन सुखपाया॥ सो रठाढे हो सनमुख जाय॥ करि प्रणाम धातावदन॥ असतुति वहुविधि गाय॥ विनय करत जुग जोरि कर॥३॥ टीका॥ इस प्रकार महा प्रचंड कलि काल अर्थात कलजुग जोहै सो जगत के लोगों को अनेक प्रकार का दंड देने लगा तब इंद्रादिक देवता यज्ञ भाग जोहैं तिनसे हीन भये हूये तव देव और पितरों को साथ लिये हूये वडे दीन और दुखी होयकर ब्रह्मा की शरण को चले आये तहां वारवार दंड प्रणाम करके अनेक प्रकार की असतुती करकर कहने लगे कि हे प्रभू हम को अव पृथवीतल पर न पिंडी और न देवभाग कोई कुछभी नहीं देताहै हम कौन आधार से जियेंगे तव विधाता देवताओं को दुखी देख कर वडे सुखदायक वातोंसे कहने लगा कि हे देवताओ इह तुमारा कलेश और दुखजोहै सो पूरवही मेरे हृदयमे विदतहै अर्थात मैं [illegible] आगेही जानरहाहूं अवतुम धीरज को धारो मैं इस वातीका उपाय करताहूं ऐसे सुनकरके देवता जोहैं सो विधाता के भरोसे को हृदयमे राखकर और वारवार प्रणाम करकर अपने घरको चले आये उहां ब्रह्माभी उठकर कैलास को महादेव जीके पास चला जाता भया तहां जायकर क्या देखताहै कि शंभू और गिरजा भगवान दोनो विराजे हूये परस्पर वार्ता आलाप कररहे हैं विधातादेखकरके परम सुखकोप्राप्त भया और प्रणाम करके सनमुख जायके ठाढे फिर दोनो हाथ जोड कर और असतुती करकर जि

(left margin): दोहा

(left margin): श्री शुकजीकी आज्ञा कर अप ने घर को चले आये

(right margin): ॥३॥

अथ शंकराचार्य चरितं

सोरठा॥ गुरुवर कृपानकेत॥ अब शंकराचारज कहूं॥
प्रेम भक्ति सुखदेत॥ कथन महातम ललित तर॥ चौ
पाई॥ जासु सुनत उर ज्ञान प्रकासहिं॥ मद जडतादि
मोह भ्रम नासहिं॥ उत्तम द्रवड देस महि जोई॥ भद्रा तुंग
नाम अस दोई॥ सरिता तहां दुरित गणहारी॥ संगम
जवन ललित तिनकारी॥ सो अति परम पुन्य प्रद नी
का॥ जहि जग विदत तेत्र वर लीका॥ तहे शृंगेरि
रुचिर अस नामा॥ रमय पुन्य मानवर ग्रामा॥ लोक
सकल तहि ग्राम निवासी॥ परम प्रवीन ज्ञान गुण रासी॥
यज्ञ विसारद शील सुधरमी॥ वेद वहीत करम कर मरमी॥
पतिव्रत धरम निरत नर नारी॥ दान दयादि विमल व्रत
धारी॥ सोरठा॥ ब्रह्म लोक सम ग्राम॥ सकल धाम सु
र धाम सम॥ धरम अर्थ श्री काम॥ शृंगेरी मध वसहिं
जनो॥ १॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे कृपा के
धाम गुरु स्वामी जी और हे संत जनो अब शंकराचार्य
जी की ~~भक्ति~~ मनोहर गाथा जो है सो आप के आगे क
थन करता हूं इसको ध्यान देकर श्रवण करिये और इह
कैसी भी गाथा है कि जिसके श्रवण करने से हृदय में ज्ञा
न प्रकाश हो जाता है और मोह मद जडता भ्रम इत्या
दि विकार जो हैं सो सब नास को प्रापत हो जाते हैं कह
ते हैं कि द्रवड देश की वडी उत्तम भूमी जो है तहां
भद्रा और तुंग नाम करके पापों का नास करने
वाली दो नदी तिनका संगम जो है सो संसार
मे परम पुन्य के देने वाला और सरव तेत्रों मे
प्रधान वडा प्रसिद्ध है और तहां शृंगेरी
नाम करके एक पुन्यमान और वडा रमणीक
ग्राम होता भया तिस ग्राम विषे निवास करने
वाले लोक जो हैं सो सब ज्ञान विचार मे परम

करहिं हम सोई॥ हरप्रसाद सब करहिं न सोई॥ तब प्रभु महादेव भगवाना॥ सुनहु गरुड़ध्वज वचन बखाना॥ अहो विपुल विसमय अति वयना॥ विस्तृत भयो धरनि मत जयना॥ यथा स्वस्ति अव प्रजा सुखो हैं॥ कहहु यतन सोई हृदय विचारी॥ तहि पर मै रमीस सुखदाई॥ करहु उपाय जवन बन आई॥ तब अस कह बिरंचि श्रीरमनाथ हे कृपाल प्रभु मनमथ दमनाथ॥ जहि विधि प्रजा स्वस्ति जुत होई॥ हम प्रभु करहिं कथन अब सोई॥ तुम हम मात लोक करि गमना॥ अंश अवतार धार दुज भवना॥ सोरठा॥ वेद शास्त्र यज्ञादि॥ करत स्थापत यथावत॥ रुचिर धरम पथ साधि॥ निदरि जयन शासन सजग॥ दोहा॥ नास्तिक मत कर विपुन कहै आस्तिक अनल जराय॥ सकल भस्म करि लोक निज पुनि प्रभु चलहु पराय॥ ॥ टीका॥ तब रमापती भगवान जो हैं सो ब्रह्मा को कहने लगे कि हे धाता तेरा रुद्र महादेव के पास आना मेरे को प्रथम ही सूझ पड़ा था तां ते मै ईहां आगे ही चला आया हूं अब शंकर देव संपूर्ण लोकों का हित विचार कर जै सी शिक्षा देवैंगे हम ~~~~ श्रम और यतन करेंगे इस तें तिन के प्रसाद से सब लोगों का हित और भलाई निश्चय होगी ऐसे भगवान का कथन सुन कर महादेव कहने लगे कि हे गरुड़ध्वज हे लक्ष्मी नाथ देखो बड़े आश्चर्ज की बात है जो संपूर्ण पृथवी पर जहां तहां रुद्र जयन मत जो है सो व्यापत होय गया है अब जिस प्रकार प्रजा को कल्यान और सुख प्रापत होवे सोई प्रकार मेरे को हृदय मै विचार करके कहो तिस पर मै जैसे बन पड़ेगा तैसे ही उपाय करूंगा तब महादेव का वचन सुनकर ब्रह्मा और विष्णु कहने लगे कि हे त्रिपुरारी

अपनी बुद्धी के अनुसार

शिक्षा देवै॥

हे कामदेव के दग्ध करनेवाले शंभू अब जिस प्रकार प्रजा कल्यान और सुख को प्राप्त होती है हम आपके हो ई उपाय कथन करते हैं क्योंकि हम अंशावतार धार कर और मात लोक अर्थात पृथ्वी तल पर आयकर वेद शास्त्र यज्ञ व्रत दया दान इत्यादि धरम का मारग सब साध कर और जयन प्रभाव का भली प्रकार निरादिर कर कर अर्थात नास्तिक मत के बल को आस्तिक ज्ञान की अगनी से भसम करके फिर आनंदपूर्वक अपने लोक को चले आवैं इस प्रकार जब विष्णु भगवान और ब्रह्मा ने कथन किया तब महादेव स्वीकार करके कहने लगे कि ऐसे ही होगा तिसते उपरांत ब्रह्मा जो हैं सो अपने धाम को चले आये और आवते ही सब देवताओं को धीरज और अभय देते भये फिर हृदय मे विचार करने लगे कि मैं अब देवताओं की भलाई के लिये अपना कौन देश विषे अवतार धारन करूं और उनके हृदय के कलेश और विपती को हरूं ऐसे देवताओं का हित विचार कर ब्रह्मा जो हैं सो मिथला पुरी मे एक सुष्ठु ब्राह्मण के घर विषे जनम लेकर मंडिन मिसर नाम करके प्रसिद्ध हो जाते भये और पृथवी का भार देवताओं के भय दूर करनेवाले तीन लोक के नायक विष्णु भगवान जो हैं सो भी तिसके समीप ही अवतार धार कर उदयनाचार्ज करके लोगों मे उजागर होते भये और द्रवड़ देस मे ब्राह्मण वंस विषे शंकर नाम करके धरम और नीती के प्रतिपादन अर्थात स्थापन करने को प्रवीन शंभू भगवान अवतार धारते भये अब प्रथम तिनकी ही गाथा जो सी के मेरे स्रवण मारग मे आई है अर्थात मैने सुनी है तैसी ही भ्रम के हरनेवाली और जगत मे

१२१

ओं हंस

धरम के प्रकाश करनेवाली है संत जनो मै आप के आगे गायन करता हूं सरव देवों के देव और सरव गुण निधान त्रिपुरारी ब्रह्म वेत विवे अवतारी जो है सो श्रम के विना सहजें को तुक से वेदाध्यायन अर्थात वेद के पढने मै प्रवीन होयकर ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ इन आश्रमो को उलंघन करके फिर संन्यास पद मै जायं स्थित भये तहां विधी पूर्वक पवित्र दंड जो है सो धारन करके । जहां तहां दंडी स्वामी प्रसिद्ध होयगये तव आपने वल पराक्रम और विद्या के प्रभाव से दिग विजय करने की अभिलाषावाले होय कर देस दिसांतों को प्रस्थान कर देते भये इस प्रकार फिरते फिरते जव तीनो ही दिशा को जीत चुके और जहां तहां अपना वैष्णव धरम जो है सो स्थापित कर दिया तव आगे को फिर चलते चलते धरम के प्रतिपादन करनेवाले शंकर भगवान पश्चम दिशा जो है तिस को चले आये तहां एक अधम राजा निरंतर करके जैनमत मे मुगध अर्थात मोहित भया हुआ देखा और तिस की जहां लग प्रजा थी सो भी सव नास्तिक धरम मे गलित भई हुई देखी तव स्वामीजीने तिन का हित विचार कर धरम के उदय करने वाला ज्ञान उपदेश यद्यपि अनेंकार ही कथन कर के तिन को सुनाया तद्यपि तिन महा मंदों के हृदय मे कुछ भी श्रद्धा और रुची नहीं उपजती भई तहां एक वडा दुष्ट और दुरमती पंडित जो था सो अधम तिस मूढ राजा को रात्री दिन नास्तिक धरम ही श्रवण करावता रहता था

स प्रकार विनती करने लगा सो आगे कथन कीजाती है ॥ ३॥ चौपाई ॥ आश्रय राखि देव बल तोरा ॥ रचेउ प्रपंच धरम अरु मोरा ॥ सो तो सकल लोक रहि काला ॥ करम भूमी पर दीन दयाला ॥ मख तप कृपा दान व्रत जोई ॥ वेद वही तरीत सब खोई ॥ जयनाचार निरत सठ भयेऊ ॥ नाहिन धरम करम कछु रहयो ॥ किंनर यक्ष विबुध गंधरवा ॥ पन्नग दीन हीन बल सरवा ॥ निज निज बली भाग नहीं पाये ॥ प्राण मात्र अवशेष रहाये ॥ सोरठा ॥ आये शरण तुमारि ॥ दीनदयाल करुणाय तन ॥ अब कछु हृदय विचारि ॥ इनकर कीजिये प्रति कृपा ॥ ४ ॥ टीका ॥ ब्रह्मा कहता है कि हे देव मैं तुमारे बलको आश्रय राखि इस प्रपंच अर्थात जगत को रचता हूं और ए हि मेरा धरम है सो तो सब लोग इस करम भूमी पर यज्ञ तप कृपा दान व्रत इत्यादि वेद की रीती और मर्यादा जो है सो सब खोयकर अधम जयनाचार मे प्रवृत हो य गये हैं अर्थात सब नास्तिक ही वन गये हैं धरम और सुकरम पृथवी पर कुछ भी नहीं रहा किंनर यक्ष देवता गंधर्व नाग इ सब दीन और बल से हीन होय गये हैं अपना अपना बली भाग जो नहीं पाया तो शरीरों से सूखकर पीछे प्राण मात्र ही रहि गये हैं अब हे दीना नाथ सब मिल कर तुमारे ही चरनों की शरण को आये हैं सो जैसे वन पड़ता है तैसे ही इन दीन देवताओं का हित विचार कर कुछ शीघ्र उपाय करिये ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ तब प्रभु रमानाथ भगवाना ॥ सुन विरंचि अस वचन वखाना ॥ तोर्यगमन वृषभ ध्वज पाहीं ॥ पूरव विदत मोर मन माहीं ॥ तांते इहां प्रथम मैं आवा ॥ अब प्रभु शंभु जवन मन भावा ॥ सकल लोकहित हृदय विचारी ॥ जो कछु मनहिं धाल त्रिपुरारी ॥ विरंचि उपाय

(margin) ४ करवडे खि (= यतनसे)

५२

निरादर कर कर और वेदकी विधी अनुसार यज्ञ व्रत कृया दया दान इत्यादि यथावत सब स्थापन करके वे मुख पुरुषों को भगवान के सन मुख करता हूं और फिर राजा के कलेवर त्याग कर अपने ही शरीर मे आय चैतन्न होंहूं ऐसे कहि कर सरव सिद्धियों मे प्रवीन और सरव कला सामर्थ होकर स्वामी जो हैं सो ततकाल ही राजा के शरीर मे जाय प्रवेश कर ते भये तब मृत होय कर के राजा जो पृथ्वी पर पड़ा हुआथा सो तुरत हीं सजीवन और चेतन्न होय करके उठ बैठता भया ॥ १ ॥ चौपाई ॥ पुर वासि जन मृत तेव कसारी ॥ मृत सजीव नृप दशा निहारी ॥ विसमय हरष विवस सब काहू ॥ लागे होन विविध उतसाहू ॥ मोद प्रमोद जायनहिं बरना ॥ मानव उदय अस्त जनु तरना ॥ तब दीननाथ वचन अस कीना ॥ सुनहु सचिव मम कथन नवीना ॥ मैं सामीप धरम नृप गयये ॥ कौतुक देखि चकितचित रहये ॥ मोरे निरखि धरम अस बानी ॥ जेहि दूत यम बदन बखानी ॥ आयू अजहु शेष नृप एहू ॥ चारजुग मास जगत जम रेहै ॥ ताते अजहु अधम इहराई ॥ मोंहु देह कछु सकहि न पाई ॥ यद्यपि ऐहि शासना जोगू ॥ नास्तिक देह विविध विधि भोगू ॥ अब इहि जाय दूत तुम ताहीं ॥ आवहु छांडि वपुष सठ माहीं ॥ बिनसहि अवधि मास षट जबहीं ॥ निज कृत पाव देह जड तबहीं ॥ जम अनुसासधरम नृप लेहू ॥ मोरे दीन छाडि वपु एहू ॥

सोरठा॥ जब लग सचिव प्रवीन॥ सभा धरम नृप मेरहो॥ अद्भुत चरित नवीन॥ देखे दृगनन विविध निज॥ ३॥ टीका॥ तब पुरके और बाहरके सब लोक राजाके मरने और जीवने की ऐसी दशा देखकर हरष भी मानते और अचरज भी मानते भये नगरमे अनेक प्रकारके उतसव और मंगल होने लग पड़े आनंद की चरचा कुछ कही नहीं जाती मानो इह राजा सूरज के समान असत होयकर फिर उदय होय गया है तब प्रजापाल अपने मंत्रीं निकर बुलायकर कहने लगा कि हे प्रधान अब मेरी बड़े अ आश्चर्य के देने वाली वारता तूं श्रवण कर कि मै धरम राजाके पास चला गया और वहां अद्भुत कौतुक देखकर बड़े आचर्ज को प्रापत होय गया हूं क्योंकि मेरे को देखकर के धरम भूपने यमदूत को बुलायकर कहा कि इस राजा की आयू अबी छै महीने बाकी रहती है तांते इह अधम राजा जो है सो अबी मेरा देर नहीं पा य सकता यद्यपि मै जानता हूं कि इह महां मंद ताड़नाके योग्य और नास्तिक देहके भोगनेका अधिकारी है परंतू कुछ आयू जो बाकी रहती है इसतें दुरमती को अबी देर नहीं दे सकता हूं हे यम अब तुम इसको लेजावो और तहां ही अधम कोतिसी शरीर विखे छोड़ आवो जब छै महीनेकी अवधी वतीत हो जावेगी तब इह मंद अपने किये हूये करम का दंड अब भोगेगा इसप्रकार धरम राजाकी आज्ञा पायकर यम जो है सो मेरे को इसी शरीर मे छोड़ गया है हे मंत्री जब लग मै धरम भूपकी सभा विखे रहा हूं तब लग तहां अनेक अद्भुत और नयेहीं चरित्र देखता रहा हूं॥ ३॥

चौपाई॥ आगम निगम सत्य सब भाई॥ मख व्रत दान धरम समुदाई॥ जप जप करहिं चरित हरि गायन॥ जे सु करम रत वेद परायण॥ सो तजि वपुष जात कहँ देखे॥ सोमि सरूप चतुर भुज लेखे॥ अरु अरूढ वर रुचिर बिमाना॥ गंध्रबादि सेवत विधि नाना॥ आवत तिनहिं निरखि यमराई॥ करि प्रणाम नमृत सिर नाई॥ पूजि विविध हँजुत सनमाना॥ देहिं कराय नाक प्रस्थाना॥ निंदक वेद यज्ञ व्रत धरमा॥ लखहिं नमूढ भक्ति पथ मरमा॥ नास्तिक निठुर श्रांत चित जयनी॥ हरि प्रतिकूल अधम दुरवैनी॥ जब सठ तौन जाब मृत ताहीं॥ तिनहिं बिलोकि दृगन जम नाहीं॥ सदृश अनल नैन रत न्यारी॥ कंपत क्रोध विवस तन सारी॥ कीरच दँष्ट्र विकट विकराला॥ भ्यावन भृकुटि चिबक मुख माला॥ क्रोध प्रचंड दंड कर धारी॥ नाडि तडित जनु वदन प्रचारी॥ विष्टा रुधिर पूय कृमि रूरे॥ अति दुख नरक कुंड परिपूरे॥ तिन मै देत तिनहीं यम डारी॥ दुष्ट दुष्ट अस वदन उचारी॥ सेवि लोकि तिन कर गति दंडा॥ परे नरक सठ घोर प्रचंडा॥ आवाई हों त्रासवस होई॥ विदत हमार सचिव गति सोई॥ हम सब जैनि धरम प्रतिकूला॥ नास्तिक निठुर भक्ति पथ मूला॥ मत हमार नहिं योग्य प्रसेसन॥ सचिव करन इहि उचित विध्वंसन॥ स्वर्ग नरक मख दान सुकरमा॥ जप तप कृया रुचिर व्रत धरमा॥ वेद पुराण वरवा का सुहाये॥ संतत सत्य सचिव समुदाये॥ सोरठा॥ तातें निज मत कोहि॥ लखि असत्य परिहरहु अब॥ रुचिर वेद मत जोहि॥ करहु गृहण हित जानि निज॥ ८॥ टीका फिर कहते हैं कि हे मंत्री आगम निगम अर्थात वेद पुराण ~~[illegible]~~ और यज्ञ व्रत ती र्थ

स्तिक धरम की कवी कुछ भी चरचा नहीं होती थी॥५॥
चौपाई॥ देव योग कर अवसर पाई॥ मृतवस भयो
तवन लतराई॥ तासमरन सुनि श्रवण स्वामी॥ नि
ज शिख बोलि धरम अनुगामी॥ भाषा जवन मोर व
पु एता॥ तैलद्रोण धरि यतन समेता॥ राखहु खष्ट
मास लग ताहीं॥ होहि न मरम प्रकट कछु जाहीं॥ त
हि अपरंत बहुरि मै आई॥ रुचिर प्रवेश वपुष निज
पाई॥ निदरि जयन मत सासन द्वारा॥ करहु वेदवत
धरम प्रचारा॥ अब मै जाहौं नृपति वपु जाई॥ सखे व्रत
कृपा सकल अधिकाई॥ वेद बहित धरम मत आपन॥
यथा चार करि सकल स्थापन॥ आवहुं ईहौं बहुरि नि
ज काया॥ अस कहि स्वामि तुरत वपु त्याया॥ जाय प्रवेश
कीन व्रतधारी॥ संकुल सिद्धि निपुण त्रिपुरारी॥ सोरठा॥
नृपति मृतक धर जोय॥ पस्यो सजीवन सो भयो॥ साव
धान मन होय॥ उठि बैठ्यो सचैतन्य भय॥६॥ टीका॥ त
ब देवभावी करके सो नास्तिक राजा जो था सो कालवश
हो जाता भया ऐसे तिसका मरना सुनकर स्वामी जी
अपने शिष्य को पास बुलायकर कहने लगे कि हे तात
मैं इस धरम के स्थापित करने के वास्ते कौतुक से अ
पने शरीर को त्यागता हूं परंतु तुम सावधानता से
से इस मेरे शरीर को छै महीने तक संभाल करके
~~के~~ तेल मे किसी खुले पात्र के बीच राख छोड
ना और तुम जानो कि इस भेद किसीको विदत ना
हो अर्थात जान ना पडे मै ~~[illegible]~~ छै महीने के उप
रांत ~~[illegible]~~ आय करके फिर अपने शरीर विखें प्र
वेश पाऊंगा ~~और तब ही [illegible] ईहां से~~
~~जयन मत को [illegible] उखाड डालूंगा और मैं धी~~
~~म साधी अनुसार~~ ~~जहां तहां सुंदर धरम को विस्ता~~
~~रन करके लोगों को भगवान के सनमुख कर देऊं~~
~~गा~~ अब मै उहां राजा के शरीर मे जाय कर और
नाना तारह नासे इस अधम जयन मत का भली प्रकार

नहीं है इसको त्यागदेना हीं भलाहै हेभाई स्वर्ग नर्क यज्ञदान व्रत जपतप कृया करम धरम और वेद शास्त्रिके वाक्य जो हैं सो निरंतर करके सब सत्य हैं असत्य केवल एक हमारा हीं मत है तो ते इस असत्य को अब त्याग देवो और सत्य मत जो वेदका है सोई हृदय मे हित मान कर ग्रहण कर लेवो ॥८॥ चौपाई॥ सेवुत प्रजा तुमहुं समुदाई॥ निजनिज चलहु वेद पथ माई॥ आस्तिक होहु धरम अनुरागी॥ नास्तिक जयन दुष्ट मत त्यागी॥ सचिव मोर इह आयसु जोई॥ कबहुंकि करहिं उलेघन कोई॥ तो मे हतहुं तासु जुत वंसा॥ इह प्रण मोर सचिव नहिं संसा॥ अब तुम शीघ्र तुरग गज याना॥ कंचन चैल द्रव्य मणि नाना॥ कोलि विप्रवर पंडित नीके॥ सोवहु वेद मरम जिनहीं के॥ मै तिनकेरि दान दै रूरा॥ करहुं अभिषष सकल करपूरा॥ शालिग्राम शिला सुचि पावन॥ प्रतिमा देव रुचिर मन भावना॥ सेजुत पूज्यप करौ सुहाई॥ जहं तहं करहु स्थापन जाई॥ यथा नृपति अनुसासन दीना॥ सादिर तथा सचिव सब कीना॥ जप तप होम जग्य व्रत दाना॥ लगे सुकरम होन विधि नाना॥ जो हे लग प्रजा तासु नृप रहयौ॥ आस्तिक धरम निरत सब भययौ॥ सोरठा॥ भूप सुमरि भगवान॥ करि सनान दुजवरन कहे॥ देत दान सनमान॥ राज काज ततपर भयो॥ ~~तदनंतर उ... बदन ... सचिवजन॥ ... प्रजा गुनादि॥ ... भई सुकरम रत~~॥ ८॥ टीका॥ फिर कहते हैं कि हे मंत्री इन संपूर्ण हमारी प्रजा जो है इसको भी वेद के अनुसार धरम मारग मे नियुक्त करो अर्थात धरम के रसते लगावो और जहां तहां आ

जो प्रचलित करदेवो कि सब कोई आस्तिक वैष्णव धरम को गृहण करके इस नास्तिक जयनमत का त्याग करदेवे जो कदाचित कोई इस मेरी आज्ञा को नहीं मानेगा तो मेरा सत्य प्रण है कि मै तिसके वंस का नाश करदेऊंगा और हे प्रधान अब तुम हसती घोड़े रथ मुद्रा मणी कंचन इत्यादि द्रव्य जो है सो शीघ्र मँगावो और अतिथी साधु ब्राह्मण पंडित कि जो वेद के जानने वाले हैं तिनको भी वेग बुलावो मै सब को दान देकर भली प्रकार संतुष्ट और प्रसन्न करूंगा और भी सुनो कि जहां लग मेरा राज है तिस विषे जहां तहां देव भवन जो है सो बनवावो और तिनो मे सब पूजन के समाज सहित भगवान की सुंदर प्रतिमा स्थापित करदेवो इससे सब लोग धरम के सहित होयकर भगवान की भक्ती प्रीती वाले होय जावेंगे इस प्रकार राजा की आज्ञा पायकर परम प्रवीन मंत्री जो है तिसने थोड़े हीं दिनो मै संपूर्ण राज मे तैसे हीं यथावत सब विवस्था बांध देई तब सरब देश मे जहां तहां जप तप होम यज्ञ व्रत दान इत्यादि सुकरम और धरम जो है सो नाना प्रकार करके होने लगे और जहां लग राजा की प्रजा थी सब आस्तिक धरम मे प्रवीन होयगई और आप प्रजापाल भगवान को सुमरता हूआ स्नान करके और अनेक प्रकार के दान ब्राह्मणों को देकरके राज काज विषे ततपर हो जाता भया ॥ ९ ॥ चौपाई ॥ तदपश्चात सचिव हितकारी ॥ कहिस वदन असगिरा उचारी ॥ यद्यपि प्रजा भूप तुव एहा ॥ भई धरम रत विगत संदेहा ॥ तद्यपि यज्ञ दान व्रत माहीं ॥ वेद विहीन मरम कछु नाहीं ॥ गीता विपुल काल महि राई ॥

संजय दृष्टि

शंकराचार लुपत समुदाई॥ अब नवीन संजुत अनुरागा॥ धरम प्रचार होन सब लागा॥ तां ते पंडित वेद वहीती॥ चहिये नृपति धरम रत नीती॥ जप तप क्रीया यज्ञ व्रत दाना॥ सकल सिखोव हिं वेद विधाना॥ मंत्री वचन सुनत सुखदाई॥ बोल्यो वदन मुदित नरराई॥ सोरठा॥ सचिव धरम अनुगामि॥ शंकराचारज नामगुरु॥ दीनद्याल मम स्वामि॥ इहां आय संजुत शिषन॥ तुव प्रधान दुत जाय आनहु तिनहिं शिषं सहि कहे॥ सरहिं काज समुदाय॥ होहिं मनोरथ सकल पुर॥१०॥ टीका॥ तिसतें उपरांत सो हितकारी मंत्री फिर कहने लगा कि हेराजन यद्यपि रावरी कृपा धरम और सुकरमों मे लाग गई है तद्यपि यज्ञ होम व्रत दान इत्यादि सुकरम जो हैं सो कुछ वेदकी रीती और मर्यादा अनुसार नहीं होते हैं क्योंकि हमारे देश से शंकराचार लुपत हुयके बहुत काल व्यतीत होय गयाहै अब जो सनमान और श्रीं पूर्वक नया धरम का प्रचार होने लगाहै ताते इस कारज के लिये वेद के जानने वाले और नीती धरममे प्रवीन पंडित जो हैं सो चाहिये वे जप तप यज्ञ व्रत होम इत्यादि सब करम वेद की विधी अनुसार लोगों को सिखावेंगे इसप्रकार मंत्रीका कथन सुनकर राजा आनंद पूर्वक कहने लगा कि हे मंत्री आज सरव जीवों के हितकारी और धरम के स्थापित करने वाले शंकराचार्य नामकर के मेरे स्वामी सब शिष्यों के सहित इहां आये हुये हैं तांते हे प्रधान अब तुम जायकरके तिनको अथवा तिनके

दया दान धरम इत्यादि शुभ आचार जो हैं सो सब सत्य हैं जप तप भजन सुमती और भगवान के नाना कीर्तन च रित्र जो गायन करते हैं और वेद में पढ़ाय लगे हैं जो रात्री दिन वेद विचार में लगे रहते हैं सो शरीर को त्याग कर कि स प्रकार जाते देखे हैं कि मानो सोमी स्वरूप अर्थात श्यामी रूप और चतुर्भुज सुंदर विमानों पर चढ़े हुये गंधर्व जो हैं सो आगे गायन करते जाते हैं और धरम राज तिनको आवते देखकर बड़ी नम्रता से प्रणाम कर के और अनेक प्रकार पूजन कर के फिर सनमान पूर्वक स्वर्ग धाम में पठाय देता है और जो वेद के निंदक हैं यज्ञ व्रत तीर्थ भक्ती दया दान धरम इनको कुछ जानते नहीं हैं और बड़े निडर नास्तिक महा आलसी और भगवान से बेमुख अधम दुराचारी जो हैं सो जब म त होय करके तहां जावते हैं तो तिनको देखकर के जमराज कैसा भयंकर रूप होय जाता है कि कोप के भरे हुये लाल नेत्र और बड़े लंबे दांत महा वि कराल टेढ़ी तैसे ही क्रूर भ्रकुटी और चढ़ा हुआ मस्तिक हाथ में धारे हुये क्रोध से बड़ा प्रचंड दंड और बिजली वत कड़कता हुआ तिन पापियों को नाना ताड़ना कर कर और दुष्ट दुष्ट उचार कर विष्टा जो मल मूत्र रुधर जो लहू पीव जो पाक कृमी जो कीड़े इन कर के भरे हुये महा दुखदायक नरक कुंड जो हैं तिन विखे यमों के हाथ से डलवाय देता है इस प्रकार मैं तिनका घोर नरक दंड देख कर के भय के वश भया हुआ ईहां चला आया हूं हे प्रधान अब तुम निश्चय जान लेवो कि हमारी भी प्रतदा तैसी ही गती होवेगी इसमें कुछ संशय नहीं है क्योंकि हम सब जयन मत वाले धरम के विरोधी महा ना स्तिक और निडर भक्ती के मारग से भूले हुये हैं इन हमारा मंद मत जो है सो कुछ श्लाघा के योग्य

है सो तो अब तुम मेरे राज मै जप तप यज्ञ दान ब्रत
होम वेद शास्त्र नीती धरम और सुकरम जो हैं सो
लोगों को भली प्रकार सब सिखायदेवो जहां लग
मेरी प्रजा है सो सब वे सब धरम मै प्रवीन होय जावे
तब वे स्वामीजी के शिष राजा की आज्ञा पायकर और
ग्राम ग्राम विखें जायकर वेद की विधी अनुसार सब
धरम और सुकरम लोगों को सिखावने लगे और
राजा भी भक्ती प्रीती से श्रद्धा वाला होयकर वेदशा
स्त्र के पढने मै रात्री दिन अभ्यास कारकर यज्ञ
होम ब्रत दान इत्यादि करम सब वेद की विधी अ
नुसार हीं करने लगा इस प्रकार जब संपूर्ण धरम
और सुकरम आनंदपूर्वक सब लोग सीख गये तब
स्वामी जी का मत जो है सो जहां तहां भली प्रकार
प्रचलत होय सरब प्रजा धरम मै प्रवीन और
परम सुखी होय गई यज्ञ दान होम ब्रत सब नारी
नर बडी श्रद्धा और रुची से करने लगे और आप
भी राजा अनेक प्रकार के धरम और सुकरम बडी
प्रती पूर्वक करने लगा वासुदेव जो भगवान हैं
तिनके चरन कमलों मै नित्य नवीन हीं प्रेम और
प्रीती उपजती भई तब राजा के राज मै कोई दुष्ट
मतवाला जयनी जो कहीं छिपकर के रहता हुआ
था सो भय के वश अपने प्राणों को लिये हुये रा
जा के देश को त्याग कर किसी और देश को चला
जाता भया ॥२१॥ चौपाई ॥ इस प्रकार जब स्वामि कृ
पाला ॥ रहे प्रविष्ट वपुष महि पाला ॥ तब ~~चक्र~~
तिन कहं षट मास विहाया ॥ आय नदीन याल निज
काया ॥ रहे जवन शिष सेवक स्वामी ॥ तिन महं एक
पृथ्वीतर गामी ॥ आवा हृदय गुनत अस ताहीं ॥ रा
जे स्वामि नृपति वपु जाहीं ॥ मंद मंद लगि श्रवला
न भाषा ॥ कृपानाथ षट मास विताषा ॥ तेल द्रौण

प्रभु जेवन शरीरा॥ ताहु न देश्या कवन मति
धीरा॥ सुनि शिष्य वचन स्वामि अनुरागे॥ मंद मंद
अस भाषन लागे॥ राखेहु जाय वपुष समजा
हो॥ आवहु प्रात काल मै ताहो॥ अस कहि ईस तो
सचिव जन सारी॥ बोलि भूप मुखे गिरा उचारी॥
मै अस सपन र जनि कछु लेखो॥ तारन शासन धरम
नृप देखो॥ अव मोरे कछु परत न हेरा॥ अग्र भाग
निज ग्रासन केरा॥ श्रवण वधर दृग ज्योति म
लीना॥ सकल अवैव शिथल बल हीना॥ ताते तुम
विलंब तजि आजू॥ सकल राज अभिषेक समा
जू॥ आनहु यथा उचित अब जो हो॥ मै प्रीय तनय
ज्येष्ठ निज को हो॥ सोरठा॥ देत राज अभिषेक॥ नि
ज कर गवहुं परलोक कहे॥ संजुत नीति विवेक॥
तुम पाछे मंत्री सकल॥ जेहि प्रकार हित होय॥ नृ
प तुमार कर सचिव जन॥ सो चिकरहु तुव होय॥ अ
रु हित प्रजा विचारि निज॥ २२॥ टीका॥ इस प्रकार
जब कृपा के धाम स्वामीजी महाराज राजा के शरीर
मै प्रवेश पाय हुये कौतुक करते रहे तब तिनको
तहां छ महीने वतीत होय गये दीन दयाल अपने
शरीर मैन हीं आये तब तिनका शिष्य पास आ
य करके कि जहां राजा के शरीर मै विराजे हुये थे
सनै सनै कानो मै लाग कर कहने
लगा कि हे दीना नाथ छ महीने तो वतीत होयगा
ये हैं अब तेल मै जो प्रभू का शरीर राखा हुआ है
तिस के लिये क्या आज्ञा है ऐसे शिष्य का वचन
सुनकरके स्वामी जी आनंद से सनै सनै कहने
ने लगे कि मेरा जहां है तहां ही रहने
देवो मै कईल को आय कर तिस विखे प्रवेश
पाऊंगा ऐसे कहि कर ईस अपने मंत्रियो को
बुलाय कर के कहने लगे कि भाई मैने आज

रात्री के समय स्वपने विषें प्राणो के हरने वा
ले धरम को देखो है तीते अब मेरे को अपनी
नासिका का अग्रभाग जो है सो देखन नहीं पर
ता है और कान भी को ले ने चौ कीजे तौ भी म
लीन संपूर्ण अंग सिथल और निबल होय
गये हैं तीते तुम बिलंम मत करो अब राज
तिलक का यथा योग्य समाज जो है सो शी
घ्र ल्यावो मै आजहीं अपने हाथ से जेष्ट
पुत्र को राजतिलक देकर आप परलोक के
मारग को चला जाता हूं पीछे तुम मंत्री
सब मिलकर नीती और बुद्धी बिचार से जि
स प्रकार तुमारे राजा और प्रजा का हित हो
सोई यतन करियो ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ भूपर
जाय सचिव जन पाई ॥ साम ग्री अभिषेक
सुहाई ॥ कीन तुरत संपादन सारी ॥ श्रो
कारत मुख बिनय उचारी ॥ महाराज अभि
षेक समाजू ॥ यथा योग्य मा संचित आ
जू ॥ अब अनुसास जवन प्रभु कर हैं ॥ दी
नानाथ सब विधि अनुसर हैं ॥ सचव न गि
रा सुनत नरराई ॥ जेष्ट पुत्र निज लीन बु
लाई ॥ राजअभिषेक वेद जुत रीती ॥ दीन
नरिंद्र बिबिध कहि नीती ॥ बहुरि सचिव
सेवक जन जाती ॥ सब कहं यथा योग्य बहु
भांती ॥ दिता दीन परम सुखदाई ॥ तहिप
श्रात मुदित नरराई ॥ करि सनान पूजन ह
रि कीना ॥ विप्रन दान विविध विधि दीना ॥

शिष्यों को इहां लै आवो तव हमारे कारज
और हृदय के मनोरथ सव सफल होय जावेंगे॥
१०॥ चौपाई॥ भूप रजाय सचव अस पाई॥ आ
य शंकर शिष चल्यो लिवाई॥ हाजिर नृप सामीप
विठाये॥ महाराज स्वामी शिष आये॥ नृपति देखि
तिन कर अस वानी॥ वोल्यो जनहु धरम रस सानी॥
जप तप यज्ञ दान व्रत नीती॥ शास्त्र विधान वेद वर
रीती॥ इन लोगन कहे देहु सिखाई॥ होहिं सुकरम
निरत ठकुराई॥ जे अनुसासन धरन पति पाई॥ जहं
तहं ग्राम ग्राम प्रति जाई॥ लगे सिखावन वेद विधा
ना॥ परम प्रेम जुत भूप सुजाना॥ वेद शास्त्र यज्ञा
दिक करमा॥ ~~येतो सुधरम दान व्रत करमा॥~~ दान
दयादि होम व्रत धरमा॥ प्रमुदित आपु पठिन सव
लागा॥ श्रद्धा धान रत वड़भागा॥ अस प्रकार स
व वेद वहीता॥ जप तप कृया दान मख रीता॥
सीखे सकल लोक मुदमानी॥ भयो प्रचलित [illegible]
रुचिर मत स्वामी॥ निरत धरम सव प्रजा सुखा
री॥ मख व्रत दान करहिं नर नारी॥ आपु नृपति
संजुत अनुरागा॥ धरम सुकरम करन वहु लागा॥
वासुदेव पद कंज सुहाई॥ नित नव उपजि प्रीति
अधिकाई॥ सोरठा॥ जयन दुष्ट मति कोय॥ रहा
गोप जोई त्रास वस॥ लिये प्राण निज सोय॥ गव
न्यो वदि हरि देस नृप॥ ११॥ टीका॥ इस प्रकार रा
जा की आज्ञा पाय कर [illegible] मंत्री जो है सो ततकाल ही
आय कर के शंकर स्वामी जी के शिष्यों को तहां ले
जाता भया और वड़े सनमान से राजा के पास वैठाय
कर कहने लगा कि महाराज इह स्वामी जी के शिष
आय गये हैं तव राजा तिन को देख कर प्रीति पूर्वक
धरम रस की भीगी हुई वाणी से कहने लगा कि

वेद प्रतिकूला॥ आये तहां गवन करि स्वामी॥ से
जुत निकर शिषन तरगामी॥ बोधाचार लोक रत
देखे॥ शास्त्रार्थ प्रभु विविध बसेखे॥ लगे कर
न श्रुति स्म्रिति द्वारा॥ भयो संवाद परस्पर भा
रा॥ यद्यपि मूढ मंदमति हार्‍यो॥ तद्यपि कर
त नहिन सूईकार्‍यो॥ सोरठा॥ तव आराम म
झार॥ एक दिवस निज बहिरपुर॥ पंचभूमि आ
गार॥ तहां नृपति राजित रह्यो॥ दोहा॥ जयना
चारज शंकरा चारज कृपा नकेत॥ आये जुगल
प्रसंन्न मन निज निज शिषन समेत॥ २८॥ टीका॥
तव इस प्रकार कौतुक करके बडे धीरज के धाम
स्वामी जो हैं सो अपने तिसी शरीर मे कि जो
तैल के बीच राखा हुआ था प्रवेश पाय कर
के ततकाल उठ खडे हूये और अपने संपूर्ण
शिष्यों के साथ पूर्व तुल्य ~~कथ~~ वार्ताआ
लाप और सब विवहार तैसे हीं करने लग
जाते भये तब एक दिन तिनोने सुनाकि मरु
देस जो˅ प्रसिद्ध है तिस विखे बडे दुष्ट अभागी
और महां मंद धरम के त्यागी जयन मतवाले
नास्तिक जो हैं सो निवास करते हैं और तिन
का राजा भी वेद के विरुद्ध धरम का निंदक और
बोधाचारी महां नास्तिक पाप की खानी है तब
स्वामी जी अपने संपूर्ण शिष्यों के सहित गवन
करते हूये तहां को चले आवते भये जब तिन
अधमों को अधर मे डूबे हूये देखा तब अनेक प्र
कार श्रुति और स्मृ~~ती~~तियों˅ प्रमाण दे दे ˅के
कर शास्त्रार्थ जो है सो किया और परस्पर आ
पसमे तहां संवाद विवाद हूआ यद्यपि वे जड बु
द्धी वाले नास्तिक और धरम के विरोधी हार भी
गये तद्यपि हठ के वश भये हूये अभागी सूईका
र नहीं करते भये अर्थात मांनते नहीं भये॥

औरभी

तव एक दिन वडे मनोहर वाग के वीच पंच भूमी
अर्थात पंजमजले वने हूये महिल मे तिन नास्तिकों का
राजा सभाल गावता भया और तहां अपने शिष्यों के
सहित तिन अधर्मों का वडा भारी पंडित जयनाचार्ज
जो था सो आय गया और ईहां अपने शिष्यों को साथ
लिये हूये कृपा के धाम धरम के प्रतिपादन करने वाले श्री
क्रों स्वामी भी आय जाते भयें॥ चोपाई॥ होन लाग तिन कर
अति भारा॥ शास्त्रार्थ कल विविध प्रकारा॥ विजय पराजय
होहिं न काहू॥ अधिक एक तें एक प्रभाऊ॥ तव जयना
चारज अस कोला॥ कपट कहत मरम निज कोला॥ सुनहु
नृपति निज शक्ति प्रभाऊ॥ मोर परखो जानि सव काहू॥ भवि
तत काल अगम गति राई॥ प्रथमहिं हृदय मोर सव आई॥
अकस्मात गत अंत अथाहीं॥ मेदत धरनि सकल जग छाहीं॥
ईह गह होहिं मगन तुवराऊ॥ आवहिं अकस्मात पुनि
नाऊ॥ जो तुम कवहु सवल भ्रम गूढा॥ होहु तासु पर नृ
पति अरूढा॥ तव तो अन्त प्राण तुवराई॥ न तर अगाध
सलिल गति भाई॥ तव नास्तिक माया निज कीनो॥ होन
लाग मेदनि जल लीना॥ वेद वात उतपात न लहू॥ देखि
स्वामि विसमय वस रेहू॥ जान्यो कीन नास्तिक माया॥
तो ते धरनि अगम जल छाया॥ सोरठा॥ जयन सिद्ध तो
जोय॥ तव वोल्यो विस्वस्त चित॥ सुनहु नृपति अव सोय॥
मोर कथन से प्राय नहीं॥ २५॥ टीका॥ तव तिस जयनी पं
डित का और स्वामी जी का परसपर शास्त्रार्थ अनेक प्रकार
करके होने लगा हार जीत कोई नहीं मानता एक से एक
अधिक प्रभाव ~~[illegible]~~ तव महा कपटी जयनाचारज
जो है सो राजा को कहने लगा कि हे राजन मेरे को अ
पनी शक्ती और विद्या के प्रभाव से आगें होने वाला वृ
तांत जो है सो सव जान पडा है ~~[illegible]~~ और तुमको मै क
हिदेता हूं कि ईहां अव थोडी देर के पीछे अकस्मात
ही पृथवी पर अत्यंत जल का समुद्र छायत हो जावेगा
और ईह तेरा घर तिस अनंत जल विखें डूव जावेगा फिर
अकस्मात हीं एक नाउका अर्थात वेडी आय जावेगी
जो कदाचित तूं भ्रम करके तिस नाउका पर चढे
वल और

जावेंगा तव तो तुमारे प्राण अन्त हो जावेंगे अर्थात वच
जावेंगे नहीं तो इह जल वडा अगम और अगाध है
ऐसे कहि कर के तिस नास्तिक ने अपनी माया जो है
सो करी तव पृथवी पर आय करके जल छा
यत होने लगा तिसको देख करके स्वामी अचरज
के वश होयकर कहने लगे कि इह तो ना कोई वेद की
वात और ना कोई उतपात भया है किस प्रकार इह अगा
ध जल पृथवी पर छायत होने लगा जान पड़ता है कि
जयनी नास्तिक ने कोई माया करी है इतने मे सो जय
न मत का आचार्ज हृदय मे धीरज धारकर राजा को कह
ने लगा के प्रजापाल देखो समय आय गया मेरे कथन
मे कुछ संशय नहीं सव सत्य है ॥२४॥ चौपाई॥ आवा स
लिल धरनि गत पारा॥ कहि प्रकार अव नृपति हमारा॥
होवहि रहन भवन इहि माहीं॥ इह निमगण संसय कछु नाहीं॥
आई नृपति देख पुनि तरनी॥ अव इहि काल विपति दुख
हरनी॥ तहि पर हम हु यतन सन दोई॥ वेग अरूढ ध
रनीपति होई॥ अगम अगाध सलिल गति तरहीं॥
आस्तिक एहु वूड जल मरहीं॥ अस प्रकार नास्तिक
जुत राऊ॥ भयो अरूढ उदित जव नाऊ॥ सोरठा॥
शोकर वलातकार॥ अरु कछु शक्ति प्रभाव निज॥ प्रेरत
लीन निवार॥ नृपहिं अरूढत तरनि तें ॥२५॥ टीका॥
फिर जयनी कहता है कि हे राजन देख इह पृथवी पर कै
सा अगाध जल आय करके छायत होय गया अव हमा
रा इस घर मे किस प्रकार रहना होवेगा इहँ अवी डुवा ^तो
चहता है परंतु हे [struck] भूप तू देख कि इस कठिन
काल मे विपती और कलेश के हरने वाली नाउका
भी आय गई है अव यतन से वल करके हम तुम इस
नाउका पर शीघ्र चढ जावें और सहजे हीं इस अगा
ध जलों को तर जावें पीछे इस आस्तिक जो है सो आ
प हीं डुव कर के मर जावेगा इस प्रकार तिँ नास्तिक के ^स
सहित राजा जव नाउका पर वल और यतन करके
चढने लगा तव सरव सामर्थ स्वामी जो थे [struck]

पावन सुखद भक्ति भगवाना॥ मख ब्रत करम धरम पथ दाना॥
सोरठा॥ सकल विवस्था एहु॥ करत स्थापित नृपति तव॥
हरि हरि दीन सनेहु॥ रटत कालवश होभयो॥ १३॥ टीका॥ तब
राजा की आज्ञा पायकर मंत्री जो हैं सो राजतिलक की य
थावत सब सामग्री ल्याय देते भये और शोक करके दुखी
भये हुये मुखसे विनती करकर कहने लगे कि हे नाथ
राज्याभिषेक का समाज जो है सो सब त्यार है जो आज्ञा
हो सो हम सीसपर धारन करैं ऐसे मंत्रियों की बानी
सुनकर राजा तुरत अपने जेष्ठ पुत्र को बुलायकर के
वेद की विधी अनुसार अनेक प्रकार की नीती कथन
करके राजतिलक दे देता भया फिर अपने मंत्री
सेवक और जाती नाती के लोगों को नाना प्रकार की शि
क्षा देकर और भली प्रकार समुझायकर तिसतें उपरांत
आप सनान करके आनंद पूर्वक भगवान का पूजन
किया और साधु ब्राह्मणों को नाना प्रकार के दान
जो हैं सो देता भया इस प्रकार इह राजा सरव
सुखों के देनेवाली पवित्र भक्ती और यज्ञ ब्रत होम
दयादान इत्यादि सब करम और सुधरम की विवस्था
को भली प्रकार स्थापित करके फिर हरी हरी रटतो
हुआ कौतुक से सहजे ही शरीर को त्याग कर अपने प्र
लोक के मारग को ~~चलो जातो भयो~~ सिध करता भया
अर्थात प्र लोक को चला जाता भया॥ १३॥ चौपाई॥
करि कौतुक अस स्वामि सुधीरा॥ तै लघु रूप
निज जवन सरीरा॥ तहां प्रवेश करत तत काला॥
उठे कृपाल धरम प्रतिपाला॥ निकर शिषन जुत
कथा अलापा॥ लागे करन सुचन तै तापा॥ पू
रव तुल्य रुचिर निज नाना॥ भे विवहार करत नि
धि ज्ञाना॥ एक दिवस करुणाय अगारा॥ सुन्यो
श्रवण मरु देस मझारा॥ करहिं निवास दुष्ट हत
भागी॥ नास्तिक निडर धरम परित्यागी॥ ताकर
नृपति अधम मति जोऊ॥ क्रोधाचार निरत सठ
सोऊ॥ जड़ अत्यंत नास्तिक मूला॥ निंदक धरम

अपने कौतुक से तुम को प्रेर लिया और तिस अधम
की माया को दूर करके ततकाल प्राणों से रहित कर
दिया जिन्हों ने अभी कोई भोग देखे नहीं पर दुष्ट ने अ
पने किये करम का फल पाय लिया हे राजन अब तू
अधरम को त्याग कर धरम के सहित अपना सुंदर
और सुखदायक कुलीन अर्थात सनातन मत जो है
सो ग्रहण कर ॥ २७ ॥ चौपाई ॥ नास्तिक अधम जयन
न मत जेहू ॥ तुव नरनाथ जोग कस एहू ॥ स्वामी व
चन सुनत सुखदाई ॥ नृपति चरन ने अत सिर ना
ई ॥ भाखत वदन जुक्त जुग पाना ॥ दीन दयाल तुव
सत्य बखाना ॥ मिथ्या मंद जयन मत जोई ॥ मै प्रभु
त ज्यो जानि जीय सोई ॥ उचित कृपाल जवन अ
व तोरे ॥ आस्तिक ज्ञान करहु प्रभु मोरे ॥ स्वामी
विनय सुनत नरराई ॥ भगवत मंत्र परम सुख
दाई ॥ सेपाय दुरत हरन जग पावन ॥ सुजस
करन कल भक्ति बढावन ॥ हित जुत परम हरष
वश दीना ॥ सादिर नृपति ग्रहण करि लीना ॥ सेव
क सचिव बोलि ततकाला ॥ तिनहि न देश दीन म
हिपाला ॥ जहे लग देस सासना मोरी ॥ नास्तिक
निरत जयन मत जोरी ॥ देहु निकारि वेग सम
दाई ॥ इह प्रपंच मिथ्या सब भाई ॥ वेद उक्त पथ
तुम सब कोई ॥ निज निज चलहु धरम रत होई ॥
सोरठा ॥ जब आयस अस दीन ॥ मेदिनि कहे मे
दनपती ॥ तथा तिनहि सब कीन ॥ भयो जयन
मत नष्ट तब ॥ २८ ॥ टीका ॥ फिर स्वामी कहते हैं
कि हे राजन इह महा अधम और कलंक के दे
ने वाला जयन मत जो है तुम इसके योग्य
नहीं हो तब इस प्रकार श्री स्वामी के वचन
सुनकर राजा नम्र होय कर के बार बार चरनो
पर सीस नावता भया और फिर हाथ जोड़ कर
विनती करने लगा कि हे कृपा निधान आप
का कथन सब सत्य है मैने जान लिया कि
और

इस ग्रधम जयन मत जो है सो केवल नरक के ही देने
वाला है ताते मैने इस दुष्ट मत का त्याग किया ग्रब
हे दीनदयाल ग्रनुग्रह करिये ग्रोर मेरे को ग्रपने
चरनो का सेवक जान कर सरब सुखों के देने वाला ग्रा
स्तिक वान जो है सो दीजिये ग्रेसे राजा की विनती
सुनकर ग्रोर तिसकी ग्रास्तिक धरम मे श्रद्धा देखकर
सरब संशय ग्रोर पापो के नास करने वाला भगवा
न की भक्ती ग्रोर सुजस के वढाने वाला सरब सुखों का
मूल भगवत मंत्र जो है ~~सो ग्रस्तिक ग्रोर श्री जी प्र~~
~~देके~~ सो वडे हरष ग्रोर ~~हित~~ चित से स्वामी जी तिस
राजा को सुनाय देते भये ~~तो जाको~~ तव प्रजापाल
मानो सरब भवनो का सुख विचार करवडे सनमान
पूर्वक ग्रहन कर लेता भया तिसते उपरांत राजाग्रपने
मंत्री ग्रोर सेवकों को वुलायकर ग्राज्ञा देता भया कि ज
हो लग मेरे देश ग्रोर राज है तिस विखे जो कोई दुष्ट ज
यन मत वाले देख पड़ता है तिस को तत काल मेरे रा
ज से वाहिर निकाल देवो क्योंकि प्रपंच नास्तिक मत
जो है सो सब मिथ्या है ग्रोर ~~तुम सब लोग~~ वेद के वा
क्य जो है सो सब सत्य है ताते तुम सब लोग ग्रब वेद
की ग्राज्ञा ग्रनुसार धरम ग्रोर सुकरमों मे परायन हो
य कर सरब सुखों के देने वाली भगवान भक्ती जो है
सो ई ग्राचरन करो ग्रर्थात सोई धारन करो जब
इस प्रकार राजा ने ग्राज्ञा दई तब तिन मंत्री ग्रोर से
वकों ने वडे हितसे सीस पर धारन करके तैसे ही यथा
वत जहां तहां सब धरम का प्रचार करके जयन
मत का ग्रपने देश से नास कर दिया ॥ ~~स~~ २८ ॥ चौपाई ॥
लोग सुधर्म होन विधि नाना ॥ जपतप यज्ञ होम
व्रत दाना ॥ सुचि सुकरम जुत प्रजा सुखारी ॥ वे सब
धरम निरत नर नारी ॥ ग्रस प्रकार शंकर ग्रवतारी ॥
जहं तहं निंदरि जयन मत सारी ॥ करत सुचिर दिग

श्री धर्म प्रदीप

विजय सुहाये॥ मिथुला पुरी मुदित मन आये॥ सो रमणीक दुजन सन कैसे॥ मातुल पुरी सुरन जुत जैसे॥ वेदाधुनी सुभग वर पावन॥ जहेतहें होहिं ललित मन भावन॥ सोरठा॥ सांख्य मिमांसा न्याय॥ अरु वेदांत सिद्धांत जुत॥ सांगोपांग सुहाय॥ जुजर वेद दुज गण पढ़ें॥ २९॥ टीका॥ तिसतें उपरांत दिनदिन यज्ञ होम ब्रत दान धरम जो हैं सो नाना प्रकार करके होने लगे और सुकरमों के सहित प्रजा भी सुखी सब नारी नर जो हैं सो वे सब धरम में प्रवीन होय गये इस प्रकार अवतारी संपूर्ण जयनमत का निरादर करके दिग विजय करते हुये आनंद पूर्वक मिथुला पुरी में चले आवते भये सो नगरी ब्रह्मणों करके कैसी भी रमणी कथी कि मानों जैसे इंद्र की पुरी देवताओं के सहित शोभा देती है जहां तहां परम सुखदायक और मन को भावती वेदाधुनी ~~जो है सो~~ होय रही है और सांख्य मिमांसा न्याय वेदांत सिद्धांत इत्यादि सब सांगोपांग ~~सहित~~ जुजर वेद ~~जो है सो~~ ब्रह्मणों के समूह पढ़ रहे हैं॥ २९॥ चौपाई॥ ग्राम ग्राम प्रति होहिं अनंदू॥ कथा कीर्तन विप्रन वृंदू॥ पूजन परम देव भगवाना॥ मख ब्रत दान होहिं विधि नाना॥ अस प्रकार दृग देखि सुहाई॥ मिथुला पुरी सरब सुख छाई॥ स्वामी हृदय परम हरषाये॥ बार बार तहिं वदन सिहाये॥ तहिं पश्चात जनक गृह मेउ॥ देखा धनुष भीम जुग खेउ॥ जे वर सीये सुयंवर जोरा॥ श्री रघुवीर भुजन बल तोरा॥ देखी पुनि वदेह कुल देवी॥ गिरजे नाम मनुज सुर सेवी॥ बहुरि तेज वर व्याघ्र नामी॥ देखा शिवन सहि प्रभु स्वामी॥ ~~तदनंतर अनेक म~~ तहिं पश्चात मुदित सनमाना॥ ● विंदु सर हृद करत सनाना॥ दरसत शिलो नाथ भगवाना॥ आय गवन करि कृपानिधाना॥ जहां मुदित परिवारत रेहा॥ मेदिन मिसर शिषन जुत गेहा॥ आवत देखि अग्र उठि धाया॥ मेदिन

सो जोरावरी आक्रमसे और कुछ आपनी शक्तीके प्रभावसे नाउकापर जाते हुये राजाको पकड़करके अपनी ओर खैंच लेते भये ॥ १२ ॥ चौपाई ॥ सो जब मध्य जान जल आया ॥ कछु कृपाल स्वामी निज माया ॥ दीनन्हि प्रेर अनत गतवारी ॥ ततक्षण भयो लोप महि सारी ॥ सो गत शक्ति जयन सिंह तो ॥ नभतें गिरयो धरनि इहि भांती ॥ दूरि अंग प्राण हत भययो ॥ देखि भूप विस्मय चित रहयो ॥ जोरि जुगल कर वचन बखाना ॥ मै कृपाल कछु नाहिं न जाना ॥ कारण भयो कवन प्रभु एहू ॥ उपजा हृदय मोर संदेहू ॥ बोले नृपति वचन सुनि स्वामी ॥ इह सठ रह्यो अधम पथगामी ॥ निज मत वस दुरजन भास्यो ॥ चहत मोर जदि या प्राण चढ़ाह्यो ॥ मै पूरव निज कौतुक राया ॥ प्रेरत तुमहि अधम हते माया ॥ प्राण रहित करि धरनि गिरावा ॥ निज कृत दंड दुष्ट तण पावा ॥ सोरठा ॥ अब सुधरम रत होय ॥ परिहरि नृपति अधर्म तुम ॥ निज कुलीन मत जोय ॥ करहु ग्रहण सुंदर सुखद ॥ १३ ॥ टीका ॥ जब सो जयनी तिस नाउकों बैठा हुआ जलके मध्य भाग मे चला आया तब स्वामीजी अपनी माया और प्रभावका चमतकार दिखावते भये सो अगाध जल तुरतहीं तहां पृथ्वी मे लुपत होजाता भया और वे अधम जैनी अशक्त होयकर मानो आकाशसे पृथ्वी पर गिर पड़ा और अंग अंग दूर कर प्राणों से रहित होय गया ऐसे तिसका मरना देखकर राजा अचरजके वश होयगया और हाथ जोड़कर स्वामीजी के आगे प्रार्थना करने लगा कि हे दीनदयाल हे कृपाके धाम मेरे विचारमे कुछ नहीं आया जो इह कौन कारणभया है कृपाकरके मेरे इस संशयको निवारण करिये तब राजाका कथन सुनकर स्वामी जी कहने लगे कि हे प्रजापाल इह जड़ महा अधरमी और नास्तिक वेदमत का विरोधी था और अधम पाप की खानी मेरे को मारने चहता था मैने प्रथमही

७१२

७२

उर स्वामी॥ हर सरूप तुव जन अनुगामी॥ जोरि
स करहु श्रवण सुनि एहा॥ तो न करहु प्रभु क
थन संदेहा॥ मंद हास जुत स्वामि उचारे॥ दुर्जन
होहिं रिस कबहुं हमारे॥ जो वशिभूत क्रोध सन्यासी॥
सो अब श्य दुज नरक निवासी॥ पूछहु विप्र स
कुच तजि मोही॥ भाषहुं यथा उचित कछु तोही॥
शंकर वचन सुनत अनुरागे॥ मंडिन मिसर कथन
अस लागे॥ अहो विपुल अश्चर्य सभासा॥ यद्यपि
तुमहुं नाथ सन्यासा॥ कीन निषेध काल कलि
माहीं॥ कहि प्रकार अब तुमहुं गुसांई॥ बलात
कार गृहण करि लीना॥ प्रभु तुमार गति जाय न
चीना॥ सोरठा॥ असतुव निरखि प्रबंध॥ मोरे
हृदय कृपा निधी॥ भयो परम आनंद॥ जाहि नव
रतन सो किये॥ २१॥ टीका॥ और फिर न्याय कर
के कृपा के धाम स्वामी जी को सुंदर आसन
पर बिठाय दिया तब मंडिन मिसर हाथ जोड़ क
र के विनती करने लगे कि हे कृपानिधान जो आ
प दया कर के मेरे अनुचित को क्षमा करो तो मैं प्रभू
तुमारे से कुछ पूछा चहता हूं तुम साक्षात शिव
सरूप हो अनुगृह कर के मेरे हृदय के संशय को
जो निवारण करो और कदाचित मेरे पूछे पर कु
छ क्रोध करना है तो मैं स्वामी आपने संशय को क
भी कथन नहीं करता हूं ऐसे मंडिनमिसर जी की
परम चतुराई वाली बानी सुन कर स्वामीजी
प्रसन्न होय कर मंद हास से कहने लगे कि हे ब्र
ह्मणों विषै प्रधान ब्राह्मण हम को तो कदा
पि काल क्रोध नहीं है जो जगत मैं सन्यासी
होय कर क्रोध के वश होय गया तो वे सन्यासी
भी निश्चय कर के नरक निवासी
ही जानो हे ब्राह्मण अब संकुच को त्याग कर जो कु
छ पूछना है सो पूछ मै तेरे को जैसा योग्य होगा
तैसा उत्र देऊंगा तब शंकर जी का कथन सु

नकर और तिनको प्रसन्न जानकर मेदिनमिसर हरष पूर्वक कहने लगे कि हे नाथ बडे अचरज की बात है देखिये कि यद्यपि तुमने हीं कलीकाल मे इस सन्यास का नषेध किया है अर्थात बरजित किया है अब किस प्रकार हे प्रभू तुमने हीं इसको ग्रहण कर लिया इह कृपानिधान तुमारी अगाध है ~~कुछ जानी नहीं जाती है~~ कोउ जानने को सामर्थ न ही है इस प्रकार नाथ तुमारा कौतुक प्रबंध देख करके मेरे हृदय मे ऐसा आनंद परिपूरण होय गया है कि जिसको मैं कथन नहीं कर सकता हे ॥ २२॥ चौपाई॥ मित्र मेष धरम चर दीजी॥ कौन कथन जस बेद बही जी॥ सो साक्षात आप कर स्वामी॥ मै सब निरखि जनन अनुगामी॥ जस सन्यस्य नाथ तुव धारा॥ बयो कवन ~~अ~~ अस धारन हारा॥ मेदिन मिसर रुचिर मृदु बानी॥ अस प्रकार जब बदन बखानी॥ श्रो कर सुनत तास रुचि रचना॥ परसुखेद कलको म मल बचना॥ अति प्रसन्न मानस अनुरागे॥ गि रा गूढ जनु भाषन लागे॥ अति अश्चर्य विप्र जीय मोरे॥ बेदा मरम विदत सब तोरे॥ पुंकस भनि कहहु काल कलि माही॥ इह सन्यस्य उचित कछु नाहीं॥ अब तुम सुनहु काल कलि कैसे॥ दुज सन्यस्य धरन विधि जैसे॥ अस कहि श्रो कर कृपा अघाये॥ धरम शास्त्र मुख वचन सु नाये॥ लागे करन अनेक बखाना॥ सुनत श्र वण दुज सुमति निधाना॥ उनकर पत्त प्रात दि ~~श्रव~~ सुखेदिन॥ लाग्यो करन वदन दुज मेदिन॥ अस तिनकर बहु तेदिन माना॥ भयो सेवा द परस्पर नाना॥ अजय युगल विद्या गुण सागर॥ निज निज पत्त उक्त दृढ नागर॥

तब स्वामी अस बचन उचारा॥ बिनु मध्यस्त न
होहिं हमारा॥ कछु सिद्धांत बिप्रवर नीके॥ तोते
पुछों मोर अस जी के॥ सोरठा॥ तुव पतनी वर
जोय॥ बैठहिं सो मध्यस्त द्विज॥ तव हमार कछु
होय॥ निश्चय हल सिद्धांत इह॥ २२॥ टीका॥ फिर
मंडिन मिसर कहते हैं कि हे नाथ भिक्षू जो सन्यासी
है तिसको भेष और उत्तम रीती जै वेद की विधी अ
नुसार कथन की गई है सो मैने साक्षात सब आप
बिखे देखी है हे कृपासिंधू जैसा सन्यास आप ने धार
न किया है ऐसा और कौन जगत मे धारन करनेवाला
है इस प्रकार जब मंडिन मिसर ने बडी सुंदर और के
मलवाली से बचन उचारन किये तब शंकर स्वामी
तिसकी परम सुखदायक और सुंदर रुचीवाली रचना
को सुनकर प्रेम से गदगदवानी होय कर बडे गूढ बचनो
से कहने लगे कि हे द्विज प्रधान मेरे हृदय मे बडा आश्च
र्ज आवता है कि तूं वेद के तत्व को भली प्रकार जान
नेवाला है और फिर किस विचार से कहता है कि इह
संन्यास कलीकाल मे धारना योग्य नहीं है हे ब्रह्मन
अब तूं श्रवण कर कि कलीकाल मे किस प्रकार और कौ
न विधी से सन्यास धारन किया जाता है ऐसे कहि कर
के शंकर स्वामी हरष और उमंग से परम पवित्र धर्म
शास्त्र के बचन जो हैं सो मुख से अनेक प्रकार करके कथ
न करने लगे तब मंडिन मिसर सुन करके तिन के
बचनों को अपनी उक्ती से नाना प्रमाण देकर खंडिन
कर देते भये स्वामी जी फिर अपने पक्ष को सिद्ध करते
हैं वे फिर ~~खंडिन~~ असिद्ध कर देते हैं ऐसे तिनकी चरचा
और संवाद जो है सो ~~[illegible]~~ परस्पर बहुत दिनो
तक होता रहा दोनो विद्या और गुणों के समुद्र ~~[illegible]~~
अपने अपने पक्ष और उक्ती मे बडे प्रवीन थे त
व स्वामी जी कहने लगे कि हे मंडिन मिसर इस
हमारी चरचा मे जब तक कोई मध्यस्त नहीं हो
गा अर्थात बीच साखी नहीं बैठेगा तब लग

मिश्र हरष उर छाया॥ दोहा॥ मंजुल शिष्य न
प्रणाम करि विनय वदन उच्चारि॥ पाद्याद्यादि
क कीन सुचि पूजा विविध प्रकार॥२०॥ टीका॥ इस
प्रकार ग्राम ग्राम विषै बडे आनंद और मंगल हो
ते हैं और कथा कीर्तन [struck] भी ब्रह्मलोकों के
समूह बैठे हुये जहां तहां कर रहे हैं भगवान का
पूजन यज्ञ होम व्रत दान इत्यादि सुकरम
जो हैं सो भी यथा विधी नाना प्रकार होते हैं ऐ
से मिथलापुरी मै सुंदर धरम की रचना देखकर
स्वामी जी हृदय मै परम आनंद मान कर सरव सु
खों कर के छायत भई हुई तिस पुरी की वारवार श्
लाघा और बडाई करते भये तिस ते उपरां
त राजा जनक के घर मै जाय करके महादेव का दूया हू
आ धनुष [struck] सो देखते भये फिर जनक भूप की
कुल देवी का दरसन किया कि जो गिरजे नाम के
से मानुष्य और देवताऊं कर के सेवत की हुई हैं
और फिर आप ने संपूर्ण शिष्यों के सहित व्याघ्र
नामा तेत्र जो है तिस का दरसन पाया तिस ते उप
रांत विंदुसर की निरमल रवर मे सनान कर के फि
र शिलानाथ भगवान का दरसन करते भये ऐसे स
व दरस परसन करके फिर आनंद पूर्वक तहां चले आ
ये कि जहां मैथिन मिश्र आपने शिष्यों के बीच बडी
शोभा से विराजे हुये थे तब शंकरस्वामी जी को आव
ते देख कर मैथिन मिश्र जो ब्रह्मा का अवतार थे उठ
करके आगे हीं लेने को चले आये और सब शिष्यों
के सहित वारवार दंड प्रणाम और विनती करके अ
र्घ्य पाद्यादिक पूजन जो है सो सनमान पूर्वक सब
भली प्रकार किया॥२०॥ चौपाई॥ ल्याय ललित
आसन निज धृला॥ बैठारे प्रभु स्वामि कृपाला॥
मैथिन मिश्र हरष उर छाना॥ बोले वचन जोरि
जुग पाना॥ अनुचित नमिय कबहु प्रभु मोरे॥
पूछहु तो कृपाल कछु तोरे॥ हृदय हरहु मोर

कि और युगल पाजी ने मीने जीके सुंदर मे [illegible] पजीमु जींके वल है सतेग

इस प्रकार जब स्वामी जीने कथन किया तब मं
डिन मिसर स्वीकार कर लेते भये फिर शंकर स्वा
मी ब्राह्मणकी पतनीको कहने लगे कि हे सुशी
ले तूं हमारा हित जानकर और हृदय मे सत्य स
त्य विचार कर हमारे संवादका न्याय कर दे तब
ऐसे शंकरकी बाणी सुनकर मंडिन मिसर की स्त्री
जो है सो हरष पूर्वक बडी कोमल बाणीसे कहने ल
गी कि महाराज आप शास्त्रार्थ करिये मै सुती
हूं और अपने घरका काज भी करती हूं इसमे जैसा मे
री बुद्धी और विचार मे आवेगा सो आपके आगे कथन
करदूंगी ऐसे कहि करके सो पती व्रता भामनी अप
ने घर भोजन बनाने लगी और चरचा संवाद
भी सुणने लगी जब सुनती सुनती भोजन ब
नाय चुकी तब संपूर्ण विद्वानो के देखते उठकर
और तिनके पास जायकर कहने लगी कि
हे नाथ तुम ने परस्पर बडा भारी संवाद
किया है ताते आतुर होय गये हो अब कृपा कर के भो
जन पाईये और इस चरचा के भ्रमको दूर करिये
ऐसे स्त्री की बानी सुनकर मंडिन मिसर हृदय मे विचार
कर मौन होय रहे और शंकर स्वामी तिसकी चतु
राई जानकर बडे हरष से बारबार आसीसा देने लगे
तब सब विद्वान जो थे सो हृदय मे जान गये कि इस महा
प्रवीन ब्राह्मणकी पतनीने अब आतुर सन्यास जो
है सो जणाय दिया है ॥ २३ ॥ चौपाई ॥ तब मंडिन द्विज
वचन उचारा ॥ कृपानाथ कलि काल मझारा ॥
इह आतुर सन्यास गुसाई ॥ रह्यो का
य सब संसृति माहीं ॥ तोते हमरे दीन सने हू ॥
करबो गृहस्थ उचित अब एहू इहिमे चतुरथ
आश्रम जोई ॥ होहि न सिद्ध कठिन प्रभू सोई ॥
सुनहु स्वामि तुव सदृश जे हू ॥ बेद निपुण वि
द्या गुण गेहू ॥ अरीवर्ग जिन जीति प्रचंडा ॥

कीने दोष दुंद गण खेडा॥ दुरलभ तुमहि कवन जग
माहीं॥ सकल सुलभ संशय कछु नाहीं॥ इह सन्य
स्य रुचिर पद जोई॥ तुमहि जोग करुणानिधि
सोई॥ अस प्रकार दुज वचन सुहाये॥ स्वामी सुनत
श्रवण हरषाये॥ परम प्रसन्न वदन मुसकाई॥ बोले
वचन जनन सुखदाई॥ सोरठा॥ सुनहु विप्र सुवकीन॥
जे वरणन निज वदन अब॥ सन्मति गुण प्रवीन॥ संपूरण
सिद्धांत कर॥ २७॥ टीका॥ तब मेदिन मिसर कहने लगे
कि हे कृपा निधान इह आतुर सन्यास जो है
सो कलिकाल मै संपूर्ण जगत विखे ख्यात होय रहा है
ताते हे प्रभू यद्यपि इस मै चौथे आश्रम का सिद्ध
होना बडा ही कठिन है तद्यपि हम को एही ग्रहण
करना योग्य है और हे कृपानिधान तुमारे जैसे महात
मां वेद विद्या और गुणों मै प्रवीन और जिनो ने अति प्रचंड
शत्रू वर्ग को जीत कर सरव दोषों और पापों के समू
ह का नाश कर दिया है हे प्रभू तुम को संसार मै कुछ भी
दुरलभ नहीं है सब सुलभ अर्थात सहजे सुखालाही
है इस मै कुछ संशय नहीं इह सब जगत विखे सन्यास
जो है सो दया की निधी तुमको ही योग्य है इस प्रकार
मेदिन मिसर के वचन सुनकर स्वामी जी हरष के
वश परम प्रसन्न भये हुये मुख से मुसकाय कर क
हने लगे कि हे ब्रह्म लोक विखे सभू हे गुणों के धाम
तूं ने जो कथन किया है सो निश्चय करके संपू
र्ण शास्त्रों का मत और सरव सिद्धांतों का मूल एही
है॥ २८॥ चौपाई॥ दुज इसि मे कछु नहिंन संदेहू॥
कीन विचार जवन सुवणहू॥ अब उठि करहु संत
समुदाया॥ भोजन दिवस विपुल नभ छाया॥ मेदिन
मिसर सुनत ततकाला॥ उठे वचन शोकर
प्रतिपाला॥ संजुत शिषन स्वामि मन माना॥ कर
न पखारि चरन अरुपाना॥ विनय बडाई विविध
विधि कीना॥ पाक जिमाय विप्र वर दीना॥ तब सुव
शिषन जनन अनुगामी॥ भोजन पाय मुदित

मन स्वामी॥ ज्ञान विचार वहुरि कछु आना॥ करत परस्पर कृपानिधाना॥ होत विदाय हरष उर छाये मिथुलापुरी वहुरि प्रभु आये॥ सोरठा॥ शंकर कृपा नकेत॥ अरु पावन मंडिन मिसर॥ च सुख
रित ललित देत॥ यथाविदत संसृति सकल॥ तथा कथन मैं कीन॥ जो इहि कर सादिर सुने॥ होहि भक्ति हदि लीन॥ विगत शोक संशय सकल॥ २५॥ टीका॥ फिर शंकर कहते हैं कि हे मंडिन मिसर इह जो तैने कथन किया है सो सत्य है इस मे कुछ संशय नहीं है अब सब संत उठिये और भोजन पाईये दिन मान वहुत आ य गया है तब ऐसे शंकर स्वामी की आज्ञा पाय कर मंडिन मिसर जी ततकाल उठ खडे हुये और जल का पात्र लेकर संपूर्ण शिष्यों के सहित स्वामी जी के चरन और हाथ प्रक्षालन कर वाये फिर सनमान पूर्वक पंक्ती मे वैठार कर मुख से नाना प्रकार की विनती और वडाई कर कर यथारुची भोजन जो है सो जिमाय दिया तब स्वामी जी प्रसन्न चित होयकर परस्पर क कर और ज्ञान विचार की चरचा करने लगे तिस तें उपरांत फिर विदाय होयकर सब शिष्यों के सहित आनंद से मिथुला पुरी को चले आये इस प्रकार इह शंकर स्वामी और मंडिन मि सर जी की मनोहर गाथा जैसी क जगत मे प्रसिद्ध है तैसे मैने इहां गायन कर देई है इह शी
कैसी भी फलदायक गाथा है कि जो इसको प्री ती पूर्वक पढैगा अथवा सुनेगा तिस के शंकर भगवान की कृपा से सब कलेश और दुख दूर हो जावेंगी और भगवान के चरन कमलों की पवित्र भक्ती जो है सो प्राप्त होवेगी॥२५॥

कुछभी सिद्धांत नही होवेगा अर्थात हमारा सत्य
असत्य कुछभी जाना नहीं जावेगा तोते मेरे विचार मे
आवताहै कि इह तुमारी परम प्रवीन और सुशृ
पतनी अर्थात स्त्रीजोहै सो मध्यस्त मे बैठे इसके बी
च बैठनेसे हमारे संवाद कानिश्चय करके सिद्धांत हो
जावेगा इहविजे पराजय अर्थात हारजीत सब आप "त
कहिदेवेगी॥२२॥ चौपाई॥ सुनहु विप्र तुम श्रीया सया
नी॥ मैसाक्षात शक्तिवत जानी॥ असप्रकार जब
स्वामी उचारा॥ मेदिन मिसर कीन सुईकारा॥ तब अ
सपतनि विप्र कहैंवानी॥ शंकर स्वामि निजवदन वखा
नी॥ हेसुशील हितजानि हमारा॥ सत्यसत्य सिद्धां
तप्रकारा॥ हृदय विचारिमलहिं निजसोई॥ तुम्रे पत्त
पात गत होई॥ तुव न्याय करि देहु हमारा॥ अस
जब शंकर वचन उचारा॥ हरष विवस तब दुज वरना
री॥ कहिस बहुत मृदु वचन उचारा॥ शास्त्रार्थमे
सुनहु तुमारा॥ अह कछु करहु काज आगारा॥ तुम
संवाद करहु निजदोई॥ मेरे यथाउचित कछु होई॥ त
हिपर मै निज मति अनुसारा॥ करहुं कथन सिद्धांत
तुमारा॥ अस कहि सो पतिव्रता सुहाई॥ पावन
अमिय पाक विरचाई॥ राजे अन्य जवन विदाना॥
देखत सवन निपुण सनमाना॥ तिनपें आय वदन
उच्चारी॥ कीन संवाद जुगल तुमभारी॥ आतुर
भये नाथ अव कीजै॥ मिक्षा चर्णउक प्रमझीजे॥
मेदिन मिसर मोंभा वानी॥ श्रीय कर सुनि कटात
रस सानी॥ स्वामी हृदय हरष अनुरागे॥ देन अ
सीर वाद वहु लागे॥ सोरठा॥ असप्रकार समुदाय॥
जानावु ध जन हृदयनिज॥ दुज त्रीय दीनजगा य॥
अव आतुर सन्यस्त रह॥२३॥ टीका॥ फिर शंकर
कहते हैं कि हे ब्रह्मण इह तुमारी स्त्रीजोहै सो
परम चतुर है मैइसको साक्षात शक्तीरूप जानताहूं

अवत्येत जड़॥ जाहि वर्या कर पाहि॥ पारने पंडित जगत को॥ २८॥ टीका॥ तीसरे कृपाके धाम संसा रकाभय दूरकरनेवाले विष्णु अवतारी उदयनाचा री नाम करके बुद्धि प्रवीन विद्या और गुणों के सागर सबलोकों मेउजागर होतभये तिनकी मनो हर और हरष केदेवाली सुंदर महातमके सहितगा था जोहै सो हेसंत जनो आपके आगे गायनकरता हूं कहतेहैं कि वे भगवान दीनोके दुखदूर करनेवालेमि थुलापुरीमे आयकरके बड़े उत्तम ब्राह्मणोंकेघर विषें अवतार धारन करतेभये और थोड़ें कालमेवे द विद्या और नीती धरममे भलीप्रकार प्रवीन होयग ये न्याय शास्त्रमे तिनकी अधिकता जोहै सो गोतम मुनीके तुल्य होय तब तिसीकालमे एक को ई महाप्रवीन बोधाचार्ज किरणावली नाम करके टीकाके सहित बड़ा अद्भुत ग्रंथ यतन और श्रमसे रचाय करके शिष्योंका समूह सा थ लिये हुये मिथुलापुरीमे चला आवतामयाता है सो जैनमतका आचार्ज विद्या और गुणोंका समुद्र अभिमानके मत्तभया हुआ अपना बोध धरम प्रकट करनेकेवासते एकशिष्यको बुलाय करके कहनेलगा किहेपुत्र तुमारी कल्या न होवे अब विलंबको त्यागकर मिथुलाका राजा जोहै तिसके पास चले जावो और मेरी ओर से इह संदेस कहो किहेराजन वेद शास्त्रका मारग जोहै तिससे तू भूला हुआ हैं मिथ्या भ्रमक रके कुछ औरही मानरहा है अब जो तू श्रद्धा पूर्वक आयकरके हमारे धरम शास्त्र के वाक्य श्रवण करेंगा तो निश्चयकरके तेरे हृदय मे ज्ञान प्रकाश होजावेगा और तरक कुतरक भ्रम भय इत्या दिक सब मिट जावेगा अथवा तुमारा कोई बड़ा

सुनीती विद्वान पंडित कि जो वेद के तत्व को जानने
वाला है सो आयकर के मेरे सनमुख शास्त्र अर्थ करै
मै तिसकी विद्या चतुराई देखूं और दिखाऊं तहो
हारजीत आप ही जानी जावेगी तब गुरू की आज्ञा
पायकर के सो शिष्य ततकाल राजा के पास चला आ
या और गुरू का कथन भली प्रकार सब सुनाय दिया
ऐसे तिसके मुखसे वचन सुनकर राजा मुसक्याय
कर के कहने लगा कि भाई तुम अपने गुरू के पास जाय
कर अब मेरा भी इह कथन सुनाय देवो कि मेरे हृदय
मे भ्रांती अज्ञान है कि अथवा तेरे मै अब विलंब मत
लगाओ प्रातकाल ही हमारे इहां चले आवो मै तुमारी
विद्या बल और चतुराई जैसे बन पड़ेगा तैसे सब दे
ख लेऊंगा ऐसे कहिकर तिसको विदाय कर दिया औ
र इहां अपने सब पंडतों और विद्वान जनों को बुला
यकर कहने लगा कि भाई आज मेरे नगर मे एक
बोधमत वाला महा नास्तिक और बड़ी उग्रबुद्धी कर
के यती पंडित जो है सो आया है और जैसे केसा भी सा
मर्थ है कि जिसकी विद्या चतुराई का कोई पंडित भी
पार नहीं पाय सकता है ॥२६॥ चौपाई ॥ मोरी सभा प्रा
त दुज सोई ॥ आव हि परम दरप वश होई ॥ तुम त
हि सन निज मति अनुसारा ॥ शास्त्र अर्थ करि वि
विध प्रकारा ॥ जो जीतहु पंडित धरि छाती ॥ तो मै
अति प्रसन्न सब भांती ॥ नतर पराजय होत तुमा
रे ॥ उचित ग्रहण मत तासु हमारे ॥ सुनि अस व
चन भूप जब कहयो ॥ अधोवदन सब तूष्नि रहयो ॥
तिन मह निपुण ज्ञान गुण धामा ॥ रहे उदयना
चारज नामा ॥ सो बोले तब भूप सुजाना ॥ सत्य व
चन निज वदन बखाना ॥ पुनि जै विजै नृपति ज
ग होई ॥ हरि आधीन जानत सब कोई ॥ तुम चिं
ता परि हरि समुदाई ॥ देखहु मोर उकत बलराई ॥
यथा शक्ति संभाषण द्वारा ॥ खंडन करहुं तासु मत
सारा ॥ सुनि अस वचन भूप सुख माना ॥ विरच्यो

सभा प्रात निज नाना॥ ऊहे दूत नरनाथ नदेसा॥
जाय गुरुहि निज दीन संदेसा॥ सो सुनि हर्ष्यो
विपुल हंकारी॥ लिये संग सेवक निज सारी॥ आ
वा प्रात सभा नृपमाहीं॥ सकुच जास मानस क
छु नाहीं॥ सोरठा॥ तव नरनाथ प्रवीन॥ शास्त्र
अर्थ तहि सन करन॥ हरषि रजायसु दीन॥ उदय
नाचारज कहे वदन॥ २३॥ टीका॥ फिर राजा कहता
है कि मेरी सभा के बीच हंकार के वश भया हुआ
सो बोधाचार्ज प्रातकाल अवश्य आवेगा तुमति
सके साथ अपनी विद्या विचार के बलसे शास्त्र
अर्थ कर कर जो कदाचित तिस अभिमानी को जी
त लेवोगे तव तो मैं सर्व प्रकार करके प्रसन्न होऊं
गा नहीं तो तुमारे हरजाने पर हमको ति
सका ही मत ग्रहण करना योग्य होवेगा जब इ
स प्रकार राजा ने वचन उचारन किये तव सुन
करके सव विद्वान जो थे सो अपने अपने सीस
झुकाय हुये मौन हीं होय रहे कोई भी कुछ उतर
नहीं देता भया तहां तिनो विखे उजागर और प्र
धान बुद्धीवाले विद्या और गुणों के सागर एक उ
दयनाचार्ज हीं थे सो कहने लगे कि हे राजन यद्य
पि तेरा कथन सव सत्य है तद्यपि जगत मे जीत
और हार इह दोनो जो हैं सो तो भगवान के अधीन हैं
इस मे किसी का वल प्राक्रम कुछ नहीं चलता है प
रंतु हे प्रजापाल अव तूं अपने हृदय की चिंता औ
र शोक जो है सो त्याग और मेरी उ
क्ति सामर्थ वल प्रक्रम को देख जो मै अ
पनी संभाषण शक्ती के द्वारा अर्थात चरचा आ
लाप के द्वारा तिसके अखंड मत को कैसे खंडन
करता हूं इस प्रकार उदयनाचारज के वचन सुन
कर राजा अत्यंत प्रसन्न होय कर प्रातकाल
होते ही नाना प्रकार की सुंदर सभा जो है सो रचाय

चौपाई॥ अब त्रितिये नारायण अंसा॥ कृपानाथ
भवभीत विध्वंसा॥ उदयनाचार्य नाम उजागर॥ म
ति प्रवीन विद्या गुण सागर॥ तिन कर कथा महाम सो
हा॥ लोम हरष प्रद मानस मोहा॥ सो अब करहु क
थन सुखदाई॥ मिथुला पुरी विप्र गृह आई॥ अवतर
यो हरन दुख दीना॥ ~~[illegible]~~ विदत वेदपथ
परम प्रवीना॥ गौतम मुनि कर तुल्य सुहाई॥ न्याय
निपुण तिन कर अधिकाई॥ तब तेहि समय काहु इक
आवा॥ बोधाचरज सुमति सुहावा॥ किरण वली ग्रं
थ कल टीका॥ रच्यो करत भ्रम तासु अलीका॥ सो
असधरन जयन मत नागर॥ दरप मत्त विद्या गुण
सागर॥ लिये संग शिष गण अनुरागे॥ मिथुलापुरी
हरष जुत आये॥ बोध सिद्धांत प्रकट बेहेतू॥ बोल्यो
शिषहिं जयमनंद सेतू॥ पुत्र होहिं कल्यान तुमारी॥ त
जि विलंब अब जाहु सिधारी॥ राजे जहां भूप मिथुलेसा॥
उन कर देहु मोर संदेसा॥ सुनहै भूप पँथ जे हो मथ्या
भ्रांति मानि तुव रेहो मोर धरम बरवाका सुहाये॥ कबहुं
कि सुनहु श्रवण मन लाये॥ तोनि श्राप उपजहिं तोहि
ज्ञाना॥ मिटहिं कुतरक मोह भ्रम माना॥ वा कोई निपुण
नीति मति वारा॥ वेद मरम सब जानन हारा॥ होहिं तुमा
र देस नृप जोई॥ सास्त्र अर्थ मम सनमुख सोई॥ कर
हिं आय निज मति अनुसारा॥ विजय पराजय परहिं
निहारा॥ गुरु अनुसासन पाय शिष तें हीं॥ आवा बेग
नृपति गृह जाहीं॥ गुरु ~~[illegible]~~ बदन सब बरना॥
बोल्यो श्रवण सुनत पति धरना॥ तुम आपन गुरु स
न जन जाई॥ मोर कथन मुख देहु सुनाई॥ मोरे हृद
य भ्रांति कै तोरे॥ आवहु प्रात काल पै मोरे॥ मै तुमार
विद्या चतुराई॥ देखहुं यथाउ चित बनि आई॥ असकहि
तासु विसरजन कीना॥ ईहों नदेश नृपति अस दीना॥
सुनहु वचन मम पंडित सैनी॥ आवा एक निपुणमत
जैनी॥ सोरठा॥ आज मोर पुर माहिं॥ सो नास्तिक

संदेहू॥ सुनि अस भूप वचन तहि कालीन के राय॥ उदयना चारज के तन हेरा॥ सोरठा॥ जव देख्यो तातनाथ॥ चायो दुजवर मरम सव॥ कहिस वदन धुनि माथ॥ इन अत्रिअण कछु रहन नहीं॥ हरि प्रसाद पै राई॥ मैं निं मेत्र प्रभावतें॥ जलकर शिला व नाई॥ हरहु अवस्य प्रपंच जड॥ २८॥ टीका॥ तव ऐसे राजाका वचन सुनकर सो जयनी मुखसे साधू साधू उच्चार करके कहने लगा कि हे राजन मैं भी एही चहता हे तूं ने वडी कृपा कर के मेरे हृदय का मनोर्थ पूर कियाहे अर्थात सिद्ध कियाहे इतने मे सरव ब्रह्मलोकों विखे सु पू उदयना चार्जजी जोथे सोतहां ततकाल हीं तिस जयनी के मतको खंडिनकरने वाला प्रश्न जोहे सो करदेते भये तव सो वोधमत का आचर्ज सुनकर के और हृदय मे विचार करके उत्तर देने लगा और उदयना चार्जजी तिसकी उक्ती को खंडिन करते इसीप्रकार एक केहि दृढ और दूसरे केहि खंडिन करने मे तिन का इ वहुत ही संवाद होता भया और परस्पर चरचा आलाप करते करते तिन को वहुत दिन गये तव अंतको वे जयन मतका प्रवीन पंडित उक्ति और शक्ति से रहित वलहीन होय गया और तिसने मली प्रकार जान लिया कि इनकोई वुद्धीका समुद्र महांवीर और अजय पुरष है तव धीरज से रहित और व्याकुल होयकर के कहने लगा कि हे राजन तूं देख कि मे अकेला और इह सव मिल कर एकाकार वृति होय रहे हैं अर्थात सवकी एक सम्मती है मेरे कथनको कोई भी नहीं मानताहे और इह सव शत्रू का ही पक्ष करते हैं ताते हे राजन अव मै शास्त्रअर्थ को त्याग कर एक और ही वडा अदभुत चरित्र करताहे सो काहे तूं श्रवण कर कि एक

सुंदर और पवित्र शालिग्राम की शिला कि जिस में भगवा
न व्यापक हैं सो मेरे को मंगवाय देवो मैं तिस को अपने
मंत्र के प्रभाव से खंड खंड कर देऊंगा और फिर तिस को
जल समान करके बहाय देऊंगा तब तो मेरा मत सत्य प्रतीत
होगा और जो कदाचित इस को पूरब के तुल्य ब्रह्मा
ने फिर शिला बनाय दिया तो निश्चय करके इस का ही
मत सांचा है हे राजन मेरा मत काचा और असत्य हो
जावेगा परंतु अब ऐसी दृढ रहना चहिये मेरे हृदय
का संशय भी सब मिट जावेगा इस प्रकार तिस जय
नी का कथन सुन कर राजा उदयनाचार्जजी की ओर देखने
लगा तब उदयनाचार्जजी राजा को देखते हीं सब मर्म
पाय कर और सीसधुनाय कर अर्थात सिर हिलाकर कहने
लगे कि इस को ई शास्त्र अर्थ नहीं है परंतु हे राजन
तूं हृदय में सोच मत कर देखो भगवान की कृपा से अपने
मंत्र के प्रभाव से अभी जल की पूरब तुल्य शिला
बनाय कर इस अधम के प्रपंच अर्थात माया को दूर
कर देता हूं" ऐसे तिन का कथन सुन कर के राजा ने ब
डे हरष से एक सुंदर पवित्र और दृढ शालिग्राम
भगवान की शिला जो थी सो [illegible] ही सुवर्ण के पात्र
में धर कर सभा के बीच तुरत ही मंगवाय लई तिस
शिला को देखते ही जयनी ने अपना मंत्र उचारन
किया तब सब के देखते ततकाल ही वे शिला जल
स्वरूप होय गई और जल भी तुरत तहां ही लोप हो
गया इस प्रकार तिस के मंत्र का प्रभाव देख कर
सब लोग आचर्ज के वश होय गये एक उदयनाचा
र्जजी सावधान रहे और तिस मंत्र के प्रभाव को सहार
नहीं सकते भये ततकाल ही तिस जयनी की माया
और मत को खंडिन करने वाला मंत्र जो सो उचारण
कर देते भये

चौपाई॥ तब नरेस ततकाल सुहाई॥ लीन रुचि
र दृढ शिला मंगाई॥ हेम पात्र धरि सभा मझारा॥
देखि बोध निज मंत्र उचारा॥ शिला बचित्र तुरत

जल होई॥ पुनि जल भये लोप तत्तसोई॥ मंत्रप्रभाव देखि नरनारी॥ देखत भये चकित चित भारी॥ तव दुजसु नृप उदयना चारी॥ सो प्रभाव नहिं सके संभारी॥ रिस कि कोध मन खेद न धारा॥ तुरत मंत्र निज वदन उचारा॥ तव सर्व कर अवि लोकत ताहीं॥ भाउ तपन्न सलिल महि माहीं॥ पुनि पूरव वत बन्यो सुहावन॥ शालिग्राम शिला मन भावन॥ भूप सहित देखत जन सारे॥ अस विचित्र अविचरित निहारे॥ साधु साधु कहि मन अनुरागे॥ बहु विधि वदन प्रसंसन लागे॥ तव बोले वचन अचारो॥ सुनहु सभ्य जन वात हमारी॥ मेरु फर कीन कथन इहि केरा॥ अवँकुर करहिं भवन पर मेरा॥ छिन रउ तंग ताल दुम जाई॥ हम जुग कर हि प्रत ज्ञाराई॥ वेद प्रमाण मोर अस काहा॥ अप्रमाण इहि कर मन नहा॥ अस कहि सो दुवि देप चुप होई॥ जो कर नृपति सत्य मत होई॥ तो कर रहहिं प्राण वपु अता॥ करि हैं आयु वेद तहि रता॥ अरु नरेस मिथ्या मत जासा॥ सो महि पर तहो व तत नासा॥ कहिस भूप सुनि प्राण अवि ज्ञा॥ कीन तुम हुं दुइ जवन प्रतिज्ञा॥ सोरठा॥ सो मोरे मन माहिं॥ सुनहु विप्र प्राणांत तुव॥ अस कछु भावति नाहिं॥ इति तें सो दुविराम तुव॥ ९९॥ टीका॥ ऐसे तिसका कथन सुनकरके राजाने हरषसे एक सुंदर पवित्र और बडी हुई शालिग्राम भगवानकी जोथी सो सुवर्णके पात्रमे रखवाय कर सभाके वीच तुरत ही मंगवाय लई॥ तिस शिलाको देखते ही जयनीने अपना मंत्र जो है सो उच्चारन किया तव सव के देखते तुरत ही वे शिला जलसरूप होय जाती भई और फिर जलभी ततकाल सव तरही लोप होय गया इस प्रकार तिसके मंत्रका

देता भया॥ और ऊनों तिस जयनाचार्ज के शिष्यने
राजा कासेदेस और कथन जोणा सो सब
सपष्ट करके भली प्रकार सुनाय दिया तब सो अभिमानी
सुनकर के हसा और प्रातकाल होते ही अपने से पू
र्ण शिष्यों को साथ लिये हुये अभय होय कर राजा
की सभा मैं आय प्राप्त भया तिसको देखकरके
फिर तिसके साथ शास्त्रार्थ करने के वासते राजाजो
है सो प्रसन्न होयकरके उदयनाचार्जजीको आज्ञा दे
ता भया ॥२१॥ चौपाई॥ भूप वचन सुनि साधु उचा
रा॥ दरपमत्त जेठ नास्तिक मारा॥ मोरे एहु मनोरथ
राया॥ सो पुर कीन तुमहु करि दाया॥ तव दुज सुघ
उदयनाचारी॥ तुरत तास मत खंडिन कारी॥ हृदय
विचारि प्रसन्न करि दीना॥ सुनत श्रवण सोई जयन
प्रवीना॥ उत्तर देत गुनत हे कारी॥
भयो संवाद परस्पर भारी॥ करहिं एक दूठ दूसर
खेडा॥ असप्रकार संवाद प्रचेडा॥ करत परस्पर
तिनकर नाना बीति गये बहुते दिनमाना॥ तव गा
त शास्त्र उक्ति बल हीना॥ भयो अंत मत जयप्रवी
ना॥ जाना अजय वीर बुध कोऊ॥ बोल्यो विष्यत
धीर गत सोऊ॥ मै एकल इह सकल जुराने को
ऊन वचन मोर नृप माने॥ इह सब करहिं पदा अ
रिकेरा॥ ताते सुनहु वचन नृप मेरा॥ परिहरि शा
स्त्र अर्थ मैराई॥ करहु विचित्र चरित अधिकाई॥ सो
तुम सुनहु श्रवण मन भावन॥ शालिग्राम शिलावर
पावन॥ जेहि मध व्यापि रहो हरिराई॥ सो
मोरे तुव देहु मंगाई॥ मै निज मंत्र प्रभाव प्रचंडा॥ क
रहु भूप देखत तुम खंडा॥ पुनि जल सदृश देहु व
हाई॥ तो मत मोर सत्य दृढ राई॥ जो पूरव सम वि
प्र प्रवीना॥ शिला बनाय बहुरि तस दीना॥ तो नि
श्चय दृहि कर मत सोचा॥ मेरो कथन भूप सब कोचा॥
अब सुई कार नृपपति वरणहु॥ मिटहिं मोर मानस

प्राण त्याल क प्रतिज्ञा जो है सो मेरे चित्तको नी
की नही लगी अर्थात मेरे भावती नहीं है तो ते को
तुम कृपा करके इस प्रण को त्याग देवो कोई औ
र चमतकार देखो और दिखावो ~~तब आचार्यजी~~
~~कहते~~ ॥२९॥ चौपाई॥ ~~कि~~ बोले अस
दुजवर ताहो॥ तुमहिं न काहु दोष नरनाहो॥
हम निज भक्ति शास्त्रबल पाई॥ लागे करन प्र
तिज्ञा ताई॥ होहिं नरेस सत्य मत जासा॥ कीहे
तुम उपासना तासा॥ अरु मिथ्या मत जासु निहा
रहु॥ तासु ग्रंथ गहि ~~[illegible]~~॥ अरु तिन
मे तत पर नर जोई॥ तासु अचारि कोप बस होई॥
देउ नरेस देउ निज भारी॥ आस्तिक होहिं धरम
रत सारी॥ दाऊ विप्र सुनि गिरा सुहाई॥ जयनी
ओर दृष्टि निज पाई॥ सो प्रमाण कहि उठ्यो रिसा
ई॥ सिखर तुरंत ताल द्रुम जाई॥ संजुत विप्र
जाय सठ ठाढ़ो॥ निज निज मत प्रभाव उर
गाढ़ो॥ वेप्रमाण विप्र मुख दाखो॥ अप्रमाण
नास्तिक अस भाखो॥ सोरठा॥ अस कहि चुत भये
सोय॥ महो विटप कर शिखरतें॥ आस्तिक ना
स्तिक दोय॥ तुमहि रखहु निज निज हृदय॥ ३०॥
टीका॥ त उदयनाचार्यजी कहने लगे कि हे रा
जन इसमें तुमारे को कुछ दोष नहीं है हम पर
स्पर अपनी भक्ती और शास्त्रका बल पाय क
रके इह प्रतिज्ञा करने लागे हैं ~~कि~~ अब इस
विखें हे नरेस जसका मत साचा प्रतीत हो
गा तुम तिसकी ही उपासना करियो अर्था
त तिसके ही मत अनुसार चलियो और जि
सका मत असत्य देखोगे तिसके ततका
लहीं सब ग्रंथ ले ~~[illegible]~~ करके ~~[illegible]~~
समुद्र

देगे

विर्हे दुकार्य को और जो कि तिन ग्रंथों
के पढने मै ततपर होंगे तिन को कोप से पकडकर
और भली प्रकार ताडना करकर अपने देश से बाहि
र निकाल दीजे तब तो तुमारे राज मै सब लोग
सुंदर धरम के सहित आस्तिक और भगवान की
भक्ती प्रीती वाले होय जावेंगे इस प्रकार आचारी
जी के वचन सुनकर राजा तिस जयनी की ओर
देखता भया कि इन क्या कहता है तब सो अभिमानी
हूंकार करके बडे कोप से तमककर उठ खे
डे हुआ आचारी जी को लेकर ततकाल तिस
अत्येत ऊंचे तमाल वृक्ष के शिखर पर जाय
के करके स्थित हो जाता भया दोनो के
हृदय मै अपने अपने मत का प्रभाव उमड रहा है
वेद प्रमाण आचारी जी ने मुख राखो और अप्र
माण मुख से तिस नास्तिक ने भाखो ऐसे कहिकर
वे दोनो आस्तिक और नास्तिक तिंव डे दीर्घ त
माल वृक्ष के शिखर से कूदकर पृथवी पर गिर प
डते भये ॥२०॥ चौपाई॥ तब वेद न निज विरद संभा
री॥ आवत पंथ उदयनाचारी॥ सादिर सहित क
रन उरधाई॥ राख्यो धरनि सहज प्रभु ल्याई॥ ना
रायण निज हृदय चितारत॥ आवान पति नि
करात आरत॥ सो सठ बोध गगन पथ नाना॥
त भ्रमें भ्रमत जब धरनि गिराना॥ सकल अवैव
खेड मृत भयऊ॥ चिन्ह मात्र कछु शेष न रहेऊ॥
देखत नृपति सकल विदाना॥ अति अचरज नि
ज निज मन माना॥ करि प्रणाम चरनन समुदाई
लोगे करन द्विज सुश्रूषा ठाई॥ भक्ति पूरव क वेद
प्रमाना॥ तब नर नाग सत्य जीय जाना॥

अरु जे ग्रंथ बोध मत पाये॥ दीन मूल सब स
लिल बुडाये॥ जहँ लग रहे जयन मत वारे॥ क
रि नरेस अन्वेषण सारे॥ तत छण वहिर दे
स निं कीने॥ विपुल सुधरम निरत करि लीने॥
आपु भक्ति पूर्वक अनुरागा॥ रुचिर सुधरम क
रने नृप लागा॥ सुचि उपश्रावि प्र वर काई॥
बन्यो तासु शिष सेवकाई॥ बहुविधि कीन मू
प सनमाना॥ दीने चैल द्रव्य मणि नाना॥ सो
रठा॥ एक समय द्विज सोय॥ जगन्नाथ दरस
न करन॥ चले मुदित मन होय॥ आये पुरषो
त्तम पुरी॥ २२॥ टीका॥ तब वेदों ने अपना
विरद सुमर्ण करके मारग मेहीं आवते उदयना
चार्ज को बडे हरष और सनमान से हाथों मे धार
कर सहजे हीं ल्याय करके पृथ्वी पर राख दिया
तब दुख और कलेश से रहित सावधान होय कर भग
वान को सुमरते हुये आचारी जी राजा के पास च
ले आवते भये और सो अधम बोध अर्थात ज
यनी आकाश के मारग भ्रमता भ्रमता जो पृथ्
वी पर गिरा तो सब अंग अंग टूट कर तत्काल मृत्यु
को प्राप्त होय गया तब तिसकी ऐसी दशा दे
ख कर के सब विद्वान बडे अचरज के वश होय कर
उदयनाचार्ज जी के चरनों पर बार बार दंडप्रणाम
करके अनेक प्रकार की शलाघा और बडाई करने ल
गे राजा जो है सो भक्ती पूर्वक वेद और पुरा
णों को सत्य जान कर तिन जैनियों के ग्रंथ शा
स्त्रों को मंगवाय करके जल विखे ~~डुबवायके~~
~~सब~~ डुबाय देता भया और जहाँ जहाँ कोई ज
यन मत वाला देख पडा पकड कर के तुरत अपने
देश से बाहिर कर दिया और बहुत सुधरम के

अद्भुत प्रभाव देख करके सब लोग आपने अपने
हृदय में आश्चर्ज मानते भये तब उदयनाचार्ज
जी तिस जयनी के ऐसे प्रभाव को सहार न हीं सके
कोप से तुरत हीं तिसकी माया और मत को खंडन
करने वाला मंत्र जो है सो उच्चारण करदेते भये तब
सबके देखते देखते हीं तहां अकस्मात पृथवी पर
जल प्रकट होयगया और तिसतें वुही पूर्ववत सुं
दर और पवित्र शालिग्राम की शिला जो है सो बन
गई तब तो राजा के सहित सब पंडित जन इस आ
श्चर्ज कौतुक को देखकर साधू साधू कहते हुये आचा
र्जी जी की बारबार श्लाघा और बड़ाई करने लगे
और फिर आचार्जी जी कहते भये कि हे सपूर्ण
लोगो अब मेरी और बार्ता सुनिये कि मैंने इसके
कथन और मनोर्थ को पुरकिया है अर्थात पूर्ण कि
या है अब चहता हूं कि इह मेरे भी कथन और
मनोर्थ को पूर्ण करे सो मेरा मनोर्थ क्या है कि मै
और इह दोनो बड़े ऊंचे ताल वृक्ष के शिखर पर जा
यकर के प्रतिज्ञा करते हैं मै कहता हूं कि वेद सत्य
और प्रमाण हैं इसका मत इह रहा कि वे असत्य
और अप्रमाण हैं ऐसे थापन करकर हम दो
नो तिस तमाल वृक्ष के शिखर से कूद पड़ते हैं
तब हे राजन जिसका मत सत्य होगा तिस
का शरीर और प्राण अक्षत रहेंगे अर्थात नाश
को प्रापत नहीं होवेंगे और वेद तिसकी आप
सहायता कर लेवेंगे और हे प्रजापाल जिसका
मत असत्य होगा सो पृथवी पर गिरता ही अंग
अंग टूटकर प्राणों से रहित हो जावेगा जब इस
प्रकार उदयनाचार्ज जी के मुख से वचन सुने तब
राजा कहने लगा कि हे उदयनाचार्जी इह तुमारी

"न सुखदाना॥ देखि दृग दरसन दुज नाथा॥ करत प्रणाम धरनि धर माथा॥ भक्ति पूर्वक बहु दिस लावा पूजन कीन देव मन भावा॥ पुनि भेटादि राखि प्रभु आगे॥ अस तुति करन विप्र वर लागे॥ अस प्रकार हरि दरसन पाई॥ आये बहिर भवन त रकोई॥ कछुक दिवस लग विप्र प्रवीना॥ तहो निवास रुचिर निज कीना॥ विस्व नाथ करजव न पुजारी॥ तब तिन कहे निसि स्वपन उचारी॥ दीन जगाय दया निधि एहू॥ पावन मोर पीतो वर जेहू॥ मोरे भक्त ~~नि~~ व्रत धारी॥ विदत प्रवीन उदयना चारी॥ सोरठा॥ तिन कहे देव उ प्रात॥ मम अैसा अवतार जग॥ मोरी स्थिति वि दीत॥ तहि प्रसाद से सृति सकल॥ न तर बोध दुखदाई॥ दुराचार नास्तिक निडर॥ ते सामर्थ्य समुदाई॥ करवे हित जिस कार मम॥" फिर उदयनाचार्जजी कहते हैं कि हे भगवान तुमारी स्थिती और बड़ाई जो है सो तो सब मेरे आधीन है अर्थात मेरे ही हाथ है देखिये कि तुमारी महिमा के दूर करनेवाले बोध अर्थात जयनी बहुत उतपन्न भये हूये हैं जब इस प्रकार उदयनाचार्जजी ने मुख से उचारन किया तब ततकाल ही मुंदे हूये चारो द्वारे खुल जाते भये इस अदभुत को देखकर पुजारियों के सहित सब लोग बड़े अचरज को प्रापत हूये तुरंत ही बड़े सतकार से साथ लेकर के पुजारी जो हैं सो भगवान के भवन मे चले आ~~ते भ~~ये और तहाँ तिन को सरव सुखों के देने वाला जगन नाथ स्वामी का दिव्य दरसन जो है सो भली प्र

कार करवाया तब भगवान का ऐसा मनोहर दरसन पायकर ब्रह्माचारी जी पृथवी पर माथ धरकर बारबार दंड प्रणाम करने लगे और फिर भक्ती प्रीती से सब पूजन सेवन करके और दीनता से भेटा आगे रखके कर नाना प्रकार की अस्तुती जो है सो करते भये ऐसे भगवान कृपानिधान का दरसन पाय करके फिर ततकाल भवन के बाहिर चले आये और कितने क दिन तहां भगवान की नगरी मे निवास करते भये एक दिन रात्री के समय पुरषोतम भगवान अपने पुजारियों सपने मे कहने लगे कि उदयनाचार्ज नाम करके मेरा परम हितकारी और ब्रतधारी भक्त जो ई हां मेरे नगर मे निवास करता है तुम प्रातकाल होते ही मेरा रूप पीताम्बर अर्थात पीत वस्त्र जो है सो ओढने के लिये तिस मेरे प्रवीन भक्त को दे देवो क्योंकि वे मेरा ऐसा अवतार है और मेरी स्थिती जगत मे तिसके ही प्रसाद से है नहीं तो महा मंद और अधम दुख के देने वाले दुष्ट बोधाचारी पृथवी तल पर मेरे निरादर करने को सामर्थ है ॥२२॥ चौपाई॥ देखि रजनि अस सपन पुजारी॥ सकल परस्पर हृदय विचारी॥ पीतांबर भगवन सुखदाई॥ तिन है दीन द्रुत दुजहीं लयाई॥ पाय दिव्य हरि चेल नवीना॥ विप्रप्रवीन सीस धरि लीना॥ करि प्रणाम पूजन सनमाना॥ लीये प्रसाद कीन प्रस्थाना॥ मिथुलापुरी हरषउर छाये॥ तेजुत शिषन भवन निज आये॥ तहां रजनि दिन विविध प्रकारू॥ लग्यो होन बर धरम प्रचारू॥ वेद प्रवीन लोक सब कीने॥ देस देस पंडित भरि दीने॥ विस्तृत भयो धरम पथनी के॥ विप्र प्रसाद सुलभ सब हीं के॥ आज है तास वंसधर केरे॥ वेद निपुण पंडित बहुतेरे॥ सो अस विप्र उदयनाचारी॥ भये जठिर अवसर

ऐसे भगवान

अनुसारी॥ जरा ग्रस्त जब भयो शरीरा॥ तब आये सरिधर पुरि धीरा॥ कछुक दिवस जब गये विताई॥ करत निवास तहां दुजराई॥ तब जो ईश ब्रह्म नालविख्याता॥ भक्तीकरनका कर सुखदाता॥ तहां आय अवसर अनुसरयो॥ लीलामात्र प्राणपरिहरयो॥ तजि नरकाय पुरातन देहू॥ वैस्नव रूप चतुरभुज जेहू॥ धरि विचित्र निज लोक सिधाये॥ अस प्रकार अवनीतल आये॥ रत्नक धरम उदय नाचारी॥ बोध प्रचार धरनित्रयकारी॥ तिन कर कथा महा तम एहू॥ सादिर सुनहिं श्रवन नर जेहू॥ सोरठा॥ होहिं धरम रत सोय॥ उपजहिं हरिपद भक्ति उर॥ अरु निश्चय तहि होय॥ दिन दिन सुमति प्रकास जग॥ २३॥ टीका॥ इस प्रकार रात्री के समय स्वपन देख करके सब पुजारी परस्पर विचार कर के भगवान का बड़ा दिव्य पीताम्बर जो है सो ल्याय कर के प्रतीसन मान से उदयचार्जजी को दे देते भये तब सो आचारीजी से परम पवित्र और सुखदायक पीतांवर को ले कर के हरष मैं मगन भये हुये वारवार सीस पर धार करते हैं और अपने आप को धन्य धन्य मानते हैं इस प्रकार कृपासिंधू पीतांवर प्रसाद पाय कर और भक्ती प्रीती से पूजन सेवन कर कर फिर वारवार देइ प्रणाम करते हूये विदा होय कर सब शिष्यों के सहित मिथुला पुरी मै अपने घर विखे चले आये तहां तिन की कृपा से दिन दिन अधिक ही धरम का प्रचार होने लगा सब लोक वेद मै भली प्रकार प्रवीन कर दिये देस देस विखें जहां तहां पंडित ही प्रकट होय गये सर्व ठौर मे धरम ही देख पड़ता है अब लग भी तिन

सहित आस्तिकभी बनायलिये और आप भक्ती प्रीतीवाला होय करके राजा नानाप्रकारके धरम और सुकरम जो हैं सो करने लगा उदयनाचार्ज जी का मंत्र उपदेश पायकर तिनकाही सेवक होय गया और कंचिन भूषण वस्त्र मणियों करकें अनेकप्रकार सेवन सतकार कर ~~ताभया~~ ताभया तब तिसतें उपरांत कुछदिन पाय करके उदय नाचार्जजी जगननाथस्वामी के दरशन करनेको आनंदपूर्वक पुरषोतुमपुरी को चले आवते भये॥ २१॥ चौपाई॥ मज्जन कीन प्रात सनमाना॥ उदय अरुण दुजनाथ सुजाना॥ सन मुख जाय सुचिर हरि द्वारा॥ करिदरशन दृग कीन जुहारा॥ बहुरि प्रवेश भवन जब चाहा॥ तब कपाट सनमुख जोरि दाहा॥ भा संलगन आपु द्रुत तोहा॥ दूसरऔर गवन दुजनाहो॥ मुद्दो सोऊ तब तीसर कोरा॥ आये विप्र सोच नहिं थोरा॥ असप्रकार चहुतिये चतुराया॥ मूंदित द्वार धरनिसुरपाया॥ विसमयविवस लोग सब देखी॥ सकहिं न चरित चारु प्रभु लेखी॥ तब दुज सृष्ट उदयनाचारी॥ निज वर भक्ति दरप अनुसारी॥ कहिस मत्त कछु भये मुरारी॥ निज ईश्वर्ये विवस मदभारी॥ ~~मूंदि द्वार~~ लागे मोर करन अपमाना॥ मूंदि द्वार तुव कृपानिधाना॥ पै तुमार इस्थिती बड़ाई॥ मोर अधीन सुनउ सुर राई॥ तुम महिमा परिहरन करेता॥ उपजे बोध विपुल भगवंता॥ जब दुजवर अस बदन उचारा॥ ततछन खुले जुगल जुग द्वारा॥ रहे जवन तहं निकर पुजारी॥ देखत भये चकत चित सारी॥ लिये संग दुजनाथहिं ताहो॥ आये उदय भवन पतिजाहो॥ दरशन ललितदिव्य भगवाना॥ कीन कराय सरब

केवल के वेदमें प्रवीन बहुत पंडित हैं सो ऐसे
धरमके स्थापित करने वाले उदयनाचार्जजी स
मय पायकरकेवृद्ध अवस्था को प्रापत होयगये
तब शरीरको छिणल विचारकर श्रम और यतन
करके शिवपुरी जो कासी है तिसविखें चले आव
ते भये तहां निवास करते और विश्वनाथ
का दरसन पावते हुये जब कछु काल वतीत हो
यगया तब समय के अनुसार एक दिन मणीक
रनका के ब्रह्मनाल विखे आयकर कौतुक से सहजे
ही प्राणों को त्याग देते भये और मानुष्य को छो
ड़कर अपना पूर्वला वैस्नव चतुरभुज रूप श
रीर जो है सो धारन करके अपने लोक को चले
जाते भये इस प्रकार इह धरम के रत्तक और
बोध प्रचार को जगत से नास करने वाले
उदयनाचार्ज जी लोगों में प्रसिद्ध होते भये ति
नकी इह बड़ी मनोहर और अदभुत गाथा जो
है इसको जो कोई प्रीती पूर्वक पढेगा अथवा
श्रवण करेगा तिसको भगवान की कृपा से अव
श्य धरम की प्रापती होवेगी और हृदय मैं दिनदिन
सुख और सुमती की अधिकता होती जावेगी॥
२२॥ इति श्रीभक्त विनोद ग्रंथे भगवदभक्त महा
तमे भाषाटीकायां शंकराचार्ज तथा उदयना
चार्ज जे चरितवरणने नाम ४२ तरंगः ==

सयानी॥ सुचिव्रत नाम मृतक नृपरानी॥ उरविचा
रि रक्षा निज प्राना॥ पुत्र सहित द्रुत किये पयाना॥
५८ धृष्टद्युमन नृपराज ऊदारा॥ आई त्यगत धामधन
सारा॥ तहां भूपकर सचिव अवासा॥ पुत्र सहित
हि कीन निवासा॥ तासन विथा सकल निज वरणी॥
सचिवहिं सुनत लागि अति करणी॥ कहि करि तासु
विविध सतकारा॥ दीन भवन निज वास नयारा॥ अ
सन वसन सेवन सब कीना॥ आरत जानि मल
हिं सुधि लीना॥ यद्यपि तासु रुचिर आगारा॥
दीन प्रवीन सचिव सुख भारा॥ सोरठा॥ तद्यपि
मरण वियोग॥ करि चिंतन निज प्राणपती॥ अ
ति चिंता दुख रोग॥ मानहिं जीय तीय पति चूना॥२॥
टीका॥ पूर्व काल विखे जगत मे एक बल पराक्रम
का धाम गुण प्रताप और सुख संपती कौ निधीन
हो सूर वीर धृष्टद्युमन नाम करके राजा बडा उजा
गर होता भया तिस के राज के सामीप ही एक सु
चिव्रत नाम करके छोटा सा राजा निवास करता था
तिस के घर मे एक बडा सुंदर रूप की नधी बालक उ
तपन्न होता भया कि जिस का नाम चंद्र हास राखा
गया सो जब पांच वरष का होय गया तब शत्रुओं
ने प्रबल होय करके तिस के पिता को रण मे वध कर दि
या अर्थात मार दिया और राज काज धन धाम इ
त्यादि विभूती जो थी सो सब छीन लई तब चंद्रहा
स की माता अपने प्राणों की रक्षा विचार कर और
सब धन धाम को त्याग कर पुत्र को साथ लिये
हूये धृष्टद्युमन राजा के राज विखे चली आव
ती भई तहां तिस राजा का मंत्री जो था तिस के
घर मे आय कर अपनी विथा और कलेश सब
सुनाय देती भई तब मंत्री सुण कर के अत्यंत
दया के वश हो जा[illegible] य गया और अपने घर के

बीच तिसके निवास करने को एक बड़ा सुंदर न्यारा
हीं थर दे दिया खानपान आदिक विच स्यामी सब बां
ध दई तिस को विपता के वश दुखी जान कर भली प्र
कार सेवा सत[illegible]कार करता भया यद्यपि
मंत्री ने तिस राजपत्नी को सरव प्रकार करके सुख और
आनंद दिया तद्यपि पती को मरण वियोग को सुमर
करके परम चिंता और कलेश को प्रापत होती थी ॥२॥
चौपाई ॥ अस प्रकार निज पुत्र समेता ॥ करहिं सकुच
जुत वासन केता ॥ रहा एक सुत सचिव प्रवीना ॥ त
हि सन चंद्रहास मन लीना ॥ खेलत रहहिं सदा सुख
मानी ॥ प्रीत रीत नहि जाये बखानी ॥ तब [illegible] तांके
खेलत दिन एका ॥ मिल्यो आय इक संत बबेका ॥
शालिग्राम सुलप शिल पावन ॥ अति बचित्र
सुभूत मनभावन ॥ देत तासु निज पेषहि धारा ॥
कहि प्रकार पूजन सुभ चारा ॥ चंद्रहास तब दृगनन
देखी ॥ शिला बचित्र दिव्य अवशेखी ॥ गयो मोद
सुख हृदय अघाई ॥ अनायास मानहुं निधि पाई ॥
तसकर त्रास तास जीय जानी ॥ राखि सवदन प्रे
म सुख मानी ॥ भोजन समय बहिर मुख ल्याई ॥
करि आचार विधि जुत समुदाई ॥ पुनि नैवेद
लाय सनमाना ॥ राख्यो बांधि बसन परिधाना ॥
करहिं आपु भोजन पुनि बाला ॥ नित्य तासु अ
स नियम रसाला ॥ एक काल क्रीड़ा सुख रात्यो ॥
संजुत सचिव पुत्र मन मात्यो ॥ धृष्टद्युमन नृप
सभा मझारा ॥ आय तिसु न जुग कीन जुहारा ॥
जहं बैठे सामु दृक चच्छिन ॥ सुमति निधान बा
म दिसि दच्छिन ॥ पृथम हिं नृपति बोलि मंगवा
ये ॥ निज निज रिष्ट सहित सब आये ॥ देख्यो ति
नहिं बाल बल धामा ॥ नृप सुत चंद्रहास जहि ना

मा॥ बदन मूंघ सब न भाषन लागे॥ सकुच भीत
मान सनि ज त्यागे॥ सोरठा॥ सुनहु धेनु दुज
पाल॥ इह बालक आक्रम नथी॥ जो कर भाल
रसाल॥ लसहिं राज सुख संपती॥३॥ टीका॥
इस प्रकार अपने पुत्र के सहित सोच और संकु
च के बस भई हुई रानी तहां निवास करती भई
तब तिस मंत्री का एक बडा सुंदर नवीन बालक जो
था तिस के साथ चंद्रहास की बहुत प्रीती होय गई
दोनो परस्पर रात्रीदिन क्रीडा विलास करते
और खेलते रहते थे एक दिन तहां खेलते खे
लते तिन के पास एक बडे महातमा और ज्ञान ध्यान
की मूरती संत जो थे सो आय गये और वे चंद्रहा
स को देखकर बडी प्रीती से एक पवित्र छोटी
सी शालिग्राम की शिला ~~दिखा~~ देकर आपअ
पने मारग को चले जाते भये तब चंद्रहास तिस
अद्भुत शिला को देखकर हृदय में ऐसा सुख औ
र आनंद मानता भया कि जो कथन नहीं किया जा
ता मानो तिस को बिना श्रम और यतन के हीं नि
धी प्रापत होय गई है तब चौर के भय से तिस शिला
को अपने मुख बिखें हीं राखने लगा भोजन के स
मय मुख से निकाल कर सनमान से सनान देता
और पूजन सेवन करता फिर नैवेद लगाय कर
तैसे हिं यतन से बांध कर मुख में राख लेता और
पीछे आप भोजन पावता था इस प्रकार तिस का
रहनि त्य नियम था एक समय ~~तिस ने~~
चंद्रहास और मंत्री का पुत्र दोनो खेलते खे
लते राजा धृष्टदुमन की सभा के बीच आय
करके प्रणाम करते भये तब तहां राजा के
आस पास दहने बायें बडे बडे भारी विद्वान

अथ चंद्रहास चरितं

दोहा॥ नाय सीस गुरुवर चरन नंमृत नाभादास॥
चंद्रहास अविचरित कहे लागे करन प्रकास॥
प्रमाणिकाछंद॥ सुनो कृपाल पाव
नी॥ कथा विचित्र भावनी॥ प्रमोद बोध दायनी॥
सुची सजस्स श्रायनी॥ कलेस शोकहारनी॥ भ
वो पयोधि तारनी॥ सुप्रेम नेम दातनी॥ प्रचंड
पाप पातनी॥ सोरठा॥ सुनहि श्रवण नर जेहु॥
इहि कहे पावन प्रीति जुत॥ हरिपद नलिन सनेहु॥
उपजहि अविरल भक्ति उर॥ १॥ टीका॥ अब नाभादास
जी गुरु महाराज के चरनो पर सीस नायकर और से
पूर्ण संत जनो को वंदना कर कर चंद्रहास की
मनोहर गाथा जो है सो गायन करने ले कहते हैं कि
हे संतो इह गाथा पवित्र पावनी और विचित्र मन
को भावनी है ~~और बुद्धी प्रेम बोध के देनेवाली~~ बुद्धी
विचार प्रेम आनंद और कल्यान के देनेवाली
संसार के भय और पापो का नास करनेवाली
है जो इस रमणीक गाथा को श्रद्धा और प्रीती से
श्रवण करैंगे तिन को अब श्री भगवान के चरन कमलों
मे अविरल भक्ती होय जावेगी किजिस मे कोई विरला
नहीं है॥ २॥ चौपाई॥ भयो एक पूरब बलशाला॥
धृष्टदुमन जग नाम भुआला॥ विभू सुमति गुण
सेपति नागर॥ सूर वीर सब लोक उजागर॥ नहि
क्षितपाल राज सामीपा॥ रहा बसत इक अलप महि
पा॥ उपजा पुत्र नासु महिपाला॥ चंद्रहास जहि नाम
रसाला॥ जब ते भयो बरष जुग तीना॥ जनक तास
रिपुअन हत कीना॥ सेपति राज धाम धन धरनी॥ ली
नहि छीन रिपुन रिपुकरनी॥ चंद्रहास कर मातु

सनमान पूर्वक भोजन जिमायकर विदाय करदेता
भया और आप तिनका कथन हृदयमें सुमर
कर सोच करताकरता इह सिद्ध करताभया कि इ
स बालकका अब वधकरना अर्थात मारदेनाही
योग्य है ऐसे विचार करके चांडाल जो है तिनको
बुलायलिया और गुपत कहिदिया कि तुम इसचं
द्रहास नामा बालकको कहीं निरजन वनविषेले
जायकर कि जहां कोई देखता नाहो खड्गका घात
देकर मारदेवो और मेरे दिखावने केलिये तिसका को
ई एकअंग काटकरके लेआवो तोमें जानू याकि वे
अवश्य मारागयाहै और तुम जानोकि इह भेद और
किसीदूसरेको जाननापवै ॥४॥ चौपाई॥ सुनि अस
गुपतवचन नरराई॥ करि चांडाल कपट चतुराई॥
सिसुहिं लेत प थ विपुन सिधारा॥ ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~॥ कहि मृदु वचन अनेक प्रकारा॥
जानहि मर्म बालकछु नाहीं॥ भक्ति हेतु ठाकर
मुख माहीं॥ राखहीं प्रेम प्रीति जुत पूजा॥ विधि
वत करहिं भाव तजि दूजा॥ तास पुनीत भक्ति वश
तेहीं॥ भक्तपाल भगवन प्रभु जेहीं॥ सात्वकि बुद्धि
दीन चंडालें॥ मांनस भयो तास तत कालें॥ को
मल परम लागि अति दाया॥ विमल विवेक [illegible]ज्ञा
न उरछाया॥ अहो विपुल आश्चर्य गुसाईं॥ इ
ह बालक अनाथ कर न्याईं॥ निर अवलेव सा
मि पि तुही ना॥ र[illegible]दा करहिं कवन इहिं दीना॥
जननी जास विरहें पति मारी॥ धृष्टदुमन नृप
सदन सिधारी॥ तास ~~[illegible]~~ करहिं निवा
सा॥ सुखसे पति गत हृदय निरासा॥ विनुभ
गवान आन जहि काहीं॥ हृदय भरोस तन क
कछु नाहीं॥ सोरठा॥ अस अनाथ सिसु दी
न॥ तहि पर मानस भूपनिज॥ कठिन कुलस
वतकीन्ह दीन रजायस क्षयकरन॥ ५॥॥॥

[illegible] टीका॥ ऐसे राजा की आज्ञा पायकर चां
डाल जो है सो अपनी चतुराई और कपट से [illegible] अ
केला ही बालक को लेकर वन को चला जाता भया तब
बालक जो है सो इस मर्म को और तिस चांडाल के कपट
को कछु जानता नहीं केवल भक्ती के निमित्त
जो ठाकुरों को मुख मे राखता और निज प्रीती सत
कार से पूजन सेवन करता था तिस पवित्र भक्ती के
प्रसाद से भक्तपाल भगवान तिस चांडाल को सात्विकी
बुद्धी देते भये तुरत हीं तिसका हृदय कोमल हो
गया और ज्ञान विवेक दया लाग इस रोम रोम
मे पूरित हो जाती भई आपहीं कहने लगा कि अहो
बडे अचरज का चमत्कार है इह अनाथ बालक
कि जिसको कोई भी आश्रय नहीं है अब इस दीन
की कौन रक्षा करे माता जिसकी पती के वियोग
से व्याकुल भई हुई सब सुख और संपती को त्याग
कर धृष्टद्युमन राजा की [illegible] शरणागत आय
कर तिसहूं मे स्त्री के घर मे वास करती है और जिस
को भगवान कृपानिधान के विना और किसीं भरो
सा नहीं है तिसका पुत्र [illegible] ऐसा अनाथ और
दीन बालक कि जिस पर राजा ने अपने हृदय को
वज्र के समान महा कठोर करके वध करने की
आज्ञा दई है ॥५॥ चौपाई॥ राऊ दीन यद्यपि अ
नुसासा॥ मैन करहु तद्यपि हत तासा॥ मृदु सुशी
ल सुंदर सिसु एहा॥ मोरे देखि उपज जीय नेहा॥ पु
नि प्रतीति निश्चय नृप लागी॥ काहु चिन्ह बालक बड
भागी॥ लैजा बहु करि यतन सुखैना॥ सिसु सन
मेलि कपट कछु बैना॥ अस जीय गुनत सुपच तत
काला॥ गहि कर करन लीन निज बाला॥ धृष्टम औगु
रि तास कर जोरी॥ [illegible]लजुत [illegible]दि लीन द्रुत सो ई॥ ए
कल सिसुहि [illegible]ि वन माहीं॥ आवा आपु भूप सठ
जाहीं॥ कपट प्रक्त मुख वचन सुनाई॥ औगभंग सिसु

दीन दिखाई॥ तासु विलोकि दृगन पति धरना॥ कीन प्रतीत बाल कर मरना॥ उहां गहन कानन सिसु जोई॥ तुष्यत विप्यत दीन बत होई॥ रोदन करहिं चास मन माहीं॥ विप्यत सरीर धीर कछु नाहीं॥ मृग विहंग खग कानन चारी॥ ललित बाल लखि विपुन दुखारी॥ सुनि विलाप रोदन मुख तासा॥ भूरि दया तिन हृदय प्रकासा॥ रक्षा तासु वचन मन देहा॥ लागे करन पूरि उर नेहा॥ तब तहिं समय एक महिपाला॥ मृगा नत रत विपुन रसाला॥ आय तुरत तहं प्रापत भयये॥ जहां बाल रोदन करि रहये॥ दसा विप्यत तहिं देखि भुआला॥ कहत वदन मृदु वचन रसाला॥ पुत्र कवन कहितें तुम आवा॥ इहां प्रवेषा विपुन कस पावा॥ सोरठा॥ को तुमार पितु माई॥ जिन निज उर करि वज्र सम॥ तुमहिं दीन बिसराई॥ कहहु तात बरि हरि रुदन॥ २॥ टीका॥ फिर चांडाल कहता है कि यद्यपि राजा की आज्ञा इस को वध करने की है तद्यपि मैं इस बालक को कदाचित नहीं मारूंगा क्योंकि यह अत्यंत सुंदर और सुशील बड़ा कोमल बालक है इस की दशा देख कर के मेरे हृदय में दया उतपन्न हो गई है परंतु अब राजा को दिखावने और तिस की प्रतीत के लिये इस बालक का कोई चिन्ह ले जाना उचित है ऐसे बिचार कर तिस चांडाल ने कुछ कपट से प्रीती के वचन कर कर तिस बालक का हाथ अपने हाथ में ले लिया और तिस के हाथ की षष्ठम अर्थात छठी अंगुली जो थी सो कृपान से तुरत ही काट कर और तिस को तहां वन में ही छोड़ कर आप तिस निर्दय राजा के पास चला आवता भया तहां कपट के वचनों

औैर पंडित जोतसी प्रथम हीं आय कर के बैठे हुये थे तिन्हों ने तिस राजा के पुत्र चंद्रहास की बड़े उदय भाग्यों वाला मस्तक देख कर के और अभय होय कर के धृष्टदुमन के आगे कथन कर दिया कि हे गौ ब्रह्मण की पालना करने वाले राजन इह बालक जो देख पड़ता है सो एक महा तेजसी और बल पराक्रम की निधी है इस के मस्तिक मे राज सुख संपती इत्यादिका चमतकार देख पड़ता है॥ ३॥ बीर प्रचंड धीर विद्वाना॥ होहि नरिंद्र तोर जामाना॥ अस जब सामुद्रिक जन भाषा॥ सुनत श्रवण महिपति मन राखा॥ तूस्नी भयो सो चमन माहीं॥ प्रकट बदन कछु भाषत नाहीं॥ तिनहिं जिमाय पाक विधि नाना॥ विदा कीन सें जुत सनमाना॥ आपु वचन तिन हृदय चितारी॥ भयो शोक बस भूपति भारी॥ करि विचार तब छितपत हेरा॥ ततन योग्य इहि बालक केरा॥ अस जीय गुनत भूपत तत काला॥ लीन सिवो लि दुष्टबंडाला॥ जाय इकांत तासु अस कहा॥ इह नवीन बालक जोई रहा॥ करि आपन छल बल चतुराई॥ इहि कहें कहुं कानन ले जाई॥ तब चंडाल करहु हतप्राना॥ मोरें हेतु सुजाना॥ सोरठा॥ काटु अंग इक तेहु ल्याय दिखावहु मोहि तुव॥ तब मिटि हैं संदेहु॥ को जाने नहीं रेह मर्म॥ ४॥ टीका॥ फिर वे पंडित जन कि जो रेखा विचार मै प्रवीन थे कहते हैं कि हे राजन बड़ा प्रचंड वीर और धीरज का धाम अब यों तेरा जामात्रा होवेगा इस प्रकार जब तिन विद्वानों ने कथन किया तब राजाने सुन करके चित्त मै हीं रख्खा और मौन होय रहा प्रकट करके कुछ कहि नहीं सका तिनको सन

नृपति सुत एहा॥ लै चले हैं इहि आपन गेहा॥ पाल
न करहु पुत्र जीय जानी॥ अस उर गुनत भूप सुख
मानी॥ लालन वचन कहत सुख नीके॥ गहि कर क
रन बाल प्रीय जीके॥ सिवका रुचिर लीन बैठाई॥
चल्यो लेत काननतें राई॥ लावा भवन हरष उर
छाये॥ महिषी कहे निज निकट बुलाये॥ दीन स
मरपि बाल गहि पानी॥ कहि मृदु मधुर रुचिर सुख
बानी॥ इहि कहं सुवन जानि जुत लालन॥ दिन दिन
करहु प्रीति [illegible]त पालन॥ प्रीया पुत्र तुव नाहिन गेहा॥
दीन तुमहें भगवन सुत एहा॥ इहि पर सदा छोह हनि
ज प्यारी॥ राखहु जानि पुत्र हित कारी॥ पति मुख
सुनत वचन अस रानी॥ अति प्रमोद मानस निज
मानी॥ सोरठा॥ सिसुहि गोद धरि लीन॥ नृप सु
भाव विलोकित ही॥ महिषी परम प्रबीन॥ गदगद
भई प्रसन्न मन॥ १॥ टीका॥ ऐसे राजा के मुख से व
चन सुन करके बालक कहने लगा कि हे नाथ मे
रे को अपना वृतांत कुछ भली प्रकार सुमर्ण न
हीं है परंतु इतना जानता हूं कि धृष्टद्युमन
राजा का मंत्री जो है तिस के घर विखें मेरी माता
निवास करती है और मेरे को इहां बन विखें दुष्ट
शत्रू कपट से प्रेर करके ले आया और मेरे हाथ
की षष्टम अंगुली को तुरत हीं काट कर और ले
करके इहां कहीं वन मैं हीं लुपत होय गया है मै
तिस को नहीं जानता हूं कि कौन था और कहां को
चला गया है हे प्रभू मेरा इह वृतांत है मैने आप
को सुनाय दिया है इस प्रकार बालक की बानी सु
नकर राजा के शरीर मैं रोम रोम दया छाय त
हो जाती भई कहने लगा कि देखो इह सुशील
और सुनीती बालक कैसे सपष्ट वचन कहता है
मै जानता हूं कि इह कोई राजा का ही पुत्र है अ
व इस को अपने घर मे ले जाँ[illegible] के और पु
त्र के समान [illegible] पालना करता है ऐसे वि

चारकरके राजा बड़ी प्रीती और प्यार के वचनों से तिस बालक का हाथपकड़करके सिव का जो पालकी है तिस विषे बिठाय करके आनंद से अपने घर को लेजाता भया और तहां रानी को बुलाय करके वे बालक तिस को देकरके बड़ी सुंदर बानी से कहने लगा कि हे प्यारी अब तूं परमहित और पयार के वचनों से इस बालक को पुत्र है जान करके पाल क्योंकि तेरे घर मे पुत्र नहीं है भगवान ने तेरे पर अनुग्रह करी और इह पुत्र दिया है इस पर तूं सदैव हीं दया राखती रहे तब पती के मुख से वचन सुन करके रानी परम आनंद को प्रापत होयगई तुरत बालक को लेकरके अपनी गोद मे बैठाय लिया और तिस का रूप सुभाव और शील देखकरके हरष के वश गदगद बानी होजाती भई अर्थात आनंद से कोई वचन निकलता कोई रुकजाता है॥ १॥ चौपाई॥ तो सु दिवस निसि पाल न लागी॥ प्रीति रीति संजुत अनुरागी॥ करलगा देखि निज पितुमाता॥ सिसु हि हरष नहिं हृदय समाता॥ असप्रकार जब बैस कशोरा॥ भा सिसु रुचिर रूप चित चोरा॥ पूरण अंग मदन बत सोभा॥ नखसिख अति बचित्र मन लोभा॥ तब नृप धृष्टदुमन सुनि लीना॥ तहि सिसु योग सुपच्च नहिं कीना॥ करहि निवास अमक नृप गेहा॥ तेसुत जानि प्रीति अति नेहा॥ दिनदिन करहिं हरष बस होई॥ भा अब जुबा बैस सिसु सोई॥ अस बिचारि मानस निजराया॥ अरि रूव रोम रोम दिस धाया॥ भ्रजानत सिस उठि ततकाला॥ संजुत सचिव गवन महिपाला॥ पहुचे वहिर नगर तहं जाई॥ उतरे देखि रुचिर अमराई॥ तब नरेस निज सचव पठावा॥ विविध भांति मुख कपट सिखावा॥

मित्रभाव मम प्रीति जनाई ॥ सव विधि करहु प्रकार अपनाई ॥ नृपते तेहि वालक कहं आनेउ ॥ जेहि विधि सचव जतन जिय जानेउ ॥ मंत्री पाय भूप अनुसाला ॥ पहुंच्यो जाय तास नृप पाला ॥ सोरठा ॥ कीनसि प्रथम जुहार ॥ मैत्रिभाव पुनि वचन मृदु ॥ कहेस सु विविध प्रकार ॥ कहा सचिव ~~नृप सुनेउ~~ ॥ ८ ॥ टीका ॥ तव तिस वालक को रानी जो है सो वडी प्रीती और प्रेमसे दिन दिन पालने लगी और वालक भी माता पिता की ऐसी दया के सहित पालना देखकर परम हरष को प्रापत होता भया इस प्रकार जव सो वालक पलता पलता जुवा अवस्था को प्रापत हो गया और कामदेव के समान अंगो की वडी अनूप शोभा देने लगा तव ~~व~~ कहीं राजा धृष्टद्युमनने सुन लिया कि तिस वालक को चांडालने वध नहीं किया और वे अमुक राजा के घर मे निवास करता है ~~और~~ तिस को पुत्र जानकर पालता है सो अव जुवा अवस्था भया हुआ है ऐसे विचार करके राजा को रोम रोम विखे कोप जो है सो व्यापत हो ~~गया~~ ततकाल ही मंत्री को साथ लेकर प्रकार के वहाने घर से निकलकर के चले ~~सो चलता भया तेव जाता जाता~~ तो चलता तिस राजा के राज मे ~~आ~~य प्रापत हुआ तहां नगर के वाहिर एक वडा सुंदर वाग देख करके तिस के भीतर उतर पडता भया तिस ते उपरांत अपने मंत्री को सरव प्रकार समुझाय कर तहां तिस राजा के पास भेजकर वारवार एही कहता भया कि हे प्रधान जिस प्रकार जानो अनेक वुद्धी और कपट चतुराई करके तिस वालक को राजा से मांगकर ईहां मेरे पास ले आवो इस प्रकार अपने स्वामी की आज्ञा पायकर मंत्री जो है सो ततकाल ~~किस~~

से तिसको वे अंगुली दिखाय कर बालक को मर
ना निश्चय कराय देता भया तब सो पापकी खो
नी सत्य मानकर बडे हरष को प्रापत होय गया
और ऊहां चंद्रहास बालक जो था सो अंगुली के
काटने की पीड़ासे बन विखे अकेला भयके वश
दीन और व्याकुल भया हूआ रोदन कर रहा है त
ब बन के खग मृग जो थे सो तिसको परम दुखी
और विलापसे रोदन करता देख करके सब दयाके वश
होय गये और तिस की सरब प्रकार करके रक्षा कर
ने लगे तब दैव योगसे अकस्मात तहां तहां एक
राजा सिकार खेलता खेलता आय प्रापत हूआ
सो तिस बालक को परम व्याकुल और दुखसे रोद
न करता देख कर बडे कोमल प्यारके वचनोंसे पूछ
ने लगा कि हे पुत्र तू कहां ते आया और कौन है
कहो ईहां निरजन बन विखे तेरा केसे वेश भ
या है और कौन तेरे असे निरदय माता पिता हैं
कि जिनोने अपने हृदयको वज्रके समान कठोर
करके तेरे को विसार दिया है अब हे पुत्र तू संको
च सोच और रोदन को त्याग कर अपना बृतांत
कथन कर ॥१॥ चौपाई ॥ सुनि नरेस मुख वचन
रसाला ॥ बोल्यो बदन वचन तब बाला ॥ नाथ
मर्म कछु नाहिं न मोरे ॥ मै रंक करहुं कथन प्र
भु तोरे ॥ धृष्टदुमन नृप सचिवन केता ॥ बसि
हे जननि मोर सुख देता ॥ अरु मोरे कोउ दुष्ट
अराती ॥ लावा ईहां गहन बन जाती ॥ मेरी
मम कर अंगुरि षटम सठ छेदी ॥ भयो नाथ क्रत
विपुन अभेदी ॥ रहा कवन कछु मर्म न मोरे ॥
इह निज मन्यो विथा प्रभु तोरे ॥ सुनि करुणा
रत बालक बानी ॥ हृदय गुनत भूपति सुख
मानी ॥ इह सुशील तिसु सुभग सुनीती ॥ कठ
त बदन कस गिरा अभीती ॥ ऐहिं अवध्य

पूछत वदन मदन कित रहयै॥ तव इक मन्त्री पुरष तहि काला॥ मदन नाम नृप सुवन रसाला॥ अत्रे तहपुर मानस सुख मानी॥ करहि निवास रूप वल खानी॥ चंद्रहास तव हृदय विचारी॥ रहो एक वाटिक फलवारी॥ अत तसे वचित्र निकट नृप ऐना॥ तहं निज जाय कीन कलसेना॥ त्रिविध समीर पाय गुणनीके॥ भयो निरत निद्रा सुखजी के॥ आई तहं रूप गुण धन्या॥ विषया नाम भूप तहि कन्या॥ सखिगण संग अंग मृदुकारी॥ नख सिख रुचिर रूप रति सारी॥ सील भवन मृदु गवन मराली॥ लालन ललित मानसर पाली॥ देखे चंद्रहास कृत सयना॥ वोली वदन सकुच जुत वैना॥ निद्रानिरत कवन सखि एहा॥ देखहु जाय मंदग तितेहा॥ अरु इहि सीस धरयो कछु देखी॥ परहि जनहुं पत्रिका सखि लेखी॥ सो तुम जाय सहज हरि लेहो॥ निद्रा विगत होन जनि देहो॥ सुनत वचन इक सखी सयानी॥ सह जहि मंदमंद मृदुगामी॥ करि वचित्र आपन चतुराई॥ पत्रिकतुरत वतुर हरि ल्याई॥ आयदीन विषया कर सोई॥ वाचि परम विसमय वस होई॥ सोरठा॥ जनक दुष्ट मतिमोर॥ लिखहि इहि कर देन विष॥ अति सुंदर चित चोर॥ सुमत दिव्य सरूप सिसू॥ ८॥ टीका॥ मंत्री कहता है कि हे राजन इह तेरा सुशील और सुंदं वालक जो है सो इसको मेरा राजा देखने चहता है क्योंकि इस वालक का गुणप्रभाव सुनकर के राजा के हृदय मे दरसन करने की वहुत लालसा उतपन्न भई है इस प्रकार तिस मंत्री ने अनेक रीती से कपट की कहानी कर कर राजा को प्रसन्न कर दिया और फिर तिस की आज्ञा पाय

करके बालकको साथ लिये हूये तहां अपने राजाके पास
आय प्रापत होता भया तब तिस शत्रुमूरती ने बालक
को देखते हीं तुरत पहिचान लिया और हृदय मे बड़ा
आनंद मानता भया कि अब इस को छल करके अव
श्य मारूंगा ऐसे विचार कर पत्रिका लिखी और
चंद्रहास ~~के हाथ में देकर~~ कहने लगा कि हे पुत्र अ
ब शीघ्र मेरे नगर मे जावो तहां मदन नाम करके
मेरा पुत्र जो है इस पत्रिका तिसके हाथ मे दे देवो और
हमारी कुसलभी सब कहि देवो देखिये अधम भूप
प्रकट तो बड़े हित के बचन करता है और पत्रिका मे गु
पत अनहित और महा अनर्थ लिख देता भया क्या
लिखो कि हे पुत्र मदन तुम मेरी पत्रिका के देखते
ही इस बालक को जिस प्रकार होय सके विष देकर
के मार देना रंचक भी विलंब नहीं करना ऐसे प
त्रिका को मुद्रित करके चंद्रहास के हाथ मे देकर बडे
उतसाहके बचन कहता भया कि पुत्र अब जावो
तुमको तहां बडा आनंद और सुख प्रापत होवेगा
इस पत्रिका को बांचकरके मेरा पुत्र मदन जो है सो
तुमारा अनेक सेवन और सतकार करेगा इसप्र
कार छल और कपट से रहित सुधे सुभाव वाला चंद्र
हास राजाकी आज्ञा सीस पर धारन करके और प
त्रिका को लेकरके ततकाल धाय जाता भया तब अ
धे दिनके उपरांत जाय करके राजा के तिस नगर मे
प्रापत होय गया और पूछने लगा कि मदन नामा
राजकुमार कहां है तब किसी ने कहि दया कि म
दन इस समय भीतर भवनों मे निवास करता है
ऐसे सुनकर के और हृदय मे विचार करके तहां
राजाके महलों के पास ही एक बड़ी सुंदर वाटि
का अर्थात फूलों की बगीची थी तिस मे जाय
करके चंद्रहास बास करता भया तब तहां ती

न प्रकार की मंद सुगंध पवन जो चल रही थी तिस
का गुल पाय करके चंद्रहास तुरत निद्राके सुख
मे लीन होयगया तिस समय तहां रूप औरगुण
विखे धन्य विषया नाम करके राजा की कन्या सख
सखियों का समाज साथ लिये हूये तहां आय जाती भई
तब चंद्रहासको तहां सोये हूये देखकर बड़े सकुच से
आचर्ज होय कर कहने लगी कि हे सखी तू सहजेही
जाय करके देख यह कौन है जो निद्राके सुखमे मगन
होय रहा है और इसके सीस की पागमे कोई पत्रि
कासी कैसी देख पड़ती है ताते तू हे सखी जा और जा
य करके इसकी पागमेसे यह पत्रिका सहजे ही निका
ल करके ले आ जो निद्रासे जाग ना पड़े तब राज
कुमारी की आज्ञा पाय कर एक चतुर सखी स
हजे सहजे पग धरती हूई चतुराई से तुरत ही
पत्रिका को निकाल कर ले आई और विषयाके
हाथ मे देदेती भई सो तिसको बाच करके बड़े
आचर्ज को प्रापत होयगई और कहने लगी
कि देखो यह मेरा पिता कैसा दुष्ट बुद्धी है कि जो
ऐसी मोहनी मूरती वाले कोमल कुमार को वि
ष देना चहता है ॥ ९ ॥ चौपाई ॥ मुद्रा रुचिर
मोर मन माना ॥ मे इहि वर हूं करहूं पति प्राना ॥
हृदय गुनत अस राज कुमारी ॥ बैठी जाय
तुरत उठि न्यारी ॥ पुष्पांवर कानन कर लीना
तास ललित लेखन द्रुत कीना ॥ काजर रुचिर
दृगन रचि स्यामा ॥ आ अ्रतर लिखि दीन ललि
लामा ॥ विषया भयो तासु विष केरा ॥ म
रम गुपत अस काहु न हेरा ॥ करन कीन
पुनि मुद्रत पाती ॥ विरचत रही प्रथम जहि
भांती ॥ ~~आई बहुरि सखिन मग माही~~ ॥

चंद्रहास की हित सखी वन सुंदर गती काली ... वास मे ... औ प्रारले मानसरोवर मे चली हे ई

तिस राजा के पास चला गया तहां प्रथम प्रणाम
करके और फिर अपने राजा की ओर से बड़ी मैत्री
और प्रीती के वचन सुनाय कर जिस प्रकार कहने
लगा सो आगे कथन किया जाता है ॥८॥ चौपाई ॥
सुंदर सील सुवन वर तोरा ॥ देखन चाहि नृपति
दृग मोरा ॥ अस प्रकार तेहि कपट कहानी ॥ कहि
कहि विविध वदन छल सानी ॥ सिसुहिं लेत आ
वातल ताहीं ॥ अरि इव रहा भूप सठ जाहीं ॥ तेहि
सिसु देखि तुरत पहिचाना ॥ परम आनंद मूढ़ म
न माना ॥ अब इहि कहं करि कपट प्रकारा ॥ करहुं
रहत प्राणन संहारा ॥ अस विचारि पत्रिक लिखि राखा ॥
~~[illegible]~~ ॥ ~~प्रमुदित~~ चंद्रहास ~~[illegible]~~ कहा जाहु मो
रे पुर माहीं ॥ मदन नाम बालक मम जाहीं ॥ तेहि
कहं जाय देहु तुव पाती ॥ कहि मुख कुसलता त
सब भाती ॥ अति हित वचन प्रकट इमि कीना ॥
गुपत मरम अनहित लिखि दीना ॥ देखत म
दन पुत्र मम पाती ॥ इहि विख देहु जानि जे
हि भांती ॥ भलहिं विचारि जतन जीय ताता ॥
कारज करहु सरव सुखदाता ॥ अस प्रकार
मुद्रित करि पाती ॥ चंद्रहास कर दीन अराती ॥
कहा जाहु सुत वेग सिधाई ॥ होहिं तुमहिं सब
भांति भलाई ॥ पत्रिक बांचि तुरत सुत मोरा ॥
करहि अभिषृ सिद्ध सब तोरा ॥ ~~सोरठा ॥ सुनि~~
~~अस वचन सुआल ॥ चंद्रहास पाती लिये ॥~~
~~चल्यो वेग ततकाल ॥~~ नृप नदेस धरि सीस सु
हाई ॥ चंद्रहास कर पत्रिक पाई ॥ चल्यो
वेग कछु विलम न कीना ॥ अर्ध दिवस जब
गयो वतीना ॥ जाय नगर नृप प्रापत भययो ॥

नेदसे अपने घर को चली आई ~~और~~ उतै चंद्र
हास भी जागा और सावधान होयकरके राजा
के भवनों को चला आया तहां द्वार को देखकर
और तिसके हाथ मे पाती देकर सब कुसल भी
भली प्रकार सुनाय देता भया तब द्वारपाल ने प
त्रका जाय करके ~~[illegible]~~ मदन के हाथ
मे देदई सो बाच करके परम हरष को प्रापत भया
और चंद्रहास के निवास के वासते एक बड़ा उत्तम
स्थान देदिया और यथा योग्य सब सेवन सतकार भी
किया ॥२०॥ चौपाई॥ अंगराग आदिक सुखदाई॥ असन
न बसन सब दीन पठाई॥ पुनि आपरोहित ~~लीन~~
बुलावा॥ सकल वृतांत तासु समुझावा॥ ते अनु
सासु मदन अस पाई॥ करत विचार नगर दुत आई॥
वस्तु विवाह जवन उपजोगा॥ तिन कर कीन ता
स उद्योगा॥ करि सुयतन सब लीन बनाई॥ आ
य मदन कहे खबर जनाई॥ महाराज सब काज स
वारा॥ साज समाज अनेक प्रकारा॥ तब तिन सो
धि महूरत भावा॥ सुदिन जानि मंगल विरचा
वा॥ यत्रव भेरि संख सैनाई॥ बाजन लगे
घोर धुनि छाई॥ उतसव भयो भवन नृपभा
री॥ गावहिं गीत कंठ कल नारी॥ वेद वतान
रुचिर विरचायो॥ वेदि निवार सुभ्र छवि छायो॥
रचे रुचिर कदली वर खंभा॥ बीच बीच तरल
लित कदंबा॥ अस प्रकार सोभा सब नीके॥ हा
स विलास विविध श्रीय जी के॥ रचना सकल
अनूप रचाई॥ बरनि नजाय मनोहर ताई॥
पूजि देवगण संजुत प्रीती॥ भलहिं सकल वि
धि वेद बहीती॥ चंद्रहास वि षया कर पावन॥
भयो विवाह सुभ्र मन भावन॥ आगल दिवस म
दन लिखि पाती॥ कारज कलित कीन जहि भाती॥

दीनजनकर्षे तुरत पठाई॥ महाराज तुव आयसु पाई॥ सुठि विवाह विषया करकीना॥ सबविधि सु जस नाथ जग लीना॥ पटु च्यो पत्र भूपर्षे जबहीं॥ बाचत भयो विप्यत मन तवहीं॥ अति अचरज क छु जाय न जाना॥ सोच विवस मानस अकुलाना॥ सोरठा॥ भयो दुखित अति भारि॥ चिंता विवसमय वि वस नृप॥ जाय न दसा निहारि॥ कौन कवन काइ ह भयो॥ ११॥ टीका॥ और फिर अंगराग जो वटने आ दिक सुंदर वासना वाले सुखदाय कहे॥ और भोजन व सन्न ~~के~~ हैं सो ~~सब~~ प्रीती पूर्वक सब पठायदिये फिर तिस तें उपरांत अपरों को वुलाय करके सब वृतांत सुनाय और समुझायदेता भया तब मदनकी आ ज्ञा पायकर अपरोहित नगर मे चलागया और विवाह के वे धी जोजो वसतू और समाज उचितथा सो सब याथावत वनायकर और आयकर मदन को खवर देता भया कि महाराज आपकी कृपा सें सब ~~[illegible]~~ समाज जोड़राखो है अवजेसी आज्ञा हो तिसके अनुसार कारज कियाजावे इसप्रकार अपरोहित का वचन सुनकर मदन जो है सो महू रतको सुधायकर और शुभदिन देखकर के घरमे मंगल रचाय देता भया अनेकप्रकार के वाजयोंकी नाना धुनी जो है सो होने लगी जहां तहां आनंद और उतसव ही देखपड़ते हैं ~~[illegible]~~ राजभवनो से लेकर संपूर्ण घर घर मे कोकला वेनी स्त्री वडे मनोहर गायन करती हैं वेदी जो है सो वेद की वि धी अनुसार भलीप्रकार सवारी गई तैसे ही जग नमाला ~~[illegible]~~ बांधकरे जहां तहां चौको मे ~~[illegible]~~ वेली वताना के सुंदर गायगान सजाय गये कदली ~~[illegible]~~ खंभ और कदंव वृक्षी की नाना रचना भी की गई

इस प्रकार सब शोभा और मनोहरताई को उदय कर कर वेद की विधी और वंस की रीती अनुसार गणपती आदि सब देवताओं को पूजन करवाय कर चंद्रहास और विषया का सुंदर विवाह जो है सो करवा य दिया तब दूसरे दिन जिस प्रकार सब कारज किया था तिसके वृतांत की पत्रिका लिख करके मदन अपने पिता के पास मे जदेता भया कि महाराज आप की आज्ञा के अनुसार विषया का विवाह कर दिया है और जगत मे लोगों विखें भली प्रकार सुजस प्रापत किया है जब इह पत्रिका राजा के पास जाय पुहुंची तब बाच करके अचरज के वश भया हुआ व्याकुल होय गया और कहने लगा कि अहो इह किसने क्या कर दिया और कौन विप्रीती क्या अनर्थ होय गया मेरे को कुछ जान नहीं परता है ॥ ११ ॥ चौपाई ॥ अति संदिग्ध भूप मन माहीं ॥ धाम सुपदि ठौर जीय नाहीं ॥ आवा नगर भवन निज माहीं ॥ पूछत वदन मदन सुत काहीं ॥ आयस पाय भूप भृत जाई ॥ ल्याय मदन कहे तुरत बुलाई ॥ सनमुख भयो भूप तब काहा ॥ पठयो मोर पत्रिक जोई राहा ॥ सो मोरे दूत देऊ दिखाई ॥ तुरत मदन आयस नृप पाई ॥ ल्याय दीन भूपति कर पाती ॥ बाचित विदरि गई मनु छाती ॥ सरव वरण मोरे कर लिखया ॥ विखे कर कहत भयो कस विषया ॥ इह अचरज मोरे मन छावा ॥ कवन मर्म कछु जानि न पावा ॥ अस जड मानि विपुल संतापा ॥ हृदय कीन पुनि चिंतन पापा ॥ कपटी कुटिल मंदमति हीना ॥ रहो मै निमन वि कल मलीना ॥ बहुरि गुनत अस हृदय कसाई ॥ जो लो करि छल बल चतुराई ॥ कर हुं

सिंहासन बैठा जब कहता है कि कछुक कहे ... [illegible]

नरपत बहुरि सखिन पें आई॥ पूछा तिन तब मर्म दुराई॥ कहा जनक इन पत्र पठोरा॥ मोरे मदन वीरवर ओरा॥ इति कहे तुम हु सहज सखि नाहीं॥ राख हु जाय सीस तहि माहीं॥ सो सखि भेद मंद तब जाई॥ धरि पत्रि क निज तुरत पराई॥ लिये संग तब सखि गन सारी॥ सुता भूप निज भवन सिधारी॥ नृप सुत चंद्रहास उत जागे॥ आय द्वार भूपति अनुरागे॥ द्वारपाल कर दीन सिपाती॥ कहि कहि कुसल बदन सब भांती॥ वाचि पत्र का मदन सुजाना॥ अति आनंद सुखे मानस माना॥ सोरठा॥ तहि निवास हित दीन॥ तुरत एक सुंदर सदन॥ सब विधि सेवा कीन॥ सादिर नरपति यथा उचित॥ २०॥ टीका॥ फिर राजकुमारी कहती है कि इस की मनोहर मूरती जो है सो मेरे चित्त को अत से करके प्यारी लगी है मै इस को अवश्य वरूंगी और अपना प्राणपती करूंगी ऐसा हृदय मे विचार करके ततकाल ही उठ कर न्यारी जाय बैठी और अपने कान का करन फूल लेकर तिस की लेखन बनायकर और नेत्रों के अंजन अर्थात सुरमे की स्याही लेकर के तहां आ अक्षर जो है सो बढाय दिया तब तिस विष का विषया शब्द बन गया इस भेद को कोई भी जान न हि सका फिर तिस पत्रिका को तैसे ही मुद्रित अर्थात बंद करके सखी के हाथ मे देकर कहने लगी कि इस को तहां सहजे हीं तिस के सीस की पाग मे धर आवो तब सो चतुर सखी तुरत हीं पाती को लेकर तहां तैसे हीं तिस की पाग मे धर करके राजकन्या के पास चली आई जब और सखियों ने पाती का मर्म अर्थात भेद पूछा तब कहने लगी कि पिता ने मेरे भ्राता मदन के नाम इह पत्रिका मे जी है ऐसे भेद को छिपाय करति सके उपरांत सब सखियों को साथ लिये हुये अ

सत्य ही कथन किया था सो अब मेरे को जानपड़ा है यद्यपि इहविषया मेरी कन्या विषरूप होय करके मेरे ग्रह मै निवास करेगी सो दुख मै सब सहार लेऊंगा परंतू इह शूल नहीं सहाजाता है ऐसे विचारकर वे अधम अपने पुत्र को वड़ी प्रीती भ्रसे कहने लगा कि इस नगर मे जो स्थापिक भई हई देवी है सो हमारी कुल की इष्ट देव है हे पुत्र अब तिस भगवती का पूजन जो है सो अब था करवाना चाहिये ॥२२॥ चौपाई ॥ चंद्रहास तहिं भवन मझारा ॥ जाहि मोर आयस अनुसारा ॥ अस प्रकार आज्ञा नृप कीना ॥ पुनि चोंडाल बोलि इक लीना ॥ भाषिस मरम तासु अस बदना ॥ चंद्रहास जातें भगवति सदना ॥ प्रथम कुछ तहें जाई ॥ रखेहु खड्ग निज पानि दुराई ॥ हमनु रंत तहिंकर निसि काला ॥ पठवहुं भगवति भवन रसाला ॥ तव तुम ततदाल खड्ग प्रहारहु ॥ काटि सीस तहिं मदनि डारहु ॥ नृप अनुसासन पाय चोंडाला ॥ चल्यो गहित कर खड्ग कराला ॥ बोल्यो तव नरेस अस बानी ॥ चंद्रहास तहिं भवन भवानी ॥ जो लो जाय करन नहिं पूजा ॥ तो लो प्रथम पुरष जनि दूजा ॥ जायन तहां मोर अनुसासा ॥ अस प्रकार नृप वचन प्रकासा ॥ तव पुर जन परिजन मृत संगा ॥ आगनित अन्य पुरष बहु रंगा ॥ लिये राऊ प्रमुदित मन गवना ॥ चंद्रहास जुत भगवति भवना ॥ एकल राखि तासु अस आगे ॥ पाछिल जाहिं सकल तहि लागे ॥ मदन भूप आयस विसराई ॥ मिल्यो सि चंद्रहास सन जाई ॥ प्रीति परस्पर तिन कर भारी ॥ एकल सक्यो न तासु निहारी ॥ पहुंचे निकट जवहि करिग

वना॥ मदन प्रथम तव भगवति भवना॥ कीन प्रवे
श सुमति नेद लाला॥ अवसर देखि तुरत चांडाला॥
कठिन प्रहार खड्गकर कीना॥ धरनि गिराय सीस तहि
दीना॥ जाना चंद्रहास जठ एहा॥ रह्यो न तासु आ
न संदेहा॥ भूल्यो चंद्रहास भ्रम जानी॥ कीन्यो तास
मदन वध पानी॥ सोरठा॥ तहि पाछिल तव जाय॥
चंद्रहास भगवति भवन॥ व्याकुल चल्यो पराय॥
अति अचरज जीय मानि निज॥ २३॥ टीका॥ राजा क
हता है कि मेरी आज्ञा से चंद्रहास तहाँ भगवती के
भवन मे जावे ऐसे कहिकर फिर अधम चांडाल को
बुलाय कर गुपत कहने लगा कि तुम हाथ मे खड्ग
जो तलवार है सो धार कर और प्रथमहीं भगवती
के भवन मे जायकर लुपत होय करके स्थित होय
रहो हम राची के समय चंद्रहास को तहां भेज देवैं
गे तब तुमने ततकाल [illegible] खड्ग का प्रहार दे
कर तिस का सीस काटकर पृथवी पर गिराय दे
ना इस प्रकार राजा की आज्ञा पाय कर चांडाल
जो है सो हाथ मे तलवार धार कर तहां भगवती
के भवन मे चला गया और ईहां राजा अपने सब
सेवकों को आज्ञा देता भया कि जब लग चंद्र
हास भगवती के भवन मे पूजा करने के लिये
नहीं जावे तब लग प्रथम तहां कोई ना जाना
पावे ऐसे कहिकर राजा अपने सज्जन सखे
परिवार और पुर के लोकों साथ लिये हुये स
वतें आगे चंद्रहास को राखकर देवी के भवन
को चलले पड़ता भया तब मदन की जो चंद्रहास
के साथ अत्यं प्रीती थी सो राजा की आज्ञा को
विसार कर धायकर के तिस के साथ रल जाता भया
जब आवते आवते भगवती के भवन के पास चले
आये तब ~~मदन~~ राजा का पुत्र मदन जो है सो प्र

पम हीं देवी के भवन में च लागया रात्री का समय था चौं डालने जाना किड्र नवें द्रहास हे तुरत खड्ग को प्रहार करके तिसका सीस काटकर पृथवी पर गिरायदिया ऐसें जब चंद्रहास के भ्रम से मदन को मार दिया तब चंद्रहास भी भवन के भीतर च ला आया और मदन का सीस कटा हूआ देखकर हृदय में व्याकुल और अचरज बश भया हूआ तुरत पीछे को फिर आवता भया ॥२१॥ चौपाई ॥ बहुरि लेग मानुष लिये गवना ॥ चंद्रहास तहि भगवति भवना ॥ देखा दुष्ट खड्ग कर धारी ॥ बोधि लीन तहि तुरत प्रचारी ॥ भयो कुलाहल शब्द अपारा ॥ मदन मरण सबका हु निहारा ॥ जब इह खबर सुन्यो नरनाहों ॥ सुतकर मरन परन मति ताहों ॥ आयो वेग मानि दुख भारा ॥ व लो मृतक जहा मदन कुमारा ॥ देखि तासु मान स अकुलाना ॥ लग्यो करन रोदन मुख नाना ॥ ताडन करहिं करन सिर छाती ॥ विलपत पर हि धरन गत शांती ॥ दारुण शोक सूल उर मानी ॥ गहि पाषाण ~~[illegible]~~ अधम दुत पानी ॥ करि प्रहार अस को टन सीसा कीन तुरत प्राण निज खीसा ॥ चंद्रहास तब हृदय विचारी ॥ करत अकाज जबूँ रुहँ [illegible]री ॥ मोर विवाह हेतु सब भयौ ॥ भूपति सुवन म दन जोई रहयो ॥ मोरे अर्थ काय तिन त्यागी ॥ अरु महिपाल तासहित लागी ॥ त्रिलवत तुरत प्राण निज तोरा ॥ अब धिग धिग जग जीवन मो रा ॥ अस प्रकार निज हृदय विचारी ॥ कै अन न्य गति भक्त मुरारी ॥ लग्यो अराधन कर न भवानी ॥ अस निज हृदय रुचिर प्रण ठानी ॥ जो जग जननि लोक त्रै मान्यो ॥ आसा पूर

न वध इहि कालक काहीं तौलौ मोहि भावत कछु
नाहीं॥ नतरु दुष्ट सामर्थ नयो रा॥ हरिहैं
देस कोस सब मोरा॥ सामुद्रक जन सत्य बखाना॥
सो तत हृदय मोर दृढ़ माना॥ सुता मोर विषया इह
जोई॥ यद्यपि विष सरूप सो होई॥ करहि निवास
मोर आगारा॥ सो दुख मैं सब लेउं सहारा॥ पै इह
सूल सहा नहिं जाई॥ अस प्रकार चिंतन करि राई॥
निज कहँ भाखन लागा॥ अति सनेह संजु
त अनुरागा॥ सोरठा॥ अधि सुता जोई देखि॥ इ
हि पुर कर सुनहो सुवन॥ सो तुमरे कुल से विआ
व तो करउ पूजनउ चित॥२२॥ टीका॥ तब अति से
करके सोच के वश भया हुआ राजा तहां से तुरत
हीं चल पड़ता भया और अपने नगर विखें घर मे
आयकर पूछने लगा कि मदन कहां है तिस को शी
घ्र ले आवो ऐसे राजा की आज्ञा पायकर सेवक जो
हैं सो जायकरके मदन को तुरत हीं ले आवते भये
तिस को देखते ही राजा कहने लगा कि मेरी भेजी हुई
पत्रिका कहां है मेरे को अभी ल्यायकरके दिखावो
तब पिता की आज्ञा सुनते ही मदन ने सो पत्रिका ल्या
यकरके तिसके हाथ मे दे देई और वे वाचता ही
बड़े अचरज के वश होयकर कहने लगा कि देखो
इह संपूर्ण अक्षर मेरे ही हाथ के लिखे हुये हैं अब
मै कुछ नहीं जान सकता हूं कि इह विष का विषया श
बद किस प्रकार होय गया है ऐसे अधम बड़ा संता
प मान कर और कपट की खानी हृदय मै पाप ब
सायकर मौन होय रहा और फिर मन मै कहता
है कि जब लग इस दुष्ट को मै नहीं मारता तब लग
मेरे को कुछ भावता नहीं है क्यों कि इह दुष्ट सरब
प्रकार करके सामर्थ है मेरा राज कोश संपती सब
छीन लेवेगा रेखो विचार वाले पंडित जो हैं तिनो ने

१०८

बडे लाला शब्द से रोदन करने लगा और हृदय मे प
रम शूल मानकर तुरत ही एक पाषाण जो पड्या
रहे था लेकर के अपने सीस मे मारता भया तब पा
षाण के लगने से तिसका मसतिक फूट गया और
तड़फता तड़फता तहां ही मृत्यु को प्रापत होय गया
ऐसे तिनकी दशा देख कर चंद्र हास कहने लगा कि
देखो इह सब अकाज मेरे विवाह के नमित्त ही भया
है राजा के पुत्र मदन ने मेरे ही नमित्त प्राण दिये
हैं और अपने के नमित्त राजा मृत्यु को प्रापत हो
य गया है अब जगत मे मेरा जीवना भी धिग है ऐसे
कहिकर भगवान का भक्त चंद्र हास जो है सो सरब
और से वृती को रोक कर और एका ग्र चित होय
कर के जगदंबे जो भगती है तिसकी आराधना क
रने लगा और हृदय मे ऐसा प्रण धारन कि
या कि जो तीन लोक मे मानी हुई जगत की मा
ता को सब कर के आशापूरनी कहते हैं तो अब
मृत भये हुये इस राजा के पुत्र मदन को अब प्राजि
याय देवे तो ऐसा प्रण करके और मदन सीस
ते सेही तिसके शरीर के साथ जोड कर और स्वे
त वसतर से आछादिन कर कर अर्थात स्वेतवस्त्र
ऊपर डाल कर भगवती के आगे लिटाय दिया
फिर भवन के कवाडु मूंद कर और आप वा
हिर आय कर दृढ आसन लगाय करके जिस
जगत की जननी भवानी को सरब चराचर जी
व सेवते और वंदना करते हैं तिसकी आराधन
करने लगा और नाना प्रकार की असतुती कर
कर हृदय मे इह निश्चय करता भया कि जो क
दाचित जगदंबे इसको जीवत नहीं
करेगी तो मै भी इहा भगवती के आगे ही अ
पने प्राणों को त्याग देऊंगा इस आराधन
और असतुती करते करते तिसकी संपूर्ण

रैन व्यतीत होयगई और जब अरुन चूड़ अर्थात कूकड़ बोलने लागे तब प्रातकाल होते ही मदन जो है सो सजीवन होयकरके जागउठता भया और कहने लगा कि भाई तुम भवन के बाहिर कौन हो कवाड़ों को शीघ्र खोलदेवो मै बाहिर आवने चहता हूं ऐसे मदन की बानी सुनकर चंद्रहास आनंद से तुरत कवाड़ खोलदेता भया और मदनको सजीवन देखकर भगवानकी मायाको बारबार सीस नायकर अनेक प्रकार की असतुती जो है सो करने लगा तिससमय चंद्रहासका सुख और आनंद कुछ कथन नहीं किया जाता ॥१४॥ चौपाई॥ आवा बहिर मदन जहिकाला॥ देखत नगर मनुज जीय बाला॥ अति अचरज तिनकर मनमाना॥ सुख समूह नहीं जाय बखाना॥ रहा मृतक भूपति सुत जोई॥ भयो सजीव भनत सब कोई॥ गयो मदन तब सीघ्र तहां॥ मृत वसपरो धरनि पितु जहां॥ पूछो मरम मदन जबताहां॥ चंद्रहास तब वचन प्रकासा॥ तुम हि बिलोकि भूप गत प्राना॥ करि प्रहार निज सीस पखाना॥ तजे प्रान चिंता जीय मानी॥ बोलो बदन मदन तब बानी॥ मोर मरन कर कवन प्रसंगा॥ करहु कथन तुव सकलनिसंगा॥ चंद्रहास सुनि वचन रसाला॥ लीन हि बोलि तुरत चंडाला॥ पूछन लगे तासु समुदाई॥ सचिव सुजान सुजन सुखदाई॥ कहि विधि करहु मदन तुम मारा॥ कहिस बृतांत सुनिप चतव सारा॥ चंद्रहास कर सब भाषा॥ लेग वन्यो जिमि कानन साषा॥ घटम अंग छेदन लग तारी॥ जथा मदन कहे खड़ग प्रहारी॥ भूप रजाय जवन विधि लीना॥ पृथक पृथक करि सब कहि दीना॥ सोरठा॥ सजानेस चिव सुजान॥ सुपच वचन सुनि मदनकहं

लागे वदन वखान॥ इहिकर सत्य वृतांत सव॥
२५॥ टीका॥ तो जव मदन भागवती के भवन
से वाहिर आया॥ नगर की सव स्त्री पुरष देख
करके वडे अचरज को प्रापत होयकरके पर
स्पर करते हैं कि देखो इह राजा का पुत्र मृत होय
गया था अव भागवती की कृपा से सजीव होयगया
है ऐसे सव कोई अपने अपने हृदय मे परम आनं
द और सुखमान ते भये तव मदन जो है सो जहां राजा
मृत हुआ पडा था तहां चला गया और तिसके मरने
का वृतांत पूछने लगा चंद्रहास ने कथ
न किया कि तुम को मरे हुये देखकर राजा भी अपने
मस्तक मे आप ही पथ्थर मार करके मर ग
या है तव मदन कहने लगा कि मेरे मरने का कौन
कारन है चंद्रहास ने तुरत ही चंडाल को वुलाय
कर सनमुख कर दिया जव तिसको पूछने लगे
तो वे चंद्रहास का वृतांत कि जिसप्रकार अकेला व
न मे ले गया और तिसकी षष्ठम अंगुली काट
कर तहां वन मे ही छोडकर चला आया फिर जै
से राजा की आज्ञा से भागवती के भवन मे आया और
तिस भवन से जै से खडग का प्रहार देकर मदन का सी
स काटा था इत्यादि सव वृतांत भिन्न भिन्न करके
सुनाय देता भया तव सज्जन सुजान और मंत्री
प्रधान सुनकरके कहने लगे कि महाराज
इसका कथन सव सत्य है इसमे कुछ संशय
नहीं है॥ २५॥ चोपाई॥ वोल्यो वदन मदन
तव वांचा॥ रह्यो सि राज दुष्ट मति साचा॥
कियो सचिव तव वचन वखाना॥ सुनहु अव
ता तु व मदन सुजाना॥ मृतवस तुम
हि देखि नृप प्राना॥ तजे तुरत हनि कठिन पा
षाना॥ चंद्रहास तव हृदय विचारा अव धि
ग जियन मोर संसारा॥ अस विचारि भगवान

निवेदवखान्यो॥ तो इमि कहे अवदेउ जयाई॥
मातु कृपाल जनन सुखदाई॥ अस कहि मदन
सीस नहि पानी॥ धरि कृबंध पर सुमिरि भवानी॥
~~[illegible]~~ डारि वसन सित साधिर धरनी॥ दी
न लिटाय अग्र सुख करनी॥ मूदित द्वार बहिर पुनि
आई॥ बैठी निज आसन दृढ लाई॥ संतत ले
ग्यो अराधन देवी॥ जे जग जीव चराचर सेवी॥ अ
स तुति विविध भांति मुखबरनी॥ नायसीस नंम्र त
गति धरनी॥ निश्चय कीन तास मन माहीं॥ जो इहि
मातु जयावति नाहीं॥ तौ इहां तजहु निज प्राना॥
अस प्रकार मानस प्रणठाना॥ अस तुति करत वद
न मृदुवानी॥ सकल रैन अस तासु सरानी॥ अरुणा
चूड जब बोलन लाग्यो॥ भयो सजीव मदन तब
जाग्यो॥ बोल्यो वदन रुचिर मृदुवानी॥ कवन
बहिर तुव भवन भवानी॥ खोलहु द्वार विलम ज
नि लावहु॥ बहिर भवन मे आवन चहवहु॥
असं सुनि चंद्र हास सुख मानी॥ खोल्यो द्वार तुर
त निज पानी॥ देखो मदन सजीवन भयऊ॥ हरि
माथा चरनन सिर नयऊ॥ सोरठा अस तुति
विविध प्रकार॥ लग्यो करन जनु बहु वदन॥
बरनि न जाय अपार॥ चंद्र हास कर जब न सुख॥
१४॥ टीका॥ ~~और फिर चंद्र हास जो है~~ सो तब और
मानुष्यों को साथ लेकर के चंद्रहास जब फिर भग
वती के भवन मे जाय कर देखने लगा तो हाथ मै त
लवार धारन किये हूये चांडाल जो है सो तहां ठाडा भ
या हूआ है तिस को देखते हीं तुरत पकड कर बांध
लिया तब मदन का मरना देख कर के तहां अत्यंत
शोर पड जाता भया इह खबर जब राजा ने सुनी कि
मदन मारा गया तब ततकाल धावता हूआ तहां च
ला आया पुत्र को प्राणों से रहित पृथ्वी पर पडा हू
आ देख कर के मस्तिक और छाती को पीटपीट कर

६१०

610

हेराजकुमार ऐसे चंद्रहास का वृतांत है सो मैंने ते रे को कथन करके सुनाय दियाहै अब जो तेरे मन को भावती है सोकर इसप्रकार मंत्री कीवाणीसुनकर मदन हृदय मै परम आनंद और सुखमानकर कहने लगा कि अहो चंद्रहास धन्य है इसकेसमान संसार मै मेरेको और कोई प्राणप्यारा नहीं है अब मै हरषपूर्वक प्रसन्न होयकर अपना आधा राज इसको देदेताहूं फिर पीछे पिताका मृतक करम जो है सो करूंगा तब मंत्री विनीत वाणीसेक हनेलगा कि महाराज पिताका करम करना प्रथम योग्य है पीछे और जो करना हो सो करियो ऐसे मंत्री की क्षिता सुनकर मदन जो है सो पहिले वेद की विधी अनुसार पिताका मृतक करमहीं करतामया ॥२१॥ चौपाई ॥ बहुरि दिवस षट चतुरथ पाछे ॥ करि बहुदान विविध विधि आछे ॥ अर्ध राज निज संपति सदना ॥ चंद्रहासकहे प्रमुदित मदना ॥ दीना हृदय परम सुखमाना ॥ सो प्रमोद किमि जाय बखाना ॥ चंद्रहास प्रभुता पद पाई ॥ विषया सहित परम हरषाई ॥ लग्यो निवास करन दिनराता ॥ लीनन्हि बोलि बहुरि निज माता ॥ र[illegible]नी कीन विपुन नृप जाही ॥ ला वा मदन जानि सुतताही ॥ तासु बोलि पितु मातु समाना ॥ सुजुन प्रीति कीन सनमाना ॥ करि सतकार विविध विधिराई ॥ दीन सकल करतासु बुडाई ॥ राज अकंटिकते निजदेसा ॥ लग्यो करन मुद मानि बसेसा ॥ जासु भूप सि सुखमय मझारा ॥ चंद्रहास पितु प्राण बडारा ॥ तहि पर लिये संग अनिधावा ॥ ऐसि प्रकार जमधाम चलावा ॥ राजको सधन संपति सारी ॥ कीन लीन रणधर न प्रचारी ॥ अस प्रकार इह चरित सुहावा ॥ चंद्रहासकर मै प्रमुगावा ॥ देखहु सालिग्राम प्रभाऊ ॥ जहि प्रसाद पूजन जगताहू ॥ कठिन घोर अपदा दुसतरनी ॥ दुरगम दुखित जाय किमि बरनी ॥ कोटी सकल सह जसुख पावा ॥ कीन अकंटिक राजसुहावा ॥ इहि तें संसृति भक्ति समाना ॥ नहिन उपाय सुगम कोआना ॥ भयकलेस अपदा दुखहारी ॥ संपति सुजस सक

लसुखकारी॥ सोरठा॥ तांते अस जीयजान॥ जे सुख सं
पति जाचहीं॥ करहिं भक्तिभगवान॥ लोकसुजस पर
लोकसुख॥ १७॥ टीका॥ तिसतें उपरांत जब दसदिन व
तीत होयगये तब अनेक प्रकार के दान ब्रह्मणों को देकर
मदन जो है सो अपना आधा धनधाम और राज आनंद
पूर्वक चंद्रहास को देदेता भया तिस समय का उतसाह और
सुख जो है सो कुछ कथन नहीं कियाजाता तब ऐसी प्रभु
ता और प्रताप को चंद्रहास पायकर हरष के वश भया हूआ
तहां अपने घरमे निवास करने लगा और अपनी माता को
भी बुलाय लेता भया फिर जिस राजाने बालाविषें तिसकी
रक्षा करीथी और पुत्र जान करके घरमे लेआया था तिस
को बुलाय करके बडी प्रीती से माता पिता के समान आ
दिर सतकार करता भया और तिस का कर अर्थात नज
राना भी सब छुडाय दिया सो आनंदपूर्वक अभय होयक
र के अपना राज काज करने लगा और जिस राजाने
चंद्रहास की बाल्य अवस्था मै तिस के पिता को मार
दियाथा सोसेना चढाय करके तिस का राज सुख औ
र धनधाम सब छीनकर अपने आधीन करलेता भया
नाभादासजी कहते है कि हे संतो इसप्रकार इह चंद्रहा
स की मनोहर गाथा मै ने आपके आगे गायन की है दे
खिये शालग्राम के पूजन का कैसा अदभुत प्रभाव है
कि जिसके प्रसाद से महा घोर दुख और बडी कठिन
दुसतरनी अपदा कि जो तरी नहीं जाती सहजे ही तरकर
और सरब कलेशों से नवृत्य होयकर चंद्रहास निस
कंटक राज और सुख को प्रापत होता भया तांते संसार मे
भक्ती के समान और कोई भी सुख का सुगम साधन नहीं है
इह भक्ती ही सहजे सरब सुखों के देनेवाली और अपदा
कलेशों के नास करने वाली है तांते इस वारता को हृदय
मे विचार कर जो कोई सुख और संपती को प्रापत किया
चाहे तो लोक और परलोक मे सुख देनेवाली इह भगवा
न की भक्ती जो है इसी को आधार करलेवे॥ १७ इति श्रीभक्त
विनोद ग्रंथे भागवद भक्ती महातम भाषा टीकायां चंद्रहास चरित
वरणने नाम सरग ७४

भवानी॥ लग्यो सुमर्ण रुचिर प्रणठानी॥ भक्ति विलो
कि तास भगवाना॥ दीन तुमहिं अस प्राणनदाना॥ अ
रु इहि जननि पर भविलपाती॥ रोदन करत धीरगत
शांती॥ तोरे भवन आज हु लग वासा॥ करहिं विरहं
वस सुवन निरासा॥ चंद्रहास कर राजकुमारा॥ इह वृ
तांत भै वर नयो सारा॥ अब तुमार मानस सुखदाई॥ आ
व तजवन करहु सुतराई॥ सुनत मदन अस वचन
सुहावा॥ हृदय परम ~~आनंद~~ सुख पावा॥ चंद्रहास सम
से मृति आना॥ कहत न काहु मोर प्रीय प्राना॥ अब
मे अति प्रसन्न मन होई॥ अर्ध भाग निज संपति जोई॥
इहि कहं देहु प्रथम तव आना॥ अर्ध दहिक पितु
करम विधाना॥ पाछि लेकरहु सकल मनलाई॥
तव मंत्री मुखविनय सुनाई॥ प्रथमहिं जोग्य क
रम नृपकरना॥ विधिवत वेद विदन जिमिवरना॥ सोरठा॥
सुनि अस मदन प्रवीन॥ सचिव सिखावन सुखद सुभ॥
~~अस~~ मृतक करम सव कीन॥ विधिवत प्रथम नरेसकर॥
रहाटीका॥ तव सुनकरकें मदन कहने लगा कि हे भा
ई मैने जान लिया है इह मेरा पिता जो था सो सत्य क
र के दुष्ट बुद्धी और महा मंद था इसने अपनी करनीका
फल पाया है तव मंत्री कहने लगा कि हे राज कु
मार अब और भी सुनो कि जव राजाने तुमको मृ
त हुये देखा ततकाल अपने मस्तिकमें पाषाण
मार मृत्यु को प्राप्त होय गया तव चंद्रहासने
हृदय मे विचारा कि अब जगत मै मेरा जीना भी
धिग है ऐसे चिंतन करके और प्रण धार करके
कृपासिंधु भगवान और जगदंबे भगवती जो है तिनका
आराधन करने लगा ऐसे चंद्रहास की भक्ती
और दृढ विस्वास देखकरके भगवान औ भवानी
तेरे को प्राणदान देदेते भये और इसकी माता
जो है धीरज और शांती से रहित परम रोदन और
विलाप करती हुई हृदय मे पुत्र का वियोग मानकर
अब लग मेरे उर मे निरास होय कर निवास करती है

खमे कुछ और उचारणहीं नहीं करता था और नित्य दिन प्रती बडे सुंदर दिव्य वस्त्र भूषण धन और गौओं का दान जो है सो वासुदेव भगवान के निमित्त अतथी साध ब्रह्मणों को देता था॥२॥ सवैया॥ नागर नीत वनीत उजागर सागर सील दया निधि राई॥ गोदुज दीनन पालक ख्यात महा वतनाथ प्रजा सुखदाई॥ एक समय करि पूजन श्रीपति श्री भगवान त्रिभुवन नाई॥ बोलि महीसुर भूपति पावन भोजन भाव पयूख जिमाई॥ आपु लग्यो जब जेवन महिपति आय कपोत तबै करतास॥ बैठयो कै वत गात थराथर भय बस भीरू मने अस भासा॥ मै सरणागत दावर आरत पाहि पुकारत प्राण निरासा॥ कोपित सेन लग्यो मम पाछिल ब्याकुल ना सठ श्रोणत प्यासा॥ सो सुनि के धरमातम भूपति राज सें आसन बैठ [illegible] यो जाई॥ संजुत प्रीति सनेह सों सादिर पावन लीन कपोत बिठाई॥ क्षुध्यत सेन निहार निवारन कीन प्रवीन दयानिधि राई॥ प्रेरत हीं वतनाथ अभय सुख बैठ सुसेन निराद रपाई॥ दोराछंद॥ क्षुध्यत व्याकुल सेन धृष्ट वत बोलत बानी॥ तुव धरमज्ञ नरेस विदत सब लोकन दानी॥ इह कस करहु अधरम देव खग मोर अहारा॥ जो प्रथमहिं करि दीन कीन तुव नृपति निवारा॥ मै क्षुध्यत अति रही भूप बहु दिवसन केरा॥ करि श्रम पत नग्र नेक आज इहि खग कर चेरा॥ तुम रक्षक इहि बने मोहि दुत दीन निवासो॥ मै तजहूं अब प्राण नाथ छित विगत अहासो॥ सुनत बैन अस सेन धेनु दुज रक्षक राई॥ बोले बचन बनीत प्रीति संजुत हरषाई॥ इह सति लख्यो प्रतदामन

तुव सुनहु खेगारी ॥ पनि इहि मै इक बन्यो वात अ
ती जस माही ॥ धारण गत इहमयो दीन मो हि
र दो कजानी ॥ जो इहिकर अबतजहुं धरमकर
हो वखिहानी ॥ सुत वित देह कुटंब राज तियसब
वदि हरहीं ॥ धरम पुरष कहें उचित शरण गत
त्यागन करहीं ॥ तांते अस प्रण चेति ताहि मैरक्षक
भययौ ॥ जानहु नतर सुजान परमसुवबुध्या त
रहयौ ॥ सोरठा ॥ अरु इह मद तुमार ॥ मैजानू
होइ यनहीं ॥ इहि कर हृदय विचार करहु यतनधी
रजधरो ॥ टीका ॥ फिर केसामी राजा श्रीवदेव के
नीती मे बड़ा चतुर और तैसाही नम्र सब लोगों मे
उजागर दया और शील ताका समुद्र सो ब्रह्मण
और दीन जनो के पालने वाला महाराजा और
प्रजा रक्षक सो एक समय तीन लोक के नायक
श्रीपती जो हैं तिनका पूजन करके अमृत के समान
बड़े पवित्र भोजन जो बनवाये हुये थे सो सनमान पू
र्वक विठाय करके ब्रह्मणों को जिमाय देता भया तिस
तें उपरांत जब आप भोजन पावने लगा तब
व एक कपोत जो कबूतर है सो आयकर के तिसके
हाथपर बैठ जाता भया और कहने लगा कि हे राजन
मै प्राणों से और दुखी भया हूं आ तेरी शरण को आया हूं
तू इस समय मेरी रक्षा कर क्यों कि इह देख बाज
जो है सो मेरे लहु का प्यासा पीछे लगा हूआ छो
ड़ता नहीं है इस प्रकार तिस कपोत के मुखसे दीन
वचन सुनकर के राजा ततकाल उठकर अपने
सिंघासन पर जाय बैठा और बड़े हित चित से प्री
ती करके तिस कपोत को अपने हाथपर बैठायलि
या और बाज जो भूखा भया हूआ ऊपरें मारता था
तिसकों निवारण कर दिया तब राजा का प्रेरा हूया सो
बाज बड़ा निरादर पायकर के कुछेक दूरी पर हटकर

के सनमुखही बैठगया और क्षुधासे व्याकु
ल और ढीठ भया हूआ कहने लगा कि हे राजन
तूं सब लोगोंमे प्रसिद्ध बडा दानी और धरमकी
मूरती है अब इह कैसा अधरम करता है कि जो
प्रथमही विधाताने इह पंखी मेरा अहार बना
य राखा है तूं इससे मेरे
को निवारण करदिया है देख राजन मै बहुत दि
नो का अतसे करके भूखा था आज बडा सन न
श्रीश्रम करके इस पंखी को मैने घेरा था सो तूं
इसका रक्षक बन गया और मेरे को निवारणकर
दिया है अब मै क्षुधा के वश भय हूआ प्राणों
को त्यागता हूं इसप्रकार तिस काव
चन सुनकर के गोब्रह्मण की रक्षा करनेवाला
राजा जो है सो प्रीती पूर्वक बडी कोमल वाणीसे
कहने लगा कि हे पंखियों के शत्रू मै जानता
हूं जो इह सत्य कर के तुमाराही भक्ष है
परंतू इस मै एक बडी कठिन वारता आय
बनी है क्योंकि मेरे रक्षक जान कर के इह को
पंखी मेरी शरण को आय प्राप्त भया है अ
ब जो मै इस को त्याग देता हूं तो अतसे करके
धरम की हानी होती है हे सेन राज धन
शरीर स्त्री पुत्र कुटंब इत्यादि सब का त्याग हो
सकता है परंतू धरम तमारे को
पुरषसे शरणागत
नहीं त्यागा जाता अर्थात शरण पडे हूये को त्या
ग नहीं सकता तां ते ऐसा विचार करके हे सेन
मै इस का रक्षक भया हूं नहीं तो मेरे को विदत
है कि तूं क्षुधा करके परम पीडत होय रहा है

धरमतम

अथ श्रावदेवभूपचरितं

दोऊ छंद॥ गुरुवर ज्ञान प्रकासि तिमर अज्ञानविनासी॥ हृदयभरन आनंद हरन भव दारुन पासी॥ चंद्रहास कर चरित मोर मति यथा बखाना॥ अब मै कथा विचित्र करहु बरनन कछु आना॥ भक्तिमहातम ललित भूप श्रावदेवसु हावा॥ दुखदुरमति अघ हरन प्रीति हरि चरन बढावा॥ दायक संपति सुजस सकल सुख मंगल मूला॥ नासन विषय विकार वपुख सब जग न भूला॥ भूमंडल पर भयो भूप श्रावदेव उदारा॥ दानिसिरोमणि वीरधीर जग कीरती वारा॥ परम चतुर रतधरम भक्तिभगवंत परायण॥ बिरहरि श्रीपति नाम आन कछु करहि न गायन॥ सोरठा॥ सोभित नाथ सुजान॥ कनक चैल वित्त धेनु नित॥ करहि दान सनमान वासुदेव अरपण सकल॥ २॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे दास जनों के हृदय मे आनंद और ज्ञान के प्रकाश करने वाले और अज्ञान रूपी अंधेरे का नास करने वाले हे संसार की कठिन फासी के काटने को सामर्थ्य गुरदेव स्वामी जी चंद्रहास की गाथा जैसी कि मेरी बुद्धी के अनुसार है की गायन करदेई है अब और बडी मनोहर गाथा और भक्ती महातम जो है सो कथन करता हूं कैसा भी महातम है कि दुख दुरमती विषय विकार और पापशूल दुख्यो कों के नास करने वाला संपती सुख सुजस और मंगलों के देने वाला है भूमी मंडल पर एक परम उदार दानियो विखे सिरोमणी महा वीरधीर जगत मै बडे सुज वाला धरम मै प्रवीन भगवान की भक्ती मे लीन श्रावदेव नाम कर के राजा होता भया सो ऐसा व्रतधारी कि श्रीपती जो लछमी के स्वामी भगवान हैं तिन के नाम विना मु

और सत्यकी निधी राजा अति प्रसन्न होय करके कह
ने लगा कि हे सुहृद सेन तैने बहुत शुभ और मेरे
चित्तको भावता परम हित का वचन उचारन किया
है मै अत्यांत प्रसन्न भया हूं ऐसे कहिकर परमदानी
और महाउदार शिविदेव राजा जो है सो तुरतहीं अ
पने उरू अर्थात पट्ठकामांस काटकर तुला जो त
राजू है तिसपर एक छावेमै धरदेता भया और दूसरे
छावेमै कपोत जो कबूतर है सो बिठाय दिया ऐसे जब दोनो
को तुलामै धरकर तोलने लगे तो राका मांस कुछ अ
धिक हीं होता भया तब सेन परम प्रसन्न होय करके
कहने लगा कि हे धरमपाल राजन अब मै जिस प्रका
र कथन करता हूं सो तूं श्रवण कर ॥ १ ॥ दोहा छंद ॥
मोर अहार नमित्त तोर इह अमुख वसेखो ॥
अब जनि कारहु आन धरम निश्चय तुव देखो ॥
इह पावक मै इंद्र कपट निज भेष बनाई ॥
लीन परीक्षा तोर भक्ति पावन चतुराई ॥ सु
रपुरतें हम आव अमुल कछु नाहिन इच्छा ॥
केवल निश्चय भक्ति तोर नृपकरन परिच्छा ॥
अब देखो हम तुमहिं करम मानस वच काया ॥ भ
क्तिपरायण भक्त निपुण भगवन पतिमाया ॥ अब
प्रसन्न जीय जानिहमहु वर मांगहु राई ॥ मंजुल
अभिमत जवन तोर मानस सुखदाई ॥ हमरे नहि
न अदेव भूप तोरे वरकाहू ॥ अस कहि लीन सि
धार हचिंरनि जमूरति ताहू ॥ पावक इंद्र प्रतक्ष
भूप जब सनमुख ठाढे ॥ परयो दंडवत चरन धर
नि हित पत सुख गाढे ॥ मागहु मागहु धरनिना
थ सुख बहुरि बखाना ॥ तब बोल्यो महिपाल
जोरि नंमृत जुगपाना ॥ धन्य जनम जगमोर आ
ज प्रभु दरसन पाये ॥ भयो कृतारथ दीन दोष दुख

जाम विलाये॥ ॐ जो प्रसन्न प्रभु भये दीन पर दीनदयाला॥
तो मागहु वर जनम जनम हरि भक्ति रसाला॥ मोरे उर
दृढ होहिं किलष दारिद दुख हरनी॥ प्रेम बढावन नेम
सुजस सुख मंगल करनी॥ सुनि अस वचन नरेस अ
नल जुत द्विज रनराई॥ एवमस्तु कहि दीन रुचिर वर
उर हरषाई॥ पुनि शिविदेव नरेस सुभ्र गुण गण सुल
दाये॥ करत प्रसंसा वदन जुगल सुर लोक सिधाये॥
इह संतपत वचेषु चेषु शिविदेव सुहावा॥ मे लघु
मति अनुसार वदन निज गुरु वर गावा॥ कीन पुराणन
व्यास विस्तार नरूपण॥ कथा अलौकिक ललित देव शि
वि भूप अनूपन॥ जो इहि कर नर करहिं श्रवण सुचि प्रे
म समेता॥ चारि पदारथ भाव सहज तहि रुचिर नकेता॥
व्याधि कीट सब हरहिं मोद मंगल सुख पावहीं॥ सुंदर ज्ञा
न विवेक तास उर निरमल छावहीं॥ संजुहिं पाप तहि
हि भक्ति भगवान सुहाई॥ लोक सुजस परलोक परम
पावन गति पाई॥ ४॥ टीका॥ सेन कहता है कि हे राज
न मेरे आहार के नमित्त इह तेरा मांस बहुत होय
गया है अब और मत काटना मैने तेरा धरम और नि
श्चय भली प्रकार देख लिया है अब देख कि इह कपोत
जो है सो अगनी है और मै सेन जो हूं सो इंद्र हे हमने
अपना कपट भेख बनाय करके राजन तेरी पवित्र भक्ती
जो है तिसकी परीक्षा लई है और तेरे को मन वचन
काया करके भगवान की भक्ती मे दृढ निश्चय वाला देखा
है अब हे भूपाल हम तेरे पर अत्यंत प्रसन्न भये हैं जो
तेरे मन को भावता है सो वर मांग हम देने को साम
र्थ है ऐसे कहि कर तिनो ने अपना यथार्थ रूप धा
रन कर लिया तब अगनी और इंद्र को सनमुख
देखकर राजा दंडवत चरनो पर गिर पड़ता भया तब
तिनो ने फिर मांग मांग हे राजन मांग ऐसा ही शब्द उ
चारण किया तब राजा हाथ जोड़ कर कहने लगा
कि हे प्रभू मेरा धन्य जनम है जो मैने आप का दरसन पाया
आज मै संपूर्ण दुख दोखों से रहित होकर जगत मे

को तार्थ रूपहोय गया है अब जो हे कृपानिधाँ मेरे पर जो
तुम अनकूल हीं भये हो तो एही आनुग्रहकरो और
एही वरदानदेवो जो मेरेको जनमजनम विखे सरव
दुख और दारिद्रों केहरनेवाली और प्रेमके सहित सुख
सुजस और कल्यानकेदेनेवाली सरव मंगलों का मूलभ
गवानकी भक्तीजोहै सोई प्रापतहोवे इस प्रकार राजा
के मुखसे वचनसुनकर अगनी और देवराज प्रसन्न होय
करके एवमसतु शबदको उचारण करदेते भये कि ऐसे
हीं होगा तिसतें उपरांत फिर आनंदमें मगण भयेहूये
दोनोदेवता राजाकी अनेकप्रकार शलाघा और बड़ाई
गायन करते करते अपने सरगधामकों चलेजाते भये ना
भादासजी कहते हैं कि हे संतो इसप्रकार इह शिविदेव
राजाकी कुछ संछेपसी गाथा इहां मैने अपनी तु
च्छ मती के अनुसार आपके आगे गायन की है श्रीव्या
सदेवजी ने पुराणों मे इसको विसतार पूर्वक भली
प्रकार कथन कियाहै इस गाथाको जो लोग भक्ती
से श्रद्धा पूर्वक पढेंगे अथवा सुनेगे तो भगवानकी
कृपासे तिन को ~~चारो~~ अर्थ धरम कामँ मोक्ष इह चा
रोहीं पदार्थ प्रापत होवेंगे और व्याधी पीड़ाक
लेश इत्यादि सब उपाधियों से छूट कर बड़ेसुंदर
सुख और मंगलों के लाभको देखेंगे और ति
नके हृदयमे सहजेही ग्यान ववेक ~~और~~ के सहित
भगवानकी निर्मलभक्ती जोहै सोभी प्रापत होजा
वेगी ~~इसमें कुछ संशय नहीं है~~ और लोकप्र
लोकमे सुजसके पात्र होयकर परम पवित्र गती
को प्रापत होवेंगे ॥ ४ ॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे
भगवद्भक्ती महातमे भाषाटीकायां शिविदेव च
रितवरणने नाम सरग: ९

और ~~सत्य~~ इह सत्य करके तेरा भक्ष है मैं भलीप्रकार जानता हूं परंतु हे सेन अब तू हृदयमें धीरज को धार मैं विचारकरके तेरी क्षुध्या के निवारण का उपाय कर देता हूं॥२॥ दोहा छंद॥ करि करि विपुन अहेर अमुख मृग भवनन मेरे॥ पस्यो अनेक प्रकार देहुं सज्ञान अब तोरे॥ पै इहि कहेतु म तजहु मोर शरणागत परयो॥ जब अस वचन नरेस वदन निज वरणन करयो॥ तब कोपित मुख बैन सेन खग ~~कहि~~ विकट बखाना॥ मैं इहि प दि हरि करहुं अमुख भक्षण नहि आना॥ कबहुं कि इहि सम देहु मांस निज भूपति मोरे॥ तो मैं भ क्षण करहुं हरषि उर सन मुख तोरे॥ सुनि अस ध रम धुरिंद्र इंद्र नर प्रमुदित माना॥ अहो सुहृद हित वचन सेन तुव वदन बखाना॥ प्रीय मोरे मन मान वचन तुव रचन सुहाई॥ अस कहि उर निज मांस काटि श्री धर नरराई॥ ~~कुंडल~~ सोरठा॥ तुला धर्यो जब सोय॥ अधिक मांस महिपति भयो॥ तब प्रसन्न मन होय॥ कहा सेन सुन सत्य निधी॥३॥ टीका॥ राजा कहता है कि शिकार किये हुये मृगों का मांस नानाप्रकार का मेरे घर मैं पड़ा है ~~हे~~ हे सज्जान इसके बदले सो तेरको मैं देता हूं तू उस को आनंद पूर्वक ~~भक्ष~~ भक्षणकर और इस दीन पंखी को त्यागदे क्यों कि इह मेरी शरण को प्राप्त भया है जब इसप्रकार राजाने कथन किया ॥ तब सेन जो है सो कोप से कहने लगा कि सुन राजा मैं इस कपोत को त्याग कर और कोई मांस कभी ग्रहण नहीं करूंगा परंतू एक करता हूं कि जो कदाचित इस के बराबर तौलकर तू अपने शरीर का मांस देवैं तो मैं आनंद मानकर अवश्य भक्षण कर लेऊंगा ऐसे तिस बाजका वचन सुन कर धरम

देखकर राजा सभा को त्याग कर आगे ही जायकर
तिनके चरणों पर दीन होय करके दंडप्रणाम करता
भया और भक्ती प्रीत से अनेक प्रकार पूजन सत
कार भी करता भया ऐसे अगनी के समान तेज के
पुंज और ज्ञान ध्यान की मूरती मुनी दुरवासा जो
थे तिनको बड़ी रुची और अभिलाखा से बड़े सनमा
न करकर राजा ने बहुत दिनो तक अपने घर में ही
राखा तब इस प्रकार राजा की भक्ती और सेवा दे
खकर मुनी नायक अत्यंत प्रसन्न होयकर एक
दिन कहने लगे कि हे राजन मै तेरे पर बड़ा प्रसन्न
भया हूं अब जो तेरे मन को भावता वर है सो मां
ग क्योंकि ~~अब~~ मैं अपने आश्रम को जाना चाहता हूं
इहां तेरे घर मे बास करते हूये बहुत दिन बीत ग
ये हैं ऐसे मुनी के मुख से वचन सुनकर राजा
हृदय मे विचारकर जिस प्रकार विनती करने ल
गा सो आगे कथन की जाती है॥ २॥ चौपाई॥ जो
मोपै तुव दीन दयाला॥ है प्रसन्न वर देहु रसाला॥
तो मैं निज इच्छा अनुसारी॥ मांगहु वर दीन न
हितकारी॥ सुनि अस मांग मांग मुनि बरना॥
तब नरेस नम्रत गहि चरना॥ कहा नाथ पांडव
सुत मोरे॥ जैही भ्रात विदत सब तोरे॥ सो इहि
अवसर सुनहु गुसांई॥ करहि निवास रुचिर
बन माहीं॥ जिमि आगमन प्रभु सुखद सुहावन॥
इहु प्रासाद मोर भा पावन॥ तिमि मोरे मन लालस
एहा॥ जाय करहु उन कर सुचि गेहा॥ एकादसि
पावन व्रतधारी॥ निराहार सेजुत श्रियकारी॥
द्वादसि दिवस जाहु मुनि तांहां॥ पांडु पुत्र बस
हिं बन जाहां॥ पैभोजन मंजुल व्रतवारी॥ क
रि लैहीं जब द्रुपद कुमारी॥ तहि पाछिल मुनिना
थ कृपाला॥ सेजुत शिषन जायतिन आला॥
जाचिन करहु मुदित मन होई॥ शिषन सहित प्रभु
वेग रसोई॥ सुनि मुनीस अस भूप बखाना॥
निज निंदा करि करि मुख नाना॥ कहत

सुनहु इह संसृति माई॥ प्राणके ठगत होहिं कदाई॥
तबहूं अधम दुष्ट बस परना॥ उचित न स्रुति
पुराण बुध बरना॥ जहि पथ चहत दुष्ट निंजाना॥
~~सोई उपदेश करहिं सठ्या~~ तहि मग कहे उपदे
शहिं आना॥ अस विचारि मानस मुनि नाथा॥ संजुत नी
ति विविध विधि गाथा॥ कहि कहिं नृपहिं समुझा
वा॥ तद्यपि तासु बोध नहिं आवा॥ बार बार अस
कहत बुझाई॥ सुनहो विनय मोर मुनिराई॥ प्रभु
तुम कहा जबन वर देना॥ मै अब सो मगवन सोई
लेना॥ आपन वचन सत्य अब करहो॥ प्रणकु
पाल निज नाहिन हरहो॥ बोले एवमस्तु मुनिनाहो॥
अब मै करहुं प्यान नृप ताहो॥ तब मुनि एक दिवस
व्रत कीने॥ शिष्यगण सहस्र संग निज लीने॥ पांडु
पुत्र धरम सुत आदी॥ कानन जहां बसहिं सतवादी॥
जब मध्यान काल रवि आवा॥ द्रोपदि लीन हि भोजन
पावा॥ तब तत्काल क्रोध धृत रूपा॥ अति परज्वल
त तेज मनि भूपा॥ सनमुख जबहिं धरम निधि आ
ये॥ आवत देखि संत समुदाये॥ उठे राऊ तत्काल
गति कीना॥ पंचुपचार शिष्यन जुत कीना॥ अति से
प्रेम पूजन मुनिराई॥ सानुकूल आसन बैठाई॥ स
नमुख बैठि जुगल कर जोरी॥ विनय करत वर प्रीति
न थोरी॥ बहु विधि करि अस्तुति महिपाला॥
कहत धन्य तुव दीनदयाला॥ आज धारि निज चरन
सुहावन॥ मुनि वर कीन मोर गृह पावन॥ सोरठा॥ तव
र॥ टीका॥ दुरयोधन क्या कहता है कि हे दीन दयाल
मुनी नायक जो तुम मेरे पर प्रसन्न होय कर के व
र देना चहते हो तो मै हे कृपा निधान अपनी इ
च्छा के अनुसार वर मांगता हूं ऐसे सुन करके
मुनी कहने लगा कि तूं अपने मन को भावता ही
वर मांग मै तेरे को देता हूं तब राजा चरनो को पकड़
कर कहने लगा कि हे नाथ पांडु पुत्र जो हैं सो आ

प को विदित है मेरे भ्राता हैं और इस समय वन मे निवास करते हैं अब मै चहता हूं कि जैसे आप के आगमन अर्थात आने से इह मेरा घर पवित्र हैगया या है तैसे ही कृपा करके उन का घर भी आप ने चरनो से पवित्र करिये सो कैसे कि एकादशी का निराहार व्रत धार कर द्वादशी के दिन तहां वन मे कि जहां पांडु पुत्र निवास करते हैं जाईये परंतू जाईये कि जब द्रोपदी भोजन पाय चुकी हो और तिस के पीछे तहां सब शिष्यों के वास्ते भोजन मांगिये इस प्रकार राजा का कथन सुनकर मुनी दुरवासा जो हैं सो अनेक प्रकार से अपनी निंदा कर कर कहने लगे कि जो कदाचित इह प्राण कंठगत भी हो जावें अर्थात निकलने को कंठ मे भी आ जावें तो भी दुष्ट और अधम पुरष जो है तिस के वश नहीं पड़ना चाहिये क्योंकि दुष्ट पुरष जिस मारग को आप जाना चहता है अधम औरों को भी उसी मारग का उपदेश करता है ऐसे विचार करके मुनी नायक दुरवासा जी ने राजा को अनेक प्रकार की नीती सुनाय सुनाय करके बहुत ही समझाया परंतू ति मंद के हृदय मे कुछ भी बोध नहीं होता भया वार वार एही कहता है कि भगवन आप ने जो मेरे को वर देना कहा है सो प्रभू मैने अ वश्य लेना है अब अपना वचन जो है सो सत्य करिये और प्रण को ना हारिये ऐसे सुन करके मुनी कहने लगे कि राजन अब तेरा स्वार्थ सिद्ध करता हूं मै तहां जाता हूं तब एक दिन मुनी नायक एकादशी का व्रत धार कर और अपना हजार शिष्य साथ ले करके जहां वन विखे बड़े सत्य वादी राजा धरम से लेकर पांडु पुत्र निवास करते थे जब द्रोपदी भोजन पाय चुकी तो तहां जाय प्रा पत होते भये ऐसे कोप की मूरती और प्रज्वलत महा

अथद्रोपदीअन्य चरित

दोहा॥ अब मै नंदनि द्रुपद कर चरित हरनमन आन॥ करहुं कथन जहि सुनत दुत श्रुति मिटहि मोहमद मान॥ चौपाई॥ अपदा हरन सुजस सुखदाई॥ कथा वचित्र पवित्र सुहाई॥ दुरजोधन नृप भवन रसाला॥ समय एक प्रभु दीनदयाला॥ दुरवासा मुनि ज्ञान निधाना॥ लीये संग शिष गणनिज नाना॥ पाँन चरन चारु निज धारे॥ तव आवत महिपाल निहारे॥ सादिर शारदूल मुनि लागी॥ भक्तिभाव जुत सभा तयागी॥ पसोजाय चरनन गति दीना॥ प्रेम प्रीति जुत पूजन कीना॥ तेज प्रज्वलित अनलवत कीना॥ अस मुनि वरहिं सहित सनमाना॥ रुचिर भवन सेजुत अमिला ~~काव~~ वो॥ विपुल दिवस लग भूपति राखो॥ देखि सरस सेवन सनमाना॥ भा प्रसन्न मुनि ज्ञाननिधाना॥ भाषत वदन भूपसन वानी॥ अब प्रसन्न मानस मोहि जानी॥ माँगहु नृपति जवन वरभावा॥ जो इहिअवसर सुखदसुहावा॥ बीते विपुल दिवस तुव भवना॥ अब चाहुं निज आश्रम गवना॥ सोरठा॥ सुनि अस वचन मुनीस॥ करि विचार निज हृदय तव॥ बोल्यो वदन नरीस॥ विनय युक्त नम्रतवचन॥१॥

टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो अब मै द्रुपत नंदनी जो राजा द्रुपद की कन्या द्रोपदी है तिसकी और वडी मनोहर अपदा के हरने वाली और सुख सुजस के देने वाली पवित्र कथा जो है सो कथन करता हूं कै सी भी अदभुत कथा है कि जिसके श्रवण करने से मोह और मद इत्यादि विकार सव नास को प्रापत होते हैं एक समय राजा दुरयोधन के घर मै सव शिष्यों का समाज साथ लिये हुये ज्ञान ध्यान की निधी ~~मुनी~~ दुरवासा मुनी जो हैं सो चरन धारते भये तव दूर सें आवते

रक्षा करैं ॥३॥ टीका ॥ तब ऐसे मुनी के वचन सुन
कर धरम के धारने वाला राजा जुधिष्टर जो है सो
हृदय मे विचार करता है कि जो अब इनको भोजन
नहीं देऊंगा तो महापाप का अधिकारी होऊंगा
ऐसे सोच कर तिनको कहने लगा कि हे मुनी मह
राज आप जाइये और सनान करिये मै कृपानि
धान तुरत भोजन बनवाय लेता हूं ऐसे राजा के
मुख से वचन सुन कर संपूर्ण शिष्यों को साथ लेक
र मुनी दुरवासा जी जो हैं सो सनान करने के वास
ते नदी पर चले गये तब पीछे बड़ा धीरज का धा
म राजा [illegible] द्रोपदी को कहने लगा कि हे प्यारी
आज साक्षात भगवान की मूरती मुनी दुरवासा जी
ने शिष्यों के सहित हमारे घर मे चरन धारे हैं
सो तिनको सनमान पूर्वक इन्है घर मे भोजन अ
वश्य जिमाना है ऐसे पती का वचन सुन कर द्रो
पदी कहने लगी कि महाराज आपने सत्य कहा
है परंतू मै ने भोजन पाय लिया है अब कैसे
बात बनेगी और कौन उपाय से मुनी भोजन
पावेंगे [illegible] मेरे को कुछ ज्ञान नहीं पड़ता
है परंतू हे नाथ अब एक यतन है कि कृष्ण
भगवान का आराधन करती हूं [illegible] इस समय
शरीरधारियों को सोई दीन बंधू सामर्थ हैं और तो कोई
देख नहीं पड़ता है ॥२॥ चौपाई ॥ कहि अस नृप
हिं वदन गति दीना ॥ हृदय सुमरि जगत पति की
ना ॥ हे चक्रायुध हे घन स्यामा ॥ हे हरि हरन के
टि छबि कामा ॥ हे सरोज [illegible] रंजन ॥ दीन
ना[illegible] भव भीत [illegible] विभंजन ॥ हे हरि धरन अनेक
अवतारा ॥ भक्तन सुखद हरन महि भारा ॥ सेवत
सुलभ सकल प्रद कामा ॥ हे अनंत माधव गुण
धामा ॥ हे प्रभु अखिल भवन नट नागर ॥ हरन

दोषदारद सुखसागर॥ अब इहि अवसर दीनदयाला॥ दुरवासा मुनि कोप कराला॥ जनहुँ अनलअति चंड महाना॥ तहिँतें राखि लेहु भगवाना॥ नहिं तो करहिं भस्म मुनिस्वामी॥ होहु सहाय भक्तअनुगामी॥ इहिअवसर रखवार हमारे॥ तुमहे हरनदुख वारन वारे॥ जिमि दुरयोधन पूरब काला॥ लाखभवन विर्चेउ विसाला॥ तहाँ हमहे करि आपत सोई॥ लाग्यो नष्ट करन दिपू होई॥ तहाँ कृपासिंधु भगवाना॥ राखलीन हमरे तुव प्राना॥ तिमि हमार अब त्रिभुवन नायक॥ प्रणत पाल प्रभु होहु सहायक॥ तव द्वारावति कृष्णमुरारी॥ दीन वचन अस द्रुपदकुमारी॥ हृदय जानि तजि रुकमनि श्यना॥ दीननिवाज भक्त सुखदयना॥ वाहनविगत वेगजनलागी॥ गरुड़ चक्र चेटकचित त्यागी॥ दिपुरत पीतवसन सुरनाहा॥ आये शीघ्र प्रात प्रभु ताहाँ॥ देखे द्रुपद सुता भगवाना॥ पदचर गती आगतयाना॥ कहत नाथ भव भीत विभंजन॥ आये आपु जननमन रंजन॥ प्रभु कहँ भयो खेद श्रम भारी॥ असनम्रत मुख विनय उचारी॥ स्वादिर आसन दीन विछाई॥ राजिव ईछ जनन सुखदाई॥ सोरठा॥ पद सरोज भगवान॥ मैं प्रक्षालन करहुँ अब॥ सुनि अस कृपानिधान॥ कहा सुनहु में दनि द्रुपत॥ ४॥ टीका॥ इस प्रकार बड़ी दीन वानी से राजाको कहिकर फिर हृदयमें जगतपती जो कृष्णभगवान हैं तिनका सुमर्ण करने लगी और कहती है कि हे चक्र के धारनेवाले हे घन स्याम हे कोटि कामदेवकी छवीको लज्जा देने वाले हे कमल नैन हे सज्जन सुखदायक हे संसारका भय दूर करनेवाले दीनानाथ हे कृ

पा सिंधू हे अनेक अवतारों के धारने वाले हे भ
क्तजनो के सुखदायक हे पृथवी का भार दूर
करने वाले हे भगवान तुम कैसे भी हो कि सेवन
करने वाले पुरषों को सहजे हीं काम नाके देने वा
ले हो और अनंत हो तुमारा अंत भी नहीं आ
वता है हे सरव भवनो के पती हे लक्षमीना
थ हे दुख दोष और दारिद्रों के हरने वाले हे
गुणों के धाम हे सुखों के समुद्र हे दीन बंधू अ
व इस समय मुनी दुरवासाजी का अति प्रचं
ड अगनी के समान महा कठिन कोप जो है
तिस तें [illegible] हम को कृपा करके राख
लीजिये नहीं तो इह मुनी इवी भस्म किये च
हता है हे भक्तपाल हमारी रक्षा करिये इस स
मय हम दीनो की सहायता करने को हे गज के फंद
न काटने वाले भगवान तुम हीं समर्थ हो और
कोई नहीं देखपड़ता है हे कृपा निधान जिस प्र
कार पूरव काल विखें दुरयोधन ने लाक्षाभ
वन बनाय करके हम को तहां मारने के लिये
निवास दिया था और दीनहितकारी तहां तुमने
हीं अनुग्रह करके हमारे प्राणों की रक्षा करी थी ते
से हीं हे भक्तपाल अब भी तुम हीं हमारी सहा
यता करो और इस मुनी के महा कोप से बचाय लेवो
जब इस प्रकार द्रोपदी नें प्रार्थना करी तब द्रो
पदी का मैं कृष्ण भगवान ने जो चराचर के अंतरजामी
हैं सुनकर के तत काल रुकमणी की सेजा से
उठकर च और अटपटा हीं इधर उधर विषुरा
हुआ पीतांवर लेकर चक्र और गरुड़ इत्यादि
सब भूले हुये पाऊं पयादे हीं धाय कर प्रात
काल होते हीं तहां आय प्रापत होते भये ।

तेजवाले मुनी को सनमुख आवते देख कर राजा उठ ख
ड़ा भया और दीनगती से आगे हो जाय कर चरनो पर
दंड प्रणाम करके ले आया और सनमान पूर्वक भक्ती
प्रीती से पवित्र आसन पर बैठार कर गंधपुष्प
धूपदीप नैवेद से ले कर पंच उपचार पूजन जो है
सो किया फिर अनेक प्रकार की अस्तुती कर कर औ
र हाथ जोड़ कर बिनती करने लगा हे मुनी कृपाल
तुम धन्य हो कि जिनों ने अपने चरन धार कर मेरे
इस ग्रह को पवित्र किया है तब मुनी दुरबासा जो कह
ने लगे कि हे राजन मैं ने शिष्यों के सहित एकादशी
का निराहार व्रत धारन किया था सो आज द्वादशी का
दिन पाय कर के सब शिष्यों के सहित तेरे घर में आये
हैं अब राजन हम को भोजन जिमावो और
हमारा आशीरबाद जो है सो लेवो ॥२॥ चौपाई ॥ सुनत
श्रवन अस बचन मुनिंद्रा ॥ सोचित उर नृप धरम
पुरिंद्रा ॥ जो इन कहे भोजन नहिं देहों ॥ तो अति पा
प आप पैं लेहों ॥ अस बिचारि नृप कहत सुजाना ॥
करहु जाय प्रभु आपु सनाना ॥ मैं कृपाल दीनन सु
खदाई ॥ लेहुं तुरत भोजन बनवाई ॥ सुनि अस
श्रवन भूप मुख गाथा ॥ शिष्य गन लिये संग मु
नि नाथा ॥ गये सनान करन नदि तीरा ॥ तब पा
[illegible]भूपति मति धीरा ॥ कहत द्रुपद नंदनि सुन बाता ॥
श्रीया अनल मूरति साक्षाता ॥ दुरबासा मुनि आज
हमारे ॥ संजुत शिषन चरन निज धारे ॥ सो तिन
कहे संजुत सनमाना ॥ हम भोजन निज भवन जि
माना ॥ तब द्रौपदि अस बिनय बखानी ॥ दीनाना
थ सत्य तुव बानी ॥ पै प्रभु मैं भोजन करि लीना ॥
बनहिं बात कस जाय नचीना ॥ जहि उपाय मु
नि भोजन करहीं ॥ मोरे नाथ जानि नहिं परहीं ॥
सोरठा ॥ पै इक कृपानिधान ॥ करहु आराधन
हृदय निज ॥ कृष्णदेव भगवान ॥ जो प्रभु अब

इहतो रहा शाक अति थोरा॥ अब न चलत कछु मोर अजोरा॥ अस विचारि आई प्रभु पाहा॥ संजुत सकुच नम्र मुख वानी॥ विनय युक्त कर जोरि लजानी॥ मा भाखत भोजन दीन सने हू॥ निकस्यो शाकमात्र कछु एहू॥ कादे हूं करुणानिधि तोही॥ आवत देत लाज जीय मोही॥ सुनि अस मने कृस सुखगेहा॥ भोजिकहे विपुल देहतुव एहा॥ तव तहि राखि दीनमुद मानी॥ परण शाक कल मगॅधानी॥ कृपा निकेत तासु मुख पाई॥ मने वचन असउर हरषाई॥ अब इहि शाकमात्र सन होई॥ तृपति सरव विश्वातम जोई॥ व्है प्रसन्न मन वहुरि कृपाला॥ कहि स वदन निज वचन रसाला॥ सुने द्रोपदि तुव मनकर जोई॥ अब सेकल्य सिद्ध सब होई॥ अस कहि उठे दीन दुखहारी॥ करत करन प्रक्षालन वारी॥ सोरठा॥ वैठि सुखासन धाल॥ धरम सुवन सन मुदित मन॥ वचन अलाप रसाल ~~कहि~~ लागे नाना भनन प्रभू॥ ४॥ टीका॥ दीनवंधू कहते हैं कि हे द्रोपदी इस समय मेरे को तुध्याने वहुत व्याकुल कियाहै तातें तुंशीघ्र ले तू ~~मेरे~~ कुछ भोजन पाव नेके लिये दे जो मैं इस तुध्याको निवारण करके और संतोष को प्रापत हूऊं ऐसे भगवानके मुखसे वचन सुनकरके द्रोपदी परम सोच के वश होयकर कु विनती करने लगी कि हे भगवन अव मध्यान समय होयगयाहै औ र मैं भोजन पाय चुकी हूं अब दीनानाथ मेरेको कोई उपाय सूजनहीं पड़ता जो मै ~~करूं~~ हे और क्या करूं कुछ वननहीं सकताहै ऐसे तिसका वचन सुनकर के भगवा

न कहने लगे कि हे द्रौपदी तूं अपने पाकभवन अ
र्थात लैंगर विखें जा और तहांसे थोड़ा वहुता जे
सा कुछ भोजन मिले सो ल्याय कर के मेरे को दे क्यों
कि मै क्षुध्या करके वड़ा पीड़त और व्याकुल होयर
हा हूं इस प्रकार भगवान का वचन सुन कर द्रौ
पदी जो है हृदय वड़ी लज्जा माने हूये और नीचे
मुख किये हूये भगवान की लीला चिंतन करती हू
ई अपने पाकगृह मे चली गई तहां जाय
करके क्या देखती है कि एक वटलोही के वीच ए
क पासे कुछ थोड़ासा साग लगा हूआ है तिसको
देखकर कहने लगी कि इससे तो कुछ काज
सिद्ध नहीं होता इह वहुत हीं थोड़ा है हे देव क्या
करूं कुछ वश नहीं चलता है इस प्रकार
सोच करती हूई कृष्ण भगवान के पास चली आई त
व तहां लज्जा और संकुच के वश भई हूई वड़ी को
मल विनती की मई हूई वानीसे हाथ जोड़ कर क
हने लगी कि हे प्रभू इह कुछ थोड़ासा शाक मात्र भो
जन जो है सो निकला है अव कृपानिधान आप को क्या
देऊं इसके देते भी लज्जा आवती है तव भगवान
कहने लगे कि हे सुशीले इह मेरे को इतना हीं व
हुत है तूं सोच और संकोच का त्याग करके शीघ्र
दे दे ऐसे सुनते हीं द्रौपदी ने आनंद से एक ~~पत्ते~~
~~अर्थात पत्तलपर दोने~~ दूण अर्थात दूने मै धरकर
दीनानाथ के हाथ मे दे दिया तव भगवान तिस
को मुख मै पाय कर वड़े हरष पूर्वक कहने लगे
कि अव मेरे वचन करके इस शाकमात्र से संपूर्ण
जगत तृपती को प्रापत हो जावे और हे द्रौपदी ते
रे मन का और ~~कामना~~ संकल्प जो है सो सव सिद्ध होवे ऐ
सा वचन उचार कर कृपासिंधु भगवान उठ खड़े
हूये और ~~कर~~ कमलों को लज्जा देने वाले कोमल

नाथ जो हैं सो जलसें प्रक्षालन करके फिर आनंद
से आय कर सुंदर सुखासन पर बैठगये और राजाध
रम जो जुधिष्ठर है तिसके साथ अनेक प्रकार वार
तालाप करकें फिर जैसी आज्ञा देते भये
सो आगे कथन कीजाती है॥ चौपाई॥ मुनि दुरबासा
पें नृवराई॥ मृत आपन अवदेहु पठाई॥ उन सन
मन हिं बिलंब न लावहु॥ करि सनान मुनि नायक
आवहु॥ भई बेर बहु बनी रसोई॥ पावहु आय मु
दित मन होई॥ प्रभु अनुसास पाय क्षितराई॥ बोलि
बेग दुज दीन पठाई॥ कहहु तोर आगमन मुनीसा॥
परतीक्षा करि रह्यौ नरीसा॥ कब मुनि नाथ शिष
न जुत आव हीं॥ हरषि भवन मम भोज
न पाव हीं॥ दुज संदेस जाय जब दीना॥ भये सो
चबस मुनि न प्रवीना॥ प्रथम प्रभाव बचन न
भवाना॥ भयो सि नृपति विप्र सब नाना॥ तो ते
कछु अभिलाष न रहचै॥ संजुत शिषन नृपत
मुनि भयचै॥ सुनि दुज बचन पाय मुनि मरमा॥
संध्यादिक परि हरि सब करमा॥ भलहिं निक
ट निज दुजहिं बिठाई॥ लागे कथन करन मु
निराई॥ सुनहु विप्र अस बचन हमारे॥ कह
हु नृपहिं मे भवन तुमारे॥ जहि प्रकार आ
वा सुत धरमा॥ सो सब करहु प्रकट अब म
रमा॥ हसतन नगर दिवस इक पाई॥ गयो भ
वन दुरजोधन राई॥ तहां भक्ति संजुत अ
भि लाषा॥ विपुल दिवस मोहि भूपति राखा॥
सुचि सतकार नवल नित पययो॥ मै प्रस
न्न तोके बश भययो॥ तब तहि मन्यो मांगवर
राई॥ जो तुमार मानस सुखदाई॥ मांगा तास
भूपवर एह॥ मोर आगमन भवन तब जेह॥

तब द्रुपदसुताने देखे कि भगवान गरुड़ रथ इत्यादि वाहन से रहित पाओं पयादे ही चले आये हैं हृदय मैं कलेश मानकर कहने लगी कि हे संसार का भय दूर करने वाले और दासजनों के हृदय को आनंद देनेवाले भगवान आप आये हो मैं जानती हूं कि दीनबंधू को इस समय विषे आवने कौं अत्यंत श्रम और कलेश पाहै ऐसे नम्र वाणी से वचन उचार कर बड़े सनमानसे आसन विछाय दिया और हाथ जोड़ कर कहने लगी कि कृपानिधान ईहां विराजिये मैं आपके चरन कमलों को प्रक्षालन करती हूं अर्थात धुलावती हूं तब भगवान तिसकी वाणीसुनकर बड़े हरख को प्रापत हुये और कहने लगे कि हे राजा द्रुपद की कन्या अब तू मेरा वचन जो है सो श्रवण कर ॥४॥ ~~इस प्रकार द्रोपदी ने कहि कर~~ चौपाई ॥ मोरे इहि अवसर बड़भागी ॥ क्षुध्या उदर कठिन अति लागी ॥ भोजन देहु जबन कछु तोरे ॥ तो संतोष होहिं जीय मोरे ॥ सुनत वचन अस द्रुपद कुमारी ॥ सोच विवस अस विनय उचारी ॥ अब अवसर मध्यान विहावा ॥ मैं लीन्यो भोजन प्रभु पावा ॥ कोऊ यतन अब बन नाहिं आवहीं ॥ दीन थाल कछु जानि न जावहीं ॥ तब भगवन मुख कहा बजाई ॥ पाकभवन तुव द्रोपदि जाई ॥ देखहु अलप मात्र कछु होई ॥ तो भोजन मोरे तुव सोई ॥ ल्याय देहु अब वेग प्रवीना ॥ मैं क्षुध्या पीड़त अति कीना ॥ सुनि प्रभु बचन धरम सुत रमनी ॥ लाजत अधो वदन गति गवनी ॥ ~~चिंतन~~ करत जात चिंतन हरिलीला ॥ का देखहिं तहां जाय सुशीला ॥ पाक निकेत शाक कछु थोरा ॥ लागिर ह्यो भाजन इक ओरा ॥ तासु देखि भावत मन माहीं ॥ इहि ते सर हिं का न कछु नाहीं ॥ अब इई चलत नाहिं बस मोराय

सहित वेग आय करके पाइये ऐसे कृस्न भग
वानकी आज्ञा पाय करके राजा जुधिष्ठिर जो है सो
तुरंत एक ब्रह्म को ऐसे समुझाय करके तहां मे
ज देता भया कि हे ब्रह्मण मुनी दुरवासाजी को
जाय करके कहो कि महाराज राजा आप के आ
गमन को देखरहा है जो कब मुनी नायक आ
वैं और मेरे घरमे भोजन पावैं इस प्रकार
राजा का भेजा हूआ ब्रह्मण मुनी के पास जा
य करके सब संदेस कहि देता भया तब दुरवासा
जी सुनकरके बड़े सोच को प्रापत होय गये क्यों
कि कृस्न परमातमा के मुख से वचन जो भया था ति
सके प्रभाव से सरव जगत को त्रिपती होय रही थी
तो ते मुनी नायक भी सब षिष्यों के सहित पर
म त्रिपती को प्रापत भये हूये थे किसी को कु
छ भी खान पान की अभिलाषा नहीं थी ऐसे
मुनियों विषे प्रधान जो दुरवासा मुनी थे सो हृ
दय मे भगवान के कौतुक और लीला को जा
नकर और संध्यादिक अपने करम को क
रकर तिस ब्रह्मण को प्रीती पूर्वक पास वि
ठाय लेते भये और मधुर वाणीं कहने लगे कि
हे ब्रह्मण अब मै जिस प्रकार कहता हूं सो तूं
स्रवण कर और तैसे ही इस मेरा कथन राजा
को जाय करके कहो कि हे स्वाम धरम भूप मै
जिस प्रकार अपने सब षिष्यों के सहित तेरे
घर मे आया हूं सो कारण तूं स्रवण कर कि
मै एक दिन हसतना पुर विषें राजा दुरयोध
न के घर चला गया तब तिसने मेरे को बहु
त दिनो तक अपने हैंदा रख कर दिन दिन हूं
म की प्रीती से ऐसा सेवन सतकार किया

जो मे प्रसन्न भया हुआ तिसके वश होयगया और
कहा कि हे राजन अब जो तेरे मनको भावता है सो
वर मांग मै देता हूं तब तिसने एही वर मांगा कि हे
मुनी जहां चारों विखें मेरे भ्राता पांडव निवास कर
ते हैं तुम तहां तिनके घर मे तब जावो कि जब द्रो
पदी ने भोजन पाय लिया हो फिर तिसी
सब शिष्यों के वास्ते तिनसे भोजन
मांगो इस प्रकार मै तिसके वचन के वश भया हूं आ रा
जन तेरे घर मे आया हूं हे ब्रह्मण तुम पहिले
मेरी और से आशीरवाद देकर के पीछे इह वृतांत
सब सुनाय देवो और इह भी कहो कि हे धरम निधी
अब मेरे को भोजन की कुछ इच्छा नहीं है मैं सर
वथा करके प्रसन्न हूं मेरे वचन के प्रसाद से राज
न तेरे को सरवदा सुख सुजस और कल्यान प्राप
त होवे ऐसे कहि करके मुनी नायक जो हैं सो सब
शिष्यों के सहित तहां से चले जाते भये और इह
ब्रह्मण भी राजा के पास चला आया और मुनी का
कहा हुआ सब वृतांत सुनाय देता भया राजा सुन
करके परम हरष को प्रापत हुआ और कहने ल
गा कि इह सब दीनो के हितकारी और परम उपका
री कृष्ण भगवान जो हैं तिनकी कृपा है तिसते उप
रांत कुछ और और चरचा वारता होती रही फिर भ
गवान आनंद से विदाय होयकर अपने धाम को च
ले गये इस प्रकार इह मनोहर गाथा जो है सो हे संतो
मैने आपके गायन करदी है देखिये कि राजा द्रुपद
की कंन्या द्रोपदी जो है तिसकी भक्ती के वश भ
ये हुये भगवान कृपानिधान पाउं पयादे ही द्वारि
का से धाय करके चले आये ऐसे विचार कर दृढ
भक्ती और निश्चय से जो आपदा काल विखे भगवा
न का सुमरण करेंगे सो अब ही आपदा के कले
श से छूट कर सुख को प्रापत होवेंगे

ऐसे इह द्रोपदी की भक्ती का महातम जो कोई श्रद्धा पूर्वक पठेगा अथवा सुनेगा तिस के हृदय मै अनपायनी कि जो नहीं पाई जाती ऐसी जो कृष्ण भगवान की है सो अवश्य करके इढ होवेगी ॥५॥ इति श्री भक्ति विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषा टीकायाँ द्रोपदी चरित वरणने नाम [illegible] सरगः

अरु जब सुता द्रुपद कि तराई ॥ कहिस लेहिं मुनि भोजन पाई ॥ तो पाकहिल तुम तहो रसोई ॥ जाचन करहु मुदित मन होई ॥ तास वचन वस होय भुआला ॥ मै आवा तुव भवन रसाला ॥ प्रथम असीर बाद दुज दे हो ॥ बहुरि वृतांत सकल अस कहेयो ॥ अन र च्छा भोजन मोहि नाहीं ॥ मै प्रसन्न सब विधि मन माहीं ॥ मोर वचन कर नृपति सुजाना ॥ होवहि तुमहिं सुज स कल्याना ॥ अस कहि कीन गवन मुनि राई ॥ रहे वि प्र छित पत पे आई ॥ सकल वृतांत दीन समुझाका ॥ हृदय आनंद भूपवर पावा ॥ कहत विदत करुणा रह ारी ॥ कृस्न देव दीन न हित कारी ॥ पुनि चरचा कछु और सुहावन ॥ रहे करत प्रभू मान स भावन ॥ अस इत चरित चारु सुखदायन ॥ मै सेवक कीन कछु गायन ॥ द्रुपद भूप कन्या वर जोई ॥ देखहु ता सन तीवस होई ॥ कृपा हिं पु दीन न हित कारी ॥ प्रलान पा ल प्रभु भक्त उकारी ॥ पद चर विपन दारिका त्या गी ॥ आय कृपाल फेर वन लागी ॥ अस विचारि दाया निधि कोहीं ॥ सुमरहिं आपद काल जीय जो हीं ॥ कष्ट देष दुख स कल विहाई ॥ ~~पावहिं प्रभु अरु~~ ~~देसुख भाई~~ ॥ लेहिं सु प्रभु प्रसाद सुख पाई ॥ दोहा ॥ द्रुपद सुता कर भक्ति भव ललित महा तम ~~[illegible]~~ एहु ॥ कीन कथन कछु प्रीति जुत सुनहिं श्रवण धर जेहु ॥ तांके उर अन पायनी हरन सकल भ्रम भीत ॥ कृस्न चरन पंकज विमल उपजहिं भक्ति पुनीत ॥ ५ ॥ टीका ॥ भगवान कहते हैं कि हे राजन अब दुरवासा मुनी के पा स अपना कोई दूत भेज देवो सो उन को जाय कर के कहि देवे कि मुनिनाथ आप आई ये भोजन बहुत देर का बना हुआ है शिष्यों के

भया सो सदैव भिक्षाटन करकर अपने स्त्री पुत्रों
की पालना करता था और तिन के निमित्त रात्रीदि
न घरघर नगर मे भ्रमन करता और नाना श्र
म कलेश पावता रहता था सो यद्यपि इतना
यतन और श्रम भी करता था तद्यपि तिस के
कुटंब की उदर पूरना नहीं होती थी अर्थात भूखे रह
ते थे तब तिस ब्रह्मण ने हृदय मे विचार कर भि
क्षाटन को त्याग दिया और और ब्रह्मणों का धरम
जो सो भी सब छोड़कर केवल दुराचार को ही ग्रह
ण कर लिया क्योंकि रात्रीदिन वण मे जाता और तहां
जो रसते चलने वाले पथिक को देखता तो तुरत धा
य करके तिस को लुकट जो लाठी है तिस का प्रहार
देकर मार देता और फिर तिस का धन वस्त्र भूषण
इत्यादि जो देखता सो लूट लाट कर घर को ले आ
वता और इसी प्रकार कुटंब की पालना करता था
ऐसे लौकिक करम मे परायण भया हुआ ब्रह्म
ण हृदय एही जानता भया कि इस से उत्तम ज
गत मे और कोई भी धरम ~~करम~~ करम न हीं है॥२॥
चौपाई॥ इह कुटंब प्रति पालन हेतू॥ भलो सुधर्म
औ हि सुख देतू॥ तब अस करम करत जग तासा॥
गयो विपुल जब काल विलासा॥ भयो धन ह्रु वि
प्र सोई मारा॥ समय पाय तहि विपुन मझारा॥
आये मुनि वसिष्ट निधि ज्ञाना॥ तिन हि देखि
हि सक अग लोना॥ भनत सो आज भाग मम
आछे॥ एक तुम हे बहु दिवसन पाछे॥ मिले
आज मुनि प्राण तुमारे॥ लागत तुम हि कब
हु अति प्यारे॥ तो निज अब हि वसन धन सारे॥
देहु वेग निज करन उतारे॥ नहि तो अब हि
लुकट हनि तोरे॥ हरहु प्राण कछु वेर न मोरे॥

सुनि असवचन तासु मुनिराई॥ बोले वदन वचन मुसकाई॥ हे लुंपक पूछहुं मैं तोही॥ परिहरिकपट सत्य कहु मोही॥ सोरठा॥ आपन सुख जीय मान॥ कै कुटंब पालन नमित॥ करहु कि कारन आन॥ नित्य पाप रहु विपुन तुव॥२॥ टीका॥ फिर कहता है कि इह कुटंब के पालने के वास्ते बहुत सुखदायक है तब इस प्रकार करम करते करते तिसको जब बहुत काल वतीत होय गया तो घर मे नित्य धन के आवने ते वे ब्राह्मण बड़ा धनी होय जाता भया तब समय पाय करके एक दिन तिस वण के रस्ते परम ज्ञाध्यानं की निधी मुनी वसिष्ठ जो हैं सो चले आवते थे तिनको देख करके वे पाप की खानी कहने लगा कि आज मेरे अहो भाग्य हैं देखो बहुत दिन के पीछे इनको ई धनवाला पुरष मेरे को आय प्रापत भया है ऐसे हरष के वश भया हूआ लुंठिक अर्थात लुटेरा मुनी को कुछ कोप जणाय कर के कहने लगा कि हे ब्रह्मण जो तेरे को अपने प्राण प्यारे हैं तो विलंब मत कर तेरे पास धन वस्त्र इत्यादि जो कुछ है सो शीघ्र उतार करके मेरे को दे दे नहीं तो इह लकुर जो लाठी है तिसका प्रहार दे कर अबी तेरे प्राणों का नाश कर देऊंगा इस प्रकार तिसका कथन सुन कर मुनी वाशिष्ठ जी मुसकाय कर कहने लगे कि हे लुंठिक मैं तेरे को जो पूछता हूं सो तूं कपट को त्याग कर के सत्य सत्य कहो कि तूं जो ई हो वण विखे इह महा पाप करता है अपने सुख के नमित्त कि कुटंब के कि अथवा और किसी के वासते करता है इसका उत्तर हृदय मे विचार कर के मेरे को दे॥२॥ चौपाई॥ असमुनि वचन सुनत निज श्रवना॥ बोल्यो वदन विप्र अगमवना॥ मोरे तात मात

सुत दारा॥ बांधवु भ्रात सकल परिवारा॥ मै उन
कर पालन हित भाई॥ करहु करम इत कानन आ
ई॥ राखहि एक मोर आधारा॥ नहिं अवलं
व आन संसारा॥ कहि अस करम सदन निज माहीं॥
लेजावहु कवहुकि धन नाहीं॥ तो कुटंव इत तुध्य
त सारा॥ मरहि विषन मुनि विगत अहारा॥ अस
तहि वचन सुनत मुनि ताया॥ मने सुनहु लग
धि कमम गाथा॥ जहि कुटंव प्रति पालन
काहीं इत तुव करहु पाप वन माहीं॥ पूछहु ति
न तें भवन सिधारी॥ तुव हित तात भ्रात महता
री॥ मै जोई करहु अनर्थ महाहीं॥ तो के संगी
अहु कि नाहीं॥ जव लग तुम नहिं आव पराई॥
तवलग रहु ठांउ इत भाई॥ सव गाथा उन
कर तुम पाई॥ वेग आय मोहि देहु जनाई॥ लु
मधिक वचन सुनत मुनि राई॥ जाग्यो ज
नहु प्रीति कछु आई॥ तात मात भ्राता सुत
नारी॥ आयो तिन पैं वेग सिधारी॥ कहत ज
वन मै अर्थ तुमारे॥ करहु अनेक विपुन अग
नारे॥ तुम उन कर वनि हो कि ना भागी॥
भनहु सत्य अव कपट त्यागी॥ वोले वचन
तास सुनि सारी॥ तात मात भ्राता सुत नारी॥
हम तुमार अग जानत नाहीं॥ कौ तुव कर
हु करम वन माहीं॥ सदा रहत भोजन अव
हेरे॥ पुन्य पाप तुव नाहिं न हेरे॥ करहु अ
नीति कि नीति सुभागी॥ हम केवल भोजन
कर भागी॥ सोरठा॥ अस वांधव समुदाय॥
तात मात त्रीय भ्रात सुत पूछे वहु समुझाय॥
वन्यो न संगी अधर्म कौ॥ ३॥ टीका॥ =

अथ वालमीक चरित

दोहा॥ गुरु संतन पद सीस धर नाभादास सुजान॥ सावधान सनमुख वदन लागे करन वखान॥ चौपाई॥ भक्ति महातम रुचिर सुहावा॥ वालमीक मुनि मोन सभावा॥ जथा स्रवण मैकीन कृपाला॥ करहु कथन तिमि दीन दयाला॥ पूरव काल एक धनहीना॥ रह्यो कुटंव निरत दुजदीना॥ सुंदरा निज पालन हेतू॥ मिता टन करि यतन सुचेतू॥ करहि कुटंव पालना होई॥ भरकत भ्रमत वपुल सुख खोई॥ तद्यपि उदर भ्ररना काहू॥ होहि न किये विपुल श्रम ताहू॥ अस विचारि मिता टन त्यागी॥ निं कुटंव प्रतिपालन लागी॥ परिहरि विप्र धर्म वर सादी॥ मा अधर्म रत अधम अचारी॥ तव तें प्रतिदिन कानन जाई॥ आवत पंथ पथक जन पाई॥ लुकर प्रहारि प्राण गत तासा॥ करहि तुरंत विप्र अगरासा॥ वहुरि तास धन संपति जेही॥ सकल मूढ लुंठिन करि लेही॥ तास कुटंव होत इहि भाती॥ जग पालन पोषन दिन राती॥ सोरठा॥ तव लुंठिक वृति माहिं भयो परायण सो वटू॥ करत आन कोउ नाहि॥ इहि ते उतम धरम जग॥२॥ टीका॥ नाभादास जो हैं सो गुरु जीं और सव संतो के चरनो पर सीस नाय कर और सनमुख सावधान होयकर कहने लगे कि हे संतो अव वालमीक जी की भक्ती का सुंदर महातम जो है जैसा कि मैने स्रवन कियाहै तैसा आप के आगे गायन करत हूं पूरव काल विखें एक कुटंव वाला निरधन अत हे कर कें दीनं दरिद्री व्रहमण होता वडा और

अनीतीसे हम को कुछ परयोजन नहीं है आप ने
भोजन हे वास्ता रखते हैं इस प्रकार माता पिता
औ स्त्री पुत्र भ्राता से लेकर के तिस ने सब को बार
बार पूछा परन्तू अधर्म और पाप का संगी कोई
भी नहीं बना ॥ ३॥ चौपाई ॥ अप्रीय वचन सुन
त तिन काना ॥ विप्र दुखित निज हृदय महाना ॥
आवा जनु सव स्व गवाई ॥ मुनि पें व्याकुल धी
र विहाई ॥ जुग कर जोरि धरनि धर माथा ॥ कहत
वदन नम्रत अस गाथा ॥ पूछे दीन नाथ मे सारी ॥
तात मात भ्राता सुत नारी ॥ को अधर्म करम भयो न भा
गी ॥ बने मीत सब भोजन लागी ॥ कहत तुमार कृता
कृत जोई ॥ हम नाहिन कछु जानत सोई ॥ सुनि अ
स वचन तासु मुनि राया ॥ बोले वदन उपजि अति
दाया ॥ अहो भेद तुव दुज सुत होई ॥ लख्यो अधर्म
धरम नहीं कोई ॥ जहिं नमित तुव पाप करहीं ॥
बने न आन तोर सठ एहीं ॥ अनहित कहे मान
स हित थापी ॥ हास्यो वृथा जनम निज पापी ॥
सुनहो विप्र सुभासुभ जोई ॥ जाव हिं संग भवत
सब कोई ॥ इह सेचित मानस जब लेहीं ॥ वपु
प्रालब्ध पाव तब सोहीं ॥ करे मान अस से चि
त करमा ॥ दायक वपुव विसव बुध वरना ॥ करे
मान नर करम जु करहीं ॥ करत करत उर से चि
त धरहीं ॥ सो मृत समय वासना द्वारा ॥ वपु
प्रालब्ध पाव संसारा ॥ सुभ असुभ कर बन्यो
सरीरा ॥ उपजे कष्ट रोग दुख पीरा ॥ सुन हु वि
प्र जहि जीवत देहा ॥ सज्जन करहिं अलिंगन
नेहा ॥ परम प्रीति जुत हृदय जुडावहीं ॥ नित
नव हरष मोद सरसावहीं ॥ मरे परे पर रहि नि
कट न कोई ॥ अवत तासु त्रास बस होई ॥

आति सने हे लालन सन पाला॥ मनु मूरति हित
सुवन रसाला॥ पितु कहे देखि मृतक मन हि परयो॥
सो जीय प्रेत प्रेत कहि डरयो॥ तो ते कौन पुत्र पि
तू मीता॥ स्वारथ जानि करहिं सब प्रीता॥ सोरठा॥
मृत पश्चात न होहिं॥ को उद्धार करता जगत॥ आपन
कृता कृत जो हिं होहिं सहायक प्रेत सो॥ ६॥ टीका॥
इस प्रकार बांधवों के वचन सुनकर सो ब्राह्मण
हृदय मे परं दुखी और व्याकुल ~~[illegible]~~ भया हुआ
मानो आपना सरवस्व गवाय करके मुनी वसिष्ठ जी
के पास चला आवता भया और हाथ जोड कर चरनो
पर सीस धर के बडी दीन वाणी से विनती करने ल
गा कहता है कि हे कृपानिधान मे आपने ~~[illegible]~~ पि
ता और स्त्री पुत्र भ्राता को भलीप्रकार पूछ आया
हूं मेरे किये हूये करम का कोई भी संगी नहीं व
ना सब आपने भोजन के ही मीत बने हैं कहते
हैं कि तेरे धरम अधर्म मे और पाप पुन्य हम कुछ ह
जानते नहीं हैं केवल आपने पेट के पोषण क
रने का तेरे साथ परयोजन रखते हैं ~~[illegible]~~
ऐसे तिस का कथन सुन कर मुनी नायक दया के वश
हो गये और कहने लगे कि अरे मंद तूं ब्राह्म
कुल मे आयकर धर्म अधर्म को कुछ भी जाना
नहीं देख मूढ जिनके निमित्त तूं नित्य पाप औ
र अनर्थ करता रहा है ~~[illegible]~~ सो तो तेरे आ
ज बने ही नहीं जिन्हें तैंने अनहित को हित मानक
र आपना जनम वृथा ही खोय दिया है सुण
ब्राह्मण इह सुभ असुभ जो हैं सो ~~[illegible]~~ संग
जाते हैं ~~कैसे कि इह सुभ असुभ नकर मे जाते~~
~~[illegible]~~ क्यों कि इह जब हृदय मे संचित होते हैं

ताकिर प्रालब्ध शरीर को धारन करते हैं करे मान
कि जो शुभ अशुभ करम किये जाते हैं और संचित कि
जो करम कर कर के हृदय मे राखता जाता है तिन
करके हैं मृत समय वासना के द्वारा प्रालब्ध शरीर को
पावता है इस प्रकार इन शुभ अशुभ करमो से शरीर
चनकर नाना दुख रोग और कलेश पीड़ा जो हैं सो
उपजती हैं हे ब्रह्मण जिस शरीर को जीवते हूये
सब सज्जन और बांधव हितकारी वड़ी प्रीती और
सनेह से हृदय मे लगाय लगाय कर मिलते हैं सो
ई शरीर जब मृत होय जाता है तब भय मान कर
कोई भी तिस के निकट नहीं आवता है और देखो
कि अनते प्रीती और पयार करके पाला
हूआ मानो सनेह की मूरती पुत्र जो होता
है सो पिता को मृत पड़े हूये देखकर
प्रेत प्रेत कहता हूआ भाग जाता है डरता
निकट नहीं आय सकता तांते हे ब्रह्मण
कौन किसी का माता और कौन पिता सब कोई
अपने अपने प्रयोजन के हीं मीत हैं मरने के पी
छे उद्धार करने को कोंभी सामर्थ नहीं है सहो
जो कुछ आप नाहीं किया हूआ होगा सोई सहा
यता करेगा ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ असें द्विज मानस नी
के ॥ करहु जतन अव भावति जी के ॥ ज्ञान यु
क्त मुनि वचन सुहाये ॥ सुवसे हृदय तास सुख
दाये ॥ भाग विराग उपज्यो उर ज्ञाना ॥ जाग्यो ज
नु सुपन अग खाना ॥ चेतन भयो जब हिं द्विज
सोई ॥ मुनि सन कहत युक्त कर दोई ॥ दीनना
थ तुम सत्य वखाना ॥ प्रभु प्रसाद मे सब कछु जा
ना ॥ कूर कुटंब सकल परि त्यागी ॥ अब दृढ प्री

इस प्रकार मुनी का वचन सुन कर सो पाप की वोनी
कहने लगा कि हे ब्रह्मण मेरे माता पिता भ्राता स्त्री
पुत्र जो हैं मैं तिनके वासते इस वण विखें आयकर
के इह करम करता हूं क्योंकि तिनका एक मेरा ही आ
धार है और किसी का भरोसा नहीं है जो मैं इह करम
कर के तिनके वासते जेर मैं धन आदिक नहीं लैजाऊं
तो वे सब भूखे व्याकुल होय करके मर जावें तब तिस
का कथन सुनकर के मुनी कहने लगे कि हे भाई लुंठिक
तूं मेरा वचन ~~जो~~ कान देकर सुण कि जिस कुटंब
के वासते ~~[illegible]~~ तूं वण मे नित्य महा पाप करता हैं अ
ब तिन से जाय करके पूछ कि हे माता पिता भ्राता
और स्त्री पुत्रो मे जो ~~[illegible]~~ तुमारे पालने के वास
ते वण विखें जायकर के अनेक पाप और अनर्थ
करता हूं अब कहो कि तुम भी मेरे पापों के संगी हो
कि नहीं और जब लग तूं नहीं आवता तब लग मैं
इहां ही स्थित रहूंगा तूं उनसे भली प्रकार पूछकर
और सब कारता को पायकर आयकर के मेरे को जणा
य दे ऐसे मुनी को वचन सुनकर सो अधरमी ब्र
ह्मण मानो अज्ञान निद्रा से जाग उठा और कुछ
शांती को प्रापत होय गया तहां से तुरत ही धायकर
के अपने माता पिता और पुत्र स्त्री भ्राता के पास आय
करके कहने लगा कि मैं जो तहां वण विखे तुमारे
पालना के वासते अनेक पाप और अनर्थ करता हूं
तुम भी मेरे तिस पाप और अनर्थ के कुछ संगी हो
कि नहीं इह मेरे को सत्य सत्य कहि देवो तब
तिस का ऐसा कथन सुनकर के माता पिता औ
र स्त्री भ्राता कहने लगे कि हम तुमारे करम
को तो कुछ नहीं जानते हैं ~~[illegible]~~ केवल अपनी
उदर पूरना को जानते हैं तुमारे पुन्य पाप नीती

ऐसे विचार कर हे ब्रह्मण अब जो तेरे मन को भा
ता है सो कर तब इस प्रकार ज्ञान के उदय क
रने वाले मुनी के वचन जो हैं सो तिस ब्रह्मण
के हृदय मे प्रवेश कर जाते भये भागों के वशात्
रतहीं हृदय मे ज्ञान उपज आया और इस ज्ञान
निद्रा मे जो सोया हुआ था जाग उठा जब इस प्र
कार चैतन्न होय गया तब दीन भाव से
हाथ जोड़ मुनी के आगे विनती करने लगा कि
हे दीन हितकारी आप का कथन सब सत्य है
मैने तुमारी कृपा से सब कुछ जान लिया है अब
तो इस कूट कुटंब को त्याग कर प्रभू मैने
आपके चरनों की प्रीती मान लई और आपके
ही चरनों की शरण को आधार कर लिया है हे भ
गवन तुम स्वामी और मै सेवक अब कृपा करके
मेरे को अपना दास जानिये और मेरे उपदेश क
रिये कि जिससे हे कृपा निधान मेरी कल्यान हो
वे ऐसे तिस के दीन वचन सुन कर यद्यपि
मनी के हृदय मे दया भी उपजी तद्यपि कहते
हैं कि इह जड़ महापापी और अधम बुद्धी का
हो न है मै इस को आज उपदेश करके अपने
ऊपर वृथा क्यों पाप लेऊं ऐसे विचार कर
मुनियों विखे प्रधान जो मुनी वशिष्ठ जी हैं ति
सको सहज सहज कहने लगे कि भाई मेरे
को तो कुछ कारज के लिये अब शीघ्र जाना है
जो कदाचित तहां नहीं जाऊं तो अति से कर
के बडी हानी होती है इस लिये अब मै तो जाता
हूं और तुम भी ईहां से अपने को चले जावो
तहां ग्राम विखे जाय कर के किसी महापुरष
का उपदेश लेकर तिस के शिष्य बन जावो जब
इस प्रकार मुनी नायक ने उचारण किया तब
सुन कर के सो ब्रह्मण हृदय मे परम दुखमान कर

कहने लगा कि मुनीनाथ मेरे वचन आपने स
त्य कर के जान लेना कि जो कदाचित तुम मेरे को
उपदेश न हीं करोगे तो मै तुमारे सहित अप ने
प्राणों का अभी नास कर देउंगा इह मेरा सत्य प्र
ण है इसमे कुछ संशय नहीं ऐसे कहता ही श्र
ण श्रण उचारता हूआ मुनी के चरनों को पकड़ले
ता भया तब मुनीनाथने यद्यपि तिस को वहुत ही
निवारण किया तद्यपि सो प्रेममे उनमत्त भया हू
आ जुगलसू चरनो को छोड़ता नहीं भया तव तो
मुनी नायकने हृदय मे विचार किया कि जो इसके साथ
[illegible] अव हठ करते हैं तो इह जरुर अवश्य आप
ने प्राणों का नास कर देवेगा और मेरे को व्रह्म
घात का पाप लग जावेगा ऐसे विचार कर मुनी
प्रधान तिस का त्याग नहीं सके और हृदय मे
सोचने लग जाते भये कि इह अधम अधिकार
के योग्य नहीं है इस को कौन मंत्र उपदेश
किया जावे इस प्रकार विचारते विचारते अंत
को इह सिद्ध किया कि इस को अब सरव दुख
दोष और पापों के नास करने वाला राम नाम
तारक मंत्र जो है सोई उपदेश करता हूं ऐसे
विचार कर संपूर्ण जगत के पवित्र करने वा
ला राम मंत्र जो है सो तिस के कान मे विध्री
त रीती से सुनाय दिया अर्थात आद का अंत
र अंत करके मरा मरा मंत्र पढाय दिया और
कहा कि इह सरव सुखों के देने वाला परम प
वित्र तारक मंत्र है इस को इकाग्र चित होय
कर के रात्रीदिन सदैव जप ~~करता~~ ते रहना
तव सो व्रह्मण आपने मन वांछित फल को
~~पाय कर और मुनी चरनों के सो उठाय कर वार~~
~~वार फिर देई~~ प्रणाम ~~करता भया तव~~

१२१

पाय कर और र मुनी के चरन जो वर्क दे हुये
थे सो को देषि आनंद में मगन भया हुआ बारंबा
र दंड प्रनाम करता भया तब मुनी नाथ कृपा
ती पूर्वक फिर जिस प्रकार तिस को शिक्षा दे ते
हैं सो आगे कथन की जाती है ॥५॥ चौपाई ॥
अब इहि थल तुव बैठि सुभागी ॥ जप हु निरंतर कपट
तयागी ॥ राम मंत्र तारक जग एहा ॥ सुलभ मोक्ष
पद पावन देहा ॥ अस कहि कीन गवन मुनिराया ॥
इत उपदेश विप्र उर छाया ॥ भयो स्थिर तहि सथल
सुजाना ॥ दीनसि त्याग अन्न जल पाना ॥ आसन एक
बैठि दृढ कीना ॥ मरा मंत्र मानस धरि लीना ॥ विपु
ल काल अस तासु बिहाया ॥ बलमीक भई प्रकट दुज क
या ॥ अवसर पाय तासु पथ आये ॥ मुनि वसिष्ठ निधि
ज्ञान सुहाये ॥ जपत निरंतर मंत्र दुज सोई ॥ विसमय
विवस देखि मुनि होई ॥ कीन्यो विधि सुमरण ततका
ल ॥ अति प्रसन्न मानस मुनि पाला ॥ हंस रूढ वे
गमुँपि आये ॥ करि प्रनाम मुनि वर हरषाये ॥ मनेव
चन चतु वदन प्रवीना ॥ पुत्र सुमरण मोर कत कीना ॥
तब वसिष्ठ मुनि विनय उचारा ॥ इह कृपाल दुजम
मतु मारा ॥ सोरठा ॥ अब इहि दुज कर पाल ॥
कीजिय वर करि कृपा निज ॥ कीन नाथ बहु काल
इहि अखंड दृढ उग्र तप ॥ १ ॥ टीका ॥ मुनी कहते हैं
कि हे ब्रह्मण अब तू इसी अस्थान पर इह बडा म
हज और कल्यान के देने वाला पवित्र तारक मंत्र
जो है सो निरंतर होय करके जप ऐसे कहि कर मुनी ना
यक अपने मारग को चले गये और इहां मंत्र उपदे
श जो है सो ब्रह्मण के हृदय मे भली प्रकार छाय त
हो जाता भया और तहां हीं तिसी अस्थान पर स्थि
त होय कर के अन्न और जल इत्यादि खान पान
सब त्याग दिया ॥ और एक आसन दृढ कर के
बैठ गया राम नाम का उलटा मरा मरा शब्द

ति चरन प्रभु लागी॥ केवल सरन तोर भगवाना॥ मैं अब
लीन परम सुख माना॥ प्रभु स्वामी मैं सेवक
दीना॥ नाथ मंत्र उपदेश न कीना॥ मोरे करहु दास
पद जानी॥ तब अस बचन सुनत मुनि ज्ञानी॥ हृद
य विचार दयानिधि कीना॥ इह सठ अधम पतित
मति हीना॥ करि उपदेश आज इहि काहीं॥ लेवहुं
वृथा पाप तन माहीं॥ अस विचारि मुनि नाय
क तासा॥ मंद मंद मुख वचन प्रकासा॥ मोरे अब अ
स्य द्विज जाना॥ कारज विवस होत नत लाना॥ तो
तें करहुं पैथ निज गवना॥ इत तुम जाय ग्राम
निज भवना॥ बनहु विप्र सेवक सिष आना॥ जब
मुनीस अस वचन बखाना॥ भन्यो तासु मुनि ना
थ प्रवीना॥ जो उपदेश तुम हुं नहिं कीना॥ तो
तुमार संजुत निज हिंसा॥ करहुं मोर प्रण ना
हिं न संसा॥ अस रटि सरण सरण परि धरना॥
पकरि लीन पावन मुनि चरना॥ तब मुनीस तहि
विविध निवास्यो॥ गहे चरन द्विज टरहिं न टास्यो॥
मुनि नायक तब मानस जाना॥ इह जड करहि तु
रत हत प्राना॥ ब्रह्म घात मोहि दूषण लागी॥
अस विचारि मुनि सकेउ न त्यागी॥ भाखेत सो
चि अधम इह भारी॥ नाहिन काहु मंत्र अधि
कारी॥ पै कलेश दुख किलविष नासवन॥ राम
मंत्र तारक जग पावन॥ इहि कहे देहुं उचित इ
हि काला॥ अस विचारि मुनि दीन कृपाला॥ राम मं
त्र विप्रीत सुहावा॥ आदि बरण सोई अंत पठा
वा॥ कहा सदैव जपहु इहि भाई॥ राम मंत्र तार
क सुखदाई॥ सोरठा॥ तब तिहि चरन पुनीत॥ प
रि हरि कीन प्रणाम महि॥ बोले वचन सप्रीत॥
मुनि कृपाल तिहि विप्र कहें॥ ५॥ टीका॥

दशा नजाय मोद कछु वरनी॥ तव निज करन कम
ल भव गेही॥ उठाय वदन अस तेही॥ होउ
ब्रह्म ऋषि तुम सुमचारा॥ वालमीकि अस नाम तु
मारा॥ अस जव विधी दीन वर तासा॥ विप्र परम नि
ज हृदय हुलासा॥ आगम समय तहि माहीं॥ सो
गो पांग रूप धरि ताहीं॥ कृतू अचार धरम धृतिदा
या॥ ह्री कीरति श्रद्धादि निकाया॥ स्तुति सिमृति
मति शांति सुहाई॥ तमानुष्टी सुंदर सुखदाई॥ अ
डिसिद्धि मानस हुलसानी॥ सादिर विधि आ
यसु उर मानी॥ वालमीक करसन मुख आई॥ ठा
ढि भई तत दासु मुदाई॥ अस करि दुजहिं क्र
तारथ ताहीं॥ गये वरिंचि भवन निज काहीं॥ मु
नि वसिष्ट आपन मग लीना॥ वालमीक वरण
य प्रवीना॥ मुनि ऋषि
यनकर वंदित होई॥ पूरण सकल मनोरथ सोई॥
परिहरि काम निरत अनुरागा॥ उत्तम अमल
करन तप लागा॥ राम नाम अरु भक्ति प्रभावा॥
मै संतपतक
छु कअस गावा॥ नतर यथावत वेद
न गाऊ॥ इह जस जगत अनंत प्रभाऊ॥
तस सामर्थ कथन कहे कोई॥ सुनहु संत जन
नाहिन होई॥ ताते मै जड लघु मतिवारा॥
इह प्रभाव कसमन हु अपारा॥ जहि तें वाल
मीक संसारा॥ प्रथमहि रुचिर राम अवतारा॥ रामा
यण रचना वर साधी॥ मानहु छंद सरस्वति वाधी॥
आजहु वालमीक मुनी कोहीं सुमरहिं प्रात
काल नर जोहीं॥ गत अज्ञान जाड़ता खोई॥ है
हिं ज्ञान रत पंडित सोई॥ अस इह भक्ति महा
तम सोहा॥ वालमीक मुनि मानस मोहा॥ दोहा

दमन दोष दारद सकल सुनहिं भक्ति जुत जोय॥
लोक सुजस परलोक सुख हरिचरनन रति होय॥
१॥ टीका॥ इस प्रकार वसिष्ठ मुनी कैं वचन सुन कर
ब्रह्माजी कहने लगे कि हे पुत्र तैने सत्य कहा जो
इस ब्राह्मण ने बहुत काल लौं तप किया है परंतु हे मुनी
प्रधान मैं प्रथमहीं इसके वर देने को अपने हृदय
मै सोच कर रहा था अब तैने जो मेरे को सुमरन कि
या तो तैं मन का अर्थ जो है सो सब सिद्ध करता हूं
अर्थात इस ब्राह्मण को बहु सुंदर और अपूरव वर
देता हूं ऐसे कथन करके विधाता ने तिसके वरमी रूप
शरीर को मुख से हे ब्राह्मण हे ब्राह्मण उचार कर स्पर्श
किया जब तिस को इस प्रकार ब्रह्मा का स्पर्श भया त
व ब्राह्मण मानो कंचिन वत नवीन काया धार कर तत काल हीं
उठ खड़ा हूआ और ब्रह्मा के सहित वसिष्ठ मुनी को
सनमुख स्थित भये देख कर और अपने भागों की वडा
ई जान कर दीनता से तुरत हीं चरनों पर गिर पड़ा
तिस समय का तिस का आनंद और सुख जो है सो कथ
न नहीं किया जाता तब ब्रह्माजी अपने चरनों पर से
तिस का सीस उठाय करके कहने लगे कि हे पुत्र तूं
मेरे वचन से ब्रह्मऋषी है और अब तैं वालमीक ते
रा नाम होता भया जब इस प्रकार ब्रह्मा ने वर दे दिया
तब सो ब्राह्मण परम आनंद को प्रापत हूआ और ति
सी समय वेद शास्त्र शुभ आचार यज्ञ धरम धी
रज सुजस लज्जा शांती श्रद्धा दया सुमती
प्रभृति स्मृती क्षमा तुष्टी इत्यादि सब ~~[illegible]~~
रिद्धी सिद्धी जो हैं सो विधाता की आज्ञा से आय
करके वालमीक के सनमुख स्थित होय जाती
भई ऐसे तिस ब्राह्मण को जगत मै सुजस का पा
त्र और कृतार्थ करके ब्रह्माजी जो हैं सो आनंद से
अपने धाम को चले जाते भये और हे वसिष्ठ

मुनीभी आशीरवाद दे कर आप ने मारग कोचले गये तब ~~ऐ~~ ई हो वालमीक जो है सो वर प्राय करके सरव मनोरथों ~~करके परम मायपूरन~~ से परिपूरन और मुनी ऋषियों करके वंदित भया हुआ ~~सब~~ कामना से रहित शुद्ध चित्त होय करके बड़ा निरमल और अखेड तप जो है सो करने लगा ~~सब~~ नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो इह राम नाम और भक्ती का प्रभाव जो है सो मैने कुछ संक्षेप करके गाय कर दिया है नहीं तो इह राम नाम और भक्ती का प्रभाव जैसा कि वेद ने गायन किया है सो तो वड़ा अगम है तिस का कथन करने को कोई सामर्थ नहीं है तो ते मै जड़ ~~मन~~ और तुच्छ बुद्धी वाला ऐसे अपार प्रभाव को कैसे कथन कर सकता हूं देखिये राम नाम और भक्ती का अनंत प्रभाव कि जिसके प्रसादे वालमीक ने प्रथम ही रामा अवतार के रामायण की कैसी रमणीक रचन साधी है मानो छंदों विखे प्रतक्ष सरस्वती वांधी ~~है~~ है आज भी तिस वालमीक मुनी का ~~प्रात काल जो कोई सुमरण~~ जो कोई प्रात काल विखे सुमरण करेगा तिसके हृदय की जड़ता और अज्ञान सब नाश होय कर ज्ञान ध्यान के सहित ~~सब~~ शास्त्र के जानने वाला ~~सब~~ पंडित विद्वान होय जावेगा ऐसा इह बड़ा मनोहर और उत्तम वालमीक की भक्ती का महातम है इसको भक्ती प्रीती से जो कोई श्रवण करेगा सो सरव दोष दुख और दारिद्रों से छूट कर भगवान के चरन कमलों की भक्ती और प्रीती वाला हो जावेगा ॥ ~~स~~२॥ इति श्री भक्ति विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषा टीकायां वालमीक चरित वरणने नाम सरगः

हस्तलिखित (margin)

जो है सोई रसना द्वारा रात्री दिउ चारने लगजाता भया जब इस प्रकार मरा मरा रटते [illegible] तिस ब्रह्मण को बहुत काल बतीत होय गया तब बैठे बैठे तिस की शरीर पर मीवत मानो माटी ही होय गया समय पाय करके तिसी मारग [illegible] पर ज्ञान ध्यान की नि[illegible] धी मुनि वसिष्ठ जी फिर आय प्राप्त हूये तब तिस बलमीक रूप ब्रह्मण को तहां सोई मंत्र जपता देखकर बड़े अचरज के वश होय गये और कहने लगे कि अहो इसने बड़ा उग्र तप किया है ऐसे कहते हो [illegible] प्रसन्न भये हूये मुनी ब्रह्मा का सुमरण करते भये तब ब्रह्मा जो हंस पर आरूढ भये हूये ततकाल ही तहां चले आये मुनी तिन को देखकर हरष के वश भया हूआ बारंबार दंडप्रणाम करता भया ब्रह्मा कहने लगे कि पुत्र तैने मेरा सुमरण किस प्रयोजन के वासते किया है तब [illegible] वसिष्ठ मुनी हाथ जोड़ कर विनती करने लगे कि हे भगवन इन ब्रह्मण जो है सो आप के चरनो का दृढ भक्त है देखिये इसने बहुत काल प्रयंत बड़ा खेद और महा उग्र तप किया है चहता है कि आप अनुग्रह करके इसको वरदान दीजिये और संसार मे सफल कीजिये ॥ ६ ॥ चौपाई ॥ मुनि कर सुनत [illegible] हितकारी ॥ चतुरानन मुख गिरा उचारी ॥ कहा सत्य तुव पुत्र प्रवीना ॥ इहि दुज विपुल काल तप कीना ॥ मैं निज हृदय प्रथम गुण अयना ॥ सोचित रह्यो अवसि वर देना ॥ कीन्यो अब सुमरण तुव मोरा ॥ करहु अभिषेक सकल फुर तोरा ॥ तात देहु मे जुल वरण हो ॥ भनत वदन अस दीनस ने हो ॥ परसत बलमि वपु खद्रुत तासा ॥ विप्र विप्र [illegible] असवचन प्रकासा ॥ भा सपरस जब तासु विधाता ॥ ततक्षण उठ्यो विप्र दुति गाता ॥ [illegible] विधि वसिष्ठ सनमुख दौ [illegible] देखे ॥ उदय भाग निज से स्तुति लेखे ॥ पर्यो लुकट इव चरनन धरनी ॥ ॥

(margin: पंच)

अब नामादासजी संत जनों के चरनों पर सीसना य कर के कहते हैं कि हे महापुरषों अब परम पवि त्र राजा रुकमांगद की गाथा जो है सो आ पके आगे गायन करता हूं कैसी भी गाथा है कि जिस के श्रवण करने से हृदय में ज्ञान विवेक और भक्ती दृढ होयकर सुख और सुजस जो है सो प्रापत होता है और काम क्रोध मद इत्यादि नाना विकार जो हैं सब नास होय जाते हैं पूरव समय विषे एक बड़ा प्रजापाल और धरम में परायण चतुरंगनी सेना करके युक्त महा प्रतापी और गौ ब्राह्मण की रक्षा करनेवा ला रण विषे बड़ा सूरवीर और धीरज का धाम सरव दोषों से रहित और गुणों की निधी भगवान का भक्त रुकमांगद नाम करके राजा हो तो भया ॥ तब तिसको निसकंटिक अर्थात निर विघन राज करते करते को बहुत काल व्यतीत होय गया और तिस ने नगर के बाहर एक मनोहर वाटिका अर्थात मनके हरनेवाली बागी ची बनवाई हुई थी कि जो षट रितु अर्था त छेही रितुओं के फूलों और फलों करके सो भा देती थी और किसलय जो बड़े कोमल नवीन वृक्ष सो अनेक प्रकार के तहां लगे हुये तैसे ही निरमल जल और तीन प्रकार की सीतल मंद सुगंध पवन भ्रमरों की बड़ी मधुर गुंजार कर की जो मोर कीर जो तोते सुंदर कंठ वाली जो कोकला हैं इत्यादि और भी नाना पंछियों करके परिवारत भई हुई सो बागीची अरथात चारों ओर बैठे हुये पंछी बड़ी अपूरब ही सोभा देते हैं और अनेक प्रकार के सबदों के बोलते हैं तब तहां ऐसी मनोहर वाई देख करके रात्री के समय अपसरा जो हैं सो आय कर तिस वाटिके

श्री

कानमे विचरती और प्रसून जो फूल हैं सो नित
हरकर के लेजाती थी एकदिन राजा जो तहां आ
या तो फूलों की न्यूनता को देखकर मालाकार
जो माली है तिसको बुलाय कोप से कहने लगा कि
अरे जड़ हमारी वाटिका के फूल कौन हरकर अ
र्थात चुराय कर के लेजाता है जो मूढ़ तिस चोर को पकड़
कर आज मेरे सनमुख नहीं करैंगा तो मेरा सत्य प्रण
है कि तेरा सब कुटंब के सहित नास कर देऊंगा
इस प्रकार राजा की आज्ञा सुनकर माली जो है सो
परम सोच और चिंता के वस भये हुए धीरज से
रहित और व्याकुल चित होयकर के नगर मे चला
आवता भया ॥१॥ चौपाई ॥ वृद्ध विप्र इक नगर मझा
रा ॥ धरम शास्त्र सब जानन हारा ॥ अति विद्वान निपु
ण गुण शीला ॥ वेद पुराण विदत जहि लीला ॥ मा
लाकार आवत तहि सरणा ॥ कीन प्रणाम शीस धरि
चरना ॥ सुमन हरन कर सकल वृतंता ॥ कीन्यो
कथन आद लग अंता ॥ नहि जानहु जड़ कवन गु
सैयां ॥ प्रतिदिन हरहि पुष्प नित जैयां ॥ राउ रजा
य आज मोहि दीना ॥ जो तुम चोर पकर नहि लीना ॥
तो सठ जान प्रान इह तोरे ॥ हतहु कुटंब सहि
त प्रण मोरे ॥ इहितें शरण तोर प्रभु आई ॥ सक
ल मरम निज दीन जणाई ॥ राखि लेहु अब कृपा
अ[illegible]रा ॥ जानि परहि मोहि सुमनन हारा ॥ मा
लाकार वचन सुनि दीना ॥ हृदय विचार विप्रवर
कीना ॥ सोरठा ॥ भयो तासु समुझाय ॥ सुमन
वाटिका भूप जे ॥ को नसकहि तहे जाय ॥ राज
दंड भय मानि उर ॥ होहि अपसरा कोऊ ॥ गंधर्व
किंनर यक्ष धों ॥ नतर सुर होऊ ॥ हरि ले
जाहि प्रसून जे ॥२॥ टीका ॥ तहां नगर मै एक

बडे ब्रह्मण वेद शास्त्र के जानने वाला परम विद्वान और
धरमातमा पुरष था सो माली दुःखी भया हुआ तिस के
पास आय कर और चरनो पर सीस नाय कर बडी दीन
बाणी से पुष्पों के हर ले जाने का प्रसंग जो था सो
सब सुनाय देता भया और कहने लगा कि राजा की ऐ
सी आज्ञा भई है जो कदाचित आज पुष्पों के चौर
को पकड कर मेरे सनमुख नहीं करेगा तो कटंब
के सहित तेरे को मरवाय डालूंगा हे भगवन तिसभ
य के वश होय कर मैं आप की शरण को प्रापत भया
हूं और अपना वृत्तांत भी सब सुनाय दिया है अब कृपा
कर के मेरी रक्षा करो जो वे पुष्पों के चुराने वाला पुर
ष प्रापत हो जावे इस प्रकार माली के दीन वचन
सुनकर दया की मूरती वृद्ध ब्रह्म जो था सो हृदय
में विचार कर के तिस को कहने लगा कि भाई इह
राजा की सुंदर वाटिका जो है इसविखे तो राज
दंड का भयमान कर कोई नहीं जाय सकता है जा
नपडता है कि कोई अपसरा अथवा यक्ष किन्नर
गंधर्व राक्षस इत्यादि फूलों को हर कर के ले
जाते हैं॥ २॥ चौपाई॥ इहि कर यतन सुनहु अब भा
ई॥ जहि प्रकार तसकर गह्यो जाई॥ जे हरि हर
निरमाल सुहावन॥ आन हु जाय वेग तुव पावन॥
भीतर सुमन वाटिका राई॥ जहं तहं करहु व
कीरण जाई॥ आपु तुमहु निशि अवसर मोने॥
रहहु अलोप बैठि कहुं कोने॥ कोउ देव अप
सर नभचारी॥ आवहि तहां मझ नृप वारी॥
सो निरमाल उलंघन कीने॥ गिरहि होहिं तु
रत बलछीने॥ ~~सुनकेवच~~ वृद्ध विप्र सुनि व
चन नवीना॥ ततक्षण तास यतन सब कीना॥
वहुरि जाय निज सदन मझारा॥ भयो सयन र
त माला कारा॥ उत निज समय पाय समुदाई॥

अथ रुक्मांगद चरितं

चौपाई॥ अब पावन रुक्मांगद गाथा॥ मन हुं नाय सेतन पद माथा॥ तत दरस सुनत जास सुख सारू॥ ज्ञान विवेक भक्ति वर चारू॥ उर दृढ होहिं मुद दाना॥ मिटहिं विकार मार मद नाना॥ पूरव एक धरन पति गावा॥ रुक्मांगद जहि नाम सुहावा॥ प्रजापाल रत धरम रसाला॥ चतुरंगनि अनि नाथ भुआला॥ पति प्रताप दुज गैयत त्राता॥ समर सूर धारन धृति दाता॥ गुण हेपन्न दोष गतसाधू॥ राम नाम नित हृदय अराधू॥ निस केटिक महि राज सुहावा॥ करत ता सु वहु काल बितावा॥ नगर वहिर इक सुखद सुहाई॥ सुमन वाटिका भूप रचाई॥ फल प्रसून खट रितु कर नीके॥ सोहत तहं ललित प्रीयजी के॥ किसलय विटप वेलि छवि छाई॥ चलत समीर त्रिवध सुखदाई॥ कयकि कीर कल कंठ सुहावन॥ गुंजत भृंग मधुर मनभावन॥ आवृत आन खग न गण संगा॥ होत वचित्र मुखर व हु रंगा॥ तहां विलोकि मनोहरताई॥ रजनी समय अपसरा आई॥ हरि ले जाहिं कुसम नितवारी॥ दृशा वाटि निज भूप निहारी॥ माला कार बोलि अस काहा॥ हरत प्रसून कौन कसराहा॥ आज मोर सन मुख सठ तेही॥ कीन्यो जो न जतन जु त मेही॥ तो कुटंब जुत तोर विधंसा॥ करहुं मोर प्रण नाहिंन संसा॥ दोह॥ अस सासन भूपति सुनत मालाकार अधीर॥ चल्यो सो चचिंता विवस कंपत वियत सरीर॥ १॥ टीका॥

अपने नियम अनुसार विचरती हुई सो अपरा तहां पुष्पवाटिकामें चली आवती भई और असे का अभय होयकरके तिस फूलंकी वाडीमें जहांतहां न्यारी न्यारी होय करके विचरने लगी इस प्रकार जब कुछ थोडीसी रात बाकी रही तब वे अपसरा उडकरके अपने मारगको चली गई तिन मेंसे एकने जो निरमाल्य उलंघन किये थे सो अशक्त भई हुई तहांही बैठ रही प्रातकाल होते माली जो आया तो तिसके ~~आमाते~~ प्रभावसे हीन लज्जित और व्याकुल देखकरके ततकाल राजाके पास जायकर सब वृतांत सुनाय देता भया कि महाराज आपके प्रतापसे फूलोंका चोर पकड लिया है परंतु हे कृपानिधान कोई कामदेवकी स्त्री कोभी लज्जा देनेवाली सरव अंगों करके सुंदर साक्षात कमलनैनी है और जिसने अपनी सौंदरयता से दसो दिशा किं है प्रकाशमान किया हुआहै मानो रोहणी जो चंद्रमाकी स्त्री है सोई पृथवी तलपर आयकरके शोभाको उदय कर रही है पृथीनाथ इह कोई मानुषी नहीं है देव कन्यासी प्रतीत होती है इस प्रकार मालीका कथन सुनकरके राजा जो है सो तुरत तहां पुष्पवाटिकामें चला आया और तैसे हीं तिस रूपकी निधीको देखकर अचरजके वश भया हूआ कहता है कि इह सत्य करके मानुषी नहीं है कोई देवकन्या हीं देखपडती है ॥ १ ॥ चौपाई ॥ अस विचारि मानस क्षितिनाथा ॥ तहि पै आय मन्यो मुख गाथा ॥ सुभ्रे सुनहु कवन तुव अहो ॥ सकल वृतांत प्रकट निज कहो ॥ इहि थल कवन हेत तुव आई ॥ ते अस सुनत वचन क्षितिराई ॥ बोली सुनहु भूप गुणरासी ॥ मै अपसरा नाकनिवासी ॥ ... सखि समाज संजुत निसि काला ॥ ईहां सुमन वाटि

कार साला॥ विहरन हेतु नृपति चलि आई॥ सो समु
दाय शेष निसि पाई॥ सुरपुर गवनि गगन पथ लीना॥
मै निरमाल उलंघन कीना॥ तहि प्रभाव कर सुरपुर
गवना॥ मोरी भई दिव्य गति दमना॥ अस तिहि वचन
सुनत नर राई॥ बोले वदन मंद मुसकाई॥ मोरे
करहु कथन सुभवानी॥ कौन यतन अवरूप निधानी॥
जहितें तूं सामर्थ समेता॥ चलि जावहु निज
नाक नकेता॥ तुव मुख यथा कथन कछु होई॥ करहुं
उपाय वेग मै सोई॥ गिरा नरेस सुनत सुखदाई॥ हरषि
अपसरा वदन अलाई॥ सुनहु भूप तहि राजमजारा॥ जे
हि एकादशि कर व्रत धारा॥ ते निज निराहार व्रत
जोई॥ मोरे देहि रुचिर फल सोई॥ तो मै जाहु नाक निज
सदना॥ सुनि अस वचन भूप तहि वदना॥ आय नगर
दूत लोग बुलाई॥ बूझत सबन प्रीति जुत राई॥ निराहा
र मंजुल व्रत कीना॥ एकादशि कर जवन प्रवीना॥ सो मो
रे अब देहु जनाई॥ ग्रम ग्राम पुनि दूत पठाई॥ आय स
दीन देखि नर नारी॥ ल्यावहु जाय वेग व्रत धारी॥ धारि
सीस सासन महिपाला॥ धाय दूत जहं तहं ततकाला॥
करि अन्वेषण विविध प्रकारा॥ आय दूत फिरि भूप
ति द्वारा॥ सोरठा॥ विनय करत गति दीन॥ महाराज पुर
ग्राम लग॥ सकल खोज हम लीन॥ पाव नजहि व्रत
कीन अस॥ ४॥ टीका॥ तव ऐसे विचार कर राजा
जो है सो तिस के पास चला आया और कहने लगा कि
हे स्त्री ले तू कौन है अपना वृतांत सब सत्य सत्य कथ
न कर कि ईहां कैसे आई है इसप्रकार राजा का वचन
सुनकर सो कहने लगी कि हे प्रजापाल मै स्वर्ग लोक
मै निवास करने वाली अपसरा हूं ईहां सब सखियें
के समाज सहित रात्री के समय अपने नियम अ
नुसार विचरती हुई तेरी इस वाटिका मै चली आई
जब थोड़ी सी रात रहि गई तो वे सब सखी उड़कर
आकाश मारग से अपने स्वर्ग धाम मै चली गई और
मै ने जो शिव निरमालों को उलंघन किया तो

१३५

तिनके प्रभाव से मेरी दिव्य गती जो है सो नील होय गई और अब शक्ति मई हुई इहाँ ही बैठ रही हूं ऐसे तिस का कथन सुनकर राजा दया के वश भया हूआ कहने लगा कि हे अपसरे सो कौन उपाय है कि जिस से तू सामर्थ्य और सावधान होय कर अपने स्वर्ग धाम को चली जावें मेरे को कथन कर मैं सोई यतन करता हूं तब राजा की बडी हित वाली बाती सुनकर अपसरा जो है सो आनंद पूर्वक कहने लगी कि हे राजन अब इसका एक उपाय है सो तुम को कहती हूं कि तुमारे नगर मे अथवा बाहिर ग्रामों मे जो किसी स्त्री वा पुरष ने एकादशी का निराहार व्रत धारन किया हो सो तिस व्रत का फल मेरे को देवे तो तिस के प्रभाव से मैं सामर्थ्य होय कर के अपने स्वर्ग धाम को अब ही चली जाऊंगी इस मे कुछ संशय नहीं है इस प्रकार तिस का कथन सुन कर ~~राजा~~ राजा जो है सो नगर के सब लोगों को अपने सनमुख बुलाय कहने लगा कि भाई जिस किसी ने एकादशी का निराहार व्रत धारन किया हूआ हो सो मेरे को कहि देवे और बाहिर ग्रामों मे भी दूत भेज दिये और तिन को कहा कि एकादशी का निराहार व्रत धारे हूये जो स्त्री पुरष हो सो मेरे पास ले आवो तब दूत राजा की आज्ञा पाय कर जहां तहां ग्रामों मे विषे धाय गये और भली प्रकार खोजने लगे परंतु ऐसा व्रत धारी कोई प्राप्त नहीं भया तब हारे हूये फिर कर के राजा के पास चले आये और कहने लगे कि हे पृथ्वीनाथ हमने यद्यपि बहुत ही खोज ना करी है तद्यपि ऐसे व्रत के धारने वाला कोई स्त्री पुरष भी प्राप्त नहीं भया है ॥४॥ चौपाई ॥ ये इक नाथ कनक तीय जोई ॥ अति बिभचार निरत [illegible] जह होई ॥ कौरक आन पुरष सन जाई ॥ [illegible]क रि बिभचार भवन निज आई ॥ पति लखि तासु अधम अश ऐना ॥ कहि कहि कोपि कठिन कटु बैना ॥ ताड़ि भल हिं देइ तहि दीना ॥ अति दुर दशा मान तत कीना ॥ तेउर मानि शोक दुख भारी ॥ पति

हरषत सो उ अपसरा आई॥ सुंदर सुमनवाटिका माहीं॥ लेन ललित मृदु फूलन काहीं॥ इतउ विगुरि कर न जव लागी॥ अटन स कुच भय मानस त्यागी॥ जव नीव तुरि सेष निसि पाई॥ मालाकार प्रात तहां जाई॥ देखहिं एक अपसरा चारू॥ बैठी सकुच विवस दुति हारू॥ सुर निरमाल उलंघन कीना॥ भई दिव्य गति विगत प्रवीना॥ मालाकार तुरत तव जाई॥ धरन पाले सन खवर जनाई॥ महाराज तस कर गहि लीना॥ पै कोई कमलँच निचीना॥ अति सुर कोमल ललित मृदु रमनी॥ निजलावन्य मान रति दमनी॥ सौंदरय ताई निज लीने॥ दसों दिसन मनु द्योतन कीने॥ रोहनि जनन्हु धरनि दुति छाई॥ इमत रूप छवि वरनि न जाई॥ मानुषि नाहिं रूप गुण धन्या॥ किंनर नाग देव की कन्या॥ सुन अवला अस राई॥ सुमन वाटिका वीच तहां॥ दिव्य रूप मन भाई॥ देखि अपूर्व सुंदरी॥ टीका॥ हे माली अव मै तेरे को एक उपाय कहता हुं कि जिस से इह फूलों का चोर सहजे ही पकड़ा जावेगा॥ तुम क्या करो कि जाय करके हरीहर विस्नु भगवान और महादेव है तिन के उतरे हुये फूल कि जिन को निरमाल कहते हैं लेआवो और राजा की पुष्प वाटिका मे जाय कर तिन को जहां तहां वकीरण करदेवो अर्थात ठौर ठौर मे खलार देवो और एकांत न्यारे लोप होय करके वैठ रहो अथवा घर मे जाय कर के सोय रहो तव तहां जो कोई अपसरा यक्ष किंनर देवता आय कर के तिन निरमालों को उलंघन करेगा सो अपने दिव्य प्रभाव से हीन और अशक्त होय कर तहां ही रुक जावेगा अर्थात तिस को जाने की सामर्थ न हि रहेगी इस प्रकार तिस वृद्ध ब्राह्मण की शिक्षा पाय कर माली यथावत सोई यतन कर के आप जाय कर अपने दसें घर मे सोय रहा तव रात्री के समय

सुस्र भवन रत आनंद छाये॥ आयो रूप सील
गुणगेहा॥ मिले राउं पूरि सनेहा॥ तब निवसत
तहि भूप अगारू॥ आवा एकादशि व्रत चारू॥ नृध्य
त परम भूप सुत जेही॥ प्रात काल भोजन करिले
हीं॥ तहां राउ अनुसासन नाहीं॥ भोजन
करन दिवस व्रत माहीं॥ सुता भूप जीयतास प्र
प्रवीना॥ तिहि दिन पतिहिं पाक नहिं दीना॥ यद्य
पि भूप सुवन बहुबारा॥ मागयो विलपत बदन अहा
रा॥ सोरठा॥ तद्यपि दीन न तास॥ माग्यो खग मृग
प्राणपती॥ इहि आज उपवास करहिं जीव जंतू सक
ल॥ ॥टीका॥ ~~[illegible] परंतु [illegible] हे प्रजा~~
~~[illegible]~~ फिर वह दूत कहते हैं कि हे प्रजापाल एक वैस
पुरष की स्त्री देखी है सो कैसी कि परम विभचा
रनी और किसी ~~[illegible]~~ दूसरे पुरष के साथ विभचा
र विवहार करके अपने घर मे जो आई तो तिस
के पतीने दुराचारनी कुकर्म लख करके अत्यंत कोप
से बडे दुरवचन बोलकर ~~[illegible]~~ और भलीप्र
कार दंड देकर जैसे योग्य था तैसे ही दुरदशा औ
र निरादर किया तब सो दुराचारनी हृदय मैं गि
लानी और शोक मानकर अन्न जल त्यागे
हुये दिनभर भूखी प्यासी हो रही और रात्री को
निद्रा भी नहीं लेती भई हे पृथीनाथ इस प्रका
र एक तिस वैस की स्त्रीने व्रत धारन किया है
आ है ऐसे दूतों का वचन सुनकर सो आप
स रा कहने लगी कि हे उपकार की निधी राजन
जो कदाचित वे वैसकी स्त्री प्रसन्न होयकरके
मेरे को तिसी व्रत का फलदान करे तो मै तिस
के प्रभावसे अवश्य अपने स्वर्ग धाम को च
ली जाऊंगी. और सरव प्रकार करके मेरा हित

हो होवेगा जव इसप्रकार राजा ने तिसके मुख से वचन सुना तो ततकाल हो तिसकी स्त्री को वुलाय कर तिससे अपने सन मुख व्रत का फल जो है सो अपसरा को दलवाय दिया ऐसे जव अपसरा ने व्रत के फल को प्रापत किया तव सव के देखते उडकर के आकाश मारग द्वारा अपने स्वर्ग धाम को चली जाती भई इस अद्भुत कौतुक को देख कर राजा आचरज के वश होयकर कहने लगा कि देखो भाई मिथ्या व्रत का तो इतना फल प्रकट भया अव कहो कि जो सत्य करके प्रीती और श्रद्धापूर्वक धारन करेगा तिसमें न जाने कैसी अगाध महिमा होगी इस प्रभाव को देखकर राजा जो है सो तिस दिन से लेकर के अपने सव परिवार के सहित सुंदर एकादशी के व्रत को धारन कर लेता भया और अपने संपूर्ण राज में भी आज्ञा प्रचलित कर देई कि स्त्री पुरुष वा मृग जीव जंतू जो मेरे राज में निवास करते हैं एकादशी के दिन कोई भोजन नहीं पावे सव कोई इस पवित्र व्रत को धारन करे जो कदाचित कोई मेरी इस आज्ञा को उलंघन करेंगा अर्थात व्रत नहीं धारन करेगा तो वे मेरे घोर दंड का फल पावेगा इसप्रकार सव प्रजा जो है सो राजा की आज्ञा सीस पर धारन करके और वैस की स्त्री के व्रत का प्रभाव देखकर परम पवित्र एकादशी के व्रत को प्रीती और रुची से धारन करलेते भये तव तैं दिन दिन अनेक धरम और सुकरम जो हैं सो होने लगे तिस प्रभाव कर के राजा भी दिन दिन संपती और संतती की वृद्धी को प्रापत होयकर वडे सुख और सुजस के सहित अपनी प्रजा को पालने लगा तव एक समय वडा सुंदर सूलम अंगों वाला राजा का जामाता कि जो राजा का हो पुत्रथा अपने घर से विदाय होयकर रूपसील

औरगुण प्रवीन जो था सो ऊ आपने सास ससुर
के भवन मे चला आया राजा देखकरके बड़ी प्रीती
सनमाने से मिलता भया और भवनो के भीतर लेजा
यकरके सुंदर निवास जो है सो दिया ऐसे तिसको तहां
वास करते को जब कुछक दिन बतीत होय गये तब
एकादशी का ब्रत जो है सो आय गया तिस दिन किसी
ने भी भोजन करना नहीं था और वे राजा का जामात्रा
कि जो अबी बालक ही था प्रातकाल उठकरके सदै
व भोजन पाय लिया करता था राजा की कन्या जो
तिसकी स्त्री थी तिससे यद्यपि बहुत बहुतबार
हीं भोजन मांग चुका परंतू सो नहीं देती भई कह
ने लगी कि हे प्राणपती देखो आज कैसा शुभ और
उत्तम एकादशी का दिन है हमारे राजभर मे सं पू
र्ण पसू पंखी जीव जंतू और स्त्री पुरखों निराहारब्र
त जो है सो धारन किया हुआ है तुम कैसे भोजन मांग
ते हो॥ चौपाई॥ जनेक जननि मुख सासन जोई॥
मै कस करहु उलंघन सोई॥ तीय मुख सुनत बच
न सुत राई॥ सास ससुर पें पुनि पुनि जाई॥ कहत
आज हुं लगा मै भुंदी ना॥ निराहार ब्रत कब हुं न
कीना॥ अति क्षुध्यां तन बिकल सरीरा॥ भयो काय
निरबल गत धीरा॥ मोरे देहु पाक अब राई॥ नतर
प्राण कर कवन बसाई॥ यद्यपि बिनय बिपुल तहि
कीना॥ तद्यपि नृपति अन्न नहिं दीना॥ तब तांके
बिनु भोजन पानी॥ सकल दिवस निसि अर्ध बि
हानी॥ तदनंतर क्षुध्यारत होई॥ ~~सो तब~~
मृतवस भयो सुवन नृप सोई॥ सोरठा॥ ससुर
सास जीय हेरि॥ कहत अवनि एती रही॥ आयु
अवधि इहि केरि॥ धरहिं न ब्रत दूषण कोई॥१॥
टीका॥ फिर राजकुमारी कहती है कि हे पती माता पि
ता की आज्ञा जो है तिसको मै कैसे उलंघन करके

रहि दिवस अन्न अहारी॥ तृष्य न तृषत बिथत चि
त माहीं॥ भई निरत निद्रा निसि नाहीं॥ अकस्मात
छितनाथ प्रबीना॥ अस तहि त्रीये वैस ब्रत कीना॥
सुनत अपसरा दूतन बानी॥ बोली सुनहु भूप जगमानी॥
कबहुं प्रसव वैस त्रीय होई॥ देवै मोहि ब्रत फल निज
सोई॥ तो मै जाऊं बिबुधपुर राई॥ सोहिं मोर सब भां
ति भलाई॥ नृप अस गिरा श्रवण जब कीनी॥ तुरत
मंगाय वैस त्रीय लीनी॥ अपसर कहं अति सुखद
सुहावा॥ तहितें ब्रत फल दान करावा॥ तब देखत
सब कर सुखदाई॥ सुरपुर कहं अपसरा सिधाई॥
भयो भूप अचरज बहु भारी॥ कहत बदन अस गि
रा उचारी॥ मिथ्या ब्रत कर इह फल भाई॥ सा चहु
~~[illegible]~~ करहिं जब न मनु लाई॥ तहि प्रभाव क
छु जाय न बरना॥ अस कहि वचन बदन पति धरना॥
तदनंतर संजुत परिवारा॥ एकादशि ब्रत लीन
सिधारा॥ अरु निज सकल राज छितराई॥ अस
सासन द्रुत दीन पठाई॥ जहं तहं प्रजा मोर सब
कोई॥ खग मृग जीव जंतु नर जोई॥ एकादशि
कर ब्रत अनुसरहीं॥ भोजन सलिल दिवस ज
नि करहीं॥ कबहुं कि इह सासन मम कोई॥ जो
निदरहिं हठवस सठ होई॥ पावहिं भोजन करि
ब्रत खेऊ॥ लेहिं सु फल दारुण मम देऊ॥ अस
धरि सीस सासना राई॥ देखि वैस त्रीय ब्र[illegible] अधि
काई॥ निज निज लाग सकल ब्रत करने॥ धरम
करम सुभ जाहिं न बरने॥ तहि प्रभाव कर भयो रसा
ला॥ युक्त सकल सम~~[illegible]~~ रिद्धि सुआला॥ मंग
ल मोद सुजस सुख पाई॥ पालहिं प्रजा धरम
रत राई॥ समय एक सुंदर मृदुगाता॥ राजकि
शोर भूप जामाता॥ निज निकेत तें होत बिदाये॥

कर चलपरती भई ऐसे सव वांधव और नाती जाती के लोगों समेत सो राजकुमारी समसान भूमीमे आय प्रापत भई तहां चितामे प्रवेश करती और पती कासी सजानू पर धरती हुई आसन दृढ कर के ध्यान मे लीन होय कर वैठ गई तो जव चेदन की रची हुई तिस चिता को आगनी प्रज्वलत करने लगे तव तुरत हीं एक वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारकर परम कौतुकी भगवान भक्त वरदान जो है सो आय प्रापत होते भये ॥ चौपाई ॥ उर वनमाल भाल दुति सोहा ॥ तिलक तुनि न मूरति मन मोहा ॥ आनन देत प्रभु किये निवारण ॥ पूछत मरम वदन भव तारन ॥ कहा सकल तिन प्रकट जनाई ॥ वोले तव कृपाल मुसकाई ॥ मृतक नाहिं इह सुजाना ॥ तधा विन सवि यत मुरछाना ॥ उरहु तन कप्र न मुख एहा ॥ सजीव होहि सजीव तुरत सिसु देहा ॥ पृथक अन्न तव भूपति आना ॥ निज कर विप्र भेष भगवाना ॥ सिसु कर वदन पाय जव दीना ॥ सो तहि तुरत न गीरण कीना ॥ भई विगत तन तन मुरछाई ॥ जनु जाग्यो सोवत सुतराई ॥ सावधान उठि देखत नैना ॥ विसमय विवस भनत मुख वैना ॥ हेत समूह कस चिता रचाई ॥ लागे कथन करन समुदाई ॥ तुव नृप सुवन मृतक सम हि परयो ॥ अति उपकार जठर दुज करयो ॥ कहत तुमहुं सव सत्य वखाना ॥ मै विनु अन्न विगत मुरछाना ॥ वृद्ध विप्र मो पें उपकारा ॥ कीन जयाय लीन संसारा ॥ भूप सहित वांधव जन सारी होत निमगण हरख निधारी ॥ सासन सुभग अरुद्ध कराये ॥ प्रमुदित तासु भवन लै आये ॥ भये लोग सव उत सव लीना ॥ तव भगवान हरन दुख दीना ॥ कहि अदभुत कौतुक निज

ताहीं॥ भये अंत्र गत सुरनर नाहीं॥ तब भूपति निज भवनन
आई॥ सो दुज कहौं कहत सुखदाई॥ प्राणदान जिहि बालक
काहीं॥ करि उपकार दीन जग माहीं॥ मैं कछु करउं तासु
सेवकाई॥ सादिर यथा उचित बनि आई॥ दोहा॥ सुनि
सासन अस भूप कुत धाय दूत पुर माहिं॥ लाग्ये खोजन
जतन जुत वृद्ध धरनि सुर काहिं॥ कैसे भगवान कि हृ
दय मे जिन के तुलसी की माला और मस्तक मे सजा हुआ
मनोहर तिलक तैसे ही सुंदर मुनियो कैसा भेष तिनो
को अगनी जो देने लगेथे तुरत ही निचारण करलेते भये
और पूछने लगे कि भाई मेरे वृतांत सुनावो इह कौन का
रन और क्या कौतुक है तब तिनोंने सब प्रसंग प्रकट कर
के सुनाय दिया भगवान सुनते ही मुसक्याय करके क
हने लगे कि इह मरा हुवा तो नहीं है परंतु सुधाकर के व्या
कुल और मूर्छागत होय रहा है इस के मुख मे थोडा
सा अन्न पाय देवो अभी जीवता होय कर उठ बैठे गा
ऐसे वृद्ध ब्राह्मण का वचन सुनकर राजा तुरत ही चा
वलों के बने हूये चिडवे जो है सो कुछ थोडे से मंगवा
य लेता भया तब वृद्ध ब्राह्मण ने लेकर के सो थोडासा
चिडवों का अन्न तिस के मुख मे डाल दिया वे
तिन को तुरत ही नगीरण कर गया अर्थात निगले
गया तिस अन्न मात्र के उदर मे जाने से बालक मू
र्छा से जाग कर चैतन्य होय करके उठ बैठता भया
और सावधान ता से इधर उधर देखकर बडे अच
रज के वश होय कर कहने लगा कि इह चिखो कैसे
रची हुई है और इहो लोग क्यों आय करके जुडे हुये
हैं तब सब कहने लगे कि हे राजकुमार तुम मृत हो
य गयेथे और इह सब लोग तुमारे शरीर के दग्ध करने
को आये हूयेथे इस वृद्ध ब्राह्मण ने परम उपकार किया
और तुम को प्राणदान दे दिये हैं ऐसे तिनका कथन
सुनकरके राजकुमार कहने लगा कि भाई तुम सत्य

कहते हैं मैं अन्न के बिना मूर्छा होय करके अचेत पड़ा हुआ था इस वृद्ध ब्राह्मण नें अत्यंत उपकार किया औ मेरे को जगत में जियाय लिया है तब सेपूर्ण बांधवों के सहित राजा जो है सो परम हरष को प्राप्त भया हुआ तिस बालक को सुंदर पालकी में बिठाय कर आप ने भवनों में ले आवता भया और बड़े मंगल और उत्सव होने की आज्ञा होती भई इस प्रकार जब सब लोग आपने आनंद सुख में लीन होय गये तब वृद्ध ब्राह्मण का भेष धारे हुये कौतुकी भगवान जो थे सो आप ना अद्भुत कौतुक करके तुरत तहां हीं लोप होजाते भये जब राजा को सुधी आई तो कहने कि भाई मेरे जामाते को प्राण दान के देने वाला वृद्ध ब्राह्मण कहां है मेरे पास ले आओ मैं तिस को जहां तक बन सकता है सेवन सतकार करूंगा इस प्रकार राजा की आज्ञा पाय कर दूत जो हैं सो नगर में जाय करके बड़े श्रम और यतन से तिस वृद्ध ब्राह्मण को खोजने लग जाते भये॥२॥ चौपाई॥ मिला न काहु सकल फिरि आये॥ नृप सन कहत वचन सिरनाये॥ महाराज हम विविध निहारो॥ पाव न वृद्ध विप्र उपकारो॥ सोतत काल लुपत भयो ताहों॥ जुसो समाज सकल प्रभु जाहों॥ सुनि अस नृप शोक वस भयये॥ रहो नाहिन जठिर दुज रहयो॥ कपट रूप धरि विप्र सुहावा॥ अगजग नाथ निगम जहि गावा॥ पारब्रह्म सोई आपुनि रंजन॥ भक्त सुखद भवत्रास विभंजन॥ प्राणदान बालक कहं दीने॥ भये लुपत प्रभु कौतुक कीने॥ अस विचारि नृप हृदय सुजाना॥ करि सनान कीन्यो वित दाना॥ द्वादश दिवस सहित परिवारा॥ भोजन व्यंजन विविध प्रकारा॥ पाये सानुकूल सुखछाये॥ राजकाज

तेरे को भोजन देऊं इस योग्य नहीं है ऐसे स्त्री के मुख से वचन सुनकर सो राजकुमार व्याकुल भया हुआ अपनी सास और सुसर के पास जायकर वारंवार बड़ी दीनता से कहता भया कि हे कृपानिधान मैंने चार में आजत क निराहार व्रत कभी धारन नहीं किया मेरा अव परम सिथल और धीरज से रहित व्याकुल होय गया है मेरे को अब भी भोजन देवो नहीं तो प्राणों का कुछ वसाय नहीं है अवी चले जावेंगे इस प्रकार यद्यपि तिसने वहुत ही विनती करी॥ तद्यपि राजा भोजन नहीं देता भया तब तिस को अन्न अन्न कर विलाप करते को जब दिन भी बीत गया और आधी रात भी निकस गई तिस ते उपरांत क्षुधा के वशाती ण होयकर पराणों को त्याग देता भया तब तिस का मरना देखकर के सुसर और सास कहने लगे कि देव की मरजी पृथ्वी तल पर इस के इतनी ही आयू की अवधी थी व्रत का दूषण जो है सो कोई नहीं राखता भया॥ १॥ चौपाई॥ प्रात काल निसि होत निवरने॥ भये उद्यु गद दगध तहि करने॥ सहगामनि वनि चली सु नयना॥ प्रमुदा तास रूप गुण अयना॥ तहिं तें दानादिक से भा हू॥ जनक कराय अनेक प्रकारू॥ वहुरि सहित वाधव जन नाती॥ कन्या धरम पतिव्रत माती॥ आई मु दित भूमि समसाना॥ चित ता चढी त संजुत पति प्राना॥ वु लै वदन मनु कमल विकासना॥ बैठी ध्यान लीन दृढ आसना॥ दोहा॥ विरचत चंदन चित हि जव लों अनल चमकान॥ वृद्ध विप्र धरि रूप तव च लि आये भगवान॥ ७॥ टीका॥ जब रात्री वीतीत होय गई तब प्रात काल होते ही चंदन की चिता रचाय कर के तिस के दगध करने की तयारी करदे ते भये सो राजा की कन्या कि जो रूप सील गुण और पति व्रता धरम में प्रवीन थी पती के साथ ही सह गामनी अर्थात सती होने को चंदन डोल पर चढ

करने से मानुष्य पापों की फांसी से सहजे ही छूट जाते हैं और सरब सुखों के देने वाली भगवान की भक्ती जो है सो तिनके हृदय मे दृढ होय जाती है ॥८॥ इति श्री भक्ति विनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती महातमे भाषा टीकायां एकमो गद चरित वरणनं नाम सरगः

पुनि ततपर भयये।। सोरठा।। सुनहो संत प्रवीन।। रु
कमांगद नृप भक्तिकर।। कथन बदन कछु कीन।। अति
विसमय दायक कथा।। सुनहिं श्रवण इत जोय।। कलिम
पाप बंधन मुकत।। राम भक्ति जग होय।। संतत ताकर
हृदय दृढ।।५।। टीका।। तब सो वृद्ध ब्राह्मण यद्यपि
तिन दूतों ने बहुत ही खोजा तद्यपि नहीं मिलता भया
अंत को हार करके निराश भये हुये फिर करके सब राजा
के पास चले आये और कहने लगे कि पृथ्वी नाथ हि
मने जहां तहां सब नगर मे बहुत ही खोजा है परं
तु बहु प्रकार की विधी वृद्ध ब्राह्मण कहीं भी देख
नहीं पड़ा है हारे हुये अंत को फिर करके चले आ
ये हैं तब राजा तिसके नहीं मिलने का हृदय मे अ
त्यंत कलेश मानकर कहने लगा कि मैने जान लिया है
इह कोई वृद्ध ब्राह्मण नहीं था कपट भेष धारे हुये स
रब चराचर सृष्टी के स्वामी और माया से रहित प
रम ब्रह्म परमेश्वर संसार का भय दूर करने वाले
भक्त सुखदायक भगवान साक्षात आप
ही थे आपने अदभुत कौतुक से इस बालक को प्रा
णदान देकर दीनानाथ लुपत होय गये हैं इस
प्रकार हृदय मे विचार करके राजा जो है सो स्ना
न करके धन धेनू भूषण वस्त्र इत्यादि नाना
प्रकार के दान करता भया द्वादशी को अपने
सब परिवार के सहित भोजन पायकरके
कृष्ण कृष्ण रटता हुआ अपने राज काज मे तत
पर होय जाता भया नाभादासजी कहते हैं कि
हे संतो इह रुकमांगद राजा की भक्ती
की बड़ी आश्चर्य और मनोहर गाथा जो
है सो मैने आपके आगे गायन करी है इह
कैसी भी फलदायक गाथा है कि जिसके श्रवण

५८२

लमिलिताहो॥ अति प्रीयभक्त मोर नृपजानो॥ प्र
सअनुमास पाय भगवाना॥ सित सरूप अरजन प्र
कटाना॥ जठिर मेष निज धरि श्री रमना॥ सेव क
स्वामि कीन [illegible] गवना॥ एक समात मग जा[illegible]
त निरता॥ व्याघ्र रूप धृत भीम कराता॥ गरजत चो
र बदन निज बाये॥ भक्षण करन हेत सिसु धाये॥
भ्यावन दशा देखि मृगराया॥ बोल्यो वृद्ध वचन
अकुलाया॥ दोहा॥ तुव उदार मृगराज अब मोहि
भक्षण करि लेहु॥ इहमेरे सिसु प्राण प्रीय करिद
या तजि देहु॥२॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे
गुरदेव स्वामीजी और हे सब संत जनो रुकमांद राजा
की गाथा जो है सो मै ने आपके आगे गायन कर देई है
अब मयूरधुज राजा की बडी मनोहर और अचरज
के देने वाली गाथा श्रवण करिये इसके ही भी गा
था है कि श्रीघरही भगवान की भक्ति के देनेवाली
और प्रेम बंधन अज्ञान इत्यादि सब कलेशों के
नाश करने वाली है एक समय देवों के देव [illegible]
[illegible] संत भक्तों के सुखदायक सरब भवनो के नायक कृ
ष्ण परमात्मा जो हैं सो अरजुन के सहित द्वारिका
मे विराजे हुये थे तब अरजुन के हृदय मे अभिमा
न उपजता भया कि सरब चराचर सृष्टी के विषै मेरे
समान भगवान का प्यारा भक्त और कोई नहीं है
[illegible] ऐसे तिसके अभिमान को भक्तजनों के हृदय
को सीतल करने वाले सरब घटघट के अन्तरजा
मी भगवान् हृदय मे जानकर और मन ही मन मु
सकाय कर कहते है कि इस गरब रूपी वृक्ष का
अंकुर जो मेरे भक्त के हृदय मे उतपन्न भया है इ
सका अबी शीघ्र ही नष्ट करना उचित है नहीं
तो इसमेरे भक्त को कलेश देवेगा इस प्रकार भ
क्त रहे भगवान हृदय मे विचार कर कहने लगे

(margin: अभिमान ... | जीव ... | ... के)

कि हे शील और सरव गुणों की खांनी मेरे सषे अ
रजुन आज में रे चित में (अभिलाषा) और वन की
मति मा देखने की बडी रुची और अभिलाषा उपजी है
तातें आनंद पूर्वक हम तुम चलें और तहां विचरक
रके फिर तब न करते हुये नरपति भवन को चले आ
वें ऐसे अरजुन ने भगवान की आज्ञा को सीस पर
धार कर सत्य वचन कहि दिया तब दीन वंधू तुर
तहीं द्वारिका को त्याग कर बन का मारग लेते भये
और अरजुन भी प्रभू के साथ ही पीछे पीछे चल
पडा ते दोनों कछुक दूर वन आय कर के भगवान ठा
ढे होय गये और अरजुन को कहने लगे कि हे स
षे तूं अब नाना वरष का वालक बन और वृद्ध बन
जाऊं ऐसे हम तुम दोनों वालक वृद्ध रूप धार कर
के परम प्यारा भक्त राजा मयूर धुज जो है तिसके
दरसन को चलते हैं तब भगवान की आज्ञा पाय कर
अरजुन जो है सो तुरंत ही वालक रूप होय गया और
भगवान वृद्ध ब्राह्मण का भेष धारन कर लेते भये
इस प्रकार सेवक स्वामी दोनों फिर आगे को चल प
डे तब क्या देखते हैं कि मारग में एक बडा भया
नक सिंह घोर गरजता हुआ मुख खोले हुये
वन के अकस्मात तहां निकल करके वालक के भ
क्षण करने को धाय पडा तहां तिस सिंह की भ
हा भ्यानक दशा देख करके वृद्ध जो है सो कांप
ता हुआ वडी दीन वाणी से कहने लगा कि हे पर
म उदार सिंहराज अब तूं मेरे को भक्षण कर
ले और इन मेरा प्राण प्यारा वालक जो है इ
सको दया करके त्याग दे ॥२॥ चौपाई ॥ सुनि
अस वचन वृद्ध रिपु नाना ॥ कछुक कोप वस भा
षण लागा ॥ सुनहु वाल रक्षक तुव वृद्धा ॥ ना
हिन मांस तोर रस गृद्धा ॥ खाद्य अमुख नवल

सिसुएही॥ भक्षण करहुं वृद्ध मैं तेही॥ बिलपि
वृद्ध तब वचन बखाना॥ सुनहु उदार सिंह बल
खाना॥ करि दाया अब यतन उचरहू॥ जेहि तें सुवन
मोर परिहरहू॥ मैं सु करहुं रजाय तुम्हारी॥ यथा
वनहिं तस हृदय विचारी॥ सुनि अस वृद्ध दीन बच बा
नी॥ बोल्यो सिंह दया कछु ठानी॥ मनहुं वृद्ध मैं ए
क उपाई॥ जो तुम तें बनि परहिं कराई॥ नृप मयूर
धज धरम प्रधाना॥ भक्त संत सेवक भगवाना॥ सो
श्रीय पतनि पुत्र कर दारा॥ धरत सीस निज आय
स आरा॥ देहि चराय काय युग खंडा॥ पगत रद
न शोक मंडा॥ अरु सुत पतनि हरष सरसानी॥
मानहिं हृदय न तनक गिलानी॥ सोरठा॥ दक्ष
भाग वपु तेहु॥ मोरे भक्षण हेतु तब॥ आनि जठिर
दुज देहु॥ तौ तुमार सुत कहें तजूं॥ ४२॥ टीका॥
इस प्रकार वृद्ध ब्राह्मण के वचन सुन करके हस्
तियों का शत्रु सिंह है सो कोप से कहने ल
गा कि हे बालक की रक्षा करने वाले वृद्ध तेरा मां
स जो है सो रस करके युक्त नहीं है अर्थात रस
वाला नहीं है और इस बालक का मांस जो है
सो अत्यंत रस वाला और बड़ा स्वादु है तो तें मैं इसी
को भक्षण करूंगा ऐसे सिंह का कथन सुनकर
वृद्ध बड़ी दीनता और विलाप के वचनों से कहने ल
गा कि हे मृगराज हे बल पराक्रम की खानी अब द
या करके मेरे को सो उपाय कहो कि जिससे तूं सं
तुष्ट होय कर मेरे बालक को त्याग सकें मैं जैसे बन
सकता है कोई यतन करता हूं और तेरी आज्ञा को पा
लता हूं तब वृद्ध ब्राह्मण के दीन वचन सुनकर
सिंह जो है सो कुछ दया के वश होय गया और क
हने लगा कि हे वृद्ध इस एक उपाय कहता हूं
मैं तेरे को

अथ मयूरधज चरित्र

दोहा॥ रुकमांगद कर चरितमे कीन कथन गुरदेव॥ अब मयूरधज भक्तिकर कथा परम विसमेव॥ मोर यथामति सो कहूं कथन ललित मन भाव॥ जासु सुन त सद्या विमल जौन भक्ति [illegible]व॥ प्रेम वंधन अ अज्ञान सब मिटहिं मोह अभिमान॥ उपजव प्रीत पुनीत निज चरन कंज भगवान॥ चौपाई॥ अब हर एक कृसन सुरनायक॥ भक्त संत सज्जन सुखदायक॥ अरजन सहित द्वारिका माहीं॥ वसहि हरन दुखदीन सदाहीं॥ तव पारथकर हृदय मझारा॥ उपज्योए कु दिवस हे कारा॥ विश्व चराचर मोर समाना॥ काहु न कीये भक्त भगवाना॥ अस अभिमान भक्त उर वंदन॥ अन्तर जामिं देवकी [illegible] नंदन॥ जानि तासु निज हृदय अगारी॥ विहसे मनहिं मन दीन उवारी॥ गरव विटप कर अंकुर जोई॥ उपजा हृदय भक्त मम सोई॥ उचित तासु अव वेग उपारन॥ अस विचारि मानस भव तारन॥ वोले वदन वचन भगवाना॥ सुनहो सखे सील गुण खाना॥ महिमा विपुल देखवे काहीं॥ उपजी रुची आज मन माहीं॥ तांते चलहु हरष सरसाई॥ विचरि आव पुनि भवन पराई॥ सत्य वचन भनि पारथ ताहों॥ धारि सासन सुर नाहों॥ चल्यो संग प्रभु पाछिले लागी॥ आये वहिर द्वारिका त्यागी॥ कौतुकि रमानाथ तव ठाढे॥ भाषत वचन प्रीति रत गाढे॥ पारथ तुम हु वरष दस कोई॥ वनहु रुचिर मृदु वालक सोई॥ मै निज वृद्ध रूप धरि ले तू॥ नृप मयूरधज दरसन हेतू॥ हम तुम चलहु युग

गा तो फिर तूं इस बालक को त्याग करके मेरे को दे दे
गा मै आनंद पूर्वक भक्षण कर लेऊंगा तब वृद्ध रूप
भगवान जो थे सो मुख से सत्य वचन कहि कर बा
लक के सहित राजा के द्वार पर चले आवते भये
तब मध्यान समय जो होय रहा था राजा भोजन
पावने के लिये त्यार था वृद्ध ब्राह्मण जो है सो द्वा
रपाल को कहने लगा कि भाई तूं भीतर जायकर
के राजा को मेरा आगमन सुनाय दे कि एक को
ई वृद्ध ब्राह्मण अपने बालक के सहित तुमारे
दरसन करने को द्वारे पर आया हूआ है तब द्वार
पाल ने सुनकर के तुरत ही जायकर वृद्ध ब्राह्म
ण को आगमन जो था सो राजा को सुनाय दिया
ऐसे ब्राह्मण का आवना सुनते ही धरम की निधी
राजा मयूरधज तुरत ही बाहिर चला आया
और वृद्ध विप्र को दरसन करके बारबार चरनो
पर सीस नाय कर विनती करने लगा कि मेरे ध
न्य भाग हैं जो आज घर मे आय करके आपने
दरसन दिया अब कृपा करके जिस कारज के लि
ये प्रभू आये हो सो आज्ञा करिये मै सेवक स
र्व प्रकार करके आपके आधीन हूं हे दयानि
धी अब संकोच के त्याग कर जो मन की इच्छा
है सो कहिये विलंब ना करिये मै प्रथम आप
का मनोर्थ सिद्ध करके पीछे भोजन पाऊं
गा ॥ चौपाई ॥ जब अस भूप वचन दृढ बो
ला ॥ तब निज मरम कपट द्विज खोला ॥ हूं स
नमित आव तुव पासा ॥ धरम धुरंध्र भूप गुण
रासा ॥ उनकर अर्थ दान कछु देहो ॥ तो मैं
द्विजा चन करि लेहो ॥ सुनि अस धरनि नाथ
द्विज बानी ॥ बोल्यो हरष मगन मुद मानी ॥

ऐसे विप्र बिस्मय अति बचना॥ जो तुव कीन बदन निज रचना॥ कृस्न अर्थ तुव जाचन आवा॥ मै नहिं देहुं तुम हिं मन भावा॥ तो धिग जियन मोर जग माहिं॥ रहे जो आन देव समुदाई॥ मै तिन अर्थ दान दे तेहूं॥ करहुं अमित सबन कर पूरा॥ कृस्न अर्थ कस देहुं न दाना॥ मागहु विप्र कवहुं तुव प्राना॥ सो कुं अदेव नाहिं दुज मोरे॥ भाखेहु सत्य धरम मनि ज तोरे॥ सुत वित काय कृस्न पर वारहुं॥ संपति राज काज सब हारहुं॥ मागहु विप्र जवन मन भावा॥ कृस्न प्रसाद मोर गृह आवा॥ सोरठा॥ चाहि दिदरथ आज॥ मै देहुं संशय नहीं॥ करहु प्रकट दुजराज॥ हृदय मनोरथ जवन निज॥८॥ टीका॥ इस प्रकार जब राजा वरे दृढ वचन बोलता भया तब कपट भेष धारी वृद्ध ब्रह्मन जो है सो अपना मनोरथ प्रकट करके कहने लगा कि हे धरम के पालक और सरगुणों की निधी राजा मयूरध्वज मै कृस्न भगवान के निमित्त तेरे पास कुछ दान मांगने आया हूं सो तूं उन के निमित्त ~~मेरे को दान दे~~ जो ~~[illegible]~~ जे कर मेरे को दान दे सके तो मै अपनी इच्छा के अनुसार कुछ मांग ले के ऐसे ब्रह्मन के मुख से वचन सुन कर राजा हरख मैं मगन भया हुआ आनंद से कहने लगा कि हे ब्रह्मन तेरे वचनों की रचना ने मेरे को बडे अचरज के वश कर दिया है क्योंकि जो सरब चराचर के पालक और सरब भवनों के पती देवों के देव कृस्न परमातमा हैं तूं तिन के निमित्त मेरे पास दान मांगने आवें ~~और मैं ना करों~~ मै ना देऊं तो मेरे धिग मेरा जीवना और धिग नहीं मेरा जनम है देखो और जो अनेक देवता हैं मै तिन के निमित्त दान

देदे कर सबका मनोरथ पूरण करता है भक्तहित
कारी कृष्ण भगवान जो है क्या मै तिनके निमित्त नहीं दे
ऊंगा ~~हे राजन~~ जो कदाचित तूं प्राण भी मांगे तो सो भी
अदेय नहीं है मै दे सकता हूं इह मेरा सत्य वचन है स्त्री पु
त्र राज कोश तन मन धन इह सब कृष्ण कृपाल पर नि
छावर ~~करदेता~~ अर्थात वार ने करदेता हूं हे ब्राह्मण अब
जो तेरे मनकी रुची है सो मांग कृष्ण भगवान की कृपा से
आज मेरे घरमे चारो पदार्थ ही परिपूरण हो रहे
हैं तुम अपना मनोर्थ जो है सो प्रकट करो मे सफल
करता हूं॥ चौपाई॥ गिरा भूप सुनि श्रवण सुहाई॥
बोल्यो बृद्ध विप्र हरषाई॥ सुनहु भूप तुव दरसन स्वा
मी॥ आय हम हु जब भवन त्यागी॥ मारग विपन
दोकि इक ठाढा॥ सिंह राज को पित अतिगाढा॥ सु
नि मोरे बालक कहै बोवन॥ धायो वाय वदन नि
ज भ्यावन॥ तब मै विलपि दीन मुख बानी॥ तासु जुग
लकर जोरि बखानी॥ हे मृग राज सुनहु बल खा
ना॥ इह बालक मोरे प्रीय प्राना॥ करि दाया इहि
करपरि हरहो॥ भक्षण मुदित मोहि तुव करहो॥ त
व मृगराज एक नहिं माना॥ कोपि वदन अस वच
न बखाना॥ लावहुं नहिं न अमुख तुव काया॥ जठ
र कृशा कछु मोहि न भाया॥ पीन नवीन बाल
तुव देहा॥ तो ते करहुं भक्ष मै एहा॥ तब व्याकुल
मै रोवन लागा॥ करि विसकार विविध निज भागा॥
एक हि देव मोर सेकारा॥ रह्यो सुवन इह प्राण आ
धारा॥ अति सनेह लाल न जुत पाला॥ जीवन
जीव मोर इह बाला॥ सो तो आज सिंह वस पर
यो॥ मोरे हृदय वज्र विधि धरयो॥ ~~मोर~~ सुनत वि
लाप मोर मृगराया॥ भयो मृगाल कछुक बस दा
या॥ लाग्यो भनन बृद्ध सुन बाता॥ जो बन है तुव
बालक त्राता॥ सोरठा॥ तो मै एक उपाय अब भाष
हुं तो हि इ जठर दुजा॥ जो तुम तें बनि आय॥ मेक्षि सु

जो तेरे से बन सके सो कर क्योंकि बड़ा धरम मे प्रधान
और संत भक्तों का सेवक जगत मे प्रसिद्ध मयूर
धुज नाम करके राजा जो है सो शोक से रहित हो कर
सीस पर आरा धर करके स्त्री और पुत्र के हाथ से आ
पनी काया को चिरवाय देवे परंतु सो स्त्री पुत्र
भी कुछ शोक और ना करैं ऐसे तिस राजा की काया का
चीरा हूआ दक्षण भाग जो है सो तूं ल्याय करके मेरे
को देवें तो मै तिस को आनंद से भक्षण करवै तेरे इस
प्यारे पुत्र को त्याग देऊंगा नहीं तो और कोई उपाय नहीं
है ॥२॥ चौपाई ॥ जो कब हुं कि तुव वचन उचारा ॥ कर
हिं न वृद्ध भूप सुई कारा ॥ तो तुव ल्याय बालक मोहि
देहो ॥ मै इहि कहे भक्षण करि लेहो ॥ सत्य वचन भ
गवान उचारी ॥ आय वेग नृप भवन सिधारी ॥
रहो छाय अवसर मध्याना ॥ उदित भूप वर भोज
न पाना ॥ अरजुन सहित वृद्ध द्विज रूपा ॥ हरन भीति
भव भवनन भूपा ॥ द्वारपाल दूतन सनकानी ॥ भने
कृपाल परम हित सानी ॥ मोर आगमन जाय तुव
भाई ॥ सपदि भूप सन देऊ जनाई ॥ सिसु जुत वृद्ध
विप्र इक गाढो ॥ दरसन हेतु द्वार तुव ठाढो ॥ विप्र
वचन तब दूत सुजाना ॥ जाय भूप सन तुरत बखाना ॥
सुनत नरेस वेग चलि आये ॥ करत प्र
णाम द्विजहिं सिर नाये ॥ बहुरि वदन अस गिरा
उचारो ॥ मोरे भवन चरन प्रभु धारो ॥ कव
न काज अब सासन करहो ॥ दीननाथ सब विधि
अनुसरहो ॥ सोरठा ॥ जेवन मनोरथ होय ॥ क
हहु कृपा निधि दास कहे ॥ पाछे कर हुं रसोय ॥
मै पूरब करि सफल सो ॥ ३ ॥ टीका ॥ फिर द्विज कह
ता है कि हे वृद्ध जो कदाचित तेरे कहे हूये वचन
को राजा सुईकार नहीं करेगा अर्थात नहीं माने

लेश मुख बानी॥ सो अरधंग दत नरराई॥ मोरे देउ वृद्ध तुव ल्याई॥ तासु मुदितमे मतलग कर होँ॥ पूरि उदर न तुव सुत परि हरहों॥ ~~अस मन~~ मैं मनि सत्य वचन तहि सेगा॥ तो पें आव लेन अरधंग॥ एउ अमिषु मोर परति मेदन॥ आय अग्र तुव कीन वेदन॥ जो तोहि अब लागहि नृप नीके॥ देउ उत्र सोई भावति जीके॥ सुनत अलोकिक मेदनि राई॥ वृद्ध जाचना अचरज दाई॥ मोद मगन जुग जोरत पानी॥ लाग्यो मनन नम्र मुख बानी॥ उदय भाग मोरे दुज आजू॥ जो तुव अर्थ कृतस सुरराजू॥ इह मम कर उ गृहन अब देहा॥ रक्षण हेतु बाल निज नेहा॥ तो मे कृत्य कृत्य दुज भयउँ॥ धारें वपुख विसल फल लयउँ॥ अस कहि अति प्रसन्न मन राई॥ पुत्र पतनि निज लीन बुलाई॥ बहुरि मंगाय लीन ध्रुत आरा॥ मन्यो वदन मनहै सुत दारा॥ अब तुम शोक ~~सब कुल त~~ रुदन दुख खोई॥ तिन जुत परम हरख रत होई॥ निज कर धरत सीस मम आरा॥ इह तन करहु चीरि जुग फारा॥ दक्षण भाग देउ दुज काहीं॥ होइ सफल तुव सेवति माहीं॥ सुनत वचन अस सुत त्रीय जोई॥ लागे मनन हरख वस होई॥ महाराज देहौं दुज एहा॥ हम चीरत अब आपन देहा॥ तुव जीवहु जग कृपा अगारा॥ होहिं विविध त्रीय सुत परिवारा॥ इह सब सुलभ नाथ संसारा॥ तुम दुरलभ मूरति उपकारा॥ दोहा॥ वृद्ध विप्र अस वचन सुनि पतनि पुत्र छित नाथ॥ मैन करहु वपु ग्रहन तुव मन्यो वदन धुनि माथ॥४०॥ टीका॥ हे ब्राह्मण सो कौन उपाय है कि मयूरधज राजा जो है तिसके शरीर का मांस मेरे चित्त को भावता है सो कैसे कि सो चरनो प्रयंत आरे के साथ तिस

की स्त्री और पुत्र शोक रोदन से रहित आनंद पू
र्वक अपने हाथों से चीरें और राजा भी हृदय में कु
छ शोक दुख नहीं माने तो वे तिस के चीरे हुये शरी
र का दक्षिण भाग जो है सो तू ल्याय कर के मेरे को
देवें तो मैं आनंद से अघाय कर तिस का भक्षण करूं
गा और तेरे इस प्यारे बालक को त्याग देऊंगा ऐ
से तिस सिंह का कथन सुन कर हे राजन मैं सत्य व
चन कहिकर ~~कि अब मैं कर~~ के ईहां तेरे पास
अरधंग लेने को चला आया हूं अब जो है तेरे मन
को भावता है सो तूं मेरे को उत्तर दे तब राजा मयूर
धज तिस वृद्ध ब्राह्मण की ऐसी अलौकिक याच
ना कि जो लोकों में नहीं है सुन कर के परम हरष के
वश भया हुआ बड़ी नम्र बाणी से कहने लगा कि हे
ब्राह्मण आज मेरे धन्य भाग और धन्य मेरा जनम
है कि जो तू अपने बालक के लिये मेरे इस शरीर
को कृष्ण भगवान के निमित्त मांगने आया है इसतें
मैं तो आज जगत में कृतार्थ होय गया हूं और श
रीर के धारने का फल जो है सो मैंने पाय लिया है
ऐसे कहि कर के अपने पुत्र और पतनी जो स्त्री है
तिन को बुलाय कर कहने लगा कि तुम शोक और
रुदन अभय होय कर सिर से पाऊं तक मेरे इस शरीर
को चीर कर के दो भाग कर देवो फिर तिन में दक्षिण
भाग जो है सो लेकर के ~~[illegible]~~ बड़ी प्रीती सनमान
से ~~[illegible]~~ वृद्ध ब्राह्मण को देकर ~~[illegible]~~ चरनों पर सीस
धरो और इस का आसीरवाद जो है सो लेवो इस
प्रकार राजा का कथन सुनकर स्त्री और पुत्र
हाथ जोड़ कर विनती करने लगे कि महारा
जा हम को आज्ञा है जो इसी आरे से चीर कर के
हम अपना शरीर देदेते हैं प्रभू ~~[illegible]~~ जगत में
तुम जीवते रहो स्त्री पुत्र और हो जावेंगे इनका

होना सुगम और सहज है परन्तु हे कृपानिधान तुमारा होना बड़ा दुरलभ है ऐसे राजा की स्त्री और पुत्र का कथन सुनकरके वृद्ध ब्रह्मन जो है सो माथा फेरकर कहने लगा कि मैं शरीर कदाचित भी ग्रहण नहीं करूंगा जो देना है तौं अपना शरीर देवो ॥ २६ ॥ चौपाई ॥ एक य भूप उपकारा ॥ मोरे हृदय लेन सूई कारा ॥ ते सुनि विप्र वदन अस वानी ॥ भये नृत्य हरष उर मानी ॥ लियो उठाय करन पुनि आरा ॥ धरयो सीस चपल शोक निवारा ॥ तुरत स्वामि सासन वस होई ॥ चीरन लगे पतनी सुत दोई ॥ आन पहोंच चीर जब आयो ॥ तब दृग वाम नीर नृप छायो ॥ अश्रूपात भयो इक ताना ॥ विप्र देखि अस वचन प्रकासा ॥ अब नहिं लेहुं भूप तुव देहा ॥ उपजा हृदय मोर संदेहा ॥ तुव निज मानि खेद उर आरा ॥ रोदन करहु वाम दृग द्वारा ॥ सोरठा ॥ तब तत नाथ वखान ॥ मै रोदन नहिं करहुं दुज ॥ मनै विप्र वर आन करहिं भूप रोदन केवन ॥ ३० ॥ टीका ॥ वृद्ध ब्रह्मण जो है सो वारंवार ए ही कहता है कि मेरे को केवल राजा का शरीर लेना सूई कर के और कुछ प्रयोजन नहीं है ऐसे ब्रह्मण का वचन सुन करके राजा की स्त्री और पुत्र मौन होय गये फिर आनंद पूर्वक स्वामी की आज्ञा पाय कर और आरा उठाय कर सीस पर धर करके राजा के दो खंड करने लग जाते भये जब आरे की चीर नासिका पर्यंत आय गया तब राजा के वाम नेत्र मे जल छाय तहोय कर एक अश्रूपात जो है सो चल परता भया तिसको देख करके वृद्ध ब्रह्मण कहने लगा कि हे राजन अब मै तुमारा शरीर नहीं लेता हूं मेरे को संशय होय गया है क्योंकि तूं आरे के चाउ का कलेश मान करके अपने वाम नेत्र द्वारा

कहे परि तर रहे तव॥५॥ टीका॥ इस प्रकार राजा की वाणी सु
नकर वृद्ध ब्राह्मण जो है सो हरष पूर्वक कहने लगा
कि हे राजन हम जब अपने घर को त्याग कर तेरे दरसन
के लिये चले आये तब मारग में वहां से एक बड़ा भारी
सिंह निकल करके हम को रोक लेता भया और तुरत ही
बड़ा भ्यानक मुख खोल कर मेरे इस बालक के भक्षण
करने को धाय पड़ा तिस को मैं काल वत देख कर दोनो
हाथ जोरे हुये दीनता के वचनों से विलाप कर कर कहने
लगा कि हे मृगनाथ इह बालक मेरे को अतिसे करके प्रा
ण प्यारा है तूं दया करके इस को त्याग और मेरे को भक्ष
ण करले ऐसे मेरा वचन सुन कर सो सिंह कोप से कह
ता भया कि हे वृद्ध तेरा मांस सूखा है कुछ रस करके यता
स्वादु नहीं है तां ते मैं तेरे को नहीं खावता इसी बालक को
भक्षण करूंगा क्योंकि इस का मांस नवीन और रस करके
[illegible] भरा हुआ बड़ा स्वादु है जब इस प्रकार मृगराज ने क
थन किया तब हे प्रजापाल मैं अपने भागों की निंदा कर
ता हुआ रोदन कर कर के विलाप करने लगा कि हे
[illegible] देव इह मेरा एक ही प्राण आधार बालक था और
बड़े सनेह प्यार से पाला हुआ मानो मेरे जीवं जीवन कि
था सो देखो आज इस सिंह के बस पड़ गया अहो मे
रे वृद्ध के हृदय पर विधाता ने कैसा वज्र धर दिया है इस
प्रकार मेरा विलाप सुनकर के मृगपती जो है सो
कुछ क दया के बस हो जाता भया और कहने लगा
कि हे वृद्ध जो तूं अपने रक्षा करनी चहता हैं तो मैं
तेरे को उपाय कहता हूं तिस को जो तूं कर सकें गा
तो मैं तेरे बालक को त्याग दें ऊंगा॥५॥ चौपाई॥
नृप मयूरध्वज अमुख सुहावा॥ सो मोरे मानस अ
ति भावा॥ सीस चरन लग आर चराई॥ सुत जीय
करन शोकगत भाई॥
सावधान हित पत अनुरागी॥ कठिन दुख क

~~स्यामदुति सुंदरी~~ ~~तन~~ रदद्युति नौलिनि नैन नवमंज
न॥ श्रवण सुखद शुक घ्राण सुहावन॥ भृकु
टी कुटिल वचन सुख पावन॥ निदरत मृगनिक
र छबि केसा॥ कुंडल रुचिर मकर कृत वेसा॥
आयत हृदय के सुकल ग्रीवा॥ नखद्युति इंदुहरे
न छबि सीवा॥ अस अनूप सरवांग सुहाये॥ हरख
रि चिनिज हृदय बसाये॥ सोरठा॥ कवन तुच्छ म
ति मोर॥ ध्यान ललित किमि कहि सकूं॥ दीन या
ल कर थोरि॥ देत कोटि उपमा मदन॥८॥ टीका॥
तब उपकार की निधी राजा जो है सो कहने लगा कि
हे वृद्ध तुम सत्य कहते हो परन्तु मैने रुदन नहीं कि
या है इस मे इह कारन है कि मेरे शरीर का बामं जो है सो
ति सने इह कारता को विचार अब का रोदन किया है कि
देखो हम दोनो दक्ष और बाम भाग एक साथ ही जन
मे हैं और खान पान से लेकर पलना बढना भी इह
भाग बराबर एक समान होता रहा है ~~अ~~ आज सो
बडभागी दक्षण भाग कृष्ण भगवान के अरथ
जाय लगा मैं मंद और अभागी वाम
~~दिस~~ भाग तिस दीन बंधू भगवान के अर्थ न
हीं आया मेरे को त्याग दिया है आज इह द
क्षण भाग ही धन्य है कि जिस को दीन हितकारी कृष्ण
प्रमातमा ने प्यारा मान कर ग्रहण कर लिया है मे
धिग हूं और मेरा जनम भी धिग है ~~कि जिस के~~ कि जो भ
गवान की शरण गत नहीं भया और दीनानाथ
के अर्थ नहीं लगा हे ब्रह्मण ऐसे ~~अ~~ ~~कर~~ ~~कर~~
अपनी लघुता और भागो की न्यूनता विचार कर
के इह मेरा बाम भाग जो है सो रोदन कर कर पछ
ताव ता है ~~श्री~~ ~~चौपाई~~ ~~असविचार सीस सुत कर~~
~~चौपाई~~ ~~धौ~~ ~~उन~~ ~~भूप धरम निधि~~ धीरा॥ मंद हास मु
~~ख बचन उ चारत~~ ~~दशा~~ तासु सुरगगन निहार

न॥ साधु साधु कहि बरषन लागे॥ परम प्रसन्न सुमन
अनुरागे॥ धन्य धन्य रव रुचिर सुहावा॥ रह्यो सिधर
नि व्योम लगि छावा॥ अहो सु नरेस कठिन तुव कर
नी॥ महिमा जाय बदन किमि बरनी॥ करहिं देव मु
नि विविध प्रसंसा॥ तेहि कृपालमय भक्त विधंसा॥ न
[illegible] नाथ भगवाना॥ निज स्वरूप सुभृत प्रक
टाना॥ हलि चक्र भूषित बनमाला॥ गदा पदम धृत
दीनदयाला॥ अंबर पीत भीत भवहारन॥ कंचन आ
रन बरन जलज [illegible] ~~निखिल [illegible]~~ नील चरन क
फा॥ के इस प्रकार स्त्री और पुत्र के हाथों से चीरा
हुआ राजा यद्यपि अंत से करके पीड़ित भी था
तद्यपि धरम और धीरज की निधी मंद हास से
प्रसन्न मुख होय करके वचन कहता रहा तब
आकाश मे देवता गण तिस की दशा देख कर के सा
धु साधु कहते हुये पुष्पों की बरषा जो है सो कर
देते भये पृथ्वी से आकाश पर्यंत धन्य धन्य शब्द
ही व्याप्त होय गया कहते हैं कि हे राजन अहो तेरी
भक्ती का प्रभाव और अहो तेरी महा कठिन
करनी कि जिसके कथन करने को कोई भी सामर्थ
नहीं है ऐसे देवता गण अनेक प्रकार मुख से बोला
जा कर रहे थे इतने मे हरि भक्तों का भय दूर करने वा
ले लक्ष्मी के नाथ कृपानिधान भगवान जो हैं सो
अपने मनोहर स्वरूप से तत्काल प्रकट हो जा
ते भये कैसे कि संख चक्र गदा पदम धारे हुये और
हृदय मे तुलसी की माला तैसे ही शोभावाले पीत व
स्त्र और बड़ी आभा करके युक्त सीस पर कंचिन का मु
कट तैसे ही मुनियों के मन को मोहित करने वाला
माथे मे सजा हुआ चंदन का तिलक और कानों मे
मकराकृत कुंडल नीले बादर वत शरीर की सुंदर
शोभा ~~[illegible]~~ नवीन कमल के को लज्जा देने वाले

विशाल नेत्र. तैसे ही बड़ी दांतो की सुंदर पंक्ती की र
जोती ताहे तिसके समान मनोहर नासिका और बहु सुख
दायक श्रवण भ्रमरयों के समाज को लज्जा देने वाले
स्याम केश तैसे ही कुटिल भृकुटी अर्थात टेढी भवें
और मुख मे बडे मधुर वचन मुरनामा दैत्य ति
तिस मद को दूर करने वाली लंबी भुजें और सुंदर
विशाल हृदय मुनीजनों के मन को हरने वाली नेत्रों
की कृपा दृष्टी चंद्रमा की आभा को लज्जा देने वाली नखों की
उजल शोभा नामादास कहते हैं कि ऐसे तो ऐसे सर
व अंगों करके शोभित भगवान कि जो शिव ब्रह्मादि
यों ने हृदय मे बसाये हुये हैं और जिन को कोटि का
मदेव की उपमा देने से भी किंचक सी प्रतीत हो
ती है तिन का अनंत ध्यान कथन करने को मेरे तु
च्छ बुद्धी वाला कैसे सामर्थ होय सकता है इस
लिये ही तो मती के अनुसार कथन क
र दिया है ॥८॥ चौपाई ॥ अस प्रकार धृत रूप सुहा
वा ॥ वत्सं भक्त जासु श्रुति गावा ॥ शोक कलेश भ
क्त उद्धारे ॥ सुर द्रुज धरनि धेनु रखवारे ॥ कृपा स
मेत आय प्रभु तो ही ॥ चीरत पुत्र पत तजि नृप जा ही ॥
पानि पान गहि जनन उबारा ॥ करत सेउ जुग कि
ये विचारा ॥ जहि लग रह्यो भूपति तन चीरा ॥ तु
रत जाय खेद न मद कीरा ॥ कर सपरस करि दीन
मिटाई ॥ सावधान भा तन ता राई ॥ भाउ कले
स खेद श्रम आरा ॥ मिट्यो प्रसाद हरन भवसा
रा ॥ तब भगवान लोक त्रै नायक ॥ बोले बदन ब
चन सुखदायक ॥ भूप प्रसन्न जान जीय माही ॥
मांग हु भाव जवन मन तो ही ॥ मन वच काय भ
क्त तुम मोरे ॥ नहिन अदेव आज कछु तोरे ॥ प्र
भु कहे देखि भूप वश दाया ॥ हरषि नम्र चूर नैन
फिर माया ॥ बहुरि बनीत दीन बत बानी ॥

रोदन करता है तब राजा हाथ जोड़ कर कहने लगा कि
हे ब्रह्मन मै कृष्ण प्रभा तमा की कृपा से ना तो कलेश मानता
हूं और ना कुछ रोदन करता हूं ब्रह्मण कहने लगे तो राजन
फिर इह कौन रोदन करता है तूं मेरे को कथन कर ॥ ७ ॥ चौ
पाई ॥ बोल्यो वदन भूप उपकारी ॥ विप्र एक असबात
विचारी ॥ मोरे वाम भाग इह जोई ॥ रोदन करत मो
हे बस सोई ॥ देख वाम हम एक हि बारा ॥ जनमे को
[illegible] पति संसारा ॥ वरधन पालन हरुन विधाना ॥
[illegible] रह्यो सब एक समाना ॥ देखो भाग आज [illegible]
बडभागा ॥ कृष्ण कृपाल चरण जोई लागा ॥ [illegible]
वाम भाग मै मंद अभागी ॥ दीनानाथ दीन जहि त्यागी ॥
देखो भाग आज जग धन्या ॥ [illegible] जगन्नाथ जा
सु प्रीय मन्या ॥ धिग धिग जनम मोर अघ धामा ॥ ला
ग न कृष्ण अर्थ विधि कामा ॥ निज लघुता अस हृद
य विचारी ॥ वाम भाग गति भाग विचारी ॥ नैन नीर
भरि उर पछताई ॥ लाग्यो रुदन करन अकुलाई ॥
अस प्रकार जीय सुत कर पीरा ॥ पीडत भूप धरम नि
धि धीरा ॥ मंद हास मुख वचन उचारत ॥ दशा तासु
सुर गगन निहारत ॥ साधु साधु कहि वरषन लागे ॥
सुमन सुखेद मानस अनुरागे ॥ धन्य धन्य रव रुचि
र सुहावा ॥ रह्यो सि धरनि व्योम लग छावा ॥ अहो
नरेस कठिन तुव करनी ॥ महिमा जाय वदन किमि
वरनी ॥ करहिं देव मुख विविध प्रसंसा ॥ तब कृ
पाल भय भक्त विधुंसा ॥ ततत [illegible] रमा नाथ भगवाना ॥
निज स्वरूप सु [illegible] भूत प्रकटाना ॥ संख चक्र भूषित
वनमाला ॥ गदा पदम धृत दीन दयाला ॥ अंबर पी
त भीत भव हारन ॥ पावन अरुन चरन जलजारन ॥
निधि लावन्य नील घन काया ॥ कंचिन क्रीट ललित
दुति छाया ॥ खोर लिलार चोर चित सोहा ॥ चितवनि
चारु मुनिन मन मोहा ॥ भुज आजानु मान मुर गंजन ॥

दृढ भक्त हैं तेरे को आज कुछ अदेय नहीं है मैं सब
कुछ दे सकता हूं तूं संकोच को त्याग कर जो मन
की रुची है सो मांग इस प्रकार भगवा
न को कृपा के वश और प्रसन्न भये हूये देख कर
राजा दीनवत चरनो पर सीस नाय कर फिर व
डी कोमल और वनीत वानी से हाथ जोड कर प्रा
र्थना करने लगा कि हे देवों के देव हे कृपा के समुद्र
मेरे आज बडे उदय भाग हैं कि जिसने इन नेत्रों कर
के दीनबंधू प्रतक्ष तुमारा दरसन पाय लिया है प्रभू
तुम कैसे भी हो कि मुनी जोगी जनो और देवताऊं के
अनेक हठ और कठिन साधना से भी प्रापत होने दु
रलभ हो मैं नहीं जानता हूं कि मेरे
कौन पुन्य हैं जिनके प्रभाव से भगवन तुम विना
यतन के सुलभ अर्थात सहजे ही प्रतक्ष
होय गये हो अब मैं वडभागी कृत्य कृत्य होय ग
या हूं जो करना था सो कर चुका हूं नाथ अब कौन
वर मांगूं संपूर्ण वरों को सफल करने वाले आ
पके चरन कमल जो हैं सो ते प्रतक्ष मेरे स
नमुख हैं अब अधिक कौन वर रहा जो मैं मांगूं
तद्यपि हे भक्त जनो का भय हरने वाले और रो
दोष दारिद्र आदि सब शूलों का नाश क
नेवाले आप को दया करके दीन अत से
कोमल और प्रसन्न चित देख करके हाथ जोड
कर कुछ मांगता हूं हे कृपानिधान इस मैं कहते
हूये मेरे को यद्यपि लज्जा आवती है तद्यपि प्रभू
तुम चूक निवारण हो मेरा अनुचित देख के क्षमा
ही करिये हे दीनबंधू आप ने जो वर देना कहा है
है सो भक्तों हितकारी मैं एही वर मांगता हूं कि इन
जैसी आपने मेरी परीक्षा करी है हे कृपानिधान
आगे ऐसी फिर किसी की मत करिये मैं जो वर मो

गनाथ सो मांग चुका हूं ॥९॥ सुनि अस वचन भक्त
भगवाना॥ एव मस्तु निज वदन वखाना॥ बहुरि आ
न वर दीन कृपाला॥ अब तुम विगत शोक महिपाला॥
मम प्रसाद महि रुचिर सुहावा॥ करहु राज निस
कंटिक भावा॥ जब रुचि होहिं तोर नर राई॥ संजुत प
तनि पुत्र हरषाई॥ मोरे परम धाम बड़भागी॥ आवहु
वेग रुचिर वपु त्यागी॥ जो लो नाम धरनि तल मोरा॥
तो लो सुनहु नृपति वर तोरा॥ संपति सुजस रहहिं जग
छाई॥ शोक कलेश विगत सब राई॥ अस वर देत भक्त
भय हारी॥ विप्र सरूप लीन निज धारी॥ चरित प्रवर
जादवन सारी॥ जे द्वारावति पुरी मुरारी॥ आये तहां
सकल सुखदाता॥ अरजुन देखि चरित भगजाता॥
जानि अगम माया पति माया॥ नम्रत सीस मनहिं
मन नाया॥ परिहरि कुमति मोह अज्ञाना॥ निरम
ल भयो विगत अभिमाना॥ सोरठा॥ भक्ति विवश नर
जोय॥ गत विकार इक वार चित॥ तहि कर निश्चय हो
य॥ तृणवत आतम जीवन जग॥ इह अनि[illegible]जि स
म जान॥ नित्य भक्ति सुख सोलहै॥ लेहि शरण भग
वान॥ संतत भक्ति अनन्य जुत॥१०॥ टीका॥ इस प्रका
र अपने भक्त का वचन सुनकर के भगवान कृपानि
धान एव मस्तु कहि देते भये कि ऐसे ही होगा फिर दी
ना नाथ और वर देते भये कि हे राजन अब तुम शो
क संदेह से रहित होयकर मेरी कृपा के प्रसाद से पृ
थवी तल पर कोई काल पर्यंत निसकंटिक राज क
रो और फिर जब तुमारी इच्छा हो तो अपनी स्त्री
और पुत्र के सहित आनंद पूर्वक शरीर को त्या
ग कर मेरे परम धाम को अभय होय कर के चले
आवो और हे भक्त जब लग इस पृथवी तल
पर मेरा नाम है तब लग मेरे वचन से सब वि
घ्नो से रहित होकर तेरा सुख संपती और सु
जस जगत मे छायत रहेगा इस प्रकार

राजा मयूरध्वज को वर देकर भगवान भक्त सुख
दान फिर अपना बुढे वृद्ध ब्राह्मण का सरूप धा
रन कर ~~लोक मध्य~~ के संपूर्ण महा जनो और जा
दवों करके भरी हुई दारिका जो है तहांको चले
आवते भये तब मारग मे आवते हुये अरजुन जो
है सो माया के पती भगवान की अगम और अ
नंत माया देखकर के मन मे ही बारबार सीस
नावता भया और मोह भ्रम इत्यादि अज्ञान के
अभिमान को त्याग कर निरमल चित होय कर
के कहने लगा कि अहो भगवान की और भगवा
न के भक्तों की महिमा अगाध है मै मोह के वश हो
य करके वृथा ही भूला हु आथा नाभादास जी क
हते हैं कि हे संतो देखिये भक्ती का प्रभाव कैसा
विचित्र है भक्ती मान पुरष जो होता है तिस को
इस जगत का जीवन तृण वत प्रतीत होता है
सो इस जगत के जीवने को अनित्त जानकर और
भक्ती के सुख को नित्त विचारकर दृढ भक्ती के स
हित भगवान की शरण को प्रापत होता है ॥ १० ॥
इति श्री भक्त विनोद ग्रंथ भगवद भक्ती महात
मे भाषाटीकायां मयूर ध्वज चरित वरणने
नाम सरग:

लाग्यो मनन जोरि जुग पानी॥ धन्य भाग मोरे सुर
राया॥ जहि इन दृग दरस प्रभु पाया॥ दुरलभ सुरन मु
निन कहे जोई॥ मोरे आज सुलभ भा सोई॥ कृत्य कृत्य
अब भयो तु भागी॥ हरिपद नलन दृष्टि जे हि लागी॥
इहि तें कवन नाथ वर आना॥ मागहुं दीनद्याल भग
वाना॥ तदपि जानि भक्त भय हारी॥ तुम हिं दया व
श दीन उवारी॥ अति [illegible] कोमल जन पर अनुकूला॥ ह
रन दोष दल दारुण सूला॥ जो चन करहु जुगल
कर जोरे॥ आवत मनत लाज पुनि मोरे॥ [illegible]
होवसि जो कृपाल कहुं वानी॥ अनुचित लाम हु दा
स पद जानी॥ जो तुव मन्यो वदन भगवाना॥ मो
रे देन रुचिर वरदाना॥ तो मै द्याल भक्तजन नेहीं॥
मागहुं प्रकट वदन वर एहीं॥ सोरठा॥ यथाकी
न प्रभु मोर॥ श्रीला दीन निवाज तुव॥ आन भक्त
चित चोर आगे कहिय नका हु अस॥ ६॥ टीका॥
इस प्रकार अद्भुत रूप से प्रकट होय कर भक्तजनो
का भय और शोक दूर करने वाले गो ब्राह्मण पृथ्वी
और देवताओं के रक्षक भगवान बड़ी कृपा से जहां
पुत्र और पतनी राजा को घेर रहे थे तहां तिन के
पास आय करके स्थित होय गये और तुरत आपने
हाथ से तिन के हाथ पकड़ कर राजा के दुखें कर जैसे
निवारण कर दिये और जहां लग राजा का तन ची
रा हुआ था सो आनंद के सागर और [illegible] भय शो
क के दूर करने वाले भगवान ने अपने हाथ का
स्पर्श देकर यथावत ज्यों का त्यों कर दिया अ
र्थात शरीर का घाउ और श्रम कलेश जो था सो
तत काल सब मिट कर दीनानाथ की कृपा से राजा
स्वस्थ चित और सावधान हो जाता भया तब भक्त
हित कारी भगवान बड़ी सुखदायक वाणी से कहने ल
गे कि हे भक्त अब मेरे को प्रसन्न जान कर [illegible] जो
तेरे मन को भावता है सो वर मांग मै देता हूं हे
राजन तू मन वचन और काया कर के मेरा

मै

विद्वान भया परन्तु सो देखनें ऐसा प्रतीत होता
कि मानो वि दो हि है इस प्रकार सो अपनी माता
पिता के सहित आनेद से तहाँ वास करता
हुआ दिन दिनँ पतनी जो स्त्री है तिसँ आधीन होय
कर लोभ स रहित धन से हीन अत से करके दीन
और दुखी रहता था भक्ताटन धरम जो है सोई कर कर
रात्री दिन कुटंब की पालना करता था ॥ २ ॥ चौपाई ॥
सो द्विज पुंडरीक अस नामा ॥ समय एक तहि रुचिर
ल्लिलामा ॥ भिक्षाटन कर हेतु सिधाई ॥ गवनँ ग्रामां
तर आई ॥ तहाँ एक द्विज कथा अलापा ॥ रह्यो करत
हारन भव तापा ॥ शिव पुरि ललित महातम जोई ॥
द्विज वर कीन कथन सुख सोई ॥ सो सुनि श्रवण पर
म हरखोई ॥ अस संकल्प करत जीय आई ॥ क
रहि दैव निज कृपा कदाहीं ॥ तब कुटंब जुत हरपु
रि माहीं ॥ जाय निवास रुचिर निज करहीं ॥ जनम
जनम कर पातक हरहीं ॥ अस गुनि त्रीये सदन
निज आई ॥ स्वामि चरन नम्रत सिर नाई ॥ लागी
मनन जुगल कर जोरी ॥ जो मानहु विनती प्रभु मो
री ॥ तो मै करहुं कथन कछु स्वामी ॥ बोल्यो विप्र
सुनत तिहि बानी ॥ इहँ तुव कस मानस निज जा
ना ॥ मै न करहुं प्रीय तोर बखाना ॥ पतिहरि सु कुव
कथन कर प्यारी ॥ वेग करहुं फुरवात तुमारी ॥ सोर
ठा ॥ पति अनकूल विचारि ॥ बोली सो द्विज भामनी ॥
प्राण नाथ सिधारि ॥ मै जब भिक्षाटिन करन ॥ द्विज
वर एक प्रवीन ॥ रहा करत पावन कथा ॥ तहाँ श्रव
ण मै कीन ॥ भक्ति महातम शिव पुरी ॥ २ ॥ टीका ॥ ऐसे
सो ब्रह्मण पुंडरीक नाम करके प्रसिद्ध था ॥ तब
एक समय तिस की स्त्री भिक्षाटन करती हुई ए
क ग्राँम मे जो आई तो तहाँ एक ब्रह्मण पापों के
दूर करने वाली और संसार का भय हरने वाली

वडी पवित्र कथा जो है सो वाच रहा था तिसमे शिव
पुरी जो कासी है तिसकी महिमा और महातम कथन
होय रहा था सो ब्राह्मणकी स्त्री सुनकरके परम हर
षको प्राप्त भई और मनमे कहने लगी कि जो कवी
भगवान कृपा करैं तो हम कुटंवके सहित तहां शिव
पुरी जायकर और भलीप्रकार यात्रा करकर जनम
जनमके पाप जो हैं सो सव निवारण करलेवैं इसप्र
कार संकलप धारकर ब्राह्मं पतनी मिसनान करके
घरमे चली आई और पती के चरनो पर सीसनायकर
हाथजोडकर प्रार्थना करने लगी कि हे प्राणनाथ जो
मेरी विनती मानिये तो मै कुछ कथन क[illegible]
रती हूं तव पुंडरीक कहने लगा कि हे प्यारी सो कौ
न वात है जो [illegible] तेरी कथन की हुई मै नहीं मानूंगा तूं
संकोच और संदेह को त्याग करके अपने हृदय की
वारता शीघ्र कहो मै तैसे ही करूंगा ऐसे पती
को प्रसन्न देखकरके सो वाला कहने लगी कि हे प्रा
णपती मै जव मिसनान करने को वाहिर ग्राम विखें
गई तो तहां एक ब्राह्मण प्रीती पूर्वक पवित्र क
था जो सो वाच रहा था तहां तिसके मुखसे मैने शि
वपुरी जो कासी है तिसकी यात्रा का महातम श्रव
ण किया है हे प्राणनाथ तव सें मेरे चित्तमे इह अभिला
खा और रुची होय रही है [illegible] कि कु
टंव के सहित तहां कासी मे जायकरके वास करैं और
महादेव की कृपासे सरव कलेश और पापों से नवृ
त्य होयकर जगत मे सुजसके पात्र हो[illegible] जावें ॥२॥
चौपाई॥ प्रीय मुख सुनत कथन अस सोई॥ वो
ल्यो विप्र हरष वश होई॥ सुमुखि कथन तोर अस नी
के॥ सुखद मोहि प्रीय भावत जी के॥ पूरव मोर म
नोरथ एहू॥ कीन कथन तुव निज मुख जेहू॥ मै अ
व प्रथ्य सस्तिधर पुरि माहीं॥ प्रीया चलहुं संशय कछु

नाहीं॥ पे पाकुल कछु दिवस न प्यारी॥ हमरे ग्राम लोग मिलि जाही॥ चलिहें रुचिर भीम पुरि काहीं हम तिन संग जाव मिलि ताहीं॥ तो लो धन संचित कछु करहो॥ नहि पथ आतवे पथ पग धरहो॥ तो मारग कर होहि निवाहू॥ अस कहि वदन विप्र वरताहू॥ लाग्यो करन जाच ना जाई॥ जहं तहं धनिन भवन भ्रम पाई॥ जहि जहि जथा उचित कछु दीना॥ सो ल्यायो धन धाम प्रवीना॥ वहुरि पतनि पितु मात समेता॥ देखि सुदिन तजि विप्र निकेता॥ संजुत निकर ग्राम निज लोका॥ गवन्यो दूर घपूरि गत शोका॥ कहुं कहुं गुनि सने हम न माहीं॥ पथ श्रम देखि द्वार निज काहीं॥ लेत उठाय पीठ दुज सोई॥ जननि जनक उर सोच न कोई॥ सो अति दीन जठर पद चारी॥ मारग श्रम करवि पुल दुखारी॥ तिन कर अन्न मान कछु करहीं॥ सेवन विप्र पतनि अनुसरहीं॥ सोरठा॥ अस प्रकार समुदाय॥ पहुंचे सन्निधर रुचिर पुरी॥ चंडी भीम सुहाय॥ ई द्विज वनं तहां॥ दोहा॥ तहि सामीप निवास करि प्रमुदित कीन सनान॥ भगवति पूजन कीन जुत प्रीति भक्ति सनमान॥२॥ टीका॥ इस प्रकार स्त्री के मुखसे वचनन सुनकर ब्राह्मण जो है सो कहने लगा कि हे प्यारी इन ते रा कथन जो है सो मेरे चित्तको बहुत सुखदायक लगा है मेरे हृदय मे पूरव हीं इस वारता की अभिलाखा होय रही थी कि जो तूने कथन की है हे सुधी ले अव मे अवश्य करके सुंदर मोक्ष के देने वाली शिव पुरी जो है तिसके दरसन को चलूंगा इसमे कुछ संशय नहीं है परन्तु हे प्यारी अव कुछ थोरे दिनो के पीछे हमारे ग्राम के लोग मिलकर शिवपुरी अर्थात कासी की यात्र को जाने वाले हैं हम भी तिनके साथ मिलकर आनंद पूर्वक तहां को चल परेगे तव लग कुछ धन जोरु

श्रीरुद्र

शंकरग्रिया

ह श्री ६५४

पुंडरीकचरितं ॥

दोहा ॥ भक्तिमहातम आनअव करहुं कथन मनहारु ॥ जासु सुनत श्रुति उपजहीं रामचरन रति चारु ॥ चौपाई ॥ दक्षण देस ललित वर जाहो ॥ मंगल रूप सुभग सुचि ताहो ॥ भीमा नाम विदित सब जानी सरिता एक विमल सुखदानी ॥ तहिं पर वसहिं ग्राम इक रूरा ॥ वेता वेदद्विजन सनपूरा ॥ तहां एक दक्षण परिवारा ॥ महाराष्ट्र द्विज ~~कुल~~ मजारा ॥ धरमातम विज्ञान नरेता ॥ उपज्यो सुत इक विप्र निकेता ॥ पै पंडित विद्या जनु धारी ॥ होहि प्रतीत समय अनुसारी ॥ असप्रकार पितु मातु समेता ॥ वसहिं विप्र निज मुदित निकेता ॥ ~~पुनि~~ ~~[illegible]~~ दिन दिन पतनि प्रेम वस होई भयो अधीन तासु द्विज सोई ॥ सोरठा ॥ लोभ विवर जित सोय ॥ निरधन सब विधि दीन दुखी ॥ भिक्षाटन करि होय ॥ तहिं कुटंब कर जीवका पर ॥ टीका ॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे सते अब भक्ती का और महातम जो है सो कथन करता हूं आप श्रवण करिये इहकै सामी महातम है कि जिसके श्रवण करने से रामचंद्र जी की सुंदर भक्ती जो है सो हृदय मे निरन्तर करके दृढ हो जाती है कहते हैं कि दक्षण देश विखे बडी पवित्र शोभायमान और मंगल रूप एक भीमा नाम करके नदी जो है तिसके किनारे पर वेद के वेता अर्थात वेद के जानने वाले ब्राह्मण जो हैं तिन करके पूरत एक ग्राम होता भया तहां दक्षणी ब्राह्मणों की महाराष्ट्र जाती विखे एक ब्राह्मण के घर एक बालक उतपन्न हुआ सो समय पाय करके ना इतना धरमातमा और ना कुछ इतना

से आपन नहिं कोई॥ सुत कर ~~~ रुचिर जवन सुतता
ई॥ विविध करम कर संसृति माई॥ जियत रै हिं
उन कर अनुसारी॥ मृत पाछि ल निज धरम विचा
री॥ मृत करम श्राधादिक जेता॥ करहिं वेद विधि
संजुत तेता॥ गया जैत्र पुनि जाय सुभागी॥ सादिर
पिंड दान तिन लागी॥ जहं तहं ठौर ठौर सब प्रीती॥ इह
निज करन करत सुभ रीती॥ तिन कर सद गति करहिं
सुहावा॥ अस सुत धरम विदित जग गावा॥ होहिं सुपुत्र
जवन सुभचारी॥ जननि जनक आयस अनुसारी॥
लेहिं सु दिन दिन वृद्धि सुहाई॥ धन संतति ~~~~~
~~~~~ सुख सुजस बड़ाई॥ तिन तें जे वेमुख सुत
होई॥ तो के सुख सब नेहु किमि कोई॥ जब पितु
मात काय पदि हरहीं॥ तब मृत काल वचन जे करहीं॥ रुचिर अ सीरवाद तिम सोई॥ होत सफर
संशय नहिं कोई॥ पितु तें अधिक भाग घर चारा॥
जननी कर संसृति अधिकारा॥ सोरठा॥ जिमि हरि
पर सुर नाहिं॥ तिमि कोऊ सखा सुहृद नहीं॥ संपू
रता जग माहिं॥ जननी तें बरहित कर न॥४॥ टीका॥
तिस तें उपरांत जहां तहां जाय करके सरब असथानों
को बड़ी प्रीती भक्ती से दरसन करने लगे तब पुंडरी
क नामा ब्रह्मण क्या देखता है कि एक अस्थान पर
बड़ी प्रीती और मधुर बानी से एक ब्रह्मण सुंदर
कथा बाच रहा है तहां माता पिता की सेवकाई का
महातम जो है सो बरणन होय रहा था कि पिता ही
ब्रह्मा और पिता ही विस्नू और पिता ही महादेव
हैं जो कपट से रहित सरल साधु चित होय करके
माता पिता की सेवा और भक्ती करते हैं तिनों ने स
रब देवताओं को प्रसन्न कर लिया है और जिन पर मा
ता पिता का कोप होता है तिन पर संपूर्ण देवता भी
कुपत होय जाते हैं और जो ~~ अपने माता पिता
~~~~~

के चरनों का जल बडे आदर से सीस पर चढाय लेते हैं तिनको प्रत्त तीरथ का फल होता है और तिनके सब पाप भी दूर हो जाते हैं पुत्र का सेवन धरम ती न प्रकार के जगत में प्रसिद्ध है पहिले तो माता पिता के जीवने प्रयंत उन की आज्ञा के अनुसार रहे और मृत होने के पीछे तिन का मृतक करम और विधीवत श्राद्ध इत्यादि जो है सो करे तीसरा गया देश पर जाय करके सनमान पूर्वक पिंडदान करकर तिनकी सदगती करवाय देवे इस प्रकार जो पुत्र माता पिता की आज्ञा अनुसार और तिनकी भक्ती सेवा में रात्री दिन ततपर रहता है तिसको धन संतती और सुख सुजस की दिन दिन वृद्धी होती है अर्थात तिसका धन परिवार और सुख सुजस दिन दिन बढता ही जाता है और जो माता पिता की आज्ञा के विरुद्ध और तिन्हे वेमुख होता तिसको सुख संपती और सुजस संतती की प्रापती कदापि काल नहीं होवेगी और जब माता पिता शरीर को त्यागते हैं तिस समय प्रसन्न होय कर जो वचन कहते हैं सो तिनका आसीरवाद सब सत्य होय जाता है इसमें कुछ संसै नहीं है और इह माता जो है सो जगत में बडी दुरलभ है पिता से माता का दस गुणा अधिकार अधिक होता है जैसे हरी जो विष्णु भगवान हैं तिनसे परे कोई और देवता नहीं है तैसी ही जगत में जननी जो माता है तिससे परे सखा सुहृद कोई नहीं है ॥४॥ चौपाई ॥ जेनि जग रम माह खट दूसरा चारी ॥ धारत जनमि लेत सम भारी ॥ पुनि कराय अस्थन हचि पाना ॥ पालहिं करि लालन मुख नाना ॥ जो रुज दुख उपजहिं सुत काहीं ॥ तहि मानत

दुखमानसमाहीं॥ होतउ द्युगद तजन निजप्रा
ना॥ धन्य जननि सम वयो न आना॥ जहंलग
विदतविप्रउपकारा॥ सवकर प्रति उपकार निहा
रा॥ जेउपकार जननि जगमाहीं॥ प्रति उपकार
तासकछु माहीं॥ अँप्रकार सुनि कथापुराना॥ पुंड
रीकमानस अकुलाना॥ निजकरनीकर निंदर नला
गा॥ कवन मोर सदृश हतभागा॥ जिन जग वृथा
जनम निजलेवा॥ कीन न जननिजनक कछु से
वा॥ सुनिप्रसंग अस आश्रम आवा॥ पितु पद मातु
नम्रसिरनावा॥ भनत वदन पुनि जुगकरजोरी॥ स्वामि
न सुनहु विनति कछु मोरी॥ मै तुमकहं जुत भक्ति कृ
पाला॥ लावा ईहो तजत निजआला॥ अव प्रभु मो
र मनोरथ एहा॥ पुनि लैचलहु रुचिर निजगेहा॥
उहां तुमार वैठि पद सेवहु॥ धारन वपुलेविप्र फल
लेवहु॥ का कीतें कछु न्यून नमोरे॥ सेवाचारन भ
वन प्रभुतोरे॥ मैपूरव ... मूढमतीना॥ कछु तुमा
र सेवन नहिं कीना॥ सोअपराध मोर पितु माता॥ त
महु अहीर वाद वरदाता॥ हरिहर आन देव समुदा
ये॥ तुमहु मोर संसृति सुखदाये॥ सुनि अस पुंडरीक
मृदुवानी॥ परम वनीत प्रीत हित सानी॥ जननिज
नक तव वदन वखाना॥ पुत्र कथन तुव पहो नजाना॥
अवलग कछु अपराध हमारा॥ ... नकीन सुत प्रा
ण अधारा॥ जो तुम कवहुं भूलि कछु कीना॥
सोहम पुत्र दोस्म करि दीना॥ सदृश सुवन कव न जग
प्यारा॥ जननि जनक कर सुत धन सारा॥ रुजजुत
अंध वृद्ध पितु मैया॥ सुतहु होत तिन केर सहैया॥
जसभावति तस करहु पयारे॥ तुव प्रसाद सव सुलभ
हमारे॥ पैइक हृदय लालसा एहू॥ सुनहो सुवन
सीलमति गेहू॥ सोरठा॥ ललित शंभुपुरि माहिं॥ ह
म आये तजि सदन निज॥ देखे दृग भरि नाहिं॥ देव
भवन जहं तहं रुचिर॥५॥ टीका॥ फिर कैसी भीमा
ताहै कि जो आपने गरभमे दस महीने राखकर
पुत्रको

लेना चाहिये फिर मारग मे पग धरना उचित है क्योंकि धन के विना परदेस मे निरवाह होना बड़ा कठिन है ऐसे स्त्री को चिताय करके पुंडरीक जो है सो जहां तहां धनी जनों के घर मे जायकर के धन की याचना करता भया अर्थात धन मांगता भया तब जिस किसी ने जो कुछ दिया सो आनंद से अपने घर मे ले आवता भया फिर सुंदर शुभ दिन विचार करके माता पिता और स्त्री के सहित घर को त्याग कर अपने ग्राम के सब लोगों के साथ मिल कर के शिव पुरी की यात्रा को चल पड़ता भया तब मारग मे जाते जाते कहीं स्त्री जो थक जाती तो सनेह के वश भया हुआ तिस को पीठ पर उठाय भी लेता और माता पिता जो वृद्ध बड़े सिथल और पदचारी अर्थात पाउं पयादे चलते थे तिन श्रम का हृदय मे कुछ भी विचार नहीं करता [illegible] की आज्ञा अनुसार तिन की केवल अवज्ञा नही सेवा करता था इस प्रकार मारग को काट कर सब लोगों के सहित आनंद से काशी मे आय प्राप्त हुये तब भीम चंडी देवी जो प्रसिद्ध है तिस के पास निवास करके फिर हरष पूर्वक स्नान कर कर भक्ती सनमान से श्री भगवती का पूजन जो है सो किया ॥२॥ चौपाई ॥ इत उत वहुरि सकल अनुरागे ॥ दरसन करन मुदित मन लागे ॥ तहां एक द्विज कथा सुहाई ॥ रह्यो करत सादिर मन भाई ॥ जननी जनक महातम सेवा ॥ वरणन कीन वदन महि देवा ॥ पितु ब्रह्मा पितु हरिहर [illegible] दाता ॥ जे सादिर सेवन पितु माता ॥ करहिं सरल चित कपट वहीना ॥ तास प्रसन्न देव सब कीना ॥ कवहुं कि करहिं कोप पितु माता ॥ कोपहिं सकल देव विख्याता ॥ चरणोदिक पितु मात सुहावा ॥ जे सादिर निज सीस चढावा ॥ तासु रुचिर तीरथ फल होई ॥ दुरित रहित

करके बाल्य अवस्थामे अपराध होय गया हो तो पुत्र सो
भी हम तेरेको क्षमा करते हैं पुत्र संसारमे बड़ा दुरलभ
है इससे प्यारा और कोई नहीं है माता पिता का सरब-
धन पुत्र हीं होता है देखो जब रोग करके ग्रस्त अंध
और वृद्ध माता पिता हो जाते हैं तब तिस समय तिनका
पुत्र हीं सहायक होता है अब [illegible] तात जैसी तेरे चित्त
को भावती है सो कर हमको तेरे प्रसाद करके कुछ दुर
लभ नहीं है सब सहज और सुगम हीं है परन्तु हे पुत्र
एक अभिलाखा हृदयमे रहि गई है कि हम ईहां शिवपुरी
मे आये और जो जो दिव्य अस्थान और देव भवन हैं ति
नका दरसन नहीं पाया ॥ ५ ॥ चौपाई ॥ पावन सलील क
रनका जाहीं ॥ मज्जन किये तात नहिं ताहीं ॥ विश्वे
स्वर प्रभुदर सन जोई ॥ भयो न हरन दुरत भव सोई ॥
तोते हमरी इहसुत कामा ॥ संजुत निकर लोक नि
ज ग्रामा ॥ जहं तहं करि दरसन समुदाई ॥ चले
बे बहुरि निज भवन पराई ॥ अस जब जननि
जनक मुख बरना ॥ पुंडरीक तब वंदित चरना ॥
जहं तहं देव भवन मन भाये ॥ [illegible] भक्ति प्रीति जुत
सकल दिखाये ॥ बहुरि सनान दान सुभरीती ॥
सादिर यथा योग्य सब प्रीती ॥ तिनतें रुचि अनु
सार कराबा ॥ सब कर हृदय परम सुख छावा ॥ पंच
कोस्सि आदिक सुभ पावन ॥ यात्रा कीन रुचिर मन भा
वन ॥ जहं जहं जस अधिकार विचारा ॥ तहं कीन्यो
तस पूजन सारा ॥ अस प्रकार दरसन अग संगा ॥ स
कल ग्राम निज लोगन संगा ॥ जननि जनक कहं मु
दित कराई ॥ आय बहुरि निज भवन पराई ॥ निवसि
सदन सादिर महि देवा ॥ निसिदिन निरत मात पितु
सेवा ॥ प्रात काल उठि सौच करावहिं ॥ धावन दसन
उदक जुत ल्यावहिं ॥ करन पखारि चरन सनमाना ॥
उस्नोदिक सन देत सनाना ॥ उज्जल बसन लेत हर
षाया ॥ [illegible] रतिजुत करत मार्जन काया ॥ बहुरि रुचिर
आसन बैठारी ॥ करहिं सनान आपु ब्रतधारी ॥

सहज सरल चित कपट बहीना॥ संतत भक्ति मातु पितु लीना॥ अस प्रकार कछु काल बतीता॥ एक दिवस ~~पुनीता~~॥ तब विप्र पुनीता॥ नारायण रंजन जं देवा॥ मन बच करम तां लखि सेवा॥ परम हरष बस सुर नरनाहो॥ धरि वर विप्र रूप निज ताही॥ द्वै भुज बरन स्याम घन श्याला॥ ललित नयन नव नलिन बसाला॥ नाहस्विदी रचे मनमोहा॥ वपु सामान मान प्रद सोहा॥ आये भवन तास पद चारी॥ सोत हि कौं विप्र न धारी॥ ~~...~~ संतत निरत मातपितु सेवा॥ बोले तासु वचन सुरदेवा॥ अति प्रसन्न मंजुल मुख बानी॥ ~~...~~ मधुर मृदुल दाया रस सानी॥ सोरठा॥ मे आत थी रहे तोर॥ आवा भिलाटन करन॥ करहु विप्र वर मोर हृदय मनोरथ सफल अब॥ २॥ टीका॥ ~~...~~ कहते हैं कि परम पवित्र मती करनका जोहै पत्र तहो सनान किया और जगत के पापों को दूर करने वाले विष्ठेसर भगवान जो हैं तिनकौं नेत्र भर कर दरसन नहीं पाया तातें हमारी इछा जहां तहां सब देव स्थानो का दरसन ~~...~~ पाय कर फिर आनंद पूर्वक अपने घरको चले आवें ऐसे माता पिता के मुखसे वचन सुन कर पुंडरीक चरनो पर सीस नावता भया और तिनकी आज्ञा अनुसार जहां जहां वडी शोभा करके युक्त देव अस्थान थे सो तिन सब का दरसन ~~...~~ और यथा योग विधि वत स्नान दान करायकर फिर पंच कोशी आदिका वडी उत्तम यात्रा जो है सो करवाई जहां जहां जैसा अधिकार रहा तहां तहां तैसा ही पूजन करवाया इस प्रकार पापों के हरने वाला देव अस्थानों दरसन जो है सो अपने ग्राम के सब लोगों के सहित माता पिता को भली प्रकार करायकर फिर आनंद से सब समाज के सहित अपने घर को चले आये तब ईहां पर

में भी पुंडरीक नामा सपुत्र ब्रह्मण अपने नियम अनु
सार माता पिता की भक्ती सेवा मे लीन रहता ॥ नित्य
प्रातःकाल उठता प्रथम शौच करावता फिर दातन
और जल ल्याय रख देता तिसतें उपरांत ल्याय और प्र
नाल कर ल्याय करके फिर गरम जल से स्नान
देकर और उज्जल वस्त्रसें सनमान पूर्वक कुशा रीत पोंछ कर प्रीती से ल्याय करकें आसन पर बिठाय देता
और फिर आप स्नान करने को जाता था इस प्रकार
जब सहज सील और निसकपट पुंडरीक ब्रह्मण को
माता पिता की सेवा करते करते कुछ काल वतीत हो
य गया तब एक दिन जगत को पवित्र करने वाले ब्र
ह्मण देवताओं के हितकारी भगवान तिस ब्रह्मण की
पित्रीभक्ती अर्थात माता पिता की सेवा देखकर परम प्र
सन्न भये हुये दीनबंधु ब्रह्मण का रूप धार कर तहां
चले आवते भये कैसा भी रूप भगवान का था कि लंबी
दो भुजे और स्याम मेघवत शरीर का रंग नवीन
कमलवत शोभा वाले विशाल नेत्र ना हस्व और
ना दीर्घ अर्थात ना छोटे और ना कुछ बडे ऐसे सामा
न्नहीं भक्तजनों के मन को मोहित करने वाले दीनाना
थ तिसके घर में पाउं पयादे हीं चले आवते भये तब
तिस समय पुंडरीक अपने माता पिता की सेवा में ल
गा हुआ था तिसको भगवान आनंद पूर्वक बडी को
मल और मधुर वाणी से कहने लगे कि हे ब्रह्मण
मैं अतथी हूं और तेरे घर भिक्षा लेने के लिये आया
हूं अब तूं मेरे हृदय का मनोरथ जो है सो सफल कर
॥६॥ चौपाई ॥ असप्रकार भगवन जब बरना ॥ सुन्यो
न पुंडरीक निज करना ॥ कृपा निकेत बहुरि अस
भाषा ॥ सो हुन हृदय विप्र कछु राखा ॥ रह्यो करत
सेवन पितु माता ॥ त्रितिये बार बहुरि भव त्राता ॥
भने वचन तब विप्र सुजाना ॥ ढासो सिला तुरत
गोहि पाना ॥ जो लों करउं मात पितु सेवा ॥

फिर बडे श्रम और कलेशसे जनती है और प्रेम से स्थन पान करायकर बडे यतन करकर पालती है तिस बालक को जो कबी रोगपीडा उपजती है तो तिसका कलेश नहीं सहार सकती अपने प्राण त्यागने को त्यार हो जाती है । तो ते इह जननी जो है सो धन्य है इसके समान उपकार की निधी जगत मै और कोई नहीं है देखिये संसार मै जहां लग उपकार हैं तिन सब का बदला होता है परन्तू इह माता का रजो है इसका बदला जगत मै नहीं है इह बडा अगम है किसी से भी दिया नहीं जाता इस प्रकार ब्रह्मण के मुख से इह पुराण की कथा सुनकर के पुंडरीक जो है सो व्याकुल होय कर के हृदय मै बहुत पछुताव ने लगा कहता है कि अहो मेरे समान जगत मै मंदभागी और पाप की खानी कौन है कि जिसने अपना सब जनम वृथा हीं गवाय दिया माता पिता की कुछ भी सेवा और भक्ती नहीं करी ऐसे अपने आप को धिक्कार करता हूआ तत काल माता पिता के पास चला आया और बडे दीन भाव से उनके चरनो पर सीस नायकर नम्रबानी से हाथ जोडकर कहने लगा कि हे कृपा निधान मै तुम को चरसे भक्ती प्रीती पूर्वक ईहां ले आया था सो अब मेरा मनोर्थ एही है कि तुम को फिर तहां चरमे ही ले चलूं और उहां ही बैठकर के तुमारे । चरनों की भक्ती सेवा करकर जगत मै शरीर के धारने का फल जो है सो प्रापत करूं हे नाथ तुमारे चरनो की सेवा करनी मेरे को काशी की यात्रा के तुल्य ही है कुछ न्यून नहीं है मै पूरब मोह के वश भया हूआ मूढ और दुरमती जो था सो तुमारी भक्ती और सेवा कुछ भी कर नही सका तो ते इह मेरा अपराध जो है सो कृपा करके आप क्षमा कर दिये ऐसे पुंडरीक के मुख से वचन सुनकर माता पिता कहने लगे कि हे पुत्र इह तैने क्या कथन किया है हम को भली प्रकार विदत है कि आज लग तूने हमारा कोई भी अपराध नहीं किया है सदैव हमारी आज्ञा के आधीन हीं रहा हैं देखो जो तेरे से कोई भूल

तिसने तोभी उत्तर नहीं दिया जवतीसरीवारकि
भगवान कहते भये तव ब्रह्मणने तुरतहीं एक
शिला पकड़करके फेंकदी और कहा किजवलग
मै मातापिताकी सेवा करताहूं तवलग हेब्रह्मण
तुम इस शिलापर मौनहोयकरके मेरे घरके द्वार
मे वैठरहो इतना कहताहीं फिर अपने कारजमै
लीनहोयगया तव तिसकी पितृभक्ती अर्थात मा
तापिताकी सेवकाई देखकरके भक्तों का भय और
कलेश हरनेवाले भगवान ब्रह्मणकी भक्ती
के वश भये हूये अनेकप्रकार शलाघा
और वड़ाई करनेलगे इतनेमे पुंडरीक भोजन
सेजा सयन चरन चापन इत्यादि मातापिता
की सुंदर सेवकाई जोहै सो प्रीती सनमानसे सवकर
के फिर जलका पात्र लेकर के अतथी ब्रह्मणके पास
चलाआया और विलंव भई जानकर सकुचके व
श होयकरके कहने लगा कि हे द्विजप्रधान अव आ
प सनान करदिये मै प्रीतीपूर्वक तुमारे हाथ और
चरन प्रक्षालन करताहूं ऐसे यद्यपि वहुतवार
हीं कहा तद्यपि अतथी ब्रह्मणने कुछ उत्तर न
हीं दिया तव पुंडरीक हाथजोड़कर वडी नम्रता
ईसे विनती करने लगा कि हे नाथ मै अपने मा
तापिताकी सेवामे लगा हूआथा इसते मेरेको व
लंव होयगई है इस दीनका अपराध क्षमा करिये
क्योंकि तुम देव ब्रह्मण और साधू सदैव दया औ
र क्षमाकी निधी होते हो ऐसे क्षमो क्षमो कहताहूं
आ पुंडरीक चरनोपर सीस धरकर फिर विनतीक
रने लगा कि हे कृपानिधान मै माताकी सेवाके वी
च मै और कोई कारज नहीं करताहूं यद्यपि मेरे
प्राणभी चलेजावे तद्यपि मै अपना प्रण नहीं
त्यागताहूं इसप्रकार वारवार कहिकर फिर अत

अथ भक्तिरसकी आनंदसे ए

यी ब्रह्मण चरन पकर लेता भया कि हे दया की मूरती इतना कोप क्यों रते हो ऐसे जब हाथ से चरनों का सपर्श भया तो क्या देखता है कि अब यी ब्रह्मन पाषाण रूप होयकर के स्थित भया हुआ है इस अचरज कौतुक को देखकर पुंडरीक परम दुखी और व्याकुल होयकर के हाहा शब्द से रोदन करने लगा तब ऐसे तिसका रोदन सुनकर के ग्राम के सब लोग तिसके घर मे धावते हूये चले आये ॥ ७ ॥ चौपाई ॥ निजनिज कहत सकल विज्ञाना ॥ इह कस भयो विप्र पाखाना ॥ पुंडरीक तब कहा बुझाई ॥ मै सेवा आपन पितु माई ॥ ताहा करत बेर कछु भयऊ ॥ तो ~~[illegible]~~ बैठि द्वार दुज रहयऊ ॥ मै जब आय भन्यो कर जोरी ॥ रोस हुविलंब विप्र वर मोरी ॥ कीन्यो जब सपर्श कर केरा ॥ ततछन शिला रूप दुज हेरा ॥ सुनि अस पुंडरीक मुखवानी ॥ अति अचरज मानस सब मानी ॥ लागे निजनिज करन विचारा ॥ शिला मरम कछु परहि न पारा ॥ दुज विद्वान बृद्ध सब स्याने ॥ भये ~~[illegible]~~ थकत जब मरम न जाने ॥ तब निजनिज सब भवन सिधाये ॥ रहे कछुक पाछिले ~~[illegible]~~ आये ॥ पुंडरीक विसमय मन लीना ॥ आपन सकल नित्य कृत कीना ॥ ~~[illegible]~~ ~~[illegible]~~ ॥ पे जल मात्र वदन कछु पाना ॥ कियो न दुजवर धरम प्रधाना ॥ दुखित शोकवस मानस मारी ॥ बिलपि कहत अस हृदय विचारी ॥ अतथी विप्र मोर गृह आयो ॥ मै भोजन विनु तासु जिमायो ॥ कहि विधि देव वदन निज पाऊं ॥ कहि के अब दुख दुसह सुनाऊं ॥ दुज प्रवीन अस हो चि विचारी ॥ उरउपवास लीन ब्रत धारी ॥ जननि जनक भामनि जुत देखी ॥ भये दुखित निज हृदय वसेखी ॥ इहि के अब विनु भोजन पानी ॥ होहि अब ~~[illegible]~~ प्राणकरे हानी ॥ देव उपाय कोन अब होई ॥ स ज्जन सखे देखि सब कोई ॥ सोचित

सह्योसबन उपवासा॥ अस प्रकार जब दिवस विता सा॥ मिलि विद्वान वृद्ध तहि ग्रामा॥ आये पुंडरीक द्विजधामा॥ कहत परसपर हृदय विचारी॥ सुनहु विप्र वर बात हमारी॥ अत थी भयो जवन पाषाना॥ अव रहि कर तुव देहु सनाना॥ समन सगंधि तिलक सिज धारी॥ ~~विधिवत~~ विधिवत भक्ति प्रीति अनुसारी॥ करि पूजन नैवेद लगावहु॥ तव पाछे भोजन तुव पावहु॥ इहि तें होहि न विप्र तुमारा॥ धरम द्रोहता अस वचनं हमारा॥ हित क वचन अस दुजन उचारा॥ पुंडरीक कीन्यो सुई कारा॥ सोरठा॥ ~~~~ करि पूजन सवताम॥ भोजन सवन जिमाय पुनि॥ धरयो आपु उपवास॥ लोन पान कछु ना कियो॥८॥ टीका॥ तव ~~~~ विद्वान जन जोथे सो ~~~~ अपने अपनें कहने लगे कि देखो वडे अचरज की बात है इह ब्रह्मण कों कर पाखाण होय गया है तव पुंडरीक कहने लगा कि मेमाता पिता की सेवा मे लगा हूआ था इह ब्रह्मण आय कर के द्वारे मे स्थित होय गया मेरे को काजे कर के अव ~~~~ कुछ वेर लग गई तो मैं आय कर तिस वेर के क्षमा कराने को हाथ जोड कर विनती करने लगा फिर जव चरनो को सपर्श भया तो क्या देखता हूं कि ब्रह्मण पाषाण रूप वना हूआ है असे पुंडरीक के मुखसे वचन सुन कर सव ब्रह्मण अचरज के वश होय कर अपने अपने हृदय मे अनेक विचार करते हैं परन्तु वास्तिव भेद का किसी ने भी पार नहीं पाया तव वडे विद्वान और वृद्ध ब्रह्मण जो थे सो सव सोचते सोचते थकत होय कर अपने अपने घरों को चले गये तिनसे पीछे और जो जो आये सो भी तिस अदभुत कौतुक को देखकर हृदय मे वडा आचरज मानने लगे और पुंडरीक भी परम सोच के वश भया हूआ अपना नित्य करम ~~~~ ~~~~ तो सव करता भया परन्तु हृदय

तो लो तुम दुहि पर महि देवा॥ बैठहु मौन द्वार म
म धामा॥ अस कहि भयो निरत निज कामा॥ जननि
जनक अस भक्ति व होती॥ दीन ध्याल तहि दुज करदे
खी॥ वसी भूत है भीत विधेसा॥ लगे करने सुत ता
सु प्रसंसा॥ तो लो पुंडरीक मन भावा॥ भोजन हि जा
सयन सुहावा॥ पादसमरदन लो सिव काई॥ कदि सब
जननि जनक सुखदाई॥ पुनि आयो अतुथी दुज पा
सा॥ महि भाजन जल विमल हुलासा॥ कछुक विलंव
मानस निज जानी॥ वोल्यो वदन सकुच जुत वानी॥
अंद्रु जु वर तुव करहु सनाना॥ मै करचरन तोर सनमा
ना॥ ~~प्रक्षालन~~ हरषि करन प्रक्षालन करहुं॥ पथ
आगमन सकल श्रम हरहू॥ रहे मौन दुज रूप
उदारा॥ यद्यपि भव न्यो विप्र वहु वारा॥ पुंडरीक
तव जुग कर जोरी॥ कहत वचन मुखविनय नयो
री॥ मोरे करत मात पितु सेवा॥ भई विलंव विपुल
महि देवा॥ तो ते क्षमहु मोर अपराधू॥ दाया नधी
देव दुज साधू॥ अस कहि नम्र चरन सिरधरयौ॥
क्षमहु क्षमहु वहु वार उचरयौ॥ मै मध्य रत मात पि
तु सेवा॥ करहु न आन काज महि देवा॥ यद्यपि आपु
मोर किना जाहीं॥ तद्यपि तजहु भक्ति प्रण नाहीं॥
अस प्रकार वहु वदन वखानी॥ गहे चरन सादिर दुज पा
नी॥ कदिय न अस अमर खे निधि दाया॥ होत स्पर्श दृगन
दरसाया॥ सन मुख शिला रूप दुज सोई॥ देखत च
रित चकत चित होई॥ दोहा॥ लाग्यो रोदन करन तव
पुंडरीक अकुलाय॥ धाय आय रोदन सुनत ग्राम
लोग समुदाय॥७॥ टीका॥ इस प्रकार विप्र रूप भ
गवान यद्यपि चिताय करके भी कहते भये कि हम
अंतर्यामि दासे लेने आये हैं तद्यपि पुंडरीक जो है सो
कुछ भी सुनता नहीं भया दीन वंधू ने फिर कहा

करि सादिर सब विप्र सुहाई॥ तब रजनी आसन न
निज आवा॥ निद्रा निरत सवन अस पावा॥ अखि
ल लोक विश्राम अगारी॥ करुणानिधी चतुर भु
ज धारी॥ पुंडरीक लोचन घन स्यामा॥ बसन पुनी
त पीत अभिरामा॥ मकराकृत कुंडल कल करना॥
कैकि क्रीट मुनि मानस हरना॥ भृकुटी बंक सुभग
शुक नासा॥ चंदन तिलक लिलाट विकासा॥ अरुन
वरन मृदु पंकज चरना॥ उज्जल नख मयंक द्युति
हरना॥ कोटि मदन छवि निदरत ~~काया॥ सुरदु~~
सोभा सुरदुज धरनि हरन भव सोभा॥ अस प्रका
धरि रूप सुहाये॥ हरि साक्षात सवन तहिं आये॥
विप्र भक्ति वश दीन उवारी॥ बोले बदन वचन हि
तकारी॥ सुनहु भक्त तुव सदृश प्यारा॥ मोरे
कोउ नाहिं न संसारा॥ मै तुव देखि मात पितु से
वा॥ ~~[illegible]~~ भयो प्रसन्न ~~[illegible]~~ विपुल महिदेवा॥
धन्य सुजनम तोर धन करनी॥ महिमा जाय व
दन किमि वरनी॥ मै तुव भक्ति विवश ~~[illegible]~~ हित
साना॥ अत यी वन्यो तुरत पाखाना॥ ईहां स
रवदा काल प्रवीना॥ चाहहु निवास रुचिर निज
कीना॥ पितृ भक्ति देखि रत तोरे॥ होत न तृप
ति विप्रवर मोरे॥ अब मै वेग द्वारिका जाई॥ एक
मूर्ति संजुत बहुरि पराई॥ तोरे सदन अंस संजुत
होई॥ बसहुं आय संशय नहिं कोई॥ ईहां मोर
दरसन सुखदाई॥ जे जन करहिं भक्ति जुत आई॥
लिये पुष्प तुलसी दल चाहू॥ मोहि पूजहिं संजु
त सत काहू॥ मै अभिवृत्ति न कर ~~सकुदाये~~॥ मन
भाये॥ करहु सफल संतति समुदाये॥ मोर सुभ
क्तो दास दृढ सोई॥ इहि कलि काल प्रीति रत
होई॥ इहि पल इहि मूरति सुखदाई॥ पूजे
हिं मोर भक्ति सरसाई॥ मै तापर अन कूल न थोरा

पावहिं परमधाम सुख मोरा॥ तातें सुनहु भक्त अनुरागी॥ धरहु धीर चिंता सब त्यागी॥ मै अब तौ ब्रह्म लान नहिं कोई॥ भोजन करहु स्वस्थ चित होई॥ तजि निज पुरी द्वारिका चारू॥ इहां पाया तो रूप सुभधारू॥ जननी जनक तोर महिदेवा॥ देखन भक्ति भाव सुचि सेवा॥ करहु निवास रुचिर तुव गेहा॥ अब तुव विगत सोच संदेहा॥ विधिवत जननि जनक करि सेवा॥ करहु प्रात भोजन महिदेवा॥ अस प्रकार निसि स्वपन निहारी॥ नृप सुने ग्राम लोग नर नारी॥ सोरठा॥ निज निज करत विचारि॥ प्रात काल उठि घर सपर इह अचरज मन हारि॥ भयो अलोकिक कछु॥ टीका॥ कहता है कि जब लग प्रकट होय करके मेरे घर मे इह अब तौ ब्रह्मन भोजन नहीं॥ तब लग मैं कदाचित कुछ खान पान नहीं करूंगा इस प्रकार हृदय मे धारन कर पुंडरीक जो है सो अपने माता पिता की सेवा मे जाय लगा तहां तिनकी जो नित्य सेव कार्य करता था सो सब करके और रात्री को फिर आयकरके सुखपूर्वक आपने आसन पर सोय रहा जब निद्रा मे लीन भया तब सरव भवनों के स्वामी दया के समुद्र और पापों के दूर करने वाले भगवान तिसको स्वपने मे दरसन देते भये कैसे भी भगवान कि चार है भुजा जिनकी और कमलों वत नेत्रों की सुंदर शोभा पीत वस्त्र और मेघवत स्याम शरीर की शोभा मकराकृत कुंडिल और माथे पर मोर मुकट तैसे ही मस्तक मे चंदन का तिलक बड़ी मनोहर चोकी भवें और शुक जो तोता है तिसके समान सुंदर नासिका कमलों की शोभा को हरने वाले लाली करके युक्त कोमल चरन और तिन चरनों के नखों की बड़ी उज्ज्वल चंद्रमा कैसमान शोभा ऐसे जो ब्रह्मन पृथ्वी और देवताओं के पा

लक भगवान कोटि कामदेव की शोभा को लज्जा दे
नेवाला मनोहर रूप धारकर पुंडरीक को स्वपने मे
कहते हैं कि हे भक्त प्रधान तूं मेरा अत से करके दृढ
सेवक है तेरे समान मेरे को जगत मे और कोई प्या
रा नहीं है क्योंकि मै तेरी इह पित्री भक्ती देखकर
के अत्यंत प्रसन्न होय गया हूं भक्त तू धन्य है और
धन्य तेरी इह करनी है मै तेरी भक्ती के वश होय कर
शिलारूप होय गया हूं और सदैव इहां ही निवास कि
या चहता हूं इह तेरी पित्री अर्पीत माता पिता की भ
क्ती जो है सो देखते देखते मेरे को तृपती नहीं हो
ती है हे भक्त अब मै द्वारि मै जाय कर और रुकमणी
को लेकर अंसों के सहित होय कर के तेरे घर मे आ
य कर निवास करता हूं इहां जो कोई भक्ती प्रीती
से मेरा दरसन करेगा और सनमान पूर्वक पुष्प औ
र तुलसी दल चढाय कर के पूजन सेवन करेगा
मै तिस के हृदय के मनोर्थ सब सफल करूंगा सो
मेरा सोई बडा प्यारा भक्त है कि जो इस कलि काल
मै प्रीती भक्ती से आय करके इसी अस्थान मेरे
इसी स्वरूप का पूजन सेवन करेगा मै तिस पर अ
त्यंत प्रसन्न होऊंगा और मेरे परम धाम का सुख
जो है सो प्रापत करेगा तो ते हे भक्त अब हृदय
से चिंता और सोच सब त्याग ~~के कोई~~
और स्वस्थ चित्त होय कर के भोजन कर मै को
ई अत की ब्रह्मण नहीं था अब तूं सत्य
कर के जान जो मै अपनी सुंदर द्वारिकापुरी को
त्याग कर इसी पाषाण रूप मै तेरी माता पिता
की उत्तम भक्ती और सेवा देखने को इहां तेरे
घर मे ही निवास करता हूं तू हृदय के सो
च और संदेह से निवृत्य होय कर और नियम
अनुसार माता पिता की सब सेवा करके आनंद
प्रातकाल

मे चिंता और कलेश मानकर कुछ जल मात्र भी पान
नहीं करता भया कहता है कि हे दे मै अव आपना दुख कि
स को सुनाऊं इह अतथी ब्रह्मण जो है सो मेरे घर मे
आया मै इस के जिमाये विना आप केसे
भोजन पाऊं इह योग्य नहीं है असे कहिकर सो
ब्रतधारी ब्रह्मण अन्न जल इत्यादि कुछ खान पान न
हीं करता भया तव माता पिता और स्त्री तिसकी असी
दशा देखकर परम चिंता करके दुखी कहते हैं कि
देव हम कौन यतन करैं इस के प्राण तो भोजन के विना
कदाचित नहीं वचैंगे सज्जन सखे जो हैं सो भी सव दे
खकर के सोच के वश भये हुये खान पान कुछ नहीं कर
ते भये इस प्रकार जव दिन वतीत होय गया तव ग्रा
म के वृध जन सव मिलकर के पुंडरीक के घर मे चले आ
ये और तिसको वडे हित के वचनो से कहने लगे कि
हे ब्रतधारी पुंडरीक इह अतथी ब्रह्मण जो शिला रू
प होय गया है अव इस को तू सनान देकर गंध
पुष्प तिलक माला इत्यादि सव सजाय कर और प्री
ती भक्ती से भली प्रकार पूजन करकर सुंदर नैवेद जो
है सो लगाय दे और फिर पीछे आप भोजन पाय ले
इस से हमारे वचन कर के तेरा धरम और ब्रत जो है सो
कदाचित भंग नहीं होगा जव इस प्रकार वृध ब्रह्म
णों ने कथन किया तव पुंडरीक ततकाल सई का
र करके सुंदर विधी अनुसार तिस अतथी पाषाण
का पूजन करता भया तिस तें उपरांत भक्ती प्रीती से घर
मे सव ब्रह्मणों को भोजन जिमाया और यथा योग्य
सव का आदि सतकार किया परन्तु आप खान पान
कुछ नहीं करता भया ॥८॥ चौपाई ॥ कहत वदन जव
लग मम गेहू ॥ करहिं न प्रकट पाक दुज एहू ॥ तव
लग कछु भोजन जल पाना ॥ मै न करहुं जावहिं य
दि प्राना ॥ अस दृढ हृदय करत महिदेवा ॥ लाग्यो कर
न मात पितु सेवा ॥ तिन कर यथा नित्य सिव कारि ॥

होयकरके अपने माता पिता की सेवा मै लीन रहता त
व राजा से लेकर के ग्राम के सब विद्वान जन जो वहा हो
वडी शाला जाय और सतकार करके वचनो से कहने लगे कि हे
ब्राह्मण तूं धन्य है और धन्य तेरी इह सेवा है कि जिसके
प्रभाव से देवताओं के दुख दूर करने वाले भगवान द्वा
रिका को त्याग करके भक्ती के वश भये हूये साक्षात ईहां
तेरे घर मै आय करके विराजमान भये हैं आज जग
त मै तेरे समान दूसरा कौन बडभागी है ऐसे कथन
करके राजा के सहित सब विद्वान जन बडे सनमान
पूर्वक पुंडरीक को साथ ले कर जहां रुकमणी के स
हित शिलारूप होयकर भगवान विराजे हूये थे तहां च
ले आवत भये ॥२०॥ चौपाई ॥ तब बुध जन जस आय
सु दीना ॥ सादिर पुंडरीक तसकीना ॥ विधिवत क
रि पूजन भगवाना ॥ हरषि कीन मुख अस तुति नाना
सादिर सुचि नैवेद लगावा ॥ तहि पाछे भोजन दु
ज पावा ॥ भये लोग सब हृदय सुखारी ॥ कहत परस्पर नर अरु
नारी ॥ हमरे धन्य भाग जग आजू ॥ जिनकर नगर राज सुर रा
जू ॥ अस प्रकार भगवान सुनाये ॥ सुर नर सुखद विप्र गृह आये ॥
बैठन हेतु जवन दुज कहयो ॥ विठुल नाम प्रकट अस भयऊ ॥
राजे जहां भक्त सुखदाता ॥ सो पुर पुंडरीक विख्याता ॥ सरव सि
द्धि कर मूल सुहावन ॥ सुंदर सुखद नेत्र कहँ पावन ॥ दरसन कि
येजास जग होई ॥ भक्ती मुक्ति रुचिर फल दोई ॥ मुनि अ
स्थिउ मा शंभु सुर राई ॥ विधि गणेश जुत विबुध निका
ई ॥ विस्नु देव जग जनन उवारा ॥ धरि निज निज अंस
अवतारा ॥ रक्षण करन हेतु निज दासा ॥ तहिउ जन पुर
कीन निवासा ॥ पुंडरीकपुर मान सम भावन ॥ [illegible]ग सु
महातम मे जुल पावन ॥ इमन अनेन विपुल विस्तारा ॥
किये कथन [illegible] परहि न पारा ॥ तो ते कछु संछेप सुना
वा ॥ मोरे यथा अवगत मन आवा ॥ सो कछु मंद
मती अनुसारा ॥ कीन कथन मै संत उदारा ॥ जे जन
अजहु भक्ति सनमाना ॥ सुमरहि उर विठुल भग
वाना ॥ गतिअनन्य कीर्तन गुन गावहि ॥ सो प्र
नत प्रभु दरसन पावहिं ॥ विठुल पुंडरीक पुर वासी ॥

किलेष औरज संताप विनासी॥ कृस्न गुनानुवाद सुखे गावा॥ सकल भोग सुख संपति दाता॥ सोरठा॥ पावहिं सदगति सोय॥ विठुल देव प्रसाद तें॥ कछु दुरलभ न हिं होय॥ सबद सुलभ तो के सदा॥ १॥ टीका॥ तब वृध जन और विद्वानों की जें आज्ञा भई पुंडरीक ने तेसें ही किया विधिवत बड़े सनमान से [illegible] विठुल भगवान का पूजन करके मुख [illegible] से अनेक प्रकार की अस्तुती जो है सो गायन करी [illegible] फिर प्रीती भक्ती से सुंदर नैवेद लगाय कर पीछे आप भी भोजन पाया तब सब लोग हृदय मे परम सुख मान कर परस्पर कहते हैं कि हमारे जगत मे धन्य भाग हैं जिन के नगर मे [illegible] देवों के देव विठुल भगवान विराजमान होये हैं इस प्रकार सर्व जीवों के सुखदायक और भक्त हितकारी भगवान [illegible] पुंडरीक ब्राह्मण के घर मे आवते भये और जो ब्राह्मण ने शिला देकर बैठने के वासते कहा था तिस तें विठुल ही नाम करके प्रसिध होजाते भये और [illegible] जहां की नाना [illegible] विराजमान होये हैं सो पुंडरीक नाम करके पुर जगत मे बड़ा उजागर [illegible] सरब सिद्धियों का मूल सुखदायक और परम पवित्र तीर्थ होता भया कि जिसके दरसन करने से भक्ती और मुक्ती इह दोनो फल प्रापत होते हैं फिर कैसा भी है कि जहां शिव पारवती और गणपती विस्नु भगवान और लक्ष्मी ब्रह्मा इंद्र इत्यादि सब [illegible] देवता आपना आपना ऐसा अवतार धारकर आपने दास भक्त की रक्षा करने के वासते तिस उत्तम पुर विखें आय कर तिस्ते भये हैं इस पुंडरीक पुर का अनेत और अगाध महातम है कथन किये सें कुछ पार नहीं पाया जाता तो ते हे संतजनो जैसा कि मैने स्रवण किया है तैसा मंदमती के अनुसार ईहों से संछेप सा कुछ गायन कर दिया है जो कोई आज कलि काल मे भी प्रीती भक्ती से निसकपट होय कर के विठुल भगवान का सुमरण करें और इकाग्र चित होय कर तिन का कीर्तन गायन करता है तिस को साक्षात भगवान का दरसन होते हैं तहां विठुल पुंडरीक पुर मे जो [illegible] कोई निवास करने

वाला है सो भले और पापों से छूटकर जगत में स
व भोग सुख भोगता और भगवान के गुणानु
वाद गाँता हूआ विष्णुदेव की कृपा के प्रसाद से
सदगती जो बड़ी उत्तम गती है तिस को प्रापत हो
वेगा भगवान की कृपा से तिस को संसार में कु
छ भी दुरलभ नहीं है सब सहज और सुगम हीं
है ॥ २२ ॥ इति श्री भक्ति विनोद ग्रंथे भगवद भक्ति
महातमे भाषा टीकायां पुंडरीक चरित वरणनं
नाम सरगः

सेभोजनकर पायले इसप्रकार रात्री के समय इह स्वपन राजा के सहित ग्राम के सब लोगों को भी होता भया तब प्रातःकाल उठकर और आपने आप ने विचारकर परस्पर कहते हैं कि देखो भाई रात्री को इह के सा आश्चर्ज और अलौकिक स्वपन भया है कि जो बुद्धी विचार मे नहीं आवता है॥९॥ चोपाई॥ संजुत नगर लोग ततकाल॥ प्रमुदित पुंडरीक पह आई॥ बोले वदन वचन समुदाया॥ कथन हमार सुनहु दुजराया॥ अतथी बने जवन पाषाना॥ इह साक्षात आपु भगवाना॥ चिंता तजहु विप्र निज जी के॥ हम कहे भये स्वपन निसि नीके॥ असतिन कथन श्रवन जब कीना॥ रह्यो मोन दुज धरम प्रवीना॥ आपन यथा नियम अनुसारी॥ सेवन निरत तातम हतारी॥ तब भूपादि ग्राम विद्वाना॥ लागे भनन वचन सनमाना॥ तुव दुज धन्य धन्य तुव सेवा॥ जहि प्रभाव रंजन दुजदेवा॥ हरि साक्षात द्वारिका त्यागी॥ केवल तोर भक्ति हित लागी॥ कीन निवास सुचिर तुव भवना॥ सदृश तोर आज जन कवना॥ तोर ठा॥ असभाखत समुदाया॥ नृप समेत दुज वृद्ध जन॥ सादिर चले लिवाय॥ पुंडरीक कहे संग निज॥ रुकमनी स हित मुरार॥ राजे दुजवर भवन जहां॥ शिलारूप निज धार॥ तहां आय प्रमुदित सकल॥१०॥ टीका॥ तब संपूर्ण नगर के लोग जो हैं सो राजा के सहित मिलकर पुंडरीक के घर मे चले आये और तिसको बडी प्रीती सतकार से कहने लगे कि हे ब्रह्मन इह अतथी पाषाण जो बने हैं सो तो साक्षात आप भगवान कृपानिधान हैं क्योंकि दीनानाथ ने हमको सपने मे भली प्रकार सब जनाय दिया है तुम हृदय की चिंता सोच को त्यागो और भगवान के चरन कमलों मे प्रीती करो ऐसे तिन का कथन सुन कर पुंडरीक ने कुछ उत्तर नहीं दिया मोन

सकी प्रीती लगी रहती थी। तब एक दिन तिस की
स्त्री बड़ी दीन वाणीसें कहने लगी कि हे पती इह
तूं जो इतना धन जोड़ता है सो किसलिये इह तेरा
खेद और श्रम तो सब वृथा ही है क्योंकि पुत्र के
विनां इह धन सम्पती किसेभी अर्थ नही
है इस का किसको लाभ होवेगा तातें इह तेरा यतन
सब अकारथ ही है तेरे भ्राता संबंधी जो हैं सो तो
परस्पर सब ऐसे कहते हैं कि जब इह स्त्री भरता
दोनो मर जावेंगे तब इनका सब धन हम ही ले
लेवेंगे इह वृद्ध तो कोई दिन के पाहुने हैं आज का
ल परलोक को जाने वाले हैं अंत को इन की सम्पती
सब हम ने ही ग्रहण करनी है॥१॥ चौपाई॥ अस
त्रीय वचन सुनत मुसकाई॥ वामदेव मुख गिरा
अलाई॥ सत्य वचन तुव मन्यो सुधरमा॥ मै नत
जहुं आपन कृत करमा॥ जो लो यथा शक्ति बन
आई॥ प्रीय निज करहु काज समुदाई॥ काजा
नू कोकर धन को ही॥ प्रीया सुनहु जग प्रापत
होही॥ जो अस कहत वचन मुख भ्राता॥ मूढ
कृत घ्न अधम अगाता॥ सदा मोर सठ पालन
कीने॥ कृपन दीन दारद दुख लीने॥ अब अस क
हत वदन हेकारी॥ तिन कर ~~हेतवकर~~ सकल म
नोरथ ध्यारी॥ निसफल करने यतन जीय मोरे॥
भामनि मनहु वदन अब तोरे॥ सो तुव करहु प्रेम
मन लाई॥ ~~स~~ प्रीय तुमार सब होहि भलाई॥ उप
जहि ~~स्व~~ रुचिर पुत्र चित मोदू॥ मिटहि कलेश
दोष दुख सोगू॥ सोरठा॥ निस वासर तुव प्यारि॥
करहु कपट गत पुन्य नित॥ तब कल्यान तुमा
रि॥ होहि अवसि संसय नही॥२॥ टीका॥ ऐसे
स्त्री का वचन सुन कर वामदेव मुसकाय करके
कहने लगा कि हे धरमप्रवीने तैने सत्य ही कहा है
परन्तू प्यारी मै अपना करम नही त्यागूंगा जब लग

जहां तक बन सकेगा तहां लग अपना
बिवहार कार्ज सब करता रहूंगा क्या जानिये किस
का धन जगत मै किसके प्रापत होवेगा मेरे बांधव
भाई जो ऐसा वचन कहते हैं तो इह मूढ बडे कृ
तघ्न अर्थात किये हूयेको नहीं जानने वाले महां
अधम और पाप की खानी हैं महां कृपन और दीन
दारिद्रीओं मे जो इह जातिओं को सदैव पालता रहा हूं अ
व हे कारके वश होय कर जो ऐसे कहते हैं तो हे प्यारी
तिनका मनोर्थ निस्फल करने को तेरा भाई एक यत
न करता हूं सो तू प्रीती सन मान से कर जिस तें तेरा स
रव प्रकार करके भला हो जावेगा भगवान की कृपा सें
तेरे घर मे इस धन के भोगने वाला पुत्र उतपन्न हो
वेगा और तेरे दुख कलेश सब दूर हो जावेंगे सो
के न यतन है कि तू हृदय से कपट और छल को त्याग
करके आनंद पूर्वक रात्री दिन सदैव पुन्य जो है सो कर
इस तें तेरी सहजे ही कल्यान हो जावेगी और अपने
मनोर्थ को प्रापत करेगी इसमे कुछ संशय नहीं है॥
२॥ चौपाई॥ पति कर वचन सुनत अनुरागी॥ नम्र
त बदन मनन अस लागी॥ नाथ न परहिं मोहि क
छु चीने॥ हेवत पुन्य करम कहि कीने॥ प्रानना
थ अब देहु जनाई॥ सुनि अस बामदेव हरखाई॥
प्रीया सुनहु मुख वचन वखाना॥ मै कछु पुन्य म
रम नहिं जाना॥ पै उपदेस काल करि दाया॥ गुरु
कृपाल अस बदन सिखाया॥ करते रहो संत महि
देवा॥ मन बच करम रुचिर सुत सेवा॥ अस कहि
गुरन मंत्र अनकूला॥ जो मोहि दीन सो हुं अब मूला॥
पै तिन कर उपदेस सुहावा॥ आज सु हृदय मोर क
छु आवा॥ तां ते तुम भाम निहित जानी॥ निसिदिन
करहु करम मन बानी॥ अतिथि संत सेवन मन लाई॥
लेहु ललित वांछित फल पाई॥ अब तें साध संत

सुम चारी॥ अतथी विप्र मन क्रम व्रत धारी॥ भी मास रत तीर दृग देखी॥ हमरे भवन कि कृपा बसेखी॥ आवहिं तासु भक्तिजुत नाना॥ करि करि वदन विनति सन माना॥ देवित वसन करहु सिव काई॥ प्रीय तुमार जग होहिं भलाई॥ वारवार मन सासन एहू॥ हितजुत करहु संत पद नेहू॥ मेहु जाय भीमा नदि तीरा॥ दिनदिन देत अन्न धन चीरा॥ इत्यादिक सेवा सुखदाई॥ क्रिया तिन करहु रुचिर मन लाई॥ अस प्रकार सुंदर हित जानी॥ दंपति परम हरष उर मानी॥ मन वच करम संत द्विज देवा॥ तत पर भये रजनिदिन सेवा॥ तव प्रभाव सेवन द्विज संता॥ उनकर भवन न सूल दुख हंता॥ भई रुचिर कन्या सुखदाई॥ हरषे दृगन देखि पितु माई॥ कहत परस्पर हृदय विचारी॥ आज सफल भई काम हमारी॥ सोरठा॥ जे संतत हम कीन॥ सेवा अतथी साधु द्विज॥ आज तासु फल लीन॥ इहि जन मी कन्या रुचिर॥३॥ टीका॥ ऐसे पती का वचन सुन कर प्रेम के वश भई हुई स्त्री जो है सो कहने लगी कि हे नाथ मै नहीं जानती हूं जो पुन्य किस कर मकर के होता है कृपा करके मेरे को आज्ञा दीजिये तब सुन करके वामदेव कहने लगा कि हे प्यारी इह तो मैभी नहीं जानता कि पुन्य किसको कहते हैं पर नृ गुरूजीने उपदेश करने के समय मेरे को कहाथा कि पुत्र तुम मन वचन काया करके जहां तक होसके साधु ब्राह्मण की सेवा करते रहना ऐसे कहिकर और फिर प्रसन्न होय करके मेरे को मंत्रभी दियाथा ~~...~~ हेवाले अव सोतो भूल गया है पर तिनका सो उपदेश आज कुछक मेरे हृदय मे आय गया है तांते अव प्यारी तूं सहज सरल चित होय कर और हृदय

अथ वामदेव चरितं

ॐ सोरठा॥ पुंडरीक पुर [illegible]य॥ संसृति आपा मंशतें॥ रह्यो
विदत अव होय॥ नाम सो पुंडिर पुर रुचिर॥ चौपाई॥
तहिंमे एक सूद्र गुणधामा॥ वसहिं वामदेव अस
नामा॥ तासु कथा अचरज मनमाई॥ कर
हुं प्रकर कछु वदन अलाई॥ छीपी जाति विपुलध
नमाना॥ निज कुटंब परिवारत नाना॥ पूरव दयादा
न सत करमा॥ रह्यो नकरत सूद्रगत धरमा॥ अरु सं
तान रहित जग सोई॥ भयो वृद्ध चिंतावस होई॥ अस
जद्यपि संतान वहीना॥ तद्यपि धन संचित मन ली
ना॥ तव इक दिवस तासु तीय जोई॥ बोली वदन
दीनवत होई॥ स्वामिन तजहु जवन धन जोरा॥ इह
सव वृथा खेद श्रम तोरा॥ पुत्र वहीन को धन सारा॥
कवन अर्थ जग प्राण अधारा॥ को कर होहिं लाभ इहि
केरो॥ अनहित स्वामि यतन सव तेरो॥ इहतु वसि
कर भ्रात परिवारा॥ निज निज उर अस करहिं विचारा॥
जव इह मरहिं जुगल पति दारा॥ हम हु लेव इनकर ध
न सारा॥ सोरठा॥ वृद्ध दंपती दोय॥ काहु दिवस कर
पाहुने॥ अंत हम हुं कर होय॥ इनकर सम्पति गह
ण सव॥२॥ टीका॥ नाभादास जी कहतें है कि हे संतो
इह पुंडरीक पुर जो है सो आपा मंशतें अर्थात
मूल [illegible] अव जगत मै पुंडर पुर प्रसिद्ध होय
रहा है तिस नगर मै एक वामदेव नाम करके सूद्र
वास करता भया अव तिसकी वडी अचरज और म
न को भावती गाथा जो है सो गायन करता हूं कै स्वामी
वामदेव कि जाती करके छींवा और वडा धनमान
भारी कुटंब वाला था परन्तु दयादान सु करम
धरम इत्यादिं जो पुन्य हैं सो कुछ नहीं करता था
और जगत मै संतान से भी रहित था तद्यपि रात्री दिन
धन के संचित करने मे अर्थात धन के जोड़ने मे होति

सुंदर जामाता॥ ग्रसत रोग ज्वर पीडत गेहू॥ मृतव
सम भयो दीन तजि देहू॥ तासु मरण लखि हृदय
दुखारी॥ वामदेव संजुत निज नारी॥ हाहाकार ला
ग मुख करना॥ दुख कलेश कछु जाय न वरना॥
नगर लोग सब देखि विलापा॥ दारुण शोक सहे
संतापा॥ धीरज देत दैव गति वरनी॥ इन तुमार
कछु पूरब करनी॥ अब कर जनम तुम्हु संसारा॥
कीन न कछु अनुचित अविचारा॥ ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~॥ यदपि कहे विपुंतिन पावा॥
तदपि संत सेवन मन भावा॥ तज्यो नाहि सुंदरि
न जानी॥ तत पर रह्यो करम मन वानी॥ एक दि
वस संजुत अभिलाषा॥ वामदेव भामनि सन भाषा॥
सुंदर सुता तोर रह प्यारी॥ अजहुं है मृगदा सुक
मारी॥ इहि के उचित मोर मति राहा॥ क्रीया
करन जग पुनर विवाहा॥ जो तुमार मानस कछु
भावा॥ तो करिहैं इह काज सुहावा॥ जब अस
वामदेव मुख भाषा॥ भामनि सुनत हृदय सब
राखा॥ निज पुत्री सन कहा बुझाई॥ ते सुनि हृद
य परम अकुलाई॥ रुदन करत मुख वचन बखा
ना॥ मैं न करहुं जन कीन्ह पति आना॥ अनुचित
कुल कलंक नहि धरहों॥ संतत बैठि भवन
तप करहों॥ अतपी संत साधु महि देवा॥ मनव
च काय करहुं नित सेवा॥ मैं दृढ सत्य धरन व्रत
धारी॥ अस अनुचित किमि सकहुं सहारी॥
सुता वचन सुनि मातु सनेही॥ सो चत हृदय
मूक वत रेही॥ सोरठा॥ पुनि अस वदन उचारि
तुव तनयो सुई कारजे॥ कबहुं कि बात हमारि॥
करहु न अनहित गुनत जिये॥ दोहा॥ तो पुत्री
तुव जनक जे दिस बस वलात कार॥ देखि स

[illegible]

दिन विधिवत तुरत करहिं विवाह तुमार"४॥ टीका

इसप्रकार दोनो स्त्रीभरता विचार करके तिसका सुंदरनाम जो है सो सुमती राखते भये तब समय पायकर के सो शील और गुणों की निधी कन्या जुवा अवस्था को प्राप्त होजाती भई वामदेव ने हृदय मे विचार करके एक वड़ा शुभदिन और सुंदर बालक देखकर तिसके साथ कन्या का विवाह कराय दिया और अपने तिस जामाते को पालन करने के लिये प्रीती पूर्वक घरमे हो राख लिया ऐसे परस्पर बड़े हरष और सनेह के सहित स्त्री भरता अपनी कन्या और जामाते के सहित घरमे निवास करते हुये रात्रीदिन साधु संत अरु तथी ब्रह्मणों सेवा भक्ती मे लीन रहते थे जब कुछ काल वतीत होय गया तब तिनका जामात्रा जो था सो देवयोग से ज्वर रोग करके बड़ा दुखी और पीड़ित होय कर अंत को कालवैश होय जाता भया ऐसे तिसका मरना देखकरके स्त्री के सहित वामदेव बड़े हाहाकार शब्द से रोदन करने लगा तब नगर के लोग तिनका शूल और संताप देखकरके दैवभावी कथन कर कर अनेकप्रकार से धीरज देते है और कहते है कि इह तुमारी कोई पूर्वकाल की करनी है इस जनम विखें तो जगत मे तुमने कोई अनुचित अधरम नहीं किया है ऐसे तिनोने जामाते के मरने का यद्यपि बहुत हि दुख और कलेश पाया तद्यपि संत भक्तों की सुंदर सेवकाई जो है सो नहीं त्यागते भये मन वचन काया करके तिसमे ही लीन रहते भये तां एकदिन वामदेव अपनी स्त्री को कहने लगा कि हे प्यारी जो तेरे मन को भाती हो तो इह तेरी कन्या जो है इसका पुनर विवाह अर्थात दूसरी वार फिर विवाह कराय देवें क्योंकि अभी इह वाल्य अवस्था है ऐसे जब वामदेव ने कथन किया तब स्त्री ने हृदय मे ही राखा और अपनी पुत्री को एकांत न्यारे विठायकर सब सुनाय देती भई जब सु

५९

४

५८

६०

पत्री का कथ
नजो थसो

मतीने माताके मुखसे पुनर्विवाह का प्रसंग सुना तब
हृदयमे परम व्याकुल होयकरके रोदन करकर कहने ल
गी किहे जननी मै दूसरा पती कदाचित ग्रहण नहीं क
रूंगी और अपनी निस कलंक कुलको ऐसा अयोग
कलंक नहीं लगाऊंगी घरमे बैठ कर तप करूंगी और
अतथी साधु ब्रह्मणों की सेवा मे रात्रीदिन लगी रहूंगी
हेमाता मै तुमारी कृपा से उत्तम ब्रतके धारने वाली हूं
ऐसा अयोग्य करम कैसे सहार सकती हूं ऐसे पुत्रीका
कथन सुनकर माता जो है सो मौन होयगई और थोड़ी
वेरके पीछे फिर कहने लगी किहे पुत्री जो तू हृदयमे अ
नहित जानकरके इस वारता को ग्रहण नहीं करेगी तो
इह तेरा पिता जो है सो कोप के वश भया हुआ शुभदिन
देखकरके जोरावरी भी तेरा विवाह करायदेवेगा ॥
४॥ चौपाई ॥ सुनत सुमती कथन महतारी॥ कहत ज
ननि मोहि सपत तुमारी॥ अस तुम करहु कबहुं बरि
जोरा॥ तो इह सत्य धरम प्रण मोरा॥ भीमा सरित बूड़ि
जँमर हौं॥ मातु विलंब छिनक नहिं करहौं॥ अस जब
सुता वचन सुनि पावा॥ उपजा सोच भीत उरछावा॥
पिति पें आय मननँ मुख लागी॥ प्राणनाथ हठ देहु तया
गी॥ बलातकार कबहु तुम कीना॥ इह विवाहनि जस सु
ता नवीना॥ तो इह मरहि बूड़ि जल जाई॥ प्राणनाथ
तुव चरन दुहाई॥ वामदेव सुनि प्रीय कर वानी॥ सुता
विवाह अगम जीय जानी॥ भयो न वृत्त भीत वस हो
ई॥ सुनँ सुमती शोक दुख खोई॥ दिनदिन हरष प्रे
म सरसाती॥ जननि जनक निज सेवन राती॥ अत
थी विप्र संत सुम चारी॥ आवत नगर देखि ब्रत
धारी॥ तिन पें जाय भक्तिरस पागी॥ करत विविध
सेवन अनुरागी॥ एक समय तजि सदन सिधारी॥
धरत सीस घट ल्यावन वारी॥ माघ मासँ बारद
नभ छाये॥ बरषत गरज गरज तत आये॥ भीमा
सरित निकट जब आई॥ पह्यो पकत व पथकदि
खोई॥ अंध कुप्प मारग विसराना॥ वरषावि कल

से कपट छल सब त्यागकर रात्रीदिन साध ब्रह्मणों की सेवा किया कर आजतें लेकर जो साध संत और अतथी ब्रह्मण भीमा नदी पर आपणा हमारे घर मे आवें तू तिंन की प्रीती भक्ती और सनमान से धन वस्त्र इत्यादि करके पूजन सेवन जो है सो किया कर इससे तेरा निश्चय करके भला हो जावेगा हे प्यारी तेरे को बारंबार एही कहता हूं कि सदेव संतों के चरनो मे सनेह और प्रीती कर और मे भी नित्य भीमा नदी के किनारे पर जाय करके अन्न वस्त्र धन इत्यादि से भक्तीपूर्वक साध ब्रह्मणों की सेवा करता हूं इस प्रकार दोनो स्त्रीमरता हृदय मे बड़ा सुंदर धरम विचार करके रात्रीदिन अतथी ब्रह्मण और संत जो है तिन मे ततपर हो जाते भये तब संत भक्तों की सेवा के प्रभाव से थोरे ही काल मे तिन के घर विखें सरब दुख और कलेशों के नास करने वाली कन्या जो है सो उतपन्न होती भई तिस को देख करके परम हरख के वश भये हूये मात पिता परस्पर कहते हैं कि आज हमारे मन की अभिलाखा पूर्ण होय गई है अतथी संत ब्रह्मणों की सेवा का सुंदर फल जो है सो हमने प्रतक्ष पाय लिया है जो इह सरब गुणों की निधी कन्या हमारे घर मे आय गई है॥ इ॥ चौपाई॥ अस प्रकार दंपति सुख माखा॥ चारुसुमती नाम तहि राखा॥ अवसर पाय शील गुण धन्या॥ जुवा वेस कछु भई सु कन्या॥ वामदेव तव हृदय विचारी॥ मदनवीन इक बाल निहारी॥ सदिन जानि उर प्रीति न थोरी॥ दीन्यो तासु विवाह किशोरी॥ जामातहि पुनि पालन हेतू॥ वामदेव उर हरखि निकेतू॥ राखि ल्यो सुत सम नेह बढाई॥ बढत भयो बालक सुख पाई॥ अस प्रकार निज सदन सुहाये॥ दम्पति वसहिं हरख सरसाये॥ विप्र संत सेवा सुखदाई॥ दिन दिन करहिं भक्ति अधिकाई॥ जब तो के कछु काल विहाता॥ रह्यो जवन

चरित्र

भक्तमाल

७५ भक्तिप्रकाश

प्रापत होती भई और रात्री दिन अपने माता की आज्ञा अनुसार होय कर अतथी संत ब्रह्मणों की सेवा जो है सो जहां तहां जाय करके भक्ती प्रीती से भली प्रकार करने लगी एक समय माघ महीने मैं अत्यंत बड़ी जोर वरषा होय रही थी सो घर से घड़ा ले करके जल ल्यावने के वास्ते जो गई तो भीमा नदी के निकट क्या देखती है कि एक अंधा और शरीर बड़ा दुबला वरषा करके व्याकुल हाथ मैं देह धारे हूये सीत से थरथर कांपता और रसते से भूला हूआ ~~[struck out]~~ बड़ा उत्तम ब्रह्मण और भगवान का दृढ भक्त जो है कुल जाति कुछ भी ऐसे कहता हूआ और प्राण कं ठ गत भये हूये परम कलेश को प्रापत होय रहा है तो वह सुमती तिस अंध ब्रह्म की ऐसी दशा देख कर रो म होम दया के वश होजाती भई और रहित की भरी हूई वाणी से नम्र होय कर कहने लगी कि हे ब्रह्म ण जो तुम हमारे घर मैं चलो तो मै तुम को ले च लती और तुमारे शरीर का दुख कलेश भी सब दूर करती हूं क्योंकि तुम को सीत के वश व्याकुल और दुखी देख कर मेरे हृदय मै अत्यंत दया उतप न्न भई है हे ब्रह्मण मै शूद्र जाती ~~और~~ इसी नगर मै वास करने वाली हूं और मन वचन काया कर के संत भक्तों के चरणों की दासी हूं मेरा पिता जो है सो तुमारा भक्त है रात्री दिन साध संतों की से वा मै लीन रहता है सो तुमारा प्रीती पूर्वक भली प्रकार सब पूजन सेवन करेगा ऐसे अंध ब्रह्म ण जो है ~~[illegible]~~ सो परम सुखदायक वचन सुन करके सीत के वश कांपता हूआ दुखी और दीन होय करके कहने लगा हे सुशीले हे उदा र हे उपकार की निधी अब जहां तेरे मन की रुची होती है तहां ले चल मै दीन बल हीन ने त्रों से अंध और सीत करके व्याकुल मरने पर्यंत

होय रहा है कृपा करके मेरे पर जीवदान का उपका
र कर और हे हित की मूरती मेरे प्राणों की रक्षा कर॥
५॥ चौपाई॥ असप्रकार जब विप्र बखाना॥ सुनत सु
मती हरष सुख माना॥ तुरत ही नदुज पीठ उठा
ई॥ ल्याई भवन वेग अस पाई॥ [struck] कर
त प्रचंड अनल दुज काया॥ सान कूल निज करन
सुखाया॥ विप्र सीत जब [illegible] भयो विनासा॥ तब भोज
न फल मूल अवासा॥ अति अनंद जुत तासु जिमाई॥ सु
खद सेज पुनि सयन कराई॥ पाछे आप मुदित मन
होई॥ जाय समीप मातु निज सोई॥ विगत रयन जब
भयो विहाना॥ अकाल वरषि बादर विथुराना॥ विम
ल व्योम रवि भयो प्रकासा॥ उठे विप्र उर पूरि हुला
सा॥ हे वतसे गुण सील निधानी॥ सुनहु सुमती
ती मनत मृदु बानी॥ मोपें जनक सहित तुव आई॥
सुनि भाषण पुनि जाहु पराई॥ मै आपं नपथ चल्यो
सिधारी॥ विप्र बचन अस सुनत कुमारी॥ जाय
जनक सन भन्यो अभेवा॥ जथा कीन दुज वर नि
सि सेवा॥ लिये संग पुनि वेग सिधाई॥ अथ वि
प्र पें प्रमुदित आई॥ पितु जुत नम्र बचन सुख बर
ना॥ कियो प्रणाम विप्र वर चरना॥ बहुरि कहत
जुग जोरत पानी॥ दीन नाथ सासन तुव मानी॥
जनक मोर इहसन मुख ठाढा॥ प्रभु प्रसाद अभि
लाषत गाढा॥ गिरा सुमती सुनत दुज नीके॥ ता
स भक्ति वश व्याकुल जीके॥ अति प्रसन्न मानस
अनुरागा॥ देन असीस बाद बहु लागा॥ हे पुत्री
गुण सील निधानी॥ हे हरि भक्ति निपुण जग जानी॥
तहां सीत अवसर मम प्राना॥ जे तुव राखि किये
सनमाना॥ सो उपकार तुमार सुहावा॥ रोम रोम
मोरे वपु छावा॥ अरु तुमार सेवन सतकारा॥ सो
सुशील किमि बिसरन हारा॥ तो ते मै प्रसन्न मन

देवी॥ भक्तिप्रवीन सेत पदसेवी॥ तोरे देउँ रुचिरवर एहू॥ उपजहिं पुत्र ललित तुव गेहू॥ वामदेव सुनि द्विजवर वानी॥ अतिअनहित निज मानस मानी॥ करि प्रणाम विनती अस कीना॥ नाथ तुम हूं अनुचित वर दीना॥ विधवा सुता मोर प्रभु राहा॥ इहि न कीन निज पुन विवाहा॥ किमि सुत उपज सदन इहि केरो॥ मिथ्या होहि वचन द्विज तेरो॥ सोरठा॥ अधविप्र सुनि कान॥ वामदेव कर वचन अस॥ अति कलेस जियमान॥ निजवरकर सोचितगती॥ ६॥ टीका॥ इस प्रकार जव ब्रह्मणा ने कहा तव सुमती वडी प्रसन्न होय करके तिसको पीठ पर उठायकर वडे प्रेम और यतन से घर में ले आवती भई अति हो प्रीतीपूर्वक आगनी जगाय कर और तिसको भली प्रकार सिकाय कर वर्षा के भीगे हुये वस्त्र जो थे सो अपने हाथों से सव सुकाय लेती भई ऐसे जव अघ ब्राह्मण सीत से निवृत्त भया और स्वस्थ चित होयगया तव कंदमूल और फल इत्यादि सुंदर भोजन कराय कर और कोमल सेजा विछाय कर सुख पूर्वक सयन कराय दिया तव मरदन चापन ~~[illegible]~~ सेवकाई ~~[illegible]~~ इत्यादि जो है सो सव करकर फिर सुखी होय करके आनंद से अपने माता पिता के पास सोय रही ऐसे जव रात वतीत होयगई और प्रातकाल भया तव वादल उडकर के आकाश जो है सो निरमल होयगया ब्रह्मणा उठकर के सुमती को पुकारने लगा कि हे गुणों और सीलता की नधी हे भक्ती व्रत के धारने वाली पुत्री अव तूं अपने पिता को साथ लेकर मेरे पास आ और इहां मेरा कुछ कथन सुनकर फिर चली जा क्योंकि मे अव अपने मारग

दुखित मुरछाना॥ कंपमान कर देउ धरायन॥ विप्रसु मृहरि भक्ति परायन॥ ञादि कुसम अस वदन उचारत॥ व्याकुल प्राण कंठगत आरत॥ तासु देखि दाया रस पागी॥ सील सुमती मनन असलागी॥ जोदुजवर तुव चलहु हमारे॥ मै कलेस वपु हरहु तुमारे॥ [illegible] इह तुव देखि सीत वस काया॥ उपजी हृदय मोर दुजदाया॥ सूद्र जाति मै नगर निवासी॥ मन वच कायसंत पद दासी॥ जनक मोर तुव भक्त प्रवीना॥ संत चरन सेवन मनलीना॥ सो तुव करहिं विप्र मनलाई॥ सादिर सुचि पूजन सेवकाई॥ सुनि दुज अध वचन सुखदाता॥ दुखित सीत वस कंपत गाता॥ परम दीन वत गिरा उचारी॥ तुव उदार उपकार विचारी॥ सोरठा॥ अव जस रुची तुमार॥ तस मोरे लैचलहु तुव॥ जीवदान उपकार॥ मोपें करहु दया निधी॥ ४॥ टीका॥ तव सुमती जो है सो माता का वचन सुनकर कहने लगी कि हे जननी मेरे को तुमारी ही सपत अर्थात सुगंद है कि जो तुम कवी जोरा वरी से ऐसा [illegible] अधरम करोगे तो मेरा सत्य प्रण है कि मै भीमा नदी [illegible] पर जायकरके ततकाल डूव मरूंगी इसमे कुछ संशय नहीं है ऐसे जव पुत्री का कथन सुना [illegible] तव माता चिंता और सोच केवश डरती हुई पती के पास आय करके कहने लगी कि हे प्राणनाथ इह पुत्री के विवाह का हठ जो है सो त्याग देवो और जो कवी तुम जोरा वरी से [illegible] कारज करोगे तो मैं आपके चरनो की दुहाई [illegible] करती हूं कि वे कन्या तुरतही जल मे डूव करके मर जावेगी मै सत्य कहती हूं तव वामदेव सुन करके पुत्री का विवाह अगम जान कर तिस के मरने से डर [illegible] मोन ही होय गया विवाह का फिर नाम न ही लेता भया तव सुमती दुख शोक से रहित होय कर परम हरख को

६७० ११०

गिरा उचारी॥ सुनहु भक्तवर बात हमारी॥ मोर असी
रबाद इह जोई॥ फुरहिं वृथा कबहु न हि होई॥ इ
हि के श्रीगोविंद प्रसादू॥ उपजहिं अवसि भक्त सुत सा
धू॥ अब निज सत्य वचन हित माई॥ भैमी भासरिता
तट जाई॥ गतिअनन्न संजुत व्रत साधन॥ करहु हेत चिर
भगवान अराधन॥ सो कृपाल प्रभु भक्त सनेही॥ करि
है सत्य वचन मम एही॥ अस कहि दुज सरिता त
ट जाई॥ बैठिगयो आसन दृढ लाई॥ लग्यो करन अ
सतुति भगवाना॥ परिहरि सकल अन्न जल पाना॥ सी
त आतप वपु खेद सहयो॥ उर संकल्प मरन अस धा
रयो॥ जो न फुरहिं मोरी इह कामा॥ तो मै तजहु तु
रत निज प्राना॥ अस प्रकार बहु दिवस बिताया॥ तृ
ध्या तिखा बिबस अकुलाया॥ एक दिवस निद्रा रत
होई॥ देखत भयो स्वपन दुज सोई॥ श्री भगवा
न भक्त भय हारी॥ पीत वसन उर बन स्रज धारी॥
पूरण दसो दिसन छबि जासा॥ मकराकृत कुंडल कर
ने प्रकासा॥ हाटक क्रीट खचित मणि मारू॥ खोर
लिलाट चोरचित चारू॥ मरकत नील नीरधर का
या॥ कोटि मदन छबि देखि लजाया॥ अस कृपा
ल भय भक्त विधंसे॥ हरन दोख दारिद दुख संसे॥ बो
ले बदन वचन भव तारन॥ पावा विप्र खेद कहि का
रन॥ सोरठा॥ कवन मनोरथ तोहि॥ परिहरि बे
गबिलंब अब॥ करहु प्रकट दुज मोहि॥ मै अभिष्ट
फुर करहु तुव॥ ७१॥ ऐसे सोच कर कर फिर अंध
ब्रह्मन को कहने लगा कि हे भक्त तूं सत्य कर के जान
इह मेरा अशीरवाद जो है सो फुर होवेगा अर्थात सत्य
होवेगा कभी वृथा नही जावेगा इस तेरी कन्या
के उदर मे श्री गोविंददेव की कृपा से अवश्य कर के
भगवान का भक्त और सरब गुण निधान साधू पुत्र
जो है सो उतपन्न होवेगा मै अब भीमा नदी के
किनारे पर जाय कर अपने वचन के सत्य करने

को इकाग्रचित होयकरके बडे दृढव्रत और साधन से
भगवान कृपानिधान का आराधन करता है सो दीनहि
तकारी और भक्त सनेही भगवान मेरे इस वचन को अव
श्य करके सत्य करेंगे ऐसे कथन करके ब्राह्मण जो है
सो भीमा नदी के किनारे पर दृढ आसन जमायकर
के बैठ जाता भया और अन्न जल इत्यादि खान पान
सब त्याग कर ~~भगवान की सुंदर असतुती जो है सो कर~~
ने लगा धूप घाम और सीत पवन का नाना कलेश दु
ख सहार कर हृदय मे ऐसा प्रण धार लेता भया कि जो
मेरा वचन सत्य नहीं होगा तो मे तुरत ई होंही प्रा
णों को त्याग दऊंगा इस प्रकार जब तिस को भूखे प
यासे कलेश पावते को बहुत दिन बतीत होय गये
तब एक दिन निद्रा मे लीन भया हुआ सो श्रेष्ठ ब्राह्मण
७२ सुंदर स्वपन जो है सो देखता भया कि भगवान कृपानि
धान भक्तों का भय दूर करने वाली पीत वस्त्र और
तुलसी की माला धारे हुये और जिन की सुंदर छवी
करके दसो दिसा ही परिपूर्ण होय रही हैं तैसे ही का
नो मे बडे प्रकाशमान मकराकृत कुंडल और दि
व्य मणियों करके खचित सीसपर कंचन का मुकट
तैसे ही मुनीजनों के मन को कुछ मोहित करनेवा
ला माथे मे चंदन का तिलक नील मणी और नी
ले बादर कमल के समान शरीर की सुंदर शोभा कि
जिस को देख करके कोटि कामदेव भी लज्जा को प्राप
त हो जाता है ऐसे भक्तजनों के भय कलेश और
दोषदारिद्रों के दूर करने वाले भगवान स्वपने मे
प्रसन्न होयकरके तिस श्रेष्ठ ब्राह्मण को कहते हैं कि
हे भक्त तैने कौन कारन इतना कलेश पाया है अब
विलंब को त्याग कर अपने हृदय का मनोर्थ जो है
सो प्रकट कर मे अबी तेरी मन वांछित कामना
पूरण करूंगा॥७॥ चौपाई॥ सुनत विप्र नारायण
बानी॥ मंजुल मधुर अमियरस सानी॥ गदगद

गिरा हरष बस होई ॥ मन्योमनोरथ आवँ जोई ॥ तासु जोचना सुनत अगारी ॥ उठहु विप्र अस गिरा उचारी ॥ मम प्रसाद तोहि कुसल सदा ही ॥ पावहु मन वांछित फल काही ॥ तुव प्रतीति हित दुज गुन गेहू ॥ करहु चरित मे अदभुत एहू ॥ जे तुव अंध नयँ दृह दोही ॥ भोर हिं विमल जोति जुत होही ॥ तो जनिहु तुव विप्र सुकरमा ॥ तांके होहि पुत्र रत धरमा ॥ सपने हुं मोर चरित पति तासु ॥ तजिहु न करहिं मनो ज विलासु ॥ तो सुत महो भक्त हरि केरा ॥ उपजहिं ता सु वचन दुज मेरा ॥ भाषहि नगर लोग नर नारी ॥ जो तांके कवहुं कि विभचारी ॥ सो अस वचन जव न मुख ल्यावहिं ॥ होवहि अंध कुष्ट राजरुज पावहि ॥ अस कहि रमानाथ निज गय यो ॥ निद्रा स्वपन विगत दुज भय यो ॥ दोहा ॥ सम्भ्रम विसमय हरष वस ॥ विथत चित होय ॥ कहत कवन फल होत इहि स्वपन विलोको जोय ॥ २ ॥ टीका ॥ औ से अंध ब्रह्मण वडी सुंदर मीठी मानो अमृत रस की भीजी हुई भगवान की वानी सुन कर हरष से गदगद वचन भया हुआ अर्थात कोई वचन मुख से निकलता कोई नहीं निकलता अपना मनोर्थ जो है सो कथन कर देता भया तव भगवान तिस की याचना कि जो मांगा था सो सुन कर के आनंद से कहने लगे कि हे ब्रह्मण अव उठो मेरी कृपा के प्रसाद से तेरे को सदैव कल्यान ही है और तूं अपने मन वांछित फल को पावेगा अव है तेरे निश्चय के लिये मे एक चमतकार दिखावता हूं कि प्रात काल होते ही तेरे दोनो अंध नेत्र जो हैं सो सुंदर जोती के सहित निरमल हो जावेंगे तव तुम ने जान लेना कि मेरी मनोर्थ सिद्ध होय गया है वाम देव की कन्या के साथ तिस का पती जो है सो आप

को जाने वाला हूं तब सुमती सुन कर के पिता सों जाय
कर रात्री के समय जिस प्रकार अंध ब्राह्मण का सेवन
सतकार किया था सो सब वृतांत सुनाय देती भई और
फिर पिता को साथ लेकर के तहां ब्राह्मण के पास आय
कर चरनो पर प्रणाम किया और नम्र वाणी से विनती
करने लगी कि हे प्रभू तुमारी आज्ञा के अनुसार इह मे
रा पिता जो है सो आय करके आप के सनमुख स्थित
भया है और नाथ तुमारी कृपा प्रसाद के पावने की
अभिलाषा वाला होय रहा है ऐसे सुमती की बानी
सुनकर तिसकी भक्ती के वश व्याकुल भया हूआ
ब्राह्मण वडी कुसल और आसीरवाद के वचन सुना
यकर कहने लगा कि हे सीलता और गुणों की निधी
हे भगवान की भै प्रवीन पुत्री तैने जो तहां सीत काल
विखें नाना सेवन सतकार करके मेरे प्राणों को रा
ख लिया है हे सुभ ब्रे अर्थात हे कल्यान की मूरती सो
तेरा अनंत उपकार मेरे शरीर के रोम रोम मे छा
यत होय रहा है और तेरी पवित्र भक्ती प्रीती सिव
काई जो है सो पुत्री मेरे हृदय से क्योंकर विसरने वा
ली है तो ते हे देवी हे संत भक्तों की सेवा मे प्रवीन मै प्र
सन्न होय करके तेरे को एही वर देता हूं कि तेरे घर मे
वडा सुंदर और सरव गुणों की निधी पुत्र जो है
सो उतपन होवे जब इस प्रकार ब्राह्मण ने वर दिया
तब वाम देव हृदय मे अनहित जान कर वडा पछ
ताय कर प्रणाम करके विनती करने लगा कि हे नाथ
पुत्री को आप ने इह कैसा अयोग्य वर दे दिया है कृपा
नि सो तो बाल विधवा रही पुनर विवाह नहीं किया
है इसके घर कैसे पुत्र होवेगा हे प्रभू तुमारा वचन
जगत मे असत्य हो जावेगा इस प्रकार वाम देव
का वचन सुनकर अंध ब्राह्मण जो है सो वडी चिंता
और शोक के वश होय कर अपने वर की गती को
कि अब कैसे होगा हृदय मे अनेक सोच और विचार
करने लगा ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ वहुरि वदन अ स

विवरण जननि तहि देखी॥ संजुत प्रीति सनेह वसे
खी॥ मृदु लालन मुख वचन उचारी॥ सुनहु सुता मम प्रा
ण पयारी॥ कवन हेतु व्याकुल तुव होई॥ मन हु मनो
रथ आपन जोई॥ सुनत सुमती वचन महतारी॥ भन्यो
वृतांत स्वपन निसि सारी॥ मातु सु
नत भाखत सुखमानी॥ सुता सत्य भई दुज वरबानी॥
सुमती सुनत जननि मुख सोई॥ मोदनि मगण स्वस्थ
चित होई॥ देव रजाय सीस धरि लीना॥ गई भवन नि
ज रुचिर प्रवीना॥ अतथी सेत विप्र वर सेवा॥ लगी
करन जुत प्रीति अभेवा॥ असप्रकार षट चतुर ष
मासा॥ करत करत जव तासु विता सा॥ सोरठा॥
एक दिवस तव होय॥ अंत भाग निसि लगन सुभ
ललित महूरत जोय॥ तामध सुत जनमत भई॥
९॥ टीका॥ इसप्रकार तिस ब्रह्मण को सोचते सो
चतें रात वतीत होय गई और प्रातकाल हो जा
ता भया तव तिसके दोनो नेत्र सुंदर जोती प्रकाश के सहि
त होय कर ज्यों के त्यों निरमल होय गये इस अदभु
त को देखकर और रात्री के स्वपन को सत्य जान कर
पृथवी पर सीस धर कर भगवान कृपा निधान के
चरनो को वारवार वंदना करने लगा और फिर आनं
द मै मगन भया हुआ वामदेव के घर मै आय कर स्व
पने का वृतांत और अपने नेत्रों की जोती प्रकाश इ
त्यादि सव मधुर वाणी से सुना
य कर कहने लगा कि हे भइभागी अव भगवान
के वचन से तेरी कन्या के घर मै अवश्य करके पु
त्र उतपन्न होवेगा तव वामदेव ब्रह्मण की वा
नी सुन कर कुछ हरष और कुछ सोच के वश
भया हुआ भगवान की सुंदर मूरती जो है सो घर मै
राख कर रात्रीदिन भक्ती प्रीती से पूजन सेवन क
रने लगा इसप्रकार जव कुछ काल वतीत हो
य गया तव सील और गुणों की निधी सुमती जो

है सो अपने पती के द्वारा गरभ धार कर प्रातकाल हो
ते जब उठी तब उदर मे गरभ का लच्छन देखकर के हृदय
मे चिंता करके व्याकुल होय गई और कहती है कि हे देव
अब मेरी कौन गती होवेगी ऐसे तिसको चिंता के व
श उदासीन देखकर माता बडे लाड प्यार और प्रीती के
वचनो से कहती है कि हे प्राणप्यारी पुत्री तूं कौन कलेश
को मान कर हृदय मे ऐसी व्याकुल और उदासीन हो
य रही है अपने हृदय का मनोर्थ जो है सो मेरे को प्र
कट करके कहो मै तिसका यतन करती हूं तब
माता का वचन सुनकर के सुमती ने जिस प्रकार रात्री के समय
स्वपने मे पती के साथ संगम भया था सो सब वृतांत सुना
य दिया माता सुनकर के कहने लगी कि हे पुत्री देखो ब्रह्मण
का कथन सब सत्य ही भया है ऐसे माता के मुख से वचन
सुनकर सुमती प्रसन्न होय करके स्वस्थ चित हो जाती भई
और देव भावी को सीस पर धारन करके आनंद पूर्वक घर
मे वास करती हुई श्री भक्तों से रात्री दिन अत यी
संत भक्तों की सेवा करने लगी ऐसे जब संत भ
क्तों की सेवा करती को दस महीने वतीत होय गये
तब एक दिन रात्री के अंत भाग अर्थात पिछले
पहर मै सुभ लगन और सुंदर महूरत विषे सुमती
जो है सो बडा दिव्य स्वरूप पुत्र जनमती भई॥
चौपाई॥ पुत्र जनम ~~[illegible]~~ सुनि श्रवन सु
हावा॥ हरष्यो वामदेव सुख पावा॥ द्विज वर व
चन सत्य जिय जाना॥ निज भामनि सन वचन व
खाना॥ नामदेव इहि नाम सुहावा॥ पुत्री सुवन
पुत्र बुध गावा॥ अप रोहित पुनि बोलि मंगावा॥
तासु वृतांत सकल समुझावा॥ वेगि जाहु सुधि
जन पें भाई॥ सुत कर सकल दोष गुन पाई॥
आय मोहि तुव विप्र जनावहु॥ धावहु सपदि वि
लम नहिं लावहु॥ मति प्रवीन हित जानि हमारा॥ पूछि मलहिं संजुत सत कारा॥ जिमि

जिमि परयो जनम गृह होई॥ मो रे कहहु कथन न तुव सोई॥ वामदेव सा सुन अस पाई॥ आप रोहि त द्रुत चल्यो सिधाई॥ तिन पै जाय मरम समुझा वा॥ वामदेव तनया सुत जावा॥ तासु दोष गुन लोक हु विचारी॥ जथा जनम गृह मल्लहि बिहारी॥ ता स कथन सुनि पंडित बृंदा॥ लागे करन सकल मुख निंदा॥ विधवा सुता तासु सुत जायो॥ इह अनुचित दुज हम हु न भायो॥ विहसि कहत सब ज्ञाति बराई॥ कवन अधम मुख गाय सुनाई॥ और इहु रहे जबन दुजजा री॥ कहत सु सकल बदन विभचारी॥ काहु सुनत का नन निज एहा॥ आये वामदेव कर गेहा॥ लागे करन हरष सरसाये॥ उतसव गान विविध मन भाये॥ मागध सूत दुजन कहे नाना॥ ~~[illegible]~~ उ चित वसन वित दाना॥ वामदेव प्रमुदित मन दीना॥ नारायण पूजन पुनि कीना॥ तब बांधव स जान जुत सारी॥ सकल जन मनिज हृदय विचारी॥ चरन कंज भगवन सुखदाई॥ दिन दिन उपजि प्रीति अधिकाई॥ वामदेव इह चरित सुहावा॥ मैं निज बदन यथा मति गावा॥ दोहा॥ नामदेव कर भक्ति अब करहुं कथन सुखदान॥ ललित रसिक पावन कथा सुनहु संत धर कान॥ ९०॥ टीका॥

तब पुत्र का जनम सुन करके वामदेव बड़े हरष और सुख को प्रापत होता भया ब्रह्मण का वचन सत्य जान कर अपनी स्त्री को कहने लगा कि हे प्यारी इस बालक का नाम मैं ने नामदेव राखा है पुत्री का पुत्र भी अपना पुत्र ही होता है ऐसे ~~[illegible]~~ कथन करके फिर अपने हित को बुलाय कर कहता भया कि तुम अब जोतसी जनों के पास जावो और मेरी ओर से प्रार्थना कर कर इस बालक के गुण दोष और जनम गृह भली प्रकार स

कर के ऐसे मैरति विलास करेगा तिससें तिस कन्या
के उदर मे भगवान का परम भक्त और सर्व गुणों की
निधी पुत्र जो है सो उतपन्न होवेगा इसमे कुछ
संशय नहीं है इस मेरा वचन सत्य करके है और बा
लक के उतपन्न होने से जो कवी नगर के लोग तिस क
न्या को विभचार का दोष लगावेंगे तो जो स्त्री अथ
वा पुरष इस वचन नें मुख मे ल्यावेंगे सो मेरे वचन
से नेत्रों करके अंध और शरीर के कुष्टी होय कर
जगत मे परम दुख को प्राप्त होवेंगे ऐसे कथन कर
के रमा जो लक्ष्मी है तिसके पती भगवान अपने आ
नंद धाम को चले जाते भये और वह ब्राह्मण भी निद्रा स्वप
ने से जाग उठता भया तब मन में कुछ हरष और
कुछ अचरज के वश व्याकुल भया हुआ हृदय मे
विचार करता है कि देखिये इस रात्री को स्वपन जो भया
है इसका अब क्या फल प्रकट होता है ॥ ८ ॥ चौपाई ॥
अस प्रकार कलपत उर ताहा ॥ बिती रयन जब भोर
प्रकासा ॥ बिमल नयन जुग जोति प्रकास्यो ॥ देखि
विप्रवर हृदय हुलास्यो ॥ सत्य जानि प्रभु स्वपन उच
रना ॥ करत प्रणाम सीस धरि धरना ॥ आयो वामदे
व कर गेहा ॥ ठाढे हरष लोम सब देहा ॥ स्वपन वृ
तांत जोति [illegible] नयना ॥ द्विजवर भन्यो वदन मृदु
वयना ॥ सुता तुमार अवसि गुन खीना ॥ जनम
हिं पुत्र वचन भगवाना ॥ वामदेव सुनि द्विजवर वानी ॥
कछुक प्रसन्न सोच कछु मानी ॥ कृष्ण देव मूरति मन
भावन ॥ करत स्थापित भवन सुहावन ॥ पूजन कर
हिं हरष सरसाई ॥ सादिर सुचि नैवेद लगाई ॥ अस प्र
कार कछु काल विहाया ॥ [illegible] सील सुमती ग
रभ सुखदाया ॥ निज पति [illegible] तें सपने निसि धारी ॥
उठी प्रात सुंदर व्रतकारी ॥ देखि सुल [illegible] गरभ क
छु सोई ॥ विकल सोच चिंता वश होई ॥ अब कस होहिं
देव गति मोरी ॥ लाज संकोच सोच नहीं थोरी ॥ दसा

क्त रुचिर सुत जावा॥ राखो नाम देव तहि नामा॥ रूप नि
धान सील गुण धामा॥ दिन दिन बढत भयो जब सोई॥ धू
लि केलि तत पर तब होई॥ मृतकाले तप्रेम सरसाई॥ ना
रायण मूरति चिर चाई॥ पूजन करत संग सिसु लीने॥
हरि पद नलिन चारु चित दीने॥ अस प्रकार मृदु प्रेम
क सोई॥ दिन दिन बाल केलि रत होई॥ भयो सु चेत ज्ञात
कछु आवा॥ वामदेव मन हरष अघावा॥ भनि भनि
मधुर तोतरी बानी॥ करत रहत लालन सुख
मानी॥ एक दिवस कहुं कारज हेतू॥ वामदेव तजि
गयो निकेतू॥ सिसु कहं बदन प्रबोधन कीना॥ मैं आ
वहुं पाछिले दिन तीना॥ तुव सुत सदन काज समु
दाई॥ करि हौ सावधान मन लाई॥ प्रथम प्रात उठि
सौं अन काहीं॥ हरषि करहु दूहन गृह माहीं॥ करि स
नान पावन पुनि होई॥ हरि मूरति सुखदायक जोई॥ ता
सु दुगध सुत पान कराई॥ फिर पावहु भोजन तुव जाई॥
अरभक सुनत कीन सुई कारा॥ वामदेव तब ग्राम
सिधारा॥ दूसर दिवस प्रात सिसु जागा॥ करि दूहन गै
यन अनुरागा॥ पावन पात्र दुगध कछु पाई॥ लै जुत
भक्ति भवन हरि ल्याई॥ करि प्रणाम जुग जोरत पा
नी॥ लाग्यो भनन नम्र मृदु बानी॥ दीन नाथ प्रभु दी
नन बंधू॥ कीजिये पान दुगध सुखकंदू॥ मातामहें
सासना दीना॥ मै सब काज आज गृह कीना॥ आपु
गयो सो ग्राम सिधारी॥ नामदेव अस गिरा उचारी॥
हरि मूरति सनमुख तहि ठाढा॥ दुगध पात्र मान
समुद बाढा॥ सो न पियत मुख सन बहु बारा॥ जो
रि जोरि अस विनय उचारा॥ कीजिये कृपा सिंधु
अब पाना॥ पिया न जब मूरति भगवाना॥ सोरठा॥ तब जिय गुनत प्रबीन॥ लग्यो भनन रहदुग
धमें॥ मान्यो सित वहीन॥ जहि तें कीन न पान
प्रभू॥ ११॥ जब वामदेव की कन्या ने सब गुण
निधान और भगवान का भक्त पुत्र जो है सो जनमा

श्री सत्य। ८

तव बालक का नाना जो था सो तिसका नाम जग तमें नामदेव राखता भया ऐसा रूपसील और गुणों की निधी बालक था सो दिनदिन बृद्धी को प्राप्त होने लगा अर्थात बढ़ता जाने लगा बालकों के साथ धूरी में खेलना और मृतका जो माटी है सो लेकर के तिसकी बड़ी सुंदर भगवान की मूरती बनाना और सब बालकों के सहित भक्ती प्रीती में तिन मूरतियों का पूजन करना और भगवान के चरन कमलों में चित्तका लगाना रात्रीदिन तिसका इसी में प्रेम रहता था इस प्रकार सो बालक दिन पायकर के कुछ सयाना होता आया और नित्त अपने नाने के साथ तोतरे से मधुर मधुर वचन बोलकर बड़े लाड प्यार से परचा रहता था एकदिन नामदेव किसी कारज के वास्ते बाहिर कहीं ग्राम में जो चला गया तो बालक को ऐसे समुझाय गया कि पुत्र मेरे को तहां तीन दिन लगेंगे पीछे घरका सब काम तुमने हीं करना होगा ऐसे करना कि प्रातःकाल उठना और प्रथम गोअन को दूह लेना फिर स्नान कर के और भली प्रकार पवित्र होय करके भगवान की मूरती को प्रीती भक्ती से जाय कर दूध का नैवेद लगाना इस प्रकार सब कार्ज कर के पीछे फिर घर में जाय कर के आप भोजन पाय लेना बालक ने तिसका वचन सुन कर के कहा कि मैं ऐसे हीं करूंगा जब नामदेव बाहिर ग्राम को चला गया और इहां दूसरे दिन नामदेव बालक प्रातःकाल उठकर के गोअन को चोय कर और एक पवित्र पात्र मे कुछ दूध पाय कर के बड़े आनंद मनमाने से भगवान के भवन मे ले गया तहां प्रणाम करके दोनो हाथ जोड़ कर बड़ी नम्र और दीन बाणी से बिनती करने लगा कि हे दीनानाथ इह दूध जो है सो कृपा करके पान करि

ये मेरे को मातामहा अर्थात नानाजी की आज्ञा म ई थी सो मैंने आज चेरका काम सब आपही किया है वे मेरे नाना कहीं बाहिर ग्राम बिखे गये हुये हैं ऐसे कथन करके नामदेव सो दूध का पात्र हाथमे लिये हुये सनमुख स्थित होयरहा है परन्तू कृपानिधान नहीं पीवते हैं तब व्याकुल भया हुआ दूधके पात्र को वारवार मुख के सनमुख जोड़कर और अनेक प्रकार विनती करकर कहताहै कि हे दीन बंधू अव दयाकरके इस दुग्ध को पान करिये जवभगवान ने न हीं पिया तव हृदय मे विचार कर कहता है कि अहो मैने जान लिया है इस दूध मे मिसरी नहीं है तिसतें भगवान भक्त सखेदान पान नहीं करते हैं ॥ ११ ॥ चौपाई ॥ अस उर सोचि भवन द्रुत जाई ॥ सिता मिलाय दुग्ध रुचि ल्याई ॥ करि सें जोजन हरि मुख से गा ॥ पीव हु भनत भीत भव मेगा ॥ तव हु न कीन पान गिरधारी ॥ विलखि बाल पुनि विनय उचारी ॥ कवन चूक करुणा निधि मोरी ॥ का कछु सिता दुग्ध भई थोरी ॥ जहिते कीन पान प्रभु नाहीं ॥ लख हु न कवन दोष इहि माहीं ॥ अस कहि वारवार सनमाना ॥ मुख सन दुग्ध भगवाना ॥ पियहु नाथ पुनि कहत उचारी ॥ पियत न दुग्ध दीन दुख हारी ॥ तव सिसु कीन सोच मन माहीं ॥ कृपानाथ मोहि चीनत नाहीं ॥ तहितें करहिं दुग्ध नहिं पाना ॥ नम्र दीन वत वचन वखाना ॥ कृपासिंधु दुख दीन निवारा ॥ मै अनन्य प्रभु दास तुमारा ॥ नामदेव त नया अस जोई ॥ नाम सुमती कहत सव कोई ॥ तो सुत करम वचन मन काया ॥ मे सेवक तु व दीन सहाया ॥ जनमत इहि ने केत सुखदाई ॥ मै कृपाल वृद्धी निज पाई ॥ तुम कहे दीन घाल मे जानें ॥ मोरे कस न तुम हु पहिचाना ॥ अस कहि

श्रुति [margin]

वधू कर फिर श्री घर आय करके मेरेको सब वृतांत सुनाय देजो ऐसे वामदेव की आज्ञा पायकर आप रोहित जो है सो विद्वान जोतसीजनों के पास जाय कर कहने लगा कि वामदेव की कन्या ने आज रात्री के समय पुत्र जनमा है आप कृपाकर के तिस के गुणदोष और जनम ग्रह भली प्रकार देखकर मेरे को जताय देवो जो मै जाय करके वामदेव को सुनाय देऊं क्योंकि मै तिसका भेजा हुआ तुमारे पास आया हूं इस प्रकार आप रोहित का वचन सुनकर सब पंडित जोतसी जो बैठे हुये थे सो वामदेव की बहुत करके निंदा करने लगे और कहने लगे कि देखो अधम की विधवा कन्याने बालक जनमा है इस अनुचित हमारे से कैसे सहारा जाता है उठो ब्रह्मण आप ने घर को चले जावो तुम आय करके हमको किस मंद और विभचारनी की वारता सुनाई है ऐसे सुन कर तहां जितने ब्रह्मण बैठे थे सो सब तिस कन्याको विभचारका दोष लगावते भये और जो जो वामदेव के हितकारी थे सो सुनकरके तिसके घर मे आय कर अनेक प्रकार गायने उतसव करकर परम हरष और सुख को प्रापत होते भये तब वामदेव ने मागद वंदीजनो को अर्थात भाट इत्यादि मांगने वालों को नाना धन वस्त्र दे देकर सबका भली प्रकार परितोष किया और फिर विधी पूर्वक भगवान का पूजन करके सब सज्जन और बांधव जनों के सहित वामदेव जो है सो अपने आपको सफल मानता भया और दिन दिन अधिक करि भगवान कृपानिधान के चरन कमलों मे प्रेम और प्रीती करने लगा इस प्रकार यह वामदेव की सुंदर गाथा जो है सो मैने गायन की है अब आगे नामदेव की भक्ती जैसी क जगत मे प्रसिद्ध है सो कथन करता हूं हे संत जनो आप कान देकर श्रवण करिये ॥ १० ॥ चौपाई ॥ वामदेव तनया मन भावा ॥ जब हरि भ

भक्तमाल
नामदेवजी की कथा है

का

काया करके आप दृढ सेवक हूं हे दीन वंधू इहां इसी
घरमे मेरा जनम भया है और इहां आपके चरनो
मे हीं पला हूं कृपानिधान मे तुम को भली प्रकार
जानता हूं आप मेरे को क्यों नहीं पहिचानते हो
ऐसे विनती करकर दूधका पात्र फिर मुखं जोड कर
र कहने लगा कि हे प्रभू अव कोप को चित्तसे त्यागि
ये और आनंद पूर्वक दूध पान करिये ऐसे ति
स को विनेप्रार्थना करते को दिन जो है सो वतीत
होय गया भगवान की मूरती ने दूध पान नहीं कि
या तब नामदेव फिर हृदयं विचार कर कहता है
कि इसमे अव म्हा मेरा कुछ अपराध है कीतो मे
रा शरीर अपवित्र है किंम्वा इह दूधका पात्र
अपावन है अर्थात पवित्र नहीं है अव तो इह मेरी
भूल होय गई है परन्तु प्राता काल होते आप
ने शरीर को और दूधके पात्र को भलीप्रकार पवि
त्र करके फिर दूध पायकर और गाढी मिसरी मि
लायकर आनंद से कृपासिंधू को पान कराऊंगा
जव लग भगवान दूध पान नहीं करेंगे तव
लग मैने भी प्रण धार लिया है कि आप कुछ खा
न पान कुछ नहीं करहूंगा ऐसा हठ करके ना
मदेव जो है सो भूखा पयासाही जायकर आप
के विसतर पर सोय रहा॥२२॥ चौपाई॥ दसा वि
लोकि तास महतारी॥ वारवार अस कहत उचा
री॥ सुनहु सुती सवन तुं नाना॥ इन हिं दिखा
य दुगध सनमाना॥ करहि आपु भोजन चि
त तूषे॥ इह सुत देव वासना भूखे॥ जदयपि जन
नि विविध समुजावा॥ तदपि तास पाकन हि
पावा॥ विगत रैन जव भयो विहाना॥ नामदे
व उठि कीन सनाना॥ उजल वसंधारि वपु
लीना॥ भगवन भवन मार्जन कीना॥

देत ललित लेपन निज पानी॥ पावन भक्तिप्रीति रस सानी॥ करत बहुरि ■ दूध न गृह गैया॥ राखि अग्र नल पै पाक करैया॥ पावन पात्र पाय पुनि सोई॥ रुचिर करन सम सिता मिलोई॥ कृपानाथ कर मूरति आगे॥ राख्यो जाय प्रेमरस पागे॥ अब तो कर रुपान सुख सीवा॥ भन्यो तास प्रभु नाहिं न पीवा॥ तब उर गुनत इन हि मै जाना॥ रदधावन नहिं कीन सनाना॥ तहि ते पान करत प्रभु नाहीं॥ अस विचारि निज मानस माहीं॥ मज्जन धावन दसन कराई॥ करि सप्रेम पूजन मन लाई॥ बहुरि सुभक्ति प्रीति गुन खोना ■ पाय सुपात्र दुगध हिन माना॥ राखि अग्र मूरति नंदलाला॥ कहँ करिय अब पान कृपाला॥ पीवा तब हु नहिं न उचारी॥ नामदेव तब विनय उचारी॥ महाराज की तेदिन तीना॥ तुम हु न दुगध पान कछु कीना॥ मै तुध्यारत व्याकुल देहा॥ कस न पियहु तुव दीन सनेहा॥ जद्यपि भन्यो विविध गति दीना॥ हरि मूरति पय पान न कीना॥ तब अति दुखित धीर तन त्यागा॥ बाल कवि यत रुदन करि लागा॥ तास कपट गत प्रेम निहारी॥ भये कृपा वस दीन उवारी॥ तुरत नयन जुग चले वहाई॥ आसू पात विकल जदुराई॥ नामदेव तब कहत उचारी॥ तुव रोदन कस करहु मुरारी॥ कीजिये वेग दुगध किन पाना॥ मै न त तजहु ना थ निज प्राना॥ अस कहि बहुरि पात्र मुख जोरा॥ उर उदवेग प्रेम नहिं थोरा॥ भक्ति विलोकि तास भगवाना॥ लागे करन दुगध द्रुत पाना॥ पियत देखि हरि मूरति काहीं॥ हरष्यो नामदेव मन माहीं॥ कहत कृपानकेत सुख कंदू॥ भक्तपाल प्रभु दीनन वंधू॥ का अब सकल पान करि लेहो॥ मोरे न हिन छाडि कछु देहो॥ सोरठा॥ जो कछु शेष

तुमार॥ ऐसें सुपात्र ~~कृपाल~~ कृपानिधी॥ हम कुटंब
मिलिमार॥ चौउव जुत मातामन हो॥२२॥टीका॥ तब
माता जो है सो तिसकी दशा देख कर मुख से वारवार क
हने लगी कि हे पुत्र तेरा नाना जो है सो प्रीती और स
नमान पूर्वक इनको इह दूध दिखाय कर हीं पीछे आप
ए भोजन पाय लेता है क्योंकि इह देवता कुछ खाव
ते पीवते नहीं हैं केवल वासना के ही भूखे होते हैं
इस प्रकार यद्यपि माताने वहुत हीं समुझाया और वा
र वार कहा तद्यपि तिसने कुछ भी खान पान न हीं कि
या जब रात वतीत होय गई और प्रात काल भया त
व नामदेव ने उठकर के सनान किया और वडे उज्जल
वस्त्र धार कर भगवान के भवन में मारजन झाडु आ
दि सेव काई जो है सो सब की और सुंदर लेपन भी दिया
तिसते उपरांत गोधन को दूहन करकर और दूध को
भली प्रकार अगनी पर तपाय कर फिर ■ पवित्र
पात्र मै पाय कर और सुंदर मिसरी मिलाय करके व
डी भक्ती सनमान से भगवान की मूरती के आगे रा
खकर कहने लगा कि कृपा निधान अब तो पान करि
ये परन्तू दीनानाथ ने तब भी पान नहीं किया ■
फिर हृदय मै सोच कर कहता है कि मै जानता हूं भग
वान ने दातन सनान इत्यादि ■ वी नहीं किया
है इसते कृपासिंधू दुग्ध पान जो है सो नहीं करते हैं
ऐसे विचार कर सनमान पूर्वक दातन और सना
न कराय कर ■ ■ प्रती भक्ती से पूजन सेवन
~~■■■■~~ किया फिर ते से हीं दूध का पात्र लेकर
और नंदलाल की मूरती के आगे राख कर कहने
लगा कि भक्त पाल पान करिये दीन हितकारी
भगवान ~~■■■ नहीं किया~~ तब भी पीवते नहीं भये
नामदेव विनती कर कर कहता है कि हे भक्तसने
ही भगवान ~~■■■~~ तीन दिन बीत गये हैं आप
ने दूध पान नहीं किया ■ मै तुध्यां से परम दुखी और

बहुरि पात्र मुख जोरी॥ नम्रत विनय करत नहिं थोरी॥ अब परिहरहु कोप भगवाना॥ कीजै हरषि दुग्ध प्रभु पाना॥ असप्रकार सब दिवस बिहावा॥ प्रतिमा देव दुग्ध नहिं पावा॥ नामदेव हृदय चितोरा॥ है अपराध अवसि कछु मोरा॥ धौं कछु मोर अपावन देहू॥ धौं उच्छिष्ट पात्र कछु एहू॥ अब तो मइ चूक इह मोरे॥ वपुष पात्र पावन करि मोरे॥ मलहिं करन सम मिता मिलाई॥ प्रभु हि देहु पय पान कराई॥ जो लो करहिं पान प्रभु नाहीं॥ मै प्राण धारि लीन मन माहीं॥ सोरठा॥ तो लो आप न गेहु॥ खान पान नहिं करहु कछु॥ हृदय सोचि निज एहु॥ रह्यो सोय उपवास धरि॥ १२॥ टीका॥ इस प्रकार सोच कर के घर मे चला आया ~~[illegible]~~ तहां से मिसरी लेकर और दूध मे मिसिर लाय कर फिर ल्याय करके पात्र जो है सो दीनबंधू की मूरती के मुख से जोड़ कर कहता है कि कृपानिधान अब तो पान करिये ऐसे यद्यपि तिस ने बारंबार बहुत ही प्रार्थना करी तथापि संसार का भय दूर करने वाले भगवान नहीं पीवते भये तब हाथ जोड़ कर बड़ी दीन बानी से बिनती करने लगा कि हे कृपानिधान आप क्यों नहीं पीवते हो इसमे मेरा कौन अपराध है कि अथवा दूध बिखें मिसरी थोडी है जिसके आप पान नहीं करते हो मेरे को इह दोष कुछ जान नहीं पड़ता है ऐसे कथन कर कर के दूध का पात्र भगवान की मूरती के मुख के साथ जोड़ दिया देव प्रतिमा ने ~~[illegible]~~ तब भी नहीं पिया फिर तिस ने हृदय मे इह विचार किया कि दीनानाथ ने मेरे को पहिचाना नहीं है इसी तें दूध पान नहीं करते हैं तब नम्रता नीसे हाथ जोड़कर कहने लगा कि हे दीनपाल हे कृपा के समुद्र मै आप के चरनों का दास हूं सुमती नाम करके वामदेव की कन्या जो है मै तिस का पुत्र हूं और मन वचन

नामदेव सुमरत जदुराई॥ सहजहिं बिनु प्रयास तजि काया॥ कृष्न लोक कहें भक्त सिधाया॥ तासु न जरन हेत तहि नारी॥ चली धरम पति व्रत विचारी॥ सरिता तीर भूमि समसाना॥ जुरयो समाज नारि नर नाना॥ बिरचत चिता रीति जुत ताहीं॥ उर धरि सीस मृतक निज नाहीं॥ सुमरत कृष्न लीन जब ज्वाला॥ पति जुत भई दगध तब बाला॥ दसा मातु महि दृगनन देखी॥ नामदेव भा विकल बसेखी॥ पतनि धरम

पुनि मानस चीना॥ मृतक करम तिन कर सब कीना॥ दीयै दान विप्रन सनमान॥ परितोषे जाचिक जन नाना॥ विविध भाँति भोजन बनवाये॥ सादिर बांधव नाति जिमाये॥ बहुरि सुभक्ति प्रीति सनमाना॥ भयो निरत पूजन भगवाना॥ देखि अतथि हंतन महि देवा॥ निसिदिन करत भक्ति जुत सेवा॥ सोरठा॥ कीषि करम निज जोय॥ परिहरि परम उदार चित॥ राम भक्ति रत होय॥ बितवि भक्ति लाग्यो करन॥ १४॥ टीका॥ ऐसे सुन करके मधुर और मंद हासि से भगवान कृपानिधान दुगध पान जो है सो त्यागदेते भये अर्थात पीते थी ते बस करगये तब भगवान का छोड़ा हुआ पात्र मे दूध जो बचा था सो तिन सब नो ने मिलकर के पान कर लिया तिसतें उपरांत फिर सब ने भोजन भी पाया इह अदभुत कौतुक जो है सो संपूर्ण ग्राम विखें फैल जाता भया तब सुन करके कोई मानता कोई नहीं मानता है और बीच बीच कहते हैं कि भाई इह कोई अचरज की बात नहीं है क्योंकि भगवान वत्सल भक्त हैं अर्थात भक्तों के सेवेधी और हितारी हैं इह वृतांत सब सत्य ही होगा इस प्रकार कहते और भगवान को सुमरते हुये

लोग अपने अपने घरों को चले गये जब कुछ काल व्यतीत होय गया तब वामदेव जो नामदेव का नाना था सो कृष्ण परमात्मा को सुमरता हुआ यतन के विना सहज ही शरीर को त्याग कर के कृष्ण लोक को चला जाता भया तब तिस की स्त्री अपना पती वृता धरम विचार करके पती के साथ ही जलने को चल पड़ती भई तहां भीमा नदी जो है तिस के किनारे समसान भूमी पर नगर के स्त्री पुरषों का सब समाज आय जुड़ता भया तब वामदेव की स्त्री चिता जो रची हुई थी तिस मे बैठ कर और पती का सीस अपने उरू अर्थात पट्ट पर धर कर कृष्ण कृष्ण भजती हुई अगनी को ले करके सब के देखते तुरत ही पती के सहित जल कर के भस्म होय गई नामदेव अपनी नानी की दसा देख कर हृदय मे व्याकुल होय गया फिर स्त्री का धरम विचार करके तिन मृतक करम जो है सो विधी पूर्वक सब करता भया और ब्रह्मणों को अनेक प्रकार के दान देकर याचिक जन जो मांगने वाले लोक थे सो भी सबै यथा योग्य सतकार कर कर विदाय किये तिस तें उपरांत नाती जाती के सब लोगों को भोजन जिमाया और भली प्रकार सब को प्रसन्न किया फिर आप प्रीती भक्ती मे लीन भया हुआ रात्री दिन नारायण का पूजन सेवन जो है सो करने लगा अपना छीपे जाती का करम त्याग करके बड़ा उदार चित होय कर अतथी साध ब्रह्मणों की धन वस्त्र अन्न इत्यादि से अनेक प्रकार सेवा करने लगा ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ जे धन नामदेव महि दीना ॥ विप्र संत अरपण तहि कीना ॥ आपु अनन्य भजन भगवाना ॥ लाग्यो करन विगत अभिमाना ॥ हरि सदृश संतन जिय जानी ॥ करहि रुचिर सेवन हित मानी ॥ एक दिवस संकुल सुख करनी ॥ कलिमल ओघ एकादशि हरनी ॥ अदभुत चरित तास दिन भय यो ॥ वे सब लोग

जैवन्ने पुर रहयो॥ भीमा सरित तीर हरि भवना॥ प्रमुदित कीन सकल मिलि गवना॥ तिन कर नित्य रीति चलि आई॥ सुंदर दिवस एकदस पाई॥ जागरन कथा कीर्तन गाना॥ ~~नामदेव सुनि श्रवण सुजाना~~॥ देव भवन पावन सुखदाई॥ अर्द्ध रैन जँगयो बिहाई॥ तहिं पस्यात हरष उर [illegible]॥ कृस्न कृस्न सुमरत तहँ आवा॥ कावेहि उत्तम मति धीरा॥ रत उपवास वैस्नव भीरा॥ हेजुत भक्ति की [illegible]रत गाना॥ करहिं सु सकल भवन भगवाना॥ ठाड्यो नामदेव हरि द्वारा॥ नम्र दंडवत कीन जुहारा॥ पुनि विचार मान सनिज ठाना॥ इहाँ भवन बहु लोग जुडाना॥ जनि पद त्राण मोर कहु जाई॥ अस विचारि धरि वसन दुराई॥ कोंत दवाय भवन पति भवना॥ हरषत नामदेव द्रुत गवना॥ तिन सन जाय कीरतन गाना॥ लाग्यो करन मोद सुख साना॥ व[illegible] सन अछादित सो पदत्राना॥ एक पुर[illegible]ष लखि वदन अलाना॥ रे रे अधम मूढ का कीना॥ इह पदत्राण कोंत कस दीना॥ तुव पुनीत हरिभवन असाधू॥ कीन महां अनुचित अपराधू॥ धिग धिग भनन सकल तहिं लागे॥ जाहु अधम हरिभवन तयागे॥ [illegible]हु रिस वस काहु ग्रीव गहि दीना॥ सवल आघात बहिर मट कीना॥ सोरठा॥ निज अपराध विचारि॥ भलो कीन इन कहत अस॥ मोरे देउ प्रचारि॥ दीन नकहु अनुचित कियो॥ २५॥ टीका॥

तब जो धन वामदेव ने दवाय करके राखा हुआ था सो नामदेव सब संत भक्तों और अतपी ब्रह्मणों को बाँट ता भया और आप अभिमान से रहित निरमल चित होय करके भगवान के भजन और सम[illegible] मे लीन रहने लगा और भगवान के तुल्य संत भक्तों को जान कर बडे हित चित सेँ बन सतकार

नामदेव सुनि श्रवण सुजाना॥

व्याकुल होय रहा हूं आप दुग्ध क्यों नहीं पान करते हो
यद्यपि तिसने दीन होय करके बारंबार बहुत ही करा
तथापि भगवान की मूरती ने दूध नहीं पिया तब नाम
देव अधीर भया हूआ बड़ा कलेश मान करके रोद
न करने लगा ऐसे तिस का रोदन और निसकपट
प्रेम देखकर के दीन हितकारी भगवान तुरत दया
के वश होय गये दीनानाथ की मूरती के नेत्रों में आ
सू पात चलने लगे तिन को देखकर के नाम देव क
हने लगा कि हे भगवन तुम क्यों रोवते हो कृपा करके इह
दुग्ध जो है सो पान करिये नहीं तो कृपानिधान मैं अ
पने प्राणों को त्याग देऊंगा ऐसे कथन करके दु
ग्ध का पात्र जो है सो दीन बंधू के मुख के साथ जो
ड़ दिया तब तिसकी भक्ती के वश भये हूये भगवान
ततकाल पीवने लग जाते भये इस प्रकार कृपासिंधू
की मूरती को दुग्ध पान करते देख कर नाम देव आ
नंद और सुख में मगन भया हूआ कहने लगा कि हे
सुख के समुद्र हे दीनों पर दया पालने वाले नंद कि
शोर क्या अब सब ही दूध की ले वोगे मेरे लिये
पीछे कुछ भी नहीं छोड़ोगे हे कृपानिधान जो तुमारा
उच्छिष्ट अर्थात जूठा कुछ बचेगा सो हम नाना
के सहित सब कुटंब मिलकर पान कर लेवेंगे और
जगत में सफल होजावेंगे ॥ २३ ॥ चौपाई ॥ अस सु
नि भेद हास जुत होई ॥ तज्यो दुग्ध हरि तृप्ति
सोई ॥ जे सु पात्र कछु शेष रहाना ॥ सो तिन
सकल कीन मिलि पाना ॥ पुनि प्रसन्न मन भोज
न पावा ॥ सकल ग्राम इह अदभुत छावा ॥
कौ मानै कौ करहिं संदेह ॥ कोऊ गुनत उर
भाषत एह ॥ इह व्याख्यान सत्य सब होई ॥
ऐसेहि भक्त वत्सल प्रभु सोई ॥ अस प्रकार भा
षत सब ~~कोई~~ काहू ॥ निज निज गये भजत
जदुनाहू ॥ गयो कछुक जब काल बिहाई ॥

प्रेम करि कै॥
चीतम जो है सो ॥
"प्रेम करि के गुरु कृपा करि आज्ञा दियो है"
"शीघ्र"

कहने लगे कि उठो अभागी ई हांसे चले जावो इत
नें एक पुरष ने उठकर और गलें पकड कर धके ले
देकरके बाहिर निकाल दिया तब नामदेव अपने अ
पराध को हृदय मे विचार कर कहता है कि इनोने बहु
त शुभ किया है मै अपराधी था मेरे को अब घ्याद ड
होना चाहिये था सो इनोने दिया है मैने अपनी करनी
का फल पाय लिया है ॥२४॥ चौपाई ॥ असप्रकार उर
सोचित आछे ॥ वैठो लज्जित जाय भट पाछे ॥
उहां भक्ति संजत हरषाये ॥ सजलनयन उ
र प्रेम वढाये ॥ भक्तपाल भगवान सुहावा ॥ लग्यो कर
न पूजन मन भावा ॥ सो तहां निज सेवक अपमाना ॥ स
हि न सके प्रभु कृपा निधाना ॥ तव तहि काल नाव जि
मि पानी ॥ कंपमान भट भूमि डुलानी ॥ लाग्यो भ्रम
न भवन भगवाना ॥ तिन लोगन निज निज जिय जा
ना ॥ भयो अवनि भूकंप घनेरा ॥ उर संदेह पात
भट केरा ॥ ततकाल आय वहिर सव भागी ॥ सम्भ्र
म विकल धीर उर त्यागी ॥ अस जव तजत भवन ज
दुराये ॥ निकसि वहिर वैस्नव गण आये ॥ मिट्यो धर
नि कंपन तव सारी ॥ भयो स्थित मंदिर गिरधारी ॥ फि
र तेसहिं वैस्नव समुदाई ॥ वैठे आय भवन जदुराई ॥ नामदेव तव सन मुख पावा ॥ जोरि जुग
ल कर हरष अधावा ॥ करत वदन अस तु
ति भगवाना ॥ प्रेम नेम कछु जाय न जाना ॥ ता सुवि
लोकि वैस्नव सारी ॥ कहत परस्पर हृदय विचारी ॥
हम अपमान कीन इहि केरा ॥ भ्रमन भवन कौतु
क तव हेरा ॥ अस जिय गुनत सकल विद्वाना ॥
नामदेव कर अस तुति नाना ॥ लगे करन मुख
साधु उचारी ॥ तुव हरि भक्त निपुण व्रतधारी ॥
हमते भयो तोर अपमाना ॥ करि दाया अव हम हे सु
जाना ॥ जान्यो नहिं प्रभाव कछु तोरा ॥ तुव हरि
भक्त विदत सिर मोरा ॥

अस्तुति करि बैष्णव सारे॥ करि प्रसन्न निजसबन सिधारे॥ दोहा॥ नामदेव इत भवन निज आय सुमरि नंद लाल॥ करत संत सेवन सदन बीति गयो कछु काल॥ १८॥ टीका॥ इस प्रकार हृदय मैं विचार करता हूआ लजि ज्जा मान होय करके भगवान के भवन के पीछे जा य बैठा ऊन्हो आनंद मै मगन होय कर और नेत्रों मै प्रेम जल भर कर भक्ती प्रीती से भगवान का पूजन जो है सो करने लगा तब तिसका अपमान जो भया था सो दीन बंधू नहीं सहारते भये ततकाल ही जैसे जल मैं नाउका डोलने लगती है तैसे ही बड़ा भ्यानक भूकंप होयकरके भगवान का भवन जो है सो भ्रमन कर कर डोलने लगा तब तिन लोगों ने जाना कि इह तो बड़ा भारी भूकंप भया है मत ऐसा ना हो कि मंदर ही गिर पड़े ऐसे विचार कर सम्भ्रम होयकरके सब वे ह्मवाजन भवन के बाहर निकल आये इतने मै जब भूकंप मिट गया और मंदर भी भ्रमन करने और डोलने से स्थिर होय गया तब सो वे ह्मवजन तैसे ही फिर आयकरके भवन के बीच वैठ जाते भये तहां तिनो ने देखा कि नामदेव भगवान कृपानिधान के सनमुख स्थित भया हूआ दोनो हाथ जोरे हूये प्रेम मैं मगन होय कर दीनानाथ की अस्तुती कर रहा है ऐसे तिसको देखकर सो वे ह्मवजन परस्पर विचार कर कहते हैं कि देखो हमने इस भक्त का अपमान जो किया था तो इसी तैं भूकंपादि मंदर भ्रमन होने का कौतुक जो है सो देखा है ऐसे विचार करके सब वे ह्म विद्वान साधू साधू उचार कर नामदेव की अनेक प्रकार अस्तुती कर कर कहने लगे कि

हे सुंदर व्रत के धारने वाले हे भक्त उत्तम हमारे से बड़ा
अपराध होयगया है जो तुम मान कर चुके हैं परन्तु तुम सी
धू दया कीरती हो कृपा करके हमारे इस अपराध
को क्षमा करो हे भक्त प्रधान हम तुमारे प्रभाव को जा
न नहीं सके तुम तो भगवान के परम प्यारे और भक्तों
विखें शिरोमणी हो इस प्रकार मुख से अनेक श्लाघा
और बड़ाई करकर भक्तप्रधान को प्रसन्न करके सब अ
पने अपने घरों को चले गये और इहां नामदेव भी
नंद लाल भगवान को सुमर अपने घर विखें चले आ
ये तहां अतथी संत भक्तों की सेवा करते करते कुछ का
ल व्यतीत करते भये ॥ २६ ॥ चौपाई ॥ तब जहि नगर भ
क्त गुण खाना ॥ करहि वास सुमरत भगवाना ॥ यमन
मलेछ तास पुर राई ॥ सेवक सचिव दुष्ट समुदाई ॥
नामदेव कर सुजस सुहावन ॥ भक्ति श्री भगवन पद
पावन ॥ सो मलेछ नहि सके सहारी ॥ जाय नृपहि
अस गिरा उचारी ॥ महाराज इह दुरजं भारा ॥ कर
त देम निंत अधम अचारा ॥ सदा मेद पूजत पा
षाना ॥ सेवे बजाय करत कछु गाना ॥ बन्यो
महंत मूढ बड़ मानी ॥ दरप मत्त दुरजन अग
खानी ॥ मानस तास त्रास कछु नाही ॥
करहु नाथ ताड़न सठ काही ॥ दै दै उग्र दंड ज
ढ देही ॥ शीक्षा करहु कवन गुन एही ॥ धों ह
म कहें सासन प्रभु करहों ॥ जढ कर गरब तु
रत हम हरहों ॥ भनि भनि क्रूर वचन त्रिसका
री ॥ सकल दोष गुण लेहु निहारी ॥ जो सा
सन रावर नृप होई ॥ हम हु करब द्रुत बिल
म न कोई ॥ अधम भूप सुनि तिन कर बानी ॥
लाग्यो मनन मुदित अगखानी ॥ मैं तुम
कहं सासन वर हेदीना ॥ जस भावति तस क
रहु प्रवीना ॥ अस प्रकार जढ आयस लीन्यो ॥
बैठि इकांत मतो दृढ कीन्यो ॥ भरी परी इक

करता रहता तब एक दिन सरब सुखों के देने वाली
और पापों के समूह का नास करने वाली एकादशी
जो है सो आय गई तिस दिन ऐसा अद्भुत चरित्र भया
कि भीमा नदी के किनारे पर भगवान मंदिर जो थान
हो नगर के सब वैस्नव जन मिलकर के चले आवते
क्योंकि तिन का सदैव एही धरम था जो एकादशी
के दिन को तहां आय कर [illegible] भगवान का कीर्तन गा
यन भजन सुमरण नित्य किया करते थे ऐसे समाज
की चरचा ~~नामदेव ने भी~~ सुन कर के आधी रात के उप
रांत घर से निकल कर तहां भगवान के भवन चला आ
या तब आय करके क्या देखता है कि व्रत को धारे हु
ये सब वैस्नव जन जो हैं सो परम भक्ति और प्रीति
से भगवान के भवन में बैठे हुये आनंद पूर्वक बड़े
सुंदर कीर्तन गायन और भजन सुमरण ~~कर रहे~~ सो कर
रहे हैं तहां नामदेव हरी भवन के द्वारे में स्थित ~~हो~~
कर नम्र होय करके बड़े दीन भाव से दंडवत प्रणा
म जो है सो करता भया फिर हृदय में विचार करने लगा
कि ईहां बहुत लोगों का समाज जुड़ा हुआ है और मैं
भीतर जाना चहता हूं ऐसा न हो कि मेरे पाओं का जो
ड़ा कहीं जाता रहे इस प्रकार सोच कर जोड़े को वस्त्र
में लपेट लिया और कांख जो कहावै है तिस के नीचे
दबाय कर भवन के भीतर वैस्नवों के समाज के बीच
जाय बैठा और तिन के साथ मिलकर कीर्तन
गायन करने लग पड़ा तब तिस की बगल के बी
च वस्त्र में छिपा या हुआ सो जोड़ा कोई एक पुरष
देख करके कहने लगा कि अरे मूढ़ मंद बुद्धि ते ने
क्या खोटा करम किया है अधम चाम के जोड़े
को कांख में दबाय के ईहां भगवान के भवन में संत
समाज के बीच बैठा हुआ है तू तो जड़ को खड़ा
असाधू है और ते ने इह महां अनुचित अपरा
ध किया है तब तो सब धिग धिग पुकार कर

कांख

तुमारे मनको भाव तो है तैसे करो इसप्रकार तिन पापी
मलेछों ने राजाकी आज्ञा पायकर और न्यारे जाय
कर परस्पर मताकिया तव किसी की एक गऊ मरी
हुई [illegible] कहीं पडीथी रात्रीके समय तिसको
उठायकरके [illegible] वडे यतन और श्रम से ल्यायकरके
नामदेव के द्वारे मे डालदेते भये और आप अधम इध
र उधर कहीं चलेगये जव कुछ थोडीसी रात वाकी र
ही तव आयकर [illegible] और लोप होयकर कहीं आसपा
सही वैठरहे इतने मै प्रातःकाल जानकर नामदेव
जी उठे और भगवानका सुमर्ण करते हुये स्नान
करने केलिये भीमा नदीको जो चले तो क्या अचर
ज देखते हैं कि मृत भई हुई गऊ जो है सो द्वारे पर प
डी है ॥२७॥ चौपाई ॥ विस्मय विवस थंभ वत ठाढे ॥
सम्भ्रम हृदय त्रास दुख वाढे ॥ ठाकर भई कवन
गति एहू ॥ परि मृत धेनु द्वार मम जेहू ॥ सो तव
आय कपट जट चरने ॥ मृखा दोष ताके सठ धर
ने ॥ करि दुरवाद विविध मुख निंदा ॥ वोले ता
सु वदन अग वृंदा ॥ अरे मूढ धूरत विभचारी ॥
कुटिल कपटि सठ वंचिक भारी ॥ दीन धेनु तुव
कौन वगार्‍यो ॥ विनु अपराध अधम कस मार्‍यो ॥
आई शीत ग्रसत तुं द्वारा ॥ भलो कीन दुरजन उप
कारा ॥ तिनमै एक दुष्ट पुनि वोला ॥ कपट अ
नर्थ मर्म जड खोला ॥ [illegible] इह तो रही धेनु
मृत मोरी ॥ तुव सठ कीन पाप अति जोरी ॥ अ
व जीवत छाडौं नहिं तोही ॥ इह सुरभी प्रा
ण न प्रिय मोही ॥ रे रे अधम सुपच सठ
भा[illegible] अस प्रकार दुरवचन उचारे ॥ रहे भले
छ आन जड जेते ॥ तिनकहे लिये कोप वस
तेते ॥ नृपपें आय अधम हत भागे ॥ [illegible] मृ
षा वदन अस भाषन लागे ॥ देखिय नामदेव

नरमाई॥ बिनु अपराध कीन्ह इन गाई॥ ता ते दं
ड जोग जड भारा॥ असप्रकार तिन कपट उचारा॥
मूढ नरेस सुनत तिन बानी॥ परम कोप मानस निज मानी॥ लाग्यो भनन सुनहु मति हीना॥ मूढ अनर्थ घोर तुव कीना॥ रे रे मंद दुष्ट दुर चारी॥ बिनु अपराध धेनु तुव मारी॥ दोहा॥ जो चाहो अब कुसल निज तो इनि देहु जियाय॥ नतर धेनु बध तुहे तोहि दुरमति त्रास दिखाय॥ १८॥ टीका॥ तब तिस को देखकर के भक्त सुष्टृ अचरज में युक्त स्थित होय गया भ्रम के सहित व्याकुल और दुखी होय कर कहता है कि हे देव इह क्या अनर्थ और ख्या कौतुक है कि मेरे द्वारे पर मृत भई हुई गऊ जो है सो इतने मैं सो अनर्थ के उतपन्न करने वाले मिले थे जो थे सो आय गये और भक्त प्रधान को दोष लगाने के लिये मुख से नाना दुरवाद और निंदा कर कर कहने लगे कि अरे मूढ धूरत और महा कपटी बिभचारी जड तेरा इस गऊ ने क्या बिगाड़ा था जो तैने इह निस अपराध मार दई है अधम इह तो सीत कर के व्याकुल भई हुई तेरे द्वारे पर आई थी अरे पापी तैने भला उपकार किया है फिर तिन मैं से एक दुष्टृ कहने लगा कि इह गऊ तो मेरी रही हो मंद तैने बड़ा अनर्थ और महा पाप किया है अब मै तेरे को जीवते नहीं छोडुंगा क्योंकि इह गऊ मेरे को प्राणों से भी प्यारी थी ऐसे अनेक प्रकार दुरवाद के और अनादिर के वचन कहते हुये सो दुष्ट मिलकर भक्त सुष्टृ को पकड़ कर के राजा के पास ले गये और कपट से कहने लगे कि महाराज इस नामदेव ने निस अपराध हमारी गऊ मार डाली है तो तो इह अधम जाती बड़े मारी दंड के योग्य है ऐसे तिन का कथन सुनकर के सो मूढमत्ते राजा हृदय

मै बडा कोप करके कहने लगा कि अरे मंद तैने
घोर अनर्थ किया है दुहनि सु अपराध गऊ जो है
सो मार डाली है अब अधम जो कदाचित अप
नी कुँशल अर्थात भलाई चाहता है तो इस गऊ
को तै से ही जयाय दे नहीं जैसे तैने गऊको मा
रा है मै दुष्ट तैसे ही भय दिखायकर के तेरे प्राणों
का नास करूँगा अथवा तू हमारे सुंदर और
सुखदायक मत को ग्रहण कर लेवें तो मै तेरे
अपराध को क्षमा कर सकता हूं जो तेरे मन को
भावती है सो सुई कार करले ॥ २८ ॥ चौपाई ॥ सु
नत राऊ मुख सासन सोई ॥ पकसो मृतन के
पवस होई ॥ करहु वेग कुर भूप रजाई ॥ देहुं मे
द मृत धेनु जयाई ॥ नहितो पास देउ अब तोही ॥
करहु जवन मन भावति तोही ॥ अस तिन कर
कटु अनहित बानी ॥ सुमति सुनत मानस अकु
लानी ॥ मोह वस करि हृदन न हि थोरी ॥
श्र का भई दैव गति तोरी ॥ वहुरि सुतहि अस क
हत बुझाई ॥ अब दुहपुत्र कोप वस राई ॥ धेनु न
मित्र प्राण तुव लेना ॥ चाहत उग्र देड वह देना ॥ तो
कस जियहि ग्रसत दुख अेवा ॥ मोरे तात कवन अ
वलेवा ॥ तोते सुनहु प्राण आधारा ॥ जस इन यम
न धरम आचारा ॥ तस तुम करहु गृहण हित कारी ॥
लेहु शरण नृप समय विचारी ॥ राखहु प्राण
यत न अस करहै ॥ पावन धरम करम परिहरहै ॥
दसा मातु अस देखि दुखारी ॥ सुनत वचन भरि
नयनन वारी ॥ नामदेव तब भाषन लागा ॥ तु
म्हहु जननि धीर ज कस त्यागा ॥ कवन भीत मा
नसु निज धरहै ॥ वृथा विलाप जननि तुव कर
है ॥ तजहु शोक चिंता अवसारी ॥ मोरे कछु न

मे दुनि गाई॥ तासु अधम श्रुत लीन उठाई॥ करि करि विविध यतन श्रम भारा॥ ल्याये नामदेव के द्वारा॥ तहं डारि के इत उत बिथुराने॥ पाय से घृनि नि सकल जुड़ाने॥ सोरठा॥ नामदेव जब प्रात॥ उठि गवन्यो मज्जन करन॥ देखि अचरज बात॥ परी धेनु मृत द्वार पर॥१२॥ टीका॥ तब जिस नगर मैं नामदेव वास करता था तहां कायमन जो मले च्छ है सो राजा था और तिस के मंत्री सेवक भी सब दुष्ट मलेच्छ ही थे तब नामदेव का सुजस और प्रेम की प्रीती से भगवान का पूजन सेवन और कीर्तन भजन जो है सो सहार नहीं सके राजा को जायकर के कहने लगे कि महाराज इहं तुमारे नगर मे काफर अर्थात हमारे मजब का विरोधी महा दुरजन बड़ा कपटी और पाखंडी वास करता है और अधम नित्य संखेव जाय कर पाषाण जो पथ्थर हैं तिन की पूजा करता रहता है तिस मंद दुराचारी ने एक दंभका जाल फैलाय कर लोगों को मोहित कर राखा है और मूढ वृथा ही हंकार के वश होयकर बड़ा मानी महंत बन रहा है जड़ के हृदय मे कछु भी भय और शंका नहीं है हे नाथ ऐसे अभिमानी दुष्ट को ताड़ना करनी चाहिये और बड़ा भारी दंड देकर तिस की प्रीक्षा लेनी चाहिये कि मंद मती मे कौन गुण है नहीं तो हम को आज्ञा करो देखिये हम अभी मूढ का गरब जो है सो दूर कर देते हैं और क्रूर वचनो से तिरस्कार कर कर तिस के सब गुण और दोष तुरत ही निकार लेते हैं जो नाथ तुमारी आज्ञा हो तो हम को कुछ विलंब नहीं है सत्य असत्य सब अभी दिखाय देते हैं ऐसे तिन दुष्टों का कथन सुनकर सो अधम राजा प्रसन्न हो य करके कहने लगा कि मैने तुम को आज्ञा दई अब जैसे

ण आधार तूं मेरा कहा मान और जैसे इन यमन
मलेछों का मत और धरम आचार है तैसे तूं भी ग्रहण
कर और राजा की शरण को प्रापत हो जा अर्थात अ
पने धरम करम को त्याग कर इनके मत के अ
नुसार होकर यतनसे प्राणों की रक्षा करले ऐसे ने
त्रों मे रुदन जल भरकर माता का कहना और परम
दुख करके व्याकुल तिस की दशा देखकर नामदेव
कहने लगा कि हे माता तैने धीरज कों त्याग दिया है
और कौन भय के वश व्याकुल भई हुई तूं वृथा ही वि
लाप करती है मेरे को कोई भी किसी का भय नहीं
है तूं शोक और चिंता को हृदय से त्याग दे मै
भगवान कृपानिधान की शरणागत हूं सो दीन बंधू
आप ही कल्यान कर देवेंगे हे जननी मै धेनू के बध क
रने मे अर्थात गऊ के मारने मे निरदोष हूं मेरा कोई
दोष अपराध नहीं है ताते मेरे को कुछ भय नहीं है
देखो कि जहां कोई उतपात का दुष्ट वा सिंह सरप
अथवा भूत प्रेत इत्यादिकों का भय होता है तब भक्त
जनों को त्रास हरने वाले भगवान अपने जन
की आप ही सहायता करते हैं और माता तूं इह भी
निश्चय करके जाण कि जिस को केवल तिस दी
न हितकारी भगवान की ही शरण है तिस की ओ
र अपमान की दृष्टी से कौन देख सकता है तैसे
ही मेरे को केवल तिस भक्तपाल के चरनों का
आधार और आश्रय है ताते जननी तूं हृदय मै
विस्वास करके धीरज को धार और चिंता शोक
को त्याग हृदय मै भय और कलेशों के दूर क
रने वाले भगवान को भज सो दीनानाथ आ
प ही कल्यान कर देवेंगे क्योंकि भक्तों की पैज
राखनी और गौ ब्राह्मण की पालना करनी
और तिन के भय कलेशों को हरना इह दीन

वंधूका सदैव विरद चला आया है इस प्रकार माता को प्रबोध करकर और समुझाय कर एक नवीन उज्ल वस्त्र मंगवाय लिया और सब के देखते गोविंद को सुमर कर तिस मृतक गऊ के ऊपर डाल दिया ॥ १९ ॥ चौपाई ॥ पुनि हरि भक्त संत समुदाई । लीन बोलि निज निकट विठाई ॥ बाजे करन चारु वहु रंगा ॥ जुगल झांज तंबूर मृदंगा ॥ लिये सकल गायन करि लागे ॥ अस प्रकार अस्तुति अनुरागे ॥ हे कृपाल माधव जग त्राता ॥ मंगल करन जनन सुखदाता ॥ फूलना छंद ॥ शरण गत दोषदुख हरन सुखकरन कलकुमठ मकरादि वपु धरन धाला ॥ क्रोड नरसिंह कोधादि वामन विमल वंस भृगुतिलक अवतरण लाला ॥ तरणिकुल तरणि प्रज्वलित जगजनन हित खलनगण दलन दलदुरत घाला ॥ कंस हन कृस्न ब्रह्मादि शिव विस्न प्रभु दिसन द्योतन करन भक्तपाला ॥ माधदुज धयन सुख अयन रत्नाकरन धरन हन भार अवतार धास्यो ॥ जनन रिपु व॰न अनल शरण आशरण अल जलज वर चरन द्युनवरन वास्यो ॥ मोद प्रद सुरन मन सकल संकट हरन देव करुणायतन जन उवास्यो ॥ विगत गजत्रास प्रल्हाद तनयो द्रुपत शावर जा अजामल गनक तास्यो ॥ जास पद रेनु गुन तरनि मुनि मुनि वर तरन विस्व कोषन भरन गाये ॥ सोऊ वृजराज मुहि जानि जन आज निज सरिय प्रभु काज करुणाय काये । दुष्ट नृप कीन प्रभु कठिन हठ दीन पर विरद निज चीन अब हो सहाये ॥ नाम की कान पहिचान भगवान निज भक्त सुखदान दुख हर हुआये ॥ २० टीका ॥ फिर भगवान के भक्त और संत महातमा जो हैं सो बुलाय कर और पास विठाय कर झांज मृदंग तंबूर इत्यादि अनेक प्रकार के बाजों से बडे मधुर कीर्तन भजन और भगवान की सुंदर अस्तुती जो है सो गायन करने लगे और आप नामदेव भी भगवान की मूरती को हृदय मैं धार कर नाना प्रकार की ~~स्तुति~~

अस्तुती से दीनानाथ को रिझावने लगा कि हे भगवान
कृपानिधान हे जगत के पालक हे लछमीनाथ हे सरव
मंगलों के करने वाले और दासजनों के हृदय को आनंद दे
ने वाले हे शरणागत पालक हे दोषदारिद्रों के हरने
वाले हे मच्छ कच्छ वाराह बोध वामन परसराम
इत्यादि अवतारों के धारने वाले हे सूरज कुल में महा
तेजस्वी सूरज ~~[illegible]~~ हे जगत मे पापों के नास
करनेवाले हे कंस के वध करने को कृष्ण अवतार के
धारने वाले हे त्रिगुण रूप धारी ब्रह्मा विष्णु महेश
हे दिशों के प्रकाश करनेवाले हे भक्तपाल हे गौ ब्राह्मों
की रक्षा करने वाले हे पृथ्वी का भार हरने वाले हे दा
स जनों के शत्रू रूपी वन को अगनीवत दग्ध करने
वाले भगवान हे देवताऊं के मन को आनंदकारी हे
शंकट हारी हे कृपानिधान तुम कैसे हो कि जिनों
ने ग्राह अर्थात तंदुये का ग्रसा हूआ गजराज जो
हसती है सो छुड़ाया और प्रल्हाद का भय दूर किया
कौरवों की सभा मै द्रौपदी की लज्या राखी और
शबर भील की पुत्री जो शबरी अजामिल और
गनका वेस्या इत्यादि नीच जो हैं तिनस
व का उद्धार किया फिर हे सरव जगत के ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ त्रिपत करनेवाले दीनबंधू तुम कैसे हो
कि जिनों के चरन कमलों की धूड़ी के सपरश से
गौतम मुनी की स्त्री अहिल्या जो शिला भई हूई थी
~~[illegible]~~ सुंदर गती को प्रापत होय
गई तैसे हे वृजराज हे दीनानाथ मै भी आ
प के चरनो का दास हूं आज कृपा करके मेरा मनो
र्थ भी सफल करिये क्योंकि इस मलेच्छ राजा
ने मेरे पर बड़ा कठिन हठ किया है तांते हे भगवा
न अपने को दास जान कर और नाम की लज्या
को पहिचान कर आज सहायक होकर मेरे हृदय
के दुख और कलेश को दूर करिये ॥२०॥ चौपाई॥

नाम महतारी॥ गहौ शरण केवल भगवाना॥ मातु सु
करहिं आपु कल्याना॥ मैं निरदोष धेनु वध माहीं॥ तो
तें जननि भीत कछु नाहीं॥ भय उतपात खेलन मृग
नाहीं॥ अरु भय प्रेत भूत भव जाहीं॥ तब भगवान भ
क्त भय हारी॥ होहिं सहाय आपु महतारी॥ जासु शर
ण केवल उनकेरी॥ ~~सब~~ कौ जग सकहिं तासु तन
हेरी॥ सुमिरि भक्त पाल कर अेवा॥ सरब प्रकार चरन
अवलेवा॥ असविस्वास जननि उर धारी॥ तज कुशो
क चिंता जिय सारी॥ भजहौ हरण भीत भगवाना॥
सो सब करहिं मातु कल्याना॥ सदा संत भक्तन दुज
गैया॥ हरन त्रास प्रभु पैज रखैया॥ सोरठा॥ अस ज
ननिहिं समुझाय॥ नवल सेत अंबर रुचिर॥ हरषत
लीन मंगाय कीन अछादिन धेनु मृत॥२६॥ टीका॥
इस प्रकार राजा के मुख से आज्ञा सुनकर तिन मले
छ नौकरों ने बड़ा कोप करके नामदेव को पकड़ लि
या और कहने लगे कि अरे मंद अबं जैसे राजा की
आज्ञा भई है तैसे कर इह गऊ जो मरी पड़ी
है इस को जिवाय दे नहीं तो कसदेउ जो कासी है
ति स को ग्रहण कर इन दोनो बातों में से जोनसी
तेरे मन को भावती है सो कहो ऐसे तिन की अ
नहित की भरी हुई बड़ी कठोर और कड़वी बानी सु
नकरके सुमती जो नामदेव की माता है सो हृदय
में व्याकुल होय गई मोह के वश भई हुई बड़ा
रुदन करती और कहती ~~और कहती~~ है कि हे दैव
इह तेरी कौन भावी वरतमान भई है फिर पुत्र
को कहने लगी कि हे तात अब इह राजा कोप के व
श भया है आ गऊ के बदले बड़ा उग्र दंड देकर के
तें प्राणों को लेना चहता है हे पुत्र जब ऐसे होगा
तो इह दुखकर के ग्रसी हुई अभागन जननी जो है सो
कैसे जीवेगी तात मेरे कौन आधार है तातें हे प्रा

(margin notes: ऐसे; अबे)

तद्यपि भूप एक नहिं माना॥ भनि भनि विविध भक्त हठतो राय॥ दीन हचिर सि ज्ञावर जोरा॥ सोरठा॥ नामदेव तवलीन॥ पुनि नरेस आयस लिये॥ गवन भवन निज कीन॥ नवीन सिज्ञा हचिर॥ सदिता दीन वनाय॥ पुनि दुज संत जिमाय॥ विरचि पाक संध्या समय॥ २२॥ टीका॥ इस प्रकार तिस को असतुती करते करते को मध्यान समय होय गया अर्थात दो पहर वीत गये तव भक्त जनों कलप वृक्ष और दीन हितकारी भगवान् अपने विरद को सुमर कर अपने भक्त की टेक और पैज जो है सो राख लेते भये ततकाल हीं तिस मृत भई हुई गऊ को जियाय देते भये सो जव उठी तो तिस को देख करके नामदेव हरष से प्रफुल्लित होय गया और नेत्रों मे प्रेम जल भरे हूये हाथ जोड कर वारवार दंडवत प्रणाम करने लगा तिस समय के आनंद की दशा कुछ कही नहीं जाती तिसतें उपरांत वे जो गऊ का कपटी अर्थात झूठा हीं स्वामी वना हूआ था तिस को कहने लगा कि ओ वो भाई इह अपनी गऊ जो है सो ले लेवो सो सुन करके जव धावता हूआ गऊ के पास आया तव गऊ ने तुरत हीं कोप से वडा कठिन शृंग का प्रहार देकर तिस का उदर जो है सो फाड दिया और प्राणों से रहत कर दिया ऐसे तिस की दशा देखकर तहां और भले जो स्थित भये हूये थे सो भय के वश होय करके सव भाग जाते भये नामदेव भी तिस का मरना देखकर वडा हाहाकार शब्द करता हूआ हृदय मे अनेक प्रकार पछताय कर कहने लगा कि अहो भगवान की गती कुछ जानी नहीं जाती है दीनवंधू मेरू परवत को राई और राई को मेरू कर कर तत्म मे कुछ और की और कर देते हैं ऐसे भगवान की भावी का कथन कर कर फिर

और फिर तिस गऊ को लेकर नामदेव जो है सो अपने घर मे चला आया तहां अपनी गऊओं के साथ राखी को तिस की भली प्रकार सेवा की और ईहां जब तिन मलेछों ने राजा के पास सजाय करके सब वृतांत सुनाया तब राजा सुन करके बडे अचरज के बश होय गया ततकाल घर से धाय कर और नामदेव के पास आय कर बडे दीन भाव से हाथ जोड कर बडाई करने लगा कि हे संत सिरोमणी हे भक्त प्रधान तुम तो सातों त जगत मे पूजने के योग्य हो इह महां मूर्ख और बुद्धी के हीन लोग जो हैं सो तुमारे चंद्रमा के समान अमृत के भरे हुये प्रभाव को कैसे जान सकते हैं हे भक्त उत्तम तुम कृपा करके इन के अपराध को क्षमा करो क्योंकि तुम संत सदैव दया की मूरती होते हो अब अनुग्रह करके मेरे से जो मन की अभिलाषा और रुची है सो मांगिये मैं देता हूं ऐसे राजा का कथन सुन कर नामदेव प्रसन्न होय करके कहने लगा कि हे राजन मेरे कों कुछ भी अभिलाषा और रुची नहीं है केवल एक नाम का ही आधार रखता हूं इह राम नाम का अतुलित धन जो है सो तो गुरू महाराज के प्रसाद से मैंने पाया हूआ है और किसी से क्या मांगूं इस प्रकार यद्यपि नामदेव ने बहुत ही कहा तद्यपि राजा एक नहीं मानता भया बारबार विनती कर करके तिस का हठ जो है सो तोड कर जोरावरी से एक बडी सुंदर और कोमल सेजा जो है सो दे देता भया नामदेव ने लेकर के राख लई जब राजा विदा होय कर अपने घर को चला गया तब पीछे नामदेव ने सो सेजा उठाय करके नदी के प्रवाह मे बहाय दई फिर संध्या के समय घर मे बडे सुंदर पकवान बनवाय कर प्रीती भक्ती से संत जनों को भोजन जिमाये और यथायोग्य सब का आदर सतकार किया॥

२२॥ चौपाई॥ पाछे आपु सख्य चित होई॥ पायो पा
क वपुख श्रम खोई॥ अस प्रकार कछु दिव सविता
हू॥ भा ■ ल्यो जाय भूपसन काहू॥ सो तुमार सि
ज्ञा नर हाई॥ तास तरंग निदीन वहाई॥ ■ सुन
त तास अस भूपति वानी॥ उर अमोल सिज्ञा
निज जानी॥ मिलन व्याज सेवक संग लीने॥ ■
आवा तहां कपट चित दीने॥ नम्र वचन क
छु प्रथम जनाई॥ बहुरि कहत अस वदन वुझाई॥
जे तुम कहे हरि भक्त प्रवीना॥ मे पूरब सिज्ञा हू दि
दीना॥ सो देहो मोहि जौ रण जानी॥ लेहै नवल मो
द मन मानी॥ नृप कर वचन मरम जुत पाई॥ नाम
देव मुख गिरा अलाई॥ चलहु प्रजापाल श्रमठानी॥
सो सिज्ञा निज लेहु पिछानी॥ अस कहि नृपहिं
लेत नदि तीरा॥ आये नामदेव मतिधीरा॥ तहां
■ भक्त निज भक्ति प्रभावा॥ वार मझार सरित
दिखरावा॥ का देखहिं दृग भूप सुजाना॥ परि सलि
ल सिज्ञा बहु नाना॥ अगनित देखि चकित चित
भययो॥ भक्त चरन नम्रत सिर नययो॥ करि अने
क मुख विनय बड़ाई॥ निज अनुचित नृप छमा क
राई॥ होत विदाय भवन निज आई॥ सव लोगन
कहे दीन जनाई॥ नामदेव मोरे हितकारी॥ सज्ञा
न सुखद भक्त व्रतधारी॥ इन सन सदा सरल चित
होई॥ राखहु मैत्रिभाव सव कोई॥ ■ सोरठा॥ अ
स नदेस नर राई॥ करि सादिर सुई कार सव॥ लागे
करन वड़ाई॥ नामदेव कर विविध मुख॥ देखहु भक्ति
प्रभाव॥ सो निंदक अरि यमन गण॥ अव प्रस
न्न मन गाव॥ मैत्रिभाव जुत सुजस मुख॥ दोहा॥
तो ते से कुल धरम मध से सृति भक्ति प्रधान॥ भ
क्ति पुरष कर राखहिं सदा टेक भगवान॥ अव आ
गलत हि भक्ति कर चमतकार मनभाव॥ करहुं
कथन जहि सुनत द्रुत दुरत दोष मिट जाव॥२२

अस प्रकार तहि करत प्रसंसा॥ भा मध्यान काल अ
वतंसा॥ भक्त कल्पद्रुम दीन उधारी॥ विरद वाणनि
ज हृदय चितारी॥ भक्त टेक राखी सुरनाई॥ दीनतुर
त मृत धेनु जियाई॥ सो जब उठी देखि दृग तासा॥ ना
मदेव उर हरष प्रकासा॥ सजल नयन मुख गदगद
बानी॥ पुलक गात जोरत जुग पानी॥ करत प्रणा
म दंडवत धरनी॥ दसा न जाय मोद कछु बरनी॥ बहु
रि कहत अस बदन बुझाई॥ इह अब लेहु धेनु निज
भाई॥ सो जब आव निकट तहि काला॥ तुरत धेनु ध
रि शृंग विसाला॥ कपट स्वामि कर उदर विदास्यो॥
प्राण हनन करि धरनि पिछास्यो॥ तासु बिलोकि आ
न जढ जोई॥ भागे सकल धीर उर खोई॥ जे निज शृं
ग धेनु धरि मारा॥ नामदेव जब तासु निहारा॥ हाहाका
र करत पछताना॥ अहो न जाय देवगति जाना॥
राई मेरु मेरु तृणराई॥ औरकि और करहिं कछु भा
ई॥ तदनंतर उर करत विचारा॥ लिये धेनु निज भव
न सिधारा॥ तो कहँ निज गैयन सन राखी॥ कीन रुचिर
सेवा सब भांती॥ उहां आय मृत भूपति पासा॥ कं
पत गात विथत बस त्रासा॥ भन्यो वृतांत जवन सब
भययो॥ सुनत भूप उर अचरज छययो॥ परिहरि
भवन बेग द्रुत धाई॥ डरपत नामदेव पें आई॥ भ
न्यो जोरि कर नम्रित बानी॥ तुव साक्षात भक्त जगमा
नी॥ काजा नहिं मूरख मति मंदा॥ तो प्रभाव विदत
जिमि चंदा॥ छमहु भक्त इनकर अपराधू॥ सदा
कृपाल मृदुल चित साधू॥ मो पें जो भावति मन
तोरे॥ मांगहु नहिं अदेव कछु मोरे॥ करहौं कृ
पा भक्त कछु लेहौ॥ मैं प्रसन्न मानस अब देहौं॥
नामदेव सुनि छितपति बानी॥ बोल्यो हृदय हरष
सुख मानी॥ मोरे नहिं नरेस कछु कामा॥ बिनु आ
धार एक हरि नामा॥ कौं की करहुं जाचना राई॥ राम
नाम अतलुत धन पाई॥ जद्यपि नामदेव कहि नाना॥

अपने अपराधको क्षमा कराय कर फिर विदा होक
रके घरको चला जाता भया तहां नगरके सब लो
गों को बुलाय कर समुझाय दिया कि इन नामदे
व जी मे हे परम हितकारी और सज्जन सुखदाय
क भगवान के दृढ़ भक्त हैं इनके साथ सब कोई हृद
य से कपट और छल को त्याग कर सरल सूधे चितसे
प करके सदैव मैत्री भाव हीं राखे इस प्रकार राजा
की आज्ञा को बड़े हर्ष मानसे स्वीकार क
रके नाम देव जी अनेक शीला चा और बड़ाई
करने लगे देखिये भक्ती का प्रभा
कि वे महा निंदक और शत्रु भले कि गण जो थे अब
सो ई प्रसन्न होय करके मुखसे नाना प्रकार का सु
जस और बड़ाई जो है सो गायन कर रहे हैं नामादा
स जी कहते हैं कि हे संतो ताते संसार मे सब धर्मो वि
खे उत्तम और प्रधान केवल भगवान की एक भक्ती है
है भक्तिमान पुरुष की दीन बंधू सदैव पैज और टेक
राखते चले आये हैं इस प्रकार इन नामदेव की भक्ती
जो है सो गायन करते हैं अब आगे और तिनकी भक्ती
का बड़ा मनको भावता चमत्कार मे कथन करता
हूं कि जिसके श्रवण करने से शरीर के पाप और दोष दु
ख सब दूर हो जाते हैं ॥२२॥ चौपाई ॥ अब सुन एक प
डोसिन आला ॥ लागी अकस्मात कहुं ज्वाला ॥ पा
यऊ कोर प्रबल तर व्यारी ॥ नाम देव गृह पहुंचि
दिवारी ॥ लागी रुचिर सदन जब जारन ॥ सामी
प कजन देखि निवारन ॥ निज निज आय सकल
करि हेला ॥ जुरये भक्त अजर जनु मेला ॥ तव नि
रवाप न देखि दिवारी ॥ नाम देव सब दीन निवारी ॥
एक आपु भवन हरि जाई ॥ हरि मूरति सादिर सुख
दाई ॥ जुत समाज पूजन हरषाई ॥ राख्यो भवन ने
वहिर दुत ल्याई ॥ कहत वदन नम्रत कर जोरी ॥

दीन दयाल करुणा सब तोरी॥ तुमहू देव बसन चित एहू॥ मोहि दीन्यो सब दीन सनेहू॥ तुम हु लीन अब कृपानिधाना॥ मै न हृदय चिंता कछु माना॥ नाथ रजाय सीस धरि लेवा॥ करहु जवन मन भावति देवा॥ अस कहि हरषँ दृग बाढ्यो॥ अग्र भाग हरिमूरति ठाढ्यो॥ निरतत वदन विमल पद गाई॥ दसा प्रेम कछु बरनि न जाई॥ तो लो सकल धाम धन जारी॥ भई शांति तब अपु दिवारी॥ सीतल भई भसम जब गेहा॥ तब सजतन हरिभक्त सनेहा॥ हरिमूरति द्रुत धार निवारी॥ कीन स्थापित भूमि सवारी॥ अस प्रकार जननी जुत ताहा॥ बसत बहिर बहु दिवस बितासा॥ को लीए कदिवस महताही॥ बहिर अतप सुत बारि बयारी॥ तोते प्रभुहि खेद नित होई॥ करहु न केत जतन कि न कोई॥ सासन मातु स्वामि दुखे लेखी॥ नामदेव करि सोच वसेखी॥ सोरठा॥ नवल भीत विरचाय॥ जोरि काठ सजुत जतन॥ एक दिवस तब धाय॥ विपुन लायबे हेतु त्रिला॥ २२॥ टीका॥ तब एक समय नामदेव के निकट वासी पड़ोसी जो थे तिन के घर मैं अकस्मात ही आगनी जो लग गई तो वे पवन का वेग पाय कर के दाध करती हुई नामदेव के घर मै आय पहुंची तब तिस का सुंदर घर जो था तिसै जलाने लगी इतने मै पड़ोसी जो हैं सो तिस के निवारण करने लिये अपने अपने घरों से धाय करके आय गये मानो भक्त प्रधान के आंगन मै एक मेला जुड जाता भया जब आगनी आप ही कुछ शांती को प्रापत होय गई तब नामदेव ने सब को निवारण करके अपने अपने घरों को भेज दिया पीछे अकेला आप ही घर के भीतर जाय कर भगवान की मूरती को पूजा के सब समाज के सहित ले करके ततकाल ही बाहर चला आया और तहां आंगन मे राख कर

किहेदीन
औरदीन भावसे हाथ जोड़कर विनती करने लगा किहेदीन इत्यादि
बंधू इहसब तुमारी कृपाहीं है क्योंकि मेरे धन वस्त्र इत्यादि
सब तुमनेहीं दियाथा औरअब तुमनेहीं लेलिया है
प्रभू इसमे मेरेको चिंता कुछभी नहीं है मैंने आपकी र
जाय को सीसपर धारन करलिया है अब जैसी मनको भा
वती है तैसी करिये ऐसे कहते हुये का नेत्रों से हरषहूकी
नीरजो है सो वहा चला जाता है और भगवान के
सनमुख स्थित होयकर प्रेममे मगन भया है आमु
खसे बड़े ललित पद गायन कर कर नृत्त करने
लग जाता भया तिसमय तिसके प्रेमकी दशा जो है सो
कुछ कही नहीं जाती तबलग सब घरबार को जा
लकर आगनी जो है सो आपहीं शांती होयगई जब
घरकी भसम भलीप्रकार सब सीतल होयगई तब भ
क्तप्रधान उठकर और देव अस्थान की शुार जो
भसम है तिसको यतनसें निवारण कर कर औ
र प्रतीभक्तीसे सुंदर लेपन देकर फिर तहां सनमान
से ल्यायकर भगवान की मूरती अस्थापित करदे
ताभया इसप्रकार नामदेव को तहां माताके सहित
वाहरहीं वास करते को कुछदिन वतीत होजाते भये
तब एकदिन माता कहने लगी कि हेपुत्र इहां वाह
र तो धूप सीत पानी पड़ता और पवन चल
तारहता है इसतें भगवानको बहुत कलेश होता
होगा तुम घर बनाने और छप्पर बांधने का क्यों
नहीं यतन करते हो ऐसें का कथन सुनकर और
स्वामी का कलेश देखकर सोच के वश भया है
आ नामदेव श्रमकरके भित्ती जो दवाल है सो बनी
नहीं उसार कर और यतन से लकड़ी काठ सब
जोड़कर फिर एकदिन त्रिण जो फूस हैं तिनके ल्या
वने के वासते जंगलमै चला जाता भया॥२२॥ चौ
पाई॥ तहां जाय त्रिण काटि निकाई॥ बांधि जतन

टीका॥ तिस तें उपरांत भक्त प्रधान फिर
आप भोजन पाय कर के श्रम को निवारण करता भया औ
से जब कुछ दिन बतीत होय गये तब किसी ने राजा को
जाय कर के सुनाय दिया कि महाराज सो तुमारी दई
हूई सेजा नामदेव ने भीमा नदी के प्रवाह मे बहाय
दई है औसे तिसका कथन सुन कर और हृदय मे आप
नी सेजा को बडी अमोल जान कर मिलन के बहाने सें
सेवक समूह साथ लिये हूये और चित्त मे कपट राखे
हूये राजा जो है सो तहां चला आवता भया तब पहि
ले नम्रताई के वचनों से प्रणाम करकर फिर पीछे क
पट से कहने लगा कि हे भक्त प्रधान मैने तुमको सेजा
जो दीनी सो तो अब जीरण अर्थात पुरानी होय ग
ई है फेर करके मेरे को देदेवो और तिस के बदले औ
र दूसरी नवीन सेजा जो है सो लेलेवो औसा कपट
करके युक्त राजा का वचन सुन कर नामदेव जी
कहने लगे कि हे प्रजापाल यद्यपि तुमको श्रम
होवेगा तद्यपि मेरे साथ चलो और अपनी सुंदर
सेजा जो है सो पहिचान करके लेलेवो औसे कहि
कर राजा को साथ लिये हूये नामदेव जी नदी के
किनारे पर चले आवते भये तहां अपनी भक्ती का
अद्भुत प्रभाव जो है सो नदी के जल विखे राजा
को दिखावते भये कह
ने लगे कि हे राजन इह जल मे देख और जौनसी
तेरी सेजा है सो पहिचान करके लेले तब राजा
नदी मे जो झाकने लगा तो क्या देखता है कि तहां
जल मे अनंत सेजा अधिक से अधिक पडी हूई हैं
जिन का कुछ अंत ही नहीं आवता है तब राजा आच
रज के वश व्याकुल होय कर दीन भाव से चरनो
पर गिर पडा फिर सावधान होय मुख
से अनेक प्रकार की असतुती और बडाई कर कर

लगी कि ~~[illegible]~~ वलि जाऊं पुत्र अब घरका काम
छोड़ देवो और सनान करके भोजन पायलेवो अब
इतना काम जो पीछे रहा है पुत्र कलको वनायले
ना ऐसे प्रेम करके पूरित माताका वचन सुनकर
भगवान सत्य वचन कहि कर अपने काम मे लगे
रहे अर्थात भक्तका घर वनावते रहे तब दीनवंधु
अपने हाथों से श्री घर हीं सब कारँ सवार कर और अ
पने भक्तँ घर भली प्रकार ~~[illegible]~~ बांधकर फिर माताके
पास आय करके कहने लगे कि हे जननी मैने तेरी
कृपा से घरका काम सब सवार लिया है अब मैं न
दी के किनारे पर जाय कर और तहां सनान करकर
फिर घर मे आय करके भोजन पावता हूं ॥ २४ ॥
चौपाई ॥ अस कहि गवन कीन सुरराया ॥ ऊहां पेख
मोहित कृत माया ॥ नामदेव निद्रा गत भययो ॥ सोचि
लाभार नदेखेन पययो ॥ सोच विवस मानस अकुलाना ॥
तुरत भवन कहँ कीन पयाना ॥ आय जननि सन
विथा उचारा ॥ गवन्यो काहु लेन विला भारा ॥ मा
तु सुनत अचरज वस होई ॥ सुत भ्रम भयो कवन
मति तोही ॥ अवहु अह्लादि सदन निज धीरा ॥
गयो करन मज्जन नदि तीरा ॥ सुनि अस मौन
मूंदि दृग रहयो ॥ करन हार करज करि गययो ॥ ध
न्य जननि तुव जनम सुहावा ॥ जहि रन दृगन दरस
प्रभु पावा ॥ मै हत भाग ~~[illegible]~~ आस हित लागी ॥ आय कृपाल
धाम निज त्यागी ॥ भये न मेद सफल इन नयना ॥
नामदेव अस विलत वयना ॥ मातु विलोकि तास प
छताना ॥ मन तव दन निज वचन सुनावा ॥ परिह
रि सोच तात अव जाई ॥ हरि हिं स चिर नैवेद लगा
ई ॥ सोरठा ॥ करहु अन्न जल पान ॥ अस प्रकार
जननी वचन ॥ नामदेव उर मान ॥ करि सनान

सरिता विमल॥ पुनि सादिर प्रभु कीन "भक्ति भाव पूजन सकल॥" का के आपु प्रवीन॥ पावा भोजन जननि जुत॥ दो हा॥ अस प्रकार रुचिर चरित मे नामदेव कर गाव॥ जासु सुनत सरया विमल कृस्न भक्ति उर छाव॥ २४ ॥ टीका॥ ऐसे सकहि कर देवों के देव भगवान चले जाते भये और उन्हे मारग मे माया कर के मोहित भया हुआ नामदेव निद्रा से जो जागा तो क्या देखता है कि वे त्रिलोकी का भार तहां नहीं है तिस कर के बड़ा सोच के बड़ा व्याकुल भया हुआ उठ कर के घर को चला आया तहां आवता ही माता को कहने लगा कि हे जननी मेरा त्रिलोकी का भार कोई उठाय कर के ले गया है और मे खाली घर को चला आया हूं तब बच्चा सुनकर के माता कहने लगी कि हे पुत्र क्या तेरी बुद्धि विषे कुछ भ्रम होय गया है तूं तो अबी घर का सब काम संवार कर सनान करने को नदी के किनारे पर गया था इस प्रकार माता का वचन सुनकर नामदेव मोन होय गया और नेत्रों को मूंद लेता भया फिर थोड़ी देर के पीछे नेत्र खोल कर कहने लगा कि अहो करनहार जो है सो मेरे घर का कारज कर गया है जननी तूं धन्य है और धन्य तेरा जनम है कि जिसने इन नेत्रों कर के भगवान कृपानिधान का दरसन पाय लिया है मेरे जैसा जगत मे कौन अभागी है कि जिस के लिये दीनबंधू अपना परमधाम त्याग कर मेरे घर मे आये और रह महानंद मेरे नेत्र सफल नहीं भये अभागियों ने दीनानाथ का दरसन नहीं पाया ऐसे नामदेव हृदय मे बड़ी हानी मान कर विलाप के वचनों से बारंबार कहता है तब माता तिस का विलाप और पछताना देख कर धीरज दे कर कहने लगी हे पुत्र अब सोच मत करो जो थी भगवान को नैवेद लगावो और फिर आनंद से आय कर के भोजन करो ऐसे माता का वचन मान कर नामदेव तुरत सनान कर के भगवान का पूजन किया भक्ति प्रीती से

और फिर माता के सहित आनंदपूर्वक भोजन पाया
नाभादास कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार नामदेव की भक्ति
कि जिसके श्रवण करने से कृष्ण भगवान के चरन कम
लों मे प्रीती और श्रद्धा उपजती है मैने गायन की है॥
२४॥ चौपाई॥ अब इह आन ललित मनभावन॥ ना
मदेव कर भक्ति सुहावन॥ करहुं कथन निज मति अनु
रूपा॥ जासु सुनत हरि भक्ति अनूपा॥ उपजहि हृद
य सकल सुख करनी॥ कलिमल ओघ दारिद दुख
हरनी॥ धरे तिलक मुद्रा वनमाला॥ आका अतिथि से
त जन काहू॥ हर हर हर सुमरण सुख जाहू॥ नामदेव
सन तासु वखाना॥ मै तो ध्यारत भक्त प्रधाना॥ तोते
अब भोजन सुवल्याई॥ वेग देहु मोहि भक्ति जिमाई॥
अस सुनि नामदेव तहि काहा॥ आज इकादसि कर
व्रत राहा॥ तुव कस करहु पाक रवि एहा॥ मोरे हृद
य भूरि संदेहा॥ तोते मै तोहि पाक न देहौ॥ जो अमा
न चाहै तव लेहौ॥ जाय वहिर कहुं लेहु वनाई॥
अस सुनि भन्यो अतिथि मुसकाई॥ मै तो सिद्ध अन्न
तुव गेहा॥ करहौं अवसि मोर प्रण एहा॥ मोरे ती
न दिवस अहराती॥ वीत्यो विगत अन्न इहि भाती॥
नामदेव सुनि ताकर वानी॥ भनत सो च वस अच
रज मानी॥ सुनहौ भक्त हे [illegible] तधारी॥ इह अप
राध तमहु मोहि भारी॥ औरहु चिर हरिवासर मोरे॥
प्राण अधिक प्रिय विनवहु तोरे॥ तुव आपन
इह प्रण परिहरहौ॥ वहिर जाय भोजन कहुं कर
हौ॥ जद्यपि नामदेव वहु वारा॥ विनय युक्त मु
ख वचन उचारा॥ तद्यपि एक न मान्यो तेहू॥
कहत करहु भोजन तुव गेहा॥ अस दृढ वचन
तास जव कहयो॥ नामदेव चिंताकुल भययो॥
वैठ्यो मौन भवन चित दोई॥ अतथी रह्यो का
इथिर होई॥ अस प्रकार [illegible] जव दिवस विहावा॥
संध्या परी तिमर जग छावा॥ नामदेव तव आय

गुत सीस उठाई॥ चल्यो धाय गौरव सिर भारा॥ पंथ
खेद किमि सकहिं सहारा॥ है अशकत मारग धरि दीना॥
देखि ललित थल छाय नवीना॥ पर्यो धरनि निद्रा द्रुत
आई॥ तब भगवान भक्त सुखदाई॥ वत्सल भक्त रू
प तहि धारा॥ लीन उठाय सीस त्रिण भारा॥ नामदे
व कर सदन सुहाये॥ अखिल लोक मंडिन प्रभु आये॥
लागे भक्त अ छादन गेहा॥ दीननाथ हरि दीन सने
हा॥ तब दृग देखि विपुल श्रम माता॥ भनत वचन
लालन सुखदाता॥ अब परिहरहु सदन सुत कामा॥
करहु अनाय पाक जलपाना॥ तात अछादिन से घ
रनावा॥ करहु कालि कल सदन सहावा॥ मातु वच
न सुनि प्रेम समेता॥ सत्य वचन भनि कृपानिकेता॥
रहे विरचत भक्त निजधामा॥ वेग सवारि सकल प्रभु
कामा॥ सोरठा॥ भन्यो जननि पें आय॥ अब मे जा
वहु सरित तट॥ पावन ~~सलिल~~ उदिक अनाय॥ आ
य करहु भोजन भवन॥ २४॥ टीका॥ तब तहां जा
यकर के त्रिण जो खड़ आदिक फूस हैं सो काटे और ति
न को यतन से बांध कर भार बनायकर और सीस पर
उठायकर के चल पड़ता भया सो ऐसे गौरव अर्थात
बड़े भारी भार को भक्त सत्तम कैसे सहार सकता था ~~अ~~
के अशकत भया हुआ मारग मै एक सुंदर अस्थान औ
र सीतल देखकर के तहां तिस भार को डाल देता भया और
आप श्रम ~~करके~~ हे ~~~~ अचेत और व्याकुल होयकर के
पृथवी पर लोट गया ~~तब~~ तहां तिस को निद्रा जो आ
य गई तो भक्त हितकारी और भक्त सुखदायक भ
गवान तुरत नामदेव का रूप धार कर के और त्रिणों
को भार सीस पर उठाकर तिस के घर मै चले आ
वते भये तहां आवते ही दीनानाथ और दीन सनेही
भगवान बड़ी प्रीती से अपने भक्त का घर जो है
सो बनावने लग पड़े ऐसे तिन का श्रम देख कर
माता बड़े सनेह और प्यार के वचनों से कहने

श्रीभ

'गा' पत्ले कों मे पलक

अतथी मुसकाय कर कहने लगा मैं तो हे भक्त अथीत
वना हुआ भोजन नहीं तेरे घर मे पाऊंगा इह मेरा स
त्य प्रण है हे भक्त मेरे को तीन रात और तीन दिन भूखे
प्यासे को बीत गये हैं तब नामदेव सुनकर के बड़े अचर
ज और सोच के वश होय कर कहने लगा कि हे
संत महातमा तुम कृपा करके मेरे इस अपराध को क्ष
मा करो और मेरी विनती को मानो देखो आज इह भग
वान का दिन मेरे को प्राणों से भी अधिक प्यारा है तुम अ
पने इस हठ को त्याग देवो कहीं बाहर जाय करके भोज
न कर लेवो इस प्रकार यद्यपि नामदेव ने बहुत हीं कहा
तद्यपि सो एक न हीं मानता भया कहने लगा कि मै तो अ
वश्य तेरे घर मै हीं भोजन करूंगा जब इस प्रकार ना
मदेव ने अतथी के वचन को बड़ा दृढ़ देखा तब चिंता
करके व्याकुल भया हूआ मौन होय करके घर मे इकांत
जाय बैठा और अतथी तहांहीं द्वारे पर स्थित होय र
ही ऐसे जब सूरज अस्त होने लगा और संध्या
समय आय गया तब नामदेव फिर आय कर और
दीनताई से हाथ जोड़कर कहने लगा कि हे संत उदार
रूप मेरी बिनती को मानो और सुंदर व्रत को धारन
करके
करो जो ऐसा नहीं करते हो तो सूका अन्न लेकर
और बाहर कहीं भोजन बनाय करके अपना परि तो ष अ
थीत उदर पूरना कर लेवो ऐसे सुनकर अथती कह
ता भया कि मै यद्यपि क्षुध्या करके व्याकुल होय रहा हूं
तद्यपि तेरे ही घर मे भजन पाऊंगा अपना प्रण कदाचि
त न हीं छोडूंगा तब नामदेव तिसका हठ देख कर हृद
मे सोच करता हूआ घर मै जाय बैठा जाग्रन करते
को सारी रात बतीत होय गई जब प्रातःकाल होते सू
रज उदय भया तब अतथी संत के पास आय कर कह
ने लगा कि हे महातमा अब उठो और सनान करो
फिर मेरे साथ चल करके आनंद से भोजन पावो

और तुध्या के श्रम को निवारण करो इस प्रकार जब नाम देव ने कहा तब संत मौन हीं रहा कुछ उत्तर नहीं देता भया इतने मे नामदेव अचरज के वश भया हुआ तिस के पास आय कर और मुख से वस्त्र उठाय कर जो देखे तो वे अतथी संत मरा हुआ पाया ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ अस अचरज तहि दषा निहारी ॥ नामदेव व्याकुल उर भारी ॥ लग्यो करन रोदन पछताये ॥ इतउत नगर लोग सुनि आये ॥ कहि वृतांत सब तिनहिं सुनावा ॥ इहि अचरज सब कर उर छावा ॥ मनन सब देव रजाई ॥ तोरे नहिन दोषक कुछ भाई ॥ जो मृत भयो कहत अस लोगू ॥ इहि सस कार करन अब जोगू ॥ नामदेव तब गिरा उचारी ॥ मैं तो भयो पाप रत भारी ॥ तुध्या रत व्याकुल जहि गेहा ॥ मृत वस भयो अतथि दुज एहा ॥ लाग्यो परम दोष मोहि भाई ॥ करहिं लोग अपवाद निकाई ॥ तांते चिता विरचि निज करना ॥ इहिं मोर धरम अब जरना ॥ जो तुव करहु निवारण आई ॥ तुमहिं सपत नारायण भाई ॥ सुनत लोग चिंतो कुल भारी ॥ आई रुदन करत महतारी ॥ मेरे तात कवन अब लेवा ॥ तोहि मृत देखि जियव कस एवा ॥ ताते तजहु पुत्र प्रण एहू ॥ परिहरि शोक चलेहु निज गेहू ॥ जद्यपि मातु अनेक बखाना ॥ नामदेव कछु एक न माना ॥ सोरठा ॥ तब लोगन सनमान ॥ विधि से जुत मृत संत को ॥ ल्याय धरनि समसान ॥ दाह करन हित तरा लयो ॥ २३ ॥ टीका ॥ जब ऐसे नामदेव ने तिस संत को मरे हुये देखा तब अनेक प्रकार पछताय करके व्याकुल भया हुआ रोदन करने लगा ऐसे तिसका रोदन सुन कर लोग जो हैं सो धाय करके आय गये तब नामदेव ने तिनको सब वृतांत सुनाय दिया सो सुन करके बडे अचरज को प्राप्त होय गये और कहने लगे कि हम कहते हे भगवान की भावी

का चमतकार है तेरे को इस मै कुछ भी दोष नहीं है
अब इह देव इच्छा से जो साधू मृत होय गया है इस को स
मसान भूमी मै ले जाय कर दगध कर देना योग्य है तब ना
मदेव कहने लगा कि हे भाई मै तो महा पापकारी होय गया
या हूं देखो जिसके घर मै तृष्णा करके व्याकुल भया हूं
श्री अतथी संत कालवश होय गया है मेरे सिर पर बड़ा भा
री पाप चढ़ गया है और मै अपजस का भागी होय गया हूं
लोग मेरी सरव काल निंदा किया करेंगे ताते अब मेरा
एही धरम है कि मैं चिता रचाय करके इसके साथ ही ज
ल मरूं जो कदाचित इस वारता से तुम मेरे को निवार
ण करोगे तो भाई तुम को भगवान के चरनो की सगंद होगी
ऐसे सुनकर के लोग सब चिंता के वश दुखी होय गये इतने
मै नामदेव की माता भी रोदन करती हुई धाय करके चली
आई और बड़े विलाप के वचनो से अनेक प्रकार समुझा
ने लगी कि हे मेरे को कौन आधार रहा तेरे को मृत देखकर
मै कैसे जिऊंगी॥ ताते हे पुत्र तूं अपने इस हठ को त्याग
दे और चिंता शोक से नवृत होयकर अपने घर मै बैठ
कर भगवान का भजन सुमरण कर ऐसे [illegible] माता ने यद्यपि
बहुत ही कहा और समुझाया तद्यपि सो एक नहीं मान
ता भया तब लोगोंने जाना कि अतथी संत को मृत भये
हूये बहुत बेर हूय गई है तत काल सनान दे कर यथा
योग्य वस्त्रो से आछादिन करके फिर विधीवत उठाय
कर और ल्याय कर समसान भूमी मै राखदिया॥ २७
॥ चौपाई॥ पाछिल नाम दुत आई॥ चिता जतन जु
त करन बनाई॥ उर धरि संत सीस गत सोगू॥ ~~[illegible]~~ बैठी
सिद्ध करन जनु जोगू॥ मे उद्योग करत जब ज्वाला॥
हस्यो तुरत शव बदन रसाला॥ करहु ज्वलत जनि
पावक काही॥ मै कौ अतथि संत मृत नाही॥
तोर भक्ति दृढ देखन कारन॥ मै कीन्यो कौतुक अ
सधारन॥ नामदेव सुनि अचरज मानी॥ ल्याये
भनन बदन मृदु बानी॥ कौतुक नाम कवं कहि
आये॥ कृपासिंधु तव मुख मम काये॥ भने अ

बहोरी॥ माथ त बदन जुगल कर जोरी॥ मोरी विन
य संत उर धरहो॥ तुव पुनीत व्रत धारन करहो॥ नत
र अमान्न लेहु तुव भाई॥ जाय बहिर भोजन विरचा
ई॥ निज पदि तोष करहु मुद मानी॥ को ल्यो अंत्र
सुनत असवानी॥ जद्यपि मै तुध्या कुल देहा॥ तै
द्यपि करहु पाक तुव गेहा॥ नामदेव हठ तासु निहा
री॥ बैठो जाय भवन व्रतधारी॥ जाग्रन करत रैन स
बकोई॥ उदयो अरुन प्रात जब होई॥ आय अतिथि ये
बदन बखाना॥ उठहु संत अब करहु सनाना॥ चलहु
पाक मोरे गृह करहो॥ है प्रसन तुध्या श्रम हरहो॥
अस जब नामदेव तहि काहा॥ ~~मिन~~ भू संत मौन धरि रा
हा॥ सोरठा॥ निकट आय मतिधीर॥ विसमय वस दे
खन लग्यो॥ बदन निवारत चीर॥ भाप्रतीत मृत
बत सोई॥ २१॥ टीका॥ अब आगे नामदेव की भक्ती की
और बड़ी अदभुत और मनोहर गाथा कथन करता
हू कि जिसके श्रवण करने से पापों के समूह का नास
करने वाली और सरब सुखों के देने वाली कृस्न भ
गवान की भक्ती जो है सो हृदय मै दृढ होती है एक दि
न तिसके घर मै संख चक्र गदा पदम इन चिन्हों कर
के चिन्हत और तिलक माला धारे हूये
हरि हरि उचारण करता हूआ एक अतथी संत आय
प्रापत भया और नामदेव को कहने लगा कि हे भक्त
मै तुध्या करके व्याकुल होय रहा हू ताते तू मेरे
को अबी भोजन जिमाय दे ऐसे तिसका वचन सुन
करके नामदेव कहने लगा कि हे संत आज तो एका
दशी का व्रत है तू इस दिन विखें कैसे भोजन मांगता
है मै तो आज कदाचित भोजन नहीं देऊंगा
जो कबी संत के अन्न ने [illegible] तो ले लेवो और कहीं बा
हर जाय करके भोजन बनाय लेवो॥ ऐसे सुनकरके

लगे तब तिस समय प्राव जो मुरदा है सो मुख के कर
के बड़ा अट्टहास शब्द करता भया अर्थात बड़ा हंस
ता भया और कहने लगा कि हे भाई मत अग्यानी ल,
गाँ मे कोई अनत थी तेन और मृतक पुरष नहीं हे
केवल तेरी दृढ भक्ती के देखने के लिये मैने इह कौतु
क धारन किया है तब नामदेव सुन कर अचरज को
प्रापत भया हुआ बड़ी कोमल वाणी से कहने लगा
कि तुमारा क्या नाम है कौन हो कहो ते आये हो तब
कृपानिधान मुख से मुसकाय करके कहने लगे
कि भाई मेरा नाम तो अनाम है और मेरा आश्रम
जाती माता पिता भी कोई नहीं है अपनी इछा
से पृथवी तल पर विचरने को आया था इह तेरा स
त्य धरम देख करके मै अत्यंत प्रसन्न होय गया है
अब तेरे मन के जो भावता है सो वर मांग मै देता हे
तब नामदेव हृदय मे जान करके बड़ी दीनताई से हा
थ जोड़ कर कहने लगा कि हे कृपानिधान तुम जो हो
सो हो मेरी तुम को दंडप्रणाम होवे और हे दीन
बंधु जो आप मेरे पर प्रसन्न भये हो तो कृपा करके ए
ही वर देवो कि मै जहां जाऊं तहां हीं आप के चरनो
की भक्ती जो है सो मेरे हृदय मे वसी रहै और भी इह
प्रार्थना है कि प्रभू मेरे घर मे चलिये और आनंद पू
र्वक भोजन पाईये ऐसे नामदेव की विनती सुनकर
भक्तों के कलप वृक्ष दीनहितकारी और तीन लोक
के नायक भगवान हरष से प्रफुल्लित भये हूये तत
काल हीं भक्त के घर मै चले जाते भये तब नामदेव
ने भगवान के वड़े सनमान से सनान करवाया और
फिर भगवान की मूरती को कि जो घर मे स्थापित थी
नैवेद लगाया तिस के उपरांत बड़ी भक्ती और
प्रीती से भगवान को भोजन जिमाय दिया इस
प्रकार भक्त के घर मे बड़ी प्रीती और रुची से
भगवान कृपानिधान आपने

भोजन पायकर फिर स्तुती स्तुती अ यांत कल्यान
कल्यान करते हुये अपने परम धाम को चले गये ऐसे
नामदेव की भक्ती देखकर सब लोग अचरज के वश होे
य कर तिस की अनेक प्रकार शलाघा और बडाई कर
ने लगे नाभादास कहते हैं कि हे संतो ऐसे दयाके स
मुद्र भक्तों का भय दूर करने वाले भगवान भक्तज
नों की भक्ती के वश होय कर अपने नानां कौतुक
जो हैं सो करते हैं देखिये पूजन जाती मंत्र आचार
जप तप जोग जतन साधन ब्रत दान इत्या
दि संसार मे जहां लग धरम और सुकरम हैं इन सब
तें भगवान को भक्ती प्यारी है दीनानाथ केवल भ
क्ती पर हीं रीझते हैं सो बडी दुरलभ है और सो पुरष
भी धन्य हैं कि जिन के हृदय मै इह भक्ती दृढ होवे
जो पुरष तिस ऊपर होय कर के भगवान की भक्ती कर
ते हैं तिन को अपने दास जान कर भगवान
आप तिन की भक्ती करते हैं ॥२०॥ चौपाई ॥ आगे
आन ललित मन माहीं नामदेव कर भक्ति सुहाई ॥
करहु कथन कछु अचरज गाथा ॥ उपजहि सु
नत भक्ति जदुनाथा ॥ काहु देस कर वनक सु
जाना ॥ महा धनवा धृति धरम प्रधाना ॥ विठ्ठ
ल प्रभु दरसन अनुरागी ॥ आयो भक्तिमान व
डभागी ॥ लिये संग धन विविध प्रकारू ॥ कनक
चैल मुद्रा मनि चारू ॥ तव भीमा सरिता तट आ
ई ॥ कीन सनान वैस सुख पाई ॥ पुनि वित वस
न आभरन नाना ॥ विधि वत तास कीन तुलदा
ना ॥ विप्र वृंद आये तहि ठाहीं ॥ दै दै तुला
दान तिन काहीं ॥ सब कर यथा इछत मन
भावा ॥ कीन वैस परितोष सुहावा ॥ पूछे
व हरि गन सो ई ॥ काहु दान विनु रहा न कोई ॥
विप्र

१९५

रह्यो भूलते जवन निरासा॥ भे पठहैं तहि भाग अवासा॥ धनक कथन सुनि दुजन मुदाई॥ बोले वदनव चन हरषाई॥ नामदेव अस नाम सुहावा॥ वे सव संत भक्त हरि गावा॥ गुण संपन्न सील व्रत धारी॥ हृदय अजाचक पर उपकारी॥ ~~विषय विकार विना~~ ~~संतत निरत भक्ति भगवाना~~॥ दुजन वचन सुनि धनक प्रवीना॥ सुतहिं बोलि ~~कथन~~ अस [illegible]ना॥ तहिपें तात वेग तुव जाई॥ करि प्रनेक सुख विनय वडाई॥ ल्याव हु जथा जतन जिय जानी॥ सिसु अस सुनत जनक मुख वानी॥ करत प्रणाम भतन जुत गवना॥ आवा नामदेव कर भवना॥ जुग कर जोरि चरन सिर नावा॥ भन्यो नम्र मृदु वचन सुहावा॥ बोलाय नाथ जनक मम दरस तुव अभिला खत मन माहिं॥ तातें चलहु कृपानिधी करहु स फल तहि काहीं॥ २८॥ टीका॥ अव आगे औरव ~~डु आचर्य्य की कथा~~ आचर्ज मन के हरने वाली और भगवान की भक्ती के उतपन्न करने वाली नामदेव की भक्ती की गाथा जो है सो कथन करता है एक किसी देस का कोई वडा धनी धीरज और धरम में प्रवीन भगवान की भक्ती वाला सोव ले भूषण वस्त्र मणी मुद्रा इत्यादि [illegible] नाना प्रकार द्रव्य साथ लिये हूये विठ्ठल भगवान के दरसन की अभिलाषा वाला भया हूआ तहां आय प्रापत भया तव भीमा नदी के निरमल जल में स्नान करके फिर केंचिन वस्त्र भूषण मणी मुद्रा इत्यादि धन का विधी अनुसार सुंदर तुलादान जो है सो [illegible] ऐसे तिस का दान सुन कर के ठौर ठौर से ब्रह्मलोके समूह चले आये तव धनी ने तिस तुलादान के धन से सव ब्रह्मलों का भली प्रकार परितोष किया जैसा जिसने मांग

नाम नाम मम भाई ॥ आश्रम जाति विगत पितु माई ॥ निज इच्छा विचरन महि आवा ॥ सत्य धरम तुव देखि सुहावा ॥ उपज्यो मन हमो मोद सुख मोही ॥ माग हु भाव जवन मन तोही ॥ नामदेव तव मानस जानी ॥ लाइयो मनन जोरि जुग पानी ॥ जो तुव सो प्रभु मै लिखि लीने ॥ वेद हु तुव पद पदम नवीने ॥ जो प्रसन्न अब मो पर अैहौ ॥ तो निज चरन भक्ति दृढ दैहौ ॥ चलहिं सुंदर दीन पग धरहौ ॥ मन प्रसन्न भोजन कछु करहौ ॥ अतरधी भेष लोक त्रै नायक ॥ भक्त कलप द्रुम दीन सहायक ॥ हरखत गवनि भक्त ग्रह आये ॥ नामदेव ता दिन अनवाये ॥ हरि मूरति कह प्रथम सुहावा ॥ प्रेम सहित नैवेद लगावा ॥ कृपा सिंधु कह वहु रिझि भावा ॥ भक्ति भाव जुत भोजन भावा ॥ भक्त भवन आनंद समेतू ॥ कायो भोजन कृपा निकेतू ॥ वहुरि भक्ति वर देत सुहाये ॥ दीननाथ निज लोक सिधाये ॥ नामदेव अस चरित निहारी ॥ भये लोक अचरज वस सारी ॥ लगे करन मुख विविध प्रसंसा ॥ अस कृपाल भय भक्त विधंसा ॥ होत भक्ति वस भक्त उवारन ॥ कौतुक करत लोक मन हारन ॥ पूजन जाति मेत्र आचारा ॥ जहि लग धरम करम संसारा ॥ जप तप जोग जतन व्रत दाना ॥ सब तें प्रीये भक्ति भगवाना ॥ दुरलभ सोऊ धन्य जन सोई ॥ जाके हृदय भक्ति दृढ होई ॥ दोहा ॥ करहिं भक्ति भगवान जे तो कर कृपानिधान ॥ करहिं आपु जन जानि निज भक्ति रुचिर भगवान ॥ २७ ॥ टीका ॥ तब पीछे नामदेव आयकर ततकाल अपने हाथों से चिखा वनाय कर तिसमत भये हुये संत का सीस जो है सो अपने उरू अर्थात पट पर राख कर के मानो जोग मारग के सिद्ध करने को स्थित होय कर के वैठ जाता भया इतने मै जब चिखा के आनी का लांवू देने

कीना॥ सोमोरे सादर अनुरागी॥ चाहत देन दान वडभागी॥ पै मोरे नाहिन मुइ कारा॥ अवलग मै आपन प्रणधारा॥ जाचन हित सत सुनहु प्रवीना॥ काहू केगृह गवन नकीना॥ इहां मोहि से जुत दाया॥ भोजनादि सब भवन पठाया॥ तुम सुत जाय जनकनिजपेही॥ मनहो सो नदान धन लेही॥ संत वचन सुनि बालक आवा॥ पितु पै भनि वृतांत समुझावा॥ वैसधनक सुनि बालक काहा॥ पलके प्रमाण मौन धरि राहा॥ बहुरि कहत अस वदन उचारी॥ पुत्र होहि कल्यान तुमारी॥ पुनि जावहु द्रुत तहां सिधाई॥ संत चरन नम्रत सिर नाई॥ कहि कहि वदन मधुर मृदुवानी ल्यावहु जथा जतन सुत जानी॥ दोहा॥ पितु सासन सिसु पाय द्रुत वृद्ध परख तहि ग्राम॥ लिये संग आयो मुदित नामदेव केधाम॥२९॥ टीका॥ ऐसे बालक की बड़ी सुंदर कोमल और सुखदायक मन को भाव ती वानी सुन कर नामदेव प्रसन्न भये हूये कहने लगे कि हे पुत्र मेरा इह नियम है कि मैं कबी किसी के घर मैं नहीं गया और मैं ने जान लिया है कि तेरा पिता बड़ा दाता है तिसनें भारी दान किया है सो वे तिस दान से मेरी कुछ सेवा सनमान किया चहता है परन्तु हे पुत्र सो मेरे को मुइ कार नहीं है क्यों कि अवलग मेरा एही प्रणर हा है जो किसी के घर कबी कुछ मांगने नहीं गया हूं भगवान कृपा के निधान मेरे को अपना जन अर्थात सेवक जानकर भोजन आदि सब इहां घर मे ही भेज देते हैं पुत्र तुम अपने पिता से जाय करके कहो कि वे साधू तुमारा दान धन जो है सो गृहन नहीं करता है ऐसे भक्त प्रधान का वचन सुन करके सो बालक फिर कर के पिता के पास चला आया और संत भक्त के नहीं आवने

का वृतांत जो है सो सुनाय देता भया तब वै सधनी औ सो
बालकका कथन सुन करके एक पल भर आंखें मूंद
कर मौन होय गया फिर कहने लगा कि हे पुत्र तेरी कल्या
न होवे अब तूं फिर तु कहीं जा और संतन भक्त के चरनो
पर दीन भाव से माथा धर कर जिस यतन से होसके तैसे
हीं तिस महातमा को साथ ले करके चला आ इस प्रका
र पिता की आज्ञा पाय कर बालक जो है सो तिस नगर के
वृद्ध पुरषों को साथ लेकर ततकाल नामदेव के घर
मे चला आया ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ करि प्रणाम नम्रत कर
जोरी ॥ मनत वदन कछु विनय नथोरी ॥ कृपा
निधान मोर पितु दीना ॥ चाहत तुव दरसन प्रभु कीना ॥
तेति चलहु नाथ तजि औना ॥ करहु सफल जनक
मम नयना ॥ दीनानाथ तास प्रण धारा ॥ जो लो होहिं
न दरस तुमारा ॥ तो लो करहिं पाक कछु नाहीं ॥
अस विचारि भगवन मन माहीं ॥ धारिय चरन हर
न दुख दीना ॥ विनय बड़ाई विविध विधि कीना ॥
नामदेव सिसु कर हठ देखी ॥ पावन भक्ति प्रीति दृढ
लेखी ॥ हरषत मने वदन सिसु मुसकाई ॥ इहो
देहु निज पितु हिं पठाई ॥ संत वचन सुनि बालक बोला
ना ॥ भक्त भक्ति वस जिमि भगवाना ॥ तस तुव पदि
हरि मान बड़ाई ॥ निज दासन बस सदा सहाई ॥ अ
स गुनि दीननाथ मन माहीं ॥ कीजे कृपा धरहु प
ग ताहीं ॥ चलिये हो निज जनहिं बड़ाई ॥ करहु
सफल प्रभु दरस दिखाई ॥ बाल प्रेम लखि वचन
सुहाये ॥ हरषत नामदेव उठि धाये ॥ आवत संत
सुवन जुत देखी ॥ उठ्यो वनक लखि भाग वसेकी ॥
आगत्य जाय चरन सिर नावा ॥ सादिर लिये संग नि
ज आवा ॥ अरघ पाद आदिक सब कीना ॥ पूजन
प्रेम भक्ति मन लीना ॥ जुग कर जोरि बहुरि अस
कहयौ ॥ मै प्रभु आज कृतार्थ भययौ ॥ देखि दर
स दृग कृपानिधाना ॥ सफल जनम निज से स्रुति
जाना ॥ सोरठा ॥ पुनि अस विनय उचार ॥ मै चाहौं क

कुकीनतुव ॥ सेवा संत उदार ॥ सो कीजै सतकार प्रभु ॥
२० ॥ टीका ॥ तब वालक जो है सो वडी दीनता से प्रणाम कर
कर और हाथ जोड कर विनती करने लगा कि हे कृपानिधा
न मेरा पिता जो है सो आप के दरसन की अत्यंत अभिला
खा राखता है ताते कृपा करके चलिये और दरसन दे कर
तिस के नेत्रों को सफल करिये नाथ पिता ने हृदय मे हठ
धार लिया है कि जब लग संत आय कर के मेरे को दरसन
नहीं देवेंगे तब लग मै अन्न जल कुछ खान पान नहीं
करेगा ऐसे विचार कर हे कृपानिधान आप चलिये त
हे चरनधा ~~रन~~ करिये और तिस के हठ को निवारण करिये
इस प्रकार वालक ने दीनताई से वडुत करके विनती वडाई
जो करी तब नामदेव तिस का प्रेम और दृढ भक्ती देख कर
हरष से मुसकाय कर कहने लगे कि भाई तू अपने पिता
को ईहां ही भेजदे दरसन मेला कर जावेगा तब इस प्र
कार भक्त प्रधान का वचन सुन करके वालक वडे चतु
राई के वचनों से कहने लगा कि हे नाथ जैसे दीन वंधू
भगवान अपने भक्तों के वश होते हैं तैसे कृपानि
धान तुम संत महातमा भी अपने दासों की सेवा और
भक्ती के वश होते हो ~~अपनी~~ अपनी वडाई को त्याग ~~कर~~ देते
हो परन्तु सेवक का मान नहीं त्यागते हो ताते हे
संत स्वामी अब अपने तिस सेवकपाल विरद को पहि
चान कर कृपा करके तहां ही चलिये और अपने दा
स भक्त को सफल करिये ऐसे प्रेम और चतुराई की भ
री हुई वालक की वडी गूढ वानी सुन कर नामदेव
हरष करके गदगद वानी होय गये और ततकाल ही
उठ करके चल पडते भये तब वालक के सहित ति
न को आवते देख कर हरष मे मगन भया हुआ वै
स धनी जो है सो तुरत उठकर और आगे जाय
कर चरनों पर देइ प्रणाम करके वडे सनमान से साथ
ले आवता भया तहां पवित्र आसन पर विठाय कर
विधीवत प्रती भक्ती से ■ पूजन किया और फिर प्रेम
हाथ जोड कर नम्र वानी से कहने लगा कि हे कृपा

धनी ने तैसा ही तिसकोदिया और बडा सुंदर जस लिया
फिर तिस वैस ने ब्राह्मणों को पूछा कि भाई कोई इहां नगर
मे कोई मेरे दान से निरास तो नहीं रहा जो कदाचित भूल
से किसी ने ना पाया हो तो मेरे को सुनाय देवो मै तिसका मा
ग तहां घर मे हीं पहुंचाय देता हूं इस प्रकार धनी का वचन
सुनकर के ब्राह्मण हरष से कहने लगे कि हे दाता और तो
सब ने पाया परन्तू एक वैस्नव संत ब्रत धारी और पर
उपकारी गुण सीलता की निधी और अजाचक जो कि
सी से कुछ नहीं मांगने वाला भक्ती मे लीन अभिमान से र
हित ऐसा जो नामदेव नाम करके भगवान का भक्त है
हे धनी सो तेरे दान से शून्य रहा है तिसने नहीं पाया
ऐसे ब्राह्मणों के मुख से भक्त की महिमा सुनकर दरस
न की अभिलाखा से धनी जो है सो अपने पुत्र को कह
ने लगा कि हे तात तुम शीघ्र घर जावो और मुख से अने
क बिनती बडाई करकर जैसे होय सके तैसे हीं यतन
से तिस महातमा को बहुसनमान से अपने साथ कर के
ले आवो तब पिता की आज्ञा पायकर के बालक जो है
सो ततकाल चरनों पर सीस नाय कर और सेवकों को
साथ लेकर नामदेव के घर मे चला आवता भया
तहां भक्त प्रधान को देख कर चरनो पर देइ प्रणाम
करता भया और फिर हाथ जोड कर बडी कोमल बानी
से बिनती करने लगा कि हे नाथ हम अमुक देश से ग
वन करते हुये इहां तुमारे नगर मे चले आये हैं और मे
रा पिता जो है सो संत भक्तों के चरनों का सेवक है इहां
आप की महिमा सुनकर नाथ तुमारे दरसन की अभिला
खा वाला होय रहा है इसी तें मेरे को आपके चरनों मे
भेज दिया है अब कृपा करके चलिये और प्रभु अपने
दरसन से मेरे पिता को सफल करिये ॥ २८ ॥ चौपाई ॥
बालक गीरा ललित मृदु नीकी ॥ श्रवण सुखद भा
वत प्रीय जी की ॥ नामदेव सुनि मानस रागे ॥ ता
सु बदन अस भाखन लागे ॥ मेरे नियम तात अ
सरे हा ॥ कौन भगवन काहु करगे हा ॥ अरु नु
व जनक जानि मै लीना ॥ दाता बिपुल दान बिन

धनी सुनत मानस बिलखाई॥ जोरि जुगल कर बिनय अलाई॥ का प्रभु कीन जाचना एहा॥ मैं बित हीन दास कछु देहा॥ कृपानाथ उपहास न कीजै॥ जो मैं देउँ मुदित मन लीजै॥ सुन हो भक्त तजहु संदेहा॥ मोर वचन उपहास न एहा॥ मैं जोई मांगा भक्त तुम पाहीं॥ इहि सम सकल भूमि तल माहीं॥ होहि न काहु विदित धन आना॥ धनि अस वचन सुनत बिसमाना॥ तुला धरत दोवर ले सुहावा॥ दूसर ओर कनक बहु पावा॥ सोरठा॥ देखा जवहिं उठाय॥ भयो तुलसि दल सो अधिक॥ तव तहि लीन मंगाय॥ हुत गोरव दूसर तुला॥ ३१॥ टीका॥ ऐसे धनी के नम्र वचन सुन करके नाम देव कहने लगे कि हे भक्त तू सत्य करके जान मैं तेरे पास धन लेने की इच्छा से नहीं आया हूं मेरे व्रत को लोग भली प्रकार जानते हैं जो मैं नित्य संतोष में हीं मगन रहता हूं ईसे तो केवल तेरी भक्ती सुन करके चला आया हूं दरसन परसन के बिना मेरे हृदय में और कुछ अभिलाषा नहीं है अब हे भक्त इह तेरा धन जो मैं ग्रहण नहीं करता हूं तो मेरा अपराध है तू दया करके छमा कर ऐसे नाम देव के वचन सुन कर धनी जो है सो परम हरष के वश भया हुआ मुख से धन्य धन्य उचार कर चरनो पर सीस धर कर विनती करने लगा कि हे कृपानिधान मैं जानता हूं कि आप विरक्त हो किसी वस्तू की इच्छा नहीं रखते हो कृपा कर के कुछ तो ले के और आवने को सफल करो मैं आप के चरनो का दास हूं दया करके नाथ मेरी कुछ सेवा जो है सो ग्रहण कर लेवो और दीन को जगत में बड़ाई देवो इस प्रकार जब धीनी ने नम्र वाणी से बहुत वार कहा तब भगवान के भक्त नाम देव हृदय में विचार करके भक्ती के दृढ

करनेवाला बडा अद्भुत कौतुक जो है सो करते भये
ततकाल ही एक तुलसी का पत्र मंगवाय लिया
तिस पर सब जगत के पवित्र करनेवाला राम
नाम जो है सो आधा ही एक दो अक्षर लिखकरके
धनी को कहने लगे कि भाई भक्त जो तेरे मन की
ऐसी ही भावना है तो इस पत्र के साथ धन तोलकर
के मेरे को दे दे तब धनी सुनकर के हृदय मे बडी
लज्जा मान कर कहने लगा कि हे भगवन आप ने इह
कैसी याचना करी है क्या मै तुमारा सेवक कुछ धन से
हीन हूं हे कृपानिधान अब मेरे को उपहास अर्थात
हासी मत करिये मै जो देता हूं सो आनंद से ग्रहण क
र लीजिये तब नामदेव कहने लगे कि हे भक्त तुम
संशय मत करो इह मेरा वचन कुछ हासी नही है
मैने जो तुम से मांगा है इस के समान पृथ्वी तल
पर और दूसरा धन कोई भी नही है ऐसे तिन का
वचन सुनकर धनी ने तो दो अंदर तुला जो तरा
जू है तिस मे तुरत धर दिया और दूसरे पासे कुछ
सोवर्न पाय दिया तब तुला को उठाय करके जो
देखने लगे तो तुलसी दल बहुत अधिक दे
ख पडा तब तो धनी बडे अचरज के वश भये हूआ
और दूसरा बडा भारी तराजू मे पाय लेता भया ॥२२॥
चौपाई॥ अस प्रकार जब तहि सन तोला॥ अर्ध नाम
राखरन अमोला॥ मणि मुकता द हेम धन चारू॥
सब ते भयो नाम हरि भारू॥ नामदेव तब वदन उचा
रा॥ सुनहु वैस वर वचन हमारा॥ तुम हु सनानदा
नव्रत करमा॥ होम यज्ञ तीर थ व्रत धरमा॥ जो
तुम हे अब लग सुख कीना॥ एक ओर सब धरहु
 जग
प्रबीना॥ तब इह तुल्य तुलसि दल होई॥ आन उ
पाय भक्त नहिं कोई॥ सुनत वचन अस धनक
महाना॥ जहि लग करम धरम निज नाना॥

साधि र तुला दीन धरि, तेहू॥ भयो न राम नाम सम एहू॥ तब कौतक अस दृग न निहारी॥ धनि जुत नगर लोग नर नारी॥ सब निज निज मानस विसमाये॥ नाम प्रभाव देखि हरषाये॥ नामदेव तब गिरा अलाई॥ दृष्टि मे न लेहु कछु भाई॥ अतुलित राम नाम धन चाहू॥ विदत जास महिमा संसाहू॥ मोपे सोऊ भक्त गुण खाना॥ को जग सरस मोर धन माना॥ राम नाम बिनु संसृति भाई॥ निरधन धनी जान समुदाई॥ अस सुनि साधु सधु कहि राग॥ बहु विधि वदन प्रसंसन लागे॥ राम नाम धन देखि प्रभाऊ॥ विपुल लोग मन मोद अघाऊ॥ दलन दोष दारद दुख सारी॥ राम नाम लीन्यो उर धारी॥ अस प्रकार हरि नाम सुहावा॥ जो कर विदत महातम गावा॥ परम पुनीत पुराणन माहीं॥ सो कछु कथन कियो किमि जाहीं॥ पुनि संतोपत यथा मति मोरी॥ ईहां कीन वरनन कछु थोरी॥ दोहा॥ जास उचारण तें भयो वारण विदत उद्धार॥ अरु शवरी गनकादि मे विकट सिंधु भव पार॥ पतित अजामल से तरे वालमीक पथ छीन॥ तरे आन केते पतित जिन सुमरण हरि कीन॥ २२॥ टीका॥ इस प्रकार जब हरी का आधा नाम सो अमोलक रा अक्षर तिस बडे तराजू मै तोला तो अनेक मणी मुकता केचिन भूषण मुद्रा इत्यादि धन जो था सो तिस सब तें हरी का नाम भारी होता भया तब नाम देव कहने लगे कि हे वैस भक्त अब तुम अपना सनान दान व्रत होम यज्ञ तीरथ कीर्तन श्रवण करम धरम इत्यादि जो कियो हैं सो सब तुला के एक पासे धर देवो इस तें सो तुलसी का पत्र के बराबर हो जावेगा इस तें इस कारता का और कोई यतन नहीं है ऐसे सुन कर के तिस धनी ने जहां लग आपने किये हूये करम और धरम थे सो सब

निधान आज मै कृत्य कृत्य होयगया हूं अर्थात जो कुछ करना था सो कर चुका हूं क्योंकि सरव दोष दारिद्र के दूर करनेवाला आप का दरसन जो है सो मैने ने प्रमर कर पायलिया है आज मेरा जगत मै जनम भी सफल होयगया ऐसे कथन कर कर फिर प्रार्थना करने लगा कि हे दीनानाथ मेरी विनती है जो मै धनकर के आपकी कुछ सेवा भक्ती ~~करना~~ करनी चहता हूं सो हे दीन दयाल आप कृपाकरके मेरी इस सेवाको सूई कार करिये अर्थात ग्रहण करिये मै आपके चरनों का सेवक हूं ॥२०॥ चौपाई ॥ नम्रत विनय धनक स्तुति कीना ॥ नामदेव अस वचन वखाना ॥ मै तुव सुन हु भक्त वडभागी ॥ आव न गहिन दान धन लागी ॥ जानत लोग मोर व्रत नीके ॥ रहू संतोष मगन नित जीके ॥ केवल सुनत भक्ति तुव काना ॥ तो पै निज आगमन सुचिठाना ॥ विनु दरसन मेरे मन माहीं ॥ भक्त आन लालस कछु नाहीं ॥ कर न न ग्रहण दान तुव जेहू ॥ मोहि अपराध क्षमहु तुव एहू ॥ नामदेव कर वचन सुहाये ॥ धनी सुनत मानस हरषाये ॥ साधु साधु कहि चरनन रा खे ॥ नम्रत सीस वदन अस भाखे ॥ तदपि कृपाना थ कछु लीजे ॥ मोर आगमन सफल अब कीजे ॥ जदपि सदा संत तुव त्यागी ॥ तदपि दयाल दास हित लागी ॥ रह कछु करउ ग्रहण शिवकाई ॥ दीननाथ मोहि देहु वडाई ॥ अस जब धनी नम्र वहुवारन ॥ विनय कीन निज वदन उचारन ॥ तबतहि प्रदधान अस देखी ॥ नामदेव उर गुनत विसेखी ॥ ~~मैजेर करत्ति प्रकट उचारी ॥ लोभी मानन मतावत~~ धारी ॥ भगवन भक्ति करन दृढ चाहू ॥ भये करत कौतुक मन ताहू ॥ तुलसी दल इकलीन मंगाई ॥ ता पर राम नाम सुखदाई ॥ निज कर लिख्यो अजग पावन ॥ एक रुचिर रावरण सुहावन ॥ भख्यो वहुरि मरम मुख वोली ॥ इहि सन देहु मक धन तोली ॥

~~पथिक जो रस्ते चलने वाले~~ मारग लूटने वाले
और मानुष्यों या~~थियों~~ त करने वाले सुंदर गती
को प्राप्त होय गये हैं इन तें लेकर के और भी अने
क पापी जन किजि कोने भगवान का सुमर्ण कि
या है ~~सो सब तर जाते भये~~ ॥ ३२ ॥ इति श्री भक्ति वि
केद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषा टीकायां
नामदेव चरित वरणनं नाम तरंगः

तुला के एक पासे राखकर जो देखने लगा तो फिर
राम नाम के साथ पूरा नहीं होता भया तब इस अद्भु
त कौतुक को देखकर धनी के सहित नगर के सब लो
ग स्त्री पुरुष जो थे सो अपने अपने हृदय मै अचरज
भये हरि नाम के प्रभाव को देखें परम हरष को प्रापत
हो जाते भये तब नामदेव कहने लगे कि हे भाई मैं भी
तें किसी का कुछ ग्रहन नहीं करता हूं क्योंकि इह अतु
लित राम नाम का धन कि जिसकी महिमा सब संसा
र मैं विदित है सो गुरों का दिया हूआ मेरे पास है तो ते
मेरे समान दूसरा जगत मै कौन धनी है हे भाई राम
नाम के विना संसार मै जो धनी कहावते हैं सो तो
सब निरधन हीं जान पूरा सोई धनी है जिसके पा
स अतुलित कि जो तोला नहीं जाता ऐसा रामना
म का धन है इस प्रकार सुन कर के सब लोग साधू
साधू उचार कर मुख से अनें श्लाघा
और वडाई करने लगे वहुत लोगोंने सरव दोष दुख
और दारिद्रों के नास करने वाला मंगलों मूल राम
नाम जो है सो तहांही हृदय मै धारन कर लिया
नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार इह परम
पवित्र राम नाम कि जिसकी महिमा
पुरानों ने विस्तार पूर्वक अनंत ही महि
मा गायन करी है मेरे से कैसे [illegible] तीहै त
थापि ईहां मंदमती के अनुसार कुछ संक्षेप कर
के कथन कर देई है इह भगवान का नाम कैसा
भी है कि जिसके उचारन तें वारन जो हस्ती है
तिस का उद्धार भया और शवरी भीलनी गनिका
वेस्या इत्यादि जो हैं सो इस महा कठिन संसार स
मुद्र से सहजे हीं पार होयगई हैं और देखिये कि अ
जामिल से जे से महा पापी और वालमीक जे से

कि सो न हरी की भक्ती परम चतुर जामाता रात्री दिन मन वचन काया करके भगवान के भजन और भगवान के दास संत भक्तों की और अतिथी ब्राह्मणों की सेवा मे लीन रहता था तब एक दिन भगवान के लिये पुष्प लेने को कहीं बाहर जो चला गया तो मारग मे क्या देखता है कि शरीर को गोपीचंदन मले हुये और गले मे तुलसी की माला पहिरे हुये कोई साधु मरा हुआ पड़ा है तिस को म ... संत और अनाथ ब्राह्मण जान कर कि रस्ते मे चलता हुआ मर गया है अपने हृदय मे विचार करने लगा कि इस अनाथ का संसकार करना कोटि यज्ञों का फल है और लोक परलोक मे सुजस के देने वाला है ऐसे विचार कर तिस शव को अर्थात मरे हुये संत को पीठ पर उठाय लिया यद्यपि तिस को बहुत ही खेद और श्रम पाया तद्यपि ल्याय कर के विधि अनसार सनमान से तिस को दाग्ध कर दिया जैसे पिता के दाह की रीती पुत्र को कही है जामाता ने तैसे हीं सब करम किया तब तहां और वे ब्राह्मण जन जो थे सो तिस की करनी को देख कर अपने अपने सब निंदा करने लगे कि देखो इन के से महाप्रधान मुनी का शिष्य था ... इस जड़ने इन क्या नीच करम किया है ॥२॥ चौपाई ॥ रे रे अधम सुबन अस काहा ॥ सठ इह साधु कवन मृत राहा ॥ कीन दग्ध तुम बिनुहिं विचारे ॥ अब पै कति गत होइ हमारे ॥ भयो अधम पातिक भागी ॥ दोष लगाय दीन तिन त्यागी ॥ जामाता तिन कर सुनि बानी ॥ मानत भयो विपुल हिय हानी ॥ भलो करत भल लीन बुराई ॥ निरत आश्रम निज आई ॥ शोक दीन त्यागी ॥ नारायण सुमरण लव लागी ॥

परति सयन करि रयन विहाई॥ दूसर दिवस प्रात उठि जाई॥ करि सनान संध्यादिक करमा॥ कीन्यो नित्य नेम निज धरमा॥ त्रितिय दिवस गुन्यो मन माहीं॥ अब निज सकल धाम धन काहीं॥ संतन कहं सब देहु लुटाई॥ चतुरथ दिवस भक्त हरषाई॥ विविध भांति भोजन बनवाये॥ जहं तहं दीन्यो निमंत पठाये॥ वैस्नव सकल निमंत्रन ताहा॥ सुनि सुनि कर हिं वदन उछाहा॥ को अस सुपच तासु गृह जाई॥ भोजन करहिं सुधरम विहाई॥ मंद कुकरम कीन जग माहीं॥ हम तजितासु अन्न अहवाहीं॥ कर सपर्स इत्यादिक त्यागा॥ जान्यो अधम पतित हत भागा॥ जब अस भयो तास तिसकारा॥ लाजित मानि सोक उर भारा॥ चिंता रत निकेत अकुलाई॥ चारहु चरन भगवन चित लाई॥ ~~...~~ भरि भरि मनत रुदन दृग वारी॥ अब का करहुं भक्त भयहारी॥ सोरठा॥ अंत्रजामि भगवान॥ परि स्रम भक्त विचारि उर॥ तासु वदन सनमान॥ सवने कीन प्रबोधप्रभु॥ २॥ टीका॥ फिर कहते हैं कि अरे अधम गवार इह मरा हूआ साधू भेषको नरहा मंदतैने विचारे और देखेविना ही इसको लेजायकर के दगध कर दिया है अव मूढतूं हमारी पंकती से वाहिर है तैने वडा भारी पाप किया है ऐसे दोष लगाय करके वैस्नवों ने तिसको अपनी पंकती से ~~...~~ दिया तव जामाता तिन वैस्नवों का कथन सुन कर हृदय मे परम ग्लानी मानकर कहने लगा कि परिलियेमलाई करते को बुराई का फल प्रापत होयगयाहै ऐसे सोक कर के कलता हूआ अपने घर मे चला आया और अन्न जल सव त्याग कर भगवान के चरनों मे चितोको लगाये हूये प्रथवी पर ही शयन करके रयन वतीत करी दूसरे दिन प्रात काल ही उठ

करके सनान संध्यादि अपना नित्य करम जो है सो सब किया तब तीसरे दिन हृदय मे विचार किया कि अब अपने घर का सब सु धन जो है सो सब संतों को खवाय देऊं और आप निसकाम होय कर के भगवान का भजन करे ऐसे विचार कर चौथे दिन को घर मे अनेक प्रकार के भोजन व्यंजनो की रचना करकर जहां तहां नगर ग्रामों विखे नेवता जो है सो पठाय दिया तब जहां जहां तिसका निमंत्रण अर्थात नेउता जाता है तहां तहां हीं सब वैस्नव बड़ी हासी कर कर कहते हैं कि भाई ऐसा कौन अधम मनुष्य होवेगा कि जो उसके घर मे जाय कर भोजन पावे और अपने धरम का नास करें तिस भेद ने नीच करम जो किया है तिस तें हमने अपनी पंकती से बाहिर कर दिया हुआ है अब मूढ बड़े भारी पाप का अधिकारी होय रहा है खाना पीना तो और बात है हम तिस के साथ सपर्श मात्र भी नहीं कर सकते हैं इस प्रकार जब सब वैस्नवों ने तिस का तिरसकार किया तब परम लज्जा और शोक को प्रापत भया हुआ [illegible] और कलेश मान कर घर मे न्यारे जाय कर के बैठ गया तहां भगवान के चरनो मे चित्त को लगाय कर और रुदन के जल से नेत्र भरभर कर दीनबंधू के आगे प्रार्थना करता है कि हे मनों के भय को दूर करने वाले भगवान अब मै क्या करूं गा जब इस प्रकार अपने भक्त को दुखी भये हुये देखा तब अंतरजामी दीनानाथ तिस का मन विचार कर के कि देखो इसने सब पूर्व का अपना सब घर लगाय कर के वैस्नव संतों के निमित्त नाना भोजन और व्यंजन बनवाये हैं बड़ी प्रीती

अथ जामाता चरितं

सोरठा॥ रामानुज निधि ज्ञान॥ जामाता शिष तासु रत। निरत भक्ति भगवान॥ कथा मनोहर जासु मे॥ करऊं कथन अब सोय॥ मोह हनन मंगल करन किये श्रवण जहि होय॥ संतत भगवन भक्ति दृढ॥ चौपाई॥ अस हरि भक्त निपुण जामाता॥ निशि दिन भजहिं रामसुखदाता॥ हरिजन भक्त संत महिदेवा॥ मन वच काय करहिं नित सेवा॥ एकदिवस हरि हेत प्रवीणा॥ लेन प्रसून गवन वन कीनो॥ बहिर ग्राम मारग तब देखो॥ काहू पस्यो पुरुष मृत भेखो॥ गोपी चंदन लिपत सरीरा॥ अरु वनमाल ग्रीव गत चीरा॥ वेस वभक्त संत दुज जानी॥ साधु अनाथ पथिक मृत जानी॥ किरि विचार अस मानस वरना॥ इहि कर संसकार अब करना॥ कोटि यज्ञ फल नाहिन संसा॥ ~~...~~ लोक ~~...~~ सुजस परलोक प्रसंसा॥ अस विचारि शव सीस उठावा॥ यद्यपि विपुल खेद श्रम पावा॥ तद्यपि ल्याय भूमि समसाना॥ कीन दाध संजुत सनमाना॥ जिमि पितु दाह रीत सुत वरनी॥ तिमि सब भक्त कीन तहि करनी॥ रहे आन तहे वेस्नव जोई॥ ■ अस अब लोकि तास गति सोई॥ सोरठा॥ करन लाग सब कोय॥ तहि निंदा अति द्वेष जुत॥ अस मुनिवर शिष होय॥ इह कुकरम का कीन सठ॥ १॥ टीका॥ ~~...~~ रामानुजजी जो एक ज्ञान की निधी बड़े संत महातमा ~~...~~ तिनको भगवान की भक्तीमे प्रवीन ~~...~~ जामाता नामकरके प्रसिद्ध हो भया अब तिसकी मनोहर गाथा किजिसके श्रवण करनेसे निरन्तर करके ~~...~~ हृदयमे भगवान की भक्ती दृढ होती है कथन करता हूं कहते हैं

(left margin, vertical) पूर्ण

(right margin, vertical) [illegible]

रह उच्छिष्ट अर्थात जूठा भोजन मेरे घरमें है र
ह पावना है इतो पाय लेवो अस प्रकार जब स्वपन
देखा तब प्राकाल उठकरके और हृदयमें विचार
करके आनंद में मगन भया हूआ घरमें मारजन जो
झाडू इत्यादि उजालताई है सो सब करता भया ऐसे
सं घरको पवित्र करके फिर नदी पर सनान करनेको
चला गया तहां संध्या सनान करके फिर घर में आ
यकर प्रीती भक्ती से भगवान का पूजन किया तिस
तें उपरांत फिर बडे सुंदर केमलपत्र और द्रोणा जो
दूने और जलकरके पूरित किये हूये अने कघट
जो घडे हैं सो ल्याय करके घरमें जहां तहां राखदि
ये और भी जोजो वसतू उचित थी सो सब ल्याय
राखी तब नगरके वैसनव तिसके परिश्रम और
सब समाजके जोडनेको देखकर परस्पर विचार क
रके कहते हैं कि भाई सो ऐसा कौन पतित अर्था
त पापी है कि जो इसके घरमें आय करके अन्नज
ल खानपान करेगा इस मूरखने तो इह वृथा ही
यतन और श्रम किया है इसका भेद हमको कुछ
जान नहीं पडता है तब इतनेमें तिसी समय आ
काश मारग विखें नाना प्रकार की सुंदर सुखधु
नी जो है सो होने लगी तिसके श्रवण करके
जामाता परम हरषको प्रापत भया और हृद
यमें जानभया कि भगवान के भेजे हूये सोई वै स्न
व संत अब आय गये हैं ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ ~~बिलम्ब~~
~~[illegible]~~ आवत देखि संत नभ झारी ॥ मे
अचरज बश वैसनव सारी ॥ कृपासिंधु भगवा
न पठाये ॥ हरषत भक्त भवन चलि आये ॥
भनत वचन मानस सुखदाता ॥ परि हरि बि
लम ब्रह्म जामाता ॥ जेवनार तुम जवन बनाई ॥

सो हम कहें अब देहु जिमाई॥ दीन थाल कर सास
न एहू॥ हम कहें करन पाक तुव गेहू॥ जबँ वचन
वदन तिन वरना॥ तुरत पखारि चारु कर चरना॥
सादिर भोजन दीन जिमाई॥ प्रेम प्रीति कछु बरनि न
जाई॥ तब ग्रामीन वैस्नव जोई॥ पूछिन तिन हिं
च कित चित होई॥ कहि तें आय कवन तुम साधू॥
इह तुमार कस बन्यो अराधू॥ तिन समान तिन कर
जिय जानी॥ भन्यो एक वैस्नव मुख वानी॥ तुम दे
षी हरिभक्त प्रवीना॥ हम तुमार नहिं चाहत की
ना॥ भसो दुरत दरसन दुखदाई॥ अस कहि संत
भक्त जे दुराई॥ गये मुदित वैकुंठ सिधारी॥ तब ग्रा
मीन वैस्नव सारी॥ जामाता कर आश्रम दीना॥ आ
य प्रणाम दंडवत कीना॥ भोजन हेतु वहुरि कर
जोरी॥ विनय वदन कछु कीन न थोरी॥ अस प्रकार
जब जाचिन कीना॥ लजित पाक कर जो सब दीना॥
सोरठा॥ तब भाख्यो जामात॥ अब उच्छिष्ट उन
कर रह्यो॥ कछु भोजन रह तात॥ इह वा है
तब लेहु तुम॥ ८॥ टीका॥ तब तिन को आवते दे
खकर नगर के वैस्नव सब अचरज के वश होय
गये सो भगवान के भेजे हुये संत आनंद पूर्वक
जामाता के घरमे आय कर वडी सुखदायक
वानी से कहने लगे कि हे भक्त अब चिंता व
को त्याग कर जो भोजन तैने वनवाया हुआ
है सो हम को [struck out] वैठार कर जिमाय दे क्यों
कि दीन वंधु भगवान की आज्ञा से तेरे घर मे भो
जन पावने है॥ जब वैस्नव संतों ने ऐसे कहा
तब जामाता ने तुरत तिन के चरन प्रक्षालन कर
वाय कर अपने जल से धुलाय कर वडे आदर स
तकार से भोजन जिमाय दिया तिस समय का प्रे
म और प्रीति जो है सो कुछ कही नहीं जाती

२०४

तब नगर के वैस्नव जो थे सो तिन वैस्नवों को पूछने लगे कि साधू तुम कहां तें आये और कौन हो इसने तुमारी कैसे आराधना करी और तुम को कैसे बुलाया है ऐसे सुनकर के तिन में से एक वैस्नव तिन ग्रामीन वैस्नवों को तृण के समान जान कर कहने लगा कि अहो मंद तुम इस भगवान के भक्त के द्वेषी अर्थात विरोधी हो मूर्ख तुमारा दरस करना भी धरम नहीं है और ना तुमारे साथ कोई बातें करनी योग्य है ऐसे कथन करके वे हरी भक्त वैस्नव जो थे सो जामाता से विदा होय कर अपने बैकुंठ लोक को चले जाते भये तिन के पीछे सब नगर वासी वैस्नव आय करके बड़े दीन भाव से जामाता के चरनों पर दंडप्रणाम करते भये और हाथ जोड़े हुये मुख से अनेक विनती बड़ाई कर कर भोजन जो है सो मांगने लगे इस प्रकार जब तिनों ने दीन होय कर के भोजन मांगा तब जामाता आनंद में मगन भया हुआ कहने लगा कि भाई अब तो उन वैस्नवों का उच्छिष्ट अर्थात जूठा भोजन घर में है जो कदाचित इन चाहिये तो ले लेवो ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ सुनि अस वचन वैस्नव सारी ॥ देउ देउ सब उठे उचारी ॥ तब जामात मुदित मन होई ॥ रह्यो शेष भोजन सब जोई ॥ सादर तिन कहं दीन जिमाई ॥ मन्यो वचन अस उर हरषाई ॥ आज कृपा यदु सिंधु भगवाना ॥ सब विधि राख्यो मोर सनमाना ॥ आगम निगम सत्य प्रभु गाये ॥ सदा दीन हित करन सुहाये तब ग्रामीन वैस्नव सारे ॥ करि भोजन जब सदन सिधारे ॥ पाछे परिपूरण पकवाना ॥ देखि सबन अचरज मन माना ॥ भाखत धन्य धन्य जामाता ॥ जो कर जगत भक्त सुखदाता ॥ सोरठा ॥ राख्यो मान महान ॥ दीन बड़ाई दीन लखि ॥ कृपा

ओर सन मानसे तिसको सुपने मै प्रबोध करने ल
गे अर्थात समुझावने लगे ॥ २ ॥ चौपाई ॥ चिंता सो
क करहु कछु नाहीं ॥ भक्त प्रात तोरे गृह माहीं ॥
आवहिं वैस्नव संत घनेरे ॥ मम वैकुंठ लोक तें प्रे
रे ॥ सो जब जेवनार करि जावहिं ॥ इह पश्चात स
कल सठ आवहिं ॥ तो पें याचिन करहिं सोई ॥ तब
तुम मन हु हरष जुत होई ॥ अब भोजन सूचे कछु ना
हीं ॥ रहो उच्छिष्ट मोर गृह माहीं ॥ अस प्रकार जब
सुपन निहारा ॥ उदय अरुन उठि कीन विचारा ॥ हर
षत परम प्रेम मन लीना ॥ सादिर सुदिन मारजन
कीना ॥ करि पुनीत मंजुल सब भवना ॥ बहुरि स
नान हेत द्रुत गवना ॥ मज्जन करत भक्ति मन लीना ॥
प्रेम सहित पूजन हरि कीना ॥ पत्रावली द्रोण दल
रूरे ॥ घट अनेक सीतल जल पूरे ॥ राखे सकल भ
वन निज ल्याई ॥ जे जें उचित समदाई ॥ वैस्नव
देखि तास ~~कृत~~ कृत सारी ॥ रहे परस्पर बात वि
चारी ॥ इहिं कौन पतित ~~नहिं जाना~~ मति हीना ॥ आय करहिं
भोजन जलपाना ॥ मूरख वृथा यतन श्रम कर
हीं ॥ हमरे मरम जान नहिं परहीं ॥ सोरठा ॥ ~~चारु~~
संख धुनि जोय ॥ भयो काल तहि गगन पथ ॥ ~~चारु~~
~~अवलाकरि~~ सुनत प्रबल निज सोय ॥ जामा
ता हरष्यो हृदय ॥ ३ ॥ टीका ॥ भगवान कहते हैं कि
हे भक्त तू हृदय मै चिंता और सोक मत कर प्रात
काल विषें तेरे घर मे मेरे प्रेरे ■ हूये वैकुंठ ~~लोक~~
लोक सें वैस्नव संत जो हैं सो बहुत आवेंगे और
वे जब भोजन पायकर के चले जावें गे तिन के पी
छे फिर इह मूढ ईर्ह्ये के वैस्नव जो हैं सो आप ही ते
रे घर मे आयकर के भोजन मागेंगे तब तुम मौन होय
होय रहना और जब लज्जित भये हूये बारबार कहें गे
तब तुम कहियो कि अब सूचा भोजन तो नहीं है

सिंधु भगवान॥ भये गुनत अस तासु शिष्य भया॥

टीका॥ तब ऐसे तिस कथन सुनकर सो देषी वैष्णव कहने लगे कि हे भक्त प्रधान अब जै स्वामी जन हैं कृपा करके तैसा हीं देको और हमारे अपराध को क्षमा करो तब जामाता ने बड़े आनंद से जो पीछे भोजन बचा हुआ था तिनको जिमाय दिया फिर हरष से प्रसन्न होय कर कहने लगा कि आज कृपा सिंधु और दीन बंधू भगवान ने मेरा सब प्रकार करके मान राखा है वेद और पुराणों ने भगवान कृपानिधान को सदैव दीनों पर हित करने वाले सत्य करके गायन किये हैं तब नगर और ग्रामों के वैष्णव लोग थे सो सब भोजन पाय करके जब अपने अपने घरों को चले गये तब पीछे फिर भोजन पकवान सब परिपूरण देखकर लोग बड़े अचरज के वश होय गये और मुख से अनेक प्रकार श्लाघा बड़ाई करकर कहते हैं कि यह भक्त प्रधान जामाता जो है सो धन्य है कि जिसको भगवान कृपानिधान ने अपना दीन जान कर ऐसा मान राखा और जगत में सुजस का पात्र बनाय दिया है ऐसे विचार करके सब लोग जो हैं सो तिस जामाता के शिष्य बन जाते भये नाभादासजी कहते कि हे संतो इस प्रकार इस जामाता की गाथा कि जिसके श्रवण करने से भगवान की भक्ती हृदय में दृढ़ हो जाती है मैं ने आप के आगे गाय कर के दई है॥१२०॥ इति श्री भक्ति विनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती महात्मे भाषा टीकायां जामाता चरित वरणने नाम सप्तदशो॰

रने सें भगवान कृपानिधान के चरन कमलों मे प्रेम उपजकर हृदय मे भक्ती दृढ होती है जगननाथ पुरी के पास उतकल देस जो है तिस मे विल्व विंद नाम करके एक ग्राम जो था तहां ब्रह्मणों की उतकल जाती विखें एजयदेव नामा ब्रह्मण प्रसिद्ध होते भये सो कैसे कि रात्रीदिन हरी सुमरन में लीन निरमल चित होय करके सुद्ध कृष्ण कीर्तन भजन जो है सो करते रहते थे काम क्रोध इत्यादि विषय विकारों से रहित थे तव तिन के निकट एक और ग्राम था तहाँ देव शरमा नाम करके ब्रह्मण वास करता था परन्तु संतान से हीन और अपने धरम मे प्रवीन था। समय पायकर के सो ब्रह्मण श्री जगननाथ स्वामी जी के दरसन को चला आया था तहां प्रीती भक्ती से आयकर और भगवान के सनमुख जायकर भेटा जो है सो राख देता भया और हाथ जोड कर विनती करने लगा कि हे दीनबंधू जो आप की कृपा प्रसाद से मेरे घर मे संतान होतो मे प्रथम हीं पुत्र वा पुत्री जो होवे सो आप को हीं नवेदन करूंगा अर्थात चढायदेऊंगा इस प्रकार विनती और प्रण करके ब्रह्मण आनंद पूर्वक अपने घर को चला आया तव समय पाय करके तिस की स्त्री गरभवती होयकर बडी सुंदर सील की निधी कन्या जो है सो जनमती भई ॥ २ ॥ चौपाई ॥ तहि उपरांत सील सुभ साधू ॥ गुन निधान भगवान आराधू ॥ जनम सुत तहि रुचिर अवासा ॥ अस प्रकार कछु काल वितासा ॥ तव सु मरन तो के उर आका ॥

ऋीदेवशर्मा विप्रक

मै न प्रभुहिं सेता न चढावा॥ अस विचारि सुत सुता समेता॥ ~~अस जीय जुत गागिविप्र न चेता~~॥

अरु भामनि जुत तजत निकेता॥ श्रम करि जगन नाथ पुरि चाहू॥ आवा भक्त विप्र वृत धारू॥ सन मुख ठाढि रुचिर हरि द्वारा॥ जोरि कर न जुग कर त जुहारा॥ भनत कृपाल तोर वर दीना॥ मै जन जथा उचित सव लीना॥ दीन नाथ पूरव कर एहू॥ उपजी सुता सुभग मम गेहू॥ सो अव करहु निवेदन तोरे॥ लीजिये कृपा भवन प्रभु मेरे॥ अस कहि सुता लेत निज पानी॥ दीन चढाय हरिहिं सुख मानी॥ ता सु देखि अस दृगन पुजारी॥ लागे पूछन वदन उचारी॥ तव प्रसन्न मानस दुज भाखा॥ कहि वृतांत सव प्रकट सुनावा॥ ~~कहत~~ वहुरि प्रणाम कर तदुत ~~थ~~ गवना॥ आवा निकसि वहिर हरि भवना॥ भई रैन मग भोजन कीना॥ लेतहिं सयन सपन अस चीना॥ दीन वंधु प्रणतारत हरना॥ कृपा निकेत भक्त सुख करना॥ वोले वदन वचन गंभीरा॥ सुनहु देव सर मन मतिधीरा॥ मै प्रसन्न तोपै व्रत धारी॥ इह सुशील जेसुता तुमारी॥ मोरे तुम हुते रखजुत दीनी॥ अंगीकार विप्र मै कीनी॥ पै अव मोर रजायस एहू॥ जो जयदेव विप्र गुण गेहू॥ सो मेरो दृढ भक्त प्रवीना॥ मन वच काय रुचिर व्रत लीना॥ मै जानहु तहि आप न काया॥ तो के हृदय विदत मम माया॥ तुम परिहरि संसय सव ताहू॥ देहु विप्र निज सुता विवाहू॥ सोरठा॥ अस प्रकार जव कीन॥ सपने तासु प्रवोध हरी॥ उहा पूज कन चीन॥ देव सपन रजनी प्रकट॥ २॥ टीका॥ तिसतें उपरांत वडे सील

साधु गुणों की निधी पुत्र जो हैं सो तिस के घर में जन
मते भये ऐसे जब कुछ काल व्यतीत होय गया त
ब तिस को सुमरण भया अर्थात याद आया कि मैने
भगवान को संतान नहीं चढाया ऐसे विचार कर
पुत्र पुत्री और स्त्री के सहित घर को त्याग कर
सो देवसरमा ब्राह्मण श्री जगन्नाथ स्वामी की
पुरी में चला आया तहां श्रम को निवारण करके
फिर भगवान के भवन के द्वार में स्थित होय कर दो
नो हाथ जोडे हुये विनती प्रणाम करके कहने लगा
कि हे दीनानाथ मैने आप का वर दिया हूआ जैसी
इच्छा थी तैसा पाय लिया है अब कृपानिधान
इस प्रथम ही उतपन्न भई हुई कन्या जो है सो
प्रभू मैं तुम को निवेदन करता हूं अर्थात चढावता हूं
आप कृपा करके ग्रहण करिये ऐसे विनती करकर
कन्या को तहां भगवान के भवन में चढाय दिया
जब पुजारियों ने मरम जो भेद है सो पूछा तब ति
स ने सब वृत्तांत प्रकट करके सुनाय दिया और
फिर प्रणाम करके आप भवन के बाहिर निकल
आया और अपने मारग को चल पडा तब जाते
जाते जहां रात पड गई तहां आसन लगा पक
र के भोजन किया और सब ने पाया फिर तहां ही
सोय गये तब भगवान तिस ब्राह्मण को सुपने में
कहने लगे कि हे बुद्धी और धीरज के धाम देवसरमा
मैं तेरे पर अत्यंत प्रसन्न हूं और इस सुशीले तुमारी
कन्या जो है सो मैंने आनंद पूर्वक ग्रहण कर ल
ई है परन्तु अब मेरी इच्छा जो है कि जो जयदेव
नाम करके ब्राह्मण मेरा परम प्यारा भक्त वैरागी
कर के एकमें तहां [illegible] रहे है और मेरी माया को भली
प्रकार जानता है तुम हृदय के संशय को त्याग करके
इस कन्या जो है सो तिस को विवाह देवो इस प्रकार
जाय करके

अथ जयदेव चरितं

चौपाई॥ अब मै भक्ति महातम सोहा॥ कारहौं कथन
आन मन मोहा॥ जासु सुनत भगवन पदनी के॥
उपजहि प्रेम भक्ति दृढ जीके॥ जगन नाथ पुरि
प्रांत सुहावा॥ उतकल नाम देस जोई गावा॥
तहि मै वंदुविल्व अस नामा॥ रह्यो एक सुं
दर सुभ ग्रामा॥ उतकल जाति दुजन गण माहीं॥
व सहीं एक विप्रवर ताहीं॥ जहि जयदेव नाम
विताना॥ विद्या निपुण धरम गुणखाना॥ निसि
वासर सुमरण भगवाना॥ कथा प्रसंग कीरतन
गाना॥ करत रहत निरमल चित होई॥ विषय
विकार मारमध खोई॥ तहि सामीप आन इक ग्रा
मा॥ विप्रदेव सरमा अस नामा॥ तहेंव स
हिं संजुत निज नारी॥ दुज अन पत्य रुचिर व्रतधारी॥
जगननाथ दरसन हित तेहू॥ आवा विप्र पूरि उर
नेहू॥ लखि मुख कृपा सिंधु भगवाना॥ करि प्रणाम
जोरत जुग पाना॥ सादिर राखि भेट कछु आगे॥
विनय कीन मानस अनुरागे॥ कब हूं कि कृपाना
थ गृह मोरे॥ उपजहिं जो प्रसाद कछु तोरे॥
सो संतान प्रथम प्रभु पाई॥ तोरे करहुं निवेदन आ
ई॥ अस प्रण करत वंदि पद गवना॥ आवा हरषि
विप्र निज भवना॥ सोरठा॥ तब कछु अवसर
पाइ॥ प्रथन ता सदु जवर भवन॥ सुभ सरव सु
खदाई॥ जनमी कन्या सील निधी॥२॥ टीका॥
नाभादास कहते हैं कि हे संतो अब और भक्ती का
महातम जो है सो आपके आगे गायन करता हूं
रह कैसा भी महातम है कि जिसके श्रवण कर

आज्ञा को सीस पर धारन करके अपनी कन्या
को लेकर जहां भक्त प्रधान जयदेव जी निवास
करते थे तहां चला आयता भया तिसने जय
देव भक्त की कैसी मुद्रा देखी तब कि मानो शांती
रस जो है सो रूप धार कर बैठा है और परण
जो पत्र हैं तिन करके रची हुई जिस की कुटिया
और दारिद्री सा बड़ा निर्बल और दुबला शरीर
परंतु निरपेक्ष जो किसी वसतूं इच्छा नहीं भ
गवान के ध्यान मै लीन और वेद विचार मै प्र
वीन ऐसे तिनको प्रसन्न मुख देखकर के देव
सरमा प्रणाम करके कहने लगा कि हे भक्त
उत्तम यह पदमावती नाम करके मेरी कन्या जो
है सो मै भगवान जगन्नाथ स्वामी की आज्ञा
अनुसार तुम को देता हूं हे भक्त प्रधान तुम इस
को अंगीकार करलेवो यह तुमारे चरनों की
दासी है इस प्रकार देवसरमा की वाणी सुन
कर जयदेव प्रसन्न होय करके बड़े मधुर वच
नों से कहने लगे कि हे ब्रह्मण इस कन्या दा
न के ग्रहण करने मै सामर्थ नहीं हूं क्योंकि
मै महादारिद्री धन संपती से हीन अतसे
दीन और माता पितासे वरजित हूं अर्थात
मेरे माता पिताभी नहीं हैं ॥३॥ चौपाई ॥ तोते
जाहु विप्र तुम ताहां ॥ सुता समेत सदन निज जा
हो ॥ जगन्नाथ सासन मनि भाई ॥ कस वच
हु मोरे दुज आई ॥ सपनेहु मै न करहु सूई का
ना ॥ यह विवाद सब वृथा तुमारा ॥ देवसरम तब
सकल प्रसंगा ॥ भाख्यो आय पूजकन संगा ॥ इन
कहे तुम हु तात समुझाई ॥ हरि नदेस सब देहु

सुनाई॥ तब तिन दीन सकल समुझाई॥ हरि न देस सु
दर सुखदाई॥ पै जैदेव मन्यो कछु नाहीं॥ देव सरम
सोचत मन माहीं॥ सुता बोलि निज निकट बिठाई॥
कहि मृदु बचन विविध समुझाई॥ इह स्वामी तुव प्रान
अधारा॥ पूजन उचित भक्ति सतकारा॥ सदा चलहु
इनकर अनुसारी॥ सुता होहि कल्यान तुमारी॥ पति
सेवत सुंदर ब्रत धारी॥ लेहि अवस सुख संसति ना
री॥ अस कहि कीन पतनि जुत गवना॥ द्विज पें
छोडि सुता निज भवना॥ तब जयदेव देखि तन तासा॥
सहज बदन मृदु बचन प्रकासा॥ भामिनि तुमहुं क
वन हित लागी॥ बैठी इहां सदन निज त्यागी॥ करी
किंहीं बहु बिपुन बराहू॥ हेम समीर अतप अति
दाहू॥ घोर बिपति दुख प्रान न हानी॥ निज गृह
गवहु बचन मम मानी॥ अस भ्याबन जव गा
थ ~~[illegible]~~ उचारी॥ द्विज जयदेव भक्त ब्रतधारी॥ प
दमावती जोरि जुग [illegible]नी॥ लागी भनन वदन
मृदु बानी॥ भगवन विदत जान सब कोई॥ कन्या
जगत जनक देय होई॥ सो मोहि तुमहिं सौं पिनि
जगवना॥ अब ~~प्रभु सहु विपुन मन भवना॥~~ इह
विपुन मोर प्रभु भवना॥ तांते तजहु ख्याल जनि
मोही॥ जानहु प्रान नाथ प्रभु तोही॥ कंकरि
चरन चारु ~~[illegible]~~ प्रन ठानी॥ सेवा करहुं करम मन
बानी॥ तासु बचन अस रुचिर सुहावा॥ सुनि
जयदेव श्रवण सु पावा॥ सत्य जानि तेंकर
सव काला॥ अब कस तजहुं मौन धरि राहा॥
बहुरि मनत उर हरष उमेगा॥ अब मोरे
विधिवत इहि संगा॥ करन विवाह उचि
त जग राहा॥ अस विचारि द्विज नायक
काहा॥ चलहु सुशील जनक निज घर हूं॥

फनि गृह लतुव विधिवत करहू॥ पदमावती सुन त असगाथा॥ पितु गृह गवनि विप्रवर साथा॥ श्राय वृतांत सकल समुझावा॥ सुनत देवसर मन सुखपावा॥ विधिसंजुत तव भयो विवाहू॥ पूरि रह्यो उरमाहनि नाहू॥ विदा लेत जुग प्रेम श्रघाये॥ गवन करत श्रा श्रम निज श्राये॥ बढत जात देवति सुनाई॥ दिनदिन प्रीति रीति सुखदाई॥ नृत्यगान पूजन हरि सेवा॥ करहिं प्रेम पूरत जयदेवा॥ एक दिवस उर चिंतन ठाना॥ मैं विरचत पद गुनिजन श्राना॥ गावहुं नित्य प्रेम जुत होई॥ श्रव कृत करहुं ललित निज कोई॥ श्रस दुजप्रवर गुनत निज जी के॥ विरचन लग्यो ललित पद नीके॥ दोहा॥ रस के प्रेम सागर रुचिर ग्रंथ गीत गोविंद॥ तासप्रे मपावन सहत लग्यो करन प्रबंध॥४॥ टीका॥

तो ते हे ब्रह्मन तुम इस अपनी कन्या को लेकर जहां से आये हो तहांहीं फिरकरके घरको चले जावो भाई अब जगन नाथ स्वामी की आज्ञा कहि कर मेरेको क्यों वंचते हो अर्थात क्यों छलते हो मैं तो इस वारता को कदाचित भी सुईकार नहीं करूंगा तुम वृथा ही विवाद जो झगडा है सो मत करो तव देवसरमा ने आय करके भगवान के पुजारियों को सव वृतांत सुनाया कि वे नहीं मानते हैं तव पूजकों ने ततकाल आय करके जयदेव को जैसी भगवान की आज्ञाथी तैसी सनाय देई परंत जयदेव एक नहीं मानते भये तव देवसरमा ने अपनी पुत्री को पास विठाय कर बडी मधुर वाणी से अनेक प्रकार शिक्षा दे दे कर कहा कि हे पुत्री इह जयदेव जी तेरे पती स्वामी हैं और तेरेको इह सदेव पूजने के योग्य हैं

जब दीन बंधू भगवान ने तिस को स्वपने मै प्रबोध किया तब ऊहां जगन नाथ स्वामी के भवन मै पुजारियों ने भी रात्री को एही स्वपन देखा ॥२॥ चौपाई ॥ देव सरम तब प्रात पराई ॥ कियो प्रणाम भवन हरि आई ॥ दीन नाथ कर जेवन पुजारी ॥ तिन सन सब निसि कथा उचारी ॥ उनहुं स्वपन निज दीन सुनावा ॥ परम आनंद परस्पर पावा ॥ तब दुजवर उर हरष अघाई ॥ पाय तुरत हरि भगतन रजाई ॥ लिये संग निज चारु कुमारी ॥ चल्यो नदेस सीस प्रभु धारी ॥ जहां भक्त जयदेव सुहावा ॥ तहां तुरंत कुटि जुत आवा ॥ सुद्ध भक्त देखि दृग केसे ॥ बैठो मनहुं शांति रस जैसे ॥ परण कुटीर रुचिर जहिं गेहा ॥ दारिद निबल कृसा कछु देहा ॥ पै निरपेक्ष निरत हरि ध्याना ॥ निगम विचार निपुण मतिमाना ॥ अति प्रसन्न आनन दृग देखी ॥ करि प्रणाम जुत हरष वसेखी ॥ भनत वचन अस दुजवर धन्या ॥ पदमावती मोर इह कन्या ॥ जगननाँथ सासन अनुसारी ॥ मै तोहि देहुं भक्त व्रतधारी ॥ दोहा ॥ तासु कथन सुभ सुनत अस दुज जयदेव प्रवीन ॥ बोले वदन प्रसन्न मन गिरा मधुर रसलीन ॥ सुता दान तुव गृहण करहुं मै समरथ नहिं नेहु ॥ दारद रत पितु मात गत नहिं न धरनि धन गेहु ॥३॥ टीका ॥ तब देव सरमा प्रातःकाल होते फिर परत करके भगवान के भवन मै आय कर प्रणाम करता भया और पुजारियों के साथ स्वपने का वृतांत सुनाय देता भया तिनों ने भी अपने स्वपने का प्रसंग तिस को सुनाय दिया ऐसे परस्पर बड़ा सुख और आनंद जो है सो पावते भये तब देव सरमा ने तिन के पूजकों के कहे अनुसार भगवान की

प्रेम के भरे हुये वचन सुनकर जयदेव जी बडे प्र
सन्न होजाते भये और तिस का कथन सब सत्य जा
नकर मौन होय गये मन मे कहते हैं कि अब इस
को कैसे त्यागूं ऐसे विचार कर इसी सिद्ध किया कि
अब इस के साथ विवाह करना ही योग्य है तब तिस
को कहने लगे कि हे सुशीले अब तू अपने पिता के
घर मे चल तहां विधी अनुसार तेरे साथ मैं विवा
ह करूंगा ऐसे तिन का वचन सुन कर पदमाव
ती आनंद से तिन को साथ लिये हूये पिता के घर
मे चली आई और तहां आय कर के सब वृतां
त सुनाय देती भई तब देव सरमा तिस का पि
ता जो है सो सुन कर के परम हरष को प्राप्त भ
या और सुंदर सुभ दिन देख करके तुरत ही विवा
ह पढाय दिया तब आनंद पू
र्वक जयदेव और पदमावती दोनो स्त्री भरता
तहां से विदाय होकर अपने आश्रम को चले
आवते भये तिन की परस्पर प्रीती जो है सो दिन दि
न अधिक ही होती जाती भई जयदेव जी अपने
नियम अनुसार रात्री दिन भगवान कृपानिधान
के पूजन सेवन और नृत्य गायन मे लीन रहते
थे तब एक दिन तिन के चित मे ऐसी आई कि
मैं जो और कवी जनों के रचे हूये पदों को गायन
करता हूं प्रेम भव से
मधुर और ललित पदों की रचना कर कर दीना
नाथ के आगे गायन करूं ऐसे चिंतन
कर कर हृदय मे गणपती देव को वंदना कर के
प्रेम रस का समुद्र गीत गोविंद
जो है तिस के मधुर और पदों की रचना करने
ललित

लग जात भये ॥४॥ चौपाई ॥ दिनदिन परम मधुर
[illegible]म न भाये ॥ निरतत नवल ललित [illegible] पद गाये ॥ रास
चरित मध रुचिर प्रसंगा ॥ [illegible] एक दिवस निकस्यो
अगमंगा ॥ मरु मान वति राधा प्यारी ॥ तब मनायवे
हेतु मुरारी ॥ अनेक वचन नम्र रस बोरे ॥ राखेउ च
रन सीस प्रिया मोरे ॥ इह प्रसंग जयदेव विचारी ॥ प्र
भु अपमान जान जीय भारी ॥ धरि न सक्यो अनु
चित पद काहीं ॥ लेखनि पत्र छाडि द्रुत ताहीं ॥
गये सरित तट करन सनाना ॥ इहां विचारि धरेउ
पद आना ॥ पाछे कृष्ण देव प्रभु आये ॥ धरत रू
प जयदेव सुहाये ॥ पदमावति कहं कृपा निधाना ॥
हरषि वदन अस वचन बखाना ॥ तजिवि लेख
भामनि अतुराई ॥ मोरे पुस्तक देहु लयाई ॥
तब तिहि दीन उतायल आनी ॥ कौतुकि कृपा
नायनिज पानी ॥ सोऊ जवन पद दुजऊ नदी
ना ॥ धरत तुरंत गवन प्रभु कीना ॥ तब जयदेव
आय निज गेहू ॥ करि हरि पूजन पूरि सनेहू ॥
अति अनंद जुत भोजन कीना ॥ निज कृत भये
छूट बहुरि लीना ॥ देख्यो लिखत पत्र पद सोई ॥
संकित [illegible] यऊ छाडि दुज जोई ॥ [illegible] नत
वदन [illegible] उर अचरज छयो ॥ इह पद इहां क
वन लिखि गयौ ॥ निज त्रिय [illegible] तें पूछत त्र
त धारी ॥ कौनै लिख्यो कहो तुव प्यारी ॥ पद
मावती सुनत पति बानी ॥ अति अचरज मान
सनिज मानी ॥ कहत प्राण नायक कछु तोरे ॥
को भ्रम भयो सोच जिय मोरे ॥ जबहिं सनान
हेतु प्रभु धाये ॥ बहुरि तुरत पाछिल फिरि
आये ॥ सोरठा ॥ चारु पत्र कर लीन लिखे

नाँचद कछुक नुव॥ बहुरि गवन नदि कीन॥ ग्रस ग्रमकर कारन कवन॥५॥ टीका॥ तव दिन दिन ग्रप ने ललित ग्रौर नवीन रचे हुये पदों को ~~गायनकर~~ ~~के~~ प्रीती भक्ती से भगवान के आगे नृत्य करते रहते थे एकदिन रास चरित्र मे इह प्रसंग निकला कि राधिके जी ने मान किया ग्रर्थात रूठगई तो तिसके मनावने के लिये नंदलाल भगवान बड़ी नम्रता रसकी ~~~~ भीजी हुई वाणी से कहते हैं कि हे प्यारी तूं रहश्रपना चरन कमल मेरे सीस पर धरदे तव इस प्रसंग को देख कर ग्रौर प्रभू का ग्रपमान विचार कर जयदेव ग्रैसे ग्रयोग्य पदको ~~~~ लिख नहीं सकते भये तुरत तहीं पुसतक ग्रौर कानी को छोड़ कर उठकरके नदी के किनारे सनान करने को चले गये ग्रौर मनमें कहते जाते हैं कि इहां कोइ उचित पद विचार करके रा खूंगा ग्रैसे जव जयदेव जी चले गये तवपी छे तुरतहीं कृस्न परमात्मा ~~~~ जयदेव का रूप धार करते ~~~~ घरमे चले आये ग्रौर पदमावती को कहने लगे कि हे सुंदरी तूं विलंव को त्याग कर पुसतक जो है सो मेरे को ल्यायदे ग्रैसे सुनकर पदमावती ने तुरतहीं पुसतक ल्याय दिया तव कौतुकी भगवान ततकाल ग्रपने हाथ से सोई पद कि जिसको जयदेव ने ~~~~ शंकित होय कर नहीं लिखाथा लिखकरके ग्रपने धाम को चले जाते भये इतने मे सनान करके जयदेव भी ग्राय गये तिनोने घर मे प्रीत से भगवान का पूजन किया ग्रौर फिर ग्रानंद से भोजन पाया तिस ते उपरांत ग्रायकर के ग्रपनी काव्य कृत मे वृती लगाय देते भये जव पुसतक

तूं इन की आज्ञा के अनुसार रहना इस मे तेरी कल्या
न होवे गी हे पुत्री जो पती सेवत स्त्री होती हैं अर्थात
जो पती की सेवा करने वाली होती हैं सो से सार अनं
सुख जो है तिसको पावती हैं कि जिस सुखका
कवी नास ही नहीं होता है ऐसे पदमावती को समु
झाय और सिक्षा कर आप देवसरमा स्त्री के सहित
अपने घर को चला आया तव पीछे जयदेवतें दे
व सरमा की कन्या पदमावती को अपने पास बैठी हुई
देख कर कहने लगे कि हे भामनी तूं घरको त्याग
कर ई हां हमारे पास क्यों वैठ रही हैं सुश्री
ले तूं देख कि ईहां महा घोर वन और जिस वि
खे वडे भ्यानक हसती शिंह सरप वाराह जो
सूर और अत्यंत सीत तैसे ही पवन और दा
ध करने वाली महा धूप है तो सरव प्रकार कर
के प्राणों की हानी है और परम कलेश के देने वा
ला भ्यान है तूं मेरा वचन मान और उठकर के
अपने घर को चली जा तव इस प्रकार जयदेव
जी के वडे भ्यान क वचन सुन कर के पदमाव
ती जो है सो नम्र वाणी हाथ जोड कर विनती करने
लगी कि हे भगवन इस वारता को सव कोई जान
ता है जो कन्या का देना जगत मे पिता के आधीन
है जिसको चाहे देवे सो कृपानिधान पिता तो मे
रे को अव आप के आश्रय कर गया और आप
की दासी वनाय गया अर्थात आप को ही दे कर के च
ला गया है अव प्राण नाथ मेरा ईहां वला विखे
आप के चरनो मे ही घर है दया कर के अव मेरे को
ना त्यागिये अपनी किंकरी दासी जो है सो जानि के
मै मन वचन काया कर के आप के चरनो की
सेवा मै ही करूं गी ऐसे पदमावती के प्रीती और

जयदेव जी का पदमावती के साथ विवाह होकर रहना

भुज आजान स्याम घन काया॥ मदन कोटि छ
वि देखि लजाया॥ विधि सन कादि शुभ सुर झारा॥
तकत रहत जेहि मृकुटि प्रसारा॥ सो अस कर
न धार भव सागर॥ मनत प्रनत जन भक्त सुन नागर॥
चिंता शोक तजहु सब नेहू॥ दोहा ईहां उचित पद
एहू॥ ताते मै निज कर लिखि दीना॥ जानि उचित
पद भक्त प्रवीना॥ अस कहि कृपासिंधु भगवाना॥
भये तुरत तहां अंतरध्याना॥ तब जागे जयदेव प्र
वीना॥ हृदय सुमरि स्वपन निमि कीना॥ पदमाव
ति कहं निकट बुलावा॥ स्वपन वृतांत सकल समु
झावा॥ सो लिखि गये आपु जदुराया॥ तेपें डारि अ
गम निज माया॥ भा तुव जनम सफल प्रीय आजू॥
जाहि इन दृगन दरस जदुराजू॥ पलन दुरत दर
प दुलि पावा॥ कवन धन्य तुव सदृश गावा॥ अस
कहि गुणगाण भक्त सहाई॥ दिन दिन प्रेम भक्ति
सरसाई॥ लग्यो करन गायन मन भाये॥ तब गो
विंद गीत विरचाये॥ प्रभु आगे नर्त्तत गति कीना॥
सो जयदेव नवेदन कीना॥ अस प्रकार इह चरि
त सुहावा॥ मै संछेपत यथा मति गावा॥ जो इहि
पढे सुनै मन लाई॥ पावन प्रेम भक्ति सरसाई॥
दोहा॥ ताके रंजन भक्त पद पावन कंजन प्रीत॥
उपजहिं दिनदिन अधिक नित हरन भीमभ
व भीत॥६॥ टीका॥ तब जयदेव जी पदमावती
की बानी सुन कर बडे अचरज के वश भये हुये मौ
न होय गये तहां तिन को सोच करते करते
दिन वतीत होय गया और रात्री पड़ गई जब तिसी
सोच मै विसतर सोय गये तब सपने मै पीत
वस्त्र धारे हुये गले मै तुलसी की माला माथे मै
चंदन का तिलक और सीस पर कंचन का

सुंदर मुकट भ्रमरयों के समाज को लज्जा देने वाले
स्याम केश लंबी भुजे और स्याम मेघवत शरी
र का स्याम ही रंग कि जिस की शोभा को देख कर के
कोटि कामदेव भी लज्जा को प्राप्त हो जाता है ब्र
ह्मा शिव सनकादिक और इंद्रादि देवता जो हैं सो
सब जिस प्रभात्मा की भृकुटी अर्थात भवों के इशा
रे को देखते रहते हैं कि किस को कब क्या आज्ञा हो
ती है ऐसे इस संसार समुद्र के करनधार अर्थात
मलाह सो जो भगवान हैं सो प्रसन्न होय कर के ज
य देव को कहते हैं कि हे मेरे प्यारे भक्त तू हृदय
मे चिंता और सोच मत कर क्यों कि इस हे ए ही पद
लिखने योग्य था तातें हे भक्त मैने अपने हाथ से
लिख दिया है ऐसे कथन कर के भगवान कृपा
निधि तुरत तहां ही लोप होय गये तब ईहां प्रा
ता काल होते जयदेव भी जाग उठे और स्वपने
को सुमरण कर कर पद्मावती को पास बुलाय
कर के सब वृतांत सुनाय देते भये कि प्यारी वे पद
तो दीनबंधु भगवान अपने हाथ से आप लिख ग
ये हैं परंतु हे भामनी आज जगत मे तेरा जनम
जो है सो सफल होय गया है क्योंकि जिस ने
सब दुख दारिद्र और [illegible] घोर पापों के नाश कर
ने वाला [illegible] त्रैलोकी के नायक भगवान का इन
नेत्रों कर के दरसन पाय लिया है आज जगत मे तू
धन्य है और धन्य तेरे उदय भाग्य हैं तेरे समान
आज दूसरा कोई भी सुजस का पात्र नहीं है ऐसे
कथन कर कर जयदेव जी दिन दिन अधिक से
अधिक भगवान के गुण गण गायन करने मे
प्रीती भक्ती वाले होय कर बहुमधुर और ललि
त पदों कर के युक्त गीत गोविंद जो है सो रचाय

करके भगवान के आगे नम्रता और दीनतां जाय कर निवेदन कर देते भये अर्थात प्रभु के आगे चढाय देते भये नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार इहां गाथा मैने कुछ संछेप करके गायन कर दई है इस को जो कोई श्रद्धा और प्रेम पूर्वक से पढैगा अथवा सुनेगा सो संसार के भय से निवृत्य होय कर भक्तपाल भगवान के चरनकमलों की भक्ती प्रीती वाला होय जावेगा॥६॥ चौपाई॥ आन चरित जयदेव सुहावा॥ करउं कथन श्रवमान सुभावा॥ पुरषोतम पुर भूप सुजाना॥ मुनि गोविंद गीत हरि षाना॥ उपजी हृदय प्रीति अधिकाई॥ हरषि लीन द्रुत तासु लिखाई॥ बहु भक्ति संजुत अनुरागा॥ पठिन तासु निसि वासर लागा॥ एक दिवस उर द्वेष बढाई॥ मोह विवस मान सहित ताई॥ भनत रचित मे निज पद चारू॥ करहुं ललित गायन मन हारू॥ अस विचारि निज हृदय नरिंद॥ विरच्यो नवल गीत गोविंद॥ सकल देस निज सासन केरी॥ सब नर नारि ललित कृत मेरी॥ सादिर पठहु भक्ति सरसाई॥ अस नदेस नर नायक पाई॥ पठन लाग सब विदत सुदेसा॥ भयो गीत गोविंद नरेसा॥ एक समय तब भूप सुजाना॥ जगन नाथ दरसन रुचि माना चल्यो तजत निज भवनन काहीं॥ आयो पुरषोतम पुर माहीं॥ तहां भक्त जयदेव सुहाये॥ देखे भूप भक्ति सरसाये॥ निज गोविंद गीत सुखसारू॥ ता पद ललित मधुर मन हारू॥ गायन करत नृत्त जुत रागा॥ आनंद मगन भक्त बड भागा॥ भयो भूप अवमे दुज जाना॥ मम कृत कर तुव करि अपमाना॥

नाथ पद तुम कौतुक॥ बहुरि गावन नदि कीन
असमंजस कर कारन कवन॥ ५॥ टीका॥ तब जय
देव जी दिन दिन होई नवीन और मधुर ललित
अपने रचे हुये पदों को गाय गाय कर भगवान
के आगे नृत्य करते और दीनानाथ को रिझावते
रहते थे एक दिन राम चरित्र में इह प्रसंग पा
या कि राधिका जी ने मान किया अथ तरूठ गई
तो तिस के मनाव ने के लिये कृष्ण देव जो हैं सो
बडी नम्रता रस की भी भरी हुई बानी से

ध्यान दिया तो क्या देखते हैं कि जिस पद को हृदय मे
शोक मान कर छोड़ गये थे तहां वोही पद लिखा हु
आ है तब तो बडे अचरज के वश होय कर कहने
लगे कि इह पद ईहां कौन लिखे गया है और फिर
स्त्री से पूछने लगे कि प्यारी तू तो ईहां थी सत्य क
हो कि इह किसने लिखा है और वे कौन है तब पद
मावती पती की ऐसी बानी सुनकर परम आश्चर्य
के वश भई हुई कहने लगी कि हे प्राणनाथ बडे च
मतकार की बात है इह कैसा वचन कहते हो क्या आ
पकी बुद्धी में कुछ भ्रम होय गया है नाथ आप जब
स्नान करने को गये थे तो थोडी देर के पीछे घर मे
चले आये थे ईहां पुस्तक और कानी लेकर कृपा
निधान तुमने कुछ पद लिखे और फिर तुरत हीं
स्नान करने को चले गये थे अब जो आपको भ्रम हो
य गया तो प्रभू इसका क्या कारन है॥ ५॥ चौपाई॥
तब जयदेव सुनत त्रिय कहा॥ विसमय विवस
मौन धरि रहा॥ चिंतन करत गयो रवि
तारा॥ भई रयन तब सपन निहारा॥ कृपानिकेत
भक्त भयहारी॥ पीत वसन उरवन स्रज धारी॥ भाल
तिलक श्रीखंड विराजा॥ कनक क्रीट कच मधुप समाजा॥

दरसनकी रुचीअभिलाषासें घरको त्यागकर
चलपडताभया तोजब पुरषोतम पुर विषें आ
या तहां क्यादेखताहै किभक्तप्रधान जयदेवजी
आनंदमे मगनभये हूये अपने अमृतरूपी गीत
गोविंदके परम रसकों और ललित पदजो हैं सो
भक्तीप्रीतीसे नृत्यकर कर मधुर मधुर स्वरसे गा
यँकर रहेहैं तब द्वेष और मोह करके ग्रसाहूआ
राजा तिन आनंद और प्रेम को सहार नहीं सका
कहने लगा कि सुनोब्राह्मण मैंने जानलिया है
जो तुम मेरी कृत का अर्थी मेरे रचेहूये गीतगोविं
दका निरादिर करके अपनेकोही प्रधान जान
कर आदर सतकार देते हो और प्रीती भक्तीसें गा
यन करते हो इसप्रकार कोप और द्वेष के भरे हूये
राजा के वचन सुन कर जयदेवजी हृदयमे सोके
च और भय मानकर कुछ लज्जित भये हूये
कहने कि हेराजन हम तेरे रचे हूये गीत गोविं
दको अवश्य करके आनंद और प्रेमसे गावते
रहते हैं परंतु सुलप जापाल मे कुछ बडाईकी
बात नहीं करता हूं सत्य कहता हूं इहमेरा गीत
गोविंदजो है इसपर भगवान बहुत रीझते हैं
और इहदी नाना ए के अत से करके प्यारा है इ
समै हे राजन जो तेरे चित्तमे कुछ [illegible]
देह भ्रम हो तो जैसी तेरे मनको भाव तोहे तू
तैसी ही प्रीता करले ॥७॥ चौपाई ॥ अस नृप
सुनत विप्र वर वानी ॥ लेत तुरंत काव्य यु
गपानी ॥ मादिर जगन नाथ प्रभु आगे ॥ रा
खि त्याय प्रेम रस पागे ॥ करि प्रणाम पुनि
जोरितपानी ॥ लाग्यो विनय करन मृदुवानी ॥

इनमहे जो कृपाल सुख कंदू॥ तेरे प्रीये गीत गो
विंदू॥ तापर चरनचिन्ह निजचारू॥ करहो हृदय
भक्त भ्रमहारू॥ अस प्रण ~~भक्त~~ वदत जुगल मतिनागर॥
~~[illegible]~~॥ विप्र भूप हरिभक्त उजागर॥ भवन कवार मूं
दि अनुरागे॥ आये वहिर भक्तिरस पागे॥ लागे ल
लित मधुर पद गायन॥ निज निज रचत रसक मन
भायन॥ कछुक वेर पाछिल पुनि जाई॥ देखन ल
गे जुगल दुज राई॥ तव जयदेव काव्य मन भावन॥
ऊपर धरयो जाति प्रभु पावन॥ कियो चरन निज चि
न्ह त चारू॥ देखि भूप दुजवर सतकारू॥ भयो
लजित क्षोकारत भारी॥ गयो तुरत निज भवन सि
धारी॥ खान पान तव दीन तयागी॥ धरयो मौन मु
ख कछत न वागी॥ कलपत रयन चयन नहि
परयो॥ भई भोर तव नीद अवरयो॥ सपने हरि
न दोषदलपीरा॥ पीत वसन जीन स्याम सरीरा॥
वने करन कुंडिल अधिकाई॥ मोर मुकट वनमाल
सुहाई॥ हेत अनन्द भनत सुख कंदू॥ तुवकृत
भक्त गीत गोविंदू॥ मोहि भावत उर रह्यो वसा
ई॥ पै जयदेव ललित कृं राई॥ मोरे जिय लाग
त वहु प्यारी॥ तांते तुमहु भक्तव्रतधारी॥ ता
कर पद भ्रम द्वेष ~~[illegible]~~ तयागे॥ गावहु प्री
ति भक्ति जुत रागे॥ सो तुमार विरचत पद नीके॥
हरषि करहि गायन रुचि जीके॥ हृदय परस्पर
प्रीति वढाई॥ करहु भजन कीर्तन सुखदाई॥ इह
गोविंद गीत संसारा॥ मोरे हृदय भक्त अति प्या
रा॥ अस प्रकार जव सपन सुहावा॥ देख्यो भूप
भवन मन भावा॥ प्रात काल जाग्यो व्रतधा
री॥ भयो हरष वस तासु विचारी॥ चरन

हरन दुख भग वन काहीं करत प्रणाम भू प मन माहीं॥ जानि न सक्यो मोह मति चेरा॥ दास हु नाथ इह अनुचित मेरा॥ अस कहि प्रजापाल अनुरागी॥ तबतें कपट द्वेष भ्रम त्यागी॥ बैठि परस्पर दुजवर संगा॥ ते गोविंद गीत मय मंगा॥ करत रहत गायन सुख छाये॥ सुनत लोग सब प्रेम अघाये॥ दोहा॥ इह नृप जुत जयदेव कर गाथा ललित सुहाई॥ कीन कथन संतपत कवु सो मन लाई॥८॥ टीका॥ इस प्रकार जयदेव की बानी सुन कर राजा दोनो गीत गोविंदों को अपने हाथ से उठाय कर और ल्याय कर के जगननाथ स्वामी के आगे राख देता भया फिर ने अवाली से विनती करने लगा कि हे कृपानिधान इह दोनो गीत गोविंद जो हैं एक मेरा रचा हूआ और एक इनमे जौन सा दीनबंधू तुम को प्यारा और जयदेव का मन को भावता है तिस पर कृपा कर के अपने चरन कमल का चिन्ह कर दीजिये क्योंकि इस तें हमारे चित्त का भ्रम जो है सो मिट जावेगा ऐसा प्रण धार कर के राजा और जयदेव भगवान के भवन के कवार मूंद कर दोनो बाहर चले आये फिर तहां बैठ कर के भक्ती प्रीती मे लीन भये हूये बडे रसिक और मधुर ललित अपने अपने रचे हूये गीत गोविंद के पद जो हैं सो मधुर मधुर स्वर से गायन करने लगे तिसतें उपरांत फिर थोडी देर के पीछे दोनो ही उठकर और भगवान के भवन मे जाय कर के देखने जो लगे तो क्या देखते हैं कि राजा के गीत गोविंद के ऊपर जयदेव जी का गीत गोविंद धरा हूआ है और अपने चरन कमल से चिन्हित भी किया हूआ है अथ तिस पर

अथ करतब कर्तई॥ अथ जोड़कर

अथ भगवत्...

आपन मोद मगन सुख पाये॥ कर हु मान निरंतर इन आये॥ तब जय देव सुनत भय मान्यो॥ लज्जित भूप सन वचन बखान्यो॥ विरचत तो रगीत गोविंदू॥ हम गावत उर पूरि अनंदू॥ पैन करहु कछु भूपबडाई॥ मोरी कृत भगवन मन भाई॥ दोहा॥ जो मोरे अस कथन भय भूपति तुमै संदेहु॥ तो भावति मानस जथा तुव प्रीता करि लेहु॥ ७॥ टीका॥ अब जयदेव की भक्ती की और मनोहर गाथा जो है सो कथन करता हूं पुरषोतम पुरी की अर्थात जगन नाथ पुरी का राजा जो है सो जयदेव जी के रचे हूये गीत गोविंद को देखकर वडा प्रसन्न भया और परम प्रीती के वश भया तिसको लिखाय करके रात्री दिन भक्ती प्रीती से पढने और गायन करने लगा एक दिन मोह के जाल मै फसकर और ईरखा [द्वेष] के आधीन होय कर कहने लगा कि मै भी काव्य कला मै प्रवीन हूं इन जयदेव के रचे हूये पदों को क्यों रटता हूं अपने ही रचकर क्यों ना गायन करूं ऐसे विचार कर राजाने श्रम करके थोरे ही दिनों मे अपना ही गीत गोविंद निरमाण कर लिया अर्थात रच लिया तव अपने संपूर्ण देस मै आज्ञा प्रचलत कर देई कि मेरे राज्य भर मै सब कोई इस मेरे हो गीत गोविंद को भक्ती प्रीती से पढे और गायन करे ऐसे राजा की आज्ञा पाय कर सब नर नारी तिसी राजा के रचे हूये गीत गोविंद को श्रद्धा पूर्वक गायन करने लगे इस प्रकार से राजा का गीत गोविंद सब देस मै जहां तहां प्रसिद्ध हो जाता भया तव समय पाय करके एक दिन राजा श्री जगन नाथ स्वामी जी के

करता है कि हे दीनबंधू मैं मोह का ग्रसा हुआ जय
देव जी के प्रभाव को कुछ जान नहीं सका
तातें कृपा करके इन मेरा अपराध क्षमा करिये ऐ
से प्रार्थना करके राजा जो है सो तब तें कपट द्वेष
और भ्रम को हृदय से त्याग कर जयदेव जी के साथ
परस्पर मिलकर बडी प्रीती और रुचि से गोविंद गी
त के ललित और मधुर प
द जो हैं सो नित्य गायन करता रहता ऐस
से प्रकार इन राजा के सहित जयदेव जी की भक्ती
की मनोहर गाथा जो है सो मैंने कुछ लेदेप करके
आप के आगे गायन कर दई है इन कैसी भी गा
था है कि जिस के श्रवण करने से हृदय की दुरबु
द्धी सो सब दूर हो जाती है ॥८॥ चौपाई ॥
अब कहु लेता जयदेव सुहावन ॥ जथा प्रसिद्ध भक्ति
जग पावन ॥ सो करहु मोद सुखदायन ॥ सा
दिव संत वदन निज गायन ॥ जगन नाथ पुर प्रांत
अकामा ॥ गुण प्रवीन रति रूप ललामा ॥ उतकल
देस मद्धे मन हरनी ॥ रहि एक मालिन नवतरनी ॥
सो इक समय सरद ऋतु पाई ॥ चारु चं
द्र चांदनि विकसाई ॥ उर गोविंद गीत पद ल्याई ॥
मधुर मधुर स्वर वदन अलाई ॥ रत उत भक्ति प्रीति
रस पागी ॥ बीनत फिरत सुमन फल रागी ॥ ललित
हि रसक मधुर पद आछे ॥ लागे फिरहिं नंद सु
त पाछे ॥ तब विहरत वृंदाक विपन महें ॥ छिपि
गये हरि के पीत वसन तहं ॥ प्रेम मगन डोल
त जदुवीरैं ॥ भूलि रही सब सुधी सरीरैं ॥ जब मा
लिनि ले सुमन न पराई ॥ चलि आये तब विक
ले कन्हाई ॥ प्रात भवन पूजक जब
आई ॥ लागे करन जजन सिवकाई ॥ तब देखे

श्री नाभा जी कहते हैं कि हे संतो ॥ कै ॥ वसनैं ॥ अथ रथ जब चूँ गौ विपुन समें आई लेन फल के हित सुमन कहें

करुणा निधि नीरा ॥ करे ग्ररे केटिक सव चीरा ॥
भये सोचवस सकल पुजारी ॥ लीन तुरंत भूप हंकारी ॥ तासु दृगन सव दीन दिखाई ॥ भयो देखि अचरज वस राई ॥ दोहा ॥ कौन मरम इह का भयो कहत सकल अकुलाई ॥ प्रभु गति जानि न जाय कछु सोचित रैन विहाई ॥ ४ ॥ टीका ॥ आगे तो राजा के सहित जयदेव की भक्ती कथन कीगई है अब केवल जयदेजी भक्ती जैसी कजगत में प्रसिद्ध है तैसे तो आपके आगे गायन करता हूं जगननाथ पुरी के पास उतकल देस मे रती जो कामदेव की स्त्री है तिस के समान सुंदर रूप वाली और सरव गुणों में चतुर एक मालन जो है सो निवास करती थी एक दिन सरद रितु के समय आधी रात को चंद्रमा की वडी उज्जल चांदनी खिली हुई थी सो मालन वृंताक जो वैंगनो की वाडी है तिस विखे फलों और पुष्पों के लेने को चली आवती भई तहां वे गीत गोविंद के परम पवित्र और ललित पद जो हैं सो हृदय में सुमरीकर के वडी मधुर मधुर स्वर से गायन करकर इधर उधर फलों को लेती और पुष्पों को चुणती लागजातीभई तब तिसके मुख से ऐसे रसिक और ललित कि जो भक्ती मे लीन होय कर गायन कर रही थी सुनकर के प्रेम के वश भये हूये भगवान कृपा निधान तिस के पीछे पीछे ही लागे फिरते हैं ऐसे तिस मालन के पीछे फिरते फिरते दीन वंधू के सुंदर पीताम्बर जो हैं सो कांटयों मे फसफस कर सव फट जाते भये प्रेम मे मगन भये हूये वितारी लाल को अपने शरीर की सुधी भी नहीं रही जव मालनी पुष्पों को लेकर के अपने घर विखें चली आई ॥ तव पीछे भगवान भी वैसे ही विकल चित

जैसी कजगत में प्रसिद्ध है

श्रीगीतगोविंदके

गीतगोविंद

© Dharmarth Trust. Digitized By eGangotri

भये हुये अपने भवन मे चले आवते भये जब प्रात काल भया तब पूजक जनो ने दीनानाथ के पूजन सेवन करने के लिये भवन के कवाड जो खोले तो क्या देखते हैं कि कृपासिंधू के पीत वस्त्रों मे कांटे फसे हुये और सब फटे हुये हैं इस अद्भुत को देखकर पुजारी सब सोच के वश होय कर राजा को तुरत बुलाय करके भगवान के वस्त्रों की दशा सब दिखाय देते भये राजा देख करके बडे अचरज को प्रापत हूआ तब तो सब मिल कर परस्पर विचार करते और कहते हैं कि इह कौन कौतुक और क्या भया है प्रभू की गती कुछ जानी नहीं जाती है इस प्रकार सोच करते करते तिनको रयन बतीत हो जाती भई ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ प्रातकाल तिन स्वपन निहारा ॥ दीन बंधु प्रभु दीन उदारा ॥ मनत वदन मे जुत मृदु बानी ॥ तुव जन हृदय कवन लखि हानी ॥ छिदे वसन कछु सोच न करहो ॥ भ्रम तासकल तुव धीरज धरहो ॥ उतकल देस जवन मन भावा ॥ रहो तहां इक नगर सुहावा ॥ ता मध वसहिं रुचिर मन हरनी ॥ गुण प्रवीन मालन नवतरनी ॥ सो बृंताक विपुन मध जाई ॥ बीनत रही सुमन सुखदाई ॥ चांदनि रयन चोप चित चारू ॥ पद गोविंद गीत मनहारू ॥ गावत मधुर मधुर मुख बाणी ॥ संतत भक्ति प्रेम रस पागी ॥ मे सुनि ता स भक्ति वस भयये ॥ सुधि सरीर कछु नाहि न रहये ॥ जित जित गावति फिरत सभागी ॥ मे तित तित चलत हि पाछे लागी ॥ फिरत तर झारो रत प्रेम घनेरे ॥ तहि ते छिदे पीत पट मेरे ॥ अस कहि भये लुपत भगवाना ॥ जगे प्रात दुज भूप सुजाना ॥ स्वपन विचारि परसपर रागे ॥ ताके विविध प्रसंसन लागे ॥ धन्य सोउ मालनि बड भागी ॥ जास प्रेम वस पाछे ल

भगवानका चरन लगा हूआ है इस प्रकार राजा जय देव जीका सतकार और प्रभाव देख करके लजित भया हूआ बड़ा शोक मान कर तुरत भवन से निकल कर घरको चला जाता भया और खान पान सब त्याग कर मौन होय गया कि किसी से कुछ बात चीत नहीं करता है सोच करते को रात्री भर चयन नहीं पड़ा जब कुछ थोड़ी सी रात पीछे रही तब तिसको निद्रा आय गई क्या देखता है कि सपने मे सरव दोष दुख और भयक लेशों के हरने वाले पीत वस्त्रधारी स्याम मेघ वत शरीर की आभा कानों मे सजे हूये मकराकार कुंडल सीस पर मोर मुकट हृदय मे तुलसी की माला ऐसे ध्यान करके युक्त भगवान जो हैं सो प्रतक्ष होय करके कहने लगे कि हे भूपभक्त इन तेरा रचा हूआ गीत गोविंद जो है सो मेरे मनको भावता है और मेरे चित मे बसा हूआ है परंतु हे भक्त इन जयदेव का रचा हूआ गीत गोविंद जो है सो मेरे को अधिक ही प्यारा है और तिस पर मै बहुत रीझता हूं तो ते हे भक्त तुम अपने हृदय का द्वेष और भ्रम त्याग करके तिस मेरे भक्त जयदेव के रचे हूये ललित और मधुर पदों को प्रीती भक्ती से गायन करो और वे तुमारे रचे हूये मनोहर पदों को आनंद पूर्वक प्रेम और प्रीती से गाय करे हे राजन इस प्रकार तुम दोनों मै त्री भाव से परस्पर मिलकर मेरे गुणानुवाद और भजन कीर्तन जो हैं सो सदैव ही गायन करते रहो क्योंकि यह गोविंद गीत मेरे को अत्यंत ही प्यारा है ऐसे जब राजा ने स्वपन देखा तो प्रातःकाल होते ही जाग उठा और तिसको विचार करके हृदय मे परम हरष मान कर भगवान कृपानिधान के चरनों को मन मै ही प्रणाम करके

तीहुई गोविंदगीतके ललित और रसिकपद जोहैं सो मुखसे मधुर मधुर स्वर आलाप करके गायन करतीफिरतीथी तब मै सुनकरके तिसकी प्रीति और भक्तीके वश भयाहुआ तनकी सब सुधी विसारकर जहांजहां वे पुष्पों को चुनती हुई गावतीफिरतीथी मै तहांतहांहीं प्रेममे मगन भयाहूआ तिसके पीछे लागा फिरताथा हे भक्तजनो इसीकारणतें मेरे वस्त्र जोहैं सोतहांकांटों मे फसफसकर सब फटगयेहै इसमे और दूसरा कोई हेतू नहीं है इसप्रकार भगवान कृपानिधान अपना सब वृतांत सुनायकरकेफिर तुरतहीं लुपत होजातेभये जब प्रातःकाल भया तब राजाके सहित ब्राह्मण पुजारी जोहैं सो सब जागउठे और परस्पर सपने कोविचारकर तिस मालनकी अनेकप्रकार श्लाघा और बडाई करने लगे कहतेहैं कि सो बडभागन आज धन्यहै और धन्य तिसका जगत मे जनमहै देखो जिसके प्रेम के वश होयकर तीनलोकके नायक भगवान अपना मान और बडाई त्यागकर रात्री के समय कांटों की भरी हुई बैगनों की वाडीमे तिसके पीछे फिरते रहेहैं ऐसे परस्पर कथन करकर फिर राजा जोहै सो तिस मालनको दूत भेजकर बडे सनमानसे अपने पास बुलायलेताभया और बडे सनेहकेभरे हूये वचनों से कहने लगा कि हे सुशीले हे गुणप्रवीने मैं तेरी पालना करूंगा परंतू तू कृपाकरके नित्य भगवान भक्तसुखदान के भवनमे आयकर सोई गीतगोविंदके ललित और मधुर पद कीर्तन करकेदीनानाथ तेने पुष्प चुनती हुईने रिझायेथे प्रीती भक्तीसे

[margin notes, partly legible: धम्मण सिरि म, वीहं ह]

गायन करती रहो ऐसे भलीप्रकार मालिन को समुझाय और सिखाय कर फिर प्रीती भक्ती से भगवान का पूजन किया और सनमानपूर्वक नैवद लगाया तिसतें उपरांत लोग जो हैं सो सब आपने आपने घरों को चले गये और राजा भी हरष मैं मगन भया हुआ आप ने राज भवनों मैं चला आया तिस दिन तें लेकर के राजा जो है सो जयदेव जी को भक्तों मैं भगवान के प्रधान भक्त जानकर अपनी [illegible] मान वडाई सब [illegible] त्याग कर नित्य तिन के घर मैं चला जाता और सेवन सतकार करता रहता था इस प्रकार राजा और ब्रह्मण दोनो परस्पर गिरधर भगवान के गुणगण और [illegible] कीर्तन भजन गावते हुये संसार मै सफल हो जाते भये नाभादास जी कहते है कि हे संतो देखिये भगवान कृपानिधान भक्ती के वश भये हुये संसार मै क्या नहीं करते हैं तो ते सरव आर्थी के सिद्ध करने के लिये जगत मै एक भक्ती ही प्रधान और आधार है ॥ १० ॥ चौपाई ॥ आगे आन [illegible] मन हारू ॥ दुज जयदेव भक्ति जग चारू ॥ कर हु कथन दुखदारद हरनी ॥ हृदय प्रकास सुमति सुख करनी ॥ सो जयदेव सवन हित कारे ॥ सव कर महत मान रखवारे ॥ निज आतम सम जीव निकाया ॥ देख त रहत सदा दुजराया ॥ सो फल वध भोग गति पाई ॥ वधे करम वंधन मध आई ॥ एक धन गुण वनक वड भागी ॥ संत चरन सेवन अनुरागी ॥ सो मन वचन करम जयदेवा ॥ भक्ति प्रवीन लीन पद सेवा ॥ एक समय सादिर हरखाई ॥ तास लिये भवन गुरु लिये वुलाई ॥ सुधा सरस षट रस पकवाना ॥ विरचत भक्त भवन सनमाना ॥ कहि अनेक मुख विनय वडाई ॥ गुरु कहं भो

अरुणमुखी

अथ हरि भक्ति रस

पृष्ट

जन दियोजिमाई ॥ दोहा ॥ धनिराखेवहुदिवसलग मुदित भवन दुजनाथ ॥ लग्योविसरजनाकरनजब चारु चरन धरिमाथ ॥ कंचिन वटमनि आभरन विविध भक्तिजुत ल्याय ॥ देसादिर करिकरि विनय गुरुवरकियेविदाय ॥ २२ ॥ टीका ॥ अब आगे और बहुनिरमल और मनकेहरनेवाली जयदेव जीकी भक्ती जोहै सो कथनकरताहूं किजिसके श्रवण करने से सब दोष दारिद्र दूर होजाते हैं हृदय मे सुख और सुमती का प्रकास होता है ऐसे सरव जीवों के सज्जन हितकारी और सब को मान राखने वाले अपने सुखदुख के समान सबका दुखसुख जानने वाले जै देवजी जो हैं सो प्रालब्ध भोग के आधीन होयकर महाप्रवल करमवंधन जो है तिसमे फस जाते भये एक कोई वडा भाग्यमान धनी पुरुष कि जो नित्य साधसेतों की सेवकाई मे प्रीति भक्तीवाला था और मनवचन कायाकरके जयदेव जी का वडा दृढ भक्त और सबका आसदे व तिनकी सेवा भक्ती किया करता था एक समय तिस धनी भक्तने गुरु जयदेवजी वडे आदिर सतकारसे अपने घर मे वुलाय लिये और अमृतके समान खटरस के व्यंजन पकवान जो हैं सो न्यारे न्यारे सब बनवायकर प्रीती भक्ती से तिनको भोजन जिमाया और ऐसे नित्य नवीन ही सनमान करते करते धनीने तिनको वहुतदिनों तक अपने घर मे राखा फिर जब विदाय करने लगा तब कंचिन वस्त्र मणी भूषण इत्यादि धन देकर और चरनो पर सीस धरकर मुखसे अनेप्रकार की विनती बडाई कर करके विदाय करदेता भया ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ सोधन लेत गवन दुज राया ॥ एकल काहू न संग सहाया ॥ भयावन विपन देखिमग ताहीं ॥ लगे विचार करन दुजनाही ॥ अहो उपाधि आज धन एहू ॥

लागी॥ फिरत रहै निसि त्रिभुवन राई॥ तजत सो फल
निज मान बड़ाई॥ अस कहि भूप हरष सरसाये॥ त
हि मालनि कहं दूत पठाये॥ लीन्यो बोलि विविध स
नमाना॥ परम प्रीति जुत वचन वखाना॥ मैं पा
लन करहौं सब तोरी॥ तुव प्रवीन इह सासन मोरी॥
दिन दिन भवन भवन पति आई॥ मधुर मधुर स्वर
वदन अलाई॥ ललित गीत गोविंद सुहायन॥ कर
है भक्ति प्रीति जुत गायन॥ पैसो उर रसिक मधुर पद
भाये जेहि प्रभु वन वृंताकहि जाये॥ अस प्रकार मा
लनि कहं राई॥ दै सासन सब वदन सिखाई॥ पाछे
करि पूजन जदुराया॥ सादिर सचि नैवेद लगा
या॥ तब निज निज सब लोग सिधाये॥ भूपति मु
दित भवन निज आये॥ तादिन तें सादिर नरराई॥
तजत सकल निज मान बड़ाई॥ भक्त प्रधान जानि ज
यदेवहिं॥ निसिवासर जुत प्रीति असेवहिं॥ [struck]
दोहा॥ लाग्यो सेवन सदन तहि प्रेम मगन नि
त जाय॥ [struck] सफल जुगत पर स्वर गिरधर गुण
गण गाय॥ अस भक्तीवस भवनपती को नकर
हिं संसार॥ लोक अर्थ साधन निमित अजहुं [struck]
भक्ति आधार॥ १०॥ टीका॥ तब प्रात काल होते तिन
को कुछ निद्रा जो आय गई तो दीन बंधु और दीन हित
कारी भगवान सपने मै बड़ी कोमल वानी सें कह
ने लगे कि भाई तुमने अपने हृदय मै कौन हानी
को माना है इह मेरे वस्त्रों के फटने का मत सोच क
रो तुम हृदय मै धीरज धारो उतकल देस मै ए
क बड़ा रमणीक ग्राम है तिस विखे बड़ी सुंदर म
न के हरनेवाली और गुणों मै प्रवीन एक मालि
न निवास करती है सो वृंताकवण मै अर्थात बेंग
नो की बाड़ी मैं फलौं लेती और पुष्पों चुण [struck]
आधी रात को चौंदकी छिटकी हुई चांदनी मै

चौपाई॥ लेहुठिक सुनत विप्र वर वानी॥ बोले हृदय कपट सठ ठानी॥ तुमरे संग विप्रवत्त सगरी॥ हम हूं च लव पुरषोतम नगरी॥ तव दुजवर मृदु वचन उचारे॥ तुव संसर्ग मोर हित प्यारे॥ मै प्रसाद तुमरे सुख पाई॥ चलहु सुगम मग विपन विहाई॥ विनय एक पूं मोर प्रवीना॥ मैगत शक्ति जठिर वलहीना॥ इह वित भार मोर अधिकाई॥ सो नवत्त मग सकहुं उठाई॥ ताते तुमहूं आप करि दाया॥ जानि निव ल मोहि होहु सहाया॥ मनत विप्र अस मणि गण चारू॥ केचिन वसन आभरन भारू॥ तिनहिं देत पाछि ल पद चारी॥ मंद मंद गति चल्यो सिधारी॥ जव दुज नाथ द्रव्य गत भयऊ॥ तव निज हृदय हरखि अस कहयो॥ अति अदिष्ट इह से सुति माया॥ जहि संसर्ग चौर दुख पाया॥ अव चेतागत पाछिल लागी॥ निरभय चलेहु सोच सव त्यागी॥ इतअ स हृदय गुनत दुज तोना॥ उत भावी वलमान स तोना॥ दीरघ सुर निज वदन अलापी॥ वोलि उठे सठ लेहुठिक पापी॥ आवहु दुज तुव वेग सिधारी॥ इह आपन धन लेहु संभारी॥ तव जयदेव सुनत अकुलाये॥ मणि वित वसन स कल इन पाये॥ अव कस मंद वदन मोहि टेरत॥ कहि कछु क्रूर दृष्टि दृग हेरत॥ का अव करहि कपटि वध एहा॥ मोरे हृदय होत संदेहा॥ उत मंदन मन मंत विचारा॥ जठिर विप्र इह धूरत मारा॥ हमरा मरम जानि सव लीना॥ तव इह निज संपति दीना॥ सोरठा॥ जठ हमार दुखदाई॥ होहिं न इहि तें कुसल कछु॥ ताते निश्चय भाई॥ वध न मूढ कर उचित अव॥२३॥ टीका॥ तव इस प्रकार जयदेव कीना

णी सुनकरके लुठिक जो महापापी लुटेरे हैं सो कप
ट से कहने लगे कि हे ब्राह्मण हम सारी बार तुमारे सा
थ ही पुरुषोतम नगरी को चलेंगे ऐसे तिनका कथ
न सुनकर जयदेव कहने लगे कि प्यारे बहुत शुभम
या इह तुमारा संसर्ग मिलाप जो है सो ई हो बणके मा
रग मे मेरेको परम हित और सुख के देने वाला है क्योंकि
मे तुमारी कृपा और सहायता से सु आनंदपूर्वक सह
जे ही इस बडे कठिन बण के मारग से पार हो जाऊंगा
परंत हे हितकारी जनो तुमारे आगे मेरी एक विनती है
कि मै शक्त से रहित निरबल और बृद्ध हूं इह मेरे पास
धन का भारी के ऊहै मै इसको उठाय नहीं सकता
हूं तां ते तुम कृपा करके मेरे सहायक बनो और इह
धन का बोझ जो है सो मेरे से लेलेवो ऐसे कहिकर पर
मप्रवीन जयदेव जी सो मणी के चिन भूषण बस्त्र इ
त्यादि धन जो था सब तिन को देकर फिर आप कुछ
दूरी पर पीछे सहजे सहजे चले जाते हैं और मनमे
कहते हैं कि देखो इह माया संसार मे बडा भारी रोग है
जिस ~~[illegible]~~ के संसर्ग अर्थात् संगत से ऐसा महा दुख
और कलेश पाया है अब जो इस दुखदायक को त्याग
दिया तो चिंता शोक से रहित ~~[illegible]~~ निरभय ~~[illegible]~~
होय कर पीछे पीछे चला जाता हूं हृदय मे कुछ भी
सोच नहीं है ऐसे भक्त प्रधान तो आप ने हृदय
मे इह विचार करते हैं और ऊहां भावी जो है सो
बडी बलमान है वे पापी लुटेरे ऊची स्वर से पुका
र कर कहते हैं कि हे बृद्ध ब्राह्मण शीघ्र वेग से
धाय करके आवो और इह आपना धन जो है सो
हमारे से संभाल करके लेलेवो तब सुणकर के
जयदेव जी हृदय मे कुछ व्याकुल से होय गये कि देखो
के चिन मणी भूषण वस्त्र इत्यादि धन तो इनो ने सब पा
य लिया है अब अधम मेरे को क्यों बुलावते हैं और

कैसे कपट की भरी हुई क्रूर दृष्टी से देखते हैं जान लिया है कि पापी मेरे को अब वध करेंगे अर्थात मार देवेंगे तब उन अधमो ने परस्पर इह मता दृढ किया कि इह वृद्ध ब्रह्मण जो है सो बड़ा कपटी और पाखंडी है हमारे भेद को भली प्रकार जान गया है इसी तें अपना सब धन हम को दे दिया है भाई तुम सत्य करके जानो कि इह दुष्ट हमारा दुखदायक है इस तें हम को कदाचित कल्यान नहीं होवेगी तो ते अधम को मार देना ही योग्य है ॥२१॥ चौपाई ॥ अस लीन्यो तिन मत विचारी ॥ तौलौ आय विप्र व्रतधारी ॥ दुष्टन तुरत बांधि भुज लीन्यो ॥ खड्ग प्रहारि अंग वध कीन्यो ॥ दुज कर चरन खंड खल कारे ॥ लिये द्रव्य द्रुत विपुन सिधारे ॥ तब जयदेव भक्त दृढ नागर ॥ भक्त प्रधान ज्ञान गुण सागर ॥ जे प्रालब्ध भोग निज रहयो ॥ कहत सो उदय आज जग भयो ॥ उनहिं न देत दोष दुज कोई ॥ होन हार अब सो भृति होई ॥ खेद निरं तुध्यत ता तत परयो ॥ तद्यपि नहिन धीर उर हरयो ॥ हरन दोष दारद समुदाई ॥ सुमरत हृदय दुगध निध साईं ॥ करिहैं सो कृपाल कल्याना ॥ अस चिंतन दुजनायक ठाना ॥ तब मग जानत विपुन विहालू ॥ पुरखोत्तम पुर भूपति चालू ॥ चे चल तुरग अरूढ तआवा ॥ तीव्र वेग मृग पाछे लधावा ॥ एण अधीर सरन दुज लीना ॥ ठाढ छोनिकट ज्ञा सब कह दीना ॥ असतहि देखि दृगन तत राया ॥ ता माकीन उपजी उर दाया ॥ पुनि दुज दशा देखि नृप सोई ॥ पूछत वदन चकित चित होई ॥ सोरठा ॥ तब बरन्यो दुजराय ॥ भुं भोग प्रालबध निज ॥ सुनि नृप लीन मेंगा तें यावेग तुरत सासन रुचिर ॥ दोहा ॥ ता पर लिये बिठाय

करहिं कुसल प्रभु दीन सनेहू॥ अस कहि दीनवा मन
जव आती॥ परे दृष्टि तव चार पदाती॥ सो लुंठिक सठ
पथिक विदारी॥ अरि इव छाकि खड्ग कर धारी॥ नि
रदय क्रूर कालवत पापी॥ मानहुं होनहार इह
व्यापी॥ देखत विप्र धीरज त्यागी॥ अब सठ वध
हिं लोभ धन लागी॥ नीति निपुण द्विज ज्ञान निधा
ना॥ अस विचार मानस निज ठाना॥ सोरठा॥ अ
व होहिं जिमि प्राण॥ कीजै सोऊ उपाय अव॥
तब द्विज प्रवर बखान॥ वतस कवन तुव गवन क
हौ॥ २२॥ टीका॥ तव सो धन लेकरके जयदेवजी
हैं सो चलपडते भये परंतु अकेले हैं और दू
सरा कोई भी साथ नहीं है ऐसे मारग में महा
भयान कवण देख करके हृदय में विचार करने
लगे कि अहो इह धन जो है सो मेरे साथ वडी भा
री उपाधी है अव भगवान नहीं कल्यान करेंगे और
तो कोई आधार नहीं है ऐसे कथन करके जव चारों
ओर को नेत्र फेर कर देखा तव तहां चार पुरुष देखपड
ते भये सो अधम कैसे कि पथिक जो रसते चल
ते हैं तिनका घात करनेवाले
लुटेरे और महा निरदय कालवत क्रूर
और बडे पापी कि जिनोने हाथों में धारे हूये हैं वर
छी तलवार इत्यादि शास्त्र ऐसे दुष्टों को देखकर
जयदेव जी हृदय से धीरज को त्याग देते भये और कहते
हैं इह तो होनहार आय करके व्यापत भई है अव
इह अधम धन के लालच से मेरे को अव अवश्य व
ध करेंगे तव नीती में महा प्रवीन और ज्ञान वि
चार की निधी जयदेव जी हृदय में सोच कर कहते हैं
कि अव सोई उपाय करना चाहिये जिस से प्राणों
की रक्षा हो ऐसे विचार कर
तिन लुटेरयों को कोमल वाणी से कहने लगे कि
हे प्यारे तुम कौन हो और कहां को जानेवाले हो॥ २२॥

अचरज के वश होयकर के राजा तिनको पूछने ल
गा कि हे दुज राज इसका कारन है तव जयदेवजी
अपना सव वृतांत प्रकट करके सुनाय देते भये कि हे
राजन इह हमारा प्रालवध कर्म था सो भोग लि
या है ऐसे तिनके मुखसे वचन सुनकर राजा हृदय
मै परम दुख मानता भया और ततकाल को
मलसिज्जावाली पालकी मंगवायकर तिसपर ति
नको वडी प्रीती सनमानसे वैठायकर अपने घरको ले
जाता भया ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ राखि भूप विप्र निज गेहा ॥
दुज पतनी पुनि वोलि सनेहा ॥ प्रेम प्रीतिजुत भक्ति
अमेवा ॥ लाग करन दंपति नित सेवा ॥ कविराजन
कहे भूप उचारा ॥ सुनहु निपुण हित जानि हमारा ॥
करहु उपाय वेग अव सोई ॥ जेथा कुसल दुजन
य कहोई ॥ सासन पाय भूप कविराई ॥ लागे क
रन यतन समुदाई ॥ थोरेहि दिवस मह दुज केरे ॥
मटे चरन कर ज्यों उ जनेरे ॥ अस प्रकार कछुका
ल विहाया ॥ सोउ अधम लुठिक सर राया ॥
आये कपट भेष मिलि चारी ॥ मुद्रमाल तिलक
तन धारी ॥ कपट साधु निज वेमव नाये ॥ दुज
उपकार निकारन आये ॥ आवत तिन हि देखि
दुज मानी ॥ कहि कहि वदन नम्र मृदु वानी ॥ सो
रठा ॥ सुचि आसन वैठारि ॥ पूछि कुसल आदि
सकल ॥ पुनि निज वदन उचारि ॥ विय कहे सास
न दीन दुज ॥ विप्र पतनि परवीन ॥ हरषन सा
हित प्रेम जुत ॥ सुचि पूजन तिन कीन ॥ अरघ पाद
आदिक सकल ॥ २५ ॥ टीका ॥ तव राजा जयदेव
जी को अपने घर मै राखकर पदमावती तिनकी
स्त्री जो है तिसको भी वुलाय लेता भया और रा
त्री दिन वडी भक्ती प्रीती से तिन दोनो स्त्री भरता की
सेवा करने लगा कविराज जो वैद है तिन को

बुलाय कर आज्ञा देता भया कि भाई तुम मेरा हित
अर्थात मेरी भलाई जान कर अब कोई उपाय करो
कि जिससे मेरे परम हितकारी जयदेवजी को शीघ्र
कल्यान प्रापत होवे ऐसे राजा की आज्ञा पाय कर क
बीराज जो बैद हैं सो अनेक प्रकार के उपाय करने
लगे तब भगवान की कृपा से थोड़े ही दिनो में भक्त
प्रधान के हाथों और पाउं के घाउ जो थे सो सब मि
ट जाते भये इस प्रकार जब कुछ काल बतीत होय
गया तब कोई अधम लुटेरे कि जिनो ने भक्त उत्तम
के हाथ पाउं काटे थे साधुओं का कपट भेष बनाये
हुये और मुद्रा माला तिलक धारे हुये जयदेवजी
का उपकार देखने के लिये चाहे ही दुष्ट तहां चले
आवते भये तब तिन अपने घातियों को आवते देख
कर बड़ी मधुर और कोमल बानी से बुलाय कर सन
मान से अपने पास आसन पर बिठाय लेते भये और
बड़ी प्रीती सतकार से कुसल पूछ कर पदमावती को
कहने लगे कि भामनी संत महातमा चार मैं आये हैं
इनके चरनों की भली सेवा कर तब परम चतुर पदमा
वती ~~[illegible]~~ पती की आज्ञा के अनकूल होय कर अर
घ पाद आदि करि तिनका पूजन सेवन जो है सो भली प्री
ती से सब करती भई ~~[illegible] सुंदर भोजन बनवा~~
~~य कर कंद मूल फल इत्यादि अनेक के समा~~
~~ने [illegible] जो हैं सो त्याग कर भक्त प्रधान बड़े~~
~~सन मान से तिन को जिमाय देते भये~~ ॥१५॥ चौपाई ॥
बहुरि दिव्य भोजन बनवाई ॥ कंद मूल फल ले
लित लियाई ॥ हर्ष पूरि तिन कहं पूजि राये ॥ सादर
करि करि विनय जिमाये ॥ भले बहुरि भूप सन चा
ही ॥ विविध प्रसंसि वदन व्रत धारी ॥ वरनी विम
ल कपट गत बानी ॥ सुनहु नरेस भक्त जग मानी ॥
इह प्रधान गुरु सदृश चारी ॥ अति धर्म सुजन नि
पुण व्रत धारी ॥ सुचि सुपात्र विद्वान कुलीना ॥

जयदेवजू

जयदेवजू

चारु भक्ति दृढ धरम प्रवीना॥ सोरठा॥ तुव नृप सुमति निधान॥ इन कर सेवा द्रव्य जुत॥ करु धरम पथ जान॥ इन श्रत श्री भगवन प्रीये॥ २१॥ टीका॥ फिर अमृत के समान भोजन बनवाय कर और सुंदर कंद मूल फल भी लयाय कर भक्त प्रधान बड़े सनमान से विनती कर करके तिन को जिमाय देते भये तिस तें उपरांत फिर निस कपट होय कर और ले जाय कर तिन की अनेक प्रकार पूजा ल्याया और बड़ाई कर कर के बड़े सनमान पूर्वक राजा से मिलाये और कहने लगे कि हे दया दान और मान की निधी राजन इह चारो महात्मा जो हैं सो वेद के पंरम वेता अर्थात वेद शास्त्र के तत्व को भली प्रकार जानने वाले संत प्रधान और साक्षात गरुड़ के समान हैं और सुपात्र कुलीन हैं भक्ती विखे दृढ और धरम मै प्रवीन हैं तां ते हे गुण निधान राजन अब तूं धरम के मारग को विचार करके इन संत भक्तों की धन के सहित सेवा भक्ती कर क्योंकि इह तेरे घर मै सुते सिद्ध श्रत श्री भगवान के प्यारे आय कर के प्रापत होय गये हैं इन की सेवा तेरे को लोक प्रलोक मै सुजस और कल्यान के देने वाली है॥ २२॥ चौपाई॥ सुनि द्विजनाथ वचन अस राई॥ अंबर रतन द्रव्य अधिकाई॥ साजे तुरग के चिन विधि नाना॥ देत नरिंद्र [illegible] सरुचि सनमाना॥ कीन विदाय चरन सिर नाई॥ सो जब चले रमत धन पाई॥ तब जयदेव हर षउरछाये॥ नृपहिं वदन अस वचन अलाई॥ आगल भूप उदधि बन चोरा॥ फिरहिं वधिक लुठिक मग चोरा॥ ताकर नरण हेतु नर राई॥

दुर्जन तु सनेहस न मान॥ लै गन्यो तब भवन निज
भूप भक्त भगवान॥२८॥ टीका॥ इस प्रकार जब तिनो
ने ब्राह्मण को मार देना हृदय मे निश्चय कर लिया
तब इतने मे परम व्रतधारी जयदेवजी भी तहां आय
जाते भये तिन दुष्टों ने मता ले किया हुआ था तुरत
ही पकड़कर भुजा बांध लई और फिर पापियों ने
निरदय होयकर खड्ग जो तलवार है तिस का प्रहार
देकर दोनो हाथ और दोनो चरन काट डाले तिसतें
उपरान्त पाप की खानी धन जो है सो लेकर के वन के मा
रग को चले जाते भये तब भक्तों मे प्रधान ज्ञान औ
र गुणों की निधी भगवान के दृढ भक्त जयदेवजी
अपना प्रालब्ध भोग भोगते था सो आज संसार प्रकट भो
ग लिया है ~~[illegible]~~ देखिये ऐसे विचार के धनी कि उन अ
धर्मों को कुछ भी दोष नहीं लगाते हैं यही कहते हैं कि हे
नाथ मेरे भावी जो थी सो आयकर के व्यापत होय गई है
ऐसे यद्यपि परम खेद औ तृष्णा करके व्याकुल प्रथवी
पर पड़े हुये हैं तद्यपि हृदय का धीरज जो है सो नहीं त्या
गते भये सरब दुख दोष और दारिद्रों के दूर करने
वाले खीर समुद्र मै विराजे हुये भगवान जो हैं रोम रोम
तिनका ही सुमर्न करते हैं और कहते हैं कि सोई कृपा
निधान मेरी कल्यान करेंगे इस प्रकार जयदेवजी
चिंतन कर रहे थे कि इतने मै पुरषोतमपुरी का राजा
वनविखे शिकार खेलता बड़े चंचल घोड़े पर सवार
भया हुआ तो वन मैं एक हिरन के पीछे धाया
चला आवता है तब सो हिरन राजा के भय से व्या
कुल और अधीर ~~होयकरके~~ भया हुआ जयदेवजी की श
रण आय पड़ा और थर थर कांपता हुआ तिनके पास
स्थित होय गया ऐसे तिसको देखकर राजा भी दया
के वश होय गया और तिस पर क्षमा कर देता भ
या परंतु जब जयदेवजी की दशा देखी तब

टिक इक देस सुहावा॥ इक द्विज भ्रमत भ्रमत तहँ आ
वा॥ जानत रहा काव्य कृत मरमा॥ तमहुं करत
मित्रा टिन धरमा॥ एक दिवस गवन्यो जड़ एहू चो
र ज करम करन धनि गेहू॥ तब तिन पकरि बांधि भु
ज लीना॥ करि दुर दशा मान गत कीना॥ नृप पें ल्या
य वदन अस कहा॥ महाराज दुरजन सठ राहा॥ चौर
ज करम निरत दिन राती॥ निरदय दुष्ट मंद मतिघा
ती॥ तब नृप वदन बोलि चंडाला॥ दीन नदेस सहित
कि पृगलाला॥ मोरे राज तें बहिर निकासो॥ जड़
कहे बधहु ग्रीव धरि पासी॥ सासन पाय भूप का सो
सोई॥ लागा तासु कोप वस होई॥ हम कहे देखि द
या कछु लागी॥ कहि करि विनय युक्त मुख वागी॥
वध तें राखि लियो धन दीन्यो॥ कर अंगुरि जुग छे
दन कीन्यो॥ पाछे बहुरि मंद निज सोई॥ पूरब
करम किये कछु होई॥ तो ते भयो चौर करहीना॥
निज कृत दंड प्रकट जड़ लीना॥ अस प्रकार ताकर
सब करनी॥ हम सब पृथक वदन मत बरनी॥ सो
निंदा निज अधम निहारी॥ अरु हमार उपकार विचा
री॥ नृप सन विविध सुजस मुख गायो॥ सठ हमा
र सनमान करायो॥ द्विज सन्यम कर कपट कहा
नी॥ जब अधम मन अस वदन बखानी॥ दोहा॥ भयो
विमल तब गगन पथ अति प्रचंड रव घोर॥ अ
कस मात टूट्यो धरन वज्रपात करि सोर॥ सो द्विज
निंदक कपटि सठ निपट मूल अग चारि॥ बहुत
तड़ित के तुरत तर भये जरत जड़ क्षारि॥ १८॥
टीका॥ तब राजा के सेवकों की वानी सुनकर के सो
मंदकपटी और पाप की खानी मिथ्या महा अनर्थ जो है
सो कपट से बनाय कर के कहने लगे कि भाई
कर नाटिक नाम कर के प्रसिद्ध एक बड़ा सुंदर देस
है॥ सो एक समय तिस विषे इक ब्राह्मण कहीं भ्रमता भ्रमता

चला आया और काव्यकृत जो कविताई है तिसको
जानता था तो हम भी ब्राह्मणों का भिक्षाटन
धरम जो है सो करते और विचरते थे एक दिन इह
जो के अपने करम के अभ्यास से चोरी करने को किसी
धनी के घर मे चला गया तब अधम तहां पकड़ा गया
और तिनों ने बांध लिया अपमान कर कर बहुत ही दूर
देश को फिर राजा के पास ले आये और कहा कि महा
राज इह मंद रात्री दिन चोरी कर कर लोगों को लूटता
रहता है बड़ा भारी दुष्ट निरदय और सब घाती
है तब राजा ने कोप से लाल नेत्र कर कर चांडाल
को बुलाय कर आज्ञा दई कि इस अधम को और
से बाहर ले जाय कर गले मे फांसी लगाय कर के मा
र डालो ऐसे राजा की आज्ञा से चांडालों ने तुरत बां
ध लिया और कोप से ले चले तब इस को देख कर के
हम को कुछ दया आय गई तिन चांडालों के आगे
विनती के बड़े दीन वचन कर कर और कुछ धन का लो
भ देकर वध से तो निवारण कर लिया अर्थात जान
से तो बचाय लिया परंतु राजा के दिखाने के लिये ति
नों ने इस के हाथ की दो अंगुली काट लई और छोड़
दिया तिसके पीछे महा मंद ने फिर अपना कोई पू
र्वला चोर करम किया होगा तिस से अधम के हा
थ पाउं भी कट गये अपने किये हूये करम का प्रकट
फल पाय लिया है भाई इस प्रकार तिसका वृतांत जो है
सो हम ने तुम को सब सुनाय दिया है अब इस कपटी
ने हम को पहिचान कर ~~[illegible]~~ सो हमारा
उपकार सुमर कर और अपनी निंदा के भय से कि
मत कहीं इह मेरा भेद प्रकट कर देवें राजा के पा
स ले जायकर मुख से हमारा सुजस और बड़ाई गाय
ने कर कर इह धन के सहित बड़ा आदिर सतकार भी
कराया है इस प्रकार जब सत्य की मूरती जयदेव
जी की तिन पापियों ने मिथ्या निंदा और कपट की

कहानी मुखसें कथन करी। तब तिस समय ग्राका
श निर्मल होगा अकस्मात तिसतें महाप्रचंड
शब्द और घोर शोर करके वज्रपात जोबिज
ली है सो कड़कती हुई टूट पड़ी तहां उपकार
कीनिधी औरधर्मात्मा जयदेवजीके सो चारो
शिष्य महाकपटी और दुष्ट पाप की खानी जोथे
सो ततकालही तिसबिजली की आंचसे जल
करके भस्म होजाते भये॥२८॥ चौपाई॥ भसम
भये अधम हत चारी॥ तिनहिं दृगन भूप
निहारी॥ करत सोच अचरज वस भयये॥ नृप
धन दान जबन तिन रहयो॥ सो सब लेत भूप
पैं आये॥ भने वृतांत वदन समुझाये॥ महारा
ज सौं सत प्रवीने॥ कानन वज्रपात बध कीने॥
सुनत भूप मानस पछताये॥ विलपत विकल
विप्र पें आये॥ तिनकर मरण वदन जब वरना॥
मूर्छित गिरे सुनत दुज धरना॥ पुनि जब उठ
शोक दुख छाये॥ हाहाकार करत पछताये॥ वि
गन अधीर नयन भरि वारी॥ रोदन करहिं विप्र
व्रतधारी॥ हाय हाय दई वदन उ
चारत॥ ताड़त धरनि भुजन दुज आरत॥ तास
कपट गत शोक निहारी॥ भये दया वस दोष निवा
री॥ सोरठा॥ रुचिर नवल प्रकटाय॥ दुजवर
बध पद जवन कर॥ सकल लोक विसमाय॥
देखि दृगन अदभुत चरित॥२९॥ टीका॥ इस
प्रकार जब सो चारोंहीं दुष्ट नाश को प्राप्त हो
य गये तब तिन की दशा देखकर राजा के से
वक जोथे सो परम अचरज के वश होय गये
और हृदय मे विचार करकर राजा का दिया हुआ धन
दान जोथा सो सब लेकर के राजा के पास ही
चले आवते भये और प्रणाम करके तिन
का जैसा वृतांत भया था सो प्रकट करके

तिसका पद शीघ्रसें

इन सन देहु सब ले भूप लाई॥ जस निदेस द्विजनायक
दीना॥ सादिर सकल भूप तस कीना॥ आये कपट भेष
मगचारी॥ भूप भृतन तब विनय उचारी॥ सोरठा॥ क
हिअ सन कवन तुमार॥ सो संबंध महातमन जानि तें वि
विध प्रकार विप्र करावा मान तुव॥२२॥ तब इस प्रकार ज
यदेव जी के मुखसे वचन सुनकर राजा जो है सो तुरत
हीं बडे दिव्य वस्त्र और भूषण रतन के चिन इत्यादि
नाना धन औ सुंदर जरी साज से संवारे हुये घोडे देकर और
हाथ जोडकर चरनोपर सीस नाय कर मुखसे अनेक
विनती करकरके विदाय कर देता भया ऐसे जब सो
कपट साधू राजासे बडा भारी धन पाय करके चल
नेको तयार हुये तब जयदेव जी प्रसन्न भये हुये राजा
को कहने लगे कि हे राजन आपने इन संतोको बहुत भा
री धन दिया है परंतू मारगमे समुद्रके समान महा घोर
व[illegible]ण पडा हुआ है कि जिसविखें मानुष्योंको वध क
रने वाले अर्थात मारदेने वाले लुंठिक लुटेरे चोर ब
हुफिं[illegible]ते हैं ताते तिस समुद्र रूपी वनके तरने
के लिये इन संतों के साथ तुम अपने शस्त्रधारी
बलमान सेवक जो हैं सो लं[illegible]यदेवो सो इनको वनसे
पार करके चले आवें ऐसे भक्त प्रधान की आज्ञा मान
कर राजा तिन के साथ अपने सूरवीर सेवक लगाय
देता भया इस प्रकार जब वे चारो कपट भेखी वन
के मारग मे चले आये तब राजाके सेवक तिनको
विनती करकर पूछने लगे कि हे संतो इह जय
देव कवी जो हैं इन के साथ तुमारा कौन संबंध है
कि जिससे राजा के पास तुमारी अनेक महिमा व
डाई करकर धनके सहित ऐसा आदिर सतकार कर
वाया है॥२३॥ चौपाई॥ भृतन भनन सुनि सो सठ
बोले॥ कपट अनर्थ मरम मुख खोले॥ करना

सुनत भूप मानस हरष पावा॥ पुनि पुनि विप्र चरन सिर

नावा॥ कीन विविध मुख सुजस बड़ाई॥ को तुमार सदृश

दुजराई॥ आज धन्य धन हेतु ति आना॥ जहि पर हित

नित मानहु माना॥ तुव संसर्ग विप्र व्रतधारी॥ हम हुं

धन्य जग कीरति धारी॥ सोरठा॥ अस बरनत नत

राय॥ चलि आये निज भवन तब॥ सब सन दीन सु

नाय॥ विप्र प्रसंसा विविध विधी॥ दोहा॥ इह गाथा

सुभ मन्यो मै दुज वर भक्ति पुनीत॥ आगे आन जथा

मती करहुं कथन जुत प्रीत॥२०॥ टीका॥ तब तिन मै

जो जो बुद्धीमान और चतुर पुरष थे सो प्रसन्न होय

करके कहने लगे कि देखो भाई जो [illegible] अनहित

करते के साथ हित करें अर्थात बुरा करने वाले के सा

थ भला करते हैं तिन को संसार मै कुछ भी दुरलभ न

हीं है और पराया दुख देखकर के अपने हृदय मै दु

ख मानते हैं सो पुरष जगत मै धन्य हैं और धन्य तिन

की करनी है ऐसे परसपर कथन कर भक्त प्रधान जय

देव जी की अनेक श्लाघा और बड़ाई करते हैं तब रा

जा हाथ जोड़ कर चरनो पर माथा नाय करके बड़ी दी

न वाणी से विनती करने लगा कि हे कृपानिधान मेरे

हृदय मै बड़ा भारी संसय उतपन्न ~~उतपन्न~~ होय गया

है और मै कुछ नहीं जानता हूं कृपा करके कहिये

कि इस मै कौन कारन है वे सेत के मारे गये और इह

आप के कटे हुये हाथ पाउं कैसे नवीन उतपन्न हो

य गये तब जयदेव जी भगवान को सुमरकर के आ

द से अंत लग अपना वृतांत जो था सो राजा को

प्रकट करके सब सुनाय देते भये ऐसे तिन का

अदभुत [illegible]तांत सुन करके राजा हरष मै मगन हो

जाता भया और बारंबार चरनों पर प्रणाम करके

मुख से अनेक प्रकार की असतुती करने लगा कह

ता है कि हे भक्त उत्तम तुम धन्य हो और धन्य तु

मारा सफल जनम है आज जगत मै तुमारे

समान और दूसरा कौन ऐसे सुजस का पात्र है हे म
हा प्रधान तुमारे जैसे तुमहीं हो और महिमा बड़ाई तुम
को ही योग्य है [illegible] तुम कैसे हो कि जिनों ने सदैव पर
हि और परउपकार को ही हृदय मे राखा हूआ है हे सत्य
की निधी देखिये कि तुमारे [illegible] संसर्ग मिलाप से आज
हम भी जगत मे धन्य धन्य और कीरतीमान होय गये हैं
ऐसे कथन करके राजा जो है सो आनंद से अपने भवन
मे चला आया तहां आय कर के बड़ी प्रीती सनमान से
जैदेव जी की भक्ती का प्रभाव और महिमा सब को भली
प्रकार सुनाय देता भया नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो
[illegible] इस प्रकार इन जैदेव जी की पवित्र भक्ती जो है सो मैंने
कुछ गायन की है अब आगे तिनकी भक्ती और मनोहर
गाथा कि जिसके श्रवण करने से भगवान के चरन कम
लों मे प्रीती उपजती है कथन करता हूं ॥२०॥ चौपाई ॥
कछुक काल बीत्यो जब आई ॥ भये वृद्ध वपु तब द्विज
राई ॥ कंपत अंग सिथल तन सारा ॥ तदपि नित्य
करम नहिं हारा ॥ प्रात हिं मंद मंद तजि धामा ॥ मार
ग लेत विपुल विश्रामा ॥ सुरसरि जाय विप्र रत ध
रमा ॥ करहिं सनान नित्य निज करमा ॥ अब स
र एक वृद्ध द्विज राई ॥ सो चादिक कृत करत सहा
ई ॥ चले जात मग जाह्नवि तीरा ॥ मंद मंद गति
सिथल सरीरा ॥ पहुंचे तहां विपुल श्रम पाई ॥
प्रीति पूरवक मुदित अन्हाई ॥ बहुरि पराय भवन
निज धीरा ॥ गिरे भ्रमत मग निवल सरीरा ॥ देखि
लोग धाये अतुराई ॥ लगे करन मरदन सिव काई ॥ बहु
रि सहज भुज पकरत पानी ॥ बैठारे सादर द्विज ज्ञानी ॥
पुनि विलोकि सीतल द्रुम छाये ॥ तहां दीन द्विजनाथ
पौढाये ॥ करत सुविजन मोद मन भरना ॥ चापि
त काहु करन मृदु चरना ॥ तोलों तहां धरन पति
आये ॥ कहत बदन मृदु बचन सुहाये ॥ सिव का

१२१

सू[illegible] करत द्रुत गवने ॥ आये मुदित भूप द्विज भवने ॥ बोले वदन नम्रकर जोरी ॥ दीन नाथ विनती कछु मोरी ॥ जीरण म[illegible] याल तुव काया ॥ अब तें नाथ तुम हूं करि दाया ॥ सिव का सू[illegible] देव सरि तीरा ॥ जाव हु नित्य हरन जन पीरा ॥ तुव प्रसाद मोरे कुल राया ॥ [illegible] नहिं न आज दुरलभ सिव काया ॥ पुनि प्रणामो मोर भूप मति धीरा ॥ पद चर जाऊं देव सरि तीरा ॥ मोरे दिवस जियन अब लागी ॥ धरम पुरातन सकहुं न त्यागी ॥ सोरठा ॥ भूप वचन द्विज मान ॥ गवनि भवन सादिर सकल ॥ करि पूजन भगवान ॥ राज काज तत पर भये परर ॥ जब जयदेव जी को इस में वास करते करते कुछ काल वतीत होय गया तब [illegible] भक्त प्रधान वृद्ध होय गये शरीर जो है सो सिथल होय गया और अंग सब कांपने लग [illegible] जाते भये तथपि तिनों ने अपना नित्य करम जो है सो नहीं तयागा प्राता काल में उठकर मारग विषें बहुत ही विस्राम लेते हुये श्री गंगाजी पर जाय कर [illegible] सनान कर कर अपनी नित्य करम सब करते थे तब एक दिन सो वृद्ध भक्त जयदेवजी सौच कर के सहजे सहजे गंगा के सनान करने को जो चले तो मारग में बहुत ही पाय कर तहां [illegible] पहुंच [illegible] ते भये और फिर जब गंगा के निरमल जल में सनान कर कर घर को आवने लगे तो मार[illegible]ग में निर्बलता के कारन चक्कर खायकर के गिर पड़ते भये और मूर्छा आय जाती भई ऐसे तिन को देख कर लोग जो हैं सो धाय कर के आय गये और मरदन चापी करने लग पड़े जब तिनें कुछ सुरत आई तब सहजे सहजे उठाय कर और ले जाय कर एक वृक्ष की सीतल छाया के नीचे सुख पूर्वक लिटाय दिये कोई पंखा झोलने लगा और कोई मरदन करने लगा इतने में तहां अकसमात ही

शुं सब सुनाय देते भये कि महाराज वे संत जो थे सो
वन विषे अकस्मात नहीं वज्रपात जो वजली है तिस
ने भस्म कर दिये हैं ऐसे तिनके मुख से वचन सुनकर के
राजा मौन होय गया और अनेक प्रकार पछताता हू
आ विलाप करता करता जयदेव जी के पास चला
आया और शोक से दुखी होय कर जब भक्त प्रधान को
विजली का
पड़ना और तिनका मरना सुनाया तब जयदेव जी सु
नते ही मूर्छा होय कर के पृथवी पर गिर पड़ते भये
फिर थोड़ी देर के पीछे दुख और शोक से घायल
भये हुये कुछ सुधी संभाल कर जो उठे तो धीरज से र
हित व्याकुल भये हुये हाहाकार शब्द से नेत्रों में जल
भर भर कर रोदन करने लगे और हाय देव हाय देव
ऐसा पुकारते हुये दोनों भुजा जो हैं सो दुखी होय कर
के पृथ्वी पर पछाड़ कर मारते भये इस प्रकार तिन
का कपट से रहित शोक देख करके सब शोक और दुख
दोषों के दूर करने वाले भगवान परम कृपा के वश
हो गये दीनानाथ की आनुग्रह से ज
यदेव जी के हाथ और पाउं जो कटे हुये थे सो तुरत
ही नवीन अर्थात नये उतपन्न हो जाते भये इस अ
द्भुत कौतुक को देख करके सब लोग अपने हृदय मैं
बड़ा आचर्ज मानने लगे ॥२९॥ चौपाई ॥ तिन में रहे
जवन बुधनागर ॥ हरषि मनत मुख वचन उजागर ॥
अनहित देखि कर हित जोई ॥ तिन कहै कछु दुरलभ
नहिं होई ॥ परदुख देखि जिनहिं दुख मानी ॥ सोऊ धन्य
नर जगत प्रधाना ॥ तब तत नाथ जोरि कर दीना ॥
करि प्रणाम विनती अस कीना ॥ कारन कवन विप्र
बरए हू ॥ उपजा हृदय मोर संदेहू ॥ दुज प्रवीन सब
बै उचारा ॥ रह्यो वृतांत जवन निज सारा ॥
प्रकर

इसप्रकार जब दिन वतीत होय गया और संध्या
पड़ गई सब जगतमे अंधेरा छायत होजाता भया
तब लोग जो हैं सो अपने घरों मे सुख पूर्वक सोयग
ये जब आधी रात वतीत होयगई तब सेवक
और मंत्रियों के सहित राजा रानी और नगरके सब
ब्रह्मण पंडित विद्वान आधीरातके समय अ
पने अपने घरों मे इह अद्भुत स्वपन जो है सो देखते
भये कि शुकल वरन अर्थात उज्जल रंग और उज्ज
ल ही वस्त्र नाओं धारे हुये सुंदर कमल और मच्छ
है वाहन जिसका पृथवी पर पापों के समूह का नास
करने वाली ऐसी कमल लोचनी मात गंगे जो है
सो भामनी जो स्त्री है तिसका अनूप रूप धारकर प्र
ग्रकट होय कर कहती है कि भक्तों मे प्रधा
न जयदेव मेरे दृढ भक्त जो हैं तिनकी भक्ती के वश हो
य करके चली आई हूं ॥२२॥ चौपाई ॥ प्रथमहिं उदय
होत जन भाना ॥ विप्र अजर जे वापि रहाना ॥ मोर
प्रवेश तास मध वासो ॥ अव तें होहि सत्य व्रत धा
रो ॥ जानहु तब निश्चय मन माहीं ॥ ता मध प्रात
के जबि कसाहीं ॥ इह जयदेव विप्र व्रत धारी ॥ अति
प्रीय भक्त मोर हितकारी ॥ निवल जठिर हठ तजत
न धीरा ॥ करत स्नान प्रात मम नीरा ॥ मै विलोकि
तो कर श्रम एहा ॥ कीन निवास रुचिर दुज गेहा ॥
इह प्रण भक्त भंग जनि होई ॥ तो कर तुमहु प्रात स
व कोई ॥ इह वृतांत सब प्रकट वखानो ॥
औरहु चमतकार तुव जानो ॥ जे प्रीय भक्त मोर
सनजाई ॥ तास वापि जल विमल अनाई ॥ सपत
दिवस पाछिल जन सोई ॥ दारुण कुष्ट गलन गत
होई ॥ असप्रकार निशि अवसर काही ॥ सकल
लोक निज निज गृहमाहीं ॥ देखत स्वपन प्रात
सुख छाये ॥ धाय धाय नृपति पें आये ॥ निशि वृ

तांत सादिर सब बरना॥ हरषे सुनत सबल पतिधरना॥
करत प्रसंसा वदन सुनाये॥ द्विजवें सकल भूप जुत आ
ये॥ सो वृतांत सब बरणन कीना॥ भने सुनत द्विज ना
थ प्रवीना॥ धन्य तुमार जनम जग भययो॥ जिन सा
क्षात दृगन मदिलययो॥ रमा रूप दरसन सुरस रि
या॥ किलबिष कोटि संसृति सब हरिया॥ देखो तुम कुं
जवन निसि माही॥ सपन बात कछु अचरज नाही॥
दोहा॥ जगत मान्य जननी जगत जगत उधार
निदान॥ जगत दुरत से यात जहि करत दरस दुर
जात॥ अस मगतो दयानिधी करन जनन पर नेहु॥
मोर सदन आवैं अवसि नहिन मित्र संदेहु॥ २३॥
टीका॥ प्रातःकाल सूर्ज के उदय होने से प्रथम ही
भक्त प्रधान जयदेव के आगाम मे वापी जो बाव ली
है आज ते लेकर मेरा सत्य करके तिसँविखें प्रवेश हो
जावेगा इस वारता को तुम सब लोगों ने तब निश्चय
करना कि जब प्रातःकाल होते तिस मैं कमलों की
शोभा देखपडेगी इह सुंदर व्रत के धारने वाला ज
यदेव ब्राह्मण जो है सो मेरा परम प्यारा भक्त है दे
खो यद्यपि वृद्ध और कृश्य निरबल भी हो गया
है तथापि अपने हठ और नियम को नहीं त्यागता
नित्य प्रातःकाल आय करके मेरे विखें ही स्नान
करता है इसी ते मै अपने वृद्ध भक्त का प्रेम देख
कर के तिसके घर मे ही निवास आय किया है कि मे
रे भक्त का नियम और प्रण जो है सो भंग ना होजा
वे अब तुम सब कोई प्रातःकाल होते तिसके
पास जाय करके इह प्रसंग जो है सो सब सुनाय
देवो इसमे मेरा एक और भी वाक्य है कि जो कोई
कुष्ट रोग करके गलित भया हुआ पुरष वा स्त्री मेरे
तिस भक्त के साथ जाय करके तहां वापी के जल

हरि, हरि हरि

मंत्री

मे स्नान करेगा सो सात दिनके पीछे तिसम
हारोग से मोक्ष को प्रापत होवेगा अर्थात् तिसका कुष्ट
रोग दूर होजावेगा इसप्रकार जब सबने अपने अ
पने घर मे सुपन देखा तब प्रातःकाल उठ करके
सब राजा के पास चले आये और सुपने का वृतांत
सुनाय देते भये तब राजा सुन करके परम हरष के
वश भया हूआ मुख से अनेक प्रकार महिमा वडाई
कर कर सब लोगों के सहित जयदेव जी के पास च
ला आवता भया तहां आवते हीं तिन को सुपने का
सब वृतांत सुनाय दिया तब भक्त प्रधान सुन कर
आनंद मे मगन होयगये और कहने लगे कि भा
ई आज तुम सब धन्य हो और धन्य तुमारे भाग्य हैं
कि जिनो ने जगत के पापों का नाश करने वाली ल
क्ष्मी रूप श्री गंगे माई का नेत्र भरकर प्रतक्ष दरस
पाया है हे प्यारे इहजो तुम ने रात्री के समय सुप
देखा है सो सब सत्य है कुछ अचरज की बात नहीं है
सो जगत मे मानी हुई जगत की माता और जगत
के जीवों का उद्धार करने वाली कि जिसके दरस
न करने तें जगत मे पापों ~~...~~ सब
नाश को प्रापत होजाते हैं ऐसे दया की निधी और
दीन भक्तों पर सनेह करने वाली मात गंगाजी
है सो हे मीत जनो मेरे घर मे अब आवेगी
इसमे कुछ संदेह नहीं है ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ सुनि
अस भूप मोद मन दीने ॥ बोलि विप्र पंडित सब ली
ने ॥ मज्जनीय संचित संभारू ॥ कीन्हो भूपति
विविध प्रकारू ॥ आगल रात्रि द्विजहिं ~~...~~ ॥
सम दाये ॥ वापी तीर मुदित मन आये ॥ प्रथम दे
व सरि पूजन कीना ॥ पठत मंत्र द्विज सृष्ट प्रवीना ॥
हरहर हर रव रटत मधीरा ॥ करत स्नान देव
सरि तीरा ॥ प्रकटी मातु गंग तब कैसे ॥ मानो तीव्र

राजाभी आय गया सो को देखकर बड़ी प्रीती
सनमानसे तुरत पालकी पर बिठाय करके तिनकेघ
र मै ले आवता भया तहां हाथ जोड़कर कोम
ल वाणीसे बिनती करने लगा कि हे कृपानिधान मे
री इह प्रार्थना है कि अब आपका शरीर वृद्ध और अ
त से करके होयगया कुछ चलने की सामर्थ नहीं र
हता है तांते चहता हूं कि आज ते लेकर प्रभू तुम दया
करकें पालकी मे बैठ कर गंगाजी के सनान
करने को जाया करो तब राजा का कथन सु
नकर जयदेवजी कहने लगे कि हे प्रजापाल मै जा
नता हूं कि तेरे प्रसाद करके मेरे को इह पालकी कुछ
दुरलभ नहीं है सब सुगम और सहज है परंतु मेरा प्र
ण है कि अपनें पाऊं से श्रद्धा पूर्वक चलकर श्री गंगा
जी मै सनान करना है धरम की बिधी राजन बहुती
तो बीत गई अब थोड़े दिनों के वासते अपना पुरा
तन धरम और प्रण जो है सो क्यों तयागूं ऐसे हे ज
यदेव जी का भक्ती प्रीती वाला दृढ़ वचन सुनकर राजा
हरष प्रणाम करके घरको चला आया तहां भक्ती
और प्रेम से भगवान का पूजन सेवन करके अपने रा
ज काज मै ततपर हो जाता भया ॥२२॥ इस प्रकार ज
व दिवस बिहावा ॥ संध्या परी तिमर जग छावा ॥ नि
ज निज किये सयन सब कोई ॥ इस जब अर्ध र
यन गत होई ॥ भृत गण सचिव भूप जुत रानी ॥
ज्ञान निधान विप्र बरमानी ॥ सबन अर्ध निसि नि
ज निज गेहू ॥ अदभुत सपनें बिलोकिस एहू ॥ दोहा ॥
शुकल बरन अंबर शुकल ललित जुगल कर कंज ॥
वाहन मतस सरोज दृग धरनि सकल अग भंज ॥
भामनि भेष बशेष दुति धृत अनूप प्रकटाई ॥
भनत भगीरथि गंगमै बिप्र भक्ति बस आई ॥ टीका ॥

बलसे आगे ही चलकर लेते हैं जल जो है सो दूध वत उजल और बड़ा निरमल पवित्र है तैसे ही गंगा के बालू समान तिसका तू की उज्जल शोभा और वापी में सुंदर कमल जो हैं सो भी विकासमान भये हुये अर्थात खिले हुये सुंदर ही छबी को उदय कर रहे हैं इस अद्भुत कौतुक को देखकर लोग सब हरष के बश भये हुये कहते हैं कि मात गंगे तेरी जय हो हे त्रिलोक की रानी तेने सपने में जो कुछ कहा था सो सब सत्य भया है तब ब्राह्मणों के सहित राजा आनंद में मगन होय करके श्री गंगा जी की असतुती जो है सो गायन करने लगे कि जय हो तेरी हे किंनर यक्ष मानुष्य और देवताउं कर के सेवन की हुई है तीनों स्वर्ग मात लोक और पाताल में विचरने वाली हे विष्णुपदी अर्थात विष्णु भगवान के चरन कमलों से उतपन्न भई हुई हे जटा शंकरी जो शंकर महादेव की जटों में निवास करने वाली हे भक्त जनों को आनंद और मंगलों के देने वाली हे भगीरथी हे जाह्नवी अर्थात जन्हु राजा के कान द्वारा उतपन्न भई हुई हे भय हरनी हे सरव सुख करनी संसार समुद्र के तारने को जीवों के लिये तू तरनी अर्थात बेड़ी है फिर हे मात गंगे तूं कैसी है कि मदन जो कामदेव है तिसके जो महादेव हैं तिन के त्रितिये क्या तीसरे नेत्र के पास तेरा निवास है इसी से तूं हे देवी जगत के चोर पाप जो हैं सो जलाय करके भस्म कर देती है ॥२२॥ चौ० इस प्रकार जब असतुति गाई ॥ द्विज जयदेव दिव्य देह पाई ॥ भये लोग सब पावन काया ॥ सबन अभिष्ट रुचिर फल पाया ॥ इस प्रकार इह चरित सुनावा ॥ में कछु अ

लप यथा मति गावा॥ जो इहि सुनहिं श्रवण मन
लाई॥ अथवा भक्ति भाव जुत गाई॥ पुरवहिं ता
स इछित सब कामा॥ उपजहिं हृदय प्रेम अभि
रामा॥ मुनि जोगीन दुरलभ गति जोई॥ हरि
प्रसाद पावहिं जन सोई॥ दोहा॥ भक्ति बँढावन
सुजस इह दुजे जयदेव पुनीत॥ मोद भरन मंग
ल करन हरन भीम भव भीत॥२४॥ टीका॥
इस प्रकार जब अस्तुती गायन करी तब श्री
गंगा जी के प्रसाद से जयदेव जी की बडी सु
दर दिव्य काया हो जाती भई और लोग भी स
व पापों से रहित होय करके पवित्र होय गये स
व ने अपने अपने मन वांछित फल को प्रापत
कर लिया इस प्रकार इह मनोहर गाथा जो
है सो मैने जैसी कतुच्छ बुद्धि है तिस के अनु
सार आपके आगे गायन कर दई है इह
कैसी भी गाथा है कि जो कोई भक्ती और
श्रद्धा पूर्वक इसको पढेगा अथवा श्रवण
करेगा तिस के मनोरथ जो हैं सो सब
सफल हो जावेंगे और भगवान के चरन कम
लों मे प्रेम बढता जावेगा और जो गती कि मुनी
जोगी जनो को दुरलभ है सो तिस को भगवान
की कृपा से सुगम और सहज ही प्रापत हो
जावेगी॥ २४॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भग
वद्भक्ती प्रकाशने भाषा टीकायां जयदेव च
रित वर्णनो नाम सर्गः

१३१
731

इसमे कुछ संशय नहीं है क्योंकि इन जयदेव जी के सुजस और भक्ती की गाथा जो है सो श्रवण करके सरब सुख और मंगलों के देने वाली और संसार के भय कलेशों के हरने वाली है ॥२४॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भागवद भक्ती महातमे भाषा टीकायां जयदेव चरित वरणने नाम स सर्गः

नालधर जैसे॥ ऊर्मी उमग उमग छवि देही॥ मानो अधी सवल चलि लेही॥ सहस्र दुग्धविमल जल भरिया॥ सिकता स्वेत सरस सर सरिया॥ नीर नवल ललित विकसाये॥ लोक विलोकि सकल हरषाये॥ जय जय तीन लोक की रानी॥ भयो मनन तुव सत्य भवानी॥ तव नरेस दुज वृंदन संगा॥ करि प्रनाम उर हरष उमंगा॥ मातु गंग कर अस्तुति चारू॥ लागे गायन विविध प्रकारू॥ जय जय त्रिपथ गामनी देवी॥ किंनर यक्ष मनुज सुर सेवी॥ विस्नु पदी शिव सीस विहरनी॥ मंगल मोद जनन मन भरनी॥ विदत भगीरथि जाह्नवि माई॥ जटा शंकरी से स्तुति गाई॥ भय हरनी सं कुल सुख करनी॥ भव निधवार तारनी तरनी॥ दोहा॥ त्रितिय नयन सुमैन दिपनि कर मातु तुव अयन॥ याते दाहत दुंद भव करत जाहि सव रयन॥२३॥ टीका॥ ऐसे भक्त प्रधान के मुख से वचन सुन करके राजा हरष से प्रफुल्लित भया हुआ सव पंडित ब्राह्मणों को बुलाय लेता भया और स्नान संवधी सामग्री जो थी सो सव साथ लेकर फिर सनमान पूर्वक जयदेव जी को आगे राखकर के वापी जो बावली है आनंद से तिस के किनारे पर चले आवते भये तहां प्रथम जयदेव जी ने विधी पूर्वक मंत्र उचारण करकर श्री गंगा जी को पवित्र पूजन जो है सो किया तिसते उपरांत जब हर हर हर रटते हुये तिस वापी के निर्मल जल विखें स्नान करने लगे तव मात गंगे के सो शोभा से उमचती भई कि जैसे नालधर जो फुहारा वडे तीव्र वेग से उछल उछल पडता है और ऊर्मी जो जल की लहिरें और कलोल है सो भी अनेक प्रकार उमग उमच कर नाना छवी करने लगे इत्यादि जो लोग देते हैं सो मानो कौ प्रकर

शोक अनल सौं दाहति देहा॥ भई सुनत अचरज बसु रानी॥ इहि प्रीता करहौं जिय ठानी॥ सो जब भई भसम तव सारे॥ भूप सहित निज भवन सिधारे॥ गयो कछुक जब काल बिहाई॥ एक दिवस प्रमुदित नरराई॥ सोरठा॥ मंदिर बोलि मंगाय॥ भक्त प्रवर जयदेव दुज॥ लिये संग निज धाय हरषि आय हरि भवन जुग॥१॥ टीका॥ नाभादासजी कहते हैं कि हे संतो अब पदमावती नाम करके पतीव्रता धरम मै प्रवीन जयदेवजी की स्त्री जो है तिसकी मनोहर गाथा जैसी कबुद्धी के अनुसार है यसकती है आपके आगे गायन करता हूं इनकी सीभीगाथा है कि भक्ती जो भगवान हैं तिनके चरनकमलों की प्रीती भक्ती के देने वाली और संशय शोक पाप इत्यादि दुख कलेश जो हैं तिनके नास करने वाली है एक समय दैवभावी करके जगननाथपुरी का राजा जो था तिसका भ्राता काल के वश होजाता भया अर्थात मरजाता भया तब तिसकी स्त्री जो थी सो अपना पतिव्रता धरम विचार करके कि पती के बिना मेरा जीवना किस अर्थ है तिसके साथ ही जलमरने को प्रण धारकर तयार होजाती भई तब राजा ने तिसका दृढ निश्चय और हठ देखकर जो जो ऐसे सरकार का उचित समाज था सो सम मसान भूमी मै ल्यायकर सब जोड़ दिया और चंदन की चिता भीर चाई गई तव सहगामनी जो सती है अपने मृत भये हुये पती के साथ मानो जैसे सूरवीर अभय होय करके रणभूमी को चला आवता है तैसे आनंद मै मगन भई हुई चली आवती भई तिस समय तहां संपूर्ण लोगों के सहित राजा भी चला आया सब कोई परस्पर शोक के वचन

आलापन करते और कहते हैं कि भाई देव भावी बड़ी बलवान है तब जहां स्त्रियों के समूह मे राजा की रानी स्थित भई हुई थी तहां सील और गुणों की खा नी जयदेव जी की स्त्री पदमावती भी शोक से आय करके स्थित होय गई तिसको देखकर रानी ने हाथ जोड़कर चरनो पर प्रणाम किया और सुंदर आसीस लिया फिर परस्पर कुछ चरचा होती रही तब रानी कहने लगी कि देखो स्त्री का इह पती व्रता धरम जो है सो बड़ा कठिन है ऐसे रानी के मुख से बचन सुन करके पदमावती बड़ी मधुर और कोमल वानी से कहने लगी कि हे महारानी स्त्रियों का पति व्रत धरम जो है तिसकी इह रीती नहीं है सो कोवडा उत्तम तें भी उत्तम धरम है हे देवी पतीव्रता स्त्री सो होती है कि जो अपने प्राणपती का मरना सुन कर तहां तुरत ही प्राण त्याग देवे और जो इहजीवती जल मरती हैं सो तिनका परलोक सिद्ध नहीं होता है केवल एक देम करके लोगों को दिखावती हैं पतीदेवता पद जो है तिसको प्रापत नहीं हो ती हैं इह तो प्रकट अगनी मे शरीर को दगध कर तीहैं और वे सती जो हैं शोक की अगनी मे ही भसम हो जाती है इस मे कुछ संशय नहीं है इस प्रकार पदमावती के बचन सुन कर रानी बड़े अचरज को प्रापत होय गई और हृदय मे कहती भई कि मे इसकी अवश्य प्रीक्षा करूंगी इतने मे सो चिता विषे जलकर के भसम होय गई तब सब लोकों के सहित राजा जो है सो अपने घर को चला आया ऐसे जब कुछ काल बतीत होय गया तब एक दिन राजा बड़ी प्रीती और सनमान से जयदेव जी को बुलाय कर और साथ लेकर आनंद मे मगन

भया हुआ जगन नाथ भगवान के भवन मे चला

आवत गया ॥१॥ चौपाई ॥ तहां रैन वसत नाथवि

होवा ॥ ईहा प्रात महि खीमन आवा ॥ श्रीलाकरहुं

विप्र त्रिय केरो ॥ वादिन वद्यो जवन प्रणमे रो ॥ अ

सविचारि तिन चेरि पठाई ॥ पदमावती तुरत च

लि आई ॥ कवन काज मोहि पठयो बुलाई ॥ करहु

प्रकट सासन मनमाई ॥ भूप पतनि भरि नयनन नी

रा ॥ करत कपट रोदन गत धीरा ॥ मनन वदन अस

प्रकट जनाई ॥ आय अवहि भूप मृत भाई ॥ तुव प

ति रजनि सूल रुज संगा ॥ भयो कालवस प्राणन

भंगा ॥ तवहुं न आय भूप निज गेहा ॥ जवं अस क

पट वचन उर आनी ॥ भने प्रकट मुख भूपति रा

नी ॥ सत्य जानि पदमावति सोई ॥ गिरी विकल

मूर्छित महि होई ॥ तजे प्राण द्रुत निमख न ला

गी ॥ देखत ~~हुमने चरि वयससरानी~~ चरित

चकत चित रानी ॥ हाहाकार करत पछताई ॥

भई देव तुव कवन रजाई ॥ करि सके निजमं

दा गतधीरा ॥ भनत विछत नयनन भरि नीरा ॥

मै पति व्रता ललित द्विज नारी ॥ करि मयामा

घलजग मारी ॥ अव का होहिं दैव गति मोरी ॥ ज

हि अस लाग्यो पाप जग चोरी ॥ देखि विकल अं

तापुर नारी ॥ लागी करन रुदन मिलि सारी ॥ तो

लो द्विज जयदेव समेता ॥ आयगये नरनायन केता ॥

तहि मृत सुनत माथ धुनि लागे ॥ चिंता विकल

शोक रस पागे ॥ का इह भयो भूप मुख बोला ॥

महिषी ~~स्क~~ मरम सकल तव खोला ॥ भने

राऊ सुनि धिग धिग वानी ॥ तुव वध योग्य मे

द मति रानी ॥ द्विज पतनी पति देवत देवी ॥ ध

रम प्रवीन रघुकुल सेवी ॥ सोतु व वृथा

[illegible]

अथ पदमावती चरितं

दोहा॥ पदमावति जयदेव कर पतिव्रत पतनी जोय॥
तासु चरित अब करहुं मे कथन यथा मति होय॥
अदभुत अचरज हरन मन हरिपद नलन पुनीत॥
प्रीति रमन संशय समन दमन दुरन दुख भीत॥ चौपाई॥ एक समय माकी बस होई॥ पुरषोतम पुर भूपति जोई॥ तास भ्रात काया तजि दीना॥ तहि पतनी त्रिय धरम प्रवीना॥ जियन जगत जिय आस बिसारी॥ पति सन जरन लीन प्रण धारी॥ तब हठ देखि तास महिपाला॥ यथा समाज उचित तहि काला॥ संचिं कियो भूमि हम साना॥ चंदन चिता विरचित नमाना॥ सहगामनि तव मृत पति संगा॥ आई मनहु वीर मति रंगा॥ भूप समेत लोग सब आये॥ ■ मनत वचन सुख शोक बढाये॥ ता ठीज होधर नपति रानी॥ आई तहां शोक रस पानी॥ पदमावती सील गुण खानी॥ देखि तासु कर जोरत रानी॥ परी चरन आसिष सुम लीन्यो॥ बहुरि परस्पर माषण कीन्यो॥ तव महिषी अस वदन उचारा॥ पतिव्रत धरम कठिन संसारा॥ पदमावती वचन सुनि रानी॥ बोली वदन मधुर मृदु वानी॥ ■ महि धी धरम पतिव्रत जोई॥ तास रीत अस नाहिन होई॥ सूतम तें सूतम अति करनी॥ जानहु जगत पतिव्रत बरनी॥ सुनत प्राण पति मरन सुभागी॥ देहिं तुरंत प्राण निज त्यागी॥ सो पतिव्रता धरम रत नारी॥ भूप पतनि उर लेहु विचारी॥ जारत निज वपु जीवत जोई॥ तहि पर लोक सिध नहिं होई॥ ~~कलो देम करि लोग~~ दिखावहीं॥ पतिदेव तपद नाहिन पावहीं॥ जरहिं प्रकट पावक वपु हा॥

कपट राखकर वचन उचारन किये तब तिनको
सुनकर और सत्य जानकर पदमावती जो है सो
मूरछा से व्याकुल होय कर पृथवी पर गिर पड़ी औ
र ततकाल ही प्रानों को त्याग देती भई तब इस
अदभुत वारता देखकर के रानी हृदय मे पछता
वती हुई हाहाकार शबद कर कर रोने लगी और
कहती है कि हे दैव इह तेरी कौन भावी वरतमान
भई है फिर मुख से अपनी अनेक निंदा कर कर अ
पने पर ही दोष धरती है कि देखो मै कैसी अधम
और पाप की खानी हूं कि जिसने मिथ्या कथन कर
कर ऐसी पतीव्रता और सत्य धरम वाली ब्रह्मण
की स्त्री मार डाली है अब मेरी कौन दशा होवेगी औ
र इस महा घोर पाप से मै कैसे छूटूंगी अहो मेरे
मंद भाग्य जो मैने वृथा ही इह अनर्थ अपने सिर
पर उठाय लिया है ऐसे तिसकी दशा और पदमा
वती का मरना देखकर राजघर की सब स्त्री बड़ा
विलाप कर कर रोवने लग जाती भई इतने मे ज
यदेव जी को साथ लिये हुये राजा जो है सो घर मे
आय जाता भया और पदमावती का मरना सुन
कर परम शोक से सिर फेर कर और हाथ मल कर
पछतावने लगा फिर पूछता है कि कहो इह का
अनर्थ भया है इसका कारन क्या है तब भय के व
श भई हुई रानी हाथ जोड़ कर सब वृतांत सुना
य देती भई तब राजा सुनकर के रानी को बहो को
पसे धिग धिग धिग उचार कर कहने लगा कि
अरे मंद जड़ जाती तूं तो वध करने के योग्य है
अर्थात मार देने के लायक है हे पापनी तूने ऐ
सी पती ~~के~~ व्रता और सत्य धरम वाली ब्रह्म
ण की स्त्री कि जो ~~~~ साक्षात देवी पूजने हि
के योग्य थी वृथा ही मार डाली है और अभागनी

सरव जगत मे अपजस ले लिया है अब सो तिस का पती ब्रह्मणों विखें उत्तम ब्रह्मण जो है कहि घर मे अकेला कैसे निवास करेगा ॥ और तिस दुज प्रधान के विना मेरे को कैसे कुछ सूझता है चित्त मे तो ऐसी आवती है कि महा मंद तेरे को अबी दुरद शासे मार डाले परंतू स्त्री वरग जान कर हाथ नहीं उठाय सकता हूं आप को हीं विष खाय कर के मरना पड़ा है अधम अब तेरे को देखना नहीं चाहता हूं इस प्रकार जब राजा ने परम कोप से राणी को वचन कहे और तिस का वहुत ही अपमान किया तब सुन कर के जयदेव जी जो हैं सो देव इच्छा को जान कर दया के वश भये हूये वड़ी कोमल वाणी से कहने लगे कि हे राजन तुम आप परम चतुर हो तुम को मै क्या सिखाऊं परंतू देखो इह देव माती जो है सो संसार मे वड़ी वलवान है इस मे किसी का दोष नहीं है होनहार अब स्य आय कर के व्यापत हो जाती है तो ते हे प्रजापाल अब चिंता और शोक को त्याग भक्तजनों पैज राखने वाले भवनों के पती भगवान जो है तिनका भजन और सुमरण करो ॥ २ ॥ चौपाई ॥ सो प्रभु आपु करहि कल्याना ॥ अस कहि विप्र भक्ति रस साना ॥ ~~देहि इसको ललित न~~ ~~पद~~ जे पद मधुर ललित मन भायन ॥ करत रह्यो भामनि जुत गायन ॥ निज निकेत मान स अनुरागा ॥ सोऊ मुदित अव गायन लागा ॥ मधुर मधुर स्वर वदन अलापा ॥ गोविंद गीत हरन संतापा ॥ मृतस जीव पद ललित सुहाये ॥ जव दुजनाथ वदन निज गाये ॥ सो जनु मृतक श्र वण मग चाहू ॥ पसो जाय अमृत रस साहू ॥ हरि प्रसाद हरि हरि रव राती ॥ दुजतिये उठी

प्रेम मदमाती॥ पति सन लाग ललित पद गायन॥ भक्तिनिपुण त्रिय धरम परायन॥ तबनरेस संजुत रणवासू॥ भयो मुदित उर पूरि हुलासू॥ लोग देखि मानहु अनुरागे॥ धन धन बदन प्रसंसन लागे॥ महिषी परी चरन करजोरी॥ देवी छमहु चूक तुव मोरी॥ स्वसति वचन दुज पतनि उचारा॥ नाहिन कछु अपराध तुम्हारा॥ भावी प्रवल देव बुधवरनी॥ भै प्रसन्न सबविधि नृप तरनी॥ अस कहि दंपति हरष प्रलीना॥ करिसनान सुभ भोजन कीना॥ विदा लेत पुनि सदन सिधाये॥ चरित विलोकि लोक विसमाये॥ भक्तिप्रभाव देखि सब कोई॥ कहत धन्य इह दंपति दोई॥ सोरठा॥ अस इह भक्ति मुरार॥ मृत सजीवनी विदत जग जिहिं लीन्यो उरधार धन्य सुजस भाजन सोई॥१॥ टीका॥ सो भगवान कृपानिधान और दीनों हितकारी जो हैं सो आप ही कल्यान करदेवेंगे ऐसे कथन करके भगवान के दृढ भक्त जयदेवजी जहां पदमावती मृत भई हुई पड़ी थी तहां ही एकांत बैठ करके बड़े मधुर और ललित पद कि जो पदमावती के ~~[illegible]~~ , सहित प्रेम मे मगन होय कर भगवान कृपा निधान के आगे गायन करते थे सोई पद मधुर मधुर स्वर से आलापन करने लगे अर्थात गावने लगे तो जव आय करके शांती रस परिपूर्ण भया और वे मृत सजीवने कि जो मरे हुये के जियाय देनेवाले ~~[illegible]~~ ललित पद हैं तिनका जव मृत भई हुइ पदमावती के कानो द्वारा अमृत रस जायकर के पड़ा तो हरी के प्रसाद से हरी हरी उचारण करती हुई ब्रह्मरा

[Margin notes: भगवान के ध्यान में मग्न होकर; सुनाये गये]

मंद वध कीनी॥ सकल जगत अपकीरति लीनी॥ अब कहि विधि एकल दुज राई॥ करहिं निवास भवन निज जाई॥ विनु दुज नारि चयन कस मोरे॥ आवति हृदय वध हु जड तोरे॥ पुनि त्रीय वरग जानि यदि हरहीं॥ आपु खोय विष सेवति मरहीं॥ देखहु अब न तोहि निज नयन॥ अस जब मने भूपरिसवैना॥ तव जयदेव देव गति जानी॥ बोले वदन मधुर मृदु वानी॥ सुनहु भूप वर वचन हमारा॥ भावी देव प्रवल संसारा॥ सोरठा॥ होनहार जग होय॥ कोकर दीजै दोख नृप॥ अब चिंता जिय खोय॥ करहु भवन नायक भजन॥ तव दरसन पर्यंत करते रहे जो पड़ गई तो जयदेव जी के सहित राजा तहां भगवान के भवन में हीं निवास करता भया और ईहां तातकाल होते राजा की राणी के चित्त में ईह सेकल्प उठा कि तिसदिन जो मेने अपने हृदय में प्रण कियाथा तो अब जयदेव की स्त्री की परीक्षा करती हूं देखती हूं तिस का कैसा पती व्रत धरम है ऐसे विचार कर रानी ने तुरत अपनी एक चतुर दासी को भेज कर पदमावती को तहां अपने पास बुलाय लिया सो पदमावती जब आई तौं कहने लगी कि हे महारानी जी मेरे को आपने कौन कारज के वास्ते बुलाया है अब जो आज्ञा है सो कहिये तब राजा की रानी पदमावती का वचन सुन कर हृदय में कपट और बाहर से शोक कर के व्याकुल भई हुई वडा रुदन करकर कहने लगी कि राजा के भृत जो चाकर थे सो अबी आये हैं हे देवी वडा घोर अनर्थ होय गया तेरा पती जो है सो रात्री के समय तहां शूल रोग से कालवश होय गया है इसी तें राजा तिस को छोड़ कर घर में नहीं आये इस प्रकार जब रानी ने हृदय में

भक्ति सनातने भाषाटीकायां पद्मावती चरित
वर्णनं नाम ~~[illegible]~~ सर्गः

कीस्त्री जो है सो ततकाल उठ कर प्रेम मे मत्त भई
हुई पती के साथ ही तिन मधर और ललित पदों
को गायन करने लग जाती भई ऐसे तिस को देख
करके संपूर्ण रणवास के सहित राजा और स
व लोग परम हरष को प्राप्त होयगये जयदेवजी
की अनेक प्रकार शलाघा और बड़ाई करने
लगे तब रानी जो है सो आय कर के पदमावती
के चरनो पर सीस धर देती भई और हाथ जोड़ कर
विनती करने लगी कि हे देवी मे मूढ मती तेरे प्रभा
व को जान नहीं सकी मोह के वश होय कर के मैने
बड़ा भारी अपराध किया है अब तूं कृपा कर के मेरे
अनुचित को छमा कर तब पदमावती अनकूल
होय कर कहने लगी कि महारानी तेरे को कल्या है
हे हितकारनी इस मे तेरा कुछ दोष अपराध नहीं है
भगवान की भावी जो है सो बड़ी प्रबल है मे तेरे
पर हरष प्रकार कर के प्रसन्न हूं ऐसे राणी को धी
रज देकर आनंद से स्नान किया और भोजन पा
या तिस ते उपरांत विदा होय कर हरषपूर्वक
अपने घर को चले गये इस अदभुत चरित्र और
भक्ती के प्रभाव को देख कर लोग अचरज के वश
होय कर जयदेव और पदमावती को धन्य धन्य उचा
र कर वंदना करते भये नाभादास जी कहते हैं कि
हे संतो इस प्रकार इह भगवान की भक्ती संसार मे
मृतसजीवनी है अर्थात मरे हुये को जीवता कर
देने वाली है सोई पुरष धन्य और सुजस का
पात्र है कि जिस ने ऐसी कलप वृक्ष के समान स
रब संकलपों के सिद्धि करने वाली भक्ती को हृदय
मे धारन किया है ॥३॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगव

१३१

शिव पुरी मे जायकर विधि पूर्वक दंड गृहण कर के सन्यास जो है सो धारन कर लेता भया॥२॥ चौपाई॥ विधि वत अस सन्यास जब लययो॥ श्रीधर स्वामि विदित तव भययो॥ वेदाधयन करहिं नित ताहीं॥ वैस्नव भक्ति निरत दुज नाहीं॥ असन अजाचि चार व्रत धार्यो॥ विषय सुखादि सकल वपु हार्यो॥ जगन नाथ जग देखि निरंतर॥ सोहे सोउ वदन दृढ मंतर॥ वासर एक भागवत काहीं॥ रहे विचार भक्त मन माहीं॥ तामध भक्ति महातम चारू॥ देख्यो अदभुत अमल अपारू॥ व्यास देव कृत सो उसु हावन॥ सुधा समूह जनहु जग पावन॥ सरव शास्त्र सम्मति जुत चारू॥ पटुन प्रबोध वोध मनु सारू॥ तरण पोत भव वारध केरी॥ पै कलि षु कोविद सव हेरी॥ सकहिं न तासु धयन करि मीके॥ होत विराम सकुच वस जीके॥ कवहुं कि दीन दयाल पति माया॥ मोपैं करहिं कृपा निधि दाया॥ तौ मैं हृदय धरत व्रत नीका॥ विरचहुं विमल भागवत टीका॥ सोरठा॥ अस प्रकार जव कीन॥ श्रीधर स्वामी हृदय प्रण॥ तव निश्चय दृढ चीन दीन दयाल दायक सुजस॥ दोहा॥ विंदू माधव ललित छवि कोटि मदन दमनीय॥ अर्ध निसा सपने वदन भनत वचन कमनीय॥२॥ टीका॥ ऐसे जव विधी वत सन्यास धारन कर लिया तव श्रीधर स्वामी नाम कर के प्रसिद्ध हो जाते भये और वैस्नव भक्ती मैं लोय कर नित्य रात्री दिन वेद विचार मै हीं ~~लीयन~~ लगे रहते है और शरीर के विषय सुख आदिक सव त्याग कर अजाची व्रत जो है सो धारन कर लिया कि अनि च्छत जो आ जावे सो पाय लेना नहीं तो रह जाना सरव जगत को जगन नाथ भगवान का रूप जान कर परम पवित्र सो है मंत्र जो है सो दृढ आधार राखते भये तव ए

कदिन स्वामी" श्री भागवत जो विचार रहे थे तो ति
सम्मति तो ने भक्ती का एक अद्भुत ही महातम देखा
सो कैसा कि सरव शास्त्रों की सम्मती करके युक्त व्या
सदेव जी का कथन किया हुआ सुधा जो अमृत है
तिस समूह और संसार समुद्र के तारने को जहा
ज पंडित विद्वानों के लिये बोध प्रबोध का मानो
एक सार और सरव जगत को पवित्र करने वाला
परंतु महा कलिष्ट अर्थात बड़ा कठिन कि पंडित प्रवी
न तिस के अर्थ को नहीं पाय सकते थे विचार ते विचा
रते थकत होय कर रहि जाते थे ऐसे तिस को देख कर
के स्वामी हृदय मे कहने लगे कि जो माया के पती और
दया की निधी दीन हितकारी भगवान मेरे पर अपनी
कृपा करें तो मै हृदय मे व्रत और प्रण धार कर के रह
बड़ी निरमल और सुंदर श्री भागवत की टीका जो
है सो श्रम करके रचता हूं इस प्रकार जब श्रीधर जी
ने हृदय मे सत्य करके प्रण धारन किया तब तिन का
दृढ निश्चय देख कर के दीन हितकारी और
दीन भक्तों को सुजस के देने वाले बिंदु माधव भग
वान कि जिन की सुंदर छवी के आगे कोटि कामदे
व की शोभा भी फीकी लागती है आधी रात के
समय" जिस प्रकार मनोहर बानी से सुंदर प्रबोध
कहते हैं सो आगे कथन किया जाता है"२॥ चौपाई॥
सुनहु स्वामि चिंता जीय त्यागी॥ सुंदर सकल लो
क हित लागी॥ चारु भागवत केरि सुहाई॥ टीका
करहु भक्त मन लाई॥ या मध रमत महातम जोई॥
गोप्य न सकहिं तासु लखि कोई॥ ताते तुमहु य
तन श्रम द्वारा॥ करहु प्रकट सोउ भक्त उदारा॥
कथन तुमार सत्य सब होई॥ मोर बचन संशय
नहिं कोई॥ जो लो मोर अवनि तल नामा॥ तो

लो तुव सुजस्स अभिरामा॥ संतुति रै हिं भक्त वरद्धी वा॥ अस जव कृपा नाथ समुझावा॥ उठे तुरत निद्रा गत भय यौ॥ सुमरत स्वपन मोद मन छय यौ॥ रा खि चरन उर भक्त सुनाय क॥ सारदादि सुर वंदि विनायक॥ प्रात मंगला चरन नवीना॥ करि प्रारे भ भक्त वरदीना॥ सोरठा॥ तब कछु समज पाय॥ विघन रहित निरमत तहां भई अंत समुदाय सुचिटीका श्री भागवत॥ ३॥ टीका॥ भगवान कहते हैं कि हे श्रीधर स्वामी तुम अब चिंता को त्याग कर और सब लोको का भला जान कर इस श्री भागवत की सुंदर और सुख दायक टीका जो है सो करो क्यों कि इस मे इतन महातम कि जिस की कोई मिती नहीं है गोप ब्य परिपूरण होय रहा है तिस को कोई लख नही सकता है तां ते तुम तिस महातम को यतन और श्रम कर के जगत मै प्रकट करो हे भक्त प्रधान मेरे वचन से तुमारा कथन जो है सो सब सत्य होगा इस मै कुछ संशय नहीं है और भी सुनो कि जब लग पृथवी तल पर मेरा नाम है तब लों तुमारा सुजस भी छायत रहेगा इस प्रकार जब भगवान कृपानिधानने प्रबोध किया तब श्री धर स्वामी निद्रा से जाग उठे और स्वपने को समझ करके परम हरष को प्रापत होते भये तिसी दिन तें भगतपाल भगवान के चरनो को हृदय मै धार कर और गणपती शारदा इत्यादि देवताउं कों मनाय कर प्रात काल होते हीं सुंदर मंगला चरण जो है तिस का प्रारंभ करदेते भये इस प्रकार श्रम करते करते कुछ समय पाय कर के सो टीका दीनानाथ की कृपा से निरविघन होय कर के सब समापत हो जाती भई॥ ३॥ चौपाई॥ तब श्री धर

ॐ श्री

सर्वसे

शिवलोई, शिवनरायण

अथ श्रीधर स्वामी चरितः

दोहा॥ अब मै अद्भुत चरित वर निज लघु मति अनुगामि॥ वरनहुं सादिर भक्तिप्रद सुंदर श्रीधर स्वामि
चौपाई॥ पूरव एक विप्र ~~भो~~ गुण बीरा॥ वेद वेदांग निपुण मति धीरा॥ शांत दांत गत क्रोध सुहाया॥ धरम प्रवीन निरत द्विज दाया॥ अति विद्वान सील सुभचारी॥ तेज समूह विप्र ब्रत धारी॥ शास्त्र उकत विधि संसृति तेह भयेसि युक्त दार परिग्रह॥ ~~विवि~~ वते ~~बहुरि विप्र~~ वर सोई॥ ~~आनि तेसे कृत तव~~ ~~पर~~ होई॥ निज सदृश धीमान सुहावा॥ विप्र प्रवीन पुत्र उपजावा॥ दोहा॥ भोग विरक्त सुभक्त वर विबुधर पुरि पुनि जाय॥ देही भये सुदेह धृत ~~सु~~ सुनि सन्यस्त पद पाय॥१॥ टीका॥ अब आगे और वड़ि उत्तम और भक्ती के देनेवाली श्रीधर स्वामी की सुंदर गाथा जो है सो जैसी क मेरी तुच्छ बुद्धी है तिस के अनुसार गायन करताहूं हे संत जनो आप ध्यान देकरके श्रवण करिये पूरव काल विषे अर्थात अगले समय मै एक सील और गुणों की निधी विषयों रहित वड़ा ईंद्रै जीत ब्रह्मण होता भया ~~कि~~ और भी कैसा कि वेद विचार मै प्रवीन दया और धरम मे उजागर महां विद्वान तेजस्वी और शुभ आचारी था ~~वो~~ नित्य अग्नी होत्र इत्यादि अपने करम और धरम मै भली प्रकार तत्पर रहताथा जव तिस ब्रह्मणने विवाह करके दारा जो स्त्री है तिस को ग्रहण किया तव समय पायकरके अपने समान ही परम बुद्धीमान पुत्र जो है सो उतपन्न करलेता भया जव घर मै पुत्र होय गया तव ब्रह्मण ~~[illegible]~~ भोग से विरक्त होय कर और

एक तो बुद्धी वाला महा मुगध अर्थात कुछ भी जानने वाला नहीं हूं सो अपनी जड़ता और मंद मती के अनुसार इह आरंभ की टीका कि जि[स] ...भीरस नहीं है बनाय कर के आप के आगे भेज देई है यद्यपि इह मेरी ढीठाई आप लोगों के योग्य नहीं है तद्यपि अपनी कृपा दृष्टी और उपकार के विचार से इसको सुईकार कर लेवोगे तो मेरा इह श्रम जो है सो सफल हो जावेगा इस प्रकार जब श्रीधर स्वामी जी की रची हूई टीका तिन विद्वानों के पास पहुंची तो तिसको देख कर भक्त विद्वान जो थे सो सब प्रसन्न हो जाते भये और अनेक प्रकार श्लाघा कर कर कहने लगे कि अहो आज जगत में कवि जनों में प्रधान श्रीधर स्वामी जी धन्य हैं और धन्य तिन की अनंत बुद्धी है कि जिन्हों ने इस समुद्र रूपी भागवत को मथन कर कर रतनों के समूह जो हैं सो जगत में प्रकट दिखाय दिये हैं ऐसे विद्वान जन तो सब हरष को प्रापत होते भये परंतू जो मुगध मूरख जन थे तिन के हृदय में ईर्षा और द्वेष का प्रवेश हो जाता भया मंद मती स्वामी जी की टीका निरादर कर कर अपनी अपनी नवीन रचना करने लग जाते भये तो जब संपूर्ण कर चुके तब बिंदु माधव जी के भवन में आय कर सभा के बीच अपनी अपनी टीका की श्लाघा और बड़ाई करने लगे एक कहता कि मेरी अधिक है दूसरा कहता मेरी अधिक है ऐसे तिन का विवाद सुन कर तहां जो विद्वान साधू थे सो कहने लगे कि भाई तुम क्यों वृथा ही विवाद करते हो सब अपनी अपनी टीका ल्याय कर के भगवान के भवन में राख देवो तहां जिस पर बिंदु माधव कृपा कर के अपने चरन को

चिन्ह लगाय देवेंगे तिसी को सब पंडित विद्वान सूक्ष्म
जान कर आनंद से सूईकार कर लेवेंगे ॥४॥ चौपाई ॥
सुनि अस वचन सभ्य समुदाये ॥ साधु साधु मुख वच
न अलाये ॥ श्रीधर पैं पुनि विप्र पठावा ॥ तो के प्रण
प्रबंध समुझावा ॥ तास जाय तिन कर सब भाखा ॥ क
हिस प्रथक कछु मरम न राखा ॥ श्रीधर सुनत कथ
न तहि नीका ॥ दीन पठाय तुरत निज टीका ॥ आपु
न आय भक्ति व्रत धारी ॥ [illegible] पठी नम्र मुख विनय
उचारी ॥ मै असाधु दिंचक मतिवारा ॥ इह कृत तन
क तास अनुसारा ॥ ऊहो आगम विद्वान जु हाने ॥ मेरे
कवन तात तहं जाने ॥ तुम इह विनय मोर सब जा
ई ॥ देहु [illegible] बस तस निज वदन सुनाई ॥ अस प्र
कार जब स्वामि उचारा ॥ लिये ग्रंथ सोऊ पंथ सि
धारा ॥ प्रथम कथन कहि श्रीधर जीका ॥ दीन्यो विप्र
[illegible] बहुरि तिन टीका ॥ सुनत सकल विद्वान प्र
वीना ॥ श्रीधर कृत सादिर गहि लीना ॥ चलि आ
ये हरि भवन सुहाये ॥ और हु सब निज निज कृ
त ल्याये ॥ राखि मुदित हरि चरनन आगे ॥ नमृत
विनय करन अस लागे ॥ इह हमार निज निज कृत
स्वामी ॥ कृपा निकेत भक्त अनुगामी ॥ [illegible] इन मह
तुम हि जवन सूई का[illegible] हू ॥ तापर चरन चिन्ह
निज चारहू ॥ करहु कृपा करि भक्त सनेहू ॥ हो हिं ह
मार सुचित संदेहू ॥ अस प्रकार तिन विनय उचा
रा ॥ मूंदे बहुरि भवन हरि द्वारा ॥ बहिर आय मान
स अनुरागे ॥ कीर्तन भजन करन कल लागे ॥ [illegible] ॥
~~तेपनेतार हरिभव~~ कछुक बेर पाछल पुनि आई ॥
का देखहिं बुधजन समुदाई ॥ श्रीधर ग्रंथ प्रकट
सिर ताजा ॥ सब ग्रंथन के सीस बिराजा ॥

अरु चिन्हत तिन चरन निहारयो॥ जे निज बच्छ श्री
भृगु अजथा स्यो॥ सकल लोक मान सविसमाये॥
सादिर लीन्यो सीस उठाये॥ तासु प्रणाम करन
सब लागे॥ कपट द्वेष दुख मान सत्यागे॥ श्रीधर
सदन हरषि सब आये॥ ~~करि अस तुति~~ कहि वृ
तांत सुख अस तुति गाये॥ स्वामि तुमार धन्य जग
करनी॥ कीरति दूमत जाय किमि बरनी॥ जेकर
के ~~विंदु वैष भगवाना~~ जासु विंदु माधव भगवाना॥
दीन सुजस अस से स्तुति नाना॥ वंदन जोग तुम
हुं जग आजू॥ भनत नम्र अस दुजन समाजू॥
तब मत सरगत स्वामि प्रवीना॥ बोले बचन म
धुर रस भीना॥ सुनहो संत सुजस सनमान्यो॥
मै अधीन तुमरे सब जान्यो॥ [illegible] पाय तुव कृपा
बसल्यो॥ मै निज भाग धन्य जग लेख्यो॥ तुमहि
जोग्य कृत जबन हमारा॥ करहु नकरहु संत
सुईकारा॥ विनय युक्त सुनि वचन सुहाये॥ कृति
जन हृदय सकल हरषाये॥ दोहा॥ निपुण भक्त भगवा
न लखि विविध प्रसंसा गाय॥ भक्ति भाव जुत
वंदि पद निज निज चले सिधाय॥ अस हरि कृ
पानिधान जग भक्त भक्ति वस होय॥ विस्तृत कर
हिं सुभक्त निज विसद सुजस सब लोय॥४॥ टीका॥
इस प्रका तिनका कथन सुनकरके और जो से पूर्ण
सभा के लोग थे सो साधू साधू उचारन करने लग
जाते भये कि इहकारता बहुत शुभ है इसमे किसी
का [illegible] पक्षपात नहीं रहा तब तिनोने श्री स्वामी के
पास भी एक ब्रह्मण सब वृतांत समुझाय कर
के पठाय दिया सो ब्रह्मण स्वामी के पास जाय क
र [illegible] और प्रणाम करकर तिन का सब कथन मि

उर आनंद छाये॥ तास ललित बहु ग्रंथ लिखाये॥ हर पुरि विदित जवन विद्वाना॥ तिन पै यथा उचित सनमाना॥ करि विभक्त सब दीन पठाये॥ विनय वदन अस स्वामि अलाये॥ मै जन मंद न्यून मति फीका॥ विरचि अरसक कछुक रहटीका॥ तुव लायक कस मोर ढिठाई॥ पै कछु कृपा दृष्टि निज लाई॥ कवहुं कि करहु संत सुई कारा॥ तो इह सफल मोर श्रम सारा॥ अस जव मधुर मनोहर नीका॥ श्रीधर स्वामि ललित कृत टीका॥ वध जन देखि सकल सुख साने॥ हरखि परस्पर वचन बखाने॥ कृति जन प्रवर आज जगमाही॥ श्रीधर स्वामि धन्य व्रतधारी॥ जास सिंधु मथि आगम अपारा॥ प्रकट दिखाय रतन संभारा॥ जे जड मुग्ध मंद समुदाई॥ तिन कर हृदय ईरखा छाई॥ तासु निंदरि सठ आपन नीका॥ लगे सयतन रचन हो टीका॥ जव तिन लीन सकल विरचाई॥ ~~[illegible]~~ भवन विंदु माधव तव आई॥ सभा मध्य निज निज कृत काहीं॥ लगे प्रसंसन वदन सवाहीं॥ काहु कहत कृत मोर सिहाई॥ काहु भनत मोर अधिकाई॥ करत परस्पर विविध विवादू॥ तव जे रहे निपुण गुण साधू॥ सोरठा॥ तिन अस भन्यो बुझाय॥ वृथा करहु हठ तुम हु कस॥ अव निज निज कृत ल्याय॥ राखहु भगवन भवन सव॥ दोहा॥ विंदु माधव जा सिर पर चरन चिन्ह निज धार॥ पटु प्रवीन तो कर सकल करहिं मुदित सुईकार॥ ४॥ टीका॥ तव श्रीधर स्वामी बडे आनंद पूर्वक तिसके बहुत ग्रंथ लिखाय कर हरपुरी जो कासी है तहां के विद्वानो के पास योग्य जान जान सनमान पूर्वक पठाय देते भये और आपनी विनय पत्र का भी लिख भेजते भये कि हे महापुरषो मै मंद जड

लगे तिसतें उपरांत अपने हृदय का कपट और द्वेष सब
त्यागकर धावते हुये स्वामी जी के पास चले आये तहां ति
नके चरनों पर दंडवत प्रणाम कर कर फिर अनेक प्र
कार की अस्तुती गायकर कहने लगे कि हे स्वामी जी तुम धन्य
हो और धन्य जगत में तुमारी करनी है तुमारी महिमा और प्र
भाव जो है सो कुछ कथन नहीं किया जाता है जिनको
विंदुमाधव भगवान ने जगत में ऐसा सुजस और बडाई दई है
ऐसे सब विद्वान साधूजन अपने अपने मुख से तिनकी अनेक
श्लाघा बडाई करते हैं तब कपट से रहित सूधे सरलचित स्वा
मी जो हैं सो बडे मधुर और कोमल वाणी से कहने लगे कि
हे संत भक्तो यह जगत में सुजस और सनमान जो है सो
तो मैने सब आपके आधीन जाना हू आहे तुमारी कृपा को
पायकर आज मैं भी धन्य भागों वाला होय गया हूं
यह मेरी कृत अर्थात कविता जो है सो गृहण
करो अथवा ना करो तुमको ही योग्य है और तु
मारे ही आधीन है ऐसे विनती करके मुक्त श्रीधर
स्वामी के बडे नम्र वचन सुनकर सब विद्वान प्र
सन्न होजाते भये और तिनको भगवान के परं दृढ
भक्त जानकर बार बार चरनों पर दंडप्रणाम क
रके मुख से सुजस गावते हुये अपने अपने घरों
को चले गये नाभादास जी कहते हैं कि
हे संतो देखिये इस प्रकार भगवान कृपानिंन
भक्ती के वश होयकर अपने भक्त
का संदर सुजस और बडाई जो है सो संसार में
विस्तृत करदेते हैं अर्थात तिसको जगत मे
उजागर करदेते हैं ॥ ५ ॥ दोहा ॥ अब मैं श्रीधर
स्वामिकर आन भक्ति मन लाह ॥ करहुं कथन सं
क्षेपत कछु ललित प्रेम रस साह ॥ चौपाई ॥ अब
संपाय स्वामि मति धीरा ॥ पीडत ज्वर रुज कृष्ण
सरीरा ॥ बीते विपुल दिवस उपवासा ॥ छूटन च
हत प्राण वपु आसा ॥ कृपा पात्र माधव अस ना

ब्रमित्र करके सुनाय देता भया तब श्रीधर जीनें तिन वि
द्वानो का सब कथन सुन करके स्वामी आपतो नहीं आये
परंतु अपनी टीका जो है सो ततकाल भेज देते भये और ब्र
ह्मण को कहने लगे कि भाई तुम सब विद्वानजनो के आगे
मेरे हाथ जोड़ करके इह विनती करियो कि मै तो असाधु ए
क तुच्छ बुद्धीवाला किसी गिनती मे नहीं हूं और इह मैंने
कृत भी तिसी तुच्छ बुद्धी के अनुसार की हुई है ऊंहां आप
म और अचेतमती वाले विद्वान जुड़े हुये हैं मेरे को तहां कौन
जानता पहिचानता है इसी तें अपनी बुद्धी की कायरता जानें शं
का के वश भया हुआ आप नहीं आय सका हूं इह जैसी कैसी
टीठाई से कुछ कृत की हुई है सो आपके पास भेज दई है ऐसे
स्वामीं विनती पाय कर ब्रह्मण जो है सो पुसतक लेकर के धावता
हूआ मारग को काट कर तहां विद्वानो की सभा मे चला आया औ
र प्रथम श्रीधर स्वामी की सब विनय प्रार्थना सुनाय कर फि
तिनकी टीका जो है सो दे देता भया तब वे साधू विद्वान जन
स्वामी का कथन सुनकर और तिन की टीका लेकर और सब
कवियों की टीका ग्रंथों के सहित बिंदुमाधव भगवान के भवन
मे चले आये तहां सब टीका ग्रंथ ▬ दीनानाथ के चरनो
के आगे राखकर नम्रवाणीसे हाथ जोड़ करने लगे कि हे कृपानि
धान हे भक्तसनेही इन तें ● अपने अपने रचे हुये भागवत की
टीका के ग्रंथ जो हैं सो प्रभू हमने आपके चरनों के आगे ल्याय
राखे हैं अब इन मै जौनसा दीनबंधू तुमको सूईकार है अर्थात
मनजूर है तिस पर कृपा करके अपने चरनकमल का सुंदर
चिन्ह कर दीजिये तिसतें हे कृपासिंधू हमारे हृदय का शंसय
विवाद सब मिट जावेगा इस प्रकार तिनोने विनती करकर
भवन के कवाड़ लगाय दिये और आप बाहिर आयकर बड़ी
प्रीती भक्ती सें कीर्तन भजन गायन करने लग जाते भये और
फिर थोड़ी देर के पीछे सब वे रसिक विद्वान हरी भवन मे जायकर
जो देखने लगे तो क्या देखते हैं कि श्रीधर स्वामी जी का ग्रंथ जो
है सो सब ग्रंथों का सिरताज होयकर सबके ऊपर विराजा
हूआ है और तिन चरनो करके चिन्हत भी है कि जो चरन शिव
ब्रह्मादि देवताओं ने भक्तीपूर्वक हृदय मै धारन किये हुये हैं
तब इस अद्भुत कौतुक को देखकरके सब विद्वान अचरज के
वश होय गये और श्रीधर जी के ग्रंथ को जाय करके सनमान
से सीस पर उठाय लेते भये और बार बार प्रनाम करने

यये॥ सम्भ्रम ग्रहन त्याग वस होई॥ गुरुपँ आ
व जन हु निधि खोई॥ संजुत भक्ती जुगल कर जोरी॥
कहि प्रनाम सुख विनय न थोरी॥ भनत वचन स्वा
मि न पितु मोरा॥ ग्रसत कृपाल रोग ज्वर घोरा॥ आ
ज सुप स्यो धरनि मुरछाई॥ मातु करत रोदन प्रभु आ
ई॥ तव अस सय चित व्याकुल गेहू॥ तजि न सक
हुँ छिन दीन सनेहू॥ काल करहु सासन अव काला॥
मोँ हृदय उपज प्रमुदाला॥ सेवा जनक देव गुर जोई॥
दीन दयाल दुरलभ जग होई॥ माधव वचन सुनत सुखे
दये॥ स्वामि स्वसति निज वदन अलाये॥ मोर अपे
क्षा कर तुव ताता॥ विव्हल हृदय दुखित अति गा
ता॥ पस्योसि जनक भवन मुरछाई॥ जननी रुदन
करत सुत आई॥ ताते तुम हुं विलंब तयागी
जावहु वसत जनक हित लागी॥ मोर न देस तात
तुव काई॥ पितु कर लेहु सूचना जाई॥ दोहा॥
यद्यपि माधव कीन हठ गुरु सन विविध प्रकार॥
तदपि भवन पठव तहि स्वामिन वलातकार॥
७॥ टीका॥ तव ऐसे माता के वचन सुनकर पर
म कलेश से हादेव हादेव पुकारती॥ माधव का
हृदय दो खेड होय गया अर्थात दो टुकडे हो जाता भ
या सो माने गुरु जी ने और पिता ने एक एक कोट
लियाहै प्रयोजन इहकि तिसका एक ही चित्त दोनो
पासे फैल गया किसको ग्रहन करे और किसको
त्यागूं ऐसे भ्रम के वश भया हुआ संकोच से मानो
सरवस गवाय करके गुरु जी के पास चला आया
तहाँ दीनता से चरनो पर प्रनाम करके हाथ
जोड कर विनती करने लगा किहे कृपानिधान
मेरा पिता जोहे सो ज्वर रोग करके ग्रस्ता हुआ
आज घर में प्राण अंत होय रहाहे इसीते माता

व्याकुल होयकर रोदन करती हुई धावती चली आई है ~~~~ इहां आप अस्वस्थचित्त ज्वरसे व्याकुल घर में पड़े हैं कि जिनको मैं छिनभर भी त्याग नहीं सकता हूं — ऊहो प्रभू पिताकी इह दशा है मैं बड़े कलेशको प्राप्त भया हूं नाथ अब क्या करूं मेरे को कैसी आज्ञा है इह गुरू पिता की सेवा जो है सो संसार में बड़ी दुरलभ है इस प्रकार माधव के वचन सुनकर स्वामीजी प्रसन्न होयकर कहने लगे कि पुत्र तेरी कल्यान हो जो तूंने ~~मे~~ मेरा दुख देखकर अपने ~~~ हृदय में बड़ा कलेश माना है अब हे पुत्र पिता के घर में दुखी और ~~~~ होनेसे माता जो रुदन करती आई है तो तुम मेरी आज्ञा से विलंब को त्याग कर प्रथम जाय करके पिता की खबर लेवो और पिता का उपकार जो है तिसको अपने सिर से उतारो ऐसे गुरू का वचन सुनकर यद्यपि माधव ने बहुत ही हठ किया कि प्रभू मैं आप को अकेले छोड़कर कदाचित नहीं जाऊंगा तद्यपि स्वामी ने ~~~~ अनेक प्रकार समुझाय कर और तिसका हठ तोड़कर जोरावरी से ~~~~~ माता के साथ घर में भेज दिया ॥७॥ चौपाई ॥ जाय भवन निज जनक निहारयो ॥ विकल अचेत धरनि तल परयो ॥ मरण तुल्य तो कर वपु पाई ॥ रोदन करहिं विथत सुत माई ॥ स्वामाजि कज न इत उत आइये ॥ मरदनादि तिन कीन उपाये ॥ सो तप ~~~~ तिन कर जब लागा ॥ उठ्यो जठिर द्विज मूर्छित जागा ॥ स्वामी ऊहां विगत ज्वर भयो ॥ तृष्णा प्रबल वपुष तब छयो ॥ आपु अंश ते निबल कृश काया ॥ हृदय करत चिंतन निमदाया ॥ दोहा ॥ कस कीजे अब पाक कछु नाहिन बनत उपाय ॥ माधव गवन्यो भवन निज सुनत जनक मुरछाय ॥८॥

टका॥ तब माधव घर मै आय करके क्या देखता है कि
पिता जो है सो मूर्छा होय करके पृथ्वी पर पड़ा है मर
णे के तुल्य तिस की दशा होय रही है ऐसे देखकर के मा
[illegible]धव और [illegible] माधव की माता व्याकुल होयकर रोद
न करने लग जाते भये तब तिन के पड़ोसी सज्जन बांधव
जो थे सो सब आय करके मरदन आदि उपाय जो हैं सो
करने लगे तब तिन के हाथों का गरम सपर्श जो भया
तिस तें तिस वृद्ध की जाग उठी और मूर्छा भी खुल ग
ई तुरत उठ करके बैठ गया ऊहों स्वामी जो थे तिन को
ज्वर अर्थात तप दूर [illegible]तो [illegible] क्षुध्या जो भूख है
तिस ने बड़ा कलेश दिया आप शरीर से बड़े नरबल थे औ
र कृष्ण थे भोजन बनाने की सामर्थ नहीं रखते थे
हृदय मै सोच करने लगे कि अब भोजन कैसे बनाऊं
कोई उपाय सूझ नहीं पड़ता है इस समय ईहों माध
व भी नहीं है सो पिता को मूर्छा पड़ा सुनकर घर
को चला गया है [illegible] मेरे मुख सें प्राण निकसे जा
ते हैं दैव अब क्या यतन करूं ॥८॥ चौपाई ॥ अस
उर कीन सोच जब स्वामी ॥ तब भगवान भक्त अ
नुगामी ॥ रक्षक भक्त भक्त भय हारी ॥ भक्त कल
पद्रुम भक्त उबारी ॥ भक्त पाल प्रभु भक्त सहा
यक ॥ रंजन भक्त भक्त बरदायक ॥ आरत हरन
भक्त सुख दाता ॥ बतसल भक्त भक्त जन त्राता ॥
माधव रूप ललित निज धारी ॥ आये हृदय भक्त
दुख हारी ॥ करत प्रथम गुरु चरन जुहारा ॥ बहुरि
नम्र मुख विनय उचारा ॥ कृपा न केत दास तुव
आवा ॥ अब प्रभु तुम हि जवन मन भावा ॥ सो
सासन मोहि देहु जनाई ॥ मै सब करूं चरन
सिर नाई ॥ स्वामी सुनत हृदय हरषाये ॥ कहत
कृपा जुत बचन सुहाये ॥ कुसल तात कहुं जे
नक तुमारा ॥ तब माधव अस बचन उचारा ॥
दीन दयाल तुव कृपा महाना ॥ पावा सदन जन

मा॥ सेवक स्वामि विप्र निस कामा॥ करम वचन मन भक्ति अमेवा॥ निसिदिन करत रुचिर गुरु सेवा॥ सो स्वामी निज खेद विचारी॥ माधव भयो दुखित जियभारी॥ कछु विचार बन आवत नाहीं॥ चिंताकुल सोचित मन माहीं॥ इत संताप गुरन जियभारी॥ उत अतिजर्जर जनक ज्वर धारी॥ पीडत कृष्ण काय ज्वर दाहा॥ मूर्छित परयो सदन निज राहा॥ सोरठा॥ तातत पस्विनि नारि॥ पतिहिं देखि मूर्छित धरन॥ आई वेग सिधारि॥ रुदन करत सन मुख सुवन॥६॥ टीका॥ अब और प्रेमरस की भरी हुई बडी मनोहर श्रीधर स्वामी जी की भक्ती की गाथा जो है सो कथन करता हूं हे संतो आप ध्यान देके श्रवण करिये समय पायकर के श्रीधर स्वामी जो हैं सो ज्वर रोग करके पीडत भये हुये कृष्ण अर्थात बडे दुवले होय गये और खान पान भी सब छूट गया प्राणों का कुछ भरोसा नहीं रहा तब एक माधव भकर के ब्राह्मण स्वामी जी का कृपा पात्र और दृढ सेवक था रात्रि दिन मन वचन काया करके तिनकी भक्ती सेवा मे लीन रहता था सो इस प्रकार गुरू जी का महा कलेश देखकर हृदय मै अत्यंत दुख मानता भया तिसको कोई उपाय बन नहीं आवता दिन दिन चिंता और शोक मे हीं व्याकुल भया रहता था इहां तो तिसको गुरू स्वामी जी की चिंता और उहां घर मे ~~तिस~~ का पिता ज्वर रोग से पीडत हुआ ~~सो~~ मरने प्रयंत होय रहा था तिसको भूमिपर मूर्छा आती थी तब तिसकी तपस्विनी स्त्री कि जो माधव की माता थी पती को पृथवी पर मूर्छा पडे हुये को देखकर बडे वेग से धावती और रुदन करती हुई पुत्र के सनमुख वली आवती भई॥६॥ चौपाई॥ आरत वचन सुनत निज माई॥ हाहा दैव ररत अकुलाई॥ माधव हृदय खेद जुग भयऊ॥ गुरु पितु जनु विभक्त करि लऊ

रत तो कहो जो तुमारे पिता को कुसल है अर्थात मो
राजी है तब माधव कहने लगा कि हे दयानिधी आ
प की कृपा सें पिता का दुख और मूर्खता सब दूर होय
कर सहजेही कल्यान होय गई है कृपानिधा
ने अब तिसकी कुछ चिंता नहीं है तब स्वामी तृष्या
करके व्याकुल भये हुये कहने लगे कि हे माधव मेरे
तो अन्न और जल के विना भूखे के प्रान निकसे
जाते हैं तात कुछ वात करने की भी सामर्थ नहीं है
ऐसे तृष्या के वश स्वामी जी को व्याकुल देखकर
सर्व दोष दारिद्रों के हरने वाले माधव रूप
भगवान जो थे सो तुरत अपने कौतुक सें अमृत
के समान अलौकिक और बडा भोजन बनाय क
र और पवित्र पात्र मै धर कर स्वामी जी को चौके
मै विठाय करके भक्ती सनमान से जिमाय देते भ
ये और फिर मार्जन लेपन देकर स्वामी जी को सु
खपूर्वक विसतर पै पौढाय करके मरदन चापी की
सेवा जो है सो करने लगे तब इतने मै माधव
भी स्वामी जी की चिंता से व्याकुल भया हुआ धाव
ता चला आया॥१८॥ चौपाई॥ ता सुवि लोकि च
रचर नाही॥ भये तुरंत लुपत प्रभु ताही॥ माध
व आय चरन गुरु लागा॥ भाषत नम्र वचन अ
नुरागा॥ कृपा अयन कस रयन विहावा॥ मोरे
हो सोच निसि छावा॥ दीन दयाल एकले गेह
मा हीं॥ सेवक आन निकट कौ नाहीं॥ स्वामी सु
नत कथन अस तासा॥ भये चकत मुख वचन प्र
कासा॥ का भ्रम भयो तोत मति तोरे॥ [illegible] तु
म हु कीन सेवा निसि मोरे॥ अन्न दान मोहि दे
त जियावा॥ कस भ्रम हृदय तोत तुव छावा॥
माधव सुनत चकत चित होई॥ लाम्यो

भजन युक्त कर दोई ॥ मैं सब रजनि नाथ निज गे
हू ॥ रह्यो करत चिंतन जिय एहू ॥ गुरु कृपाल
तहँ भवन इकाकी ॥ तुम हु सहायक कृष्ण पिनाकी ॥
भजत नाथ जे अस सिव काई ॥ मैं न कीन प्रभु चरन दु
हाई ॥ श्रीधर स्वामि मरम तब जाना ॥ सो तो कृपासि
धु भगवाना ॥ माधव रूप ललित धरि आये ॥ कौतु
क अमिय पाक विरचाये ॥ सो हि जिमाय सहित सन
माना ॥ भये लुपत प्रभु कृपानिधाना ॥ अहो भाग
जग मोर सुहावन ॥ जहि इन दृगन दरस प्रभु पाव
न ॥ दुरलभ जोगि मुनिन कहे जोई ॥ देख्यो आज
सुलभ मैं सोई ॥ तास रूप माधव कर नाना ॥ करत
भजन हिं मन दंड प्रनामा ॥ तहि दिन तें औषध पथ
~~कीना~~ हीना ॥ भये विगत ज्वर स्वामि प्रवीना ॥
माधव रजनि वृतांत सुनावा ॥ सादर सब कहे दीन
सुनावा ॥ सुनत लोग मन हर्षित भाये ॥ श्रीधर
स्वामि धन्य सब भाये ॥ मन बच करम भक्ति रत होई ॥
पूजन लागे तिनहिं सब कोई ॥ अस प्रकार इह च
रित नवीना ॥ मैं कछु कथन तनक मति कीना ॥
दोहा ॥ भक्तिमहातम ललित इह जे रति जुत मुख
गाय ॥ धौं सादर कानन सुनै हरष प्रेम सरसाय ॥
तो के दुंदारद विकट रोग सोग अभिमान ॥ नास
हीं कृष्ण प्रसाद तें उपजहिं भक्ति प्रधान ॥ १० ॥
टीका ॥ तब माधव को आवते देखकर सब चरा
चर के स्वामी भगवान तुरत हीं लुपत हो जाते भये
और माधव आय कर गुरु जी की चरनो पर सीस
धरकर प्रार्थना करने लगा ~~और कहने लगा~~ किं कृ
पानिधान कहिये रात कैसे बीती प्रभू मैं रात्री भर
चिंता में हीं रहा हूं कि दीन याल घर मैं अकेले हैं
लिये सेवक और कोई भी पास नहीं हैं तब ऐसे

स्वामी

माधव का कथन सुनकर बड़े अचरज के वश होय
कर कहने लगे कि हे पुत्र तेरी बुद्धी मे इह कैसा भ्रम
होय गया है क्योंकि तुम आप हीं रात्रीभर मेरी सेवा
करते रहे हो और आपने हाथों से भोजन
जिमाय कर मेरे प्राणों की रक्षा करी है अब इह कैसा
तुमारे हृदय मे भ्रम उतपन्न होय गया है तब माधव
आचर्ज होय कर के हाथ जोड़े हुये विनती करने ल
गा कि हे दीनदयाल मैं तो आप को ईहां छोर मे अके
ले ज्वर कर तहां सारी रात सोचमें हीं वतीत
करी है प्रभू मेरे को तुमारे चरनो की दुहाई है मै
ने आप की इह सेवा नहीं की है तब तो श्रीधर स्वा
मी हृदय मे जान गये कि अहो सो तो भगवान कृ
पानिधान माधव का रूप धारे हुये आप हीं थे औ
र आप हीं दीनबंधू अपने कौतुक से भोजन ब
नाय कर और मेरे को जिमाय करके लुपत होय
गये हैं आज मेरे धन्य भाग्य हैं कि जो भगवान मु
नी और जोगी जनों को देखने दुरलभ सो मै
ने नेत्र भरकरके घर मै देख लिये हैं तिस माध
व रूप भगवान को स्वामी वार वार हृदय मै प्रणाम
करने लगे और तिसी दिन तें तिनका ज्वर रोग जो था
सो औषधी के विना हीं निवृत्य हो जाता भया तब
माधव ने रात्री का वृतांत जो था सो सनमान पू
र्वक सब को सुनाय दिया लोग सुनकरके
को हृदय मै बड़ा अचरज मान कर
स्वामी जी को सब धन्य धन्य कहने लगे और भक्ती
प्रीती से तिनको भगवान के दृढ भक्त जान कर सब
पूजने और सेवने लगे इस प्रकार श्रीधर स्वामी भक्ती मै
ने कुछ भेद मती के अनुसार कथन की है इसको जो कोई श्रद्धा
पूर्वक पढेगा अथवा सुनेगा तिसके दुख दारिद्र रोगों को
क सब नाश होय कर हृदय मै भगवान की भक्ती उतपन्न हो जावेगी
॥७०॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ति महात्मे भाषाटीकायां
श्रीधर स्वामी चरित वरननं नाम सरगः

क कल्याना॥ मित्रो भूर कादिक दुख हारा॥ भयो
सुखित संकुल परिवारा॥ तब स्वामी सुध्यान रवानी॥
सुनहु वतस अस वदन वखानी॥ मोर वहीन अन्न
जोल पाना॥ चाहत चलन जठिर जठ प्राना॥ सुनत
वचन अस स्वामि अधीरा॥ माधव रूप [illegible] हरन जन
पीरा॥ अमिय अलौकिक रुचिर सुहावा॥ कौतुक
दिव्य पाक विरचावा॥ मंदिर विमल पात्र धरि सोई॥
दीन जिमाय मुदित मन होई॥ पुनि उ[illegible]सु सम्मार्जे [illegible]
न सारे॥ करत करन कल धरन सवारी॥ सोरठा॥ पु
नि सेवा कहु आन॥ वैठि निकट लागे करन॥ कृपासिं
धु भगवान॥ तव आवा माधव तहां॥ ८२॥ टीका॥
जब इस प्रकार श्रीधरस्वामीने हृदय मैं चिंतन अर्थ
त [illegible] सोच किया तब भक्तों के आधीन [illegible]
थे और भक्तों की रक्षा करने वाले भक्तों के भय हर
ने वाले भक्तों के लिये कल्पवृक्ष भक्तारक भ
क्त पाल और भक्त सहायक भक्तों के हृदय को आ
नंद देने वाले भक्त वरदायक और भक्तजनो की
पीड़ा कलेशों के दूर करनेवाले भक्तवतसल भ
गवान तुरत हीं माधवजो स्वामीजी का सेवक था
तिसका रूप धारकरके आय जाते भये तव पहि
ले स्वामी जी के चरनो पर प्रणाम करके पीछे
हाथ जोड़ कर दीनता की भरी हुई नम्र वाणी से
विनती करने लगे कि हे कृपानिधान आपका दा
स आय गया है अब जैसी मनकी रुची है तैसी
आज्ञा करिये मै दीनानाथ की सेवा करने को सा
वधान हूं ऐसे माधव रूं भगवान की वाणी सुन
करके स्वामीजी वड़े प्रसन्न भये और कृपा के
भरे हुये वचनों से कहने लगे कि हे पुत्र प्रथम

लता पलता जुवा अवस्था को प्राप्त होय गया परंतु विद्या और ब्रह्मणधरम जो है तिस से शून्य रहा सो कुछ न हीं सीखा तब तिसका पिता काल वश होय गया तब सुतंतर अपनी इच्छा के अनुसार होय करके पिता का जो द्रव्य आ धन जो था सो नृत्य गीत नाटक चेटक इत्यादि विषयों लाग कर भली प्रकार लुटावने लगा॥ १ ॥ चौपाई॥ एक दिवस तेहि सुन्यो सिलामा॥ सरिता पार बार तिय धामा॥ चिंतामणि नाम अस तासा॥ कला प्रवीन रुप गुण रासा॥ द्विज मर्याद निज बंस तयागी॥ बारविलास निदरस लागी॥ ताके सदन गयो द्रुत धाई॥ मानो सुखद नवल निधि पाई॥ बांधव नाति मीत जन जाती॥ वेस्या निरत देखि इहि भांती॥ हितकुतरक सब विविध सिखावहिं॥ हृदय भेद कछु एक न आवहिं॥ ताके वशीभूत जड होई॥ विप्र सुधरम लाज कुल खोई॥ अवसर पाय सदन सामान्या॥ जन आऊं बास रजिय जान्या॥ ~~मनत मूढ तहि बदन उचारी~~॥ मूढ बदन अस गिर उचारी॥ कालकरहु अब प्राण पयारी॥ आज जनक मम श्राध सुहावा॥ ताते चाहुं भवन निज जावा॥ दोहा॥ मृगनयनी निसि आज कर आवन होहि न मोर॥ तुव वियोग मोहि मरण तें प्रिया अति ही कठोर॥ २ ॥ टीका॥ तब एक दिन तिस ब्रह्मण ने सुना कि नदी के पार बारतिय जो कंचनी है तिस का घर है ~~ग्राम चिंता~~ सो चिंतामणी नाम करके प्रसिद्ध सरब कला प्रवीन और गुणों की खानी है ऐसे सुन करके ब्रह्मण अपने बंस की मरयादा को त्याग कर तिस के दरसन की अभिलाखा वाला होय कर तिस के

घर मै हीं जाय प्राप्त होता भया तब तिस को देखकर के ऐसा प्रसन्न होय गया कि मानो तिस को बडी सुख दायक कोई नवीन निधी प्राप्त भई है ऐसे तिस की दशा देखकर सब बांधव मित्र और जाती नाती के लोग अनेक तरें कें कुतरकें देदे कर सिखावने और समुझावने लगे परंतु सो नंद कुछ भी नहीं मानता भया॥ तिस वेस्या के वश होय कर के अपना ब्राह्मण धरम और कुल की लाज जो है सो सब खोय देता भया तब सब पाप करके एकदिन तहां वेस्या के घर मे बैठे बैठे तिस के पिता का वर्ष ही श्राद्ध जो है सो आय गया तिस को हृदय मे स्मरण करके चिंतामणी को कहने लगा कि हे प्राण प्यारी अब मै क्या करूं क्यों कि आज मेरे पिता के श्राद्ध का दिन आया है ता तें घर मे अब श्र जाना चहता हूं हे मृगनयनी हे हितकारनी आज रात्री को मेरा आवना नहीं बनेगा परंतु इहां तें वियोग जो है सो मेरे को मरणे तें भी भारी हे जावेगा कहो मै कैसे रैयन वतीत करूंगा॥२॥ चौपाई॥ निज वस तासु बार बधु देखी॥ मनत व चन उरेध वसेखी॥ जाहु भवन निज वेग सिधारे॥ तब दुज आव सदन मन मारे॥ सादर दुजन निमंत्रण दीना॥ विधिवत श्राद्ध करम सब कीना॥ मेवा हरि विविध भोजन बनवाये॥ विप्र वृंद सब दीन जिमाये॥ शेष कीन पुनि आपु अहारा॥ तदनंतर उर करत विचारा॥ आज दिवस मोहि वरष विहाई॥ प्रिया वियोग दारुण दुखदाई॥ अस दुज विरहं विवस अकुलावा॥ संध्या हेतु सरत तट आवा॥ सोउत पार वार तिय गेहा॥ देखा दृगन विप्र भरि नेहा॥ सहि वदनी तब दरसन लागे॥ दृग चकोर प्रिय एकटक लागे॥ इह कब होहिं सफल जुग नयना॥ बरहे निरत दुज उचरत बयना॥ सोरठा॥

१४२

ग्रा का मवन पराय॥ लोक लाज वस विथन त म
न॥ ग्रव कत रयन विहाय॥ निद्रा गत चिंतन करत॥
३॥ टीका॥ तव वारवधू जो वेस्या है सो तिस ब्रह्म
ण को ग्रप ने वश देखकर वडे हरष से कहने लगी
कि हे प्यारे ग्रव तेरे को घर मे जाना योग्य है तां ते तूं
विलंव को त्याग कर तहां चला जा ग्रैसे वेस्या का
वचन सुन कर ब्रह्मण मन मारे हूये उठ कर के
घर को चला ग्राया तहां सनमान पूर्वक ब्रह्मणों
को निमंत्रण किया ग्रर्थात नेवता दिया ग्रौर फिर
विधीवत श्राद्ध करम जो है सो सव किया तिस ते
उपरांत ग्रनेक प्रकार के सुंदर भोजन पकवान
जो वनाये हूये थे सो ब्रह्मणों को जिमा ये देता
भया फिर पीछे ग्राप भी भोजन पाया तव हृदय
मे विचार करने लगा कि ग्राज मेरे को दिन जो है सो
वरष के समान वतीत होवेगा चिंता म
णी का वियोग मेरे को परम कलेश का कारण है ग्रै
से विरह के वश व्याकुल भया हूग्रा ब्रह्मण संध्या
के निमित्त नदी के किनारे पर चला ग्राया तव न
दी के उस पार चिंता मणि का घर जो देख पडा तो
ग्रत्यंत सनेह को प्रकट करके कहता है कि हे समि
वदनी ग्रर्थात चंद्रमा के समान सुंदर मुखवाली ते
रे दरसन के ॥ इह मेरे चकोर रूपी नेत्र जो हैं सो ग
कटका लगा रहे हैं देखिये इह कव सफल होते हैं
ग्रैसे विरह के वश कहता हूग्रा ब्रह्मण लोक
लाज से उठ कर घर को चला ग्राया हृदय मे
चिंतन करता है कि ग्रव रात्री कैसे वतीत होवेगी॥३॥
चौपाई॥ ग्रस जव ग्रर्ध विगत भई स्यामा॥ विप्र ग्र
धीर तजत निजधामा॥ पीरत मदन कुसुम सर ती
खा॥ निसा भीम मनु घोर ग्रंधीरा॥ साजल स

ग्रंथ मंजरी

कहते हैं कि नेत्र सफल होते हैं

अथ बिलमंगल चरित्र

दोहा॥ उदय होत जेहि सुनत नर आतम तिमर
मिसेक॥ भक्तिभान प्रज्वलत दुत दुरवन उलक
अनेक॥ चौपाई॥ सो मैं चरित परम मनभावन॥
करहुं कथन दुख दोष मिटावन॥ दक्षण द्विजन बं
स द्विजकाहू॥ रह्यो धनक गुण सील सराहू॥ सो
जब भयो वृद्ध वपु आई॥ तांके उपज सुवन सु
खदाई॥ सरव अंग सु[illegible]दर मि सुरामा॥ ताको बिल
मंगल तेहि नामा॥ अति सनेह लालन जुत पाला॥
भयो तरण तब बालक आला॥ विद्या वेद धरम द्विज
जोई॥ तिहितें रह्यो मुगध जड़ सोई॥ वृद्ध जन
क जब परिहरि काया॥ समय पाय परलोक सि
धाया॥ सोरठा॥ तब सुतेत्र द्विज होय॥ पितु संचित
धन विषय रत॥ दिन दिन लाग्यो खोय॥ नृत्य गीत
नाटिक निरत॥ [illegible] टीका॥ नाभादास कहते हैं कि हे
संतो जिसके श्रवण करने से मानुष्य के हृदय
मैं पाप रूपी उल्लूओं को लोप करने वाला उद
य होता है मनो प्रकाशमान भक्ती का सूरज जैसी
जो सब कलेशों के दूर करने वाली अद्भुत और
मनोहर गाथा है सो अब श्री तीसनमान से आप के आ
गे गायन करता हूं दक्षणी ब्रह्मणों के बंस वि
खे कृष्णा नदी के किनारे पर [illegible] बड़ा धनमान औ
र सील गुण धरम मैं प्रवीन ब्रह्मण वास करता
था सो जब वृद्ध होय गया तो तिसके घर मैं पुत्र उ
तपन्न भया सो कैसा कि बड़ा सुंदर और सरब अं
ग सुन्दर तब पिता तिसका नाम बिलमंगल
राखता भया सो दिन दिन सनेह सनमान से १

प्रकाश से ब्राह्मण क्या देखता है कि सन्मुख नदी के किनारे पर लकड़ी के समान एक शव अर्थात मुरदा लगा हुआ है॥४॥ चौपाई॥ जागि तरणि जे तु गमन उपाऊ॥ भयो अरूढ विप्र लखि नाऊ॥ वेस्या सदन निकट हत भागा॥ वे षृत मदन जाय तव लागा॥ तासु सजतन सरत तट लाई॥ देखा प्रीया सदन दृग ... ई॥ मूंदे द्वार अर्ध निसि सोई॥ द्वितउ तकिरहिं मदन वस होई॥ कहत देव अब कवन उपाई॥ देखहु प्रीयहिं दृगन कस जाई॥ भीत प्रलेव मान तव देखा॥ प्रवसत विलख व्याल अवरेखा॥ वधनी बोध सबल अवलेखा॥ पंकरत चढ्यो मन हु नट खेमा॥ चिंतामणी चिंतमणि लेखी॥ भयो रंक मनु धनद विसेखी॥ सो विलोकि मानस विसमाई॥ भनत वदन कछु वचन दिसाई॥ मो रइ हो अर्ध निसि माहीं॥ कौन यतन मोहि सूझत नाहीं॥ वारद कठिन रयन अंध्यारी॥ सरता प्रबल वारि भरयारी॥ गरजत मेघ व्योम वरसाये॥ चढ कपाट भवन कस आये॥ प्रिय मुख सुनत वचन मन भावा॥ निज आगमन सब मरम जणावा॥ सो सुनि कहत वदन विसमाये॥ देखहु कवन वधनि पथ आये॥ कवन यान जल सो उदिखावहु॥ हृदय मोर संदेह मिटावहु॥ तव दुज दृगन वधनि दिखरावा॥ व्याल कराल रुधर लटकावा॥ सरता तीर तरनि शव पाये॥ कहत वारत्रिय वचन दिसाये॥ मूढ हि ताहित तुम कहु न जाना॥ दृगन उरग शव भयो न माना॥ मेसज ग्रसत स्वान वत धावा॥ जनक आध तिजि दिवस सुहावा॥ मेद अधमे वृंस

चुन दीती॥ सोश्र चरण करि अधम अनीती॥ दोहा॥
प्राण अश्रि ये भोंकर नव यंत्रित सठ होय॥ मोपें आवा
सुपच वत विप्र धरम निज खोय॥ ५॥ टीका॥ तव
तिस मुरदेको ब्राह्मण अपने तरने को उपाय जा
न कर छाती के नीचे धर कर काम कर के व्याकुल भया
हुआ तरता तरता वेस्या के घर के निकट
हो आय लागता भया तहां तिस मुरदेको नदी के कि
नारे पर यतनसे बांध कर आप जाय कर कें चिंताम
णी के घर को जो देखने लगा तो वे कवाड़ मूंदे हुये आ
नेदसे घरमे सोई पड़ी है तव ब्राह्मण काम के अधीन
भया हुआ इधर उधर घरकी चारो ओर फिरता है कह
ता है कि दैव अव मै कौन उपाय करूं और अपनी प्या
री को कैसे नेत्र भर कर देखूं ऐसे चिंतन कर रहा है कि
सेन मुख दिवाल विखे एक छिद्र मे प्रवेश किये हुये
वड़ा भयंकर सरप लटका हुआ है ति
सको वधनी के वोधसें अर्थात रस्सी जान कर वल
सें जेसे खंभ पर नट चढ जाता है तेसे ऊपर
को चढ जाता भया तव चिंता मणी को चिंताम
णी के समान देख कर कि जो था सो धनी
हो गया आनंद मैं समाव ता नहीं है तव ति
सको चिंतामणी देख कर वडे अचरज को प्रापत भई
और कोप के वचनो से कहने लगी कि हे ब्राह्मण
तूं देख इस समय आकाश मे घोर वादल छाया
भया हुआ पृथवी पर गरज गरज कर वडे जोर शोर
से वरस रहा है और महा अंधेरी रात तेसे ही उमडी
हुई नदी और वेग से पवन चलती ऐसे कठिन सी
त काल मै आधी रात को मेरे घर के कवाड़ चढे हुये
तुम कैसे चले आये हो इस प्रकार चिंतामणी के

मुख से वचन सुनकर अपने आवने का सब वृतांत
सुनाय देता भया॥ सो सुनकर अचरज से कहने
लगी कि ब्राह्मण चल करके मेरे को दिखा जो तूं
कौन रस्ते से आया हैं और मेरे घर मैं कैसे चढ़आ
र नदी से कैसे पार उतरा हैं तब बिल्वमंगल ने प्रथ
म सरप दिखाया कि इस रज्जु अर्थात रस्सी को पक
ड़ कर ऊपर चढ़ आया हूं और फिर नदी के कि
नारे पर मुरदा जो था सो दिखाया कि इस के आधार
से नदी को तर कर प्यारी तेरे पास आया हूं तब तो
देख कर वेश्या परम कोप से धिक्कार कर
कर कहने लगी कि अरे मूढ़ तैने हित
अहित कुछ नहीं जाना तेरे को सरप और मुरदा
नेत्रों मैं कुछ देख नहीं पड़ा काम के वश भया
हुआ स्वान जो कुत्ता है तिस के समान धावता चला
आया हैं इतना नहीं विचारा कि आज पिता के श्रा
द्ध का दिन है हे मंद हे अधम तैने तो अ
पने धरम और वेद के विरुद्ध रीती [illegible]चार जो है
सो ग्रहण किया है और प्राण अप्रिये भैंग कि जो प्रा
णों के प्यारा नहीं है अर्थात प्राणों के नास करने
वाला है तूं जड़ तिस के वश होय कर अपने ब्र
ह्मण धरम को त्याग करके नीच वत मेरे पास
धावता चला आया है ॥५॥ चौपाई॥ धिग धिग
तुमहिं कुमारग गामी॥ निडर निलज दुष्ट म
ति कामी॥ तोसे सुत उपजावन हारी॥ भली सु
विस्व बोऊ महतारी॥ पित्री श्राद्ध दिवस जड़ जो
ई॥ संतत विषय निरत जो होई॥ रौरव
नरक भोगि सठ ताहू॥ अंत सो होहिं प्राम बा
ताहू॥ मैं इह श्रवण विप्र मुख कीना॥ तो ते तु

घन गगन घन छाये॥ बरसत गरज गरज दोत
आये॥ तड़त दमंक वंक गति न्यारी॥ मारत मानहु
सबल बल व्यारी॥ आगम तरंग तरंगनि छाये॥
सलल प्रवाह बरनि किमि जाये होत जात भयावन
रव सरता॥ धीरन हृदय धीर जनु हरता॥ आवा वि
प्र सरत तट ठाढ़ा॥ प्रिय कर मिलन प्रेम उर गाढ़ा॥
कहत उपाय कवन अब कर हौं॥ इह
दुसतरनि तरनि कस तरहौं॥ दोहा॥ तो लो गरजत
गगन घन भयो चपल चमकार॥ दुज सन मुख
निज सरत तर शब्द घर परयो निहार॥ ६॥ टीका॥ इ
स प्रकार जब भटकते और चिंतन करते हुये ब्रह्मण
को आधी रात बतीत होय गई तब धीरज से रहित
भया हूआ घर को त्याग कर चल पड़ता भया तिस स
मय बड़ी भयानक और घोर अंधेरी रात जल कर के
पूरित बड़े घने बादल जो हैं सो आकाश मे छाय त
भये हुये गरज गरज कर पृथवी पर बरसते हैं त
इत जो बिजली है सो भी अति वंक गती से दमके मा
रती है अर्थात बड़ी विकट वनवन कर चमकती है
तैसे ही पवन भी मानो महा वेग से चलती और मार
ती है नदी की उमंग और जल का प्रवाह तरंगों
की महिमा कुछ कही नहीं जाती तिस तें ऐसा भया
नक शब्द होता है कि मानो सूरवीरों के हृदय की धी
रज को भी हरता है तब ब्रह्मण जो है सो नदी के
किनारे पर आय कर के स्थित होय गया और हृदय
मे कहता है कि अब कौन उपाय करूं इह जो महा
दुसतरनी नदी है कि जो तरनी बड़ी कठिन है इसको
मे कैसे तरूंगा ऐसे विचार कर रहा था कि इतने मे
आकाश में बादल गरज कर चपला जो बिजली
है तिस का चमतकार पड़ता भया तब तिस के

अस प्रकार नृपकार न तेहा ॥ उठे रोमांच विप्रव
र देहा ॥ लागे उदय होन जब भागा ॥ विषय रज
नि सोवत तब जागा ॥ मौन वृत्य दुरजय दुज सो
ई ॥ नृपनिरहा उत्तर [illegible] होई ॥ बहुरि कहत अस तब
दुन उचारी ॥ जाहु तुम हे अब भवन सिधारी ॥ मैं अ
बई हौं सरित तट झारी ॥ राम भजन रवि रैन गुजारी ॥
जावहु प्रात सदन निज त्यागी ॥ कानन कृष्ण भजन
हित लागी ॥ दोहा ॥ वारि तिये तब सुनत अस [illegible] म
नन वदन मुसकाय ॥ तुव हठ देखन हेतु मै रहक
हु कपट अलाय ॥ सो मेरे तुम राम हु दुज चले
हु भवन कर छोह ॥ प्रेम सनातन जानि जिये त
जहु मित्र अब रोह ॥ ७ ॥ टीका ॥ इस प्रकार जब वे
स्याने परम विसकार के वचन कहे तब ब्राह्मण
के शरीर के रोमांच उठ खड़े हुये और भाग्य जो
है सो उदय होने लगे विषय की निद्रा मे सोया
हुआ जाग उठा ॥ [illegible] दुरजय जो कामदेव है ति
स से मौन वृत्य होय गया और मौन व्रत होय कर
हो कुछ उत्तर नहीं देता भया थोड़ी देर के पीछे
कहने लगा कि हे भामनी अब तूं [illegible] अपने घर मे
चली जा मैं अब इहां ही नदी के किनारे पर भ
गवान के भजन सुमरन मे रात्री वतीत कर के
प्रातकाल होते घर की आसा त्याग [illegible] कर
कृष्ण भजन के निमित्त कानन जो वन है तिस
विषें चला जाऊंगा ऐसे विप्र का कथन
सुन कर चिंतामणी [illegible] मुसकाय कर कहने
लगी कि हे प्यारे मैं तो तेरा हठ देखने के
लिये इह वचन जो है सो कुछ कहे थे तूं
मेरे पर क्षमा कर और सनातन प्रीति को
जान कर हृदय का रोह जो है सो त्याग

और दया करके मेरे साथ घर को चला॥ ३॥ चौ
पाई॥ तासु कथन सुनि विप्र प्रवीना॥ बोल्यो बच
न ज्ञान रस भीना॥ मानहि अब न करहु हठ ज्ञाना॥
मैं तुव कपट कथन हित जाना॥ कृष्ण भक्ति जनु
अमिय सुहाई॥ मोरे स्रुतन श्रवन तुव पाई॥ अ
स उपदेस तोर मोहि [illegible] ज्यावा॥ आज वपुष
फल संसृति पावा॥ गुरु पितु मातु तुमहुं जग मोरे॥
बंदहुं चरन हरन दुख तोरे॥ अस कहि विप्र तासु
सिर नाई॥ चल्यो विपन उर हरष बढ़ाई॥ सोउ च
कित चित सदन सिधारी॥ इत उत भक्ति दहुं न उर
धारी॥ अस हरि चरित यथा मति मोरी॥ सादर की
न कथन कछु थोरी॥ दोहा॥ नासन विषय विकार
सब भक्ति सहित मय एहु॥ सुनहिं प्रीति जुत [illegible] मनुज
जे हरि पद उपजहिं नेहु॥ ८॥ टीका॥ तब तिसका
कथन सुनकरके विलमंगल ज्ञान रसका भीना हु
आ वचन जो है सो कहता भया कि हे [illegible] सुशीले अब
तूं वृथा हठ मत कर इ तेरा कपट का कथन जो है सो
मैने हित करके मान लिया है और मेरी भलाई का ही
कारन है क्योंकि सरव सुख दायक अमृत के समान
कृष्ण भगवान की भक्ती जो है सो ने वे माको मेरे मरे
हुये के कानों मे पाय दई है हे हितकारनी तेरे ऐसे उ
पदेश ने मेरे को जगत मे जीवत कर दिया है और मैने
आज शरीर धारने का फल पाय लिया है अब तो तुम
हीं गुरु और तुम हीं मेरे माता पिता हो वार वार
तुमारे ही चरनों के मेरी होवे ऐसे उचारण
करके ब्रह्मण तहो वेश्या के चरनों पर सीस नाय
कर कृष्ण कृष्ण रटता हुआ बन के मारग को चल
पड़ता भया और इहो वेस्या भी अचरज के वश सो च
करती हुई अपने घर को चली आई तब दोनों के
हृदय मे भगवान की भक्ती जो है सो स्थायत हो जाती भई

इस प्रकार इस गाथा जैसी कई हौ बुद्धी के अनुसार है
सकी कुछ गायन कर दई है इस के सी भी गाथा है कि
जो पुरष श्रद्धा और प्रीती पूर्वक पढे सुने गा ति सकी
विषय विकारों से रहित होय कर
भगवान के चरनो मे अव श्य प्रीती हो जावेगी ॥ ८ ॥ दो
हा ॥ आगे विलंभ गल ललित भक्ति महात मआ
न ॥ करहु यथा मति कथन कछु सुनहु संत धर
कान ॥ सो उपदेश वार त्रिय पाई ॥ करत विचार
विपुन मंग आई ॥ अव मै कहां शरण कहि जाऊं ॥
कैथें निज आतम पद पाऊं ॥ जब तें लीन जनम से
सारा ॥ कीन न काहु करम सुभ चारा ॥ पावन विप्र
वंस उप जोई ॥ रहा कुलीन धरम चुत होई ॥ अव
लग विशय निरत दिन खोये ॥ अस पछतात वि
प्र उर रोये ॥ दुरलभ जनम मनुज जग लीना ॥ का
हु न धर्म करम सुभ कीना ॥ निज पछतात दुरत
उर आनी ॥ ताडित दुखित धरनि जुग पानी ॥ हार
न त्रास हुंदगण नाना ॥ अव कस भजहुं कृष्ण
भगवाना ॥ दोहा ॥ अस चिंतन उर करत दुज
लाध्यत लुखत सरीर ॥ बैठी जुग कर माथ ध
र तह तर विप्र अधीर ॥ ९ ॥ टीका ॥ अव आगे
विलमंगल की भक्ती की और गाथा जो है सो क
थन करता हूं है संतो आप कान धर कर श्रव
करिये ■ सो ब्रह्मन तिस वेस्या का उपदे
श पाय कर मारग जो रसता है तिस मे आय कर
के हृदय मै विचार करता है कि अब मै कहां जा
ऊं और किस की शरण को प्रापत होऊं और कि
स से उपदेश लै कर अपने वास्तव सरूप
की प्रापती करूं जब तें संसार मे जनम लि
या है तब तें कोई भी सुकरम और धरम न

म हूं अधम मति हीना॥ आज दिवस निज जनक
मृती॥ अरे निसरम दुरातम त्यागी॥ मेरे आव र
मन हित मूढ॥ सदृश तोर कवन अग मूढ॥ दे
ख मुगधमें गनक कुकरमी॥ तुव उतपन्न विप्र कुल
धरमी॥ मूढ कवन रिं चक सुख लागी॥ वेस मृया
द कीन सब त्यागी॥ जस तुव कीन विप्र ए सोरी॥ प्री
त प्रतीत नहिंन कछु थोरी॥ सोरठा कबहुं किय
द भगवान॥ दृढ निश्चय अस करहु दुज॥ तो तुम
री कल्यान॥ होहि सुजस से जुत जगत॥८॥
टीका॥ फिर वेस्या कहती है कि धिग है धिग है तेरे
को हे कुमारग गामी हे निर लज्ज हे दुष्ट मती कौ
मी अरे निडर गवांर तेरे जैसे पुत्र को उतपन्न कर
ने वाली जननी जो माता है सो तो जगत में क्या हि
मली थी मूढ मैंने ब्राह्मण के मुख से सुना है अरु है
कि जो पुरष पित्री श्राद्ध के दिन मैं विषय भोगता है
सो रौरव नरक का महा दुख और कलेश भोग कर
अंत को ग्राम का वाराह अर्थात गाउं का सूर
बनकर भटकता भ्रमता रहता है तो ते हे बुद्धि के
हीन और अभागी अधम तूं आज पिता के श्राद्ध का
दिन त्याग कर मेरे रमने कैसे चला आया है मूढ
तेरे समान दुष्ट सुभाव वाला और पाप की खानी
और कौन है हा मंद देख कि मै वेस्या जाती महा
कुकरमी और तूं ब्राह्मणों की सुधरमी कुल वि
खें उतपन्न भया है अरु अधम कौन रिं चक विषय
का सुख किञ्चित के लिये तैने अपने वेस की
मर्यादा और धरम के त्याग दिया है अरे ब्राह्मण
जैसे मूं निश्चय कर प्रीत मेरे विखें करी है
जो कदाचित वैसी सा भगवान के चरनो मे
भी दृढ प्रेम करैं तो जगत मे तेरी सुजस के
सहित कल्यान हो जावे॥८॥ चौपई॥

मति सब खोई॥ अब मोरे गुरु सरण आये ना॥ जे
हि प्रसाद भव विकट बसे[illegible] छा॥ तरहैं पाय मंत्र
उपदेसू॥ मिटहिं सकल दुख दोष कलेसू॥ सुनि अ
स कथन पथिक बटु ताता॥ दयायुक्त मुख वचन प्र
कासा॥ अहो विप्र उर धीरज धरहौ॥ चिंता सोच सकल
परिहरहौ॥ ईहाँ निकट पथवार नितीरा॥ वान प्रस्थप
द निरत मधीरा॥ विप्र तपस्वि सोमगिरि नामा॥ प्रा
त होत दाया गुण धामा॥ ताकर लेहु सरन सु
खदाना॥ विप्र तुमारे होहिं कल्याना॥ तहिं उप
देस मंत्र वर पाई॥ दुजे तुव होहु कृतारथ जाई॥
दोहा॥ सुनि अस पथिक महात मन वचन वदन
सुखदाय॥ विलमंगल मंगल लखी चल्यो चर
न सिर नाय॥१०॥ टीका॥ तब तहाँ सीतल और
सुंदर सुखदायक वृक्ष की छाया देखकर एक
कोई रसते चलने वाला ब्रह्मण आयकर के स्थित
होजाता भया सो विलमंगल को चिंता मे व्याकु
ल देखकर के पूछने लगा कि भाई तुम कौन हो
और कहाँ से आये हो ईहां कैसे व्याकुल होयकर
मनमारे हुये बैठे हो तुमको चिंता मे मगन देख
कर मेरे हृदय मे ऐह निश्चय होता है कि तुमको
ई मानो ब्रह्म घात करके आये हो कि जिससे चिं
ता सोच करके ऐसे व्याकुल होय रहे हो हे प्या
रे तुम अपना वृतांत प्रकट सुनाय करके अब
मेरे हृदय का भ्रम संदेह जो है सो मिटावो तब ऐ
से ब्रह्मण का कथन सुनकर विलमंगल कु
छु अपना हित जानकर वेस्या के उपदेश के
सहित अपनी [illegible] विद्या और वृतांत जो था सो
प्रकट करके सब सुनाय देता भया कि मै तिस वेस्या
का प्रेरया हुआ दुबदुरमती और विष[illegible]य सु
खादि सब त्यागकर निरमल चित होयकर के

ईहां वण मारग विषें चला आया हूं अब मेरे को गु
रदेव स्वामी जो हैं तिन के चरनो की शरण को आमिला
या है कि जिनकी कृपा सें मंत्र उपदेश से इहमहां वि
कट संसार समुद्र जो है सो तर कर शरीर के सब दे
षदुख और पीडी कलेशों से न वृत्य होजाऊं ऐसे
बिलमंगल का कथन सुनकर के सो पथिक वटू अर्णा
तरसते चलने वाला ब्रह्मण दया केवश भया हुआ
कहने लगा कि हे ब्रह्मण तुम चिंता सोच मत करो
हृदय मे धीरज धारो ईहां निकट हीं रसते मे नदी के
किनारे पर एक वानप्रस्थी का वण मे निवास क
रने वाले इंद्रेजीत दया और गुणों के धाम महांत
पस्वी सोमगीरी नाम करके प्रसिद्ध हैं तुम जाय
करके तिनकी शरण लेवो सो तुमारी कल्यान करें
गे हे ब्रह्मण तुम तिनका मंत्र उपदेश पायकरके
जगत मे कृतार्थ होजावो इसप्रकार तिस पथिक
महात्मा के वचन सुनकर बिलमंगल जो है सो हृ
दय में मंगल और हित जानकर तिसके चरनो पर
सीस नाय कर तहां को चल पड़ता भया ॥१०॥
चौपाई ॥ आश्रम तपस रुचिर मन भावन ॥ दे
षो विप्र दृगन अति पावन ॥ कमल पवन सुम
न वर कारी ॥ कोकल कीर भृंग गुंजारी ॥ कद
ली खंभ जंव नवलाये ॥ ललित कदंब अंब छबि छित
छाये ॥ जहं तहं नवल हुन विण सोभा ॥ बृंद
वाल बृंदावन लोभा ॥ चारु कुटीर तीर सरिता जी
उपमा सकल देखि जनि लाजे ॥ रिद्धि सिद्धि नव नि
द्धि सुहाई ॥ इह सब बसहिं जास गृह आई ॥ तासु दे
त उपमा सब थोरी ॥ कवन सु तुच्छ मंद मति मोरी ॥
कुसम भक्ति कर सदन बड़ाई ॥ मै कछु सक हु व
दन निज गाई ॥ दोहा ॥ अस रचना दृग देखि दृग भक्त

श्री ८

श्रीपरमसुखनिधायक

सोमगिरि गेह॥ करि प्रनाम बैठ्यो स्थित हृदय हरष भरि नेह॥ तब तहां जाय कर के सोमगिरि तपस्वी जो थे तिनका आश्रम के सो देखो कि बड़ा रमणीक मन को भावता और सुंदर नवीन वृक्ष लगे हुये तैसे ही मनोहर पुष्पों की वाड़ी की कलां कीर जो तोते भृंग जो भ्रमर इनका नाना गुंजार कर रहे हैं कदली जो केले जंब जो जामन और कदंब आंब इत्यादि शोभावाले वृक्ष जो हैं सो भूमी पर छायत भये हुये छवि पावते हैं और जहां ... वृक्ष जो हरे चित्त हैं सो भोले हुये हृदय को आनंद देते हैं तैसे ही बाल तुलसी के ~~...~~ ~~... जहां तहां शोभा पावती हैं~~ समूह लगे हुये सुंदर शोभा को उदय कर रहे हैं और रमने को भावते हैं नदी के किनारे पर बड़ी सुंदर ... और मनोहर कुटिया कि जहां रिद्धि सिद्धि इत्यादि सब निधी जो हैं सो निवास करती हैं ऐसे कुसुम ... के आश्रम की महिमा कुछ कथन नहीं की जाती तिसकी मनोहरता और रमणीकता ... आगे सब उपमा लज्जा को प्राप्त होती हैं तो तिसे कैसे कथन करा जाता है तब मल्ल ... ने के आश्रम की ऐसी रचना देख करके विल मंगल हर्ष और प्रेम में मगन भया हुआ प्रणाम करके तहां स्थित होय कर बैठ जाता भया॥२२॥ ~~तब तिस को मौन और ... रजते भये हुये~~ को देख कर सोमगिरी आय करके कहने लगे कि भाई तूं कौन है और कहां ते किस कारन के लिये आया है अपना वृतांत मेरे को प्रकट कर के कहो ऐसे कृपा करके युक्त सोमगिरी के वचन सुन कर विलमंगल चरनों पर सीस धर

हीं कियाहै परम पवित्र ब्राह्मण वंस जोहै तिसमे उतपन्न होयकर अपने कुलीन धरमसे दूर रहाहूं तिसको निकर भी नहीं आयाहूं अबलग सबदिन जोहैं सो विषयोंमे हीं खोयदिये हैं आगेके लिये कुछभी बन नहीं पड़ा ऐसे ब्राह्मण जोहै सोदेय होय कर पछतावताहै वारंवार क हीं कहताहै मेरे भाग्य देखो जगतमें बड़ा दुरलभ मानुष्य जनम पाया और फिर कुछ धरम सुकरम नहीं किया ऐसे अपने किये हुये पापोंको हृदयमे सुमरण कर कर दुखी भयाहुआ पछाड़ खाकर पृथवीपर मारताहै और विलापकरताहुआ मुखसे कहताहै कि अब सरब भयकलेस और पापोंके दूर करने वाले कृष्ण भगवान जोहैं तिनको मै कैसे भजूं इस प्रकार चिंतन करता हुआ ब्राह्मण मूरछा खाया सा दोनो हाथ माथेपर धरे हुये एक वृक्ष केनीचे वैठ रहाहै॥८॥ चौपाई॥ सीतल ललित देखि द्रुम छाऊ॥ आवा आन विप्र तहे काहू॥ तासु देखि चिंता कुलभारी॥ विप्र वदन अस गिरा उचारी॥ कित आये तुव कहां पधारे॥ बैठे इहां विकल मनमारे॥ चिंता मगन देखि अस तोरे॥ संतत जानियरत जिय मोरे॥ के तुम ब्रह्म ज्ञान मनु कीना॥ जहितें विप्र सोच मन लीना॥ मोरे मरम प्रकट करि रहू॥ करहु न वृथ्य तात संदेहू॥ दुज कर बचन सुनत अस काना॥ विकलमे गलमानस हितजाना॥ जस उपदेस वारचिय कीना॥ सोनिज विपत सहित कहि दीना॥ मैतो कर प्रेरित अस भाई॥ विषय सुखादि तजत समुदाई॥ आवा विपन विमल मन होई॥ हृदय देष दुर

करहुं मंत्र उपदेस न तोही॥ अस कहि वदन सोमननि धनीके॥ लगे विचार करन निज जीके॥ इह द्विज पतित जनम ते राहा॥ ब्रह्म धरम निज सख्यो न काहा॥ अब इहि करहुं कवन उपदेसू॥ हरन वपुष दुख दुरत कलेसू॥ जाहि तें इह अध मरन जोई॥ सुजस सहित जग मुकति होई॥ अस उर गुनत दोष दुख हरना॥ विय धालोक मे तुरत सुमरना॥ जिन कर अर्थ रुचिर अस रा ना॥ भरन मोद मान स उत साहा॥ है श्री कृष्ण नाम अस जोई॥ ललित मोद मंगल प्रद सोई॥ रटत जास नर संसृति जीना॥ सोउ सु फल मुकति अवधीना॥ ताकर उग्र किलष संघाता॥ सुनत कृष्ण होत सव पाता॥ दारि द्री आरत सुज याहू॥ दुखित दोष ग्रह पीडत काहू॥ कृष्ण नाम चितत मन माहीं॥ मुक्त होत संशय कछु नाहीं॥ अस सोचत मान स सुभ चारा॥ कृष्ण नाम महिमा गत पारा॥ तासु ललित माधुरि मृदु वानी॥ भने वदन दाया रस सानी॥ दोहा॥ कृष्णा सरिता तीर तुम चल हुव नस संग मोहि॥ परमारथ साधिक रुचिं देहु मंत्र अव तोहि॥ २२॥ टीका॥ हे दीन दयाल अव मेरे को कृतार्थ कहिये अर्थात सफल करिये जो मैं अपने किये हूये घोर पापों से मोत को प्रापत हो जाऊं नाथ इह महा कठिन और अगम संसार समुद्र जो है इसके तरने को अब जहाज वत आप ही आधार देख पडते हो और दूसरा कोई नहीं है कृपा करके मेरे को इस अगाध समुद्र से पार उतारिये मैं मन वचन काया करके आप के चरनों का सेवक हूं ऐसे तिस की वडी दीन और भक्ती प्रीती वाली कोमल वानी सुन कर के सोमगिरी हृदय मे जानगये कि इह सावधान जिज्ञासी और मंत्र उपदेश का अधिकारी होय रहा है अत्यंत प्रसन्न होय कर के मानो अमृत रस की भीगी हूई वानी से कहने

लगे कि हे पुत्र हृदय मे धीरज धरो और चिंता सोच
मत करो सरव सुख और हित के देने वाला मंत्र उप
देश जो है सो तेरे को देता हूं और तेरे हृदय के भ्रम संदे
ह को दूर करता हूं ऐसे कथन करके ज्ञान विचार की नि
धि सोमगिरी तपस्वी हृदय मे सोचने लगे कि इह ब्र
ह्मण जनम ते लेकर आज लग पाप ही करता है अप
ना मूल ब्रह्मन धरम जो है सो तो इसने सुपने मे भी
नहीं किया तां ते अब इसको घोर पाप और दुख कले
शों के हरने वाला कौन मंत्र उपदेश करूं कि जिससे
इह अधरमी ब्रह्मण जगत मे पुन्य मान और सुज
स का पात्र हो जावे इस प्रकार विचार रहे थे कि तुरत
ही दो श्लोक तिनके हृदय मे फुर आये जिनका इह
अर्थ था कि हे कृष्ण ऐसा जो सरव मंगलों के देने वा
ला भगवान का नाम है तिसको संसार मै जिस पुरष
की जिह्वा रटने करती है साई सब सुकृतियों की अव
धी है तिसते परे और कोई भी पुन्य मां और सुजस मा
न पुरष नहीं है तिसके घोर पाप जो हैं सो कृष्ण नाम के
सुमरण करने तें सब नास को प्रापत हो जाते हैं और भी
दारिद्री दुखी रोगी और ग्रहों की पीडा वाला इस पर
म पवित्र कृष्ण नाम के चिंतन करने तें तिन सब व्या
धियों से छूट जाता है इसमे कुछ संशय नहीं है इस प्र
कार महा तपस्वी और ब्रह्मचारी सोमगिरी संत जो हैं
सो कृष्ण नाम की महिमा अपार जान करके विलमंग
ल को बडी मधुर और दया रस की भीनी हुई वाणी से क
हने लगे कि हे पुत्र तूं मेरे साथ कृष्णा नदी के किनारे
पर चल तहां तेरे कों मै परमार्थ के साधने वाला पवित्र
मंत्र जो है सो कान मे सुनाय देता हूं ~~तब विलमंगल~~
~~तुरत ही तिनकी आज्ञा पाय करे कृष्णा नदी के कि~~
~~नारे पर चला आया और तहां प्रीती पूर्वक स्नान~~
~~करके फिर हृदय मे [illegible] और प्रेम को अधिक~~

~~अधिक कियेहू हृये हाथ जोड़ कर सनमुख स्थित~~ ॥ १३ ॥
चौपाई ॥ तुरत नदेश अवर द्विज पाई ॥ कीन सनान कृष्ण
सरि आई ॥ जोरि जुगल कर सनमुख ठाढ़ा ॥ पावन भ
क्ति प्रेम उर बाढ़ा ॥ गुरु कृपाल तब लीन बिठाई ॥ प्रथ
म नीति कछु वदन सिखाई ॥ विधिवत करन दक्ष पुनि
तासा ॥ हरन द्वंद गुरु मंत्र प्रकासा ॥ रहे तपस्वी सो भग
ति साधू ॥ कृष्ण नाम निज हृदय अराधू ॥ मनवच करम
भक्त भगवाना ॥ द्विज स्पर्श तो कर जब पाना ॥ तुरत वि
धूत दुरत वपु भययो ॥ ~~[illegible]~~ जनहु अनल वह्योत
न लययो ॥ करि प्रणाम नें मृत कर जोरी ॥ कहत वदन
अस विनय नपोरी ॥ तुव प्रसाद करुणायनिधाना ॥ भ
यो कृतार्थ दीन महाना ॥ आज सिद्ध मनअर्थ सुहा
वा ॥ धरन वपष फल संप्रति पावा ॥ अब कृपाल ज
स आयस होई ॥ मैं धरि सीस करुं प्रभु सोई ॥ वतस
तोर इच्छा मन जाहीं ॥ करहु निवास मुदित मन ता
हीं ॥ क्षत्रियन धरम सुष्टु आचारा ॥ सोऊ रुचिर ब्रत
पुत्र तुम्हारा ॥ इति जुत गुरु नदेस अस काई ॥ ततपर
भयो स्वाभिसिव काई ॥ दिन दिन निरत भजन भगवाना ॥
अस प्रकार कछु काल सराना ॥ तब सुविप्र गुरु कृपा
प्रसादू ॥ अति शास्त्रज्ञ निपुण गुण साधू ॥ कोविद परम
काव्य कृत मरमा ॥ भासामर्थ विप्र वर धरमा ॥ तब इक
दिवस निकट गुरु आपन ॥ कीन्यो ~~[illegible]~~ आय वदन
विज्ञापन ॥ कृष्ण देव दरसन सुख दाई ॥ मोरे हृदय ला
लसा छाई ॥ श्रीमुख जो नदेस अब पाऊं ॥ तो कृपाल
वृंदावन जाऊं ॥ गुरु प्रसन्न मन आयस दीना ॥ द्विज प्र
स्थान तुरत तब कीना ॥ कृष्ण कृष्ण मुख कृष्ण उचा
री ॥ चल्यो विप्र गुरु चरन जुहारी ॥ दोहा ॥ आवा मा
रग कांटि तब नदी नरमदा तीर ॥ देखी पुरी महिसमती
तहां ललित मति धीर ॥ १४ ॥ टीका ॥ तब विलमे

~~को और हाथ जोड़ कर वे~~ चौपाई॥ तब तहि
देखि मौन बिसमाये॥ बदन सोम गिरि बचन सुनाये॥
को तुम कवन हेतु कित आवा॥ निज बृतांत मोहि देउ
सुनावा॥ कृपायुक्त अस बचन सुहावन॥ ~~[illegible]~~ सुनत
बिलखे मंगल मन भावन॥ करि प्रणाम नम्रत महि माथा॥
निज बृतांत जुग जोरत हाथा॥ दोहा॥ बाराह दिये उपदे
स लेश सकल कथन करि दीना॥ निज उद्धार हित
बहुरि दुज बिनय बदन अस कीन॥ दुरलभ मानस
जनम प्रभु मैं निज बृथा गवाव॥ अब तो करउ प
देश सुनि याल शरण तुव आव॥ २२॥ टीका॥ तब
तिस को मौन और अचरज भये हुये को देखकर सो
मगिरि जी आय कर कहने लगे कि भाई तुम कौन हो और
कहां ते किस कारज के लिये आये हो अपना बृतांत
मेरे को प्रकट करके कहो ऐसे कृपा करके युक्त सो
मगिरि के बचन सुनकर बिलखे मंगल चरनो पर सीस
धरकर और हाथ जोड़ कर ~~[illegible]~~ वे
ह्या के उपदेश से लेकर अपना बृतांत और बिथा जो
थी सो सब सुनाय कर फिर तैसे ही हाथ जोड़े हुये दी
नताई से अपने उद्धार के लिये बिनती करता भया कि
हे प्रभू मैंने आज लग संसार में अपना मानुष्य जनम
बृथा ही गवाया है अब तिस बेह्या के मुख से उपदेश
सुनकर के कृपानिधान तुमारे चरनो की शरण को आ
या हूं॥ २२॥ चौपाई॥ मोरे करउ कृतारथ आपू॥ हो हिं
मुचित बपु संचित पापू॥ अगम अगाध सलिल नि
धि भव हीं॥ अब अब लेब यान जल तुव हीं॥ कीजे
कृपा नाथ मोहि पारा॥ करम बचन मन दास तुमारा॥
तास मधुर सुनि गिरा बिकासी॥ जान्यो सावधान जु
ज्ञासी॥ हृदय प्रसन्न सोमगिरि ज्ञानी॥ बोले बचन सु
धा रस सानी॥ तात धरहु धीरज जिय माहीं॥ चिंता सो
च करहु कछु नाहीं॥ सब सुखद हितकारक जोई॥

अर्थात कविता मे सामर्थ और संत प्रधान होजाता भया सो एक दिंन गुरुजी के आगे हाथ जोड़ कर बड़ी नंम्र वाणीसे प्रार्थनाकरने लगा कि हे कृपानिधान मेरे हृदयमे कृष्ण प्रभातमा के दरसन करने की अभिलाखा और रुचीउपजी है जो दीनानाथ के मुखसे आज्ञा पाऊं तो प्रभू मे श्री वृंदावन को जाऊं इस प्रकार तिसके भक्ती प्रीती वाले वचन सुनकर गुरु कृपाल आनंदसे आज्ञा देदेते भये कि पुत्र जाओ कृष्ण भगवान का दरसन करकर नेत्रों को सफल करो ऐसे गुरुजी की आज्ञा पायकर वारवार चरनोपर प्रणाम करके विलमंगल जो है सो कृष्णकृष्ण रटतां तहांसे तुरत प्रस्थान करदेताभया तब चलता चलता मारग को काटकर नरमदा नदी के किनारे पर महिसमती नाम करके बड़ी सुंदर और रमणीक पुरी मे आय प्रापत हु ~~अर्थात तो कृष्ण भगवान को सुमरते हुये कुछ काल वतीतकिया~~ ॥ चौपाई ॥ करत सुमरणा कृष्ण सुखरासा ॥ तहां वसत कछु काल बितासा ॥ एक दिवस तहि भक्ति सुहावा ॥ भयो महातम मानस भावा ॥ चल्यो प्रात दुज हेतु स्नाना ॥ सरिता तीर हर षसराना ॥ तव मारग पतिव्रता सुमेली ॥ विधवा त्रियेविप्र वर देली ॥ लिये उछंग वालमृत सोई ॥ रोदन करत मोह वस होई ॥ तासु विलोकि विकल दुजराया ॥ पूछत वदन उपजि उरदाया ॥ रहकस भयो वाल मृत माई ॥ करहु वदन कछु विथा ग्रलाई ॥ सो सुनि विप्र वचन विलपाती ॥ रोदन करत विरहे सुत माती ॥ भनत नाथ दुज वेस सुहावा ॥ जनम मोर इह वालक जावा ॥ पतिमृत होत जरन संग लागी ॥ सुत वति धरम जानि सुनि

त्याग्यो॥ फिर सुत देखि उर धीरज ठाना॥ प्राण आधार नाथ निज जाना॥ इस प्रकार कछु बरष बितेवा॥ मोरे हृदय पुत्र अवलेवा॥ दोहा॥ सोऊ नाथ अब मृत भयो मेरे जीवन प्राण॥ फूलन कर उर कर गयो कठिन वज्र पाषान॥ २४॥ टीका॥
तब तहां निवास करके कृष्ण भगवान को सुमरते हुये कुछ काल व्यतीत किया एक दिन तिन की भक्ती का ऐसा चमतकार लोगों मे प्रकट होता भया कि प्रातःकाल के समय भक्त प्रधान बिल्वमंगल जी स्नान करने के लिये नदी के किनारे को चले जाते थे तब मारग मे एक पतीव्रता और विधवा ब्राह्मणी मरा हुआ बालक गोद मे लिये हुये बडे विलाप से रोदन करती और व्याकुल भई हुई चली आवती है तिस को देखकर बिल्वमंगल भी दया के वश व्याकुल होय गये और पूछने लगे कि हे माई इस तेरा पुत्र कैसे मृत होय गया है तू दया करके मेरे को इस का वृतांत जो है सो सुनायदे तब ब्राह्मणी सुनकरके महा विलाप से पुत्र की विरह के वश रोदन करती करती कहने लगी कि हे नाथ ब्रह्मा ने सब विधि से मेरा जनम है और इस बालक मै ने उतपन्न किया था जब दैव योग से पती मृत होय गया तब तिस के साथ जलने को त्यार हुई परंतु पुत्रवती धरम [illegible] कर नहीं जल सकी तिस तें नवृत्य होय गई और इस पुत्र को देख कर हृदय मै धीरज धार लिया और एही अपने प्राणों का आधार जाना ऐसे कुछ काल व्यतीत होय गया मै इसी पुत्र के सहारे पर जीवती रही हे नाथ अब सोई मेरे जीवन प्राण जो था सो मृत होय गया है फूलों के समान इस मेरे कोमल हृदय को आज बडे कठिन वज्र के तुल्य कर गया है॥ २५॥ चौपाई॥ अब मोहि केवल नाथ आधारा॥ मरहीं बूडि सरित जल धारा॥ सुत वियोग नहिं सकहुं सहारी॥ होत विरस मन किमि वारी॥ तुमहुं नाथ मोहि जनक समाना॥ तुमहि मोर अब देउ प्रणामा॥ पावक विरहे दगध तन जिव च[illegible]मा॥ मन हुं रूप

(margin) विधवा

१५६

करुणाधृत रचना॥ द्विजवर हृदय भूतद्रुति भयऊ॥ रोम रोम दाया मनुछायऊ॥ धरि निज क्रोड़ बालमृत लीना॥ कछु विचार विप्र नहिं कीना॥ हृदय सुमरि लाग भगवाना॥ कृपा निकेत भक्त वरदाना॥ दीनबंधु प्रणतारत भंजन॥ भक्ततोष प्रणदेव निरंजन॥ अब ब्रत विप्र पाल निज जेहू॥ सुमरत द्याल हरणदुख तेहू॥ इहमृत बाल विप्र तिय स्वामी॥ देहु जियाय भक्त अनुगामी॥ नतर न जियहि जननि शिशु एहा॥ तापर मोर मरण संदेहा॥ अस प्रकार कछु दिवस बिहाना॥ कीन नतिनहिं अन्न जलपाना॥ सोरठा॥ निश्चय सत्य निहारि॥ तव कृपाल रंजन भक्त॥ आपन विरद सँभारि॥ मृत शिशु दीन जियाय प्रभु॥ २२॥

टीका॥ फिर कहती है कि हे प्रभू अब मेरे को किसका आधार रहा कहीं नदी के अगम जल में डूब करके मरजाऊंगी इस पुत्र का वियोग कैसे सहार सकूंगी रोते रोते मेरे नेत्रों का जल अंत नहीं पावता है हे भगवन तुम मेरे को पिता के समान हो अब तुम को मेरी दंडप्रणाम होवे ऐसे विरहे की आगी करके दग्ध भये हुयेतिसके वचन कि मानो साक्षात शोक ही रूप धारकरके विलाप कररहा है विलमंगल जी सुन करके द्रवीभूत अर्थात चित्त करके कोमल होयगये और दया जो है सो रोम रोम में छायत होयगई हृदय में चार विचार कुछ नहीं किया तुरत ही सो मृत भया हुआ बालक तिसकी गोद से छुड़ायकर आपकी गोद में लेलेते भये और भक्तों की पैज राखनेवाले भक्त वरदायक कृपानिधान भगवान जो हैं तिनका सुमरण करने लगे कहते हैं कि हे दीनबंधु हे भक्तों के प्रणपूरण करनेवाले हे देव हैं ~~[illegible]~~ परमात्मा हे परमात्मा प्रभू अब कृपा करके अपना ब्रह्मणपाल विरद जो है सो दीनदयाल हृदय में सुमरण करके इह मृत भया हुआ दीन ब्रह्मणी का बालक जो है सो जियाय दीजिये नहीं तो कृपानिधान इह ~~[illegible]~~ पुत्र की विरहे के वश

मंगल तुरत ही तिनकी आज्ञा पायकर कृष्णा नदी
के किनारे पर चला आया॥ और तहां प्रीती पूर्वक स
नान करके फिर हृदय मे भक्ती और प्रेम को अधिक किये
हूये हाथ जोड़कर सनमुख स्थित होय गया गुरू जीने
कृपा करके बिठाय लिया प्रथम कुछ नीती जो है सो क
थन करी [illegible] तिसते उपरांत फिर सरव पापों के
नास करने वाला मंत्र जो है सो विधी पूर्वक तिस के दहने
कान मे सुनाय दिया उपदेश ऐसे कृष्ण नाम के आराधन करने
तब
वाले और मन वचन काया करके कृष्ण भगवान के दृढ
भक्त होमगिरी महा तपस्वी संत जो थे जब तिस ब्राह्मण को
तिनका सपर्श भया तो ततकाल ही तिसके शरीर के [illegible]
पाप जो थे सो सब नास को प्रापत होय गये और शरीर
का तेज जो है सो अगनी के समान प्रकाश देने लग जाता
भया तब गुरू जी के चरनो पर प्रणाम करके बड़ी दी
नता से हाथ जोड़ कर विनती करने लगा कि हे दीन
याल मै आपकी कृपा प्रसाद से जगत मे कृतार्थ रूप
होय गया हूं और मेरा मनवांछित अर्थ भी सिद्ध होय गया
है आज शरीर के धारने का फल जो था सो मैने पाय लि
या है अब दीना नाथ जैसी आज्ञा हो मै तैसी ही सीस
पर धारन करूं तब होमगिरी जी आनंद से कहने ल
गे कि हे पुत्र जहां तुमारी इच्छा है तहां सुख पूर्वक
निवास करो रिषियों का आचार [illegible] धरम जो है सो
गृहण करो और कृष्ण कृष्ण भजते रहो इस प्रकार पर
म हित और सुख के देने वाली गुरू जी की शिक्षा पाय
कर बिलमंगल तहां ही स्वामी जी की सेवा मे ततपर हो
[illegible]यगया और रात्री दिन भगवान के भजन सुमर्ण
मे लीन रहने लगा ऐसे जब कुछ काल बतीत हो
य गया तब बिलमंगल गुरू जी की कृपा के प्रसाद से
परम शास्त्रज्ञ अर्थात सरव शास्त्र के जानने वाला धरम
प्रवीन सरव गुणनिधान काव्य कृत मे सावधान

प्रसन्न होयकरके बालक जो था सो तिसको दे दिया और तिस ब्रह्मपतनी ने बडे हरष सनमान से प्रणाम करके ले लिया फिर बारबार चरनो को बंदना करके और आनंदपूर्वक आसीसा पाय कर बालकको गोदमे धारन करके तिनका सुजस गावती हूई अपने घरको चलीआवती भई — इहां भक्तप्रधान विलमंगलजीभी नदीके निरमल जलविखें सनान करकर कृस्न कृस्न ररते हुये अपने आश्रम मे चले आये तब ऐसा अदभुत कौतुककी चरचा होती होती संपूर्न नगर मे फैल गई कि [illegible] संत महातमा ने अमुक ब्रह्मनी का मरा हूआ बालक जीवता करदिया है सब लोग स्त्रीपुरष [illegible] बालक वृद्ध महंत हो के दरसन करने को धावते चले आये तब सो संत बिरक्त और निरपेक्ष कि जिनको किसी बारता की इच्छा नहि ऐसी लोक मानता को [illegible] कर हृदय मे गोरी और गणपतीजी को मनाय कर श्री वृंदावनको कृस्न परमातमा के दरसन [illegible] की रुची अभिलाषा बाल होयकर तहां से ततकाल प्रस्थान करदेते भये तब चलते चलते मारग मे एक बडी दिव्य जोती वाली रूपमान वैस भक्त की वाला जो स्त्री थी तिसको देखते भये ॥ २७ ॥ चौपाई ॥ सुभग तरीस नीर चर सो हा ॥ प्रिय सर [illegible] ललित म[illegible] न मोहा ॥ पूरण चंद्र प्रभा मुनिरमा ॥ निज छवि हरत मान रति भामा ॥ चपल अपांग दुंद दृग मेलत ॥ खें जन जु[illegible] जा[illegible] जनु खेलत ॥ चाल मराल बाल जा[illegible] नु निंदा ॥ नख सिख चल्यो जात कवि वृंदा ॥ मध्य भाग सूतन मदुति काया ॥ देखत दृगन विकल दुजराया ॥ तास रूप वस पाछि ल लागो ॥ धीर सरीर बिप्रवर त्यागो ॥ दोहा ॥ तब भामनि तहि देखि दृग पति के [illegible] ताति आवा ॥ मोरे पाछिल नाथ को काहा मदन वस भाव ॥ २८ ॥

टीका॥ सो कैसी कि जल की भरी सुंदर गागरी
सीस पर धरे हूये और सरव अंग सुन्दर मन के हरने
वाली मानो पूर्णमासी के चंद्रमा वत जिस के मुख
की शोभा और अपनी छवी कर के रती जो कामदे
व की स्त्री है तिस को भी निदर दी है सो जब दोनो चं
चल नेत्रों को मेल कर फेरती और भाव करती है
तो ऐसे प्रतीत होता है कि मानो जुग खंजन अर्थात
दो ममोले खेलते जाते हैं तैसे ही बाल हंस
वत चाल की शोभा नाकों टीना लेवी मनुष्य
आग [illegible] की सुन्दर काया नख सिखा से ले
कर मानो एक छबी का समूह चला जाता है ऐसे
तिस को देखकर विलंमग लजा मोहित और व्या
कुल हो गये रूप के वश भये हूये धीरज को त्या
ग कर तिस के पीछे लाग चलते भये तब सो पती
व्रता स्त्री तिन को पीछे आवते देख कर बडी उता
यल से भय के वश कांपती हूई पती के पास आय कर
कहने लगी कि हे नाथ आज मेरे धरम की भगवान
ने रक्षा करी है देखिये कोई पुरष साधू भेष काम के
वश व्याकुल भया हूआ मेरे पीछे पीछे लागा च
ला आया है और मैं नहीं जानती हूं कि कौन है॥२८॥
चौपाई॥ सो समदरशि तासु पति जोई॥ ला
ग्यो मनन हरष वस होई॥ तुव न करहु चिंता कछु
प्यारी॥ पतिव्रत धरम तोर रखवारी॥ आपु कृ
पानिधान भगवाना॥ तुव कस प्रीया चाहउ रमा
ना॥ सो जपि छबि मानस हरषाई॥ जस तोहि कर
हि कथन सिव काई॥ हित जुत तुमहुं सीस धरि
भामा॥ [illegible] करहु तासु उर पूरण कामा॥ तो लो
भक्त प्रवर तहं आये॥ त्रियपें पतिहिं देखि सकुचा
ये॥ तब प्रणाम करि बैस प्रवीना॥ जुग कर जोरि
भक्ति मन लीना॥ भनत नाथ रह भामनि मेरी॥ मन
वच काय चरन तुव चेरी॥ सब विधि दीन दयाल

अनुसारी॥ जस न देस प्रभु होहिं तुमारी॥ हमरे सो ऊ हेत सूई कारी॥ आज सफल जग जनम बिचारी॥ धारि चरन बु वदीन सनेहू॥ कीन मोर इह पावन गेहू॥ अस जब वेस सु जस मुख भाखा॥ तब तिय कहै दुज सु सृ अलाखा॥ सुमेर मोर कथन कछु देहा॥ सुन हरि इकांत चले हुनिज गेहा॥ पति अनुसास तुरत गहि रमनी॥ सदन इकांत विप्र सन गवनी॥ तब तहिं रमा रूप जिय जानी॥ बिलसे गल जोर तु जुग पानी॥ धन्य धन्य मुख भनत अकामा॥ कीं भक्ति जुत चरन प्रणामा॥ नमत बहुरि वदन निज रूची॥ मांगी विप्र जुगल तव सूची॥ देवी वेग बिलम तजि देहै॥ आसिष मोर मुदित मन लेहै॥ ल्याय दीन तत तारा सत हेसी॥ दुज द्रुत कीन करन जुग वेसी॥ प्रणम वदन अस वचन उचारी॥ रे दृग मंद दुष्ट जग भारी॥ हित अनहित कर तुम हू नमानी॥ केवल रूप विषय अनुरागी॥ जप तप जोग धरम ब्रत जोई॥ तो कर तुम हुँ अनल वत होई॥ देत अधम तारा सकल जराई॥ तुव संसर्ग विसव दुख दाई॥ अस कहि डारि दृगन दुज वेसी॥ लीने तुरत वहिर निलकेसी॥ श्रोणत जुगल नयन द्रुत जाता॥ दुज वर चल्यो भक्ति मद माता॥ त्रिय जुत वैस विप्र हठ देखी॥ विलपत करत रुदन अवसेखी॥ दोहा॥ काका दारुण कष्ट इह दुज सेसरंग हमार॥ धुनत सीस पछुतात जिय हाहा देव उचार॥२८॥ टीका॥ ऐसे त्री का कथन सुन कर सो तिस का पती समदरसी और भगवान का भक्त वडे हरष से कहने लगा कि हे प्यारी तूं चिंता मत कर तेरा पती ब्रता धरम राखने वाले आप जदुनंदन भगवान हैं प्यारी तैने हृदय मे क्यों इतना भय माना है सो मन हातमा

व्याकुल भई हुई कैसे जीवेगी और तिस पर मेरे मरने का भी संदेह है जो कदाचित इह नहीं जीवेगा तो मैं भी प्राणों को त्याग दे ऊंगा इस प्रकार सुमरण करते को आधा दिन वतीत होय गया अन्न जल कुछ खान पान नहीं किया तब तिस का ऐसा हठ और निश्चय देखकर के भक्त प्रण पालक भगवान अपना विरद हृदय मैं सुमरकर ततकालहीं तिस मृत भये बालक को जियाय देते भये ॥१२॥ चौपाई ॥ जियत विलोकि बालमहतारी ॥ फूली जनहु नवल फलवारी ॥ हरषत चरन विप्र गहि लीना ॥ मोरे जियन सफल प्रभु कीना ॥ दुजवर धन्य तुम हु उपकारी ॥ पितु समान करुणा निज भारी ॥ मोपैं कीन जानिजिय आरत ॥ सदा संत प्रभु प्रण तउधारत ॥ तब दुज सुखु बालक तहि दीना ॥ सादर करि प्रणाम गहि लीना ॥ बहु विधि वंदि चरन दुजराई ॥ अह प्रसन्न मन आसिख पाई ॥ सुतहिं क्रोड धरि सदन सिधारी ॥ इत दुजनाथ सरित तट बारी ॥ करि सनान आश्रम निज आये ॥ लोक विलोकि चरित विसमाये ॥ सकल नगर चरचा अस कीना ॥ मृतक बाल दुजनाथ जियाया ॥ दरसन हेतु ग्राम नरनारी ॥ जहं तहं आय जूथ मिलि सारी ॥ दोहा ॥ सो विरत निरपेक्ष दुज लोक मानता त्यागि ॥ वृंदावन उदविगन चित कृस्न दरस हित लागि ॥ भयो करत प्रस्थान द्रुत गणपति गौरि मनाय ॥ तहि मारग इक वन के विषे देखि विप्रवर आय ॥१३॥ टीका ॥ इस प्रकार बालक को जीवता देखकर तिसकी माता जैसे नवीन फुलवारी फूलती है तैसे आनंद मैं फूल उठती भई और धायकर बिल्वमंगल जी के चरनों पर सीस धरकर विनती करने लगी कि हे प्रभू तुम धन्य हो जिन्होने ऐसी अनंत कृपा कर के जगत मैं मेरा जीवना सफल कर दिया है नाथ तुमारे समान उपकार की निधी और दूसरा कोई नहीं है मेरे को दुखी जानकर आज पिता के समान दया पाली है आहो संत सदैव ऐसे ही शरण पडे की पीडा हरने वाले और रक्षा करने वाले होते हैं तब बिल्वमंगल जी ने

तिनकी दोवनखी अर्थात दो कुंडी वनाय लेते भये औरं प्रथम मुखसे ऐसे उचारकर कि अरे महांमद और दुष्ट चित्त जठ नेत्रो तुम कैसे हो कि ति अनहि कुछ जानते हो केवल रूपविषय मैंही मोहित होजाते हो और जपतप जोग व्रत धरम और सुकरम जो हैं इन को अधम तुम अगनीवत होयकर छनमै भसम करदेते हो तोते तुमारा हमर्ष अर्थात संगती जो है सो जगत मैं महा दुख और कलेशोंके देनेवाली है ऐसे नेत्रो का धिक्कार करके फिर तुरतही वनखी जो कुंडी है सो डालेकर दोनो नेत्रों को निकाल करके वाहर फैंक देते भये ओर एत जो लाहू है सो वहाचला जाताहै आप भक्ती के मदमै उनमत्त भये हुये भक्त प्रधान [illegible] कृष्ण कृष्ण रटते हुये चलपडे तव स्त्री के सहित सो वैस भक्त तिनके अगाध हठको देखकर हा देव हा देव पुकार कर और अनेक प्रकार पछताय कर परम विलाप करते हैं [illegible] हम कैसे महा दुष्ट और पाप की खानी हैं कि जिनकी संगती से संत [illegible] वडे औरं कलेशको प्रापत होयगये ॥ २८ ॥ चौपाई ॥ रोदन करत कहत विललाई ॥ दीनदयाल कस चले सिधाई ॥ यद्यपि हम हे अधम अपराधू ॥ तदपि तुम हु नाथ तुव साधू ॥ हमरे चलहु दीन सुखदाई ॥ मनवच करम करहु शिव काई ॥ तव दुज नाथ मधुर मृदु वानी ॥ अति प्रसन्न मन वदन वखानी ॥ तुव कस दुखित सोच जियधारा ॥ इह नकाहु अपराध तुमारा ॥ मोरे दुष्ट नयन विधि वामी ॥ इह नजिनहि पति व्रता पछानी ॥ जस अपराध अधम इन कीना ॥ तस परिणाम वम करलीना ॥ मै प्रसन्न मन सव विधि भाई ॥ तुम हि होवक ल्यान सुहाई ॥ अस कहि कीन गवन दुजराये ॥ दंपति सोऊ सदन निज आये ॥ वृंदवि पुन विप्र जव आवा ॥ कीन स्नान जमुन जल भावा ॥ भाषत इह मथुरा मन भाती ॥ कृष्ण जनम

महि मंगल दाती॥ हरन सकल दुख दोख विकारा॥ श्री सुख
सुजस देन संसारा॥ इहां निवास करहु निजनीके॥ तव अस
गुनत विप्रवरजीके॥ रुचिर भानुजा तीर हुलासन॥ कीन प्र
वीन विप्र दृढ आसन॥ जुगल दिवस जव तासु सराना॥ भयो
न काहु अन्य जलपाना॥ तव तद्ध्यातर विथत सरीरा॥ भाष
त वदन विप्र गतधीरा॥ मै दृग अंध सकत वल हारा॥ केव
ल एक कृष्ण आधारा॥ सोऊ देव प्रभु दीन दयाला॥ आन
कवन निरधन प्रतिपाला॥ लेहि न लेहि याल सुधि तेहू॥
मोरे उर भरोस दृढ एहू॥ आरत हरन जनन सुखदाई॥ सो
ऊ कृपाल कृष्ण सुरराई॥ दोहा॥ अस जव कीन सुमरण
प्रभु हृदय भक्त व्रत धारि॥ भक्त अमर तर भक्त पें आ
ये भक्ति निहारी॥ २०॥ टीका॥ फिर दोनो रोदन करते हुवे
लज्जा को प्राप्त भये हुये कहते हैं कि हे दीनदयाल अव
कहां सिधार चले हो यद्यपि हम अधम और अपराधी
हैं तद्यपि कृपानिधान तुम संत हो हमारे पर क्षमा करो
और फिर करके घर को चलो हम मन वचन काया करके
प्रभू आपकी सेवा करेंगे ऐसे तिनका कथन सुनकर
विल्वमंगलजी प्रसन्न होय कर कहने लगे कि हे भक्त
तुमने अपने हृदय मै चिंता और शोक क्यों किया है
इस कुछ तुमारा अपराध नहीं है मेरे ही नेत्र महा
दुष्ट और अधम पाप की खानी थे कि जिन्हों ने ऐसी पती
व्रता और धरम सील की निधी को अपनी जडता के वश
होय कर नहीं पहिचाना ताते इन अधमोने
जैसा अपराध किया था तैसा ही प्रकट फल पाय लि
या है तुमारे कुछ नहीं है मै तुमारे पर अत्यंत प्रसन्न
हूं हे भक्त तुमारी कल्यान हो और तुम पे जदुनंदन
भगवान सदैव ही अनकूल रहैं ऐसे स्त्री के सहित
तिस वैस भक्त को आशीरवाद देकर के भक्त प्रधान
जो हैं सो चले जाते भये और इहां वै सम भक्त भी स्त्री
के सहित फिर कर के अपने घर मे चला आया ऊहां
जाते जाते विल्वमंगलजी जव श्री वृंदावन मै आय

तुम्हारी पतनी

वन

पहुंचे तब आनंद से जमुना जी के जल में स्नान किया और कहने लगे कि इह सरब पाप और कलेशों के दूर करने वाली और सुख सुजस के सहित कल्यान के देने वाली सरब मंगलों का मूल मथुरा पुरी कृस्न भगवान का जनम भूमी आया है अब मैं इहां ही निवास करता हूं असे विचार कर जमुना जी के सुंदर किनारे पर अपना दृढ आसन जो है सो लगाय दिया तहां दो दिन असे ही बतीत होजाते भये अन्न जल कुछ प्रापत नहीं भया तब तुध्यां व्याकुल और अधीर भये हूये बिलमंगल कहते हैं कि मै नेत्रों से हीन अंध और असक्त निरबल एक कृस्न भगवान का आधार ही राखता हूं सोई दीनानाथ और सोई दीनादयाल असे उपकार को सामर्थ हैं तिनके बिना निरधनों के पालने वाला और दूसरा कोई नहीं है मेरे जैसे दीन दरिद्रियों की सोई दीनबंधू सुधी लेवैं अथवा ना लेवैं मै तो अपने हृदय मे सत्य करके एही भरोसा राखता हूं कि दीन जनों के दुख दूर करने वाले और दीन सुखदायक सोई जदुनंदन भगवान हैं इस प्रकार जब बिलमंगल जी ने भगवान कृपानिधान का सुमरण किया तब [illegible] भक्त की दृढ भक्ती देख कर भक्तों के कलप बृक्ष कृस्न परमात्मा जो हैं सो ततकाल ही तहां अपने भक्त के पास चले आवते भये ॥२०॥ चौपाई॥ अवसर [illegible] रथ रैन अंध्यारी॥ कृस्न सरूप बिप्र निज धारी॥ भोजन अमिय पात्र धरि नीके॥ बोले मधुर वचन प्रीय जी के॥ तुध्यत बिधत बिप्र तुम रहो॥ भोजन करहु मुदित मन एहो॥ पदि हदि बिलमंगल अब पाई॥ पाके भजहु कृस्न सुखदाई॥ बिप्र सुनत भगवन अस बानी॥ बोला हृदय परम सुख मानी॥ मै तो अंध दीन दृग हीना॥ जो उपकार तुम हु अ

अपनी इच्छा और रुची के अनुसार तेरे से जो सेवा लेनी चाहें सो तूं परम हित जान कर चरनों पर सीस धर कर के तिन के मन की अभिलाषा को पूरन कर इस में तेरा लोक परलोक सुधर जावेगा और तूं कल्यान को प्राप्त होवेगी इतने में बिल मंगल जी तिस घर के भीतर ही चले आये और तिस स्त्री के पती के पास स्थित भई हुई देख कर हृदय में सकुचमान होय गये तब तिस वैस भक्त ने तिन को सकुचे हुये देख कर हाथ जोड़ कर चरनों पर प्रनाम कर कर प्रार्थना करी कि हे नाथ इह स्त्री जो है सो मन वचन काया कर के आप के चरनों की चेरी अर्थात दासी है और सरब प्रकार कर के प्रभू तुमारी आज्ञा के आधीन है कृपानिधान अब संकोच और संदेह को त्याग कर जैसी मन की रुची है तैसी आज्ञा करिये हम दोनो स्त्री भरता तुमारे चरनों की सेवा करने को सामर्थ हैं आज हमारे धन्य भाग्य और धन्य हमारा सफल जनम है कि जिन के घर को भगवन आपने चरन धार कर पवित्र किया है इस प्रकार जब वैस भक्त ने नम्र बानी से बिनती और बड़ाई के वचन उचारन किये तब बिल मंगल जी तिस स्त्री को कहने लगे कि हे सुशीले मेरा कुछ कथन है तूं न्यारी चल कर श्रवण कर ले ऐसे तिन का वचन सुन कर के सो भामनी पती की आज्ञा पाय कर एक न्यारे घर में संत महात्मा के साथ चली गई तब बिल मंगल जी लक्षमी का रूप जान कर हाथ जोड़ कर धन्य धन्य कहते हूये चरनों पर सीस धर कर प्रनाम करते भये और फिर रुची पूर्वक नम्र बानी से कहने लगे कि हे देवी अब तूं मेरा आसीर्वाद ले और दया कर के दो सूची अर्थात दो सूई मेरे को अबी उतावल से ल्याय दे तब सो हंस गमनी वैस भक्त की स्त्री तुरत ही संत महात्मा की आज्ञा पाय कर के दो लोहे की सूई जो हैं सो ल्याय देती भई सो ले कर के कृष्ण भगवान के दृढ भक्त बिल मंगल जी आपने हाथों से

अब हे पुत्र आतमा तुम सत्य कहो कि कौन हो
जब से तुमारा रूह पकड़ा है आ हाथ छोड़ूंगा ऐसे भ
क्तों के मुख से वचन सुन कर भक्तों के चित्त को चराय
लेने वाले भगवान तुरत बल से आप का हाथ छुडा
य कर और न्यारे जाय कर मौन होय कर स्थित होय गये
इस प्रकार भक्त पालक प्रभु को देख कर के बिल्वमंगल
बड़ी प्रीती से कहने लगे कि हे भक्तों के भय हरने वाले
दीनबंधू क्या आप बल से मेरा हाथ तोड़ कर और मे
रे को जीत कर चले गये हो परंतु आप का बल पु
रुषार्थ और जीत तब जानूंगा कि जब कृपानि
धान मेरे हृदय से छूट कर चले जावोगे ॥ २२ ॥
चौपाई ॥ भक्ति प्रेम जुत मधुर सुहावन ॥ सुनि
प्रभु भक्त कथन मन भावन ॥ परम हरष बस दी
न बंधू ॥ बोले बदन बचन सुख कंदू ॥ सु
नहु प्रवीन विप्र ब्रतधारी ॥ तुव समान मो
हि संतति सारी ॥ नाहिन आन भक्त प्रिय का
हू ॥ पुत्र कलत्र मित्र तजि जाहू ॥ केवल मो
र सरण हित माना ॥ तुम समान मोहि [illegible]
तुमहि सुजाना ॥ पय निध सुता सोउ अस
नाहीं ॥ जस मोहि प्रिये भक्त मन माहीं ॥ यद्य
पि विप्र मोर अज नामा ॥ तदपि भक्त हेत अभि
रामा ॥ धरि सरूप नाना निज भावा ॥ कानकरउं
संसार सुहावा ॥ गोकुल मैं बसुदेव कुमारा ॥
नंद नंदन जानत संसारा ॥ पारथ कुंवरि भ
क्ति बस चाहू ॥ ग्वाल केलि कौतुक मन ला
हू ॥ गनका शबरि गृद्ध गज तारे ॥ पतित
अजामिल आदि उधारे ॥ जे जे करम विदित
जग माहीं ॥ मैं भक्तन हित कीन निकाई ॥

भक्तपाल अस नाम हमारा॥ मोरे प्रिय भक्त से प्यारा॥ तांते तुम हु वचन मन काया॥ अति प्रिय भक्त मोर द्विजराया॥ परम प्रसन्न जान अब मोही॥ द्विजवर देहुं नवल दृग तोही॥ नव नयनन भरि लेहु निहारी॥ मोर सरूप भक्त व्रतधारी॥ द्विजवर दिव्य दृष्टि तुव पाई॥ मोरे वसहु नगर सुखदाई॥ अस कहि कृपानाथ तव कीना॥ कर सपर्श द्विज दृगन प्रवीना॥ ततछन नवल नयन उपजाये॥ जनु चकोर ससि दरस लुभाये॥ इक टक अमिय रूप भगवाना॥ होत न तृपत पियत सुख माना॥ दोहा॥ जेहि जाचित शिव कमलभव मुनि सनकादिक राति॥ सो प्रगत्य देखत दृगन दरस विप्र बहु भांति॥ २२॥ टीका॥ तब भक्ती प्रेम के सहित बडे मधुर और कोमल ब्राह्मणके वचन सुनकर भगवान कृपानिधान प्रसन्न होय कर के कहने लगे कि हे द्विज उत्तम तेरे समान मेरे को संसार मे और कोई प्यारा भक्त नहीं है कि जिसने स्त्री पुत्र और सब कुटंब त्याग कर के केवल मेरी हीं शरणको आधार कर ~~जिसने~~ के कोई अवलंब नहिं लिया है तांते तेरे समान मेरे को तू हीं है और कोई नहीं है क्षीर समुद्रकी पुत्री लक्ष्मी जो है सोभी ऐसी नहीं है कि जैसा मेरे को भक्त प्यारा है हे ब्राह्मण यद्यपि वेद पुराणों ने मेरो नाम अज करके कथन किया है कि जनम मे नहीं आवता हूं तद्यपि भक्तों के निमित्त मे अपने अनेक नाना रूप धारन करके संसार मे क्या नहीं करता हूं देखो गोकुल मे वसुदेव का पुत्र बना और नंदनंदन भी कहाया पारथ जो अर्जुन कुवरी जो कुबजा मालिन इनकी भक्ती के वश होय कर ग्वालवालों के साथ वृंदावन मे अनेक क्रीडा विलास किये

और सावरी गनका गृद्ध गजराज जो तेदवेका ऐसा हुआ न सती ऐ सब तारे और अजामिल जैसे महा पापी जो थे तिनका उद्धार किया है भक्तो मैने भक्तो के लिये जो जो करम किये हैं सो जगत मे भली प्रकार प्रसिद्ध हैं मेरा तो नाम हीं भक्त पाल है संसार मे मेरे को भक्त ही प्यारा है तो ते हे ब्रह्मण तूं मन वचन काया कर के मेरा परम प्यारा भक्त हैं अब तूं मेरे को अत्यंत प्रसन्न जान और मे अनकूल अपीत प्रसन्न भया हुआ भक्त तेरे को सुंदर जो ती के सहित नवीन नेत्र जो हैं सो देता हूं तब तूं सोई नेत्र भर कर मुनीः जो नीजनों दुरलभ मेरा सरूप जो है तिसको भली प्रकार दरसन कर ले और भक्त तूं दिव्य दृष्टी के सहित होय कर आनंद पूर्वक मेरी इस नगरी मे हीं निवास कर ऐसे कहि कर भगवान कृपा निधान ने तिसके नेत्रो को अपने हाथ का सपर्स जो किया तो तुरत हीं दोनो नेत्र ~~[illegible]~~ ते भये मानो दो चकोर जो हैं सो चंद्रमा के दरसन करने के लोभी होय रहे हैं ऐ कटके लगे हूये अमृतमय भगवान के रूपको पीवते पीवते तृपत नहीं होते हैं देखिये जिस प्रमातमा के दरसन को शिव ब्रह्मा मुनी सनकादिक अनेक और हठ कर कर जाचते अर्थात मांगते रहते हैं सो ऐसा दुरलभ दरसन बडे भागों वाला विलमंगल आज भरतत नेत्र भर कर देखर हा है ॥२२॥ चौपाई ॥ अस दृज देखि रूप सुखकर ना करत प्रणाम दंडवत धरना ॥ असूपात नयन छुटि आये ॥ गदगद गिरा प्रेम उर छाये ॥ कृपानकेत सीस धरि हाथा ॥ भये प्रसन्न बदन अस गाथा ॥ अब तुम

॥८६॥

सकीना॥ तोसो निरदेइ करन तुव दाता॥ अस जब
[struck through] मन्यो वदन दुज गाता॥ कृष्ण कृपाल करन
कर गहा॥ लेहु लेहु दुजवर अस कहा॥ सरस दि
व्य इह भोजन करहो॥ हृदय आनंद विप्र वर भरहो॥
प्रभु कर कुरसवर्श ककुआना॥ विप्र प्रवीन लीन जि
य जाना॥ [struck through]
[struck through]

॥२२॥ टीका॥ तब भक्त अधीर और आधी रात का कृष्ण परमात्मा ब्राह्मण का रूप धारे हुये और अन्न के समान भोजन पात्र मे धरे हुये बड़ी मधुर वाणी से आय कर कहने लगे कि हे ब्राह्मण तुम क्षुधा कर के परम व्याकुल और शिथल होय रहे हो ताते अब विलंब को त्याग कर प्रथम आनंद से भोजन पाय ले के फिर पीछे स्वस्थ चित होय कर कृष्ण भगवान का भजन करो ऐसे परम सुखदायक वचन सुनकर ब्राह्मण आनंद से कहने लगा कि हे दाता मै तो अंध नेत्रों से हीन हूं जो तुमने इतना उपकार किया है तो कृपा करके आप ने हाथ से ही मेरे मुख मे भोजन पाय देवो क्योंकि मै ऐसा निरबल होय रहा हूं जो अपने हाथ से आप खाने की सामर्थ नहीं रखता हूं जब इस प्रकार बिल्वमंगल ने कथन किया तब कृपानिधान भगवान अपने हाथ से तिसका हाथ पकड़ कर कहते हैं कि लेवो लेवो ब्राह्मण भोजन पावो इस रस के सहित बड़ा स्वादु और दिव्य पकवान है तुम पाय कर आनंद को प्राप्त होजावो तब भगवान के हाथ का स्पर्श जो भया तिस ते बिल्वमंगल को कुछ चमत्कार सूझ पड़ा तुरत ही आपने हाथ से भगवान का हाथ पकड़ कर कहता है कि अहो इह मानुष्य का हाथ नहीं है क्योंकि इस के स्पर्श होते ही मेरे अंतःकरण रूपी हृदय मे आनंद का एक चैन अर्थात वादल आयत होयगया है

८ करसो कर गहि रहग्रहो॥ इतनर कर करना हि नाई॥ जास कृपत घन आनंद भरहू॥ क्योंमोर अन्न उदयाहू॥ कौतुम सांच कथन मोहि करहो॥ तो मै गहित

पानि पदि रहे हो॥ तब भगवान भक्त चित चोरा॥ दुज कर सबल करन कर तोरा॥

हो जाय भौन पधारे॥ भक्त पालक प्रभु भक्त उबारे॥ कहत वदन तब विप्र सप्रीती॥ कासों कृपानाथ अब जीती॥ दोहा॥ कहें सबल कुटाय कर चले हरन मन भीत॥

तव विलम गाल जी ध्यान हृदय में धार कर नि द्रा के सुख मे लीन होय गये जव प्रातकाल के समय अरुन चूड जो कूकट है सो वोलने लगे तव भक्त सुषूपी जागे और भगवान का मिलना हृदय मे विचार कर कहते हैं कि हम ने कोई स्वपन भया है कि यथार्थ भगवान ही मिले हैं ऐसे प्रामिक वृती के सहित दुचित से होय कर अपनी शौचादिक कृया जो है सो सव कर के फिर ततकाल ही आसन पर चले आये और तहा चित्त को स्थित कर के भवनो के नायक भगवान जो हैं तिन का सुमरण करने लगे जव नेत्रो को मूंद कर सोई सरूप कि जो सुपने मे देखा था हृदय मे ले आये तव भक्त वरदायक और घट घट वासी भगवान जो हैं सो तुरत ही प्रकट हो जाते भये॥ २३॥ चौपाई॥ सरद मयंक वदन दुति सोभा॥ ध्यान व चित्र मुनिन मन लोभा॥ पुंडरीक लोचन अरुन्यारे॥ आयत हृदय कंठ कलवारे॥ संख चक्र भूषत वन माला॥ वर कृीट कंचिन मणि जाला॥ निदरत ईंद्र धनुष भ्रू वांकी॥ उपमा कोटि मदन मनु थांकी॥ भाल विसाल लसत ललित दुजनासा॥ लोर चोर चित चारु विकासा॥ कुंचित चिकर भृंग जनु वृंदा॥ दाडम दसन कुंद कलिनिदा॥ विदसत चैल नीलधर वरना॥ चित वनि चारु भक्त मन हरना॥ अरुण चरन जलजा रनलाजा॥ जेउर शोभु नेलन मव राजा॥ दोहा॥ अस प्रतक्ष ध्यान दुज दृग देखत सुख मानि॥ दोत नत पस्यो अस तावत लुकट जुक्त जुग पानि॥ २४॥ टीका॥ तव वैं ध्यान से भगवान प्रकट भये कि सरद रितू का चंद्रमा जो है तिस के समान जिन के मुख की शोभा कमलो

वत लोली मय सुंदर नेत्र विशाल हृदय और स्वरा मनोहर कंठ संख चक्र गदा पदम धारे हुये हृदय मे तुलसी की माला के चिन मणियों कर के खचि त ~~मस्तक~~ पर मोर मुकट इंद्र के धनुष को लज्जा दे ने वाली बांकी भवों तैसे ही विशाल मस्तक पर चंदन का तिलक और दुज जो तोता है तिस के समान सुंदर नासिका कुंडलों वाले चिकने मा नो भ्रमरयों के समाज को लज्जा देने वाले स्या म केश दाडम जो अनार कुंद कली जो नापा तिन को निंदर ने वाले उज्जल दंत और बिज ली की छबी को हरने वाले पीत वस्त्र तैसे ही मे घवत स्याम सरीर और कमलों के समान को मल चरन कि जो सदैव शिव ब्रह्मादियों के हृद यमे बसे रहते हैं मुनी जनों के चित्त को चुराय लेने वाली नेत्रों की कृपा दृष्टी और मधुर मुस क्यान ऐसा य चि त्र ध्यान कि जिसके आगे कोटि कामदेव की उपमा भी थ कत होती है बिलमंगल प्रतक्ष सनमुख देख कर सुख मे मगन ~~होकर~~ ~~प्रेम~~ और प्रेम कर के आसक्त भया हुआ हाथ जो ड कर दंडवत चरनो पर गिर पड़ता भया ॥२८॥
चौपाई ॥ कृपा नाथ तब लीन उठाये ॥ अरु धोव दन गति विप्र लजाये ॥ नम्रत विनय करत कर जो रे ॥ भयो अनाथ नाथ भ्रम मोरे ॥ ~~मोरे~~ मम अपराध मन्यो मन सपना ॥ तुम हु कृपाल जानि जन अप नो ॥ ~~हरखि~~ हरखि भने तब दीन उवारा ॥ ~~है~~ नको उ अपराध तुमारा ॥ मै प्रसन्न तोपें दुजराई ॥ अंग संग मोहि जानि सदाई ॥ करहु समर्थी मोर तुव जव हीं ॥ पहि हरि बिलम बेग मे तबहीं ॥ तो पें आय भक्त व्रत धारी ॥ करहु सफल सब काम तुमारी ॥ अब तुम भक्त बिगत

से देह॥ वसहु मोर रुचिर पुर एह॥ मेरे भजननि रत दिन दयना॥ अस कहि वदन वचन सुख अयना॥ अंतरध्यान भगवन सुखकंदू॥ भयेतु रतं प्रभु दीनन बंधू॥ दुजवर कृत्यकृत्य निज जाना॥ सकल चराचर कृष्ण समाना॥ देखन लग्यो ज्ञान रत होई॥ दुरमति दुरत द्वेष भ्रम खोई॥ दोहा॥ अखिल मंगल भक्ति फल कीन कथन कछु एह॥ मरन मोद मंगल करन कृष्ण कमल पद नेह॥ २४॥ टीका॥ ऐसे तिसको प्रेममे उनमत्त देखकर भगवान कृपानिधान तुरतहि चरनो परसे उठायलेते भये तब भक्त सुदू नीचे मुख किये लज्जित भया हुआ हाथ जोडकर नम्रवाणी से विनती करने लगा कि हे अनाथोंके नाथ हे दीन दयाल मे दुरमती भ्रमके वस हो गया आपके साक्षात कार होने को एक स्वपना ही जानता भया तो ते हे भक्तपाल इह मेरा प्रकट अपराध है कृपा करके मेरे को अपना जन जानकर आप क्षमा करिये तब दीनबंधु मुसक्याय कर कहने लगे कि हे भक्त उत्तम इह तुमारा कुछ अपराध नहीं है मै तेरे पर सदैव सरव प्रकार करके प्रसन्न हु तूं मेरे को सदा अपने प्रेम संग ही जान और भक्त तूं जब मेरा सुमरन करेगा मै तिसी छरा विलंब को त्याग कर और आय कर तेरी मन वांछित कामना को पूरन करूंगा अब हे भक्त प्रधान तूं अपने हृदय के संशय भ्रम सब त्याग कर आनंद पूर्वक इहा मेरे पुर मे ही निवास कर और नित्त रात्री दिन मेरे ही भजन सुमरन मे लीन रहा कर इस प्रकार कथन करके भक्त सुखदायक भगवान तुरत तहाही अन्तर ध्यान हो जाते भये तब विल

कृत्य कृत्य द्विज होऊ॥ मोर प्रसाद सुलभ सब तोऊ॥
खान पान लग कृपा तुमारी॥ बिनु प्रयास सब
होहिं सुखारी॥ करहु सुमरण विप्र जब मोरा॥ होहि प्र
मिष्ट फुर तोरा॥ अस कहि वदन सुखद द्विज गैयां॥
भये तुरत अंतरगत गोप गुसैयां॥ द्विजवर हृदय धरत सोऊ
ध्याना॥ भये निरंत निद्रा सुख माना॥ अरुन चूड़
जब बोलन लागे॥ प्रातहिं विप्र सुष्टु तब जागे॥ कृ
स्न मिलन निज हृदय विचारे॥ कहत स्वपन कछु
भयो हमारे॥ अस द्विजनाथ अंतवृति होई॥ कृपा
सकल सोचादिक जाई॥ करत बहु दिन जब आ
श्रम आये॥ कीन सुमरण भक्त सुखदाये॥ दोहा॥
नयन नमीलन कीन जब सौ सरूप उर आनि॥
प्रकटे चटपट रमन तब तुरत कृस्न वरदानि॥
२३॥ टीका॥ इस प्रकार भगवान का रूप देख करके
विलमंगल जो है सो दीन होय करके चरनो पर दंड
वत प्रणाम करता भया नेत्रों से जल बहा चला जा
ता है प्रेम करके गदगदवानी होय गया कोई वचन
मुख से निकलता कोई नहीं निकलता है तब भग
वान दीन सुखदान तिसके सिर पर हाथ धरकर बड़े
आनंद से कहने लगे कि हे ब्राह्मण अब तूं अपने
आपको जगत में सफल जान मेरी कृपा करके अ
ब तेरे को कुछ दुरलभ नहीं है सब सुगम और
सहज है खान पान से लेकर सब
कृपा तुमारी यत्न के बिना सहज ही होजाय करे
गी और जब जब तुम मेरा सुमरण करोगे तो मैं
तब तब ही आय कर तुमारे मन की अभिलाखा
को पूर्ण किया करूंगा ऐसे कथन करके गौ ब्राह्मण
के पालक भगवान तुरत न हो ही लुपत होजाते भये

प्रेम जल भरे हूये बडी दीन वाणी से भगवान कू याचिधा
न के अप्रातेसव सुनाय देते भये कि हे दीनवंधू मैं तिस वेस्या
के उपदेस से जो संसार मै फल प्राप्त किया है सो तो
मानुष्य नाग और देव अदेवों को भी ~~दुर्लभ~~ प्राप्त
होना दुरलभ है जव इस प्रकार भक्त सूर्य ने ~~कथ~~
न किया तव भगवान मुसक्याय के ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ र बडी सुंदर मधुर वाणी से कहने लगे कि
हे दुजप्रधान अब मेरा वचन सत्य कर के जान कि कु
छ थोरे दिन के पीछे वे सुशील और सुंदर व्रत के धा
रनेवाली वेस्या जो है सो तेरे को अब पा मिलेगी ॥२४॥
चौपाई ॥ अस कहि वदन वचन दुजकाहीं ॥ ~~प्रेम~~
~~[illegible]~~ भये लुपत तहे त्रिभुवन साई ॥ सो तव वार त्रि
ये अभिरामा ॥ चिंतामणी विदत जहि नामा ॥ दुज
हिं विरक्त जगत जिय जानी ॥ वारवार मानस पछ
तानी ॥ मे जोई कीन तास तिसकारा ॥ ~~[illegible]~~ तहितें
तजि कुटंव सुतदारा ॥ लीन निवा सविपुन निजजा
ऊं ॥ राधारौन भजन मन चाऊं ॥ तो ते मोहि उचि
त अवएहा ॥ लोक विरक्त मुचित चित गेहा ॥
तजि संसार मोह भ्रम फंदा ॥ लेहु शरण पद जा
दव चंदा ॥ तिनकर शरण जिनहिं जग लीना ॥ स
फल जनम निज संसृति कीना ॥ पूरव रही एक
ता मान्या ॥ अस तिन हृदय रुचिर व्रत ठान्या ॥ सू
प्रा राखि निज सदन सुहाती ॥ राम नाम नित ता
सु पढाती ॥ तहि प्रभाव करि भव निधि तारी ॥ विनु प्र
यास भई पार सुखारी ॥ तो ते मैं हु पतित हत भागी ॥
रहनिज जाति धरम सव त्यागी ॥ केवल भज हु
कृस्न पद कंजा ॥ जो हि विकट भव त्रास विभंजा ॥
नाम मंत्र तारक कलि माहीं ॥ सहज सुलभ सं
शय कछु नाहीं ॥ दोहा ॥ अस विचारि चिंतामणी

कै विरक्त संसार॥ कृस्न कमल पद प्रीतिपर परिहरि विखय विकार भर॥१॥ टीका॥ इस प्रकार विलमंगल जो के मनको कृपानें कथन करके आप तन्हो हीलु प्त होजाते भये तव सोचिंकामली नाम करके प्रसिद्ध वेस्या जो थी विलमंगलको जगत मै वि रक्त भये जानकर हृदय मै वार वार पछतावने ल गी कि देखो मै दुरमतीने जो ब्राह्मन का मन्हो जिसका द्रव्य धीन वहुत नास किया तो इसीतें स्त्री पुत्र आदि कुटंव को त्याग कर और जगतसे विरक्त हो कर वन के विखें जाय निवास लिया और कृस्न प्रमात्मा तिनके भजन सुमरन की अैसी प्रीती वाला होय गया है तोते अव मेरे को भी एही उचित है कि कुटंव के लो गों से विरक्त होय कर और घर को त्यागकर संसार के मोह और भ्रम का वंधन जो है सो सब तोड कर जदुकुल के चंद्रमा कृस्न भगवान जो हैं तिनके च रनो की शरण को प्रापत हो जाऊं जिन वडभा गियोंने तिनकी शरण को ग्रहण किया है तिनो ने संसार मै अपने जनम को सफल कर लिया है देखिये कि पूर्व काल के विखें एक वेस्या होती भई तिसने इह व्रत धारन किया कि सूआ जो तोता है सोई अपने घर मै राखकर तिसको नित्त राम नाम ही पढावती रहती थी तव समय पाय कर के तिसें राम नाम के प्रभाव से सो वेस्या इस महा विकट संसार समुद्र से यतन के विना सहजे ही पार होय गई अैसे विचार कर अव मै अधम पापों की खानी भी तिसी प्रमात्मा के चरन कमलों को भजती हूं और तिनकी कृपा के प्रसाद से संसार के महा भय से निवृत्य होती हूं क्योंकि कलीकाल मै इह तारक नाम मंत्र जो है

सो बड़ा सुगम और सहज है इसमे कुछ हठ साधन न
हीं करना पड़ता बहुत सुलभ अर्थात सुखाला है और
प्रीयर कल्यान के देने वाला है इसमे कुछ संशय
नहीं है ऐसे विचार कर चिंतामणी जो है सो ज
गत से विरक्त होय कर और सब विषय विकारों को
त्याग कर कृष्ण भगवान के चरन कमलों की प्रीती
भक्तीवाली होय जाती भई ॥२६॥ चौपाई ॥ तब बांधव
जन सकल सुजाती॥ करि उपदेस वदन बहु भांती॥
तासु विरक्त होन परिवारा॥ बारबार करि जतन नि
वारा॥ पै तरुनि तिनकर कथन नमाना॥ इह प्रपं
च मिथ्या सब जाना॥ निरत ती ब्र तर विरत विरा
गा॥ गिरधर चरन प्रेम मगन लागा॥ हरषि व
दन अस गिरा उचारी॥ सुनहु सत्य बांधव जन
नारी॥ मै तो कृष्ण कमल पद केरी॥ तन मन
करम वचन वर चेरी॥ उनकर नृत्य गीत गुन
गाना॥ मै निज हृदय रुचिर हित माना॥ करि प्र
सन्न सुख सदन मुरारहि॥ लेहु सुगम भव
वारद पारहि॥ अस कहि वदन प्रेम रंग राती॥
परिहरि सकल बंधु जन नाती॥ सम्पति सदन
मोह मम ताई॥ गृहस्थ विकार तजत समुदाई॥
दोहा॥ जहं तहं प्रतिमा देखि दृग कृष्ण देव
भगवान॥ प्रेम मगन निरतत ललित करत की
रतन गान॥२७॥ टीका॥ तब बांधव और नाती
जाती के लोग तिसको परिवार से विरक्त देख
कर अनेक प्रकार के उपदेश कर कर समुझा
वने लगे परंतू सो सब प्रपंच को मिथ्या जा
न कर तिनके कथन को भी मिथ्या जानती भ
ई अर्थात कुछ नहीं मानती भई बड़े तीव्र वैरा
ग वाली होय कर गिरधर जो गोबरधन परवत के
धारने वाले कृष्ण भगवान हैं तिनके चरनों के

मंगल अपने आप को सफल जानकर और जगत के विकारों से रहित ज्ञान ध्यान के सहित होय कर सरव चराचर सृष्टी को कृस्न परमातमा का रूप ही जानने लेगा इस प्रकार बिलमंगल की भक्ती की सुंदर गाथा जो है सो ईहां कुछ कथन कीगई है इनकी भी गाथा है कि आनंद और मंगलों के देनेवाली और कृस्न भगवान के चरन कमलों मे प्रीती प्रेम के अधिक करने वाली है ॥ २५॥

चौपाई॥ अब तहि भक्ति आन मन भाई॥ गायन करउं ललित सुखदाई॥ करत तास वृंदावन वासा॥ गयो कछुक जब काल विनासा॥ भयो प्रवीन काव्य कृत भारी॥ निरत कथ गुन कृस्न मुरारी॥ एक दिवस हरि भवन सुजाना॥ रह्यो जुरय कृस्न कल ध्याना॥ करि सुमरन पाछिल निज सारी॥ वेस्यादिक उपदेस विचारी॥ जोरि जुगल कर सनमुख ठाढा॥ प्रेम प्रवाह नयन जल बाढा॥ प्रभु सन करि करि विनय उचारा॥ रह्यो वृतांत जबन निज सारा॥ मै उपदेस तास वधु वारा॥ लीन जनम फल दीन उवारा॥ मनुज नाग सुर असुरन सोई॥ दुरलभ कृपा नाथ जग होई॥ अस प्रकार जब तास बखाना॥ मंद हास जुत तब भगवाना॥ दोहा॥ गिरा मधुर मंजुल बदन दीन दयाल उचारि॥ कछु दिन मै तो हि मिलहिं दुज सो वेस्या व्रतधारि॥ २६॥ टीका॥

अब बिलमंगल की भक्ती की और बहुत मनोहर और सुंदर सुखदायक गाथा जो है सो कथन करता हूं जब तिन श्री वृंदावन मे वास करते करते कुछ काल बतीत होय गया तब काव्य कृत जो कविता है तिस मे बडे प्रवीन होय गये कृस्न भगवान के पवित्र गुन गन जो है सो अनेक ही कथन करते भये एक दिन हरी भवन ~~मे बैठे हुये हृदय मे~~ विखे कृस्न भगवान के ध्यान मे जुडे हुये बैठे थे तब वेस्या के उपदेश से ले कर आप का पिछला वृतांत ~~[illegible]~~ सुमरन करके हाथ जोड कर नेत्रों मे

लिंदी जल मुदित अनाये॥ लिये अेक सुभृत निज वीना॥
आय प्रणाम भवन हरि कीना॥दोहा॥ लगी नृत्य गा
यन करन मन अनंद सरसाय॥ तन सुधि बिसरत दृगन
पथ प्रेम नीर छुटि जाय॥२८॥टीका॥ इस प्रकार कृस्ना
नदी के किनारे पर वास करती हूई चिंतामणी को जब
कुछ काल वतीन होय गया ... के रहने वाले लोग
जो थे सो सब मिल कर के कृस्न भगवान के दरस की अ
मिलाषा वाले होय कर मथुरा पुरी के जाने को त्यार
होते भये तिन की अैसी यात्रा को चिंतामणी सुन कर
के रोम रोम हरख के वस होती भई और बडे प्रेम से
आय कर के तिन को कहने लगी कि हे भाई भक्त जनो
और हे बड भागियो मैं भी तुमारी कृपा और सहायता
से कृस्न पुरी की सुंदर शोभा जो है सो देखने चहती
हूं कै सी भी कृस्न पुरी है कि जिस का दरसन कर के दे
वता नाग किन्नर मानुष्य सब मोहत हो जाते हैं जो
तुम कृपा कर के मेरे को अपने साथ ले जाय कर कृ
स्न भगवान की पुरी का दरसन कराओगे तो इह
तुमारा परम उपकार मेरे को सो जनम प्रयंत
भी नहीं विसरेगा अैसे तिस चिंतामणी को भगवा
न की भक्ती प्रीती मे लीन जान कर सब लोग प्रसन्न
होय कर के कहने लगे कि हे सुभी ले तूं आनंद पू
र्वक कृस्न पुरी को ... चल तेरे को कुछ भी श्रम औ
र कलेश नहीं होवेगा इस प्रकार तिन का कथन
सुन कर के चिंतामणी जो है सो भगवान कृपानिधा
न के गुण गान गावती हूई तिन के साथ ही कृस्न पुरी
मे चली आवती भई तब आनंद पूर्वक ... जमुना जी
है तिं के किनारे पर आय कर के भक्ती प्रीती से निरमल
जल विखे स्नान किया फिर हाथ मे वीना धारन कर
के भगवान के भवन मे चली आई तहां दंडवत प्रणा
म कर के आनंद मे मगन भई हूई अनेक हाव भावों से
नृत्य कर कर भगवान के गुण गान जो हैं सो मधुर मधुर

(margin notes: ...वती ; ...मोह ; ...किंकिणि ; ...)

स्वरसे गावती गावती प्रेम करके ऐसी व्याकुल होय गई कि शरीर की दशा भी भूल गई और नेत्रों से आनंद जल का प्रवाह द्रवता चला जाता है॥ २८॥ चौपाई॥ तासु नृत्य गायन सुनि सारे॥ साधु साधु अस वदन उचारे॥ तव प्रसन्न मन भवन पुजारी॥ मंजु मधुर सुख [illegible] उचारी॥ दीन तासु नैवेद सुहावा॥ चिंतामणी लीन मन भावा॥ सादिर वंदि सीस सुखदाती॥ गिरधर चरन प्रेम मदमाती॥ पुनि पर भई निरत कल गाना॥ अस जव भयो काल मध्याना॥ पूजक हरिहिं देत विस्रामा॥ ~~[illegible]~~ ललित कवारु भवन अभिरामा॥ कदि से लगन सदन निज आये॥ उत चिंतामणि आनंद छाये॥ होत न वृत्य नृत्य कल गाना॥ कालिंदी तट कीन पयाना॥ देखि स्थान ललित मन भावा॥ तहं रुचिर आसन निज लावा॥ सो नैवेद भवन सुर दया॥ सानुकूल चिंतामणि पाया॥ दोहा॥ देखि तव कालिंदि तट विरचत ललित कुटीर॥ कुसुम भजन त तपर विमल सिल में गलमति धीर॥ २९॥ टीका॥ तव तिस चिंतामणी का ऐसा रसिक और मधुर गायन सुनकर सव लोग साधु साधु ~~[illegible]~~ उचारन करने लग जाते भये और भगवान के भवन के पुजारी जो थे सो अत्यंत प्रसन्न होय कर और मधुर वचनों से ~~[illegible]~~ अनेक शलाघा करके भगवान का सुंदर नैवेद जो है सो तिस को देते भये तव चिंतामणी भगवान के पवित्र नैवेद को वडे सनमान से लेकर वारवार मस्तक के साथ लगायकर वंदना करती भई फिर तैसे ही गिरधर भगवान के प्रेम मे उनमत्त भई हुई नृत्य और गायन करने लग जाती भई इस प्रकार जव मध्यान काल होय गया अर्थात दो पहर दिन वीत गया तव पूजा

ही जो थे सो भगवान को शयन देकर और भवन के
कवाड़ बंद कर कर अपने अपने घरों को चले गये और
ई सो चिंतामणीभी नृत्य गायन से नवृत्य होय आनंद
से कृष्ण कृष्ण रटती हुई जमुना के किनारे पर चली आई
तहां एक बड़ा सुंदर स्थान देखकर आसन लगा
यकर स्थित होय गई भगवान के भवन से नैवेद
जो मिला था सो [struck out, illegible] सुख पूर्वक बड़ी प्रीती
से पाय कर संतोष मै मगन हो जाती भई फिर आ
सन पर कुछक विश्राम करके विचरती विचरती जो
आई तो क्या देखती है कि तहां जमुना के किनारे पर
ही बड़ी सुंदर कुटि बांधे हुये महा ज्ञान ध्यान औ
र धीरज की निधी कृष्ण भगवान के भजन मै लीन
परम तपस्वी बिल्वमंगल जी बैठे हैं ॥ २२ ॥ चौपाई ॥
रुचिर प्रभाव भजन दुजराई ॥ भानु तेज सदृश दुति
पाई ॥ कंचिन तपत वदन जनु लाली ॥ जाय न
ज्वलत जोति तन झाली ॥ दूरहिंसार दंडवत की
ने ॥ बैठी कृष्ण चरन मन दीने ॥ दृगन दृष्टि वि
लमंगल केरी ॥ सो तव परी दार थिर देहरी ॥ हर
ष विवस सहिसा उठि आये ॥ कीन प्रणाम चरन
सिर नाये ॥ पूछि कुसल मृदु गिरा उचारी ॥ तुव
प्रसाद सुभ्रे व्रत धारी ॥ कृत्य कृत्य मै भयो प्रवी
ना ॥ संसृति जनम सफल करि लीना ॥ तब चिं
तामणि दुजवर वानी ॥ श्रवण सुनत मान स
हरषानी ॥ करत प्रणाम दंडवत चरना ॥ नम्रत
वदन वचन अस वरना ॥ मै दुजर हौ दुरत रत मा
ही ॥ तुव संसरग सुन हु उपकारी ॥ वपु कर दुर
त दोष सब खोई ॥ जीवन मुक्त आज जग होई ॥
याविध हृदय जुगल अनुरागा ॥ लगे परस्पर

प्रेम मै उनमत्त भई हुई बांधव जनो को कहने लगी
कि हे भाई अब मेरा तुमारा कोई संबंध नहीं है मै
तो मन वचन काया करके नंदलाल भगवान के चर
नो की चेरी होय चुकी हूं अपने हित चित से अब ति
न के आगे हीं नृत्य तिनके ही गुण की तैन [illegible] गाय
गायकर और तिनको ही रिझायकर इस महा
विकट संसार समुद्र से यतन के विना सहजेही पार
होती हूं ऐसे कथन करके प्रेम रंग मै रंगी हुई चिंता
मणी नाती जाती के सहित सब कुटंब को त्यागकर
गृहस्थ विकार और धनधाम की मोह ममता से
निवृत्य होयकर जहां जहां कृष्ण प्रभात मा की [illegible]
सुंदर मूरती और दरसन देखती तहां तहां हीं जाय
सुनती
कर प्रेम मै मगन भई हुई नृत्य गायन करती और
अपने जीवने का लाभ लेती थी ॥२७॥ चौपाई ॥ अस प्र
कार कृष्ण सरि तीरा ॥ करत निवास हृचिर मति
धीरा ॥ कछुक काल जव तासु विता[illegible]सू ॥
तव कृष्ण सरि तीर निवासू ॥ विपुल लोक मानस
हरषाये ॥ कृष्ण दरस लालस उर छाये ॥ निज निज
सकल हरषि मन माहीं ॥ भये ~~अदित~~ उदित मथुरा
पुरि काहीं ॥ इह प्रसंग चिंता मणि पाई ॥ रोम रोम
मानस हरषाई ॥ तिन सन कहत वदन अनुरागी ॥
मै प्रसाद तुमरे वड भागी ॥ देखन चाहुं कृष्ण पुरि
सोभा ॥ किन्नर देव मनुज जन लोभा ॥ जो तुम कृ
पा दृष्टि निज कीने ॥ प्रभु पुर चलहुं संग मोहि ली
ने ॥ तो तुमार उपकार पयारे ॥ विसरव मोहि न
जनम सत धारे ॥ कृष्ण भक्ति रत तासु निहारी ॥
हरषं कहत वदन मिलि सारी ॥ ~~[illegible]~~ चलहु सुशील तु
म हु हम संगा ॥ ~~ललित~~ कृष्ण ललित पुरि किल
ष विभंगा ॥ तिन कर वचन सुनत सुख दाई ॥ करत
गान गुण प्रभु आर ॥ मथुरा पुरी हरष उर छाये ॥ का
गता

चौपाई॥ कौतुक सरस विप्र वड़भागी॥ प्रभु पदके
जजास लव लागी॥ अब सुसील मन भावत जा
हो॥ करहु निवास मुदित तुव ताहो॥ सरिता तीर
सदन इक मोरा॥ सो तो जान निपुण सब तोरा॥ चिं
तामणि सुनत दुज वचना॥ मंजु मधुर वर को
मल रचना॥ कहत कृपा निधान दुजराई॥ मै कहुं
औन जमुन तट आई॥ तोर नंदेस सुखद हित
पायो॥ करहुं निवास रुचिर निज जाये॥ बिलमे
गल सासन तव दीना॥ वंदित चरन गवन तहि
कीना॥ कालिंदी तट देखि सुहावा॥ [illegible] थ
ल पुनीत मंजुल मन भावा॥ तहां निवास कर
न निज लागी॥ नंद लाल चरनन अनुरागी॥
[illegible] साधि लिये ललित कर वीना॥ मृदुल
मंजु माधुरि सुर लीना॥ कृष्ण विनोद वि
मल पद जोई॥ रटत [illegible] प्रवीन भक्ति रत हो
ई॥ अस उतसाह मगन दिन राती॥ हिय प
द नलन प्रेम सुखमाती॥ निरतत युगल दि
वस लग कीना॥ वार अहार हरष मन लीना॥
त्रितिये दिवस पूजकन काहीं॥ दीन सुहार स्वप
न निशि माहीं॥ जमुना तीर वार त्रिय रामा॥
चिंतामणि विदत जहि नामा॥ ताके मोर भ
वनतें भाई॥ नुव भोजन नित देहु पठाई॥
मोर भक्ति रत सोऊ प्रवीना॥ मोरहिं प्रेम
भजन मन लीना॥ मोर समर्णो रुचिर व्रत
ठाना॥ निरतत मोर ललित गुण गाना॥ पा
य रजनि अस सपन पुजारी॥ तव तें ली
न रुचिर व्रत धारी॥ अमिय दिव्य भोजन
विरचाई॥ तहां तासु नित देत पठाई॥

सो प्रसाद प्रभु कुंज विहारू॥ पाय मुदित मन मोजन चारू॥ रटत कृष्ण कल गुण गणनी के॥ विषय विकार तजत सब जी के॥ विलमंगल जुत भक्ति अभंगा॥ कालिंदी तट मोद उमंगा॥ जब लग रहे जियत अभिरामा॥ कीर्तन भजन कृष्ण घन स्यामा॥ रति जुत रहे रटत मुख दोई॥ दुर मति द्वेष दुरत भ्रम खोई॥ अंत काल तजि सुगम सरीरन॥ सायुज मुक्ति लीन मति धीरन॥ संत सिद्ध [illegible] जोगिन मुनि जोई॥ किये अनक हठ दुरलभ होई॥ तांते सरव अर्थ सुभ साधन॥ कृष्ण कमल पद भक्ति अराधन॥ संसृति अगम तरन नदराई॥ सुगम प्रयास भक्ति वरभाई॥ नहिं असाध कछु भक्त जनाके॥ कृष्ण प्रसाद सुलभ सब ताके॥ जो नर कृष्ण भक्ति अनुकूला॥ सोउ धन्य जग सुकृति मूला॥ या मैं जाति धरम नहिं कोई॥ हरि कहे प्रेम भक्ति प्रिय होई॥ दोहा॥

भक्त पुरष ~~[illegible] सुखद संसृति कीरति पाय॥~~ तजि संसृति सुखद सुंदर कीरति पाय॥ ~~[illegible]~~ हरि प्रसाद गति लेहिं सुभ विनु प्रयास तजि काय॥ इ॥ टीका॥ फिर विलमंगल कहते हैं कि हे चिंतामणि तेरे समान कौन वड भागी है कि जिस की भगवान के चरन कमलों मे अखंड प्रीती लगी हुई है अब हे सुशीले जहां तुमारे मन की रुची है तहां निवास कर इह जमुना जी के किनारे पर मेरा अस्थान जो है सो तो है जित कारनी है वते [illegible] है इस मे क्या किसी को पूछना है [illegible] ने देसे वास कर इस प्रकार वडी हित की भरी हुई विलमंगल जी की कोमल वानी सुनकर चिंतामणी हाथ जोड़ कर कहने लगी कि भगवन इह आप का

यर जो है सो मै सत्य कर के ग्रप नाहीं जानती हूं ना
थ तुमारी कृपा जो है सोई मेरे को सरव सुखें का ग्रस्थान है
है ग्रब ग्राप की ग्राग्या जो पाऊं तो कहीं जमना
जी के किनारे पर जाय कर रती हूं ग्रैसे सुन कर विट्ठल गल
जी प्रसन्न होय कर के ग्राग्या देते भये तब चिंतामनी च
रनो पर वार वार प्रनाम कर के चली ग्रावती भई तब
निकट हीं जमुना जी के किनारें एक सुंदर ग्रस्थान दे
ख कर ग्रौर तहां ग्रासन लगाय कर नंद लाल भग
वान का भजन सुमरन जो है सो करने लगी नित्य हा
थ मे सुंदर वीना धारन कर के कृस्न भगवान के चरि
त्रों के बडे निरमल पद जो है सो मधुर मधुर स्वर से
~~प्रेम भक्ती मै लीन भई हूई~~ ग्रालापन करती ग्रौर गा
वती रहती थी इस प्रकार गिरधर भगवान के चरन
कमलों का प्रेम जो है तिस के उतसाह ग्रौर सुख मै
मगन भई हूई ~~[illegible]~~ तिस को ग्रन्न के विना ज
ल के ग्रहार पर हीं दो दिन वतीत हो जाते भये
तब तीसरे दिन भगवान कृपानिधान ग्रपने पु
जारियों को स्वपने मे कहते भये कि जमुना के
किनारे पर चिंतामनी नाम कर के एक वेस्या वा
स करती है तुम मेरी ग्राग्या से तिस को तहां नि
त्यहीं भोजन पठाय दिया करो क्यों कि वे प्रवी
न रात्री दिन मेरी ही भक्ती ~~[illegible]~~ प्रेम मेरे ही
भजन सुमरन ग्रौर मेरे हीं नृत्य गायन मे ली
न रहती है तिस को मेरे विना ग्रौर किसी का भ
रोसा नहीं है केवल मेरी ही भक्ती प्रीती का व्रत
धारन किया हूग्रा है इस प्रकार रात्री कें पूजक
जो हैं सो स्वपन देख कर भगवान की ग्राग्या ग्र
नुसार तब तें ~~[illegible]~~ ग्रमृत के समान दिव्य भोज
~~[illegible]~~ न का थाल लगाय कर नित्य तिस को तहां
हीं पठाय देते तब चिंता मनी दीन वंधू के पठे

(Left margin: ॰चिंतामनी कर॰ ; ॰प्रेम भक्ती मै लीन भई हूई॰)
(Right margin: ५८ ; ५८८८)

करन शलाघा॥ दोहा॥ तब बिलमंगल मुदित मन
भोजन तासु जिमाय॥ भने वदन मृदु वचन अस प्रेम
प्रीति सरसाय॥ धन्य धन्य तुव जनम जग जहि जगना
थ कृपाल॥ कृष्ण कमलपद प्रेम किये काटि जगत जेजा
ल॥ ३०॥ टीका॥ देखिये भजन का प्रभाव कि जिस करके तिन
का सूरज के समान प्रकाशमान होय रहा है और
तपे हुये कंचिन वत मुख का महा तेज सहा नहीं जा
ता है चिंतामणी कृष्ण भगवान के चरनों में चित ल
गाये हुये दूर से ही प्रणाम करके द्वार पर स्थित हो जा
ती भई सो जब बिलमंगल की दृष्टि पड़ी तब हरष
के वश उठकर और उतावल से जाय कर चरनों
पर प्रणाम करते भये फिर मुख से बार बार कुसल
पूछकर मधुरवाणी से कहने लगे कि हे हितकारनी
हे सुश्री ले मैं ने तेरी कृपा से जगत में कृतार्थ होयकर
अपने जनम का फल जो है सो प्रापत कर लिया है
ऐसे बिलमंगल जी का कथन सुनकर चिंतामणी
हरष से चरनों पर प्रणाम करके हाथ जोड़कर
बड़े दीन वचनों से कहने लगी कि हे द्विज उत्तम हे
भक्त प्रधान मैं तो महा मंद और अधम पाप की
खानी थी तेरी कृपा और तेरी संगती के प्रसाद
से आज संपूर्ण पापों से निवृत्य होयकर जगत
में जीवन मुक्त होय गई हूं इस प्रकार परस्पर
शलाघा और बड़ाई करकर परम आनंद
को प्रापत होते भये तिसते उपरांत बिलमंगल जी ने
चिंतामणी को बड़ी प्रीती सनमान से भोजन जिमा
या और फिर प्रसन्न होयकर कहने लगे कि हे
बड़भागन तूं धन्य और धन्य तेरा जनम है कि
जिसने इस महा कठिन जगत के जेजाल को तोड़कर
कृष्ण भगवान के चरन कमलों में प्रेम किया है॥ ३०॥

जगत मे धन्य और सरव सुकृतियों का मूल है अ
र्थात सोई पुन्य मान और धरमातमा है इ
सविखें जाती धरम कोई नहीं है ~~[illegible]~~ जो भ
क्ती और प्रेम मै सावधान हैं सोई भगवान को
प्यारे है भक्त पुरष जो [illegible] है सो संसार मै बडा
[illegible] सुंदर और सुखदायक सुजस [illegible] ~~[illegible]~~
[illegible] पायकर फिर शरीर को त्याग करके भग
वान की कृपा से सुंदर दिव्य गती को प्रापत हो
जाता है ३१ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवत भक्ती
महातमे भाषा टीकायां [illegible] विल मंगल चरित वरण
नो नाम ~~[illegible]~~ सरगः

हये प्रसाद को बार बार वंदना करके बडी प्रीती और सनमान से पाय लेती और विषय विकारों से निवृत्य भई हूई प्रेम मै मगन होय कर भगवान कृपानिधान के गुण गण जो हैं सो नित्य गावती रहती और अपने जनम का लाभ लेती थी इस प्रकार विलमेगल और चिंतामणी दोनो जमुना जी के किनारे पर जब लग जीवते रहे कपट विकारों से रहित सरल चित होय कर कृस्नभगवान के पवित्र गुण गण जो हैं सो गावते रहे और जब दोनों का अंत समय आय गया तब कृस्नभगवान की कृपा से यतन और स्रम के विना सहजे हीं शरीर को त्याग कर कृस्न भगवान के तुल्य हीं चतुरभुज रूप होजाते भये नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो देखिये भक्ती का प्रभाव कि जिस गती के लिये सिध साध मुनी जोगी तपस्वी अनेक यतन साधन और हठ करते हैं तिनको प्रापत होनी बडी दुरलभ होती है सो ऐसी गती विलमेगल और चिंतामणी ने भक्ती के प्रसाद से कैसी सुगम अर्थात सुखाली हीं प्रापत कर लई है तातें सरव अर्थों का मूल साधन कृस्नभगवान के चरन कमलों की भक्ती है इस संसार समुद्र के तरने का सुगम यतन जो है सो एक भक्ती है और ऐसा उपाय दूसरा कोई नहीं है हे संतो भक्त जनो का संसार कुछ असाध नहीं है तिनकों सब साध्य और सुगम हीं है जो पुरष कृस्नभगवान में प्रीती श्रद्धा वाला है सोई पुरष
के चरनोंकी

(margin) कृस्नभगवान के चरणों में
(margin) भगवान
(margin) सुदामा
(margin) कृपानिधान

एक ब्रह्मण [illegible] वास करता था सो समय पा
य कर [illegible] पानी ग्रहण अर्थात विवाह जो है सो करता भ
या तिसतें तिसके घर विषे एक पुत्र उतपन्न होय ग
या इस प्रकार कुछ काल वतीत होता भया तब एक
दिन तिसकी स्त्री अपनी जड़ता के वश कोई दुखदा
यक कठोर वचन जो है सो बोल उठती भई तिसको
सुनकर विप्र सहार नहीं सका क्रोध के व
श भया हुआ घरबार स्त्री पुत्र सब त्याग कर ग्राम
के बाहिर एक बड़ा प्राचीन अर्थात पुराना महादे
व जी का मंदिर था तहां जायकर के निवास करता
भया सिखा सूत्र जो चोटी जनेऊ है सो धारे हुये
गेरी के रंग से वस्त्रों को भगवे करकर और शरीर पर
भस्म रमायकर काम क्रोध मोह ममता इत्यादि विका
रों को त्याग और जगत से विरक्त [illegible] होयकर मानो
संन्यास भेषको धारन कर [illegible] के शंभू भगवान के ध्यान
मे लीन होय कर [illegible] बैठ [illegible] गया ऐसे तिस
को विरक्त भये हुये [illegible] देखकर ग्राम के वृद्धस्या
ने सब आयकर और अनेक प्रकार के प्रसंग सु
नाय सुनाय कर बारबार समुझावने लगे ॥१॥ चौ
पाई॥ पुत्र पतनि आरत पुनि तासा॥ करि करि
नम्र वदन संभाषा॥ यद्यपि विविध भांति समुझा
ना॥ तद्यपि द्विज विरक्त नहिं माना॥ करि तिरस
कार पुत्र निज नारी॥ चल्यो आनं त कहं विप्र सि
धारी॥ तब निरास मन सुवन लिलामा॥ संजुत
वृद्ध लोग निज ग्रामा॥ निज निज आय सदन
सबकाहू॥ करत वदन अप कीरति ताहू॥ सो अ
यथा विधि विगत प्रयासू॥ धारत भयो भेष
संन्यासू॥ परिहरि करम जाल जगनाना॥
पुनि सेजा निज लीन धरानाम विरत निरत

थल बिपुन बिहारी॥ आवा भ्रमत भ्रमत तत सारी॥
महादेव भगवन सुरनाहा॥ राजे शिलारूप प्रभु जा
हा॥ तिनकर कथा प्रथम सुखदाई॥ मैं कछु करउँ
कथन मन भाई॥ अवसर एक शंभु अरधंगी॥ होत मा
नवति दुरत बिभंगी॥ गवन करत बिंदूसर आई॥ तहाँ
दीन निज वपुष गिराई॥ काढे महादेव प्रभु आये॥ बि
रह विवस मानस अकुलाये॥ प्रिया अवयव देखत
सिहराई॥ तिनहु दीन निज वपुष गिराई॥ तब इंद्रा
पति विधि सुरराई॥ लिये संग देवन समुदाई॥ कि
न्हि प्रसंसि विविध मृदुबानी॥ विनय करत जुग जो
रित पानी॥ यद्यपि कृपा नाथ तुव देहा॥ देखन मा
त्र लोकँ [illegible] रेहा॥ वास्तव भेद कछु नहीं आना॥
सदा अकाय तुमहु भगवाना॥ तद्यपि हम पूछहु हे
निधि दाया॥ कीन्ह्यो बात कवन हित काया॥ हरि बि
धि वचन सुनत त्रिपुरारी॥ कै प्रसन्न अस गिरा उ
चारी॥ सुनहु देव वर जुगल सुजाना॥ मैं निज हृ
दय लोग हित माना॥ यद्यपि इह बिंदूसर माहीं॥ अ
ति प्राचीन तेत्र संसारा॥ तद्यपि मोर वपुष करता
हू॥ ~~[illegible]~~ भाव शेष संसार प्रभाऊ॥
सकल लोक उपकार विचारी॥ मै इत दीन वपुष
निज डारी॥ या बिंदूसर ललित सुहावन॥ ऊँ क
मला सरिता मन भावन॥ प्रीति भक्ति जुत जवन
अन्हाइ [illegible] वहिं॥ मोर वपुष वर दरसन पावहिं॥
ब्रह्म घात इत्यादिक पापा॥ आन अनर्थ सूल
संतापा॥ मुचित सकल संशय कछु नाहीं॥ पू
वहिं मन वांछित तिनकाहीं॥ दो॥ इहां अराधन
करहिं मम एक मास लगँ [illegible] य॥ तासु मनोरथ
करहुँ मैं सफल इच्छित मन जोय॥२॥ टीका॥
औरति सकी स्त्री पुत्र भी दुखी भये हुये आ
यकर दीन कालीसे यद्यपि वहुतहिं समुझावते

भये तद्यपि वैरागी भया हूआ सो ब्रह्मण एक न ही
[illegible] भया तिन का जिस कारके तहां से उठ
करके कहीं और अस्थान को चला जाता भया तब ति
स के स्त्री पुत्र निरास और दुखी होय करके ग्राम के
तिन वृद्ध लोगों के सहित तिस की अनेक प्रकार निं
दा अपकीरती करते हुये अपने अपने घरों को चले
आये और सो ब्रह्म शास्त्र की विधी के विरुद्ध अयोग्य
रीती से संन्यास धार कर और जगत मे करम जाल को
त्याग कर पुरी से जा कर के प्रसिद्ध हो जाता भया तब
वैरागी चित भया हूआ अनेक अस्था
न और बण परवतों मे पृथवी पर भ्रमता भ्रम
ता जहां शिला नाथ महादेव
भगवान विराजैंथे तहां आय प्रापत भया नाभादा
स कहते हैं कि हे संतो अब जिस प्रकार शिला नाथ
भगवान प्रकट भये हैं प्रथम तिन की मनोहर गा
था जो है सो श्रवण करिये एक समय महादेव
की अरधंगी पारवती जो है सो मानवती होय
कर अर्थात महादेव के साथ रूठी हूई कोप के व
श गवन करती करती वा चलती चलती विं
ध्य सर जो बड़ा उजाड़ देश है तिस पर चली
आई तहां आवती ने हीं अपना शरीर जो है सो
छोड़ दिया तब पीछे महादेव भी आय गये तहां
अपनी प्यारी पारवती के अंग देख कर तिनों ने
भी ततकाल शरीर को त्याग दिया ऐसे तिन की
दशा देख कर विष्णु भगवान ब्रह्मा इंद्र सब
देवताओं को साथ लिये हूये तहां तुरत ही आ
य जाते भये और बड़ी नम्र वाणी से महादेव
की अनेक प्रकार अस्तुती कर कर विनती कर
ने लगे कि हे कृपानिधान हे दीन हित कारी
त्रिपुरारी प्रभू यद्यपि तुमारा शरीर लोकों के

अथविस्नुसरमाचरितं

दोहा॥ ग्यान महातम भक्ति वर जासु सुनत सब कोय॥ लेहिं विमल पद भक्ति कल करहुं कथन अब सोय॥ चौपाई॥ मथुरा निकट चूली इक ग्रामा॥ तहां विस्नु सरमा अस नामा॥ वसिहे विप्र परम ब्रत धारू॥ वेद तत्व सब जानन हारू॥ चार कुलीन करम पर धीरा॥ धरम प्रवीन गुनन गंभीरा॥ अवसर पाय कीन मन भावा॥ पानि ग्रहन तिहि सुखद सुहावा॥ तिहि तें रुचिर पुत्र उपजायो॥ असप्रकार कछु काल बितायो॥ एक दिवस त्रिय तासु निहोरा॥ कीन दुसह कछु वचन कठोरा॥ तास क्रोध वस दुज वर होई॥ तजि सुत दार सदन सुख खोई॥ रह्यो ग्राम सामीप स्थाना॥ अति प्राचीन शंभु भगवाना॥ तहां निवास जाय निज कीन्यों॥ गेरुक वपुष वसन करि लीन्यो॥ सिखा सूत्र धारत सब तेहा॥ भसम रमाय रुचिर निजदेहा॥ शंभु ध्यान ततपर थिर भययो॥ वटु सन्यस्थ भेष धरि लययो॥ ममता मोह मदन मद त्यागी॥ भा विरक्त तेसति वड़भागी॥ दोहा॥ अस विरक्त तिहि ग्राम तकि वृद्ध लोग समुदाय॥ निज निज वदन सि खावहीं अनक प्रसंग बनाय॥ १॥ टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो अब और भक्ती की मनोहर गाथा आप के आगे गायन करता हूं कि जिसके श्रवण करने से ततकाल ही भगवान की सुंदर भक्ती जो है सो हृदय मे व्यापत हो जाती है ~~मथुर~~ कहते हैं कि मथुरा के निकट एक चूली नाम करके ग्राम होता भया तहां परम ब्रत के धारने वाला और वेद के तत्वको जानने वाला धरम सुकरम मे प्रवीन सरव गुणों का धाम विस्नु सरमा नाम मकाके

मे शिव अंतर ध्याना॥ ब्रह्मा विस्नु मोद सुख माना॥
अति पुनीत प्रतिमा वर आपन॥ तहां करत निज कर
न स्थापन॥ गये बहुरि निज भवन सिधाई॥ अस प्रका
र भगवन सुखदाई॥ शिलानाथ भगवान सुहाये॥ बिं
दु सर तीरथ प्रकटाये॥ सो विस्नु सरमा दुज जोई॥ ब्र
ह्म चरज ब्रत तत पर होई॥ तहां स्थित ह्वै शंभु अरा
धन॥ लख्यो प्रलोक रुचिर निज साधन॥ भयो वती
त बरष जब आये॥ तब ससिधर भगवान सुहाये॥
सपने भनत कृपायनिधाना॥ सुनहु श्रवण दुजना
थ सुजाना॥ होहि तुमार रुचिर कल्याना॥ मोर अ
राधन तुव हित माना॥ मे प्रसन्न मानस हरषाना॥ सं
कुल अर्थ सिद्धि मनभावा॥ विस्नु मंत्र मंजुल ज
ग पावन॥ तोहि देहुं सुख सुजस बढावन॥ चारहु
अस्तेष भोग जग भोगी॥ अंत विमल गति दुरल
भ जोगी॥ सो तुव लेहु भक्त हित कारी॥ अस दीर
घ आयु सुखनिज धारी॥ करहु दुजेंद्र दार परिग्रेहु॥
सुठि संतति सुख संपति लेहू॥ अस कहि दीन
शंभु सुद भवना॥ द्वादस बरस मेत्र तहि श्रवणा॥
तदप स्वात भक्त सुखदाई॥ मे अंतर गत भक्त स
हाई॥ सपन सुमरण करत दुजनाथा॥ सम्भ्रम
हृदय गुनत अस गाथा॥ हर प्रभु कथन बदन सु
भ बानी॥ कस मोहि परहिं सत्य जिय जानी॥ अस
प्रकार दुज हृदय विचारी॥ बन सज अस्तन अजा
चितधारी॥ सख सुखद जग मंगल मूला॥ जप
त निरन्तर मनु अनुकूला॥ दोहा॥ त्रूणि ग्राम
कर लोग मिलि चाहम हुत सब पाप॥ हर रज
नी दरसन करन शिला नाथ प्रभु आप॥ ३॥ टी
का॥ फिर महादेव कहते हैं कि भली कारणिका
के तुल्य मेरे मन को [illegible] भावता है जैसे

काशी मे विश्वेश्वर भगवान प्रसिद्ध हैं तैसे तूं भी इहां वि

श्वनाथ भगवान लोगों के उद्धार करने को विराजमा

न भये हैं जो कोई इहां निवास करके शरीर को

त्यागन करेगा मै तिस को सर्व सुखदायक मुक्ती जो

है सो अवश्य देऊंगा और जो कोई इहां श्रद्धापूर्व

क बैठकर पुरश्चरण करेगा तिसको भी मै शीघ्र

सिद्धी के देनेवाला हूं अर्थात तिस के मनोरथ को तत

काल ही सिद्ध करदेऊंगा अब हे देव प्रधान तुम भी

जीवों का उपकार और उद्धार विचार कर इस क्षेत्र को

प्यारा जांकर के इहां ही निवास करो और इस को पर

म वडाई जो है सो देओ ऐसे कथन कर के महादेव

अन्तर्ध्यान अर्थात लुप्त हो जाते भये और ब्रह्मा

विष्णू आनंद करके प्रफुल्लित भये हूये अपनी अ

पनी सुंदर और पवित्र प्रतिमा तहां अपने हा

थों से स्थापित फिर हर्ष पूर्वक अपने अपने

धाम को चले गये इस प्रकार बिल्वेश्वर भगवा

न जो है सो बिंदुसर तीरथ पर प्रकट होते भये

तब वे विष्णुशर्मा ब्राह्मण जो था सो ब्रह्म

चर्य धारन किये हूये तहां बिंदुसर तीरथ पर

स्थित होय करके अपने परलोक के सुधारने के

लिये शंभू भगवान का आराधन करने लगा ज

व महादेव का सुमर्ण करते करते तिस को वरष

व्यतीत होय गया तब एक दिन शंभू भगवान प्रसन्न

भये हूये सपने मे कहने लगे कि हे भक्त तेरा कल्या

न होवे तैने वडे हित चित से मेरा आराधन किया है

मै अत्यंत प्रसन्न होय गया हूं अब तेरे को सरव

अर्थों के सिद्ध करने वाला जगत मे परम पवित्र और

सुख सजस का मूल विष्णू मंत्र जो है सो देता हूं

तिस के प्रसाद से तूं संसार मे अनेक भोग कि जो

रहि जावें सो सव भोगकर फिर जोगीजनों को दु

रलभ गती है तिस को प्राप्त हो और वडी ले की

संतती

आयुषाधारन कर कर और दार जो स्त्री

जो पुत्र संपती जो धन इत्यादि सब सुख के सहि

त होयकर आनंद पूर्वक अपने घर मै बास कर

इस प्रकार कथन कर कर शंभू भगवान तुरत हीं

द्वादसवरन अर्थात बारे अक्षर का मंत्र जो है सो

तिसके कान मे सुनाय कर आप भक्तहि

तकारी त्रिपुरारी तहां हीं लुपत हो जाते भये जब

विस्वासरमा निद्रा से जागा तब सपने को सुमरन

करके बड़ा भ्रमिक चित होय कर के कहता है कि

इस सपने मै शंभू भगवान ने जो कथन किया है

सो मेरे को सत्य कैसे प्रतीत हो ऐसे हृदय मै

बिचार करके कंठ मै तुलसी की माला धार कर

अजाचित ब्रत को ग्रहन कर लिया कि जो अ

निच्छत आय जावे सो पाय लेना नहीं तो हरी

इच्छा और जगत मै सरव मंगलों का मूल

हरी मंत्र जो है बशेष कर के सोई आधार राख

लिया तिसको हीं भक्ती प्रीती से रात्री दिन जप

ता रहता था तब समय पाय कर के तिस

नूली ग्राम के लोग कि जहां का विस्वासरमा रह

ने बाला था सब मिलकर के शिवरात्री के मेले

पर शिला नाथ भगवान

के दरसन कर ने को आवते भये ॥ ३ ॥ चौपाई ॥

मांदिर करि पूजन प्रभु वामा ॥ दूज पे आय लो

क मिलि ग्रामा ॥ करि प्रसन्न बहु विधि समुझा

ई ॥ तासु संग निज चले लिवाई ॥ आये मुदि

त सकल मिलि ग्रामा ॥ विप्र निवास कीन नि

ज धामा ॥ भयो सुनिरत दार गुन खीरा ॥ वै

स्नव प्रवर चारु मति धीरा ॥ कछुक दिवस बी

ते दुज नाथा ॥ तब लीने बांधव निज साथा ॥

नेत्रों मे एक देखने मात्र हीं है वास्तव करके कुछ भी नहीं है नाथ तुम सदैव अकाय हो अर्थात का याधि कार से रहित हो तथापि हे दयाकी निधी हम पूछते और हम को कृपा करके कहिये कि आपने कौन निमित्त करके शरीर को पात किया है अर्थात शरीर को छोड़ दिया है ऐसे विष्णू भगवान और ब्रह्मा के कोमल वचन सुन कर महादेव प्रसन्न होय कर और मुसक्याय कर कहने लगे कि हे विष्णू हे ब्रह्मा मैने हृदय मे लोगों का हित और भला विचार कर इहां अपने शरीर को इसलिये गिराय दिया है कि यद्यपि इह विंदुसर जगत मे अत से प्राचीन और बड़ा भारी तीर्थ प्रसिद्ध है तथापि इहां मेरे शरीर के गिरने से इसका और अधिक हीं प्रभाव होय गया है अब इस परम पवित्र विंदुसर मे और सुंदर कमला नदी मे जो कोई प्रीती श्रद्धा से आयकर स्नान करेगा और मेरा दरसन पावेगा तिसके शरीर के ब्रह्महत्यादि पाप अनर्थ और दुख दारिद्र सूल सब मिट जावेंगे और मन वांछित फल जो है सो प्रापत होवेगा इस मे कुछ संशय नहीं है इस अस्थान पर जो कोई निश्चय धारकर एक महीने लग मेरा आराधन करेगा मै तो मे अवश्य कर के तिस भक्त के मन की सब कामना पूरण करूंगा ॥२॥ चौपाई ॥ भली करणना तुल्य सुहावा ॥ इह अस्थान ललित मन भावा ॥ जस काशी विश्वेस्वर गाये ॥ तस इह विश्वनाथ इत छाये ॥ जे नर इहां तजहिं निज काया ॥ मै तिन देहुं मुक्ति सुखदाया ॥ जो पुरश्चरण करहिं इत आई ॥ मै तिन सपदि सिद्धि वरदाई ॥ तुमहुं देव करहु निज कीने ॥ इहि कहि प्रिय तीरथ उर चीने करहु निवास सकल इत आई ॥ करि दाया इहि देहु बड़ाई ॥ अस कहि

पहुंचायकर अपने अपने सब चले गये तब पर
म व्रतधारी वैस्नव भक्त विष्णु सरमा जी अपनी
स्त्री के सहित ग्रस्थी होयकर घर मे वास करने
लगे जब इस प्रकार कुछ दिन वतीत होय गये तब
एक दिन अपने स्त्री पुत्र को साथ लेकर चलता च
लता जगननाथ पुरी मे आय प्रापत भया तहां कु
छ दिन निवास करकर और श्री भागवत पुराण की
सुंदर कथा लेकर अपनी ~~बना~~ ही उक्त रचना से
भक्ती रतनावली नाम ग्रंथ जो है सो बनाय लेते भये
तब प्रथम जगननाथ स्वामी के भवन मे जायकर
और प्रणाम करकर सो भक्ती रतनावली ~~जो है सो~~
भगवान के आगे बड़े मधुर मधुर स्वर से ~~...~~ और
भक्ती प्रीती से गायन करके सब सुनाय देते भये तिस
के उपरांत फिर तहां से चलकर शिवपुरी जो कासी
है तिस ~~मे~~ विषे चले आये तहां आयकर बिंदुमा
धव भगवान के सनमुख स्थित होयकर और हृ
दय मे पुरुषोतम भगवान का सुंदर ध्यान धारे हुये
द्वादशाक्षर मंत्र जो है सो जपने लगे तब जपते
जपते एक दिन दीनबंधु भगवान अपने पुजा
रियों को सुपने मे कहने लगे कि ~~...~~ विस्नु
सरमा भक्त की रची हुई भक्ती रतनावली जो
है सो मेरे को अत्यंत प्यारी है तुम तिसके ग्र
ट के को ल्यायकर बड़े सनमान पूर्वक मेरे ग
ले मे पहिराय देवो ॥४॥ चौपाई ॥ सो पुजवस
हिं शंभुपुरि माहीं ॥ पठहो दूत वेग तुम ताहीं ॥
जब लौ न तुम्ह पहिरावो ॥ तब लग मोहि न
आभरन भावे ॥ इस प्रकार नृप सन निज आ
ई ॥ सपन मरम सब दीन सुनाई ॥ ~~...~~
~~...~~ त्रिभुवननाथ प्रणम नृप कहो ॥ ~~...~~

दीनबुजाय स्वपन निसिमाही॥ तिनहिं भूप ग्रस बचन उचारा॥ तुव ~~पूजन~~ प्रभु दीन उचारा॥ करऊ प्रीति पूर्व कमन लाई॥ मेले हैं तहि वेग मंगाई॥ ग्रस भूपति दूत पठाये॥ द्वत पूजिक पूजन प्रभु ग्राये॥ मणि माला भूषण सब नाना॥ देखे धरनि परे भगवाना॥ दोहा॥ उत दूतन द्विज नाथ कहं भूप पत्रिका जाय॥ दीन्यो देखत द्विगन द्विज महं मोद ~~~~ सुख पाय॥ बार बार पूछत कुसल दूतन हृदय लगाय॥ कहि सेवा सतकार सब पावन पाकजि माय॥५॥ टीका॥ फिर भगवान कहते हैं कि सो ब्रह्मण प्रधान जो है काशी में बास करता है तुम तहां तिसके पास दूत भेज देवो जब लं भक्ती रतनाबली विसूहरमा की कूत नहीं आवती तब लग मेरे को भूषण वस्त्र कुछ भावते नहीं हैं ऐसे स्वपन को पाय कर और पूजिक जाय कर राजा को सब प्रसंग सुनाय देंभये तब राजा को दीनबंधू ने आगे ही सुपने में सब जणा य दिया हूआथा तिनको कहने लगा कि भाई तुम प्रीती सनमान से भगवान् पूजन सेवन करो मैं फ़ीर तहां दूत भेज करके तिस भक्ती रतनाबली के गुटके को ईहां ही मंगवाय लेता हूं ऐसे कहिकर राजा ने दूत जो हैं सो तहां को पठाय दिये और ईहां जब पूजिक भगवान् पूजन सेवन करने को भवन में आये तो क्या देखते हैं कि भगवान सू ~~~~ के मणि माला के सहित सुंदर ~~~~ भूषण जो हैं सो सब नीचे पृथ्वी पर पड़े हूये हैं और ऊहां जब विसूहरमा के दूतों ने राजा की पत्र का जाय करके देई तब भक्त प्रधान तिसको देख कर के अत्यंत प्रसन्न होयगये और दूतों को बारबार

हृदय से लगाय कर और भली प्रकार सब कुसल
पूछ कर बड़ी सेवा सतकार से भोजन जिमाय देते
भये ॥५॥ चौपाई ॥ बहुरि भक्ति रतनावलि चाहू ॥
निज कृत विप्र प्रेम रस साहू ॥ दूतन दीन जुगल कर
जोरी ॥ बार बार करि विनय अथोरी ॥ बहुरि बिदाय
कीन सनमाना ॥ लै दूतन तब कीन पयाना ॥ नृप पें
आय बेग हरखाते ॥ लिये सु भूप प्रेम सुख माते ॥
बुध पंडित जन को लिमंगाये ॥ विप्र समाज सचि
र बिरचाये ॥ सो भक्ती रतनावली भाती ॥ पावन
प्रेम सार सुखदाती ॥ मानस मोद प्रमोद बढाय
न ॥ कीन जगत पति सन सुख गायन ॥ तब
प्रभु भक्त वतस भगवाना ॥ नृप कहें पुनि अस
सपन बखाना ॥ इहि कहें भूपति ललित लि
खाई ॥ केचिन पंडित श्लोक मढाई ॥ मोरे
कंठ प्रीति सरसाये ॥ सुबदे है छितपति पहि
राये ॥ कछु कर मु दुक माहिं जराई ॥ मोरे
कर रहु अले कृत राई ॥ सासन पाय भूप भगवा
ना ॥ सो सब प्रथम कीन सनमाना ॥ पाछे आ
न आभरन भाये ॥ तुलसी मुक्त माल पहिरा
ये ॥ अस प्रकार भगवन सुख कंदू ॥ सदाम
क्त बस दीनन बंधू ॥ देत जनन निज रुचिर
बड़ाई ॥ कृपा न केत भक्त सुखदाई ॥ अस इन
चरित यथा मति गावा ॥ मै संतपत कछुक
मनभावा ॥ [illegible] दोहा ॥ जो सादिर रति प्रेम जुत
सुन्हिं श्रवन धर रहु ॥ ताकें उपजब बिमल
ज्ञान नाथ पद नेहु ॥ ६ ॥ टीका ॥ फिर वे आपकी
कृत मानो प्रेम रस का सार भक्ती रतनाव
ली जो थी सो [illegible] विस्तार मा ताथ जोड़कर
और बारँ विनती कर कर राजा के दूतों को दे
कर

पुरुषोतम पुरि हरष अजावा॥ हरहर रटत विप्र वर आवा॥ तहां भागवत केरि सुनाई॥ लीन सिकथा रुचिर मनमाई॥ करि निज नवल उक्त अभिराम॥ राखि भक्ति रतनावलिनामा॥ प्रथमहिं करि प्रणाम दुज गवना॥ जगन नाथ जगपावन भवना॥ ताहि भक्ति प्रीति सरसाई॥ हरिहिं मधुर स्वर गाय सुनाई॥ तहिपल भ्रात मुदित मन आये॥ सासिधर पुरी विप्र वर आये॥ सनमुख दीन याल भगवाना॥ माधो विंदु भक्त वरदाना॥ दादिस वरण मेच जग पावन॥ लाख्ये जपन ललित मन भावन॥ ध्याईं निज ध्यान रसाला॥ परषोतम प्रभु दीन दयाला॥ रति जुत जपन ~~रहे~~ रिकाहीं॥ बीति गये कछु वासर नाहीं॥ एक दिवस पुरुषोतम देवा॥ जे प्रवीन १ जे करत सेवा॥ सोरठा॥ तिनहिं ~~स~~पन असदीन॥ जे भक्तीरतनावली दुज प्रवीन निज कीन॥ विस्नु सरमा नवल कृत ॥ दोहा॥ सो सुंदर मोहि परम प्रीये तो कर वेग मेगाय॥ मोरे ग्रीव नपुक्त सुव करहु करन निजल्याय॥४॥ टीका॥ तव वे उली ग्राम के लोग ~~ज~~ जो थे सो प्रथम दि ला थ भगवान को वडे सनमान से सुंदर दरसन और पूजन कर के फिर सव मिल कर के विस्नु सरमा जी के ~~पास~~ चले आये तहां तिन को देख कर ~~ ~~ हरष से प्रणाम ~~किया~~ फिर कुसल पूछ कर और तिन को प्रसन्न कर कर आनंद से सौंप लिये हुये अपने ग्राम विखे चले आये तहां ~~लोग हेवे अपने अपने घरों को चले गये ईहां विस्नु सरमा भी अपने घर में चले आये~~ तिन की वडे सतकार से घर मे

करके सनमानसे विदाय करदेतामया सोलेकर
के बडेहरषसे आयकर राजाको देदेते भये तव राजाआ
नंदमें मगन भया हुआ तिसीदिन सव ब्राह्मण पंडि
त और विद्वानोंका समाज जोडकर सो भक्तीरतना
वली कि जो परम पवित्र और प्रेम सुख के उपजा
वनेवाली विष्णूसरमा की कविता की हुई थी वडी प्री
तीभक्तीसें गायन कराकर पुरुषोतम भगवान को सव सु
नायदेतामया तव तिसको सुनकरके भक्तहितका
री भगवान राजा को फिर सुपनेमें कहतेभये कि हे
राजन् तुम इस भक्तीरतनावलीके सुंदर श्लोकजो
हैं सो के चिन पदिक अर्थात सुवरणकी चौकी
मे मढायकर मेरे गलेमे पहिराय देवो और कुछ
श्लोक हाथकी मुद्रकामे जडायकर मेरेको श्रृंगार
करायदेवो ऐसे भगवान कृपानिधानकी आज्ञा
पायकर प्रथम सो यथावत करके पीछे और
भूषण तुलसीमाले और मुक्तमाल आदिकजोथेसो
पहिराय देतेभये इसप्रकार सरव सुखोंकीनि
भगवान जोहैं सो सदैव ही भक्तोंके वश होयकर
संसारमेतिनको सुजस और वडाई देतेहैं ऐसे इह
विष्णूसरमाकी भक्तीमेंने यथामती कुछ संक्षेपकर
के गायनकीहै इसको जोकोई श्रद्धा और प्री
तीसे श्रवण करेगा तिसका जगन्नाथ भगवानके
चरनकमलोंमें अवश्य प्रेमहो जावेगा ॥१॥ इति
श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवत भक्ति महातम भाषाटी
कायां विष्णूसरमा चरितवरणनं नाम सरगः

जो है सो भगवान के परम चतुर भक्त होते भये आ
गे इनके अनेक सिष परसिष जो हुये सो भक्ती के
प्रभाव से संसार मै वडी मान प्रतिष्टा वाले होय क
र अनंत ही जीवों का उद्धार करते भये आज ल
ग भी तिन की भक्ती का प्रभाव जो है सो पृथवीत
लपर सोभायमान होय रहा है तिसीके प्रसाद से
लोगों का उद्धार हुआ चला जाता है विस्नुस्वा
मी जी के वंस मे दक्षणी ब्रह्मणों की तैलंग [illegible]
जाती के विखैं वल्लभाचारी जी उतपन्न होते भ
ये अब तिन की वडी अद्भुत और भ्रम के हरने
वाली गाथा जो है सो कथन करता हूं एक समय सो
वडभागी ब्रह्मण ~~[illegible]~~ अपने देस को त्या
ग करके [illegible] कहीं और देस को चला जाता भ
या और अजाचित व्रत जो है सो धारन कर
लिया किसी से कुछ मांगना नहीं अनिच्छात
जो आय जावे सो पाय लेना नहीं तो हरि हरि
जपते रहना ऐसे तिन की भक्ती का प्रभाव देख
कर वहुत लोग राजे राउ इत्यादि [illegible] सब सि
ष सेवक वन गये और मन वचन काया करके
भली प्रकार भक्ती प्रीती से तिन का सेवन सतका
र जो है सो करने लगे ~~[illegible] एक दिन [illegible]~~
~~[illegible] करने वाला एक साधू तिनके [illegible]~~
आय प्राप्त भया सो कैसा कि जिसने भगवे
वस्त्र मै वांधी हुई शालिग्राम भगवान की सिला
कंठविखैं धारन की है और तहां जो भगवा
न का मंदिर था तिसके द्वार के सनमुख एक सुंदर
निंव वृक्ष था तिसकी साखा के साथ सो भग
वान की सिला लटकाय करके आप आचारी जी
के पास चला आया और प्रणाम करके तिन

~~के आगे विनती करने लगा~~ ॥ २ ॥ चौपाई ॥ एक दि
वस भगवान आराधू ॥ आवा विप्र सदन एक साधू ॥
पट कै श्रोय बंध कृत चारू ॥ शालिग्राम शिला धा
रू ॥ तहां जवन हरि भवन सुहावा ॥ ताके द्वार निंब
द्रुम छावा ॥ तहिं पादप सन संत सुजाना ॥ करत
शिला निज करन निधाना ॥ गयो आपु सनमुख आ
चारी ॥ करि प्रणाम सुख विनयउ चारी ॥ नाथ रु
चिर वर ठाकुर तोरे ॥ देखन दृग न लालसा मोरे ॥ भ
ने मुदित मन वदन अचारी ॥ जाहु भवन दृग लेहु
निहारी ॥ सो न देस अस द्विज वर लयऊ ॥ आय भवन
हरि देखत भयऊ ॥ शिला निकर वर शालिग्रामा ॥
एक तें एक अधिक अभिरामा ॥ तुलसीदास सुम
न सित चंदन ॥ किये अले कृत अनक सुगंधन ॥
देखत भवन भूरि सुठि सोभा ॥ गीरवाण मुनि मा
नस लोभा ॥ करि प्रणाम चित चक्र परावा ॥ पा
दिप निंब निकट जब आवा ॥ दोहा ॥ सो नियुक्त
कृत साख वृक्ष निज ठाकुर दिख नाहिं ॥ सुख
विलाप सुख विगत दुख लखि लखे मानस मा
हिं ॥ प्रत्यावर्तन तुरत तर अभिमुख आव
पुजारि ॥ कहत नाथ तरुतें गई आप हुत शि
ला हमारि ॥ २ ॥ टीका ॥ तब एक दिन तहां तिन
के द्वारपर एक साधू आय प्राप्त होता भया सो
कैसा कि भगवान के पूजन सेवन वाला और कौ
पीन जो पाट [illegible] तिस के वस्त्र मे बांधी हुई शालि
ग्राम भगवान की शिला कंठ विखें धारन की हुई
है और तहां भगवान का सुंदर भवन जो था ति
स के द्वार के सनमुख एक निंब का वृक्ष लगा हु
आ था [illegible] सो साधू तिस निंब वृक्ष की साखा के
साथ अपने शालिग्राम भगवान की शिला को नि
धान करके अर्थात लटकाय करके आप आचा
री जी के पास चला आया और प्रणाम करके

तिनके आगे विनती करने लगा कि हे नाथ आप
के सुंदर ठाकुर जो हैं सो मैं तिनके दरसन करने की
अभिलाषा रखता हूं ऐसे सुनकर आचारी जी प्रस
न्न होयकरके कहिने लगे कि हे संत महातमा भीतर
भवन मैं चले जाइये और आनंद से श्री ठाकुर जी का दरस
न पाइये तब सो अतथी आचारी जी की आज्ञा पा
यकर भगवान के भवन मैं जो चला आया तो क्या
देखता है कि शालिग्राम भगवान की शिला तहां ए
कतें एक अधिक विराजी हुई हैं
हैं और तुलसी पुष्प चंदन इत्यादि सुगंधिओं क
रके शृंगार तन की हुई अत्यंत शोभा को उदय कर रही
हैं तैसे ही बड़ी मनोहर भवन शोभा कि जिसको दे
खकर देवता मुनी सब मोहित हो जाते हैं ऐसे र
चना देखकर सो अतथी संत अचरज के वश भया
हुआ प्रणाम करके तुरत पीछे को फिर आया औ
र निंब वृक्ष के पास जो आयकर देखने लगा तो वे
अपने शालिग्राम भगवान की शिला कि जो तिस वृ
क्ष की साखा के साथ बांध गया था देखन हीं पडी त
ब तो संत हृदय मैं मानो लाख दुख मानकर विला
प करता हुआ महाभाचारी जी के पास च
ला आया और रुदन कर कर कहने लगा कि हे ना
थ मैं अपने शालिग्राम भगवान की सुंदर शिला
पारके वस्त्र मैं बांधी हुई इस निंब वृक्ष की साखा के
साथ राखी थी सो कोई हर करके ले गया है ॥२॥
चौपाई ॥ का जानूं कां के मन भाये ॥ मोरे देव प्राण
सुखदाये ॥ उन बिनु मोर जियन जग ऐसे ॥ तरफत
मीन बिरहे जल जैसे ॥ तासु दुखित तकि मन ने
अचारी ॥ तजहु शोक संत ब्रत धारी ॥ जाय भव
न भीतर भगवाना ॥ जौन प्रीये तुमरे मन माना ॥
सो तजि सकुच संत हरषाई ॥ लेहु शिला ललि

अथ ज्ञान देव चरित्र वरनने

दोहा॥ मंजुल विस्नू संप्रदा करन प्रवित्र महान॥ विस्नु भक्त मे चारि वर लोक विदित यशमान॥ भक्ति मुक्ति जुत ज्ञान निधि सकल हित कारि॥ तिनकर कथा यथा मती करहुं कथन भ्रम हारि॥ चौपाई॥ विस्नु स्वामि परम व्रत धारी॥ निंबादित्त माधवाचारी॥ रामानुज गौरव गुण लीना॥ इह चतुरथ हरि भक्ति प्रवीना॥ इनकर सिष परसिष समुदाई॥ सुभृत भक्ति महातम पाई॥ पूजनीय संसार कहाये॥ जीव अनेन पतित उधराये॥ अजहुं प्रभाव भक्ति निज साहीं॥ करत अलंकृत मेदनि काहीं॥ विस्नु स्वामि वैस्नव व्रत धारी॥ संभव भये वल्लभाचारी॥ दुज तैलंग विदित दाहानी॥ तिनकर कथा सुनहु भ्रम हानी॥ अवसर एक विप्र वडभागी॥ त्रिय समेत निज देस तयागी॥ दोहा॥ असन अजाचि संतुष्टचित हरि अरचन नित लीन॥ विपुल लोक पति लोक अस तासु महातम चीन॥ सिष सेवक तो के भये करम वचन मन काय॥ निसि वासर सेवत सकल भक्ति प्रीति सरसाय॥ १॥ टीका॥ अब विस्नू संप्रदा के प्रविरत करनेवाले अर्थात वैस्नव मतके चलावनेवाले बडे वैस्नव भक्त और यशमान भक्ती मुक्तीके सहित ज्ञानकी निधी सरव जीवों के हितकारी और व्रतधारी चार महातमा होते भये तिनकी बडी सुखदायक और भ्रमके नास करनेवाली गाथा जो है सो जैसी कुछ बुद्धीके अनुसार होय सकती है कथन करता हुं परम पवित्र व्रतके धारने वाले विस्नु स्वामी और निंबादित्य तैसेही माधवाचारी और सरव गुण प्रधान रामानुजजी इह चारे

मेरे ही शालिग्राम के तुल्य हैं मै किस को लेऊं और
किस को ना लेऊं तब तिस को अचरज भये हूये देख
कर आचारी जी कहने लगे कि हे संत तुम तहां ही
जावो कि जहां निंब वृक्ष की साखो से तुमारी सुखदा
यक और मन भावती शिला जाती रही है ऐसे आ
चारी जी का वचन सुनकर सो साधू तुरत निंब वृ
क्ष के नीचे चला आया तहां क्या देखता है कि कोई
अपनी सुंदर और सुखदायक शिला तैसे ही निंब
वृक्ष की साखा के साथ फटे के वस्त्र मे बांधी हूई ल
टकरही है ॥३॥ चोपाई॥ साधिर हरषि संत गहि
लीन्यो॥ तहां निवास रुचिर निज कीन्यो॥ अस
प्रकार अचरज प्रद भारी॥ चरित पुनीत महा ब्रह्मचारी॥ रहे अनेक धरणि तल छायो॥ मैं संत
पत कछुक रह गायो॥ अब तो कर वरवें सत
सावन॥ प्रकटे ज्ञान देव जस पावन॥ तिन क
र कथा मोद मन छायन॥ मै अब करहुं वदन
निज गायन॥ दक्षण देस विदत असनामा॥ ई
द्राणी सरिता प्रद कामा॥ पावन विमल ललि
त जहि नीरा॥ रह्यो एक तीरथ तहि तीरा॥ सो
आनंद नामिक जग गावा॥ विप्र वृंद जुत पूरित
भावा॥ तिन मै एक विप्रवर काहू॥ कलेह मू
ल भाम नि भव ताहू॥ देत कलेश नित्य ज्व
भारी॥ सो न विप्रवर सक्यो सहारी॥ वे चित ता
सु तजि अंत अगारा॥ दुज सन्य [illegible] लीन पद
धारा॥ अस प्रकार कछु काल विताया॥ ताकर
निरत भेष सन्यासा॥ तब तहि पतनि तास सु
धि पाई॥ पति हरि सदन तास ढिग आई॥ भाष
त नम्र वचन रिस छीजै॥ ऐसी कार नाथ
मोहि कीजै॥ दोहा॥ तास वचन सुनि मन त

दुज मे न तोर पति भामा॥ हे हु नम्र बस तु
म हुं अब जाउ ललित निज धाम॥४॥ टीका॥
तब प्रसन्न होय कर के तिस संत ने अपनी चिला
लेलेई और आनंद पूर्वक तहां ही वास करता
भया इस प्रकार बड़े पवित्र और अचरज के देने
वाले ब्रह्मचारी जी के संसार मै अनेक ही च
रित्र हैं ई तो एक मैने संक्षेप कर के कुछ वर्णन
कर दिया है अब आगे तिनके वंस मै जैसे ज्ञान
ध्यान की निधी बड़े उजागर ज्ञानदेव जी प्रकट भ
ये हैं तिन की पवित्र गाथा जो है सो कथन करता
हूं दक्षण देस विखे बड़ी सुंदर निरमल जल वा
ली इंद्रायणी नाम कर के नदी जो है तिसके किनारे
पर एक आनंद नाम से प्रसिद्ध बड़ा पवित्र
तीर्थ होता भया सो ब्रह्मणों के समूह कर के प
रिपूरण था अर्थात तहां बहुत ब्राह्मण निवास
करते थे तब तिन ब्रह्मणों विखे एक ब्राह्मण
जो था तिसकी स्त्री बड़ी कलह कारनी मानो
लड़ाई का मूल थी सो तिस अपने पती को स
दुरवचन बोल बोल कर रात्री दिन बड़ा कले
श देती रहती थी तब ऐसे नित्य के कलेश को
ब्राह्मण सहार नहीं सका दुखी भया हु आक
पर चतुराई से तिस दुरमती को छल कर और
घर को त्याग कर जाय कर के सन्यास जो है
सो धार लेता भया इस प्रकार सन्यास भेष
धारे हुये तिस ब्रह्मण को कुछ काल बतीत
हो जाता भया तब तिसकी स्त्री जो है सो तिस
की सुधी पायं कर के तहां आय प्रापत होती भ
ई और पती के आगे हाथ जोड़ कर नम्र वाणी
सें विनती करने लगी कि हे नाथ अब कोप

मैं शांत होयकर दया करके मेरे को ग्रहण करि
ये ऐसे तिस का कथन कर ब्राह्मण कहने लगा
कि हे भामनी मैं तो तेरा पती नहीं हूं तेरे हृदय
मैं कुछ भ्रम होय गया है तूं विचार कर और अ
पने घर को चली जा ईहां तेरा पती कोई नहीं है
॥४॥ चौपाई॥ पति मुख वचन सुनत असरमनी॥
उठि निरास तहि गुरु पैं गवनी॥ करि प्रणाम मुख
विनय उचारी॥ मैं अनपत्त दीन हितकारी॥ जनक
जननि वरजित संसारा॥ पती सोउ सिष नाथ तुमारा॥
मोरे याल शरण अब को की॥ गुरु असगिरा न अस
नि तो की॥ अनहित देखि उपजि उरदाया॥ तासु बो
लि गुरु दीन सहाया॥ भने मोर सासन सुत मानी॥
इहि सुशील पतिदेवत जानी॥ अंगीकार नात तुव
करहै॥ संसय सोच सकल परिहरहै॥ या कारग
हण दोष सुन तोही॥ सो तोरह्यो सकल अव मो
ही॥ जो मैं प्रथम वतस नहिं चीना॥ विनु अधि
कार तोहि सिष कीना॥ पै अव मोर वचन अनुसारा॥
रहनि जप तपि करहु सुई कारा॥ सरव सु पूज
ग देव प्रभाऊ॥ तोर विमल वर वेस वढाऊ॥ चा
हे भाँवत संसृति धन्या॥ यातें होहि पुत्र उतप
न्या॥ दोहा॥ असगुरु वर अनुसास दुज सिरध
रि पतनि समेत॥ करि प्रणाम निवसत भयो वि
रचित कितहुं नकेत॥५॥ टीका॥ इस प्रकार पती
के मुख से वचन सुनकर सो भामनी निरास हो
यकर तिस के गुरू के पास चली गई तहां प्रणाम
करके हाथ जोड़ कर विनती करने लगी कि
हे दीन हितकारी हे संत उपकारी मैं संतान से र
हित हूं और मेरे माता पिता भी नहीं हैं केवल एक
पती ही आधार था सो भी आपका शिष्य होय गया
है अब हे दीन याल मैं अभागन किस की शरण को

तनुवपाई॥ तव बोल्यो अतथी असवानी॥ सुनहो नाथ सत्य जियजानी॥ मोर शिला सदृश जग माहीं॥ को साक्षात देव प्रभु नाहीं॥ अस गावन भवन हरि कीना॥ अद्भुत चरित दृगन तव चीना॥ जहं लग शिला भवन वर रहयौ॥ निज ठाकुर सदृश सब लहयौ॥ देखि चरित अचरज मन माना॥ लेहुं कवन सब एक समाना॥ तव बोले तहि वदन अचारी॥ संत जाहु तुव वेग सिधारी॥ जहितें तोर प्राण सुखदा ई॥ गई ललित सुभ शिला हराई॥ दोहा॥ सुनि अस वचन महातमन निव विटप ढिग आई॥ सोऊ सनातन देखि निज शिला सुखद तरु ठाई॥ टीका॥ हे संत उदार अब मैं नहीं जानता हूं कि मेरे प्राण सुखदायक देव जो हैं सो किस के मन मै भाये हैं प्रभू उनके विना मेरा जीना ऐसे है कि जैसे जल के वियोग से मछली का होता है तव तिस को वडे दुखी और व्याकुल देख कर आचारी जी दया के वश होय कर कहने लगे कि हे साधू अब तुम शोक और से को च को त्याग कर भगवान के भवन मै चले जावो तहां जो शिला तुमारे मन को भावती और प्यारी लगती है सो तुम प्रसन्न होय कर के ले लेवो ऐसे आचारी जी का कथन सुन कर साधू कहने लगा कि हे महातमा मेरा वचन आप सत्य कर के जानिये मेरी शिला के समान संसार मै और कोई भी साक्षात देव प्रभू नहीं है सो वडी दुरलभ थी ऐसे कथन कर कर भगवान कृपानिधान के भवन मै चला गया और तहां अद्भुत ही चरित्र देखता भया क्योंकि भगवान के भवन मै जहां लग शिला स्थापित थीं सो तिस को सव अपनी शिला के समान ही देख पड़ीं इस अद्भुत को देख कर अचरज के वश भया हूआ कहता है कि इन तो सव ठाकुर

दाई॥ करि कृपा तुव देहु पठाई॥ सुनि अस वचन
तासु दुजरासी॥ [illegible] लगे करन निज निज सवना
सी॥ इहि पूरव सन्यास धराना॥ वहुरि अधम प्रभु
दारति माना॥ अव मति मंद सवन जुत धावा॥ हम
पें तासु पठावन आवा॥ तव [illegible] महिसो इकनिक
टनिहारी॥ बोले तासु विप्र अस सारी॥ जो इहि मनि
ष वेद पठि लीना॥ तव तो हृदय सत्य हम चीना॥
निश्चय पठहिं वेद सुत तोरा॥ सुनत विप्र अस वच
न कठोरा॥ लाजित वैठ मौन धरि न्यारे॥ तव वा
लक मृदु वचन उचारे॥ हरिमाया कछु परहिं न
जाना॥ काइह तुम हु असंभव माना॥ दोहा॥ ग्या
नदेव अस भाखि मुख महिषहिं वचन वखान॥ घ
ट घट व्यापक कहत अस कृपासिंधु भगवान॥ तु
म हूं गोविंद रूप अव सरव सुवेद जन पाल॥ भक्त
कामना सिद्धि हित द्रवहो दीन कृपाल॥ सो सुंदर नि
ज विरद प्रभु हृदय सुमरि गिरधारि॥ इहि अव
सर देखत सवन करहु मोर रखवारि॥१॥ टीका॥
जद्यपि वशेष करके ब्रह्मण हृदय से विरक्त हीं था
तद्यपि स्त्री को रितवती भई हुई देख कर गृहण
कर लेता भया तव तिस के घर मे तीन पुत्र भग
वान के भक्त ही उतपन्न होते भये तिन तीनो मे
जेष्ठ अर्थात वडे गुण और ज्ञान की निधी ज्ञान
देव जी रहे सो जव सात वरष के भये तव पिता
तिन को साथ लेकर वडे विद्वान ब्रह्मण के घर मे
चला गया तहाँ प्रथम चरन वंदन करवाय कर फिर
हाथ जोड कर विनती करने लगा कि हे पंडित प्रधान
हे उपकार की निधी अव कृपा करके प्रथम इस
वालक को विधी पूर्वक यज्ञोपवीत अर्थात जनेऊ
जो है सो धारन करवाइये तिस ते उपरांत फिर

विद्याका प्रारंभ करवाय दीजिये इस प्रकार तिसका कथन सुनकरँ जितने ब्रह्म वैठेथे सो अपने अपने सब हांसी करने लगे कि देखो इस ब्रह्मण ने पहिले सन्यास धारन किया और फिर आय करके अधमने स्त्रीको गृहन कर लिया अब महामंद बालकको विद्या पढावने के लिये हमारे पास ले आया है पंडितजो ऐसो ऐसे कथन कर कर और सन मुख एक महिष जो बैठाहँ ताको देख कर तिसब्रह्मणको कहने लगे कि जो इह महिष वेद को पढ लेवेगा तब हम सत्य जानेगे कि तेरा बालकभी निश्चय करके वेद को पढ जावेगा ऐसे तिन का महा कठोर और अगम वचन सुन करके ब्रह्मण लज्जा से मौन होयकर न्यारे जाय बैठा तब बालक बडी कोमल बाणी से बोल उठता भया कि हे पिता भगवानकी माया बडी अगाधहै तहां इनकारता कुछ दुर्लभ नहीं है दीनबंधू जो चाहें सो कर सकतें हैं ऐसे कथन करके ज्ञानदेव जी फिर महिष को कहने लगे कि हे महिष वेद शास्त्र सब भगवान कृपानिधान को चराचर व्यापक कहते हैं तातें सरब सुखदायक और दीनो पर दया करने वाले अब तुमभी गोविंद भगवान का रूप हो अपने भक्त की कामना सिद्ध करने के लिये हे दीन दयाल कोमल हो जाइये और कृपा करिये अपना शरण पाल और दीन पाल विरद जो है सो हृदय मै सुमर कर इस समय सबके देखते प्रभू मेरी रक्षा करिये॥१॥ चौपाई॥ ज्ञान देव मुख वचन सुनाये॥ सुनि अस महिष तुरत प्रकटाये॥ वेद रिचन कर गायन लागे॥ मंजुल मधुर मुखर अनुरागे॥ विप्रवृंद अस चरित निहारी॥ कहत परस्पर हृदय विचारी॥ भयो न होहिं अगम संसारा॥ इह अदभुत जे दृगन निहारा॥ हरि माया कछु जाय न जानी॥

कहत विप्र अस विस्मत बानी॥ विपुल लोग अ
चरज वस धाये॥ चरित अलौकिक देखन आये॥
भनत विप्र तुव धन्न नयो रा॥ अहह धन्य सु
वन वर तोरा॥ जिहि हित लागि महिष मध्य होई॥
लागे वेद पठन प्रभु सोई॥ कृत्य कृत्य द्विज पुत्र तु
मारा॥ वंदन जोग विदित संसारा॥ हमतें भयो जवन
अपराधू॥ अनुचित जानि छमहु तुव साधू॥ अब
ते हम जुत प्रीति महाना॥ सादिर वेद मरम नाना॥
तिसु कहं देउव बदन पठाये॥ अस प्रकार ज
व विप्र अलाये॥ दोहा॥ ज्ञानदेव तव भने मुख क
हि प्रणाम महिमाथ॥ कीजे हमा नपठिय अब
कृपासिंधु जननाथ॥ ७॥ टीका॥ इस प्रकार ज्ञानदेव
के मुख से वचन सुनकर महिषजी सो तुरत
ही प्रकट होकर वेद की सुंदरि
चों को मधर मधुर सुर से रुची पूर्वक पठने लग
जाते भये तब इस अदभुत कौतुक को देखकर
सब ब्राह्मण जो परस्पर कहने लगे कि भा
ई इह बड़ा वचित्र चमतकार जो हमने प्रकट दे
खा है ऐसा संसार मै ना तो कहीं हूआ और ना
होवेगा भगवान की माया बड़ी अगाध है कुछ
जानी नहीं जाती ऐसे अचरज के वश भये हूये ब्रा
ह्मण परस्पर भगवान की अगाध गती को चिंतन
करते हैं इतने मै और भी बहुत लोग इस अलो
किक और अदभुत चरित्र को सुनकर देखने के
लिये धावते चले आये और ज्ञानदेव के पिता की
अनेक शलाघा बड़ाई कर कर कहते हैं कि हे ब्राह्म
ण तू जगत मै धन्य है और धन्य तेरा इह पुत्र है
कि जिस की भक्ती के वश भगवान कृपानिधा
न महिष रूप होय कर के वेद को प्रकट गायन
करने लगे हैं तो ते आज इह तुमारा पुत्र जगत

जाऊं मेरे को कौन आश्चर्य है ऐसे तिस के दीन वचन
सुनकर और बड़ा आनंदित देखकर गुरु जी का हृदय
कोमल होय गया जो है सो रोम रोम व्याप्त होय
गई तिस अपने शिष्य को पास बुलाय कर के कहने
लगे कि हे पुत्र अब तूं मेरी आज्ञा मान कर इस सुशी
ले अपनी पतनी को पती व्रती जान कर और सब
सोच संशय को त्याग कर के आनंद से ग्रहण कर लेय
यं सन्यासी होने से इसके ग्रहण करने का तेरे को दो
ष है तद्यपि सो दोष जो है सो मै अपने पर ले लेता
हूं क्योंकि प्रथम जब तेरे को भेष दिया तो मैने विचा
र कर न हीं दिया अधिकार के विना हीं तुम को मैने शि
ष्य कर लिया आनंद जो हूआ सो हूआ अब पुत्र तूं मे
री आज्ञा से इस अपनी पतनी को स्वीकार कर ले भग
वान की कृपा से जगत मै सूर्य और देवता के प्रभा
व वाला तेरे वंस को उजागर करने वाला भगवान का
बड़ा प्रधान भक्त इस तें पुत्र जो है सो उतपन्न होवे
गा इस प्रकार गुरु जी की आज्ञा [illegible] को [illegible]
[illegible] सीस पर धारन कर के स्त्री [illegible] के सहित चर
नो पर बारबार प्रणाम कर कर चला जाता भया और
किसी अस्थान पर जाय कर और घर बनाय कृं सभ
गवान को भजता हूआ निवास करने लगा ॥ चौ॰ ॥ चौपाई ॥
यद्यपि द्विज विरक्त अवसेषी ॥ तद्यपि रितु अवसर त्रिय
लेखी ॥ भयो सि करत कामना तेहूं ॥ या विध तीन सु
वन द्विज गेहूं ॥ संभव भयो भक्त भगवाना ॥ तिन मै ज्ञा
न देव निधि जाना ॥ सब तें प्रवर जेष्ठ सुत रहयो ॥
ते जब सपत वरष कर भययो ॥ पितु जुत प्रीति से
ग निज लीन्यो ॥ कोविद विप्र गवन गृह कीन्यो ॥
प्रथम चरन वंदन करवायो ॥ विनय वहुरि निजव
दन सुनायो ॥ इहि सुत कहें द्विजवर उपकारी ॥ वि
धि जुत प्रथम सत्रु सुभधारी ॥ विद्या वेद वहुरि सुल

थोरे ही दिनो मे श्रम करके ज्ञानदेव जी वेदविद्या
मे प्रवीन होय गये तब तिनकी ऐसी चतुराई
देखकरके सब लोग बडे अचरज को प्रापत होयगये
कि देखो इस बालकने थोरेही कालमे सबविद्या
प्रापत करलई है ऐसे तहां निवास करते कर
ते एकदिन कोई बडाभारी सिद्ध जो हो आयग
या सिंह जो शेर है तिसपर चढा हूआ और म
हो भयंकर सरप का कोरडा हाथ मे लिये हूये ऊंची
स्वरसे कहता था कि मेरेको बतावो ज्ञानदेव ब्राह्म
ण कहां है ॥८॥ चौपाई ॥ सिद्ध वचन सुनि द्विज
वरकाना ॥ रहौ निकट इक भीति पुराना ॥ तुरत ता
सपर होत अरूढा ॥ ताके कहत वचन अस गू
ढा ॥ कोइक सिद्ध सिंह चढि आवा ॥ मोपै भी
ति दरप बस धावा ॥ तुव तो धरहिं रूप प्रदकामा ॥
तुमहिं [illegible]र अब देउ प्रणामा ॥ मेलहु मोहि
आगल चलि तासा ॥ जब द्विजवर अस वचन प्र
काशा ॥ भीति तुरंत वेगधरि धाई ॥ सिंह अरूढ सि
द्ध ढिग आई ॥ अदभुत देखि लोग विसमाये ॥
द्विज पैं सिद्ध सिंह तजि आये ॥ आलिंगन करि वि
विध प्रकारा ॥ बहुरि बदन अस वचन उचारा ॥
तुव जग धन्य प्रवर द्विजराई ॥ जाय न तुव प्र
भाव कछु गाई ॥ सकल कला गुण निपुण
सुहावा ॥ सुनि अस ज्ञानदेव हरषावा ॥ कह
त कृपा निधि कृपा तुमारी ॥ जो मोहि दीन सुज
स अस भारी ॥ तुम हुं विदित समरथ जग जैसे ॥
करत अलाप परस्पर ऐसे ॥ सोरठा ॥ निज
निज आसन धाय ॥ अस प्रकार इह चरित मे
रुचिर सरव सुखदाय ॥ गावा काम अभि सु
प्रदाय ॥ टीका ॥ तब सिद्धने वचन सुनकर

के ज्ञानदेवजी एक [illegible]कर [illegible] माटी की दिवाल जो
थी खड़ी तत काल तिस पर सवार होजाते भये और
तिसको कहने लगे कि हे दिवाल कोई एक सिद्ध
बड़े अभिमान से सिंह पर सवार भया हुआ मेरे को हे
कारता अर्थात बुलावता है तो ते मैं भी पाऊं पयादा
नहीं जाय सकता हूं इसलिये तेरे पर सवार भया हूं
और तूं जो है सो पृथ्वी रूप सब कामना
के देनेवाली और सब सामर्थ्य है अब तेरे को मेरी
देह प्रणाम होवे कृपा करके मेरे को सिद्ध के साथ आ
गेहीं चलकरके मेल इस प्रकार जब ज्ञानदेवजी
ने पृथ्वी के आगे प्रार्थना करी तब भित्ती जो दि
थी वाल है सो तुरत वेग से धाय कर सिंह पर आरू
ढ भये हुये सिद्ध के पास चली आई इस अद्भु
त कौतुक को देखकर सब लोग अचरज के वश
होय गये और सिद्ध जो था सो सिंह को त्याग
कर ज्ञानदेव जी के पास चला आया तिनके सा
थ बड़ी प्रीती से आलिंगन करके अर्थात गले मि
लकर फिर मुख से कहने लगा कि हे महातमा
तुम जगत मे धन्य हो तुमारे प्रभाव की कुछ महि
मा कथन नहीं की जाती ऐसे सिद्ध के मुख से
वचन सुनकरके ज्ञानदेवजी प्रसन्न होयकर कह
ने लगे कि हे कृपानिधान तुमारी ही सब कृपा
है जो मेरे को दरसन दे करके ऐसा सुजस
और बड़ाई दि[illegible] तुमको ही योग्य है और तु
म ही सब सा[illegible] और सब गुण निधान हो
मर्थ
ऐसे परस्पर बोला जा और बड़ाई करकर अपने
अपने आश्रम को चले जाते भये इस प्रकार इ
हे चरित्र जो सो हे [illegible] संत जनो मैं ने [illegible] य
थामती अर्थात मेदगती के अनुसार जैसे [illegible] सका
होय
और मन को वांछित फल हुँ देनेवाला

आप के आगे प्रगट कर दिया है ॥ २९ ॥ इति श्रीभक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्त महातमे भाटीकायां ज्ञानदेव चरित्र वरनने नाम सर्गः ६

मे सफल हुए है और वंदना करने के योग्य हे फिर पंडितवि द्वानजो है सो दीन होयकर विनती करनेंकि हेव्रह्मणोवि षें उत्तम ब्रह्मण हम अपनी जड़ता के वश होयकर तुमारे को कुछ अनुचित वचन बोल चुके हैं सो हमको अवूझ जान कर तुम कृपा करके क्षमा करो अब तो हम वडे हितचित और प्रीती सनमान से तुमारे इस गुणनिधान बालक को वेद विद्या जो है सो सब पढाय देते हैं जब इस प्रकार पंडि त विद्वान जनों ने कथन किया तब ज्ञानदेवजी प्रणा म करके महिष भगवान को कहने लगे कि हे दीन बंधू हे कृपासिंधू अब नापढिये मौन धारिये दयाकर के क्षमा करिये॥७॥ चौपाई॥ मधुरवचन सुनि तासु रसाला॥ भये विराम महिष ततकाला॥ तब सा धिर द्विज गुण हरषाये॥ लिये तासु निंसदन सि धाये॥ यज्ञोपवीत रीत जुत पावो॥ वेदत्रै पु नीत पढावा॥ थोरहिं दिवस हुचिर श्रम कीनो॥ भ यो विप्र वर वेद प्रवीनो॥ अस लखि देखि लोग स मुदाई॥ अलप काल विद्या वरपाई॥ निज निज हृदय चकित सब काहू॥ तब इक सिद्ध आव पल ताहू॥ दोहा॥ इस मी व्याल कराल कर व्याघ्र अ रूढत सोय॥ कहत कहो निजवदन अस ज्ञानदेव द्विज जोय॥८॥ टीका॥ तब ऐसे ज्ञानदेव के वडे वनीत और मधुर वचन सुन करके महिष जो थे सो तुरत मौन होयगये तिसते उपरांत हरष के वश भये हुये ब्रह्मण वडी प्रीती सनमान से ज्ञानदेव को अपने घर मे लेगये तहां प्रथम वेद की विधी अनुसार यज्ञोपवीत जो है सो धार न करवाया और फिर वडे हित प्यार से रात्रीदिन करके वेदत्रै जो है सो पढाय दिया इस प्रकार

होता जाता था कारण जो हसती है तिस का भय हरने
वाले हरी भगवान जो हैं स्वास स्वास तिन का ही सुमर्ण
करता रहता था तब ऐसे तिस का निस्कपट प्रेम
देख करि भक्ती के वश भये हुये सोई हसती का
फंद काटने वाले हरी ब्राह्मण का रूप धार कर औ
र अंतरजामी अपना नाम रख कर त्रिलोच
न के साथ मैत्री भाव से मिल कर नित भिक्षाटन क
रने को चले जाते और भिक्षाटन के अन्न का भा
र बहुत हो जाता तो कृपासिंधु अपने सीस पर
उठाय लेते थे तब सोई अन्न त्रिलोचन घर
मे ल्याय कर और भोजन बनायें निज प्रीती
भक्ती से अतथी ब्राह्मण संतों को जिमाय देता
था ॥१॥ चौपाई ॥ बहुरि करत बर विप्र अहारा ॥ता
कर शेष देहि ___ दारा ॥ ऐसे जामिक हूँ देत जि
माई ॥ बोलत सो नभक्त सुखदाई ॥ अलप विपु
ल कछु हृदय नकामा ॥ अस प्रकार सुंदर दुज
भामा ॥ आपु रहत नित विगत अहारू ॥ बीते दि
वस तासु जब चारू ॥ तब भामा जिक सखी सुनाई ॥
तासु बिलोकि कृस्य अधिकाई ॥ ब्यापो तुमहि
कवन प्रीय सोगू ॥ भई काय दूबरि बिनु रोगू ॥
हम तहिकर करिहैं प्रतिकारू ॥ प्रिय नववदन
कस प्रकट उचारू ॥ सुनि सखि वचन मनत दुज
नारी ॥ कछु मोहि बपुष रोग नहि प्यारी ॥ भक्ता
टिन कर अन्न सबा हीं ॥ पति सेतन दुज देत जिमा
हीं ॥ ऐसे जामि इक पेष रहातो ॥ होहि न त्रिपत
तोष सखि पातो ॥ याबिध होत सदन नितमोहू ॥
अलि उपवास सत्य कहुं तोहू ॥ सखि तुव कोत
कवन हठठाना ॥ अस इह कवन कहां ते आना ॥
तब दुज भामनि वदन उचारा ॥ सखि इहपति हि

प्राणते प्यारा॥ अंतरजामि सुनिवचन सुखं तन॥ तहां
अंतरगत भये तुरंतन॥ दोहा॥ तब लाग्यो पूछन वदन
त्रियहिं त्रिलोचन आय॥ अंतरजामि गवन्यो कहां मोर
प्राण सुखदाय॥२॥ टीका॥ तिसतें उपरांत फिर त्रिलोच
न जो है सो आप आहार करता और तिसतें पीछे जो वचता
तो ~~सो~~ तिसकी स्त्री अंतरजामीको जिमायदेती थी
वे ~~सो~~ अंतरजामी भगवान थोड़े वहुतेकी कुछ काम
ना नहीं करते जैसा देती तैसा पायलेते और आप त्रि
लोचनकी स्त्री नित्य भूखीही रहती थी इसप्रकार जब कु
छ दिन वतीत होयगये तब आसपासकी सखी सहेली
जो थी सो तिसको कृश अर्थात दूवली भई हुई दे
खकर कहने लगी कि हे सखी कहो तेरेको कौन शोक
व्यापित भयाहै जिसतें तूं दिनदिन रोगकेविनाही दू
वली होती जाती है ~~सो~~ अब आपने जियेकी स
त्य सत्य वतायदे हम तेरा उपाय करती हूं असे ति
नका कथन सुनकर सो भामनी कहने लगी कि हे स
खी मेरे शरीरको कोई रोग नहीं है परंतू मिलादिन
का अन्न जो आवता है सो पती अतथी साधव्राह्मणों
को जिमाय देता है तिनतें पीछे जो कुछ वचता है
सो एक अंतरजामी नामकरके पतीका सज्जन वना
हुआ है सो सब पायलेता और त्रिपत भी नहीं होता
है तिसतें मेरेको सखी नित्य भूखेही रहना पड़
ता है इसीतें मैं दूवली होयगई हूं तब सुनकरके
सखी सहेली कहने लगीं कि हे प्यारी तेरे पतीने
इसके साहठ धारन किया है और इसके वचनहैं क
हो अंवानाहै तब त्रिलोचनकी स्त्री कहने लगी
कि सखी इस पतीको प्राणोंसे भी प्यारा है इसप्र
कार तिन स्त्रियोंका कथन सुनकरके अंतरजामी
जी ततकाल तहांहीं लुपत होयगये इतनेंमें त्रि

लोचनभीजर मैं आयगया और इधर उधर देखकर
के स्त्री को पूछने लगा कभामनी मेरा परम प्यारा
और प्राण सुखदायक ■ अंतर जामी जो है सो कहाँ
गया है ॥२॥ चौपाई ॥ विपुल वेर भई अंतर जामी ॥
आवन गये सदन तजि स्वामी ॥ सहि सा सुनत
विप्रवर धाये ॥ लागे बहिर द्वार गुहराये ॥ हे हे अं
तरजामि प्रवीना ॥ तुव कित आज गवन निज कीं
ना ॥ अस प्रकार द्विज बारहिं बारा ॥ अंतर जामि क
हि वदन गुहारा ॥ सो न आय जब भक्त सनेही ॥
तब जिय विथा दुखित द्विज तेही ॥ करत विला
प कीन निसि नाहीं ॥ भोजन भूरि सोच मन मा
हीं ॥ अरध रयन सपने प्रभु आये ॥ मनतव
दन मृदु बचन सुनाये ॥ द्विज न करहु चिंता मन मा
हीं ॥ मैं कहु तजि न गयो तुव काहीं ॥ संतत तोर
भक्ति बस होई ॥ इह तुव सदन विप्रवर जोई ॥
तांकर अंतरहित निज वासा ॥ मैं अब करहुं वि
प्र गुण दासा ॥ इहि तें आगल तुव बड़भागी ॥ मि
ताहि न निज धरम त्यागी ॥ बैठहु अचल श्रम
न श्रम खोई ॥ तुमरे सदन सुलभ सब होई ॥ ■
~~~ वृद्ध कु■ प्र निरखल तोहि देखी ॥ दु
ज दुख होत मोहि अवसेखी ॥ रुचिर रिद्ध समृ
द्धि सुहाई ॥ तोरे सदन रेहि सब आई ॥ दोहा ॥
रे जन दीन दयानिधी जनहिं सपन समुझाय ॥
भये लुपत जब ■ तुरत तब उठे चौंकि द्विज
राय ॥ सपन विचारत मनहिं मन बार बार द्विज
नाथ ॥ वंदित चरन सरोज प्रभु नम्र धरनि
धर माथ ॥३॥ टीका ॥ तं स्त्री जो है सो कहने ल
गी कि हे पती बहुत वेर होय गई है अंतर जामी
चोर से गया था फिर नहीं आया ऐसे स्त्री का व
~~~

अथ त्रिलोचन चरित

दोहा॥ भये त्रिलोचन विदित जग ज्ञान देव शिषचार॥ तिनकि पावनि मानुष कथा करहुं कथन मनहार॥ विष्णु भक्तिरत विप्रवर दारिद्र परदार॥ भिक्षाटन व्रत जासु नित धस्यो विदित संसार॥
चौपाई॥ जब मध्यान भासकर आवहिं॥ तब निज सदन पाक विरचावहिं॥ अतथी संत दुजन कोई॥ प्रथम जिमाय मुदित मन होई॥ करहिं आपु भोजन दुजपाछे॥ अस व्रत निकसि जाहिं दिन आछे॥ हरि हरि नाम ठरण भय कारण॥ स्वास स्वास नित करत उचारण॥ अस तिहि चिर भक्ति वस होई॥ हरन गजेंद्र त्रास प्रभू सोई॥ विप्ररूप सुभृत धरि आये॥ यंत्र जामि निज नाम धराये॥ दुजचिनपय सन प्रतिदिन जाई॥ भिक्षाटन करि त्रिभुवन राई॥ लेत उठाय सीस निज भारू॥ विपुल जानि करन लाय अगारू॥
दोहा॥ सो भिक्षाटन अन्न दुज मुदित सदन निज ल्याय॥ विरचि पाक संतन दुजन सादर देहिं जिमाय॥ १॥ टीका॥ अब एक त्रिलोचन नाम करके प्रसिद्ध ज्ञानदेव जी के शिष्य हो ते भये तिनकी मानुष्यों को पवित्र करने वाली सुंदर गाथा जो है सो कथन करता हूं कैसे भी त्रिलोचन ब्राह्मण थे कि विष्णु भक्ती में रात्री दिन लीन और स्त्री के सहित महा दारिद्र जिनका नित भिक्षाटन कर कर हीं निरवाह होता था और सूरज मध्यान में आयत होय जाता तब घर में नित भोजन बनावते और प्रथम अत थी साध ब्राह्मणों को जिमाय कर पीछे स्त्री के सहित आप पावते इसी प्रकार कालवतीत

सुनावा॥ ग्राम ग्राम मम पाछिलला
गी॥ निजईश्वर्य मानतात्यागी॥ भिक्षाटिन कर
भक्तउवारू॥ रहे सीस निजधारत भारू॥ अहो ना
थ सम से सुति सारी॥ को अस दीन बंधु हितकारी॥
अस कहि विप्र सदन जव देखा॥ भयो सकल समरि
द्धि विसेषा॥ तवतें विगत मोह अभिमाना॥ विरचि
पाक पावन नितनाना॥ अतथी विप्र संत गण काहीं॥
बोलिभक्ति युत सघन जिमाहीं॥ तिनका
पोष वचन जुतदारा॥ करत अहार सुपाप सुभ
चारा॥ संतत निरत भजन भगवाना॥ भोगि ह
चिर सुख संपतिनाना॥ अंत विमल पद धरि हरि
काया॥ हरि प्रसाद लीन्यो द्विजराया॥ दोहा॥ अत्र सु
धर समृद्धि प्रद ललित महातम एहु॥ अरु मोक्ष
द सुख सुजस प्रद सुनहिं श्रवण नर नेहु
८॥ टीका॥ फिर कहता है कि कृपासिंधू भगवा
न ने मेरे को भला भुलाया और मेरे साथ भला
छल किया अंतर जामी अपना नाम सुनाया
और अपना ईश्वर्य वडाई त्याग कर ग्राम ग्राम विषे
मेरे पीछे फिर फिर कर भिक्षाटिन वोझ जो था
सो सिर पर उठाया है अहो भगवान कृपानि
धान के समान जगत मै ऐसा कौन दीन बंधू
और दीन हितकारी है ऐसे कथन करके द्विजलो
चन जव घर मे देखने लगा तो भगवान की कृ
पा से सव परिपूरण पाया किसी वसतू की
न्यूनता नहीं है तवतें मोह और
अभिमान से रहित होयकर अमृत के समान
भोजन पकवान जो हैं सो
र चाय कर अतथी साधब्रह्म
णों को वडी प्रीती भक्ती से वुलायकर
नित

जिमाय देता ओर तिन तें शेष पीछे भोजन जो
बचता सो स्त्री के सहित आप पायलेता फिर
भगवान के भजन सुमरन मै लीन होयजाता
ऐसे दीनानाथ को भजता और संसार मै सुंदर भोग
सुख भोगता हुआ त्रिलोचन जो है सो स्त्री के सहि
त शरीर त्यागकर भगवान की कृपासे जो गीजनो
को दुरलभ जो गती है तिस को प्रापत होयगया
नाभा दास जी कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार इह सु
दरभक्ती का महातम जो है सो मैने संछेप कर के कु
छ गायन कर दिया है इह कैसा भी महातम है कि श्र
वण करने से सब सिद्धि समृद्धि के सहित सुख सु
स और कल्यान के देने वाला है ॥ ८ ॥ इति श्री मन्नि
नोद ये भगवत भक्ती महातम भाषा टीकायां त्रि
लोचन चरितवरनो नाम

सरगः =

चन सुनकर त्रिलोचन ततकाल धाय कर द्वार मै
चला आया और तहां ऊंची स्वर से हे मेरे प्यारे अं
तरजामी तूं कहां चला गया
इस प्रकार यद्यपि अंतरजामी अंतरजामी करके वार
वार बलावता भया तद्यपि सो भक्त सनेही भगवान
जोष्ठ सो नहीं आवते भये तब त्रिलोचन जो है सो
परम दुखी और व्याकुल भया हूआ रात्री के सम
य कुछ खान पान नहीं करता भया वडे सोच मै वि
लाप करते करते जब आधी रात बतीत होय गई
तब कुछ निद्रा आय जाती भई अंतरजामी
भगवान सुपने मै प्रकट होय वडी मधुर वाणी से क
हने लगे कि हे ब्रह्मन तुम चिंता मत करो मै तुम
को त्याग कर कहीं गया नहीं हूं अब मै प्रेम
की के वश भया हूआ ईहां तेरे ही घर मै निवास करता
हूं अब ते लेकर तूं मिथ्या टिन धरम जो है सो त्याग दे
और भ्रमन के श्रम को खोय कर अचल होय
करके घर मैं वैठ तेरे को इहां घर मै ही सब कुछ
प्रापत होवेगा हे भक्त तेरे को वृद्ध और निरबल
देखकर मै अपने हृदय मै वडा दुख और कलेश
मा[illegible]नता हूं ताते मेरे वचन से अब तेरे घर मै रिद्धि
समृद्धि सब आयत रहेगी इस प्रकार दीन
जनो को आनंद देने वाले दया की निधी भग
वान अपने भक्त को सुपने मै समुझाय कर फिर
तुरत हीं लुपत होय गये जब अंतरजामी भगवान
लोप होय गये तब त्रिलोचन ततकाल जाग पड़े
और सुपने को विचार कर वारवार मन मै भ
गवान कृपानिधान के चरन कमलों को देउ
प्रणाम करने लगा ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ कृपाना
थ मोहि भलो भुलाबा ॥ अंत्र जामि निज नाम

सरन सुरारी॥ ॥ अस निश्चय दृढ ताहि निहारी॥
अंत्र जामि प्रभु भक्त उवारी॥ सेइन धरनिदेव द्विज
गैयों॥ लषन सहित सिय राम गुसैयों॥ होत अस
ढ जान जल आये॥ करनधार कपि नाथ सुहाये॥
दोहा॥ तव नृप सन हनुमत कह्यो ~~[illegible]~~ वधत
वदन दस राम॥ कुसल लखन सिय सैन जुत
गवनं अवध निजधाम॥१॥ टीका॥ अव आगे
और वडे हरष और सुख के देने वाला भक्ती का सु
दर महातम जो है सो कथन करता हूं किनीलाच
ल परवत के पास एक कुलशेखर नाम कर के रा
जा प्रसिद्ध होता भया सो कैसा कि रामचंद्र भग
वान की भक्ती प्रीती वाला और तिन के ही पूजन से
वन मै लीन ॥ मानो सिय राम जी के चरन कमलों
का ~~[illegible]~~ भ्रमरा होय कर तिन के प्रेम मै मगन रह
ता था और दया धरम मै प्रवीन गुणों की खानी
सरव जीवों का सुखदायक और सव का हितकारी
आधे दिन लग रघुनाथ जी का भजन सुमरण क
रता ~~[illegible]~~ फिर राजकाज मै तत्पर हो
जाता तिस ते उपरांत फिर न्यारे वैठ कर रामा
यण को श्रवण करता था तव पंडित प्रवीन तिस रा
जा को और और अनेक प्रसंग जो हैं सो सव सु
नाय देता परंतू सीता जी के हर लेजाने [illegible]
का [illegible] विरहे विलाप और [illegible] दुख कलेश जो था सो
नहीं सुनावता था तव एक दिन पौराणिक जो पं
डित था सो ज्वर रोग कर के ग्रसा हूआ कथा वा
चने के लिये नहीं आय सका तिस दिन तिस
पंडित का पुत्र ~~[illegible]~~ राजा को रामचरित्र
श्रवण करावने के लिये तहां चला आवता भ
या परंतू पिता ने तिस को कुछ समुझाया नहीं
था कि सीता जी का हरना इत्यादि विरहे विलाप

जो है सो नहीं सुनावना सो बालक जब आयकरके
कणवा चने लगा तब तिसने प्रथम जानकीजीके
हरलैजाने का प्रसंग जो है सो सुनाय दिया कि इस
प्रकार रावण हर करके ले गया इस प्रसंग को सुन
ते ही राजा तुरत कोपसे धनुष बाण धारन करके अ
पने सेवकों को कहने लगा कि अभी विलंब को त्या
ग कर मेरा तुरंग अर्थात घोड़ा जो है सो शीघ्र स
जाय करके ले आवो मैं जबलग अपने कठिन
बाण मार कर इस अधम लंकपती को प्राणों
से रहित नहीं कर देऊंगा और सीते माता को
नहीं ले आऊंगा तबलग संसार मैं मेरा जी
वना हीं धिग है इस प्रकार प्रण कर और वो
तीव्र वेग वाले घोड़े पर सवार होय कर
राजा जो है सो समुद्र के किनारे पर चला आया
तहां घोड़े को कसा जो कोरड़ा है तिसका
घात देकर तुरत समुद्र के बीच चलाय देता भया
और हृदय मै ये ही अभिलाषा है कि लंकपती जो
रावण है तिसको अबी जाय कर के मार देऊंगा
ऐसे तिस राजा का दृढ निश्चय देख कर भक्तों
की पैज राखने वाले अंतरजामी घटघटमे
व्यापक और गौ ब्राह्मण पृथ्वी देवताओं
के रक्षक भगवान कृपा निधान तुरत हीं सीते और
लछमण जी के सहित तिसी समुद्र से जहाज पर
चढ़े हुये हनूमान जी को मलाह स्थापित किये हु
ये चले आवते भये जब निकट आय गये तब ह
नूमान जी कहने लगे कि हे राजन श्री रघुना
थ जी महाराज दसमुख जो लंका का पती रावण
था तिसको रण मे मार कर अब बड़ी कुसल
और आनंद से सीते लछमण और सब सेना के

सहित अपनी राजधानी अजुध्या जो है तिस को च
ले जाते हैं ॥२॥ चौपाई ॥ सुनत नरिंद्र बचन हनुमा
ना ॥ अति प्रमोद सुख मानस माना ॥ लीन तुरत नि
ज बाजि पराना ॥ अद्भुत चरित गगन दरसाना ॥ बलि
मुख भालु बृंद चहुं ओरा ॥ करत सुजात जयति धुनि
घोरा ॥ आगल देखि भूप निज सयना ॥ लिये सस
कल आव निज अयना ॥ सादर बोलि पुरानिक सोई ॥
तासु प्रसन्न बदन नृप होई ॥ जस सिय राम लखन
हनुमाना ॥ बानर बृंद गगन जस नाना ॥ देखे दृगन
भूप हरषाई ॥ पृथक पृथक सब दीन सुनाई ॥ बो
ल्यो विप्र सुनत अस बानी ॥ तुम हु धन्य नर
नायक मानी ॥ जासु भक्ति बस त्रिभुवन नाथा ॥
चाप निराच धरन कटि भाथा ॥ सीते लखन पव
न सुत संगा ॥ दीन्यो दरस भीति भव भंगा ॥ चरित
गुणोत्र विदत नृप रहयो ॥ सो तोहि आविरभूत
नृप भयो ॥ को तुव सरस विस्व बडभागी ॥ जो
कर रुचिर भक्ति श्रम लागी ॥ श्री रघुबीर जनन
हितकारी ॥ मे साक्षात तुमहि निधि कारी ॥ सिद्ध
साध जोगी मुनी जेते ॥ करि हठ जतन कठि
न श्रम तेते ॥ पाव न दरस जासु हरि केरा ॥
सो तुव नृपति दृगन भरि हेरा ॥ जब कोविद
अस बदन अलाना ॥ उपजा हृदय भूप तव ज्ञा
ना ॥ बारबार पछतावत सोई ॥ मै मूरख दुरम
ति बस होई ॥ रंजन धरनि देव दुज स्वामी ॥ ले
खे मै न भक्त अनुगामी ॥ अस चितत नरना
थ प्रबीना ॥ सो सरूप उर धारन कीना ॥ सि
य रघुनाथ चरन रुचि मानी ॥ राजित रहो
रुचिर रजधानी ॥ दोहा ॥ अस प्रकार इह चरि
त मै कुल शेखर नृप गाव ॥ देखे सिय वर
दृगन भरि जहि निज भक्ति प्रभाव ॥ अजहुं

अथ कुलशेखर भूप चरितं

दोहा॥ अब मैं आन यथामती भक्तीमहातम जोय॥ करहुँ कथन सादिर वदन लोम हरष प्रदसोय॥ चौपाई॥ कुलशेखर नीलाचल माहीं॥ राहाविदतएक नरनाहीं॥ राम भक्ति आसक्त प्रवीना॥ चारु राम अरचन मन लीना॥ सियेरामपद पंकज जासा॥ सदा मधुप इव प्रेम प्रकासा॥ दयाधरमरत भूप सुजाना॥ सकल सुखद संकुल गुणखाना॥ अरध भानु लौं सुमरत रामा॥ करहिं सुराज काज अभिरामा॥ तदप आत अलग मन भायन॥ सादिर सुनत भूप रामायन॥ विदुख पुरानक सकल सुनावन॥ कथा वचित्र सुखद मन भावन॥ हरषित करावत अवल नरेसहिं॥ पैं कछु विरह विखाद कलेसहिं॥ सियेहरण इत्यादि कजोई॥ करत न कथन विप्रवर सोई॥ अवसर एक पुरानक तेहू॥ वसोग्रस्त ज्वर मूर्छित गेहू॥ तादिन तों कर सुत हुलसावा॥ राम विनोद ललित मन भावा॥ सादिर नृपहिं सुनावन आयो॥ जनक न मर्म तासु समुझायो॥ सो सियहरन जवहिं दसमाथें॥ देत सुनाय भयो नरनाथें॥ सुनत भूप इह अनुचित भारा॥ उठ्यो तुरत करि कोप अपारा॥ गहि कुंदर सर खड़ग कराला॥ बोल्यो भृतन वचन महिपाला॥ मोर तुरग तुर वेग सजाई॥ आन कु अवहि विलम तजिजाई॥ जो लो मैं न वधहुं पति लंकैं॥ ~~करि प्रहार सरमार~~ वार वार सरमार निसकैं ल्यावहुं जगजननी कहं नाहीं॥ तो लो धिग जीवन जग माहीं॥ अस प्रण ठानि भूप दिगु भंगा॥ ह्वै अरूढ निज चपल तुरंगा॥ आवा तुरत वारनिधि तीरा॥ कसा यौत दै तुरग सरीरा॥ दीन चलाय मध्य निधि वारी॥ वधहुं जाय निज

महामूरख वृद्धी का हीन अपनी जड़ता के वश होयकर गौ ब्राह्मण पृथवी देवताओं के पालक और सर्व चराचर के स्वामी भगवान जो हैं सो लखे हीन हीं ऐसे चिंतन करके सिय रघुनाथजी के चरन कमलों में प्रीती भक्ती वाला भया हुआ सोई तिन का ध्यान हृदय मे धार कर आनंद पूर्वक अपनी सुदर राजधानी मे निवास करने लगा इस प्रकार रहि कुल शेकर राजा की ~~भक्ती की~~ गाथा जो है सो मैने गायन की है कि जिसने अपनी भक्ती के प्रभाव से श्री रघुनाथ जी को प्रतक्ष दरसन पाय लिया है आज भी जो पुरष कपट से रहित होयकर दृढ़ भक्ती से साचा प्रेम करेगा तिसको अवश्य दीन बंधू और कृपा सिंध का प्रकट दरसन हो सकता है इसमे कुछ संशय नहीं है ॥२॥ चौपाई ॥ आगल आन चरित नृपता सा ॥ करहु कथन दुखदोष विनासा ॥ राम भक्ति मंजुल सरसावन ॥ मंगल मोद सुजस उपजावन ॥ माधव मास ~~[illegible]~~ शुकल पख माहीं ॥ नरमृगराज चतुरदशि काहीं ॥ प्रादर भाव आदिति न केरि ॥ सुचिली लाव र ललित अनेरी ॥ सादिर कुलशेखर नर राई ॥ विरचत भयो भक्ति अधिकाई ॥ काहु हरन कश्यपु करि लीना ॥ कै प्रल्हाद शुक्र कौ कीना ॥ भृत सेवक इत्यादि बनाई ॥ जहँ तहँ कीन स्थापित राई ॥ तव शुक्राचार ज प्रल्हादै ॥ दानव वंस दमन अल्हादै ॥ विदत दनुज कुल नीति विधाना ॥ जस तहि रह्यो पठावत नाना ॥ राहा करत सासना सोई ॥ अरु प्रल्हाद भक्ति जिमि होई ॥ करी चरन सन यथा वंधावा ॥ अनल दगध जल सिंधु बुड़ावा ॥ भुजग डसन गिरि धरनि गिरावा ॥ जब इत्यादि देइ दिय नाना ॥ तबहु न राम भक्त कछु मान्यो ॥ तब

(margin) ॐ

(margin) भगवान का अवतार करने लगे मे

दनुजात भूप दिस ठान्यो॥ सायंकाल खड्ग कर साधा॥ पकस्यो वामपान प्रल्हादा॥ वदन मंदमति वचन उचारा॥ कहो राम कहं है कृष्ण तुमारा॥ जो केवल तुव मोर वखाना॥ दृष्टि अधम कछु एक न माना॥ जो कर पत्र सुपच उर तोरे॥ सो अब करहु प्रकट जड मोरे॥ दोहा॥ नतर वधहुं अब तोहि मैं मंद कुटिल रिपु मीत॥ तव बोल्यो प्रल्हाद अस राम चरन रति चीत॥३॥ टीका॥ अब आगे और बडी मनोहर सरव दोष दुखों के दूर करने वाली और आनंद सुजस के सहित रामचंद्रजी की भक्ती के अधिक करने वाली तिसी कुलशेखर भूप की भक्ती की गाथा जो है सो कथन करता हूं कि माधव मास जो वैसाख महीना है तिस के शुकल पक्ष और नरसिंह चतुरदशी को भगवान के साक्षातकार होने से लेकर सुंदर लीला जो है सो कुलशेखर राजा बडे सनमान से सब रचता भया कोई हरिण्यकश्यप कोई प्रल्हाद कोई शुक्राचार्य इत्यादि भूत सव क जो हैं सो सब बनाय कर यथा योग्य जहां तहां स्थापित कर दिये तव जिस प्रकार शुक्राचार्य दैत वंश के नाश करने वाले प्रल्हाद को तिन के वंश की रीती नीती और विधान जो पढावते रहे सो तैसे ही लीला के शुक्राचार्य भी ईहां प्रल्हाद को सासना और ताडना यथावत सोई सब करते भये और जैसे प्रल्हाद की भक्ती भई थी तैसे सब दिखाई हसती के चरन में वाधां अगनी में दगध किया समुद्र मे डुबाया महा विष के भरे हुये सरपों से डसाया और फिर परवत से गिराया इत्यादि अनेक हीं दंड दिये परन्तु राम भक्त प्रल्हाद जो था सो एक नहीं मानता भया रघुनाथजी की कृपा सें सब अनर्थों सें बचता रहा तव दैत राज

जो तिसका पिताथा सो परम कोपसें सायंकालके
समय हाथमें खड्ग जो तलवार है सो धारन करकर
और प्रह्लादको वायें चरनसे पकड़कर मंदमती
कहने लगा कि कहो मूढ अब तुमारे राम और
कृष्ण कहां हैं जिनके वलसें अधमतूं मेरे कथन
को नहीं मानता हैं अरे चांडाल जिनका वल तेरे
हृदयमें है तिनको अव मेरे सनमुख प्रकट कर
नहीं तो हे मंद कुटिल और शत्रू के मीत मैं तेरे
को दुष्ट अवी वध करता हूं अर्थात मारदेता हूं ऐ
से पिताका कठोर वचन सुनकर रामचंद्र जीके
चरनोकी प्रीतीवाला प्रह्लाद जो है सो अभय होयक
रके वड़ी मनोहर वानी से कहने लगा॥२॥ चौपाई॥
अनहित कथन जनक तुव रैसे॥ कहहु क
हां हरि भक्त सनेहे॥ इहन वचन तुव वदन
सुहाता॥ सो भगवान जनन निज त्राता॥ स
व मय सरव वरति सव काला॥ चर अचर
मन भक्त भव पाला॥ तजहु दुरंत कुटिलप
न मूरी॥ लखि सर वत्र राम परि पूरी॥ दैतरा
ट तव वदन उचारा॥ जो व्यापक सव राम तु
मारा॥ तो इह खंभ अग्र मुख जोई॥ यामें सो
तुमार प्रभु होई॥ तव प्रह्लाद भन्यो दनुनाहे॥
दुरजन हनन सत्य इहि माहें॥ अस सुनि दैत
राज रिसमाना॥ ताडन लग्यो खंभ जुग पाना॥ त
ततछन प्रवल कोप गरजाये॥ हरि नरसिंह रू
प प्रकटाये॥ लीलामात्र गहित असुरारी॥
लीनसि करन धरन पर डारी॥ नखेन विदारि
उदर खल मारो॥ अति दुर धरष तेज वपु धा
रो॥ दारुन कोप देखि समुदाये॥ हाहाकार
करत अकुलाये॥ करि प्रनाम तव भूप प्र
वीना॥ भक्तिभाव जुत पूजन कीना॥

कपटगत भक्ति दृढ करहिं समवद जेहु॥ लेहिं दृ
गन अवि लोकि विमल दरस प्रभु तेहु॥२॥ टीका॥
तब हनूमान जीका वचन सुनकर राजा परमआ
नंद और सुख को प्राप्त होता भया तुरत ही आप
ने घोड़े को पीछे फेरकर समुद्र के बाहर निकल
आया और क्या अद्भुत चरित्र देखता है कि आका
श मारग मे विलिमुख जो वानर और भालू जो री
छ सो अनेत हीं जयजय शब्द पुकारते हुये धाये
चले जाते हैं तब आगे राजा अपनी सेना देख
कर सब साथ लेकर फिरकर के घर को चला
आया तहां आवते ही तिस अपने पौराणिक
अर्थात पंडित को बुलायकर और प्रसन्न होयकर
जिस प्रकार सियाराम लषमण हनूमान इत्यादि अने
क वानर भालू आकाश मे आवते देखे ये भिन्नभिन्न का
रे सब सुनाय देता भया तब पंडित प्रवीन सुनकर
कहने लगा कि हे राजन तू आज जगत मे धन्य है जिस
की भक्ति के वश होयकर धनुषबाण धारी रघुनायकने
जानकी लषन और हनूमान जी के सहित संसार के भय
को दूर करने वाला दरसन जो है सो दिया है युगों का
विदित चरित्र जो था सो तेरे को आज प्रकट देखपड़ा है
तेरे समान आज दूसरा कौन बड़भागी है कि जिसकी
भक्ति [illegible] कर दीनो के हितकारी श्री रघुवी
र जी महाराज समुद्र के बीच आय करके प्र[illegible] हो प
गये हैं देखिये जोगी सिद्ध संत मुनी तपस्वी जिस
भगवान के दरसनको अनेक यतन और बड़े कठि
न हठ से तपस्या करते हैं सो भगवान के कीर्तन के
ध्यान मात्र भी नहीं आवते हैं तेरे पुन्य बड़े अप्र
रब हैं कि सो भगवान सनमुख नेत्र भरकर देख लिये
इस प्रकार जब पौराणिक ब्राह्मण ने कथन
किया तब राजा के हृदय मे ज्ञान का प्रवेश होजाता भ
या बार बार पछताय कर कहता है कि अहो मे

ष्या ऐसे तिनका महा कठिन कोप देखकर के
सब लोग हाहाकार शब्द कर कर व्याकुल हो य
गये तब राजा प्रणाम कर के बड़ी भक्ती प्रीती
से पूजन करता भया और फिर प्रह्लाद को ले
जाय कर के चरनो पर देउ प्रणाम करवाय कर नर
सिंह भगवान का कोप जो है सो शांती करवाया तब
लीला के कपट रूपी दैत राज का मरना सुन कर
■ लोग सब राजा को अपजस और निंदा कर
ने लगे ॥ ४ ॥ पालन करत काहु दुख राऊ ॥ का
हु मन त दुखन र मृगराऊ ॥ तब हु कपट करि उद
र विदार्यो ॥ भयो अनर्थ मनुज नृप मार्यो ॥ ति
न कर कथन सुनत नरराई ॥ कहत लोग सूर
ख समुदाई ॥ जानत कछु न अलप चित वरिये ॥
इ■न कर कथन कान नहि करिये ॥ तदनंतर आये
मन भाया । रामनौमि कर दिवस सुहावा ॥ तब न
रेस हरि भक्त रसी लाय विरचत भयो राम वर ली
ला ॥ उहां जवन नरसिंह बनायो ॥ इहां प्रकट
दसरथ विरचायो ॥ राम लछन सिय भरत सुजाना ॥
रिपुहन कौशल्यादिक नाना ॥ कयकि सुमित्रा
मंथ्रा जे■ तू ॥ वृद्ध सुमंत वसिष्ठ समेतू ॥ विर
चि अनेक आन नर वेता ॥ आदि जनम जुवराज
प्रयेता ॥ कौन चरित सब हृदय हुलासू ॥ गव
ने बहुरि राम वन वासू ॥ तब मिथ्या दसरथ
जे रहयो ॥ रघुवर विरहै विवस मृत भययो ॥ तो
कर मरन देखि निज नयना ॥ चक्रत रटत लोक
असवैना ॥ देख हु वन्यो वात अब सोई ॥ पूरव
चरित जवन विधि होई ॥ अस कहि बदने
लोग समुदाये ॥ करि विस्वास भवन निज आ
ये ॥ भक्ति महातम से सुधि माही ॥ सुखद

सत्य संशय कछु नाहीं॥ जे अनुकरण करहिं भगवंता॥ भक्ति प्रीति जुत कपट विहंता॥ तिनहुं न कछु अपराध जान भाई॥ लेहिं सुराम विमल पद पाई॥ दोहा॥ अस इह चरित यथामती मैं संतपत कछु गाव॥ इहि के सादिर सुनत नर राम भक्ति दृढ़ पाव॥५॥ टीका॥ तव कोई कहता है कि भाई इसके साथ राजा का कौं वैर विरोध था कोई कहता कि इस पर निरसिंह देव का हीं कोप था जिसतें कपट करके इसका उदर फार डाला है परंतु भाई वडा ही अनर्थ भया है कि राजा ने वृथा मानुष्य घात करवाय दिया है ऐसे तिनका कथन सुनकर राजा कहने लगा कि इहां महो मूरख लोग हैं गूढ़ वारता को कुछ जानते वूझते नहीं हैं इनका कथन जो है सो कान नहीं करना चाहिये अर्थात सुणना नहीं चाहिये तिसतें उपरांत फिर राम नौमी का सुभ दिन जो है सो आय जाता भया तव भगवानका भक्त राजा सुंदर राम लीला को रचता भया और जैसे चुतुरदशी की लीला मे जो नरसिंह भगवान वनाया था इहां राम नौमी की लीला मै सो राजा दसरथ वनाया और राम लछमण सीते भरत सत्रुघन कौशल्या सुमित्रा कयकै मंथरा वृद्ध सुमंत वसिष्ठ इनसे लेकर और भी जो जो स्त्री पुरष लीला मै वनाने योग्य थे सो सव रचना कर लई तव जनम ते लेकर जुवराज प्रयंत जो चरित्र था सो सव किया तिसतें उपरांत राम चंद्र जी वणवास को चले जाते भये तव लीला का राजा दसरथ जो था सो राम चंद्र जी की विरह के वश होय कर ते पुत्र हा पुत्र रटता हूआ प्राणों को त्याग देता भया ऐसे तिसका मरना देखकर अचरज के वश भये हूये सव लोग कहते हैं कि देखो भाई इहां भी सोइ वार्ता वनी है कि जो

ऊंचे नुरदशी की लीला मे प्रकट भई थी ऐसे कथन
करकर सब लोग अपने अपने घरों को चले आये
नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो इन भक्तों का महा
तम जो है सो सरवदा सुखदायक और सत्य है इस
मे कुछ संशय नहीं है जो पुरष इस प्रकार भक्ती
प्रीती से भग॰ के सुंदर चरित्र और लीलाओं को कर
ते हैं तिन को जगत मे कुछ भी असाधन नहीं है स
व सुगम और सहज है यतन के विना हीं भगवान
के निरमलपद को प्राप्त हो जाते हैं इस प्रकार इन
चरित्र जो है सो मैने यथामती संक्षेप करके कुछ
गायन कर दिया है इस के श्रवण करने से मानु
ष्य अवश्य रामचंद्र जी के चरनकमलों की भक्ती
प्रीती वाले हो जाते हैं॥ ५॥ इति श्री भक्त विनो
द ग्रंथे भगवद्भक्तिमहातमे भाषाटीकायां कुल
शेखर चरित वरणनं नाम सरगः

श्री च

तब प्रल्हादैं चरन जुहास्यो॥ प्रारदूल नरको प
निवास्यो॥ दोहा॥ कपट दनुज नृप मरत अस सुने
त लोग समुदाय॥ लागे अपकीरति करन बदन
विविध ततराय॥८॥ टीका॥ क्या कहता है प्रल्हाद
कि हे पिता इह तेरा कथन जो है सो सब अनहित
और अयोग्य है भक्त सनेही भगवान जो हैं तिन
को तूं कहता हैं कि कहां हैं तात इह वचन तेरे मु
ख से कुछ शोभा नहीं पावता है सो दीनबंधु भ
गवान तो चराचर मै व्यापक सर्वठौर परिपूर्ण
होय रहे हैं सो कौन स्थान और कौन चराचर है
किं ज्यां शावत भगवान नहीं समाये हूये तूं ऐसे
अपने दुष्ट सुभाव को त्याग दे राम सुखधाम
को सरवत्र और सरव व्यापी सब मे रमे हूये जा
न ऐसे प्रल्हाद का वचन सुनकर दैतराज
कहने लगा कि जो इस प्रकार तेरा राम सरव
त्र और सरव व्यापक है तो इह तेरे सनमुख
खंभ जो है इसमैं भी तेरा राम होवेगा प्रल्हाद
कहता भया कि दुरजनों को हनने वाले अर्थात
दुष्टों का नास करने वाले इसमै सत्य करके विरा
जमान हैं तब दैतराज सुनकर के परम को प
से दोनो हाथ मार कर तिस खंभको ताड़ने और
पीटने लगा जब इस प्रकार दैतपती ने खंभको
ताड़ा तब ततकाल हीं कोपसे गरजते हूये
नरसिंह भगवान जो हैं सो प्रकट होजाते भये और
प्रबल दैतों के राजा को कौतुक से सहजे हीं पकड़
कर पृथ्वी पर डाल कर तुरत दबाय लिया
और फिर ततकाल नखों से तिसका उदर फाड़
कर प्राणों से रहित कर दिया और ऐसा दुसह ते
ज धारन किया कि जो किसी से सहा नहीं जा

कैसी कि सरद रितू का सुखदायक चंद्रमा जो है ति
स के समान श्रद्धावाले लोगों के कुमदरूपी हृद
य को विकास मान अर्थात प्रफुल्लित करने वाली
ऐसी जो भक्ती की वड़ी मनोहर और सुंदर गाथा
है सो हे संत जनो जैसी कछु मंदमती के अनुसार
होय सकती है आपके आगे गायन करता हूं दक्षि
ण देश में ब्राह्मणों के वंस विखे सुंदरव्रत के धा
रने वाली रक्मिमति नाम करके एक स्त्री प्रसिद्ध हो
ती भई सो कैसी कि पती पुत्र से रहित वहुत धन
वाली और धरमधीरज की निधी थी तब एक स
मय संध्याकाल विखें एक संत महातमा तिलक
और गले में तुलसी की माला धारन किये हूये वड़ी
अदभुत बाल गोविंद की मूरती लिये हूये कृस्न कृ
स्न रटते तिस के घर में आय प्रापत भये तब र
तिमती घर में आय हूये संत को देखकर हरष से
प्रफुल्लित भई हुई नेत्रों में प्रेम जल भरकर दंडप्रणा
म करती भई और भक्ती प्रीती से चरन प्रक्षालन
करवाय सो ई चरनों का जल सीस पर चढावती भई
~~और पान करती भई~~ और आचमन भी करलेती भई
तिस से उपरांत फिर घर से पवित्र भोजन जो है सो ले
आई और वड़ी प्रीती सनमान से अतिथी से
त को देकर कहने लगी कि भगवन अव वैठ कर रु
ची से भोजन पाईये तब संत महातमा ने ति
स का अतिथी सतकार गृहण करके सायंका
ल जानकर अपना संध्यादिक करम जो था सो
सव किया ~~फिर वैसा किया~~ फिर ब्राह्मण की स्त्री
ने जो भोजन दिया था सो पहिले बाल गोविंद
की मूरती के आगे रखकर और नैवेद लगाकर
पीछे आनंद पूर्वक आप भी पाय लिया तब
बाल गोविंद की मनोहर मूरती को देखकर प्रेम

करके व्याकुल भई हुई॥ हाथ जोरकर जिस प्रका
र भक्तीप्रीतीसे कहने लगी सो आगे कथन किया
जाता है॥ २॥ चौपाई॥ मै निज जनम वंस दुजधा
रा॥ पती पुत्र वर जत संसारा॥ मोरे नाथ कवन ग
ति होई॥ कौन वशेष धरम नहिं कोई॥ अव लग
वृथा जनम निज हारा॥ भव निधवार अगम कह पा
रा॥ विनु भगवान चरन रति होई॥ त सो न विकट सिं
धु भव कोई॥ तातें सुनहु संत उपकारी॥ पै हूं नाथ
जौ कृपातु मारी॥ तोइ हरनवाल मुद्र भगवाना॥ मोरे हृ
दय परम प्रियमाना॥ इनकर सदृश मूरति आना॥ मैं नि
ज भवन वेदि सनमाना॥ मंत्रुपदेस नाथ तुव पाई॥
पूज्योप करण राखि समुदाई॥ विरचि भवन वर नव
ल सुहावा॥ तहां करहुं पूजन मन भावा॥ अस प्रका
र करि देवन देवा॥ मंजुल भक्ति भाव जुत सेवा॥ तु
व संसर्ग संत उपकारी॥ तरं विकर संसृति नि
धकारी॥ जो लो इन न होंहि सब स्वामी॥ तो लो ई
हां वसहु निस कामी॥ हरि वदनावन प्रीति सुहा
ई॥ देखि विप्र पतनी मनभाई॥ हरषत संत सु
ष्ठ व्रतधारी॥ मृदु माधुरि मुख गिरा उचारी॥ सु
नहु सुशील रुचिर व्रत धरनी॥ तुव आपन कबु
पूरव करनी॥ भई जगत पति पुत्र वहीनो॥ पै अव
उदय भाग निज चीनो॥ देखि वाल गोविंद सुहाई॥
माधुरि मृदुल मुद्र मनभाई॥ तोरे हृदय उपज
अनुरागा॥ श्री गोविंद चरन मन लागा॥ सखि
जहिं भई अमल मति तोरी॥ तुमहु धन्य जग आ
ज न थोरी॥ मंत्र जोग जप साधन चारू॥ सुचि
व्रत धरम जतन संभारू॥ इन तें रमार मन जग
वीजा॥ विप्र पतनि संसार नरीजा॥ केवल भ
क्ति विवस भगवाना॥ सदा भक्ति प्रिय भगवन मा
ना॥ चारु प्रेम रज जे वत होई॥ भक्त अमि षृ

काम कल जोई॥ पूरन दीन बंधु सत काला॥ सदा
कृपाल भक्त प्रण पाला॥ पती पुत्र सदृश जगजे
हू॥ अवदिल अमल कपट गतने हू॥ केशव चर
न कीन संसारा॥ लीन तिन है निज जनम सुधारा॥
दोहा॥ कृष्ण मेत्र पावन पतित अभिमत फलदा
तार॥ आवागवन निवरण भय हरण सकल सं
सार॥२॥ टीका॥ कहती है कि मै ब्राह्मण वंस विषै
उतपन्न भई परंतू पती भी मृत होय गया और सं
तान से भी शून रही अब कहिये कि मेरी कौन गती
कोई ऐसा धरम भी न हो किया कि जिसके आधार से
मै आगे सीझने वाली होती और परलोक मे मेरा कु
छ भला होता अब लग जनम जो है सो संसा
र मे वृथा ही गवाया है और इह संसार समुद्र
कैसा अगाध है कि इसके पार को प्रापत होना बड़ा
कठिन है भगवान कृपानिधान के चरन कम
लों की होने के बिना इह महा विकट समुद्र जो
है सो अपने पार को कदाचित नहीं दिखाय स
कता है तातें हे संत उपकारी जो कबी आप
की मेरे पर कृपा हो तो इह ~~[illegible]~~ भगवा
न की सुंदर बाल मूरती जो है सो मेरे हृदय को
अत्यंत प्यारी लगी है नाग्य रन के समान और
मूरती जो है तो तुमारे उपदेश के अनुसार मै
सुंदर नवीन भवन बनवाय कर पूजन के सब
समाज सहित तहां स्थापित कर के भक्ती प्री
ती से रात्री दिन पूजन सेवन किया करूं इस
प्रकार दीनबंधू की सेवा कर कर तुमारी संगती
के प्रसाद सों इस महा विकट संसार समुद्र से पार
होजाऊं हे दया की निधी जब लग इह
वारता नहीं होती तब लग आप कृपा कर
के इहां ही वास करिये तब इस प्रकार र

अथ रतिमति चरितं —

दोहा॥ काम कल्पतर तरन भव दुस्तर तरनि नु रेत॥ श्रोतन श्रवणामृत भरन करन पारणा श्री केत॥ भक्ति प्रवरधन प्रेमप्रद सुखद सरद सतिभाय॥ अज्ञजन मन कुमदकल विकसन विमल वनाय॥ चौपाई॥ सो मै चरित चारु मनभायन॥ मति अनुकूल करहुं कछु गायन॥ दतना दुजन वंसवर नारी॥ रति नाम विदत व्रत धारी॥ पतिसुत वितत विविधं धरनी॥ धीरय धरमवत्सला तरनी॥ अवसर एक संत सुखदाये॥ संध्यासमय सदन तहि आये॥ भूषित तिलक कलित वनमाला॥ रटत वदन कल कृस्न कृपाला॥ लिये ललित गोविंद सुहाई॥ मूरति वाल विमल मनभाई॥ रतिमति निरखि संत गृह आये॥ आवृत प्रेम वार दृग छाये॥ देइ प्रणाम हरष उर दीने॥ करि पादादि आचमन लीने॥ भोजन चारु सरस सुखदाई॥ सादिर दीन चरन सिरनाई॥ सो करि गृहना अनधि सतकाहू॥ सायंकाल संत वृत धाहू॥ सुचि संध्यादि करम निज कीना॥ भोजन विप्र पतनि जे दीना॥ मूरति ललित वाल मनमाना॥ सनमुख राखि प्रीति सनमाना॥ विधिवत संत सुपूमनभावा॥ हरि कि रुचिर नैवेद लगावा॥ पाछे आपु हरष उर छाये॥ लीन प्रवीन पाक कलपाये॥ दोहा॥ मूरति वाल गुविंद कर दुजपतनी दृग हेरि॥ मनत भक्ति जुत वचन कर जुक्त प्रेम मति येरि॥ १॥ टीका॥ अब आगे भक्ती और प्रेम के अधिक करने वाली और श्रोता जनो के कानो मै अमृत के भरने वाली कामना के सिद्ध करने को कलप वृक्ष और दुसतर जो तरना बहुत कठिन है ऐसे संसार समुद्र के तारने को वेड़ा फिर

तितेहा॥ बिरची नवल ललित निजगेहा॥ सादिर विप्र पतनि पैं लावा॥ लीन अभिषृहृ चिरनिजपावा॥ रति मति परम हरषबस होई॥ मूरति बाल देव दुति जोई॥ विधिवत करत स्थापित गेहा॥ पूरत रोम रोम बपु नेहा॥ जियसुत भाव दाविरति मानी॥ पूजन लगी करम मनबानी॥ फलअरिषृ जेनु भीत कमाला ~~किये~~॥ किये अले कृत गोविंद वाला॥ लाग दोष दृष्टि जनि काहू॥ हृदय प्रेम मनु जलध अथाहू॥ सुंदर बसन आभरन साजहिं॥ कोटि मदन छवि देखत लाजहिं॥ करिक पोल कल काजल लांछित॥ लेत ललित फल मानस वांछित॥ अवसर सरद उसन अतिवारी॥ मेखज मेलि देत रुज हारी॥ दोहा॥ निसि मूरति गोविंद कहें लालन वचन अलाप॥ करत सयन उर लाय निज मंद मंद मृदु चाप॥

१॥ टीका॥ इस प्रकार जब संत महातमा ने प्रेम भक्ती के अधिक करने वाले वचन उचारन किये तब तुरतहीं रति मति के हृदय का अंधेरा दूर होय कर ज्ञान प्रकाश होय गया ततकाल सिलपकार जो पाषाण की मूरती बनाने में चतुर था बुलाय लिया तिसको बालगोविंद की सुंदर मूरती जो थी सो दिखाय दई तिसतें उपरांत चारसै मसीव सु धन ल्याय कर और बहु सनमान से संत महातमा को देकर फिर बारबार चरनो पर सिर नाय करके बिदाय कर देती भई तब संत जो थे सो प्रसन्न होय कर कृस्न कृस्न ररते हूये अपने मारग को चले गये ई हो सिलपकार जो थे सो कोई एक दिनों में बाल गोविंद की बड़ी अदभुत मूरती बना

पकरके रति मति के पास लेआवता भया सो भग
वानकी बालमुद्राको देखकर बड़ी प्रसन्न होयगई
तिस मिलकारने जो ग्राम्मण सोई देकर तिसके म
नोरथ को पूरण किया फिर भगवानकी मूरती वि
धीपूर्वक बड़े सनमानसे घरमे स्थापित करके
रोम रोम प्रेम और हरषसे पूरित भई हुई हृदय
मै पुत्र भाव राखकर मन तन और हित चित सेति
नका नित्य पूजन सेवन करने लगी और अरिष्ट
फल कि जो रीठे हैं तिनकी ग्यानककी सी माला गलेमे पहिरायदई

कि किसीकी दोषदृष्टी अर्थात नजर नालगिजावे
और हृदयमे समुद्रवत अपार प्रेम जो है सो पूरित
होयरहा है फिर बड़ी प्रीती से अति शोभा वाले भू
षण वस्त्र सजावती है कि जिनको देखकर कोटि
कामदेव की छबी भी लज्जा को प्रापत होती है औ
र बालभगवानके सुंदर कपोल जो हैं तिनपर
काजलके बिंदू दे राखती है सीत कालमे गर
म जलविखें औषधी घोलकर नित्य पान करा
यदेती कि किसी रोगका सपर्श ना होजावे और
रात्री के समय बाल गोविंद की मनोहर मूरती
को मुखसे बड़े लाड़ प्यारके वचन आलाप कर
और हाथों से मंदमंद कोमल थापी दे देकर अ
पने हृदयसे लगाय करके सोयरहती है ॥२॥
चौपाई ॥ प्रात होत सुंदर सुखदाई ॥ बाल केलि
मूरति मन भाई ॥ प्रभु आगे राखत हरखोनी ॥
तैलाभ्यंग करत कलपानी ॥ देत सनान उ
[illegible] ष्ण जल संगा ॥ पोंछति बसन विम
ल मृदु अंगा ॥ करि भाषण अल्हाद बढावन ॥
सुतसम करत विलास सुहावन ॥ असप्रका
र कछु काल सराना ॥ तासु करत पूजन भ
गवाना ॥ जहंजहं कथा कीरतन होई ॥

तहँ तहँ जात श्रवण हित सोई॥ एक दिवस सुंदर थल ताहीं॥ चारु पुराण भागवत माहीं॥ इह प्रसंग पौराणिक गावा॥ नंद लाल नवनीत चुरावा॥ तब पकरन हित जसुमति माई॥ कोमल लकुट लेत कर धाई॥ तिस बस देखि जननि भगवाना॥ तास त्रास ताड़न जिय माना॥ भागे बाल देखि तब माई॥ द्रुत गति लीन पकरि लग जाई॥ करन प्रहार कपोलन दीना॥ पुनि मृतका प्रभु भक्षण कीना॥ ता पै जननि बांधि रजु संगा॥ ताड़न लगी ललित मृदु अंगा॥ जब इह सुन्यो श्रवण रतिमाती॥ हाहाकार करत बिलपाती॥ दोहा॥ हा हा निरदय हनत कत मृदुल गात मम बाल॥ अस कहि मुरछित धरन परि तजे प्राण तत काल॥४॥ और प्रातःकाल होता तब बालकों के खेलने वाली जब मूरती जो हैं सो प्रीती से ल्याय करके आगे राखदेती और अपने हाथों से उनकी कोमल मरदन देकर फिर गरम जल के साथ स्नान करावती और उज्ज्वल वस्त्र से अंगों को भली प्रकार पोंछती और सुलावती थी तिस ते उपरांत मुख से आनंद दायक मधुर मधुर वचन बोलकर पुत्र के समान हीं दीनबंधु को खिलावती और रिझावती थी इस प्रकार रतिमति को भगवान कृपानिधान का पूजन सेवन करते करते कुछ काल व्यतीत होय गया जहां जहां कथा कीर्तन और भगवान के गुणानुवाद गाय होते थे तहां तहां बड़ी प्रीती भक्ती से जाय कर श्रवण करती थी तब एक तहां श्री भागवत की कथा में इह प्रसंग आया कि नंदलाल भगवान ने नवनीत जो माखन है सो चुराया तब देखकर के जसोधा माई हाथ में एक कोमल छोटी

(margin) ८६, हिंदु, ८७, ओं सद्गुरु, ८८, टीक

तिस ति को भगवान के चरनकमलों मै दृढ़ प्रेम
देखकर संत महातमा जो थे सो वड़े प्रसन्न होयक
रके कहने लगे कि हे सुंदर व्रत के धारने वाली सुशी
ले इह ~~तुमारे~~ तुमारी कुछ पूर्व जनम की करनी है
जो पती पुत्र से तूं वरजित रही परंतू हे हरी भक्ते अव
तूं अपने भागों की वड़ाई जान जो इह भगवान की वा
लमुद्रा देखकर तेरे हृदय मै प्रेम उतपन्न भया है और
श्री गोविंद के चरनकमलों विखे तेरा मन लाग गया
है और तेरी वुद्धी जो है सो सहजे हीं निरमल होय गा
ई है तूं आज जगत मै धन्यता की निधी होय गई है
हे सुशीले जहां लग मंत्र जप जोग साधन धरम व्र
त इत्यादि अनेक यतन हैं इन सव तें लछमी के
पती और जग के बीज भगवान कदाचित नहीं री
झते हैं तिन को तो सदा भक्ती हीं प्यारी है दीनवंधू
केवल भक्ती के वश होते हैं प्रेम रज्जू के साथ वंधे
हूये कृपासिंधू जगत मै अपने भक्त के मनोर्थों
को सफल करते हैं और सदैव भक्त के प्रण को पा
लते हैं जिस किसी ने निसकपट निरमल चित
होयकर पतीपुत्र के समान भगवान विखे प्रे
म किया है तिसने दीनानाथ की कृपा से जगत मै
अपना जनम सुधार लिया है ~~[illegible]~~ इह
कृष्ण मंत्र जो है सो पतित पावन है अर्थात पापीज
नों को पवित्र करने वाला है और आवागवन जो
जगत मै जनम मरण है तिस के भय को दूर करने
वाला और मनवांछित फल के देने वाला है॥
२॥ चौपाई॥ अस प्रकार जव संत उचारा॥ दुज
नि तिमर उर भयो उज्यारा॥ सिलपकार तर वोलि
पठावा॥ तासु वाल हरि मुद्र दिखावा॥ नम्र त
वहुरि चरन सिरनाई॥ मणिगण वसन विम
ल धन ल्याई॥ देत विदाय कीन सनमाना॥ च
ले संत सुमरत भगवाना॥ सिलपकार तव मूर

दोहा॥ इह कीन्यो संकलप दृढ जब बलि भूप कुमा
रि॥ भई पूतना विदत सो द्वेष भाव जिय धारि॥ रंज
न जन मन का हि तिन लव निज पान कराय॥ ज
सुमति कर सुंदर सुखद लीन परम गति पाई॥

टीका॥ तब लोग सब देख कर के अचरज के वश
भये हुये हाहाकार करते चले आये और ब्रह्म
ण की हीं कृष्ण प्रमातमा की भक्ती वाली यतन
के विनाश हु जे हैं शरीर को त्याग कर कृष्ण भग
वान की कृपा से जसुमती के तुल्य सुंदर गती जो
है सो पाय लेती भई देखिये कैसी बुधमान रती मती
कि जो ज्ञान ध्यान जप जोग करम धरम तीरथ
व्रत इत्यादि अनेक हठ और साधन जो हैं सो स
ब त्याग कर केवल कृष्ण भगवान के चरन कम
लों का पवित्र प्रेम और दृढ भक्ती कर के मुनी जोगी
जनों को दुरलभ जो पद है तिस को प्राप्त होयगा
ई तो ते इह भगवान की भक्ती जो है सो सदा
वोत कलप बृक्ष के समान सुख सुजस के स
हित सरब कामना के सिद्ध करने वाली है और दे
खिये कि जब बामन रूप धार कर भगवान ब
ली राजा के घर में गये तब तिस की कन्या जो
थी सो भगवान की तिस मनोहर मूरती को दे
ख कर आचरज भई हुई हृदय में चिंतन करती
है कि जगत में सो पुन्य मान और बडे भागों वा
ली माता है जिस का इह सरब अंग सुतम औ
र सौंदर्यता की निधी ऐसा बालक है
जो कबी भगवान कृपा कर के ऐसा मनोहर बालक
मेरे को भी देवें तो मैं अत्यंत प्रेम से तिस को
स्तन पान अर्थात ममा पिलाय कर
के रमायकर

नित्य वडे लाड और प्यार से पालती रहूं ऐसे प्रेम और प्री
प्रीती कर कर संसार मै जनम का फल जो है सो पा
य लेऊं इस प्रकार जब बलीराजा की कन्या ने हृद
य मै संकलप धारन किया तब वे आय कर के पूतना
जो है सो प्रकट होती भई और चित्त मै द्वेष भाव रा
ख कर दीनहितकारी भगवान को अपना स्तन
पान कराय कर जसुमति के तुल्य सुंदर गती को
प्रापत होय गई देखिये कि दैत की कन्या जो द्वेष
भाव कर के सुंदर मुकती को प्रापत होय गई तो रति
मति जो सत्य सनेह और भक्ती प्रीती वाली थी
दिव्य गती को क्यों ना प्रापत होती ॥ ४ ॥ इति श्री
भक्ति विनोद ग्रंथे भगवद्भक्ति महातमे भाषा
टीकायां रति मति चरित वरननो नाम सरगा

सी छड़ी ले करके पकड़ने के लिये धाई ऐसे मा
ता को कोप के वश आवती देख कर और हृदय में
डर ने का भय मान कर बाल गोविंद जो हैं सो भाग
चले तब जसोधा माता ने वेग से धाय कर पकड़
लिये और कपोलों पर अर्थात मुख पर तमाचों की
मार देती भई तिस तें उपरांत फिर नंदलाल ने मृतका
जो माटी है तिस को भक्षण किया तिस पर जननी
ने रज जो रस्सी है तिस के साथ बांध कर कोप से को
मल अंगों पर मार देने लगी जब इस प्रकार से गरति मति
ने भक्षण किया तब मनों विलाप से हाहाकार कर
ती हुई कहने लगी कि हे कठोर हे निरदय मेरे
इस कोमल शरीर वाले बालक को क्यों मारती है
इस प्रकार कथन करके मूर्छा होय कर पृथवी पर
गिर पड़ी और तुरत ही प्राणों को त्याग देती भ
ई ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ लोक बि लोकि चरित विसमा
ये ॥ हाहाकार करत सब आये ॥ सो दुज पतनि कुसुम
पद रागी ॥ तत छन बिनु प्रयास तन त्यागी ॥ जसु मति
सदृश रुचिर सुहाई ॥ कृष्ण प्रसाद लीन गति पाई ॥
ज्ञान ध्यान जप जोग सुकरमा ॥ तीरथ अटन कठ
न ब्रत धरमा ॥ इह तजि सकल चरन हरि कीना ॥
प्रेम पुनीत परम पद लीना ॥ तो ते भक्ति कलप त
रु नारू ॥ सुख प्रद सुजस काम प्रद सारू ॥ ब
लि गृह कीन गवन जब स्वामी ॥ बामन रूप म
हा प्रभु नामी ॥ तो कर सुता देखि धज सोई ॥ चिं
तन करत चकित चित होई ॥ इह सुत जास ललि
त मृदु गाता ॥ सो बड़ भागि धन्य जग माता ॥ कब
हुं कि देहिं देव निज दाया ॥ अस सुत मोहि मंजु
मन भाया ॥ तो मैं स्तन पानादिक लालन ॥ करि
स हरखि कराय करहुं नित पालन ॥ अस प्रकार क
रि श्रीखि सु होई ॥ ले हु जनम फल से सु तिपाई ॥

सनमुख होय करके प्रजापाल को देने लगा तव राजा
जो चौपट की खेल मै लीन भया हूआ था भगवान
का पवित्र प्रसाद जो है सो वायां हाथ पसार करके ले
ने लगा तव ऐसे अनुचित और अनहित को पूजा
री देख कर प्रसाद नहीं देता भया और पीछे फिर
आया हृदय मै विचार करता है कि मैं ने जान लिया
राजा जो है सो राज्य के मद मै उनमत्त होय गया है
देखो इन सरव जगत के पवित्र करने वाले भगवान
का प्रसाद जो है सो वायां हाथ निकाल करके ले
ने लगा ऐसे पूजक विचार कर रहा था कि इतने
मै राजा भी चौपट की खेल से नवृत्त होय गया था
तव अपने तिस अपराध को हृदय मै सुमर्ण क
र के अनेक प्रकार पछतावने लगा कि देखो
मेरी मती कैसी मलीन होय गई जो ~~[illegible]~~ अव
तीन लोक के स्वामी का पवित्र प्रसाद मै मैं दम
ती वायां हाथ निकाल करके लेने लगा अहो
अभागी वडे उग्र दंड का अधिकारी ~~[illegible]~~
और महांपापी होय गया हूं अव इस दुखदा
यक और दुष्ट मेरा वायां हाथ जो है इस का काट
ने के बिना और तो कोई बदला ~~[illegible]~~ देख पडता है तो ते राही
योग्य है कि अव इसको काट हीं डालूं ॥१॥ चौ
पाई ॥ तव चिंताकुल नृपहिं निहारा ॥ रहो
प्रवीन राक भूत प्यारा ॥ कहत इकोतव चन कर
जोरी ॥ दसा विवरण नाथ कस तोरी ॥ जानि
उचित मोहि देउ जनाई ॥ करहुं उपाय जव
न वनि आई ॥ भन्यो नरेस कपट जुत तेहू ॥
अति अचरज सुनहो भूत एहू ॥ काहु पिसाच
भीम वपु धारी ॥ मोहि जड देत खेद निसि सारी ॥
सपना मार मोर तुव आई ॥ रहउ सजग [illegible] आ

जहँ निसि भाई॥ सेवक सुनत भूप असवानी॥ ठ
ढ़ो रजनि रह्यो तहि पानी॥ अर्ध रयन निद्रा वस
होयो॥ देखो द्वगन भूप मृत सोयो॥ तव नर सवि
रचत ---- द्रुत चालू॥ निज सद्वृश परजंक अकालू॥
मीतो वहिर देड कर धारी॥ मगगवास करवामनि
कारी॥ ताइन लग्यो सेज निज राया॥ खुलेनयन से
वक अकुलाया॥ धायको पवसहुंड्यग्रसो॥
नृप कर वाम कारि महि डारो॥ केहित पानि नृपति त
हि पाहीं॥ आकाकछु नदोसमनमाहीं॥ सो विलो
कि तन केपन लाग्यो॥ भयवसविकल धीर उर त्या
ग्यो॥ चाहित तासु निरखि नरराया॥ ---- मनि म
नि विविध वदन सनुदाया॥ इन अपराध नहिंन भृ
त तोरा॥ देउ रहा वाम कर मोरा॥ इहि सन मेद
विवस अ जाना॥ मैप्रसाद मांग्यो भगवाना॥ अस
प्रकार ले भाषग लगारा॥ सेवरयन मृत भूप निवारा॥
देहा॥ तहिरजनी भगवंत अस दीन्यो सपन पु
जारि॥ सो अपराध प्रसाद कर सको न भूप सहा
रि॥ तजि दीन्यो निज वाम कर ते अपमान विचा
र॥ तहि सद्वृश प्रिय आन मोहि नहिं न भक्त संसार॥ अव तैं तुव उठि प्रात जन सुचि प्रसाद
मम लेहु॥ ता केसाहिर देहु नित गवनि हरखजुत
गेहु॥ कहित कर सन नृपति वर जव प्रसाद म
म लेहिं॥ उपजहिं नूतन तासु कर रुचिर तुरत व
ला तेहिं॥ ---- सो देहै नृप कटत कर
मोर वाटिका वोय॥ उपजहि दमनक तासु तर मु
हि भावत प्रिय जोय॥२॥ टीका॥ तव ऐसे चिंता
करके व्याकुल राजा को देखकर एक तिनका
वड़ा सुहृद और प्यारा सेवकथा सो ---- राजा
के इ कांत न्यारे देखकर के हाथ जोड़कर क

हने लगा कि हे नाथ तुमारी दशा कैसी विवर्ण
सी होय रही है अर्थात तुम क्यों उदासीन होय रहे
हो योग्य जानकरके मेरे को वताय दीजिये मैं जै
से वनसकेगा तिसका उपाय करूंगा तव राजा हृ
दयमें कपट राख कर कहने लगा कि हे हितकारी से
वक वडे अचरज की वात है तुम श्रवण करो कि ए
क कोई महाभयानक दुष्ट पिसाच है सो रात्री के स
मय नित्य आयकर मेरे को वडाभारी कलेश देता है
तुम आज रात्री को मेरे [illegible] के सोवने वाले घर
मै आयकर और तलवार पकड कर सावधान
ता से स्थित होय रहो तव सेवक राजा की आज्ञा
पायकर रात्री के समय हाथमै खड्गधारकर
तहां लोप होय करके स्थित होय रहा जव आधी
रात वतीत भई तव राजसेवक निद्रा के वश
होयकर सोय गया ऐसे सेवक को सोये हुये दे
खकर राजा तुरत उठकर और पलंग पर अ
पने समान वस्त्रों का आकार वनायकर फिर
हाथमै एक दंड धारन करके दिवाल के पार
जाय स्थित भया और तहां से एक [illegible]
गवाक्ष जो [illegible] है तिसके रसते [illegible] वांयां हा
थ निकाल कर दंड से अपनी सेजा को ताडने
लगा तव सेवक जो सोया हुआ था जागपडा
जाना कि पसाच राजा को कलेश देरहा है
तुरत कोपसे धाय कर और खड्ग का प्रहार दे
कर अर्थात तलवार मारकर प्रजापाल का
वांयां हाथ काट कर पृथवी पर गिरायदिया
तव राजा वैसे ही हा करते हुये तिसके पास
चला आया सो देखकर भयके वशहोय

अथ भूप चरित वरनन

दोहा॥ पुरुषोत्तम पुर माहिं इक वैस्नव भूप सुजान॥ सुंनत दंत दया युकत निरत भक्ति भगवान॥॥ चौपाई॥ अवसर एक चतुष्पदि क्रीडा॥ रह्यो सि निरत मुदित गत ब्रीडा॥ तव श्री जगन नाथ सुपुजारी॥ पावन हरिप्रसाद कर धारी॥ सादिर नृपहिं देन हित आवा॥ राऊ अस तो केलि मन लावा॥ वाम पानि निज दीन पसारी॥ तव अनहित नृप देखि पुजारी॥ धरि अमर्ष उर चल्यो पराई॥ दीन नसो प्रसाद नरराई॥ उर विचारि पूजक अस लयऊ॥ राऊ राज्य मद वेष्टित भयऊ॥ हरि प्रसाद जग पावन जोई॥ लेवत वाम पानि कठि सोई॥ इत नरेस जव केलि निवा स्यो॥ सो अनर्थ निज हृदय विचा स्यो॥ मे प्रसाद वर त्रिभुवन नाथा॥ मांगा भेद वाम कठि हाथा॥ याते वन्यो देउ अधि कारी॥ मूढ अधम मति पातिक भारी॥ दोहा॥ अव इहि विनु छेदन करन नहिंन आन परिहार॥ दुष्ट वाम कर मोर इह अस नर नाथ विचार॥२॥टीका॥ नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो अब आगे और वडी मनोहर और कृस्न प्रभातम्य के चरन कमलों कीभ क्ती के देने वाली गाथा जो है सो स्रवन करिये जगननाथ पुरी विषें एक ब्राम्हन और ईद्रे जीत वैस्नव राजा भगवान का दृढ भक्त होता भया एक समय सो प्रजापाल आनंद से चौसर जो चौपट है तिसकी खेलमे लीन होय रहा था तव जगन नाथ भगवान का पुजारी जो था सो ~~भगवान~~ का पवित्र प्रसाद लिये हूये वडे सनमान से राजा के देने को आया और जव ~~पुजारी सोप्रस~~

श्रीरामजी

तुरत उपजायो॥ नूतन पानि परम सुख पायो॥
छेदत रह्यो जवन नृप पाना॥ दीन बंधु वाटि
के भगवाना॥ भयो रुचिर तर दमनक सोई॥
ता सम प्रसून पत्र सन कोई॥ करहिं जजन पुरषो
तम जाई॥ लेहिं ललित फल अभिमत पाई॥
हरि प्रसन्न हित संमति आना॥ नहिं उपाय कोउ
भक्ति समाना॥ दोहा॥ पयन लोक परलोक जस
सकल जीव सुखदाई॥ चारु भक्ति भगवान अस
वेद पुराणन गाई॥३॥ इस प्रकार पुजारी जो है
सो रात्री को स्वपन देखकरके प्रात होते दीनबंधु
भगवान का अमृत प्रसाद लेकर के राजा के भ
वनों को चला आया तब भगवान के पुजारी
को आवते देखकर राजा सनमाने उठ खड़ा भ
या और जब पुजारी ने आयकर के नैवेद दिया
तब प्रजालने भक्ती प्रीती से प्रणाम करके ले
लिया तिसके स्पर्श होते ही तुरत राजा का हाथ
जो ॰ सो नवीन उतपन्न होय जाता भया इस अद
भुत को देखकर सब लोग परम आनंद को प्राप
त होय गये ॰ तिसते उपरांत फिर वे राजा का
हाथ जो कटा हुआ पड़ा था पुजारी ने ले
जायकरके दीनबंधु की आज्ञा अनुसार
कृपासिंधु की वाटिका अर्थात बागीची मे
बीज दिया सो भगवान की इच्छा सें तिस
का ॰ अत्यंत शोभावाला दमनक ना
मा वृक्ष जो है सो प्रकट होय जाता भया औ
र कैसा विचित्र कि जिसके पुष्प पत्रों हे पुरषोतम
भगवान कोई पूजन करे तिसके मनवांछि
त अर्थ जो हैं सो सब सिद्ध और सफल होजावें

नाभादास जी कहते हैं कि हे संत भक्तो इस प्रकार
इन राजा की सुंदर भक्ती जो है सो मैने गायन की है
देखिये कि संसार मे भगवान कृपा निधान के प्रसन्न
करने को भक्ती के विना और कोई उपाय नहीं है
दीन बंधू केवल भक्ती पर ही रीझते हैं लोक
और परलोक मे सुजस के देने वाली सब जी
वों को सुखदायक वेद और पुरानों ने भगवा
न की भक्ती को ही गायन किया है ॥ १ ॥ इति श्री
भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ति महात्मे भाषाटीका
यां भूप चरित वरनने नाम सरगः

थर कांपने लगा और व्याकुल होयगया थी र
ज सब छूट गया तब तिसको भय से व्याकुल
भया देखकर राजा अभय देकर अनेक प्रकार स
मुझावने लगा कि भाई इसको ई तुमारा अपरा
ध नहीं है देउ के लायक इस मेरा ही वांयां हाथ था
क्योंकि मै महां मंद और अज्ञानी ने इस वायें हा
थ के साथ जगन्नाथ भगवान का पवित्र प्रसाद
जो है सो मांगा था इस प्रकार परस्पर वारता आला
प करते हुये राजा और सेवक रात्री को वतीत करते भ
भये और इहां तिसी रात को भक्त हितकारी भगवा
न अपने पुजारी को सपने में कहते भये कि देखो सो
मेरे प्रसाद का अपमान जो था राजा सहार न होसका
तिसी अपराध से भूपने अपना वायां हाथ काट डा
ला है तो ते तिसके समान मेरे को संसार में और कोई
प्यारा भक्त नहीं है हे पुजारी आज तें लेकर तूं मे
री आज्ञा से मेरा परम पवित्र प्रसाद जो है सो नित्य प्राता
काल जायकर तिस मेरे भक्त के घर में ही दे आया कर औ
र जब वे तिस कटे हुये हाथ के साथ मेरे प्रसाद
को लेवेगा तो तिसी समय तुरत ही तिसका हाथ
जो है सो सुंदर नवीन उतपन्न हो जावेगा और ति
सका वे हाथ जो सेवक ने काट कर गिराय दिया है
सो तुम लेकर के मेरी वाटिका जो वगीची है ति
स विखे बीज देवो तिसतें तहां वड़ा सुंदर और
मेरे को परम प्यारा दमनक नामा वृक्ष जो सो उ
तपन्न होवेगा ॥ २॥ चौपाई ॥ अस विलोकि
निसि सपन पुजारी॥ प्रात प्रसाद ललित धरि
थारी ॥ आवा भवन भूप हरषाई ॥ आवत दे
खि उठो नरराई ॥ करि प्रणाम नैवेद्य सुहा
वा ॥ लीन नरेंद्र प्रीति जुत पावा ॥ होत स्पर्श

८०७

प्रसादपाय सनमाना॥ दोहा॥ अस की त्योजुग दिवस आपु नपाकरचाव॥ देव भोग लायो न कछु करि सुमति पछताव॥२॥ टीका॥ अब और बड़ा अदभुत और सुंदर सुखदायक भक्ती का महातम जो है सो कथन करता हूं किजिसके श्रवण करने से कृष्ण भगवान के चरन कमलों मे अवश्य प्रीती होय जाती है पश्चिम देश मे [illegible] पुष्कर की त्रेतीर्थ के निकट ब्रह्मण वंस विषे उतपन्न भई हुई एक करमा बाई नाम करके प्रसिद्ध होती भई सो कैसी कि पती पुत्र बांधव इत्यादि सब से वरजित थी [illegible] तिस का और कोई भी नहीं था औ धन हीन व दीन नित्य भिक्षाटन करके उपजीव का करती थी परंतु सुधरम करम और भक्ती मे लीन रहती थी एक दिन कहीं कोई पंडित कथा जो वाच रहा था तहां तिसने इह प्रसंग सुनाकि जो कोई प्रीती भक्ती से जाय कर श्री जगननाथ भगवान का दरसन करेगा [illegible] सो शरीर के [illegible] सब पापो से [illegible] कर परम पद प्रापत होजावेगा और जो प्रीती भक्ती से भोजन बनाय कर प्रथम भगवान कृपा निधान के भोग लगाय कर पीछे आप पावेगा तिस को यतन के विना ही मुक्ती और मुक्ती दोनो प्रापत हैं इसमे कुछ संशय नहीं है इस प्रसंग को सुनकर के बहुमान न करमा बाई बैराग्य और प्रेम के वश भई हुई [illegible] जगननाथ भगवान के दरसन की अभिलाषा वाली होय जाती भई [illegible] नित्य भिक्षाटन कर के भोजन बनावती और प्रथम भगवान को

भोग लगावती फिर पीछे प्रीती से आप पाय लेती
थी इस प्रकार कुछ काल बतीत होयगया तब श्री
जगन्नाथ स्वामी के दरसन करने को मिलकर के स
ब ग्राम के लोग जो चल परे तो तिन के साथ ही आ
नंद मै मगन भई हुई करमाबाई भी चल परती भई
तब भगवान को भजती हुई सुषी से मारग के श्रम को नि
वारण करके जगन्नाथ पुरी मे आय प्रापत भई
तहां बड़े हरष और प्रेम से दीनबंधू को दिव्य दरसन
~~जो है सो भली प्रकार~~ कर कर अमृत के तुल्य भगवा
न का नैवेद प्रसाद जो है सो पावने लगी ऐसे तिस
को जगन्नाथ का प्रसाद पावती को दुइ दिन बतीत
होयगय आप कुछ भोजन नहीं बनाया और
ना भगवान को नैवेद लगाया तब इस अनुचि
त को हृदय मे सुमर कर बार बार पछतावने
लगी ॥२॥ चौपाई ॥ धिग धिग मोहि मंद हतभा
गी ॥ जिहि जठ उदर तोष निज लागी ॥ कृपा
सिंधु प्रभु दीन बिसारे ॥ अस कहि नाथ बिकल
मन मारे ॥ वैस्नव बृद्ध संत ढिग जाई ॥ करि प्र
णाम अस बिनय अलाई ॥ महाराज मुहि तें
अपराधू ॥ भयो न कृत्य करहु तुव साधू ॥ बिनु
भगवन नैवेद लगायो ॥ मै अस पाक कबहु नहिं पा
यो ॥ इहां नाथ द्वै दिवस बिहाना ॥ मैं न हरिहिं नै
वेद लगाना ॥ जुगल दिवस हरि भवन प्रसादू ॥ पावा
दीन दयाल बिनु साधू ॥ इह अनुचित मुहि तें अति
भययौ ॥ तातें नाथ शरण तुव लययौ ॥ मन हु यतन
अब दीन सनेहा ॥ जिहि तें होउ सुचित संदेहा ॥ वैस्न
ब सुनत तास असबानी ॥ बरजित कपट प्रेम र
स सानी ॥ बोल्यो परम हर्षवंत होई ॥ ~~सुनहु कारु~~
तुमरे सुमति दोष नहिं कोई ॥ तुव तो निपुण कर

म मनबानी॥ हरिपद पदम भक्ति रति मानी॥ दोहे॥ बिरंचि पाक तुम पावहु भगवन भोग लगाई॥ भक्ति विवस ठाकुर सदा कछु न दोष तो हि माई॥२॥ टीका॥ फिर कहती है कि मेरे बुधि गई ऐसी अभागन और मतिमंद मैं कि जिसने अपना उदर पूर्ण लिया और अर्थात पेट भर कर खाय लिया और दीनबंधु भगवान को बिसार दिया तिनको नित्य नैवेद जो लगाती थी सो नहीं लगाया इस प्रकार पछतावती और व्याकुल चित भई हुई करमाबाई एक वृद्ध वैस्नव संत देख कर तिसके पास चली गई और प्रणाम करके बिनती करने लगी कि हे संत महातमा मेरे से बड़ा अपराध होय गया है तुम दया करके मेरे अपराध को निवारण करो हे प्रभू मैं आज लग भगवान के नैवेद लगाने के बिना कभी भोजन नहीं खाया था और कृपानिधान इन दो दिन बतीत होय गये हैं मैं ना तो भोजन बनाया और ना भगवान को नैवेद लगाया दो दिन लगाई तो भगवान के भवन में दीनबंधु के भोग लगाये बिना ही प्रसाद पावती रही हूं हे संत महातमा इह मेरे से बड़ा अनर्थ होय गया है इसी तें आपकी सरण को प्रापत भई है कृपा कर के सो यतन कहिये कि जिस तें प्रभू मेरा संदेह नवृत्त हो जावे तब कपट से रहित और प्रेम के सहित ऐसे तिसका कथन सुन करके वै स्नव संत प्रसन्न होय कर कहने लगा कि हे सुशीले इसमें तेरा कोई दोष नहीं है तू तो मन वचन काया करके भगवान के चरन कमलों की प्रीती भक्ती वाली है अब तू संशय भ्रम को त्याग कर भोजन बना और प्रीती भक्ती से प्रथम

अथ करमा बाई चरित्र

दोहा॥ अब अद्भुत सुंदर सुखद भक्ति महातम आ
न॥ करहुं यथा मति कथन कछु कृष्ण भक्ति प्रद
मान॥ चौपाई॥ पश्चिम देस वैस द्विज जैया॥ पुष्क
र तीरथ प्रांत बसैया॥ करमा बाई विदित असना
मा॥ पति बांधव सुत विगत ललामा॥ भिक्षाटन
तत पर धन हीना॥ पै सुकरम रत भक्ति प्रवीना॥ क
रत प्रजटिन काल इकतासा॥ सुन्यो कथा त्र रुचि
र इतिहासा॥ जे नर करहिं प्रीति जुत जाई॥ जग
न्नाथ दरसन सुखदाई॥ दारुण दुंद दोष गत होई॥
[illegible] लेहीं ललित विमल पद सोई॥ अरु स
प्रीति भोजन विरचाई॥ प्रथम हरिहिं नैवेद ल
गाई॥ पाछे आपु हरष उरछाये॥ लेहिं प्रसाद
रुचिर प्रभु पाये॥ बिनु प्रयास संशय कछु नाहीं॥
भुक्ती मुक्ती सुलभ तिहि काहीं॥ सुनि अस ललि
त महातम सोई॥ करमा बाई हरष बस होई॥ उ
तकंठित मानस बड़भागी॥ हरि पद पदम दरस
अनुरागी॥ भिक्षाटन करि पाक रचाती॥ हरिहिं
प्रथम नैवेद लगाती॥ पाछे करत आपु आहा
र॥ अस प्रकार कछु काल निवारा॥ तब श्री ज
गन्नाथ दरसाने॥ मिलि ग्रामीन लोग सुख मा
ने॥ गवने जबहिं देखि तिन काहीं॥ करमा बाई
हरषि मन माहीं॥ हरिहिं रटत श्रम पंथ [illegible] वि
हाई॥ तिन सन जगन नाथ पुरि आई॥ अति
आनंद पूर्वक अनुरागी॥ करन दिव्य दरसन प्र
भु लागी॥ हरषत सुधा सरस भगवाना॥ लेत

करने के लिये भगवान के भवन मे चली आई तहां
पूजिक जो हैं सो षटरस अर्थात छहों रसों वाले व
डे दिव्य अमृत के समान अनेक भोजन व्यंजन और
पकारण रचाय हूये भगवान को भलो भोग जो लगा
यारहे थे सो करमाबाई देखती भई तिसो दिन तें
हृदय मैं इहा विचार कर कि इहां तो भगवान कृपानि
धान बडे दिव्य भोजन व्यंजनों अहार करते हैं मेरे
दिये हूये सरख अन्न को कृपासिंधु कब क्या खावते होंगे तां ते अब
तें मै दाल चावलों की खीचड़ी बनायकर भग
वान को नैवेद लगाया करूं प्रातःकाल दीनबंधु
भूखे होते हैं तिस समय जि मा या दिया करूं अैसे
विचार कर प्रातःकाल उठती और कृष्ण कृष्ण र
टती हूई मित्ताटन कर कर चावल ले आवती
फिर लेपन चौके विना ही माटी की
हंडिया मैं प्रीती सनमान से खीचडी बनाय लेती
और प्रेम भक्ती से प्रथम भगवान नैवेद लगायकर
पीछे स्नान करके आप पाय लेती थी इस प्रका
र पुरषोत्तम भगवान को सेवती हूई करमा बाई के
बहुत काल बतीत होय गया दीनानाथ लपता ही
नित्य आय करके तिसकी खीचडी पावते रहे दीन
बंधु का रहनियम था कि पहिले करमाबाई की खी
चड़ी पायकर पीछे अपने भवन मैं जायकर नैवेद
ग्रहण करते थे ॥ २ ॥ चौपाई ॥ खीचरि रचत दिव
स रक ताहू ॥ आवा संत वैष्णव काहू ॥ तहि प्र
भु कहं नैवेद सुहावा ॥ निज नित प्रीति भक्ति जु
त लावा ॥ अनाचार रत तासु निहारी ॥ बोले
दिसक संत व्रत धारी ॥ अहो भेद इह कवन प्रचा
रा ॥ मै देखो कृत जवन तुमारा ॥ बिनुहिं मारज
न मज्जन कीने ॥ मृतका पात्र मूढ तुव लीने ॥

विनु पावन थल पाक रचावा॥ हरिहिं अधम नै
वेद लगावा॥ पावन विश्वदेव भगवाना॥ जडु तोहि
दीन कवन अस ज्ञाना॥ अव तुम तजहु मेद दुहक
रमा॥ होहु निरत रुचिर व्रत धरमा॥ करि सना
न पावन वपु कीने॥ लेपन ललित मारजन दी
ने॥ भोजन विमल पाक विरचावहु॥ हरिहिं
रुचिर नैवेद लगावहु॥ तो प्रसन्न प्रभु दीन
उवारी॥ नतर पाप निश्चय तोहि भारी॥ सुनि
सुशील अस संत उचारा॥ करि धिग धिग निज
कहे विसकारा॥ दोहा॥ पावन तें पावन अमल
जगपति देवनदेव॥ तिन कर मै करती रही अ
नाचार जुत सेव॥४॥ टीका॥ तब एक दिन कर
माबाई केली चरी वनावते वनावते तहां कोई
वैस्नव संत जो थे सो आय गये और जब तिस
वुढिया ने खीचडी वनायकर और वरतन मे डाल
कर प्रीतीम जी से भगवान को नैवेद लगाया तब
तिसका ऐसा अनाचार देखकर के वैस्नव संत
कोप से कहने लगे कि अरे दुष्टने करम किया हि॰
है और मैने देखा है कि यह कवन आचार और धर
म है कि लेपन चौका सनान और पवित्र अस्था
न के विना माटी की हंडिया मे भोजन वनाया
और माटी के ही टाकू मे पायकर अधम
तैं ने भगवान को नैवेद लगाया सो भगवान कैसे
कि महा पवित्र और देवों के देव मूरख यह ज्ञान
तेरे को किसने दिया है मूढ अव इस
कुकरम को त्याग और सुंदर धरम सुकरम का व्रत
जो है सो धारन कर आज तें लेकर तूं प्रथम सनान
कर कर और शरीर से पवित्र होय कर फिर झाडू ले हि॰
पन देना और चौका करना तिसतें उपरांत पवित्र

भोजन अर्थात बरतनमैं भोजन बनावना करश्री
ती भक्ती से भगवान कृपानिधान को नैवेद लगावना
तिसतें उपरांत पीछे आप पाय लेना तब भगवान
प्रसन्न होवेंगे नहीं तो तेरेको अत्यंत पाप है ऐसे
वैस्नव संतका वचन सुनकरके करमाबाई अपने
आपका अनेक धिक्कार करकर तिरस्कार करने ल
गी और कहती है कि देखो पवित्रसे भी पवित्र
और निरमल देवोंके देव जगतपती भगवान से मैं
ने आजलग तिनकी अनाचार से अर्थात् अशुभ
रीतीसे हीं सेवा करती रही हूं ॥४॥ चौपाई ॥ हितवां
छित मोहि अनहित भय यौ ॥ अबलों करनि नि
फल सब गयौ ॥ अस विचारि उठि प्रात सु
धीरा ॥ करि सनान प्रक्षालन चीरा ॥ करत मार
जन लेपन कीना ॥ भोजन विमल स्वच्छ पर
कीना ॥ खीचरि विरचि हरिहि मन भावा ॥ सा
नुकूल नैवेद लगावा ॥ अस श्रम देखि तास
भगवाना ॥ निज उर दीन दयाल दुखमाना ॥ पै
कृपाल तहि भोजनपाई ॥ गये भवन निज भक्त
सहाई ॥ जब पूजिक संजुत रसनाना ॥ लाव
न लगे भोग भगवाना ॥ धरि नैवेद रुचिर प्र
भु आगे ॥ आय बहिर सब देखन लागे ॥ सो पर
नारबार नहिं आवा ॥ संभ्रम सबन सोच उर
छावा ॥ भीतर जाय चरित अस लेखो ॥ ला
ग उच्छिष्ट बदन प्रभु देखो ॥ ॥ निज निज चकि
त कहत मन माहीं ॥ पावा दीन दयाल कछु ना
हीं ॥ लाग्यो उच्छिष्ट बदन कस एही ॥ अस
संदिग्ध सोच बस तेही ॥ चिंता मगन बिपत
निसि सारी ॥ रहे बैठि भवन पुजारी ॥ तब भ
गवान स्वपन अस दीना ॥ मैं रुचितें भोजन न

पीनाना प्रकार के नैवेद लगायकर पीछे आनंदपू
र्वक आप पावले हैमाई इसमें तेरेको कुछ दोष न
हीं है ठाकुर सदैव भक्ती के वश होते हैं ॥२॥ चौपा
ई॥ लेत नदेश संत अनुरागी॥ करमा बाई भ
क्ति रस पागी॥ करे प्रजटन अन्न कछु ल्याई॥ प्रीति
पूरवक पाक रचाई॥ प्रभुहि देत नैवेद सुहावा॥ आ
पु करत भोजन मन भावा॥ एक दिवस हरि भवन
रसाला॥ दरसन हेतु गवनि दुज बाला॥ तहां निकर
पूजिक भगवाना॥ व रचित अमिय सरस रस ना
ना॥ दिव्य पाक कछु जाहिं न लेखे॥ महा भोग
लावत सुचि देखे॥ तहि दिन ते अस हृदय विचारा॥
ईहां करत प्रभु दिव्य अहारा॥ मोर कदन्न विगत
रस जोहीं॥ कृपासिंध कस पावत सो हीं॥ अब तो
खीचरि रुचिर बनाई॥ प्रभुहिं देहुं नैवेद लगाई॥
तुष्यत होत प्रात भगवाना॥ अस निज हृदय तास
प्रण ठाना॥ भोरहिं सुमरि कृष्ण उठि जाती॥ मि
लाटिन करि तंदुल लाती॥ विगत मार्जन लेपन
कीने॥ बिनु सनान मृत भाजन लीने॥ विरचित
चिर खीचरि सनमाना॥ लावत प्रथम भोग भगवा
ना॥ पाछे आपु निपुण लव भागी॥ करि सनान
पावत अनुरागी॥ दोहा॥ अस सेवत तहि भक्ति
जुत दीरघ काल बिहाय॥ रहे आगे चर करत प्र
भु पाक सदन तहि आय॥ प्रथम पाय कर लाय
तब खीचरि करमा बाई॥ बहुरि लेत नैवेद प्रभु
चारु भवन निज जाई॥३॥ टीका॥ तब इस प्रका
र संत महात्मा की शिक्षा लेकर प्रेम भक्ती के
रस में भीगी हुई करमाबाई घरघर में भ्रमन कर
के अन्न जो है सो ले आवती और प्रीती से भोजन
बनाय कर प्रथम भगवान को नैवेद लगावती फि
र पीछे आप पाय लेती थी एक दिन दरसन

२८

हिं कीना॥ मोंभक्ति तत पर दुजनारी॥ करमाबाई नाम व्रत धारी॥ करम वचन मन प्रीति अमेवा॥ संतत निरत मोर दृढ सेवा॥ लावत रही सो मोहि प्रवीना॥ प्रात बिरचि नैवेद नवीना॥ वैस्नव संत देखि रकता सा॥ कहि विसकार सुवचन प्रकासा॥ अनाचार कर तोर निदाना॥ इह नकरत भोजन भगवाना॥ अव तैं अनाचार अस होई॥ सुचि आचार निरत नुव होई॥ तदिहिं रुचिर नैवेद लगावहु॥ मंजुल मन वांछित फल पावहु॥ तास वचन वस सो मति धीरा॥ करत सनान प्रात नदि नीरा॥ दोहा॥ कहि नाना श्रम रच्यो निज सदन पाक व्रत धारि॥ तासु दुखित देखत भयो मोहि कलेस जियभारि॥ २॥ टीका॥ फिर कहतीहैं कि अहो मेरे कों हित करती को अनहित होय गया और अव लग मेरी करनी निस्फल हीं गई ऐसे विचारकर वडे धीरज वाली करमाबाई प्रातःकाल हीं उठी और सनानकरके वस्त्र भी धोये फिर आय कर झाडु लेपन दिया और चौका किया तव पवित्र नये वेरतन मैं खीचडी वनायकर आनंद पूर्वक प्रीती भक्तीसे भगवान को नैवेद लगाया इस प्रकार तिसका श्रम और कलेश देख करके दीन हित कारी भगवान अपने हृदय मैं वडा दुख मानते भयेकि देखो इस वृद्धे दीन वल हीन मेरी भक्ती मै लीन थी इस को मतिमंद साधूने कैसे श्रम और कलेश मै डालदिया ऐसे कथन कर कर और तिसकी देई हुई खीचडी पाय कर भक्त रक्षक भगवान अपने भवन मे चले आये जव पुजारी दीन वंधु के भोग लगावने को नाना रसों वाले व्यंजन भोजन और दिव्य पदार्थ जो हैं सो

वांछित फल को प्रापत करे इस प्रकार वै सब से
तें उपदेश पाय कर तिस करमाबाई ने प्राता काल
उठकर प्रथम नदी पर जाय करके सनान कि
या और फिर सीत में कांपती हुई ने चरमे
आय कर बड़े पतन और स्रम से भोजन बनाया
और मेरे को नैवेद लगाया ऐसे तिह बृद्धि का
दुख देख कर हे पूजक जानो मैं भी अत्यंत दुखी हो
गया ॥ ६ ॥ चौपाई ॥ सो मैं पाक सदन त
हि कीना ॥ स्रम कलेस तां कर चीना ॥ ते दारुण
दुख मानस मानी ॥ बदन मार जब सुधि बिस
रानी ॥ इह तुमार नैवेद लगावा ॥ मै नतासु चिंता
बस पावा ॥ अब तुम तहि वे सब जन काहीं जाव
हु लिये संग निज ताहीं ॥ देहै तासु सकल समु
झाई ॥ तुव आचार पूर्व निज माई ॥ करहु
भक्ति संजुत अनुरागी ॥ सिष्टाचार खेद स्रम त्यागी ॥
जगननाथ कहे सोऊ तुमारे ॥ अनाचार ला
गत अति प्यारे ॥ पूजक रजनि स्वपन असपा
ये ॥ मिलि सब प्रात सदन तहि आये ॥ करि प्र
नाम चरनन गति दीना ॥ स्वपन बृतांत कथ
न सब कीना ॥ सुनु तोर हेतु भगवाना ॥ ईहां बस
हि प्रभु कृपा निधाना ॥ जे आचार तुम हि संत सि
खावा ॥ सोऊ नहीं नंद लाल कहे भावा ॥ जो तुव
धरम सनातन राहा ॥ करहु सोऊ भगवन अस का
हा ॥ अस तुव देखि खेद स्रम भारी ॥ कृपा सिंधु
अति भये दुखारी ॥ तजि दीना भोजन जल पाना ॥
तोर भक्ति बस कृपा निधाना ॥ तुम हि नवेधन
चार विचारा ॥ लेहु पुरातन निज ब्रत धारा ॥ दी
नानाथ प्रथम तुव पाई ॥ भोजन करत भवन
निज जाई ॥ सुचि आचार सोऊ जग माहीं ॥

ल्याय कर और कृपासिंधु के आगे दारवेकर फिर
अपनी नित्य की रीती के अनुसार भवन के कवाड
दे कर और उठाय कर देखने जो लगे तो त
ले प्रनाल का जल जो आवता था सो
नहीं आवता भया तब तो सब पुजारी भ्रम और सो
च के वश अचरज भये हुये भवन के भीतर चले ग
ये और जाय कर के क्या अदभुत चमतकार देख
ते हैं कि भगवान कृपानिधान के मुख कों खीच
डी लगी हुई है देखकर सब पुजारी अपने अ
पने हृदय में बड़ा अचरज मान कर कहते हैं कि महा
भोग में से तो भगवान ने कुछ पाया है नहीं इन दी
नानाथ मुख को खीचड़ी कैसे लगी हुई है ऐसे आ
मिक चिंता कर के व्याकुल भये हुये पुजारी रात्री को
तहां भगवान के भवन में ही बैठ रहे तब कृपानि
न को दुखी देखकर सपने में कहने लगे कि माई मैं
तो भोजन इस निमित्त से नहीं पाया कि मेरे चरनो
की भक्ती प्रीती वाली करमाई नाम कर के एक ब्राह्म
णी है सो मन बानी और काया कर के नित्त मेरी
ही सेवा में लीन रहती है और प्रातः काल उठ क
र नित्य खीचड़ी बनाय कर के मेरे को सुंदर भो
ग लगावती है तिस को एक वैष्णव संत दे
खकर बड़े दुरवचनों से तिरस्कार करकर कहने लगा कि अरे
मेद तू अनाचार और अपवित्रता से भोजन बनाय
कर भगवान को नैवेद लगावती है तो तेरे अ
पवित्रता और अनाचार के रचे हुये इस भोजन को
भगवान नहीं पावते हैं मूढ़ तू अब तें ऐसे अना
चार अर्थात कुकरम को त्याग और सुभ आचा
र में लीन होय कर पवित्रताई से भोजन बनाय
कर के भगवान के नैवेद लगा और सुंदर मन

[illegible]

हों भावता कौ बारबार एही आज्ञा है कि
जो तेरा सनातन धरम और आचार रहा है तूं सोई कि
या कर हे माई हम सत्य कहते हैं कि तेरा श्रम और क
लेश देख करके कृपा सिंधु अत्यंत दुखी होय रहे हैं ते
री भक्ती के वश होय कर दीन बंधु खान पान भी सब
बिसार बैठे हैं अब तूं अपना हीं पुरातन व्रत धारन
कर ले तेरे को चार विचार का कोई बंधन नहीं
है क्योंकि जिसकी भक्ती पर ऐसे रीझ हूये भग
वान कि प्रथम ईहां तेरे घर मे भोजन पाय कर पी
छे आपने भवन मे भोग लगावते हैं हे सुश्री ले
पवित्रताई आचार व्रत और धरम जगत मे सो
ई है कि जो भगवान को प्यारा हो इन चार आचार
जो है सो अभक्तों के लिये है तूं सुतंतर अपनी इ
च्छा के अनुसार विचरने वाली और भगवान
की भक्ती मे चतुर तेरे को चार आचार का कोई
स्पर्श नहीं है इस प्रकार तिन का कथन सुन
करके कर माबाई हाथ जोड़कर बड़ी दीन वाणी
से विनती करने लगी॥ कि हे भक्तो मेरे तो नाको
ई धरम ना करम ना चार ना विचार और ना
भक्ती अभक्ती का कुछ ज्ञान मै तो महा मलीन
मती गवार और अधम पाप की खानी स्त्री हूं अब
तें लेकर तुमारे वचनो के अनुसार भगवान कृ
पानिधान की आज्ञा पायकर अपना सोई सना
तन धरम और व्रत जो है सो धारन कर लेती हूं॥
७॥ चौपाई॥ अस तिहि वचन सुनत समुदाये॥
करि प्रणाम हरि भवन सिधाये॥ प्रीति पूर्व क
विमल सुहावा॥ हरिहि रुचिर मै वेद लगावा॥
अति आनंद जुत भगवन पायो॥ अद्भुत चरि

त सकल पुर कहायो॥ अस भगवान भक्त सुखदाता॥
सदा भक्त वस भक्तन त्राता॥ दीनदयाल कर रीति सुहा
ई॥ देत जनहि निज रुचिर वडाई॥ तातें भक्ति सिरो
मनि चारू॥ जहं लग रहे धरम संसारू॥ दोहा॥ अस
से जब लग रहि जियत जग सो करमा व्रतधारि॥ त
ल्यो जिय न भरोसो विय विनु पद पदम मुरारि॥ अंत सु
गम तजि वपुष निज कृष्ण प्रसाद प्रवीन॥
ललित विमल पावन सुखद मुनि दुरलभ गति
लीन॥ टीका॥ ऐसे कर माबाई के वचन सुन
कर पूजक जो हैं सो प्रनाम करके सब हरि भ
वन को चले आये तहां आवतें हीं हरष पूर्व
क भगवान को नैवेद लगाया तव दीनानाथने
वड़ी रुची सें प्रसन्न होयकर पाय लिया इस अ
द्भुत चरित्र जो है सो संपूर्न नगर में फैल जाता
भया ऐसे भगवान कृपानिधान सदा भक्तों
के वश होयकर भक्तों को पालते औ
र सुख देते हैं दीनदयाल की एहि है कि जगत में
अपने भक्त को सुंदर वड़ाई और सुजस देते हैं तातें
संसार में जहां लग धरम और आचार हैं सव
तें प्रधान भगवान की भक्ती है जानो इस प्र
कार करमा बाई जो है सो जब लग जीवती रही
तव लग भगवान के चरन कमलों के विना और
दूसरा कोई भरोसा नहीं राखा और अंत काल य
तन के विना सहजे हीं शरीर को त्याग कर भ
गवान की कृपा से मुनी जोगी जनों को जोग
ती दुरलभ है क्या मिलनी वड़ी कठिन है तिसको
जाय प्रापत होती भई॥८॥ इति श्री भक्त

विनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महातमे भाषाटीकायां करमा बाई चरित वरणने नाम — — सरगः — — —

जे लागत प्रिय भगवन काहीं॥ चार अचार अभक्त न
लीना॥ तुँ सुत तेर हरि भक्ति प्रवीना॥ दोहा॥ सुनि ताक
र अस वचन मृदु हरषत करमा बाई॥ जोरि जुगल क
र [struck] वदन निज नम्रत विनय [struck] अलाई॥ न
हिं सुधरम नहिं करम कछु नाहिं न चार विचार॥ भक्ति
अभक्ति न ज्ञान मोहि त्रिय मति अधम गवार॥ अब तें
सासन पाय प्रभु तुव मुख जवन बखानि॥ धरि लेहौं
निज प्रणम व्रत सुखद ललित हित जानि॥ ७॥ टीका॥
सो भोजन मै तिसके घर मे पाया और तिसका श्रम क
लेश जो देखा तो मेरे से सहारा नहीं गया तिसी पर
म[illegible] दुख से मुख का शुद्ध करना भी भूल गया व्याकु
ल भया हूं आ जूठे मुख ही चला आया हूं इहो इस तु
मारा ने वेद जो है सो मैने तिसी चिंता से नहीं पाया
है अब तुम सब मिलकर और तिसी वैष्णव संत
को साथ लेकर करमा बाई के पास चले जाओ तिस
को बड़े हित के वचनों से भली प्रकार समुझाय देवो
कि हे माई तूं प्रीती भक्ती से अपना सोई सनातन आ
चार और रीती जो है सो कर इस सुघृ चार और
श्रम कलेश को त्याग दे जगननाथ भगवान को तु
मारा सोई अनाचार प्यारा लागता और मन को
भावता है इस प्रकार रात्री के समय स्वपन पाय करके
पूजक जो हैं सो प्रातःकाल होते सब मिल करके कर
मा बाई के घर मे चले आये और तिसके चरनो पर
बारंबार प्रणाम करके स्वपने को वृत्तांत जो थाँ सब सु
नायँ [struck] और कहने लगे कि हे सुशीले हे बड़ भाग
न तूं धन्य हैं कि जिसकी भक्ती [illegible] के वश भये हूए ये
भगवान ईहां तेरे घर मे आय करके नित्य भोजन
पावते हैं अब दीनानाथ की इह आज्ञा है कि जो आचा
र तेरे को वैष्णव संत ने सिखाया है सो मेरे को न

के [illegible] चरनों की प्रीती के देने वाली भक्ती की अदभु
त गाथा जो है सो कथन करता हूं एक कोई कित
नेक ग्रामों का मालक वडी प्रीति श्रद्धा वाला पुरष हो
ता भया तिस के घर मै एक वडी रूप वती कन्या
थी सो राजा की कन्या के साथ मैत्री भाव रखती
थी अर्थात तिस की वडी हितकारनी सहेली थी रा
त्री दिन दोनो मिलकर क्रीडा विलास करती रहती
थीं एक राजा की माता एक उत्तम वैस्नव संत
आये [illegible] हूये सुनकर तिन के दरसन करने को
दोनो कन्या को साथ लिये हूये चली आवती भ
ई तव संत महातमा का दरसन करके चरनो प
र सीस नाया और वडे आनंद को प्रापत भई फिर थो
डी देर के पीछे दरसन [illegible] पाय कर जब घर को
चलने लगी तव सो दोनो कन्या हाथ जोड वडे
दीन वचनो से संत महातमा के आगे विनती
करने लगी कि हे दीनदयाल हमारे पर कृपा करि
ये और पूजन सेवन करने के लिये हम को [illegible]
[illegible] दीजिये इस प्रकार परम प्रीती और भक्ती वा
ले तिन के वचन सुनकर वै स्नव संत हृदय मै अ
त्यंत प्रसन्न होय गये तुरत ही दो शिला तिन दोनो
को देदई और [illegible] मुख से हस कर के कहने
लगे कि हे पुत्री इन ठाकुर जो मैने तुम को दिये हैं
इन का शिल्य विल्य नाम है ऐसे तिन ठाकुरों
का नाम सुनकर [illegible] कन्या वडे हरष को प्रापत
भई हर्ई प्रणाम करकर अपने घर को चली आ
ई [illegible] और प्रीती भक्ती से नित्य तिन का पूज
न करने लगीं ऐसे तिनो ने निसकाम [illegible] होय
कर के जो व्रत धारन किया सो दीन वंधु भग

बानने सूई कार करलिया अब तिन कुमारियों
की भिन्नभिन्न गाथा जो हैं सो कथन करता हैं एक
तिस ग्रामाधीस का घर जो है सो किसी प्रबल श
त्रू ने आय करके लूट लिया और तिस की कन्या
का ठाकुर जो सुधर्मे जूषा अर्थात एक कोटी सी
सुंदर सें दूख ही जोषा सो भी चर के धन अस
बाब के सहित शत्रू लूट मै ले गया॥२॥ चौपाई॥
कन्या देखि दैव निज जाना॥ परम शोक बस रोद
न ठाना॥ बंधु वर्ग लखि तासु दुलारी॥ पितु जु
त मातु देखि दुख भारी॥ भनत तासु सब बदन
सिखोई॥ तब रिपु सदन पुछि वर जाई॥ मांगहु
शिला दैव निज जोई॥ आन उपाय चलत न
हिं कोई॥ बंधुवचन सुनत ततकाला॥ लि
ये संग इक सूदरि बाला॥ रिपु गेह गव नि ह
रष उर छायो॥ सो तकि तासु निकारन आ
यो॥ कवन काज मोरे तुव आवन॥ तब सु
कुमारि वचन मनभावन॥ बोली मोहि न
द्रव्य कछु कामा॥ देहु एक शिला दिव्य अभि
रामा॥ मोरी जेवन लूटि तुव लाया॥ सो मै
चाहूं दैव निज पाया॥ बोल्यो सो असमर्थ बसहो
ई॥ इहां न दैव दूव तुव कोई॥ जो अस कवहु
कि दैव तुमारा॥ तो न लेहु कस बदन सुहारा॥
ताह वचन सुनि विपन अधीरा॥ दुखित दीन
भरि नयनन नीरा॥ धरि भरोस दृढ मान स
माहीं॥ लगी गुहारन प्रभु निज काहीं॥ तत
काल दैव हरन जन दूखो॥ पैठत निज मंजुल
मंजूखो॥ प्रेमाव्रत न छिपे प्रभु आये॥ लोक
विलोकि चरित विसमाये॥ सो मंजूष दैव

निजपती ॥ करि प्रणाम सादिर हरषाती ॥ आय भवन
निज पूजन कीन्यो ॥ भक्तिप्रभाव सबन असचीन्यो ॥
इहतें कर अद्भुत मन भावा ॥ मै संतपत चरित न
कछु गावा ॥ दोहा ॥ अब द्वितिये वरनउं कथा पा
वन राजकुमारि ॥ जासु सुनत उपजत विमल हृ
दय भक्ति गिरधारि ॥ २ ॥ टीका ॥ तब कन्या जो है सो
अपने ठाकुर को लूट मे जाना देखकर परम शोक
के वश भई हुई रोदन कर कर विलाप करने लगी
ऐसे तिस को दुखी और व्याकुल देखकर मातापि
ता और बांधव जाती नाती जो थे सो सब तिस क
न्या को अनेक प्रकार धीरज दे कर और निखोय स
मुझाय कर कहने लगे कि हे पुत्री तूं हृदय मे कु
छ भय संकोच मत कर और भगवान को सुमर
ती हुई तहां शत्रु के घर मे जाय कर अप
ने इष्ट देव की शिला जो है सो मांग ले इसके वि
ना और उपाय कोई नहीं है तब बांधवों का वच
न सुन करके सो कन्या तुरतहीं एक सूद्री सखी
को साथ लेकर आनंद से शत्रु के घर को चली
आई तहां तिस को आवती देखकर सो आगेहीं
निकारने के लिये चले आये और कहने लगे कि
इहां हमारे घर मे तेरे आवने का क्या काम है तब
कन्या बड़ी चतुराई के वचनों से कहने लगी कि
भाई मेरे कुछ धन पदार्थ की इच्छा नहीं है मै
तो केवल इसलिये आई हूं कि जो तुम हमारे
घर के धन असबाब के बीच एक मेरे ठा
कर और इष्ट देव की शिला लूट कर ले आ
ये हो मै सो चाहती हूं और कोई काम नानहीं
है ऐसे तिस का कथन सुनकर सो अभिमानी
कोप से कहने लगे कि ईहां तेरा देव दूब कोई

अथ जुगल कन्या चरितं

दोहा॥ अब अद्भुत सुंदर सुखद भक्ति महातम आन॥
करहुं यथामति कथन कल देन भक्ति भगवान॥
चौपाई॥ ग्रामाधीस एक कौ मन्या॥ ताकर रुचिर
चिर द्वै कन्या॥ भूप सुता कर सहचरि होई॥ दि
न दिन तास प्रेम बस होई॥ क्रीडा करत रहत नित
ताहीं॥ एक दिवस जननी नरनाहीं॥ सुनत संत
वै सब व्रतधारी॥ लिये संग निज जुगल कुमारी॥
तिन पैं आय हरष उर छाये॥ दरसन करत चरन
सिर नाये॥ ते जब चलन सदन निज लागी॥ तब
सुकमारि जुगल बड़भागी॥ नम्र जोरि कर विनय
उचारी॥ पूजन हेतु हमहिं व्रतधारी॥ काहु
ललित ठाकुर प्रभु दीजै॥ दीन दयाल निज से
वक कीजै॥ परम प्रीति जुत वचन सुनाये॥ ति
नकर सुनत संत मन भाये॥ सिला सुदेव द्वहुंन
कहं दीन्यो॥ हसि सुख वचन संत अस कीन्यो॥
श्रील्य विल्य इनकर मन भावा॥ राज कुवरि वर
नाम सुहावा॥ सो अस लेत परम हरषाई॥ करि
प्रनाम निज सदन सिधाई॥ अति प्रसन्न मान
स अनुरागी॥ पूजन देव करन जुग लागी॥ जे
निहकाम तिनहिं व्रत धारा॥ दीनानाथ कीन सूं
कारा॥ अब आगे तिनकर इतिहासा॥ प्रथक प्र
थक कल करहुं प्रकासा॥ अवसर एक ग्राम पति
तेहा॥ लूट्यो आय प्रबल रिपु गेहा॥ दोहा॥ तास
सुता ठाकुर रुचिर मंजूषा धृत जोय॥ धन
न केत संजुत सकल गयो लेत सठ सोय॥२॥
टीका॥ अब और बड़ी सुखदायक कृस्न भगवान

तब अविलोकि तासु पति काहा॥ इह कस करम
तोरत्रिया राहा॥ विहसि तासु असवचन बखाना॥
करहुं नाथ पूजन भगवाना॥ लोक सुजस परलो
क सवारन॥ मै व्रत कीन जवन प्रभु धारन॥ सुनत
अधम जड नास्तिक मूला॥ कुमती पतित धर
म प्रतिकूला॥ करि अपमान मेद दुख दाई॥ परम
कोप वस शिला उठाई॥ संजुत पूजुपकरन अ
साधू॥ सरिता वारि विलोकि अगाधू॥ बूडत आ
व सदन निज माहीं॥ हृदय विचार कीन कछु ना
हीं॥ विगत धीरगत राजकुमारी॥ महारोदनं
करत निहारी॥ तेकर मेद मूढ हत भागा॥ कोप
वचन कछु भाखन लागा॥ सो उरविरह देव नि
जमानी॥ लागी करन प्राण दुत हानी॥ मेद वि
लोकि प्राण तहिनासा॥ लागे करन निवर्तो अ
जासा॥ धरहु धीर उर शोक विहाई॥ मे ल्यावहु ठा
कुर तुव जाई॥ अस कहि लिये सेत मृत जारी॥
किये यतन सरिता बहु वारी॥ तीन दिवस त
हि खोजत लायो॥ शिला व चित्र तबहु नहि पा
यो॥ बूडे आव सदन निज हारी॥ तियकहे दे
खि अन्नविनु वारी॥ रोदन करत दुखित अकुला
ती॥ हाहाकार करत विलपाती॥ दोहा॥ बोल्यो मे
द दुरात मन दिमवस खेदा निकाम॥ विलपन
तजहु न मूढ कस जानि प्राण निज नाम॥३॥ टी
का॥ सो राजकुमारी प्रीती भक्तीं नित्य सिरधा से
का री भगवान पूजन करती रहती थी जब तिसका
विवाह भया तब पती जो है सो क सब राज समा
जके सहित ले कर के अपने चला आया तब ही
राज कन्या कि जो अपने ठाकुर जी को पालकी

मे बिठाय कर के साथही ले गई थी बडे प्रेम सन
मान से तिनका पूजन सेवन करती रही तब एक दि
न तिसका पती देख करके कहने लगा कि प्यारी तूह
तेरा क्या करम है और तू क्या करती है सो प्रवीन ह
स करके कहने लगी कि नाथ भगवान का पूजन क
रती हूं और आपने लोक परलोक को सुधारती हूं ऐ
से तिसके मुखसे वचन सुन करके सो अधम नास्ति
क महा पापी और जड अधरमी तुरत बडे निरा
दिर और कोपसे भगवानकी शिलाको पूजाके
सब समाज के सहित उठाय कर और जाय कर
नदीके अगाध जलबिखे फेंक देता भया कुमतीहृ
दयमे कुछभी सोच नहीं करता भया और बकता
हूआ मंद आपने घरको चला आया राजकुमारी जो
है सो देख करके व्याकुल होय गई और हाहाकार
सें रोदन करकर बिलाप करने लगी तब सो मूढ अ
भागी तिसका रुदन बिलाप सुनकर बडे कोपके ब
चनोंसे तिसको धिककारने लगा और राजकन्या
अपने ठाकुरकी बिरहसे प्राणोंको त्याग देने लगी त
ब तिसके प्राणोंकी हानी देख कर पापकी आय कर
के निवार होलगा और मंद बारबार सुमुझाय कर क
हता है कि तू हृदयमे धीरज धार और शोकको नि
वार मे जायकर के तेरे ठाकुर ल्याय देता हूं ऐसे
कथन करकर और सेवक समूह साथ लेकर न
दी के जलमे जाय कर खोजने लगा इस प्रकार
तीन दिन लग तिसने अनेक ही यतन किये प
रन्तु सो शिला प्राप्त नहीं होती भई अंतको हा
र करके घरमे चला ई हो ठाकुर जीके बियो
ग से स्त्री की इह दशा होय रही कि अन्न
जल कुछ खान पान नहीं किया परम बिलाप

कर कर हा देव हा देव पुकार रही है तब दुष्ट अध
म से और तो कुछ नहीं बन सका कोप से खड्ग
जो तलवार है सो खैंच कर कहता है कि अरे मूढ
विलाप को त्याग दे नहीं तो इन प्राणों के नास
करने वाली खड्ग देख इससे तेरे को दो खंड कर
देऊंगा ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ तास कथन सुनि सो व्रत धर
नी ॥ भाषत नाथ धन्य तुव करनी ॥ जो मोहि ल[illegible]यो
देन मृतदाना ॥ को उदार तुव सदृश आना ॥ जाग मा
ग आज जग मोरे ॥ जो अस सुमति उपजि जिय तोरे ॥
करि प्रहार अस बेग सनेही ॥ करहै जुगल खंड प
ति मोही ॥ आगम अरु मुज है देव सिधाये ॥ तहां देहु
वपु मोर बनाये ॥ मैं निज इष्ट देव ढिग जाई ॥ कर
हुं सफल मन काम सुहाई ॥ अस दृढ वचन सुन
त सुतदाया ॥ भयो अमर्ष विगत वसदाया ॥ मा
खिस बदन जाहु द्रुत ताहों ॥ हरिता पस्यो देव तुव
जाहों ॥ सुनि अस पति नदेस अनुरागी ॥ प्रभु पै ग
वनि हरषि बडभागी ॥ सरता तीर आय मतिधीरा ॥
करि प्रणाम पूजसी द्रुत नीरा ॥ केऊ प्रयेत आवज
व वारी ॥ सुमरत हृदय भक्त भयहारी ॥ तव भगवान
देखि प्रणतासा ॥ चाहत करन प्राण निज नासा ॥ सं
जुत शिला हरन जन दूखा ॥ मेल्यो चरन तास मे
जूषा ॥ होत स्पर्श तुरत गहि लीना ॥ सोऊ व चि
त्र देव निज चीना ॥ वंदित बार बार हरषाती ॥ आसू र
पात प्रेम दृग छाती ॥ करि सनान निज भवन पराई ॥
पतिहिं सकल निज विथा सुनाई ॥ भक्ति प्रभाव
देखि सो साचा ॥ तजत दुरंत भक्ति पथ राचा ॥ स
कल देस निज भक्ति सुनाई ॥ वि[illegible]स्तृत कीन तास
सुतदाई ॥ ते स्त्रिनि विविध भोग सुख भोगी ॥

नहीं है और जो कदाचित तेरा कोई ऐसा देव है भी तो तू उसको बुलायले तेरा होगा तो कोलपड़ेगा इस प्रकार तिनका वक्र क्या विरुद्ध वचन सुनकरके कन्या जो है सो व्याकुल होयगई धीरज छूट गया औ दीन दुखित भई हुई के नेत्र रुदन जलसे भर आये तब भगवान को सुमर कर हृदयमे दृढ भरोसा राखकर सबके देखते अपने प्रभू को बुलावने लगी कि हे कृपानिधान आवते क्यों नहीं हो जब ऐसे तिसने दीनबंधु को बुलाया तब अपनी संजूषा अर्थात सुंदर संदूखडी में वैठे हुये दुख कलेशों के हरने वाले भगवान प्रेम करके घेरे हुये ततकाल हीं तिसके पास चले आवते भये इस अदभुत चरित्र को देखकरके लोग सब अचरज को प्रापत होय गये और कन्या अपने ठाकुर को लेकर आनंद पूर्वक घर मे चली आई तहां भक्ती प्रीती और सनमानसे तिनका पूजन सेवन करती भई तब तिसकी भक्ती के प्रभाव को देखकर सब लोग धन्य धन्य कहने लगे इस प्रकार इन ग्रामाधीस की कन्या की भक्ती जो है सो मैने संक्षेप करके कुछ गायन कर देई है अब आगे दूसरी राजकन्या की पवित्र जो है सो कथन करता हूं कि जिसके श्रवण करने से गिरधर भगवान के चरन कमलों प्रीती और प्रेम उपज आवता है ॥२॥ चौपाई ॥ सो प्रति दिवस वचन मन काया ॥ पूजन करत देव निधि दाया ॥ भयो तासु जब रुचिर विवाहू ॥ गवन्यो लेत भवन निज नाहू ॥ शिला सुदेव निज राखत याना ॥ राज कुंवरि तब कीन पयाना ॥ उहां जाय सादि प्रभु पूजा ॥ रहो करत उर भाव न दूजा ॥

के

अपना तसंदूखड़ी जोषी सोतिस चरनके साथ मेलदे
तेभये जब तिसको मंजूषाका सपर्श भया तब तुरत
ही हाथ पसार कर पकड़ लेती भई और सोई अपने
इष्टदेव पहिचान कर नेत्रों से प्रेम जल बहाय कर
हरष के बश भई हुई वारवार वंदना करने लगी तिस
ते उपरांत सनान करकर आनंद पूर्वक घर को चली
आई और घर मे आय कर पती के आगे सब वृतां
त सुनाय देती भई सो भक्ती का प्रभाव सत्य देख कर
और हृदय का सब कुटिलपन त्याग कर भक्ती प्रीती
वाला हो जाता भया तब तिसने अपने संपूर्ण देस
विखें जहां तहां सुंदर भक्ती का ही विसतार कर
दिया और संसार मै अनेक प्रकार के भोग और
सुख भोग कर अंत को पवित्र भक्ती के प्रसाद से
मुनि जोगी जनों दुरलभ जो गती है सो दोनो स्त्री
भरता यतन के विना ही प्रापत कर लेते भये
इस प्रकार इह पवित्र गाथा जो है सो मैने
संखेप करके कुछ गायन कर दई है इसको
जगत मै जो कोई प्रीती और सनमान से स्र
वण करेगा सो अवस्य भक्ती के पद को प्राप
त होवेगा इस मै कुछ संशय नहीं है ॥४॥ इति
श्री भक्त विनोद ग्रंथे भ[illegible]गवद भक्ति महातम मे
भाषाटीकायां जुग कन्या चरित वरणनं
नाम सरगः ══ ══

अतलीन गति दुरलभ जोगी॥ सुचि संसर्ग भक्ति सु
खदाई॥ बिनु प्रयास तिन देवति पाई॥ दोहा॥
अस चरित पुनीत मे कछुक संतन करि गाव॥ जो सा
दिर नर सुनहिं भव बिमल भक्ति पद पाव॥४॥ टीका॥
तव इस प्रकार पती का कथन सुन कर सो ब्रतधारी
राजकुमारी प्रसन्न होय कर कहने लगी कि हे नाथ
तूं धन्य है और धन्य तेरी करनी है जो मेरे को कृपा
कर के इस समय मृतदान देने लगा है आज तेरे समा
न दूसरा जगत मे कोई उदार नहीं है मेरे बडे उद
य भाग है जो तेरे हृदय मे हे पती ऐसी सुमती उ
पजी है अब बिलंब मत करिये खडग का प्रहार देकर
मेरे को दो खंड कर दीजिये और जहां नदी के अ
गाध जल बिखें प्रभूदेव डालदिये हैं तहांहीं मे
रे को भी तिन के चरनो के बीच डालदेवो मे अपने
इष्टदेव के पास जाय कर के मन बांछित कामना जो
है तिस को सफल करूं ऐसे पतनी के बडे दृढ
और भक्ती भरी ती वाले वचन सुन कर सो राजकुमार
क्रोध से नवृत्य हो जाता भया और रोम रोम बिखें
दया का प्रवेश होय गया कहने लगा कि हे भामनी तूं
तहां चली जा कि जहां नदी के अगाध जल बिखें ते
रा इष्टदेव पडा हुआ है ऐसे पती के मुख से आज्ञा सु
न कर सो दृढ भक्ती वाली राजकुमारी ततकाल उठ
कर के भगवान को सुमरती हुई चल पडी और नदी के कि
नारे पर आय कर दीनबंधू के चरनो को प्रणाम कर के ज
ल मे प्रवेश कर जाती भई जब जाती जाती को कंठ प्रयंत
जल आय गया तब तिस का सत्य प्रण और दृढ हठ दे
ख कर के कि अब इन प्राणों का नास करती है भगवा
न कृपानिधान तुरत हीं शिला वाली मे जू खो

शील उत्तम और पतिव्रता धरम मे प्रवीन तिसकी स्त्री
थी मन वचन काया करके पती की सेवा मे नित्य ली
न रहती थी तब एक समय चौमासे के दिनो मे
एक वेला संत शिष्य समूह साथ लिये हुये तिन के
घर मे आय प्राप्त होते भये तव राजा तिन को देख क
र के बड़ा प्रसन्न भया और सन मुख जाय कर चरनो
पर प्रनाम कर कर अपने भागों की बड़ाई करने लगा
कि आज मेरे धन्य भाग्य हैं जिसके घर मे कृपा कर
के संतों ने चरन धारन किये हैं ऐसे कथन कर कर
फिर बड़ा सुंदर और पवित्र स्थान देख कर कि ज
हां निरमल जल और पुष्पों के सहित सुंदर छाया
वाले वृक्ष थे तहां तिन को निवास दिया और भक्ती
प्रीती से दिन दिन अधिक से अधिक ही सेवा सन
मान करने लगा और संतो की भक्ती का प्रभाव दे
ख के देख राजा चिंतत नहीं होता इस प्रकार
जब तहां निवास करते हुये संतों को चुमासा वती
त होय गया तब शिष्य समूह हाथ जोड़ कर गुरु
जी के आगे प्रार्थना करने लगे कि हे भगवन अब
पावस रितु जो है सो बीती गई है कृपा करके श्री
जगन नाथ स्वामी जी के दरसन को प्रस्थान करि
ये अर्थात चलिये ऐसे शिष्यों का वचन संत म
हातमा जो हैं सो राजे ते विदाय मांगते भये तब ते
तिन का वचन कान मे पड़ते ही राजा को मानो कर्ण
शूल वत अर्थात कान की पीड़ा के समान दुख
दायक होजाता भया ॥१॥ चौपाई ॥ रहत नमूप
संत वर जाने ॥ विनय युक्त अस वचन अला
ने ॥ आज काल मे देखिये भवना ॥ पद दिन क
रऊ नाथ तव गवना ॥ अस भूपति जब ने अउ
चारा ॥ वै सव संत कीन सूई कारा ॥ तव नरेस

निज सदन सिधार्‍यो॥ संत गवन चिंता उर मार्‍यो॥ महिषी देखि भूपमन मारे॥ सर्‍दुख बचन अस बदन उचारे॥ कारन कवन सोच प्रभु कीना॥ देखि परत कछु बदन मलीना॥ संत गवन तब भूप बखान्यो॥ रानी सुनत सोच उर ठान्यो॥ अस प्रकार रवि ती नवि लाये॥ नृप तें मागये संत विदाये॥ विनय बखान भूप कर जोरे॥ बहु है आज कृपानिधि मोरे॥ रह अपराध छमा करि भारी॥ गवहि प्रात संत व्रत धारी॥ सुनि अस विनय भूप मुख सोई॥ भये कृत्य भक्तिवस होई॥ नृपति विरह उर संत विचारी॥ पीरत तज्यो अन्न अरु वारी॥ जदपि विविध महिषी समुझावा॥ तदपि तासु संतोष न आवा॥ तब रानी लीन्यो जिय जाना॥ संत वियोग तजहिं नृप प्राना॥ मोर जियन सुख संसति काहा॥ जो ना जियत प्राण पति नाहा॥ तातें कर हुं उपाय नधाना॥ जाहितें अवलोहि पति प्राना॥ करत सोच निसि विविध प्रकारा॥ अंत यतन रह हृदय विचारा॥ देहुं सुतहिं निज गरल खवाई॥ तासु विलोकि मरन समुदाई॥ दोहा॥ प्रात न जैहैं संतवर वसहिं कछुक दिन सोय॥ होहिं सुस्थित चित नृपति तव विरहं कठिन दुख खोय॥ टीका॥

तब राजा ने जान लिया कि संत रहते नहीं हैं हाथ जोर कर दीनव चनों से विनती करने लगा कि हे संत कृपाल आज और काल का दिन मेरे घर मै वास करके फिर तिसउपरांत आपकी जैसी इच्छा हो तैसी करिये ऐसे जब नम्र होय करके राजा ने प्रार्थना करी तब संत महात्मा दया के वशीभये हुये सुई कार कर लेते भये और राजा अपने घर मे चला गया परंतु संतों के जा

चले जाने की चिंता हृदय मे अत्यंत व्यापित होय
रही है तब रानी जो है सो राजा का मन मलीन
देख कर के कोमल वाणी से कहने लगी कि हे प्राण
नाथ आप कौन चिंता के वश होय रहे हो राजा कहने
लगा कि प्यारी संत जो हैं सो अब जाने को कहते हैं ति
सते मै दुखी होय होय रहा हूं ऐसे सुन कर के रानी
हृदय मे बड़ा सोच करने लगी जब तीन दिन बीत गये
तब संतो ने राजा से फिर विदाय मांगी भूप सुन कर के
और हाथ जोड़ कर के विनती करने लगा कि हे प्रभू
मेरे अपराध को क्षमा करिये और आज का दिन मेरे घर
मे वास करिये प्रात होते आनंद से वरध जाइये
ऐसे राजा की विनती सुन कर के भक्ती के वश भये हुये
संत जाने से नवृत्य होय रहे ईन्हो तिन की विरहे विचा
र कर दुखी और व्याकुल भया हुआ राजा अन्न जल
आदि खान पान सब त्याग देता भया यद्यपि रानी ने
बहुत ही समुझाया तद्यपि तिसको कुछ संतोष न
हीं आया तब परम चतुर रानी जो थी सो जान गई
कि पती तो संतों के वियोग से प्राणों को अब त्या
त्याग देवेगा और जो संसार मे प्राण नाथ जीवता
नहीं रहा तो पीछे मेरा जीवना कौन अर्थ है तो तें
अब कोई ऐसा उपाय करूं कि जिस तें पती के प्रा
णों की हानी ना हो इस प्रकार रात्री भर सोच कर
कर अंत को यह निश्चय किया कि अपने पुत्र को वि
ष देकर मार देऊं तब तिस का मरना देख कर सं
त जो हैं सो कल्ह को नहीं जाय सकेंगे कुछ दिन ई
हां ही निवास करेंगे पती तिन की विरहे से छूट कर
स्वस्थ चित हो जावेगा ॥२॥ चौपाई ॥ अस विचारि
मान मन निज रानी ॥ दीन्हो गरल सुतहि निज पानी ॥
जब निसि सोय हुइ जुग रहयो ॥ गरल प्रभाव

अथ पांचालदेश भूप चरितं

दोहा॥ विष्णुभक्ति कर ललित वर विमल महातम जोय॥
लोमहरष प्रदकर हु अब कथन यथामति होय॥ चौ
पाई॥ नृप पांचाल देस इक भयऊ॥ परमदेव पूजन
पर रहयो॥ सत्य वाक्य रत धरम प्रकासा॥ अति हि संत
जन से तत दासा॥ तहि सुशील पतिदेवत नारी॥ अ
ति उतकृष्ट रुचिर व्रत धारी॥ करम वचन मन प्रीति अ
मेवा॥ निरत प्रवीन प्रान पति सेवा॥ समय एक पा
वस ऋतु पाये॥ वैस्नव संत सदन तहि आये॥ सिषगन
लिये संग निज सोई॥ क्षितपति भक्ति प्रेम रत होई॥ करि
प्रनाम सनमान स बहु भांता॥ पावन भाग सराहने लागा॥
बहुरि विलोकि ललित थल पावन॥ जहां सुमं द्रुम स
लिल सुहावन॥ तहां निवास दीन तिन काहीं॥ भूपति
हरष पूरि मन माहीं॥ दिनदिन करन लाग सनमाना॥
नित नव प्रीति न जाय बखाना॥ भक्ति प्रभाव संत अव
रेखी॥ होत न नृप त भूप दृग देखी॥ अस प्रकार जा
व चतुरथ मासा॥ करत वास तहं तिन हि विलासा॥
तब सिषगन अस विनय उचारी॥ कीतिग यो प्रावट
अनुसारी॥ अब श्री जगननाथ हित माने॥ कृपान
केत चलहु दरसाने॥ दोहा॥ सुनि सिष वचन महा
तमन नृपतें मांगि विदाय॥ करन सूलवत नृपहि
सो पर्यो श्रवन दुखदाय॥१॥ टीका॥ अब विस्नु
भगवान की भक्ती का बड़ा सुंदर पवित्र और रोम
रोमहरष के देने वाला महातम जो है सो जैसा कि
बुद्धी के अनुसार होय सकता है गायन करता हूं पां
चाल देश विषे एक राजा होता भया सो कैसा कि
भगवान के पूजन सेवन मैं प्रवीन क्या चतुर सत्य
वादी धरम के प्रकाश करने वाला और अतथी व्र
हमण संत भक्तों का सेवक क्या तैसे ही वह सु

१२२

लगी तव लोग सुनकरके इधरउधरसे धाव
ते चले आये और वालकको मरे हूये देखकर
सव अचरजको प्राप्त होयगये इतनेमे मंत्री
को साथ लिये हूये राजाभी आयगया और
पुत्र को मृत देखकर मानो शोकके समुद्र मे
डूव जाता भया रानी को पूछने लगा कि प्यारी
इसका कौन कारन है तव सो पतीव्रता हाथजो
डकर विनती करने लगी कि हे प्राणनाथ जो आ
पके अपराध क्षमा करो तो मै सत्य सत्य क
थन करती हूं राजा कि प्यारी कहो मैने तेरा अप
राध जो ... सो क्षमा किया तव राजपतनी कह
नेलगी कि हे नाथ आपने जो संतो चलेजाना
विचारकर तिन की विरहे का हृदय मे अत्यंत
दुख और कलेश माना तिससे मैने आपने मन
मे जानलिया कि मेरा पती ... के प्राण जो है
सो तो संतों के साथ ही जावेंगे ... ऐसा उपाय क
रू कि जिससें संत ... न चले जावें इस विचार क
रके नाथ मैने वालक को विख देकर मार दियाहै
कि इसका मरना सुनकर संत महातमा नही जा
वेंगे और तुमारे प्राणभी अचल रहेंगे तिन कीरा
नी ... होयगी सरवप्रकारकरके हितहीहोयगा
ऐसे पतनी के मुखसें वचन सुनकर राजा परम
प्रसन्न होयकरके तिसकी अनेक प्रकार शलाघा
वडाई करने लगा और वे सव संत रानी का हठ
देखकर अपने आप को निंदा कर और धिक्कार क
र कर हृदय मे परम दुख मानते भये कहते हैं कि
संसार मे संत जनोंकी संगत जो है सो वडी सुख

दायँ होती है देखो हमारी संतान इन को परम दुखदा

यक होयगई है गुरु जी दया के वश भये हुये कहते

हैं कि अब मैं इन को छोड़ कर कैसे जाऊं उचित नहीं

है इन राजा और रानी ये दोनो भगवान के भक्त जो हैं

इन का दुख देख कर सहा नहीं जाता है चहता हूं कि मैं भी

शरीर को त्याग देऊं ऐसे कथन कर कर गुरु जी

अपने शिष्य को बुलाय कर रानी का चरि

त्र जो है सो सब सुनाय देते भये तब शिष्य संत

सुन करके हृदय मे कलेश मान कर बहुत पछ

ताव ने लगे और गुरु कृपा लभी भक्तो के कले

श से पीड़ित भये हैं दीनबंधु भगवान को सुमर कर

जिस प्रकार प्रण प्रतिज्ञा करते हैं सो आगे कथन

किया जाता है ॥ १ ॥ चौपाई ॥ रानी मोर राखेबे कारन ॥

विष दे कीन सुवन निज मारन ॥ तो ते भयो मोर

प्रण एहा ॥ देव जियाय देहि सुत तेहा ॥ ~~कस्तुंकि~~

जो न जियावा सिसु भगवाना ॥ तो मैं तजहूं तब आ

पन प्राना ॥ अस व्रत ठानि संत तहि ठाहीं ॥ लग्यो

सुमरन कृष्ण मन माहीं ॥ मंत्र स्तोत्र गीत गुण ना

ना ॥ लागे भक्त वैष्णव गाना ॥ अस जब अर्ध

दिवस नभ आयना ॥ भये विलोल बाल नव नय

ना ॥ देखत चरित तलोक समुदाई ॥ ~~संत सकेतज~~

संत महंत जन कजु तमाई ॥ भरि भरि भूरि हरष

दृग बारी ॥ मोद विवस तन दसा विसारी ॥ भक्ति प्र

भाव वचित्र निहारत ॥ धन्य धन्य नरनारि उचा

रत ॥ उठ्यो बाल तब संत प्रवीना ॥ हरषत धा

रि क्रोड़ निज लीना ॥ करत वदन प्रवाल न

ताहू ॥ भवि भवि मधुर वचन उतसाहू ॥ जनक

प्रेक पुनि दीं भराई ॥ नवल बाल मनु छिति प

तिपाई ॥ अति प्रसन्न जुग जोर तपानी ॥

बोल्यो बदन नम्र मृदु बानी॥ बंधु दार सुत वित
मृत तोरे॥ बिनु संतोष प्रभु अपृय मोरे॥ तुमहु
सरव सुखदायक नाथा॥ अस कहि नयो चरन नृप
माथा॥ तब गुरु बोलि निकर शिष काहा॥ याव
त जियत मोर जग राहा॥ तावत मै नत जहु नररा
ई॥ जाहु तुमहु निज निज समुदाई॥ शिष न देस
गुरु वर अस पायो॥ चलबे हेतु चरन सिर नायो॥
तब अस विनय कीन नरराई॥ जाहु संत [illegible] अ
ब भोजन पाई॥ भूप वचन अस मानि सुहावा॥
करि सनान तिन भोजन पावा॥ दोहा॥ तब नरप
त धन चरन मृग कामर वसन सुहाय॥ देत बि
सर जन सो किये नम्र चरन सिर नाय॥४॥ टीका॥
कैसा प्रण किया कि इस रानीने मेरे राखने के
लिये विषपान कराय करके अपने प्यारे पुत्रको
मार दिया है तातें अब मेरा भी इह प्रण रहा कि
भगवान कृपानिधान इस [illegible]ई के बालक को जि मा
वाय देवें और जो कदी भगवान भक्तसुखदान
इसको नहीं जिवावें [illegible]गे तो मै भी अपने प्राणों
को त्याग देऊंगा इस प्रकार प्रण धारकर भक्त
प्रधान हृदय मै कृष्ण भगवान को सुमरने लग
जाते भये और पवित्र मंत्र स्तोत्र [illegible] गुण
कीर्तन जो हैं सो प्रीती भक्तीसें गायन करने ल
गे इस प्रकार [illegible] आराधना करते हुये वे सब
भक्त को जब [illegible] आधा दिन
बतीत होय गया और सूरज मध्यान मै आय
गया तब भगवान की कृपासें बालके ने चे
चले हो जाते भये अर्थात जीवता होय गया इस
को अदभुत चरित्र देख करके सं लोग अचरज के
वश होय गये और संम्हलात माके सहित माता

बालमृतभयो॥ राजपतनि लागी तबकरनै॥ हाहा
कार दिष्य सुर भरने॥ सुनत लोग सहि सोउठि धाये॥
मृतक विलोकि बाल बिसमाये॥ आये राऊ सचिव
लिय संगा॥ [illegible] देखि सुतहि निजप्राणसम [illegible] भंगा॥
भयो निमग्न शोक निधारी॥ कहहु कवन [illegible]म
कारन इह प्यारी॥ तबकर जोरि बचन अस रानी॥
पति कहै नम्र भनन सुख लानी॥ जो अपराध तुम
हु प्रभु मोरे॥ तो मैं करहुं नवेदन तेरे॥ भन्यो नरेस क
हो तुव प्यारी॥ राजपतनि तवविनय उचारी॥ गुनि
जियगवन संत भगवाना॥ तुव पति विरहे परम दुख
माना॥ मोरे पति जानि जिय नाणा॥ जात [illegible] तु
व संतन स्नाणा॥ असविचारि सुत को विष दीनी॥
हनिकर मरण संतवर चीनी॥ तजहीं प्रात गवन
निज सोई॥ [illegible] प्राणनाथ तुमरो हित होई॥ भू
प प्रसन्न सुनत अनुरागा॥ बहुविधि तासु प्रसंसन
लागा॥ वै सब संत देखि हठ रानी॥ निदरत नि
जहिं परम दुख मानी॥ जग संगत संतन सुख दा
यो॥ मम संसर्ग इनहु दुख पायो॥ अब कस जाऊं क
हत व सदाया॥ तजहौं देखि भक्त दुखकाया॥ अ
स कहि बोलि निकर सिष लीन्यो॥ महिषी च
रित कथन सब कीन्यो॥ दोहा॥ सुनत निकर सि
ष मरण सिसु धुनत सीस पछुतान॥ तब गुरु
प्रण जसकीन तस आगल करहुं बखान॥ १॥ टीका॥
ऐसे विचार करके रानी अपने पुत्र को विष जो है
सो खवाय देती भई॥ जब दो घड़ी रात्र बाकी रही
तब विषके प्रभाव से बालक मृत्यु को प्राप्त हो
जाता भया तिसको मरे हुवे देखकर रानी बहु
तेरी स्वर से हाहाकार शब्द करकर रोदन करने

सव भक्ती प्रीती से देकर और नाना सतकार कर
कर बारंवार चरनों पर सीस नाय करके विदाय
कर दिये ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ गुरु वर रहे भ
क्ति वस ताहो ॥ दिन दिन प्रेम निरत नर नाहो ॥ ल
ग्यो करन सादिर तिन सेवा ॥ काय वचन मन भक्ति
अभेवा ॥ असप्रकार कछु काल विताया ॥ दंपति
तजत रुचिर निज काया ॥ गये जुगल हरि धा
म सिधारी ॥ पाछे संत सूपृ व्रतधारी ॥ राज्य
वषेक राज सुत का हीं ॥ निज कर देत हरषि मन
माहीं ॥ विदाय होत सनमाना ॥ जगन्ना
थ कहें कीन पयाना ॥ दोहा ॥ असप्रकार इह
चरित मे यदुकिंचित मति गाव ॥ रुचि के सादिर
सुनत नर परम भक्तिपद पाव ॥ ५ ॥ टीका ॥ तव
गुरु जो हैं सो राजा की भक्ती के वश भये हुये तहां
हीं वास करते भये ॥ प्रजापाल भक्ती प्रीती से रा
त्री दिन तिन की सेवा करने लगा इस प्रकार जव
कुछ काल व्यतीत होय गया तव राजा और रा
णी दोनो शरीर को त्याग कर कृष्ण कृष्ण रटते हु
ये कृष्ण धाम को चले गये ॥ पीछे संत महा
तमा जो थे सो विधी पूर्वक राजा के पुत्र को रा
जतिलक देकर ॥ फिर आप विदाय होकर आ
नंद से श्री जगन्नाथ स्वामी के दरशन को चले
जाते भये ॥ ऐसे इह मनोहर गाथा जो है सो
मैंने जैसी क वुद्धी के अनुसार हे यस की इहो
गायन करदेइ है इस गाथा को जो कोई प्र
द्धा सनमान पूर्वक श्रवण करेगा सो कृष्ण भ
गवान की सुंदर भक्ती को अवश्य प्राप्त
हो जावेगा ॥ ५ ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद

पिता हरष के जल से नेत्र परिपूरन होये शरीर की दशा से भी भूल गये तिस समय का आनंद कुछ कथन नहीं किया जाता तब इस अद्भुत भक्ती के प्रभाव को देखकर नर नारी सब लोग धन्य धन्य शब्द को उचारन करने लग जाते भये वालक जब उठा तब संत महात्मा ने हरष से अपनी गोद मे ले लिया और मधुर वचनो से बड़ा प्यार करकर और भली प्रकार प्रीती से मुख पोंछ कर पिता की गोद मे दे दिया तब राजा मानो नवीन अर्थात नया वालक पाय करके प्रसन्न भया हुआ हाथ जोड़ कर कोमल वाणी से विनती करने लगा कि हे कृपा निधान स्त्री पुत्र पिता भ्राता हेवं धी सेवक धन धाम इत्यादि जो हैं सो आपके संतोष और प्रसन्नता के विना मेरे को सब अप्रिये हैं अर्थात प्यारे नहीं लगते हैं सरव सुखदायक और सरब हितकारी मेरे प्रभू एक तुम ही हो ऐसे कथन कर कर राजा चरनो पर शीस धर देता भया तब गुरू जी ने अपने सब शिष्यों बुलाय कर सुनाय दिया कि भाई मैं जगत विखें जब लग जीऊंगा तब लग इस राजा को नहीं त्यागूंगा अब तुम सब अपनी इच्छा के अनुसार जहां की रुची रखते हो तहां को चले जावो ऐसे गुरू जी की आज्ञा पाय कर शिष्य जो थे सो जाने को त्यार होय कर गुरू जी के चरनो पर प्रणाम करते भये तब राजा हाथ जोड़ कर विनती करने लगा कि हे संतो अब भोजन त्यार है कृपा करिये और पाय करके जाईये इस प्रकार राजा की विनती मान कर संतो ने स्नान किया और फिर आय करके प्रीती सनमान से भोजन पाया तब राजा ने सुंदर वस्त्र धन कंबल और मृगछाला इत्यादि

निकटवरती जो देस है तहां एक राजा वास करता भया सो कैसा कि बड़ा प्रजा पाल और भगवानकी भक्तीमे प्रवीन परमउदार और धरमकी निधी जो मन वचन काया करके नित्य वैष्णव संत भक्तों और अतथी ब्रह्मणों की सेवा करता रहता था तिसके घरमे बड़ी सुशील गुणों की खानी और भगवानकी भक्ती प्रीतीवाली जुवा अ—वस्थाएक कन्याथी सो भी प्रेम भक्ती से नित्य अतथी संत भक्तों के चरनोंका पूजनसेवन करती रहतीथी तब समय पायकरके पिताने एककोई बड़ा धनमान राजा देख करके तिसके साथ तिसकन्याका विवाह पठायदिया जब सो राजकुमारी पतीके घरमे आयप्रापत भई तब तहां तिसको अतथी संत भक्त वैष्णवं सुपनेमे भी देख नहीं पड़ा तब तो बड़ी उदासीन सी होयकरके एकदिन पती के आगे विनती करने लगी कि हे नाथ वैष्णव संतभक्त जो हैं तिनके पूजन करने की मेरे हृदयमे अभिलाषा उतपन्न भई है सो कृपा करके तिनको सनमानपूर्वक बुलाय पठिये मै प्रीती भक्ती से पूजन करूंगी इसप्रकार जब राजकुमारी ने कथन किया तब सो तिसका मूढ पती सुन करके कहने लगा कि वैष्णव कौन और कैसे होते हैं हमने तो आज लग कानमें भी नहीं सुने ऐसे पती के मुखसे वचन सुनकर सो प्रवीन और सुशीले हृदयमें परमचिंता दुखमान कर कृष्ण कृष्ण रटती हुई मौन होय रही तिसके उपरांत पतीकी कुलका सब आचार जो देखा तो कैसा देखा कि

जो किसी भी कुल मे न होंय हरी का नाम जो कली
काल एक सार है और सहजे ही उधार करदेने
वाला है तिस ऐसे सुखदायक हरी के नाम को कोई
लेता कान मै भी नही सुना ॥१॥ चौपाई ॥ दयाधरम
रत हिं सक देषी ॥ उपज तासु उर शोक वसेषी ॥ ऐस
प्रकार कछु काल विहाया ॥ राजकुवरि तव सुत उप
जाया ॥ सास सुसर पति बांधव जेते ॥ तासु विलोकि
हरष जुत तेते ॥ प्राण भूत निज जानन लागे ॥ हम हूं
आज से सतिव डभागे ॥ ऐस प्रकार संवत सर चारि ॥
जव वीत्यो तव राजकुमारि ॥ अवसर एक वोलि निज
दासी ॥ तासु तचिर ऐस गिरा प्रकासी ॥ अव ते संत
वैस्नव चीना ॥ जो आवहिं तव ग्राम प्रवीना ॥ तो मो
हि शीघ्र सूचना देहै ॥ करि सेवा वांछित फल लेहैं ॥
सुनि सासन स्वामिनि ततकाला ॥ करि प्रणाम गव
नी तव वाला ॥ संत आगमन विलोकन लागि ॥ कर
त प्रजटन ग्राम अनुरागि ॥ एक दिवस द्वारावति तेहीं ॥
आय गये वैस्नव गण जेहीं ॥ खोजत फिरे न
गर सव माहीं ॥ तिन कहं मिल्यो वास थल नाहीं ॥
कीन नकाहु जवहिं सनमाना ॥ तव इक वहिरवा
पि जल पाना ॥ तरुवर देखि सघन सुठि छाया ॥
तहं तिनहिं आसन दृढ लाया ॥ सो दासी तिन पैं
अनुरागी ॥ करि प्रणाम अस पूछन लागी ॥ कहि
तें आय संत समुदाया ॥ न वृतांत निज सकल सु ति
नाया ॥ हम आये द्वारावति त्यागी ॥ जगन नाथ प्र
मुद रसन लागी ॥ वे सुनि निज स्वामिनि ढिग आ
ई ॥ कथा संत आगमन सुनाई ॥ देवी आय वै
स्नव ग्रामा ॥ दीन नकाहु तिनहिं विस्रामा

अेत कलेश पा मातिउरमाही॥ वहिर ग्राम इक
वाथि निहारी॥ तहाँ विञ्चाय परत तहतासा विनु
भोजन निज कीन निवासा॥ विप्र मक्तिरत भूपकु
मारी॥ अस कलेश सुनि संत न भारी॥ होत दुखित
निज सुत कहे दीना॥ हालाहल विलंव नहिं कीना॥
वालक भयो तुरत मृत जवहीं॥ लागी करन रुदन
अतितवहीं॥ दोहा॥ सुनि आरत स्वर तासु अस
सुसर सास पति वंधु॥ अेता पुरतें धाय सव सम्भ्र
म विगत अनेदु॥२॥ टीका॥ फिरके ते कि दयाधर
म से रहित नित्य पाप में हीं जिनकी प्रीती अैसे पती
की कुल को देख करके राजकन्या परमशोक को प्रा
पत होय गई इस प्रकार कुछ काल वतीत हो जाता
भया तव सो भूपकुमारी सुंदर पुत्र जो है सो जनम
ती भई तिस वालक को देखकर सास सुसर
पती वांधव जो थे सो सव परम हरष को प्रापत
हूये और तिसको अपना जीवन प्राण जानने
लगे वालक के उतसाह मै मगन भये हूये
कहते हैं कि आज हमारे समान जगत मे कौन
वडभागी है अैसे जव चार वरष वतीत होय गये
तव एक दिन राज कन्या अपनी दासी को वुला
यकर कहने लगी कि अव ते तूं जाय कर देखती
रहना कोई वैस्नव संत जन जो आवें तो आयक
रके शीघ्र मेरे को जणाय देना मै तिन की सेवा
भक्ती करके अपने मन वांछित फल को प्रापत
करलेऊं इस प्रकार सामनी की आज्ञा पायकर
दासी जो है सो तुरत प्रणाम करके चली गई
और संतो का आगमन अर्थात आवनेंकू ताकी
ग्राम मे जहां तहां फिरकर

कन्या

अथ कुलशेखर देस प्रांत वासी भूप चरितं

दोहा॥ अब अदभुत सुंदर सुखद भक्ति महातम आन॥
करहुं यथा मति कथन रति कृष्ण कमल पद दान॥
चौपाई॥ पुष्कर तीर्थ प्रांत जे देसा॥ तहां बसहिं इक
रुचिर नरेसा॥ प्रजापाल हरि भक्ति प्रवीना॥ परम
उदार धरम व्रतलीना॥ वैस्नव भक्त हेत मंदिदेवा॥
मन वच करम करत नित सेवा॥ ताकर सुता सील
गुणखानी॥ वय कशोर हरि भक्ति सयानी॥ विप्र सं
त वैस्नव पद पूजा॥ प्रतिदिन करत भाव तजि दूजा॥
जनक तास कछु अवसर पाई॥ देखि धनढ्य एक
छित राई॥ पाँ[illegible]हता कन्या मन भावा॥ तेहि सन
सादर दीन करावा॥ पतीभवन जब राजकुमारी॥
गवनी सो सुंदर व्रत धारी॥ तहां सेत वैस्नव जन काहू॥
परहिं न सपन दृष्टि दृग ताहू॥ एक दिवस तव राज
किशोरी॥ पति सन विनय करत कर जोरी॥ मोरे
वैस्नव पूजन काहीं॥ कारण लालसा मानस माहीं॥
राज कुवरि अस जबहिं बखानों॥ तब बोल्यो नृपसु
वन अजाना॥ कवन तु वैस्नव पूजन काहीं॥
हम इन सुन्यो आज लग नाहीं॥ राजसुता सुनि
चिंता घेरी॥ भई मौन मुख हरि हरि टेरी॥ दोहा॥
तदनंतर पति कुल सकल लोक्यो अकुल आचा
र॥ सुन्यो न स्रुति हरिनाम को रटत कलित
कलिसार॥१॥ टीका॥ अब और कृष्ण भग
वान के चरनों की प्रीती के देने वाली बडी अदभुत
और सुंदर सुखदायक भक्ती की पवित्र गाथा
जो है सो कथन करता हूं हे संतो आप ध्यान दे
कर श्रवण करिये पुष्कर तीरथ के

रोदन और विलाप सुनकर सास ससुर पती औ
र बांधव जो थे सो मन लों से निकल कर भ
म के वश व्याकुल भये हुये धावते चले आये ॥ २ ॥
चौपाई ॥ देखि बाल मृत हाहाकारा ॥ लाग्यो कर
न सकल परिवारा ॥ मदन बाल कारन जब बूझा ॥
मनत जननि मोहि नाहिन सूझा ॥ तब बांधव धी
र जब सब त्यागे ॥ ताडन बदन निज लागे ॥ अ
स विलोकि तिन करदुख भारी ॥ बोली बदन बाल म
हतारी ॥ जनक न के तंत्र मन रहयो ॥ सो दि
वस विवस मृत भययो ॥ जनक मोर तब हृदय वि
चारी ॥ लखि हरि भक्त ... झारी ॥ तिन पें जाय
जोरि जुग पाना ॥ करत प्रनाम नम्र मनमाना ॥ ला
वा प्रीति भक्ति जुत बैना ॥ कीन विविध विधि पूजन
ते ना ॥ चरनोदिक तिन लैन सुनाया ॥ कीन मृतक
मागि लकाया ॥ सो प्रभाव संतन बदना री ॥ उ यौ
बालमून कुसम उचारी ॥ तो ते तुम हुं यतन अब ए
हु ॥ करहु वेग बांधव जन ते हू ॥ देखि संत वेसब
क हुं आये ॥ त्याव हु भवन वेग दुत जाये ॥ सोहिं जि
यत मृत बाल तुमारा ॥ तास बदन जब वचन उचा
रा ॥ कहत सब हुं कस जानब सोई ॥ वे सब संत
कवन कस होई ॥ अब लों ऐसो अवता नहिं ए हु ॥
वैसब संत भने तुव जेहू ॥ तास कह्यो हरषत
मन माहीं ॥ ऐ हदासी जानत तिन काहीं ॥ सुनत
सकल ... दउ मे गा ॥ लिये तासंगि कहे संगा ॥
आय संत गन चरन जुहारो ॥ जोरि जुगल कर
विनय उचारो ॥ महाराज सिसु आज हमारा ॥ भ
न वस भये प्रानतें प्यारा ॥ तुव प्रभाव चरन न
तहिमाई ॥ ... नाना करि करि विविध बडाई ॥
तो तें चल हु संत करि दाया ॥ जानि दास निज
लेहु सहाया ॥ तुव प्रसाद मृत बाल हमारा ॥

जियत संत प्रभु भूप उचारा॥ सदा संत संसृति उपकारा॥ तासम भक्ति संत चले सिधारी॥ जब प्र वेश भूपति गृह कीन्यो॥ मृतसुत मातु चरन गहि लीन्यो॥ दोहा॥ करि पूजन विधि वत सकल नमत विनय बखान॥ ~~...~~ अहो भाग मूरी ~~...~~ न आयसंत भगवान॥ टीका॥

तब बालक को मरे हुये देखकर संपूर्ण परिवार जो है सो हाहाकार शब्द करकर रोवने लगा और जब बालक के मरने का कारण पूछा॥ तब तिस की माताक हती भई कि मै कुछ नहीं जानती हूं इनकैसे मृतक ये गया है ऐसे सु तिसके मुखसे वचन सुनकर के सब बांधव दुखित भये हुये अपने अपने हृदय को कूटने लगे इस प्रकार तिनका परम दुख और कलेश देखकरके बालक की माता जो है सो कहने लगी कि हे बांधव जनो मै तुमको एक वार्ता सुनावती हूं तुम हृदय मै धीरज धार कर के श्रवण करो क्योंकि एक दिन पिता के घरमे मेरा भ्राता जो था सो दैव जोग से काल के वश होय गया अर्थात मर गया तब मेरा पिता ~~...~~ मनमे विचार करके तहां ~~...~~ वैस्नव संतों ~~...~~ की जमात आई हुई थी तिनके पास चला गया और दीनभाव से चरणोंपर प्रणाम किया फिर हाथ जोड़कर मुखसे अनेक प्रकार विनती बड़ाई कर कर तिनको अपने घरमे ले आया ~~...~~ विधीपूर्वक बड़ी प्रीती सनमान से तिनका पूजन किया तब संतों के चरनों का जल जो था सो लै तिस मृत भये हुये बालक के शरीर पर मार्जन किया अर्थात छिड़का तब संतों के चरणामृत के प्रभाव से सो मरा हुआ बालक कुसल कुसल कहता उठ खड़ा भया तां ते अब तुम भी हे बांधव जनो ~~...~~ रोदन

विलाप को त्याग कर कहीं वैष्णव संत आय हुये देखकर तिन्‍ह भक्ती सनमान से घर मे ले आवो तौ तिनके चरनो के प्रसाद से इह तुमारा बालक भी जीवत हो जावेगा इस मै कुछ संशय नहीं है ऐसे तिस का कथन सुन कर सो बांधव जन कहने लगे कि हे सुशीले तूं ने सत्य कहा है परन्तू हम तिन को कैसे पहिचानेगे वैष्णव कौन और कैसे होते है ~~[struck through]~~ हमने आज लग कानमै भी नहीं सुने तब सो राजकुमारी हृदय मे बड़ा हर्ष मानकर कहने लगी कि मेरी इस दासी को तुम साथ ले जावो इह तिन को जानती पहिचाने है इस प्रकार सुनकर के बांधव जो हैं सो तिस दासी को साथ लेकर आनंद से खोजते हुये तिन संतो के पास चले आये और दीन भाव से चरनों पर प्रणाम कर कर औ हाथ जोड़ कर विनती करने लगे कि हे संत उदार हे कृपाल आज हमारा प्राण प्यारा बालजो था सो काल के वश होय गया है प्रभू तिस की माता ने आपके चरनो का प्रभाव और महिमा बड़ाई जो है सो अनेत ही कथन की है कि जिस का कुछ अंत नहीं तो ते अपने सेवक जानकर कृपानिधान कृपा करिये और हमारे घर मैं आप के चरनों के प्रसाद से हमारा बालक जो है सो अब भी जीवत हो जावेगा जब इस प्रकार राजा के सहित सब बांधवों ने प्रार्थना करी तब संत सदैव परउपकारी और दया की निधी होते हैं तिस राजकन्या की भक्ती के वश होकर ततकाल हीं तिन के घर मे चले आये तब संतो का दरसन कर के राजकुमारी कि जो मृत भये हुये बालक

(५१)

दिनदेखने लगी तब एकदिन द्वारावती नें विचारते विचरते वे सब संत जो हैं सो तिस नगर में आयप्रापत भये सो संपूर्ण नगर में फिर चुके परन्तु किसी नें तिन का कुछ सनमान नहीं किया और ना तिन को कहीं निवास करने के लिये कोई अस्थान प्रापत भया तब तो दुखी होय कर और बड़ा कलेश पायकर नगर के बाहर एक वापिका अर्थात बावली और घने बृक्षों की छाया देख कर भूखे प्यासे तहां आसन लगाय देते भये इतने में फिरती फिरती सो दासी भी तिन के पास चली आई और वे सब संतों को देखकर प्रणाम करके कोमल बाणी सें पूछने लगी कि हे संतो कृपाकर के कहिये कि तुमारा कहां तें आवना हुआ है ऐसे तिस का हित प्रीती वाला बचन सुन करके संत कहने लगे कि माई हम दूर का तें आये हैं और जगन नाथ स्वामी के दरसन की अभिलाषा रखते हैं तब संतों का बचन सुनकर दासी तुरत अपनी स्वामिनी के पास चली आई और वे सब संतों के आवने का सब प्रसंग सुनाय देती भई कि हे देवी इहां नगर में वे सब संत आये हैं परन्तु किसी ने तिन को निवास के लिये नहीं पूछा और ना किसी ने कुछ सनमान किया अंत को दुखी होय कर निदान इस नगर के एक बावली और बृक्षों की घनी छाया देख कर तहां पत्र बिछाय कर और तिन पर आसन लगाय भूखे प्यासे हीं पड़े हुये हैं इस प्रकार दासी के मुख से बचन सुन कर विष्णु भक्ती में लीन विष्णु भक्ता राजा की कन्या जो थी सो संतों का ऐसा दुख और कलेश बिचार कर सहार नहीं सकती भई तिन के दुख से व्याकुल भई हुई तुरत हीं अपने पुत्र को हाला हल जो विष है सो खवाय देती भई जब तिस के प्रभाव से बालक मृतक होय गया तब बड़ी ऊंची स्वर से हाहाकार कर कर रोवने लगी ऐसे तिस का

तन ताँ भयो कपट विनाई ॥ सो
रठा ॥ तव सु संत समुदाय ॥ अस प्रकार कहि चारि
तवर नृपतें होत विदाय विज मारग गवने मुदि
त ॥ नृप भक्ति जुत होय ॥ कुसुम कमलपद धारि उर
॥ कुमति दोष सव खोय राजकाज तत पर भयो ॥ ८ ॥ टीका ॥
फिर कहती है कि आज मेरे को मनवांछित फल जो
था सो प्रापत होय गया है हे संत स्वामी तुम अन्तर
जामी सव कुछ जानते हो तव ऐसे कहत वालेति सके
वचन सुनकर कि जिन मैं रहनाथ जी हो ताहै
जो भगवत वालक का मारना केवल आप के दरस
न के लिये है संत महातमा सुनकरके परम आनंद
के प्रापत भये और तुरत ही उज्जल वस्त्र ले करके
मृत भये हुये ऊपर डाल दिया ॥ फिर आप बैठके
रके भगवान कृपानिधान का सुमरण करने लगे इस
प्रकार दीनबंधू को सुमरते सुमरते संध्या पड़ गई
और सूरज भगवान लुपत होय गया तव मृत
भया हुआ वालक जो था सो मानो चंद्रमा के स
मान उदय हो जाता भया तिसको देखकर
माता पिता वांधव इत्यादि कुमद अर्थात् कूये जो थे
सो भी प्रफुल्लित होय गये संपूर्ण नगर इह चरचा भी
तुरत ही फैल गई कि राजा का मरा हुआ वालक संतों
ने जिवाय दिया है तव राजा के सहित सव परिवार
के स्त्री पुरष संतों का अत्यंत उपकार जानकर
आय करके वार वार चरनों पर सीस नावते और
तिनकी महिमा वड़ाई कथन करते तृपत नहीं
होते हैं तिस ते उपरांत अनेक प्र
कार के भोजन व्यंजन वनवाय
कर और प्रीती सनमान से प्रथम संतों को जिमाय

पीके परिवार के सहित राजा आप पावतामया फिर सुंदर वस्त्र और मणी कंचिन इत्यादि धन जोडे सो ल्याय कर और संतो के आगे मेरा राखकर हाथ जोड कर दीन वाणी से विनती करने लगा कि हे कृपानिधान मे क्या देऊं इन कुछ आपके लायक नहीं है मेरी बुद्धी नहीं अधीन बोली हाथ हीं आपकी सेव काई है तब सें महातमा राजा प्रार्थना सुन कर प्रसन्न होय गये और कहने लगे कि हे राजन इह तुमारे पुत्र की पतनी तुमारी सनुषा अर्थात बहू है जो है सो पवित्र व्रत के धारने वाली भगवान की भक्ती मे प्रवीन और विसनु भक्त राजा की कन्या है इसी की भक्ती के प्रभाव से तुमारा मृतभया हूआ बालक जेप्या सो जीवत होय गया है तांते हे राजन भक्ती के और दूसरा कोई भी धरम नहीं है इस संसार समुद्र के तारने की भक्ती हीं जहाज के समान प्रधान है हे प्रजापाल अब तुम भी द्वेष और कपट को त्याग कर कृस्न भगवान के चरनो की सुंदर भक्ती जो है तिस को धारन करके निरभय होय कर अपना सब राज काज करो और प्रजा को पालो इस प्रकार जब संतों ने उपदेश किया तब कपट से रहित कृतार्थ भया हूआ राजा दंडवत चरनो पर गिर पडता भया ऐसे संत महातमा भक्ती का प्रभाव दिखाय कर और विदाय ले कर कृस्न कृस्न रटते हूये अपने मारग को चले गये इन तिन के प्रसाद और राज कन्या के उपकार से राजा भी कुमती और द्वेष से नवृत्त होय कर कृस्न भगवान की भक्ती प्रीती वाला होय कर राज

काज मै लीन भया ह्या दया और धरम से प्रजा को पालने लगा॥४॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगव भक्ति मनान मे भाषाटीका यो कुलशेखर क्षे प्रीतवासी नृप चरित्र वर्णनं नाम सर्गः

की माता थी धाय कर के संतो के चरन पकड लेती भई
और फिर विधीवत तिन को पूजन कर के हाथ जोड कर
बडी दीनताली से कहने लगी कि अहो आज हमारे धन्य
भाग और धन्य हमारा सफल जनम कि जिन के घर मे
अनायास अर्थात यतन के बिना ही संत भगवान चले आ
ये और चरन धार कर हमारे घर को पवित्र किया है ॥३॥
चौपाई ॥ मिल्यो आज वंछित फल मोरे ॥ अन्तर जा
मि विदत सब तोरे ॥ अस कहत स्नेह जुत बचन सुहावा ॥
सुनत तास संतन सुख पावा ॥ देखित पट मृत बाल
अक्रादिन ॥ करत लाग भगवान अराधन ॥ अस
प्रकार से ध्यान जब छायो ॥ मार तेउ भगवान दुरायो ॥
मृतक बाल जनु इंदु प्रकास्यो ॥ माधव कुमद विले
कि विकास्यो ॥ सकल नगर चरचा अस छावा ॥
संत दीन मृत बाल जियावा ॥ भूप समेत सकल परि
वारा ॥ जानि सुमत संतन उपकारा ॥ बार बार चरन
न शिर नावहिं ॥ करत सुजस सुख तृपति न पावहिं ॥
तब तर नाथ पाक विरचाये ॥ प्रथम प्रीति जुत जिमा
ये ॥ पुनि परिवार सहित निज कीना ॥ भोजन भूपवर
म सुख लीना ॥ तहि [illegible] पश्चात वसन धन
नाना ॥ मणि कंचिन ल्यायो मनमाना ॥ कीन न
वेदन संतन आगे ॥ करि प्रणाम मानत अनुरागे ॥
कहे हैं भगवन तुव काहीं ॥ दीन द्याल कछु लाय
क नाहीं ॥ तब संतन अस गिरा उचारी ॥ जौ नृप
ति सुन खोतु मारी ॥ भगवन भक्ति निरत व्रत धन्या ॥
भगवन भक्त भूप कर कन्या ॥ हम इहि भक्ति विवस
नृप आवा ॥ भक्ति प्रभाव बाल मृत ज्यावा ॥ भूप भक्ति
सम हेतु नि आना ॥ नहिं न तरन भव सागर याना ॥
ताते तुम ऊदेष सब कोई ॥ संतन कृपा भक्ति र
त होई ॥ कर हु अकेटिक राज सुहावा ॥ अस संत
न भव बचन अलावा ॥ पर सो लुकट इव चर

र्ध नामकरके एक वैस्य प्रधान होते भये सो कै
से कि विस्नु भक्ती के मानो कल्प वृक्ष [illegible] तिस
ग्राम के सव लोग तिनको परम प्रीती पूर्वक पूज
ते थे और सव स्त्री पुरष दयाधरम मै प्रवीन थे
तिसी ग्राम विषें मातुल और भागनेय दो नामा
मानजा निवास करते थे सो किसी संत महातमाका
उपदेश पाय करके भगवान की भक्ती प्रीती वाले होय ग
ये अतिथि साधव्रह्मन देखकर [illegible] प्रजा भक्ती
सें तिनका सेवन सतकार करते रहते थे एक दिन
तिनके हृदय मै अभिलाषा उपजती भई कि हम श्री
रंग स्वामी जी का सुंदर मट जो है सो वनावें इस तें प
रे पुन्य [illegible] धरम और कोई नहीं है परन्तू हमारे
पास इस लायक धन नहीं है एही सोच करते कर
ते अंत को इह सिद्ध किया कि इस ग्राम विषें जयनी
जो वडा धनमान है तिसके जाय करके नौकर वनिवें
और चोरी से तिसके घर का धन लेजाय कर तव श्री
रंग स्वामी जी का मट जो है सो वनाय लेवें इस प्रकार
मता दृढ करके तिस जयनी के घर मे चले गये और
दोनों तिसके नौकर वन गये तव रात्री दिन टहिल
सेवा और [illegible] काम काज जो है सो सव करने लगे ऐसे
कुछेक दिनो के पीछे सो दोनो सुनार [illegible] परस्पर
विचार करने लगे कि हमने इसके घर मै चोरी करने
के लिये नौकरी करी है परन्तू इहां तो देव की प्र
तिमा के विना और अधिक धन कोई नहीं देख प
डता है ॥१॥ चौपाई ॥ अस विचारि मातुल निसि
काहीं ॥ उत स्यो भगगवान मट माहीं ॥ रतन
जटित कल मूरति देखा ॥ गहि भागनेय उँधे प
ग लेखा ॥ तव मातुल अस ताहु वखाना ॥ मोर

तीसन हनि खेडग सुजाना॥ काटि जाहु निज सदन सिधाई॥ तुम कहं होहिं सफल धन भाई॥ तास वचन वस [illegible] करवाला॥ काटि सीस मातुल ततकाला॥ प्रतिमा दैव लेत द्रुत गवना॥ राखै जाय तास निज भवना॥ आवहु फिरि जयन धनि गेहा॥ भयो शयन रत विगत संदेहा॥ ऊठो तासमातुल कर आना॥ कट्यो सीस नूतन उपजाना॥ खुल्यो तुरत से लगन कवारा॥ आयो निकसि वहिर तव द्वारा॥ निज सिज्जा जन मौन धराये॥ रह्यो सो पनिसि अवसर आये॥ भोरहिं देखि तासु अस [illegible] आवा॥ भागनेय मुख चकित अलावा॥ जानि न परहिं अहं भव मोरे॥ कारन कवन जियन अव तोरे॥ तव मातुल मुख वचन अलाया॥ द्रुत श्रीरंगस्वामि सब दाया॥ अस कहि प्रात जयन शिव काई॥ लागे करन जुगल जन जाई॥ तास जयन जव जाय निहारा॥ खुले दैव मट मे जु कवारा॥ सो ठाकुर प्रतिमा नहिं पायो॥ परम सो चकित उरकायो॥ भयो दैव रहकारण काहा॥ [illegible] करत जयन रोदन मुख लेहा॥ ते निज कोलि जुगल मृत लीने॥ वोल्यो वचन कोप रस भीने॥ जाहु मोर जठ भवन तयागे॥ अव न रहहु मम आंखिन आगे॥ तुव सेहगि दूरतें चोरी॥ लागी आज सदन मम चोरी॥ दोहा॥ तास कोप जुत वचन अस सारन कार सुनि कान॥ चलि आये निजभवन द्रुत हदय रुचिर हित मान॥२॥ टीका॥ ऐसे [illegible] मातुल जो मामा था सो रात्री के समय गवाक्ष अर्थात एक [illegible] के रसते मट के बीच उतर गया और दैव प्रतिमा जो रतन [illegible] न मणियों कर के जडत भई हुई थी उठाय कर तिसी रसते से ऊपर चढाय देता भया तव भागनेय अर्थात तिसके भानजे ने

हाथ पसार कर तिस मूरती कों खैंच लिया तव मातुल
कहने लगा कि हे भान जे अव तूं तलवार का प्रहार
देकर मेरे सीस को काट डाले फिर इस धन को लेकर
अपने घर को चला जा तेरे को सफल हो इस प्रका
~~सुन~~ र मातुल का वचन मान कर तुरत तलवार
का प्रहार देकर तिसका सीस काट डाला औ देव प्र
तिमा को लेकर के अपने घर मे चला आया तहां
तिस को यतन से राख कर फिर आप निरसंदेह आ
य कर जयनी के घर मे सोय रहा और इहां श्रीरं
गस्वामी की कृपा से तिस मातुल का कटा हूआ सीस
फिर नया उतपन्न हो जाता भया और भवन के क
वाड जो वंद थे सो भी खुल गये तव वे तुरत हीं वाहर
निकल आया और आय कर आनंद से अपने वि
सतर पर सोय रहा जव प्रातःकाल होते मातुल
चला आया तव भान जा देख कर भ्रम से वडे अ
चरज के वश भया हूआ कहने लगा कि इह आश
चर्य तो मेरे को कुछ जानी नहीं जाती तेरे जी
वने का कौन कारण है तव मातुल कहने लगा
कि भाई इह सव श्रीरंगस्वामी जी की दया है ऐसे
कथन कर कर ■ और फिर आय कर जयन
की सिव काई ~~...~~ हो गये ■ इतने मे जयन
मे ला व धान
भी अपने देव के भवन को आया तो क्या देखता है
कि मट के कवाड खुले हूये और ठाकुर की मूरती
■ न हीं है आचर्ज होय कर के कहता है कि हे
■ इह कौन कारण भया ऐसे परम चिंता मान
कर रोदन करने लगा और अपने वेदो नो ने■
कर वुलाय कर तिन को वडे कोप से कहने ■
लगा कि अरे अधम मेरे घर से चले जावो अ

अथ श्रीरंग चरित्र

उपजैविलास

दोहा॥ आन भक्ति गाथा रुचिर करहुं कथन सुखदान॥
जासु सुनत ~~उर उपजत अति~~ भक्ति कृष्ण भगवान॥ चौ
पाई॥ दक्षिण द्रवड़ देस इक ग्रामा॥ तहं बैस्नव श्री
रंग अकामा॥ विस्नु भक्ति मनु सुरद्रुम सोई॥ ग्राम
लोग सब रति जुत होई॥ पूजहिं तासु वचन मन का
या॥ नर नृप सकल धरम रत दाया॥ मातुल भा
गनीय जु गरामा॥ ~~[illegible]~~ निवसत स्वरनकार
तहि ग्रामा॥ सो उपदेस लेत बरपाई॥ भये निरत ह
रि भक्ति सुहाई॥ देखि अतिथि वैस्नव महिदेवा॥ करत
भक्ति जुत पूजन सेवा॥ एक दिवस तिन हृदय विचा
रा॥ इहि तें आन धरम नहिं भारा॥ ~~जो हमतें~~ रन
रुम श्रीरंग नवल मठ भाई॥ करत यतन स्रम लेव
बनाई॥ पै धन बिनु कारज कस सरहीं॥ अस प्रका
र उर चिंतन करहीं॥ ओत परस्पर इहमत ठाना॥
~~[illegible]~~ ग्राम जवन जयनी धन माना॥ तांकर
बनहुं जगल मृत जाई॥ चौरज करम तासु धन ल्या
ई॥ तब श्रीरंग नवल मठ रूरा॥ लेव बनाय यतन
करि पूरा॥ अस गुनि स्वरनकार करि गवना॥ आ
ये जु गल बोध के भवना॥ भये तासु मृत कपट
दुराई॥ लागे करन रुचिर सिवकाई॥ दोहा॥ तब
तिन कीन विचार उर करिहुं कवन अब चोरि॥
ईहों न प्रतिमा देव विनु सम्पति आन अथोरी॥२॥
टीका॥ अब और भक्ती की मनोहर गाथा जो है सो
कथन करता हूं कि जिसके स्रवन कर लेतें कृष्ण
भगवान की भक्ती हृदय मैं दृढ़ हो जाती है दक्ष
ण मैं द्रवड़ देस विखें एक ग्राम था तहां श्रीरंग

मेरे आंखों के सनमुख मत रहो अरे पापी तुमारी मंद
संगती से मेरे घर मे चोरी लगी है इसप्रकार कोप
के भरे हुये तिस के वचन सुनकर स्वरनकार जो है
सो हरष से हृदय मे हित मानकर अपने घर को
चले आये ॥२॥ चौपाई ॥ कछुक काल जव तिनहि
सराना ॥ मूरति रतन आभरन नाना ॥ लेत सकल
श्री रंग सुहावा ॥ मट वचित्र तिन दीन वनावा ॥ अस
इह भक्ति महातम गायो ॥ कट्यो सीस नूतन उपजा
यो ॥ खुले कवाउ आपु मट ताहो ॥ अवलो चरित
विदत जग माहो ॥ दोहा ॥ इह प्रभाव श्री रंग सव जा
स कृपा वल पाय ॥ स्वरनकार मातुल भयो मृत स
जीव जग आय ॥३॥ टीका ॥ जव तिनको कुछ काल
वतीत होय गया तव तिस मूरती के रतनभूषणोंस
व उतारकर श्री रंग जी का वडा सुंदर शोभावाला
मट जो है सो वनाय देते भये इसप्रकार इह भक्ती
का महातम मैने गायन किया है देखिये कि तिसका
कटा हुआ सीस नूतन नया उतपन्न होय गया और
मट के कवाउ भी आप हीं खुल गये अव लग इह
चरित्र सव जगत मे विदत है परन्तु इह सव
प्रभाव श्री रंग स्वामी जी का है कि जिन की कृपा
तें स्वरनकार जो सुनार है सो मरा हुआ जीवता
होय गया ॥३॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगव
द्भक्ति महातमे भाषा टीकायां श्री रंग चरित
वरणनं नाम सर्गः

सोआपने पूर्व लेकरम के अनुसार ईसी राजराज
जो कुष्टरोग है तिसके वश होयकर सदा दीन औ
र दुखी रहता था यद्यपि तिस महारोग के निवारण
के लिये राजा ने बहुत ही यतन उपाय किये तथा
पि [illegible] रोग की कुछ भी शांती नहीं होती भई
तब कलेश से व्याकुल चित्त होयकर अंत को यह
विचार दृढ करता भया कि अब राजसमाज सब
छोड कर किसी उत्तम तीर्थ पर जाय कर इस दु
ख रूप शोकी रोगी शरीर जो है इस को त्याग देऊं
इस प्रकार निश्चय करके जो जो उचित समाज
साथ लेना था सो कुछ हेतेपहीं लेलिया औ
र चलने को त्यार होय गया इतने में दैव योग से
सुतेसिंह सें अर्थात यतन के विना आपने आप
हीं एक कविराज जो वैद है सो ततकाल राजा
के घर में आय प्राप्त भया और प्रजापाल की
तयारी देख कर पूछने लगा कि हे पृथीनाथ
तुम कहां जाते हो तब राजा ने तिस वैद को
अपनी विथा सब सुनाय दई कि मैं इस राज
रोग का ग्रसा हूआ अत्यंत दुखी होय रहा हूं
[illegible] अनेक उपाय किये हैं इसकी निवृत्ती नहीं
होती इसलिये अब किसी तीरथ पर जायकर
इस विकार के भरे हूये शरीर को त्याग देता हूं
तब ऐसे दुख करके पूरत राजा के वचन सु
नकर वैद विरसैके होय करके कहने लगा
कि हे राजन अब इस राज रोग की चिंता और क
लेश जो है सो हृदय से त्याग देवो ॥२॥ चौपा
ई ॥ मै प्रसाद निज गुरु वर दाया ॥ विक्रत तोर
वपुष मिटि जाया ॥ करत लोह जिमि पारस

हेमा॥ तस तोहि तीन दिवस अस वेमा॥ करहुं श्रउ
कंचनवत राई॥ देहु वेग खग हंस मंगाई॥ वनहिं
तास औषधि सुख कारी॥ वैद वदन जव गिरा उ
चारी॥ सो सुनि राऊ हरष वस भयऊ॥ बोलि वदन
व्याधन अस कहयो॥ वधिक निकर जहं तहं तुम
जावहु॥ हंस सकुन बंधन करि ल्यावहु॥ व्याध
पाय छिति पति अनुसासा॥ चले तुरंत करन
गृह पासा॥ चा[illegible] है दिसा गवन तिन कीना॥
तव इक वधिक सरोवर चीना॥ तहां दृगन लखि
विहरत देखे॥ हंस विहंस रूप अवरेखे॥ करत
विलास विमल जल नीके॥ लेत आनंद परस्पर
जीके॥ मन तं[illegible]हिं मोरी [illegible] आसा॥ जो इह हो
हिं वध खगकासा॥ आज भाग वड मोर सुहाये॥
विनु प्रयास इह दुरलभ पाये॥ दोहा॥ अस चितत
जिय वधिक निज फंधन जतन समेत॥ [illegible]ला
यो जहं तहं दुष्ट मति गहन खगन तिन हेत॥ १२॥
टीका॥ फिर कहता है कि मैं अपने गुरु के प्रसाद से
[स] हे राजन इहतें विक्रत अर्थात विगड़ा हुआ शरीर
जो है जैसे पारस लोहे को कंचन कर देता है तैसे
[को] तीन दिन के वीच तेरे शुद्ध कंचन के समान कर
देऊंगा परन्तू हे [illegible] प्रजा पाले अव शीघ्र हंस
पंछी जो है सो मंगवाय दे तिस की औषधी वने
गी कि जिस ते तेरे को ततकाल हीं कल्यान होजा
यगी इस प्रकार वैद का कथन सुन कर राजा पर
म आनंद को प्रापत भया और व्याध जो पंछियों
के पकड़ने वाले हैं तिन को बुलाय कर आज्ञा देता
भया कि [illegible] हे वधिक तुम जहां तहां परव
त स्थल सरोवरों पर धाय जावो और जैसे हो
य सके तैसे हीं यतन से शीघ्र हंस पंछी जो है
सो पकड़ कर के इहां मेरे पास ले आवो जैसे राजा

की आज्ञा पायकर वधिक जो है सो पंछियों बंधन
करनेवाली फांसियों को लेकर जहां तहां को चले
पड़ते भये चारों ही दिशा में भ्रमन जो कर रहे थे
तो तिन में से एक वधिक कहीं बड़े भारी तड़ा
ग को देखता भया तहां तिस विषे एक बड़ा मनो
हर हंसनी हंस जो परम आनंद से स्वर विलास कर
कर इधर उधर विचरता फिरता था सो वधिक तिन
को देखकर हृदय में बड़ा प्रसन्न भया और कहने लगा
कि जो कदाचित यह पंछी मेरी फांसी में फस जावें
तो मेरे मन की आशा सब पूरण हो जाती है और मैं
जानता हूं कि आज संपूर्ण वधिकों में से मेरे ही
ऊंचे भाग हैं कि जिसको यह दुरलभ हंस यतन
के विनाहीं प्रापत भये हैं ऐसे विचार कर सो अ
धम वधिक तिन दोनु हंसों के पकड़ने के लिये
अपनी फांसी जो है सो यतन से भ्रम कर के जहां
तहां लगाय देता भया ॥२॥ चौपाई ॥ तासु कपट
अस हृदय विचारी ॥ लेत त्रिये
जुत हंस उदारी ॥ वधिक दृष्टि अगोचर होई ॥ बैठे
जाय सकुन वर दोई ॥ असप्रकार कछु दिवस वि
हायो ॥ व्याध मराल पकर नहिं पायो ॥ तब धा
वन जनभूप पठायो ॥ तीन दिवस तुव वधिक
सतायो ॥ पठ्यो न हंस गहे हम पाहीं ॥ राजन
देस कोन फुर नाहीं ॥ जो अब अन्य तीन दिन पाये ॥
कबहूं कि अधम हंस नहिं ल्याये ॥ साकुटंब तब सु
पच तुमारा ॥ आपु करन निज करहु संहारा ॥ क्रूर
नदेस व्याध सुनि राई ॥ उरत परसपर गिरा अला
ई ॥ जियन आस अब देहु विहाई ॥ मिलन मराल
असे भव माई ॥ अस कहि व्याध विकल मन मारे ॥
सर सरितन पल सकल सिधारे ॥ ते केदिक

अथ नैम हैमनी चरित्रे

दोहा॥ चंद्र किरण सदृश सरद भक्ति महातम आन॥ स्रोतन जन मन कुमद कल विकसन विमल महान॥ चौपाई॥ करहु कथन निज मति अनुसारू॥ मानस करन प्रेम प्रचारू॥ मथुरा निकट भूप इक आजा॥ धरम निरत निज युक्त समाजा॥ पूरव करम विवश विजहोई॥ अति रुजराज गलित वपु होई॥ रहत सदा नृप आरत दीना॥ यद्यपि विविध यतन तहिं कीना॥ तद्यपि भयो शोक तिहि जनाहीं॥ विथत अधीर दुखित मन माहीं॥ अस विचार कीन उरराई॥ अब कहुं उग्र छेवत रहजाई॥ इहनिज तनजहुं वपुष दुखलोकी॥ अस प्रकार सम्म ति नृप ठानी॥ यथा उचित निज सेन समाजू॥ कछु संवत पत लीन नरराजू॥ भाउ सुगमन गवन जव तेहूं॥ तव कविराज एक नृप गेहूं॥ आवा अनायास मतकाला॥ देखि उदोगमवने महिपाला॥ पूछित कहां जात छिततराई॥ तव नरेश निज विथा सुनाई॥ ग्रस्यो राजरुजमोर सरीरा॥ तजहुं जाय तन तीरथ तीरा॥ दोहा॥ वेद दुखित नृप वचन सुनि मन्यो संकगत गाथ॥ अव रुजराजकलेश कर तजहु सोच नरनाथ॥२॥ टीका॥ अव आगे और मनोहर प्रेम के उतपन्न करने वाला और चंद्रमा की किरणों वत सीतल स्रोता जनों के कुमद रूपी मन को प्रफुलित करने वाला भक्ती का महातम जो है सो हैसं तो जैसा कमती के अनुसार होय सकता है आप के आगे गायन करता हूं कहते हैं कि मथुरा के निकट अपने सब समाज करके युक्त बड़ प्रताप मान और दयाधरम की विधी एक राजा कासकरता था

वैस्नव संत भगवानकी भक्तीमे लीन मानोशांत
रसजो है सोई स्वरूप धारकर वैठा हुआ ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ ध्यानमे मगन होयकर भ
गवानका पूजन कररहा है तसंत सिसमहात्माके
पास वैदेको हंस ओर हंसनी अभय होयकर वडे आ
नंदसे विचार रहे हैं तब इसप्रकार संतके पास तिनहं
सोंको निरभय फिरते देखकर फंदिकपकी हृदय
मे विचार करने लगा कि इन हंस हंसनी नहीं डर
ते हैं तो केवल वैस्नव भेषका प्रभाव है तांते [illegible]
मे भी अब एसो यतन करुं किअपने इस वधिक
शरीरको वैस्नवसंतके भेषमें छिपाकर [illegible] और
इनकों पकरुं ॥३॥ चौपाई॥ अस तहिं वधिकसं
तचित दीन्यो॥ मिलहिं न हंस कपट [illegible] कीन्यो॥
करि चितन सठ साधुकाला॥ गेरक पट मुद्रादि
कमाला॥ वैस्नव भेष अलेकृत होई॥ हरिहररट
तवदन निज सोई॥ सरोवरतट बकध्यान लगा
ई॥ वैठ्यो सठ निज वपुष दुराई॥ तेसुशील
अति निपुल मराली॥ वधिक कपट अस देखि
कुचाली॥ पतिसन कहत मनोहरवानी॥ ना
थ अधम हिंसक अग्यानी॥ धूरत वैस्नव
धरमविरोधू॥ कस्योचहत सठ हमहि निरे
धू॥ कपटि निपट हित गहन हमारो॥ कप
ट भेष वैस्नव निज धारयो॥ तांते हमहिं उचि
त अब जाया॥ सोहुं वचन इहिं हंसक हा या॥
संत भेष धृत मृषा न होई॥ लेहिं अमिष अधम
निज सोई॥ साधू भेष दूसदेव सुहावा॥ जो इन
निज वोछित नहि पावा॥ तो अपमान ता सव
ति प्राना॥ हम हे न पाव सुजस कल्याना॥

जो इन पकरि हम कि पति मारा॥ तब हुं सकल पर लोक हमारा॥ अब लग नाथ सकुन वपुमाहीं॥ कीन्यो अर्थ सिद्ध कछु नाहीं॥ आगल द्वेष जियन संसारा॥ कृपा जाहि पति प्राण निवारा॥ व्याध सदैव लगन वधकारी॥ द्विपति हमारे भाग करन्यारी॥ जो इन हम हु बंधन हित चारू॥ वैसे व संत मे षग्र सधारू॥ तापर राम नाम जगतारक॥ रटत वदन निज किलष निवारक॥ इहितें हमहिं आन कल्याना॥ हो कवन सुन है पति प्राना॥ लोक प्रलोक सुजस निज जानी॥ वधहु नाथ इहि हिं सक पानी॥ दोहा॥ सुनि मराल अस वचन प्रिय वहु विधि वदने प्रसंस॥ कहत आज प्रिय कीन तुव सफल सकल निज वंस॥४॥ टीका॥ तिस अधम के दिक ने चित में मता करकर तब निश्चय कर लिया कि कपट किये विना हंस कदाचित भी पकड़े न हीं जावेंगे ऐसे चिंतन कर कर कपटी ने तिलक माला मुद्रा और गेरू रंगे वस्त्र धार कर तुरत हीं वैस्नव संत का सुंदर भेष जो है सो वनाय लिया और तिस संत मेषमें अधम अपने वधिक रूप को छिपाय कर हरि हरि रटता हूआ सरोवर के किनारे पर वक ध्यान लगाय कर के बैठगया तब परम चतुर और वड़ी सुशील मराली अर्थात हंसनी तिस मंद की कुचाली और कपट देकर पती को वड़ी मनोहर वाणी से कहने लगी कि हे नाथ अधम हिंसक को जीव घाती और महापाप की खानी धूरत वैस्नव संत का कपट भेष वनाय कर हम को पकड़ने चलता है कपट भेष वनाय कर हम को पकड़ने के लिये अब दुष्ट ने केवल हमारे ही पकड़ने के लिये भ्रम कर के वैस्नव भेष को धारन किया है तो ते हे प्राण पती अब हम को [illegible] उचित है कि इस के वंधन

४०

(३७)

मे आय जावें और इस के हाथ से पकडे जावें क्यों
कि इस कपटी ने संत ओधारन किया है सो
असत्य ना हो जावे और तिस संत मे
ष के प्रसाद से इस अधम अपनी मन वांछित काम
ना को पूरन कर लेवे प्राननाथ साधू भेष जो है
सो कलप वृत के समान सरव मनो र्थो को सफ
ल करने वाला होता है जो कदाचित इस ने अप
ना मन वांछित अर्थ प्राप्त नहीं किया तो कृपानि
धान संत भेष का अपमान होवेगा और हम को भी
सुजस प्रापत न होवेगी और जो कदाचित ह
म को पकड कर इस ने मार दिया तो भी हमारा पर
लोक सफल हो जावेगा हे प्रानपती देखिये अब
लग हम ने इस पंछी कायामे कौन अर्थ सिद्ध किया
है और आगे हमारा जीवना जो है सो भी वृथा ही
जाने वाला है इह वधिक जो है सो सदैव पंछि
यों को मारते चले आये हैं परन्तु हमारे भागों का
चमतकार देखिये जो इस ने हमारे मारने के लिये
सरव सुखदायक और कल्यान का मूल वे
ष भेष जो है सो धारन किया है तिस पर और
अधिकता देखिये कि पापों के नास करने वाले
जगतारक राम नाम को मुख से उचारन करता
है हे प्रान आधार इस ते अधिक और कल्यान
हम को कवी प्रापत नहीं होवेगी और ना ऐसा सम
य फिर हाथ आवेगा कृपानिधान लोक परलोक
मे अपना सुजस जान कर इस वधिक के हाथ वं
धन मे आय जावो इस प्रकार हंसनी के मुख से
वडे गूढ वचन सुन कर हंस तिस की वार वार वडी
प्रसंसा कर कर कहने लगा कि अहो प्यारी तू
धन्य है और धन्य तेरी ऐसी सुमती सुशीले
तू ने तो आज मेरे संपूर्न वंस का उधार कर

तिन हंसन पाहें॥ हृदय विचारि यतन निज आहें॥
आवा तास सरोवर तीरा॥ तहां वैस्णव मति धीरा॥ भगवन भक्त विरक्त विकारू॥ मानहु धर्म तिरूप धृत चारू॥ वैठ्यो ध्यान लीन हरि पूजा॥ तत पर भक्ति भाव तजि दूजा॥ तहं हंसनी वखग देखत सोई॥ विहरत उभय त्रास वस होई॥ संत निकट लखि अभय निहारी॥ भनत व्याध अस हृदय विचारी॥ दोहा॥ वैस्णव भेष प्रभाव इह जो उर पत खग नाहिं॥ तोते वधिक कदुराहुं वपु भेष वैस्णव माहिं॥
इ॥ टीका॥ तव तिसकाऐसा कपट हृदयमे विचार करके स्त्री के सहित हंस उडारा ले करके फंदिक की दृष्टी के परोक्ष होय करके जाय वेठा इसप्रकार जब कुछ दिन व्यतीत होय गये और फंदिक हंसों को नहीं पकड सके तव राजा के धावन जन जो हलकारे हैं सो पीछे पीछे ही आय कर तिनको राजा की आज्ञा सुनाय देते भये कितने दिन वीत गये हैं मूर्ख तुमने हंस पकड कर के नहीं भेजा है मेरी आज्ञा पूर्ण नहीं की है अव अधम जो कवी और तीन दिन के पीछे तुम हंस पकड कर नहीं ल्याये तो मै तुमारा भेद सव कुटंव के सहित नास कर देउंगा इस प्रकार राजा की वडी क्रूर आज्ञा सुन करके वधिक जो हैं सो परस्पर कहने लगे कि भाई अव जीवने की आसा त्याग देवो क्योंकि हंसों का मिलना वडा कठिन है ऐसे कथन कर के व्याध जो हैं सो मन मारे हुये जहां तहां परवत स्थल नदी सरोवरो को चले जाते भये तव सो फंदिक तिन हंसों के पीछे यतन विचारता हुआ सरोवर के किनारे किनारे लागा चला आवता है तो क्या देखता है कि तहां आगे एक विरक्त

मंदमंदगती में अर्थात सहजे सहजे चलकर परा
ये हित के लिये तिस फेधिक के निकट चले आव
ने भये तब तिस कपटी ने बक जो बगुला है तिस
के समान ध्यान जो लगाया हुआ था तिन पक्षियों के
पास आये हुये देखकर हाथ पसार कर कैं तुरत ही
पकड़ महा मंद ने बल लगाय करके अपनी
अर्थी जोहंसे पकड़ कर लिया जब दुष्ट बुद्धी तिस हंस को
लेकर के चल पड़ा तब हंसनी जो है सो बहुत बिल
लाप और रोदन कर कर कहती है कि हे दैव अब मे
रा जीवना कैसे होगा और मै प्राणपती का
विजोग कैसे सहार सकूंगी हाय हाय आज
इन कैसे उपद्रव आयकर के व्यापत होय गया
और कैसी कुचाली आयबनी है इस प्रकार वि
लाप से रोदन करती हुई हंसनी तुरत उड़ा ही
लेकर पती के पास ही फेधिक की भुजा के ऊ
पर आय बैठती भई तब तिसके अधम ने देख
कर और एक के दो जान कर हाथ बढ़ाय कर के
तुरत तिसको भी पकड़ लिया और धावता हुआ
घर मे चला आया तहां दोनो हंस हंसनी को पिंज
रे मे पाय कर के और जाय कर के राजा के आ
गे नवेदन कर देता भया तब प्रजापाल तिसकी
छिब काई देख कर अत्यंत प्रसन्न भया और धन
वस्त्र देकर तिस फेधिक को भली प्रकार परितो
ष किया तिसतें उपरांत फिर कविराज जो वैद
था तिसको बुलाय कर राजा ने हंसनी हंस दोनो
दे दिये सो तिन को लेकर के अत्यंत प्रसन्न
भया हुआ कहेने लगा कि हे पृथीनाथ अब आप
आने पूर्वक स्नान कर कर भोजन पाइये और

इन शरीर का राजरोग जो है इसका अब कष्ट और
चिंता हृदय से सब दूर करिये मैं इन हंसों का रुधर
अर्थात लहू लेकर राजन तुमारे शरीर को मरदन
करूंगा तो गुरु के प्रसाद से तीन दिन के भीतर
इन तुमारा असाध रोग जो है सो सब नवृत्य हो
जायगा इसमें कुछ संशय नहीं है ऐसे वेद के
मुख से वचन सुन कर राजा परम हरष को प्रापत
होय गया तब कुछ देर के पीछे वेद जो है सो
तिन दोन पंछियों को पिंजरे से निकाल कर
गला काटने और वध करने को तयार होजा
भया॥४॥ झूलना छंद॥ देखि करवाल सुमराल
कविराज कर जपत राजीव नयना॥ भवन
मुद भीम भय भक्त भंजन सकल ललित वर भक्त
भव अभय देना॥ खगन अवरेख प्रभु खेद अब
भेष अस वपुष मम भक्त हित भेष स
हिना॥ अमर मनि रूप भव कूप करहरन भ
य तुरत धर प्रवर करुणाय ऐना॥ दोहा॥
जासु नाम भेषज विमल मृत जीवन संसार॥
वनि सुवैद भेषज लिये आय धरन पति ॥
२॥ टीका॥ तब कविराज जो वेद है तिसके ~~हाथ~~ मैं
चौहई तलवार देखकर ~~...~~
भक्तों के हृदय का भय दूर करने वाले और
जगत मैं भक्तों को अभय वर के देने वाले रा
जीव लोचन अर्थात कमलों के समान ने
त्रों की शोभा वाले कृपानिधान भगवान जो
हैं तिनका सुमरन करने लगे तब दीन
वंधु भगवान तिन दोन पंछियों का दुख
लेश जान कर कि इन्हों ने मेरे भक्तों के

बंधु ऐसे भैसे

मेष के लिये अपने पर इन कष्ट कलेशों लिया है
तुरत हीं जगत के रूप का भय निवारने वाले द
या के धाम कि जिनका नाम संसार में मृत संजी
वनी क्या मरे हुये को जिवाय देवे वाली निरमल औ
षधी है ब्राह्मण का रूप धारे हुये वैदवन कर और
औषधी लेकर राजा के द्वार में आय प्रापत होते भ
ये ॥१॥ चौपाई ॥ जाहि थल हेम होन बध लागे ॥
तहां कृपाल भक्त अनुरागे ॥ नृपसन कहत बदन
मृदु बानी ॥ सुनहु बचन नरनायक मानी ॥ श्रुति
स्मृति अस विदत बखाना ॥ तेहिं न जग हि
त के कल्याना ॥ पूरब करम कीन तुम जे [illegible] हू ॥
लीन बपुष तोक [illegible]र दुख एहू ॥ अब अना
थ खग बिनु अपराधू ॥ लाग्यो करन भूप कत
बाधू ॥ हसो लोक परलोक नसावहु ॥ वृथा
दीन जीवन जनि मारहु ॥ मैं मिष्टान्न [illegible] ते लेहु
हावा ॥ देऊं बपुष तुव मेखज लावा ॥ रहे अस
धरहु तुरत तुम्हारा ॥ जाहिं सहज नृप सकल
विकारा ॥ हित जुत वेदवचन सुनि राया ॥ करि
सुई कार चरन सिर नाया ॥ कृपानिकेत भक्त
सुखदाई ॥ तब मेखज कछु ते लमिलाई ॥ पा
रद परसि लेत जिमि धातू ॥ केचिन होत बिम
ल मलजातू ॥ मेखज कुबत तुरत तिमि राया ॥
प्रकटी कुष्ठ कटक बनत काया ॥ लोकबिलोकि
चरित बिसमाये ॥ साधु साधु सब बदन अला
ये ॥ माया सुहत भूप सुख पाई ॥ जानि न स
को वैद चतुराई ॥ करि प्रणाम जुग जोरत हा
था ॥ लाग्यो बिनय करन नरनाथा ॥ वैदराज
हजराज अचेरा ॥ [illegible] कीन नवृत्य आज

दिया है ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ जीवन मुक्त कीन मोहि प्यारी ॥ सुमति वदन अस गिरा उचारी ॥ मोरे कथन नेतोर सुई कारा ॥ अस प्रकार जब हंस उचारा ॥ तब निरभय खग दंपति दोई ॥ जियन आस निज तेत्रति खोई ॥ मंद मंद गति परहित ● लागी ॥ आये बधिक निकट बड़ भागी ॥ तेब कध्यानि हंस गहि लीन्यो ॥ ● लव लग्र्य हिउ निज कीन्यो ॥ अधम लेत जब तासु सिधारा ॥ खग निविलाप करत जियमारा ॥ हो ई है देव जियन कस मोरा ॥ सहि न सकहु पति प्राण विछोरा ॥ बन्यो कहेन कछु आन कुचाली ॥ रुदन करत अति दुखत मराली ॥ पति समेत फंधि कमुज जाई ॥ बैठी चिये हंस अकुलाई ॥ गहो बधिक करतुरत पसारी ॥ ल्याय सदन पिंजर जुग डारी ॥ नृप पै जाय नवेदन कीन्यो ॥ राउ विलोकि विविध वित दीन्यो ॥ तब कविराज बोलि नरसाई ॥ हंसनि हंस दीन तहि काहीं ॥ सोप्रसन्न मानस गहि पानी ॥ भनन लाग नृप कहे मृदु बानी ॥ करि सनान अब भोजन कीजे ॥ बपुल जराज कष्ट सब छीजे ॥ मैं श्रोणन इन हंसन केरो ॥ मरदन करहुं भूप तन तेरो ॥ तीन दिवस गुरुदेव प्रसादू ॥ होहिं तोर तन मुचित असाधू ॥ दोहा ॥ तासु वचन सुनि राट अस अति अनंद जुत होय ॥ तो लो भा उ युग ● द हित खग ● दबध होय ॥ ५ ॥ टीका ॥ फिर कहता है कि ●ती तेने मेरे को संसार मे जीवन मुकत कर दिया है अब तेरा इह ● सुखदायक कथन जो है सो मैने सुई कार किया इस प्रकार जब हंस ने ● ● कहा तब निरभय होय करके दोनो पंती

ᵛ संसार मे जीवने की आसा त्याग कर और

औषधी जो है सो तैल मे मिलाय देते भये॥ कि जै
से पारे का स्पर्श लोंधातु मैल को त्याग करके
निरमल कंचन हो जाती है तैसे औषधी को ला
गते ते हीं राजा की काया जो है सो फटकमनी के
समान शुद्ध निरमल हो जाती भई इस अद्भु
त चरित्र के देख करके लोग सब अचरज को प्रा
पत होय गये और साधु साधु शब्द को उचा
रन करने लग जाते भये तब माया करके मोहित
भया हूआ राजा वैद की चतुराई को कुछ जान नहीं
सका प्रणाम करके दोनो हाथ जोड़ कर विनती
करने लगा कि हे वैदराज तुम धन्य हो कि जिनोने मे
रा ऐसा भारी राज रोग नवृत्य कर दिया है इतुमा
रा उपकार मेरे पर अवधगत है कि जिसकी कोई अव
धी नहीं मानो जगत मे मेरे को नया जनम दिया है
मै तुमारी कौन सेवकाई करूं स्त्री पुत्र
तन धन धाम इत्यादि जो है सो कृपाल सब तुमा
रे अरपण है परन्तु फिर भी चित्त मे सकुचे हो
ता है कि थोड़ा है तब संपूर्ण सृष्टी के वैद्य भगवा
न तिस के बड़े कोमल विनती वाले वचन सुन
कर प्रसन्न होय करके कहने लगे कि हे प्रधान रा
जन तैने सब सत्य कहा है परन्तु इसमे मेरे को
कुछ दरकार नहीं है केवल एक कि इस
स्त्रीमरता दोनों पेती जो है सो मां
गता हूं॥ १७॥ चौपाई॥ इह जुग सकुन भूप मोहि
देहो॥ लोक ललित सुकीरति लेहो॥ अस इह
वैदराज मुख मोरे॥ सुन कर वचन भूप जनतो
रे॥ सेवा करहु हुचिर हित जानी॥ सुनत वैद
भगवान अस बानी॥ हृदय चकित गति सोचन

लागा॥ तब भगवाने मधुर मुख वागा॥ वैदवंस गाहि
सकल सुनायो॥ तब विस्वास तास उर आयो॥ इह अ
व प्रभु शिष होहिं हमारा॥ तब नरिंद्र मुख विविध प्र
कारा॥ वैदराज कर अस नुति कीन्यो॥ बहुरि मराल
जुगल नृप लीन्यो॥ सादिर कृपानाथ कर दीने॥ वि
नय प्रणाम विविध विधि कीने॥ तुरत लेत भगवान
सिधाये॥ [struck out] नगर वहिर प्रमुदित जब आये॥ बंध
मोतें प्रभु दीनन बंधू॥ कीने जबहि दीन खग दंदू॥ मा
या मोहत वदन मृदु वानी॥ तिनहि दीन बनत वदन ब
खानी॥ तुव समान वर सेवति सारी॥ लख्यौ न हम
हु आन उपकारी॥ जो हम से दीनन खग [blot] कारी॥ वि
नु हित दीन मोत तुव साई॥ एक वदन हम जद ख
ग जाती॥ तोर इमत कीरति कहि भाती॥ सकहिं अ
नाथ नाथ कस वरनी॥ अहो धन्य दाता तुव करनी॥
यथा ग्राह गज ग्रस्त मुरारी॥ तिमि सहाय तुव कीन
हमारी॥ अस प्रकार मोहित कृत माया॥ खगन मुरा
र मरम नहिं पाया॥ करि प्रणाम गुणगण मुख
गाते॥ उडे सकुन उर हरष अघाते॥ करि कौतुक
अस भक्त उवारे॥ भक्तपाल निज धाम सिधारे॥
इत तहि वैदराज कहे राई॥ देत वसन वित वा
जि सजाई॥ दोहा॥ सादिर कीन विदाय तब नम्र
चरन सिर नाय॥ राज काज तत पर भयो आपु नृ
पति सुख पाय॥ ८॥ टीका॥ तो ते भूप तू इह दोनो [blot]
पंछी मेरे को दे दे इस मै तेरा लोगों विखे वडा सु
जस और वडाई होगी और इह वैदराज जो है सो
मेरे गुरू हैं इनकी तुमारे सें जहां लग हो सक
ती है सेवा करो तब इस प्रकार भगवान की

वाणी सुनकर सो वैद हृदयमें आश्चर्ज होयकर के
सोचने लग जाभया तब दीनबंधू तिसका वंसजो
है सो मिलाकर के सब सुनाय दे भये तिस तें वैद के
हृदय मे निश्चय होयगया कि इन अवश्य हमारा
शिष्य है ऐसे सुनकर के राजाने भी तिस वैद
राजकी बहुत अस्तुति बड़ाई करी तिस में उप
रांत दो नो हंस पंछी मंगवाय कर बड़ी प्रीती स
नमान से कृपानिधान को देदिये तब दीनानाथ
तिन अनाथ पंछियों को लेकर हरष के वश भये
हूये जब नगर के बाहिर निकल आये तब तिन
हंसों को कृपासिंधू ने बंधसे मोख कर दिया अर्था
त छोड़ दिया सो बंधन से छूट कर माया करके मो
हित भये हूये बड़ी कोमल और दीन वाणी ने कहने
लगे कि हे दाता तेरे समान संसार मे उपकार की
निधी और दूसरा कोई नहीं देखपड़ता है क्योंकि
हम दीन और बलहीन पंछियों को तैने जान प
हिचान के बिना ही ऐसे कठिन बंधन से मोख कर
वायदिया है हम पंछी जड़ जाती एक मुख से
तुमारे अनंत सुजस और अगाध महिमा बड़ाई
को कैसे गायन कर सकें अहो धन्य अ
नाथों के नाथ तुमारी करनी है, जैसे ग्राह जो ते
दुआ है तिस के ग्रसे हूये गजराज अर्थात हस
ती की मुरारी भगवान ने सहायता करी थी तैसे
हे उदार तैने दया कर के हमको राखलि
या है ऐसे माया के मोहित किये हूये पंछी
दीनहितकारी मुरारी भगवान का भेद नहीं जा
न सके प्रणाम कर के तिन का सुजस
और महिमा बड़ाई गावते हूये हर
ष से पंख खोल कर और उड़ कर अपने मोरग

जे मेरा॥ तुव उपकार अवध गत चीना॥ जनु मोहि नवल जनम जगदीना॥ मैं अब करहुं कवन सिव काई॥ सुत धन तन चित सजुत समुदाई॥ तुमहिं कृपाल नवेदन मोरा॥ पै जिय सकुच होत कछु थोरा॥ विप्र वैद सुनि भूपति बचना॥ परम बनीत प्रीति जुत रचना॥ दोहा॥ बोले सुनहु नरिंद्र मति मुहि न अपेक्षा काय॥ पै जाचिन इक करहुं तोहि लगा वर देव पति दोय॥७॥

टीका॥ तब जिस अस्थान तिन वेल्हियों को वध करने लगे थे अथवा मारने लगे थे तहां भक्त हित कारी भगवान आय कर वही कोमल बाणी से राजा को कहने लगे कि हे मान के राखने वाले प्रजा पालनें मेरे वचन को स्रवन लाकर क्या कि स्रुति और पुराणों ने प्रकट कर के कथन किया है कि संसार मैंहिं एक जीव चौरासी जो है सो कल्यान को कदाचित प्राप्त होता है तैने पूर्व जैसा कोई करम किया था तिसका तैसा ही ईहां आय कर के शरीर विखें कलेश पाया आगे फिर निसअपराध ईहां दीन और अनाथ वेल्ही जो हैं इन को तूं मारने लगा हैं हे राजन तैने लोक तो हारा परन्तु परलोक क्यों हारता हैं इस अनर्थ से निवृत्य हो वृथा जीवों को मत मार मैं तैल में मिलाय कर के एक औषधी तेरे शरीर को लगाय देता हुं जिससे तेरा इह असाध रोग जो है सो सहजे ही सब निवृत्य हो जावेगा इस प्रकार वडे हित के भरे हुये वैद के वचन राजा सु ईकार कर के बार बार चरनो पर सीस नावता भया तब भक्त सुखदायक भगवान कृपा निधान कोई

धारन किया था तिसके हृदय मे इहसुमती आ
य करके व्यापत होती भई कि ऐसे संतभेष की
महिमा वरणई है दे॰ खिये जिसके प्रभाव से वेह
सों का जो ऽ यतन के विना सहजेही मेरे हाथ
मे आय गया और फिर जिसके बलप्रभाव से
तिनों ने मोक्ष भी पाय लई सो ऐसा सुखदायक
कल्प वृक्ष के समान संत भेष मै दुरमती ने केव
ल कपट से ही धारन किया तो तिसका प्रत्यक्ष
ऐसा प्रभाव देखो जो कदाचित इस संतभेष को
मै सत्य सत्य निसकपट होय करके धारन करूं तो
इसमें कुछ संदेह नहीं है जो इस अगम संसार समु
द्र को यतन के विनाँ ही तरकर पार उतर जाऊं ऐसे
विचार कर जीवघाती के धिक जो है सो संतम
हातमा की शरण को लेकर और तिनसे ज्ञानउ
पदेश पायकर विधीपूर्वक वैष्णव भेष को धारन
करके ~~[illegible]~~ द्वेष दुरमती से रहित भया हुआ
अभय होय करके पृथवीतल पर विचरने ल
गा इस ~~[illegible]~~ प्रकार इह वड़ा सुंदर और सुख
दायक हंसनी हंस और कौंधि के सहित राजा का चरित्र
जो है सो मैने अपनी तुच्छ मती के अनुसार भगवा
न के चरनों मे चित्त लगाय कर गायन कर दिया है दे
खिये भक्तों का भय हरने वाले ~~[illegible]~~ और भक्तों
के कल्प वृक्ष भगवान सदा भक्तों के रखवारे भ
क्त सहायक और भक्त हितकारी हैं संसार मे भक्तों
के लिये नाना शरीर धार कर गौ ब्राह्मण पृथवी दे
वता और भक्तों ~~[illegible]~~ के पालक भ
गवान अपने अदभुत कौतुक जो हैं सो करते
चले आये हैं ॥ ५८ ॥ इति श्रीभक्तविनोद ग्रंथे भगवद भक्त

को चले जाते भये ॥ ई तो भक्त पाल भगवान भी आप
ना अद्भुत कौतुक कर के आने देखे आप ही वैकुंठ
धाम को चले आये फिर ॥ ८ ॥ जातिस कविराज को
नाना धन वस्त्र और साज समाज के सहित चोड दे
कर बार बार चरनो पर सीस नाय कर बडे सनमान से
बिदाय कर देता भया और आप कृस्न भगवान को सु
मरता हुआ सुखपूर्वक अपने राज काज मे ततपर हो
यगया ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ जास गहन नहि न हेस वया
धू ॥ धारयो कपट भेष निज साधू ॥ ताकर हृदय सुम
ति अस छाई ॥ अहो भेष कस संत बडाई ॥ जास प्रभा
व हेस खग जोरे ॥ आये बिनु प्रयास कर मोरे ॥ अख
ल जास मोत तिन पाई ॥ सो अस संत भेष सुखदाई ॥
भे निज कुमति कपट बपु धारयो ॥ अस प्रभाव तोहि वि
दत निहारयो ॥ जो अस सत्य भेष निज धरहीं ॥ अना
यास भव सागर तरहीं ॥ अस विचारि हिंस क जिय मा
हीं ॥ वे सब संत भेष वर काहीं ॥ सुठि उपदेस पा
लेत गुरु जाना ॥ धारत भयो मुचित अभिमाना ॥ भ
गवन भक्ति निरत जग होई ॥ विचरन लाग दुसृमति
खोई ॥ अस इन चरित ललित सुखदाई ॥ हेस नि हेस
व्याधन राई ॥ भे निज अलप यथामति लीने ॥ ह
रिपद नलिन चारु चित दीने ॥ गायन कीन रुचिर
मुद भरना ॥ देख हु देव भक्त भय हरना ॥ सरव काल
भक्तन रखवारे ॥ भक्त अमर तर भक्त उवारे ॥ भ
क्त सहाय भक्त हित कारी ॥ नाना रूप भक्त हित
धारी ॥ दोहा ॥ कौतुक करत वचित्र प्रभु सदा भ
क्त सुख देन ॥ रंजन महिसुर सुर धरन करन दुगध
निधि सैन ॥ ९ ॥ टीका ॥ और जिस फेयिकने हंसों के
पकडने के लिये ~~अब~~ वे सब संतका कपट भेष

विचरतेहूयेवैस्नवसंतजोहैं सोतिसकेघरमेंग्रायग
ये तव धनीने भगवानकेवैस्नवभक्तोंकोदेखकरभक्ती
सनमानसेतिनकापूजनकिया ग्रौरफिरखानपानसे
लेकरग्रनेकप्रकारकीसेवकाई करकेहाथजोड़कर
दीनवाणीसेविनती करनेलगा किहेसंत भगवान
ग्रापके कृपाप्रसादसें घरमेधनपदार्थकीकुछटो
टनहींहै परन्तुएकहींन्यूनताहै किदीवरूपीसंता
नकेविना मेरे घरमे ग्रंधकार होयरहाहै तातेहेसं
तउपकारी ग्रव दयाकरके कोई यतन वताईये
किजिसतें मेरे घरकाग्रेसाशोक सवमिटजावे
ग्रौर इसमहांद्रव्यकेभोगनेवालाग्रानंदकामू
ल पुत्रजोहै सोप्रकाशमान होयजावे ग्रैसेधनी
काकथनसुनकर संत कहनेलगे कि भक्त इसस
त्यवारताहै पुत्रकेविना संसारमेंग्रहस्थवृथाही
है इसकाएकहीउपायहैकि रात्रीदिननित्यंग्रत
थी साधब्रह्मणोंकी सेवाकरतेरहो इसीतें तुमको
फलप्रापतहोवेगा भगवान कृपानिधि संतसेवका
ईपर प्रसन्न होयकरके तुमको पुत्र देदेवेंगे तुमारे
मनकीग्रभिलाषापूर्णहोजायगी ग्रैसेकथनकरकर
संतजोहैं सो कुसल कुसलरटतेहूये ग्रपने मारगकोचले
गये ग्रौरधनी तिनकाउपदेशलेकर वडीप्रीती
भक्तीसे साधब्रह्मणोंकासेवन सतकार जोहै सो
नित्यकरनेलगा इसप्रकार संत भक्तोंकी सेवाक
रतेकरते जव कुछकाल वतीत होयगया तव
तिसकेघरमे एककन्याउतपन्न होयगई
तिसकोदेखकर प्रसन्न भयाहूग्रा धनी कन्याका
पुत्रकेसमान ही सव संसकार करकर
ग्रतथी
ब्रह्मणोंको ग्रनेकप्रकारकेदान देतामया॥२॥

चौपाई॥ बहुरि तीन संवतसर पाऊ॥ उपज्यो सुत बन
सदन तहि आऊ॥ जान्यो वैस संत पद सेवा॥ मैं रह
विदत आज फल्ले लेवा॥ तबतें अधिक संतति वकाई॥
लग्यो करन श्रद्धा अधिकाई॥ अस प्रकार बहु दिवस
बिहाये॥ तो के सदन संत इक आये॥ सो अति दुखित त
दीन रुज आहू॥ देखा विलोकि वैस अस ताहू॥ भक्तिमान
मानस रतदाया॥ निपुण वैद द्रुतलीन बुलाया॥ तास
न वृत्य होन हित रोगू॥ लग्यो उपाय करन जिमि जो
गू॥ विधिवत करत यतन इहि भांती॥ भयो असाध
संत रुज शांती॥ तब उरपूरि हरष सुख पागा॥
साधु वचन अस भाषन लागा॥ धनी परमि जस कीन
हमारी॥ तुम हुं अनाथ जानि रखवारी॥ जनु मृत
जीवदान मोहि दीना॥ इह उपकार अवध गत कीना॥
अब मोरे मानस अस कामा॥ वसहुं तुमार भक्त नित
धामा॥ एक काल भोजन मोहि देहौ॥ यथा उचि
त सेवा कछु लेहौ॥ साधु वचन सुनि वनक प्रवी
ना॥ भक्तिमान कर जोरत दीना॥ बोल्यो तुम हुं
नाथ सिव काई॥ कवन बात अस वदन अलाई॥
मै तो आपु वचन मन देहौ॥ दास चरन तुव दीन सनेहौ॥ सुत जुत सं[illegible] संपती दारा॥ दीननाथ इह स
कल तुमारा॥ बसहौ जानि रुचिर निज गेहू॥ रहहुं
करत प्रभु सदा सनेहू॥ दोहा॥ वैस वचन सुनि सं
त अस अति आनंद जुत होय लाग्यो करन निवास
तहि सदन सकुच [illegible] सब खोय॥ २॥ टीका॥
तिसते उपरांत फिर तीन वरष के पीछे तिस धनी
के घर मैं सुंदर सरव अंग सुनाम पुत्र उतपन्न हो
और
ता भया तब वैस ने हृदय मै जान लिया कि इन संतों
की सेवा का फल प्रापत भया है तिस दिन तें बड़ी श्र
द्धा प्रीती वाला होय कर दिन दिन अधिक तें

अधिक नहीं संतों की सेवा करने लगा इस प्रकार
अब बहुत दिन वतीत होय गये तब एक दिन ति
सके घर मे एक साधू आय प्राप्त भया सो कैसा कि
रोग करके ग्रसा हूआ बड़ा दीन और दुखी मरने
प्रयंत होय रहा था तिसकी दशा देखकर वैसम
हो जो था सो परम दया के वश होय गया तुरत ही
एक चतुर वैद को बुलाय कर तिसके रो
गकी नवृती के लिये यथा योग्य उपाय जो है सो
करने लगा इस प्रकार विधी पूर्वक यतन क
रते करते संत का असाध रोग जो था सो थोड़े ही दिनो
मे नवृत्य होय गया ऐसे जब रोग की शांती होय
गई तब प्रसन्न भया हूआ साधू बड़ी मधुर वाणी से
कहने कि हे धनी धरमी तैने अनाथ जान कर
मेरी रक्षा करी है मानो मेरे हूये को जी
व दान दिया है इतने उपकार जो है सो अनंत और
अवधगत है कि जिसकी कोई अवधी नहीं तो ते
मेरे मन की यूही इच्छा है जनम प्रयंत तेरे ही
घर मे वास करूं दया करके मेरे को एक काल भोज
न देते रहो और टहिल सेवा लेते रहो
इस प्रकार साधू का वचन सुनकर वैसमता हाथ
जोड़ कर दीन वाणी से कहने लगा कि हे नाथ आ
पने टहिल सेवा की बात मुख से क्या कथन करी है
मैं तो मन वचन काया करके प्रभू तुमारे चरनो का
सेवक हूं और मेरा पुत्र स्त्री घर वार धन संपती
जो है सो सब आपका ही है नाथ अपना घर
जान कर आनंद से वास करिये और मेरे पर सदा
कृपा दृष्टी रखने रहिये ऐसे परम हित के मेरे ह
ये धनी के वचन सुनकर साधू संकुच से रहित अ
भय होय कर आनंद से तिसके घर मे वास कर
ने लगा ॥ २ ॥ चौपाई ॥ अस प्र कर कछु काल बितासा ॥

बेस

से

अथ वैश्य भक्त चरितं

दोहा॥ नारायण पंकज चरन विमल भक्ति भव दैन॥
सो मै चरित यथामती कहउं कथन कछु गैन॥ चौपाई॥
पश्चिम दिसा विदित इक राहा॥ वैस धन युवित बहु साहा॥
विनु संतान दुखित चित सोई॥ सदा रहत चिंता वस होई॥
अवसर एक आयत हि धामा॥ वैष्णव संत भक्त भगवाना॥
धनि विलोकि पूजन सतकारा॥ करत भक्ति जुत विविध
प्रकारा॥ कीन्यो विनय जुगल कर जोरी॥ दीननाथ
कछु द्रव्य न थोरी॥ पै संतान दीप विनु गेहा॥ मोरे अंध
कार प्रभु देहा॥ तांते तुम हु दीन हित कारी॥ मन हु मोहि
कछु यतन विचारी॥ जहि तें मिटहिं सदन मम सोगू॥ उप
जहिं रुचिर पुत्र विन भोगू॥ सत्य वचन सुनि संत उ
चारा॥ सुत विनु वृथा ग्रहस्य संसारा॥ करते
रहु संत महि देवा॥ मन वच करम भक्ति नित सेवा॥ तो
असाध कछु संसति नाहीं॥ होहिं प्रसन्न कृष्ण मन
माहीं॥ उपजहिं रुचिर पुत्र तुव भवना॥ अस कहि
कीन संत निज गवना॥ धनि उपदेस तास अस लेवा॥
लाग्यो करन संत दुज सेवा॥ अस प्रकार कछु काल
वितन्या॥ उपजी सदन तास इक कन्या॥ सोरठा॥ य
नि अनंद मन लीन॥ सेसकार तो कर सकल॥ रुचिर
पुत्र सम कीन॥ दीन दुजन अनथीन धन॥१॥ टीका॥
नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो अब नारायण के चर
न कमलों की निरमल भक्ती के देने वाला वड़ा
सुंदर चरित्र जो है सो आप के आगे यथामती गायन
करता हूं क्याकि पश्चिम दिसा मै एक वैस जाती कर
के धनी वड़ा प्रसिद्ध होता भया सो यद्यपि बहुत सम्प
ति वाला था तद्यपि संतान से हीन हृदय मे चिंता
करके परम दुखी रहता था तब एक समय दैवयोग सें

तिस बडे भारी उत्सव मेलेको जान कर वै स्थ[illegible] नी अपने पुत्र स्त्री और [illegible] संत के सहित आनंद से तहां चला आवता भया जब दरसन परसन कर के [illegible] घर को चले आये तब बालक फिर पिता के साथ रार क्या अरु करके कहने लगा [illegible] तात मेरे को तहां हीं ले चलो कि जहां बणविखें नाना प्रकार का लोग समाज जुडा हुआ है ऐसे बालके का कथन सुनकर पिता ने यद्यपि बहुत हीं निवारण किया तद्यपि सो मिटता नहीं भया अंत को तिस साधू के साथ तहां को भेज दिया सो जब बालक को लेकर के वहु चले बणविखे आय गया तब केचिन और मणियों करके जटित बालक के अमोल भूषण देखकर [illegible] तिस संत के हृदय मे दुष्ट बुद्धि व्यापित होय गई कि बालक को मारकर इस के भूषण जो हैं सो सब उतार लेऊं ऐसे विचार कर सो साधू हिंसक जो जीव व्याघ्र है तिस के समान होय कर और अधम अभागी हृदय को वज्र के तुल्य कठोर कर करके इस [illegible] [illegible] थोडे से जीवने के सुख के लिये दया धरम और संत करम से रहित चांडाल वत निरदय होय कर और धनी कों उपकार [illegible] हृदय से विसार कर तिस सून मग्र गौं वाले सुंदर बालक को निरअपराध हीं मार देता भया और फिर तिस के भूषण वस्त्र सब उतार कर यतन से कहीं राख कर और तुरत पृथवी को खोद कर तिस बालक को तहां बण के बीच हीं दबाय करके फिर आप मथुरा आनंद थी और अधम पापी धनी के घर मे चला आ[illegible] भया ॥३॥ चौपाई ॥ बालमरम वध का हु न जाना ॥ [illegible] यो भास कर जब अब साना ॥ बोलि असंत वनक तब काहा ॥ पसो नदृष्टि

वालकितराना॥ तासप्रथम तव वदन उचारा॥ अर्थ
दिवस तें वालतुमारा॥ देखो मै नललित मृदुगाता॥
सुनत वैस मानस अकुलाता॥ तुरतलीन निज चेरि
वुलाई॥ सिसु अन्वेषण हेतु पठाई॥ वीथनठामधा
म सव ग्रामा॥ लागी खोजन ललितललामा॥ सिसु
सिसु करत विपत चितदासी॥ मिल्यो एक मारग संन्यासी॥ सूखेवदन देखि अकुलानी॥ पूछत भई क
वन तुव हानी॥ चेरि वदन सव कथा सुनाई॥ संत
मरम तव दीन जनाई॥ साधु मेषजे सदन तुमारे॥ ता
स विपुन दुग लखत हमारे॥ विलपत रुदन करत सि
सु काहीं॥ दाव्यो हनत खनत महिमाहीं॥ दासी सु
नत चरनसिरनावा॥ महाराज मोहि देहु दिखावा॥
सोरठा॥ तासु वचनवस होय॥ संतदिखायोवाल मृ
त॥ रुदनकरत तवसोय॥ चलि आई स्वामिन सदन॥
४॥टीका॥ तव वालकके मरनेकाभेद किसीने नहीं जा
ना जव सूरज असत ~~[illegible]~~
होने पर आया तव तिस असंत को धनी वुलायकर
के पूछने लगा कि ~~[illegible]~~ वालक कहां है मेरे को दे
खने नहीं पड़ा ऐसे धनी का वचन सुनकर सो प्रथम
कहने लगा कि मैंभी इसी चिंता मै हूं आधे दिनके उ
परांते मैने ~~[illegible]~~ वालकको देखा नहीं ~~[illegible]~~ है इसप्रकार
तिसके मुखसें वचन सुनकर धनी ~~[illegible]~~ वालककी
चिंतामै व्याकुल होय गया और तुरत चेरी या
दासीको वुलायकर वालकके खोजने के लिये मे
ज देता भया तव सो दासी यतन से ग्रामके घर
घर और गली कूचे मारग मै जाय कर जहां तहां
खोजने लगी ~~[illegible]~~ वालकवालक पुकारती व्याकु
ल भई फिरती को मारग मे एक संन्यासी सें मिल
जाते भये सो तिस दासी को सूखे हुये मुख देखकर
पूछने लगे कि हे सुशीले तूं किस कारणतें व्याकु

लहैयरहौहैं दासीने सब वृतांत प्रकटकरकेसु
नायदिया संत सुनकरके कहनेलगे किनुमारेघर
मै साधूभेष एक पुरुष जोरहताहै तिसने हमारे देखते
वलाविखें रोदन विलाप करते हुये बालकको निरदय
हैयकरके मारदिया औरफिर तहांहीं माटीमें गढा
खोदकर दवायदियाहै ऐसे दासीने सुनकर संतचर णके
नोपर सीस धरदिया औरहाथ जोडकैं कहनेलगीकि
महाराज आप कृपाकरके मेरेको दिखायदीजि
ये संत महात्माने तिसकी विनती मानकर तुरत
जायकरकें बालकको दिखायदिया तब दासी देखकर
हाहाकारसे रोदन करतीहुई अपने स्वामीके घरमे
चलीआई ॥४॥ चौपाई ॥ धनिसन बालमरण
जिमि गाथा ॥ कीन्यो कथन चेरि धुनिमाथा ॥
भेद अमक्त नाथ सिसु मास्यो ॥ मै स्वामिन निजदृ
गनतिहास्यो ॥ मिदू संतएक संग आवा ॥ तासबा
ल मृत मोहिदिखावा ॥ सुनि अस वचन चेरिमुख
ताहो ॥ आवा वनकवाल मृत जाहो ॥ खनत धरनि
सिसुलीन निकाँ ॥ ~~[illegible]~~ ॥
~~[illegible]~~ मृतक देखि उपज्यो दुखभारा ॥ तसहि द
वाय धरनि तल तासा ॥ आब वनक निजसदन
निरासा ॥ परम निपुण धृति ज्ञान विचारा ॥ त्रिय
हि वदन निज विविध प्रकारा ॥ धीरज देत वचनमृ
दु कहयो ॥ प्रिया तुमार करम असरहयो ॥ कोजैदो
षकवन कररोई ॥ जस भवतव्यताई तस होई ॥
इह सेवत संतन सुत लीना ॥ आज सुप्रिया संत
हरि लीना ॥ इहि कहे भूलि दोष जनि देहै ॥ वृथा
न जग अपकीरति लेहै ॥ भामनि ~~[illegible]~~ तुमहि
उचित न अवराहा ॥ हित जुत मानि मोर इह काहा ॥
जै तुमार कन्या सुखदाई ॥ इहि कहें विधिवत
देहु विवाही ॥ आपु महो पथ चलहु सिधाही ॥
दीजै वपुष सचैन हिम गाही ॥ दोहा ॥ निजपति

दिन दिन बढत गयो बिस्वासा॥ मनि मनि [illegible] बच
नमधुर मुख लालन॥ सुत सम करत बनक सुतपाल
न॥ पितु सम जानि संग सिसु तासा॥ करत रहत नित
केलि बिलासा॥ तब इक दिवस प्रांत तहि ग्रामा॥
जुरयो समाज लोक अभिरामा॥ जानि बचित्र महुत्सव
माही॥ वैस सेत सेजुत सुत नाही॥ गवने तहाे हरष
उरछाये॥ करि दरसन जबमवन पराये॥ तब बाल
क उत केठित बानी॥ पितु सन मनत दार मुखठानी॥
मोहि ले चलहु तात पुनि ताहो॥ कानन कलित महु
तसव जाहो॥ यद्यपि पितु बर ज्यो बहुवारा॥ [illegible] तद्यपि
र ह्यो न बाल निवारा॥ [illegible] तब सो साधु लेन सिसु
काहीं आवा जबहिं गहन बन माहीं॥ देखि ग्राम
रने केचिन काया॥ तो के हृदय दुष्ट मति आया॥ हर
हु बाल बधि भूषण एहू॥ अस विचारि हिंसक ग
तितेहू॥ हृदय बज्र करि अधम अभागी॥ दिं पक
जि यन भोग सुख लागी॥ दाया धरम संत मत खोई॥
निरदय क्रूर सुपच वत होई॥ धनि उपकार सकल स
ठ मंगा॥ बिनु अपराध बाल मृदु अंगा॥ मास्यो मे
द बिपुन थल ताहीं॥ दीन दवाय खनत महिमाहीं॥
देह॥ भूषण वसन उतारि तहि राख्यो जतन दुरा
[illegible] य॥ धनि गृह आयो आपु सठ अति अनर्थ स
रसाय॥३॥ टीका॥ जब इस प्रकार कुछ काल बतीत
होयगया तब तिस साधूका दिन दिन अधिक ही बि
स्वास बढता चला गया और मुखसे बडे मीठे प्यारके
बचन उचारन करकर पुत्रके समान वैसधनी के पु
त्रको पालता रहा और बालक भी पिताके समान जा
न कर तिसके साथ नित्य पर चया रहताथा तब एक
तिस ग्राम से बाहिर चार पांच कोस पर एक बडा भारी
मेलें उतसव होता भया तहां चारो ओर से लोग समाज
जो है सो अनेक प्रकार आय करके जुडा है आथा
की

करो तो हमारे वडे पूर्ण भाग्य हैं कृपानिधान र
न सुखदायक वारता मेरे कोसरव प्रकार करकेसु
ई कारहे संत भक्त को कन्या दीजे और मैं सुं
दर जस बडाई लीजे ॥ ५ ॥ चौपाई ॥
त्रिय मुख सुनत वचन हित साना ॥ वैस भक्त मान
स सुख माना ॥ तहि प्रसंसि उर विविध प्रवीना ॥ को
लि असंत निकट निज लीना ॥ जोरि जुगल कर विन
य अलाया ॥ जो मोपै कीजै निज दाया ॥ तो कन्या
इहजवन हमारी ॥ करहु नाथ निज चेरि विचारी ॥
हित जुत वैस वचन सुनि नीके ॥ निज अपराध साध
गुनि जीके ॥ निदरि आपु धिग वचन अलाई ॥ र
ह्यो वैठि मुख लजित झुकाई ॥ मोर अधरम धर
म इन करना ॥ उभय अवधिगत जाहिं न वरना ॥
सोऊ मनुज दुरलभ संसारा ॥ पर अपराध
विसारा ॥ अनहित देखि करत हित जोई ॥ वंदन
जोग धन्य नर सोई ॥ मै अव अधम दुरत रत
चोरी ॥ सनमुख सकहुं दृग न कस जोरी ॥ अस
विचारि मानस विलखीना ॥ मरहु आज निस्चय
असकीना ॥ मरण तास उर सुमुरि मुरारी ॥
वैस भक्त दृढ भक्ति निहारी ॥ तास संत गुरु रूप
धराये ॥ वतसल भक्त तुरत चलि आये ॥ साधु
विलोकि दृग न गुरु काहीं ॥ वूझो जनहु लाज
न दमाहीं ॥ दोहा ॥ दिव्य दरस गुरु वर निरख व
नेक चरन सिर नाय ॥ पानि गृहण निज कुवरि
कर दीन वृतांत सुनाय ॥ ६ ॥ टीका ॥ इस प्रकार
स्त्री के मुख से वचन सुन कर वैस भक्त हृदय मे
परम सुख मान ता भया और मन मे तिस सुशी
ले की अनेक प्रकार वडाई कर कर फिर तुर

तहीं तिस साधूको अपने पास बुलाय लेता भया
और हाथ जोड़ कर बड़ी दीन वाणीं से विनती करने
लगा कि हे संत कृपाल मेरे को अपना दास जान कर
दया करिये और इह मेरी कन्या जो है इस को वर कर अ
पने चरनो की चेरी करिये ऐसे वैस भक्त के मुख से व
चन सुन कर सो अ साधू अपने अपराध को हृदय में स
मर कर अनेक प्रकार के निरादर से धिकार उचार कर
अपनी निंदा करने लगा और लज्जा के वश नीचे मुख
कर के मन में कहने लगा कि मेरा दुष्ट बुद्धी का अधरम
और इन उपकारियों का सुधरम दोनो की कोई अ
वधी नहीं है सो पुरष संसार में धन्य हैं कि जो पराये
अपराध को विसार देते हैं और अनहित करने वाले के
साथ सदैव हित ही करते हैं मैं अधम अभागी और
पापी अब इनके सनमुख नेत्रों को कैसे करूं
कि जिनो ने अपने सरल और साधू सुभाव से मेरे महा
अनर्थ और अनहित को हृदय से विसार ही दिया
है अब उचित है कि विष खाय कर मर जाऊं जीवता स
मुख ना दिखाऊं जब इस प्रकार तिस साधू
ने अपने करम की हानी गिलानी मान कर मरणा नि
श्चय कर लिया तब तिस के प्राणो की हानी विचा
र कर और वैस भक्त की भक्ती के वश होय कर भ
क्त हित कारी भगवान कृपा निधान जो हैं सो तिस
साधू के गुरू का भेष धार कर तुरत हीं चले
आवते भये तब साधू गुरू को आवते देख कर
मानो लज्जा के समुद्र में डुब जाता भया जब गुरू
जी पास आय गये तब तिन का दिव्य रूप देख
कर वैस भक्त ने बड़ी दीनता से चरणों पर प्रणा
म कर कर और हाथ जोड़ कर कन्या के विवाह का
वृतांत जो था सो सब सुनाय दिया ॥ ६ ॥ चौपाई ॥

वैस कथन सुनि कृपानिधाना॥ अति प्रसन्न मन ब
चन बखाना॥ इहि तें धरम आन संसारा॥ नहिं न
वैस तुव भलो बिचारा॥ देहु सुता इहि वेग विवाही॥
तब तहिं वैस चरन सिर नाई॥ बोलि तुरत अपरो
हित लीना॥ यथा उचित विधि वत सब कीना॥ ला
जा होम [illegible] बानी॥ गुरु कृपाल अस ब
दन बखानी॥ देवे हेतु अहुति सुनाई॥ बोलहु
वेग कुवरि वर भाई॥ बांधव दुखित सुनत गुरु
कहा॥ लागे रुदन करन सब नाहा॥ देहिं अहुति
कवन अब आई॥ सुनि लाजित दुलहा पछुता
ई॥ तब कृपाल गुरु अंतरजामी॥ बोले बदन
सुखद हित बानी॥ सकुच विलाप तजहु तुम
सारी॥ आवत अबहिं अनुज सुकुमारी॥ कृपा
नाथ जब बदन अलायो॥ सुनत लोक मानस
विसमायो॥ मनुज एक तब कानन माहीं॥ दे
खत भयो वैस सुत काहीं॥ लीने संग हरष
बस गवना॥ आवा लेत वनक वर भवना॥
तिनुहिं विलोकि लोक समुदाई॥ लागे साधु
साधु मुख गाई॥ सबन प्रणाम चरन गुरु कीना॥
लाजा अहुति बाल तब दीना॥ अस प्रकार ज
व भयो विवाहू॥ तब निज तियहिं वैस उतसा
हू॥ दोहा॥ कहा किधों प्रतक्ष इह किधों स्वपन
भयो मोहि॥ प्रिय सेतन सेवा किधों आज स
फल जग होई॥१॥ टीका॥ तब भगवान कृपा
निधान तिस वैस का वचन सुन कर परम प्र
सन्न होय कर के कहने लगे कि हे भक्त इस ते
अधिक संसार और कौन धरम है इह तुमने
बड़ा शुभ मंगल विचारा है इस साधू को

कर सुनि वचन अस भामनि वदन उचार ॥ जो की
जै अस प्राण पति तो वड़ भाग हमार ॥ मोरे उर
सूई कर प्रभू बात सरव सुखदान ॥ दीजै कन्या संत
कहं लीजै सुजस महान ॥ ५४ ॥ टीका ॥ तब धनी के सा
थ बालक के मरने का प्रसंग जो था सो सब सुनाय देती
भई कि हे नाथ इस मंद अभक्त ने बालक कौं तरसाय कर
मारा है मैं अपनी आंखों से देख आई हूं एक सं
न्यासी संत रस ते मैं चले आवते थे तिनो ने मेरे कौ पता
लाया और पृथवी मैं दबा हुआ बालक दिखाया है इस
प्रकार दासी का कथन सुनकर धनी तुरंत तिस अस्थान
पर चला आया तब अपने हाथों से पृथवी को खोद कर म
रे हूये बालक को निकाला और देख देख हृदय अत्यंत
कलेश मान कर फिर तहां हीं दबा यदिया और निरास
होय कर के दासी के सहित अपने घर को चला आया तब
ज्ञान विचार में प्रवीन और धरम धीरज की निधी
वैस धनी वड़ी कोमल वाणी से अपनी स्त्री को कहने ल
गा कि हे प्यारी तेरा पूर्व ला कर म औसा ही था दोष कि
स के ताई दीजे जैसी होनी थी तैसी वरतमान होय
गई इस पुत्र संतों की सेवा करकर प्रापत किया था सो
अब संत ने हीं हर लिया है प्यारी तूं भूल कर मत कहीं
संत पर दोष धरें और वृथा जगत मे अपजस जो है
सो लेवैं सुणि ले अब जो तूं मेरा कहा माने तो तेरे
को इह उचित है कि अपनी प्यारी सुखदायक कन्या
जो है सो भी विधि अनुसार विवाह कर के इसी को दे दे
और आप हम हिम जो वरफ है तिस विखें शरीर गला
यें महां मारग जो परलोक का रसता है तिस को चले
चलते हैं ऐसे पती के मुख से वचन सुनकर सो ~~पतिव्रता देवी मन में लखी~~ धरम की मूरती कहने लगी
कि हे प्राण नाथ जो तुम कदाचित ऐसी शुभ वारता को

नरसाय

जैहे

भै

पतिव्रता देवी

अ

काफल प्रकट भयाहै ॥७॥ चौपाई ॥ गुरु कृपा
ल तव मांगि विदाया ॥ सुनि अस वैस चरन सि
र नाया ॥ करि सतकार विविध विधि सेवा ॥ वैस
विदायकीन गुरुदेवा ॥ सोतव सैन सकुचवस सो
ई ॥ कालकवस न अमरन जोई ॥ त्याय सकल
मानस बिलखाई ॥ छिमुहि क्षीन निज कर घरि
राई ॥ कोल्यो वैस भक्त सन वानी ॥ मैं इन वध्यो
वा लखन पानी ॥ मुहि तें भयो विपुल अपराधू ॥
तुम हु कृपाल भक्त तुव साधू ॥ वैस भक्त तब व
दन उचारा ॥ सेत नकछु अपराध तुमारा ॥
सोनतार संतति वल माना ॥ तुमहिं दोष कछ
दे हु सुजाना ॥ अस कहि भक्त सहित पद्दि वारा ॥
तजि सेस्य उर कपट विकारा ॥ दिनदिन अधिक
प्रेम वस होई ॥ भयो प्रलीन भक्ति हरि सोई ॥
अस प्रकार इन चरित सुहाका ॥ मे सेत पत
वदन कछु गावा ॥ देखहु भक्तपाल भगवा
ना ॥ दीन भक्ति वस काल जियाना ॥ सोरठा
भक्ति पुरष कहे सोय ॥ नहिं असाध सेसवकी
कछू ॥ तांते अस जिय जोय ॥ करहु भक्ति भ
गवत प्रीय ॥८॥ टीका ॥ तव गुरु काभे
घधारे हुये भगवान कृपाने जोघे सो विदाय
मांगते भये वैस भक्त सुनते हीं ततका
ल अनेक प्रकारकी सेवा सतकार करकर
और वारवार चरनोपर सीस नायकर क्षमा
पाकरके मोहित भया हुआ आनंदसे विदा
य कर देता भया तब वे सेत वैस भक्त
का जामाता हृदयमे वडा सेके चे और

सेवकीवारोकेसहित

और सहज है ऐसे विचार कर और सब पत
को त्याग कर केवल भगवान के चरनो की भ
क्ती जो है सोई आधार करनी चाहिये दीना
नाथ के संसार मे भक्ती ही व्याली है और भक्ती
पर ही प्रभू रीझते है ॥८॥ इति श्री भक्तविनोद
ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भाषाटीकायां वै
स भक्त चरित वरनने नाम सरगः

कन्या जो है सो विवाह करके देदेवो तब वैस भक्त
ने चरनोपर सीस नायकर तुरत हीं अपरोहित को
बुलायलिया और विधीवत जोजो करना था सब सो
किया जब लाजा होम का समय आया तब गुरु
कृपाल कहने लगे किं अहुती देने के लिये कन्या के
भाई को ल्यावो ऐसे गुरु जी मुखसे वचन सुनकर सं
व बांधव परम कलेश से रोदन करकर कहने लगे कि
देव अब कौन उपाय करें बालक कहां से ल्यावें इस
समय अहुती कौन देवेगा तब दुलहा जो साधू था
सो भी लज्जा करके व्याकुल भया हुआ हृदय मैं पछता
वता है इतने मे गुरु भेषधारी अन्तरजामी भगवान ति
न सबका कलेश विचारकर परम सुख और हितके दे
नेवाला वचन जो है सो कहते भये कि भाई तुम सब लो
ग अपने हृदय की चिंता को त्याग देवो भगवान की कृ
पा से कन्या का भ्राता जो है सो अबी आय जाता है
जब इस प्रकार दीनबंधू ने कथन किया तब लो
ग सुनकरके सब अचरज के वश होय गये कि इह
क्या कहते हैं इतने मै एक मानुष्य बालक से चला
आंता था सो आरम मै तिस बालक को देखकर और
पहिचान कर हरष से ततकाल वैस धनी के चरनमे
ले आया तब बालक को देखकर के सब लोग प्रस
न्न भये हुये साधु साधु शबद को उचार उठे और गु
रु जी के चरनो पर सीस धरधरकर प्रणाम करने
लगे फिर बालक ने विधिपूर्वक लाजा अहुती जो
है सो दई इस प्रकार जब विवाह होय गया तब
वैस भक्त बडे हरष उतसाह से अपनी स्त्री को क
हने लगा कि हे प्यारी [illegible] हम को आज पुत्र के मि
लने का आनंद जो प्राप्त भया है सो इन प्रतत
है कि अपना खपने है कि साध संगत की सेवा

रती को विकास मान अर्थात प्रफुलीत करके अंग्रे
साभक्तीरूपी सुंदर मकरंद जो है सो प्रकट करता
है पश्चम देस जो प्रसिद्ध है तहां गरच तना
मं करके एक उजागर अस्थान होता भया तिस
विखे अपने परिवार और सब समाज के स
हित एक कुसम भक्त राजा निवास करता था और
नित्य अतथी संत गौ ब्रह्मन की सेवा भक्ती मे ली
न रहता था तिस राजा का एक वडा बुद्धीमान
गुणों की निधी सूरवीर सेनापती था सो रा
जा के आगे वडा ही विस्वास राखता था और
भवन सिंह नाम करके प्रसिद्ध था अपने स्वा
मी की सेवा मे रात्री दिन लीन रहता था तब
एक समय राजा जो है सो वन विखें शीकार खेल
ने को जाता भया तहां वडे चंचल चपल और
तीव्र वेगवाले घोडे पर सवार भये राजा ने अप
ने धनुष के छुटे हुये वाणों से वहुत ही सिंह आदि
मृगों को मारकर फिर जब मंद मंद गती से क्या सह
जेसहजे लोट चले आवते थे तब अकसमात ही
वन से एक सुंदर नेत्रों वाली हरनी जो है सो निक
ल पडती भई तिस को देखकर राजा और भवनसिं
ह इन दोनों ही ने घोडों चपल करके तिस हरनी
के पीछे लाग चलते भये और मृगनी भी तिन को
देखकर भय के वश भई हुई पवन के समान उड
चलती भई जब धावती धावती करदम
मुनी के अस्थान के पास आय पहुंची तब
तब तहां कुछेक झील सी जो आय गई तिस मे कूदती
हुई चारों ही चरनो से धस गई और फस गई
इतने मे राजा ने आय कर और खडग चला

य कर तिस को दो खंड कर दिया ॥ तब हरनी जो गर्भ वती थी तुरत ही तिस के पेट से दो बच्चे निकल कर बा हर पृथवी पर आय पड़ते भये तिन को देख कर भवन सिंह जो दया की मूरती था हृदय मै परम दुखी होय ग या ॥ और बार बार सीस फेर अनेक प्रकार पछता वता हुआ राजा के सहित घर मै च ला आया ॥ १ ॥ चौ पाई ॥ तब ते उपजि परम उरदाया ॥ दुरत देष हिंसा दिवि नाया ॥ आयस तजत दारु असि धारी ॥ प्रभु भृत ता निज हृदय विचारी ॥ करत नृपहिं उपदेस सुहावन ॥ हरि पद पंकज प्रीति बढावन ॥ अस नित कृष्ण भजन रत तासा ॥ गये कछुक जब दिव स वितासा ॥ बांधव मिलि सारे ॥ नृप सन मुख अस देष उचारे ॥ महाराज तुव लखहु न भेवा ॥ धूरत करत कपट जुत सेवा ॥ बांधे कमर दारु का चाला ॥ अभिमुख रहत कवन भृत चाला ॥ आ युध दारु दलन अरि काहीं ॥ कस सामर्थ समर महि माहीं ॥ अवसर परे होहिं पछताबा ॥ अ स तिन नृपहिं देष समुझावा ॥ भेदन कथन सुनत नरराई ॥ भनत वचन मानस बिसराई ॥ मै देखु नैयनन निज जबहीं ॥ रत तुव कथन सत्य जन तबहीं ॥ अस प्रकार कछु दिवस बिताये ॥ तब उपवन दासन नृप आये ॥ भवन सिंह जुत भृत समुदाया ॥ लिये सं ग विहरत नरराया ॥ तहां कजलि द्रुम देखि रसा ला ॥ तुरत प्रहारि खंग महि पाला ॥ दोहा ॥ कौतुक कदलि तर साजि सभा नृप जाय ॥ भृत गण सब कहे वदन अस सासन दीन सुनाय ॥

मैं कायो जस कदलिद्रुम तस तुम निज निज जा
य॥ खड्ग प्रहार तक्षि प्र क्षिदि मोहि दिखाव हु
त्याय॥ ॥२॥ टीका॥ तब तें भवनसिंह के हृदय में
परम दया उतपन्न होजाती भई और कपट द्वेष
पाप हिंसा इत्यादि अधरम सब त्याग कर
स्वामी की सेव कार्ई के निमित्त लोहे की तलवार को
तजकर तिस के बदले लकडी की तलवार धारन कर लेता
भया और रात्री दिन नित्य राजा को भी एही उ
पदेश करता रहता कि हे प्रजापाल दयाधरम
के सहित होयकर भगवान के चरन कमलों में प्री
ती करनी संसार में एही जीवने का लाभ है इस प्र
कार भगवान की भक्ती में लीन भये हुये तिसको
कुछ समय वतीत होय गया तब तिसके
बांधव सरीक जो थे सो द्वेष से राजा के पास जाय
कर कहने लगे कि महाराज आपने कुछ जाना
नहीं है इह धूरत भवन सिंह जो है सो प्रभू तु
मारी कपट के सहित सेवा करता है अधम रा
त्री दिन कमर में काठ की तलवार बांध कर दीना
नाथ आपके सनमुख स्थित रहता है देखिये र
न सेव कों कौन रीती है नाथ काठ की तलवार
रण में शत्रू के घात करनें कहा समर्थ होयस के
कती है इह तो केवल कपट हीं है समय पडे पर
पछताने के बिना और दूसरी बात नहीं है ऐसे
तिन दुष्टों ने द्वेष के वचन कथन कर कर रा
जा के चित्त में भ्रम डाल दिया परन्तु भूप सुन
कर के कहने लगा कि भाई मै इस वारता को ज
वलग आपने नेत्रों से नहीं देखूंगा सत्य न
हीं मानूंगा इस प्रकार जब कुछ दिन वतीत

अथभवन चौभान चरित

दोहा॥ अकत होत जहिपान करि हरिजन भक्त मलिंद॥ नलनि वागविकसत कहूं प्रकट भक्ति मकरंद॥ चौपाई॥ पश्चिम देस विदत अभिरामा॥ गर चत नाम सुभग इक ठामा॥ तहां सहित निज सकल समाजा॥ कृस्न भक्त इक भूप विराजा॥ अतिथि संत गोयन महिदेवा॥ सादिर करत रहत नित सेवा॥ तांकर एक सुमति गुणधीरा॥ सूरवीर अनिनायक धीरा॥ ~~मा~~ मान नीय सेवक विस्वासा॥ भुवन सींह नाम अहसता॥ सुठि चौभान विदत जग जाती॥ सेवत लाग निरत दिन राती॥ नृपति एक दा कानन माहीं॥ गवन कीन मृग्यानत काहीं॥ वेगवंत वरतुरग अरूढा॥ सर संधानि धनुष निज गूढा॥ हनि मृग व्याघ्र विपुन नरराये॥ मंदमंद जव सदन पराये॥ अकं~~स्मा~~त कानन कलि ~~[illegible]~~ नयनी॥ निकसत चली गरभ वति अयनी॥ भुवन सिंह जुत भूप प्रधाना॥ तासु विलोकि वाजि चपलाना॥ चले जुगल तहि पाछिल धाये॥ सो मृगनी कोरदम पलआये॥ धसी असक्त चरन अकुलानी॥ नृपति प्रहारि खड्ग निज पानी॥ कीनसि द्वैद खंड ततकाला॥ निकसत उदर तासु जुग वाला॥ दोहा॥ परे धरनि अस देखि दृग भुवन सिंह अकुलाय॥ धुनत सीस पछितात उर सदन नृपति जुत आय॥ १॥ टीका॥ नाभादास कहते हैं कि हे संतो जिसके पान कर ने से हरी जन ~~और~~ हरी भक्त भ्रमरे जो हैं सो आय करके मसत हो जाते हैं सो कमल रूपी वा

भुवन

सिंह

चौभान

कोपि कीन जिसकार वसेखो॥ दोहा॥ तव कर जो
रि विरोधि जन नृपसन विनय उचारि॥ इहि
अय धूरित कुटिल दारु खड्ग प्रभु धारि॥१॥ टीका॥
तब राजा की आयकर संपूर्ण भृत सेवक जाय कर
और खड्गों के प्रहार दे दे कर कदली वृक्षों को काट
काटकर राजा को दिखाय देते भये भवनसिंह
की तलवार जो [illegible] काठ की थी तिस तें [illegible]
[illegible] वड़ा शंकित और चिंता के वश भया हुआ हृद
य मैं [illegible] गिरधर भगवान का सुमरण करने लगा
कहता है कि हे दीनबंधु आज मेरा मान अपमा
न जो है सो तुमारे हीं आधीन है राखिये अथवा
ना राखिये ऐसे कथन करकर भगवान कृपानि
धान के चरन कमलों प्रणाम किया और फिर हृ
दय मैं तिन चरनो का ही भरोसा राखकर भवन
सिंह भी चल पड़ते भये तब कदली वृक्ष के पास आ
यकर भक्तपाल भगवान को सुमर कर तत्का
ल म्यान से खैंच कर खड्ग का प्रहार जो किया तो
ऐसे प्रतीत हुआ कि मानो विजली का चमतका
र पड़ा है तिस के भय से राजा के सहित सब लोग
अपने अपने नेत्रों को मूंद लेते भये फिर कुछ क
देर के पीछे जब नेत्रों को खोलते भये तब राजा
आश्चर्ज होय करके कहने लगा कि हे भवनसिं
ह सत्य कहो इह ऐसी अमोल और विजली
के प्रभाव वाला खड्ग जो तलवार है सो तैने
कहां से पाई है इस को निकालकर मेरे को दि
खावो और इस की प्रापती का प्रसंग सुनाय
कर मेरे हृदय का संदेह मिटावो

जासु इहि अवसर त्रिभुवन राज ॥ ४ ॥ टीका ॥
ऐसे तिनका कथन सुनकर राजाके हृदयमें फिर
भ्रम होय गया तब भवनसिंह के हाथसे तलवार
लेकर देखने जो लगा तो वें काठ की देख पडी रा
जा अचरज के वश होय कर पूछने लगा कि भवन
सिंह इसको कौन कारन है तब सो भगवान का भक्त वि
नती करने लगा कि कृपानिधान इनका कथन सब
सत्य है तिस दिन प्रभु तुम बलोचि कें शिकार खेल
ने के लिये जो गये थे तो कर्दम मुनी के अस्थान के
पास झील मे धसी हुई गारभवती हरनी को आपने
खड्ग का प्रहार देकर दो खंड कर दिया तहां तिसके पे
ट सें दो बच्चे निकलकर पृथवी पर तड़फ तड़फ कर
मर गये तिनको देखकर नाथ मेरा शरीर कांप उ
ठा और दया जो है सो रोम रोम मे प्रवेश कर गई
तब तें मै भय के वश होय कर दीनदयाल आपने
शस्त्र सब त्याग दिये आपकी सेवा के वि
चार से केवल इह काठ की तलवार जो है सो धार
न कर लेई और भगवान के चरन कम
लों का आधार राख लिया तिस दिन स्वामी तुमा
री कदली खंभ काटने की आज्ञा जो भई तब मे का
ठ के भरोसे पर हृदय कदराय गया और पछताय
कर व्याकुल होय गया परन्तु फिर धीरज धार
कर कृष्ण भगवान के चरनो का ध्यान कर के क
दली खंभ में खड्ग का प्रहार कर दिया तब कृपा
निधान कुछ भेद नहीं जाना गया इस काठ की
खड्ग में बिजली का प्रभाव और चमतकार होय नि
कला तो देखो इस प्रकार भवनसिंह के मुखसें

होयगये तब एकदिन सब सेवकसमाज साथलि ये हुये राजा बागके देखनेको चलाआया तहाँवि चर ते विचरते भवनसिंहके सहित सब सेवकोंके देखते राजाने एक कदली अर्थात केले के वृक्ष को खड्गका प्रहार देकर काट डाला और फिर तिसी बागमे सभा सजायकरके बैठ गया तब आपने से पूर्वी भृत सेवकोंको आज्ञा देता भया कि जिसप्र कार तलवार मार कर मैने कदली वृक्षको काटाहै तैसे ही तुम सब सेवक भी अपनी तलवार से क दली काट कर और ल्याय कर मेरे को दिखाते जा वो ॥२॥ चौपाई ॥ नृप नदेस सुनि भृत्त समुदाये ॥ छे दत खंभ कदलितरु ल्याये ॥ भवनसिंह चिंतावस भारी ॥ हृदय सुमरतलाग गिरधारी ॥ मोर कृपालमा न अपमाना ॥ तोर अधीन आज भगवाना ॥ अस हरि जलज चरन सिर नाये ॥ हरि भरोस हरि भवन सिधा ये ॥ कदलीखंभ निकट तब जाई ॥ सुमरि हृदय निज भक्त सहाई ॥ कीन प्रहार खड्ग जब तासा ॥ भा प्रतीत जनु तडित प्रकासा ॥ भूप समेत त्रास चि तकीने ॥ निज निज नयन नमीलन कीने ॥ केउ कवेर पाछिल जब खोल्यो ॥ तब नर नाथ वदन अस बोल्यो ॥ इह तुव कहां भवन मृगराई ॥ खड ग अमोल ललित वर पाई ॥ दामनि जनु दमक दुति कारी ॥ मोहि दिखाउ वेग हितकारी ॥ सास न मानि भवन मृगराया ॥ नृपहिं दिव्यवर खड्ग दिखाया ॥ अद्भुत देखि भूप विसमान्यो ॥ परम कोपवस वचन वखान्यो ॥ सुखो मंदमति अध म मलीना ॥ मोहि सन कवन द्वेष तुव कीना ॥ तिनकहे सन मुख बोलि नरेसा ॥

कर मैं आप मन वचन काया तें होयकर मैं नहीं
तेरी सब सिव काई करूंगा जब तेरे मन की
अपनी कुछ इच्छा रचीहोवे तब मेरे को
दरसन दे जाया कर इसप्रकार जब वृहित के
वचन राजा ने उचारन किये तब भवनसिंह
प्रणाम करके कृष्ण कृष्ण रटते हूये अपने घर
को चले गये और इस अदभुत कौतुक को देख
कर लोग सब अचरज के वश होयगये नाभाद
सजी कहते हैं कि हे संतो ऐसे रहन सीर्कमहा
तम प्रभाव जो है सो मैंने यथामती गायन क
र दिया है भक्तिमान पुरष के संसार मे कुछ दुर्ले
भ नहीं है सो भवनसिंह चौमान जब लग संसा
र मे जीवते रहे तब लग कृष्ण प्रमातमा के
गुणगण जो हैं सो प्रतीमक्ती हें नित्यहीं गावते
रहे और जब शरीर को त्यागा तब कृष्ण भग
वान की कृपा से कृष्ण रूप को प्राप्त होयगये
और तिन की भक्ती चरित्र जो है सो तिस को आज
भी प्रेम प्रीती से लोग गाय गाय कर संसार
समुद्र से पार होते जाते हैं ॥ इति श्रीमक्तविनो
द ग्रंथे भगवत भक्ति महातमे भाषाटीकायां भव
नसिंह चरित्र वरणने नाम सरगः

वचन सुनकर राजा रोम रोम प्रसन्न होय गया
और अनेक प्रकार तिस की श्लाघा वडाई करकर
कहने लगा कि अहो भवन सिंह तुम धन्य हो जि
सकी ऐसे समय विखे तीन लोक के नायक जदु
नाथ भगवान ने आप सहायता करी ॥४॥ चौपाई ॥
तुव सम कवन आन वडभागी ॥ जहि पदपदम कृ
ष्ण लव लागी ॥ चारु जनम तुव सफल सुहावा ॥
आज सुजस संतति अस पावा ॥ अव तें तुम हु भवन
मृगराई ॥ परिहरि मोर सदन सिवकाई ॥ वैठि अचल
निज भवन सुहायन ॥ करहु रमापति गुण गण गा
यन ॥ मैं भन वचन करम सिवकाई ॥ करहुं भक्त
तुव सदन सुहाई ॥ जव कछु तुमहिं होव मन कामा ॥
तव मोहि भक्त दरस अभिरामा ॥ देत रहहु नित जानि
सुहावा ॥ अस प्रकार जव नृपति अलावा ॥ भवन
सिंह तव सदन सिधाये ॥ लोक विलोकि चरित वि
स्माये ॥ अस रहभक्ति महातम भावा ॥ मैं निज
अलप यथामति गावा ॥ भक्त पुरष कर संतति मा
हीं ॥ सुनहु संत दुरलभ कछु नाहीं ॥ दोहा ॥ जव
लग रहे सजियत जग सिंह भवन चौभान ॥ रहे
निरंतर रटत नित कृष्ण विमल गुणगान ॥ [illegible] ॥
टीका ॥ फिर राजा कहता है कि तेरे समान आज दू
सरा कौन वडभागी है कि जिसकी भगवान के चरन
कमलों मे ऐसी दृढ भक्ती और प्रीती है भक्त तेरा ज
नम भी सफल और तूं संसार मे सुजस का पात्र हो
य गया है अव तें हे प्यारे तूं मेरी सिवकाई सव
छोडकर और अचल होयकर आनंद से अपने घर
मे वैठ और भगवान के गुणगण जो है सो गायन

श्रोताजनो के हृदय मे भगवान के चरनो मे प्रीती उपज आवत है वेही चतोड गढ का राजा कि जि स की पूर्व कथा गायन हो चुकी है तिसके घर मै चतुरभुज भगवान की मनो हर मूरती थी तिस मूरती के पूजन सेवन के लिये राजा ने एक ब्राह्मन पुजारी बुद्धिमान श्रीमान देवाजी नाम करके राखो हुआ था सो प्रजापाल की आज्ञा अनुसार भगवान कृपानिधान का तीन काल बडी प्रीती भक्ती से पूजन करता था और आप राजा प्रातःकाल उठ तिस से चस्नान करकर अपना सब नित्य नेम करता और फिर भगवान के भवन मे आयकर दीन भाव से प्रणाम करकर तिस ते उपरांत जायकरके अपने राजकाज मे ततपर हो जाता था ऐसे नित्य राजाने एही व्रत धारन किया हुआ था और जब भगवान के भवन मै आवता तब देवाजी दीनबंधू पर चढे हुये पुष्पो मे से एक पुष्पमाला लेकर राजा को प्रसाद की रीतीपर नित्य दे देते थे सो राजा प्रणाम करके आनंद सुख से अपने कंठ मे धारन कर लेता था एक दिन देवाजी ने एकादशी का व्रत धारन किया हुआ था और द्वादशी के दिन के प्रातःकाल उठकर विधीपूर्वक भगवान का पूजन किया राजा के आवने मे कुछ देर जो होय गई तो के दीनानाथ की प्रसाद माला देवाजी ने अपने कंठ मे डाल राखी इतने मे राजा जो आय गया तो तिसने वे माला उतार करके प्रजापाल को दे दई राजा तिस माला को लेकर जब अपने कंठ मे धारन करने लगा तब उसमे एक

सेत केस क्या चिह्न बाल लिषटा हुआ राजाको देख
पडा तब तो बडा आस्तिक चित होयँ कोपते देवाजी
को कहने लगा कि ब्राह्मण क्या चतुरभुज भगवा
न कुछ वृद्ध होय गये हैं जो इह माला मै लिषटा
हुआ सेत केस प्रकट भया है ॥२॥ चौपाई ॥ अस
आक्षेप वचन नरराया ॥ जब अस रघुवस द्विजहिं
सुनाया ॥ तब संकित त्रासत अस बानी ॥ नृपकै
कहे द्विजबर वदन बखानी ॥ धाता कर
जु विधाता होई ॥ नृपति न होहिं वृद्ध कस सोई ॥
इह कच स्याम होत सित आई ॥ सेत हुं भूपति वि
र न रहाई ॥ तब नरनाथ सुनत अस काहा ॥
आज अलप द्विज तु दहिराहा ॥ आव हुं कालि भ
वन भुज चारी ॥ निज नयनन सब लेहुं निहारी ॥
अब मै जाय विप्र निज गेहा ॥ पारन करउं रुचिर
व्रत एहा ॥ देवाजी सुनि कथन भुआला ॥ मान्यो
उर निज त्रास बिसाला ॥ कहत कालि गत कवन
हमारी ॥ होहिं कृपाल भक्त भय हारी ॥ अस प्र
कार चिंता मन लीना ॥ द्विजवर अन्न सलिल तजि
दीना ॥ निज अपराध सु हृदय विचारी ॥ कहत शरण
अब देव तुमारी ॥ प्रात मोंहि दिस वस अपमाना ॥ क
रहिं अबस्य भूप भगवाना ॥ अब भरोस विनु त्रिभुवन
माहीं ॥ मोहि अवलंब आन कछु नाहीं ॥ अस द्विज
र जनि विगत आहारा ॥ हृदय सुमरि निज भक्त उबा
रा ॥ रह्योसि भवन चतुरभुज सोई ॥ विगत अर्ध जा
मनि जब होई ॥ तब भगवान स्वपन तहिं दीना ॥ उ
ठहु विप्र मम भक्त प्रवीना ॥ भोजन करहु छोकजि
यकोई ॥ कथन तुमार सत्य सब होई ॥ प्रात लेहु

निज नयन निहारिहौं॥ मोरे होंस केह हित चाहौं॥ दोहा॥ तज दुज सोच संकोच निज नृप कहं देहु दिखाय॥ तोपें होहिं प्रसन्न मन भक्तिमान लखि राय॥१२॥ टीका॥ इस प्रकार जब कोप से राजाने ब्राह्मण को कहा तब भय से संकित चित्त होयकर के देवाजी कहने लगे कि हे राजन विधाता का जो विधाता है सो वृद्ध केस नाहो अवस्था के अनुसार इह स्याम केस जो हैं सो खिन हो जाते हैं और वे हित भी फिर थिर नहीं रहते हैं तब सुन करके राजा कहने लगा कि हे ब्राह्मण आज दंद जो है सो थोड़ी है इसलिये आज मैं जाता हूं और कल को प्रातःकाल हीं आयकर अपने नेत्रों से सब देखलेऊंगा॥ अब घर मे जायकर के व्रत पारन करता हुं ऐसे कथन कर कर राजा चलागया और ईहां देवाजी परम चिंता के वश होयकर हृदय मे कहते हैं कि हे भक्त हितकारी भगवान अब कल को राजा के आने पर मेरी कौन गती होवेगी और मैं क्या दिखाऊंगा प्रभू तुमारे केश तो स्वेत नहीं हैं इसी चिंता मे मगन भये हूये देवाजी अब और जल का खान पान कुछ नहीं करते भये बार बार एही कहते हैं कि हे दीनबंधू राजा प्रातकाल आयकर मेरा अवश्य अपमान करेगा तो हे प्रभु अब तुमारे ही चरनो की शरण है और कृपा निधान तुमारा ही भरोसा है इस प्रकार भूखा प्यासा रात्री केस मय भगवान को सुमरता हुआ तहां भवन मे हीं पड़ रहता भया तो जब आधी रात बीत होय गई तब भगवान भक्त सुखदान तिसको स्वपने मे प्रबोध करने लगे कि हे मेरे भक्त तुम उठो और आनंद से भोजन पावो तुमारे कथन जो है सो सब सत्य है

अथ देवाजी चरित

दोहा॥ कहूं कथनं अब सुखेद सुभ भक्तिमहातम आन॥ सोतन जन मन सुनत जहि उपजहि प्रीति महान॥ चौपाई॥ गढ़ चतौड़ कर जे छितराई॥ पूरव कथा जास कछु गाई॥ मूरति तास भवन मुजचारी॥ तहि पूजन हित विप्र पुजारी॥ देवाजी अस नाम सुहाया॥ भक्तिमान नृप भवन विठाया॥ सो दुज नृप सासन अनुसरहीं॥ तीन काल प्रभु पूजन करहीं॥ आपु भूप उठि प्रात सनाना॥ करि निज नित्य नेम सनमाना॥ चाहि भवन नारायण आई॥ करत प्रणाम नम्र सिर नाई॥ राजकाज पर होत वहोरी॥ अस व्रत नृपति प्रीति नित जोरी॥ हरिप्रसाद सु जविप्र उताही॥ देत खीच नरनायक ठाही॥ अति अनंद जुत छितपत होई॥ धारत करि प्रणाम सिज सोई॥ एक तहि विप्र प्रवीना॥ ललित एकादसि कर व्रत कीना॥ द्वादसि दिवस प्रात हरखाई॥ करि पूजन भगवन सुखेदाई॥ सोऊ प्रसाद रुचिर हरि माला॥ जानि आगमन विलम महिपाला॥ राखि विप्र निज के ठलाई॥ तौलो आय भवन छितराई॥ दुजवर सो प्रसाद भगवाना॥ दीन्यो जाय नृपहि सनमाना॥ जब नरेस हरि सिज अनुरागा॥ केस निधान कंठनि जलागा॥ उर ज्यो ताहि स्वेत कच देखा॥ नृप संदिगध रिसकि अव सेखा॥ दोहा॥ कोल्यो काँ दुज वृद्ध भये चतुरवाहु भगवान॥ जो इह माल प्रसाद प्रभु भयो केस सितमान॥२॥ टीका॥ अव मैं और भक्ती का अद्भुत महातम जो है सो कथन करता हूं कैसा भी महातम है कि जिसके श्रवण करने से

सर्वैकेर्त

सीस पर से मुकट उठाय कर जो देखने लगे तो
कृपानिधान के केस सब स्वेत नहीं पाये तब भग
वान का मक्तरक्षक और भक्तपालविरद जो है सो स
त्य जानकर हरष के वश भये हुये देवाजी वारवार
दंड प्रणाम कर कर और दीनता से हाथ जोड़ कर क
हने लगे कि अहो प्रभू के समान संसार मे दीनानाथ
और दीनो की रक्षा करने वाला कौन है कि जिस कृपा
सिंधू ने मेरे जैसे कुटिल कपटी की ये जय दा लई
लेई और अपमान से बचाय लिया ऐसे कथन क
र कर फिर प्रीती भक्ती से भगवान का पूजन किया
और सुंदर मधर फलों का नैवेद जो है सो प्रथम कृपा
निधान को लगाय कर पीछे आनंद पूर्वक कुछ आ
प भी पाय लिया इतने मे राजा भी ब्रह्मणों का स
माज साथ लिये हूये तहां आय प्रापत होता भया
और भगवान के चरनो के प्रणाम करके बैठ गया
तब देवाजी कहने लगे कि हे नरनायक महाराज
जन अब तुम आय कर के देख लेवो देवों के देव
चतुरभुज भगवान वृद्ध हैं कि जुवा अवस्था हैं ऐ
से तिन का वचन सुन कर राजा हृदय मे क्रोध कर
के उठ खड़ा भया और चतुरभुज देव की मूरती
के पास आय कर जब देखने लगा तब दीनबं
धू सीस के सुंदर केस जो हैं सो सब स्वेत
हीं देख पड़े इस अदभुत कौतुक को देख कर
राजा बड़े भ्रम के वश होय कर के हृदय मे सोचने
लगजाता भया ॥ २ ॥ चौपाई ॥ सब कहे लगा दि
खावन राई ॥ तब देवा प्रभु कीट उठाई ॥ मल हि
प्रकरि दीन दिखराव ॥ सब कर हृदय असे भव

भेषा॥ तब निज कर हरि सीस नरेसा॥ सीन उघा
रि जगल सित केसा॥ कंचन मूल मूरति भुज चारी॥
चली रुधिर स्रुत लोम द्रुत धारी॥ तासु बिलोकि भूप
भयमाना॥ दुजहिं जोरि कर बचन बखाना॥ महा मं
द मति निपट असाधू॥ मोहि तें भयो बिपुल अपराधू॥
जो संदेह बिबस जड़ भारी॥ कंच कृपायतन लीन उपा
री॥ तासु खेद सोणित दुजराई॥ दीन थाल कर चल्यो
बहाई॥ सो मोहि देखि परम दुख लाग्यो॥ त्रासत हृदय धी
र दुज भाग्यो॥ इह अपराध मोहि हितकारी॥ तुम हू सक
हु दुजनाथ निवारी॥ जानि मुगध मोहि होहु सहाया॥ कर
हु कृपाल बिप्रवर दाया॥ प्रभु पें बरनि मंद मति मेरी॥ कर
हो बिनय जुगल कर जोरी॥ स्रोणित द्रवत देव भुज चारी॥
होहिं निरोध बिप्र ब्रत धारी॥ आरत दीन बचन सुनि राया॥
दुजबर तुरत होत बस दाया॥ सनमुख जाय देव भगवाना॥
नम्रस जोरि जुगल निज पाना॥ कहत कृपाय सिंधु ज
न रंजन॥ भक्त सुखद भव भीत बिभंजन॥ भूप अजान मूढ़
मति हीना॥ जासु नाथ अनुचित अस कीना॥ भ्रम बस प्र
भु प्रभाव बिसराई॥ लाग करन प्रीता जड़ आई॥ दोहा॥
अब प्रनत करुणायतन देखि दृगन प्रभुताई॥ सो अनु
चित गुनत निज सकहिं न सनमुख आई॥ यद्यपि
कीन असाधु नृप प्रभु अपमान तुमार॥ तद्यपि बिदित
कृपायतन तुव जन चूक निवार॥ कीजै छमा दयानिधी
दास चरन निज जान॥ बिप्र बचन सुनि कान भये कोम
ल कृपानिधान॥४॥ टीका॥ फिर भगवान के सुंदर स्वेत
केस जो थे सो राजा सब को दिखाने लगा तब देवाजी ब
ने दीनानाथ के सीस से मुकट उठाय कर भली प्रकार
सब को स्वेत केसों का दरसन कराय दिया इस अद्भु
त को देख कर लोग सब अचरज के बस होय गये

जावेगा प्रातःकाल उठकर अपने नेत्रों से मेरे [illegible]
केस सब स्वेत देखलेने तुम अपने हृदय का सोच संको
च सब त्यागकर मेरे सीस से मुकट उतार कर राजा को
स्वेत केशों का दरसन कराय ति ससमय आपही प्रजा
पालतेरे को भक्तिमान जानकर प्रसन्न हो जावेगा ॥२॥
चौपाई ॥ उठ्यो देखि अस स्वपन पुजारी ॥ आयो प्रात
भवन भुजचारी ॥ कलित क्रीट प्रभु सीस उठायो ॥ क
चसित चारु वृद्धवत पायो ॥ एतक भक्त विरद प्रभु ले
खि ॥ हरषत हृदय विप्र अवसेखि ॥ वारंवार दंडवत
होई ॥ करत प्रनाम पुलक वर दोई ॥ अहो कवन प्र
भु सम संसारा ॥ दीननाथ दीनन रखवारा ॥ मोर कुटि
लकर जनि भगवाना ॥ राखी [illegible] पैज सन माना ॥ अस
कहि विप्र मोद मन छावा ॥ करि पूजन भगवान सुहावा ॥
[illegible] बहुरि सभक्ति [illegible] मधुर फल ल्याई ॥ हरिहि प्रथम
नैवेद लगाई ॥ पाके आपु विप्र कछु पायो ॥ तौलौ नृप
ति भवन हरि आयो ॥ पुजवर लिये संग समुदाई ॥ वैठ्यो
देव चरन सिर नाई ॥ तब देवाजी गिरा उचारी ॥ लेहो
अब नरनाथ निहारी ॥ जुवा कि वृद्ध मनुज सुर सेवा ॥
देवन देव चतुरभुज देवा ॥ सुनत भूप तो कर अस
वानी ॥ उठ्यो रोष मानस निज मानी ॥ मूरति देव
चतुरभुज केरी ॥ जब नरनाथ दृगन निज हेरी ॥ दोहा ॥
भयो चकत चित तकत [illegible] दृग कचसित सीस मुरारि ॥
संभ्र[illegible] म सोचन लाग नृप अद्भुत हृदय विचारि ॥३॥
टीका ॥ तब इस प्रकार स्वपन देख कर [illegible] देवाजी
पुजारी जो थे सो उठ [illegible] करके अपने आसनपर
चले आये और प्रातःकाल होते [illegible] चतुरभुज भ
गवान के भवन मे चले आये तौ लों दीनबंधू के

प्रभाव को विस्तार कर के क्रीडा करने लगा सो दीन दयाल की प्रतल प्रभुता देखकर तिस अपने अपराध को हृदय में विचार करके प्रभु तुमारे सन मुख न हीं आय सकता है हे कृपा निधान यद्यपि इस असाधू राजा ने तुमारा बहुत ही अपराध किया है तद्यपि दीन दयाल तुम सदैव चूक निवारण हो अर्थात सेवकों के औगुणों को वख सन हार हो कृपा करके इस पर क्षमा कीजिये प्रभू इन आपके चरनों का सेवक है इस प्रकार जब देवा जीने विनती उचारन करी तब दया की निधी भगवान सुन करके तुरत ही कोमल अर्थात प्रसन्न हो गये ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ श्रोतन धारि श्रवन तत काल ॥ भई निरोध दीन प्रतिकाला ॥ विप्र स्वरूप तब वदन बखाना ॥ जाहु भवन अब नृपति सुजाना ॥ सुनत भूप सहित सोच लि आयो ॥ तुध्यत विकल सोच जिय छायो ॥ जा सजत सयन जब कीन्यो ॥ विप्र तपसि सपने तब चीन्यो ॥ भनत वदन अस प्रकट उचारी ॥ सुनहु नाथ नर बात हमारी ॥ अब ते देव चतुर भुज एहा ॥ चले नदि तज तनुव गेहा ॥ तोर राज सुख संपति भारी ॥ लेहिं मलेछ छीन नृप सारी ॥ स्वपन विलोकि तुरत असराई ॥ उठ्यो लीन निज सचिव बुलाई ॥ दीन्यो सकल वृतांत सुनावा ॥ सत्य जानि तहि सीस धुनावा ॥ सोचत खेनत चरन सवधरनी ॥ भावी दैव प्रवल मुख वरनी ॥ असप्र

कारक कुकालविनाये॥ तब दलीसदल गारजत आये॥ देखन रेस नरत सब तासा॥ कीन प्रचलित साहअनुहासा॥ सो पूजक मूरति हरिकाहीं॥ अंतर वेधि देस कलमाहीं॥ ले तजतन जुतगये सिधारी॥ अजहूं मूरति भुज चारी॥ गाकल माहिं विराजत सोई॥ चिंतं विस्व जानत सब कोई॥ ५८

अस रह चरित चार मनभावा॥ मै कछु वदन संतजन गावा॥ दोहा॥ समन सकल संसय दमन दुरतदोष अज्ञान॥ सरस करत भव भक्तिवर चारन के जे भगवान॥ ५॥ टीका॥ सोलधरजे लहूकी धारा दीन वंधू के सीस से चल रही थी तुरतहीं सुंती होयगई तब देवाजी राजाको कहने लगे कि हे प्रजापाल अब तुम अपने घरको चले जावो तब राजा देवाजी की आज्ञा पायकर प्रणाम करके तुरत अपने घरको चला आया परंतु लानं कुछ नहीं किया सोच के वस व्याकुल चित भया है और आय करके सेजापर सोय गया तब स्वपने मे एक कोई तस्वी ब्राह्मण राजाको प्रकट करके कहने लगा कि हे नरनायक अब ई रहचतुर भुज भगवान जो हैं सो तेरे घरको त्यागके चले ~~जावेंगे~~ हैं और तेरा राजकी सव संपत्ती और सुख समाज इन सब मलेछ आयकरके छीन लेवेंगे ऐसे स्वपनको देखकर राजा तुरत उठ खड़ा भया और मंत्रीको बुलाय कर सब वृतांत सुनाय देता भया तब मंत्री प्रवीन सत्य जानकर सीस फेर फेर पछताने लगा और भी सब सेवक सयाने सोचके वस पृथ्वी को नकों से खुनते और कहते

"दबिज
"भगमक्ते
भक्त
५
"क

हैं कि अहो दैवमाग्री बडी प्रबल है इस प्रकार जब
कुछ समय बीतत भया तब दिल्ली के बादसाह का
दल जो लसकर है सो गरज करके आय गया औ
र राजा का सब राज देस छीन करके बादसाह
की आग्या जो हुती ता हो प्रचलित कर देई सो पुजारी
भगवान की तिस चतुरभुज मूरती औं तरबेधी
देस मैं ले गया अब सो हरी कीं सब लोगों को
विदत है कि गोकल मै विराजमान है इस प्रकार
इन चरित्रों मै ने हे संत जनो आप के आगे गायन
कर दिया है इन के सौ चरित्र है कि सरब दुखदो
ष औरु संसय अग्यान के नास करने वाला औ
र संसार मै कृष्ण भगवानं चरन कमलों की उ
त्तम भक्ती जो है तिस को हृदय मै अधिक कर
के उतपन्न करने वाला है ॥ ४ ॥ इति श्री भक्तवि
नोद ग्रंथे भगवद भक्ति महातमे भाषा टीकायां
देवा जी चरित बरनन नाम सरगः

तब राजा ने मूरख ताई अपने हाथ से [illegible] चतुर
भुज प्रभू के सीस से देखन के सउखाउ लिये अब
ऐसा अनुचित किया तब तुरत ही तिन केसों के मू
ल सें एक सूक्ष्म रुधर की धारा जो है सो चलपड़ी
तिस को देख करके राजा भय से व्याकुल होय
गया और हाथ जोड़ कर देवाजी के आगे बिनती
करने लगा कि हे भक्त मैं मंद मती और महा मूढ़
असाधू गवार हूं कि जिसने भ्रम के वश होय कर भ
गवान कृपानिधान के [illegible] केस जो हैं सो उखाड़ (सुंदर)
लिये और तिसी छेद स्थान सें दीनबंधू के सीस से रु
धर की धारा बही चली जाती है इस अनुचित को
देख कर मैं परम दुखी होय गया हूं और भय के
वश होय कर मेरे हृदय से धीरज भी छूट गया
है अब इस समय मेरे इस अपराध के निवार
ण को हे हितकारी देवाजी तुम ही सामर्थ हो
मेरे को मूढ़ जान कर दया कर के मेरी सहाय
ता करो दीनानाथ के आगे मेरी जड़ता और
मंदता कथन कर कर इस चलती हुई रुधर की
धारा की शांती करवाईये इस प्रकार राजा के
मुख सें दीन वचन सुनकर देवा जी तुरत दया
के वश होय गये और भगवान के सनमुख जा
य कर हाथ जोड़ कर के दीन भाव से बिनती क
रने लगे कि हे कृपासिंधू हे संसार का भय दूर कर
ने वाले हे भक्त सुखदायक भगवान इह राजा जो
है सो प्रभू अजान है कुछ जानता नहीं और मूढ़
बुद्धी का हीन है कि जिसने इह अनुचित अपराध
किया [illegible] भ्रम के वश होय कर जड़ ने प्रभू के

॥२॥ टीका॥ अब और वही उत्तम भक्तीके देनेवाली और मोहमद इत्यादि विकारोंके नास करनेवाली मनोहर गाथा जोहै सो कथन करता हूं उदयपुरविषे एक राजा होतामया सो कैसा कि बड़ा भाग्यमान प्रतापी सेना सुख सम्पतीकरके भलीप्रकार परिपूरण था तिसका एक रजपूत सेवक सरव गुणोंकी निधी और महा सूरवीर था एक समय सो हितकारी चाकर सेवकधरम जो है सो हृदयमे विचार शत्रूकेसाथ बीर करनी कर कर राजाके सनमुख हीं रणभूमीमे जूज कर प्राणोंको त्याग देता भया तब पीछे तिसके चार पुत्र थे सो राजाने अपने सेवक जान बुलाय लिये और जिस जिसको जैसा उचित देखा तैसाहीं अधिकार दे दिया तिन मैसे जे बृद्ध बडे तीन भाई जो थे सो तो भलीप्रकार स्वामीकी सेवकाई मे लीन होयगये और तिनका चौथा छोटा भाई जो था सो रघुनाथजीके चरनोंकी प्रीतीभक्तीवाला साधू होतामया तिसका नाम कामधुज प्रसिद्ध था वे नित्य बडे गहिरे बनविषे जाय कर दुस्तर जो संसार समुद्र कि जिसका तरना बड़ा कठिन है तिसके पार होनेको राममंत्र को उचारण करता रहता था और जब सूरज मध्यानमे आय जाता तब अपने घरको चला आवता था इस प्रकार तिसका नित्य बनमे जाना देखकर वंधू जो भ्राता हैं सो कहते

लो कि अरे मूढ ● चर को त्याग कर इन नित्य वन
मे जाना तेरे को किसने सिखाया है जेठ जिस स्वा
मी का लक्ष्मणपाती होता है तिस की सेवकाई मै तो
कुछ प्रीति नहीं करता और लकडो के समान मुख
उठाय कर निज वन मे पड़ा फिरता है मूरख पिता की
और नहीं देखता कि सेवक धरम विचार कर स्वा
मी के सन मुख रण मे जूजकर प्राणों को त्याग दि
या और अब सोई सेवकाई विचार कर पृथी
नाथ हमारी पालना करता है इस प्रकार वंधूओं के
मुख से बड़े हित के भरे हूये वचन सुनकर काम
धुज प्रसन्न होय कर के बड़ी मीठी मनोहर और
कोमल वाणीों से जिस प्रकार उत्तर देने लगा सो आ
गे कथन किया जाता है ॥ २॥ चौपाई ॥ शिव विरंचि
जो कर समुदाई ॥ देव अदेव करहिं सेवकाई ॥
अरु प्रसाद जहिं त्रिभुवन राया ॥ सुव नरेस अ
नल तव विभु पाया ॥ तास भवन नाथ कर कर
भाई ॥ मै नित करहु विपुन सेवकाई ॥ परि
हरि नाथ चराचर काहीं ॥ सेव हु आन मोर वे
चिनाहीं ॥ लोक परलोक विदत सुख जो हीं ॥ सेवत
जास सिद्ध सब होहीं ॥ तास देव द्रुम कर परित्या
गी ॥ होहु धरनि पादप अनुरागी ॥ इन भ्रात मो
रे सईकारा ॥ यद्यपि अन हित होहिं तुमारा ॥
वंधु सुनत तो कर अस वानी ॥ बोले तासु प्रीत
चित जानी ॥ जो न करहु हित पत सेवकाई ॥
तो अरण्य निज गवन विहाई ॥ वेठि इकांत स
दन निज माया ॥ करहु भजन भगवान सुहावा ॥
कानन फिरहिं न धकमृगमाना ॥ करहिं कदापि

तोर रहत प्रा का॥ तो सहाय वन कवन तुमारा॥ अस प्रकार जव तिनहिं उचारा॥ मृदु मुसकात वदन तव वानी॥ सुनहु भ्रात ध्वज मदन वखानी॥ वृज गोपन गिरवर नख धारी॥ ग्राह ग्रस्त गज जात मुरारी॥ जन प्रल्हाद ध्रुव पद जा कीन्यो॥ जस रखवारि भ्रात तुव चीन्यो॥ जा सन्ग्र उ खेचर ~~कवन रोक~~ निरधारी॥ मारत तोरि चोट गज जडारी॥ सोऊ हरन भय दीनन काहीं॥ होहिं सहाय मोर वन माहीं॥ अस कहि सुमदिरा न सुखदाता॥ कानन चल्यो भक्ति मदमाता॥ दोहा॥ अस प्रकार कछु काल तहि विरमत विपुन मरा न॥ भाकानन नहीं कालवस रटत रटत भगवान॥ टीका॥ कहता है कि शिव ब्रह्मादि सब देव अदेव जिस अनंत भगवान की रात्रीदिन सेव काई करते रहते हैं और जिस प्रभु के प्रसाद से तुमारे राजाने ऐसी प्रभुता बडाई पाई है हे भाई मे तिसी तीनों भवनों के स्वामी की बल मे जाय कर के सेवकाई करता हूं ऐसे सरव चराचर सृष्टी के नाथ को छोड कर और दूसरे की सेवा करने की मेरी रुची नहीं होती है जिस के सेवन करने तें लोक परलोक के सुख जो हैं सो सिध होते हैं तिसदेव न तके अर्थात कलेप वृती को त्याग कर मे पृथ्वी के वृती को कैसे सेवन करूं हे भ्राता इह मेरे को कदाचित भी सुहाई कार नहीं है इस मे यद्यपि तुमारी अप्रसन्नता भी हो जावे तद्यपि मेरे को कुछ चिंता भय नहीं है ऐसे तिसका कथन सुनकर वंधू जो भ्राता है सो तिस को भ्रम के वश भया हुआ

अथ कामधुज चरित

दोहा॥ अबमैं उत्तम भक्तिप्रद कथन महात म आन॥ करहु कथन सादिर वदन हरनमोह म दमान॥ चौपाई॥ भूपउदय पुरएकविराजा॥ युत रुचिर समरिद्धि समाजा॥ तास सुहृद संकुल गुणनागर॥ रहाएक भृत सुभट उजागर॥ अव सर जानि होऊ हित कारी॥ सेवक धरम सुहृदय विचारी॥ नृपदेखत करि वीरन कर●नी॥ जूझ्यो सुभटसूर रणधरनी॥ तासचारि सुत चारु सुहाये॥ निजसेवक नृप जानि बुलाये॥ तिनकहं पयाउ चित अधिकाहू॥ दीन नरिंद्र करत सतकाहू॥ तिनमें जेष्ठ जवन वैभाई॥ ●भये भूप ततपर सिवकाई॥ चतुरथ लघु भ्रात तिन जोई॥ ताकर रा म चरन रति होई॥ विदत कामधज नाम सुहावहिं॥ प्रतिदिन प्रात स त्यन वन जावहिं॥ तहां सिंधु भव दुसतरतारन॥ राममंत्र नितकरत उचारन॥ जब मध्यान भान नभआवहिं॥ तब निज धाम कामधुज आवहिं॥ बंधुनविपन गवन अस तासा॥ देखि कोप जुत वचन प्रकासा॥ अरे मूढ तोहि कौन सिखावा॥ तजि न केत कानन अस जावा॥ दिनदिन लोन जास जठ होई॥ करहु न तास सामिति व काई॥ सेवक धरम जन के कस जाना॥ तजे समर सनमुख नृप प्राना॥ सोपि चारि मान स सिवकाई॥ कालत हमहिं आज लतराई॥ दोहा॥ सुनि बंधुन मुख वचन अस धुजमनोज हितकारि॥ मधुर मनोहर मंजु मृदु हरषतगिराउचारि॥

पानी॥ तासु दाग हित दीन पठाये॥ वानर विपुन
मृतक ढिंग आये॥ तहां विलोकि ~~लोकि~~ सुभग अ
स्थाना॥ विरचत चिता चारु मनमाना॥ राखि
तासु तनु जुत उतसाहा॥ लगे उद्योग करन जब दा
हा॥ तब तहं विपुन मरण सुधि पाई॥ आये
सदन करत सब भाई॥ लीये संग निज पुर कर
लोका॥ करत प्रलाप वचन मुख सोका॥ आवत
देखि मनुज तब झारी॥ धाय विपुन डरपत बन
चारी॥ नगर लोग जुत बंधुन ताहीं॥ कीन्यो तासु
दाग बन माहीं॥ भयो भसम तकि तासु सरीरा॥ वा
नर आय सरोवर तीरा॥ विधिवत तासु तिलांजलि दी
न्यो॥ बहुरि गवन कानन निज कीन्यो॥ ग्राम लोग
बांधव समुदाये॥ निज निज सदन प्रसंसत आये॥
अस रह चरित यथामति मोरी॥ कीन्यो वदन क
थन कछु थोरी॥ देखहु भक्ति प्रभाव रसाला॥ जा
सु दाग हित विपुन कराला॥ कृपासिंधु निज
दूत पठाये॥ बनचर रूप धरत बन आये॥ अस
मृत जीवन भक्त उधारे॥ भक्त पाल भक्तन रखवा
रे॥ सदा होत निज भक्त सहाई॥ कृपा निकेत भक्त
सुखदाई॥ ~~सोरठा~~ ॥ दोहा॥ जे नर दृढ विस्वास जुत
भजहिं भवन पति काहि॥ तासु सुखद सदगति
सहज प्रभु प्रसाद भव माहिं॥ २॥ टीका॥ तब दी
न हितकारी भगवान ने ~~[illegible]~~ का मरना जानकर
तिसकी काया के दाग करने के लिये चार वानर
जो हैं सो भेज दिये सो बनचर तुरत ही तिस मृ
तक के पास आयकर और एक सुंदर पवित्र
अस्थान देखकर तहां उतसाह पूर्वक यतन से

विलाप करकर और तिस मैं भक्त के मृतक शरीर को देख कर के जब दग्ध करने को तत्पर हूये तब ऊनों ने तिस का मरना सुन कर ~~[illegible]~~ ~~[illegible]~~ ग्राम के बहुत से लोगों को साथ लिये हूये बडे हाहाकार से रोदन विलाप करते करते वहां विषें चले आवते भये इस प्रकार मानुष्यों के समूह को आवते देख कर वानर जो थे सो डरते हूये भाग कर वहां विषें चले गये तब ग्राम के सब लोगों के सहित बंधुओं ने तिस के शरीर के दग्ध क्रिया जब भली प्रकार जल करके भस्म होय गया तब वानर जो दूर पर स्थित भये हूये देख रहे थे तुरत सरोवर पर चले गये तहां स्नान करके विधी पूर्वक तिस को तिलांजुली देकर फिर वहां को चले जाते भये तिस ते उपरांत बांधव जन और ग्राम के लोग इस अदभुत कौतुक को देख कर ~~[illegible]~~ शलाघा करते हूये अपने अपने घरों को चले आये इस प्रकार इह चरित्र जो है सो मैंने इहां कुछ संक्षेप कर के गायन कर दिया है देखिये भक्ती का प्रभाव कि भगवान कृपानिधान ने वहां मैं अपने भक्त के शरीर को दग्ध करने के लिये वानरों के भेष मैं अपने दूतों को भेज दिया ऐसे मृतजीवन मरे हूये को जीवत करने वाले भक्त पाल और भक्त रक्षक भगवान जो हैं सो ~~[illegible]~~ सदा भक्तों की सहायता करते चले आये हैं जो पुरष दृढ भक्ती और सत्य विश्वास से भगवान के चरणारविंद को भजता है तिस को सुखदायक उजमगती

श्री जो है सो पतन कें सहने से हीं प्रापत हो जाती है ॥३॥
इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्तिमहातमे भाषा
टीकायां कामध्वज चरित्र वरणनो नाम [illegible]
सरगः ॥ ॥

जानकर कहने लगे कि भाई जो तू राजा की सि
वकाई नहीं करता और तेरे मनकी ऐसी ही रुची
है तो बनके विचरने को त्याग कर आनंद से घर
मे बैठकर के भगवान का भजन सुमरन कर क्यों
कि बनमें अनेक घात करने वाले मार चोर सिंह से
ती इत्यादि पड़े फिरते हैं कदाचित ऐसा घातक
मृग तेरपर आय पड़े और प्राणों की हानी कर दे
वे तो तहां घोर बनमें तेरी कौन सहायता करेगा॥
इस प्रकार जब बांधवों ने कहा तो कामध्वज सुन
कर और मुसकाय कर कोमल वाणी से कहने ल
गा कि हे भाई तुम मेरे वचन ध्यान दे कर श्र
वण करो कि जिस भक्त भयहारी ने गौ अन के स
हित संपूर्ण वृजकी और ग्राह जो तन्दुवा है
तिसके ग्रसे हुये हस्ती की प्रल्हाद की द्रोपदी
की और महाभारत मे हस्ती के गले का घंटा डा
लकर रक्षा करी जो टीटोरी है तिसके अंडों की
रक्षा और सहायता करी थी सो ई दीन और दीन
हितकारी कृपानिधान तहां बनमे मेरी रक्षा क
रने को भी सामर्थ्य हैं इसमें कुछ संशय नहीं है
ऐसे कथन कर कर हृदय मे राम सुखधाम को
सुमर ~~तिस~~ कर भक्ती के मद मे उनमत्त भया
हुआ अभय होय करके बन को चला जाता भया
इस प्रकार बनमे ही विचरते हुये तिसको कु
छ काल व्यतीत होय गया तब भगवान कृपा
निधान को भजता भजता अंत को बनमे ही का
ल वश हो जाता भया॥२॥ चौपाई॥ तब निज
भक्त मरण अस जानी॥ बलि मुख चारि तुरत धनु

चरानेवाला ग्वाल वास करताथा तिसका इस्त्रीपुत्र
भ्राता इत्यादि बांधव कोई भी नहीं था केवल एक माता
थी और आप था एक महिषी जो भैंस है सो घर
मे राखकर और तिसके दूध को वेचकर आनंद से
भली प्रकार अपनी उपजीवका करलेते थे सो ग्वाल
महिषी को नित्य वनमे चराय कर सांझ के समय घर
मे ले आवताथा एक दिन कहीं वनविषें कोई तप
स्वी संत जो भगवान के भजन और ध्यान मे लीं हुये न
वैठे थे तिन को देखता भया भजन का प्रभाव ऐसे
सा हीथा तुरत तिसके चित्त मे संत सिवकाई की इ
छा रची जो है सो [illegible] भई तिसदिन से
[illegible] फूल फल पत्र लकड़ी इत्यादि नि
त्य वन से ल्याय करके तिन के आसन पर छोड़ जा
ता और जब सांझ होती तो महिषी को आगे राख
कर अपने घर को चला आवता ऐसे जब संत सि
वकाई [illegible] तिसको कुछ दिन वतीत होय गये तब
तिसकी निसकपट सेवाभक्ती देखकर संत महातमा प्र
सन्न होय कर दया के वश हो जाते भये और कहने लगे
कि हे भाई अब तें तू सरव पापो और दोष दुखों के नास
करनेवाला राम नाम जो है सो भक्ती प्रीती से उचा
रण कर तिस तें तेरा अवश्य कल्यान होजावेगा॥
इस प्रकार संतो के मुख से उपदेश सुन करके ग्वाल
जो है सो राम नाम को रटन करने लग जाता भया॥
तब एक दिन संतो की सिवकाई करते करते तिस
की [illegible] महिषी को कोई चौर चुराय करके लेग
या और जब लेकर के जमुना के पार चला गया
तब पीछे गुवाले वनमे तिसको देखने लगा
ऐसे खोजते खोजते तिसको सूरज भी लुपत

जनपथेजाती

करतेभये

होयगया और सोऊ पडगई तब सोच के वश मिरा
स और उदास चित्त होकर उसास भरता हुआ माता
के भय से कांपता कांपता वन को त्याग कर घरवि
खें चला आवता भया ॥२॥ चौपाई ॥ एकल देखित ता
सु महतारी ॥ भनत तात कहां महिषि तुमारी ॥ मा
तु त्रास मानत मन माहीं ॥ कहत सु दीन आज दुज
काहीं ॥ पालन हेतु जानि भ्रम भारा ॥ तीन वरष
लग बोल हमारा ॥ मृत संतति ताकर भव जई ॥
सो हमार जननी सब होई ॥ सुनि सुत वचन मातु म
न राखा ॥ भई मौन कछु वदन न भाखा ॥ ग्वाल मुदि
त मानस अनुरागा ॥ तब तें जाय विपुन वडु भागा ॥
भक्ति भाव जुत प्रीति बढाई ॥ तत पर भयो साधु सिव
काई ॥ कानन कंद मूल फल पावहिं ॥ ल्याय
जननि कहे तोष करावहिं ॥ अस प्रकार कछु
काल बिहाया ॥ तब भगवान भक्त सुखदाया ॥ तास
भक्ति दृढ देखि सुहाई ॥ भे प्रसन्न मन त्रिभुवन राई ॥
महिषी सोऊ देन हित तासा ॥ भये उदित प्रभु भवन
प्रकासा ॥ तब इक दिवस भानु जा तीरा ॥ ताकर पान
करावन नीरा ॥ तसकर सोऊ सहित परिवारा ॥ लि
ये आव महिषी उतपारा ॥ पुत्री पुत्र ललित तहि
चारी ॥ चारु ग्रीव भूषण रज डारी ॥ हरषि चोर
चातुर तहि ठाहीं ॥ पयरन हेतु जमन जल माहीं ॥
प्रेरि महिषि संजुत परिवारा ॥ आपुर ह्यो इत ठाढि
किनारा ॥ दोहा ॥ तब सुविल प्रेरक प्रभू ॥ तुरत प्रेरि
उरतास ॥ दीन सुमति करावत हि ॥ पूर्व स्वामि निज
वास ॥२॥ टीका ॥ तब माता तिस को इकेले हीं
पूछने लगी कि हे पुत्र तुमारी महिषी
आवते देखकर

कहाहै सो जननी के भयसें कहनेलगा किमाताति
सके पालनेका बहुत श्रम और कलेश होता था इस
लिये सो महिषी एक ब्रह्मण को देदेई है और तीन
बरष लगतिसके साथ बोल करलिया है चूत जो
चोउ और संत ती जो तिसके बच्ची बच्चे होवेंगे सो
भी सब हमारे ही होंगे ऐसे पुत्रका वचन सुनकर
माता मौन हीं होयरही कुछ बोलती नहीं भई तब
सो बडे प्रेम और हरषमे मगन भया हुआ तिसदिन
तें नित्य बनमे जायकर प्रीतीभक्ती से संतसिवका
ई जोहै सोकरने लगा दिन भर संतोंकी सेवाकरता रा
त्री को घरमे आयकर बनसे कंदमूल फल
फूल जो ल्यावता सो माताको अहार कराय दे
ता था इसप्रकार जब संत सेवा करते हुये तिस
ग्वाले को कुछ काल बतीत होयगया तब भक्त
सुखदायक भगवान ऐसी तिसकी संतभक्ती दे
खकर प्रसन्न होयगये और तीन लोकके
नायकप्रभू तिस ग्वालेको सोई महिषी के ल्याय
देनेकी इच्छावाले होयजाते भये तबएकदिन
कोई चोर तिसी महिषीको तिसके सब परिवारके
सहित किजिनके गले और शृंगोंमे चांदीके भू
षण पडे हुये थे लेकरके जलपिलानेके लिये
जमुनाके उतपार आयस्थित होता भया तिस
महिषीके चार बच्चीबच्चे जोथे तो तिन सबको स
नान करानेकी इच्छासें चोर जोहै सो मुखसे पि
बकार पिचकार कर जमुनाके प्रवाहमे फेर दे
तीभया जब तिनोने कालिंदी जो जमुनाहै ति
सके जलमें प्रवेश किया तब सरब जगतके प्रेरक

अथ ग्वाल चरितं = = =

दोहा॥ वसु भक्तिदायक विमल ग्वाल चरित हरन मँआन॥ करहौं मति अनरूप कछु कथन अवल सुखदान॥ चौपाई॥ तहि जैमल नृप देस रसाला॥ वसि है एकॅ धन गोपाला॥ त्रिये बंधु सुत आन न काहू॥ रहिस वृद्ध जननी इकताहू॥ महिषी राखि सदन निज एका॥ करहिं दुगध विक्रय नित तेका॥ तहि हन तासु सदन निरवाहू॥ होत मलहिं सब अशुभ न काहू॥ विपुन चराय दिवस नित तासू॥ आवत साजहिं मुदित अवासू॥ एक दिवस तहि कानन देखे॥ निरत भजन हरि संत सु भेखे॥ तिनपै पुष्प वहु फल ल्याई॥ इन्धनादि सादर सिव काई॥ लाग्यो करन ग्वाल मन काया॥ उपजी हृदय संत तव दाया॥ तासु बदन अस कहाबु काई॥ अवतें राम नाम तुव भाई॥ दुरत दोष दारुण दुख हारन॥ करहु भक्ति जुत तात उचारन॥ सुनत साधु उपदेस रसाला॥ राम नाम रत भयो गुवाला॥ एक दिवस संतन सिव काई॥ करत चैर वन महिषि चुराई॥ गयो लेत जमुना उत पारी॥ ग्वाल विपुन रहत लागनि हारी॥ अस प्रकार खोजत वन तासा॥ पडी सांझ ~~सव सर वनास~~॥ रवि मिट्यो प्रकासा॥ दोहा॥ आवा सोचत सदन तव परिहरि विपुन निरास॥ भरत उसास उदास चित जननि चास उरतास॥ ४॥ टीका॥ अव और वडा सुखदायक विमल भक्ती के देनेवाला मनोहर चरित्र जो है सौ मत जनो मे आप के आगे पन करता हूं कहते हैं कि तिसी चतौड के राजा जयमल नामा के देस मे एक कोई गोधन के निरधन

माता को कहते कि हे मैया आज तिस धरमी ब्राह्मण ने हमारी महिषी को घरमें पठाय दिया है अब लग तिस का जितना दूध और घृत लिया था तिस के मोल के भूषण बनवाय कर और परिवार के सहित महिषी को पहिराय कर आनंद पूर्वक हमारे घर मैं भेज देई है इन ब्राह्मण बड़ा सत्यवादी है हमारे साथ जननी इसने परमहित किया है तब ग्वाल की माता हृदय मैं अत्यंत प्रसन्न होय गई तुरंत ही अक्षत जो चावल दुरवा जो दूभ इत्यादि लेकर तिनका पूजन करकर फिर प्यार से हाथ का स्परश देकर तिन सब को सुंदर अस्थान पर बांध लेती भई॥ तिसके उपरांत तिनके गले और सृंगों मैं भूषण जो थे सो सब उतार कर यतन से घर मैं राख लेती भई तब समय पायकर तिन भूषणों के द्रव्य से पुत्र का विवाह भी किया और घर की विवस्था भी भली प्रकार सब बनाय लेई ऐसे सो ग्वाल स्त्री के सहित भया हुआ समय अनुसार पुत्री पुत्रों वाला होयकर संतों की सेवा करता करता अंत सहजे ही शरीर को त्याग कर संत भक्ती के प्रसाद से विष्णु लोक को चला जाता भया नामा दास जी कहते हैं कि हे संतो देखिये भक्ती और संत सेवकाई का प्रभाव कि जिस के प्रसाद से ग्वालने चोरी गई हुई महिषी को मुक्ती के सहित प्राप्त कर लिया॥३॥ इति श्रीमत कविनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महात्मे भाषा टीकायां ग्वाल चरित वरणने नाम सरगः

ॐ ॐ गुरवे नमः

ॐ

ग्वाल के विवाह के ही

भगवत भक्ति

भगवान ने तुरत हीं तिस महिषी के हृदय को प्रेर कर अपने पूर्व ले स्वामी के चरका समर्प कर दिया ॥२॥ चौपाई ॥ अस महिषी प्रेरत भगवा ना ॥ कीन जमुन उत पार पयाना ॥ लियेसकल परि वार सुहाई ॥ ठाढी स्वामि सदन नि जआई ॥ तब गोपा ल दृगन अनिहारी ॥ हरषत जाय निकट महतारी ॥ भन्यो आज जननी दुज तेहू ॥ महिषी दीन पठाय सि गेहू ॥ अब लो जवन दुगध घृत लीना ॥ तासमो ल सँचित सब कीना ॥ करत अले कृत भूषण चा रू ॥ पठे दीन सँजुत परिवारू ॥ सुन दुज मातु सत्य व्रत वारा ॥ हम सन कीन जो हित भारा ॥ तब अक्षत दुरवादिक लीने ॥ मातु मोद जुत पूजन कीने ॥ करत स्परश तासु निज पाना ॥ लादिरवांधि सदन सुभथाना ॥ शृंग ग्रीव भूषण तिन सारी ॥ रा खे बहु रि सदन सँभारी ॥ सुत कर कीन द्रव्य तहि संगा ॥ पानि गृहण मन मोद उमंगा ॥ तेजव भयो ग्वाल रतदारा ॥ पुत्र पुत्रि सँजुत परिवारा ॥ भोगत भोग विविध सुख पाई ॥ करत रुचिर संतन सिव काई ॥ अंत सुगम पद हरि निज कापा ॥ विस्नु लोक के हं ग्वाल सिधाया ॥ दोहा ॥ अस रह भक्ति प्रभाव वर अरु संतन सिवकाई ॥ जहि तें चौरज महिषि नि ज ग्वाल मुक्ति जुत पाई ॥३॥ टीका ॥ तब भक्ति त कारी भगवान की प्रेरत की हूई महिषी जो है सो अपने परिवार के सहित तरती हूई जमुना के उस पार चली आई और फिर जाती जाती अपने स्वामी के घर पर आय करके स्थित होय गई और से तिस को ग्वाल देख कर हरष मे मगन भया हुआ आय कर

श्रीधर स्वामी कथन किये गये हैं तिन का एक
कोई बड़ा भारी धनी जो था सो शिष्य होता भया औ
र तिसने उत्साह पूर्वक यज्ञ का प्रारंभ किया
तब अपने गुरु श्रीधर स्वामी जी तिसने सेवा कर
ने के लिये श्रीती भक्ती से बुलाय भेजे सो अपने
शिष्य की श्रद्धा भक्ती विचार कर प्रसन्न भये हूये ति
स के घर मे चले आये तब धनी ने चरनों पर प्रनाम
कर कर और भली प्रकार कुसल पूछ कर सनमान
पूर्वक बड़े सुंदर अस्थान मे वास दे दिया सो जब
तिसका यज्ञ संपूर्ण होय गया और ब्राह्मणों के स
मूह भली प्रकार सब दान मान पाय कर प्रसन्न भ
ये हूये मुख से शलाघा बड़ाई करते अपने घरों
को चले गये तब पीछे [struck] बड़े आदर सतकार से
[struck] सुवरन मुद्रा मणी इत्यादि धन जो है
सो दे कर और हाथ जोड़ें बिनती के भरे हूये दीन व
[struck] चन उचार कर [struck] को बार बार प्रणा
म करके विदाय कर देता भया इस प्रकार जब स्वा
मी जी शिष्य के घर को त्याग कर द्रव्य को लिये
हूये अपने मारग को चल पड़े [struck]
[struck] दुष्ट घाती और नि
र्दय पापी [struck] पथिक जो रस्ते चलने
वाले हैं तिनके शत्रू [struck] हाथों मे बरछी तल
वार इत्यादि शस्त्र धारे हूये महा क्रूर और भयंकर
भेष किये हूये [struck] तिनके पीछे
लाग चलते भये जब स्वामी जी ने तिन अधमों
को अपने पीछे आवते देखा तब हृदय का धीरज

(margin: गुरुजी को)
(margin: तब तिन को देख कर चोर)
(margin: नगनसे विकराल कर)

अथ श्रीधर स्वामी चरितं

चौपाई॥ अब मै आन महातम चारू॥ करउं कथन गायन मन हारू॥ पूरब श्रीधर स्वामि सुहाये॥ वेतावेद विदत जोई गाये॥ तिन कर को हु धनद सिष नाम॥ तास विर च्यो यग्य उत साना॥ मन वच करम करन हित सेवा॥ ते निज पठे बोलि गुरदेवा॥ सो ग्रसत चारु निमंत्रण पाय॥ श्रीधर स्वामि सदन तहि आये॥ धनि गुरु चरन वंदि सनमाना॥ स्वागति पूछि दीन सुस्थाना॥ भयो जब हि पूरण मख ताना॥ विप्र वृंद तब हृदय हुलासा॥ दान मान [illegible] बहुविधि सब पाये॥ निज निज सदन प्रहंस त आये॥ पाछे भक्ति प्रीति सनकारा॥ भनि भनि विनय वचन बहु बारा॥ हेम मुद्र मणि गण वित दीने॥ निज गुरुदेव विसर जन कीने॥ अस जब स्वामि तजत सिष भवना॥ कीन द्रव्य जुत मारग गवना॥ विपुन विलोकि चोर सठ जाती॥ पापी निरदय पथिक अराती॥ शक्ति खड्ग आयुधकर धारी॥ कपटी क्रूर भयंकर भारी॥ चले जात ^हि^ [illegible] पाछि लगयो॥ देखि विप्र उर धीरज त्यागयो॥ भय वस राम कवच उचारण॥ लगे करन दुजे त्रास निवारण॥ मंत्र प्रभाव रुचिर [illegible] सुखदाई॥ दसरथ सुत राघव जुग भाई॥ दोहा॥ लखन राम धनु बान धृत दुज सुमग के रखवार॥ प्रकटे तत छन विपुन पथ ^गुजर^ [illegible] विरद संभार॥ १॥ टीका॥ अब आगे और भक्ती की अदभुत और मनोहर गाथा जो है सो गायन करता हूं हे संत जनो आप ध्यान देकर श्रवण करिये पूरब जो वेद तत्व के जानने वाले

लागकपटमनमाहिं॥ सोरठा॥ आये सदन तुमा
र॥ गवर स्याम धनुबान धृत॥ सूरवीर सुकमार॥
सो रखवार तुमार कहौ॥२॥ टीका॥ तब चोर तिन
दोनो धनुषबाणधारी राघवों को देखकर भयके
वश भये हुये ब्रह्मण की ओर देख नहीं सकते
हैं तिस की दृष्टि बचाये हुये पीछे पीछे लागे च
ले जाते हैं और लखमण राम गवर स्याम दो
नो भ्राता कैसे कि कोमल हैं शरीर जिनके और को
टि कामदेव की छवी को लज्जा देनेवाले सुन्दर महा
हैं अंग पीत वस्त्र हृदय मे तुलसी की माला और
माथे मे चंदन का मनोहर तिलक ऐसे अनेत
शोभा करके युक्त सूरवीर राघवों को देख कर
चौर जो हैं सो अचरज के वश मोहित भये हुये अ
शक्त होय गये तिनका कुछ भी वस नहीं चलता
भया इतने मे श्रीधर स्वामी अपने घर मे आ
य पहुंचे तब भक्तपाल और भक्तरक्षक दो
नो भ्राता राघव ब्रह्मण भक्त को घर मे पहुंचाय
कर आप तुरत नहीं लुपत होयकर अपने
धाम को चले जाते भये चोर जो थे सो तहां श्री
धरस्वामी के द्वारे पर स्थित होय रहे और हृदय मे
विचार कर कहते हैं कि भाई वे दोनो गवर
स्याम धनुषबाणधारी जो थे सो कहां चले गये हैं
श्रीधर स्वामी ने चोर अधर्मी को द्वारे पर स्थित भ
ये जो देखा तो हृदय मे विचार कर कहते हैं कि र
हे दुष्ट पाप की खानी अबी पीछा नहीं छोड
ते हैं तब कोमल बानी से तिनको कहने लगे
कि हो भाई तुम कौन हो और कौन काज

(margin) और
(margin) और
(margin) और
(margin) परस्पर
(margin, right) किं (illegible marginal note)

के लिये मेरे द्वारे पर स्थित होय रहे हो जो कदाचि
त विश्राम करने की रुची हो तो इह तुमारा अपना घर
है आनंद से निवास करो तब चोर कहने लगे कि हे
ब्राह्मण हम हृदय मे तुमारे लूटने की इच्छा
धारकर वण से पीछे पीछे लागे तुमारे घर में
चले आये हैं और दो सूरवीर तुमारे रखवारे जो होय
गये तिन के भय से हमारो कुछ वस नहीं चलता अब
कहो कि वे दोनो गवर स्याम धनुष वान धारी वीर
प्रधान कहां गये हैं ॥२॥ चौपाई ॥ तिन कर सुनत म
रम जुत वानी ॥ विप्र वदन अस गिरा वखानी ॥ मन
हो मोहि प्रकट करि भाई ॥ को तुम सो मम कवन
सहाई ॥ तव तिन सकल मरम निज कहा ॥ हमरा
जनम विप्र कुल रहा ॥ ते कछु पूर्व करम अनुसारा ॥
चोर करम व्रत भयो हमारा ॥ तुमहि देखि कानन
वध हेतू ॥ हम पाछे आयुध कर लेतू ॥ चितलाल
स पाछिल तुव लागे ॥ पै सुकमार युगल वड़ भा
गे ॥ आकृति सुभट धनुष सर धारे ॥ भये तोर दुज
वर रखवारे ॥ जव चोरन अस वचन अलावा ॥ तव
दुजनाथ तिनहि सिर नावा ॥ अहो आज तुव सं स्तुति
धन्या ॥ जहि अस देव चराचर मन्या ॥ सिद्ध साध
मुनि दुरलभ लेखो ॥ तुम है सुलभ नयनन
भरि देखो ॥ मै तो चास मानि उर भारा ॥ राम कवच
मुख मंत्र उचारा ॥ तहि प्रसाद राघव जुग वीरा ॥ ल
छमन राम हरन जन पीरा ॥ कानन भये मोर
रखवारे ॥ अस प्रकार जव स्वामि उचारे ॥ नम्र जो
रि कर चोरन दीना ॥ तव प्रणाम चरनन दुज की
ना ॥ तुम है धन्य जग विप्र सुधरमा ॥ जहि प्रसा
द हम अधम कुकरमा ॥ गवर स्याम राघव जुग

तुमारे रखवारे जो होय

श्रीता॥ जीव चराचर कर सुखदाता॥ इन नय नन भरि लीन निहारे॥ आज हमार भाग जग भारे॥ अस कहि आयुध दीन सिडारी॥ राम लषन मूरति उरधारी॥ श्रीधरस्वामि चरन सिरनाये॥ र टत राम निज सदन सिधाये॥ अस इन चरित चार मन भावा॥ मै संक्षेपत वदन निज गावा॥ दोहा॥ दुज उत्तम संसर्ग तें चौर कुमति अगखानि॥ तजि कु करम भे भक्ति ■ जुत राम चरन रतिमानि॥ जिमि आयस केचिन भवत पारस परसि तुरंत॥ तिमि जगदुरत ■ वधूत कल करत सुसंगति संत॥ टीका॥ ऐसे तिन चौरोंकी गूढ बानी सुनकर श्री धरजी कहने लगे कि हे भाई मेरेको प्रकट करकेक हो कि तुम कौन हो और वे मेरे रखवारे कौन थे तब चौर अपना भेद कथन करके सब सुनायदे ते भये कि हे ब्रह्मण हम ब्राह्मण कुलमे जन मे हुयेहैं परन्तु कुछ पूर्व जनमकी करनी करके इहा चौर करम जोहै सोई हमारा व्रत और धर म होयगया अर्थात इसी चौर करमकोही हम ने ग्रहण करलियाहै वनमे तुमको अकेले देख कर धनके लालचसे हाथों मे प्रचंड शस्त्र पकर कर तुमारे वधकरने व्या मारदेने की घात मे पी छे पीछे लागे चले आये हैं परन्तू वे सूरवीरों केसे भाववाले धनुष बाणधारी गवर स्याम दोनो सुकुमार तुमारे रखवारे होय गये तिनके भयसे हमारा कुछ वस न हीं चलसका जब इस प्रकार चौरोंने कथन किया तब श्रीधरस्वामीने तिन को प्रणाम करकर कहा कि अहो भाई आजतुम

जो है सो सब छूट गया भय के वश भये हुये सब
त्रासों के दूर करने वाले राम कवच को उचारण
करने लग जाते भये तब तिस मंत्र के प्रभाव से अ
पने भक्त सहायक विरद को सुमर कर धनुषबाण
धारी राम लछमण दोनो भ्राता राघव जो हैं सो
ब्राह्मण भक्त की रक्षा करने के लिये तुरत ही तहां
वण मैं प्रकट हो जाते भये ॥२॥ चौपाई ॥ अस देखि
चौरन दृग सोई ॥ राघव धनुर बान धृत दोई ॥ मानि
त्रास तिन चौरन केरा ॥ सकहिं न दृगन विप्र तन
हेरा ॥ दुजवर दृष्टि अगोचर रागे ॥ चले जात अस
पाछिल लागे ॥ चौर विलोकि रूप जुग भ्राता ॥
गवर स्याम सुंदर मृदु गाता ॥ अंग अंग छवि
विलाजा ॥ पीत वसन वनमाल विराजा ॥ विल
सत मलय भाल कल खोरा ॥ भये चकित मोहित
चित चोरा ॥ छिपल अंग बस चल्यो न काहू ॥ तो
लों आय सदन दुज नाहू ॥ भक्तपाल राघव जुग
भाई ॥ तब दुज नाहहि सदन पुचाई ॥ होवन लु
पत निज भवन सिधारे ॥ तस कर रहे ठाढ दुज
द्वारे ॥ लखन राम छवि हृदय विचारी ॥ सो कित
गये कहत धनु धारी ॥ ठाढे चौर देखि निज द्वा
रा ॥ श्रीधर स्वामी कियो विचारा ॥ रहत जेठ अज
हु तजत मुहि नाहीं ॥ नम्र वचन दुजवर तिन
काहीं ॥ भने कवन भैया तुम सारे ॥ ठाढे कौन
काज मम द्वारे ॥ जो विश्राम करन कछु कामा ॥
तो रहि सदन वसहु सुख धामा ॥
दोहा ॥ तब चौरन अस वदन निज मन्यो व
चन दुज काहि ॥ हम कानन पथ संग सुब

सपर्श होनेसे लोहा जो है सो म
ल को त्याग करके शुद्ध कंचन होजाता है तैसेहीं
संसार के पापो के धो डालने और चित्त के निरमल
करने को संतों की संगती सामर्थी है ॥ ३ ॥ इति श्री भ
क्ति विनोद ग्रंथे भगवद्भक्ति महात्मे भाषाटीकायां श्री
धरस्वामी चरित्र वरणने नाम सरगः

हौं संसार मे धन्य हो किजिस चराचर सृष्टी के स्वामी कों [illegible]
[struck] सिद्धसाध तपस्वी जोगी मुनी [struck] लोगों को अने
क यतन हठ करने से भी दुरलभ होता है अर्थात नहीं
प्रापत होता सो दरसन आज तुमने यतन के विना सह
जे हीं नेत्र भरकर पाय लिया है मैने जो भय के वश
होयकर राम कवच मंत्र को मुख से उचारण किया था
तो तिसके प्रसाद से भक्तजनों की पीड़ा कलेश हरने वाले
राम लषन दोनो भ्राता राघव तहां वन मै मेरे रखवारे
होय गये इस प्रकार स्वामी जी का कथन सुनकर चौर
दीन होय करके चरनो पर प्रणाम करते भये और हा
थ जोड़कर कहने लगे कि हे द्विज प्रधान तुम धन्य हो
और हे धरम की निधी धन्य तुमारी करनी है कि जिसके
प्रसाद से हम अधम कुकरमियों ने चराचर सृष्टी के पा
लक गवर स्याम दोनो भ्राता नेत्र भर करके देख लिये आज
जगत मै हमारे भागों के समान किसके पूरण [blot] भा
ग्य हैं ऐसे कथन करकर शास्त्र जो थे सो हाथों से
डाल दिये और राम लषन दोनो भ्राता की सोई
गवर स्याम मूरती हृदय मै धार कर श्रीधर स्वामी
जी के चरनो पर वारंवार प्रणाम करके राम राम
रटते हूये अपने घर को चले जाते भये इस प्रकार
इह सुंदर गाथा जो है सो मैने संछेप करके कुछ गा
यन कर दई है देखिये ब्रह्मलोक विखे उत्तम श्री
धर स्वामी जो हैं तिनके संसर्ग अर्थात संगती से
पाप की खानी और अधम कुमती चौर जो थे सो
अपने सब कुकरमों को त्याग कर [struck] श्रीरघुना
थ जी के [gap] चरन कमलों की भक्ति प्रीती
वाले हो [gap] जाते भये जैसे पारस के साथ

तुम हे हितकारी॥ मैं आवहुं पाछिल जुतनारी॥
दोहा॥ सुनि लुंठिक अस वचन तिहि भने कपट
जुत गाथ॥ हमरहु क तुव विपुन पथ चलहु तु
गम लहिं साथ॥२॥ टीका॥ नाभादासजी कहते
हैं कि हे संतो जिस के सेवन करने से मानुष्य सं
सार मे मरे हुये जीवत हो जाते हैं ऐसी मृत सजी
वनी जदुनंदन भगवान की निरमल भक्ती जो है
सो आप के आगे गायन करता हूं पूर्व काल के वि
षे कोई ब्रह्मण मथुरा के निकट वास करता था
तिसका माता और स्त्री के विना पिता पुत्र भ्राता औ
र कोई बंधव नहीं था एक समय तिसकी स्त्री
अपने माता पिता के घर मै गई हुई थी तब माता के
अकेली जान तिसको सुसर सास के घर से लेकर
सो धरम सुकरम मै प्रवीन औ कृस्न प्र
मातमा की भक्ती वाला ब्रह्मण अपने घर को
लिये चला आवता था तब मारग मै बड़ा भारी
वण जो था तहां तिसको अधम लुंठिक कि जो
लूटने वाले महा पापी थे हाथों मे शस्त्र धारे हु
ये मिल पड़ते भये तिन दुष्टों का मय मान कर
ब्रह्मण जो है सो तहांहीं सुंदर जल और वृक्षों की
छाया देख कर बैठ जाता भया और हृदय मे इह
विचार किया कि अब इहां हीं भगवान का पूजन
करता हूं जब लग कोई पथिक अर्थात रस्ते
चलने वाला नहीं आवता तब लग मैं इहां से
आगे पाऊं नहीं धरूंगा और साथियों के साथ मि
लकर और अभय होयकर इस वण के मारग को
सुगमता से निवारण करूंगा तब वे चोर लुंठि

क तिस के मे ञ विचार को जान कर कपट करके को म
ल वाणी से कहने लगे कि हे ब्राह्मण वड भागी तुम को
किस ने सिखाया है जो ईहां जंगल मे अकेले बैठ कर
अपने इष्ट देव का पूजन करने लागे हो क्या तुम को
सूझ नहीं पडता है जो ईहां चोर वण मे अनेक जीव
घाती अधम ~~कुटिल~~ चोर लुटेरे और सिंह वाघ
मृग इत्यादि पडे फिरते हैं हे भाई ईहां तुमारा रहना
हमारे विचार मे सरव प्रकार दुख के देने वाला है तु
म को योग्य है कि इस वण के भयंकर मारग को
निवारण करके फिर स्वस्थ चित होय करके विश्रा
म करो कै चार जोजन हीं विखडा और कठिन मार
ग है सो हमारे साथ मिल कर हम जे हीं काट च
लो तुम को कुछ भी खेद नहीं होवेगा ऐसे तिन का
कथन सुन कर ब्राह्मण हृदय मे भयमान कर कहने
लगा कि हे भाई जिस के साथ अपना जाती सुभा
व नहीं मिलता है तिस के साथ पंथ चल जाउ
चित नहीं होता है तुम दया करके आगे चले चलो
मै स्त्री के सहित तुमारे पीछे पीछे लागा चला आ
वता हूं तब लुटेरे तिस का वचन सुन कर कपट
से कहने लगे कि हे ब्राह्मण चिंता मत करो हम तु
मारे रक्षक और सुखदायक हैं हमारे साथ मि
ल कर ~~[illegible]~~ वण के मारग से सु
गम हीं पार उतर चलो ॥ ॥ चौपाई ॥ हृदय स
कुच संदेह विहाई ॥ हम से सगी जानि सुखदाई ॥ का
टि चलहु वण मारग काहीं ॥ हम हु कर अन हि
त कछु नाहीं ॥ दुज मध्य स्य हमार तुमारा ॥ साखी
कृष्ण देव करतारा ॥ कबहुं करब हम कपट अकामा ॥
तो कर देहिं देव परिणामा ॥ तिन कर कथन सुनत

पुनि ज्ञाना॥ साखी गुनत कृस्न भगवाना॥ प
थ आरण्य विगत उर त्रासा॥ चल्यो वत निजु न
धरि विस्वासा॥ भयो प्रवेश विपुन जव घोरा॥ त
व सुभ्र धन लुंठिक सठ चोरा॥ वदन मीठ मानस
कटु सोई॥ कपटी क्रूर काल वत होई॥ खड्ग प्र
हार माथ द्विज दीना॥ तृणवत काटि प्राण गत कीना॥
तव दोला वाहन सुन वानी॥ अधम लुंठक
न वदन वखानी॥ इहपथ तजत लेत पथ आना॥
हमरे सदन करहु तुव प्याना॥ ततर विप्र समस्त्र
वहिं तुमारे॥ जाहिं तुरत सठ प्राण वडारे॥ दो
ला वाहक कोप जुत वानी॥ तिन कर सुनत त्रास
जिय मानी॥ चले तास पथ त्रसित होई॥ द्विज
त्रिय सुनत वचन तिन सोई॥ निज पति मरन
जानि अकुलानी॥ आर्द्रत विरहे निरत सुख
वानी॥ हाहा कार रुदन करि लागी॥ छिप
ल सरीर धीर सव त्यागी॥ दोहा॥ सुभ्रव
पति कहं तुव इष्टदेव प्रभु साखि॥ चल्यो ह
तो इन सन विपुन उर भरोस जिन राखि॥२॥टीका॥
फिर कहते हैं कि तूं हमारी संगत को आनंद के देने
वाली जान कर संसय को त्याग करके इस वण
के मारग को काट चल हम तेरे साथ कुछ अन
हित नहीं करेंगे हे ब्रह्मणि हमारे तुमारे बी
च साखी कृस्न भगवान रहे जो कदाचित हम
कुछ कपट करेंगे तो भगवान तिस का हम को
वदला देवें अर्थात हम अपनी करनी का फल पावें
इस प्रकार तिन का कथन सुनकर और कृस्न
भगवान को बीच साखी जानकर साधू सरल

अथ विप्र चरित वरणनं

दोहा॥ जहि सेवत सेवति मनुज मृत सजीव ह्वै जात॥
सो जदुपति पद भक्ति वर करहुं कथन अवदात॥
चौपाई॥ पूरव काल विप्र गुण धामा॥ मथुरा सीत
वसहिं अभिरामा॥ विनु प्रिय जननि आन नहिं का
हू॥ भवन जनक बांधव सुत ताहू॥ समय एक
ससुराल अगारा॥ आवा लेत विप्र निज दारा॥ धर
म सुकरम निरत बड़भागी॥ संतत कृष्ण चरन अ
नुरागी॥ तब मारग आयुध कर धारे॥ मिले तासु लु
ठक सठ भारे॥ मानि त्रास तिन कर द्विज काया॥ बै
ठो देखि सलिल द्रुम छाया॥ हृदय विचार चतुर
अस ठाना॥ इहां करहुं पूजन भगवाना॥ जो लो
आन पथिक नहिं आवा॥ तो लो मैं न करहुं निज
जावा॥ तिन सन लागि अभय चित होई॥ चलहुं
सुगम कानन पथ सोई॥ तासु मत अस लुठि
क जानी॥ बोले बदन कपट मृदुबानी॥ कस तुम
इहां विप्र बड़भागे॥ पूजन करन रघुपति जला
गे॥ सूझ न परहिं विपुन बड़ चोरा॥ फिरहिं
वधिक पथ लुठिक चोरा॥ इहां तुमार रहन दु
ज भाई॥ हमरे जान परत दुख दाई॥ तुम कहं
उचित करन गुण धामा॥ पंथ निवारि विपुन
विस्रामा॥ जो जन चारि कठिन पथ माहीं॥ हम
सन चलहौ सुगम [illegible] विहाई॥ तिन कर कथन
सुनत द्विज काना॥ उर त्रासित अस वचन ब
खाना॥ जहि सन मिलहिं न जाति सुभाऊ॥ त
हि सन उचित न मारग जाऊ॥ आगल चलहु

दीन्यो वीच साखि भगवाना॥ कपटि अन छैंवहु रि कस ठाना॥ अस कहि अति प्रहार तिन कांहीं॥ देत कियेव ध अधम तहांहीं॥ दुजपतनी कहें धीरज दीने॥ पति मृत निकट आय संग लीने॥ प्राण नाथ कहे सो उनिहारी॥ लागी रुदन करन खरभारी॥ अब पति मोर कवन गति होई॥ सुत पितु मात भ्रात नहीं कोई॥ तुम हे एक मोहि प्राण अधारा॥ भये तु मृतक आज संसारा॥ अभय दान दे विविध प्रकारा॥ दाया युक्त मधुर मृदुवानी॥ सुनहु पुत्रि अस वदन वखानी॥ कृष्ण प्रसाद तोर पति एहा॥ जीवहिं अवसि नहिंन संदेहा॥ अस अस्वासन देत प्रवीना॥ दुज वपु माथ नयोजन कीना॥ पटसन करत अक्षादि न तासा॥ कीन आपु वन गवन हुलासा॥ पाके जनु निद्रा गत होई॥ उठ्यो तुरंत विप्रवर सोई॥ दोलीवाहे देखि हरखाये॥ दुजहिं मरम सव दीन सुनाये॥ विप्र सुनत विसमय वस भययो॥ सव कररुदय मोद सुख छययो॥ तदप स्त्रात पत निजु तआवा॥ विप्र विपन तजि सदन सुहावा॥ मातु चरन नेम्रत सिरनाई॥ निज वृतांत सव दीन सुनाई॥ जननी सुनत हरख व समारी॥ कहत धन्य वर भक्ति मुरारी॥ जहि प्रसाद मृत जीवन ताता॥ तुव कै कीन सफल दृग माता॥ अस प्रकार [illegible] करत वे डाई॥ कृष्ण भक्ति संसति सुखदाई॥ सोरठा॥ तजि कुतरक अभिमान॥ नित नूतन दिन दिन अधिक॥ प्रीति भक्ति भगवान॥ करि दुजवर त्रिय जन निजुत

८ [illegible]॥

अंक

ॠतकाल तजि काय॥ सुमरत कृस कृपाय तन॥ दुज वरलीन कि काय॥ मुनि दुरलभ सद गति रु चिर॥३॥ टीका॥ इस प्रकार जब ब्रह्म पतनी ने अर्थात ब्राह्मण की स्त्री ने भगवान कृपानिधान पर वचन ल्याय करके कहा कि अब हो तेरे साखी कहो हैं तब तिसी काल तहां वनमें से बरछी खड्ग कमान बरछी तलवार इत्यादि शस्त्रधारे हुये तुरत चार सवार प्रकट होजाते भये और घोड़ों को चपल किये हुये आय कर तिन दुष्ट लुठकों को ललकार कर कहने लगे कि अरे अधम लुटेरों अब काहें रहो आगे पाउं मत धरो मंद मूढ तुमने निरअपराध ब्राह्मण को वृथा ही जान से मार डाला है हे कपटी हे अपराधी तुम ने तो कृस प्रमातमा को बीच साखी दिया था और अभागी चांडालो फिर ऐसा अनर्थ कोकिया ऐसे कहि कर कोप से खड्गों के प्रहार देकर तिन दुष्टों के सीस काट डाले और ब्राह्मण की स्त्री को धीरज देकर जहां मरा हूआ पती पड़ा था तहां ले आये तब सो प्राण नाथ की मृतक दशा देखकर विरहों के वश भई हुई बड़ी ऊंची स्वर सें रोदन करकर कहने लगी कि हे पती अब मेरी कौन गति होवे कि जिस की जगत मे माता पिता पुत्र भ्राता इत्यादि कोई बांधव भी नहीं है केवल एक तुमही मेरे प्राणों के आधार थे सो भी आज मृत्यु के वश होय गये ऐसे विलाप की भरी तिसकी दुखी और दीन बाणी सुन कर सो सवार दया के वश होय गये ब्राह्मण की स्त्री को अभय और धीरज देकर बड़ी मधुर और कोमल बाणी सें कहने

लगे कि हे पुत्री तूं चिंता रोदन को त्याग कर स्वस्थ
चित हो अब कृष्ण भगवान की कृपा से तेरा पती
जो है सो अब ही जीवत हो जावेगा इस मे कुछ सं
शय नहीं है ऐसे धीरज देकर ब्राह्मण का कटा
हुआ सीस तिस के धड़ के साथ जोड़ दिया और उ
पर तिस के हेत अर्थात चिन्ह वस्त्र डाल कर आ
प कृष्ण कृष्ण रटते हूये सो सवार वण को चले
जाते भये तब इतो थोड़ी देर के पीछे मृत भया
हुआ ब्राह्मण जो था सो जैसे कोई सोया हूआ नि
द्रा से जाग पड़ता है तैसे ही तुरत जाग कर उठ
बैठता भया दोला वाहक जो कहार थे सो ब्राह्मण
को जीवत भया देख कर अत्यंत हरष को प्रापत ८४
होय गये और तिस के मरने का सव वृतांत सुना
य देते भये ब्राह्मण सुन कर के बड़े अचरज को
प्रापत हूआ ■ सब के हृदय मे आनंद छाय
त होय गया तिस तें उपरांत ब्राह्मण जो है सो
स्त्री के सहितं हरष पूर्वक अपने घर मे आय
प्रापत भया तहां दीन भाव से माता के चरनों
पर प्रणाम कर के अपने मरने और जीवत हो
ने का सब वृतांत सुनाय देता भया तब माता
सुन कर के प्रसन्न भई हूई सुंदर वाणी से क
हने लगी कि हे पुत्र धन्य सो भगवान है और
धन्य तिन की ऐसी सुखदायक भक्ती है कि
जिस के प्रसाद से तूं मृत सजीवन होय कर
के आज इस जननी के नेत्रों को सफल कि
या है इस प्रकार कृष्ण भगवान की भक्ती
की अनेक ■ महिमा वर्णाई गायन

वित ब्राह्मण जो था सो स्त्री के सहित निरभय होय कर और विश्वास रालकर तिन के साथ चलपड़ता भया जब चलते चलते बड़े भारी गहिवर बन विखें प्राप्त प्रवेश भया तब वे अधम पाप की खानी लुटेरे मुखसे मीठे और हृदयसे मलीन पनी तुरत काल के समान निरदय होय कर और कोप से खड़ग निकास हीं प्रहार दे कर ब्रिणवत ब्राह्मण का सीस काट पृथ्वी पर गिराय देते भये तिसते उपरांत दोलावाह अर्थात पालकी के चलाने वाले कहार जो थे तिन को कहने लगे कि तुम शीघ्र पालकी को उठाय कर और इस मारग को त्याग कर हमारे घर के मारग को चल पड़ो नहीं तो ब्राह्मण के समान तुम को भी मार कर इस स्त्री को हम आप ले जावेंगे ऐसे कोप के भरे हूये तिन दुष्टों के वचन सुन कर भय के वश भये हूये कहार तुरत पालकी को उठाय तिसी मारग को चलपड़ते भये तब ब्राह्मण की स्त्री तिन के वचन सुन कर और पती का मरना जान कर व्याकुल होय गई और दुख की भरी हूई विरहो की वाणीं से बड़ा हाकार कर कर रोदन करती भई शरीर कर के सिथल होय गई हृदय का धीरज सब छूट गया विलाप कर कर कहने लगी कि हे प्राणपती अब तुमारे वे इष्टदेव कृष्ण भगवान मामा सादी जो थे सो कहां है कि जिनका भरोसा राख कर इनके साथ बनों मारग मे अकेला चल पड़ा था॥ २॥ चौपाई॥ द्विज तिय जब अस वचन उचारा॥ तुरत विपुन पथ चारि सवारा॥ शक्ति खड़ग आयुध कर धारे॥ आवत तिनहि अस बदन प्रचारे॥ अरे तिष्ठ सठ चोर गवारा॥ बिनु अपराध विप्र तुम मारा॥

सुमरी ती॥ अस प्रकार कछु काल बिताना॥ न
जे जनक रज आरत प्राना॥ सहगामनी भई
महतारी॥ पति सन जरत परलोक सिधारी॥ त
व सु विप्र निज पतनि समेता॥ प्रीति पूरवक रु
चिर नकेता॥ लागे करन संतन सिव काई॥ अ
सवित पितु संचित समुदाई॥ संतन कहं सब
दीन लियावा॥ बहुरि पतनि आभरन सुहावा॥
साधुन अर्थ सकल वय कीन्हो॥ भयो बहुरि दु
ज द्रव्य वहीनो॥ लाग्यो करन गृह गेह दिग
दाना॥ अस प्रकार भयो रंक महाना॥ लखत
लोक निस केचिन ताहू॥ बहुरि देत नाहिन
दिग काहू॥ तब सु विप्र संतन हित लागी॥ लो
क लाज कुल दीन तयागी॥ भिक्षाटिन करि सं
तन सेवा॥ लाग्यो करन प्रवर महि देवा॥
निस केचिन ता कर अस नामा॥ भाषत सकल
नारि नर ग्रामा॥ दोहा॥ भिक्षाटिन अस धरम
तें संत तृपति कछु नाहिं॥ होत न जान्यो वि
प्र वर तब विचारि मन माहिं॥ संतन हित
लाग्यो करन दिवस रजनि दुज चोरि॥ आपु
भो ति भोजन करत यथा लवध कछु थोरि॥
१॥ टीका॥ अब और बड़ा अदभुत सुदायक
और कृस्न भगवान के चरन कमलों की प्रीती
के देने वाला भक्ती का सुंदर महात मजो है
को कथन करता हूं महदेस ~~केजीसके~~
~~मारवाड़ के देसके मध्य~~ एक धनवान ब्राह्मण
हरिपाल नाम करके वास करता था औ
र ~~[illegible]~~ नित्त भगवान के पूजन सेवन

मे लीन रहता था परन्तु संतान से हीन था वृ
द्ध अवस्था विखे भगवान ने तिस के घर मे पुत्र
दिया तब बालक के जनम का उतसाह मानकर
अतथी साध ब्राह्मनों को दान मान से भलीप्र
कार प्रसन्न करता भया जब दिन पायकर बाल
क कुछ सयाना होय गया तब तिस को विधी
पूर्वक यज्ञोपुवीत धारन करवाय के और
फिर थोड़े दिन के पीछे आनंद से तिस का वि
वाह भी करवाय देता भया इस प्रकार बड़े सनेह
और प्यार से पाला हूआ सो बालक विद्या से ही
न रहा अर्थात तिस के विद्या कुछ प्रापत न
हीं भई परन्तु कुछ पूर्व ले हेसकार के प्रभा
व से सुते सिद्ध हीं तिस के हृदय मे भगवान
के चरनो की भक्ती उतपन्न होजाती भई जहां
कहीं अतथी साध ब्राह्मन को देखता प्रीती
सन मान से जाय कर तिन की सेवा करता
था तब ऐसे तिस की संतसेवकाई मे
प्र[illegible]देखकर और सुभरीती विचारकर
माता पिता अपने चित्त मे अत्यंत हीं प्रस
न्न होते थे ऐसे जब कुछ काल बतीत
होय गया तब दोस कार के पीड़त भया हूआ
तिसका पिता जो था सो ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ काल वश होजाता भया पीछे माता
भी तिसका विजोग नहीं सहार सकी पती के
~~[illegible]~~ साथ जलकर [illegible]लोक के

मारग को सिधार जाती भई तब ब्राह्मण ति
न का सब संसकार करकर फिर स्त्री के सहित
घर मे स्वस्थचित होय कर अत णी साध ब्रा
ह्मणों की भली प्रकार सेवा भक्ती करने लगा
थोडे ही कालमे पिता का संचित किया अर्थात
जोडा हुआ धन जो था सो सब संतों को खुवा
य दिया तिसते उपरांत स्त्री के भूषण इत्यादि
और जो कुछ घर मे रहा सो भी सब संतों के अ
र्थ लगाय दिया पीछे जब घर मे कुछ न हीं
रहा तब रिण जो करज है सो ले ले कर नि
र्वाह करने लगा जब करज देने से भी लोग ह
ट गये तब लोकलाज और कुल लाज को त्या
ग कर भिक्षाटिन करकर साध संतों सेवा कर
ने लगा और नगर के सब स्त्री पुरषों मे नि
त के दिन तिस का नाम प्रसिद्ध होय गया इस
प्रकार भिक्षाटन करने से भी संतो की तृपती हो
ती नहीं देखी तब तिन की सेवा के निमित्त चोर
ज करम जो है सो धारन कर लेता भया अर्थात रा
त्री दिन चोरी करने लगा और आप स्त्री के स
हित भिक्षा मांग कर जैसा कुछ प्रापत होता ते
सा भोजन पाय लेता ॥२॥ चौपाई ॥ तब है जोन
दुजवर निज जी के ॥ होत न संत तोष कछु नीके ॥
तब लुंठिक बनि कानन भारी ॥ गयो विप्र कर
आयुध धारी ॥ बिनु इक बिप्र वैस्नव सोई ॥ त
जेहि न आन पथिक कस होई ॥ लूट लेत य
न प्राण वचाई ॥ शक्ति खड्ग वहु जोम दि
खाई ॥ सोऊ द्रव्य संतन कहं ल्याई ॥ देत विप्र

जयदेवी चरित्र
८

करकर फिर माता ~~पुत्र ओर तिसकी स्त्री~~ ओर स्त्री के सहित ब्रह्मण कपट अभिमान इत्यादि विकारों को त्याग कर दिनदिन अधिकसे अधिक कृष्ण भगवान की भक्ती प्रीतीवाला ~~भया~~ अंतकाल कृष्ण भगवान भगवानको हीं सुमरता हुआ शरीर त्याग करके मुनीजोगीजनोंको दुरलभ जो गती है सो प्रापत करलेता भया॥ इति श्री भक्ति विनोद ग्रंथे भगवद् भक्ति महातमे भाषा टीकायां ब्रह्मण चरितवरणने नाम ~ सर्गः

अथ थनिसकंचन चरित

दोहा॥ अति अदभुत सुंदर सुखद भक्ति महातम आन॥ करहुं कथन सादिर वदन कृष्ण भक्ति बर दान॥ चौपाई॥ विप्र एक मरुदेस निवासी॥ जाहि हरिपाल नाम धनरासी॥ करत देवपूजन मन भावा॥ भये वृद्ध तव बालक जावा॥ उपजत सुवन हरष उर माना॥ दुजे अतथीन दीन बहु दाना॥ दिन दिन वृद्धि बाल जवलीना॥ तब उपनयन करम सब कीना॥ पुनि काल कछु कर रुचिर विवाहा॥ दीन कराय विप्र उतसाहा॥ सो सनेह लालन जुत पाला॥ रहा मुगध विद्या वरवाला॥ पै मानस एक सुत सुभाऊ॥ भगवन चरन भक्ति रति ताहू॥ देखत अतथि संत महिदेवा॥ सादिर करहिं विप्र सुत सेवा॥ जननी जनक पूरि उर प्रीती॥ होत प्रसन्न देखि

घरमै आवताहै तवनिस केचितने आयकरसव
संतोके चरनोपर प्रनामकिया फिरअपनीस्त्री के
पास आयकर कहने लगा कि हे प्यारी अव कौनउपा
य करूं इहदेखे संतोकीजमात घरमै आईहुई है
जो आज इन्हों ने भोजन नहीं पाया तौंनिश्चयक
रके [illegible] मरणहै ऐसे पती के मुखसेवचनसु
नकर सोभामनी रोयकरके कहने लगी कि हेप्रा
णनाथ संतो के भोजनपायविना जैसेतुमारीद
शाहोवेगी तैसेहीं मेरीभी जान लेना इसमेकु
छसंसय नहीं है ॥२॥ चौपाई॥ इन कहेदीनना
थ अव कहिये॥ महाराज मन जान हित जैये॥ पा
ऊँ भोजन व नहिं तुमारे॥ जाहिं संत जव सकल
सिधारे॥ तव हमतज व प्राणनिजदेई॥ इन
सनमुख पति मरण न होई॥ [illegible]
भलो यतन गुनि मानस माहीं॥ भन्यो विप्रवर
संतनकाहीं॥ दीनदयाल तुव मज्जन कीजै॥
सरिता तीर पंथ श्रम छीजै॥ पाछेवनहि
सदन पकवाना॥ अस प्रकार जव विप्र वखा
ना॥ विप्रमरण अस हृदय [illegible] चितारी॥
द्वारावती कृष्ण गिरधारी॥ भक्तपाल निज
विरद संभारयो॥ रुकमणि सन अस वचन उ
चारयो॥ लुंठक रूप विप्रव्रतधारी॥ मन
वच काय भक्त मम भारी॥ सो संतन हित त
[illegible] जि द्विजधरमा॥ करत विपन नित लुंठिक
करमा॥ वीते दिवस जुगल तहि काहीं॥ पा
यो पथिक द्रव्य जुत नाहीं॥ लुध्यत संत स
दन तहि जाहीं॥ मै सुभक्त निज देखिदुखारी॥
जो नहिं जाऊं देन वित प्यारी॥ तो निज तंजहिं

ब्राह्मण जुत नारी॥ रुकमणी सुनत वचन भगवा
ना॥ बोली नम्र जुक्त जुग पाना॥ दीन नाथ अ
स भक्त तुमारा॥ मैं हूं दृग न निज चाहूं निहारा॥
श्री मुख जो न देख प्रभु पाऊं॥ तो कृपाल तुव
तेग सिधाऊं॥ दोहा॥ प्रिय रुक्मिणि मानि प्रसन्न मन
अभय भक्त वरदानि॥ चलहु चलहु बोले वदन
मुसकि मधुर मृदु वानि॥ हम तुम करहैं लूट वसोई
बै मुह कमलि तास॥ देहैं कव हुं न तुव प्रिया राखे
हु लषन अजासु॥२॥ टीका॥ फिर कहने लगी कि
हे नाथ अब संतो को कहिये जो आप सनान कर
ने के लिये जाईये पीछे भोजन तयार होय जाता
है जब इस प्रकार संत सनान करने को चले जावें
गे तब पीछे हम दोनो प्राणों को त्याग देवें गे ति
न के संन मुख हमारा मरना कैसे होय सके गा ऐसे
स्त्री का कथन ब्राह्मण के मन को भाय गया भलो
यतन विचार कर संतों के आगे विनती करने ल
गा कि महाराज आप नदी के किनारे जायकर
सनान करिये और मारग के श्रम को शान्त कि
वारिये कृपानिधान पीछे भोजन तुरत हो तया
र हो जाता है इस प्रकार जब ब्राह्मण ने कहा तब
द्वारिका मे गोवरधन परवत के धारने भक्त रक्षक
भगवान अपना भक्तपाल विरद जो है सो हृदय मे
सुमरते भये और रुकमणी को कहने लगे कि हे प्या
री एक ब्राह्मण लुंठिक जो लुटेरे हैं तिन का रूप
धारे हुये मन वचन काया कर के मेरा दृढ भक्त
है सो संतों के निमित्त अपना ब्रह्म धरम त्या
ग कर के लुंठिक जो लुटेरे हैं तिन का करम कर
ता है आज तिस को दो दिन वतीत होय गये
कोई भी धन वाला पुरष वन के मारग मे आता
जाता नही मिला और घर मे वहुत से संत भूखे

प्यारे वैठे हुये हैं ऐसे मैं आपने तिस भक्त को प
रम दुखी देखकर जो धन देने के लिये नहीं
जाऊं तो वे स्त्री के सहित आपी प्राणों को त्याग
देते है इस प्रकार भगवान कृपानिधान का
कथन सुनकर रुकमणी हाथ जोड़ कर दीनता
ली से कहने लगी कि हे प्राणनाथ हे दीनहित
कारी भगवान ऐसे तुमारे प्यारे भक्त को मैं भी
नेत्रों करके देखना चहती हूं जो श्री मुख से आ
ज्ञा पाऊं तो कृपानिधान आप के साथ मैं चलूं
और प्रभु तुमारे ऐसे भक्त का दरसन करकर इन
नेत्रों को सफल करूं ऐसे अपनी प्यारी रुकम
णी की रुची मान कर भक्त जनों को अभय कर
के देने वाले कृष्ण परमात्मा प्रसन्न भये हुये मु
ख से मधुर मधुर मुसक्याय कर कहने ल
गे कि प्यारी चलो वे मेरा भक्त जो है सो तहां व
न के मारग मैं मेरे को और तुम को अब पावेगा
ऐगा परन्तु हे प्यारी इन तुमारे हाथ की अंगुली
मैं भली ~~हरी~~ की शोभावाली मुद्रका
अर्थात अंगूठी जो है सो नहीं लखावनी तिस
को यतन से छिपाय राखना ॥ इं॥ चौपाई ॥ प्र
स प्रकार भगवान उचारी ॥ वेस लप भक्त
हितधारी ॥ भक्त सहाय करन हित स्वामी ॥ च
ले कृपाल भक्त अनुगामी ॥ सरव सिद्धि सामर्थ
मुरारी ॥ आपे होर भक्त व्रत धारी ॥ श्री मुख
मधुर वचन प्रभु कहा ॥ कहो विप्र तिस के चि
न राहा ॥ भूषण कनक अप ले कृत देवी ॥
हरख्यो हृदय विप्र अब से खी ॥ से तन कहे
~~अब चल~~ भाख्यो दुहराई ॥ करहु सनान वेग
तुव जाई ॥ न्यो जात दुत भोजन भवना ॥ सु
ते तकीन संतन तव गवना ॥ भन्यो वहो इ

वर सदन खवाई॥ एक दिवस तिहि विपुन मझारा॥
मिल्यो न काहु पथिक धनवारा॥ तब कछु के निज
सदन पराबा॥ त्रिय जुत क्षुध्यत रैन विहावा॥ प्रा
त काल उठि कानन गवना॥ तब हुं आव कछु के नि
ज भवना॥ देखे सदन वैष्णव झारी॥ तिलक माल
मुद्रा वर धारी॥ इत उत दृष्टि निहारत तेहू॥ कव आ
वत निस के चिन गेहू॥ सो अस देखि संत समुदाई॥
करत प्रणाम चरन सिर नाई॥ बहु विपत निसन क
हत उचारी॥ करहुं उपाय कवन अब प्यारी॥ संत
समूह सदन जे आवा॥ जो न आज इन भोजन पावा॥
मोर मरण निश्चय तब होई॥ दुजे त्रिय सुनत कहत
अस होई॥ दोहा॥ संतन बिनु भोजन करन पति
जस दसौं तुमार॥ सो उपाय संसय नहीं सुन हो
प्राण आधार॥२॥ टीका॥ ऐसे चोरी करने से भी
तिस ब्राह्मण ने जाना कि संतों का भली प्रकार तो ष
नहीं होता है तब हाथ मे शस्त्र धार कर और
लुंठिक लुटेरा बन कर बण विखे चला जाता भया
एक वैष्णव संत ब्राह्मण को छोड़ कर और सब को लू
टने लगा किसी के प्राणों की हानी नहीं करता केव
ल धन ही खोस लेता और घर मे ल्याय कर के संतों
को खवाय देता एक दिन तिस के बण मै कोई भी रस
ते चलने वाला नहीं मिला तब निरास भया हुआ खा
ली हाथ ही लौट कर के घर को चला आया रात्री
भर स्त्री के सहित भूखा ही घर मे पड़ रहा जब प्रात
काल भया तब उठ कर के फिर बण को चला जाता
भया तिस दिन भी कुछ प्रापत नहीं भया पछताव
ता हुआ घर को चला आया आगे क्या देखता है कि सुं
दर तिलक माला मुद्रा धारन किये हुये वैष्णव संतों
का समूह घर मै बैठा है और सब संत इधर उधर
ने त्र घुमाय कर पड़े देखते हैं कि निस के चिन कव

रकरके मेरेको इस वनके कठिन मारगसे पार
उतार देओगे तो मैं यथा योग्य तुमारी कुछ सेवा
करूंगा और तुमारे उपकारको [illegible] चित्त से नहीं
विसारूंगा ॥४॥ चौपाई ॥ विप्र सुनत अस वचन
प्रकासा ॥ तजहु गवन कानन तुव त्रासा ॥ और
संगतुवँहानी ॥ अस कहि धसो शस्त्र द्रुतपानी ॥
प्रभुहिं लेत पथ विप्र नसिधासो ॥ गवन काल
निज चियहिं उचासो ॥ अब विलंब भोजन क
छु नाहीं ॥ अस कहि तिनहिं लेत वनमाहीं ॥
आवा तव सुअरुन करि नयना ॥ बोल्यो प्र
भुहिं कोप वस वयना ॥ वेग सकल भूषण पट
नारी ॥ अरे पथिक मोहि देहु उतारी ॥ नतर
प्रहार खड्ग करि पाना ॥ करहौं तुरत तोर हत
प्राना ॥ व्याधिके वचन सुनत अस श्रवणा ॥ बो
ले वैस सुप श्रीरमना ॥ अहो विप्रकुल जनम
तुमारा ॥ इह दुर धरम करम कस धारा ॥ चारि दि
वस जग जीवन लागी ॥ दीन प्रमाद वेस दुज त्या
गी ॥ को तुव कीन दुरत आचरना ॥ दुजपरलो
क लोक सुख हरना ॥ सुनत कथन भगवन द्विज
काना ॥ मुहि नवैस कछु निज हित राना ॥ आ
वत सदन सेत भगवाना ॥ मैं तिन अर्थ पतन
करि नाना ॥ अस लेठिक वृत्ति सांज सवेरा ॥
करहुं तोष नित संतन केरा ॥ यामें मुहि स्पर्श
कछु नाहीं ॥ पाप पुन्य सब भगवन काहीं ॥
सुन है वैस मोर प्रण एहा ॥ कबहुं कि जाहिं
संत ममगेहा ॥ तु ध्यान विनु भोजन जलपा
ना ॥ तो मैं तजे हुं तुरत निज प्राना ॥ वन्यो आ
ज मुहि अवसर सोई ॥ तो ते तुम हुं वेग अव

होई॥ निज भूषण तुत देहु उतारी॥ तास कथन
सुनि भक्त उवारी॥ ६ आमर्ने वसन जुत माला॥
तासु दीन भगवन तत काला॥ दोहा॥ तब रुक्मणी
लै मुद्रिका मनचिंतत फलदाई॥ ताकर दीन न
यतन जुत राखी कर न दुराई॥ तिसके चिन तकि
कोपवस मांगि वदन बहुकार॥ जब न दीन तब
अंगुरि जुत लीनसि सबल निकार॥ ४॥ टीका॥
इसप्रकार वैसरूप भगवान का कथन सुनकर
ब्रह्मण कहने लगा कि भाई तुम वण के मारग
का भय जो है सो चित से त्याग देवो मेरे साथ तु
मारी कदाचित कुछ भी हानी ना होगी ऐसे क
हि कर ब्रह्मण हाथ मै शस्त्र धार कर और भगवा
न को साथ ले कर वण के मारग को चल पड़ता भया
तब चलते वर अपनी स्त्री को कहने लगा कि अ
व भोजं की कुछ विलंब नहीं है ऐसे सुनाय कर
और दीन वंधू को लेकर तुरत वण विषै चला
आया तहां आवते हीं कोप से लाल नेत्र कर
कर और प्राणों का भय दिखाय कर सरब भय
के लेशों के दूर करने वाले भगवान को कहने ल
गा कि हे पथिक अब तूं शीघ्र स्त्री के सहित भू
षण वस्त्र उतार कर मेरे को देदे नहीं तो अबी खड
ग का प्रहार देकर तेरे को मार डालूं गा इस प्रकार
तिस लुंठिक ब्रह्मण का कथन सुनकर वै
सरूप लक्ष्मी के पती जो हैं सो कहने लगे कि अ
हो बड़े अचरज की बात है जो तुमने ब्रह्मण कुल
विषै जनम धार कर इह कैसा अधर्म और कुकर्म
धारन किया है केवल चार दिन के जीवने के
लिये वंस की मर्यादा को त्याग दिया है और
लोक परलोक के सुख को नष्ट करने वाला दुरा

कार पाप जो है सो ग्रहण कर लिया है ऐसे भग
वान के वचन सुन कर ब्राह्मण कहने लगा कि हे
सत्तम ने सत्य कहा है परन्तु निश्चय कर के जा
नो कि इस में मेरे को अपना [illegible] हित पर्यो ज
न नहीं है केवल संतों के निमित्त इस ले ठिकक
रम को धारन किया है अपने पास धन नहीं जो ति
नको लवाऊं मेरे घर में कृपा कर के संत महात्
मा नित्य चले आवते हैं इस लिये मैं अनेक यत
न कर कर और धन ल्याय कर तिन को परितोष क
र देता हूं इस में [illegible] मेरे को कुछ दोष स्पर्शे
नहीं है पाप पुन्य सब भगवान को है केव
ल मेरा तो प्रण है कि जब संत मेरे घर से भूखे प्या
से जावें तो इह मेरे प्राण भी तिन के संग ही जा
वें सो आज वैसा ही समय आय कर के बन र
आया दैव योग से तुम आय प्रापत भये हो अब
वार्ता आलाप को छोड़ कर तुम दोनों ही अप
ने सब भूषण वस्त्र उतार कर मेरे को दे देवो तब
भक्त हितकारी भगवान जिसका कथन श्रवन
कर तुरत ही माला के सहित सब भूषण वस्त्र
उतार कर के दे देते भये रुकमणी ने जो मनवां
छित कामना के देने वाली मुंदका जो थी नहीं
देई यतन से छिपाय राखी जिस के चिन्ह देख कर
के कोप से वारंवार मांगता भया जब नहीं देई
तब बल से हाथ पकड़ कर अंगुली के सहित
ही छीन कर ले लेता भया ॥४॥ चौपाई ॥ लेत
द्रव्य द्विज अतुलित भारी ॥ चल्यो हरखि जब
सदन सिधारी ॥ भक्तपाल तब कहा बुझाई ॥
द्विज तुव जो मुद्रका उठाई ॥ सो अमोल द्रुम
देव प्रभाऊ ॥ सुनत सुखद वो छित फल

तास उतसाहा॥ मैं हि विप्र निस केचिन लाहा॥ बोले

भक्त पाल भगवाना॥ मैं निज चाहूं विपुन पथ जा

ना॥ सुठि आभरन अलंकृत अंगा॥ रहौ एक प्र

मुदा मम संगा॥ सुन्यो विपुन इक पथिक विदारी॥

सूर वीर लुंठिक अति भारी॥ तास त्रास वस एक

ल जाना॥ मैं न सकहुं पथ विपुन महाना॥ सो

रठा॥ जो उपकार विचारि॥ मोहि अरन्य मारग

कठिन॥ दुज तुम देहु उतारि॥ तो सेवा कछु कर हुं

मैं॥ ४॥ टीका॥ इस प्रकार कहि कर भक्त हितकारी

भगवान रुकमणी के सहित वैस वैसनी का रूप धार

कर भक्त की सहायता करने के लिये द्वारिका से चल

पड़ते भये तब कौतुक से तुरत तिस व्रतधारी भक्त

के द्वारे पर आयकर तिनके भरे हूये कोमल वचन से

कहने लगे कि निसकेंचिन नामो ब्रह्मण जो है सो

कहां है ऐसे रुकमणी के सहित ~~वैस~~ वैस रूप भ

गवान को सुवरण के भूषणों से सजे हूये देखकर

ब्रह्मण परम हरष को प्रापत हो जाता भया और सेतो

को फिर दुहराय कर कहने लगा कि आप शीघ्र

जाईये सनान करिये भोजन अवी बना जाता है कु

छ विलंब नहीं है सो तहु नकर के सब सनान करने को

चले गये पीछे आने से ब्रह्मण तिनको कहने

लगा कि पथिक भाई मेरा ही नाम निसकेंचिन ब्र

ह्मण है तब भक्तपाल तिसको कहने लगे कि

भाई मैं वन के मारग से जाना चहता हूं परन्तु अंग

अंग भूषणों कर के भरी हूई मेरे साथ इसत्री है

सुनते हैं कि ईस वन के मारग मे एक कोई बड़ा

भारी सूरवीर शस्त्रधारी लुटेरा पड़ता है तिस

के भय से मैं इस घोर वन के मारग से अकेला

नहीं जाय सकता हूं जो कदाचित तुम उपका

नाय कर प्रीती सनमान से संत महा
तमा वैठार कर जिमाय दिये इस प्रकार सव द्र
व्य जो था सो ब्रह्मण संतों के नमित नहीं लगा
य देता भया तिस तें उपरांत जव तिस को ध
न की इच्छा होती तव मुद्र का से मांग कर से
त भक्तों की सेवा करता रहता था ऐसे जग
त मे संतो की सेवता और रात्री दिन कृष्ण भ
गवान को भजता हूआ ब्रह्मण ऐते का
ल ती के सहित शरीर को त्याग कर मुनी जो
गी जनो को दुरलभ जो गती है सो सुगम ही
पाय लेता भया नाभादास जी कहते हैं कि हे संत
तो इन देखिये दीनवंधु भगवान की गती कु
छ लखी नहीं जाती है कहो तिस व्रह्मण का
नित अपराधी रसते चलने वालों को मारने और
लूटने का अधम करम और कहो कृपानिधान
का तिस को इस कठिन संसार समुद्र से पार उता
रना अर्थात तिस के सव अपराधों को विसार कर
मुनी जो गी जनो को दुरल जो गती है सो देदना
ता तें हे संत भक्तो दीनानाथ और दीन हितकारी
भगवान के विना संसार मे दीनो पर दया करने
वाला और दीन दासों के अपराधों को विसार देने
वाला और दूसरा कोई नहीं है ॥ ६ ॥ इति श्री भ
क्तविनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महातमे भाषा टीका
यां तिस केचिन चरित्र वरणने नाम सर्गः

दाऊ॥ अस कहि कृपासिंधु भगवाना॥ भये तुरत त
हां अंतरध्याना॥ द्विज अमोल भूषण धन पाई॥
संजुत हरष सदन निज आई॥ विरचत अमिय पा
क सनमाना॥ दीन जिमाय संत भगवाना॥ अस प्र
कार आभरन सुहाये॥ विप्र [illegible] संतन सब लाये॥
त [illegible] शांत अपेक्षा ताहीं॥ जब जब होहिं विप्र
वर काहीं॥ तब मुद्रा पें मांगि [illegible] अभेवा॥ करत रह
त अस संतन सेवें॥ निशिदिन रटत कृष्णपति
माया॥ अंतकाल प्रिय जुत तजि काया॥ मुनि जो
गिन दुर्लभ गति जोई॥ [illegible] पायो सुलभ विप्र
वर सोई॥ [illegible] देखहु इहि कस भगवन भाई॥ अहो
रीति कछु लखि न जाई॥ कहां करम तहिं पथिक
विदारन॥ कहां घाल भव सागर तारन॥ ते अपराध
सकल विसराई॥ मुनि दुर्लभ गति दीन सुहाई॥
दोहा॥ तो ते दीना नाथ सम को दूसर संसार॥ [illegible]
कारन दुख हरन जन जन निज चूक निवार॥६॥
टीका॥ ऐसे ब्राह्मण जब अतुलित धन कि जो न
हि तोला जाता लेकर के हरष के वश भया हुआ
अपने घर को चला [illegible] पड़ा तब भक्तपाल
भगवान तिस को कहने लगे कि हे ब्राह्मण इह
मनोहर मुद्रिका जो तैने पाई है सो बड़ी अमो
ल [illegible] कल्प वृक्ष के प्रभाव वाली [illegible] और सर
व सुखों के सहित मन वांछित फल के देने वाली
है ऐसे कथन कर कर कृपा के समुद्र भगवान
तुरत तहां ही लुपत हो जाते भये और इहां
ब्राह्मण भी अमोल धन पाय कर के आनंद
में मगन भया हुआ अपने घर में चला आया त
ब अमृत के समान नाना भोजन पकवान ब

जानी॥ दोहा॥ कहाँ सदन अरु तुम कहाँ कहाँ पु
त्र परिवार॥ मै निरधन पितु मात गत कस ए व
नहि उपकार॥१॥ टीका॥ अब और बडा सुंदर भक्ती
का महातम जो है सो कथन करता हूं कै सा भी महात
म है कि जिसके श्रवण करने से कृष्ण भगवान की
निरमल और सुखदायक भक्ती निरंतर करके हृ
दय मे दृढ हो जाती है गौड देस विखें खुरदा ना
म करके एक रमणीक ग्राम होता भया तिस गा
उं के बीच वेद की विद्या के जानने वाले बहुत से ब्राह्म
ण निवास करते थे तिन्हो के बीच एक धनवान
ब्राह्मण ~~[illegible]~~ अपने पुत्र पुत्री और
स्त्री कुटंब के सहित वास करता था परंतु चित्त
से विरक्त रहता था एक समय तिस के चित्त मे अ
भिलाषा उतपन्न भई कि मै घर को त्याग कर पर
लोक के सिद्ध करने के निमित्त संदर तीर्थ यात्रा
जो है सो करूं फिर अपने वृद्ध और निवल जान
कर शंकित भया हुआ कहता है कि इस वृद्ध अव
स्था विखें मै तीरथों का भ्रमन अकेला कैसे क
र सकूंगा इस प्रकार चिंता के वश होय रहा था
कि इतने मे एक कोई जुवा अवस्था ब्राह्मण तीर्थ
यात्रा की इच्छा वाला तहां तिस के पास आय प्रा
पत भया तब वृद्ध ब्राह्मण तिस पावन पुरष को देख
कर हृदय मे अत्यंत प्रसन्न होय गया तुरत अपने
बांधवों की आज्ञा लेकर तिस ब्राह्मण को साथ लिये
हूये घर से निकल चलता भया तब जाता जाता मा
रग को काट कर प्रथम गया जी मे जाय प्रापत हू
आ तहां विधी पूर्वक पिंडदान श्राद्ध इत्यादि स
व करकर फिर भक्ती प्रीती वाले भये हूये दोनो ब्रा
ह्मण आनंद से कासी पुरी मे चले आवते भये

शरीरको

तिस ब्राह्मण पितासोंनाके [illegible]

तिस तें उपरांत [illegible] प्रयागराज फिर मथुरा वृंदा
वन इत्यादि यात्रा जो है सो करते भये तब दैव योग कर
के तिस वृद्ध ब्राह्मण का शरीर रोग के वश [illegible] छीण
होय गया तिस ते सो परम कलेश को प्राप्त भया त
ब साथ का ब्राह्मण जो था सो तिस की माता पिता के स
मान अत्यंत ही सेवा करता भया औ ते तिस की सेवा के
प्रसाद से सो वृद्ध रोग से निवृत्त होय कर सुखी और
स्वस्थ चित होय गया तब तिस ब्राह्मण को कहने
लगा कि हे देवता तैने इस समय जो मेरी इह सेवा
करी और मेरु परउपकार किया है मै तिस का कौन
प्रति उपकार और क्या बदला देऊं अब मेरे [illegible]
पास और तो कुछ नहीं है परंतु एक है कि मेरे
घर मै एक कन्या कुमारी है सो मैने तेरे को देई इस
प्रकार तिस वृद्ध के मुख से वचन सुन कर ब्राह्मण
तिस बारता के आगम असंभव [illegible] कहिन
और ना होने वाली जान कर [illegible]
वृद्ध को कहने लगा कि हे पिता कहां चार कहां तुम
और पुत्र परिवार कहां मै दीन निरधन कि जिस
का माता पिता भ्राता संबंधी कोई भी नहीं है इह उ
पकार कहो कैसे बन सकता है ॥ ॥ चोपाई ॥ जाहि
र विप्र तब तासु बखाना ॥ कन्यादान करन कहे
आना ॥ बिनु मोरे सामर्थ न कोई ॥ सदा सबे द
रीति अस होई ॥ कन्यादान जनक बिनु करना ॥
[illegible] उचित न [illegible] बरना ॥
तां ते तुम हि दीन मैं सोई ॥ रही भवन कन्या मम
जोई ॥ मोर वचन करो अब इहि काला ॥ साखी रहे
देव गोपाला ॥ असमध्य स्य जानि भगवाना ॥
द्विज निज हृदय सत्य तव जाना ॥ करि प्रणाम जुग
चले भवन हरषत मन माहीं ॥
भगवन काही ॥

[margin:] [illegible]

तब तें तास वृद्ध कर सेवा॥ लाग्यो करन अधि कमहि देवा॥ अस प्रकार तीरथ समुदाये॥ करि करि सदन विप्र जुग आये॥ बांधव जन [illegible] जठेर [illegible] अलाई॥ निज तज करन विप्र क्षिव काई॥ सुता दान मुख वह रि उचारा॥ भने सुनत बांधव सुत दारा॥ इह अनरीत अहो कस होई॥ हमरे वंस आज लग कोई॥ जाती भिन्न आन दुज काहीं॥ कन्या दान दीन पितु नाहीं॥ जो हम करब आज इहि नाती॥ है व अब ध्रष्ट बाज निज जाती॥ इह हो [illegible] जन कैसे न तुव होई॥ जो विवाद करि है कछु कोई॥ हम सें तो ष करब तहि नीके॥ सुनि दुज वृद्ध कथन तिन [illegible] के॥ वसीभूत तो कर मन मारे॥ रह्यो मौन गत गिरा उचारे॥ तब तो के दुज धरम चितावा॥ कर हु सत्य निज [illegible] सुनावा॥ दोहा॥ वृद्ध सुतन सुनि कथन तहि करि बहु विधि तिरसकार॥ कोपि भनत कटु बच बदन दीन्यो सदन निकार॥ २॥ टीका॥ ऐसे तिसका कथन सुन कर वृद्ध कहने लगा कि हे हितकारी कन्या दान करने को मेरे बिना और कोई सामर्थ नहीं है इस पर मथरा वेद शास्त्रकी मर्यादा चली आई है कि पिता के होते और किसीको कन्या दान करना उचित अर्थात योग्य नहीं है केवल पिता को ही अधिकार है तां ते मैं तो कन्या तेरे को देई इस मेरे बचन के इस समय कृष्ण परमातमा साखी है ऐसे जब कृष्ण भगवान को बीच साखी कहा तब ब्रह्मण ने निश्चय करके सत्य [illegible] जान लिया तिसतें उपरांत गिरधारी गोपाल को दोनो प्रणाम करके घर के मारग को चलते भये तब तें सो ब्रह्मण तिस वृद्ध की अधिक

अथ अन्य चरितं

दोहा॥ भक्तिमहातम आन अब करहु कथन मन
भाव॥ जासु सुनत संतत विमल कुसुम भक्तिउर छा
व॥ चौपाई॥ गौड देस इक ग्राम सुहावा॥ खुर
दा नाम विदित अस गावा॥ तहां वसहिं द्विजवर अ
धिकाई॥ विद्यावेदनिपुण ~~[illegible]~~ समुदाई॥
तिन मे एक विप्र धनवाना॥ विप्र पुत्री सुत ~~[illegible]~~ सु
जाना॥ पै विरक्त सम ~~[illegible]~~ वसहि अवासा॥
एक समय उपज्यो रुचि तासा॥ करहुं अटन तीरथ
गृहत्यागी॥ पै निज वृद्धकाय गति लागी॥ एकल
गवन पैय सकु चाहीं॥ अस प्रकार चिंता मन माहीं॥
तब आवा एक द्विज तहि पासा॥ जासु गवन तीरथ
उर आसा॥ जननी जनक न बांधव नारी॥ वृद्धदे
खि उर भयो सुखारी॥ निज बांधव कर लेत रजाया॥
लिये तासु द्विज मंदिर सिधाया॥ प्रथमहिं गया
गवन करि आये॥ तहां प्रीति जुत श्राद्ध कराये॥
सुसिधरपुरी वहुरि हुलसाते॥ द्विज जुग आयम
क्तिमद माते॥ पुनि प्रयाग मथुरादि सुहाई॥ यात्रा
कीन रुचिर मन भाई॥ दैवयोग कर वृद्ध सरीरा॥
ग्रस्यो रोग दारुण दुख पीरा॥ विप्र नवीन तासु से
वकाई॥ कीनी विविध जनहु पितु माई॥ वृद्ध वि
प्र जब भयो सुखारी॥ तहि प्रसाद रुज विगत विचा
री॥ भाषत जथा मोर द्विज देवा॥ तुव इहि समय
कीन सुचि सेवा॥ मै औरन कस होउं तुमारा॥ विप्र
अनंत कीन उपकारा॥ पै अब मे प्रसन्न मन होई॥
प्रति उपकार करहुं कछु तोही॥ जे मोरी कन्या सु
भगोहा॥ तुम कहं होहिं सफल द्विज नेहा॥ सुनि द्वि
ज वृद्ध विप्र मुख वानी॥ निज उर अगम अस भव

नृपहिं दीन सब बिथा सुनाई॥ सुनत भयो रिसव
स छितराऊ॥ जठिर सहित सुत बांधव ताहू॥
पठत तुरत भृत पकरि मंगाये॥ कुवरि विवाद
वदन नरराये॥ पूछन लाग सकल तिन काहीं॥
वृद्ध विप्र बांधव सुत लाहीं॥ झगरन लाग निवल
दुज संगा॥ भन्यो भूप तब वचन उमंगा॥ कहहै
सत्य धरम मोहि भाई॥ बुधजन बैठि मध्य समुदा
ई॥ तब बुधजन जुगलन कर काहा॥ निज निज
यथा कथन तिन राहा॥ सुनत सकल अस वदन उ
चारे॥ सदा विदत कुल रीति हमारे॥ वहुरि मर्या
द देस असभाती॥ देहिं न कुवरि जवन लघु
जाती॥ मृखो विवाद विप्र इह करहीं॥ अनुचित
कथन जानि सब परहीं॥ अस कहि वदन सभ्य स
मुदाये॥ तास दुजहिं असगिरा अलाये॥ तुव स
न वृद्ध विप्र जब कीना॥ वचन देन निज कु
वरि नवीना॥ साखी रह्यो कवन तहि काला॥
देहु दिखाय मिलहिं तोहि वाला॥ विप्र सुनत
अस तिन कर बानी॥ बोल्यो सुनहु सभ्य जन मा
नी॥ रह्यो न मनुज आन तहि काला॥ बिनु सा
खी गोपाल कृपाला॥ भगवन भवन वचन मो
हि संगा॥ कीन जठिर दुज हृदय उमंगा॥ दीन
[struck] बीच भगवाना॥ अब निज धरम विप्र वि
सराना॥ सुनत सभ्यजन वदन उचारे॥ जो सा
खी अस कृस्न तुमारे॥ इहां देहिं साखी तुव आई॥
तब [illegible] हि मिलहिं कुवरि सुखदाई॥ सुनें असे भ
व [struck] दुखारी॥ विप्र वदन अस गिरा उचारी॥ इह
(गात) सब भये वृद्ध दुज बोरा॥ मुहि भरोस अब भगवन
तोरा॥ [struck] करत पदो तोकर

समुदाई॥ मोर कवन विनु कुसमसनाई॥ प्रभुपें च
लहु सो चउरठानी॥ बोल्यो वदन विप्रअस वानी॥
मोर विनेति सुनहु बुधसारे॥ जो लागहिं कछुउ
चित तुमारे॥ तो तुव चारि मास लग अन्या॥ देन
न देहु वृद्ध दुज कन्या॥ ईहाँ मोर आगमन निहारे॥
पुनि करिहो रुचि जवन तुमारे॥ पै कवहुं कि तुव
वचन विधंस्यो॥ ब्रह्म घात तव पाप नसेस्यो॥
सुनि तहि कथन सभ्य जनसारे॥ साधु साधु अस
वदन उचारे॥ हम तुव वचन कीन सइकारा॥ अव
मानहु तुव कथन हमारा॥ दोहा॥ चारि मास उप
रांत जे एक दिवस कढि जाहिं॥ तव कन्या इहि
वृद्ध कर कवहु मिलव तोहि नाहिं॥३॥ टीका॥ तव
सो तिनके घर से निकल कर परम दुखी और निरा
सचित भया हुआ राजा के द्वारे पर चला आया तहां
वडी लंवी ऊंची स्वर से पुकार कर अपना वृतांत रा
जा को सुनाय देता भया तव राजा सुन कर के कोप
के वस होय गया तुरत हीं अपने दूत भेज कर वृ
द्धब्राह्मण को तिसके पुत्र बांधवों के सहित तहां
सभा मे बुलाय कर झगडे विवाद का कारण जो था
सो पूछने लगा तव तिस वृद्धब्राह्मण के पुत्र और
बांधव तिस दीन ब्राह्मण के साथ वादसंवाद करने
लगे परंतु राजा ने और विद्वान पंच ब्राह्मणोंथे ति जो
नको आज्ञा दई कि तुम इनके वीच वैठ कर सत्य
सत्य जैसे उचित धरम है सो समुझ विचार कर मेरे को
सुनावो तव विद्वान ब्राह्मणों ने तिन दोनों का क न
थन वृतांत सुन कर फिर सार असार को परस
परविचार कर कहने लगे कि भाई सदैव ते हमारे
कुलकी रीती है औ देस की मर्यादा भी है कि
लघू जो कोटी जाती है जिसको कदाचित कन्या

नहीं देते हैं इस ब्राह्मण का अनुचित वृथा ही
विवाद है ऐसे विद्वान जन परस्पर कथन कर
कर फिर तिस ब्राह्मण को कहने लगे कि भाई
जब वृद्ध ब्राह्मण ने तेरे साथ अपनी कन्या के
देने का वचन धरम किया था [illegible] तब कौन साक्षी
रहा तिस को बताय देवो जो वे आय कर साक्षी देवे
तो तेरे को कन्या मिल जाती है इस प्रकार तिन का क
थन सुन कर ब्राह्मण कहने लगा कि हे सभा के वि द्वा
न जनो तिस समय मानुष्य तो साक्षी कोई नहीं था
केवल [illegible] गोपाल भगवान ही साक्षी थे क्यों कि ति
न के ही भवन में वृद्ध ब्राह्मण ने मेरे साथ अपनी
इच्छा से आनंद पूर्वक कन्या के देने का वचन किया है
और दीनबंधु भगवान को ही बीच साक्षी राखो है अ
ब वृद्ध अपना धरम जो है सो विसार बैठा है ऐसे
तिस का कथन सुन कर सभा के विद्वान कहने ल
गे कि हे ब्राह्मण जो कदाचित ऐसे इष्ट देव तेरे
साक्षी हैं तो वे आय कर के साक्षी देवें तिस पर अ
ब कन्या तेरे को मिल जावेगी ऐसे बड़ी अगम
और अनहोनी बात सुन कर ब्राह्मण हृदय में क
हने लगा कि हे भगवान इस समय तो सब तिस वृद्ध ब्राह्म
ण का ही पक्ष करते हैं और तिसी की ओर सब हो
गये हैं मेरे को केवल प्रभु तुमारे ही चरणों का भ
रोसा है और दीनबंधु तुम ही मेरे सहायक हो ऐ
से सुनाय कर इह दृढ़ किया कि अब गोपाल जी के
पास ही चलता हूं तब तिन को कहने लगा कि
हे विद्वान जनो जो तुमारे चित्त को उचित और नी
की लगे तो मेरी इह विनती है कि तुम चार महीं
ने तक इस वृद्ध की कुआंरी कन्या किसी और दूसरे को व्या
हण नहीं होने देना तब लग मेरा आवना देख

तें अधिक हीं सेवा करने लगा इस प्रकार सव ती र्थयात्रा करते हूए दोनो ब्रह्मण घर मे आय प्रापत होते भये तव वृद्ध ब्रह्मण ने अपने स्त्री पुत्र और सव बांधवों तिस ब्रह्मण की तिव काई अपने रोग कलेश का वृतांत जोणा सो भली प्र कार सव सुनाया तिस तें उपरांत फिर तिस ब्रह्मण को पुत्री दान देना भी कथन किया तव बांधव और प्रसंना तो सुनते रहे कुछ नहीं बोले परंतु जव पुत्री दान का प्रसंग सुना तव कहने लगे कि अहो पिता इनतेने कैसी अनरीती की अयोग्य वार ता करी है हमारे वंस मै अव लग ऐसी कुचाली कवी नहीं हूई जो अपने नाते से वाहिर और किसी दूसरे को कन्यादान किया हो और जो कदाचित आज हम इसको नाती कर लेवें तो अभी अपनी जाती पंक्ती से वाहर हो जावें इस मै कुछ संशय नहीं है हे तुम मौन होय रहो जो कदाचित यह कुछ झगड़ा विवाद करेगा तो हम इसके साथ समुझ लेवेंगे और इसको भली प्रकार से तुष्ट करदेवेंगे ऐसे वृद्ध ब्रह्मण बांधवों का कथन सुनकर तिन के वश भया हूआ मन मारे हूये मौन होय रहा कुछ बोल नहीं सकता भया तव सो ब्रह्मण तिस वृद्ध के धरम सुमरण करावता भया कि अव अपने वच न को करिये इस प्रकार जव ब्रह्मण ने कहा तव वृद्ध ब्रह्मण के पुत्र बांधवों ने सुनकर दुरवचनों तें तिस का वहुत तिरस्कार कर के फिर कोप से प कड़ कर घर से वाहिर निकाल दिया ॥ २ चौपाई ॥ त व सुविप्र तजि जठिर अगारा ॥ अति निरास चित चिंतित पति द्वारा ॥ दीरघ स्वर निज वदन अलाई ॥

तुई कारकरके का मान करके हृदयमै कृसप्र
मात ताको सुमरकर तहांसे तुरत हीं चलपरु ता म
पा एक मही ने तक श्रम पायकर ग्रौर मारग को
काटकर मथुरापुरी मै आय प्रापत भया तब ग्रके
ला ही भगवान के भवनमैं आय करग्रौर नम्रताई
से प्रणाम करकर दोनो हाथ जोड़ करके ग्रप
नी सव विथा सुनाय देतो भया ग्रौर फिर कहने लगा
कि हे दीन हितकारी प्रभू जो ग्राप मेरे साथ ग्रव सा
खी देने के लिये चलो तव तो भली वात है नहीं तो
मै ग्रवी तुमारे सनमुख ग्रपने प्राणों का नास कर दे
ऊंगा ग्रर्थात ग्राप के देखते ही ग्रगनीमै जलमरू
गा ग्रैसे कथन करकर भूखोप्यासा हीं व्याकुल
चित होयकर गोपाल भगवान के भवनमै हीं सोय
रहा तव भक्तवछल तिस ब्राह्मण की दशा देखकर
दया के वश भये हुये स्वपनेमै कहने लगे कि हे ब्राह्म
ण तुम हृदयकी चिंताको त्याग देवो मै ग्रपने
ईश्वर्यवडाई को त्यागकर तुमारे साथ ग्रव ग्रा
चलूंगा ग्रव तुम प्रातःकाल स्नान करकर भो
जन पावो ग्रौर कल को जव ग्राधी रात वतीत हो
जावेगी तव मै ग्रपने भवन को त्यागकर तेरे साथ
चला चलूंगा परंतू तुम ग्रागे ग्रागे मेरी चरन
नेवरका ग्रर्थात मेरे पाउं की झांजर का शब्द
सुनते चले चलना पीछे फिरकर नहीं दे
खना ग्रौर जो कदाचित तुम पीछे फिरकर देखो
गे तो ब्राह्मण मै तुमारे साथ नहीं जाउंगा इ
से वचन तुम सत्य करके जान लेना इस मै कुछ
संशय नहीं है इस प्रकार जव दीनवंधू ने कहा
तव ब्राह्मण स्वपन देखकर के जाग उठा ग्रौर प्रा
तःकाल होते स्नान करकर भोजन पाया

ग्रौरतिसमयकर

दि

तिस तें उपरांत फिर भगवान कृपानिधान के भवन
मैं आयकर बैठ जात भया ॥४॥ चौपाई ॥ उत के
ठित चित लाग निहारन ॥ होहिं रजनि कब शोक नि
वारन ॥ अस तहि करत प्रतीक्षा ताहीं ॥ भई रैन नहि
मंदिर माहीं ॥ तब भगवान भक्त चित चोरा ॥ मंदिर
अजर अर्ध निशि जोरा ॥ चलि आये नायक सत व
भवना ॥ नेवर मुखर
सुनत दुज स्रवना ॥ चपल चैल निज लेत तुलाये ॥
चल्यो अग्र भगवान सिधाये ॥
भयो उदत मारग तब भाना ॥
सोइ करत पथ गवन सराना ॥ दुज कर हृदय पला
लसा भारी ॥ देहि आज चलि साथि मुरारी ॥ सफ
ल होहि मम मानस कामा ॥ भई तास अस चिंतन
स्यामा ॥ मोद मगन प्रभु वचन विसर्यो ॥ नेवर
मुखर स्रवन नहि परयो ॥ भ्रमवस पाछि लला
गनिहारन ॥ तब गोपाल भक्त भय वारन ॥ ठाढे
अविर भूत थिर होई ॥ विप्र देखि प्रभु मूरति सोई ॥
साजल जुगल नयन हुलसाता ॥ पुलकगात मु
ख गदगद बाता ॥ करि प्रणाम अस तुति भगवाना ॥
लाग्यो करन वदन दुज नाना ॥ हरषि हरि हि अस
कहत उचारी ॥ कृपासिंधु अब चलहु सिधारी ॥
अब नजाहु भगवन अस बरना ॥ करहु विप्र मम
वचन सुमरना ॥ तब भूदेव विपुल पछताना ॥
अहो कथन भगवन विसराना ॥ अस दुज रहो
बहिर थिर ग्रामा ॥ प्रभु पै विपत ठाडि नहि ठामा ॥
तहं नरेस देस कर राती ॥ सेजुत सचिव सुन
इहि भाती ॥ भयो भूरि विसमय चित दपना ॥ सुनहु
नरिंद्र इंद्र गुण अयना ॥ इहि दुज दीन विपुल श्रम
पावा ॥ साक्षी भरन हेतु मुहि लावा ॥ सोरठा ॥

सत्य वचन नरनाहु॥ सम सपबृसनमुख जोरि॥ निजवरकुंवरिविवाहु॥ मामाहित दुज सन करन॥ दोहा॥ दीन्यो साखी वीच मुनि वृष धरम दृढ कीन॥ भयेसकल अचरज विवस देव स्वपन निज चीन॥५॥ टीका॥ तब चित करके वडे उतसाह वाला भया हुआ ब्रह्मन देखै कि रात्री कब होती है इस प्रकार तिसको प्रतीक्षा अर्थात उडीकते उडीकते को तहां दीनानाथ के भवन में हीं सूरज लुपत होयगया और रात्रि आ तीभई तब भक्तजनोके चित्तको चुरायलेनेवाले भगवान वडि अंधेरी आधीरात को भवन से निकल [struck through] कर वाहर अंगणभूमीमे चले आवतेभये तिस समय दीनवंधू की चरन नेवर अर्थात पाउं की झांजरी को [struck through] शवद जो हुआ तो तिसको सुनकर ब्रह्मन चपलता से तुरत अपने वस्त्र आदि लेकर शीघ्र गती से कृपानिधान के आगे आगे होयचला तब चलते चलते सूरज जो है सो उदय होयगया और मारग चलते चलते फिर अस्त [illegible] होने का समय भी आयगया ब्रह्मन के हृदय मै वडा उतसाह कि आज भगवान चलकर के साखी देवेंगे और मेरे [struck through] मनोर्थ सव सफल होवेंगे ऐसे चिंतन करते करते को सांझ पड जाती भई आनंद मै मगन भये हूये को भगवान कृपानिधान का वचन [struck through] विसर गया नेवर का शवद जो कान मै नहीं पडा तो भ्रम के वश भया हुआ पीछे को देखने लग जाता भया तव भक्तों का भय दूर करने वाले भगवान तुरत हीं प्रसन्न होय के सनमुख स्थित होयगये ऐसे ब्रह्मन

मेरे पीछे के विचार से चली

जो पाछे

कार उपरांत जैसी तुमारी रुची होगी तैसी करीयो औ
र जो कदाचित इसमे रे वचनको भंग न करोगे तो तुम
को अवस्य ब्रह्महत्यात का पाप लागेगा इस प्रकार
तिह का कथन सुनकर सभाके सब लोग साधु साधु
कहने लग जाते भये औ फिर कहने लगे कि भाई हमने
तो तुमारा कथन सब सईकार किया परंतु अब तुम
हमारा कथन भी सत्य कर के मानो सो क्या है कि जो
कदाचित चार महीने ते उपरांत एक दिन भी नि
कल जावेगा तो कन्या तुमको नहीं मिलेगी ॥३॥
चौपाई ॥ तिन कर कथन करत सईकारा ॥ सुम
रि कृस्न दुज वेग सिधारा ॥ मास प्रयंत विपुल स्रम
पावा ॥ मथुरा का टि कठिन पथ आवा ॥ एकल आ
य भवन भगवाना ॥ करि प्रनाम जोरत जुग पाना ॥
विप्रास कहत निज दीन हि भाखे ॥ जो प्रभु चलहु
दैन हित साखे ॥ तो मै केन तन वपुख वडारहु ॥ इन्ह
नाथ धरि इंधन जारहु ॥ अस न्तुध्यत विपत वि
हाला ॥ रहयो सोय निसि भवन गुपाला ॥ भक्त पा
ले तव स्वपन मझारा ॥ दुजहि प्रकट अस वचन
उचारा ॥ चिंता तजहु संग तुव लागी ॥ चलहु
विप्र प्रभु ता निज त्यागी ॥ तोर हुचिर हित हृदय
विचारी ॥ भाखेहु सत्य विप्र व्रतधारी ॥ करि सना
न तुव प्रात सुजाना ॥ करहु पाक भगवान वखाना ॥
काल्हि अर्ध रजनी दुज भंगा ॥ तजि निज भवन च
लहु तुव संगा ॥ मै पाछिल तुव आगल गवना ॥
मोर चरन नेवर रव जवना ॥ सुनत चलहु आग
ल पथ सेखा ॥ विप्र कवहु पाछिल तुव देखा ॥ तो
न चलहु मै संग तुमारे ॥ अस प्रकार जव देव उ
चारे ॥ दोहा ॥ विप्र देखि अस स्वपन तव उठ्यो प्रा
त हरखाइ ॥ करि सनान भोजन स्थित भयो भवन
प्रभु आइ ॥४॥ टीका ॥ तव ब्रह्मन ने भी तिन का कथन

चौपाई॥ उठे प्रात सब करत विचारा॥ निसि अचर
ज कछु लखन निहारा॥ तब तजि सदन प्रात जन का
हू॥ आवा वहिर ग्राम जब ताहू॥ तहाँ विप्र जुत देखि
सुहाई॥ मूरति ललित भक्त सुखदाई॥ करि प्रणाम
अस कहत विचारी॥ इह तो प्रकट आपु गिरधारी॥
अरु इह विप्र लख्यो मै येहू॥ अस कहि चल्यो ग्राम
निज तेहू॥ जाय सवन सन वदन उमेगा॥ हरि अ
गमन जेस भन्यो प्रसंगा॥ सो की विप्र देन हित आ
जू॥ दुज सन आय विदत जदुराजू॥ ललित स्याम
मृदु मूरति धारे॥ अमुक सथल थिर भक्त उवारे॥
लोक सुनत मानस हरषाये॥ तहां भूप ले जुत चलि
आये॥ गिरधर रूप अनूप निहारी॥ गदगद गिरा
दृगन भरि वारी॥ लगे करन अस नुति भगवाना॥ हो
अ नेद किमि जाय बखाना॥ तासु विप्र पद वंदित राजा॥
[illegible] भूप प्रसंसन बहु विधि लागा॥ आज तुम हु सेव
ति सुरधरना॥ धन्य सुजस [illegible] जाहि न वरना॥ जा
स भक्ति वस गे यन पाला॥ तुव आये इहि त[illegible]त
निज आला॥ अस कहि वृद्ध विप्र नरनाहो॥ वो
लि लीन निज सन सुख ताहो॥ वेद वहित रीत
सब कीनी॥ दुजहि विवाह कुवरि वर दीनी॥ खुर
दा ग्राम विविध धन माया॥ दायज दीन मुदि
त नर राया॥ शिलपिनि पु[illegible]ण तत काल बु
लाई॥ राजे जहा भक्त सुखदाई॥ मनिमनि तहां
वदन नरराई॥ भवन भूरि रचना विरचाई॥ ता
मध कीन स्थापित सोई॥ मूरति दिव्य दया नि
धि जोई॥ विप्र प्रवर कुल कन्या पाई॥ भयो
पुजारि भवन सुरराई॥ प्रतिदिन काय कर मन
न वाचा॥ दीननाथ सेवन रुचि राचा॥ सौं भूत
होन हित ताला॥ भयो नाम साखी गोपाला॥

५८

सो प्रसिद्ध आज है जेगगा॥ देखहु भक्तिप्रभाव
सुहावा॥ वसी भूत दुज होत सुहाये॥ साखी देन
देव चलि आये॥ दोहा॥ उहां प्रात है गये जागे
सकल पुजारि॥ भगवन मूरति भवन सुभ नाहिन
दृगन निहारि॥ ६॥ जो वु प्रात काल भया तब उठ
कर परसपर विचार करने कि इन रात्रि के समय कैसा
अदभुत स्वपन देखने मे आया है ऐसे सो च विचा
र करते हैं कि इतने मे एक पुरष घर से निकलके
र कुछ दूरी पर ग्राम से वाहर जो चला आया तो
क्या देखता है कि एक पुरष के सहित तहां भू
मी पर गोपालदेव की मूरती स्थित भई हुई है
तब वे प्रणाम करके कहने लगा कि इह तो
साक्षात आप कृष्ण भगवान विराजमान भये हु
ये हैं और इह पुरष भी गोपाल जी के पास कोई ब्राह्मण दे
ख पडता है ऐसे विचार करकर लौट करके अपने ग्राम मैं
चला आया तहां आवते हीं सब लोगों के साथ नंदला
ल भगवान का आगमन अर्थात आवना जो है सो सब वृ
कर के सुनाय दिया कि भाई ब्राह्मण की साखी देने के लिये
तिस के साथ सरब चराचर के स्वामी आज मथुरा को त्या
ग कर तुमारे ग्राम के वाहिर आय करके विराजे हुये हैं
तब लोक सुनकर के हरष के वश भये हुये राजा के सहि
त सब धावते हुये तहां हीं चले आये जब गोपाल भग
वान की मनोहर मूरती का दरसन पाया तब नेत्रों मे प्रे
म जल भर आये और गदगद वाणी से दीनानाथ की
असतुती करने लग जाते भये तिस समय का आनंद
सुख जो है सो कुछ कहा नहीं जाता फिर तिस ब्राह्मण के
चरनों को वंदना करकर अनेक प्रकार शलाघा वडाई
से कहने लगे कि हे ब्राह्मण आज तूं हीं जगत मे
और सुजस का पात्र है कि जिस की भक्ती के वश
धन्य और सुजस का पात्र है

४२१

सरव सृष्टी के आधार गोपालजी अ
प का धाम त्याग करके ईहां हमारे गाउं मै चलेआ
ये हैं ऐसे कथन करकर राजाने तिस वृद्धब्रह्म
ण को तुरत तहां भगवान के पास हीं बुलायलिया
और वेद की विधी अनुसार तिस ब्रह्मण के साथ कन्या
का विवाह जो है सो करवायदिया और बहुत धनपदा
र्थ कु सहित बेखुरदा नाम ग्राम जो था सो आनंद
पूर्व दायजमे देदिया तिसतें उपरांत फिर
बड़े प्रवीन शिलप कारों को अर्थात राजइयों को बुला
यकर जहां गोपाल भगवान विराजे हुये थे तहां
तिनको भली प्रकार चिताय समुझाय कर
भवन की मनोहर रचना जो है सो करवाय दई तब
तिस भवन के बीच भगवान कृपानि
की दिव्य मूरती को स्थापित कर देते भये सोई
ब्रह्मण सुंदर कुल की कन्या को पाय कर तहां दी
न बंधू के भवन का पुजारी होजाता भया रात्री दिन
मन वचन काया करके गोपाल भगवान के पूजन
सेवन मे लीन रहने लगा तब दीनानाथ साखी
देने को जो आये थे इसीतें प्रभू का नाम साखी गो
पाल प्रसिद्ध होय जाता भया सो अब लग भी संपू
र्ण जगत मे विदत हैं देखिये भक्तों प्रभाव के साथ
पूर्व है कि भक्त के वश भये हुये भगवान को
त्याग कर साखी देने के लिये खुरदा नाम ग्राम विखे
चले आवते भये और ऊहां जब प्रातःकाल होय
गया तब के पुजारी गुपाल देव के पूजन सेव
न करने को भवन के कवाड़ जो खोलते भये तो क्या
देखते हैं कि भीतर दीनबंधू की मूरती ही नहीं है॥
२॥ चौपाई॥ लगे विचार करन समुदाई॥ देव कव
न रह भयो रजाई॥ मनुज करम के कृ जा हिन

वैष्णवों ... पूर्वक ... मथुरा

गोपाल जी की मनोहर मूरती को देखकर शरीर कर
के प्रफुल्लित और नेत्रों मैं हरष जल भरे हूये हाथ जो
ड़कर गदगद वाणी सैं असतुती करने लगजाता
भया और फिर वारवार प्रणाम करके विनती करने
लगा कि हे दीन दयाले हे कृपासिंधू अव दया करके
आगे चलिये और मेरी साखी दीजिये तव भक्तपा
ले कहने लगे कि हे ब्रह्मण अव मै आगे नहीं जाऊं
गा तुम मेरे वचन को सुमर्ण करो कि जो तुमा
रे साथ नियम किया था अव मेरा कुछ दोष नही
है जो हूआ सो तुम से हीं हूआ तव ब्रह्मण कृपा
निधान के वचन को सुमर कर हृदयमे अनेक प्रका
र पश्चाताप कर कहने लगा कि अहो मै अभागी
ने दीनानाथ के वचन को विसार दिया ऐसे चिंता
के वस व्याकुल मन भया हूआ ब्रह्मण तहां ग्राम के
वाहर हीं नंदलाल भगवान के पास स्थित होय र
हा तव तिस देस का तहां राजा जो था तिस को
मंत्री के सहित रात्री के समय ऐसा स्वपन दिखाई
देते भये कि हे राजन यों विषें प्रधान राजन इस
दीन ब्रह्मण ने कैसी श्रम और कलेश पाया
या है जो मेरे को साखी देने के लिये ल्याया है हे रा
जन मै सत्य वचन कहता हूं कि मेरे सनमुख वृध
ब्रह्मण ने प्रकट करके कहा जो ब्रह्मण मै अप
नी कन्या का तेरे साथ विवाह करदेउंगा इस वा
रता का वीच साखी मेरे को किया था तो ते वृधविप्र
ने इस ब्रह्मण को कन्यादान देने का सत्य करके
धरम किया हूआ है आगे जैसी तुमारी रुची हो तै
सी करो इस अद्भुत स्वपन को देखकर राजा
और मंत्री परम अचरज को प्रापत होयगये॥

मानुष्य का तो इहां काम नहीं है किसी असु
र देवता ने कोई छल चरित्र किया है इतने मे को
ई एक पुरष तहां आय प्रापत भया सो जहां तहां
सब देव भवनैं और अस्थानों को देखता हूआ पर
म सुखदायक केशव भगवान का दरसन करके फि
र आनंद से गोपालजी के भवन को चला आया था त
हां वे पुरष भगवान की मूरती के चले जाने का
प्रसंग सुनकर तिन पूजकों को कहने लगा कि भा
ई तुम चिंता सोच मत करो मै तुम को सब वृतांत
सुनाय देता हूं ऐसे तिस का कथन सुनकर पू
जक जो थे सो कुछ धीरज को धारकर कहने लगे
कि हे प्यारे तूं तो आज हमारे भागों के वश ही इहां
आय प्रापत भया है अब कृपा करके हम को शीघ्र
बताय दे कि हमारे प्राण आधार कहां और कौ
न स्थल मे विराजे हूये हैं तिन के विना आज हमा
रा सरब सुख डूबा जाता है और हम सब मरणांत
होय रहे हैं इस प्रकार जब पूजकों ने आपना दुख
और कलेश कथन किया तब जिस प्रकार दीन
बंधू भगवान का जाना हूआ था वे सब प्रसंग
प्रकट करके सुनाय देता भया कि तुमारे इहां जो
एक ब्रह्मण आया था तिस की साखी देने के लिये
दीनानाथ तिस की भक्ती के वश भये हूये जग
न्नाथ जी के निकट चार कोस पर खुरदा नाम
करके एक ग्राम है कि जहां मे
तहां तुमारे गोपाल कृपानिधान विराजे हू
ये हैं और तिस ब्रह्मण की साखी देकर तिस को सं
सार मे धन्य धन्य बड़ा कीरती मान और सुजस मा
न कर दिया है इस प्रकार तिस के मुख से वचन

सुंदर नवलदेव निजपाये॥ असप्रकार इहचरि
ते सुहावा॥ मैनिजवदन संत जनगावा॥ दोहा॥
अखिल काम पूरण रुचिर विमल भक्ति भगवान॥
ताते परिहरि भक्ति अस भजिय न सेवति ग्यान॥ जे
हि प्रभाव बस होत द्रुत तजि निजभवन रसाल॥
साखी दे न दयानिधी दुजमन गवन गोपाल॥८॥
टीका॥ इसप्रकार कथन करकर फिर हरष से आ
य करके भगवान भक्त सुखदान की मूरती को उठा
वने लगे परन्तू सो भक्त जन के वश भई हुई
देवमूरती कैसे उठ सकती थी बारबार हठ कर
कर अंत अन जले खानपान त्याग करके मरणेपर
हठ बांध लेते भये तब तिन को रात्री के समय भगवा
न सपने मे कहने लगे कि भाई तुम मथुरा मे चले जावो
अब मैं जाने की आसा हृदय से त्याग देवो क्यों कि मैं भ
क्त के वश भया हूं या अब आनंद पूर्वक इहां हीं निवास
करूंगा तुम मथुरा मे जायकर मेरी सुंदर नवीन मूरती
बनवाय कर विधी वत तहां भवन मे स्थापित कर देवो
और तिस विखे निश्चय करके मेरा निवास जानो ऐसे
रात्री के समय पूजक सपन देखकरके प्रातःकाल हो
ते उठकर और चिंता को त्याग कर सनान संध्यादि क
रम सब करते भये तिसते उपरांत श्री गोपालजी के च
रणों पर प्रणाम कर जब चलने को तयार भये तब ब्रा
ह्मणो ने बडे आदर सतकार सें भोजन जिमाया और
फिर यथा योग धन वस्त्र देकर प्रीती सनमान से विदा
य कर दिये तब सो पूजक ब्राह्मण की सुंदर भक्ती की
अनेक प्रकार शलाघा वडाई करते हुये मारग को
नवृत्य करके मथुरा पुरी आय प्रापत भये तहां गोपा
ल देवजी की तुरत नवीन मूरती बनवाय कर विधी
पूर्वक बडे सतकार मंदिर मे स्थापित कर के यथावत
पूजन सेवन करने लग जाते भये तब मथुरा के

चीना॥ इह सुर असुर चरित ककु कीना॥ तो लोगौ उ देसतें का हू॥ यात्रा करन आव उत ताहू॥ जो नर जेह देव भवन सु मं लेखे॥ फिरि फिरि ता सकल दृग देखे॥ कदिदरसन के हाव सुखदाया॥ तब गोपाल भवन चलि आया॥ तहं गोवन मूरति भगवाना॥ सुनन तास अस वदन बखाना॥ करहु न कछु चिंता मन माहीं॥ मैं अब करहुं कथन तुव कांहीं॥ सुनि पूजक जन वदन अलावा॥ हमरे भाग दिवस तुव आवा॥ वेग सु करहु कथन अब प्यारे॥ कहो प्राण आधार हमारे॥ सुरद्रुज धरनि धेनु प्रतिपाला॥ सकल सुखद प्रभु दीन दयाला॥ तास देव बिनु मरण हमारा॥ अस प्रकार जब तिनहिं उचारा॥ तब वृतांत तहिं कीन नरूपा॥ द्विज सन यथा गवन सुर भूपा॥ जगन नाथ पुरि पश्चिम वोरा॥ जुग जुग कोस ग्राम कल मोरा॥ लुरदा नाम सकल विख्याता॥ तहँ सु वसहिं तहं भक्त सुखदाता॥ तुमरे इहां विप्र जे आवा॥ तहि साखी प्रभु देन सु लावा॥ कृपासिंधु निज भवन तयागी॥ आवन विप्र भक्त हित लागी॥ तहं निवास जाय निज कीना॥ ता सुख ठाईं सु जस जग दीना॥ पूजक सुनत तास अस बानी॥ चले तुरंत धाय सुख मानी॥ तहं जाय निज भगवन आगे॥ विनय करन रोदन मुख लागे॥ हमरी कवन चूक प्रभु जाना॥ जहिं ते तजि आये भगवाना॥ सोरठा॥ हमरे सरब प्रकार॥ दीन दयाल करुणा यतन॥ तुम हु प्राण आधार॥ नहिं न आन अब लेव जग॥ १॥ टीका॥ तब परम अचरज के वश भये हुये पूजिक परसपर सब विचार करने लगे कि इह कौन चमतकार है कुछ लखा न नहीं जाता

लोग जो भगवान की विरहं से व्याकुल भये हूये थे
सो देखकर के सब सुख को प्रापत होयगये नाभा
दासजी कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार इह मनो
हरगाथा जो है सो मैंने गायन करी है संसार में सब
कामना के सिद्ध और सफल इह भगवान की निर
मल भक्ती जो है सोई सामर्थ्य है भक्ती के समान सं
सार समुद्र के तरने को और कोई भी सुगम उपाय
नहीं है तातें और सब वासना उपासना को त्याग
कर केवल भक्ती को हीं आधार करना चाहिये देखि
ये भक्ती [illegible] का प्रभाव कि जिस के वश [illegible] भये हूये
भगवान अपने मथुरा धाम को त्याग कर ब्रह्म
ण के साथ साक्षी देने को खेरदा ग्राम विषे आय
निवास करते भये ॥८॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भ
गवद्भक्ति महात्मे भाषाटीकायां ब्रह्मणचरित
वरणनं नाम सरगः

भक्ति

द्वारका की पूरब ओर एक डाकौर नाम करके ग्रा
म प्रसिद्ध होता भया तहां कुटंब के सहित मन वच
न काया कर के भगवान की भक्ती मे प्रवीन और दृ
ढ़ ब्रत मै लीन रामदास नामा ब्रह्मण वास करता
था
तिसने इह ब्रत धारन किया हूआ था कि
नित्य दसमी के दिन द्वारका मे चले जाना और
तहां एकादशी को ब्रत धार कर रात्री भर
श्री गोपाल जी के भवन मै जागरण करते रहना और
द्वार मै भिक्षाटन कर कर अतिथी साध ब्रह्म
णों की सेवा करनी इस प्रकार कुछ समय वती
त होय गया तब वे ब्रह्मण ब्रद्ध हो जाता भया प
रंतु तिसने रणछोड भगवान की यात्रा जो थी सो
नहीं त्यागी नित्य आयकर ब्रत जागरण कीया
दि सब करता रहा यद्यपि बडा बृद्ध निरबल और
अशक्त भी होय रहा था तद्यपि भगवान कृपानि
धान का दरसन परसन कर के कुटंब की मोह
ममता के वश भया हूआ फिर लौट कर के घर
मे ही चला आवता था एक दिन निराहा
र एकादशी का ब्रत धारने
द्वादशी को पारन करके जो किया तो शरीर बुढा
पे का ग्रसा हूआ अत्यंत ही और सिथल बलही
न होय गया घर मे नहीं जाय सका तहां भगवा
न के भवन मे ही सोय गया और निद्रा आय ग
ई तब दीन बंधू भगवान सपने मे तिस को कह
ने लगे कि हे ब्रह्मण तेरा इह सिथल निरबल औ
र बृद्ध शरीर देख कर के मेरे को परम कलेश भा

तत काल द्वारिका मे चला आया और एकादशी का व्रत धारन कर के भगवान के भवन मे जागरन करता रहा जब दोपहर रात चली गई तब दीनबंधु के पास जाय कर सब भूषण व स्त्र उतार कर के व ड़े सनमान से तहां भवन के बीच अलग रख दिये और फिर आप प्रणाम कर कर अकेला ही प्रभू की मूरती को उठाय कर और सनमान से गाड़ी मे राख कर रातो रात शीघ्र गती से धाय चलता भया ईहां जब द्वादशी के दिन प्रातःकाल होते ही पूजक जन भगवान की सेवा करने के लिये भवन मे आये तो क्या देखते है कि रणछोड़ देव की तहां मूरती नहीं है तब तो सब पुजारी बड़े भ्रम से अचरज के वश होय कर परस्पर कहने लगे कि भाई यह क्या चमतकार भया है कुछ समुझ विचार मे नहीं आवता हमारे रणछोड़ भगवान को कौन ले गया है परंतु ए कैसे दृष्ट होता है कि रात्री के समय कोई भवन मे कृपानिधान की मूरती को यतन से निकाल कर ले गया है॥२॥ चौपाई तब तिन सब जन वदन अस काहा॥ ईहां सु राम दास दुज रहा॥ सोन पराति अब नयन न देखो॥ होत ताम भ्रम हृदय वसेखो॥ ते दुज शाकट सदन ते लाया॥ तहि पर प्रभु कहे राखि निधाना॥ अस कहि पूजक वि प्रत दु खारे॥ लागि चले तापै॥ देखो चल्यो जात दुज धाये॥ सो मूरति रणछोड़ सुहाई॥ शाकट अरूढ दृगन दरसाई॥ राम दास देखत तिन काहीं॥ कोप न लोपि या त्रास मन न

अथ राम दास चरितं

दोहा॥ अब मै जुलमानस हरन भक्ति महातम आन॥
करहुं कथन सादिर वदन कृस्न भक्ति वरदान॥ चौपाई॥
द्वारावति कर पूरव ओरा॥ रहा प्रसिद्ध ग्राम जो कोराय
रामदास अस नाम सुहाये॥ निवसहिं तहां विप्र सुखछा
ये॥ सो कुटंब हरि भक्ति प्रवीना॥ धरम सुकरम सुथिर
व्रत लीना॥ दस मी दिवस द्वारिका जाना॥ अस प्र
श्री
ति [illegible] सत तास व्रत ठाना॥ पावन दिवस एकदस माहीं॥
धारहिं विप्र सुप्र व्रत काहीं॥ भक्ति प्रीति से जुत वि
स्तारी॥ जागरण करहिं भवन गिरधारी॥ इहां [illegible]
करत निज सदन अमेवा॥ मिष्टान्न करि संतन
सेवा॥ अस प्रकार कछु काल सराना॥ भयो विप्र
वर जठर महाना॥ पै यात्रा रंचक छोड़ सुहाई॥ तजी
न विप्र भक्त सुखदाई॥ निवल असक्त वृद्ध दुज
काया॥ तवहुं कुटंब मोह मन न छाया॥ तहि तें
करि दरसन भगवाना॥ जात बहुरि फिरि सदन सुजा
श्री
ना॥ अवसर एक इकादसि [illegible] हीं॥ आवा धरि अपो
ष व्रत काहीं॥ द्वादसि कहं दुज पारन कीना॥ भयो
सिथिल वपु बल हीना॥ जरा ग्रसत गृह स
को न जाई॥ देव भवन निद्रा तहिं आई॥ सोरठा॥
तव स्वपने प्रभु आय॥ दुजहिं भनत मृदु वचन अस॥
देखि सिथल तुव काय॥ उपज्यो भक्त कलेस मोहि॥
दोहा॥ तुव मन वच काया निपुण मोर भक्त व्रत
धारि॥ अब आगमन दुखे सुजन तुव सकहुं न दृगन
निहारि॥ तां ते आपन सदन अब लै [illegible] चलै
दुज मोहि॥ सेवत हौं सज्जन तहां तुव आगमन
स्रम खोई॥ १॥ टीका॥ अब और बड़े सुंदर मन
के हरनेवाले भक्तों का महातम जो है सो कथन करते हैं कि
और कृस्न भगवान ने भक्तों की प्रीति के देनेवाला
के र

और रणछोड भगवान की मूरती जो है सो ऊ[illegible]
पर राखी हुई है तब रामदास तिनको आवते
देखकर भयसे कांपता हुआ तुरत भगवान की
मूरती को उठाय करके पास एक वापिका जो वा
वली थी तिसके जलविखें डार देता भया तब वे
पुजारी निकट आयकर देखने जो लगे तो भग
वान की मूरती गाडीपर नहीं पाई तब तिन मेंसें
एक कहने लगा कि इह ब्राह्मण मैने वापिका
की वोर जाता देखा था ऐसे तिसका कथन सु
नकर वे सब वापिका पर जायकर जो देखने
लगे तो भगवान की मूरती जल मे पडी हुई पाई तब तो
वे सब के सब [illegible] दीनबंधू की मूरती को तुरत
यतनसें निकालने लगा परे परंतू [illegible] भक्तहित
कारी भगवान भक्त के वश भये हुये कब निकल
ते थे अंत को हार धीरज को त्यागे हुये दुखी हो
यकर कहने लगे कि इह दीनानाथ तो नहीं चल
ते है अब हम भी इहां ही वास करते हैं द्वारिका
मे क्या ले करके जावें एही कृपानिधान हमारे
सब कुटंब के आधार थे हम तहां किस की शरण
को प्राप्त होवेंगे ऐसे कथन कर कर अन्नज
ल सब त्याग करके रात्री को तहां वापिका के कि
नारे पर ही सोय रहे तब रणछोड भगवान ति
नको स्वपने मे कहने लगे कि भाई इह परम
व्रत के धारने वाला रामदास ब्राह्मण जो है सो मे
रा अत्यंत प्यारा और बडा हितकारी भक्त है मै
तिसकी भक्ती के वश होय रहा हूं अब आपने द्वा
रिका धाम मे नहीं जाऊंगा हे ब्राह्मणो तु
म मेरी मूरती के सम भाग अर्थात बराबर इसमें

४२५६

रु यतन पूजिक मिलि [illegible]रा॥ उठे न देव भक्त भयला रे॥ तुव कस लाव प्रकट पति जारे॥ भक्त हेत प्र भु करहिं न काहा॥ विप्र सुन तग्र स नूषनि ताहा॥ ~~[illegible]~~ गयो हरषित तव वा [illegible] किना रे॥ लीन तुरत प्रभु वहिर निकारे॥ दोहा॥ वहुरि तुला दुजवर धरी शिला भक्त चित चोर॥ कर [illegible] हेम श्राभर्न विये रा [illegible] दीन इक कोर॥४॥ टीका॥ फिर भगवान कृपानिधान रामदास को स्वपन देते भये कि हे ब्राह्मण तूं इन [illegible] पूजिकों को मेरी मूरती वरावर धन तो लकर के देदे तो इन लेक र के द्वारिका को चले जावेंगे ऐसे कहिकर फिर भक्तपाल रामदास की स्त्री को सपने में कहने लगे कि हे सुशीले तेरे कान मे तीन रत्ती प रिमाण सुवरण का भूषण जो पड़ा हुआ है सो तूं मेरी मूरती मूरती के साथ तोलकर इन मेरे पूजकों को देदे हृदय मे कुछ संदेह मत क रना इहते रे कान का भूषण मेरी मूरती के तु ल्य श्रर्थात वरावर श्रव ही हो जावेगा इस प्र कार रात्री के समय स्वपन देखकर पूजिक जो है सो प्रातःकाल रामदास के पास आयकर स्वपने का सव वृतांत सुनाय देते भये तव राम दास सुनकर के श्रचरज को वश होय गया श्रौर हृ दय मे विचार करने लगा कि मैंने भी रात्री को एही स्वपन देखा है श्रव कौन उपाय करूं मैं तो दीन निरधन हूं इतना भारी धन कहां से लाऊंगा ऐसे चिंता के वश भया हुआ ब्राह्मण स्त्री के पास जाय कर स्वपने का वृतांत सव सुनाय देता भया तव सो चतुर भामनी सुनकर के कहने लगी कि हे

रूक

माहीं॥ गिरधर मूरति वेग उतारी॥ डारी तुरत वापि
का वारी॥ तिन जब आय दृगन निज देखी॥ प्रभु मूर
ति तव शाकट न लेखी॥ एक करत देख्यो
मैं वीरा॥ रहे दूजे जात वापिका तीरा॥ अस कहि त
हौं जाय जब देख्यो॥ प स्यो वारि हरि मूरति ले
ख्यो॥ लगे जतन जुत ताहु निकारी॥ निकसत सो
न भक्त हितकारी॥ करि वल यतन अंत सब हारे॥
रहे न चलत प्रभु भक्त उवारे॥ अस कहि पुनि तन धीर
उर त्यागे॥ स्मरे न जाव मनन अस लागे॥ रहे हमा
र कहत एक य अगारा॥ रह्यो सकल परिवार अधा
रा॥ अब अहार वार जुत खोई॥ रहे सकल वापी
तट सोई॥ तब रजनी रणछोड़ कृपाला॥ दीन स्व
पन अस तिनहिं रसाला॥ रहे दुज रामदास व्रत धा
री मेरे प्रीय भक्त हितकारी॥ मैं रहि भक्ति वि
वस अब भाई॥ वस हुं रहौ निज सदन विहाई॥
तुव मम मूरति के सम भागा॥ रहि दुज तैं धन ले
हु सुहावा॥ दोहा॥ तास मोर रचि नवल तुव मृदु
मूरति सुखदान॥ करहु स्थापित भवन मम होत
वति सनमान॥ २१ तव ऐसे सुनकर के सब कहने
लगे कि ईहां रात्री के समय भवन में रामदास ब्रैल
ला जो है सो जागरन कर रहा था सो अब देखने
हीं पड़ता है और वे घर से गाड़ी भी लाया हुआ था
भ्रम होता है कि वे ही गाड़ी या पर डाल कर देव
मूरती को अपने घर में ले गया है ऐसे कहि कर
पुजारी तत्काल उठ कर के सब के सब तिस रामदा
स के पीछे लाग चलते भये जब जाते जाते तिस
के ग्राम के निकट जाय पहुंचे तब क्या देखते
हैं कि वे ब्रैल्हला मारो मार गाड़ी को हाँके चला जाता है

८ डंको॥

न पिला भक्त सुखदाना॥ अब तुम करन आमर
न पाई॥ लाग्यो करन कसमाई॥ राम दास तिन
कर सु निवानी॥ बोल्यो हरि भरोस जिय ठानी॥ गुर
ला येव लीला भगवाना॥ तुलै तुल्य करि ले हु सु
जाना॥ विप्र वदन अस तिन कहि आलाई॥ सुमरि कृ
ष्ण जब तुला उठाई॥ कौन रकम केचिन सन ता
हो॥ भई तुल्य मूरति सुर नाहो॥ देखि चरित्र सक
ल विसमान्यो॥ मूढ़ि तकनहीं वदन वखान्यो॥
हम न लेव कंचन हरमाई॥ लेव देव मूरति सु
खदाई॥ अस कहि लगे यतन जुत ठावन॥ कि
ला दिव्य भगवान सुहावन॥ सो किमि उठहि हर
न जनत्रासा॥ यदपि कीन तिन विपुल अजासा॥
अंत हारि निज सदन सिधाये॥ सो आमरन करन वि
य पाये॥ विप्र भक्ति अद्भुत मन भाई॥ जात सकल
निज वदन सिहाई॥ दोहा॥ धन्य धन्य रनछोर धन्य दु
जो जासु भक्ति वस आय॥ अतुलित तुल्य तुला भ
य करन आमरन माय॥ तव मूरति रनछोड़ कों
रामदास दुज ल्याय॥ कीन स्थापित भवन निज
भक्ति प्रीति सरसाय॥ लाग्यो सेवन दिवस नि
सि तासु भक्त अभिराम॥ रह्यो जियत जव लों
जगत पल न विसारे स्याम॥ अंत काल हरि
कृपा तें विनु अजास तजि काय॥ दुजवर भक्ति
प्रसाद तें लीन परम पद पाय॥ अव लों सेसें
त्रिति विदित सकल देव सिरमोर॥ भक्त हेत त
जि द्वारिका वसहिं ग्राम डाकोर॥ अस प्रकार
रनचरित मे रामदास मन हार॥ कीन यथा म
ति कथन कछु कृष्ण भक्ति प्रद चारु॥ ५॥ टीका॥
तव इस ~~[illegible]~~ काता को देख करके लोग सब मुसका

वनेलगे अर्थात हासी करने लगे और पूजक भी अ
चरज के वश भये हूये कहने लगे कि इन ब्राह्मण का
कुछ विलपत अर्थात सोदाई होय गया है और मूढ
बुद्धि हीं इन का हठ कारता है हम सब ने मिलकर के
कोर हीं यतन किये परंतु इह देव शिला जो है सो न
हीं उठी और अब इन मूढ स्त्री के कारण
भूषण के साथ तोलकर के बराबर करने लगा
है तब रामदास तिन की बाती सुनकर कहने ल
गा कि हो भाई गुरु लाघव अर्थात भारी और हौला
होना भगवान की लीला है तुम बराबर पूरा कर
के ले लेवो इस प्रकार कथन करकर ब्राह्मण ने जब
हृदय प्रमात्मा को सुमरकर तुला उठाई तब तीन
रत्ती परिमाण जो कान का भूषण था तिस के साथ
भगवान की सो शिला बराबर हो जाती भई इस
अद्भुत कौतुक को देखकर सब लोग अचरज
को प्रापत होय गये तब तिन पूजकों मे से एक
मूढ कहने लगा कि हम इस सुवरण को नहीं ले
ते अपने देव की सुखदायक मूरती जो है
सोई हम लेवेंगे ऐसे कथन करकर भगवान
की मूरती को उठावने लगपडे यद्यपि तिनों
ने अनेक ही यतन उपाय किये तद्यपि भक्ति
न कारी मुरारी की मूरती जो थी सो नहीं उठती
भई अंत को लजित भये हूये हारकर ब्राह्मण
की स्त्री के कारण भूषण को लेकर अपने घर को
द्वारका मे चले आवते भये और मारग मे रा
मदास ब्राह्मण की पवित्र भक्ती की अनेक
प्रकार शलाघा बडाई करते चले आवते हैं

९००

करहते हैं कि धन्य है धन्य है इन ब्रह्मण जिसकी भ
क्ती के वश होयकर अतुलित भगवान जो ऐसे
तीन रत्ती के कारण नूपुर के साथ तुला में तुल करके
वरावर होय गये ऐसे शलाघा करकर और द्वारि
का में जायकर भगवान की नवीन मूरती वनवा
यकर भवन में स्थापित कर लेते भये और ईहां रा
मदास भी दीनानाथ की तिस मनोहर मूरती
को ल्यायकर तनमन से विधि पूर्वक घर में स्था
पित करके भक्ती प्रीती से रात्री दिन तिस्ती के पूजन
सेवन में लीन होजाता भया जब लग जगत में जीव
भगवान के चरन कमलों की भक्ती के विना और
कोई आधार नहीं रहा और अंत काल भगवान
की कृपा से यतन के विना सहजे हीं शरीर को
त्यागकर भक्ती के प्रसाद तें परम पद जो है तिस
को प्रापत होजाता भया अव लग वे भग
वान कृपानिधान संपूर्ण जगत
में प्रसिद्ध हैं कि भक्तों की भक्ती के वश होयकर
द्वारिका को त्याग करके डाकौर ग्राम विषे जा
य वसे हूये हैं इस प्रकार इन रामदास ब्रह्मण
की भक्ती जो है सो मैंने गायन की है इन कैसी
भी भक्ती है कि जिसके श्रवण करने तें भक्तपा
ल भगवान के चरन कमलों में अवश्य प्रीती उ
पजआवती है ॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगव
द भक्ति महात्म्ये भाषा टीकायां रामदास चरि
त्र वरननं नाम सरगः

संपूरनमभत्याग करोगे

प्राण नाथ कुछ चिंता सोच मत करिये दीनबंधू ने स्वपने मे देकेभी कहा है कि तूं मेरी मूरती के साथ अपने कान का भूषण तुला जो तराजू है तिससे तौल कर के दे मेरी कृपा से तेरा करण भूषण मूरती के साथ बराबर हो जावेगा सो लेकर के पुजारी नरपसे द्वारिका को चले जावेंगे इस प्रकार के थन कर के सो पतीव्रता ब्रह्म पतनीं अपने कान का भूषण उतार करके पती को दे देती भई तब ब्रह्मण तिस तीन रत्ती सुवर्ण के करण भूषण के हृदय मे संकुच करि कहने लगा कि अहो इतने से भगवान की मूरती के साथ तुल्य होवेगा तब तिसकी स्त्री कहने लगी कि हे पती तूं विचार करके देख जो पूजकों ने दीनानाथ की मूरती के उठाय नेंकूं लिये अनेंकों उपाय किये परं तू वे तिनसें उठाई गई और तिसी मूरती को तूं पतीअके लाही उठाय कर और गाडी पर कर ले आया तो ते अब करण भूषण के साथ तुल्य होने मे संशय काहे प्राणनाथ इह कौन बुद्धी की बात है भगवान कृपानिधान संसार मे भक्तों के निमित्त क्या नहीं करते हैं तब रामदास सुन करके मौन होय गया और तुरत जाय करके भगवान की मूरती को उठाय लयाया और तुला जो तराजू है तिसकी एक ओर धरकर दूसरी ओर स्त्री के कान का भूषण जो है सो धर देता भया ॥४॥ चौपाई ॥ लोक वि लोकि चरित मुसकाये ॥ भगत बदन पूजक बिसमाये ॥ इह कसे मृषा मूढ हठ करहीं ॥ कछु विलंब जा निज घर परहीं ॥ किये विविध हम यतन महाना ॥ उठो

के एक ब्राह्मण भगवान का भक्त होता भया सो वह निरधन घरमे केवल एक ही बैल राखता था और तिसी के साथ किरषी करम अर्थात करसाणी करकर जो कुछ प्रापत करता सो संत भक्तों की सेवा मै लगाय देता था तिस ब्राह्मण ने ऐसे व्रत धारन किया हूआ था तब एक समय ब्राह्मण के तिस बैल को कोई दुष्ट चोर चुराय करके ले गया तिस के खोजने के लिये सो जहां तहां वण स्थल ग्रामो मे भ्रमन करने लगा और दुखी होय करके कहता है कि देखो घरमे मेरा एक बैल ही था सो भी चोर हर करके ले गया है अब संतो की सेवा भी जाती रही तांते घरमै चलकर और बिष खायकर मर जाता हू अब जीवने का कुछ धरम नहीं है ऐसे विचार कर जब घर मे आय प्रापत हूआ तब भक्त हितकारी भगवान तिसका मरणो विचार कर कि अब यह अवश्य प्राणों का नास कर देवेगा तुरत तिसके बैल समान एक सुंदर बैल रचाय कर तहां मारग मे स्थित करदेते भये तब ब्राह्मण तिस को देखकर और अपना जानकर बडे हरष से घरमे ले जाय कर बांधदेता भया फिर पूर्व के समान तिस बैल के साथ अपना कारशिक करम अर्थात करसानी करकर संतो की सुंदर सेवा भक्ती जो है सो करने लगा इस प्रकार जब वरष वतीत होयगया था तब एक दिन कोई चौर कि जिसने ब्राह्मण का बैल चुराया था तिस के घरमे आय प्रापत भया तहां बैल और

को वेषहिये देख कर [illegible] हृदयमे वडा आ
चरज मानि कर कहने लगा कि कैसा चमतकार है?
है वैल ने खेसिख मेरे है वैल के समान है॥ चौ
पाई॥ करत चोर चिंतन अस नीके॥ आवा सदन
सो चवस जी के॥ देखि न केत वृषव निज वांध्यो॥
आवा वेग सुकट धरि कांध्यो॥ सोउ वृषव दुज
द्वार निहारी॥ गयो सदन निज वहुरि हिय हारी॥
अस प्रकार रतउत वहु वारा॥ सोउ वृषव द्वग
चौर निहारा॥ तव दुज चरन नम्र गति सीसा॥ ना
वत भयो दुष्टमति खीसा॥ वहुरि वचन अस कहत
उचारी॥ मै तुव वृषव विप्र व्रत धारी॥ हरि आर
ण्य लेत निज धावा॥ ऐसकैस नाहि तुल्य तुव
पावा॥ कहे सत्य कारण दुजराई॥ मै अव देहु
वृषव तुव लाई॥ देखि प्रभाव दरस तुव देवा॥
मै निज जनम सफल करि लेवा॥ अव कुकरम
सव दीन तयागी॥ विप्र तोर चरनन लव लागी॥
स्वामिन करहु कृतार्थ मोही॥ वंदहु वार वार
अव तोही॥ अव मुहि चरन शरण लिखि देवा॥
करहु मंत्र उपदेस अभेवा॥ तास कथन सुनि
विप्र सुहाया॥ भयो तुरत कोमल वरदाया॥
हरषि चौर कहं भक्ति वढावन॥ दीन्यो राम मंत्र
जगपावन॥ पाय सु मनु तारक अभिरामा॥ आ
वा सदन पूरि उर कामा॥ लेत सु वृषव विप्र
गृह जाई॥ साष्टिर दीन चरन सिरनाई॥ आसि
ख लेत वहुरि हरषाता॥ आवा भवन भक्ति
मदमाता॥ दुज प्रसाद संसृति सुख पागा॥ भयो
प्रधान भक्ति वडभागा॥ [illegible]स रह चरित यथा
मति मोरी॥ कौन वदन वरणन कहु थोरी॥

देखहु सं[illegible]त सुसंगति कोर॥ भक्तासूष्र भादुरमति चोर॥
होत॥ जिमि पारस संसर्ग गहि आयस होत सुवर्ण॥ ति
मि सज्जन संगत सुखद नाशन कुमति कलेक॥२॥ टीका॥
तब चोर जो है सो ऐसा चिंतन करके अपने घर
मे चला आया तहां सोई बैल बांधा हुआ देखकरके फिर
ब्राह्मण के घर मे चला गया तहां भी सोई बैल बांधा हुआ
देखा फिर अपने घर मे चला आया ऐसे भ्रम के वश भया
हुआ बहुतबार इधर उधर फिरा परंतु दोनो ठौर वे एक
ही बैल देखता भया तब तो भ्रमनको त्याग कर दीन
गती से आय करके ब्राह्मण के चरनो पर सीस नाय
कर कहने लगा कि हे व्रतधारी [illegible] मैं दुष्टबुद्धि
चोर तुमारे बैलको चुराय करके ले गया था अब कृ
पा करके प्रभू मेरे को सत्य सत्य कारण जो है सो क
हिये कि तिसी बैल के समान इह बैल तुमने कहां से
पाया है मैं तुमारा बैल जो चुराय करके ले गया था
सो दीन ख्याल अब ल्याय देता हूं क्यों कि आपका दर
सन और प्रभाव देखकरके मेरा चित्त शांती को प्रा
पत होय गया है और आज मैंने अपने जनम को भी
जगत मे सफल जाना है और चित्त से मंद करमो को
भी त्याग कर दिया है अब नाथ तुमारे ही चरनो की
मै अपना उद्धार मानता हूं और बार बार बेदना
करता हूं कृपा करके अपने चरनो का सेवक जान
कर मेरे को मंत्र उपदेश [illegible] करिये और मेरे
जनम जनम के पापों को हरिये इस प्रकार तिसकी
प्रार्थना सुनकर ब्राह्मण तुरत ही दया के वश हो
जाते भये और अपने पास बिठाय कर सब सुखों
का मूल और सब जगत को पवित्र करने वाला
राम मंत्र जो है सो बडी प्रीती सनेह से तिस [illegible]
के कान मे सुनाय दिया तब वे चोर ऐसे तार
क मंत्र को पाय कर आनंद मै मगन भया
हुआ मानो सब कामना पूरण करके

अथ जस्सू स्याम चरितं

दोहा॥ श्री जदुपति पंकज चरन विमल भक्ति रति दान॥
करहुं ग्यान गाथा कथन वदन सरुचि सनमान॥
चौपाई॥ अंतरवेधि देस महि माहीं॥ जस्सू स्याम
नाम दुज ताहीं॥ सो हरिभक्त वैष्णव भावा॥ वृषव
एक तहिं सदन सुहावा॥ वित्त वहीन करहिं तहिं से
गा॥ किरषि करम दुज हृदय उमंगा॥ तहिं सन यथा
लाभ वन आई॥ करहिं विप्र संतन सिवकाई॥ अव
सर एक चौर वन माहीं॥ हरि लेगयो वृषव दुज का
हीं॥ दुखित तास अन्वेषण हेतू॥ लाग्यो भ्रमन प
लवि पुन नकेतू॥ एक हिं रह्यो वृषव गृह मोरा॥
आज सुगयो लेत सठ चोरा॥ भयो अभाव संत
सिवकाई॥ अब चलि मरहुं सदन विषलाई॥ अ
स जिय गुनत भवन जब गवना॥ तासवि चारिम
र एश्री रमना॥ विप्र वृषव सदृश रचि ताहीं॥
कीन ठाढ मारग सुर नाहीं॥ तासु देखि दुज आ
पन जानी॥ लावा सदन हरष उरमानी॥ यथा पूर्व
का र्षि कनिज करमा॥ लाग्यो करन विप्र रत धरमा॥
करत रुचिर संतन सिवकाई॥ गयो वरष जब ता
सु विहाई॥ सोऊ चौर जेहि वृषव चुरावा॥ विप्र
नकेत गवन करि आवा॥ दोहा॥ ते विलोकि दृग वृ
षव तहं मनत चकत चित होय॥ वंध्यो जवन दुज
सदन इह मोर वृषव इव सोय॥१॥ टीका॥ अब श्री
जदुन भगवान के चरन कमलों की भक्ती और प्रीती
के देनेवाली और मनोहर गाथा जो है सो रुची सन
मान से गायन करता हूं अंतरवेधी देस जो पृथवी
तल पर प्रसिद्ध है तहां जस्सू स्याम नाम करके

बाग अभिरामा॥ तिन महं नंदास दुज दीना॥
निज विद्या बर सेपति हीना॥ कार्तिक करम
निरत दिन राती॥ धीरज धरम सील निधि श्रोती॥
सेतत लीन सेत सिव काई॥ परम प्रवीन भक्ति न
दुराई॥ संध्या समय सदन जो तासा॥ आवत अत
थि सेत करि आसा॥ सादिव तिनहिं विप्र बड़भागा॥
देत जिमाय पाक अनुरागा॥ अस निरपेक्ष देखि
तहि काहीं॥ भयो द्वेष दुरजन मन माहीं॥ अनथि
सेत सेवा सुचि जोई॥ नास करण करन हित सो
ई॥ कीन परस्पर सम्मति तेहा॥ दूत निकृष्ट
नगर दुज देहा॥ अधिक दंभ करि लेहिं बड़ाई॥ मि
थ्या करत सेत सिव काई॥ करि प्रपंच सठ भयो
उजागर॥ अब हूंहि कर हु यतन कछु नागर॥
जाहि तें लोग सदन जड़ तासा॥ जाहिं न जानि विप्र
धम आगारासा॥ अस नसु अस दोष लगाई॥ क
रहु अधम हत मान बड़ाई॥ दोहा॥ अस वि
चारि सत वत्सतरि धरत ते च दुज तास॥
आये निसि निज सदन सठ परम अनर्थ प्र
कास॥ २॥ टीका॥ अब आगे और बड़ा आच
रज और अद्भुत भक्ती का निरमल महात
म जो है सो मति अनुसार कुछ गायन करता हे
कै सामी महातम है कि जिसके श्रवण करने
तें कृस्न भगवान के चरन कमलों में प्रीती
उतपन्न होय जाती है और दोष दुख संशय
भ्रम इत्यादि विकार जो
है सो भी सब नास को प्राप्त होते हैं नेम
धारण नामा तीर्थ जो प्रसिद्ध है
संसार मैं कल्यान

तिस के पश्चम वोर गंगाजी के किनारे पर एक
वरेली नाम कर के ग्राम होता भया तहां वहुत
से ब्राह्मण जो हैं सो निवास करते थे तिन के वी
च एक नंददास नामा ब्राह्मण था सो निर
धन दीन और अपनी व्रत्ति विषे सते होत
का ब्राह्मण करम जो करना होइ सोई करके
अतथी संत
मंतों की सेवा करता रहता था संध्या के समय
जो कोई अतथी साध ब्राह्मण तिस भक्त के घरपर
चले आवता तो वे वडभागी प्रणाम करके वडी
श्रद्धा सनमान से विनय कर भोजन जिमाय दे
ता और नित्य संतों का आसीरवाद लेता था इस
प्रकार तिस की संतभक्ती और महिमा वढी देखकर
दुरजन जो थे तिन के हृदय मै द्वेष उतपन्न हो
य जाता भया सो मूढ तिस के संतभक्ती के यश
को सहार नहीं सके और तिस के निसफल कर
ने को परस्पर सम्मती कर कर कहने लगे कि
इस नषिद्ध ब्राह्मण ईहां हमारे नगर मे
वसता है वडे दंभ और प्रपंच से संतों की
झूठी हीं सेवा कर कर लोगों मे जशमान और
वडाउ जागर होय गया है अब इस मे दंड का अ
साउ पाय करिये और ऐसा अनमि
र दोष लगाईये कि जो कवी मिट हीं नहीं और जि
सतें लोग इस को मलेछ जान कर कवी निकट
नहीं आवें इस प्रकार तिन दुष्टों ने मता कर कर
रात्री के समय एक मरी हुई वछी उठाय

कर और ल्याय कर तिस नंददास ब्रह्मण के
लेत मे राखे दई और आप अधम इस अनर्थ
को उतपन्न करके फिर रानी को जाय कर आप
ने अपने घरों मे सोय रहे ॥ १ ॥ चौपाई ॥ नंददा
स जब प्रात सुनावा ॥ चाहे लेत निज देखेन आवा ॥
पाछे सोऊ सुपच जन आये ॥ दुजहिं वदन कटु
वचन अलाये ॥ अरे विप्र कुल जनम तुमारा ॥
कीनसि इन कुकरम कसमारा ॥ विनु अपराधव
तस तरि मारो ॥ अधम कवन तुव काज बिगा
रो ॥ वृथा मृढ मद्रोस्मजधारी ॥ गलन देमनुव
दुरमति मारी ॥ असकहि अधम ऊच स्वर लाई ॥
सवन धेनु मृत वतस दिखाई ॥ दुरजन ओख सु
नत समुदाई ॥ जुरे सुजन दुरजन सब आई ॥
विप्र चकित अस चरित निहारी ॥ मनत देव
गति कवन तुमारी ॥ दुरजन देखि करहि मुख
बिंदा ॥ ठाढे मौन सुजन सब वृंदा ॥ सुमरि
राम तब विप्र अमाना ॥ सुनहु सुजन मुखव
चन वखाना ॥ ~~[illegible]~~ हुँ समुदाई ॥
जो निरदोष अहुं मे भाई ॥ तो इन मृतक
वतस तरि जोई ॥ होहिं सजीव तुरत अब
सोई ॥ मोर जियन इहि जीवन संगा ॥ कर हैं
नतर प्राण निज भंगा ॥ अस कहि विप्र वसन
सित लीने ॥ सुरभी सुता अछादन कीने ॥ म
ले सुखद कहत लोयनिधाना ॥ लाग्यो ललि
त विमल गुण गाना ॥ दीन दयानिध नंद
दुलारे ॥ सुर दुज धरनि धेनु रखवारे ॥

अपने घर मे चला आया तहां से वे चोरी का धन
जो थी सो लेकरके [illegible] गुरू जी के घर मे चला आया
और चरनो पर प्रनाम करके तिन को [illegible] दे देता भया
फिर आनंद पूर्वक आसीसा लेकर भक्ती के मद मे मत्त
भया हुआ अपने ही घर मे चला आया तहां कु
छु काल भगवान का सुमरण करता करता बड भागी
चोर जो था सो महा भक्ती मान के और भक्तों मे प्रधा
न माने सरव गुणों की खान हो जाता भया इस
प्रकार इह चरित्र मैने कुछ संक्षेप करके गायन क
र दिया है देखिये उत्तम संगती का कैसा वचित्र
प्रभाव है कि महा दुष्ट बुद्धी चोर जो था सो भक्तों
मे प्रधान भक्त और सरव गुणों की निधी होय गया
जैसे पारस के स्पर्श होने से लोहा मल को त्याग
करके कंचन होय जाता है तेसे ही संसार मे उत्तम
जनो की संगती जो है सो कलेक और कुमती का
नास करके हृदय मे निरमल सुमती का प्रकाश
कर देती है॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ति
महातम भाषा टीकायां जसस्याम चरित वरण
ने नाम सरगः ==

प्रयनेददास चरितं

दोहा॥ अब अद्भुत आचरज अमल भक्ति
महातम चारु॥ कहुं कथन सादिर वदन दूरत
दोष भ्रम हारु॥ चौपाई॥ क्षेत्र नेम सार नसु
ख मूला॥ पश्चिम के देव सरि कूला॥ विदत
बरेलि नाम इक ग्रामा॥ तहां वसहिं दुज

तब तिन ग्रंथों का शोर सुन कर दुरजन और सुजन अर्थात बुरे भले लोग सब आय कर के जुड़ जाते भये दुरजन जो दुष्ट लोग थे सो देखकर बड़ी निंदा करने लगे और सुजन जो भले पुरष थे सो मौन होय कर के हृदय में सोच करने लग जाते भये तब नंददास प्रेम चरज के वश भया हुआ विचारता है कि हे देव इस तेरी को न गती है मैं कुछ जान नहीं सकता हूं ऐसे सोच कर फिर हृदय में भगवान कृपा निधान को सुमर्ण करता है कि हे भाई सज्जन जनो अब तुम सब मेरे साक्षी रहना जो तो मैं इस बार तो मैं निर दोष हूं तब तो भगवान इस मरी हुई गऊ की बछी को अब भी जियाय देवेंगे और जो कदाचित नहीं जियावेंगे तो मैं भी इसके साथ ही प्राणों को त्याग देऊंगा इसके जीवने से मेरा जीवना भी है ऐसे कथन कर कर ब्रह्मा ला जो है सो स्वेत वस्त्र लेकर तिस मृत भई हुई बछी पर डाल देता भया और आप भक्त सुखदायक कृपा की निधी भगवान जो हैं तिनका सुमर्ण और तिनके निरमल गुण गण जो हैं सो भक्ती श्रद्धा से गायन करने लग जाता भया कि हे नंद कुमार हे गऊ ब्राह्मण पृथ्वी और देवताओं की रक्षा करने वाले हे व्रज की सहायता के लिये गोवरधन परवत के धारने हारे हे संसार का भय कलेश दूर करने वाले हे लक्ष्मी के

वती हे भवनों के प्रकाश करनेवाले हे कृपा
के समुद्र हे दीनहितकारी हे दीनदुखहारी हे
पापों के नाश करनेवाले हे असुर संहारी मुरा
री हे भक्तजनो का तारनेवाले हे दीनबंधु हे
प्रल्हाद के रखवारे हे कौरवों की सभा मे द्रोपदी
की पैज राखनेहारे हे भारत मे टटीहरी के अंडो के
पर हसती के गले का घंटा डालकर रक्षा करने
वाले हे कठिन काल मे भक्तों की सहायता कर
नेवाले और ग्राह जो तदुआ है तिसके ग्रसे ग
ज की सहायता करनेहारे हे भक्त भयहारी हे
कृपानिधान हे जुगजुग भक्तों की लज्जा राखने
वाले हे भक्तों के निमित्त मच्छ कच्छ नरसिंह
बाराह वामन परसराम इत्यादि अवतारों
के धारनेहारे और तिनके कलेशों को दूर कर वेदबंधी
रजके देनेवाले भगवान इस प्रकार असतुती गायन कर
कर मनमेंहीं दीनानाथ के चरन कमलों पर सी
स नायकर और सुंदर स्याम मूरती को हृदय वसा
यकर प्रेम से कहता हुआ कि हे दीनबंधू हे भक्तपा
ल मेरी लज्जा राखिये तुरत नेत्रों को मूंद लेता
भया॥२॥ चौपाई॥ विप्र करत अस विनय सुहे
ना॥ देखा खोलि जुगल जब नयना॥ जियत व
त्स तरि सनमुख पाई॥ पुलक गात रोमावलि
छाई॥ मानहु भवन चतुर दसराजू॥ पावा विप्र
रंक जनु आजू॥ बोलि तुरत सबको समुदाई॥
जियत वत्स तरि दृगन दिखाई॥ सकल चकि
त चित मन अनुरागे॥ धन्य धन्य मुख भाष
न लागे॥ करि प्रनाम बहु सुजस बखाना॥

आज तुम हे जगमक्त प्रधाना॥ दुरजन देखि सक लखि स कुचाने॥ अधोवदन लाजत विस माने॥ धेनु सुता तव तुष्य तमारी॥ हुव हुव मुख लाग उचारी॥ जननी ता हु सुनत अकुलाई॥ बंध न ग्रीव मुचित करि धाई॥ पालि जीन लालन अनुरागी॥ गोरस पान करावन लागी॥ आवाजव धावत अनुरागी॥ तासु रमि कर दुत गति स्वामी॥ पूछत लोग सकल तहि ऐसे॥ इह मृत भई वत्स तरि कैसे॥ बीते तीन दिवस मम गेहा॥ मृत वत्स भई वत्सतरि एहा॥ चरम कार तहि दिवस उठाई॥ दीन क्षितु डारि वहिर लत जाई॥ आज सुनत इहि मुख र उचारा॥ धाई जननि करत हुंकारा॥ मै देखत तहि पाछिल धावा॥ इहि सुजियत वत्स तरि पावा॥ अस वृतांत तहि वदन अलाई॥ नृपहि जाय पुनि कथा सुनाई॥ भूप सुनत मानस हरषाना॥ दुरजे न बोलि देइ दिय नाना॥ वहुरि लीन दुज प्रवर बुलाई॥ प्रणम नम्र चरनन सिर नाई॥ मुदित भूप मानस अनुरागा॥ वहु विधि वदन प्रसंसन लागा॥ दोहा॥ आज धन्य तुव धन्य जग धन्य वंस दुज तोर॥ जहि मध अस तुव सुजस उप उपजेम क्तिर मोर॥ पदनत नम्र प्रहर्षि अत मेदनपत दुज काहिं॥ कीन विसर जन मवन सुम मक्ति मा व मन माहिं॥ तव तें सुक्रति रूप दुज सुचि की रति जुत होय॥ सेवत सज्जन संत जन अंत वपु ष तजि सोय॥ हरि प्रसाद संस्रति अगम वारदत सो महान॥ मै कीन्यो चरित कछु यद विंचत मति गान॥ टीका॥ इस प्रकार ब्रह्मण जो है सो विनती अस तुती कर कर कुछेक

हे गिरिधरन हरन भवत्रासा॥ हे श्रीपति हे भवन प्रकासा॥ हे करुणा सागर जन रंजन॥ धरन धीर जन पीर विभंजन॥ हे गजदलन खलन संघारे॥ दीनबंधु प्रभु दीन उधारे॥ हे प्रह्लाद द्रुपतजा तारन॥ सकुनी औरु चंट गजदुख टारन॥ कठिन काल प्रभु भक्त सहैया॥ आनि प्रहलाद राज कुरैया॥ सदा पैज भक्तन रखवारे॥ कृपा नकेत भक्त भय हारे॥ हे कूरम हे मतस मुरारी॥ हे नरसिंह रूप प्रभु धारी॥ वामन परसराम बाराह॥ भक्तन हेत वपुष सुरनाह॥ धरत कलेश भक्त भव हरने॥ सदा भक्त उर धीरज धरने॥ अस प्रकार सुख अस्तुति गाये॥ प्रभु पद पदम मन हिं सिरनाये॥ दोहा॥ नयन नमीलन कीन तब हृदय धारि प्रभु ध्यान॥ कहत दयानिधि राखिये मोर वेज भगवान॥२॥टीका॥ जब प्रातःकाल होते नेद दास अपने खेत के देखने को आया तब पीछे पीछे सो दूषण लगावने वाले दुष्ट जन नीच ले आये और तहां आवते हीं नेद दास को बडे कठोर बचनों से कोप कर के कहने लगे कि अरे मंद तूं तो ब्रह्मण कुल मे उतपन्न भया हूआ है और तहां जन भंकर के इह तैंने कैसा कुकरम किया है जो अपराध के विना निस अपराध इस गऊ की बच्छी को मूढ मार डाला है कहो तेरा इस ने क्या विगाडा था हो हो पापी और दुरमती देखो इह तैंने तिलक माला मुद्रा वृथा हीं धारन किये हूये हैं इस प्रकार कहि कर फिर बडी ऊंची स्वर से पुकार कर सब को सुनावते हैं कि अहो देखो हो लो गो इस नीच ब्रह्मण ने कैसा अनर्थ किया है

२०७

:॥२४ ४५ ॥

इस वछिया कहो कैसे मृत होयगई थी सो कहने
लगा कि आज तीन दिन हूये हैं जो इस वछिया
मृत होयगई थी और चरम कार जो चम्मार हैं
तिनों ने उठाय कर बाहिर कहीं भूमी मे डाल दई
थी आज तिसका शब्द सुन करके इस धेनू तिस
की माता जो थी सो तुरत वेग से हुंकार शब्द कर
ती हुई धाय पड़ी मैं भी देखता हुआ इसके पीछे
पीछे हीं चला आया अब ईहां आय करके इस
वछिया जीवती पाई है इस प्रकार कथन कर
कर फिर एही प्रसंग तिसने तुरत जाय करके
राजा को सुनाय दिया तब राजा सुन करके बडे ह
रष को प्रापत भया और तिन दुष्ट जनो को बुला
य कर भली प्रकार ताडना कर कर दंड दिया तिसते
उपरांत फिर राजाने वडे आदर सतकार से नंददास
जी को बुलाया और प्रीती भक्ती से चरनो पर प्रणाम
कर कर अनेक प्रकार शलाघा वडाई जो है सो करी
फिर हाथ जोड कर कहने लगा कि हे दुजउ त्तम आ
ज तू धन्य हैं और धन्य तेरा सुपूवंस है कि जि
स विषें तूं ऐसी उपमा और सुजस वाला भक्तों
मे प्रधान भक्त उतपन्न भया हैं ऐसे वारवार
प्रसंसा वडाई कर कर आनंद के वश भया हूआ
राजा वडे दीन भाव सें चरनों पर सीस नाय क
र भक्ती प्रीती से भक्त सुष्ट को विदाय कर दे
ता भया सो नंददास भक्त तवतें चार मे निवास
करके संत भक्तों को सेवता सेवता अंत काल
शरीरको त्याग कर भगवान की कृपासे इस
महां अगम संसार समुद्र सें यतन केविना सु
गम सहजें पार होयगया इस प्रकार इह नंद
दास की भक्ती सुंदर गाथा जो है सो मैने मती के

देर के पीछे जब नेत्र खोल कर देखने लगा तब
क्या देखत है कि वे मरी हुई बछिया जो थी सो जी
वत भई हुई है तब तो नंददास का शरीर आनं
द से पुलक मान हो [struck] और रोमावली जो
है सो हरष से अंग अंग पर उठ खड़ी भई मानो
आज इक ब्रह्मानंद ने जगत में चौदों भवन
के राज को प्राप्त कर लिया है तिसतें उपरांत तिन
साक्षी पुरुषों को बुलाय कर वे जीवत भई हुई ग
ऊ की बछिया जो थी सो दिखाय दई तब तिस
को देख कर के सब लोग अचरज के वश हो [struck]
धन्य धन्य उचार कर और प्रणाम कर कर अनेक प्र
कार सुजस और बड़ाई के वचनों सें कहने लगे कि हे
दुजोउत्तम आज संसार में भक्तों विखें प्रथम गिन
ती वाले [struck] और जदुनंदन भगवान के प्यारे
तुम हीं हो तुमारे समान और दूसरा कोई नहीं है
तब दुरजन जो थे सो अचरज भये हुये लज्जा संको
च सें मुख नीचे किये मौन होय रहे हैं कुछ बोल न
हीं सकते इतने में वे बछिया तृष्णा कर के व्या
कुल भई हुई हुंब हुंब शब्द जो है सो करने लग
पड़ी तब तिसकी माता अपनी पुत्री का हुंब श
बद सुन कर प्रेम सें आतुर भई हुई गले से तुरत
बंधन को तोड़ कर धावती हुई तहां चली आई और
बड़े लाड़ प्यार अपनी बालकी को [struck] जिह्वा सें
चाट चाट कर गोरस जो दूध है सो पिलावने ल
गी इतने में जब तिस [struck] धेनू का स्वामी अ
चानक ही पीछे धावता चला आया तब लोग
तिस को पूछने लगे कि भाई इस गऊ की

श्रीगंगाजी की

[struck] पवित्र और अदभुत चरित्र जो है सो क
थन करता हूं उत्तर दिशा में [struck]
ब्रह्मावरत के परे मोह मद जड़ता इत्यादि
विकारों से रहित धीरज [struck] और धरम की नि
धी बुद्धी में [struck] परम प्रवीन सरब गुणों की
खानी एक वैश्य भक्त वास करता था सो कै
सा ज्ञानी और समदरसी [illegible] कि ब्रह्मा तें ले
कर चींटी पर्यंत जिस को एक भगवंत [illegible] ही
मानता था इस प्रकार सब को ब्रह्मरूप जानकर
किसी से भी मुख नहीं मोड़ता था अर्थात प्रीती
भाव से सब की सेवा करता था एक समय तिस
के हृदय में अभिलाषा उपजती भई कि सरब पाप कले
शों के नास करने वाला नेमशारण तीरथ जो प्रसिद्ध
है मैं तिस का दरसन करूं ऐसे विचार कर अपने शि
ष सेवक साथ लेकर आनंद से घर को त्याग करके च
ल पड़ता भया तब जाते जाते मारग में शरीर जो बृ
द्ध निरबल था श्रम करके अलसाय गया [struck]
और सूरज की धूप ने भी अंग अंग को तपाय दिया क
हीं एक आंबों का सुंदर छायावाला बाग देखकर तु
रत रसते को छोड़कर तहां उतर पड़ते भये तब तिस
बाग के बीच [illegible] अति से सुंदर और बड़ा ऊंचा एक
अंब का पेड़ था तिस को फला हुआ देखकर तिनका
शिष्य कहने लगा कि हे कृपानिधान स्वामी जी आप
देखिये [illegible] इस बृक्ष के शिखर में अमुक साख जो है
तिस के साथ कैसे अमृत के समान सुंदर मधुर फल
लगे हूये हैं इनके ग्रहण करने की प्रभू मेरे चित्त
में रुची उत्पन्न [illegible] होय गई है अब कृपा करके
हे दीनदयाल इह मनोहर फल मेरे को अब पा लेदी
जिये [struck] इस प्रकार शिष्य का कथन सुन कर और

तिसकी मान कर गुरु कृपाल तुरत हीं रखवारे को बुलाय कर बड़े हित प्रीती के वचनों से कहने लगे कि हे भाई माली इह हमारा बालक तेरे इस ग्राँव के सुंदर फल पर लोभी होय गया है तांतें अब तू दया करके हमारे मोल ले और इह मनोहर फल ल्याय करके हमारे इस बालक को दे हे भाई जैसे तेरे से होय सके तैसे हीं यतन से हमारे बालक की राखे और इह फल ल्याय कर के दे ॥२॥ चौपाई ॥ माला कार वदन मुसकाई ॥ गुरु हि कहत जुत गिरा अलाई ॥ अति उतंग इह विटप महाना ॥ को अस सकहिं सिखर इहि जाना ॥ बिनु खग लेन लाभ इहि केरा ॥ सुनहु संत को मनुज न हेरा ॥ तुमहु सरब सामर्थ्य तुहाये ॥ सिद्ध भक्त भगवन जग गाये ॥ तउ कहे मनहु न मत गति होई ॥ देहुं तुमहि ललित फल सोई ॥ अस हाद जन तो कर काहा ॥ सुनत अबला मन तुष्ट लि राहा ॥ बहुरि भनत अस वदन उचारी ॥ इह न अगम कछु बात तुमारी ॥ कृष्ण कृपा तें संसति माहीं ॥ सुनहु सुजन कछु दुरलभ नाहीं ॥ अस कहि भक्त मन हिं सिरनाई ॥ सुमरि कृष्ण उरदीन सहाई ॥ तरहिं प्रसंसि वचन मन भावा ॥ भक्त प्रवर निज वदन अलावा ॥ तुम हु प्रवीन भक्त व्रतधारी ॥ सब कर सुखद सबन हितकारी ॥ तरु प्रधान गुण रुचिर तुमारे ॥ सकहिं कवन अस वदन उचारे ॥ ध्योर आतप निज सीस सहैया ॥ आश्रित जनन रुचिर सुख दैया ॥ धार्यो जनम परारथ लागी ॥ को तुव सरस विरल बड़भागी ॥ जो मोपें निज करहु सनेहू ॥ तो मांगत बालक फल एहू ॥ अति उतंग तुव सिखर बड़ाई ॥ ता पर इह न सकहिं सिसु जाई ॥ मोपें करि उपकार सु हावा ॥ सज्जन देहु सिसुहिं फल भावा ॥

मूल, सत्य भक्तिमें अधिकारी (margin notes, partly illegible)

अस जब अह्लाद जन बानी॥ तरु कहे मनीत चिर
हित सानी॥ लिये ललित फल संजुत साखा॥ नम्रतसी
स मक्तपद राखा॥ तब जन अह्लाद मृदु बानी॥ अतिप्र
सन्न निज वदन बखानी॥ मालाकार वेगतुव भाई॥ नि
ज कर देहु सि सुहि फल ~~...~~ आई॥ ते विलोकि अस
चरित सुहावा॥ जन अल्हाद चरन सिर नावा॥ कहत
आज तुव धन्य अथोरा॥ जहि अस कीन चरित चित
चोरा॥ मुनि पुलस्त जिमि मेरु झुकावा॥ तिमि तरु
गगन तुमहुं महिनावा॥ भक्त प्रभाव तोर अधिकाई॥
मै किमि सकहुं एक मुख गाई॥ नाथ अ ~~...~~ जान की
न कछु हासी॥ सो तुव कृपासिंधु गुणरासी॥ जानि
मोर अपराध महाना॥ छमहु अनाथ नाथ भगवा
ना॥ तब बालक मन हरष अघाये॥ तरु तें लीन पं
च फल भाये॥ दोहा॥ गुरु प्रसन्न मन मन्यो तब सुत
अभिलाष तु मांगु॥ अब फुर भई कि ना भई पायम धुर
फल चाहुं॥२॥ टीका॥ तब माली ~~...~~ मुख से मु
सकाय कर कूट अर्थात मसकरी कर कर कहने लगा
कि इह वृक्ष तो अत्यंत ही बड़ा ऊंचा है इसके सिखर
पर जाने को न सामर्थ है ऐसे त इस के फलों का ला
भ केवल पंछी ही लेते हैं मानुष्य से नहीं लिया
जाता है परंतु तुम भगवान के पूरे भक्त और सिद्ध
सामर्थ हो इस वृक्ष को आज्ञा करो जो नीमा होय
कर और सीस को झुकाय अपने सुंदर और मधुर
फल जो हैं सो तुम को देदेवे इस प्रकार मालाकार
जो माली है तिसका कथन सुन करके अह्लाददास
जी मौन होय रहे फिर थोड़ी देर के पीछे बड़ी को
मलवानी से कहने लगे कि हे भाई माली इह वा
रता जो तैने कही है कुछ अचरज और ~~...~~
नहीं है भगवान की कृपा के आगे सहज और
सुगम है ऐसे से कथन कर कर दीन हित कारी
गिरधारी को सुमर कर और मन में ही तिन

तब प्रह्लाद कहि सिर ... तब प्रसन्न ... मेरा मनोरथ ... ललित फल देहु॥

अथप्रल्हाद चरितं

दोहा॥ विमलभक्ति दृढ करन मन अद्भुत चरित्र पु
नीत॥ कहहुं कृपन कछु वदन अब हरन सकल भ्र
मभीत॥ चौपाई॥ उत्तर दिसा सुरसरि कर तीरा॥
ब्रह्मावरत प्रांत मति धीरा॥ विगत मोह मत्सर
अभिमाना॥ वसहिं भक्त वैष्णव गुणखाना॥ ब्रह्मा
तें चींटी परयंता॥ देखहिं दृष्टि एक भगवंता॥ ब्रह्म
रूप सब जानि अभेका॥ करहिं निरन्तर सब कर सेवा॥
अवसर एक तास रुचि होई॥ नेम स्नान तीरथज
गजोई॥ दरसहु जाय हरन अघ गाता॥ अस विचा
रि मानस हुलसाता॥ लिये संग शिष सेवक रागी॥
चल्यो निकेत भक्त निज त्यागी॥ जठिर सरीर पंथ
श्रम पाई॥ देखि एक सुंदर अमराई॥ तपत अवैव
अतप रवि तेगा॥ उत सो तहां भक्त पथ भेगा॥ सु
भ्र ललित दृग देखि विसाला॥ अति उतंग तहं
एक रसाला॥ बोल्यो वदन वचन शिष स्वामी॥
रहि तरु सिखर साख जे जामी॥ तासन अमिय
ललित फल ल्याये॥ दीन दयाल मोरे मन भाये॥
मोहि ले देह कृपानिधि एहा॥ अति विचित्र
फल दीन सनेहा॥ शिष कर वचन सुनत मन
भावा॥ गुरु कृपाल रखवार बुलावा॥ दोहा॥
कहिस देखि बालक नवल सुचि फल ललित
रसार॥ चाहत मित वित गलित तुव देहु सयतन
उतार॥ यथा सुजन वसि परहिं कछु तुमते
यतन उपाय॥ सि सुरुचि राखहु निपुण अब
देहु चिर फल ल्याय॥ १॥ टीका॥ अब और हे
भगवान की निरमल भक्ती के दृढ करने वाला
और संपूर्ण भय भ्रमों के हरनेवाला परम

२१०

अद्भुत कौतुक को देख कर अचरज के वश भया हुआ तुरत भक्त प्रधान प्रह्लाद दास जी के चरनो पर सीस धर देता भया और हाथ जोड़ कर दीन बानी से विनती करने लगा कि हे भगवन तुम धन्य हो और धन्य तुमारी महिमा है कि जिं इह अलौकिक मन के हरने वाला चमतकार प्रतक्ष दिखाया है जैसे मुनी पुलस्त ने मेरु अर्थात सुमेरु झुकाय दिया था तैसे दीनदयाल तुमने इस बृक्ष को खेंच आकाश से पृथवी पर अपने चरनो में झुका लिया है हे भक्त सिरताज तुमारा अनंत प्रभाव एक मुख से कैसे कथन कर सकूं मैं मूढमती ने जडता करके कुछ हांसी करी थी सो कृपानिधान मेरे अजान जान कर आप छमा करियें भक्त प्रधान प्रसन्न होय कर तिस को आसीरवाद देते भये तब तिन के शिष्य बालक ने हरष पूर्वक तिस बृक्ष के पांच फल लेंये गुरु जी देख करके आनंद से कहने लगे कि हे पुत्र अब इन फलों को पाय करके कहो तुमारे मन की अभिलाषा पूरी भई ॥ तब बाल जो है सो प्रणाम करके कहने लगा कि हे दीनदयाल तुमारी कृपा के प्रसाद से अब इन सुंदर फलों को पाय करके मेरे मन की कामना सब पूरी होय गई है ॥२॥ चौपाई ॥ तब प्रसन्न मानस गुरु राते ॥ तरुहिं बदन असमा छाए लागे ॥ तह उदार तुव कीन अघोरा ॥ इह प्रसन्न मानस सिसु मोरा ॥ मैं आनंद पूरित अब नेहू ॥ तुमहिं देहु आसिष सुख एहू ॥ सुख समेत तुव सदा सुहावा ॥ रहहु नवल कल मेदनि छावा ॥ अब तुव होहु पूर्व वत भाई ॥ मोर रुचिर सुभ असिर कराई ॥

पावत के ... अंगीकार कीनो ... अं बीसी ... अकिवती

करि प्रणाम तव विटप सुहावा॥ रह्यो सुजाय गगन पथ छावा॥ अस कौतुक सब लोग निहारी॥ इत उत सुनत श्रवण नर नारी॥ आय चकित चित दरसन लागी॥ निज निज ग्राम धाम सब त्यागी॥ सब कर यथा उचित सनमाना॥ चले करत हरि भक्त सुजाना॥ शिष्य समेत मानस हरषाये॥ नेम शारने तीरथ तट आये॥ अस इह भक्ति महातम सोहा॥ लोम हरष पद मानस मोहा॥ मैं संतप्र वदन निज बरना॥ राम भक्ति मानस दृढ करना॥ दोहा॥ हरन भीत संसय सकल जन अल्हाद चरित्र॥ जे सादर स्तुति सुनहिं नर होहिं सु परम पवित्र॥ २॥ टीका॥ तब गुरु अल्हाददास जी बडे हरष सें तिस वृक्ष को कहने लगे कि हे वृक्ष उदार आज तूं ने मेरें काल को अत्यंत प्रसन्न किया है तांते मैं तेरे पर प्रसन्न भया हूं ऐसे सने की मूरती तेरे को इह आसीसा देता हूं कि तूं आनंद और सुख के सहित संसार में सदैव हरा भरा और नित फूलता ही रहैं तेरे को आयू पर्यंत ~~कोई~~ किसी प्रकार का कोई भी कलेश नाहोवे अब तूं हे प्यारे अपनी पूर्व की आकृती को धारन कर ले अर्थात जिस प्रकार पहिले था तैसे ही अपने स्थान पर जायकर स्थित होजा इस प्रकार अल्हाददासजी का वचन सुनकर वृक्ष जो था सो तुरत प्रणाम करके अपने स्थान पर जाय कर आकाश मारग मै स्थित होजाता भया इस अदभुत कौतुक को देखकर सब लोग नारी नर अपने अपने ग्राम और धाम को त्याग कर दरसनुं की अभिलाषा सें धावते हूये चले आये तब भक्त प्रधान सब का यथा योग्य आदिर सतकार करकर फिर शिष्यों के सहित तहां से वरध कर आनंद पूर्वक नेम शारन तीरथ

(left margin) ..मौरी मर्जी ...केपण्करै
(right margin) ... सो
(right margin) ...

पर चलेंगावैं इसप्रकार इन राम रामको हरषदे
नेवाला भक्तीका सुंदर महातम जो है सो मैने
गायन करदिया है इनके सों महातम के
सहित प्रल्हाददासजीका चरित्र है कि हृदयमे
रामचंद्रजीकी भक्ती के दृढ करनेवाला और सं
पूर्ण भय भ्रम के नास करनेवाला है जो पुरष इस
को श्रद्धापूर्वक श्रवण करैंगे सो सब पापो
से छूट कर परम पवित्र होजावेंगे इसमै कुछ
संशय नहीं है ॥ इति श्री भक्तिविनोद ग्रंथे भगवद
भक्ति महातमे भाषाटीकायां प्रल्हाददास चरि
त्र वरणनं नाम सरगः ॥

तनुवपाई॥ तब बोल्यो ग्रत थी ग्रसबानी॥ सुनहो नाथ सत्य जियजानी॥ मोर शिला सदृश जगमाहीं॥ कौ साक्षात देव प्रभु नाहीं॥ ग्रस कहि पावन भवन नहरि कीना॥ ग्रदभुत चरित दृगन तब चीना॥ जहेलग शिला भवन वर रहयौ॥ निज ठाकुर सदृश सब लहयौ॥ देखि चरित ग्रचरज मन माना॥ लेहुं कवन सब एक समाना॥ तब बोले तहि वदन ग्रचारी॥ संत जाहु तुव गेह सिधारी॥ जहितें तोर प्राण सुखदा ई॥ गई ललित सुभ शिला नहराई॥ दोहा॥ सुनि ग्रव वचन महातमन निव विटप ढिग ग्राई॥ सोऊ सनातन देखि निज शिला सुखेद नहर कराई॥ टीका॥ हे संत उदार ग्रव मैं नहीं जानता हूं कि मेरे प्राण सुखदायक देव जो हैं सो किस के मन मे भाये हैं प्रभू उनके विना मेरा जीना ग्रैसे है कि जैसे जल के वियोग से मछली का होता है तब तिस को वडे दुखी ग्रौर व्याकुल देख कर ग्राचारी जी दया के वश होय कर कहने लगे कि हे साधू ग्रव तुम शोक ग्रौर सोको च को त्याग कर भगवान के भवन मे चले जावो तहां जो शिला तुमारे मन को भावती ग्रौर प्यारी लगती है सो तुम प्रसन्न होय कर के ले लेवो ग्रैसे ग्राचारी जी का कथन सुन कर साधू कहने लगा कि हे महातमा मेरा वचन ग्राप सत्य कर के जानिये मेरी शिला के समान संसार मे ग्रौर कोई भी साक्षात देव प्रभू नहीं हैं सो वह दुरलभ थी ग्रैसे कथन कर कर भगवान कृपानिधान के भवन मे चला गया ग्रौर तहां ग्रदभुत हीं चरित्र देखता भया क्योंकि भगवान के भवन मे जहां लग शिला स्थापित थीं सो तिस को सब ग्रपनी शिला के समान हीं देख पडीं इस ग्रदभुत को देख कर ग्रचरज के वश भया हुग्रा कहता है कि रहते सब ठाकर

ते हैं तहां तहां हीं तिनकी भक्ती के वश भये
भगवान पीछे लागे फिरते हैं सूरदास जी जो हैं
सो भगवान के नाना कौतुक ग्वाल वालों के सहित
हास विलास और वन में गऊओं का चराना इत्यादि
मनोहर सव चरित्र जो हैं सो अपने अनभवसे नित्य
भक्ती प्रेम को अधिक किये हूये देखते ही रहते हैं रा
त्रीदिन ब्रह्मानंद में मगन भक्ती प्रीती प्रभाव कुछ
कथन नहीं किया जाता है तव एक दिन वन में
मारग चलते चलते अकस्मात कहीं कूआ जो
आय गया तो भक्त प्रधान नेत्रों से हीन जो थे तिसमें
गिरने लगे ॥४॥ चोपाई॥ तव भगवान भक्त रखवा
रे॥ अदभुत गोप वेस निज धारे॥ गहित करन कर
तुरत मुरारी॥ भक्त कूप च्युत लीन निवारी॥ करि कर
हरन त्रास करकेरा॥ सूर सपर्स लेत जियहेरा॥
इहकर जानि परत नर नाहीं॥ करि विचार करु
णा निधकाहीं॥ कर ते लीन पकरि कर संगा॥
कहित वचन मन मोद उमंगा॥ अव न तजहु
विनु सोच वखाने॥ तव भगवान वदन मुसका
ने॥ सूर करन कर करि वर जोरा॥ चले छुडाय
भक्त चित चोरा॥ अस जिय जानि देव चतुराई॥
ब्रह्मानंद सूर सुख पाई॥ मानत भयो भूरि नि
ज भागा॥ कर सो कर कृपाल जव लागा॥ गदगद
गिरा प्रेम दृग वारी॥ बोल्यो वदन वचन मन हा
री॥ वंदहु वारवार प्रभु तोही॥ जो [illegible] अस निवल
जानि जीय मोही॥ केसी कंस असुर मद गंजा॥
लीन छुडाय सवल कर कंजा॥ दोहा॥ काह भयो
कर तें छूटे करन धार भव सिंधू॥ मन तें छूटन
कठिन जन भक्त कुमद उर इंदु॥ अव तो वल
कर तोरि कर चले निवल कर मोहि॥ प्रेमन
तें [illegible] छूटो न जव तव देखों प्रभु तोहि॥५॥ टीका॥

५१२

सरव जीवों के सुखदायक श्री रंग नाथ भगवान
गायन किये गये हैं तिनके निकट एक भ्रतथी ज
नों को प्यारे जानने वाली और संत भक्तों की सुखदा
यक कल्यान की मूरती वडी धनमान वेस्या वा
स करती थी और भी कैसी कि रात्रीदिन नित भग
वान के गुणकीर्तन गायन करबे मै लीन रहती थी
इस प्रकार प्रेम मै उनमत्त भई हुई जगत के सब
लोगों को मोहत करती थी और जिस घर मै वास क
रती थी सो अतसे करके पवित्र और उज्जल रहता
हुआ था ऐसे तिसके घर को ब्रह्मणों के घर स
मान वडा निरमल स्वछ देखकर एक क्षुध्या
और त्रिषा करके वडा व्याकुल भया हुआ एक की
ई [illegible] भक्त विद्वान जोगी सो निरभय होय
करके तिसके घर के भीतर चला जाता भया तब
संत भक्त को घर मै आये हुये देखकर दीनभा
व से चरनोंपर प्रणाम किया और फिर हरष मै मग
न भई हुई हाथ जोडकर कोमल वाणी से कुस
ल पूछकर तुरत घर से एक चांदी के बरतन मे
मणी मुक्ता कंचिन मुद्रा इत्यादि धरकर तैसे ही
दीन भाव से हाथ जोडे हुये मुखसे अनेक प्रकार
की विनती वडाई करकर सनमान पूर्वक तिस
भ्रतथी संत के आगे निवेदन कर देती भई अर्थी
त सनमुख ल्याय राखती भई इस प्रकार तिसकी
भक्ती सेवकाई देखकर सो विद्वान भक्त वडी प्रीती
के वचनों से कहने कि हे सुन्दरी ले कहो तेरा कौन
वंस है और तू कौन है और क्या तेरा धरम आचा
र है ऐसे संत का वचन सुनकर सो प्रवीन विन
ती करने लगी कि हे संत स्वामी मै अभागिन जग
त मै वेस्या जाती करके प्रसिद्ध हूं और मन वच

न कायाकरके संत भक्तों के चरनोकी दासी हूं ॥२५॥
चौपाई॥ अस तेहि वचन संत सुनि नीके॥ लागो भनन हरषि निज जीके॥ भामनि तोर रुचिर चित गेहा॥ मोहि तउ चित गृह लागि कछु एहा॥ तुव सतकार कीन जे मोरा॥ सो नरतन कैंचिन तें थोरा॥ मै प्रसन्न तो पैं तिन कारी॥ उठ्यो विप्र अस वदन उचारी॥ करि प्रणाम तब सो अभिरामा॥ बोली वदन वचन निसकामा॥ मैं संकलप करत महिदेवा॥ चित तें कीन तोर कछु सेवा॥ अब ले जाहु सदन कस फेरी॥ कवन चूक भई स्वामिन मेरी॥ भक्त प्रवर दाया तुव जोई॥ जो इहि काले न मोपर होई॥ तो कस होहि मोर कल्याना॥ तुव साक्षात रूप भगवाना॥ होहि संत अनुकूल न जोके॥ करहिं कुसल भगवन कस ताके॥ तास सुनत मृदु गिरा सुहाई॥ बोले संत हरष सरसाई॥ तुव सुचि साधु चरन रति माना॥ यातें रंगनाथ भगवाना॥ तोहि अनुकूल सरवदा स्वामी॥ देवन देव भक्त अनुगामी॥ अब इन मणि कैंचिन कर भामा॥ तुव विरचाय क्रीट अभिरामा॥ सो श्री रंगनाथ पैं जाई॥ देहु ललित प्रभु सीस चढाई॥ सुनि अस संत भक्त मुख बानी॥ ~~[illegible]~~ करि प्रणाम वधु बार अलानी॥ दोहा॥ जो अब कीन न मोर तुव भक्त संत सनमान॥ तो करिहैं सुईकार कस रंगनाथ भगवान॥२॥ टीका॥ तव तिस वेस्या का ऐसा कोमल वचन सुन करके संत महात ~~[illegible]~~ मा अत्यंत प्रसन्न होय गये और कहने लगे कि हे सुशीले इतने तेरे घर का

द्रव्य अर्थात धन जो है सो मेरे को गृहण करना योग्य नहीं है नहीं तो मैंने जो मेरा सतकार किया है सो हे प्रवीने इन कंचिन रतनो से कुछ थोड़ा नहीं है मैं तेरी भक्ती प्रीती देखकर परम प्रसन्न होयगया हूं इस प्रकार उचारण करके संत विद्वान उठ करके चलने को तयार होजाते भये तब वेस्या जो है सो प्रणाम करके विनती करने लगी कि हे संत उदार मैंने ▬ से कलप करके कुछ ▬ धन से आप की इह सेवा करी थी प्रभू अब मैं कैसे फेर कर घरमें ले जाऊं दीनदयाल मेरी कौन चूक है और क्या अपराध है कि जिसते मेरी सेवा सुईकार नहीं होती है हे भक्त उपकारी जो इस समय ▬ मेरे पर दाया नहीं होगी तो कृपानिधान मेरी कल्यान कैसे होगी और मैं जगत में किस प्रकार सफल होऊंगी हे दीनबंधू ▬ संत हीं प्रसन्न ना भये ▬ भगवान कैसे प्रसन्न होवेंगे ऐसे विनती रस की भीगी हुई तिस वेस्या की वाणी सुनकर भक्त प्रधान बड़े हरख से कहने लगे कि हे सुभक्ते तू जो है सो मन वचन काया करके संत जनो के चरनो की प्रीती भक्ती वाली है तेरे पर रंगनाथ भगवान सदैव हीं अनुकूल अर्थात प्रसन्न हैं अब तूं मेरे वचन से इन कंचिन मणियों का बड़ा सुंदर दिव्य मुकट बनवा और प्रीती सनमान से जाय कर रंगनाथ भगवान के सीस पर चढा यदे इसतें तेरी इह सेवा सब सफल होजावेगी इस प्रकार संत भक्त के मुख से वचन सुन करके प्रणाम कर कर और हाथ जोड़कर कहने लगी कि हे संत कृपाल जो इस समय प्रभू तुमने हीं मेरा सनमान सतकार नहीं किया तो कहिये कि आगे रंगनाथ भगवान मेरी सिवकाई को कैसे सुईकार करेंगे ॥४२॥

चौपाई ॥ संत कथन सुनि तासु सुहावा ॥

अथ वेस्या चरितं

दोहा॥ अब उत्तम हरि भक्ति दृढ करन करण सुख
दात॥ भक्तिमहातम [illegible] करहुं कथन
अवदात॥ चौपाई॥ पूरब सकल लोक सुखदाये॥
जे श्रीरंगनाथ मे गाये॥ दक्षणदेस विदत भगवा
ना॥ तिन सामीप एक धन माना॥ काम कलावति
कुसल सुहाई॥ अतथी प्रिये संत सुखदाई॥
[illegible] नितरत नृत्य गीत भगवाना॥ मो
हत विश्व चराचर नाना॥ बसहि जहां गुण सुमति
प्रवीना॥ सो निज संसकृत कीना॥ देखि तास सुचि
वास महाना॥ आवा एक भक्त विदाना॥ जानि
विप्रवर गेह नवीना॥ वुध्यत चिखत विकल अति
दीना॥ तास भवन भीतर पग सान्यो॥ ते वधु वार दे
खि हरषान्यो॥ लागति पूछि वदन मृदुवानी॥
करि सतकार जोरि जुगपानी॥ रतन हेम मु
द्रादिक नाना॥ धरत रजत भाजन सनमाना॥ ता
स अतथि कर सनमुख सोई॥ हरषत हृदय नम्र
वत होई॥ करि करि विनय वदन नहि धोली॥ की
न नवेदन जुग कर जोरी॥ तासु विलोकि भक्ति सि
वकाई॥ गिरा वदन विदान अलाई॥ सुन्हे क
वन वेसतुव काहा॥ कस आचार धरम तुव राहा॥
दोहा॥ भन्यो वदन तव वार त्रिये मे लामिन दुर
भागि॥ सामान्या अस कहत सब संत चरन अनु
रागि॥ १॥ टीका॥ अब भगवान की उत्तम भक्ती
के दृढ करने वाला और श्रवण करने से कानो को
सुख देने वाला भक्तीका निरमल महातम जो है सो
गायन करता हूं पहिले जो दक्षण देस विखें प्रसिद्ध

१८१४

जे निसि हम काहिं वखान॥ आई सो अब वार ति
ये लिये और कल पान॥ ३॥ टीका॥ तव ऐसे तिस
वेस्या का वचन सुन करके संत भक्त प्रसन्न भये हे
ये कहने लगे कि हे हितकारनी भक्तों के अनुसारी औ
र भक्तों पर सनेह करने वाले दीनदयाल भगवान जो हैं
सो तेरी प्रेम भक्ती की ऐसी सेवा को देख कर कैसे सूई
कार नहीं करेंगे सेसार में भक्तों का मान राखना
इह दीन वंधू की सनातन वान है इस में कुछ संश
य नहीं है ऐसे कथन कर कर संत महात्मा आप
ने मारग को चले जाते भये तव इह चरमे सो
वेस्या तिन का उपदेश पायकर आनंद के वश भई
हुई एक वडे चतुर स्वरण कार [illegible]
दूत भेज कर वुलाय लेती भई और प्रीती से पास
वैठकर, तिन कंचिन मणियों का वडा दिव्य मनो
हर मुकट वनवाय कर भगवान कृपानिधान के आ
गे नवेदन करने को त्यार हो जाती भई कि वलक
र के आप ने हाथ से प्रभू को कढावती हे जव इस प्र
कार वेस्या ने त्यारी करी तव ऊहो रात्री के सम
य रंगनाथ भगवान अपने पुजारियों को ऐसा
सुपन देते भये कि हे पूजक जनो आज प्रात का
ल होते एक वेस्या कंचिन मणियों करके खचि
त वडा दिव्य और सुंदर शोभा वाला मुकट लेकर
के प्रीती सनमान से मेरे कढावने को इह मेरे म
वन मे आवेगी और वे मेरा सरूप देख कर केतु
रत ही पुष्य वती अर्थात रितवंती हो जावेगी
तिस तें अपना धरम विचार सो मेरे निकट
आवने का अवस्य संकोच करेगी तव तिस
को तुम कहना कि हे सुशीले तू हृदय मे कुछ
सोच और संकोच मत कर तिस से के

हे कृ...
[illegible]
[illegible]

होयकर अपने हाथों से इह मनोहर मुकट जो
है सो भगवान के सीस पर चढायदे और जो कद
चित वे नहीं मानेंगी तो तुम ~~इह~~ तिसको इह मेरा
कथन जो है सो सब सुनाय देना और इह भी कहना
कि हे तितकारनी तेरी निसकपट भक्ती जो है सो
~~सो~~ भगवान के हृदय मे बसी हूई है इस प्रकार रात्री
के समय स्वपन देखकर प्रातःकाल होते पुजारी
सब जाग उठे और परस्पर विचार करने लगजा
ते भये इतने मे सो प्रवीन वेस्या भी ~~जो~~ प्रेम के
समुद्र मे मगण भई हूई आनंद पूर्वक स्नान करके
सुंदर वस्त्र और अंगअंगभूषण जो हैं सो सजावती
भई तिसते उपरांत हृदय मे पुष्पों की माला धार
कर और चंदन का लेप देकर रती जो कामदेव की
स्त्री है तिसके मान को हरनेवाली एक रूपे के था
ल मे मनोहर मुकट को राखकर और ~~बडी~~ प्रीती सन
मान से अपने हाथों मे धारन करकर चारो ओर
दासी दासों करके परिवारत क्या जेरी हूई बडे प्रेम
से नृत्य गायन करती हूई चल पडती भई तिस सम
य कैसी भी शोभा को उदय करती है कि मांनु तपस्विनी
रूप धारे हूये चली आवती हे ~~ऐसे~~ ऐसे नृत्य गा
यन करती हूई जब रंगनाथ भगवान भवन के
द्वार पर ~~चली आई~~ आय प्राप्त भई तब तिसको
देखकर पूजिक लोग परस्पर कहने लगे कि भाई रात्री
का स्वप्न सब सत्य भया है देखो कि रात्री के समय दी
नहितकारी भगवान कृपानिधान ने जो हमको स्वप
ने मे कहा था अब सोई वेस्या हाथों मे मनोहर मु
कट को धारन किये हूये प्रतक्ष आय प्राप्त भई
है ॥ इह ॥ चौपाई ॥ ताम कहत अस बदन बुजाई ॥
तब हरि भवन सील निधि आई ॥ इह निज कारन क्रीट

२१४

मन भावा॥ कृपा नाथ कहे देहु चढावा॥ रंगनाथ देव प्रभु सासन दीना॥ तुव कर पहरन क्रीट प्रवीना॥ अस सुनि करि प्रणाम हरषाती॥ भीत रमवन भक्ति मद माती॥ ब्रह्मानंद मगन मनु होई॥ प्रभु पें आई जु क्रीट करदोई॥ देखत दिव्य दरस सुख करना॥ भई प्रेम वस दशा विवरना॥ पुनि से भारि सुरत जब देखा॥ निज कहे रमनि पुष्प वति लेखा॥ सोचित सिथर सकुचवस ठाढी॥ चासत दृगन लाज ...वाढी॥ पूजक देखि सकुच अस तासा॥ मधुर मंजु मुख वचन प्रकासा॥ जाय सुशील वेग प्रभु पाहीं॥ कल कल क्रीट चढावति नाहीं॥ अब न ...उचित असमाचत सोई॥ मे अस प्रभु अपावन होई॥ इन कर दरस देखि मन भायन॥ भई आज रितु धरम परायन॥ सुनत तास अस कथन पुजारी॥ केले तेहि न दोष व्रत धारी॥ जापें रंगनाथ अनुकूला॥ तुम हुं आज सव सुकृति मूला॥ धरम अपावन पावन जाई॥ दीनद्याल कहे ~~[illegible]~~ एक समाना॥ संजुत भक्ति अपावन जे हू॥ रंगनाथ कहे पावन तेहू॥ अस विचारि भ्रम हृदय विलाई॥ प्रभु कहे देहे क्रीट चढाई॥ सुनत वचन तिन सुख दसु नावा॥ परम आनंद वारतिय पावा॥ दोहा॥ ~~करतें सादिर क्रीट धर~~ राखि क्रीट कल कर न तें वहिर भवन हरि आय॥ करि सनान जल विमल झट सजे नवल पट काय॥४॥ टीका॥ तव तिसको पूजक ~~[illegible]~~ कहने लगे कि हे सुंदरि तू भगवान के भवन मै आय कर इन दिव्य मुकट जो है सो अपने हाथों से कृपासिंधू को चढाय दे रंगनाथ भगवान ने तेरे ही हाथ से इस मुकट के पहिरने की आज्ञा दी हूई है ऐसे सुन करके सो वेस्या हरष से प्रणाम करके भक्ती के मद मै मत्त भई हुई मानो

अति प्रसन्न मुख वचन अलावा॥ सो भगवान भ
क्तप्रिय गाये॥ दीनवंधु प्रभु भक्त सहाये॥ तव सिव
काई भक्ति रति दारा॥ कस न करहिं भगवन सुई कारा॥
अस कहि संत गवन भग कीना॥ ई तो वारवधु
हरष प्रलीना॥ स्वरनकार अति निपुण सुहावा॥ प
ठत दूत लीन बुलावा॥ तहितें मणि कंचिन
जुत सोहा॥ द्रुत बनवाय क्रीट मन मोहा॥ करन
हेत अरपण गिरधारी॥ जब कीनी वधुवार
तयारी॥ तब रजनी अस स्वपन सुहंता॥ दीन पुजारि
न कहं भगवंता॥ आज होत स ज्ञान मि नसारा॥ आव
हिं एक भवन वधुवारा॥ मणि कंचिन मंडित मन भा
वन॥ मोरे मंजुल क्रीट चढावन॥ सुरूप
देखत सोई॥ कौतुक तुरत पुछ्यवति होई॥ तहितें
सो निज धरम विचारी॥ आवत मोर निकट व्रत
धारी॥ तव तुम तहि हित जुत समुझावहु॥ प्र
भु कहं निज कर क्रीट चढावहु॥ जो न करहिं
भामनि सुई कारा॥ तो इह कथन मोर तुव सारा॥
तासु देहु सादिर समुझाई॥ तोर भक्ति प्रभु के मन
भाई॥ पूजिक देखि स्वपन अस जागे॥ सकल
परस्पर भाषण लागे॥ तौलो निपुण वार त्रिय
सोई॥ प्रेम पयोधि मगण मनु होई॥ करि स्नान
मन मोद उमंगा॥ सजि आभर्न वसन तन अंगा॥
सुंदर सुमन माल उरधारी॥ लेपत मलय सकल
सुखकारी॥ आवत मनहुं नपस्वनि रूपा॥ रज
भाजन धरि क्रीट अनूपा॥ निज कर लिये
मान रति चोरा॥ दासी दास संग चहुं ओरा॥ करत
नृत्य गुण गीत सुहाई॥ जब हरि भवन द्वार
आई॥ तव पूजिक नयनन तहि देखी॥ मिसि कर
स्वपन सत्य सब लेखी॥ दोहा॥ दीन दयानिध कीन

सम्म ५१६

हे बड़भागिन हृदय की भ्रम संकोच सब त्याग और निरसंक जाय कर के दीन बंधू को मुकट जो है सो चढ़ाय दे ऐसे तिन का बड़ा सुंदर और सुखदायक बचन सुन कर के वे स्त्री परम हरष को प्रापत होती भई और तुरत हीं सनमान पूर्वक मुकट को तहां राख कर भवन के बाहर चली आई तब दासियों से निरमल जल मंगवाय कर और भली प्रकार सनान कर कर फिर तैसे हीं ~~सुगंध~~ सुमन सुगंधी धी चंदन इत्यादि सजाय कर सुंदर नवीन वस्त्र जो हैं सो पहिर लेती भई ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ भीतर भवन हरषजुत आई ॥ लीन क्रीट कर करन उठाई ॥ रंगनाथ सनमुख निंकामा ॥ ठाढ़ी आय बारस्त्रिय रामा ॥ उतकंठित चित मानस रागी ॥ प्रभुहिं क्रीट पहिरावन लागी ॥ कछु उतंग हरि मूरति काहीं ॥ देखि विचार करत मन माहीं ॥ तौ लौ भक्त सोच उरहारे ॥ कृपानकेत भक्त हित कारे ॥ तहि आगल मुनि मानस भावा ॥ दीन ललित निज सीस झुकावा ॥ तब बधु बारि क्रीट निज करना ॥ पहिरायो ~~सन्तोष~~ मानस मुद भरना ॥ भनत आज जग मोर समाना ॥ कौन धन्य जग सुकृति आना ॥ पुनि आनंद मगन अनुरागी ॥ करन नृत्य गायन गुण लागी ॥ उठे रोमांच पुलक गति गाता ॥ प्रेम बारि नयनन छुटि जाता ॥ ~~देखि~~ कहत चकित सब लोग निहारी ॥ रहन जग आज धन्य बधुवारी ॥ जास भक्ति अस देखि सुहावा ॥ रंगनाथ निज सीस झुकावा ॥ दोहा ॥ तब सुशील निधि बारस्त्रिये करि प्रनाम गुण गाय ॥ चलि आई प्रमुदित सदन प्रभु तें होत विदाय ॥ ५ ॥ टीका ॥

४ स

तब शरीरसे शुद्ध होय करके भगवानके भवनमे चली आई फिर तिससे हीं मुकटको उठायकर और आयकर रंगदेवके सनमुख स्थित होयकर बडेप्रेम उतसाह से दीनबंधूके मुकट जोहे सो पहिरावने लगी तहां भगवानकी मूरती कुछ ऊंची जोथी तिसको देखकर हृदय मेविचार करतीं कि अब कौन यतन करूं इतने मे भक्तों के सोच दूरकरने वाले और भक्तोंके हितकारी भगवान कृपानिधान तिसके हृदय के सोच को जानकर तुरत मुनीजनोंमन मे निवासकरनेवाला अपना सुंदर सीस जोहै सो तिसके आगे झुकायदेतभये तब वेस्याने आनंदपूर्वक अपने हाथों से वे मनोहर मुकट जोथा सो कृपासिंधूके सीसपर चढायदिया और कहने लगी किं मेरे समान जगत मे दूसरा कौन धन्य है और कौन पुन्नमान सुजसपात्र है इसप्रकार आनंद मे मगन भई हुई दीनानाथके आगे नृत्य करकर मधुरमधुर स्वरसे प्रभूके गुण जोहैं सोगायन करने लग जाती भई तिसमय तिसकी ऐसी दशाथी कि हरषसे अंग अंग रोमावली उठी हुई और शरीर प्रफुलितमया हुआ नेत्रोंसे प्रेमजल वहा चला जाता है तब लोग तिसकी भक्ती को देखकर अचरजके वशमये हूये परस्पर कहते हैं कि भाई आज इह वेस्या जगतमे धन्य है और धन्य इसका जनम है कि जिसकी भक्तीके आगे रंगनाथ भगवान की मूरती ने सीस झुकायदिया है देखो पाषाण की मूरती का ऐसे झुकजाना बडी अलौकिक वारता है इह तो भक्ती को ही सामर्थ है और किसी को नहीं है तब वे सुशील भक्तीमान वेस्या तहां नृत्य गायन से

भगवान कृपानिधान को भली प्रकार रिझायक
र फिर विदाय होयकर वारवार प्रणाम करती हु
ई आनंद से अपने घर को चली आई ॥४॥ चौपाई॥
तव तें निज निकेत अनुरागी॥ निज कुल करम सक
ल परित्यागी॥ मणि कंचन धन विविध वसेखे॥
देत अतथि संतन हरि लेखे॥ विरचि कुटीर ललि
त सरि तीरा॥ लगी निवास करन मति धीरा॥ देव
चरित गायन पूजा॥ निरतसु नृत्य भाव तजि दू
जा॥ भगवत भक्ति रुचिर व्रत धारा॥ जस वनितै
तस करहिं अहारा॥ लोकक करम सकल तजि
दीना॥ केवल कृष्ण भजन मन लीना॥ दोहा॥
अस श्री रंग उपासना करत वार वधु जोय॥ अंत
वपुष तजि भव हरि गवन सुजस जुत होय॥६॥ टीका॥
तव तें प्रेम मगन भई हुई अपने वेस के धरम को त्याग
कर और मणि कंचन मुद्रा इत्यादि धन जो घर में था सो सव हरि
केनमित्त अतथी संतो को वांट कर फिर
घर से निरास होयकर के नदी के किनारे पर जायकर और ए
क छोटी सी सुंदर कुटिया वनायकर आनंद सेत हां निवास कर
ने लगी और रात्रौदिन भगवान के पूजन सेवन और भगवान
के हीं नृत्य गुण गायन मैं लीन रहती भई संसार की ओर तें
पूर्ण वासना को त्याग कर तिसने केवल एक भक्ती का व्रत ही
धारन कर लिया जैसा अनिच्छित आय वने तैसा
पायकर लेना और भगवान के भजन सुमरण मैं लीन र
हना इस प्रकार रंगनाथ स्वामी की उपासना भक्ती क
रती करती सो वडभागन वेस्या अंत काल आन
केविनास हजेहीं शरीर को त्याग कर और सुजस के सहित
होयकर रंगनाथ जी के धाम को हीं जाय प्रापत हो
ती भई ॥६॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती
महातमे भाषा टीकायां वेस्या चरित वरणनं
नाम सर्गः

वृह्मा नेद मै मगण होयकर दोनो हाथ जोड़े हये भव
न के भीतर भगवान कृपानिधान के सनमुख चले आ
वतीभई तब दीनानाथ का दरसन करती ही प्रेम के
वश तुरत तिसकी दशा विवर्ण कुछ और की और हो
~~जातीभई~~ गई फिर जब शरीर की कुछ सुरत सँभाली
तब भामनी अपने आप को पुष्पवती अर्थात रितवंती
देखतीभई तिसते वडे अचरज और सोच के वश
थरथर कांपती हुई तहाँ स्थित होयगई लज्जा
~~करके नेत्रों को~~ जो हि सोनेत्रों मै अधिक करके आ
यत होयगई तब पूजिक तिसको ऐसे संकोच और
सोच के वश देखकर बड़े मधुर वचनोसे कहने लगे
कि हे प्रवीने तूं अब वेग निकट जायकर क्यों नहीं रंगनाथ
भगवान के सीसपर मुकट चढायदेती ऐसे तिनका
कथन सुनकर वेस्या कहने लगी कि मैं अब इनके
साथ स्पर्श करने के योग्य नहीं हूं भगवान की माया
वड़ी अगाध है कुछ जानी नहीं जाती मै कृपासिंधू
का दरसन करती ही रितवंती होयगई हूं अब शरीर
करके अशुद्धभई हुई दीनानाथ को कैसे जायकर
मुकट चढाऊं इस प्रकार तिसका कथन सुनकर
पुजारी कहने लगे कि हे सुशीले हे व्रतधारनी तेरा
को कोई दोष नहीं है रंगनाथ भगवान जो हैं सो तेरे
पर परम प्रसन्न हैं तूं तो आज जगत मे सरव पुन्नों
की निधी है इह पवित्र अपवित्र धरम ~~[illegible]~~ लो
लोगों के लिये हैं भगवान के आगे सब एक समान हैं
~~[illegible]~~ भक्ती के सहित अपवित्र धरम जो है सो
सो भगवान को पवित्र ही लागता है कृपानिधा
न के दरवार मे धरम अधरम ऊंच नीच का कोई मत
मरन हीं है वे तो केवल भक्ती को बड़ाई देते हैं और
भक्तीपर ही रीझते हैं ~~[illegible]~~ ऐसे विचार कर
जो तैं तू

स्तु २१८

भक्ती का सुंदर महातम जो है सो कथन करता है
पंचाल देस विखें विस्नु भगवान के पूजन सेवन
मे लीन और अपने सुखे संपती के सब समाज के
सहित एक राजा प्रसिद्ध होता भया सो कैसा
कि जिसको विस्नु भगवान के नाम के विना और दू
सरा कोई विषय नहीं था रातोदिन अन्न धन
वस्त्रों करके अतथी संत भक्तों की सेवा ही करता
रहता था कोई कपटी चोर पापी हे त भेष धा
र कर तिस के घर पर चला आवता तो तिस
को भगवान का भक्त जान कर भक्ती प्रीती से
पूजन सेवन कर कर तिस के मन की अभि
लाषा को पूरण करता ऐसे तिस राजा ने सुंदर
व्रत जो है सो धारन किया हुआ था और तिस की
रह संत भक्ती की महिमा और चरचा जहां तहां
देस दिशाओं मे फैली हुई थी तब एक दिन आप
ने रूप को छिपाय कर के भंड जो हैं सो राजा के
छलने के लिये तिलक माला मुद्रा और रंगे
हो रंगे वस्त्र धारन किये हूये संतों का कपट भेष
बनाय कर सरव सुखदायक देवों के देव वासुदेव
भगवान जो हैं तिन को सुमरते हूये राजे के द्वार पर आ
य प्रापत भये तहां द्वारपालों को कहने लगे कि भाई
तुम भीतर जाय कर के राजा को कहो कि तुमारे द्वा
रे पर संत महातमा आये हूये हैं और दरसन मेला
किया चहते हैं ऐसे तिन का कथन सुन कर के एक
द्वारपाल तुरत भीतर चला गया और राजा को जा
य कर कोमल वाणी से कहने लगा कि महाराज
आप के द्वारे पर भगवान के प्यारे संत भक्त दरसन
मेला करने के लिये आये हूये हैं तब राजा सुन
कर के परम हरष को प्रापत भया संत भक्तों

के दरस की अभिलाषा वाला भया हूं आतुरत
यासे निकलकर द्वार पर चला आया और वै सब
संतों का दरसन कर कर दोनो हाथ जोड़े हूये चरनो
पर दंडवत प्रणाम करता भया फिर नम्र वाणी से स
ब कुसल पूछकर श्रीतीम संतौं से ल्याय कर सुव आ
सन परविठाय देता भया ॥२॥ चौपाई ॥ कहत धन्य
तुव संत उदारा ॥ जो विरक्त विचरत संसारा ॥ तजि
त्रिय सुत वितादि वड भागी ॥ मोह मदन मद सदन त
यागी ॥ केवल वासुदेव पद प्रीती ॥ कीनी संत नि
पुण गुण नीती ॥ तुम प्रभु धन्य धन्य मोहि कीना ॥
जो निज दरस सदन चलि दीना ॥ कहि तें कौन संत प्रभु
आवन ॥ आज भागवड मोर सुहावन ॥ सुनि कृत्र
म वै सव नृप वानी ॥ भनत सुनहु नर नायक मानी ॥
हम तो हैं विर दारिका त्यागी ॥ आय अवध पुर दर
सन लागी ॥ सुनत भूप तुव सुजस सुहावन ॥ कीन
तुमार ललित पुर आवन ॥ जानि संत सेव के अनुरागी ॥
हम आये तुव दरसन लागी तव नरेस जोरत जुग
पानी ॥ नम्र भक्ति जु विनय वखानी ॥ करि सनान अव
पूजन कीजै ॥ कृपा नकेत पंथ श्रम छीजै ॥ जव लग
रैहि संत रुचि तोरे ॥ तव लग वसहु सदन जन
मोरे ॥ दोहा ॥ सुनत नृप वचन अस कहत
सकुचि मन माहिं ॥ हम कहं गवन अव हां अव
रहन उचित थिर नाहिं ॥ फिर राजा कहने लगा कि हे
संत उदार तुम ~~[illegible]~~ धन्य हो जो ऐसे विरक्त अ
थात विरमोह होय कर के जगत में विचरते हो और
निरन्तर कर के ~~[illegible]~~ वासुदेव भगवान के ही चरनो का
भरोसा रखते हो हे भगवन तुम तो धन्य हो परंतू आज
मैं भी होय गया हूं कि जिस को परमेस्वर रूप संतो ने
घर मे आय कर दरसन दिया है अव कृपा कर के
कहिये कि प्रभू तुमारा आगमन जो आवना है सो
कौ त्यागकर

कहांतें हूआहै तब इस प्रकार राजाकी वाणी सुन
कर वे कपटी वैश्नव जो वने हूये थे सो कहने लगे
कि हे राजन हम द्वारिकोत्यागकर अवधपुरी जो
अजुध्याहै तिसके दरसको चले जाते थे मारग मैं ज
हां तहां तुमारी संतन की और जस बड़ी को जो सु
ना तो दरसन मेला करने के लिये इहां तुमारे नगर
मै चले आये हैं तब राजा हाथ जोड़कर बड़ी नंम्रता
णीसैं कहने लगा कि हे संत महात्मा अब आप ह्यां ने
दसे सनानं करिये और मारग का स्रम कलेस जो है
सो निदिये फिर जब लग प्रभू तुमारी इच्छा रहवी हो तब
लग इहां मेरे घरमै वास करिये इस प्रकार राजाके मु
खसे वचन सुनकर भाउ जो थे सो हृदय मै सकुचकर
कहने लगे कि हे राजन हमको तो अब फि जाना है एक
स्थानपर स्थिर होयकर वैठना उचित नहीं है ॥२॥
चौपाई ॥ यद्यपि भूप राखवे कारन ॥ कीन विविधमुख
विनय उचारन ॥ तद्यपि तिन हु नमान्यो काहू ॥ तब
नरेस संजुत उतसाहू ॥ मणि आभणी वसन वित
ल्याये ॥ देत तिन नहिं जब कीन विदाये ॥ सो अस
पाय द्रव्य मन माना ॥ लागे करन नृत्य कल गाना ॥
निज मत भांड प्रकट तिन कीना ॥ तब नरनाथ कपट
कृत चीना ॥ भक्त सुजान ज्ञान निधराजा ॥ कीन
न तन करी खिजिय काहू ॥ जानि भक्त हरिमेष सुहा
वा ॥ करि प्रणाम नृप भवन सिधावा ॥ इत भांड़क
मानस इह ठाना ॥ भक्ति विचार रुचिर दृढ ज्ञाना ॥
~~हम जे कीन संत [illegible]~~ ॥ संत मेष जग धन्य सुहा
वन ॥ हम कीन्यो धारन मन भावन ॥ जदपि हमार
कपट नृप लेखा ॥ तदपि जानि सुभ संतन मेषा ॥ क
रि प्रणाम निज सदन सिधारयो ॥ हम प्रभाव न
हिं विदत निहारयो ॥ अब न तज [illegible] व इत सुखद
सुहावन ॥ संत मेष पावन मन भावन ॥ करत
भांड अस हृदय विचारा ॥ भयेभक्त वैश्नव व्रत धारा ॥

८

श्रीमोदव चरित्रे

दोहा॥ अब अति प्रवर प्रमोद प्रद प्रणत पाल भगवान॥ भक्तिमहातम ललित तहँ कथन करहुँ आन॥ चौपाई॥ नृप पांचालदेस इक भ्राजा॥ युक्त सकल सम ऋद्धि समाजा॥ ~~विष्णु भक्ति नित~~ सदा निरत हरि सेवन पूजा॥ विष्णु नाम तजि काम न दूजा॥ मलिन तव सन असन जुत सेवा॥ निसिदिन करत संत महिदेवा॥ हिंसक चोर ~~...~~ कोई॥ आवत संत भेष धरि जोई॥ जानि भक्त जुत भक्ति अभेवा॥ मनवच करम करत नृप सेवा॥ ता कर करहिं अर्थ फुर सारा॥ अस नर नाथ रुचिर व्रत धारा॥ तिसु चि संत भक्त सेवकाई॥ रही दिसो बसकल सुभ काई॥ एक दिवस निज भेष दुराये॥ नृपति द्वार मोड्वजन आये॥ सो नरिंद्र कर वेचिन हेतू॥ ललितमाल मुद्रा अब षेकू॥ गेरुवसन बनसजत सुलाये॥ कपटभेष निज संत बनाये॥ वासुदेव देवन सुखदा ~~...~~ ता॥ रटत निरंतर चराचर त्राता॥ द्वारपाल सन भाषत भाई॥ नृप सन कहहु कथन अब जाई॥ आये संत ~~...~~ तुव राया॥ द्वारपाल सुनि भवन सिधाया॥ नृप सन जाय म... मृदु वानी॥ आये संत द्वार तुव ज्ञानी॥ वैस्नव भेष भक्त भगवाना॥ नृपति सुनत मानस हरषाना॥ हरि भक्तन दरसन सुखदाई॥ देखन दृगन लाल सा छाई॥ दोहा॥ आवावेग नरिंद्र मनि तजत भवन निज द्वार॥ देखत संत सरूप दृग भक्त वैस्नव चार॥ जुगल जोरी कर लकुट इव परयो चरन महि राय॥ पुलकित स्वागति भक्ति जुत आसन लीन विठाय॥१॥ टीका॥ अब और बड़े आनंद के देनेवाला अति से करके पवित्र दीनबंधु और शरणागत पालक भगवान की

सं० ५२०

और राजाने भी हमारे कपट को भली प्रकार जान लिया परंतु संत भेष की महिमा और प्रभाव को देखिये कि प्रजापाल सब प्रकार क्षमा करके बड़े सनमान से प्रणाम करकर घर को चला गया है इससे संत भेष का चमत्कार हमने प्रतक्ष देख लिया है अब इस परम पवित्र और सुखदायक भेष जो है सो हम कदाचित नहीं त्यागेंगे ऐसे विचार कर सो भांड जन हृदय का कपट द्वेष सब त्याग कर बड़े व्रतधारी वैस्नव भक्त होजाते भये और वे राजा से लिये हुये रतन भूषण वस्त्र जो थे सो सब अतिथी संतों को बांट कर आप लक्ष्मी नाथ भगवान को रटते हुये आनंद पूर्वक जहां तहां को चले जाते भये इस प्रकार राजा के उत्तम संसर्ग अर्थात संगती सें वे अभक्त जो थे सो भक्त होयगये तब राजा के मंत्री इस अद्भुत कौतुक को देखकर परस्पर कहने लगे कि भाई प्रजापाल तो अनंत भगवान का बड़ा प्रधान भक्त है और इस के हृदय में दीनबंधू सदैव ही निवास करते हैं इस आज संसार में धन्य है और धन्य इस का जनम है ऐसे शाला घा बड़ाई करकर सब आप ने अपने घरोंको चले आये तब विरक्त भया हुआ राजा एक बड़ा सुंदर और सुभ दिन देखकर सब मंत्री विद्वानों को बुलाय कर के अपने पुत्र को राजतिलक दे आप संत भेष धारन करके कृस्न कृस्न रटता हुआ भजन के नमित्त वन को चला जाता भया तहां नरनागर भगवान को भजता सुमरता हुआ औरं वन के

बीच ही शरीर को त्यागकर मुनी जोगी जनो को दुरलभ जो गती है सो भक्ती के प्रसाद से यतन के विना सहजेही प्रापत कर लेता भया तांते भक्ती के समान इस अगम संसार समुद्र के तरने को और कोई भी सुगम और सुखदायक उपाय नहीं है ॥२॥
इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महातमे भाषा टीकाया ध्रुवचरित वरनने नाम सरगः

सोधन रतन वसन नृप लीने॥ संतन कहे विभक्त
सव कीने॥ रटत वदन भगवन श्री रमने॥ जहं तहं
मुदित भक्तिरत गावने॥ सुचि संसर्ग भूपवर पाई॥
भये अभक्त भक्त जदुराई॥ सचिव विलोकि चरित
अस चारू॥ कहत नरेंद्र रुचिर व्रत धारू॥ विदत भ
क्त भगवन सुख केंदू॥ जा के उर प्रभु दीनन बंधू॥ व
सत सदा संतत हम लेख्यो॥ असो धन्य नृप
सें सति लेख्यो॥ तव नरनाथ सुदिन सुभ जानी रा
जतिलक निज सुत कर पानी॥ देत सुमरि नगधरन
कृपाला॥ कीन गमन कानन महिपाला॥ रटत रटत
नागर नट काहीं॥ अंत वपुख तजि कानन माहीं॥ दोहा॥
मुनि जोगिन दुरलभ अगम विनु अजास गति सोय॥
छितपत भक्ति प्रसाद तें लीन विदत सव लोय॥ तो
ते संसृति भक्ति सम सुगम सुलभ सुखदाय॥ तर
न वार निध अगम भव नाहिन आन उपाय॥३॥
टीका॥ तव राजा ने तिनके राखने के लिये यद्यपि
वहुत ही विनती कर कर कहा तद्यपि सो न
हीं मानते भये तव प्रजापाल ने भूषण भली वस्त्र
इत्यादि धन दे करके वडे सनमान से जव विदाय किये
तव वे राजा के ऐसे सतकार को पाय कर तुरत नृत्य
गायन करने लगपडे और अपनो भांडव मत जो है
सो प्रकट कर देते भये ऐसे तिनके कपट
को देखकर भक्त प्रधान और ज्ञान की निधी राजा
जो था सो हृदय मे कुछ भी रोख नहीं करता भया
भगवान के संत भक्तों का भेष जान कर प्रणाम
करके घर को चला जाता भया तव इन भांड जो थे
तिनके हृदय मे तिसी काल भक्ती विचार के सहित सु
दर ज्ञान जो है सो दृढ होजाता भया और कहने लगे
कि धन्य इन संतों का भेष है जो हमने धारन किया

य॥ याते तोहि असंत पति नास्तिक धरम निधान॥ अबलों निज जड़ जाति वश जानत रही अजा
न॥ यद्यपि रुचि उपदेस कहे रही होत बहु बार तदपि रहत हुती सकुच पति गुरु स्वामि विचा
र॥ इह चिंता पावक प्रबल दहत हुती उर मोर॥ आज सुपत सियराम रव सुनत बदन पति तोर॥
सुनि अनंद उपज्यो महो भई सफल मनकाम॥ जान्यो पति उर बसत प्रभु भक्त सुखद सियराम॥ या
तें मै मणि बसन धन दीन दुजन बहु दान॥ मंगल ललित महान मुद कीन सदन पति प्राण॥
तुमहिं उचित अब कृपातन अतछि संत लिखि द्वार॥ दै दै निज कर दान धन करहु सुभग सतकार॥२॥
टीका॥ अब जदुनंदन महाराज के चरन कमलों मैं ■ के दृढ़ करने वाला भक्ती का और बड़ा सुंदर
महातम जो है सो कथन करता हूं कहते हैं कि राम के सुमर्ण और रटन करने मे प्रवीन एक कोई महा
भक्त राजा होता भया सो कैसा था कि रात्री दिन भगवान के मानसी जाप मै लीन रहता था अर्थात मन
मे ही भगवान को भजता था ■ बाहर ते सब लोग तिसको अभक्त ही जानते थे और वे अंतर
भक्त नाम करके प्रसिद्ध था तिसकी स्त्री बड़ी वुद्धीमान और भक्तीमान पती व्रता धरम मै प्रवीन औ
र सरव गुणों की निधी थी सो अपने हृदय मे सोच करने लगी कि इह मेरा प्राण पती भरता जो है सो
अब भगवान की भक्ती मे कैसे आसक्त अर्थात पती के हृदय मे भगवान की कैसे दृढ़ हो और सा
धसंतों के पूजन सेवन मै कैसे प्रीती भक्तीवाला हो इस प्रकार प्रेम भक्ती और वुद्धी मे प्रवीन
रानी जो है सो चिंतन सोच करने लगी ऐसे

जब कुछ एक दिन बतीत होयगये तब एक दिन
राजे अपने घरमे बड़ी गाढ़ी निद्रामें सोया हुआ
था तहां अकस्मात हीं तिसके मुखमें सियराम श
ब्द जो है सो निकल पड़ा तब रानी तिस शब्दको सु
नकरके मानो ब्रह्मानंदमे मगन होयगई और तुर
त हीं साथ ब्राह्मण अतिथी दीन जनों को बुलायकर
अनेक प्रकारके दान धन वस्त्र भूषण इत्यादि जो हैं
सो सनमानसे सबको देने लगी और मे नाना मंगल
भी होने लगपरे तब ऐसे उतसाहकी धूमधामके
शब्दको सुनकरके राजा तुरत जागपड़े और रानी
को पूछने लगे कि प्यारी इह कौन मंगलउतसाह
है और इसका कारण क्या है किसके इहां पुत्र भया
मेरे को प्रकट करके कहो ऐसे पतीका वचन सुनकर
रानीं कहने लगी कि हे प्राणनाथ ना तो पुत्र [illegible]
मेरे घर भया और किसी बांधव जाती के परन्तु
मंगलका कारण इह है कि नाथ मैने अबलग तु
मारे मुखसे कबीं इह जो भी सरब सुखदायक रामना
म शब्द जो है सो नहीं सुनाथा इसतें मे अपनी ज
ड जाती के सुभावसे अबलगं तुमको अधरमी ना
स्तिक और असंत अभक्त जानती रही हूं यद्यपि
हृदय मे नाथ तुमको उपदेश करने की बहुतवार
इच्छा होती रही तदपि गुरु पती और स्वामी विचा
रकर लज्जा संकुचसे रुक जाती रही हूं कुछ क
हने नहीं [illegible] सकी हूं और इस चिंता की प्रबल
अगनीं मेरे हृदय को सदैव हीं जलावती रहती थी
आज तुम निद्रामे जो लीन भये थे तो तुमारे मुखसें
सियराम शब्द जो निकला तिसको मे सुनकरके
हे पती परम आनंद को प्राप्त होयगई हूं अब मेरे
मन की अभिलाषा सब पूरण होयगई है और मे

१२३

ने आज निश्चय करके जान लिया है कि पती तुमारे हृदय में भक्त सुखदायक सिये राम जो हैं सो अव स्य निवास करते हैं मै इसी आनंद और सुख को मानकर हे प्राण अधार ब्राह्मणों को धन वस्त्र त्यादि अनेक प्रकार का दान दिया और घर मे नाना मंगल उतसाह जो है सो किया है तांते पती अव तुमको भी उचित है कि द्वारे पर आतथी साधु ब्राह्मणों को आये हुये देख कर अपने हाथ से अनेक प्रकार का धन दान दे दे कर सब को संतुष्ट और प्रसन्न करो ॥ २ ॥ चौपाई ॥ सुनि अस वचन भूप ति जनारी ॥ भनत सुनहु सुंदर व्रत धारी ॥ प्रिया कीन सुकृत तुव जोई ॥ तेंकि[illegible]र एहु विदत फल होई ॥ मर हे आज संशय कछु नाहीं ॥ जो सिय राम वसत मुहि माहीं ॥ मै तिन श्रेत्र भक्ति जुत सेवा ॥ २ ह्ये कर त निसि दिवस अभेवा ॥ आज सु हृदय मोर तजि स्वामी ॥ भये कृपाल भवन निज गामी ॥ मरहिं वहीन मीन जिमि वारी ॥ तिमि अब मरन मोर सुन प्यारी ॥ अस कहि भूप स चव हे कारयो ॥ सुतहिं बोलि सुभ नीति उचारयो ॥ देत राज अवधेक सुहावा ॥ निज सिय राम चरन मन लावा ॥ विनु प्रयास तजि के तुक काया ॥ भक्ति प्रसाद परम पद पाया ॥ सहगामनि अनुरागन रानी ॥ पति सन लोकगवने निवड़ भागी ॥ लोक वि लोकि चरित वि समाये ॥ साधु साधु सब वदन अलाये ॥ दोहा ॥ अस प्रकार सं तोष कछु मै गाथा रह गाई ॥ मुनि जोगीन जे अगम गति श्रेत्र भक्ति नृप पाई ॥ ४ ॥ टीका ॥ इस प्रकार रानी का वचन सुनकर के

॥ [illegible] ॥

अथ अंतर भक्तिनृपचरितं

दोहा॥ अब श्री जदुनंदन नलिन चरन करन दृढ प्री
त॥ भक्ति महातम आन कछु करहु कथन सुभ
रीति॥ चौपाई॥ राम भजन तत्पर गुण खाना॥
भयो भूप इक भक्त महाना॥ करत जाप मान सिमि
त सोई॥ बाऊ अभक्त लखहिं सब कोई॥ अंतभ
क्त तहि नाम उजागर॥ ता कर पतनि रुचिर म
ति नागर॥ भक्तिमान पतिदेवत रानी॥ सो निज
करन सोच जिय लानी॥ इह कस मोर प्राणप
ति स्वामी॥ होवत्ति भक्ति निरत निसकामी॥ देव
जजन संतन सिवकाई॥ करहिं आ[illegible]णि कौन
विधराई॥ लगी करन अस चिंतन तेहू॥ भक्ति
प्रवीन सुमति गुण गेहू॥ [illegible] अस प्रकार
कछु दिवस बिताये॥ तब इक समय भव नछि
तराये॥ दिवस प्रयेक सैन जब लययो॥ निद्रा
निरत तुरत नृप भययो॥ अकस्मात तब वदन
मुआला॥ कढ्यो राम सिय सुखर रसाला॥ म
हिखी सुखर सुनत अस सोई॥ ब्रह्मानंद मगन
भनु होई॥ धन आभर्न वसन बहु भांती॥ लगी
विभगात करन मुद माती॥ होन भवन मंगल सु
भ लागे॥ ते सुनि [illegible] स्रवण जोखे नृप जागे॥
पूछत प्रियहिं कवन उत साहा॥ मंगल हेतु भ
वन तुव काहा॥ कौं के भयो सुवन सुखकारी॥ क
रहु कथन तुव वेग पयारी॥ रानी सुनत वचन अ
नुरागी॥ नृप सन भनन प्रकार अस लागी॥ दोहा॥
नाउपज्यो सुत मोर गृह ना सुत बांधव काहु॥ सु
नहु प्राणपति सदन अस हेतु ललित उतसाहु॥
मैं अब लग पति वदन तुव रव निसि सहिज सुभा
य॥ नाहिन कब हुं सुन्यो हुतो राम नाम सुखदा

~~सम~~ ९२४

सो गायन कर देई ॥ देखिये भक्ती के प्रसाद से अं
तरभक्ती राजा ने मुनी और जोगी जनो को भी
दुरलभ जो गती सो प्रापत कर लेई ॥२॥ इति श्री
भक्ति विनोद ग्रंथे भागवदभक्ती महातमे भाषाटी
कायां अंतरभक्ती नृप चरितवरणने नाम
तेरमा: ═══

अथ विप्रभक्तचरितं

दोहा भक्तिमहातम ललित तर मृत जीवन संसार ॥ आ
न पणमति वदन निजकर हों प्रकट उचार ॥ मथुरा
प्रांत विप्रवर काहू ॥ उतम भक्त वे [illegible] सब ताहू ॥
त्रिय बांधव सुत बरजित होई ॥ एकल वसहि सदन नि
ज सोई ॥ निर्तदिन व्रत भक्त प्रवीना ॥ ● रामभज
न संतत मन लीना ॥ अस प्रकार बीत्यो कछु काला ॥
तब कुटि द्वार तास इक बाला ॥ धृत उपवीत वि
प्र सुत काहू ॥ वरजित बांधव मात पिता हू ॥ आय
परम दीनव त होई ॥ तासु विलोकि विप्रवर सोई ॥
दाया युक्त वदन मृदु वानी ॥ भाखी परम हरष जनु
सानी ॥ कहि तें आव कवन तुव कारे ॥ ठाढो दुलि
त दीनवत द्वारे ॥ वालक वचन सुनत दुजकेरा ॥
कहत नाथ पितु मात नमेरा ॥ दुज सुत विदत
लोग ग्रामी ना ॥ पाल्यो मोहि जानि अति दीना ॥
अब दुरमित काल गति पाई ॥ आयो तोर सदन
दुजराई ॥ वे सब सुनत नम्र सितु वानी ॥ ला
ग्यो मनन हरष उर मानी ॥ अब नजा हु तजि मो
र अगारा ॥ अस प्रकार जब विप्र उचारा ॥ निज
अभिषृ तब बालक पाई ॥ भयो स्थित दुज पद

सिरनाई॥ द्विजवर करत पुत्र सम लालन॥ लाग्यो
तासु प्रीति जुत पालन॥ एक दिवस तब बालक ते
ला॥ गवन्यो रहो बहिर तजि गेहा॥ विप्र भक्ति निज
मरण विचारी॥ निज गुरुदेव लीन हेकारी॥ भन्यो
मरन निज मरन सवाहीं॥ होमिय मोर नाथ गृह
नाहीं॥ जब लग सो न आव निज गेहा॥ तब लग ना
थ मोर मृत देहा॥ राखेहु यतन सदन संभारी॥ ते
ज ब आव बाल बन धारी॥ दोहा॥ तासु भनेहु गु
रदेव तुव मोर सिखावन एहु॥ होउ जे सत तुव
भक्ति दृढ भगवन दीन सनेहु॥ तब तुव भक्ति प्रसाद
तें मोर व पुत्र मृत जोय॥ कौतुक देखत सबन सुत
होहिं सजीवन सोय॥२॥ टीका॥ अब और मृत
सजीवन अर्थात मरे हुये पुरुष जीवत करने वा
ला भक्ती का सुंदर महातम जो है सो जैसा के
मती के अनुसार होय सकता है गायन करता हूं मथु
रा के परे एक कोई ब्रह्मण बड़ा उत्तम वैस्नव भक्त
होता भया सो कैसा कि जिसका मातापिता स्त्री पुत्र
बांधव कोई भी न होया केवल आप ही अकेला
घर मै वास करता था भिक्षाटन कर कर अपनी
उपजीवका करता और रात्री दिन भगवान के भजन
सुमरण मै लीन रहता था इस प्रकार जब कुछ काल
वतीत होय गया तब एक दिन तिसकी कुटिया के
द्वारे पर यज्ञोपुवीत अर्थात जनेऊ धारन किये हु
ये मातापिता भ्राता इत्यादि बांधवों से हीन और बड़ा
दारिद्री दीन ब्रह्मण का एक बालक आय प्रापत
होता भया तब तिसके देख करके ब्रह्मण भक्त दयाके
वशी भया हुआ बड़ी मधुर वाणी से पूछने लगा कि हे
बालक तूं अत से दुखी और दीन होय कर के मेरे द्वा
रे पर स्थित भया हुआ है कहो पुत्र तूं कौन है और क
हां ते आया है ऐसे ब्रह्मण का वचन सुनकर बाल
क दीन वाणी से कहने लगा कि हे नाथ मेरा माता

पिता माता बांधव कोई भी नहीं है ग्राम के लोगों
ने आज तक मेरी पालना करी है परन्तु अब दुर्भि
क्ष काल अर्थात मंद समय करके कोई अन्न नहीं दे
सका तिस ते विपती का मारा हुआ ईहां तुमारे द्वार
पर आय प्राप्त भया हूं इस प्रकार तिस बालक की
बडी दीन कोमल वाणी सुनकर ब्रह्मण भक्त ने
रघसे दया के वश होयकर कहने लगा कि हे पुत्र अब
तुम ईहां मेरे ही घर मे निवास करो ऐसे सुनकर सो बा
लक अपने मन वांछित फल को पाय कर ब्रह्मण भक्त
के चरनो पर प्रणाम करके तहां ही स्थित होजाता भया
तब ब्रह्मण तिसको पुत्र के समान प्यार करकें बडी
प्रीती से पालने लगा और भगवान
के भजन सुमरणो मे लगाय दिया एक समय सो बालक
किसी कारज के नमित्त घर से निकल कर कहीं बाहर
चला गया तब पीछे तिसके गुरु ब्रह्मण भक्त ने अ
पना अंत समय अर्थात मरण विचार कर अपने
गुरु जी को पास बुलाय लिया और अपने मरणे का वृत्ता
न्त सब सुनाय कर कहने लगा कि हे दीन दयाल मेरा
शिष्य जो है सो कहीं कारज के नमित्त बाहर गया
हुआ है घर मे नहीं है नाथ जब लग सो घर मे नहीं
आवेगा तब लग मेरा मृतक शरीर तुमने संभाल
कर रखना और जब वे मेरा शिष्य बा
लक घर मे आवेगा तब तिसको तुम मेरी
इह शिक्षा कहियो कि हे पुत्र जो तुम सत्त करके
भगवान दीन सुखदान की भक्ती में होवोगे तो
तुमारी भक्ती के प्रसाद से मेरा मृत हुआ शरीर जो है
सो कौतुक से सब के देखते अब ही जीवत होजा
वेगा ॥१॥ चौपाई ॥ अस कहि देवं करता हो ॥ सो
दुज भयो मृतक गृह माहो ॥ जब मध्यान भा

राजा कहने लगा कि हे सुंदर व्रत वाली हे प्यारी ति
ने जो पुन्न किया है सो तिसका फल प्रतक्ष अव
ए होजान कि मै आज अवश्य मरूंगा इसमे कुछ
संशय नहीं है क्योंकि भगवान मेरे हृदय मे निवास
करते थे और मै रात्रीदिन निरन्तर होयकर
के अंतर भक्ती के सहित सेवा करता था अर्थात
मानसी पूजन करता और प्रभू को मन मे ही वसाय रख
ता था सो दीनवंधू भगवान आज मेरे हृदय को त्या
गकर अपने धाम को चले गये हैं प्यारी तैने मेरे मु
खसे निकलते आप देख लिये हैं जैसे जल के वि
ना मछली का जीवना नहीं होता है तैसे हीं अव मेरा
जीवना भी कठिन प्रभू के विना प्राण जो हैं सो अभी च
लेको चहते हैं ऐसे कथन करकर राजा ने मंत्री को
वुलाया और फिर तुरतहीं पुत्र को भी वुलायकर सुंदर
सुभनीती जो है सो भली प्रकार सब सिखाई तिसतें उप
रांत तिसको राजतिलक देकर आप भगवान के चरनो
मे चित्त को जोड़कर यतन के विना सहजे हीं शरीर
को त्यागकर भक्ती के प्रसाद से परम पद को प्रापत
होजाता भया तब तिसकी रानी जो थी सो तिसके सा
थ हीं जल करके अपने परलोक को सिद्ध
करती भई तहां इस अद्भुत कौतुक
को देखकर सब लोग अचरज को प्रापत भये हुये अ
नेक प्रकार श्लाघा वड़ाई करकर कहते हैं कि धन्य
इह भगवान का भक्त राजा और धन्य प्रेम भक्ती मे
प्रवीन इसकी रानी है ऐसे तिनका सुजस वखान गा
वते हुये लोग सब अपने घरों को चले गये ना
भादास जी कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार इह सुंदर
गाथा जो है सो मैने कुछ संक्षेप करके आपके आ

~~४३०~~ ६२६

२

तें श्रवण कर तव बालक हाथ जोड़ कर दीन वाणी
से विनती करने लगा कि हे कृपानिधान आप कृपा
करके कथन कीजे कि सो कौन ज्ञान उपदेश है
जो गुरु जी दीन बोले मेरे लिये कथन करते
हैं तव वृद्ध गुरु कहने लगा कि हे पुत्र तेरे गुरु
की तेरे को यह शिक्षा है कि राम चंद्र भगवान की सुंदर
सुखदायक भक्ती जो है सो कदाचित सत्य
करके हृदय में धारन करेंगा तो तेरी तिस सत्य
भक्ती के प्रभाव से इह मृतक भया हुआ मेरा शरीर सजी
वत होजावेगा ऐसे वृद्ध गुरु के मुख से वचन सु
न करके बालक जो है सो प्रीति भक्ती से तुरत ही
मरे हूये को जीवत करने वाला सब सुखों का सार
राम नाम जो है तिसको सुमरने लगजाता भया ॥२॥
चौपाई ॥ अवरिल भक्ति शेम मन लीना ॥ तारक मे
त्र रटन जब कीना ॥ तास प्रभाव मृतक गुरु वा
ला ॥ ~~जीवत होय सुख~~ उठ्यो होत जीवत त
तकाला ॥ ति सुमुख राम नाम सुनि सोई ॥ बोल्यो
परम हरषवस होई ॥ देखऊं वत्स सुभग सुखदाई ॥
राम भक्ति महिमा अधिकाई ॥ जहि प्रसाद मृत
वपुष हमारा ॥ उठ्यो तात तुव प्रकट निहारा ॥
तो ते मृत सजीव दुखहरनी ॥ राम भक्ति भव वा
रद तरनी ॥ तात लेहु सेनत उरधारी ॥ ~~तुम्हे~~
तुमरे सदा सरव सुखकारी ॥ मै तोरे उपदेश
सुनावा ॥ परिहरि नाक लोक सुत आवा ॥ जि
यन आस मोरे कछु नाहीं ॥ असवि चारि बाल
क मन माहीं ॥ वासुदेव पावन पद रामा ॥ नि
सिदिन करहु भक्ति बड़भागा ॥ करि करि भक्ति
सुधा रस पाना ॥ होहु अमर तुव तात सजाना ॥
अस कहि विप्र तजत निज काया ॥ करि कौतुक

सतसंगत सिधाया॥ उरध देहिक कृत ताकर सारी॥
विधि वत कीन काल व्रत धारी॥ बहुरि भवन मानस
अनुरागा॥ सुचि हरि भक्ति करन दृढ लागा॥ रटत
नाम भगवान सुहावा॥ तहि निज अंत परम पद पावा॥
अस हरि चरन चारु मन भायन॥ मैं संतन तकी
न कछु गायन॥ दोहा॥ राम भक्ति से सत्ति सुखद
जेहि धारन उर कीन॥ ~~तेहि~~ तहि सुकृति जन
जगत निज जनम सफल करि लीन॥ २॥ टीका॥
जब इस प्रकार अजामिल जो सें कि जिसमें कोई वि
रल नहीं है तिस बालक ने तारक मंत्र राम ना
म का सुमरण किया तब तिस राम नाम के प्रभाव सें
~~ब~~ तिस बालक का मरा हुआ गुरू जो था सो तत
काल जीवत हो जाता भया और बालक के मुख तें
राम नाम शब्द को सुन कर बडे आनंद में मगन हो
य कर कहने लगा कि हे देखो सब सुखों के देवाली
सुंदर राम भक्ती जो है तिस की कैसी अद्भुत महि
मा है कि जिस के प्रसाद से मेरा इह मृत भया हुवा
शरीर जीवत होय गया है ताते इह मृत संजी
वनी और संसार समुद्र के तारने वाली पवित्र राम
भक्ती जो है इसे पुत्र तूं निरंतर कर के हृदय में धा
रन कर ले इह तेरे को सब काल सुख के देने वा
ली है और मैं हे हितकारी केवल तेरे उपदेश के
लिये स्वर्ग लोक को त्याग कर के आया हूं मेरे को
जीवने की कुछ इच्छा नहीं है ऐसे विचार कर हे बडभागी
सब वासना को त्याग कर केवल वासुदे
व भगवान के चरन कमलों में प्रीती कर और भ
क्ती के अमृत रस को पान कर कर देवताओं के स
इस प्रकार कथन कर कर वृ
मान अमर हो

१२४ ६२१

ह्मणभक्त जो है सो फिर सहजे ही शरीर को त्याग
कर और बड़ा अदभुत कोरकर भगवान कृपानिधा
न के परमधाम मे जाय निवास करता भया तब पी
छे बालक ने विधी के अनुसा
र तिस का मृतक करम जो है सो सब किया तिस तें
उपरांत स्वस्थचित होय कर के भगवान की
भक्ती मे लीन हो जाता भया ऐसे समय पाय कर
सो भी भगवान चरन कमलों सुमरता
सुमरता अंत शरीर को त्याग कर भक्ती के प्रसाद
सें परम पद को प्रापत हो य गया इस
प्रकार इह चरित्र जो है सो मैने कुछ संक्षेप कर
के गायन कर दिया है ॥ जिस पुरष ने संसार
मे इस सरव सुखों के देने वाली रामचंद्र जी की
भक्ती को हृदय मे धारन किया है तिस पुन्यमा
न पुरष ने जगत मे सत्य करके अपने जनम
और जीवने को सफल कर लिया है ॥२॥ इति
श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे
भाषाटीकायां विप्र चरित वरणने नाम
= सरगः

सकरआवा॥ गवन करत बालक तब आवा॥ मृतके
विलोकि सदन गुरु का हीं॥ बालक भयो विकल मन मा
हीं॥ रोदन करत दुखत चित होई॥ देव भरोस कव
न अब मोही॥ शिशु मति देखि वृद्ध गुरु तेहा॥ बोल्यो
वदन वचन जुत नेहा॥ बाल तनक धीरज उर ले
वो॥ मुहि मृत समय तोर गुरुदेवो॥ जेउपदेश
ज्ञान तुव हेतू॥ कीन सु सुमरु अब लसु खदेतू॥
बालक सुनत भन्यो कर जोरे॥ कीजिये कथन वेग
प्रभु मोरे॥ कवन ज्ञान उपदेश सुहावा॥ मोर हेतु
गुरु देव अलावा॥ जठिर विप्र तब वदन बखाना॥
अस उपदेश तोर गुरु ज्ञाना॥ राम भक्ति सुत सु
खद सुहाई॥ जो तुव करहु रुचिर मन माई॥ तो प्र
भाव सु चिन्हित तुमारे॥ होहिं सजीवन प्राण हमारे॥
दोहा॥ बालक तत तन सुनत अस मृत जीव नज
गचाहु॥ लग्यो आराधन करन उर राम नाम सु
ख साह॥ २॥ टीका॥ इस प्रकार कथन करके
सो वृद्ध ब्राह्मण कि दैव योग से मृत होय जाता भया
तो जब दिन का मध्यान समय आय गया तब वे
बालक तिसका शिष्य भी बाहर से घर में आय प्रा
पत हुआ आगे गुरु को मृत भया हुआ देखकर बा
लक जो है सो व्याकुल होय जाता भया दुखी होय
कर बड़े विलाप से रोदन कर कर कहता है कि हे
दीन दयाल आप तो परलोक को सिधारे परन्तु मेरे
को अब किसका भरोसा है और मैं कौन की शरण
को प्रापत होऊं नाथ मेरे को तो कोई आधार नहीं
रहा है ऐसे बालक का रोदन विलाप सुनकर
और तिस की व्याकुल दशा देखकर वृद्ध ब्राह्मण
ती के वचनों से कहने लगा कि हे पुत्र तू हृदय में
धीरज को धार और मरने के समय तेरे गुरु
ने जो तेरे लिये ज्ञान उपदेश किया है सो तू मेरे

शिवपूर्व

~~१११~~ ८२८

विमराई॥ संतत निरत गुरन सिव काई॥ संतत सू गुरु देव अमानी॥ रामानंद विदत जग ज्ञानी॥ मिदा टिन निज धरम सुहावा॥ सोऊ धरम रवि जनहिं सिखावा॥ पायन देस गुरन हित साकी॥ मिदा अटन करत सुख मानी॥ गुरु कहे प्रणम देत जन त्याई॥ तै करि हरि हित काई॥ विरचि पाक नैवेद लगावत॥ सिष समेत पाके कछु पावत॥ दोहा॥ अस मिदाट न करत तहि निकसि गयो कछु काल॥ देव योग कर दास रवि एक दिवस तजि आल॥ निकसे मि दाटन करन घटा गगान घन जोर॥ ज्यो ज्यो प्रती लग पवन लगी चलन चहु वोर॥ मूसल धारन वार झर मारत मरत अजात॥ वज्र पात टूटत उरन नरन धरन घहरात॥ १॥ टीका॥ अव श्री र हृदयके निरमलकरनेवाल और परमआनंद के देनेवाला भक्तीका मनोहर महातम जो है सो कथन करता हूं कैसा भी महातम है कि मोहग्र म पाप कलेशों के नास करनेवाला राम चंद्र जी के चरन कमलोंकी भक्ती प्रीती के देनेवाला है रामानुज जी के ~~[illegible]~~ सिष देवाचारज जी राधानंद जी हरजानंद जी महिमानंद जी इन चारो बडे उजागर और महां संत ज्ञान विज्ञान की निधी होते भये श्री राधानंद जी के शिष्य ~~[illegible]~~ रामानंद जी हुये सो कैसे कि पर व्रत धारी और इंद्रय जीत दयामान सरव गुणोंकी निधी जगत में वडे उजागर वैस्नव प्रधान और कृष्ण भगवान की भक्ती में लीन पर हित और पर उपकार मे प्रवीन सब का मान राखने वाले कृपा और

श्रावमै भी सामर्थ अनुपाय नी भक्ती के धारने
वाले कि जो किसी सें नहीं पाई जाती और तिसम
ती केवल से जिन्हो ने अनेतनों जीवों को इस
महां भ्यानक संसार समुद्र सें पार [illegible] उतार दिया
अर्थात तिनका उद्धार कर दिया है आगे तिन के शिष्य
पीपा [illegible] नरहरी कबीर रविदास धन्ना
सदना भक्तानंद इत्यादि बडे भक्त प्रधान ज
गत मै प्रसिद्ध होते भये अब तिन मै से प्रथम
रविदास जी की भक्ती जो है सो गायन करता हूं कै
सी भी रविदास जी की भक्ती है कि मन के हरनेवा
ली पवित्र और सुख के देनेवाली निरमल
मानो संसार समुद्र के तारने को बडी सुगम ना
व का है और जिस को सुणकर के मानुष जो हैं
सो ज्ञानध्यान के सहित परम वैसव भक्त होजा
ते हैं ऐसी भक्ती वाले सो रविदास जी पूर्व ले ज
नम विखे ज्ञान की निधी ब्रह्मचारी होयकर रामा
नंदजी के चेले होते भये कैसे कि शरीर के विषय
सुख भोग इत्यादि सब बिसार कर रात्री दिन नि
रन्तर गुरु जी की सेवा मै लीन रहते थे तब ज्ञा
नध्यान की मूरती निरमान संत प्रधान गुरु
रामानंद जीं भिक्षाटन धरम [illegible] करते थे सोई
धरम करने की रविदास जी को भी आज्ञा देते
भये तब गुरु जीं आज्ञा पायकर रविदास जी
प्रणाम करके सावधान हों [struck-through, illegible] और
नित्त भिक्षाटन कर कर अन्न जो प्रापत होता सो
गुरु जी के आगे ल्याय राखते तब सो दीनदयाल
भगवान का पूजन सेवन करकर पीछे भोजन

१८२२

बनावते ओर प्रीती भक्तीसे प्रथम भगवान
को नैवेद लगाय कर फिर शिष्यके सहित आ
नंदसे आप भोजन पाय लेते थे इस प्रकार भि
क्षाटन करते करते रविदासजी को कुछ काल व्यती
त होय जाता भया तब एक दिन जो घर को त्या
ग कर भिक्षाटन करने को चले तो दैव योगसे आका
शमे बदलकी [illegible] घोर घटा छायत हो कर
जल जो है सो मूसल [illegible] लगपड़ा और पवनभी
बड़े वेगसे चल कर चारो ओरते झकोरे मारने ल
गी तैसे ही परम भ्यानक वज्रपात अर्थात
विजली के टूटनेसे पृथवी [illegible]
भी थरथर कांपने लगी और मानुष्य भी भयसे
व्याकुल हो जाते भये ॥२॥ चौपाई ॥ रविजन
देखि वृष्टि घन माही ॥ करि न सको भिक्षाटन
ताही ॥ छूछे गुरु पै आवन काही ॥ भयो सा
म [illegible] विप्रवर नाही ॥ तब इक देखि नास्ति
क गेहा ॥ सकुचित तास द्वार थिर रेहा ॥ नास्ति
क ठाढ विलोकि अकेला ॥ कहत काहु रामा
नंद चेला ॥ भक्तिमान ठाढो मम द्वारा ॥ तास
मधुर मृदु वचन उचारा ॥ आज विराम होव
नहि वारी ॥ इत तुव अन्न लेहु व्रतधारी ॥ गुरुहि
कराय पाक निज कर है ॥ जाय कुटीर म
को भ्रम हर है ॥ सुनि रविदास भन्यो निज ब
दना ॥ गुह वर मोर अन्न तुव सदना ॥ करत
ना कृपासिंधु सुई कारा अस प्रकार रविदा
स उचारा ॥ तब मध्यान भास कर [illegible] ॥
जो लघ गगन नहि विपुरत छावा ॥ विमल

अथ रविदास चरितं

दोहा॥ अब मंजुल आनंद प्रद ~~भक्ति महात्म~~
चाह॥ भक्ति महातम आनमे करहुं कथन मन [करत अमल उर]
लाह॥ मोह दुरत दुख हरन सब हृदय मरन सु
ख चैन॥ प्रेम भक्ति बरधन नवल राम चरन र
ति दैन॥ रामानुज कर विदित शिष देवाचार जना
म॥ राधा हरजानंद पुन महात्म हम अभिरा
म॥ चौपाई॥ इह चतुरथ रामानुज भाये॥ महा
संत शिष ज्ञान अघाये॥ श्री राधानंद कर शिष चा
रू॥ रामानंद विदित व्रत धारू॥ पूरित दर्शि दायरत
नागर॥ वै सब संत विदित गुण आगर॥ कुसुम
क्ति पर पारित पाला॥ ज्ञान निधान मान प्रद [illegible]या
ला॥ अनुग्रह शापादि परायण॥ विस्तृत लोक
भक्ति अनुपायन॥ इमत भक्ति वल भवनि पधारी॥
विनु प्रयास जहि दीनसि तारी॥ पीपा जी शिष
तासु सुहाये॥ नरिहरि जन कबीर जग गाये॥
धन्ना सदना रवि जन चारू॥ म[illegible] सुखानंद म
क्ति व्रत धारू॥ इत्यादिक अभिराम सुहाये॥ म
हा प्रधान विदित जग गाये॥ प्रथम हि चरित रवि
दास सुहायन॥ मैं अब करहुं भक्ति कछु गाय
न॥ विमल सुखद पावन मन हरनी॥ मानहुं
सुगम सिंधु भव तरनी॥ जाकर सुनत मनुज
अनुरागे॥ होहिं भक्ति वे सब बड़भागे॥ पूर्व ज
नम निज सो रविदासा॥ भक्ति प्रवीन ज्ञान गुण
रासा॥ ब्रह्मचरज व्रत निरत सुहेला॥ [illegible] होत
भयो रामानुज चेला॥ विषय सुखादि सकल

और गुरू जी के भयसे भी चित्त कांपता है कि वेदीन
ख्याल भूखे क्या कहते होंगे इतने में नास्तिक फिर
मधुर और हित की भीनी हुई वाणी से कहने लगा
कि हे संत आज आकाश से वरषा छूटने वा
ली नहीं है और गुरू तुमारे घरमै भूखे व्याकुल
होय रहे होंगे तांते तुम इस हठ को त्याग कर अन्न
ले लेवो और शीघ्र घर चले जावो ॥ २ ॥ चौपाई ॥ गु
रु वंधुयत अस हृदय विचास्यो ॥ लेत अन्न रविदा
स निधारो ॥ वेग रुचिर आश्रम निज आई ॥ तुर
त विप्रवर पाक बनाई ॥ गुरु पें जाय नवेदन कीना ॥
पावन प्रेम भक्ति मन लीना ॥ लेत तुलसिदल
गुरु सुतपा ते ॥ संजुत प्रीति परोषण लागे ॥ पुनि स
भक्ति सन मुख भगवाना ॥ सो नैवेद राखि सनमाना ॥
स्याम जलध तन अंवुज नयना ॥ कच कुंचित अलि
अवलि लजयना ॥ कीर तुंड कल नासिक तोहन ॥
अधर अरुन मुनि मानस मोहन ॥ ललित कपोल
भ्रकुटि सुभ बांकी ॥ पटतर गुनत कविन मतियां
की ॥ भाल खौर चित चोर विराजा ॥ कान मत स
कुंडल साजा ॥ रदन कुंद कलि पांति न
यारी ॥ वा रु अ जान खेलन मद हारी ॥ अस वचि
त्र मूरति भव तारन ॥ लागे हृदय विप्र जब धार
न ॥ होत न वढ पूर्व वत सोई ॥ भाषत तवसे
दिगाध कछु होई ॥ काफिर रह्यो नाहिं चित मोरा ॥
जहितें देव भक्त चित चोरा ॥ मोरे हृदय जु उत
प्रभु नाहीं ॥ अस विचारि निज मानस माहीं ॥
बार बार हरि मूरति चारु ॥ धारत हृदय भक्त व्रत
धारु ॥ सो नहिं होत वढ सुख कारी ॥ भनत
शिषहि तब वदन उचारी ॥ सत्य सत्य मुनि दे

हु सुनीवा॥ ग्रा जग्रन्न तुव कहि करलावा॥ तव डरवत रविदास बखानी॥ विनय नम्र जुगजोरत पानी॥ मुनि तैं भयो नाथ ग्रपराधू॥ क्षमहु क्षम हु देव तुं साधू॥ ग्राज ग्राम ध्याल दुरदिवस विलावा॥ ग्रोर वृष्टि कछु पार नपावा॥ भिक्षाटन करि सक्यो न दीना॥ मारग एक सदन प्रभु चीना॥ वारद प्रवल निवारन काहीं॥ रहा ग्रधे दिवस लगताहीं॥ सो कृपाल नास्तिक कर गेहा॥ कहि कहि वार वार मुनि ते ना॥ इह कछु ग्रन्न दीन गुरुदेवा॥ तुध्यत जानि तुमहि प्रभु लेवा॥ तो कर वेग पाक विरचाई॥ तुमहिं कीन ग्ररपन प्रभु ग्राई॥ रामानंद सुनत रिषवानी॥ परम कोप मानस निज ग्रानी॥ भाष्यो ग्ररे ग्रधम दुरचारी॥ मेद ग्रनर्थ कीन तुव भारी॥ मोर सुधरम कीन सठ भंगा॥ वाहु लीजणा वारिवर गंगा॥ नास्तिक सदन ग्रन्न मुहि दीना॥ जठ ग्रपराध ग्रोर तुव कीना॥ ग्रव इह शाप मोर सठ काई॥ होहै चरमकार तुव जाई॥ ग्रस जव ग्रोर वचन गुरु भाषा॥ तव रविदास चरन सिर राषा॥ त्राहि त्राहि ग्रस वदन मलीना॥ लाग्यो विनय करन गतिदीना॥ चरमकार प्रह मोर ग्रसंसय॥ होहि जो नम मयन क्षविधंसे॥ पै कृपाल पदसेवक जानी॥ मुनिवर देहु वदन मृदुवानी॥ तहोपि तोर भक्ति सुख दाई॥ मोरे हृदय रहव प्रभु ग्राई॥ इति पुर चरमकार कर गेहू॥ होहि जनम मम कीन सनेहू॥ दोहा॥ जो लो तुव उपदेस मुनि कीन न मंत्र ग्रलान॥ तो लो स्तन निज जननिकर मे न कर हु प्रभु पान॥ ३॥ टीका॥ तव रविदास तिस नास्तिक का कथन सुनकर ग्रोर गुरु जी को मूल विचार कर तुरत तिस के ग्रोर का ग्रन्न लेकर के चल

५२९ २३१

९

पड़ता भया ओर घर मै आय कर तत काँ भोजन बनाय कर बड़ी प्रीती भक्ती से ल्याय करके गुरुजी के आगे नेवेदन कर देता भया तब गुरुजी तुरत तुलसी दल ले करके प्रीती से तिस भोजन को परोस कर भक्ती सन मानँ भगवान कृपा निधान को नेवेद लगावते भये तब स्याम मेघवत सुंदर शरीर, ओर कमलों के समान मनोहर नेत्र कुंडलों वाले भ्रमरों वत स्याम केश कीर जो तोता है तिस के समान नासिका मुनि जनो के मन के मोहित करने वाले लाल लाल ऊँठ तैसे हीं सुंदर कपोल ओर वो की भवें कि जिन का कवि जन कोई उपमान नहीं देस कते कि कैसी हैं ओर मसतक मे मनोहर तिलक कानो मे मकराकृत कुंडल कुंद कली जो नाये का फूल है तिस के समान वड़े उज्जल दांत ओर दुष्टों का मद दूर करने वाली लंबी भुजें ऐसे भगवान के वचित्र ध्यान को नेत्र मूंदकर रामानंदजी हृदय मे जुड़ावने लगे तो वे पूर्व कें बड़न हीं होता अर्थात साक्षातकार होकर जुड़ता नहीं है तब आसि कचित होय करके कहते हैं क्या मेरा चित्तँ स्थिर नहीं कि जिस तें भक्तों के मन को मोहित करने वाले भगवान मेरे हृदय मे आय करकें जुड़ते नहीं हैं ऐसे विचार कर रामानंद जी फिर वार वार भगवान की मूरती को हृदय मे धारन करते हैं परंतू वे तिन के हृदय मै स्थिर नहीं होती है तब रविदास को कहने लगे कि हे शिष्य मेरे को सत्य सत्य कहो कि आज तू

व्योम कब होहिं निहारत॥ गुरु करओम दास रवि
आरत॥ नास्तिक बहुरि बदन मृदु बानी॥ भाखी
जनहुं परम हित सानी॥ दोहा॥ आज न छूटत वृ
ष्टि नभ गुरु लुध्यत तुव गेहु॥ अन्न लेत गव है
नेकत न जहु विकट हठ एहु॥२॥ टीका॥ तब इस
प्रकार चोर बादलों की महा बरखा को देखकर
तिसतें रुका हुआ रविदास भिक्षाटन जो है सो नहीं
कर सका तिसतें हृदय में बड़ी चिंता और कलेश
मानता भया कि अब खाली हाथ गुरुजी के पास कै
से जाऊं और तिनको जायकरके क्या दिखाऊं ऐसे
चिंतन करता हुआ एक नास्तिक का घर जो था ति
सके द्वारे पर आयकरके स्थित होय रहा तब ना
स्तिक तिसको अकेला स्थित हुआ देखकर कह
ने लगा कि इह कोई रामानंद का चेला देख पड़ता है
ऐसे विचारकर बड़ी मधुर बाणी से कहने लगा कि
हे व्रतधारी संत भक्त आज बादल जो है सो बर
सने से नवृत्त नहीं होनेवाला है अर्थात इह मिटता
नहीं देखपड़ता है तो ते तुम मेरे घर से अन्न लेले
वो और जायकरके शीघ्र गुरु को भोजन करा
वो और आप भी करो ~~[struck out]~~
फिर कुटिया में बैठकर बरखा का भ्रम कले
श जो है सो त्यागो इस प्रकार तिसका कथन सु
नकरके रविदास जी कहने लगे कि भाई तुमारे
घर का अन्न जो है सो हमारे गुरदेव स्वामी स्वीका
र नहीं करते हैं ऐसे वारता अलाप करते कर
ते दिन का मध्यान समय होय गया परंतु बाद
ल जो है सो बिखरता नहीं भया रविदास जी पड़े
देखते हैं कि आकाश कब निरमल होता है

~~१०२०~~ ६३२

व तो आपके वचनसे मेरा चरम कारके घरमे अ
वष्य जनम होवेगा इसमे कुछ संशय नही है प
रंतू हे दीनदयाल मेरे को अपने चरनोका सेव
क जानकर कृपा करके इह वर देवो कि तहां चरम
कारके जनममैभी तुमारी सुखदायं भक्ती जो
है सो मेरे हृदय मे दृढ रहे अर्थात सो मेरे को वि
सरे नही और चरम कारके घरमे मेरा जनम भी
इसी नगरमै हो और जव लग प्रभु तुम आयकर
के मेरे कानमै उपदेश ना करो तव लग मै अप
नी माताका दूध जो है सो पान ना करूं ॥२॥ चौ
पाई ॥ अस गुरु नम्र सुनत सिष वानी ॥ एव म
स्तु निज वदन वखानी ॥ वहुरि विपुल मानस प
छताना ॥ अहो दीन हम पाप महाना ॥ करहि कृ
पाल संत दिस जैसे ॥ होहि तुरत मानस
मृदु तैसे ॥ एह संत सज्जन अधिकाई ॥ हृदय न
धरत कपट रिस ताई ॥ निजहि विविध विधि
निंदन लागे ॥ गुरु उदार दया रस पागे ॥ ब्रह्म
चारि परिहरि वपु ताहीं ॥ गवन्यो धरम राज
पुर काहीं ॥ ठाढो जाय यमन नृप आगे ॥ चित्र
गुपत तव भाषन लागे ॥ सुकृत विपुल पाप तु
व थोरे ॥ भोगन प्रथम कवन मत तोरे ॥ ब्रह्म
चारि तव वदन उचारा ॥ मुहि फल पाप प्रथम
सुई कारा ॥ सुनत विप्र वर कथन सुहावा ॥ य
म नरेस निज वदन अलावा ॥ चरम कार कुल
जाहु तुमारा ॥ होव जनम अस वचन हमारा ॥
तहां ललित सुकृत फल पाई ॥ राम भक्ति दृढ ले
त सुहाई ॥ होव प्रवर पावन गति लेवा ॥ सहज
प्रसाद रुचिर गुरु देवा ॥ महो विकट वारद संसा
रू ॥ होव सि विनु प्रयास तुव पारू ॥ अंत के

वचन सुनत हितकारी॥ करि प्रणाम दुज चल्यो सिधारी॥ चरम कार त्रिय गरभ मझारू॥ आवा विप्र मक्त व्रतधारू॥ जननि उदर नव मास विहावा॥ सुभृत सुदिन दसम जब आवा॥ तब सुमरत गुरु देव कृपाला॥ निकस्यो जननि उदर तजि काला॥ दोहा॥ तब जननी अति प्रेम [illegible] पय लागी करावन पान॥ सो न पियत निज वचन वस बालरुदन मुख ठान॥ ४॥ टीका॥ तब इस प्रकार गुरु रामानंद जी शिष्य की बड़ी कोमल दीन वाणी सुन कर दया के वश भये हूये एवमस्तु कहि देते भये कि ऐसे ही होगा फिर शाप को विचार कर हृदय में बहुत पछताव ने लगे कि अहो मैंने बड़ा अनर्थ किया जो इस शिष्य को वृथा ही और शाप दे दिया है देखिये संत सुभाव कि जो किसी पर कोप भी करते हैं तो दिया के वश कोमल भी तुरत हो जाते हैं संत सज्जन जनों की यही विशेष तावड़ाई है कि हृदय में कपट क्रोध जो है सो राखते नहीं हैं कृपा करके आतुर भये हूये परम उदार गुरु रामानंद जी अपने आप का बड़ा तिरसकार करने लगे॥ कि देखो मैंने इस नीच कोप के वश होय कर अपने परम हितकारी और सुशील सेवक को कैसा कठिन शाप दे दिया है ईश्वर गुरु कृपाल तो हृदय में ऐसा पछताते हैं और उहां ब्रह्मचारी रविदास शरीर को त्याग कर धरम राज के पुर को चला जाता भया तहां जाय कर के यमराज के सनमुख स्थित होय गया तब तिस को देखकर चित्रगुपत कहने लगे कि भाई तेरे पुन्न बहुत हैं और पाप थोरे हैं अब कहो कि तेरी रुचि प्रथम पुन्न भोगने की है कि पाप [illegible] तब ब्रह्मचारी कहने लगा कि मैं प्रथम पापों को भोगूंगा ऐसे

तिस के मुखसें वचन सुनकर यमभूप जो धरम
राज है सो कहने लगा कि ब्रह्मचारी जावो हमारे
वचन से तुमारा चरमकार जो चमार है तिस के
घरमे जनम होवेगा तहां अपने पुन्नों के फल
से रामभक्ती के सहित होयकर गुरु जी के प्रसा
द से महा विकट संसार समुद्र को तर कर फिर सु
दर गती को प्रापत होवेंगा ऐसे धरम राज का व
चन सुनकर ब्रह्मचारी जो है सो प्रणाम करके चल
~~[illegible]~~ पड़ा और तुरत आयकर चरमकार
की स्त्री के गरभमे प्रवेश कर जाता भया तहां नौ
महीने माता के गरभमे निवास कर कर जब दस
मा महीना चढा तब सहजेहीं जननी के उदर को
त्याग कर गुरु जी को सुमरता हुआ बाहर चला
आवता भया ऐसे बालक को देख करके हरष
मे मगन भई हुई माता प्रेम से दूध जो है सो पि
लावने लगी तब बालक अपने वचन के वश
भया हुआ दूध नहीं पीवता वडी ऊची स्वर भर
भरकर रोता और गुरु जी का सुमरण करता है
॥४॥ यद्यपि बाल दुगध नहि पाया॥ तद्यपि
होत भयो दृढ काया॥ बांधव ~~सकल~~ देखि दुग
न गति ताहू॥ निज निज कहत चकित सब
काहू॥ ललित रूप मृदु अंग सुहावन॥ मान
हु भूप सुवन मनभावन॥ इहकस जियहि
बालनर नारी॥ कहत वदन निज प्रकट उचा
री॥ कौन न दुगध सुवन जब पाऊ॥ होत ज
ननि तब विकल महाना॥ पूछत जतन नि
पुण जन काहीं॥ बालक पियत दुगध कछु
नाहीं॥ अस प्रकार जुग दिवस बिहाये नर त्रिय

अन्न किसके चोरका ल्याया है तब भयके वश भया हुआ रविदास हाथजोड़ करदीन वाणीसे विनती करने लगा कि हे नाथ मेरे तें बड़ा भारी अपराध होय गया है आप कृपा करके क्षमा करिये क्यों कि आज दिन भर बड़ी जोर वर्षा जो है सो हो रही है तिस तें मेरे को समय नहीं मिला और प्रभू मैं भिक्षाटन नहीं कर सका मार्ग में एक चोर देखकर के वर्षा के निवारण करने को आधे दिन पर्यंत तहां हीं स्थित रहा हूं सो दीनानाथ नास्तिक का चोर रहा तिसने मेरे को वार वार कहि कर इह कुछ थोड़ासा अन्न दिया और मैं कृपानिधान आप को भूखे जान कर तिस अन्न को ले करके चला आया इहां तत काल तिसका भोजन बनायकर और ल्याय कर प्रभू तुमारे आगे निवेदन कर दिया ऐसे रविदास के मुखसे वचन सुनकर रामानंदजी परम क्रोध के वश होय गये और इस प्रकार के वचनों से कहने लगे कि अरे मंद दुराचारी तैने बड़ा जोर अनर्थ किया है अधम मेरा सुधरम जो है सो तैने सब नष्ट कर दिया है जैसे कोई गंगा के जल विखे वारुणी अर्थात शराब डाल देता है तैसे मूढ तैने इह कुकरम किया है जो नास्तिक के चोरका मेरे को अन्न दिया है और जोर अपराध किया है अब अभागी तूं मेरे शाप को धारण कर और जाय कर के चरमकार जो चमार है तिसके शरीर को प्राप्त हो इस प्रकार जब गुरू ने जोर शाप दे दिया तब रविदास चरनों पर सीस धर कर आर्त आर्त वाणीसे मुख मलीन भया हुआ दीन होय कर विनती करने लगा कि हे कृपानिधान अ

के माता पिता आदि बाधवों को घर से बाहर अल
ग कर दिया " ~~और~~ आप गुरु कृपाल बालक के पास
जाय कर तिस के कान मै शरीर के सब दुख कलेश
और पापों के नास करने वाला सर्व सुखों का सा
र राम मंत्र जो है सो सुनाय देते भये " " चौपाई "
सो मनु पाय बाल सुखदाई " विनस्यो मुदित वो छि
त फल पाई " गुरु कृपाल तब बचन बखाना " अब
पयकरहु मुदित सुत पाना " श्री पति चरन भक्ति
अनुरागे " रहहु प्रसन्न सबन दुख त्यागे " सो सुवि
बस गुरु मनन बखोरी " हिलच समई बिथनमति
मोरी " जो इति से सुचि सेवक काही " दीन निवास
सुपच बघु माही " कहं सुब्रह्म चरज ब्रत धर
ना " कहां मलेछ सदन अवतरना " अस बिचा
रि गुरु सेवक रागे " रोदन करत बिथत धृति त्यागे "
परम खेद बस दीन सनेहू " आये चरम कार तजि
गेहू " तब जननी लालन मन लीना " धारि लि
न बालक मुख दीना " सो प्रसन्न मानस गत ब्रीडा "
लाग्यो करन पान सिसु क्रीडा " लोक बिलोकि सक
ल बिसमाये " गुरु उपदेस बाल बर पाये " कृ
ष्ण भक्ति सुंदर सुखदेवा " हृदय धरत निज बाल अ
भेवा " कृष्ण सुमर्यो फिरत मन माही " जनक
जननी जानत कछु नाही " अस प्रकार जब भ
यो सयानहू " तब बिरचत निज करन उपान
हू " अनघी संत दीन दुज काही " देत लेत बेत
न कछु नाही " सो भाविदत नाम रबिदासा ~~[illegible]~~ "
अस प्रकार कछु काल बिताहा " जो कछु
बेत हि जननि तिव काई " करत सुमत चर
न सिर नाई " मन्यो बिरक्त जनक लखि ते
हू " मोरे कृपा सदन श्रम ए हू " दोहा "

विप्र संत अरु तत्व प्रिये जा सदिवस निसि कीन॥ हम
सन हित चित गत रहत करत न करम कुलीन॥
१॥ टीका॥ नव ऐसे सुखदायक तारक मंत्र को सुनि
कर बालक अपने मन वांछित फल को पाय कर
के आनंद में मगन भया हुआ हसने लगा इस प्रकार
तिस के प्रसन्न देखकर गुरु कृपाल हरख से कहने
लगा कि हे पुत्र अब आनंद से माता का दूध जो है सो
पान करो अर्थात पीवो और हृदय से सरव दुख के
लेश को त्याग कर नारायण के चरन कमलों की म
नो प्रीती जो है तिस में मगन रहो फिर गुरु जी मो
ह के वश भये हुये कहने लगे कि देखो कोप के
आधीन होय कर मेरी बुद्धी कैसी व्याकुल होय गई
जो मैं से सुहृद और उत्तम सेवक को चांडाल के शरी
र में निवास दे दिया है वे कहां ब्रह्मचरज ब्रत का
धारन करना और कहां मलेछ के घर में जनम
होना ऐसे विचार कर सेवक के प्रेम में व्याकुल
भये हुये धीरज को त्याग कर रोदन करने लगे
फिर तैसे ही कलेश से पीड़त भये हुये दीन
सने ही चरमकार के घर को त्याग कर अपने आ
श्रम को चले आवते भये तब माता ने बड़े हित प्या
र से स्तन जो मस्त्या है सो बालक के मुख में दिया
वे तुरत हठ को त्याग कर और बालकों के समान
चेष्टा क्रीड़ा कर कर आनंद पूर्वक पीवने लग जा
ता भया इस कौतुक को देखकर लोग सब अच
रज को प्रापत होय गये गुरुजी का उपदेश पा
य कर बालक जो है सो कृष्ण भक्ती को हृदय में
धार कर रात्री दिन कृष्ण परमात्मा के
भजन सुमरन में लीन रहता भया इस भेद को
तिस के माता पिता कुछ जानते नहीं थे

१-२३ ९१२४

इस प्रकार जब समय पायकर के बालक सया
ना होय गया तब अपने हाथसे बड़ी सुंदर जूती
र चायकर अतथी साध ब्रह्मणों को पहिराय देता
और मोल किसीसे नहीं लेताथा सो रविदास नाम
करके प्रसिद्ध होताभया और जो कदाचित को
इ पैसा टका पास आय भी जाता तो प्रणाम करके
माता के आगे जाय राखताथा तब ऐसे तिसको
विरक्त देखकर पिता हृदयमै बड़ा क्षोभ मान कर
[illegible] कहने लगा कि इस पुत्र को तो अब मै मेरे को
वृथा श्रम हीं श्रम है [illegible] क्योंकि जिसको रात्री
दिन [illegible] अतथी साध ब्रह्मणों हीं प्यारे हैं और
तिनकी सेवा भक्तीमे हीं लीन रहता है हमारे स्वा
र्थ चित करके कुछ हित प्रीती नहीं करता और
ना अपनी कुल का करम धरम जो है सो करता
है ॥६॥ चौपाई॥ अस विचारि मानस [illegible] पितु
तासा॥ दीन बहिर निज सदन निकासा॥ तब र
विदास सुमति सिरधारी॥ विरचि कुटीर ललित
निजन्यारी॥ रचत रुचिर निज करन उपानह॥
देत दुजन संतन सनमानह॥ आपु धरम भि
[illegible] क्षाटन जासा॥ सो हरि भक्त रुचिर रविदासा॥
एक दिवस भिक्षाटन लागी॥ गवन कुटीर
तजत बड़भागी॥ शालिग्राम ललित छविले
पावन॥ मारग देखि दृगन मन भावन॥ करि
प्रणाम रविदास उठावा॥ अटन करत आश्र
म निज आवा॥ तहां देत निज करन सनाना॥
भक्ति भाव जुत कीन विधाना॥ [illegible] निरत प्रेम पा
वन चित तासा॥ लग्यो करन पूजन रविदासा॥
वृंदा विटप अजर निज लाई॥ निज कुल करम

सुनत सदन तहिं आये॥ नृपसुत सरस देखि सुतचा
रू॥ विकसत विमल वदन मन हारू॥ विविध प्रसं
सि सदन निज जाहीं॥ सुनत प्रसंग प्रवर सिसु ता
हीं॥ रामानंद जनन सुखदाते श्रीपति चरन प्रे
म मद माते॥ हृदय विचारि श्राप निज तेहू॥ आये
चरमकार कर गेहू॥ सिसु पितु मातु सदन सब वा
रन॥ दीन दयाल करि दीन निवारन॥ दोहा॥ गुरु
र का कि सिसु पैं गवनि लागि स्रवण उच्चार॥ हर
ने दोष दुख दुरत वपु राम मंत्र सुख सार॥ ५॥ टीका॥
यद्यपि वालक ने दूध पान नहीं किया तद्यपि श
रीर करके पुष्ट ही रहता भया तिस वालक के सु
दर रूप और सुलक्षण अंगों को देखकर सब वांधव
जन अचरज के वश भये हुये कहते हैं कि देखो भाई
इह वालक कैसा है जैसे कोई राज पुत्र होता है और फि
र नर नारी सब कहते हैं कि इह ऐसा दिव्य वाल
क ईहां चरमकारों के घर में कैसे जीवेगा तो जब
वालक ने दूध पान नहीं किया तब व्याकुल भई
हुई तिस की माता वैद जनों को पूछने लगी कि
महाराज मेरा वालक दूध नहीं पीवता है कृपा कर
के कुछ उपाय कहिये ऐसे दो दिन वतीत होय
गये तब सुन कर के ग्राम के लोग नर नारी जो हैं
सो तिस के घर मे आवते भये और राजा के पुत्र वत
वालक का सुंदर खिला हुआ मुख देख कर अने
क प्रकार शलाघा करते हुये फिर आप
ने अपने घरों को चले जाते भये तो
लोगों के मुख से तिस वालक की महिमा सुन कर
परम उदार भगवान के चरन कमलों प्रीती वाले रा
मानंद जी हृदय में अपने श्राप को विचार कर तुर
त चरमकार के घर में चले आये तब वालक

है तब प्रसन्न मानस द्रुत सेता॥ रविजन कहे
लै गयो इकेता॥ भनत भक्त मम वचन सुहावन॥
सुन है [illegible] हृदय मोद सुख छावन॥ मोपै इह
स्पर्श मणि जोई॥ चाहु अमित देन फल सोई॥
तुव निज करहु भक्त सुखकारा॥ सकल इच्छ तकु
र होहिं तुमारा॥ इहि सन विरचि हेम वित भूरी॥
करहु संत सेवा तुव पूरी॥ देव भवँ निज सदन
सुहावा॥ कौतुक ललित लेहु विरचावा॥ मैज
व आव काल कछु पाई॥ इह मणि मोहि देहु
सुखदाई॥ अस कहि सिद्ध गवन तब कीना॥ सो
रविदास रुचिर मणि लीना॥ सादिर प्रीति पूरव
क रागे॥ राखि लीन हरिमूरति आगे॥ [illegible] भि दा
टिन निज धरम हुलासा॥ [illegible] रह्यो करत नहि
त जुत रविदासा॥ मणि कर लाभ भक्त व्रत धारी॥
कछु न लीन अस हृदय विचारी॥ इह धन विदित
म विश्व बँद दाई॥ राम [illegible] सुमरण देत विसराई॥ वि
षय अंध करि जीवन काहीं॥ करहिं पतित संसय
कछु नाहीं॥ धन व हीन जन दीन विचारा॥ मांग
न जात भीष जहि द्वारा॥ राधारमन राम रव
राटन॥ करत सु करहिं नगर भिक्षाटन॥ याते
अधन धनक जन तेहीं॥ भलो सुमरि हरि सद
गति लेहीं॥ सदा सुशील होत धन हीना॥ आरत
रटन राम मन लीना॥ राम मेत्र सरवस धन चा
हू॥ दारिद दुरत दोष भ्रम लाहू॥ अस विचारि नि
ज मानस सोई॥ वितगत रह्यो दीन वत होई॥
राम भजन तत पर दिन राती॥ बीत्यो बरष एक
इहि भांती॥ दोहा॥ [illegible] सोऊ सिद्ध आवा तहां
जहि स्पर्श मणि दीन॥ चीन दीन वत कीन अ
ति रविजन कहे धन हीन॥ वितप्रापत विनु

भाग अस करत न संपति होय॥ सागर तें नि
कसत नृपन विथन विलपि जिमि कोय॥ इह प
द्यपि गत भाग्य भव मै तद्यपि हित मानि॥ कर
है सुचि रउपकार कछु भक्त संत जिय जानि॥ ८॥
टीका॥ तब प्रसन्न भया हुआ सो सिद्ध रविदा
स को न्यारे ले गया और कहने लगा कि हे संत
भक्त तूं मेरा वचन श्रवण कर कि इह मेरे पास
पारस मणी जो है सो सरब मनोरथों के सिद्ध करने वाली है
सो तें तूं इस को ले ले तेरे मनवांछित फल सब स
फल होवैंगे क्योंकि इस के साथ तूं सुवर्ण बना
य कर अनथी संत भक्तों की सेवा जो है सो भली प्र
कार कर और अपने घर कै मै भगवान का सुंद
र मंदर अस्थान बनवा कर देव प्रतिमा को
तहां स्थापित कर मै जब कुछ समय पाय कर फिर
इहां तुमारे पास आऊंगा तब इह मणी मेरे को
तुम दे देना तब लग इससे अपने सब कारज सि
द्ध करो ऐसे कथन कर कर सो सिद्ध अपने मा
रग को चला गया और रविदास ने वे मणी ले
कर बडी प्रीती सनमान से भगवान की मूरती के
आगे राख छोडी और अपना सोई भिक्षा टन ध
रम जो है सो कर कर भगवान के भजन सुम
रण मै लीन रहता था तिस मणी का लाभ जो है
सो भक्त उत्तम ने हृदयं ऐसे विचार कर कुछ
नहीं लिया कि इह धन जो है सो संसार मै मद आ
दि विषयों के उतपन्न करने वाला और राम भ
जन के विसार देने वाला है इह के सामी प्रबल
शत्रू है कि जीवों को विषयों मै प्रेध कर के प
तित जो पापी हैं सो बनाय देता है और धन से

हीन जो दीन विचारा होता है सो जब भीख मांग
ने जायगा तो राधाकृष्ण सियेराम अैसे भगवान
के नाम को उचारण करकर नगर मे भिक्षाटन
करता फिरेगा इस तें निरध जो है सो धनी पुर
ष से भला है कि जो भगवान को सुमरता सु
मरता अपने परलोक को सुधार लेवैगा और
भी सुनो कि निरधन जो होता है सो सदा सुखी रहे
ता है दारिद्र और दुख का ग्रसा हुआ नारायण का
सुमरण करता रहता है ~~[illegible]~~ संसार मे
राम नाम जो है सोई अमित धन है कि जिस की के
ई [illegible] मिती नहीं है और सरब दुख दारिद्रों के भी दू
र करने को एही सामर्थ है अैसे विचार कर रविदा
स जो है सो धन से रहित दीन दारिद्री होय बना रहा रा
त्री दिन [illegible] भगवान के भजन सुमरण मे ही लीन
रहता भया इस प्रकार जब एक वर्ष वतीत होय
गया तब सोई सिद्ध कि जिस ने भक्त स्रेष्ठ रविदा
स को वे पारस पाषाण दिया था तहां आय प्राप
त भया और रविदास को तैसे ही महादारिद्री
दीन धनहीन देख कर के कहने लगा कि अहो
संसार मे भाग्यों के विना धन कैसे प्रापत होय स
कता है इस की वारता तो अैसे भई कि जैसे कोई
समुद्र मे ~~[illegible]~~ प्रवेश करके फिर त्रिषा त्रिषा
कहता व्याकुल भया हुआ वाहर निकल आ
वता है भाग्यो के विना जल कैसे प्रापत होना था
तैसे ही ~~[illegible]~~ मैने यद्यपि इस को अभागी जा
न लिया है तद्यपि संत भक्त विचार कर और हृ
दय मे हित मान कर इस के साथ फिर कुछ उप
कार करता हूं ॥८॥ चौपाई ॥ अस विचारि रवि
जनहि सुहावा ॥ सिद्धवदन निज वचन अ

तजत दुरताई॥ वन्यो विमल वैस्नव सुभ चारी॥
तिलक माल मुद्रा वर धारी॥ एक दिवस तहि सद
न सुहावा॥ गवन करत साधू इक आवा॥ दोहा॥
तहि देख्यो रविदास कहं रति पूजन भगवान॥ से
वक संत उदारचित वैस्नव भक्त महान५२॥३॥
ऐसे विचार कर और निकारा जान कर पिता
ने तिसको घर से बाहर निकाल दिया तब रविदा
स गिरधारी लाल को सुमरता हुआ तहां एक
न्यारी कुटिया बनाय कर तिसके बीच निवास करने
लगा और अपने हाथों से पद त्राण अर्थात सुंदर
जोड़े बनाय बनाय कर अतथी साध ब्राह्मणों को प
हिराय देता और आप भिक्षाटन कर कर अपनी उप
जीविका कर लेता था सो ऐसा भगवान का भक्त रवि
दास एक दिन भिक्षाटन के लिये कुटिया को त्याग
कर बाहर जो गया तो मारग में कहीं बड़ी सुंदर उत्तम
और मन को भावती शालिग्राम की शिला देख
कर प्रणाम करके उठाय लेता भया और फिर भिक्षा
टन करके अपने आश्रम पर चला आया तहां ति
स शिला को स्नान देकर भक्ती सनमान से घर में स्था
पित करके रात्रीदिन प्रेम से पूजन
सेवन करने लगा घर में सुंदर तुलसी के वृक्ष लगा
य कर और अपनी कुल का भेद करम सब त्याग
कर तिलक माला मुद्रा इत्यादि सब धार करके
वैस्नव उत्तम और निरमल सुभ चारी भक्त जो है
सो बन जाता भया तब एक दिन तिसके घर में एक
कोई भगवान की भक्ती वाला
सिद्ध संत जो था सो आय प्रापत हुआ
वे रविदास को भगवान के पूजन सेवन में लीन
देखकर बड़ा संत सेवक और उदारचित महां
वैस्नव भक्त जानता भया॥७॥ चौपाई॥

उदार तुमने तो मेरे पर [illegible] अत्यंत कृपा करी [illegible] इह दिव्य मणी जो है सो देई सत्य है संत कृपाल पृथ्वी तल पर परहित और पर उपकार के लिये आये हूये हैं प्रभू तुमने सरव लोगों का हित और भला विचार कर इह उपकार जो है सो मेरे पर किया परंतू इसमें दीन द्याल मेरी इक विनती है सो मुख से कहते हूये नाथ कुछ लज्जा आवती है तद्यपि कहता हूं कि मेरे हृदय के मंजरो अर्थात संदूख में रामनाम का धन अतलत भरा हूआ है कि जिसका कोई तोल नहीं है तातें अब और धन के धरने को तहां जगा नहीं है प्रभू मैं तिसको कहां राखूं ऐसे विचार कर हे कृपानिधान अब कृपा करिये और अपनी इस पारस मणी को ले लीजिये इससे मेरा कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है जब इस प्रकार रविदास जी ने भक्ती और प्रेम रस की भीगी हूई वाणी [illegible] उचारण करी तब सिद्ध सुनकर के प्रसन्न भया हूआ अपनी पारस मणी को ले लेता भया और फिर हरख से फूला हूआ कहने लगा कि हे जो तुम अनुकूल अर्थात प्रसन्न हो तो मेरी इच्छा है कि कुछ दिन इहां तुमारे घर में ही निवास करूं ऐसे तिसका वचन सुनकर रविदास प्रसन्न होयकर कहने लगा कि हे संत कृपाल तुम्हारे हृदय में ऐसी रुची जो उपजी है तो मेरे धन्य भाग्य और धन्य मेरे जगत में पुन्य हैं कृपा करके अपना ही घर जान कर आनंद से वसिये और मेरे को सनाथ करिये इस प्रकार रविदास की आज्ञा रुची देखकर सिद्ध [illegible] तिसके घर में निवास करके अपनी पारस मणी से सुंदर कंचन जो है सो दिन दिन बनाने लग जा

ता भया ॥ २ ॥ चौपाई ॥ द्रव्य प्रसाद दिव्य विरचाना ॥
तहं भवन हरि कृपानिधाना ॥ अ
तथी संत द्विजन जन चारू ॥ लग्यो होन भोजन सत
कारू ॥ जुरहिं समाज सुजन नित आई ॥ दिन दिन अ
धिक अधिक प्रभुताई ॥ भक्त सु रविदास प्रवीना ॥
आपु धरम मिलाटन लीना ॥ तब ग्रामीन बरन मि
लि चारी ॥ भक्त सुजस प्रभुताई निहारी ॥ लागे कर
न द्वेष समुदाई ॥ चरमकार कसलीन बडाई ॥ नृप
पें जाय द्वेष जुत बानी ॥ भाखी सुनहु भूप बरमानी ॥
चरमकार जड ग्राम निवासू ॥ आज सु विदित लोक
रविदासू ॥ शालिग्राम शिला सनमाना ॥ कीन
अधम निज सदन निधाना ॥ विनु अधिकार सुपच
अगरासा ॥ करत द्विजन सम पूजन तासा ॥ नृपकहे
सुनत कोप उरछावा ॥ पठत दूत द्रुत लीन बु
लावा ॥ करि विसकार कथन अस कीना ॥ तुव
सठ चरमकार मति हीना ॥ सेहति संत सुभूद्विज
बरमा ॥ तुव आचरण कीन कुधरमा ॥ राखिस
दन निज सिला सुहाती ॥ शालिग्राम देव लखु जा
ती ॥ करहु दिवस निसि पूजन मूढा ॥ सूझत
मोर त्रास नहिं गूढा ॥ जाहु मूढ अब बेगलिवा
ई ॥ द्विजहिं देहु निज सिला सुहाई ॥ न तर कर
हुं तव प्राण विनासा ॥ सुनत भूप रविजन
अनुसासा ॥ जोरि जुगल कर विनय बखाना ॥ अ
ब न करहुं पूजन भगवाना ॥ जो हरि चाहिं वर
ण व शेष ॥ तो हम अधम कवन किन लेष ॥
अस कहि भवन कुंचिका रागे ॥ रविजन राखि
दीन नृप आगे ॥ सो नरनाथ दीन द्विज काहीं ॥
भाख्यो जाहु भवन हरि माहीं ॥ सादर सिला देव

सुखदाई॥ राखेहु विप्र सदन निज ल्याई॥ दोहा॥
पाय नदेस नरेस अस दुजनृ रंत तर आई॥ भ
वन द्वार बंधन मुचित करत करन हरषाई॥ शा
लि ग्राम सिला सुचि चल्यो लेत जुत मान॥ ला
वा निज सुंदर सदन दुजवर परम सुजान॥ २०॥ टीका॥
तव द्रव्य के प्रसादसे तहां रविदास के घरमै
वडा सुंदर भगवान का भवन जो है सो वन गया औ
र अतथी साध ब्रह्मणों को सव प्रकारका सनमा
न से भोजन भी मिलने लगा सज्जन संत भक्तों
का समाज जो है सो भी नित्त आय करके जुडने ल
गा दिनदिन अधिक तें अधिक प्रभुता होने लगी
परंतु भक्त प्रधान रविदास जी ने अपना नित्त मि
लाप धरम हीं दृढ राखा सोई कर कर अपनी उ
पजीव का कर लेते थे तव ग्रामों के सव लोग
अर्थात चारो हीं वरन मिल कर रविदास जी के
सुजस और प्रभुता वडाई को सहार नहीं सके
द्वेष भाव कर कर कहने लगे कि देखो इस अधम
चरमकार ने जगत में कैसी प्रभुता फैला ई है
ऐसे मता कर कर द्वेष से राजा के पास जाय कर क
हने लगे कि महाराज वडे अचरज की वात है देखि
ये चरमकार जड ग्राम के वाहिर वास करने वा
ला आज रविदास नाम से उजागर होय कर औ
र शालिग्राम की शिला घरमै स्थापित कर कर
अधिकार के विना हीं रात्री दिन पूजन करता है
ऐसे तिनका कथन सुन कर राजा परम कोप से
दूत भेज कर तुरत तिसको वुलाय लेता भया औ
र वडी ताडना तिरसकार कर कर कहने लगा कि
अरे वुद्धी केहीन चरमकार [illegible] ते रा इह क्या क
रम है कि संसार मे जो तो त्री ब्रह्मणों का धरम है

लोका॥ तुव नलीन कस भक्त बनाई॥ दारद हरन
हेम सुखदाई॥ सुनि प्रसन्न बोल्यो रविदासा॥ मोरे
नहिन सजन धन आसा॥ तुव उदार मोपें निजकी
नी॥ दाया विपुल दिव्य मणि दीनी॥ अहो कलप
तर तैंत सुहाये॥ परहित करन धरन तल आये॥
सकल लखो कहित हृदय विचारा॥ कौन द्याल अतलु
त उपकारा॥ पै अस विनय नाथ कछु मोरी॥ आव
त कहत वदन प्रभु खोरी॥ मोरे उर मंजूष मझा
रा॥ राम नाम अतुल तधन भारा॥ गुरु प्रसाद प
रिपूरण सोई॥ बधो धरन धन ठौर न कोई॥ अस
विचारि कहण अब कीजै॥ तुव निज नाथ रुचिर
मणि लीजै॥ जब रविदास मधुर अस बानी॥
भने सुभक्ति प्रेम रससानी॥ सुनत सिद्ध मान स
हरषाई॥ निज मणि मंजु लीन तब पाई॥ ला
ग्यो बहुरि भनन मुद फूला॥ जो तोहि होहि भ
क्ति अनुकूला॥ तो कछु दिवस बसऊं तुव गेहू॥
सुनत वचन रविदास सनेहू॥ बोल्यो अहो भा
ग जाग मोरे॥ जो अस उपजि द्याल रुचि तोरे॥ ल
खि निज सेत सिर ताजू॥ करऊं सनाथ नाथ मु
हि आजू॥ दोहा॥ सिद्ध देखि रविदास अस रति
रुचि रुचिर सुभाऊ॥ लग्यो रचन कैंचिन सु
धन सुभग सदन बसि ताहु॥ ९॥ टीका॥ ऐसे
विचार करके सिद्ध जो है सो रविदास को क
हने लगा कि हे भक्त तेरे को मैंने इह पारस
दिया था तूने सरव दुख दारिद्रों के दूर करने
वाला और आनें सुख के देने वाला सो बलो धन
जो है सो क्यों नहीं बनाय लिया॥ ऐसे तिसका
वचन सुन करके रविदासजी कहने लगे कि
हे सज्जन मेरे को कुछ धन की आसा नहीं है

दुज तेहू॥ शिलाअगमन दास रवि गेहू॥ तुवसा
सन नर नायक पाई॥ राखि सदन हरि मूरति ल्याई॥
केल कवाउ निसि मूंदित राहा॥ कहि पथ गवनि म
मे नहीं काहा॥ काहु भन्यो रविदास म
हाना॥ जानत मंत्र तंत्र विधि नाना॥ सो प्रभाव आ
करषण मंत्रा॥ लीन मंगाय निकेत सुतंत्रा॥ भन्यो
भूप मान सविसमाई॥ अब तुम बहुरि वेग दुज जाई॥
शालिग्राम शिला वर तेहू॥ राखहु ल्याय
जतन जुत गेहू॥ भे इत बोलि दास रवि काहीं॥ देहु
न देस द्वार तुव माहीं॥ निसिथिर रहिं जाव किमि सो
ई॥ शिला विचित्र कवन पथ होई॥ आयस मानि
विप्र बरराई॥ शिला बहोरि सदन निज ल्याई॥
करि पूजन संजुत सनमाना॥ भक्ति प्रीति जुत कीन
निधाना॥ इत रविदास नृपति अनुसासा॥ विप्र
द्वार सवरयन विताशा॥ सुमरत हृदय भक्त भय हा
रे॥ भक्त सुखद प्रभु भक्त उवारे॥ दोहा॥ तब जा
मनि अवसर शिला बहुरि भक्त निज गेहु॥ रहे
द्वार मूंदित भवन गवनि मरम नहिं केहु॥११॥ टीका॥
तहां तिस शिला को पंचगव्यादि पवित्र स्नान देक
रके और विधीवत सुंदर पूजन करकें अपने घर मे
स्थापित करलेता भया इहां रविदास जो है सो रा
जा को प्रणाम करके भगवान कृपानिधान को सुमर
ता हूआ अपने घर मै चलाआया इस प्रकार जब
दिन का अंत होय गया तब रात्री के समय वे भग
वान की सरब सुखदायक शिला जो थी सो अपने म
हा रविदास के घर मै चली आवती भई तहां प्रात
काल ब्रह्मण जब आयकर देखने लगा तो वे शा
लिग्राम की शिला घर मै नहीं है तब तो भ्रम भय
और अचरज के वश व्याकुल भया हूआ ब्रह्मण

जायकरके तुरत रविदास के घरमे चलाआया औ
र तहां सोई शालिग्राम भगवान की शिला स्थापित
भई देखकर ततकाल राजाके पास जायकर कहने
लगा कि महाराज मै आपकी आज्ञासे वे शालिग्रा
म की शिला रविदासके घरसे ल्यायकर विधीपूर्व
क अपने घरमे स्थापित कर्यी सो नाथ मै नहीं जा
नता कौन कारन और किस भेद से वे शिला मेरे
घरसे निकल कर रात्रीके समय तिसीके घर मे
चलीगईहै भवनके कवाड़ भी तैसेही मूंदे रहे हैं
ऐसे सुनकरके तहां कोई पुरष कहनेलगा कि महा
राज वे रविदास बड़ाधूरत है सठमंत्र तंत्र बहुत
जानता है तिसने आकरषन मंत्र के प्रभाव से शि
लाको अब आअपने घरमे मंगायलिया है तब राजा
हृदय मे अचरज मान कर कहने लगा कि हे ब्राह्मण
अब तुम फिर जावो और शिलाको ल्यायकर के
तैसेहीं अपने घर मे स्थापित करो मै ईहां रविदा
स को आज्ञा देता हूं कि वे रात्री को तुमारे घर के द्वा
र पर स्थित रहेगा तब देखेंगे कि कौन रहते से
और कैसे शिला चलीजाती है ऐसे राजा की आ
ज्ञापायकर ब्राह्मण जो है सो फिर रविदासके घरसे
शिलाको लेआया और विधीवत ~~स~~ पूजन कर
के भक्तीप्रीती से सनमान पूर्वक घरमे स्थापित कर
देता भया ईहां रविदास भी राजाकी आज्ञापायकर
भक्तपाल भक्तसुखदायक और मनभय हारी भग
वान को सुमरता हुआ रात्रीभर ब्राह्मण के द्वारे पर
स्थित रहा ~~रात्री के समय~~ तब द्वार भी तै
सेही मूंदे रहे और भेद भी किसीने कुछ नहीं जाना
सो शालिग्राम भगवान की शिला रात्री के समय

२२८ ६४१

फिर अपने भक्त रविदास के घर मे चली आई ॥२२॥ चौपाई ॥ तहिं रजनी नरनायक देखा ॥ सपने वृद्ध विप्र सुम भेषा ॥ सो करि अरुण कोपवस नयना ॥ फरकत अधर भनत मुख बैना ॥ भूप कवन हित शिला सुहाई ॥ दुज निज सदन लेत जेंठ जाई ॥ ऊंच नीच भगवान न भाषा ॥ केवल भक्ति प्रेम मुख राखा ॥ उनकर प्रिये भक्त संसारा ॥ भूप वृथा अपवाद तुमारा ॥ ~~...~~ राम जाति कछु रीझत नाहीं ॥ जानत प्रीये भक्त मन माहीं ॥ ऊंच नीच नर संमति कोई ॥ हरि कहे भजहिं सु हरि जन होई ॥ नृप विचारि मानस इहि भांती ॥ तजहु देव उतम लघु जाती ॥ भक्त प्रवर हरि रवि जन सोई ॥ तामे नीच धरम नहिं कोई ॥ जो पैं दीनदयाल अनुकूला ॥ सोऊ नृपति जग सुकृति मूला ॥ देखहु बारबार दुज ल्याई ॥ राखी शिला सदन सुखदाई ॥ कृपा नकेत भक्त निज धामा ॥ देत पठाय चरित अभिरामा ॥ तासु भक्ति वस त्रिभुवन राजू ॥ देत सुजस सुंदर जग आजू ॥ अब नकेत तें भक्त सुमामी ॥ करहु न हठ ल्यावन शिल लागी ॥ देखि स्वपन जब भूपति जागा ॥ दुज कहे बोलि मनन अस लागा ॥ देखहु जाय विप्र तुम ताहीं ॥ शिला सदन तुव अहें कि नाहीं ॥ सासन ■ पाय गयो जब तेहू ॥ देखि न शिला दृगन निज गेहू ॥ भन्यो विप्र तब नृप सन आई ॥ नाथ न शिला सदन निज पाई ॥ दोहा ॥ तब नरेस रविदास कहे बोलि सदन सनमान ॥ भन्यो धन्य तुव धन्य जग भक्त सृ भगवान ॥ तो पैं कोमल कृपानिधि भगवन भक्त सनेहु ॥ अब कर हो तुव पूर्व वत भक्ति गवनि

जहां तैने हो आचर्ण अर्थात गृहस्थाश्रम किया है घर मै शालिग्राम भगवान की शिला राखकर नी च जाती तूं नित्त पूजन करता है क्या तेरे को कुछ मेरा भय सूझता नहीं है अब मूर्ख अवी चला जा और जाय करके वेग ब्रह्मण को शालिग्राम की शि ला दे दे नहीं तो अधम तेरे प्राणों का नाश कर देऊं गा तब रविदास राजा की आज्ञा सुनकर दोनों हा थ जोड़कर दीन वाणी से विनती करने लगा कि ना थ अब नहीं भगवान का पूजन करूंगा क्यौं कि जो चार वरण के हैं भगवान है तो हम अधन कौन गिनती मे है ये और क्या वस्तु हैं ऐसे कथन कर कर भवन की कुंचिका अर्थात कूंजी तुरत राजा के आगे राखदेई सो राजा ने लेकर और एक ब्रह्मण को देकर कहा कि जाको भवन से शिला को निकाल कर अपने घर मै ले जायकरके विधीपूर्वक स्थापि त करदेवो इसप्रकार राजा की आज्ञा पाय कर ब्रह्मण जो है सो ततकाल आयकर अपने हा थसे भवन के कवाड़ खोलकर शालिग्राम भग वान की शिला को सनमान से उठायकर अपने घर मै ले आवता भया ॥२०॥ चौपाई ॥ चाह पे च ग व्यादि सुहावन ॥ देत तासु मज्जन दुजपावन ॥ करि पूजन विधिवत सनमाना ॥ कीन स्थापित सदन सुजाना ॥ इत रविदास वेदि नृपतेहू ॥ सुमरि राम आवानि जगेहू ॥ तब निसि समय देव सुखदा ई ॥ शिला हु भवन भक्त निज आई ॥ तहि दुज प्रात जाय जव देख्यो ॥ शिला न देव सदन निज लेख्यो ॥ संभ्रम विष्यत चकित उर त्रासा ॥ आवा विप्र सदन रविदासा ॥ तहं देखि निज दृगन निधाना ॥ शिला सुदिव्य ललित भगवाना ॥ नृपसन भन्यो जाय

१२० ५४२

और बड़ाई देरहे हैं हे राजन अब भक्तप्रधान
रविदासके घरसे शिला के ल्यावने का ... हठ जो
है सो त्याग देवो इस प्रकार स्वपन को देखकर
राजा जब जागा तब ब्रह्मणों को बुलाय कर क
हने लगा कि हे द्विज तुम जावो अपने घरमे देखो
कि वे शालिग्रामकी पवित्र शिला तहां है कि व
हीं है ऐसे राजाकी आज्ञा पाय कर ब्रह्मणराज
व अपने घर मै जाय कर देखने लगा तब वे शिला
तहां तिसको देख नहीं पड़ी अचरज के वश भया हू
आ तुरत आय करके राजाको कहने लगा कि
महाराज वे शिला मेरे घरमे नहीं है फिर रवि
दासके पास चली गई है तब राजा ब्रह्मणका
ऐसा कथन सुन कर तुरत बड़े आदिरसत कार
से रविदासको अपने घरमै बुलाय लेता भया
और हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे भक्तप्रधान
तेरे पर भक्ती सने ही भगवान अत्यंत प्रसन्न
हैं आज तू संसारमे धन्य है और धन्य तेरी दृढ़
निरमल भक्ती है मै अपने मुखसे तुमारी क
हां लग प्रशंसा बड़ाई करूं तुम संत कैसे हो ...
कि सदा सुशील परम उदार चित और दया उ
पकारकी मूरती हो ... नाथ मेरे से बड़ा भारी
अपराध होय गया है सो मेरेको अजान और मूढम
ति जानकर आप कृपा करके क्षमा करिये और घ
रमे जायकर पूर्ववत आनंदसे भगवानका भज
न सुमरण करिये ऐसे राजाकी नम्रवाणी सुन
कर रविदास जी कहने लगे कि हे राजन इसमे तु
मारा कोई अपराध नहीं है संसारमे इन भ्रमजो
है सो सदा प्रबल होता है भगवान की कृपा से जब

हृदय मे ज्ञान प्रकाश होता है तव इन सहजे ही छू
ट जाता है राजन तेरे को कल्यान होवे ~~मेरे को~~ मे तेरे
पर अत्यंत प्रसन्न हूं इस प्रकार आसीसा देकर रामराम
सुमरते हुये भक्त प्रधान अपने आश्रम को चले आये
॥२२॥ चौपाई॥ आय भवन निज देखि सुहावन॥ शि
लानिधान ललित मनभावन॥ प्रेम भक्ति संजुत
सिर नायो॥ आनंद नीर दृगन भरि आयो॥ राम स
रूप हृदय धरि लीना॥ अह्लाद जुत पूजन कीना॥
दिन दिन अधिक राम पद रागा॥ लाग्यो करन भ
क्त वडभागा॥ अस भगवान भक्त नित नेहू॥ देखहु
चरमकार कर गेहू॥ प्रीति निरत परिहरि प्रभुताई॥
कीन निवास भक्ति वस आई॥ दोहा॥ याते तीन हु
लोक मै ललित भक्त जन काहि॥ राम कृपा ते सुल
भ सुख कछु असाध असनाहीं॥ इह गाथा इक
कीन मै रवि जन की कछु गान॥ अब आगे मन
हरन रुचि सुनहु संत जन आन॥२३॥ टीका॥
तव भक्त प्रधान घर मै आयकर सोई शालिग्रा
म भगवान की वडी शोभावाली सुंदर शिला स्था
पित भई देकर नेत्र जो हैं सो आनंद जल से भर
आये चरनो पर दंडवत प्रणाम किया फिर सोई
राम स्वरूप हृदय मै धारकर वडे हरष उतसाह से
वैठकर पूजन करते भये तव ते भगवान के
चरनों मै दिन दिन अधिक से अधिक ही प्रेम व
ढता जाने लगा इस प्रकार भक्तों पर स्नेह क
रने वाले भगवान देखिये प्रेम भक्ती के वश भये
हुये अपनी मान वडाई और प्रभुताई को त्याग
कर चरमकार के घर मै आय निवास करते भये
ताते भक्तजनो को तीनो ही लोक मै भगवान

की कृपा से सब सहज और सुगम है कुछ भी अ
गम असाध नहीं है ऐसे एक है सेत जनो दूह
गाणा मैने गायन की है अब आगे रविदास जी की
और मनोहर गाथा जो है सो रुची से ध्यान देकर
श्रवण करिये ॥ १३ ॥ चौपाई ॥ गढ़ चतौड़ कर
भूपति रानी ॥ सो हरि भक्ति रुचिर रति सानी ॥ व
तज्युँ बसन असन रुचि ल्याई ॥ अस रविदास क
रत सिवकाई ॥ ~~दरसन पाय भक्त~~ पाय भक्त
दरसन बड़भागी ॥ निज नकेत चलि आवत रागी ॥
~~तिन्कर देखि~~ भक्ति अस सेवा ॥ पुरकर सकल लो
तासुलखि लोकि
क महिदेवा ॥ बदन विविध अप कीरति ठानी ॥ च
रमकार गृह जावत रानी ॥ तासु दुजन सेवत सोई ॥
लगे विचार करन सब कोई ॥ अब तें हम न कर
व तहि गेहा ॥ भोजन दुजन कीन मत एहा ॥ मह
षी ~~[illegible]~~ दिवस सुभ पाई ॥ किये न मे ब्रह्म दुजस
मुदाई ॥ तिन हुं कीन जाचन तब एहा ॥ लेव अ
मान्न अन्न तुव गेहा ॥ करँ सिद्ध भोजन हम ना
हि ॥ अस सुनि दुजन कथन मन माहीं ॥ ऐसे
न कीन धरम रत रानी ॥ पति चरन भक्ति रससा
नी ॥ ~~[illegible]~~ दियो अमान्न हरष मन लीना ॥ दुज गण
रचन पाक तब कीना ॥ दोहा ॥ जब बैठे भोजन
करन विप्र संत सुभ चारु ॥ तब पंकति मध्यान
तिन रविजन दृगन निहारु ॥ १४ ॥ टीका ॥ च
तौर गढ़ के राजा की रानी जो थी सो भगवान के
चरन कमलों की भक्ती प्रीती वाली थी वे श्रद्धा
पूर्वक धन वस्त्र अन्न इत्यादि से ~~[illegible]~~ भक्त प्रधान
~~[illegible]~~ रविदास जी की सेवा करती रहती और नि
त्य तिनका दरसन करके आनंद से फिर ~~[illegible]~~
प्रणाम

निज गेहु॥ संत सुशील उदाचित सदा कारन केल
कोहु॥ भा अपराध अजान लखि तमहु मान प्रद
मोहु॥ कछु अपराध न भूपतुव सदा प्रबल भ्रम
होत॥ छूटत राम कृपाय तें ज्ञान दिपति उद्योत॥
होव तुमहि कल्यान नृप मुहि प्रसन्न जियजान॥
अस आसिख दै भक्तवर चले सुमरि भगवान॥१२॥
टीका॥ तसी रात्री को राजा एक सुभ भेषवाले वृद्ध
ब्रह्मण को स्वपने मे देखता भया सो कैसा कि कोप
से ओठ फरकते हुये लाल नेत्र कर कर कहने लगा
कि हे राजन इन महा मूढ ब्रह्मणो किसलिये
वारवार भगवान की शिला को उठाय कर के ले जा
ते है तिस दीनानाथ के तो कोई ऊच नीच नहीं
है भगवान ने केवल भक्ती और प्रेम ही मुख्य राखा हि
हुआ है उनके संसार मे भक्त ही प्यारा है इन तु
मारा अपवाद जो है सो राजन सब वृथा ही है राम
कृपानिधान वरण और जाती पर नहीं रीझते हृदय
मैं भक्ती को प्यारी जानते हैं ऊच नीच कोई भी है
जो हरी को भजै सोई हरी का प्यारा भक्त है ऐसे
विचार कर हे राजन उत्तम लघु अर्थात ऊच नी
च जाती का भ्रम जो है सो त्याग दे वो सो रविदास
भगवान का परम सुहृ भक्त है तिस विखै नीच ध
रम कोई भी नहीं है जिस पर दीन दयाल अनुकूल
अर्थात प्रसन्न होवें सोई जगत मैं
और सुजस का पात्र है देखो ब्रह्मणने वारवार त्या
य कर के शिला अपने घर मे स्थापित की परन्तु भग
वान कृपानिधान कौतुक से फिर अपने भक्त के घर मे
हीं पठाय देते भये तीन लोके नायक भगवान तिस
की भक्ती के वश भये हुये आज जगत मै तिस को सुजस

पत्र १८४४

जानि जग लीना॥ इह चरित्र माया पति कीना॥
सत्य भक्ति रविदास सुहाई॥ लगे करन दुज विकर
बड़ाई॥ परि हरि हृदय द्वेष सब काहू॥ लागे व
दन प्रसंसन ताहू॥ इन तो निपुण भक्त भगवाना॥
हम इनि वृथा कीन अपमाना॥ बिनु विचार परनि
दरन लागी॥ भये दुरं त दुरत करभागी॥ का जा
न हु भगवन कहि भांती॥ दीजत कवन भेष मत
जाती॥ अस कहि विप्र वृंद ~~[illegible]~~ हरषाते॥
नि जानि जगये राम गुण गाते॥ अस इह चरित
दास रवि भावा॥ मैं संक्षेप वदन कछु गावा॥
दोहा सरव सुखेद संसय हरन जन रविदास
चरित्र॥ सुनत श्रवण नर लेहिं भव भगवन
भक्ति पवित्र॥ ११॥ टीका॥ तब इस प्रकार देखे
ते हैं सब ब्रह्मण लोग प्रहार करते हूये भक्त उनमें
को भुजा से पकड़कर पंक्ती से बाहर निकाल
देते भये तो जब फिर कर के दूसरी ओर देखते
हैं तो वहां फिर रविदास स्थित भया हुआ
देख पड़ा ऐसे भ्रम ते भ्रमते जिस ओर देखते
हैं तिसी ओर तिनकों दरसन देता भया तब तो
ब्रह्मणों ने जान लिया कि इनके नुक माया के
हृदय मे
पती भगवान जो हैं तिनका है तुरत ~~[illegible]~~ हृदय
से कपट द्वेष त्याग कर और रविदासजी की
भक्ती को सत्य जान कर अनेक प्रकार की श्
लाघ्या बड़ाई करकर कहने लगे कि अहो इन
तो भगवान का परम प्रवीन भक्त है हमने
इस का वृथा ही अपमान किया है तां ते विचा
र के बिना पर त्रिसकार करने मे हम मंदभागी
मंद सुभाव वाले

प के भागी होय गये हैं हम मूरख का जानते हैं कि भगवान कृपानिधान कौन भेष मत औ रँ जातीपर रीझते हैं ऐसे कथन कर कर ब्रह्मन लोहर ष से राम गुण गाते हुये अपने अपने ग्रहों को चले गये इस प्रकार इह रविदास जी का चरित्र जो है सो मैने ईहाँ कुछ संक्षेप कर के गायन किया है कैसा भी चरित्र है कि श्रद्धापूर्वक श्रवण करने से सब पाप कलेश और भ्रम भय के नाश करनेवाला और सुख से पती के सहित श्री रघुनाथ जी के चरन कमलों की भक्ती के देनेवाला है॥ १६॥ चौपाई॥ अब रविदास अमानुष चारू॥ अान पुनीत चरित मन हारू॥ करहु कथन लघु मति अनुसारी॥ पाय मया प्रभु से तनुमारी॥ एक समय तहि ग्राम उमंगा॥ लोग सनान करन हित गंगा॥ चलन लाग उर हरष अचारी॥ तिन तें काहु एक जन आई॥ भक्त प्रधान दास रविपासा॥ करि प्रणाम अस वचन प्रकासा॥ हम लखि परब प्रबर बड़भागी॥ चले सुंदर सदेव सरि लागी॥ जो रुचि तुमहि भक्त प्रतधारी॥ तो कर है अब चलन तयारी॥ द्विज कर वचन सुनत सुखमानी॥ भन्यो वदन रविजन मृदुवानी॥ धन्य विप्र तुव संमति माहीं॥ जो मोहि अधम जाति जन काहीं॥ अस उपदेस कीन सुखदाऊ॥ हरन दुरत सुरसरि दरसाऊ॥ पै इह जरा ग्रसत वपु मोरा॥ कस उपदेस करहिं फुरतोरा॥ बलगत गात सिथल सब गाता॥ द्विज कस बनहि देवसरि जाता॥ करहु उपाय कथन इक तोरे॥ जो द्विज करहु कृतारथ मोरे॥

१-२३ ९४५

अस कहि जुगल पुनि फल ल्याई॥ दुज कहं दीन चरन सिर नाई॥ दोहा॥ इहं दीजो दुज दंद फल हरन दुंदभव काहि॥ पुनि मोर प्रणाम करि देवि पदम पद माहिं॥ कहियो जन रविदास तुव जठिर भ्रक्ति बल हीन॥ तुव दरसन हित कीन हठ जदपि विविध विधकीन॥ पय सामर्थ नवन पठी दियो अबैवन पीठ॥ यातें विलपत रहि गयो जो रचरन तुव डीठ॥ जो प्रसाद दुज नाथ तुहि पतित उधारनि देहु॥ सो आदर निज करन धरनि सीस धरि लेहु॥ २७॥ टीका॥ अब और रविदास का बड़ा सुंदर पवित्र और मन के हरने वाला चरित्र कि जो मानुष्यों में नहीं है ऐसे तो आपकी कृपा प्रसाद पायकर के जैसा कमती के अनुसार होय सकता है गायन करता हूं एक समय जहां रविदासजी वास करते थे तिस ग्राम के लोग बड़े हरष में मगन भये हुये श्री गंगाजी के स्नान दरसन जाने लगे तब तिन में से एक ब्राह्मण रविदास के पास आयकर और प्रणाम करकर कहने लगा कि हे भक्त बड़भागी हम ग्राम के सब लोग बड़ा सूर्य परब जान करके श्री गंगामाई के दरसन करने को चले हैं जो कदाचित तुम्हारी रुची भी हो तो भक्त प्रधान तुम हमारे साथ मिलकर के चले चलो परंतु विलंब कुछ नहीं है शीघ्र तयारी करो ऐसे ब्राह्मण का वचन सुन कर रविदास जी हृदय में परम सुख मान कर बड़ी कोमल वाणी से कहने लगे कि हे ब्राह्मण तूं जगत में धन्य है कि जिसने मेरे जैसे अधम नीच जाती के ऐसा पाप कलेशों के नास करनेवा

कार अपने घर मे चली आवती थी इसप्रकार ति
सकी सेवा भक्ती देख कर नगर के ब्राह्मण
लोग जो थे सो अपने अपने मुखसे सब आपकी रती
अर्थात आपजस करने लगव है कि देखो इह रानी
चरमकार के घर मे जाती है और ब्राह्मणों के समान
तिसकी सेवा भक्ती करती है ऐसे सब ब्राह्मणपर
स्पर मता कर कर कहने लगे कि अब तें हम इस रा
नी के घर मे कदाचित भी भोजन नहीं पावेंगे तब
इन ब्राह्मणों का मता जो था सो कहीं रानी सुणलिया
तिसकी परीक्षा के लिये एक सुभ दिन देख करके
भोजन के लिये नगर के सब ब्राह्मणों को निमंत्रण
किया अर्थात नेउता दिया ऐसे रानी का निमंत्र
ण सुणकर के सब ब्राह्मण कहने लगे कि हम तुम्हा
रे घर का सिद्ध पाक अर्थात बनाहुआ भोजन नहीं
पावेंगे सूखा अन्न लेकर आपहीं बनावेंगे और
पावेंगे इसप्रकार बडे निरादर वाला ब्राह्मणों
का वचन सुनकर भगवान की भक्ती प्रीती वाली
धरम सील धीरज की निधी रानी जो थी
सो हृदयमें किंचक भी रोख नहीं करती भई बडे
हरष उतसाह से प्रसन्न होय कर सूखा ही अन्न देदे
ती भई तब ब्राह्मणों ने सो अन्न लेकरके तुरत यतन
से भोजन रचाय लिया और जब संत भक्त अनतथी
ब्राह्मणों पंक्ती लगाय कर जेवने बैठे तब वे क्या
देखते हैं कि तिस सरब समाज की पंक्ती के बीच
भक्त प्रधान रविदास जी बैठे हूये हैं ॥ २४ ॥ चौपाई ॥
नाना कार दुजन तब कीना ॥ पकरत भुजा बहिर
कढि दीना ॥ दूसर ओर भ्रमत जब देखा ॥ नहो
छिपिर पुनि रवि जन लेखा ॥ तब सब दुजन

४५८२

लासा॥ करि नवृत्य मारग मतिधीरा॥ पहुच्यो
जाय देव सरि तीरा॥ रजनी तहँ वृद्धतिय काहू॥
भनत वचन सपने अस ताहू॥ जो प्रसाद तोहि
देहिं भवानी॥ सोतुव विप्र हरषउर मानी॥ जा
य नकेत भक्त रविदासा॥ सादिर देऊ करन कल
तासा॥ द्विज वि लोकि अस सपन सुनावा॥ निज
जन कहे सब प्रकार सुनावा॥ करत बहोरि वि
मलजल पावन॥ विप्र सनान रुचिर मन भावन॥
जुग कर जोरि जुगल फल लीना॥ लाग्यो विनय
करन गति दीना॥ हे अवे जग पतित उधरनी॥ हे
सुरसरि सिव सीस विहरनी॥ हे सुख सदनि ज
नन हितकारी॥ हे अनंत कल कीरति वारी॥ हे
सुभ कीरति विसद वरदानी॥ हे सुर असुर चराचर
जानी॥ हेभय भक्त सेत भव हरनी॥ तीन लोक दु
ख दोष निवरनी॥ जन रविदास भक्त दृढ तोरे॥
इह फल पुंगि दीन जुग मोरे॥ भन्यो चरन ने
भत सिर नाई॥ द्विज तुव करहु नवेदन जाई॥ बहु
विधि विनय वदन निज भाषी॥ मातु तोर दरस
न अभिलाषी॥ पय जन जरा ग्रसत बलहीना॥
जद्यपि विविध यतन हठ कीना॥ तद्यपि
वृद्ध वपुष नहिं मान्यो॥ सिथल अवेव कंपि
कदरान्यो॥ हारि रह्यो निज सदन सुदीना॥ वि
नय प्रणाम विविध विधि कीना॥ सुनत वि
प्रमुख कथन सुनावा॥ जाचन करत जुगल
कर भावा॥ रतन जड़त कहुँ के कन धारी॥ नि
कसे वहिर देव सरि वारी॥ द्विज दृग देखि पुंगि
फल देई॥ हरषत दीन करन धरि लेई॥ तेनि
ज भक्त राखि सनमाना॥ भये सुलेत लुपत

मृदु पाना॥ चढ़ि मकरनि एक कलकै कला॥ हरे न सकल जन ज्वरन कलेकन॥ करनिकारि दुज सन मृत उरसो॥ जन हृदम क दुति दाम मिमा सो॥ देहा॥ विप्र विलोकत चकित चित जानि सकल संसार॥ करि प्रनाम सादिर सदन चल्ये सीह निजधार॥ ~~लोकनि लोकि~~ ~~नमो मा~~॥ १८॥ टीका॥ इस प्रकार रविदास की विनती सुनकर ब्रह्मण जो है सो दोनो पुंगीकले अर्थात सुपारियें की भेटा लेकर आनंद से चल परता भया तब संपूर्ण समाज के सहित मारग के नवृत्य करके श्री गंगा जी मे आय प्रापत हूआ जब रात्री के समय सयन किया तब सपने मे एक वृद्ध ब्रह्माणी आय कर के तिस को कहने लगी कि हे ब्रह्मण प्रातःकाल ई हो तेरे को जो गंगा माई प्रसाद देवेगी सो तूं आनंद पूर्वक पायकर और घर मे जाय कर बड़ी प्रीती सनमान से रविदास भक्त को दे देना ऐसे ब्रह्मण रात्री के समय स्वपन देख करके प्रातःकाल अपने सब संगी साथियों के सुनाय देता भया तिसते उपरंत श्री गंगा जी के किनारे पर हरिद्वार मे निरमल जल विखे स्नान किया फिर भक्त प्रधान के दिये हूये दोनो पुंगी लेकर के हाथ जोड़ कर के बड़ी दीनता से विनती करने लगा कि हे अवे हे जगत मे पापी जनो के उद्धार करने वाली हे देवगंगे हे संकर के सीस मे विराजने वाली हे आनंद की मूरती हे दीन जनो पर सनेह करने वाली हे अनंती कि जिसका कोई अंत नहीं हे सुंदर कीरती वाली हे शुभ कीरती वाली हे वर की दाती हे निरमल जल वा

भक्त माल १०५

पत्र २४२

लो हे देव अदेव और सरव चराचर जीवों की र
ना करनेवाली हे संसार मैं संत भक्तो के भय को दू
र नेवाली हे तीन लोक के दुख दोष निवारने को
सामर्थ माई भागीरथी माई हे जग जननी
तेरे चरनो का सेवक और तेरा व्रतधारी दृढ भ
क्त रविदास जो है तिसने इह दो पुंगी फल मेरे को
दिये हैं और कहा कि माई तूं मेरी ओर से गंगा मा
ई के चरनो को [illegible] करके इह फल जो हैं
सो नेवेदन कर देना अर्थात दे देना और [illegible]
[illegible] मेरी बहुत बहुत विनय प्रार्थना भी क
रना सो हे मात गंगे मै सत्य करके कहता हूं कि
वे तेरा भक्त रविदास माता तेरे दरसन की अत्यं
त अभिलाषा रखता है परंतु क्या करे बुढेपे का
ग्रसा हुआ शरीर अत से करके दीन और बलहीन
होय रहा है यद्यपि वे तेरे दरसन के लिये ति
सने बहुत ही यतन हठ किया तद्यपि जीरण
वृद्ध शरीर जो था सो मारग के निवारने को
सामर्थ नहीं होता भया और सिथल भये हुए
ये सब अंग भी कंपायमान होकर कदराय
गये अर्थात कायर होय गये इसते हारकर
के दीन और अशक्त भया हुआ रविदास है
पतित उधारनी चरनों मैं रहि गया है माता तेरे
आगे बहुत बहुत विनती और वार वार प्रणा
म किया है इस प्रकार ब्राह्मण के मुख से भ
क्त की प्रार्थना सुनकर तीन लोक तारनी
के दोनो हाथ कि जिन मे शोभा दे रहे हैं रतन
न मणियों करके खचित भये हुये कंकण
मनोहर

ला सरव सुखदायक गंगा माई कै दरसन कर
ने का उपदेश किया है अहो देवता तैने तो आज
जगत मे मेरे को सफल कर दिया परंतु क्या करूं
जो इठ वुढापे का ग्रसा हूआ मेरा शरीर ते
रे उपदेश के सफल नहीं कर सकता वल से
हीन निरवल शरीर और शीतल सिथल सव अंग
तिन कर के हितकारी इह गंगा माई की यात्रा वन
नहीं पड़ती है अव जो तूं उपकार कर के
मेरे को कृतार्थ करें तो हे मीत तेरे को एक उपाय
कहता हूं ऐसे कथन कर कर दो पुंगी फल अर्थात
सुपारी ल्याकर चरनो पर सीस नाय कर के व्रह्मन
को दे देता भया और हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे
व्रह्मनों विखें उत्तम व्रह्मन तूं
मेरी ओर से जगत के पाप हरने वाली मात गंगे
के चरन कमलों पर प्रणाम कर के इह दोनो फ
ल जो हैं सो दे देना और विनती करना कि हे माता तेरा
सेवक रविदास जो है सो अति से कर के वृद्ध और वल
शक्ति से हीन होय रहा है तिस दीन ने तेरे दरसन के
लिये यद्यपि वहुत हीं हठ किया तद्यपि सामर्थ
नहीं वन पड़ी अव जो शरीर के अंग हैं तिन्हों ने
तिस को पीठ दे दई अर्थात सिथल भये हूये सामर्थ
नहीं होय सके इस ते कलपता और विलपता हू
आ तेरे ही चरनो मे दृष्टी जोड़े हूये रहि गया है अ
शक्त भया हूआ दरसन का भागी नहीं वन सका और
हे व्रह्मन जो वे पापी जनो का उधार करने वाली
माता तेरें अपना कुछ नैवेद प्रसाद देवेगी तो
तिस को तुम सनमान पूर्वक प्रणाम कर के अपने
हाथों मै धारन कर लेना॥ १७॥ चौपाई॥ सुं अस
वचन विप्र रविदासा॥ चल्यो लेत फल जुगल हु

दास सुहाई॥ निज निज भवन प्रवेसत गाई॥ गइ छवि
तोर कर छित पत रानी॥ देखन आई सुनत विस
मानी॥ भक्त दिखाय दीन छवि सोहन॥ जटित
रतन कंकण मन मोहन॥ दिखावि लोकि
दृगन अस रागी॥ वारवार उर वंदन लागी॥ कस
न होहिं अदभुत दुति न्यारी॥ कंकण करन जगत
महतारी॥ आज धन्य रविदास सुहावा॥ जास
हेत जग जननि पठावा॥ इह प्रसाद भूषण निज
करना॥ भक्त सुजस कछु जाहिं न वरना॥ ज्ञान
विवेक यदपि रत रानी॥ तदपि देव विषय देखिल
मानी॥ सोचत हृदय मौन धरि लीन्यो॥ तब रवि
दास तास गति चीन्यो॥ ते प्रसाद कंकण जग
माई॥ दीन्यो भक्त सकल सुखदाई॥
उदय भाग से सति निज जानी॥ लियो कर न सा
दिर दुत रानी॥ दोहा॥ करि प्रणाम निज भवन त
व गवन कीन रति रागि॥ नृपहिं दिखावत वदन
कहि वारवार वडभागि॥ १९॥ टीका॥ तव लो
ग रा स अदभुत कौतुक को देख कर के वडे अचर
ज को प्राप्त होय गये और ब्राह्मण जो है सो ने
त्रों मे हरष जल भर कर कहता है कि संसार
के संपूर्ण दुखदोखों के नास करने वाला इह
गंगा माई का सुंदर प्रसाद जो है सो मै जाय
करके सनमान पूर्वक भक्त प्रधान रविदास
जी को देऊंगा ऐसे मन मे विचार करता हुआ
ब्राह्मण मारग को न वृत्य करके रविदास के
घर मै आय कर वे माई का मनोहा कंकण प्र
साद जो था सो देदेता भया तव भक्त प्रधान तिस
भूषण की सुंदर शोभा को देख कर प्रणाम क
र के और वारवार वडे सनमान से लेकर के सीस पर चढाय

लेतामया फिर प्रेम जल से नेत्र भरकर गदगदवा
णी मया हुआ कि कोई वचन मुखसे निकलता कोई
न हीं निकलता है आनंद से नृत्य करने लगपड़ा
ऐसे पापी जनो का उद्धार करने वाली गंगा माई
के हाथ के कंकणकी चरचा सुनकरके सवलोग
नारी नर जुवा वृद्धवाल ततकाल देखने कोधाव
ते चले आये तव रविदासजी के द्वार मे वड़ा भारी उ
त सव मेला आय जुड़ता भया सव कोई अपने
अपने मुख से भक्त उत्तम रविदासजी की भक्ती की
अनेक प्रकार शलाघा वड़ाई करने लगे तिससमय
चतौड़ गढ के राजा की राणी भी इस अपूर्व वारता
को सुनकर के अचरज के वश भई हुई देखनेको
चली आवती भई तव रविदासजी सो गंगमाई
का कंकण तिसको प्रीती सनमान से दिखाय देते
भये राणी ऐसे जगत माता के दिव्य कंकण को
दरसन पाय कर वार वार वंदना करकर कहती है
कैसा ऐसी अनूप शोभा और अदभुत आभा
है रे हे जगत माता के हाथ का मनोहर कंकण है
आज सव संत भक्तों मे रविदास जी धन्य हैं कि
जिनके लिये कृपाकरके जगजननीने हाथ अपने
हाथ का दिव्य भूषण प्रसाद भेजा है इनका सु
जस और महिमा आज कुछ कथन नहीं की
जाती है ~~इस प्रकार कंकण की शोभा देखकर~~
राणी यद्यपि ज्ञानविवेक मै प्रवीन थी ~~तथापि~~
तथापि स्त्री सुभावसे कंकण की शोभा को देख
कर मोहित होयगई हृदय मे सोच करती करती
मौन सी होजाती भई तव परम चतुर भगवान
के भक्त रविदास जी तिसके हृदयकी जान कर ~~[illegible]~~
सव सुखों के देने वाला गंगा माई के हाथका कं

४ण कण जो श्री सो तिस को दे दे ते भये ताणो जे
गत मे अपने भागों की वडाई जान कर आने
द पूर्वक सब नानन से लेले ती भई फिर वार
वार प्रणाम करके प्रेम मे मग्न भई हुई अपने
घर को चली आई तहां आय करके बडे हर
ष उतसाह से अनेक प्रकार शृंगार करकर
राजा को दिखावती भई ॥ १९ ॥ चौपाई ॥ दे
खि भूपकार कैकण देवी ॥ किंनर नाग मनुज सु
र सेवी ॥ वारवार करि दंड प्रणामा ॥ बोल्यो वदन
वचन अभिरामा ॥ आज धन्य तुव संसृति प्यारी ॥
जहि जग जननि जो ननहितकारी ॥ मातु गंग कर
पावन पावा ॥ ललित करन आभरन सुहावा ॥
तापर धन्य भक्तवर तेहू ॥ तो पैं कीन जास अस
नेहू ॥ जिन उ कलप द्रुम सदृश दीना ॥ कृत्य
कृत्य तोहि संसृति कीना ॥ पति मुख सुन त
व वचन मृदु बानी ॥ धारि लीन कैकण निज पा
नी ॥ सुष्ठि से पति सौभाग्य विराजी ॥ जनु सु
र सुता रूप निज लाजी ॥ अस प्रकार कछुक
काल बिहावा ॥ एक दिवस महि को जिय आवा ॥
नम्रत वदन वचन अनुरागी ॥ नृपसन कथन
करन अस लागी ॥ प्राणनाथ कैकण मन लोभा ॥
देत न एक करन कल शोभा ॥ कृपानाथ तुव
आन सुहावा ॥ जो मोहि देहु रुचिर विरचावा ॥
तो मैं धारि करन अभिरामा ॥ लेहु नाथ मन
वांछित कामा ॥ सुनत भूप अस गिरा उचारी ॥
इह का कीन कथन तुव प्यारी ॥ मातु गंग
सदृश आभरना ॥ कवन गुणी समरथ जग
वरना ॥ जो निज करत कोटि चतुराई ॥ त
हि सम देहिं नव लविरचाई ॥

श्री २८

भक्तरविदास की भेजी हुई भेटाको मांगते हुये
तुरत गंगा के जल से बाहर निकल आवते भये तव
ब्रह्मण तिनको देखकरके तुरत दोनो पुंगीफल
जो सपारीये सो गंगामाई के हाथों मै दे देता भया
श्री तव वे आपने भक्त सनमान राखकर तिस भेटा को
लेते हीं तुरत लुपत होय गये फिर थोडी देर के
पीछे भक्त जनो के हृदय के दुखकलेश और दारि
द्रों के नास करनेवाला गंगे माई ने आपना एक दिव्य
कंकण जो है सो हाथ बाहर निकाल करके तिस ब्र
ह्मण के सनमुख डाल दिया तिस समय [illegible] रह
प्रतीत हुआ किमानो बडी दमक चमक से बिजली
ने चमतकार मारा है तब ब्रह्मण देखकरके अच
रज को प्रापत होय गया और तिस कंकण को [illegible]
संपूर्ण जगत का धन जानकर प्रणाम कर कर बडे
सनमान से लेकरके आनंद से घर को चलपडता
भया ॥ २८ ॥ चौपाई ॥ लोक बिलोकि चरत वि
समाये ॥ दुजे दृग हरख नीर भरि आये ॥ भक्त
प्रसाद रुचिर रहांगा ॥ सकल दोष दुख से छति
भंगा ॥ सादिर दे हुं भक्त वर काहीं ॥ करत विचा
र विप्र मनमाहीं ॥ आय दास रवि सदन सुहावन ॥
दीन ललित कंकण मनभावन ॥ भक्त देखि वर
भूषण सोभा ॥ तीन लोक मनु मानस लोभा ॥
करि प्रणाम सादिर गहि पानी ॥ लियो चढाय
सीस सुख मानी ॥ सजल नयन गदगद अनु
रागा ॥ हरषत निरत करन कल लागा ॥ दिव्य
करन कंकण श्री गंगे ॥ सुनत लोग मन मो
द उमंगे ॥ आय सकल देखन नरनारी ॥ भक्त
भवन भाउत सब भारी ॥ विमल भक्ति रवि [illegible]
~~लगे सकल निज वदन सिहाई~~
~~त सुभाई ॥~~
जेनेआविकाई ॥

मन को भावता सुंदर कंकण जो है सो आप के ला
हाथ मे धारन किया हूआ शोभा नहीं देता है जो
कृपा कर के कदाचित इस की जोड़ी का दूसरा भी
बनवाय देवो तो नाथ मे दोनो हाथों मे धारन
कर के आप नी मनवांछित कामना को सफल
करूं इस प्रकार रानी की प्रार्थना सुन कर रा
जा कहने लगा कि हे प्यारी इह तैने क्या कथन
किया है विचार तो कर कि जगतमाता के भूषण
समान दूसरा भूषण बनाने को संसार मे कौन
गुणी सामर्थी है सो तो कोटि चतुराई किये तें
भी तुच्छ नहीं बन सकता वेदविदास भक्त जो हैं
सो मन वचन काया कर के जदुनंदन भगवान के
बडे दृढ ~~■~~ सेवक और परम प्यारे भक्त हैं तिस
तें तिन पर ~~■~~ श्री गंगा माई अनुकंम भई अर्था
त प्रसन्न हूई और अपने हाथ का कंकण प्रसा
द कृपा कर के दिया तिस के समान दूसरा रच
ना हे रानी असंभव है अर्थात नहीं होय सक
ता जब इस प्रकार राजा ने कथन किया तब
रानी ने अतसे कर के हठ धारन कर लिया खा
न पान इत्यादि सब सुख त्याग कर के बड़ी
मलीन मुख हो जाती भई राजा ने यद्यपि
बहुत ही समुझाई तथापि स्त्री सुभाव बड़ा
~~होता है~~ क्रूर है नहीं मानती भई तब ~~■~~
चिंता के वश दुखी भया हुआ राजा अपने प्र
वीन मंत्री को बुलाय कर कंकण के विषय
मै रानी का हठ जो था सो सब सुनाय देता
भया ॥ २० ॥ चौपाई ॥ सचिव सुहृद सुनि कथन
सुआला ॥ लाग्यो मनन कर जोरि रसाला य

मातु गंग कंकण सम कोई॥ मिलन असाध भूप
मन होई॥ मै इक करउं कथन तोहि पासा॥ सुगम
उपाय नृपति गुण रासा॥ जो वनि परहिं ललित
सुखदाई॥ तौ अब चलहु वेग छिन राई॥ भव न
प्रधान भक्त रविदासा॥ सो पुर करहिं तोर नृप आ
सा॥ अस कहि जुगल भक्त गृह आये॥ प्रथम नम्र
चरनन सिर नाये॥ पाछे कीन भनन मृदु वानी॥
सुनहु प्रवीन भक्त जगमानी॥ तोर भक्ति रत महि
छीजेहू॥ तासु दीन कंकण नृव नेहू॥ मातु गंग
कर पावन पानी॥ अब तहि समदिय जाचित रानी॥
जद्यपि हम हुं आगम लखि टारी॥ तद्यपि नहिं न त
जत हठ भारी॥ खान पान सव दीन तयागी॥ चा
हत चलन प्राण अब रागी॥ मै कस जियव भक्त
बिनु रानी॥ अस जव भनी भूप मुख वानी॥ लाग्यो
करन सोच रविदासा॥ करहुं देव अब कवन उपा
सा॥ जहि तें भूत चराचर सेवी॥ मिलहिं ललित
कंकण विय देवी॥ हठ वस नतर भूप जुत रानी॥
देहिं अवस्य प्राण निज त्यागी॥ मिलहिं बिलस मो
हि अपजस भारी॥ असप्रकार निज हृदय विचारी॥
सुमिरि राम जन त्रास निवारने॥ लाग्यो भक्त यत
न अस करने॥ आयत पात्र विमल जल पाई॥
करत शुद्ध वपु ध्यान लगाई॥ मातु गंग गुण व
दन सराहन॥ करि करि लाग करन आवाहन॥
दोहा॥ हे गंगे हे भगिरथी हे भव पतित उद्धारि॥
हे जान्हवि हे भोगवति हे सुभगा सुभ चारि॥ हे
नंदनि नलनी त्रमा विष्णुदेवता देवि॥ हे विद्याधरि
वैष्णवी हे शांता सुरसेवि॥ हे नंदा वृंदा शिवा हे
शिवशीश निवासि ~~हे सुभद्रा माधवी हे सुख~~
~~रा सुभ कोमि॥ हे सुरतरि हे सुजस भरि हरि~~

हे श्री प्रीतिप्रदायनी जगजननी अघ नाशि ॥ हे सु
प्रसन्नमाधवी हे सुवरणि सुभ कीर्ति ॥ हे सुरस दि
हे सुजसभरि हरिपद सेभवि प्रीति ॥ रसालिका ॥
तब मंत्री सुहृदजो है सो राजा का कथन सुन कर
हाथ जोड कर कहने लगा कि हे राजन तै ने सत्य
कहा है परंतु गंगामाई के कंकण समान दूस
रा ऐसा जगत मे प्राप्त होना बडा कठिन है
इह कदाचित नहीं होय सकता अब इसमे प्रजा
पाल तेरे को मै एक सुगम उपाय कहता हूं जो ब
न पडे तो हमारा मनोरथ सहजे ही सफल होजा
ता है सो क्या है कि भक्त प्रधान रविदास जी
जी के ही घर मे चलो और तिसी से कंकण की प्रा
र्थना करो ऐसे मता कर कर मंत्री और राजा
दोनो भक्त उत्तम के घर मे चले आये और प्र
थम नम्र भाव से चरनो पर प्रणाम किया पीछे
हाथ जोड कर विनती करने लगे कि हे जगत मे
मान के देनेवाले भक्त प्रधान [illegible] रानी जो [illegible] च
रनो की भक्ति प्रीति वाली है तिस को आपने कृ
पा कर के [illegible] गंगा माई के हाथ का परम
पवित्र और दिव्य कंकण दिया है सो [illegible]
मोहित भई हुई रानी अब तिस की जोडी का
दूसरा कंकण भी मांगती है यद्यपि हमने ति
सको बहुत ही समुझाया तद्यपि अपना ह
ठ नहीं त्यागती है खान पान सब छोड कर
प्राणों से निरास होय रही है जो कदाचित आ
ज कालमे तिस को कंकण नहीं मिला तो अ
ब [illegible] प्राणों को त्याग देवे गी हे संत उ
दार जो कदाचित इह रानी मृत्यु को प्राप्त

तेरे विदाह वचन मन काया॥ सेतत निरत भक्ति
पतिमाया॥ तापर भई देवहरि माता॥ अति अनु
कूल जनन भव त्राता॥ दीन दिव्य वर केकणाया
नी॥ तहि सम रचन अहै भवरानी॥ जवन रेसअ
सवचन उचारा॥ तव महिषी हठ कीन अपारा॥
लोन पान निज पट हरि सारी॥ भई मलीन वदन
नृप प्यारी॥ जद्यपि भूप विविध समुझानी॥ तद्य
पि तिय सुभाव नहिं मानी॥ दोहा॥ तव नरेस चि
त विवस सचिव सुजान बुलाय॥ महिषी कर हठ
कठिन कहे केकण दीन सुनाय॥ २०॥ तव किं
नर नाग मानुष्य देवताओं करके सेवत की हुई
गंगा माई का दिव्य केकण देख कर राजा जो है सो
वारंवार देइ प्रणाम करके कोमल वाणी से कहने
लगा कि हे प्यारी आज तूं संसार मे धन्य है कि जिस
ने जगजननी और भक्तजनों पर सनेह करने वा
ली मात [illegible] गंगे का ऐसा परम पवित्र और [illegible]
सुंदर शोभावाला हाथ का मनोहर भूषण प्रापत
किया है तिस पर वे भक्त सूभी धन्य हैं कि
जिन्हों ने तेपर ऐसा सनेह और उपकार किया है
मानो हे प्यारी कलप वृक्ष के तुल्य देकर तेरे
को [illegible] जगत मे सफल कर दिया है ऐसे पती
के मुख से वचन सुन कर राणी ने सो केकण तु
रत अपने हाथ मे धारन कर लिया तव तो सुभ
संपती और सौभाग्य के सहित होय कर अपनी
छवी और शोभा से मानो देव कन्या को भी ल
जादे ने लगी इस प्रकार जव कुछ समय वती
त होय गया तव एक दिन राणी के चित्त मे अभि
लाषा जो उपजी तो वड़ी नम्र वाणी से हाथ जोड़
कर राजा को कहने लगी कि हे प्राण नाथ इह

१५०० १५२

खानी है विसूष नारायण के चरन कमलोंसें उतपन्न भई हूई हेभवानी मेरे पर कोमल अर्थात प्रसन्न हो॥१२॥ चौपाई॥ अस जब कीन भक्त प्रतिपा लू॥ वदन देव सरि अस्तुति चारू॥ तौ नहीं निश्चय होत अभंगा॥ तहीं सरव थल व्यापक गंगा॥ तात पात्र मध ऊरमि सोभा॥ लो॰ देन हे ललित मन लोभा॥ ~~र्त्न जटित~~ कंकण रुचिर रतन कृतकारी॥ परयो वहिर निकसत दुतिवारी॥ लोक विलोकि चरित विसमाये साधु साधु सब वदन अलाये॥ रवि जन देखि दृगन दुति तासा॥ करि प्रणाम निज हृदय हुलासा॥ मोहि भलो जननि सुख देया॥ तौ मैं जो आज जगमैया॥ अहो मातु सम हे सतिसारी॥ ऐसो कवन जनन हितकारी॥ अस प्र हेसि मुख विविध प्रकारू॥ लेत भक्त वर कंकण चारू॥ नृपहिं दीन संजुत सनमाना॥ प्रीति भरे त मुख वचन वखाना॥ देहो नृप निज प्रिय करें जाई॥ होवहि तास सफल सिव काई॥ भूप लेत चरनन सिर नावा॥ मनहु लोक सबसं पति पावा॥ आनंद उदधि मगण छितराई॥ प्रिय कों दीन भवन निज आई॥ देखि दृगन निज अ दभुत रानी॥ आपन भाग सराहन लागी॥ मो सम कवन धन्य जग आजा॥ जहि अस करन देव सरि राजा॥ कंकण दिप्ति जटित मणि चारू॥ जन मन तिमर त्रास भ्रम हारू॥ आज जानि जग अभिमत दाई॥ भगवन भक्त संत सिव की ई॥ तवतें अधिक भूप जुत रानी॥ अवरिल भक्ति दास रवि जानी॥ तजत सकल निज मान वडाई॥ लागे करन रुचिर सिव काई॥

दोहा॥ विप्रसंत सेवत सदन अखिल भोगसु
खभोगि॥ [illegible] तजत अंत निज वपुष तिनली
न परम पदजोगि॥ असगाथा इह चरित मे दास भ
क्त रविदास॥ करन हचिरदृढ भक्ति उर हरनस
कल भ्रम त्रास॥२२॥ टीका॥ इस प्रकार जब भक्त
व्रतधारी रविदास जीने गंगा माई की अस्तुती
गायन करी तो जहां सत्य करके अंग गनि आप
होता है तहां सरव स्थल मे गंगा ही व्यापिक है ति
सीका त्र मे कि जिस विखे जल परिपूर्ण करके भक्त
प्रधान गंगा माई का ध्यान कर रहे थे ऊरमी जो
जल की लहिरें और के लोल तरंगा है सो नाना प्र
कार [illegible] कर [illegible] शोभा देने लगे और तिन
तरंगो के ही उछाले से रतन मणियों करके ज
उत भया हुआ दिव्य कंकण जो है सो उछल
कर तुरत जल से बाहिर आय पड़ता भया इ
स अदभुत कौतुक को देखकर लोग आचरज को
प्रापत होय गये और सब कोई मुख से साधु साधु
उचारने लग पड़े तब रविदास जी देखकर [illegible] औ
र दंडप्रणाम कर कर आनंद मे मगन भये हुये
कहने लगे कि हे दीनहितकारनी हे पतित उद्धा
रनी मातगंगे तैने आज मेरी लज्जा राख लेई है
अब तेरे समान संसार मे कौन ऐसा दीनज
नो पर सनेह करने वाला है इस प्रकार शला
घा वडाई कर कर और तिस मनोहर कंकण को
लेकर भक्त प्रधान वडे सनमान से राजा को
देदेते भये और प्रीती भाव के वचनों से कह
ने लगे कि हे राजन इह दिव्य कंकण जो है सो
जाय करके अपनी प्यारी राणी को देदेवो

क्योंकि उसकी संत सेवकाई सफल होजावे ऐसे रविदास राजा तिस कंकण को लेकर रविदास जी के चरनो पर सीस नायकर मानो तीन लोक की संपती को पायकर के आनंद मे मगन भया हूआ घर को चला आया तब ही आय कर के भक्त प्रधान का दिया हूआ गंगा माई का कंकण जो था सो राणी को दे देता भया तब राणी जगत जननी के अदभुत कंकण को देखकर अपने भागों को सराहने लगी कि आज मेरे समान दूसरा कौन जगत मे धन्य है जिस के हाथों मे रहे दिव्य मणियों करके जडित बडे प्रकाशमान और भक्तजनों के मन को अधिक आनंद और प्रेम का प्रकाश करने वाले विराजे हूये शोभा देते हैं आज मेरे को मन वांछित फल के देने वाली जगत मैं संत भक्तों की सेवकाई जो है सो जान पडी है तब ते राजा और राणी रविदास जी की [illegible] अवरिल भक्ति जान कर कि जिस मे कोई विरल नही है अपनी मान वडाई सब त्याग कर के दिन दिन अधिक ते अधिक ही सेवन सतकार करने लगे ऐसे संत भक्तों की सेवा करते करते दोनो राजा और राणी यतन के विना सहजे ही शरीर को त्याग कर मुनी जोगीजनों को दुरलभ परम पद जो है तिसको प्रापत हो जाते भये नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार रहे संपूर्ण भ्रम भय के हरने वाली और राम भक्ती को हृदय मे दृढ करने वाली रविदास भक्त की मनोहर गाथा जो है सो मैने आप के आगे गायन कर दई है ॥२२॥ इति श्री भक्तविवेकदर्पणे भगवद्भक्तमहात्मे भाषाटीकायां रविदास चरित्र वरणनं नाम

— सरगः —

श्रीगंगमाई कैकंकण

होजावेगी तो कहिये कि तिस के बिना मै कैसे जीऊंगा नाथ तब तो मेरे मरने मैभी कुछ संदेह नहीं है जब इस प्रकार राजा ने कथन किया तब रविदास जी हृदय मे परम चिंता और सोच करने लगजाते भये कि देव अब मे कौन ऐसा उपाय करूं कि जिस ते सुर व चराचर जीवों करके सेवत की हुई गंगे माई का दूसरा दिव्य कंकण जो है सो मेरे को प्रापत होवे नहीं तो हठ के वश भये हुये दोनो रानी और राजा अवश्य प्राणों को त्याग देवेंगे और मेरे को संसार मै अपजस का पात्र बनाय देवेंगे अर्थात इस मै मेरी जगत विखे बड़ी भारी निंदा अपकीरती होवेगी इस प्रकार हृदय मे विचार कर भक्त ■ प्रवीन रविदास जो हैं सो भक्तजनों के भय निवारणें भगवान कृपानिधान को सुमर कर और आचमन करते भये कि शरीर से शुद्ध होय करके एक पवित्र खुले पा■त्र मे निरमल पाय कर और ध्यान लगाय कर अनेक प्रकार की अस्तुती से जगजननी गंगे माई का आवाहन करने लगे कि हे गंगे हे भगीरथी हे संसारी पापी जनों का उधार करने वाली हे जान्हू राजा की कन्या जान्हूवी हे पाताल मै विचरने वाले भोगवती हे शोभा की निधी हे शुभ आचार वाली हे समृद्धियों करके युक्त हे नंदा हे कमँवत शोभावाली हे क्षमा मूरती हे विष्णु ■ रूपवाली हे देवी हे विद्या के धारने वाली हे विष्णु भगवान की शक्ती हे शांती हे देवताउं करके सेवत की हुई हे स्वेत जलवाली शिवा हे वृंदा हे महादेव के सीस मै निवास करने वाली हे कल्यान मूरती हे शांती के देने वाली हे जगत माता हे अवनासी हे प्रसन्न मुखवाली हे माधव भगवान की प्यारी माधवी हे सौंदरता वाली हे देवनदी हे मनोहर आभावाली हे सुजंसकी

१८६४

चैल चतुराई॥ जन करै चन सव दीनसि कोई॥ यद्यपि वंसधरम निज जोई॥ लोग्यो करन निपुन वत होई॥ तद्यपि जगत असार जिय जानी॥ रह्यो रंक जन हु दृढ ज्ञानी॥ असप्रकार कछु काल विताया॥ एक दिवस तांके ऊरआवा॥ श्रीव पुदिकवन प्रवरअस चारू॥ जो मोहि राम मेत्र सुखसारू॥ करि उपदेश उदधि संसारहिं॥ करन धार वत पार उतारहिं॥ अस विचारि मानस ... हरषाई॥ आवा संत सरन सुखदाई॥ दोहा॥ देखे तहां कबीर जन रामानंद प्रचार॥ दूरहिं तें जुग जोरि कर नम्रत ... विनय उचार॥ भन्यो संतस जन सुखद जनन जगत प्रदकाम॥ दीन दयानिधि चरन तुव मोरी दंड प्रनाम॥ मै कुविंद लघु जाति जन लखि असार संसार॥ सार सरन संतन सुनत आव आवा तुव द्वार॥ २॥ टीका॥ अब श्री नारायण देव के चरन कमलों की निरमल भक्ती के देने वाली पवित्र गाथा जो है सो कथन करता हूं हे संत जनो इस को कृपा से ध्यान दे कर श्रवण कीजिये पूर्व जनम विखें जगत में वेदांत शास्त्र के अभ्यास वाला और ज्ञान ध्यान में परम प्रवीन ब्रह्मन होता भया कि जिस ने संसार को असार अर्थात मिथ्या जान कर सब करम कर्तव्य जो है सो त्याग दिया ... के वल स्त्री पुत्र की पालना के लिये कुछ चित्र करम अर्थात चित्र कारी कर कर तिन की उपजीवका का निरवाह कर लेता था एक समय वे ब्रह्मन वडा सु

महीन सूत्र लेकर जुलाहे के घर मे चला गया सो जुलाहा अपने करम कर्तव्य मे बड़ा प्रवीन था तिसको ब्राह्मण कहने लगा कि भाई मेरे इस सूत्र का वस्त्र तूं अपनी चतुराई से बीचबीच सेंदूर चित्र राखकर बनाय दे ऐसे बारबार तिसको समुझायकर ब्राह्मण जो है सो अपने घर मे चला आया तब घर मे आवते ही ~~ब्राह्मण~~ को बड़े भारी कठिन ज्वर ने ग्रस लिया तिसतें शरीर करके बहुत व्याकुल और दुखी होय गया परंतु तिसका ध्यान अपने तिस वस्त्र मे हीं जुड़ रहा कि मेरा वे वस्त्र बिगड़ न जावे जो कदाचित मेरा पति जुलाहे के घर मे होता तो अपने वस्त्र को कबी बिगड़ने नहीं देता सुधार लेता इस प्रकार वस्त्र मे हीं ध्यान ~~लगा~~ जुड़े हुये ब्राह्मण को तिस प्रबल ज्वर रोग ने ऐसा जीत लिया कि अंत को एक दिन काल के वश होय गया अर्थात मर गया और वे वस्त्र मे जो तिसकी वासना ~~लगी~~ जुड़ी हुई थी सो नहीं छूटती भई तिसतें प्रालब्ध करम के आधीन होयकर ब्राह्मण जुलाहे के घर मे आय जनम धारता भया तब माता पिता देखकर के प्रीती के सहित दिनदिन बालक की पालना करने लगे और नाम तिसका सुंदर कबीर धर देते भये सो रूपशील गुण को निधी बालक अपनी बाल अवस्था ~~के अनुसार~~ मे बालकों के साथ बाल क्रीड़ा और बाल विलास करता रहता और जो कहीं साधु ब्राह्मण को आवते देखता तो दूर से हीं पृथ्वी पर माथा धरकर प्रणाम करदेता तिसको अपने पूर्व जनम का

सुमरणी भी ज्यों का त्यों बना रहा कुछ वितरा नहीं
जब सयाना भया तब पिता ने अपनी कुल का करम
कर्तव्य जो है सो प्रीती पूर्वक सब सिखाय दिया
केवीर यद्यपि अपने वंस का धरम अर्थात तबत्ते
का बुनना रचना बड़ी चतुराई से करने लगा त
द्यपि जगत को असत्य जानकर चित्त से विरक्त
ही रहता भया इस प्रकार कुछ समय बतीत होय
गया तब एक दिन तिसके हृदय में इह विचार उ
तपन्न भया कि शिवपुरी जो कासी है तिसविषे
ऐसा कौन उपकार की निधी संत मलाह मारे कि
जो मेरे को सरव सुखों के सार राम मंत्र का उप
देश करके इस महाविकट संसार समुद्र से करन
धारवत अर्थात मलाह के समान पार उतारदे
वे और विचार कर हृदय में मगण भया हुआ कवीर
सरव सुखदायक और भय भ्रम के नास करने
वाली संतों की शरण जो है तिसको चला आया
तहां आवते ही कवीर ने रामानंदजी का अतसे
प्रभाव और प्रचार देखा तब दूर से ही दोनो हाथ
जोड़कर दीन वाणी से विनती करने लगा कि हे
उदार दीन सुखदायक और दीन जनो के मनोरथ
सफल करने वाले हे दया की निधी अब मेरी तुमारे
चरनों पर दंड प्रणाम होवे नाथ मैं कुविंद अर्थात
वस्त्र बुनने वाला नीच जाती इस संसार को असार
जानकर और संत कृपाल तुमारी शरण को सा
र विचार कर अपने उधार के लिये तुमारे द्वार पर
चला आया हूं ॥२॥ चौपाई ॥ वे सब मन के कथन
सुनि तासा ॥ कवन नाम तुव कहां निवासा ॥

अथ कबीर चरितं

दोहा॥ नारायण पंकज चरन विमल भक्ति वरदायन॥
सो मैं कथा जथा मती करहुं वदन गयन॥ चौपाई॥
पूर्व जनम से छत्ति गुण रासा॥ रत वेदांत शास्त्र
अभ्यासा॥ भयो एक दुज ज्ञान वसेखो॥ जानत सक
ल जोग मिथ्या लेखो॥ करम कृतैच्छ दीन सब त्या
गी॥ केवल पुत्र पतनि हित लागी॥ विचकारिका
रजपर होई॥ नित निरवाह करत दुज सोई॥ अव
सर एक सूत्र कर लीन्यो॥ तेतू वाहर गवन गृह
कीन्यो॥ तै निज करम विपुल अतिदाहा॥ ताकर
विप्र वदन अस काहा॥ रचहै मोर वसन नृप प्री
ती॥ भीत वचित्र चित्र जुत रीती॥ वारवार अस
तासु अलावा॥ दुजवर वहुरि सदन निज आवा॥
आवत भयो कठिन रुज तेहा॥ भयो दुखित व्या
कुल अति देहा॥ पै दुजवर उर सोच न थोरा॥
विगरहि रुचिर वसन जनि मोरा॥ जो मैं होत सदन
तेहि माहीं॥ लेत सुधारि वसन निज काहीं॥ अस
प्रकार जेवर उर आसा॥ दुज कहं प्रवल रोग ज्वर
ग्रासा॥ मृत वस भयो दिवस कछु पाई॥ छुटे न
वसन वास ना छाई॥ तेतु वाहर सदन सुहावा॥
सो प्रालब्ध करम वस आवा॥ तव पितु मात प्री
ति जुत लालन॥ दिन दिन लाग करन तेहि पाल
न॥ धरयो नाम तेहि रुचिर कबीरा॥ रूप सील
गुण निपुण सधीरा॥ बाल काल बालक जन से
गा॥ बाल विलास करत वहु रंगा॥ दूरहि देखि
संत दुज आवत॥ नमत सीस धर निधर नावत॥
~~सोवेद पूर्व~~ पूरव जनम तासु निजोई॥ रह्यो
सुमरण न विसरयो सोई॥ निज कुल करम

जन दरिद्र द्वार लगि तासु॥ तोपैं निकसत ध
रहिं पग गुरुवर ज्ञान प्रकास॥ सो कछु खेद वि
चारि तुव प्रभु दाया बस होय॥ राम राम अस
रटहि मुख तुव आधार करि सोय॥ पाय इकांत
मन मंत्र वर करहु गवन गृह काहिं॥ बिनु इहि
आन सुयतन मोहि जानि परत कछु नाहिं॥२॥
तब इस प्रकार तिस का कथन सुन कर वैश्नव जन
कहने लगे कि तेरा क्या नाम है और कहां निवास
करता है वे कहने लगा कि मै काशी मै गंगाजी के
किनारे पर वास करने वाला कबीर नाम कर के सं
त भक्तों के चरनो का सेवक हूं दीन हने ही और
दीन सहाय क गुरु रामानंद जी जो हैं तिन की
शरणागत आया हूं ~~अब तिन~~ और तिन की ही
कृपा प्रसाद तें अब महा विकट संसार समुद्र को
तरने चहता हूं ऐसे तिस की बाणी सुन कर वै
स्नव जन सब हासी करकर कहने लगे कि जो
दीन सुखदाय क और कृपानिधान गुरु रामानंद
जी मलेछ के शरीर की कबी छाया भी नहीं
लेते सो तेरे को हे मूढ ऐसा गूढ ज्ञान कैसे
उपदेश करेंगे मंद उठ इहां द्वार से चले जावो
नहीं अबी आय कर के कोई वैस्नव मार पीट कर
निकाल देवेगा ऐसे संतो की कटु अर्थात कड
वी बानी सुन कर के कबीर डरता हुआ अपने घर
को चला आया जब दूसरा दिन भया तब फिर
तहां जाय कर के तैसे ही कहता भया संतों ने
फिर भी कुछ हृदय मै नहीं राखा अंत निरा
स होय कर के घर को चला आया इस प्रकार
यद्यपि तिस का निरादर भी हुआ तथापि तिस

ने संतो की शरण को जाना [struck] जो था
सो नहीं त्यागा ऐसे जब कुछ दिन बीतत होय
गये तब एक सुशील संत जानकर और तिसके
पास जायकर दोनो हाथ जोड़ कर प्रणाम करके
दीनवाणी से कहने लगा कि हे संत हितकारी अब
दया से विचार करके उपाय कहो कि दासजनों के
दुख कलेश हरनेवाले गुरु रामानंदजी मेरे को कैसे
मंत्र उपदेश करेंगे कि जिसतें मै तिनके प्रसाद से
इस महाविकट संसार समुद्र से सहजे ही पार उतर
जाऊं ऐसे कबीर की बड़ी कोमल और गुरु जी
के चरनो मे प्रेम प्रीतीवाली वाणी सुनकर संत
जो है सो दया के वश प्रसन्न भया हुआ कहने लगा
कि हे भाई जो कदाचित तेरे चित्त मे इह रुचि अ
भिलाषा है कि स्वामी रामानंद जी गुरु होयकर
और अपना शिष्य जानकर मेरे को [struck] मुख
से मंत्र उपदेश करें तो इह बार्ता बहुत अगम परंतु
तेरे को एक उपाय कहता हूं कि जिसतें तू अपने
मनवांछित फल को अब प्रापत लेवेगा सो क्या
है कि कुछ शेष रात्री लेकर अर्थात कुछ थोड़ी
सी रात रहती पर गुरु रामानंद जी घर से निकल
कर गंगा जी के किनारे स्नान करने को जाते हैं
तुम ऐसा काम करो कि रात्री [struck] को [struck]
तिनके घर के द्वार की दलीज [struck] मे आयकर
के सोय रहो तो जब ज्ञान के प्रकाश करनेवाले
गुरु कृपाल अपने घर से निकलेंगे तो द्वार
की दलीज मे सोये हुये तेरे पर तिन चरन जो
है सो अवश्य पड़ेगा [struck] तिसतें तेरा कुछ
खेद विचार कर दया के वश भये हुये गुरु जी मु
[illegible] उचारण कर [struck]
ख से राम राम शब्द

१५४ ८४७

ॐ नेलग जावेंगे तब सोई राम नाम हृदय मैं आ
धार करकर और अपनी मन वांछित कामना
को पूरण जानकर तुरत घर को चले जाना
इसतैं विना तुमारे मनोर्थ को सफल करनेवाला
यतन मेरे को और कोई देख नहीं पड़ता है॥२॥
चौपाई॥ सुनि कबीर तोकर अस काहा॥ करि प्र
णाम संजुत उतसाहा॥ बोल्यो तुम हूं प्रथम गुरु
मोरे॥ बंदहुं बार बार पग तोरे॥ जो मोहि तारन
हृदय कलेसू॥ अस तुव कीन संत उपदेसू॥ विवि
ध प्रसंसि बदन मतिधीरा॥ करि प्रणाम तब च
ल्यो कबीरा॥ अवसर एक परब तिथि पाई॥
सुंदर स्वामि सदन निसि आई॥ सोयो द्वार दहिर
सेन लागी॥ राम मंत्र उतकंठित रागी॥ गुरु स
पर्शी पद जाचिन जोके॥ देखत रजनि रुचिर
द्दग वोके॥ तब निसि शेष सुखद जन सज्जन॥
गुरुवर करन देव सरि मज्जन॥ कुसाति लादि
ललित कर लीने॥ निकसे राम चरन चित दीने॥
ता छिन द्वार चरन जब धरयो॥ सो उर जन क
बीर पर परयो॥ ऊच कत रघुवर राम उचा
रत॥ गवने स्वामि हरन दुख आरत॥ सुगम
सिउ करि संसृति खारथ॥ जन कबीर तब भयो
कृतारथ॥ गुरु मुख राम मंत्र अस पाई॥ करि
प्रणाम निज चल्यो सिधाई॥ आवत सदन भ
क्ति मन लीना॥ मुद्र माल भूषत तन कीना॥
रटत सु राम मंत्र जग सारू॥ बन्यो ललि
त वैस्नव ब्रतधारू॥ तास विलोकि परम मन
मोरे॥ वैस्नव सकल द्वेष अमिलावे॥ दोहा॥
मने अधम मति हीन तुव इन आचरण कस
कीन॥ तिलक माल मुद्रादि सजि कपट भेष धरि

कासी बसहु देव सरि तीरा॥ दास चरन तेष नाम
कबीरा॥ गुरु रामानंद दीन सहाया॥ तां की सरन
संत ● मैं आया॥ अब प्रसाद गुरु दीन सनेहू॥ मोग
हुं तरन उदधि भव एहू॥ संत सुनत अस तो करबो
नी॥ बोले हृदय लास स बठानी॥ जो मलेछ व पुको
कछु काया॥ लेत न कबहुं जनन सुखदाया॥ सो तो
हि करहिं बदन कस सूठा॥ अस उपदेश ज्ञान मत
सूठा॥ तजे हौ दार सदन निज नाहू॥ मार बनत
र बे सब काहू॥ सुनि कबीर संतन कटु बानी॥ आ
वा सदन त्रास उर मानी॥ दूसर दिवस ■ बहुरि
ति न पासा॥ जाय पूर्व वत वचन प्रकासा॥ तब हु
न कीन संत सुई कारा॥ ■ पुनि निरास आवा
निज द्वारा॥ पै तहि हृदय हरन जठताई॥ तजी न
संत सरन सुखदाई॥ अस प्रकार कछु ■ सरा
न्यो॥ तब इक सैं सील निधि जान्यो॥ तहि पै जाय
जुक्ति जगपानी॥ करि प्रनाम अस विनय बखानी॥
हे प्रभु संत दीन हितकारी॥ मन कुयतन कछु हृदय
विचारी॥ गुरु रामानंद हरन कलेसू॥ ■ कस
मोहि करहिं मंत्र उपदेसू॥ जो भव विकट सिंधु
भव भारा॥ गुरु प्रसाद उतरहुं प्रभु पारा॥ संत
कबीर सुनत मृदु बानी॥ गुरु वर चरन प्रेम मन
लागा॥ अति प्रसन्न दाया रस पाग्यो॥ बदन
अस भाषन लाग्यो॥ जो जन प्रीति रुचिर रुचि तो
रे॥ रामानंद व नहिं गुरु मोरे॥ श्री मुख ■ विम
ल मंत्र उपदेसू॥ करहिं ध्यान भव हरन कलेसू॥
तो मैं करहुं कथन इक तोही॥ सुगम उपाय फु
रयो जिमि मोही॥ दोहा॥ भै छनि सातकि तजि
सदन सोभावत मति धीर करन हेत मज्जन सु
दिन विमल देव सरि तीर॥ तुम की जो निसि

१७१६ ५५८

चला आया तहां आय करके भक्ती मे लीन भया
हुआ सुंदर तिलक माला मुद्रा जो है सो धारलेता
भया और संसार मे तिस सार राममंत्र को जप
ता जपता वडे उत्तम व्रत के धारने वाला वैस्नव
भक्त वन गया तव ऐसे तिस की ~~भक्ति~~ उत कृष्ट अग्र
णी उत्तमताई और भक्ती आचार देखकर के संपू
र्ण वैस्नवों के मनमें द्वेष उत्पन्न होय जाता भया
और कोप ~~किया~~ के वचनों से कहने लगे कि अरे
अधम वुद्धी के हीन मूढ दुष्ट तेरा कौन आचार
धरम है कि वृथा ही तिलक माला मुद्रा धारकर
कपटी वैस्नव वन वैठा है जड देखतो तेरे को कै
सा दंड देते हैं ॥१॥ चौपाई ॥ तव कवीर उर भक्त
उचारे ॥ मैं पट के जग राखन हारे ॥ सुमरत भयो
वदन मृदु वानी ॥ सन हो संत ज्ञान गुण खा
नी ॥ रामानंद मोर गुरुदेवा ॥ जहि प्रसाद जन
सेवत लेवा ॥ राममंत्र मैं जुल सुखे करना ॥
वैस्नव धरकीन आचरना ॥ सुनि कवीर मुख व
चन नवीना ॥ गुरु सन जाय कथन तिन कीना ॥
ते अनुचित सुनि हृदय रिसाये ॥ जन कवीर
दुत लीन वुलाये ॥ करि करि त्रास विविध तिर
कारा ॥ भने स्वामि जुत कोप अपारा ॥ अरे मूढ
मति अधम मलीना ॥ मै जड तोहि मंत्र कव
दीना ॥ ~~ह~~ कस मृखो कीन चतुराई ॥ तव कवी
र चरनन सिर नाई ॥ भयो कथन कछु अनुचित
मोरा ॥ तुम हु नाथ जन सेवक तोरा ॥ तव कर
रयन क्रोध लिखि पाई ॥ प्रभु सनान हित चले
सिधाई ॥ मैनिज सफल मनोरथ हेतू ॥ रह्यो
सोय तुव दहिर न केतू ॥ मोरे व ~~च्छ~~ चरेन प्रभु

परयो॥ रामराम तब वदन उचरयो॥ सोकबीर
जन आधार सो ऊ करि लीना॥ अस उपदेश मं
ते प्रभु दीना॥ दोहा॥ सुनि स्वामी अस कथन त
हि सो सुमरणि उर कीन॥ सत्य ~~गुरु~~ ~~वचन~~
उपदेश निज भये हरष सुखलीन॥ ४॥ टीका॥
इस प्रकार वैश्नव संतों का कथन सुनकर कबी
र जो है सो जगत मे भेष की लज्जा राखने हारे
और भक्त जनो के रखवारे नंद दुलारे भगवान
को सुमरकर बडी कोमल वाणी से कहने लगा
कि हे ज्ञान गुण निधान संत जनो स्वामी रा
मानंद जी जो हैं सो मेरे गुरदेव हैं कि जिन
के प्रसाद तें मैने संसार मे सरव सुखों के देने
वाला तारक राम मंत्र ~~उपदेश~~ ~~प्राप्त~~ करके
वैश्नव धरम जो है सो धारण किया है ऐसे क
बीर का वचन सुनकर वैश्नव हृदय मे बडा अचरज
मानकर तुरत जायकरके गुरु जी को ~~सब~~
सब प्रसंग सुनाय देते भये तब स्वामी सुनते ही
क्रोध से लाल वरण होय गये और ततकाल कबीर
को बुलाय कर अनेक प्रकार का तिरसकार करकर
कोप के वचनो से हीं कहने लगे कि अरे मूढमती
हे अधम मलीन जड कहो मैने तेरे को मंत्र उप
देश कब दिया है इह तैने मृखा अर्थात झूठी क्या
चतुराई करी है इस प्रकार गुरु जी के मुख से वचन
सुनकर कबीर हाथ जोड कर विनती करने लगा
कि हे कृपानिधान मेरा कुछ अयोग्य सा कथन
है आप कृपा करके सेवक को क्षमा करिये तब
की रात्री मे ~~ओ~~ कुछ थोडी सी रात रहती

१४७ ५५६

जानकर आप सनान को जाने के लिये चर
सेवा हर जो निकले तो मै अपने मनोर्थ के सफ
ल करने को प्रभू तुमारे द्वार की दलीज मे पड़ा हूआ
था तहां दीनबंधू तुमारा चरन मेरे व अर्थात छा
तीपर पड़ा तिसतें मेरा खेद मान कर आपने रा
म राम शबद उचारन किया दीनदयाल मैं सोई
सुनकर अपने हृदय मे धारन कर लिया इसप्रका
र कृपालपू तुमने मेरे को मंत्र उपदेश दिया है और
मै आपका सेवक भया हूं ऐसे कबीर का कथन सुन
कर गुरु रामानंद जी ने अपने हृदय मै
सुमती विचार जो किया तो अपने उपदेश को
सत्य जानकर परं हरष और सुख को प्रापत होते
भये ॥४॥ चौपाई ॥ तात हरन दुखदुरत कले
स ॥ जो तुव लीन मो उपदेस ॥ ताके भजउ
कपर भ्रम त्यागी ॥ संतत हो उ भक्ति प्रेम रागी ॥
राम मंत्र तारक जग जोई ॥ मिल्यो सुलभ तोरे
सुत सोई ॥ जब गुर देव कीन अस दाया ॥ तब
विलोकि वैस्नव समुदाया ॥ बने मीत सब
देष विहाई ॥ जब कबीर चरनन सिर नाई ॥ आसि
ष लेत सदन निज आवा ॥ राम चरन पंकज म
न लावा ॥ भक्ति प्रसाद भक्त भगवाना ॥ भयो वि
दत सब लोग महाना ॥ निज कुल करम करत सं
सारा ॥ पालत भक्त जन तनि जुत दारा ॥ अवस
र एक सु संत कबीरा ॥ विरचत चीर हेत मति
मतिधीरा ॥ किंद तासु नगर वेचन जब चले सो ॥
तब इक वृद्ध विप्र मग मिलसो ॥ विपत सीत वस
कंपत देह ॥ वसन विलोकि दृगन अस तेह ॥
नंम्रत दुखित दीन मुख बानी ॥ बो ल्यो जन तो

लीन॥ ३॥ टीका॥ ऐसे तिस संत हितकारी की कथन सुनकर कबीर बडे हरष उतसाह से प्रणाम कर कर कहने लगा कि हे संत कृपाल तुम ने मेरे पर अत्यंत उपकार किया है जो हृदय के सब कलेश दुख हरनेवाला उपदेश दिया है मेरे प्रथम गुरू प्रभू तुम हीं हो अब तुम को मेरी बारंबार दंडप्रणाम होवे ऐसे अनेक प्रकार श्लाघा कर कर कबीर चरनों पर सीस नाय करके आनंद से घर को चला आवता भया तब एक दिन सुंदर परब और सुमति थी पाय कर रात्री के समय गुरू रामानंद जी के घर पर चला आया और हृदय मे राम मंत्र की अभिलाखा लोभ भया हूआ तिनके द्वार की दलीज मे लेटा पडा रहा तहां गुरू रामानंद जी के चरन के सपर्श की इच्छा वाले कबीर के नेत्र रात्री भर निद्रा के वश नहीं होते भये तिनके आगमन को देखते देखते ही प्रभात हो गये जब कुछ शेष अर्थात थोडी सी रात पीछे रही तब सज्जन सुखदायक और दीन हितकारी गुरू कृपाल कुशा तिलादि हाथ मे लिये और भगवान के चरनों मे चित दिये हूये गंगा के सनान करने को घर से निकल कर चल पडते भये जब द्वार की दलीज के बाहर चरन धरा तो वे कबीर के हृदय अर्थात छाती पर पडा तुरत तिसका खेद विचार कर दीनो के दुख दूर करने वाले गुरू रामानंद जी ऊचक कर मुख सें राम राम उचारते हूये आगे को चले गये तब कबीर अपने मनोर्थ को सहजे ही सिध कर के जगत मे कृतार्थ हो जाता भया गुरू जी के मुख से राम मंत्र पाय कर प्रणाम कर के तुरत घर को

इस जगत मै परम पवित्र तारक मंत्र जो है
सो पुत्र तेरेको बड़ा सुगम और सहज ही प्राप्त
होय गया है जब इस प्रकार गुरु रामानंदजी ने
कृपा करके कहा तब तिन की दया दृष्टी देख कर के
वे सब जो थे सो सब द्वेष को त्याग कर मित्र
भाव से अनुग्रह करने लग जाते भये तिसते उपरांत
कबीर गुरुजी के चरनो पर सीस नाय कर और स
ब संतो को बंदना कर कर आसीसा पाय कर के राम
राम रटता हुआ घर को चला आया तब तें दिन
दिन अधिक ही भगवान कृपानिधान के चरन क
मलो मै सनेह कर कर भक्ती के प्रताप से भक्
पा और नित्य अपनी कुल का करम कर कर
माता और स्त्री की पालना करता रहता एक
दिन कबीर एक वस्त्र त्यार करके तिस के वे
चने के लिये नगर को चला जाता था तब मा
रग मै एक कोई बृद्ध और दीन दारिद्र ब्राह्मण सा
तिस को मिल बड़ा सो कैसा कि सीत से व्याकुल
भया हुआ थर थर कांप रहा था कबीर के पास
तिस ने वस्त्र जो देखा सो बड़ी दुख की भरी हुई
दीन बानी से हाथ जोड़ कर बिनती करने लगा
कि हे दाता मै बृद्ध और सिथल सरीर सीत
कर के व्याकुल भया हुआ थर थर कांप रहा हूं
तूं उपकार कर के इह अपना वस्त्र मेरे को दे
और मेरे दुखी दीन की सुंदर आसीसा जो है सो
ले भगवान तेरा लोक परलोक मै भला क
रेंगे ऐसे तिस की बड़ी दीन और दुख की

भरी हुई बाणी सुनकरके कबीर तुरत दया
के बस होय गये ब्राह्मण के पास जाय कर तत
कांधा वस्त्र फाड़ करके दे दिया तब ब्राह्मण
तिस वस्त्र को देखकर ते से हीं दीन वाणी
से कहने लगा कि हे दाता जो तैंने उपकार कि
या है तो इह सब का सब वस्त्र मेरे को दे तेरे को
भगवान की कृपा से इस का अनंत फल प्रा
पत होवेगा और तूं लोक परलोक मै बड़े
सुजस और बड़ाई को पावेगा जब इस प्रकार
ब्राह्मण ने कहा तब कबीर ने तिस को सब सारा ही
वस्त्र दे दिया पीछे हृदय मै विचार करने लगा
कि अहो घर मै अन्न मात्र तो कुछ भी नहीं है इसी
वस्त्र के मोल से निरबाह होना था अब मां और
स्त्री भूख से क्या दशा होगी अब बोली लाज घर
मै कैसे जाऊं और तिन को जाय कर क्या देऊं इसी
सोच मै भयभीत होय रहा है इहो कबीर का ऐसे
चिंतन करना और उहो भूख से व्याकुल भई हुई
स्त्री और माता तिस के आगमन अर्थात आवने
का मारग देख रही हैं इस प्रकार तिन का कलेश
देखकर भक्तों की रक्षा करने वाले भगवान ब्राह्म
ण का बड़ा अनूप रूप धार कर तुरत तिस के घर मै
चले आवते भये तब कबीर की माता को पास बुला
य कर कहने लगे कि माई तेरे पुत्र कबीर ने मेरे को
तुमारे निरबाह के लिये इह कुछ धन दिया है
सो तूं ले और वे आप किसी कारज के लि
ये कहीं और ठौर गया है थोड़ी देर के पीछे आय
जाता है ऐसे तिस को समुझाय कर और वे धन दे
कर कृपासिंधू तहां तुरत ही लुपत होय गये
॥ यथा चौपाई ॥ तब पुर कर लोगन सुनि पावा ॥

~~२४९~~ ५६१

गयो कवीर सदन नहिं आवा॥ खोजत तासु यतन हठ कीने॥ आये सकल संग निजलीने॥ भने दीन धन तुम हु पठाये॥ आपुन भवन कवन हित आये॥ तब कवीर मानस निज जाना॥ इह कीन्यो कौतुक भगवाना॥ मोरवि लोकि खेद श्रम स्वामी॥ भये सहाय जनन अनुगामी॥ अहो सत्य भगवान सुहाये॥ वतसल भक्त वेद स्तुति गाये॥ आज धन्य इह संस्तुति माता॥ जहिं इन दृगन दरस सुखदाता॥ पावा हरन दुंद भव सारी॥ अस कवीर मुख गिरा उचारी॥ जे धन कृपाकि धुं ~~...~~ दीना॥ ते विभक्त संतन कहं कीना॥ निज कुल करम सकल परिहरयौ॥ राम सरोज चरन उर धरयौ॥ सरव विश्व पालक भगवाना॥ अस आधार भक्त उर ठाना॥ सुनत विप्र भगवन धन दीना॥ ~~...~~ तहिं वे आय कथन अस कीना॥ अरे कवीर सदन तुव दूरी॥ काहु सेत दीन्यो धन भूरी॥ वृथा विभक्त कीन सब काहि॥ हम कहं भक्त दीन कस नाहीं॥ हम हु लेव हठ जुत निज भागा॥ तब कवीर उर सोचन लागा॥ अब तो नहिंन सदन कछु आना॥ इन तें छुटहि देव कस प्राना॥ उर पत लजित भवन तजि सोई॥ दुसो जौय चिंतावस होई॥ इ जगत भये द्वार थिरतासा॥ कब कवीर आवत उर आसा॥ दोहा॥ तब भगवन वतसल भक्त धृत कवीर कल रूप॥ आ~~...~~ लेत धन सदन जन हरन त्रास भव कूप॥ १॥ टीका॥ तब नगर के लोगों ने सुना जो कवीर घर से कहीं बाहर गया

जुगल निज पानी॥ देखि हि पल मम केपत गाता॥
जो उपकार करहु तुव दाता॥ तो इह चारु चीर मो
हि देहौ॥ दीन दुखित आतिख अब लेहौ॥ सु दुजआ
रत जब वचन अलाया॥ सुनत कबीर भयो ब
स दाया॥ ताके निकट जाय गतधीरा॥ दीन विदा
रि अर्ध निज चीरा॥ देखि विप्र तब बदन उचारा॥
जो तब कीन भक्त उपकारा॥ तो इह देहु सकल
पर मोरे॥ राम प्रसाद इमत फल तोरे॥ लोक सु
जस पर लोक बडाई॥ तब कबीर मान सहर धाई॥
ॐ तासु सकपट तत दलादीना॥ लग्यो क
रन पुनि सोच प्रवीना॥ आज मोल बिनु बसन
अहेरी॥ रहहि जननी तिय मोरी॥ कू
है जाहु कवन विधि गेहा॥ इसो भीत बस सो
चत एहा॥ इत कबीर उर चिंतन होई॥ उत आ
गमन प्रतीतत होई॥ सुध्यत विकलप तनि जुत
माता॥ तब भगवान भक्त जन त्राता॥ दोहा॥
विप्र सरूप अनूप धृत बित जुत सदन कबीर॥
आये प्रणतार तहरन धरन जननउरधीर॥
बोलि निकर तहि जननि प्रभु बदन प्रबोधन
कीन॥ इह धन लेहु कबीर सुहि तुव निवाह
हित दीन॥ सो गव न्यो कछु काज बस आन
ठौर मति धीर॥ अस तिन कहे समुझाय द्रुत
भये लुपत जदुबीर॥ ४॥ टीका॥ फिर गुरू जी
कहने लगे केहे पुत्र अब तेने दुख कलेश और
पापों के नास करने वाला मेरा उपदेश जो लिया
है तिस को हृदय का कपट भ्रम त्याग कर निरलो
भज और प्रेम प्रीती वाला होय कर भक्ती में दृढ हो

सें मेरे प्राण कैसे छूटें गे तब तिन के भय से लज्जा
और चिंता के वश भये हुए कबीर कहीं निरजन
अस्थान विषें जाय कर छिप रहे और इहां ब्राह्म
ण लोग आय कर तिस के द्वारे में स्थित भये हुये
देखरहे हैं कि कबीर घर में कब आवता है तब आप
ने जन की हानी विचार कर इस संसार रूपी कोप का
भय दूर करने वाले भक्तवत्सल और दीन हितकारी
भगवान कबीर का रूप धारे हुये धन ले करके
तुरत तिस के घर में चले आवते भये ॥ ६ ॥ चौपाई ॥
इत उत फिरत बहुरि भगवाना ॥ होत द्वार स्थिर भ
क्त सुजाना ॥ लगे देन धन विप्रन रूरा ॥ कीन अभि
ष्ट सबन कर पूरा ॥ सो जब गये सुजस गुण गाते ॥
तब भगवान भक्तजन त्राते ॥ धरि निज विप्र रूप
अभिरामा ॥ रह्यो कबीर लुपत जहि ठामा ॥ तहां
आय प्रभु भाषण लागे ॥ काहु बईहां करत ब
डभागे ॥ तोरे भवन द्रव्य संभारू ॥ हेत विभक्त
भक्त व्रत धारू ॥ देखहु कस न जाय अस सोभा ॥
चल्यो कबीर सुनत मन लोभा ॥ भवन भूरि
रचना दृग देखी ॥ जासि चरित चारु कछु जा
हि न लेखी ॥ धन्य कबीर सुजस गाई ॥ लि
ये जात धन दुजस मुदाई ॥ तबहुं कबीर जानि
जिय लीना ॥ इह चरित्र मेरे प्रभु कीना ॥ मोहु
सुजस दीन्यो जग भारी ॥ करि कौतुक अस भ
क्त उबारी ॥ सुनत लोग ग्राम बसे या ॥ देत
कबीर विपुल धन भैया ॥ जाचन हेतु सकल मिलि
आये ॥ तब कबीर देखत अकुलाये ॥ भयो विभ
क्त जबन धन राहा ॥ दैव अजास करहुं अब काहा ॥
अस विचारि चित पत अधीरा ॥ भयो तजत नि
ज सदन कबीरा ॥ एक बार बधु कर गहि पानी ॥

लाग्यो नृत्य करन सुखमानी॥ देखि असंत अधम अगरासी॥ लागे करन सकल तति हासी॥ साधु संतजन दृगन न देखी॥ कर सोच दुख मानि विसेखी॥ बहुरि असंत संत जन दोई॥ गवने राग द्वेष वस होई॥ तब उनमत्त वारतिय संगा॥ जन कबीर नृप द्वार उमंगा॥ दोहा॥ आवा दरस न देख करत नृप मन्यो वदन पुनि माथ॥ भावित पत कबीर कछु गह्यो वारवधु हाथ॥ तब कबीर नृप द्वार पिर देखि विमल घर वारि॥ करि पूरब मुख लाग द्रुत अंजुलि भर भर डारि॥७॥ टीका॥ तब प्रथम इधर उधर फिरकरके फिर भक्तपाल भगवान अपने भक्त के भेष मे तिसके द्वार पर स्थित होयकर ब्राह्मणों को धन दान देदेकर सब के हृदय का मनोरथ पूर्ण करते भये सो ब्राह्मण जब धन को पायकर प्रसन्न भये हूये अनेक प्रकार का सुजस गायन करते करते अपने अपने चले गये तब भक्तजनों की रक्षा करने वाले भगवान बड़ा सुंदर ब्राह्मण का रूप धारकर जहां कबीर लुपत भया हूआ था तहां जाय कर ऐसा कहने लगे कि हे बड़भागी तूं इहां क्या करता है तहां तेरे घर मे तो साध ब्राह्मणों को प्रसन्न करकर और मूठी भरभर द्रव्य दिया जाता है सो तूं तिस शोभा को जाय कर क्यों नहीं देखता है ऐसे भेषधारी ब्राह्मण का वचन सुनकर तिस रचना शोभा के देखने का लोभी भया हूआ कबीर निरभय होय करके तुरत चल पड़ता भया घर मे आयकर तिस रचना और शोभा को देखकर अचरज को प्रापत होय गया कुछ कौतुक लखा नहीं जाता है धन्य कबीर धन्य कबीर ऐसा सुजस गायन करते हूये साध

ब्रह्मणधन लिये चलेजाते हैं तब कबीर अपने मन
मे जान गया कि इह चरित्र मेरे ही प्रभू ने
किया है और दीन बंधू ने मेरेको संसार मे सुजस सब
छाई दिया है इतने मे ग्रामों के लोग सुन
करके कि भैया कबीर धन बांट रहा है सब धाव ते
चले आये तब तिनको देखकरके कबीर व्याकुल
होगया और हृदयँ विचार करने लगा कि धन
जो था सो तो सब बांट गया अब घर मे कुछ
भी नहीं है देव इनको कहां से देऊं और क्या यतन
करूं इस प्रकार चिंतन करकर भय और हानी का
मारा कबीर घर को त्याग कर वितस्त अर्थात बा
उला वन गया और एक वेस्या का हाथ पकड़ कर
तिसके साथ निर लज्ज भया हूआ नृत्य गायन क
रने लग जाता भया तब अधम मूढ पाप की खा
नी असंत लोग जो थे सो तिसको देखकर के सब
हांसी करने लग पड़े और साधू संत बड़े उत्तम
पुरष जो थे सो तिसकी दशा देख कर बड़े दुख
सोच को प्रापत हो जाते भये तिसते उपरांत फि
र संत असंत दोनों ही हरष दुष के वश भये
हूये अपने अपने घरों को चलेगये तब भक्ती
मै उनमत्त भया हूआ कबीर तिस वेस्या को सा
थ लिये हूये अभय होय कर राजा के द्वार मे च
ला आया राजा देख कर और सीस फेर कर क
हने लगा कि देखो इह कबीर तो अब मुझ बाउ
ला होयगया जो इस वेस्या का हाथ पकड़ा हूआ
है तब कबीर राजा के द्वार मे निरमल जल देख
कर तहां से पूरव दिसां को मुख करकर
और अंजुली भरभर कर जल सींचने लगा ॥७५॥

या फिर नहीं आया तब तिसको खोजकर
बडे यतन हठ से [illegible] ले आये और कहते
भये कि भक्त तुम ने धन घरमे [illegible] मे जदिया आप
क्यों नहीं आये थे इस प्रकार धन की वात
सुनकर कबीर हृदय मे जान गये कि इह कौतुक
तो भक्त हितकारी भगवान ने हीं किया है मेरा
श्रम कलेश देखकर कृपासिंधु सहायक भये हैं
अहो भगवान सत्य करके वेद पुराणों ने भक्तवत्स
ल गायन किये हैं आज जगत मे इह मेरी माता धन
बडे उदय भागों वाली है कि जिस ने [illegible] अपने
नेत्रों से संसार के पाप कलेशों के नाश करनेवाला
सर्व सुखदायक भगवान कृपानिधान का दरस न
पाया है ऐसे कथन कर कर कबीर जो है सो वे भक्त
पाल का दिया हुआ धन सब अतथी साध ब्राह्म
णों को [illegible] वांट देता भया और अपनी कुल का क
रम धरम सर्व त्याग कर केवल रघुनाथजी के
चरन कमलों को हृदय मे धार करके [illegible]
जगतपाल रघुनंदन के ही भजन सुमरण को अ
धार कर लेता भया तब नगर के और और ब्राह्मण
[illegible] भगवान के दिये हूये तिस धन को सुण कर म
न तें सब के पास आय कर कहने लगे कि हे क
बीर हम ने सुना है जो तेरे को किसी संत ने दया
करके बहुत द्रव्य दिया है सो तैने वृथा ही सब
को बांट दिया है अरे भक्त हम को क्यों नहीं दिया इह
तैने क्या अपजस लिया है भाई हम तो हठ करके
भी अपना भाग अवश्य लेलेवेंगे ऐसे तिन ब्राह्म
णों का कथन सुनकर कबीर हृदय मे चिंतन कर
ने लगा कि अब तो घर मे और धन नहीं है देव इन

जो मै सेवत लेहु जग मिज अमि वृफल पाइ ॥१८॥

टीका तब राजा देखकर कहने लगा कि हे महातुम
इह क्या चतुराई करते हो ऐसे राजा का कथन सु
न कर कवीर निरभय होयकर कहने लगा कि हे रा
जन अब इस समय जगननाथ पुरी मे भगवान का
पाचक अर्थात भोजन वनाने वाला जो है तिस का
भात की तपत पीछे से पाउं जल गया है सो मैने
तिस की शांती के लिये हे प्रजापाल इह कुछ यतन
किया है तब राजा सुन करके वडे अचरज को प्राप
त होय गया और तिस वारता के सत्य जानने
के लिये तुरत अपने दूत जगननाथ पुरी मे भेज दिये
तिन दूतों ने तहां भगवान के पूजकों के पास जाय
कर राजा का कथन जो था सो सब सुनाय दि
या तब पूजकों ने सुनते ही कहि दिया कि भग
वान का पाचिक जो भोजन वनाने वाला है तिसका
चरन भात की पीछे से सत्य करके जल गया
था परंतु कवीर ने वडी सहायता करी कि
जल छिंचन करकर तिस तपत को तुरत ही शां
ती कर लिया इस प्रकार सुनकर और दूतों ने आ
यकर राजा के आगे सब सपष्ट करके सुनाय दि
या कि महाराज कवीर का कथन सब सांचा है
और इह भक्त प्रधान जगत मे धन्य हैं देखिये
इनो ऊहां दोनो ठौर प्रकट होय करके अपना
प्रभाव जो है सो दिखाया है तब राजा इस अद
भुत को सुनकर और महा प्रभाव देखकर नम्र
भाव से तुरत कवीर के चरन वलागया और प्रणा
म कर कर जान लिया कि इह तो परमसिद्ध भ
गवान के दृढ भक्त हैं हृदय का अज्ञान और
मोह भ्रम अंतर के इत्यादि सब मिट गया ऐसे

राजा को देख कर कबीर प्रेम से बड़ा सनमान
कर कर मधुर बाणी से कहने लगा कि आज जगत
बिखै मै धन्य हूं तिसपर हे प्रजापाल तुम भी धन्य
हो कि जो मेरे जैसे दीन निरधन के घर मै चरन
धार कर भलीप्रकार सब लोगों मै
उजागर कर दिया और जगत मै मेरे को सुजस
का पात्र बनाय दिया है अब हे गुण प्रवीन राजन
कहिये कि इस दीन के घर मै कौन कारण आग
मन अर्थात आवना हुआ है नाथ इह तो आपने
बड़ा अनुचित और जोरावरी करी है क्योंकि मै तुम्हा
रा सूत(?) था तो आपने घर मै ही क्यों नहीं बुलाय
भेजा ऐसे कबीर की बड़ी कोमल बाणी सुन कर
राजा हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे भक्तप्रधान
तुमारा प्रभाव जो जगत मै पूरण होय रहा है मै अ
जान तिस के जानने को सामर्थ नहीं हो पहुंचा
सो मेरे को दुरविषय और जड़मती जान कर
तुम हेत उदार और सज्ञान सुखदायक हो क्षमा
करो और आगे अपना सेवक जान कर कृपा
कर के कुछ आज्ञा करिये कि जो मै आप की
सेवा कर कर अपनी मन बांछित कामना को
पाय कर संसार मै सफल होऊं ॥ ८ ॥ चौपाई ॥
कामा गहें भूपति धीरा ॥ चल हार संसार क
बीरा ॥ बुधिमान दृग सकल मधेना ॥ कवन
भरोस राखि उर लेना ॥ बृति आबृत क जीव
जग जेहू ॥ रहि न धरन नाथ थिर तेहू ॥ तो ते
अस विचारि गुण धामा ॥ हृदय मोर कछु ना
हिं न कामा ॥ केवल राम नाम आधारा ॥ भूप
सुखद मोरे संसारा ॥ तुम हु जानि जिय रुचिर
नरेसा ॥ भजहु राम सब हरन कलेसा ॥ भूप

स्यरे ९६५

सुनत मृदु वचन सुहावा॥ ब्रह्मानंद जन है पद पा
वा॥ ज्ञान मगन निज भवन सुखारी॥ करि प्रणा
म पग चल्यो सिधारी॥ सकल लोग निज नगर
बुलाई॥ अस शासन नृप दीन सुनाई॥ भक्त कबी
र मोर प्रिय नेहू॥ तासन करब द्वेष जन जेहू॥
सो रिपु मोर दंड अधिकारी॥ सुनि नृप कथन न
गर नर नारी॥ जन कबीर सन द्वेष बिहाई॥ लागे
करन रुचिर सेवकाई॥ दोहा॥ अवसर एक सुधी
र मति जन कबीर तजि धाम॥ तीरथ यात्रा संग
लेहि गवन कृस्न कल ग्राम॥ २०॥ टीका॥ तब क
बीर कहने लगे कि हे बुद्धी और धीरज के धाम
राजन कहो मैं क्या मांगूं ई कबीर भी और
संसार भी सब चलनेवाला ही देख पड़ता है ज
हां लग नेत्रों का विषय है अर्थात जो जो दृष्टी
मे आवता है सो सब मिथ्या ही भास रहा है
तातें किस का भरोसा राख कर क्या मांगूं और
कौन आशा करूं हे राजन वृती अवृती अर्थात
जीवका अजीवका वाले जीव जो हैं सो तो
दोनो ही थिर रहनेवाले नहीं हैं ऐसे विचार
करके पृथ्वीपाल मेरे हृदय मे कुछ भी काम
ना नहीं है केवल राम नाम जो है सोई मेरे
को आधार और सुखदायक है मै राम नाम के
विना संसार मे और को [illegible] ई भरोसा नहीं
राखता हूं हे राजन तुम भी ऐसे जानकर
सरब कलेशों के हरनेवाला राम नाम जो है
सोई हृदय मे आधार कर लेवो और तिस को हि
भजो इस प्रकार कबीर का कथन सुन कर रा
जा मानो ब्रह्मानंद पद को प्राप्त ही होजाता
भया ज्ञान के सुख मे मगन भया हुआ म

चौपाई॥ तब नृप भन्यो वदन मुसकाई॥ इह का करइ
भक्त चतुराई॥ सुनि कबीर अस भूप बिलासा॥ बोल्यो
वदन वचन निरत्रासा॥ अब इहि समय सुनहु नरना
हो॥ जगननाथ पावन पुर माहो॥ नारायण करपा
चक राहा॥ तास चरन तपतोदन दाहा॥ मै तहि
प्रीति करन हित कीना॥ इह सु यतन कछु भूप प्रबी
ना॥ ~~सुनि नरेस~~ सुनत नरेस हृदय बिसमाये॥
तहाँ के दूत द्रुत दीन पठाये॥ तिनहुं जाय पूजक
जन पासा॥ भूप कथन सब वदन प्रकासा॥ तप
तोदन पचता पग जाहा॥ भन्यो भरम पूजक तव
सारा॥ जन कबीर द्रुत सिंचत वारी॥ पचकताप
पग दीन निवारी॥ दूतन आय भूप सन वाचा॥ ना
थ कबीर कथन सब साचा॥ इत उत दहुन ठौर प्र
कटाये॥ धन्य कबीर भक्त जग आये॥ भूप प्रभाव
देखि दृग एहू॥ गवन्यो जन कबीर कर गेहू॥ जा
न्यो सिद्ध भक्त भगवाना॥ मिट्यो कुतरक मोह अ
भिमाना॥ तव कबीर संजुत अनुरागा॥ करि सन
मान मधुर मृदु वागा॥ बोल्यो आज धन्य ज
ग मोही॥ तापर धन्य धन्य नृप तोही॥ जो मोसे
निरधन जन गेहू॥ धारि चरन तुव दीन सनेहू॥
भलो कीन सब लोग उजागर॥ कहिये अब न
रेस गुणागर॥ कस आगमन दीन गृह मोरा॥
अनुचित कीन नाथ बरजोरा॥ मै कबीर जन दास
तुमारा॥ पठ्यो न बोलि ललित निज द्वारा॥ सुनि
नरेस अस कोमल बानी॥ बोल्यो वदन जुक्त जु
ग पानी॥ भक्त प्रभाव तो जग भरयो॥ मोहि अ
जान कछु जानि न पायौ॥ सो दुरविषय मोर
जड़ताई॥ क्षमहु संत सज्जान सुखदाई॥ दोहा॥
अब मोरे कछु करहु तुव भक्त कथन सिवकाई॥

पं० २९६

966

जो न चलहु तुव सासन पाई॥ चलव लेत हम बंधन
लाई॥ सुनत भृतन अस कथन कवीरा॥ कैल्यो वि
गत त्रास मति धीरा॥ गुरु प्रसाद बंधन चुत होई॥ वि
चरत हमहुं जगत भ्रम खोई॥ सो तुमार बंधन कस
भाई॥ देखव हम दलीस ढिग जाई॥ अस कहि अभय
~~[illegible]~~ कृष्ण सुखदाते॥ सुमरत चले भक्ति मद मा
ते॥ दोहा॥ जात साह सनमुख अचल जनहुं थेव
थिर होय॥ नत गत मानस मौन धृत भक्त सकुच
चित खोय॥११॥ टीका॥ तब सुंदर मन भावन मथु
रा पुरी का सब दरसन परसन करके फिर विचरते
विचरते हसतना पुर जो दिल्ली है तिस विखे आय प्रा
पत हूये तिस समय तहां सूरज के समान बडे प्र
ताप वाला तेजस्वी सिकंदर नाम करके बादसाह रा
ज करता था और भगवान के बडे दृढ भक्त ज्ञान ध्या
न की मूरती कवीर दास जो थे तिन का प्रभाव भी
सूरज के समान उदय होय करके नगर के सब लो
गों विखे फैल जाता भया तब दुष्ट जन जो थे सो
भक्त प्रधान कें प्रभाव को सहार नहीं सके बादसाह
के पास जाय कर द्वेष के वचनों से कहने लगे
कि महाराज देखिये इह नीच जाती जुलाहा
और महा अधम निंदक जो है सो वृथा ही वैस
व भक्त बना बैठा है और मूढ संत भेष धार कर
जगत मे लोगों को ~~[illegible]~~ छलता फिरता है जड
दुरमती को हृदय मे तुमारा त्रास रिंच कभी न
हीं है ऐसे तिन दुष्ट जनो का कथन सुन कर
~~[illegible]~~ कोप से भरा हूआ साह तुरत तिस के ल्याव
ने के वासते दूत भेज देता भया तिनको कहा जो
कदाचित नहीं आवे तो अधम को ऊट बांधकर
~~[illegible]~~ मेरे सनमुख ले आवो इस प्रकार आज्ञा

के वश भये हूये दूत तुरत कबीर के पास आयकर कहने लगे कि हे भक्त चल तेरे को बादसाहने बुलाया है हम दूत जो हैं सो धावते चले आये हैं जो कदाचित तूं आज्ञा मान कर नहीं चलेगा तो हम जोरावरी से बांध कर ले जावेंगे ऐसे दूतों का कथन सुन कर धीरज और सुमती के धाम कबीरजी निरसंक अभय होय कर कहने लगे कि हे भाई हम तो गुरूजी के प्रसाद से संपूर्ण भ्रम बंधनों को तोड़ कर निरभय होयकरके जगत मे विचरते हैं अब सो तुमारा बंधन कौन और कैसा है चलो तो हम दलीस के पास चल करके देख लेते हैं ऐसे कथन करकर और अभय होयकर भक्ती के मद मे मत्त भये हूये कबीर भक्त सुखदायक और भक्त सहाय क भगवान को सुमरते हूये चले आये तहां साहके सनमुख आय कर अचल और निरसंक होयकर ना तो प्रणाम किया और ना कुछ कहा सुना मौंह धार करमानो [illegible]व वत स्थिर हो जाते भये ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ देखि सचिव जन वदन उचारे ॥ अरे अभक्त मेद मतिवारे ॥ साह दलीस विदत संसारा ॥ तुव न अधम कस कीन जुहारा ॥ इन कर भक्त संत समुदाई ॥ आवत द्वार नम्र सिर नाई ॥ होहि सकल कर जानत लोगू ॥ प्रजापाल जग वंदन जोगू ॥ तिन कर सुनत कथन जडताई ॥ बोल्यो जन कबीर मुसकाई ॥ को मे कवन साह तुम कौन्यो ॥ कवन प्रणाम कहत तुम जोन्यो ॥ पायप्र वर अनभव गुरदेवा ॥ एक ब्रह्म विय बीच नभेवा ॥ करहुं कवन इतउत रम्यो राम सब [illegible]ठामा ॥ अस अद्वैत वचन सुनि साहा ॥ करदं इ प्रणामा ॥

स्थल २६७

बोल्यो अनल कोप जनु दाहा॥ का फर कुफर कथन कस कीना॥ निज लघुताई परत नहीं चीना॥ साहिब बन्यो दरप रत मूढा॥ करत कथन कस अनभव गूढा॥ अबहिं मेद निकसत चतुराई॥ बोलि भूत दीन रजाई॥ तुव बाँट चरन कर न निज नाथा॥ सठ कर बाँधि बेग रज साथा॥ भ्रमन अगाध जनन जलजाई॥ दय अघात दुत देहु वहाई॥ भूत न गहित सासन अस साहू॥ दुत्यो बाँधि उदक गत धाहू॥ सुमरत कृस्न जनन हितकारी॥ भयो मक्त बंधन चुत बारी॥ विनु प्रयास रवि नंदनि तासा॥ वहिर वारि तट दीन निकासा॥ राम कृस्न मुख रटत कवीरा॥ चल्यो जात जमुना जल तीरा॥ भूतन विलोकि बेग ढिग साहा॥ जाय कृतो तव दन अस काहा॥ महाराज ह... चोर खिलारी॥ जानत इंद्र जाल विध सारी॥ दोहा॥ हमय दपि संजुत यतन जड़ कर चरन बंधाय॥ भवर भीम जमुना ढस्यो न स्यो तदपि तट धाय॥ २२॥

तब ... मंत्री जन अर्थात वजीर दिवान देख कर के कहने लगे कि अरे अभक्त मंदमती इह दिल्लीपत महा प्रतापी सब जगत मे प्रसिध अधम अैसे स्वामी को तैने क्यों नहीं प्रणाम बंदना करी इन के द्वार पर तो भक्त संत साध सब आय करके ही नमावते सीस नावते हैं मूढ इह तो सब कोई जानता है कि प्रजापाल जगत मे ... सदैव वंदन योग्य होते हैं इस प्रकार तिन का ... जड़ता अभिमान का महा ... कथन सुन कर कबीर दास जी मुसक्याय कर कहने लगे कि सुनो भाई कौन मे कौन साह ... कौन तुम और कौन प्रणाम है जिस

भक्त प्रधान के चरनोपर बारबार दंड प्रणाम करके अपने घरको चला आया तहां नगरके सबलोग बुलायकर आज्ञा सुनाय देता भया कि भाई इह भग वानके परम दृढ भक्त कबीर जो हैं सो मेरे अत से करके प्यारे हितकारी हैं तिनके साथ कदाचित कोई भूले करके भी वैर द्वेष करेगा सो निश्चयकरके मेरा शत्रु होगा और अधम मेरे हाथसे भली प्रकार दंड कलेश पावेगा ऐसे राजाकी आज्ञा सुनकर नगरके लोग नरनारी सब कपट द्वेष को त्यागकर साधूस रल चित होय करके कबीर जी का सेवन सतका र करने लगे तब एकसमय सुमती और धीरजका धाम कबीर घरको त्यागकर यात्रू लोगों के साथ मि लकर संत भक्तों के हृदय को आनंद देनेवाली सुंदर कृष्ण पुरी जो है तिसके दरसन को चलपरता भया ॥ २० ॥ चौपाई ॥ मथुरा देखि ललित मन भावन ॥ कियो हस्तना पुर पुनि आवन ॥ तहां सिकंदर नामक साहू ॥ विदत प्रताप तरनि जिमि ताहू ॥ जन कबीर तहि भक्त सुहावा ॥ तहि प्रभाव जब लोगन पावा ॥ दुरजन वदन साहसन जाई ॥ लागे भक्त द्वेष जड भाई ॥ महाराज लघु जाति कुविंदू ॥ बन्यो भक्त वैष्नव जग निंदू ॥ संत भेष धरि लोगन काहीं ॥ वंचित अधम त्रास तुव नाहीं ॥ साह सुनत दुरजन अस बानी ॥ पठे दूत दारुण रिस मानी ॥ जो न आव अस वदन प्रकासा ॥ तो तुव बांधि सुजन दूत तासा ॥ ल्यावहु मम सनमुख तम गेही ॥ देखहुं कवन भेख मत तेही ॥ सुनत न देश भूपत अस पाई ॥ भने कबीर तुरत ढिग आई ॥ चलदली स तोहि बोलि पठायो ॥ हमहु वेग मन धावत आयो ॥

नम्बर ६६८

नाने तिसको ततकाल जलसे ~~जलसे किनारे पर~~ निकाल कर बाहर किनारे पर डाल दिया तव राम कृष्ण राम कृष्ण उचारण करता हूआ कबीर आनंदसे जमुना के किनारे किनारे चला जाता है इस प्रकार तिसको बादसाह के चाकर देख कर आचरजके वश भये हूँ साहके आगे जाय कर कहने लगे कि महाराज इह कबीर तो कोई बड़ा चोर लिलारी देख पड़ता है और जड़ इंद्रजाल मंत्र तंत्र इत्यादि नाटक सब भली प्रकार जानता है नमने यद्यपि बहुत हीं यतन से हाथ पांउ बांधकर जमुना के बड़े भ्यानक भ्रमन वाले अगाध जल के बीच डाल दिया था तद्यपि वे तैसे हीं ज्यों का त्यों निकल कर जमुना के किनारे किनारे मंद मंद गती से आनंदपूर्वक चला जाता है प्रभु कुछ जान नहीं पड़ता कि कपटी ने कौन छल चरित्र किया है ॥२२॥ चौपाई ॥ तिन कर देष कथन सु असकाना ॥ साह सुनत सोचत विसमाना ॥ मन्यो प्रचंड अनल रचि ताहू ॥ करहु धरत धूरत कर दाहू ॥ भृत अनुसास लेत ततकाला ॥ कीन प्रचंड प्रबल तब ज्वाला ॥ साधु कपट गत भक्त कबीरा ॥ सुमरत कृष्ण हरन जन पीरा ॥ धावत धस्यो भृतन हंकारी ॥ बदन विविध दुरवचन उचारी ॥ त्याय महानल चंड मझारा ॥ रामभक्त दुरजन रतिहारा ॥ ताके होत बार वत ज्वाला ॥ जाके राम कृष्ण रखवाला ॥ देख्यो प्रात यमन जब आये ॥ जन कबीर हरि भक्त सुहाये ॥ बैठे मस्त ध्यान रत लागे ॥ कृष्ण सरोज चरन मन लागे ॥

दुरजन देखि साह सन जाई॥ भने नाथ पावक अ
थि काई॥ कौतुक कीन स्यंबन तेहा॥ बैठ्यो भस्म
सावधन देहा॥ सुनि दलीस दारुण रिस कीना॥
भृतन कठन सासन अस दीना॥ [illegible] मत्त ग
यंद वेग अब प्रेरो॥ कारहु विदलन वपुख जढ के
रो॥ भृतन लेत [illegible] अस सासन साहू॥ बाँध्यो
राम भक्त तरणताहू॥ करि कराल कर सनमुख
ठाँ[illegible]॥ प्रेरि वदन निज विविध प्रकारा॥ तब गजे
न्द्र कहे भक्त कबीरा॥ भा प्रतीत मृगराज सरीरा॥
उरपत धरत चरन नहिं आगे॥ चिकरत चल्यो
विकल गज भागे॥ तो लो पस्यो दृष्टि सब काहीं॥
भक्त कबीर रूप मृग साईं॥ भावन भेष पेषमृ
ग राजू॥ उठ्यो कंपि सब साह समाजू॥ अस अ
नंत दृग देखि प्रभाऊ॥ तजत द्वेष दुरमति नरना
हू॥ देहा॥ करि प्रणाम नम्रत चरन विनय की
न कर जोरि॥ सकई नजानि कृपायतन तुव
प्रभाव मति मोरि॥ निज जढतावस कीन
कछु कथन वचन दुरदीन॥ सो मुहि तमकु
कृपायतन जन अंसत निज चीन॥ यद्यपि
यमन निसरगते कीन कुमति अपमान॥ तद्यपि
चूक निवारणा तुव संत भक्त भगवान॥ २३॥ टीका॥
तब तिनका कथन सुनकर के साह हृदय मै अ
चरज मानकर बडे कोप से इह आज्ञा देता भया
[illegible] कि तुम महा प्रचंड अग्नी र चायकर इस
धूरत कपटी को ति सवि ले डाल करके भसम क
र देवो इस प्रकार [illegible] आज्ञा पायकर तिन मले

१०५७ २६६५

दुष्टों ने तुरत महा प्रबल अगनी को प्रचंड कर
दिया फिर सरल साधू निस कपट और राम भक्त
कबीर जो था तिस को कृस्न कृस्न सुमरते हूये
को दुष्टों ने कोप से आय कर के पकड़ लिया औ
र बड़े निरादर के दुर बचन बोल बोल कर त्याग
कर के तिस महा प्रचंड अगनी के बीच डाल
दिया अब देखिये कि अपनी वोर से तो मंद मले
छ भक्त प्रधान को भसम ही कर चुके परंतु जिस
के राम कृस्न रखवारे हों तिस के दाध करने को अ
गनी क्यों कर सामर्थ हो सकती थी वे तो तिस को
सीतल जल के समान होय गई जब प्राता काल
होते दुष्ट मलेछ आय कर के देखने लगे तो क्या
चमतकार पाया कि राम भक्त कबीर भग
वान के चरन कमलों के ध्यान मे लीन और प्रे
म मे मगन भये हूये आनंद पूर्वक तैसे ही सी
तल भसम के बीच बैठे हूये शोभा देते हैं तब
अचरज के बस भये हूये मलेछ फिर जाय कर
बादसाह को कहने लगे कि प्रजानाथ वेख
लिया तो अगनी के महा प्रभाव को अपने को
तुक से मिटाय हूये और शांती किये हूये तहां
भसम के बीच ही सावधान होय कर बैठा हू
आ है ऐसे तिन का कथन सुन कर लजित भ
या हूआ साह फिर परम कोप कर के आज्ञा
देता भया कि अब तुम वेग जाय कर महा
क्रूर और मत्त हसती जो हैं सो इस अधम पर
प्रेरो और तिन के दांतों से इस धूरत का शी

को तुम कहते हो. हम तो गुरु महाराज जी दिये हुये उत्तम अनुभव ज्ञान से एक अद्वैत ब्रह्म ही जान ते हैं किजिसविखे दूसरा कोई भेद नहीं है इहां ऊ हां सरव ठौर मे राम ही परिपूर्ण होय रहा है और चार चोर के विखे राम ही रमा हुआ है मे किस को दंड प्रणा म करूं ऐसे अद्वैत वचन सुन कर किजिसमे दू सरा नहीं एक ही ब्रह्म है साह तो कोप अग्नी के समान लाल होय कर कहने लगा कि अरे वि मुखे नास्तिक भेद उड़ ते ने क्या कथन किया है अधम तेरे को अपनी लघुता ● नीच जाती जो है सो जान नहीं पड़ती ~~परमेश्वर~~ हंकार के वश होय कर मूढ तू साहिव परमेश्वर वन गया और वड़ा भारी गूढ ज्ञान कथन करने ल ग गया हैं जढ देखते तेरी अबी सब चतुराई नि कल पड़ती है ऐसे कहता ही साह अपने नोकर चा करों को ● आज्ञा देता भया कि तुम इस मे दके हाथ पाऊं भली प्रकार कठिन वांध कर फिर लि जाय कर के जमुना के वड़े भ्रमन वाले ग हरे अगाधजल मे फेंक कर वहाय देवो तव चा करोंने साह की आज्ञा ● अनुसार ~~~~ हाथ पाऊं से तुरत वांध कर ● और निरदय होय कर भक्तप धान को जमुना के अगाध जल मे प्रवेश दे दिया ~~जिसके~~ नामा दास कहते हैं हे संतो जिस पुरष के जगधीश आप रखवारे हों तिस को संसार मे को न मार ने हारा है कृष्ण कृष्ण रटते हूये कवीर का जमुना के जल मे पड़ते ही वंधन जो था तुरत टूट गा या और यतन के विना सहजे ही सूरज पुत्री जमु

भक्त० ९७०

तन्माहीं कहिये॥२३॥ चौपाई॥ सुनि दलीस ग्रस क
थन कबीरा॥ बोले गिरा मधुर मृदु धीरा॥ संसृति उ
भय मान ग्रपमाना॥ गुरु प्रसाद मुहि एक समाना॥
राग द्वेष निंदादि बडाई॥ हमरे सदा एक सम राई॥
सुख दुख हान लाभ संसारा॥ जियन मरन ग्रविचार
बिचारा॥ नींपर ऊंच नीच हम काही॥ भासत ए
क ज्ञान वृति माहीं॥ कहि कर भयो मान ग्रपमाना॥
तुव कस वृथा लोभ उर ठाना॥ साह सुनत मान
स हरषाये॥ बंदि भक्त वर कीन बिदाये॥ सुमरत
कृष्ण हरन जन पीरा॥ ग्राय सदन निज भक्त
कबीरा॥ दिन दिन ग्रधिक भक्ति ग्रनुरागा॥ पद
सरोज मन वच दृढ लागा॥ कृष्ण सुमरहि भजन
गुण गाना॥ करत सदन कछु काल बिताना॥
समय एक सिव नगर निवासी॥ ● करत
भये तीकर ● हासी॥ ग्राज कबीर भक्त ग्राग
र॥ होहि बिभक्त रुचिर भंडारा॥ जहं तहं नगर
ग्राम सब चीने॥ दुज गण संतनि में चरण कीने॥
उत कबीर गवन्यो कहुं काजा॥ जुरयो ग्रजर
इत संत समाजा॥ सिष बिलोकि मानस ग्रकु
लाना॥ तब प्रभु भक्त वतस भगवाना॥ जन
कबीर धरि रूप सुहाये॥ भक्त टेक राखन हित
ग्राये॥ दोहा॥ ललित कोटि व्यंजन बिमल बि
रचत दीन सनेहु॥ ग्रद्भुत कौतुक करन हि
त ठाढि ग्रजर जन गेहु॥ सिष कहे धीर ज
दीन प्रभु तजहु वतस कदराई॥ ग्रब कीनेबि
नु ग्रसन ● ग्रतथि संत जन जाई॥ २४॥
टीका॥ इस प्रकार ~~कबीर जी~~ का कथन सुन
दिल्लीपत

कर दिलीपत जो हैं सो बडी मधुर और कोमल वा
णीं से कहने लगे कि हे प्रजापाल गुरु महारा
जकी कृपा प्रसाद से संसार में हमको मान अ
पमान राग द्वेष निंदा बडाई सब एक समान
है और सुख दुख हानि लाभ जीवन मरन
चार विचार अपना बिराना ऊंच नीच इत्या
दि जो हैं सो भी ज्ञान दृष्टी से सदा एक रूप ही
भासते है किसका अपमान भया तु
म पृथीनाथ वृथा ही दोष मानते हैं ऐसे
भक्तप्रधान की परहित और सुखके देने वाली
वाणी सुन करके दिलीपत परम आनंद को
प्राप्त होय गया और बारबार चरनो पर सीस धर
कर बडे आदिर सतकार से विदाय कर देत भया त
ब कुसल प्रभात मा को सुमरते हुये कवीर आनंद
पूर्वक अपने घर विखें चले आये तब ते
भगवान के चरन कमलों में प्रेम और
भक्ती का प्रभाव सो बढता जाने लगा ऐसे
जब भगवान कृपानिधान के भजन सुमरण और गु
णानुवाद गाते गाते कवीर का कुछ समय वतीत
होय गया तब कासीपुरी के द्वेषी लोग मिल
कर भक्त सुष्टि के साथ हासी करते भये तिन
जोंने क्या किया कि जहां तहां साध संत अत
थी ब्रह्मणों को निमंत्रण अर्थात नेउता प
ठाय दिया कि कलको कवीर के घर मैं बडा भारी
भंडारा होगा सब
संत ब्रह्मण कृपा करके तहां चरन धारियो और
भक्त उत्तम के घर को पवित्र करियो जहां

कबीर

अपनाबिराना

उनसे भिलोकी

दिलीपत

१८ जब प्रातःकाल होते कबीर कि [illegible] ती काजी के न मित्त कहीं बाहर चला गया तब [illegible] पीछे तिस के घर मे संत ब्रह्मणों का समाज नाना प्रकार का आय जुडता भया तहां तिस संत समाज को देख कर के कबीर का शिष्य जो था सो व्याकुल हो गया तब भक्तवत्सल और सहायक भगवान भक्त की टेक राखने के लिये तुरत कबीर का रूप धार कर तिस के घर मे चले आवते भये और आदरणीय स्थित भये हुये दीन सने ही भगवान अपने कौतुक से अनेक प्रकार के अमृत के समान दिव्य व्यंजन बनाय कर अद्भुत चरित्र करने के लिये कि कबीर के व्याकुल भये हुये शिष्य को धीरज देकर कहने लगे कि हे पुत्र अब कदराई को त्याग और सावधान हो देखना मत कोई अतथी ब्राह्मण साध संत मेरे घर से भोजन पाय विना भूखा चला जावे सब आनंद पूर्वक भोजन पाय कर जावें ॥ २४ ॥ चौपाई ॥
अस कहि कृपासिंधु भगवाना ॥ भक्त अजर नि जो कौतुक नाना ॥ पाक पदार्थ सरस सुखदाई ॥ सब कहं सादिर दीन जिमाई ॥ अतथि संत द्विज वृंद सुहाये ॥ करि प्रणाम पुनि कीन विदाये ॥ चले सकल निज निज अस्थानी ॥ धन्य कबीर धन्य तुव करनी ॥ देख हु भक्ति विवस भगवाना ॥ तजि वैकुंठ ललित निज धामा ॥ भक्त अजर मेदनि प्रभ पाई ॥ कीन चरित अद्भुत प्रभु आई ॥ उदय कीन जिमि संसृति तरनी ॥ ॥

ीर विद लन करवाय डालो अर्थात चिरवाय डालो
नव साह की आज्ञा से तिन पापियों ने फिर कबीर
भक्त को बांध लिया और निरदय होय कर
त्याय कर के मस्त मत्त हसतियों के आगे डाल दि
या और बारबार बोल कर तिन को भक्त प्रधान पर
प्रेरने लगवे जब तिन के प्रेरे हूये हसती मारने
को आगे बढे तो रामभक्त कबीर तिन को महा भया
नक मृगराज जो सिंह है सो प्रतीत होता
भया तिस के भय से आगे चरन नहीं धर सके त्रा
स के वस बडा चिक्कार शब्द करते हूये व्याकुल
होयकर सब पीछे को भाग गये इतने मे सब लोगों
को कबीर जी सिंह रूप ही देख पडते भये ऐसे महा
भय कर रूप को देख करके साह का जितना भ्रमा
जथा सो सब दूर पर को पड उठा इस प्रकार राम
भक्त कबीर का अनंत प्रभाव देख कर बादसाह
हृदय की दुरमती और द्वेष को त्याग कर दीन
होय कर के चरनो पर गिर पडा फिर हाथ जोड कर
नम्र बानी से बिनती करने लगा कि हे संतकृ
पाल इन मेरी दीन की जड बुद्धी जो है सो नाथ
तुमारे अनंत प्रभाव को जान नहीं सकी मैने अ
पनी जडता के वश होयकर प्रभू तुम को कुछ
अनुचित वचन बोल चुका हूं सो हे दया
श्री की निधी हे उदार मेरे अत्यंत मूढ मती जानक
र आप कृपा कर के क्षमा करिये नाथ यद्यपि
मलेछ सुभाव से इस मंदमती ने आपका अपमा
न ही किया है तद्यपि हे संत भगवान तुम सदैव
चूक निवारण और क्षमा करने के योग्य हो मेरे पर

पृ० ५७२

ब्रह्मण भोजन पाय कर प्रसन्न होय गये तब फिर प्रणा
म कर कर आनंद से सब विदाय कर दिये सो धन्य कबी
र और धन्य कबीर की करनी इस प्रकार सुजस गाते हुये
अपने अपने सब चले जाते भये नाभादास जी कहते हैं
कि हे संतो देखिये भगवान कृपान ने भक्ती के वश होय कर
अपने वैकुंठ धाम को त्यागा और भक्त की अंउ-णभू
मी मे आय कर बड़ा श्रम पाय कर कैसा अद्भुत कौतु
क किया है तिस की करनी और सुजस प्रभाव को
सूरज के समान संसार मे उदय कर दिया है
तो ते इ हरा म भक्ती जो है सो जगत मैं सुखदायक और
सरब अरथों के सिद्ध करने वाली है भक्तीमान पुरुष
को संसार मे कुछ दुरलभ नहीं है भगवान की कृपा से
सब सुगम और सहज है इतने मे जब कबीर आप ने
घर मे आये तब भगवान तुरत अंतरध्यान अर्थात
होय गये तहां घर मे यज्ञ के समान उतसाह देख कर
कबीर आपने शिष्य से पूछने लगे कि हे पुत्र आज
घर की शोभा कुछ मंगल वाली देख परती
है सत्य कहो इहां कौन आनंद उतसव होय चुका है
मै देख कर बड़े अचरज को प्रापत होय रहा हूं तब
सुन कर के शिष्य कहने लगा कि हे नाथ आप
को इह कौन भ्रम होय गया है तुम तो नाना प्रकार
के भोजन रचाय कर अभी अपने हाथ से अनेक
अतथी संत ब्रह्मण जिमाय कर विदाय किये हैं
और मन के हरने वाला बड़ा अद्भुत कौतुक किया है
अब इह कैसे भ्रामिक वचन उचारण करते हो कि घ
र मै कौन मंगल उतसाह भया है नाथ तुमारे इस कथन
से मै भी बड़े अचरज को प्रापत होय गया हूं तब कबीर
हृदय मे जान गये कि अहो इह चरित्र तो रे हरि प्रभू ने
किया है आज जगत मै इस शिष्य के बड़े पूरण भाग हैं

कि जिसने संपूर्ण लोको के सुखदायक और पालक भगवान नेत्र भरकर देखलिये हैं तिसपर यह मेरा शरीर भी धन्य है कि जिसको रूप धारण कर भक्त हितकारी भगवान मेरे घर मे चले आये हैं इस प्रकार हृदय मे विचार कर और भेद को छिपाय कर कबीर अपने शिष्य को बड़ी मधुर वाणी से कहने लगे कि हे पुत्र मैं अत से कर के भूखो और प्यासा व्याकुल चित जो हो रहा हूं इस तें मेरे को सत्य करके भ्रम होय गया है क्यों कि भूख प्यास के मारे बुद्धी जो है सो स्थिर नहीं रहती है पुरष कुछ और का और ही बकने लग जाता है तो ते अब हे पुत्र तूं शीघ्र घर मेरे को कुछ भोजन ल्याय कर के दे जो मैं तिसको खाय कर के स्वस्थ चित होऊं और अपने आप की सुरत संभालूं ऐसे गुरू जी के मुख से वचन सुनकर दीन बंधु भगवान का कौतुक हेरता हुआ अमृत के समान सुंदर रस वाला कुछ भोजन बचा हुआ जो था सो हरष पूर्वक भक्ती प्रीती से ल्याय कर गुरू जी के आगे राख देता भया॥ १४॥ चौपाई॥ पाय कबीर कृतार्थ भैयो॥ भाखत आज जनम फल लैयो॥ तब दुरजन संतजन समुदाई॥ लागे करन सब सुजस बडाई॥ तुव भगवान भक्त दृढ चीन्यो॥ जिहि अनेत दुज संतन दीन्यो॥ खटरस असन अमिय सम नाना॥ तुम समान जग तुम हु सुजाना॥ सदन तोर बिनु सम्मति पाये॥ बिप्र बृंद हम बोलि पठाये॥ यद्यपि कीन बिपुल अपराधू॥ तद्यपि तुम हु भक्त तुव साधू॥ सुनि कबीर अस बदन उचारा॥ धन्य तुमार जनम संसारा॥ जिहि उद्योग सदन मम दीना॥ अगनित दुजन अमल असि कीना॥ मैं जान्यो उपकार तुमारा॥ दीन सुजस मुहि संसृति भारा॥ आज तुमहुं जग बंदन जोगू॥ दरसे जिनहिं हरन भव

९९१

सोगू॥ सुनि कबीर कर कथन सुहावा॥ दुरजन सुजन सबन सुख पावा॥ विविध भांति मुख अस तुति गाये॥ निज निज सदन हरष जुत आये॥ धारि चरन उर त्रिभुवन राजे॥ जन कबीर निज भवन विराजे॥ कृस्न सुमरीं करत कल गाना॥ अस प्रकार कछु काल सराना॥ एक दिवस तहि सदन सुहाई॥ कला प्रवीन वार त्रिय आई॥ नृत्य गीत गुन रूप रसीली॥ मनहुं मानतिय मदन कटीली॥ करि प्रनाम नम्रत कर जोरी॥ करत वदन कछु विनय न थोरी॥ महाराज मानस रुचि मोरे॥ कछु दिन वसहुं सदन सुभ तोरे॥ गीत नृत्त नित नवल सुनावहुं॥ करि विलास बहु भांति रिझावहुं॥ ता कर गिरा सुनत प्रिय जी की॥ देखि रूप लावन्यत नीके॥ दोहा॥ मन्यो ललित मृग लोचनी पिकवेनी मुहिं नाहिं॥ नृत्य विलासन गीत रति अति केलीव इन माहिं॥ ११॥ टीका॥ तब कबीर तिस भोजन को पायकर अपने आप को कृतार्थ मानता भया कि आज जगत मे मेरा जनम सफल होय गया है तहां दुरजं और सज्जन जो थे सो सब कबीर जी की अनेक प्रकार सुजस और बडाई करने लगे कि तुम तो भगवान के सत्य कर के दृढ भक्त हो तुमारा प्रभाव कहां लौं कथन किया जावे कि जिनो ने अनंत हीं संत ब्रह्मणों को षट रस के सहित अम्रत के समान नाना प्रकार के व्यंजन भोजन जिमाये है हे भक्त प्रधान तुमारे समान जगत मे तुम हीं हो और दूसरा कोई नहीं है देखो हम ने तुमारी सम्मती के बिना हीं ईहां तुमारे घर मै अनगिणत साध ब्रह्मणों को भोजन के लिये बुला ~~लिया~~ य लिया सो इह हमारा अत्यंत अपराध है तुम संत उदार और चूक निवार हो हमारे इस महा अपराध को दया कर के

सुनत सुजस भक्त निज करनी॥ तोते राम भक्ति जग भाई॥ सरव अरथ साधन सुखदाई॥ भक्ति पुरष कहे संसृति माहीं॥ सकल सुलभ दुरलभ कछु नाहीं॥
आये जब कवीर निज गेहू॥ अंतर ध्यान मे दीन सनेहू॥
कौतुक देखि सदन उतसाहा॥ सिष कहे गोलि वदन अरसाहा॥ आज भवन लावन्यत सारी॥ जानि परत कछु मंगल चारी॥ वीत्यो कवन मोद सुत गेहा॥ करहु कथन अचरज कछु एहा॥ सुनत वदन सिष वचन उचारे॥ नाथ कवन भ्रम भयो तुमारे॥ अवहिं अनेक पाक विरचाये॥ विप्र वृंद तुव दीन जिमाये॥ कौन ललित कौतुक मन हरना॥ अव कस भ्रमि कवचन उचरना॥ सुनत कवीर जानि [illegible] जियलीना॥ इह कौतुक मोरे प्रभु कीना॥ धन धन उदय भाग सिष एही॥ जास दृगन भरि दीन सनेही॥ देखे सकल लोक सुखदाता॥ तापर धन्य मोर जग [illegible]ता॥ जहि अन तूप वनत [illegible] विकाये॥ वतसल भक्त भवन मम आये॥ अस विचारि उर मरम दुरावा॥ सिषहिं वदन मृदु व[illegible]चन अलावा॥ तुध्यत सिषत विपत चितकोरे॥ भयो तात निश्चय भ्रम मोरे॥ अव सुन देहु पाक कछु ल्याई॥ तो मे होहु सुस्य चित पाई॥ गुरु मुख सुनत वचन ~~[illegible]~~ ~~[illegible] दोहा~~॥ ततकाला॥ सिष विरचत कौतुक जदुपाला॥ दोहा॥ असन सरस सुदृश सुधा जे कछु शेष रहान॥ गुरु पें आवा हरषि जुत प्रीति भक्ति सनमान॥२४॥ टीका॥ ऐसे शिष्य को समुझाय कर कृपासिंधू भगवान भक्त के अंगन मे अपने कौतुक कहे नाना प्रकार का अम्रत के समान भोजन जो [illegible] रचा है ब्राह्मणो सो सब को वडी प्रीति सनमान से जिमाय देते भये जब अंत थी साध

सू २१४

ओमादेखकर कबीर कहने लगे कि हे मृगनयनी हे कोकलावयनी सुंदरी मै अपनी कहता हूं किमे रे को इस नृत्य और गायन मे कुछ प्रीती रुची नहीं तू सत्य कर के जान जो मैं इन बातों मे कलीब अर्थात नपुं सक हू ॥ २८ ॥ चौपाई ॥ पै तुव हितवि चारि मन माहीं ॥ करहुं कथन भामनि तुहि काहीं ॥ सदन मोर मृदु मूरति चारू ॥ श्री हरि हरन भीत से रारू ॥ नृत्य गीत ~~सुखद~~ रुचिरीत सुहावन ॥ प्र भु पैं जाय रुचिर मन भावन ॥ करि करि ललित भाव चतुराई ॥ दीननाथ कहे लेहु रिझाई ॥ होउ वि करि भव वारध पारा ॥ अस कबीर जब वदन उचारा ॥ सो आनंद पूर्वक अनुरागी ॥ तहां नि वास करन निज लागी ॥ लेत ललित कर हरषत वीना ॥ राम सरोज चरन मन लीना ॥ निरतत न वल भाव विधि नाना ॥ गान मधुर स्वर तान तराना ॥ दीन दयाल कर भवन सुहावा ॥ रहत नवल नित उत सब छावा ॥ ~~निमुनन~~ करत सुखस त्रिभुवन धनि सेवा ॥ तास अमिय रुचिर नि ज लेवा ॥ एक दिवस निकसानि अकेली ॥ वधूवार कानन अलबेली ॥ देखत सवन नि पुण ततकाला ॥ भई लुपत द्रुत रूप र साला ॥ लोकविलोकि चरित विसमाये ॥ क हत मरम कछु जानि नपाये ॥ किधो देव कि नर तिय एहू ॥ आई जन कबीर कर गेहू ॥ अ स प्रकार मानस विसमाये ॥ निजनिज सदन लोग सब आये ॥ तब कबीर कछु अवसर पा ये ॥ बोलि निकर सिष नगर पठाये ॥

सब सन करउ कथन अस जाई॥ मनी करन तीरथ तट भाई॥ आज कबीर जठिराना॥ करहिं ललित निज लोक पयाना॥ गुरु सासन लेत सिष धाये॥ दीन सकल पुर मरम जनाये॥ अचरज सुनत लोग सब आये॥ तब कबीर अस बदन अलाये॥ मै तो गंग पार अब जाये॥ इह पदि हरउं जठिर निज काये॥ जो जग सत्य भक्ति भगवाना॥ तरन विकट भवसिंधु म हाना॥ दोहा॥ तो यद्यपि इह मगध महि संसति रो रव दाई॥ तद्यपि भक्ति प्रसाद मै होहु मुक्त मृत पाइ॥ २७॥ टीका॥ परंतू हे सुश्रीले तेरा हित विचार क रके तेरे प्रती कुछ कहता हू कि मेरे घर मै श्रीपती भगवानकी मनोहर मूरती जो है तिसके आगे तू जायकर नाना भाव और चतुराई से सुंदरम नभावता नृत्य गायन करकर अपने गुन प्रभाव से दीनानाथ को रिझाय ले ऐसे भक्तहितकारी भगवान को प्रसन्न करकर इस महा विकट संसार समुद्र से सहजेही पार हो इस प्र कार जब कबीर जी ने प्रसन्न होयकर कहा तब प्रेम के वश भई हूई वेस्या आनंदपूर्वक तहां निवास करने लगी और नाथमै सुंदरी वीना धार कर भगवान के चरन कमलों चित्त जोडे हूये नये नये भाव से नृत्य और म धुर मधुर स्वर से गान तान आलापन करकर दी नद्याल को रिझावती रहती तिसतें भगवान के भवनमै दिनदिन नित्य नयाही उतसव मेला बना रहता था ऐसे तीन भवन के नायक की सेवा

५५८ ३७५

करती करती सो वे स्या अपने मनवांछित
अर्थ को सिद्ध कर लेती भई एक दिन वेवश्या
गन चारसे अकेली ही निकर ~~कहीं चसाके~~
~~[illegible]~~ लोगों के देखते देखते बन
के मारग को चली जाती थी तब ऐसा अदभुत
चमतकार भया कि वें सबके देखते तहां हीं
तुरत लुपत होय गई इस कौतुक को देखकर
सब लोग अचरज के वश होय गये और परस्पर
कहने लगे कि भाई इन चरित्र और भेद हमको
कुछ जान नहीं पड़ा है क्या जाने इनकोई देव
कि अथवा किंनर स्त्री आकाश से पृथ्वी तल पर
कबीर के घर में आई हुई थी इस प्रकार सब लो
ग अचरच के वश भये हुये अपने अपने घरों
को चले आये तब कबीर ने कुछ समय पाय
कर अपने शिष्यों को समुझाय कर नगर में
भेज दिया कि तुम सब को सुनाय देवो हे भाई
शरीर कर के वृद्ध भया हुआ जो कबीर है सो
आज ~~[illegible]~~ तिस वृद्धशरीर को छोड़ कर अपने
लोक को चला जावेगा जो किसी ने दरसन
मेला करना है तो चले आवो ऐसे गुरुजी
की आज्ञा पाय कर शिष्यों ने जहां तहां नगर
में इस भेद सब को सुनाय दिया तब लोग बड़ा
अचरज मान कर सब धावते चले आये ति
न को देख कर कबीर कहने लगे कि भाई मैं तो
गंगा के पार जाय करके आज इस वृद्धशरी
र को त्यागूंगा जो जगत में इस महा विकट
संसार समुद्र से पार उतारने वाली भगवान

तमा करो ऐसे तिनका कथन सुनकर कवीर कहने
गा कि हे भाई तुम धन्य हो और धन्य जगत मै तुम्हा
रा जनम है कि जिनके उद्यम से मेरे दीन के घर मै
अनेकहीं अतथीसंत ब्रह्मनों ने भोजन पाया है
हे हितकारी जनो तुमने तो मेरे पर अत्यंत ही उपका
र किया है और जगत मे मेरे को वड़ा भारी सुजस दिया
है आज तुम तो संसार मे वंदना करने के योग्य हो कि
जिन्हों ने सरव कलेशों के हरने वाले तीन लोक के ना
यक का दरसन पाय लिया है इस प्रकार कवीर का
कथन सुनकर दुरजन और सज्जन जो थे सो सब
परम सुख को प्रापत होय कर मुख से अनेक प्रकार
शलाघा वड़ाई करते हुये आनंद पूर्वक अपने अ
पने घरों को चले आये और इहां भवनो के पती भ
गवान के चरन कमलों को हृदय मै धार कर कवी
र दास जी अपने भवन मे विराजमान रहते भये
तहां कृस्न प्रमातमा को सुमरते भजते जव कुछ
काल वतीत होय गया तव एक दिन तिन के घर
मै गुण कला प्रवीन नृत्य गायन मै वड़ी रसीली
और रूप मै रती जो कामदेव की स्त्री है तिस को ल
ज्जा देने वाली एक वेस्या आय प्रापत भई सो वह
दीन भाव से प्रणाम करके हाथ जोड़ कर विनती क
रने लगी कि हे स्वामी जी मेरे हृदय मे अतसे कर के
रह रही अभिलाषा है कि कुछ दिन पर्यंत आ
पके सुंदर घर मै निवास करके नाथ तुम को नित्य
नया नृत्य और नित्य नया गायन जो है सो सुनाऊं
और ~~कृपानि~~ अपने गुण प्रभाव से कृपानिधान
तुम को भली प्रकार रिझाऊं ऐसे तिस की वड़ी
मधुर प्यारी वाणी सुनकर और रूप की मनोहर

१४८ २९६

भगवान॥ को नकरहिं ते सार सुनावा॥ कानन शवरि विदुर फल पावा॥ अधम गृद्ध खग आमुख अहारी॥ नीच निखाध कार शियतारी॥ आन किरात कौल वन चासो॥ चरम कार रविदास उवासो॥ दोहा॥ नहिं जानत कहु ग्याय तन अधम ऊच संसार॥ भक्ति प्रेम प्रभु कहे प्रिये परिहरि चार विचार॥ सरव सिद्धि प्रद कलपतर सरस भक्ति भगवान॥ ताते परिहरि भक्ति अस भजिय न सेव तिआन॥ २८॥ टीका॥ फिर कहता है कि मैं मलेछ जाती करके चारो वोर प्रसिद्ध हूं और करम मेरा वहुत रहा इन शरीर का संसकार जो है सो कैसे होवे इसतें मे हृदय मे विचार कर एही सिद्ध कीया कि अव भूत जो तत्त हैं सो तत्तों मे लीन ~~कर~~ करकर ~~के~~ संसकार ते रहित हो जाऊं और निरगुण ब्रह्म के साथ जोती जुड़ाय कर निरन्तर कर के निरमल पद ~~मे~~ विखें जाय समाऊं इस अद्भुत को सुन कर ~~के~~ लोग ~~अ~~ अचरज के वश भये हुये भक्त प्रधान को चरित्र ~~को~~ देखने के लिये सब चले आवते भये जैसे जब वड़ी भीर मार के सहित भक्त कवीर जी तहां आय गये तव शरीर पंचवस्त्र ओढ कर और सोय कर अपनी जोग की जुक्ति जो है ~~सो~~ साधने लगे तिस समय लोगों को सुनाय दिया कि भाई तुम दोघडी के पीछे आय कर मेरे शरी को देखना तव तुम को जो कुछ भगवान की माया होगी सो जान परेगी इस प्रकार जव दो घडी वतीत होय गई तव लोगों का प्रेरा हुआ एक तिन का शिष्य जोथा सो पास चला आया और संकोच

से दुरलता हुआ जबनाथ सें वस्त्र को उठाय कर देख ने लगा तो क्या देखे ~~[illegible]~~ ता ने कि खाली व स्त्र ही पड़ा है गुरु जी का शरीर तहां नहीं है इस अ दभुत कौतुक को देख कर लोग सब अचरज को प्राप्त होते हुये ~~[illegible]~~ दांतो के तले जिह्वा को दबाय कर फिर साधू साधू श ब्द को उचारण करने लग जाते भये और कहते भये कि आज संसार मे सरब भक्तों विखें प्रधान प्रथम गिणती वाले सत्य कर के कबीर ही पाये हैं इस प्रका र भक्त शृष्ट के गुण गण और सुजस वडाई गाय न करते हुये लोग सब अपने अपने घरों को च ले गये ऐसे कबीर जी का बड़ा अदभुत ~~[illegible]~~ मन के मोहित करने वाला चरित्र और भक्ती का प्रभाव जो है तिस के कथन करने को कौन सामर्थ हो सकता है देखिये कहां कुविंद अर्थात नीच जुलाहे के घर मे तिस का जनम और कहां जग त मे मुनी और जोगी जनो को दुरल गती जो है तिस को प्राप्त होना ऐसे तो इह तो केवल भक्ती का ही प्रभाव है इस भक्ती के वश होय कर भग वान संसार मे क्या नहीं करते हैं सब लोगों मे प्रसिद्ध है कि बणविखे शबरी भीलनी के फ ल खाये और बिदुर का साग भी पाया वे अधम गृद्ध पंछी कि जो नित्य मांस के ही खाने वाला था सो तारा नीच निखाध और गनका ~~[illegible]~~ इत्या दि का भी उद्धार किया और अनेक कोल किरा त भील औ बणमे विचरने वाले थे कृपासिंधू ने सब को पार उतार दिया रविदास चमार और अजामिल आदियों को भी अपने परमधाम

~~१२५४~~ ५९९

~~अविचारी लोग अधिकारी किया~~ मैं निवास देकर से पूरी जगत में उजागर किया भगवान कृपानिधान जो हैं सो संसार में चार विचार ऊंच नीच कोई नहीं जानते हैं तिन को तो केवल प्रेम और भक्ती ही प्यारी है दीनानाथ निरन्तर कर के भक्ती पर हीं रीझते हैं ~~तातें~~ इह भक्ती जो है सो संसार में कल्प वृक्ष के समान सब ~~म~~ अर्थों के सिद्ध करने वाली है ताते और सब साधना को त्याग कर हितचित से केवल भक्ती को हीं आधार करना चाहिये ॥ २८ ॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महात्मे भाषा टीकायां कबीर चरित वरनोने नाम सरगः

की भक्ती सत्य करकेहै तो यद्यपि इहमगध
भूमी संसारमे नरकके देनेवालीहै तद्यपिभक्ती
के प्रसाद मैं शरीरकोत्यागकर अवश्य मोक्ष
कोप्रापत होजाऊंगा॥१२ चौपाई॥ जातिमले
छविदत चहु वोरा॥ रह्योकरम सुभवै सव
मोरा॥ होवसि संसकार कसदेहा॥ याते हृदय
गुणत निज एहा॥ करहुभूत निजभूतन
लीना॥ संसकार गत होहु प्रवीना॥ अगुण
ब्रह्म सनजोति जुडाई॥ लेहु विमल संततपद
पाई॥ अदभुत सुनत लोग विसमाये॥ भक्त चरित दे
खन हित आये॥ भूरि भीर संजुत मति धीरा॥ तहां आ
यजव भक्त कवीरा॥ सोय करत वपु वसन अछा
दिन॥ लागे जुक्त जोग निज साधन॥ लोगन सन
अस कहा वुझाई॥ जुगल देउ पाछिल तव आई॥ कर
हु मोर अविलोकन काया॥ जानि परहिं कछु भगवत
माया॥ जुगल देउ अस जवै विलाये॥ तव सो
मीप एकसिष आये॥ संकुचित वसन वपुष गु
ह केरा॥ करन निवारि दृगन जव हेरा॥ कछु पा
सो वसन विनु देहा॥ देखि चरित सव अदभुत
एहा॥ चकित रसन नर दसन दवाये॥ साधु सा
धु सव वदन अलाये॥ अहो भक्त सिर मोर सुहा
ये॥ आज कवीर भक्त जग आये॥ सुभ्र सुजस गु
ण गण मुख गाते॥ चले लोक निजनिज विसमा
ते॥ इह कवीर कर अदभुत सोहा॥ चरित वचित्र
विमँ मन मोहा॥ को सामर्थ कथन कर एहा॥ कहं
कुविंद जनम कुल तेहा॥ कहां आगम मुनि जोगि
न काहीं॥ लीन ललित गति संस्रुति माहीं॥ भ
क्ति प्रभाव विदत इह जाना॥ देखहु भक्ति विवस

सब अभिमत तोरा॥ अस प्रकार निसि सपन बिलोका॥ उठ्यो प्रात भूपति गत शोका॥ दोहा॥ करि सनान निजनित्य कृत भगवति पूजन साज॥ मंडप रंग उमंग जुत राजन राजविराज॥ १॥ टीका॥ अब और बड़ा अद्भुत और सुंदर सुख के देनेवाला पीपा राजाकी भक्तीका महातम जोहै सो कथन करताहूं दिल्लीके उत्तर दिसाकी वोर एक नागर नामकरके बड़ा मनोहर ग्राम होताभया तहां धरमधीर और सुमती प्रवीन महां सूर वीर पीपा नाम करके राजा होताभया सो मन वचन काया करके श्रीदेवीजीका बड़ा भक्तीमान दृढ़ सेवक हो ~~कामना~~ यकर रात्रीदिन नित्य भवानी केही भजन सुमर्ण और पूजनमें लीन रहताथा देवताउंकी संसारमें सदा रहरीती चली आईहै कि जो कोई तिनको कामना के सहित भजताहै तो वे संसारमें तिसके हृदयकी सब कामना पूरण करतेहैं और जो कोई निसकाम होयकर तिनकी आराधना करताहै तिसको ते से हीं मुनी जोगी जनोको दुरलभ गती जोहै सो देतेहैं ऐसे पीपा नरेस जोहै सो भगवतीकी निसकाम भक्तीमें निरन्तर करके लीनथा तब भवानी तिसको निसकाम भक्तीके सहित देखकर प्रसन्न होयकरके सुंदर ज्ञान ध्यान और निरमल विवेक वैराग जोहै सो देती भई ऐसे परमार्थ पदको पायकर पीपा ~~कामना~~ गृहस्थके बंधनको तोड़कर धन धाम राज स्त्री पुत्र इत्यादि सब सुखको अनित्य जानकरके हृदयमें विचार करने लगा कि अब लक्ष्मीके नाथ जगतपालक भगवानका मेरे कोनेत्रोंके सुख देनेवाला दिव्य दरसन कैसे प्रापत हो इस प्रकार चितन करकर जगत

जननी भवानी का हृदय मे सुमर्ण करने लगा तव
संसार का भय दूर करने वाली महामाई भगवती अ
पने भक्त के मनोरथ को जान कर तिस की माता का
रूप धार कर स्वपने मे प्रबोध करने लगी अर्थात
समुझावने लगी कि हे राजन तू मेरा वचन सत्य क
र के श्रवण कर कि कली काल विखे जगत मे भग
वान का दरसन होना वड़ा दुरलभ है परन्तु तुमारी
दृढ भक्ती देख कर के हे व्रतधारी भगवान के रूप स
मान हीं तुमारे नेत्रों के सनमुख होय कर
तेरी मन वांछित कामना को सफल करेगा
ऐसे रात्री के समय स्वपन देख कर प्रातःकाल होते
राजा उठा और स्वपन का सुमर्ण कर के शोक से
नवृत्य होय कर परम आनंद को प्राप्त होय ग
या सनान कर के अपना स
व नित्य तव जो है सो किया फिर भक्ती सनमान से भ
गवती का पूजन कर कर राजसिंघासन पर जाय
कर विराजमान होय गया ॥२॥ चौपाई ॥ तहि अवसर
नृप सभा सुहाये ॥ रामानंद सेवक सिष आये ॥ तिन
कहें देखि भूप हरषाना ॥ कहि मृदु वचन कीन
सनमाना ॥ विमल दिव्य भोजन वनवाई ॥ सानु
कूल नरनाथ जिमाई ॥ भाष्यो बहुरि जुगल कर जो
री ॥ सुनहो विनय संत जन मोरी ॥ रामानंद वि
दत गुरदेवा ॥ तिन कर चरन कमल कल सेवा ॥ सं
त जोग मोरे कस होई ॥ करहु उपाय कथन तु व
सोई ॥ जहि विधि लेहुं ललित उपदेसू ॥ होहुं पा
र संसार नदेसू ॥ सिष अस सुनत कथन नरराऊ ॥
बोले वदन वचन सुखदाऊ ॥ धन्य भाग तोरे
नरराई ॥ जां कर हृदय सुमति अस आई ॥ सहज
सुलभ दुरलभ केहुं नाहीं ॥ चलहु वेग समीप र

पुर माहीं॥ दीनदयाल गुरुदेव सुहावा॥ तोहि उपदेस करहिं मन भावा॥ करि कछु दिवस बहुरि सिव काजू॥ लेहु ग्रमिषुरु चिर निज पाजू॥ राउ सुनत मानस सुख माना॥ बोल्यो वचन जुक्त जुग पाना॥ ग्रव तो रह्यो दिवस कछु थोरा॥ होवहि चलन प्रात प्रभु मोरा॥ ग्रस कहि तिनहिं देत धन दाना॥ किये बिदाय नृपति सनमाना॥ बोलि प्रात निज सचिव सुजाना॥ कीन वृतांत कथन कछु ग्राना॥ सचिव ग्राज निसि तिरि सन मोरा॥ भयो सुपन भारत ग्रति घोरा॥ भूधर प्रवल तार मुहि दीना॥ तास निवरण यतन ग्रस चीना॥ कासी जाय करउं कछु दाना॥ बोलि निपुण पंडित विदाना॥ ग्रस कहि प्रात तरघ उरका ये॥ भूपगावन करि सिवपुरि ग्राये॥ संजुत भृत समाज मुनि द्वारा॥ किये धरा धर श्री सगुहारा॥ गुरु पें जाय सिषन ततकाला॥ कीन ग्रागमन कथन नरपाला॥ दोहा॥ तव रामानंद सुनत ग्रस सिषन सिखावन दीन॥ मो पें लावन उचित नहि राज चिन्ह गत चीन॥ टीका॥ तव तिस समय राजा की सभा विखे रामानंद जी के शिष्य ग्राय प्रापत भये तिन को देखकर राजा वडा प्रसन्न हुआ ग्रौर विनती प्रणाम करकर ग्रनेक प्रकार का ग्रादिर सतकार किया ग्रौर सुंदर दिव्य भोजन वनवाय कर प्रीती भक्ती से जिमाये फिर हाथ जोड कर कोमल वाणी सें विनती करने लगा कि हे संतो मेरे हृदय मे गुरू रामानंद जी के चरन कमलों के सेवन करने की प्रीत ही उपजी हे सो तुम कृपा करके मेरे को उपाय कथन करो कि जिस तें मे

अथ पीपा चरित

दोहा॥ अब अदभुत सुंदर सुखद भक्तिभक्तातम ज्ञान॥ पीपा नृपकर कथन कल करहु भक्तिवरदान॥ चौपाई॥ दिस्सी दिसा उत्र मनहारू॥ नागर नाम ग्राम इक चारू॥ तहं नरिंद्र धरमरत वीरा॥ पीपा नाम विदत मतिधीरा॥ भगवति सेवक परम प्रवीना॥ मन वच करम भक्तिदृढ लीना॥ देवि भजन पूजन अनुरागा॥ संतत निरत भूप वडभागा॥ देवन रीति परम पर एहू॥ जेजन भजहिं कामजुत तेहू॥ तो कर अर्थ रुचिर संसारा॥ सफल करत कछु लाहि न वारा॥ अरु निसकाम भजत नर जेहू॥ जोगी जनन दुरलभ गति तेहू॥ देहिं देव निज मन अनुकूला॥ सो पीपा नृप सुकृति मूला॥ भगवति भक्ति निरत निसकामा॥ अस जग जननि देखि अभिरामा॥ तो के दीन ललित जुत रागा॥ ज्ञान ध्यान कलवि मल विरागा॥ छितपत पाय अमल पद सोई॥ गेह गृहस्थ वंधन च्युत होई॥ जानि अनित्य राज सुतदारा॥ त्याग करन अस हृदय विचारा॥ तुहि कस रमानाथ जनत्राता॥ होहिं दृगन दरसन सुखदाता॥ अस गुनि देवि जननि जग काली॥ लाग सुमती भूप मनमाहीं॥ तव सेवति भय हरन भवानी॥ भक्त मनोरथ निज उर जानी॥ धरि सरूप तहि मातु सुहावा॥ मन्यो वचन सपने मन भावा॥ सुनहु सत्य तव भूप सुजाना॥ दुरलभ दरस विष्नु भगवाना॥ पै तुमार दृढ भक्ति निहारी॥ हरि सरूप सदृश्य व्रतधारी॥ होत दृष्टि गोचर चित चोरा॥ करहिं सफल

कथन करकर प्राता काल होते राजा स्नानेद पूर्वक
घरसे चल पड़ा और मारग को नवृत्य करकर का
सी पुरी विखें आय प्रापत भया तब अपने सब से
वकों के समाज सहित गुरू रामानंद जी के द्वारे
पर आय कर पृथवी पर माथा धर कर दीन भाव से
प्रणाम किया ऐसे राजा का आवना देख कर शिष्यों
ने तुरत जाय कर गुरू जी के पास सब वृतांत सुना
य दिया कि महाराज पीपा नरेस अपने सब सेवक
समाज के सहित दरसन परसन को आया
है और कृपानिधान के चरनों का सेवक बना चहता है
तब गुरू रामानंद जी सुन कर के शिष्यों
को कहने लगे कि राजा को मेरे पास राज चिन्ह सेर
हित जान कर ल्यावना योग्य है ऐसे राज समाज
के सहित ल्यावना उचित नहीं है ॥२॥ चौपाई ॥
जो आवहिं तजि मान बड़ाई ॥ ल्यावहु तासु ता
ते तुव जाई ॥ कहहु मोर पुनि न्याय सनेहा ॥
जो इह कूप बहिर मम गेहा ॥ तामध देहु वपुष
निज डारी ॥ जब परि है तब लेहु
निकारी ॥ गुरु कृपाल सासन सिष पाई ॥ नृप
सन कीन कथन सब आई ॥ भूप सुनत मानस
हरषावा ॥ निरभय परन कूप जब धावा ॥ सि
षन लीन धरि तुरत निकारी ॥ ल्याय से
ग गुरु सरण सिधारी ॥ रामानंद दरस सुखदा
या ॥ जब नरनाथ दृगन निज पाया ॥ ज्ञा
हि ज्ञाहि मुख सिथल सरीरा ॥ पर्‍यो लुकट इव
चरन अधीरा ॥ गुरु कृपाल सेवक दृढ जानी
हरषि उठाय लीन निज पानी ॥ विधिवत कीन
ललित उपदेसू ॥ राम मंत्र उरहरन कलेसू ॥

दोहा॥ कीन सिलोचन बदन पुनि कृष्ण भजन
सुखदाई॥ जाय सदन निज करहु जुत विप्र संत
सिवकाई॥ ३॥ टीका॥ फिर कहते हैं कि जो मान
बड़ाई को त्याग कर आवे तो शिघ्र तुम जाय कर
के ले आवो परन्तु प्रथम इह कहो कि गुरु जी की
आज्ञा है इह द्वार पर कूप अर्था कुआ जो
है इस विषै तुम कूद पड़ो हे शिष्य जब वे
सत्य करके तिस मै गिरने लगै सो तो तुम यतन
से तुरत निकार लेना और फिर मेरे पास ले आव
ना इस प्रकार गुरु जी की आज्ञा पाय कर शिष्य
जो हैं सो ततकाल पीपा नरेस के पास चले आ
ये और गुरु जी का कथन तिस को सब सुनाय दे
ते भये तब राजा सुनकर परं सुख को प्राप्त हुआ
तुरत निरभय होय करके कूप अर्थात कूये मै गिरने
को कूद पड़ा शिष्यों ने ततकाल कर पकड़ लिया औ
र सनमान से साथ लेकरके गुरु जी की शरण को च
ले आये जब पीपा ने परम सुखदायक गुरु रामानंद
जी का दरसन नेत्र भर कर पाया तब मुख से त्राहि
त्राहि कहता हुआ अधीर और सिथल सरीर होय क
र दंड के समान चरनो पर गिर पड़ा गुरु जी ने देख कर
और दृढ सेवक जान कर दया करके तुरत चरनो पर
से उठाय लिया और प्रसन्न होय कर विधी के अनु
सार सुंदर राम मंत्र जो है सो कान मै सुनाय दिया
और शिक्षा भी देई कि गृह चार मै जाय कर संत
ब्राह्मणों की सेवा भक्ती के सहित रात्री दिन सरव
सुखदायक कृष्ण भजन और कृष्ण सुमरण मै
ही लीन रहो॥ ३॥ चौपाई॥ अस उपदेश भूप जब
पावा॥ करि प्रणाम गुरु चरन सुहावा॥

जुग कर जोरि नम्र अनुरागा॥ बदन विनंति करन अस लागा॥ जो मोहि दास चरन निज कीना॥ तो अस विनय करत प्रभु दीना॥ धारि चरन नुव दीन सने हू॥ करहु मोर पावन चलि गेहू॥ गुरु वर सुनत कीन सुई कारा॥ तव नरेस निज सदन सिधारा॥ संजुत भृतन भवन निज आई॥ भयो भजन ततपर रघुराई॥ अतथि संत दुज सेवँ लागा॥ भक्ति प्रवीन भूप बड़ भागा॥ सुत कहं देत राज सुख सूरी॥ करि विभक्त संतन धन भूरी॥ आपु वन्यो वैरागव मति धीरा॥ लाग्यो करन भजन रघुवीरा॥ पुर लोगन अस देखि बखाना॥ भावित पत भूप हम जाना॥ अप्रकार संवत सर तासा॥ करत भजन भगवान विलासा॥ एक दिवस लिखि पाति पठाई॥ गुरु कहे परम हरष बसराई॥ तव कर वचन सत्य प्रभु कीजै॥ निज जन जानि सुजस मोहि दीजै॥ धारि ललित पद पदम सुहावन॥ करहु कृपाल सदन जन पावन॥ दोहा॥ गुरु वाचित जन पत्रिका मन अनंद सरसाय॥ संजुत शिष गण गवन करि भवनभक्त निज आय॥४॥ टीका॥ इस प्रकार गुरु जी का उपदेश पायकर राजा चरनो पर प्रणाम करके हाथ जोड कर विनती करने लगा कि हे कृपानिधान जो दया करके मेरे को अपने चरनो का सेवक किया है तो अब मेरी इह प्रार्थना है कि जैसे प्रभू तुम मेरे को सफल किया है तैसे दया से चरन धार कर और चलकर मेरे इस दीन के घर को भी पवित्र करिये ऐसे पीपा की विनय प्रार्थना सुन कर कृपा के वश भये हुये गुरु जी सुई कार कर लेते भये कि हे राजन हम तेरे घर मै अवश्य चलैंगे तव गुरु जी का वचन सुन कर हरष

तिन की शरण को प्राप्त होऊं और कृपा निधान
का सुंदर उपदेश लेकर इस संसार समुद्र से पार
उतर जाऊं ऐसे पीपा राजा का कथन सुनकर शि
ष्य जो थे सो प्रसन्न होयकर बड़ी सुखदायक वाणी
से कहने लगे कि हे राजन तूं धन्य है और धन्य
तेरे जागे हुये भाग हैं जिसके हृदय मे ऐसी सुमती
ने आयकर के प्रवेश किया है इह तो बहुत सुगम
और सहज है कुछ भी दुरलभ नहीं है शिवपुरी जो
काशी है तिसको चले चलो दीन
हितकारी और उपकार की निधी गुरू कृपाल
जो हैं सो राजन तेरे को सुंदर उपदेश करके कृतार्थ
कर देवेंगे तहां कुछ दिन पर्यंत तिनके चरनों की
सेवा करकर अपने मन वांछित फल को पायले
तब राजा सुनकर परम सुख को प्राप्त भया और हाथ
जोड़कर कहने लगा कि हे संतो अब तो दिन कुछ
थोड़ा रहा है मेरे चलन अब प्रातःकाल
हीं होगा इस प्रकार उचार कर राजा तिन संतों
को धन दान देकर बड़े आदर सनमान से विदाय
कर देता भया इहां प्रातःकाल होते राजा अ
पने मंत्री को बुलायकर कपट से कुछ औरही
बात बनाय कर कहने लगा कि हे मंत्री आज
रात्री के समय मेरा परवत के साथ बड़ा भारी युद्ध
भया है तहां प्रबल भूधर अर्थात परवत ने मेरे
को जीत लिया और भली प्रकार दीन बलहीन
कर दिया इसतें मैं तिसके निवारने और
शांती के लिये यतन विचारा है कि काशी
मे जायं और विद्वान पंडित ब्राह्मणों को बुलाय
कर सनमान से कुछ दान पुन्न देता हूं ऐसे

१०७०

मूषण धन वसन मंगाये॥ सनमुख राखि मन्यो कर जोरी॥ आवत देत घाल मुनि कोरी॥ कृपा नाथ तुव लायक नाहीं॥ हमरु घाल अनुचित जन काही॥ गुरु वर सुनत नृप अस वानी॥ मधुर वतीत प्रीत रस सानी॥ कृपा... अस वचन उचारा॥ तुव नृप आज धन्य संसारा॥ दीन्यो वित अनंत ह म काहीं॥ पुनि अस कहत दीन कछु नाहीं॥ एहु री त सज्जन जेन चारु॥ निज कृत गुनत नाहि उ पकारु॥ अस प्रकार गुरु आसिष रागे॥ देत स मव रावन जब लागे॥ तव नरेस जुग जोरत पा नी॥ बोल्यो वदन नम्र मृदु वानी॥ मै तो चलन चाहुं गुरु देवा॥ प्रमु संग चरन करन कछु सेवा॥ रह धन धरनि धाम सुत दारा॥ तज्यो जानि जिय स कल विकारा॥ प्रमु सरोज चरनन रति मानी॥ मु नि अस वचन सव रानी॥ विकल अधीर कहत अस होई॥ हमरे नाथ कवन गति होई॥ प्राण आधार धाम धन त्यागी॥ हमहुं चलव प्रमु पाछिल ला तव प्रवोधि गुरु विविध प्रका... रन॥ तिनहिं जत न करि कीन निवारन॥ सीते नाम एक नृप रानी॥ पति रति चरन जासु दृढ मानी॥ सो नमई वारन व्रत धरनी॥ त्यागत लाज अस वदन उचरनी॥ दोहा॥ जो न आगमन रहु जिय जीवन सन का य॥ तो इन प्राणन व्यान कर परहिं नपलक वहाय॥४॥ टीका॥ तव राजा गुरुजी का आगम न सुन कर वडे सनमान से आगे जाय कर चरनो पर प्रणाम करता भया फिर प्रीती भक्ती से सुंदर पालकी पर विठाय कर के सव सिष्य समाज के सहित आनंदपूर्वक घर मे

ले आया तहां विधीवत सब पूजन सेवन
कर कर और ततकाल बडे सुंदर दिव्य भोजन बन
वाय कर भक्ती सनमान से सब संतों को जिमाय दे
ता भया इस प्रकार राजा पीपा जो है सो गुरु जी
को घर मे राखकर दिन दिन नित्य नया हीं सेवन स
त कार करने लगा ऐसे जब कुछ दिन बतीत होय
गये तब एक दिन गुरु क्रिपाल प्रसन्न होयकर
विदाय मांगने लगे पीपा सुनकर चरनो पर सी
स धर देता भया और फिर के चन मनी भूषन
वस्त्र इत्यादि धन मंगाय कर और सनमान से
आगे राखकर हाथ जोड करके दीन भाव से विन
ती करने लगा कि हे कृपानिधान मै क्या देऊं दे
ते को भी लज्जा आवती है प्रभू इह कुछ आप
के लायक नहीं है मैने अनुचित हीं किया है
कृपासिंधू आप दया करके मेरे अपराध को छ
मा करिये ऐसे बडी मधुर और बनीत प्रीती
रस की भीगी हुई पीपा भक्त की बानी सुनकर
गुरु कृपाल प्रसन्न भये हुये कहने लगे कि
हे राजन आज जगत मे धन्य है और धन्य
तेरी सीलता सुमती है कि देखो जिसने हमको
इतना अमित धन दिया कि जिसकी कोई गिनती
नही होती और फिर कहता है कि मैने कुछ
नहीं दिया अहो सज्जन पुरुष जो होते हैं तिन
की संसार मे एही रीती होती है जो आप ने कि
ये हुये उपकार को कदाचित नहीं कहते हैं
कि हम ने कुछ किया है इस प्रकार गुरु जी

प्रसन्न भये हुये सुंदर ग्रासीसा दे कर जब घरको चलने लगे तब पीपा नरेस हाथ जोड कर कोमल वाणी से विनती करने लगा कि हे कृपानिधान मै तो ग्राप के चरनो की सेवा करने को प्रभू तुमारे साथ ही चलने चहता हूं इस धन धाम राज समाज स्त्री पुत्रं मैने हृदय मै विकार जान कर त्याग दिये हैं केवल ग्रापके ही चरनो की प्रीती मान लई हैं ग्रैसे राजाका कथन सुन कर रानीं सब व्याकुल होय गई ग्रौर बड़ा रोदन कर कर कहने लगी कि हे प्राणनाथ जो ग्राप चले जावोगे तो पीछे हमारी कोन गती होवेगी ग्रौर किस के ग्राधार जीऊंगी इसते हमभी धन धाम को त्याग कर प्रभू तुमारे पीछे हीं लाग चलती हूं तब गुरुजी ने ग्रनेक प्रकार प्रबोध कर कर ग्रौर हित लाय समुजाय तिन सब को साथ चलने से निवारण किया तब तिन मे एक सीते नाम करके रानी जो थी सो पती के चरनो मे बडे दृग प्रेम वाली थी ग्रौर सब तो मान गई परन्तु वे नहीं मानती भई लज्जा को त्याग कर प्रकट कहने लगी कि जो इस ग्रभागन मेरी काया ग्राज जीऊ के जीवन साथ नहीं जायगी तो इन प्राणों के चले जाने का मेरेको कुछ वहाय नहीं परता है क्या जाने कब निकल जावेंगे ॥ ५ ॥ चौपाई ॥ गुरु वर देखि सत्य व्रत रानी ॥ बोले ग्रति प्रसन्न मुख वानी ॥ इहि करें चलहु संग निज लीने ॥ साधु सील पति व्रत रत चेने ॥ सुता समान रहव सुकुमारी ॥ राखव हम हुं प्राण तें प्यारी ॥ ग्रस कहि चले हरष उर छाये ॥ नृप समेत गुरदेव सुहाये ॥ ग्राये मुदित द्वारि को माहीं ॥ विधि संजुत नर नाय ताहीं ॥ यात्रा कीन ललित मनभावन ॥ दीने दान विविध विधि पावन ॥ वहुरि परस्पर होत विदाये ॥

मैमगनमगनहोयपीपाजी कारवाँप्रणाम करकेअप
नेघरकोचलेआयो तहां सब सेवक समाजके
सहित घरमै स्थित होयकर भगवान कृपानिधानके
भजन सुमरनमै सावधान होयगयो तब भक्ती
मै लीन होयकर अतथी संत ब्रह्मणोंको
सेवता हुआ राज समाज पुत्र कोदेके और
कंचन मुद्रा भूषण वस्त्र इत्यादि धन सब संत भक्तों
को बाँट कर आप केवल रघुनाथ जीकेचरनोका
ही आधार राख लेता भया तब नगरकेलोग तिस
और
की दशा देखँकहने लगे कि अहो हमने जान लिया
राजा तावितपत अर्थात बाउला होयगया है इसप्र
कार भगवान का भजन सुमरण करते करते राजाको
जब एकबरष बतीत होय गया तब एकदिन प्रसन्न
चित होयकर गुरु रामानंद जीको पाती लिखता भया
किहे कृपानिधान अब दया करके सो अपना वचन
और
सुमरण करिये औरँ प्रभू अपने चरन कमल धारकर
मेरे इस घरको पवित्र करिये ऐसे
जबँ पीपाकी लिखीहूई पाती गुरुजीने बाची तब
हरषसे प्रफुल्लित भये हूये रामानंद स्वामी शिष्योंका
समाज साथलिये हूये ततकाल अपने प्यारे भ
क्तकेघरकोचले आये ॥४॥ चौपाई ॥ आगल
जाय भूप मनमाना ॥ लिये संग निज वाहन नाना ॥
करि आरूढ सिवकादि सुहाये ॥ गुरु कहे सदन
धरन पति ल्याये ॥ करि पूजन भोजन बनवाये ॥
प्रीति भक्ति जुत भूप जिमाये ॥ असप्रकार सादि
र करि सेवा ॥ राखे भवन भूप गुरु देवा ॥ बीते क
छु कदिवस जब ताहो ॥ मांगी तब विदाय मुनि
नाहो ॥ पीपा सुनत चरन सिर नाये ॥ मणि

[illegible]

हीरे का जो है सो दिखाय देते भये तिसते उपरांत भक्त
जनो के मन को मोहित करनेवाले क्षीरसमुद्रवासी भग
वान प्रसन्न होयकर संख चक्र गदा पदम इह चिन्ह
मुद्रा जो हैं सो पीपाजी को देदेते भये ॥१॥ चौपाई॥
इन मुद्रन सन भूषित काया॥ कहि तुव गवहु वेग नर
राया॥ भन्यो भूप सुनि वचन सनेहा॥ मैं न तजहुं द्वा
रावति एहा॥ ईहां करत सुमरण भगवाना॥ बूडित जल
धि तजहुं निज प्राना॥ तव करुणाय सिंधु भवतारना॥
कीन विविध विधि तासु निवारन॥ ईहां मरण तुव भूप
सुजाना॥ करहिं लोग अपजस सुख नाना॥ हठ परि
णाम भूप भल नाहीं॥ बुद्धि न उचित वारनि
ध नाहीं॥ यद्यपि करणधार भव सागर॥ प्रेस्यो वि
विध धरन पति नागर॥ तद्यपि तज्यो तास हठ नाहीं॥
भने वचन तव त्रिभुवन साईं॥ करहु तन कछित
पत गुण अयना॥ इह निज जुगल नमीलन नय
ना॥ सुनत नरेस तुरत दृग दोई॥ मूंदे दैव वचन
वस होई॥ तव कौतुक सागर के तीरा॥ भयो जाय
प्रापत नृप धीरा॥ देखि भूप अद्भुत विस
माना॥ दैव चरित कछु परयो न जाना॥ निर
खि प्राणपति सन मुख रानी॥ रोदन करत चरन
लपटानी॥ गदगद हरष विवस गत शोकी॥ चां
द चकोर मोर जिमि कोकी॥ अस प्रकार तीरथ द
रसाये॥ चले भवन नृप हरष अघाये॥ मिल्यो म
लेछ विपुन पथ काहू॥ नृप सन देखि भास मु
दु ताहू॥ खड्ग दिखाय प्रवल रिपु नाईं॥ हरि ले
चल्यो पतनि नृप काहीं॥ देखत रह्यो ठाढ छित
पाला॥ कीन न यतन हरन कछु वाला॥ तव सीते
शोक करत नाना॥ रोदन करत सुमरि भगवाना॥

जानि भक्त तिय परम दुखारी॥ अस्त्रा रूढ खडग कर धारी॥ मनुज रूप धरि भक्त सहैया॥ हरि रखवार धरनि दुज गैया॥ वतसल भक्त भक्त सुखदाये॥ आये जन ऊ तहं तन चत धाये॥ अब कित जात मंद मति वारे॥ रहु रहु ठाढ अस बदन उचारे॥ देख्यो दुष्ट प्रवल रिपु पावा॥ तिय कहे क्राहि जस बस धावा॥ दोहा॥ तब करुणाय निकेत प्रभु सिय कहि धीरज देत॥ नृपपै हृदय उमंग जुत आय संग निज लेत॥७॥ टीका॥ फिर भगवान कहते हैं कि हे मुद्रों से आपने शरीर को चिन्हित कर के अर्थात शंख चक्र गदा मदम के सहित भूषित होय कर आने दहे अपने आश्रम को चला जा ऐसे भगवान कृपानिधान का व्याहित सनेह का भरा हुआ वचन सुनकर राजा कहने लगा कि मैं अब इस द्वारावती अर्थात द्वारिका को कदाचित त्याग कर नहीं जाऊंगा॥ तब कृपा के समुद्र [illegible] और संसार का भय दूर करने वाले भगवान तिस को अनेक प्रकार समुझाय कर निवारण करते भये कि ईहां जल में डूब कर मरने से ते राजन लोग तुमारा जगत में बड़ा अपजश करेंगे तो ते इस हठ को छोड देवो हे प्रजापाल हठ का फल जो है सो शुभ नहीं होता है इह समुद्र में मरणा तुमारा उचित नहीं है इस प्रकार संसार समुद्र के मल्लाह भगवान ने यद्यपि बहुत हीं निवारण किया तद्यपि राजा आपने हठ को नहीं त्यागता भया तब तीन लोक के नायक भगवान तिस को कहने लगे कि हे पृथ्वीनाथ जो तूं नहीं मानता तो अवनत नेक प्रमाण अर्थात एक क्षण भर के लिये आपने दोनो नेत्रों को मूंद ले इस वारता को सुन कर राजा ने भगवान के वचन अनुसार तुरत आपने दोनो नेत्र मूंद

तेरी राजा में

भगवानको प्रमाण हुआ ... हे समुद्र में डूब कर मरणे को त्याग करें

लिये तब दीन बंधू के कौतुक से राजा तुरत अप
ने अस ● पान पर समुद्र के किनारे आय प्राप
त हूआ इस अदभुत को देखकर राजा बड़े अचर
ज के वश होय गया भगवान का चरित्र कुछ जा
ना नहीं जाता है तब राणी अपने प्राणपती को
सनमुख देखकर बड़ा रोदन कर कर चरनो को लि
पट जाती भई जैसे चकोरी चांद को और चकवी
सूरज को देखकर प्रसन्न हो जाती है तैसे ही पती
को देखकर राणी शोक से नवृत होय कर आनं
द मैं मगन होय गई इस प्रकार तीरथ यात्रा कर
कर आनंद मै मगण भया हूआ राजा फिर अपने
घर को चल पड़ा तब मारग मै आने हुये ● बण
बिखे कोई दुष्ट मलेछ जोण सो राजा के साथ
बड़ी सुंदर सदोम रूपवती स्त्री को देखकर मोहित
होय गया और अधम खड़ग का भय दिखाय कर
शत्रू के समान प्रबल होय कर ~~किसी को राजा के~~ छी
न कर ले चला तब राजा स्थित भया हूआ देखता
रहा तिस के निवारणे का कुछ भी यतन नहीं किया
राणी जो है सो दुष्ट को देखकर भय से व्याकुल भई हू
ई रोदन कर कर भगवान का सुमरण करने लगी ऐसे
भक्त की स्त्री का कलेश देखकर गउ ब्राह्मण पृथ
वी के पालक भक्त हितकारी और भक्त सहाय क
भगवान मानुष्य रूप धार कर बड़े चपल घोड़े के स
वार हाथ मै तलवार लिये हूये मानो बिजली के स
चमकते और धावते चले आये तब कोप के वच
नो से कहने लगे कि अरे मूढ मंद मती अब कहां
जाता है दुष्ट इहां ही ठहर रहो ऐसे प्रबल शत्रु
ऋ को आवते देखकर वे अधम भय के वश भया हू
आ राजपत्नी को छोड़कर मानो पवन होय या अग्नी त

(margin, left:) शैलराजवचनको सुनकर

(margin, right:) ब

(margin, right:) हरि की कृपा

(below line:) त ... यग

गुरु समेत मिलि निज गृह आये ॥ पीपा भक्त पतनि
जुत ताहीं ॥ एकले रह्यो द्वारिका माहीं ॥ एक दिवस
आरूढि तनाऊ ॥ चल्यो मझार बारि निधि राऊ ॥
द्वारावती रुचिर दरसाये ॥ तब भगवान भक्त सुख
दाये ॥ धरि स्वरूप नाविक ततकाला ॥ नृप स
मीप आये जगपाला ॥ अति रमणीक द्वारिका जेहू ॥
दीन दिखाय सकल प्रभु तेहू ॥ दोहा ॥ पुनि दीन्ह्यो म
न हरन हरि कारन दुग्ध निधि सयन ॥ संख चक्र
मुद्रा रुचिर गदा पदम मुद दयन पर टीका ॥
तब गुरु कृपालु तिस रानी का सत्य व्रत देख करके
परम प्रसन्न भये हुये मुख से कहने लगे कि इस देवी
को साधु सील और पतिव्रत धरम मैं प्रवीन जान
कर साथ लिये चले इस कन्या के समान हमा
रे पास रहेगी इस पुत्री को प्राणों से भी प्यारी
रखेंगे ऐसे कथन करके गुरु रामानंद जी आप
ने सब शिष्य समाज और राजा के सहित आनंदपू
र्वक तहां से चल पड़ते भये और मारग को तै पू
रन करके सुख से सुंदर द्वारिका मै आय प्राप्त होये
तहां पीपा नरेस ने विधी अनुसार भली प्रकार स
ब यात्रा करी और अतपी साध ब्रह्मणों को अने
क प्रकार के दान भी दिये फिर परस्पर विदाय हो
य कर गुरु जी के सहित सब अपने चले आवते
भये पीपा भक्त जो है सो स्त्री के स
हित तहां द्वारिका मे हीं निवास करता भया एक दिन
दि व्य द्वारिका के दरसन करने को नाउ का पर
बैठ कर समुद्र के बीच चला जाता था तब तिस
आय देखकर भक्त सुखदायक भगवान नावक अघ्रपात
मल्लाह का रूप धार कर तहां समुद्र मै तिसके पा
स चले आये और अत से रमणीक बडी सुंदर अपनी

१-१४

हो॥ अगनित करमविवस निज धायो॥ भयो न मोद भ्रमत अकुलावा॥ अंतहुं व्याघ्र जनम तुव ~~अ~~ पावा॥ अवतो तजहु अधम नव हिंसा॥ करत कुकरम जीव जग हिंसा॥ सुचिउपदेस मोर उर धारू॥ होहु निरत शिव अमल अहारू॥ इहवनमाल ललित उर धारी॥ जियत जीव जनि बधहु मृगारी॥ तोरे कुसम सपथ सुत भाई॥ अब नकरहु दुरकरम कदाई॥ सारदूल सुनि भूपति बानी॥ विमल विवेक ज्ञान हित सानी॥ मन हुं कुमति निसि सोवत जागा॥ सोभि सरूप धरत अनुरागा॥ दोहा॥ लेत प्रदछिणा नम्र गति धरत धरणि निज माथ॥ करि प्रणाम छितपत चरन गयो विपुन मृगनाथ॥ अव लग तहि कानन ललित छितपत वचन प्रभाऊ॥ करत अहार न जियत वधि पसु मानव मृगराऊ॥८॥ टीका॥ तव राजा पीपा देखकर प्रसन्न होयकरके कहने लगा कि अहो भाई धन्य जगतमे तुमारा जनम है किजिसने परहित जानकर असा उपकार किया है किजो कुछ कहा नहीं जाता इस भामनी को बुरा विखे दीन और दुखी जानकर बडे हित चित से रछ्या करी है तोते आज तेरे समान संसार मे मेरे को और दूसरा कोई उपकारी नही देख पडताहै हे हित की मूरती तेरे को मेरी बारवार देउ प्रणाम होवे जो तूं ने जगतमै मेरे को मानो इह नवल अर्थात नई स्त्री दान करीहै इस प्रकार जव राजाने कथन किया तव भक्त सुखदायक भगवान राजा को अपनी अद्भुत माया का चमतकार दिया कर फिर दीन

सहायक तुरत नहीं लुपत हो जात भये तब राजा सीते को कहने लगा कि हे प्यारी मेरे को नाना श्रम और खेद अब प्रकार के भोगना ही है परन्तू तूं रहवण का दुख और कलेश जो है सो वृथा कौं सहार ती हैं जा को अपने घर मे जाय कर सुख से निवास करो ऐसे पती का कथन सुन कर राणी कहने लगी कि हे प्राणनाथ आप वृथा कौं कथन करते हो मैं तो प्रभू तुमारे चरनो को कदाचित नहीं त्यागूं गी और नाथ मेरा तुम को कौन कलेश है भगवान कृपानिधान मेरे आप रखवारे हैं आपदा काल के विखें भक्त सहायक और भक्त हितकारी दीनबंधू रक्षक हो जाते हैं ऐसे जब राणी ने कथन किया तब राजा हृदय मे सुख मान कर तुरत चल पड़ता भया जब मारग चलते चलते कुछ क दूरी पर आय गये तब एक महां भ्यानक शिंह मुख खोले हूये वण से निकल कर भबकता हूआ सनमुख चला आया तिस काल रूप भय कर मृगराज को देख कर सीते जो है सो भय के वश व्याकुल भई हूई थरथर कांपने लग पड़ी राजा ने यद्यपि बहुत ही धीरज दिया तद्यपि स्त्री सुभाव जो महां भीरू अर्थात डरने वाला था हृदय मे कुछ धीरज नहीं धारती भई तब राजा अभय होय कर बड़े सुखदायक वचनों से तिस मृगराज को उपदेश कर कर कहने लगा कि हे मृगपती विचार के देख जो अब लग संसार मे तूं ने करम के वश होय कर अनेक ही जनम धारन किये हैं और भ्रमता भ्रमता व्याकुल होय गया है मोक्ष को प्राप्त नहीं भया अब अनेको ते ने व्याघ्र जो शिंह है तिस

का जनम धारन किया है हे वीस नखोंवाले मूढ़
अधम अब तो ~~इस जगत में जीवों के मारने का कुकरम जो है सो त्याग~~ जगत में जी
व हिंसा के कुकरम का त्याग कर और मेरे उत्तम
उपदेश को पाय कर अब तें आगे मरे हूये जीव का
आहार किया कर इस तुलसी की माला ले और हृदय
मे धार कर वैस्नव भक्त वन जा जीते जीव को मत
मारना ॥ इस दुरकरम जो है सो अब कदाचित नहीं
करना ॥ तेरे को कुसल प्रमातमा की वारवार सौगंद है
फिर
इस प्रकार वडी ज्ञान विवेक और सुंदर हित की भीगी
पीपा भक्त की वाणी सुन कर मृगपती मानो कुम
ती की निद्रा मे सोया जो था सो ~~[illegible]~~ जाग उठा और
वड़ा शांती सरूप धार कर प्रेम भक्ती वाला भया
हूआ राजा की चारो ओर प्रदक्षणा लेकर और दी
भाव से वारवार प्रणाम करकर अपने वण के मा
रग को चला जाता भया तिस देश विखे ~~[illegible]~~ पी
पाजी के वचन के प्रभाव से अवलग भी कोइ मा
नुष्य पशु फिर जीते जीव को मार कर नहीं खाव
ते है ॥८॥ चौपाई ॥ तव नरेस कानन तजि तेहू ॥
मारग देखि वैस इक गेहू ॥ रवि मध्यान काल गति
जानी ॥ आये तहां विपुल श्रम मानी ॥ रहा सु वैस
भक्त भगवाना ॥ नृप कहं देखि परम हरखाना ॥ सा
धु जानि चरणन सिर नाये ॥ सादिर सुचि आसन
वैठाये ॥ जुग कर जोरि विनय अनुरागा ॥ करन
वदन नम्रत अस लागा ॥ मे निज उदय भाग जग
चीन्यो ॥ संत सदन मुहि दरसन दीन्यो ॥ अना
यास तुव दीन सनेहू ॥ कीन मोर पवन इह गेहू ॥
अस प्रकार करि विनय वडाई ॥ भक्त वैस निज

भाग गया तब दयाके समुद्र भगवान तिसतीते

को नामक राजपत्नी भलीप्रकार धीरज देकर औ
अभय करकर फिर साथ लिये हूये आनंद पूर्वक
राजा के पास चले आये॥७॥ चौपाई॥ देखि भूप
अस वदन उचारा॥ अहो धन्य जग जनम तुमा
रा॥ परहित लागि कीन जहि भाई॥ इह उपकार
कहि नकछु जाई॥ इहि कहे दीन दुखित तुव जा
नी॥ कीन विपुन रक्षा हितमानी॥ तुव समान
मुहि संपति सारी॥ जानि नपरसो आन उपका
री॥ वंदहूं वारवार अब तोही॥ जहि जन नृदी
न नवल तिय मोही॥ अस जब भन्यो वचन नर
राई॥ तब भगवान भक्त सुखदाई॥ नृपहिं दिखाय
ललित निजमाया॥ भये लुपत प्रभु दीन सहाया॥
तब नरेस सीते सन कहा॥ तुव कस सहहु विपुन
दुखदाहा॥ जाहु सदन निज वेगसिधारी॥ तब
नरेस तिय वदन उचारी॥ करहै वृथा कथन
कस मोही॥ मे न तजहु पति प्राणन तोही॥ तो
हिं नाथ दुख कवन तुमारे॥ मोरे आपु देव रख
वारे॥ दीन दयाल भक्तन सुखदाई॥ अपद का
ल प्रभु तोहिं सहाई॥ अस जब भन्यो वचन मृदु
रानी॥ तब नरेस गवन्यो सुखमानी॥ कछुक दूर
मारग जब आये॥ कि हर कराल वदन तब धाये॥
भ्यावन भव कि विपुन निकसान्यो॥ सीते देखि वि
पत उर पान्यो॥ यदपि दीन धीरज नर राऊ॥ करि
करि विविध कथन मुख ताहू॥ तदपि तिय सुभाव
अति भीरू॥ धरेयो न हृदय तास कछु धीरू॥ तब
नृप अभय वचन सुखदायक॥ बोल्यो वदन सु
नउ मृग नायक॥ अब लों तुमहूं जनम संसा

१०७६

भी नहीं है और संत ग्रत से कर के भूखे देख पड़ते हैं अब कौन उपाय करूं अपना नित्य का धरम भी तो टिन जोया आज सो भी नहीं किया कि जिसतें घर में कुछ अन्न होता अब संतों को कहो तें भोजन जिमाऊं इस प्रकार पती का वचन सुन कर सो भामनी कहने लगी कि हे नाथ घर की विभूती जो है सो आप को भली प्रकार सब विदत है अब मेरे को भी कोई यतन सूझ नहीं पड़ता है परन्तु हे प्राननाथ एक मेरा नित्य के पहिरने वाला वस्त्र है सो तुम नगर में ले जावो और किसी दुकानदार अथवा गृहस्थी के पास बंधे छोड़ कर तिसके अनुसार जो कुछ मिलता है सो अन्न मात्र ले कर के घर में चले आवो तिसतें कुछ संतों का परितोष होय जावेगा ऐसे कथन कर कर तिस पती सेवत स्त्री ने हरष से तुरत अपना वस्त्र उतार दिया सो वैस नगर में राखकर तिसके बदले में अन्न जो मिला ततकाल ले करके घर में चला आया तब राजा की स्त्री सीते जो थी तिसके पास आय कर कहने लगा कि हे सुशीले तुम यह अन्न लेवो और प्रीती पूर्वक अपने हाथसें भोजन बनावो और रसोई में बैठ कर पावो जो शेष कुछ पीछे बचेगा तो हमको भी दे दीजो तब सीते ने अन्न लेकर और चौका लगाय कर तुरत हीं प्रीती रसोई से तहां वैस के घर में भोजन बनाय लिया ॥ ८ ॥ चौपाई ॥

प्रथम हरिहिं नैवेद सुनावा ॥ पीपा भूप भक्ति जुत लावा ॥ देत वैस कहे पुनि अनुरागे ॥ दंपति आपु अचन जब लागे ॥ तब नरेस अस गिरा उचारी ॥ कहो वैस वर वियो तुमारी ॥

सीते सुनत कथन अस राऊ॥ उठी तजत भोजन
चित चाऊ॥ इत उत करत सदन अ[illegible]न्वेषण॥ ला
गी ललित वैस तिय देषण॥ कोष्ठी
लुपत अवसन अकेली॥ सीते जाय दृष्टि द्रग मेली॥
मुख मुसकाय वचन मृदु कान्हा॥ कवन मरम इह
नागरि रान्हा॥ हमकहे केऊ वार अस रानी॥ यसो
विपति हेतन हित लागी॥ सुनि अस कथन वैस
तिय केरा॥ [illegible] सिय कहा धन्य जनम जग तेरा॥ प
तिहु तुमार धन्य संसारा॥ परहित जास रुचिर व्रतधारा॥
अस कहि सिय मान स हरषाई॥ अर्ध[illegible] वसन निज ता
सु उढाई॥ तुरत गहित कर वहिर निकारो॥ चतुर
चारु निज हृदय विचारो॥ इन कहे देखि सत्य व्रत मा
हीं॥ भक्ति हमार लेस कछु नाहीं॥ नृपसन जाय
कथन सब कीन्यो॥ इह दृढ निरत भक्ति हरि चीन्यो॥
जो हम सन इन कीन भलाई॥ प्रति उपकार कवन
तहि राई॥ तव नरनाथ भन्यो मृदु वानी॥ जाव हु न
गर सकुच तजि रानी॥ यथा अनीत नीत वन
आई॥ ल्याव हु प्रिया वेग वित जाई॥ मे हुं यतन
युत नगर सिधारी॥ ल्यावहु यथा लक्ष्य धन ग्या
री॥ दोहा॥ तो इहि कर वनि परहिं कछु सुंदरि
प्रति उपकार॥ अस कहि कोशल गहिन दंपति धन
नगर सिधार॥ २०॥ टीका॥ जब भोजन वन गया
तब पीपा जी प्रथम भगवान को नैवेद लगाय कर
और वैस भक्त को भी दे कर पीछे स्त्री के सहित
जब आपव ने लगे तब वैस भक्त की ओर देखकर
कहते भये कि भाई तुमारी वे प्रवीन स्त्री कहां है
ऐसे राजा के मुख से वचन सुन कर रानी जो है
सो तुरत भोजन को त्याग कर और उठकर व
डे हरष उतसाह से घर मे इधर उधर खोजने

लग जाती भई तव क्या देखती है कि वे घर मे एक को
ठी के वीच अकेली शरीर से नगन छि
प करके वैठी हुई है राणी तिस के सांने अों दृष्टी मि
लाय कर और मुख से मुस्काय कोमल वाणी से क
हने लगी कि हे प्यारी तुमारा अैसी दशा से छिप कर
वैठने का कौन कारन है तव वे सुशीले कहने लगी
कि हे हितकारनी हम को संतो नमित्त कई वार
अैसी विपती व्यापत होय चुकी है तू
हमारा कारन कहां तक पूछेंगी इस प्रकार तिस का
वचन सुन कर सीते कहने लगी कि अहो वड भा
गन तूं धन्य और धन्य जगत मे तेरा जनम है औ
र तेरा पती भी धन्य है कि जिसने हृदय मै पर हित
और पर उपकार का ही व्रत धारन किया हुआ है
अैसे कथन कर कर हरष के वश भई हुई सीते
तिस के शरीर पर अपना आधा वस्त्र उढाय कर
हाथ से पकड कर तुरत वाहिर निकाल लेती भ
ई और अपने हृदय मे विचार करने लगी कि अ
हो इनको इन सत्य व्रत देख कर हमारी भक्ती
तो कुछ लेस भी नहीं है तव जाय कर के राजा
के साथ कहने लगी कि महाराज इन्हों की भक्ती
मे प्रवीन भगवान के वडे दृढ भक्त है इन्हों ने जो
हमारे साथ भलाई और उपकार किया
है तिस का प्रति उपकार अर्थात हम कैसे दे
सकेंगे अैसे राणी का कथन सुन कर राजा प्र
सन होय कर कहने लगा कि हे प्यारी तूं संकोच
और लज्जा को त्याग कर नगर विखे जा तहां से
नीती अनीती कर के जैसे वन सकता है तैसे
धन ल्या और मै भी नगर मे जाय कर जिस
प्रकार कुछ प्रापत होय सकता है तैसे ही यतन

त्रिय सन आई॥ मन्यो न सदन अन्न कछु ताका॥ तुष्यन संत करहुं अब काहा॥ मिल्याहिन निज धरम सदाहीं॥ सोउ आज कीन्यो हम नाहीं॥ कवन अजास करहुं अब प्यारी॥ सुनत वैस त्रिय वदन उचारी॥ भवन विभूति विदत पति तोही॥ जानि न परत जतन कछु मोही॥ ये इ हवस मोर परिधाना॥ तुव ले जाहु नगर पति थाना॥ काहु विलोकि वनक नत गेही॥ तायें यथा लब्ध धरि एही॥ ल्यावहु अन्न सदन पति जोहीं॥ तो परितोष संत कछु होहीं॥ अस वैस भक्त वर नारी॥ हरषि वसन निज दीन उतारी॥ वैस सु जाय नगर पर राख्यो॥ लाका अन्न सदन अभिलाख्यो॥ त्रिय कहे देत भन्यो मृदु वानी॥ रहतु वर रचहु पाक निज पानी॥ दोहा॥ हम हुं देहु कछु शेष निज तुव पूरव जु गगाय॥ तव त्रिय सादिर सदन सुभ वैस अग्र सन विरचाय॥ ९॥ टीका॥ तब पीपाजी तिस वनको त्यागकर सूरज का मध्यान समय जानकर श्रमत भये हुये अर्थात थके हुये मारग मे एक वैसका घर देखकर तहां चले आवते भये सो वैस भी भगवान का दृढ भक्त था पीपा जी का दरसन पाय कर बड़ा प्रसन्न भया और संत भक्त जानकर दीनभाव से चरनों पर प्रनाम करकर फिर ल्याय करके प्रीती सनमान से सुभ आसन पर बिछाय देता भया और हाथ जोड कर दीन वानी से विनती करने लगा कि प्रभू आज मेरे बडे पूर्ण भाग्य हैं जो संत कृपाल तुम ने आय कर घर मे दरसन दिया और यतन के बिना ही हे दीन हने ही चरन धार कर मेरे घर को पवित्र किया है इस प्रकार विनती बडाई करकर फिर वैस भक्त अपनी स्त्री के पास जाय कर कहने लगा कि हे प्यारी आज घर मे अन्न

कर मेरे को तेरा पती जान नहीं पड़ता है और वे
स्वामी प्रतीत नहीं होती हैं भामनी अब प्र
कट करके कहो कि ई हो तेरा आवना किस प्रका
र भया है तब धनी का कथन सुनकर सीते कह
ने लगी कि हे दाता मैं ते द्वार पर मांगने
के लिये आई हूं अब तेरे स श्रद्धा पूर्वक
जो कुछ बन पड़ता है सो दान कर ऐसे सीते
का वचन सुनकर धनी प्रसन्न होय गया
दयासैंय था शक्त धन देकर के तुरत
विदाय कर देता भया तब सीते वेग धाय कर
और पती के सनमुख आय कर धन प्रापत
भया था सो सब दिखाय देती भई इहाँ राजा भी
जो कुछ ल्याया था सो मिलाय कर बड़ी प्रीती
रीती सें हाथ जोड़ कर जाय करके वे सम क्त के
आगे नवेदन कर देता भया अर्थात् देता भ
या ॥ ११ ॥ चौपाई ॥ बहुरि कछुक दिन दंपति
ताहों ॥ कीन निवास सदन नहि माहों ॥ एक
दिवस पीपा हरखाये ॥ मज्जन करन सरित
तट धाये ॥ तब मारग महुर कीन विचारा ॥
हम सन वैस जबन उपकारा ॥ कीन्यो प्रीति
रीति जुत जोई ॥ प्रति उपकार तास किमि होई ॥
अस कहि अधो दृष्टि जब कीन्यो ॥ मूदित धरनि
ताम्र घट चीन्यो ॥ महिं देखि जब लियो उ
घारी ॥ हेम मुद्र वदि पूरन सारी ॥ महिसन कर
त अच्छादिन ताहों ॥ करि सनान आयो नर
नाहों ॥ निसि कहे सुमदि भूववित ते हू ॥ नि
ज भामनि सन मन्य सनेहू ॥ मैं ल्याव हु कव
हु कि धन हूरा ॥ प्रति उपकार वैस तब

पूरा॥ होहिं प्रिया से देह विलाई॥ जवग्रसकी
न कथन नरराई॥ रहे लुपत तसकर द्वैचारी॥
चले सुनत सठ तहां सिधारी॥ धरणि खनत त्यार
तोम्र निकास्यो॥ खोलि तासु जव दृगन निहा
स्यो॥ भुजग भीम फुंकरत तव पावा॥ मू
दि त्रास वस मरम दुरावा॥ धरत सीस चरचले
लिवाई॥ सोवत रहे सदन जहिंराई॥ दीन तुरंत
तहां चरडारी॥ सुनत नरेस च्योंखे तहिंमारी॥ उठि
सामीप जाय जव देखा॥ पूरित पुरट ताम्र घट
लेखो॥ सोऊ जानि कियति यहिं जगावन॥ भ
न्यो वदन मृदु वचन सुनावन॥ मोरहिं वैस
भक्त सन जाई॥ मोर कथन प्रिय देहु सुनाई॥
रहनवित तोर भाग्य कर नेहू॥ श्रावाविनु प्र
यास तुव गेहू॥ लेहै भक्त प्रवर तुव श्राई॥
राखेहु सदन यतन जुत जाई॥ दोहा॥ सुनि
सीते निज प्राण पति सुखेद मृदु वानि॥ वैस
भक्त ढिग श्रायद्रुत हृदय हरष सरसानि॥ कि
हि मृदु वचन वनीत श्रति पति कर कथन
सुनाय॥ त्रिय संजुत वरवैस करे प्रमुदित च
ली लिवाय॥२२॥ टीका॥ फिर दोनो राजा श्रौर
रानी कुछकदिन तहां वैसभक्त के घरमें हीं
निवास करते भये एकदिन पीपाजी स्नान
करने के लिये नदी के किनारे को चले जाते
थे तव मारग में विचार करने लगे कि हमरे साथ
वडे हित चित से इस वैस भक्त ने उपकार जो किया
है तिसका प्रति उपकार श्रर्थात वदला हमारे सें कैसे
उतर सके श्रैसे विचार कर नीचे दृष्टी करके जो
देखा तव पृथ्वी के वीच मूंदा हुश्रा तांवे का

पीपा

टीका

मा

चरदेखपड़ा जवतिस पृथवीसे निकाल कर और तिसका मुख खोलकर भली प्रकार देखा तव वे सारा हीं सोवर्ण मुद्रासे परिपूर्ण पाया अर्थात सोने की मुहरों का भरा हुआ पाया फिर तिस को वैसेहीं तहां पृथवी मे दवाय कर और स्नान कर कर राजा घरको चला आया तव रात्री के समय तिस धन को चिंतन करके पीपा जी ने अपनी स्त्री के साथ सव भेद प्रकट कर दिया और कहा कि हे प्यारी जो मैं कदाचित मै तिस सुंदर धन को लेआऊं तो वेह भक्त का वदला जो हमारे सिर पर है सो सव उतर जाता है इस मे कुछ संशय नहीं है इस प्रकार जव राजा ने कथन किया तव तहां दो चार चौर छिप कर वैठे हूये थे सो अधम सुनते ही ततकाल तिस अस्थान पर धाय कर चले गये और जहां ने जाते ही तिस चरु को पृथवी से खोद कर निकाल लिया तो जव भेद तिस का मुख खोल कर देखने लगे तो क्या देखते हैं कि तिसके वीच एक कालरूप वड़ा भयंकर भुयंग अर्थात सरप फुंकारे मार रहा है तव भय के भये हूये चौर तिसको तैसेही मूंदकर और सीस पर उठाय कर जहां पीपा नरेस सोये हूये थे तहां ल्याय करके डाल देते भये तिस के डालने का शब्द जो भया तो पीपा जी सुण करके जाग उठे और तिस चरु के पास चले आये क्या देखते हैं कि वे कंचिन मुद्रा का भरा हूआ है तव सोई चढा जान कर अपनी स्त्री को जगाय करके वड़ी कोमल वाणी से कहने लगे

करकर ले आवता है ~~तब~~ इसते ~~हे प्यारी~~ इसका हे प्यारी कुछ प्रति उपकार अर्थात बदला जो है सो सिरसे उतर सकेगा ऐसे कथन करकर दोनो राजा और रानी अभिलाषावाले भये हुये धनके ल्याव ने कौ नगरविषें चले जाते भये॥ १०॥ चौपाई॥ तब स्त्री ते उर करत विचारा॥ ठाढीजाय वनक इक दारा॥ ते अविलोकि लाजवति भामा॥ निज छवि हरन मान धन कामा॥ को तुव कहत वन कमुख ताथा॥ आई इहां कवन कर साथा॥ ~~कै~~ ~~विकै~~ विभचारी धौं राज कुमारी॥ मनहु सत्य निजवदन उचारी॥ पति न परत तुव भामनि जाना॥ हेउ नवारवधू कुछ माना॥ करहै वेग कथन अव मोही॥ इहां आगमन कमन हित तोही॥ तब स्त्री ते अस वदन अलाई॥ मै तुम पैं जाचिन कछु आई॥ जो कछु सरहिं देउ तुव दाना॥ सुनि अस वचन वनक हुलसा ना॥ यथा उचित धन देत विदाया॥ स्त्रिय कहे कीन वनक करि दाया॥ ते सुशीलवति सनमुख आई॥ यथालब्ध धन दीन दिखाई॥ दोहा॥ इत कछु निज आनित सहत रतिरत जुग कर जोरि॥ वैसहिं दीन प्रवीन नृप विनय कीन नहिं थोरि॥ ११॥ तब स्त्री ते जो है सो हृदय मे विचार करती हुई जायकर के एक धनी के द्वारे पर स्थित होय गई सो लाजवती और अपनी छवी सें कामदेव की स्त्री का मान हरने वाली सुंदरी देखकर कहने लगा कि हे भामनी तूं कौन हैं और इहां किसके साथ कैसे आई है क्या तूं कोई विभचारनी है कि अथवा कोई राज कन्या हैं मेरे को सत्य सत्य कथन

चरन सिर नाये॥ जुगकर जोरि नम्र मृदुवानी॥
वोल्यो सूरसयन सुखमानी॥ सौमि सरूप देखि
प्रभु तोरे॥ उपज्यो प्रेम भक्ति उर मोरे॥ कृपाना
थ मुहि सेवक कीजै॥ सुचि उपदेश मंत्र वर दी
जै॥ दोहा॥ पीपा सुनत वनीत अस सूरसयन
मृदु वानि॥ लागे मनन प्रमोद जुत गिरा रुचिर हि
त सानि॥ जो कर है सुई कार तुव मम नदेश सुख
दाई॥ तो कर हूं सिष तोहि मै सुनहु धरम नि
धराई॥२६॥ टीका॥ तव पीपाजी ने वडे हरष सन
मानसे सो धन का महा हुआ चतुरा विस वै स भक्त को
देदिया ओर कहा कि हे भक्त प्रवीन तुम इस द्रव्य
के साथ घर मै बैठकर आतिथी संत ब्रह्मणो को
भली प्रकार सेवा भक्ती करो तेरे को भक्त सने ही ज
दु ने कृपा करके इतना अनंत दिया है ऐसे क
थन करकर सीता के सहित पीपा नरेस जो हैं
सो तहां से चल पडते भये तव तिन को देखकर
वै स भक्त हाथ जोड कर वडी दीन वाणी से विन
ती करने लगा कि हे कृपानिधान आप ने दया
करके दास को संसार मे कृतार्थ रूप कर दिया॥
अर्थात दीन को जनम मरन का भय जो था सो
सव मिटाय दिया है परन्तूं कहिये कि जन का को
न अपराध है जिससे प्रभू आप मेरे घर को त्या
ग करके चल पडे हो हे दीन सुखदायक हे मीत
हितकारी कृपा करिये और कुछ दिन लग मेरे
हो घर मै वसिये जो मै आछी कर भली प्रकार
आपके चर्नों की सेवा भक्ती कर लेऊं तव पीपाजी
प्रसन्न होय कर वडी मधुर और कोमल वाणी से
कहने लगे कि हे मीत जैसी तुम ने हमारी सि

व कार्ई करी है सो तो कुछ कथन नहीं कीजाती है
परन्तू तुमारे से हो कुछ वन नहीं पड़ा जोतुमारी सि
वार्ई का वदला उतारते तुमधन्य हो ग्रौर तुमारी सि
व कार्ई भी धन्य है ग्रैसे कथन करकर कृष्ण कृष्ण र
टते पीपाजी चल पड़े वे सभक्त ने टालने के
लिये यद्यपि वहुत ही यतन ग्रौर हठ किया तद्यपि
सो नहीं मानते भये चलते चलते दोनो राजा ग्रौर
रानी सूरसयन भूप जो प्रसिद्ध था तिसके नगर वि
खे ग्राय प्रापत हूये तहां कुछ कदिन निवास
जो किया तो वे राजा सूरसयन संतान से हीन था
ग्रथात तिसके घर पुत्र पुत्री कोई नहीं था सो पी
पाजी को सुनकर वड़ा प्रीती भक्ती वाला भया हूं
ग्रा तुरत चला ग्राया ग्रौर तिनका दरसन करते
ही चरनोपर सीस धरदेता भया फिर हाथ जोड़
कर दीन वाणी से विनती करने लगा कि हे कृपा
निधा ग्राप का शांत सरूप देखकर मेरे हृदय मे
प्रेम भक्ती जो है सो उतपन होय गई है ग्रव प्रभू
ग्राप दया करिये ग्रौर मेरे को दीन जानकर ग्र
पने चरनो का सेवक वनाइये ग्रौर पवित्र मंत्र
उपदेश जो है सो दीजिये इस प्रकार सूरसयन की
वड़ी विनती प्रेम वाली कोमल वाणी सुनकर
पीपाजी प्रसन्न होयकर वड़ी हित की भरी हूई वा
णी से कहने लगे कि हे सूरसयन जो कदाचि
त तूं मेरी सुखदायक शिक्षा को हितचित से ग्रह
ण करलेवें तो धरम की निधी मै तेरे को ग्र
वश्य ग्रपना सिष सेवक वनाय लेऊंगा ॥१३॥
चौपाई ॥ तव कर जोरि नरेस उचारा ॥ प्रभु
नदेस मोरे सतकारा ॥ करहु कथन तव दीन
दयाला ॥ तव वोले पीपा महिपाला ॥ भूप

भूप सदन निज संपति जोई॥ मोरे देह सकल तुव सोई॥ सूरसयन बोल्यो कर जोरे॥ प्रमुदित सदन पग तोरे॥ तब पीपा पुनि गिरा उचारी॥ देहो भूप माम निज प्यारी॥ तुरत नरेस गहत कर रानी॥ दीन प्रभौं हरष उर मानी॥ पीपा देखि मोद मन छाये॥ भने वदन मृदु वचन सुहाये॥ सुता समान भूप इन मोही॥ अब जिय लाज सकुच सब खोही॥ संतन सभा बेठि मन भायन॥ करहिं नृत्य कल कीर्तन गायन॥ करि सुइकार सील निधि सोई॥ प्रेम पयोधि मगण मनु होई॥ तब भृत सचिव भूप समुदाये॥ अहन नयन दाहण दिस छाये॥ कहि निंदादि वचन मुखेना॥ इह वि तपत भूप हम जाना॥ तव पीपा वपु दोष निवारक॥ मनु संसार अपार तारक॥ नृप कहे मन्यो पुनि ज्ञाना॥ जो तुव सदन वस्तु वितनाना॥ करि नरेस हरि अरपण सारी॥ होहु विरक्त सुभक्त सुखारी॥ तजहु नवेस मर्याद सुहाई॥ पालहु प्रजा विविध विधि राई॥ दोहा॥ कृष्ण भक्ति रत दिवस निसि सेवहु संत समाज॥ धरम पतनि जुत करहु नृप निस कंटक निज राज॥२४॥

टीका॥ तब राजा सूरसयन हाथ जोड़ कर विनती करने लगा कि दीन दयाल आपकी सुखदायक शिक्षा जो है सो मेरे को सुई कार है मै परम हित मान कर ग्रहण कर लेऊंगा आप कृपा करके कथन करिये ऐसे तिस का वचन सुन कर पीपा जी कहने लगे कि हे राजन प्रथम तो आपने घर की सब संपती मेरे को दे दे तब सूरसयन प्रसन्न होयके कहने लगे कि कृपानिधान लीजिये मेरा राज

कि हे प्यारी प्रातःकाल होतेही तूं वैस भक्त के पास जाय कर मेरा कथन जो है सो इस प्रकार तिसको स्पष्ट कर के सुनाय दे कि हे भक्त इह धन जो है सो तेरे ही भागों का है और यतन के विना सहजे हीं तेरे घर मैं आय गया है अब तूं कृपा कर और आय कर के इस अपने धन को ले जा तहां अपने घर मे यतन के सहित भ भली प्रकार सें भाल कर राख ले इस प्रकार [illegible] प्राणपती का कथन सुन कर के हरष के वश भई हुये तुरत वैस भक्त के पास चली आई तिस के आगे विनती के भरे हुये बडे कोमल वचनों से पती का कथन जो था सो सब सुनाय कर फिर प्रीती सनमान से स्त्री के सहित वैस भक्त को साथ ले कर आनंद पूर्वक पीया जी के पास चली आवती भई ॥२२॥ चौपाई॥ तब सादिर नरनाथ प्रवीना॥ सो वित कुंभ हरषित हि दीना॥ मन्यो संत दुज अतथिन माई॥ इहि सन करहु रुचिर सिव काई॥ तुम पै जदु वर दीन सनेहू॥ करुणा कीन दीन धन एहू॥ अस कहि चले भूप जुत सीते॥ मन्यो वैस तब वचन वनीते॥ कृत्य कृत्य मुहि कीन कृपाला॥ अब कस चले तजत जन आला॥ कछु दिन वसहु मीत सुखदाई॥ मै करि लेहु चरन सिव काई॥ तब नरनाथ परम सुख मानी॥ बोले वदन मधुर मृदु बानी॥ मीत तुम हु जस कीन हमारी॥ सुचि सिव काई न जाहि उचारी॥ पै हमतैं वनि यसो न काहू॥ अस कहि चले पतनि जुत राऊ॥ यद्यपि वैस यतन बहु कीना॥ तदपि रहे न भूप प्रवीना॥ गवन करत दंपति जुग आये॥ सूर सयन नृप नगर सुहाये॥ तहां निवास कछुक दिन कीना॥ ते अपत्य नरनाथ प्रवीना॥ आवा सुनत भक्ति सरसाये॥ देखत दरस

सनातन धरम जो है सो नातयाग और रात्रीदिन कृस्न भक्ती मे लीन होय कर संत समाज को सेवता हुआ अपनी धरम पतनी अर्थात धरम वाली स्त्री के सहित सुखपूर्वक निस केटिक राज कर॥१४॥ चौपाई॥ अस उपदेश पाय नर राई॥ चित जुत कीन गुरन सिवकाई॥ निस प्रेहता पीपा मन माहीं॥ सो सूई कार कीन चित नाहीं॥ सूर सयन नव जुग कर जोरी॥ करत वदन कछु विनय नथोरी॥ वार वार चरनन सिर नाये॥ होत विदाय भवन निज आये॥ उत पीपा अति हृदय हुलासू॥ लगे करन तहि नगर निवासू॥ एक दिवस तहि नगर सुहावा॥ काहु धन जु वनक वर आवा॥ भ्रमत भ्रमत पुर ग्रामन केतू॥ ~~[illegible] [illegible] वृषव निज वेचन हे [illegible] पुर गन काहु नगर तन निवासी~~ काहु दुष्ट जन नगर निवाही॥ तास कीन कपट जुत हासी॥ पीपा नाम भक्त इक भाई॥ ताके सदन वृषव अधिकाई॥ जस भाव हित तस लेहु सुजाना॥ सरस एकतें एक महाना॥ सुनत वैस धूरत अस वानी॥ आवा भक्त सदन सुख मानी॥ करि प्रणाम अस वदन अलायो॥ तुमरे भक्त वृषव सुनि पायो॥ मोतें जथा मोल तुव लेहौ॥ और व वरद नवल कल देहौ॥ पीपा सुनत वनक अस वानी॥ बोल्यो हृदय असंभव मानी॥ मोरे सदन सजन तुव आई॥ आवत वृषव सो कस मुदाई॥ देखि लेहु जस भावत तोही॥ देहु जे पुचित मोल कछु मोही॥ अस कहि सुमरि

ॅँ जमे लाल काल वृषव लेतू॥

भक्त दुख मोचन॥ सोचन लाग मूंदि जुगलोचन॥
मिथ्या वचन वनक सनकीना॥ वरहिं नयतन दे
व कवु चीना॥ दोहा॥ तव देख्यो संध्या समय मुर
मद वरद सहाय॥ आवत वैस्नव काहुइक नगर
विपुन विचराय॥ २४॥ टीका॥ इसप्रकारउपदेश
पाय कर राजा सूरसयन आनंद पूर्वक धनवस्त्र इ
त्यादि से गुरूजी की वहुत सेवकाई करता भया त
व जी महं विरक्त और निसकाम जो थे सो तिसकी
धन की सेवकाई सूईकार अर्थात ग्रहण नहीं क
रते भये यद्यपि सूरसयनने हाथजोड चरनोपर
सीसधरकर वारवार वहुत ही विनती करी तद्य
पि पीपाजी ने सो धन ग्रहण नहीं किया अंतको
विदाय होकर सूरसयन अपने घर को चला आ
या और पीपाजी आनंद पूर्वक तहां तिस नगर
मेंहीं निवास करने लगे एक दिन ~~तिस नगर~~
[illegible] एक कोई धनी वैस जो था सो नगर ओर ग्रा
मों मे भ्रमता भ्रमता वैलों के मोल लेने की इच्छा
वाला तिस नगर विखे आय प्राप्त भया तव ति
सको एक कोई दुष्ट जन कपटसे हासी करकर
कहने लगा कि भाई इस नगर मै एक पीपा भक्त
वास करता है तिसके घर मे अधिक तें अधिक व
डे सुंदर दरसनी वैल हैं तहां जायकर जैसे तुम
को भावते हैं तैसे देखकर मोल ले लेवो सो तुमा
रे साथ भेद की वात नहीं करेगा इसप्रकार सो वै
स धनी तिस धूरत कपटी की वानी सुनकर पीपा
जी के घर मे चला आया तिनको देखकर प्रणाम
किया और कहने लगा कि हे भक्त तुमारे पास
वैल सुणे पाये हैं सो कृपा करके तुम तिनका
मोल लेवो और वडे सुंदर दरसनी वैल जो हैं
सो हम को देवो ऐसे तिसका कथन सुनकर

पीपाजी साधू ग्रौर सरलचित जो थे सो इस कपट को कुछ नहीं जानते भये हृदय मे असंभव अर्थात अन होनी बात जान कर राम ग्रासरे तिस को कहि देते भये कि हे सज्जन सांझ को ~~मेरे~~ घर मे मेरे बैल आवेंगे तिस समय तू आय कर ग्रौर देख भाल कर जो जो तेरे को भावता होगा सो प्यारे तू लेलेना ग्रौर यथा उचित मोल जो होगा सो मेरे को देदेना ऐसे तिस के साथ कथन कर कर भक्त प्रधान पीपाजी भक्तों के दुख हरने वाले भगवान को सुमर कर फिर दोनो नेत्र मूंद कर के हृदय मे सोच ने लग जाते भये कि वैस के साथ मिथ्या वचन कर दिया है देव अब कोई यतन सूझ नहीं पड़ता है इतमे जब संध्या जो पड़ी तों क्या देखते है कि बड़े मद कर के भरे हुये सुंदर दरसनी बैल एक वैसन व वला से चराय विचराय कर के आनंद पूर्वक नगर को चला आवता है॥२५॥ चौपाई॥ तासु देखि पीपाजिय जाना॥ मोर बैज रा खी भगवाना॥ प्रमुदित सीस मनहिं मन नाई॥ हरषि लीन तब वैस बुलाई॥ दीने वृषभ यथा रुचितासा॥ ~~[illegible]~~ लेत वैस निज हृदय हुलासा॥ रुचि अनुसार मोल जस दीना॥ भूप भक्त सादिर तस लीना॥ ~~स्वामी वृषभ वे~~ वृषभ न स्वामी वैसव जोई॥ तो केहु प्रीति भक्ति जुत होई॥ हरि स्वरूप जिय जानि अमेवा॥ करि सादिर पूजन सुचि सेवा॥ कीन विदाय चरन सिर नाई॥ सोवित मोल वृषभ समुदाई॥ कीन विभक्त संत दुज देखी॥ अस उपकार लोक सब लेखी॥ इह कस द्रव्य कहत सब काहू॥ तब बोले पीपा नरनाहू॥ मोरे रहे वृषभ कल गेहा॥ विक्रय कीन लीन धन एहा॥ सुनत लोग मानस विसमान्यो॥

भगवतकीकथा

पीपा

समाज धन संपती जो है सो प्रभू सब तुमारे हीं अ
रपण है तिस पर पीपा जी फिर कहते भये कि हे प्रजा
पाल अब अपनी प्यारी स्त्री भी मेरे को दे दे ऐसे सु
नते ही तुरत रानी का हाथ पीपा जी के हाथ मे पक
ड़ाय दिया और कहा कि प्रभू इह भी आप के अरपण
भई फिर हाथ जोड़ कर कहा कि दीनबंधू और भी आज्ञा
करिये तब पीपा जी राजा का सत्य व्रत जान कर
बड़े आनंद को प्रापत होय गये और बड़े मधुर वच
नों से कहने लगे कि हे नरेस इह तेरी रानी जो है
सो मेरे को पुत्री के समान है अब इह अपने हृदय
की लज्जा संकोच सब त्याग कर संत समाज
मे बैठ कर आनंद पूर्वक सुंदर नृत्य और गायन
जो है सो कर कर भगवान को रिजावे तौ रहे इस प्र
कार सीलता की नि
धी रानी पीपा जी का उपदेश
सुईकार करके मानो प्रेम के समुद्र मे मगन हो
जाती भई ऐसे रानी और राजा की दशा देख कर
तिन के मंत्री सेवक जो थे सो परम कोप से अ
नेक प्रकार दुरवाद कर कर कहने लगे कि ह
मने जान लिया इह राजा तो विलप अर्थी त
बाउला होय गया है तब पीपा जी ने सुरसयन
राजा को शरीर के सब दोष निवारने वाला और
संसार समुद्र के तारने वाला मंत्र उपदेश जो
है सो दे दिया और कहा कि हे राजन जहां लग
तेरे घर मे धन संपती और विभूती है सो
सब कृष्ण अरपण करके जगत मे विरक्तावत
सुखी होय कर विचर और देस की मर्यादा
के सहित अपनी प्रजा को पाल अपना कुलीन

१०८४

नाय करके विदाय कर देते भये और वे बैलों के मो
लका धन जो आया था सो अतिथि संत ब्रह्मणों दे
खकर यथा उचित सब को बांट दिया इस उपका
र को देखकर लोग सब कहने लगे कि भाई इन
के सा धन रहा और कहां से आया था तब पीपाजी
कहने लगे कि भाई मेरे घर मे बडे बडे भारी रहते सो
मैने तिनको बेचकर इतना धन ~~लि~~ लिया था ऐसे
सुनकर के लोग सब अचरज ~~के...~~
के वश होयगये और कहने लगे कि भाई इसकी
भक्ती हमने सत्य जानी है देखो हम यद्यपि इसके
साथ हासी ही करी थी तद्यपि इसने सत्य करके
प्रकट दिखाय दिया है इस प्रकार सब कोई अपने
अपने मुख से पीपाजी की अस्तुती जो है सो गायन
करने लगे तब एक दिन भक्त प्रधान स्नान करने
की अभिलाषा से राजा सूरसेन के दिये हुये घोडे
पर सवार होकर नदी के सुंदर किनारे पर चले आये
तहां एक वृक्ष के साथ घोडे को बांधकर आप न
दी के निरमल जल विषे स्नान करने लगे तब
दुष्ट जनों ने दृष्टी बचाय कर घोडे को तहां से खोल
लिया और लेकर के चले गये इतने मे पीपाजी वृ
क्ष के पास आयकर जो देखने लगे तो तहां घोडा
~~नहीं देखकर~~ तैसे ही बांधा हुआ है तुरत सवार
होयकर अपने आश्रम मे चले आये तिन दुष्टों ने
आयकर जब पीपाजी के घर मे वो घोडा देखा तब
भ्रम के सहित अचरज को प्राप्त भये हुये धायकर
अपने घर मे चले आये तहां घोडे को बंधा हुआ
देखकर फिर उतावल से पीपाजी के घर पर मैं
आयकर देखने लगे तो तहांभी तिनको वैही घोडा

बांधा हु आदे खे पठ॥ २६॥ चौपाई॥ अस प्रकार इत
उत बहु बारा॥ सोऊ तुरग तिन दृगन निहारा॥ अ
त प्रभाव भक्त जिय जानी॥ धूरत नम्र जुक्त जुग पा
नी॥ बारबार मुख बिनय उचारी॥ करहु छमा प्र
भु चूक हमारी॥ अप हृत तुरग ल्याय पुनि दीना॥
निज अपराध कथन सब कीना॥ अति उदार कोम
ल चित साधू॥ छमा कीन तिन कर अपराधू॥ सो
तुरंग जुग भूपति पासा॥ दीन पठाय भक्त गुणरा
सा॥ तदप अन्न दिवस इक पाई॥ कीन गवन का
नन दिषि राई॥ तब त्रिय कहे अस बदन उचारा॥
तोहि आगमन मोर निज द्वारा॥ तब मध्यान का
ल कल पाई॥ यथा अनीत नीत बन आई॥ आ
वत अतथि संत हरषाई॥ बिरचि पाक सब दे
हु जिमाई॥ जब पीपा अस भांति सिधाये॥ पी
छे सदन संत वर आये॥ तुध्यत त्रिषत विथत
त्रिय चीने॥ करि प्रणाम आसन सुचि दीने॥
चारु चरन पखालन कीन्यो॥ ते जल चरन
सीस धरि लीन्यो॥ गई नगर पुनि हरष अघा
ई॥ राजत तहं बनक इक पाई॥ लागी तासु भ
नन मृदु बानी॥ मोरे सदन संत सुखदानी॥ आ
ये अतिथि भ्रमत है चारी॥ मे तुध्यत तिन केरि
निहारी॥ दोहा॥ तुम पे आई भक्त मै तिन हित
लेन अमान॥ जो देहो तब देहिं तोहि मोल मो
र पति प्रान॥ २७॥ टीका॥ इस प्रकार ■■ति
न दुष्ट धूर्तों ने बहुत बार इधर उधर भ्रमकर
ज(न्हें) एकही घोडा दोनो ओर देखा तब हार कर
कहने लगे कि भाई इन तो भक्त के प्रभाव का ■

१-९५

वडाग्रद्भुत चमतकार है इहविचारकर ग्रौर राणजो दोनवाणी से चरनोपर सीसधरकरकेविनती करने लगे कि हे संत कृपाल हमारा ग्रपराध छमाकरिये काणू हम ग्रजान मूढमती तुमारे प्रभाव को कुछ जानते नहीं थे तोते जडता केवश प्रभू हमारे से ग्रनुचित होयगया है ग्रैसे ग्रपना ग्रपराध कथन करकर धूरत जिस घोडे को हरकरके लेगये थे सो ततकाल ल्यायदेते भये संत सदैव उदार कोमल चित ग्रौर दयाकी मूरती होते हैं देखकरके तिनके ग्रपराध को तुरत ही छमा करदिया तब वे दोनों घोडे पीपाजी ने राजासूरसेयन के पास भेजदिये तिसतें उपरांत एक दिन भक्त प्रधान विचरने के लिये कहीं वनावि खे जो चले तव सीते को कहते भये कि हे प्यारी मेरा ग्रावना ग्रव रात्री केसमय होगा तूं मध्यानेकाल मे जे से नीती ग्रनीती करके वनसके घर मै ग्राये हूये ग्रतिसंतों को वनायकरके भोजनजिमायदेना इसप्रकार जव पीपाजी रानी को समुझायकर वन को चले गये तव दैवयोग से पीछे संत जनभी घरमे ग्राय प्रापत हूये तिनतुध्यत ग्रौर विखत ग्रर्थात भूखे प्यासे जानकर सीते ने प्रणाम करकर पवित्र ग्रासनोपर विठाया ग्रौर प्रीतीभक्ती से तिनके चरन धोयकर सो चरनो का जल सनमान पूर्वकग्रपने सीस पर चढायलिया ग्रौर घरमे सिंचन करदिया फिर तुरतही नगर मे चली गई ग्रौर एकवै सधनी का हट पर बैठे हूये देखकर वडी मधुर ग्रौर कोमल

दृढ़ि कर भक्ति सत्य हम जान्यो॥ यद्यपि हम ? की
न्यो परिहासा॥ तद्यपि सत्य प्रतच्छ प्रकासा॥ अ
स प्रकार निज निज मुख नाना॥ लागे अस्तु
ति करन महाना॥ एक दिवस तब भक्त सधीरा॥
चले सनान करन सरि तीरा॥ असारूढ़ धरन पत
दीने॥ आये सरत कूल कल चीने॥ बांधि विटप
सन बाजि सुहावन॥ लगे विमल वर वारि अन्हा
वन॥ तव अवि लोकि लोक ग्रामीना॥ दुष्ट्र बचा
य तुरग हरि लीना॥ अधम लेत जब नगर सिधा
ये॥ तह नर भक्त सुष्टु तब आये॥ सो निज बाजि
जणावत पाये॥ कै असरूढ़ आश्रम निज आये॥
दुरजन देखि तुरग विसमाये॥ सम्भ्रम गव नि
सदन निज आये॥ दोहा॥ तहां विलोकत बाजि वर
द्रुत गति पीपा पाहिं॥ आय सोई देख्यो तिन्है बं
ध्यो तुरग तहि ठाहिं॥२६॥ टीका॥ तब तिस को
देखकर पीपा जी ने हृदय मै जान लिया कि मेरी
पैज भगवान कृपानिधान ने राख लई है अै
से विचार कर दीनबंधू के चरनो को वारवार वंदना
करके फिर आनंद पूर्वक तिस वैसधनी को अप
ने घर मै बुलाय लिया और जैसे वे तिस के
मन को भावते थे तैसे दे दिये सो तिन को लेकर
वडे हरष को प्रापत भया अपनी रुची के अनुसार
जो मोल दिया सो प्रीती सनमान से पीपा जी ने प्र
सन्न होय कर ले लिया तिसते उपरांत वे वैलों
~~का स्वामी~~ के ल्यावने वाला तिन का स्वामी वे
स्व जो था तिस को भगवान का रूप जान कर औ
र भक्ती सनमान से भली प्रकार सब पूजन सेवन
कर कर फिर हरष पूर्वक वारवार चरनो पर सीस

तब वैस धनी जो है सो बडे सुलक्षन अंगोंवाली
सीते के रूप को देखकर कि मानो कामदेव की
स्त्री का भी मान दूर करती है मोहित हो गया और
काम के वश भया हुआ कहने लगा कि हे सुंदरी
मैने तेरा कथन सब मान लिया परन्तु दया
करके तूं भी मेरे हृदय की अभिलाषा को पूरण
कर सो क्या है कि आज की रात मेरे ही पास वास
कर ऐसे तिस का वचन सुनकर सीते जी ने स्
ईकार लिया तब वैस ने जैसा कि योग्य
जाना तैसा अन्न देदिया सो लेकर के सीते तु
रत घर मे चली आई और चौका लगायक
र प्रीती पूर्वक सुंदर भोजन बनायलिया तब
संतों के हाथ और चरन प्रक्षालन करवाय
फिर भक्ती सनमान से सुंदर आसनो पर बि
ठाय भोजन जिमाय दिया तिन तें पीछे जो
कुछ बचा सो संतोष से आप पाय लिया
तिस तें उपरांत बारबार बिनती प्रणाम कर
संत भगवान जो थे सो बिदाय करदिये इतने मे
पीपा जी भी घर मे आय प्रापत भये तब सीते
ने चरनो पर प्रणाम करके जिस प्रकार वैस
धनी से अन्न लेना और रात्री को तिस के पा
स जाने का बोल करना फिर संतो को भक्ती
भाव से भोजन जिमाना इत्यादि वृतांत जो
था सो भली प्रकार सब सुनायदिया तब पी
पा जी सुन करके प्रसन्न होयगये और हर्ष
से कहने लगे कि प्यारी अब बिलंब को त्याग
कर अपने वचन को सफल कर तिस हित
कारी वैस के पास शीघ्र चली जा नहीं तो

वाणी से कहने लगी कि हे धनी प्रधान आज मे
रे घरमे दीनसुखदायक कई दो चार संत महातमा
जो हैं सो भ्रमते भ्रमते आय प्रापत भये हैं और मे
तिनको भूखे विचार कर हे भक्त जन तेरे पास
कुछ अन्न लेने को आई हूं जो तूं दया करके मे
रे को संतों के लिये अन्न दे देवेगा तो मेरा पती आ
य करके इस अन्न को मोल जो होगा सो तेरे को सब
दे देवेगा ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ वै सवि लेकि रूप मृदु अं
गी ॥ मन हुं मदन तिय मान विभंगी ॥ को ल्यो वि
कल विवस पचवाना ॥ सुंदरि कथन तोर सब
माना ॥ पै पुर करहु मोर तुव आसा ॥ वसहु आ
जे जाम निमम पासा ॥ तिय सुई कार सुनत अ
सकीना ॥ वनक अमान्न उचित जस दीना ॥ ले
त तुरंत सदन निज आई ॥ सादिर सरस पाक वि
रचाई ॥ प्रथम चरन प्रक्षालन कीने ॥ व हुरि जि
माय संत वरदीने ॥ आपु कीन कछु शेष अहारा ॥
पुनि प्रणाम करि वारहिं वारा ॥ कीन विदाय से
त समुदाये ॥ तव पीपा आश्रम निज आये ॥ सी
ते देखि चरन सिर नावा ॥ यथा अमान्न वन
क पें पावा ॥ सो संकेत निसी निज जाना ॥ संत
जनन जस भोजन पाना ॥ दीन पृथक निज पति
हिं सुनाई ॥ सुनि के ले पीपा हरषाई ॥ अव विलं
व परि हरि तुव प्यारी ॥ ~~साधु~~ वचन निज हृदय
संभारी ॥ तहिं ये जाहु परम सुख मानी ॥ होव कि
नतर धरम कर हानी ॥ पति मुख सुनत वचन
हित कारी ॥ लगी करन तिय चलन तयारी ॥
दोहा ॥ तव छायो मग गगन घन गरजि
~~जोर कर सोर~~ म गरजि ● छुट जोर ॥ झूम झूम
लाग्यो झरन धरन वार चहु वोर ॥ २३ ॥ टीका ॥

हरिः

२-८१

गत माहीं॥ कछु विचार वन आवत नाहीं॥ दोहा॥
मातिरूप तव सिय चरन जात जुगल कर जोर॥
करि प्रनाम नम्रत भनत भई चूक रहन मोर॥ नम
हो जानि अजान मोहि निज करुणा करि मात॥ जा
नि नसको प्रभाव तुव अधम निरत अज्ञात॥ २८॥
तव सीते देखकर भय के वश होय गई और कहने
लगी कि हे प्राणपती अब इस घोर वरषा मे मे
रा जाना कैसे होगा ऐसे सीते का वच
न सुनकर पीपीजी एक वस्त्र तानकर और तिस
के नीचे सीते को राखकर आप ले करके चल पड़
ते भये जब वैस के द्वार पर आय प्रावत भये तव
सीते को कहने लगे कि हे प्यारी तूं अब आगे च
र मे चली जा और जब लग तूं नहीं आती
तब लग मै ईहां द्वार मै ही स्थिर रहूंगा इस प्र
कार पती की आज्ञा पाय कर सीते भीतर घर
मे चली गई तब तिस को देखकर अचरज के
वश होय गया और कहने लगा कि आज ऐसी
महा घोर वरषा मे हे भामनी तूं किस प्रकार
और कौन धीरज से आई है सीते कहने
लगी भई कि पती जो है सो मेरे पर वस्त्र
देकर यतन से वरषा की रक्षा करता हुआ आप
पने साथ लिये चला आया है अब मेरे को
नर भी मे जकर आप द्वारे पर स्थित भया हुआ है
ऐसे सीते का कथन सुनकर वैस तुरत बाहर
चल आया तव क्या देखता है कि पिता के समा
न पीपाजी द्वारे पर स्थित भये हुये है तिन को देख
कर संदिग्ध चित भया हुआ फिर आय कर के
सीते को देखने लगा तव सो आगे प्रनत माता

"अस्य मैं कुछ और सीते को उनको भगवती है

सुशीले धरम की हानी होती है संसार मैं वचन
का पालना बड़ा कठिन है वचन के खंडित होने
से परलोक बिगड़ जाता है इस प्रकार पती के मु
ख से बड़े हित के वचन सुनकर सीते तुरत नहा
जाने को तयार होय गई तब तिस समय देव यो
ग से आकाश मारग विखें महा घोर घटा
के बादल जो हैं सो छायमान भये हुये बड़े गर
ज गरज कर और झुक झुक कर मानो मूसल धा
र से पृथवी तल पर बरसने लग जाते भये ॥५॥
चौपाई ॥ तब दशरथ त्रिय वचन बखाना ॥ अब कस
होहि प्राणपति जाना ॥ पीपा सुनत बसन निज ली
ने ॥ त्रिय तन करन अछादन कीने ॥ गवन्यो लेत
बँनकर गेहा ॥ भयो द्वार प्रापत जब तेहा ॥ तब सीते
सनगिरा उचारी ॥ जाहु भवन आगल तुव प्यारी ॥
मैं इत रहूं ठाढ थिर द्वारा ॥ जो लो होहि आगमन तु
मारा ॥ अस सीते आयस पतियाई ॥ सकुचित वे
स भवन चलि आई ॥ तेमा विपुल चकित दृग
देखी ॥ आजन गगन घन वृष्टि वसेखी ॥ तो आगम
न कमन विध भयो ॥ तब त्रिय बदन वचन अस
कैहो ॥ पति पट करत अछादन मोरे ॥ लावा
ई नो सदन सुम तोरे ॥ आपु सु रह्यो द्वार थिर
होई ॥ सुनि त्रिय कथन बनक वर सोई ॥ देख्यो
भवन बहिर जब आये ॥ पितु समान पीपा दर
साये ॥ बहुरि होत संदिग्ध पराई ॥ देख्यो त्रिय हिं
वेस जब आई ॥ सदृश जननि दरस विदाता ॥
परयो दृगन दृष्टि सुखदाता ॥ भयो नमगलाउ
दधि संदेहा ॥ कहत कौन कस कारण एहा ॥ ज
ननि जनक बहु काल बतीते ॥ मृत बस
विदत आज मै चीने ॥ अस तहि भ्रमत गता

पीपाचरित्र

क

तववैसके वडेविनतीवाले वचन सुनकर पीपाजी
भी तहां भीतर चलेआये और प्रसन्न होयकर कहने
लगे कि वैसभाई सीते तेरा वचन मानकर इहां ते
रे घरमें चली आई है इसका प्यारे तेरे को कुछ दो
षनहीं है और इहसी भी अदोष है मेरे को भी को
ई रोष क्रोध नहीं है तूं ने वृथा अपने चित्तमें क्यों
दोष माना है ऐसे पीपाजी का कथन सुनकर वैस
जो है सो रोदन करकर कहने लगा कि हे धरमातमा
मैं आपके चरनो को वारंवार वंदना करता हूं और तु
म मेरे सत्य करके मातापिता हो मेरे से जो अनु
चित अपराध भया है सो तुम बालक जानकर कृ
पा करके क्षमा करो॥ क्योंकि तुम संत उदार और
उपकार की मूरती हो मेरे को मन वचन काया से
अपने चरनो का दास जानकर और आसीसादेक
र आनंदपूर्वक अपने आश्रम को सिधारो इसप्र
कार वैसके वडे नम्रविनतीवाले वचन सुनकर
धरम पतनी के सहित पीपाजी हरषसे
अपने आश्रम को चले आये और उहां वै
स भी सुखपूर्वक अपने घरमें
विराजता भया जब रात वतीत होयगई तब
दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर पीपाजी के
द्वारपर आयकर हाथजोरकरके दीनभावसे
चरनोंपर प्रनाम करता भया॥२०॥ चौपाई॥
असप्रकार निसिदिवस अमेवा॥ वीत्योकाल
करत सुचिसेवा॥ पीपा देखि तासु सिवकाई॥
मनवचकरम भक्ति अधिकाई॥ मनुउपदेश
प्रीति जुत दीना॥ चारुचरन निजसेवक कीना॥
तव तें तासु वैस वडभागी॥ हरिपद

नलन प्रीति दृढ लागी॥ भक्त प्रधान जगत विख्या
ता॥ भयो सु गुरु प्रसाद सुखदाता॥ इह वृतांत
अदभुत मन भावा॥ जव नृप सूरसयन सुनि पावा॥
सकल नगर सासन निज ~~कहेउ पीपा~~ दीनो॥
पीपा विदत मोर गुर चीनो॥ जो इन कहें पितु मा
न समाना॥ भक्तिभाव जुत करहिं नगाना॥ सो
मम प्रकट देह कर योगू॥ सुनत भूपका सासन
सव लोगू॥ जननि जनक सम जानि अमेवा॥
लागे करन भक्ति जुत सेवा॥ तव पीपा मान स
हर धाये॥ करि निज गवन भवन नृप आये॥
सूर सयन चरनन सिर नावा॥ गुरु कृपाल तव
वचन अलावा॥ सुत वहीन तिय जवन तुमा
री॥ तासु लेहु नृप वेग हंकारी॥ गुरु नदेस छि
तपत अस मानी॥ वोलि लीन सुत गत निजरा
नी॥ होत तासु सनमुख तत काला॥ धरि गुरु
सिंह रूप विकराला॥ वदन वाय वहु गरजन लागे॥
लोक विलोकि विकल भय भागे॥ दोहा॥ नृ
प अदभुत तकि चकित चित कंपि रह्यो थिर
होय॥ महिषी सनमुख त्रास गत गई सकुच
भ्रम खोय॥ २२॥ टीका॥ इस प्रकार वै सके गु
रु जी के घर मै नित्य आवते और रात्री दि
न सेवा करते को कुछ काल वतीत होय गया
तव पीपा जी तिस की सेवा भक्ती देख कर प्रसन्न
भये हूये विधी के अनुसार तिस को सरव सुखदा
यक मंत्र उपदेश जो है सो दे देते भये और आप
ने चरनों का सेवक कर लेते भये तव ते तिस
वड भागी वैस को भगवान के चरन कमलों की
दिन दिन अधिक ही प्रीति वढती जाने लगी

सो गुरू पीपाजी के प्रसाद तें थोड़े ही दिनो मै
जगत विखे बड़ा भक्त प्रधान प्रसिद्ध हो जाता भया
इस अद्भुत वृतांत जब सूरसयन राजा ने सुन
पाया तब आपने संपूर्ण नगर मै आज्ञा प्रचल
त कर देई और सब को सुनाय दिया कि इन पीपा
जी महातमा मेरे गुरदेव स्वामी हैं जो कोई इन
माता पिता के समान नहीं जानेगा और तैसे ही
आदिर सनमान नहीं करेगा सो भली प्रकार मेरे
दंड का कलेश पावेगा ऐसे राजा की आज्ञा
पाय कर सब लोग पीपाजी को गुरू माता पिता
के समान जानकर बड़े प्रीती भाव से सेवा भ
क्ती करने लगे तब पीपाजी प्रसन्न भये हुये रा
जा सूरसयन के घर मै चले आये प्रजा पाल आ
य कर चरनी लागा गुरूजी दया के वश भये हूये
कहने लगे कि हे राजन पुत्र के विना जो तुमा
री स्त्री है कि जिसके घर मै कोई संतान नहीं है सो
तिसको तुम शीघ्र बुलाय लेवो तब गुरूजी आ
ज्ञा पाय कर राजा अपनी संतान रहित स्त्री कि
जिसके घर मै पुत्र नहीं तुरत बुलाय लेता भ
या सो जब सनमुख आई तब गुरू को नुकी
तुरत महा भयंकर सिंह रूप धार और मुख खो
ल कर बड़े जोर शब्द सें गरजने लगे बड़े तिन
का ऐसा कराल भेष देखकर भय के मारे लो
ग सब भाग गये राजा इस अद्भुत चरित्र को
देखकर अचरज को प्राप्त होय गया परन्तु के
पायमान भया हुआ तहां हीं स्थित रहा और रा
नी जो थी सो भय संकोच को त्यागे हूये अभ
य होय कर नरसिंह भगवान के सनमुख
चली आई ॥२२॥ चौपाई ॥ सिंह रूप कौतु
क धृत जोई ॥

कारूप देखपड़ी तब तो वैसे मान संदेह के समुद्र में डूबगया अर्थात अत से करके भ्रामिक चित होयगया और हृदय में कहने लगा कि अहो कौन कारण भया कुछ जान नहीं पड़ता है देखो बहुत काल के मृत भये हुये मात पिता आज कों कर प्रतक्ष देखपड़े हैं ऐसे तिसको इधर उधर भ्रमते भ्रमते को कोई विचार भी बनन हीं आवता है तब अंतका माता रूप जो सीता थी तिसके चरनो ऊपर दीनवत प्रणाम करके हाथ जोड़ कर विनती करने लगा कि जननी मै अजान मूढ़मती और अधम अज्ञानी तेरे अनंत प्रभाव को कुछ जान नहीं सका तां तें तू कृपा करके मेरा अपराध को क्षमा कर और अपना बालक जान ॥२९॥ चौपाई ॥ विनय वचन सुनि वनक सुहाये ॥ पीपा द्रुत भीतर चलि आये ॥ भने प्रसन्न वदन शुभ वानी ॥ वैस तुमार वचन प्रिय मानी ॥ ईहां भवन तोरे चलि आई ॥ उहि कर तोहि दोष नहिं भाई ॥ अरु अदोष प्रिय दोष न मोही ॥ तात लोभ उपज्यो कस तोही ॥ पीपा कथन सुनत सुखदाया ॥ वैस रुदन करि वचन अलाया ॥ बारबार वंदहुं पद तोरे ॥ तुम हू सत्य मात पितु मोरे ॥ भयो अनुचित भवन अपराधू ॥ बालक जानि क्षमहु सुसाधू ॥ मन वच करम दास पद चीने ॥ जाहु भवन प्रभु आसिष दीने ॥ नम्र वचन सुनि वनक सुहाये ॥ पत नि सहित पीपा हरषाये ॥ कीन रुचिर आश्रम निज थाना ॥ उत गृह गये वैस सुख माना ॥ दोहा ॥ दूसर वासर प्रात उठि वैस राज ऋष द्वार ॥ जाय कीन जोरत करन दंपति चरन जुहार ॥ टीका ॥

वाली से कहने लगे कि हे राजन संतान के विना तेरी रानी को देखकर मेरे हृदय मै वड़ा शोक उतपन्न होय रह्या सो भगवान कृपानिधान ने तेरे को पुत्र दे दिया है और इह कैसा वी पुत्र है कि वड़ा सुंदर सील सरव गुणों का समुद्र और तेरे वंस को उजागर करने वाला है भूप तूं इस को ले और प्रीती पूर्वक पाल ऐसे गुरु जी का वचन सुन कर परम हरष से राजा और रानी वारवार स्वामी जी के चरनो पर सीस धरने लगे फिर प्रीती सनमान से वालक को ले कर और हृदय से जुड़ाय कर मंत्री सेवकों को वुलाय कर के आज्ञा देते भये तव ततकाल राजा के भवन द्वार मै अनेक प्रकार के मंगल और उतसव आनंद जो हैं सो होने लगवरे ईहां पीपा जी भी कृस्न परमात्मा को सुमरते हूये आनंद पूर्वक अपने आश्रम को चले आये दिन दिन भक्ती भाव के सहित भगवान का पूजन ~~करते~~ करते और अतिथि संत व्राह्मणों को सेवते हूये अनेक प्रकार के वड़े उग्र करम कर कर संपूर्ण जगत मै प्रसिद्ध हो जाते भये एक दिन तिस नगर मै दो चार दुष्ट धूरत मिलकर ~~और वनावटी संत भेष वना~~ ~~कर~~ भक्त प्रधान पीपा जी की परीक्षा लेने के लिये चले आये तिन मै से एक धूरत संध्या के समय पीपा जी के पास आय कर कहने लगा कि हे भक्त मै अतिथी संत तेरे घर पर चला आया हूं और तेरे से इह मांगता हूं कि तूं अपनी सुख दायक स्त्री जो है सो आज की एक रात के लिये मेरे दे दे प्रातःकाल होते मै तिस को ईहां तेरे घर मै हीं

और कपटी संत

छोड़ जाऊंगा ऐसे तिस कपटीका वचन सुनकर
साधू सरल चित पीपाजी सूई कार करके लेते
भये कि सत्यवचन ले जाइये ॥२२॥ चौपाई त्रिय
कहे भन्यो जाहु तुव भामा॥ करहु अतिथि मानस
फुरकामा॥ पति सासन सीते अस पाई॥ तहि सन
बहिर भवन जब आई॥ तव आश्रम निज धूरत का
हीं॥ भूलि गयो आवत सुधि नाहीं॥ इत उत भ्र
मत विकल चहुं ओरा॥ जहं तहं करत मनुज ग
ण सोरा॥ अस प्रकार निसि सकल बितायो भ्रम
त तास कछु ठौर न पायो॥ पीपा द्वार भोर भई
आवा॥ तव सीते अस वचन अलावा॥ भये
आज दूसर दिन साधू॥ मैं निज जाउं छमहु
अपराधू॥ तास लजित कछु कह्यो न बानी॥
त्रिय निज आई भवन सुखमानी॥ निसि वृ
तांत सव पतिहिं सुनायो॥ पीपा सुनत निकट
तहि आयो॥ भन्यो संत कस सोच तुमारे॥ का
त्रिय कछु कटु वचन उचारे॥ धों तुमार कछु
कथन न कीना॥ जहितें तुम्हहुं सोच मन लीना॥
धूरत सुनत भक्त अस बानी॥ भयो नम्र गण
लाज निधानी॥ करि प्रणाम अस वचन वहो
री॥ बोल्यो नम्र जुगल कर जोरी॥ जन तें भयो
विपुल अपराधू॥ छमहो दीन दयाल तुव साधू॥
अस कहि बार बार सिर नाई॥ निज आश्रम धूरत
जब आई॥ आन कपटि संतन सारा॥ सो वृतां
त करि प्रकट उचारा॥ ते हैं दिगध सकल उ
त करि प्रकट उचारा॥ पीपा त
ठि धाये॥ क्रीड़ा करन भक्त गृह आये पीपा त
किति न विविध हुलासन॥ पूछि कुसल दीने
सुभ आसन॥ दोहा॥ तव लै धूरत सकल हम
जाचिन तुव नारि॥ आय भक्त तुव भवन चलि

पूर्वी है आस हमारी॥२३॥ टीका॥ तव सीते
को कहने लगे कि हे प्यारी अव तूं इसके साथ जा
और अतिथी संत के हृदय की अभिलाषा जो है सो पूर्ण
कर इस प्रकार सीते पती की आज्ञा को धर कर तिस
धूरत के साथ चल पड़ी और जब घर से बाहर नि
कल आये तव तिस कपटी को जाते जाते अप
ने आश्रम का मारग अर्थात रस्ता जो था सो भू
ल गया और भ्रमता भ्रमता व्याकुल होय गया ज
हो जाता तहाँ हीं मानुष्य बोलते सुना पड़ते हैं
इस प्रकार अंत को सारी रात वतीत होय गई भ्रम
ते हूये तिस साधू धूरत को कहीं ठौर नहीं मिला
तव प्रातःकाल होते फिर कर पीपा जी के द्वार पर
हीं आय प्राप्त भया इतने मैं सीते कहने लगी
कि लो साधू जी आज दूसरा दिन होय गया
मेरा अपराध क्षमा करिये मैं अपने घर को जा
ती हूं वे लज्या का मारा कुछ बोल नहीं सका
सीते अपने घर को चली आई और रात्री का
वृतांत पती को सव सुनाय देती भई तव पीपा
जी सुन कर तिस साधू के पास चले आये और क
हने लगे कि महात्मा तुम सोच के वश क्यों हो
य रहे हो क्या कोई सीते ने मत क्रूर वचन क
हा है कि अथवा तुमारा कुछ कहा नहीं माना
जिसतें तुम ऐसे चिंता सोच मैं लीन होय रहे
हो इस प्रकार पीपा जी का कथन सुन कर
साधू मानो लाज के समुद्र मैं डुव गया फिर
प्रणाम करके वडी दीन वाणी से हाथ जोड़
कर विनती करने लगा कि हे दीनदयाल हे
संत कृपाल नाथ मेरे तें वड़ा भारी अपराध

तो लो भयो अेन्रागत सोई॥ अकस्मात तव क्रो
ड़ महीपा॥ भाउतपन्न वाल कुलदीपा॥ पी
पा देखि भने मृदुवानी॥ विनु संतान भूप तुव
रानी॥ मोरे देखि शोक उपजाना॥ नृप तोहि
दीन सुवन भगवाना॥ सुंदर सील सकल गु
ण नागर॥ लेहु करन तुव वंस उजागर॥ त
व नरेस हरषत जुत रानी॥ करि प्रणाम जुग
जोरत पानी॥ सादिर लाय वाल उरलीना॥
कोलि सचिव सासन सुभ दीना॥ मुदमंगल
केल विविध प्रकारा॥ लागे होन भूपवर द्वारा॥
पीपा सुमरि कृष्ण भगवाना॥ कीन मुदित
आश्रम निज प्याना॥ भक्तिभाव जुत पूजन
देवा॥ अतिथि संत वैश्नव द्विज सेवा॥ करि
करि उग्रकरम कलकाही॥ भये प्रसिद्ध स
कल जग माहीं॥ एक समय तहि नगर मझा
रा॥ कपटि संत धूरत द्वै चारा॥ शीक्षा करन
भक्त वर आये॥ तिन मध एक कपट सरसाये॥
सायंकाल द्वार तहि आवा॥ सुनहु भक्त मुख व
चन अलावा॥ मै अतिथी आवा तुव गेहू॥
जाचिन करहु भक्त मुख एहू॥ तुव निज पत
नि रुचिर सुखदाई॥ मोरे देहु आज निसिमाई॥
दोहा॥ छाडि जाऊं मै सदन तुव तहि कर प्रा
त प्रवीन॥ सुनि पीपा अस कथन तहि हरषि सी
स धरि लीन॥ २२॥ टीका॥ तव कौतुक सें जो
सिंह रूप वने हुयेथे सो तुरत हीं लुपत होय
गये अकस्मात हीं राजा की गोद मै एक
माने कुल का दीपक वाल जो है सो उतप
न्न होयगया पीपाजी देखकर वडी मधुर

८ पीपा जी

१:२२

मुदाये॥ धीरज धरत बहुरि फिरि आये॥ तियपद कंज नम्रसिर नायो॥ जोरि जुगल कर विनय अलायो॥ हम अजान जान्यो कछु नाहीं॥ आय मात [struck] काहीं॥ सो प्रभाव तुव देखि वसेखो॥ जाय न चरित चारु कछु लेखो॥ जानि दास निज चरन असाधू॥ छम हु हमार जननि अपराधू॥ नम्र वचन तिन कर सुनि काना॥ भन्यो वचन पीपा सुखदाना॥ हम नाहिन प्रीवा कर जोगू॥ संत जनन जन जानत लोगू॥ भूरि भाग तुव संत हमारे॥ करुणा कीन चरन निज धारे॥ भयो आज हरह पावन गेहू॥ हम करें कीन सफल तुव नेहू॥ साधु सुनत पीपा अस बानी॥ ज्ञान विवेक रुचिर हित सानी॥ करि प्रणाम मानस हरषाये॥ चले भवन निज हेत विदाये॥ अस प्रकार पीपा नरराई॥ [struck] भक्ति भजन भगवन बलपाई॥ वे सम व प्रवर भागवत नागर॥ भयो लोक परलोक उजागर

दोहा॥ दोहा॥ तांते भगवन भक्ति सम आन धरम नहिं कोय॥ सेवत सुख प्रद सुजस प्रद सँ काम प्रद सोय॥ २४॥ टीका॥ तब पीपा जी संतों की ऐसी वाणी सुनकर परम प्रसन्न होय कर अपनी स्त्री को कहने लगे कि हे प्यारी अब तू सुंदर वस्त्र और भूषणों से अपना भली प्रकार सुभ सृंगार कर [struck] संतों की प्रसन्नता के लिये लज्जा और संकोच को त्याग और रहन के [struck] चली जा इन संत महात्मा ते रे को जो सिव काई कहें [struck] सो तू घर नो पर सीस नाय कर इन को भली प्रकार [struck] से तुष्ट और

कल

पुष्प

प्रसन्न कर ऐसे पती की आज्ञा पाय कर सी
ते ने तत काल सुंदर भूषण और वस्त्रों से अ
पना शुभ शृंगार जो है सो सब कर लिया अ
सी नीकी बनी कि रूप की छबी को देखकर का
म देव की स्त्री भी लज्जा को प्राप्त होती थी भ
ली प्रकार सज सजाय कर और द्वार मे न्यारी
विराजमान होय कर तिन धूरत साधुओं को
बुलाय भेजा सो अधम सुनते ही आने के से
तत काल चले आये और द्वार दलीज पर स्थित
होय कर जब दृष्टी जोड़ कर सीते की ओर देख
ने लगे तब वे माई तिन को महा भयंकर सिंह
रूप जो है सो देख पड़ी इस प्रकार देखते ही भय के
बस व्याकुल भये हुये धीरज को त्याग कर त्राहि
त्राहि पुकारते हूये पीछे को भाग चले तब तिन
को भागे जाते देखकर पीपा जी वेग से आगे आ
य कर कहने लगे कि हे तो तुम क्यों भागे जाते हो
सावधान रहो कुछ भय त्रास नहीं है ऐसे पीपा
जी का कथन सुन कर वे साधू हृदय मे धीरज
धार फिरत ही हीं फिर कर के चले आये और
आवते ही सीते जी के चरनो पर प्रणाम कर
के हाथ जोड़ कर दीन वाणी से बिनती करने
लगे कि हे मैया हम अज्ञान महा मूढ ते री
परीक्षा करने को आये थे सो देवी तेरा अनंत हीं
प्रभाव देखो है तें अद्भुत चरित्र की कुछ
पार नहीं पाया जाता अब कृपा करके हम को अ
पने चरनो के सेवक और असाधू जानकर हमा
रे अपराध को क्षमा कर ऐसे तिन के बिनती वाले
बड़े दीन वचन सुनकर पीपा जी कहने लगे कि हे
ते हमारी क्या प्रीता है क्योंकि हम किसी लायक

ऐसे

और धीरज धर कर

भी नहीं हैं केवल संत जनो के दास सेवक हैं आ
ज हमारे धन्य भाग हैं जो आपने दया करके ई हो ह
मारे घर मे चरन धारन किये हैं आज ई ह घर जो है
सो पवित्र होय गयो है और तुमारे प्रसाद से हे संतो
जगत मे हम भी सफल होय गये हैं तब साधू ज्ञा
न विवेक और प्रीती सनेह की भरी हुई पीपाजी की
वाणी सुनकर वारंवार प्रणाम करके बडे हरष प्रे
म से विदाय होयकर अपने आश्रम को चले
गये ॥ नाभादासजी कहते हैं कि हे संतो ई स
प्रकार सरव जीवों के हितकारी पीपा नरेस कृस्न
भगवान की भक्ती और भजन का बल पाय कर
परम वैस्नव भक्त होयकर लोक परलोक मे उ
जागर हो जाते भये ताते हे संतो भगवान की भ
क्ती के समान संसार मे और कोई भी धरम नहीं है
ईह कैसी भी भक्ती है कि सेवन करने तें मानुष्यों
को सरव सम्पती और सुजस कल्यान के सहि
त संपूर्ण कामना के देने वाली है ॥२४॥ इति श्री
भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ति महातमे भाषा टी
कायां पीपा चरित वरणनं नाम सरगः

हो यगगयाहे आप श्रीगंगाजी सरूपहो दयाकरकेक्ष
मा करिये ऐसे विनती करकर धूरत जो है सो अ
पने आश्रम पर चला आया तहां और साधू वै
स्नव जो थे तिनके साथ सव वृतांत प्रकट
करके सुनाय [struck] देता भया सो सुनकर वडे अ
चरज के वश भये हूये प्रीक्षा करने केलिये तुर
त भक्त प्रधान के घर मे चले आये तव पीपाजी
तिनको देखकर वडे आनंद से कुसल पूछकर
पवित्र आसनो पर विठाय लेते भये ऐसे तिन
का सतकार देखकर धूरत साधू कहने लगे कि
हे भक्त उत्तम हम तेरे घरमे मांगने केलिये आ
ये हैं अव तू उपकार करके इह अपनी स्त्री जो
है सो हमको दे और हमारे मन की अभिलाषा
को पूर्ण कर ॥२६॥ चौपाई ॥ सुनि पीपा संतन
असवानी ॥ परम हरष निज मानस मानी ॥ सि
य कहं भन्यो वेग तुव प्यारी ॥ लेहु वसन सुभ
भूषण धारी ॥ नख सिख ललित अलंकृत हो
ई ॥ सुकुच लाज संतन छित खोई ॥ जो तोहि
करहिं कथन सिव काई ॥ प्रिय सव करहु चरन
सिरनाई ॥ सिये पाय सासन पतिप्राना ॥ सजि
[struck] सिंगार आभर्न नाना ॥ मानहु मदनना
र छवि लाजी ॥ सज सजाय निज भवन विराजी ॥
सो धूरित तव वोलि पठाये ॥ प्रमुदित द्वार दहिर
जव आये ॥ दृष्टि जोरि जव कीन नजारा ॥ व्या
घ्रेरूप तव सियहि निहारा ॥ त्रासित विकल सु
कल धृति त्यागे ॥ त्राहि त्राहि करि पाछे लभा
गे ॥ पीपा द्रुत धावन तिन चीना ॥ कतपरात
धीरज अस दीना ॥ सुनि तिन कथन साधु स

तुमहिं नउचित करन अस सेवा॥ विप्रधरम पूजन देवा॥ दोहा॥ यद्यपि कीन्यो वार वहु दुजवर वारन तास॥ तद्यपि मिटत न सो भयो तव सुविप्रकरिहास॥ गहित गरव प्रस तर तुरत तास करन धरिदीन॥ इहठाकर पूजन उचित तुम कहे भक्त प्रवीन॥ २॥ टीका॥ नाभादास कहते हैं कि हे संतो अब और वडी शुभ और सुखदायक गाथा जो है सो मन मान से ध्यान देकर श्रवण करिये कैसी भी गाथा है कि जिसके श्रवण करते ही जदुनंदन भगवा न की पवित्र और निरमल भक्ती हृदय मे तुरत उपज आवती है मथुरा के परे एक सुंदर ग्राम जो था तहां आभीर अर्थात गोप वंस विखें सरल सील और साधू सुभाव वाला एक धन्ना नाम करके प्रसिद्ध होता भया सो माता पिता स्त्री पुत्र इत्यादि कुटंवके सहित अ पने घरमे सुख पूर्वक निवास कर कर नित्य गौअन की सेव काई मे लीन रहता था प्रा तः काल उठ करके वण विखें चला जाता और गौअन को भली प्रकार चरायकर फि र सांझको सुखपूर्वक घर मे चला आवता ऐ से तिसको नित्य वण मे जाते और गैयन को चराते चराते कुछ समय वतीत होय गया तव एक दिन कोई अति धी ब्राह्मण पवित्र सनान और पूजन का स्थान खोज ता और भ्रमता हूआ तिस के द्वार पर आय

प्रापत भया सो तहां जलके सहित सुंदर गौस्थान का स्थान देखकर और पवित्र जानकर ~~बैठ गया तिसतें उपरंत~~ प्रथम स्नान किया तिसतें उपरांत सुंदर लेपन देकर और पूजा का समाज सब सजायकर प्रीती भक्ती से बैठकरके पूजन करने लगा पड़ा इतने मे धन्ना भी गौओं को चरायकर घर मै आय गया तब आगे सुंदर मनको भावता शालिग्राम भगवानका पूजन होता देखकर लोपजो है सो परम हरष ~~[illegible]~~ को प्रापत हूआ और बडी अभिलाषा रुचीवाला होयकर कहने लगा कि मेरे भाग्य कब उदय होवैं जो मै भी इसप्रकार शालिग्राम भगवानका पवित्र पूजन [illegible] और सेवन जो है सो करूं तब वे ब्राह्मण भगवान कृपानिधानका पवित्र पूजन करकर जब चलने को तयार भया तब धन्ना हाथ जोड़कर बडी दीनतासे विनती करने लगा कि हे दुजप्रधान अब दया करके अपने चरनोका सेवक जानकर भक्तसहायक भगवान की एक पवित्र शिला मेरेको भी दान करो ऐसे धन्नेका वचन सुनकर दुजउत्तम कहने लगे कि भाई इसप्रकार भगवान के पूजन करनेका तुमको अधिकार नहीं है इह तो ब्राह्मणकाही धरम है ऐसे यद्यपि ब्राह्मणने तिसको वारवार ही निवारण किया तथापि सो नहीं मिटता भया अंतको तिस ब्राह्मण

ने तासीमे एक भारासा पत्थर लेकर और धवा
केहाथ देकर समुझायदिया कि तू इसकी पूज
न सेवन किया कर इसठाकुर तेरे पूजन करने
के लायक है॥२॥ चौपाई॥ होत न हरिचरन नि
श्चय दृढ़ जाहीं॥ का न होत फुर संसृति ता
हीं॥ साधू सरल कपट गत धन्या॥ तहिनि
ज इष्ट देव जिय मन्या॥ करि प्रनाम नयन
न उर लाई॥ पट लपेटि द्रुत सीस उठाई॥
बहुरि बिप्र वत धारन ग्रीवा॥ करत पयू
ष प्रेम मनु पीवा॥ [illegible] चल्यो चरन हि
त कानन गैया॥ उर उतसाद भक्ति सुखदै
या॥ [illegible] कंधे करन कल सोटी॥ बांधे
बाति बसन जुगरोटी॥ अस विचार मान मनि
ज ठाना॥ करि पूरब पूजन भगवाना॥ प्रभु
हि रुचिर नैवेद लगाई॥ पाछे लेहुं शेष क
छु पाई॥ अस विचारि सरिता तट गययो॥
करि स्नान पावन तन भययो॥ कीन्ह त
पुष्प द्रोण धरि लीने॥ बैठो सथल अम
ल सुभ चीने॥ राखि परण हरि शिला
सुहाई॥ करि सप्रीति पूजन मन लाई॥ भो
भोजन बांधित पट बासा॥ सन मुख राखि
भक्ति जुत तासा॥ करत करत कल बहुत
अराधिन॥ लाग हृदय भगवान अराधन॥
भगत दास तुव त्रिभुवन साईं॥ विधि विधा
न कछु जानत नाहीं॥ शाक पत्र कछु
भोजन तासा॥ पा[illegible] देव हरण भव त्रासा॥

अथ धन्नाभक्त चरितं

दोहा॥ अब सुनहो सन्तमान जुत आन सुवेदसु
म गाथ॥ जो सुनत उपजत विमल हृदय भक्ति
जदुनाथ॥ चौपाई॥ मथुरा प्रान्त रुचिर इक ग्रामा॥
तहँ अभीर वंस अभिरामा॥ साधु सरलचित सील
सुभाऊ॥ धन्ना नाम भनत सब काहू॥
मात पिता सुत तिय जुत ॥ धेनु चरावन तत
पर होई॥ प्रात जात उठि कानन माहीं॥ आवत
सदन काल निसि काहीं॥ अस प्रकार सेवन व्रत
तासा॥ करत गवन वन समय विताता॥ एक दि
वस अतथी द्विज काहू॥ सुचि सनान पूजन थलता
हू॥ हेरत भ्रमत
द्वार तहिं आवा॥ तहँ विलोकि रुचिर मन भावा॥
गोशाला पावन प्रिय जीके॥ देत ललित उपलेप
न नीके॥ सुचि समाज पूजन सब ल्याई॥ विप्र
भक्तिजुत सजाई॥ बैठ्यो पूजन हृदय प्र
सन्ना॥ तो लो आय सदन निज धन्ना॥ शालिग्रा
म रुचिर मन भावा॥ पूजन देखि मोद हर षावा॥
उपजी हृदय रुचिर रुचि तासा॥ मोर भाग कब
होहिं प्रकासा॥ जो मै इहि सदृश मन भायन॥
करहुं देव पूजन कलमायन॥ तब द्विज करि
पूजन भगवाना॥ लाग्यो करन जवहिं प्रस्थाना॥
धन्ना जोरि जुगल निज पानी॥ बोल्यो वदन म
धुर मृदु वानी॥ विप्र सुपृ मोयँ करि दाया॥ शि
ला एक कल भक्त सहाया॥ मोरे देहु दास नि
ज जानी॥ तब द्विज भन्यो सुनत अस वानी॥

१-८८१

भया तहां आय कर हृदय मै विचार करने लगा
कि प्रथम भगवान का पूजन करूं और दीनानाथ
नाथ को नैवेद लगाऊं तिन तें पीछे जो कुछ
बचेगा सो संतोष से बैठकर आप पायलेऊं इ
स प्रकार विचार कर नदी के किनारे चलागया
तहां सनान करके शरीर को पवित्र किया फि
र बन से पुष्प पत्र लेकर सुंदर ठौर मै धरकर
एक पवित्र और सुभ अस्थान देखकर तहां
बैठगया तब एक पत्र के ऊपर भगवान की
शिला को स्थापित करके प्रीती भक्ती से
पूजन किया तिस तें उपरांत बस्त्र मै बांधा
हूआ बासा भोजन जोथा सो खोलकर और
प्रेम भक्ती से भगवान के आगे रख कर
बस्त्र का परदा करके दीन बंधू का आराधन
और ध्यान करकर कहने लगा कि हे तीन
लोक के नायक हे भक्त सहायक भगवान
मै दीन दास महां मूढ और अजान तुम्हा
रा सेवक नाथ धरम आचार और
विधि विधान को कुछ नहीं जानता हूं इस लो
ग रोटी का कुछ बासा भोजन जो है सो आप
के आगे नवेदन करता हूं हे संसार का भय
दूर करने वाले प्रभू अब दया करके इस को
पाईये ऐसे बिनती प्रार्थना करकर एक महूरत
के पीछे जब नेत्र खोलकर देखने लगा तब
नैवेद जो है सो वैसे का वैसा ही आगे धराहूआ
है कृपा सिंधू ने कुछ भी नहीं पाया तब धना

विचार करने लगा कि इन जो दूध दही के विना लूखो भोजन है इसलिये दीनबंधूने नहीं पाया तब हाथ जोड़ कर कोमल बाणी से कहने लगा कि हे भक्तपाल आज दयाकरके इसदासका अपराध क्षमा करो काल प्रभू मै भली प्रकार यतन करलेऊंगा बडे सुंदर मधुर दधी और दूधके सहित भोजन ल्याय कर आपके आगे नवेदन करूंगा आज मूझे और च्या से प्रभूतुम हाय रहे हो तातें ~~कृपाकरके~~ इसभोजन को ~~कुलाल जानकर~~ पाय लीजिये ॥२॥ चौपाई ॥ अ
कृपाकरके
सकहि कीन वहुरि सुखमानी ॥ विधिवत वसन अच्छा दित पानी ॥ कछुक वेर पाछिल जब देखा ॥ वरणपाक परिपूरण लेखा ॥ तब संदिग्ध ~~[illegible]~~ भनत मन माही ॥ मोहितें भयो रीति जुतनाहीं ॥ सुचि सनान पूजन भगवाना ॥ अस विचारि उर भक्त सुजाना ॥ जाय विमल वर वारि अनावा ॥ मृतका तिलक भाल कल लावा ॥ सुमरत भक्त वत्स भगवाना ॥ देत ललित ~~[illegible]~~ लेपन सनमाना ॥ करि पूजन संजुत अनुरागू ॥ सो नैवेद राखि प्रभु आगू ॥ विधिवत वसन अच्छादिन कीना ॥ मूंदे नयन ध्यान हरि लीना ॥ बारबार मुख विनय उचारी ॥ मोर सपथ तोहि भक्त उवारी ॥ जो नैवेद मोर इह लूखो ॥ अ
"न
वै पाहु भव तारन दूखो ॥ अस कहि जब हिं पटिल दृग टारे ॥ तब प्रभु भक्त पैज रखवारे ॥ दिये तास दुजवर पाघाना ॥ प्रकटे हरन मदन छविनाना ॥ अरुण चरण जलजारन लाजा ॥ उर विशाल वन माल विराजा ॥ नख छवि हृदय भक्त जन मेहा ॥ मानहु जरत इंदु दस खेहा ॥ भाल विशाल लसत कल खोरा ॥ कच अलि अवलि छवि वक

धु० कु०

कुमद्याकलानकहै

चित चोरा॥ पुंडरीक लोचन अरुन्यारे॥ भुज आ
जान बलन मद हारे॥ तुंड कीर नासिक भूवां की॥
दंद कल कांति कुंद कलियां की॥ मंजुल अधर विं
व दर ग्रीवा॥ अस सुखमा निधान सुख सींवा॥ ला
ग करन भोजन जल पाना॥ धरि गोपाल रूप भगवा
ना॥ धन्ना देखि ललित छवि सोई॥ रह्यो मगन
वारद मुद होई॥ अहो सुभाग आज जग एही॥ अ
खिल लोक पति सन मुख जेही॥ करत भक्ति वस
भोजन रूखे॥ दीना नाथ प्रेम कर भूखे॥ रह्यो शे
ष प्रभु भोजन जोई॥ पायो तास प्रीति जुत सोई॥
दोहा॥ तब तें कृपा निकेत नित दीन बंधु भगवान॥
जन सन धेनु चरात वन रहे खात पकवान॥ ३॥
टीका॥ असे विनती करकर फिर तैसेही वस्त्र का प
डदा करके नेत्र मूंद कर ध्यान करने लगा और कुछ
क वेर के पीछे जब नेत्र खोल कर देखने लगा त
ब पत्र के ऊपर भोजन ज्यों का त्यों ~~धरा~~ धरा
हुआ पाया कृपा निधान ने कुछ नहीं खाया ~~तब~~
फिर हृदय मे वडा सोच और संदेह कर कर कहता
है कि अहो मैने रीती के अनुसार सनान कर कर
~~के~~ भगवान का पूजन सेवन नहीं किया है इसी
तें दीन हितकारी प्रभू भोजन नहीं पावते हैं ऐ
से विचार कर धन्ना भक्त ने जाय करके निरमल
जल विखें सनान किया और माथे मे विभूती का
तिलक दिया फिर भगवान को सुमरता हुआ सुंदर
लेपन दे करके भक्ती प्रीती से बैठ कर भगवान का
पूजन करता भया तिस तें उपरांत सो नैवेद आ
गे राख कर ~~ब~~ और वस्त्र का परदा कर कर नेत्र मूं
द कर ध्यान मै लीन होय करके विनती करने लगा

भक्तिसुधा ८

असकहि एक महूरत पाछै॥ मूदित कोलि नयन निज आछै॥ जब देखो नैवेद सुहा वा॥ कृपानाथ कछु नाहिन पावा॥ तब धन्ना उरकीन विचारा॥ तुला बिनु दधिदुग्ध अहारा॥ भक्तपाल तब नाहिन पावा॥ जोरि जुगल कर विनय अलावा॥ तुम हो आनचूक निजदासा॥ कालि करहु प्रभु रुचिर अ जासा॥ दधिदूध सरस भोग विर चाई॥ करहु कृपाल नवेदन ल्याई॥ दोहा॥ आज तृषत क्षुध्यत विपुल तुव प्रभु कृपा निधान॥ तांते अब स्वीकार रुचि करहु भक्त प्रदमान॥२४॥

टीका॥ जहां भली प्रकार निश्चय दृढ होजाता है तहां जगतमें क्या नहीं सिद्ध होता सो साधू सरल चित्त और निसकपट धन्ना तिस ब्रह्मणके दिये हूये पाषाणको अपना इष्टदेव मान लेता भया और वारवार वंदना करकर हृदय और नेत्रों से लगायकर वस्त्रमें लपेटकर सीसपर चढाय लेता भया तिसतें उपरांत फिर ~~और ब्राह्मण ठाकुरोंको गलेमें राखते~~ ~~देखे तैसे हि धारन कर~~ ब्रह्मणभक्तके समान ठाकुरको गलेमे धारन करके मानो प्रेमके अम्रतको पान किये हूये धन्ना जो है सो ~~ठाकुर को गलेमें~~ कांधे पें केवल लाठी सोटी और वस्त्रमे कांधे हूये वासी रोटी गोअन के चराने के लिये वनको चलाआवता

२-९८

होयकर भोजन जलखान पान करने लगपरे तव धन्नाजो है सो भगवान की ऐसी छवी को देखकर मानो आनंद के समुद्र मे मगन होय जाता भया देखिये आज इस के पूरन भाग्य हैं कि अनंत लोक के पती भगवान जिस के सनमुख बैठ कर रूखा सूखा भोजन जो है सो पाय रहे हैं तातें भाई सत्य है सत्य है भगवान कृपानिधान केवल प्रेम के ही भूखे हैं देखिये तहां भीलनी के बेर सुदामा के चावल और विदुर का साग इन सब की नेवेधू सदैव प्रेम के वश हीं पावते चले आये हैं प्रभू की परंपरा एही रीती चली आई है कि जहां निसकपट प्रेम देखा दीनानाथ तुरतत हो हीं रीझ गये जब कृपासिंधु भोजन पाय चुके तब तिन तें जो कुछ शेष बचा सो प्रीती पूर्वक धन्ना पाय कर संतोष मे मगन होय गया तब तें भक्ती के वश भये हूये कृपा के समुद्र भक्तहितकारी भगवान अपने दास के साथ नित्य हीं वन विखे गोओं चराते और जैसा कैसा तिस का दिया हूआ भोजन बडी रुची प्रीती से प्रसन्न होय कर खाते पावते रहे॥ ३॥ चौपाई॥ गोप करम अस करत कृपाला॥ बीत्यो विपुन फिरत कछु काला॥ गवन करत तव दुजवर तेहा॥ आवा भ्रमत भक्त सुभ गेहा॥ धना जानि विप्र वर सोई॥ सादिर परम हरष वस होई॥ कीन नम्र अष्टांग प्रनामा॥ भाख्यो वदन वचन अभिरामा॥ दुजवर तुम हु धन्य संसारा॥ मोपें कीन इमत उपकारा॥ इह साता

त देव मोहि दीना॥ मानहु कृत्य कृत्य जग कीना॥
प्रभु वर दीन धाल अभिरामा॥ मोहि सन करत विपुन सब कामा॥ इन तुमार दुज अत लुत दाया॥
जात न एक वदन कछु गाया॥ विप्र सुनत मान सविसमाना॥ सुनहु गोप मुख वचन वखाना॥
जो करि सपथ करहु सुई कारा॥ तो निज तात मनोरथ सारा॥ तोहि सन करहु कथन हित जानी॥
बोल्यो गोप सुनत अस वानी॥ मोरे विप्र सपथ प्रात तोरे॥ गुरु समान तुव स्वामिन मोरे॥ जस
न देस करुणा निध होई॥ मै धरि सीस करहु प्रभु सोई॥ तव बोल्यो दुज दृष्टि उमेगा॥ भक्त विपुन
भगवन तुव संगा॥ भोजन करत दिवस निसि आई॥ तुव देहो मोरे दरसाई॥ श्री गोपाल ललित मन भाई॥ मुहि लागत मुद्रा सुखदाई॥ दोहा॥
तव धन्य दुज प्रवर कहे मन्यो प्रात तुव काहि॥ दरस करावहु पूछि निज दीन नाथ प्रभु पाहि॥ ७॥ टीका॥
इस प्रकार गोप करम करते करते कृपानिधान को वणविखें [illegible] काल वतीत होय गया तव समय
पाय करके सोई ब्राह्मण कि जिसने वे पाषाणों भ्रमता भ्रमता तहां भक्त के घरमें आय प्रापत भया
तिस को देखकर और पहिचान कर हरष के वश होय कर दीन भाव से अष्टांग प्रणाम जो है सो करता भया और फिर मधुर वाणी से कहने लगा कि हे
ब्राह्मण तू संसारमें धन्य है कि जिसने मेरे पर औसा उपकार किया जो इन साक्षात भगवान मेरे को दिये और जगमें कृतार्थ रूप कर दिया है
आज मैं तेरे प्रसाद से सरव प्रकार करके सफल होय गया हूं क्यों कि दीनानाथ भगवान वणविखें मेरे साथ सब काम काज करते रहते हैं

श्री [illegible]

१०९९

और सरवदा मेरे सहायक बने रहते हैं हे ब्राह्म
ण इन तेरी अनंत दया और उपकार मैं एक
मुख से कैसे गायन कर सकता हूं तब ब्राह्म
ण सुनकरके अचरजको प्रापत होय गया और
कहने लगा कि हे प्यारे जो कदाचित तूं शपथ
अर्थात सुगंद मेरे वचन को मान लेवें तो मैं
अपना मनोर्थ जो है सो तेरे आगे कथन करता हूं तब
गोप प्रसन्न होयकरके कहने लगा कि हे ब्राह्मण मेरे
को तेरी सौ सुगंद होवे और तूं मेरे गुरु स्वामी के सम्मा
न है जैसी तेरी आज्ञा होगी मैं सीस पर धारन करके
सब पूरी करूंगा हे ब्राह्मण तूं संकोच को त्याग करक
हो ऐसे धन्ने का वचन सुनकर ब्राह्मण कहने लगा
कि हे भक्त भक्तपालक भगवान कृपानिधान जो
हैं सो तेरे साथ वण विषे नित्य गौओं चरावें और
भोजन पावते रहते है तो तें तूं दयाकरके मेरे को
तिनका दरसन करायदे क्योंकि श्री गोपाल जी की
मनोहर मुद्रा जो है सो मेरे को अतसे करके प्यारी
लगती और मनको भावती है तब धन्ना कहता
भया कि हे दुज प्रधान मैं प्रातःकाल भगवानभ
क्त सुखदान को पूछ कर तेरे को ले चलूं गा औ
र दीन बंधू का सुंदर दरसन करायदेऊंगा ॥४॥
चौपाई॥ अस कहि प्रात विपुन बड़भागा॥ च
ल्यो चरन गौयन अनुरागा॥ विधिवत जथा
रुचिर कृत कीना॥ प्रकटे कृष्ण हरन दुख दीना॥
कीन्यो विनय करत सब सेवा॥ दीनानाथ मोर
गुरदेवा॥ तुव सरूप लाजत छवि मारा॥ द्या
ल दृगन भरि देखन हारा॥ दीजै जो नदेस प्र
भु मोरे॥ करहुं देव तव सनमुख तोरे॥ गोप
वेस धृत भक्त उधारी॥ सुनत वदन अस गिरा

कि हे संसार का भय दूर करने वाले हे भक्त पाल भगवान ~~तुम को मेरी सोगंद है~~ जो कदाचित अब मेरा दिया हूआ रूखा सूखा भोजन ना पावोगे तो प्रभू तुम को मेरी ही सोगंद है नाथ मेरे को अपना दास जान कर कृपा करो और इस भोजन को पा य लेवो इस प्रकार विनती करके जब नेत्रों को खोल कर देखा तब भक्तों की पैज राखने वाले और कोट कामदेव की छबी को लज्जा देने वाले भगवान कृपा निधान तिस ब्राह्मण के दिये हूये पाषाण के से अद्भुत ध्यान सें प्रकट हो जाते भये कि कमल के समान चरनों की लाली मय सुंदर शोभा और विशाल हृदय पर तुलसी की माला भक्त जनों के हृदय को उतसाह देने वाली नखों की कैसी शोभा कि मानो दसो ही अंगुलिओं के अग्रभाग मे दस खंड होय करके चंद्रमा जडित भया हूआ है तैसे ही विशाल मस्तक पर ~~चंदन~~ सजा हूआ चंदन का तिलक भमरयों के समाज को लज्जा देने वाले स्याम केश मुनी जनो के मन को हरने वाली चिबक अर्थात ठोडी ~~लाल~~ कमलों ~~के~~ वत लाली कर के युक्त नेत्रों की मनोहरताई दृष्टों का मद दूर करने वाली लंबी भुजें शुक जो तोता है तिस के समान नासिका तैसे हीं बांकी भृकुटी अर्थात टेढी भवें चंबेली की कलीं के समान दांतों की उज्जलताई बिंब जो कन्दूरी फल है तिस को लज्जा देने वाले लाल लाल ओष्ठ और संख वत ग्रीवा अर्थात गला ऐसें शोभा की निधी और सुख की अवधी भगवान सनमुख प्रगट

गोपाल रूप धार कर

८८

को

जिस ने आपने भक्त रूप

आपके चरणों में

नाथ मेरा गुरू जो है तो आपके कोटि कामदेव की
छवी को हरने वाले रूपका नेत्र भरकर दरसन पा
या चहता है जो दीनबंधू की आज्ञा पाऊं तो सन
मुख ले आऊं इस प्रकार भक्त की विनती सुनकर
गोपवेसधारी भगवान कहने लगे कि हे भक्त मत
किसी के साथ इस भेद प्रकट करना अपना मनो
र्थ सफल जानकर मौन रहो इह ब्रह्मण जो है सो
मेरे शालिग्राम रूपका नित्यही दरसन करता रह
ता है तब धनाधीन बालीने कहने लगा कि हे कृपा
निधान मै गुरू के साथ बोर पकड कर सुगंद कर आ
या हूं कि तुम को अवश्य भगवान का दरसन करा
य देऊंगा हे भक्त हितकारी जो अब कदाचित इह वार
तो नहीं बनेगी तो मेरा वचन भंग हो जायगा
और जगत मे गुरू द्रोही कहाऊंगा तां ते हे भ
क्त भय हारी अब कृपा करके गुरू जी को अव
श्य दरसन दीजिये नहीं तो प्रभू मै प्राणों को
त्याग देऊंगा ऐसे तिस का दृढ वचन सुन कर
भक्त सनेही भगवान प्रसन्न होयकर कहने ले
गे कि हे भक्त तेरे वचन के अनुसार कल के दिन
तिस को अवश्य मेरा दरसन होयगा इसमे कुछ
संशय नहीं है पूजन के समय वे ब्रह्मण कुछ
दूरीपर स्थित होय कर मेरा दरस जो है सो ने
त्र भरकर भली प्रकार देख लेवे जब गोपभक्त
ने भगवान कृपानिधान के मुखसे इस प्रकार व
चन सुना तब हरष मे प्रफुल्लित भया हूआ
सांझ को अपने घर मे चला आया और गुरू
के साथ सब वृतांत सुनाय देता भया जब
प्राता काल के समय हू कर बोलने लगे तव गुरू
को भली प्रकार समुझाय सिखाय कर आप आ
गे ही गोअन को लेकर बन बिखे चला आया

जब मध्यान समय भया तब भक्ती प्रीती से भगवानकी पूजन सेवन करने लगा इतने मे दीन वंध अपने नियमके अनुसार तहां तुरतहीं प्रकट होयगये तब नीले वादर के समान वडे गंभीर नील मणीवत मनोहर आभावाले और नीले कमल के सदृश कोमल ऐसे कोटि कामदेव की छवी को हरने वाले भगवान का दरसन जो है सो ब्राह्मण नेत्र भरकर देखता भया॥ ४॥ चौपाई॥ यद्यपि अस सरूप द्विज हेरयो॥ तद्यपि तास मोह मति घेरयो॥ भ्रमत विपुन अस बालक जाना॥ पै सरूप द्विज देजु ठाना॥ लागे रहे एकटक नयना॥ भ्रमवस कहि न सकत कछु वैना॥ बाल रूप तब भक्त उचारे॥ करत पाक निज धाम सिधारे॥ तब धर्म निज गुरु सन वरना॥ देखे तुमहु भक्त मन हरना॥ विप्र सुनत अस चकित उचारा॥ एहु कमल दृग स्याम तुमारा॥ मै केवल बालक जिय जाना॥ गोप भक्त तब वचन वखाना॥ इष्टदेव मोरे प्रभु एहू॥ दीन विप्र प्रस्तार तुव जेहू॥ मम अरपण कृत भोजन जोई॥ पावत दीननाथ प्रभु सोई॥ पाछे अरध शेष हरि केरा॥ होत अहार विप्र सो मेरा॥ द्विज अस सुनत विपुल पछुताया॥ अहो प्रवल जादव पति माया॥ वंच्यो मोहि बाल धृत रूपा॥ लख्यो न देव असुर सुर भूपा॥ दोहा॥ सुत धन्ना तुव धन्य जग जेहि अस त्रिभु वन नाथ॥ धेनु चरत भोजन करत फिरत विपुन लगि साथ॥ ६॥ टीका॥ तो यद्यपि ब्राह्मणने ऐसा सरूप भी नेत्र भरकर देखा तद्यपि तिसकी बुद्धी को मोहने जो घेर लिया भगवानको वनविखे भ्रमता हूआ एक बालक ही

जानता भया तब बालरूप भगवान भोजन पायकर
अपने परम धामको चले गये इतने मै धन्ना आयकर
अपने गुरू को कहने लगा कि हे गुरूजी तुमने भक्तों
के चित्तको चुरायलेने वाले मेरे प्रभू देखलिये हैं त
ब गुरू कहने लगा कि हे धन्ना तेरे कमलों ~~[illegible]~~ वत
नेत्रों की शोभावाले श्याम जो हैं सो एही हैं मै तो
केवल बालरूपही जाने और पहिचाने हैं ऐसे
गुरूके मुखसे वचन सुनकर गोपभक्त कहने
लगा कि हे द्विजप्रधान तुमने जो दया करके मेरेको
पाषाण दिया है सोई साक्षात मेरे इष्टदेव प्रभू हैं और
मेरा अरपण किया हुआ भोजन जो होता है सोई दी
न बंधू कृपाकरके नित्य पावते हैं तिनतें पीछे जो
कुछ बचरहता है सो आनंद पूर्वक मै पायलेता हूं
तब ब्राह्मण सुनकरके हृदय मै बड़ा पछताया और
कहने लगा कि अहो भगवान बड़ी अगाध माया है
बालकरूप धारकरके मेरे मोहत करलिये अ
र्थात छलिलिया है ~~[illegible]~~ मै सुरअसुरों के
स्वामी पहिचान नहीं सका हूं हे धन्ना पुत्र
तूं ~~[illegible]~~ जगत मै धन्य हैं कि जिसके साथ
रह तीनभवन के नायक भगवान नित्य ब
ण विखैं गौओं चरावते और भोजन पावते
रहते हैं ~~और सदैव ही [illegible] तेरे चित्तसे~~
~~अपने दरसन से तेरेको सफल करते रहते हैं~~
॥ १ ॥ चौपाई ॥ आज भाग जग उदय तुमारे ॥
जो अस धरनि धेनु रखवारे ॥ मुनि जोगिन की
ने हठ नाना ॥ ~~[illegible]~~ ॥
आवत ध्यान न कृपानिधाना ॥ सो दुरलभ
अस भक्त सहैया ॥ धारत गोप रूप सुखदैया ॥
सनमुख तोर सुलभ सुखदाते ॥ फिरत विपुन
तुव धेनु चराते ॥ तुमहुं सकल सुकृति करमूला ॥

उचारी॥ लोगन सन जनि मरम बखाना॥ करहु प्रक
ट तुव भक्त सुजाना॥ निज अभिष्ट सज्जन कुरजानी॥
रहहु मौन मुख मनहु नवानी॥ देखत विप्र दरस
नित होई॥ शालिग्राम रूप मम जोई॥ तव धन्ना
अस विनय उचारी॥ मैं कृपाल दीनन हितकारी॥ गु
रु सन कीन शपथ नहि वाहो॥ होहि दरस तुम्हि सुर
नरनाहो॥ जो न करहु कुर भगवन सोई॥ मंजत
वचन मवहु गुरु द्रोही॥ तोते जास भक्तजन
रंजन॥ गुरुहिं देहु दरसन रंजन॥ होहिं नतर भगवन मम मरना॥ अस प्रकार जब गोप उचर
ना॥ भक्तवतस भगवान कृपाला॥ मने वदन
तव वचन रसाला॥ कालि दिवस दरसन दुज
काहीं॥ होहिं भक्त संशय कछु नाहीं॥ पूजन समय
मन्दिर कछु दूरी॥ देखहि दरस मोर दुज सूरी॥
गोप भक्त सुनि भगवन वानी॥ आवा सदन सोउ
सुख मानी॥ गुरु सन सकल वृतांत सुनायो॥
अरुन चूड जब प्रात अलायो॥ गुरु हिं प्रबो
धि वदन बहु बारा॥ लेत धेनु निज विपुन
सिधारा॥ लग्यो करन पूजन मध्याना॥ प्र
कटे तब गुपाल भगवाना॥ दोहा॥ चारु नीर
धर नील मणि नील कंज तन स्याम॥ दुज दृ
ग देखे हरन छवि मदन कोटि अभिराम॥ ५॥
टीका॥ ऐसे कथन करकर बडभागी धन्ना जो है
सो प्रातःकाल गौ अन के चराने को वन विषे
चला गया तहां विधी के अनुसार अपना नित्य
कृत जो है सो करने लगा तब दीनो के दुख दूर
करने वाले कृष्ण परमात्मा आय कर के तुरत
प्रकट हो जाते भये धन्ने ने सब सेवा कर के फिर
हाथ जोड कर के विनय प्रार्थना करी कि हे दीना

११२

करते और कृष्ण परमात्मा को भजते भजते कुछ काल वतीत होय गया॥७॥ चौपाई॥ एक दिवस तहि भक्ति सुहावा॥ भयो महातम मानस भावा॥ खेत बीज बापन हित ताका॥ चल्यो जनक उर पूरि हुलासा॥ वध्यत देखि संत मगमाहीं॥ भन्यो देहु भोजन तुव काहीं॥ अस कहि जात नगर बड़भागा॥ सो गोधूम बीज अनुरागा॥ भूनि अनल कल चरवण कीना॥ सिता मिलाय मोद मन लीना॥ मोदिक बांधि संत जित ठाढे॥ लावा भक्ति प्रेम उर वाढे॥ रुचि प्रीती जुत दीन जिमाई॥ ते प्रसन्न मन वैस्नव पाई॥ आसिष देत गवन मग कीना॥ जनक जासव सभक्त प्रवीना॥ मूषक सदन भूम गहिलीनी॥ जाय खेत निज बापन कीनी॥ का र्षिक आन निकट तहि वासी॥ लागे देखि करन सब हासी॥ जव धन्ना आवा निज गेहा॥ लोगन जाय जनक सन तेहा॥ सो वृतांत सब दीन सुनाई॥ जनक सुनत सुत लीन बुलाई॥ भाख्यो तात करम कस कीना॥ मृतका बीज खेत निज दीना॥ भयो नहोहि सुवन संसा रा॥ भक्त सुपूत तव वदन उचारा॥ इह सव मृषा भनत पितु तोही॥ कपटी करत कूट स ठमोही॥ सुनत जनक बालक निज वानी॥ वारन भयो मौन उर ठानी॥ दोहा॥ समय पाय तहि बृद्ध जन दिवस एक निज खेत॥ जाय विलोक्यो दृगन निज हरहरा छवि देत॥ ८॥ टीका॥ तव एक दिन धन्ना की भक्ती का बड़ा अदभुत महातम और कौतुक होता भया

८२

सो कैसा कि एकदिन पिताने वडे हरषउतसाहसें
तिसको खेत्रमे वीज वोनेके वासते भेज दिया तव
मारगमे कहीं संत महातमा भूखे प्यासे जो वैठे हूये
देखे तो भक्ती मानभया हूआ तिन को कहने लगा
कि महाराज मैं आप को ल्याय करके भोजन जिमा
वताहूं ऐसे संतों को धीरज देकर आप फिरकर
के नगरविखें चला आया और वे गोधूम अर्थात
कनक का वीज जो था तिसको आगनी के साथ
भाठमे भुनाय कर और मिष्टान मिलाय कर
सुंदर चवीना करके लड्डू जो हैं सो वांट लेता भया
फिर जहां संत महात्मा वैठे हूये थे तहां ल्याय
कर भक्ती सनमानसे तिनको जिमाय देता भया
सो आनंदपूर्वक षायकर वारवार आसीसा देते हू
ये अपने मारगको चले गये तव ईहां पिता का
भयमानकर धन्ना जो है सो तिस वीजके वदले चू
हों के ऊकेर की माटी लेकर और जाय कर
कृस्मकृस्म रटता हूआ अपने खेत्रमे वीज देता भ
या ऐसे तिसका कृतव्य देखकर के और सा
मीपके करसान लोग जो थे सो अपने अपने सव
हासी करने लगे और फिर घरमे आयकर इह
वृतांत तिसके पिताके साथ सव सुनाय देते भये
तव तिस वृद्धने इह प्रसंग सुनकर तुरत अपने
पुत्र धन्नाको निकट वुलाय कर कहने लगा कि
हे पुत्र इहतैने कौन करम किया जो अपने खेत्र
मे वीजके वदले माटी वोय दई है पुत्र इहवा
रता तो ना कवी आगे हूई और ना होयगी तै
ने जगतमे अनहोनी हीं वाता करीहे तव धन्ना
कहने लगा कि हे पिता इन दुष्ट लोगों का कहना

कोनमत करिये कपटी महा मंद जो हैं सो वृ
था हीं झूठ बोलते हैं और मेरे साथ अधम
हासी करते हैं ऐसे पुत्र की वाणी सुनकर वृद्ध
जो है सो नवृत्य होय कर मौन होय रहा तब स
मय पायकर एकदिन वृद्ध अपने खेत के देखने
कौं चलागया सो जायकर के क्या देखता है कि
वे खेत जिसमें विलें धन्ने ने माटीका बीज बो
याथा हरहरात होयकर बड़ी सुंदर शोभा जो है
सो दे रहा है॥२॥ चौपाई॥ विसमय विवस सव न स
न कहयो॥ लोक विलोकि चकित चित भयो॥
निज स्वामीपन तें अधिकाई॥ दस गुना देखि ह
रिद मन भाई॥ अति प्रसन्न पितु भवन सिधारा॥ अ
स प्रकार इह चरित अपारा॥ गोय भक्त कर सु
सुख सुनावा॥ मैं संतापत वदन कछु गावा॥ सुन हो
संत भक्त जन काहीं॥ नहि असाध कछु संसृति
माहीं॥ अस विचारि सव तर कवि साही॥ लीजे
कृस्न भक्ति उरधारी॥ दोहा॥ भक्ति कलप द्रुम
विदत जग जो आश्रत तहि होय॥ पावत कृस्न
प्रसादतें मन वांछित फल सोय॥६॥ टीका॥ तब
धन्ने के वृद्ध पिताने हृदय में बड़ा अचर
च मान कर ~~[illegible]~~ इह वृतांत जो है
सो सब को सुनाय दिया ऐसे अदभुत को
सुनकर और देखकर लोग भी सब अचरज
को प्रापत होय गये नाभादास कहते हैं कि हे संतो
इसप्रकार गोय भक्त की भक्ती का चरित्र जो है सो मैने संक्षेप कर के वर्णन
कीय कर दिया है देखिये भक्तजनों संसार में कुछ भी असाधन नहीं है सब स
गम है ऐसे विचार कर तो ते कृस्न भक्ती को ही आधार करना चाहिये इह भ
क्ती जो है सो संसार में कलपवृक्ष के समान है इसके आश्रय जो कोई होता है
तिसके इदय के मनो की सब फल होते हैं॥६॥ इति श्री भक्तिविनोदे गोय भक्त
दम भक्त माल टीका यां धन्ना चरित वरणनं नाम-- सरगः

और सामीपन के भी धन्ने से ग्रस्त हो दस गुणा भूमि के अन्न कर

[illegible]

[illegible]

अस गुपाल जाये अनुकूला॥ मुनि प्रसन्न जिय जानि
अभेवा॥ अब तैं तात संत द्विज सेवा॥ करहु सुखद सु
दर हित जानी॥ अस कहि विप्र सु मृदु मुख बानी॥ आ
सिष देत हरष उर छाये॥ चले भवन निज होत वि
दाये॥ गोप भक्त तब तें मन लाई॥ लाग्यो करन सं
त सिव काई॥ आवत देखि अतिथि द्विज काहू॥ पूजत
प्रीति भक्ति जुत ताहू॥ दोहा॥ अस प्रकार सेवत सद
न अतिथि संत द्विज काहिं॥ निकसि गये कछु काल
तहि कृष्ण चरन रति माहिं॥ ७॥ टीका॥ आज संसा
र मे तेरे बडे उदय अर्थात जागे हूये भाग हैं देखो कि
जो भक्त सहायक और गौ ब्राह्मण पृथवी देवताओं
की रक्षा करने वाले भगवान मुनी जोगी जनों को
दुरलभ हैं अर्थात अनेक यतन और हठ करने
तें * तिन को ध्यान मात्र भी नहीं आवते हैं सो ऐसे
दुरगम भगवान गोपबालक का रूप धार कर सुग
म और सहजे ही सनमुख प्रतक्ष होय कर बालवि
खे तेरी गौओं चराते रहते हैं तांते भाई आज ज
गत मे तूं ही सरव पुन्यो का मूल है कि जिस पर
ऐसे गोपाल भगवान अनुकूल अर्थात प्रसन्न हैं
हे प्यारे अब तूं मेरे को परआनंद जान कर अब तें
बडे हितकारक
नित्य संत भक्तों की सेवा मे ही लीन रहा कर ऐसे
कथन कर कर और बार बार आसीसा देकर ब्रह्म
ण भक्त जो है सो विदाय होय कर हरष पूर्वक अ
पने घर को चला जाता भया और ई हो गोप भक्त
भी तिस ब्राह्मण के उपदेश को पाय कर सं
त महातमा की सेवा भक्ती जो है सो दिन दिन अ
धिक तें अधिक ही करने लगा अतिथि संत भक्तों
को आये हूये देख कर प्रणाम करके बडी प्रीती
से पूजन सेवन और आदर सतकार करता इस
प्रकार अतिथी साधु ब्राह्मणों की सेवा करते
ओर मै

के चरनकमलों की भक्ती के दृढ करने वाला और
संसार समुद्र के तारने वाला है बुंदेलखंड नामा
देस जो बड़ा प्रसिद्ध और उजागर है तहां राजाराम
नाम करके एक प्रजापाल अर्थात राजा होता भया
तिसने बड़ी प्रीती से एक बड़ा सुंदर वास अस्थान
जो है सो बनवाया और बांधवगढ तिसका नाम
रखा सो अतसे रमणीक और तैसे हीं मन को
भावते बड़े ऊंचे धवलधाम कि जिनके द्वारों पर
मनोहर कंचिनके कलस शोभा देते हैं और मणि
यों करके जड़ित भया हूआ सब अंगण तैसे हीं
दिवालों की मनोहर[illegible]ताई कि जब प्राताका
ल के समय सूरजभगवान उदय होता तब चा
रों ओर से जगमग जगमग मणियों जो हैं सो च
मकने लग जातीं और भी चारों ओर बावली त
लाउ और कूये जलसे परिपूर्ण भये हूये [illegible]वी
देते हैं उपवन जो बाग और शोभा की अमराई
तिन[illegible]बू[illegible]नों का सुंदरपन मानो चित्तको
चुराय लेता है तैसे हीं वाटिका अर्थात बग
गीची जिनके बीच भांतभांत के फूल और नाना
प्रकार के पंखी [illegible] बड़ी मधुर स्वर से बो
लते और भ्रमरे गुंजार करते शोभा पावते हैं
आप राजा विद्या और गुणों का समुद्र दयादा
न सनमान [illegible] और धरम विचार में परम प्रवी
न भगवान के पूजन सेवन में परायण पर
हित के पालने वाला और काम क्रोध मोह मद
इत्यादि विकारों से वरजित एकनारीव्रत धी
रज का धाम और वीर प्रधान रण विषे जय की
सामर्थ्य वाला था तिस राजा का नाई जाती ए
क सेवक [illegible] बड़ी चतुराई में नित्य

तैलकी मरद करने वाला था और प्रजापाल
की श्रीं का मानो पात्र था अर्थात तिसको राजा
अपना बड़ा प्यारा सेवक जानते और सने
ह करते थे तिस का नाम सयन होता भया सो ऐसा
धरमी और गुण प्रवीन था कि जहां कहीं संत
व साधु अतिथी ब्रह्मण को देखता तो राजाकी
दया हूआ धन जो घरमै होता सो सब भगवान
के निमित्त साध संतो को बांट देता था रात्री
दिन सदैव तिसका एही धरम था॥२॥ चौपाई॥
कीर्तन कथा चरित भगवाना॥ संजुत भक्ति सु
नत सनमाना॥ कृष्ण चरन दृढ़ प्रीति सुहाई॥
करत संत सज्जन सिव काई॥ वेतन विगत
वपन कच करना॥ प्रीत जनन कर मरदन
चरना॥ अंगुद वरतन गुरुजन सेवा॥ कारन
सयन इत्यादि अभेवा॥ एकदिवस जब प्रा
त सुहाई॥ चलो काई छितपत सिवकाई॥ तुध्यत ठाढ संत सुभ भेखे॥ करि प्र
णाम नम्रत तिन काहीं॥ लावा ललित
सदन निज माहीं॥ काय करम मन भक्ति अ
भेवा॥ लाग्यो करन संत सुभ सेवा॥ सो सिव
काई भूप विसरानी॥ संतत संत चरन रति
मानी॥ अस तहि करत संत सिव काई॥
आर्ये आय मध्य दिनराई॥ राजाराम प्रात इत
जागे॥ आन्हिक किरत करन निज लागे॥ ते
ल अभ्यंग समय जब आवा॥ सयन रूप धरि
रुचिर सुहावा॥ जानि भक्त स्वामि निज सिव काई॥
कोप दृष्टि कछु करहि न राई॥ मायक कृत्रम

(margin) चले छितपत सिव काई॥
(margin) चलो जान समारन वचो॥

सयन सुहेला॥ लेत ललित सौगंधिक तेला॥ सादिर भक्तिभाव जुत आई॥ लाग करन मरदन सुखदाई॥ तादिन देखितास चतुराई॥ भयोप्रसन्न मोद वसराई॥ दोहा॥ करन हार कौतुक सकल करिछित पति सिव काई॥ भये लुपत ह्रत सदन निज सयन सेत ~~सिवकाई~~ सुखदाई॥ किये विसरजन भक्ति जुत भोजन भवन जिमाई॥ भयोभीत वस सुमरि उर निज स्वामिन सिव काई॥ २॥ टीका॥ औरभी कीर्तन कथा और भगवानके गुण चरित्र जो है सो प्रीती भक्ती से भली प्रकार श्रवण करता ~~[illegible]~~ कृस्न भगवान के चरन कमलों की प्रीती वाला ~~[illegible]~~ भया हुआ नित्य संत भक्तों की ~~[illegible]~~ सेवा मे ही मगन रहता था जो किसी दौर अर्थात क्षिरमूडन भी करता तो वेतन मजूरी कुछ नहीं लेता और घके हुये संत भक्त अथवा किसी महाजन को देखता तो प्रीती ~~[illegible]~~ मरदन चापी करने लग जाता और वटने आदि सौगंधिक द्रव्य वनाय कर जाय करके उत्तम ~~[illegible]~~ लोगों के मल आवता था एक प्रातः होते ही राजाकी सिवकाई करने को जो चला तो मारग मे तिसको भूखे ठाढे हुये संत महात मा देख पडे तव तिनको दीनभाव से प्रणाम करके ~~[illegible]~~ वडे सनमान से घरमै ले आया और मन वचन काया करके तिनकी सेवा भक्ती जो है सो करने लगा ~~[illegible]~~ ऐसे संत सेवा मे लीन भया सै यन राजाकी ~~[illegible]~~ सिवाई को हृदय से विसार देता भया तव संतो की सेवा करते हुये तिसको सूरज मध्यान मै छायत होय गया

अथ सयन चरित्र

दोहा॥ स्रवण सुखद मानस मुदित हरन त्रिविध तपमूल॥ भक्ति महातम कथन कल करहुं सकल सुखमूल॥ हरिपद पंकज भक्ति दृढ़ करन तरन संसार॥ नासन दुरमति दुरत दुख विदरन विषय विकार॥ चौपाई॥ विदत बुंदेलखंड जे देसा॥ तहां वसहिं इक रुचिर नरेसा॥ राजाराम नाम अस तासा॥ तहि इक रच्यो ललित थल वासा॥ बांधव गढ़ अस नाम सुहावा॥ रम्य धवल धाम मनभावा॥ लसत कलस कल कंचन द्वारा॥ जड़ित चारु मणि चित्र अपारा॥ मोरहि उदित होत जब भाना॥ जगमगात छवि देत महाना॥ वापि तड़ाग कूप चहुं कोरा॥ उपवन द्रुमन दरस चित चोरा॥ वाटिक सुमन ललित अमराई॥ मधुप सकुन स्वर मधुर सुहाई॥ आपु भूप विद्या गुण सागर॥ दया दान धरम मति नागर॥ देव यजन पर परहित पाला॥ विषय विकार मार मद जाला॥ एक पतनि रत धीरज धामा॥ वीर प्रधान कुसल संग्रामा॥ तासु एक भृत नापित कोई॥ ब्रैलाप्येग करम पर सोई॥ प्रीति पात्र छितपत अभिरामा॥ सयन नाम सेवक गुणधामा॥ दोहा॥ इत उत देखत संत कित छितपत चित दत जोय॥ रति रत करत विभक्त मन तासु दिवस निस सोय॥१॥ टीका॥ अब और कानो को सुख और मन को आनंद देनेवाला ~~तीसरा~~ और तीन प्रकार के ताप शूल ~~[illegible]~~ को नास करने वाला भक्ती का सुंदर महातम जो है सो कथन करता हूं कैसा भी महातम है कि दोष दुरमती के सहित सब विषय विकारों को नास करके कृस्न भगवान

सयन सुखं कमलंड ८

निज सदैव स्वामि नहिव काई॥ भयो न आज उ
पस्थित भाई॥ तांतें जाहु नउरपत आगे॥ जोतुम
कवहुं दयारस पागे॥ करि चतुराई युक्ति युत आ
पन॥ नृपपें जाय मोर विज्ञापन॥ करउ आत प्र
भु कोप निवरनी॥ सहिउ जहिं शांति मोद मन भ
रनी॥ अस मृत सुनत सयन कर वानी॥ नृपपें जा
य युक्तयुग पानी॥ दोहा॥ मने दासतुव सयन छि
र उरपत ठाढ्यो द्वार॥ कृपा अपेक्षत नाथ तु
व निज अपराध विचार॥३॥ टीका॥ इसप्रकार से
चिंता सोच मे लीन भया हूआ सयन कहता है
कि आज मैने अपने स्वामी के अंगों मे तैलकी म
रदन नहीं की इसतें सो अव क्या मेरे पर कोप क
रेंगे हे भगवान अव कौन यतनसें वचूं गा
देखिये मेरी कैसी दशा होती है ऐसे विचारकर चिं
ताके वश भया हूआ वडे संकोच से राजाके द्वार
पर चला आया और भयसें कांपता हूआ द्वारके
वाहर ही स्थित होय रहा मुखसे कुछ वोल न
हीं सकता है तव राजाके और सेवक तिसको
मन मारे हूये देखकर कहने लगे कि हे भाई तू
आज प्रजापालके निकट क्यों नहीं जाता है
तेरेको कौन सोच ने घेरा हूआ है ऐसे तिन
का कथन सुनकर परम साधू जन सयन जो है सो
कहने लगा कि भाई आज मेरे तें वडा अपराध
होयगया है मै आज स्वामी की नित्य की से
व काई से चूक रहा हूं अर्थात आज मैरे से तैल
की मरदन जो है सो नहीं होय सकी इसीतें भ
य भीत भया हूआ आगे नहीं जाय सकता हूं
अव जो कदाचित तुम दया करके मेरी अपनी

चतुराई और युक्ती से जाय कर प्रजापाल के आगे मेरी ऐसी विनती और प्रार्थना करो कि जिस तें तिनके हृदय का कोप सहजेही शांती हो जावे और मेरे को कृपा दृष्टी सें अपराध कीना मॉकरें इस प्रकार सेवक जो हैं सो सयन की वाणी सुन कर तुरत राजा के पास जायकर हाथजोड़ करके विनती करने लगे कि हे नाथ आप के चरनो का दास सयन जो है सो प्रभू तुमारे भय से संकोच के वशीभया हुआ द्वारे पर स्थित होय रहा है कुछ अपना अपराध विचारकर दीन दयाल की कृपा दृष्टी के पावने का अभिलाषी है॥ ३॥ चौपाई॥ तास हेत जस आयस होई॥ कहिये दीन दयाल अब सोई॥ भूप सुनत मानस विसमाई॥ भन्यो वदन अस वचन अलाई॥ सो करि गयो प्रात सुखदाई॥ ते लाभ्यो॥ रुचिर सिव काई॥ हम न गुनत ताकर अपराधू॥ सयन सुसील सरल चित साधू॥ उपजी कवन तास उर भ्रांती॥ से तहि कर हु वेग अब शांती॥ अभय देहु सुचि सेवक जानी॥ ल्याव हु जाय सपदि गहि पानी॥ अस सासन नरनायक पाये॥ तासु लेत सनमुख भृत आये॥ देखित भन्यो मुदित क्षितराई॥ जन तुव आज सकल सिवकाई॥ हित जुत जथा उचित करि मोरी॥ कीन गवन निज भवन वहोरी॥ अब कस उपजि भ्रांति उर तोरे॥ बोल्यो सयन जुग ले कर जोरे॥ मे जब आज प्रात प्रभु जागा॥ स्वामि सदन तुव आवन लागा॥ देख्यत देखि संत मग ने हू॥ गवन्यो लेत नाथ निज गेहू॥ तिन सुर करत सदन सिव काई॥ आज नसको दास

प्रभु आई॥ याते मानि त्रास उरभारा॥ ३ होंठा ठ सेवक थिर द्वारा॥ अस सुनि भूप परम विसमाना॥ आन भृतन सन वचन वखाना॥ देखो तुम है सयन जन आव॥ भृतन वदन तव वचन अलाव॥ देख्यो महाराज हम राहा॥ तेलाभ्यंग करत प्रभु देहा॥ अब इहि कथन सुनत हम काहीं॥ भयो नाथ विसमय मन माहीं॥ ३ हे निश्चय हरि भक्त सुजाना॥ अस विचार सब लोगन ठाना॥ देख्यो नम्र वचन नरराई॥ अब तें सयन पुरष सिव काई॥ तुव नकरहु विनु भगवन सेवा॥ सेवहु अतिथि संत दुज देवा॥ मैं तो रे देहौं इकग्रामा॥ जहि तें सरहिं सकल तुव कामा॥ दोहा॥ मोरे सनमुख सयन अब गुरु समान थिर होय॥ रहहु सदा अनुकूल तुव वेस धरम निज लोय॥४॥ टीका॥ अब तिसके नमित्त जैसी आज्ञा हो सो कृपानिधान कहि दीजिये तव राजा सुन कर अचरज को प्राप्त होय गया और कहने लगा कि भाई वे तो प्रात समय अपनी तेल मरदन आदि सुखदायक सिव काई जो है सो भलीप्रकार सव कर गया है मैं तो तिस का कुछ अपराध नहीं गिनता हूं सयन बड़ा सुशील और सरलचित साधू है तिसके हृदय मे ईश्वरकौन प्रेम उतपन्न होय गया है मैं अवी तिस की प्रीती करूंगा और अपना सुहृद सेवक जान कर तिस को अभयदान देऊंगा जावो सयन को मेरे पास शीघ्र ले आवो ऐसे राजा की आज्ञा पाय कर सेवक तुरत ही जाय कर तिस को राजा के सनमुख ले आये तव राजा देख करके कहने लगा कि हे सयन तू तो हितचित से यथा योग्य मेरी सव

ओर ईसी प्रातकाल हीं राजाराम जो जागे
तब अपना नित्य का सब करम जो है सो करने ल
गे ओर जब तैल मरदन का समय आया तब
भक्त की स्वामी से वाको विचार कर कि राजा कोप
ई षी ना करें तुरत ही सेयन का रूप धार भगवा
न कृपा निधान तहां चले आये ओर माय कसय
न मेष प्रभू वड़ा सुंदर सुगंधी वाला तेल
लेकर जाय करके राजा को वड़ी सुखदायक कोमल
मरदन जो है सो करने लगे पेउ तिस दिन राजा तिस
की चतुराई के सहित वड़ी सुखदायक सेवा देख कर
हृदय मे अत्यंत ही प्रसन्न होय गये तब करन हार
भगवान अपने अदभुत कौतुक से राजा की सिव
काई करके तुरत तहां हीं लुपत होय गये ईहां
सयनभी संतों को भक्ती भाव से भोजन जिमायकर
ओर भली प्रकार सब सिवकाई कर कर सनमान
से विदाय कर देता भया तिसतें उपरांत आपने
राजा स्वामी की सिवकाई का सुमरण करके भय से
व्याकुल होय कर कहने लगा कि हे देव अब मे कौन उ
पाय करूंगा ॥२॥ चौपाई ॥ तैलाभ्यंग आज नहिं
कीना ॥ अस उर गुनन सोच मन लीना ॥ करहिं
अब प्र कोप नर राऊ ॥ देव करहुं अब कवन
उपाऊ ॥ अस विचारि चिंताकुल होई ॥ सकुचि
त गयो द्वार नृप सोई ॥ भयवस रहो देहि थिर
सयना ॥ बोलि न सकत वदन कछु वयना ॥ तब
भूत आन देखि मन मारे ॥ तासु वदन अस गिरा उ
चारे ॥ आज न आउ भवन कसराई ॥ कवन
सोच तोरे [illegible] उर माई ॥ २ बोल्यो वदन स
यन जन साधू ॥ मोहि ते भयो आज अपराधू ॥

और किसी मानुष्य की सेवा नहीं करना भक्त मै तेरे को एक सुंदर ग्राम जो है सो देता हूं तिस तें तेरा सब कार्ज सिद्ध हो जाय करेगा और प्यारे तूं अपने वंस का धरम सब त्याग कर सदा प्रसन्न चित होय कर के गुरू के समान मेरे पास ही निवास किया कर ॥४॥ चौपाई ॥ भूप वचन सुनि सयन सुहावा ॥ करि प्रणाम निज सदन सिधावा ॥ तब तें प्रीति भक्ति गुन रागा ॥ अधिक संत दुज सेवन लागा ॥ कृष्ण भजन तत पर दिन राती ॥ विजन मोह मद मदन अराती ॥ संजुत नृपति लोक समुदाई ॥ तास भक्ति दृढ देखि सुहाई ॥ कृष्ण सरोज चरन रति मानी ॥ भये सुभक्त रुचिर सब जानी ॥ अस रह चरित यथा मति मोरी ॥ वरणन कीन वदन कछु थोरी ॥ दोहा ॥ अमर अंसु सदृश विमल कृष्ण भक्ति सुखदाई ॥ ते नर धन्य सुधन्य जग दुरत हरन जिन पाई ॥ ५ ॥ टीका ॥ तब राजा का बड़ा हित प्रीती वाला वचन सुन कर के सयन जो है प्रणाम कर के आनंद से घर को चला गया तब तें बड़ी प्रीती भक्ती वाला भया हुआ दिन दिन अधिक तें अधिक ही संत भक्तों की टहल सेवा करने लगा और काम क्रोध मद मोह इत्यादि विषयों को जीत कर रात्री दिन कृष्ण भगवान के भजन सुमरण मै लीन हो जाता भया तब राजा के सहित सब लोग तिस की बड़ी दृढ भक्ती देख कर सो भी कृष्ण परमातमा की भक्ती प्रीती वाले होय कर जगत मै ज्ञान ध्यान और विवेक विचार

केसहित सुंदर भक्त होंहोजाते भये इसप्रका
र इन चरित्र जो है सो जैसा क मती के अ
नुसार होय सका ऐहाँ गायन करदिया है
इन संसार मे कृस्न भगवान की भक्ती जो है
सो मानो मरे हूये जीवों को जिया
वने वाली एक निरमल अंम्रुत की नदी है
वे धन्य वे धन्य पुरष हैं ~~किन्होंने इन~~ किजि
न्होने इनपापों के हरने वाली भगवानकी
भक्ती प्रापत की और जगत मै अपना ज
नम सफल करलिया है॥७॥ इति श्री भक्त
विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती महातमे भा
षा टीका यां सयन चरित वरणने
नाम सरगः — — —

अथसुखयानंदचरित

दोहा॥ जास सुनत विदरत दुरत उर आनंद स
रसात॥ सो अस भक्ति प्रभाव भव करहुं कथ
न अवदात॥ ससि कल सदृश वढन सुख य
टन देष दुखकाय॥ सज्जन कुमद कलीन
मन विकसन विमल वनाय॥ ~~सज्जन कुम~~
दचौपाई॥ रामानंद कर विदत सुहेला॥ सुख
यानंद नाम अस चेला॥ भक्त सुष्ट गुणस क
ल परायण॥ रत संगीत निपुण पद गायन॥

नित संसक्त संतसिवकाई॥ विषयविरक्तम
क्त जदुराई॥ शांति रूप रत तीरथ यात्रा॥
श्रीपति भक्ति रुचिर वर पात्रा॥ विहरत विपुन
लेत कर वीना॥ कृष्ण चरित गायन मनली
ना॥ सो अस सुनत मधुर स्वर प्यारी॥ खग मृग
सकल मुहत वनचारी॥ इत उत चारि वोर
तहि आये॥ निरखत करत दृग नीर वहाये॥ वे
लि प्रसून विटप वनपाता॥ इकटक जनहुं श्रो
ति रस राता॥ आन जीव जेतू जित देखे॥ ठाढे
मनहुं चित्रवत लेखे॥ अस प्रकार नित कानन
जाई॥ कृष्ण चरित्र विमल सुख दाई॥ करि अ
लाप मुख विविध प्रकारा॥ अमय करत जीवन
संसारा॥ समय एक मथुरा पुरि आवा॥ तहे
विलोकि ललित मन भावा॥ राधा भवन भव
न सुर लाजा॥ पूरित संत महंत समाजा॥
प्रेम पयोधि मगन मति धीरा॥ सुमरत कृ
ष्ण हरन जन पीरा॥ वंदित संत कंज कल
पादन॥ लग्यो मधुर वर वेणन निनादन॥
कृष्ण चरित पद गायन रागा॥ भक्तप्रधान
करन कल लागा॥ वैष्णव सुनत सार संगी
ता॥ कृष्ण चरित पद विमल पुनीता॥ सा
दिर प्रीति भक्ति जुत रागे॥ वंदित विविध प्रसंस
न लागे॥ दोहा॥ भक्त सुभृ दृग देखि अस संत
न सील सुभाय॥ वैठो सुचि आसन धरन
नम्र चरन सिर नाय॥ १॥ टीका॥ अब जिसके
श्रवण करने सें पापों का नास होय कर हृदय
मे आनंद फैल जाता है सो ऐसे सामक्री का

सिव कांई करके फिर अपने घर को चला गया था अब तेरे हृदय मे इह कैसा भ्रम संदेह उतपन्न होय गया है तब राजा को प्रसन्न जान कर सयन हाथ जोड़ कर दीन बाणी से कहने लगा कि हे कृपा निधान मै जब आज प्रातःकाल उठ कर तुमारी सेवा करने को घर से निकल कर चल पड़ा तब मारग मै संत महातमा भूखे जो देखे सो सहार नहीं सका तुरत तिनको साथ ले कर और लौट कर के फिर मैं ही चला आया तहां तिन की सेवा भक्ती करते करते प्रभू मेरे को आप की सिव कांई जो थी सो बिसर गई और समय बतीत होय गया आपनी सेवा पर आय नहीं सका इसी तें दीन ख्याल मे चित मे भय मान कर द्वार पर ही स्थित रहा सनमुख आवने की सामर्थ नहीं भया ऐसे सयन का वचन सुनकर परम अचरज को प्रापत होय गया और अपने दूसरे सब सेवकों को कहने लगा कि भाई आज सयन जो मेरी सेवा करने को आया था सो तो तुम सबने भी देखा होगा तब सेवक जन कहने लगे कि हे पृथ्वीनाथ हमने देखा था आप की प्रीती भक्ती से भली प्रकार तेल की मरदन कर रहा था परंतू अब जो इसके मुख से कथन सुना है तो नाथ हम भी बड़े अचरज को प्रापत होय गये हैं इह तो निश्चय करके भगवान का बड़ा दृढ़ और चतुर भक्त है जब इस प्रकार सब लोगों ने सयन की प्रसंसा बड़ाई गायन करी तब राजा प्रसन्न भया हुआ कहने लगा कि हे भाई सयन भक्त तूं आज तें ले कर अतिथी संत ब्रह्म की सेवा और भगवान के भजन सुमर्ण के बिना

जोहैं सो बड़ी कोमल रसीली स्वरसे आलाप
न करकर संसार के जीवों को अभय और स
फल करते रहते थे एक समय भक्त प्रधान
कृष्ण प्रभा तमा के गुण गावते और विच
रते हुये मणुरापुरी में चले आये तहां देव
ताओं के भवनों को भी लज्जा देने वाला श्री रा
धके जी का भवन जो है सो देखते भये वैसा
कि संत समाज करके परिपूर्ण था तब भक्त उ
त्तम प्रेम के समुद्र में मग्न भये हुये भक्तज
नों की पीड़ा के लेने हारने वाले कृष्ण प्रभात मा को
सुमरकर और संत भक्तों के चरनो
को वंदना करकर वीना को कांधे पर धर करके
बड़ी मधुर स्वर और कोमल वाज से
रागतान को आलापन करने लग जाते भये
और फिर तैसे ही रसीली और मधुर प्यारी
स्वर सें कृष्ण भगवान के चरित्रों के मनो
हर पद जो हैं सो मुख सें गायन करने लगे त
व तिनके मुख सें गाने संगीत के सार और
भगवान के अगाध चरित्रों के ललित पद
सुनकर के सब वैष्णव गदगद प्रसन्न होय
गये और भक्त प्रधान के चरनों पर वारंवा
र प्रणाम कर कर नाना प्रकार श्लाघा व
ड़ाई जो है सो करने लगे कि अहो भक्त उत्तम
तुम धन्य हो कि जिनोंने ईहां अपने चरन धा
र कर आज संसार में हम को सफल कर दिया
है तब इस प्रकार हेतों कासी
लसुभाव और हित प्रीती देख कर सुखया

नंदजी सब को सीस नाय कर और वंदना कर
कर फिर पृथ्वी पर आसन लगाय कर के बै
ठ जाते भये ॥२॥ चौपाई॥ तब वैष्णव संतन मृ
दु बानी॥ विनय युक्त प्रसन्न वदन बखानी॥ सुन हे
भक्ति शिरोमणि नागर॥ जब भगवान तरण भव
सागर॥ कृष्णदेव हरन दुखदीना॥ द्वारावती गव
न निज कीना॥ पाछे गोपि सकल बिलपाती॥
कीन विरहे गायन जहि भाती॥ आज सु भक्त
सु पृ सुखदाई॥ हमहिं वदन निज देहु सुनाई॥ भ
क्त प्रवर संतन लखि देखौ॥ करि प्रणाम जुत ह
रष बसेखौ॥ राधा कृष्ण चरन जल जारन॥
हृदय सुमरि निज विघन निवारन॥ गोपि न वि
प्रयोग भगवाना॥ कीन वदन गायन जिमि ना
ना॥ सो मन हरन ललित पद पावन॥ ला
गे भक्त मधुर स्वर गावन॥ सुन लोग करुणा ॸ
र पाये॥ हाहा रुदन करन सब लागे॥ केऊ
धरणि मुर्छित अकुलाये॥ केऊ चित्र वत
रह कर रह गये॥ केऊ निरत निरवेद अधीरा॥
विकल बहाय प्रेम दृग नीरा॥ गवने तोरि गृ
हस्थ प्रति बंधा॥ भये क्षि बेलि विटप निह
पंदा॥ गेयन खानपान तजि दीना॥ बतस
विकल सब दुग्ध बहीना॥ दोहा॥ श्री राधा
कर भवन मध मृदु मूरति कल जोय॥ सो
हु लागि रोदन करन केपि झरन दृग तोय॥
२॥ टीका॥ तब वैष्णव संत जो थे सो बड़ी व
नीत अर्थात विनती की भरी हुई बाणी से कहने
लगे कि हे प्रवीन (हे) भक्त शिरोमणि जब संसार

समुद्र के तारने वाले और दीन जनो के दुख निवारने वाले कृष्ण परमात्मा मथुरा को त्याग कर द्वारिका को चले गये हैं तब पीछे गोपी समाज ने जिस प्रकार भगवान के विरहे विलाप गायन किया है सो आज आप ने मुख से हम को सपष्ट कर के सब सुनाय दीजिये [illegible] इस प्रकार संतो का कथन सुन कर और तिन की आज्ञा सचीदेव भक्त प्रधान [illegible] प्रणाम कर के गदगद प्रसन्न होय गये तिस तें उपरांत फिर श्री राधा कृष्ण के चरन कमलों हृदय मै सुमर कर के भगवान और गोपियों का जिस प्रकार विरहे विषाद भया था सो वडे मनोहर और ललित पदों मै मधुर मधुर स्वर से भक्ती प्रीती पूर्वक गायन कर कर ~~[illegible]~~ सब को रिझावने लगे तब ऐसे अद्भुत गायन को सुन कर वै सब संतो के सहित सब लोग करुणा रस विखे भीगे हुये हाहा कार कर रुदन करने लग जाते भये के ते व्याकुल और मूर्छा होय कर पृथवी पर गिर पडे के तेएक टक दृष्टी जोडे हुये चित्र के समान स्थिर होय गये के ते धीरज को [illegible] कर वैरागी चित होय कर प्रेम नीर जो है सो नेत्रों से वहाय चले जाते हैं के ते गृहस्थ का वंधन तोड कर निरमोह और विरक्त होय गये वेली वृक्ष भी सब अचल गती को प्रापत होजाते भये गौओं ने खान पान सब त्याग दिया वछरी वछरे भी दूध पीने से नवृत्य होय गये तहां श्री राधा जी के भवन मे वडी मृदु मनोहर मूरती

सुंदर प्रभाव जो है मै कथन करता हूं कैसा भी
प्रभाव है कि दिन दिन चंद्रमा की कला के समान
सुख को अधिक करके दोष कलेशों की हानी
देने वाला और कुमद कली अर्थात न्हो ये
की कलियों के समान सज्जन जनों जो हैं तिनको
प्रफूलत करने वाला है कहते हैं कि रामा
नंद जी का वड़ा सुंदर उजागर सुखया नंद
नाम करके एक चेला होता भया सो कैसा कि भक्त
उत्तम सरव गुणों की निधी और संगीत के ल-
लित पद गायन करने मै परम प्रवीन संतों की से
वा भक्ती वाला विषयों से विरक्त और जदुनंदन
भगवान का भक्त वड़ा शोभीत सरूप तीर्थ यात्रा
की श्रद्धा वाला मानो भगवान की भक्ती का एक
पात्र था सो प्रेम मे उनमत्त भया हूआ हाथ
मे वीना धारन करके नित्य वन विखे विचर
ता और मधुर मधुर स्वर से भगवान के चरित्रों के
ललित पद जो हैं सो गायन करता रहता था ऐसे
तिस वड़ी मधुर और स्वर के सुन करके वन के सं
पूर्ण खग मृग और जीव जंतू जो थे सो सब मो
हित होय गये इत उत तिस की चारो वोर आ
य करके जिहवा से चाटते और प्रेम के वश भये
हूये नेत्रों से नीर वहाय चले जाते हैं वन के वे
ली वृक्ष पुष्प पत्र इत्यादि जो थे सो भी प्रीती
रस मे मगन भये हूये टकटक होय करके स्थि
त होय गये उपरांत और अनेक जीव जंतू जो
थे सो सब मानो चित्र के समान चत्र हीं होय
कर अचल होय गये इस प्रकार भक्त सुखया
नंद जी नित्य वन विखे जाय कर कृष्ण भग
वान के वड़े निरमल और सुखदायक चरित्र

ल

गीजन आगम जग लीन सुगम गति पाय ॥ ३॥
टीका॥ ऐसे बडा अदभुत कौतुक कर कि जी
व जंतू सब अचल जडवत होय गये हैं भ
गवान के भक्त सुखयानंद जी तुरत गायन करने
से नृत्य होय गये तब और और भांत की
चरचा और कथा वारता आलापन कर कर मू
रछा करके व्याकुल भये हूये लोग जो थे सो
सावधान करके सब उठाय लिये ऐसे माया
के मोहित भये हूये लोगों कों वे कुछ भी सुम
ली नहीं रहा तब बहुत बेर के पीछे तिस गा
यनें प्रेम सुख को हृदय मे विचार कर
दीन भाव से प्रणाम करके कहने लगे कि हे
भक्त प्रवीन धन्य हो तुम धन्य हो और धन्य
तुमारी जदुनंदन भगवान के चरन कमल मे
दृढ भक्ती है देखो कि जिस प्रकार आज तु
मने इन भगवान और गोपि
यों का विरहे वियोग कथन गायन कर कर
लोगों के सहित सब संत समाज को सनाथ और
सफल किया है ऐसे दूसरा कौन सामर्थ होय सकता
है ताते भक्त प्रधान तुम जगत मे दुरल
भ हो तुमारे समान उपकार की निधी ना को
ई पीछे भयी और ना आगे होयगा इस प्रकार
अनेक श्लाघा बडाई और परस्पर
विनती प्रणाम कर कर सुखपूर्वक सब लो
ग अपने घरों को चले गये और
भक्त सुघ सुखयानंद जी श्री वृंदावन मे विराज
ते भये तहां कुछ दिन निवास करके फिर
हाथ मे वीना लेकर कृस्न भगवान के पवित्र

गुण गण जो हैं सो गावते हूये भक्ती के मद मे
मत्त होय कर अनेक तीरथों मे भ्रमते भ्रमते म
थुरा पुरी मे आय प्रापत भये तहां कृष्ण पर
मातमा को भजते हूये निवास करने लगे तब
समय पाय कर ध्रुव ने शरीर को और निबल
जान करके एक दिन जमना जी के किनारे
पर चले आये तहां भक्ती मे लीन भये हूये कौ
तुक से शरीर को त्याग कर कृष्ण लोक को
चले जाते भये नाभादास कहते हैं कि हे संतो
देखिये भक्ती का अद्भुत प्रभाव कि कृष्ण भगवा
न के गुण गण गावते हूं भक्त सुखानंद मुनी
जोगी जनों को भी दुर्लभ और अगम गती है सो
भक्ती के प्रसाद तें सुगम सहजे ही प्रापत कर
लेते भये ॥२॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भ
गवद्भक्ति महातम भाषा टीकायां सुखानं
द चरित वरणनं नाम — — सर्गः

अथ सुरसुरानंद चरित

दोहा॥ मोद भरन संशय हरन भक्ति महातम
ग्यान॥ करहुं कथन संछेपत कछु कृष्ण च
रन रति दान॥ रामानंद कर रुचिर
सिख विदित सुरसुरानंद॥ जास मधुप मन
लुभत पद पदम कृष्ण सुख कंद॥ चौपाई॥
विरत विवेक ज्ञान निधि नागर॥ करत चरन
हियन सहित परिचा
रीरथ गुण सागर॥ आवा जगन नाथ पुरि सोई॥
रत होई॥

तहां निवास कछुदिन कीना॥ करि प्रणाम
हरि भवन प्रवीना॥ बहुरि करत अस्थान सु
हावा॥ देखत नगर विपुल मन भावा॥ अस से
कलप लीन उरठाना॥ वृषभ नाथ पुर कर
हुं पयाना॥ तब मारग इक बनक सुजाना॥ वि
क्रय करत बटक पकवाना॥ तिन कहँ देखि भक्त
वर काहा॥ इहके सबन क पदारथ गहा॥ महा
भाग इति जानन काहीं॥ उपजी रुची मोर मन
माहीं॥ जानि वनक अति मूरख तासा॥ कीन्हो
वदन वचन परिहासा॥ इह प्रसाद पावन मन
भावा॥ जगन नाथ भगवान सुहावा॥ जो तुमार
इच्छा मन मा[illegible]नी॥ तो इह लेहु रुचिर सुभ
जानी॥ अस कहि वनक बटक इक दीना॥ भ
क्त सुघृ स्वादि गहि लीना॥ तिन कहे देखि ए
क सिष आना॥ लीन बटक उर हरषि महाना॥
गुरु बर दृष्टि बचावत रागा॥ वदन फेरि ज
ब पावन लागा॥ तासु बिलोकि बटक अस
पावत॥ भनै वदन गुरु वचन रसावत॥ इह
प्रसाद पावन भगवाना॥ तुव कत पाव
अधम मति हाना॥ अब तुम भये हु सुपच गत पां
ती॥ गुरु कर कोप क्रूर इहि भांती॥ देखत
नम्रनि कर सिष आना॥ बोले वदन जुक्त जुग
पाना॥ तुमहिं देखि पावत इन पावा॥ कस
कृपाल अपराध लगावा॥ तब गुरु भने
रि तकि मन माहीं॥ जानत तुम हो मरम क
छु नाहीं॥ महाप्रसाद जानि भगवाना॥
पावा हम हु भक्ति सन माना॥ इन रसना रस
जानि अभावा॥ अधम मंद लालच मति
पावा॥ दीना॥ सुनत सिषन जुत लोग सब

जोथी सोभी प्रेम कर के व्याकुल श्रोर केपायमा
न भई हुई रोदन कर कर नेत्रों में जल का प्र
वाह वहाय जाती है॥२॥ चौपाई॥ अस अद्भुत
अचरज वसेखी॥ जीवजंतु अब चल सब दे
खी॥ सुखआनंद भक्त भगवाना॥ भये नृत्य करन
कलगाना॥ आन गाय कछु वदन अलाई॥ मुर
छित विकल लोक समुदाई॥ सावधान करि ली
न उठाये॥ माया मुहत लोग विसमाये॥ रहीन
सो समझी तिन काहीं॥ विपुल वैर का[illegible] मन न
माहीं॥ उर विचारि गायन सुखरागे॥ करि प्रणा
म अस भाषण लागे॥ धन्य धन्य तुव भक्त प्रवीना॥
जदुपति चरन भक्ति दृढ़ लीना॥ सकल लोक
जुत संत समाजू॥ तुव जस विरहे कथन करि
आजू॥ कौं सनाथ भक्त सब काहीं॥ तुव समान
दुरलभ जगमाही भये न होंहि लोक हित का
ही॥ गायन रसिक भक्त व्रतधारी॥ अस प्रसंसि
मुख विविध प्रकारा॥ करत परस्पर विनय जु
हारा॥ निज निज चले सदन सुख पाये॥ भक्त
सुघृ वृंदावन आये॥ तहां निवास कछुक दिन
कीना॥ लेत वहोरि ललित कर वीना॥ कृस्न च
रित गुणगण सुखगाते॥ तीरथ अनक भक्ति
मदमाते॥ अटन करत मथुरापुरि आये॥ नि
वसत तहां कृस्न गुण गाये॥ जानि जठिर नि
ज निवल सरीरा॥ एक दिवस रविनंदनि तीरा॥
कृस्न चरित्र विमल पद गायन॥ करें भक्त हरि
भक्ति परायन॥ कौतुक तजत रुचिर निज काये॥
कृस्न लोक कहं भक्त सिधाये॥ दोहा॥ देखहु भ
क्ति प्रभाव इह भक्त कृस्न गुण गाय॥ मुनि जो

कहा कि [illegible] हे साधू इह परम पवित्र श्री ज
गननाथ स्वामी का नैवेद प्रसाद है जो तुमारी
कृपा से वचा है तो इस में वडा सुंदर और शु
भ कर लेलेवे इस प्रकार कथन करकर वे
सने एक [illegible] जो वडा है सो दे दिया और
इस भक्त प्रधान ने वडी रुची सनमान से लेलिया
[illegible] से तिन को देखकर एक शिष्य जो था सो
तिस ने भी तैसे ही एक वडा ले लिया और
गुरु जी की दृष्टी बचायकर मुख फेर कर के
जव तिस को खावने लगा तव गुरु जी ति
स को देखकर वडे कोप से कहने लगे कि अ
रे दुष्ट नीच इह तैने भगवान का नैवेद प्रसाद था कि
य लिया है जाके भेद अव तुम हमारी पंक्ती में का
हिर होवो इस प्रकार गुरु जी का महां कठिन कोप
देखकरके और शिष जो थे सो नम्रता से हाथ
जोडकर कहने लगे कि हे कृपा निधान इस ने
तो आपको खावते देखकर इह प्रसाद पाया है
अव प्रभू इस दीन पर इतना भारी कोप क्यों किया
है इह तो कोप के लायक नहीं था तव गुरु
जी रोखके वचनों से कहने लगे कि हे जन तु
म इस भेद को नहीं जानते हो हमने तो इहां
महां प्रसाद जानकर वडी प्रीती भक्ती और सन
मान से पाया और इस अधम ने लालच वृती
से जिह्वा का रस जानकर निरादर पूर्वक पा
या है ऐसे भक्त सत्यम का कथन सुनकर
शिष्यों के सहित सव लोग [illegible] जो थे सो कह
ने लगे कि हे भक्त प्रधान हम को इस तुमारे

कथनका निश्चय किसप्रकार हो औरहम इस
को कैसे सत्य जाने॥१॥ चौपाई॥ जबलोगन
अस वदन वखाना॥ बोले तब सुभक्त भगवाना॥
अवहिं होव निश्चय तुम काहीं॥ धरहु तनक धी
रज उर माहीं॥ अस कहि सिषहिं वदन समुझाई॥
आपु कीन तहि वमन कराई॥ निकस्यो वदन
वमन सिष द्वारू॥ गुरुमुख निकस तुलसिद
लचारू॥ लोक विलोकि चरित विसमाये॥
साधु साधु सब वदन अलाये॥ तव गुरु भने व
चन सुखदाऊ॥ इहप्रसाद रुचि रुचिर प्रभाऊ॥
इहि निज हृदय ग्यान मति पावा॥ सो प्रतछ तुव
सनमुख आवा॥ तातें भयो पतित गतवेला॥
अव नउ चित इहि पंकति मेला॥ सुसिधर
पुरी लोहिं जव ध्याना॥ तव कराय प्रायश्चित
सनमाना॥ जानि शुद्ध कल पावन देहू॥ लेहु
मेलि निज पंकति एहू॥ लोग सुनत मान सवि
समाने॥ सकल परस्पर वचन अलाने॥ हो
त सत्य निश्चय दृढ जाहीं॥ ~~[illegible] उपजन~~
~~प्रकार तुमताहीं~~॥ भनत लोग अस निज नि
ज धाये॥ भक्त प्रवर कासीपुर आये॥ विधि
जुत प्रायश्चित सिषहिं कराई॥ लीन रुचिर नि
ज पंगति मिलाई॥ दोहा॥ अस प्रकार इह चरित
सुभ भक्त सुरसरानंद॥ मैं कीन्यो निज वदन
कछु कथन करन भव फंद॥ करि निश्चय दृ
ढ भक्तवर कृष्ण भक्ति पर होय॥ तरै सो सुगम
वारद विकट भव सदृश पद गोय॥२॥ टीका॥
जब इसप्रकार लोगों ने कथन किया तब भग

वान के भक्त सुरसरा नंद जी कहने लगे कि भाई तुम को अवी निश्चय हो जाता है एक लगा प्रमाण लेधी रज करो ऐसे कहिकर और शिष्य को समुझाय कर आप भी वमन अर्थात उलटी करी और शिष्य को भी करवाई तब शिष्य की उलटी के द्वारा ज्यों का त्यों वटिक जो वड़ो है सो निकल पड़ो और गुरु जी के मुख से तुलसी दल निकलतो भयो इस अद्भुत कौतुक को देख कर सब लोग अचरज को प्राप्त भये हुये साधू साधू शब्द को उच्चारन करने लग जाते भये तब गुरु जी बड़े सुखदायक वचनो से कहने लगे कि भाई मैने जो तिस वटिक अर्थात वड़े को भगवान के पवित्र प्रसाद की रुची से पाया सो इस तिस का प्रभाव है और इसने कुबुद्धी करके जिव्हा के रस के लालच से पाया था सो तुमारे सनमुख प्रकट होय गया है सो ते इस दोष के सहित मर्यादा से वाहिर होय गया अव इस का पंक्ती मे मिलाना उचित नहीं है जब लग शिव पुरी मे नहीं जाते तब लग इह नहीं मिल सकता तहां जाय कर विधी विधान के सहित प्रायश्चित करवाय कर फिर इस के शरीर को शुद्ध जान कर अपनी पंक्ती मे मिलायते वेंगे इस प्रकार लोग सुन कर के बड़े अचरज के वस होय गये और परस्पर कहने लगे कि भाई जहां सत्य करके निश्चय दृढ होता है तहां कौन सी वात है जो सफल और सिद्ध नहीं होजाती ऐसे कथन कर कर लोग सब अपने अपने चले गये और भक्त प्रधान शिष्य समाज के सहित आ नंद से कासी पुरी मे आय गये तहां विधी अनुसार प्रायश्चित जो है सो करवाय कर अपने निसप

भगत भक्ती गुण गो हुआ हमारे निश्चय होव कसमस्य
कथन तुव ए हु॥२॥टीका॥ अब और हृदय
मे आनंद के भरनेवाला और संशय शोक के ह
रने वाला भक्ती का महातम कि जिस के श्रवण
करने से कृष्ण भगवान के चरन कमलों मे प्रीती
उपजती कुछ संक्षेप करके गायन करता है रामा
नंदजी का सुंदर शिष्य एक सुरसुरानंद नामक
रके उजागर होता भया सो कैसा कि जिसका
भ्रमर रूपी मन नित्य ही कृष्ण परमात्मा के चर
न कमलों का लोभी भया रहता था और परम
चतुर वैराग विवेक के सहित ज्ञान ध्यान की
निधी था एक समय सो गुणों का समुद्र अप
ना सिष्य समाज सब साथ लिये हूये तीर्थों का
अटन भ्रमन करता हूआ जगन्नाथपुरी मे
आय प्राप्त होते कुछ एक दिन निवास क
रके फिर भगवान के भवन मै दंड प्रणाम करकर
कही और दिशा को प्रस्थान करे तब ब
ड़े मनोहर बन और नगरों को देखते और वि
चरते हूये हृदय मे इह अभिलाषा करी कि
अब शिव पुरी जो कासी है तिस का दरस करि
ये ऐसे विचार कर चलते चलते मारग मे
एक वेस जो देखा तो वे वटक जो बड़े हैं तिन
को पकवान बनाय वेचरहा है तब तिन को दे
खकर भक्त सब पूछने लगे कि वे सुभा
ई इह कौन पदारथ है हे बड़भागी इस के बूझ
ब के मेरे चित्त मे बड़ी है ची अभिलाखा उत
पन्न भई है ऐसे सुन कर और वै सबने जिस को
मूरख जान कर के
मुख से मुसक्यावते हूये हासी करके

गत्तुगत तासु ग्रस भक्त सूबृ जगि ग्राय॥२॥
टीका॥ ग्रब ग्रोर बड़ा निरमल सुंदर कानो को
सुखदेने वाले भक्ती का मनोहर महातम जो है
सो कथन करता हूं इसमी रामानंद जी का शि
ष्य सुरसरी नाम करके जगत मे प्रसिद्ध ग्रोर
कृस्न भगवान के चरनो की प्रीती वाला विषयों
से विरक्त ग्रोर गुणों की निधी भगवान का भक्त
सो होता भया धन पुत्र स्त्री मीत संबधियों
को हित त्यागकर ग्रतिथि साध ब्रह्मणों की से
वा भक्ती मे लीन रहता था सदैव निसकाम
ग्रोर इकांत बन मे निवास करने वाला था सो
एक दिन घर के सुख ग्रोर कुटंब को त्यागकर
विरक्त भया हूग्रा कृस्न भजन के निमित्त ब
न के मारग को चल पड़ता भया तब तिस
की पतिब्रता ग्रोर धरमसील की निधी स्त्री जो
थी सो भी साथ ही चल पड़ती भई इस प्र
कार भगवान की भक्ती वाले दोनो स्त्री भरता
तहां बन विखे कोई सुंदर स्थान देख कर नि
वास करने लगे तब सुरसरी [illegible] भक्त जो है
सो प्रात काल उठता ग्रोर सोच सनान
करकर फिर ग्रासन पर ग्राय कर भगवान के
भजन सुमरन ग्रोर ध्यान मे जुड़ जाता ग्रोर स्त्री
जो है सो बन से कुछ कंदमूल फल ल्याय
करके प्रथम भक्ती [illegible] भगवान को नैवेद ल
गावती ग्रोर फिर तहां बन विखे कोई ग्र
तिथी संत भक्त जो ग्राय जाता [illegible] प्रीती भाव

से ति [illegible] को जि मायकर पीछे कुछ शेष जो रह
ता सो आय पायलेती [illegible] ऐसे [illegible] बहुमान न
बलबिर्षे भक्ती प्रीती से नित्य पती और संत
महातमा की सेवा करती रहती थी एक दिन
संध्या के समय कोई कपटी दुष्टजन अतिथी
संत का भेषधारे [illegible] स्त्री का रूप देखकर के मोहि
त भया हुआ हर लेजाने के लिये तिन के घर मैं
बलबिर्षे आय प्राप्त भया तब साधू जानकर
सुरसरी भक्त ने बड़ी प्रीती भक्ती से तिस का ब
हुत ही सेवन सतकार किया फिर जब भली
प्रकार रात होयगई तब [illegible] स्त्री के सहित
सुरसरी और वे कपटी संत तहां घर मे आप
ने आपने बिछोना पर सोय रहे [illegible] जब आधी रा
त बतीत होय गई तब पापकी लोभी कपटी
संत [illegible] सो उठकर सुरसरी के वध करने अ
थात मारने के त्यार होकर के इधर उधर डोल
ने लागा [illegible] से तिस के चरन का शब्द सुन
कर सुरसरी भक्त भी जागउठे और चैतन्न हो
य गये ॥ २ ॥ चौपाई ॥ लगे सुमरण करन भग
वाना ॥ अधम कुटिल मानस निजजाना ॥ रहे
तो उठ्यो संत अब जागी ॥ अस बिचारि उर दुष्ट
अभागी ॥ दहिरी हुर बहिर निकसाना ॥ पापी
हनन पाप बलवाना ॥ अकस्मात झटकि हर
कराला ॥ देत झपट ताकर जनु काला ॥ लेत
गयो कानन मध्याना ॥ तहां बिदारि उदर जठ
पाना ॥ गयो अचाय अमुख तहि पाई ॥ हृदय
भक्त चिंता रत आई ॥ [illegible] भई बैर अतिथी

२११७

तजि द्वारा॥ गयो वहिर जामनि अंध्यारा॥ अवलो निज आसन नहिं आवा॥ कारन मर्म कछु जानि न पावा॥ देखन लग्यो सोच वस तासा॥ कर हुं देव अव कवन अजासा॥ अस कहि विपुल वेर लग जोयो॥ वहुरि आय आसन निज सोयो॥ प्रात जाय जव कानन चीना॥ कपटी परयो व्याघ्र वध कीनाथ जान्यो पतित दुष्ट सठ कोई॥ हन्यो विपुन पंचानन जोई॥ अवलो रहि निकट मम गेहू॥ मारयो मृग कानन नहिं केहू॥ अति वचित्र कारमन गति न्यारी॥ मनुज असुर सुर सकहिं न टारी॥ जौं वस संसार अपारा॥ सुख दुख करत जीव सुईकारा॥ अस प्रकार इह चरित सुहावा॥ मैं संछेपत वदन कछु गावा॥ दोहा॥ भक्त सेष्ट जग सुर सरी॥ संजुत पत निप्रवीन रहे करत कानन भजन कृस्न चरन रति लीन॥ २॥ टीका॥ तव भगवान नें सुमरन जो हे सो करने लगपरे तिस अधम कपटी ने जान लिया कि इह संत तो जाग पड़ा है ऐसे विचार कर मूढ पाप की खानी द्वार की देलीज के वाहर निकल गया पापी के मारने को पाप महा वली है तहां अकस्मात हीं एक वड़ा विकराल अर्थात भयंकर सिंह निकलकर और तुरत झपट

अथ सुरसरी चरित

दोहा॥ अब अद्‌भुत ~~[struck out]~~ विमल भक्ति महात
म ज्ञान॥ करहुं कथन मानस हरन नरन श्र
वण सुखदान॥ चौपाई॥ रामानंद ज्ञान शिषए[blotted]
[blotted] हा॥ सुरसरि नाम विदित जगतेहा॥ कृष्ण
पदार्विंद रति जासा॥ विषय विरक्त भक्त गुण
रासा॥ सुत वित पतनि मीत हितु त्यागी॥ अ
तिथि संत सेवन अनुरागी॥ वसहिं वविक्त देस
निस कामा॥ एकदिवस कानन अभिरामा॥ होत
विरक्त सदन सुख खोई॥ गवन्यो कृष्ण भजन हि
त सोई॥ चली संग पति व्रता सुहाई॥ सुभगा
चीये तास सुखदाई॥ जात अरण्य रुचिर थिर
होये॥ धरम सील निधि दंपति दोये॥ प्रात उठ
त सुरसरि मन भाई॥ करि सनान हरि ध्यान जुडा
ई॥ तिय फल मूल विपुन कछु ल्याई॥ प्रथम
हरिहिं नैवेद लगाई॥ [blotted] अतिथि संत जे कान
न आवहिं॥ तिनहिं जिमाय सेष कछु पावहिं॥
अस प्रकार त्रिय भक्ति अभेवा॥ करहिं संत पति
कानन सेवा॥ एकदिवस संध्या जब होई॥ अति
[blotted] थि भेष धरि दुरमति कोई॥ सुंदरि देखि रूप
मन भावा॥ हरन दुष्ट तहि कानन आवा॥ संत जा
नि सुरसरि अस सेवा॥ कीन तास जुत भक्ति अ
भेवा॥ दोहा॥ तव दंपति जुत कपटि सठ [blotted]
सोय सदन निशि काहि॥ कीन्यो जामनि अरध
जब कुटिल गुनत मन माहिं॥ सुरसरि वध हि
त उदित चित रत उत फिरत दुलाय॥ करत

रते हुये रात्रीदिन नित्य कृस्न भगवान के चरन कमलों की प्रीमें और तिन के भजन सुमरनी में हीं लीन रहते भये ॥ २ ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भक्ति महातमे माधादीकायां सुसरी चरित्र वरनन नाम सर्गः

अथ नरहरी चरितं

दोहा ॥ करहुं कथन अब चरित में आन ललित मनभाव ॥ जासु सुनत सुति कृस्न पदपदम भक्ति दृढ आव ॥ चौपाई ॥ परानंद करलिय अभिरामा ॥ नरहरि विदत जास जग नामा ॥ विषय विकार मार मद त्यागी ॥ संतत कृस्न चरन अनुरागी ॥ विरचि कुटीर व हिर कल ग्रामा ॥ भगवन भजन निरत निसकामा ॥ अतिथि संत वैस्नव दृग देखी ॥ संजुत भक्ति प्रीति अव सेवी ॥ तिन कर यथाउचित वनआई ॥ मन वच करम करहिं सिवकाई ॥ अस प्रकार कछु काल विता सा ॥ सुमरत कृस्न हरन भवपासा ॥ एक दिवस वैस्नव समुदाये ॥ तुध्यत सांझ सदन तहि आये ॥ तिन कहं देखि विपुल सुख माने ॥ लाग्यो मुदित पाक विरचाने ॥ नव ईंधन गत सदन निहारा ॥ वेग भक्त वर विपुन सिधारा ॥ निरखि अवसर पायो कछु नाहीं ॥ करि विचार निज मानस माहीं ॥ २ हि अरण्य ग्राम सव सेवी ॥ जाय

नरहरि नाम कदेवी॥ तास भवन और रावन

को॥ करि प्रनाम अस भक्त प्रलावा॥ अब

तो जनहिं और जगदेवा॥ सव प्रकार चरनअ

व लेवा॥ अस कहि सुखा काठ तहि भवना॥

भक्त लेत आ अपने निज भवना॥ विरचि पाक क

ले संत जिमाये॥ करि प्रनाम पुनि कीन विदाये॥

आपु वहोरि शेष कछु पाई॥ भयो निरत निद्रा सु

खदाई॥ दोहा॥ सपने कीन प्रवोध तहि ~~मुनि~~

~~[illegible]~~॥ मातु परम हित मान॥ अव तें भक्त प्र

धान तुव मुहि प्रसन्न मन जान॥ जाहु नरेंध न

लेन तुव विपुन [illegible] भवन मम नेहु॥ रहु आवहिं

विनु यतन नित भक्त प्रवर तुव गेहु॥ २॥ टीका॥

अव आगे और वडा सुंदर मन भावन चरित्र

जो है सो गायन करता हूं कि जिस के श्रवण

करने सें कृष्ण भगवान [illegible] के चरन कमलों

मे प्रीती भक्ती उतपन्न होय जाती है परानंद

जी का एक शिष्य कृष्ण भगवान की भक्ती

वाला और काम क्रोध मोह मद इत्यादि विषय

विकारों से रहित नरहरी नाम करके जगत मे

प्रसिद्ध होता भया सो अतिथि वैष्णव संत भक्तों को

देखकर मन वचन काया करके नित्य प्रीती भक्ती

से सेव तार रहता था ऐसे तिस को कृष्ण परमा

तमा के भजन सुमरनी और साध संतों की सेवा

करते को कुछ काल व्यतीत होय गया तव एक

दिन कोई वैष्णव संत जो थे सो विचरते विचरतें ति

स के घर मे चले आये सो तिन को भूखे जानकर

वडे प्रेम उतसाहसे जवँ भोजन वनावने कौ तयार भया तव क्या देखता है कि घर मे कुछ लकरी हि नहीं है इस अकाज को देख कर धावता हुआ ततकाल वण को चलागया रात्री का समय जोणा तहां तिस को लकरी प्रायत न हीं भई तव मन मे विचार करके तिस ग्राम की जाग्रत रूपनी नाम करके अधिष्ठाता देवी जो थी तहां तिस का वहुत पुरानां भवन था तिस भवानी के आगे प्रणाम करके दीन वाणी से कहने लगा कि हे जगदंवे अव तो मेरें सरव प्रकार करके तेरे ही चरनो का आश्रय भरोसा है ऐसे विनती कर कर और भगवती भवन का सूका काठ ले कर तुरत घर मे चला आया और प्रीती रुची सें भोजन वनाय कर वडे सनमान से संतो को जिमाय कर वार वार प्रणाम करके आनंद से विदाय कर के तिन का वचा हुआ कुछ शेष भोजन जोणा सो आप पाय कर फिर आय कर सुख से विसतर पर सोय रहा तव वे ग्राम की अधिष्ठाता भवानी जो थी सो सपने मे प्रवोध कर कर कहने लगी कि हे भक्त प्रवीन तूं मेरे को प्रसन्न जान कर अव तें आगे ईहां वण वि खें लकरी लेने को मत आईयो मे आप ने कौतुक सें नित्य तहां तेरे घर मे हीं भोजन करने के लिये लकरी पहुंचाय दिया करुंगी ॥ २ ॥ सपन विलोकि प्रात जव जागा ॥ भक्त सदन निज देखन लागा ॥ परयो अजर अचरज मन लागू ॥ ईधंन सुशक गरवरक

मार कर तिस [illegible] को उठाय करके बन को वी
चले गया और तहां नलों ने दुष्ट का पेट फाड़
कर फिर मांस खोय कर अघाय करके [illegible] गा
छ बन को चला गया तब इहां भक्त प्रधान के
हृदय मे बड़ा सोच और चिंता उतपन्न भई कि दे
खो अतिथी संत जो है सो [illegible] ऐसी अंधेरी रात
विखे [illegible] द्वार से बाहर निकलकर
गया हुआ है तिस को बहुत बेर होय गई अब
लग फिर करके आसन पर नहीं आया क्या भया कु
छ जान नहीं पड़ता [illegible] है देव अब मै कौन यतन
करूं ऐसी अंधेरी रात और गहिवर बन इस मै तो
कुछ बस नहीं चलता है ऐसे वि चौर [illegible] कर
कर बहुत बेर लग तिस को देखा अंत को आय
कर अपने बिस्तर सोय रहे जब प्रातःका
ल होते बन विखे जायकर देखा तो वे कपटी
सिंह का मारा हुआ दुरदशा से चीथड़े हुआ पड़ा
है तब भक्त सुन्नने जान लिया कि इह कोई दुष्ट
पापी जन है जि स को बन विखें ऐसी दुरदशा
से सिंहने मार कर खाय लिया है देखो इस पापी
के विना अब लग मेरे आश्रम के निकट किसी
बन के मृग ने कोई जीव नहीं मारा है इह कर्म
की गती अत से करके बचित्र और न्यारी है मानु
ख देवता असुर इस को कोई टार नहीं सकता है
इस करमजाल के बस होय कर जीव संसार मे
अनेक कहीं दुख सुख जो हैं तिन को धारन करता है
इस प्रकार इह चरित्र मे ने संक्षेप कर के कुछ गा
यन कर दिया है सुंदरी भक्त जो हैं सो अपनी धर
म पतनी अर्थात स्त्री के सहित बन विखे वास क

देखकर भक्तप्रधान जो है सो प्रातःकाल होते जा
गा और घरमे देखने लगा तब क्या देखता है कि
ग्रंगणके बीच एक सूकी लकड़ियोंका बांधाहूआ
भार पड़ाहै तिसको देखकर भगवती का सुपन
सब सत्य जाना इसप्रकार जब कुछ दिन
बतीत होयगये तब तिंनिकट एक ग्रोर साधू वास
करताथा ~~किसोदिन~~ सो ग्रद्भुत कोतुकको देखकर कह
ने लगा कि इन तो सब दीनोकी सहायताकर
ने वाली वनदेवी की कृपाहै उचित है कि मेभी
तैसाहि यतन ग्रोर करम करूं तिससे ग्राप
ने मन वांछित फलको पायलेऊं ग्रैसे विचा
रकर महामूढ़ ग्रोर ग्रधम पापकी खानी वह
विखें भगवती के भवनमे चलागया तहां से
सूखी लकड़ियों का भार बांधकर ग्रोर सीसपर
उठायकरके चलपड़ा तो जब देवी के भवन
से बाहर निकल ग्राया तब तुरत तिसके सि
र विखे ग्रैसी कठिनपीड़ा उतपन्न होयगई कि
जिसके कलेशसे ग्रधम ब्याकुल ग्रोर मलीन
मन मानो मरणे पर्यंत होयगया ग्रैसे तिसको
दुखी भये हूये को रात्रीके समय भगवती सुपने
मे कहनेलगी कि ग्ररे मूढ़ मंद तैने इह कौन
करम कियाहै जो मेरे भवनकी लकड़ी सब तोड़
ताड़कर लेगया हैं ग्रब दुष्ट तूं सत्य करके
जान जो मे चरवारके सहित तेरे सब प
रिवार का नास करदेऊंगी इसप्रकार भवानी
का कथं सुन कर सो मंद भयसे कंपायमान
भयाहूग्रा हाथ जोड़कर विनती करनेलगा

कहे माता मैने तेरा वडाभारी अपराध कियाँ जो मैंने मूढ अपनी जडता के वश होयकर तेरे प्रभाव को जान नहीं सका सो तूं मेरे को अज्ञान मतीहीन जान कर क्षमा कर इसप्रकार तिसकी विनती सुनकर जगदंवे प्रसन्न होयकर कहने लगी कि हे जन जो तूं अव मेरी आज्ञा को सीस पर धारन करैगा तो मे तेरे अपराधँ क्षमा कर देऊंगी सो मेरी आज्ञा कौन है कि आज तें लेकर तूं नित्य वनविखें जायकर और सूकी लकडियों भारवनायकर नरहरी जो भगवान का दृढभक्त है तिसके घरमे छोड आया कर ऐसे स्वपन को देखकर भयके वसभया सो वह साधू प्रातकाल उठते ही वनको चला गया और तहां से सूकी लकडियों का भार विनायकर सीस पर उठायकर के नरहरी के घरमे डालजाता भया इसप्रकार जव तिसने भगवती केवचनको पाला और सत्य किया तव तिसी समय तिसके सीसका सूल जो था सो तुरत मिट जाता भया और वडे आनंद सुखको प्रापत होय गया ॥२॥ चौपाई ॥ तव तें भक्त सदन सुखदाई ॥ लग्यो करन इंधन सिव काई ॥ भक्तसंग संसर्ग प्रसादू ॥ भयो सु भक्त ज्ञान रत साधू ॥ अस इह चरित ललित मनहारू ॥ भक्ति प्रभाव कथन निरधारू ॥ मै संतन पद कीन कछु गायन ॥ कृस्न सरोज चरन रति दायन ॥ दोहा ॥

श्री ७

सिद्धि

सिद्धि

भक्तपुरष कहं जगत मध नहिं असाध कछु जा
न॥ भगवन भक्तिप्रसादतें सकल सुलभ सुखदान
॥३॥ टीका॥ तब ते नित्य वे साधू भक्त उत्तम
नरहरीके चरं लकड़ियों की सिवकाई जो है सो
बड़ा हित और सुख मान कर करने लगा तब भक्त
प्रधान की संगती के प्रसाद से वे असाधू ज्ञान
ध्यान के सहित बड़ा सुघ्र साधू भक्त होजाता भया
इस प्रकार इह ~~...~~ चरि त्र अ
र भक्ती का प्रभाव जो है सो मैने कुछ संक्षेप कारके
कथन कर दिया है देखिये भक्त पुरष को संसार
मै कुछ भी असाध नहीं है भगवान की भक्ती के प्र
साद तें सब सहज ही सुगम और सुखदायक हीं
है ॥३॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भ■ गवद्भ
■ क्ति महातमे भाषा टीकायां नरहरी चरि
त्र वरणनं नाम सरगः = = =

ॐ श्रीभगवानके चरनकमलोंकी प्रीतिके हेत बालामनोहर

माहू॥ भगवति स्वपन सत्य सब जाना॥ अस प्रका
र कछु दिवस सराना॥ ताहि रहा आनइ कसाधू॥
ता सम रम अस जानि अगाधू॥ भाषत रहत करुणा
सब माई॥ विपुन निज जनन सहाई॥ मै
हुं करब अस यतन सुहावा॥ लेहुं अमि धृ रुचि
र निज पावा॥ अविचारि वन भवन भवानी॥ गयो
अधम मूरख अगखानी॥ बांधि सुपाक इंधन इ
कभारू॥ गवन्यो लेत सीस निज धारू॥ भाजव
व हिर भवन गत ब्रीडा॥ उठ्यो सीस तहि दारुण
पीडा॥ लग्यो मरण मन विकल मलीना॥ भ
गवति रिसकि स्वपन निसि दीना॥ जठ कसकीन
करम तुव एहू॥ अब परिवार सहित तुव गेहू॥ जा
न हु दूर नष्ट सब होई॥ देवि कथन सुनि दुरम
ति सोई॥ कंपत विनय करत गति दीना॥ मै अपरा
ध मानु तुव कीना॥ जन प्रभाव कछु जानि न पाया॥
सो अब लेम हु जननि करि दाया॥ भगवति विनय सु
नत अस तासा॥ दयायुत मुख वचन प्रकासा॥
कब हुं कि करहु कथन तुव मोरा॥ तो अपराध
लम हुं जन तोरा॥ प्रात दिवस नित कानन जाई॥
सुपाक बोझ इंधन तुव ल्याई॥ नरहरि स
दन भक्ति जुत डारी॥ जाहु भवन निज बहुरि सि
धारी॥ त अस देखि स्वपन निसि माहीं॥ भयव
स गयो प्रात वन काहीं॥ तहां जाय इंधन
गहि भारा॥ ल्याय सदन सुभ नरहरि डारा॥ दोहा॥
अस प्रकार भगवति वचन जब कीन्यो फुर
तास॥ भयो तीव्र नत तण सकल ले सीस सूल त
हि नास॥ २॥ टीका॥ तब रात्री के समय स्वपन

आवत निकट नपति तब विचारी॥ अस कलेश जिय जानि अपारी॥ भाउ युगल मरण जलधारी॥ आन यतन बिनु मरण सुजाना॥ मै नदु खित निज मानस जाना॥ दोहा॥ तास कथन सुनि पदम अस अति दया बस होय॥ कहिस करहु सुई कार तुव मोर कथन अब जोय॥ होत गलत रुज राज गत सुलभ बपुख सुख पाय॥ निज बोध ब जन भ्रतन जुत बसहु सदन सुभ जाय॥ २॥ टीका॥ अब आनंद के सहित श्री रघुनाथ जी के चरन कमलों की प्रीती के देने वाला और संशय भ्रम इत्यादि कलेशों के हरने वाला भक्ती का अद्भुत महातम जो है सो कथन करता हूं कबीरदास जी का एक चेला ग्यान विचार की निधी और परम प्रवीन पदम नाम कर के उजागर होता भया और सरब जगत को पवित्र करने वाला राम नाम जो है तिस के रटने मे हीं रात्री दिन लीन रहता था के जो भी राम नाम कि जिस के प्रसाद तें अजामिल आदि पापी जो थे सो तर गये अरु और भी संसार मे केतयों का उद्धार होय गया ऐसे राम नाम की महिमा और प्रभाव गुरु के मुख से स्रवण कर कर तिस पदम भक्त ने हृदय मे एही निस्चय कर लिया कि जगत मे जीवों के उद्धार करने को केवल एक राम नाम हीं समर्थ है ऐसे विचार कर पदम जो है सो राम चंद्र भगवान के चरनों का हीं आधार राख लेता भया और शिवपुरी जो कासी है तिसमे निवास करके

अति थी साध ब्राह्मण की सेवा भक्ती करने लगा और अपने गुरू जी की सेवा मे भी लीन रहता था एक अमिमुक्त क्षेत्र मे गंगाजी के किनारे पर एक कोई धनी वैस जो था सो कुष्ट रोगका ग्रसा हुआ मरने की अभिलाषा करके तहां आय प्राप्त होता भया तब वे अपने गले मे बडा भारी बोझवाला पाषाण बांधकर गंगाजी के जल विखे डूब कर मरने लगा तब पदमभक्त जो हे सो अ से तिसका करम देखकर बडी मधुर बाणी से पूछने लगा कि हे भाई तूं धीरज को त्यागे हूये ऐसा कलेश सहारकर जल के बीच अवगत डूब कर क्यों मरने लगा है इसप्रकार पदमकी बडी हित की भीगी हूई बाणी सुनकर वैसजो है सो वडे नम्र दीन वचनों से कहने लगा कि हे संतभक्त आप देखिये मेरी काया की दशा कि सिर से पाउं तक इस महा प्रबल राजरुज अर्थात कुष्ट रोगने ग्रसलिया है और परम कलेशको प्राप्त होय रहा है तो ते दोष के सहित अपने शरीर को देखकर लज्जा का मारा इस घोर दुख की पीडा को सहार नहीं सकता हूं अब मेरे सेवक और बांधव सज्जन हितकारी जो हैं सो पतित का पापी जान मेरे निकट नहीं आवते हैं ऐसी हानी और कलेश को विचार कर हे संत मे जल विखे डूबकर मरने लगा हूं इस मरने के बिना मेरे इस घोर कलेश के निवरती होने का और कोई यतन सूझ नहीं पडा इसप्रकार तिसका

कथन सुन कर पदम भक्त कहने लगे कि हे भा
ई वैस जो कदाचित तूं मेरे वचन को ग्रहण क
र लेवें तो भगवान की कृपा से तूं इस महा रा
ज रोग से सहजे ही छूट कर और शरीर से
निरमल केचिन के समान होय कर
के अपने सब बांधव और सेवक समाज के स
हित आनंद पूर्वक जाय कर के घर
मे निवास कर ॥१॥ चौपाई ॥ सुनत पदम अस
कथन सुहावा ॥ वनक नंम्र चरनन सिर नावा ॥
विनय कीन करि रुदन अघोरा ॥ कहिये दीन
घाल हित मोरा ॥ भक्त सषु तब गिरा उचारी ॥
तुव भली करन देव सरि वारी ॥ मज्जन करहु
वदन दुख हारन ॥ राम बार मुख राम उचारन ॥
तेहि प्रभाव तुव विकृत देहा ॥ होहिं विमल
केचित वत एहा ॥ सुनि अस वनक वचन
हित कारी ॥ भृत कर गहित देव सरि वारी ॥
अति प्रसन्न मानस अनुरागा ॥ मज्जन करन
भक्ति जुत लागा ॥ करि सनान वपु दोष नि
वारण ॥ तदप श्री पतित भव तारण ॥ तीन
बार जब राम उचारा ॥ सो प्रभाव दृग प्रकट
निहारा ॥ उपजे नवल चरन को चारू ॥ अद
भुत देखि वनक मन हारू ॥ मुक्त विकार राज रुज
होई ॥ वपु कर सकल दोष दुख खोई ॥ भक्त पदम
पद पदमन जाई ॥ बारबार नंम्रत सिर नाई ॥ कर
त विनंति भक्ति मन लीना ॥ जो उपकार नाथ तुव
कीना ॥ मुहि ते सरहिं देव कस सेवा ॥ अस प्रकार

अथ पदम हरीचरिते

दोहा॥ मोदभरन संशय हरन राम चरन रतिदान॥
करहुं यथा मति कथन कछु भक्तिमहातम ग्यान॥
चौपाई॥ जन कवीर कर ज्ञान निधाना॥ पदम नाम
मतिष परम सुजाना॥ रामनाम पावन जगजोई॥
ररत [illegible] निरंतर निजमुख सोई॥ पतित अजामि
ल जासु प्रसादू॥ तरे अनेक आन जगसाधू॥ गुरु
मुख सुनत महातम सँ■हा॥ कीन्यो हृदय तासु दृ
ढ एहा॥ [illegible] रामनाम पावन संसारा॥ जीवन
विदत उद्धारनहारा॥ असऊर गुनत पदम वड
भागी॥ राम सरोज चरन अनुरागी॥ करतनिवा
स नगर ससिधरिया॥ अतिथी संतनिरत परच
रिया॥ गुरुसेवन ततपर मतिधीरा॥ अवसरए
के देव सरि तीरा॥ सुचि अभिमुक्त तेत्र वरजोई॥
आवा तहां वनक धनि कोई॥ गलत राजरुज
दुखत सरीरा॥ मरले हेतु देव सरि तीरा॥
प्रसतर बांधि ग्रीव निज मारी॥ वूडन लग्यो गंग-
वरवारी॥ तास विलोकि पदम अस करनी॥
पूछत गिरा मधुर मुख वरनी॥ तात कलेश
कवन धृति त्यागा॥ अवगत वरण मरणकत
लागा॥ सुनि अस गिरा पदम हित सानी॥ वो
ल्यो वनक नेत्र मुख वानी॥ देखहु भक्त सम्
मम काया॥ नख सिख प्रवल राज रुजछाया॥
जानि दोष निज आवत वीडा॥ सहि न सकहुं
दारुण दुख पीडा॥ हत बांधव सज्जन हितकारी॥

उपजआवते भये और शरीर भी सब कंचित वत शुद्ध होय गया ऐसे जब महा राजरोग से छूटकर शरीर के दुख दोष से नवृत्य होय गया तब वह अद्भुत प्रभाव जान कर पदम भक्त जी चरनो पर वारंवार प्रणाम करके हाथ जोड़ कर बड़े दीन भाव से विनती बड़ाई करने लगा कि हे कृपानिधान संत भगवान इह जो आप ने मेरे पर उपकार किया और संसार मै मानो नया जनम दिया है सो प्रभू मै उपकार का बदला कौन सेवा से कैसे दे सकेगा इस प्रकार भक्ती प्रीती से विनय प्रार्थना कर कर विदाय लेकर के स्वस्थ चित और निरदोष भया हूआ पाउं पयादा अपने घर को चला आया तब लोग जो थे सो इस अद्भुत कौतुक को देखकर अचरज को प्रापत भये हूये भक्त प्रधान पदम जी के चरनो को बंदना कर कर आपने अपने मुख से अनेक प्रकार की श्लाघा और बड़ाई करते भये इस प्रकार इह चरित्र जो है सो मैने संक्षेप करके कुछ गाय कर दिया है देखिये पदम दास भक्त की महिमा कि जिसने नाम के प्रसाद से भगवान का परम पद जो है सो सहजे ही प्रापत कर लिया तो तें लोक परलोक कौं ~~...~~ इह अमृत रस नाम ही सार वसतू है कि जिस के पान करने अर्थात पीवने से मरे हूये जीवते हो जाते हैं और पापी जनों का जगत मै उधार होय जाता है ॥ ॥२॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद्भक्त महातम्ये भाषाटीकायां पदम हरी चरित वरननं नाम सरगः

करि विनय अमेवा॥ पदचरण वन भवन निज कीना॥ देखि लोग अचरज मन लीना॥ भक्त पदम पद वंदित रागे॥ निज निज वदन प्रसंसन लागे॥ अस प्रकार इह चरित सुनावा॥ मैं संतपत पदम हरि गावा॥ पावा राम परम पद पावन॥ नाम प्रसाद जास मन भावन॥ दोहा॥ तां ते लोक प्रलोक फल नाम अमिय रस सार॥ जहि पीवत मृत जीव जन पतित न होत उद्धार॥२॥ टीका॥ इस प्रकार पदम भक्त का सुंदर कथन सुनकर वैस दीन भाव से चरनों सीस धर देता भया और बड़े विलाप से रुदन कर कर विनती करने लगा कि हे दीन दयाल अब जिस प्रकार मेरा भला होता है सोई उपाय कथन करिये तब दया के वश भये हूये भक्त प्रधान कहने लगे कि भाई तूं मणिकरणका पर गंगाजी के सर्व कलेषों के हरने वाले जल विखे स्नान कर और फिर तीन वार मुखसें परम पवित्र राम नाम जो है सो उचारण कर तिस के प्रभाव से इह तेरा विगड़ा हूआ शरीर के चिन के समान शुद्ध और निरमल हो जावेगा ऐसे भक्त सूषकों वचन सुनकर अपने सेवक का हाथ पकड़ कर श्री गंगा माई के किनारे पर चला आया तहां प्रेम भक्ती से प्रसन्न चित होय कर सरव दोखों के निवारणे वाला स्नान जो है सो करता भया तिस तें उपरांत जगत मे पापी जनों को तारने वाला तीन वार राम नाम भी उचारण किया तब तो राम नाम का प्रकट ऐसा देखो कि तिस के हाथ पाउं तुरत ही नये

प्रभाव

सूर्य

पद्मभक्तरा

जो करुणा करि प्रकट मनहु निज किंकर जानी॥ तो कानन कछु करहु नाथ मुख मे जुल बानी॥ मुनि नायक सुनि विनय बदन नृप जवन वखाना॥ हरषत लागे कथन करन प्रभु कृपा निधाना॥ गूर्जर देस नरेस मोर इक भक्त प्रवीना॥ देव समीर प्रसिद्ध नाम धृति सुमट नवीना॥ करम वचन मन काय भक्त भगवान नरेसा॥ सो मा मृत परिहरि आज राज धन सं तति देसा॥ सुरपुर गवन्यो जात वैठि वर रुचिर विमाना॥ मोरे दरसन लागि ठाढ नम पंथ सुजाना॥ तासु विलोकत रहा भूप मम भक्त पयारा॥ निज कीरति सन जास कीन पूरन जग सारा॥ सुनि मुनि वचन नरेस गुपत निज दूत पठाये॥ समाचार सव लेत वेग छितपति पैं आये॥ मुनि नायक कर वचन सत्य जव भूपति जाना॥ अति विसमय वस कीन मन हिं मन दंड प्रनामा॥ यद्यपि रहा मुनिनाथ जान कपट भुआलू॥ तद्यपि कोप न कीन संत प्रभु सदा कृपालू॥ तदनंतर मुनि नाथ आन निज चरित सुहावा॥ चाहत नृपकहें दृगन दीन दुख हरन दिखावा॥ उठि गवने निज भवन वोलि नृप निकट विठायो॥ तहि देखत निज भाल खोलि मंजूष निपायो॥ भई कछुक जव वेर भूप मन तिरा प्रकासी॥ सो ल्यावहु नर नाथ वेग सज करन निकासी॥ १॥ टीका॥ अव नाभादास संत जनो के चरनो पर सीस नाय कर

कैद

कीलदास और अग्रदास मुनियों का बड़ासुं
दर निरमल चरित्र जो है सो कथन करते हैं
कैसा भी चरित्र है कि पाप कलेश भ्रम भय
काम क्रोध मोह मद इत्यादि संसय विकारों के
नाश करने वाला और भक्ती वैराग निरमल
बुद्धी के सहित ज्ञान ध्यान और कृष्ण भगवा
न के चरन कमलों की प्रीती के देने वाला है
कृष्णदास नाम करके मुनी नायक जो थे
तिन के ज्ञान ध्यान की निधी और सरव गु
ण प्रवीन कीलदास और अग्रदास ए है दो
शिष्य प्रधान होते भये तिन में से जेष्ठ अर्थात
बड़े महा जोगी जन और शील सुभाव वाले
कीलदास जी थे सो कैसे कि इंद्रापती जो लक्ष
मी के स्वामी विष्णु भगवान हैं तिन की सं
पूर्ण लीला जिन के हृदय में प्रकाशमान होय रही
थी वे कृपा निधान बहुत करके अपना मथु
रा पुरी में निवास राखकर रात्री दिन कृष्ण पर
मातमा को ही भजते और सुमरते रहते थे एक
समय राजा मान सिंह जो तिन का शिष्य था सो
अभिमान से रहित सेवक समाज के सहित
अंग अंग प्रेम करके पूरित भया हुआ तिन के द
रसन को चला आया तब दीन भाव से चरनों
पर सीस नाय कर और तिन की आज्ञा पा
य कर मुख से अनेक प्रकार की विनती कर क
र के बैठ गया तहां मुनी नायक की चंद्रमा वत
मुख की शोभा देखकर राजा के नेत्र जो हैं सो कुं
मद अर्थात न्होपे के फूलों समान प्रफुल त

भये हूये दरसन करते करते तृपत नहीं होते
हैं इस प्रकार परस्पर ज्ञान चरचा और वार
ता आलाप करते करते तीन पहर दिन वतीत
हो जात भया जब चौथा पहर आँ तब मुनि प्रधा
न आकाश की वोर दृष्टी जोड़ कर ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ और मुख से कुछ [illegible] भेद के सहित क
ठान के वचन उचारण कर कर राजा को सुना
वते भये तब प्रजापाल सुन कर के हाथ जोड़
कर दीन वाणी से विनती करने लगा कि हे
दीन तारन हे दीन दुख निवारन हे दीन सहा
यक प्रभू इस कदाचित करके युक्त आपकी वा
णी जो है सो दीन को कुछ बूझ नहीं पड़ी ~~[illegible]~~
~~अचरज के देने वाले [illegible] भेद के वचन जो~~
~~है सो कुछ जान नहीं सकता हूं~~ और ना इस अच
रज के देने वाला गूढ भेद मेरे को कुछ सूझ प
ड़ा है अब जो कृपा करके अपने चरनो का सेव
क जान कर मेरे को [illegible] सपष्ट और प्रकट क
रिये तो मैं आपके मुख से इस अद्भुत वारता को
स्रवण कर लेऊं इस प्रकार राजा के मुख से वि
नती के वचन सुनकर कृपानिधान मुनि नाय
क जो हैं सो हरष से प्रसन्न होय कर के कथन
करने लगे कहते हैं कि हे पृथीपाल गूर्जर
देस विखें एक हमीरदेव नाम कर के राजा
मेरा परम प्रवीन सेवक और महा सूरवीर धर
म धीरज का धाम मन वचन काया कर के भ
गवान् दृढ भक्त जो था सो आज राज समाज
धन धाम स्त्री पुत्र से उदासीन होय कर शरीर

अथ कील्हदास अग्रदास चरित्र

झूलना छंद॥ संतजन चरनपर धरित्रिधर सीस निज बदननचर विमल अवचरित ललिता॥ कील अरु अग्र जुग मुनिन नाभा कथन करख दुख हरन भव किलख दलता॥ हनन भ्रम भीत मोह मदन संसय सकल करन मंगल अमल वृद्धि बलता॥ भक्ति वैराग वर ज्ञान ध्यानादि लो प्रेम प्रद चरन हरि बस्य पलता॥ रोड़ा छंद॥ कृस्नदास मुनिनाथ जुगल सिष सेवक कीना॥ कील्हदास अरु दास अग्र गुण ज्ञान प्रवीना॥ भक्त जतें द्वै जेष्ठ जोगरत कील सुसीला॥ जोके मानस विदत भक्ति इंद्रावति लीला॥ मथुरापुरी निवास विपुल निज राखि रसाला॥ निसिदिन करहिं सुमर्न कृस्न भय हरण कृपाला॥ एक काल नृप मानसिंह हति दरसन आवा॥ विगत हेग भत संग अंग अनुराग बढावा॥ मुनिनाथ माथ महि नै भूत नायो॥ वैठो सासन पाय वदन वहु विनय अलायो॥ मुनि मुख देखि मयंक भूप दृग कुमुद विकास्यो॥ करत परस्पर ज्ञान मान वै जाम वितास्यो॥ तब जोरत नभ वोर नयन निज चतुरथ जामै॥ भने भूप सों वचन मरम कछु मुनि मुद धामै॥ सुनत मरम जुत वचन भनत नैम्रत नरराई॥ दीन उवारन दीन हरन दुख दीन सहाई॥ रउ प्रभु मिटा कटाक्ष दीन कछु नाहिन वूझा॥ विसमय दायक मरम मोर उर परयो न सूझा॥

अध्याय (margin)

ई हो मे देपास ले आवो ॥१॥ रोडा छंद ॥ मुनिसा
सन नृप पाय पटिल मंजूख उठायो ॥ स्याम भ
यंकर भुजग दृगन तब भंकरत पायो ॥ भयवस
पट मंजूख देत नृप चकित वखाना ॥ दीनना
थ नहि माल व्याल मनु काल समाना ॥ तब
डारत मंजूख हाथ मुनि माल दिखायो ॥ भूचकि
त तकि चरित चरन नंम्रत सिर नायो ॥ अस
बहुकर नरेस उरग स्रज देखत ताहां ॥ तजि
संशय भ्रम लाग करन अस मुनि नरनाहां ॥ सोर
ठा ॥ मुनिप्रभाव दृग देखि ॥ अति अगाध मति
माकहु ॥ जाय न अदभुत लेखि ॥ परो दंडवत
चरन पर ॥ सादिर लीन उठाय ॥ गुरु कृपाल
अति प्रीति जुत ॥ तब प्रणाम करि राय गयो भ
वन आयस लिये ॥२॥ टीका ॥ तब मुनिनाथ
की आज्ञा पाय कर राजा जाय कर संदूख का
पड़दा जो उठावता भया तो क्या देखता है कि
तिसके वीच एक वड़ा भयंकर काला सरप वै
ठा हूआ फुंकारे मारता है इस प्रकार देखकर
भय के वश अचरज भया हूआ राजा तैसे ही
संदूख को वंद कर कर आय कर के मुनि नायक
को कहने लगा कि दीनानाथ तहां माला तो
नहीं है परंतु एक काल के समान काला सर
प वैठा हूआ फुंकारे मारता है तब राजा का
कथन सुनकर मुनि नायक उठे और आव
तेही संदूख मै हाथ डालकर माला की माला
ही निकाल कर दिखाय देते भये तब राजा
देखकर अचरज को प्राप्त होय कर के दीनभाव

से चनोपर सीस नावता भया इस प्रकार मुनियों विखें प्रधान कील्हदासजी ने राजा को बहुत वार कवी माला कवी सरप का चमतकार जो है सो दिखाया अरु मुनी की अगाध महिमा और प्रभाव देख कर के राजा मुख से अनेक प्रकार की असतुती कर कर दंड के समान चरनोंपर गिरपड़ा गुरू जी बड़ी प्रीती सन मान से चरनोंपर से उठाय लिया तब आनंद में मगन भया हुआ राजा गुरूजी की आज्ञा पाय कर वार वार प्रनाम कर के सब सेवक समाज के सहित अपने घर को चला जाता भया ॥२॥

इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ती मनात मे भाषा टीकायां कील्हदास चरित वरनं नाम सर्गः

अथ अग्रदास चरितं

सोरठा ॥ सुनहु संत समुदाइ ॥ अब मैं अदभुत आन वर ॥ कथा ललित मन भाई ॥ कहहुं कथन सादिर बॅन ॥ छंद ॥ कील्हदास मुनि अनुज भक्त भगवान उजागर ॥ अग्रदास जिहि नाम धाम विद्या गुण सागर ॥ महिमा इमत प्रभाव परम अचरज उर दायन ॥ सो कर हे कछु वदन संत तुव सन मुख गायन ॥ अवसर एक नरेस मान हरि सोऊ सुहावा ॥ लिये निकर भृत सेवा करन दरसन तिन आवा ॥ छाड़े भृत मुनि द्वार भूप भीतर चलि आये ॥ तहि अवसर मुनि बहिर भवन वाटिका मध छाये ॥ परे पुष्प दल सुष्क करत मार्जन निज पानी ॥ इत आसन निज भवन भूप

देखे मुनि ज्ञानी॥ तब सनमुख धरि भेट वंदि पद विनय उचारी॥ मै सेवक प्रभु चरन हरन दुख दीन उबारी॥ लखि सेवक निज अचल पूछि मुनि कुसल सबाहीं॥ नृप कह कुसल कृपाल आज दरसत प्रभु काहीं॥ करत परस्पर ज्ञान मान जुग जाम बिहावा॥ तब बादिक तजि लाग भवन मुनि भीतर आवा॥ रोकि लिये नृप भृतन भवन नहिं आवन दीना॥ मान्यो एक न विविध यदपि मुनि भाषण कीना॥ कहै नाभा तब मोर करन गुरु सुमरन लागे॥ मै तिन गति लखि आव ठाढ जहं जन अनुरागे॥ तुरत निवारत भृतन दिसकि कछु बचन उचारे॥ तब बोले गुरु द्याल मान अपमान न हमारे॥ तात सदा सामान हम हुइ नकर अपराधू॥ होत नित्य संतोष सील रत संतति साधू॥ अस कहि आये भवन नाथ नृप चरनन परयो॥ तब आचरज मन हरन चरित द्रुत मुनि वर करयो॥ राज्यो सन मुख आन रूप आसन मुनि जोई॥ तहिं आवत द्रुत भयो लुपत कौतुक जन सोई॥ २॥

टीका॥ नाभादासजी कहते हैं कि हे सब संत महंतो अब मै और बड़ी अद्भुत सुखके देनेवाली सुंदर गाथा जो है सो ~~आपके~~ अ सन मान पूर्वक कुछ यथामती गायन करता हूं आप ध्यान देकर श्रवण करियेकी लदास जीका छोटा भाई भगवानका बड़ा

को त्याग करके सुंदर विमान पर बैठा हूआ स्व
ग लोग को चला जाता है सो मेरा दरसन करने
के लिये आकाश मारग मैं होय गया मै राजन
तिस आपने प्यारे भक्त को देख रहा था कैसा भी
भक्त है कि जिसने अपनी सुंदर कीरती और सुज
स जो है तो संपूर्ण जगत मै विसतारण कर दि
या है ऐसे मुनी का वचन सुनकर अचरज के व
श भया हूआ राजा गुपत ही तहां अपने दूत भे
ज देता भया सो समाचार सब लेकर और आय
करके राजा को तैसा ही सब वृतांत सुनायदेते
भये तब मुनी नायक का वचन राजा ने सत्य जो
जाना तो अचरज के वश भया हूआ मन ही मन
मै वारवार दंड प्रणाम करने लगा यद्यपि राजा
का इह कपट अर्थात दूतों का गुपत भेजना मुनि
नाथ त्रिकालग्य ने भली प्रकार सब जान लिया
तद्यपि संत उदार सदैव दया की निधी होते हैं
हृदय मै कुछ भी कोप नहीं करते भये तिसतै उ
परांत मुनि प्रधान जो है सो राजा को अपना औ
र अद्भुत चरित्र दिखावने की इछा करते भये तब
आसन से उठकर और भीतर भवन मै जाय करतहां
राजा को बुलाय करके अपने पास बिठाय लि
या फिर तिसके देखते देखते हूये अपनी
माला गले से उतार कर एक संदूखडी के
बीच डालदेई जब कुछ थोड़ी सी वेर होयगई
तब राजा को कहने लगे कि हे प्रजानाथ
तुमारे देखते जो माला मैने संदूख मै डाली
अब तिसको अपने हाथ से तुम निकाल कर

र हे आनंदके देनेवाला आपका दरसन जो है सोई सरब कुसलों का मूल है ऐसे वारता आलाप और ज्ञान चरचा करते करते दो पहर सूरज आय गया तब वारिकों के बीच जो अ ग्रदास मुनी गये हुये थे सो भीतर भवन को आवने लगे जब द्वारपर आये तब राजा के सेवकों ने कोई और हीं जानकर रोक लिये भीतर न हीं आवने दिये मुनी ने यद्यपि बहु त हीं कहा तद्यपि तिनो ने एक नहीं माना ना भादास कहते हैं कि हे संतो तब गुरू जीने हृदय मे मेरा सुमरण किया मै तिनकी गतीको जान करके जहां द्वारे पर कृपानिधान स्थित भये हुये थे तहां तत काल हीं चला आया और राजा के सेवकों मैने कुछ कोप के वच नो से निवारण करके पीछे हटाय दिया तब दया के वश होयकर गुरूजी कहने लगे कि हे पुत्र इनको मत कुछ कहो और इन पर क्षमा करो हमको मान अपमान दोनो समान है संत जो हैं सो सदा शील संतोष और शांती क्षमा की मूरती होते हैं इनको चित्तमे किसी प्रकार का क्षोभ करना उचित नहीं है ऐसे कथन कर कर गुरु कृपालु भीतर भवन मे चले आये तब तिन को आवते देख कर राजा उठकर के चरनो पर प्रणाम करता भया ति स समय गुरूजी महाराज ऐसा मन के हर ने वाला अद्भुत कौतुक करते भये कि वे जो अपना दूसरा रूप धार कर राजा के सनमुख

आसन पर विराजमान भये हुये थे सो राजा
के प्रणाम करते करते तुरत लुपत हो जाते भ
ये ॥२॥ छंद ॥ तब विसंत चित मनत भूप ⸫
मम कानन लागी ॥ सो गवने गुरु कहो अव
हि आसन निज त्यागी ॥ मै देखत जुगरूप ना
थ मुनि अचरज मान्यो ॥ तब मै नृप सन व
दन हरन भ्रम वचन वखान्यो ॥ तुव भक्ती
वश भूप वहुरि कारज निज जानी ॥ धरे ना
थ जुगरूप करन दुख दीनन हानी ॥ आय आ
प जब नाथ रूप निज आन दुराये ॥ सुनत
भूप भा मौन स कुचि मानस विसमाये ॥ त
ब मै भाख्यो वदन सुन हु नागर नरराई ॥ से
त प्रभाव अगाध नहिन कछु अचरज भाई ॥
रैन कर महि मा ने त नेत मुख वेद वखानी ॥ कौ
न तुच्छ मति मनुज मरम कस सकहि सु
जानी ॥ सुनत भूप मम वचन मुचित भ्रम हृ
दय हुलास्यो ॥ जुगकर जोरत वदन नम्र वहु
विनय प्रकास्यो ॥ तुम हो दीन दयाल भृत न
वहु अनुचित कीना ॥ तव प्रसन्न मन
भने वदन मुनि नाथ प्रवीना ॥ स्वामी सासन भू
प सदा पालन भृत धरमा ॥ मै प्रसन्न नहि
कीन तिन हु कछु अनुचित करमा ॥ दोहा ॥
मुनिनायक र वचन सुनि हरष्यो भूप महान ॥
धन्य धन्य लाग्यो भनन वदन विमल जप्रा
गान ॥ करि अस्तुति अस विविध विधि
वंदि चरन मुनिनाथ ॥ लै आसिष गवन्यो भ
वन भृत समाज सब साथ ॥ अस रह चरित पुनी
त मै अग्रकील मुनिनाथ ॥ जासु सुनत संतत विमल

कृष्ण भक्ति उर ध्याव ॥२॥ टीका ॥ बड़े
अचरज के वश भया हुआ राजा आय कर के मेरे कान
मैं कहने लगा कि वे गुरु जो आसन पर विराजे हुये थे सो कहां गये
हैं संत मैं गुरु जी के दो रूप देख कर बड़े अचरज को प्रापत हो
य गया हूं तब मैं ने भ्रम संदेह के हरने वाले वचन से कहा कि
हे राजन तेरे आवने के समय गुरु जी चौर के बाहर बाटि
का मैं विराजे हुये नहा से सूके
पड़े हुये पुष्प पत्रों को निवारण करने के लिये आप ने कारज
मैं लगे हुये थे जब तुम को चौर मैं आवते देखा तौ दीनों के
दुख हरने वाले तुरत अपना दूसरा माय क रूप धार
कर तुमारे सनमुख आसन पर विराजमान होय गये अब जो
आप कृपानिधान बाटिका से चौर को आये तो राजन तेरे
चरनो लागते लागते अपना वे माय रूप जो था सो लुप
त कर लेते भये इस प्रकार मेरा कथन सुन कर के राजा संको
च से मौन और बड़े अचरज को प्रापत होय गया तब मैं ने कहा
कि राजन महा पुरषों का प्रभाव और महिमा अगाध होती है इस
मैं कुछ अचरज नहीं संत महिमा को वेद भी कथन नहीं क
र सकता मानुष्य तुच्छ बुद्धी वाला इस के जानने को कैसे
सामर्थी होय सकता है ऐसे मेरा वचन सुनकर राजा प्रेम से
नवृत्य होय कर आनंद को प्रापत होय गया और हाथ जोड़ कर
दीन वालों से गुरु जी के आगे विनती करने लगा कि हे दीन दयाल
मेरे सेवकों ने बड़ा अनुचित किया जो कृपानिधान को दीरघ रो
कलि या तो ते इन सब मेरा ही अपराध है नाथ
अपने चरनो का सेवक जानकर दया कर के क्षमा करिये ऐसे रा
जा की विनती सुन कर मुनी प्रसन्न होय कर कहने लगे कि राजन
स्वामी की आज्ञा पालनी इह सदा ही सेवकों का धरम चला आया
है मैं तेरे पर प्रसन्न हूं तिन का कोई अपराध नहीं है तब मुनि
नायक का वचन सुन कर परम हरष को प्रापत भया हुआ राजा
धन्य धन्य कहता हुआ तिन का निरमल सुजस और असतुती
जो है सो अनेक प्रकार से गायन करता भया तिसते उपरान्त
बारम्बार चरनो पर सीस नाय कर और सुभ आसीस पाय कर
अपने सब सेवक समाज के सहित विदा होय कर चौर को चला गया
है सो इस प्रकार इन कील्हदास और अग्रदास जी का सुंदर चरित्र जो
है सो मैं ने गायन किया है इस को जो कोई श्रद्धा पूर्वक श्रवण करेगा
तिस के हृदय मैं कृष्ण भगवान की भक्ती अवश्य दृढ़ होजावेगी ॥२॥
इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भागवद्भक्तिमहातमे भाषा टीकायां अग्र
दास चरित वरणनो नाम सरगः ॥

उजागर भक्ति विद्या का धाम गुणों का समुद्र अग्र
दास नाम करके प्रसिद्ध होता भया के सामी महा
तमा कि जिस की अगाध महिमा और अचरज
प्रभाव को मै आपके गायन करता हूं एक सम
य कोई मानसिंह राजा अपना सेवक समाज
सब साथ लेकर तिनके दरसन करने को चला
आया तब आवते ही मुनी के दुवारे पर अपने नौक
र चाकरों स्थित करके आप अकेला ही भीतर
चला गया तिस समय मुनि अग्रदास जी जो थे
सो चर के बाहर अपने हाथ की रची हुई सुंदर
वाटिका अर्थात फूल फलों की वाड़ी मे विरा
जे हूये तहां कुछ सूखे पुष्प पत्र जो पड़े हूये थे
तिन को प्रीती पूर्वक झाडू से निवारण कर रहे थे
और इहां आय करके ज्ञान ध्यान की निधी मुनि
नायक को राजा ~~...~~ चर के भीतर अपने आ
सन पर विराजे हूये देखता भया तब तिन के
आगे भेटा धर कर और चरनो पर प्रणाम कर
कर हाथ जोड़ करके दीन वाणी से विनती कर
ने लगा कि हे दीन दुख हारी हे दीन हितकारी
प्रभू मै आपके चरनो का से वक हूं और मन वचन
काया करके आप का ही दृढ दास हूं इस प्रकार
राजा की विनती सुनकर और अपना अचल
सेवक कर बड़ी दृष्टी से सब स्त्री पुत्र परिवार के
सहित धन धाम और राज काज की कुसल
पूछने लगे तब राजा हाथ जोड़ कर कहने
लगा कि हे कृपानिधान मै आज आपका दर
सन करके सरव कुल को प्राप्त भया हूं प्रभू

विधि प्रकार द्वापर का प्रभाव जो है सो दिया और
मन वचन काया करके कृष्ण भगवान के भक्त सो कृ
ष्ण परमात मात आज्ञा को हीं पायकर गृहस्थ
धरम जो है तिसको धारण करते भये तब तिन के घर
मै सात पुत्र उतपन्न हुये अब तिन के भिन्न भिन्न
नाम जो हैं सो कथन करता हूं प्रथम श्रीमतजी
और गोकलनाथजी बालकृष्ण घनस्याम गि
रधर श्रीगोविंद जदुनाथ ये सब वैष्णव उत्त
म तो हीं भगवान के भक्त होते भये ॥२॥ चौपाई ॥
तब वै सब उतम समुदाई ॥ चारु जनक अनु
सासन पाई ॥ पृथक पृथक तिन निज अस्थाना ॥
मन भावत विरचे सनमाना ॥ वज्रना
थ भगवान सुहाई ॥ राखि ललित मूरति सुखदा
ई ॥ पूजन करहि प्रेम सरसाते ॥ निज
निज हृदय भक्ति मदमाते ॥ दोहा ॥ गिरधर गो
विंददेव श्रीनाथ चतुर्भुज सेव ॥ श्रीमतवैष्णव
देव पुनि वंसिदेव हरिदेव ॥ मूरति सपत
प्रसिद्ध इह भिन्न भिन्न धरि नाम ॥ कीन आचार प्र
चलित जग सुचि वैष्णव अभिराम ॥२॥ टीका ॥ तब
तै वै वैष्णव उत्तमों ने पिता की सुंदर आज्ञा पाय
कर अपने भिन्न भिन्न बडे मनोहर अस्थान बना
य लिये और वज्रनाथ भगवान की सुंदर सा
तो मूरती बनवायकर विधि अनुसार स
नमान से अपने भवन मै स्थापित कर लेते भये
और तिन के गिरधरदेव गोविंददेव श्रीनाथ
चतुरभुज श्रीमतवैष्णवदेव वंसीदेव हरिदेव
ऐसे भिन्न भिन्न नाम राखकर बडी प्रीती भक्ती से
पूजन सेवन करने लगे इस प्रकार तिनो ने अपने

भजन के प्रभाव से संसार मे सुंदर वैष्णव धरम और आचार जो है सो प्रचलित करदिया॥२॥ चौपाई॥ अब लों विदत धरणितल नामा॥ सेवत भक्तजनन प्रदकामा॥ तिनहि विठ्ठलेश करुण कसुजाना॥ सुचि सेवि रह्यो भक्त भगवाना॥ तासु कथा अद्भुत सुखदाई॥ सो अब करहुं प्रकट कछु गाई॥ पश्चिम देस ललित पुरि काहू॥ नाथद्वार संज्ञा अस ताहू॥ तहां वसहिं वैष्णव समुदाई॥ प्रीति भक्ति भगवन सरसाई॥ सो श्रीनाथ देव जो गाये॥ तहां स्थापित भक्त सहाये॥ भक्ति मुक्ति प्रद दीन उवारी॥ दीन दोष दुख त्रास निवारी॥ श्रीमत त्रिपुरदास इक नामा॥ सेवक भूप भक्त भगवाना॥ गुण प्रवीन कुलकायथ जाती॥ निरत संत सेवन दिन राती॥ ते श्रीनाथहिं भक्ति बढाई॥ वसन मृदुल वरष प्रति ल्याई॥ समय समय करदेत सुहावा॥ अस प्रकार कछु काल बितावा॥

विपुल उदार व्रत धारू॥ भयो अंत निरधन संसारू॥ सो निज सुमरि वारषिक करनी॥ चिंता लीन खनत नख धरनी॥ दैव उपाय करहुं अब काहा॥ सो सामर्थ नहिं न कछु राहा॥ अस चिंतत करि यतन अधीरा॥ कछु सामान बन्यो जसचीरा॥ आय भवन श्रीनाथहिं दीना॥ रोदन करत कथन अस कीना॥ इह स्थूल पट नाथ न जोगू॥ निदरहिं देखि सकल मुहि लोगू॥ तब आये हरिभवन पुजारी॥ ते स्थूल पट दृगन निहारी॥ कहत कवन इह कीन ढिठाई॥ प्रभुहि दीन अस चैल उठाई॥ धर्यो उतारि उसन पट आना॥ प्रभुहि उढाय दीन सनमाना॥ अति तुखार निशि सीत अपारो॥ केपत विथत लोत पुर सार्यो॥ तब भगवन निज पुजिक

कोहीं॥ भाष्यो वचन सपन निसि माहीं॥ दोहा॥ अति आरत मे सीत बस थर थर कंपत गात॥ तुव पट तें पूजि कनमुहि भयो नृपति कछु रात॥ १॥ टीका॥ सोऐसे विठ्ठलजी अब लग भी पृथवीतलपर प्रसिद्ध हैं और सेवन करने से अपने सेवकों के मनोर्थ सफल करने वाले हैं तिन कारिक शिष्य भगवान का इष्ट भक्त और सरव गुण प्रवीन होता भयाँ अब तिस की गाथा जो है सो कुछ संक्षेप करके कथन करता हूं पश्चिम देस विखे एक द्वारनाथ नाम करके पुरी होती भई तहां भगवान की प्रीती भक्ती वाले वैष्णव जन जो हैं सो निवास करते थे और ऊपर जो श्रीनाथदेव जी कथन किये गये हैं सो भक्त हितकारी भगवान तिस पुरी मे स्थापित थे तहां श्रीमत त्रिपुरदास नाम करके वड़ा भक्तीमान और गुण प्रवीन संतो की सेवा मे प्रीती वाला राजा का सेवक था तिसने इह व्रत धारन किया कि वरष वरष प्रती समय समय के वड़े सुंदर कोमल और महीन वस्त्र जो हैं सो भक्ती प्रीती से ल्याय करके श्रीनाथ भगवान को पहिरावता और ओढावता था इस प्रकार श्रीनाथ भगवान की भक्ती और संत सेवा करते तिसको कुछ काल वतीत होय गया तव वे अति से करके उदार जो था अंत को समय पाय करके निरधन होय गया और वरष निकट आय गया तो अपने नियम का सुमर्ण करके चिंता मे लीन भया हूआ नख से पृथ्वी को खनने अर्थात खोदने लगा और कहने लगा कि हे देव अब मै कौन यतन करूं वे पिछली सामर्थ तो अब

श्रीनाथ

दीननि हित

श्रीमत्रिपुरदासजी श्री वृंदावन

अथ त्रिपुरदास चरित्रं

दोहा॥ जहि सेवत नर सुगमतर तरहिं अगम संसार॥ जिमि आश्रय जलजान जन जात जलधके पार॥ चौपाई॥ सो अस भक्ति महातम चारू॥ कर हु कथन अब मानस हारू॥ पूरब विदित मल्लभाचारज॥ करन प्रविरत संप्रदा आरज॥ तिन कर तने सुभ्र अभिरामा॥ इंद्रयजीत निपुन गुनधामा॥ महाभागवत लोग उजागर॥ विद्यावेद धरम धृति नागर॥ जास विदत कलिकाल मझारा॥ कीन प्रकट द्वापर संसारा॥ सो विठुल अस नाम सुजाना॥ मन वच करम भक्त भगवाना॥ पायने देस कृस्न गुन गेहा॥ भयो सु निरत दार परिग्रेहा॥ सपत पुत्र ता कर उपजाये॥ तिन कहें कर हुं प्रकट अब गाये॥ दोहा॥ श्रीमत गोकुलनाथ कले बालकृस्न घनस्याम॥ गिरधर श्रीगोपाले जदुनाथ नपुन अभिराम॥१॥ टीका॥ नाभा दासजी कहते हैं कि हे संतो जिसके सेवन करने से मानुष्य इस महा कठिन संसार को सहजे ही तर कर पार हो जाता है कि जैसे जहाज के आश्रय समुद्र को तर जाना सहज होता है सो ऐसा भक्ती का सुंदर महातम जो है मैं आप के आगे गायन करता हूं पूर्व जो आर्य अर्थात वैस्नव संप्रदा के प्रचलित करने वाले वल्लभाचार्ज जी भये हैं तिन के पुत्र परम चतुर इंद्रयजीत गुणों के धाम और वेद विद्या के जानने वाले धरम और धीरज की निधी महा भक्त विठुल नाम कर के उजागर होते भये कैसे भी सामर्थ कि जिनो ने कलिकाल

१२३२

सकल लोग सुनि अद्भुत चारू॥ लगे प्रसंसन विविध प्रकारू॥ दोहा॥ हरिजन हरि की कृपातें परिहरि विषय विकार॥ लहैं सुभक्ति प्रसादतें निज अभिमत फल चार॥४॥ टीका॥ इन त्रिपुर के वस्त्र जो हैं सोई मेरे मन को भावते हैं और मैं तिन तें बहुत तृप्ती और सुख को प्रापत होय जाता हूं हे पूजिक तू अब तें संकोच को त्याग कर मेरे को सोई वस्त्र दे कि जो मेरे प्यारे भक्त त्रिपुर ने दिया हुआ है तब पुजारी इस प्रकार के स्वपने को देखकर रात्री भर भय के वश भया हुआ सो चकरता रहा और जब प्रातःकाल भया तब भगवान के भवन में आयकर सो अपना वस्त्र तुरत उतार लिया और त्रिपुर का दिया हुआ वस्त्र जीर्ण सो दीनबंधू पर सनमान से उढाय दिया और इस अद्भुत को देखकर अचरज के वश भया हूआ कहने लगा कि अहो भगवान कृपानिधान के समान दीनहितकारी और दीनपाल तीन लोक में कोई देखने नहीं पड़ता है ऐसे कथन कर कर फिर जाय करके त्रिपुरदास का भक्ती प्रीती बड़ा आदर सत्कार किया तब पुर के सब लोग इस अद्भुत को सुनकर के त्रिपुरदास की अनेक श्लाघा बड़ाई करने लगे देखिये हरी के भक्त जो हैं सो हरी की कृपा तें सब विषय विकारों को त्याग कर भक्ती के प्रसाद तें अपने मनवांछित फल को सहजे ही प्रापत कर लेते हैं॥४॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भागवद्भक्ति महातम भाषाटीकायां ~~विठुले~~ त्रिपुरदास चरित वरनने नाम

सरगः

नहीरही ऐसे सोच करकर यतन से जैसा कुछ
सामान हीं वस्त्र वन पड़ा भवन मै आय करके भ
गवान श्रीनाथजी के ऊपर चढाय देता भया और
दीन भया हूआ रोदन करकर कहने लगा कि हे दीन
द्याल मेरे आधीन नहीं है मै जानता हूं कि इह वस्त्र
अस्थूल कृपानिधान आपके लायक नहीं है इस
मै सब लोग देखकर के मेरेको हासी हीं करेंगे और
प्रभू मेरा निरादर हीं होवेगा ऐसे कथन करकर त्रि
पुर जो है सो चला आया इतने मे तहां भवन मे पुजारी
आय गया और भगवान के ऊपर वे स्थूल वस्त्र दे
खकर कहने लगा कि इह किसने ऐसी ढीठाई की
है जो भगवान के ऊपर इह महा मोटे वस्त्र उढाय
दिया है इस प्रकार उचारण करकर वे वस्त्र उतार
डाला और कोमल गरम वस्त्र जो था सो श्रीनाथजी
के ऊपर उढायदिया तब रात्री को कह्करके के
पड़नेसे अत्यंत सीत जो पड़ा तो तिस के मारे पुर
के सब लोग थर थर कांपने लगे तिस समय श्रीना
थभगवान पुजारी को सुपनेमे कहने लगे कि हे पू
जि मै परम सीत के वश दुखी भया हूआ शरीर कर
के थर थर कांप रहा हूं तेरे दिये हूये इस वस्त्र से मे
रे शरीर की त्रिपती नहीं होती और मेरा सीत निवारण
होता है॥३॥ चौपाई॥ त्रिपुर चैल मोरे मन भावा॥ तहितें लेहु त्रिपति सुख पावा॥ अब तें देहु
स कुचत जिसो ई॥ मोरे दीन भक्त पट जोई॥ पूजि
क देखि सुपन इहि भांती॥ सोचित रह्यो भीत वस
राती॥ उदय अरुण हरिभवन सिधारी॥ सो आप
न पट लीन उतारी॥ त्रिपुर चैलक ल दीन उढायो॥
अद्भुत देखि परम विसमायो॥ अहो देव सब भक्त
सनेह॥ तीन लोक लखि परहिं न केह॥ अस कहि
त्रिपुर दास कर नाना॥ संजुत भक्ति कीन सनमाना॥

दोहा॥

पाऊं आपु सेवक कछु पावा॥ सुनि पूजक जन स
कल अस अति प्रसन्न सुख पाया॥ भने स्वपन नि
ज सुनत तब भक्त सुष्ठ हरषाय॥२॥ टीका॥ अब
मोह भ्रम के नास करने वाला व ऽ सुखदायक
भक्ती का और महातम जो है सो कथन करता हूं
कृष्णदास नाम करके मथुरा मै एक भक्त होता
भया सो कैसा कि कामना से रहित कृष्ण भगवान के
भजन सुमरण और पूजन सेवन मे बडी भक्ती
वाला जो प्यारी वस्तु अपने घर मे देखता सो
भगवान के अरपण कर देता था एक समय भ
क्त प्रवीन घर को त्याग कर श्री वृंदावन के दरस
न करने को चल पडा तब मारग मे पांडवपुरी प्र
थीत दिल्ली विखे किसी हलवाई के हाट पर के
ऽका अर्थात जलेबी देख कर और मोल लेकर
सरता जो नदी है तिसके जल विखे सनान करके
तिन जलेबियों का भगवान को नैवेद लगाय कर पी
छे आप पाय लेता भया तिसी समय मथुरा मे पूज
कों भगवान को नैवेद लगाया और भवन के कवा
ड देकर बाहर चले आये फिर थोडी देर के पीछे
भीतर जायकर जो देखने लगे तो क्या देखते हैं
कि कृपा निधान के प्रसाद के थाल मे जलेबी पडी
हूई हैं इस अदभुत को देखकर सब अचरज के व
श होगये और परस्पर विचार करने लगे ऐसे
से तिनको चिंता के वश व्याकुल देखकर भगवा
न रात्री को स्वपने मै कहने लगे कि भाई
तुम चिंता क्यों करते हो एक कृष्णदास नाम
करके मेरा परम चतुर प्यारा भक्त है तिसने
प्रेम भक्ती से इह मधुर और सुखदायक नैवेद मेरे को
लगाया सो मै पाय करके आज त्रिपती को प्रापत

होय गया है इस प्रकार अपने अपने उर मे सपन देख कर पूजिक जो है सो परम हरष को प्राप्त भये दूसरे दिन जब कृस्नदास जी भगवान के भवन मे आये और दिन भाव से प्रनाम किया तब पूजिक पूछ ने लगे कि भक्त तुम कहां तें आये और कौन अस्था न पर भगवान तुम कैसा नैवेद लगाया था ऐसे पूजि कौं का कथन सुन कर भक्तप्रवीन कहने लगे कि भाई मैने काल पांडुवपुर मे भगवान कृपानिधान को जलेवियों का नैवेद लगाया था तिनका शेष जो पी छे रहा सो मे आप पाय लिया था तब पूजिक सुन कर के हरष और सुख मान कर अपना सपने का वृतांत जो था सो सब सुनाय दे ते भये भक्तप्रधान सुन कर के परम आनंद से अपने भागों की वडा ई करने लगे ॥ २ ॥ चौपाई ॥ इह प्रभाव मंजुल मन भावा ॥ मै कछु भक्ति कृस्न जन गावा ॥ एक दिव स हरिभक्त प्रवीना ॥ दिल्ली नगर गवन निज कीना ॥ देखी तहां मनोहर कोई ॥ वेस्या गीत रत होई ॥ भाषत श्रीमत कुंजविहारी ॥ जो इह भवन भाम सुभचारी ॥ गवनि करहिं कल नृत्य अलायन ॥ तो मुहि लोग करहिं कस गायन ॥ अस कहि जाय निकट बधु वारी ॥ भक्त ने मृदु गिरा उचारी ॥ जो सु मे तुव मोद उमंगा ॥ करहु गवन मथुरा मुहि संगा ॥ तो प्रभु रसिक कहि रो भगति मोरे ॥ देखहिं नृत्य गीत कल तोरे ॥ मन वांछित पुर होहिं तुमारा ॥ अस प्रकार जब भ क्त उचारा ॥ तेस ईकार करत चलि आई ॥ मथुरा देखि लोक समुदाई ॥ निंदन लाग वदन कहि ना ॥ भक्त सुपृक कछु हृदय न आना ॥ भाषत ता सु भक्तप्रिय जी के ॥ सुमेहो हु अलेकृत नीके ॥ करहु

देव सन मुख मनभायन॥ निरतत नवल गी
त गुन गायन॥ भक्त न देश लेत अनुरागी॥
अदभुत कर नें नृत्य कला लागी दोहा॥ सब
कर देखत कर वधु निरतत भवन गुपाल॥ गायन
मति रति प्रेम अति भई तुरत ब सकाल॥ टीका
इस प्रकार का इह सुंदर प्रभाव और भक्ति जो
सो मैंने गायन कीये एक दिन सो भक्त प्रवीन दि
ल्ली नगर विखे जो चले आये तो तहां एक वे
स्या वडी रूपवंत और नृत्य गायन मे परम चतुर
जो थी तिस को देखते भये फिर मन मे कहने लगे
कि जो कदाचित इह मनोहर वेस्या श्रीमत कुंजवि
हारी जी के भवन मे चलकर अपने नृत्य गायन
से कीना नाथ दिखावे तो मेरे को लोग कैसा धन्य
कहें ते ऐसे विचार कर तिस वेस्या के पास जाय
कर कहने लगे कि हे सुशीले जो तूं कदाचित मे
रे साथ मथुरापुरी को चले और तहां अपनी
चतुराई से सुंदर नृत्य गायन जो है सो करे तो हि
तकारनी तेरे नृत्य गायन को मेरे रसिक सिरोम
णी अर्थात रसकों विखे प्रधान भगवान प्रीती
पूर्वक अव प्य सुनेंगे और तूं अपने मनवांछित
फल को प्रापत होवेगी ऐसे जब भक्त प्रवी
न कृष्णदासजी ने कहा तब वेस्या आनंद से सू
ईकार करके तिन के साथ ही मथुरा मे च
ली आवती भई ऐसे वेस्या के सहित भक्त स
बृ को देखकर नगर के लोग सब नाना चरचा
करकर निंदा करने लगे परंतु कृष्णदासजी
ने हृदय मे नहीं राखी तिस वेस्या को क
हने लगे कि हे सुशीले हे गुन प्रवीने अब

कृष्णदासजी

भक्तमालजी

श्री

अ कृष्ण दास चरितं

दोहा॥ मोहविनाशन करन सुख हृदय हरन दुरताई॥
भक्ति महातम आन करहुं प्रकट कछु गाई॥ चौ
पाई॥ कृष्णदास इक नाम अकामा॥ मथुरा व
सहिं भक्त अभिरामा॥ कृष्ण भजन सेवन रति
जासा॥ नवल नित भक्ति विकासा॥ जे
प्रियवस्तु होहिं निज गेहू॥ प्रभु कहं करहिं समरपन
तेहू॥ समय एक वृंदावन चारू॥ चल्यो करन दरसन
मनहारू॥ तब मारग गोउव पुरि आई॥ तहां नँ कुं
डिलका कलविरचत चारू॥ सो अस लेत मोल
व्रत धारू॥ करि सनान सरिता मनभावा॥ हरिहिं
रुचिर नैवेद लगावा॥ ताहि समय पूजक जन
नाना॥ लाय भोग मथुरा सनमाना॥ आय बहिर
कल देत कवारा॥ बहुरि जाय जब भवन निहा
रा॥ सो कुंडिलका भगवन थारू॥ देखि लाग सब
करन विचारू॥ जानि तिनहिं चिंताकुल भारी॥ दी
न स्वपन निसि भक्त उकारी॥ तुव चिंता कस मानस
कीना॥ रहा मोर प्रिय भक्त प्रवीना॥ कृष्णदास अस
नाम सुहावा॥ तास भक्ति से जुत मोहि लावा॥ उह नै
वेद मधुर सुखदाई॥ भयो सु तृपत आज मैं पाई॥
देखि स्वपन अस पूजक गैना॥ भये मुदित उ
त फुल्लत नैना॥ दूसर दिवस कृष्णजन आये॥
भवन देव नम्रत सिर नाये॥ तब पूजिक पूछ
न अस लागे॥ कहितें आय भक्त बड़भागे॥ कहो
कवन फल हरिहिं सुहावा॥ का नैवेद भक्त तुव
लावा॥ तब बोल्यो हरिभक्त प्रवीना॥ मै कुंडिल
का कालि नवीना॥ गोउव पुर नैवेद लगावा॥

दीन हित कारे॥ सब कहं सुचि उपदेस सुहावा॥
करहिं प्रीति हित संजुत भावा॥ सफल करत सब
लोगन काहीं॥ निरत जुगल नित परहित माहीं॥
हरिगुणगान विमल कलगाते॥ संतत संत भक्ति
भवराते॥ विचरत रहे ज्ञान गुण सागर॥ विद्यादे
व धरम मति नागर॥ तेसा नाम एक अभिरामा॥
राम भक्त मानस निस कामा॥ कृपापात्र हनूमान
सुहावा॥ विठ्ठल नाम आन इक गावा॥ मथुरा
वसहि भक्ति रत होई॥ पितु पितरव्य तास अस
होई॥ रहे भूप अपरोहित तेहू॥ सो करि कल
ह परस्पर गेहू॥ मृतक भये एक कर सीला॥ वि
ठ्ठल नाम निपुण हरिलीला॥ पुत्र प्रवीन वादव
र वादन॥ रसिक मधुर स्वर नाद निनादन॥ क
रहिं ललित जब नृत्य प्रवीना॥ नारायण पद
पंकज लीना॥ एक दिवस अपरोहित राजा॥
कीन सुमरण जानि कछु काजा॥ तब तहिं मरण
मृतन जब वरना॥ बोल्यो सुवन तासु पतिधर
ना॥ सुनि नदेस विठ्ठल नरराये॥ आये हृदय
प्रीति सरसाये॥ राऊ विलोकि कीन सनमाना॥
तहं वसि कछुक दिवस सुखमाना॥ दोहा॥
तब एकादशि दिवस कहे धराणि नाथ व्रत धा
रि॥ नृत्य गीत गुणि जन सभा विरचि ललि
त मन हारि॥२॥ टीका॥ अब और भक्तों प्रभाव कि
जो है सो है संत जनो आपके आगे गाय
न करता हूं कैसा भी चमतकार है कि जिस के श्र
वण करने तें मानुष्य सहजे ही गौ चरन के
समान संसार समुद्र को तर कर पार हो जाते
हैं भक्त आचार ज जी के गंगल और वरधान
नाम करके दो चेले होते भये सो कैसे कि श्री

मत भागवत के विचारने मै प्रवीन और कृस्नभक्ती
मै लीन निरमल बुद्धीवाले वैस्नं उत्तम और दयाके
रस मै भीगे है दीन जनो के हितकारी थे नित्य लो
गों को बडे हित चित और प्रीती से सुख के देनेवाले पर
म पवित्र उपदेस जो है सो सुनाय कर
सव को सफल करते पर हित और पर उपकार
मै ही लीन रहते थे और भगवान के गुन गायन कर
ने और संतो की सेवा भक्ती मै प्रीती वाले होकर प्रेम
मै उनमत्त होकर संसार मै विचरते रहते थे इन
की इतनी ही गाथा है आगे हनूमान जी के कृपा
पात्र कि जिनके ऊपर हनूमान जी की अत्यंत दया थी
और परम भक्तीमान ते माना मकरके भक्त उजा
गर होते भये तैसे ही और दूसरे विठ्ठल भगवा
न के परम भक्त मथुरा मै वास करते थे तिन का पि
ता और चचा दोनो राजा के अपरोहित थे सो
दैव भावी से दोनो परस्पर वैर विरोध करकर औ
र लडकर मर जाते भये तिन के पुत्र परसुशील
और साधु विठ्ठल जी सो कैसे कि रागसे वंधी
वा जयों के वजाने और मधुर रस भरी स
रसे गायन करने मै परम चतुर थे जब नृत्य गाय
न करते तब भगवान के चरन कमलो के प्रे
म मै उनमत्त होय जाते थे एक समय रा
जा ने कुछ कारज जान कर अपरोहित का सु
मरन किया अर्थात तिस को वुलाया राजा के सेवकों
ने कहा कि महाराज वे तो कब का मर गया हूआ है तब
प्रजा नाथ वोले कि तिसके पुत्र को ले आवो ऐसे
राजा की आज्ञा से सेवकों के द्वारा प्रेम भक्ती मै म
गन भये हूये विठ्ठल जी तहां चले आवते भये ति
नको देखकर राजा ने प्रनाम करके बहुत आदर सन

कारकिया तब वे सुख पूर्वक कुछ दिन पर्यंत तहाँ
हीं निवास करते भये जब एकादशी का दिन आया
तब भक्त व्रतधारी राजाने पंडित विद्वान और गुणी
जनो की सुंदर सभा जोड़े सो रचाई और अनेक प्र
कार के नृत्य गायन भजन कीर्तन होने लगे ॥२॥
चौपाई॥ द्वेषी जन विठ्ठल जन केरे॥ नृपसन प्र
कट बदन असटेरे॥ पृथीनाथ नृत गीत सुहाव
न॥ इह अति निपुण विप्र मन भावन॥ सुनहु आ
ज इहि दीन दयालू॥ तब नदेस दीन्यो महिपालू॥
विठ्ठल सुनत कीन सुई कारा॥ दुष्ट जनन करि
हृदय विचारा॥ बुध सनमुख हरि भवन अखारा॥
रच्यो विलोकि उतंग अगारा॥ भूप सचिव जुत
सज्जन जाती॥ आये सकल विलोकन राती॥
साधु निकर परिवारत होई॥ विठ्ठल आय सकु
च सब खोई॥ लाग्यो होन नृत्य कल गाना॥ हि
मधुर मधुर स्वर रसिक महाना॥ भूप वि ँललित
रस सोहन॥ मुरछित भयो जन हु वस मोहन॥
सभा समष्ट एकटक लागी॥ प्रेम प्रवाह वार
दृग त्यागी॥ परम मोद विठ्ठल उत मानी॥
निरतत सुधि सरीर बिसरानी॥ संतत निर
त ध्यान भगवाना॥ ब्रह्मानंद जनहु सुख
माना॥ प्रेम मगन चुत होत अगाधू॥ उ
रभी परयो भक्त व्रतधारू॥ भूप देखि मान
स अकुलावा॥ हाहाकार करत उठि धा
वा॥ साधु संत सब लोग सयाने॥ निज
निज हृदय दुखित पछताने॥ मनहुं प्राण गत
लीन उठाई॥ निज मुख दुष्ट जनन कहे
राई॥ ईहो, मूढ कत रच्यो अखारा॥

नूं अपना नखसिख सृंगार करके भगवानके
भवनमै सनमुख जायकर प्रेम भक्तीसें सु
दर नृत्य गायन जो है सोकर और कृपानिधान
को रिझा ऐसे भक्तकी आज्ञा पायकर वेस्या अ
पना सब संगार करके भगवान के आगे जा
यकर अनेक हाव भावों से नृत्य गायन जो है
सोकरने लगी तब सबके देखते प्रेमभक्तीसे गो
पालजीके भवनमै गायन करतीकरती सो वेस्यातुर
तही प्राणों को त्याग देती भई ऐसे तिसका अद
भुत कौतुक देखकर सब लोग अचरजको प्रापत हो
यगये और कहने लगे कि अहो इह वेस्या धन्य है दे
खो जिसने प्रेमभक्तीमै लीन होयकर गायन करती
करतीने भगके सनमुख शरीरको त्यागदिया है इस
प्रकार कृस्नदास भक्त जो हैं सो संसार मै तिस वे
स्याका उद्धार करके आप कृस्न परमात्मा के चरन
कमलों को हृदयमै धारकर अमय होय पृथवी त
लपर विचर तेभये॥२ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भ
गवद्भक्ति महात मे भाषाटीकायां कृस्नदास चरि
त वरणन नाम सप्त:

अथ विठुल चरितं

दोहा॥ ग्यान महातम सुखद जेहि सुनत उदधि
संसार॥ धेनु चरन वत होहि नर सुगम यतन
विनु पार॥ चौपाई॥ चारु भल्लभाचारज केरे॥
वरद पान गेगल जुग चेरे॥ ललित भागवत
रटन सुशीला॥ निरत निरन्तर भगवन लीला॥
वैस्नवसुभट विमल मति वारे॥ दाया निस पुरा

गायन जो है सो ने लगा तव ऐसा अद्भुत रस आय करके व्यापत भया कि देख करके राजा मानो मोहन मंत्र के वश होय करके चकित हो य गया और सभा भी सब एकटक नेत्र जोड़ करके चित्र के समान मौन होय गई सब के नेत्रों से प्रेम जल का प्रवाह बहा चला जाता है इतो विट्ठल जी भी शरीर की दशा से अचेत मानो ब्रह्मानंद के सुख में मगन निरन्तर करके भगवान के ध्यान में लीन भये हुये नृत्य गायन में खचते य रहे हैं इस प्रकार नृत्य करते करते प्रेम में उनमत्त भक्त प्रधान अकस्मात ही तिस ऊंचे अस्थान तुरत पृथवी पर गिर पड़े ऐसे तिनका गिरना देखकर व्याकुल चित हाहाकार करता हुआ राजा धाय करके पास चला आया अ रु और भी सब साध संत पंडित विद्वान और गुणी जन जो थे सो अपने अपने चित्त में परम दुख मान कर पछतावने लगे राजा ने आय कर भक्त सपूत को ऐसे उठाया कि मानो प्राणों से रहित भया हुआ है और तिन ऊंची जगा पर अखाड़ा रचने वाले दुष्टों का राजा ने अनेक प्रकार के दुरवचनों से निरादर किया और कहा कि अरे अभागी तुम ऐसी ऊंची जगा पर क्यों अखाड़ा रचा था अब जाओ दुष्ट मेरी आंखों के सनमुख मत रहो तव अचेत भये हुये विट्ठल जी को संत उठाय करके नगर में चर विखे ले आये राजा ने तिन की सेवा के लिये तहां अपने सेवक छोड़ दिये और आप भी संतों का भक्त राजा रात्री दिन तिन के उपाय में ही

लगा रहता था कि इनको कब कल्यान होवे इस
प्रकार जब तीसरा दिन वतीत भया तब विठ्ठलजी
को सुरत आय गई और माताने सब वृतांत प्रकट
करके सुनाय दिया भक्त प्रवीन सुनकरके मौन
रहे कुछ उत्तर नहीं दिया हृदय मै भगवान का सुम
रन करने लगे। तब एक दिन रात्री के समय घर
मे बैठे हुये विचार करते हैं कि इह जगत प्रपंच
जो है सो सब मिथ्या हीं भासता है इस के बीच पचत
होय कर वृथाहीं जनम हार देना है असे सोच कर
कर विरक्त भये हुये भक्त प्रधान विठ्ठलजी आधीरा
त के समय घर को त्याग कर चल पडे॥२॥ चौपा
ई॥ छिति नाम मंजुल इक ग्रामा॥ व सहिं निकर
वै सुभग अभिरामा॥ गरुड गुविंद देव कर चारू॥
तहां ललित मूरति मन हारू॥ विप्र निवास कीन
निज ताही॥ सुमरत हृदय चराचर नाही॥ सोजब
आय सदन निज त्यागी॥ पतनि मातु तहि विर
हे विरागी॥ दुखित तास अन्वेषण हेतू॥ चली
जुगल तजि रुचिर नकेतू॥ उत धावन नृप
दीन पठाई॥ दुखित इत आई॥
खोजत विपत सकल थल काहीं॥ पहुंची आ
य ग्राम छिति माहीं॥ सुत कहं देखि भरत दृग
वारी॥ दुखित दैन मुख गिरा उचारी॥ इह व
लहीन वृद्ध तव अंवा॥ अब सुत तजहु कवन
अवलंबा॥ करहु सदन चलि पालन मोरा॥
हमहु भरोस तात बलि तोरा॥ रह्यो मौन सु
नि भक्त प्रवीना॥ तहां निवास जननि त्रिय कीना॥
सुख दुख तात लाभ संसारा॥ भक्त
सुष सम हृदय विचारा॥ रहत अ
जाचित व्रत मन लीना॥ मातु पतनि उत

अन्न व हीना॥ भई दुखित अति कृष्य सरीरा॥
तव भगवान हरन जन पीरा॥ दुजकहं दीन सुप
न निसिमाहीं॥ अव तुम भक्त सुख रनकाहीं॥ जा
हु लेन निज सदन सुहायन॥ [struck] करहु मो रगु
न गन तहां गायन॥ वारवार जव कृस्न अला
वा॥ तव निज भवन भक्त वर आवा॥ देखि दीन
बांधव जन त्यागी॥ रहो सि एक मीत अनुरागी॥
हित जुत तास कीन सनमाना॥ लायो वसन तहि
सदन सुजाना॥ एक दिवस तहि तिये सुभागी॥
वदन लखि खेनन धरन जव लागी॥ कलस निधा
न देखि तव पावा॥ पतिहिं जाय तिय मरम ज
नावा॥ विठुल देखि वदन अस काहा॥ रहन हमा
र कछु सि त नराहा॥ दोहा॥ सदन स्वामि क
हे वोलि अस भक्त सुख समुझाय॥ रहसज्जन
वित सिन तुव राखहु यतन दुराय॥ ३॥ टीका॥
तव छिरी नाम कर के एक सुंदर ग्राम था तिस
विखे वहुत वैस्नव हीं रहते थे और गरुड़ गो
विंद भगवान की मनोहर मूरती भी थी तहां कृ
स्न परमातमा को सुमरते हूये भक्त प्रधान नि
वास करते भये तो जव भक्त प्रवीन घर को त्या
गकर चले आये पीछे तिनकी माता और स्त्री
विरहे करके व्याकुल और दीन दुखी भई हुई
तिन के खोने को वग नगर ग्रामों मे भ्रमती भ्र
मती तहां हीं छिरी नगर विखे आय प्रापत भ
ई तव पुत्र को देखकर नैनों मे जल भर क
रके वड़ी दीन और दुख की भरी हुई वाणी से
रोदन कर कर कहने लगी कि हे पुत्र मै वृद्ध
वलहीन और दुखी दीन तेरी जननी
अव तात मेरे कौ कौ न के आस्रय को उकर

कहि दुरवचन कीन तिसकारा॥ तव अचेत वि ठ कुल दुज काहीं॥ ल्याये साधु नगर गृहमाहीं नृप भृत संजुत विविध प्रकारा॥ कीन्यो तासु य तन परिचारा॥ तितिये दिवस दुज कहिं सुधि आई॥ जननि कीन सब कथा सुनाई॥ भ क्त प्रवर कछु वदन नकाहा॥ सुमरत कृष्ण मौन उर राहा॥ वासर एक सदन निसि काहीं॥ लग्यो विचार करन मन माहीं॥ दोहा॥ इह प्रपंच मिथ्या सकल करि चिंतन उर सोय॥ है विरक्त चित अर्ध निसि चल्यो सदन सव खोय॥२॥ टीका॥ तव विठुलजी के द्वेषी और वि रोधी जो थे सो राजा को कहने लगे कि हे पृथीपा ल इह विठुल ब्रह्म नृत्य गाय मे परम चतुर है हावभाव और मधुर आलाप से मानो मन को मोहि त कर लेता है कृपानिधान आज इस को अव आप दे खना सुनना चाहिये ऐसे तिनका कथन सुनकर राजा विठुलजी को आज्ञा देता भया तिनो ने तुरत स्वीकार कर लिया कि सत्य वचन देखिये तव दु ष्ट जनों ने कपट से भगवान के भवन के सनमु ख वडे ऊंचे अस्थान पर आखाडे की रचना कर दई और साज समाज सव ल्याय करके राख दिये तव रात्री के समय अपने सव सेवक मंत्री औ र नाती जाती सज्जन हितकारियों के सहित राजा जो है सो आय कर के तहां वैठ जाता भया तिस तें उपरांत साधु समाज के वीच परिवारित अपी त जेरे हूये विठुल भक्त भी सकुच लज्जा को त्याग हूये आनंद से चले आये और सुंदर नाना प्रकार का वडी रसिक और मधुर स्वर से नृत्य

है तिसको एक धन का भरा हुआ पीतका व
डा सगला देख पड़ा सो देखती ही तुरत आय
कर पती को सुनाय देती भई विठ्ठलजी सुन
कर कहने लगे कि हे प्यारी इह हमारा स्वत
नहीं है अर्थात हमारे भाग का नहीं है तब उ
रके मालक अपने मीत को बुला कर समुझा
य दिया कि भाई इह धन तुमारा है इसको ले
ले के और घर मै कहीं यतन से संभाल
कर राखो तुमारे काम आवेगा ॥३॥ चौपाई॥
तो सुनत असगिरा अलाई॥ इह का की
न कथन तुव भाई॥ सुत वित सदन और प
रिवारा॥ सुनहु तात सब अहि तुमारा॥ स
कल लेहु कल स निधि एहू॥ स्वारथ नि
रत है रुह हचिगे हू॥ तब विठ्ठल सादिर
हरखाई॥ खोल्यो ललित कलश जब आ
ई॥ निकसी बीच देव सुखदाई॥ वित से
जुत मूरति मनभाई॥ सो सादिर कल भवन
रचाई॥ स्थापित कीन भक्ति सरसाई॥ अ
हवि तत अब दीन जन लेखो॥ अति थी संत म
हा हरि देखो॥ लग्यो विभक्त करन सन माना॥
सब कहे जथा जोग जिमि जाना॥ भयो विदत
दाता उपकारी॥ विभू देखि बोधव अस सारी॥
लागे करन रुचिर सतकारा॥ सो कुतरक
सब हृदय विसारा॥ रंगी लाल विदत अ
स नामा॥ भयो सुवन ताकर अभिरामा॥
~~[illegible]~~ नित्य गायन बड़ भागी॥ कुस
कुसल

सरोज चरन अनुरागी॥ जाको कछुक जव
समय विताई॥ तव इक नटी निपुण कला आई॥
देव भवन तहि नृत्य सुनावा॥ भक्त सुपूजत
भक्ति करावा॥ ललित भाव रस ताल विनारी॥
साधु साधु सव लगे उचारी॥ जव तुहि दे
न वसन वित लागे॥ भक्त सुपूत हरषत अनु
रागे॥ नटी भनत प्रिय वस्तु सुनाई॥ सो सुनि
देहु भक्त मन भाई॥ कवन देउं तोहि भक्त उचारा॥
लेहु एक प्रिय पुत्र हमारा॥ अस कहि दीन भक्त सु
त तासा॥ चली लेन मन वांछित आसा॥ तव विख्या
त नर नायक रानी॥ तोकर नृत्य गीत रुचि मानी॥
बोलि तासु जव नृत्य करावा॥ देखि सु ललित बा
ल मन भावा॥ हरषत पुत्र भाव जिय आनी॥ बो
ली वदन वचन अस रानी॥ दोहा॥ इह कहि तें तुव
लीन नटि बाल ललित मृदु गात॥ सुनि प्रिय
लाग अति सुत सनेह जिमि मात॥४॥ टीका॥
तव सो मीत सुण करके कहिने लगा कि हे भाई
इह तैने क्या कथन किया है धन धाम स्त्री पुत्र
मेरा जो है सो तो सव तेरा ही है मीत तूं संको
च को त्याग कर इस धन के भरे हूये ~~पात्र~~ को
ले और घर विखे आनंद पूर्वक स्वार्थ मे ल
गा ऐसे सज्जन सनेही का वचन सुनकर वि
ठलसी नें आय कर तिस धन के भरे हूये पात्र
को खोला तव तिस के बीच अनंत धन के स
हित एक भगवान् मनोहर मूरती देख पडी सो
भक्त प्रधान ने यतन से बडा सुंदर भवन बनवा
य कर तिस मूरती को विधिवत भक्ती श्री तीसे
तहां स्थापित कर दिया ~~और~~ अतिथी सेत
कार

सुवरनमयी से

भक्तों और निरधन दीन जनों को देखकर वे अ
ति धन जो था सो प्रीति सनमान से बाँटने लगा
तब तो भक्त प्रवीन बड़ा दाता उपकारी सब ज
गत मे प्रसिद्ध होय गया इस प्रकार तिन के प्र
ताप और महिमा बड़ाई को देखकर बाँधव भा
ई बंद जो थे सो हृदय से कुतरक और द्वेष को छो
ड़कर सब आय मिले और नाना प्रकार का आदिर
सतकार करने लगे तब विठुलजी का एक ब
ड़ा सुंदर रंगीलाल नाम करके पुत्र होता भया सो
कैसा कि नृत्य गायन मै परम प्रवीन और कृ
ष्ण भगवान के चरनो की प्रीति भक्ती वाला था ज
ब कुछ के काल बतीत होय गया तब तहां एक
संगीत के जानने वाली परम चतुर वेस्या जो थी
सो आय गई विठुलजी ने आनंद पू
र्वक भगवान के भवन मे बड़ी भक्ती सनमान
से तिस का नृत्य करवाया तब तिस के हाव
भाव और रस के सहित बड़ा मधुर गायन सु
न करके सब लोग प्रेम के वश भये हूये साधू
साधू उचारन करते भये जब भक्त प्रधान प्रस
न्न भये हूये तिस को धन वस्त्र इत्यादि देने लगे
त नटी जो वेस्या है सो कहने लगी कि महारा
ज मै सो वस्तू लेऊंगी कि जो आप को अत्त
करके प्यारी हो भक्त कहने लगे कि नटी मै तेरे
को कौन ऐसी प्यारी वस्तू देऊं अब प्यारा तो
मेरा एक पुत्र ही है सोई तुम ले लेवो ऐसे कथ
न कर कर रंगीलाल अपना प्यारा पुत्र जो था सो
तिस वेस्या को दे दिया तब वे अपने मन वांछि
त फल को पायकर और रंगीलाल को लेकर

चले आये हे पुत्र तुम को उचित नहीं था अब
मेरी वृद्ध की दशा देखकर घर मे चल और हमा
री पालना कर हम को केवल तेरा ही भरोसा है ऐ
से सुन कर विठुलजी मौन हीं रहे कुछ उत्तर
नहीं दिया तब माता और स्त्री दोनों तहां हीं नि
वास करने लगीं भक्त सूघू जो थे तिन को सु
ख दुख हान लाभ संसार मे एक समान हीं
था और नित्य अजाचित व्रत मैं मगन रहते
थे किसी से कछु नहीं मांगते थे माता और
स्त्री जो थी सो अन्न के विना भूखी बड़ी दुखी दी
न और दुबली बलहीन होय गई इस प्रका
र तिन की दशा देखकर दीनो की पीड़ा हरने
वाले भगवान भक्त को रात्री के समय सुपने मे
कहते भये कि हे मेरे प्यारे भक्त अब तुम मेरे
वचन से इन को लेकर सुखपूर्वक अपने घर को
चले जावो और तहां निवास करके मेरा भजन सु
मरण कीर्तन गायन जो है सो करते रहो ऐसे ज
ब बारबार भगवान कृपानिधान ने कहा तब दी
नबंधू की आज्ञा के वश भये हुए ये विठुल भ
क्त माता और स्त्री के लेकर अपने घर मे चले आये
तहां बांधव भाई बंदों ने कुछ देष राखकर तिन
को अपनी पंक्ती से त्याग दिया केवल एक मी
त हित कारी पुरष जो था सो आदिर सतका
र और हित प्यार मिलकर सनमुख रहा नहीं तो
और सब बेमुख होय गये तब तो भक्त प्रधान
तिस मीत के घर मै हीं निवास करने लगे एक
दिन सोच करती हुई भक्त उत्तम की स्त्री अ
पने पाउं के नख से पृथ्वी को खन रही थी अ
भीत खोद रही थी तब देवयोग से अकस्मात

नाम सकल जगजाना॥ जहि से सर्ग वारवधु रा
नी॥ भई विरक्त भक्ति सुखमानी॥ दोहा॥ रा
त आनन आतुर रटि नारि नागर भगवान॥ क
टि बंधन भव भक्त भरि भगवन भयो समान॥ ५॥
टीका॥ तव सो वेस्या वडे प्रेम सनमान से भग
वान कृपा निधान के भवन मे ● नृत्य गायन
जो कर रही थी तिस मे प्रवीन ने रानी के मनोरथ
को जान कर वडी मधुर वाणी से जणाय कर कहा
कि हे रानी मैं यह पुत्र तेरे को देती हूं ऐसे कथन
कर कर गुण प्रवीन नटी जो थी वालक को कहने
लगी कि पुत्र तूं भगवान के भवन मे नृत्य गायन
कर और कृपा निधान को रिझा इस प्रकार नटी
का वचन मान कर रंगीलाल भगवान के आगे
नृत्य करने लगे तव वेस्या प्रसन्न होय कर के रं
गी लाल को गोद मे लेकर और जगतनाथ भग
वान के सनमुख कर कर कहने लगी कि हे रानी जी
इह वालक मैंने भगवान के अरपण कर दिया
अर्थात प्रभू को चढाय दिया है अव तूं इस को दी
नवंधू तें मांग कर लेले ऐसे जव नटी ने कथ
न किया तव आनंद मे मगन भई हुई रानी वा
लक को भगवान से मांगती भई रंगीलाल जी
सुनकर वडी चटक की वाणी से कहने लगे
कि देख माई मेरे हाथ नहीं लगना मै अव
कृष्ण भगवान का दास होय गया है अव तुम्हा
रा किसी का मेरे पर अधिकार नहीं रहा है ऐ
से कथन कर कर रंगीलाल जी भगवान के आगे
प्रेम मे मगन होय कर नृत्य करने लगपडे
तव सव के देखते नृत्य करते करते ही शरीर

की

कोत्याग" भगवान" जो तीर्थ मे जाय लीन हूये इसप्र
कार इन मथुरावासी विठ्ठल जी सब लोगों मे ब
डे प्रधान भक्त उजागर होते भये कि जिनकी संग
ती के प्रसाद से वे वेस्या और दासी विरक्त होय
कर भक्ती के सुख मे मगन होय गई ऐसे विठ्ठल
भक्त जी नट नागर कृष्ण नृत्य मे चतुर जो भगवा
न हैं तिनको रात्री दिन रटते हूये अपार भजते हू
ये इस संसार के बंधन को तोड़ कर कृष्ण परमा
तमा की कृपा से कृष्ण रूप ही होय गये ॥ ५ ॥ इति
श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महातमे भा
षा टीकायां विठ्ठल चरित वरणनं नाम सरगः

अथ हरि राम चरितं

दोहा ॥ अब संशय हरन करन विमल
मन चारु ॥ भक्ति महातम करहु मै कथन विद
त संसारु ॥ चौपाई ॥ भक्त सुष्ठु हरिराम सुहाये ॥
इ प्रय जीत विदत सब गाये ॥ नृपसन सब्य
भाग गुण सागर ॥ विद्या वेद धरम पथ नागर ॥
~~स्वामी~~ एक आन तहं साधू ॥ रामनाम नि
सो ही
जो हृदय अराधू ॥ तहि वृति भूमि दान कृत राऊ ॥
देखि आन मिश्र सठ काहू ॥ मिथ्या मन्यो भूप
सन तेही ॥ पृथ्वी नाथ वृति नाहिन रही ॥
~~~~ मूढ बन्यो अनुचित अधिकारी ॥ अस
प्रकार सठ कपट उचारी ॥ दीन्यो प्रेरि हृदय
नरराई ॥ दीन तास वृति भूमि छुडाई ॥ देखि
~~~~

११४२

अनंथ्ये साधु अकुलाना॥ रोदन करत सरण ह रिरामा॥ आवत विथा सकल निज वरनी॥ दीन सुनाय दुष्ट सब करनी॥ तब हरिराम दया रसपागे॥ तासु वदन अस भाषण लागे॥ नृप पै जाय बणा वनआई॥ देहुं से त नुव विथा सुनाई॥ अस कहि भक्त स्रेष्ट हरिरामा॥ आये भूप भवन निजधामा॥ पाक्रिल साधु स्रेत अधिकारी॥ आवा हृदय दुखित निजमाही॥ अज हु वदन ह रिराम नमाख्यो॥ तहिनिजविनय पृथमकरि राख्यो॥ राजसुनत करि क्रोध अपारा॥ कीन्यो विविध साधुतिरसकारा॥ तब हरिराम कीन से भाषण॥ का अब करहु भूप इहि शासन॥ सुनं नरिंद्र मौन धरि रहा॥ ने म्रत वदन व हुरि अस कहा॥ महाराज मितू मुहि वरना॥ सो इहि कर नाहिन वृतिधरना॥ तब हरिराम सफुट मुख वानी॥ सुनहु भूप अस वदन वखानी॥ मितू मनत सत्य सब तेरे॥ पै आवहिं अब सन मुख मोरे॥ देहु॥ जो मिथ्या अस कथन तहि तो नवदन कछु गाय॥ निकसहिं निरखत सब अब देखि लेहु नरनाथ॥ २॥ टीका॥ अब सब क्लेशो केहरनेवालो और मन को सुंदर निरमल करने वाला भक्ति को प्रभाव जो है सो कथनकरताहै॥ एक भक्तजनो मे उत्तम और इंद्रय जीत भगवान के भक्त हरिरामजी नाम करके प्रसिद्ध होते भये तिनकी राजा कैमे बै भाव और बड़ी प्रीती थी और भक्त प्रधान गुणो के समुद्र वेदविद्या और धरम के मारग मे चतुर थे तहां

प्रणाम करके चलपड़ी ऊहांरा जाकी परमच
तुर राणी जोथी सो नटी के नृत्य गायनकी शो
भासुनकर बड़ी रुचीसे बुलाय कर तिसका
नृत्य गायन जो है सो करावती भई तो
जब रंगी लाल मनोहर बालक कोतिस के साथ दे
खो तव हृदय मे पुत्रभाव राख कर मोहित भई हुई
कहने लगी कि हे नटी सत्य कहो इन कोमल अंगों
वाली दिव्य स्वरूप बाल तैने कहां से पाया है मेरे
को देखकर के इ पुत्र के समान अत्यंत प्या
रा लगा है ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ भगवन भवन नृत्य
कल गाना ॥ रही करत वेस्या सनमाना ॥ चतुर
विचारि मनोरथ रानी ॥ वोली वदन मधुर मृदु
वानी ॥ तुमहिं देउं महिखी सुत एहू ॥ अस कहि
नटी निपुण गुण गेहू ॥ सि सुहिं वदन अस वचन
उचारी ॥ करहु नृत्य सुत भवन मुरारी ॥ लाग्यो
करन नृत्य कल सोई ॥ तव प्रसन्न मानस नटि
होई ॥ सि सुहिं लेत निज अंक प्रवीना ॥ विलखा
यकर सन मुख कीना ॥ महिखी सन अस वचन
व खाना ॥ इन अरपण कीन्यो भगवाना ॥ प्रभु तें
लेहु मांगि नृप रानी ॥ अस जव कीं कथन न
टि वानी ॥ तव प्रसन्न मन हरष बरानी ॥
प्रभु तें लेन वाल जव लागी ॥ स्फुट वचन
तव रंगी अलाया ॥ करहु स पूर्ण मोर तनि
काया ॥ मै अव भयो कृष्ण जैम माता ॥ अस कहि
हि वदन वचन सुख दा ना ॥ निरतत तुरत
वपुष तजि दीना ॥ भयो सुभक्त जोति हरि ली
ना ॥ अस माथुर हरि भक्त महाना ॥ बिठ्ठल

११४४

मुख से हरिराम जी कहने लगे कि हे राजन वे संन्यासी सत्य कहता है परन्तु अब मेरे मन मुख आवे जो इन ने तिस ने कुछ मिथ्या कथन किया होगा अर्थात झूठ कहा होगा तो तिसके मुख से कदाचित कोई भी वचन नहीं निकलेगा हे राजन अब सबके देखते तुम इस वारता को प्रकट अपने नेत्रों से देख लेवो ॥२॥ चौपाई ॥ जो तहि सत्य कथन कछु कीना ॥ तो बोलब प्रणाम र प्रबीना ॥ राधा कृष्ण चरित इह चारू ॥ देख हु भूप विदित मन हारू ॥ जहि प्रह्लाद कीन रखवारी ॥ खंब फोर हरनाकस मारी ॥ कस नहीं सो संत सहैया ॥ अस कहि हृदय भक्त सुख देया ॥ कृपासिंधु भगवान चितारन ॥ लख्यो द्रुपदजा सुनि तिय तारन ॥ मै प्रणाम कीन दीन दुखगंजन ॥ दुज सुर धरणि धेनु मन रंजन ॥ तबन रहनि निज हृदय हुलासी ॥ वेग बुलाय लीन संन्यासी ॥ बैठो आय मौन मन मारे ॥ सकत नहिन कछु वचन उचारे ॥ बार बार तब भूप अलावा ॥ सो वृतांत अब देहु सुनावा ॥ यद्यपि रिसकि भूपवर काहा ॥ तद्यपि चकित मौन धरि राहा ॥ कर न सयान करि कहत बुझाई ॥ मोरे कछु सामर्थ नहाई ॥ भूप देखि अदभुत बिसमाना ॥ करत प्रणाम चरन हरिरामा ॥ सो वृति दीन संत तहि काही ॥ चल्यो सुहरषि भवन निज माही ॥ भक्त सृ हरिराम सुहाये ॥ सादिर नृपतें होत विदाये ॥ आय ललित आश्रम निज राजे ॥ सुमरत भक्त करन सब काजे ॥ मिटू होइ निकट नर नाही ॥ राहा बैठ मौन धरि ताही ॥ एकल

देखि धरन पति वरना॥ भाखेहु सत्य कवन कर
धरना॥ ~~[struck out]~~ तास प्रकट नवगिरा उचारी॥
मे प्रभु हृदय द्वेष निज धारी॥ इह अनुचित कछु वदन
अलावा॥ तहि परिणाम प्रकट अव पावा॥ अस
सुनि धरणी नाथ निज काहीं॥ निदरन लग्यो वि
विध मन माहीं॥ दोहा॥ अस इह चरित वचित्रवर
मे गायो हरिराम॥ जा सुनत जग भक्ति युत हो
हिं सफल पुर काम॥ २॥ टीका॥ और जो तिस
ने सत्य कथन किया होगा तो मेरा प्रण है कि बो
ल उठेगा हे राजन इह श्री राधा कृष्ण का अदभु
त चरित्र तूं प्रकट विलोकन कर अर्थात देख जिस
परमातमा ने प्रल्हाद की सहायता करी और खंब फो
डकर के हरनाकस को मारा सो संत सहायक भग
वान मेरी क्यों ना पज राखेंगे ऐसे कथन कर कें द्रो
पदी और अहिल्या के तारने वाले भक्त सुखदायक
कृपा के समुद्र भगवान जो हैं तिन का सुमरण करने
लगे के हे गौ ब्राह्मण पृथवी देवताओं के हृ
दय को आनंद देने वाले भगवान मैं इह प्रण
कर चुका हूं अब आप दया कर के मेरे इस प्रण
को सत्य करिये ऐसे प्रार्थना कर कर मौन होय गये
तब राजा ने हरष से तत काल हीं तिस सन्यासी
को बुलाय लिया सो आय कर मन मारे हूये मौ
न धार कर बैठ गया मुख से कुछ बोल नहीं स
कता तब राजा तिस को बारबार कहता भया कि
साधू अब सो वृतांत प्रकट कर के सुनाय देय
द्यपि राजा ने कोप से भी कहा तद्यपि सो आचर
ज के वश मौन हुआ बैठा है हाथ की सैनों से जना
य कर कहता है कि मेरे को बोलने की कुछ सामर्थ

नहीं है इस अद्भुत को देखकर राजा अचरज को
प्राप्त होय गया और हरिरामजी के चरनों पर गिर
प्रनाम करके सो भूमी तिसी साधू को दे देता भया
वो अपनी दानभूमी को पायकर आसीसा देता हुआ
आनंदपूर्वक घरको चला गया ई होम भक्तप्रधान
हरिरामजी भी राजासे विदाय होय कर कृष्ण कृष्ण
रटते हुये अपने आश्रममें चले आये और वे
संन्यासी जो था सो मौन धारे हुये तहां राजा के पास
ही बैठ रहा तब राजा तिसको अकेला जानकर क
हने लगा कि हे साधू सत्य कहो वे किसकी भूमी
रही सो कहने लगा कि यजापाल मैंने द्वेष औ
र कपट से इन अनर्थ मिथ्या ही कथन किया था
अब तिसका बदला मैंने प्रकट पाय लिया है तब
राजा तिसका कथन सुनकर अपने आप की
बहुत निंदा करने लगा कि इस मूढ के कहने प
र मेरे से अनुचित पाप होय गया था हरिरा
मजी की कृपा तें मैं इस अनर्थ से छूट गया
है इस प्रकार इन अद्भुत चरित्र जो है
सो मैंने यथामती कुछ गायन कर दिया है
इसके श्रद्धा पूर्वक श्रवण करने से सब
भगवान की भक्ती के सहित सब मनोरथ
सफल हो जाती हैं ॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे
भगवद् भक्तिमहात्म्ये भाषाटीकायां हरिरा
मचरित्र वर्णनं नाम सर्गः

एक ~~कोई~~ और साधू वास करता था तिस को रा
जाने कुछ धरम अर्थ जमीन दी हुई थी सो एक और
संन्यासी साधू देख कर द्वेष से राजा के साथ झूठ ही
आय करके कहने लगा कि पृथ्वीनाथ इन भूमी र
स की नहीं है इह झूठ वृथा ही तिस का अधिकारी
बन बैठा है इस प्रकार तिस संन्यासी ने मिथ्या कथन
करकर राजा के हृदय को फेर दिया और तिस साधू से
वे भूमी छुड़वाय देई तब इस अनर्थ को देख कर
व्याकुल भया हुआ वे साधू रोदन करता करता हरि
राम जी की शरण को चला आया और आवते ही अ
पनी सब विथा वारता तिस दुष्ट की करनी के सहित
सब सुनाय देता भया ऐसे सुनकर दया के वश
भये हूये हरिरामजी कहने लगे कि हे संत तूं
धीरज को धारण कर मैं रे से जहां तक बन परेगा
राजा के पास जाय कर तेरा दुख कलेश सब सुना
य देऊंगा ऐसे कथन करकर भक्त श्रेष्ठ हरिरा
म जी आश्रम को त्याग कर राजा के भवन में
चले आये तिन के पीछे पीछे ही भूमी के अधिका
र वाला साधू भी परम दुखी और निरास भया हूआ
आय गया अबी हरि राम जी कुछ बोले नहीं थे
कि इतने में तिस साधू ने अपना दुख कलेश जो था
सो सब प्रथम ही सुनाय दिया ~~राजा~~ राजा सुनते
ही बड़े कोप से तिस का निरादर कर कर निवारण
करने लगा तब हरिराम जी देख कर कहने लगे
कि राजन क्या अब इस को ग्रासण करता है राजा सु
न कर मौन होय गया फिर दीन भाव से हाथ जोड़ कर
कहने लगा कि महाराज मेरे को संन्यासी ने सुनाय
दिया है कि जो इह भूमी इस साधू की नहीं है तब

१११६

इहदेखउउज्जलसुखदेनी॥ वह्यो जातअति ललित त्रिवेनी॥ देखिलोग मानसविसमाये॥ सलिलप्रवाह वरनि किमि जाये॥ वारवार हर षत अनुरागे॥ नारायण पद वंदन लागे॥ दोहा॥ अस इह भक्तप्रवीन भव परमभक्त ज दुराय॥ जेहि मथुरा निज भक्ति वल दीन प्रयागदिखाय॥ टीका॥ अव सं पूर्ण पाप और दुरमती के नास करने वाला नारा यण जी की भक्ती का प्रभाव जो है सो संक्षे करके कुछ गायन करता है इह भक्त प्रधान मथुरापुरी मे निवास करके कृष्ण भगवान के चरन कमलों को भजते रहते थे जगत मे जो जो देव अ स्थान पुरा णों विषे प्रसिद्ध लुपत भये हुये थे ति न सवको अपनी वुद्धि और अनुभव के द्वारा प्रकट करते भये जहां कहीं कुछ संशय भ्रम होता तो सपने मे दीनहितकारी भगवान आप जणाय देते थे इसप्रकार कुछ स मय वतीत होयगया तव एकदिन माघम होने की सुंदर ऋतू आपायकर नगर के लोग मिल करके प्रयागराजके दरसको चले और भक्त प्रधान नारायण जी के पास आय कर कहने लगे कि हे भक्तप्रवीन चलो हमारे साथ प्रयागराजको तहां भली प्रकार सवदर सन पाय कर और फिर हमारे साथ हीं सु पूर्वक घरको चले आवो ऐसे तिनका कथ न सुन कर भक्तसिरोमणी कहने लगे

कृष्ण हरि, ... [illegible]

[illegible]

कि भाई इन तुमने क्या कथन किया है मै तो भग
वान की कृपा से तुम को ईहां ग्राम मै हीं प्रयागरा
ज का दरसन कराय देता हूं तुम बालक की को
न अर्थात वगल मै दवाये हूये नगर मै ढूंढते
फिरते हो क्या तुमारी बुधी किसी ने चोरी कर दई
है जो प्रयागराज को ग्राम मै छोड कर बाहर दरस
न करने को जाते हो इस मै जो कदाचित तुम को
प्रतीती नहीं आवती तो चलो अवहीं दिखाय
देता हूं कुछ विलंब नहीं है ऐसे कथन कर
कर सब लोगों को साथ लिये हूये भक्तप्रधान
नगर के बाहर चले आये तहां एक बडा ऊंचा
सिखर देख कर तिस के ऊपर जाय कर वडी ऊं
ची स्वर से सब को सुनाय कर कहने लगे कि हे
भाई लोगो इन देखो वडी उज्वल सुख के देने वा
ली सुंदर त्रिवेनी जो है सो वही चली जाती है
तब लोग देख कर के परम आचरज को प्राप
त होय गये जल का प्रवाह जो है सो अनेत हीं
वहा चला जाता है इस अदभुत कौतुक और
भक्ती के प्रभाव को देख कर हरष के वश भये हू
ये सब लोग भक्तप्रधान के चरनो पर है कारवा
र दंड प्रणाम करके मुख से अनेक प्रकार की असतुती
वडाई करने लगे इस प्रकार इन नारायणभ
ट्ट जी भक्ती मे प्रवीन जदुनंदन भगवान के
परम भक्त होते भये देखो कि जिनो ने अपनी
भक्ती के प्रभाव से लोगों को मथुरा हीं प्र
याग राज प्रकट दिखाय दिया ॥२॥ इति श्री
भक्तविनोद ग्रंथे भागवद भक्ति महातम मे भा
षाटीकायां नारायणभट्ट चरितवरणनं नाम सरगः

अथ रूपसनातन चरित

दोहा॥ अब अदभुत सुंदर सुखद ~~भक्तिमलित~~
~~मसह~~ हृदय हरन संदेहु॥ भक्तिमहातम
करनकल कृस्न कमल पदनेहु॥ करहुं [illegible]
यथामति कथन कहुं रूप सनातन नाम॥
गौडदेस जुग भ्रात दूह भये विदत गुणधाम॥
चौपाई॥ अब सर एक जुगल अनुरागे॥ नि
जवर देस सदन सुख त्यागे॥ कृस्न कमलप
द प्रीति बढाये॥ उतके ठित वृंदावन आये॥
गोपेस्वर भगवान समीपा॥ लागे वसन भक्त
कुल दीपा॥ चारु अजाचित व्रत कहे पासो॥
यथालाभ से नैष्ठु विचासो॥ विचरत तहां कृ
स्न भगवाना॥ लीला अमिय करत नित पाना॥
कृस्न विमल कल गुण गण गाते॥ वृंदा
विपुन भक्ति मद माते॥ निवसत भये विप्र
वर दोई॥ अजाचित वृती विदत सब होई॥
अब सर एक रूप गुण भवना॥ नंदी ग्राम
कीन कल गवना॥ रह्यो सनातन प्रीति ~~प्री~~ प्री
ति बढाये॥ वृंदा विपुन ललित सुख पाये॥
एक दिवस भेटन निज वीरा॥ नंदी ग्राम
गवन विधि धीरा॥ आवत देखि रूप अनुरा
गा॥ हृदय विचार करन निज लागा॥ कब
हुं कि आज दुगध मैं पावहुं॥ प्रभुहिं प्र[illegible]णम
पाछे सानुकूल सुख पाई॥ देहुं रुचिर निज
वीर जिमाई॥ हृदय सफुरन भक्त जन कामा॥
रमा रूप राधे अभिरामा॥ जनु गूजरि क
ले लरक चरकिया॥ धरत सीस सुभ दुगध

अथ नारायणभट्ट चरितं

दोहा॥ अब नारायणभट्ट कर भक्ति प्रभाव अलाई॥
करहुं प्रकट संक्षेप कछु हरन दुरित दुराई॥
चौपाई॥ मथुरा बसहिं भक्तवर सोई॥ कृष्ण सने
हे जे चरन रत होई॥ विदित पुरान स्याम गुन गा
ये॥ जे जे रहे लुप्त मन भाये॥ तिन सब कहे
निज अनुभव द्वारा॥ लग्यो प्रकास करन संसा
रा॥ जहं तासु कछु होत संदेहू॥ सोनिसि
स्वपन कृष्ण जन नेहू॥ निज कर करि देत
जनाये॥ अस प्रकार कछु दिवस बिताये॥ काल
एक दिवस सानंद वहै बैठे॥ माघ मास सु
दर ऋतु लै बैठे॥ लोक सकल मानस अ
नुरागे॥ चारु प्रयाग चलन जब लागे॥ भ
क्त सबै सन कहत उचारी॥ हम सन तुम च
लहो व्रतधारी॥ सुचि प्रयाग तीरथ दरसा
ई॥ आव हु बहुरि सदन सुख पाई॥ तब बो
ल्यो हरि भक्त प्रवीना॥ इन कहं तुम हु
कथन जन कीना॥ इहां प्रयाग होय मन
भावा॥ देहुं ललित तुव दृगन दिखावा॥
खोजहु नगर कोन तिसु दीन्यो॥ का मति
बौरि तुम हु कहि कीन्यो॥ जो प्रतीत कछु तु
म हिं न भाई॥ चलहु वेग अब देहुं दिखाई॥
अस कहि नगर बहिर जब आया॥ देखि उ
तंग सिखर मन भावा॥ तहिं पे जाय सफु
ट अस बानी॥ भक्त सबै निज बदन बखानी॥

११४८

प्रेमभक्तीमे मगन भये हूये अपने देस और घर के सुखको त्याग कर कृष्ण भगवान के चरन कमलों को हृदय मे धारकर वडी प्रीती से श्री वृंदावन मे चले आवते भये तहां आयकर आनंद से गोपेस्वर भगवान के निकट निवास करने लगे और अजाचित व्रत जो है सो धारन कर लिया जो कोई आयकर रुची से कुछ देजाता तो पाय लेते नहीं तो संतोष मे मगन रहते थे और तहां ही विचरते विचरते कृष्ण परमतमा की लीलाविलास के अमृत रसको पान करते और तिनके ही गुण गण गावते रहते थे इस प्रकार भक्ती के मद मे उनमत्त भये हूये वृंदावन मे वासकरकर सब लोगों मे अजाचित वृति अर्थात किसी से कुछ नहीं मांगने वाले प्रसिद्ध होय गये एक समय गुण प्रवीन रूप जो है सो नंदीग्राम विखे चला गया और तिसका दूसरा भाई सनातन आनंद पूर्वक वृंदावन मे ही रहता भया तब एक दिन अपने भ्राता के मिलने को सनातन जो है सो नंदीग्राम विखे चला गया तिसको आवते देखकर हरष और प्रेम के वश भया हूआ रूप हृदय मे विचार करने लगा कि जो कदाचित आज मेरेको दुग्ध जो दूध है सो प्रापत होवे तो प्रथम भगवान को नैवेद लगाय कर पीछे प्रीती रुची से अपने भ्राता को जिमाऊं जब रूप के चित्त मे इह अभिलाषा भई तब भक्तजनों के मनोरथों को सफल करने लक्ष्मी का रूप श्री राधके जो है सो गूजरी के

सुंदर मैं घमै वडी लटक और चटक से सीस पर
धरी हुई दूध की सुभमट की तैसे हीं बडे उज्जल सु
गंधी काले चावल और शरकरा मिष्टान लिये हूये
आयकर कहने लगी कि हे भक्त मैने यह मै इन सु
कतरणा करी थी कि जव मेरी गऊ सुखपूर्वक
निरविघन होयकर प्रसूत होवेगी अर्थात सूयेगी
तो मैं दीर के निमित्त इसका दूध प्रथम संतो के च
ढाऊंगी सो अव तुमारी दया से मेरा मनोर्थ सफ
ल होयगया है इसलिये ये इह दूध चावल और
मिष्टान मै ल्याई हूं सो तुम कृपा करके ले लेवो इ
स प्रकार गूजरी भेष राधके जी का वचन सुन कर
सो दूध चावल मिष्टान आनंद पूर्वक सव कुछ
ले लिया परन्तु तिस कपट भेष गूजरी के रूप
की शोभा देखकर कि मानो रती जो काम देव
की स्त्री है तिसकी मैंहरताई को भी लज्जा देती है
रूप भक्त के नेत्र चकित होयकर एकटक लगजा
ते भये तवँ सनातन कहने लगा कि हे माता
तूं कहां से आई और तेरे पिता का क्या नाम है ऐ
से सुनकर सो कहने लगी कि साधु मैं वृषभान की
पुत्री ~~[illegible]~~ हूं इतना कहती ही तु
रत चली गई तव तो रूप ने भोजन वनाया औ
र भ्राताँ जिमायकर आपभी पाया फिर रूप कह
ने लगा कि भाई मेरे को तेरा आवना देखकर
हृदय मे दूध का आहार करावने की रुची हो
ती भई तव अकस्मात ही इह गोपी जोषी सो
मेरे मन को छत को लेकर के आगई ऐसे
रूप का वचन सुनकर सनातन कहने लगा
कि तीरण वासी संतों को ऐसे अभिलषा और

लोभ नहीं करना चाहिये इस मे बड़ी हानीकीबार ता है और इसते जपतप भक्तीभजन सब नष्ट होजा ता है फेर इह भी जान किजिस को तेने अहीर की कन्या समुझा है सो तो साक्षात श्रीराधके कृष्ण भगवानकी प्यारहै॥ चौपाई॥ हम कहे जानिए ऊ तजिगेहू॥ त्यांई दुग्ध मातु [illegible] करि नेहू॥ सुनत सुनत मानस विसमाना॥ बंधुवच न निष्फल नहि जाना॥ नेदी ग्राम कौन तव थ्या ना॥ खोजत जुगल सदन वृखभाना॥ तब लो गन अस प्रकट उचारा॥ अब न काहू वृखभान अगारा॥ पूरब भयो विदत जग गावा॥ जब लो गन अस वदन अलावा॥ तब है सनातन [illegible] गिरा उचारी॥ तात तुमार लोभवस भारी॥ पा वालोभ जनन सुखदानी॥ आगल अब न कर हु इहि भांती॥ अस भाषत वृंदावन काही॥ चल्यो कृष्ण सुमरत मन माहीं॥ एक दिवस सुंदर थलकाहू॥ लीला रास कृष्ण उत साहू॥ देख्यो होत नृत्य कलगाना॥ रसो भक्त वर वैठि जुड़ाना॥ प्रेममगन मन वत जनु भयवै कर न फूर इक पूतिक रहयो॥ मृत लखिता सु चेत किन चीनी॥ ग्रा्ण रंधर अगुरी न हि दीनी॥ तव सचारि करि तेज कृसाना॥ भ यो तासु जनु दाहक भाना॥ देखी वहुरि तुरत निरेकासी॥ पावक दग्ध स्याम सच भासी॥ जियत जानि मानस विसमाना॥ भक्ति प्रभा व विदत प्रकटाना॥ उत नहि भ्रात रूपवर कोही॥ भयो स्वपन अदभुत निसि माही॥ कृ पानाथ भगवान गोविंदू॥ बोले भक्त कुमद

मरकिया॥ तंदुल सित सुगंधि मन लाहू॥ लीने सुभ्र ग्रार करा वाहू॥ आवत मने वचन रस वोरे॥ लेउ भक्त इन अरवल तोरे॥ मै प्रतिसुत कीनी सुमरहू॥ तोहि प्रसूत धेनु जव गेहू॥ पायस सिद्धि हेतु तुव लाई॥ देउ दुगध तंडुल हरखाई॥ हित जुत तुव सुनत अस वानी॥ लीन्यो दुगध परम सुख मानी॥ मै दृग देखि अलौकिक सोभा॥ रूप अनूप मान रति छोभा॥ इकटक रह्यो चकित चित मोरी॥ वदन सनातन निरख उचारी॥ कहितें कीन आगमन सुहाता॥ माता कवन नाम तुव ताता॥ मै पुत्री वृषभान सुहाई॥ कियो गवन अस वदन खलाई॥ वेग पाक तव रूप रचा यो॥ वंधु जिमाय आपु पुनि पायो॥ मने वहोरि वचने सुख दाता॥ मे आगमन देखि तुव भ्राता॥ दुगध अहार करावन कोरी॥ तोरे भई रुचिर रुचि मोरी॥ अकस्मात इन गोपि सुहाई॥ तात मोर मन वांछित ल्याई॥ दोहा॥ सुनत सनातन वचने तहि मने वदन मृदु वानि॥ तीरथ वासी संत कहे करन लोभ वड हानि॥ ▬ यातें तप कृत भक्ति जुत होत नष्ट सव वीर॥ इह राधा प्रिय कृष्ण कल तुव गुनि सुता अहीर॥ १॥ टीका॥ अव कृष्ण भगवान के चरन कमलों मै प्रीती के अधिक करने वाला वडा सुंदर सुखदाय क और अदभुत भक्ती का महातम जो है सो गायन करता है कहते हैं कि गौड देस विखें सरव गुणों के धाम रूप सनातन नाम करके ~~प्रसिद्ध~~ दो भ्राता प्रसिद्ध होते भये एक समय वे दोनो भ्रा

के समान अचेत होय कर बैठ रहा॥ तब करन
पूर नाम करके तहां एक पूजिक था सो तिस को
मृत जान कर भ्रम से परीक्षा करने के लिये नासिके
के मारग मै अंगुली देकर तिस की चेतनता को जा
चने लगा तब स्पर्श होते ही तिस को ~~~~ बडे
दाहक अग्नी का प्रभाव जान पडा कि मानो अंगुली
सब भस्म होय गई है तुरत ही बाहर निकाल कर
जो देखने लगा तो क्या देखता है कि अंगुली जल
करके सब स्याम रूप होय रही है तब तिस को जीव
ता जान कर हृदय मे बडा अचरज मानता भया
ऐसे सनातन की भक्ती का प्रभाव जो है सो प्रक
ट देखने मे आया और ऊहां तिस के ~रूप नामा
भ्राता को रात्री के समय बडा अद्भुत स्वपन दे
ख पडता भया क्यो कि भक्त जनो के ~~ कुमद
रूपी मन ~~ के चंद्रमा भगवां कृपानिधान
जो है सो कहने लगे कि हे गुणों के धाम भक्त
प्रवीन इहां नगर के बाहर बडी दिव्य प्रका
शमान मेरी मूरती भूमी के बीच लुपत भई
हुई है तूं पृथवी को खोद कर और तिस सुख
दायक मेरी मूरती को निकाल कर संसार मै
भली प्रकार प्रकट कर हे भक्त तिस के पूजन
सेवन ते लोग अपने मन वांछित फलों को
प्रापत करें गे सो ऐसी सरव सिद्धियों के देने वा
ली मेरी मनोहर मूरती कहां है कि ~ अमुक
अस्थान पर ~~ गौओं का समूह बैठता
है तहां तिस के ऊपर मंद मंद अप्रीत बूंद
बूंद करके गऊ का दूध जो है सो टपकता
रहता है एही तिस का निश्चय करके चिन्ह
है मैने भक्त तेरे को भली प्रकार जताय

य दियाहै ॥२॥ चौपाई ॥ देखि स्वपन अस रूप
सुजाना ॥ सो वचित्र मूरति भगवाना ॥ धेनु ज
स तहं ग दुग्ध निहारी ॥ तुरत खनत लत लीन
निकारी ॥ सज्जन साधु चरित अस देखी ॥ भये
चकित चित हृदय वसेखी ॥ करि पूजन विधि
[illegible] वत समुदाई ॥ रूप भक्ति मानस सरसा
ई ॥ कीन स्थापित सुचि सनमाना ॥ अवलो
सो मूरति भगवाना ॥ जयपुर जय हरि भू
पति नामा ॥ तास विरचित भवन अभिरामा ॥
भुक्ति मुक्ति लोगन सुखदाई ॥ जैहि स्थापित
भवन कराई ॥ तव इक दिवस सनातन धावा ॥
नंदी ग्राम रूप पैं आवा ॥ मारग जटा मु
कर सिर जोई ॥ कस्यो विपुन कंटिक द्रुम
सोई ॥ ईलो रहन सासन भगवाना ॥ भक्त
प्रवर मानस निज जाना ॥ अस प्रकार द्वै दि
वस विहाये ॥ तव गोपाल भक्त सुखदाये ॥
त्रितिये दिवस दुग्ध सुचि लीने ॥ जटा मु
चित द्रुम कंटिक कीने ॥ सो मादिर पय [illegible]
पान करावा ॥ देखि दिव्य वर रूप सुहावा ॥
पूछत कवन वसहु कहि ग्रामा ॥ केते तोर वैधु
अभिरामा ॥ सुनि बोले अस भक्त उचारी ॥ मै गो
पाल मात मम चारी ॥ नंदी ग्राम वास निज माना ॥
अस कहि भये लुपत भगवाना ॥ तव विसमय अ
ति मानस छावा ॥ नंदी ग्राम सनातन आवा ॥ लो
जन लाये सकल थल नीके ॥ सो गोपाल भक्त
प्रिय जीके ॥ देखे जव [illegible]न जनन सुखदाना ॥ तव
निश्चय कीने भगवाना ॥ रोदन करत विविध पछ
तावा ॥ आय रूप कहे मरम सुनावा ॥ दोहा ॥

११५१

तब इक अवसर रूपवर राधा वेनि सुहान॥ ला
ग्यो बरनन बदन निज लखि न परहि उपमान॥
२॥ तब ऐसे स्वपने को देखकर के रूपभक्त नु
रत तहां चला गया और भगवान की दिव्य मूर
ती के ऊपर तैसे ही दूध की बूंदें देखी तत
काल बडे उत्साह से पृथवी को खोद कर वेदी
नवंधू की मनोहर मूरती जो थी सो निकाल ल
ई इस अदभुत को देखकर सब सज्जन साधू
बडे अचरज को प्राप्त होय गये तब रूप ने भक्ती
प्रीती से विधिवत तिस मूरती का सब पूजन
करके फिर सनमान से ल्याकर भवन मैं स्था
पित कर देई सो मूरती भगवान कृपानिधा
न की अब लग भी जयपुर मे जयसिंह राजा के
रचे हूये भवन विखैं विराजमान हैं कैसी भी
प्रसिद्ध है कि जगत मै लोगों को मुक्ती मुक्ती
के सहित सरब सुखों के देने वाली है तब एक
दिन सनातन जो हैं सो वृन्दावन के वृं
दावन मैं रूप के पास आवता था तहां मा
रग विखैं तिस के सीस का जटा मुकट कहीं
वृक्ष के कांटयों मै फस गया तब भक्त प्रधा
न ने अपने हृदय मे ऐही जाना कि मेरे को
भगवान कृपानिधान की ईहां ही स्थित रह
ने की आज्ञा भई है इस प्रकार जब तहां ही
खरे के हूये भक्त को दो दिन बतीत होय गये
तब तीसरे दिन भक्त सुखदायक भगवान गो
पाल रूप धार कर एक पवित्र पात्र मै दूध
लिये हूये तहां चले आये और आवते ही दया
के वश भये हूये तिस की जटों का मुकट वृ

मन हेदू॥ मूरति मोर व फिर कलग्रा माया॥ सुनहि गुणधामा॥ तां कर लेहु लखनत तु व धरनी॥ करहु प्रकट से सति सुख करनी॥ तहिय जन कहि रुचिर सुहावा॥ लेहि लोग मन वांछित पावा॥ दोहा॥ बैठहिं गोपन जूथ जह हेग्र मुक ललित थलसोय॥ मंद मंद तहियें झरत धेनु दुग्ध चुत होय॥२॥ टीका॥ इन जगत की माता हम को अपने पुत्र जान कर वहु सने हसे चर को त्याग कर के दूध ले आई है तव सप्रसन्न कर के आचरज के वश होय गया और भ्राता के वचन पर्यंत श्रद्धा नहीं होता भया ते दो ग्राम के चले गये तहां दोनो भाई वृषभान का घर खोजने लगे तव लोगों ने कहा कि भाई अब तो इहां वृषभान का घर कोई नहीं है सो तो पूर्व काल विखे भया है सव लोग जानते हैं जव इस प्रकार लोगों ने कहा तव सनातन कहने लगा कि हे वीर तेरे लोभ के वश होय कर सुख दायक और दीन हित कारी माता वहुत कलेश पाया है अर्थात तेरे हृदय की वूझ कर अपने परम धाम से दूध लेकर चली आई इस मे विचार तो कर कि जग जननी ने कितना कलेश और श्रम पाया होगा आनंद अव जो भया सो भया परन्तु हे भैया इस तें आगे फिर ऐसी वारता कदाचित न हीं करनी ऐसे कथन कर कर कृष्ण भगवान को सुमरता हुआ सनातन जो है सो वृंदावन को चला आया एक दिन तहां किसी देव भवन मे कृष्ण भगवान की सुंदर रास लीला और नृत्य गाय जो होता था तो भक्त सखी देख कर प्रेम मे मत्त और ध्यान मे जुड़ा हुआ मानो मेरे हृदय पुरष

१९५२

प्रवीना॥ जो कछु हृदय तोर रुचि एहू॥ तो विरचहु
कछु काव्य सनेहू॥ रूप सुनत अस वचन हुलासा॥
उपजी काव्य रचन रुचि तासा॥ आयो तट प्रया
ग अनुरागा॥ सुमरत कृष्ण भक्त बड़ भागा॥ तरु
कदंब सोभित कल भावन॥ लागे तहां चरन जुग पा
वन॥ देखे रूप ललित मन हरना॥ इह कस चकि
त वदन अस वरना॥ भने सनातन वचन सुहा
ता॥ इह जगजननि चरन सुखदाता॥ वरनन वे
नि उचित जन नाहीं॥ करहु कथन इन चरनन
काहीं॥ दोहा॥ बंधु वचन सुनि रूप अस अति
अनंद सरसात॥ जनु पंकज लखि मधुप वत
भयो लीन पद मात॥ गौड़ देस अस विप्र मे
भक्त सुबृ जुगल हु॥ जिनकर कथा प्रसिद्ध
जग अनक अलौकिक रेहु॥४॥ टीका॥ ऐसे
देख कर सनातनजी कहने लगे कि हे भाई
इह जगत माता की वेनी का कथन करना तेरे को
उचित नहीं है जो कदाचित हृदय मे कुछ ऐसी
ही रुचीउतपन्न है तो प्यारे कोई काव्य की रच
ना करो इस प्रकार माता का वचन सुनकर रू
प जी के हृदय मे काव्य के रचने की रुची उतप
न्न होती भई तब कृष्ण परमातमा को सुमरते
हूये बड़भागी भक्त जो थे सो आनंद से प्रयाग
राज पर चले आये तहां एक कदंब के वृक्ष
मे बड़े पवित्र और मनोहर दो चरन लगे हु
ये थे तिन को देख कर रूप कहने लगे कि
इह चरन कैसे हैं तब सनातन बोले कि भा
ई इह ~~...~~ भक्त जनो के हृदय को आनं
द देने वाले चरन जगत मात दीन सुखदाता

के हैं वे नीका कथनकरना उचित नहीं है
इन पवित्र चरनोंको वरणन करो तब वे धूम्र
ध्यात भ्राताका वचन मानकर मानो तिन चरनो
को कमल जान कर भ्रमरे के समान तिन विषे
हीं लीन होय ~~ऐसे भये~~ पर्योजन इहकि अनेक
प्रकार ~~भक्त~~ तिनको गायन करते भये इसप्रका
र इह भक्त सुबुधे ने ब्रह्मण गौर देस विषे उ
जागर ~~होते भये~~ कि जिनकी अनेक हीं बड़ी सु
दर और अलौकिक गाथा जो हैं सो जगत मै
प्रसिद्ध हैं ॥४॥ इति श्री भक्तविनोदग्रंथे भग
वद भक्ति महातमे भाषाटीकायो रूप सनात
न चरित वरणनं नाम सरगः

— अथ हरि वंस चरित

दोहा॥ अब गाथा संसय हरन करन कृस्न पदनेहु॥
करहु करहु कथन संतप्त कहु सुनहु संत गुणगेहु॥
चौपाई॥ विदित नाम हरि वंस सुहाये॥ गोस्वामी भव
भक्त कहाये॥ कृस्न रटन पर परम प्रवीना॥ संतत
कृस्न भजन मन लीना॥ कृस्न सरोज चरन मन
लाये॥ सदा रहत प्रभु ध्यान जुडाये॥ धस्यो अ जा
चित व्रत मन माहीं॥ भक्तिमत्त ~~कछु~~ चेतन कछु
नाहीं॥ विधि निषेध गत भक्ति अकामा॥ वरजित
गृहस्थ धरम अभिरामा॥ अब सर एक फेरधनि
किसमाहीं॥ ताहि नगर इक दुज वरकाहीं॥ कृस्न
प्रबोध स्वपन अस कीना॥ भक्तमोर हरि वंस
प्रवीना॥ ताहि गृहणनिज सुता सुहावा॥ तहि सन
करहु विप्रमनभावा॥ देखि स्वपन अस विप्र सुजा
ना॥ सम्भ्रम हृदय गुनत विसमाना॥ त्रियसन

कौन कथन सब जाई॥ ते सुशील अस सुनत भलाई॥
पतिवर वचन महाजन केरा॥ धरहिं सीस कछु जाहिं न फेरा॥ पूरन तौ परम दैव भगवाना॥ दीन ने देश तोर हित जाना॥ धरहु सीस भगवान रजाई॥ देहु तासु निज सुता विवाही॥ उपजहिं तास वंस गुण सागर॥ सिद्ध भक्त भगवान उजागर॥ अस तिय वचन सुनत द्विज ताहू॥ दीन तासु निज सुता विवाहू॥ तो के वंस निपुण बोना॥ उपजे परम भागवत नाना॥ दोहा॥ अस प्रकार कल्यायतन भक्त का जे जिय जानि॥ दीन वंधु करते रहे सदा भक्त हित मानि॥ २॥ टीका॥ नाभादासजी कहते हैं कि हे गुणों की निधी संत जनो अब और संसय भ्रम के हरने वाली और कृष्ण भगवान के चरन कमलों मे स्नेह के अधिक करने वाली गाथा जो है सो संक्षेप करके कुछ गायन करता हूं एक हरिवंस नाम करके गुसाईं प्रसिद्ध होते भये सो कैसे कि परम भक्त कृष्ण सुमरण मे प्रवीन और कृष्ण भजन मे ही लीन कृष्ण परमातमा के चरन कमलों मे मन को लगाये हुये नित्य कृष्ण के ध्यान मे ही जुड़े रहते थे और अयाचित व्रत को धारन किये हुये कि किसी से कुछ न ही मांगना भक्ती मे ही मत्त थे और गृहण त्याग से रहित निसकाम अपने शरीर की दशा को भी भुलाये हूये थे तिनको गृहस्थ धरम से क्या प्रयोजन था तब एक समय रात्री को पिछले पहर तिसी नगर मे एक ब्राह्मण को स्वपने मे भगवान कहने लगे कि हरिवंस नाम करके मेरा परम चतुर भक्त है हे ब्राह्मण तू आनंद पूर्वक तिसके साथ अपनी कन्या का विवाह कर दे इसमे सर्व प्रकार करके तेरा हित होवेगा इस प्रकार रात्री के समय स्वपन देख करके ब्राह्मण बड़ा आश्चर्य भया है क्या आचरज के वश

5455

ता के कोटयों मे जो फसा हुआ था सो छुड़ाय कर के फिर वड़ी प्रीती सनमान से दूध जो था सो पान कराय देते भये अर्थात पिलाय देते भये तव दीनवंधू कादि व्य सरूप सनातन भक्त पूछने लगा कि भाई तुम कौन हो और किस गाउं मे वास करते हो कितने तुमारे भ्राता हैं ऐसे तिसका कथन सुनकर भक्तपालक भगवान कहने लगे कि भाई मे गोप जाती हूं और चार मेरे भ्राता हैं नंदी ग्राम जो है तिसविषें निवास करता हूं ऐसे कथन करकर दीनहितकारी तुरतहीं लुपत होयगये तव अचरज के वश भया हूआ सनातन ततकाल हीं नंदी ग्राम को चला आया तहां आयकर के जहां तहां भली प्रकार खोजने लगा परन्तु जव वे भक्त हितकारी और दीन सुखदायक गोपालजी देखन हीं परे तव निश्चय करके जानलिया कि वे तो गोपाल रूप साक्षात आप भगवान हीं थे ऐसे जान कर के रोदन करकर अनेक प्रकार पछताव ने लगा कि अहो मै अभागी माया कर के मोहित भया हुआ दीनानाथ को गोपाल रूप नहीं जानता भया इस प्रकार पछतावता हुआ आपने रूप नामा भ्राता के पास भगवान के मिलने का सव वृतांत सुनाय देता भया तव एक समय रूप भक्त कि जो कविता मे वड़े प्रवीन थे श्री राधके जी की वेनी अर्थात केशों का वरनन करने लगे तो यद्यपि तिनोने वहुत हीं सोच विचार किया तद्यपि तिसका कोई उपमान हृदय मे फुरता नहीं भया कि श्री राधके जी की वेनी अमुक वसत के समान है ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ तव अस कथन सनातन कीना ॥ ३२ नउ चित तो हिवधु

अथ हरिदास चरित

दोहा॥ सुनहु ललित मनभावनी गाथा संत सुजान॥ जासु सुनत श्रुति लखि परै भक्ति प्रभाव महान॥ गूर्जर देस प्रसिद्ध इक विप्र असाधर नाम॥ तासु पुत्र हरिदास जग विदित सकल गुणधाम॥ चौपाई॥ सो अति रसिक भक्त भगवाना॥ सेवत भूप विविध सनमाना॥ खान पान लग वस्तु सुहाई॥ देहिं जे नगर लोग समुदाई॥ हरिहिं रुचिर नैवेद लगाता॥ कान्ह भक्ति प्रेम सरसाता॥ मृग विहंग वनचर पसु काहीं॥ कृष्ण सरूप जानि जिय माहीं॥ करहिं विभक्त भक्त उपकारी॥ एक दिवस त्रिक्षित पत हितकारी॥ जमुना तीर दास हरि पाहीं॥ आवा भक्ति भाव मन माहीं॥ करि प्रणाम मुख अस्तुति कीना॥ सुअसुगंधि तैल कल दीना॥ सादिर भक्त सुभृ कर [illegible] लीने॥ राधा कृष्ण चरन चित दीने॥ रवि तनया कर वारि मझारा॥ भक्त प्रधान दीन तव डारा॥ सो अस देखि भूव हितकारी॥ मानत भयो छोभ उर भारी॥ चित दै लीन तेल वर तेहू॥ खोये वृथा आज कस एहू॥ [illegible] अस उर गुनत विपुल पछताना॥ भक्त सुभृ तव लीन सि जाना॥ शिष्य कहे [illegible] बोलि समुझा[illegible] वन॥ अब इहि देव भवन समनभावन॥ लै जावहु संजुत सनमाना॥ कहि हैं दिव्य दास भगवाना॥ गुरु सासन में जुल अस पाई॥ चल्यो तासु शिष्य भवन लिवाई॥ सो विलोकि कल भावन सोभा॥ दे प्रणाम करत मन लोभा॥ सुभ्र सुगंधि तैल निज काई॥

भवन देव परिपूरण भाई॥ कृष्णचंद्र कर अंग न लागा॥ देखि चकित अस भाषत बागा॥ गुरि दीन जमुना जल एही॥ अब कस सज्यो कृष्ण कल देही॥ जान्यो भक्ति प्रभाव सुहावा॥ तजि हरि भवन हरष बस आवा॥ भक्त चरन नें भूत सिर नाई॥ निज अनुचित सब क्षमा कराई॥ चल्यो सदन निज लेत विदाई॥ नृप सन कीन कथन सब आई॥ दोहा॥ इह अदभुत सुनि धरणीपत सचिव महाजन सारि॥ साधु साधु लागे भनन भक्ति प्रभाव निहारि॥ १॥ टीका॥ ~~हे~~ हे संतजनो अब और भक्त की भावती सुंदर गाथा जो है सो श्रवण कि जिस के श्रवण करने तें भक्ती का महा प्रभाव प्रकट देख पड़ता है गूजर देस मे एक बड़े प्रसिद्ध असाधर नाम कर के ब्राह्मण होते भये तिन के पुत्र सरब गुणों के धाम हरीदास जी जगत मे जाग्र हुये सो कैसे कि प्रेम मे उनमत्त और भगवान के बड़े रसिक भक्त रात्रीदिन जिन का राजा भी सेवन सतकार करता रहता था और खान पान लग इत्यादि वसतू जो नगर के लोग देते सो प्रथम भगवान को नैवेद लगाय कर पीछे भक्ती प्रीती से वन के विचरने वाले जीव मृग पसू ~~पं~~ पंछी इत्यादि यों को कृष्ण रूप जान कर बांट देते थे तब एक दिन राजा का एक बड़ा अधिकारी सेवक जमुना के किनारे ~~...~~ हृदय मे भक्ती भाव राख कर हरी दास जी के पास चला आया और चरनों पें प्रणाम करके मुख से अनेक प्रकार की असतुत बड़ाई करता भया फिर तिस ने बड़ा उत्तम सुगंधी वाला सौंधा अर्थात अतर जो है सो निकाल कर भेटा की रीती से भक्त प्रधान के आगे राख दिया तब परम

११५५

उदार और निसकाम हरीदास जी तिस अंतर को सं
नमान से लेकर राधा कृस्न राधा कृस्न रटते हु
ये जमुना जी के जल मै डार देते भये इसको
तुक को देखकर सो राजा का अधिकारी अचरज
के वश भया हूआ बड़े लोभ को प्रापत होय गया
और हृदय मै विचार करने लगा कि देखो इस उत्तम
अंतर मोल दे कर लिया था इस साधू ने क्या वृ
था ही खोय दिया है ऐसे सोच कर कर हृदय मै
बहुत ही पछतावता भया तब भक्त साधू नैं चि
तत सोच को देखकर अपने शिष्य को बुलाय
कर समुझाय दिया कि अब तू सनमान पूर्वक
इस को भगवान के भवन मै ले जा जो इहां ते हो जा
यकर कृपासिंधू दिव्य दरसन जो है सो पावे इ
सप्रकार गुरू जी की आज्ञा पाय कर शिष्य लेकर के
तिस को भगवान के भवन मै चला आया तब
वे दीनबंधू के भवन की शोभा देख कर
मोहित भया हूआ बार बार दंड प्रणाम करने ल
गा और क्या चमतकार देखा कि तिस अ
पने अंतर की सुंदर सुगंधी जो है सो भगवा
न के भवन मे फैली और कृस्न चंद्र प्रभू
के मनोहर अंगों को भी लगा हूआ शोभा को उ
दय कर रहा इस अदभुत को देखकर वे अच
रज के वश भया हूआ कहने लगा कि देखो
कैसे चमतकार की बारता है कि जो अंतर मेरे
सनमुख देखते ही भक्त प्रधान ने जमुना
के जल विखें डार दिया था सोई अंतर अब
कृस्न भगवान की काया को सजा हूआ सुगं
धी की प्रबलता को दिखाय रहा है तब तिस ने
केवल भक्ती का अनंत प्रभाव जो है सो

होयकर सोच करने लगा पड़ा और फिर जाय करके अपनी स्त्री के साथ सब वृतांत सुनायदेता भया सो सुशील और परम चतुर सुनक रके कहने लगी कि हे पती महंजनों अर्थात बड्यों का कहना जो है सो अवश्य मानने के योग्य होता है कदाचित फेरा नहीं जाता इहतो अब परमदेव भगवान ने बहुहित जानकर पती तेरे को आज्ञा दई है तो तूं भगवान कृपानिधान की इस सुंदर आज्ञा को सीसपर धारन करके तिस महातमा के साथ पुत्री का पानी ग्रहन अर्थात विवाह करायदे तिसके वंसतें गुणों के समुद्र और जगत मे उजागर भगवान के परम भक्त जो हैं सो उतपन्न होवेंगे ऐसे सुंदर और सुखदायक स्त्री का वचन सुनकर ब्रह्मणने आनंद पूर्वक तिस संत भक्त हरिवंस जी के साथ कन्या का विवाह कराय तब समय पाय करके तिनके वंसमे भगवान की कृपातें परम भागवत कि जो भक्तीमान और ज्ञान ध्यान की निधी संत महंत माथे सो उतपन्न होते भये इस प्रकार कृपा के समुद्र और दीन हितकारी भगवान सदैं भक्तों का हित मान कर संसार मे तिनके काज जो हैं सो सफल करते चले आये हैं ॥ १ ॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ति महातमे भाषाटीकायां हरिवंस चरितवरणनं नाम सरगः ॥

(margin: ६१०, ६०, ६१, ६२)

११५६

काल तहां लग्यो करन सिवकाई ॥ गुरु सेव
त गुरु कृपातें लीन परम पद पाई ॥ २ ॥ टीका ॥
तब एक दिन कोई एक पुरुष भ्रमता
हुआ जमुना के किनारे वर्ड्स्थाने देखता
हसे हरिदासजी के आय प्रापत भया
तिस के पास एक बड़ी दिव्य सपर्श म
णी अर्थात पारस थी तो हरिदास
जी के भगवान के भक्त संत महातमा जा
न कर तिस मणी को निकाल कर के रुची पू
र्वक भेटा की रीती से तिन के आगे रख देता भया
और महाराज इन सरब अर्थों के सिद्ध करने
वाली आप इस के लायक हो कृपा कर के इस को
ग्रहन करिये ऐसे तिस का कथन सुन कर
और रुचा देख कर भक्त प्रधान तिस
पारसमणी को लेलेते भये और तिसी समय
थोड़ी देर के पीछे हृदय मे कृष्ण भगवान का
सुमरन कर के तिस पारसमणी को तिस के
देखते ही जमुना के अगाध विषैं डार दि
या तब वे पुरुष देख कर और मन के हर
ने वाली दिव्य मणी को लगी जान कर दुखी भ
या हूआ कुछ बोल नहीं सकता है ऐसे ति
स की मनमारे हुये और सुधी विसारे हुये
की दशा देख कर भक्त प्रधान हरिदासने तु
रत जमुना के जल मे जाय प्रवेश किया
और तहां से ततकाल ही रेत संयुक्त कंक
रों की चार अंजुली भर कर तिस पुरुष
के आगे डार दई और मधुर बाणी से कह
ने लगे कि भाई अब तू अपनी मनोहर दि
व्य मणी जो है सो इन मे से पहिचान कर

ले ले औसे भक्त उत्तमका वचन सुन कर सोज
व देखने लगा तो तिसको वे सब अपनी हीं म
तीके समान दिव्य मनोहर और बडी अद्भुत
देखपडती भई तब तो हृदयमे बडा अचरज
मानकर और हाथ जोड कर चरनो पर गिर प
डा फिर तैसे हीं दीन भाव से सनमुख स्थित हो
पकर मुखसे अनेक प्रकारकी विनती बडाई
करने लगा और अपना अपराध क्षमा करवा
पकर मन वचन काया करके तिनकाहीं से
वक होय गया और गुरु जीको कृष्ण के समा
नें जानने लगा इस प्रकार कुछ काल पर्यंत
तहां निवास करके गुरु जीके चर्नो की सेव
न करता हुआ गुरु के प्रसादसे सुंदर
परम पद जो है तिसको प्राप्त हो जाता भ
या ॥२॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भागवद
भक्ति महातमे भाषा टीकायां हरिदास च
रित वरणने नाम प्र्संगः

अथ हरव्यास चरित

दोहा॥ अब पावन मन हरन कल करहुं कथन
सुखदान॥ भक्ति महातम सुनत जहि बढहिं सु
मति सुभ ज्ञान॥ चौपाई॥ दुजेउ छोटे ग्राम अभिरा
मा॥ सेहति विदत व्यास हर नामा॥ विषय विरक्त
ग्रहस्थ रत नागर॥ तिय जुत समय एक गुणसागर॥
वृंदा वन कहे चल्यो सिधारी॥ महापितराऊ
हचिर हितकारी॥ गावन हेतु यतन बहुकीना॥

२२५७

तद्यपि रह्यो न विप्र प्रवीना॥ सानुकूल वृंदावन आवा॥ तहं ललित थल देखि सुहावा॥ गिरधर चरन चारु रत होई॥ लग्यो निवास करन कुंज सोई॥ एक दिवस हरि भवन सुशीला॥ लागी होन रास वर लीला॥ राधा चरन भक्त मन लूटी॥ तहं ललित किंकणि रज टूटी॥ सहिसा व्यास दृगन ग्रस चीन्ह॥ निज उपवीत प्रीत जुत लीन्हे॥ तुरत करन ग्रेथन करि दीन्यो॥ हरषत वदन कथन ग्रस कीन्यो॥ धार्यो विपुल दिवस कर ऐहा॥ भयो हि आज सफल जग एहा॥ ग्रस वखानि निज वदन प्रवीना॥ धारन सूत्र नवल कल कीना॥ दोहा॥ लोक विलोकन लाग जब व्यास केंध्र तब पाय॥ बैठे कृस्न कृपाय तन सकल देखि विसमाय॥ २॥ टीका॥ अब पुनः पवित्र मनोहर और सुंदर सुखके देने वाला भक्ती का महातम जो है सो गायन करता हूं कै सामी महातम है कि जिसके श्रवण करने से भगवत भक्ती के सहित हृदय मे ज्ञान ध्यान की अधिकता होती है उर्छा नामा सुंदर ग्राम विखें विषय विकारों सें विरक्त हरव्यास नाम करके उजागर एक गृहस्थी ब्राह्मण भक्त होते भये सो एक समय घर से उदासीन होय कर स्त्री के सहित श्री वृंदावन के दरसन को चल पड़े तो राजा जो तिनकी भक्ती श्रद्धा वाला था तिस ने हित चित से तिन के राखने के लिये यद्यपि बहुत ही यतन किया तद्यपि सो न हीं रहते भये आनंद से वृंदावन मे ग्राय कर और कहीं सुंदर अस्थान देख कर गिरधर भगवान

जान लिया और भगवान के भवन से नि
कल कर भक्त प्रवीन के पास आय कर बारबार
चरनों पर सीस नाय कर के अपना अपराध क्षमा
करावता भया और फिर आनंद से विदाय ले कर
घर को चला आया तब राजा के पास जाय कर
जिस प्रकार चमतकार देखा था सो प्रकट कर के
८ सब सुना दिया इस अदभुत को सुन कर के राजा
मंत्री अधिकारी और पंडित विद्वान जो थे
सो भक्ती का प्रभाव जान कर अपने अपने मुख
से सब ही साधु साधु शब्द को उचारन करने
लग जाते भये॥१॥ चौपाई॥ तब इक दिवस अ
नंत जन काहू॥ करत अटिन कल तीरथ ताहू॥
जमुना तीर दास हरि पासा॥ आवा हृदय हुलास
सविकासा॥ मणि सपर्श ललित तहि पाहीं॥
दीनी तास दास हरि काहीं॥ भक्त सभूकल
लेत सुहाई॥ करि सुमति मानस जदुराई॥ अ
मु आगम अति भानु कुमारी॥ तहि देखत दीन्यो
धुत डारी॥ जानि अमोल दिव्य मन हरनी॥ ते दु
खोत्र कछु सकहि न बरनी॥ भक्त विलोकित
स सुधि मारी॥ करि प्रवेश जमुना बर बारी॥ अं
जुलि चारि शारकरा भरि कै॥ भनत वदन तहि
सनमुख धरि कै॥ अब तुम तात तजत उर
हानी॥ निज मणि ललित लेहु पहिचानी॥
ते अदभुत निज सदृश हारी॥ देखत दिव्य
मणि मन हारी॥ जुग कर जोरि चरन गहि
लीने॥ विनय वदन नेमृत बहु कीने॥ सेव
क बन्यो करम मन बानी॥ गुरुहि कृपा स
दृश जिय जानी॥ दोहा॥ करि विकास कछु

११५९

ललित धरत प्रभु आगे॥ आपु करन निज लेहु सुकारी॥ अस कहि आय व हिर व्रतधारी॥ तो लौं आन देसकर काहू॥ आवा भक्त निरत उत साहू॥ सुमरि कोप निज करि विसकाइ॥ तासु लेत नहि भवन सिधारा॥ देखि ललित अदभुत मन नारी॥ तजी सीस वर पाग मुरारी॥ आस्नुपात नरष दृग छाये॥ गदगद वचन भनत मुसकाये॥ सो तें अस भावत प्रियजीकी॥ कव वनि परत नाथ छवि नीकी॥ तव हुं देत वोधन प्रभु नाहीं॥ जानि पर्यो मानस जनकाहीं॥ आन भक्त अस सुनत प्रसंगा॥ पुलक गात मन नमो द उमंगा॥ दोहा॥ साधु साधु कहि वदन निज कृष्ण चरन सिरनाय॥ रटत व्यास गुणगुण विमल चल्यो सदन निज धाय॥२॥ टीका॥

तव लोगों ने हृदय मे जाना कि इन भक्ती का औ ने प्रभाव और महिमा है ऐसे विचार कर आके मुख से नाना प्रकार अस्तुती और वडाई जो है सो गायन करने लगे तव एक दिन वर भागी हरिव्यास जी भक्ती प्रेम मगन भये हुये भगवान कृपानिधान के नमित्त केचिन तार और सूत के मेल से मनोहर वडी सूक्ष्म पीत वरण की पाग वनवाय कैर और भक्ती भाव से ल्याय कर अपने हाथ से कृष्ण परमात मा की मूरती के सीस पर वांधने लगे तव दीन वंधू की मूरती का सीस सुचिकना जो था ज्यों ही खेंच खेंच वांधते त्यों ही पेच खिसकते जाते कर

फिर वार वार बांधते परंतु पाग भगवान के
सीस पर थिर नहीं होतीभई ऐसे तो प्रेम रस के
कोस भीगे हुये तिस पाग को प्रभु के आगे धरकर
कहने लगे कि इसको आप ही संवार लेवो ऐसे क
थन करकर मक्त[illegible] व्रतधारी भवन के बाहर च
ले आये इतने मे कोई और देस के रहने वाला
भगवान का भक्त तहां आय प्रापत भया तब भक्त
हरव्यास जी अपने कोप को सुमर कर और अपने
आव का वहुत तिरसकार कर कर तिस भक्त को
साथ लिये हुये भगवान के भवन मे चले गये
तहां जायकर क्या अदभुत चमतकार देखते
हैं कि वे सुंदर पाग भगवान के सीस पर वडी
शोभा से सजी हुई है तब तो भक्त प्रधान के ने
त्रों से प्रेम के आंसू पात जो है सो चलपडे
और वाणी भी गदगद होय गई कोई वचन [illegible] नि
कलता कोई नहीं निकलता है [illegible] तब मुखसे आय
कर कहने लगे कि नाथ मेरेसें मन भावन छवी
कब बन सकती थी अब जान लिया कि इसी तें प्रभू
मेरे को बांधने नहीं देते थे इस अदभुत प्रसंग को सु
नकर वे दूसरा भक्त जो था सो आनंद से प्रफुल्लित
होयकर साधू साधू उचारकर भगवान के आगे
दंड प्रणाम करके व्यासजी के गुण गण गावता हू
आ अपने घर को चला गया॥२॥ चौपाई॥ [illegible]
तदनंतर इक दिवस प्रवीना॥ साधु समाज प्रेम म
न लीना॥ लग्यो करन भोजन निज गेहा॥ लगी
परोसन भामनि तेहा॥ दुग्ध विभक्त करत सब
काहीं॥ पति कहँ प्रीति भक्ति मन माहीं॥ दुग्ध
मंह दीन्यो हरषाई॥ सो अस देखि व्यास दुखिता

ई॥ सारभूत केवल मुहि दीना॥ द्वेष आन संतन
सन कीना॥ भनेसि परम रोख जुत बानी॥ तुव मु
हि अधम प्रीति पति जानी॥ ■ दीन सार सठ पंक
ति भेदा॥ सोमै सुन्यो संत मुख वेदा॥ प्रबल पाप
इह रौरव दाई॥ अब न भेद तोहि होहिं भलाई॥
इह तो विदत सकल जग जाना॥ एक बैठि पाक
जहि पाना॥ अरु विभक्त अवसर जहि कीना॥ पंक
ति भेद नरक जग लीना॥ अब तुहि अधम निरत
दुरताई॥ नाहिन उचित संत तिव काई॥ मोरे दृग
न ओर हत भागी॥ दुरमति होउ वेग गृह त्यागी॥
पति तिरसकार लेत ततकाला॥ परिहरि सदन
गवनि तव बाला॥ सामा जक जन भवन न
बीना॥ बैठी जाय सोच मन लीना॥ निस अप
राध जानि निज काहीं॥ वार अहार कीन कछु
नाहीं॥ असप्र कार जुग दिवस बितायो॥ त्रिति
ये दिवस सपन निसि आयो॥ कमल नयन
वैस्नव इक चारू॥ भाषत वदन वचन मन
हारू॥ तिय अपराध नहिं न कछु कीना॥ दुरध
सार तोहि कपट वहीना॥ दीन्यो सरल भाव नि
ज जीके॥ अव तुम जानि विप्रवर नीके॥ करि प्र
सन्न संजुत सतकारा॥ वोलि लेउ निज ललित
आगारा॥ जो न करउ तो कर सतकारो॥ तो निश्च
य अस वचन हमारो॥ अब तें सदन तोर सनमा
ना॥ करहिं न संत अन्न जल पाना॥ दोहा॥ दे
खि व्यासवर सपन अस निज पतनी पैं आय॥ भा
ष्यो तोहि न दोष कछु प्रिय तुव सील सुभाय॥
जान बूझ कछु ना करी परी सूझ मुहि आन॥
अब चल हो निज सदन सुभ सेवउ संत सुजा
न॥ होहि अनिच्छित पापजे उचित निवार

के चरन कमलों कों सुमरते हूये तहां निवास करने लगे एक दिन भगवान के भवन मै वडे आनंद रस के सहित रास लीली जो होने लगी तो भक्तजनों के मन को लूट लेने वाली श्री राधके जी के चरन कमल की सुंदर किंकनी का धागा जो था सो टूट गया इस अकाज को देख कर हर व्यासजी तुरंत अपना यज्ञोपवीत अर्थात जनेऊ उतार कर तिस के साथ हाथ की चपलता से तिस किंकनी के टूटे हूये सूत्र को तैसे हीं यथावत गांठन कर दिया और प्रसन्न होय कर कहने लगे कि मैने यज्ञोपवीत वहुत दिनो का धारन किया हुआ था सो आज इह जगत मे सफल होय गया है असे कथन कर कर भक्त प्रवीन और दूसरा नया यज्ञोपवीत धारन कर लेते भये जव लोग देखने लगे तो क्या देखते हैं कि व्यासजी के कांधे पर भगवान कृपानिधान कृष्ण परमातमा जो हैं सो विराजमान भये हूये हैं देखकर के सव अचरज को प्रापत होय गये कि इह कैसा चमतकार है ॥२॥

चौपाई॥ भक्ति प्रभाव अनंत अपारा॥ तव लोगन निज हृदय विचारा॥ नाना वदन प्रसंसन लागे॥ वासर एक भक्त वडभागे॥ भक्ति प्रीति मानस सरसाई॥ कृपानकेतु हेतु मन भाई॥ निरमत पीत प्रवर मन हारू॥ वेषून स्वर्ण सूत्र करचारू॥ मौलि कृष्ण मूरति अनुरागे॥ भक्त सुषृ परिरावन लागे॥ खसकत पेच के सकज व होई॥ चिकन सीस थिर रहत न सोई॥ वारवार वांधत हरषाई॥ ध्रुव नहोत प्रभ पाग सुहाई॥ तव अति प्रेम कोप रसपागे॥ वेषून

सुंदर कमलों के समान नेत्रों की शोभा वाला वे
सब आयकर मनोहर वाणी से कहने लगा
कि हे भक्त स्त्री ने कुछ अपराध नहीं किया
दूध की मलाई जो है सो तेरे के सूधे सुभाव से
निस्कपट होय कर देई थी अब तुम को उचित
है कि तिस को प्रसन्न करके आदर सतकार से
बुलाय कर अपने घर मे ले आवो और जो
कदाचित तुम तिस को सनमान पूर्वक प्रीती भा
व से नहीं ले आवोगे तो निश्चय करके मेरा
इह सत्य वचन है कि अब ते आगे आदर स
नमान से तुहारे घर मे कोई भी अन्न जल
खान पान नहीं करेगा ऐसे स्वपन को देख कर
व्यास जी तुरत अपनी स्त्री के पास चले गये और
जाते हीं तिस को कहने लगे कि प्यारी तूं अदोष है
और सरल सूधे सुभाव वाली है तेरे को कोई दोष
नहीं है मैने अब भली प्रकार जान लिया है कि ते
ने कुछ जान बूझ कर नहीं किया तो ते अब क्रो
म को त्याग कर अपने घर को चल और संतो की
सेवा भक्ती मे सावधान हो अनि च्छत पाप जो हो
ता है तिस का निवारण हीं उचित होता है ऐसा भ
र पती का वचन सुन कर वे सुशीले आनंद से
अपने घर को चली आई ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ हृदय
प्रसन्न पूर्व वत लागी ॥ सेवन अतिथि संत व
ड भागी ॥ तब इक दिवस काल मध्यान ॥ ता
के सदन संत भगवान ॥ क्षुध्या विकल तजू पलि
लि आयो ॥ व्यास देखि मानस हरषायो ॥ तास
र जानि निज सदन र चावा ॥ वानि गृहलो निज
सुता सुहावा ॥ जे पकवान वरातन हेतू ॥

रहे सकल निरमाण नकेतू॥ ते संतन को
नदीन जिमाई॥ तब बरात दुलहा जुत आई॥ सं
तन देखि परम दुख माना॥ अब कस बनहिं दे
पकवाना॥ जानि संतजन चिंतन सोई॥ बोल्यो
व्यास हरष जुत होई॥ महाराज अब सोच न
कीजै॥ जो कछु है सो घ सदन को दीजै॥ कृष्ण
कृपाल पैज रखवारे॥ अस प्रकार जब व्यास
उचारे॥ तब पकवान बरातन काहीं॥ लागे देन
सकल जहां तहां॥ कृष्ण प्रसाद पार नहिं पा
यो॥ सादिर सकल बरात जिमायो॥ दोहा॥ अ
स अदभुत दृग देखि निज सकल लोग बिसमा
य॥ साधु साधु अस रटत मुख साधु सदन नि
ज धाय॥ ४॥ टीका॥ तब प्रसन्न होयके सो ब
ड़भागन पूर्वक सनमान अतिथी साध संतो की से
वा मे जो है सो करने लगी एक समय सूरज
के मध्यान काल मै तिस के घर विखे क्षुधा
करके व्याकुल संतों की जमात आय जाती भई
तब देखकर के व्यास जी हृदय मै बड़े प्रसन्न हुये
और तिस रात्री को तिन के घर मे कन्या का विवाह
था जो जो पकवान बरातियों के लिये रचाये
हुये थे सो आनंद पूर्वक बड़े सनमान से संतों
को जिमाय दिये इतने मे दुलहा के सहित बरात
भी आय प्रापत भई तब तिस को देख कर के संतो
ने हृदय मे बड़ा कलेश माना कि हे भगवान अ
ब इनके लिये पकवान कहां से और कैसे बनेगे
इस प्रकार संतो को चिंता सोच के बस देख कर
व्यास भक्त कहने लगे कि हे संत महतो अब सो
च का समय नहीं है इस घर मे जो कुछ पीछे
बचा हुआ है इनको दीजिये भगवान

भक्त सुखदान हमारी पैज राखने वाले हैं ऐसे जब व्यासजी ने कथन किया तब तिन संतों के सहित सब लोग मिलकर पकवान जो थे सो जहां तहां बराती जनों को देने लगे तहां कृष्ण भगवान की कृपा से पकवान का कुछ भी पार नहीं पाया गया जहां लग बराती जन थे सो आदिर सनमान से सब जिमाय दिये इस अद्भुत को देखकर सब लोग अचरज को प्राप्त होय गये और मुख से साधू साधू शब्द को उचारण करते भये और वे संत भी हरिव्यासजी की भक्ती का प्रभाव देखकर धन्य धन्य कहते हूये तिन का सुजस गावते अपने धाम को चले गये॥ चौपाई॥ समय एक तब व्यासन केतू॥ आवा आन संत सुखदेतू॥ सो अनभिग्य लोक विवहारू॥ संतत कृष्ण भक्ति उरधारू॥ द्वै दिन रह्यो व्यासवर भवना॥ तीसर दिवस कीन जब गवना॥ राख्यो व्यास यतन सनमाना॥ आज न जाहु संत भगवाना॥ अस जब भानु लुपत निसि छाई॥ तब करि यतन व्यास हर षाई॥ सालिग्राम सिला तहि की लीन्ही न सपदि कलसे पट लीली॥ अति विचित्र प्रभु मूरति जोई॥ कीनी लुपत व्यासवर सोई॥ राग रकध स्यो ता सध्याना॥ राखि दीन सेपुट सनमाना॥ उदय अरुण तब संभागा॥ प्रमुदित चलन पंथ निज लागा॥ व्यास दीन भोजन कछु आनी॥ भनी वदन मृदु मंजुल वानी॥ ऐसे अनुकथ ल ललित सुहाना॥ चारु चंद्र जोजन परिमाना॥ तहां सनान करत मन भावा॥ लेहु भक्त वर भोजन पावा॥ संत सुनत मान संहर लोई॥ चल्यो करत वहु विनय वडाई॥ तहां

ए तास॥ सुनि पति मुख तिय वचन अस हरषि च
ली निजवास॥ ३॥ तिसतें उपरांत एक दिन अ
पने घर में संत समाज के सहित बैठकर भो
जन पावने लगे तब तिन की स्त्री जोथी सो प
रोसने लगी और जब संतो को दू
ध ने लगी तब दूध की मलाई जोथी सो वो
हरष और प्रीती मती हैं अपने ही पती को देती
भई ऐसे तिस के दुतभाव को देखकर कि दूधका
सार मेरे को दिया और संतों के साथ द्वेष किया व्या
सजी परम कोपसें कहने लगे कि अरे अधम भामनी
तैने पती की प्रीती मान कर और पंक्ती कर
कर इस दूध का सारभूत मलाई जो है सो मेरे को
दे दिया भेद मैंने वेद शास्त्र और संतो के मुख सें
सुना हुआ है कि इस ते रे करम का रौरव नरक के देने
पाप है अब जठ तेरा कदाचित भला न हीं
होगा इह तो सरव जगत में प्रसिद्ध है कि जिस पुरष
अथवा स्त्रीने अकेले बैठकर भोजन पाया और
परोसने बांटने के समय जिस से पंक्ती से भेद कि
या तिस को अवश्य नरक की प्रापत होता है
तो ते अधम दुरबुद्धी अब तेरे को संत सिवका
ई जो है सो योग्य नहीं है अभागन मे
री आखों के परोक्ष कहीं घर को त्याग कर
चली जा इस प्रकार पती की तिरसकार तकी
हुई सो भामनी घर को त्याग कर परम चिं
ता और सोच वशी कहीं पडोसी के घर मे
जाय बैठी तब अपने को निस अपराध जा
न कर तिसने अन्न जल कुछ खान पान न
हीं किया ऐसे जब दो दिन वतीत होय गये
तब तीसरे दिन रात्री को सुपने में एक बडा

शालिग्राम भगवान की शिला संपुट मे राखी हुई थी
सो यतन से निकाल कर लेलेते भये और तिस संपु
ट के बीच [illegible] एक पंछी बंद करके फिर तैसे हीं
[illegible] संभाल कर राख देते भये जब प्रातःकाल
होते वे संत चलने लगे तब व्यास जीने तिसको
कुछ भोजन [illegible] ल्याय दिया और [illegible] मधुर
वाणीं से कहा कि ईहां से एक जोजन अर्थात चार
कोस पर एक बडा सुंदर अस्थान है तहां निरम
ल जल और छाया भी है हे संत तुम तहां [illegible] सोच
स्नान करके प्रीती से बैठकर भोजन पाय लेना
ऐसे भक्त सूश्रूक का वचन सुन कर सो साधू बारंबार
विनय प्रणाम करके चल पडा और जाते जाते
तिसी अस्थान पर जाय प्रापत भया तहां प्रेम प्रीती
सें स्नान करके और पवित्र होय कर एक सुंदर
कमल का पत्र ले लिया तिस पर वे भोजन रा
ख कर भगवान कृपानिधान को नैवेद लगावने
लगा तो जब सनमान पूर्वक तिस संपुट को खो
ला तब तिसके बीच वे पंछी जो बंद किया हूआ
था सो तुरत हीं उडकर के चला जाता भया इस अ
दभुत को देखकर साधू बडे अचरज को प्रापत हो
य गया और हृदय मे जान लिया कि व्यास जी की
भक्ती के वश भये हूये भगवान तिनके घर मे हीं
चले गये हैं तब खानपान सब त्याग कर धाव
ता हूआ तिनके पास चला आया और आय कर
सब वृतांत सुनाय देता भया व्यास जी सुन कर ह
रष से अपना कपट विचार करके मुसकावने ल
गे और फिर तिस साधू को कहने लगे कि भाई
भगवान के भवन मे चले जावो तहां पहिचान
कर जौन सी अपनी मूरती है सो ले लेवो ऐसे
सुन कर वे साधू तुरत भगवान के भवन मे च

लाआया ~~तहां~~ आपनी ति समरतो को पहिचान कर तहां
और लेकर नम्र वाणीसे कहने लगा कि मैंने हृदय
मैं जान लिया प्रभु आपको ईहांहीं निवास करने की
रुची होयगई है तब व्यासजी कहने लगे कि हे संत
महात्मा अब तुम ईहांहीं निवास करो ईहां तुमारे भ
गवान कृपा निधान जो हैं सो ईहां हीं स्थापित होने
की रुची राखते हैं अर्थात ईहांहीं वास करना चहते
हैं ताते तुम ईहां मेरे घरमैहीं वसो जब भगवान
भक्त सुखदान जावेंगे तब जावो इस प्रकार व्यासजी
का कथन सुनकर सो धू भगवान की रुची जानकर
आनंद पूर्वक तहांहीं निवास करता भया तब एक
दिन व्यासजी के घरमे एक कोई और साधु तिन की
प्रीक्षा करने के लिये चला आया और आवते ही स
बकों कहने लगा कि भाई तुम जाय करके व्यासजी
को सुनाय देवो जो मै अतिथी साधु क्षुध्याकर के
व्याकुल भया हूआ तेरे द्वारे पर आया हूं॥ ५॥ चौपाई॥
जो मुहि करहिं तृपत जन व्यासू॥ कालकलेस
न व्यापहिं तासू॥ अस जब सुन्यो व्यास ततका
ला॥ ~~[illegible]~~ गयो लेत निज भवन रसाला॥
दीन्यो सुचि भोजन सुखदाता॥ अतिथी कछुक पा
य अकुलाता॥ उठ्यो वदन अस गिरा उचारी॥ उ
पज्यो उदर सूल मुहि भारी॥ तब उच्छिष्ट भोज
न जेतासा॥ लीन उठाय कर निज व्यासा॥ सो
विलोकि मानस विसमाना॥ सादिर गहित पानि नि
ज पाना॥ बोल्यो हरषि वचन अभिरामा॥ रही न
मोहि पाक कछु कामा॥ सुनि संतन मुख सुजस
सुहावा॥ भक्त करन प्रीक्षा तुव आवा॥ भयो आज
मोरे सब माना॥ भक्त न तोहि सपन अभिमाना॥
उदर सूल मिथ्या मिस कीना॥ भक्ति प्रभाव रु
चिर तुव चीना॥ अस प्रकार मुख संत उचारो॥

करि प्रणाम निज भवन सिधायो॥ इत निज व्यास वृद्ध वपु चीन्यो॥ लीन बुलाय पुत्र वर तीन्यो॥ तीन भाग निज संपति सारी॥ कीनी व्यास भक्त व्रत धारी॥ एक ओर हरि मूरति चारू॥ एक ओर भूषण धन सारू॥ संत मंत्र इक ओर सुहाये॥ ता ले भवन भक्त जदुराये॥ ते सब करि प्रणाम सुत तीन्यो॥ भक्ति भाव जुत लीन्यो॥ दोहा॥ ऐसे इह भक्त धनरु जग विदित व्यास हर नाम॥ सेवत संतन सुजस जहि रह्यो पूरि सब धाम॥ भक्त सिरोमणि ऐसे निज तजत सुगम कलकाय॥ मुनि सुर दुरलभ ललित गति लीन यतन बिनु पाय॥ टीका॥ जो मेरे को व्यास भक्त विपत करेंगे तो भगवान की कृपा से तिन को काल का कलेश जो है सो कदाचित नहीं व्यापेगा॥ ऐसे जब व्यासजी ने श्रवण किया तो ततकाल आय कर तिस साधू को सनमानसें घर मैं लेगये और भक्ति प्रीती से बड़ा सुखदायक पवित्र भोजन जो है सो आगे राख दिया तब वे अतिथी भोजन पावने लगा अबी दो तीन ग्रास ही किये थे कि व्याकुल होय उठ खड़ा हुआ और कहने लगा कि मेरे पेट मैं बड़ा भारी शूल उतपन्न भया है तब व्यासजी ने वे तिस का जूठा भोजन तुरत सनमान पूर्वक अपने हाथ सें उठाय लिया ऐसे तिनकी संतभक्ती को देखकर सो साधू अचरज मानकर के धन्य धन्य कहता हुआ अपने तिनका हाथ पकड़ कर के तिस भोजन को रखवाय देता भया फिर प्रसन्न होय कर मधुर वाणी से कहने लगा कि हे भक्त प्रधान मेरे को कुछ भोजन की इच्छा नहीं थी मैं तो संतों के मुख से तुमारा

जाय संकेतकठामा॥ देख्यो जाय दृगन अभिरा
मा॥ करि सनान पावन तन होई॥ सुंदर नवलक
मलदल लोई॥ राखि पाक नैवेद सुहावन॥ ला
ग्यो जब भगवन कैंहि लावन॥ तब बोल्यो सं
पुट सनमाना॥ उघरे विहग देखि बिसमाना॥
जान्यो सदन व्यास प्रभु धाये॥ तोकर भक्ति विलो
कि लुभाये॥ खान पान तजि धावत आवा॥ तासु
दीन सब मरम सुनावा॥ व्यास सुनत मानस हुल
सान्यो॥ निज कृत कपट देखि मुसकान्यो॥ जाव हु
भने भवनहरि भाई॥ देखि लेहु निज मूरति पाई॥
ते सुनि भवन देव जब आयो॥ सोऊ ललित निज
मूरति पायो॥ भाषत तुम हु देव भगवाना॥ इहां
निवास रुचिर रुचि माना॥ बोले व्यास वदन त
ब बानी॥ अब तुम इहां बसहु सुख मानी॥ इह
भगवान भक्त मन भाये॥ चाहत इहां वसन सुख
दाये॥ तो ते बसहु सदन मम माहीं॥ तब जाबहु
जब भगवन जाहीं॥ साधु सुनत अस वचन ब
पासा॥ तहां कीन निज रुचिर निवासा॥ एक दि
वस तहि सदन सुहावा॥ प्री[illegible]दा कारन संत
इक आवा॥ दोहा॥ सब कहे भाषत वचन अस
व्यासहिं देहु सुनाय॥ मै आवा तुव सदन [illegible]
[illegible]ति अति लुध्यत अकुलाय॥५॥ टीका॥ तब
एक समय व्यास जी के घर मैं एक और संत
आये सो तहां व्यास जी के घर मै दो दिन निवास
करके तीसरे दिन जब चलने लगा तब भक्त प्र
धानने बड़े आदर सनमान से राख लिया कि हे
संत महातमा आज का दिन कृपा करके इहां हीं
वास करिये तो जब सूरज लुपत होय गया
और रात्री पड़ गई तब व्यास जी ने [illegible]
कौतुक किया कि तिस संत की झोली के बीच

अथ मधुस्वामी चरित्र

दोहा॥ अब करहौं संछपत कछु कथन भक्ति
मन लाइ॥ जासु सुनत उपजे बिमल कृष्ण
भक्ति उर चाइ॥ चौपाई॥ मधु स्वामी अस ना
म सुहाये॥ भक्त प्रवर जग लोगन गाये॥ म
थुरा बसहिं ज्ञान गुण धामा॥ कृष्ण भजन
तत्पर अभिरामा॥ तासु कथा मधु सन्यो
सुहावन॥ ~~[illegible]~~ कृष्ण मथुरा मन भावन॥
सदा करत निज रुचिर निवासा॥ तब सु भक्त
अस कीन अभ्यासा॥ वन वन कुंज कुंज अनु
रागा॥ कालिंदी तट सरत तड़ागा॥ जहँ तहँ
भ्रमत प्रेम मन लीना॥ अन्न बारि सोजन त
जि दीना॥ जुगल दिवस अस तासु बिताया॥
~~[illegible]~~ तृतिये दिवस निबल अति काया॥ जमु
ना तीर बंसिबट काहीं॥ चल्यो जात चिंता म
न माहीं॥ तब मारग मृदु स्याम अनूपा॥ बाल
गोपाल रुचिर धृत रूपा॥ नयन नवल क
ल के जन सोभा॥ भृकुटी कुटिल इंद्र धनु
लोभा॥ अधर अरुण शुक घ्राण सुहावन॥ कुंडिल क
रन ललित मन भावन॥ कुंचित चिकन स्या
म कच चारू॥ खोर लिलार पीत पट धारू॥
हरन मदन मद लावन ताई॥ देखि भक्त छ
बि भक्त सहाई॥ प्रेमाकुल मानस हरषाये॥
लीन तुरत निज अंक बिठाये॥ तब भगवा
न प्रेरि निज माया॥ सुहृत कीन मानस भ्रम छा
या॥ बोले बदन भक्त सुखदाना॥ कवन
हेत मुनि पकरि बिठाना॥ को कर हृदय उ
पज भ्रम तोहीं॥ सो तत करहु कथन अब
मोहीं॥ दोहा॥ तब बोले मधु स्वामि अस जा

नि कृष्ण जियमाहिं मैपक स्यो पैश्रव लख्यो गोपबाल तुव काहीं॥ टीका॥ ग्रवग्रौर तैसेकरके कृष्णभक्तीका प्रभावजोहै सोकथन करताहै कि जिसके श्रद्धापूर्वक श्रवण करने से हृदयमे कृष्ण भगवानके चरनोंकी भक्ती उत्पन्न होय जातीहै मधुस्वामी नाम करके एक ~~[illegible]~~ बड़े उत्तम भक्त लोगोंमे उजागर होतेभये सो मथुरामे निवास करके रात्रीदिन भगवानके भजन सुमरण मैहीं लीन रहतेथे एकदिन भक्त सत्पुरुष कथाकेबीच रहते प्रसंग सुणतेभये कि भक्तसहायक ग्रौर भक्त सुखदायक कृष्ण परमातमा जोहैं सोसदैव मथुरा विषैंहीं निवास रखतेहै तिस परम भक्त प्रवीनने ऐसा प्रेम धारन करलिया कि प्रेमके मदमे मत्त भयाहूग्रा मथुरामे वणबण कुंज कुंज गलीगली जमुनाके किनारे नदी तलाउ वाटिका इत्यादिमे जहांतहां भ्रमन करने लगा ग्रौर दीनबंधू को खोजते खोजते ने ग्रन्नजल का खानपान भी सब त्यागदिया इस प्रकार भूखप्यासको दोदिन बतीत होयगये तीसरेदिन शरीरकरके ग्रतसे निरबल हृदयमे चिंतकरताहूग्रा जमुनाके किनारे वंसीवटको चलाजाताथा तव मारगमें बड़े कोमल स्याम सरीर ~~[illegible]~~ ~~[illegible] धारे हुए~~ ग्रौर मलों के समान नेत्रोंकी शोभा इंद्रधनुषको लज्जादेने वालीबांकी भृकुटी ग्रर्थात टेढीभवें लाललाल ऊंठ तोतेकी चुंचवत नासिका कानोंमै मनोहर कुंडल तैसेहीं कुंडलोवाले बड़े सुंदर चिकने स्याम केश माथेमे चंदनका तिलक ग्रौर सजेहूये पीतवस्त्र ग्रपनी छबीसे

ग्रौर युगलोंकी लिये

परम

सो [illegible]

गोपाल बालतिस समय कोट कामदेव के मद और
शोभा को भी निंदरते हैं ऐसे पापी जनो का उधार कर
ने वाले भक्त हितकारी गोपाल बालको दे
खेकर मन मे हरष भरे हुये प्रेम करके व्याकुल तुर
तही लेकर के अंक अर्थात गोद मे बैठाय लेते
भये तब भगवान कृपानिधान ने अपनी माया को
प्रेरकर भक्त प्रधान को मोहित कर लिया हृदय
मे भ्रम जो है सो छायत होयगया फिर दीनानाथ
कहने लगे कि भाई तुम ने कौन कारन मेरे को प
कड़कर बिठाय लिया है तेरे हृदय मे किस का भ्रम
उपजा है मेरेको सत्य करके कहो इस प्रकार
गोपाल की बानी सुनकर मधुस्वामी कहने लगे
कि भैया मैने तेरे को कृष्ण विचार कर पकड़ा
था परंतु अब और ही चमत्कार देखा किंतू
तो किसी गोपका बालक है मै ऐसे ही भ्रम के
वश होय गया था ॥२॥ चौपाई ॥ अस कहि दीन
तुरत तजि तासा ॥ भये लुपत द्रुत भवन प्र
कासा ॥ आगे ले चल्यो भक्त हरषाई ॥ खोज
त विपुन भक्त सुखदाई ॥ तब निशि समय ता
सु भगवाना ॥ दीन स्वपन अस वचन बखा
ना ॥ अब खोजत कानन कस मोही ॥ मै गो
पाल बाल बनि तोही ॥ जो दरसन दीन्यो म
न हारी ॥ सोऊ सरूप मोर ब्रतधारी ॥ तुव नि
ज हृदय राखि अभिरामा ॥ बस है जाय भक्त
मन धामा ॥ दोहा ॥ देखि स्वपन अस भक्तवर
निज अभिष्ट फल लेत ॥ मथुरा निवसत व
पुख तजि गवन्यो कृष्ण निकेत ॥२॥ टीका ॥
ऐसे कहिकर भक्त सुष्ठु ने तिस बालक को त्याग
दिया तब भवनों के प्रकाश करने वाले भगवान

सुजस और बड़ाई सुनकर केवल परीक्षा कर
ने के लिये आया था सो मैंने आज अपने ने
त्रों से प्रकट देख लिया है भक्त तुमको तो सुपने
मे भी अभिमान नहीं है मैने इह मिथ्या ही पर
के सुलक्का बहाना करकर तुमारी भक्ती के प्रभाव
को देख लिया है इस प्रकार कथन करकर वे संत
जो था सो बार बार प्रणाम करके मुख से नाना गुण
गण और सुजस गावता हुआ अपने आश्रम को च
ला गया तब ही तो व्यास जी ने अपने शरीर को वृ
द्ध जान कर अपने तीनों पुत्रों को बुलाय लिया
और घर की संपती के तीन ही भाग कर दिये सो कै
से किये कि एक भाग मे भगवान की सुंदर मूरती
और दूसरे भाग मे संपूर्ण धन भूषण और तीसरे
भाग मे ठाकुरों के सेज मंजन इत्यादि इस प्रकार भ
क्त प्रधान ने सर्व संपती को बांट दिया तब जिस
पुत्र की जैसी रुची होती भई तिसने भक्ती भा
व से प्रणाम करके सोई भाग ले लिया ऐसे
इह जगत मे धनमान भक्त हरव्यास जी प्रसिद्ध
होते भये कि जिनकी संतसेवकाई का सुजस जहां
तहां परिपूर्ण होय रहा है और भक्त प्रधान
संसार मे जब लग जीवते रहे तब लग कृष्ण पर
मातमा के भजन सुमरण और कीर्तन गायन मे ही
लीन रहे फिर अंत को सहजे ही शरीर को त्या
ग कर मुनी देवताओं को दुरलभ गती जो है तिस
को यतन के बिना ही प्रापत होते भये ॥६॥

इति श्रीभक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्तिमहा
तमे भाषा टीकायां हरव्यास चरित्र वरण
न नाम .... सर ॥७॥

तहिसन करत भक्त जदुराई॥ अस दुरलभ ब्रत ता
स न कीना॥ हृदय भक्ति जुत धारन कीना॥ समय
एक तहि सदन सुहावा॥ गुरु कर स्राद्ध रुचिर
रवि आवा॥ सादिर संतनि मै त्रण कीने॥ आये
सकल हरष मन लीने॥ एक संत अस हृदय वि
चारी॥ मै भी ता अब लेहुं मुरारी॥ तब अस सेव
इक हृदय उमंगा॥ साधा कपट भाव जुत संगा॥
तिलक माल मुद्रा पहिरावा॥ वैस्नव भेष व सेष
बनावा॥ पै तहि गलत राज रुज देहा॥ अस स
ब आय भक्त वर गेहा॥ सब कहे कीन प्रणाम मु
रारी॥ पुनि सिष कहे मुख गिरा उचारी॥ करि प्र
छालन संतन चरना॥ चरणोदिक पावन दुख ह
रना॥ डारहु कुंड शेष कछु ल्याई॥ सिंचन कर
हु सीस मम आई॥ सिष न देश गुरु बर अस ली
ने॥ संत चरन प्रछालन कीने॥ सो पद बार सा
धु समुदाई॥ गुरु पै भक्ति ▒▒ प्रीति जुत
ल्याई॥ सीस वपुष सब सिंचन कीना॥ सा
दिर शेष कुंड धरि दीना॥ मिथ्या संत गलत
रुज जोई॥ तहि तें अति संकित चित होई॥
दोहा॥ कीन न तासु स्पर्श सिष मान्यो हृद
य गिलानि॥ तब अस देखि कृपाल गुरु भने
बदन मृदु बानि॥ माला मुद्रा तिलक जहि
सो वैस्नव गुणराम॥ अस गुनि तजि संदेह
सुत ल्यावहु पद जल ताम॥२॥ टीका॥ अब
और ▒▒ अद्भुत बड़ा सुंदर और आचर्ज
भक्ती का महा प्रभाव जो है सो हे संत जनो
आप के आगे गायन करता हूं इस को कान
ध्यान दे कर स्रवण करिये एक मुरारी

नाम करके वडे रसिक भक्त जगतमै लोगों वि
खे उजागर होते भये सो अपने आश्रममे एक
वडा सुंदर कुंड वनवाय कर और तिसके वीच
संत भक्तों के चरनो का पवित्र जल राख कर
तिसके साथही नित्य भक्ती प्रीती से द्वेष रहित
और निस कपट होय करके सनान पान से
लेकर अपनी सब कृते जो है सो करते रहते थे
इस प्रकार भक्तप्रवीन ने वडी श्रद्धा भक्ती से
इस दुरलभ व्रत को हृदय मे धारन कर लिया त
व समय पाय करके ~~एक दिन~~ तिनके घरमे गुरू
के श्राद्ध का दिन जो था सो आय गया वडे आ
दिर सनमान से संपूर्ण संत भक्त और ब्रह्मणो
को निमंत्रण अर्थ तब नेउता देदिया तब समय
जान कर आनंद पूर्वक सब चले आये तिन मैं
एक संत हृदय मे ऐसे विचार कर कि मै अब मुरा
री भक्त की प्रीक्षा करूंगा तव वे कपट भाव से एक
किसी असंत पुरष को तिलक माला मुद्रा इत्यादि
पहिराय कर और वैष्णव भेष वनाय कर तहां
अपने साथ ले आवता भया परंतू वे पुरष रा
जरुज जो कुष्ट रोग है तिस कर के गलित भया
हू आ था इस प्रकार संत समाज सब घरमे आय
गया तव भक्त प्रधान मुरारी जी ने प्रेम भाव से स
व को प्रनाम कर कर फिर अपने शिष्य को बुला
य कर कहने लगे कि भाई भक्ती भाव से संतो के
चरन प्रक्षालन करवाय कर तिन महातमाओ के चर
नो का जल जो है सो सब कुंड मे भर देओ वृथा ना
जाना पावे और तिसमेसे कुछ ल्याय कर मेरे सी
स पर छिरकिन कर देओ अनंत ~~[illegible]~~ छिड़क
देओ तव शिष्य ने गुरू जी की आज्ञा पाय कर
तैसे ही भक्ती प्रीती सें संतों के चरन प्रक्षालन

अब

करवाये अर्थात धुलायदिये और वे संतोके चर
नो का जल ल्याय करके गुरु जी के सीस और शरीरपर
सिंचन करदिया तिसमे से जो कुछ बचा सो ल्या
य करके फिर कुंड मे डारदिया ऐसे ति सशि
ष्य ने सब के चरनतो प्रक्षालन किये परंतु वे कु
ष्टरोग का ग्रसा हूआ कपटी संत जो था तिस
तें अंत से संकित चित होय करके और हृदय मे
गिलानी मान कर तिसके साथ स्पर्श मात्र भी
न हीं किया तब गुरु मुरारीभक्त जी देख कर
के बडी कोमल वानी से कहने लगे कि हे पु
त्र तिलकमाला मुद्रा धारन किये हूये जो है
सो सत्य करके वैस्नव ही रूप ही है तातें तूं
संसय भ्रम को त्याग कर और जायकर तिस के
चरन भी प्रक्षालन करवा और सोई चरन ज
ल ल्याय करके मेरे सीस चढा॥ ~~इसप्रकार~~
॥१॥ चौपाई॥ यद्यपि गुरु कृपालु अस बरना॥ सि
ष संदेह नहिं भयो निवरना॥ बोलि लीन त
ब तासु मुरारी॥ भक्ति प्रीति संजुत हितभारी॥
~~भक्ति~~ भनिभनि वदन वचन मृदु लालन॥
कीने तासु चरन प्रक्षालन॥ ते पदवारि सीस
निज धारा॥ पाय स्पर्श गलित रुज वारा॥
भयो विमल कंचिन वत काया॥ विसमय
देखि संत समुदाया॥ भक्त ~~[illegible]~~ प्रवर कर व
दन बडाई॥ लागे साधु साधु मुख गाई॥ अ
स प्रकार द्वादिस दिन ताहीं॥ रह्यो होत भो
जन तिन काहीं॥ बसहि संत जहं वीच
ग्रामा॥ गवन्यो तहां भक्त अभिरामा॥
करत रह्यो इक संत सुतावा॥ धूमपान
आश्रम हरषावा॥ आवत भक्त सम्मुख कहे

तत काल तहां हीं लुपत होय गये जब दीन बंधू तिसके नेत्रों से भि न्न हूये तब फिर तहीं सूझ पड़ा कि इ हतो साक्षात भगवान हीं थे ऐसे सुमर कर व्याकुल भया हूआ तिन खोजता खोजता आगे वन के मारग को चल पड़ा तब तिस को व्याकुल देखकर भक्त सुखदायक भगवान रात्री के समय स्वपने मे कहने लगे कि हे भक्त अब क्यों वन विखें मेरे को खोजता हैं मैने गोपाल बाल बन कर तेरे को जो दरसन दिया है तूं सोई मेरा सरूप हृदय मे धार कर और जाय कर सुख पूर्वक मेरे धाम मे निवास कर इस प्रकार स्वपन देखकर मधुस्वामी भक्त अपने मन वांछित फल को पाय कर मथुरा मै हीं वास करता करता शरीर को त्याग कर सहजे हीं कृष्ण भगवान के धाम को चलाता भया ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महातमे भाषाटीकायां मधुस्वामी चरित वरणन नाम सरगः

अथ मुरारी भक्त चरित

दोहा ॥ अब अदभुत अचरज ललित भक्त प्रभाव महान ॥ गावहु कछु सादिर बदन सुनहु संत धर कान ॥ चौपाई ॥ भक्त सरेष्ट जग नाम मुरारी ॥ विदत रसिक लोगन ब्रतधारी ॥ विरचि तास कल कुंड सुहावन ॥ भक्त हेत चरणोदिक पावन ॥ तहां राखि नित दिवस प्रवीना ॥ पान सनान भक्ति मन लीना ॥ आन सकल कृत द्वेष विलाई ॥

११५९

को गायन करने लगे इस प्रकार वारादिन लग
तहां तिन संतों को भोजन होता रहा तव जिस वाग
के बीच वे संत उतरे हुये थे एक दिन तहां मुरारी
भक्तजी चले गये तिस समय तिन मे एक संत
~~तमोया~~ धूमपान क
र रहा था अर्थात तमाकू पी रहा था जव तिस ने
भक्त मुरारी को आवते देखा तो तिनके संकोच से
लज्जा करके अपने धूमयंत्र नरियेले को छिपा
य लेता भया तव मुरारी जी तिस को देख कर हृद
य मे सोच किया कि इस संत ने इस करम को
अधम जान कर अपना धूमयंत्र नरियेला
जो है सो मेरे से छिपाय लिया है ऐसे तिस के
भ्रम संकोच के निवारण करने के लिये भक्त
प्रधान कैसा कौतुक करते भये कि अपने
पेट के सूल का वहाना करके तिस साधू संत
से तमाकू पीने को नरियेला मांगने लगे और
कहने लगे कि हे संत मै पेट की पीडा से वहुत व्या
कुल होय रहा हूं तव साधू ने तिन का कलेश
विचार कर हृदय से तुरत नरियेला दे दिया भ
क्त उत्तम सनमान से मुख से लगाय कर और
तिस के हृदय का संकोच संदेह छुडाय कर
आनंद से अपने घर को चले आये इस प्रका
र जव कुछक दिन वतीत होय गये तव
संध्या करके व्याकुल भये हुये और संत
जो है सो तिनके घर मे आय प्रापत भये
ऐसे संतों को घर मे आये हुये देख कर
भक्त प्रवीन वडे प्रसन्न भये परंतु संत

भूखे जो देखे तो ततकालही सुंदर भोजन बन
वाय कर प्रीती सनमान से तिन को बैठार दि
या और भक्त प्रधान का एक बड़ा चतुर शिष्य
जो था सो संतों को भोजन परोसने लगा तब
संतों के बीच तहां एक साधू लाण मै देउ धार
कर बैठा हूआ था सो कहने लगा कि भैया तुम
प्रथम प्रीती पूर्वक मेरे इस देउ को भोजन दे
कर पीछे मेरे को देना ॥२॥ चौपाई॥ मै न देउ वि
नु भोजन करना ॥ अस जब संत वदन निज वर
ना॥ तब शिष दीन पाक सब काही॥ संजुत भ
क्ति हरषि मन माही॥ तेदुर वाद संत कर जानी॥
देउहि दीन न भोजन पानी॥ तास कथन जब
नाहिन माना॥ कियो संत तब कोप महाना॥ ते
उ शिष्य निज पत्र उठाई॥ फरकि अधर
दृग भृकुटि चढाई॥ भक्त मुरार सीस सन जा
ई॥ हन्यो प्रचंड कोप अकुलाई॥ धीर धुरिं धुम
क्ति भगवाना॥ ते मुरार मानस मुसकाना॥ धन्य
भाग मम आज सुहाये॥ सादिर सीस दृगन नि
जे लाये॥ धरत उ छिष्य पत्र महि रागा॥ बहु
रि मरम तहि पूछन लागा॥ तास वृतांत भन्यो
निसारा॥ शिष कर कीन विविध तिरसकारा॥ तुव
न मूढ देउहि कस दीना॥ अस कहि आपु भक्ति
मन लीना॥ दामा कराय देउ जुत चारु॥ भोजन
दीन भक्त व्रत धारु॥ संत विलोकि तास अस
करनी॥ स्रवन वदन बहु कीरति वरनी॥ हो
त विदाय चले निज भवना॥ सोऊ संग लाजित
तिन गवना॥ अस प्रकार कहु दिवस विहा
ये॥ गुरु वर भक्त सुपूजे गाये॥ स्यामा नेद
नाम अभिरामा॥ तिन कर रह्यो एक वृति

मा॥ सोमलेछ नृपलीन छुडाई॥ तलिक लेश मानस निजपाई॥ लेखिपत्र कलयोलि पठाये॥ तेमुरार सेवक सुखदाये॥ कर्मोज वसदन प्रवीना॥ अजहु वदन शोधन नहिं कीना॥ दूतपत्र तहि अवसर दीनी॥ चलेतुरंत सीसधरि लीनी॥ दोहा॥ गुरुपैं आये भक्तवर जोरि करन गतिदीन॥ करि प्रणाम पद दंडवत विनय वदन निजकीन॥ कवन काज निजदास तुव वोल्यो कृपानिधान॥ गुरु कृपाल तहिवच न सुनि कियो वृतांत वखान॥ गुरुमुखसुनत वृतांतते पावा खेद मुरारि॥ चलिआये पुरय मनकहे वेगभक्त व्रतधारि॥ ३॥ टीका॥ भेद ३के विना कदाचित भोजन नहीं पाऊंगा जवइ स प्रकार तिस संतने उचारण किया तव शिष्य ने भक्ती प्रीती सें आनंदपूर्वक सव कोभोजन वरतायदिया परंतू तिस साधूका वेदुरवाद जानँ देउको कुछ नहीं दिया ऐसे जवतिस का कथन नहीं माना तव वे संत महां कोप सें अधर फरकते हूये भृकुटी चढाय कर और अपने आगेकी जूठी पतरी अर्थात पत्तल उ ठायकर घुमाय करके मुरारी भक्तके सीस मे मारता भया ॥ इसप्रकार संतकाप्रचंडकोप देखकर धीरज और शांतीनिधी भगवान के प्रवीनभक्त मुरारी जोथे सो मुखसे मुसक्या यकर तिस पत्तलको लेकर वारवार अपने सीस और नेत्रों सें लगायकर कहते हैं किमे आज संसार मैधन्य हे क्योंकिजिन संतोंके चर नोंका जल सीसपर धारन करने से शरीरके सव पाप नवृत्य होजाते हैं तिनका जूठा भोज नमेरे सीसपरपडा मे क्यों नहीं अपने भागोंकी

श्री

मुरारी

ओसेर

पाई॥ धूम पंत्र निज लीन दुराई॥ देखि मुरार सो
च अस कीना॥ इहि निज अधम करम उर चीना॥
हारन हृदय तास संदेहू॥ भक्त कीन कल कौतुक
एहू॥ मिथ्या उदर सूल मिस लाई॥ मांग्यो धूम पं
त्र अकुलाई॥ अस उर मुनत साधु दुखताता॥ धूम
पंत्र निज दीन हुलासा॥ सादिर भक्त सु मुख मुख
लाई॥ चल्यो तास संदेह बिहाई॥ अस जब क
छु क दिवस निकसाने॥ आन संत लुब्धत वियता
ने॥ आय सदन वर भक्त मुरारी॥ तिनहिं देखि
लुब्धत व्रतधारी॥ विरचि वेग भोजन सनमाना॥
बैठारे सब संत सुजाना॥ दोहा॥ लाग्यो करन वि
भक्त तव सुचि सिष भक्त मुरारि॥ बैठ्यो इक पं
कति रुचिर साधु देउ कर धारि॥ सो भाषत मुख
प्रीति जुत प्रथम पाक कल एहु॥ मोरे देउ हि
देत जब तव पाछै मुहि देहु॥ ॥२॥ टीका॥ ऐसे
गुरु जी ने यद्यपि बहुत ही कहा तद्यपि शिष्य
का संशय निवृत्य नहीं होता भया तव मुरारी
जी ने तिस कपटी संत को अपने पास बुलाय लि
या और व्रतधारी भक्त ने मुख से हित के भरे हुये को
मल वचन उचार कर बड़ी प्रीती भक्ती करके
आप अपने हाथों से तिस के चरन जो है सो प्रक्षा
लन करवाय दिये अर्थात भली प्रकार धुलाय
दिये और तिस के चरनों का जल लेकर के बड़े स
नमान से सीस पर धारन कर लिया तव वे राज
रोग का ग्रसा हुआ पापी पुरुष भक्त प्रधान के हा
थ का सपरश पाय कर तुरत ही शुद्ध कंचिनवत
शरीर से अदोष हो जाता भया इस अद्भुत कौ
तुक को देखकर सब संत अचरज को प्रापत होय
गये और मुरारी भक्त की भक्ती का प्रभाव विचार कर
साधू साधू कहते हुये नाना प्रकार के सुजस और बड़ाई

भाव से दंड प्रणाम करके हाथजोड़ कर विनती करने लगे कि हे कृपानिधान कहिये कौन काज के लिये दास को बुलाया है तब गुरु कृपालु अपना वृतांत जो है सो सब सुनाय देते भये मुरारीजी सुनते हीं तुरत तिस मलेछ राजा के नगर मे चले आये ॥३॥ चौपाई ॥ रहे भक्त वर सेवक ताहों ॥ मृत अधिकारि यमन नरनाहों ॥ गुरु हिं देखि मानस अनुरागे ॥ बारबार पद वंदन लागे ॥ कवन काज भगवन इत आये ॥ कृपानाथ अब देहु सुनाये ॥ कीन कथन तब वदत मुरारी ॥ सुनि बोले सेवक हितकारी ॥ तुव न जाहु प्रभु सनमुख राजा ॥ हम सब करिहैं नाथ तुव काजा ॥ बोले जनन हरन संतापू ॥ मैं जावहुं नृप सनमुख आपू ॥ अस सुनि सेवक चले सिधारी ॥ तब मलेछ नृप गिराउ चारी ॥ तुव जन आज बेर कत लावा ॥ मृतन वदन तव विनय अलावा ॥ आये गुरु हमार नरसाईं ॥ तब रहे भई बेर ~~नरसाई~~ ॥ हम काहीं ॥ तिन गुरु कर कछु वृती प्रचारी ॥ कीन लीन प्रभु तुव अधिकारी ॥ सुनि मलेछ नृप तिन कर बानी ॥ बोल्यो हृदय हरष निज मानी ॥ ल्याउ वेग मम सनमुख जाऊ ॥ मै देखउं तिन कछुतास प्रभाऊ ॥ ~~सिनसुनि~~ तब तिन लीन तुरत गुरु बोला ॥ ल्याये करि अरूढ कलदोला ॥ नृप हित भक्त मत्तगज चीना ॥ करन विदलन द्वार थिर कीना ॥ आपुउ तेंग भवन चढि गा ॥ चरित चारु ~~मके~~ देखन लागा ॥ आये जब हरि भक्त मुरारी ॥ अरुण नयन गज पसो चिकारी ॥ दोला वाह त्रास वस भागे ॥

एकल रहे भक्त वडभागे॥ रह्यो कृष्ण हरि वदन सुनागे॥ तव सिंधूर आयो मदमाता॥ सादिर भक्त चरण गतमाता॥ दियो नेम्र मस्तक निज राखो॥ तासु करन तव भक्त प्रवीना॥ अमर मंत्र उपदेसन कीना॥ डास्यो ग्रीव ललित वनमाला॥ धरयो नाम तहि दास गोपाला॥ देखि भूप मानस वि समाये॥ साधु साधु सव लोग अलाये॥ निज अनुचित नृप क्षमा कराई॥ वंदि चरन करि विनय वडाई॥ सो वृति देत दीनधन हूरा॥ करि अभिषु सादिर सव पूरा॥ दोहा॥ हरषत कीन विदाय नृप नेम्र चरन सिर नाई॥ दूत गजे जन गोपाल रत भयो सेत सिव काई॥४॥

तव तहां तिस राजा के [illegible] [वडे वडे] अधिकारी नौकर चाकर जो थे सो मुरारि [illegible] जी के सेवक रहे गुरु जी को आये हुये [illegible] [सुन] कर [illegible] भक्तिभाव से सव चले आये और वार वार चरनोप दे प्रणाम करने लगे फिर हाथ जोड कर पूछते भये कि हे कृपानिधान दयाकर के कहिये [illegible] जो आप कौन कारज के लिये ईहां आये हो तव सेवकों का कथन सुनकर भक्त प्रधान अपना पयोजन जो था सो सव सुनाय देते भये सुनकर के वें सेवक कहने लगे कि नाथ आप राजा के सनमुख ना जाइये हम प्रभु तुमारा आपहीं सव कारज कर लेवेंगे तव गुरु जी कहने लगे कि भाई मैं आप राजा के सनमुख चलूंगा इस प्रकार गुरु जी के मुख से वचन सुनकर वे सेवक राजा के पास

२२९१

चले आये तब राजा कहने लगा कि आज तुम इतनी बेर क्यों लगाई है कहाँ रहे वे सेवक कहने लगे कि पृथ्वीनाथ आज संत महातमा हमारे गुरदेव स्वामीजी आये हुये हैं इस कारन तें प्रभु हमारे को बेर लाग गई है और हे नाथ तिनके गुरुजी का आप के राज मे एक धरम अर्थ गाउँ था सो नाथ तुमारे अधिकारी कामदार ने छीन लिया है ऐसे तिन सेवकों का कथन सुन कर वे मलेछ राजा कहने लगा कि जाओ तुम शीघ्र अपने तिस गुरु को मेरे सनमुख ले आओ मैं तिस का संत प्रभाव जो है सो कुछ देखूंगा तब सेवक प्रसन्न होय कर और तत काल जाय कर बड़े आदिर सतकार से गुरुजी को पालकी पर बिठाय करके ले आये इतने ही तिस अधम राजा ने क्या अनर्थ किया कि एक मत्त हसती को भक्त प्रधान के चिरवा डालने के लिये अपने द्वारे पर स्थित कर राखा और आप मंद कौतुक देखने के लिये बड़े ऊंचे अस्थान पर चढ़ कर बैठ रहा जब भगवान के भक्त मुरारीजी तिस अस्थान पर पहुंचे तब वे महा प्रबल मत्त हसती जो था सो कोप से लाल नेत्र किये हुये बड़ा चिक्कार शबद करके तिन के ऊपर कूद पड़ता भया दोलावाह अर्थात कहार जो थे सो भय के मारे भक्त प्रवीन को तहां ही छोड़ कर भाग गये तब वे अकेले ही कृष्ण कृष्ण ररते हुये तहां स्थित रहे मत्त हसती जो था सो सनमुख आय कर कृष्ण नाम को श्रवण करके कोप से निवृत्य दीन होय कर चरनो पर सीस राख देता भया ऐसे तिस को प्यार

भक्तमाल

मुरारीजी

वड़ाई मानूं ऐसे कथन करकर तिस पत्तल को सनमान से तहां पृथवी पर राखकर फिर तिस साधू को भेद जोड़ के सो पूछने लगे तब तिस ने प्रकट करके सब वृतांत सुनायदिया मुरारीजी सुनकर तिस अपने शिष्य का बहुत तिरसकार करने लगे कि मूढ़ तैने देउ को क्यों नहीं भोजन दिया ऐसे कहिकर मुरारीजी ~~भक्त~~ भक्ती भाव सें तिसें तें छमा करवायकर देउ के सहित वही रुची सनमान सें भोजन देते भये इस प्रकार तिन की भक्ती प्रीती ~~[illegible]~~ और सुंदर करनी देखकर प्रसन्न भये हुये सब संत मुख सें साधू साधू उचार कर अनेक प्रकार की शलाघा वड़ाई करने लगे और फिर आनंद से विदाय होयकर भक्त प्रधान के गुण गण गावते हुये अपने मारग को चले गये तब लज्जा का मारा वे देउधारी संतभी तिन के पीछे पीछे चलपड़ा ऐसे जब कुछेक दिन व्यतीत होयगये तब मुरारी जी के गुरू स्यामानंद नाम करके उजागर जो थे तिन को सनातन सें एक गाउं धरम अर्थ मै जागीर मिला हूआ था सो तहां का मलेछ राजा जो था ~~तिसने~~ तिस दुष्ट ने अधर्म करके वे गाउं तिन के अधिकार से छुड़ाय लिया इस वारता का कलेश मान कर गुरूजी पत्रिका लिखकर अपने सेवक मुरारी जी को बुलाय भेजते भये तब ईहां घर मै भक्त प्रवीन ने भोजन पायकर अभी मुख प्रोछन नहीं किया था कि दूत ने मैं दूत ने आयकर वे गुरू जी की पत्रिका तिन को देदई तिस को वाचते हीं सीस पर धरकर तुरत चल पड़ते भये तब गुरू जी के पास आयकर दीन

सुनि गोपाल दास गुरु वाना॥ हो कुकरम निज दान हि त्यागा॥ इह अद्भुत जब सुन्यो दलीसा॥ पठ्यो वोलि तव भक्त गजीसा॥ भृतन वदन अस विनय वखाना॥ तास आगम संतन विनु आना॥ तव दिल्लीपत साधु पठाये॥ ते अजास विनु तास लयाये॥ देखत कीन साह संत कारा॥ धरि भोजन कल विविध प्रकारा॥ तास ग्रहण कछु नाहि न कीना॥ अस प्रकार वीते दिन तीना॥ लुध्यत देखि साह दुख माना॥ [struck] वार इहि देह सनाना॥ तव निस्चय कछु करहिं अहारा॥ अस दलीस जब वदन उचारा॥ साधु अरूढ होत तनहि काहीं॥ ल्याये विमल [struck] माहीं॥ तहाँ सनान भक्ति जुत रागा॥ लाग्यो करन भक्त वड भागा॥ वहुरि कूल अनुकूल विचारी॥ चलि आयो वर भक्त मुरारी॥ दोहा॥ सुमरत कृस्न कृपायतन सव कर देखत तेहु॥ गयो कृस्न कल धाम कहं विनु अजास तजि देहु॥ सुनि दलीस अद्भुत [struck] भयो चकित चित माहिं॥ लग्यो प्रसंसन विविध विधि भक्ति महातम काहिं॥ पंटीका॥ और प्रेम प्रीती से संतो का वाहन वन कर नित्य नगर में विचरता रहता था राजा का काज और हिव काई जो थी सो हृदय से सव विंर देई कृस्न कृस्न रटता हूआ नगर मे जिस हट्ट पर चला जाता तहां से अन्न आटा इत्यादि उठाय कर ले लेता और अतिथी साध संत देख कर तिस को भक्ती प्रीती से दे देता तिस के भय के मारे कोई वोल नहीं सकता था तव नगर के दुकानदार लोग सव दुखी भये हूये मिलकर के मुरारीजी के पास [struck] आय कर

अद्भुत

अद्भुतजल

चकित

औ

ऐसे प्रकार सुप्रसन्न भये विपुल भक्ति भावना जित॥ न निज भक्ति प्रभाव वल वाचो पद निरवाण॥

हि

तिसके कलेश का वृंतात प्रकट करके सब सुना
य देते भये तब भक्त प्रवीन सुनते हीं ततकाल
तहां चले आये और गोपाल दास नाम करके
जो हसती भक्त था तिस को कहने लगे कि भाई
इह तैने लोगों को दुख देने वाला कैसा अधम क
रम ग्रहन किया है मांगे विना अपने आप हीं
किसी का कुछ ले लेना इह उचित नहीं है इस
मे भाई लोगो विखे अपजस होता है और इह
भले पुरषों का काम नहीं है इस प्रकार गुरु
जी के मुख से शिक्षा सुनकर गोपालदास ति
स अनुचित करम सें निवृत्य होय गया अर्था
त वे करम त्याग दिया इह अदभुत कौतुक
को जब दिल्ली के बादसाह ने सुना तो तिस ने
गोपाल दास हसती भक्त को अपने सनमुख
बुलावने की आज्ञा देई तब बादसाह के सेव
कों ने प्रार्थना करी कि दीन दयाल वे तो से
तो के विना कदाचित नहीं आवेगा ऐसे सुन
कर दिल्ली पत ने ~~उसके~~ तिस के ल्यावने को त
हां साधू हीं भेज दिये तब वे साधू यतन के
विना तिस को सहजे हीं दिल्ली नगर मे ले आ
ये जब ~~[illegible]~~ गोपाल दास को बादसाह
ने देखा तब प्रसन्न भया हूआ वडे सुंदर मिष्टा
न भोजनो से तिस का सनमान करता भया प
रंतू गोपाल दास ने बादसाह का दिया हूआ भोज
न कुछ नहीं पाया इस प्रकार तीन दिन वतीत
होय गये गोपाल भक्त को भूखे देखकर बादसा
ह ने हृदय मे वडा कलेश माना और कहा कि
इस को ~~[illegible]~~ के जल मे सनान कराओ तब इह
जमुना

अव प्रथ कुछ भोजन पाय लेवेगा ऐसे जब
सा कि आज्ञा भई तब साधू गोपालदास
को आनंद पूर्वक श्री जी के निरमल वि
जलविषे ले आवते भये तहां बड़भागी भक्त गो
पालदास जो है सो परम भक्ती और प्रेम से सूरज
पुत्री के जल मे सनान करने ल
गा ऐसे भली प्रकार सनान करके फिर मु
रारी जी का सेवक गोपालदास आनंद से ज
मुना के बाहर किनारे पर चला आया तहां आ
वता हीं कृस्न कृस्न सुमरता हूआ सब के
देखते सहजे हीं शरीर को तयाग कर कृ
स्न लोक को चला जाता भया तब इस अदभु
त कौतुक को सुनकर दिल्लीपत जो है सो पर
म अचरज को प्रापत भया हूआ बारबार भ
क्ती की शलाघा बड़ाई करने लगा कि देखो र
हे केवल भक्ती का ही चमतकार और प्रभाव
है इस प्रकार मथुरा मे ऐसे बहुत भगवान
के उतपन्न भये हैं कि जिनो ने भक्ती के बल
और प्रभाव से भगवान का निरवाण पद
जो है सो प्रापत कर लिया है॥ इति श्री भक्तवि
नोद ग्रंथे भगवद भक्ति महातमे भाषा टीकायां
मुरारी चरित बरनने नाम सरगः

भक्तमालप्रसंग

णागत देखकर प्रसन्न भये हुये भक्त प्रधानने
तिसके अमर मंत्र का उपदेश कर दिया और
सुंदर तुलसी की माला गले में पहिराय कर
तिसका गोपाल दास नाम जो है सो राख दिया
तब ~~राजा~~ इस अद्भुत कौतुक को देखकर राजा
बडे अचरज को प्रापत होय गया और सब लोग
साधु साधु शबद को उचारण कर कर भक्त प्रधा
न के चरनो पर बारबार सीस नावने लगे फिर रा
जा भी दीनभाव से चरनो पर सीस धर कर
और अपना अपराध छमा करवाय कर मुख
से अनेक प्रकार का सुजस ~~कर~~ को गायन कर
ने लगा तिसते उपरांत सनमान से धन के
सहित तिन के गुरू जी का धरम अर्थ गाउं जो
कीना हुआ था सो देकर और बारबार चरनो
पर सीस नायकर आनंदपूर्वक विदाय कर दे
ता भया और इहां वे गोपालदास नाम कर के
हसती जो था सो मुरारी जी की कृपा के प्रसाद
से भक्ती ~~करने~~ प्रीतीवाला भया हुआ रात्री
दिन संतसेवकाई में ही मगण रहने लगा॥
४॥ चौपाई॥ वनि वाहन संतन अनुरागा॥
~~४~~ भक्ति मान पुर विचरन लागा॥ भूप काज
सब दीं न तयागी॥ कृष्ण कृष्ण सुमरत बडभा
गी॥ धावत वनक रहु पुर जाई॥ अन्नादिक
ग्रास लेत उठाई॥ अतिथि संत कहं देत निहा
री॥ नगर वनक सब भये दुखारी॥ भक्तमु
रार सरण सब आये॥ तिनहिं दीन निज विथा
सुनाये॥ भक्त प्रबोध कीन तब आई॥ इह क
स कीन गृहण दुरताई॥ बिनु मांगे ग्रास लेन
न जोगू॥ करहि ता ● त अपज सब लोगू॥

१२२४

अस जाना॥ आपु करम हिं सादि विता सा॥ मृत न ग्रीव दीन्यो धरिपासा॥ जननि जन कवां धव समुदाई॥ मृत वस भये काल गति पाई॥ तब सुत तेउ सब कर वित लीना॥ वा हु मिम तजनहु मद कीना॥ तहि पुर जगन नाथ दरसाये॥ समय एक वैं सवजन आये॥ दोहा॥ मिलादिन हित एकतव भ्रमत सदन तहि आव॥ अमुष तुला धृत पिला कल देखि दृगन पछताव॥१॥ नामादास कहते हैं कि हे संतो अव और वं अदभुत मन के हरने वाला और संपूर्ण भय भ्रम के नास करने वाला भक्ती का सुंदर महातम जो है सो भक्ती प्रीती से आपकें कुछ गायन करता हूं॰ एक सदना नाम का के जगत मै उजागर भक्त मलेछ वंस विखें उतपन्न होता भया सो पूर्वं जनम ब्रह्मण की कुल विखें धार कर धरम और करम से भूला हुआ था परंतू भक्ती भाव से व्रत धार कर एक शालिग्राम भगवान का पूजन करता था और धन की अधिकता के लिये एक कोई महा मलेछ कसाई देख कर कि जो सदैव मांस हीं वेचता रहता था तिसें व्याज के लोभ सें वहुत सा धन दे देता भया इस प्रकार तिस को कितने हीं वरष वतीत होयगये तिस मलेछ सें कुछ धन प्रापत नहीं तव वे ब्रह्मण अपनें को सुमरता सुमरता ही अंत शरीर को त्याग कर काल कें वश होय गया और करम वंधन के तिसी मलेछ के घर मैं आय कर जनम धारन कर लेता भया तव वे

मांस के बेचने वाला मलेच्छ कसाई जो था सो ऐसे
रूपवंत पुत्र को पायकर दिन दिन बड़े हित प्यार
से तिसकी पालना करने लगा और नाम तिसका
सदना राखा जब वे बालक बड़ा होय ग
या तब पूर्व जनम की तिसकी भक्ती और पूजन
सेवन जो था सो आय करके उदय हो जाता भया
अकस्मात नहीं बल से एक शालिग्राम भगवान की
मनोहर शिला जो थी सो तिसको मिल जाती भई
सो पांच सेरी जो बटी है तिसके बदले बराबर जानकर
बड़े आनंद सुख से घर में ले आया तब तुला अर्थी
त तराजू मे एक पासे धर कर और दूसरे पासे मांस
डालकर तिसके साथ तोल तोल कर बेचने लगा
हुता है और वे शिला अधिक न्यून अर्थात घाट
बाध के साथ एक समान बराबर ही रहती थी इ
ह तिसका प्रभाव प्रकट था आप
सदना ने हिंसादि जीव घात का करम जो है सो
त्याग दिया हुआ था इस पाप की फांसी अपने
नौकर चाकरों के गले मे पाय राखी थी जब ति
सके मातापिता काल के वश होय गये तब ति
न सब का धन लेकर जैसे मदपान करने से म
त्त होय जाता है तैसे धन के मद मे उनमत्त होय
गया और अपनी इच्छा के अनुसार रहने लगा
किसी दूसरे का सिर पर कुछ भय नहीं तब
एक समय जगननाथ स्वामी के यात्रु संत
जो थे सो तिस नगर मे आय प्रापत भये तिन
मे से एक संत भिक्षाटिन करता करता दैवयो
ग से सदना के घर चल आया
तब तहां मांस के तोलने वाले तराजू मे वे

११७५

शालिग्राम भगवान की मनोहर शिला देखकर हृदय में अत से पछतावने लगा और बड़े अचरज को प्राप्त होय गया ॥ चौपाई ॥ विकल दुखित ~~मन~~ संत उचारा ॥ इन नउचि कछु करम तुमारा ॥ कबहुंकि कृपा सहित इन देहो ॥ ~~शिला~~ शिला मोहि आसिष सुभ लेहो ॥ जब अस संत कथन मुख कीन्यो ॥ शिला तुरत सदनात हि दीन्यो ॥ मानहुं सकल भवन वित पाई ॥ निज समाज लावा हरषाई ॥ पंच गव्यादि सनान सुहावा ॥ देत कीन भोजन मनभावा ॥ सुचि नैवेद भक्ति जुत लाई ॥ बहुरि आपु भोजन सब पाई ॥ भये निरत निद्रा समुदाई ॥ तब भगवान भक्त सुखदाई ॥ धरि सरूप बैसाख निसि माहीं ॥ दीन्यो स्वपन संत जन काहीं ॥ रिस कि कठिन मुख वचन अलावा ॥ अरे मूढ जहि तें मोहि लावा ॥ तहीं देहु जड़ वेग पुचाई ॥ देखहु नतर प्रात समुदाई ॥ होहि बिदित गति कवन तुमारी ॥ तुव समाज सब देहुं संहारी ॥ अस प्रकार जब भगवन भाखो ॥ स्वपन जानि कछु हृदय न राखो ॥ दीननाथ तब बहुरि बखाना ॥ उठो संत मान स अकुलाना ॥ सिष कहे बोलि वदन समुझावा ॥ रहा अमुक जे सदन सुहावा ॥ तहं जाय संजुत सनमाना ॥ इन तुव शिला देहु भगवाना ॥ सिष सासन गुरु वर द्रुत पाई ॥ चल्यो लेत प्रभु सिला सुहाई ॥ तिन सन जाय कथन सब कीना ॥ गुरु कहे जथा स्वपन निसि दीना ॥ इन हमार पूजन सुई कारा ॥ करत न देव हर न महि भारा ॥ इन कहे अमुख तुला तुव जोई ॥ लागि ललित सुखद प्रिय सोई ॥ ~~सु~~ ~~[illegible]~~

अथ सदना भक्त चरितं

दोहा॥ अति विचित्र मानस हरन दलन सकल
भ्रम भीत॥ भक्ति महातम कहहुं अब कथन भ
क्ति जुत प्रीत॥ चौपाई॥ भयो मलेछ वंस उ
त पंन्या॥ सदना नाम भक्त जग मन्या॥ पूर्व
जनम द्विजकुल उपजाया॥ वरजित धरम कर
म गत दाया॥ पै पूजन इक शालिग्रामा॥ व्र
त जुत करहिं भक्त अभिरामा॥ धन वृद्धी कर
लोभ विचारी॥ महा मलेछ काहु अनिहारी॥
रहा सदैव अमुक विक्रेई॥ दीन्यो विप्र विवि ध
धन तेई॥ विपुल वरष अस तासु विहायो॥ तहि
तें वित न विप्र वर पायो॥ करत सुमरि अंत
धन तेहू॥ मृत वस भयो विप्र तजि देहू॥ होत
करम वंधन वस जाई॥ तौ कुर सदन यमन दे
ह पाई॥ सो अस धनी अमुष विक्रेई॥ मे जु
ल रूप वंत सुत लेई॥ दिनदिन करत नेह
नव लालन॥ लाग्यो प्रीति रीति जुत पाल
न॥ ~~सदन~~ धरो नाम सदना तुम तवहीं॥
भयो वरष द्वादिस कर जवहीं॥ पूर्व जनम
~~करे पूजन~~ कर पूजन हेवा॥ भयो उदय तहि
भगवन देवा॥ शालिग्राम सिला मनभाई॥
अकस्मात पथ कानन पाई॥ वाट कप्र
माण ललित जिय जानी॥ लावा सदन हर
ष सुख मानी॥ तुला धरत इक ओर उमंगा॥
विक्रय करत अमुष तहि संगा॥ अधिक न्यू
न हेन एक समाना॥ तासु प्रभाव विदित

२२७६

सू० तुम जहां से मेरे को ल्याय हो तहां हीं अब
फेर कर पहुंचाय देवो नहीं तो प्रातःकाल होते
कल को देखना कि तुमारी कैसी दशा होवेगी मैं तु
मारे संपूर्ण समाज का नाश करदेऊंगा इस प्रका
र यद्यपि भगवान ने कहा तद्यपि स्वपन जानकर
तिस संत ने कुछ हृदय में ---- नहीं राखा दीन
बंधू ने फिर भली प्रकार चिताय कर कहा तब तो
भय से व्याकुल भया हूआ वे संत प्रातःहोते हीं
उठ खड़ा हूआ और अपने शिष्य को बुलाय कर
समुझाय देता भया कि अमुक अस्थान पर वे
मो सवेचने वाले मलेछ का घरजो है तुम इस
भगवान की शिला को तहां ले जावो और भली
प्रकार संनमान पूर्वक तिसको देदेवो तब वे शि
ष्य गुरू की आज्ञा पायकर और शालिग्राम भग
वान की शिला लेकर ततकाल हीं चलपड़ा तहां
जायकर तिसके साथ जिस प्रकार गुरूजी को स्व
पन भयाथा सो सब वृतांत सुनाय देता भया और
फिर कहने लगा कि इह भूमी का भार हरने वाले
भगवान हमारा पूजन सेवन स्वीकार नहीं क
रते हैं इनको तो तुमारी तुला अर्थात तराजू जो
है सो मनको भावता और प्यारा लगता है तिस
विखे झूलने का आनंद जो है दीनबंधू ने सोई सुख
दायक मान लिया है क्योंकि इनको सनातन की
इह बाण चली आई है कि जब जब रामकृस्न
बालरूप होते रहे हैं तब तब प्रेम प्रीती से माता
जो है सो मंगूरे पर झुलावती रही है दीनानाथ
सोई सुख मानकर ईहां तुमारी तुला मे
झूलने का आनंद लेते हैं इस प्रकार साधू ने
कथन करकर वे मनोहर भगवान की शिला
जो थी सो तिसको देदई ऐसे जब तिसके मु
ख से प्रसंग सुना तब सदना जो अज्ञान नि

श्रीविश्वंभर

श्रीसमुझायकर

२५

द्रा मै सोया हुआ था ततकाल ही जाग उठा मा
नो ज्ञान का सूरज हृदय मै प्रकाशमान होय
गया और जडता कुमती रूपी उल्लू और अं
धेरा जोण्या सो सब नास को प्रापत हो जाता भया
ति सी समय ज्वर के भषण वस्त्र धन इत्यादि सब
अतिथी साधु ब्रह्मण और दीन जनो को दे
दिलाकर आप निरधनो के समान दीन हो
य कर तिन सेतो के साथ ही संपूर्ण सुख
को त्याग करके चल पड़ता भया ॥२॥ चौपाई ॥
अस प्रकार संतन वत भययौ ॥ मारग चलत
काहु थल गययौ ॥ तहं भक्त मित्ता दिन है तू ॥
गयो ग्राम इक धनी नके तू ॥ राधा कृष्ण सुनत
अस बानी ॥ जुवती एक मान रति हानी ॥ तासु
वि लोकि रूप अनुरागी ॥ बदन वचन मृदु भा
षन लागी ॥ अहो संत मुद्रा तुव नीकी ॥
लगी मोहि मंजुल प्रिय जी की ॥ अब न जा
हु तजि मोर अगारा ॥ ईहां रुचिर हित होहि
तुमारा ॥ भूरि द्रव्य तुव भोगन जोगू ॥ होहु अ
सत्र विगत दुख सोगू ॥ करम वचन मन मै
तिय तोरी ॥ तुव इह करहु काम फुर मोरी ॥
सदना सुनत वचन अस तासा ॥ दैन विदत ज
नु नरक निवासा ॥ बोल्यो इह अनर्थ कस बा
नी ॥ मातु प्रकट तुव वदन बखानी ॥ सुख
समूह संपति धन धामा ॥ हृदय मोर कछु ना
हिन कामा ॥ तुव निज पति से जुत अनुरा
गी ॥ बसहु सदन अस दुरमति त्यागी ॥ हित जु
त वचन सुनत अस तेहा ॥ भई विराम नहिन
अगगेहा ॥ तब सदना मुख कृष्ण उचारी ॥ च
ल्यो सदन तजि बहिर सिधारी ॥ तब कीन्यो चिं
तन उर भामा ॥ राखहुं कवन यतन इहि धामा ॥

पतिमय प्रवल सकुच उर एही॥ तांते हनन उचि
त अब तेही॥ अस विचारि पापनि हत भागी॥ त्रि
ण वत पतनि धरम सब त्यागी॥ खडग लेत कर
सोवत जाई॥ रिस मति काटि सीस पति ल्याई॥
तासु दिखाय वदन अस बरनी॥ देखहु रसि क
मोर कलकरनी॥ मैं तुमार हित मानस मानी॥ जा
सो काटि सीस पति पानी॥ निरभय वसहु सदन
दुख खोई॥ अब तुमार मन वांछित होई॥ सदना
सुनत दुखित अकुलाई॥ हा हा करि मुख चल्यो प
राई॥ दोहा॥ जो अधमनि अपराध विनु हन्यो प्रा
ण पति एहु॥ तो निश्चय मम वधन कर पापनि
कवन संदेहु॥ ३॥ टीका॥ इस प्रकार सदना जो है
ॐ सं सो हंसों के समान होय कर जाता जाता किसी नगर
मैं जाय प्रापत भया तहां भगवान को सुमरता हुआ
भिक्षा दिन के लिये नगर मे किसी धनी के घर पर जाय
स्थित भया तब तिस के मुख सें राधा कृष्ण नाम को
श्रवण कर [illegible] रती जो काम देव की स्त्री है तिस के रू
प को लज्जा देने वाली एक स्त्री बाहर आय कर के
बडी प्रीती प्रेम की भरी हुई कोमल वाणी से कहने
लगी कि हे संत तेरी सुंदर मूरती जो है सो मेरे
चित्त को अतसे कर के प्यारी लगी है तांते तुम
दया कर के अब इहां मेरे घर मैं हीं वास करो [illegible]
तुमारा सरव प्रकार कर के हित होवेगा मेरे घर मे
तुमारे भोगने के लिये बहुत द्रव्य है तूं आन
द मे मगण हो [illegible] और हृदय की चिंता शोक को
[illegible] हे संत मैं मन वचन काया कर के त्याग
तेरी स्त्री हूं तूं इस मेरे मनोरथ को सफल
कर इस प्रकार तिस भामनी का कथन सुन
[illegible] कि जो प्रतक्ष नरक के निवास देने वाला था
[illegible] सुन कर के सदना कहने लगा कि हे माई

कर औरु तिस मन को स्थिर करके धिक्कार

झूलन तासु दैव मन माना॥ इनकर एउ सनातन
बाना॥ जब जब राम कृष्ण मे छैया॥ तब तब रही
झुलावति मैया॥ सोऊ दैव सुख मानि सुहाये॥ ई
हों आय तुव तुला झुलाये॥ अस प्रकार शिष बद
न उचारी॥ दै नीं सिला सुभग मन हारी॥ जब अस
सुन्यो कथन शिष बदना॥ उठ्यो जाग सोवत तब
सदना॥ ज्ञान भान जनु हृदय प्रकास्यो॥ मतसर
कुमति उलूक तम नास्यो॥ भूषण बसन सदन
वित जेहू॥ लग्यो विभक्त करन सब तेहू॥ दोहा॥
दीन जनन कहँ देत सब आपु दीन बत होय॥ तिन
संतन सन लागि अस चल्यो सदन सुख खोय॥२॥
टीका॥ तब अति से व्याकुल और चित्त से दुखी होय
कर संत कहने लगा कि भाई तुम को इह करम योग्य
नहीं है कदाचित दया करके इह तुमारे तराजू मै
शिला जो है सो मेरे को दे देवो तो मै तुम को प्रसन्न
होय कर आशीरवाद देता हूं इस प्रकार जब
संत ने कहा तब सदना ततकाल वे शिला तिस
को दे देता भया संत मानो संपूर्ण भवनों की सं
पती पायकर आनंद मे मगन भया हुआ अपने
संत समाज मे चला आया तब तिस शिला को दे
खकर सब संत प्रसन्न भये और तुरत पंचग
व्यादि सनान जो है सो कराय कर पूजन किया फि
र भोजन बनाय कर और शालिग्राम भगवान
को भक्ती प्रीती से नैवेद लगाय कर पीछे आ
प भी भोजन पावते भये तिस ते उपरांत अप
ने आसन पर सुख पूर्वक सोय गये तब आधी
रात के समय भगवान कृपानिधान वैष्णव रूप
धारकर और आय कर बड़े कोप के क्रूर वचनो
से तिस संत को स्वपने मै कहने लगे कि अरे

मेरे साथ क्या भलाई करेगी अर्थात मेरे मार
देने मे भी इस का कौन संदेह है॥ ३॥ चौपाई॥
अस कहि चल्यो भीतवस भागी॥ देखि अधम
तहि पाछे लागी॥ ऊचे स्वर रोवति दिस काई॥
सामाजिक जन लीन बुलाई॥ सब कर मनत पाय
वट चरनी॥ देखउ विदत दुष्टृ कर करनी॥ सोवत
सदन चोर पति मारा॥ अस प्रकार जब नाम उचा
रा॥ पकरि लोगन तिस का को॥ पद
कर बांधि विविध विधि मार्यो॥ नृप पे ल्याय कर
मदुर तासा॥ धनक वधन सब वदन प्रकासा॥ ह
त्यो नमूप साधु जियजानी॥ दीन नदेश छाडि दन
पद पानी॥ तब चोडाल युगल कर तासा॥ दि
तुरत पुर बहिर निकासा॥ पूर्व करम फल हृद
य विचारी॥ तिन संतन सन चल्यो सिधारी॥ य
द्यपि करहिं संत तिस कारा॥ तद्यपि रहहिं मौ
न उरधारा॥ न हस्त मिताहिन प्रेरमा॥
करत करत अस भक्त सुधरमा॥ सुमरत कृस्न
जनन सुखदाया॥ जगननाथ मे जुल पुरि आ
या॥ तब स्रपन पुजादिन काहीं॥ जग
ननाथ दीन्यो निसि माहीं॥ छिन हस्त इक
संत सुहावा॥ संतन संग मोर पुर आवा॥ तांक
र दोला रूठ कराई॥ तुव ल्याव हु मम सनमु
ख जाई॥ देखि स्रपन पूजिक उरधाये॥ खोज
त छिन हस्त ढिग आये॥ प्रभु सासन सब
दीन सुनाई॥ दोला रूठ लेहु तुव भाई॥ विन
य वदन सदना तब कीना॥ मे नयोग्य इहि
का हन दीना॥ ~~[illegible]~~ दरसन हित भ
गवन सुखदाई॥ पद चर चलहु सीस वल भा
ई॥ तब पूजि क हठ कीन अपारा॥ मन तजे
त सदना जन हारा॥ जोरि जुगल निज पेड सुजा

ये॥ वार वार चरन न सिरनाये॥ मुनि अनुचि
त दाम है वडभागी॥ इहलछुता निजसक
हुं न त्यागी॥ दोहा॥ असप्रकार जव देउ जुग [illegible]
रि विनय नहि कीन॥ तव उपजे हरि कृपा ते कोर
वर जुगल नवीन॥ भक्ति प्रभाव विलोकि अस लो
क सकल विसमाय॥ तव सदना [illegible]
रति जुत भवन जगननाथ प्रभु आय॥ वार वार करि
दंडवत कछुक दिवस वसि तो हिं॥ पुनि आवा
वृज मै रटत कृस्न कृस्न मनमा हिं॥ विनु अ
जास तजि काय तहे भक्ति प्रसाद प्रवीन॥ मु
नि सुर दुरलभ ललित गति कृस्न कृपा ते
लीन॥४॥ टीका॥ ऐसे कथन करकर भयके वश
भया हूआ तहां से भाग चला तव वे अधमनी देख
कर तिसके पीछे हीं लाग चली जव देखा कि र
ह नहीं सकता तव ऊंची स्वर से हाहा कर कर रो
वने लग पडी तिसका रुदन सुनकर पडोसी लोग
धावते चले आये पाप की खानी तिनको केसा अ
नर्थ सुनावती भई कि ये या देखो इस दुष्ट ने वडा
घोर अपराध किया है धनके लालच से चोरया
ती ने घरमे सोया हूआ मेरा पती जो था सो मार
डाला है अव क्या करूं किसकी शरण को जाऊं
जव तिस मेदने ऐसा अनर्थ सुनाया तव लोगों
ने धायकर सदना को पकड लिया और हाथपा
उं वांध कर भलीप्रकार मारा वहुत दुख दुआ
करके फिर राजा के पास ले आये और धनी के
मार देने का प्रसंग भी सव सुनाय दिया तव
राजाने सुनकर परम कोप किया फिर साधू जान
कर जान से नहीं मारा परंतु हाथपाउं काटने
की आज्ञा दे दई ऐसे राजाकी आज्ञा अनुसार
चंडाल ने लेजाय कर तुरत हीं दोनो हाथ

११८९

काट डाले और नगर से बाहर निकाल दिया तब वह अपने पूर्व करम का फल विचार कर कृस्न कृस्न सुमरता हूआ तिन संतो के पीछे पीछे लाग कर चल पड़े यद्यपि तिनो ने भी बहुत त्रिसकार किया तद्यपि समय जान कर मौन होय रहा कुछ बोलता नहीं भया तैसे ही करे हूये हाथों कर के भिक्षाटिन धरम करता करता और दीन सुखदायक भगवान को सुमरता हूआ सुंदर जगननाथ पुरी जो है तिस विखे आय प्रापत भया तव रात्री के समय भगवान कृपानिधान जो गननाथ स्वामी ने अपने पुजारियों को स्वपने मे कहा कि एक छिन्न हस्त अर्थात करे हूये हाथ संत जो है सो और संतो के साथ मिलकर मेरे नगर मे आया है तिस को पालकी पर बिठाय कर ईहां मेरे सनमुख ले आवो इस प्रकार स्वपन देख कर हरष के वश भये हूये पूजिक आयकर के तिस छिन्न हस्त साधू को खोजने लगे तब जहां वह बैठा हूआ था तहां आय कर तिस को भगवान की आज्ञा सुनाय कर कहने लगे कि हे संत अब तुम इस पालकी पर बैठ कर आनंद से भगवान दीन सुखदान के सनमुख चलो ऐसे तिनका कथन सुनकर सदना हाथ जोड़ कर के नम्र बाणी से बिनती करने लगा कि हे भक्त जनो मैं दीन भाग हीन ~~इ...~~ इस पालकी पर बैठने के योग्य नहीं हूं दीन सुखदायक भगवान के दरसन करने को मैं सीस के बल पाऊं पयादा

तैने इनकैसा अनर्थ वचन मुख से प्रकट उचार न किया है मेरे को तो धनधाम सुख संपती इत्यादि की कुछ इच्छा नहीं है तूं आनंदपूर्वक अपने पती के सहित घर में निवास कर और इस दुरबुद्धी को हृदय से त्याग ऐसे हित के भरे हूये वचनो से यद्यपि सदना भक्त ने वार वार कथन किया तद्यपि सो पाप की खानी अपने हठ को नहीं त्यागती भई तब कुसम कुसम रटता हूआ सदना जो है सो तिस के घर से बाहर निकल आया तिस अधमनी ने हृदय मे विचार किया कि अब इस को कौन यतन से घर मे राखूं अंत को इन विचार किया कि इस के हृदय मे मेरे पती का अंत से कर के भय संकोच है तो ते अब पती का मार देना उचित है ऐसे विचार कर अभागन पाप की निधी अपने स्त्री धरम को विलवत तोड कर के और हाथ मे तलवार धार कर कोप से मत्त भई हूये जाय कर के तुरत पती का सीस काट लिया है और सदना को दिखाय कर कहने लगी कि हे रसिक सुंदर इन देखो मेरी कैसी करनी है जो तुमारी हित प्रीती के लिये मैंने अपने पती का सीस काट डाला है अब तुम हे प्यारे निरभय होय कर के इनो मेरे घर मे वास करो तुमारी मन वांछित कामना सफल होय गई है इस प्रकार तिस पापनी के मुख से दुरवचन सुन कर के सदना जो है सो व्याकुल हाहा शबद करता हूआ भाग चला और कहने लगा कि देखो इस दुष्टनी ने अपराध के विना ही वृथा अपने प्राण पती को मार डाला है सो कहो कि इह पापनी

अध्याय
सदना
सदना

११८०

खोजीभक्त
अथ ~~ऐसा~~ चरित

दोहा॥ मोद भरन मंगल करन भक्ति महातम एहु॥
करउं यथामति कथन कछु हृदय हरन संदेहु॥
चौपाई॥ रहा भक्त सत्यम अभिरामा॥ खोजी नाम
विदित गुण धामा॥ कृष्ण समान जानि गुरु देवा॥
मन वच काय करहिं नित सेवा॥ गुरु कृपा लह्य
स लोगन गाये॥ पार गामि आगम समुदाये॥
त्रिविध काल गति जानन हारे॥ सरव भूत सन्म
न हित कारे॥ अवसर एक तिन हु मन भावा॥
अति उतंग कलचंट वंधावा॥ सब कहं प्रक
ट वदन समुझाये॥ अव प्रस्थान समय निय
राये॥ जो मुनि मृत अवसर रत आये॥ कृ
ष्ण दूत ले जाहिं सुहाये॥ तव रह अकस्मात
सव जानो॥ करहिं चंट कल शावद महानो॥
और रव भयो चंट कुछु नाहीं॥ तो मम गवन
आनथ लकाहीं॥ ~~सुन~~ अस प्रण सुनत लो
ग अनुरागे॥ ताह मरन अवसेरन लागे॥
तव खोजी निज सेवक काहीं॥ गुरु वर वहि
र ग्राम रक माहीं॥ कछु कारज वस दीन प
ठाई॥ आपु चले परलोक सिधाई॥ आ मुवि
टप तर स्थित गण आई॥ तव मंडलि अउ न
विरचाई॥ लेपन देत कुसादि ~~वि~~ विछाये॥
गुरु कहं अंतकाल तहं ल्याये॥ ऊर्द्ध दृष्टि दे
खत गुरु देवा॥ तजे प्राण सहजहिं मृत ले
वा॥ चंटा नाद विलो कहिं लोगू॥ सो न भ
यो तव मानि अजोगू॥ गुरु कहं दीन स्थित
न तव दाहा॥ दूसर दिवस खोजि उत साहा॥
आये गुरु मृत ~~सुनत धीरज~~ त्यागा॥ हृदन कर
सुनि धृति

ने दीरघ स्वर लागा॥ तब लोगन करि बदन प्र
बोधू॥ कीन्यो शोक प्रवाह निरोधू॥ घंटनाद
पूछत अभिलाषा॥ सो न भयो शिष्यगण अस
भाषा॥ दोहा॥ पुनि पूछत भूत काल तब गुरु
कहि थल कौ जाय॥ आम्रविटप तर अजर नि
ज शिष्य मुख दीन सुनाय विगत आछादन उ
डुमुख कुसुम कुसादि विछाय॥ तस सहज
हिं गुरुदेव निज बिनु अयास तजि काय॥ २॥ टीका॥
अब आनंद मंगल के देने वाला और संसय भ्रम के
नाश करने वाला भक्ती का महात्म जो है सो जैसा
किं मती के अनुसार होय सकता है गायन करता हूं ए
क प्रकट गुरुओं के धाम और भक्तों विषे सब लोकों जो
नाम करके उजागर होते भये सो अपने गुरूजी को
कृष्ण भगवान के तुल्य जान कर मन वचन काया
करके नित्य तिन की सेवा भक्ती करते रहते थे तब
वे तिन के गुरूजी कैसे थे कि [illegible] भूत भविष्यत
वरतमान इन तीनो कालों की गती को जानने वा
ले सरब जीवों के हितकारी वेद विचार मे परम
प्रवीन और सब लोगों मे माने हुये थे एक समय
तिनों ने बडे ऊंचे अस्थान पर एक सुंदर घंटा
जो था सो बांध दिया और अपने शिष्यों के सहि
त सब लोगों को प्रकट करके सुनाय दिया कि भाई
हमारे प्रस्थान अर्थात परलोक को जाने का समय
जो है सो निकट आय गया है जब हम शरीर को त्या
गेंगे और कृष्ण भगवान के दूतों के द्वारा कृष्ण
लोक को जो जायेंगे तो अकस्मात अपने आपही
इस घंटे का बडा जोर शब्द जो है सो हो जावे
गा और जो कदाचित इसका शब्द न हों भया
तो तुमने जान लेना कि गुरू किसी और अस्थान
को चले गये इस प्रकार तिनका प्रण सुनकरके
शिष्यों के सहित सब लोग तिन के अंत समय

को देखने लगे तब एक दिन गुरूजी आप ने सुहृद सेवक खोजीजी को कहीं बाहर ग्राम विखे किसी कारज के लिये भेज दिया और तिस के पीछे आप परलोक के जाने को तयार होय गये तब तिनकी आज्ञा से शिष्यों ने एक उत्तम विखे आंब के वृक्ष के नीचे लेपन देकर सुंदर मंडली जो है सो रचाय देई और कुसा पुष्प इत्यादि भी सब बिछाय देई फिर ऐसे समय जान गुरूजी को सनमान से ल्याय कर तहां बैठाय दिया तब वे कृपाल नेत्रों की दृष्टि जो है सो ऊपर को लगाये हूये एक महूरत के बीच यतन के बिना सहजे ही प्राणों को त्याग कर मृत होजाते भये तिस समय लोग जो ये सो चेटे के शब्द को देखने लगे कि कब होता है परंतु वे नहीं होता भया इस मे सब लोग अनुचित और अचिंत मान कर परस्पर चरचा करने लगे तब शिष्यों ने रीती अनुसार गुरूजी के शरीर को दाह दे दिया और बड़ा शोक मान कर अनेक प्रकार से रोदन विलाप करने लगे फिर दूसरे दिन बड़े उत्साह पूर्वक खोजी भक्त जो घर पर आये तो गुरूजी का मरण सुनकर व्याकुल होय गये और हृदय का धीरज छूट गया बड़ी दीर्घ स्वर से रोदन करने लगजाते भये तब लोगों ने अनेक प्रकार समुझाय कर तिनके शोक के प्रवाह को कुछ शांती किया और फिर सुरत संभाल कर चेटे के शब्द का वृतांत पूछने लगे तब लोगों ने कहा कि वे तो नहीं भया है इस प्रकार सुनते ही खोजी भक्त शिष्यों से पूछने लगे कि भैय्या मेरे को इह कहो जो ऐसे समय गुरूजी तुमने कहां और कौन अस्थान पर बैठाये थे ऐसे

हीं चलता है तब पूजिकों ने बहुत ही हठ किया सदनामी कहता कहता हार गया अंत को अपने कटे हुये दंड के समान हाथ जोथे सो जोड करके बारबार चरनोपर सीस नायकर कहने लगा कि भक्त दया करके तुम इह अनुचित मेरेको क्षमा करो मै अपनी दीनता और लघुता को कदाचित त्यागनहीं सकूंगा इस प्रकार जब सदनाने दीनभाव से अपने दोनो कटे हूये दंड जोड़कर विनती करी तब धरम का प्रभाव जो उदय होना था तुरतहीं जगननाथ भगवानकी कृपातें तिसके दोनो हाथ नवीन उतपन्न होजाते भये इस अदभुतको देखकर लोग अचरज को प्रापत हो यगये तब सदना आनंदमे मगन भया हूआ प्रीती भक्तीसें भगवानके भवन मै आयकर कृपासिंधूके आगे बारबार दंडप्रणाम करता भया ऐसे कुछकदिन तहांनिवास करके फिर कृष्ण कृष्ण सुमरता हूआ बृजभूमी मै चला आया तहां भगवान के गुणगण गावता हूआ यतन के विना सहजे हीं शरीर को त्याग कर भक्ती के प्रसाद से मुनी देवताऊं को दुरलभ गती जो है तिसको प्रापत होजाता भया॥४ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भागवदभक्ति महातमे भाषाटीकायां सदना चरितवरणनं नाम सरगः ==

अंग्रेजी पुस्तक (margin)

आन वेसतें ध्यान विसारी॥ लागे रे हिं चरन गिरधारी॥ सुनत लोग अस मानस रागे॥ साधु साधु सब भाखण लागे॥ दोहा॥ अस प्रकार करि परस्पर वचन अलाप सुनाय॥ तब सुमरत उर कृस्न सब निज निज सदन सिधाय॥२॥ टीका॥ तब इस प्रकार तिन की वाणी सुनकर लोजी मतो अपने हृदय मे वडा अचरज मानते भये और जिस अस्थान पर गुरू जी अंत समय पौढाये अर्थात लिटाये थे तहां आय कर तैसे ही उपर को मुखकर के सीधे लेट पड़ गये और दृष्टि जोड़कर तिस आंब वृक्ष के सिखर साखाउं मे भली प्रकार देखने लगे तब क्या देखते हैं कि तहां एक साखा के साथ पक्का हूआ एक आंब लटक रहा है तिस को देखते ही कुछ मरम विचार कर तुरत उठ खडे हूये और तिस आंब के वृक्ष पर चढ गये जाते ही तिस पके हूये आंवफल को तोड़ लिया और तिस की तुचा उतार कर जो देखने लगे तो तिस के बीच एक छोटा सा कीट अर्थात कीड़ा देख पड़ा सो तत काल ही लुपत होय गया तिसी समय नेटेका अतसे, कर के प्रचंड शबद जो है सो हो जाता भया तब तिस के ऐसे शबद को सुनकर अचरज के वश भये हूये लोग पूछने लगे कि हे भक्त हम को इस का भेद कुछ जान नहीं पड़ा इह गुरू जी के प्रण अनुसार तिन के प्राणांत के पीछे तो नही बजा कहिये कि अब किस प्रकार इह बाज उठा है ऐसे तिन का कथन करके लोजी भक्त जी सावधान होय कर तिस के शबद करने का कारण जो है सो कहने लगे कि हे भाई इस मे इह प्रयोजन है कि गुरू जी का मन जो था

(margin) ओं सब लोगों के हृदय में आनंद होने लगा

सो इस ओव के विखें जाय लगाया ~~~~ कि जो तुमारे देखते मैं ने उतार करके कील डाला है तिस कारण तें तिन का जीव जो है सो कीट के शरीर को धारन कर लेता भया और ओव मै निवास कर कर तिस के रस को भोग करके आज निकल कर भगवान की शरण गत को प्रापत होय गया है इही तें आप चेटे शबद भी होता भया क्यों कि गुरू जी ने ऐसे ही प्रण किया था कि जब मैं भगवान की शरण को प्रापत होऊंगा तब इस चेटे का शबद होजावेगा सो आज गुरू जी भगवान की सामीपता को प्रापत हुये अर्थात कृशन परमातमा के निकट जाय निवास करते भये इसी तें इह चेटा भी आप ने नियम के अनुसार बाज उठा है ~~~~ जिस का अंत समय जैसा मन है तिस को निरंतर करके तैसी ही गती प्रापत होती है देखिये कि गुरू जी कैसे सुध मन तमा और गान ध्यान की ~~~~ निधी थे परंतु वासना के आधीन होयकर कौन कीट जूनी को प्रापत होय गये तो तो वेद पुराणों ने सत्य करके कथन किया है कि संसार मै इह वासना जो है सो बडी प्रवल है इही तें इह विषय विकार जो हैं सो ~~~~ जीतने योग्य हैं जिस पुरश के हृदय मे मोक्ष की रुची अभिलाषा होवे और सब के रस से वृती को तोड कर केवल भगवान के चरणारविंद मे जोड कर राखे ऐसे शोजी भक्तो के मुख से वचन सुन कर सब लोग प्रसन्न भये हुये धन्य धन्य कहने लग जाते भये इस प्रकार परस्पर वचन आलाप कर कर फिर भक्तो की शो

लो चाकरते और कृस्न कृस्न सुमरते हूये सव लोग अपने अपने आश्रम को चले आये और ईलो खोजी महात्मी सव संत समाज केसहित भगवान कृपानिधान को सुमरते हूये सुखपूर्वक अपने आश्रम मै निवास करेने लगे॥२॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ती महात्मे भाषा टीका यां खोजी चरित वरणने नाम सरग॥

अथ रंकावंका चरितं

दोहा॥ अव मंजुल मन हरन कल कथा श्रवन सासुखदान॥ ग्यान प्रकासन करहुं कछु कथन दलन अभिमान॥ चौपाई॥ पुंडरीकपुर विदत सुहावा॥ रंकानाम सुद्र इक गावा॥ वंका तास पतनि मन भाई॥ सो पतिव्रता विदत सव ठाई॥ तिनकर पूर्व पुन्य उदताना॥ उपजी हृदय भक्ति भगवाना॥ यथालाभ संतुष्ट विचारी॥ जाय जुगल कानन व्रतधारी॥ ईंधन सुषक लेत पुर आई॥ विक्रायकरत भक्ति सरसाई॥ तोकर मिलहिं अन्न कछु जोई॥ पावत करि विभक्त जन सोई॥ अस प्रकार व्रत धारन कीना॥ विठुलदेव रटन मन लीना॥ सेवत अतिथि संतगत संका॥ रंकाअनुगामिनि कल वंका॥ अस तिनकर व्रत रुचिर सुहावा॥ नामदेव कर मान सभावा॥ नम्रत जोरि करन अनुरागे॥ विनय कीन अस भवन आगे॥ रंकावंका जन निज काहीं॥ देहु विपुल धन विभुवन साईं॥ तव सपने प्रभु भक्त उवारे॥

खोजीजीका वचन सुनकर शिष्य कहने लगे कि इस ग्रीव वृक्षके नीचे अपने अंग-गमें भली प्रकार लेपन देकर और पुष्प कुशा इत्यादि सब विछायकर ■ ■ वस्त्रनिवारे हुए खुले मुख ऊपर की ओर ध्यान जुड़ाय करके गुरुजीको सनमानसे पौढायदिया था कुछभी विलंब नहीं भई कि दीनयाल ने यतन के विना तुरत सहजेही शरीर को त्यागदिया॥१॥ चौपाई॥ ■ खोजी सुनत शिषन असवानी॥ अति विसमय मानस निजमानी॥ जहि थले गुरु कृपाल मन पाई॥ पौढ्यो उधो वदन तहे जाई॥ सो खोसिखर आम्र तर वोरी॥ देखन लग्यो दृष्टि दृग जोरी॥ तहां पक्कु फल आम्र निहारा॥ उठ्यो करत निज हृदय विचारा॥ तहियें चढ्यो जाय व्रत धारी॥ लेत तासु जब तुचा उतारी॥ ~~ता~~ तहि भीतर लघु कीट रसाला॥ देखत भयो लुपत ततकाला॥ घंट ■ घोर तब भयो प्रचंडा॥ मानहुं सकल लोको मन मंडा॥ पूछत लोग सुनत समुदाई॥ रह गुरु मत कस कालविलाई॥ ताज्यो आज मरम हम काहीं॥ सज्जन जानि परत कछु नाहीं॥ तब खोजी निज हृदय सचेतू॥ लाग्यो कथन करन सब हेतू॥ गुरु मन लाग्यो आम्रफल एही॥ ~~भये सि को~~ पायो कीट जीव तिन देही॥ भोग्यो तासु आज निकसाना॥ ■■ गवन्यो निकट कुसुम भगवाना॥ अस सामीप मुक्ति तिन देखी॥ घंटनाद तब भयो वसेली॥ जो कर होत अंत मत जोई॥ संतत लेत संत गति सोई॥ ज्ञान निधान प्रवर गुरु देवा॥ देखहु कवन कीट गति लेवा॥ आगम निगम भनत समुदाई॥ संसृति प्रवल वासनाभाई॥ तोते इह सब विषय विकारा॥ जीतन जोग अहिं संसारा॥ जिन निज हृदय मो ता हचि माना॥ तिन कहें एहु उचित निसि भाना॥ ८

दृढ भक्त जो हैं सो दीन बंधू दया कर इन को धन
दीजिये क्योंकि इन को आप के संत भक्तों और
अतिथी दीन जनों की सेवा भक्ती करने की अंतरसे कार्य
प्रीती रुची है सो दीनानाथ धन के बिना नहीं हो
य सकती है इस प्रकार नामदेव जी की विनती
सुन कर भगवान स्वपने में कहने लगे कि हे भ
क्त सुधृ जब इह दोनो स्त्री भरता प्रातःकाल हो
ते बन कों जावेंगे तहां तिन को धन जो है सो
अब प्य मिल जावेगा तुम किसी वैस्व पुरुष के सा
थ जाय कर तहां विण विखें तिन को देखते रहो ऐसे
भक्तोपाल भगवान की आज्ञा पाय कर नामदेव जी
प्रातःकाल तिन तें प्रथम ही बण विखे जाय कर
कहीं लुपत होय कर के बैठ रहे ॥ चौपाई ॥
मिल्यो एक वैस्य वण का हू ॥ भाष्यो नामदे
व सन ताहू ॥ देखहु तुम हु भक्त भगवाना ॥ रंक
बंक इह जुगल सुजाना ॥ मैं इन कहं चितदेवन
लागी ॥ आवा ईहां सदन निज त्यागी ॥ सन मु
खदेन उचित पै नाहीं ॥ अस विचारि निज मान
समाहीं ॥ हम तुम रहव लुपत इत ठाहीं ॥ इन
हित राखि द्रव्य मग माहीं ॥ ते निज कर हिंक
बन चतुराई ॥ दम्पति उभय विपुन इत आई ॥ अस
कहि राखि द्रव्य मग सोई ॥ बैठ मौन लुपत गति होई ॥
तब पूरब रंका बन आवा ॥ देखि द्रव्य मानस
बिसमावा ॥ विण समान लखि आगल धावा ॥
करि विचार पुनि पाछि ले आवा ॥ लाग्यो करन
अछादिन धूली ॥ तब बंका मानस मुद फूली ॥
आई पति हिं देखि अनुरागी ॥ कारन कर हु अ
स पूछन लागी ॥ तब रंका अस बदन उचारा ॥
ईहां विपुन वित परयो अपारा ॥ इहि कहं दे
खि विपुल दुख दाई ॥ उपजत हृदय लोभ

नामदेव कहे वचन उचारे॥ जब इह प्रात जाहिं बन
काहीं॥ मिलिहैं तहां द्रव्य इन काहीं॥ तुम काहू वे
स्व सन जाई॥ इन कहं करहु वि लोकं माहीं॥ दोहा॥
नामदेव भगवान अस सुनि निदेश सुखदाइ॥ तिन
तें पूरव जाय वन रह्यो सि द्रुमन दुराइ॥ २॥ टीका॥
अब हृदय के अभिमान के नास करने वाली और ज्ञान
ध्यान के देने वाली श्रवन सुखदायक और सुंदर म
नोहर गाथा जो है सो गायन करता हूं पुंडरीक
ग्राम विखें रंका नाम करके एक शूद्र होता भया और
वंका नाम सें प्रसिद्ध वडी सुंदर और पतीव्रता धरम
मै प्रवीन तिस की स्त्री होती भई तिनका पूर्व भाग्य
जो उदय हूआ हृदय मै भगवान कृपानिधान की
भक्ती जो है सो आय करके उतपन्न होय गई प्रात
काल नित्य वन विखें चले जाते और तहां सूखी
लकडियां ल्याकर पुर मै वेचते तब तिन को जो
कुछ प्रापत होता तिस का अन्न ल्याय कर भोजन
वनाते फिर तिस मै से यथा शक्ती कुछ साध ब्र
ह्मण को भी देकर पीछे भक्ती प्रीती से आप पाय
लेते थे तिनका एही व्रत था कि जो कुछ प्रापत
होता तिसी मै संतोष धारकर मगन रहते और
रात्री दिन विठ्ठल भगवान के चरन कमलों को
भजते और अतिथी साध ब्रह्म की सेवा कर
ते थे वंका जो है सो मन वचन काया कर
के रात्रीदिन अपने रंका पती की सेवा भक्ती मे ही
लीन रहती थी इस प्रकार तिन का सुंदर व्रत जो
था सो भक्त नामदेव जी के हृदय को अतसे कर
के प्यारा लगा तब तिनके प्रेम के वश भये हूये
भक्त प्रधान वडी नम्रता से हाथ जोड कर भगवान
कृपानिधान के आगे विनती करने लगे कि हे दी
न हितकारी हे दीन दुखहारी इह रंका वंका
दोनो आपके ही चरनो का मेरे सा गा खने ...

परसीसनायकर जदुनंदन भगवानके दासोंकी वडीग्र दमुत ग्रोरसुंदर सुखदायक गाथाँहै सोगायन करताहूं क हतेहैं कि मोरध्व ग्रोर ताम्रधुज दोनो पिता पुत्र राजाथे ग्रोर कैसेभी भक्ती मे प्रवीनथे किजिनका जदुनंदन परमा तमाके चरन कमलोंमे भमरे वत साचाप्रेम होता भया एकसमय धरम पुत्र जो राजा जुधिष्टिर थे तिन का सरसेना दलके सहित यज्ञका घोडा जो था सो सव देसदेसान्तों मे फिरता ग्रोर संपूर्ण पृथवी के राजा उंको जीतता हुग्रा तिसमोरधुज राजाकी रतनना मा नगरीमे ग्राय प्रापत भया तिस समय वें राजा मोरधुज रेवा नदी के किनारे पर सव उचित समा ज जोडकर वेदकी विधीके ग्रनुसार ग्रस्वमेध य ज्ञ जो है सो कररहाथा पीके घरमे तिस राजा कापुत्र ताम्रधुज नामकरके उजागर ग्रोर [illegible] वल का मानो सागरथा ग्रोरतिसका मंत्री सरव करमधरमों के जानने वाला ग्रोर सुमती काधाम वहु लधुजनाम करके प्रसिद्ध होतामया तव ताम्रधुज ने तहां ग्रपनीनगरी मे तिस यज्ञके घोडे को ग्रायेहूये देखकर ग्रोर तिंके मस्तिकमे पटा लगा हूग्राथा सो वाचकर तिसीसमय जदुनंदनभगवान का भरोसा राखकर भक्तप्रधान ताम्रधुज जुद्ध की ग्रभिलाषावा ला होय जाताभया तव वीर सिरोमणी तुरत ग्रपने मं त्री को कहने लगा कि हे मेरी ग्राज्ञामानकर ग्रोर विलंव को त्यागकर सीघ्र इस घोडेको पकडलेवो ग्रोर ग्रपने संपूर्ण सेनादलको साज कर जुद्ध के लिये सा वधान होय जावो इससे ग्रधिक संसार मे ग्रोर दूसरी कोई मुख्य काज नहीं है क्षत्रियों का धरम एही है कि धीरजको धारकर रणमे छाती देकर स्थित होयजाना तिसपर ग्रोर भी वडे लाभ की वार्ता हैकि कृष्ण परमातमाका दरसनसे हमारे नेत्र सफल होवेंगे हे प्रधान मेरे चित्तमे इस ग्रभिलाषा व हुत दिनो की थी ग्रोर मेरा एही मनोर्थ था कि

मेश्यवन सुंदर स्याम सरीर जोहै सो मै ने त्रमरकरकव
देखूंगा और संसारमै कव सफल होऊंगा अवजदु
पती दीनदयालका दरसन पायकर रणभूमी मै तिन
केसनमुखहीं प्राणों को त्याग देवो और अपने लो
क परलोक को सुधारलेवो आज हमारे
भाग जोहैं सो उदय होयगये हैं अर्थात जाग पडेहैं
ऐसे कथनकरकर और चतुरंगनी सेना हाथी घोडे
रथ पयादे इत्यादि सजायकर औं दुदभी वजायकर
हरीका वडा दृढ भक्त ताम्रधुज जोहै सो
राजा जुधिष्टर के तिस
जग्गे को घर मे वांधकर आप
की अभिलाषा वालाभया हूआ कृष्ण कृष्ण सुमरता
रणभूमी को प्रस्थान करदेता भया जव तें सु
रथ और सुधन्वा ने दीनवंधूके सनमुष रण करके
मुक्तीपदको प्रापत कियाहै तव तें अर्जुन के साथ
जदुनाथ भगवान तहांही विचरते रहेहैं फिर किसी
दास ने भी अपने वाणों की उग्रता दिखलाय करके
रणभूमी विखें दिखाये नहीं हैं ॥२॥ चौपाई ॥ इहां
ताम्रध्वज करत विचारा॥ ऊहां दूत जदुपति दर
वारा॥ भन्यो वदन निज सकल प्रसंगा॥ ना
थ ताम्रधुज गह्यो तुरंगा॥ अरु आवा वहु
सैन सजाई॥ संग सुभट समरथ समुदाई॥
जै जदुवीर रटत मन माहीं॥ वीर प्रधान स
मर अभिलाषी॥ दूतवचन सुनि के जदुनाथा॥
लागे भनन वदन धुनि माथा॥ सुन हो सषे
धरम नृप वाचा॥ दूत न मृषा कथन
सव साचा॥ जनि भूले औरन के जाऊ॥ रहअप्रति
समर सुभट सुतराऊ॥ महाविक्रमी वीर प्रधाना॥ नाम
ताम्रधुज विदत जहाना॥ धरमधुरंधर धरनि उदारा॥
जासु भुजन वल पारहि नपारा॥ छाडत विसषवान
वहु गाढे॥ कौन समर सनमुष तहि ठाढे॥

मोर अनन्य दास व्रतधारी॥ भूप कामधुज सुत सुभ
चारी॥ महाकठिन संगर इह होई॥ जानि परत वचि
है नहिं कोई॥ तब अर्जुन प्रभु चरन जुहारी॥ लायो
मन नसु नहु गिरधारी॥ तुव प्रताप हरि जगत प्रका
सा॥ पाउव विजय अवसि तुव दासा॥ नाथ समर सन
मुख जनकेरा॥ देखिये प्राक्रम भुजन घनेरा॥ अरिदलक
है करिवान प्रहारी॥ देहु भूमि भारथ झटमारी॥ तब प्र
द्युम्न कहै श्री जदुराई॥ वोलि तुरंत दियो समुझाई॥ गृ
ध्र व्यूह रचि वेग सुजाना॥ होहु सुभट सगरे सवधाना॥
तजि विलेव झट करहु अजासा॥ आयो लरन ताम्रधज
दासा॥ तब प्रद्युम्न सासन प्रभु पाई॥ लियो खग व्यूह
रचाई॥ वहुरि संग सेनादल भारी॥ च[illegible] लयो लेत
समर हित रारी॥ पारथ कृस्न वीच दल जाहीं॥ औ
र सुधीर वीर चहुं घा हीं॥ उते ताम्र धुज संजुत
सैना॥ आयो सुमरि कृस्न उर मैना॥ देखि दूर तैं नंद
कुमारैं॥ रथतैं उतरि भूमि पद चारैं॥ कियो प्रनाम धर
नि धरि माथा॥ जै जै जगत नाथ जदुनाथा॥ सषा पुत्र
जुत दीनदयाला॥ दै दरसन मुहि कियो निहाला॥ दोहा॥
चाहु दिखावन नाथ मे क्षत्रि धरम कछु आज॥
पै मोरी जदुराज अव अहै हाथ तुव लाज॥ २॥ टीका॥
ईहां तांम्रधज ऐसे विचार करता है और उहां दू
त ने जाय कर जदुनाथजी के दरवार मै सव वृतांत
प्रकट करके सुनाय दिया कि हे कृपानिधान राजा
मोरधज का पुत्र ताम्रधज जो है तिसनें यज्ञ का
घोडा पकड लिया है और वडा उग्र सेनादल सजा
य कर और वडे सामर्थ सूर वीरों को साथ ले करके
जै जदुवीर जै जदुवीर पुकारता [illegible] कोप सें जुद्ध
की अभिलाषा वाला भया हुआ वीर प्रधान सनमु
ख रण भूमी को चला आया है ऐसे दूत का कथन
सुनकर जदुनंदन भगवान सीस धुनाय कर अर्थी
त माथा फेर कर कहने लगे कि हे राजा धरम हे
अर्जुन दूत का कथन झूठा नहीं सव साचा है तुम
औरों के भूले मत जाईयो इह राजा का पुत्र रण

अथमोरध्वजतथाताम्रध्वज चरितं

दोहा॥ अब चरित्र अद्भुत सुखद जदुपति जन की गाथ॥
मै वरनहुं सादर ~~[illegible]~~ संत चरन धरि माथ॥ ~~[illegible]~~ मोरध्वज
ताम्रध्वज पिता पुत्र नृप रेहु॥ जिनहुं कृष्ण पदपदम मध
कियो मधुप इव नेहु॥ अवसर एक धरम नृप केरा॥
वाजिमेध दल संग घनेरा॥ फिरत फिरत सब देसन
माहीं॥ विजय करत नृप मेदनि काहीं॥ आयो रतन
नगर के माहों॥ रह्यो मोरध्वज भूपति जाहों॥ तहि
अवसर सो नृप व्रत धारू॥ रह्यो करत रेवा तट चारू॥
मख तुरंग जुत वेद विधाना॥ जोरि समाज उचित सब
नाना॥ तासु ताम्रध्वज सुवन उजागर॥ रह्यो सुभवन
बुद्धिबल सागर॥ ताको सचिव बहुल ध्वज नामा॥
सत्कर्म कारक मति धामा॥ तुरत ताम्रध्वज तुरगनि
हारी॥ तासु उलेख भाल जे सारी॥ वाचित भयो स
मर अभिलाखी॥ उर भरोस जदुनंदन राखी॥ भाखी
सुभट सचिव सों वानी॥ अब प्रधान मम सासन मा
नी॥ पकरहु वेग विलम तिजि वाजी॥ होहु सजुग
सगरो दल साजी॥ इहि तें अधिक परै नहिं लेखी॥
सचिव काज जग वयो वसेखी॥ तजी धरम अहै इहि
भाती॥ धरन धीर रण सनमुख छाती॥ तापर दर
सन जदुपति केरा॥ औसहिं रह्यो मनोरथ मेरा॥
सुंदर जलध स्याम तन काहीं॥ कब देखहुं इन ने
नन माहीं॥ अब दरसन करिके जदुराया॥ तजो
समर सनमुख हरि काया॥ लेहु लोक पर लोक
सुधारे॥ आज भाग जग जगे हमारे॥ अस कहि
चतुरंगनि अनि साजी॥ चल्यो ताम्रध्वज दुंदभि
वाजी॥ जबतें सुरथ सुधंन्वैं कीना॥ संगर समर
मुक्ति पद लीनाः॥ दोहा॥ तबतें अ[illegible]र्जुन संग प्रभु
विचरत रहे तहों हिं॥ ~~[illegible] काहु पास रस[illegible]~~
[illegible] रिझाये नाहिं॥१॥ टीका॥ अब संत जनो के चरनो

लाषावाला होय करके रणभूमी को चलपड़ता भ
या कृष्ण भगवान और अर्जुन दुहदल के बीच
बीच जाते हैं अरु और बड़े बड़े धीरज के धाम
सब सूरवीर चारो वोर लागे चले जाते हैं ऊहां
वीर प्रधान ताम्रधुज जो है सो अपने सब सूरवीर
और सैना समाज के सहित अभय भया हुआ कृ
ष्ण कृष्ण सुमरता युद्ध स्थल को चला आया
तब दूर तें ही दीन उद्धार भगवान नंदकुमार
को देखकर तुरत रथ तें उतर कर और पाउं प
यादा होयकर पृथवी पर माथा धर करके दीन भाव
सें प्रणाम करता भया और कहने लगा कि जै जै
जगतनाथ जै जदुनाथ हे अथानो के नाथ नाथ
तुमने आज सखा और पुत्र सेवकों के सहित मे
रे को दरसन देकर निहाल करदिया है और
संपूर्ण परिवार के सहित मेरे को संसार सुजस
बड़ाई का पात्र बनाय दिया है हे प्रभू तुम धन्य हो
और धन्य तुमारा दीनो पर सने है अब हे कृपानि
धान रह तुमारा दास प्रभू आज तुमको रणभूमी
मै अपनी भुजों के पराक्रम से कुछ क्षत्री धरम जो है
सो दिखाया चहता है परंतू हे जदुराज हे भक्तस
वारन काज आज मेरी लाज नाथ तुमारे ही हा
थ है ॥२॥ चौपाई ॥ अस कहि ताम्र तुरत तहि का
ला ॥ सुमरि चरन पंकज नंदलाला ॥ करि दीन्यो
आरंभ लराई ॥ छाडन लग्यो बान अतुराई ॥ उ
तै जादवी सैन प्रवीरा ॥ मारत भये अनेकन तीरा ॥
भयो भयावन संगर भारी ॥ जूझे विविध वीर रण
रारी ॥ वसुधा पें कटि सुभट अपारा ॥ वही जात स्रो
णित की धारा ॥ भूत पिसाच प्रेत समुदाई ॥ प्रकटे
तहां समर महि आई ॥ भरि भरि खप्पर जोगनि
नाना ॥ पूरें उदर रुधर करि पाना ॥ भषैं मो
स वहु स्वान सगाला ॥ उहै गृद्ध गन हि ग्रो

तन माला॥ तहां ताम्रधज जान धवाई॥ आयो जहां सूर समुदाई॥ सान्य कियआदिक वीर न काहीं॥ मा रि मरन कियविकल तहांहीं॥ वेगवंत सर र चहुं कित जाही॥ जादवि सेन सकल सं हारी॥ को नरहो सनमुख थिरताहू॥ सको न समर आदि इषु काहू॥ तव प्रद्युम्न गहित धनु पानी॥ जानि सैन निज संगर हानी॥ रोम रोम रिस मँ सरीरा॥ धाये जनुं ॥ उतै विलोकि ताम्रधज नयना॥ हरिसुत सुमट सहाय क सयना॥ आयो उर उतसाद वढाई॥ कियेप्रणाम नम्र सुतराई॥ दूरहि तें पुनि विनय उचारी॥ सुनहो वीर सुवन गिरधारी॥ तुं विक्रम वल भुजन महाना॥ अहै हमार नाथ सव जाना॥ भयो मनोरथ पूरण सारे॥ आ ज देखि दृगदरस तुमारे॥ अव सोचरी कौन सुख दैनी॥ देखहु तुव पितु दरसन नैनी॥ दोहा॥ देखिये विक्रम दास कर जो कछु कृपान केत॥ मैं सिथिरायो जतन जुत तुम्हें दिखावन हेत॥ ३॥ टीका॥ ऐसे कथन कर कर ताम्रधजनें नंदलाल भग वान को सुमरकर जुद्ध का प्रारंभ जो है सो कर दिया वडी तुरत उतायलसें धनुष मे जोड जोड कर वाणों के प्रहार कर ने लग पडा उहां तें जादवी सेना के वीर धीर भी तिस की चपलता देख कर कोप के वस भये हुये अनेक प्रकार के वाण जो हैं सो कानो लग तान तान कर मार ने लगे तिस समय तहां अतसे कर के वडा जुद्ध हो तामया दोनो वोर तें अनेक हीं सूरवीर अपने अपने प्राक्रम कर कर रणभूमी विखे जूझ जाते भये इस प्रकार अनंत हीं वीरों के टूक टूक होने तें पृथवी पर जहां तहां रुधर की धारा वही चली जाती थी भूत प्रेत पि साच इत्यादि आय करके रणभूमी मे अनेक हीं प्रक ट होय गये और जोगनी भी भयंकर रूप धारे हुये ख प्पर भर भर कर रुधर जो लहू है सो पीवती जाती हैं और अघाय कर नाचती फिरती हैं स्वान जो कुत्ते स्र गाल जो गीदड इन सूरवीरों का मांस भक्षण कर

कर प्रसन्न भयेहुये बोलते हैं चीलें जो हैं सो आंतों
की माला गले मै पाय पाय कर आकास मारग को उ
डती चली जाती हैं तहां जुद्ध की ओर श्मसान देख
कर वीर प्रधान ताम्रधुज अपने रथको धवाय
कर अर्थात वेग से चलायकर सूरवीरों के समू
ह के वीच चला आया और सात्यकि आदि महा
जोधयों को वडे प्रचंड वाने मार मार कर व्याकुल
करदेता भया क्रुद्ध कोप के मद मै मत्त भया हुआ
वीर ऐसे गाढे तीक्ष्ण और वेगवंत वाण छोड
ने लगा किजिनके प्रभाव तें संपूर्ण जादवी सैना
का संहार होय गया अर्थात अगनित ही सेना मारी
गई किजिसकी कोई गिनती नही होयसकती थी को
ई सूरवीर भी रणभूमी मै स्थित नहीं रहा और को
ई भी तिसके सनमुख वाणों को ताण नहीं सका औ
र ना कोई अपना कुछ पराक्रम दिखायसका तव म
हा पराक्रम की निधी प्रद्युम्न जो है सो अपनी सेना की रणमै
हानी देखकर रोमरोम सरीर मै कोप भरे हुये वीर
प्रधान तुरत हीं मानो विजली के समान धावते
चले आये जहां से सूरसिरोमणी राजा का मध
जका पुत्र ताम्रधुज जो है सो अपने नेत्रों कर के
देखता भया कि जदुनंदन भगवान के कुमार वीर
उदार प्रद्युम्न अपनी सैना की सहायता के लिये
हृदय मै परम उतसाह को पूरित किये हुये आये
हैं तव ताम्रधुज पृथ्वी पर माथा धेर कर औ
र दीन भाव से प्रणाम कर कर दूर से हीं विनती क
रने लगा कि हे वीरप्रधान गिरधारी नंदन नाथ
तुमारी भुजों का महा पराक्रम जो है सो मै सवजा
नता हूं मेरे तें कुछ भूला हू आ नही हैं दुर्लभ तो
एक आपका दरसन हीं था सो मैने नेत्र भर कर
पाय लिया है और अपने मनोर्थ को सफल जा
न लिया है अव नाथ सो जुद्धी कव सुहावनी होवे
मेरेको

विषे वड़ा गाढा सूरवीर है और महा पराक्रमी वीरों विषे प्रधान ताम्रधुज नाम करके जगत मे उजागर है फिर कैसा कि धरम के धारने वाले पृथवी पर परम उदार और जिसकी भुजों के वल का कोई पार नहीं पाया जाता अपनी उरसी क्या छाती के वल से ऐसे गाढे वालों के मारनेवाला है कि जिसके सनमुख रणभूमी मे ~~स्थित~~ स्थित होने को कोई सामर्थ नहीं देखपड़ता तिसपर मेरा अनन्य दास है अर्थात मेरे विना और किसी का भरोसा नहीं राखता है और परमव्रत के धारने वाला है वड़ा ब्रमचारी और धरम की निधी राजा कामधुज जो है तिसका इकपुत्र है हे सषे इसके साथ महा कठिन युद्ध होवेगा मेरेको प्रतीत होता है कि कोई भी वचने नहीं पावेगा इसप्रकार कृश्न परमातमा के मुख से वचन सुनकर पारथ जो अर्जुन है सो चरनो पर प्रणाम करके विनती करने लगा कि हे मुरारी हे गिरधारी ~~हे~~ हे जगत के प्रकासिक प्रभू तुमारे प्रताप और तुमारी कृपा के प्रसाद ते ~~हे~~ नाथ तुमारा इह दास जो है सो अव पुन जय को प्रापत होवेगा हे कृपानिधान रणभूमी के बीच प्रभू आप तुम अपने जन की भुजों का प्राक्रम देख लीजिये जो वाणों के प्रहार करकर सत्रू के दल का युद्ध भूमी के बीच कैसे नास करूंगा जव इसप्रकार अर्जुन की सावधनता देखी तव जदुनंदन भगवान ततकाल प्रद्युम्न को वुलायकर और समुझायकर कहने लगे कि तात अव तुम विलंव को त्याग कर गृद्ध व्यूह जो है सो रचाय लेवो और संपूर्ण सूरवीरों के सहित भली प्रकार सावधान होय जावो क्योंकि मेरे चरनो का दृढ दास ताम्रधुज जो है सो युद्ध करने के वासते आया है तव प्रद्युम्न इसप्रकार भगवान की आज्ञा पायकर तुरत ही यतन से गृद्ध ~~~~ व्यूह को रचकर और वड़ा भारी सेनादल साथ लेकर युद्ध की भूमि

(margin: कृष्णः अर्जुन प्रति कहिया; प्रद्युम्न; भगतों की रक्षा वास्ते प्रताप)

निज पर परहिं सूक कछु नाहीं॥ तव भट सुव
न मोर धज राई॥ देखि हनन निज सैन [illegible] नि
काई॥ धायो धवत वेग रथ काहीं॥ आयो सम
र कृस्न सुत जाहीं॥ होत समुख मुख वचन
उचारे॥ धन्य धन्य रुकम[illegible] दुलारे॥ तो सम
न संसार न कोई॥ वीर धीर विक्रम निध होई॥
पै अब कृपा कर न कछु मोरा॥ देखिये भुजवल
प्राक्रम जोरा॥ काटहुं तुव रथ विलम न कोई॥
रोकिये सावधान प्रभु होई॥ महां मंत्र आवत
इक मो[illegible]हू॥ कौन करहिं वारन जग सो[illegible]हू॥
दोहा॥ अस कहि ऐंचत दास हरि [illegible] वान एक
निज भाथ॥ धनु संधानत छाड्यो रटि जै जै
जदुनाथ॥४॥ टीका॥ ऐसे कथन कर कर वीर
प्रधान जुद्ध के उतसाह वाला भया हुआ रणभू
मी के वीच अगनित वाणोंके प्रहार करने ल
गा कि जिनकी कोई गिनती नहीं होय सकती
और ऐसा चरित्र किया कि चारो ही दिसा वाणों
करके परिपूरन होय गई फिर कोपसें तमक
कर सूरवीर एक ऐसा उग्र वाण मारता भया
कि जिसके लगते ही कृस्न कुमार के रथका चो
ला जो था सो नासको प्रापत होय गया इस प्र
कार नाम्रधुज का प्राक्रम देख कर प्रद्युम्नजी
प्रसन्न भये हुये धन्य धन्य उचार कर और ति
सकी अनेक प्रकार श्लाघा कर कर कहने
लगे कि हे राजकुमार मै भली प्रकार जानता
हूं जो तूं मेरे पिता का अनन्य दास है जिनके
चरनोंके विना तेरेको और किसीका भरोसा
नहीं है और वीर धीर तेरा जस भी दसो दिसा मे
प्रकास मान होय रहा है मै जदुनंदन भगवा

नका पुत्र है यद्यपि पुत्रपर पिताका अधिकही
सनेह होता है तथापि हे राजकुमार तूं सत्य
करके जान जो स्वामी को पुत्रतें सेवक प्यारा
होता है तिनकी परमपरा एही रीत चली आई
है जो सेवक पर अधिकही सनेह पालते हैं
तातें हे प्यारे तुम हमारे हितकारी और तुमारे
अनुसारी तुमारा हमारा परस्पर कुछ
भेद नहीं है हे गुणनिधान हेमनत तुमने हमारे
पाउं मे प्रेम का जंजीर डाला हूआ है तिसतें हम
सदाहीं तुमारे आधीन रहते हैं इहकार्त तोऐसे
रही अब भतउत्तम तूं सावधान हो और मेरा
प्राक्रमभी कुछ देख जो तेरे सनमुख ईहां रण
भूमी विखें नात्र धरम का चमतकार जो है सो कुछ
दिखावता हूं ऐसे कथन करकर वीर सिरोमणी
प्रद्युम्न जी जो हैं सो ततकाल अपने धनुषका
टंकार करते भये और फिर तिसी धनुष मे
जोड़ जोड़ कर अपार हीं बान छोड़ने लगे जब
कृस्न कुमार के ऐसे विस के भरे हूये महां पैने
बाण छुटे तब रणभूमी विखें नाम्रधुज की
सेना जो है सो नास को प्रापत होने लगी प्रद्युम्न
जीने रण की चारो वोर रथ घुमाय कर बादर
की बूंदों के समान बाणों की झड़ी लगाय
देई तिस समय रथ हाथी घोड़े और सेना
के सहित सूर वीर बाणों के मारे हूये अनंतहीं
मूर्छा होय कर पृथवी पर गिर पड़े ~~फिर प्राक्रम~~
~~के धाम कृस्न कुमार अपने रथ को रण की चा~~
~~रों ओर घुमायकर~~ और अनेकहीं घायल

क्ष प्रद्युम्न

कृस्न कुमार अपने रथ को रण की चारों
ओर घुमायकर

फिर प्राक्रम के धाम

होयकर व्याकुल भये हूये धीरजको त्यागदे
ते भये इस प्रकार ताम्रधजकी सेना जो है सो प्र
द्युम्न के प्रचंड बाणों करके छिंद भिंद होयकर
कट जाती भई तिस समय रणभूमी विखें मानो
एक प्रलै व्यापित होय गई चार घड़ी के बीच
कृष्ण कुमारने तीन अक्षोहिनी सेना का सं
घार कर दिया अर्थात मार डाली दलके बीच
जहां तहां हाहाकार सब्द मच गया अपना
विगाना किसीको कुछ सूझ नहीं पड़ता तब
वीर प्रधान मोरधज राजाका पुत्र अपनी सेना
समूहका मरना और घायल होना देखकर तुरत
हीं वेगसें रथको धवायकर धाउ लाय
कर धावता चला आया और रणभूमिका
विखें जहां कृष्ण दुलारे प्रद्युम्नजी स्थित
भये हूये थे तहां आय प्रापत होता भया
और सनमुख होतेहीं ऊंची सुर सें कहने
लगा कि रुकमनीकूं पुत्र तुम धन्य हो और
धन्य तुमारा अनंत प्रभाव है नाथ तुमा
रे समान वीर धीर प्राक्रम की निधी संसार
मे और कोई नहीं है परंतू हे कृपानिधान
अब कृपाकरके दासकी भुजों का कुछ प्रा
क्रम भी देखिये कुछ विलंब नहीं है प्रभू सावधान
होयकर रोकिये मै प्रचंड बाण मारकर आ
पके रथको चूर करता हूं नाथ मैने एक म
हा मंत्र सीखा हूआ है सो अब प्रकट करता
हूं कैसा भी महा मंत्र है कि जिसके निवार
नेको जगत मै कोई भी सामर्थ नहीं है

यही कि जिस आपके पिता का दरसन पाऊंगा और संसार मे अपने आपको धन्यधन्य मानूंगा हे कृपानिधान अब दास का कुछ प्राक्रम देखिये कि जो प्रभु के दिखाने के लिये मैंने यतन करके सीखा हूआ है ॥ २ ॥ चौपाई ॥ अस कहि सुभट समर अनुरागा ॥ अगनित बान प्रहारन लागा ॥ चारिउ दिसा सरन मढि दीन्यो ॥ वीर बचित्र चरित रण कीन्यो ॥ वहुरि कुपत तीन ण सर मारा ॥ हन्यो तुरग रथ कृस्नकुमारा ॥ तब प्रद्युम्न तहि विविध सिहायो ॥ ~~[illegible]~~ अलायो ॥ तुव अनन्य मम पितु के दासा ॥ तुमरो जस दसदिसन प्रकासा ॥ मै हौं सुत जदुनायक केरा ॥ यद्यपि सुत पें प्रेम घनेरा ॥ तद्यपि सुन है भूप कुमारा ॥ सुत तें सेवक होत पयारा ॥ स्वामी रीत परम पर एहू ॥ करें अधिक सेवक पर नेहू ॥ तातें तुम हमरे हितकारे ॥ हम तुमरे कछु भेद न प्यारे ॥ हमरे भक्त निपुण गुण खाना ॥ तुम लासो पग प्रेम अलाना ॥ पै विक्रम कछु लषहु हमारा ॥ धरम कर करहु विचारा ॥ अस कहि कियो धनुष टंकारा ॥ छूटन लग्यो निराच अपारा ॥ चले विसष वहु सायक पैना ॥ विनसन लगी ताम्र धुज सेना ॥ चहुं दिसि रण रथ मे जुल दीन्यो ॥ मघा वूंद सम सर झरि कीन्यो ॥ ~~[illegible]~~ रथ मातंग तुरंग अपारा ॥ सेना सुभट सूर सरदारा ॥ विन से विषम वाण जब लागे ॥ घायल वीर धीर उर त्यागे ॥ कटी ताम्र धुज सैन प्रतापी ॥ मानहुं प्रले समर थल व्यापी ॥ ~~चारि दंड महं अरि दल चोरा ॥ कियो हनन सव कृस्न किसोरा ॥ तीन अछोहिनि सैन लसेई ॥ हनि निराच रण मार गवाई ॥~~ चारि दंड महं कृस्न कुमारा ॥ तीन अछौहिनि सैन संघारा ॥ हाहाकार मच्यो चहुं या हीं ॥

धन्य धन्य रविवचन

सविविध प्रभु ने

सिथल तहिकाहीं॥ आयवेग सनमुषहरि पुधाई॥
लागे हनन बाण अतुराई॥ दोहा॥ कियो जुद्ध
अनिरुद्ध जदपि पै नृपसुतके बाण॥ सहि न स
को मुर्छित भयो गिरयो धरनि गत त्राण॥५॥
टीका॥ सो बाण जायकर के प्रद्युम्न के रथको जो
लगा तो तिसके लगते हीं वीर धीर का रथ त
तकाल भस्म होयगया ऐसे तिसका प्रभाव
देखकर हरीके पुत्र प्रद्युम्न जी कहने लगे कि हे
वीरों विषें श्रेष्ठ राजकुमार तैने जो मंत्र पढ
कर यह महा प्रचंड बाण मारा है मैं जानता हूं
कि तिसके रोकने को तीन लोक विषें कोई साम
र्थ नहीं है यह तेरा बाण जो है सो सत्य करके
अनरोक है इससें मेरेको जदुनंदन भगवानने
सहायता करके बचाय लिया है परंतू हे
वीरप्रधान अब तूं भी भली प्रकार
सावधान हो और मेरे आवते हुये इस विकट
बाणको रोक ऐसे कथन करकर महाबलकी
निधी कृष्णकुमार अपने प्रचंड बाणको धनु
षमें जोडकर और कान पर्यंत खेंचकर ताम्र
ध्वजकी वोर छोडदेते भये तब प्रद्युम्न जी के ध
नुषका छुटा हुआ बाण लागते ही राजकुमा
रके रथको तुरत भस्म कर देताभया तब ताम्र
कृष्ण कुमारके बाणका प्रभाव देखकर और तत
काल दूसरे रथपर सवार होयकर रणभूमी
के बीच सनमुख स्थित भया हुआ प्रद्युम्न जीको
ऊंची स्वरसें कहने लगा कि हे सूरसिरोमणी
हरीके दुलारे अब आप इस मेरा प्रण भी का
नदेकर श्रवण करिये क्योंकि जो मैं मन व
चन काया करम करके और सबके भरोसे

को त्यागकर केवल एक तुमारेही पिताके चरनो
का दृढ सेवक हूं तो इह मेरे हाथका छुटाहूआ
प्रचंड बाण इसरण भूमिका केबीच नाथ
तुमारे प्राणों की अवश्य हानी करेगा ऐसे कथन
करकर कुसमदासने बाण जोहै सो हाथसे छोड
दिया तबतो वे बाण जातेही प्रद्युम्न जी के हृदय
को भेदन करदेताभया और वीरधीर मूर्छा होय
करके तुरंतहीं रणभूमी के बीच गिरपडे तिन
की दसा देखकर सैना केसहित सब सैनापती और
सूरवीर चारो दिसासें हाय हाय पुकारने लग
पडे इसप्रकार मदन जो प्रद्युम्न जीहैं तिनको
रणभूमी के बीच घायल और मूर्छित पडे है
येदेखकर सात्यकी जी उतायलसें तुरतहीं
धावते चले आये और कोपसें भरे हूये आवतेही
ताम्रधुज के साथ जुद्ध मे जुट जाते भये और ब
डी लाघवता करकर अर्थात शीघ्रता पूर्वक बा
णों के प्रहार करने लग पडे उधर सें ताम्रधुज
केभी महा प्रचंड बाण छूटने लगे इसप्रकार दो
नो ओर सें अपनी अपनी भुजोंके जोरसें बा
णोंके प्रहार होते भये तबतो ताम्रधुज
ने रिसाय कर ऐसे गाढे बाण मारे किवे जाते
ही सात्यकी के हृदयको विदारन करगये अर्थात
हृदयके बीच धस गये तिनके कलेशसें वीरप्र
धान मूर्छा गत होयकर पृथवीपर सैन करने
के लोभी होयगये ऐसे तिनको रणभूमी मे सि
थल पडे हूये देखकर अनिरुद्ध जी कोपसें
धायकर और ताम्रधुजके सनमुख आयकर
बडे तीव्र बाण जोहैं सो मारने लगे इसप्रकार

२८

जैमिनिअश्वमेध

महा प्राक्रमी अनिरुद्ध जीने यद्यपि वहुत हीजु
द्ध किया तद्यपि वीरधीर ताम्रधजके क्रूर वा
णोंको सहार नहीं सके अंतको वे भी घायल
और असक्त भये हुये मूर्छा होयकर पृथ्वीपर
गिरपड़े ॥ ५ ॥ चौपाई ॥ आन महारथि
जे जे आये ॥ ते सब नृप सुत मारि गिराये ॥
भगी पंडुकी सेन सवाहीं ॥ रहौ न थिर रण
मेदनि माहीं ॥ सुभट ताम्रधुज वाणन केरी ॥
लाई समर मनु झरी घनेरी ॥ तब अर्जुन
जुग भुजा उठाई ॥ भाखे सुनहु सुभट समुदाई ॥
तुम सब वीर धीर उर त्यागे ॥ जाहु कहो का
यर रव भागे ॥ धरहु तनक धीरज जियमाहीं ॥
देखहु मम विक्रम वलकाहीं ॥ अस कहि पा
रथ सुभट सुधीरें ॥ भाष्यो वदन वचन जदु
वीरैं ॥ कृपासिंधु स्यंधन इह मोरा ॥
लैचलहो जहँ भूप किसोरा ॥ मे देखहु
तहि प्राक्रम भारा ॥ जास समर दल हन्यो
हमारा ॥ मानि वचन पारथ जदुराई ॥
चले चपल गति जान धवाई ॥ आये
जहां ताम्रधुज वीरा ॥ ठाढ़ो समर
धारि उर धीरा ॥ अरजुन देखि तासु वल
कारा ॥ होउ सजुग अव वीर उदारा ॥ मोर
वान और न सम नाहीं ॥ इह तो विदत भवन
त्रै माहीं ॥ अस कहि सात वाण संधानी ॥
मारे वीर करन लगतानी ॥ भंजि जान
सारथि संघारा ॥ भयो चकित लखि
भूप कुमारा ॥ द्रुतिय जान द्रुत होत सवारा ॥
कुंती सुत सों वचन उचारा ॥ आजहि
सफल जनम जग मेरो ॥ जोरन नयनन

ऐसे कथन करकरँ वीरधीर ताम्रध्वजने अपनी भाषा अर्थात ढुही सें एक वाण खैंच कर और धनुषमे जोड़ कर कान लग ऐंच कर जे जे जदुनाथ उचार करके कृस्न कुमार की ओर छोड़ दिया॥४॥ चौपाई॥ सो सर जाय मदन रथ काहीं॥ लागा भयो भस्म छनमाहीं॥ हरि नंदन तव वचन उचारा॥ सुनहु वीर वर राजकुमारा॥ जौन मंत्र पढि तैं सर गाढा॥ मारयो त्रिभुवन तासु नआढा॥ इह अन रुक्मिस त्य सुत राई॥ भये मोर जदुनाथ सहाई॥ पुनि अव सजुग सावधान रैहो॥ रोकहु मोर विकट सर एहो॥ अस कहि वदन मदन वलवाना॥ मास्यो वान तान लग काना॥ तुरत ताम्रधुज को रथ जारा॥ चढि दूसर रथ भूप कुमारा॥ समर मध्य अस वचन वखाना॥ सुनहो वीर सुवन भगवाना॥ जो मै करम वचन मन काया॥ ऐहुं अनन्य दास जदुराया॥ तो इह छुटत वान मम पानी॥ करिहैं अवसि समर तुव हानी॥ अस कहि छाडि दियो सर घोरा॥ लग्यो जाय उर कृस्न किसोरा॥ मुर्छित गिरयो रंग महि माहीं॥ हाय हाय माच्यो चहुं घाहीं॥ देखि मदन कहं घायल रण महं॥ सात्यकि धाय आय द्रुत तण महं॥ जुरे ताम्रधुज सों रिस वाढे॥ लगे हनन वहु सायक गाढे॥ दहुन ओरतें वान कठोरा॥ लागे मुचित होन भुज जोरा॥ पै सर विषम ताम्रधुजप्रेरे॥ ॥ धसे व उर सात्यकि केरे॥ भये तुरत मुर्छित रण माहीं॥ लखि अनिरुद्ध

भये कि जहां रण भूमिका के बीच वीर प्रधान ता
म्रधुज स्थित भया हुआ सो भादेता था तव अर्जुनने
तिसको देखकर दूरसें ललकारकर कहा कि हे वीर
उदार अव तूं सावधान हो देख मेरे बाण औरों कैसे
नहीं हैं इनको तीन लोकमें सव जानते हैं ऐसे क
थन करकर वीर सिरोमणि अर्जुन ■ तुरतही आप
ने गांडीव नामा धनुषमें सात बान संधानकर औ
र बलसें कान लग तानकर ताम्रधुजको मारता भया
तव तिन बाणोंके लगतेही सारथीके सहित राज
कुमारका रथ जो था सो चूर दूर होय गया इस
प्रकार अर्जुन के बाणों का प्रभाव देखकरके ताम्र
धुज अचरज के वस भया हुआ तुरतहीं दूसरे र
थपर सवार हो जाता भया और कुंतीका पुत्र जो
अर्जुन है तिसको वडी गंभीर वाणीसें कहने ल
गा कि हे वीर प्रधान पार्थ मैने जान लिया है जो
संसारमें मेरा जनम आजहीं सफल भया है क्यों
कि गौ ब्रह्मण पृथ्वी देवताउं के सुखदायक और
सरव चराचरके पालक तेरे सारथी जदुनंदनका
मैं इन नेत्रों करके दरसन पाय लिया है और हे
हरी के सखे मैंने केवल इसी निमित्त जज्ञ का
घोडा बांधा था और इसी निमित्त रणभूमीविखें
जुद्ध मचाया था इसी निमित्तहीं अनेक सूरवी
रों को बाणोंसे मारा तो तें जिसके निमित्त मैं इत
ना श्रम यतन किया आज सोई ■ मैंने प्रापत
कर लिये हैं हे वीर उत्तम पार्थ अव तो मेरे सर
व मनोर्थ सफल होय गये और ■ आसा
भी सव पूर्ण होय गई इह तीन लोकके नायक
भगवान जो हैं सो मैं प्रतक्ष सनमुख स्थित भये हूये
नेत्र भरकर देख रहा हूं ॥१॥ चौपाई ॥ हरि छवि
हेरि ताम्रधुज दासा ॥ अति विनीत मुख वचन

उत्तम और

प्रकासा॥ हे मुरार हे दीनन बंधू॥ हे मकुंद हे ग्रस
र निकंदू॥ हे हरि कृपा सिंधु जगदीसा॥ तुम्हरे
चरन मोर है सीसा॥ जस ग्रभिलाष रही उर मोरी॥
तस पूरयो तुव नंद किसोरी॥ कुमति कुटिल
कहे दीनदयाला॥ दे दरसन जग कियो निहाला॥
कृपासिंधु विनती कछु मोरी॥ कहि नवनत प्रभु
सन मुख छोरी॥ पै कृपाल तुव स्त्री मुख वरना॥
क्षत्रीधरम जुद्ध रण करना॥ तहि कुल जनम
दीन को राहा॥ सुभट देखि वाढ्यो उतसाहा॥ तातें
जो सासन प्रभु पाऊं॥ तो पारथ कहं समर दि
खाऊं॥ हरि प्रसंन मुख वचन वखाना॥ करहु
वीर प्राक्रम निज नाना॥ हम देखव तुव समर वि
लासा॥ ग्रस सासन जव कृस्न प्रकासा॥ तव ता
म्रधुज सुभट सुधीरैं॥ नाय सीस चरनन जदु
वीरैं॥ जोरि धनुष निज सायक काढे॥ ग्रर्जुन
वीर जोर भुज वाढे॥ उत तें कृस्न सखे वल भूरी॥
लागे हनन वान रिस पूरी॥ छुटे परस्पर जव ग्रस
वाना॥ ग्रंधकार दस दिसि प्रकटाना॥ वि
पुल काल लग दोहन केरा॥ भयो जुद्ध रण भूमि
घनेरा॥ एक एक कर ग्रंत न पायो॥ लखि विस्ता
र ग्रलप कछु गायो॥ कह्यो ताम्रधुज तव
कर जोरी॥ सुनहु नाथ विनती ग्रस मोरी॥
जव जव जस तुव दास मुरारी॥ कीन्यो प्रण
दीनन हितकारी॥ तव तव तस तुव भक्त सहाई॥
तिन प्रण पूरन कियो चनाई॥ मैं इहि काल क
रहुं प्रण एहा॥ सखा पुत्र नाती जुत नेहा॥ तुव
पद पदम पकरि जदुवीरा॥ पुनि दृढ जकरि प्रेम
जंजीरा॥ दोहा॥ नदी नरमदा तीर में वसत ना

ण पितु मोर॥ लैजैहैं तुमकों तहां भक्त सेन चित चोर॥ वाजिमेध सो करन है कृपासिंधु तु व दास॥ नित वासर ध्यावत तुम्है तजत और की आस॥७॥टीका॥ भगवान की छवी को देख देख कर हाथ जोड़ कर विनती के भरे हूये वचनों से कहने लगा कि हे कृपानिधान मेरी कुछ प्रार्थना है सो लज्जा के वस आपके सनमुष कथन नहीं कर सकता हूं परंतु इस विचार पर कहते हूये संकोच नहीं होता नाथ तुमने हीं अपने मुखारविंद से वरन न किया हूआ है कि क्षत्रियों का धरम है रण भूमी विखें जुद्ध करना सो तैं मैंने भी क्षत्री कुल विखें जनमधारन किया हूआ है और अब सनमुष सूरवीरों को देख कर हृदय में रण का उतसाह उमच उमच आवता है जो कृपासिंधू की आज्ञा पाऊं तो ईहां रण भूमी विखे आपके सनमुष हीं पारथ जो नाथ का सषा है तिस को जुद्ध में अपनी भुजों का कुछ प्रभाव दिखाऊं ऐसे सुनकर भगवान कृपानिधान प्रसंन होयकर कहने लगे कि हे वीर प्रधान तुम नाना प्रकार करके अपना अपना प्राक्रम जो है सो प्रकट करो मेरे चित्त में भी तुमारे रण विलास देखने की अतसे कर के अभिलाषा है जब इस प्रकार कृष्ण परमातमा की आज्ञा पाई तब वीर धीर ताम्रधुज भगवान के चरनो को नमसकार करकर और तुरंत हीं अपने धनुष में बड़े गाढे वाण जोड़ कर कान लग खेंच करके अर्जुन की ओर मारता भया और उधर तें महावीर भगवान के सषे अर्जुन भी तैसें कोप से भरे हूये भुजों के जोर से वाणों के प्रहार करने लगे इस प्रकार जब परस्पर वाण छूटते भये तब दसो हीं दिसा में अंधकार

सारथि तेरो॥ मै दरसे सब अगजग जाता॥ सुर
दुज धरनि धेनु सुखदाता॥ इहि हित मै मख वा
जि बंधावा॥ इहि हित महि रण रार मचावा॥ इहि
हित हने इमत मटिवाना॥ ~~दरसे आज कृष्ण मन~~
~~वाना॥~~ सो पाये अब कृपानिधाना॥ दोहा॥ भये म
नोरथ सफल सब पूरी आस हमार॥ तीन लोक
नायक विदित सनमुख लिये निहार॥६॥ टीका॥ और
महा रथी भी जो जो आये सो सब ही राजकुमार ता
म्रधुज ने बाण मार मार कर मूर्छा को प्रापत कर
दिये इस प्रकार फौज की सेना जो है सो सब भाग च
ली रणभूमी विखे थिर रहने को सामर्थ नहीं हो
ती भई ताम्रधुज ने तिस समय बाणों की मानो
झड़ी लगाय देई तब अर्जुन ने अपनी सेना
के सूरवीरों को व्याकुल भागे जाते देखकर दोनो
भुजा उठाय कर और पुकार कर कहा कि हे
सूरवीरो तुम हृदय के धीरज को त्याग कर का
यरों के समान कहां भागे चले जाते हो ठहरो
कुछ धीरज करो देखो तो रण मे मेरा प्राक्रम
कैसा होता है और मै क्या चमतकार दिखावता हूं
ऐसे सब को सुनाय कर फिर महा बाहू जो अरजुन
सो जदुनंदन भगवान को कहने लगा कि हे कृपा
के समुद्र अब दया करके मेरे इस रथ को जहां ता
जा मोरधुज का पुत्र ताम्रधुज रणभूमी विखे
स्थित भया हूआ है तहां ले चलिये मै तिस
के प्राक्रम को देखने चहता हूं कि जिस के प्रभाव
ते तिसने हमारे संपूर्ण दल का संघार कर दि
या है ऐसे अर्जुन का वचन मान कर कृष्ण भगवा
न तुरत हीं बडी चपल गती से रथ को उड़ाय
ले चलते भये और ततकाल हीं तहां आय प्रापत

सुत हरि कंध चढाई॥ सुनत तुरंत मोरधुज राया॥ उठि सनमुष अचरज बस धाया॥ देखे सुत कर कंध मुरारी॥ भक्त संत दीनन हित कारी॥ नाथनाथ मुखे वचन उचरयो॥ प्रेम विकल मेदनि गिरि परयो॥ कूदि कंध ते तब जदुराई॥ लियो उठाय भक्त निज भाई॥ हृदय लगाय सफल पुनि कीन्यों॥ प्रेमवार दृग वार नलीन्यो॥ बहुरि मोरधुज कर गहि हाथा॥ आये मषमंडल जदुनाथा॥ तहां भूप सिंघासन सूचे॥ बैठारे नंदनंदन ऊंचे॥ पूजत विधि जुक्ति अमेवा॥ पदपखारि चरणामृत देवा॥ जुत सुत बंधु दार परिवारा॥ लीन्यो भूप सीस सब धारा॥ धरत अंकपुनि चरन मुरारी॥ मुदित मोरधुज गिरा उचारी॥ आज धन्य कुल मोर सुहाई॥ अरु मै धन्य जगत जदुराई॥ कोटि जनम कर भारे॥ मिटिगे दुरितदोष दुष सारे॥ मै पापी बावर सकले का॥ प्रभु तासो दै संसति डंका॥ रही जुत पत दरस ललचाती॥ भई आज सो सीतल छाती॥ कौन नाथ सम दीनदयाला॥ दै दरसन मुहि कियो निहाला॥ सुत जुत धाम वाम परिवारा॥ राज भूमि भृत संपति सारा॥ पुर परिजन हितु मीत पयारे॥ प्रभु कहे अरपण सकल हमारे॥ अपने जानि देवकी लाला॥ रहहु सदा अनुकूल कृपाला॥ अस कहि उठे मोरधुज राई॥ सुमरत उर हरि भक्त सहाई॥ अर्जुन जुत चित प्रेम घनेरा॥ सकल समाज जादवी केरा॥ भिन्न भाव कछु हृदय न आना॥

कीन्यो पूजन कृस्न समाना॥ पुनि भूषन पट रुचिर मंगाये॥ जथा जोग सब कहं पहिराये॥ चरनोदिक गहि सबन महीसैं॥ धारि लियो सादिर निज सीसैं॥ हरितें अधिक दास हरि केरे॥ स न माने नरनाथ घनेरे॥ दोहा॥ बृंदारिक गण गगन तें दे दुंदभि अनुकूल॥ धन्य धन्य कहि भूप कहे लागे बरषन फूल॥८॥ ऐसे कथन कर कर ताम्रध धायकर के भगवान् के चरनों को हाथ गावता भया और फिर संसार के फंदन काटने वाले दीनानाथ को तुरत हीं उठाय कर और कांधे पर चढाय कर रोम रोम प्रेम करके पूरित भया हुआ अपने पिता की वोर ले चलता भया तब अर्जुन और प्रद्युम्न इत्यादि सूरवीर भी सब पीछे पीछे हीं धाय चलते भये इस प्रकार मुरारी भगवान की व भक्तवत्सलता देख कर अर्थात भक्तों पर सनेह प्यार देख कर सब को सत्रू भी बिसर गया और रण का जुद्ध करना भी बिसर गया धन्य धन्य कहती हुई संपूर्ण सेना भगवान के पीछे हीं चल पड़ी सब कोई अपने अपने मुष सें कहता है कि हो भाई संसार मे प्रभू के समान और प्रभू के इस दास समान और दूसरा कोई ना देखा ना सुना है सैनाके सहित सब सेनापती इसी प्रकार धन्यवाद अर्थात सुजस जो है सो गावते चले जाते हैं तब ताम्रधज देवा नदी के किनारे पर ~~जाय कर~~ कि जहां राजा मोरधज विराजा हुआ जग्य कर रहा था जाय प्रापत भया दूत ने आगे हीं जाय कर जणाय दिया कि देखिये महाराज तुम्हारा पुत्र ताम्रधज जदुनंदन भगवान को अपने कांधे पर चढाये हुये लिये आवता है ऐसे सुनकर मोरधज राजा आचरज के

वसमयाहूआ तुरत उठकरके सनमुष कोधाय
चला आगेक्यादेखताहै कि भक्त संत और दीनो
के हितकारी मुरारी भगवान सत्य करके पुत्र के
कांधे पर विराजे हूये सोभादेते हैं तिनको
देखतेही भूप भक्त नाथ नाथ कहता प्रेम करके
व्याकुल भया हूआ तहां हीं पृथ्वी पर गिर पड़ा
ऐसे तिसकी दसा देखकर दीन बंधू जदुनंदन तुर
त कांधे सें कूदकर और जायकर भक्त को प्रीती
पूर्वक उठाय लेते भये और सफल करने के न
मित्त हृदय सें लगाय लेते भये तिस समय प्रे
म नीर जो है सो कृपा सिंधू के नेत्रों का रुकता
नहीं भया तब प्रसंन भये हूये भगवान मोरध
ज का हाथ पकड़ कर तहां जग्य मंडिल के बी
च चले आये राजा ने कृपानिधान को बड़े सुं
दर और पवित्र ऊंचे आसन पर आसीन कि
या अर्थात बैठाय दिये फिर विधीपूर्वक भक्ती
प्रीती सें पूजन करकर चरन प्रक्षालन करवा
ये व्याधु लाये और वे दीनबंधू के चरनों का ज
ल लेकर स्त्री पुत्र भ्राता और परिवार के सहित
राजा ने सब सीस पर धारन कर लिया तिसतें
उपरांत फिर नंदलाल के चरन कमलों को अप
ने अंक अर्थात गोद मे राख कर आनंद सें मोर
धुज कहने लगा कि हे जदुराज महाराज आ
ज मेरी कुल भी धन्य और मै भी धन्य हूं कि जि
सके कोटि जनम के पाप और दुख कलेस सब
नास को प्रापत होय गये हैं नाथ मै तो महा प
पी पांवर कलंक की खानी था परंतू प्रभू
तुम ने दया मेरे को संसार मे डंका बजाय
कर तार दिया है भगवान तुमारे दरसन को ल
लचती हूई मेरी छाती जो तपत होय रही थी

जो है सो छायत हो जाता भया ऐसे बहुत काललग दोनो सूरवीरों का बड़ा भारी घोर युद्ध होता रहा एक का दूसरे ने कुछ पार नहीं पाया विस्तार के भय से कथा भी संक्षेप करके ही गायन की गई तब ताम्रध्वज भगवान के आगे हाथ जोड़कर विनती करने लगा कि हे कृपानिधान मेरी प्रार्थना है कि जगत मे जब जब तुमारे दास भक्तों ने जैसा प्रण किया हे दीन हितकारी तब तब तिन का तुम तैसा ही प्रण पूरण किया निश्चय याते भक्त पाल इस समय मैं भी यह प्रण करता हूं कि [illegible] तथा पुत्र पौत्र और हितु संबंधियों के सहित नाथ तुमारे चरन कमलों पकड़कर और प्रेम के जंजीरों से भली प्रकार जकड़कर जहां नरमदा नदी के किनारे पर बैठा हुआ [illegible] रात्री दिन तुमको ध्यावता [illegible] प्रभू के चरनो का दास मेरा पिता अस्वमेध ज[illegible]ग्य कर रहा है हे संत भक्तों के [illegible] मन को मोहित करने वाले भगवान मै कौतुक से उठायकर तुम को तिसके पास ले जाऊं ॥ १ ॥ चौपाई ॥ अस कहि तुरत ताम्र ध्वज धायो ॥ प्रभु पद पंकज पानि लगायो ॥ बहुरि उठाय लिये निज कंधैं ॥ नृपसुत सपदि समन भव फंधै ॥ रोम रोम पूरित अनुरागा ॥ चल्यो लेत पितु पैं बड़भागा ॥ पारथहू पाछे लपुनि धाये ॥ प्रद्युम्नादि सकल भट आये ॥ भक्त वत्सलता देखि मुरारी ॥ विसरि गई सब कहे रिपुरारी ॥ धन्य धन्य रटत समुदाई ॥ चली जात सेना पछिआई ॥ प्रभु सम ओ प्रभ दास समाना ॥ देख्यो सुन्यो न संसृति आना ॥ सब सैनप जुत सैन सकाहीं ॥ धन्यवाद अस गावत जाहीं ॥ रेवा तीर ताम्रधज गमना ॥ जहां मोरधज भूपति रमना ॥ दूत भन्यो आगल कछु जाई ॥ आवत

श्री कृष्णाय नमः

श्री मोरध्वज कथा

वाजि मेध जहि वांधि हमारा॥ रोकि लियो दल सकल अपारा॥ जीत्यो अर्जुनादि सववीरा॥ सरह सवाहु सम रिपु रणधीरा॥ मोरे पगन प्रेम अालाना॥ वरवस डारि भक्त गुण खाना॥ तोरे ढिग प्रण धारि सुहावा॥ लैआयो कछु विलम न लावा॥ प्रभु मुख सुनत वचन सुखदाई॥ भने मोरधज सीस झुकाई॥ नाथ रावरी वाण सदा हीं॥ वहै वसु व रु दासन काहीं॥ नत सुत सखा तु वजोई॥ तिनकहे जीति सकै किमि कोई॥ अज संकर कछु पाय न पारा॥ कौन मोरसुत दीन विचारा॥ नाथ देखि तुव अपनी कोरा॥ जनप्रण पाल्यो नंदकिसोरा॥ अस कहि वदन वेग नरनाहीं॥ लियो मंगाय तुरग मष ताही॥ सौं प्यो प्रभुहि चरन सिरनाई॥ लीन्यो हरषि विपुल जदुराई॥ चले वहोरि सदल सुखमाते॥ भक्त भूप मुख गुणगण गाते॥ नृप की प्रीति विलोकि अघाहीं॥ पुनि पुनि जादव सराहीं॥ दोहा॥ भनत धन्य इह मोरधज संस्तति भक्त प्रधान॥ जेहि रिझाय निज भक्ति वस कृपा सिंधु भगवान॥ ९॥ टीका॥ फिर राजा मोरधज अपने पुत्र को कहने लगा कि अहो पुत्र तूं तो जगत मे कुलतारक भया है देखो जिसने अपनी भक्ति के वस ईहां ल्याय करके वारन जो हसती है तिसके तारनेवाले भगवान प्रतक्ष मेरे सनमुष करदिये और मैने नेत्र भरकर दरसन पाय लिया है ऐसे मोरधज की वडी वनीत अर्थात विनती की भरी हुई वानी सुनकर और

तिसके हृदयकी प्रीत प्रतीत देखकर कृपानिधान
सुखपूर्वक वारवार मिलते भये फिर कृपादृष्टी
सें तिसके सीसपर हाथ धरकर दीनवंधू कहनेल
गे कि हे राजन तेरे समान मेरे चरन कमलों
की प्रीतीरस मे भीगा हुआ संसार मे और कोई दू
सरा भक्त नहीं है और तेरे पुत्र के समान मेरा
इष्ट भक्त और सूरवीरों विखें स्रेष्ट तीनलोक
मे कोई देखन हीं पड़ता है देखो जिसने हमा
रे जग्य का घोड़ा बांधकर और हमारे अपार
दल को रोककर सहसवाहु के समान रण
विखे धीरज के धाम अर्जुनादि सव ~~के~~ वीरथी
रों को अपनी भुजों के वलसें जीत लिया और
मेरे पाउं मे जोरावरी प्रेम का जंजीर पायकर
और विलंव को त्यागकर हे राजन तुरत तेरे पास ले
आया है इसप्रकार भगवान के मुखसें वड़े सु
खदायक वचन सुनकर राजा मोरधज दीनवा
णीसें सीस नायकर विनती करनेलगा कि हे कृ
पानिधान मै जानता हूं जो आप की सदा ऐसीही
वाण है अपने दास जो होते हैं ~~[illegible]~~ तिनको
नाथ तुम जगत मे वड़ा हीं देते हो नहीं तो तु
मारे सखा और पुत्रों ~~[illegible]~~
~~[illegible]~~ के जीतने को संसार
मे कौन सामर्थी है कि जिनके वल प्राक्रम का व्र
ह्मा और संकर भी पार नहीं पाय सकते मेरा पु
त्र कौन दीन और किस गिनती मे है प्रभू तुम
अपनी प्रभुताई की ओर देखकर अपने दास
के प्रण को पाला है और जगत मे सुजसका
पात्र वनाय दिया है ऐसे कथन करकर राजा
ने ~~[illegible]~~ जग्य का ~~[illegible]~~ वांधा हुआ घोड़ा

जोथा सो तुरत मंगवाय लिया श्रौर भगवान
को सौंपदिया दीनानाथने प्रसन्न होयकर लेलि
या फिर अपने संपूर्ण दल श्रौर सूरवीरों के स
हित भक्त प्रधान राजा मोरधज के गुणगण गा
वते हूये भगवान तहों से चल पड़ते भये इस
प्रकार राजा मोरधज की अद्भुत भक्ती श्रौर अपा
र प्रीती देखकर जादव जो हैं सो बार
वार श्लाघा बड़ाई गायन करते चले जाते हैं
कहते हैं कि अहो धन्य है धन्य है इस राजा मोर
धज कि जिसने अपनी भक्ती केवल भगवान कृ
पानिधान देखो कैसे रिझायलिये हैं ॥ ६ ॥
चौपाई ॥ कछुक दूर जब प्रभु कढ़ि आये ॥ तब अ
र्जुन हरि पद सिर नाये ॥ कियो विनय जुग जो
रि तपाना ॥ उदव भाग हमेरे भगवाना ॥ जानत
हू अपने मन माहीं ॥ मोसम धन्य धरा कोउ नाहीं ॥
मुहितें प्रभु सब नृपन जिताई ॥ दियो सुजस मे
दनि अधिकाई ॥ नाथ कथन कछु मोर ढिठा
ई ॥ तम हु चूक लिखि अनुचित ताई ॥ मोरे उर
दीवर जन कोई ॥ मोते अधिक न सेवति होई ॥
धरम सुवन अग्रज इक मोरा ॥ अहै दास
तुव नंद किसोरा ॥ जासु धरम हित वपुष सला
दे ॥ बहु कलेस देवकि दुलारे ॥ श्रौर हु कहौ
कौन संसारा ॥ दीन नाथ अस दास तुम्हारा ॥
तब मुसक्याय भने भगवाना ॥ सुन हौ चित
दै सखे सुजाना ॥ जदपि धरम सुत भ्रात
तुम्हारा ॥ अहै मोर दृढ दास पयारा ॥ तदपि
धरम धुरंधर आना ॥ सो सुन हो अब सखे सुजा
ना ॥ जे दुज हित तनधन सुतदारा ॥ कर
हि न कछु सरवस निज प्यारा ॥ तब

सो आज भलीप्रकार सीतल होय गई है अनाथोंना
थके समान कौन ऐसा दीनपाल और कौन ऐसा
दीनपाल है कि जिन्हों ने मेरे जैसे महा कुटिल
कपटी को निहाल करदिया है अब दीन बंधू मे
रा धन धाम राज देस स्त्री पुत्र परिवार पुरजन
और हितू संबंधी सब आपके हीं अरपण हैं हे
देवकी नंदन अपने जानकर इनपै अनुग्रह पा
लिये ऐसे कथन करकर राजा मोरधुज उठखे
डा भया और हृदय से भिन्न भाव को त्याग कर अ
र्जुन के सहित सब जादवी समाज का जदुराज
के समान हीं पवित्र पूजन किया फिर बडे सुंदर
दिव्य भूषण वस्त्र मंगवाय कर सब को सनमान
पूर्वक जथा जोग पहिरायदिये और फिर सब के चरन
पखार कर वे चरनो का जल जोथा सो लेकर सन
मान सें अपने सीसपर चढायलिया राजा मोरध
ज ने भगवान के दासों का भगवान सें अधिक आदर
सतकार किया तिस समय ~~आकास मारग में~~ देव
ता ~~[illegible]~~ धन्य राजा मोरधज धन्य राजा मोरधज
ऐसी श्लाघा करकर और आनंद सें दुंदभी बजा
यकर आकास मारग तें फूलों की बरषा करदेते
भये ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ बहुरि भूप निज सुतहिं उचारा ॥
तुव कुल तरन भयो संसारा ॥ जहि निज भक्ति वि
वस रत ल्याये ॥ गज तारन प्रभु मोहि दिखाये ॥ दे
खि मोरध्व की अस प्रीती ॥ उर प्रतीत मुखगिरा ब
नीती ॥ बारबार तहि मिले सुखारी ॥ धरे सो हा
थ नृप माथ मुरारी ॥ भने वचन अस दीन दया
ला ॥ ~~तुहि सम~~ तुव समान नहिं आन भुआला ॥
मम पद मदन प्रीति रस साना ॥ धरम धुरि
धर भक्त प्रधाना ॥ अरु तुव सुवन सरिस त्रै
लोका ॥ कोउ न सुभट सूर अविलोका ॥

धरमके पुत्र मेरे वडे भ्राता राजा जुधिष्टर
एकवे देखपडते हैं किजिन्होंने धरमके न
मित्त अपने सरीर नानाप्रकारके वहुत कले
स सहारे हैं हेदीनानाथ इनते भिन्न ओरक
िये जो तुम्हारा कौन ओसा दृढ से
वक है इसप्रकार अर्जुनका कथन सुन
कर दीनवंधू मुसक्याय कर कहने लगे कि
हे सषे तेने जो पूछा है सोचित्त देकर श्रव
ण कर जद्यपि तुमारा भ्राता धर्म पुत्र राजा जु
धिष्टर मेरे दृढ दास ओर परम प्यारा है तद्यपि
हे सषे धरम धुरंधर अर्थात धरमके धारने
वाले ओर हीं होते हैं सो कैसे भी होते हैं कि जो
ब्राह्मणों के नमित्त अपना तन धन धाम
स्त्रीपुत्र इत्यादि सर्वस कुछ भी प्यारा नहीं कर
ते हैं सब कुछ तिनके हीं अरपण करदेते हैं
तव अर्जुन हाथ जोडकर विनती करने लगा
कि हे कृपानिधान सो ओसा कौन है दया करके व
ताय दीजिये भगवान कहने लगे कि हे सषा
ए ही मोर धज राजा तुम देख आये हो ओ
र जिसके पुत्र के साथ तुमने रण भूमी विखे जु
ध किया है तिसवि खे मेरी भक्ती ओर
वल प्राक्रम जैसा कहै सो सषे तुम सव देख
हीं लिया है अब जो तुम राजा मोरधजका ध
र्म प्रभाव देखना चहते हो तो ब्राह्मणका सरीर
धारकर ओर चतुराई से अपना भेद छिपा
यकर तहां चलो ओर देखलेवो कि वे मे
रा भक्त कैसा धरम धारी है अर्जुन कहने ल
गा कि दीनद्याल वहुत नीकी वार्ता है मेरे
चित्त मैं तिसका धरम देखने की रुची है

तब मुरारी भगवान ने अर्जुन के सहित कौतुक में तुरत अपना ब्राह्मण सरीर धारन कर लिया और संपूर्ण जादवी समाज को तहां हीं छोड़कर राजा मोरधजकी परीक्षा लेने को चले आये और आवते हीं राजा के द्वार पर स्थित होय गये तिनकें कपट को कोई कैसे जान सकता था तब तिनको देखकर द्वारपाल जायकर के राजा सों कहने लगे कि महाराज किसी काजी के निमित्त आपकें द्वारे पर दो ब्राह्मण आयकर स्थित भये हुये हैं ऐसे द्वारपालों का कथन सुनकर राजा तुरत हीं बाहिर चला आया और द्वारे पर ब्राह्मनों को देखकर प्रणाम करकर और सनमान सें हाथ पकड़कर भीतर भवन में लैं आवता भया ॥२०॥ चौपाई ॥ तहं सविधि पूजन सुम कीनो ॥ पद पषारि चरणोदिक लीनो ॥ सोउ चरन जल जुगल द्विजे सू ॥ धारि लियो निज सीस महेसू ॥ करि प्रणाम पुनि वारहिं वारा ॥ जोरि जुगल कर विनय उचारा ॥ कहिये विप्र हेत कहि काजू ॥ कियो भवन मम पावन आजू ॥ वेग विलम तजि देहु सुनाई ॥ मैं जतन करहिं करहुं सिव काई ॥ तब द्विज भने नरें उदारा ॥ ~~जेहि कित आये तुव दासा~~ हम आये हैं तुम्हरे द्वारा ॥ धरम धुरंधर धरा सुधीरा ॥ सुन्यो तुम्हैं वार न दुज पीरा ॥ मम अभिलाष कठिन अति राई ॥ जो तुमतें बनि परहिं कदाई ॥ सोउ प्रकार विचारि महाना ॥ राखिले हु हमरे भव प्राना ॥ दानी नाम तुम्हार अनूपा ॥ सुनि आये हम तुव ढिग भूपा ॥ धन अभिलाष हृदय कछु नाहीं ॥ द्विज कुल जनम पुत्र पितु दोई ॥ मिल्यो [illegible] मग किहरि के सलो ॥

मोरे सुत हिं धर्यो ततकाला॥ तव मै हृदय धीर निज त्यागा॥ दुखित दीन तहि चरनन लागा॥ वार वार अस विनय उचारी॥ रह्यो एक सुत मोर मृगारी॥ दसा विलोकि वृद्ध कर मेरी॥ छाडि देहु करि दया घनेरी॥ धर्म किये सुन हो मृगराई॥ होहिं लोक परलोक भलाई॥ परहित तें पर धरम सुहावा॥ औरन हीं कोई संसृति गावा॥ जिन्हि पाल्यो जीवन पर दाया॥ सो जग धन्य अहे मृगराया॥ व्याघ्र सुनत मुख गिरा उचारी॥ दयाधर्म नहिं रीति हमारी॥ तव मै कहा सुनो मृगराई॥ अव तुव कौने हु जतन उपाई॥ तज हौ मोर सुवन इह व्यारा॥ सुनत सिंह अस वचन उचारा॥ वचै तोर सुत एक उपाऊ॥ जो तुमतें वनि परै कदाऊ॥ अहै मोरधज नामक राजा॥ धरम धुरंधर जगत विराजा॥ विप्र संत सेवक वहुमानी॥ वचन पाल प्रणपूरक दानी॥ दोहा॥ ताकर दक्षण अंग तुव जो मोहि देहु लयाय॥ तो नहिं करहौं तोर सुत मै भक्षण द्विजराय॥ ११॥ टीका॥ तहां वधीपूर्वक तिनका पूजन किया और चरन पषार कर तेई चरनो का जल लेकर सनमान से सीस पर धारन कर लिया फिर वारवार प्रणाम कर कर और हाथ जोड कर दीनवानी से विनती करने लगा कि हे ब्रह्मण अव कृपा करके कहिये जो कौन काज के निमित्त आप ने चरन धार कर मेरे द्वार को पवित्र किया है विलंव को त्याग कर के सुना दीजिये मेरे तें जैसी होय सकती है प्रभू तुमारी सेवा करता हूं तव ब्राह्मण कहने लगा कि हे भूप उदार मैं तेरे को धरम धीरज की निधी और ब्रह्मणों के दुःख काटने

पारथ कर जोरि अलाये॥ कौन नाथ अस देउ बताये॥ भने कृपाल मोरधुज एही॥ देखिआय तुम जौन सनेही॥ जाके सुत सो संगर माचा॥ अहै सुभक्त मोर मव साचा॥ पुत्र भक्ति विक्रम वल जैसो॥ देख्यो सखा समर तुम तैसो अव जो भक्त मोरधुज केरा॥ चाहु धर्म तुव पारथ हेरा॥ तो धरि विप्रभेष चतुराई॥ चलहु तहां निज मर्म दुराई॥ अर्जुन कह्यो बात प्रभु नीकी॥ अहै मोर रुचि देखन जीकी॥ तव पारथ जुत तुरत मुरारी॥ कौतुक लिये विप्र वपु धारी॥ छोड़ि समाज जादवी ताहों॥ चले करन प्रीती नरनाहों॥ आये भूप द्वार दुज दोऊ॥ ता कर कपट लखै किमि कोऊ॥ द्वारप नृप सो जाय अलाये॥ नाथ द्वार तुव दै दुज आये॥ दोहा॥ सुनत भूप द्वारप मनन कढ़ि आयो द्रुत द्वार॥ देखि दुजन कहं लै गयो मंउ पजुत सतकार॥ १०॥ ऐसे जब कुछ एक दूर चले आये तब अर्जुन चरनोपर सीस नाय कर विनती करने लगा कि हे कृपानिधान मेरे वडे पूर्ण भाग हैं और मै अपने मनमे जानता हूं जो मेरे समान पृथवीतल पर कोई धन्य नहीं है ~~कि मेरे नाथ~~ प्रभू तुमने मेरे हाथते सवरा जाउंको हार दिलाय कर और मेरी जीत कराय कर संसारमें भली प्रकार सुजस छापा तब नाय दिया है अब दीनानाथ मेरा कथन ढिठाई अथवा मूरखताई सी है प्रभू इसको अजोग जान कर आप दया कर के क्षमा ही करिये सो क्या है कि मेरे हृदयमे मेरे ते अधिक प्रभू का दास संसार मै और कोई नहीं होगा

वे स की रीती नहीहै इन तो मानुष्यों के लि
ये जो यहे मैं तेरे पुत्र को नहीं त्याग सक
ता हूं हे राजन जब इस प्रकार सिंह ने कहा
तब मैं निरास होय कर तिसको फिर कहने
लगा कि हे सारदूल अब तूं ~~कौन~~ कोई
ऐसा भी उपाय है कि जिस तैं तूं मेरे बाल
क के त्याग सकै तब सिंह कहता भया कि
ब्रह्मण एक उपाय जो कदाचित तेरे सें ब
न पडे तो तेरा पुत्र अवश्य बच जाता है
सो कौन जन नहै कि धर्म के धारने वाला ज
गत मैं यश दानी मानी और संत ब्रह्मणों
का सेवक अपने बचन प्रण के पालने
वाला राजमोरध्वज नाम करके जो लोगों
मैं उजागर है तिस के सरीर का दहिना भा
ग जो तूं ब्रह्मण तूं त्याय कर मेरको
देवें तो मैं तिसको रुची पूर्वक पायकर
तेरे पुत्र को भक्षण नहीं करूं गा अवश्य
त्याग देऊं गा॥ २२॥ चौपाई॥ अस जब
सिंह बचन मुहि बरना॥ तब मैं भयो वि
कल पग धरना॥ भूप देन तन दु
र्लभ एहू॥ मिलहिं मोहि कहि विधि सु
त नेहू॥ सुनत विप्र मुख बचन भुआ
ला॥ भने भूमि सुखे हृदय विसाला॥ ध
न्य भाग मम भाग नरा जू॥ जहि हित तव
चहिं विप्र सुत आजू॥ इहि ते कौन
धरम अधिकाई॥ जो मुहि तें दुज होहिं

भलाई॥ पुन्य मूल मे संतति तबहीं॥ दुज अनुकूल होयगो जबहीं॥ सत्य वचन सुन हौ दुज राया॥ नुव अरपण मोरि इह काया॥ अ ह सुसफल धन्य तन सोई॥ लागै विप्र अर्थ मव जोई॥ दुज कारज हित तनक सरीरा॥ होत न दुख कलेस कछु पीरा॥ ~~देहु अर्ध तन मे दुजराज~~ ~~पा~~॥ अव तुव सुत न हतहि मृगराया॥ ~~बोले~~ सुनि मू पतिरानी॥ आई नार असस पि सुनत मोरधुजरानी॥ आई पति पद प्रीति सुमानी॥ पाके सुवन ताम्रधुज आये॥ भ क्ति प्रेम मानस सरसाये॥ दुज निज कथन जा व ना की नी॥ प्रकट सुनाय दहन कहे दीनी॥ सुनत नारि सुत नृपति केरे॥ भये मगन मन मोद घनेरे॥ तव बोली तिय हरष उमंगी॥ हे त नाथ भामति अर्धंगी॥ तो ते मुनि दे हौं ~~नाई~~॥ ले है प्रभु निज सुत हिं वचाई॥ जननी वचन सुनत हित साना॥ भने ताम्रधुज तने सुजाना॥ ~~सुनहु~~ विप्र सुत आत्मज सुत जोई॥ है तसु जनक रूप जग सोई॥ तो ते मुनि हरि के मुष देहैं॥ विप्र उवारि सुवन निज लेहैं॥ तिन कर वचन सुनत दुज का हा॥ सिंह कथन औरहूं कछु रा हा॥ मुनि आवत इत वार वारा॥ सिंह वदन अस ~~...~~ प्रकट उचारा॥ नृप तिय तनै दोऊ सुष भरि कै॥ निज निज कर मो आरा धरि कै॥ पति हरि सो कहो चउर सारा॥ करैं मोर धुज तन जुग फारा॥ सोमे दन भाग व पुराई॥ दे हौं

मारदूलकहंजाऊं दोहा॥ करिपूरो आपन वचन सुतकेहलेहुं छुडाई॥ पुनिजावहुं निज भवन कहं सुमरत सीजदुराई॥२२॥ टीका॥ इसप्रकार जवसिंहने मेरेको कहा तवराजनमे चित करके व्याकुल होयगया और विचार कियाकि राजाके सरीर का प्रापत होना बडा कठिन है मे पुत्रके काज के हाथसें कैसे छुडाऊंगा और प्राण आधार मेरे को कैसें मिलेगा ऐसे ब्राह्मण केतुरछ्हें वचन सुनकर राजाप्रसंनहोयकर कहनेलगा

कि हे ब्राह्मण आज मेरे भाग्य संपूर्ण भागोंके राजा हैं कि जिसके नेमि जसिंहका ऐसा हूआ तुमारा पुत्र मौतको प्रापत होवेगा अर्थात छूटजावेगा इसतें अधिक जगतमे कोनधरम है जो मेरे हाथसे ब्राह्मणका भलाहोय जावे मे संसारके बीच तवही पुन्यमान गिनाजाऊंगा कि जब मेरें ब्राह्मण ही ठीक करप्रसंन होवेंगा सत्य वचन हे दुजउत्तम मैंने इहे अपना सरीर तुमारे अर्पण किया धन्य है धन्य है सोई सफल सरीर कि जोजगतमे ब्राह्मण के अर्थ लागेगा ब्राह्मकार्ज करतेहूये सरीर को कुछ पीडा कलेस भी व्यापत नही होता है मे सत्य कर के ब्राह्मण अवतेरेको अपना आधा सरीर देता है ~~मेरे पुत्रको सिंहजो है सो~~ इस मेरे सरीर को भक्षणकर के सिंह जो है सो तेरे पुत्र को त्यागदेवेगा

हरने वाला सुन कर तू ही तेरे घर मैं चले आ-
ये हैं मेरे चित्त की अभिलाषा जो है सो
बड़ी कठिन है जो कदाचित तेरे से बन पड़े
तो परम उपकार बिचार कर जगत मैं हमारे
प्राणों की रक्षा कर ले हे राजन हम दोनो
पिता पुत्र ब्राह्मण हैं और तुम को दान मान
मैं महा प्रवीन सुन कर धर्म की अभिला-
षा से तुम्हारी ओर चले आवते थे मारग
के बीच बन मैं से एक महा भयानक सिंह नि-
कल कर के मेरे पुत्र को पकड़ लेता भया
तब मैं तिस को देख कर पुत्र की [illegible] से व्या-
कुल भया हुआ जिस के चरनो पर गिर पड़ा
और मुख से बार बार ऐसी बिनती करने लगा
कि हे महाराज मैं दीन धन हीन बृद्ध ब्राह्मण
हूं और इह एक ही पुत्र प्राणों का आधार है
तूं मेरे बृद्ध की दीन दसा देख इस बालक
को दया कर के छोड़ दे इह तेरा अत्यंत धर्म
होवेगा क्यों कि धर्म के करने से लोक पर-
लोक मैं भला होता है और अपने हाथ से
किसी का भला जो होय जो है तो इस से परे
और कोई धर्म नहीं है जिस पुरुष ने सदा
जीवों पर दया पाली है तिस के समान सं-
सार मैं और कोई धन्य नहीं है इस प्रकार
ब्राह्मण के मुख से बचन सुन कर सिंह कह-
ने लगा कि हे ब्राह्मण तैने सब सत्य कहा
है परंतु इह दया धर्म जो है सो हमारे

देवें अब हे राजकुमार जो तुम इस प्रकार से देको राजाका शरीर चीर देवो तो मैं तिसका दक्षिण भाग लेजाय कर भक्षणके निमित्त सिंहको देऊं और अपना वचन पूर्ण जान कर तिस नें बालकको जिवायकर सुखपूर्वक कृष्ण कृष्ण रटता अपने घरको चला जाऊं॥ १२॥ चौपाई॥ विप्र वचन सुनि भूप बखाना॥ अब विलंब जनि करहु सुजाना॥ दोऊ तनत उर सोक रिलानी॥ पकरि लेहु आरा निज पानी॥ सिर तें धरत पगन लग मेलु॥ द्वै तन करहु मोर जुग बेलु॥ विप्रकाज कर कीरति जोई॥ उदय सूर सम सो नित होई॥ सुनत मोरधज वचन तुरंता॥ सुमरत हृदय कृष्ण सतवंता॥ भूप सीस आरा धरि दीन्यो॥ हाहाकार जनन लखि कीन्यो॥ सुरपुर तें सुरवृंद सबाहीं॥ चढि चढि रुचिर विमानन माहीं गगन पंथ ठाढे सब आई॥ कौतुक लखन मोरधजराई॥ नृप थिर मे रु माहिं उदारा॥ चलत सीस प्रति तीछन आरा॥ सुर मुनि सकल प्रसंसन करहीं॥ धन्य धन्य मुख मुखर उचरहीं॥ पुरजन परिजन दुखित महाने॥ ठाढे सकल वदन कमलाने॥ कुमदवती नामक जो रानी॥ पति पद प्रेम प्रीति रस सानी॥ तिनै ताम्रधज धर्म निधाना॥ कृष्णभक्त सब लोगन जाना॥ ते जुग पुत्र पति सिर माहे

आरा॥ खैंचत दहुंदिसि तजत षमाल॥ दुज का रज गुनि दुख नहिं माना॥ दोहन के मन मोद महाना॥ चलत चलत आरा तहि काला॥ आयो भूपति के मधि भाला॥ वाम विलोचन तें तव राई॥ चल्यो नीर मनु नीर व हाई॥ दुज है देखि वहत दृग वारी॥ ह्वै उदास असगिरा उचारी॥ अव हम लेव नहिं वपु राजा॥ दुःख न करहिं हमरो कछु काजा॥ देत काय निज नृप दुख मान्यो॥ वाम नैन तें नीर वहान्यो॥ दोहा॥ दुख सों देहें दान जे लेहैं दुज भव जोय॥ निश्चय नरक निवास तहि भनत वेद वुध लोय॥ अस कहि गवने विप्र जुग तजत भूप वपु काहिं॥ वरजे लोग न वि वुध यदि पै माने कछु नाहिं॥ २२॥ टीका॥ इस प्रकार ब्राह्मण का कथन सुन कर राजा कहने लगा कि अव विलंब करने का समय नहीं है तुम हृदय के सोक और गिलानी को त्याग कर आनंद पूर्वक हाथ मे आरा पकड़ लेवो और सिर मे धर कर पाउं लग मेरे सरीर को चीर कर दो षंड कर देवो ब्राह्मण के कार्ज की कीरती जो है सो सूर्ज के समान संसार मे उदय होय जावे ऐसे राजा मोरध्वज के मुख से वचन सुनकर तत काल स्त्री और पुत्र दोनो ही हृदय मे कृष्ण भगवान को सुमर कर राजा के सीस पर आरा धर देते भये तिस समय

लोगों ने देखकर हाहाकार मचाय दिया और स्वर्ग लोकतें देवता गण विमानो पर चढ चढ कर आकाश मार्ग मे आय कर राजा मोरधुज का कौतुक देखने लगे तब मंडप के बीच स्थित भये हूये राजा के सीस पर महा तीक्षण आरा जो है सो चलता भया साध संत देवता मुनी इत्यादि सब देख रहे थे सो मुख सें अनेक प्रकार की श्लाघा व ताई करकर बार बार धन्य धन्य कहते भये पुर के लोग और भाई बांधव संबंधी सब दुख सें मलीन मुख भये हूये स्थित होय रहे हैं पती के चरनो के प्रेम रस मे भीगी हूई कुमूदवती नाम करके रानी और लोगों मे उजागर हूआ भगवान का दृढ भक्त ताम्रधज नामा पुत्र इह दोनो हीं हृदय का क्षोभ त्यागे हूये अपने पती और पिता के सीस पर दृढ होकर तें आरा जो है सो जोर सें खेंचे चले जाते हैं परंतू ब्राह्मण का काज विचार कर तिनोने कुछ भी दुख क्लेस नहीं मानाँ है दोनो हीं आनंद मे मगण हैं तब तो चलता चलता वे आरा राजा के मस्तक लग आय पहुँचा तिस समय प्रजापाल के वाम नेत्र सें मानो पीडा के वस कुछ नीर चल पडता भया तब वे दोनो ब्राह्मण भूप के तिस वाम नेत्र सें नीर चलता देख कर धीरज से रहित उदास चित होय कर कहने लगे कि अब हम इह राजा का सरीर कदा चित नहीं लेवेंगे इस तें

सब देखोंतेउगारि

निज करि

अंगद्वेक

और पुरे

और स

इस सुधी को पायकर राजा मोरध्वज की रानी जोथी
सो पती के चरनो की प्रीती वाली भई हुई तहां
चली आवती भई पीछे ... और प्रेम को प्र
धिक किये हूये राजा का पुत्र ताम्रध्वज भी चला
आया तब ब्राह्मणने जो राजा के
आगे जाचना करी थी अर्थात जो कुछ मांगणा
सो तिन दोनों को प्रकट करके सुनाय दिया ऐसे
सुन कर वे दोनों हीं परम हर्ष के प्राप्त होय गये
तब राणी प्रसन्न होयकर कहने लगी कि हे दुज
राज स्त्री जो है सो पुरष की अर्धंगी होती है
ताते राजा के सरीर मे आधा भाग मेरा है सो तुम
मेरे को लेजाय कर सिंह के अर्पण करदेवो और अ
पने पुत्र को बचाय लेवो इसप्रकार माता का वच
न सुनकर परम प्रवीन राजकुमार ताम्रध्वज जो था
सो कहने लगा कि हे दुज प्रधान पिता के वीर्ज से
उतपंन भया हूआ पुत्र जो होता है सो जगत में
साक्षात पिता का हीं रूप होता है ताते तुम मेरे
को सिंह के मुख मे देवो और अपने बालक को
छुडाय कर सुखपूर्वक घर लेजावो ऐसे तिस
का कथन सुनकर ब्राह्मण कहने लगा कि हे राज
कुमार सिंह का कथन तो कुछ और हीं है ति
सने मेरे को इहां आवने के समय वारता प्रकट
करके कहा था कि राजा की स्त्री और पुत्र
दोनो हीं चिंता सोक और दुख कलेस को
त्यागकर सुख पूर्वक अपने हाथमे आरा प
कड कर राजा मोरध्वज के सरीर को सिर
से पाउं तक चीर कर के दो भाग कर

परमप्रवीन

ऐसे

इहां

कहा था

कौन कवी उपमा किमि गावै॥ सजलजल
द सम स्याम सरीरा॥ दरसत हरत भक्तज
न पीरा॥ पीतवसन दामनि दुति लाजै॥
विप्र चरन उर चारु विराजै॥ अति प्रसंन
मृदु मुद मुसकाई॥ परम कृपा पूरित जदु
राई॥ ५ करि लियो ञाम निज पानी॥ धन्य
धन्य वहु बार वखानी॥ धरम अवधि धीरज
धनि कोई॥ तुहि सम भक्त न सत्य तिहोई॥
॥ मैं तो ञाम दास हूं दृढ़ ~~भक्त~~ दूसर मेरा॥
तुव समान भव नाहिन हेरा॥ अव वर मांग
रुची अनुसरही॥ जवलग देह न कलकि
मि परही॥ दोहा॥ कृस्न कमल कर परस तें आ
रो कर दुख जाउ॥ मिट्यो तुरत देखत सवन
भयो स्वस्थ चित राऊ॥ १४॥ टीका॥ तवरा
जा मोरधज कहने लगा कि हे कृस्न अव
मेरे वचन तूं सत्य करके श्रवण कर इहमेरे
वाम नेत्र से नीर जो चला है सो कुछ सरीर
की पीड़ा कलेस करके नहीं चला है इसका
कारण कुछ और ही है सो मैं तुमारे आगे
कथन करता हूं ~~[illegible]~~ मेरे सरीर
का इह वायां भाग जो है तिसको इस विचा
र से दुख कलेस उतपंन होता भया कि दक्ष
ण और वाम अर्थात दहिना और वायां भाग
हम दोनो एक ही साथ ही राजा के सरीर
मे जनमे और हमारा मान मरदन वाले

ना इत्यादि जो कुछ संत कारण सो सब एक
समान बरोबर ही होता रहा आज इस दन मे
भागकी कौ अधिकता कौन पुन्य और कौन
ऐसी बसेष कमाई है कि जिसतें इन ब्राह्मण
के अधी लाग और मै मंद अभागी ऐसे हों
रहि गया मेरे को त्याग दिया है ब्राह्मण इस
कलेस को मान कर मेरी इह बाई आंसू रोवती है
इस वार्ता के जदुनंदन भगवान साषी हैं मै ने तो
अपने आपमे कुछ कलेस दुख नहीं माना है इस
प्रकार धरम और धीरज मे अचल
देखकर भगवान को वे कपट भेष ब्राह्मण का
धारा हुआ जो था सो सब बिसर गया दीनानाथ
तुरत हीं प्रकट होय जाते भये कैसे भी दीन बंधू
कि चार हैं अनंत सोभावाली भुजें जिन की और
हृदय मे मनोहर तुलसी की माला तैसे हीं कोटि
सूर्ज को लज्जा देने वाला माथे पर मणि जो हीरा के
जटित भया हुआ मोर मुकट कि जिस की सोभा क
थन करने को कोई कवी सामर्थ नहीं हों और
जल के सहित जो नील बरन का सुंदर बादर है
तिस के समान मनोहर स्याम सरीर कि
जिस के दरसन करने तें भक्त जनो के कलेस
दुख सब दूर हों जाते हैं और तैसे हीं बिजली
की छबी के हरने वाले सुंदर पीत वस्त्र दुज
पद कर के चिन्हत है जिन की काया अर्थात
हृदय मे लगे हुये सोभा देते हैं भृगू के चरन
ऐसे ध्यान तें अत्यंत प्रसंन भये हुये भगवान

परम कृपासें मंदमंद मुसक्याय कर राजाके सीस पर आरा जो चल रहा था तिसको हाथ सें तुरत पकड़ लेते भये और मुषहे वारवार धन्यधन्य उचार कर कहने लगे कि हे राजन हे भक्तप्रधान मै सत्य सत्य कहता हु जो तेरे समान संसार मै धरम धीर्ज की अव धी और मेरे चरनोका दृढ दास और दूसरा कोई नहीं है अव तूं मेरेको अनुकूल क्या प्रसंन जान कर जो मनको भावता है सो वर मांग मै जव लग भक्त तेरेको वर नहीं देता तव लग मेरेको चैन सुष कहां है राजाको जव दीनानाथके हाथका सपर्स भया तव तुरतहीं सवके देषते आरेका घाउ और दुख कलेस जो था सो सव मिट गया प्रजापाल ज्यों का त्यों स्वस्थ चित होय जाता भया ॥ २४ ॥ चौपाई ॥ मोदमगन तव नृप वड़भागा ॥ जुग कर जोरि प्रेमरस पागा ॥ भगत सुनहु मम विनय कृपाला ॥ जो मोपें तुव दीनदयाला ॥ रीझे हो हरि भक्त सनेही ॥ तो मांगहु भगवन वरएही ॥ कीजे और दास की नाहीं ॥ अस परीछा जदुपति जगमाहीं ॥ कलि प्रभाव अति घोर महो हीं ॥ दृढता धीर सरीरन नाहीं ॥ एवमस्तु कहि मुदित मुरारी ॥ भूपति सों अस गिरा उचारी ॥ अतुम भूव भक्त सरताज ॥

हमारा कु कार्ज नहीं सरेगा क्योंकि राजा
ने शरीर देते हुये क लेस मानाहै इसी तें इस
के वाम नेत्र सें नीर चल पर्यो है जो पुरष
जगत मे दुखी होय कर दान देता है और ऐसे
जिसके दान को जो ब्राह्मण ग्रहण करता है
सो वेद और वुधी मानो का कर्म है कि वे ब्रा
ह्मण अवश्य नरक का अधिकारी होता है
अर्थात नरक मे वास करता है॥
१३॥ चौपाई॥ तब असमने मोर धर्म वाचा॥
सुन हो विप्र विनै मम साचा॥ तन की पीर
नीर दृग माहीं॥ चल्यो बहाय विप्र कछु नाहीं॥
याको है कारन दुजग्याना॥ सो तुम सों
अब करहुं वखाना॥ वाम भाग जे मोर सरीरा॥
ताके उर उपजी अस पीरा॥ दच्छन अंग हम
एक हि वारा॥ जनमे नृपति काय संसारा॥
मरदन मान जथा कछु पालन॥ हो तर हीं
सगरी सम लालन॥ आज कौन याको अ
धिकाई॥ कौन पुन्य और कौन कमाई॥ ज
हि तें रहे दुज कीरज लागा॥ मैं रहि गयो मंद
हत भागा॥ अस दुख मानि वाम दृग आंषी॥
रोवति है जदुनंदन साषी॥ धरम धीर ध्रुव
देखि भुआलै॥ विसरि गयो निज कपट कृपा
लैं॥ भये प्रकट तहें तुरत मुरारी॥ सोभा
अमित चतुर भुजधारी॥ हृदय ललित
वनमाल विराज्यो॥ मनिमय मुकट माथ
छाज्यो॥ कोटि भानु जहि लषत लजावै॥

श्री रत जदुनंदन ताम्रध्वं सुवन मोर धुज का हिं॥ वैठाये विधि जुत मुदित राज संघासन माहिं॥ निज पद पंकज प्रीति दै भव मे दियो छुड़ाय॥ को न धन्य जदुनाथ सम भक्तन होत सहाय॥ ४५॥

टीका॥ तव आनंद मे मगन भया हुआ वडभागी भूप हाथ जोड़ कर वड़े प्रेम से कहने लगा कि हे कृपा निधान दास की विनती जो है सो आप श्रवण करिये क्या कि जो मेरे पर आप तुम रीझ कर प्रसन्न भये हो तो प्रभू मै एही वर मांगता हूं कि जैसी आपने मेरी परीक्षा करी है ऐसी जगत मे और किसी दास की मत करिये क्यों कि कलिकाल अर्थात कलजुग का घोर प्रभाव फैलता जाता है मानुष्यों के सरीरों मे धीर्ज और दृढ़ता होनी वड़ी कठिन है ऐसे राजा मोरध्वज का कथन सुनकर भगवान एवमस्तू कहि कर कि ऐसे नहीं होगा फिर कहने लगे कि हे भक्त सिरोमणी राजन अब आनंद से तूं अपना जग्य जो है सो संपूर्ण कर भक्तरत्न तेरा जग्य मैंने सरव प्रकार करके अपना कीना है इस मे कोई दूसरी वाती नहीं है तव राजा दीनवत हाथ जोड़ कर विनती करने लगा कि हे सत्य सिंधू हे दीनवंधू अब तुमारी कृपा तें मेरे को जग्य की कुछ अभिलाषा नहीं है संसार मै जप तप जग्य इत्यादि का वड़ा दुर्लभ फल जो है सो मेरे को सुगम सहज ही प्रापत होय गया है और जिस परमात्मा के

नमित्त जोगी जन बहुत जतन और हठ करते हैं ~~सो भी~~ तिसके साथ मेरा सहजे हीं उरमें मिला होयगया है और जो तीन लोक के नायक भगवान अनेक साधना किये तें ~~भी तपसी~~ ऋषी मुनी तपस्वियों के ध्यान में भी नहीं आवते हैं सो आज मैने प्रतक्ष नेत्र भर कर देख लिये हैं मेरे भागों की जगत में कौन प्रभुताई और कहां लग बड़ाई है कि जिसको दीनानाथ ने इस प्रकार सफल किया और संसार मे ■ कीर्ती सुजस का पात्र वनाय दिया है अव हे कृपानिधान मेरा इह राज कोस पुत्र परिवार जो है सो सव तुमारे ही अरपण है प्रभू तुम अपना हीं जान कर पालना करिये और मेरे को अपने चरन कमलों की दृढ प्रीती ~~[illegible]~~ दीजिये हे ■ तरव भवनो के प्रकास करने वाले हे दीन वंधू अव तुमारे प्रसाद तें मेरा जनम मरन से लेकर संसार का भयक लेस ~~[illegible]~~ सव दूर हो जावे इस प्रकार मोरधुज का कथन सुनकर भगवान एवमस्तू कहते भये कि ऐसे ही होयगा तिसतें उपरांत कृपासिंधू ने प्रसंन होय कर और भुजा ■ भर कर राजा को अपने हृदय से जुडाय लिया और नेत्रों मे प्रेम जल भरकर भक्तपाल तिसको वारंवार मिलते भये तब राजा मोरधुज भगवान के हृदय से छूट कर ~~[illegible]~~ प्रेम भक्ती से दीनानाथ के प्रदक्षणा देकर और वारवार चरनो पर देह प्रणाम कर ■ फिर अपनी सुशील ■ ल स्त्री को साथ लेकर के कृष्ण कृष्ण सुमरता हूआ वनको गया

और भक्ती

औ रसी

स्फुट

[illegible]

को चलाजाताभया जहांलग संसारके
भोग सुख विलास हैं तिन सब की सुरतीविसा
रकर वन के बीच जलके सहित
सीतल अस्थान और कुटिया बनायकर स्त्री
के सहित भूपभक्त तहां निवास करने लगा और ते
राजा मोरधज कुछु एक काल वनमें वास कर
कर और प्रेमभक्ती से कृस्न भगवानको
भली प्रकार भजकर फिर जतन केविना सहजेहीं
सरीरको त्याग कर कृस्न कृस्न रटता हुआ कृस्न
कृपातें कृस्नधामकोहीं चलाजाता भया तब
ईहां जदुनंदन भगवानने मोरधजके पुत्र
ताम्रधजको विधिपूर्वक आनंदसें राजसिंघासन
पर बैठायकर और अपने चरन कमलोंकी प
वित्र प्रीती भक्तीदेकर तिसके हृदयसें संसारका
भय जो था सो सब छुडायदिया नाभादा
स कहते हैं कि हे संतो देखिये भगवान कृ
पानिधान की भक्तवत्सलता कि
स्त्री पुत्र और परिवार के सहित अपने भक्त
राजा मोरधजको संसारमें कैसे तारा और
कैसे उजागर किया है अब कहिये कि जदुनं
दनभगवानके समान जगतमें भक्तोंकी सहा
यताकरने को दूसरा असा कौन धन्य है मेरे
विचारमें इनके समान एकी हैं और दूसराको
ई नहीं है ॥ २५ ॥ इति श्रीभक्तविनोदग्रंथे भग
वद्भक्तिमहात्मे भाषाटीकायां मोरधजच
रितवरनंनाम सरगः

करहु जग्य पूरण निज साग॥ इनतुम्हार मष भक्त प्रधाना॥ मैसव विधि ग्रपनो करि जाना॥ तव नरनाथ जोरि जुगपानी॥ नम्रदीनवत विनय वखानी॥ ग्रव नाहिन मोरे भगवाना॥ हृदय जग्य ग्रभिलाष रहाना॥ दुर्लभ जप तप मष फल जोई॥ पायो सुलभ नाथमै सोई॥ करहिं जतन जोगी जहि हेतू॥ सोऊ मिले मुनि सहजन केतू॥ ग्रगम दरसे जहि त्रिभूवन राजू॥ मै पायो नैनन भरि ग्राजू॥ भूरि भाग मेरे जग माहीं॥ कियो सफल भगवन जहि कोहीं॥ ग्रव सुत राज कोस परिवारा॥ तुमहिं नाथ ग्ररपण मम सारा॥ ■ ग्रपनो जानि पालना कीजै॥ मुहि निज पदपंकज रतिदीजै॥ मिटै मोर ग्रव भवन प्रकासा॥ तुव प्रसाद दारुण भव त्रासा॥ एवमस्तु कहि कृपा निधाना॥ नृप कहे भुज भरि हृदय जुड़ाना॥ वारवार पूरित दृग वारी॥ मिले तासु हरि भक्त उदारी॥ तव उर तें छूटत महिपालें॥ दियो प्रदक्षण दीन दयालें॥ पुनि पुनि वंदि चरन गिरधारी॥ लिये सु■सी लैं निज नारी॥ चल्यो चपल कानन कहें धाई॥ जात हृदय सुमरत जदुराई॥ जगत भोग सुष सकें विसारी॥ उरतें तुरति भूप व्रतधारी॥ देखि सुथल जल सुंदर छाई॥ वसे विपुने नृप कुटी वनाई॥ दोहा॥ तहां भूप कछु काल वसि करि हरि पद ग्रनुराग॥ तिय जुत गवन्यो हरि भवन सहज वपुष निज त्याग॥

तिकाहीं॥ बिसरयो निजपूरव सुधि नाहीं॥
दोहा॥ मानि गिलानी विपुलमन बार
बार पछताव॥ विहरत गिरि कुंद्रन विपुन
मुक्त तेत्र पुनि आव॥२॥ टीका॥ नाभादास
कहते हैं कि हे संतो अब भक्तों विषें प्रधान ज
इ भरत जो हूये हैं तिनकी मनोहर गाथा में आप
के आगे गायन करता हूं कैसे भी जड़ भरत कि जि
नों ने मृग संगती के वस होयकर जगत में अ
पने दो जनम धारन किये हैं इन जड़ भरत जी
राजा रिषभ के पुत्र होते भये और जिन्हों ने पृथ
वीतल पर बड़े विभूप्रताप सें इंद्र के तुल्य राज
किया और फिर विरक्त होयकर स्त्री पुत्र धन
धाम इत्यादि सब सुख समाज को छोड़कर
अपने जेष्ठ पुत्र को राज देकर तप के निमित्त
बन को चले जाते भये तहां तप करते
करते राजा को बहुत काल बतीत होय गया
एक दिन गंडिका नदी के किनारे पर अर्घ
दान देकर जदुनंदन भगवान के ध्यान में लीन
बैठा हूआ था तब तहां एक गर्भवती हरिनी
जो थी सो जलपान करने के लिये आवती भई
तब अकस्मात तिसको देखकर के एक महा भ
येकर सिंह बड़े ऊचे नाद सें घोर गरजकर
ता भया तो तिसके भय सें व्याकुल भागती
हूई मृगी परवत की गुफा में जाय
छिपी परंतू भय के मारे तिसका गर्भ जो था सो
गुफा के द्वारे में ही छूट गया और पीछे वे दुखी हो
यकर आप भी मर जाती भई तब गंडिकी की धा
रा जो परवत के साथ मिलकर बहती थी बे म

गीके बालक को अपने जल के प्रवाह में समेट कर नीचे को ले जाती भई जब बहता बहता वे मृग बालक जडभरत जी के पास आय पहुंचा तब तिस को देखकर तिन के हृदय में दया उत्पन्न होय गई तुरत जल के बीच जायकर और श्रम से पकड कर तिस को बाहर ले आये ऐसे मृगबालक को बडा मनोहर देखकर हरष के वस भये हूये भरत जी अपने आश्रम में ले आये और दिन दिन नित्य अधिक ही प्रेम प्रीती से तिस को पुत्र के समान पालने लगे सो तिन के मन में ऐसा बस गया कि तपस्या करनी भूल गई राती दिन तिसी प्रेम में मगन रहते भये जो कदाचित चरता चरता कहीं नेत्रों के अगोचर दूर चला जाता तो अनेक प्रकार पश्चताप कर तिस को खोजते खोजते व्याकुल होय जाते और खेद से यतन श्रम में भाल कर कुटिया में ले आवते इस मृग के प्रेम के वस भये हूये भरत भूप समय पायकर जब सरीर को छोडने लगे तब तिन का मन जो था सो मृग के बीच ही लगा रहा तिस तें अंत मृग के सरीर को ही प्रापत होय गये जद्यपि जडभरत जी महा ज्ञान ध्यान की निधी और बुद्धी विचार में प्रवीन थे तद्यपि मन की गती और वासना जो है सो अती ही बलवान है खेंचकर तिन को मृग के सरीर में ही ले गई परंतू तप के प्रभाव की अद्भुत चमतकार है जो तिन को अपने पूर्व ले जनम की सुधी बिसरती नहीं भई हृदय बडी गिलानी मान कर और बार बार पश्चताप कर बन पर्वत के

श्र इत्यादि मे फिरते विचरते हुये भरत रू
पी मृग जो थे सो मुक्त देत्र मे श्राय प्रापत भये
॥ २॥ चौपाई॥ तहं श्रनसन व्रत धारन कीना॥
सुमरत कृस्न प्रान तजि दीना॥ तप प्रभाव
तव दुज कुल माहीं॥ लियो जनम भूली सु
धि नाहीं॥ कृस्न पदम पद जल्यो सनेहू॥ रहे
त विरक्त जगत धन गेहू॥ कुल कुटंव सव
मोह तयागी॥ दिवस रैन हरि सों ल
व लागी॥ मानहु मत्त प्रेम मद होई॥ विच
रहिं पुर वपु सुरति न कोई॥ वांधव जन तव
लियो विचारी॥ रहत न करत कछु काम श्रगा
री॥ तहि जड़ भरत नाम धरि दीनो॥ खेतन
को रखवार वठीनो॥ सो दीने तहि दुगन उजा
री॥ लियो उठाय वांधव न हारी॥ श्रोरहु
जो कछु काम वतै हैं॥ सो तहिं ते उलटो क
छु पैहैं वैठव जहां वैठवो रहहीं॥ जो को
कहै सो ऊ मुख कहहीं॥ सूद्र भूप इक र[illegible]त
हो रहाना॥ करै चंडिका भक्ति महाना॥ ए
कदिवस देवी के भवना॥ सुत श्रमिलाखत भू
पति गवना॥ तहां जोरि कर विनय उचारी॥
जो मुहि सुत देहो महतारी॥ तो मे दहुं म
नुज वलि तोही॥ करि पूजन जिमि भा
वति मोही॥ श्रस कहि वंदि चरन महा
माया॥ सूद्र भूप निज भवन सिधाया॥
कछुक काल जव गयो सरानी॥ तो के म
हान प्रसाद भवानी॥ उपज्यो सुत सुंदर सु
खदाई॥ हरष विपुल देखि पितु माई॥
श्रधिकाई

अथ जड भरत चरितं

दोहा॥ अब गाथा जड भरत की सुनहो संत सुजान॥
जहि मृग संगति तें लियो जनम जगत निज आन॥
रिषभ पुत्र भो भरत नरेसा॥ कियो राज जहि सरिस
सुरेसा॥ बहुरि विरक्त होत संसारैं॥ दियो राज
निज जेष्ठ कुमारैं॥ धाम धाम सुख संपति त्यागी॥
आपु गयो कानन तप लागी॥ तहां तासु तप कर
त महाना॥ विपुल काल जब गयो सराना॥ वा
सर एक गंडिका तीरा॥ बैठो ध्यान लीन जडु बीरा॥
तब आई एनी इक ताहीं॥ गर्भवती जल पीवन
काहीं॥ अकस्मात तहं सिंह कराला॥ गरज्यो
तासु विलोकि विसाला॥ भयवस मृगी भागि अ
तुराई॥ जाय विकल गिरि दरी दुराई॥ पै तहि त्र
स्त गर्भ गिरि गेयो॥ आपहु मृगी प्राण हत भेयो॥
गंडकि धार बहति गिरि संगा॥ सो सावक
गहि चली कुरंगा॥ सलिल बहत आयो जब ता
हां॥ बैठे भरत तपस्वी जाहां॥ ~~तहं कालको~~
बहो जात तब मृग सिसु देखी॥ लागी तिनहिं द
या अवसेखी॥ पकरि लियो करि वेग अजासा॥ ले
आये निज हरखि अवासा॥ निसि वासर सिसु
सम बहु भागे॥ तासु प्रीति जुत पालन लागे॥ मृ
ग बालक औसो मन बस्यो॥ भूलि गई निज सकल
तपस्या॥ जो कहु चरत चरत कढि जाहीं॥
तो तहि बिन भूपति पछताहीं॥ अस मृग प्रेम
विवस नरराया॥ जब लाग्यो छूटन निज काया॥
तब मन लागि रहो मृग माहीं॥ पायो भरत मृगहिं
वपु काहीं॥ जद्यपि रह्यो सि ज्ञान निधाना॥ तद्यपि
मन गति अति बलवाना॥ पै तप बल तहि भूप

ऐसे जब बाहर निवास करने लगा तब खेत तिसने आगे तें भी दुगने उजाड़ दिये फिर बांधवों ने तहां से भी उठाय लिया और जो जो काम तिसको करते भये तिस तें विरुद्ध अर्थात उलटा ही करता भया फिर तो ऐसी दसा होय गई कि जहां बैठा तहां बैठा ही रहा और जो कोई कुछ कहता सोई मुष से आप भी कहता तिस नगर में एक सूद्र जाती राजा रहता सो नित्य चंडिका की भक्ती मे लीन रहता था एक दिन वे राजा पुत्र की अभिलाषा से भगवती के भवन मे आया और जगदंबे के आगे हाथ जोड कर विनती करने लगा कि हे मैया जो कदाचित तूं अपना सेवक जान कर कृपा करके मेरे को पुत्र दान देवे तो मै अनेक का पूजन कर कर माता तेरे को मानुष्य बली जो है सो देऊंगा ऐसे विनती कर कर सूद्रभूप महामाया के चरनों मे दंडप्रणाम करके अपने घर को चला आया जब कुछक काल बतीत होय गया तब तिस के घर मै भगवती के प्रसाद तें बड़ा सुंदर ~~पुत्र~~ पुत्र जो है सो उतपन्न होता भया तिस को देख कर माता पिता अत्यंत प्रसन्न होय गये तब वे सूद्रभूप अनेक प्रकार पूजन की सामग्री लेकर देवी के भवन मै चला आया तिसने पूर्व ही नरबली देने के लिये अपने घर मे एक मानुष्य पाल राखा हूया था

तब तिसको वलीदेनेकेलिये भवानीकेभ
वनको लेआये. तबवे आपना मरना विचारकर भ
यकेवस रात्रीको अंधेरापायकर और
औषद खायकर तुरत कहीं निकल करके भाग
गया ऐसे तिसका लोप होना देखकर सब सेव
कचाकर जोथे सो भयके मारे व्याकुल होय कर
रात्रीके समय जहां तहां तिसको खोजने लगे प
रंतु वे कहीं मिलता था श्रम कर हारगये और म
लीनमुखभयेहूये परस्पर कहनेलगे कि अब हम
वलीके निमित्त कहांसे और कौन मानुष्य ल्या
य कर स्वामी के सनमुख करें निश्चयहोता है कि आ
जहमहीं वलीरूप होयजावेंगे ऐसे विचारकर
जब आगेको चले तब मारगमे जड भरत जो हैं सो
स्थित भयेहूये तिनको देखपडे॥२॥ चौपाई॥ मूढ
न मर्म लख्यो कछु ताहीं॥ रिष्टपु
ष्ट देख्यो तिनको हीं॥ अरु अनाथ मानसगुनिली
नो॥ है सबविधि वलिलायक पीनो॥ अस गुनि
मंदमरन गहिहाथ॥ लेआये सनमुख नरनाथ॥
सने मनुज पूरव कर जेहू॥ भागि गयो मगतें प
भुतेहू॥ जद्यपि खोजि विविध हम हारे॥ तद्य
पि कहुं न मिल्यो अंध्यारे॥ तब
रह मग आवत हम हेरा॥ कोउ नहीं याके घर
केरा॥ रिष्टपुष्ट वपु पीन रह्यो है॥
वलिलायक हम जानि गह्यो है॥
भूप प्रसन्न भयो सुनि बाता॥ लिये तासु अब
सर अधिराता॥ आयभवन भगवती हुलासा॥

कियेदीपचहुँ वोर प्रकासा॥ जहु भरतैं जोलै
सो अनवाई॥ हरषि निकट भगवति के ल्याई॥
सुंदर अहन वसन पहिरायो॥ चंदन रकत लि
लाट लगायो॥ जथा मनुज वलि पूजे कीन्यो॥
वहु निवेद आगे धरि दीन्यो॥ तव हरि भक्त
किये अहारा॥ हरष विषाद न हृदय विचारा॥
अपने मन अपने सुखमाहीं॥ रह्यो मगन सूझत कछु
नाहीं॥ तव भूप रोहित मंजुल वानी॥ लाग्यो अ
सतुति करन भवानी॥ सूद्र भूप पुनि विनय अलाई॥
तुव दीन्यो मोरे सुत माई॥ अव देहौं मै नर वलि तो
ही॥ लेहो जानि दास पद मोही॥ मोपें करहु कृपा
वतिदाया॥ तुव प्रसाद मन वांछित पाया॥ अस कहि
काढि खड्ग नरनाथा॥ दै दीन्यो भूपरोहित हाथा॥
पंनव ऊंज संष धुनि छाई॥ तूर मृदंग वज्यो सह
नाई॥ सो हरि जन भय त्रास निपाता॥ वैठि रह्यो
सनमुष जगमाता॥ जव भूप रोहित तेग उठावा॥
भक्त के ठ काटन हित आवा॥ तव हरि भक्त सहा
यक मानी॥ सहि न सके निज जनकर हानी॥ भ
क्ततेज प्रकट्यो तहं भारी॥ देवी दुतन कहु अनत सि
धारी॥ दोहा॥ काली वपु लाग्यो जरन तव करि
कोप अषंड॥ भई प्रकट मूरति तहां भ्यावन वि
कट प्रचंड॥ ३॥ टीका॥ तव मूढ अधमों ने तिनका
मर्म आर्थात भेद जो था सो कुछ नहीं जाना
सरीर करके सें वडे रिसपुस विचार कर और
अनाथ जानकर कि इसका मालक कोई नहीं है औ
र इन सरीर करके मोटा सरव प्रकार वलीको लायके

सु द्रुम रूप तव भगवति भवना॥ लै उपकार इमि तत
द्रुत गवना॥ तहि पूरव नरवलि कहे तूम पालि र
ख्यो इक मनुज जन के तू॥ देवि भवन कहें जब जहि
ल्याये॥ सो डरको निज वध पाये॥ जानि ति
मर निसि मारग तेहीं॥ भागि गयो लखि परलो
न केहीं॥ स्वामि त्रास वस भृत जे तेहीं॥
लगे तासु खोजन चहुं योहीं॥ सो न मिल्यो क
रि करि श्रम हारे॥ भये मलीन वदन भृत सारे॥
अब नरवलि स्वामी कहित भाई॥ कहि ते कौ
न मनुज हम ल्याई॥ करि हे तास सन भृत हो गुनत
परस्पर आय॥ तव मारग जड भरत तिन भृतन वि
लोकन पाय॥२॥ टीका॥ तहां निराहार व्रत जो है सो
धारन कर कर फिर कुसम कुसम समरता हुआ प्रानों
को त्याग देता भया तप के प्रभाव सें ब्राह्मण के कु
ल मैं जाय जनम लिया और पूर्व ले जनम की सु
रती भी नहीं विसरी॥ आगे फिर भगवान के चरन
कमलों मे भ्रमरे वत मन नेह जुड़ता भया॥
तब जगत सें विरक्त होय कर और धन धाम कु
ल कुटंब का मोह त्याग कर रात्री दिन हरि
सों लै लगी हुई मानो प्रेम के मद में मत्त भया
हुआ वदेह होय कर नगर मे फिर ने लगा
घर के भाई बंधुओं ने देखा कि इह तो घर का कु
छ काम काज नहीं करता इसलिये तिस का जड़
भरत नाम राख दिया और खेतों की रखवारी क
रने के लिये वाहर ही जौं पड़ी बनाय दई

वानीसें भगवतीकी अस्तुती करने लगा॥ औ
७२ र फिर सुध्रमूपभी आयकरके दीनवानीसें विनती
करने लगा कि हे महामाया तैनें कृपाकरके मेरे
को पुत्र दियाहै अब जगदंबे मैं तेरेको नरब
ली देताहुं तूं मेरेको अपने चरनोका सेवक
जानकर इस मेरी दीहुई मानुखबलीको ग्र
हण कर मैंने तेरी कृपाके प्रसाद तें अप
ने मन वांछित फलको पाय लियाहै अब तूं
दयाकरके मेरेपर कोमलहो ऐसे विनतीक
रकर राजाने तुरत तलवार निकालकर उ
परोहितके हाथमे देदेई तिस समय ढोलमृ
दंग झांज तुरी संख सहनाई इत्यादि अनेक
बाजे बाजने लगे और भगवान भक्त जेउ गृ
भरत जी [struck-through] भगवतीके सनमुख निधड
क होयकर बेठेहूयेथे तिनके हृदयमे रिंचक
मात्र भी भय त्रास नहीथा तो जब अभागी उ
परोहित खडग अर्थात तलवार उठायकरके
भक्त प्रधानके सीस पर चलावने लगा तिस
समय भक्तसहायक जदुनंदन जोथे सो अप
ने दासकी हानी सहार नहीं सके ततकालही
७का भगवत भक्त ऐसा प्रचंड तेज प्रकट होयजा
ताभया जो तिसके प्रभावसें देवीकी सना
कहीं चली जाती भई और कालीका सरीर ज
लने लगपडा तब महाकोप करके एकवडी
प्रचंड भयंकराकार मूरती तहां प्रकट होय
गई ॥३॥ चौपाई॥ तहि छपरोहित पानि

मोरी॥ लियो कुठाय खेलत वर जोरी॥ करिकै विकट कुभेष डरावन॥ भृकुटी वंक नासिका भ्यावन॥ अरुन नैन रद कुटिल वनायो॥ दीरघ जीह वदन वहु वायो॥ चिवक मेद कटि छीन मही हीं॥ मानहु ग्रसन जगत कहं चाहीं॥ कारो प्रथम पुरोहत माथा॥ कासो वहुरि सूद्रमति नाथा॥ और हुं रहे सूद्र जे सारे॥ देखे खडग लवन सिर जारे॥ जस अपराध कियो हरिदासा॥ तस तिन कहं फल प्रकट प्रकासा॥ जो को करै संत अपकारा॥ ताको इहु फल करहु विचारा॥ जडभरतैं कछु चाहि न चीनो॥ लीला जोन चेष्टि का कीनो॥ सो जुडि रह्यो ध्यान भगवाना॥ काहु भयो कछु परसो न जाना॥ सूद्रन सीस गेंद की चाली॥ काढि खेल कीन्यो वहु काली॥ जद्यपि कठिन काल तहं वीत्यो॥ पेन हृदय कछु हरिजन चीत्यो॥ यही सत्य संतन की रीती॥ कठिन काल कछु लहैं न भीती॥ [illegible] कोउ केती॥ रहे सुखरक ठोर हरि हेती॥ तेऊ अनन्य दास हरि भाखे॥ रहहिं सदा विनके हरि राखे॥ जे अपराध करहि हरि दासा॥ तिन कर उलटि होत निज नासा॥ जन अपमान कवहु गिरधारी॥ तीन काल नहि सकहि सहारी॥ [illegible] ताते करि दृढ सहो विचारा॥ मलिन करिय संत अपकारा॥ इहप्रभाव जडभरत सुहायो॥ मैं संछेपन संत कछु गायो॥ अव आगो

और हृ
धरि काना॥ सुन हो तास प्रभाव म
हाना॥ रह्यो नरेस सिंधु सौवीरा॥ और हुना
म रह्यो गुनधीरा॥ सो पावन हित ज्ञान विचारा॥
कपल देव के निकट सिधारा॥ सिव का हूढ
चल्यो नृप जाना॥ सुमर कृष्ण भक्त सुखदाना॥
जव आयो कढि सो मतिधीरा॥ इक्षुमति सरि
ता के तीरा॥ तव सिविका को वाहक एका॥ हा
रि गयो चलि सकहिं न नेका॥ तहिं तें धरन पाल
की ताहीं॥ ले सेवक सासन नरनाहीं॥ वाहिक
न वल चहूं दिस जाई॥ खोजन लगे अतुराई॥
तव भृत्य भरत तहां तिन पाये॥ पकरि तुरत भू
पति पे ल्याये॥ जानि अरोग पीन अति काये॥
पालिकि आगल दीन लगाये॥ तव हरिदास
हृदय निज माहीं॥ हरष विषाद कियो कछु नाहीं॥
देहा॥ हरि हरि सुमरत भक्त हरि रक्त प्रे
म अनुराग॥ दै कांधो वाहक जथा पालकि लि
यो उठाय॥ ४ ॥ टीका॥ तव तिस भयंकर सूर
तीने उपरोहित का हाथ मरोर कर तुरत खे
ड्ग लेई और फिर महा क्रूर कुभेष
वनाय कर भृकुटी जो भवां है सो वंक कारे
ली और भय के देनेवाली वडी जोर ना
सिका लाल नेत्र कुटिल दांत और लंबी
जीभ हू तैसे ही भ्यानक ठोडी और वडी
पतली सी बीली कमर मुख खोले हूये मानो
सैरव जगत ग्रासन करने चहती है ऐसे
भ्यंकर रूप धारे हुये महा काली जो है तिस

ऐसे विचार कर तिन को पकड़ कर के राजा के स
नमुष ले आये और आवते ही कहने लगे कि हे
नरेंद्र वे पहिला वली का मानुष्य जो था सो रात्री
का समय पायकर और अपने मरने का भय मान
तुरंत हमारी आंखों के देखते हीं मारग मे
कहीं लुपत होय गया है जद्यपि हम ने चारोंवोर
वहुत ही खोजा और वहुत हीं जतन भ्रम किया
तद्यपि भेद कहीं नहीं प्रापत होता भया तव एक
पुरष हम को मारग मे आवते हुये मिल गया प्रभू
इस के घर का मालक स्वामी कोई नहीं है और
सरीर कर के हिष्ट पुष्ट वड़ा मोटा है सर्व प्रकार
वली के लायक है ऐसे तिन सेवकों का कथन सुन
कर राजा परम प्रसन्न होय गया और आधी रा
त के समय जड़ भरत जी को लेकर आनंद
पूर्वक देवी के भवन मे चला आया तव आवते ही
काली के भवन मे चारोंवोर दीपों का प्रकास कर दि
या फिर जड़ भरत को जल के साथ स्नान देकर
हरष से भगवती के निकट ले आये तहां तिन
को लाल वरन के वस्त्र पहिराय कर और माथे
मे रक्त चंदन का तिलक देकर जैसे मानुष्य व
ली के पूजने का प्रकार था तैसे सव पूजन क
र कर अनेक नैवेद जो हैं सो आगे धर दिये तव
हरी के भक्त जड़ भरत जी रुचीपूर्वक तिन नैवेदों
को पावने लगे हृदय मे हरष विषाद कुछ नहीं
करते भये अपने मन कर के अपने सुख मे मगन
भये हुये तिन को वाहिर और कुछ भी सूझता नहीं था
तव राजा का कुँवर जो था सो आय कर के वड़ी सुंदर
रीत

कामदोसा नहीं है और हरी हीं सदैव तिनके रक्षकारे रहते हैं जो पुरुष मूढता के वस होय कर हरी के दासों का अपराध करते हैं तिनका उलटकर अपना ही नास होय जाता है क्योंकि भगवान अपने दासों का अपमान तीन काल कबी नहीं सहार सकते हैं तांते ऐसे विचार कर भूलकर भी संतों का निरादर नहीं चाहिये इस प्रकार जडभरत जी का ... इन प्रभाव मैने कुछ संक्षेप करके गायन किया है अब आगे और तिनकी भक्ती की महिमा जो है सो कान देकर श्रवण करिये एक सिंधु सौवीर नामक रके राजा जगत मे उजागर होता भया और रहूगुन नाम भी तिसका प्रसिद्ध था सो एक समय ज्ञान विचार लेने के लिये ... पालकी में बैठकर कपलदेव जी के आश्रम को चला जाता था तब तिस की पालकी का एक वाहक अर्थात कहा ... चलता चलता मारग मे थकत होय कर ... गया ... तिस समय राजा की आज्ञा ... पालकी को तहां राखकर सेवक जो ... नवीन वाहक के खोजने को जहां तहां चारो ओर चले जाते भये तब तिनको मारग मे कहीं जडभरत जी बैठे हुये मिल पडे मूढ तिनको पकड कर तुरंत राजा के पास ले आये और सरीर से दृष्टपुष्ट जानकर धरकर के पालकी आगेवाले कहारों के

जडभरत रहूगण की पालकी

मै लगाय देते भये तहां हरीकेदास जड़ भरत जीने अपने हृदय मै कुछभी हरष विषाद नहीं किया हरी हरी सुमरते हरी के प्रेम मै मत्त भये हुये हरी के भक्त वाहकों के समान कांधा दे कर पालकी को उठाय लेते भये ॥४॥ चौपाई॥
चले वहुरि आगल जव पंथा॥ भक्त उठाय पालकी कंधा॥ मारग जीव देखि जे परहीं॥ तासु वचाय ऊंचकि पग धरहीं॥ तव पालकि विषम कै जाई॥ कंपहिं भूप विपुल दुख पाई॥ जव वहु वार भये अस चाला॥ तव अति कोपि भने महिपाला॥ धरहु न जड़ पग पंथ संभारी॥ कत डोलति पालकि हमारी॥ तव वोले वाहक भय मानी॥ हम सूधे पग धरत पछानी॥ लग्यो नवल इह वाहक जोई॥ धरत कूदि पग मारग सोई॥ तहितें पालकि डोलति जाहीं॥ लागत वृथा दोष हम काहीं॥ तव सुनि भूप वक्र तकि नैना॥ भाषे जड़ भरत हिं अस वैना॥ ~~रे अरोग सठपीन मतोहीं॥ जानि परहु कछु निरवल तोहीं॥~~
पीन अरोग मंद तुव देहा॥ जानि न परहिं निवल कछु देहा॥ चलत विषम गति कत मग माहीं॥ मोर त्रास तुहि लागत नाहीं॥ अव जो चल्यो विषम तुव चाला॥ तो पै हैं मम दंड विसाला॥ तव जड़ भरत मौन गति धारी॥ लै पालकि मग चल्यो सिधारी॥ तव हु जीव मारग महं पाई॥ धरत भये पग ऊंचकि उठाई॥ डोलती पालकि नृप दुख पायो॥ कोपि कठिन मुख वचन अलायो॥ मूढ मोर सासन नहिं पाला॥

अब पैहो तुव दंड कराला॥ जड तूं निदर वडो अभिमानी॥ धिग धिग तोहि मंद मति हानी॥ अस नरनाथ अरुन करि नैना॥ भाषे तासु विविध कटु बैना॥ तव जडभरत सोच अस ठाने॥ नृप थोरे कटुवचन बखाने॥ जो मुहि दंड भूप इह देहीं॥ तो मुह दुरगती सु अस मपेहीं॥ जद्यपि मै तम हैं अपराधू॥ पै मोरे प्रभु कृपा अगाधू॥ भक्त विरोध न सकहिं सहारी॥ नृप कहं देहिं दंडदुषभारी॥ दोहा॥ तो ते देहुं बुझाय मै करि उपदेस न ज्ञान॥ जहि तें भूल्यो भूप नव होहि सजुग सवधान॥५॥ टीका॥ इस प्रकार जव शिवका उठाय कर आगे मारग को चलपडे तव रसते मै कहीं कोई जीव जो आय जाता तो तिसके बचाने के लिये पाउं को उचं ककर और कूदकर धरते ते तिस ते पालकी टेढी होयजाती और राजाको भी स्रम कुलेस होताथा ऐसे जव वहुत वार राजाको दुख प्रापत भया तव कोपके वचनो से कहने लगा कि अरे मूढ कहारो तुम पाउं संभाल कर नहीं धरते हो हमारी पालकी को डोलती और टेढी होयजाती है ऐसे राजाका कथन सुन कर वा टहक अपना न कहार कहने लगे कि प्रजापाल हम तो अपने पाउं उचितरीती से सूधे संभाल कर धरते हैं परंतू इह कोई नवीन वो हक जो लगा हुआ है सो अपना पाउं वारवार कूदकर हीं धरता है इसीते पालकी डोल

ने कोपहें प्रथम पुरोहित का सीस काट कर फि
र सूद्र राजा को खड्गसें बध कर दिया तिसतें उ
परांत तहां और जितने सूद्र थे भिंनभिंन कृपा
न के प्रहार देकर तिन सबके सीस काट दिये
नाभादास कहते हैं कि हे संतो देखिये तिन अध
म जड जातियों ने हरी के दास का जैसा अपरा
ध किया था तिसका तैसा ही प्रकट फल पाय लि
या जो कोई जडता के बस होयकर भगवान
के संत भक्तों का अपमान करता है तिसका ऐसा
ही फल विचार लेना चाहिये अब देखिये
कि चंडिका माई ने इह जो नसी अद्भुत लीला
करी है तिसकी जडभरतजी को कुछ भी खबर न
हीं कि क्या चमतकार हुआ है वे तो अपने हीं
ध्यान में जुडे हुये थे ~~तिनको कुछ नहीं जान पडा~~
~~कि क्या हुआ है~~ नहीं जानते भये कि ईहां कौन
~~लीला भई है~~ कौतुक भया है सूद्रों के सीस का
ट कर काली ने तहां गेंद करी री तहां खेल करी
और वहां क्रूर समय जहां व्यापि [illegible] होय जाता
भया तद्यपि हरी के दास जडभरत मैं जो कुछ
भी डोलते नहीं भये अपने ध्यान में स्थिर
भये होयकर साव धानताके मंतरौं की स
त्य करके एही रीती होती है कि कठिन
काल मे चित्त के स्थिर राखते हैं डोलते न
हीं हैं और जिन हरी के प्यारयों के हृदय की
गांठ खूल जाती है वे सरव ठौर हरी का ही
दरसन करते हैं और हरी के ही अनन्य दा
स कहावते हैं तिन को हरी के विना और किसी

हृदयमे विचारकरने लगे कि राजाने मेरे कोप हि चाना नहीं है तांते धोषेमें दुर वचन कहे हैं अब जो मेरे को दंड देवे गा तो मैं जानता हूं कि इसकी तिस सूद्र राजा के समान दुरदसा होवेगी इसब विखें मे तो जैसे होय सके गा नमा हीं करुंगा परंतू मेरे कृपानिधान भगवानजो हैं सोतो अपने भक्त का द्वेष विरोध कदापिकाल सहार नहीं सकेंगे राजाको बडा भारी दंड देवें गे तातें अब उचित है कि मे राजा को ज्ञान उपदेस करकर अपना आप जणाय देऊं कि जिस तें भूला हुआ राजा चेतन होयकर के सावधान होय जावे ॥ ५ ॥ चौपाई ॥ असकहि वदन मंद मुसक्याई ॥ देखि भूप तन गिरा अलाई ॥ जे तुव भने वचन महिपाला ॥ ते जद्यपि सब सत्य रसाला ॥ पै जो भारका ऊपर हूई ॥ ताको दुख माने वपु सोई ॥ अहै धरापर चरन सुआला ॥ चरनन पर जानू सवकाला ॥ तहिं पर कटी प्रकट सव पाई ॥ कटि ऊपर देख हुधर राई ॥ धरपर कंध अहे सव जाना ॥ तापर है पालकि गुन खाना ॥ तापर तूं सुन भूप प्रवीना ॥ कहो भार कापें अव चीना ॥ द्वै है कौन दंड कहि काहीं ॥ पै है कौन कहो भव माहीं ॥ इन मिथ्या भ्रम भूप ~~[illegible]~~ उदारा ॥ ~~[illegible]~~ कोऊ न देवन लेवन हारा ॥ इह अज्ञान भूप सव तोरा ॥ तापर चलत

नवसकछु मोरा॥ अस औरउ उपदेस अनेका॥ मनि मनि विमल विचार विवेका॥ सोवत निति अज्ञान जगायो॥ ज्ञान मानु भूपति उर छायो॥ जानि परयो तोके ततकाला॥ इह कोउ परम भक्त जदुपाला॥ कंपि उठ्यो भय माति प्रवीना॥ कूदि परयो पालकि न जिदीना॥ लषि अपनो अपराध वसेखी॥ रतक आन परयो नहिं देखी॥ तव जड़भरत चरन पर जाई॥ गिरयो जाहि जाहि रटि राई॥ राखि लेहु अव निज जन काहीं॥ मैं प्रभाव जान्यो प्रभु नाहीं॥ मैं जड मंद महा अभिमानी॥ विषय मत्त दुरमति अज्ञानी॥ तुम हो संत दीन सुखदाया॥ सदा वसत दाया तुव काया॥ दीनदयाल करि कृपा अगाधू॥ करहौ छमा मोर अपराधू॥ अस नृप वचन विनय रस साने॥ सुनि जडभरत हरष सुख माने॥ जानि रहूगुन कहं निज दासा॥ भक्ति ज्ञान विज्ञान प्रकासा॥ भवाटवी वरनन पुनि कीना॥ जहिमहं जन भटकत दुखि दीना॥ वहुरि कियो उदघाट प्रकासा॥ जहितें मिटहिं जनन दुख त्रासा॥ जे जड़भरत रहूगुन काहीं॥ दियो विमल उपदेस महाहीं॥ सो अनेद अंवुधि महं सारा॥ अहै कियो सुंदर विस्तारा॥ कपल मुनी के ढिग जहि हेतू॥ चल्यो हतो नृप तजत निकेतू॥ सो पायो

तके मारग माहीं॥ लौटिगयो निजग्राम काहीं॥ दोहा॥ ग्रस इह चरित पुनीत मे ~~गुणसिंधु सोवीर~~॥ कियो कथन दायक विमल भक्ति चरन जदुवीर॥२॥ टीका॥ ग्रैसे कथन करकर ग्रौर मुषसें मंदमंद मुसक्यायकर जड़ भरतजी राजाको कहने लगे कि हे राजन तैंने जो वचन कहे हैं सो जद्यपि सब सत्य हैं परंतु जो किसी पर कोई भार होता है तो वे तिसका कल समानता है विचार करके देख कि चरन जो हैं सो पृथवी पर हैं ग्रौर चरनों पर जानू हैं जानुग्रों के ऊपर कटी ग्रर्थात कमर है ग्रौर कमर पर धड़ है धड़ पर कांधे हैं ग्रौर कांधयों पर पालकी है पालकी पर तूं सवार होय रहा हैं ग्रव कहो कि भार किसको है दंड के देने वाला कौन ग्रौर लेने वाला कौन इह तो राजन मिथ्या ही भ्रम है कोई भी लेने देने वाला नहीं है इह तेरा जोरावरी का ग्रज्ञान है इसमें मेरा कोई वस नहीं चलता इस प्रकार ग्रौर भी ग्रनेक ज्ञान विचार ग्रौर निरमल विवेक वाले वचनों से उपदेस करकर मानो ग्रज्ञान की रात्री में सोये हूये राजा को जगाय दिया ग्रौर ज्ञानरूपी सूरज जो है सो तिसके हृदय प्रकासमान कर दिया तव तो राजा तुरत चैतन्य होय गया ग्रौर जान लेता भया कि इह तो जड़

ने लगती है नाथ इसमे तुमारा कुछ अपराध न हीं है हम को तो वृथा ही दोष लगता है ऐसे वचन राजा ने तुरत सुनकर और नेत्र मोड़ कर कोप के वचनों से जड़भरत की ओर देखते हि कहा कि अरे मूढ तूं तो अरोग और सरीर करके मोटा देखपड़ता है कुछ दुबला और निरबल नहीं है फिर जड़ तूं मारग मे कूद कूद विषम गती क्यों चलता है और सूधे संभाल कर पाउं क्यों नहीं धरता है क्या मंद तेरे को मेरा भय त्रास नहीं है अब अधम तूं जान ले जो आगे के समान फिर विषम चाल चलेंगा तो मेरे बड़े कठिन दंड को प्रापत होवेंगा ऐसे राजा के मुख से वचन सुनकर जड़भरत जी मौन होयकर पालकी उठाये हुये आगे मारग चले जाते भये परंतू फिर भी जहां रसते मे कोई जीव आय जाता तो तिसको बचाने के लिये तैसे ही ऊचक कर और कूद कर पाउं धरते तिस ते पालकी को अब अधिक धक्का लगता राजा तिस खेद को सहार नहीं सका महा कोप कर के कहने लगा कि अरे दुष्ट तैने मेरी आज्ञा को बिसार दिया है अब देख तो मै तेरे को कैसा कठिन दंड देता हूं जड़ तूं बड़ा भारी निडर और अभिमानी है हे बुद्धी के हीन तेरे को धिक्कार है इस प्रकार जब राजा ने कोप से लाल नेत्र कर भरत जी को निरादर के बड़े कटु वचन कहे तब कानों मे सुनकर के परम सील से तोतल और दयाउ प्रकार की मूरती जड़भरत जी जो थे सो

ॐ अकस करके और

किया किजिसतें छूटकर मानुष्य दुखकलेसों
सें न वृत्य होयजाते हैं ऐसे इह उपदेस जो
जडभरत जीने राजा रहूगुन को दिया है सो वि
स्तार पूर्वक आनंद अंबुधी नामा ग्रंथमे भली
प्रकार वरनन किया है कपल मुनी के पास
जो राजा [illegible] जिस मनोर्थ के लिये चला जाता
था सो मनोरथ तिसको जडभरत जी के मिला
पसें मारग में प्रापत होय गया तहां सेतीं लौट
कर अपने घरको चला आया इस प्रकार इह
~~[illegible]~~ जडभरत जी की पवित्र गाथा जो है
सो मैने गायन करी है इसको जो कोई श्रधापी
तीसें श्रवण करेगा तिसके हृदय मै जदुनंदन भ
गवानके चरन कमलों की भक्ती अवश्य दृढ
होय जावेगी॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगव
द भक्ति महातमे भाषा टीकायां जडभरत चरित
वरननं नाम सरगः

नंदन भगवान के परम भक्त हैं अपना अपराध
विचारकर भय से कंपायमान भया हूआ पालकी
से तुरत कूद पड़ा और कोई भी रक्षक नहीं देख
ता भया कि जो तिस समय अपराध की शांती
कराय लेवे तब तो धीरज से रहित व्याकुल भ
या हूआ राजा त्राहि त्राहि रटता जायकर भरत
जी के चरनो पर गिर पड़ा और दीन वा
नी से प्रार्थना करता है कि हे भगवन दास को रा
खेलीजिये मै महा मंद मूढ जड़ अभिमानी और
विषय विकारों मै खचित भया हूआ दुरमती अ
ज्ञानी नाथ तुमारे प्रभाव को जान नहीं सका कृ
पानिधान तुम संत हो और सब के सुखदायक हो
प्रभू तुमारे हृदय मै सदैव दया का निवास रहता है
अब दीनदयाल दया करके मेरे अपराध को क्षमा
करिये और मेरे को अपने चरनो का सेवक जा
नयें इस प्रकार परम नंम्रता और विनती के भ
रे हूये राजा के दीन वचन सुनकर जड़ भरत जी
अत्यंत प्रसंन होयगये और राजा रहूगुन को
मन वचन काया करके अपना दृढ दास
जान कर तिस के हृदय मै ज्ञान विज्ञान के स
हित भगवंत की भक्ती का प्रकास किया
और फिर भवाटवी को भली प्रकार वरनन कर
कर सुनाया कि जिस मै भ्रमते भटकते हूये मा
नुष्य नाना दुख कलेसों को प्राप्त होते हैं तिस
से उपरांत फिर तिस का उदघाटन भी वरनन

नंदन भगवान के परम भक्त हैं अपना अपराध विचारकर भय से कंपाय मान भया हुआ पालकी से तुरत कूद पड़ा और कोई भी रक्षक नहीं देखता भया कि जो तिस समय अपराध की शांती कर्य लेवे तब तो धीरज से रहित व्याकुल भया हुआ राजा त्राहि त्राहि रटता जायकर भरत जी के चरनों पर गिर पड़ा और दीन वानी से प्रार्थना करता है कि हे भगवन दास को राख लीजिये मैं महा मंद मूढ़ जड़ अभिमानी और विषय विकारों में खचित भया हुआ दुरमती अज्ञानी नाथ तुमारे प्रभाव को जान नहीं सका कृपानिधान तुम संत हो और सब के सुखदायक हो प्रभू तुमारे हृदय में सदैव दया का निवास रहता है अब दीनदयाल दया करके मेरे अपराध को क्षमा करिये और मेरेको अपने चरनों का सेवक जानिये इसप्रकार परम नम्रता और विनती के भरे हुये राजा के दीन वचन सुनकर जड़ भरत जी अत्यंत प्रसन्न होयगये और राजा रहूगुन को मन वचन काया करके अपना दृढ़ दास जान कर तिस के हृदय में ज्ञान विज्ञान के सहित भगवंत की भक्ती का प्रकास किया और फिर भवाटवी को भली प्रकार वरनन करकर सुनाया कि जिस में भ्रमते भटकते हुये मानुष्य नाना दुख कलेसों को प्राप्त होते हैं तिस से उपरांत फिर तिस का उद्घाटन भी वरनन

श्रीभागवतसंस्कृतटीका ५४७२

अतिथि रूप भगवंत विचारी॥ क्षुधित गुनत सु
त सुत तिय नारी॥ चारि भाग भोजन कर कीनो॥
आपन भाग भिन्न करि दीनो॥ सू द्रुपाय सो हृदय
सुखारी॥ गयो मुदित निज पंथ सिधारी॥ त
व नरेस सुमरत भगवाना॥ बहुरि करन भो
जन रुचि ठाना॥ दोहा॥ तब आयो दूसर तहां लि
ये संग कूकूर स्वान॥ रंतिदेव नृपतें वदन लाग्यो
वचन वषान॥ इहि औसर निज तें अधिक क्षु
धित भूप चीन॥ ~~करि उपकार उदार मुहि~~
~~मो~~ स्वानन जुत उपकार करि भोजन देहु प्रवी
न॥ ॥ टीका॥ अब रंतीदेव राजा की मनोहर गाथा
जो है सो गायन करता हूं कि जो अनूप नाम कर
के भी जगत में प्रसिद्ध था और सरव प्रकार करके
परम उदार दीन अतिथी जनों की मनवांछित अ
भिलाषा को सफल करता था जो कोई कुछ आ
य कर मांगता सोई देदेता था कबी किसी को
निरास नहीं करता था इस प्रकार भगवान का
परम भक्त राजा रंतिदेव अति साध ब्राह्मण औ
र दीन जनों को संतुष्ट करता करता ऐसी दसा
को प्राप्त हो गया कि जर में धन कुछ भी
नहीं रहा परंतू धीरज और सुमती प्रवीन राजा
तोभी अपने धरम नेम और भगवत प्रेम को न
हीं त्यागता भया अंत धन से हीन दीन भया
हुआ प्रजापाल हृदय मे विचार कर कर पु
त्र और पुत्र की स्त्री के सहित अपनी स्त्री को
साथ ले कर घर को त्याग करके वन के मा
रग को चला गया तहां वन मे जाय कर

लोगों को कम मनाय, राज कर नेवाला

और कुटिया बनाय कर अहर्निश दिन भगवान को
सुमरता हुआ सुखपूर्वक वास करने लगा
और सब को भरोसा त्याग कर एक भगवान
का हीं आधार राखे लेता भया तहां भी भगवान
तिस को भोजन पहुंचाय देते भये अतिथी दीन
जन भोजन की इच्छा से नित तिस के चरणपर च
ले आवते धरम धुरंधर राजा प्रसन्न होय कर ति
न को हीं भोजन जिमाय देता आप स्त्री
पुत्र और पुत्र वधू के सहित भूखा प्यासा ही तो धर्म
मगन रहता इस प्रकार अठतालीस दिन को व
तीत होय गये भूख के मारे सब अंग कांपने लग जा
ते भये तब एक दिन पुत्र के सहित राजा भोजन जो
पावने लगा तिसी समय तहां एक अतिथी आय
प्राप्त भया और राजा को देख कर कहने लगा कि हे
राजन मैं भूख करके बहुत व्याकुल होय रहा हूं
इसी लिये तुम्हारे द्वारे पर आया हूं जो मेरी क्षुधा
को निवारण कर ऐसे तिस को क्षुधा करके व्या
कुल भया देख कर राजा ने तुरत अपना भोजन
तिस के आगे धर दिया सो पाय कर और अघाय कर
प्रसन्न होय कर अपने मारग को चला गया पीछे
जो भोजन बचा था सो राजा अपने पुत्र स्त्री के स
हित जब पावने को तयार भया तो फिर एक
शूद्र आय प्राप्त हुआ सो कहने लगा कि
राजन मैं भूखा हूं मेरे को भोजन दे तब राजा ने
अतिथी को भगवंत रूप जान कर और अपने
स्त्री पुत्र और पुत्र की स्त्री को भी भूखे विचार कर
भोजन के चार भाग कर दिये तिन मैं से अपना

भागमिष्ट करके पतिसमस्त सुद को दे दिया सो पा यकर और जो चायकर आसीस देता हुआ अपने मारग को चला गया तिसके पीछे राजाने फिर भोजन करने चाहा तब तहां एक और जाचिक अपने साथ दो स्वान अर्थात दो कुत्ते लिये हूये आय प्राप्त भया और इती देव राजाको कहने लगा कि राजन तूं मेरे को अपने हे भी अधिक भूखा जान कर इन स्वानो के सहित शीघ्र भोजन दे क्योंकि मै भूष का मारा अत्यंत व्याकुल होयरहा हूं ॥२॥ चौपाई ॥ असतहि वचन सुनत नृपराजा ॥ जे निज तिय सुत सुत तिय भाजा ॥ तासु दीन हरि रूप पछानी ॥ वंदि चरन परदन पाठानी ॥ सोऊ पायनिज पंथ सिधारा ॥ तहि पाछे पुनि भूप उदारा ॥ रह्यो सेष जो जल कछु ताहो ॥ लाग्यो पान करन नरनाहो ॥ आयग यो एकतुरत चंडाला ॥ सो बोल्यो सुनहो म हिपाला ॥ तुम हरिभक्त निपुण गुण ज्ञाना ॥ मै हों तृषत देहु जलदाना ॥ तृषाविकल नृ प तासु निहारी ॥ इह अब तजहिं प्राण विनुबा री ॥ तब भूपति करुणारस साने ॥ सुततिय सों अस वचन बखाने ॥ रिद्धी सिद्धी मुक्ति पद काहीं ॥ मै मांगहुं नाहिन हरिपाहीं ॥ पै अभिलाष एक जिय मोरे ॥ सो मांगहु प्रभुतें करजोरे ॥ जे ते जीव जंत जग अहैं ॥ ते सब मगन मोद सुखरैहीं ॥ मै दुखदुरत सवन

अथ अनूप भूप चरित्र

दोहा॥ अब अनूप नृप की कथा मै वरनहुँ अभिराम॥ रंतिदेव तहि नाम पुनि जाचिक पूरन काम॥

चौपाई॥ भयो उदार भूप भव माहीं॥ करत तोष दीनन जन काहीं॥ जो कोउ करत जाचना आई॥ देत सोऊ तोहुँ नर राई॥ परम भक्त हरि दीने हू॥ देत देत कछु रह्यो न सोहू॥ तोहुं चरन पंकज जदुबीरा॥ छुट्यो न प्रेम नेम मतिधीरा॥ अस जब भयो भूप [illegible] हीना॥ तब विचारि निज हृदय प्रवीना॥ सुत तिय सुत जुत आपन नारी॥ लिये संग निज चल्यो सिधारी॥ जाय विपुन कहुं कुटी बनाई॥ बस्यो भूप सुमरत जदुराई॥ एक अधार कृस्न उर राखा॥ वयो भरोस स्वपन नहीं भाखा॥ हरि भोजन नित देहिं पुचाई॥ सो दीनन कहं देहिं खवाई॥ जाचिक आय नित्य तहि धामा॥ पावहिं पाक पूरि उर कामा॥ आपु रहें भूख अरु प्यासे॥ अरतालिस दिन जबहिं विताहे॥ छुधा विकल तब कंपत अंगा॥ करन चह्यो भोजन सुत संगा॥ आय गयो अतिथी इक ताहीं॥ भन्यो वचन सुन है नरनाहीं॥ मै छुधा पीड़ित बहु कीना॥ आय पर्यो तुव द्वार प्रवीना॥ छुधा विकल तहि भूपति चीन्यो॥ निज भोजन तुरंत दै दीन्यो॥ पाय अघाय गयो जब सोई॥ वच्यो पाक पाहै कछु जोई॥ तहि नृप सुत वधु सुत तिय संगा॥ लाग्यो पावन जबहिं उमंगा॥ तबहिं सूद्र एक आवत भेयो॥ भन्यो भूप मै छुध्यत रे हो॥

सो देखकर राजाको कहने लगा कि हे प्रजापाल तूं भगवानका परमभक्त और धरममें प्रवीन है मैं इस समय त्रिषाकरके वहुत व्याकुल होय रहा हूं तूं उपकार करके मेरेको जलपान करा तव राजाने जाना कि इह त्रिषा करके व्याकुल है और जल के विना प्राणोंको त्यागता है ऐसे विचारकर दयाके वस भया हूं और राजा अपने स्त्री पुत्रको कहने लगा कि मैं भगवान कृपानिधाते ऋद्धि सिद्धि मुक्ति पदार्थ इत्यादि कुछ नहीं मांगता हूं केवल एकहीं अभिलाषा है सोई मांगता हूं क्याकि जहां लग जगतके सव जीव जंतु हैं वे सरव अपने अपने आनंद और सुखमें मगन रहैं तिनके दुरभागों फल पाप कलेस जो है सो मैं भोगूं त्रिषावंत अर्थात प्यासे को जलदान देने सें श्रम कलेस भूष प्यास शोक विषाद दीनता मोह पाप अपवाद इत्यादि सव नास कोप्रापत होते हैं इस प्रकार कथन करकर राजाने तिस चांडाल को जलपान करायदिया और प्यासका कलेस जो था सो अपने ऊपर सहार लिया ऐसे राजा का धरम और हठ देषकर दीनवंधू भगवान तुरत हीं प्रकट होयगये तव दीनानाथ सनमुष देखकर राजा दीनभाव सें चरनोंपर दंड प्रणाम करता भया तव कृपासिंधू कहनेलगे कि राजन तूं मेरेको प्रसन्न जानकर वर मांग मैं तेरेको देता हूं कुछ विलंव नहीं है ऐसे भगवान अनुकूल जानकर राजा हाथजोड करके कहनेलगा कि हे कृपानिधान अव तो मेरेको कुछ आसा नहीं है प्रभू तुम अपने मुषसें मांग मांग कहते हो इससें अधिक मैं क्या पाऊंगा तव

राजा की विनती और चतुराई की दीन बानी सुनकर प्रसन्न भये हुये दीनबंधू तहां एक मनोहर विमान तुरत प्रकट करलेते भये और राजा को स्त्री पुत्र और पुत्र की इस्त्री के सहित तिस निरमल विमान पर बिठाय कर आनंद पूर्वक ~~अपना~~ अपने बिकुंठ धाम को लेजाते भये नाभादास कहते हैं कि हे संतो देखिये भगवान कृपा निधान ऐसे अपने दासों का उद्धार करने वाले हैं पृथवी तल पर इह रंतिदेव राजा भी धन्य है और जदुनंदन भगवान भी जगत मे अपने दासों के तारने वाले धन्य हैं संसार मे ऐसे धीरज के धारने वाला भी कौन है और दास जनो के उधारने वाला भी ऐसा कौन है इस प्रकार इह रंतिदेव राजा का इतिहास जो है सो कुछ संक्षेप करके गायन किया है इस राजा के समान जो कोई निश्चय से ऐसा ही प्रण धारन करेगा सो भगवान की कृपा ते ~~[illegible]~~ ~~[illegible]~~ कदापि काल भी जम की फासी मे नहीं परेगा ॥ ३ ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महातमे भाषा टीका यां रंतिदेव चरितवरणनं नाम सरगः

दुरभागा॥ भोगहुं फल संजुत अनुरागा॥ प्या
से कहें जल पान कराना॥ तहितें क्षुधा त्रिषा श्रम
नाना॥ शोक विषाद दीनता मोहू॥ अघ अपवाद
नास सब होहू॥ असकहि चांडालहिं जल दीना॥
सही त्रिषा नृप आपु प्रवीना॥ नृप कर देखि धरम
हठ भारी॥ भये प्रकट तब तुरत मुरारी॥ भूप वि
लोकि रूप घनवरना॥ किये प्रणाम दंडवत चरना॥
भने भक्तवत्सल भगवाना॥ मोहि प्रसंन नृप जानि
महाना॥ मांग मांग वर वेर न कोई॥ मैं देहों भूपति
अब तोही॥ तब नरेस अस विनय प्रकासा॥ अब
कृपाल कछु नाहिन आसा॥ मांग माग प्रभु जौन
भनै हैं॥ यातें अधिक कौन मैं पैहों॥ सुनत प्रसं
न भये भगवाना॥ प्रकटायो इक विमल विमाना॥
सुत सुत वधू नारि नृप संगा॥ तुरत चढाय विमा
न उमंगा॥ लेगे निज वैकुंठ अगारा॥ असहरि
तरन दास संसारा॥ रंतिदेव धनि धरनि महाना॥
धनि दासन दाहिन भगवाना॥ को अस धरन धीर
संसारा॥ को अस जनन उबारन हारा॥ दोहा॥ अस
कछु गाय न कीन इह रंतिदेव इतिहास॥ जो अस
प्रणधारन करै परै न जम की पास॥२॥ टीका॥
ऐसे तिसका वचन सुनकर राजाने अपनी स्त्री
पुत्र और पुत्र की स्त्री का भाग जो था सो तिसको
भगवान का रूप जानकर देदिया और चरनोपर
प्रणाम करके प्रदक्षणा भी करी तब वे पुरुष भोजन
पायकर अपने मारग को चला गया तिसतें उ
परांत राजा पीछे कुछ जल मात्र जो र
हा था तिसके पान करनेकी रुची करता भया
इतने मे तहां एक चांडाल आय प्रापत हुआ

कलेस वतेरो॥ दोहा॥ चीतकार तहे मचिरह्यो पा
पी करेंं पुकार॥ देहिं दंड जमदूत वहु होत मारे थर
मार॥२॥टीका॥ अव मिथुलापुरीके राजाकी वडी
मनोहर आनंदके देनेवाली गाथा जोहे सोगाय न
करताहूं वैसीभी अदभुत गाथाहै किजिसके स्रवण
करनेते शीघ्रहीं रघुनाथजीके चरनकमलोंमें प्री
ती उतपंन होय जाती है कहते हैं कितिस मिथले
स राजाकी कुलमे प्रथम वडे ज्ञान विचारमे प्रवीन
और सुष सुजस की निधी निमिराजा उजागर होते
भये एक समय तिस प्रजापालके घरमे हरष करके
पूरित भये हूये नव जोगीस्वर जोहैं सो आवते भये
तिनको देखकर राजाने ततकाल उठकर चरनोपर
दंड प्रणाम किया औरफिर प्रेम भक्तीसें तिनके
चरन प्रछालन करचन्य कर त्याय कर सुभ आस
नोके ऊपर वैठार दिये तिसते उपरांत राजा प्रीती
भक्तीसें ज्ञान विवेक वैराग भक्ती इत्यादिके अने
क प्रस्न जोहैं सो करने लगा और जोगीस्वर महा
त्मा जथाउचित तिसको उत्तर देने लगे ऐसे अ
नेकप्रकार ज्ञानविचारकी चरचा वार्ता होती रही
तिस आनंदमे मगण भये हूये ~~सब~~ निमिराजाको
खान पान राजकाज इत्यादि विवहार जो था सो
सब विसर गया ~~सो~~ वे धरमकी मूरती प्रजा
पाल जव लग जगतमे जीवता रहा तव लग
कुछभी दुखकलेस नहीं देखता भया आगे तिस
कुलमे जोजो राजा होतेरहे वे सव भगवानके
परम भक्त और धर्म मे प्रधानहीं होतेरहे और
जगतमे मैथुल जनक वदेह इहतिनकी
संज्ञा होती भई फिर तिस कुलमे सीरधुजना
मकरके राजा भगवानके परम भक्त होते भये
और तिसी कुलमे संतोंकी रक्षा करनेवाली सो

ते नामकरके रमा जो लक्षमीहै सो अवतार धारन करती भई॥ तिसव्याहनको कोटिछवी करके धायत भये हूये श्रीरघुवीरजी महाराज बडे आनंद उतसाहसें आवते भये और तिन्होंने जिसप्रकार महादेव के धनुषको भंजन करके जगतमे अपना निरमल सुजस विस्तारण कियाहै सो संपूर्ण कथा रामायणविखें श्रीवालमीक और गुसाई तुलसी दास जीने भलीप्रकार गायन करीहै इसीतें रघुनाथजीकेविवाहकाविस्तार जोहै सो ईहां कथन नहींकिया केवल मिथुलाके राजा की परम आनंद के देने वाली गाथा जोहै सोई कुछ संछेप करके गायन करताहूं राजाजनक जो हूये तिन्होंने अपना बडा भारी अचल राजकिया और धरमके सहित प्रजाकोभी प्रकारपाला और सुखदिया इसप्रकार वडे सुजस पूर्वक राज करकर अंतकाल भगवान को सुमरते हूये इस असार संसारको त्यागकर सार जो विस्नुलोक है तिसको चले जाते भये तब हरीके चार पार्षद सुंदर भूषणोंकरके भूषत राजाके संग सोभादेते भये जब जनकनरेसका विमान जमपुरके निकट होयकर निकला तब दसोंही दिसामें सूरजके समान प्रकास फैलगया और नरक जोहैं सो तहां अनेकहीं देखपडे किजिनमें पापी जन पडे हूये नाना दुखकलेस भोग रहेहैं और हाहा सबद करकरके बडे चिल्लाते हैं जमदूत जोहैं सो तिन पापियोंको अनेकप्रकारके देते और मुखसे मारोधरो मारोधरो पुकारतेहैं॥२॥ चौपाई॥ जब विमान वर जनक नरिंदा॥ गयो वरोवर नरकिन वृंदा॥ चीतकार तिनकर जे होई॥ कछु मिटि गयो ताहि छिन सोई॥

ॐ

श्रीजगन्नाथजी

सुनि नृप सोर घोर तिन जेहू॥ पुनि मिटि गयो म
यो संदेहू॥ तव पूछ्यो हरिदासन पाहीं॥ वसैं
कौन जन इहि थल माहीं॥ होत कुलाहल पक
हिं वारा॥ कौन हेत मिटि गयो अपारा॥ तव हरि
दास भने अस वानी॥ इह जम लोक भूप वड भा
गी॥ देहिं दंड जम के भट नाना॥ करहिं दुखित
अधि सोर महाना॥ तोर अंग मारुत करराई॥
पाय स्पर्स नेक सुखदाई॥ इहना सकी जीव समु
दाई॥ गये परम सुख मोद जुडाई॥ अस नृप द
सा नार्किन देखी॥ भये तुरत वस दया वसेखी॥
सजल नयन करुणारस सानी॥ वोल्यो हरि
दासन सों वानी॥ जो मम अंग पवन को पाई॥
सवै नारकी गये जुडाई॥ तो हम जम पुर र
हव सदा हीं॥ नहिं जैहें अव हरिपुर माहीं॥
इन कर दुख कलेस जे भाई॥ हरिजन मोहि तें स
ह्यो न जाई॥ राखहु इहि थल मोर विमाना॥ ह
रिदासन नृप सासन माना॥ तव नृप चले नार
किन वोरा॥ सोर मच्यो जम पुर महे घोरा॥ सुनि
जम राज विपुल दुख माना॥ कियो भूप ढिग तुरत
पयाना॥ मति सों कह्यो जाय नृप काहीं॥ इहि थल
उचित वास तुव नाहीं॥ हरि पें जाय जनक अनु
रागे॥ करहु जाय दरसन वडभागे॥ वसहिं ईहां
हम कह्यो नरिंदा॥ हरि पें जाहिं नारकी वृंदा॥
दोहा॥ इन कर देखि कलेस दुख परे नरक जे घोर॥ सु
नहु सत्य जमराज अव चलत चरन नहिं मोर॥२॥
टीका॥ जव जनक राजा का विमान तहां नरकवा
सी जीवों के वरावर चला गया तव तिनका वहुत

अथ जनकभूपचरितं॥

दोहा॥ अब मिथलेसन की कथा ललित मन रंज॥
जासु सुनत विस्वास जुत उपजहिं रति हरि कंज॥
चौपाई॥ भये प्रथम तहि कुल निमि राजा॥ ज्ञान विचा
र सुजस सुख भ्राजा॥ एक समय ताके ग्रह आयें॥ नव
जोगीस्वर हरष अघाये॥ देखि भूप उठि चरनन लागा॥
व हरि भक्ति संजुत अनुरागा॥ चरन धोय सुभ आसन
ल्याई॥ बैठारे सादिर नराई॥ पुनि नाना संजुत अ
नुरागा॥ ज्ञान विवेक भक्ति वैरागा॥ लाग्यो
प्रस्न करन महिराई॥ होत रही चरचा मन भाई॥
खान पान आदिक सब काजहिं॥ भूलि गये सगरे निमि राज
हिं॥ रह्यो जियत जब लों जग माहीं॥ देख्यो दुख कलेस
कछु नाहीं॥ तहि कुल भये जौन महिपाला॥ भये धर्म
रत भक्त बिसाला॥ मैथल जनक वदेह सुहाये॥ इन ना
मन सों लोगन गाये॥ भूप सीरधज पुनि कुल तासा॥
भये भक्त हरि चरनन दासा॥ तहि कुल लियो रमा
अवतारा॥ सीते नाम संत आधारा॥ तासु मुदित
मन ब्याहन आये॥ श्री रघुवीर कोटि छबि छाये॥ भं
जि धनुष जिमि सब जग माहीं॥ बिसतार्यो निज सुजस
महांहीं॥ सो सब कथा संत सुखदाई॥ बालमीक तुल
सी जन गाई॥ राम ब्याह विस्तार सहावा॥ यातें
मैं न वदन कछु गावा॥ कथा ललित मिथुला
के भूपा॥ करहुं कथन सुख सार अनूपा॥ जनक
राज किय राज महाना॥ पाल्यो प्रजा धर्म जुत
नाना॥ अंतकाल हरि सुमरत राई॥ विस्नु लोक
कहं चल्यो सिधाई॥ पार्षद चारि संग छवि छा
ये॥ भूषन भूषण ललित सुहाये॥ जमपुर के
जव कढ्यो विमाना॥ भा प्रकास तब दसो दिसाना॥
नर्क अनेक परे तहं देखी॥ भोगहिं पतित

नरेस तिन नरकी जीवोंकी वोर चला गया तिसको देखतेहीं जमपुरके वीच महांसोर मच जाता भया ऐसे महां सोरको सुनकर जमराज जो था सो परम दुखी होयकर मिथलेस भूपकी वोर चला आया और आवते ही वडी चतुराईकी वाणीसें राजाको कहने लगा कि हे प्रजापाल तुमारा रहना ईहां योग्य नहीं है तुम तो हे वडभागे हरी जो विस्नू महाराज हैं तिनका जाय कर दरसन करो ऐसे जमराजका वचन सुनकर राजा कहने लगा कि हम तो ईहां हीं वास करेंगे हरीके पास रहनारकी लोग जावेंगे क्योंकि इनका दुख और घोर कलेस देखकर कि जो नहो नरकमे पडे हूये हैं हे जमराज अव मेरा चरन ईहां तें आगे नहीं पड सकता और मै इनको छोडकर नहीं जाय सकता हूं ॥२॥ चौपाई ॥ तव कर जोरि भन्यो जमराजा ॥ तुम तो हरिदासन सिरताजा ॥ हरि मरजाद वांधि भव जोई ॥ निदरन तासु उचित नहीं होई ॥ जो तुम इत वसिहो महिराई ॥ तो जमपुर मिथ्या ह्वै जाई ॥ अव तुम इन जीवन पर राजा ॥ जो कीनी निज दया दराजा ॥ तो मे मन हुं भूप गुन गेहा ॥ अस उपाय तुम करहु सनेहा ॥ जे तुव उठि सदैव मिनसारा ॥ राम राम निज वदन उचारा ॥ धारि कुसा अंजुलि जल भरना ॥ एक वार मुष राम उचरना ॥ सो फल देहु भूप सुम चारा ॥ इन सवकर ह्वै जाहिं उद्धारा ॥ विनु आयास हरिके सुभ गेहा ॥ जाय वसहिं

सब नारकि एहा॥ इहितें सरहिं काज्ञ है राई॥
तरहिं जीव नहिं नरक नसाई॥ सुनि जम ब
चन भूप मुद भूरी॥ धस्यो कुसा अंजुलि जल
पूरी॥ एक बार मुष राम उचरना॥ दीन्यो फल
अखि जीव उधरना॥ तातकाल हरिपुरतें आये॥
नाना कोटि विमान सुहाये॥ सकल नारकी वि
विधप्रकारा॥ धरिधरि दिव्य सरूप अपारा॥ चढे
विमानन मोद अघाये॥ जैजै जनक भनत समु
दाये॥ हरिपुर कहं उर हरष महाना॥ चलेजा
त नारकि गन नाना॥ तिन पाछे मिथेस नरीसा॥
आवत हृदय सुमरि जगधीसा॥ अस जीवन करि
जगत उधारा॥ हरिपुर आपु नरेस सिधारा॥दोहा॥
रामनाम परभाव इह देखहु संत विचार॥ नरक
सून भो काल तहि कियो जनक उपकार॥२॥टीका॥
तब हाथ जोडकर जमराज कहने लगा कि हे राजन
मै भलीप्रकार जानताहूं जो तुम भगवानं महोप्रधा
न भक्ताहो परंतु हे राजन भगवान कृपानिधानकी
बांधी हूई मरजादा जोहै तिसका निरादर करना
उचित नहीं है जो कदाचित तुम इहां निवास
करोगे तो प्रजापाल इह मेरा जमपुर जोहै सो
सब मिथ्या अर्थात झूठा होय जावेगा इसमे
कुछ संदेह नहीं है अब जो तुम इन जीवों पर द
या करीहै तो हे राजन मै तेरे को उपाय कहताहूं
क्योंकि तुम सदैव प्रातःकाल मे उठकर जो
राम नामका उचार करते रहे हो सो अब हाथमे
कुसा और जल धारन करके रामनामके एकवार

५२१

का उचारनें फल जो है सो इन जीवों को देदेवो वे तिनके तरने के लिये वहुत है अर्थात तिससें हीं तिनका उद्धार हो जावेगा और जतन के विना हीं इह सव नारकी जीव हरी के धाम मे जाय निवास करेंगे इसतें हे राजन दोनो ही वारता सिद्ध होजावेगी इह नारकी जीव भी तरजावेंगे और नरक भी वना रहे गा ऐसे जमराज का कथन सुनकर राजा परम आनंद को प्रावत होयगया ततकाल हीं हाथ मे कुसा और जल धारन करके राम नाम के एक वार मुषसें उचारने का फल जो था सो तिन जीवों के उद्धार के लिये देदिया तिसके प्रभाव सें तुरत हीं हरीपुर सें कोटि नाना प्रकार दिव्य विमान जो थे सो चले आवते भये तव तो वे नारकी जीव वडे सुंदर दिव्य सरूप धारकर आनंद मे मगन भये हूये तिन विमानो पर अपनी अपनी इछा से आरूढ होजाते भये अर्थात चढ वैठते भये और जनक राजा की जै पुकारते हूये हरिपुर जो विस्नु भगवान का निवास स्थान है तिस को आनंदपूर्वक चले जाते भये तिनको आगे आगे रखकर पीछे पीछे परम उदार और उपकार की निधी जनक नरेस भी चले आवते भये नाभादास जी कहते हैं कि हे संतो देखिये राम नाम का प्रभाव और जनक नरेस का उपकार कि जिसके परसाद तें संपूर्ण नरक हीं खाली होय गया अर्थात नारकी जीव जो थे सो सव विस्नु धाम को जाय प्राप्त भये ॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भागवद्भक्ति महातम भाषाटीकायां जनक चरित्र वरणनं नाम सरग:

"ऐसें तिन नारकियों का उद्धार कर और

हरिपुर को गमन किया" "इसी प्रकार हरिपुर को गये"

चिङ्कार सोर जो होताथा सो कुछेक मिट जाता भया क्यों
से तिनका प्रथम सोर सुनकर और फिर तिसका मि
ट जाना देखकर राजाके हृदयमे बड़ा संसय उतप
न्न होय गया तब तो जनक भूप भगवानके दास पा
र्षद जोथे तिनसे पूछने लगे कि हे हरिदासो मेरेको
सत्य बताओ जो इस स्थान कौन लोग निवास क
रते हैं और इहभी कहो कि इहां ऐसा महा भारी सो
र होता एकेवार जो मिट गया है इसका क्या कारन
है तब हरीके पार्षद कहने लगे कि हे राजन इह
जम लोक है इहां जमराजाके दूत बड़े सूरवीर जो
हैं सो पापी जीवोंको नाना प्रकारका दंड देते हैं
तिसते वे परम दुखको प्रापत होयकर अनेक
प्रकारका सोर और चिङ्कार जो है सो करते हैं अब
राजन तेरे अंगके साथ छूह कर पवन जो तिनकी
ओर गई है तिसके सपर्स से वे संपूर्ण नारकी जी
व बड़े आनंद सुखके मे मगन होयकर प्रीती
को प्रापत होय गये हैं इस प्रकार तिन नारकी
जीवों दसा देखकर जनकराज तुरत दयाके
वस होयगये और नेत्रोंमे जल भरकर दयारस
की भीगी हुई वाणी से हरीदासों को क
हने लगे कि जो मेरे अंगकी पवनके स्पर्स ते
इह नारकी जीव दुखसे रहित होयकर सुखको
प्रापत होय गये हैं तो हे हरिदासो मैं अब स
दा इहां जम पुरमे ही निवास करता हूं हरिके धा
मको नहीं जाता हूं इनका दुख कलेस जो है सो
प्यारे मेरे तें सहारा नहीं जाता है अब दया क
रके मेरे विमान को इहां ही राख देवो ऐसे रा
जा की आज्ञा मानकर हरिपार्षदों ने विमान
को तहां ही राख दिया तब दयाकी निधी जनक

आपु न जाहिं दरस हित ताहीं॥ भरे भरोस भू
रि मन माहीं॥ निज जन प्रण पालक जदुनाथा॥
हम कहं करहिं सुभवन सनाथा॥ तव निज दा
सन की रुचि राखी॥ कृस्न चंद्र घट घट के साषी॥
दारुक सारथि बोलि अपाना॥ भने वचन अस
कृपानिधाना॥ सुन हो सूत विलंब विहाई॥ ल्या
वहु मम रथ वेग सजाई॥ पूरब ओर जायवे का
हीं॥ उपजी रुची मोर मन माहीं॥ मिथुला नग
रि विदत तहि देसा॥ तहां वसहिं बहुलास नरेसा॥
तैसे हि द्विज श्रुतिदेव सुजाना॥ उभय मोर इह
भक्त प्रधाना॥ दोहा॥ मम दरसन हित बड़ो पण
तिन दोहन मन माहिं॥ दै हौं दरसन जाय मैं कर
हुं सफल [illegible] जन काहिं॥७१॥ टीका॥ नाभादास क
हते हैं कि हे संतो अब इह आनंद रस कर के पूरि
त भई हई गाथा जैसी क मेरे कान मार्ग मैं पड़ी
है तैसी मै कृस्न पर[struck out]मात्मा के चरन कमलों
का हृदयँ ध्यान धार कर आपके आगे गायकर मै
ता हूं इह कैसी भी गाथा है कि जिसके श्रवण कर
ने तें दुरमती [struck out] नास होय कर संसा
र का महा विकट अर्थात बड़ा कठिन फंद जो
है सो सब टूट जाता है और जदुनंदन भगवान के
चरन कमलों विखें दृढ़ भक्ती और प्रीती उतप
न्न होय जाती है कहते हैं कि मिथुला नगरी का
एक राजा बहुलास नाम करके प्रसिद्ध होता
भया कि जिसके हृदय मैं एही अभिलाषा थी
जो मैं कृस्न परमात्मा का दुर्लभ दरसन कब
ने त्र भर कर पाऊंगा और तसी नगरी मैं

एक ब्राह्मण भी निवास करता था कि जो श्रुति
देव नाम करके लोगों मे उजागर था वे भी ह
दय की संपूर्ण आसा को त्याग कर के जदुनंद
न भगवान के दरसन का ही पयासा था और वे
स्वामी सुभचारी और सुधर्मी कि विषय विका
र काम क्रोध मद इत्यादि सब त्याग कर रात्री
दिन सदा भगवान की प्रीती भक्ती मे ही मगण
रहता और बडे सुखदायक मधुर वचन जो
हैं सो बोलता कविता मे प्रवीन बडा सुसील
और सांति सुभाव वाला सरव गुणों की निधी
जैसा कुछ प्रापत होता तैसा ही पाय कर संतो
ष मे मगण रहता और सब को एक समान सम
दृष्टी से देखता हान लाभ सुख दुख इन सब
मे एक रहता था और मन वचन काया करके
भक्ती पूर्वक संतों की सेवा मे लीन रहता अ
पने निमित्त कोई किसी प्रकार का उद्दम नहीं
करता आनंद सुख से सदा घर मे ही निवास
किये रहता था तैसे ही बहुलास राजा भी
भगवान का भक्त कि जिसके सपने मे भी हंकार
निकट नहीं आया इन दोन राजा और ब्रा
ह्मण ने एक ही प्रण धारन किया कि जब ज
दुनंदन भगवान हमको घर मे ही दरसन देवेंगे
तब ही पावेंगे और प्रभू का दरसन पाय कर
इहां घर मे ही अपना जनम सफल करेंगे
और दोनों ने ही सुना हुआ था कि भगवान कृपा

निधान द्वारिकामे निवास करते हैं तहां नहीं जाते भये हृदयमे दृढ करके एही मनो सा राख लिया कि भगवान ईहां घरमे हीं को दरसन दे कर हम को सनाथ करेंगे तब सर्व घट घट के साखी नंदलाल भगवान अपने दासों की रुचीराखने और प्रण पूर्ण करने के वास्ते दारुक नामा जो अपना सार्थी है तिसको तुरत बुलाय कर आज्ञा देते भये कि हे सूत तूं अब शीघ्र मेरे रथ को सजाय कर के लेआ क्योंकि मे पूर्व दिशा के जाने की अभिलाषा करता हूं तहां जगत में प्रसिद्ध मिथुला नगरी जो है तिस विषें मेरे चरनों के दृढ सेवक और भक्तों मे प्रधान भक्त राजा वहुलास और श्रुतिदेव नामा ब्राह्मण दोनो हीं निवास करते हैं और तिन्हों ने प्रणधारा हूआ है कि हम को भगवान का दरसन ईहां घरमे हीं प्रापत होवे इस लिये मे तिन का प्रण सत्य करने को तहां तिनके घरमे हीं जायकर दरसन देता हूं और संसारमे अपने दासों को सफल और सनाथ करता हूं ॥ २॥ चौपाई॥ ~~सुनि प्रभु~~ प्रभु मुख सुनत सूत अस वानी॥ चल्यो वेग मान सुख मानी॥ ल्यावा स्यंदन तुरत सजाई॥ हरषि चढे तापें जदुराई॥ जनक नगर को कियो पियाना॥ वहुरि विचार कियो भगवाना॥ ~~मुनिन समाज भीत भव समना॥~~

~~हमरे संग उचित सब गमना॥~~

ंसव दासअपने दासों मेंप्रणपालते हैं

लीन

अथ श्रुतदेव तथा राजा बहुलास चरित्र

दोहा॥ अब इह आनंद रस भरी परी गाथ जिमि
कान॥ तिमि बरनन कछु करहुं [illegible] रि कृस्न चर
न उर ध्यान॥ जासु सुनत दुरमति मिटै कटै विकट
भवजाल॥ उपजि परै सुभ भक्ति पद जदुपति
दीनदयाल॥ चौपाई॥ नृप बहुलास नाम सुभ
चारा॥ मिथुलापती विदित संसारा॥ जाके उर
अभिलाष विसाला॥ [illegible] कब देखहुं नयनन
जदुपाला॥ तहि पुर दुज इक बसहिं सुहावा॥
जेहि श्रुतिदेव नाम जग गावा॥ सो हुं अ
न तव वरि हरि आसा॥ हृदय दरस जदुनंद
न प्यासा॥ विषय विकार मार मद त्यागी॥ रह
त सदा हरिपद अनुरागी॥ मधुर वचन बोलत
सुखदाऊ॥ सुकवि सांति रत सील सुभाऊ॥ ज
था लाभ संतुष्ट सदाहीं॥ देखै सम दृष्टी सब का
हीं॥ हान लाभ सुख दुष संसारा॥ सदा एकरस
जासु विचारा॥ मन वच काय भक्ति सरसाई॥ करै
संत सज्जन सिव काई॥ निज हित करहिं न साहस
कोई॥ निवसै भवन सदा सुख मोई॥ तस बहु
लास भूप गुन रासा॥ जासु स्वपन नहिं दरप प्र
कासा॥ दौहन [illegible] उर एकै प्रण धारा॥ हमरे
घर प्रभु नंददुलारा॥ जो दैहैं दरसन हम पैहैं॥
घरहीं जनम सफल करि लैहैं॥ दौहन सुनि
रहयो निज काना॥ द्वारावती बसहिं भगवाना॥ १०

नहिं अबसेरा ॥ दोहा ॥ जाय विलोके तिनँ तब भक्त सुखद जदुराव ॥ विकसे मुष लषि सब नके दृगन प्रेम जल छाव ॥ २ ॥ टीका ॥ इस प्र कार प्रभूके मुषसें वचन सुनकरके सूत जो सा र्थी है सो आनंदसें ततकाल जाय कर और रथको सजाय कर भगवानके पास ले आव ता भया तब दीनबंधू आदरपूर्वक तिस रथपर सवार होयकर जनकके नगरको जो प्रस्थान करने लगे तो कृपासिंधू नें विचार किया कि हमारे साथ मुनि लोगों का समाज भी होना चाहिये ऐसे विचारकर गिरधारी भगवानने नारद व्यास बृहस्पती च्यवन विश्वामि त्र भरद्वाज वामदेव मैत्रेय भृगू वसि ष्ठ अत्री इत्यादि मुनिनाथ कों को बुला यकर सनमानसें अपने साथ रथपर च ढायलिये आगे मार्गमे कहीं विचरते हूये शुकदेव जीभी मिल पडे प्रभूने तिनको भी सतकारसें अपने साथ रथपर बैठाय लि या तब तो देस देसान्त्रों मे विचरते हूये और तहां के मुनी लोगों को सफ लकरते हूये भगवान अपने तब मुनी समा जके सहित जब जनक नगरी के निकट आय प्रापत भये तब तहां सें दीनानाथ ने मिथुलापती की ओर अपना दू त जो है सो पठाय दिया तिस

दूतने ततकाल जाय करके राजा बहुलास और श्रुतिदेव श्री ब्राह्मणको सब वृत्तांत प्रकट करके सुनाय दिया कि हे राजन हे द्विज तुमारी अभिलाषा और मनोरथको जानकर संसारमे तुमको सफल करनेके लिये मुनि समाजके सहित तीन लोकके नायक जदुनंदन भगवान जो हैं सो चले आवते हैं तव राजा बहुलास अपने घरमे जदुनंदन भगवान का आगमन अर्थात आवना सुनकरके अपने भागोंकी बड़ाई जानकर आनंदमे ऐसे मगन होय गया कि जैसे स्वांती बूंदको पायकर चात्रिक जो पपीहा है सो प्रसंन और त्रिपत होय जाता है ततकाल अपने पुरके लोग और भाई बांधवोंको बुलायकर आज्ञा देता भया कि भाई तुम सब अपना अपना साज समाज सजायके हे साथ भगवानको आगे हीं लेनेके वास्ते चलो देखो वे दीनानाथ तुमारे को सफल और सनाथ करनेके लिये ई हाँ मेरे नगरको चले आवते हैं ऐसे राजाके मुषसें परम सुखदायक वचन सुनकर पुरके नारी नर जुवा वृद्ध बालक जो थे सो आनंदमे मगन भये हूये तुरत नाना भांतके बड़े मनोहर मंगल सजाय और हाथोंमे लेकर प्रेमके वस सरीरकी दसा विसारे हूये जैसे जहां जहां थाते सेहीं तहां तहांसें नंदलाल

कोई

भगवान की छवी देखने को चलप ड़ता भया मनों के ह्रुदय मे अत्यंत लाभ जान करके एक दूसरे को कोई संभालता उठीकता नहीं भया तवजाते जाते आगे क्या देखते हैं, कि मुनी समाज के सहित भगवान कृपा निधान रथपर विराजे हूये वड़ी सोभासें चले आवते हैं ग्रैसे जवनिकट आय गये तव भक्त हित कारी मुरारी भगवान की मनोहर छवी को देखकर के सवलोगों के मुख जो हैं सो प्रसंनता को प्राप्त होयगये ग्रौर सवके लोचनों मे प्रेम जल जो है सो छायत होयगया ॥२॥

चौपाई॥ धरि धरि धरनि सीस अनुरागे॥ प्रभुहिं प्रनाम करन सव लागे॥ पुनि जोरत कर मुनिन जुहारी॥ सवलोगन मुषविनय उचारी॥ हमरे भागन तें रत आये॥ नाथ अनाथ सनाथ वनाये॥ अतने मे धावत गत धीरा॥ प्रेम विकल कछु सुध न सरीरा॥ ॥ नीर प्रवाह दृगन पथ वाढ्यो॥ अंग अंग रोमाव लि ठाढ्यो॥ भूले वसन चान पद काहीं॥ इक छिन वीति कलप सम जाहीं॥ अस स्रुति देव भूप वहुलासा॥ आय जहां हरि जगत प्रकासा॥ प्रभु कहं देखि चरन लपटाने॥ नाथ नाथ मुख वचन अलाने॥ कृपासिंधु तिनकर दृग देखी॥ प्रेम नेम जुत भक्ति विसेखी॥ सुख चरननतें चट कृस उठाई॥ लिये भुजन भरि हिये जुडाई॥ वारवार पूछी कुसलाता॥ तव द्विज भूप भने मुष वाता॥ आजकुसल

मुनि मंडलि सुंदर सुखदाई॥ चलहिं हमार संग मनभाई॥ अस विचारि प्रभु लिये वुलाई॥ व्यास अत्रि नारद ऋषिराई॥ च्यमन देव गुरु कौस क लोहीं॥ वामदेव मैत्रे भृगु जोहीं॥ भाद्विज राम समुदाई॥ मुनि वसिष्ट जुत संग लिवाई॥ पुनि विचरत सुकदेव सहाये॥ मिले लीन प्रभु जान चढाये॥ देस देस वहिरत भगवाना॥ करत मुनिन कहें सफल महाना॥ आये जनक नगर ढिग जवहीं॥ पठ्योदूत आगल प्रभु तवहीं॥ जायदूत मिथुलापुर माहीं॥ मन्यो भूप श्रुति देव हु काहीं॥ ~~[illegible]~~ तुव मनअर्थ गुनत नंदलाला॥ कर[illegible] न हेत भव तुम्हें निहाला॥ मुनिनि समाज लिये निज साथा॥ आवत हैं त्रिभुवनके नाथा॥ नृप वहु लास सुनत जदुराया॥ निज नकेत आगमन सुहाया॥ भाँविवस उर हरष अघावा॥ स्वाति वूँद चातिक जिमि पावा॥ पुरजन परिजन सकल वुलाई॥ दियो तुरत सासन असराई॥ साजि साजि निज निज सव साजैं॥ चलहु लेन आगल जदुराजैं॥ सोस नाथ करव तुव काहीं॥ आये ईहाँ मोर पुर माहीं॥ सुनत भूपपुरकी नर नारी॥ वाल वृद्ध सव हृदय सुखारी॥ हरष मगन तन सुरति विसारे॥ साजि करन कल मंगल भारे॥ जे जस रहे चले तस धाई॥ प्रेम विवस देखन जदुराई॥ जानि लाभ निज हृदय घनेरा॥ एक दूसर कर

ओर राजा व उल्लास जहां जगत के प्रकासक म
मवान स्थित भये हूये थे तहां आय प्रापत भये
ओर दीन बंधू को देखते ही तुरत चरनो मे लिप
ट गये तब कृपा सिंधू ने तिन का प्रेम नेम ओर
पवित्र भक्ती प्रीती देखकर चरनो सें उठायकर
के ततकाल भुजा भरते ही हृदय सें जुड़ाय लि
ये ओर प्रसन्न भये हूये दीना नाथ भली प्रकार स
ब कुसल पूछने लगे जाते भये तब भगवान को
अनुकूल जान कर ओर तिन की कृपा दृष्टि देखकर
राजा ओर ब्राह्मन दोनो भक्त मधुर वाणी सें क
हने लगे कि हे कृपानिधान आज तुमारे चरन क
मलों का दरसन पाय कर हम को सब प्रकार करके
कुसल ओर कल्यान ही है फिर वे दोनों भगवा
न के साथ मुनी जो आये हूये थे तिन सब के चर
नो पर प्रणाम करते भये मुनिनाथकों ने प्रसन्न
होयकर तिन को आसीस सें सफल किया तब
फिर वे दोनो भक्त जदुनंदन भगवान की छबी
को देखने लग पड़े ओर देखते देखते त्रिपत न
हीं होते भये दोनो के दीनबंधू की छबी मे एक
टक नेत्र जुड़ गये प्रेम के वस मुख से वचन
नहीं निकलता जदुनाथ के रूप की छबी मे
उनमत्त भये हूये तिन को सरीर की दसा भी
भूल जाती भई॥ जब बहुत सी वेर के पीछे कु
छ सुरत संभाली तब दोनो हीं हाथ जोड़ कर
दीन वाणी सें विनती करने लगे कि हे दीनाना
थ हे दीनो के दुखदूर करने वाले हे ~~दीन~~ सुखदायक

हे दीनो की रक्षा करने वाले हे दीन सनेही अब कृपा करके चलिये हमारे घर में चरन धारिये और हमारे कुटंब को पवित्र करिये हे दयानिधी तुमारा सदा ऐसा ही विरद है जो अपने दासों पर सनेह का अंग जो है सो पालते हो और जगत में तिनको मान बड़ाई देकर सफल और सनाथ करते चले आये हो ॥ २ ॥ चौपाई ॥ अस प्रकार जुग भक्त सुहाये ॥ विनय वदन इक साथ अलाये ॥ हमरे भवन भवनपति आजू ॥ धारिय चरन कमल जदुराजू ॥ देखि दहुन की अघटत प्रीती ॥ सुभग सरस सम भक्ति प्रतीती ॥ दीनदयाल उर सोचन लागे ॥ इन है भक्त मोर बड़भागे ॥ मैं हूं एक कौन के गेहा ॥ जाऊं प्रथम अव होत संदेहा ॥ पूरव गवन एक के धामा ॥ होय दूसरे को अपमाना ॥ सोल सुताई ~~अब मम~~ भक्त ~~[illegible]~~ व्रतधारी ॥ मोपें कबहुं न जाय सहारी ॥ अब लौं भेद ब्यो भव नाहीं ॥ भेद वुद्धि निज दासन काहीं ॥ असवि चारि ~~[illegible]~~ जदुनायक कीना ॥ ~~[illegible] कौतुक अस [illegible]~~ ~~नाम~~ अति अचरज कछु चरित नवीना ॥ मुनिन सहित ततकाल मुरारी ॥ लीने जुगल वपुष निजधारी ॥ द्वै रथ द्वै सारथि द्वै सेना ॥ रहे संग पुर लोग लखेना ॥ गये चरोवर दोहुन धामा ॥ दोहुन रुचि राषी घन स्यामा ॥ द्विज श्रुतिदेव भूप बहुलासा ॥ जाने मरम न रमा विलासा ॥ तिन अपने अपने मन माना ॥ मेरे हिं आय प्रथम भगवाना ॥ अब सुन हो जहि विधि घन स्यामा ॥ मुनिन सहित [illegible] धामा ॥ जब भूपति के धाम

मुरारी॥ आयगये छवि अतलुतधारी॥ तवदु
तभूप भक्ति जुतधाये॥ सिंहासन निज सिरधरित्या
ये॥ तहिपर जदुपति दीनदयालैं॥ वैठो सादिर
महिपालैं॥ तैसेहिं सव मुनिजन सनमाने॥
दीनवचन वहुवदन वखाने॥ पुनिहरि जुन ति
नकर पद लायें॥ कीने प्रक्षालन नरनायें॥ सोज
चरनजल जुत परिवारा॥ लियोसीस सादिर नृ
पधारा॥ सीच्यो सेष भवन निजसारी॥ सफल
होनकी रीति विचारी॥ दोहा॥ पुनि भगवत तन
भागवत चंदन अतर लगाय॥ निजकर नृप भू
षण वसन मुकतमाल पहिराय॥४॥ टीका॥ इस
प्रकार वेदोनो भक्त एकसाथ ही विनय प्रार्थना कर
तेभये कि हे भवनोकेपती जदुराज प्रभू आज दया
करके हमारे भवनमे चरन धारन करिये तव ऐसे
दोनों की अचटतप्रीती कि जो चटने वाली नहीं है
देखकर और एकसमान वरोवर ही भक्तीभा
व और निश्चय विचारकर दीनानाथ हृदयमें सोच
करने लग जाते भये कि वडे संदेह की वार्ता है अव
कौन उपाय कीजे इह मेरे वडभागी भक्त जो है सो
दो हैं और मे एक हूं अव प्रथम किसके घर जा
ऊं जो पहिले एकके घरमे जाऊंगा तो दूसरे
का अपमान होवेगा सो भक्तका अपमान
मेरेसे सहारा नहीं जाता है मैने अवलगसे
सारमे भेदवुद्धी करके अपने किसी को देखा नहीं
है एकसमान ही देखता रहा हूं अव इह वडी क
ठिन वारता आय वनी है ऐसे विचारकर दीनवंधू
भगवानने वडा अचरज कुछ नया ही चरित्र
और कौतुक किया कि तत काल ही मुनियों

सब नाथ हमारे॥ देखि चरन जलजात तुमारे॥ पुनि सब मुनिन चरन जुग लागे॥ नेम सन आसिष अनुरागे॥ ~~[illegible]~~ बहुरि भूपद जनरि छबि काहीं॥ देखि देखि कछु छिपति नहीं॥ जुरे एक टक दोहन नैना॥ निकसत प्रेम बिबस नहिं बैना॥ बिसरि गई तनकर सुधि सारी॥ ~~[illegible]~~ भये छकत छबि लखित मुरारी॥ बहुत बेर पाछे सुधि आई॥ विप्र भूपतब गिरा अलाई॥ दीनानाथ दीन दुख हारी॥ दीन सुखद प्रभु दीन उबारी॥ अबदाया करि दीन सनेहू॥ धारिय पदपंकज हमगेहू॥ करहु पुनीत कुटंब हमारा॥ नाथ सदा असविरद तुमारा॥ दोहा॥ पालत हो निजजनन पें नेह अंग भगवान॥ सफल करत हो जगत मे देत बड़ाई मान॥२॥ टीका॥ तब प्रेम के बस भये हुये सब लोग पृथ्वी पर माथा धरधरकर भगवान कृपानिधान को प्रणाम करने लगे फिर ~~[illegible]~~ तैसे ही सब मुनियों के आगे हाथ जोड़कर और प्रणाम करकर बिनती करने लगे कि हे प्रभू तुम हमारे भागों से ई हां आय चरन धारे हैं और हम अनाथों को नाथ तुमने सनाथ करदिया है इतने मे धीजसें रहित धावते और प्रेम करके व्याकुल शरीर की सुधी भूले हुये नेत्रों से जलका प्रवाह बहाते अंग अंग रो मावली उठी हुई शरीर के वस्त्र और पाउं के जोड़े की सुरत बिसारे हुये एक छिन जिनको कलप के समान बतीत होता जाता था ऐसे श्रुति देव ब्राह्मण

कछु बाकी जो बचाथा सो सनमान पूर्वक सब अपने भवनों मे छिडुकदिया तिसतें उपरांत भगवान के और भगवान के तिन मुनी भक्तों के सरीरको भलीप्रकार चंदन और अतर मलकर अपने हाथों से बडे दिव्य भूषण वस्त्र और मोतियों की मनोहर माला जो हैं सो पहिराय देई ॥४॥ चौपाई ॥ धूप दीप नैवेद दिखायो ॥ गो वृष सगुन हेत तहं ल्यायो ॥ तन मन धन अरपण पुनि कीन्यो ॥ कृष्ण चरन रज सिर धरि लीन्यो ॥ बहुरि चरन जलजात मुरारी ॥ राखि अंक भूपति सुखभारी ॥ निरभय अनघ अमद अनुरागा ॥ मंद मंद मृदु मीजन लागा ॥ कृपा दृष्टि जदुनंदन पाई ॥ लाग्यो विनय करन महि राई ॥ प्रभु तुम हरन जगत संतापू ॥ सब प्राणिन के आतम आपू ॥ महिमा रुमत प्रभाव अपारा ॥ विभु अनंत भगवंत तुमारा ॥ अंतर जामि सर्व चर साखी ॥ जो हम बहुदिन तें उर राखी ॥ सो अभिलाष कृपाल हमारी ॥ आज कीन पूरण तुव भारी ॥ जिन चरनन दरसन हित सारे ॥ मुनि जोगी करि करि हठ हारे ॥ सो भयो प्रापत तिनका हीं ॥ उदय भाग मेरे जग माहीं ॥ ~~सो~~ ~~चरन~~ पंकज मुख देना ॥ देखि लिये अब भरि भरि नैना ॥ वेद पुरान वाक्य जे केहीं ॥ जदुपति जन प्रणपालक अहीं ॥ सो मै सत्य लियो सब हेरी ॥ प्रभु अभिलाष कीन पुरु मेरी ॥ तोर कथन जे दीन उबारे ॥ श्री संकर ~~...~~ विधि ~~मेदनिचारे~~ ॥ दासन तें मुनि प्रिये न कोई ॥ दियो दिखाय प्रकट प्रभू सोई ॥ अस तुव घालदीन हितकारी ॥ दीनपाल अरु दीन उबारी ॥ तुम्हें छाडि औरें नंदलाला ॥

भजे जोय किमि होय निहाला॥ तुम कहे तजि म
जो हैं जे ग्याना॥ सोनर जह्न पाषान समाना॥ प्र
भु तें विमुष जगत जन केरी॥ होहि विदन दुरद
सा घनेरी॥ पावें विपति संति कछु नाहीं॥
सदा रहै भटकत भव माहीं॥ जे सज्जन तजि विषय
विकारा॥ राखहिं तुव चरनन ग्राधारा॥ दोहा॥ ति
न कहें तुव करुणाय निधि दीन नाथ भगवान॥
ग्रोर कहा कीजे कथन दीजत हो निज प्राण॥४॥
टीका फिर धूप दीप नैवेद दिखायके कर गोवृष
ग्रर्थात गौ ग्रोर बैल सगुन के लिये सनमुष ल्याय
स्थित किये ग्रोर ग्रपना तनमन धन सब भग
वानके ग्रर्पण करदिया दीनबंधू के च
रनकमलों की धूली को लेकर सीस पर धारन कर
कर फिर तिन चरनो को ग्रप ने ग्रंक
ग्रर्थात गोदमें लेकरके सब पाप हंकार से रहित
निरभय ग्रोर प्रेम सुखमें मग्न भया हुग्रा राजा
बलीको भलताई से सहजे सहजे चापने लगा तब
भगवान कृपानिधान की कृपा दृष्टी देखकर ग्राने
दमें मगन भया हुग्रा प्रजापाल हाथ जोडकर दीन
बानीसे बिनती करने लगा हे भगवान तुम कैसे हो
कि जगत के संपूर्ण कलेसोंको दूर करने वाले
ग्रोर सरब प्राणियों के बिखे व्यापक नाथ तुम्हारी
ग्रनंत महिमा कि जिसकी कोई मिती नहीं है तैसे
ही ग्रपार प्रभाव ग्रोर ग्रनंत प्रताप कि जिसका को
ई ग्रंत नहीं है सर्व घटों के साखी ग्रर्थात सब के
हृदय की जानने वाले ग्रंतर जामी हो हे दीन हि
तकारी मुरारी मैंने भगवान मैने जो बहुत

दिनो की हृदय मे राखी हुई थी सो मेरी अभिला
षा आज कृपानिधान तुमने पूर्ण कर दई है
देखिये जिन चरन कमलों के दरसन के नमि
त मुनी जोगी जन अनेक जतन हठ कर कर हा
र गये तिनें प्रापत नहीं भया मेरे धन्य भाग्य
कि जिसने भक्तों के मन को आनंद देने वाले सोई
चरन कमल आज प्रतक्ष नेत्र भर भर कर देख
लिये हैं वेद और पुरानो ने कहा है कि जदुनंदन
भगवान जनप्रण पालक हैं अर्थात अपने दास का
प्रण पूर्ण करते हैं सो मैने सब सत्य देख लिया है
मेरे हृदय में अभिलाषा जो थी सो दीनानाथ ने सब
पूर्ण कर दई है और हे भगवन तुमारे मुष का जो
वाक्य है कि महादेव ब्रह्मा लक्ष्मी और ह
जार फण वाले सेस इन को मैं ऐसे प्यारे नहीं
जानता हूं कि जैसे मेरे को अपने दास भक्त प्यारे हैं
सो भी हे दीनबंधु तुमने प्रकट दिखाय दिया है ना
थ सत्य कर के दासों पर अधिक ही सनेह है
ताते दया के धाम दीन हितकारी और
दीनों की रक्षा करने वाले हो कृपानिधान तुम को
छोड़ कर जो जगत मे और को भजते तिस को
सपने मे भी सुख प्रापत नहीं है और तुम
को त्याग कर जो दूसरे का सुमर्ण करता है सो
पुरुष संसार मे महा जड़ पाषाण के समान
है नाथ तुमारे से वेमुष हैं ति
स की जगत मे प्रकट दुरदसा हीं होती है और
वे सांती और विपती को कदाचित प्राप
त नहीं होता॥ संसार मै सदा भ्रमता और

के सहित अपने दो सरूप धारन करलिये दोनो
हीं रथ दोनोहीं सार्थी और दोहीं सेन के भाग प्र
कट होय जाते भये पुर के लोग जो भगवान के संग लागे
चले आवते थे वे कौतुकी भगवान के भेद को कुछ
भी लखने को सामर्थ नहीं होते भये तब कृपानिधान
वरोवर ही दोनो भक्तों के घर मे गये और दोनो
की रुची अभिलाषा जोथी सो पूरनकरी श्रुतिदेव
ब्राह्मण और राजा बहुलास रह कृपासिंधू के मर्म
अर्थात भेद को कुछ जान नहीं सके एक दूसरा
अपने अपने मन मे कहता है कि लक्ष्मी नाथ
भगवान प्रथम मेरे ही घर मे आये हैं नामादास कह
ते हैं कि हे संतो अब जिस प्रकार जदुनंदन परमा
तमा राजा बहुलास के घर मे गये हैं सो ध्यान दे कर
श्रवण करिये जब ~~[illegible]~~ अनंत छबी
[illegible] करके सोभित मरारी भगवान सब मुनियों के
सहित राजा के घर मे आय प्रापत भये तब दीनबंधू
के नमित्त सुंदर सिंहासन जो है सो राजा भक्ती पू
र्वक [illegible] तुरत अपने हीं सीस पर उठाय करके ल्याय
राखता भया और तिस के ऊपर बड़े आदर सतकार
से भगवान कृपानिधान को विठाय देता भया फिर ते
से हीं सनमान पूर्वक सब मुनी भी जथाजोग आस
नो पर वेठाय दिये और सब के आगे वड़ी कोमलवा
नी से अपनी नम्रता और दीनता जो है सो प्रकट करी
फिर जदुनाथ के सहित अपने हाथ से तिन सब के
चरन प्रक्षालन करवाये अर्थात ~~[illegible]~~ धुला
ये और सोई चरनो का जल लेकर संपूर्ण परिवार
के सहित राजा ने अपने सीस पर धारन कर लिया
फिर सफल होने की रीती विचार कर वे चरनामृत
जगत मे

मुनिसमाज के सहित,

पट फहराय अजर व तु भागा॥ नाथ नाथ कहि नाचन लागा॥ पुनि दुज धरत धीर कुछु जीके॥ काष्ठि कुसासन आसन नीके॥ ता पर मुनिन सहित जदुनंदू॥ बैठारे भव किलषनिकंदू॥ करिके कुसल प्रस्न कर जोरी॥ लग्यो करन मुष विनय बहोरी॥ जहिं चरनन गौतुम तियतारी॥ जहिं निषाद जग लियो उबारी॥ जहिं सपर्स भई पावन गंगा॥ करवे कहे जग के अग भंगा॥ जे पद सकल लोक सुषदाये॥ महादेव निज हृदय बसाये॥ अरु जे जीवन तारन रागे॥ गया गयासुर के उर लागे॥ जहि पर सिंधु सुता मन लोभा॥ जहिं पद की जलजारन सोभा॥ जे सब संतन के आधारा॥ आज प्रकट सो मोर अगारा॥ संजुत मुनिन चरन अधिकाई॥ देत अहैं सोभा मन भाई॥ दोहा॥ धन धन मेरे भाग धन धन्य जनम संसार॥ भये मनोरथ सफल जहि दरस त चरन मुरार॥६॥ टीका॥ और हे दीन सनेही भगवन तुम अपने दास भक्तों के नमित्त जदुवंस मे अवतार धार कर और नाना प्रकार के अनंत हीं मनोहर चरित्र कर कर बड़ा निरमल सुजस जो है सो संसार मे विस्तारण कर दिया है प्रभू ऐसे तुमारे सुजस को गाय गाय कर और तिस का हीं आधार लेकर लोग इस संसार समुद्र में जतन के विना सहजे हीं पार उतरते जाते हैं हे गिरधारी लाल इह तुमारी कीरती का चंद्रमा जो है सो तीन लोक के अंधकार को करने वाला है नाथ तुम कैसे भी हो कि ज्ञान सरूप हो और सरव जगत के जीवन प्राण हो अब हे दीन सनेही हे सुख के सागर दया

करके मुनिसमाज के सहित कुछ क काल लग
इहां मेरे घरमे हीं निवास करिये और दास को सु
जस का पात्र बनायकर लोगों मे उजागर करिये इस
प्रकार राजा बहुलास के मुष सें विनती के भरे हुये बडे
कोमल बचन सुनकर नंदलाल भगवान अत्यंत
प्रसंन होय गये और कुछ क दिन तहां निवास कर
कर मिथुलापुरी के लोगों को भलीप्रकार सफल
करते भये तब राजा प्रेम करके मत्त भया हुआ घर
के सनेह सें लेकर देह की सुरती बिसारे हुये जनम
जनम के पापों का नास करने वाले जदुनंद भगवान
के चरन कमल जो हैं तिनको रोजीदिन
अनन्य भक्ती सें सेवता भया आज इह मिथुलापती
राजा बहुलास जो है सो धन्य है कि जिसके घर मे मुनी
समाज के सहित तीन लोक के नायक जदुनंदन भगवान
आय करके बिराजमान भये हुये हैं इह प्रसंग तो ऐसे
रहा अब और सुनिये कि जिस प्रकार भगवान इस राजा
के घर मे गये हैं तैसे हीं सब मुनिसमाज के सहित नंद
लाल श्रुतिदेव ब्राह्मण के घर मे जाते भये वे भी भक्तों स
नमान हैं आगे हीं जायकर दीनबंधू को सब मुनि
यों के सहित आनंद करके पूरित भया हुआ अपने
घर मे ले आवता भया तब दीनानाथ के सहित
सब मुनियों के चरनो पर दंडवत प्रणाम कर कर
आनंद मे मगन भया हूआ बस्त्र घुमाय कर और
अंगण मे नाचने लग जाता भया फिर कुछ धीरज को धा
रकर और भीतर घर सें सुंदर कुसासन ल्यायकर
और जथा जोग अस्थान पर उसायकर तिन पर
भगवान के सहित सब मुनियों को सनमान सें बि
ठाय दिया तब नम्र वाणी सें आनंद कुसल पूछकर

फिर हाथ जोड़ करके विनती करने लगा कि हे देव जिन चरनोने गौतुम मुनी की स्त्री को तारा और जिन चरनोने जगत मै निषाद जो मल्लाह है तिस को उद्धार किया जिन चरनोके सपर्स तें जगत के पाप निवारण करने को गंगा जो है सो पवित्र भई है और जो चरन सब लोगोंके सुखदायक महादेवजी ने हृदय मे बसाये हूये हैं और जे चरन जगत के सं पूर्ण जीवोंके उद्धार निमित्त गयाजी मे गयासुर के हृदय पर लगे हूये सोभा देते हैं जिन चरनोपर लक्ष्मी का मन लोभी होय रहा है और जिन चरनों की कमलों कैसी उपमा है और जो चरन संसार मे संत जनोंके आधार हैं आज सोई चवन मुनियोंकी चरन पत्नी के सहित मेरे घर मे विराजे हूये बड़ी मनोहर सोभा को उदय कर रहे हैं अब मै धन्य हूं और धन्य जगत मे मेरा जनम है कि जिन्हे तीन लोक के नायक जदुनंदन भगवान के चरन कमलोंका दरसन पायकर अपने हृदय की सब अभिलाषा और मनोर्थों को पूर्ण कर लिया है ॥ ६ ॥ चौपाई ॥ अस कहि मुनिन सहित गिरधारी ॥ अन्हो ले पदपंकज वारी ॥ सो जल ले निज सीस चढावा ॥ कोटि जनम अघ तुरत मिटावा ॥ पति तें दुगन प्रेम तिय काहीं ॥ सेवत लेत त्रिपति कछु नाहीं ॥ सोंधा सुरभि सुन्याय उमंगा ॥ निज कर मल्यो नाथ के अंगा ॥ दुज प्रथम हिं जदुनंदन हेतू ॥ ल्याय मधुर फल धरे न केतू ॥ ते सादिर अरपत दुज की ने ॥ सुधा जानि जदुनंदन लीने ॥ वारवार बहु वदन सिहाई ॥ लिये कृपाल प्रीति जुत पाई ॥ बहुरि विप्र सीतल जल ल्यायो ॥ निज कर प्रभु कहे

भरकता हीं रहता है और जो सज्जन पुरुष
नाथ तुमारे दास हैं और विषय विकारों त्यागकर
केवल तुमारें चरनोंकी भरोसा राखते हैं तिनकोतुम
हे दीनानाथ हे कृपा निधान और क्या कहिये
अपने प्राणदेते भी संकोच नहीं मानते हो ॥५॥ चौपाई ॥
दासन हित तुव दीन उवारा ॥ लै जदुवंस माहिं अव
तारा ॥ करिकरि चरित मन हारयो ॥ विमल
सुजस संस्रति विस्तारयो ॥ सो कृपाल अस
सुजस तुम्हारा ॥ गायगाय गहि मनुज अधारा ॥
भव सागरतें पार सवाहीं ॥ विनु प्रयास प्रभु उत
रत जाहीं ॥ तुव कीरति मयंक गिरधारी ॥ हरन
हार त्रिभुवन तम भारी ॥ ज्ञान सरूप तुम हो भगवा
ना ॥ सरव जगतके जीवन प्राना ॥ अव दाया करि
दीन सनेहू ॥ मुनिन सहित मोरे रहु गेहू ॥ वस हो
कछुक दिवस सुख सागर ॥ करहु दीन कहे लोक उ
जागर ॥ सुनत भूप मुख विनय सुहाई ॥ परम ह
रष पूरित जदुराई ॥ कछुक काल तहं नंददुलारे ॥
वसे लोग पुरके सव तारे ॥ प्रेम मत्त भूपति
वडुभागी ॥ गेह सनेह देह सुधि त्यागी ॥ जनम
जनमकर दोष निवारी ॥ सेवत चरन कंज गिरधारी ॥
अहो धन्य मिथुलापति आजू ॥ जाके भवन वस
त जदुराजू ॥ जिमि वहुलास भूपके गेहू ॥ गये मु
निन जुत दीन सनेहू ॥ तिमि श्रुति देव मही सुर केरे ॥
गये सदन रुचि प्रेम घनेरे ॥ सो हूं भक्ति संजत प्रभु
काहीं ॥ ल्यायो हरषि भवन निज माहीं ॥ सकल
मुनिनके चरन जुहारी ॥ दुज श्रुति देव मगन सुखभारी ॥

जनमकेअपने

कर के सनमानसें अपने सीस पर धारन करलि
या तिसतें ब्राह्मणने मानो ~~अपने जनमजन~~
~~मके~~ कोटि पाप जो थे सो सब मिटाय लिये और
तिसकी स्त्री जो थी सो तिसतें भी अधिक प्रेम भक्ती
वाली थी कि जो भगवान कृपानिधान का सेवन स
तकार करती विपती को प्रापत नहीं होती ~~जैसा~~
~~जो अंतर है इत्यादि और भी सुंदर सुगंधी सु~~
~~घायकर~~ दीनबंधू के सुंदर सुरभी अर्थात
सुगंधी सुंघायकर फिर प्रीती पूर्वक अपने हाथों
सें नाथ के अंगों को सोंधा जो अतर है सो लगाव
ती भई श्रुतिदेवने प्रथम ही कृपासिंधू के निमित्त
बडे सुंदर मधुर मधुर फल ल्याय करके जो मेरा
खे हूये थे सो प्रीती भक्ती से दीनानाथ के आगे नवे
दन करदेता भया अर्थात प्रभू को अरपण करदेता
भया कृपानिधानने देखकर और वारवार तिन
की श्लाघा करकर अमृत के समान जानकर के
बडी प्रीती रुची सें पाय लिये तिसतें उपरांत ब्रा
ह्मण जो है सो सुंदर सीतल जल ले आया और
अपने हाथसें भगवान को पान कराया फिर बडे
~~सुंदर~~ कोमल कमलदलों की और नवीन तुलसीदलों की
मनोहर माला रचायकर अविरल प्रेम के सहित
कि जिसमें कोई विरल नहीं है भगवान के गले में प
राय देता भया इसप्रकार सब मुनि समाज के सहि
त दीनसनेही भगवान का पूजन करकर ब्राह्म
मण जो है सो जगत में अपने समान दूसरे को न
हीं जानता भया हृदय में विचार करने लगा कि
मेरे संसार में ऐसे कौन वसेष पुन्न हैं मैं तो जगत

के अंध कूप अर्थात अंधेरे कूये मै पड़ा हूआ रात्री दि
न कृष्ण [illegible] परमात्मा के आधार पर हीं रहता था
सो दीनानाथ ने अपना दीन पाल विरद संभाल कर
परम अनुग्रह से ईहा घर मे आय कर मेरे को द
रसन दिया है और हे दया की निधी सरव तीरथों
का मूल पापों का नास करने वाली महा पवित्र
तुमारे चरन कमलों की धूली जो है मुनि जनों की व
[illegible] सहित ईहा मेरे घर मै पड़ी मै तिस को नेत्रों
मे लगाय कर और सीस पर चढायकर आज ज
गत मै सरव प्रकार करके कृतार्थ रूप होय गया
हूं ऐसे कथन कर कर प्रेम करके अधीर भया
हूआ ब्राह्मण नेत्रों आनंद जल भर कर चंद्रमा के
तुल्य भगवान के मुष की छबी जो है तिस को दे
खने लगा और दीनबंधू के चरन कमलों को अप
ने अंक अर्थात गोद मै ले कर मंद मंद हाथों से चाप
ने लगा फिर कोमल वाणी से कहता भया कि हे सं
त सुखदायक हे जदुवंस के नायक हे भक्तसरहाँ प्रभू तु
म दया करके मेरे को जतन के विना सहजेहीं प्रा
पत होय गये हो नाथ जे तुमारे दास भक्ती प्रीती
से तुमारी कथा कीर्तन गायन करते रहते हैं और
तुमारे पूजन वंदन मे रात्रीदिन सरव प्रकार करके
लीन रहते हैं तुमारे विना संसार मे और किसी का भरो
सा नहीं राखते हैं तिन को प्रभू तुम भागों के वस
कवी ध्यान मे आवते हो नहीं तो अनेक जतन ह
ठ किये तें भगवन तुम ध्यान मेभी नहीं आवते हो
सो ऐसे तुम वारन जो हसती है तिस का भय दूर कर
ने वाले दुरलभ भगवान आज मेरे को ईहा मेरे घर

~~मैं पिरोजे हैं ये आद अपने दरसनते निहाल कर रहे हो~~
मै भलीप्रकार भुजा भरभर कर मिलेहो और सब
मुनिसमाजके सहित प्रतदा अपने दरसनसे मेरेको
निहालकररहेहो॥ ७॥ चौपाई॥ मै तो कबहुं की न
प्रभु नाहीं॥ नीककर्म कछु निजसुधि माहीं॥ औ
प्रभुपदपंकज अनुरागा॥ कियो न कबहुं अधम ह
त भागा॥ अस मुहिमहां मंद जठ काहीं॥ नाथनि
हाल कीन भवमाहीं॥ सोकरतब नहिं मोर कृपाला॥
तुम हौ दीन दयाल जदुपाला॥ जे कपटी कुमती दुरचा
री॥ विषय वासना पूरित भारी॥ तिनपें अबहु दीनद
खि पाई॥ जद्यपि रहहु दूरि जदुराई॥ जयजय जयव
सुदेव कुमारा॥ जय भक्तन के प्राण आधारा॥ जय
निजजन द्रोहिन तरु केरे॥ काटन कठन कुठार घ
नेरे॥ तुमहु अहेत हेत के स्वामी॥ औहो हेत भक्त
अनुगामी॥ परे फंध माया तुव जेहू॥ तुव दाया
बिनु छुटे न तेहू॥ प्रभु तुम हो दरं संसारा॥ तीन हुं ता
प निसावन हारा॥ मैं हौं लघु रावर प्रभुदासा॥ क
रहुं विनय कछु जगत प्रकासा॥ जद्यपि मन तत ला
ज कछु आवे॥ तदपि मने बिनु रहा न जावे॥ निज
पदपदम प्रीति कर चाहू॥ अहै रीति जस दीन उ
चारू॥ सो मोरे अब देहु बताई॥ मै तस करहुं
नाथ सिवकाई॥ सुनि श्रुति देव अस
बेना॥ भये प्रसंन कमलदल नैना॥ पूरि कृपा
उर दीन सनेही॥ निज कर सों दुज वर कर गेही॥
वदन मधुर म जुल मुसकाई॥ मने वचन अ
स भक्त सहाई॥ तुम पर कृपा कारन हित आये॥
मुनि नायक मम संग सुहाये॥ रहे अनन्य मोरे
मु निदासा॥ भूरि भवन अघ करन विनासा॥

पान करायो॥ रचिको मल दल कमल रसाला॥ जुत कल नवल तुलसि दल माला॥ प्रेम विमल अव रिल गल नाथें॥ मेलि दियो दुज वर निज हाथें॥ अस सब मुनि जुत जदुपति पूजे॥ निज सम दुज जग गन्यो न दूजे॥ लग्यो विचार करन पुनि जी के॥ कौन मोर सुकृत अस नीके॥ अंध कूप संसार मजारा॥ परो रहे प[illegible]रि कृष्ण अधारा॥ सो संभारि निज विरद कृपाले॥ दियो आय दरसन मुहि आलै॥ सब तीरथ कर मूल सुहावनि॥ प्रभु पद पंकज रज जगपावनि॥ सो मे ~~धारि सीस सुखदाई॥ भयो कृतार्थ दुरत बिलाई॥~~ मुनिन चरन जुत मोर अवासू॥ परी आय सब दुरित विनासू॥ सो मैं नैनन सीस चढाई॥ आज कृतार्थ भयो द्युनाई॥ अस [illegible]चारि दुज प्रेम अधीरा॥ दृगन कोर भरि आनंद नीरा॥ निरषत जदुपति वदन मयंका॥ चापत चरन चारु धरि अंका॥ भनत वदन मृदु गिरा सुहाई॥ हे हरि भक्त संत सुखदाई॥ मुहि दाया करि जन अनुगामी॥ ~~मिले हो~~ विनु स्रम सहज मिले हो स्वामी॥ जे तुव कथा कीर्तन चारू॥ पूजन वंदन विविध प्रकारू॥ करत रहत जुत भक्ति अमेवा॥ तिनके हे तुव जदुनंदन देवा॥ ~~[illegible]~~ कवहुं भागवसं (अहंमहि) ध्याना॥ आवत हो कृपानिधाना॥ दोहा॥ सो अस दुर्लभ नाथ तुम मिथु लामे पगधारि॥ मोहि मिले हो हरन भय वारन भुजा पसारि॥ ७॥ टीका॥ ऐसे कथन करकर श्रुतिदेवने मुनियोंके सहित गिरधारी भगवानके चरन कमल जो हैं सो जलसें प्रक्षालन करवाये॥ और सोई चरनोका जल ले

विप्रतें सादर होत विदाय॥ भवन भूप बहु
लास के हरषि मुनिन जुत आय॥ बसि कछु
दिन ताके सदन किये सुजस की खानि॥ बहुरि
गये सब मुनिन जुत जदुपति निज रजधानि॥
८॥ टीका॥ फिर कहता है कि हे कृपानिधान मैंने अपनी
सुरती मै आज लग कबी कोई सुभ करम नहीं किया है
और ना इस अभागी ते नाथ कबी आपके चरनकमलों
की कुछ प्रीती भली वन पडी है तिस पर देखिये प्रभु
तुमारी भक्तवत्सलता कि ऐसे मेरे जैसे महा मंद और
मूढ जड को कृपासिंधु तुमने जगत मै निहाल कर
दिया है नाथ इस मै मेरा तो कोई करतब नहीं था
केवल तुमारी ही दीनदयालता [struck] है भगवन
तुम कैसे हो कि जो कपटी कुमती दुराचारी अर्थात कु
करमी और विषय वासना कर के पूरित क्या भरे हुये
हैं तिन पर तुम दीन दुखी जान कर जद्यपि दूर ही
रहते हो परंतु तुरत ही कोमल होय जाते हो जय हो जय
हो तुमारी हे वसुदेव के कुमार जय हो तुमारी हे
भक्तजनों के प्रान आधार और जय हो तुमारी हे दा
सों के वृत रूपी द्रोहियों [struck]
के काटने को कठिन कुठारे और हे दी
न हितकारी कारन और अकारन के कारन भी
तुम ही हो प्रभू तुमारी माया के फंदे मै जो जीव
पडे हुये हैं वे तुमारी दया के बिना तनक हे कदापि
काल छूट नहीं सकते हैं नाथ तुमारा दरसन
जो है सो जगत के तीनो ही तापों के नास करने
वाला है अब दीना नाथ दास की कुछ बिनती
है जद्यपि कहते हुये लज्जा आवती है तद्यपि कहे

विना रहा भी नहीं जाता है सो क्या है कि भगवन तुमारे चरन कमलों की प्रीती है मै तिसके प्रकार को नहीं जानता हूं कृपा करके मेरे को सो रीती वताय दीजिये जो मै तिसी के अनुसार आपके चरन कमलों की सेवकाई और भक्ती पूजन करूं जो है सो कहो ऐसे श्रुति देव के मुष से वचन सुन कर कमल नैन भगवान अत्यंत प्रसन्न होय गये और दीन सनेही प्रभू परम कृपा सों तिसका हाथ अपने हाथ मे पकड़ कर वडी कोमल वाणी सें मुसक्याय कर कहने लगे कि हे भक्त तेरे पर कृपा करने के लिये इह मुनी नायक जो हैं सो मेरे संग आये हूये हैं और इह मेरे अनन्य दास है मेरे चरनो के विना इन को और किसी का भरोसा नहीं है और इह के से भी हैं कि संपूर्ण भवनों के पापों का नास करने वाले हैं संसार के वीच सव तीर्थ और देवता जो हैं सो दरसन परसन और सेवन तें वहुत काल मे पवित्र करते हैं और इह मेरे दास जिसपर अनुकूल अथवा प्रसंन होते हैं वे तिनके प्रसाद तें संसार मे सर्व जातियों विषें उत्तम ब्राह्मण जो है तिस सरीर को प्रापत होता है तिसपर जो तप किया हो तो तिसके समान और दूसरा कोई नहीं है तिसपर जो कदाचित विद्या भी हो और फिर साथ संतोष भी हो और मेरा दृढ भक्त भी हो सो तो साक्षात ब्रह्मा के तुल्य होता है तिसके समान तीन लोक मे और कोई नहीं है और इह तप विद्या संतोष और भक्ती करके युक्त जो है

सो एही मेरा चतुरभुज रूप है भक्त तूं सत्य
करके जान इन मेरे को अपने दास ते प्यारा नहीं
है मेरे दास के प्रसाद तें जो ब्राह्मण का सरीर प्रा
पत भया सो ब्राह्मण सरब वेद मय कहावता
है और सरब देव मय मेरे को श्रुति ने गायन
किया है अर्थात सरब देवता मेरा ही रूप हैं [illegible] मे
रा अतेसे गूढ वैस्नव रूप जो है तिसको ज
णावने सें भी मूढ पुरष जाण नहीं सकता है
मूरती मे मन मोह करकर वास्तवरूप मेरी मू
रती जो है तिस को नहीं जान सकता है जगत
का कारन और कारज इन दोनो [illegible] मेरा रूप हैं
परंतू संसार मे इस का भेद विचार जो है सो निर
नार करके संत जन ही जानते हैं तातें भक्त तूं
मेरे तें अधिक ~~[illegible]~~ विचारकर इन मुनिम
हातमा जो तेरे घर आये हूये हैं इनका ही भक्ती
प्रीती सें पूजन सेवन कर जगत मे संतों के पूज
न करने तें सरब काल मेरा ही पूजन होय जाता
है और जो संतों को त्याग कर मेरे को पूजता है
मे तिसका वे पूजन [illegible] सूई कार नहीं करता हूं
इस प्रकार अपने दास भक्तों की महिमा जो है सो
दीनानाथ मुख से अनेक प्रकार गायन कर कर
अपने चरन कमलों के प्रेम और प्रीती की रीती
जो थी सो श्रुति देव को भलीप्रकार सब प्रकार
करके सुनाय देई तब ब्राह्मण भक्त भगवान
की आज्ञा को सीस पर धर कर आनंद मे मगण
भया हूआ परम भक्ती प्रीती से भगवान तें भी अ
धिक भगवान के दासों का पूजन सेवन करता भया

सुर तीरथ समारे भव जोऊ ॥ दरसत परसत सेवत सोऊ ॥ बहुत काल महं पावन करहीं ॥ सो जन मोर जासु पंघ धरहीं ॥ ते प्रसाद तिन कर भव माहीं ॥ पावहिं विप्र प्रवर वपु काहीं ॥ तपर कियो रुचिर तप जोई ॥ तहि सम दुज दूसर नहिं कोई ॥ तापर विद्या होहिं सुहावन ॥ पुनि संतोष ताहु पर पावन ॥ तहि पर मोर भक्ति सुखदाई ॥ पावै सो विरंचि सम ताई ॥ तहि सम त्रिभुवन आन न हेरो ॥ एही रूप चतुर भुज मेरो ॥ मोर दास तें मोहि न प्यारा ॥ सुन है भक्त सत्य निरधारा ॥ जे अस मोर दास की दाया ॥ सुंदर प्रवर विप्र वपु पाया ॥ सो दुज सरब बेद मय भावै ॥ सरब देव मय सो हि स्रुति गावै ॥ वैस्नव रूप मूढ प्रति मेरा ॥ लषहिं न मूढ लषाय घनेरा ॥ मूरति मे करि मोह महानै ॥ वास्तव मम मूरति नहिं जानै ॥ जग को कारन कारज जोई ॥ मेरो रूप अहैं रह दोई ॥ पै याको भव मर्म विचारा ॥ जानत संतत संत उदारा ॥ तातें मुनिहिं तें अधिक विचारी ॥ पूजहु मुनिन विप्र हितकारी ॥ पूजत पग जग संत रसाला ॥ होहैं मम पूजन सब काला ॥ मुहि पूजे जे संतन त्यागी ॥ तहि पूजन मैं हो हैं न भागी ॥ अस कहि मानि जजनन सुहाई ॥ कृपासिंधु बहुविधि मुष गाई ॥ निज पद पदम प्रेम रति रीती ॥ दुज कहं कही सकल जुत प्रीती ॥ विप्रन देस पाय जदुनंदू ॥ मानि हृदय निज परम अनंदू ॥ हरि तें अधिक भक्ति सरसाई ॥ पूजे दुज मुनिवर समुदाई ॥ दुज की प्रीति नाथ की दाया ॥ तासु न जाहिं पार कछु पाया ॥ दोहा ॥ पुनि जदुनंदन

इस प्रकार रन्तिदेव भक्त की प्रीती और मुनियों के सहित भगवान की कृपा जो है इन दोनो का कुछ पार नहीं पाया जाता ऐसे भगवान कृपानिधान ब्राह्मण को कृतार्थ कर कर फिर आनंद से विदाय होकर मुनि समाज के सहित राजा बहुलास के घर मे चले आवते भये तहां कुछक दिन निवास कर कर और राजा को जगत मे सुजस और सोभा की खानी बनाय कर फिर सब मुनियों के सहित विदा होय कर जदुनंदन भगवान सुष पूर्वक अपनी राजधानी को चले जाते भये ॥ ८ ॥ इति श्री भक्त विनोद ग्रंथे भगवद भक्ति महात मे भाषा टीकायां नृप बहुलास और दुज श्रुतिदेव चरित वरणन नाम सरगः

महिपाला॥ मानि हृदय निज हरष विसाला॥ जुग कर जोरि सीस पद नाई॥ गिरा नम्र अरु वदन अलाई॥ दोहा॥ जहि विधि सासन होय प्रभु तहि विधि तुव पद दास॥ इन दोहन कर करन निज करव विवाह अजास॥ १॥ टीका॥ अँब हरि चंद राजा की सुंदर गाथा जो है सो हे संत जनो आप कान दे कर स्रवण करिये कैसी भी गाथा है कि जिस के स्रवण करने तें ब्रह्म परमात्मा की पवित्र भक्ती हृदय दृढ होय जाती है सो राजा हरि चंद कि जिस का सुधरम और सुजस चंद्रमा की चांदनी के समान संसार मे विकासमान होय रहा है अर्थात विलाह आहे सिव ब्रह्मा और विस्नू वडे वडे मुनीसरे ज्ञान ध्यान की निधी जिस राजा की श्लाघा वडाई गायन करते हैं कि तिस के समान संसार मे और दूसरा कोई है ना होवेगा एक समय विस्वामित्र औ विसिष्ट सें ले कर और कितने हीं महा मुनी कि जो परमार्थ के जानने वाले थे महादेव की सभा मे बैठे हुये परस्पर विवाद कर रहे थे कि राजा हरी चंद जो है तिस के तुल्य आज पृथवी तल पर और कोई दूसरा धरम और कीर्ती वाला नहीं है वे सील संतोष इत्यादि सरव गुणों कर के लायक है ऐसे सव मुनियों का कथन सुन कर विस्वामित्र जी कहने लगे कि हे मुनीसरों तुम यद्यपि सत्य हीं कहते हों तद्यपि परीक्षा करने पर जो तिस राजा का धरम स्थित रहे तव हीं सव सत्य जानिये और तव हीं सव गुणों की निधी मानिये नहीं तो वडाई और सुजस सव

वृथा होहै ऐसे कथन करकर बुद्धीके सागर मुनी
विस्वामित्र जी राजा हरीचंदकी परीक्षा लेनेके लिये
अपने कौतुक और चतुराई सें पृथ्वीतलपर च
ले आये और अपना रूप छिपायकर किसी अस्था
नपर तपसी बनकर बैठ रहते भये तब समय पा
यकरके सोई धरम की निधी राजा हरीचंद अपने सब
समाजके सहित देस देसांतरों मे गवन करते हूये
तहां आय प्रापत हूये विस्वामित्रजीने अपने तप
के प्रभावसें तहां तुरत एक कन्या और एक पुत्र उ
तपन्न कर लिया जब राजा कुछक निकट आय पहूं
चा तब मुनी ऊंची सुरसें सुनायकर कहने लगे कि
हे राजन तुम जगत मे महादानी कहावते हो और
सुजस कीरतीके सहित सरवगुणों की निधी हो मे दीन
धनहीन ब्राह्मण तुमारे आगे कुछ जाचना करता हूं
सो तुम दीन जानकर इह मेरा पुत्र और कन्या जो है
सो दान देकर तिनका अपने हाथसें विवाह करवा
य देवो और प्रजापाल मेरे मनोर्थ को सफुल करदे
वो मै प्रसंन होयकर तेरे को आसीस देता हूं हरि
हर जो विस्नू महादेव हैं सो तेरे पर सदा अनुकूल
रहैं इस प्रकार ब्राह्मण की जाचना सुनकर राजा
परम हरष को प्रापत होय गया और हाथ जोड़े हूये
चरनोपर सीस नायकर कोमल वाणी से कहने
लगा कि हे दुज उत्तम तुमने दरसन देकर मेरे को
क्रतार्थ करदिया है अब जैसी तुमारी आज्ञा होवे मे
तिसीके अनुसार तुमारी कन्या और पुत्र का अपने
हाथसें विवाह कराय देता हूं और ब्राह्मण तुमारा
मनोर्थ जो है सो सब सफल करदेता हूं ॥१॥ चौपाई॥

तब कौसिक नरपति कहँ देवी॥ दया हरष जुत हृदय बसेवी॥ मन्ने प्रथम दे हौं तिसु ए हीं॥ रुचिर राजपद तुव दुजनेही॥ छत्र चमर इहि सी सजु लाई॥ करहु विचारह बहुरि सुखदाई॥ सत्य बचन मनि भूप तुरंता॥ नृप पद दियो कियो बिभु बंता॥ पुनि कौसिक अस बचन उचारा॥ तुव इहि कियो भूप निरधारा॥ पै सुनहौ तुव दीन सनेहू॥ बिनु मेदनि नृप होय न केहू॥ तांते तुम इहि कहे गुण खानी॥ निज सम देहु धरा सुखमानी॥ जो तुव सत्य वचन महराजा॥ तो करहौ इह पूरण काजा॥ कियो विचार हृदय [illegible] राई॥ निज सम अन न लेन कित जाई॥ अपनो हीं जहिलग महि सारा॥ धरम प्रवीन राज दे डारा॥ पुनि मुनि कौसिक अस कहेयो॥ इह तो तुव प्रसाद नृप भयेयौ॥ अब मोरे कछु भूप उदारा॥ दीजे दान करहु उपकारा॥ दे करि कनक बीस मन चाहू॥ लेहु ललित कीरति संसारू॥ तब नृप मने जुक्त करदोई॥ हम तें कनक देन किमि होई॥ जे अपनो सरबस हम पाहीं॥ दे दीन्यो सब तुव सुत काहीं॥ अब मोरी केवल है काया॥ सो वेचब तुव हित दु नराया॥ तिं तें बनहि बिप्र धन जोई॥ ल्याय करहु अरपण तुव सोई॥ अस कहि भूप सत्य व्रत धारी॥ धरम हेत दुख सीस सहारी॥ मानव लाई तजत कुलकानी॥ लेनि ज संग सुवन जुत रानी॥ कासी पुरि कहे चल्यो सिधारी॥ दोहा॥

तब मारग सुकमार अति ग्राम धूप कर पाय॥ भये विकल तीनो त्रिषत अधर सूखि कमलाय॥ २॥ टीका॥ तब विस्वामित्रजी राजा को दयाके

अथ हरि चंद भूप चरितं

दोहा॥ अब गाथा हरि चंद की सुनहु संत दै कान॥ जासु सुनत उपजै बिमल हृदय भक्ति भगवान॥ तासु परम कीरति सुहाई॥ चंद्र प्रभा सदृस बिकसाई॥ हरि बरैंचि संकर भगवाना॥ महा महा मुनि ज्ञान निधाना॥ करहिं प्रसंसन भूपति काहीं॥ है न भयो दूसर भव माहीं॥ एक समय परमा दणवादी॥ मुनि बसिष्ठ कौसिक इत्यादी॥ संकर सभा बिराजत चारू॥ कियो बिवाद बदन ब्रत धारू॥ जे हरि चंद भूप महिमाहीं॥ तासम आन सुजस निधि नाहीं॥ है सब गुण लायक महिपाला॥ धरम सील संतोष बिसाला॥ तब कौसिक मुनि तहां बखाना॥ जो श्रीला पर धरम रहाना॥ तौ सब सत्य भूप गुण रासा॥ नातो बृथा प्रसंसन तासा॥ अस कहि मुनि कौसिक मति सागर॥ लेन प्रीक्षा भूपति नागर॥ आये अवनि किये चतुराई॥ बैठे कहुं निज रूप दुराई॥ तहां पाय अवसर गुण गेहू॥ नृप हरि चंद धरम रत जेहू॥ अटन करत दिसि देसन आये॥ मुनि कौसिक निज तप बल पाये॥ इक कन्या इक पुत्र रचाये॥ जब देख्यो महिपति नयराये॥ ऊंचे स्वर भाषन अस कीना॥ मैं अति प्रीनिरधन धन हीना॥ भूप नाम तुव जगत उजागर॥ दाता धरम सुजस गुण सागर॥ तातें मोहि दीन लखि राजा॥ कन्या पुत्र बिवाहन काजा॥ ~~मनोवांछित~~ देहो दान ~~[illegible]~~ तुव सूरा॥ जाहितें होहिं काज मम पूरा॥ लेहु मोर आसिष नरराई॥ तोर हरिहर होहिं सहाई॥ इमि जाचना सुनत

निज कर इक [illegible] बिवाहू॥ तुमहुं भूप संजुत उत साहू॥

पत्र होय गया परंतू अब मेरे पर भी कुछ दान दे कर उपकार करिये वीसमन सोवर्ण तें अधिक नहीं मांगता हूं सो दया करके दीजिये और संसार में सुंदर कीरती सुजस जो है सो लीजिये ~~~~ तब विस्वामित्र की जाचना सुनकर राजा हरीचंद हाथ जोडकर बिनती करने लगा कि हे दुजउत्तम अब मेरे में इतना सोवर्ण दान देने की कहां सामर्थ है और मैं कैसे दे सकता हूं अपना सर्व स्व जो था सो तो सब तुम्हारे पुत्र को दे दिया अब हमारे केवल सरीर ही रहते हैं सो तुमारे निमित्त कहीं जायकर बेचते हैं तिन तें जो कुछ धन पढेगा सो ब्राह्मण ल्याय करके तुमारे अर्पण करदेंगे ~~~~ ऐसे कथन करकर सत्य व्रत के धारने वाला राजा हरीचंद धरम के निमित्त अपने सीस पर कलेस सहारकर और ~~सब~~ मान बडाई के सहित कुल की सब लज्जा को त्याग कर अपनी स्त्री और पुत्र को साथ लेकर के दीनों के दुष दूर करने वाले मुरारी भगवान को सुमरता हूआ शिवपुरी जो कासी है तिस को प्रस्थान कर देता भया तब जाते जाते मारग में राजा राजपुत्र और राजस्त्री ए हतीनो ही महां सूतम धूप की घाम जो लगी तो व्याकुल होय गये त्रिषा के मारे अधर भी सूख गये और मुष भी कमलाय जाते भये ॥२॥ चौपाई॥ तब खोजत जल भूपति काहीं मिलयौ एक कूप मग माहीं॥ तहि तें करन लग्यो जल पाना॥ तब महि षी

अस वचन बषाना॥ हम न पीब तब लग जल राया॥ जब लग विप्र दान नहिं कया॥ भूप सुनत दीन्यो तजि गारी॥ ~~देखैं पुरमहि...~~ तिय सुत जुत द्रुत चल्यो सिधारी॥ आय गयो कासी रुचि राखी॥ विप्रदान पूरन अभिलाषी॥ देखि वनक इक धनी महाना॥ तासु वचन अस भूप बखाना॥ अहे धनक मुहि द्रव्य त चारी॥ तो ते इह निज सुत जुत नारी॥ तोपैं निज इच्छा अनुसारा॥ मेरा लेहु सुन वनक उदारा॥ जो लो देहु न धन तुव काहीं तौ लो रहहिं सदन तुव माहीं॥ इन ते लेहु जथा मन भाई॥ वनेक न केत सकल हिव काई॥ तव धनि दोऊ देव धन लीन्यो॥ कछु न मोह भूपति उर कीन्यो॥ ~~...~~ चल्यो तहां आगल धाई॥ तव इक सुपच सुन्यो नरराई॥ नाम कालिया नगर उजागर॥ तहि पैं गयो भूप गुण सागर॥ बन्यो तासु चाकर रुचि मानी॥ मनी न मन कछु नीच गिलानी॥ लियो रहा तकि होम इजारा॥ मृतक जरावन गंग किनारा॥ जब लग मुद्रा पांच न लेहीं॥ तब लग मृतक न जारन देहीं॥ सो जु काज तहि नृप कह दीना॥ रहे घाट पर के छिप्र —— वीना॥ देहें पांच मुद्र कढि जोई॥ लेहैं जराय मृतक निज सोई॥ तब कौसिक मुनि परम प्रवीना॥ भूप धरम देखन हित कीना॥ निज माया कौतुक मन लाही॥ ~~......~~ बनत उरच धनि भवन सिधारी॥ डस्यो तुरत भूपति सुत काली॥

मरयो लग्यो विलम कछु नाहीं॥ तव रानी सुत मरन निहारी॥ भई सोकरत पीडत भारी॥ तासु देह हित जतन उठाई॥ रुदन करत गंगा तट ल्याई॥ धरयो चिताचें जव तहि आनी॥ तव पदपकरि भने नृप वानी॥ दोहा॥ तुन भामनि तो सों कहुं स्वामी सासन मोहि॥ कर लीने विनु मृतक कहें चारन देऊं न तोहि॥३॥ टीका॥ तव जले के खोजते खोजते राजा को मारग मे एक कूआ मिल जाता भया जव त्रिषा कर के व्याकुल भया हूआ तिस जल पान करने लगा तव रानी देखकर रानी कहने लगी कि हे प्राणपती रमतो ब्राह्मण के दान दिये विना जलपान कदाचित नहीं करेंगे इस प्रकार रानी के मुख सें वचन सुनकर राजा ने तुरत जल को त्याग दिया और स्त्री पुत्र के सहित ब्राह्मण के दान पूरण करने की अभिलाषा वाला भया हूआ मारग को नवृत्य करके कासीपुरी मे आय प्रापत भया तहां बजार मे एक कोई धनी साहूकार देखकर तिस के सनमुख जाय स्थित हूआ और नम्र वाणी सें कहने लगा कि हे धनिप्रधान मेरे को इस समय धन की वहुत आवस्यकता है अपनीत लोट है तोते मेरी स्त्री ~~[illegible]~~ जो है सोंप न के वदले ~~[illegible]~~ अपनी इछा रुची सें तेरे पास राख देता हूं जव लग तेरा धन नहीं देऊंगा तव लग इह तेरे ही घर मे रहेंगे और जेसी

औरपुत्र इहदे मे

सहित अत्यंत प्रसंन चित देषकर कहने लगे कि हे
ब्राह्मणों पर सनेह पालने वाले राजन [illegible] जो तुमारा
धरम सत्य है तो प्रथम इस बालक को राज पद की
[illegible] दान करो [illegible] सुंदर छत्र और चमर जो है
सो इसके सीस पर झुलाय कर फिर आनंद पूर्वक
विवाह का प्रारंभ करदेवो इस प्रकार कौसिक मुनी
का बचन सुन कर धरम की निधी राजा हरीचंद जो
था सो तिस को विधि अनुसार ततकाल राजप
दवी दे [illegible] कर बडा प्रताप मान करदेता भया
तिसतें उपरांत विस्वामित्रजी फिर कहने लगे कि हे
भूप प्रधान तैने इस को राजा तो निश्चय करके
बनाय दिया है परंतू हीन हितकारी तूं श्रवण
कर [illegible] कि राजा जो है सो [illegible] भूमी अर्थात पृ
थवी के विना कदाचित नहीं होता है तो ते गुण
निधान तूं इसको अपने समान आनंद पूर्वक भूमी
दे ~~जगत मे सुजस ले~~ हे राजन् [illegible] जो तेरा
धरम सत्य है और तेरा बचन भी सत्य है तो इस
कार्ज को अवश्य पूर्ण कर और जगत मै सुजस
को प्रापत हो ऐसे कौसिकमुनी का कथन सुनकर
राजा हृदय मै विचार करने लगा कि अब मै इसके
लिये भूमी और कहां लेने को जाऊं अपनी ही देता
हूं इस विचारसें धरम धुरंधर राजा ने अपना ही जहां तक
राजभूमी [सरबस] [illegible] था सो सब तिसको देदिया जब
इस प्रकार राजा सब कुछ दे चुका॥ तब विस्वामित्र
जी फिर कहते भये कि हे प्रजापाल इह तो तुमारे
प्रसाद तें सब देस भूमी के सहित राजपद को प्रा

किनारे समसान घाट मे ले आई जब चिषा पर
ल्याय राखा तब राजा ने आय कर पाउं से पकड
लिया और कहा कि हे भामनी मेरे स्वामी की आ
ज्ञा है जो मै पांच मुद्रा लिये विना कबी ज
लाने नहीं देउंगा ॥ १ ॥ चौपाई ॥ तब तिय रु
दन करत अस काहा ॥ इह तो सुवन तोर नृप राहा ॥
राउ निदरि अस तासु उचारा ॥ विनु दीने कर जा
हिं जारा ॥ वारवार भाष्यो यदि रानी ॥ पै नरनाथ
एक नहि मानी ॥ भनत परस्पर दौ इहन काहीं ॥ वी
ति गई अधरात तहांहीं ॥ नृप हठ देखि स्वामि सिव
काई ॥ रहि न सकि प्रकटे जदुराई ॥ विस्वामित्र वहु
रि प्रकटाने ॥ धरम नेम लखि भूप लुभाने ॥ धन्य ध
न्य तुव धन्य महीसा ॥ पूरण कृपा पात्र जगधी
सा ॥ धरम अवधि ~~[illegible]~~ दूसर जग माहीं ॥ तुव समान
दुख्यौ को नाहीं ॥ तुम सो धरम विलोकन लागी ॥ हम
हु कीन माया वडभागी ॥ सो तुव सत्य धरम निरधा
रू ॥ देखि लियो भूपति व्रतधारू ॥ अब निज
भवन जाय वडभागी ॥ सोक कलेस भीत भ्रम
त्यागी ॥ करहु राज निज सुखद सुहावा ॥ तिय
सुत सैन प संजुत भावा ॥ पुनि जदुनंदन कृ
पानिधाना ॥ भने वचन सुन भूप सुजाना ॥ तुव
अनन्य मम चरनन दासा ॥ मोरे तजि भव और
न आसा ॥ मै प्रसन्न वर देहुं तुमारे ॥ जब लग
जियहु जगत हित कारे ॥ भोग हु अखिल भोग
सुख चारू ॥ अंत सहज तजि वपुष उदारू ॥ मो
रे भवन जात न विनु जाई ॥ वसहो रूप चतुर भुज

चौपाई॥ अस वर देत कृपानिधि भगवाना॥ भये तुरत तहँ अंतरधाना॥ दोहा॥ पाछे मुनि कौसिक मुदित त्रिय सुत जुत नृप काहीं॥ करि उपदेस वसेस विधि लै आये पुर माहिं॥ पुरजन परिजन विप्रजन मंत्री सैनप आय॥ सकल सोहिवी सहत नृप सिंहासन वैठाय॥ कछुक दिवस मुनि वास करि भूप सिवर मति धीर॥ गये वहुरि निज भवन कहँ उर सुमरत जदुवीर॥४॥ टीका॥ तव राजा की स्त्री रुदन कर कर कहने लगी कि हे प्राणनाथ इह तो तुमारा ही पुत्र है आज दैव जोग से काल के वस होय गया है तव राजा सुनकर तिसको निरादर के वचनों से कहने लगा कि मै पुत्र का संवंध कुछ नहीं जानता हूं ईस को मसान का पांच रुपैये जो है सो लिये विना कभी जलाने नहीं देऊंगा रानी ने जद्यपि वारवार भी कहा तद्यपि राजा एक नहीं मानता भया इस प्रकार दोनों को परस्पर वाद करते हुये आधी रात वीत होय गई तव राजा का स्वामी सिवकाई मे हठ देखकर जदुनंदन भगवान रहि नहीं सके ततकाल प्रकट होय गये और तैसे ही राजा का धरम नेम देखकर मुनि विस्वामित्र भी प्रकट होय जाते भये कहने लगे कि हे राजन तूं धन्य हैं और धन्य तेरी महिमा वर्णन है भक्त तूं तो जदुनाथ भगवान की कृपा का पूर्ण पात्र हैं तेरे समान धरम की अवधी और दूसरा कोई नहीं है मैने तेरा धरम और निश्चय देखने के लिये इह माया जो है सो करी थी अव भक्त तेरा धरम और निश्चय सत्य सत्य भली प्रकार देख लिया है तूं सव गुण लायक जदुनाथ भगवान का परम भक्त है अव तूं शोक कलेस और भ्रम भय को त्यागकर स्त्री पुत्र और सव सेना समाज के सहित आपने घर मे जाय कर आनंद सुख मे मगण होय करके राज कर फिर भगवान कृपानिधान भी कहने लगे कि हे राजन मैने

संसार मे

सुख

सुख

भलीप्रकार जान लिया है जो तू मेरे चरनो को अ
नन्य दास है मेरे बिना अपने चित्त मे और कि
सी का भरोसा नहीं राखता है तातें मै प्रसन्न होयक
र भक्त तेरे को बर देता हूं कि जब लग तुम जगत मे
जीवो तब लग नाना प्रकार के अनंत भोग सुख जो है
सो भोगो और फिर अंत को जतन के बिना सहजे हीं स
रीर को त्याग कर चतुरभुज रूप होय कर मेरे धाम मे
जाय निवास करो ऐसे बर देकर भगवान तुरत तहां
हीं लुपत होय गये पीछे विस्वामित्रजी राजा को अ
नेक उपदेस सुनाय कर और सावधान करकर आनंद
पूर्वक घर मे ले आये तब पुर के लोग और भाई बां
धव अपरोहित ब्रा[ह्म]ण सेनापती और मंत्री दि
वान सब आय कर जै जै कार ~~[illegible]~~ उचा
रन करने लगे विस्वामित्रजी ने उचित समाज के स
हित राजा को राजसिंघासन पर बैठाय दिया तब
तो सब कोई अपने अपने हृदय मे परम आनंद सुख मा
नते भये इस प्रकार विस्वामित्रजी कुछेंक दिन तहां
राजा के घर मै निवास कर कर और फिर सनमान पू
र्वक विदाय होय कर कृस्न कृस्न सुमरते हुये आप
ने आश्रम को चले गये ॥४॥ इति श्री भक्त विनोद
ग्रंथे भागवद भक्ति महातमे भाषा टीकायां हरिचं
द चरित्र वरणनं नाम सरगः ॥ ॥

तेरे चित्तमें आवे तैसी तूं इनतें सेवकाई लिया कर इन तेरे दासीदास बने रहेंगे तब धनीने तुरत धन देकर तिन दोनोंको ले लिया राजाने तिस समय अपनी स्त्री और पुत्रका हृदयमें दिं चक प्रमाणभी मोह नहीं किया और कुसम कुसम सुमरना हूआ तहांसे आगेको चलपड़ा तब एक कोई चांडाल जाती कालिया नामकरके उजागर था धीज धर्मकी निधी सर्व गुणप्रवीन राजा हरीचंद तिसके पास चला गया और जाते हीं नीच जातीका कुछ विचार नहीं किया तिसका चाकर बन जातभया तहां तिस डोमने गंगाके किनारे पर शव जो मुरदे हैं तिनके जलानेका इजारा लिया हूआ था जबलग कोई पांच रुपैये नहीं देताथा तबलग मुरदा जलने नहीं पावताथा तिस चांडालने सो काम राजाको सौंप दिया तिसतें वे नित्य समसान घाट परहीं बैठा रहताथा जो कोई तिसको पांच मुद्रा देता सो मुरदेको जलाय लेता नहीं कवी जलाने नहीं देताथा इहां तो राजाकी विवस्था थी और उहां मुनी विस्वामित्रने राजाका धरम देखनेके लिये ऐसी अदभुत माया करी कि सरपका रूप धारकर और तिस धनीके घरमें जायकर राजाके पुत्रको डसकरके तुरत प्राणोंसे रहित कर देताभया तब रानी अपने पुत्रका मरना देखकर शोकके वस भई हूई परम कलेसको प्राप्त होय गई अंत तिसको दगध करनेके लिये रुदन करती हूई यतनसें उठायकर गंगाके

गंगाके किनारे

पूछन लगे जानि दुचिताई॥ तव द्विज निज सव दसा सुनाई॥ दोहा॥ मने भूप द्विजनाथ सों जोरि जुगल निज हाथ॥ कौन तुच्छ सी वात पै चलेउ छावन माथ॥ तन मन धन मेरो सकल द्विज अर्पण है तोहि॥ लेहु तिय जुत सकुच तजि करहु धन्य धन मोहि॥ पूरिय निज अभिलाष प्रभु इहि तिय कर गहि हाथ॥ तापर जे कछु आन रुचि सो कहिये द्विजनाथ॥ १॥ टीका॥

नाभादास कहते हैं कि हे संतो अव रघुराजा की पवित्र गाथा जो है सो मै आपके आगे गायन करता हूं कैसे श्री रघुराज कि जो ब्राह्मण को सरवस दान देकर के निसकाम भक्ती के परसाद तें हरी के दिव्य धाम विषें जाय निवास करते भये सो श्री रघुराज जगत मे उजागर होते भये कि जिन का शासन कर दिगपाल भी कांपते थे और जिन का प्रभाव नव हीं खंडों में फैला हूआ था भूमी के जहां लग राजा थे सो सव हीं तिनकी सासना अर्थात आज्ञा के वश थे सत्रूओं के नास करने वाले महा चक्रवर्ती राजा होते भये फिर कैसे कि भक्त संत सज्जनों के हितकारी परमार्थ मे लीन पुन्नों के मूल सदैव हीं धरम और सुकर्म मे जिनकी प्रीती थी और विसुमवान के भक्त दीनों के हितकारी सील संतोष और गुणों के धाम जिन्होंने सुष संपती और सव समाज के सहित पृथवी

तत्पर बहुत कालतक राज किया एकसमय
कोई एक ब्राह्मण तहां राजा के घर मे आयप्रापत
भया और वे आवताही सीधा अंतापुर अर्थात रण
वासको चला गया तब तिसको एक चेरी आव
ते हुये देखकर जाय करके रानीको कहने लगी
कि हे महारानी जी कोई एक अतिथी साध ब्राह्मण
निरभय होय करके तुमारे घरकी वोर चला आता
है ऐसे तिसचेरी का कथन सुनते ही रानीने तिस
अतिथीको तुरत अपने पास बुलाय लिया और
भक्ति प्रीती से विधि पूर्वक तिसका पूजन करकें प
वित्र भोजन जो है सो जिमाय दिया इसप्रकार रानी
का आदिर सतकार और भक्ति प्रीती देखकर ब्राह्मण
बडी कोमल बानी सें कहने लगा कि हे धरम सील
और सत्य संतोष की निधी रानी तूं मेरे को सत्य
सत्य कथन कर कि तेरे जैसी परम प्रवीन पतनी
अर्थात स्त्री राजा को कौन पुन्य करके प्रापत भई है
ऐसे ब्राह्मणका वचन सुन कर धरम और सीलता
की निधी रानी कहने लगी कि हे ब्राह्मण राजा ने
मन वचन काया करके संभू भगवान की भक्ति करी
और बारबार काटकर अपने सीस चढाये तिस भ
क्ति के प्रसाद तें इस जनम विषे मेरेको प्रापत किया
है ऐसे रानी के मुख सें वचन सुनकर ब्राह्मण क
हने लगा कि मै भी ऐसे ही करता हूं अर्थात संभू
के आगे जायकर सीस चढावता हूं कि जिसतें तेरे
समान मनभावनी सुंदरी मेरे को भी प्रापत होवे
इसप्रकार कथन करकर ब्राह्मण जो है सो कासी
के जाने को तयार होय गया इतने मे तहां इचू

राजा आय प्रापत हूये और ब्राह्मण को देख कर चरनो
पर सीस नावते भये फिर जब ब्राह्मण को कुछ चिंता
करके दुचित चित भया हूआ देखा तब तिस को पू
छने लगे कि देवता जी तुम कौन चिंता मे मगन हो
ऐसे राजा का वचन सुन कर ब्राह्मण तुरत अपनी सब
दसा सुनाय देता भया राजा सुन कर तुरत हाथ जोड
कर कहने लगा कि हे देवता जी इह कौन सी तुच्छ
वारता है कि जिस पर तुम संभू के आगे सीस चढा
वने जाते हो इह मेरा तन मन धन सब तुमारे ही
अरपण है स्त्री के सहित लेलीजिये और संसार
मे मेरें धन्य धन्य करके सफल कीजिये अकी इस
मामनी की वांह पकड लीजिये और अपने चित
की अभिलाषा पूर्ण कीजिये इस ते भिन्न और
भी जो कुछ मन की रुची है सो हु कृपा कर के
कहिये मै अबी पुर करता हूं ॥१॥ चौपाई ॥ तब
द्विज मने भूप सन वानी ॥ मै इह लै करिहौ का
रानी ॥ भोजन को संसय नित राई ॥ तिया
की करहि कौन सिवकाई ॥ भूप कह्यो द्विज स
त्य उचारा ॥ को करिहै दंपति सतकारा ॥ पै द्वि
ज परिहरि उर संदेहू ॥ राजकोस मेरो सब गेहू ॥
तुव लेहो आपन लखि हूरी ॥ उर अभिलाष क
रहु सब पूरी ॥ अस कहि धरम धुरंधर राया ॥
दै द्विज कहे धन धाम निकाया ॥ आपु विपुन क
ढि गयो निरासा ॥ जाय कियो इक तरु तर वासा ॥
तहि तरु पै निसि अवसर आई ॥ बसे विहंग जुग
ल सुख पाई ॥ एक दिव्य फल हरष अजाये ॥ सो
सुर राज सभा तें ल्याये ॥ रघुराज हि लखि तिनहुं

अथ रघुराजचरितं

दोहा॥ अब पुनीत रघुराजकी गाथा कहउं बषान॥
जे गौन्यो हरिधाम दै द्विजकहे सरवस दान॥ चौ
पाई॥ भयो विदित मेदनि रघुराया॥ जास त्रास
दिगपालन पाया॥ फैल्यो जहि प्रभाव नव षंडा॥
किये भूमि वस भुज परचंडा॥ भयहु चक्रवर्ती
रिपुहारी॥ भक्त संत सज्जन हितकारी॥ परमा
रथ रत सुकृत मूला॥ सदा सुकरम धरम अनुकू
ला॥ विष्णुभक्त नृप दीन सनेहू॥ रत संतोष सी
ल गुण गेहू॥ सुख संपति जुत सकल समाजू॥
कियो काल बहु मेदनि राजू॥ एक समय आयो
द्विज काहू॥ अंतापुर गवन्यो उतसाहू॥ तहि आ
वत लखिकै इक चेरी॥ जाय कह्यो रानीसन
टेरी॥ अतिथी विप्र काहु इक आवा॥ तब
रानी तहि लीन बुलावा॥ करि पूजन जुत भक्ति
विधाना॥ दियो जिमाय पाक सनमाना॥ तब भने
वदन मृदु बानी॥ सुनहु धरम सील निधि रानी॥ तो
सी तिय सब सुखदाई॥ कौन पुन्य वस भूपति
पाई॥ द्विज कर वचन सुनत अस रानी॥ बोली वचन
सील निधवानी॥ सिव कर भक्ति कीन महिराई॥
बारबार निज सीस चढाई॥ भक्ति प्रभाव विदित
प्रकटायो॥ तब इहि जनम मोहि नृप पायो॥ द्विज
कहे हमहुं करब अस जाई॥ देहैं सिव कहं सीस
चढाई॥ जाहितें तुव समान सुखदाई॥ मिलहिं
मोहि सुंदरि मन भाई॥ अस कहि द्विजवर कीन
तयारी॥ कासी कहं मानस प्रणधारी॥ तेहि लो
आय गये रघुराया॥ द्विज कहं देखि चरन सिरनाया॥

वारताका हृदय [illegible] मे कुछ संसय नहीं करो भ
गवान सवके पालने वालाहै इहमेरा राज धन
धाम जोहै सोतुम अपना हीं जानकर [illegible]
[illegible] लेलेवो और अपने मनकी अभिलाषाको पूर्ण
करो [illegible] करलेवो इसमे मेरा सरवप्रकार करके
हितहीं होवेगा ऐसे कथन करकर राजाने ब्रा
ह्मणको अपना सर्वस्व देकर और आप हृदयकी
सव आसा त्यागकर कृसकुसमसुमरता हुआ
वणके मारगको चलागया तहां वडे गहवर
वनमे जायकर एक वडाभारी वृक्ष देखकर ति
सके नीचे निवास करलिया दैव इच्छासे रात्री
के समय तिस वृक्षके ऊपर दो पंछी आयवास
करतेभये औ वे खग [illegible] इंद्रराजाकी सभा
तें एक मधुर दिव्य फल ल्यायेथे सो नीचे वसे
हुये रघूराजाको देखकर तिन्होने वे फल नहीं
खोया हित [illegible] प्रीती सें राजाको दे दिया तवरा
जा तिस मनोहर फलको देखकर तिन पंछियों
को पूछने लगा कि भाई इहके सा फल है तव
तिनोने तिसें सव वृतांत प्रकट करके सुनाय दि
या और कहा कि हे राजन इस फलको जोको
ई अहार करेगा अरोगत होवेगा सो वृद्धो को छो
डकर जुवा अवस्थाको प्रापत होयजावेगा इस
मे कुछ संसय नहीं है इसप्रकार तिन पंछियों का
कथन सुनकर राजाने हृदयमे विचार किया कि
इह मेरे जोग्य नहीं है इहतो ब्राह्मणको ही देना
उचित है कि जिस वृद्धने जुवा अवस्थाकी रानी
को प्रापत किया है वे इस दिव्य फलको खायकर
और जुवा होयकर संसार के भोग सुख जो हैं सो

भलीप्रकार भोगलेवे ऐसे विचारकर परमउदार
रयुराज तुरत हीं लौटकरके अपने नगरँआयगये
और आवते ही सो फल प्रीतीपूर्वक ब्राह्मणको
देकर तिसका गुणभी प्रकट करके सुनाय दिया
तबतो ब्राह्मणके चित्तमे कुछ और ही वसी विचार
करता है कि राजाके हृदयमे राजस्त्रीका लोभला
लच उतपन्न भया है इसीतें कपटकरके मेरेको
इह फलनहीं कोई विष दिया है ऐसे विचार
कर ब्राह्मणने कुमतीके वस होयकर वे फलनि
रादिरसे तहो मारगमे हीं फेंकदिया तब कोई दी
न पुरष रोगके वसभया हूआ जोतहो चला आवता
था तिसने देखकरके तुरंतँ तिस फलको उठाय
लिया और मधुर मनोहर जानकरँ खाय लिया
तिसके अहार करते ही वे दीन रोगी और वृद्ध जो
था सो ततकाल सब दोषदुष और दारिद्र से नवृत्य
होयकर सरव सुषोंके सहित सुंदरँ जुवा अवस्था
को प्रापत होयगया इसप्रकार तिस फलका अद्भुत
प्रभाव देखकर ब्राह्मण मानो हाथसें अमृत ग
वायकर अनेकप्रकार पछतावता हूआ राजाके
पास चला आया ॥२॥ चौपाई ॥ मन्यो भूप सन
की फल देहो ॥ कीतो अबहीं प्राण मम लेहो ॥
तास कथन सुनि भूप उचारा ॥ धरहु धीर उरविप्र
उदारा ॥ हमफल देव अ[illegible] वसि दुजतो हो ॥ यामें
कछु संसय नहि होई ॥ अस कहि जाय विटप
तर राई ॥ निवसे दुज कारज मन लाई ॥ तब
निसि पाय सकुन वर कोई ॥ बैठे आय विटप पे
सोई ॥ तब तिन कहे नरनाथ उचारे ॥ देहु सोऊ

फल सकुन उदारे॥ सुनिवि हंग मुषगिरा अला
यो॥ हम सो इंद्र समाते पायो॥ भूप मले मगवा
पें जाऊं॥ द्विज हित अवसि सोऊ फल ल्याऊं॥ अ
स कहि गये इंद्र दरबारा॥ लखि सुरेस कीन्यो सतका
र॥ जब मांग्यो फल नृप गुण गेहू॥ तब बोल्यो सु
रपति अस तेहू॥ हम पायो विधितें फल राया॥ सु
नत भूप विधि लोक सिधाया॥ विधि सों फल जाचिन
नृप कीनो॥ तास भन्यो हम हरि सों लीनो॥ सुन
त भूप ततकाल सिधाये॥ हरि सुमरत हरिके पुर
आये॥ प्रभु आवत लखि केरघुनाथें॥ आदर सों
गहि सरसिज हाथें॥ निकट विठाय कृपाय नकेता॥
पूछी कुसल अगमन समेता॥ जहि कारन आये
महिपाला॥ सो हरि सों सब कह्यो हवाला॥ सुन
त भूप मुख गिरा अलाई॥ रमानाथ बोले मुसका
ई॥ जाहि खोजत फिर हो महिपाला॥ सो फल
तुव बाग रसाला॥ ॥दोहा॥ मंजु मधुर नाना
फरे पाकि परे महिमाहिं॥ खोव हु रुचि अनुकू
ल तुव बसहु भूपवर ताहिं॥ २॥ टीका॥ तब ब्राह्म
ण ही राजा को कहने लगा कि हे राजन कीतो
वे फल मेरे को देवो कि अथवा मेरे प्राणों को
ले लेवो अब दूसरी वारता नहीं होवेगी ऐसे
तिस का कथन सुनकर राजा कहने लगा कि
हे ब्राह्मण तुम हृदय में धीरज धारो मैं
तुमको वे फल अब इय ल्याय देऊंगा इस
मै कुछ संसय नहीं है ऐसे कथन कर कर
राजा तिसी वृक्ष के नीचे जाय निवास करता भ
या तब रात्री के समय सो पंछी अपने नियमानु
सार तिसी वृक्ष के ऊपर आय बैठे तिन को

न भागा॥ नृपहिं दियो फल मधुर सुहावा॥ तब
रेचु भने कारु इहमाई॥ तुरत बिहंगन गिरा
अलाई॥ जो नृप फल कहं पावहिं राया॥ होहिं
वृद्ध तरुण ● द्रु न काया॥ भूप सुनत अस
हृदय विचारे॥ इह फल खैहिं न उचित हमारे॥
दुज कहं देहु परम हित जानी॥ पायो जास वृद्ध
वपु रानी॥ भोगहिं भोग तरुण तन होई॥ ● करि
विचार अस भूपति सोई॥ आयो लौटि नगर निज
माहीं॥ दीन्यो फल सादर दुज काहीं॥ तासु स
कल गुण दिये सुनाई॥ दुज के हृदय आन मति
छाई॥ जान्यो कुल नरनाइक कीना॥ राज तिये
हित विष मोहि दीना॥ अस गुनि विप्र अमिय
फल सोई॥ डास्यो दुगर कुमति बस होई॥
कोऊ एक रुज बस अति दीना॥ देखि सुफल
पथ परयो नवीना॥ क्षुधा विवस तहि लीनं सिषा
वा॥ तुरतहिं तरुन रूप प्रकटावा॥ मिट्यो
सकल दारिद रुज तासा॥ भयो नवल तन ज्योति
प्रकासा॥ दोहा॥ फल प्रभाव दृग देखि अस बार
बार पछताय॥ नृप पैं आयो विप्रवर करतें सुधा
गवाय॥२॥ टीका॥ ऐसे राजा का कथन सुनकर
ब्राह्मण कहने लगा कि हे प्रजापाल मै इस रानी
को लेकरके क्या करूंगा क्योंकि मेरे को तो भोजन
की ही संसय रहता है इस की सेवा कोन करेगा
राजा कहने लगा कि हे दुज प्रधान तुम ने सत्य
कहा है अपना हीं निरवाह कठिन स्त्री मरता दोनो
की कोन सेवा करेगा परंतु हे दुजराज तुम इस

तुम जाय कर तिन को रुची पूर्वक तोषो ओर तन हो
हीं निवास करो ॥ ३ ॥ चौपाई ॥ भूप भने हरि सों कर
जोरी ॥ सुनहु नाथ विनती इह मोरी ॥ विप्र हेत ह
म सो फल चाहैं ॥ निज अभिलाष नाथ कछु नाहैं ॥
हरि कह सो दुज नरक निवासी ॥ जांके उर हरि राज
प्रकासी ॥ दुज के राज ग्रहण जहि कीना ॥ तासन
रक निश्चय नृप लीना ॥ सुनत भूप प्रभू की अस
बानी ॥ बोल्यो उर विषाद निज मानी ॥ जानिय
सो मुहि दीन उधारा ॥ होहि मोर अप जस संसारा ॥
या मे रावर हाथ मुरारी ॥ अहै नाथ अब लाज ह
मारी ॥ प्रभु करि कै मोपर अनुरागा ॥ दुज हिं बु
लाय देहु इह बागा ॥ भूप विनय सुनि कै भगवाना ॥
है प्रसंन मुख बचन बखाना ॥ हे नृप तुव कथन मन्यो
रघुराई ॥ अब न परहिं दुज नर्क कदाई ॥ तुम
हु जाय निज भवन सुहावा ॥ करहु राज
भूपति मन भावा ॥ दुजवर उर संदेह बिहाई ॥
वसहिं मुदित मोरे पुर आई ॥ प्रभु सासन भू
पति सिर धारी ॥ बारबार पद बंदि मुरारी ॥ आयो
लौटि आपने देसा ॥ दुज उत हरि पुर कियो नवे
सा ॥ विपुल काल करि कै नृपराजू ॥ अंत काल
तजि सकल समाजू ॥ पांचभूत करि भूत न ली
ना ॥ हरिपुर गवन रटत हरि कीना ॥ दोहा ॥
दान मान उपकार रत रघु सम भयो न आन ॥
जहि पावन कुल अवतरे रघुपति कृपा निधान ॥
४ ॥ टीका ॥ तब राजा हाथ जोड कर भगवान के
आगे प्रार्थना करने लगा कि हे कृपानिधान मेरी
बेनती सुनिये नाथ मैं तो केवल ब्राह्मण के निमित्त

फल चहता है अपनी तो इस मे कुछ अभिलाषा
रुचि नहीं है तब भगवान कहने लगे कि हे राजन
जिस ब्राह्मण के हृदय मे राज की इच्छा उपजी सो
ब्राह्मण तो निश्चय करके नरक का अधिकारी है
तिस को अवश्य नरक होवेगा क्योंकि ब्राह्मण
होय करके राज को ग्रहण करता है ऐसे
भगवान के मुख से वचन सुनकर राजा हृदय
मे विषाद मान कर कहने लगा कि दीनबंधू मै
ने जान लिया है जो जगत मै मेरा अपजस हीं
होवेगा परंतु हे कृपा निधान अब मेरी लाज
तुमारे हाथ है जो मेरे पर दीन जान कर दया करो
तो दया सिंधु इह बाग बुलाय करके इस ब्राह्मण
को हीं दे देवो इस प्रकार राजा की बिनती सुनकर
प्रसंन भये हूये भगवान कहने लगे कि हे राजन
मै ने तेरा वचन मान लिया है अब इह ब्राह्मण
जो है सो नरक मे नहीं पडेगा तुम जाय करके
अपने घर मै सुख पूर्वक राज करो और ब्राह्मण
आनंद से इहां आय करके मेरे पुर मे निवास
करे ऐसे भगवान की आज्ञा सीस पर धारन कर
कर राजा वारंवार प्रणाम करके आनंद से हरि हरि
सुमरता अपने घर को चला गया और तैसे हीं
ब्राह्मण उहां भगवान के धाम को चला गया
तब रघुराज इहां पृथवी तल पर बहुत काल
पर्यंत राज कर कर अंत समय सब समाज को
छोड कर पांच भूत को भूतों मे लीन कर के
अर्थात तत्वों को तत्वों मे लीन कर के हरि
हरि सुमरता हूआ हरि के धाम को चला गया

नाभादास कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार दान मान और परम उपकार मैं ~~[illegible]~~ रघू राजा के समान संसार मे और दूसरा कोई नहीं भया है कि जिसकी पवित्र कुल मे भगवान कृपा निधान रामचंद्रजी ने अवतार धारन किया है और रघू राजा को सुजस के सहित तीन लोक मे उजागर कर दिया है ॥४॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे ~~[illegible]~~ भगवद भक्ति महात मे भाषा टीकायां रघुराज चरित बरनन नाम — — — सरगः

देखकर राजा कोमलवानीसें कहने लगा कि हे पंछी हे उदार तुमने कालकी रात मेरेको फल जो दिया था सोई फल कृपा करके आज भी दान करो ऐसे राजाका कथन सुनकर पंछी कहने लगे कि हे नरेंद्र हम ने तो वे फल इंद्रकी सभा तें पाया था तब सुनकरके राजा कहने लगा कि भली बात मैं ब्राह्मणके निमित्त इंद्र के दरबार मे जाता हूं और तहांतें वे फल ल्याय कर तिस ब्राह्मणको अवश्य देता हूं इतनी कहतेही राजा इंद्रकी सभामे चलागया तहां इंद्रने देखकरके तिसका बहुत आदिर सतकार किया जब राजाने फल मांगा तब सुरपती कहने लगा कि मैने तो वे फल चतुराननं अर्थात ब्रह्मासें पाया था इस प्रकार इंद्रका कथन सुनकर राजा फिर ब्रह्म सभामे चलागया जब तहां जायकर विधी सें फल मांगा तब विधाता कहने लगा कि मैनेतो वे फल विष्णु भगवानसें पाया था ऐसे सुनकर राजा फिर हरिहरि सुमरता हुआ हरीके पास चला आया तहांरघू राजाको आवते देखकर भगवान कृपानिधान बडी कृपासें तिसका हाथ पकड कर आदरसें अपने पास विठाय लेते भये और भलीप्रकार सब कुसल पूछकर फिर आवने का वृतांत भी पूछते भये तब तो जिस कारजके लिये राजा भगवानके पास आया था सो अपना मनोर्थ सब सुनाय देता भया ऐसे राजाके मुखसें वचन सुनकर भगवान मुसक्यायकर कहने लगे कि हे राजन जिसको तूं लोजता है सो फल तो तेरेही बागमे अनेक [illegible] फले हुये सोभा देते है और अनेक हीं पाके हुये साखों सें टूटकर पृथ्वी पर पडे हुये हैं

संत सुनहौ मनभावा॥ आतापी वातापी दोई॥
रहे दुष्ट कपटी सठ सोई॥ मुनि सों छल कीनो म
तिहीने॥ मुनि भक्षण करि पाचन कीने॥
भयो भूप इक धरम निधाना॥ धरनि धाम सुवरण
मणि दाना॥ तिन्है दीन्यो नाना उतसाहू॥ अन्न दान
नृप दियो न काहू॥ तन तजिग
यो निकट जव धाता॥ तव विधि भने तासु मुष
वाता॥ दीनो दान अन्न विनु राया॥ तांते करहु भ
क्ष निजकाया॥ सुनत भूप अस वचन विधाते॥
चढि विमान गंध्रव संग गाते॥ रह्यो एक सरवर
गंभीरा॥ पर्यो जहां नृप मृतक सरीरा॥ तहां आय
नित भूप उदारा॥ करत सोऊ निज वपुष अहारा॥
क्षुधा होत वरवस मनु सांपन॥ तहि तें भषत भूप
वपु आपन॥ एक दिवस आवत नृप काहीं॥ मिले
अगस्त डगर के माहीं॥ दोहा॥ नृपकी दसा विलोकि
तव मुनि पूछ्यो करि नेहु॥ भूप सुनायो कथा सव
जथा विथा निज देहु॥ पाछे कर तें कनक कर कंकन
तुरत उतारि॥ मुनि आगे धरि भेट मुष वहुविधि विनय
उचारि॥ मुहि तारहु अस कहत नृप मुनिवर कृपाग
गार॥ अन्न दान फल देत तहि करि दीन्यो उधार॥१२॥
टीका॥ नाभादास कहते हैं कि हे संतो अवपुराणों
विषें जिसप्रकार पुलस्त मुनी की गाथा नरूपन
भई है अर्थात कही है और जिसप्रकार हनूमानजी
ने तिस मुनी को राम तत्व की महिमा सुनाई है सो म
नोहर भक्तजनों के चित्त को आनंद देनेवाली गाथा
हैं तिन्है मै संक्षेप करके कुछ गायन करता हूं कहते हैं
कि जवतें मुनि अगस्तजी पृथ्वीतल पर आये
तवतें तिन्हों ने राम तत्व के विना और कुछ भी
गायन नहीं किया केवल रामतत्व का हीं विचा
र करते रहते थे शंभू महादेव आदिक रामतत्व

के श्रवण करने को मुनि अगस्त जी के आश्रम पर
आवते रहे तो जब रघुनाथजी महाराज लंका जीत
कर सब कुसल के सहित अपनी राजधानी मे आये
तब कुंभज जो अगस्त मुनी सो तिनके दरसन के
निमित्त अवधपुरी अर्थात अजुध्या नगरी मे
आवते भये तब श्रीरघुवीर जी मुनी के चरनों मे
प्रणाम करकर लंकनाथ जो रावण है तिसकी
वार्ता पूछने लगे यद्यपि रघुनाथ जी को सब विदित
हीं था तिन्होने आपहीं सब चरित्र किया हूआ था तद्यपि
मुनी प्रकट करके सब सुनाय देते भये तिहते उपरांत
मुनी फिर विंध्याचल परवत को चले आये तहां तिस
परवत ने वढते वढते सूर्य को रोक लिया था मुनी
नायक ने अपना प्रभाव दिखाय कर तिस वढन गती
को कुंठित कर दिया अर्थात वढ नहीं सका जैसे था
तैसे ही होय गया तहां तें अगस्त जी फिर आगे को
चले तब भ्रमन करते हूये द्रवड देस मे आय प्रापत
भये तहां का सुजन नाम करके राजा तिस समय
रघुनाथ जी का पूजन कर रहा था और निरन्तर
होय कर रघुनंदन देव के ध्यान मे लीन भया हूआ
था जोग जुक्ती से राम रूप को हृदय मे वद्ध किया हूआ
अर्थात जुलाया हूआ था तिस तें मुनिनायक जो आ
ये तो राजा उठा नहीं सो मुनी भी अपना अपमान
सहार नहीं सके तुरत ही कोप कर शाप की वानी
से कहते भये कि अरे मूढ क्या गज जो हस्ती तिस
के समान तूं उठा नहीं अब जान पडता है कि तूं
हस्ती के शरीर को प्रापत होवेगा परंतु जढ तेरे
मोक्ष का उपाय भी वन गया है जो रघुनाथ जी के
पूजन मे आसक्त है अर्थात लीन है सो रघुनंदन
तेरे को अवस्य तारेंगे मेरा सत्य वचन है इस मे कुछ
संसय नहीं ऐसे कथन कर कर मुनी अपने मार्ग को

चलेगये और ईहाँ समय पाय कर राजा सरीर कोत्या
गकर गजरूप अर्थात हसती होय जाताभया तोज
वतिसको ग्राह जो तंदुआ है तिसने ग्रसा तव भगवा
नने तिसको मोक्ष करके अपने विकुंठ धाम को पठा
यदिया इह गज और ग्राह की गाथा भली प्रकार सव
लोगोंमे प्रसिद्ध है अव अगस्त मुनी जी का और अ
द्भुत प्रभाव जो है सो हे संत जनो श्रवण करिये आ
तापी और वातापी नाम करके इह दै दुष्ट वल
वंते मायक क्या माया के जानने वाले रहे सो अधम
मुनी के साथ कपट करके तिस के उदर मे प्रवेस कर
जाते भये सो मुनीनायक ने अपने प्रभाव तें तिन
को भक्षण करके पचाय ही लिया इसी प्रकार पृ
थ्वी तल पर एक और राजा उतपंन होता भया सो
कैसा कि जिसने धरम के सहित जगत मे भू पृथ्वी धा
म च्यार और सोवर्ने मणि मुक्ता वस्त्र इत्यादि अने
क ही दान किये परंतु अंन दान किसी को नहीं दिया
तो जव वे सरीर को त्याग कर ■ धाता जो ब्रह्मा है ति
सके पास गया तव ब्रह्मा कहने लगा कि हे राजन
तैने मात लोक विषें अन्नदान कुछ नहीं दिया है
तातें तूं जाय करके अपने सरीर को ही भक्षण कर
और तिसी तें अपनी क्षुधा को निवारन कर ऐसे
विधाँ का कथन सुन कर राजा अपसरा और गं
धर्व साथ लिये हुये वडे गायन होते विमान पर
चढ कर एक कोई वडा भारी सरोवर जो था कि ज
हाँ राजाने अपना सरीर छोडा हुआ था तहाँ आ
य कर क्षुधा के वस जो इह भूप वडी भारी सरपनी
है नित्य अपने सरीर को ही भक्षण कर कर फिर तै
से ही चला जाता दैवजोग सें एक दिन आते हुये
तिस राजा को मारग मे अगस्त मुनी मिल जाते भये
तव राजा की दसा विचार कर मुनि नायक वडे सने ह
सें पूछने लगे राजा ने तिनके पूछने पर अपना वृतां
त ■ कलेस जो था सो सव सुनाय दिया तिस तें उपरांत

अथ अगस्त मुनि चरितं

दोहा॥ अब पुरान गायो जथा मुनि पुलस्त इ
तिहास॥ राम तत्व हनुमान जिमि वरन्यो ता
सु प्रकास॥ चौपाई॥ सो मै कथा अल्प सुखदाई॥
वरनहु कछु संछेप सुहाई॥ जबतें मुनि [illegible]ल
सहि आये॥ राम तत्व तजि और न गाये॥ आय सं
भु मुनि नाथ नकेतू॥ राम तत्व सुनवे कर हेतू॥
लंका जीति राम जब आये॥ तब कुंभज मुनि अ
वध सिधाये॥ करि प्रणाम मुनि पद रघुनाथा॥
पूछी लंक नाथ की गाथा॥ मुनि त्रिकालदरसी
सब भाषी॥ जद्यपि आपु नाथ सब साखी॥ बहु
रि आय विंध्याचल जाहीं॥ बढत रोकि लीन्यो
दिन नाहीं॥ मुनि प्रभाव तहं प्रकट दरेयो॥ ता
स बढन गति कारन भेयो॥ आगे चले बहुरि
मुनि नाहू॥ आये द्रवड देस उत्साहू॥ तहां सु
जय नाम नृप गाया॥ रह्यो करत पूजन रघु
राया॥ जुट्यो भूप रघुनंदन ध्याना॥ राम रूप
मानस निज ठाना॥ मुनि अगस्त आये जब ताही॥
उठ्यो न रत पूजन नरनाहा॥ तब मुनि कोप कियो
अति भारी॥ श्राप युक्त मुख गिरा उचारी॥ कागज
सम तुव उठ्यो न मूढा॥ जानि परत ह्वैहै गजगू
ढा॥ पै बनि गो तुव मोक्ष उपाई॥ जो पूजन करहो
रघुराई॥ तहि तें तारहिं तोहि रमीसा॥ सत्य वचन
इह मोर महीसा॥ अस कहि मुनि निज मारग
गेयो॥ इहां देह तजि नृप गज भेयो॥ ग्राह
ग्रसित तासों हरि ताहू॥ कथा विदित जानत
सब काहू॥ आन प्रभाव अगस्त सुहावा॥ भनहुं

वहुरि रामपद सुमरत जीके॥ मन्योवचन मुनिनाय
क नीके॥ जो मम रामनाम पर चारू॥ है विस्वास स
त्य निरधारू॥ तो इह धरनि दंड पर मेरे॥ रहै छिन
क थिर सब कर हेरे॥ तव धरनीस महा वल वंडै॥ दि
यो धरनि धरि मुनि के दंडै॥ रामप्रसाद नेकु नहि डो
ल्यो॥ सवन सुनाय सेसतव गोल्यो॥ देखि लियो
तव मुनि समुदाई॥ रामनाम नीके प्रभुताई॥ कहौ कौन
अस जगत सुजाना॥ रामनाम सम गोरव आना॥ एहि
वडो अतुलित धन भाई॥ याके रटत अमर है जाई॥ मू
सम किलविष भार सिर भारी॥ राम नाम सव देत निवारी॥
रामनाम महिमा अधिकाई॥ सहस वदन मै सकहु न
गाई॥ मुनि समूह दृग देखि सुहाऊ॥ रामनाम कर
अगम प्रभाऊ॥ धन्य अगस्त धन्य इहि राई॥ गये र
टत निज भवन सिधाई॥ अवसर एक अगस्त मुनी
सा॥ संध्याहेतु कूल जलधीसा॥ धरिकै पट तट म
ज्जन लागे॥ लघन प्रभाव सिंधु अनुरागे॥ दिये तरं
गन वसन वहाई॥ तव कछु कोप कियो मुनि राई॥ सो
ऊ हृदय सुमरत सुषदाऊ॥ रामनाम कर अतुल प्र
भाऊ॥ धरि अंजुलि कौतुक जुत सारी॥ लियो पान
करि जल निधि वारी॥ देखि चकित सुरगण अतु
राई॥ कियो विविध मुनि असतुति आई॥ तव तो कै प्रसेन
मुनि नाहो॥ मोचि दियो वारद द्रुत ताहों॥ तव ते सागर
सलिल महाना॥ षारो भयो विदित सव जाना॥ पै प्रभाव
मुनि नाथ अपारा॥ भयो अस्तुचि नहि सागर षारा॥
दोहा॥ मुनि अगस्त महिमा अमित विदित पुरा
नन गाई॥ आये गुरु गुनि सदन जहि सिय सेजुत र
घुराई॥२॥ टीका॥ तव राजा मुनीके गुणगण अ
तीत सुजस गावता हुआ आनंद पूर्वक ब्रह्मा के
लोककों चलागया तव एक समय जौनध्यान की नि
धी अगस्त मुनी जी दिनकर जो सूर्ज देवता है

तिसके पास चले गये तिनके आवते देखकर सूरजने कुछ सनमान नहीं किया अर्थात उठा नहीं तबतो मुनी के चित्त में कोप उतपंन होय गया और वस्त्र काल से समाल कर फिर करके सेसाचल परवत में चले आये तहां बैठ कर और आगे वस्त्र राखकर रामचंद्रजी को हृदय में सुमर करके ऐसा वचन कहते भये कि जो कदाचित मेरा राम नाम पर सत्य विस्वास है और जो मैं रामचंद्र भगवा न का सत्य करके दृढ दास हूं और तिनके चरनों का मेरे को सत्य करके भरोसा है तो इस मेरे आगे राखे हुये वस्त्र का रघुनाथजी की कृपा के प्रसाद तें कोटि हो सूरज का प्रकास होय जावे इस प्रकार मुनीने जब राम नाम के भरोसे पर ऐसा वचन उचारन किया तब तिस वस्त्र तें तुरत हीं मानों कोटि सूर्ज का प्रकास उदय हो य जाता भया तिस समय तिसके आगे सूर्ज का प्रकास जो था सो मंद पड़ गया अर्थात कुछ भी प्रतीत न हीं हो ता इस अद्भुत को देखकर ब्रह्मा अचरज के बस भया हुआ तुरत तहां मुनी के पास चला आया और आय करके अगस्त जी की अनेक प्रकार अस्तुती कर ता भया ऐसे ब्रह्मा की अस्तुती करने पर मुनि जो यक प्रसंन होय गये और अपने कोप को तत काल शांत कर लेते भये इसी प्रकार एक समय अगस्त मुनी जी गवन करते अर्थात विचरते हुये सेस भग वान के पास चले गये तहां तिन की सभा में ब्रह्म ऋषि और देव ऋषि इत्यादि महातमा [illegible] बैठे हूये थे तब अगस्त जी हाथ जोड़ कर कहने लगे कि हे फणीनाथ जो आप कृपा करोगे तो मेरी इह प्रार्थना है कि इस तुमारे दास के सहित इह सब मुनी सुर जो हैं सो कृपानिधान तुम्हारे मुख से परम प वित्र और परम गूढ राम तत्व जो है तिसके श्रवण करने की अभिलाषा रुची राखते हैं दीन दयाल की अनसे करके इन को सफल कहिये ऐसे मुनि का वचन आप कृपा करके

सुनकर सेसभगवान कहने लगे कि हे मुनिप्रधान मै भूमी के भार के अन्त से पीड़ित होय रहा हूं तुमको राम नाम का महात प्रभाव है सो सुनाऊं मेरे और दूसरा कोई आधार नहीं है कि जहां मै पृथवी क्षणभर राख कर तुमारे साथ वार्ता आलाप करूं इस प्रकार सेस का कथन सुनकर अगस्त जी कहने लगे कि हे नाथ आप कृपा करिये और इस पृथवीं मेरी भुजा के दंड पर धर दीजिये ऐसे कहिकर मुनी ने अपना भुजदंड जो है सो आगे कर दिया और मुख से इह वचन भी कहा कि जो राम नाम पर मेरा सत्य विस्वास है तो सब के देखते इस पृथवी को मेरा दंड क्षणभर धारन कर लेवेगा अर्थात उठाय राखेगा तब सेसभगवानने पृथवी को मुनी के दंड पर धर दिया राम कृपा ते मुनी भी जो लेश नहीं भया पुष्प के समान पृथवी को धारन कर लेता भया इस अद्भुत को देखकर सेस जी सब मुनियों को सुनाय कर कहने लगे कि हे मुनी सुरो तुम ने इह राम नाम का प्रभाव भली प्रकार अपने नेत्रों से देख लिया है अब कहो कि राम नाम के समान और कौन ऐसी प्रभुता को समर्थ है इह राम नाम ही संसार मे बड़ा अतुल धन है इसी को रटन करते करते मानुष्य अमर होय जाते है पृथवी के तुल्य पापों के भार है ~~[illegible]~~ तिन के निवारने को राम नाम ही समर्थ है हे मुनीसरो राम नाम की महिमा मै अपने हजार मुख से भी कथन करूं तो भी अगम है कदाचित नहीं होय सकती इस प्रकार संपूर्ण मुनी राम नाम के प्रभाव को देखकर धन्य अगस्त मुनी और धन्य सेसभगवान ऐसे गुण गण गायन करते हुये अपने अपने आश्रमों को चले गये तब एक समय अगस्त जी संध्या के निमित्त समुद्र के किनारे पर वस्त्रों को राख कर ~~[illegible]~~ आप मज्जन अर्थात स्नान करने लगे समुद्र ने चाहा कि मै मुनी का प्रभाव देखूं तब तिस ने उछाली लेकर मुनी के वस्त्र तरंगो मे बहाय दिये

हाथों में अपने सोवर्णके कंकन उतारकर और मुनी
के आगे भेटाधरकर हाथजोड़करके दीनवाणीमें विनती
करने लगा कि हे कृपानिधान मेरी दसा आपको सब विदत
होयगई है अब कृपाकरके मेरेको तारिये ऐसे राजाके क
हते ही मुनिनाथ तुरत दयाके वस होयगये तिसी समय
अनदानका फल देकर तिसका उधार करदेते भये॥२॥
चौपाई॥ तब नरेस मुनि गुणगण गाना॥ गयो मुदित
मन लोक विधाना॥ एक समय मुनि ज्ञाननिधाना॥ दि
नकर पें निज कियो पयाना॥ उठ्यो न भानु देखि मुनिका
हीं॥ तब मुनि कोप कियो मन माहीं॥ फिर आये से सा
चल कोरा॥ उर कलेस कछु भयो न थोरा॥ तहां वे छिन्ना
मैं पट धारा॥ राखि राम उर वचन उचारा॥ राम नाम
पर जो मम नेहा॥ है विस्वास सत्य अति पूरा॥ अरु मैं
होउं सत्य संसारा॥ जो रघुनंदन सेवक प्यारा॥ तो इहि
पटकर रा[illegible]म विलासा॥ कोटि भानु सम होहि प्रकासा॥
जब मुनी ने अस वचन उचारा॥ कोटि भानु पट भयो
उज्यारा॥ पसो संद रवि तेज महाना॥ विधि अचरज
देखो करि ध्याना॥ चलि आये मुनि पें अनुराई॥ [illegible]की
नी अस्तुति विविध बड़ाई॥ तब मुनी सहरषे मन
माहीं॥ कियो शांति निज कोप सवाहीं॥ [illegible] एक स
मय [illegible] कुंभज मुनि सोई॥ इरिपतिपें गवने मु
द मोई॥ ब्रह्मरिषी सुररिषि सव ताहां॥ वैठे सभा
रुचिर इहि नाहीं॥ तव अगस्त सब की रुचि जा
नी॥ भने सिवचन जोरि जुग पानी॥ विनय मोर
फणिनाथ कृपाला॥ जो मानहु करि कृपा विसाला॥
तो सब मुनिन मोहि इहि नाहा॥ राम तत्व सन वे की चा
हा॥ तब फनीस मुख वचन बखाना॥ मैं पीड़ित भू भार
महाना॥ कहि विधि मन हुं तत्व भगवाना॥ धरनि धरन
आधार न आना॥ तब अगस्त मुनि वचन अलाया॥
तुव फनीस मोपें करि दाया॥ रहु निज धरनि [illegible] देउ
मम धर ऊँ॥ अस कहि दंड ठाढ़ मुनि करऊँ॥

ऐसे समुद्र की कुचाली देखकर मुनी के हृदय मे
क्षोभ करके कोप उतपंन होय गया तब राम नाम प्रभाव
को हृदय मे सुमर कर एकै बार अंजुली भर करके संपूर्ण
समुद्र को पान कर लिया अर्थात पी लिया जब समुद्र सू
क गया तब देवतागण देखकर के अचरज के वस भये हुये
आय करके मुनी की अनेक प्रकार असतुती बड़ाई करने
लगे देवताओं की असतुती करने पर मुनीनायक प्रसंन
होय गये और कौतुक सें फिर तैसे हीं समुद्र को मोच
दिया अर्थात छोड़ दिया तब तें इह समुद्र षारा होय
रहा है सब जगत मे विदत है परंतु मुनि के प्रभाव तें
अपवित्र नहीं भया इस प्रकार अगस्त मुनी की महि
मा पुराणों मैं लीप्रकार गायन की हुई है देखिये जिस
के घर मै गुरू जानकर जानकी के सहित जानकी के
पती रामचंद्र भगवान आप आवते भये ॥२॥ इति
श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ति महात मे
भाषा टीकायां अगस्त चरित्र वरणनं नाम सरग.

धरनि अमोल रतन इहराहा॥ असविचारि मुनि सों नृप कहा॥ सहस चतुर दस करभ तुरंगा॥ सजे समाज साज बहुरंगा॥ सतदासी सुंदर सुकमारी॥ दस सहस्र स्यधन असवारी॥ ले हु ग्राम सुंदर सत मारे॥ और हु जस रुचि होहिं तुम्हारे॥ सो सब मुनि नायक तुम लेहो॥ पै सबला सुरभी मुहि देहो॥ सुनि मुनीस नृप भाषन एहा॥ हृदय सोच बस नृसनि रेहा॥ मन्यो बहोरि वचन इहि भाती॥ मास मास मम जय निब्राती॥ सो सबलों केहि विधि हम देहू॥ नृप अनुचित मांगन तुव एहू॥ एकहिं इह सुरभी वन माहीं॥ और अधार भूप हम को हीं देहा॥ सुनि वसिष्ट के वचन अस नृप कोप बस होय॥ लीन जोर तें छीन तब मुनि तें सबला सोय॥२॥ टीका॥ नाभादास कहते हैं कि हे संतो जगत मे महा रिषी और परम उदार विस्वामित्र जो भये हैं अब तिनकी गाथा मे लघू मति अर्थात तुच्छ बुद्धि के अनुसार कुछ गायन करता हूं कैसे भी विस्वामित्र कि जिनको लछमन के सहित रामचंद्र महाराज ने अपने गुरु बनायकर लोगों मे उजागर किया सो विस्वामित्र प्रथम प्रजा के पालक और दयाधरम मे प्रवीन बड़े राजा होते भये सो एक समय सकार के पीछे बणमे भ्रमते भ्रमते वसिष्ट मुनीजी के आश्रम को देखकर दरसन की अभिलाषा तें निकर चले आये और आवते ही पृथवी पर माथा धरकर मुनिनायक को प्रणाम किया तब वसिष्टजी ने राजा का भलीप्रकार आदर सतकार करकर और आसीसा के सहित सब कुसल पूछकर निमंत्रण किया अर्थात कहा कि हे राजन आप अपने सब सेना समाज के सहित आज मेरे घर मे भोजन पाईये तब राजा हाथ जोड़ कर कहने लगा कि नाथ भोजन तो सब आपकी कृपा और दाया है मे ने आज अपने मनवांछित फल को पाय लिया है नाथ के दरसन की चिंता मे अत से

करके अभिलाषाथी सो आज सब तुझे ही सफल होयगई है अब कृपाकरके आज्ञा दीजिये मे घरको जाऊं भोजनकी कुछ इच्छा नही है इसप्रकार राजाके कथन करनेपर मुनी ने वारंवार जो कहा तो अंतको राजाने स्वीकार करलिया अर्थात भोजन मानलिया तब मुनीकेपास सबला नाम करके एक कामधेनी तिसके पास जायकर मुनिउदारके हने लगे किहे सुरभी मैने आज सब सेनासमाजकेसहित राजाको निमंत्रण कियाहै अर्थात भोजनका नेउता दिया है तो तेअबतू विलंबको त्यागकर सबभांत [illegible] कवान जोहै सो वेग रचायदे मै राजाको भोजन जिमाय देऊं ऐसे मुनीकी आज्ञापायकर तिससबला धेनू ने अपने कौतुकप्रभावतें षटरसके सहित अमृतके तुल्य नाना व्यंजन पकवान जोथे सो सब रचायदिये तबरा जाने अपने संपूर्ण समाजके सहित बडे आदरस नमानसे मुनीके घरमें भोजन पायलिया जिसको जैसी रुची अभिलाषा भई सबला सुरभीभी तिसको तैसेही सबदेती भई इसप्रकार संपूर्ण सेनासमा जकेसहित राजा भोजनपायकर बडी त्रिपतीको प्रापत होयगया परंतू धेनूका प्रभाव देखकर राजा अचरजके वस होयकर कहताहै कि इह सुरभी तो कोई साक्षात कल्पवृक्षकारूपहै और पृथवीतलपर इहबडाभारी अमोल रतन है ऐसे कथनकरकर ला लचकेवस भयाहुआ प्रजापाल मुनीको कहनेलगा किहे मुनींद्र [illegible] सब साजसमाजके सहित सजाहुआ चौदा हजार हसती घोडा दसहजार र थ [illegible] और बडी सुकमारी सुंदररूपवाली सोदासी [illegible] तैसेही सुंदर रमणीक सौग्राम इनतें भिन्न और जो तुम्हारे चित्तकी रुची अभिलाषा हो सो लेवो मैप्र सन होयकरके देता हूं परंतू इह अपनी सबला धेनू जो है सो मेरेको देवो ऐसे राजाका जाचिना सुनकर

मांगना सुनकर मुनी सोचके वह एक महूरत भर मौन
होय गये तिसतें उपरांत फिर चतुराई के वचनों से कह
ने लगे कि हे प्रवीन राजन तूं विचार करके देख जो मैं मा
सप्रती सदैव जज्ञ करता हूं और इह सवला ही मेरे यज्ञोंका
निरवाह करती है हम रिषी सदा वनके बीच वास करने
वाले हैं हमारी तो ईहो एक इह धेनू ही आधार है सो रा
जन हम तेरे को कैसे देवें इह तुमारा मांगना जो है सो अ
जोग है ऐसे जब मुनीने धेनू के देने का असूईकार कि
या अर्थात नाह करी तब राजा को कोप उतपंन होय
जाता भया तुरत सेवकों को आज्ञा देकर जोरावरी सें
धेनू जो थी सो छीन लेई ॥२॥ चौपाई ॥ चल्यो लेत ज
व भूपति तासा ॥ तब सवला मन कोप प्रकासा ॥ तोरिस
वल वंधन अतुराई ॥ दुषित दीन वत मुनि पै आई ॥ रोय
रोय असकरत उचारन ॥ तज्यो नाथ मोहे कहि कारन ॥
मुनि कह मैं न तज्यो तुव काहीं ॥ नृप सों चल्यो ने कुछ स
नाहीं ॥ गरव स मोर निरादर कीने ॥ लै गवन्यो सवला
तुहि छीने ॥ अवल विप्र हम काअव करें हीं ॥ कौ
न भांति नृप सों अपहरहीं ॥ कहे सवला दुज वल
है विसाला ॥ मुहि सासन तव देहु कृपाला ॥ मुनि
कहे तुव समरथ सव भाती ॥ करहु जथा वनिपरहीं
अराती ॥ मुनि सासन सवला अस पाई ॥ विरचि
प्रवल जमन समुदाई ॥ तिन कीन्यो अतिसे रणरारी ॥
हने भूपभट कोटिन भारी ॥ विस्वामित्र पुत्र सत धाये ॥
जमन मारि सर सवन हटाये ॥ पुनि सवला औरहु
विरचाये ॥ [illegible] सैद पठान मुगल समुदाये ॥ सरभी
महां मलेछ तुरंता ॥ प्रति रोमन तें कढे अनंता ॥ भू
पति के सत सुत भटि मारे ॥ स्यंधन सिंधुर सेजुत गा
रे ॥ विस्वामित्र पराजय [illegible] लीनो ॥ कानन जा
य [illegible] तप कीनो ॥ महां प्रसंन भये त्रिपुरारी ॥ दिये
[illegible] अस्त्र रिपु खंडिन कारी ॥ तहां आय पुनि भूप

अथ विस्वा मित्र जी चरित

दोहा॥ महाँ रिषी जगमे भये विस्वामित्र उदार॥ अब
तिनकी गाथा भनू मै लघु मति अनुसार॥ चौपाई॥
लछन सहित रघुनंदन देवैं॥ जहि अपने गह किये अ
मेवैं॥ रे हे मुनीस प्रथम महि राया॥ पालक प्रजा
धर्म रत दाया॥ एक समय मृग्यानत हेतू [illegible] भ्रमत
भ्रमत नृप विपुन सचेतू॥ मुनि वसिष्ठ आश्रम दर
साये॥ दरसन हेतु निकट चलि आये॥ किये प्रणाम
धरनि धरि माथा॥ मुनि आदर कीन्यो नरनाथा॥ कुस
ल प्रश्न करि भूपति काहीं॥ किये निमंत्रन मुनिवर ता
हीं॥ सहित समाज आज मम गेहू॥ करहो भोजन भू
पति नेहू॥ नृप कह भोजन प्रभु की दाया॥ आज ना
थ मनवांछित पाया॥ चहत रह्यो तुव दरसँ नूरा॥
भयो सु सहज मनोरथ पूरा॥ सासन देहु भवन अव
जाहें॥ भोजन की इ[illegible]च्छा कछु नाहें॥ वारवार
मुनि नाथ उचारा॥ तब नरेस कीन्यो सुइकारा॥ मुनि
पैं रही एक अभिरामा॥ सबला नाम धेनु प्रद कामा॥
तासु निकट मुनिनाथ सिधारे॥ अति सनेह जुत वचन
उचारे॥ सकल समाज सहित महि राजहि॥ दिये च
हत भोजन हम आजहि॥ ताते तुम सब [illegible] देहु रचा
ई॥ भूरि भांति भोजन समुदाई॥ मुनि सासन सुनि
धेनू सुहावन॥ दिये रचाय पाक शुत पावन॥ छटरस
चारु सुधासम नाना॥ व्यंजन विविध भांति पक[illegible]
वाना॥ नव जुत सेन समाज महि राया॥ सादिर मु
नि के भोजन पाया॥ जो जांके रुचि भई रसाला॥ स
वला दीन तुरत तहि काला॥ पाय पाय भोजन सल
दाये॥ सकल सैन जुत भूप अघाये॥ धेनु प्रभाव ल
ख्यो नृप भारी॥ विदत कलप तरु रूप निहारी॥

क्यों नहीं दिखाया भला जो हूआ सो हूआ अब कृपाकरके मेरेको आज्ञा दीजिये और आप देखिये मैं तिसको कैसा चमत्कार दिखावती हूं तब मुनी कहने लगे कि हे सबला तूं सर्व प्रकार करके सामर्थ हैं अब जैसी तेरेको भावना है तैसे तूं सत्रू का उपाय कर इस प्रकार मुनी की आज्ञा पायकर सबलाने ततकालही नाना जमन मलेछ जो हैं सो निरमाण कर लिये अर्थात रच लिये तिन्होने रण मे आवतेही ऐसा घोर जुद्ध किया कि राजा के अनेक महां सूरवीर जो थे सो सब प्राणों से रहित कर दिये तब विस्वामित्र के सौ पुत्र जो थे सो कोप करके धाय पडे मिलेछों ने सब ही मार करके हटाय दिये फिर सबलाने और सैद सेख मुगल पठान इत्यादि अनेक निरमाण किये अर्थात तिसके रोम रोम तें अगनित कि जिनकी गिनती नहीं थी ऐसे कोटिन कोटी मलेछ उतपंन होय जाते भये तिनोने हसती घोडे और रथों के सहित विस्वामित्र और सब सूरवीरे का मारकर के नास कर दिया तब विस्वामित्र हार करके दुषी भया हूआ बण को चला गया तहां जायकरके महादेव को ▪ अराधने लगा ऐसी तपस्या करी कि जिसतें त्रिपुरारी भगवान गदगद प्रसंन होय गये और विस्वामित्र को सत्रू के नास करनेवाले महां प्रचंड अस्त्र जो थे सो देते भये तिनको पायकरके कोप [illegible] से भरा हूआ विस्वामित्र फिर आयकरके जुद्ध करने लगा पडा तब तो क्रोध के वस भया हूआ ऐसा अगनी अस्त्र मारता भया कि जिसतें वसिष्ट मुनी का आश्रम जलकरके भस्म होय गया इस प्रकार अपने आश्रम की हानी देखकर मुनी भी कोप सें लाल होय गये और ततकाल हीं ब्रह्म तेज को प्रकट करके राजा के सनमुष आय स्थित होते भये तब राजा को महादेवने जो अस्त्र सस्त्र दिये थे सो एक एक

करके मुनीवर सब छोड चुका परंतू ब्रह्म तेजके आगे सब भस्म होयगये जैसे वडवानल अगनी जो है तिसके आगे समुद्रकाजल हस्तोषण होता जाता है अर्थात जलता जाता है तैसे हीं मुनीका ब्रह्म तेज जो है तिसके आगे राजाके अस्त्रसस्त्र सवनिसफल होयगये तब राजा देखकरके अचरजके वसभया हूआ क्षत्रीकेवल और सामर्थको धिगधिग ~~कहने लगा~~ कहिकर इहनिश्चय करता भया कि पृथवीतलपर ब्रह्म तेजके समान और दूसरा कोई नहीं है तीते मैभी और सब लालसाको छोडकर ब्रह्म तेजको ही प्रापत करता हूं जो मेरे को इहप्राप होय गया तो भलीवात नहीं तो अपने प्राणों का नास कर देऊंगा ऐसे कथन कर कर और वणमे जायकर राजा महो उग्र तपको करताभया इस प्रकार तिसका अखंड तप देखकर प्रसंन भये हूये ब्रह्माजी राजाको महो र्षी पद जो है सो देते भये तिसीकालविषे ईहां अजुध्या मे त्रिसंकूनाम करके परम उदार राजा जो थे तिनों ने जज्ञकी अभिलाषातें विसष्ट मुनीजी को बुलायकरके कहा कि हे कृपानिधान आप विधीपूर्वक मेरे तें जज्ञ करवायकर इस सरीरके सहित ही मेरेको स्वर्ग लोकमे पठायदेवो नाथ इह आपका मेरे पर अत्यंत उपकार होवेगा ॥२॥ चौपाई ॥ मुनि कह अस न होहि नरराया ॥ तब नृप गुर पुत्रनपें धाया ॥ कही मनोरथ आपन जाई ॥ वारवार चरनन सिर नाई ॥ गुर सुत भने सुनहु महिपाला ॥ जो न कियेगुरु दीनदयाला ॥ तो कहि विधि करिहैं हम ताई ॥ सुनि नृप कोपित गिरा अलाई ॥ तुव अतनो जे गरव जताना ॥ का मोरे गुरु मिलहिं न आना ॥ दरप वचन जब भूप अलापा ॥ गुरु सुत सुनत दियो द्रुत सापा ॥ जा है मेद होहु चंडाला ॥ पावहु वपु संताप विसाला ॥ तब रवि उदय त्रिसंकु भूपा ॥ होत भयो चंडाल सरूपा ॥ स्याम वसन आयस आभरना ॥

अति सय रौद्र स्याम तन वरना॥ पुर तें कढ्यो जरत
वपु सोई॥ देषि न परयो हरन दुष कोई॥ भ्रमत भ्रमत
कौसिक मुनि पाहीं॥ गिरयो आय विकल पग माहीं॥ पा
हि पाहि दीनन हित कारी॥ मुहि अनाथ कहं सरण तुमा
री॥ गुरु जुत गुरु पुत्रन की गाथा॥ सकल सुनाई जोरि
जुग हाथा॥ मुनि के सुनत दया अति लागी॥ दीन्यो अ
भय भनत मृदु वाणी॥ वहुरि कह्यो मुनिनाथ उदारा॥
करहुं मनोरथ सकल तुमारा॥ मुनिन वोलि सुभ जग्य
करावहुं॥ इहि तन तें तुहि स्वर्ग पठावहुं॥ अस कहि सि
ष्य पठे जहं ताहीं॥ लिये वुलाय मुनी मुनि नाहीं॥ तहं
वसिष्ठ सुवन नहिं आये॥ तव कौसिक दे साप जराये॥
जोरि सकल संभार सुहावा॥ विस्वामित्र जग्य विरचावा॥
भयो सुमष पूरन जव आई॥ तव कौसिक तप वल महि
राई॥ तन जुत दियो स्वर्ग कहं प्रेरी॥ तासु जात वासव
अस हेरी॥ गुरु अपकार जानि जिय मारा॥ पत पत [illegible]
~~[illegible]~~ वदन सुरेस उचारा॥ तव तें त्रिसंकु
त हो हीं॥ गिरन लग्यो नभ तें महि माहीं॥ त्राहि त्राहि
अव होहु सहाई॥ मुहि टोकत वासव मुनिराई॥ विस्वा
मित्र सुनत रिस छाये॥ तिष्ट तिष्ट अस वदन अलाये॥
पुनि हरि भजन प्रभाव सुहावा॥ मुनि कौसिक अस
प्रकट दिखावा॥ लाग्यो रचन स्वर्ग मनु आना॥ देव
न तत्र अनक विरचाना॥ फल तरु जोनि जौन संसारा॥
विरच्यो अन अनेक प्रकारा॥ रचत दुतीय जगत मु
नि काहीं॥ लषि आये तहं देव सवाहीं॥ करि अस तु
ति वहु विनय वखानी॥ समुझाये भनि भनि मृदु वानी॥
जव देवन अस कीन वडाई॥ तज्यो तुरंत कोप मुनिरा
ई॥ पै अस भने ~~[illegible]~~ वचन रिषिराये॥ इह मम कृत
जे नषत सुहाये॥ दल गण करहिं प्रकास सदा हीं॥ मोर व
चन संसय कछु नाहीं॥ औरहु निज इच्छा मन भाई॥
जौन जौन मे वस्तु वनाई॥ सो सव सत्य होहिं संसारा॥

रिसाई॥ पावक अस्त्र हन्यो अनुराई॥ मुनि वसिष्ठ कर आश्रम जा[illegible]रा॥ तव मुनि कोप कियो उरभारा॥ ब्रह्म तेज कहं प्रकट कराई॥ भयो ठाढ सन मुष नृप आई॥ भूपति कहे संकर जन मेरा॥ अस्त्र सस्त्र जे दिये सबेरा॥ सो मुनि पें मोचन नृप कीने॥ ब्रह्म तेज महं मे सब लीने॥ जथा दिवानल वारि समोये॥ ब्रह्म तेज तिमि नृप सर लोये॥ देषि भूप अचरज बस परयो॥ तजी बल कहे धिग धिग करयो॥ [illegible] मुनि निश्रुप मान सनि जजाना॥ ब्रह्म तेज सम अहै न आना॥ सो तप करि लेहों मे पाई॥ नत रदेहुं निज काय गवाई॥ अस कहि जाय महा तप कीना॥ तव मंह रिषि विधि सों पद लीना॥ कावेरी तट दत्त्ण ओरा॥ लाग्यो करन महा तप घोरा॥ इते अवध पुरि भूप उदारा॥ नाम त्रिसंकु विदत संसारा॥ ~~मुनि[illegible]~~ दोहा॥ [illegible] वसिष्ठ [illegible] हि वोलि नृप मुनि प्रभु जज्ञ कराय॥ मत्यों यातन सों करुणाय तन दे हो स्वर्ग पठाय॥ २॥ टीका॥ जव राजा तिस सवला नाम धेनू को लैकरके चलपड़ा तव सवला ने अत सैकरके कोप को उदय किया तुरत हीं गले का वंधन छुडायकरके वड़ी दुषी भई हुई मुनी के पास चले आई और रुदन करकर विलाप केवचनों सें मुनी के आगे कहने लगी कि हे नाथ मेरे को आपने कौन कारन तें त्यागदिया है तव वसिष्ठ जी कहने लगे कि हे सवला तूं तो मेरा सरव प्रकार करके आधार हैं मैं तेरे को कैसे त्याग सकता हूं परंतू मेरा राजा के साथ हितकारनी कोई वस नहीं चला वे तो जोरावरी मेरा निरादर करके तेरे को छीन कर लेगया है हम ब्राह्मण हैं और अवल हैं कुछ वल नहीं रषते है कौन जोर से हम तेरे को राजा सें छीन लेते ऐसे मुनी का कथन सुनकर सवला कहने लगी कि हे मुनेन्द्र ब्रह्मवल जो है सो तो वड़ा अगाध है और सव से जोरावर है आपने राजा को

मै अनाथ हूं प्रभू आपकी शरणागत आया हूं इतना
कहते हीं चरनो पर गिर पड़ा फिर हाथ जोड़ कर गुरू के
सहित गुरू पुत्रों की गाथा जो थी सो सब सुनाय देता भया
तिसकी दीनता और दुष देष कर मुनी तुरत दया के वस होय
गये और तिसको अभय देकर कोमल वानीसें कहने ल
गे कि हे राजन तूं सावधान हो मै तेरे मनोर्थ को सफल
करूंगा मुनी रिषियों को बुलाय कर तेरा जज्ञ करवाता
हूं और तेरे को सरीर के सहित स्वर्ग लोक मै पठाता हूं
ऐसे कहि कर अपने सिष्य [illegible] जहां तहां पठाय दि
ये और बड़े बड़े महात्मा मुनी रिषी जो थे सो सब बुलाय
लिये परंतू तहां वसिष्ट मुनी के पुत्र नहीं आये
तिस तें विस्वामित्र ने स्राप देकर तिन सबको भस्म कर
दिया और जज्ञ की जो जो वस्तू उचित थी सो सब जोड़ कर
जज्ञ का प्रारंभ कर दिया इस प्रकार जब जज्ञ संपूर्ण
होय गया तब विस्वामित्र जीने अपने तप के प्रभा
वतें राजा को सरीर के सहित स्वर्ग की वोर पठाय दि
या तहां त्रिसंकू राजा को जाते देख कर गुरू को अप
मान हृदय मै विचार कर इंद्र जो है सो पतुपत मुषसे
ऐसा शब्द उचारण कर देता भया तिस पतपत
शब्द के उचारण करते हीं राजा तुरत आकास सें पृथ्वी
की वोर गिरने लग पड़ा और त्राहि त्राहि पुकारता हूं
आ कहने लगा कि हे मुनी नाथ हे प्रभू अब मेरी सहाय
ता करिये ऐसे राजा की आरतवाणी [illegible] अर्थात
~~दुषि के भरे हूए~~ दुष की भरी हूई पुकार सुनकर विस्वामि
त्र जी कोप सें तिष्ट तिष्ट शब्द उचारण कर देते भये कि
तहां हीं स्थित रहो फिर मुनिनायक हरी के भजन की
प्रभाव जो है सो प्रकट करके दिखावते भये क्या कि दू
सरा स्वर्ग हीं रचने लग पड़े देवता नक्षत्र [illegible]
[illegible] वृक्ष फल नाना जो नी और अनेक प्रकार
के अंन इत्यादि सब रच देते भये इस प्रकार मु
नी को जगत की रचना करते देख कर अचरज के

वसभये हूये सवदेवता तहां चले आये और आवतेही विस्वामित्र जीकी अनेक प्रकार अस्तुती वडाई गायन करने लगे और वडी कोमल वाणी सें वारवार समुझायकर तिन के कोप की सांती करते भये परंतु मुनी नायक कहने लगे कि इह मेरे रचे हूये नक्षत्र अर्थात तारे जो हैं सो आकास मारग मे दक्षण दिसा विषें सदैव ही प्रकासमान रहेंगे और भी अपनी इच्छा करके मैने जोजो वस्तू निरमाण करी हैं क्या रची हैं सो मेरे वचन करके संसार मै सव सत्य होवें और इह त्रिसंकू राजा जो है सो सरीर के सहित देवताउं के समान होयकर स्वर्ग लोक मै जाय करके निवास करे तव देवताउं ने एवमस्तु शब्द उचारन किया कि ऐसे हीं होवेगा परंतू इह राजा गुर अपकारी है अर्थात इसने गुरू का अपमान किया हूआ है इसतें इह दक्षण दिसा मे आकास मार्ग विषे नीचे सिर और ऊपर पाऊं करके सदा हीं प्रकास के सहित निवास करेगा इस प्रकार कथन कर कर आनंद मे मगण भये हूये देवता गण अपने लोक को चले गये इहां विस्वामित्र भी सुष पूर्वक सव शोक सें नवृत्त होयकर दक्षण तें चलकर हरीहरी सुमरते हूये किसी और ~~[illegible]~~ ~~[illegible]~~ अस्थान पर जायकर तहां वडा सुंदर और निरमल सरोवर देखकर तिसके किनारे वैठकर के अषंड तप जो है सो करने लग पडे ॥ २ ॥ चौपाई ॥ एकसमय तहं रूप सुहाई ॥ मज्जन हेतु मेनका आई ॥ तासु देखि कौसिक मुनि रागे ॥ भये मदनवस धीरज त्यागे ॥ तव दसवर्ष मेनका संगा ॥ किये विहार मुनीस अभंगा ॥ तहि पाछे जव चेतन पाये ॥ छाडि तासु द्रुत अनत सिधाये ॥ जाय इकांत कियो तप भारी ॥ सो सुरनाथ न सक्यो सहारी ॥ मघवस रंभा दीन पठाई ॥ करन विधुंसन तप मुनि राई ॥ तासु देखि मुनि साप वखाना ॥ होहै अधम जाय पाषाना ॥ जैहैं कवहु वसिष्ट उदारा ॥ होहि मेद तव तोर उधारा ॥ अस इंमे कहं वचन अलाई ॥ उतर दिसा

आय मुनि राई॥ सहस वर्ष कीन्यो तप भारा॥ सहस वर्ष
पुनि अनन गुजारा॥ एक दिवस मुनिवर कछु ल्याई॥
लगे करन भोजन हरषाई॥ तहाँ इंद्र द्विज वपु धरि आ
यो॥ जाच्यो अंन तुरत सो पायो॥ तहँ तें वहुरि चले
रिषि राजे॥ सैल हिमालय आय विराजे॥ कीन्यो सह
स वर्ष जब ताहीं॥ सिर तें कढ्यो तपानल काहीं॥ जर
न लग्यो त्रिभुवन तहि काला॥ गये विवुध विधि सरन
विहाला॥ जाय पुकार करी कर जोरी॥ राखिय नाथ सर
न अव तोरी॥ विस्वामित्र तपानल तेहीं॥ भवन भस्म
कछु वेर न ऐहैं॥ सुरन वचन सुनि विधि आतुराये॥
विस्वामित्र निकट चलि आये॥ भने सुनहु तुम हू मुनि
राया॥ तपवल ब्रह्म रिषी पद पाया॥ अव जे आन रु
ची कछु तोरे॥ सो मागहु मुनि नायँ मोरे॥ मै देहौं द्रुत
वेर विहाई॥ तव प्रसंन वोले मुनि राई॥ नाथ न मुहि
लालस कछु आना॥ विनु इक भक्ति कृष्ण भगवाना॥
सो देहौ मोरे सुषकारी॥ उर तें कवहु टरै नहिं टारी॥ ए
व मस्तु विधि हरषि उचारे॥ वहुरि तुरत निज भवन सि
धारे॥ विधि वर पाय मुनी सउदारा ▬॥ भजन पुंज
प्रकटे संसारा॥ जासु भक्ति वस पाछु ल लागे॥ संग सं
ग रघुपति वन वागे॥ पूर्व जनम महँ द्विज सुत रहे
ऊ॥ सेवन संत वान सो गहेऊ॥ तासु विलोकि सं
त सिव काई॥ काहु संत उर मोद अघाई॥ कहत तुव
कीन संत जस सेवा॥ तस तुम री करिहैं रघुदेवा॥
संत वचन सुनि सुषद सुहावा॥ विमल विवेक ज्ञा
न उर छावा॥ तजि दीन्यो संसार महाना॥ भजन क
रत कछु समय विताना॥ पुनि जव छूटन प्रानन का
या॥ कठिन काल तौं कर नियराया॥ मगमहं परयो
भूप कोउ ताहीं॥ आय गयो तहि औसर माहीं॥ तासु वि
लोकि विप्र मन जोई॥ जुटयो भूप रूप महं सोई॥
~~कि आसा वस कु~~ ताहु वासना वस संसारा॥ द्विज ली
न्यो कुस को अवतारा॥ भक्त सहायक श्रीरघुनाथैं॥

अरु इह भूप त्रिसंकु उदारा॥ यातनतें गति देव बड़ाई॥
सुरपुर बसहिं सदा सुष पाई॥ एव मस्तु देवन कहि दीना॥
दक्षण बसहिं नरेस प्रवीना॥ ऊर्ध
चरन अध सिर गुरद्रोही॥ रहहिं सु सदा गगन थिर होई॥
दोहा॥ अस कहि गवने लोक निज मुदित देव समुदाय॥
विस्वामित्र आनंद जुत इत सव सोक विहाय॥ द
क्षणतें चलि अनतक हि समरत हृदय मुरारि॥ लषि
सरवर कौ बैठि तहँ कियो अगम तप भारि॥
३॥ टीका॥ इस प्रकार त्रिसंकु नरेस का कथन
सुनकर वसिष्ट जी कहने लगे कि हे राजन इह कार्ज
मेरे तें नहीं होय सकेगा जव मुनी ने ऐसे कहा
तव राजा गुरु पुत्रों कूं पास अर्थात गुरु वसिष्ट जी के पु
त्रों के पास चला गया और जाते ही तिनको अपना
सब मनोर्थ सुनाय देता भया तव सुनकरके गुरु पुत्र
कहने लगे किं जिस कार्ज के करने को गुरु जी सामर्थ
नहीं भये तो कहो तिस कार्ज को हम कैसे कर सकते हैं
ऐसे जव गुरु पुत्रों ने भी अस्वीकार किया तब कोप के
वस होय करके राजा कहने लगा कि तुम इतने भारी
क्यों होते हो क्या मेरे को और दूसरा गुरु नहीं मिलेगा
इस प्रकार जब हंकार के वचन राजा ने उचारन किया
तब कोप करके गुरु पुत्रों ने साप दे दिया कि जा तु मंद
तूं चांडाल हो और सरीर में परम संताप और दुष जो है सो
प्रापत कर ऐसे जब गुरु पुत्रों ने साप दिया तब सूर्ज
के उदय होते ही राजा चांडाल रूप होय जाता भया
स्याम वस्त्र और लोहे के भूषण बड़ा भयानक स्याम
ही सरीर का रंग और हृदय करके जलता हूआ नगर तें
बाहर निकल चला तिस काल तिस को दुष के नि
वारने वाला कोई भी देष नहीं पड़ता है तव भ्रमता भ्र
मता विस्वामित्र जी के पास चला आया आवते ही त्रा
हि त्राहि कहता हूआ कि हे दीनहितकारी मेरी रक्षा करिये

वर्ष वतीत होय गया तब मुनिनाथ तपानल जो तप की महाप्रचंड अगनी है [illegible] तें प्रकट करते भये तिस समय तिस मुनी की तपानल तें तीनो लोक हीं भस्म होने लगपड़े और सब [illegible] जीव जंतू त्राहि त्राहि पुकार उठे तब तो देवता गण देख करके व्याकुल भये हुये ब्रह्मा की सरण को जाय प्रापत हुये और हाथ जोड़ कर विनती करने लगे कि हे कृपानिधान इस समय तुमारी ही सरण है और प्रभु तुम हीं सहायता करने को सामर्थ हो नहीं तो विस्वामित्र की तपानल रूपा तप की अगनी तें सपूर्ण लोक हीं भस्म हुये चाहते हैं कुछ विलंब नहीं है ऐसे देवताउं की विनती सुनकर ब्रह्मा तुरत वेग सें विस्वामित्र जी के पास चले आये और आवतें बड़ी मधुर बाणी सें कहने लगे कि हे मुनेंद्र तैने अपने तप के प्रभाव तें जगत विषें ब्रह्म ऋषि वतुल उत्तम पद जो है सो प्रापत किया है मै तेरी भक्ती के वस भया हुआ तेरे आधीन हुआ अब जो तेरे मन की कुछ और रुची वा मनोर्थ है तो मेरे तें मांग ले मै अभी देता हूं कोई विलंब नहीं है इस प्रकार विधाता का वचन सुनकर मुनि प्रसंन होय कर कहने लगे कि हे कृपानिधान अब मेरे हृदय मे श्रीरघुनंदन देव की भक्ती कें और दूसरी कोई अभिलाषा रुची नहीं है नाथ जो आप मेरे पर प्रसंन भये हो तो कृपा करके एही वरदान करो जो सिय रघुनाथ जी की भक्ती मेरे हृदय तें कबी टारी हुई भी टरे नहीं अर्थात सदेव ही मेरे हृदय मे बसी रहे मुनी का वचन सुनकर ब्रह्मा एवमस्तू उचार कर कि ऐसे हीं होगा फिर आनंदपूर्वक अपने धाम को चले गये इही विधि तें वर पायकर मुनिनाथ [illegible] संसार मे मानो भजन के पुंज प्रकट होते भये कि जिन की भक्ती के वस होयकर रघुनंदन देव बण विषे साथ साथ पीछे पीछे लगे फिरते रहे ऐसे मुनियों विषे प्रधान विस्वामित्र जी पूर्व ले जनम विषे ब्राह्मण के पुत्र रहे और रात्री दिन

तिनकी संतसेवनमे हीं प्रीती थी जैसे तिनकी अधिक संतसेवकाई और संतभक्तीदेषकर एक कोई संतमहात्माजो थे सो प्रसन्न होयकर कहने लगे कि हे ब्राह्मण तैने जैसे मन वचन काया करके संत सेवा करी है तिस के प्रसादतें तेरे रघुनाथ जी महाराज तेरी आप सेवा करेंगे इस प्रकार संतमहात्मा के मुषसें वचन सुनकर तिसके हृदयमे सुंदर विवेक विचार और निरमल ज्ञान प्रापत होयगया तिसी समय चित्तसें संसार का त्याग कर देतामया भजन करते करते कुछ समय वतीत होयगया जब प्राण छोडने का अंत समय निकट आयगया तब मारगमे पडे पडे एक कोई राजा तहां आयप्रापत भया तिसको देषकर ब्राह्मण का मन राजाके रूपमे जुड गया तिसी वासना के वस होयकरके ब्राह्मण संसार मे कुसका अवतार धारन करता भया तब भक्त सहायक श्री रघुनंद भगवान अपने हाथों सें तिसके चरनो को चापन अर्थात मरदन करते भये नाभादास कहते हैं कि हे संतो इस प्रकार मुनियों विषे प्रधान विस्वामित्रजी जगतमे तपके पुंज उजागर होते भये कि जिनकी भक्ती के वस भये हुये लषमण जी के सहित कौसलराजकुमार श्रीरामचंद्र महाराज मुनिनायक के घरमे आयकर और दुष्ट दैतोंको मारकर तिनका जग्यजोथा सो सफल करते भये ॥ ४ ॥ इति श्री भक्तविनोद ग्रंथे भगवद्भक्ति महात्मे भाषाटीकायां विस्वामित्र चरितवरणनं नाम सरग -



तासु चरन चाये निज हाथें॥ दोहा॥ अस प्रकार कौसिक
मुनी भये विदत संसार॥ जास जग्य पूरण कियो कौसल
राजकुमार॥८॥ टीका॥ तव एक समय तहां रूप करके
वड़ी सोभा वाली मेनका नामिक अपछरा जो थी सो ति
स सरोवर पर स्नान करने के नमित्त आय प्रापत होती
भई तिसके रूप की सोभा को देषकर विस्वामित्र मोहि
त होयकर काम के वस आतुर होय गये और धीर्ज भी छू
ट जाता भया तव ऐसे काम करके वेष्ठित भये हूये मुनी
स तिस मेनका के साथ दस वरष लग चेष्टा विहार करते
रहे तिसतें उपरांत जव चेतन भये तव अपनी भूल को सु
मरकर ततकाल हीं तिसको त्याग कर किसी और स्थान
पर जायकर वड़ा भारी उग्रतप करने लग पड़े ऐसे तिन
का घोर तप देषकरके इंद्र जो था सो सहार नहीं सका भय
के वस भया हूआ तुरत रंभा नामिक अपछरा कौं तहां
पठाय देता भया जव रंभे मुनी के पास आयकर अपने
हावभाव प्रकट करने लगी तव देखते हीं मुनी के हृदय
मे कोप उतपन होय गया तुरत हीं स्राप के वचन से कह
ने लगे कि जा रे अधम तूं पाषाण हो और कवी सम
य पायकर वसिष्ट मुनी जी के दरसन तें मंद तेरा उद्धा
र होय जावेगा इस प्रकार रंभे को स्राप देकर मुनि वि
स्वामित्र जी उत्र दिसा को चले आये तहां हजार वर्ष
लग वड़ा भारी तप किया और फिर हजार वर्ष किसी और
पर वतीत करते भये एक दिन मुनिनायक त्यायकर
के कुछ भोजन करने लगे तिस समय ब्राह्मण
का रूप धारकर देवताउं का राजा इंद्र जो था सो तहां च
ला आया तिसने मुनी तें कुछ अंन मांगा तिन्हों ने ब्रा
ह्मण जानकर दे दिया सो मुनी का प्रभाव देषकर और
अंन लेकर तहांतें चला गया पाछे विस्वामित्र भी तहां
से उठकर और चलकरके हमालय परवत मे आयकर
स्थित होय जाते भये जव तहां तप करते तिनको हजार